JGBY-02

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

एल. एस. ई.-13
पादप विविधता-II

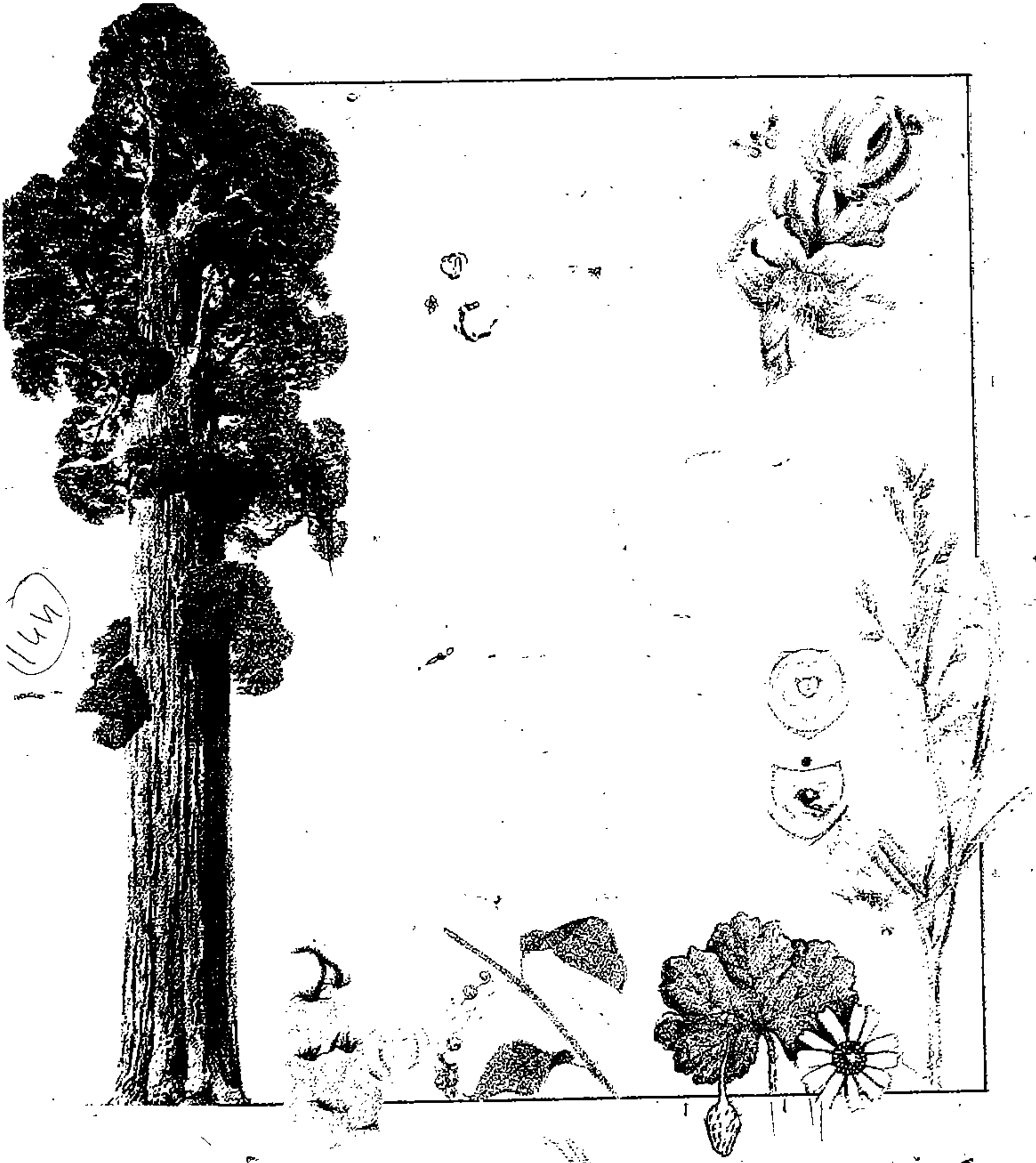

जिम्नोस्पर्म्स

1

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -02
पादप विविधता-II

खंड

1

जिम्नोस्पर्म्स

इकाई 1
जिम्नोस्पर्म्स का परिचय 7

इकाई 2
साइकेडोप्सिडा : *साइकस* 34

इकाई 3
कोनोफेरोप्सिडा : *पाइनस* 58

इकाई 4
नीटोप्सिडा : *इफेडरा* एवं *नीटम* 84

इकाई 5
जिम्नोस्पर्म्स का आर्थिक महत्व 131

पाठ्यक्रम परिचय

पादपों की विविधता के बारे में थोड़ी बहुत जानकारी तो लगभग इतनी पुरानी है जितनी कि स्वयं मानवता। अनुभव ने प्राचीन मानव को उन पादपों के बीच में अन्तर करना सिखा दिया था जो हितकर अथवा लाभदायक थे या जो जहरीले अथवा हानिकारक थे। परीक्षणों तथा गलतियों के द्वारा उसने निश्चय ही धीरे-धीरे समझा होगा कि पौधे सिर्फ अपनी उपयोगिता से ही उन्नत या विकसित नहीं होते हैं, बल्कि सामयिक उत्पत्ति तथा वितरण में भी उन्नत होते हैं। जब मनुष्य ने इधर-उधर घूमने अथवा शिकार करने की बजाय एक ही स्थान पर उपयोगी पादपों की खेती करना सीख लिया, तब उत्तर जीविता के लिए प्रमुख फसलों तथा नए पौधों की खोज आरंभ हुई। 17वीं शताब्दी में उभरते हुए वैज्ञानिक समुदाय ने दूर-दराज की जगहों से सूखे हुए पादपों तथा बीजों तथा कभी-कभार जीवित पादपों के संग्रह में दिलचस्पी लेना शुरू किया। 18वीं शताब्दी में पादप वर्गीकरण विज्ञान की आधुनिक प्रणाली अस्तित्व में आई। 18वीं शताब्दी के अंत तथा 19वीं शताब्दी के आरंभ में पादप वितरण का ज्ञान जानकारी तथा अनुमान/कल्पनाएं विज्ञान का आकार लेने लगीं जो आज पादप विज्ञान के नाम से जाने जाते हैं। विविध पादपों के आकार एवं संरचना का ज्ञान, उनके परस्पर सम्बंध तथा प्रजनन ने, आधुनिक मानव के विकास एवं प्रगति के लिए आधार बनाया। पादप विविधता के इस पाठ्यक्रम में आप शैवाल, कवक, ब्रायोफाइट्स, टेरिडोफाइट्स, जिम्नोस्पर्म्स, (अनावृत बीजी पौधे) तथा एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी पौधों) के आकृति विज्ञान, शारीर, प्रजनन तथा जीवनचक्र के बारें में पढ़ेंगे।

आप इससे पहले ही पादप विविधता-1 पाठ्यक्रम पढ़ चुके हैं। आप कवक, शैवाल, ब्रायोफाइट्स तथा टेरिडोफाइट्स के बारे में पढ़ चुके हैं, जिन्हें अक्सर निम्न पादप कहा जाता है। अब इस पाठ्यक्रम में पादप विविधता- II में आप जिम्नोस्पर्म्स (अनावृत बीजी), एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी) तथा पादपों के आर्थिक महत्व के बारे में पढ़ेंगे।

पादपों के इस समूह में बहुत अधिक विविधता है। पादपों ने पेड़ जैसी संरचना से पूर्ण विकसित पेड़ों का आकार ले लिया है। उनके आवास, पत्ती की संरचना, फूल की संरचना, प्रजनन के तरीकों में, फलों में, उनके परिक्षेपण में तथा बीज की संरचना में विविधता है। जिम्नोस्पर्म्स (अनावृतबीजी) जिनमें विशाल एवं खूबसूरत पेड़ हैं, परन्तु उनमें नग्न बीज तथा एकल निषेचन पाया जाता हैं, वे अधिक विविधता वाले एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी) से कम विकसित हैं। जब आप जिम्नोस्पर्म्स से आरंभ करके एन्जियोस्पर्म्स तक खंडों को पढ़ेंगे तब आप शारीर, आर्थिक वनस्पति विज्ञान तथा वर्गीकरण विज्ञान जैसे विविध विषयों के बारे में भी जानेंगे जो कि दोनों वर्गों से संबद्ध हैं।

यह 4 क्रेडिट वाला पाठ्यक्रम है जिसमें 4 खंड हैं जिसमें से तीसरे खंड के दो भाग है - खंड III ए तथा III बी। इस पाठ्यक्रम में 2 क्रेडिट का प्रयोगशालीय अध्ययन भी शामिल है। इससे पादप विविधता II अथवा एल.एस.ई. 13 के 8 क्रेडिट बन जाते हैं।

पादप विविधता II

खंड I	-	जिम्नोस्पर्म्स (अनावृत बीजी)
खंड II	-	पुष्पीय पादप
खंड III ए	-	आर्थिक वनस्पति विज्ञान
खंड III बी	-	आर्थिक वनस्पति विज्ञान
खंड IV	-	एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी) के कुल

5 इकाइयों वाला खंड I पूरी तरह से जिम्नोस्पर्म्स को समर्पित है जिसमें आप *साइकस*, *पाइनस*, *इफेड्रा* तथा *नीटम* के संरचना विज्ञान, शारीर तथा जीवन चक्र का अध्ययन करेंगे। आप यह भी

पढ़ेंगे कि किस प्रकार जिम्नोस्पर्म्स (अनावृतबीजी) क्रमशः एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजीयों) के कुछ गुणों को अर्जित कर लेते हैं; परन्तु फिर भी जिम्नोस्पर्म्स के रूप में अपनी पहचान को बनाए रखते हैं। आप लकड़ी, दवाई, खाद्य पदार्थ तथा विभिन्न उद्योगों में कच्चे माल के रूप में जिम्नोस्पर्म्स के विविध उपयोगों के बारे में भी पढ़ेगें।

खंड II में 5 इकाइयाँ हैं, जो आपको एन्जियोस्पर्म्स के बारे में विस्तृत जानकारी देगीं। इसमें एन्जियोस्पर्म्स में पाये जाने वाले विभिन्न ऊतकों के बारे में भी विस्तार से बताया जायेगा। आप जड़, तने तथा पत्ती की संरचना, शारीर तथा रूपांतरों के बारे में भी पढ़ेंगे। आप पुष्प, फल तथा बीज की उत्पत्ति, विकास तथा संरचना के बारे में भी जानेंगे। एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटना परागण की भी, "परागण जीवविज्ञान" नामक एक इकाई में जानकारी दी गई है।

खंड III, जो कि दो भागों में उप-विभाजित हैं, में कुछ कृष्य पादपों के आर्थिक महत्व के बारे में बताया गया है जिन पर मानव जाति भोजन, आवास तथा कपड़े के लिए निर्भर है। खंड III ए में अनाज, मिलेट (ज्वार, बाजरा आदि) दालों, फलियों, फलों तथा दृढ़फलों/नट, वनस्पति तेलों, चीनी तथा मांड के बारे में बताया गया है, जबकि खंड III बी में मसालों, पेय पदार्थों चिकित्सीय तथा सुगन्धित पौधों एवं वन उत्पादों की जानकारी दी गई है।

खंड IV में एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री दोनों प्रकार के एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी पादपों) के कुलों की झलक प्रस्तुत की गई है तथा एक इकाई में विशेष महत्व वाले कुछ पौधों की चर्चा की गई है।

हमें उम्मीद है कि आपको यह पाठ्यक्रम दिलचस्प तथा शिक्षाप्रद लगेगा तथा यह आपको वनस्पति विज्ञान में और अधिक दिलचस्पी/रुचि विकसित करने की प्रेरणा देगा।

खंड I जिम्नोस्पर्म्स (अनावृतबीजी पादप)

पादप जगत् के लंबे विकासात्मक प्रक्रम में सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक है पहले थल या जमीनी पादपों की उत्पत्ति का। पृथ्वी पर सबसे ज्यादा और प्रभावी थल पादप, अपनी प्रकृति, अंगवर्णन तथा प्रजनन के तरीकों में असाधारण विविधता के बावजूद एक महत्वपूर्ण गुण में समान हैं : वह है संवहन तंत्र की उपस्थिति। इस शारीरीय गुण के आधार पर ही इस प्रकार के पादपों को "ट्रेकियोफाइट्स" कहा जाता है।

आप पहले ही संवहनी पादपों के एक समूह-टेरिडोफाइट्स के बारे में पढ़ चुके हैं। दूसरा समूह बीजीय पादपों का है (जिन्हें स्पर्मेटोफाइटा भी कहा जाता है)। स्पर्मेटोफाइट्स बीजांड को मिले हुए संरक्षण के आधार पर दो प्रमुख उप प्रभागों - जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स में विभाजित हैं। जिम्नोस्पर्म्स के बीजांड मुक्त रूप से नग्न होते हैं, जबकि एन्जियोस्पर्म्स में बीजांड अंडाशय में ढके रहते हैं। इकाई 1 में हमने जिम्नोस्पर्म्स की आकारिकी, शारीर तथा प्रजनन विज्ञान के प्रमुख गुणों की सामान्य जानकारी देने का प्रयास किया है। खंड I की आगे की इकाई 2, 3 तथा 4 में, हमने आपको नग्न बीजी पादपों की संरचना तथा प्रजनन में विविधता की जानकारी देने का प्रयास किया है।

इकाई I जिम्नोस्पर्म्स के सामान्य गुणों, उनके वितरण, सामान्य आकृति विज्ञान और प्रजनन तथा उनके जीवन-चक्र के बारे में है। इसके अतिरिक्त हमने विशेष महत्व वाले कुछ जिम्नोस्पर्म्स जैसे कि जीवित जीवाश्म *गिंगो (Ginkgo)* की तथा वैलविश्चिया *(Welwitschia)* जो कि विलक्षण है क्योंकि वह नामीब मरुस्थल के भयानक भूभाग में पाया जाता है, की भी चर्चा की है।

इकाई II में साइकेडोप्सिडा के बारे में बताया गया है जिसमें *साइकस* को प्रतिनिधि वंश के तौर पर लिया गया है। यह इसलिए है क्योंकि यह साइकेडेलिस के एकमात्र वंश है जो कि इस महाद्वीप में पाया जाता है।

इकाई III में *पाइनस* के बारे में बताया गया है जो कि कोनीफेरोप्सिडा का सबसे महत्वपूर्ण तथा विस्तृत वंश है। यह भारत में काफी अधिक पाया जाता है तथा यह लकड़ी एवं रेजिन/राल का भी स्त्रोत है।

इकाई IV नीटोप्सिडा के बारे में है जिसमें कायिक तथा जनन संरचनाओं में बहुत अधिक विकसित सदस्य हैं। तीन कुल इफेड्रेसी, नीटेसी तथा वैलविश्चिएसी वर्ग नीटोप्सिडा का निर्माण करते हैं। यह इकाई दो उपइकाइयों में उपविभाजित है। उपइकाई IV ए में कुल इफडरेसी का एकमात्र प्रतिनिधि वंश *इफेड्रा* है। यह वंश महत्वपूर्ण भी है तथा दिलचस्प भी यह दिखने में अन्य जिम्नोस्पर्म्स से बिल्कुल भिन्न है। उपइकाई IV बी में हमने कुल नीटेसी के एक और एकमात्र प्रतिनिधि सदस्य-*नीटम* को लिया है। यह वंश भी अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके कुछ गुण एन्जियोस्पर्म्स से मिलते हैं।

इकाई V जिम्नोस्पर्म्स एक ऐसा समूह है जोकि आर्थिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण है। इस इकाई में आप जिम्नोस्पर्म्स के लकड़ी, कागज उद्योग के लिए लुगदी, रेजिन/राल, दवाइयों तथा भोजन के लघु स्त्रोत के रूप में विभिन्न उपयोगों के बारे में पढ़ेंगें। ये अपनी सदाबहार प्रकृति तथा खूबसूरत पत्तों के कारण उद्यानविज्ञानियों की भी पंसद है।

इकाई 1 जिम्नोस्पर्म्स का परिचय

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
1.2 जिम्नोस्पर्म्स के सामान्य गुण
1.2.1 वितरण
1.2.2 आकृति विज्ञान
1.2.3 शारीर
1.2.4 प्रजनन
1.3 भ्रूणोद्भव
1.3.1 बहुभ्रूणता
1.3.2 वयस्क बीज तथा अंकुरण
1.4 जीवन चक्रों के सामान्य प्रकार के पैटर्न
1.5 जीवित जीवाश्म - *गिंगों बाइलोबा*
1.6 वंश *वैलविश्चिया*
1.7 जिम्नोस्पर्म्स का वर्गीकरण
1.8 सारांश
1.9 अंत में कुछ प्रश्न
1.10 उत्तर

1.1 प्रस्तावना

बीजीय पादप (स्पर्मेटोफाइट्स) सामान्यत: दो भागों जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स में विभाजित होते हैं। अरस्तू के शिष्य, थियोफ्रेस्टस, ने सबसे पहले जिम्नोस्पर्म शब्द का प्रयोग किया था। जैसा कि नाम से जाहिर है (जिम्नोस = नग्न, स्पर्मा = बीज), जिम्नोस्पर्म में एन्जियोस्पर्म्स के विपरीत बीजांड अनावृत होते हैं।

जिम्नोस्पर्म्स पादप जगत् का सिर्फ एक छोटा सा भाग है (लगभग 70 वंश तथा 700 से ज्यादा जातियों का)। इतने कम सदस्यों द्वारा प्रतिनिधित्व होने के बावजूद, वे पूरे विश्व में वितरित हैं, तथा बहुत से पहाड़ी क्षेत्रों में, वे वनस्पति का प्रभावी और प्रमुख भाग निर्मित करते हैं।

इस समूह का एक लंबा इतिहास है जो कम से कम 20 या 30 करोड़ वर्ष पुराना है। उनके लंबे विकासात्मक इतिहास में बहुत से ऐसे जीवों के उदाहरण हैं जो अस्तित्व में आए तथा कुछ समय के लिए फले-फूले और फिर जलवायु व स्थलाकृति में परिवर्तन तथा जीवविज्ञानी प्रतियोगिता के कारण विलुप्त हो गए। जीवित (विद्यमान) जिम्नोस्पर्म्स में से, कुछ का लंबा जीवाश्म इतिहास है तथा इसलिए उन्हें "जीवित जीवाश्म'' कहा जाता है।

जिम्नोस्पर्म्स एक समूह के रूप में काफी दिलचस्प हैं, महज इसलिए नहीं क्योंकि वे क्रिप्टोगैम्स तथा पुष्पीय पादपों (फैनेरोगैम्स) के बीच में स्थित हैं, बल्कि वन विद्या (forestry) में अपने विशेष महत्व के कारण भी वे महत्वपूर्ण हैं। पिछले पाठ्यक्रम में आपने विभिन्न " निम्न पादपों '' शैवाल से लेकर टेरिडोफाइट्स तक के बारे में पढ़ा था। पादप जगत् में पाई जाने वाली विविधता के विस्तार की पूरी तस्वीर स्पष्ट करने के लिए, जिम्नोस्पर्म्स के बारे में जानना आवश्यक है, जो इस विस्तार का छोटा परन्तु महत्वपूर्ण भाग है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- जिम्नोस्पर्म्स के वितरण का वर्णन करने में,
- उनके प्रमुख आकृति विज्ञानी गुणों को सूचीबद्ध करने में,
- उनके शारीरीय गुणों का वर्णन करने में,
- उनके प्रजनन के तरीकों को समझाने में तथा प्रारूपिक जीवन-चक्रों को चित्रों द्वारा दर्शाने में,
- कुछ जीवित जिम्नोस्पर्म्स को श्रेणीबद्ध करने,
- जिम्नोस्पर्म्स को वर्गीकृत करके उनका वर्गीकरण करने में,
- जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स में विभेद/अंतर को समझने में।

1.2 जिम्नोस्पर्म्स के सामान्य गुण

जिम्नोस्पर्म्स पादपों का ऐसा समूह है जो एन्जियोस्पर्म्स से कई मायनों में भिन्न है। वे अधिकांशत: विश्व के शीतोष्ण भागों में पाए जाते हैं तथा उनमें ज्यादातर सदाबहार पेड़ तथा झाड़ियाँ शामिल हैं जो देखने में अत्यंत आकर्षक लगते हैं। वे उद्यानविज्ञानियों तथा प्राकृतिक दृश्यों के चितेरों के लिए बहुमूल्य संपत्ति है। उनकी सदाबहार प्रकृति पूरे साल आकर्षण का केन्द्र बनाए रखती है।

बहुत से जिम्नोस्पर्म्स आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण हैं, विशेष रूप से ये वनविद्या, उद्यान विज्ञान तथा राल/रेजिन, दवाइयों, सगंध तेलों और खाद्य तेलों तक के स्त्रोत हैं। जिम्नोस्पर्म्स का आर्थिक महत्व इस पाठ्यक्रम की इकाई 5 में बताया गया है।

बीजीय पादप (स्पर्मेटोफाइट्स, जिनमें जिम्नोस्पर्म्स एवं एन्जियोस्पर्म्स दोनों ही शामिल हैं) बहुत ही जटिल, दीर्घ, स्वतंत्र बीजाणुउद्‌भिदी पीढ़ी तथा बहुत ही लघुयुग्मकोद्‌भिदी पीढ़ी जो कि बीजाणुउद्‌भिदी पीढ़ी पर निर्भर होती है, द्वारा पहचाने जाते हैं। परन्तु पहले हम जिम्नोस्पर्म्स एवं एन्जियोस्पर्म्स के कुछ प्रमुख गुणों का अध्ययन करेंगे जिससे कि आप उनमें अन्तर करने में समर्थ हो सकें।

जिम्नोस्पर्म्स के गुण :

1. पादप बीजाणुउद्‌भिद होते हैं, जिनमें वास्तविक जड़ें, तने तथा पत्तियां होती हैं।
2. बीजाणुउद्‌भिद सुदीर्घ, बहुवर्षीय तथा सक्रिय कैम्बियम/एधा वाले होते हैं जो द्वितीयक दारू उत्पन्न करते हैं जिनमें अधिकांशत वाहिकाएं नहीं होती हैं।
3. बीजाणुधानियाँ बीजाणुपर्ण पर उगती हैं और दोनों मिलकर शंकु का निर्माण करते हैं।
4. सभी विषम बीजाणु बनाते हैं तथा दो प्रकार के बीजाणु, नर तथा मादा युग्मकोद्‌भिद बनाते हैं।
5. वास्तविक बीज (एकल दीर्घबीजाणु दीर्घबीजाणुधानी के अंदर स्थित रहता है, जो कि बाद में एक अध्यावरण द्वारा ढक जाता है) किशोर बीजाणुउद्‌भिद् (भ्रूण) अपेक्षाकृत बड़े बीजाणुउद्‌भिद के अंदर रहता है।
6. युग्मकोद्‌भिद छोटा व निर्भर होता है।
7. परागनलिका बनती हैं, परागण हवा अथवा कीटों के द्वारा होता है।
8. बीजांड तथा बीज नग्न होते हैं (अनावरित)।
9. स्त्रीधानी ग्रीवा, अंडधा नाल कोशिका (वी.सी.सी. VCC) /वी.सी.एन. (VCN) तथा अंड सहित होती है।
10. एकल निषेचन यानि कि निषेचन में एक शुक्राणु से संलग्न होता है।

11. प्राक्भ्रूण मुक्त केन्द्रकीय होता है.
12. भ्रूणपोष अगुणित होता है।

एन्जियोस्पर्म्स (पुष्पीय पादपों) के प्रमुख गुण

1. लघुबीजाणुधानियां लघुबीजाणुपर्णों (परागकोश तथा तंतु क्रमशः) पर उगकर पुंधानी का निर्माण करती हैं।
2. दीर्घबीजाणुधानी (बीजांड) एक अथवा अधिक अंडपी बीजाणुपर्ण से पहचानी जाती है जो अंडाशय का निर्माण करती है। अंडाशय वर्तिका तथा अंतस्थ वर्तिकाग्र के साथ मिलकर स्त्रीधानी (स्त्रीकेसर) बनाता है।
3. परागण तथा द्विनिषेचन के बाद भ्रूणपोष त्रिगुणित हो जाता है। बीजांड बीज के अंदर अंडाशय भित्ति के भीतर विकसित होते हैं, इसके फलस्वरूप फल का निर्माण होता है।
4. दारू/जाइलम में वाहिकाएं उपस्थित होती हैं। द्वितीयक दारू छिद्रित काष्ठ/लकड़ी बनाता है (कुछ अपवाद भी हैं)।

बॉक्स 1.1 : जीवित जीवाश्म

गिंगोफाइटा तथा साइकैडोफाइटा के जीवित प्रतिनिधि सदस्य **जीवित जीवाश्म** कहलाते हैं। *गिंगो बाइलोबा* इस समूह का एकमात्र जीवित सदस्य है तथा यह जंगली अवस्था में दक्षिण-पूर्वी चीन के कुछ पहाड़ी भागों में ही पाया जाता है। साइकैड्स भी भूतकाल के अवशेष हैं तथा उष्णकटिबंधी और उपोष्ण क्षेत्रों के कुछ भागों में सीमित हैं। साइकैडोफाइट्स (साइकैडिओइएड तथा साइकैड) जुरासिक काल (भूवैज्ञानिक समय मापक्रम के) में बहुतायत में थे तथा इसी काल में डायनोसॉर भी फलेफूले थे। इसीलिए साइकैड्स **''पादप जगत् के डायनोसॉर''** भी कहलाते हैं।

बोध प्रश्न 1

जिम्नोस्पर्म्स को आप किस प्रकार परिभाषित करेंगे ? किस प्रकार आप उन्हें एन्जियोस्पर्म्स से विभेदित करेंगे (कोई 5 कारण बताइए)।

....

....

....

....

बोध प्रश्न 2

कोष्ठ अ को कोष्ठ ब से मिलाकर वाक्यों को पूरा कीजिए।

	कोष्ठ अ		कोष्ठ ब
1.	जिम्नोस्पर्म्स जिनमें वाहिकाएं होती हैं	अ.	अगुणित भ्रूणपोष
2.	जिम्नोस्पर्म्स के बीज	ब.	कोनीफर/शंकुवृक्ष
3.	जिम्नोस्पर्म्स में एकल निषेचन होता है तथा ये बनाता है	स.	*नीटम*
4.	वर्तमान में जिम्नोस्पर्म्स का सबसे बड़ा समूह जो पूरे विश्व में वितरित हैं	द.	खुले तथा अनावरित होते हैं।

बोध प्रश्न 3

एन्जियोस्पर्म्स तथा जिम्नोस्पर्म्स में तीन मुख्य विभेदों को बताइए।

....

....

....

....

1.2.1 वितरण

जिम्नोस्पर्म्स विश्व के लगभग सभी भागों में पाये जाते हैं। विद्यमान साइकैडेलीस तथा गिंगोएलीस बहुत ही प्राचीन हैं तथा उनका लंबा जीवाश्म इतिहास है। इस कारण से तथा कुछ अन्य गुणों की वजह से, इन्हें "जीवित जीवाश्म" कहा जाता है। हालांकि इन गणों/ऑर्डर का पहले अच्छा प्रतिनिधित्व था, परन्तु वर्तमान में साइकैडस सिर्फ 11 वंशों द्वारा तथा गिंगोएलीस सिर्फ एक जाति *गिंगो बाइलोबा* द्वारा जाने जाते हैं। वे अब उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में ही पाये जाते हैं। वे पृथ्वी पर वनस्पति का प्रमुख भाग नहीं बनाते हैं।

कोनिफर्स/शंकुवृक्ष (कोनिफरेलिस) जिम्नोस्पर्म्स का सबसे उत्कृष्ट तथा बड़ा समूह हैं तथा इनमें बहुत से आर्थिक महत्व के पादप पाए जाते हैं। कोनिफर्स के 50 से भी अधिक वंश पाये जाते हैं तथा ये विश्व के लगभग सभी भागों में वितरित हैं। एरोकेरिएसी (Araucariaceae) तथा पोडोकार्पेसी (Podocarpaceae) कुल मुख्यतः दक्षिणी गोलार्ध में पाए जाते हैं। टैक्सोडिएसी (Taxodiaceae) तथा क्यूप्रिसेसी (Cupressaceae) उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्ध दोनों में ही पाए जाते हैं। टैक्सेसी (Taxaceae) (जिन्हें किसी समय में वास्तविक कोनिफर नहीं माना जाता था, क्योंकि उनका प्रजनन आकृति विज्ञान भिन्न होता है) मुख्यतः उत्तरी अमरीका, यूरोप तथा एशिया में पाया जाता है।

गण/ऑर्डर इफिड्रेलीस(Ephedrales) /नीटेलीस (Netales) तथा वेलविश्चिएलीस (Welwitschiales) एकरूपी हैं, तथा क्रमशः वंश *इफेड्रा*, *नीटम* तथा *वेलविश्चिया* द्वारा पहचाने जाते हैं। ये पौधे सिर्फ सीमित वितरण ही नहीं दर्शाते हैं बल्कि अपने आकृति विज्ञान तथा प्रजनन में भी बहुत से दिलचस्प गुणों को प्रदर्शित करते हैं। *इफेड्रा* सिर्फ शुष्क क्षेत्रों में तथा उष्णकटिबंधी एवं शीतोष्ण एशिया तथा अमरीका में ही पाया जाता है। *नीटम* अफ्रीका, एशिया तथा दक्षिण अमरीका उष्णकटिबंधी वर्षा वनों में उगता है। *वेलविश्चिया* दक्षिण पश्चिम अफ्रीका तक ही सीमित है। भारतीय उपमहाद्वीप से जिम्नोस्पर्म्स के लगभग 20 वंश रिपोर्ट किए गए हैं। इनमें से 14 वंश प्राकृत/मूलवासी हैं। इनमें *एबीज (Abies)*, *सिड्रस (Cedrus)*, *लैरिक्स (Larix)*, *पाइनस (Pinus)*, *पाइसिया (Picea)*, *सूगा (Tsuga)*, *सिफेलोटैक्सस (Cephalotaxus)*, *क्यूप्रेसस (Cupressus)*, *जूनीपेरस (Juniperus)*, *पोडोकार्पस (Podocarpus)* तथा *टैक्सस (Taxus)* नामक कोनीफर्स सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त, *साइकस*, *इफेड्रा* तथा *नीटम* भी वन्य अवस्था में पाए जाते हैं।

बाहर से पुनः स्थापित किए गए, कुछ वंश, भी भारत के पहाड़ी तथा मैदानी इलाकों में भली प्रकार स्थापित हो गए हैं। इनमें *गिंगो (Ginkgo)*, *बायोटा (Biota)*, *थूजा (Thuja)*, *क्रिप्टोमेरिया (Cryptomeria)*, *ऐगैथिस (Agathis)*, *ऐरोकेरिया (Araucaria)*, *कनिंघमिया (Cunninghamia)*, तथा *टैक्सोडियम (Taxodium)* सम्मिलित हैं।

1.2.2 आकृति विज्ञान

जिम्नोस्पर्म्स में बड़े पेड़ तथा काष्ठीय झाड़ियाँ दोनों पाए जाते हैं। कुछ कठलता अथवा आरोही लता *(नीटम)* अथवा प्रकंदी *(स्टेनजीरिया पैराडोक्सा, इन्सफैलार्टोस विलोसस, मैक्रोजेमिया)* भी हो सकते हैं। अधिकांश जिम्नोस्पर्म्स सदाबहार हैं, कुछ जैसे कि *लैरिक्स* तथा *टैक्सोडियम* पतझड़ी हैं। बहुत से पादपों में मरुद्भिदी गुण भी पाये जाते हैं।

पादप जगत में सबसे लंबे वृक्ष जिम्नोस्पर्म्स में है। कैलीफोर्निया में जीवित रक्तदारू पादपों की दो जातियाँ अपने आमाप, लंबाई तथा दीर्घजीविता के लिए मशहूर हैं। *सिकुआ सेम्पर्वाइरेंस* (तटीय अथवा कैलीफोर्निया रक्तदारू) के लिए 90 मीटर (295 फुट) की लंबाई असामान्य नहीं है तथा हंबोल्ड काउण्टी, कैलीफोर्निया में 111.6 मीटर (366.2 फुट) लंबाई वाला एक वृक्ष विश्व का सबसे लंबा वृक्ष माना जाता है। एक अन्य जाति *सिकुआडेन्ड्रोन जाइगेन्शियम* जिन्हें आमतौर पर "विशाल वृक्ष" अथवा विशाल रक्तदारू कहा जाता है (तथा जो कैलीफोर्निया के पूर्वी ढलानों पर ही सीमित हैं) वे उतने लंबे नहीं हो पाते हैं जितने कि तटीय रक्तदारू पादप होते हैं परन्तु ये उनसे कुल आमाप में अधिक होते हैं। उदाहरण के लिए, सिकुआ राष्ट्रीय उद्यान में "जनरल शेरमेन" वृक्ष की परिधि 31 मीटर (101.5 फुट), लंबाई 83 मीटर तथा अनुमानित वजन 5,5,94 मीट्रिक टन (6167 टन) है। वृक्ष 3,500 वर्षों से भी अधिक प्राचीन है। कैलीफोर्निया में उगने वाला "पाइन अल्फा" शूकशंकु पाइन (*पाइनस लोंगेइवा*) का 4,300 वर्ष पुराना नमूना है।

सबसे छोटा रिकॉर्ड किया गया जिम्नोस्पर्म्स साइकैड, *जैमिया पिगमेइआ, (Zamia Pygmaea)* है जो महज 3 से 4 से. मी. लंबा होता है।

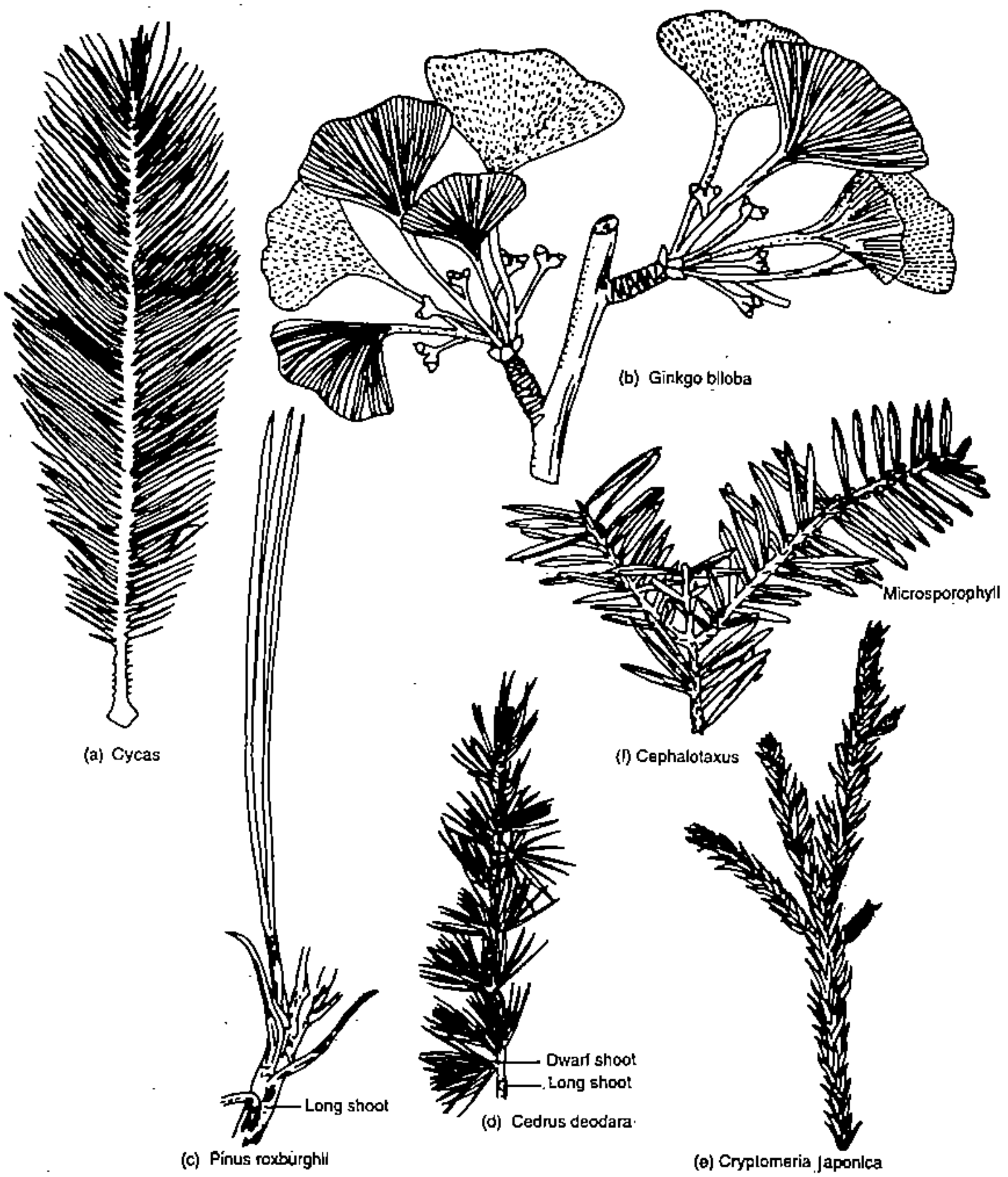

चित्र 1.1 : जिम्नोस्पर्म्स में पर्णआकारिकी में विविधताएं (नोट कीजिए ये एक ही स्केल पर नहीं बनाए गए हैं)

जड़, तने तथा पत्ती का आकृति विज्ञान

जड़ : जिम्नोस्पर्म्स में मूसला जड़ तंत्र पाया जाता है। कुछ वंश जैसे कि *साइकस* में प्रवाल मूल भी विकसित हो जाते हैं जबकि *पाइनस* तथा अन्य कोनिफर्स में कवकमूली जड़ें पाई जाती हैं। ये दोनों ही सहजीवी सहचर्य हैं (क्रमश: नील हरित शैवाल तथा कवक के साथ) जो कि पादप के पोषण में मदद करते हैं। कवकमूल में कवक का कवकजाल/माइसीलियम एक आवरण बनाता है जिसे 'हार्टिंग नेट' कहते हैं। आप इनके बारे में इकाई 2 तथा इकाई 3 में विस्तार से पढ़ेंगे।

तना : वायवीय तने शाखित (जैसे कि अधिकांश पादपों में) अथवा अशाखित होते हैं जैसे कि साइकैड्स में। प्ररोह द्विरूपी भी हो सकते हैं। जिनमें लंबे तथा बौने प्ररोह होते हैं, बौने/छोटे प्ररोह/तनों में वृद्धि सीमित होती है जैसे *पाइनस* तथा *गिंगो* में लंबे प्ररोह तथा छोटे प्ररोह होते हैं। बौने/छोटे प्ररोह में पत्तियाँ उनके शीर्ष पर होती हैं तथा *पाइनस* में ये संपूर्ण संरचना शुंडिका प्ररोह (spur) कहलाती है।

पत्तियां : पत्तियां प्रकार तथा विन्यास में बहुत अधिक विविधता दर्शाती हैं। पत्तियां लंबी (गुरूपर्ण) अथवा छोटी (लघुपर्ण) हो सकती हैं। सामान्य तथा संयुक्त पर्ण दोनों पाई जाती हैं : आकृति भी साइकेड्स में पिच्छाकार अथवा फर्न जैसी से लेकर *पाइनस* में सुई जैसी होती है। *गिंगों* की पत्तियां पंखाकार होती हैं तथा *नीटम* की सतही तौर पर द्विबीजपत्रियों से मिलती जुलती हैं। *वैलविश्चिया* में ये फीताकार होती है तथा पूरे जीवनकाल में रहती हैं। जिम्नोस्पर्म्स में सामान्य पत्र सामान्यत: सदाबहार होते हैं तथा मोटी क्यूटीकिल द्वारा संरक्षित होते हैं। सामान्य पत्रों के अतिरिक्त, शल्क पत्र भी उपस्थित हो सकते हैं।

तने पर पत्तियों का विन्यास बहुत अधिक विविध होता है। वे आमतौर पर सर्पिलाकर रूप में व्यवस्थित रहती है परन्तु चक्करदार भी हो सकती है जैसे कि *सिड्रस* में अथवा विपरीत क्रॉसित (decussate) जैसे क्यूप्रेससी तथा *नीटम* में होती है।

शिराविन्यास भी अधिकांश वंशों में एकशिरीय से लेकर जालिकावृत *(नीटम)*, समानान्तर (*एगेथिस* और *वैलविश्चिया*) तथा द्विभांजी *(गिंगो)* भी हो सकता है। *टैक्सस* के अतिरिक्त सभी कोनीफर्स में रेजिन नाल उपस्थित होती है। रंध्र सामान्यत: धँसे हुए होते हैं (अधिकांश जिम्नोस्पर्म्स मरुद्भिदीय गुण दर्शाते हैं), जोकि पत्ती की दोनों सतहों पर अथवा सिर्फ निचली सतह पर उपस्थित होते हैं।

बोध प्रश्न 4

कोष्ठ अ को कोष्ठ ब में दिए गए शब्दों/नामों से मिलाइए।

	कोष्ठ अ		कोष्ठ ब
1.	सिर्फ दो पत्तियां उगती हैं	अ.	*जैमिआ पिग्मेइ*
2.	पत्तियां पंखाकर होती हैं	ब.	*सिड्रस*
3.	कवकमूली जड़ें उपस्थित होती हैं	स.	लगभग सभी कोनिफर्स/शंकुवृक्ष
4.	सबसे छोटा जिम्नोस्पर्म	द.	*वैलविश्चिया*
5.	पत्तियां सतही तौर पर द्विबीजपत्री से मिलती जुलती हैं	क.	*टैक्सस*
6.	सुई जैसी पत्तियां चक्करदार रूप में व्यवस्थित होती हैं	ख.	*सिकोआ*
7.	सबसे लंबा वृक्ष	ग.	*गिंगो*
8.	रेजिन नलिकाएं अनुपस्थित होती हैं	घ.	*नीटम*

1.2.3 शारीर

किशोर (प्राथमिक) तने में खुले, बहि:पोषवाही/फ्लोएमी, मध्यादिदारूक पूल एक वलय में पाए जाते हैं। कैम्बियम की गतिविधि के कारण द्वितीयक वृद्धि होती है। अधिकांश पादपों में काष्ठ वाहिकाओं की अनुपस्थिति के कारण पहचानी जाती है (*नीटम, इफेड्रा* तथा *वैलविश्चिया* अपवाद हैं)। काष्ठ में वाहिनिकाएं तथा मृदूतक होते हैं, दारू तंतु अनुपस्थित होते हैं तथा इसीलिए इसे मृदुकाष्ठ तथा इसके विपरीत द्विबीजपत्री काष्ठ को दृढ़काष्ठ कहते हैं। दो प्रकार के काष्ठ होते हैं जिनके नाम विरल दारूक तथा धनदारूक हैं (बाक्स देखिए)। पोषवाही/फ्लोएम में सहचर कोशिकाए नहीं पाई जाती हैं तथा उनकी बजाय एल्बूमिनी कोशिकाएं पाई जाती हैं।

जड़ों में दारू द्वि-से बहु आदिदारूक होता है। वाहिनिकाएं दारू का अधिकांश भाग बनाती हैं। जिम्नोस्पर्म की पत्ती के शारीर का एक महत्वपूर्ण लक्षण संचरण ऊतक है।

बॉक्स 1.2 : विरलदारूक तथा धनदारूक काष्ठ

काष्ठ में उपस्थित मृदूतक की मात्रा तथा मज्जा के आकार के अनुसार दो प्रकार की लकड़ियां/काष्ठ पाये जाते हैं : विरलदारूक तथा धनदारूक। धनदारूक काष्ठ सघन होता है उसमें संकीर्ण दारू किरणें होती हैं तथा छोटा वल्कुट और मज्जा होती है। इसके विपरीत, विरलदारूक काष्ठ में दारू कम तथा मृदूतक चौड़ी पट्टियों में होता है तथा मज्जा और वल्कुट बड़े होते हैं। धनदारूक काष्ठ तने का मुख्य भाग बनाता है, अत: इस प्रकार का काष्ठ औद्योगिक रूप से महत्वपूर्ण होता है। विरलदारूक काष्ठ औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं है। एक अन्य पहलू भी है : विरलदारूक काष्ठ उन प्रकारों में पाया जाता है जिनमें दीर्घपर्ण तथा त्रिज्यत: सममित बीज होते हैं (त्रिज्यबीजी) जैसे कि साइकैड्स, धनदारूक काष्ठ लघुपर्णी पत्तियों तथा द्विपार्श्व सममित बीजों (चिपिटाबीजी) से संबद्ध है। उदाहरणत: कोनिफर्स

1.2.4 प्रजनन

जिम्नोस्पर्म्स में कायिक प्रजनन दुर्लभ है, परंतु साइकैड्स पत्रप्रकलिका/बलबिल के द्वारा प्रवर्धन करते हैं। आप पत्रप्रकलिका के बारे में इस खंड की इकाई 2 में पढ़ेंगें। जहाँ *साइकस* के बारे में विस्तार से बताया गया है।

लैंगिक प्रजनन

जिम्नोस्पर्म्स विषमबीजाणुक होते हैं जिनमें दो तरह के बीजाणु भिन्न-भिन्न बीजाणु धारण करने वाली संरचनाओं में उत्पन्न होते हैं (दीर्घबीजाणुधानी या बीजांड तथा लघुबीजाणुधानी या परागकोष)। विस्तार के लिए चित्र (1.2 तथा 1.3) देखिए। जिम्नोस्पर्म्स उभयलिंगाश्रयी (*पाइनस, सिड्रस*) अथवा एकलिंगाश्रयी (*साइकस, इफेड्रा, गिंगो*) हो सकते हैं तथा *साइकस* (मादा पादप) के अतिरिक्त सभी में नर या मादा शंकु धारण किए रहते हैं। नर शंकु का आमाप 1 मि.मी. (*जैमिया पिग्मेइ*) से लेकर 60 से.मी. (*इन्सिफेलार्टोस कौफर*) तक हो सकता है। पादप पर शंकु की स्थिति शीर्ष से पार्श्व तक भिन्न हो सकती है। *साइकस* में दीर्घपर्ण सामान्य पत्रों के उत्तरोत्तर किरीटों के बीच में शिथिल रूप से व्यवस्थित रहते हैं। मादा शंकुओं की व्यवस्था में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है जिसके बारे में आप इस खंड की आगे आने वाली इकाइयों में पढ़ेगें। लघुबीजाणुधानियाँ लघुबीजाणुपर्णों की अपाक्ष अथवा निचली सतह पर उगतीं है। बीजांड सामान्यत: दीर्घबीजाणुपर्णों या बीजांडधर शल्क की अभ्यक्ष अथवा ऊपरी सतह पर उगते हैं। बीजांड सामान्यत: ऋजु (orthotropous) होता है। बीजाणु मातृ कोशिका बीजाणुधानी के अंदर ही अर्धसूत्री विभाजन करके क्रमश: लघुबीजाणु तथा दीर्घबीजाणु बनाती है जो अगुणित अथवा युग्मकोद्भिदी पीढ़ी की प्रथम कोशिका होती है। लघुबीजाणुधानी में असंख्य लघुबीजाणु होते हैं जबकि दीर्घबीजाणुधानी में सिर्फ एक दीर्घबीजाणु होता है। युग्मकोद्भिद अंत:बीजाणुक (endosporic) होते हैं यानि कि वे अपनी बीजाणुभित्तियों के भीतर विकसित होते हैं।

लघुबीजाणु लघुयुग्मकोद्भिद (परागकण) बनाते हैं जो नर युग्मकों (शुक्राणुओं) को उत्पन्न करते हैं। दीर्घबीजाणु दीर्घयुग्मकोद्भिद (मादा युग्मकोद्भिद) में विकसित होता हैं, जो स्त्रीधानी को धारण करता है जिसमें मादा युग्मक (अंड) होता है।

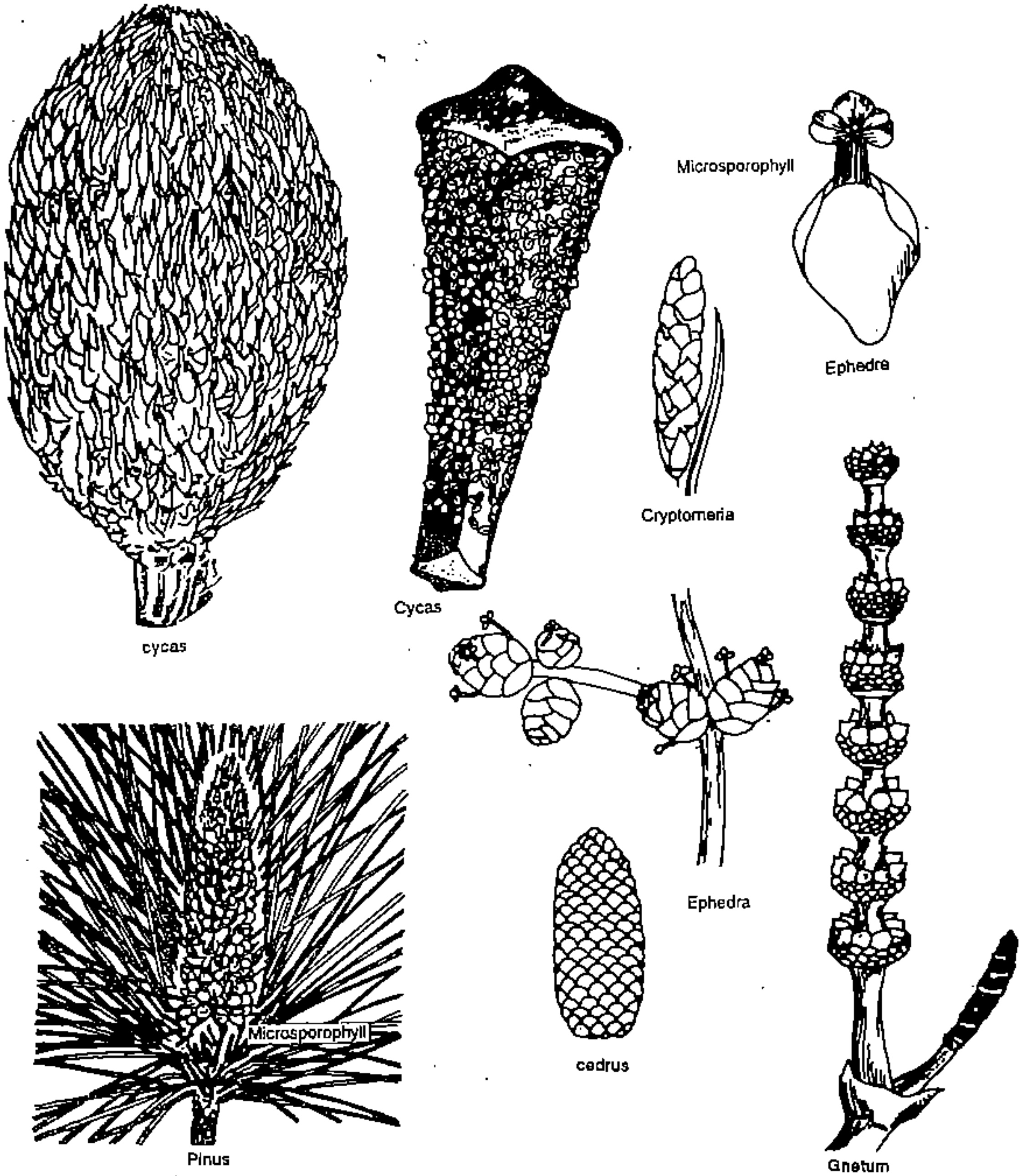

चित्र 1.2 : जिम्नोस्पर्म्स में विभिन्न प्रकार की नर प्रजनन संरचनाएं (सारे चित्र एक ही पैमाने पर नहीं बनाये गये हैं)

लघु बीजाणुधानी तथा नर युग्मकोद्भिद्

लघुबीजाणुधानियां लघुबीजाणुपर्णो की अपाक्ष सतह पर उगती हैं। लघुबीजाणुधानी का विकास इस प्रकार होता है। आरंभक प्रप्रसूतक बनाता है जो भित्ति सतहों तथा बीजाणुजन कोशिकाओं का निर्माण करता है। बीजाणुजन कोशिकाएं लघुबीजाणु मातृकोशिकाओं को जन्म देती है जो समसूत्री रूप से विभाजित होकर लघुबीजाणुओं के चतुष्टक बनाती है। लघुबीजाणु नर युग्मकोद्भिद की प्रथम कोशिका है। ये आमतौर पर विभाजित होकर एक या अधिक प्रोथेलियल कोशिकाओं तथा पुंधानी आरंभक का निर्माण करता है। पुंधानी आरंभक अंततः नर युग्मक का निर्माण करता है।

नर युग्मक का विकास अंतः बीजाणुक होने के कारण अंशतः लघुबीजाणुधानी में तथा अंशतः बीजांड के पराग कक्ष में होता है।

नरयुग्मक के विकास को सारांश रूप में नीचे दिया गया है:

प्रत्येक चरण कोशिका का विभाजन दर्शाता है

- लघुबीजाणु
  - केन्द्रीय कोशिका
    - पुंधानी आरंभक
      - पुंधानी कोशिका
        - पुमणुजन (देह) कोशिका
          - नर युग्मक
          - नरयुग्मक
        - बंध्य कोशिका
      - नलिका कोशिका
    - प्रोथेलियल कोशिका
  - प्रोथेलियल कोशिका

प्रोथेलियल कोशिकाओं की संख्या, नर युग्मक के आमाप तथा चालन एवं उनके निर्माण तथा स्खलन के समय आदि में भिन्नता होती है।

नर कोशिकाएं क्यूप्रेससी, टैक्सोडिएसी, ऐरोकेरिएसी तथा नीटेसी में बनाती हैं जबकि *इफ़ेड्रा, सिफ़ैलोटैक्सस* तथा पाइनेसी में केन्द्रक बनते हैं। *साइकस* तथा *गिंगो* में नर युग्मक सचल (पुमणु) होते हैं तथा यह गुण निम्न संवहनी पादपों (टेरिडोफाइटा) की विशेषता है। इन दो पादपों में पराग-नलिका पुमणुओं की वाहक नहीं होती है बल्कि बीजांडकाय में घुसकर महज एक चूषकांग की भांति व्यवहार करती हैं। *गिंगो* में सचल कोशिका को खोज 1896 में हीरासे (Hirase) ने की थी।

झड़ने के समय, परागकण आमतौर पर बहुकोशिकीय होते हैं तथा एक, दो या अधिक प्रोथेलियल कोशिकाएं, नली केन्द्रक तथा पुंधानी कोशिका लिए रहते हैं। क्यूप्रेसेसी, टैक्सोडिएसी, सिफेलोटैक्सेसी तथा टैक्सेसी में, परागकण एक-केन्द्रकी अवस्था में झड़ जाते हैं तथा युग्मकोद्भिद का विकास परागण के बाद जारी रहता है।

परागकण सपक्ष (पंख) (*पाइनस, पोडोकार्पस*) या पक्षहीन (*साइकस, गिंगो*) होते हैं। या तो नर युग्मक में प्रोथेलियल कोशिका अनुपस्थिति होती है (*टैक्सोडियम, सिफ़ैलोटैक्सस*) अथवा इनकी संख्या एक (*साइकस*) से लेकर 32 (*ऐगेथिस, ऐरोकेरिया*) तक हो सकती है। नर युग्मक कशाभयुक्त (*साइकस गिंगो*) या कशाभहीन (*पाइनस, सिड्रस*) होते हैं।

बीजांड तथा मादा युग्मकोद्भिद
(Ovule and female gametophyte)

जैसा कि आप जानते हैं बीजांड नग्न होते हैं (यानि कि वे दीर्घबीजाणुपर्ण या कक्षांतरकारी संरचना द्वारा ढके नहीं होते हैं) तथा दीर्घबीजाणुपर्णों की अपाक्ष सतह पर उगते हैं जो, केन्द्रीय शंकु अक्ष के चारों ओर सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित होते हैं। बीजांड अवृंत्ती तथा ऋजु होते हैं तथा प्रत्येक कोशिकाओं के मृदूतकी पिंड का बना होता है जिसे बीजांडकाय **(nucellus)** या दीर्घबीजाणुधानी **(megasporanguim)** कहते हैं। बीजांडकाय एकल वृहत् अध्यावरण द्वारा ढका रहता है जो उसके चारों ओर शीर्ष पर एक छोटा सा छिद्र छोड़ते हुए बढ़ता जाता है, इस छिद्र को बीजांडद्वार **(micropyle)** कहते हैं। अध्यावरण में लिपटी हुई दीर्घबीजाणुधानी को बीजांड कहते हैं। बीजांडकाय में एक एकल द्विगुणित दीर्घबीजाणु कोशिका पाई जाती है जो अर्धसूत्री रूप से विभाजित होकर अगुणित **दीर्घबीजाणुओं** का चतुष्टक बनाती है जिसमें से सिर्फ एक क्रियाशील रहता है तथा अन्य तीन अपभृष्ट हो जाते हैं। **क्रियाशील दीर्घबीजाणु (functional megaspore)** जो आमतौर पर निभागी दीर्घबीजाणु होता है, बड़ा हो जाता है तथा **मुक्त केन्द्रीय विभाजन** करता है। इस प्रकार किशोर युग्मकोद्भिद

दीर्घबीजाणु के अंदर ही विकसित होता है। अभिकेन्द्री भित्ति निर्माण (भित्ति निर्माण परिधि से आरंभ होकर भीतर की ओर बढ़ती है)। मादा युग्मकोद्भिद के मुक्त केन्द्रकों के चारों ओर आरंभ हो जाता है (कूपिका निर्माण इकाई 3 देखिए) और तब तक होता रहता है जब तक संपूर्ण युग्मकोद्भिद कोशिकीय नहीं हो जाता है। यह मादा युग्मकोद्भिद है। जिम्नोस्पर्म्स के बीजांड में अध्यावरण तीन परतों का बना होता है। आप इसके बारे में अधिक विस्तार से बाद में इस खंड की *साइकस* तथा *पाइनस* पर इकाइयों में पढ़ेगें।

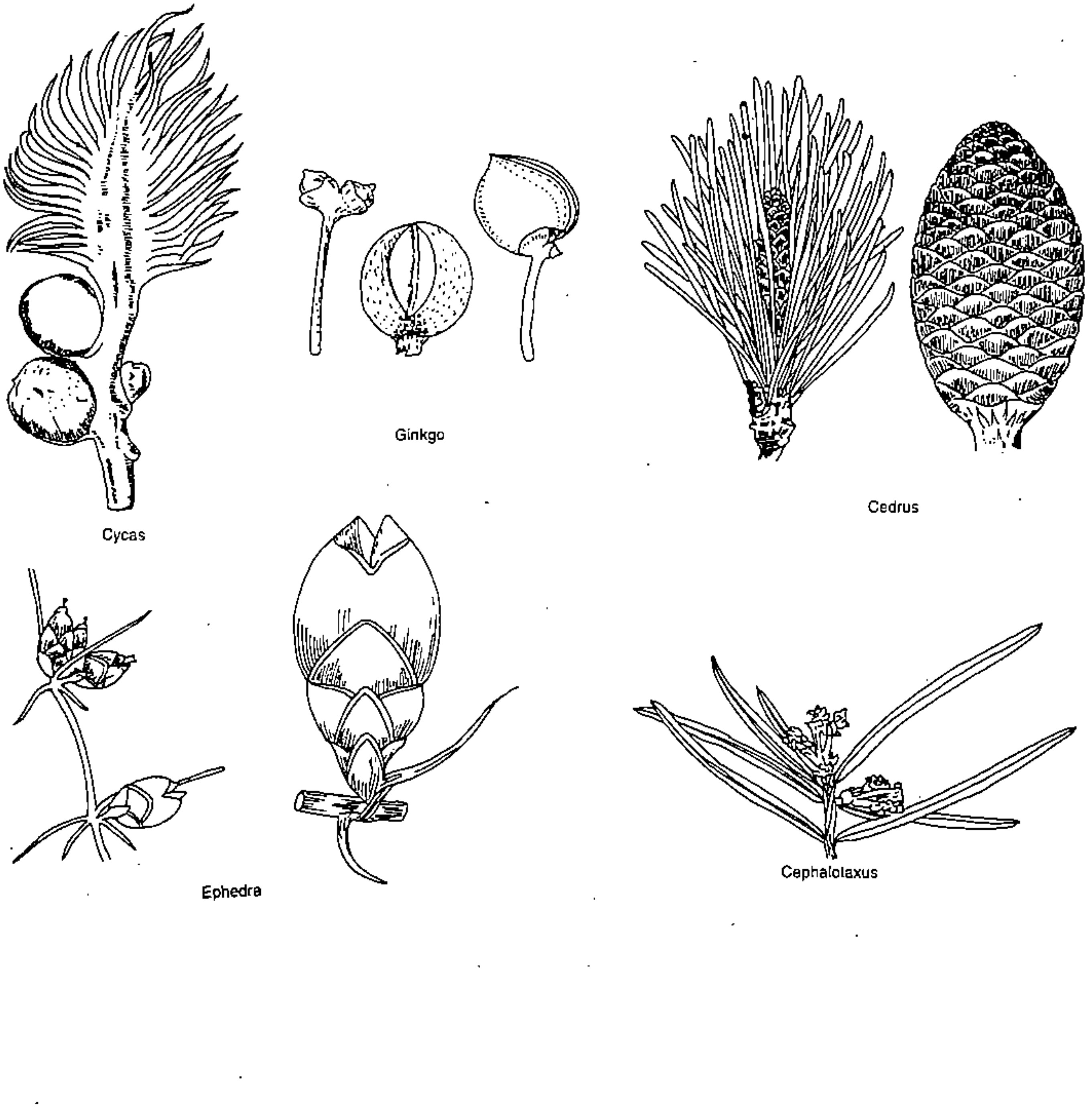

चित्र 1.3 : जिम्नोस्पर्म्स में विभिन्न प्रकार की मादा प्रजनन सरंचनाएं।

बीजांडकाय का शीर्ष भाग परागकक्ष (pollen chamber) बनाने के लिए अपभ्रष्ट हो जाता है जिसमें परागकण आ जाते हैं तथा आगे वृद्धि होने तक रहते हैं। मादा लैंगिक अंग या स्त्रीधानी

(archegonia) मादा युग्मकोद्भिद के बीजांडद्वार वाले सिरे की ओर विकसित होती है। स्त्रीधानी अकेली अथवा स्त्रीधानी पुंजों (**archegonial complex**) के रूप में पाई जाती है। स्त्रीधानी बड़ी तथा लंबी होती है तथा उनमें ग्रीवा नाल कोशिकाएं नहीं पाई जाती हैं। *नीटम* तथा *वैलविश्चिया* में विशेषत: स्त्रीधानी, अंड केन्द्र नहीं पाई जाती तथा अंड केन्द्रक लिए हुए प्रोथेलियल नलिकाएं होती हैं।

परागण तथा निषेचन

परागकण बीजांड की ओर ले जाए जाते हैं तथा इसके बाद निषेचन होता है। नर युग्म अंड की ओर पराग नलिका के द्वारा पहुँचाए जाते हैं। दो अगुणित युग्मकों (नर तथा मादा) के मध्य संयुग्मन (या निषेचन) 2n के गुणक स्तर को पुन: स्थापित कर देता है। नया बीजाणुउद्भिद् पहले युग्मनज/जाइगोट द्वारा पहचाना जाता है तथा बाद में यह भ्रूण में विकसित होता है। इस प्रकार चक्र पूरा होता है। इनमें स्पष्ट पीढ़ियों का एकांतरण पाया जाता है।

जिम्नोस्पर्म्स में परागण सामान्यत: वायु द्वारा होता है तथा परागकणों का बहुत अधिक संख्या में उत्पन्न होना परागण को सुनिश्चित कर देता है। अधिकांश कोनिफर्स/शंकुवृक्षों में पक्षित परागकण होते हैं तथा पंख परागकणों को बीजांड तक पहुँचने में मदद करते हैं। चीड़ के वृक्षों में, जब नर शंकु स्फुटित होता है, तो आसपास का क्षेत्र पीले परागकणों से भर जाता है तथा यह घटना "सल्फर/गंधक शॉवर'' कहलाती है। *साइकस, इफेड्रा, नीटम* तथा *वैलविश्चिया* में कीट परागण रिपोर्ट किया गया है।

परागण बूंद बीजांड द्वारा बीजांडद्वार के शीर्ष पर स्त्रावित किया जाता है तथा यह वायु द्वारा लाए गए परागकणों को पकड़ लेता है। आंशिक रूप से विकसित नर युग्मकोद्भिद बीजांड द्वारा परागण बिंदु के सूखने से अंदर की ओर खींच लिए जाते हैं। नि:स्त्राव सिर्फ परागकण ही नहीं प्राप्त करता है। बल्कि उन्हें बीजांडकाय के समीप भी ले जाता है। परागकण अब पराग कक्ष में अथवा बीजांडकाय पर स्त्रीधानी के काफी निकट आ जाते हैं।

जिम्नोस्पर्म्स में परागण के तत्काल बाद ही निषेचन होना जरूरी नहीं है : कभी-कभी दोनों घटनाओं के बीच में लंबा अंतराल भी हो जाता है। इस मध्यवर्ती प्रावस्था के दौरान (जो सुषुप्तावस्था कहलाती है) बीजांड में बहुत से परिवर्तन होते हैं और वह निषेचन के लिए तैयार हो जाता है। बीजांडद्वार बंद हो जाता है तथा बीजांड आकार में बढ़ जाता है। परागकण बीजांडकाय पर पहुँचकर या तो तत्काल अंकुरित हो जाते हैं अथवा सुषुप्तावस्था के बाद होते हैं। परागनलिका मादा युग्मकोद्भिद तक पहुँच जाती है तथा अंतत: स्त्रीधानी की ग्रीवा से संपर्क बना लेती है।

कुछ जिम्नोस्पर्म्स में, बीजांडकाय के शीर्ष बिन्दु पर एक सुस्पष्ट गर्त बन जाता है। यह परागकक्ष परागकणों को ग्रहण करता है। वर्तमान में यह सिर्फ साइकैड्स, *गिंगो* तथा *इफेड्रा* में पाया जाता है।

बॉक्स 1.3 : नालयुग्मनी तथा जीवकयुग्मनी पादप

शब्द "नालयुग्मनी'' (Siphonogamous) सामूहिक रूप से उन पादपों के लिए प्रयोग किया जाता है जिनमें पुमणु अंड तक सीधे ही परागनलिकाओं द्वारा ले जाए जाते हैं। इसके विपरीत निम्न संवहनी पादपों को जीवकयुग्मनी (Zooidogamous) कहा जाता है क्योंकि इनमें सचल कशाभी पुमणु पुंधानी में से मुक्त रूप से जल में निर्मुक्त कर दिए जाते हैं जिनमें से उन्हें अंड तक पहुँचने तथा निषेचन करने के लिए निश्चित रूप से कुछ दूर तैरना पड़ता है (अक्सर काफी दूरी तक के लिए)। जीवकयुग्मनी से नालयुग्मनी में रूपांतरण के विकासात्मक चरण निश्चय ही स्पष्ट हैं, परन्तु पुमणुओं को ले जाने वाली परागनलिकाओं का विकास जो उच्च जिम्नोस्पर्म्स तथा सभी एन्जियोस्पर्म्स की विशेषता है। वह निश्चय ही महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। पराग नलिका के बनने से जलीय जीवकयुग्मनी विधि के संभावित खतरे तथा नुकसान खत्म हो गए तथा निषेचन की अधिक निश्चितता संभव हो सकी। जीवित जिम्नोस्पर्म्स में से, साइकैड्स तथा *गिंगो* में पुराने तरीके की परागनलिका दिखाई पड़ती है जो प्राथमिक तौर पर चूषकांग का कार्य करती है। इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण लगता है कि ये ही एकमात्र ज्ञात जीवित बीजीय पादप हैं जिनमें कशाभी प्रकार के पुमणु पाए जाते हैं। (Gifford 1989)

परागकण कमोबेश नलिकाकार उद्वर्ध/बहि:वृद्धि, परागनलिका उत्पन्न करते हैं। *साइकस* तथा *गिंगो* में परागनली मुख्य रूप से चूषकांग की भांति कार्य करती है। यह काफी महीनों के लिए बीजांडकायिक ऊतक में वृद्धि करती है तथा भोजन अवशोषित करके उसे नलिका के निचले सिरे पर विकासशील परागकणों को पहुँचाती है। यह नर युग्मकों को स्त्रीधानी कक्ष में पहुँचाने में भी मदद करती है। निषेचन के दौरान परागनलिका का आधारीय भाग फट जाता है तथा बहुकशाभी पुमणुओं तथा कुछ द्रव को कोटर में छोड़ती है। पुमणु स्त्रीधानी की ग्रीवा की ओर तैरते हैं, वहां कशाभ को अलग करके स्त्रीधानी में प्रवेश करता है, नर केन्द्रक अंड के साथ मिलकर युग्मनज बनाता है।

कोनिफर्स/शंकुवृक्षों में परागनलियां सिर्फ पुमणु वाहकों का कार्य करती हैं। नर युग्मक नली तथा वृंत केन्द्र के साथ परागनली के शीर्ष बिन्दु पर पहुँच जाते हैं, जो बीजांडकाय के द्वारा वृद्धि करते हैं। परागनली स्त्रीधानी की ग्रीवा पर पहुंचकर, उसे भेद कर फाड़ देती है और नर युग्मक को मुक्त कर देती है, जिनमें से एक निषेचन करता है।

वैलविश्चिया में मादा युग्मकोद्भिद नलिकाकार दीर्घण निकालते हैं जो परागनलियों के शीर्ष बिन्दु से मिल जाते हैं। उनके बीच की भित्ति घुल जाती है तथा निषेचन हो जाता है। *वैलविश्चिया* तथा *नीटम* में स्त्रीधानी नहीं होती है।

जिम्नोस्पर्म्स में द्विनिषेचन नहीं पाया जाता है। *इफेडरा* तथा *नीटम* ही अपवाद हैं, पर उनमें भी भ्रूणपोष अगुणित होता है।

बोध प्रश्न 5

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1. बड़े पैमाने पर चीड़ के परागकणों के झड़ने को ·········· कहते हैं जिससे पूरा क्षेत्र ढक जाता है।
2. हवा में पाये जाने वाले परागकण बीजांड द्वारा स्त्रावित होने वाले ·········· द्वारा पकड़ लिए जाते हैं।
3. *साइकस* तथा *गिंगो* में परागनलिका मुख्यत: ·········· की तरह व्यवहार करती है।

बोध प्रश्न 6

नर युग्मकोद्भिद के विकास को सिर्फ आरेख द्वारा समझाइए।

बोध प्रश्न 7

जिम्नोस्पर्म्स में मादा युग्मकोद्भिद का निर्माण।

....

....

....

....

....

1.3 भ्रूणोद्भव (Embryogeny)

जिम्नोस्पर्म्स में प्राक्यभ्रूणोद्भव में काफी भिन्नता पाई जाती है। जिम्नोस्पर्म्स में (*सिकोआ* तथा *वैलविश्चिया* के अतिरिक्त) भ्रूण विकास की आरंभिक प्रावस्था मुक्त केन्द्रकी है। *पाइनस* में सिर्फ आठ मुक्त केन्द्रक होते हैं; साइकैड्स में 256 या 572 मुक्त केन्द्रक तक बन सकते हैं। बाद में भित्ति निर्माण आरंभ होता है तथा कोशिकीय भ्रूण बनता है। यह (वयस्क होने पर) निलंबक, मूलांकुर, बीजपत्राधर, प्रांकुर तथा बीजपत्रों में विभेदित हो जाता है। भ्रूण का प्ररोही सिरा बीजांडद्वार से दूर होता है, अतः भ्रूणोद्भव अन्तर्मुखी होता है।

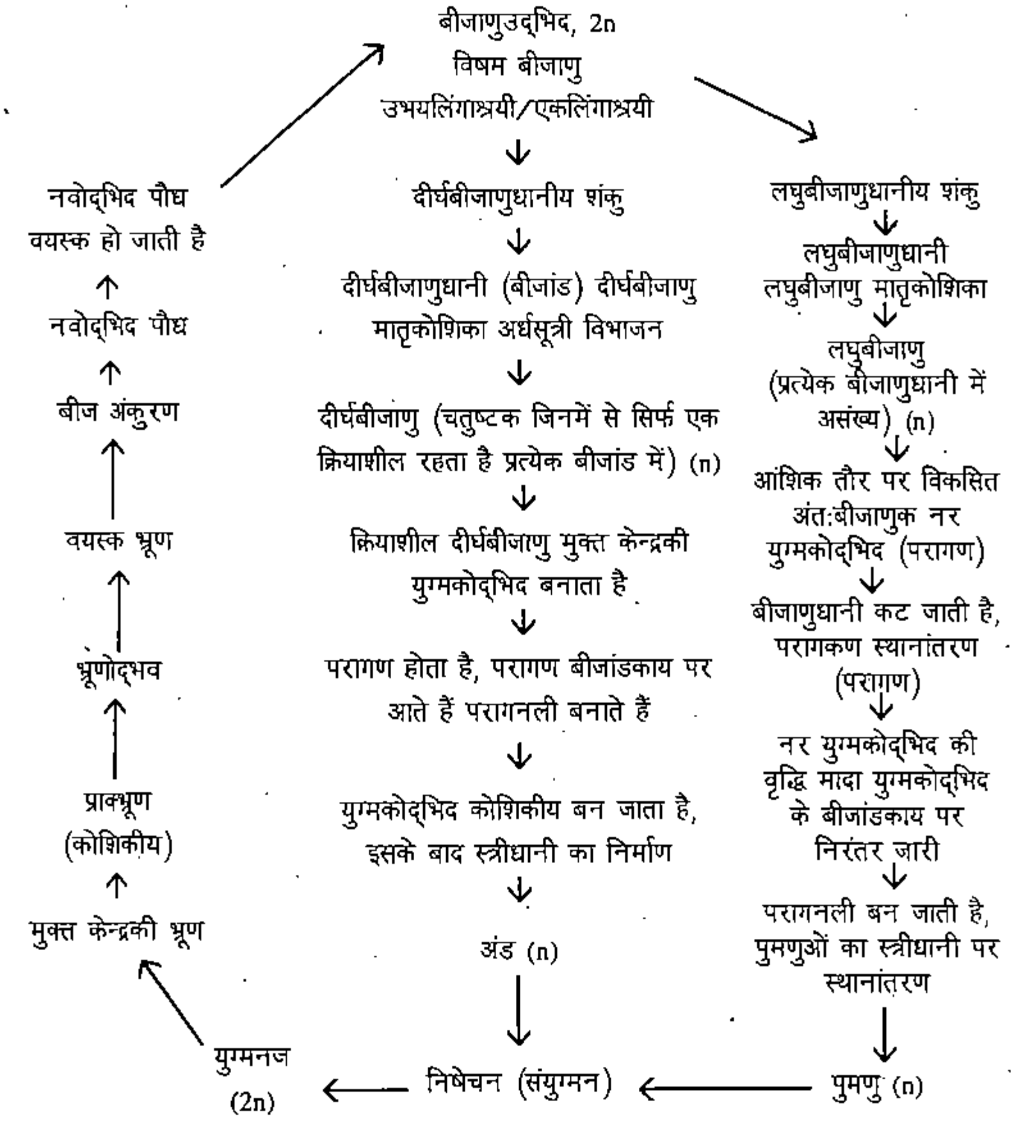

1.3.1 बहुभ्रूणता

एक ही युग्मकोद्भिद में बहुत से भ्रूणों का बनना जिम्नोस्पर्म्स में सामान्य है। साधारण या स्त्रीधानीय बहुभ्रूणता काफी अधिक पाई जाती है क्योंकि एक से अधिक स्त्रीधानियां निषेचित हो सकती हैं। कोनिफर्स /शंकु वृक्षों में *विदलन बहुभ्रूणता* (Cleavage polyembryony) पाई जाती है। इसमें तरुण प्राक्भ्रूण की चारों कोशिकाएं अलग हो जाती हैं तथा प्रत्येक भ्रूण में विकसित हो जाती है। शरीरक्रियात्मक प्रतिस्पर्धा में एक को छोड़कर सभी भ्रूण नष्ट हो जाते हैं और वह भ्रूण वयस्क हो जाता है।

1.3.2 वयस्क बीज तथा अंकुरण

बीज का बनना निषेचन तथा उसके बाद बीजांड के बड़े होने के परिणामस्वरूप होता है। युग्मनज भ्रूण में विकसित होता है, तथा भ्रूणपोष दीर्घस्थायी/अपाती मादा युग्मकोद्भिद से बनता है (जो पोषण प्रदान करता है)। बीजांडकाय अव्यवस्थित हो जाता है तथा बीज के बीजांडद्वार के सिरे पर एक बारीक टोपी की तरह दिखाई पड़ता है। अध्यावरण बीजावरण बनाता है। बीज दो बीजाणुद्भिद तथा एक युग्मकोद्भिद पीढ़ी का अनोखा संयोजन है।

i) बीजावरण पुराना बीजाणुद्भिद है

ii) भ्रूण नया बीजाणुद्भिद है

iii) भ्रूणपोष दीर्घस्थायी मादा युग्मकोद्भिद हैं।

बीजपत्रों की संख्या दो से लेकर अनेक तक हो सकती है। जिम्नोस्पर्म्स के अलग हो गए बीज सुषुप्तावस्था में बने रहते हैं तथा एक लंबे विश्रांति काल में रहते हैं। अनुकूल परिस्थितियों के आने पर भ्रूण की पुनः वृद्धि होने लगती है तथा कड़े बीजावरण को भेदकर एक नए पौधे के रूप में विकसित हो जाता है। अधिकांश वंशों में अंकुरण भुम्युपरिक (epigeal) होता है यानि कि बीजपत्र भूमि के ऊपर आ जाते हैं।

साइकस तथा *गिंगो* में बीज में सुषुप्तावस्था नहीं होती है, वे उचित आधार पर गिरने के तत्काल बाद अंकुरित हो जाते हैं अथवा उनकी जीवन क्षमता खत्म हो जाती है।

बोध प्रश्न 8

कोष्ठक में लिखिए कि दिए गए वक्तव्य सत्य हैं या असत्य। सत्य वक्तव्य के लिए स तथा असत्य के लिए अ लिखिए।

i) जिम्नोस्पर्म्स विषमबीजाणुक होते हैं यानि कि दो तरह के बीजाणु बनाते हैं। [ ]

ii) जिम्नोस्पर्म्स में नर तथा मादा बीजाणु एक ही शंकु में उत्पन्न होते हैं। [ ]

iii) जिम्नोस्पर्म्स में दोनों युग्मकोद्भिद क्रमशः अपनी बीजाणुभित्ति के अंदर विकसित होते हैं। [ ]

iv) *साइकस* का बीजांड पादप जगत में सबसे बड़ा है। [ ]

v) *साइकस* में परागनलियां पुमणुओं की वाहक हैं। [ ]

vi) जिम्नोस्पर्म्स में दीर्घबीजाणु द्विगुणित होते हैं जबकि लघुबीजाणु अगुणित होते हैं। [ ]

बोध प्रश्न 9

जिम्नोस्पर्म्स में बहुभ्रूणता पर संक्षिप्त लेख लिखिए।

....

....

....

....

बोध प्रश्न 10

सभी आधुनिक जिम्नोस्पर्म्स के कौन से गुण प्राचीन प्रकारों से मिलते हैं ?

....

....

....

....

1.4 जीवन चक्रों के सामान्य प्रकार / पैटर्न

जिम्नोस्पर्म्स में प्रजनन प्रावस्थाएं लंबे कालखंड में फैली हुई हैं। इस पहलू पर जानकारी वनविद्यार्थियों तथा पादप प्रजनन करने वालों के लिए महत्वपूर्ण हैं। चूंकि बहुत से जिम्नोस्पर्म्स शीतोष्ण क्षेत्रों में पाए जाते हैं। उनकी क्रियाशीलता सर्दियों में धीमी हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप, न सिर्फ कैम्बियम की क्रियाशीलता रुक जाती है, बल्कि प्रजनन संरचनाओं का विकास भी सीमित हो जाता है, तथा यह क्रिया बसन्त ऋतु में फिर आरंभ हो जाती है।

प्रजनन चक्र की अवधि

अधिकांश शीतोष्ण तथा उपोष्ण कोनिफर्स/शंकुवृक्षों के नर शंकु शुरूआत से लेकर झड़ने (परागण) तक में एक वर्ष से कम समय लेते हैं। एन्जियोस्पर्म्स के विपरीत, जिनमें बीजांड की शुरूआत तथा बीज के व्यस्क होने में समय अंतराल कम होता है (कुछ सप्ताह), जिम्नोस्पर्म्स में यही प्रक्रिया काफी अधिक समय ले सकती है। एकमात्र अपवाद *इफेड्रा* का प्रतीत होता है जिसमें यह प्रक्रिया लगभग 3-4 महीने में पूरी हो जाती है। अधिकांश अन्य जिम्नोस्पर्म्स 1-, 2-, या 3- वर्ष प्रकार का जीवनचक्र प्रदर्शित करते हैं। वर्षों की गणना बीजांड द्वारा गुजारे गए शीत विश्राम तथा उसके बाद बसन्त में पुनः वृद्धि के आधार पर होती है। वंश की अधिकांश जातियां समान प्रकार का प्रजनन-चक्र प्रदर्शित करती हैं, परन्तु कुछ अपवाद भी पाए जाते हैं (*पोडोकार्पस, जूनीपेरस* तथा *पाइनस*)।

साइकैड्स चक्रों की इस प्रकार की योजना में आसानी से सही नहीं बैठते हैं आंशिक तौर पर उनके बारे में व्यापक जानकारी के अभाव में तथा अधिक महत्वपूर्ण रूप से क्योंकि उनमें से अधिकांश उष्णकटिबंधी अथवा उपोष्ण क्षेत्रों में होते हैं, और इसलिए वे शीत विश्राम नहीं करते हैं।

वर्ष के समय के अनुसार कुछ चिन्हों का प्रयोग करते हुए जिम्नोस्पर्म्स के जीवन-चक्र को एक सुविधाजनक तरीके से नीचे दिए गए चित्र में प्रदर्शित किया गया है। यही चिन्ह आगे के सभी आरेखों में भी उपयोग किए गए हैं। अंक वर्ष के महीनों को प्रदर्शित करते हैं। वर्ष के मौसमों को भी सूचित किया गया है क्योंकि ये उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में भिन्न होते हैं।

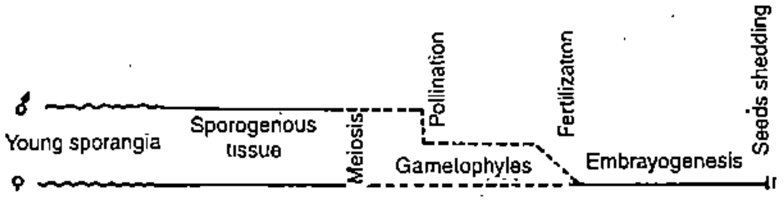

चित्र 1.4 : जिम्नोस्पर्म्स के प्रजनन चक्र में प्रमुख घटनाऐं। अवस्थाओं को विभिन्न प्रकार की रेखाओं द्वारा प्रदर्शित किया गया है (लहरदार, सीधी, खंडित तथा समानान्तर)। ये रेखाएं इस अध्याय में आगे के चार जीवनचक्रों के आरेखों में भी प्रयोग की गई हैं। (सिंह1978)।

सामान्य प्रकार का एक-वर्षीय चक्र जिसमें नर शंकु का बनना ग्रीष्म काल में तथा मादा शंकु का शरद काल में, शिशिरातिजीवन बीजाणुजन अवस्थाओं में, परागण बसन्त के दौरान, निषेचन ग्रीष्मकाल में तथा दूसरे शिशिर काल के आने से पहले बीज वयस्क हो जाता है।

एक वर्ष प्रकार का प्रजनन-चक्र। *सिड्रस देवदारा* के प्रजनन चक्र में जब कि वह पश्चिमी हिमालय में पाया जाता है। परागण शरदकाल में होता है तथा युग्मकोद्भिदों का विकास भी उसी समय होता है। (चित्र 1.5 a)।

एक वर्ष प्रकार का प्रजनन-चक्र। *नीटम उला* के जीवन चक्र में क्योंकि वह पश्चिमी घाटों पर पाया जाता है। इसमें भ्रूणोद्भव ग्रीष्म काल में बीजों के झड़ने के बाद भी जारी रहता है। (चित्र 1.5 b)।

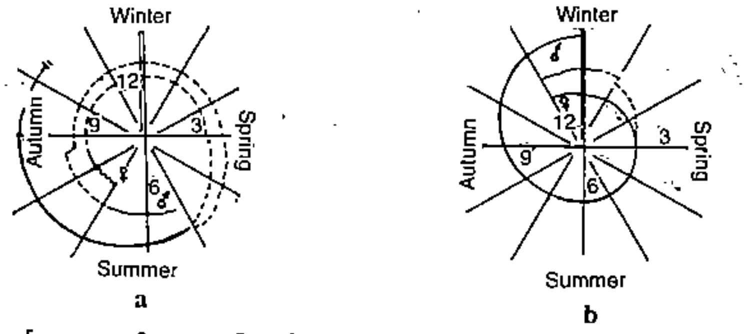

चित्र 1.5 : एक वर्ष प्रकार का जीवन-चक्र *सिड्रस देवदार* a) तथा b) *नीटम उला* द्वारा प्रदर्शित जैसे वे क्रमश: पश्चिमी हिमालय तथा पश्चिमी घाटों पर पाए जाते हैं। अंक वर्ष के महीनों को प्रदर्शित करते हैं। *सिड्रस* में परागण तथा युग्मकोद्भिदों का विकास शरत ऋतु में होता है। *नीटम* में बीज ग्रीष्मकाल में गिर जाते हैं परन्तु भ्रूणोद्भव जारी रहता है। (सिंह, 1978)

दो वर्ष प्रकार के प्रजनन चक्र

इस प्रकार का प्रजनन चक्र *गिंगो बाइलोबा* में पाया जाता है जिसमें परागण पहले वर्ष के बसन्त में तथा निषेचन उसी वर्ष की शरद् ऋतु के आरंभ में होता है परन्तु भ्रूणोद्भव काफी लंबे समय तक चलता है तथा बीजों के झड़ने के बाद भी जारी रहता है।

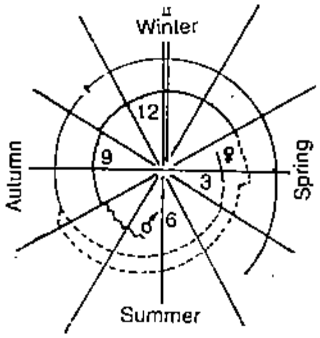

चित्र 1.6 : *गिंगो वाइलोवा* में दो वर्ष प्रकार का जीवन चक्र।

तीन वर्ष प्रकार का प्रजनन-चक्र

पाइनस रौक्सबरघाई (Pinus roxburghii) में बीजांड पहले वर्ष की बसन्त ऋतु में परागित होते हैं तथा निषेचित तीसरे वर्ष की बसन्त ऋतु में होते हैं। अत: दो वर्ष का समय व्यर्थ होता है। बीजों का झड़ना शरद ऋतु में होता है।

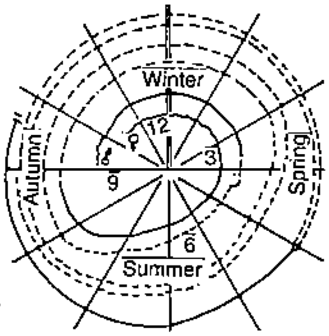

चित्र 1.7 : *पाइनस रोक्सवरघाई* में तीन-वर्ष प्रकार का जीवन-चक्र।

साइकैड्स में प्रजनन चक्र

साइकस सर्सीनेलिस (Cycas circinalis) दक्षिण भारत में पाया जाता है। *साइकस* पहले वर्ष के शीतकाल में परागण करता हैं, निषेचन दूसरे वर्ष के ग्रीष्म काल में यानि कि पाँच महीने बाद करता है, तथा बीज का झड़ना तीसरे वर्ष के ग्रीष्मकाल में होता है तथा भ्रूणोद्भव बीजों के झड़ने के बाद भी जारी रहता है।

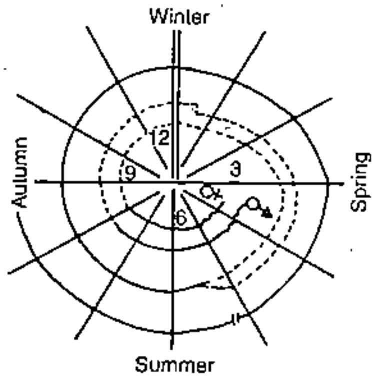

चित्र 1.8 : *साइकस सर्सीनेलिस* में तीन-वर्ष प्रकार का जीवन-चक्र।

1.5 जीवित जीवाश्म - *गिंगो बाइलोबा*

कुछ जीवित (विद्यमान) जिम्नोस्पर्म्स का बहुत प्राचीन जीवाश्म इतिहास है तथा इस कारण तथा कुछ अन्य गुणों के कारण, उन्हें अक्सर "जीवित जीवाश्म" कहा जाता है।

मेटासिकुआ ग्लिप्टोस्ट्रोबोइडीज (Metasequoia glyptostroboides) ऐसा उदाहरण है जिसमें वंश को पहले जीवाश्म रिकार्ड्स में उत्तरी अमरीका तथा एशिया के विभिन्न भागों से रिपोर्ट किया गया था तथा बाद में चीनी वनस्पति विज्ञानी द्वारा सिचुअन (szechuan) प्रांत से जीवित खोज लिया गया।

सागूताड़ (*साइकस*) तथा मेडेनहेयर वृक्ष (*गिंगो बाइलोबा*) जीवित जीवाश्म हैं, तथा *गिंगो बाइलोबा* बीजीय पादपों का सबसे पुराना जीवित वंश भी हो सकता है। *गिंगो* जैसे पादप के जीवाश्म जुरासिक कल्प के संस्तरों से विश्व भर में पाये गए हैं। इनका अपक्षय मध्यजीवी कल्प में आरंभ हो गया था तथा वर्तमान में चीन ही इस वृक्ष का एकमात्र प्राकृतिक घर है। यह संदेहास्पद ही है कि यह वंश वन्य अवस्था में भी पाया जाता है। यह व्यापक रूप से बगीचों तथा वीथियों के वृक्ष के रूप में विश्व के बहुत से शीतोष्ण भागों में उगाया जाता है। यह पादप एकलिंगाश्रयी है तथा दोनों लिंगों में तरुण अवस्था में

अंतर करना संभव नहीं है। बीजों से एक गंध निकलती है जो सड़े हुए मक्खन जैसी होती है तथा इसीलिए मादा पादपों को बिल्कुल पसंद नहीं किया जाता है। बीज की गुठली जापान तथा चीन में भोजन के रूप में प्रयोग की जाती है। यह चीनी औषधि में हृदय तथा फेफड़ों के टॉनिक तथा अन्य रोगों जैसे अस्थमा, एल्ज़ीमर रोग (Alzheimer's) तथा परिसंचरण की खराबियों के इलाज में प्रयोग की जाती है।

बॉक्स 1.4 : मेडेनहेयर वृक्ष

> *गिंगो* शब्द की उत्पत्ति चीनी शब्दों से हुई है जिनका अर्थ है "रजत खुबानी" इसे खाँचदार, चौड़ी, पंखाकार पत्तियों की मेडेनहेयर फर्न के वैयक्तिक पिच्छकों से समानता के कारण मेडेनहेयर वृक्ष भी कहा जाता है।
>
> इसके वृक्ष चीन और जापान में मंदिरों के निकट काफी संख्या में उगते हुए पाए जाते हैं तथा यह संभव है कि पुजारियों ने इनके विस्तार तथा इन्हें जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हो।

गिंगो के वृक्ष पिरैमिडी प्रकार के तथा पंखाकर पर्णपाती पत्तियों वाले होते हैं। पत्तियाँ *एडिएन्टम (Adiantum)* (मेडेनहेयर फर्न) की पत्तियों से मिलती हैं तथा इस कारण *गिंगो* को मेडेनहेयर वृक्ष (चित्र 1.9a) का नाम दिया गया है।

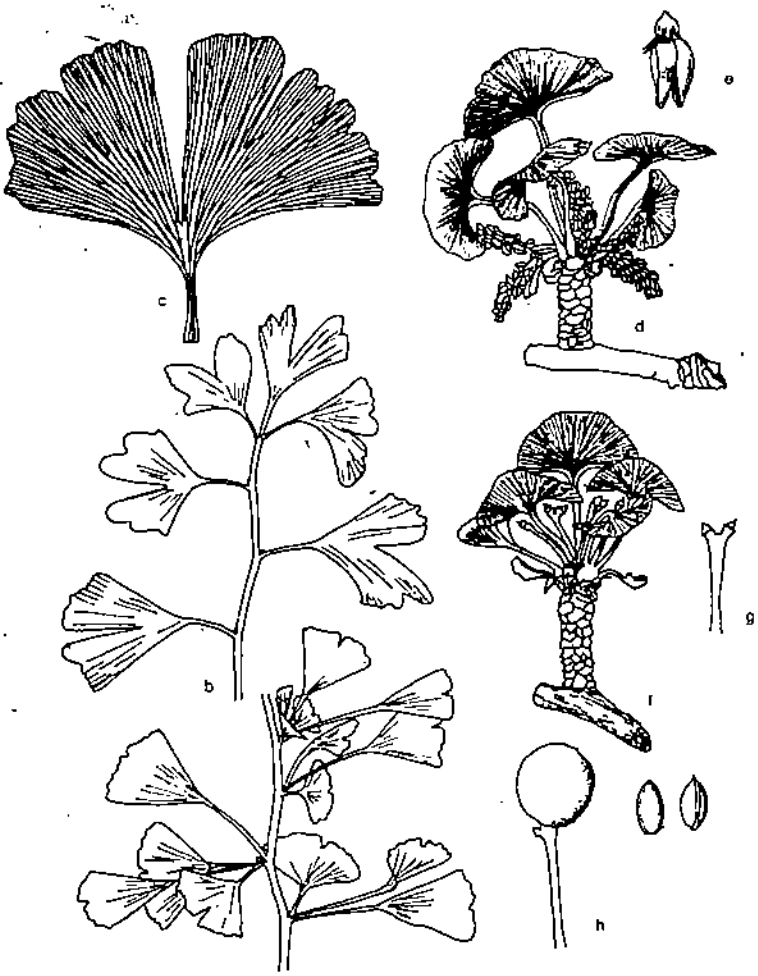

चित्र 1.9a : गिंगोएसी, *गिंगो बाइलोबा* a) बौना प्ररोह b) लंबा प्ररोह c) पत्ती d) मादा पुष्पों के साथ बौना प्ररोह e) लघुबीजाणुपर्ण f) मादा "पुष्पों" के साथ बौना प्ररोह g) वृंतीय बीजांड h) बीज i) गूदेदार अध्यावरण के हटने के बाद का बीज (a-c डी विट से 1964 d और f बोल्ड आदि से 1980; c) लॉरेन्स से 1951, g-i वास्तविक Götz)

पौधों में द्विरूपता पाई जाती है यानि इसमें दो प्रकार के प्ररोह पाये जाते हैं (i) लंबे प्ररोह जिसमें अनिश्चित लंबाई बढ़ सकती है ii) छोटे प्ररोह या दलपुट (spur) प्ररोह समूह जिसमें निश्चित सीमा तक लम्बाई बढ़ती है और जिसके शीर्ष पर पत्तियाँ समूह में होती हैं। पत्तियाँ फनाकार या पंखाकार तथा साफतौर पर बंटी हुई होती है और शिराविन्यास संलक्ष्य द्विभाजनी (dichotomous) है। पत्तियों का रंग पतझड़ में गिरने से पहले सुनहरे पीले रंग में बदल जाता है। *गिंगों* के जननांग को आदि या आदिम माना गया है। *गिंगों* एकलिंगाश्रयी है। नरशंकु, पत्ती के कक्ष में स्पर प्ररोह पर पाये जाते हैं। प्रत्येक शंकु एक ढीले आकार की संरचना है जो एन्जियोस्पर्म के पुष्पक्रम से मिलती जुलती है। बीजांडी शंकु भी दलपुट (Spur) प्ररोह पत्ती के कक्ष में पाये जाते हैं। इसमें एक छोटा सा वृंत होता है। जिसका शीर्ष दो भागों में बंटा होता है। प्रत्येक भाग पर सीधा अवृन्त बीजांड होता है। जिसके निचले भाग में एक कॉलर (Collar) की तरह संरचना होती है।

परागनलिका चूषकांग की तरह कार्य करती है और बीजांडकाय तक फैली रहती है। नरयुग्मकोद्भिद् का विकास पूरा हो जाने के बाद ये स्त्रीधानी (Archegonium) तक पहुँचते हैं जहाँ निषेचन होता है। हिरसे द्वारा 1896 में इस पौधे में सबसे पहले गतिशील शुक्राणु का पता चला था।

गिंगों में एक और जानने योग्य बात है। भ्रूणोद्भव का विकास जो निषेचन के बाद शुरू होकर बीज के अंकुरण के पहले तक होता रहता है। बीज पेड़ से विकास के आरम्भिक दौर में ही अलग हो जाता है और भ्रूण का विकास जमीन पर ही होता है। बीज निषेचन से पहले ही गिर जाते हैं (परागण के बाद) और भ्रूण के परिपक्व होने के लिए सात महीने लगते हैं और बीज अंकुरण के लिए तैयार हो जाता है।

1.6 वंश *वैलविश्चिया*

सबसे विलक्षण तथा भौगोलिक दृष्टि से सीमित जिम्नोस्पर्म अफ्रीकन वंश *वैलविश्चिया* है। जिसमें सिर्फ एक जाति पाई जाती है। *वैलविश्चिया मिराविलिस*। विशेषण "मिराविलिस" इस दृष्टि से काफी सही है क्योंकि वयस्क में आश्चर्यजनक रूप से एक छोटी डिस्क या काष्ठीय किरीट होता है। जिस पर सिर्फ दो विशाल फीताकार पत्तियां होती हैं तथा जीवन भर यही पत्तियाँ रहती हैं।

पादप नामीब मरूस्थल में, दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका तथा अंगोला में उन क्षेत्रों में पाए जाते हैं जहाँ वर्षा बहुत कम होती है। वंश का नाम डा० फ्रेडरिक वैलविश के नाम पर रखा गया है जिन्होंने इसे 1860 में खोजा था।

वैलविश्चिया का अनुमानित जीवन-काल 400–1500 वर्ष है। चूंकि पादप बहुत अधिक शुष्कता वाले क्षेत्रों में उगते हैं (वर्षा 0-100 मि.मी. प्रतिवर्ष), वे रात्रिकालीन कोहरे अथवा ओस पर निर्भर करते हैं। वयस्क पादप विशाल शलगम या गाजर के समान दिखता है जिसके शीर्षभाग का व्यास एक मीटर या अधिक होता है। पत्तियों के ऊपर तने का भाग किरीट होता है। किरीट तथा जड़ के बीच का भाग स्कन्ध होता है। परित्वक (periderms) परिकला संपूर्ण पादप को ढके रहती है। *वैलविश्चिया* का कायिक अंगवर्णन संवहनी पादपों में विशिष्ट है। प्ररोह का शीर्ष अपना विभज्योतकी क्रिया खो देता है तथा विकास की आरंभिक अवस्था में ही अपभ्रष्ट हो जाता है। दो अल्पजीवी बीजपत्र नवोद्भिद पौध की अवस्था के दौरान उत्पन्न होते हैं जो ½ से 1½ वर्ष तक प्रकाश संश्लेषणी रूप से सक्रिय रहते हैं तथा स्थायी प्रकाश संश्लेषणी अंग सिर्फ एक जोड़ी फीताकार पत्तियों द्वारा प्रदर्शित होते हैं। ये चिरस्थायी पत्तियां अनिश्चित रूप से आधारीय विभज्योतक द्वारा बढ़ती रहती हैं। वयस्क पत्ती 3 मी की लंबाई तथा 1 मी. चौड़ाई तक की हो जाती है : इनमें असंख्य समानान्तर शिराएं दिखाई पड़ती हैं तथा पत्तियां सिरों पर फीतों या कतरनों में कट जाती हैं। *वैलविश्चिया* में सी.ए.एम. (CAM) प्रकाश संश्लेषण का पाया जाना रिपोर्ट किया गया है। दो शल्क जैसी पत्तियां प्ररोह शीर्ष को जकड़े रहती हैं।

पादप एकलिंगाश्रयी होते हैं तथा नर तथा मादा शंकु ("पुष्पक्रम") दोनों अंतस्थ रूप से शाखित वृंतों पर उगते हैं।

वैलविश्चिया को चिरस्थायी नवोद्भिद कहा जाता है। इसे कभी-कभी "अपंग पादप" भी कहा जाता है जिसने वास्तव में अपना सिर खो दिया है।

वैलविश्चिया नववर्धित पादप है यानि कि ऐसा पादप जिसमें प्रजनन प्रावस्था आरंभ हो जाती है जबकि पादप बाल रूप में ही होता है।

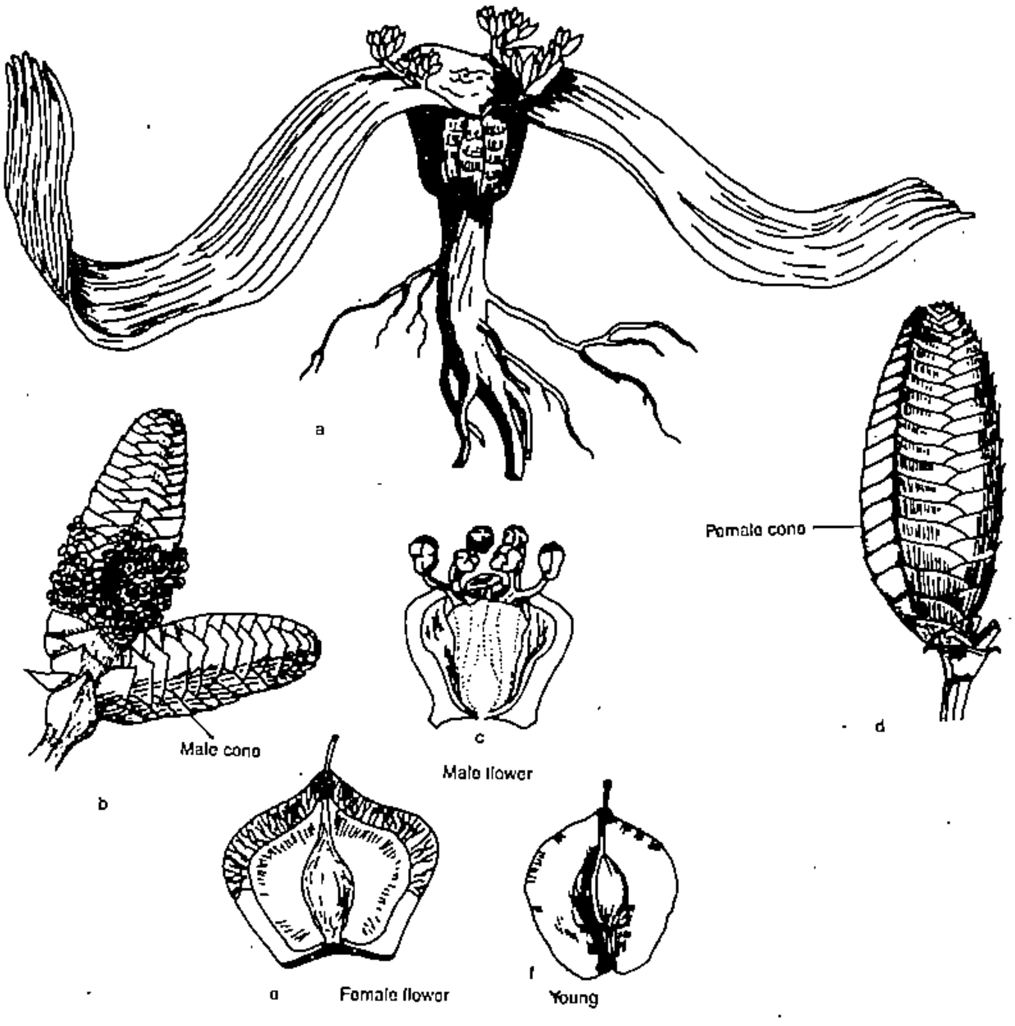

चित्र 1.10 : वैलविश्चिएसी, *वैलविश्चिया मिराबिलिस* a) प्रकृति b) नर शंकु c) नर पुष्प d) मादा शंकु, e) मादा पुष्प f) तरुण फल (a, d, f, ली माउट तथा डिकेस्नी से 1876; b, c, e एंगलर के पाठ्यक्रम से 1954)

बॉक्स 1.5 : विभिन्न जिम्नोस्पर्म्स के सामान्य तथा वानस्पतिक नाम

नामों की सूची		
पाइन्स/चीड़	*पाइनस* जाति	*पाइनस रौक्सबरघाई*- चीड़, पाइन
		पाइनस वैलीविश्चियाना-कैल, पाइन
		पाइनस जिरार्डिआना- चिलगोजा, पाइन
सिडार	*सिड्रस* जाति	
यू	*टैक्सस* जाति	
स्रिपेस	*साइप्रस* जाति	
साइकैड्स	*साइकस* तथा साइकैडेलीज के अन्य सदस्य	
मेडेनहेयर वृक्ष	*गिंगो बाइलोबा*	
ऐरोकेरिया	*एरोकेरिया* जाति	
जाइन्ट रेडवुड/रक्तदारू	*सिकुआडेन्ड्रोन जाइगेन्शियम*	
कैलीफोर्निया रेडवुड	*सिकुआ सैम्परविरेन्स*	
जूनीपर	*जूनीपेरस*	
लार्च	*लैरिक्स*	
फिर	*एबीज़*	
स्प्रूस	*पाइसिया*	
बाल्ड साइप्रेस	*टैक्सोडियम*	
हेमलॉक	*सूगा*	

1.7 जिम्नोस्पर्म्स का वर्गीकरण

पादपों का एक महत्वपूर्ण समूह होने के कारण जिम्नोस्पर्म्स को विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा भिन्न-भिन्न तरीके से वर्गीकृत किया गया है। इस इकाई में प्रयोग किया गया वर्गीकरण भटनागर तथा मोइत्रा (1996) का है। इसका विवरण नीचे दिया गया है।

जिम्नोस्पर्म्स में जीवित (विद्यमान) तथा जीवाश्म (विलुप्त) दोनों ही समूह हैं। इस वर्गीकरण में इस समूह के विभिन्न कुलों को सूचीबद्ध किया गया है। आपको इस वर्गीकरण को याद करने की आवश्यकता नहीं है। यह इसलिए दिया गया है क्योंकि आपको जिम्नोस्पर्म्स के सभी वर्गों, गणों तथा कुलों पता होना चाहिए।

वर्ग 1 प्रोजिम्नोस्पर्मोप्सिडा

गण एन्यूरोफाइटेलीस
  कुल एन्यूरोफाइटेसी
गण आर्कियोप्टेरीडेलीस
  कुल आर्कियोप्टेरीडेसी
गण प्रोटोपिटीएलीस
  कुल प्रोटोपिटीएसी

(सिर्फ जीवाश्म)

वर्ग II	साइकैडोप्सिडा	
गण	टेरीडोस्पर्मेलीज़	(सिर्फ जीवाश्म)
कुल	कैलेमोपिटीएसी, लाइजोनोप्टेरीडेसी मैडुलोसेसी, कैलिस्टोफाइटेसी	
गण	ग्लौसोप्टेरीडेलीज़	
कुल	ग्लौसोप्टेरीडेसी	
गण	कैटोनिएलीज़	
कुल	कैटोनिएसी, कोरीस्टोस्पर्मेसी पैल्टास्पर्मेसी	
गण	साइकैडेलीज़	
कुल	साइकैडेसी, जैमिएसी (जीवित व जीवाश्म)	
गण	साइकैडिओइडेलीज (बेनेटिटेलीज)	(सिर्फ जीवाश्म)
कुल	विलियमसोनिएसी, वीलेन्डिएडेसी साइकैडिओइडेसी	
गण	पैन्टोजाइलेलीस	
कुल	पैन्टोजाइलेसी	
वर्ग III	कोनीफेरोप्सिडा	
गण	गिंगोएलीस	
कुल	गिंगोएसी	
गण	चैकेनाव्सिकिएलीज़	(सिर्फ जीवाश्म)
कुल	चैकेनाव्सिकिएसी	
गण	कोर्डाइटेलीज़	
कुल	कोर्डाइटेसी	
गण	वोल्ट्ज़िएलीज़	
कुल	वोल्ट्ज़िएसी	
गण	कोनीफरेलीज़	
कुल	पाइनेसी, टैक्सोडिएसी, क्यूप्रेससी, पोडोकार्पेसी एरोकेरिएसी, सिफैलोटैक्सेसी, टैक़्सेसी	
वर्ग IV	नीटोप्सिडा	
गण	इफिड्रेलीज़	
कुल	इफिड्रेसी	
गण	नीटेलीज़	
कुल	नीटेसी	
गण	वैलविश्चिएलीज़	
कुल	वैलविश्चिएसी	

बॉक्स 1.6 : जिम्नोस्पर्म्स का संरक्षण

जिम्नोस्पर्म्स विश्व की वनस्पति का बहुत छोटा सा भाग हैं। कोनिफर्स अधिकांशत: शीतोष्ण भागों तक ही सीमित हैं जहाँ वे वन क्षेत्र बड़ी पट्टियाँ बनाते हैं। इस समूह में लंबे, बहुवर्षी वृक्ष पाए जाते हैं जो अपनी लकड़ी तथा अन्य उत्पादों जैसे रेजिन/राल तथा पल्प/लुगदी के कारण कीमती हैं। आज "विशिष्ट" (या उच्च कोटि के) वृक्षों को पहचानने तथा ऐच्छिक गुणों, बेहतर पैदावार, रोग तथा कीट प्रतिरोधात्मक क्षमता के साथ प्रवर्धित करने की आवश्यकता है। इसलिए प्राकृतिक जर्मप्लासम/जननद्रव्य का निरीक्षण तथा संरक्षण आवश्यक है।

साइकैडस तथा *गिंगो* पृथ्वी पर पाए जाने वाले कुछ सबसे प्राचीन पादप समूहों में से हैं। उनके प्राकृतिक आवासों पर नगरीकरण के कारण दबाव पड़ रहा है तथा वे तेजी से आमाप में छोटे होते जा रहे हैं। ये "जीवित जीवाश्म" भी लुप्त हो सकते हैं यदि उन्हें मानव द्वारा संरक्षित नहीं किया जाएगा। इसके लिए स्वस्थनिक/यथावत तथा बाहरी दोनों तरीकों की आवश्यकता है।

जिम्नोस्पर्म्स का निरीक्षण उनके औषधीय तथा खाद्य मूल्यों के लिए किया जाता है तथा कुछ जैसे *टैक्सस* कैन्सर के इलाज में विश्वसनीय साबित हुआ है। भविष्य में इस समूह के अन्य सदस्य भी आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण साबित हो सकते हैं। अत: इन्हें संरक्षित करने की तत्काल आवश्यकता है।

1.8 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- जिम्नोस्पर्म्स, एन्जियोस्पर्म्स से अपने आकृति विज्ञान, शारीर तथा प्रजनन के तरीके में भिन्न होते हैं।
- बीजांड तथा बीज नग्न तथा अनावरित होते हैं।
- बीजाणुउद्भिद् बड़े तथा बहुवर्षी होते हैं, जबकि युग्मकोद्भिद् बहुत अधिक लघु तथा बीजाणुउद्भिद पर निर्भर होते हैं।
- एकल निषेचन (*इफेड्रा* तथा *नीटम* अपवाद) यानि की निषेचन में एक पुमणु संलग्न होता है।
- सबसे लंबे वृक्ष रेडवुड/रक्तदारू तथा विशाल वृक्ष दोनों ही जिम्नोस्पर्म्स हैं।

1.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स के बीच में भिन्नताओं को बताइए।

....

....

....

....

....

....

2. जिम्नोस्पर्म्स में परागण तथा निषेचन का वर्णन कीजिए तथा यह किस प्रकार एन्जियोस्पर्म्स से भिन्न होता है ?

....

....

....

....

....

....

3. जिम्नोस्पर्म्स के बीज को दो पीढ़ियों का विलक्षण संयोजन क्यों कहा जाता है ?

....

....

....

....

....

....

4. "जिम्नोस्पर्म्स में युग्मकोद्‌भिद पीढ़ी बीजाणुउद्‌भिद पीढ़ी पर निर्भर करती है।'' इस वक्तव्य पर टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

....

5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

   i) जिम्नोस्पर्म्स का वितरण

   ii) विरलदारूक तथा धनदारूक काष्ठ

   iii) नालयुग्मन तथा जीवकयुग्मन

   iv) जिम्नोस्पर्म्स में बहुभ्रूणता

   v) पराग परागण बिंदु

....

....

....

....

....

....

....

6. वंश *वैलविश्चिया* का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

7. जिम्नोस्पर्म्स के जीवित जीवाश्म का वर्णन कीजिए तथा बताइए कि इसे ऐसा क्यों कहा जाता है।

....

....

....

....

....

....

8. जिम्नोस्पर्म्स में जीवन चक्रों को समुचित आरेखों के साथ समझाइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

1.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1. देखिए - जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स के गुण तथा कोई 5 प्वाइंटस लिखिए।

2. 1 (स)

   2 (द)

   3 (अ)

   4 (ब)

3. सेक्शन 1.2 में देखिए।

4. 1. (द)

   2. (ग)

   3. (स)

   4. (अ)

   5. (घ)

   6. (ब)

   7. (ख)

   8. (क)

5. i) सल्फर शावर्स/वर्षा

   ii) *वैलविश्चिया*

   iii) पराग बिंदु

6. सेक्शन 1.2.4 देखिए - लघुबीजाणुधानी तथा नर युग्मकोद्भिद

7. सेक्शन 1.2.4 देखिए - बीजांड तथा मादा युग्मकोद्भिद

8. 1. (स)

   2. (अ)

   3. (स)

   4. (अ)

   5. (स)

   6. (अ)

9. सेक्शन 1.3 देखिए - भ्रूणोद्भव

10. 1. नग्न बीज

    2. एकल निषेचन

    3. अगुणित भ्रूणपोण

अंत में कुछ प्रश्न

1. सेक्शन 1.2 देखिए - जिम्नोस्पर्म्स के सामान्य गुण

2. सेक्शन 1.2 तथा सेक्शन 1.2.4 देखिए - प्रजनन

3. सेक्शन 1.3.2 देखिए - वयस्क बीज तथा अंकुरण

   i) बीजाणुउद्भिद ऊतक तथा युग्मकोद्भिद ऊतक दोनों बीज में पाए जाते हैं। उनको विस्तार से समझाइए।

4. सबसेक्शन 1.2.4 देखिए - प्रजनन विस्तार से वर्णन कीजिए कि किस प्रकार जिम्नोस्पर्म्स में युग्मकोद्भिद पीढ़ी पूर्णतः बीजाणुउद्भिद पीढ़ी पर निर्भर करती है। पादप विविधता-I में, आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि युग्मकोद्भिद पीढ़ी मुक्त रूप से रहने वाली प्रकाश संश्लेषणी पादप

अथवा भूमिगत हो सकती है तथा अपने अस्तित्व के लिए आभासी रूप से अंत:पादपी कवक की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

5. सेक्शन 1.2.1 बॉक्स 1.1, बॉक्स 1.3, सबसेक्शन 1.2.4 देखिए।

6. सेक्शन 1.6 देखिए – वंश *वैलविश्चिया*

7. सेक्शन 1.5 देखिए – जीवित जीवाश्म – *गिंगो बाइलोबा*

8. सेक्शन 1.4 देखिए – जीवन चक्रों के सामान्य प्रकार/पैटर्न

इकाई 2 साइकैडोप्सीडा : *साइकस*

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
2.2 विवरण, आवास और सामान्य लक्षण
2.3 कायिक संरचनाएँ
2.3.1 जड़
2.3.2 तना
2.3.3 पत्ती
2.4 जनन संरचनाएँ
2.4.1 नर शंकु तथा युग्मोकद्भिद्
2.4.2 मादा स्ट्रोबिलस तथा युग्मोकद्भिद
2.5 परागण, निषेचन और भ्रूणोद्भव
2.6 विशिष्ट लक्षण और संरक्षण संबंधी समस्याएं
2.7 सारांश
2.8 अंत में कुछ प्रश्न
2.9 उत्तर

2.1 प्रस्तावना

इकाई-1 में आपने पढ़ा कि साइकैडोप्सीडा के छः गण (Order) हैं : टेरिडोस्पर्मेल्स, केटोनिएल्स, साइकैडेओइडीऐल्स, पेन्टोजाइलेल्स, साइकैडेल्स और ग्लासोटिरिडेल्स। इसमें से साइकैडेल्स के अलावा सभी पांच विलुप्त हो चुके हैं। साइकैडेलीज का जीवाश्म इतिहास बड़ा पुराना है। मध्यजीवी काल (मीसोजुइक काल) के मध्य में ये बहुतायत में पाए जाते थे और इनमें से कुछ आज भी मिलते हैं। इसीलिए इन पादपों को "जीवित जीवाश्म" (living fossils) कहते हैं। सरसरी तौर से देखने पर सभी साइकेड पादप ताड़ (palms) के पेड़ों जैसे लगते हैं। साइकैडेल से जुड़े सभी सदस्य-पादपों को साइकेड कहा जाता है। इनका तना स्कंधी और बेलनाकार होता है जिसकी चोटी पर ताड़ के जैसे पत्तों का बड़ा-सा मुकुट (crown) पाया जाता है। वस्तुतः ये वास्तविक अनावृतबीजी पादप हैं जिनके बीज आवरणहीन होते हैं और वे रूपांतरित पत्तियों पर उत्पन्न होते हैं जिन्हें बीजाणुपर्ण (sporophylls) कहते हैं। कुछ वैज्ञानिक साइकेड पादपों को फर्न (पर्णांग) और अनावृतबीजी पादपों के बीच की संक्रांति अवस्था मानते हैं। पक्ष्माभी शुक्राणुओं (ciliate sperms) की उपस्थिति जो कि निम्न कोटि पादपों का विशेष लक्षण है, इस धारणा को पुष्ट करती है।

साइकैडेलीज में कुल 11 जीनस (वंश) पाए जाते हैं, जिन्हें जॉन्सन (1959) के अनुसार तीन कुलों में बांटा गया है : साइकैडेसी (Cycadaceae), स्टेनजीरिएसी (Stangeriaceae) और जैमिएसी (Zamiaceae)। किन्तु भटनागर और मोइत्रा (1996) ने सभी 11 जीनसों को एक ही कुल यानि कि साइकैडेसी में रखा है क्योंकि इन जीनसों में आकारिकी, शारीर और जनन जैविकी में एकरूपता पाई जाती है। इस पाठ्यक्रम में हम वर्गीकरण की इसी प्रणाली का अनुकरण करेंगे। इस इकाई में दी गई जानकारी *साइकस* पर आधारित है। शेष जीनस के विशेष लक्षणों का उल्लेख यथावश्यक स्थानों पर किया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- साइकैड जीनसों के नाम बता सकें;
- साइकैडों और विशेषकर *साइकस* की पहचान उनके आकारिकी, शारीरी और जननात्मक गुणों के आधार पर कर सकें;
- *साइकस* के जीवन चक्र का सचित्र वर्णन कर सकें;
- *साइकस* की रचनात्मक विशेषताओं की निम्न कोटि पादपों, विशेषकर फिलिकेलीज से तुलना कर विवेचन कर सकें;
- पूरे विश्व में साइकैड पादपों की संख्या में ह्रास के कारणों एवं मुख्य सरंक्षण उपायों की चर्चा कर सकें।

2.2 वितरण, आवास और सामान्य लक्षण

साइकैडेलीज के सभी 11 जीनसों को सारणी-2.1 में सूचीबद्ध किया गया है। हालांकि साइकैड 25 करोड़ वर्षों से अस्तित्व में रहे हैं और उनका वितरण काफी व्यापक रहा है, लेकिन आज प्रत्येक जीनस का वितरण संकुचित रह गया है। विभिन्न जीनसों की 100 से अधिक जातियां पूर्वी और पश्चिमी गोलार्ध में पाई जाती हैं।

सारणी – 2.1 : साइकैडों का सार्वत्रिक पैटर्न।

जीनस	प्रदेश/देश	गोलार्ध
डायून, सिरेटोजेमिया	मेक्सिको	पश्चिमी गोलार्ध
माइक्रोसाइकस	क्यूबा	
जेमिया	मेक्सिको, वेस्ट इंडीज, उत्तरी पश्चिमी दक्षिणी अमेरिका, फ्लोरिडा	
चिगुआ	कोलोंबिया	
एनसिफैलार्टोस, स्टैनजीरिया	दक्षिणी अफ्रीका	पूर्वी गोलार्ध
लेपिडोजेमिया, मैक्रोजेमिया, *बोवीनिया*	आस्ट्रेलिया	
साइकस	मैडागास्कर, आस्ट्रेलिया, भारतीय उप-महाद्वीप, चीन और दक्षिणी जापान	

सारणी-2.1 में सूचीबद्ध सभी जीनसों में से सिर्फ एक *साइकस* ही भारतीय उपमहाद्वीप में पाया जाता है। भारत के अलावा यह उसके पड़ोसी देशों जैसे – नेपाल, म्यानमार और श्री लंका, विशेष रूप से हमारे देश में पाई जाने वाली *साइकस* की जातियों के नाम सारणी 2.2 में दिए गए हैं।

सारणी 2.2 : भारत में *साइकस* का वितरण।

जातियाँ	स्थान जहाँ पाई जाती हैं
साइकस बेडोमी डाइयर	तमिलनाडु में कुडापाह जिले की पहाड़ियों और आंध्र प्रदेश में
सा. पेक्टिनैटा ग्रिफ	सिक्किम और आसाम के साल के वनों में, खासी की पहाड़ियों और मणिपुर में
सा. सर्सिनैलिस लिन्न	पश्चिमी घाट के पर्णपाती वनों और उड़ीसा में
सा. रंफाइ मिक	अंडमान निकोबार द्वीप समूहों के तटीय वनों में
सा. रेवोल्यूटा थुनब और *सा. सायामैंसिस* मिक	बागों में उगाया जाता है

साइकस को उगाया तो जाता ही है और साथ में यह वन्यावस्था में भी पाया जाता है।

इसका प्राकृतिक आवास शुष्क-बलुई (यानी मरू जैसा) होता है और इसमें सुसिंचित उघड़ी (यानी सूर्य प्रभावित) मिट्टी और पहाड़ियों की धूपदार ढलानें भी शामिल हैं।

साइकस बनावट में ताड़ की तरह दिखाई देता है (चित्र 2.1 a)। इसका आकाशीय तना स्तंभाकार होता है जिसके शिखर पर पिच्छाकार संयुक्त (pinnately compound) पत्तियों का एक मुकुट (crown) पाया जाता है। इसका तना साधारणतया शाखाहीन होता है किन्तु कभी-कभी पुराने वृक्षों में शाखन देखने में आता है। इसमें शाखा एक छोटे पत्रप्रकलिका (bulbil) के रूप में शुरू होती है (चित्र 2.2)। पत्रप्रकलिका असल में एक अपस्थानिक (adventitious) कलिका है। इसका उद्‌भव पर्णाधार (leaf base) के मांसल निम्नतर भाग से होता है। आरंभ में पत्रप्रकलिका में शल्की पत्तियाँ (scale leaves) प्रकट होती हैं किन्तु इसमें वृद्धि होते-होते यह मुख्य तने की तरह ही पत्तियों का एक मुकुट बनाने लगती हैं जो कालांतर में एक शाखा जैसी दिखाई देती है। ये पत्रप्रकलिकाएं इस पौधे के कायिक प्रवर्धन (vegetative propagation) कृत्रिम और प्राकृतिक दोनों तरह से, का माध्यम बनती हैं। शारीरिक चोट जैसे कारक, शाखन में वृद्धि करते हैं। यही कारण है कि पार्कों में *साइकस* के अति शाखित पेड़ दिखाई देते हैं परंतु प्राकृतिक अवस्था में ये शाखाहीन या अल्प शाखित होते हैं।

बड़े और लघु पर्णाधारों के एकांतरी पट्टों का कवच सर्पिल तरीके से आकाशीय तने को ढके रहता है (चित्र 2.1 b)। बड़े पर्णाधार पूर्णसमूह की सामान्य पत्तियों और लघुत्तर पर्णाधार शल्की पत्तियों के निम्नतर भाग हैं। दोनों प्रकार की पत्तियों की विशेषताओं की आगे के भाग में चर्चा की गई है। वैसे तो पर्णाधार अनेक वर्षों तक स्थायी बने रहते हैं किन्तु पुराने पेड़ों में पुराने पर्णाधार विलगित (abscise) हो जाते हैं। इस स्थिति में पेड़ के तने का निचला भाग ऊपरी भाग से पतला दिखाई देता है।

प्रति वर्ष पत्तियों के ऐसे दो मुकुटों का निर्माण होता है। एक का निर्माण वसंत में और दूसरे का मानसून में होता है। ये ऋतुएं वृद्धि के लिए अनुकूल हैं। तने पर विद्यमान पर्णाधारों को गिन कर उनकी कुल संख्या को पेड़ के मुकुट की पत्तियों की आधी संख्या से भाग देकर हम *साइकस* पौधे की आयु का निर्धारण कर सकते हैं। ऐसा इस आधार पर किया जाता है कि दोनों ऋतुओं के दौरान पर्णाधारों की वृद्धि वर्ष में किसी भी समय इस पर दर्ज रहती है।

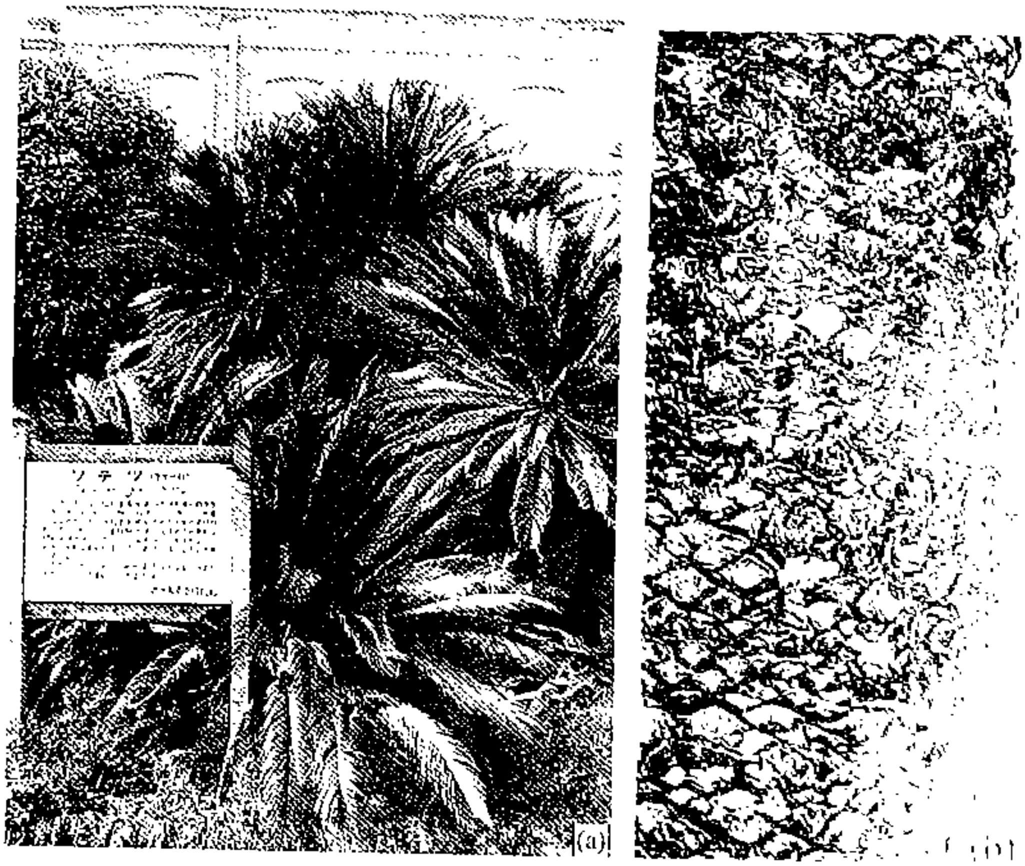

चित्र 2.2 : *साइकस* जाति की एक पर्णप्रकलिका। शल्की पत्तियों के बीच कुंडलित अल्पवर्धित पत्ती को देखा जा सकता है (पंत 1973 से)।

चित्र 2.1: a) जापान के कागोशीना प्रीफेक्चर संग्राहलय के आहाते में स्थित *साइकस रेवोल्यूटा* के कुछ पौधे। चित्र में दर्शनीय विवरण-पट्टिका पर लिखा है कि "साइकस रेवोल्यूटा के इन ऐतिहासिक पौधों को सुरक्षित रखना चाहिए क्योंकि इन्हीं में से प्रोफेसर इकेनो ने सन् 1898 में सर्वप्रथम पुमणुओं की खोज की थी। b) तने का एक आवर्धित भाग। बड़े और छोटे पर्णाधारों के एकांतरी पट्टों को ध्यान से देखिए। आभार: a) प्रोफेसर तेत्सुओ नाकाजीमा; b) भटनागर एवं मोइत्रा, 1996।

बोध प्रश्न 1

कौन-सी बातें (i-viii) साइकेडेलीज के संदर्भ में तर्कसंगत हैं ?

i) जीवित जीवाश्म

ii) वास्तविक अनावृतबीजी

iii) पर्णांग

iv) तीन जीनस

v) शाकीय पादप

vi) समोद्भिदीय (mesophytic)

vii) ताड़ जैसी बनावट

viii) शुष्क बलुई (xeric)

नीचे दिए गए विकल्पों में से सही उत्तर चुनिए :

क) ii, iv, vi, viii

ख) i, iii, v, vii

ग) iii, iv, v, vi

घ) i, ii, vii, viii

बोध प्रश्न 2

कॉलम अ में दी गई विषय वस्तुओं को कॉलम ब से मिलाइए। फिर नीचे दिए गए विकल्पों में से सही उत्तर बताइए :

	अ		ब
1.	साइकैडेलीज के जीनसों की संख्या	i)	*विगुआ*
2.	भारत उपमहाद्वीप में साइकैड जीनस	ii)	नवीन उत्पत्ति
3.	साइकैड इतिहास	iii)	शल्की पर्ण
4.	अलैंगिक प्रवर्धन का जरिया	iv)	तीन जीनस
5.	पत्ती(यों) द्वारा प्रतिवर्ष निर्मित मुकुट(ों) की संख्या	v)	*साइकस*
		vi)	पर्णप्रकलिका
		vii)	दो
		viii)	मध्जीवी महाकल्प
		ix)	11 जीनस
		x)	एक

विकल्प :

	1	2	3	4	5
क)	ix	i	viii	vi	x
ख)	iv	v	ii	iii	x
ग)	ix	v	viii	vi	vii
घ)	iv	i	ii	vii	viii

2.3 कायिक सरंचनाएँ

इस अनुभाग में कायिक अंगों जैसे कि जड़, तना और पत्ती की आकारिकीय तथा शारीरीय लक्षणों का विवेचन किया गया है। अपने अध्ययन को सुसाध्य बनाने के लिए दिए गए चित्रों पर विशेष ध्यान दें तथा उनकी बारीकियों को समझें।

2.3.1 जड़

प्राथमिक जड़ एक मूसला जड़ (tap root) होती है, जो शीघ्र ही समाप्त हो जाती है और इसकी जगह बड़ी मांसल जड़ों वाला अपस्थानिक जड़ तंत्र (adventitious root system) विकसित होता है। भूमि के समीप की जड़ की कुछ शाखाएं ऊपर की ओर विकसित होती हैं तथा भू-अनुवर्ती (apogeotropic) जड़ें बनाती हैं। ये जड़ें बारम्बार द्विविभाजन से निरंतर शाखों में बंटती जाती हैं और सघन, हरे या भूरे पिंडों का निर्माण करती हैं। जिन्हें प्रवाल मूल (coralloid roots) कहते हैं। (चित्र 2.3)।

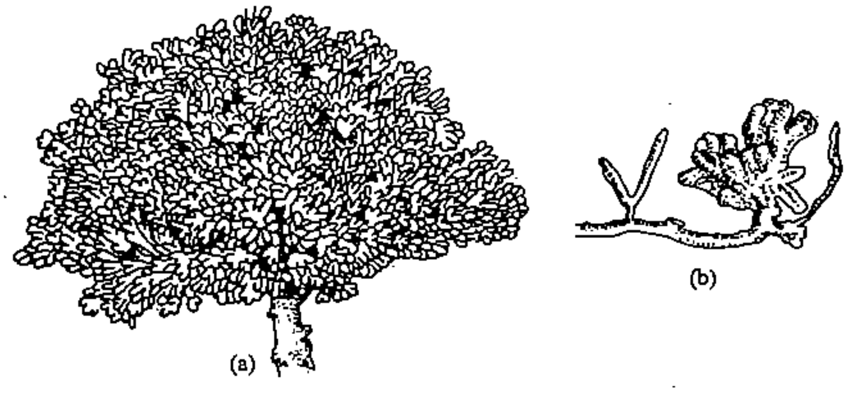

चित्र 2.3 : a) *साइकस* जाति में प्रवाल मूलों का एक गुच्छा। b) प्रवाल मूल का एक आवर्धित भाग (पन्त, 1973 से)।

भू-अनुवर्ती होने के कारण प्रवाल जड़ें मिट्टी से ऊपर निकल आती हैं। ऐसा माना जाता है कि वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने के अलावा ये जड़ें वातन अंगों (aerating organs) का काम भी करते हैं। प्रवाल मूलों के अलावा *साइकस* की कुछ जातियों में अप्रवाल वायव मूल (non-coralloid aerial roots) भी पाए जाते हैं। ऐसी जड़ें पत्रप्रकलिकाओं के आधारों या पर्णाधारों से उत्पन्न होती हैं और ये प्राय: भू-अनुवर्ती (geotropic) होती हैं। सामान्य और प्रवाल दोनों प्रकार की जड़ों की सतहों पर वातरंध्र (lenticels) प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

सामान्य जड़ : *साइकस* की तरुण, सामान्य जड़ की शारीरीय संरचना (चित्र 2.4 a,b) द्विबीजपत्री आवृतबीजी की तरह ही होती है। इसमें दारू (जाइलम) और फ्लोएम अरीय विन्यास में व्यवस्थित रहते हैं। संवहन-न्यास (वास्कुलेचर - vasculature) द्वि-आदिदारुक (डाइआर्क - diarch), त्रिआदिदारुक (ट्राइआर्क - triarch) से लेकर बहुआदिदारुक (polyarch) अवस्थाओं में पाया जाता है और आदिदारु (protoxylem) बाह्य-आदिदारुक (एक्सार्क - exarch) होता है। जड़ के मध्य भाग में एक लघु मृदूतकी मज्जा (पेरेंकाइमैटस पिथ - parenchymatous pith) स्थित होता है। संवहन-न्यास परिरंभ (पेरिसाइकिल- pericycle) से घिरा रहता है, जो बहुधा बहु-स्तरीय होता है, जिनमें स्टॉर्च के कण प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। बाहर की ओर एक एकलस्तरीय अंतस्त्वचा (एंडोडर्मिस - endodermis) पाई जाती है। अंतस्त्वचीय कोशिकाओं की विशेषता इनमें पाए जाने वाले कैस्पेरी स्थूलन (casparian thickenings) हैं। अंतस्त्वचा के बाद बहुस्तरीय कॉर्टेक्स स्थित होता है, यह मृदूतकी कोशिकाओं का बना होता है तथा इसमें स्टॉर्च के कण प्रचुर मात्रा में होते हैं। कभी कभी कॉर्टेक्स (वल्कुट) भाग में दृढ़ोतकी (sclerenchymatous) और टैनिन भरी कोशिकाएं बिखरी पाई जाती हैं। इनके अलावा कॉर्टेक्स में भिन्न-भिन्न आकृति की क्रिस्टल युक्त कोशिकाएं भी साधारणतया वितरित रहती हैं। सबसे बाहरी परत अधिचर्म या बाह्यत्वचा कहलाती है। अन्य जड़ों की तरह ही यह भी वर्धनशील शिखाग्र (apex) के पीछे मूल रोमों (root hair) को जन्म देती है। द्वितीयक वृद्धि (secondary growth) फ्लोएम के भीतरी हिस्से की तरफ एधा (कैम्बियम) चापों के विकास से आरंभ होती है। इन चापों के बीच की परिरंभ कोशिकाएं भी मेरिस्टमी हो जाती हैं और एधा के चापों से जुड़कर पूर्ण एधा वलय (कैम्बियल रिंग-cambial ring) का निर्माण करती हैं। एधा वलय की क्रियाशीलता से भीतर की ओर द्वितीयक जाइलम और बाहर की ओर द्वितीय फ्लोएम कोशिकाएं बनती हैं।

प्रवाल मूल : शारीरी दृष्टि से प्रवाल मूल सामान्य जड़ के लगभग समरूप होती है। इसमें सिर्फ यह अंतर है कि इसका कॉर्टेक्स विस्तृत होता है जिसके मध्य में एक सुस्पष्ट शैवाल खंड (algal zone) स्थित रहता है (चित्र 2.4 c,d)। यह शैवाल खंड पतली-भित्ति वाली अरीय दीर्घित कोशिकाओं का बना होता है जो अदृढ़ तरीके से व्यवस्थित होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच वृहत अंतराकोशिक रिक्त स्थान होते हैं जिनमें *एनाबीना (Anabaena)* और *नॉस्टॉक (Nostoc)* जैसे सायनोबैक्टीरिया पाए जाते हैं। कुछ अध्ययनों के अनुसार इनमें हरे शैवाल जैसे *कैलोथ्रिक्स* भी देखे गए हैं। कॉर्टेक्स मृदूतक कोशिकाओं का बना होता है। कागजन (phellogen or cork cambium) और परिधि में कॉर्क कोशिकाओं की कुछ परतें पाई जाती हैं।

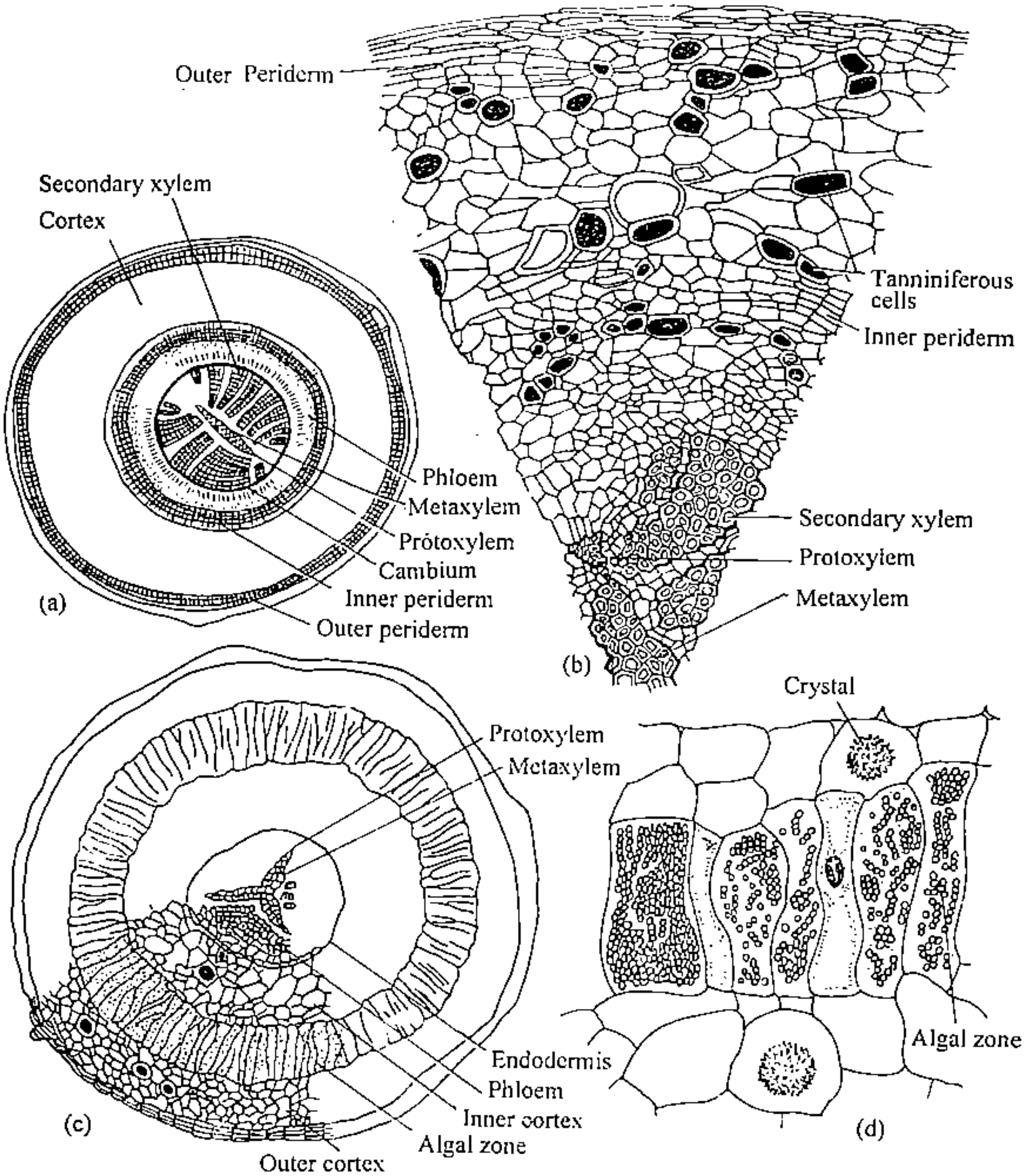

चित्र 2.4 : *साइकस* जाति की सामान्य जड़ (a, b) और प्रवाल मूल (c, d)। a) सामान्य जड़ के अनुप्रस्थ काट का रेखांकन। द्वि-आदिदारुक अवस्था को ध्यान से देखिए। b) कोशिकीय सूक्ष्मताओं को दिखाता सामान्य जड़ का एक आवर्धित भाग। c) प्रवाल मूल की अनुप्रस्थ काट का रेखाचित्र। शैवाल खंड की स्थिति को चिन्हित कीजिए। d) शैवाल युक्त अरीय वर्धित कोशिकाओं को दिखाता हुआ शैवाल खंड का आवर्धित भाग। (a-c, पंत 1973; d वेट्टस्टीन, 1953 से)।

2.3.2 तना

स्थायी पर्णाधारों के कारण तने की रूपरेखा अनियमित होती है। तने को अनुप्रस्थ काट में देखने पर इसके मध्य भाग का अधिकांश भाग मृदूतकी मज्जा (parenchymatous pith) से भरा होता है। जोकि समूचे तने का एक बड़ा भाग घेरे रहता है। मज्जा कोशिका में भारी मात्रा में स्टार्च पाया जाता है जिसे *सागू* कहते हैं। इस पदार्थ का कुछ जातियों से व्यावसायिक दोहन किया जाता है। मज्जा अनेक संवहन बंडलों से घिरा रहता है। ये संवहन बंडल संपार्श्विक (collateral) और विवृत (open) होते हैं। आदिदारू (protoxylem) मध्यादिदारुक (endarch) होता है। संवहन वलय के बाहर एक विस्तृत कॉर्टेक्स पाया जाता है जो चौड़ी मज्जा किरणों (medullary rays) के द्वारा मज्जा से जुड़ा रहता है।

साइकस का तना अधिकतर मृदूतकी ही रहता है जिसमें जाइलम का विकास अत्यल्प देखने में आता है। इस स्थिति को विरलदारुक (manoxylic) कहते हैं (भाग 1.2.3 भी देखें)। इस दशा में तने को यांत्रिक शक्ति पर्णाधारों के मोटे और दृढ़ कवच और परिकला (periderm) से मिलती है। मज्जा की कुछ कोशिकाओं और मज्जा किरणों में कैल्शियम ऑक्सैलेट (calcium oxalate) के क्रिस्टल पाए जाते हैं। इसके अलावा मज्जा और कॉर्टेक्स दोनों में ही श्लेष्मक कोशिकाएं (mucilage cells) होती हैं जिनका एक जाल शाखों और पर्ण-अनुपथों (leaf traces) तक फैला रहता है। श्लेष्मक, जल के संरक्षण में सहायता करता है जो एक मरुद्भिदी (xerophytic) विशेषता है।

द्वितीयक वृद्धि काफी जल्दी शुरू हो जाती है। अंतरापूलीय एधा (interfascicular cambium) विकसित होकर अंत:पूलीय एधा से जा मिलता है। एधा मज्जा की तरफ जाइलम, और बाहर की ओर *फ्लोएम* बनाती है। *साइकस* का तना आरंभ में एकदारुक (monoxylic) यानी संवहन-न्यास का एक वलय लिए होता है। किंतु कालांतर में यह कॉर्टेक्स में बनने वाले एधा के सहायक वलयों (accessory rings) के फलस्वरूप बहुदारुक (polyxylic) बन जाता है (चित्र 2.5a)। कॉर्टेक्स में अनेक पर्ण अनुपथ देखने में आते हैं (चित्र 2.5b)।

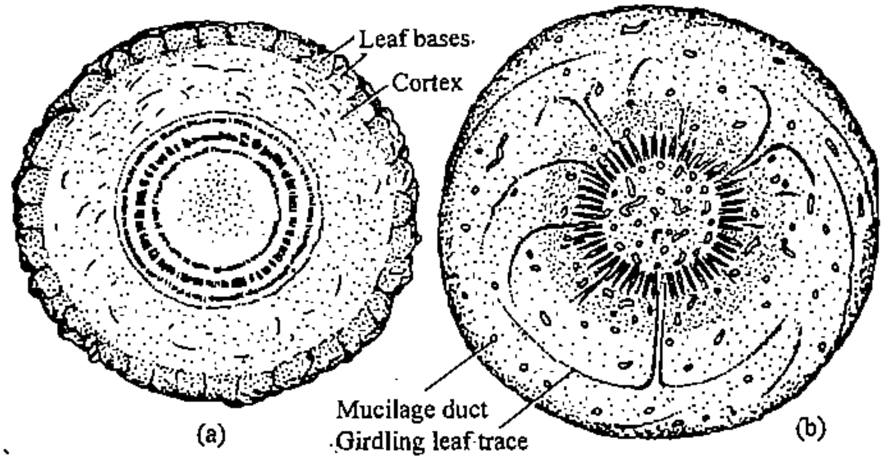

चित्र 2.5 : a) *साइकस* जाति के तने की अनुप्रस्थ काट का रेखाचित्र। पर्णाधारों का कवच, वृहद् कॉर्टेक्स, मज्जा और बहुदारुक स्थिति को ध्यान से देखिए। b) *जैमिया* जाति के तने का अनुप्रस्थ काट। इसके कॉर्टेक्स में पर्ण-अनुपथों के सुस्पष्ट कटिबंध देखने में आते हैं। साथ ही विरलदारुक (manoxylic) काष्ठ को ध्यान से देखिए। तने में श्लेष्मक वाहिनियां यत्र-तत्र बिखरी मिलती हैं (भटनागर और मोइत्रा 1996 से)।

बॉक्स 2.1 : साइकैडेलीज में पर्ण अनुपथ

पत्तियों तक जाने वाले संवहन-न्यास (vasculature) संपूलो (strands) को पर्ण अनुपथ (leaf traces) कहा जाता है। साइकेडों में हर पत्ती में दो प्रकार के अनुपथ पाये जाते हैं और दोनों ही प्राथमिक संवहन बंडलों से उत्पन्न होते हैं। ये है कटिबंध अनुपथ (girdle traces) और अरीय (radial) या सीधे अनुपथ (direct traces)। कटिबंध अनुपथ रंभ (stele) की ओर, उस पत्ती के सामने जिसमें कि इन्हें अंतत: प्रवेश करना होता है, उत्पन्न होती हैं। कॉर्टेक्स से गुजरते समय ये रंभ के दोनों ओर संडसी के घुमावदार कांटे की तरह पार करते-करते ये पूरी तरह उलटे हो जाते हैं। ये कटिबंध अनुपथ साइकेडेलीज के विशेष लक्षण हैं। अरीय या सीधे अनुपथ, रंभ के इर्द-गिर्द घेरा नहीं बनाते, बल्कि पत्ती में प्रवेश करने से पहले ही ये एक सीधे मार्ग में कॉर्टेक्स से निकलते हैं।

2.3.3 पत्ती

साइकस की पत्तियों में द्विरूपता (dimorphism) देखने में आती है। सामान्य पर्ण समूह की पत्तियां बड़ी तथा पर्णहरित (chlorophyllous) होती हैं और शल्की पत्तियां (scale leaves) या अपपर्णा (cataphylls)

छोटी तथा भूरी होती हैं। शल्की पत्तियां द्विकोशिक रोमों के भारी आवरण के कारण भूरी दिखाई देती हैं। इन रोमों को तनुशल्क (ramenta) कहते हैं। पर्णसमूह (सामान्य पत्तियों) और शल्की पत्तियों के मुकुट नियमित रूप से एकांतर में बनते हैं।

पर्णसमूह की पत्तियां संयुक्त मगर एकपिच्छकारी होती हैं जिनमें अनेक चर्मिल, आमने-सामने या एकांतर क्रम में व्यवस्थित पर्णक (leaflets – लीफलेट्स) होते हैं। इन पर्णकों के सिरे नुकीले होते हैं। पत्तियों में एक लंबा रैकिस (rachis) या प्राक्ष और एक लघु पर्णवृंत (पिटिओल-petiole) पाया जाता है। पर्णवृंत के आधार पर छोटे कड़े कंटकों की दो पंक्तियां दिखाई देती हैं (चित्र 2.6a तीर के चिह्न)। पर्णक का किनारा कोरकुंचित (revolute-रिवोल्यूट) यानी घुमा हुआ होता है जैसा कि *सा. रेवोलूटा* और *साइकस वेडोमि* जातियों में होता है, या फिर पर्णक सपाट (फ्लैट) होता है जो *कि सा. सर्सिनैलिस, सा. रम्फाई, सा. पेक्टिनैटा* और *सा. सियामैसिस* जैसी जातियों में देखा जाता है। पर्णकों में एक प्रमुख मध्यशिरा (midrib) आरंभ से अंत तक पाई जाती है। पौधे में *पर्णांगी* लक्षण पाए जाते हैं जैसे कि सीधा या कुंडलित (circinate - सर्सिनेट) रैकिस और पर्णकों का कुंडलित किसलय-विन्यास (*circinate* vernation) (चित्र 2.6 b,c)।

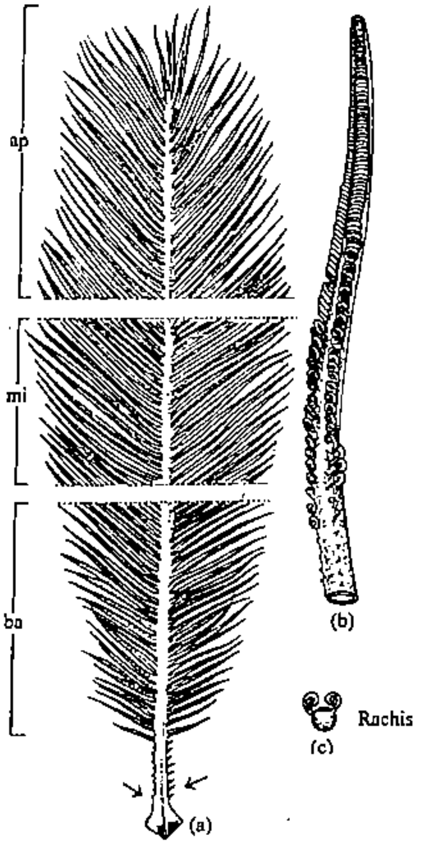

चित्र 2.6 : *साइकस रेवोल्यूटा* **a) शिखाग्र (ap), मध्य (mi), और आधारी (ba) भागों को दिखाता एक पत्ती का चित्र। b) यही पत्ती तरुणावस्था में, कुंडलित पर्णकों की पंक्तियां इसके आधार से ऊपर की ओर यानी अग्राभिसारी अनुक्रम में खुलती दिखाई देती हैं। c) रैकिस में उपस्थित दो कुंडलित पर्णकों को दिखाती तरुण पत्ती की अनुप्रस्थ काट (a, पंत, 1973; b, c, गिफर्ड और फौस्टर, 1989 से)।**

साइकस के पत्ती की शारीरी संरचना के बारे में रैकिस और पर्णक शीर्षकों के अंतर्गत बताया गया है।

रैकिस (rachis) : यह बेलनाकार होता है और इसके अभ्यक्ष (adaxial) यानी पृष्ठ भाग (dorsal side) में पर्णक मौजूद होते हैं। इससे इस की बनावट ढाल जैसी दिखाई देती है। बाह्यत्वचा (एपिडर्मिस - epidermis) स्थूल भित्ति युक्त होती है और यह रंध्रों (स्टोमैटा - stomata) वाले हिस्सों को छोड़, पूरी तरह एक मोटी उपत्वचा या क्यूटिकल (cuticle) से ढकी रहती है। अधिश्चर्म (हाइपोडर्मिस –

hypodermis) में दृढ़ोत्तक (स्क्लेरेंकाइमा-sclerenchyma) और श्लेषोतक (कॉलेन्काइमा - collenchyma) दोनों छितरे-बिखरे पाए जाते हैं। मृदूतकी आधारी ऊतक (parenchymatous ground tissue) में संवहन बंडल स्थित होते हैं। संवहन बंडल एक चाप में व्यवस्थित रहते हैं जो भुजाओं युक्त अंग्रेजी के "यू" (U) अक्षर या ग्रीक अक्षर ओमेगा Ω की तरह दिखाई देता है। संवहन चाप के अंदर और बाहर दोनों ओर श्लेष्मक नाल (म्यूसिलेज कैनाल - mucilage canals) पाई जाती हैं।

रैकिस के संवहन बंडल एक रोचक व्यवहार दिखाता है। आपको याद होगा कि पर्ण-अनुपथ के दो संवहन बंडल तने से उसके आधार में प्रवेश करते हैं। इस जगह संवहन बंडल मध्यादिदारुक (endarch) या अपकेन्द्री (centrifugal) होता है। यानी आदिदारू (प्रोटोजाइलम- protoxylem) अंदर की ओर और अनुदारू (मेटाजाइलम – metaxylem) रैकिस की परिधि की ओर पाया जाता है। किन्तु ये संवहन बंडल पत्ती में प्रवेश करते ही अनेक संपूलों में बंट जाते हैं और उल्टे ओमेगा की तरह व्यवस्थित हो जाते हैं (चित्र 2.7a देखें)। यहां तक दारू तत्व पूर्णत: मध्यादिदारुक या अपकेन्द्री रहते हैं। रैकिस में कुछ दूरी तक चलने के बाद आदिदारू के दोनों ओर अभिकेन्दी दारू (centripetal xylem) के तत्व देखे जा सकते हैं तथा ज्यों-ज्यों हम सिरे की ओर बढ़ते हैं, अपकेन्द्री दारू का निर्माण धीरे-धीरे घटते जाता है। इसीलिए रैकिस के सिरे के पास अपकेन्द्री दारू की तुलना में अभिकेन्द्री दारू अधिक मात्रा में मिलता है (चित्र 2.7b)। अभिकेन्द्री और अपकेन्द्री दोनों प्रकार के दारू वाले इन विचित्र द्विदारुक (diploxylic) संवहन बंडलों को कूटमध्यादिदारुक (*स्यूडोमिजार्क*- pseudomesarch) कहा जाता है है। (चित्र 2.7c)। जैसे ही संवहन बंडल पर्णकों में प्रवेश करते हैं, तो वे बाह्यआदिदारुक (exarch) हो जाते हैं तथा उनमें अपकेन्द्री दारू का कोई चिह्न दिखाई नहीं देता है।

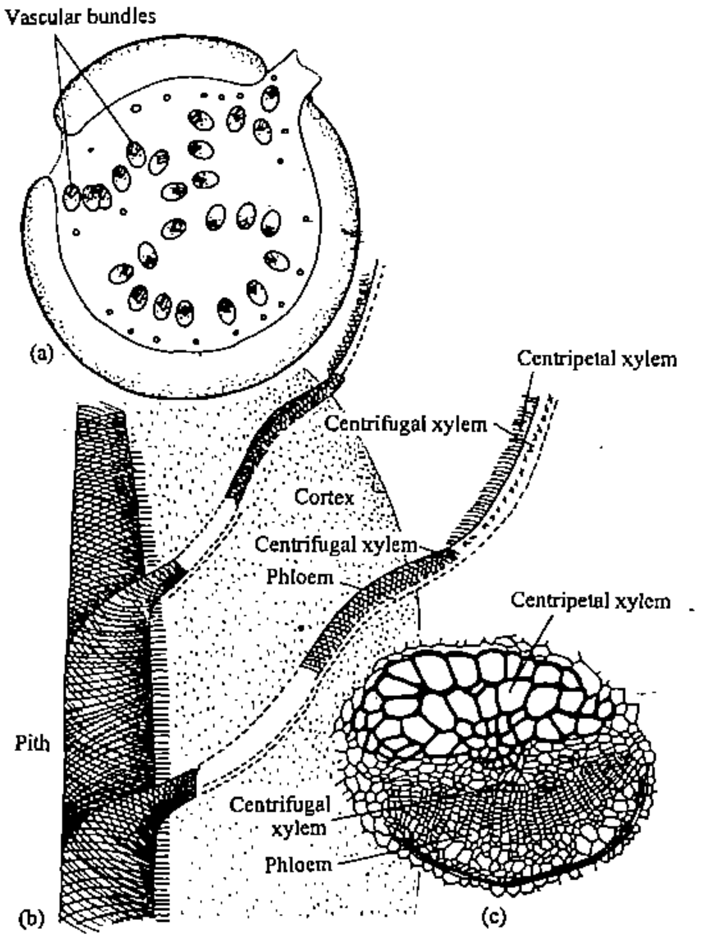

चित्र 2.7 : *साइकस जाति*। a) रैकिस की अनुप्रस्थ काट का रेखाचित्र। संवहन बंडलों के उल्टे ओमेगारूपी विन्यास को ध्यान से देखिए। b) दो वृंतों वाले तने का चित्र निरूपण जो तने से वृंत तक संवहन बंडलों के मार्ग और अभिकेन्द्री व अपकेन्द्री दारू के संबंध को दिखाता है। c) द्विदारुक संवहन बंडल का एक आवर्धित भाग (a, पन्त, 1973; b, ल गोक, 1914; तथा c, महेश्वरी, 1960 से)।

पर्णक (leaflet) : *साइकस* की पत्ती में अनेक मरुद्भिदी लक्षण देखने को मिलते हैं। प्रत्येक पर्णक पृष्ठाधर (डॉर्सिवेन्टल - dorsiventral) होता है और बाह्यत्वचा (epidermis) स्थूलभित्ति युक्त क्यूटिननित कोशिकाओं की बनी होती है जिस पर साधारण गर्त (pits) पाए जाते हैं। अधिश्चर्म (hypodermis) एक या दो स्तरीय होती है और इसकी कोशिकाएं भी क्यूटिनयुक्त और लिग्निनयुक्त होती हैं। पर्णमध्योतक (मिजोफिल - mesophyll) एकस्तरीय ऊपरी खंभ (single-layered upper palisade) और बहुस्तरीय अधर स्पंजी मृदूतक (multi-layered spongy parenchyma) में विभेदित रहता है (चित्र 2.8 a, b)। संवहन बंडल द्विदारुक (diploxylic) होता है। कुछ विलगित स्थूलभित्ति कोशिकाएं इससे अधिश्चर्म कोशिकाओं तक पाई जाती हैं। वाहिनी जैसी कुछ कोशिकाएं, जिनमें कि जालिका रूपी स्थूलन पाए जाते हैं या जिनकी भित्तियों में किनारीदार गर्त (bordered pits) मौजूद होते हैं, अभिकेन्द्री दारू के दोनों ओर मिलती हैं। ये कोशिकाएं संचरण ऊतक (ट्रांसफ्यूजन टिशू - transfusion tissue) बनाती है, जो कि अपने चारों ओर स्थित मृदोतकी कोशिकाओं से जुड़ी होती है। इसके अलावा खंभ (पैलिसेड - palisade) और स्पंजी मृदोतक के बीच खाली, वाहिनी जैसी कोशिकाओं की कुछ परतें पाई जाती हैं जिनमें जालिका स्थूलन और भित्तियों में गर्त होते हैं। ये कोशिकाएं पत्ती के अनुदैर्ध्य अक्ष के समकोण विन्यास में होती हैं और मध्यशिरा (mid-rib) से स्तरिका (लैमिना - lamina) तक पाई जाती हैं। इन्हें सहायक संचरण ऊतक (accessory transfusion tissue) कहा जाता है और यह शिरा विहीन पर्णकों में पार्श्व चालक ऊतक (लेटरल कंडक्टिंग टिशू - lateral conducting tissue) के रूप में कार्य करता है। रंध्र (चित्र 2.8 c, d) धंसे और सिर्फ अधर भाग में पाए जाते हैं।

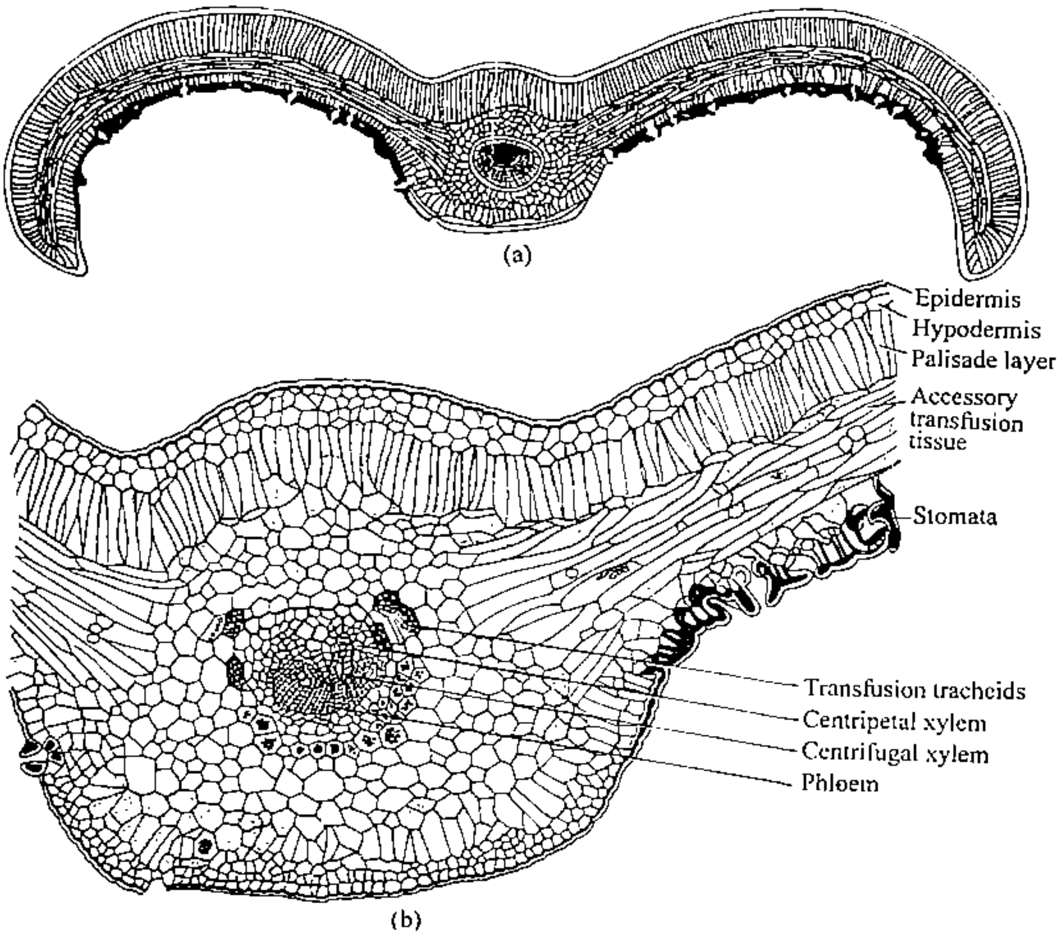

चित्र 2.8 : *साइकस*। a) पर्णक की खड़ी काट जिसमें आप स्थूलभित्ति क्यूटिकलयुक्त बाह्यत्वचा और निचले भाग में रंध्र देख सकते हैं। b) इसी पर्णक का एक आवर्धित अंश द्विदारुक संवहन बंडल और संचरण ऊतक दिखलाता हुआ (a, b, पन्त, 1973 से)।

बोध प्रश्न 3

कोष्ठक में दिए गए वैकल्पिक शब्द (शब्दों) में से सही विकल्पों को चुनिए।

क) प्राथमिक मूल तंत्र (मूसला जड़/झकड़ा जड़) का बना होता है।

ख) (प्रवाल/वायव) मूल भूअपवर्ती होते हैं और वातावरणीय नाइट्रोजन के यौगिकीकरण में सहायक होते हैं।

ग) प्रवाल मूल सामान्य जड़ से इस तरह भिन्न है कि इसमें (संकीर्ण/विस्तृत) कॉर्टेक्स और शैवाल खंड (उपस्थित/अनुपस्थित) होता है।

घ) तने की अनियमित रूपरेखा (अपसामान्य वृद्धि/अपाती पर्णाधारों) के कारण होती है।

ङ) (श्लेष्मक/सैगो) तने से व्युत्पन्न होने वाला उत्पाद है, जिसका व्यावसायिक दोहन किया जा सकता है।

च) तने की यांत्रिक शक्ति (स्थूल दारू/पर्णाधार कवच) से मिलती है।

छ) साइकैड पादपों के पर्णकों में सहायक संचरण ऊतक (स्रावी/संवाहक ऊतक) का कार्य करते हैं।

2.4 जनन संरचनाएं

साइकैड एकलिंगाश्रयी (*डायोसियस* - dioecious) होते हैं जिसका मतलब है कि इनके नर एवं मादा जननांग अलग-अलग पौधों पर पाए जाते हैं। *साइकस* के पौधे कोई 10 वर्ष तक कायिक वृद्धि करते हैं और उसके बाद उनमें जनन अंगों या संरचनाओं का विकास होता है। नर और मादा जनन संरचनाओं के बिना दोनों लिंग के पौधों के बीच भेद नहीं बताया जा सकता है। कायिक प्रवर्धन में सहायक पत्र प्रकलिकाएं भी जनक पादप के समान लिंग वाले पौधे में ही विकसित होती हैं।

2.4.1 नर शंकु तथा युग्मोकद्भिद्

नर शंकु बहुत बड़ा और अंडाकार या शंक्वाकार होता है (चित्र 2.9a)। शल्की पत्तियों से घिरा यह प्राय: अकेला शंकु किरीट के बीचोंबीच पाया जाता है। तरुण शंकु की सतह भूरे शल्कों से पूरी तरह ढकी रहती है। परिपक्व शंकु एक विशिष्ट तीक्ष्ण गंध छोड़ता है, जिसे दूर से ही महसूस किया जा सकता है।

शंकु में एक मध्य अक्ष होता है जिस पर लघुबीजाणुपर्ण (माइक्रोस्पोरोफिल - microsporophyll) सर्पिल विन्यास में व्यवस्थित रहते हैं। हर एक बीजाणुपर्ण (स्पोरोफिल - sporophyll, चित्र 2.9b देखें) एक कठोर, अनुप्रस्थिय रूप से चपटी, काष्ठीय संरचना है जिसमें एक भाग फनाकार होता है, जिसका उद्वक्र शिखाग्र पतला होता जाता है (चित्र 2.9b)।

अपाक्षी (abaxial) यानी निचली सतह पर अनेक बीजाणुधानियां (*स्पोरैंजियम* - sporangium) बनाती हैं (चित्र 2.9 b) जो तीन, चार या पांच के समूहों में इकट्ठा होकर बीजाणुधानी पुंज (*सोरस* - sorus) की रचना करती हैं। हर बीजाणुधानी पुंज रोमों (hair) से घिरा पाया जाता है। बीजाणुधानी पुंज रोम

एक कोशिक होते हैं। बीजाणुधानी पुंज में एक स्थूल वृंत होता है और इसमें स्फुटन अनुदैर्ध्य रेखाछिद्रों द्वारा होता है (चित्र 2.9 c, d) जो भित्तियों में बनते हैं। *सा. सर्सिनैलिस* में प्रति बीजाणुपर्ण 700 बीजाणुधानियां और *सा. मीडिया* में ये 1160 तक की संख्या में पाई जाती हैं।

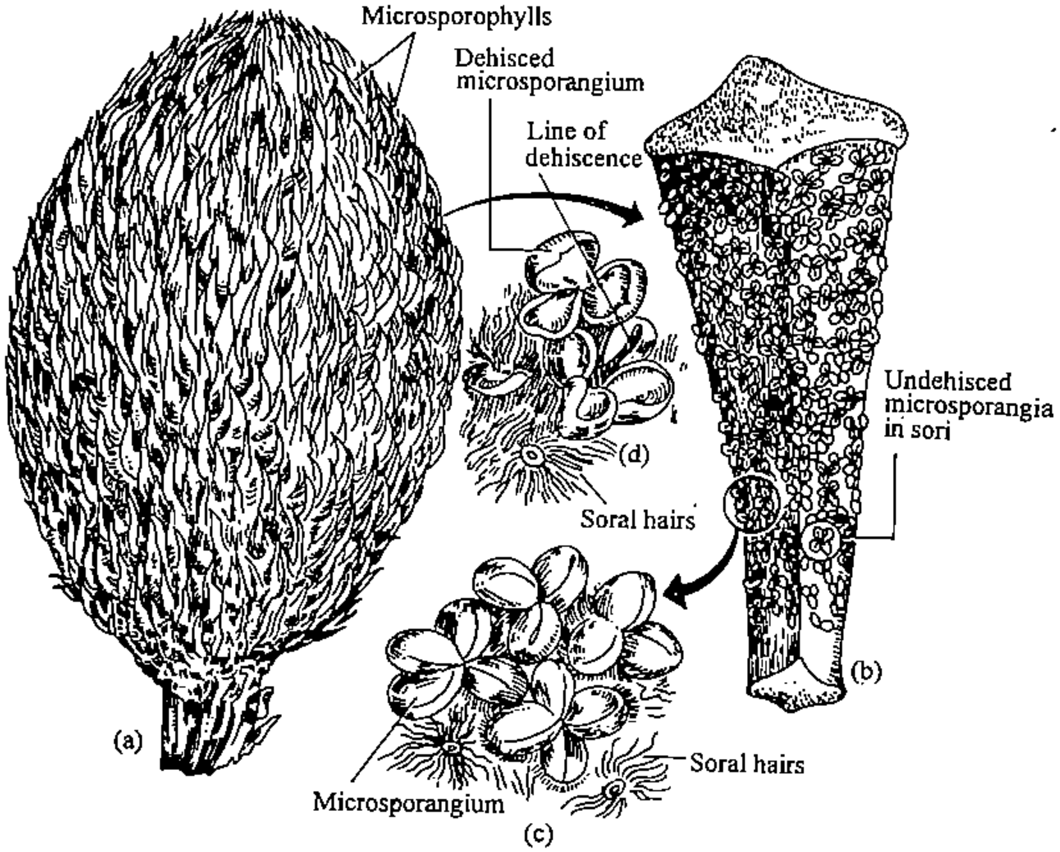

चित्र 2.9 : *सा. सर्सिनैलिस।* a) एक पक्व नर शंकु। सर्पिल विन्यास में व्यवस्थित लघुबीजाणुपर्णों को ध्यान से देखिए। b) अपाक्षी दृश्य में एक लघुबीजाणुपर्ण जो बीजाणुधानी पुंजों में व्यवस्थित लघुबीजाणुधानियों को दिखाता है। c) बीजाणुधानी पुंजों में एकत्रित अस्फुटित लघुबीजाणुधानियां। पुंजों को घेरे रहने वाले पुंज रोमों को देखिए। d) स्फुटित लघु बीजाणुधानियां। (a, महेश्वरी, 1960 से; तथा b-d, वाइलेंड, 1906 से)।

नर शंकु स्थिति में अंतस्थ होते हैं किंतु वृंतक (peduncle) से एक पार्श्व कलिका निकलती है, जो शंकु को एक ओर धकेल देती है। इस तरह बना यह नया प्ररोह शिखाग्र (shoot apex) शीघ्र ही पत्तियों और शल्कों का निर्माण शुरू कर देता है और अंततः एक अन्य नर शंकु धारण करता है। इस प्रकार की वृद्धि को संधिताक्षी (सिंपोडियल - sympodial) कहा जाता है।

चित्र 2.10 (a,b) में लघुबीजाणुपर्णों की कोशिकीय रचना को दिखाया गया है। *भरण ऊतक* (ग्राउंड टिशू - ground tissue) में संवहन बंडलों के अतिरिक्त श्लेष्मक वाहिनियां भी यहाँ-वहाँ पाई जाती हैं। एक ओर लघुबीजाणुधानियां रहती हैं। निचले या अपाक्ष (abaxial) हिस्से में लघुबीजाणुधानियां पाई जाती हैं। प्रत्येक लघुबीजाणुधानी में एक विशेष बाह्यथीसियम (exothecium) पाया जाता है। इसके बाद टेपीटम ऊतक और लघुबीजाणु (microspore) स्थित होते हैं।

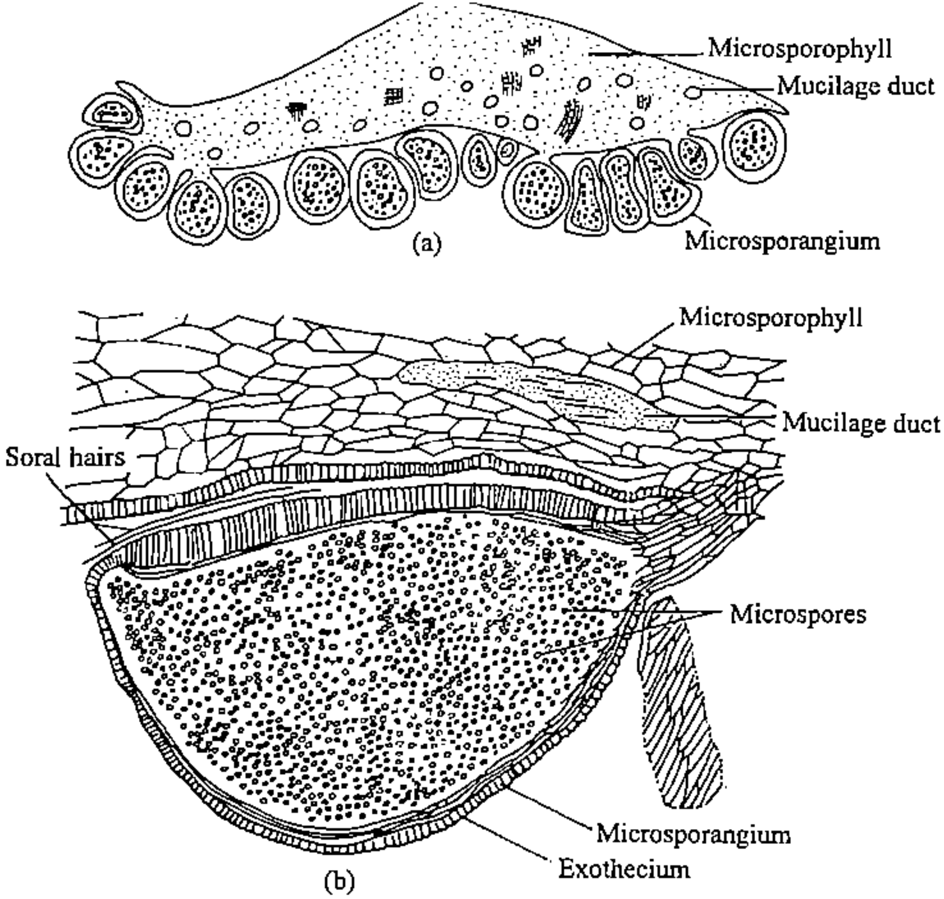

चित्र 2.10 : *साइकस जाति।* a) लघुबीजाणुपर्ण की अनुप्रस्थ काट। b) काट का एक आवर्धित भाग। चित्र में दिखाई गई लघुबीजाणुधानी अनुदैर्ध्य काट में है। (a, b) पन्त, 1973 से)।

लघुबीजाणु या परागकण, लघुबीजाणु मातृकोशिका (microspore mother cell) से लघुबीजाणुजनन (माइक्रोस्पोरोजेनेसिस - microsporogenesis) के फलस्वरूप विकसित होते हैं। विकास की विभिन्न अवस्थाओं में लघुबीजाणुओं को चित्र 2.11 में दिखाया गया है। परिपक्व परागकण की एक सतह पर खाँच होने से वह किश्ती के आकार का होता है। इनका प्रकीर्णन 3 – कोशिका अवस्था में होता है (एक प्रोथेलियल कोशिका – prothallial cell), पुंधानी (antheridial) कोशिका और नली (tube) कोशिका।

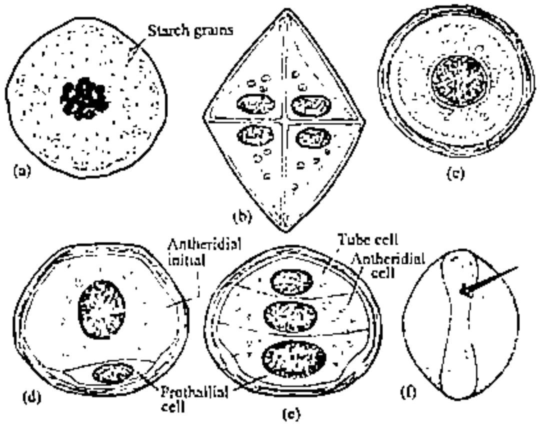

चित्र 2.11: *साइकस* में नर युग्मकोद्‌भिद के विकास की अवस्थाएं। a) अर्धसूत्री विभाजन से पूर्व एक लघुबीजाणु कोशिका जिसमें प्रचुर मात्रा में स्टार्च होता है। b) अर्धसूत्री विभाजन के बाद लघुबीजाणु चतुष्क (microspore tetrad) बनता है। c) चतुष्क का एक एककेन्द्रिक लघुबीजाणु। d) पुंधानीआरंभक (antheridial initial) और प्रोथेलियल कोशिका युक्त नवनिर्मित द्विकोशिकीय लघुबीजाणु। e) प्रकीर्णन की अवस्था में परिपक्व परागकण तीन कोशिकाओं का बना होता है। नली कोशिका और पुंधानी कोशिकाएं, पुंधानी आरंभक से जन्म लेती हैं, जिसे d) में दिखाया गया है। f) इसी अवस्था में परागकण का भीतरी दृश्य जिसमें एक सुस्पष्ट खाँच देखने में (तीर का निशान) आती है। (पन्त, 1973 से)।

2.4.2 · मादा स्ट्रोबिलस और युग्मकोद्भिद

साइकस जीनस अन्य साइकेट पादपों से अनूठा है क्योंकि इसमें संहत मादा शंकु नहीं पाया जाता (चित्र 2.12)। मादा पादप क्रमशः पर्ण समूहों की पत्तियों, अधोपर्णों (कैटाफिल - cataphyll) और फिर गुरूबीजाणुपर्णों (मेगास्पोरोफिल - megasporophyll) को जन्म देता है। यह क्रम कई बार चलता है। उत्पत्ति की दृष्टि से गुरूबीजाणुपर्णों की तुलना पर्ण समूह की सामान्य पत्तियों से की जाती रही है और दोनों को सजातीय (*होमोलोगस* - homologous) माना जाता है। *साइकस रिवोलुटा* में ये रूपांतरित तथा लघुकृत पत्तियों की तरह दिखाई देते हैं, जो कि भूरे, रोमिल *तनुशल्कों* (ramentum) से पूरी तरह से ढके रहते हैं (चित्र 2.12a)।

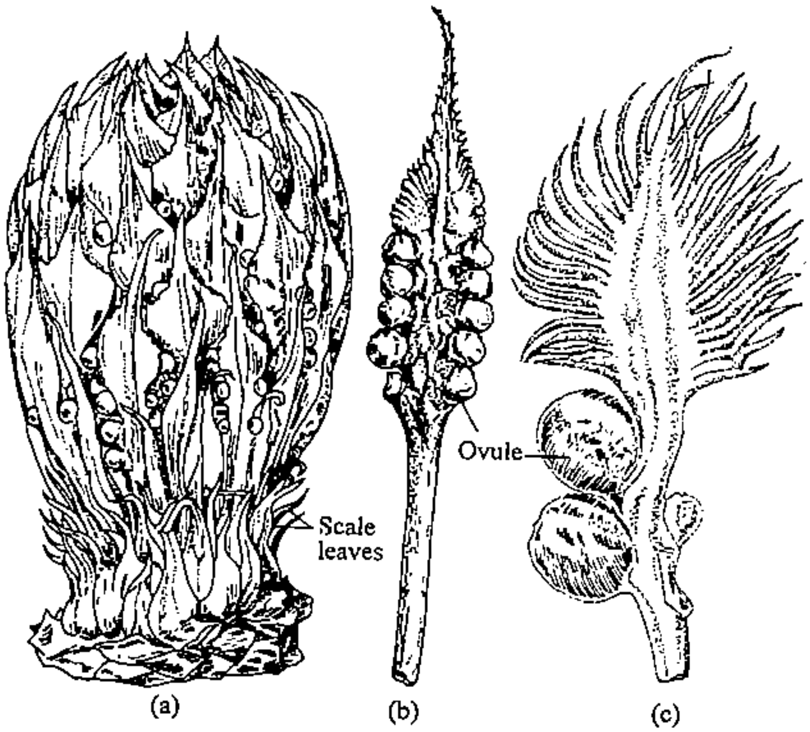

चित्र 2.12: a, b *साइ.सर्सिनैलिस,* c) *सा. रिवोल्यूटा*। a) गुरूबीजाणुपर्णों का एक झुंड। इनके मूल पर वंध्य शल्क पत्तियां मौजूद रहती हैं। b) एक आवर्धित गुरूबीजाणुपर्ण। दो पंक्तियों में एक-दूसरे के सामने व्यवस्थित बीजाण्डो को देखिए। गुरूजीजाणुपर्ण का शीर्ष भाग (तीर) बंध्य होता है। c) एक और गुरूबीजाणुपर्ण। b में बताए गए उन्हीं लक्षणों को फिर से देखिए। वंध्य शीर्ष भाग बड़ा, चपटा और पंखे की तरह है। (a, b, महेश्वरी 1960 से; c, गिफर्ड और फॉस्टर से पुनः आरेखित)।

प्रत्येक गुरूबीजाणुपर्ण लगभग 30 से.मी. या अधिक लंबा होता है। इसमें दो से लेकर 12 बीजांड, दो पंक्तियों में व्यवस्थित पाए जाते हैं। ये बीजांड ऋजु (*आर्थोट्रोपस* – orthotropous), छोटे वृंत वाले होते हैं और एक-दूसरे के सामने या अर्धसम्मुख स्थित होते हैं (चित्र 2.12 b, c)। *साइकस* जातियां पादप जगत में सबसे बड़े बीजांड बनाती हैं जो लंबाई में 6 से 7 से.मी. तक होते हैं। विकास की आरंभिक अवस्था में गुरूबीजाणुपर्ण की अनुदैर्ध्य काट में एक सुस्पष्ट गुरूबीजाणुमातृ कोशिका दिखाई देती है (चित्र 2.13a)। यह कोशिका अर्धसूत्री-विभाजन कर केवल गुरूबीजाणुओं का एक रैखिक चतुष्क बनाती है। चतुष्क का निचला गुरूबीजाणु ही सक्रिय होता है। यह चतुष्क समसूत्री विभाजन की श्रृंखलाओं से गुजर कर मादा युग्मकोद्भिद ऊतक बनाता है। युग्मकोद्भिद के मुक्त केन्द्रकों के चारों ओर कोशिका भित्ति बनने की अवस्था के तुरंत बाद ही स्त्रीधानी का निर्माण प्रारंभ हो जाता है। मादा युग्मकोद्भिद् की सतह आवरण कोशिकाओं से अलग हो जाती हैं। इस प्रक्रिया में कुछ जगह सी बन जाती है। यह जगह स्त्रीधानी कक्ष कहलाती है।

एक परिपक्व स्त्रीधानी की ग्रीवा एक ही पंक्ति में व्यवस्थित दो कोशिकाओं से बनी होती है। ग्रीवा नाल कोशिका अनुपस्थित होतीं है तथा अभ्यक्ष नाल केन्द्रक भी अपह्रसित हो जाता है। अंडज केन्द्रक

काफी बड़ा होता है तथा आंख से बिना किसी यंत्र की सहायता से देखा जा सकता है। *सा. रेवेल्यूटा* में यह 500µ तक होता है। स्त्रीधानी के परिपक्व होने में 2-3 माह का समय लग जाता है। इसके विकास की विभिन्न अवस्थाएं चित्र 2.13 में दिखाई गई हैं। चित्र को ध्यान से देखिए।

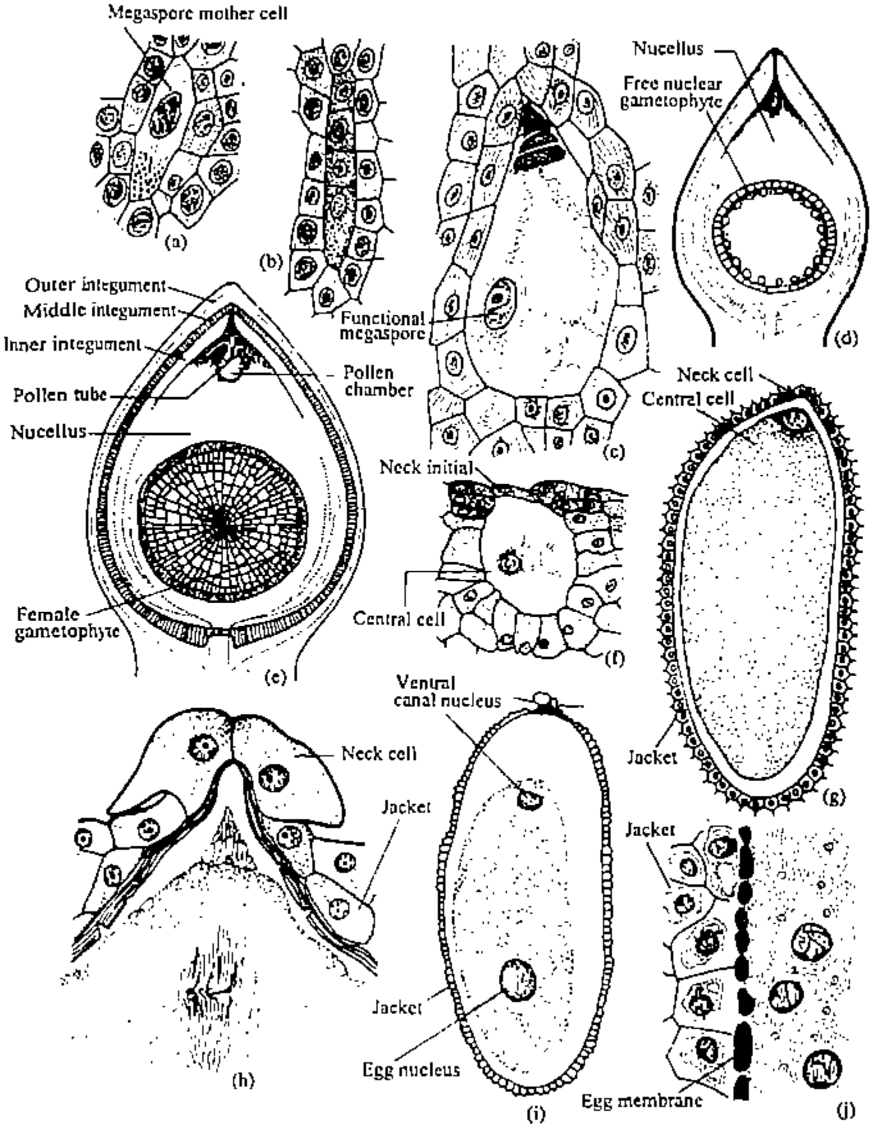

चित्र 2.13 : साइकैडों में मादा युग्मकोद्भिदों के विकास की अवस्थाएं। a-c, f-i) *साइकस* जातियां, d, e) *डायून* जाति a) एक गुरूबीजाणु मातृकोशिका b) गुरूबीजाणु मातृकोशिका के अर्धसूत्रण के पश्चात बना एक चतुष्क। c) सक्रिय गुरूबीजाणु एक बड़ी, सुस्पष्ट कोशिका होती है, जबकि शेष तीन कोशिकाएं अपह्रासी पिंडों के रूप में मौजूद रहती हैं (कोशिका से ऊपर के तीन काले पिंडों को देखिए। d, e) सक्रिय गुरूबीजाणु मातृ कोशिका के विभाजन के बाद अनेक केन्द्रकों के निर्माण को दर्शाती अवस्थाएं। ये मुक्त केन्द्रक धीरे-धीरे अपने चारों ओर कोशिका भित्तियां अर्जित कर लेती हैं जैसी कि चित्र e में तीनों परतों - बाह्य, मध्य और आंतरिक बीजांडकाय को घेरे रहने वाले अध्यावरणों को भी ध्यान से देखें, बीजांडकाय में शीर्ष पर एक प्रमुख पराग कक्ष मौजूद होता है। मादा युग्मकोद्भिद् बीजांडद्वारी कोशिकाओं से स्त्रीधानी प्रारंभक विभेदित होते हैं। f से j तक के चित्रों में स्त्रीधानी के विकास की c के बाद की अवस्थाओं को दिखाया गया है। f) स्त्रीधानी प्रारंभ विभाजन कर एक ग्रीवा प्रारंभक (neck initial) और एक केन्द्रीय कोशिका (central cell) बनाती है। g) एक तरुण स्त्रीधानी में एक-केन्द्रीय कोशिका, दो ग्रीवा कोशिकाएं और सुस्पष्ट जैकेट होते हैं। h) केन्द्रीय कोशिका केन्द्रक में विभाजन दर्शाती अवस्था। इस अवस्था में सुस्पष्ट ग्रीवा कोशिका पर भी ध्यान दें। i) परिपक्व स्त्रीधानी में अंडज (egg), अध्यक्ष नाल केन्द्रक (ventral canal nuclei), और अपहासित ग्रीवा कोशिकाएं होती हैं। अंडज का केन्द्रक वृद्धि कर अक्सर 500µm तक बड़ा हो जाता है और स्त्रीधानी में मध्य भाग में स्थित रहता है। j) मुक्त केन्द्रक भ्रूण (free-nuclear embryo) का एक भाग जिसके चारों ओर जैकेट कोशिकाएं हैं। मोटी, अण्डज झिल्ली में बड़े गर्तों द्वारा कोशिकाद्रव्य संबंधन स्थापित होते हैं। a-c, दी सील्वा और ताम्बीया, 1950 से; d, e, चेम्बरलेन, 1935 से; f, h, स्वामी, 1948 से तथा g, i, j, महेश्वरी 1960 से।

बोध प्रश्न 4

साइकैड के संबंध में निम्न में से कौन-कौन सा कथन सही नहीं है ? नीचे दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए।

i) एक मादा पौधे द्वारा उत्पन्न पत्रप्रकलिका भी एक मादा पौधे को ही जन्म देगी।

ii) अधिकांश साइकैडों में अनेक नर शंकु और एक ही मादा शंकु उत्पन्न होता है।

iii) परिपक्व मादा शंकु परागणकारियों को आकर्षित करने के लिए एक विशिष्ट गंध छोड़ता है।

iv) नर युग्मकोद्भिद् तक पहुंचने के लिए शंकु , बीजाणुधानी, लघु-बीजाणुपर्ण और बीजाणुधानी पुंज के क्रम में सरंचनाओं से गुजरना पड़ता है।

v) जनन संरचनाओं में श्लेष्मक वाहिनियां नहीं होती।

vi) मादा पौधा पहले पर्णसमूह की पत्तियों, फिर अधोपर्णों और तत्पश्चात् गुरूबीजाणुपर्ण को उत्पन्न करता है।

vii) गुरूबीजाणुपर्णों को पर्णसमूह की पत्तियों का व्युत्पन्न माना जाता है।

viii) साइकैडों को पादप जगत में सबसे छोटे बीजांड उत्पन्न करने वाले पादपों के रूप में जाना जाता है।

उत्तरों के लिए विकल्प

क) i, ii, iii, vii

ख) iii, iv, vi, vii

ग) iv, v, vi, vii

घ) ii, iv, v, viii

2.5 परागण, निषेचन और भ्रूणोद्भव

नर और मादा युग्मकोद्भिदों के विकास के बाद आगे का विकास तभी हो सकता है, जब दोनों का परागण द्वारा परस्पर मेल हो जाए यानी निषेचन का संपादन हो। मादा पौधों तक परागकण हवा या कीटों के माध्यम से पहुंचते हैं। इन परागकणों को बीजांड की चोटी पर स्रावित होने वाली परागण बूंद में पकड़ लिया जाता है और फिर इन्हें बीजांडद्वार के मार्ग से पराग कक्ष में ''चूस'' लिया जाता है। इसके बाद पराग कक्ष बंद हो जाता है तथा बाहरी वातावरण से इसका संबंध टूट जाता है। इससे रोगाणुओं के आक्रमण से रक्षा और विकसित होने वाले भ्रूण को एक अनुकूल वातावरण मिलता है। इस बीच परागकण अंकुरित होता है तथा प्रोथेलियम कोशिका के सामने वाले सिरे पर एक पराग नली विकसित होती है। यह परागनली चूषकांगी होती है। पुंधानी कोशिका (antheridial cell) विभाजित होकर बंध्य (stalk) और पुमणुजन कोशिका (spermatogenous cell) बनाती है। पुमणुजन कोशिका के विभाजन के फलस्वरूप दो पुमणु बनते हैं (देखिए चित्र 2.11, और 2.14)। चूषकांगी पराग नली की लगातार वृद्धि के फलस्वरूप बीजांडकायी ऊतक का ह्रास हो जाता है। साइकैडों के पुमणु, समस्त वनस्पति जगत में सबसे बड़े, पुंयुग्मक (male gametes) हैं तथा यह बिना किसी सहायता से आँख से देखे जा सकते हैं। पुमणु लट्टू के से आकार के होते हैं तथा इनकी सतह पर कशाभिका (flagella)

सर्पिल पट्ट के छः घुमाव मौजूद होते हैं। पुमणु बढ़ती हुई परागकण नलिका से जो कि प्रोथैलियम कोशिका के पार्श्व से निकलती है, स्त्रीधानी में पहुंचते हैं। पुमणु पक्ष्माभी होता है जो अंततः अपने पक्ष्माभी पट्ट को उतार फेंकता है और उसका केन्द्रक अंडज में पहुंचकर इसमें उतर जाता है। इस तरह निषेचन पूर्ण होता है। इस प्रक्रम के फलस्वरूप युग्मनज (zygote) बनता है। प्रत्येक पराग से उत्पन्न होने वाले दो पुमणुओं में सिर्फ एक ही पुमणु भाग लेता है। दूसरे पुमणु का ह्रास हो जाता है। भ्रूणोद्भव का आरंभ युग्मनज के विभाजन से होता है। परिवर्धन के आरंभिक चरणों में प्राक्भ्रूण (proembryo) मुक्त केन्द्रिक होता है तथा केन्द्रक स्त्रीधानी की रसधानी के चारों ओर वितरित होते हैं। कुछ समय बाद अधिकतर केन्द्रक आधार में चले जाते हैं और ऊपरी हिस्से में से कुछ ही केन्द्रक रह जाते हैं। भित्ति निर्माण आधार की ओर से प्रारंभ होता है। इसके फलस्वरूप प्राक्भ्रूण बनता है। ऊपरी कोशिकाएं लम्बे आकार की हो जाती हैं तथा निलंबक बनाती हैं। पूर्ण कोशिकीकरण नहीं होता तथा निलंबक और मुक्त केन्द्रक क्षेत्र के बीच के कोशिका क्षेत्र, बफर क्षेत्र कहलाते हैं।

आरंभिक अवस्थाओं में बहुभ्रूणता (polyembryony) यानी एकाधिक भ्रूणों का विकास भी देखने में आता है। किंतु अंततः इनमें सर्वाधिक प्रबल भ्रूण ही, परिपक्व हो पाता है। बीज में भ्रूण की वृद्धि बड़ी धीमी होती है और निषेचन के बाद परिपक्व होने में भ्रूण को एक वर्ष से भी अधिक समय लग जाता है। अब चूंकि एक गुरूबीजाणुपर्ण में अनेक बीजांड पाए जाते हैं, तो आप पूछ सकते हैं कि इनमें से कितने बीज में विकसित हो पाते हैं ? कई बीजांड तो अपरागणित (unpollinated) ही रह जाते हैं या वृद्धिरोध से ग्रस्त या छोटे ही रहते हैं। पक्व बीज चौड़े, दीर्घवृत्ताकार या अंडाकार, पार्श्व में कुछ कुछ चपटे और द्विपालिक (बाइलोबेट - bilobate) होते हैं। तरुण बीज भूरे रोमों से पूरी तरह ढके होते हैं। बीज के परिपक्व होने पर ये रोम झड़ जाते हैं। पक्व बीज मांसल और चटक नारंगी या लाल रंग के हो जाते हैं। उष्णकटिबंधीय या उपोष्ण पादप होने के कारण साइकैड शीतविश्राम नहीं करते। बीज का अंकुरण अधोभूमिक (हाइपोजील - hypogeal) होता है (चित्र 2.15)।

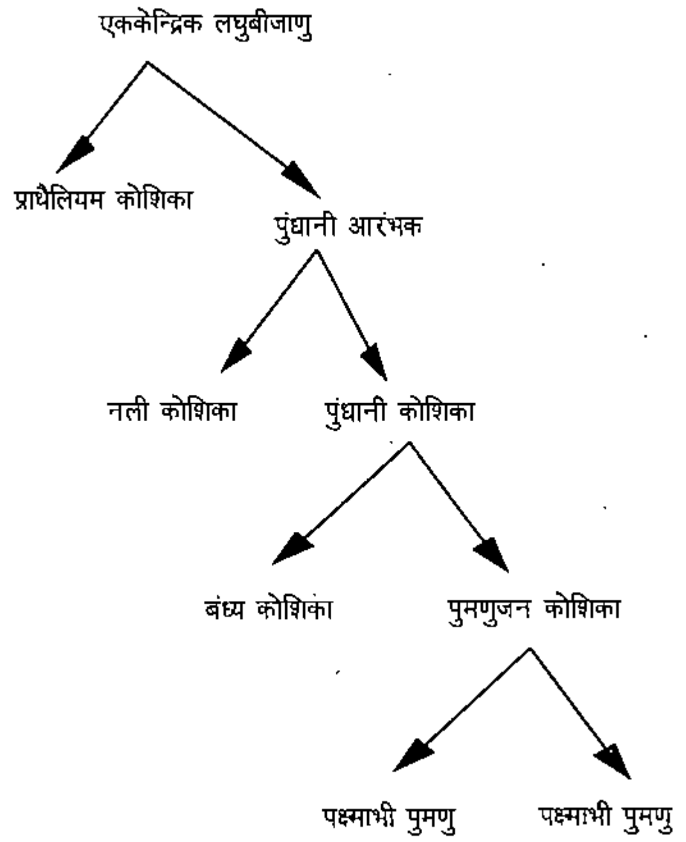

चित्र 2.14 : साइकैडों में नर युग्मकोदभिद के विकास की अवस्थाओं को दर्शाता चित्र।

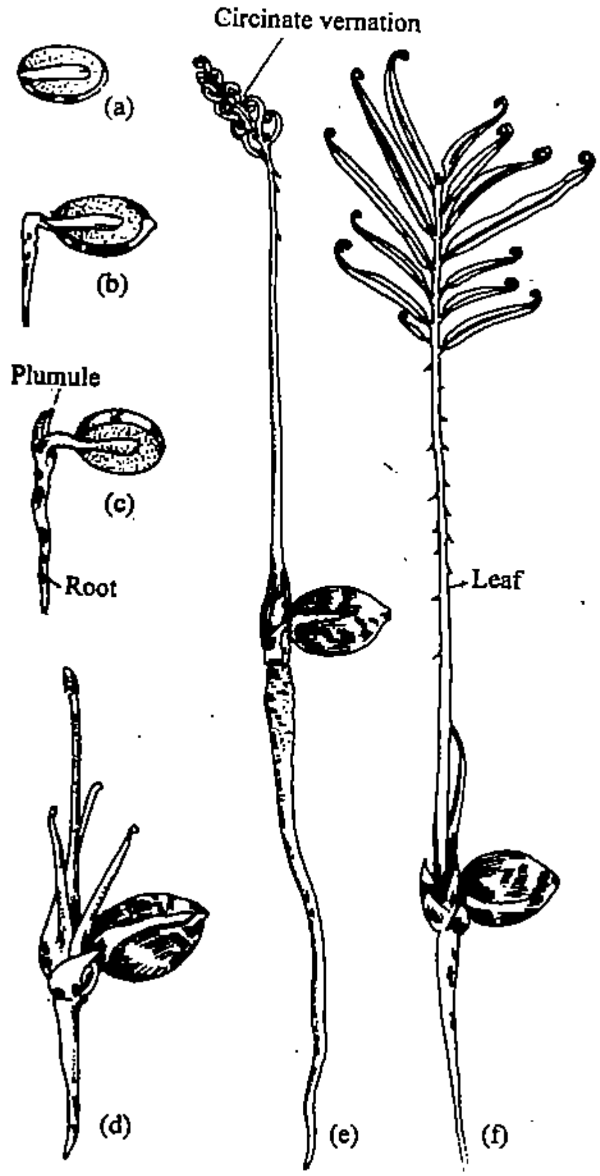

चित्र 2.15 : (a-f) साइकस पौध के विकास की अवस्थाएं (a-f महेश्वरी, 1960 से)।

2.6 विशिष्ट लक्षण और संरक्षण संबंधी समस्याएं

साइकैड मध्यजीवी महाकल्प के मध्यकाल के दौरान बहुतायत में पाए जाते थे। इनकी प्राचीनता की पुष्टि विश्व के अनेक भागों में मिलने वाले जीवाश्म साइकैडों की विशाल संख्या से हो जाती है। पर आधुनिक साइकैड का वितरण बहुत सीमित है। अधिकांश साइकेड पादपों में कुछ खास किस्म के विषैले ग्लाइकोसाइड (सायकेसिन और मैक्रोजैमिन) या कुछ अन्य कार्यिकी सक्रिय पदार्थ पाए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि इन पदार्थों की उपस्थिति ने ही इस पादप समूह को आधुनिक युग तक जीवित रहने में सहायता की (इसके लिए देखें इकाई-5 जिम्नोस्पर्म्स का आर्थिक महत्व)।

बॉक्स 2.2 : साइकैडों के ह्रास के कारण और उनके संरक्षण के उपाय

साइकैड पादपों पर भारी दबाव निम्नलिखित कारणों से पड़ रहा है : i) उनके प्राकृतिक आवास को बेतहाशा नष्ट किया जाना और बिक्री या संग्रहकर्ताओं के संग्रह के लिए पौधों को निरंतर उखाड़ा जाना। आई.यू.सी.एन. (IUCN- International Union for Conservation of Nature and National Resources) ने अब तक विश्व में इसकी 26 जातियों को विलोपन के खतरे की सूची में रखा है। साइकैड पौधों का अंतरराष्ट्रीय और स्थानीय दोनों स्तरों पर संरक्षण किया जाना जरूरी है। सी.आई.टी.ई.एस. (CITES- Conservation on International Trade in Endangered Species) ने संकटापन्न जातियों के व्यापार पर रोक/प्रतिबंध लगाए हैं और इस श्रेणी में कुछ साइकैड पादप भी सूचीबद्ध हैं।

वानस्पतिक उद्यानों में इनकी उपज ने इनके संरक्षण में महती भूमिका निभाई है। साइकैड पादपों के महत्व पर बढ़ती जागरूकता प्राकृतिक आवास में भी इनकी उत्तरजीविता को सुनिश्चित करने में सहायक होगी।

टेरोस्पर्म यानी पक्षबीजी पादपों की भांति साइकैडेलीज पादपों में भी अनावृतबीजी लक्षणों के साथ-साथ बीजधारण प्रकृति जैसी अनेक फिलिसीयन (filicean) विशेषताएं देखने में आती हैं। किंतु बीज-पर्णांगों के विपरीत इनकी बीजाणुधानियां विशिष्टीकृत पार्श्व संरचनाओं में विकसित होती हैं जिन्हें बीजाणुपर्ण कहते हैं। ये बीजाणुपर्ण अंतस्थ नर और मादा शंकुओं के समूहों में गठित रहते हैं। इसका अपवाद सिर्फ *साइकस* है, जिसमें पत्तीनुमा गुरूबीजाणुपर्णों का एक अदृढ़ विन्यास पाया जाता है। साइकैडों की शारीरी लक्षणगत विशेषता पर्णकटिबंध अनुपथों की उपस्थिति है।

यह पादप समूह आज भी उन पादपों की वंशावली के अवशेषों के रूप में जीवित हैं, पृथ्वी में मौजूद वनस्पति पर जिनका कभी वर्चस्व था। किंतु अब ये तेजी से लुप्त हो रहे हैं जिसका आंशिक कारण इनका ह्रास और मुख्यत: उनके प्राकृतिक आवासों में मानव का अनियंत्रित अतिक्रमण है। मानव के आक्रमण से अगर इन्हें बचाया नहीं गया तो वह समय दूर नहीं जब संभवत: सभी जातियां इस पृथ्वी से लुप्त हो जाएंगी।

भारत सहित विश्व के अन्य भागों में साइकैड जातियां विलुप्ति की कगार पर खड़ी हैं और उनका नाम रेड डेटा बुक में दर्ज है। इसलिए इन प्राचीन पौधों का संरक्षण अति आवश्यक है। जिन आवासों में इनका विलोप हुआ वहां इनकी नई पौध को उगाना एक संरक्षण उपाय होगा। सरंक्षण का एक और उपाय जैवप्रौद्योगिकी माध्यमों द्वारा पात्रे (इन-विट्रो- In-vitro) प्रवर्धन है। इन आकर्षक पौधों के इन समूहों के संरक्षण के लिए आप भी कुछ उपाय सोच सकते हैं।

पक्षबीजी या *टेरिडोस्पर्मेलीज* कार्बनी कल्प (Carboniferous period) से पर्मियन (Permian) युग के दौरान पाए जाते थे। इनमें पर्णांगों और अनावृतबीजी पौधों दोनों की ही विशेषताएं थीं, जैसे पर्णांगों की तरह पर्णसमूह और आवृतबीजी की तरह बीजों का निर्माण।

बोध प्रश्न 5

साइकैडों में परागण से जुड़ी घटनाओं का संकल्पना मानचित्र बनाइए।

बोध प्रश्न 6

साइकैड और फिलिकेलीज के बीच तुलना कीजए।

2.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- साइकैडेलीज मध्यजीवी महाकल्प के मध्यकाल में पाए जाते थे। वर्तमान में पूर्वी और पश्चिमी गोलार्द्ध के कुछ ही स्थानों में इनकी 100 जातियाँ पाई जाती हैं, जिन्हें जीनसों में वर्गीकृत किया गया है।
- बनावट में साइकैड पादप ताड़ की तरह दिखाई देते हैं। इनमें एक स्कंधी, आकाशीय तना पाया जाता है जो पत्तियों के एक मुकुट से सज्जित रहता है। पत्र प्रकलिकाएं जोकि अपस्थानिक कलिकाएं होती हैं, का विकास शाखाओं में होता है और ये पौधे के कायिक प्रवर्धन में सहायक हैं। प्रति वर्ष अनुकूल ऋतुओं में पत्तियों के दो मुकुटों का विकास होता है।
- *साइकस* में, प्राथमिक जड़ तंत्र मूसला जड़ का बना होता है जिसका स्थान अपस्थानिक जड़ें ले लेती हैं। इनमें से कुछ जड़ों में भी शाखन होता है जिन्हें प्रवाल मूल कहते हैं। जो भू-अनुवर्ती हो जाती हैं और नाइट्रोजन यौगिकीकरण करती हैं। शारीरीय दृष्टि से तरुण जड़ें आवृतबीजी पौधों की जड़ों से मिलती-जुलती हैं। प्रवाल जड़ की शारीरी संरचना सामान्य जड़ के समान ही होती है, किन्तु इसके कॉर्टेक्स के मध्य भाग में एक शैवाल खंड पाया जाता है।
- तना मरुद्भिदी होता है। इसकी प्रचुर श्लेष्मक कोशिकाएं जल के संरक्षण में सहायक होती हैं। मज्जा बड़ा होता है जो तने के लगभग एक तिहाई भाग घेरे रहता है। तना यांत्रिक शक्ति अपनी सतह पर मौजूद स्थायी पर्णाधारों से अर्जित करता है। पर्ण कटिबंध अनुपथ साइकैड तने की एक और विशेषता है।
- *साइकस* में द्विरूपी पत्तियां पाई जाती हैं। ये हैं - शल्की पत्तियां और सामान्य पत्तियां जो एकांतर तरीके से बनती हैं। शल्की पत्तियों में तनुशल्क का एक सघन आवरण होता है और पर्णसमूह की पत्तियां संयुक्त, एक-पिच्छकारी होती हैं, जिनमें एक सुस्पष्ट रैकिस और पर्णक पाए जाते हैं। रैकिस और पर्णक दोनों में मरुद्भिदी लक्षण देखने को मिलते हैं। रैकिस संवहन-न्यास की विशेषता द्विदारुक या कूटमध्यादिदारुक बंडल हैं।

- *साइकस* में नर और मादा जनन अंगों का विकास भिन्न पौधों में होता है जिसका मतलब है कि वे एकलिंगाकायी होते हैं। नर शंकु एक बड़ा अंतस्थ संरचना है, जो अकेला ही बनता है और इसमें एक विचित्र गंध पाई जाती है। नर शंकु अनेक लघुबीजाणुपर्णों से मिलकर बना होता है, प्रत्येक लघुबीजाणुपर्ण के अधर भाग में असंख्य बीजाणुधानियां पाई जाती हैं, जो समूहों में होती हैं। मादा पौधा अनेक मादा शंकु बनाता है, प्रत्येक मादा शंकु में दो पंक्तियों में कई बीजांड पाए जाते हैं। लघुबीजाणु मातृकोशिका और गुरूबीजाणु मातृ कोशिकाएं क्रमश: नर और मादा युग्मकोद्भिदों के प्रजनक हैं।
- परागण कीटों या हवा के द्वारा होता है। पुमणु पक्ष्माभी होता है तथा ये पुयुंग्मक समस्त वनस्पति जगत में सबसे बड़े होते हैं। निषेचन के फलस्वरूप युग्मनज की उत्पत्ति होती है। युग्मनज में भ्रूणोद्भव होता है और बीज का निर्माण होता है। बीज शीत विश्राम नहीं करते और इनमें अंकुरण अधोभूमिक होता है।
- ऐसा माना जाता है कि साइकैड पादपों में कार्यिकीय सक्रिय पदार्थों की उपस्थिति के कारण ही यह पादप जाति आधुनिक युग तक जीवित बनी रह सकी है। यह पादप समूह बीजपर्णांगों से काफी समानताएं दर्शाता है।

2.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. साइकैड में शाखन किन कारणों से होता है ?

   ....

   ....

2. ऐसा क्यों होता है कि साइकैड पौधों के तने नीचे की ओर, ऊपर की तुलना में पतले होते हैं ?

   ....

   ....

3. *साइकस* के किसी वृक्ष की आयु का निर्धारण आप किस तरह करेंगे ?

   ....

   ....

4. *साइकस* की सामान्य और प्रवाल जड़ में तुलना कीजिए। दोनों में अंतर स्पष्ट करने के चिह्नांकित चित्र बनाइए।

5. सिर्फ चिह्नांकित रेखाचित्रों की सहायता से पर्णक में रैकिस की संरचना को दो स्तरों पर दर्शाइए। पहला, उस बिंदु पर जहां यह पर्णक से जुड़ता है और दूसरा, इसके सिरे के समीप।

6. साइकैडों की नर और मादा जनन संरचनाओं की तुलना कीजिए।

....

....

....

....

7. साइकैडों के शारीरी लक्षण बताइए।

....

....

....

....

8. साइकैडों के संरक्षण के लिए एक रणनीति सुझाइए।

....

....

....

....

2.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1. घ
2. ग
3. क) मूसला
   ख) प्रवाल
   ग) विस्तृत, उपस्थिति
   घ) स्थायी पर्णाधार

च) सागू

छ) पर्णाधार कवच

ज) संचरण ऊतक

4. घ

5. भाग 2.5 देखिए।

संकेत : इस भाग से परागण संबंधी मुख्य शब्दावलियों को चुनिए। उन्हें एक तार्किक अनुक्रम में व्यवस्थित कीजिए और फिर उन्हें तीरों के निशान से जोड़िए। इन शब्दावलियों को जोड़ने के लिये संयोजी शब्दों का भी आप प्रयोग कर सकते हैं।

6. संकेत : भाग 2.6 को पढ़िए और इकाई में दिए गए सामयिक बिंदुओं को संग्रहित कीजिए।

अंत में कुछ प्रश्न

1. साइकैड पादपों में शाखन का एक महत्वपूर्ण कारक शारीरिक चोट है।

2. वृक्षों की आयु बढ़ने के साथ-साथ पुराने पर्णाधारं जो स्पष्टतया निचले भाग के समीप होते हैं, वे विच्छेदित हो जाते हैं। इसलिए निचला स्कंध ऊपरी भाग से पतला दिखाई देता है।

3. पर्णाधारों की संख्या को गिनकर, उसे मुकुट की पत्तियों की अर्ध संख्या से विभाजित करें। देखिए भाग 2.2 ।

4. देखिए भाग 2.3.1 ।

5. उपभाग 2.3.3 दिए गए वर्णन को पढ़िए और रेखाचित्र बनाइए।

6. उपभाग 2.4.1 और 2.4.2 को पढ़िए।

संकेत : इन भेदों को एक तालिका में क्रमबद्ध लिखिए। रेखाचित्र आपके उत्तरों को और निखारेंगे। इसलिए उनका प्रयोग यथासंभव अधिकाधिक कीजिए।

7. संकेत : कायिक और जननक संरचनाओं की शारीरी विशेषताओं को लिखिए।

8. अपने विचार लिखिए।

संकेत : अपने उत्तर में आप इन पहलुओं को मिला सकते हैं : जागरूकता का प्रसार, स्वस्थाने संरक्षा (*in situ* conservation) जैवप्रौद्योगिकी खोजों का प्रयोग।

इकाई 3 कोनिफेरोप्सिडा : *पाइनस*

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
3.2 वितरण, आवास तथा सामान्य गुण
3.3 कायिक संरचनाएँ
3.3.1 जड़
3.3.2 तना
3.3.3 पत्ती
3.4 प्रजनन संरचनाएँ
3.4.1 नर शंकु तथा युग्मोकद्भिद
3.4.2 मादा शंकु तथा युग्मोकद्भिद
3.5 परागण तथा निषेचन
3.6 भ्रूणोद्भव तथा बीज का विकास
3.7 सारांश
3.8 अन्त में कुछ प्रश्न
3.9 उत्तर

3.1 प्रस्तावना

आपने जिम्नोस्पर्म्स का सामान्य परिचय पढ़ा है तथा इकाई 2 में *साइकस* के बारे में विस्तार से भी पढ़ा है। इस इकाई में आप कोनीफरेलीज के बारे में तथा विशेषतौर पर *पाइनस* के बारे में पढ़ेंगे।

कोनिफरेलीज सभी विद्यमान जिम्नोस्पर्म्स का लगभग 75% भाग हैं, तथा आज विश्व की वनस्पति का एक महत्वपूर्ण भाग बनाते हैं। इस गण में सात कुल हैं जिनमें 52 वंश तथा 550-600 जातियां हैं।

कोनिफर्स/शंकु वृक्ष : कुछ वंश पूरे विश्व में विस्तृत रूप से वितरित हैं जबकि कुछ टैक्सा/वर्गक विशेषक्षेत्री हैं तथा सीमित वितरण दर्शाते हैं। यह इंगित करता है कि ये एक प्राचीन समूह है जो कभी विस्तृत रूप से बिखरा (मध्य-मध्यजीवी महाकल्प) हुआ था तथा यूरोप में विस्तृत वन पाए जाते थे। उसके बाद ह्रास होने के कारण इनका वितरण वियोजित हो गया।

विश्व के शीतोष्ण (temperate) क्षेत्र के कोनिफर्स/शंकु वृक्षों का घर हैं, सिर्फ कुछ वंश उष्णकटिबंधी (tropical) हैं। पादपों की ऊँचाई बहुत परिवर्ती होती है।

कोनिफर्स के सामान्य गुण

1. काष्ठीय बहुवर्षी एवं लंबे तथा छोटे प्ररोह युक्त, पर्णीय तथा शल्कीय पत्तियों की उपस्थिति वाले पेड़ होते हैं।
2. बर्हिमुखी अथवा अंर्तःमुखी कवकमूलों (endotropic mycorrhiza) से संबद्ध मूसला जड़ें होती हैं।
3. काष्ठ धनदारूक, तथा द्वितीयक दारू में तंतु अनुपस्थित होते हैं।
4. प्रजनन अंग एकलिंगी सघन शंकुओं में पाये जाते हैं।
5. परागकण (पखंयुक्त/पंखहीन) अचल पुमणु उत्पन्न करते हैं।

आपने इकाई 1 में पढ़ा है कि कोनिफरेलीज़ में सात कुल जैसे पाइनेसी (एबीटीएसी), टैक्सोडिएसी, क्यूप्रिएसी, पोडोकार्पेसी, एरोकेरिएसी, सिफेलोटैक्सेसी तथा टैक्सेसी पाए जाते हैं।

पाइनेसी कोनिफर्स का सबसे विस्तृत रूप से पाए जाने वाला कुल है। यहां हम आपको पाइनेसी से सामान्य तौर पर परिचय कराएंगे तथा वंश *पाइनस* का विस्तृत तौर पर वर्णन करेंगे।

पाइनेसी

कुल पाइनेसी में, 10 वंश हैं : *एबीज (Abies)*, *कैथया (Cathaya)*, *सिड्रस (Cedrus)*, *केटीलेरिया (Keteleeria)*, *लैरिक्स (Larix)*, *पाइसिया (Picea)*, *पाइनस (Pinus)*, *सूडोलैरिक्स (Pseudolarix)*, *सूडोसूगा (Pseudotsuga)*, तथा *सूगा (Tsuga)*।

इसमें काफी मात्रा में रालयुक्त झाड़ अथवा वृक्ष होते हैं। पत्तियां सदाबहार तथा पर्णपाती, सामान्यत: राल नलिकाओं युक्त, सूई जैसी या दीर्घायत, एकल तथा सर्पिल रूप में व्यवस्थित अथवा दलपुट प्ररोहों पर एक साथ समूहित होते हैं।

नर तथा मादा शंकु एक ही वृक्ष पर पाए जाते हैं। नर शंकु में एक अक्ष होता है जिस पर असंख्य सर्पिल रूप से व्यवस्थित लघुबीजाणुपर्ण होते हैं। मादा शंकुओं में सहपत्र शल्क तथा बीजांडधर शल्क होते हैं, बीज पंखयुक्त या पंखहीन व प्रति शल्क दो होते हैं।

भारतीय उपमहाद्वीप में छह वंश पाए जाते हैं। ये हैं *पाइनस, सूगा, पाइसिया, एबीज, सिड्रस* तथा *लैरिक्स*। अब हम वंश *पाइनस* का वर्णन करेंगे तथा इसके आकृति विज्ञान, शारीर तथा प्रजनन का भी विस्तृत वर्णन करेंगे।

उद्देश्य

आप पहले ही साइकैड्स से परिचित हो चुके हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ हो सकेंगें :

- कोनिफर्स/शंकु वृक्षों के सामान्य गुणों को बताने में,
- पाइनेसी के विभिन्न वंशों को सूचीबद्ध करने में,
- भारत में *पाइनस* की विभिन्न जातियों के वितरण को बताने में,
- *पाइनस* की कायिक संरचनाओं के आकृति विज्ञान तथा शारीर का वर्णन करने में,
- *पाइनस* में नर तथा मादा शंकुओं का संरचनात्मक तथा विकासात्मक वर्णन करने तथा उनमें उपस्थित युग्मकोद्भिदों का वर्णन करने में,
- *पाइनस* के परागण तथा निषेचन के बारे में बताने में, तथा
- *पाइनस* प्राक्भ्रूण के बनने तथा उसके बाद के भ्रूणोद्भव का वर्णन करने में।

3.2 वितरण आवास तथा सामान्य गुण

वंश *पाइनस* इस कुल का सबसे प्रसिद्ध प्रतिनिधि है तथा अति प्राचीन काल से इन्सानों को इसकी जानकारी है। पाइनस मुख्य रूप से उत्तरी यूरोप, उत्तरी तथा मध्य अमरीका, उत्तरी अफ्रीका के उपोष्ण क्षेत्रों तथा केनरी द्वीप, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, भारत, म्यांमार तथा फिलीपीन्स में वितरित हैं तथा भूमध्यरेखा को पार करके ये इंडोनेशिया तक में फैले हुए हैं। उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में ये उपोष्ण या अधिक शीतोष्ण ऊँचाइयों पर पाए जाते हैं। *पाइनस मर्कुसी* (P. murksi) एकमात्र शंकुवृक्ष है जो भूमध्यरेखा को पार करता है।

वंश *पाइनस* सदाबहार वृक्षों की सौ से अधिक जातियों द्वारा प्रदर्शित होता है। पाइनों/शंकु वृक्ष विस्तृत शुद्ध वन या चौड़ी पत्तियों वाले वृक्ष के साथ विपर्यास रूप से मिश्रित वन बनाते हैं। *पाइनस* की सात जातियां भारत में पाई जाती हैं, जिनमें से चार हिमालय में सीमित हैं।

पाइनस एक खूबसूरत लंबा वृक्ष है, जिसमें ऊर्ध्वाधर शाखाएं चक्करों में व्यवस्थित रहती हैं, जो पेड़ को पिरामिडीय रूप प्रदान करती हैं परन्तु बाद की अवस्थाओं में वृक्ष अपनी सममिति खोने लगता है।

बॉक्स 3.1 : पाइनस का भारतीय उपमहाद्वीप तथा पड़ोसी देशों में वितरण

जातियां	पाए जाने का स्थान
पाइनस वैलीचियाना (*P. Wallichiana*)	पाकिस्तान से लेकर अरुणाचल प्रदेश तक नेपाल और भूटान; काश्मीर, हिमालच प्रदेश, कुमाऊँ, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश से गुजरता हुआ।
पाइनस अरमण्डी (*P. armandii*)	अरुणाचल प्रदेश, मध्य व पश्चिम चीन और ताइवान
पाइनस भूटानिका (*P. bhutanica*)	अरुणाचल प्रदेश व भूटान
पाइनस जिरार्डिआना (*P. gerardiana*)	उत्तर पश्चिम हिमालय, अफगानिस्तान से काश्मीर, हिमाचल प्रदेश
पाइनस केसिया (*P. kesiya*)	खासी और नागा हिल्स, मणिपुर, म्यांमार व फिलीपीन्स
पाइनस रॉक्सबरघाई (*P. roxburghii*)	पाकिस्तान से अरुणाचल प्रदेश तक 450-2300 मी० की ऊँचाई तक (काश्मीर में अनुपस्थित जहाँ पूरे वेग में मानसून नहीं पड़ता है)
पाइनस मरकूसी (*P. merkusii*)	थाइलैंड, चीन, म्यांमार, फिलीपीन्स हाल ही में अरुणाचल प्रदेश से रिपोर्ट किया गया है।

3.3 कायिक संरचनाएं

3.3.1 जड़

पाइनस में दो प्रकार का जड़ तंत्र पाया जाता है - लंबी जड़े जिनमें अनिश्चित वृद्धि करने की क्षमता होती है वो मुख्य जड़ तंत्र बनाती है, जबकि सीमित वृद्धि तथा अपेक्षाकृत छोटी आयु वाली शाखाएं छोटी या बौनी जड़े होती हैं।

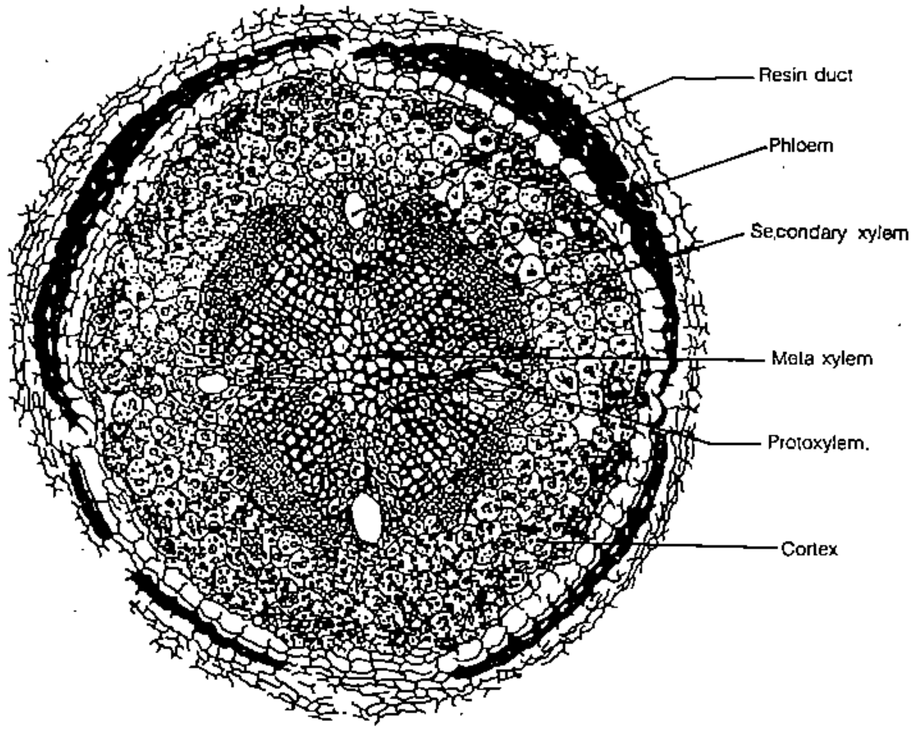

चित्र 3.1 : *पाइनस* स्पी. द्वितीयक वृद्धि स्थापित हो जाने के बाद तरुण जड़ की अनुप्रस्थ काट (T.S.) । बाहरी भाग का पट्टियों में शल्क उतर रहा है। चारों आदिदारुक विन्दुओं के विपरीत राल नलिका है। कुचला हुआ आदि पोषवाह। आदिफ्लोएम अभी तक दिखाई पड़ रहा है तथा उसके बाहर की तरफ मंड से भरी हुई कोशिकाएं हैं तथा शल्क उतरने वाली पट्टियों के ठीक पीछे असंख्य राल कोशिकाएं हैं।

पाइनस में लंबी तथा छोटी दोनों जड़े द्विआदिदारुक (diarch) या चतुष्की (tetrach) आदिदारुक हैं (चित्र 3.1)। बाहर से अन्दर की ओर संरचनाएं हैं : बाह्यत्वचा उसके बाद मंड-युक्त वल्कुट जिसमें छोटी मृदूतकीय कोशिकाओं का बाहरी क्षेत्र तथा बड़ी का भीतरी क्षेत्र हैं। अंत: त्वचा एकल परती है जिसमें कैस्पेरी पट्टिया (casparian strips) है तथा उसके बाद 6 या 7 परतों का परिरंभ (pericycle) है। जाइलम/दारू तथा फ्लोएम/पोषवाह अरीय व्यवस्था दर्शाते हैं। प्रत्येक आदिदारुक बिंदु राल नलिका से संबद्ध होता है (चित्र 3.1)। अनुदारू तत्व गर्तमय वाहिनिकाओं के बने होते हैं। फ्लोएम जाइलम के साथ एकान्तर में होता है तथा चलनी कोशिकाओं (sieve cell) और मृदूतक का बना होता है। मज्जा कोशिकाएं मंड से भरी होती हैं। कभी-कभी उनमें से कुछ टैनिनधारी (tanniniferous cells) भी होती है।

द्वितीयक वृद्धि बहुत जल्दी आरंभ हो जाती है तथा जड़ की संरचना, बाद की अवस्थाओं में, बहुत कुछ तने जैसी हो जाती है।

पाइनस की बौनी जड़ शारीरीय रूप से लंबी जड़ के समान होती है। हालांकि इसकी भिन्नता लंबी जड़ से मूल गोप, राल नलिका, वल्कुट कोशिकाओं में मंड तथा द्वितीयक वृद्धि की अनुपस्थिति से होती है। वल्कुट बौनी जड़ में लंबी जड़ की तुलना में छोटा होता है।

अनेकों कोनिफर्स/शंकु वृक्षों में कवकमूल पाया जाता है। *पाइनस* में ये न सिर्फ सुविकसित होता है, बल्कि इसका व्यापक रूप से अध्ययन भी किया गया है। ये 50 से भी अधिक कवक की भिन्न-भिन्न जातियों के साथ सुविकसित बर्हिभूमिक कवकमूली संबद्धता दर्शाता है जो बेसीडियोमाइसिटीज की बोलीटेसी तथा एगारिकेसी कुलों के होते हैं। बौनी जड़े द्विभाजी रूप से विभाजित होती हैं (चित्र 3.2) और कवकीय संक्रमण के बाद कवकमूली तंत्र में रूपांतरित हो जाती हैं, जब पूरी जड़ माइसीलियम/कवकजाल से आच्छादित हो जाती है (चित्र 3.2) तब कवकीय तंतु जड़ की वल्कुटी क्षेत्र की कोशिकाओं में अन्तराकोशिकी स्थानों में घुसकर हार्टिग्स जाल बनाती हैं (चित्र 3.2)।

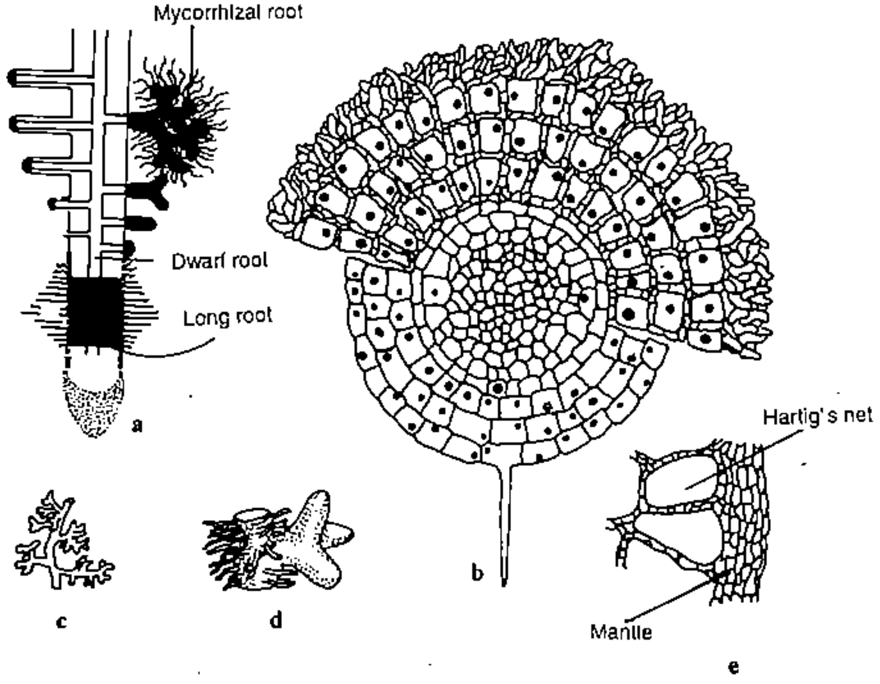

चित्र 3.2 : *पाइनस स्पी.* a) तरुण जड़ का आरेखी प्रदर्शन। मूलरोम क्षेत्र K (ब्लाक में) शीर्ष बिंदु के निकट है। नोट कीजिए कि अवशोषण सतह (काले रंग में) संक्रमित हिस्से की तरफ (a-d) सामान्य हिस्से की तरफ से ज्यादा है (c-j) b) जड़ का अनुप्रस्थ काट जिसका आधा हिस्सा सामान्य तथा दूसरा आधा (चित्र में ऊपरी भाग) कवकमूली है। वल्कुट कोशिकाएं अतिवृद्धित हैं तथा संक्रमित भाग में कवक तंतु से आवरित होकर बर्हिभूमिक कवकमूल बना रही हैं। c) संक्रमित अवस्था में छोटी पार्श्व जड़ें द्विभाजी रूप से शाखित होती हैं। d) कवकमूल का दीर्घित परिदृश्य e) बर्हिभूमिक कवकमूल विशिष्ट हार्टिग्स जाल तथा प्रावार/मेंटल के साथ (a e d हैच के बाद, 1937 b, e हैच एवं डॉक 1933)।

पाइन-कवकी संबंध सहजीवी है, शंकुवृक्ष कवकमूली जड़ों के बढ़े हुए अवशोषण क्षेत्र तथा मृदीय पोषण तत्त्वों के बढ़े हुए अवशोषण के द्वारा लाभान्वित होते हैं।

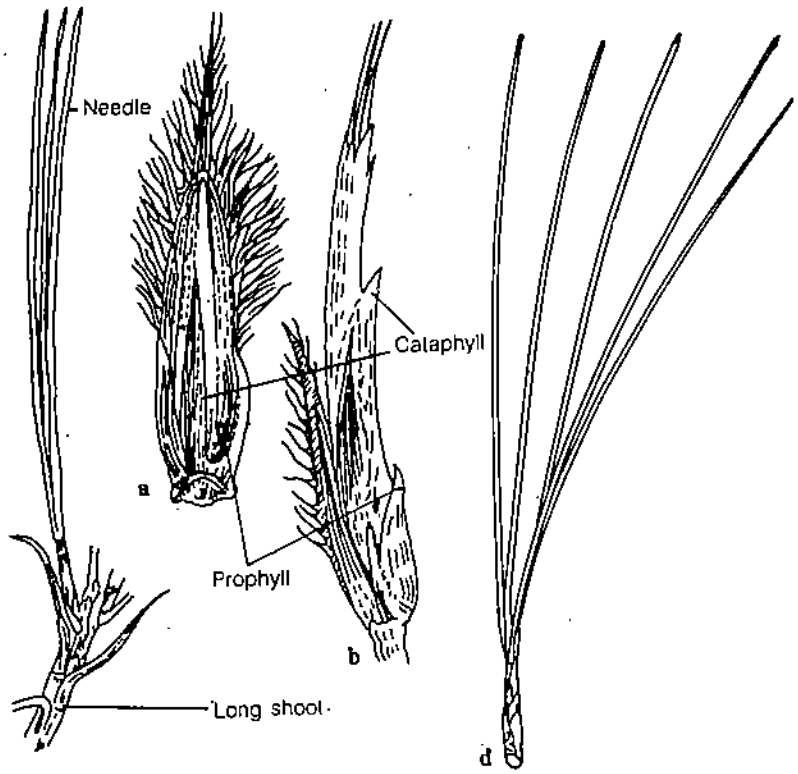

चित्र 3.3 : a-c) *पाइनस* स्पी. a, b) तरुण बौने प्ररोह सुइयों के वलनों के खुलने की अवस्याएं दर्शाते हुए c) तीन सुइयों युक्त बौने प्ररोह को धारण किए हुए लंबे प्ररोह का भाग d) बौना प्ररोह पाँच सुइयां धारण किए हुए (a-c, महेश्वरी और कोनार के वाद 1971; द, कोनार और रामचंदानी, 1958।)

3.3.2 तना

तना सीधा, काष्ठीय तथा असम शल्कीय छाल से ढ़का रहता है, जो उतर जाती है। शाखाएं दो प्रकार की होती हैं : i) लंबे प्ररोह तथा ii) बौने प्ररोह। लंबे प्ररोह या असीमित वृद्धि वाली शाखाएं एक शीर्ष कलिका धारण किए रहती हैं जो कलिका शल्क में बंद रहती है। प्रत्येक लंबा प्ररोह पार्श्व कलिका के रूप में शल्क पत्र के अक्ष में उगता है। ये पार्श्व कलिकाएं ऊर्ध्वाधर रूप से मुख्य तने पर एक निश्चित लंबाई तक उगती हैं तथा यह नोडल/पर्वसंधीय वृद्धि कहलाती है। दलपुट प्ररोह, जब गिरते हैं तो वे तने पर निशान छोड़ देते हैं। बौने प्ररोह या सीमित वृद्धि वाली शाखाएं, जो छोटे प्ररोह, लघु शाखा या पत्रीय दलपुट भी कहलाते हैं, लंबे प्ररोहों पर उगते हैं तथा शल्क पत्रों के अक्षों में उगते हैं। (चित्र 3.3 a-b) प्रत्येक बौना तना दो विपरीत शल्कीय पत्र (scaly leaves) धारण किए रहता है जो सहपत्रिका (prophylls) कहलाते हैं जिनके बाद 5-13 , सर्पिल रूप से व्यवस्थित शल्कीय अधोपत्र 2/5 के पर्णविन्यास में रहते हैं।

शंकु वृक्ष विभज्योतक की क्रियाशीलता के फलस्वरूप बढ़ते हैं। *पाइनस* के तरुण तने की अनुप्रस्थ काट में आप कटक तथा खाँचे देख सकते हैं जो उसको घेरे हुए पत्तियों के अधि लग्नन के कारण बनते हैं। बाह्यत्वचा के बाद चौड़ा मृदूतकीय वल्कुट, संपार्श्विक (collateral) तथा खुले संवहन पूलों की असंतत वलय तथा मज्जा होती है। पूल एक दूसरे से चौड़ी मज्जा किरणों द्वारा विलग रहते हैं। पतली भित्तियों के अंत:स्तर वाली उपकलीय कोशिकाओं युक्त राल नलिकाएं उपस्थित होती हैं। जब घाव लग जाता है तब बहुत सारी राल नलिकाएं उसके चारों ओर बन जाती हैं। द्वितीयक वृद्धि से पहले, पूलीय एधा (fascicular) कैम्बियम तथा अन्तरपूलीय (interfascicular) एधा/कैम्बियम मिलकर पूर्ण वलय बना लेते हैं। कैम्बियम दो प्रकार की कोशिकाओं को काटता है- तर्कुरूप (fusiform) तथा किरण (ray)

आरंभक। तर्कुरूपी आरंभक सुदीर्घित तथा शुंडीय सिरों वाले होते हैं तथा स्पर्शरेखीय रूप से चपटे होते हैं।

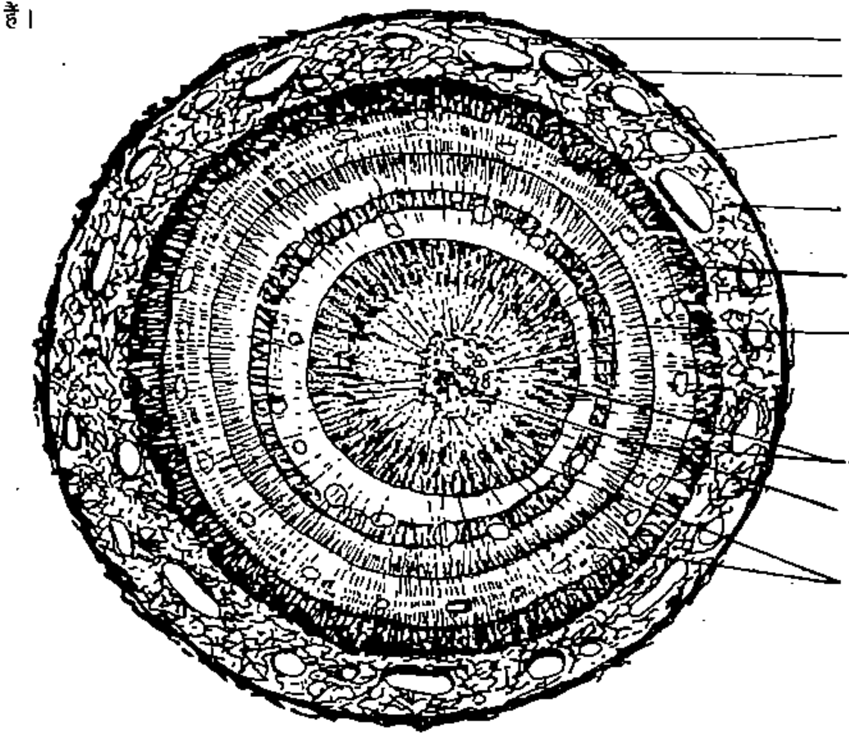

चित्र 3.4 : पाइनस के दो वर्षीय तने का अनुप्रस्थ काट वृद्धि वलयों तथा घनदारूक काष्ठ के साथ (फोस्टर 1989)।

वे अक्षीय तंत्र को जन्म देते हैं। यानि कि जाइलम/दारू तथा फ्लोएम पोषवाह को। किरण आरंभक छोटे तथा समव्यासी होते हैं तथा अरीय तंत्र बनाते हैं जो किरणों का बना होता है।

कैम्बियम द्वितीयक दारू का सतत् सिलिंडर भीतर की ओर तथा द्वितीयक पोषवाह/फ्लोएम का बाहर की ओर बनाता है। (चित्र 3.4)। कैम्बियम मृदूतकीय कोशिकाएं भी काटता है, बनाता है जो द्वितीयक मज्जा किरणों को जन्म देती हैं। द्वितीयक दारू की वाहिनिकाओं में परिवेशित गर्त (bordered pits) होते हैं (चित्र 3.5)।

द्वितीयक फ्लोएम में चालनी तत्व होते हैं। जिनका सबसे विशिष्ट गुण अरीय भित्तियों पर उनकी पूरी लंबाई में चालनी पट्टिकाओं का पाया जाना है। चालनी पट्टिकाएं असंख्य संकरे चैनलों का बना होता है जो कैलोस युक्त होते हैं।

किरणें दो प्रकार की होती हैं : i) एक पंक्तिक किरणें, तथा ii) बहु पंक्तिक या तर्कुरूपी किरणें। अधिकांश किरणें एक पंक्तिक प्रकार की होती हैं, ऊँचाई में, किरणें 1 से 12 कोशिकीय तक होती हैं। बहुपंक्तिक कोशिका हमेशा एक कोशिका से अधिक चौड़ाई की तथा कुछ कोशिकाओं की ऊँचाई की होती है। यह केन्द्र में स्थित राल नलिकाओं से संबद्ध होती है (चित्र 3.5b)। किरण की विस्तृत संरचना को सभी तीनों समतलों में कटे सेक्शनों का निरीक्षण करके सबसे अच्छी तरीके से समझा जा सकता है। आप चित्र 3.5 का ध्यानपूर्वक अध्ययन करिए। अनुप्रस्थ काट (T.S.) किरण की चौड़ाई तथा लंबाई दर्शाता है। लंबे काट अरीय (R.L.S) तथा र्स्पशरेखीय (T.L.S.) तलों में काटने चाहिए। यदि कोई स्पर्शरेखीय सेक्शन काटे तथा निरंतर भीतर की ओर काटता चला जाए, तो मज्जा से होकर गुजरने वाला सेक्शन अरीय होगा (चित्र 3.5 देखिए)। यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि अरीय सेक्शन त्रिज्या के साथ तथा संवहनी किरणों से भी कटता है, जबकि स्पर्शरेखी सेक्शन संवहनी किरणों से समकोण पर कटता है। T.L.S. किरणों की लंबाई तथा ऊँचाई दिखाता है। (R.L.S.) किरणों की लंबाई तथा ऊँचाई दर्शाता है। किरणों में दो प्रकार की कोशिकाएं होती हैं – भीतरी, मंड से भरी हुई जीवित किरण मृदूतक तथा परिधीय, मृत अजीवी किरण वाहिनिकाएं। किरण मृदूतक में सामान्य गर्त होते हैं। जबकि किरण वाहिनिकाओं में परिवेशित गर्त दिखते हैं।

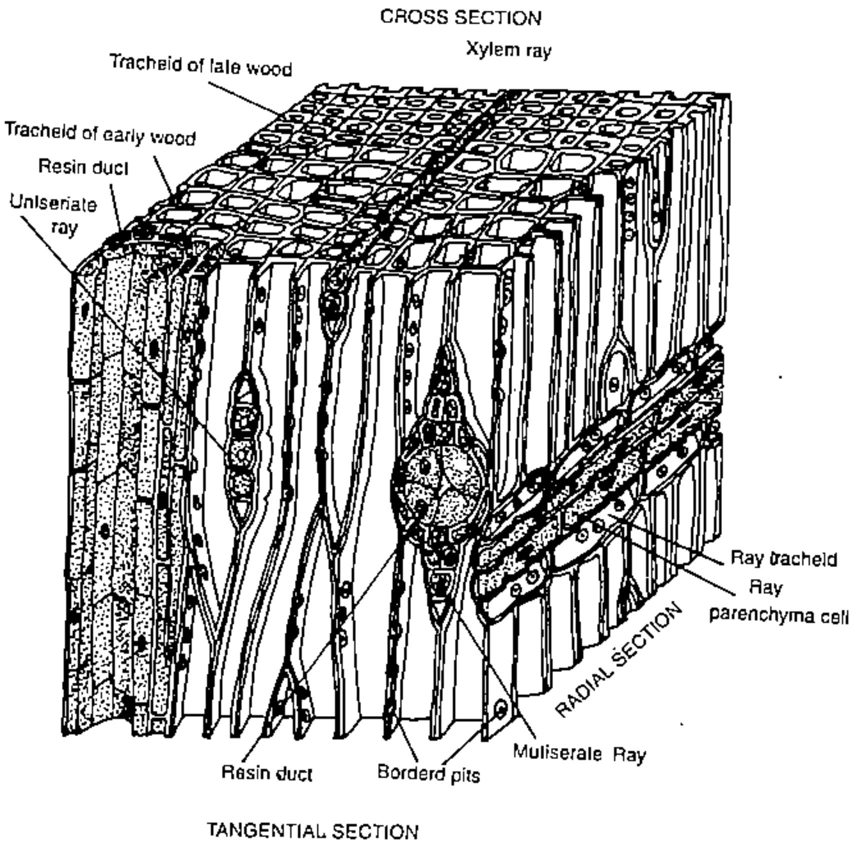

चित्र 3.5 : पाइनस स्पी. के द्वितीयक दारू के टुकड़े का त्रिविम आरेख।

पाइनस की काष्ठ संरचना द्विबीजपत्रियों के काष्ठ की तुलना में काफी सरल होती है। काष्ठ में मुख्यतः वाहिनिकाएं (Tracheids) होती हैं तथा वाहिकाओं (vessels) की अनुपस्थिति इनका विशिष्ट गुण होता है। कॉर्क/काग कैम्बियम वल्कुट की पहली या दूसरी परत में विभेदित हो जाता है। यह बाहर की ओर कार्क/काग तथा भीतर की ओर द्वितीयक वल्कुट काटता है।

शारीरीय रूप से बौना प्ररोह अपने व्यास के अतिरिक्त सभी गुणों में लंबे प्ररोह से मिलता है।

3.3.3 पत्ती

बौने प्ररोह पर पत्तियां दो प्रकार की होती हैं : 2-5, लंबी, सूई जैसी पत्रिय पत्तियां, तथा संरक्षात्मक प्रकृति की शल्क पत्तियां। सुइयों की संख्या प्रत्येक जाति के लिए स्थिर होती है तथा वर्गिकीय गुण के रूप में प्रयोग की जाती है। उदाहरण के लिए *पाइनस मोनोफिला* में एक, *पाइनस सिल्वेस्ट्रिस* में दो, *पाइनस रौक्सबरघाई* में तीन (चित्र 3.3c) तथा *पाइनस वैलविश्चियाना* में पाँच सुइयां होती हैं (चित्र 3.3d)।

प्राथमिक (पर्णपाती) पत्तियां, जो हमेशा एकल होती हैं, अंकुरण के ठीक बाद दिखाई पड़ती हैं तथा पर्णिय पत्तियों की भाँति कार्य करती हैं। द्वितीयक पत्तियां (स्थायी), अथवा सुइयां, बौने प्ररोह या लघुशाखा (brachyblasts) पर पूलों में शल्क पत्रों के अक्षों में उगती हैं।

पाइनस मोनोफिल्ला में एकल सुई गोल होती है (चित्र 3.6a), दो सुई वाले शंकु वृक्ष (*पाइनस मुरकूसी*) में यह अर्धगोलाकार, तथा तीन सुई वाले शंकु वृक्ष जैसे *पाइनस रौक्सबरघाई* में, ये त्रिकोणीय होती है (चित्र 3.6b)। सुई की आंतरिक संरचना (चित्र 3.6 c) में समझाई गई है। त्वचीय परत (बाह्य तथा अधोत्वचा) के बाद द्विभाजी/एकभाजी रंभ को घेरे हुए मध्यपर्ण होता है। बाह्यत्वचा समव्यासी लिग्नीकृत कोशिकाओं की एकल परत होती हैं जिसमें क्यूटिन का मोटा निक्षेप होता है।

अधोत्वचा कोशिकाओं की 2 या 3 परतों की बनी होती है। जो सामान्य रूप से पतली या मोटी होती है। मध्यपर्ण हरित ऊतकी (chlorenchymatous) होता है जिसमें विभिन्न संख्या में पट्टिका जैसे या खूंटी जैसे भित्ति के अन्तरवलन कोशिका गुहिका में लटके रहते हैं। मध्यपर्ण में राल नलिकाएं भी उपस्थित होती हैं।

अंत: त्वचा ढोलकाकार, कोशिकाओं की एकल सतत परत होती है। परिरंभ मृदूतकी व संचरण वाहिनिकाओं से अंत: प्रकीर्ण होता है। दृढ़ोतकी आच्छद संवहन पूलों के चारों ओर उपस्थित रहता है। *पाइनस रौक्सबरघाई* में दो संवहन पूल होते हैं जो एक दूसरे से कोण पर स्थित होते हैं। दारू में आदिदारू (protoxylem) तत्व तथा मध्य दारू (metaxylem) तत्व होते हैं। फ्लोएम/पोषवाह चालनी कोशिकाएं तथा मृदूतक का बना होता है। वाहिनिकाओं तथा मृदूतकी कोशिकाओं का बना संरचण ऊतक (Transfusion tissue) संवहन पूलों के दोनों तरफ पाया जाता है; यह जल तथा पोषण तत्वों के पार्श्व चालन में भूमिका निभाता है। रंध्र अनुदैर्ध्य कतारों में स्थित होते हैं तथा धँसे हुए होते हैं। सहायक कोशिकाओं तथा रक्षक (guard) कोशिकाओं की भित्तियां आंशिक रूप से लिग्नीकृत होती हैं।

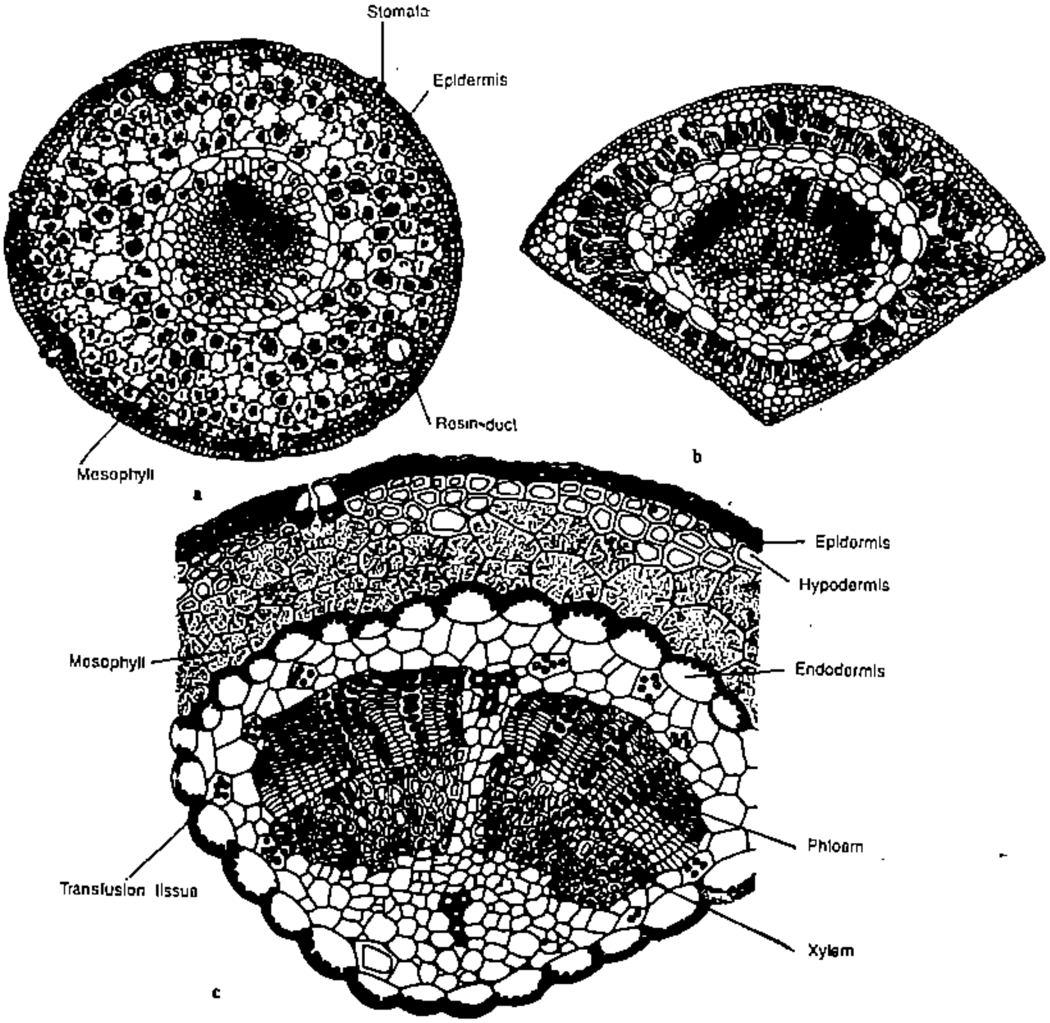

चित्र 3.6 : *पाइनस* जाति a, b) सुई की अनुप्रस्थ काट (T.S.) c) लिग्निनयुक्त वाह्यत्वचा, अधोत्वचा, भित्तियों के अन्तरवलन को दिखाने वाली कोशिकाओं युक्त मध्यपर्ण, मोटी वाहरी भित्तियों संचरण ऊतक तथा कोण पर स्थित दो संवहन पूलों के साथ अंत: त्वचा (a गिफोर्ड और फोस्टर से पुर्नआरेखित 1989; b कोनार से 1963 a)।

बोध प्रश्न 1

उपर्युक्त वक्तव्य सत्य है या असत्य। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) कोष्ठक में लिखिए।

i) कुल पाइनेसी में सिर्फ सात वंश हैं [ ]

ii) शंकु वृक्ष विशाल शुद्ध वन या चौड़ी पत्तियों वाले वृक्षों के साथ मिलकर मिश्रित वन बनाते हैं [ ]

iii) *पाइनस* की छह जातियां हिमालय की देशज हैं [ ]

iv) *पाइनस* की सुइयों की संख्या एक जाति के लिए स्थिर होती है तथा वर्गिकीय गुण के रूप में प्रयोग की जाती है। [ ]

बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) वल्कुट की कोशिकाए.................. से भरी होती हैं।

ii) फ्लोएम/पोषवाह.................. तथा मृदूतक का बना होता है।

iii) *पाइनस*.................. में कवकमूली संबद्धता सुविकसित होती है।

iv) पाइन/शंकु वृक्ष कवक संबंध.................है।

v) *पाइनस* में संवहन पूल.................. तथा.................. होते हैं।

vi) चालनी कोशिकाओं में कोशिका की पूरी लंबाई में भित्तियों पर.................. होते हैं।

vii) *पाइनस* के काष्ठ में.................. की अनुपस्थिति होती हैं।

viii) *पाइनस रौक्सबरघाई* में अनुप्रस्थ काट में सुइयां.................. होती हैं।

ix) *पाइनस रौक्सबरघाई* में दोनों संवहन पूल एक दूसरे से.................. पर स्थित होते हैं।

x) कोनिफरेलीज में रोमछिद्र.................. होते हैं।

3.4 प्रजनन संरचनाएं

3.4.1 नर शंकु तथा युग्मकोद्भिद

वृक्ष उभयलिंगाश्चयी (monoecious) होता है, परन्तु नर और मादा शंकु (male & female cone) अलग-अलग शाखाओं पर उगते हैं। नर शंकु नीचे की तथा मादा शंकु ऊपर की शाखाओं पर उगते हैं। नर शंकु, जो बौने प्ररोह को विस्थापित करते हैं, गुच्छों में पाए जाते हैं (चित्र 3.7 a-c)। गुच्छे में नर शंकुओं की संख्या 15 से *(पाइनस वैलिविश्चियाना)* लेकर लगभग 140 *(पाइनस रौक्सबरघाई)* तक हो सकती है। प्रत्येक नर शंकु में एक केन्द्रीय अक्ष होता है जिस पर लघुबीजाणुपर्ण सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहते हैं (चित्र 3.7 f)। प्रत्येक लघुबीजाणुपर्ण निचली अथवा अपाक्ष सतह पर दो बीजाणुधानियां धारण किए रहता है (चित्र 3.7 d-f)। शंकु अक्ष लंबी हो जाती है जिससे लघुबीजाणुधानियां दिखने लगती हैं जो अनुदैर्ध्य रूप से प्रस्फुटित होती हैं।

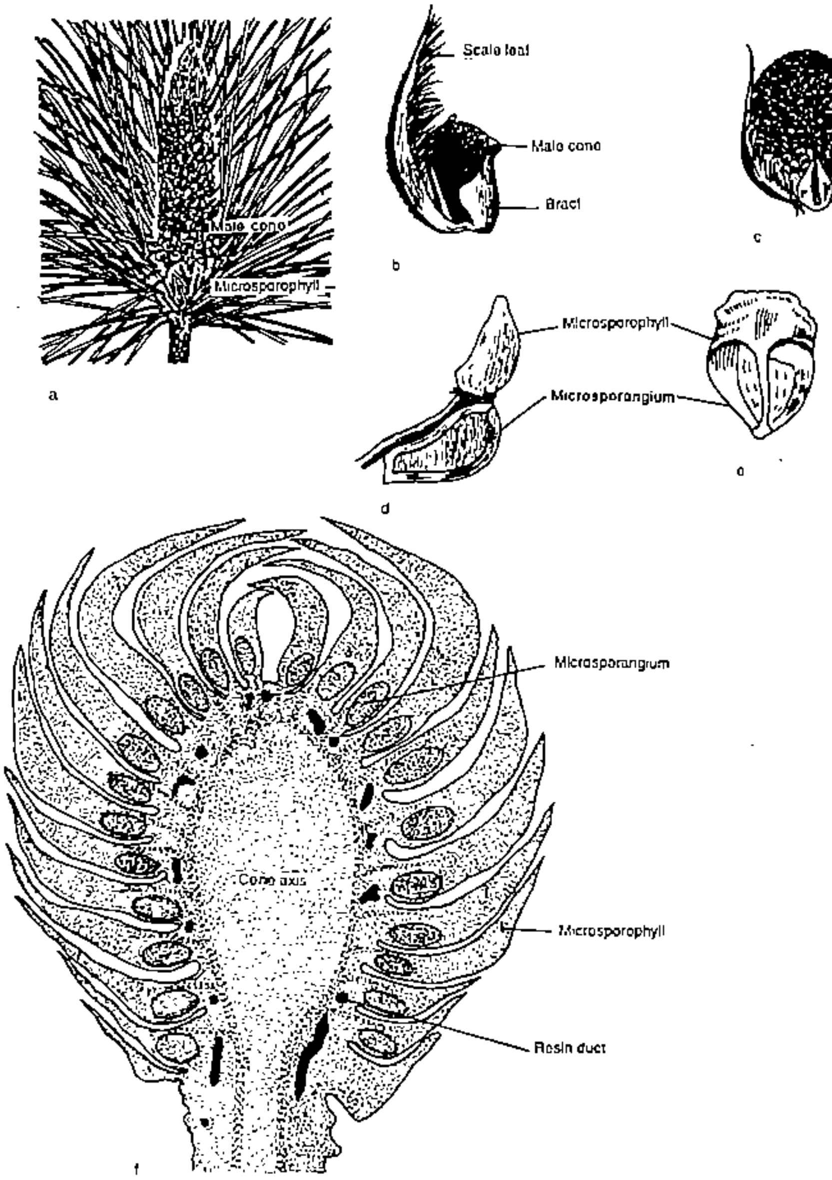

चित्र 3.7 : *पाइनस* स्पी. a) नर शंकुओं के गुच्छ को धारण किए प्ररोह b-c) नर शंकु की आरंभिक तथा बाद की अवस्थाएं d) लघुबीजाणुपर्ण का पार्श्व दृश्य e) अपाक्ष सतह पर दो बीजाणुधानियां धारण किए लघुबीजाणुपर्ण f) नर शंकु की अनुदैर्घ्य काट।

लघुबीजाणुधानी

आप *पाइनस* के नर शंकु की संरचना से पहले ही परिचित हैं। अब आप विस्तार से उन विकासात्मक बदलावों का अध्ययन करेंगे जिनसे नर युग्मकोद्भिद (male gametophyte) का निर्माण होता है।

एक या अधिक अधोत्वचीय कोशिकाएं प्रप्रसू कोशिकाओं (archesporial cell) के रूप में विभेदित हो जाती हैं जो लगातार विभाजित होकर प्रप्रसूतक बनाती हैं (चित्र 3.8 a)। प्रप्रसूतक की परिधीय कोशिकाएं परिनीतक रूप से विभाजित होकर प्राथमिक परिधीय परत तथा प्राथमिक बीजाणुजन कोशिकाओं (primary sponogenous cells) को जन्म देती है (चित्र 3.8b)। प्राथमिक परिधीय परत परिनतिक तथा अपनतिक दोनों तरह से विभाजित होकर 3 या 4 परतों की भित्ति बनाती हैं जिनमें से सबसे भीतर की परत टेपीटम के रूप में विभेदित हो जाती है (चित्र 3.8 c)। बची हुई 2 या 3 परतें मध्य परतें होती हैं, जो बीजाणुधानी (sporangium) के वयस्क होने पर अपभ्रष्ट हो जाती हैं (चित्र 3.8 d)। प्राथमिक बीजाणुजनन कोशिकाएं, दूसरी ओर, सभी तलों में विभाजित होकर बीजाणुजन ऊतक का पिंड बनाती हैं। जिनकी अंतिम कोशिका पीढ़ी लघुबीजाणु मातृ कोशिका (microspore mother cell)

अवस्था के रूप में जानी जाती है। बाद की अवस्थाओं में, बाह्य त्वचीय कोशिकाएं तंतुमय (fibrous thickening) स्थूलन/मोटाई विकसित कर लेती हैं, सिर्फ एक कतार में थोड़ी सी कोशिकाएं मोटी नहीं होती है, जो स्फुटन की सीवन (suture) को चिन्हित करती हैं। जिम्नोस्पर्म्स में टेपीटम तथा बीजाणुजन कोशिकाओं का विकास साथ-साथ होता है। (चित्र 3.8 c)

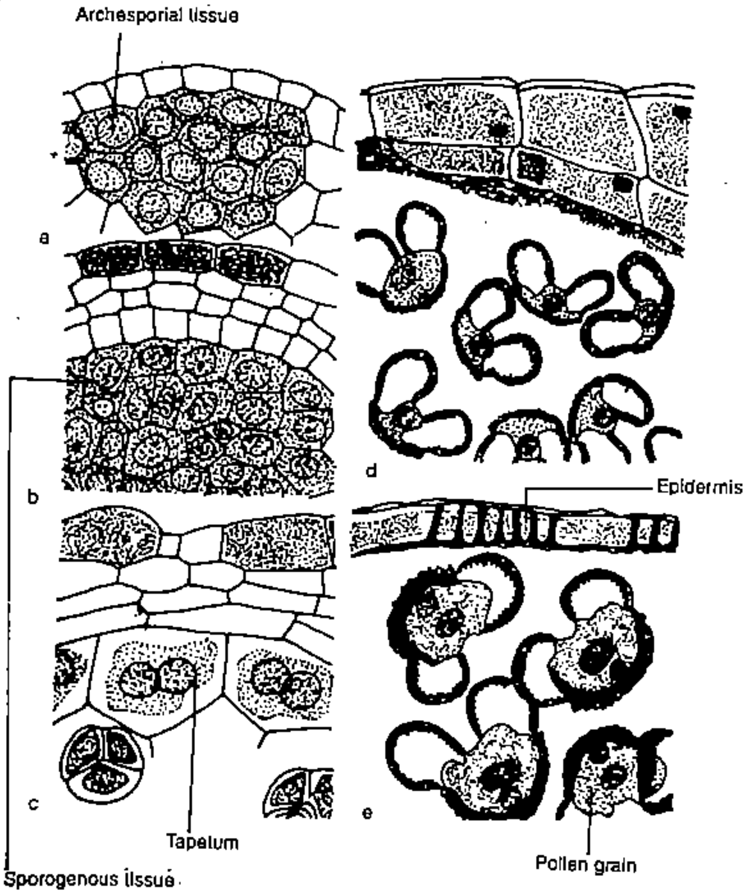

चित्र 3.8 : पाइनस स्पी. a) अधोत्वचीय प्रप्रसूतक कोशिकाओं को दिखाने के लिए तरुण लघुबीजाणुधानी की अनुदैर्घ्य काट b) समान, बाद की अवस्था में; भित्ति परतें तथा बीजाणुजन कोशिकाएं विभेदित हो गई हैं c) चतुष्की अवस्था में लघुबीजाणुधानी, द्विकेन्द्रकी टेपीटल कोशिकाओं को नोट कीजिए d) थोड़ी सी बड़ी लघु बीजाणुधानी तरुण द्विकोशी (bisaccate) परागकणों को दिखाते हुए। टेपीटल परत तथा भीतरी भित्ति परतें अपभ्रष्ट हो चुकी हैं। e) समान, वयस्क होने पर जब परागकण अलगन की अवस्था में होते हैं। बाह्य त्वचीय कोशिकाएं तंतुमय मोटाई विकसित कर लेती हैं (a से c कोनार से, 1960; d-e कोनार तथा रामचंदानी से 1958)।

लघुबीजाणुजनन

अर्धसूत्री विभाजन से पहले लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं तथा टेपीटल कोशिकाओं का कोशिकाद्रव्य एक जैसा दिखाई पड़ता है। मातृ कोशिका का केन्द्रक अर्धसूत्री विभाजन करता है उसके बाद साथ ही साथ भित्ति निर्माण होता है जिससे लघुबीजाणुओं का चतुष्टक (tetrad) बनता है (चित्र 3.8 c, 3.9 a-d)। इस विभाजन के अंत में, कैलोज आच्छद (sheath) एन्जाइम की क्रिया द्वारा घुल जाता है तथा तरुण अगुणित लघुबीजाणु मुक्त हो जाते हैं। एककेन्द्रकी परागकण नर युग्मकोद्भिद की पहली कोशिका है। टेपीटल कोशिकाएं तथा अन्य भित्ति परतें अंततः अपभ्रष्ट हो जाती हैं जब परागकण बन जाता है (चित्र 3.9 e)।

नर युग्मकोद्भिद

लघुबीजाणु केन्द्रक एक छोटी लैन्स की आकृति की प्रोथेलियल कोशिका (prothallial cell) निकटस्थ

सिरे पर तथा बड़ी केन्द्रीय कोशिका (central cell) दूरस्थ सिरे पर काटता है (चित्र 3.9 f)। केन्द्रीय कोशिका द्वितीय प्रोथेलियल कोशिका तथा एक पुंधानी आरंभक (antheridial initial) काटती है (चित्र 3.9 g)। पुंधानी आरंभक अब विभाजित होकर छोटी पुंधानी कोशिका (antheridial cell) तथा बड़ी नलिका कोशिका (tube cell) को जन्म देता है। परागकण चार-कोशिकीय अवस्था में अलग होते हैं वे दो प्रोथेलियली कोशिकाएं, एक छोटी पुंधानी कोशिका तथा एक बड़ी नलिका कोशिका को दर्शाते हैं (चित्र 3.9 h)। लघुबीजाणु में कैलोज की पतली परत पहले दो भागों में विकसित होती हैं। जहाँ पंखों को बनना होता है, तथा बाद में फैलकर परागकण के निकटस्थ सिरे को ढक लेती है। परागकण अब वयस्क हो जाता हैं तथा बीजांड को परागित करने के लिए तैयार हो जाता है। आप उसके बारे में बाद में पढ़ेंगे।

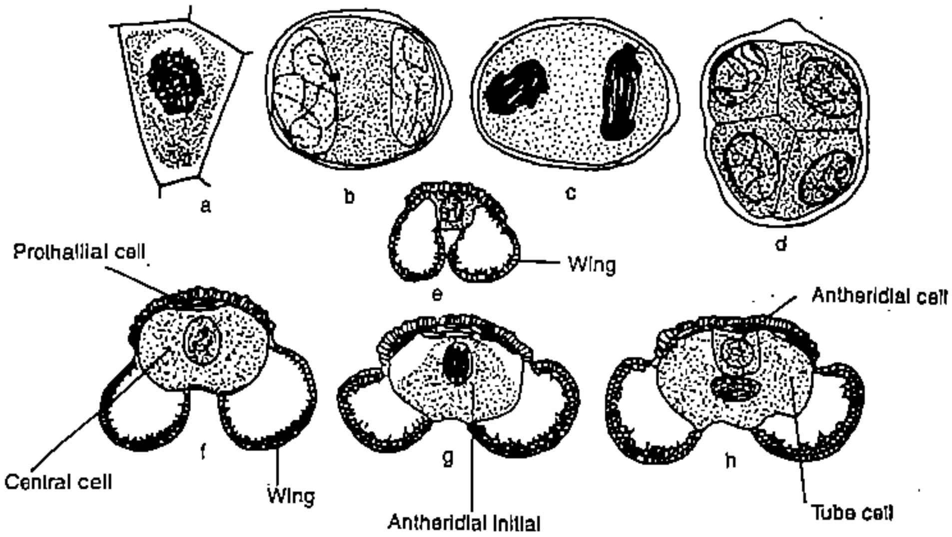

चित्र 3.9 : *पाइनस* स्पी. लघुबीजाणुजनन का विवरण a) लघुबीजाणुजनक कोशिका b, c) अर्धसूत्रीय विभाजन I और II क्रमश: d) लघुबीजाणु चतुष्टक e) एक केन्द्रकी परागकण f, g) नर युग्मकोद्भिद का विकास g) में दोनों प्रोथेलियल कोशिकायें और पुंधानी आरम्भक का विभाजन हो रहा है। h) व्यस्क चार कोशिकीय (अपभ्रष्ट होती दो प्रोथेलियल कोशिकायें और नलिका कोशिका) परागकण परागित होने की स्थिति में (कोनार और रामचन्दानी, 1958)।

3.4.2 मादा शंकु तथा युग्मकोद्भिद

मादा शंकु (चित्र 3.10 a) लंबे प्ररोहों को विस्थापित कर देते हैं तथा उनकी संख्या परिवर्ती होती है परन्तु संख्या छह तक ही हो सकती है। प्रत्येक मादा शंकु में एक केन्द्रीय अक्ष होता है जिस पर 80-90 दीर्घबीजाणुपर्ण (बीजांडधारी शल्क या बीजांड धारण करने वाले शल्क), सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहते हैं (चित्र 3.10 b, c)। सहपत्र तथा बीजांडधारी शल्क साथ मिलकर बीज-शल्क कॉम्प्लैक्स सम्मिश्र बनाते हैं (चित्र 3.10 e, f)। प्रत्येक गुरूबीजाणुपर्ण ऊपरी अथवा अभ्यक्ष सतह पर दो बीजांड धारण किए रहता है (चित्र 3.10 d)। बीजांड उल्टे होते हैं व बीजांडद्वार शंकु के अक्ष की ओर होता है। बीजांडधर शल्क आरंभ में सहपत्र शल्क से काफी छोटे होते हैं, परन्तु परागण के बाद की अवस्थाओं में ये उनसे अधिक वृद्धि कर लेते हैं। (चित्र 3.10 e, f)।

गुरूबीजाणुधानी तथा गुरूबीजाणुजनन

पाइनस के बीजांड एक अध्यावरणी (unitegmic) तथा स्थूलबीजांडकायी (crassinucellate) होते हैं। अध्यावरण अपनी लंबाई के अधिकांश भाग तक सिर्फ कैलाजा (Chalazal) सिरे के अतिरिक्त बीजांडकाय से अलग रहता है। ये काफी चौड़ी बीजांडद्वारी नलिका (micropylar tube) बनाता है जो परागण के पहले की अवस्थाओं में अन्दर की ओर मुड़ी रहती हैं परन्तु परागण के वक्त आगे की ओर मुड़ जाती है।

अधोत्वचीय (hypodermal) प्रप्रसूतक कोशिका (कभी-कभी अधिक) चौड़े बीजांडकाय की बीजांडद्वारी सिरे पर बनती है। ये परिनतिक रूप से विभाजित होकर बीजांडद्वारी सिरे पर प्राथमिक परिधीय कोशिका तथा कैलाजा सिरे की ओर प्राथमिक बीजाणुजनन कोशिका बनाती है। पहली अपनतिक फिर परिनतिक दोनों तरह से विभाजित होती है जिससे गुरूबीजाणु मातृ कोशिका बीजांडकाय में काफी नीचे की ओर खिसक (धंस) जाती है (चित्र 3.11 a)। ये अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात् गुरूबीजाणुओं का रेखीय चतुष्टक बनाती है (चित्र 3.11b) सबसे नीचे की कोशिका क्रियाशील गुरूबीजाणु की भांति व्यवहार करती है तथा ऊपरी तीनों दीर्घबीजाणु अपभ्रष्ट हो जाते हैं।

मादा युग्मकोद्‌भिद

क्रियाशील गुरूबीजाणु काफी बड़ा हो जाता है; इसका केन्द्रक मुक्त केन्द्रकी युग्मकोद्‌भिद बनाने के लिए समसूत्री रूप से विभाजित होता है (चित्र 3.11 c, d)।

मुक्त केन्द्रकी युग्मकोद्‌भिद में केन्द्रकों की संख्या किसी भी जाति विशेष के लिए निश्चित/स्थिर होती है। जब मुक्त केन्द्र की युग्मकोद्‌भिद को कोशिकीय बनना होता है तब पहली भित्तियां गुरूबीजाणु झिल्ली के लंबवत् बनती हैं तथा केन्द्रीय धानी के मध्य तक जाती हैं। ये कोशिकाएं लंबी नलिकाओं जैसी होती हैं जो भीतर की ओर खुली रहती हैं तथा "कूपिका" (alveoli) कहलाती हैं। केन्द्र की तरफ भित्तियां बनने के फलस्वरूप युग्मकोद्‌भिद कोशिकीय बन जाता है (चित्र 3.11 e)।

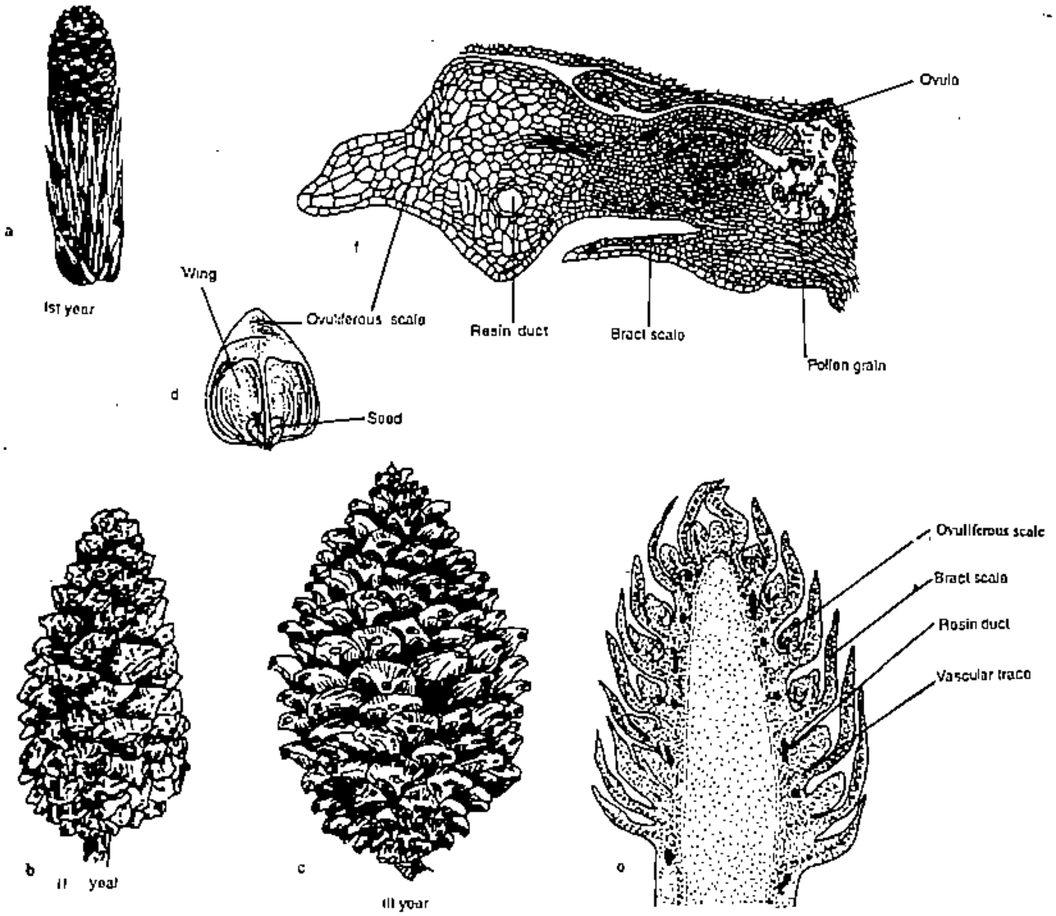

चित्र 3.10 : पाइनस स्पी. a) परागण के समय मादा शंकु (पहला वर्ष) b, c) समान (दूसरे तथा तीसरे वर्ष) के दौरान परागण के बाद की प्रावस्था तथा बीज-अलगन के समय d) अभ्यक्ष सतह पर उगे दो बीजों के साथ बीजांडधर शल्क e) परागण के समय तरुण मादा शंकु का अनुदैर्घ्य काट।

कुछ कोशिकाएं (सामान्यत: दो या चार) मादा युग्मकोद्भिद (female gametophyte) के बीजांडद्वारी सिरे पर बड़ी और प्रमुख बन जाती हैं तथा स्त्रीधानी आरंभक (archegonial initials) की तरह कार्य करती हैं (चित्र 3.12a)। प्रत्येक स्त्रीधानी आरंभक शीघ्र ही एक बड़ी केन्द्रीय कोशिका तथा एक छोटी प्राथमिक ग्रीवा आरंभक (neck initial) में विभाजित हो जाती है (चित्र 3.12 b)। बाद वाली एक दूसरे से समकोण पर दो उर्ध्वाधर भित्तियों द्वारा विभाजित होकर चार कोशिकाओं की ग्रीवा बनाती है जो एक सोपान (tier) में व्यवस्थित होती हैं। केन्द्रीय कोशिका बड़ी तेज़ी से बड़ी होती है। जिससे असंख्य धानियां बन जाती हैं। ये स्त्रीधानी के विकास की 'झाग अवस्था' (foam stage) कहलाती है (चित्र 3.12 c)। केन्द्रीय कोशिका का केन्द्रक, इस बीच, एक अल्पकालिक अंडधा नाल कोशिका (ventral canal cell) तथा एक बड़ी अंड कोशिका में विभाजित हो जाता है (चित्र 3.12d)।

प्रत्येक वैयक्तिक स्त्रीधानी के शीर्ष सिरे के निकट को युग्मकोद्भिदी कोशिकाएं तेजी से वृद्धि करती है जिसके फलस्वरूप स्त्रीधानी धँस जाती है। अत: प्रत्येक स्त्रीधानी का अपना स्वयं का स्त्रीधानी कक्ष होता है। स्त्रीधानी को घेरे हुए कोशिकाएं एक विशिष्ट आच्छादी परत, जैकेट, बनाती है (चित्र 3.12d)। भीतरी मोटी भित्ति में असंख्य गर्त उपस्थित रहते हैं (स्त्रीधानी की ओर खुलने वाले)। स्त्रीधानी इन गर्तों के जरिए अपने को घेरे हुए युग्मकोद्भिद से संपर्क बनाए रखती है। जब गर्त झिल्ली फट जाती है, तब विभिन्न उपांग, तथा संपूर्ण केन्द्रक भी जैकेट से अंड कोशिकाद्रव्य में चला जाता है।

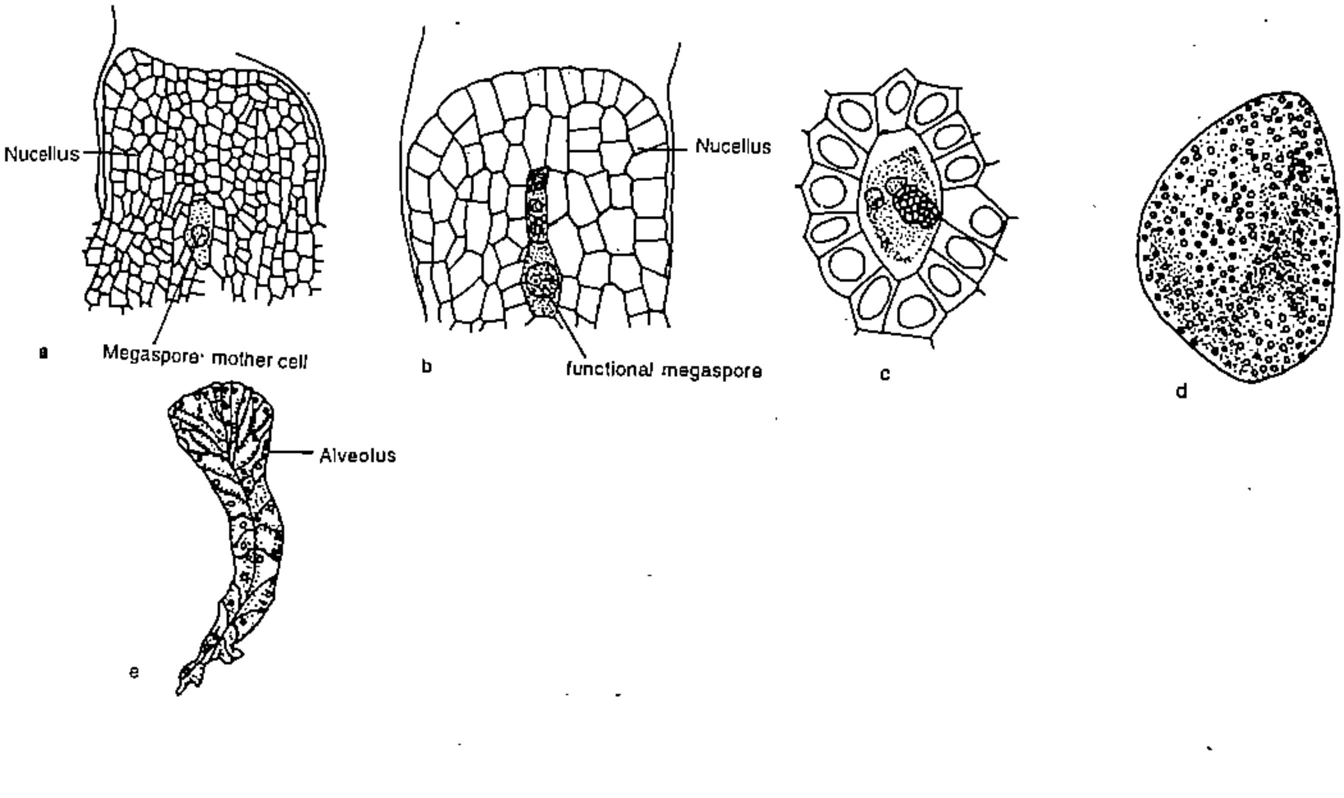

चित्र 3.11: a-c) *पाइनस रौक्सबरघाई* d-c) *पाइनस वैलीविश्चियाना* a) गहरे-धँसी हुई गुरुबीजाणु मातृ कोशिका के साथ बीजांडकाय की अनुदैर्घ्य काट d) गुरुबीजाणुओं का रेखीय चतुष्टक कैलाजा की ओर का क्रियाशील तथा ऊपरी तीन अपभ्रष्ट होते हुए c) चार-केन्द्रकी मादा युग्मकोद्भिद d) मुक्त केन्द्रकी अवस्था में युग्मकोदभिद का पूर्ण ढेर c) कूपिकाओं के द्वारा भित्तियां बन गई हैं (महेश्वरी और कोनार से, 1971)

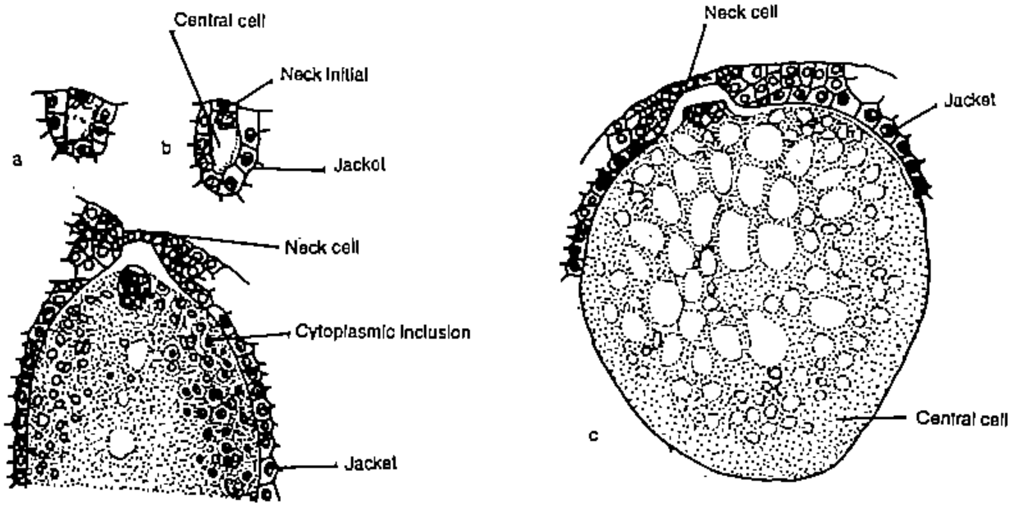

चित्र 3.12 : a-d) *पाइनस* स्पी. a) नया बना स्त्रीधानी आरंभक तथा उसकी जैकेट b) स्त्रीधानी आरंभक ग्रीवा आरंभक तथा केन्द्रीय कोशिका में विभाजित c) केन्द्रीय कोशिका का तेजी से बढ़ जाना, उसका कोशिकाद्रव्य असंख्य धानियां दर्शाता है। ग्रीवा आरंभक दो ग्रीवा कोशिकाओं में विभाजित d) स्त्रीधानी के ऊपरी भाग की अनुदैर्ध्य काट ग्रीवा कोशिकाओं तथा केन्द्रीय कोशिका केन्द्रक के विभाजन को दर्शाते हुए जिसके फलस्वरूप अंडधा नाल कोशिका तथा अंड कोशिका का निर्माण होता है, कोशिका द्रव्यी समावेशनों को देखिए, कोनार और रामचंदानी से; 1958) ।

बोध प्रश्न 3

बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य।

i) *पाइनस* का वृक्ष उभयलिंगाश्रयी होता है तथा नर और मादा शंकु एक ही शाखा पर उगते हैं। [ ]

ii) *पाइनस* में बीज की फसल वार्षिक नहीं होती तथा दो या और भी अधिक वर्षों के अंतराल पर होती है। [ ]

iii) परागण के बाद की अवस्थाओं में बीजांडधर शल्क सहपत्र शल्कों से अधिक वृद्धि कर जाते हैं। [ ]

बोध प्रश्न 4

मान लीजिए कि *पाइनस* की किसी जाति में पर्ण कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या 72 है। आप *पाइनस* की इस जाति में निम्नलिखित में से प्रत्येक कोशिका में गुणसूत्र की संख्या कितनी मानेंगे ?

अ) लघुबीजाणु पर्ण की कोशिका में ....

ब) गुरूबीजाणु ....

स) नर युग्मक ....

द) गुरूबीजाणुधानी की कोशिका ....

क) अंडधा नाल कोशिका ....

ख) गुरूबीजाणु मातृ कोशिका ....

ग) युग्मन की कोशिका ....

घ) टेपीटम की कोशिका ....

ङ) जैकेट की कोशिका ....

बोध प्रश्न 5

सूचित कीजिए कि इनमें से प्रत्येक क्या बनेगा या किसमें विकसित होगी।

अ) गुरूबीजाणु मातृ कोशिका ....

ब) बीजांड ....

स) लघुबीजाणु ....

द) भ्रूण ....

क) अध्यावरण ....

ख) क्रियाशील गुरूबीजाणु ....

ग) युग्मनज ....

घ) पाइन शंकु में आच्छद शल्क ....

ङ) पाइन शंकु में बीजांडधर शल्क ....

3.5 परागण और निषेचन

पाइनस वायु-परागित होता है। पीले रंग के परागकण इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं कि पाइन/शंकु वृक्ष वनों में ये "सल्फर शावर" (गंधक वर्षा) कहलाता है। इस समय तक मादा शंकु खुला रहता है (चित्र 3.10 a, e) तथा पंखयुक्त परागकण आसानी से भीतर घुसकर तिरछे रूप से घूमे हुए शलकों से नीचे उतर कर बीजांडद्वार के निकट विश्राम करने लगते हैं। इस अवस्था में, बीजांड शर्करायुक्त तरल की एक बूंद स्त्रावित करता है, जिसे "परागण बूंद" (Pollination drop) कहते हैं, जो बीजांडद्वारी गुहिका को भर देती है तथा अध्यावरण के अपसारी शीर्ष पर बाहर आ जाती हैं।

बूंद का स्त्रावित होना चक्रिक घटना बताया जाता है (24 घंटे का चक्र) जो रात्रि में अथवा प्रात:काल के आरंभिक घंटों में पाया जाता है।

पंख परागकण को इस तरह से रखने में सहायक होते हैं कि परागकण के जननछिद्र बूंद के संपर्क में आ जाते हैं तथा अंदर चूस लिए जाते हैं।

पराग नलिका अंत: चोल से निकलती है। बीजांडकाय (nucellus) में से गुजरते हुए पराग नलिका ऐसे एन्जाइम स्त्रावित करती हैं जो बीजांडकायी कोशिका भित्ति को विलीन कर देते हैं या घोल देते हैं। जैसे ही नलिका निकलती है, नलिका केन्द्रक सबसे पहले इसमें चला जाता है, उसके बाद पुमणुजन कोशिका तथा वृंत कोशिकाएं जाती है (चित्र 3.13 a)। पुमणुजन कोशिका अंतत: दो असमान नर केन्द्रकों (male nuclear) में विभाजित हो जाती हैं (चित्र 3.13 b, c)।

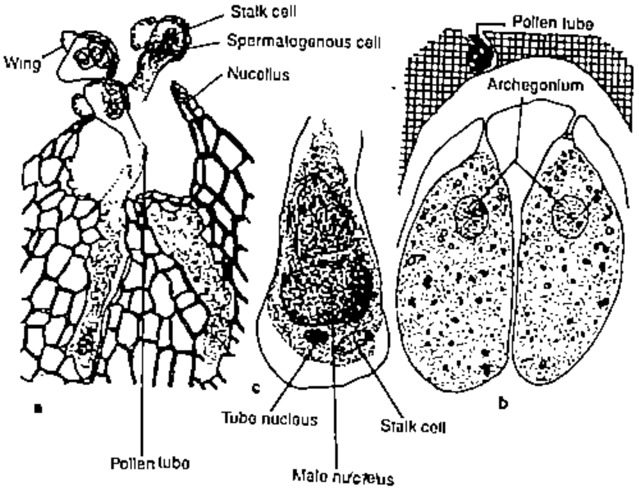

चित्र 3.13 : *पाइनस स्पी.* : a) बीजांडकायी शीर्ष की अनुदैर्घ्य काट तीन अंकुरित होते परागकणों के साथ। एक परागकण में, वृंत तथा पुमणुजनन कोशिकाएं परागनलिका में अपने प्रवेश से पहले अलग हो रही हैं b) समान, बीजांड का एक भाग निषेचित (बाएँ) तथा अनिषेचित (दाएँ) स्त्रीधानी को दर्शाते हुए। परागनलिका का एक भाग बीजांडकायी ऊतक में दिखाई पड़ रहा है। c) परागनलिका व में से दीर्घित, दो असमान नर युग्मकों, वृंत कोशिका तथा नलिका केन्द्र को दिखाने के लिए (कोनार से 1962)।

निषेचन

नर तथा मादा युग्मकों का संयुग्मन जिसके फलस्वरूप युग्मनज का निर्माण होता है वह निषेचन कहलाता है। परागनलिका स्त्रीधानी में स्वयं को ग्रीवा कोशिकाओं के मध्य घुसाती है। परागनलिका फटने पर दो असमान नर युग्मक, वृंत कोशिका तथा नलिका केन्द्रक संबद्ध कोशिकाद्रव्य के साथ निर्मुक्त करती है। नर केन्द्रक स्त्रीधानी में घुस जाता है तथा अंड केन्द्रक की ओर बढ़ता है तथा अंततः उसके साथ युग्मित होकर युग्मनज बनाता है (चित्र 3.14)।

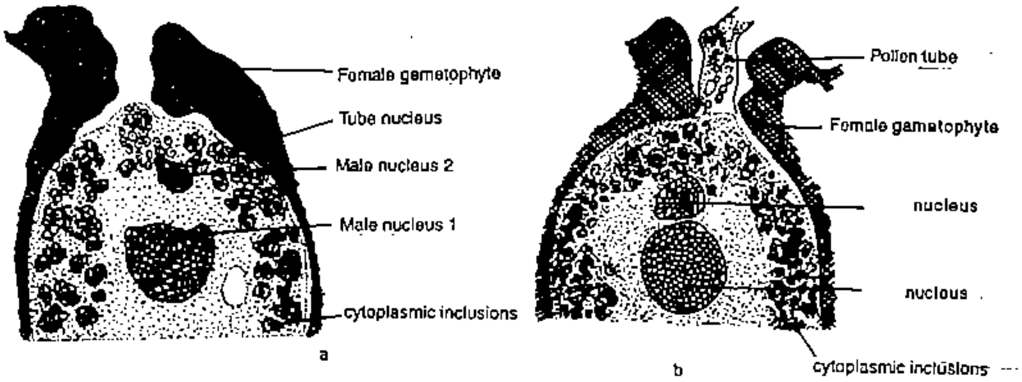

चित्र 3.14 : *पाइनस* स्पी. निषेचन में अवस्थाएं a) स्त्रीधानी के ऊपरी भाग की अनुदैर्ध्य काट। नर केन्द्रक अंड केन्द्रक के समीप पहुँच रहा है, परागनलिका का भाग शीर्ष पर दिखाई पड़ रहा है। b) समान युग्मनज बनाने के लिए नर तथा मादा केन्द्रकों का संयुग्मन दिखाते हुए। द्वितीय नर केन्द्रक तथा नलिका केन्द्रक अंड कोशिका के ऊपरी भाग में दिखाई पड़ रहे हैं। कोशिकाद्रव्यी समावेशन सुस्पष्ट है (कोनार और रामचंदानी से 1958)।

प्राक्भ्रूण का विकास

युग्मनज केन्द्रक समसूत्री विभाजन करके दो केन्द्रकों को जन्म देता है। दूसरा विभाजन तुरंत बाद होता है जिसके फलस्वरूप चार केन्द्रक स्त्रीधानी के आधार में बढ़ जाते हैं (चित्र 3.15 a-c) तीसरे तुल्यकालिक विभाजन के फलस्वरूप आठ मुक्त केन्द्रक बनते हैं। भित्ति निर्माण एक ऊपरी कोशिकाओं के समूह प्राथमिक ऊपरी सोपान (p^U) को तथा निचले कोशिकाओं के समूह प्राथमिक भ्रूणीय सोपान (p^E) को जन्म देता है। प्रत्येक में चार कोशिकाएं होती हैं (चित्र 3.15 d)। दोनों सोपानों में एक और विभाजन (आंतरिक विभाजन) के फलस्वरूप U, S तथा E बनते हैं। अब 16 कोशिकाएं, 4 सोपानों में व्यवस्थित होती हैं। ऊपरी सोपान में ऊपर की ओर कोई भित्ति नहीं होती है अतः ये खुला होता है। निचले दो सोपान E समूह के होते हैं। उनके बाद S तथा U सोपान होते हैं। सबसे नीचे का सोपान (E समूह की निचली चार कोशिकाएं) भ्रूणीय पिंड को जन्म देता है। बाद का सोपान (E समूह की ऊपरी चार कोशिकाएं) दीर्घित होकर भ्रूणीय निलंबक (Es) बनाती हैं।

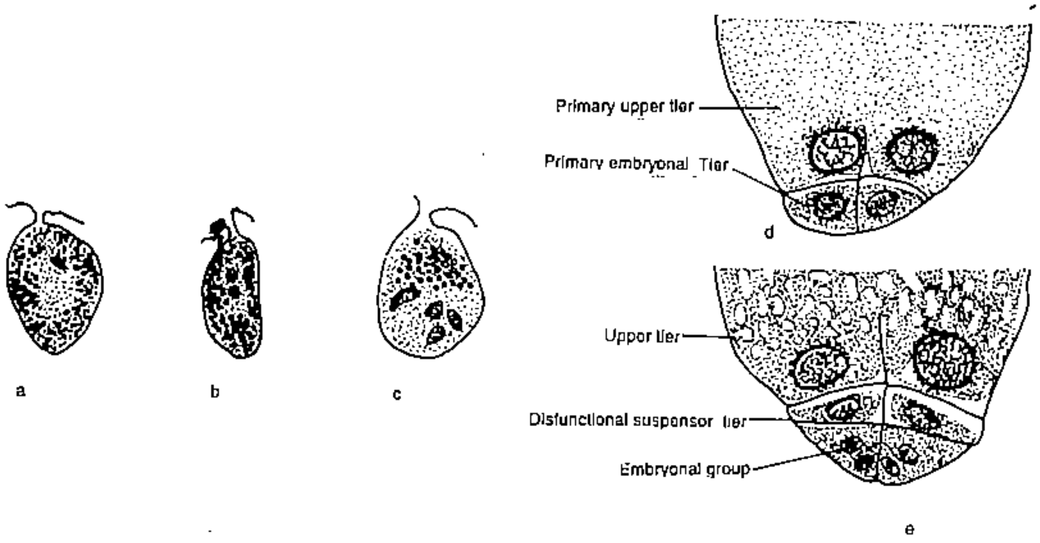

चित्र 3.15 : *पाइनस* स्पी. a) युग्मनज केन्द्रक को मध्यावस्था/मेटाफेज में दर्शाती हुई स्त्रीधानी b-c) क्रमश: दो तथा चार केन्द्रकी प्राक्भ्रूण d) आठ कोकिशकीय प्राक्भ्रूण दो सोपानों में व्यवस्थित, प्रायमिक ऊपरी (p^{U}) तथा प्राथमिक भ्रूणीय (p^{E}) प्रत्येक चार कोशिका का। e) प्राक्भ्रूण ऊपरी (U) तथा अक्रियाशील निलंबक (dS) तथा दो सोपानों में भ्रूणीय समूह (E) सहित (कोनार और रामचंदानी से 1958)

3.6 भ्रूणोद्भव तथा बीज का विकास

विकासशील भ्रूणीय कोशिकाएं (चित्र 13.16 a-i) भ्रूणीय निलंबक के कई वलन लंबे होने से युग्मकोद्भिद में नीचे खिसक जाती हैं। *पाइनस* में भ्रूणीय निलंबक की कुछ फसलें (Es_1, Es_2, Es_3 तथा ...) उत्पन्न होती हैं (चित्र 13.16 a-d)। भ्रूणीय पिंड की समीपस्थ कोशिकाएं असमान रूप से लंबी होकर विशिष्ट भ्रूणीय नलिका (embryonal tube) बनाती है। चार या अधिक भ्रूण लंबे होना आरंभ कर देते हैं। सामान्य तथा विदलन बहुभ्रूणता (cleavage embryony) दोनों दिखाई पड़ती हैं। सिर्फ़ एक भ्रूण वयस्क होता है, जबकि अन्य की वृद्धि, विकास की विभिन्न अवस्थाओं में रुक जाती है।

विकासशील भ्रूण की भ्रूणीय कोशिकाएं विभिन्न समतलों में विभाजित होकर निचले (दूरस्थ या कैलाजा सिरे पर) सिरे पर अर्ध गोलाकार शीर्ष और निलंबक तंत्र बनाती हैं जो ऊपरी (समीपस्थ या बीजांडद्वारी) सिरे तक उसके साथ निरंतर रहता है। मूलगोप (root cap) भ्रूण के निलंबक सिरे पर विकसित होती है तथा एक केन्द्रीय स्तंभ (central column) तथा परिधीय क्षेत्र दर्शाती है। भ्रूण के मूलगोप क्षेत्र में इन बदलावों के दौरान, मज्जा क्षेत्र बीजपत्राधर प्ररोह अक्ष (hypocotyl shoot axis) में विभेदित होना आरंभ कर देता है। बीजपत्राधर (hypocotyl) क्षेत्र की कोशिकाएं , जो बीजपत्रोपरिक (epicotyl) तथा मूल शीर्ष के मध्य स्थित होती है वे बड़ी, धानीयुक्त तथा अनुप्रस्थ रूप से व्यवस्थित हो जाती हैं। इसके बाद वल्कुट (cortex) विभेदित हो जाता है। उसके बाद प्रौकैम्बियम तथा अंतत: बीजपत्रीय आद्यक (primordis) विभेदित होता है। प्ररोह शीर्ष तथा बीजपत्र सबसे आख़िर में विभेदित होते हैं। बीजपत्रों की संख्या 3-18 तक होती है (चित्र 13.16 h, i) तथा प्रौकैम्बियम संपूलों तथा मध्यवर्ग कोशिकाओं की उपस्थिति दर्शाते हैं। वयस्क भ्रूण में अत: सुस्पष्ट बीजपत्रोपरिक मूल अक्ष बीजपत्राधर प्ररोह अक्ष निलंबक (suspensor) के अवशेषों के साथ होते हैं।

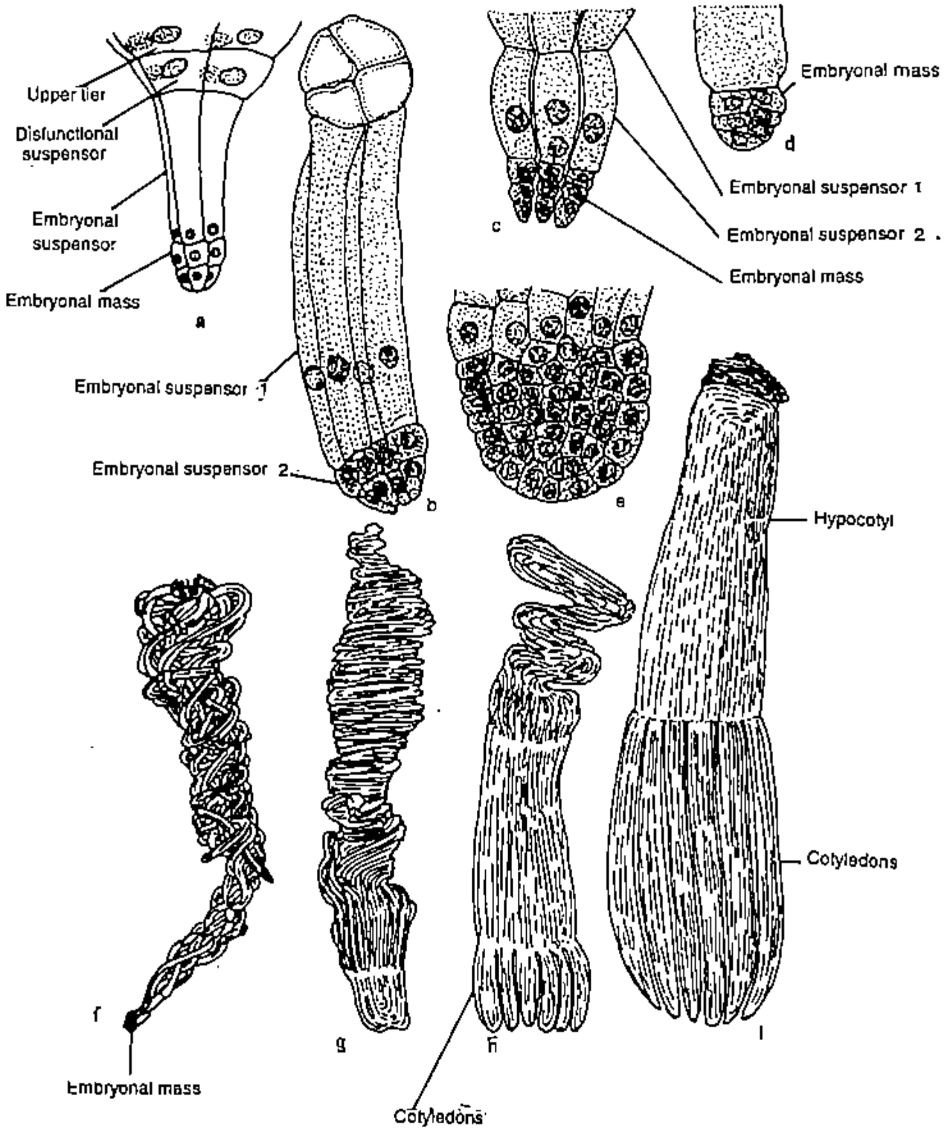

चित्र 3.16 : *पाइनस* स्पी.; भ्रूण के विकास में प्रगामी अवस्थाएं a) प्राकभ्रूण का आरेखी प्रदर्शन भ्रूणीय निलंवक की पहली फसल को दर्शाता हुआ (Es_1) । प्राकभ्रूण का निलंवक सोपान लंवा नहीं होता है तथा अक्रियाशील है। भ्रूणीय कोशिकाओं में अनुप्रस्थ विभाजन होता है b) भ्रूणीय समूह की कोशिकाओं ने भ्रूणीय निलंवक की दो फसलों को जन्म दिया है : (Es_1) के काफी लंवे होने को देखिए। अक्रियाशील निलंवक इस सोपान के ऊपर दिखाई पड़ रहा है। c-e) भ्रूणीय पिंड में आगे के विभाजन (f) संपूर्ण आरोपण वहुत अधिक कुंडलित निलंवक तंत्र तथा विभिन्न स्तरों पर कुछ प्राकभ्रूणों को दिखाने के लिए। g, h) पूर्ण आरोपण भ्रूणीय पिंड में और अधिक क्रियाशीलता दिखाने के लिए (c) वीजपत्र घड़ में विभेदित हो गए हैं i) वयस्क भ्रूण वहुवीजपत्री स्थिति को दिखाते हुए a) वुक्होल्ज से 1929; b-i महेश्वरी और कोनार से)।

बीजावरण

तरुण बीजांड में अध्यावरण तीन परतों का होता है। जब बीजांड वयस्क हो जाता है तब अध्यावरणी कोशिकाएं विभाजित होती हैं तथा तीन क्षेत्रों में विभेदित हो जाती हैं; बाहरी गूदेदार, मध्य पाषाणी तथा भीतरी गूदेदार (चित्र 3.17)।

लगभग सभी शंकु वृक्षों के बीजों में सुविकसित पंख होते हैं, हालांकि कुछ जातियां अवशेषी पंख वाली या पंखहीन होती हैं।

बीजावरण कठोर या कागजी हो सकता है, परंतु यह जल के लिए पारगम्य होता है। शंकु वृक्षों के बीज सामान्यत: वायु द्वारा लंबी दूरी तक परिपेक्षित होते हैं। शंकु भी फिसलकर नीचे चले जाते हैं तथा निचली ऊँचाइयों पर पादप को स्थापित करने में सहायक होते हैं।

पाइनस में बीज की फसलें होती हैं। ये वार्षिक नहीं होती हैं बल्कि दो या और अधिक वर्षों के अंतराल पर पाई जाती हैं। जैसे-जैसे पादप बड़ा होता है, बीज धारण करने की क्षमता घट जाती है। परन्तु बिल्कुल समाप्त नहीं होती है। शंकुवृक्ष अपनी मृत्यु तक बीज उत्पन्न करते रहते हैं।

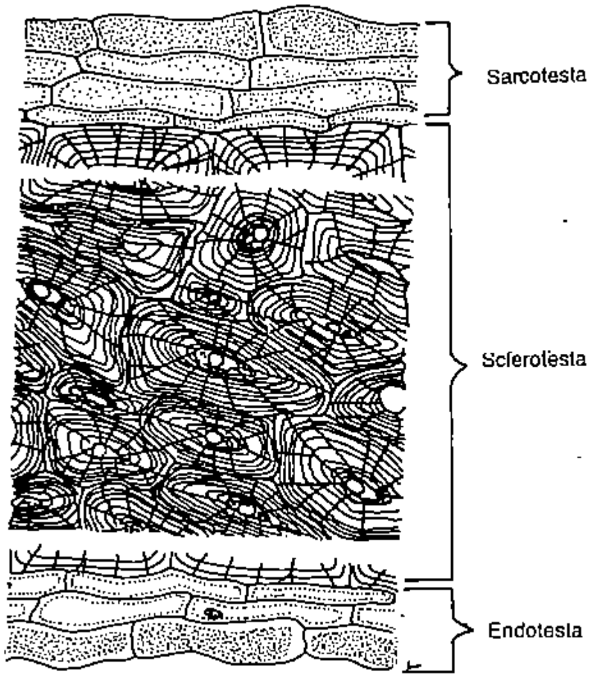

चित्र 3.17 : *पाइनस रौक्सबरघाई* के बीजावरण की अनुप्रस्थ काट (कोनार से 1960)।

बीज की जीवनक्षमता तथा अंकुरण

पाइनस में जहां मादा शंकु वयस्कता पर बंद रहते हैं बीज लंबे समय तक जीवनक्षम रहते हैं। बीज का अंकुरण भूमिपरिक (epigeal) होता है (चित्र 13.18 a-h)। बीज बोने के 3-4 सप्ताह के भीतर अंकुरित हो जाते हैं। मूलक निकलता है तथा मिट्टी में घुस जाता है। बीजपत्राधार लंबा व सीधा हो जाता है तथा बीजपत्रों के साथ बीज के अवशेष लिए रहता है, और इस प्रकार उन्हें जमीन के ऊपर धकेलता है। बीजपत्र, भ्रूणपोष से पोषक तत्व अवशोषित करता है तथा उन्हें नवोद्‌भिद को प्रदान करता है। बीजपत्र तभी अलग होते हैं जब प्राथमिक/किशोर पत्तियां निकल आती हैं तथा लंबा प्ररोह उग जाता है।

पाइनस एरिस्टाटा का वृक्ष जो कैलीफोर्निया के इन्यो राष्ट्रीय उद्यान में हैं, वह 4,600 वर्षों से भी अधिक पुराना है, तथा कभी-कभी शंकु उत्पन्न करता है।

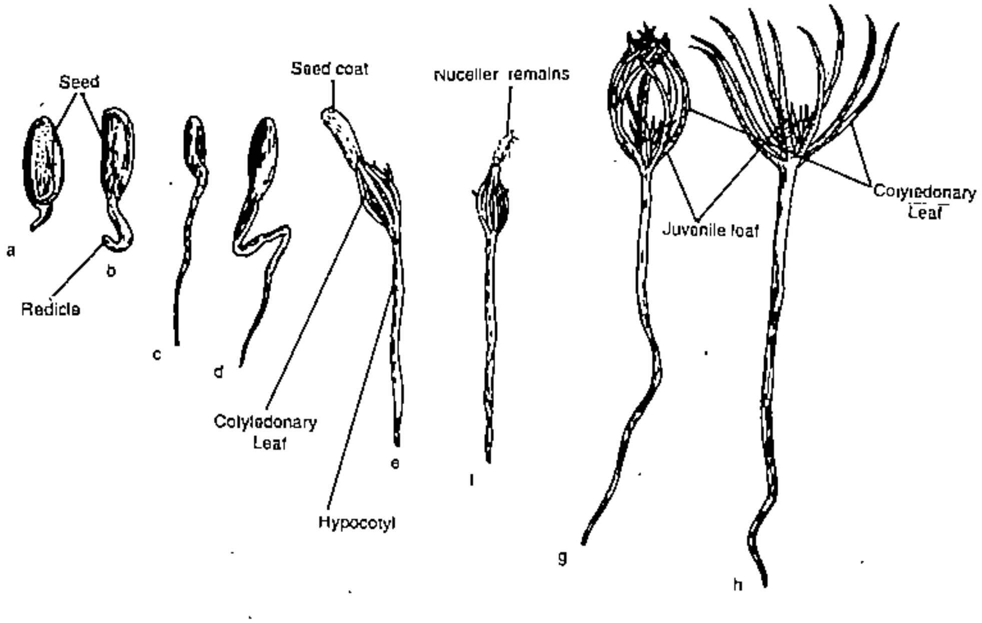

चित्र 3.18 :*पाइनस जिरारडियाना* a-g) बीज के अंकुरण में अवस्थाएं h) नवोद्‌भिद बीजपत्री और किशोर पत्तियों के साथ।

जीवन चक्र

उष्णकटिबंधी तथा शीतोष्ण शंकु वृक्षों में प्रजनन-चक्र पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होता है। ऊँचाई जिस पर वृक्ष उगता है वह भी महत्वपूर्ण है। कम ऊँचाई पर उगने वाले वृक्षों में (पाइनस रौक्सबरघाई) नर शंकु सितम्बर में आते हैं तथा परागण आगामी मार्च में होता है। अंकुरण के बाद परागनलिका लगभग 10 महीने के लिए विश्राम करती है (मई से फरवरी -द्वितीय वर्ष)। वृद्धि पुन: मार्च में होती है जिसके बाद निषेचन अप्रैल में होता है।

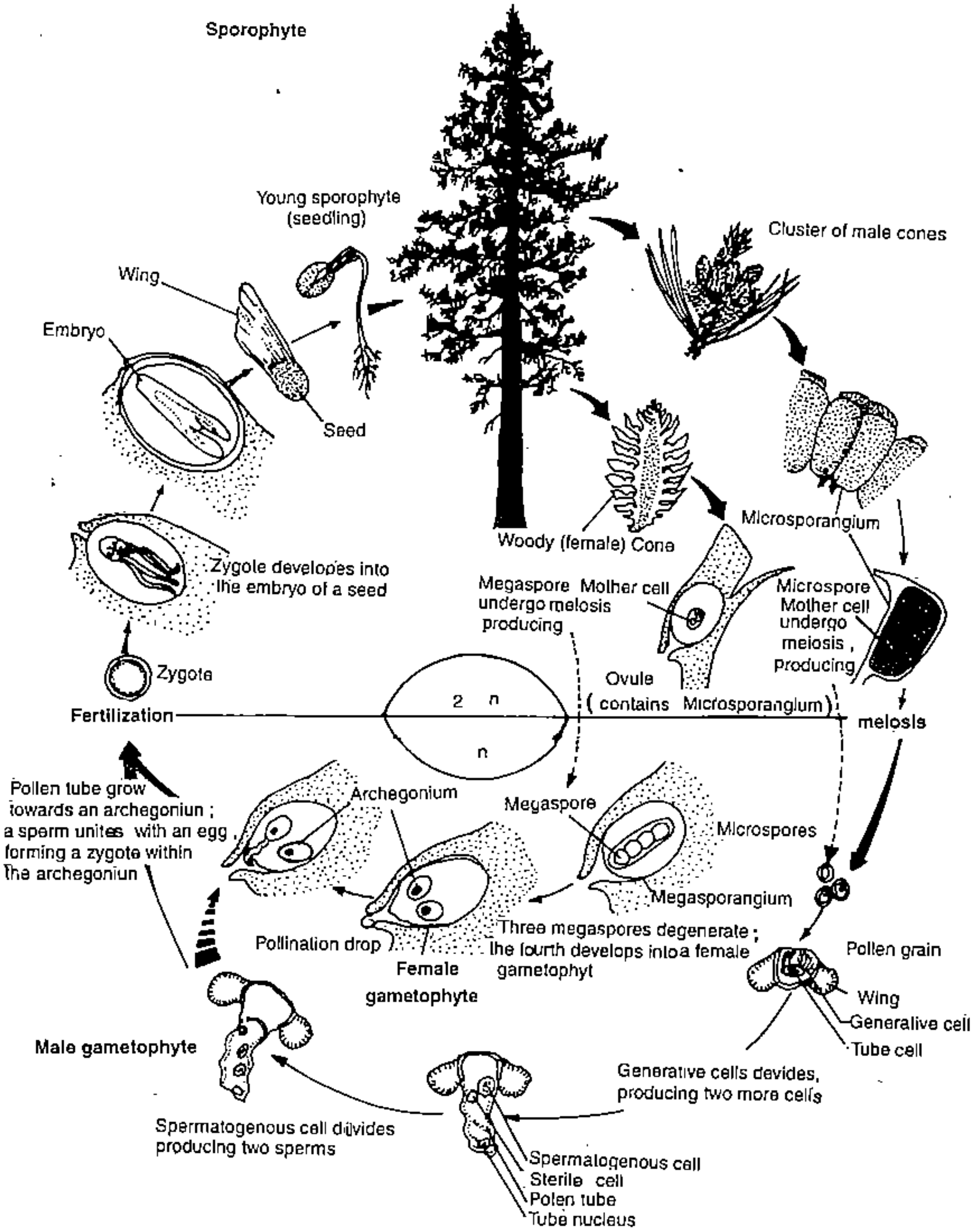

चित्र 3.19 : पाइनस के जीवनचक्र का आरेखी प्रदर्शन।

मादा शंकु फरवरी में बनने आरंभ होते हैं। मार्च में परागित होते हैं तथा उसके बाद अप्रैल से जनवरी तक 10 महीने के लिए विश्राम करते हैं। परागण के समय बीजांड में मुक्त-केन्द्रकी युग्मकोद्भिद में होता है। दूसरे वर्ष के दौरान जब फरवरी में पुन: वृद्धि होती है। युग्मकोद्भिद कोशिकीय बन जाता है तथा स्त्रीधानी का निर्माण होता है। निषेचन अप्रैल में होता हैं तथा उसके बाद भ्रूण का विकास तथा बीज वयस्क होता है। शंकु फटकर अपने बीज अप्रैल-मई में अलग करते हैं (तीसरे वर्ष)।

बोध प्रश्न 6

शंकु वृक्ष के जीवन चक्र का सारांश/संक्षिप्तीकरण कीजिए, नीचे दिए आरेख का अध्ययन कीजिए तथा रिक्त संरचनाओं के नाम भरिए।

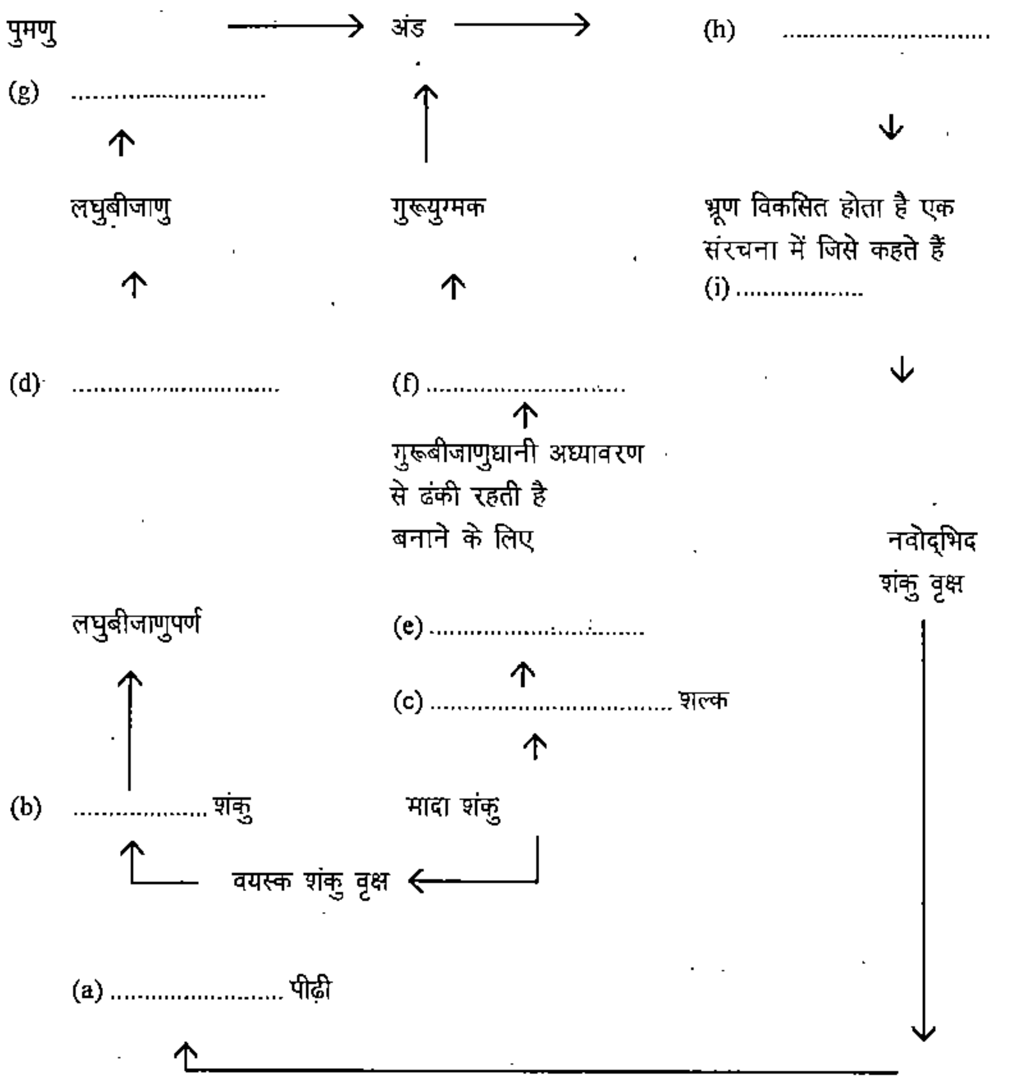

3.7 सारांश

- कोनिफरेलीज़ एक बड़ा समूह है जिसमें 7 कुल हैं। वंश *पाइनस* इस कुल का एक सबसे अधिक परिचित प्रतिनिधि है। भारतीय उप-महाद्वीप से *पाइनस* की सात जातियां ज्ञात हैं। *पाइनस* एक खूबसूरत वृक्ष है जिसकी पिरामीडीय आकृति है। *पाइनस* में दो प्रकार की जड़ें पाई जाती हैं। सामान्य तथा कवकरूपी। तना सीधा और काष्ठीय होता है। दो प्रकार की शाखाएं (i) लंबे प्ररोह तथा (ii) बौने प्ररोह पाए जाते हैं। पत्रिय पत्तियां सुई जैसी होती हैं तथा बौने प्ररोह पर उगती हैं।

- वृक्ष उभयलिंगाश्रयी है, परन्तु नर और मादा शंकु अलग-अलग शाखाओं पर उगते हैं। नर शंकु गुच्छों में पाए जाते हैं तथा उनकी संख्या 15-140 तक हो सकती है। मादा शंकु लंबे प्ररोह को विस्थापित करते हैं तथा प्रत्येक पर्वसंधि पर 2-6 उगते हैं। 80-90 गुरूबीजाणुपूर्ण केन्द्रीय अक्ष के चारों ओर सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित रहते हैं। बीजांडधर शल्क तथा सहपत्र मिलकर बीज शल्क-संकर बनाते हैं।

- कवकमूल कुछ शंकु वृक्षों में पाया जाता है। *पाइनस* में कवकों की 50 विभिन्न जातियों के साथ सुविकसित बर्हिमुखी कवकमूली संबद्धता पाई जाती है। पाइन कवक का संबंध सहजीवी होता है। द्वितीयक वृद्धि मूल तथा प्ररोह दोनों में पाई जाती है। काष्ठ मुख्यत: वाहिनिकाओं का बना होता है।

- *पाइनस* की पत्ती अनुप्रस्थ काट में गोल, अर्धगोलाकार या त्रिकोणीय हो सकती है। पत्तियों में मरुद्भिदीय गुण पाए जाते हैं।

- लघुबीजाणुजनन लघुबीजाणुधानी में होता है तथा पंखयुक्त पराग कण बनते हैं। बीजांड में (गुरूबीजाणुधानी) गुरूबीजाणुजनन होता है तथा अगुणित मादा युग्मकोद्भिद बनता है। स्त्रीधानी युग्मकोद्भिद के शीर्ष भाग में स्थित होती है।.

- *पाइनस* में परागण वायु के द्वारा होता है तथा निषेचन के बाद युग्मनज बनता है। भ्रूण सुस्पष्ट बीजपत्रोपरिक, मूल अक्ष तथा बीजापत्राधर प्ररोह अक्ष व निलंबक के अवशेषों से विकसित होता है। लगभग सभी शंकु वृक्षों के बीजों में सुविकसित पंख होते हैं। हालांकि, कुछ जातियां पंखहीन होती है। बीजावरण में तीन परते होती हैं। बीज बोने के 3-4 सप्ताह के भीतर अंकुरित हो जाता है। *पाइनस* का प्रजनन चक्र तीन वर्षों में पूरा होता है।

3.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. लंबे प्ररोह तथा बौने प्ररोह में अन्तर कीजिए।

....

....

....

....

....

2. *पाइनस* के नर तथा मादा शंकु का आरेखों सहित वर्णन कीजिए।

3. कवकमूल क्या है ? विस्तार से बताइए कि इस संबंध में कौन लाभान्वित होता है।

4. तने की शारीरीय संरचना का वर्णन कीजिए।

5. लघुबीजाणुधानी, लघुबीजाणुजनन तथा नर युग्मकोद्भिद को विस्तार से समझाइए।

6. *पाइनस* में परागण तथा निषेचन किस प्रकार संपन्न होता है ?

7. आरेखों के द्वारा *पाइनस* के जीवनचक्र को दर्शाइए।

3.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) 1. असत्य
   2. सत्य
   3. असत्य
   4. सत्य

2) 1. मंड
   2. चालनी कोशिका
   3. बर्हिमुखी
   4. सहजीवी
   5. खुले, संपार्श्विक
   6. चालनी पट्टिका
   7. वाहिकाएं
   8. त्रिकोणीय
   9. कोण
   10. धँसे हुए

3) 1. असत्य
   2. सत्य
   3. सत्य

4) अ 72
   ब 36
   स 36
   द 72
   क 36
   ख 72
   ग 36
   घ 72
   ङ 72

5) अ चार गुरूबीजाणु
   ब बीज
   स लघुयुग्मकोद्भिद
   द नवोद्भिद, युग्मकोद्भिद अंततः बीजाणुउद्भिद के रूप में वयस्क होता है
   क बीजावरण
   ख गुरूबीजाणुउद्भिद
   ग भ्रूण
   घ वयस्क बीजांडीय पाइन शंकु के काष्ठीय शल्क
   ङ पाइन बीजों पर पंख जैसे प्रक्षेप

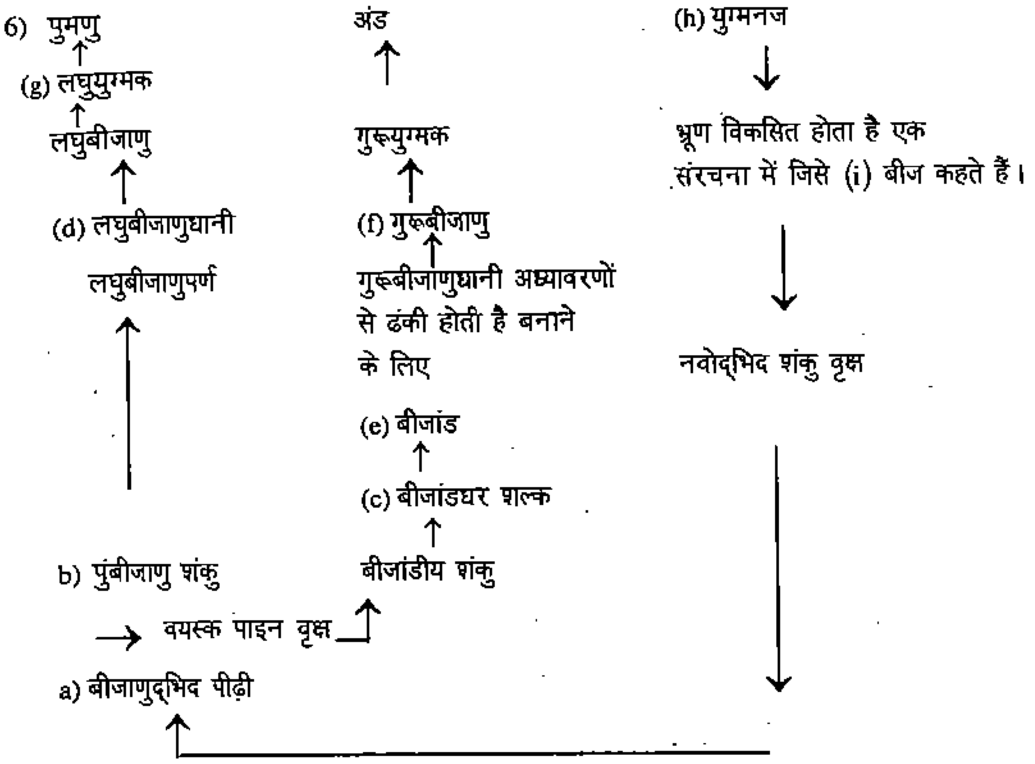

अंत में कुछ प्रश्न

1) सेक्शन 3.3 आकारिकी देखिए

2) सेक्शन 3.3 आकारिकी देखिए तथा रेखाचित्र बनाइए

3) सेक्शन 3.4.2 तथा चित्र 3 संदर्भ के लिए देखिए।

   i) वर्हिमुखी कवकमूली संबद्धता

   ii) बेसीडियोमाइसिटीज की 50 से भी अधिक जातियां

   iii) हार्टिग्स नेट/जाल

   iv) संबध सहजीवी है।

4) सेक्शन 3.3 व...... उपसेक्शन 3.4.3 तना देखिए

5) सेक्शन 3.4 के...... उपसेक्शन 3.4.2; 3.4.3; 3.4.4 को देखिए

6) सेक्शन 3.5 ...... परागण को देखिए

7) चित्र 3.19 देखिए।

इकाई 4 नीटोप्सिडा : *इफेडरा* और *नीटम*

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना
उद्देश्य
उप-इकाई 4A *इफेडरा*
उप-इकाई 4B *नीटम*

4.0 प्रस्तावना

अनावृतबीजी या जिम्नोस्पर्म (gymnosperms) पादपों के वर्गीकरण के बारे में आप अभी तक जान चुके हैं (इकाई 1 देखें)। *इफ़ेड्रेसी, नीटेसी* और *वेल्विटिशियेसी* नाम के तीन कुलों को अक्सर नीटेलीज गण या नीटोप्सिडा (Gnetopsida) वर्ग में रखा जाता है। इन कुलों का प्रतिनिधित्व एक-एक जीनस क्रमश: *इफेडरा, नीटम* और वेल्विटिशिया करते हैं। इन तीनों जीनसों में कुछ विशेष लक्षण उभयधर्मी होते हैं : i) इनके द्वितीयक जाइलम में वाहिकाएं पाई जाती हैं; ii) पौधे प्राय: एकलिंगाश्रयी (dioecious) होते हैं; iii) नर शंकु (स्ट्रॉबिलस) सहपत्रों (bracts) से घिरा पाया जाता है, इस कारण इन्हें अक्सर "पुष्प" कहा जाता है; iv) बीजांड भी आवरणों से घिरे रहते हैं जिन्हें प्राय: परिदलपुंज (perianth) माना जाता है। नीटोप्सिडा में एक से ज्यादा आवरण होते हैं जबकि अनावृतबीजियों में केवल एकमात्र अध्यावरण (integument) होता है। इन उभयधर्मी लक्षणों के बावजूद इन तीनों जीनसों के वर्गिकी विवेचन में परिवर्तन हुए हैं। गहन अध्ययनों के फलस्वरूप इनकी आकारिकीय और जनन में महत्वपूर्ण भेदों का पता चला है। वर्तमान में इन्हें भिन्न गणों में वर्गीकृत किया जाता है (इकाई 1 देखिए)।

तीनों जीनसों की कायिक और जनन संरचनाएं अति विशिष्टीकृत पाई जाती हैं। *नीटम* में ऐसी कई विशेषताएं हैं, जो आवृतबीजी पौधों से काफी मिलती-जुलती हैं। इन आवृतबीजी पादप लक्षणों के कारण *नीटम*, वर्गिकी की दृष्टि से एक विशेष महत्वपूर्ण जीनस माना जाता है। हम आपको *नीटम* के बारे में विस्तार से जानकारी देना चाहते हैं क्योंकि नीटेसी कुल का यह एकमात्र जीनस है। इस जीनस के बारे में आप उप-इकाई 4 B में पढ़ेंगे। इससे पहले उप-इकाई 4 A में *इफ़ेडरा* के बारे में जानकारी पाएंगे। *इफ़ेडरा* का अध्ययन महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि रोचक भी है क्योंकि यह अन्य जिम्नोस्पर्म्स पादपों से बिल्कुल अलग है। ऐल्केलॉइड इफेड्रीन (alkaloid ephedrine) का स्रोत यही पादप है। तीसरे जीनस *वैलविटिशिया* का उल्लेख इकाई 1 में किया जा चुका है।

उप-इकाई 4A इफेडरा

उप-इकाई की रूपरेखा

4A.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

4A.2 वितरण, आवास और सामान्य लक्षण

4A.3 कायिक संरचनाएँ

4A.3.1 जड़

4A.3.2 तना

4A.3.3 पत्ती

4A.4 जनन संरचनाएँ

4A.4.1 नर शंकु और युग्मकोद्भिद

4A.4.2 मादा शंकु और युग्मकोद्भिद

4A.5 परागण और निषेचन

4A.5.1 परागण

4A.5.2 निषेचन

4A.6 भ्रूणोद्भव

4A.7 सारांश

4A.8 अंत में कुछ प्रश्न

4A.9 उत्तर

4A.1 प्रस्तावना

नीटेसी और वैल्वित्शियेसी की तरह इफेडरेसी (गण इफेडरेलीज) भी एकलप्ररूपी (monotypic) है जिसमें सिर्फ एक ही जीनस है और वह है - *इफेडरा*। इस जीनस में 40 जातियां पाई जाती हैं। *इफेडरा* एक छोटी, अतिशाखित, सीधी, शयान झाड़ी के रूप में पाया जाता है जो कभी-कभी आरोही भी होता है। यह मुख्यत: विश्व के शुष्क जलवायु वाले प्रदेशों में पाया जाता है। इसकी कुछ जातियों से ऐल्केलॉइड इफेडरीन निकाला जाता है। जिसका व्यापक उपयोग है। इस इकाई में आप अनावृतबीजी पादपों के इस रोचक समूह की संरचना, जनन और परिवर्धन से जुड़े पहलुओं का अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- समस्त आकारिकीय और शारीरीय विशेषताओं के आधार पर इफेडरा के पौधे को पहचान सकें,
- इसकी कायिक और जनन संरचनाओं के विशेष लक्षणों के बारे में बता सकें तथा
- इफेडरा के जीवन-चक्र का सचित्र वर्णन कर सकें।

4A.2 वितरण, आवास और सामान्य लक्षण

जीनस *इफेडरा* में 40 जातियां होती हैं, जो व्यापक रूप से वितरित पाई जाती हैं। ये भूमध्य सागर से लेकर हिमालय तक एशिया में चीन और उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका सहित नवीन और प्राचीन दोनों विश्वों में पाई जाती हैं। भारत और चीन में इसकी लगभग 18 जातियां पाई जाती हैं तथा नवीन विश्व में 22 जातियां मुख्यत: उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में मिलती हैं।

इसके पौधे बहुधा झाड़ीदार होते हैं और उनमें चरम मरुद्भिदी लक्षण देखने को मिलते हैं। इनकी ऊँचाई साधारणतया दो मीटर से कम होती है। लेकिन इनकी कुछ जातियां कठलताएं (lianas) होती

हैं तो कुछ जातियां भूमिगत प्रकदों द्वारा फैलती हैं। इसकी एक जाति *इफेडरा ट्राइएंड्रा (E. triandra)* एक छोटे पेड़ के आकार की होती है जिसके तने का व्यास 30 सेमी. तक जाता है। *इफेडरा काम्पेक्टा (Ephedra compacta)* अपने नाम के अनुरूप ही ठोस, अति शाखन करने वाला पौधा है, जो ऊँचाई में 30-50 सेमी. तक जाता है। एक और विविधता दिखाता है *इ. केम्पाइलोपोडा (E. campylopoda)* जिसकी टहनियां निलंबी रहती हैं। भारत में पाई जाने वाली *इफेडरा* की पांच जातियों के वितरण के बारे में तालिका 4A.1 में बताया गया है।

तालिका 4.1 : भारत में पाई जाने वाली *इफेडरा* की जातियां (स्रोत : पी. एन. मेहरा, 1988)

क्रमांक	जीनस	पाए जाने का स्थान
1.	*इ. फोलिएटा*	हरियाणा, राजस्थान और पंजाब के शुष्क मैदानी भागों में पाया जाता है।
2.	*इ. इंटरमीडिया*	शीतोष्ण और अल्पाइन हिमालय के शुष्क प्रदेशों में विशेषकर चट्टानों के विदरों में चिरस्थायी झाड़ियों के रूप में उगता है।
3.	*इ. जेरार्डियाना*	
4.	*इ. सैक्साटाइलिस*	
5.	*इ. पाइकिएजेनिसस*	मध्य हिमालय

सरसरी नजर में *इफेडरा* (चित्र 4.1) के पौधे को *एक्वीसीटम (Equisetum)* समझने की भूल अक्सर हो जाती है क्योंकि इसमें पाए जाने वाले पर्व अनुदैर्ध्य कटकित होते हैं और साथ ही ये कटक उत्तरोत्तर पर्वों पर एकांतरित रहते हैं। किसी तरह, उत्तरोत्तर पर्वों में पत्तियां भी एकांतरित होती हैं। पाइनस (चीड़) की तरह इसमें शाखाएं दो प्रकार की होती हैं : अपरिमित (indeterminate) और परिमित (determinate) । किन्तु इन शाखाओं में विभेद *पाइनस* की तरह सुस्पष्ट नहीं होता। प्रत्येक पर्वसंधि में अपरिमित शाखाओं पर पत्तियाँ तीन और कभी कभी चार के घेरों में पाई जाती हैं। परिमित शाखाएं अपरिमित शाखों की कुछ पत्तियों के कक्ष पर पाई जाती हैं और इनमें आमने-सामने और क्रांसित पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं।

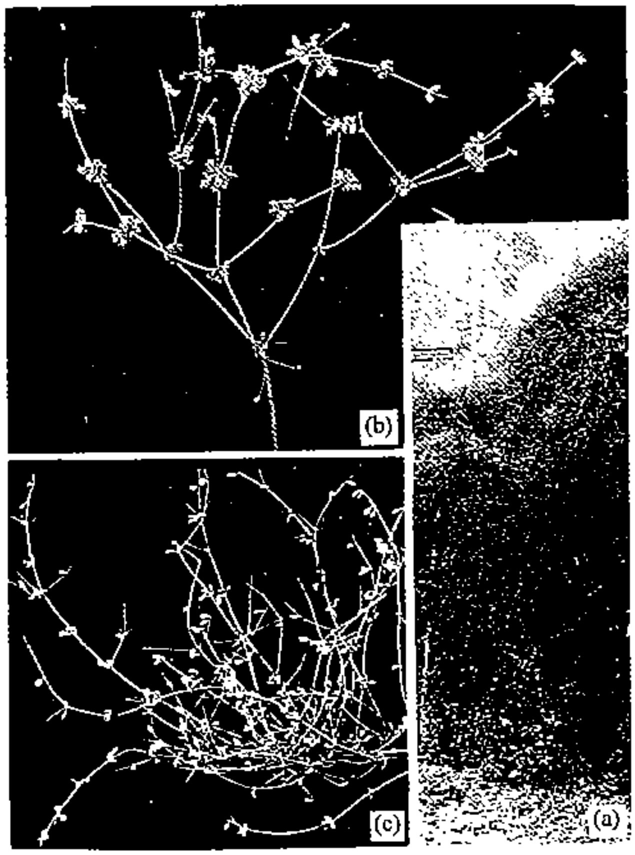

चित्र 4A.1 : *इफेडरा फोलिएटा* :
a) पौधे का एक हिस्सा, इसके झाड़ीदार स्वभाव को ध्यान से देखिए।
b) और c) नर और मादा शंकु क्रमशः धारण करने वाली टहनियां (एम.एन. सिंह से)।

4A.3 कायिक संरचनाएं

इकाई के इस भाग में आप जड़, तना और पत्तियों, इन कायिक संरचनाओं के विशेष आकारिकीय और शारीरीय लक्षणों का अध्ययन करेंगे। चित्रों में विस्तार से दिखाई गई संरचनाओं को आप ध्यान से देखें।

4A.3.1 जड़

इफेड्रा की जड़ की संरचना आकारिकीय और शारीरीय दृष्टि से आम जड़ों की तरह ही होती है। सबसे बाहरी परत बाह्यत्वचा कहलाती है जिसके बाद एक सुविकसित वल्कुट (कार्टेक्स) रहता है। स्थूलभित्तियुक्त कोशिकाओं से निर्मित एक ठोस बाह्य भाग और अदृढ़ तरीके से आबद्ध तनु-भित्ति कोशिकाओं से बने एक आंतरिक भाग में विभेदित रहता है। वल्कुट में श्लेष्मक नलिकाएँ (mucilaginous canals) वितरित मिलती हैं। वल्कुट स्थूल-भित्ति कोशिकाओं की एक एकल परत वाली अंतस्त्वचा से सीमित रहता है, जिसके बाद एक एकलस्तरित मृदूतकीय परिरंभ पाया जाता है। इसमें एक छोटा द्विआदिदारुक रंभ स्थित होता है, जिसमें बाह्य-आदिदारू तत्व पाए जाते हैं। मज्जा छोटा मगर सुस्पष्ट होता है। जड़ों में द्वितीयक वृद्धि सामान्य तरीके से होती है।

4A.3.2 तना

जैसा कि पहले बताया गया है, तने पर स्थित अनुदैर्ध्य कटक तने को एक लहरदार रूपरेखा प्रदान करते हैं। अनुप्रस्थ काट में इसमें कटक और खांचे नजर आते हैं (चित्र 4A.2a)। बाह्यत्वचा पर एक मोटी क्यूटिकल या उपत्वचा पाई जाती है, जो खांचों पर टूट जाती है जिनमें रंध्र पाए जाते हैं। रंध्र गर्तमग्न होते हैं और प्रत्येक रंध्र दो द्वार कोशिकाओं और एक अधोरंध्री गुहिका (substomatal cavity) का बना होता है (चित्र 4A.2b)। अधस्त्वचा जो केवल कटकों के नीचे उपस्थित होती है, तथा दीर्घित दृढ़ोतक कोशिकाओं से बनी होती है, यह तने को यांत्रिक आधार प्रदान करती है। वल्कुट एक बाहरी एकलस्तरीय, दृढ़ता से बद्ध, दीर्घित खंभ कोश्किकाओं में विभेदित रहता है। इन खंभ कोशिकाओं में पर्णहरित (क्लोरोफिल) भरपूर मात्रा में मौजूद रहता है जिससे वह प्रकाशसंश्लेषण कर लेती हैं। आंतरिक भाग अदृढ़ रूप से बद्ध कोशिकाओं से बना रहता है जिनमें हरितलवक अल्प मात्रा में पाया जाता है। वल्कुट एकलस्तरीय अंतस्त्वचा द्वारा सीमांकित रहता है। संवहन बंडल विवृत्त और मध्याद्विदारुक होता है। मज्जा का मध्य भाग स्थूलभित्ति टैनिनधारी कोशिकाओं का बना रहता है। जाइलम वाहिनिकाओं (tracheids), वाहिकाओं (vessels) और जाइलम मृदूतक का बना होता है। वाहिनिकाओं में वलयाकार और सर्पिल स्थूलन और परिवेशित गर्त (bordered pits) देखने को मिलते हैं, जबकि वाहिकाओं में सिर्फ परिवेशित गर्त होते हैं। फ्लोएम चालनी कोशिकाओं (sieve cells) फ्लोएम मृदूतक और ऐल्बूमिनी कोशिकाओं (albuminous cells) का बना होता है।

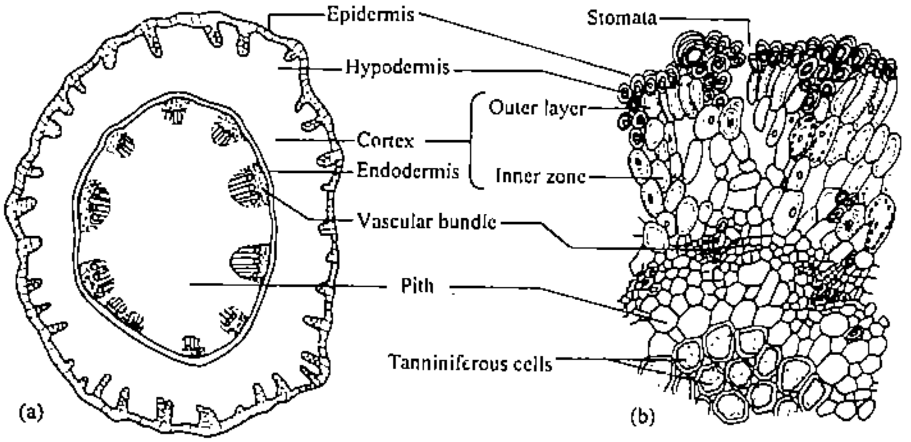

चित्र 4A.2 : a) *इफेड्रा फोलिएटा*, अनुप्रस्थ काट में तरुण तने का रेखाचित्र। इसकी लहरदार रूपरेखा, कटकों के नीचे स्थित स्थूलभित्ति कोशिकाएं , चौड़ा वल्कुट, मज्जा और मध्यदारुक संवहन बंडलों को ध्यान से देखें। b) *इफेड्रा ट्राइफर्का* : कोशिकीय सूक्ष्म-संरचनाओं को दर्शाता तने के एक भाग का अनुप्रस्थ काट। कटकों के नीचे स्थित स्थूल-भित्ति कोशिकाओं, खांचों में स्थित रंध्रों, बाहरी और आंतरिक वल्कुट, संवहन पूलों और मज्जा में उपस्थित स्थूलभित्ति टैनिनधारी कोशिकाओं को भी ध्यान से देखें। (a, भटनागर और मोइत्रा, 1996 से संशोधित; b चैंबरलेन, 1935 से)।

इफेड्रा के तने पर स्थित पर्व काफी दीर्घित होते हैं। यह अंतर्वेशी मेरिस्टेम (intercalary meristem) की सक्रियता के कारण होता है, जो हर एक पर्वसंधि के ठीक ऊपर उपस्थित रहता है (चित्र 4A.3a, b देखिए)। सक्रिय प्रावस्था के बाद अंतर्वेशी मेरिस्टेम या तो विलग्न परत (abscission layer) बनाता है या दृढ़ीभवित मृदूतक में विकसित हो जाता है। अंतर्वेशी मेरिस्टेम को एक और नाम से जाना जाता है, यह है पर्वसंधि मध्यपट (nodal diaphragm) । प्रत्येक पर्व के आधार पर इस मध्यपट उपस्थिति के कारण तने की पर्वसंधियों पर आसानी से पृथक किया जा सकता है।

(a)

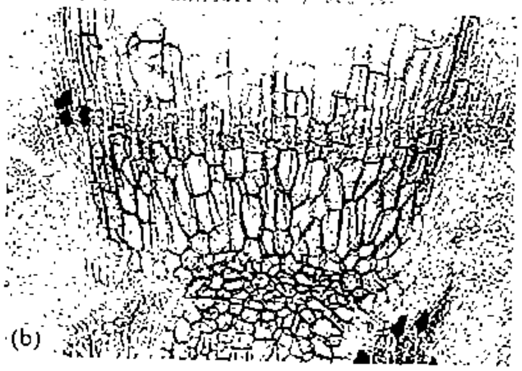

(b)

चित्र 4A.3 : *इफेड्रा फोलिएटा,* a) पर्वसंधि पर तने के एक भाग की अनुदैर्घ्य काट, जिसमें मेरिस्टेमी पट्टिका देखी जा सकती है। b) आवर्धित अंतर्वेशी खंड (भटनागर और मोइत्रा, 1996)।

तने में द्वितीयक वृद्धि सामान्य तरीके से होती है। द्वितीयक वृद्धि की शुरूआत अंतरापूलीय एधा (interfascicular cambium) में विभेदन से होती है। यह आंतरपूलीय एधा (intrafascicular cambium) से जा मिलता है और एक वलय बनाता है। यह एधा वलय भीतर की ओर जाइलम कोशिकाएं और बाहर की तरफ फ्लोएम कोशिकाएं बनाता है। आपको याद होगा कि एधा कोशिकाएं दो प्रकार की होती हैं : अर-आरंभक (ray initials) कोशिकाएं और तर्कुरूप आरंभक (fusiform initials) कोशिकाएं। जैसा कि इनके नाम से ही संकेत मिलता है, अर-आरंभक जाइलम और फ्लोएम अरों का निर्माण करती हैं, तो तर्कुरूप आरंभक संवहन अवयवों को जन्म देती हैं। वार्षिक वृद्धि वलय प्रत्येक वर्ष की द्वितीयक वृद्धि के कारण बनते हैं (चित्र 4A a, b)। तरुण तने में मज्जा किरणें (medullary rays) एकपंक्तिक (uniseriate) होती हैं, किन्तु विकसित तने में अर कोशिकाओं में अनुदैर्घ्य विभाजन या एकपंक्तिक किरणों में संलयन के द्वारा ये बहुपंक्तिक बन जाती हैं (चित्र 4a.4d)। वाहिकाओं से परिवेशित गर्त (bordered pits) दिखाई देते हैं (चित्र 4a.4c)। वाहिनिकाएं तने की सबसे सुस्पष्ट लक्षण हैं (चित्र 4a.4a-c)। द्वितीयक फ्लोएम में चालनी कोशिकाएं, फ्लोएम मृदूतक, एल्बुमिनी कोशिकाएं और किरणें होती हैं। अक्षीय तंत्र में पाई जाने वाली एल्बुमिनी कोशिकाएं तर्कुरूप आरंभकों द्वारा बनती हैं।

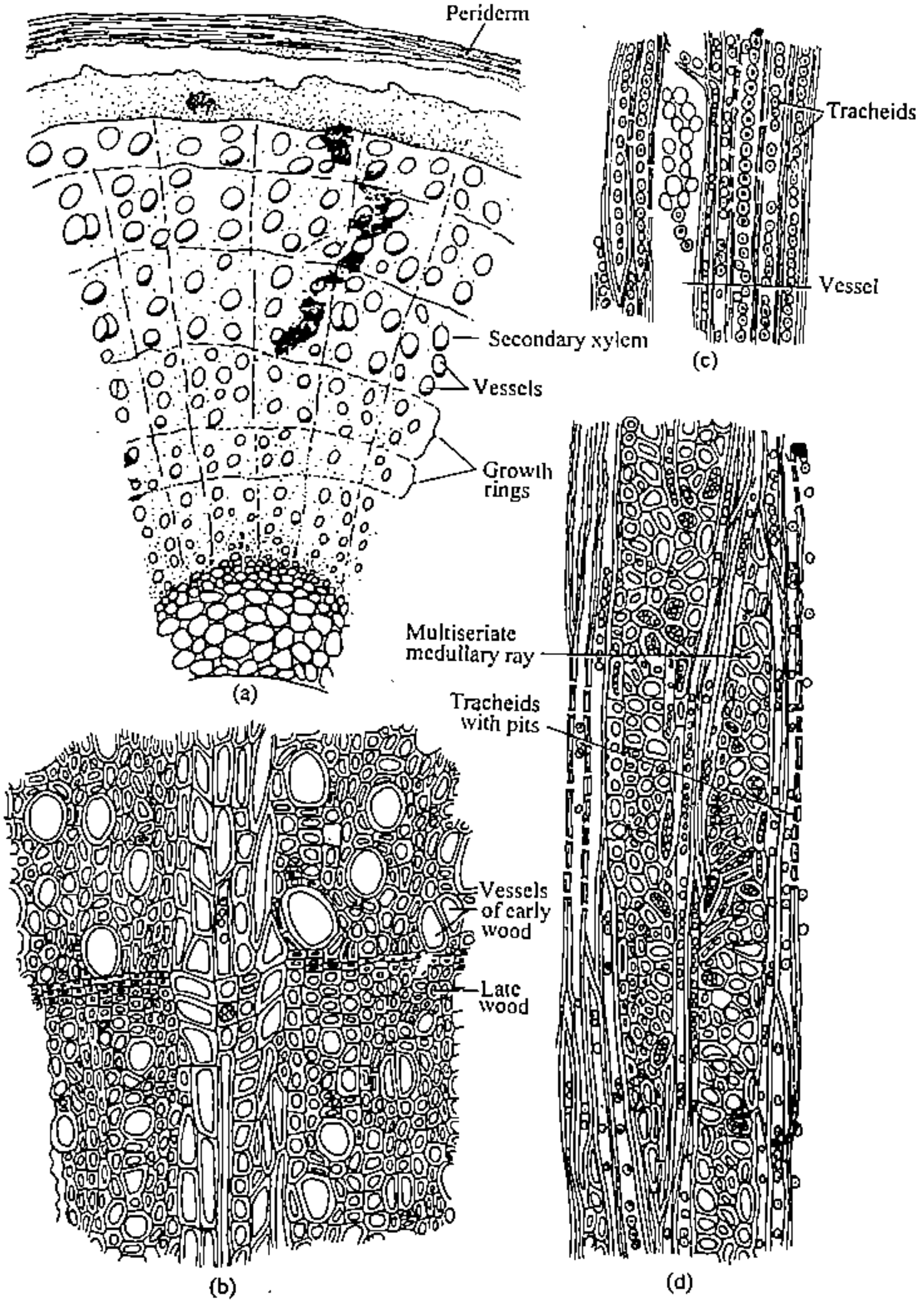

चित्र 4A.4: इफेड्रा जाति, a) अनुप्रस्थ काट में विकसित तने का एक अंश जिसमें अनेक वार्षिक वलय दिखाई दे रहे हैं। b) आरंभिक या अग्रदारू (early wood) और पश्चदारू (late wood) का निकटतर दृश्य दिखाने के लिए चित्र का एक आवर्धित अंश। अग्रदारू में बड़ी वाहिनिकाएं हैं जबकि पश्चदारू मुख्यत: वाहिकाओं का बना होता है। c) अरीय अनुदैर्घ्य काट (RLS) में तने का एक भाग जिसमें एक बड़ी वाहिनिका और अनेक वाहिकाएं दिखाई देती हैं। d) स्पर्शरेखीय अनुदैर्घ्य काट में तने का एक भाग जिसमें दो चौड़ी बहुपंक्तिक मज्जा किरणें और कई वाहिकाएं देखी जा सकती हैं (a, भटनागर और मोइत्रा, 1996; b-d, चैंबरलेन, 1935 से)।

4A.3.3 पत्ती

पत्तियां सहजात (connate) और आधारी आच्छद (basal sheath) में संलयनित रहती हैं। ये छोटी, शल्की और पतली होती हैं। तरुण अवस्था में ये हरी होती हैं मगर परिपक्व होने पर भूरी हो जाती हैं और अंतत: गिर जाती हैं। इनके नीचे और कक्षीय प्ररोहों के मूल में सहायक कलिकाएं उत्पन्न होती हैं। पत्तियां चूंकि शल्की और लघुकृत होती हैं, इसलिए कार्बन स्वांगीकरण (carbon assimilation) हरे

तने के माध्यम से होता है। अनुप्रस्थ काट में पत्तियों की अंडाकार रूपरेखा दिखाई देती है। बाह्यत्वचा पर एक मोटी क्यूटिकल होती है। गहराई या गर्त में अवस्थित रंध्रों पर बाह्यत्वचा क्रम भंग पाई जाती है। बाह्यत्वचा के बाद दो या तीन स्तरीय खंभ कोशिकाएं स्थित होती हैं जिनमें हरितलवक पाया जाता है। शेष स्थान स्पंजमयी कोशिकाओं से घिरा मिलता है जिनमें हरितलवक नहीं होता। इस स्पंजी मृदूतक में दो लघु संवहन अनुपथ अंतः स्थापित पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 1

किन तीन मुख्य लक्षणों के आधार पर आप *इफेड्रा* के पौधे की पहचान करेंगे ?

....

....

बोध प्रश्न 2

इफेड्रा की जड़ के बारे में नीचे दिए गए कथनों में कौन सही नहीं है ? दिए गए कोडों में से अपने उत्तर चुनिए :

i) अनुदैर्घ्य कटकों की उपस्थिति के कारण इसकी रूपरेखा लहरदार होती है।

ii) बाह्यतम परत एपिडर्मिस है।

iii) वल्कुट अल्प-विकसित होता है।

iv) वल्कुट में श्लेष्मक नलिकाएं पाई जाती हैं।

v) अंतस्त्वचा और परिरंभ मिलकर रंभ का आवरण बनाते हैं।

vi) रंभ द्विआदिदारुक होता है जिसमें प्रोटोजाइलम बाह्यआदिदारुक पाया जाता है।

vii) द्वितीयक वृद्धि नहीं होती।

viii) एक सुस्पष्ट मज्जा पाया जाता है।

कोड

1) ii, iv, vii

2) ii, iii, viii

3) i, iii, vii

4) v, vi, viii

बोध प्रश्न 3

अ) यह प्रश्न *इफेड्रा* के तने की संरचना पर आधारित है। स्तंभ-I में दी गई विषय सामग्री का स्तंभ-II की सामग्री से सटीक मिलान कीजिए।

I	II
1) बाह्यत्वचा	i) दो खंड
2) रंध्र	ii) टैनिनधारी कोशिकाएं
3) अधश्चर्म	iii) विवृत, मध्यआदिदारुक
4) वल्कुट	iv) चालनी कोशिकाएं , मृदूतक और ऐल्बुमिनी कोशिकाएं
5) अंतस्त्वचा	v) स्थूल क्यूटिकलयुक्त
6) संवहन पूल	vi) गहरे गर्त में स्थित
7) जाइलम	vii) कटकों के नीचे दृढ़ोतक
8) फ्लोएम	viii) एक-स्तरीय
9) मज्जा	ix) वाहिकाएं, वाहिनिकाएं और मृदूतक।

ब) *इफेड्रा* में लंबे पर्वों की उपस्थिति किस शारीरीय विशेषता के कारण होती है ? बताइए।

....

....

....

....

बोध प्रश्न 4

पत्ती की संरचना की चार विशेषताओं को यहां दिया गया है। पौधे के प्रकृति के बारे में आप इनसे क्या निष्कर्ष निकालेंगे ? कारण सहित बताइए। ये चार लक्षण हैं - झिल्लीमय पत्तियां, क्यूटिकल आवरणित बाह्यत्वचा कोशिकाएं, गर्तमग्न रंध्र, हरितलवक युक्त रंभ कोशिकाएं।

....

....

....

....

4A.4 जनन संरचनाएं

इफेड्रा विशिष्टतया एकलिंगाश्रयी होता है। नर और मादा शंकु परिमित प्ररोहों की पत्तियों के कक्षों पर और पुरानी शाखों की पर्वसंधियों पर स्थित घेरों पर उत्पन्न होते हैं (चित्र 4A.1 और 4A.5)। ये कभी-कभी एकल होते हैं, मगर ये अधिकतर युग्मशाखित ससीमाक्ष (dichasial cymes) में व्यवस्थित पाए जाते हैं।

4A.4.1 नर शंकु और युग्मकोद्भिद

नर शंकु : यह एक मध्य अक्ष और कुछ आमने-सामने तथा क्रासित विन्यास में व्यवस्थित सहपत्रों का बना होता है, जिनमें से सबसे नीचे स्थित सहपत्र बंध्य रहता है। इ. *फोलिएटा* में सहपत्रों की संख्या 10 होती है। प्रत्येक निषेच्य सहपत्र के कक्ष पर एक निषेच्य प्ररोह या एक लघुबीजाणुधानिक "पुष्प" उत्पन्न होता है। हर एक "पुष्प" में मूल से मिली परिदलपुंज पत्तियों का एक जोड़ा और एक बीजाणुधानी पाए जाते हैं। बीजाणुधाणीधर के सिरे पर दो से लेकर छः तक द्विपालिक स्थानबद्ध लघुबीजाणुधानियां पाई जाती हैं (चित्र 4A.5b)।

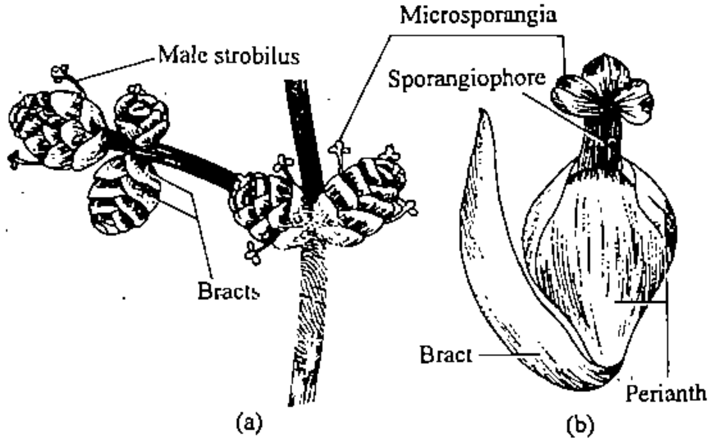

चित्र 4A.5 : *इफेड्रा फोलिएटा*। a) शंकु का एक झुंड धारण किए टहनी का एक भाग। b) एक नर निषेचनशील प्ररोह जिसके सिरे पर द्विकोष्ठिक लघुबीजाणुधानियां हैं (तियागी, 1966 से)।

लघुबीजाणुजनन : तरुण बीजाणुधानी के अधस्त्वक (hypodermal) भाग में प्रप्रसू कोशिकाओं (archesporial cells) के एक समूह का विभेदन होता है (चित्र 4A. 6a, b)। इसके बाद बंध्य कोशिकाओं के एक बैंड का विभेदन बीजाणुजन कोशिकाओं को दो कक्षों में विभाजित करता है (चित्र 4A. 6, c)। इसके कारण सतही दृश्य में बीजाणुधानी सपालि दिखाई देती है। प्रप्रसू कोशिकाओं की बाह्यतम परत में परिनतिक विभाजन (periclinical division) से एक प्राथमिक भित्तीय परत (primary perietal layers) और एक प्राथमिक बीजाणुजनन परत (primary sporogenous layer) बनती है। प्राथमिक भित्तीय परत में अपनतिक और परिनतिक विभाजन होते हैं जिससे भित्ति परतों का निर्माण होता है। इनमें से सबसे भीतरी परत विभेदन कर टेपीटम (tapetum) को जन्म देती है (चित्र 4A.6d)। उधर प्राथमिक बीजाणुजन कोशिकाएं बीजाणुजन ऊतक (sporogenous tissue) बनाती हैं, जो अंततः लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं (microspore mother cells) में विकसित होते हैं (चित्र 4A.6d)। लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं में अर्धसूत्री विभाजन होता है जिससे लघुबीजाणुओं के चतुष्क (tetrads) की रचना होती है। ये चतुष्क कैलोस (callose) की भारी परत में अंतःस्थापित रहते हैं। कैलोस के विलयन के बाद ये लघुबीजाणु मुक्त हो जाते हैं।

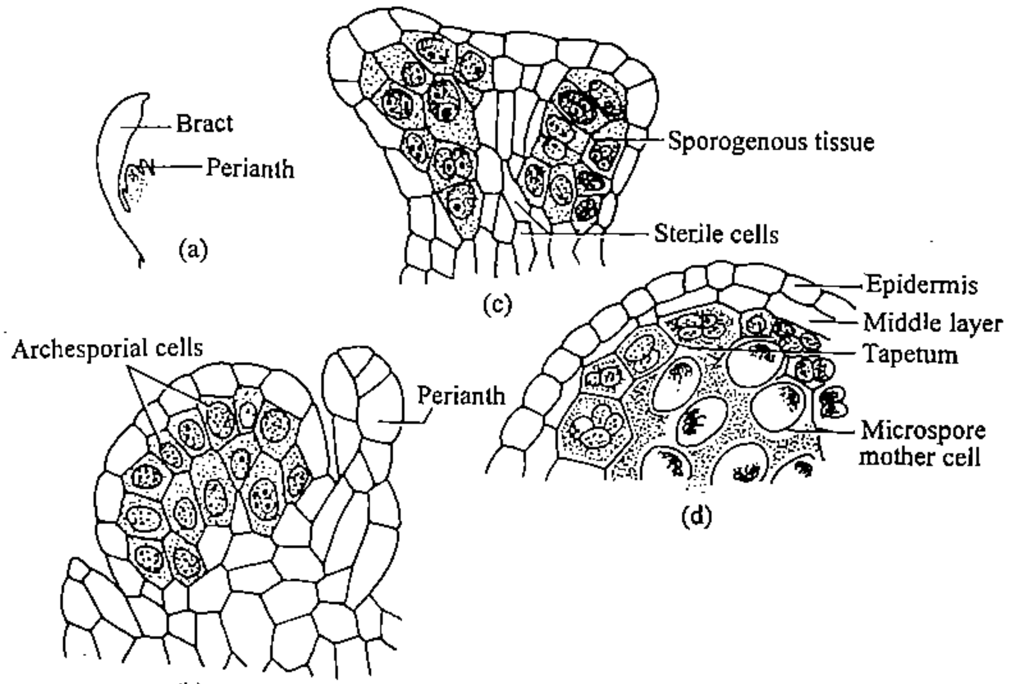

चित्र 4A.6 : इफेडरा में लघुबीजाणुजनन। a) कक्षांतरकारी सहपत्र युक्त तरुण नर "पुष्प" की अनुदैर्घ्य काट। परिदलपुंज और प्रारंभक बीजाणुधानी को ध्यान से देखें। b) इसी की वयस्क अवस्था जिसमें परिदलपुंज और अधस्त्वक प्रप्रसू कोशिकाएं दिखाई देती हैं। एक और पश्च अवस्था जो बंध्य कोशिकाओं के विकास को चित्रित करती है। c) इसमें बीजाणुजन कोशिकाओं के दो समूह भी दिखाई दे रहे हैं। **d)** बीजाणुधानी का एक भाग जो अर्धसूत्री विभाजन करती लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं और बहुकेन्द्रिक टेपीटमी कोशिकाओं को दिखा रहा है (सिंह और माहेश्वरी, 1962 से)।

नर युग्मकोद्भिद का विकास : लघुबीजाणु केन्द्रक एक छोर की ओर चले जाते हैं (चित्र 4A.7a) और प्रत्येक केन्द्रक विभाजन कर एक छोटी, अल्पकालिक लैंस के आकार की प्रोथैलियमी कोशिका (prothallial cell) जिसे प्रथम प्रोथैलियम कोशिका (first prothallial cell) कहते हैं, और एक विशाल मध्य कोशिका (central cell) बनाता है (चित्र 4A.7b)। मध्य कोशिका पुनः इसी तरह विभाजन करती है, जिससे एक द्वितीय प्रोथैलियम कोशिका (second prothallial cell) और एक बड़ी पुंधानी आरंभक (antheridial initial) की रचना होती है (चित्र 4A.7c, d)। पुंधानी आरंभक में एक विभाजन होता है और नली कोशिका (tube cell) तथा एक पुंधानी कोशिका (antheridial cell) बनती है। पुंधानी

कोशिका अब विभाजन कर पुमणुजन कोशिका (spermatogenous cell) और वृंत कोशिका (stalk cell) बनाती है (चित्र 4A.7e, f)। इस प्रकार परागकणों का प्रकीर्णन पांच कोशिका अवस्था में होता है जिसमें दो प्रोथेलियमी कोशिकाएं, एक नली कोशिका, एक वृंत कोशिका और एक पुमणुजन कोशिका रहती है। परागभित्ति का निर्माण, चतुष्कों से लघुबीजाणुओं के मुक्त होने के साथ-साथ होता है।

पराग भित्ति दो परतों से बनी होती है – बाहर से एक बाह्यचोल (exine) और भीतर से अंत:चोल (intine)। बाह्यचोल स्पोरोपोलेनिन (sporopollenin) के आवरण से ढका रहता है। यह स्वप्रतिदीप्त (autofluorescent) और ऐसीटो-अपघटन (acetolysis) प्रतिरोधी होता है। अंत:चोल सेलुलोसी होता है। बाह्यचोल पर्शुक होता है यानि कि इसमें कटक और खांचे पाए जाते हैं (चित्र 4A.7g)। इ. *फोलिएटा* में ऐसे लगभग 16 अनुदैर्ध्य कटक मिलते हैं जबकि इ. *जेरार्डियाना* में सिर्फ 11 कटक उपस्थित होते हैं।

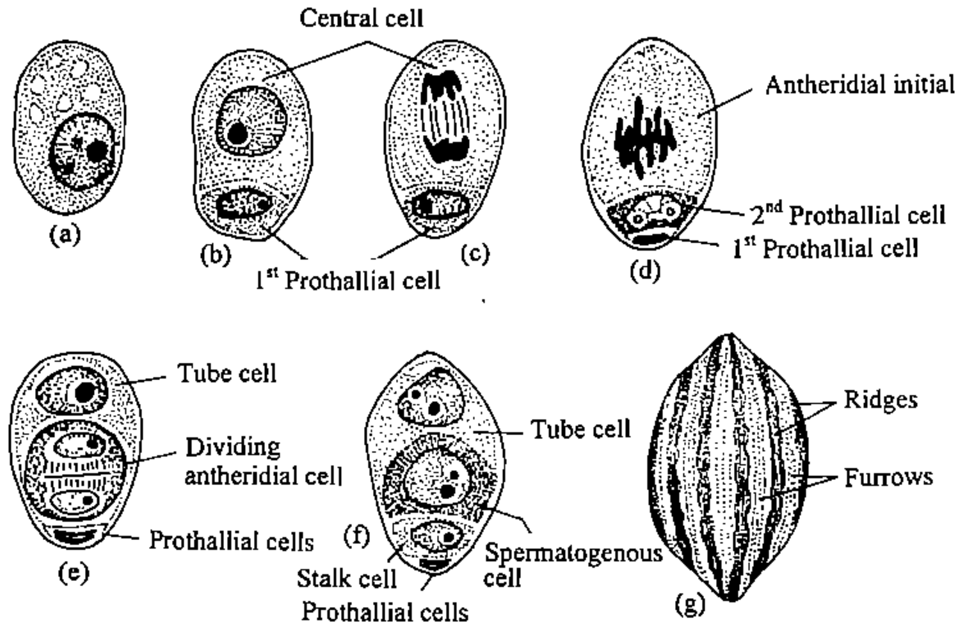

चित्र 4A. 7 (a-g) : *इफेड्रा* जाति में नर युग्मकोद्‌भिद् के विकास की अवस्थाएं। a) एक लघुबीजाणु। b-c) नर युग्मकोद्‌भिद के विकास की अवस्थाएं। f) एक 5 केन्द्रिकित परागकण। g) एक परिपक्व परागकण का सतही दृश्य जिसमें उसके कटक और खांचे स्पष्ट दिखते हैं (सिंह और माहेश्वरी, 1962 से)।

4A.4.2 मादा शंकु और युग्मकोद्‌भिद

मादा शंकु : यह चार से लेकर सात जोड़ा आमने-सामने और कॉसित, हरे सहपत्रों का बना होता है, जो इसके आधार पर परस्पर मिलकर एक कपनुमा संरचना बनाते हैं। सहपत्रों के सबसे ऊपर के प्रत्येक जोड़े के कक्ष पर एक-एक बीजांड स्थित होता है (चित्र 4A.8a, b; 4A.9a)। बीजांड में दो आवरण होते हैं। आंतरिक आवरण, जो कि इसका एकमात्र अध्यावरण है, पतला रहता है। यह बीजांडकाय में सिर्फ उसके ऊपरी भाग को छोड़कर संलीन पाया जाता है। बीजांडकाय का यह ऊपरी भाग बाहर की ओर वृद्धि कर एक लंबी बीजांडद्वारी नलिका (micropylar tube) बनाता है (चित्र 4A.8b)। बाह्य आवरण जिसे परिदलपुंज (perianth) भी कहते हैं, अपेक्षतया मोटा और अध्यावरण से मुक्त होता है।

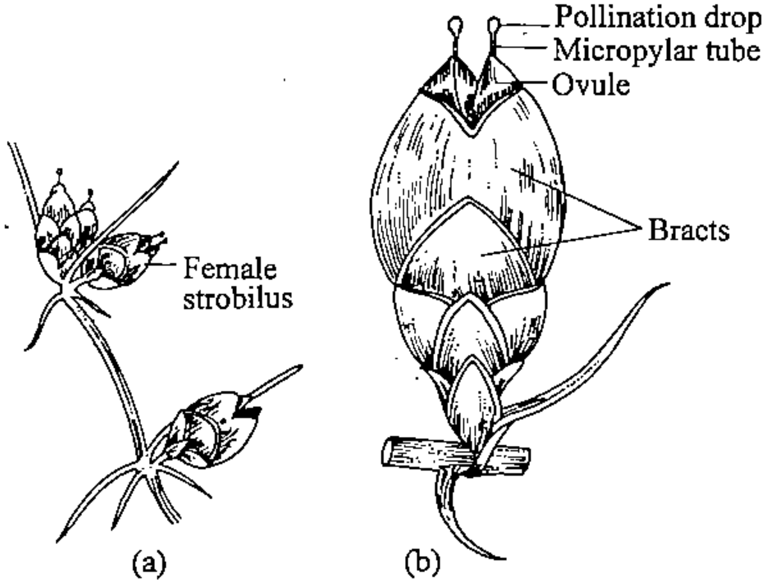

चित्र 4A.8 : *इफेड्रा फोलिएटा*। a) मादा शंकु युक्त टहनी का एक भाग। b) आवर्धित दृश्य में एक मादा शंकु। यह दो विशाल बीजांडों और छ: जोड़ा सहपत्रों से मिलकर बना रहता है। प्रत्येक बीजांड में एक बीजांडद्वारी नलिका है, जिसमें सुस्पष्ट परागण बूंद दिखाई देती है (तियागी, 1968 से)।

शीर्षस्थ मेरिस्टेम (apical meristem) एक बीजांड में रूपांतरित हो जाता है। बीजांड का समारंभन पार्श्व-प्ररोह मेरिस्टेम (lateral shoot meristem) की बाह्यतम परत में परिनतिक विभाजनों से शुरू होता है। बाह्य आवरण, जिसे परिदलपुंज भी कहा जाता है, बाह्यत्वचा में होने वाले अपनतिक और परिनतिक विभाजनों से बनता है। बाह्य आवरण के ठीक ऊपर अध्यावरण एक प्रोदवर्ध के रूप में विकसित होता है। समारंभन के बाद अध्यावरण वलयाकार बन जाता है। लेकिन बाद में इसमें एकतरफा वृद्धि देखने को मिलती है या यह पृष्ठ पार्श्व पर असममित बन जाता है। फिर यही अध्यावरण पूर्णत: असममित हो जाता है जो बीजांडद्वार में भी देखने में आता है। दोनों ही आवरण तरुण बीजांड में लगभग एक समान स्तर पर आलग्न पाए जाते हैं। मगर कालांतर में अध्यावरण, जो कि आंतरिक आवरण है, उसे बाह्य आवरण से ऊंचे स्तर पर देखा जाता है। ऐसा संभवत: बीजांडकाय और अध्यावरण के नीचे के भाग में होने वाली वृद्धि के फलस्वरूप होता है। बाह्य आवरण एक स्वतंत्र मेरिस्टेम के द्वारा वृद्धि करता है।

इफेड्रा की अधिकतर जातियों में बाह्यत्वचा में परिनतिक विभाजनों के फलस्वरूप एक भारी बीजांडकाय का निर्माण होता है, जो एक बीजांडकाय-गोप को जन्म देता है। इस तरह, इसमें भित्तीय ऊतक (parietal tissue) नहीं होता। किन्तु कुछ जातियों में बीजांडकाय दोहरी उत्पत्ति का होता है जिसकी रचना में बीजांडकाय बाह्यत्वचा और भित्तीय ऊतक दोनों का योगदान रहता है।

गुरूबीजाणुजनन (megasporogenesis) : पहले एक अकेली अधस्त्वक प्रप्रसू कोशिका (hypodermal archesporial cell) विभेदित होती है जो फिर परिनतिक विभाजन कर एक प्राथमिक भित्तीय कोशिका (primary parietal cell) और एक बीजाणुजनन कोशिका (sporogenous cell) बनाती है। प्राथमिक भित्तीय कोशिका, भित्तीय कोशिकाओं की अनेक परतें बनाती हैं (चित्र 4A. 9b)। बीजांडकायी बाह्यत्वचा की कुछ कोशिकाएं भी परिनतिक और अपनतिक विभाजन करती हैं, जिसके फलस्वरूप गुरूबीजाणु मातृ कोशिका (megaspore mother cell) विशाल बीजांडकाय में और गहरे धकेल दी जाती है। गुरूबीजाणु मातृ कोशिका आकार में बढ़ जाती है और अर्धसूत्री विभाजन कर गुरूबीजाणुओं का एक

रैखिक चतुष्क (linear tetrad) बनाती है। इस चतुष्क का सबसे निचला गुरूबीजाणु ही कार्यशील रहता है, ऊपर के शेष तीनों गुरूबीजाणुओं का ह्रास हो जाता है। इस प्रकार के विकास को एकबीजाणुज (monosporis) कहते हैं। यह *नीटम* और *वेल्वित्शिया* के एकदम उलट है, जिनमें गुरूबीजाणु का विकास चतुष्कीबीजाणुज (tetrasporic) होता है। मगर कभी-कभी द्वयक (dyad) में ऊपरी कोशिका विभाजन नहीं कर पाती जिसके फलस्वरूप कोशिकाओं का एक त्रिसंयुज (triad) बन जाता है (चित्र 4A.9c)।

मादा युग्मकोद्भिद का विकास : कार्यशील गुरूबीजाणु वृद्धि कर काफी बड़ा हो जाता है और उसके कोशिकाद्रव्य के मध्य में एक रसधानी (central vacuole) उत्पन्न होता है। इसका केन्द्रक समसूत्री विभाजन कर 256 से लेकर 512 मुक्त केन्द्रकों को जन्म देता है। ये केन्द्रक अपने आपको केन्द्रीय रसधानी के चारों ओर कोशिकाद्रव्य की एक पतली परत में व्यवस्थित कर लेते हैं (चित्र 4A.9d-f)। भित्ति का निर्माण *कूपिकीकरण* (alveolation) (इकाई 1 भी देखें) के जरिए होता है। कोशिकीय युग्मकोद्भिद को दो खंडों में चिह्नांकित किया जा सकता है : पहला है - एक विस्तृत बीजांडद्वारी खंड जो उन अरीयदीर्घित, तनुभित्ति और काचाभ (hyaline) कोशिकाओं का बना होता है, जिनमें कोशिकाद्रव्य नहीं के बराबर होता है। दूसरा है - निभागी खंड, जो ठोस, लघु, बहुभुजीय सघन कोशिकाद्रव्य युक्त कोशिकाओं से बना है (चित्र 4A.9h)। जब युग्मकोद्भिद् परिपक्व हो जाता है, तो निभागी खंड सक्रिय रूप से विभाजी कोशिकाओं के एक ऊपरी भाग और सुस्पष्ट केन्द्रकों से युक्त सघन कोशिकाद्रव्य वाली बड़ी कोशिकाओं के निचले भाग में गोचर बन जाता है। युग्मकोद्भिद, जो कि इस अवस्था में शंक्वाकार होता है, उसमें एक लंबा नलिकाकार प्रवर्ध पाया जाता है, जो निभागी खंड में गहराई तक जा पहुंचता है। यह आसपास की पोषण कोशिकाओं से पोषक पदार्थ चूस लेता है, जो अंततः समाप्त हो जाती हैं। इस प्रकार परिपक्व युग्मकोद्भिद तीन खंडों में विभाजित होता है : एक ऊपरी निषेच्य (fertile) खंड जिसमें स्त्रीधानी (archegonia) होती है, मध्य संचायक (storage) खंड और एक निचला चूषकांग (haustorial) खंड।

आइए, अब हम स्त्रीधानी के विकास की चर्चा करें। मादा युग्मकोद्भिद के बीजांडद्वारी छोर (micropylar end) पर तीन या चार आरंभक (या यदाकदा अधिक) कोशिकाएं स्त्रीधानी आरंभक कोशिकाएं (archegonial initials) बन जाती है। इनके बड़े केन्द्रकों और सघन कोशिकाद्रव्य के आधार पर इन्हें समीप की कोशिकाओं से अलग पहचाना जा सकता है। स्त्रीधानी आरंभक परिनतिक विभाजन कर एक बाहरी, छोटी प्राथमिक ग्रीवा (primary neck initial) और भीतरी अपेक्षतया बड़ी मध्य कोशिका (central cell) की रचना करती हैं (चित्र 4A.9 i)। स्त्रीधानी का एक विशिष्ट लक्षण 30 से 40 ग्रीवा कोशिकाओं के एक लम्बे स्तंभ का निर्माण है, जो प्रायः आसपास की युग्मकोद्भिदी कोशिकाओं में जा मिलता है। इससे इसमें मौजूद ग्रीवा कोशिकाओं की ठीक-ठीक गिनती कठिन हो जाती है (चित्र 4A.9j)।

लम्बी, स्तंभाकार ग्रीवा आवृतबीजी पौधों के वर्तिका में पाए जाने वाले संचरण ऊतक (transmitting tissue) की तरह दिखाई देती है। अब स्त्रीधानी पर फिर से आते हैं, जिसमें मध्य कोशिका के वर्धन के बाद उसके केन्द्रक में विभाजन होता है जिससे एक *अभ्यक्ष नाल केन्द्रक* (ventral canal nucleus) और एक अंड केन्द्रक बनते हैं (चित्र 4A.9j)। अभ्यक्ष नाल केन्द्रक इसके तुरंत बाद लुप्त हो जाता है मगर कुछ जातियों में यह चिरस्थायी रहता है और स्त्रीधानी के ऊपरी भाग में अक्षुण्ण बना रहता है। अंड केन्द्रक आकार में बढ़ता है और स्त्रीधानी कोशिकाद्रव्य के मध्य में चला आता है।

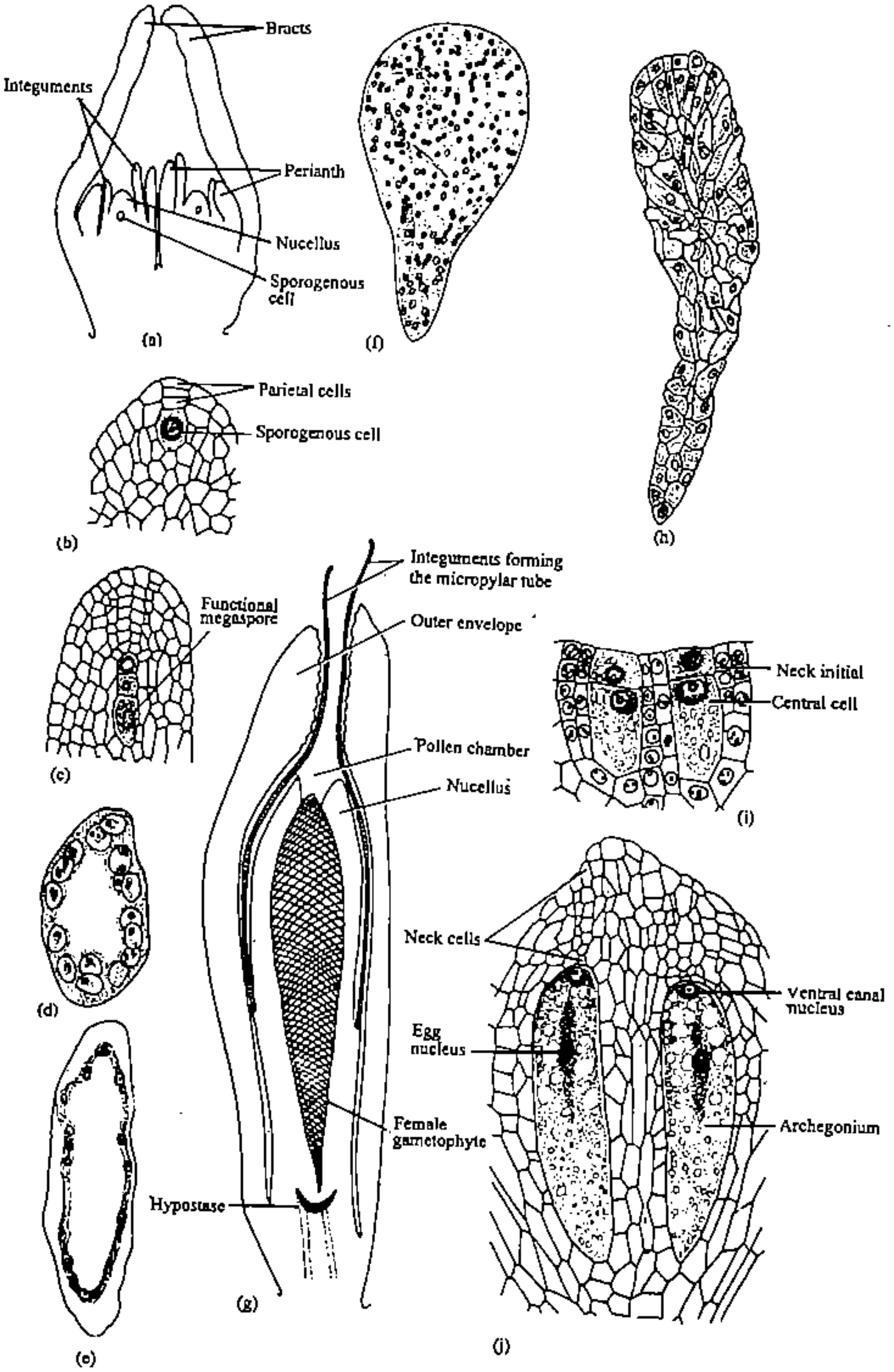

चित्र 4A.9: *इफेड्रा जाति* : a) दो तरुण बीजांडों और कक्षांतरकारी सहपत्रों को दिखाती मादा शंकु की अनुदैर्घ्य काट। b) बीजांडकाय के शीर्षस्थ भाग का एक अंश जिसमें बीजाणुजन कोशिका और भित्तीय कोशिका दिखाई देती हैं। c) गुरुबीजाणुओं का एक त्रिसंमुज दिखाता वही अंश। ध्यान दीजिए इसमें सबसे निचला गुरुबीजाणु ही क्रियाशील है। d, e) अनुदैर्घ्य काट में एक मुक्त केन्द्रिकित युग्मकोद्भिद। f) अनुदैर्घ्य काट में लट्टू के आकार का मुक्त केन्द्रिकित मादा युग्मकोद्भिद। g) कोशिकीय युग्मकोद्भिद अवस्था में बीजांड की अनुदैर्घ्य काट जिसमें हाइपोस्टेस को ध्यान से देखिए। अध्यावरण बीजांडद्वारी नलिका को बनाता है। h) कूपिकीकरण के माध्यम से निर्मित कोशिकीय युग्मकोद्भिद जिसे यहाँ g से बड़ा करके दिखाया गया है। i) दो तरुण स्त्रीधानियों को दिखाती मादा युग्मकोद्भिद की अनुदैर्घ्य काट, प्रत्येक में एक ग्रीवा आरंभक और एक मध्य कोशिका है। j) यही विकास की पश्च अवस्था में। प्रत्येक स्त्रीधानी में एक अंड केन्द्रक, एक अभ्यक्ष नाल केन्द्रक और एक लंबी ग्रीवा दिखाई देती है। इस ग्रीवा की कोशिकाएं अपने चारों ओर की युग्मकोद्भिदी कोशिकाओं में जा सकती हैं। [a, g, j माहेश्वरी, 1935 से; b, c, i) नारंग, 1956 से; d, f, h) सिंह और माहेश्वरी, 1962 से]।

बोध प्रश्न 5

नीचे नर युग्मकोद्भिद के विकास से जुड़ी संरचनाओं और अवस्थाओं के बारह शब्द दिए गए हैं। इनके स्थापना/विकास के क्रम के अनुसार इन्हें क्रमबद्ध कीजिए (संकेत : नर शंकु से शुरू कीजिए)।

पुंधानी आरंभक, बीजाणुजन ऊतक, लघुबीजाणुधानी युक्त पुष्प, प्रप्रसू कोशिकाएं, प्राथमिक बीजाणुजन कोशिका, लघुबीजाणु मातृ कोशिकाएं, नर शंकु, पुंधानी कोशिका, परागकण, लघुबीजाणुधानी, प्राथमिक भित्तीय कोशिका और लघुबीजाणु।

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 6

मादा युग्मकोद्भिद विकास से जुड़ी संरचनाओं और अवस्थाओं से संबद्ध निम्न कथनों में से कौन-कौन सही नहीं हैं ? नीचे दिए गए स्थान में लिखिए।

i) बीजांड का निर्माण अंतर्वेशी मेरिस्टेम के रूपांतरण से होता है।

ii) मादा शंकु के सबसे ऊपरी सहपत्रों के जोड़े में प्रत्येक में एक-एक बीजांड पाया जाता है।

iii) हर एक बीजांड में सिर्फ एक ही आवरण होता है।

iv) भारी बीजांडकाय दोहरी उत्पत्ति का होता है।

v) बीजांड में प्रप्रसू कोशिकाएं बड़ी संख्यां में बीजाणुजन कोशिकाओं का निर्माण करती हैं।

vi) गुरूबीजाणु मातृ कोशका भारी बीजांडकायी ऊतक में गहराई में स्थित होती है।

vii) मुक्त-केन्द्रिकित युग्मकोद्भिद का निर्माण कार्यशील गुरूबीजाणु से होता है।

viii) परिपक्व युग्मकोद्भिद में स्त्रीधानी इसके चूषकांग खंड में पाई जाती है।

ix) एक अंड केन्द्रक, एक अभ्यक्ष नाल केन्द्रक और एक लंबी ग्रीवा स्त्रीधानी के मुख्य अवयव हैं।

4A.5 परागण और निषेचन

4A.5.1 परागण

इफेड्रा में परागकण पंखहीन और वायु वाहित होते हैं। ये परागकण बीजांडद्वारी के सिर पर मौजूद परागण-बूंद (pollination drop) (चित्र 4A.10a) में आ फंसते हैं जिसके बाद इन्हें अंदर खींच लिया जाता है। परागण-बूंद में अनेक अमीनो अम्ल, पेप्टाइड, मैलिक अम्ल, साइट्रिक अम्ल, अकार्बनिक फॉस्फेट और शर्कराएं पाई जाती हैं। सुक्रोस का सांद्रण इसमें 25 प्रतिशत तक रहता है। वायु-परागण ही परागण-निकास की सामान्य विधि है। मगर कुछ जातियों, जैसे – इ. *एफाइला* और इ. *कैम्पाइलोपोडा* में, कीट परागण (entomophily) होता है। इन जातियों में परागण शंकुओं पर आने-जाने वाले कीटों और चीटियों के जरिए होता है।

शर्कराओं से भरपूर मकरंद नर और मादा दोनों शंकुओं में मुख्य आकर्षी है। इन शंकुओं पर उतरने वाले कीट इसी मकरंद को चूसते हैं और इस प्रक्रिया में अपने शरीर से चिपके परागकणों को इनमें स्थित बीजांडों में स्थानांतरित कर देते हैं। बीजांडकाय में एक सुस्पष्ट परागकक्ष (pollen chamber) होता है, जिसमें मादा युग्मकोद्भिद का सिरा बाहर निकला रहता है। इस तरह के उभार को "टैन्ट-पोल'' या शिविरदंड (tent pole) कहते हैं (चित्र 4A.10b)। पराग कक्ष चौड़ा और गहरा और ठीक मादा युग्मकोद्भिद के शीर्ष तक फैला रहता है (चित्र 4A.10b, 4A.11a), जो कि मुक्त रूप से उघड़ा होता है।

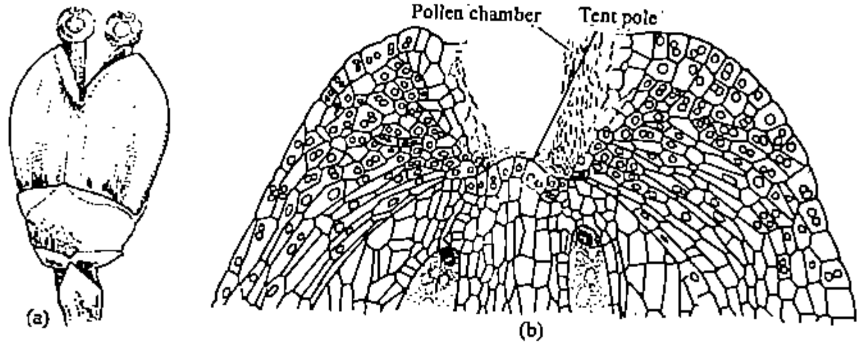

चित्र 4A.10 : इफेड्रा। a) सुस्पष्ट परागण-बूंदे दिखाते बीजांड लिए एक परिपक्व मादा शंकु। b) अनुदैर्ध्य काट में बीजांड का एक भाग जिसमें सुविकसित पराग कक्ष और टेंट-पोल दिखाई देता है। (a, एम. एन. सिंह; b, नारंग, 1956 से)।

परागण बूंद में फंसने पर परागकण उसमें फूल जाते हैं जिसके फलस्वरूप उसका बाह्यचोल फट जाता है जिसे अंकुरण से पहले त्याग दिया जाता है। नलिका केन्द्रक सबसे पहले निकलता है जिसके पीछे-पीछे पुमणुजन कोशिका चलती है। पराग नली में पुमणुजन कोशिका विभाजन कर दो नर केन्द्रकों (male nuclei) को जन्म देती है।

यहां पर सबसे रोचक बात यह है कि परागकण जब अंकुरण करता है, तो परागनली स्त्रीधानी ग्रीवा में प्रवेश करती है जो कि एक युग्मकोद्भिदी ऊतक (gametophytic tissue) है जबकि शंकुधारी वृक्षों में बीजाणुउद्भिदी (स्पोरोफाइट- sporophytic) ऊतक है। पराग नली अब अंड-कोशिकाद्रव्य में प्रवेश कर जाती है और उसमें दो नर युग्मक (male gametes) छोड़ देती है।

परागण के बाद की अवस्थाओं में, बाहरी आवरण की कोशिकाओं में पैपिलामय प्रक्षेप (papillate projections) प्रकट होते हैं जो बाद में लंबाई में वृद्धि करते हैं और स्थूल भित्तियुक्त बन जाते हैं (चित्र 4A.11b)। फलत: दोनों आवरणों के बीच का अवकाश बंद हो जाता है। इस तरह बीजांडद्वार नली पर पड़ने वाला दाब बीजांडद्वार को पूर्वत: बंद कर देता है। बीजांडद्वारी नलिका की कोशिकाओं में कोई परिर्वतन नहीं आता।

हाइपोस्टेस (hypostase) सुविकसित रहता है और युग्मकोद्भिद का निचला शुंडाकार सिरा इसके काफी समीप स्थित होता है। हाइपोस्टेस की कोशिकाएं छोटी, तनु-भित्ति और रंगहीन होती है। कुछ सर्पिल और गर्तमय वाहिकाएं हाइपोस्टेस के नीचे पाई जाती हैं (चित्र 4A.11c)।

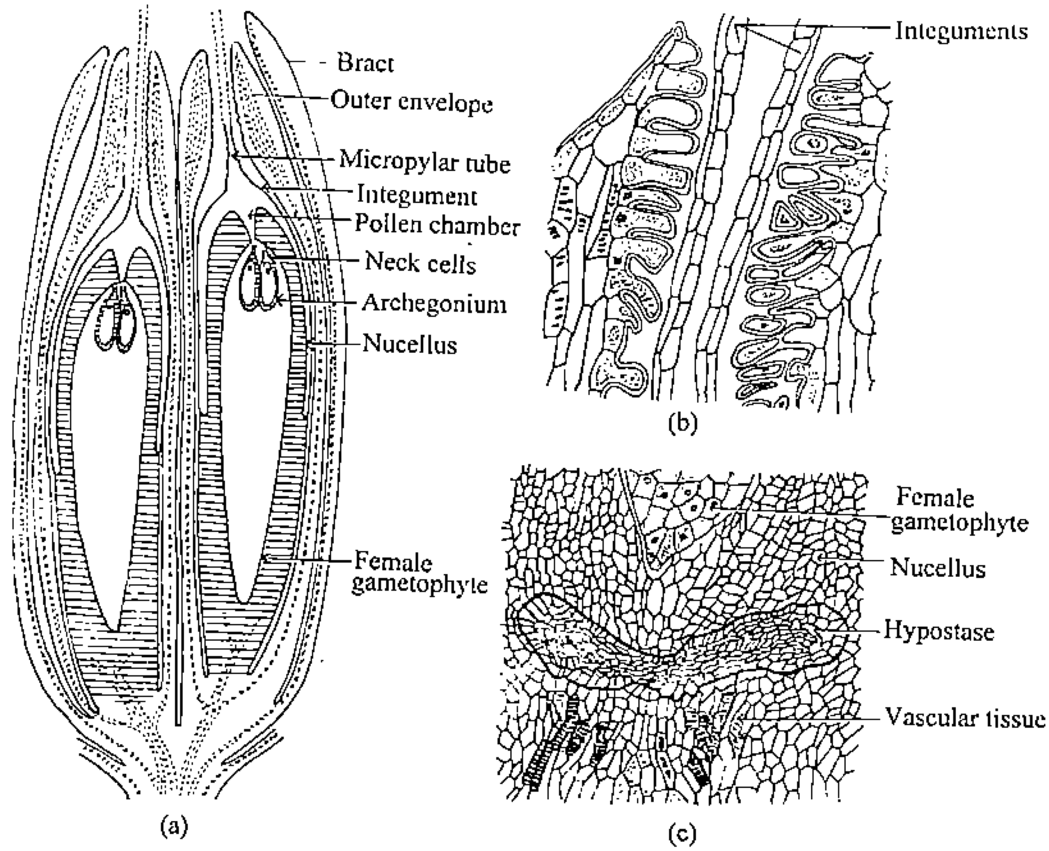

चित्र 4A.11: *इफेड्रा* जाति। a) दो विकसित वीजांडों को दिखाती मादा शंकु की अनुदैर्ध्य काट। हर एक वीजांड में दो आवरण, एक पराग कक्ष, लंवा शुंडाकार मादा युग्मकोद्भिद जिसमें लंवी ग्रीवाएं लिए दो स्त्रीधानियां हैं। b) वीजांडद्वारी नाल वाले हिस्से का अनुदैर्घ्य काट। इसमें बाह्य आवरण के भीतरी अस्तर से निकलते पैपिलामय प्रक्षेप दिखाई दे रहे हैं। c) हाइपोस्टेस युक्त निभागी सिरे से वीजांडकाय का अंश (a, नारंग 1956; b और c, सिंह और माहेश्वरी, 1967 से)।

4A.5.2 निषेचन

नर युग्मकोद्भिद् का केन्द्रक अंड केन्द्रक के पास जा पहुंचता है और उससे संपर्क करता है। संपर्क स्थल की केन्द्रक झिल्लियां विलीन हो जाते हैं और युग्मनज की रचना होती है। इ. *नेवेडेंसिस* में द्विक निषेचन (double fertilization) नियमित रूप से होता है। इसमें दोनों नर केन्द्रक अंड में छोड़ दिए जाते हैं। एक नर केन्द्रक नीचे उतरता है और सघन कोशिकाद्रव्य भाग में अंड केन्द्रक से जा मिलता है, जिससे युग्मनज केन्द्रक (zygote nucleus) बनता है जिसे "सामान्य युग्मनज" केन्द्रक (normal zygote nucleus) कहा जाता है (चित्र 4A.12a-d)। नर और अंड केन्द्रक जब संलयन की अग्रिम अवस्था में पहुंचते हैं, तो उसी समय अभ्यक्ष नाल केन्द्रक (ventral canal nucleus) भी अंडे में नीचे की ओर आ जाता है जिसके पीछे-पीछे दूसरा नर केन्द्रक भी चला जाता है। ये दोनों ही केन्द्रक आपस में मिल जाते हैं और "अधिसंख्य युग्मनज" केन्द्रक (supernumerary zygote nucleus) की रचना करते हैं (चित्र 4.12 b-f)। यह द्वितीय निषेचन है। पहला निषेचन, अंड और प्रथम नर केन्द्रक के बीच में होता है। *इफेड्रा* और आवृतबीजी पौधों में द्विकनिषेचन की यह परिघटना जैव-विकास की दृष्टि से समजात मानी जाए कि नहीं, इसका निर्धारण अभी मुश्किल है। ऐसा व्यापक मत है कि यह उस दिशा में कदम है। यह माना जा सकता है कि द्विक निषेचन *इफेड्रा* और आवृतबीजी दोनों के उभय पूर्वज से उपजा होगा।

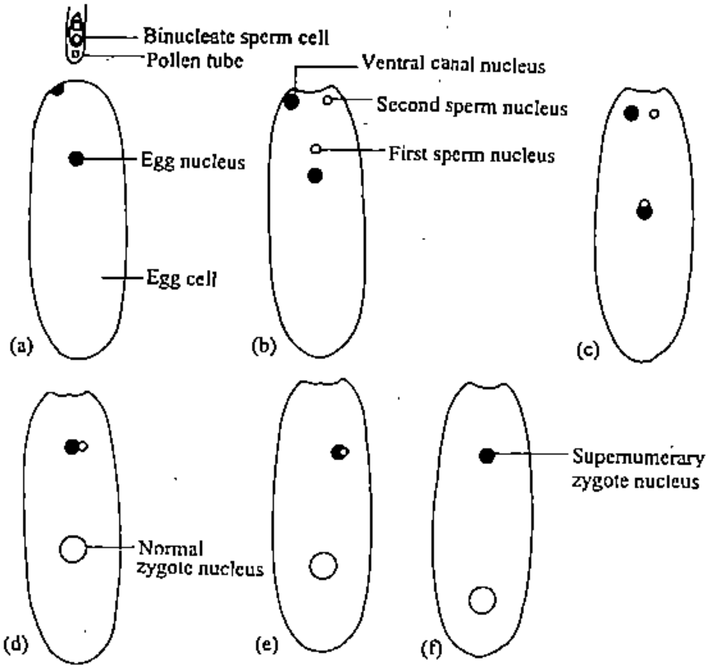

चित्र 4A.12.a-f): *इफेडरा*। विभिन्न अवस्थाओं को दिखाते योजनावद्ध चित्र, जिनकी परिणति द्विक निषेचन में होता है। a) पराग नली का चित्र निरूपण जिसमें द्विकेन्द्रिकित शुक्र कोशिका (binucleate sperm cell) अंड कोशिका की ओर बढ़ता दिखाई देता है। b-c) प्रथम शुक्र कोशिका द्वारा अंड केन्द्रक के निषेचन की अवस्थाएं जिससे एक सामान्य युग्मनज केन्द्रक बनता है। d-f) युग्मनज केन्द्रक अंततः पूर्व अंड कोशिका के निचले भाग में चला जाता है। अभ्यक्ष नाल केन्द्रक और द्वितीय शुक्र कोशिका के संलयन की अवस्थाएं को b-f चित्रों में दिखाया गया है (पूर्व अंड कोशिका के ऊपरी भाग को देखें)। (फ्रायडमैन, 1990 से पुनः चित्रित)।

4A.6 भ्रूणोद्‌भव

युग्मनज केन्द्रक के विभाजन से भ्रूणोद्‌भव की शुरूआत होती है। दोनों युग्मनज केन्द्रकों में समकालिक विभाजन (चित्र 4A.13a) के फलस्वरूप संतति केन्द्रकों के दो सेटों का निर्माण होता है। सामान्य युग्मनज केन्द्रक से व्युत्पन्न संतति केन्द्रक पूर्वक अंड कोशिका के आधार में अवस्थित रहते हैं और केन्द्रकों का दूसरा जोड़ा पूर्व अंड कोशिका के शीर्षस्थ अग्र भाग में स्थित रहता है (चित्र 4A.13b)। तदोपरान्त होने वाली समसूत्री विभाजनों के फलस्वरूप आठ केन्द्रक बनते हैं जो पूर्व अंड कोशिकाद्रव्य के अंदर दो समूहों में विशिष्ट रूप से व्यवस्थित रहते हैं : सामान्य युग्मनज केन्द्रक से व्युत्पन्न एक आधारी चौकड़ी और अधिसंख्य युग्मन केन्द्रक से उपजी शीर्षस्थ चौकड़ी (चित्र 4A.13c)। इसके बाद प्रत्येक केन्द्र के चारों ओर कोशिका भित्तियां बन जाती हैं (चित्र 4A.13d)। इस प्रकार चार एककोशिकीय, एकलकेन्द्रिकित प्राक्‌भ्रूण कोशिकाओं या इकाइयों के दो सेट पूर्व अंड कोशिका के शीर्षस्थ और आधारी दोनों सिरों पर बन जाते हैं (चित्र 4A.13d)। इन आठों प्राक्‌भ्रूण कोशिकाओं या इकाई में हर एक संभावित भ्रूण है। विवर्धन में अगला चरण प्रक्षेप का उभरना है यानि प्रत्येक इकाई में एक तरफ की ओर नलिकाकार उद्‌वर्ध होता है। ये प्रक्षेप स्त्रीधानी आधार की दिशा में वृद्धि करते हैं। इसके बाद इन आठों इकाइयों में हर एक का केन्द्रक गोलाकार, बल्बनुमा भाग को छोड़कर नली में आ जाता है। यहाँ पर यह एक अनुप्रस्थ भित्ति द्वारा एक भ्रूण कोशिका (embryonal cell) और एक निलंबक कोशिका (suspensor cell) में विभाजित हो जाता है (चित्र 4A.13e; और 4A.14a)। आकारिकी की दृष्टि से यह एक भ्रूण-निलंबक कोशिका है जो वर्धनशील भ्रूणों को मादा युग्मकोद्‌भिद में भीतर धकेल देता है। एक स्त्रीधानी में सभी आठ प्राक्‌भ्रूण यूं संभावना में समान नजर आते हैं, मगर बीजांडद्वारी छोर पर उपस्थित प्राक्‌भ्रूण धीरे-धीरे लुप्त हो जाते हैं। सिर्फ गहराई में बैठा, बीचों बीच अवस्थित निभागी प्राक्‌भ्रूण ही अंततः एक परिपक्व भ्रूण में विकसित हो पाता है। चित्र 4A.14b-d

में भ्रूण विकास की पश्च अवस्थाएं दिखाई गई हैं। प्ररोह शिखाग्र निभागी छोर की तरफ सिरे पर संगठित होता है और बीजपत्र प्ररोह शिखाग्र के ठीक नीचे दो छोटे-छोटे उभारों के रूप में उगते हैं। मूल शिखाग्र (root apex) द्वितीयक निलंबक कोशिका (secondary suspensor cells) के नजदीक विभेदित होता है।

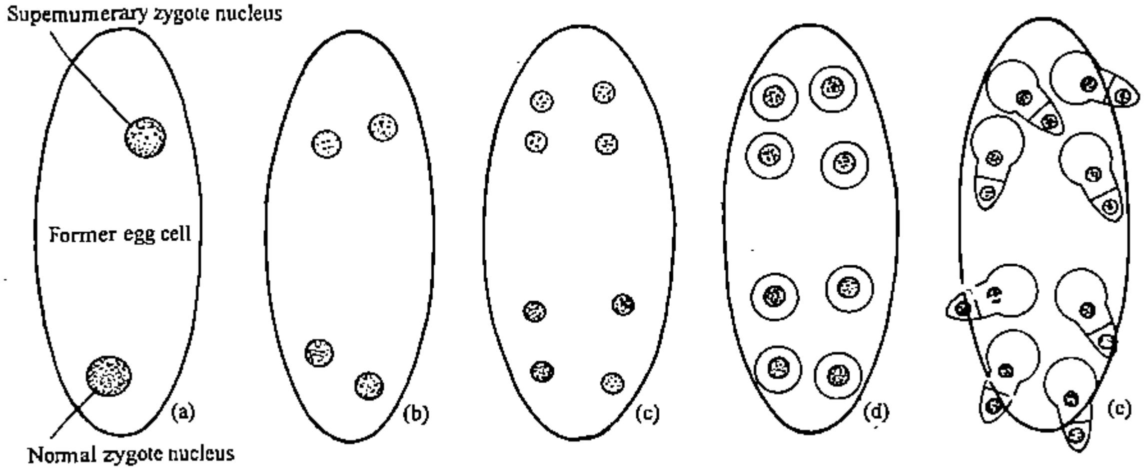

चित्र 4A.13: *इफेड्रा* जाति, आरंभिक भ्रूणोद्भव की अवस्थाओं को दिखाता रेखाचित्र। a) द्विक निषेचन के दो उत्पाद। b,c) दोनों निषेचन उत्पादों (केन्द्रकों) में समसूत्री विभाजन से चार-चार केन्द्रकों के दो समूह बनते हैं। d) यह चित्र मुक्त केन्द्रकों का कोशिकीकरण दिखाता है, जिसमें प्रत्येक केन्द्रक एक कोशिका भित्ति अर्जित करता है। इस तरह एककोशिकीय, एककेन्द्रिकित प्राक्भ्रूणों के दो सेट बनते हैं। e) इसके बाद, प्रत्येक प्राक्भ्रूण तंतुक वृद्धि से विवर्धन के कोशिकीय पैटर्न की शुरूआत करता है (फ्रायडमैन, 1994 से)।

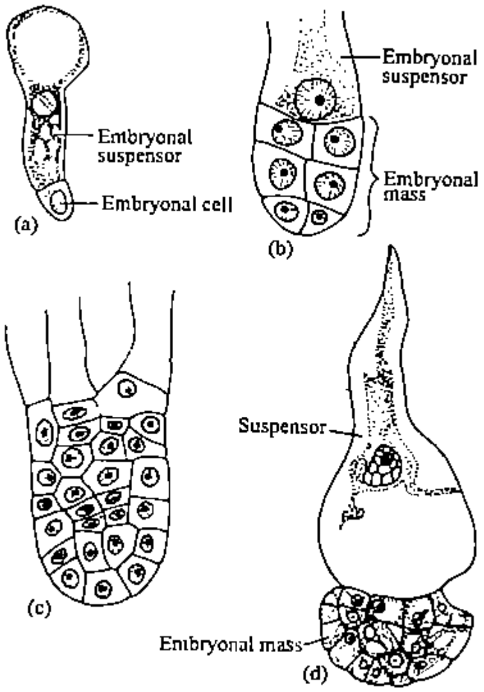

चित्र 4A.14 : *इफेड्रा*, चित्र 4A.13e से जारी भ्रूणोद्भव की आगे की अवस्थाएं। a) बाद की अवस्था में एक भ्रूणीय इकाई जिसमें दीर्घित भ्रूण निलंबक कोशिका और एक भ्रूण कोशिका दिखाई देते हैं। b-d) भ्रूण विकास की बाद की अवस्थाएं, (a, d, खान, 1943 से; b, c, तैहमैन वीथर्ड्स, 1967 से पुन: चित्रित)।

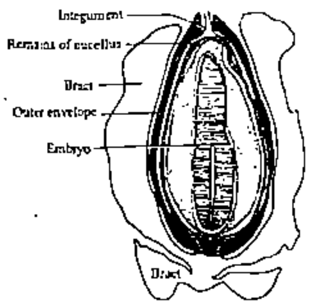

चित्र 4A.15 : इफेड्रा, अनुदैर्घ्य काट में एक बीज का रेखाचित्र (खान, 1943 से)।

बीज : गुरूबीजाणुधानी शंकु के दो सहपत्र, परिपक्व बीज के बाहरी मांसल आवरण बनाते हैं (चित्र 4A.15)। दो आवरणों में सिर्फ बाह्य आवरण जो कि संवहनीभवनित रहता है, बीजावरण को जन्म देता है। भीतरी आवरण यानि अध्यावरण (integument) कागजी ही बना रहता है। परागणपूर्व अवस्था में बीजांड, परागकक्ष के आसपास की बीजांडकाय कोशिकाएं द्विकेन्द्रिकित हो जाती हैं। ये केन्द्रक आकार में बढ़ते हैं, विरूपित बन जाते हैं और निषेचन के बाद खंडित हो जाते हैं। परिपक्व बीज में बीजांडकाय के संपीडित अवशेष बने रहते हैं। इसके बाद स्टार्च से भरपूर, एक विकसित मादा युग्मकोद्भिदी भ्रूणपोष पाया जाता है। भ्रूण द्विबीजपत्री होता है। बीज का अंकुरण भूम्युपरिक होता है। बीजपत्रों में पर्णहरित (क्लोरोफिल) विकसित हो जाता है और ये पहले दो बीजपत्री पत्तियों के रूप में व्यक्त होते हैं।

बोध प्रश्न 7

निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए :

i) बीजांड में परागणकण पहुंचाने की क्या-क्या विधियाँ हैं ?

....

....

....

ii) परागण बूँद की क्या भूमिका है ?

....

....

....

iii) प्रथम और द्वितीय निषेचन में भाग लेने वाले मुख्य पात्र कौन-कौन से हैं ?

....

....

....

iv) भ्रूण विकास का कोई एक विशिष्ट लक्षण बताइए।

....

....

....

v) एक चित्र द्वारा एक परिपक्व बीज की संरचना दर्शाइए।

4A.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- *इफेड्रा* का वितरण नवीन और प्राचीन दोनों विश्वों में व्यापक रूप से मिलता है।
- कई आकारिकीय और शारीरीय लक्षणों के चलते यह मरुद्भिदी परिस्थितियों के प्रति अनुकूलित रहता है।
- बाह्य आकारिकी में इसमें *इक्वीसीटम* से काफी समानता मिलती है। इसमें एक विशिष्ट मूल-संरचना पाई जाती है। इसके तने में कटक और खांचे, गहरे अवस्थित रंध्र, क्लोरोफिल से भरे खंभ मृदूतक पाए जाते हैं। पत्तियां अति लघुकृत होती हैं और तना ही प्रकाश संश्लेषण स्थल है। प्रत्येक पर्वसंधि के ठीक ऊपर स्थित अंतर्वेशी मेरिस्टेम (intercalary meristem) इस जीनस का एक विभेदक लक्षण है।
- *इफेड्रा* विशिष्टत: एकलिंगाश्रयी (dioecious) है। प्रकीर्णन के समय परागकणों की 5 कोशिकीय संरचना होती है। इसके बाह्य चोल में कटक और खांचे पाए जाते हैं जिनकी संख्या जाति के साथ-साथ बदलती रहती है। परिपक्व स्त्रीधानी में एक लम्बी ग्रीवा, एक अंड केन्द्रक और एक अध्यक्ष नाल केन्द्रक पाए जाते हैं।
- परागण वायु या चींटियों के जरिए होता है। परागकण, परागण बूंद में फंस जाते हैं जिन्हें बाद में अंदर ग्रहण कर लिया जाता है और परागकण बीजांडकाय के अग्र सिरे पर बैठ जाते हैं। निर्मित होने वाली दो नर युग्मकों में से एक अंड केन्द्रक के साथ संलयन कर सामान्य युग्मनज को जन्म देता है, इसे प्रथम निषेचन कहते हैं। द्वितीय निषेचन में दूसरा नर युग्मक अध्यक्ष नाल केन्द्रक के साथ संलयन कर अधिसंख्य युग्मनज केन्द्रक बनाता है। *इफेड्रा* में विचित्र प्राक्भ्रूणोद्भव देखने को मिलता है जिसमें स्त्रीधानी के आठ प्राक्भ्रूणों में सिर्फ एक ही प्राक्भ्रूण जो कि उसके बीचों बीच स्थित रहता है, विकसित होकर परिपक्व बनता है। गुरूबीजाणुधानिक शंकु के दो सहपत्र पक्व बीज के बाहरी मांसल आवरण की रचना करते हैं। भ्रूण द्विबीजपत्री होता है। बीज का अंकुरण भूम्युपरिक (epigeal) होता है।

4A.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. यह निर्धारित करने के लिए कि कोई पौधा *इफेड्रा* ही है, आप उसमें कौन-कौन से विभेदक लक्षण देखेंगे ?

....

....

....

....

2. *इफेड्रा* के नर और मादा शंकुओं की संरचना की तुलना *पाइनस* और *साइकस* से कीजिए।

3. यदि आपको *पाइनस*, *इफेड्रा* और *साइकस* के परागकणों का एक मिश्रण दिया जाता है। इन तीनों प्रकार के परागकणों की पहचान आप कैसे करेंगे ?

4. *इफेड्रा* में मादा युग्मकोद्भिद के विवर्धन के बारे में बताइए। *पाइनस* और *साइकस* से यह किस प्रकार भिन्न है ?

5. *इफेड्रा* में परागण, निषेचन और भ्रूणोद्भव से जुड़ी विशेषताओं के बारे में बताइए।

....

....

....

....

4A.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) मरुद्भिद, अधिकतया झाड़ीदार स्वभाव, अनुदैर्घ्य-कटकित तना।

2) 3

3) अ) 1 को v से

2 को vi से

3 को vii से

4 को i से

5 को viii से

6 को iii से

7 को ix से

8 को iv से

9 को ii से जोड़िए।

ब) संकेत : अंतर्वेशी मेरिस्टेम की सक्रियता।

4. स्वयं विश्लेषण कीजिए। अधिकांश पत्तियों की भूमिका पर थोड़ा-सा गौर कीजिए और उनकी तुलना इस पौधे से कीजिए। साथ ही अधिकांश पत्तियों की संरचना पर भी ध्यान दीजिए तो आप पाएंगे कि ये इस पादप में कितनी भिन्न हैं ? सोचिए यह किसकी ओर इशारा करता है ?

5. नर शंकु, लघुबीजाणुधानिक पुष्प, लघुबाजणुधानी, प्रप्रसू कोशिकाएं, प्राथमिक भित्तीय कोशिका, प्राथमिक बीजाणुन कोशिका, बीजाणुजन ऊतक, लघुबोजाणु मातृ कोशिकाएं, लघुबीजाणु , पुंधानी आरंभक, पुंधानी कोशिका, परागकण।

6. i, iii, v और viii

7. i) हवा और कीटों के माध्यम से

   ii) पराग को बीजांडकाय तक पहुंचाती है, पराग अंकुरण के लिए एक माध्यम प्रदान करती है।

   iii) प्रथम निषेचन - अंड केन्द्रक और प्रथम नर केन्द्रक; द्वितीय निषेचन - अभ्यक्ष नाल केन्द्रक और द्वितीय नर केन्द्रक।

   iv) संकेत : आठ प्राक्भ्रूण का विकास शुरू होता है, किन्तु सिर्फ एक ही भ्रूण पूर्ण विकसित हो पाता है।

   v) उपभाग 4A.6 देखें।

अंत में कुछ प्रश्न

1. *इफेडरा* के विशिष्ट आकारिकीय और शारीरीय लक्षणों की सूची बनाइए। इस इकाई के 4 A. 2 से 4A.4 भागों को देखिए।

2. भाग 4A.4, तथा इकाई 2 और 3 देखिए।

3. इस इकाई के भाग 4A.5 में *इफेडरा* के पराग की संरचना देखिए। *साइकस* और *पाइनस* के लिए क्रमश: इकाई 2 और 3 को पढ़िए। परिपक्व परागकणों की संरचना के चित्र बनाइए जो इनके प्रकीर्णन के समय उपस्थित केन्द्रकों/कोशिकाओं की संख्या को बताते हों।

4. संदर्भ : भाग 4A.4, और, इकाई 2 और 3 देखिए।

5. इकाई के भाग 4A.5 और 4A.6 को देखें।

उप-इकाई 4B नीटोप्सिडा : *नीटम*

इकाई की रूपरेखा

4B.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

4B.2 वितरण, आवास तथा सामान्य लक्षण

4B.3 कायिक संरचनाएँ

4B.3.1 जड़

4B.3.2 तना

4B.3.3 पत्ती

4B.4 जनन संरचनाएँ

4B.4.1 नर शंकु तथा युग्मोकद्भिद

4B.4.2 मादा शंकु तथा युग्मोकद्भिद

4B.5 परागण तथा निषेचन

4B.6 भ्रूणोद्भव तथा बीज का विकास

4B.7 सम्बन्ध

4B.7.1 *इफेड्रा* तथा *वैलविश्चिया* के साथ संबंध

4B.7.2 एन्जियोस्पर्म्स के साथ संबंध

4B.8 सारांश

4B.9 अंत में कुछ प्रश्न

4B.10 उत्तर

4B.1 प्रस्तावना

पिछली उप इकाई में आपने *इफेड्रा* पढ़ा था, तथा इस उपकाई में आप *नीटम* पढ़ेंगे क्योंकि ये नीटेसी को प्रदर्शित करने वाला एकमात्र वंश है। *नीटम* में बहुत से ऐसे महत्वपूर्ण लक्षण हैं जो एन्जियोस्पर्म्स से मिलते हैं।

उद्देश्य

अब आप जिम्नोस्पर्म्स की प्रमुख श्रेणियों से परिचित हो गए हैं। इस इकाई में आप समर्थ होंगे :

- विश्व में व साथ ही भारत में *नीटम* के वितरण की स्थिति से,
- कायिक व प्रजनन संरचनाओं दोनों की आकारिकी का वर्णन करने में,
- जड़, तना तथा पत्ती के शारीर के बीच अंतर करने में,
- लघु तथा गुरूयुग्मकोद्भिद की संरचना का वर्णन करने में,
- परागण, निषेचन तथा बीज के विकास के बारे में बताने में तथा
- अन्य जिम्नोस्पर्म्स और एन्जियोस्पर्म्स के साथ *नीटम* के संबंधों की तुलना करने में।

4B.2 वितरण, आवास तथा सामान्य लक्षण

वंश *नीटम* में तीस जातियां हैं, जो विस्तृत रूप से विश्व के उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण नम क्षेत्रों में वितरित हैं। इनमें से 7 उष्णकटिबंधी अमरीका में, 2 पश्चिमी अफ्रीका में तथा बाकी बची उष्णकटिबंधी एशिया में पाई जाती हैं और 5 जातियां भारत में पाई जाती हैं। अधिकांश जातियां उष्णकटिबंधी वर्षा वनों में 1500 मी. की ऊँचाई से नीचे पाई जाती हैं।

नीटम जिम्नोस्पर्म्स की अपेक्षा एन्जियोस्पर्म्स से ज्यादा मिलता है। अधिकांश जातियां आरोही लताएं हैं जिनके तने यमलन (twinning) होते हैं।

नीटम उला एक काष्ठीय आरोही लता हैं, जो बहुत सामान्य तथा बहुतायत में होती है तथा प्रायद्वीपीय भारत के तटीय प्रदेशों में पाई जाती है। *नीटम कान्ट्रेक्टम (G. contractum)* तथा *नीटम मोन्टेनम (G. montanum)* दोनों कठलता हैं, पहला केरला तथा तमिलनाडू में जबकि दूसरा आसाम और सिक्किम में उगता है। एक अन्य आरोही लता *नीटम लैटीफोलियम (G. latifolium)* अंडमान द्वीप समूह में पाया जाता है। *नीटम नीमोन (G. gnemon)* जो कि एक वृक्ष है वह भारत के उत्तर-पूर्वी भागों तक ही सीमित है। *नीटम ट्राइनर्व (G. trinerve)* परजीवी माना जाता है।

4B.3 कायिक संरचनाएं

4B.3.1 जड़

पादप में मूल (tap) जड़तंत्र पाया जाता है जिसमें सुविकसित पार्श्व जड़ें होती हैं। सबसे ऊपरी सतह या बाह्यत्वचा के बाद कई परतों वाला मृदूतकीय, मंड कण युक्त वल्कुट होता है। वल्कुट में मोटी भित्ति वाली तंतु कोशिकाएं काफी पाई जाती हैं। अंत:त्वचा के भीतर बहुस्तरीय परिरंभ पाया जाता है। प्राथमिक जाइलम दारू द्विआदिदारुक (diarch) होता है। वाहिनिकाओं में एकपंक्तिक परिवेशित गर्त (uniseriate bordered pits) होते हैं। फ्लोएम/पोषवाह एक सी कोशिकाओं का बना होता है। द्वितीयक वृद्धि सामान्य तरीके से होती है।

4B.3.2 तना

इसमें दो प्रकार की शाखाएं होती हैं, जैसे सीमित वृद्धि की शाखाएं तथा असीमित वृद्धि वाली शाखाएं। इस तरह का विभेद *नीटम* की झाड़ी अथवा वृक्ष वाली जातियों जैसे *नीटम नीमोन* में नहीं पाया जाता है। कुछ जातियों में संधित तने पाए जाते हैं। जोड़ों के दो भाग होते हैं, एक आसंधि ठीक ऊपर तथा दूसरा आसंधि के नीचे, तथा ये एक वलयाकार खांच द्वारा विभाजित रहते हैं।

किशोर तने में आयताकार कोशिकाओं की एकल परत होती हैं, जिस पर क्यूटीकल/उपत्वचा की मोटी परत तथा धँसे हुए रंध्र होते हैं। वल्कुट मृदूतकी कोशिकाओं की 12-16 परतों का बना होता है : भीतरी क्षेत्र में कुछ कोशिकाएं तंतुमय हो जाती हैं जिनमें बारीक ल्यूमेन/अवकाशिका होती हैं। अपेक्षाकृत बड़े तनों में, भीतरी वल्कुट में मृदूतकी कोशिकाओं की एक वलय दृढ़ोतकी (sclerenchymatous) बन जाती है, तथा यह कंटिकीय कोशिकाओं (spicular cell) की वलय कहलाती है। अंत:त्वचा (endodermis) तथा परिरंभ (pericycle) स्पष्ट नहीं होते हैं। संवहन पूल (20-24) संपार्श्विक (collateral) तथा मध्यादिदारुक (endarch) तथा वलय में व्यवस्थित होते हैं। दारू में वाहिनिकाएं तथा कुछ वाहिकाएं होती हैं। संवहन पूलों के बीच की मज्जा किरणें ऊँची और चौड़ी होती है। मज्जा मृदूतकी होती है। मज्जा तथा वल्कुट दोनों में लैटेक्सधर (laticiferous) तत्व दिखाई देते हैं। (चित्र 4B.1 a)।

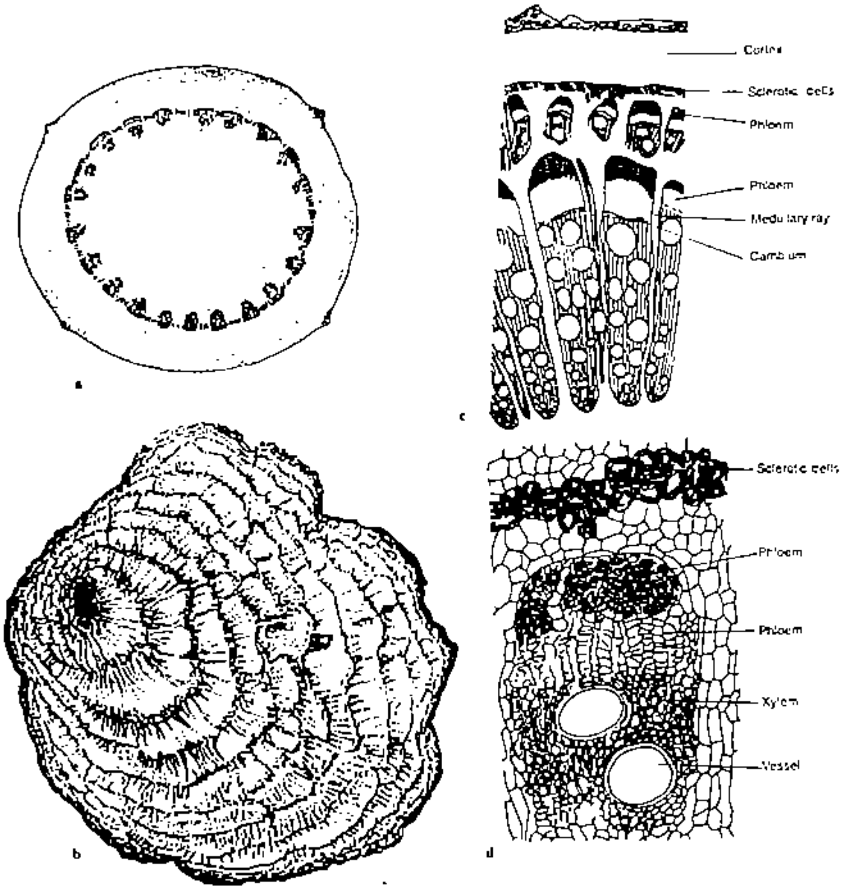

चित्र 4B.1 : *नीटम* स्पीशीज a) किशोर तने की अनुप्रस्थ काट (आरेखी) b) संवहनी पूलों के सहायक वलयों को दर्शाती तने की अनुप्रस्थ काट c) समान एक विवर्धित भाग दो संवहनी वलयों को दिखाते हुए d) सहायक वलय से एक संवहनी पूल विवर्धित। पूल की परिधि की ओर फ्लोएम पोषवाह तंतुओं की उपस्थिति को नोट कीजिए जो उसके ठीक ऊपर एक पैवंद/पैच तथा दृढ़ोतकी कोशिकाओं की मोटी परत बनाए हुए हैं। दारू ऊतक में दो प्रमुख वाहिकाएं दिखाई पड़ रही हैं (महेश्वरी तथा वासिल से 1961a)।

नीटम की वृक्ष वाली जातियों जैसे कि *नीटम नीमोन* में, द्वितीयक वृद्धि सामान्य होती हैं। आरोही जातियों जैसे *नीटम उला* तथा *नीटम अफ्रीकानम (G. africanum)* में आरंभ में द्वितीयक वृद्धि सामान्य होती है परन्तु, बाद में नए कैम्बियम के बन जाने के कारण, दारू/जाइलम तथा पोषवाह/फ्लोएम की कुछ वलय उत्पन्न होती है जो मज्जा किरणों के कारण फानाकार पूलों में विभाजित हो जाती हैं। आप चित्र (4B.1 b) में देख सकते हैं कि इनमें से कुछ सहायक वलय अपूर्ण हो सकती हैं। जिसके परिणामस्वरूप या तो मज्जा अथवा संवहन पूलों की व्यवस्था उत्केन्द्रकी (eccentric) हो जाती है। प्रत्येक संवहन पूल की विस्तृत संरचना चित्र (4B.1 c,d) में दिखाई गई है।

द्वितीयक फ्लोएम/पोषवाह चलनी कोशिकाओं (sieve cells) तथा मृदूतक का बना होता है। दोनों तत्व अपनी व्यवस्था में बहुत नियमितता दर्शाते हैं–चलनी कोशिकाएं एकसमान कतारों में तथा मृदूतकी कोशिकाएं उनके बीच के कोणों में होती हैं। अपनी अवस्थिति, आमाप तथा अंतर्वस्तुओं में मृदूतकी कोशिकाएं सहचर कोशिकाओं (companion cells) से मिलती हैं, जबकि उनकी उत्पत्ति बहुत भिन्न होती है।

नीटम की लकड़ी विशिष्ट होती है क्योंकि उनकी वाहिकाओं में अंत:भित्ति पर एकल छिद्र होता है

(चित्र 4B.2a) वाहिकाओं के अतिरिक्त, वाहिनिकाएं तथा दारू मृदूतक भी उपस्थित होते हैं।
वाहिनिकाएं लंबी होती हैं तथा अपनी अरीय तथा स्पर्शतलीय भित्तियों दोनों पर एक पंक्तिक परिवेशित गर्त दर्शाती हैं। जाइलम/दारू मृदूतक कोशिकाएं सादा गर्त की होती हैं (चित्र 4B.2 b, c)

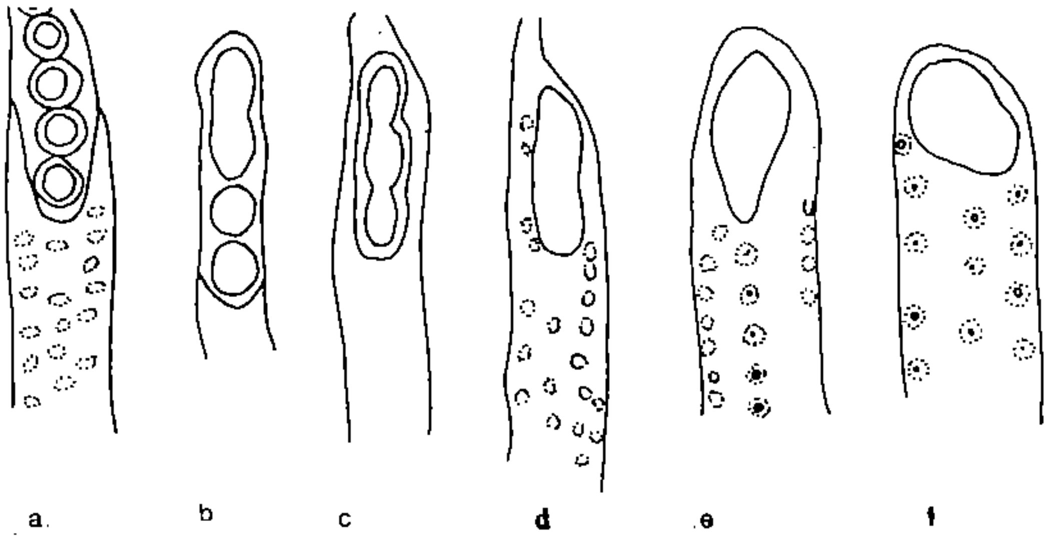

चित्र 4B.2 : *नीटम अफ्रीकानम* की वाहिकाओं की अंतभित्तियों के छिद्रण (डूपी से 1912)।

तने का शीर्ष : *नीटम* में तने का शीर्ष एन्जियोस्पर्मी लक्षण दिखाता है। इसमें विशिष्ट ट्यूनिका-कोर्पस (Tunica-cörpus) संगठन पाया जाता है। ट्यूनिका कोशिकाओं की सबसे बाहरी एकल परत होती हैं जो आद्य पत्ती के पहले जोड़े से लेकर तने के शीर्ष तक जाती हैं। कोर्पस उप शीर्ष आरंभकों, केन्द्रीय मातृ कोशिका क्षेत्र, पार्श्व परतों तथा मज्जा शिरा विभज्योतक की बनी होती है। आप इसके बारे में और अधिक इकाई 8 में पढ़ेंगे।

4B.3.3 पत्ती

पत्ती की आकृति तथा शिराविन्यास में *नीटम* का पौधा द्विबीजपत्रियों से मिलता है। पत्तियां बड़ी अंडाकार जालिकावत विन्यास (reticulate venation) तथा अच्छिन्न कोर (entire margin) वाली होती हैं (चित्र 4B.3a)। छोटे तने आमतौर पर अशाखित होते हैं तथा प्रत्येक शाखा पर 9-10 क्रॉसित (decussately) रूप में व्यवस्थित पत्तियां होती हैं।

पत्तियों में बाह्यत्वचा में मोटे क्यूटिकल युक्त तरंगित भित्तियां होती हैं। पर्णमध्योतक खंभ ऊतक (palisade) तथा स्पंजी (spongy) मृदूतक में विभेदित होता है। खंभ ऊतक संहत कोशिकाओं की एकल परत का बना होता है जो निचली बाह्यत्वचा के निकट ताराकार शाखित स्क्लैरीडस (sclereids) भी उपस्थित रहते हैं। तंतु तथा लैटेक्स नलियां प्रचुर मात्रा में होती हैं विशेषतौर पर मध्यशिरीय भाग में। रंध्र सिर्फ निचली सतह पर होते हैं तथा अनियमित रूप से व्यवस्थित होते हैं। रंध्र के विकास का तरीका हैप्लोकाइलिक (haplocheilic) होता है। संवहन पूल वक्र में व्यवस्थित होते हैं (चित्र 4B.3b)। जाइलम/दारू वाहिकाओं, वाहिनिकाओं तथा मृदूतक का बना होता है। पोषवाह/फ्लोएम जाइलम के ठीक नीचे नियमित कतारों में व्यवस्थित होता है। मोटी भित्ति वाली गर्त युक्त कोशिकाएं फ्लोएम के बाहर की ओर पैच बनाती हैं।

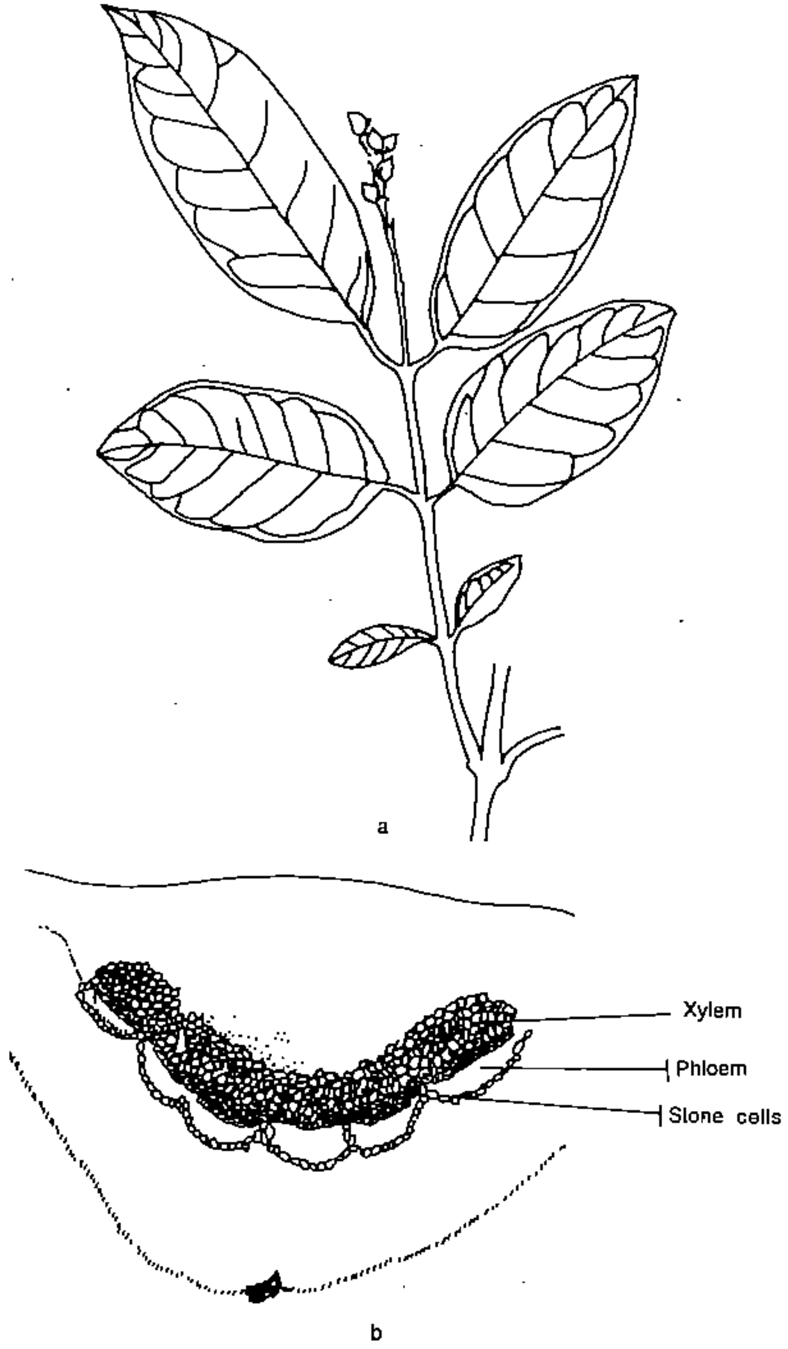

चित्र 4 B. 3 : a) *नीटम इंडिकम* : जालिकावत शिराविन्यास युक्त पत्तियां b) मध्यशिरा क्षेत्र से अपेक्षाकृत पुरानी पत्ती की उर्ध्वाधर काट। फ्लोएम ऊतक के बाहर की ओर पाषाण कोशिकाओं के स्पष्ट पैवंदों/पैचो को नोट कीजिए (महेश्वरी तथा वासील 1961a)

बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों को उचित विकल्प से पूरा कीजिए

1) *नीटम* पादप .... (काश्मीर/केरल) में पाए जाते हैं।

2) *नीटम* (शुष्क/नम) .... उष्णकटिबंधी क्षेत्र का पादप हैं।

3) *नीटम* की पत्तियां .... (जालिकावत्/समानान्तर) शिराविन्यास दर्शाती हैं।

4) *नीटम* .... (वाहिकाओं/स्कलैरीड्स) की उपस्थिति दर्शाता है तथा इसलिए एन्जियोस्पर्म्स से मिलता है।

5) *नीटम* के तने में.................. (लैटेक्स धारी/रेजिन नलियों) की उपस्थिति दिखाई पड़ती है।

बोध प्रश्न 2

1) इस वक्तव्य पर टिप्पणी कीजिए कि "*नीटम* एन्जियोस्पर्मी तने का शीर्ष दर्शाता हैं ?"

....

....

....

....

....

....

2) *नीटम* की कुछ जातियों में असंगत द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है ? ये सामान्य वृद्धि से किस प्रकार भिन्न होती है ?

....

....

....

....

....

....

3) *नीटम* की लकड़ी की क्या विशेषता है ?

....

....

....

....

....

....

4B.4 जनन संरचनाएं

4B.4.1 नर शंकु तथा युग्मकोद्भिद

नर तथा मादा शंकु अलग-अलग पादप पर विकसित होते हैं यानि कि *नीटम* एकलिंगाश्रयी है। चित्र 4B.4 नर तथा मादा शाखा की आकारिकी दर्शाता है।

नर शंकु : "पुष्पक्रम" एकल (solitary) अथवा गुच्छित पुष्प गुच्छ होता है। यह लघु प्ररोह पर कक्षीय होता है तथा अशाखित होता है। लघुबीजाणुधानियों के अतिरिक्त यह बंध्य बीजांडों का एक घेरा भी दशाते हैं। शंकु में एक अक्ष होता है जिसमें आधार पर दो बंध्य (sterile) सहजात (connate) विपरीत सहपत्र तथा गोलाकार सहपत्रों की श्रृंखला (प्यालिका या कॉलर) होती है जो एक दूसरे के ऊपर अध्यारोपित होते हैं (चित्र 4B.5a)। एक तरुण शंकु लघुकृत अक्ष के कारण संहत दिखाई पड़ता है उसमें बहुत छोटी पोरी/पर्व होती है तथा प्यालिकाएं कॉलर सतत/अखंड दिखाई पड़ते हैं। जैसे-जैसे अक्ष की लंबाई बढ़ती है कॉलर अलग होते जाते हैं। *नीटम नीमोन* में ऊपरी दो या तीन कॉलर बहुत अधिक लघुकृत तथा बंध्य होते हैं।

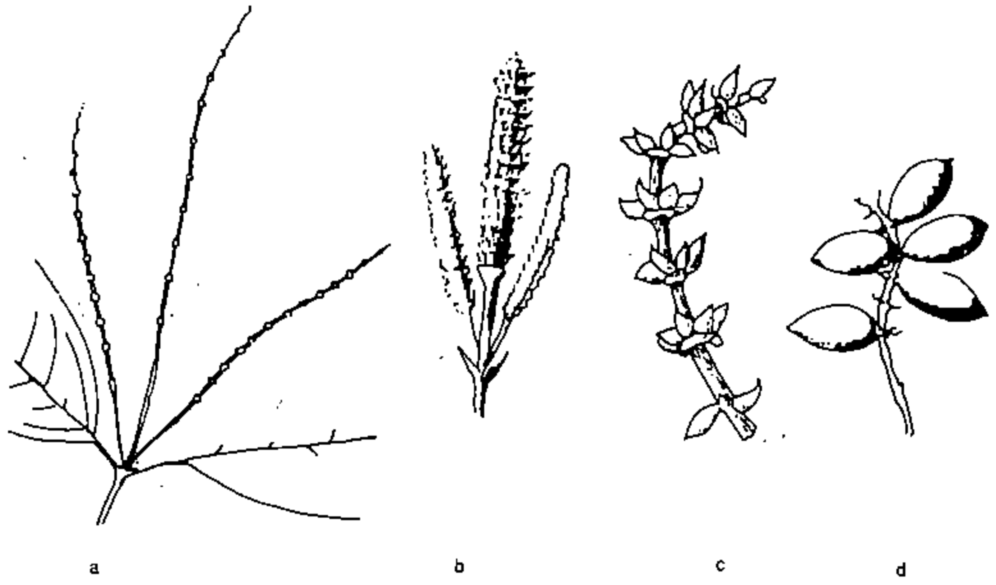

चित्र 4B.4 : *नीटम* स्पीशीज a) प्रजनन शाखा b) नर शंकु c) मादा शंकु d) बीजधारी शाखा (कुबित्जकी से, 1990)।

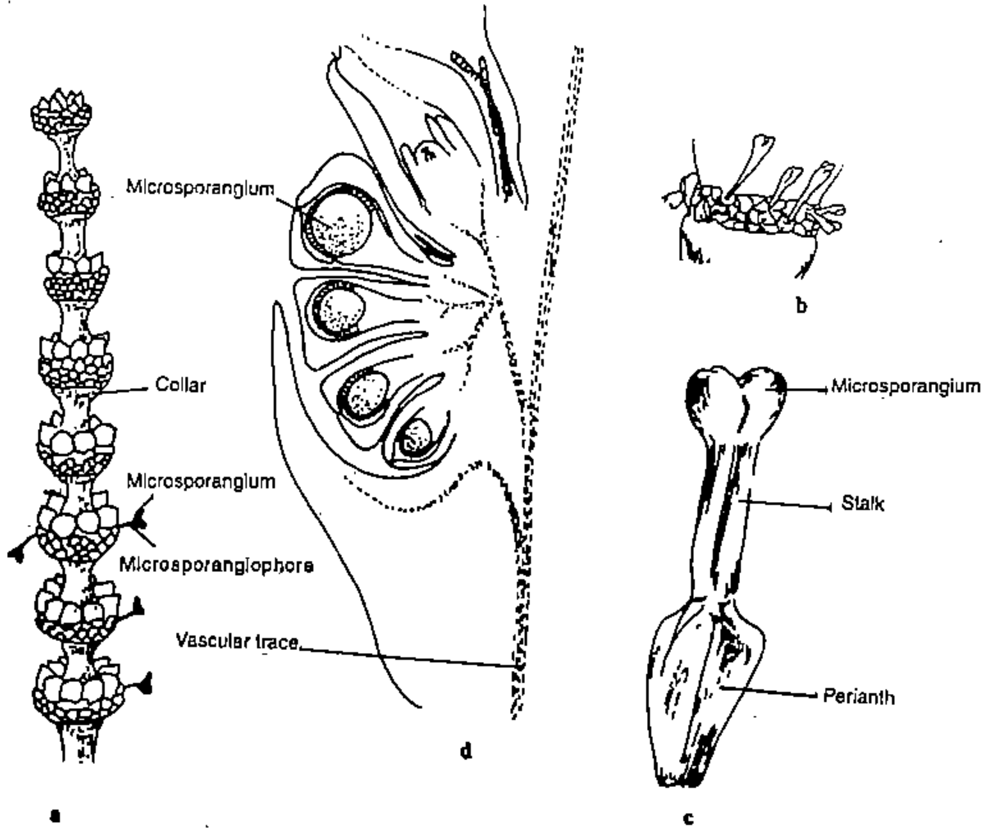

चित्र 4B.5 : *नीटम* स्पीशीज : a) स्फुटन के समय नर शंकुओं के पुष्पगुच्छ को धारण किए हुए शाखा प्रत्येक कॉलर पर, नर पुष्पों के ठीक ऊपर, अपूर्ण मादा पुष्पों या रुद्धवृद्धि बीजांडों की एक वलय होती है b) सुदीर्घित में से एक खंड; नर पुष्पों का स्फुटन हो रहा है। c) वृंत का लंबा होना तथा परिदलपुंज से परागकोशों का निकलना d) नर शंकु की अनुदैर्ध्य काट भाग बीजाणुधानी और बीजांड की स्थिति तथा कॉलर के लिए संवहन-न्यास, नर पुष्प तथा बीजांड को दिखाता हुआ, (a से c वासील 1959; d-g संवाल से 1962)

प्रत्येक कॉलर 12-15 नर पुष्पों की 3 से 6 तक वलय तथा उनके ऊपर 7-12 अपूर्ण मादा पुष्पों या रुद्धवृद्धि बीजांडों की एकल वलय धारण किए रहता है (चित्र 4B.5 a,b) प्रत्येक नर पुष्प में वृंत के ऊपर दो एककोष्ठकी परागकोश (पुंधानीधर (antherophore)) होते हैं जो सहपत्रों या परिदलपुंज के आच्छद से ढंके रहते हैं (चित्र 4B.5d)।

वृंत वयस्क होने पर लंबा हो जाता है तथा परागकोश परिदलपुंज के आच्छद से एक झिरी के जरिए बाहर निकल आते हैं (चित्र 4B.5c)। नर शंकु के विकास के दौरान, कॉलर्स अग्राभिसारी (acropetel) अनुक्रम में बनते हैं।

विभज्योतकी कोशिकाओं की एक वलय प्रत्येक कॉलर के आधार (कक्ष) पर विभेदित हो जाती है। लघुबीजाणुधानी ऊतकों के एक ककुद (hump) द्वारा बनती हैं जो वृंत युक्त दो परागकोश बनाने के लिए खांचित हो जाता है।

अधोत्वचीय प्रप्रसू कोशिकाओं (hypodermal archeosporial) के दो समूह लगातार विभाजनों के द्वारा बहुकोशिकीय प्रप्रसूतक को जन्म देती हैं (चित्र 4B.6a)। प्रप्रसू कोशिकाओं की सबसे बाहरी सतह प्राथमिक भित्तीय सतह (primary parietal cell) तथा बीजणुजन कोशिकाएं बनाने के लिए विभाजित होती हैं (चित्र 4B.6b)।

(कॉलर्स की आकृति उनकी संख्या तथा पोरी/पर्व की लंबाई वर्गिकीय महत्व के होते हैं)।

प्राथमिक भित्तीय सतह, परिनति विभाजन के द्वारा बाहर की ओर भित्ति सतह और भीतर की ओर टेपीटम (Tapetum) बनाती है। भित्ति सतह सबसे पहले अपभ्रष्ट होती है। टेपीटम की कोशिकाएं सघन रूप से कोशिकाद्रव्यी हो जाती हैं तथा सामान्यत: द्विकेन्द्रकी होती हैं; केन्द्रक युग्मित होकर बहुगुणित (polyploid) हो सकता है।

टेपीटम की कोशिकाएं अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात् अपभ्रष्ट होने लगती हैं तथा उनके अवशेष लघुबीजाणुओं की एक केन्द्रकी अवस्था में विवेचन योग्य होते हैं (चित्र 4B.6c)। यूविष (Übisch) कण या ऑर्बिक्यूल टेपीटम कोशिकाओं की भित्ति पर दिखाई देते हैं।

बाह्यत्वचा एकमात्र सतह होती है जो वयस्क बीजाणुधानी में बनी रहती है जो एक मध्य लंब झिरी के द्वारा स्फुटित होती है। बीजाणुजन कोशिकाएं विभाजन करती हैं तथा संख्या में बढ़ जाती हैं, जिनकी अंतिम कोशिका पीढ़ी लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं में विभेदित हो जाती हैं। चौड़े कोशिकाद्रव्यी चैनल लघुबीजाणु मातृ कोशिकाओं या अर्धसूत्रीकोशिकाओं (meiocytes) को आपस में जोड़कर सिन्काइट्रियम (syncytium) बनाते हैं।

जीवद्रव्य कला तथा मातृ कोशिका भित्ति के मध्य स्थान बन जाता है। मातृ कोशिका भित्ति क्रमश: घुल जाती हैं और उसके बाद जीवद्रव्य गोल हो जाता है। जब मातृ कोशिका में अर्धसूत्री विभाजन होता है, वह कैलोस की मोटी परत से घिर जाती हैं।

अर्धसूत्री विभाजन के फलस्वरूप क्रॉसित (decussate) चतुष्फलकीय (tetrahedral) अथवा समद्विपार्श्व चतुष्टक (isobilateral tetrads) बनते हैं जो अभी तक कैलोस कवर आच्छद में ही रहते हैं। यह आच्छद शीघ्र ही अवशोषित हो जाता है जिससे अगुणित लघु बीजाणु निर्मुक्त हो जाते हैं (चित्र 4B.6c देखिए)।

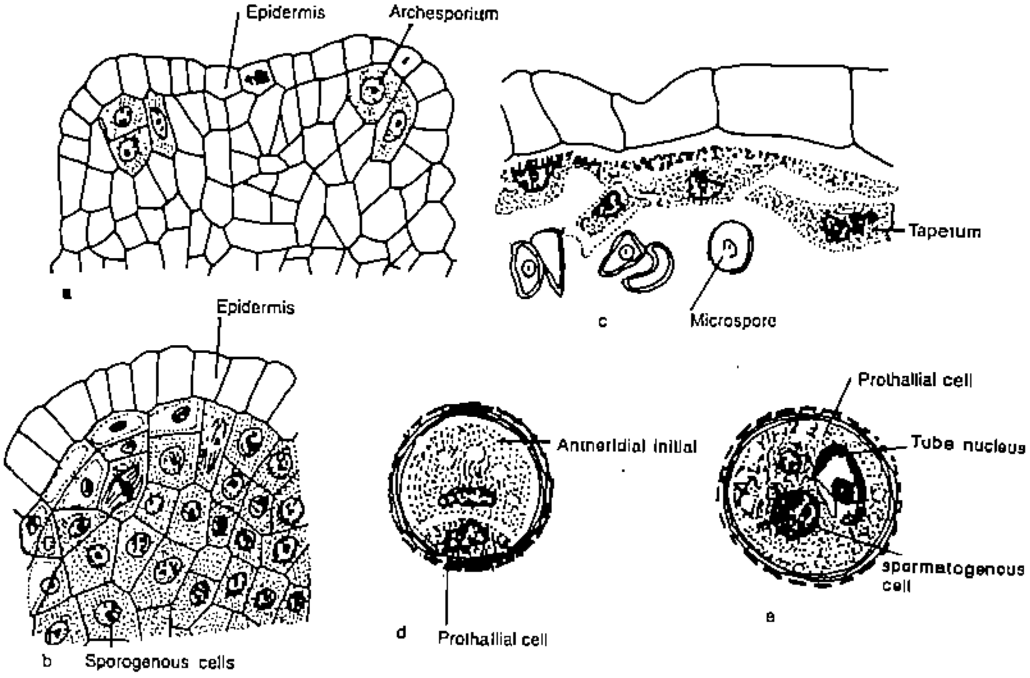

चित्र 4B.6 : *नीटम* ग्नीमोन.लघुबीजाणुजनन तथा नर युग्मकोद्भिद a) कुछ अधोत्वचीय प्रप्रसू कोशिकाओं को दिखाने के लिए तरूण नर पुष्प की अनुदैर्ध्य काट। b) समान, बाद की अवस्था में; बीजाणुजन ऊतक के ऊपर प्रायमिक परिधीय परत कट गई हैं c) अपभ्रष्ट होती टेपीटम कोशिकाओं तथा कुछ लघुबीजाणुओं को दर्शाता बीजाणुधानी का एक भाग d) द्वि-केन्द्रकी परागकण : प्रोथेलियल कोशिका वन गई है, e) वयस्क तीन कोशिकीय (प्रोथेलियल कोशिका, नली/ट्यूब कोशिका तथा पुमणुजन कोशिका) परागकण अलगन/झड़ने की अवस्था में (सांवाल से 1962)।

नर युग्मकोद्भिद

लघुबीजाणु केन्द्रक एक लैन्स के आकार की प्रोथेलियल कोशिका तथा एक बड़ी पुंधानी आरंभक बनाने के लिए विभाजित होता है (चित्र 4B.6d)। प्रोथैलियल कोशिका गोलाकार हो जाती है तथा आगे विभाजित नहीं होती है तथा वैसे ही अपभ्रष्ट हो जाती है। पुंधानी आंरभक पुंधानी कोशिका तथा नलिका कोशिका बनाने के लिए विभाजित होता है। चूंकि *नीटम* में वृंत कोशिका नहीं बनती है, पुंधानी कोशिका सीधे ही बीजाणुजन कोशिका की भाँति कार्य करने लगती है। परागकण 3-कोशिकीय अवस्था में गिरते हैं। (चित्र 4B.6e)। कुछ जातियों में कभी-कभी दोहरे परागकण दिखाई पड़ते हैं। वे संभवत: चतुष्टक की दो या अधिक कोशिकाओं के अलग न होने के कारण उत्पन्न होते हैं। परागकण प्रकृति में चिपचिपे होते हैं।

4B.4.2 मादा शंकु तथा युग्मकोद्भिद

मादा शंकु : तरुणावस्था में मादा शंकु, नर शंकु से मिलता है। हालांकि जैसे-जैसे शंकु बड़ा होता है, तो अंतर स्पष्ट होता जाता है। मादा शंकु में, प्रत्येक कॉलर के ऊपर चार से दस मादा पुष्पों (बीजांडो) की वलय उपस्थित रहती है। नर पुष्प नहीं होते हैं। आरंभ में सभी बीजांड एक जैसे दिखाई पड़ते हैं परन्तु बाद में सिर्फ कुछ ही वयस्क होते हैं। ऊपर के कुछ कॉलर में आमतौर पर बीजांड

लगभग चार से दस बीजांडीय आद्यक वलयाकार विभज्योतक मादा शंकु के प्रत्येक कॉलर के नीचे के घेरे से विभेदित होते हैं। बीजांडकीय आद्यक कुशन/गद्दी पर स्थित होता है। तीन आवरण (बाहरी, भीतरी तथा अध्यावरण) अभिकेन्द्र (centripetal) प्रतिमान/पैटर्न में निकलते हैं। बीजांड संवृत या अवृंतप्राय होता है। तीनों आवरणों में से बाहर वाला सबसे पहले विभेदित होता है। अक्सर परिदलपुंज (perianth) कहलाने वाला यह आवरण वयस्क होने पर मोटा तथा कुछ-कुछ गूदेदार हो जाता है (चित्र 4B.7a) बाहरी बाह्यत्वचा में रन्ध्र दिखाई पड़ते हैं।

भीतरी आवरण इसके बाद बनता है, तथा कभी-कभी बाहरी अध्यावरण (Outer integument) कहलाता है। नरशंकु में मादा पुष्पों में यह आवरण नहीं पाया जाता है। शीर्ष भाग क्रमशः सूक्ष्म होती है वलयाकार रिम/घेरा बनाता है। रन्ध्र बाहरी बाह्यत्वचा में विभेदित होते हैं। परागण के वक्त लैटेक्सधर भी बनते हैं। बीजावरण की पाषाणी (stony) परत का प्रमुख भाग इस आवरण के तंतुमय तत्वों तथा स्कलैरीड्स के द्वारा बनता है।

तीसरा आवरण या अध्यावरण सबसे बाद में बनता है, तथा बीजांडकाय से निचले भाग में युग्मित हो जाता है। यह बीजांडद्वारी नलिका या तथाकथित "वर्तिका" (style) में काफी लंबाई में बढ़कर बाहरी आवरण के शीर्ष विदर (apical cleft) के ऊपर निकल आता है। दिखाई पड़ने वाला भाग वयस्क बीजांड की लम्बाई का लगभग एक तिहाई होता है। यह भाग परागण के पहले अथवा परागण के वक्त अपभ्रष्ट होना शुरू होता है। इस आवरण के शीर्ष पालि उन्नत/प्रमुख बन जाते हैं तथा उनकी संख्या 7 से 11 तक हो सकती है। पालि (lobes) बड़े होते हैं तथा अनियमित रूप से व्यावर्तित रहते हैं। अन्य दो आवरणों के विपरीत (चित्र 4B.7a), अध्यावरण में न तो रन्ध्र और न ही स्लैरीड्स विकसित होते हैं।

बीजांडकाय : बीजांडकाय सुविकसित तथा काफी स्थूल/पृथु होता है। इसकी बाह्यत्वचा विभाजित होकर बीजांडकाय-गोप (nucellar cap) बनाती है।

दीर्घबीजाणु मातृ कोशिकाओं में अर्धसूत्री विभाजन से पहले, उनके नीचे की कुछ बीजांडकाय कोशिकाएं विभाजित होकर एक ऊतक बनाती हैं जिसकी कोशिकाएं विकिरणकारी कतारों से व्यवस्थित रहती हैं। यह "कुट्टिम ऊतक" (pavement issue) कहलाता है, तथा जब मादा युग्मकोद्भिद मुक्त केन्द्रकी होता है तब इसकी कोशिकाएं सघन रूप से अभिरंजित रहती हैं। जैसे-जैसे मादा युग्मकोद्भिद निभाग/कैलाजा क्षेत्र में बढ़ता हैं, कुट्टिम ऊतक अवशोषित होता जाता है। इस ऊतक का कार्य पोषण करना माना जाता है।

गुरूबीजाणु जनन तथा मादा युग्मकोद्भिद : सामान्यतः दो से चार अधोत्वचीय प्रप्रसूतक कोशिकाएं तरुण बीजांडकाय में विभेदित होती हैं (चित्र 4B.7b)। वे बाहर की ओर प्राथमिक परिधीय कोशिकाएं तथा भीतर की ओर प्राथमिक बीजाणुजन कोशिकाएं बनाती हैं। जैसा कि पहले बताया गया है परिधीय कोशिकाएं बीजांडकायी बाह्यत्वचा (nucellar epidermis) के साथ मिलकर स्थूल/पृथु बीजांडकाय उत्पन्न करती हैं। प्राथमिक बीजाणुजन कोशिकाएं विभाजित होकर 8-16 बीजाणुजन कोशिकाएं बनाती हैं, जो कतार में व्यवस्थित रहती हैं तथा गुरूबीजाणु मातृ कोशिका की भाँति कार्य करती है।

चूंकि अर्धसूत्री विभाजन I और II (चित्र 4B.7d) के बाद कोई भित्ति नहीं बनती है अतः चतुष्केन्द्रकी संगुरूबीजाणु (tetranucleate coenomegaspore) उत्पन्न होता है। आरंभ में, चारों केन्द्रक संगुरूबीजाणु के केन्द्र में रहते हैं परन्तु बाद में वे परिधि की ओर चले जाते हैं। अतः मादा युग्मकोद्भिद का विकास चतुष्की बीजाणुक (tetrasporic) होता है।

हालांकि बहुत से संगुरूबीजाणु एक ही बीजांडकाय में विकसित होते हैं पर सामान्यतः सिर्फ 2 या 3 ही 16-केन्द्रकी अवस्था से आगे तक विकसित होते हैं।

जब मादा युग्मकोद्भिद विकसित हो जाता है, तब केन्द्र में एक बड़ा धानी दिखाई पड़ने लगती है तथा परिधीय कोशिकाद्रव्य में स्थित केन्द्रक बारंबार विभाजित होने लगते हैं (चित्र 4B.7c)। बाद में, जैसे विभाजन होते रहते हैं, ऊपरी भाग में युग्मकोद्भिद चौड़ा हो जाता है तथा एक धानी लिए रहता है, जबकि अपने निचले भाग में युग्मकोद्भिद कोशिकाद्रव्य का संचय दर्शाता है। आगे वृद्धि के साथ युग्मकोद्भिद लंबा हो जाता है तथा एक उल्टे फ्लास्क की आकृति अपना लेता है (चित्र 4B.7e)।

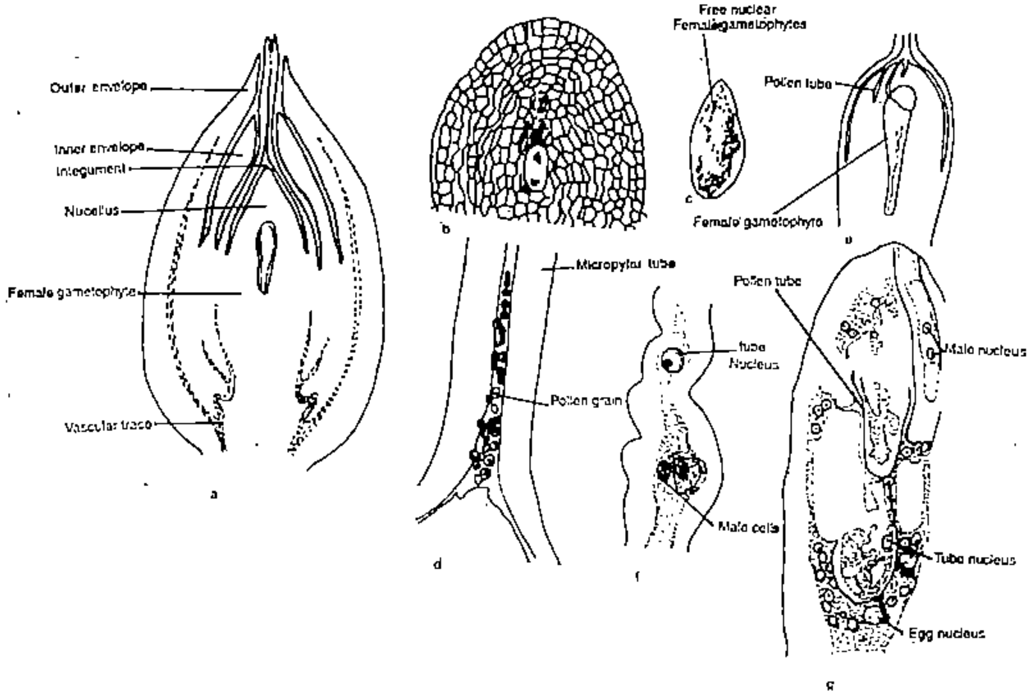

चित्र 4B.7 : *नीटम* स्पीशीज a) बाहरी तथा भीतरी आवरण अध्यावरण तथा सुविकसित वीजांडकाय को दिखाने के लिए वींजाड का अनुदैर्ध्य काट, अध्यावरण वीजांडद्वारी नलिका बनाता है। मादा युग्मकोद्भिद मुक्त केन्द्रकी अवस्था में है। विन्दु रेखाएं विभिन्न भागों को संवहन पूर्ति दर्शाती है। b) दो केन्द्रकी गुरूबीजाणु मातृ कोशिका c) मुक्त केन्द्रकी मादा युग्मकोद्भिद d) फंसे हुए परागकणों को दर्शाती बीजांडद्वार के भाग की अनुदैर्घ्य काट, e) वीजांड की लंबकाट वीजांडकाय ऊतक में तीन परागनलिकाओं को दिखाने के लिए एक पराग नलिका निचले मादा युग्मकोदभिद् में प्रवेश करने वाली है। f) नलिका केन्द्रक तथा दो समान नर कोशिकाओं को दिखाता पराग नलिका का भाग g) कुछ परागनलिकाओं के साथ मादा युग्मकोद्भिद के ऊपरी भाग की अनुदैर्घ्य काट। निचली परागनलिका के निकट विकिरणकारी कोशिकाद्रव्य के साथ दो बड़े केन्द्रक अंड केन्द्रक की भांति कार्य करेंगे (c-e वासिल से 1959; a-b मधुलता से 1960; f-g सांवाल से 1962)।

मादा युग्मकोद्भिद का दिलचस्प लक्षण स्त्रीधानी की अनुपस्थिति है, *नीटम* का यह गुण *वैलविश्चिया* में भी पाया जाता है। जब पराग नलिका मादा युग्मकोद्भिद के साथ संपर्क करती हैं, तब विस्फरित क्षेत्र के मध्यवर्ती भाग (equatorial region) में एक या अधिक केन्द्रक, अन्य केन्द्रकों से अपने बड़े आकार तथा सघन अभिरंजन के कारण आसानी से पहचाने जा सकते हैं। ये अंड केन्द्रक होते हैं जिनकी संख्या सामान्यत: दो होती है परन्तु कभी-कभी, अंड में एक या तीन केन्द्रक भी विकसित हो सकते हैं।

अंड का विभेदन मादा युग्मकोद्भिद के समीपवर्ती क्षेत्र में परागनलिका की उपस्थिति से उद्दीपित हो जाता है (चित्र 4B.7g)। अंड के विकास का सबसे दिलचस्प पहलू यह है कि सभी अंड एक साथ / समकालिक रूप से विकसित नहीं होते हैं ना ही सभी पराग नलिकाएं युग्मकोद्भिद पर एक ही वक्त पर पहुँचती हैं। अतिरिक्त अंडों का विभेदन पहले अंड के निषेचन के बाद भी जारी रहता है। युग्मकोद्भिद जो अधिकांश समय मुक्त केन्द्रकी होता है, वह एक अंड के निषेचन के बाद ही अपने ऊपरी भाग में कोशिकीय होने लगता हैं। अंततः युग्मकोद्भिद का ऊपरी भाग लगभग पूरा ही कोशिकीय हो जाता है।

नीटम नीमोन में, परागनलिका युग्मकोद्भिद के पार्श्व में बढ़ती जाती है तथा परागनलिका के समीपवर्ती केन्द्रक कई गुना बड़े हो जाते हैं और अपने चारों ओर सघन कोशिकाद्रव्य एकत्रित कर लेते हैं। ये अंड केन्द्रक होते हैं।

4B.5 परागण और निषेचन

जब *नीटम उला* में मादा युग्मकोद्भिद में 250 केन्द्रक हो जाते हैं तथा *नीटम नीमोन* में 32 या 64 केन्द्रक हो जाते हैं तब परागण होता है। परागण वायु अथवा कीट द्वारा हो सकता है। बीजांडद्वारी नलिका का शीर्ष भाग अपसारी और विदारित हो जाता है। परागण बूंद (pollination drop) जिसमें काफी शर्करा होती है। शीर्ष पर रिसावित/निःस्त्रावित होती है तथा परागकण एकत्रित करती है। जैसे ही तरल सूखता है। परागकण बीजांडद्वारी नलिका में चूस लिए जाते हैं तथा परागकक्ष में चले जाते हैं। (चित्र 4B.7d)। चीटें परागण बूंदों पर जाते हैं जो बीजांडकाय शीर्ष की अपभ्रष्ट होती कोशिकाओं द्वारा बनती हैं।

एकलिंगी (झाड़ी) जाति, *नीटम नीमोन* के परागण जीवविज्ञान का अध्ययन किया गया है। शाम के समय नर तथा मादा शंकु दोनों तीखी गंध निकालते हैं; परागण बूंदे भी बीजांड से स्त्रावित होती हैं। उष्णकटिबंधी वर्षा वनों में खुली पराग बूंदों का वाष्पन बहुत धीमा होता है। दिखावटी पुष्पदलों का विस्थापन तेज गंध से किया जाता है इस प्रकार की प्रक्रिया रात्रीचर कीट परागण (nocturnal entomophily) पौधों में होती है।

परागण के अंकुरण के वक्त, बाह्यचोल (exine) हट जाता है। परागकणों में जननछिद्र नहीं होते हैं। परागकण नलिका निकालते हैं, जो अन्तराकोशिक स्थानों में से बीजांडकाय में गुजरती है। जब परागनलिका बीजांडकाय की लगभग आधी लंबाई तक पहुँच चुकती है, तब पुमणुजन कोशिका नलिका में प्रवेश करती है जबकि प्रोथेलियल कोशिका उसी स्थान पर अपभ्रष्ट हो जाती है। विभाजित होने पर, पुमणुजन कोशिका दो नर कोशिकाएं बनाती है (चित्र 4B.7f)। नर युग्मक नलिका केन्द्रक के आगे बढ़ जाते हैं तथा पराग नलिका के शीर्ष पर आ जाते हैं (चित्र 4B.7g)।

परागकक्ष (Pollen chamber) बीजांडकाय के शीर्ष भाग में विकसित होता है। जब गुरूबीजाणुजनन पूर्ण रूप से बन जाता है, तब ऊपरी भाग की कोशिकाएं अपभ्रष्ट होने लगती हैं। कोशिकाद्रव्य के अपभ्रष्ट होने के बाद केन्द्रकों तथा कोशिका भित्तियों का विखंडन होता है। अंततोगत्वा एक छिछला परागकक्ष बन जाता है जिसमें परागकणों को अंततः जाना पड़ता है। परागकक्ष तथा मादा युग्मकोद्भिद के बीच की कोशिकाएं मंड कणों से भर जाती हैं। विकसित होता हुआ भ्रूणपोष (मादा युग्मकोद्भिद्) बीजांडकाय का लगभग पूरा उपभोग कर लेता है तथा, वयस्क बीज में शीर्ष भाग की कोशिकाएं क्यूटिनमय हो जाती हैं और क्यूटिनमय ही बनी रहती है।

परागण के बाद की अवस्थाओं के दौरान, भीतरी आवरण के निवेशन के ठीक ऊपर एक वलयाकार उभार दिखाई पड़ता है। दूसरा उभार या प्रचुरोद्भवन ऊपरी भाग में पराग कक्ष के नीचे विकसित होता है।

परागण के समय, एक गोलाकार रिम/घेरा या छत्राकार संरचना, अध्यावरण से विकसित होती है जो फ्लेंज/पर्शुकाभिका (flange) कहलाती है। इसका कार्य स्पष्ट रूप से पता नहीं है।

बीजांडद्वार समापक ऊतक : एक अन्य ऊतक (समापक ऊतक) अध्यावरण की भीतरी बाह्यत्वचा के फ्लैंज के स्तर तक उभरने/प्रचुरोद्भवन से बनता है इसके फलस्वरूप बीजांडद्वारी नलिका बंद हो जाती है। बंद होना भीतरी बाह्यत्वचीय कोशिकाओं के दीर्घन और अंतरबंधन के कारण होता है। बीजांडद्वार समापक

ऊतक नीचे की ओर बढ़ कर पराग कक्ष को भर सकता है। प्लगिंग (plugging) ऊतक "सेतुक" ("obturator") कहलाता है क्योंकि यह परागकक्ष में टक्कन की तरह काम करता है।

बोध प्रश्न 3

1) *नीटम* में यदि स्त्रीधानी अनुपस्थित होती हैं, तो अंड केन्द्रक कहाँ पाया जाता है ?

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) उस प्रक्रिया का वर्णन कीजिए जिसके द्वारा परागकण नर शंकु से बीजांड तक स्थानांतरित होते हैं।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

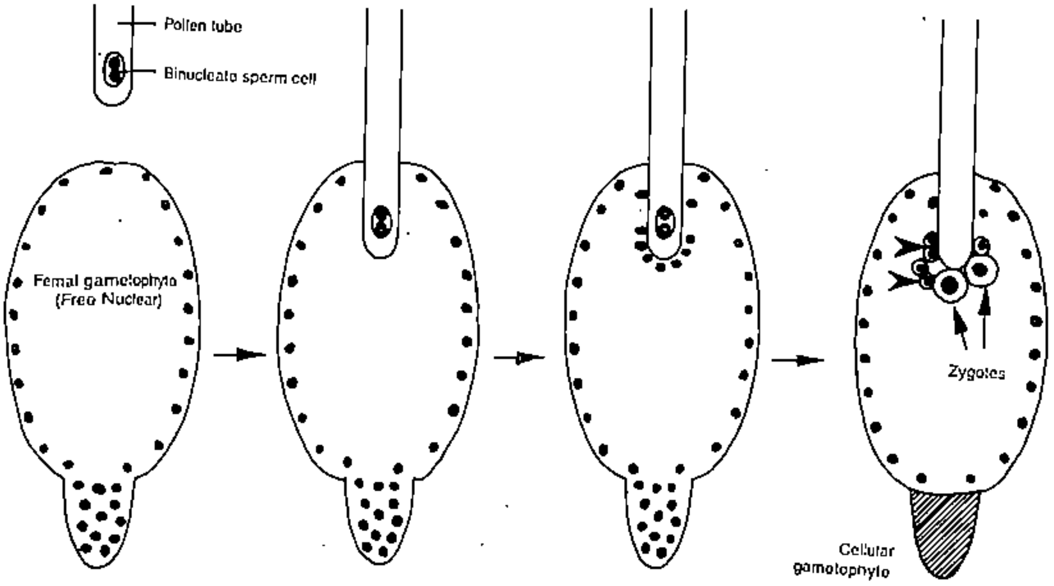

चित्र 4B.8 : *नीटम नीमोन* में द्वि निषेचन दर्शाता आरेख/द्विकेन्द्रकी शुक्राणु कोशिकाएं परागनलिकाओं के अंदर उत्पन्न होती हैं जो संकोशिकीय मादा युग्मकोद्भिद में प्रवेश करती हैं। परागनलिकाओं के प्रवेश के थोड़ी देर बाद ही, मादा युग्मकोद्भिद के अंदर के मुक्त केन्द्रक परागनलिकाओं के शीर्ष बिन्दु के आसपास पहुँच जाते हैं। कोई भी मादा केन्द्रक अंड के रूप में विभेदित नहीं होता हैं तथा सभी संभावित युग्मकों को प्रदर्शित करते हैं। परागनलिकाएं दोनों शुक्राणु कोशिकाओं को आसपास के मादा कोशिकाद्रव्य में छोड़ देती हैं तथा प्रत्येक शुक्राणु केन्द्रक अलग-अलग मादा केन्द्रक के साथ युग्मित होता है। द्वि निषेचन के फलस्वरूप दो जीवनक्षम युग्मनज बनते हैं। हालांकि, अनिषेचित मादा केन्द्रक कोशिकीय बन सकते हैं (तीर के सिरे), वे द्विगुणित युग्मनजों से स्पष्ट रूप से विभेदित किए जा सकते हैं। निषेचन के सहवर्ती साथ ही मादा युग्मकोद्भिद का कैलाजा क्षेत्र कोशिकीय बन जाता हैं और अंततः बड़े होकर विकासशील भ्रूण पोषण के काम आते हैं। छह परागनलिकाएं तक एक मादा युग्मकोद्भिद को निषेचित कर सकती हैं (फ्रीडमेन से 1996)।

बोध प्रश्न 4

बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य है या असत्य। कोष्ठक में सत्य के लिए स और असत्य के लिए अ लिखिए।

i) *नीटम* में परागकण त्रिकेन्द्रकी अवस्था में अलग होते हैं। [ ]

ii) *नीटम* उला में परागण तब होता है जब मादा युग्मकोद्भिद में 250 केन्द्रक हो जाते हैं। [ ]

iii) परागण बूंद प्रोटीन तथा विटामिनों से भरपूर होती है। [ ]

iv) *नीटम* की कुछ जातियों के तने में द्वितीयक वृद्धि के कारण संवहन न्यास के कुछ सहायक वलय बनते हैं जिनमें से कुछ अपूर्ण भी हो सकते हैं। [ ]

iv) नीटम में मादा युग्मकोद्भिद का विकास चतुष्की बीजाणुज होता है। [ ]

नीटम में द्वि निषेचन ज्ञात है। *नी.नीमोन* में यह अक्सर होता है। यह इसलिए भी क्यों कि पराग नलिका में उपस्थित दो शुक्राणुओं के लिए मादा युग्मकोद्भिद में कम से कम दो निषेचन योग्य स्त्री केन्द्रक होते हैं। *नीटम नीमोन* में द्वि केन्द्रकीय शुक्राणु पराग नलिका में ही बनते हैं। मुक्त केन्द्रकीय में, मादा युग्मकोदभिद में कोई भी एक अविभेदित मादा केन्द्रक अंड के रूप में काम करने लगता है। दोनों शुक्राणु मादा कोशिकाद्रव्य के आसपास छोड़ दिये जाते हैं। दोनों अलग-अलग मादा केन्द्रक के साथ युग्मित होते हैं और द्विनिषेचन के फलस्वरूप दो जीवन क्षम युग्मनज बनाते हैं। निषेचन के बाद प्रत्येक युग्मनज केन्द्रक भ्रूण में विकसित होता है पर ज्यादातर एक ही भ्रूण पूर्ण रूप से विकसित होकर बीज बनाता है। पूरी जानकारी आपको चित्र 4B.8 पढ़ने के बाद मिलेगी।

4B.6 भ्रूणोद्भव तथा बीज का विकास

युग्मनज एक प्रोद्वर्ध उत्पन्न कर सकता है जिसमें केन्द्रक चला जाता है (चित्र 4B.9a)। ये दो कोशिकाओं में भी विभाजित हो सकता है जिनमें से एक या दोनों कोशिकाओं में से नलिका निकल सकती है (चित्र 4B.9b)। नलिकाओं को प्राथमिक निलंबक नलिकाएं (primary suspensor tubes) भी कहा जाता है जिससे उन्हें द्वितीयक निलंबक से विभेदित किया जा सके जिसका वर्णन आगे होगा। नलिकाएं पटयुक्त और अधिक लंबी तथा कुंडलित हो जाती हैं, तथा मादा युग्मकोद्भिद या भ्रूणपोष (endosperm) में प्रवेश कर जाती हैं। (चित्र 4B.9c) ये प्राथमिक निलंबक नलिकाएं सदैव नीचे की ओर यानि कि कैलाजा की ओर बढ़ती हैं (चित्र 4B.9d,e)।

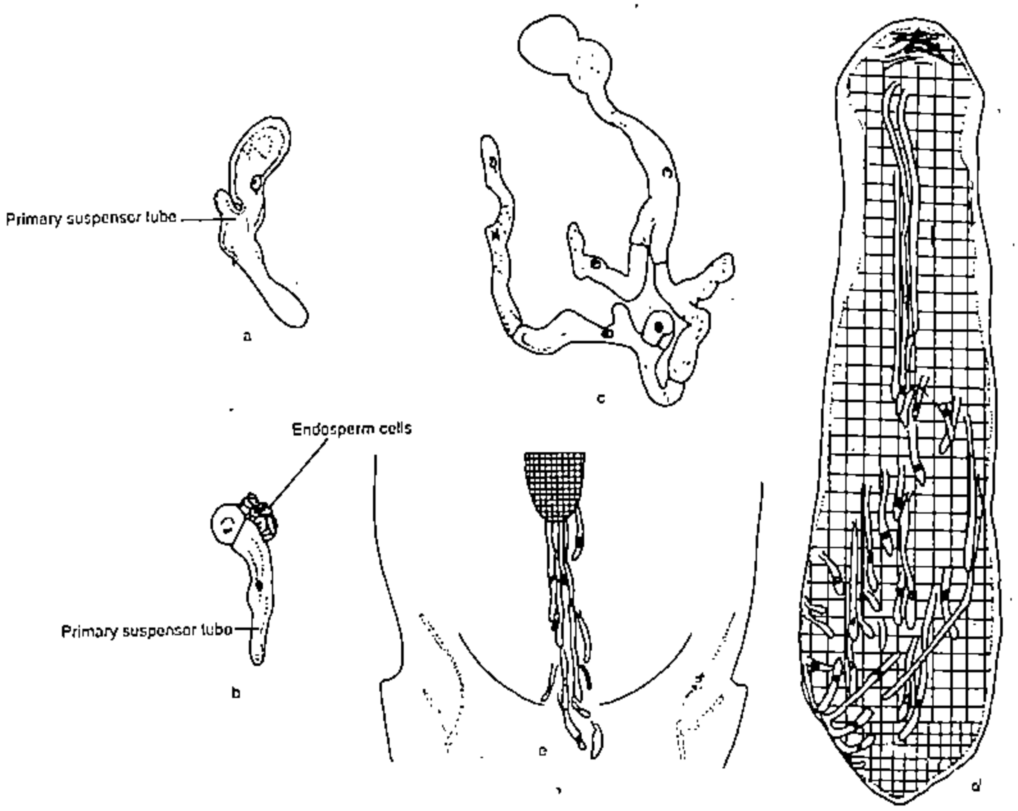

चित्र 4B.9 : a-c : *नीटम नीमोन* के विकास की अवस्थाएं a) युग्मनज प्राथमिक निलंबक नलिकाएं निकालते हुए, b) द्वि कोशिकीय युग्मनज, कुछ भ्रूणपोष कोशिकाएं भी दिखाई पड़ रही हैं c) शाखित प्राथमिक निलंबक नलिका d) मादा युग्मकोद्भिद में प्रवेश करती असंख्य प्राथमिक निलंबक नलिकाओं को दर्शाता बीजांड का अनुदैर्घ्य काट e) प्राथमिक निलंबक नलिकाओं को भ्रूणपोष के आगे बीजांडकायी ऊतक में बढ़ता हुआ दर्शाता बीजांड का निचला भाग।

भ्रूण का विकास इनमें से कुछ प्राथमिक निलंबक नलिकाओं के शीर्ष बिन्दुओं पर आरंभ होता है। प्राथमिक निलंबक नलिका का केन्द्रक शीर्ष की ओर चला जाता है तथा दो असमान केन्द्रकों में विभाजित हो जाता हैं (चित्र 4B.10 a, b)। छोटा वाला गोल हो जाता है तथा दो बार विभाजित होकर चार कोशिकाएं बनाता है। इसके बाद के विभाजन अनियमित होते हैं जिससे कोशिकाओं का एक पिंड बन जाता है, जिसके ऊपर की कोशिकाएं द्वितीयक निलंबक (secondary suspensor) (भ्रूणीय नलिकाओं) को जन्म देती हैं (चित्र 4B.10 c, d)। द्वितीयक निलंबक के शीर्ष की कोशिकाएं सघन होती हैं तथा समुचित भ्रूण का निर्माण करती हैं (चित्र 4B.10e)। द्वितीयक निलंबक काफी स्थूल होकर कोशिकाओं की वलित पट्टिका जैसा लगता है। कुछ कोशिकाएं दीर्घित होकर लंबी नलिकाएं बनाती हैं जो प्राथमिक निलंबक नलिका के पार्श्व में बढ़ती है जो कार्य करना बंद कर देती है (चित्र 4B.10f)।

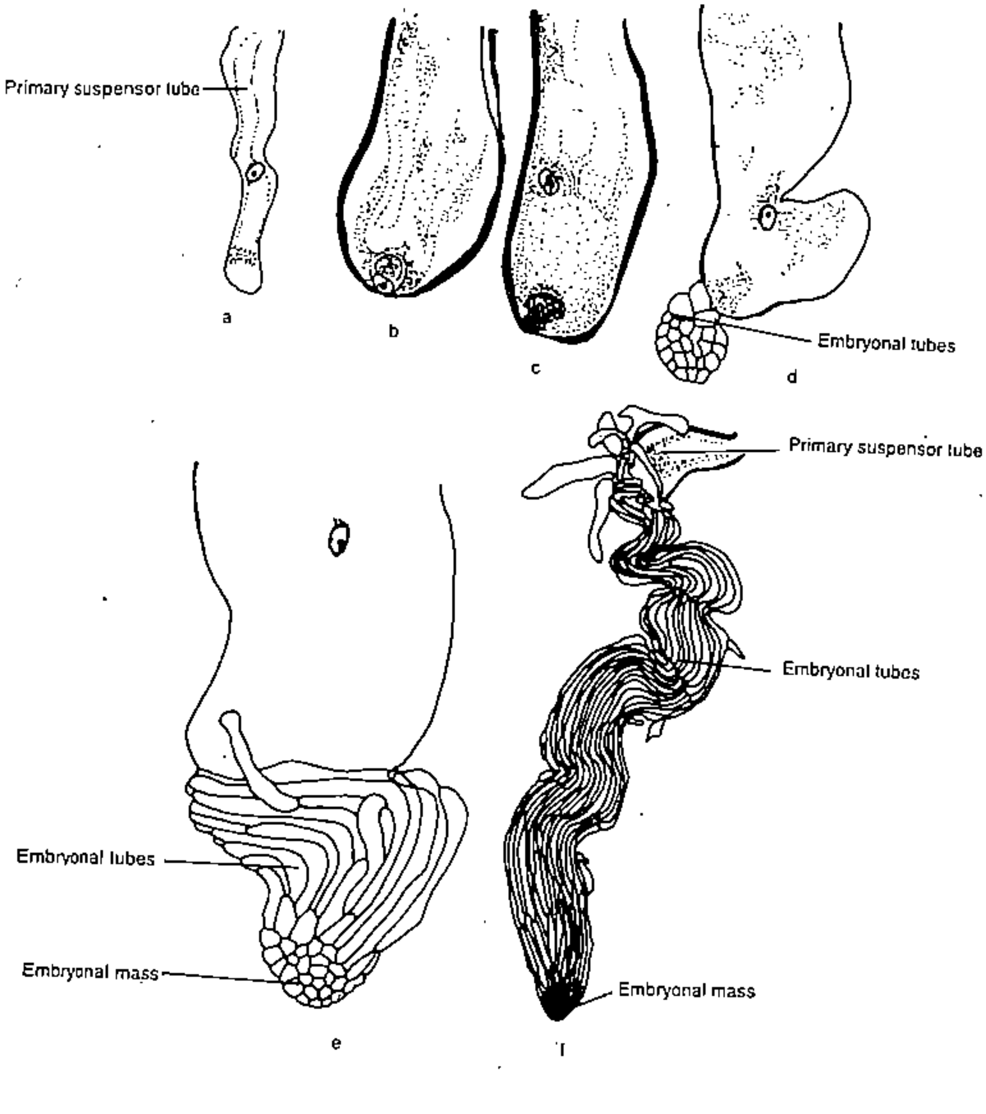

चित्र 4B.10 : *नीटम* स्पीशीज. a) प्राथमिक निलंबक नलिका का शीर्ष भाग b, c) समान 2 तथा 8 कोशिकीय अवस्था को दर्शाते हुए; प्राथमिक निलंबक नलिका का केन्द्रक दीर्घस्थायी होता है d, e) कोशिकीय पिंड की ऊपरी भाग की कोशिकाएं बड़ी हो गई हैं तथा द्वितीयक निलंबक को जन्म देने के लिए विभाजित हो गई हैं। (भ्रूणीय नलिकाएं) f) लंबे, कुंडलित बहुकोशिकीय द्वितीयक निलंबक युक्त प्राथमिक निलंबक को दर्शाता हुआ तरुण भ्रूण। द्वितीयक निलंबक की कुछ कोशिकाएं लंबी होकर लंबी नलिकाएं बनाती हैं जो प्राथमिक निलंबक नलिका के पार्श्व भागों में बढ़ती हैं (वासिल से 1959)।

भ्रूण का विकास : बहुत सी प्राथमिक निलंबक नलिकाओं में से, सिर्फ कुछ विकसित होना जारी रखती हैं तथा बाकी के भ्रूण अपने प्राथमिक निलंबक तंत्र के साथ अपभ्रष्ट हो जाते हैं। बढ़ते हुए भ्रूण में कोशिकाओं का शंक्वाकार पिंड पाया जाता है, जिसमें प्ररोह का शीर्ष शंकु के शीर्ष बिन्दु पर होता है। भ्रूणीय पिंड के शीर्ष के पार्श्व भागों में, कोशिकाएं सक्रिय रूप से विभाजित होकर दो बीजपत्र बनाती है जिससे प्ररोह शीर्ष ढक जाता है।

जड़ शीर्ष विपरीत सिरे पर विभेदित होता है। मूल गोप कोशिकाएं संगामी तथा वृहत् द्वितीयक निलंबक वाली होती हैं। प्ररोह तथा मूल शीर्षों के बनने के बाद, एक छोटा वहिःसंरण/उभार दोनों शीर्षों के बीच में दिखाई पड़ता है। यह तथाकथित "फीडर/संभरक'' की शुरूआत होती है। इसमें बाह्य त्वचा, वल्कुट, संवहन पूल तथा मज्जा दिखाई पड़ते हैं। वयस्क भ्रूण में फीडर/संभरक बहुत स्पष्ट होता है तथा सामान्यतः बीजापत्राधर (hypocotyl) से लंबा होता है (चित्र 4B.11a)।

नीटम में बहुभ्रूणता काफी पाई जाती है (चित्र 4B.11b)। सामान्य तथा विदलन बहुभ्रूणता दोनों ही पाई गई हैं। विदलन बहुभ्रूणता प्राथमिक अथवा द्वितीयक निलंबक नलिकाओं के भ्रूणीय पिंड में से पाई जा सकती हैं। कभी-कभी द्वितीयक निलंबक की कोशिकाएं विभज्योतकी बन जाती हैं तथा शीर्ष बिंदु पर बहुत सारे भ्रूणों को उत्पन्न करती हैं।

भ्रूणपोष : अन्य जिम्नोस्पर्म्स के विपरीत जिनमें कोशिकीय भ्रूणपोष (मादा युग्मकोद्भिद) निषेचन के पूर्व बनता है, *नीटम* में हालांकि कोशिकीकरण निषेचन के पहले आरंभ हो जाता है, पर युग्मकोद्भिद का एक भाग मुक्त केन्द्रकी रहता है। भित्ति निर्माण के फलस्वरूप बहुकेन्द्रकी कक्ष बन जाते हैं। प्रत्येक कोशिका में केन्द्रक अंततः युग्मित होकर एकल बहुगुणित केन्द्रक बनाते हैं।

नीटम उला का जीवनचक्र जो पश्चिमी घाटों पर वन्य रूप में उगता है। वह शंकु के बनने के आरंभ होने से लेकर बीज के अंकुरण तक लगभग 18 महीने लेता है। बीज अलगन के बाद अंकुरण के लिए लगभग 1 वर्ष लेता है। उत्तर पूर्वी भारत (आसाम) में *नीटम नीमोन* के बीज जून/जुलाई में झड़ते हैं वे अगले वर्ष सितम्बर में अंकुरित होते हैं।

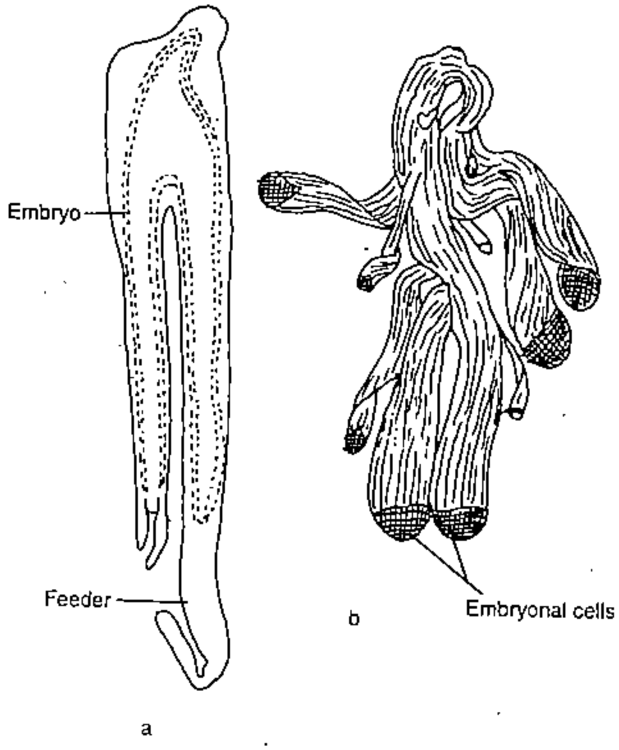

चित्र 4B.11 : *नीटम नीमोन* a) वयस्क भ्रूण की अनुदैर्घ्य काट सुविकसित फीडर/संभरक को दर्शाता हुआ जो कि भ्रूणीय अक्ष से अधिक लंबा है। बिन्दुमय रेखाएं संवहन न्यास को दर्शाती हैं b) बहुभ्रूणता : प्राथमिक निलंबक नलिका से अतिरिक्त भ्रूणों के विकास को नोट कीजिए (सानवाल से 1962)।

जैसे-जैसे भ्रूणपोष बढ़ता है, उसकी आकृति बदल जाती है व निचला हिस्सा ऊपरी भाग से अधिक चौड़ा हो जाता है। यह कैलाज़ा क्षेत्र से भी अधिक बढ़ जाता है। ये कोशिकाएं अनुप्रस्थ विभाजनों से एक अलग स्पष्ट क्षेत्र बनाती हैं जिसे अक्षीय ऊतक (axial tissue) कहते हैं। ऊपरी भाग का धीरे-धीरे नीचे बढ़ते हुए निलंबकों द्वारा उपभोग कर लिया जाता है तथा निलंबक संपीडित तथा संदलित हो जाते हैं। भ्रूणपोष में मंड तथा तैल बिंदु प्रचुर मात्रा में होते हैं तथा यह अविभेदित भ्रूण को पोषण प्रदान करता है जो बीज के धरती पर गिर जाने के बाद भी बढ़ता रहता है।

बीज : *नीटम* की अधिकांश जातियों में बीज अंडाकार होता है, उसका रंग हरे से लेकर लाल तक हो सकता हैं। बीज उस अवस्था में झड़ते हैं जब भ्रूण पूरी तरह निर्मित नहीं हो पाया होता है। बीजांडकाय शीर्ष पर एक पतली पट्टी की तरह होता है; भ्रूणपोष स्थूल होता है तथा तीन परतीय बीजावरण द्वारा घिरा रहता है।

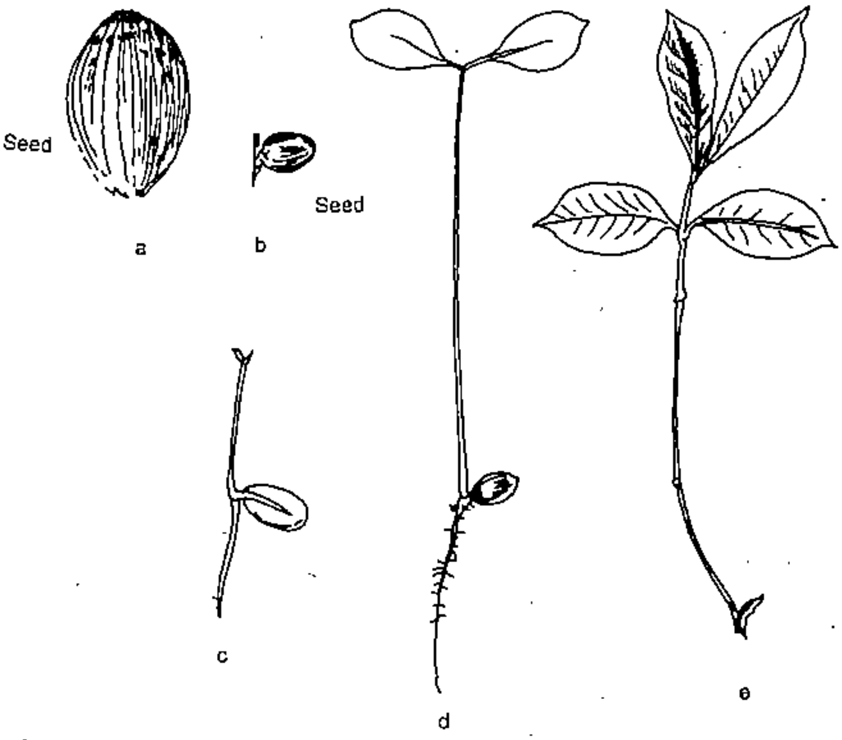

चित्र 4B.12 : a-e *नीटम* में बीज का अंकुरण तथा नवोद्भिद का बनना (महेश्वरी तथा वासिल से, 1961)

बीज के झड़ने तथा बीज के अंकुरण में हमेशा समय अन्तराल रहता है। *नीटम नीमोन* में बीज अप्रैल में झड़ते हैं तथा सितम्बर में अंकुरित होते हैं, जबकि *नीटम उला* में वे अंकुरण में एक वर्ष लगा देते हैं। अंकुरण भूम्युपरिक (epigeal) होता है (चित्र 4B.12)।

बोध प्रश्न 5

निम्नलिखित कथन में से कौन-से सही या गलत हैं। सही के सामने स तथा गलत के लिये अ लिखिए।

i) *नीटम* में एक कुंडलित द्वितीयक निलंबक बनता है जो विकसित होते हुए भ्रूण को भ्रूणपोष में अंदर तक धकेल देता है। [ ]

ii) *नीटम* में 'फीडर' विकसित भ्रूण में विशिष्ट रचना होती है और ज्यादातर बीजपत्राधर से लंबा होता है। [ ]

iii) *नीटम* में बहुभ्रूणता अक्सर नहीं पाई जाती है। [ ]

iv) *नीटम* के बीज में तीन स्तर पाये जाते हैं। [ ]

v) *नीटम* की सभी जातियों में बीज का अंकुरण बीज के झड़ने के एक वर्ष बाद होता है। [ ]

बोध प्रश्न 6

1) *नीटम* में निषेचन की क्या विशेषता है ?

....

....

....

....

....

....

2) *नीटम* में किस प्रकार की बहुभ्रूणता पाई जाती है ?

....

....

....

....

....

....

3) क्या भ्रूण पूर्णतः विकसित होता है जब बीज का अलगन होता है ? टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

....

4) जिम्नोस्पर्म्स का भ्रूणपोष एन्जियोस्पर्म्स के भ्रूणपोष से किस तरह भिन्न होता है ?

....

....

....

....

....

....

आर्थिक महत्व :

नीटम नीमोन मलेशिया तथा इंडोनेशिया और कुछ अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई द्वीपों में अपने खाद्य बीजों के लिए उगाया जाता है। तरुण पत्तियां तथा पुष्पक्रम भी सब्जी के रूप में खाए जाते हैं। छाल से फाइबर/तंतु प्राप्त होता है जिससे रस्सियां बनती हैं। *नीटम उला* की गुठली से तेल प्राप्त होता है। जो केरला में गठिया में मालिश के काम आता है। *नीटम मोन्टेनम* में मत्स्यनाशी (piscicidal) गुणों का पाया जाना रिपोर्ट किया गया है।

4B.7 सम्बन्ध

4B.7.1 इफेड्रा तथा *वैलविश्चिया* के साथ संबंध

लंबे समय तक, गण नीटेलीज में *नीटम* के अतिरिक्त *इफेड्रा* तथा *वैलविश्चिया* भी सम्मिलित थे। कुछ गुण जो इन तीनों वंशों में समान हैं वे हैं अ) काष्ठ में वाहिनिकाओं तथा वाहिकाओं की उपस्थिति, ब) पुष्पों से मिलते-जुलते जननक्षम/उर्वर प्ररोह पर नर तथा मादा प्रजनन भागों पर उगते हैं तथा संयुक्त शंकु में व्यवस्थित रहते हैं, स) अन्य जिम्नोस्पर्म्स की तुलना में बेहतर संरक्षित बीजांड तथा द) अध्यावरण के लंबे हो जाने से बीजांडद्वारी नलिका का बनना।

वर्ग नीटोप्सिडा जिम्नोस्पर्म्स में सबसे विकसित माना जाता है जो एन्जियोस्पर्मी स्टॉक (stock) की ओर बढ़ रहा है। हालांकि, दो आधारीय गुण, जो तीनों वंशों में अन्य जिम्नोस्पर्म्स के समान हैं वे हैं अ) शंकुओं में उगने वाले नग्न बीजांड, ब) वर्तिका तथा वर्तिकाग्र की अनुपस्थिति तथा स) परागण का पूर्णतः बीजांडीय क्रिया में ही होना।

आज के वनस्पति विज्ञानी, गण को तीन अलग-अलग गणों में विभाजित करने पर सहमत हैं जैसे इफेडरेलीस, नीटेलीस तथा वैलविश्चिएलीस प्रत्येक में एकलप्ररूपी कुल हैं। जिनके नाम हैं इफेडरेसी, नीटेसी तथा वैलविश्चिएसी। *नीटम* तथा *इफेड्रा* के बीच अन्तर सुस्पष्ट हैं। चूंकि वंश वैलविश्चिया का पूरी तरह अध्ययन नहीं किया गया है, इसके सिर्फ कुछ अंतर ही पता हैं। *नीटम* तथा *इफेड्रा* के बीच कुछ प्रमुख अन्तर हैं :

नीटम नम उष्णकटिबंधी अथवा उपोष्ण भागों में सीमित हैं, जबकि *इफेड्रा*, शुष्क क्षेत्रों में तथा अधिक ऊँचाइयों पर भी पाया जाता है। *इफेड्रा* के पौधे झाड़ीनुमा व छोटी पत्तियों युक्त होते हैं जिनमें समानान्तर शिराविन्यास दिखाई देता है, जबकि *नीटम* के वृक्ष अथवा कठलताएं होते हैं जिनमें चौड़ी "एन्जियोस्पर्मी" पत्तियां पाई जाती हैं जिनमें जालिकावत शिराविन्यास होता है। *इफेड्रा* का तना प्रारूपी मरुद्भिदीय गुण दर्शाता है तथा प्रकृति में स्वांगीकारक होता है। यह वल्कुट क्षेत्र में खंभ ऊतक की उपस्थिति के कारण हरा होता है। रंभ सामान्य/सरल होता है। *नीटम* की कुछ जातियों के तने, दूसरी ओर, असंगत द्वितीयक वृद्धि दिखाते हैं।

हालांकि, *इफेड्रा* और *नीटम* दोनों में वाहिकाएं पाई जाती हैं, परन्तु वाहिकाओं की मूल प्रकृति में स्पष्ट अन्तर होता है। *नीटम* की वाहिका की अन्तभित्ति में एक बड़ा छिद्र होता है। जबकि *इफेड्रा* में बड़ी संख्या में परिवेशित गर्त होते हैं जिनमें मध्य पटलिका अनुपस्थिति होती है। *इफेड्रा* में बीजांड अंतस्थ अंग के रूप में उर्वर प्ररोह के पार्श्व उपांग पर उत्पन्न होती है, जबकि *नीटम* में ये स्तंभिक (प्ररोह अक्ष के शीर्ष पर) प्रकृति का होता है। यह आकारिकीय अंतर बहुत महत्वपूर्ण है तथा एक ओर इफेडरेसी में तथा दूसरी ओर नीटेसी एवं वैलविश्चिएसी में बड़े जातिवृत्तीय अंतराल को सूचित करता है।

इफेड्रा के परागकणों में कोशिकाओं का विभाजन जिम्नोस्पर्मी योजना के अनुसार होता है। परागकण पाँच कोशिकीय अवस्था में अलग होते हैं व उनमें दो प्रोथेलियल कोशिकाएं, वृंत तथा पुमणुजन कोशिकाएं तथा एक नलिका केन्द्रक होता है। *नीटम* में परागकण तीन-कोशिकीय अवस्था में अलग होते हैं, जिनमें एक प्रौथेलियल कोशिका, एक नलिका केन्द्रक तथा एक पुमणुजन कोशिका होती है।

इफेड्रा में मादा युग्मकोद्भिद का विकास एकलबीजाणुज (monosporic) होता है जबकि *नीटम* में ये चतुष्की बीजाणुज (tetrasporic) होता है।

इफेड्रा में मादा युग्मकोद्भिद निषेचन होने से पूर्व कोशिकीय बन जाता है, जबकि *नीटम* में ये उस अवस्था में अशंतः मुक्त केन्द्रकी होता है।

इफेड्रा की बहुत सी जातियों में "टेन्टपोल" (tentpole) पाया जाता है, जबकि *नीटम* में ये सिर्फ

नीटम अफ्रीकानम में अवशेषी संरचना के तौर पर होता है तथा अन्य में अनुपस्थित होता है।

इफेड्रा में स्त्रीधानियां बनती हैं, जबकि *नीटम* में ये नहीं बनती हैं।

4B.7.2 एन्जियोस्पर्म्स के साथ संबंध

नीटम बहुत से मायनों में एन्जियोस्पर्म्स से मिलता है

i) *नीटम* का पौधा अपनी बाहरी दिखावट में प्रारूपी द्विबीजपत्री पादप से मिलता है। *नीटम* की पत्तियों में पाया जाने वाला जालिकावत विन्यास द्विबीजपत्री पत्तियों के समान होता है।

ii) दोनों समूह अपने दारू में वाहिकाएं दर्शाते हैं। वाहिकाओं की उत्पत्ति, हालांकि दोनों समूहों में भिन्न होती है। *नीटम* में वाहिकाएं वाहिनिकाओं से उत्पन्न होती हैं जिनमें अंतभित्तियों में काफी संख्या में परिवेशित गर्त होते हैं जबकि एन्जियोस्पर्मी वाहिकाएं, संकरे सीढ़ीनुमा छिद्रणों वाहिनिकाओं/ट्रेकीड्स से विकसित होती हैं।

iii) *नीटम* के प्ररोह शीर्ष की टयूनिक व कार्पस व्यवस्था एन्जियोस्पर्मी हैं। हालांकि केन्द्रीय मातृ कोशिका (central mother cell) की उपस्थिति प्रारूपी जिम्नोस्पर्मी गुण है।

iv) *नीटम* में बीजांड का अध्यावरण सुविकसित बीजांडद्वारी नलिका बनाने के लिए लंबा हो जाता है। नलिका में कभी-कभी अंकुरित होते परागकण भी पाए जाते हैं। यह स्थिति एन्जियोस्पर्मी अंडप की वर्तिका का ध्यान दिलाती है।

v) *नीटम* में गुरूबीजाणुजनन चतुष्की बीजाणुज होता है जो जिम्नोस्पर्म्स में नहीं पाया जाता है (सिवाय वैलविश्चिया के) तथा बहुत से एन्जियोस्पर्म्स में सामान्य होता है। स्त्रीधानी का निर्माण दोनों समूहों में पूर्णतः निरुद्ध होती है। मादा युग्मकोद्भिद के कुछ मुक्त केन्द्रक *नीटम* में अंड की तरह कार्य करते हैं।

vi) एन्जियोस्पर्म्स में संचय ऊतक या भ्रूणपोष निषेचन के बाद विकसित होता है तथा त्रिगुणित होता है (त्रियुग्मन के फलस्वरूप)। *नीटम* में हालांकि कोशिकीकरण निषेचन के पूर्व आरंभ होता है, परन्तु यह पूर्ण निषेचन के बाद ही होता है तथा अगुणित होता है।

vii) युग्मनज मुक्त केन्द्रकी विभाजन नहीं करता है।

इन दृष्ट समानताओं के आधार पर ऐसा माना जाता है कि एन्जियोस्पर्म्स विकास के दौरान कुछ अवस्थाओं से गुजरे हैं जो अब *नीटम* द्वारा प्रदर्शित होते हैं। ऐसा समझा जाता है कि *नीटम* की एन्जियोस्पर्म्स के साथ किसी अन्य पादप समूह की अपेक्षा सबसे नजदीकी जातिवृतीय समानताएं हैं।

बोध प्रश्न 7

1) *इफेड्रा* और *नीटम* के मध्य दो समानताएं बताइए।

....

....

....

....

2) ऐसा क्यों कहा जाता है कि *नीटम* कुछ मायनों में एन्जियोस्पर्म्स से मिलता है ? दो विशिष्ट गुण बताइए।

....

....

....

....

4B.8 सारांश

वंश *नीटम* विस्तृत रूप से विश्व के उष्ण कटिबंधी तथा उपोष्ण भागों में वितरित है। पांच जातियां भारत में पाई जाती हैं, मुख्यतः पश्चिमी घाटों तथा आसाम में। *नीटम* जिम्नोस्पर्म्स की बजाय एन्जियोस्पर्म्स से अधिक मिलता है। *नीटम* एकलिंगाश्रयी है तथा पुष्पक्रम या तो एकल अथवा गुच्छित पुष्पगुच्छ होता है। नर तथा मादा शंकु दोनों ही तरुण होने तक समान लगते हैं, परन्तु जैसे-जैसे शंकु बढ़ते हैं, अन्तर स्पष्ट होता जाता है। परागकण तीन-कोशिकीय अवस्था (प्रोथेलियल, नलिका तथा पुमणुजन) में झड़ते/अलग होते हैं। गुरूबीजाणुजनन के दौरान चतुष्की केन्द्रकी संगुरूबीजाणु उत्पन्न होते हैं। मादा युग्मकोद्भिद चतुष्की बीजाणुज होता है। कुछ युग्मकोद्भिद विकसित होना आरंभ करते हैं परन्तु उनमें से सिर्फ दो या तीन 16 केन्द्रकी अवस्था से आगे तक बढ़ते हैं। एक दिलचस्प लक्षण स्त्रीधानी की अनुपस्थिति है। सामान्यतः दो मुक्त केन्द्रक अंडों में विकसित होते हैं। *नीटम नीमोन* में दो पुमणु केन्द्रक अपने को घेरे हुए मादा कोशिकाद्रव्य में निर्मुक्त होते हैं, प्रत्येक एक अलग मादा केन्द्रक के साथ युग्मित होता है और इस प्रकार द्विनिषेचन करता है जिसके फलस्वरूप दो युग्मनज बनते हैं। निषेचन के बाद, सिर्फ एक युग्मनज भ्रूण में विकसित होता हैं। सिर्फ एक या दो युग्मनज वयस्क हो पाते हैं और अन्य अपभ्रष्ट हो जाते हैं। सामान्य तथा विदलित बहुभ्रूणता दोनों रिकार्ड की गई है। बीज उस अवस्था में अलग हो जाते हैं जब भ्रूण पूर्णतः बन नहीं पाया होता है। *नीटम* के कुछ गुण *इफेड्रा* तथा *वैलविश्चिया* के तथा कुछ एन्जियोस्पर्म्स के साथ साझा है।

4B.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. किस आधार पर *नीटम* जिम्नोस्पर्म्स के रूप में वर्गीकृत किया गया है तथा एन्जियोस्पर्म्स के रूप में नहीं किया गया।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. क्या *नीटम* की उत्पत्ति को भलीभांति समझा जा चुका है अथवा यह अब भी पहेली है ? टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3. *नीटम* की गुरूबीजाणुधानी का आरेखों से युक्त वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4. *नीटम* के मादायुग्मकोद्भिद का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

5. *नीटम* में परागण किस प्रकार होता है ?

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4B.10 उत्तर

1) 1) केरला
   2) नम
   3) जालिकावत
   4) वाहिकाएं
   5) लैटेक्सघर

2) 1) कृपया खंड 4B.3 उपखंड - प्ररोह शीर्ष को देखिए।
   2) कृपया खंड 4B.3 उपखंड - तना को देखिए।
   3) नीटम की लकड़ी वाहिकाओं की उपस्थिति के द्वारा पहचानी जाती है जिनमें अंतभित्ति में एकल छिद्र होता है।

3) 1) *नीटम* में स्त्रीधानियां अनुपस्थित होती हैं परन्तु जब परागनलिका मादा युग्मकोद्भिद से संपर्क करती है तो विस्फारित भाग के मध्यवर्ती क्षेत्र के एक या अधिक केन्द्रक आकार में बड़े तथा सघन रूप से अभिरंजित हो जाते हैं। ये अंड केन्द्रक होते हैं जिनकी सामान्य संख्या दो हैं, परन्तु कभी-कभी एक या तीन केन्द्रक भी खंड में विकसित हो जाते हैं।
   2) कृपया खंड 4B.5 देखिए , परागण और निषेचन

4) 1 स
   2 स
   3 स
   4 अ

5) 1 सत्य
   2 सत्य
   3 असत्य
   4 सत्य
   5 असत्य

6) 1. *नीटम* में द्विनिषेचन पाया जाता है जिसके फलस्वरूप दो द्विगुणित युग्मनज बनते हैं। निषेचन के बाद प्रत्येक युग्मनज भ्रूण में विकसित होता है, परन्तु सामान्यत: सिर्फ एक बीज के रूप में वयस्क हो पाता है।
   2. खंड 4B.6 देखिए - भ्रूणोद्भव तथा बीज का विकास उपखंड भ्रूण का विकास।
   3. उपखंड - भ्रूण का विकास - देखिए।
   4. खंड 4B.6 भ्रणोद्भव तथा बीज का विकास, उपखंड- भ्रणपोष देखिए।

7) 1) *नीटम* तथा *इफेड्रा* दोनों में होती हैं

i) काष्ठ में वाहिनिकाएं/ट्रेकीड्स तथा वाहिकाएं

ii) नर तथा मादा प्रजनन अंग पुष्पों से मिलते जुलते उर्वर प्ररोह पर उगते हैं तथा संयुक्त शंकुओं में व्यवस्थित रहते हैं।

2) खंड 4B.8.2 देखिए - एन्जियोस्पर्म्स के साथ सम्बन्ध।

अंत में कुछ प्रश्न

1. *नीटम* का पादप बाहर से प्रारूपी द्विबीजपत्री पादप से मिलता है परन्तु उनकी कुछ भिन्नताएं होती हैं।

i) वाहिकाएं *नीटम* तथा एन्जियोस्पर्म्स दोनों में पाई जाती हैं, परन्तु उनकी उत्पत्ति भिन्न होती है

ii) *नीटम* में प्ररोह शीर्ष की ट्यूनिका कॉपर्स व्यवस्था एन्जियोस्पर्मी है। हालांकि केन्द्रीय मातृ कोशिका की उपस्थिति प्रारूपी जिम्नोस्पर्मी गुण हैं।

iii) *नीटम* में भ्रूणपोष भी पाया जाता है परन्तु उसकी प्रकृति अगुणित होती है तथा एन्जियोस्पर्म्स की भाँति त्रिगुणित नहीं होती है।

उपर्युक्त दिए गए गुणों के कारण नीटम जिम्नोस्पर्म्स के रूप में वर्गीकृत किया गया है तथा एन्जियोस्पर्म्स के रूप में नहीं किया गया।

2. खंड 4B.11 संबंधों को संदर्भ के लिए देखिए उसकी जिम्नोस्पर्म्स के साथ ही साथ एन्जियोस्पर्म्स के साथ भी संबद्धता ने *नीटम* की उत्पत्ति को एक पहेली बना दिया है।

3. खंड 4B.4 प्रजनन संरचनाएं तथा उपखंड 4B.4.2 युग्मकोद्भिद देखिए।

4. खंड 4B.4 प्रजनन संरचनाएं तथा उपखंड 4B.4.2 मादा शंकु तथा युग्मकोद्भिद देखिए।

5. खंड 4B.5 परागण तथा निषेचन देखिए।

इकाई 5 जिम्नोस्पर्म्स का आर्थिक महत्व

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

5.2 जिम्नोस्पर्म के उपयोग

5.3 काष्ठ और उससे निर्मित वस्तुएं

5.4 अकाष्ठकीय उत्पाद

5.5 लुगदी और कागज बनाना

5.6 भोजन

5.7 औषधि और अन्य उपयोग

5.8 सौन्दर्यपरक उपयोग

5.9 आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण जिम्नोस्पर्म्स की भारतीय जातियां

5.10 सारांश

5.11 अन्त में कुछ प्रश्न

5.12 उत्तर

5.1 प्रस्तावना

अनावृतबीजी पौधे या जिम्नोस्पर्म पादप जगत का एक महत्वपूर्ण समूह है जो कि अधिकतर समशीतोष्ण (temperate) और अधिक ऊँचाई वाले उष्णकटिबंधीय भागों में पाये जाते हैं। कोनिफर वृक्ष उत्तरी और दक्षिणी शीतोष्णीय मेंखला में पाये जाने वाले वनों के मुख्य भाग हैं। टिम्बर और काष्ठ उद्योग उन देशों की अर्थ व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जो इन भौगोलिक भागों में स्थित है जैसे यू.एस.ए., कनाडा और उत्तरीय यूरोप।

जिम्नोस्पर्म वृक्षों/पादपों के असीमित उपयोग हैं। इनकी लकड़ी से फर्नीचर, इमारती और रिहायशी वस्तुऐं बनायी जाती हैं। ये कागज, इत्र, औषधि, वार्निश, तेल और सूखे मेवों के भी स्त्रोत हैं। कुछ जिम्नोस्पर्म *भूसदर्शनीकरण* (landscapping) और उद्यानों के लिए भी उपयोग में लाऐ जाते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- जिम्नोस्पर्म्स वृक्षों के अनेक उपयोगों को जान सकेंगे,
- लकड़ी और अन्य वस्तुओं के बनाने में काम आने वाली प्रमुख जातियों के नाम बता सकेंगे,
- आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण जातियों का विवरण तैयार कर सकेंगे,
- जिम्नोस्पर्म का उपयोग चिकित्सीय रूप से आज के संदर्भ में जान सकेंगे।

5.2 जिम्नोस्पर्म के उपयोग

साधारणत: जिम्नोस्पर्म्स और विशेषकर कॅनीफर्स हमारे दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली बहुत सी वस्तुओं के स्त्रोत हैं। जिम्नोस्पर्म के वृक्षों में हमें काष्ठ और इमारती और निर्माण सम्बन्धी लकड़ी मिलती है। ये वृक्ष और भी बहुत सी महत्वपूर्ण वस्तुओं के स्रोत हैं जैसे - रेज़िन, रोज़िन, राल (copal), सैन्ड्रैक, वसीय तेल और सगंध तेल। कागज के कारखाने पूर्णतया कोनिफर काष्ठ पर ही निर्भर करते हैं। कुछ जिम्नोस्पर्म वृक्षों के बीज खाने योग्य होते हैं, कुछ जिम्नोस्पर्म वृक्षों के पादप अंग कच्चे या पका कर खाये जा सकते हैं। कुछ जिम्नोस्पर्म की किस्मों में चिकित्सीय गुण होते हैं और उनका उपयोग अब औद्योगिक रूप से किया जा रहा है। इस समूह के पेड़ों का एक और उपयोग 'क्रिसमस ट्री' के रूप में भी होता है। दृश्यभूमि निर्माणकर्त्ता भी जिम्नोस्पर्म वृक्षों का उपयोग करते हैं क्योंकि ये ज्यादातर सदापर्णी पेड़ हैं। आगे हम इनके उपयोगों का विस्तृत वर्णन करेंगे।

साधारण यू *(टैक्सस बकाटा)* की काष्ट साफ्टवुड में सबसे भारी होता है। *थूजा प्लीकेटा* की काष्ठ सबसे ज्यादा टिकाऊ होती है क्योंकि उसमें एन्टीबायेटिक होते हैं। खाली तनों से कैनोए बनाये जाते हैं।

5.3 काष्ठ और उससे निर्मित वस्तुएं

काष्ठ का शाब्दिक अर्थ वृक्ष या इमारती लकड़ी होता है। अमेरिका में टिम्बर या काष्ठ को 'लम्बर' कहा जाता है। सारे विश्व में जिम्नोस्पर्म विशेषकर कोनिफर वृक्ष काष्ठ के प्रमुख स्त्रोत हैं। यूरोप, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया के जंगलों की शीतोष्णीय मेंखला का अधिकांश भाग सदा हरित कोनिफर वृक्षों से ढका रहता है।

कोनिफर काष्ठ वाहिका और दारू फाइबर (xylem fibre) रहित होने के कारण अरंधी (non-porous) और मुलायम होती है। ये मुख्यत: वाहिनी दारू मृदूतक और दारू की बनी होती है। फाइबर रहित होने के कारण इसमें सेल्यूलोज (cellulose) का भाग आवृतबीजी काष्ठ से अधिक होता है इस कारण इसकी संरचना चिकनी या बराबर होती है। अधिकतर कोनिफर *काष्ठ सरल* काष्ठरेखा (straight grain) की, हल्के रंग की और कम वजन की होती है। मृदुदारू (soft wood) और अंत:काष्ठ (heart wood) में बहुत कम भिन्नता होती है। ये फर्नीचर और आंतरिक सजावट के लिए उपयोगी है क्योंकि ये बहुत अधिक मजबूत नहीं होती है। अब हम मुख्य काष्ठ स्त्रोतों के विषय में चर्चा करेंगे।

टैक्सोडियम एक ऐसा जिम्नोस्पर्म है जो नम तथा दलदली क्षेत्रों में पाया जाता है। यह वहाँ उपयोगी होता है जहाँ प्रतिरोधी क्षमता मजबूती से ज्यादा उपयोगी होती है।

पाइन काष्ठ एक साफ्ट वुड है जिसका उपयोग अनेकों तरह से सारे विश्व में होता है। अमेरिका, और यूरोप में *पाइनस सिल्वेस्ट्रिस (P. sylvestris, scot pine) पा. कैरेबिया (P. caribaea) पा० पाल्यूसट्रिस (P. palustris) पा० कानट्रोटा (P. contorta)* और *पा० डेन्सीफ्लोरा (P. densiflora)* औद्योगिक रूप से महत्वपूर्ण काष्ठ माना जाता है। इनकी लकड़ियाँ भवन निर्माण और फर्नीचर बनाने के काम में आती हैं। *पा० हेल्पेन्सिस (P. halepensis) (मेडेटैरेनियन), प० नाइग्रा (P. nigra), पा० पिनास्टर (P. pinaster)* और *पा. पान्डरोसा (P. ponderosa),* (न. यूरोप) में और *पा० मॉन्टीकोला (P. monticola) पा. स्ट्रोबस (P. strobus), पा.लैम्बरटिना (P. lambertiana)* और *पा. रेडियेटा (P. radiata)* (अमेरिका) आदि पाइनस काष्ठ के अन्य स्त्रोत हैं।

भारत में चीड़ की लकड़ी *(P. roxburghii)* आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण काष्ठों में से एक है तथा इसका उपयोग सबसे ज्यादा होता है। यह लकड़ी रेज़िनमय और हल्की होती है, इसीलिए पैकिंग, सस्ते फर्नीचर, निर्माण कार्य, खम्बों, रेलवे स्लीपर, ट्रक और बसों की कुर्सी बनाने के काम आती हैं। *पा. वालचियाना (P. wallichiana)* (ब्लू पाइन या केल) चीड़ की लकड़ी की तुलना में सख्त और मजबूत होती है। इसका भी वही उपयोग है जो चीड़ की लकड़ी का होता है।

बाक्स 5.1 : कोनिफर संरक्षण

कोनिफर वृक्ष, विश्व के सबसे प्राचीन, सबसे लम्बे और विशालकाय जैविक सम्पदा वाले माने जाते हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर अधिकतर कोनिफर वृक्ष पूरे विश्व के लिये काष्ठ के स्रोत हैं। संसार के ज्यादातर काष्ठ जो कोनिफर से ही प्राप्त होती है, वह परम्परागत तरीके से पूरे के पूरे जंगल को काट इकट्ठा की जाती है। वृक्षों को काटने का प्रचलन इस सीमा तक हो गया है कि धीरे-धीरे इन वृक्षों की संख्या लुप्त सी होने लगी है। कोनिफर वृक्षों की कमी मुख्यतः विश्व के शीतोष्ण और दक्षिणी द्वीपीय (insular) भाग में पायी गई है। कुछ जंगली जिम्नोस्पर्म वृक्ष बहुत धीमी गति से बढ़ते हैं इसलिए इन वृक्षों का रोपण अधिक आवश्यक है। लेकिन इस दिशा में बहुत ही कम ध्यान दिया गया है। रोपण भी सिर्फ उन जातियों का किया गया है जो तेजी से बढ़ती हैं इसलिए कोनिफर की पाइन जातियाँ ही सभी क्षेत्रों में पायी जाती हैं। इसलिए स्थानीय कोनिफर की जातियाँ जो वर्षों पुरानी थी और काफी संख्या में थीं आज नाजुक हालत में हैं। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय प्राकृतिक संरक्षण यूनियन ने कोनिफर संरक्षण समूह की स्थापना की है। जिसका सचिवालय रॉयल बॉटनिकल गार्डन इडनबर्ग में है। कोनिफर संरक्षण छोटे स्तर पर बीज बैंक की मदद से और दुर्लभ अनुवांशिक गुणों वाले पौधे को संन्तुलित स्तर पर संरक्षित समर्थन के साथ उगाया जा सकता है। इस प्रकार उन प्रजाति या जाति वाले पौधों को भी उगाया जा सकता है जिनका असली जन्म स्थान बहुत दूर हो। पर जिम्नोस्पर्म बहुत ही धीमी गति से बढ़ते हैं और कम समय में हम उन वृक्षों का संरक्षण नहीं कर सकते जिनकी आयु कई सौ वर्ष होती है। इसलिए इन वृक्षों के जो जंगल अभी भी मौजूद हैं उनका संरक्षण होना चाहिए, नहीं तो इतने उपयोगी पौधे हमेशा के लिए समाप्त हो जायेंगे।

स्प्रूस की लकड़ी (*पाइसिया* स्पी०) हल्की और सरल काष्ठ रेखा की होती है, परन्तु ये लकड़ी बहुत मजबूत नहीं होती है। इस लकड़ी में एक विशेष प्राकृतिक चमक होती है जो प्लाईवुड और आंतरिक सजावट को आकर्षक बनाती है। ये लकड़ी माचिस के डिब्बे बनाने के काम आती है। क्रिसमस के दिनों में ये वृक्ष सजावट के लिये बेचा जाता है। इसका अधिकतम उपयोग लुगदी और कृत्रिम फेब्रिक लुगदी बनाने में होता है। *पाइसिया एबीज (P. abies), पा. एलन्गमनी (P. engelmanni) पा. ग्लाउका (P. glauca), पा. मैरियाना (P. mariana) पा.रयूबेन्स (P. rubens), पा.साइचेन्सिस (P. sitchensis)* और *पा. स्मिथियाना (P. smithiana)* आदि महत्वपूर्ण जातियाँ हैं। स्प्रूस काष्ठ की वाहिनी की आन्तरिक दीवार सर्पिलकार रूप से मोटी होती है। इस कारण इस लकड़ी से एक विशिष्ट प्रकार की ध्वनि निकलती है। इसलिए इसकी लकड़ी वाद्य यंत्र के लिए सबसे उपयुक्त है। उदाहरणार्थ - वायलिन, पियानो और आर्गन पाइप।

लार्च वृक्ष (Larix sp) की लकड़ी अन्य वृक्षों से अधिक सख्त और मजबूत होती है। इसलिए ये नाव और खानों में गड्ढे में अवलम्ब (pit props) लगाने के काम आती हैं। लार्क की लकड़ी से बने खम्भे बीस साल तक कायम रहते हैं और ये काष्ठ सभी कोनिफर काष्ठों में सबसे सख्त होता है।

फर *एबीज* की तकरीबन 40 किस्में है जो अधिकतर निर्माण कार्य, प्लास्टिक, कागज और टिम्बर उद्योग में इस्तेमाल होता है। फर के वृक्ष का इस्तेमाल 'क्रिसमस ट्री' के रूप में भी होता है। उत्तरी अमेरिका और यूरोप में *एबीज एल्बा, ए. बालसीमिया* और *ए. कोनकलर*। टिम्बर की तरह इस्तेमाल होती है। *ए. पिन्नड्राउ* भारत में पाया जाता है पर इसकी लकड़ी मजबूत और अधिक चलने वाली नहीं होती है।

बालसम फर *(ए. बालसीमिया)* की छाल पर छाले पाये जाते हैं जिसमें साफ रेज़िन भरा होता है जो कनाडा बालसम के नाम से जाना जाता है।

डगलस फर *(Pseudostuga menziesii)* वास्तव में असली फर नहीं है। ये वृक्ष बहुत विशालकाय होते हैं और रेडवुड के बाद इनका दूसरा स्थान है। डगलस फर के टिम्बर की मांग विश्व में आजकल अधिक है। यह पेड़ तेजी से बढ़ता है (डालें नहीं बढ़ पाती इसकी लकड़ी समतल और बिना गांठों की होती है।) मजबूत और समतल होने के कारण इसकी लकड़ी भारी प्लाईवुड और खम्बे बनाने में काम आती है। समतलता के कारण डगलस फर की लकड़ी पर पालिश और पेन्ट सुगमता से होता है।

कोस्ट रेडवुड (*Sequoia sempervirens*) फंजाई और बैक्टीरिया प्रतिरोधी (कुछ विशेष पदार्थ) विशेषता होने के कारण बहुत उपयोगी है। इसकी लकड़ी मुलायम हल्की, मजबूत और आसानी से कटने वाली होती है। यद्यपि इसकी लकड़ी, काष्ठ का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है पर इस जाति के लुप्त होने के कारण इस जाति को राष्ट्रीय उद्यानों में संरक्षित और सुरक्षित किया जाने लगा है। इस लकड़ी का निर्माण खम्भों, फर्नीचरों और बहुत से अन्य रूपों में इस्तेमाल किया जाता है।

साधारण यू (yew) *(टेक्सस बकाटा)* सबसे भारी साफ्ट वुड में से एक है। इसकी लकड़ी, धनुष, मोमबत्तियाँ और अन्य कलाकृति बनाने में काम आती है। इसका लकड़ी मजबूत, तैलीय और सजावटी (अनियमित द्वितीयक वृद्धि के कारण अनियमित/ वृद्धि चक्र होते हैं) होने के कारण, ये लकड़ी फर्श, फर्नीचर और फलक बनाने में उपयोगी होती हैं।

टैक्सस के काष्ठ की वाहिकाओं पर तृतीयक सर्पिल स्थूलन होता है जो काष्ठ को लचीलापन प्रदान करती है।

भारत में देवदार (*सिड्रस देवदारा*) और अल्जीरिया और मोरक्को में *सिड्रस एटलान्टिका (C. atlantica)* कीमती लकड़ी की किस्मों के वृक्ष हैं। देवदार वृक्ष की लकड़ी मजबूत, तैलीय, कीट प्रतिरोधी और सीझी हुई होती है। इसकी कीट प्रतिरोधकता इसमें उपस्थित तेल के कारण होती है। रेजिन वाहिनियों के असमतल होने के कारण ये लकड़ी प्लाईवुड के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

डामर पेड़ से डामर और एम्बार प्राप्त होता है।

रेड सिडार वुड *(Thuja plicata)* पैंसिल, सिंगार बाक्स और पैंकिग के काम में आती है। मौसम अवरोधक तत्व होने के कारण इसकी लकड़ी मजबूत और अधिक चलने वाली होती हैं और जल्दी खराब नहीं होती है। पूर्वी सफेद सीडार की लकड़ी *(Thuja occidentalis)* लचीली होती है इसलिए अमेरिकन जनजाति के लोग इसका उपयोग डोंगी बनाने में करते हैं। इसका वृक्ष देखने में खूबसूरत होता है और भारत में इसका प्रयोग क्रिसमस ट्री के रूप में भी होता है।

कौरी पाइन *(Agathis australis)* न्यूजीलैंड का प्रमुख काष्ठ स्रोत हैं। दक्षिण गोलार्ध का यह एक प्रमुख कॉनीफर वृक्ष है। ब्राजील और आस्ट्रेलिया में औरोकेरिया *(Araucaria)* जाति से अधिकतम लकड़ी प्राप्त की जाती है।

बोध प्रश्न 1

कालम ब में दिये गये स्पीशीज से कालम अ में दिये गये उपयोग से मिलान कीजिए।

	कालम अ	कालम ब
1.	अछिद्रित और साफ्टवुड	क. *पाइसिया* जाति
2.	औद्योगिक रूप से अधिकतम उपयोगी काष्ठ	ख. *एबीज़* जाति
3.	वाद्य यंत्रों में प्रयुक्त काष्ठ	ग. *पाइनस राक्सबघाई*
4.	कोनिफर काष्ठों में सबसे सख्त काष्ठ	घ. कोनिफर वुड
5.	सजावट के लिए और कागज उद्योगों में प्रयुक्त होने वाली काष्ठ	ङ. *लैरिक्स* जाति

5.4 अकाष्ठकीय उत्पाद

काष्ठ के अतिरिक्त कॉनीफर वृक्षों के अन्य उपयोग भी हैं।

रेज़िन : रेजिन वृक्षों से निकलने वाला एक विशेष पदार्थ होता है जो कि काष्ठ को नष्ट होने से बचाता है ये पानी में अघुलनशील और कार्बनिक विलायकों में घुलनशील होता है।

कोनिफर वृक्षों में असंख्य रेज़िन नलिकाएं होती है जिसके अंशनिष्कासन (tapping) से ऑलियोरेज़िन (oleoresin) प्राप्त होता है। ऑलियोरेज़िन (पाइनपिच, पाइनगम या टरपेन्टाइन) रेज़िन और सुगंध

तेलों का मिश्रण होता है। टरपेन्टाइन का आसवन करने पर एक सख्त पदार्थ प्राप्त होता है जिसे **रेज़िन या गम रोज़िन** कहते हैं। लकड़ी के पुराने ठूंठो के उचित विलयकों के निष्कर्षण से भी रोज़िन प्राप्त किया जाता है। इसको **वुडरोजिन** कहते हैं। यह वार्निश और इंक बनाने में प्रयोग होता है।

बॉक्स 5.2 : टर्पेन्टाइन इकट्ठा करना

> कैम्बियम सतह के काटने पर टर्पेन्टाइन रेज़िन नलिकाओं से बाहर रिसता है और उसी के साथ नई नलिका बनाने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण जातियों की नलिकाएं चौड़ी होती है और वहाँ पर भारी मात्रा में ओलियोरेज़िन बनता है। इस प्रक्रिया के लिए कैम्बियम को हर बार काटना और नलिका बनाना होता है। अन्यथा आक्सीकरण और क्रिस्टलीकरण के कारण पुरानी नलिकाओं के अवरुद्ध होने का खतरा रहता है।

कोपल (copal) और सैंडार्क (sandarc) आदि भी सख्त रेज़िन के अन्तर्गत आते हैं, इसमें संगंध तेलों की मात्रा बहुत कम होती है। कोपल वर्तमान वृक्षों के अतिरिक्त फॉसिल वृक्षों से भी निकाला जाता है। सबसे महत्वूर्ण **कॉरी गम या कॉरी कोपल** *एगाथिस आस्ट्रेलिस (Agathis australis)* से प्राप्त होता है। यह लैकर (Lacquers), पोलिश, वार्निश और एनेमल्स बनने में प्रयुक्त होते हैं। **मनिला, कोपाल** *एगाथिस एल्बा (A. alba), टेट्राक्लीनस (Tetraclinis)* से और *कैलीर्टीस (Callitries)* से सैंड्रक बनता है।

ऐम्बर (Amber) भी एक प्रकार का फॉसिल रेज़िन है जो कि फॉसिल पाइन *पा. सक्सीनीफेरा (Pinus succinifera)* से प्राप्त होता है। फॉसिल ऐम्बर में कई बार पौधों या जीवों के अवशेष भी पाये जाते हैं। मानव रक्त को अम्बर के बर्तन में रखने पर वो जमता नहीं है ऐसी जानकारी है।

कनाडा बालसम भी एक प्रकार का रेजिन है जो कि *(Abies balsamea)* से प्राप्त होता है। इसकी Rf निश्चितांक ग्लास की Rf निश्चितांक में बराबर होती है। और ये क्रिस्टलीकृत नहीं होता है। यह ऊतकीय अध्ययन के लिए स्लाइडस बनाने में माउटिंग मीडिया (mounting media) के रूप में उपयोग होता है। ये स्लाइडस में एक तरह से सीमेन्ट का काम करता है।

ऐम्बर पारदर्शी टुकड़े के रूप में हल्के पीले रंग में पाया जाता है। कुछ टुकड़े 45 kg तक के होते हैं।

बाक्स 5.3 : रेज़िन

> पौधों से निकलने वाले सख्त, गाढ़े और चमकदार पदार्थो को साधारणतया रेज़िन कहा जाता है। ये पौधे से निकलने वाले ऐसे पदार्थ हैं जो कि लकड़ी को नष्ट होने से बचाते हैं। कोनिफर उनमें से विश्व के प्रमुख रेज़िन के स्त्रोत है। ये पानी में अघुलनशील पर कार्बनिक विलायकों में घुलनशील होते हैं। उच्च किस्म की रेज़िन पेपर साइजिंग, वार्निश के इनेमल, प्लास्टर, दवाइयों और क्रीम में उपयोग होता है। निचले दर्जे की रेज़िन तैलीय वस्त्र, ग्रीस, कीटनाशक, गोंद, प्लास्टिक और शू पालिश में इस्तेमाल होती है। न्यूजीलैंड का विशालकाय कॉरी पाइन (*अगैथिस*) जो कि वास्तविक पाइन से अलग कुल है और रेज़िन मिश्रण के स्त्रोत है, उच्च स्तरीय रंगहीन वार्निश बनाने के काम में आती है। यही वह रेज़िन है लिनोलियम बनाने में भी प्रमुख स्त्रोत के रूप में प्रयुक्त होता है। भारत में पाइन वृक्षों *(P. roxburghii & P. wallichiana)* के गोदने की प्रक्रिया साधारणतया मार्च से नवम्बर के माह तक होती है। गोदने की प्रक्रिया (Tapping process) दो तरह से की जाती है 1) धीमी और निरंतर प्रक्रिया 2) तीव्र प्रक्रिया। लोहे का एक चौकोर टुकड़ा पेड़ में घुसा दिया जाता है जो एक तरह का होंठ (Lip) का काम करता है। और उसी के ठीक 2 सेमी. नीचे एक कील ठोंक दी जाती है। लिप के नीचे एक बर्तन लटका देते हैं। लिप के ऊपर एक नली बना देते हैं जिससे आसानी से नि:स्राव बर्तन में इकट्ठा हो जाये। हर पाँच साल बाद उसी पेड़ पर नयी जगह कील ठोंकते हैं। इस प्रकार पेड़ की पूरी चौड़ाई उपयोग में लाई जाती है। तीव्र प्रक्रिया वाली गोदने में एक साथ कई जगह कीलें गाड़ी जाती है। यह क्रिया उसी पेड़ में की जाती है जो पेड़ निकट भविष्य में गिरने वाला हो।

टैनिन : कुछ जिम्नोस्पर्म वृक्षों की छाल से एक विशेष प्रकार के तरल पदार्थ का निष्कर्षण होता है जिसे टैनिन कहते हैं। ये जातियाँ हैं - *पाइसियाँ (Picea), लैरिक्स (Larix), सिकोया (Sequoia) सूगा (Tsuga), ऑरकेरिया (Araucaria)* आदि। टैनिन का उपयोग चमड़े और पेट्रोलियम कारखाने में रंजन के रूप में होता है और इसके साथ साथ ये औषधि रूप में भी इस्तेमाल होते हैं। यद्यपि ये स्रोत अभी औद्योगिक रूप से इस्तेमाल नहीं किये गये हैं। लार्क और स्प्रूस की छाल भी इसी कार्य के लिए प्रयुक्त होती है।

अन्य उपयोग -- सफेद स्प्रूस की जड़ें लचीली होती हैं। उनकी जड़ों को अलग अलग करके अमेरिका में उसकी बास्केट और कैनॉय बनायी जाती है।

बोध प्रश्न 2

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :-

i. ऑलियोरेज़िन............और............मिश्रण है।

ii. कॉरी कोपल .... से प्राप्त होता है।

iii. ....और........ सख्त रेज़िन है जिसमें बहुत कम मात्रा में सगंध तेल होता है।

iv. ....एक प्रकार का रेज़िन है जो स्लाइड बनाने में माउन्टिग मीडिया के रूप में इस्तेमाल होता है।

बोध प्रश्न 3

1). रेज़िन क्या है ? इनके उपयोगों का विवरण दीजिये ?

....

....

....

....

5.5 लुगदी और कागज़ बनाना

कोनिफर सारे विश्व में लुगदी बनाने के लिए एक प्रमुख स्त्रोत रहा है। इसकी लकड़ी के घन में इसकी वाहिका की औसतन लम्बाई और लम्बी वाहिकाओं का प्रतिशत ज्यादा होता है। पाइसिया से सबसे अच्छी लुगदी बनती है। क्योंकि लकड़ी का रंग हल्का होता है और रेज़िन बहुत कम मात्रा में होता है।

कोनिफर काष्ठ से प्राप्त लुगदी विश्व भर में कागज के उत्पादन में प्रयुक्त होती है। समाचार पत्रों की एजेन्सियां पूर्ण रूप से इसी स्त्रोत पर निर्भर करती हैं। लिखने और छापने के लिये उत्तम किस्म के कागज कोनिफर काष्ठ से ही बनाये जाते हैं। उदाहरणार्थ : *पाइसिया (Picea), एबीज (Abies), सूगा (Tsuga), लैरिक्स (Larix) स्यूडोसूगा (Pseudotsuga)* उत्तरी अमेरिका में लुगदी और कागज बनाने के लिए सफेद स्प्रूस *(Picea glauca)* का उपयोग होता है।

काष्ठ की लुगदी मुख्यत: कोनिफर वृक्षों से प्राप्त होती है जिनमें प्रमुख है *पाइसिया, एबीज* और *पाइनस*। कुछ उत्पाद जैसे - रेयन, पारदर्शी कागज, और फोटोग्राफिक फिल्म इत्यादि काष्ठ की लुगदी से ही बनते हैं।

भारत में *पाइसिया स्मिथियाना (Picea smithiana), एबीज़ पिन्ड्रो (Abies pindrow)* और *पाइनस राक्सबघाई* अच्छी किस्म की लुगदी प्रदान करते हैं। *क्राफ्ट पेपर के लिये क्रिप्टोमेरिया जैपोनिका (Cryptomeria japonica)* की काष्ठ उपयोग में लाई जाती है।

5.6 भोजन

साइकस वृक्षों को विश्व के बहुत भागों में भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। ये मुख्यत: स्टार्च स्रोत के रूप में लिया जाता है। ये स्टार्च तने का पिथ (Pith) या बीज की गुठली में पाया जाता है।

बाक्स 5.4 : साबूदाने का उत्पादन

> स्टार्च स्रोत के रूप में *साइकस* का लगभग सात साल पुराना और फलरहित (जिसमें अब तक फल न लगे हों) पेड़ का ही मुख्य रूप से उपयोग किया जाता है। पेड़ से जहाँ से नयी पत्तियाँ निकलती हैं उससे जरा से ऊपर से काट दिया जाता है। फिर बाहर की पर्त को पत्तियों सहित काट के निकाल दिया जाता है। केवल सबसे भीतरी बेलनाकार छड़ को सुखाने के बाद आटे के रूप में पीस लिया जाता है। स्टार्च को गोल दाने में बदल दिया जाता है और इसे ही 'सागो' कहते हैं। इसी सागो को अलग-अलग श्रेणी में छन्नियों से छानने पर अलग-अलग किस्म के हो जाते हैं जैसे 'बुलेट सागो' 'पर्ल सागो' आदि।

इस तने से प्राप्त स्टार्च को प्रचलित रूप से 'सागो' कहते हैं जो मुख्य रूप से *साइकस सर्सिनेलिस (C. circinalis), सा. रम्फाई (C. rumphii), सा. रिवोल्यूटा (C. revoluta) जामिया* और *मैक्रोजैमिया (Macrozamia)*। *एन्सिफेलेस्टोस (Encephalartos)* तने के पिथ से अफ्रीका में कैफिर ब्रेड (kaffir bread) बनायी जाती है। साइकेसिन नामक विषाक्त साइकस वृक्ष से निकलता है जो गर्म करने पर निष्क्रिय हो जाता है। भारत और ऑस्ट्रेलिया में क्रमश: *साइकस* और *मेक्रोजैमिया* के बीज खाने के रूप में प्रयोग होते हैं, विशेषकर आदिवासी इलाकों में।

ऑस्ट्रेलिया, चिली और जापान में *आरूकेरिया (Araucaria), गिंगो* और *टोरिया (Torreya)* के बीज भी भून कर खाये जाते हैं। पाइन के बीज प्राचीन समय से भोजन के रूप में इस्तेमाल होते हैं। भारत में चिलगोजा *(पा. जिरैरडियाना)* अफगानिस्तान से मंगा कर बेचा जाता है। ये वृक्ष पश्चिमी हिमालय (हिमाचल प्रदेश) के अधिक ऊँचाई वाले भागों में पाया जाता है। यूरोप और उत्तरी अमेरिका में भी पाइन के बीज *(पा. पाइनिया, पा. सेम्बेरा, पा. फ्यूमेला, पा. इडूलिस, पा. पारयाना, पा. मोनोफिला)* सूखे मेवों के रूप में बेचे जाते हैं। ये मेवे सूप, डेर्जट, कैन्डी और कन्फैक्शनरी की वस्तुओं को बनाने के काम में आते हैं।

बहुत से कॉनिफर वृक्षों के फ्लोएम और कैम्बियम का भीतरी मुलायम भाग प्राचीन काल से आपातकालीन भोजन के रूप में इस्तोमल होती है। फ्लोएम में शर्करा होती है जिसके कारण यह मीठा होता है। उत्तरी अमेरिका की कुछ आदिवासियों जातियों में यह कच्चा खाया जाता है। कुछ लोग इसे सुखा के आटा बनाकर इस्तेमाल करना पसन्द करते हैं। जबकि कुछ लोग इसे उबाल कर या पट्टियों के रूप में इकट्ठा करके सर्दियों में इस्तेमाल करना पसन्द करते हैं।

टेक्सस के बीज के चारों ओर घिरा हुआ लाल रंग का मांसल एरिल (Aril) स्वाद में मीठा होता है। और इसको ज्यादातर जानवर खाते हैं। लेकिन इसका बीज और दूसरे भाग निश्चित रूप से विषैले होते हैं।

गिंगो (Gingo) वृक्ष के बीज का बीजावरण मांसल होता हैं लेकिन इसका स्टार्ची भ्रूणपोष (Kernel) खाने में प्रयोग होता है। चीन और जापान में उसको उबाल कर या भून कर खाया जाता है।

बोध प्रश्न 4

नीचे दिए गए वक्तव्यों में सही या गलत बताइये। सही वक्तव्यों के लिए (स) और गलत वक्तव्यों के लिए (अ)।

i) पर्ल सागो *साइकस रिवोल्यूटा* के फल से प्राप्त होता है। [ ]

ii) लगभग सारे पाइन वृक्षों के बीज खाने योग्य होते हैं। [ ]

iii) *टैक्सस* वृक्ष का एरिल, बीज और अन्य भाग मीठे और खाने योग्य होते हैं। [ ]

iv) भारत में चिलगोजा के बीज *पा. जिरारडियाना* से प्राप्त होते हैं। [ ]

v) 'सागो' अधिकतर *सा. सरसिनेटा, सा. रम्फाई,* और *सा. रिवोल्यूटा* के तने से प्राप्त स्टार्च से बनता है। [ ]

5.7 औषधि और अन्य उपयोग

औषधि के रूप में महत्वपूर्ण जिम्नोस्पर्म वृक्षों में *इफेडरा* का वृक्ष प्रमुख है। *इफेडरा जिरारडियाना, (Ephedra gerardiana) इफेडरा इक्वीसिटिना (E. equisetina)* और *इफेडरा सिनिका (E. sinica)* की हरी शाखाओं से एफिड्रीन नामक एल्केलॉयड निकाला जाता है। एफिड्रीन खाँसी और नाक की दवाइयों में एक प्रमुख संघटक होता है। ये श्वास नली को खोलता है और श्लेष्मल झिल्ली को सिकोड़ता है। आजकल ज्यादातर औषधि-उद्योगों में एफिड्रीन की खपत औद्योगिक रूप से संश्लेषित ऐल्कलाएड से पूरी की जाती है। स्थानीय आवश्यकता अभी भी प्राकृतिक जड़ी-बूटियों का निष्कर्षण से पूरी की जाती है।

टैक्सस की जातियाँ बहुत सी बीमारियों के लिए उपयोगी है। *टैक्सस बकाटा* की पत्तियाँ, दमा ब्राकाइटिस, मिर्गी और अपच में काम में लायी जाती है। इस पादप में एक विषैला सक्रिय कारक टेक्सिन (Taxine) होता है जो हृदय के लिये अत्यधिक जहरीला विष है। टैक्सोल (Taxol) नामक एक अन्य औषधि जो कि बाजार में उपलब्ध है, *टैक्सस ब्रैवीफोलिया (T. brevifolio)* से निकाली जाती है। यह विशेषकर ब्रेस्ट कैंसर, अंडकोष में कैंसर या गुदा कैंसर के निदान में अत्यधिक प्रभावकारी दवा है। *टैक्सस* की बहुत सारे पेड़ों के काटने के बाद ही टेक्सोल प्राप्त होता है इसीलिए अब इसको कृत्रिम रूप में ऊतक संवर्धन से टैक्सोल प्राप्त करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। टेक्सोल के कृत्रिम संश्लेषण पर भी अन्वेषण किया जा रहा है।

बॉक्स 5.5 : कैंसर और टेक्सोल

1989 में जॉन हापकिंग ओंकोलॉजी सेन्टर एन. वाई., वाशीन्गटन (Johns Hopkins Oncology Centre, N. Y. Washington) के शोधकर्त्ता ने जानकारी दी कि जिन अंडकोष कैंसर के मरीजों पर परम्परागत इलाज का कोई असर नहीं हो रहा था (जिसमें शल्य चिकित्सा भी शामिल है) उन मरीजों में 50% या उससे भी ज्यादा ट्यूमरों का आकार घट गया और एक औरत का ट्यूमर टैक्सोल नामक दवाई जो *टैक्सस* की छाल से प्राप्त की गई थी, से समाप्त हो गया। *टैक्सस* जाति के पेड़ छोटे आकार के होते हैं और बहुतायत में नहीं पाये जाते हैं। ये बहुत धीमी गति से बढ़ते हैं और करीब-करीब सत्तर साल में पूर्ण रूप से बढ़ जाते हैं।

चीन और जापान में *गिंगों बाइलोबा* के बीजों का प्रसाधन उद्योग में उपयोग होता है। इसके लिए कच्चे बीज इकट्ठे किये जाते हैं। और बीजावरण के पल्प भी प्रसाधनों में प्रयोग किया जाता है।

गिंगों बाइलोबा की पत्तियों का रस मानसिक अपरिपक्वता (cerebral insufficiency) और चक्कर (vertigo) के इलाज के लिये उपयोगी है। गिंगोलाइड यौगिक पहिकाणु सक्रियता कारक (platelet activating factor, PAF) को कशेरूकीयों में नष्ट कर देता है।

साइकस के बीज वमनकारी (emetic) होते हैं और फोड़े एवं घाव के इलाज के लिये प्रयुक्त होते हैं। *सा. रम्फाई* के परागकण नशीलेपन लिये होता है ऐसा माना जाता है। *सा. पैक्टिनेटा* के तने का चूर्ण, बीमार जड़ों वाले बालों को धोने के काम आता है। *जैमिया* के बीज से प्राप्त विषैला पदार्थ गठिया या जोड़ों के दर्द में उपयोग में लाया जाता है। *साइकस* के नर शंकु की महक (अलग सी) से बग भाग जाते हैं। कभी-कभी चूहे भी इसकी महक से खेतों या अनाज भण्डार से भाग जाते हैं।

कोनिफर वृक्षों से निकाले जाने वाले सगंध तेल इत्र उद्योग के काम आते हैं। इसके अलावा ये कीड़े भगाने, र्निगन्धीकारक और त्वचा के रोगों के लिये विशेष दवाई बनाने में प्रयुक्त होता है। *जूनीपेरस कमूनिस* के स्त्री शंकु से निकले तेल नशीले पेय को सुगंधित करने में किया जाता है। भारत में *सिड्रस देवदार* का तेल इत्र और साबुन उद्योग में प्रयोग होता है। ये सूक्ष्मदर्शी कार्य में निमज्जन तेल के रूप में प्रयुक्त होता है।

बोध प्रश्न 5

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :-

i. .... से ऐल्कलाइड .... निष्कासित किया जाता है।

ii. .... नामक औषधि *टेक्सस ब्रेवीफोलिया* से निकाली जाती है।

iii. .... यौगिक कशेरूकीयों के प्लेटलेट एक्टीवेटिंग फैक्टर (PAF) को नष्ट करता है।

iv. .... तेल इत्र और साबुन में प्रयुक्त होता है।

बोध प्रश्न 6

टेक्साल पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

5.8 सौन्दर्यपरक उपयोग

पहाड़ी ढ़लानों पर उगे हुए कोनिफर वृक्ष पहाड़ी इलाकों का प्राकृतिक सौंदर्य प्रस्तुत करते हैं। इनकी सदा हरित प्रकृति, लम्बाई और सममित वृद्धि दर्शनीय होती है। ये उद्यानों में, सजावट के लिए और सूर्य की रोशनी रोकने के लिए पंक्तियों में भी लगाये जाते हैं। उद्यानकर्मी और बागवानी के शौकीन लोग ऐसे वृक्षों को अपने बगीचों में जरूर लगाते हैं। पाइन, सिड्रस, फर, स्प्रूस, जूनपीर और हैमलॉक आदि समशीतोष्ण जलवायु के सामान्य वृक्ष है। ''बोनसाई'' पौधों में विकसित करने के लिए भी जिम्नोस्पर्म वृक्ष अच्छे स्रोत माने जाते हैं। बोनसाई बनाने की विधि सबसे पहले जापान में शुरू हुई थी। इस विधि के द्वारा पौधों को छोटे रूप में परिवर्तित किया जाता है। ये पौधे ड्राइंग रूमें सजावट के लिए प्रयुक्त होते हैं। जूनीपर और पाइन बोनसाई बनाने के लिये ज्यादा उपयुक्त माने जाते है।

जैसा कि आप यूनिट - 1 में पढ़ चुके हैं कि *गिंगे बाइलोबा* प्रकृति का एक खूबसूरत उपहार है। ये पौधा बागों में बहुतायत से लगाया जाता है। और वनस्पतिक कलाकृति की तरह संसार के वृक्ष-वाटिका में लगाये जाते हैं।

क्यूप्रेसस स्पूनीब्रिस अधिकतर गुम्बद और धार्मिक स्थानों के चारों ओर लगाया जाता है। *टैक्सस* भी एक बहुत उत्तम सजावटी और कर्तन कला के लिए उपयुक्त पौधा है। अन्य कोनिफर जो अधिकतर बागों में उगाये जाते हैं वो हैं – *बायोटा, थूजा, जूनीपेरस, ऑरुकेरिया* और *पाइनस*।

यूरोप में क्रिसमस के समय *पाइसिया, एबीज* की शाखायें और पौध सजावट के लिए उपयोग में लाई जाती है। भारत में इस काम के लिए *सिड्रस* और *थूजा* का उपयोग होता है। गर्म इलाकों में (शीतोष्ण और उपशीतोष्ण) साइकस को बाहर लगाये जाने वाले पौधों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इनका बड़ा आकार व रूप बागों की खूबसूरती को बढ़ाता है। ये समशीतोष्ण इलाकों में ग्रीन हाउस में उगाये जाते हैं।

अन्य उपयोग - कोनिफर वृक्ष से प्राप्त फॉसिल रेज़िन अम्बर से मोती, जेवर और मूर्तियाँ और सिगार होल्डर बनाये जाते हैं। अम्बर जिसमें पौधों और कीटों के अवशेषों से कलात्मक रूप से सजावटी वस्तुएं एवं लाकेट बनाये जाते हैं।

5.9 आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण जिम्नोस्पर्म की भारतीय जातियाँ

उत्तरी भारत का सबसे महत्वपूर्ण वृक्ष *सिड्रस देवदारा* है जिसे देवदार या सिडार वुड कहते हैं। ये सबसे मजबूत कोनिफर काष्ठ है और सीझने के पश्चात ये टीक की लड़की जैसी मजबूत हो जाती है। ये फर्नीचर, दरवाजे, खिड़की, फर्श और काष्ठकारी के लिए उपयोगी होती है। विशिष्ट प्रकार के तेल के कारण ये कीटरोधी भी होती है। इससे निष्कर्षित तेल का इत्र और साबुन उद्योग में प्रयोग होता हैं

क्यूप्रसेस टोरूला (Cupressus torulosa) (पश्चिमी हिमालय में पाये जाते हैं) और *पाइसिया स्मिथियाना* (पश्चिमी हिमालयी स्प्रू) भारत में पाये जाने वाले अन्य काष्ठ उत्पादक कोनिफर वृक्ष हैं। *पाइनस रॉक्सबरघाई* और *पा. वैलचियाना* भी सस्ते किस्म के फर्नीचर निर्माण कार्य और पैकिंग कार्यों में उपयोग किये जाते हैं। चीड़ से ही टर्पेंटाइन निकाला जाता है। *एबीज* की लकड़ी भी कभी-कभी काष्ठ रूप में इस्तेमाल होती है।

पा. जिरारडियाना के बीज बाजार में चिलगोजा के नाम से बेचे जाते हैं। औद्योगिक टैक्सोल का निष्कर्षण *टैक्सस* पौधों के रूप में भारी मात्रा में किया जाता है और भारत टैक्सोल का सबसे बड़ा निर्यातक है।

5.10 सारांश

- जिम्नोस्पर्म्स का उपयोग विभिन्न प्रकार से होता है। ये काष्ठ, रेज़िन, पेपर और बोर्ड, खाद्य और औषधि के रूप में उपयोग में आते हैं।
- समस्त विश्व में कोनिफेरिल्स समूह काष्ठ के प्रमुख स्रोत हैं। इनसे मुलायम काष्ठ प्राप्त होती है जिसके अनेक प्रकार के उपयोग हैं।
- भारत में चीड़ की लकड़ी *पा० रॉक्सबरघाई* सबसे अधिक उपयोग में आने वाली काष्ठ है।
- स्प्रूस की लकड़ी से वाद्य यंत्रों के ध्वनि कोष्ठ बनाये जाते हैं।
- तटीय रेडवुड की लकड़ी बैक्टीरिया और फफूंदी अवरोधी होने के कारण कीमती होती है।
- पाइन से प्राप्त रेज़िन से टर्पेन्टाइन और रोज़िन प्राप्त किया जाता है। टर्पेन्टाइन तेल विलायक के रूप में और रेज़िन का इस्तेमाल वार्निश और स्याही बनाने में होता है।
- कागज बनाने के लिये लुगदी का बड़ा भाग *पाइसिया, एबीज* और *लैरिक्स* जैसे कोनिफर वृक्षों से बनाया जाता है।
- 'सागो' साइकस के तने से प्राप्त होता है।

- जिम्नोस्पर्म की कुछ जातियाँ औषधि के रूप में महत्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ – *इफेड्रा* जिससे एफिड्रिन प्राप्त होती है। *टैक्सस ब्रैबीफोलिया* जिससे टैक्सोल नामक औषधि निकाली जाती है। ये टैक्सोल अंडाशय के कैंसर के इलाज के लिए उपयोगी है।
- जिम्नोस्पर्म्स वृक्षों की सदाहरित प्रकृति समकारीय वृद्धि और ऊँचाई और लम्बाई प्राकृतिक सौंदर्य प्रदान करती है। *क्यूप्रेसस, जूनीपेरस, पाइनस, टेक्सस, गिंगो, थूजा* और *आरुकेरिया* साधारणतया बागों में उगने वाली किस्में हैं।

5.11 अंत में कुछ प्रश्न

1. जिम्नोस्पर्म समूह के उपयोगों का विवरण दीजिये।

....

....

....

....

2. रेज़िन क्या है और उनके स्रोतों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

3. टैक्सॉल पर टिप्पणी कीजिए ?

....

....

....

....

4. भारत के प्रमुख काष्ठ उत्पादक कॉनिफर वृक्षों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

5. पेपर मिलें पूर्ण रूप से कॉनिफर काष्ठों पर क्यों निर्भर करती है।

....

....

....

....

6. जिम्नोस्पर्म समूह की अलंकारिक महत्ता पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

....

7. अगर आप एक खूबसूरत लैंडस्केप बनाना चाहते हैं और आर्थिक रूप से कोई समस्या नहीं है तो आप कौन कौन से जिम्नोस्पर्म उगाना पसन्द करेंगे और क्यों ?

....

....

....

....

5.12 उत्तर

बोध प्रश्न

1. 1) *पाइनस, राक्सबरघाई*
   2) कोनिफर वुड
   3) पाइसिया स्पीशीज़
   4) लैरिक्स स्पीशीज़
   5) एबीज स्पीशीज़

2) 1) रोज़िन, सगंध तेल
   2) *अगैथिस* आस्ट्रैलिस
   3) कोपाल और सैन्ड्रैक
   4) कनाडा बालसम

3) सेक्शन 5.4

4) 1 स
   2 स
   3 अ
   4 स
   5 स

5) 1 इफेडरा *जिरारडियाना,* एफिड्रिन
   2 टैक्सोल
   3 गिंगोलाइड
   4 *सिड्रस देवदारा*

6) सेक्शन **5.7**

अंत में कुछ प्रश्न

1) उपयोगी जिम्नोस्पर्म वृक्षों की सूची बनाइये और प्रत्येक के बार में कुछ लाइनें लिखें।

2) सेक्शन 5.4 और बाक्स 5.3 देखें।

) सेक्शन 5.6 औषधि और अन्य उपयोग और बॉक्स 5.4

) सेक्शन 5.3 काष्ठ और उससे निर्मित वस्तुऐं।

) सेक्शन 5.5 लुगदी और कागज बनाना।

5) सेक्शन 5.8 सौन्दर्यपरक उपयोग

7) इस प्रश्न को हल करने के लिए जिम्नोस्पर्म के वृक्षों की सूची बनाइये। फिर एक चित्र बनाइये जिसमें निम्न बातों का ध्यान रखिए (1) जलवायु (2) सुरुचिपूर्ण तरीके से वृक्षों को निम्न बातों का ध्यान रखते हुए लगायें।

1) ऊँचाई

2) पत्तियों का आकार

3) शाखन

4) रंग

शब्दावली

अंतर्मुखी भ्रूणवृत्त	:	पादपों में एक ऐसी स्थिति, जब विकसित हो रहे भ्रूण का शीर्ष स्त्रीधानी के आधार की ओर संकेत करता है।
एकदारूक	:	संवहन न्यास के एक वलय का होना
एकलिंगाश्रयी	:	अलग-अलग पादपों पर नर और मादा जननांग।
ऐल्बूमिनी कोशिका	:	अनावृतबीजियों में चालनी कोशिका के साथ सम्बद्ध मृदूतक कोशिकाएं।
गुरूबीजाणुपर्ण	:	गुरू बीजाणुधानी धारक पत्ती के आकार की संरचना।
जीरिक	:	सामान्यतः शुष्क आवास में उगने वाला पादप।
पत्रप्रकलिका	:	अलैंगिक प्रजनन में कार्य करने वाली एक मांसल, जमीन के ऊपर उगने वाली, कक्षीय कली।
बहुआदिदारुक	:	अनेक आदिरंभों वाला रंभ।
बहुदारुकी	:	कैम्बिया की सहायक वलयों के परिणामस्वरूप निर्मित जाइलम की अनेक वलयें।
बाह्य कवकमूल	:	बाह्य कवकमूल में कवक जड़ (मूल) के धरातल पर कवक जाल उत्पन्न करता है। वल्कुट कोशिकाओं के बीच में तंतु-स्ट्रांड (hyphal strand) (लड़) जड़ को वेधती है और वहाँ पर एक जाल बनाती है।
बाह्यमुखी भ्रूणवृत्त	:	पादपों में एक ऐसी स्थिति, जब विकसित हो रहे भ्रूण का शीर्ष स्त्रीधानी की गर्दन की ओर मुड़ता है।
बीजांडकाय	:	वे ऊतक जो कि अपरिपक्व बीजांड के मुख्य भाग हैं तथा जिसमें भ्रूणकोष विकसित होता है।
बीजांडद्वार	:	बीजांडकाय की सतह से नीचे अध्यावरणों के छोरों के बीच बीजांड के बाहरी सतह की ओर एक छिद्र।
मध्यजीवी	:	255 लाख वर्ष पूर्व शुरू और 65 लाख वर्ष पहले समाप्त भूवैज्ञानिक-काल।
युग्मशाखित	:	एक ससीमाक्षी, पुष्पक्रम, जिसमें लगभग समान स्तर पर दो पार्श्विक शाखाएं होती हैं।
रैकिस	:	संयुक्त पर्ण का केन्द्रीय पर्णवृंत।
लघुबीजांडधानी	:	लघुबीजांडों वाली बीजांडधानी।
लघुबीजांडपर्ण	:	लघुबीजांडधानी धारक, पत्ती के आकार की संरचना।
विरलदारुक	:	जाइलम की कम मात्रा वाला तना।
विलुप्त	:	किसी विशिष्ट जीव अथवा जीवों का समूह के संसार से हमेशा के लिए अदृश्य होना।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -02
पादप विविधता-II

खंड

2

पुष्पीय पादप

इकाई 6

एन्जियोस्पर्मीय पादपों का परिचय 5

इकाई 7

ऊतक 28

इकाई 8

जड़, तना और पत्ती 67

इकाई 9

पुष्प, फल तथा बीज 138

इकाई 10

परागण जीवविज्ञान 186

खंड की रूपरेखा

इकाई 6, 'आवृतबीजी पादपों का परिचय' में पुष्पी पादपों के बारेमें विवरण है जिनका आज पृथ्वी पर प्रभुत्व हैं। ये पादप संपूर्ण पृथ्वी पर वितरित हैं और मानव की अधिकांश पर्यावरणीय तथा आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। इस इकाई में आपको आवृतबीजी पादपों के सामान्य गुणों के बारे में झलक दी गई है जिसमें पुष्प की उपस्थिति, वाहिकाओं तथा चालनी नलिकाओं के विकास, फल से ढके हुए बीजों तथा द्विनिषेचन जैसे गुण सम्मिलित हैं। आवृतबीजी पादप विविध आवासों जैसे मरुस्थल, पहाड़, नमभूमि तथा मैंग्रोव में उगने के लिए अनुकूलित होते हैं। इनमें वायु, जल, कीट, पक्षियों तथा अन्य जंतुओं की सहायता से परागण तथा बीज वितरण के प्रभावी तरीके पाए जाते हैं। आवृतबीजी पादपों की उत्पत्ति क्रिटेशस कल्प में, संभवत् कुछ आज विलुप्त अनावृतबीजी पादपों से हुई है। उत्पत्ति के बाद वे तेजी से विकसित हुए। इस इकाई में आप आवृतबीजी पादपों के प्रमुख समूहों तथा उनके मौलिक गुणों के बारे में जानेंगे।

इकाई 7, 'ऊतक' में पादप शरीर अध्ययनों के बारे में आवश्यक मूलभूत जानकारी दी गई है। इस इकाई में, ऊतक प्रकारों की तीन मूल श्रेणियों की चर्चा की गई है जो आवृतबीजी पादपों की काया को बनाते हैं। ये हैं - मेरिस्टेम, परिपक्व ऊतक तथा अधिचर्मी ऊतक तंत्र। इनमें से प्रत्येक श्रेणी, उपश्रेणियों में विभाजित की गई है, उदाहरण के लिए, मेरिस्टेम शिखाग्र; पार्श्विक, तथा अंतर्विष्ट मेरिस्टेमों में विभाजित किए गए हैं। इनमें से प्रत्येक ऊतक प्रकार के विभेदक लक्षण तथा उनके विविध प्रकारों तथा कार्यों के बारे में विस्तार से बताया गया है। हालांकि इनमें से कुछ ऊतक, जैसे कि मृदूतक तथा उसके विभिन्न प्रकार, संपूर्ण पादप काया में पाए जाते हैं, परन्तु कुछ ऊतक जैसे कि शिखाग्र मेरिस्टेम तथा उनकी कोशिकाएं सिर्फ सीमित स्थानों पर ही पाई जाती हैं। इस महत्वपूर्ण पहलू को स्पष्ट रूप से समझने की आवश्यकता है क्योंकि यह ही इस इकाई का निहितार्थ है।

इकाई 8, में जड़, तना तथा पत्ती के आकृति विज्ञान तथा शारीर के बारे में विस्तृत रूप से बताया गया है। तना तथा पत्ती प्ररोह बनाते हैं और ये दोनों प्ररोह शीर्ष से विकसित होते हैं। इन दोनों अंगों के मध्य संबंध तथा आपसी निर्भरता पादप के पूरे जीवन में रहती है। जड़ सामान्यतः मिट्टी की सतह के नीचे विकसित होती है: कभी-कभी जड़ हवा में तथा तना भूमि के नीचे भी विकसित होते हैं परन्तु जड़ तथा प्ररोह में प्राथमिक ऊतकों के विकास तथा व्यवस्था में मूल अन्तर सदैव स्पष्ट रूप से भिन्न होते हैं।

इकाई में जड़, तना तथा पत्ती के विभिन्न विशेषीकृत रूपों के बारेमें भी बताया गया है जो उनके विभिन्न कार्यों तथा पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण होते हैं। जड़, तना तथा पत्ती के शारीरीय विवरणों तथा एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री पादपों के तनों के बीच अन्तर के बारे में भी इकाई में बताया गया है।

इकाई 9 पुष्प, फल तथा बीज के निर्माण के बारे में है। पुष्प अथवा पुष्पक्रम रूपांतरित प्ररोह शीर्ष होता है जो परागण सफलता के लिए काफी विविधता दर्शाता है। प्रजनन शीर्ष विभज्योतकी कोशिकाओं से घिरा रहता है जो पुष्प के विभिन्न भागों में विकसित होता है। पुष्प के भागों (बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप) की उत्पत्ति के बारे में भी विस्तार से बताया गया है। फलों, उनके वर्गीकरण, प्रकारों, विकास तथा विलगन के बारे में भी संरचनाविकास के परीप्रेक्ष्य में चर्चा की गई है।

असंगजनन, अनिषेकफलन तथा अनिषेकजनन का उपयोग मानव उपयोग के लिए किया जा सकता है। बीज प्रकारों एवं बीज उपांगों में विविधता को भी विस्तार से बताया गया है।

परागण, पुष्पी पादपों में लैंगिक प्रजनन की बहुत जटिल, अतिविशिष्ट, तथा सक्रिय प्रावस्था है। विभिन्न पादप जातियों ने अपने विकासात्मक इतिहास के दौरान अनेकों परागण तकनीकों को सटीक विकसित कर लिया है। इनमें से प्रत्येक परागण का तरीका न केवल पादप जाति के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि यह अध्ययन के लिए भी बहुत ही दिलचस्प तथा कम जाना गया क्षेत्र है। इकाई 10 'परागण जीवविज्ञान' में हमने चर्चा के लिए ऐसे ही कुछ परागण के तरीकों के बारे में बताया है, जो विभिन्न पादपों द्वारा अपनाए गए हैं, और जिनके बारे में हमें अच्छी जानकारी है। यहाँ हमारी मंशा आपको परागणकर्ता तथा पादप के मध्य होने वाले 'लेन-देन' के बारे में बताना है और साथ ही पुष्पी पादपों के जनन चक्र की इस बहुत ही आवश्यक क्रिया से संबंधित दिलचस्प जीवविज्ञानी तथ्यों के बारे में जानकारी भी देना है।

इकाई 6 एन्जियोस्पर्मीय पादपों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
6.2 आवृतबीजी पादपों के सामान्य गुण
6.3 पुष्पी पादपों का वितरण तथा विविधता
6.4 पादप प्रकृति
6.4.1 विविध आवासों के लिए अनुकूलन
6.4.2 पत्तियों में अनुकूलन
6.4.3 तनों में अनुकूलन
6.4.4 तना, जड़ तथा पत्ती के रूपांतरण
6.5 आवृतबीजी पादपों में संवहनी ऊतक
6.6 आवृतबीजी पादपों में प्रजनन
6.7 फल तथा बीज का परिक्षेपण
6.8 पादप सुरक्षा
6.9 आवृतबीजी पादपों की उत्पत्ति
6.10 आवृतबीजी पादपों का वर्गीकरण
6.11 स्वपोषित तथा परपोषित पादप
6.12 कीटभक्षी पादप
6.13 पादप विविधता का पर्यावरणीय महत्त्व
6.14 आर्थिक महत्व
6.15 आवृतबीजी पादपों पर भारत में अनुसंधान कार्य
6.16 सारांश
6.17 अंत में कुछ प्रश्न
6.18 उत्तर

6.1 प्रस्तावना

खंड I में आपने अनावृतबीजी पादपों के बारे में विस्तार से पढ़ा। आपको ध्यान होगा कि अनावृतबीजी पादपों में बीज नग्न रूप से गुरूबीजाणुपर्णों पर लगते हैं जो अधिकांशत: शंकुओं में व्यवस्थित रहते हैं। ये खंड और आने वाले खंड पूर्णत: आवृतबीजी पादपों के लिए समर्पित है। खंड II की इस इकाई में आप आवृतबीजी पादपों के बारे में पढ़ रहे हैं, जिनमें पुष्प होते हैं और जिनमें बीज अंडप में या फल में ढंके रहते हैं। आवृतबीजी पादपों/एन्जियोस्पर्मी (Angiospermae) (एन्जियों = बक्सा या पेटी; स्पर्मा = शुक्र या बीज) को एन्थोप्सिडा (Anthopsida) (एन्थो = पुष्प या चटकीला रंग) अथवा मैग्नोलिओप्सिडा (Magnoliopsida) भी कहते हैं।

आवृतबीजी पादप प्रमुख पादप समूहों में सबसे छोटे हैं; जो केवल 1410-650 लाख वर्ष पूर्व विकसित अथवा विविधरूपायित (diversified) हुए हैं। फिर भी, आज ये पादपों का सबसे बड़ा वर्ग है जिसमें 13,000 वंश तथा 2,40,000 जातियां है (तख्ताज़न, 1980)। पुष्पीय पादप पृथ्वी पर सबसे प्रभावी/प्रमुख हैं तथा पृथ्वी पर जीवन आधार तंत्र को नियंत्रित रखने में सबसे महत्वपूर्ण हैं। वे मानव की अधिकांश आर्थिक जरूरतों को भी पूरा करते हैं।

आवृतबीजी पादप आमाप (साइज़) में छोटे डक्वीड्स जैसे *लेम्ना* (*Lemna*) तथा *वोल्फिया* (*Wolffia*) (2 मि.मी. तक के) जो जल पर तैरते हैं से लेकर विशाल वृक्ष जैसे बरगद *फाइकस बेंगालेन्सिस* (*Ficus benghalensis*) तथा यूकेलिप्टस लगभग 100 मी. तक लंबा हो सकता हैं। ये गर्म उष्ण कटिबंधी प्रदेशों तथा शीतोष्ण पहाडों की चोटियों, रेगिस्तानों तथा जल तक में उगते हैं। वास्तव में, ये उत्तर ध्रुवीय/आर्कटिक प्रदेश को छोड़कर पृथ्वी के सभी स्थानों पर पाए जाते हैं। ये अपने पुष्पों के द्वारा बहुत आसानी से पहचाने जा सकते है जिनमें बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप होते हैं। पुष्प जो कीटों अथवा पक्षियों द्वारा परागित होते हैं वे बड़े सजावटी तथा कभी-कभी सुगंधयुक्त होते हैं। इसके विपरीत, वे पुष्प जो वायु अथवा जल द्वारा परागित होते हैं वे छोटे तथा अस्पष्ट बाह्यदल तथा दल युक्त होते हैं। आवृतबीजी पादपों को उनकी जालवत् शिराओं जैसी पत्तियों तथा उनके विशिष्ट फलों के द्वारा भी पहचाना जा सकता है जिनके अंदर बीज होते हैं। फल जो शुष्क अथवा गूदेदार होता है, वह सुरक्षा तथा उचित समय पर बीज के प्रभावी परिक्षेपण के लिए अनुकूलित होता है।

अनावृतबीजी पादपों (Gymnosperms) की तुलना में, पुष्पी पादपों (Angiosperms) में जल तथा भोजन के संवहन के लिए अधिक प्रभावी तंत्र होते हैं। जबकि अनावृतबीजी पादपों में दारू/जाइलम में सामान्यत: जल के संवहन के लिए सिर्फ वाहिनिकाएं (trachieds) पाई जाती हैं, आवृतबीजी पादपों में वाहिकाएं (vessels) भी पाई जाती हैं जो छिद्रित नलिकाएं बनाती हैं, जो अधिक तेजी से जल का संवहन करने में सक्षम होती हैं। अनावृतबीजी पादपों में पोषवाह/फ्लोएम में चालनी कोशिकाएं होती हैं जो पार्श्वरूप से पतले छिद्रों वाले चालनी क्षेत्रों द्वारा आपस में संबद्ध होती हैं। आवृतबीजी पादपों में इसके विपरीत पोषवाह/फ्लोएम में चालनी नलिकाओं में चालनी तत्व एक-दूसरे से सिरे से सिरे तक जुड़े रहते है जो चालनी पट्टिकाओं द्वारा अलग रहते हैं जिनमें चौड़े छिद्र होते हैं जिनके द्वारा भोजन अधिक तेजी से स्थानांतरित होता है। इन कारकों ने आवृतबीजी पादपों को पृथ्वी पर प्रभावी पादप बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

आवृतबीजी पादप न सिर्फ पादपों का सबसे अधिक विस्तृत रूप से फैला हुआ विविध तथा दर्शनीय समूह है, बल्कि ये आर्थिक तथा पर्यावरणीय रूप से भी सबसे महत्वपूर्ण हैं। अधिकांश भोजन, फाइबर्स, औषधियां, दवाएं, सगंध तेल, टैनिन तथा डाइ/रंजक, लकड़ी तथा ईंधन तथा अनेकों अन्य उत्पाद जो मानव द्वारा उपयोग किए जाते हैं वे आवृतबीजी पादपों से ही प्राप्त किए जाते हैं। पुष्पी पादप पृथ्वी का आवरण हैं और मिट्टी, जल और वायु आदि संसाधनों को निर्मित करने तथा बनाए रखने में सहायता करते हैं। जंतु जीवन की समृद्ध विविधता, खासतौर पर कीटों, पक्षियों तथा स्तनधारी जंतुओं की साथ-साथ विकसित हुई है तथा ये अपनी उत्तर-जीविता के लिए आवृतजीजी पादपों पर निर्भर हैं। प्रसिद्ध पादप वर्गीकरण विज्ञानी अर्मान तख्ताज़न के अनुसार "अंतिम गणना में पुष्पी पादपों की प्रमुखता ने मानव के आविर्भाव को संभव बनाया है।"

इस इकाई में हम आपको आवृतबीजी पादपों का संक्षिप्त विवरण देंगे। बाद में खंड III ए, III बी तथा IV में आप इनके विषय में और अधिक पढ़ेंगें।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- आवृतबीजी पादपों के सामान्य गुणों का वर्णन कर सकेंगें,
- उनके वितरण तथा विविधता को समझाने में,
- उनके शारीरीय तथा प्रजननात्मक गुणों का वर्णन करने में,
- उनके संरचनात्मक रूपांतरणों को पहचानने में,
- आवृतबीजी पादपों के आर्थिक तथा पर्यावरणीय महत्व को बताने में समर्थ हो सकेंगे।

6.2 आवृतबीजी पादपों के सामान्य गुण

आवृतबीजी पादप बड़ा तथा विविध समूह है, व इसके सदस्य विविध आवासों में पाए जाते हैं और अपने आकृति विज्ञान, आन्तरिक संरचना, उपापचय (metabolism) तथा जीवन चक्र के विवरणों में भिन्न होते हैं। हालांकि, उनमें कुछ गुण समान होते हैं जो अन्य पादपों से भिन्न होते हैं। ये विशिष्ट गुण न सिर्फ समूह को परिभाषित करते हैं बल्कि उसकी असाधारण सफलता को भी समझाते हैं।

आवृतबीजी पादपों के दारू/जाइलम में वाहिकाओं की उपस्थिति, जिनमें छिद्रित जल संवहनी तत्व सिरे से सिरे तक लंबी नलिकाएं बनाने के लिए व्यवस्थित रहते हैं जल के प्रभावी संवहन में सहायक होते हैं। फ्लोएम/पोषवाह, जिसमें चालनी नलिकाएं होती हैं जो सीधी कतारों में व्यवस्थित चालनी तत्वों से आपस में जुड़ी रहती हैं, भोजन के संवहन के लिए प्रभावी क्रियाविधि प्रदान करती हैं। अधिक प्रभावी दारू/जाइलम तथा पोषवाह/फ्लोएम ने आवृतबीजी पादपों को अधिक तेजी से वृद्धि के जरिए अत्यधिक विस्तार प्राप्त करने में सहायता प्रदान की है। इन गुणों के कारण आवृतबीजी पादप चौड़ी पत्तियाँ विकसित करने में सफल हुए जो अधिक प्रभावी रूप से प्रकाश संश्लेषण कर सकती हैं एवं वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन (evapotranspiration) के द्वारा स्वयं को ठंडा भी रख सकती हैं।

पुष्प आवृतबीजी पादपों का सबसे विशिष्ट गुण है। अनावृतबीजी पादपों में सामान्यत: स्पष्ट नर तथा मादा शंकु होते हैं। नर शंकु में लघु बीजाणुपर्ण होते हैं, प्रत्येक में उसकी अपाक्ष सतह पर विभिन्न संख्या में लघुबीजाणु पाए जाते हैं। गुरूबीजाणुपर्ण जो शंकु अथवा शंकु विहीन हो सकते हैं, वो एक या अधिक नग्न बीजांड धारण किए रहते हैं। इसके विपरीत पुष्प में परिदलपुंज (बाह्यदल तथा दल) का/के सहायक चक्र पुंकेसर को घेरे हुए होते हैं। प्रत्येक पुंकेसर में 2 या 4 लघुबीजाणु होते हैं तथा एक या अनेक बीजांडों को घेरे हुए अंडप होते हैं।

अनावृतबीजी पादपों में परागण, लघुबीजाणु से गुरूबीजाणुपर्ण पर पराग कणों का स्थानांतरण, वायु के द्वारा होता है। आवृतबीजी पादपों में, इसके विपरीत, पुंकेसरों से अंडप पर परागकणों का स्थानान्तरण वायु, जल, कीट, पक्षी अथवा चमगादड़ों के द्वारा होता है। वायु-परागित पुष्पों में, जैसे कि शहतूत में, पुष्प छोटे तथा अस्पष्ट परिदलपुंज युक्त होते हैं। जबकि, जंतु-परागित पुष्पों में परिदलपुंज सजावटी तथा अक्सर सुगंधित भी होता है। उदाहरण के लिए, गुलाब के पुष्प, सुन्दर तथा सुगंधित होते हैं। सरसों, साल्विया अथवा ऑर्किड्स के पुष्पों में सुस्पष्ट सममिति (symmetry), गठन (texture) तथा रंग होता है जो कीटों जैसे कि मधुमक्खियों तथा तितलियों को आकर्षित करता है। ये पुष्प बदले में जंतु परागणकर्ताओं को मकरंद देते हैं। अंडप का विभेदन होता है और परागकणों को ग्रहण करने के लिए वर्तिकाग्र एक विस्तारित वर्तिका और एक अंडाशय बनाने के लिए जो अंदर बीजांड को ढंके रहता है, बनाती है और बीजों को परागित करने वाले जीवों से क्षति पहुँचाने से बचाव करने में सहायक होता है।

आवृतबीजी पादपों में, परागनलिका दो नर युग्मकों को मादा युग्मकोद्भिद अथवा भ्रूण-कोष तक लाती है। एक युग्मक अंड के साथ युग्मित होकर युग्मनज (zygote) बनाता है, जो भ्रूण को बनाता है। दूसरा युग्मक भ्रूण-कोष के ध्रुवीय अथवा केन्द्रीय कोशिका केन्द्रक के साथ मिलकर पोषण ऊतक भ्रूणपोष बनाता है। ये प्रक्रिया द्वि-निषेचन कहलाती है। अत: अनावृतबीजी पादपों के विपरीत, भ्रूणपोष सिर्फ तभी बनता है यदि भ्रूणकोष भ्रूण बनाने के लिए निषेचित हो जाता है। द्वि-निषेचन ने आवृतबीजी पादपों में प्रजनन प्रक्रिया की सक्षमता तथा व्यवस्था में योगदान दिया है।

आवृतबीजी पादपों में, फल जो बीजों को ढंके रहते हैं, उनमें बीजों के प्रभावी परिक्षेपण के लिए विविध विधियां पाई जाती हैं। बालसम, *इम्पेशिएन्स बालसेमिना* (*Impatiens balsamina*) तथा स्पर्ज, *यूफॉर्बिया स्पी.* (*Euphorbia* spp) तीव्रता से खुलते हैं और बीजों को दूर तक फेंकते हैं। कुछ फल या बीज दूर तक वायु, जल या जंतुओं के द्वारा प्रकीर्णित किये जाते हैं। उदारहण के लिए, नारियल (*कोकस न्यूसीफेरा Cocos nucifera*) का फल समुद्र के जल में सैंकड़ों किलोमीटर दूर तक चला जाता है और बीज अंदर सुरक्षित रहता है। मिसलटो (mistletoe) *विस्कम एलबम* (*Viscum album*) के फल पक्षियों द्वारा ले

जाए जाते हैं। ऑर्किड्स के बहुत ही छोटे बीज वायु द्वारा प्रकीर्णित किये जाते हैं। अनेक बीजों में रोम जैसे कि मिल्कवीड *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* (*Calotropis procera*) अथवा पंख होते हैं जैसे कि ड्रमस्टिक (drumstricks) *मोरिन्गा ऑलीफेरा* (*Moringa oleifera*) में, जिनकी मदद से वे हवा में कुछ दूरी तक चले जाते हैं। लीची, *लीची चाइनेन्सिस* (*Litchi chinensis*) के बीजों में कठोर, भूरे बीज को घेरे हुए मीठा सफेद बीजचोल (aril) होता है। कैस्टर/एरंड *रिसिनस कम्युनिस* (*Ricinus communis*) के कठोर बीजों में मृदु, कॉलर जैसी भोजन से भरी हुई बर्हिवृद्धि होती है जिसे बीजचोलक (caruncle) कहते हैं। ऐसे बीज उपांग जंतुओं द्वारा परिक्षेपण में सहायक होते हैं। जो मृदु भाग को खा लेते हैं और कठोर बीज को फेंक देते हैं। फल या बीज का, जनक पादप से दूर परिक्षेपण, बीज के अंकुरण के लिए बेहतर तथा कम प्रतिस्पर्धी स्थितियां प्रदान करता है।

तख्ताज़न (1969) ने आवृतबीजी पादपों में कम से कम सात गुणों में बहुत अधिक समानता को बताया था (1) **पुंकेसरी** संरचना (2) अंडप **वर्तिका** तथा **वर्तिकाग्र** सहित (3) पुष्प में जायांग तथा **पुमंग** की सापेक्ष रूप से स्थिर स्थिति (4) त्रि-केन्द्रकी पराग-नलिकाएं (5) विशिष्ट गुण जिसमें मादा युग्मकोद्भिद अंड **सहाय कोशिकाओं (synergids)** द्वारा रक्षित रहता है और उसमें स्त्रीधानी नहीं होती है, (6) द्वि-निषेचन की प्रक्रिया तथा (7) चालनी नलिकाओं की उपस्थिति। तख्ताजन की सूची में आवृतबीजी पादपों के इन विशिष्ट गुणों को भी शामिल किया जा सकता है (8) भ्रूण के बंद अंडप के भीतर विकास, जो सूखे के प्रभाव, कम आर्द्रता तथा छोटे शाकभक्षी जंतुओं से बचे रहते हैं; (9) पत्तियों में शिराओं के शाखन के तीन या अधिक क्रम होते है। (10) पराग कण (लघु बीजाणु) सुविकसित, सामान्यत: जालिकावत् बाह्यचोल (exine) के अलंकरण तथा स्तंभी संरचना की उपस्थिति द्वारा पहचाने जाते हैं (11) चालनी नलिकाओं युक्त सुविकसित पोषवाह/फ्लोएम; तथा (12) जाइलम/दारू में वाहिनिकाओं के स्थान पर वाहिकाओं तथा फाइबर्स का पाया जाना। ये गुण लगभग पूर्णत: आवृतबीजी पादपों तक ही सीमित है; तथा सभी नियमित रूप से पूरे वर्ग में पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 1

आवृतबीजी तथा अनावृतबीजी पादपों में पांच अंतर बताइए।

....

....

....

....

....

....

6.3 पुष्पी पादपों का वितरण तथा विविधता

आवृतबीजी पादप वितरण में सर्वव्यापी होते हैं । ये समुद्र के तलों पर, नदियों तथा तालों में, ऊँचे पहाड़ों पर तथा रेगिस्तानों में भी पाए जाते हैं। परम मरूद्भिदी जैसे कि *ओपन्शिया* (*Opuntia*) (नागफनी), कैक्टस तथा *यूफॉर्बिया* स्पी (*Euphorbia* spp.) शुष्क स्थितियों को सहने में सक्षम होते हैं तथा ऐसे स्थानों पर उग सकते हैं जहाँ वर्षा कम होती है। सीडम (*Sedum*) तथा क्रैसुला (*Crassula*) की जातियां खुले/नग्न पत्थरों पर उगती हैं। जलोद्भिदी पादपों में *हाइड्रिला वर्टिसिलेटा* (*Hydrilla verticillata*) तथा रिबन वीड *वैलिसनेरिया स्पाइरेलिस* (*Vallisneria spiralis*) जो जल में निमग्न रहते हैं तथा श्रंगयुक्त (horned) वाटर चेस्टनट, *ट्रापा बाइस्पाइनोसा* (*Trapa bispinosa*) तथा वाटर हाइसिन्थ, *आइकोर्निया क्रेसिपीज* (*Eichhornia crassipes*) जो मुक्त प्लावन करते हैं सम्मिलित हैं। पोडोस्टीमेसी (Podostemaceae) कुल के सदस्य चट्टानी आधार पर तेज प्रवाह से बहते हुए जल के नीचे उगते हैं।

मैंग्रोव पादप जैसे कि *राइज़ोफोरा* (*Rhizophora*) तथा *ऐविसेनिया* (*Avicennia*) समुद्र तट के ज्वार नद मुखों (estuaries) के लवणीय जल में उगते हैं। आवृतबीजी पादपों की बड़ी संख्या अधिपादपों की है यानि कि वे अन्य वृक्षों के तनों का सहारा लेकर उगते हैं। इनमें ऑर्किड्स जैसे कि *वैन्डा* (*Vanda*) हैं।

वनों में विभिन्न ऊँचाइयों के वृक्षों के अनेकों स्तरों, अनेकों आरोही लताओं तथा अधिपादपों तथा वन की धरती पर झाड़ियों तथा शाकों की समृद्ध विविधता को देखा जा सकता है। झरनों तथा नमस्थानों में जलोद्‌भिदी पादप पाए जाते हैं जबकि नदी के किनारों तथा छायादार स्थानों पर समोद्‌भिदी पादप जैसे कि *पॉलीगोनम* (*Polygonum*), *रैननकुलस* (*Ranunculus*) तथा *ऑक्जैलिस* (*Oxalis*) की जातियां पाई जाती हैं। अत: थल अथवा जल का प्रत्येक कोना आवृतबीजी पादपों द्वारा घिरा हुआ है।

6.4 पादप प्रकृति

आवृतबीजी पादप अपने साइज, प्रकार तथा आकृति विज्ञान में बहुत अधिक विविधता दर्शाते हैं। उनमें से अनेक एकवर्षी होते हैं जो अपना जीवनचक्र एक साल में पूरा कर लेते हैं। इनमें घासें सम्मिलित हैं, जिनमें प्रमुख फसलें जैसे गेहूँ तथा चावल तथा उद्यान कृषि की जातियां जैसे नेस्टर्शियम, *ट्रोपिओलम मेजस* (*Tropaeolum majus*) तथा केन्डीटफट, *आइबेरिस अमारा* (*Iberis amara*) सम्मिलित हैं। गाजर (*रैफैनस सैटाइवस; Raphanus sativus*) द्विवर्षी पादप का उदाहरण है जो पुष्पित होकर अपना जीवन चक्र दो वर्षों में पूरा करता है। झाड़ियां जैसेकि मिल्क वीड, *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा तथा* कनेर, *नीरियम इंडिका* (*Nerium indica*) तथा सभी वृक्ष बहुवर्षी होते हैं। वे निरन्तर उगते रहते हैं तथा प्रतिवर्ष एक या अधिक बार पुष्पन करते हैं। भारतीय सेमल वृक्ष *बाम्बैक्स सीबा* (*Bombax ceiba*) तथा लैबरनम *कैसिया फिस्टुलोसा* (*Cassia fistulosa*) प्रतिवर्ष एक बार पुष्पित होता है। मैक्सिको कपास, कारिसिआ स्पीसिओसा (*Chorisia speciosa*) वर्ष में दो बार पुष्पन करता है। बहुवर्षी पादपों में अदरक, *जिन्जिबर आफिसिनेल* (*Zingiber officinale*) तथा केसर, *क्रोकस सैटाइवस* (*Crocus sativus*) जैसे पादप सम्मिलित हैं जो भूमिगत प्रकंदों अथवा घनकंदों के द्वारा प्रवर्धन करते हैं।

केला को बहुवर्षी शाक के तौर पर वर्णित किया जा सकता है क्योंकि इसके भूमिगत प्रकंद में से अनेक कूट-तने (जो वलित पर्ण आधारों) निकलते हैं जिनमें से प्रत्येक सिर्फ एक ही बार पुष्प तथा फल देता है। बाँस कायिक तौर पर प्रकंद के द्वारा फैलते हैं और अनेकों वर्ष में एक बार पुष्पित होते हैं।

6.4.1 विविध आवासों के लिए अनुकूलन

आपने ध्यान दिया होगा कि अनेकों अनावृतबीजी पादप खासतौर पर शंकु वृक्ष, पहाड़ के ढ़लावों पर तथा ठंडे मौसम में पाए जाते हैं। इसके विपरीत, आवृतबीजी पादप विविध प्रकार के आवासों में पाए जाते हैं। पादप काया आवास के लिए विभिन्न अनुकूलन दर्शाती है, परन्तु उसमें समान मूलभूत गुण होते हैं। ज़मीन के नीचे दबा हुआ जड़ तंत्र होता है जो धनात्मक गुरूत्वाकर्षी प्रकृति के कारण ऊर्ध्वाधर रूप से नीचे की ओर जाता है। मुख्य जड़ जो भ्रूण के मूलांकुर के विस्तार के द्वारा बनती है वह प्राथमिक जड़ या मूसला जड़ कहलाती है जबकि शाखाएं द्वितीयक या तृतीयक जड़ें कहलाती हैं। बारीक शाखाओं के मूलरोम मुख्य रूप से जल का अवशोषण करते हैं। अधिकांश वृक्षों में गहरा मूसला जड़ तंत्र होता है परन्तु शुष्क क्षेत्रों में अनेकों पादपों में सतही मिट्टी में भी शाखाओं का जाल पाया जाता है। जबकि मुख्य जड़ गहरी मिट्‌टी से जल अवशोषित करती है वहीं सतही जड़ें तेजी से बारिश के बाद उपलब्ध जल को अवशोषित कर लेती हैं। एकबीजपत्री पादप जैसे कि घासों में सुविकसित प्रायमिक जड़ तंत्र नहीं होता है। नयी जड़ें मूलांकुर के आधार के निकट से निकलती हैं और भ्रूणीय/सेमीनल जड़ें कहलाती हैं। बाद में प्रांकुर के आधार से अथवा निचली पर्व संधियों से और जड़े निकलती हैं। ये झकड़ा जड़ (fibrous root) कहलाती हैं। अपस्थानिक जड़ें, जो मूलांकुर के बजाय अन्य स्थानों से निकलती हैं, भी जल के अवशोषण में सक्रिय होती हैं।

मरूद्भिदी पादप जो शुष्क स्थानों जैसे रेगिस्तानों में उगने के लिए अनुकूलित होते हैं (उदा. कैक्टस तथा *ओपन्शिया*) में सामान्यत: सुविकसित जड़ तंत्र होता है। हालांकि, जलोद्भिदों अथवा जल में उगने वाले पादपों में (उदा. *हाइड्रिला*) में अल्प विकसित जड़ तंत्र होता है अथवा जड़ें पूर्णत: अनुपस्थित होती हैं क्योंकि पादप पूरी सतह से जल अवशोषित कर सकते हैं।

6.4.2 पत्तियों में अनुकूलन

आवृतबीजी पादपों में सामान्यत: पत्तियां विशिष्ट होती हैं। पत्तियों का साइज कुछ मिली मीटर्स (उदा. *यूफॉर्बिया प्रोस्ट्रेटा*) (*Euphorbia prostrata*) अथवा सेन्टीमीटर्स (जैसे कि तुलसी, *ओसिमम सेंक्टम* (*Ocimum sanctum*) से लेकर कुछ मीटर तक हो सकता है (जैसा कि केला, *म्यूजा पैराडिजिएका;* (*Musa paradisica*) तथा तेल ताड़ इलीइस *गिनीन्सिस; Elaeis guineensis* में होता है)। पत्तियां शाखों पर इस तरह से व्यवस्थित रहती हैं जिससे प्रकाश संश्लेषण के लिए अधिकतम प्रकाश प्राप्त कर सकें। पत्तियां सामान्य एकल पटल युक्त (जैसी कि बरगद, *फाइकस बैंगालेन्सिस* में) हो सकती हैं परन्तु अनेकों आवृतबीजी पादपों जैसे गुलाब , नीम तथा वाटल (wattle) में संयुक्त पर्ण होते हैं जिनमें पटल छोटे पत्रकों में खंडित रहता है। पर्णों की व्यवस्था भी प्रत्येक जाति में भिन्न होती है। ये चक्रित (प्रत्येक पर्व संधि पर अनेकों पत्तियां), सर्पिल (प्रत्येक पर्व संधि पर एक पर्ण अगली पर्व संधि के पर्ण से 90° के कोण पर) विपरीत (प्रत्येक पर्वसंधि पर दो पत्तियां 180° के कोंण पर) अथवा एकांतरित (प्रत्येक पर्वसंधि पर एक पर्ण अगली पर्वसंधि के पर्ण से 180° के कोंण पर) हो सकती हैं। पत्तियां वृंतहीन अथवा वृंतीय हो सकती हैं जिनका साइज़ विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होता है। मरूद्भिदी पादपों में पत्तियां शल्कों में तनुकृत (जैसे कि *कैजुएराइना इक्वीसिटीफोलिया* (*Casuarina equisetifolia*) में अथवा कभी-कभी शूलों में रूपांतरित (जैसे *ओपन्शिया* में) होती हैं। पत्ती की सतह पर नमी की क्षति को कम करने के लिए अक्सर मोटा क्यूटिकल, रोमों की घनी वृद्धि तथा मोम पाया जाता है। शुष्क आवासों के पादपों में रंध्र सिर्फ पत्ती की निचली सतह पर ही होते हैं और विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित होते हैं जिससे कम से कम जल वाष्पोत्सर्जित होता है जबकि वायु का आदान-प्रदान होता रहता है। अनेकों मरूद्भिदी पादपों जैसे *केलेन्चू स्पी* (*Kalanchoe* spp.) अथवा तने (जैसे ओपन्शिया में) की पतली भित्तियों वाले ऊतकों में जल संग्रह करने की क्षमता होती है।

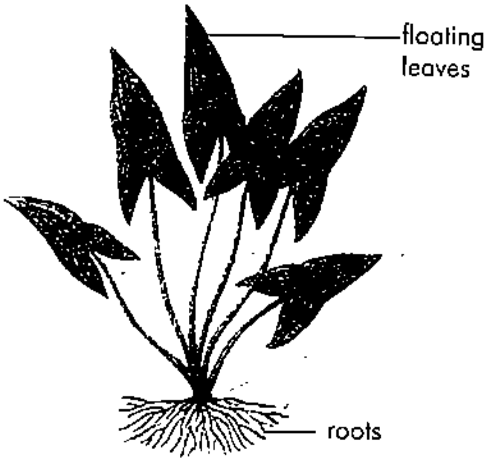

चित्र 6.1 : ऐरोहेड (*सैजिटेरिया*) एक आदि एकबीजपत्री पादप वर्ग लिलिओप्सिडा (Liliopsida) तथा उपवर्ग एलिस्मेटिडी (Alismatidae) में।

वे जलोद्भिद जो सिर्फ आंशिक तौर पर जल में निमग्न होते हैं उनमें पतली पालियुक्त अथवा तीर के आकार की पत्तियां होती हैं (उदा., वाणाग्र/ऐरोहेड; *सैजिटेरिया; Sagittaria*)। वे जो तालाब अथवा नदी में आधार से जुड़े रहते हैं और जल में निमग्न रहते है उनकी पत्तियां छोटी, पतली तथा रिबन जैसी होती हैं (उदा. *हाइड्रिला, वेलिसनेरिया; Vallisneria*) । बहुत से जलोद्भिद नीचे आधार से जुड़े रहते हैं परन्तु उनकी चौड़ी पत्तियां जल की सतह पर तैरती रहती हैं (उदा. *ट्रापा बाइस्पाइनोसा* तथा वाटर हाइसिन्थ, *आइकोर्निया क्रैसिपीज, लेम्ना पॉसीकोसेटा* (*Lemna paucicosata*) की छोटी पत्तियां जल की सतह पर चटाई सी बिछा देती हैं। तैरने वाली पत्तियां उत्प्लावन/तैरते रहने के लिए चौड़ी होती हैं। जलोद्भिदों का

एक प्रमुख गुण ये है कि उनकी जड़, तना तथा पत्तियों में वायु गुहिकाएं होती है जो उन्हें तैरने के लिए काफी हल्का बना देती हैं और पानी के अन्दर भी गैसों के आदान प्रदान को संभव बना देती हैं। क्योंकि जल के भीतर प्रकाश नहीं पहुंच पाता है, निमग्न जलीय पादपों में हरितलवक (chloroplast) सतही कोशिका परतों में जमा हो जाता है जिससे अधिक बेहतर प्रकाश संश्लेषण हो सके।

6.4.3 तनों में अनुकूलन

अधिकांश आवृतबीजी पादपों में तना सीधा, छोटे विभज्योतक के साथ उगता हुआ होता है जो अनावृतबीजी पादपों से अधिक जटिल होता है। प्ररोह शीर्ष विभज्योतक के शीर्ष में कुछ समय तक कायिक वृद्धि के बाद और कुछ निश्चित पर्यावरणीय परिस्थितियों के फलस्वरूप पुष्पक्रम या पुष्प बनाने की क्षमता होती है। कक्षीय कलिकाएं विभज्योतक से कटकर पार्श्व निर्मित करती हैं जो इस प्रकार फैलती है कि सूर्य की रोशनी की अधिकतम मात्रा पत्तियों तक पहुँचे। वन में बहुत से पादप झाड़ियों और वृक्षों के ऊपर चढ़कर अपनी पत्तियों को परपोषी की पत्तियों के ऊपर छा देते हैं। पेले रबर, *क्रिप्टोस्टीजिया ग्रैन्डीफ्लोरा* (*Cryptostegia grandiflora*) तथा *टिनोस्पोरा कार्डीफोलिया* (*Tinospora cordifolia*) ऐसे जीवोम (biomes) के अच्छे उदाहरण हैं। इसके विपरीत कुकरबिट्स जैसे तोरई, कद्दू के तने कमजोर होते हैं जो आधार पर प्रतानों (tendrils) की सहायता से चढ़ते हैं। मज़बूत तनों पर मरूद्भिदी पादपों जिनमें तनुकृत पत्तियां होती हैं उनमें तना भी हरा और प्रकाश संश्लेषी होता है जैसे कि *कैपेरिस* (*Capparis*) तथा कैजुएराइना में। *ओपन्शिया* में तथा *यूफॉर्बिया* की अनेकों जातियों में तने द्वारा काफी प्रकाश संश्लेषण होता है जो जल संग्रही कोशिकाओं की उपस्थिति के कारण गूदेदार होता है। निमग्न जलोद्भिदों में भी पतली पत्तियां होती हैं और उनका हरा तना पत्तियों द्वारा किए जाने वाले प्रकाश संश्लेषण की पूर्ति करता है।

कुछ छोटे, मुलायम एकवर्षी पादप होते हैं जैसे हरा चना *साइसर एरीटिनम* (*Cicer arietinum*) तथा बटरकप, *रैननकुलस स्क्लरैटस* (*Ranunculus scleratus*) जिन्हें शाक कहा जाता है। कुछ अन्य झाड़ियों की श्रेणी में आते हैं, जो मध्यम आकार के कठोर तने पर मुलायम शाखाओं वाले होते हैं। इनमें 'करी पत्ता' *मुराया कोइनिंजाई* (*Murraya koenegii*) तथा *सैल्वेडोरा पर्सिका* (*Salvadora persica*) सम्मिलित हैं। वृक्ष लंबे, कठोर तने तथा शाखाओं युक्त होते हैं। *यूकेलिप्टस* की कुछ जातियां 100 मीटर तक की होती हैं। बरगद का वृक्ष *फाइकस बैंगालेन्सिस* चौड़ाई में बहुत फैलता है, जो पार्श्व शाखाओं से जमीन में वायवीय जड़ें भेजता है, जो वृक्ष को अतिरिक्त सहारा प्रदान करती हैं।

वन में विभिन्न ऊँचाइयों के शाक, झाड़ियाँ तथा वृक्ष विभिन्न स्तरों पर पर्णसमूह बनाते हैं जिससे अनेकों जातियां एक ही क्षेत्र में उग सकती हैं और प्रकाश संश्लेषी उत्पादकता को अधिकतम कर देती हैं।

6.4.4 तना, जड़ तथा पत्ती के रूपांतरण

सामान्यत: तना सीधा होता है और उसकी शाखाएं पत्तियां धारण करती हैं। तना वायवीय तंत्र को आधार प्रदान करता है। तथा पोषवाह/फ्लोएम और दारू/जाइलम के द्वारा भोजन और जल का परिवहन करता है। हालांकि बहुत से आवृतबीजी पादपों में तना चिरकालिकता, प्रवर्धन तथा भोजन के संग्रह के लिए विभिन्न प्रकार से रूपांतरित हो जाता है। चाहे कोई रूपांतरण हो, तना अपनी स्पष्ट पर्व संधियों तथा पर्वों शारीर तथा पर्व संधियों पर शल्क पत्रों तथा अपस्थानिक जड़ों की उपस्थिति के द्वारा पहचाना जाता है। अनेकों विसर्पी (*creeper*) पादप जैसे कि *ऑक्जेलिस कॉर्निकुलेटा* (*Oxalis corniculata*) तथा *हाइड्रोकोटाइल एशिएटिका* (*Hydrocotyle asiatica*) में विशेष शाखाएं होती हैं जिन्हें उपरिभूस्तारी (runners) कहते हैं जो जनक पादप से हर दिशा में कलिकाओं को ले जाते हैं। अत: एक ही पादप जल्दी ही बड़े क्षेत्र में फैल जाता है। *मेन्था* स्पी (*Mentha* spp.) में सामान्य शाखाएं नीचे मुड़कर मिट्टी में चली जाती हैं जहाँ संतति पादप बनते हैं। इन्हें भूस्तारी (stolon) कहते हैं। जब कोई भूमिगत उपरिभूस्तारी अथवा कक्षीय कलिका पर्व से ऊपर की ओर निकलती है और संतति पादप बनाती है जिसे अंत:भूस्तारी (sucker) कहते हैं। अंत:भूस्तारी *क्राइसेंन्थिमम* (*Chrysanthemum*) में पाए जाते हैं।

बहुत से आवृतबीजी पादपों में तना खाद्य सामग्री के संग्रह के लिए रूपांतरित हो जाता है। अदरक, *जिन्जिबर आफिसिनेल* तथा हल्दी, *कुरकुमा डोमेस्टिका (Curcuma domestica)* में खाया जाने वाला भाग गूदेदार अधिक शाखित तना होता है जो चिरकालिक अंग की भांति कार्य करता है। आलू *सोलेनम ट्यूबरोसम (Solanum tuberosum)* में तने के भूमिगत भाग से निकलने वाली अपस्थानिक शाखाएं अपने सिरों पर फूल जाती हैं और कंद बनाती हैं , जो भोजन संचित कर लेते हैं ज्यादातर ये मंड के रूप में होता है। केसर, *क्रोकस सैटाइवस* में तथा ग्लेडिओलस (gladiolus) में चिरकालिकता घनकंदों के द्वारा होती है जो तने का ठोस निचला भाग होते हैं; प्रत्येक में बड़ी शीर्षस्थ कलिका होती है। धनकंद छोटे शल्क पत्रों से ढंक रहता है और उसके निचले सिरे से अपस्थानिक जड़ें निकलती हैं। तने का एक अन्य रूपांतरण प्याज, *ऐलियम सीपा (Allium cepa)* तथा कंदाकार, *पोलीएन्थीज ट्यूबरोसा (Polyanthes tuberosa)* में देखा जाता है। इन पादपों में ऐसे कन्द होते हैं जिनमें तना डिस्कनुमा संरचना में तनुकृत हो जाता है जिससे गूदेदार शल्क पत्र निकलते हैं। शीर्ष पर एक कलिका होती है जिसमें उपयुक्त मौसम में पुष्पदंड (scape) विकसित होते हैं। संतति कन्द अथवा कली जनक कन्द से विकसित होते हैं जो कायिक प्रवर्धन में बहुत प्रभावी तरीके से कार्य करते हैं।

बहुत से आवृतबीजी पादपों में पत्तियां रूपान्तरण दर्शाती हैं जो प्रमुख रूप से नमी के क्षय में कमी अथवा जल के संचय का कार्य करती हैं। *ओपन्शिया* तथा *बेरबेरिस (Berberis)* में पत्तियां सुरक्षा तथा जल के व्यय को रोकने के लिए शूलों में रूपांतरित हो जाती हैं। बहुत से मरूद्भिदी पादपों में तथा लवणमृदोद्भिदों (halophytes) में, जैसे कि *कालेन्चौय* तथा *सीडम* की जातियों में पत्तियां जल के संग्रह के कारण गूदेदार होती हैं। आरोही पादपों जैसे *लैथाइरस ओडोरेटस (Lathyrus odoratus)* में पर्ण पटल प्रतान बनाने के लिए रूपांतरित हो जाता है जो पादप को आधार पर चढ़ने में सहायता करता है।

आवृतबीजी पादपों की जड़ें अक्सर विविध कार्यों के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। बरगद के वृक्ष *फाइकस बैंगालेन्सिस* में अवस्तंभ मूल (prop roots) होते हैं जो तने की क्षैतिज शाखाओं से नीचे लटकी रहती हैं और वृक्ष को खंबों की भाँति सहायता प्रदान करती हैं। मक्का, *जिआ मेज़ (Zea mays)* स्क्रूपाइन *पैन्डेनस फोइटीडस (Pandanus foetidus)* तथा अनेको मैन्ग्रोव्स जैसे *राइजोफोरा* में निचली पर्वसंधियों से अवस्तम्भ मूल निकलती हैं जो तिरछे रूप से नीचे की ओर मिट्टी में घुस जाती हैं और मजबूती से तने को सहारा दिए रहती हैं। मैंग्रोव पादप जो जलाक्रांत (water logged) मिट्टी में उगते हैं उनमें श्वसन मूल होती है जो ऊर्ध्वाधर रूप से ऊपर की ओर बढ़ती है और गैसों का आदान-प्रदान करती हैं। बहुत से पादपों में जड़ें भोजन सामग्री संचित करती हैं। ऐसी संचयी जड़ें मूली, गाजर तथा चुकंदर में पाई जाती हैं। संचित भोजन सामान्यत: पादप द्वारा पुष्पन और फलन के दौरान उपयोग कर लिया जाता है। रूपांतरणों के विस्तृत विवरणों के बारे में आप इकाई 8 में पढ़ेंगें।

बोध प्रश्न 2

कॉलम ब के शब्दों को कॉलम अ में दिए गए नामों से मिलाइए।

	अ		ब
क)	*कैसिया स्पी. (Cassia sp)*	i)	भूमिगत् प्रकंद अथवा घनकंद के द्वारा चिरकालिकता करते हैं
ख)	*क्रोकस सेटाइवस*	ii)	वर्ष में दो बार पुष्पन करते हैं
ग)	*कारिसिआ स्पीसिओसा (Chorisia speciosa)*	iii)	बहुवर्षी
घ)	रैफैनस सैटाइवस *(Raphanus sativas)*	iv)	द्विवर्षी
ड.)	*नीरियम इंडिकम*	v)	वर्ष में एक बार पुष्पित होते हैं।

बोध प्रश्न 3

जलोद्भिदों की पत्तियों में पाए जाने वाले रूपांतरणों को बताइए।

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 4

रिक्त स्थानों को उचित शब्द/शब्दों से भरिए

i) रूपांतरित तने में हम तने को .... तथा .... की उपस्थिति के द्वारा पहचानते हैं।

ii) .... स्पी. में जहाँ सामान्य शाखाएं नीचे की ओर झुक जाती हैं और मिट्टी के अंदर घुसकर संतति पादप बनाती हैं वे .... कहलाती हैं।

iii) क्राइसेन्थिमम .... का अच्छा उदारहण है।

iv) .... में भोजन .... के रूप में संचित रहता है।

v) .... में पर्ण पटल .... बनाने के लिए रूपांतरित हो जाता है।

vi) मैन्ग्रोव पादप जो जलाक्रांत मिट्टी में उगते हैं उनमें .... तथा .... होते हैं।

6.5 आवृतबीजी पादपों में संवहनी ऊतक

आवृतबीजी पादपों की पृथ्वी पर सफलता के लिए जिम्मेदार एक प्रमुख कारक जल और भोजन के परिवहन के लिए उनकी अधिक सक्षम क्रियाविधियां हैं। अनावृतबीजी पादपों में, अधिक उन्नत नीटेलीज (Gnetales) तथा वेलविशिएलीज (Welwitschiales) को छोड़कर, अन्य वंशों में जल मुख्यत: वाहिकाओं द्वारा ले जाया जाता है जो छिद्रित दारू/जाइलम तत्व होते हैं जो एक दूसरे से पार्श्व रूप से गर्तों (pits) द्वारा जुड़े रहते है। इसके विपरीत, आवृतबीजी पादपों में वाहिकाएं होती हैं जिनमें अनेकों वाहिका सदस्य ऊर्ध्वाधर कतारों में व्यवस्थित रहते हैं जो चौड़े छिद्रों द्वारा जुड़े रहते हैं। वाहिकाओं द्वारा जल के अधिक प्रभावी संवहन के कारण, आवृतबीजी पादप विविध आवासों में अधिक तेजी से तथा अधिक ऊँचे उगते हैं।

पोषवाह/फ्लोएम, जो भोजन को पत्तियों से अन्य अंगों में ले जाता है, जहाँ वो उपयोग अथवा संचित हो जाता है, भी आवृतबीजी पादपों में अधिक विकसित होता है। अनावृतबीजी पादपों में चालनी कोशिकाएं होती हैं जो एक दूसरे से पार्श्व चालनी क्षेत्रों द्वारा जुड़ी रहती हैं जिनमें बारीक छिद्र होते हैं जिनके द्वारा भोजन धीमी गति से ही जा पाता है। आवृतबीजी पादपों में, इसके विपरीत, चालनी नलिकाएं होती हैं जिनमें चालनी नलिका सदस्य सिरे से सिरे तक लंबी कतारों में जुड़ें रहते हैं जो चौड़े छिद्रों वाली चालनी पट्टिकाओं द्वारा विभक्त रहते हैं। चालनी नलिकाओं में जीवित सहचर कोशिकाएं होती हैं जो भोजन सामग्री के अधिक प्रभावी संवहन में सहायता करती हैं। इसके बारे में विस्तार से इस खंड की इकाई 7 में बताया जाएगा। अनावृतबीजी काष्ठ में वाहिनिकाएं होती हैं जो न सिर्फ जल का संवहन करती हैं बल्कि अंग को अधिक शक्ति भी प्रदान करती हैं। आवृतबीजी पादपों में दारू/जाइलम का संगठन अधिक जटिल होता है। वाहिनिकाएं जल के संवहन के लिए वाहिकाओं को तथा सहारे और शक्ति के लिए फाइबर्स को जन्म देती हैं। फाइबर्स में अधिक मोटी भित्तियां, पतली अवकाशिका (lumen) तथा गर्त तनुकृत या अनुपस्थित होते हैं। फ़ाइबर्स के कारण, आवृतबीजी वृक्षों की काष्ठ में कठोर बनावट तथा अधिक तनन सामर्थ्य (tensile strength) होती है।

बोध प्रश्न 5

आवृतबीजी तथा अनावृतबीजी पादपों के संवहनी ऊतकों के बीच अंतर बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

6.6 आवृतबीजी पादपों में प्रजनन

आवृतबीजी पादपों द्वारा पृथ्वी पर अपने वर्चस्व को बनाए रखने का एक प्रमुख कारण उनकी प्रजनन की क्रियाविधि है। आवृतबीजी पादपों में प्रजनन के बारे में विस्तार से इकाई 9– पुष्प, फल तथा बीज में बताया गया है। अनावृतबीजी पादपों के विपरीत, जिनमें शंकु होते हैं, आवृतबीजी पादपों में पुष्प होते हैं जो कहीं अधिक विविधता तथा अनुकूलन दर्शाते हैं। पुष्प में सहायक बाहरी चक्र होते हैं जिन्हें बाह्यदल तथा दल कहते हैं। ये उर्वर भाग पुंकेसर तथा अंडप को ढंके रहते हैं। बाह्यदलों, पुंकेसरों तथा अंडपों की संख्या, व्यवस्था, साइज तथा आकृति परिवर्तनीय होते हैं। बाह्यदल तथा दल छोटे अथवा अस्पष्ट हो सकते हैं जैसे घासों, एमारेन्थ्स (Amaranths) तथा शहतूत में। *यूफॉर्बिया* स्पी. में नर पुष्प में सिर्फ एक पुंकेसर तथा मादा पुष्प में सिर्फ एक स्त्रीकेसर होता है; बाह्यदल तथा दल अनुपस्थित होते हैं। हालांकि अधिकांश आवृतबीजी पादपों में बड़े तथा स्पष्ट दल होते हैं जैसे *पिटूनिया (Petunia)*, गुलाब तथा कपास में। पुष्प आवश्यक रूप से परागण के तरीके के अनुसार रूपांतरित हो जाते हैं।

पुंकेसरों में परागकोष होते हैं जो लघुबीजाणु या परागकण उत्पन्न करते हैं। आवृतबीजी पादपों में परागकण काफी तनुकृत नर युग्मकोद्भिद को प्रदर्शित करते हैं, जिनमें कायिक कोशिका तथा जनन कोशिका होती है। जनन कोशिका विभाजित होकर दो पुमणु या नर युग्मक बनाती है।

आदि आवृतबीजी पादपों में, जैसे कि मैग्नोलिएसी (Magnoliaceae) तथा रेननकुलेसी (Ranunculaceae) के सदस्यों में पुंकेसर तथा अंडप पत्ती जैसे दिखाई पड़ते हैं। जबकि, अन्य सभी आवृतबीजी पादपों में पुंकेसर तंतु तथा परागकोष में विभेदित होता है। पुष्प में एक या अधिक, परन्तु

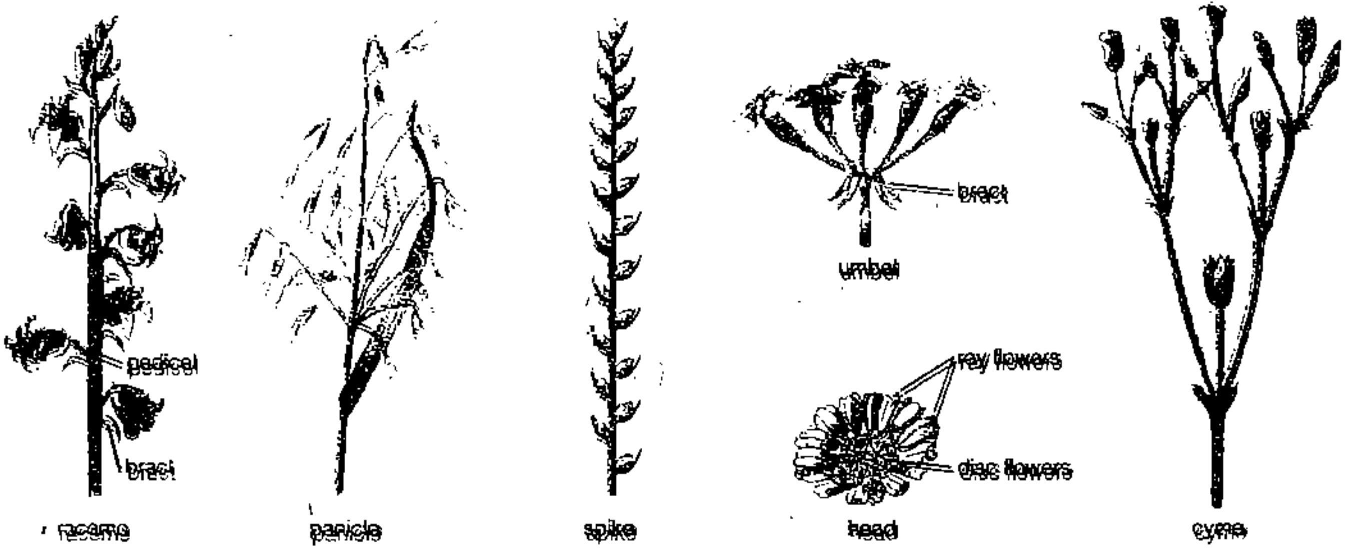

चित्र 6.2 : पुष्पक्रमों के प्रकार

सामान्यत: 3-5 मुक्त या युग्मित पुंकेसर होते हैं। अंडप भी एक से अनेक हो सकते हैं, परन्तु सामान्यत: पाँच तक तथा एकल बहुअंडपी स्त्रीकेसर बनाने के लिए युग्मित रहते हैं। स्त्रीकेसर अंडाशय वर्तिका तथा वर्तिकाग्र में विभेदित होती है। अंडाशय में एक या अधिक बीजांड हैं। बीजांड की संरचना अनावृतबीजी पादपों के समान ही होती है परन्तु आवृतबीजी पादपों में अध्यावरण एक या दो हो सकते हैं। अगुणित भ्रूणकोष बनाने के लिए अंडाशय के बीजांडकाय (nucellus) में गुरूबीजाणु मातृ कोशिका में अर्ध सूत्री विभाजन होता है। भ्रूण कोष बहुत ही तनुकृत मादा युग्मकोद्भिद को प्रदर्शित करता है। इसमें अंड, दो सहाय कोशिकाएं एक केन्द्रीय कोशिका दो ध्रुवीय केन्द्रकों तथा तीन प्रतिव्यासांत (antipodal) कोशिकाओं के साथ होती हैं।

वे पुष्प जो अजैविक कारक (agencies) जैसे वायु तथा जल द्वारा परागित होते हैं उनमें अस्पष्ट बाह्यदल तथा दल होते हैं, परन्तु ये बड़ी मात्रा में चिकनी-भित्ति वाले परागकण बनाते हैं। वर्तिकाग्र सुस्पष्ट होती है कभी-कभी ये परागकणों के पकड़ने के लिए पंखयुक्त होती है, जैसे घासों में। पुष्प जो दिन में निकलने वाले कीटों जैसे मधुमक्खियों तथा तितलियों द्वारा परागित होते हैं उनमें चटकीले तथा उत्कृष्ट पुष्प होते हैं, अक्सर ये सुगंधयुक्त (जैसे गुलाब में) अथवा द्विसममित आकृति के होते हैं जो कीटों के समान होते हैं (जैसे कि फलियों/लैग्यूम तथा ऑर्किड्स में)। रात्रिकालीन कीटों जैसे शलभों से परागित होने वाले पुष्पों में तीक्ष्ण सुगंध होती है जैसे रात की रानी *सेस्ट्रम नोक्टरनम* (*Cestrum nocturnum*) में। पक्षियों द्वारा परागित होने वाले पुष्प, जैसे सेमल, *बाम्बैक्स सीबा* तथा ढ़ाक, *ब्यूटिया मोनोस्पर्मा* (*Butea monosperma*) के पुष्प बड़े, प्यालेनुमा तथा चटकीले रंगों के होते हैं। जैविक कारकों जैसे पक्षियों तथा कीटों द्वारा परागित होने वाले पुष्प अपने परागणकर्ता को मकरंद इनाम में देते हैं। सामान्यत: जंतु-परागित पुष्पों में प्रत्येक अंडाशय में बड़ी संख्या में बीजांड तथा बीज होते हैं (जैसे टमाटर, कद्दू तथा पॉपी में) क्योंकि एक ही रेंगने या उड़ने वाले जंतु बड़ी मात्रा में परागकण ले आता है, जो बड़े, चिपचिपे तथा विभिन्न प्रकार से अलंकृत होते हैं।

परागकण वर्तिकाग्र पर अंकुरित होकर परागनलिका बनाते हैं जो वर्तिका में से गुजर कर अंडाशय में बीजांड(ों) तक पहुँचती है। वर्तिका द्वारा अलग किए गए वर्तिकाग्र पर परागकणों के आने से न सिर्फ अंडाशय सुरक्षित रहता है, बल्कि इसने आवृतबीजी पादपों को ऐसी क्रियाविधि विकसित करने में समर्थ बनाया है जिससे केवल समान जाति के वांछित परागकण ही पुष्प के वर्तिकाग्र पर अंकुरित हो सकते हैं। परागनलिका बीजांड में बीजांडद्वार (micropyle) के जरिए प्रवेश करती हैं और दो सहाय कोशिकाओं में से एक में से अपनी राह चुन लेती है जो अंड को भ्रूणकोष में रक्षित किए रहती हैं। परागनलिका दोनों नर युग्मकों अथवा पुमणुओं को वेधी गई सहाय कोशिका में छोड़ देती है। सहाय कोशिका से एक युग्मक अंड में प्रवेश करके उसके केन्द्रक को निषेचित करके द्विगुणित युग्मनज बनाता है, जबकि दूसरा केन्द्रीय कोशिका के केन्द्रक के साथ युग्मित होकर त्रिगुणित प्राथमिक भ्रूणपोष केन्द्रक बनाता है। द्विनिषेचन की यह प्रक्रिया सिर्फ आवृतबीजी पादपों में ही पाई जाती है। युग्मनज समसूत्री विभाजन द्वारा एक विशेष पैटर्न में विभाजित होकर भ्रूण बनाता है, जो बीजाणुउद्भिद की अगली पीढ़ी को निर्मित करता है। प्राथमिक भ्रूणपोष केन्द्रक बारंबार विभाजित होकर भ्रूणपोष बनाता है जो बीज में भ्रूण के पोषण के लिए भोजन संचित करता है। अनावृतबीजी पादपों में संचित भोजन के साथ भ्रूणपोष ऐसी अवस्था में भी विकसित हो जाता है जब बीज में कोई भी भ्रूण सफलतापूर्वक नहीं बन पाया होता है। आवृतबीजी पादपों में भ्रूणपोष सिर्फ तब ही बनता है जब अंड निषेचित हो जाता है और बीज में भ्रूण बन जाता है। अपने आर्थिक महत्व के कारण, अनेक आवृतबीजी पादप अनावृतबीजी पादपों की तुलना में कहीं अधिक बीज निर्मित करते हैं।

वर्तिकाग्र का परागण अंडाशय को फल निर्मित करने के लिए प्रेरित कर देता है, जबकि द्विनिषेचन बीज में बीजांडों का विकास करता है। आवृतबीजी पादपों में फल तथा बीज भ्रूण की दो प्रमुख आवश्यकताओं सुरक्षा तथा प्रभावी परिक्षेपण को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार से अनुकूलित रहते हैं। अनेकों पादपों में, जैसे बादाम, नारियल तथा मूंगफली में फल भित्ति कठोर परन्तु बीजावरण (seed coat) पतला तथा मुलायम होता है। गूदेदार फलों जैसे टमाटर, सैपोडिला/सदाबहार पादप तथा अमरूद में फल मुलायम तथा गूदेदार परन्तु उनके भीतर बीज कठोर होते हैं। अत: भ्रूण, सुरक्षित तथा प्रकृति के विभिन्न प्रकोपों से तब तक अप्रभावित रहता है जब तक बीज अंकुरित नहीं हो जाता और भ्रूण नए पादप के रूप में नहीं उग जाता है।

बोध प्रश्न 6

वायु परागित पुष्पों के गुणों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 7

पुष्पों के उन गुणों को बताइए जो परागणकर्ताओं को आकर्षित करने में सहायक होते हैं।

....

....

....

....

....

....

6.7 फल तथा बीज का परिक्षेपण

आपको ध्यान होगा कि अनावृतबीजी पादपों में बीज का परिक्षेपण/प्रकीर्णन वायु द्वारा होता है। कुछ अनावृतबीजी पादपों में बीज में पंख होते हैं जिनकी सहायता से बीज कुछ दूरी तक चले जाते हैं। आवृतबीजी पादपों में फलों तथा बीजों में बड़े दूर के क्षेत्रों तक परिक्षेपण के लिए विविध तरीके होते हैं।

पॉपी/खसखस के कैप्सूल में लंबा वृंत होता है जिस पर फल हवा के साथ झूलता है और उसके छोटे बीज सभी दिशाओं में फैल जाते हैं। बालसम, *इम्पेशिएन्स* स्पी. (*Impatiens* spp.) में बेलनाकार कैप्सूल के पाँच अंडप अलग हो जाते हैं और झटके से अंदर की ओर मुड़ जाते हैं जिससे बीज दो मीटर दूर तक जा गिरते हैं। अनेकों फल तथा बीज वायु द्वारा परिक्षेपित होते हैं। ऑर्किड्स लाखों की संख्या में बीज निर्मित करते हैं जो हवा द्वारा परिक्षेपित हो जाते हैं। अनेकों फलों (उदा. *एसर* स्पी. (*Acer* sp) तथा बीजों (डमस्टिक, *मोरिन्गा ऑलीफेरा*) में पंख होते हैं। भारतीय सेमल, *बाम्बैक्स सीबा* तथा मिल्कवीड *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* के बीजों में रोम होते हैं जिनके द्वारा वे लंबी दूरी तक ले जाए जाते हैं। जल में अथवा उसके निकट उगने वाले पादप अक्सर जल का उपयोग बीज तथा फलों के परिक्षेपण के लिए करते हैं। नारियल, *कोकोस न्यूसीफेरा* ऐसे फल का बेहतरीन उदाहरण है जो विभिन्न महाद्वीपों के तटीय क्षेत्रों में अपनी सैंकड़ों किलोमीटर्स तक तैरने की क्षमता के कारण फैला है। अनेकों फल तथा बीज जंतुओं द्वारा ले जाए जाते हैं। आलूचा, अंगूर, अंजीर तथा अमरूद पक्षियों द्वारा खाए जाने वाले फलों के उदाहरण हैं। अंकुरण के लिए तैयार बीज बीट के साथ ऐसे स्थानों पर गिर जाते हैं जो वृद्धि के लिए उपयुक्त होती है। कम्पोजिटी कुल के अनेक पादप जैसे कि *बाइडेन्स* स्पी. (*Bidens* spp) तथा कॉकलीबर, *जैन्थियम स्ट्रूमेरियम* (*Xanthium strumarium*) में हुक या काँटे होते हैं जिनके द्वारा फल फर वाले जंतुओं से चिपक जाते हैं और दूर-दूर तक फैल जाते हैं। गूदेदार बीजचोल (aril) जो लीची, *लीची चाइनेन्सिस* तथा फलीदार वृक्ष *पिथीकोलोबियम डल्से* (*Pithecollobium dulce*) के बीज को ढंके रहता है उसे पक्षी खा लेते हैं तथा बीज को फेंक देते हैं। एरंड, *रिसिनस कम्युनिस* के बीजों में एक सिरे पर कॉलर- जैसा बीजचोलक होता है। चींटे भोजन से समृद्ध बीजचोलक को खा लेते हैं और इस प्रक्रिया में बीजों को वितरित कर देते हैं।

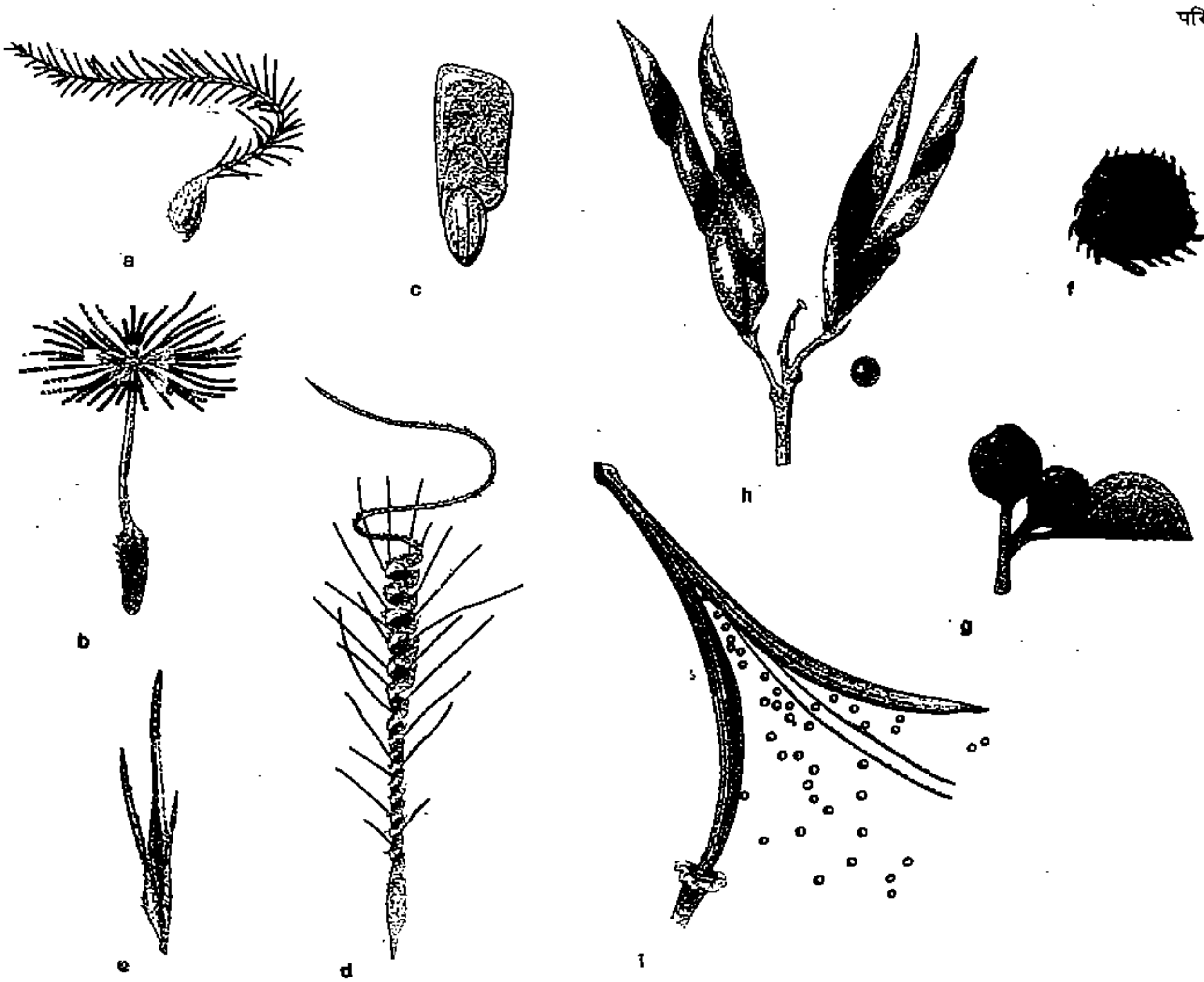

चित्र 6.3 : वायु द्वारा परिक्षेपण में कारगर विभिन्न तरीकों को दर्शाते फल तथा बीज a) क्लीमेटिस (*Clematis*) b) डेन्डिलान (*टैरक्सकम वल्गेरी; Taraxacum vulgare*) c) काउन्टर्स वड़े-शंकु ताड़ के बीज (*पाइनस काउल्टेरी; P. coulteri*) d) क्रेन्सविल (*जिरेनियम; Geranium*) e) फॉक्सटेल (*हारडियम हिस्पिडा; Hordeum hispida*) f) वर क्लोवर (*मेडिकागो डेन्टीकुलेटा; Medicago denticulata*) g) कोटोनिएस्टर (*Cotoneastar*) के गूदेदार खाद्य फल, h) वेच (*विसिया सैटाइवा; Vicia sativa*) i) कैलीफोनियां पॉपी *एशचोलजिया कैलीफॉर्निका; Eschscholtzia californica*) ।

अधिकांश पुष्पी पादपों के बीजों में मांड, लिपिड तथा/या प्रोटीन्स उनके भ्रूणपोष (उदा. एरंड तथा गेहूँ) अथवा भ्रूणीय ऊतकों (मूंगफली तथा सरसों) में पाए जाते हैं। यह संचित खाद्य पदार्थ तरुण बीजाणुउद्भिद को बीज का अंकुरण आरंभ होने के बाद उसकी प्रारंभिक वृद्धि में सहायता करता है। आवृतबीजी पादपों के बीजों/कणों में संचित भोजन मानव तथा मवेशियों के पोषण का भी मुख्य स्रोत है।

6.8 पादप सुरक्षा

पुष्पी पादपों ने स्वयं को कीटों, रोगजनकों तथा शाकभक्षियों से बचाने के लिए विविध प्रकार के तरीके विकसित कर लिए हैं। अनेक पादपों में अधिचर्मी उपांग होते हैं जिन्हें त्वचारोम (trichome) कहते हैं। ग्रंथिविहीन त्वचारोम, जैसे कि सोरघम तथा सोयाबीन में पाए जाते हैं, वे कीटों की काया में चुभ जाते हैं या सिर्फ उनके पैरों को जकड़ लेते हैं। ग्रंथियुक्त त्वचारोम अनेक प्रकार के वाष्पशील तेल/संगध तेल, श्लेष्मा (mucilage), गम तथा रेज़िन, कार्बनिक अम्ल, ऐल्केलॉइड तथा विषाक्त पदार्थ भी निकालते हैं जो शिकार को भगा या मार देते हैं। चना, (*साइसर ऐरीटिनम*) तंबाकू (*निकोटिआना टुबैकम (Nicotiana tobaccum)*) तथा पुदीना (*मेन्था स्पिकेटा (Mentha spicata)*) ऐसे पादपों के उदाहरण हैं जिनमें ग्रंथियुक्त त्वचारोम पाए जाते हैं। अनेकों आवृतबीजी पादपों में टैनिन, रेजिन तथा अन्य कड़वे तत्व पाए

जाते हैं (उदा. ऐकेशियाज तथा प्रोसोपिस) जिसके कारण जंतु उन्हें छोड़ देते हैं। स्पर्जेस (*यूफोर्बिया स्पी.*) मिल्कवीड (*कैलोट्रापिस प्रोसेरा*) तथा पॉपी, (*पैपेवर सोम्नीफेरम (Papaver somniferum)*) ऐसे पादपों के उदाहरण हैं जिनमें दूधिया तरल पदार्थ (लेटैक्स) पाया जाता है जो शाकभक्षण के विरुद्ध प्रभावी होता है। भाग्यवश वे द्वितीयक पदार्थ जो अनेकों आवृतबीजी पादपों में उनकी सुरक्षा के लिए पाए जाते हैं वे मानव द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली अनेकों दवाइयों, मसालों, नशीली दवाओं, कीटनाशकों और अनेकों पदार्थों में उपयोग किए जाते हैं।

6.9 आवृतबीजी पादपों की उत्पत्ति

अधिकांश विकासविद् वनस्पति शास्त्री आवृतबीजी पादपों को एकस्त्रोद्भवी (monophyletic) समूह का मानते हैं। पुष्प, सहाय कोशिकाओं युक्त चालनी नलिका, वाहिका, 8-केन्द्रकी भ्रूणकोष तथा द्विनिषेचन का पाया जाना ऐसे गुण हैं जो सिर्फ आवृतबीजी पादपों में ही पाए जाते हैं। इन गुणों के स्वतंत्र रूप से पूर्वज पादपों के एक से अधिक समूह में पाए जाने की संभावना कम ही है (तख्ताजन, 1969 ; स्पोर्न 1974)। आवृतबीजी पादपों की अनावृतबीजी पादपों के आदि समूह से उत्पत्ति की संभावना काफी अधिक है, जो संभवत: अब नहीं पाया जाता है। जीवाश्म रिकॉर्ड बताते हैं कि सबसे प्राचीन आवृतबीजी पादपों की उत्पत्ति क्रिटेशस कल्प (Createous period) के आरंभ में (लगभग 1410-650 लाख वर्ष पूर्व) हुई थी तथा मध्य क्रिटेशस कल्प तक वे प्रभावी हो गए थे और आज पाए जाने वाले प्रमुख समूहों में विविधरूपायित हो गए थे।

सबसे प्राचीन जीवित आवृतबीजी पादपों को मैग्नोलिएलीज (Magnoliales) में रखा गया है, जो ऐसे वृक्ष हैं जिनमें प्राचीन प्रकार के संवहनी ऊतक (कुछ में वाहिकाएं नहीं होती हैं) तथा ऐसे पुष्प पाए जाते हैं जिनमें अनेक मुक्त, सर्पिल रूप से व्यवस्थित बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप होते हैं। पुंकेसर तथा अंडप चपटे पत्ती-जैसे होते हैं जिनमें बहुत कम अंतर होता है।

6.10 आवृतबीजी पादपों का वर्गीकरण

आज के आवृतबीजी पादपों को दो प्रमुख समूहों में वर्गीकृत किया जाता है – द्विबीजपत्री पादप/डाइकॉटिलिडिनी (Dicotyledonae) मैग्नोलिओप्सिडा (Magnoliopsida) तथा एकबीजपत्री पादप/मोनोकॉटिलिडिनी (Liliopsida, लिलिओप्सिडा)। द्विबीजपत्री पादपों की लगभग 2,00,000 तथा एकबीजपत्री पादपों की 50,000 जातियाँ पाई जाती हैं। ये दोनों समूह अनेक बातों में भिन्न होते हैं। जैसा कि नाम से विदित है, द्विबीजपत्री पादपों में भ्रूण में दो बीजपत्र होते हैं (आवृतबीजी पादपों के जैसे) तथा एकबीजपत्री पादपों में भ्रूण में सिर्फ एक बीजपत्र होता है। दिखने में द्विबीजपत्री पादपों में सामान्यत: जालिकावत् शिराविन्यास (venation) युक्त चौड़ी पत्तियाँ होती हैं, जबकि एकबीजपत्री पादपों में समानान्तर शिरा विन्यास युक्त पतली पत्तियां होती हैं। द्विबीजपत्री पादपों के पुष्प में पाँच या कभी-कभी चार बाह्यदल तथा दल होते हैं। एकबीजपत्री पादपों में इनकी संख्या तीन (या तीन के गुणकों में) होती है। द्विबीजपत्री पादपों में तना तथा जड़ में द्वितीयक वृद्धि होती है जिसमें कैम्बियम की विभज्योतकी क्रिया के परिणामस्वरूप दारू/जाइलम का ठोस बेलन बनता है। जो पोषवाह/फ्लोएम के बेलन से घिरा रहता है। द्वितीयक वृद्धि के कारण द्विबीजपत्री पादपों का तना/स्तंभ उम्र के साथ चौड़ाई में बढ़ता जाता है और उनमें से अनेक विशाल वृक्षों के रूप में उगते हैं। एकबीजपत्री पादपों में द्वितीयक वृद्धि नहीं होती है। नए संवहनी पूल परिधि की ओर विभेदित रहते हैं और ये भरण मृदूतक (ground parenchyma) में बिखरे रहते हैं। एकबीजपत्री पादपों में तना तथा जड़ अपेक्षाकृत पतले होते हैं।

तख्ताज़न (1969) ने मैग्नोलिडी (Magnolidae) को विकास का आधार माना है जिससे मैग्नोलिओप्सिडा (द्विबीजपत्री) तथा लिलिओप्सिडा (एकबीजपत्री) विकसित हुए हैं। उन्होंने मैग्नोलिओप्सिडा को सात उपवर्गों में तथा लिलिओप्सिडा को तीन उपवर्गों में वर्गीकृत किया है। हैमैमेलिडी (Hamamelidae) शीतोष्ण काष्ठीय पादपों जैसे हेजेल (*हैमैमेलिस स्पी; Hamamelis* spp., आल्डर/भिदुर (*ऐलनस स्पी. Alnus* spp), बाँज (*क्वेर्कस स्पी.; Quercus* spp.) तथा भोजपत्र (*बेटूला स्पी.; Betula* spp.) का अपेक्षाकृत

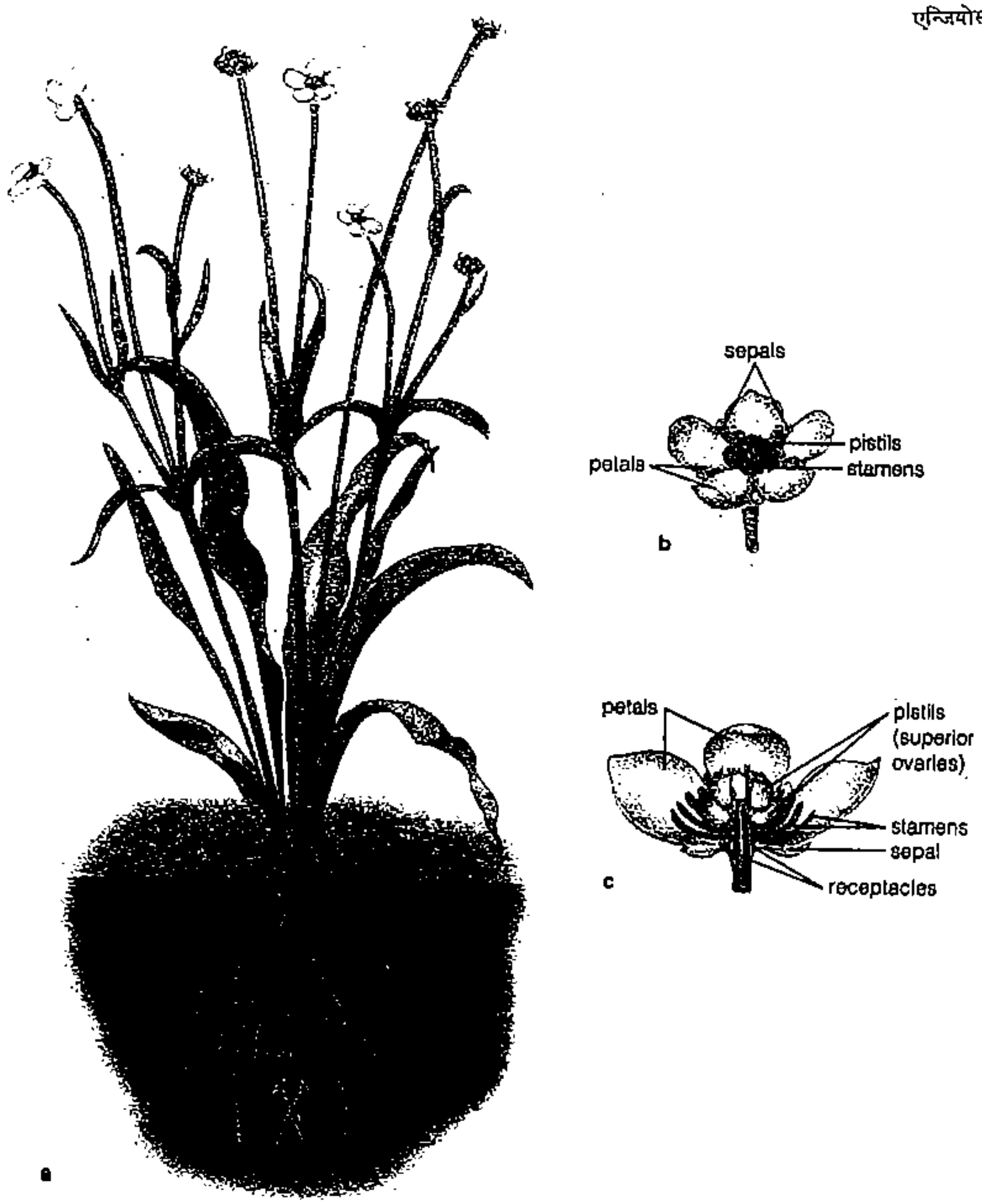

चित्र 6.4 : रैननकुलिडी : यह आदि कुल *रैननकुलस एलिसमैफोलीयस*; (*Ranunculus alismaefolius*) द्वारा प्रतिरूपित है। a) पूरा पौधा b) एकल पुष्प c) पुष्प का सेक्शन

छोटा उपवर्ग है। इसके सदस्यों में वायु परागण होता है और इसीलिए इनमें से अधिकांश में पुष्प कैटकिन/नतकणिश में होते हैं जो दिखने में शंकु जैसे लगते हैं। दूसरी शाखा जो मैग्नोलिडी से विकसित हुई है वो रैननकुलिडी (Ranunculidae) हैं, जिसमें पुराने/आदि प्रकार के ही पुष्पीय गुण हैं परन्तु शाकीय प्रकृति विकसित हो गई है जैसे बटरकप (*रैननकुलस स्कलरैटस* ; *Ranunculus sceleratus*) में। रैननकुलिडी से कैरियोफिलिडी (Caryophyllidae) विकसित हुई है जिसमें शाकीय प्रकृति परन्तु विशेषीकृत पुष्पीय गुण होते हैं जैसे कि कैक्टस, चुकन्दर तथा ऐमारेन्थों में दिखाई पड़ते हैं। डिलीनिडी (Dillenidae) उपवर्ग में बड़े शाकीय तथा काष्ठीय कुल हैं जैसे सरसों, शहतूत तथा डिप्टैरोकार्पस के कुल। इस समूह में कपास, जूट, भाँग तथा चाय भी सम्मिलित हैं। उपवर्ग रोजिडी (Rosidae) सबसे विविध समूह है जिसमें फलियां, स्पर्ज (*यूफॉर्बिया* स्पी.), यूकेलिप्टस, गुलाब तथा गाजर सम्मिलित हैं। द्विबीजपत्री पादपों का सबसे विकसित वर्ग ऐस्टेरिडी (Asteridae) है, इसमें टमाटर, पुदीना, सूरजमुखी के कुल सम्मिलित हैं। ये पादप शाकीय हैं जिनमें विशेषीकृत पुष्पक्रम, पुष्प तथा फल होते हैं।

लिलिओप्सिडा (एकबीजपत्री पादपों) बहुत पहले ही मैग्नोलिडी (द्विबीजपत्री पादपों) से अलग हो गए थे। सबसे प्राचीन लिलिओप्सिडा ऐलिस्मेटिडी (Alismatidae) में हैं, जिन्हें मुश्किल से ही द्विबीजपत्री पादपों से

अलग किया जा सकता है। ये शाकीय, जलीय पादप हैं जिनमें वाहिकाएं सिर्फ जड़ों में ही पाई जाती हैं (उदा. ऐरोहेड, *सेजीटेरिया* स्पी.) अधिक उन्नत उपवर्ग ऐरिकेडीएइ (Arecidae) हैं, जिसमें ताड़ जैसे नारियल, तेल ताड़ तथा खजूर ताड़ सम्मिलित हैं। इस उपवर्ग में सबसे छोटे पुष्पीय पादप, डक्वीड्स (*लेम्ना; Lemna* तथा *वोल्फिया Wolffia*) हैं। एकबीजपत्री बहुत पादपों का सबसे उन्नत उपवर्ग लिलिडी (Lilidae) है जिसमें अत्यधिक विविधता है। इसकी एक शाखा में बहुत अधिक विशेषीकृत ऑर्किड्स, लिलीस तथा ब्रोमीलिएडस शामिल हैं जिनमें रंगीन पुष्प होते हैं जो कीटों द्वारा परागित होते हैं। दूसरी शाखा में छोटे, तनुकृत तथा वायु-परागित पुष्प होते हैं जो घासों, बॉस तथा नरकुलों (sedges) में पाए जाते हैं।

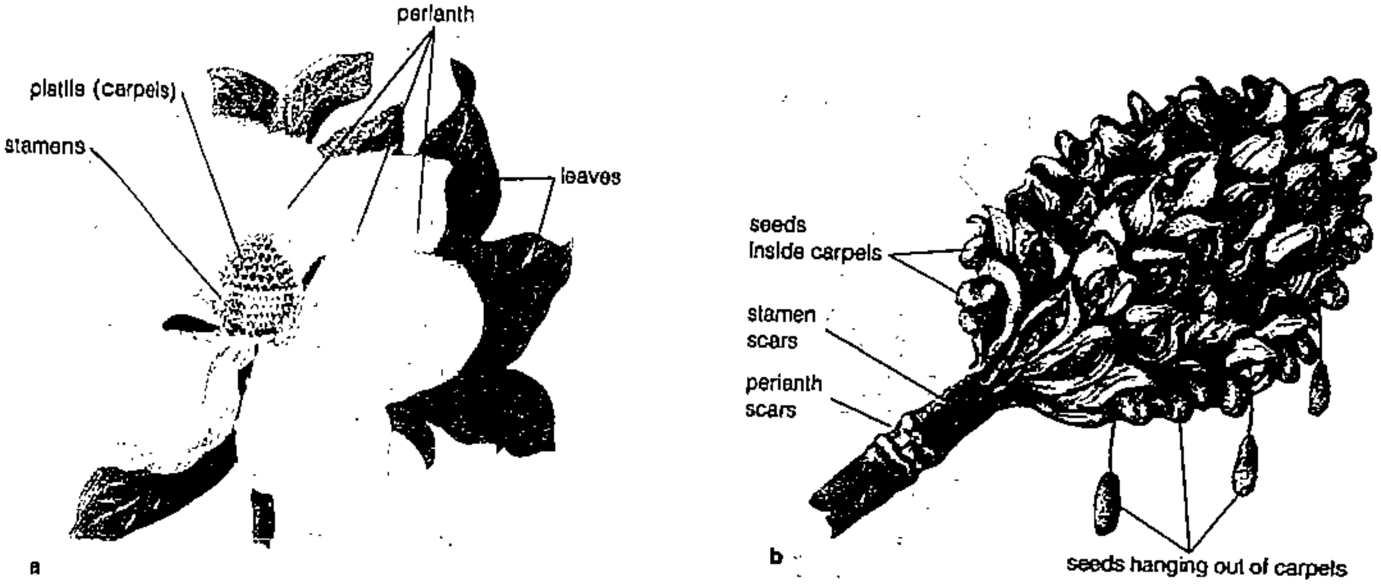

चित्र 6.5 : *मैग्नोलिया ग्रैन्डीफ्लोरा (Magnolia grandiflora)*: a) पुष्प b) फल। इस डिवीजन में पादप की नवीन संरचनाओं को यहाँ दिखाया गया है, पुष्प, स्त्रीकेसर (अंडप) के भीतर स्थित बीजांड के साथ तथा फल।

6.11 स्वपोषित तथा परपोषित पादप

अधिकांश आवृतबीजी पादप स्वपोषित होते हैं। वे अपना खाना स्वयं प्रकाश संश्लेषण के द्वारा, पर्यावरण से सिर्फ अकार्बनिक कच्चे पदार्थ लेकर बनाते हैं। स्वपोषित पौधों में भी विशेष अनुकूलन होते हैं, खासतौर पर उनमें जो विशेषीकृत आवासों जैसे कि जल, मरूस्थल अथवा मैंग्रोव दलदली स्थानों में पाए जाते हैं। कुछ मरूस्थली पादप गूदेदार होते हैं - उनके मांसल तने (*ऑपन्शिया*) या पत्ती (केलेन्चौय) में जल संग्रह करने के ऊतक होते हैं। अधिपादप अन्य पादपों पर उगते हैं परन्तु अपने परपोषी से जल या भोजन नहीं लेते हैं। ऑर्किड्स, जिनमें से अधिकांश अधिपादप होते हैं, में अनुलग्नी (clinging) जड़ें होती हैं जो उन्हें आधार से जोड़े रखती है और वायवीय जड़ें होती हैं जो वातावरण से नमी सोखती हैं। चन्दन (*सैन्टेलम ऐल्बम; Santalum album*) एक जड़ परजीवी है। ये विकास की प्रारंभिक अवस्थाओं के दौरान परपोषी से सिर्फ जल लेता है। परपोषित पादप अपने कार्बनिक पोषक तत्व अन्य जीवित या मृत जीवों से प्राप्त करते हैं। जब कोई जीव अन्य जीव पर उगता है और जीवित परपोषी से पोषण लेता है तो वह परजीवी कहलाता है। यदि परजीवी हरा है और आंशिक तौर पर अपना भोजन प्रकाश संश्लेषण के द्वारा बना लेता है, व बचा हुआ पोषण और जल परपोषी से लेता है, तो वह आंशिक या अंश परजीवी कहलाता है (उदा., मिसलटो, *विस्कम एल्बम; Viscum album*)। कुछ परजीवी जैसे अमरबेल, *कस्कुटा रिफ्लैक्सा (Cuscuta reflexa)* में पर्णहरित नहीं होता है। वे अपना पोषण पूर्णत: परपोषी तने से विशेष चूषकांगों (haustoria) की सहायता से लेते हैं। ऐसे परजीवी पूर्ण परजीवी कहलाते हैं। *आरोबेन्की* स्पी. (*Orobanche* spp.) तथा *रैफ्लैसिया आर्नोल्डी (Rafflesia arnoldi)* जड़ परजीवी के उदाहरण हैं जो अपना भोजन तथा जल परपोषी की जड़ों से प्राप्त करते हैं।

वे पादप जो दूसरे जीवों के शवों पर अथवा अन्य क्षय होते उत्पादों जैसे ह्यूमस तथा गोबर पर जीवित रहते हैं वे मृतजीवी कहलाते हैं। *मोनोट्रॉपा* (*Monotropa*), जिसमें पर्णहरित नहीं होता है वो पूर्ण मृतजीवी होता है क्योंकि वो अपना पोषण वन के फर्श पर पड़ी क्षय होने वाली पत्तियों से प्राप्त करता है। पादप परजीवियों का विस्तृत विवरण इकाई 24 में दिया गया है।

अनेकों आवृतबीजी पादपों का अन्य जीवों के साथ सहजीवी संबन्ध होता है। अधिकांश पादपों की जड़ों में ऐसे कवक पाए जाते हैं जो अकार्बनिक पोषक तत्वों जैसे फॉस्फोरस के संश्लेषण तथा अवशोषण में सहायक होते हैं। अनेकों ऑर्किड्स तब तक नहीं उगते जब तक कि वो विशेष कवकमूल (mycorrhiza) द्वारा संक्रमित नहीं हो जाते हैं। फलीदार पादपों में जड़ (root nodules) होती हैं जिनमें जीवाणु *राइजोबियम* (*Rhizobium*) रहते हैं जो पर्यावरणीय नाइट्रोजन का नाइट्रेट्स में स्थिरीकरण करने में सहायता करते हैं जो पादपों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है।

6.12 कीटभक्षी पादप

कुछ आवृतबीजी पादपों में कीटों को पकड़ने तथा उनके प्रोटीन तत्वों को एन्जाइम्स की सहायता से पचाने की क्षमता होती है। सनड्यू *ड्रोसेरा* स्पी (*Drosera* spp.) जो घास के मैदानों में उगने वाले छोटे पादप होते हैं, में ग्रंथिमय त्वचारोम होते हैं जो कीटों को पकड़ते और पचाते हैं। ब्लैडरवर्ट या *युट्रीकुलेरिया* स्पी. मुक्त प्लावन करने वाले जलीय पादप हैं जिनमें बहुत अधिक कटी-फटी निमग्न पत्तियां होती हैं। पत्ती के अनेकों भाग थैलियों में अथवा दृतियों (utricles) में रूपांतरित होते हैं जिनमें छोटे जलीय जीव पकड़ कर पचा लिए जाते हैं। *नेपेन्थीज खासियाना* (*Nepenthes khasiana*) में पत्ती का निचला भाग एक चपटा पटल और ऊपरी भाग एक ढ़कने युक्त घट के रूप में रूपांतरित होता है। घट की किनारी चिकनी तथा मुड़ी हुई होती है जिससे कीट अंदर की ओर फिसल जाता है और नीचे की ओर मुड़े रोमों के कारण वापिस बाहर नहीं जा पाता है। नीचे तरल में डूबे हुए कीट ग्रंथिमय त्वचारोमों के द्वारा स्रावित एन्ज़ाइम पचा लिए जाते हैं जो घट की भीतरी सतह पर रहते हैं। इन पादपों के बारे में विस्तार से आप इस पाठ्यक्रम की इकाई 24 में पढ़ेंगे।

6.13 पादप विविधता का पर्यावरणीय महत्व

पुष्पी पादपों ने पृथ्वी के हर कोने को घेर रखा है। ऐसा करने से उन्होंने न सिर्फ उन पारिस्थितिक तंत्रों की प्राथमिक उत्पादकता को बढ़ाया है जहाँ वे उगते हैं, बल्कि वे महत्वपूर्ण पर्यावरणीय योगदान भी प्रदान करते हैं। पादप मिट्टी की संरचना के निर्माण और रखरखाव में तथा मिट्टी में पोषक तत्वों और नमी बनाए रखने में भी सहायता करते हैं। यदि सुरक्षात्मक वनस्पतियों के छत्र को हटा दिया जाए तो मिट्टी के कण अलग हो जाएगें और आसानी से जल के साथ बह जाएगें या हवा के साथ उड़ जाएगें। प्राकृतिक पादप छत्र जलीय चक्रों को बनाए रखने में भी सहायक होता है। ये जल के बहाव को नियंत्रित करने और स्थिर करने में सहायक होता है जिससे बाढ़ और सूखा नहीं आ पाते हैं। वानस्पतिक छत्र के कम होने से जलीय साधनों का गादयुक्त होना, जल की उत्पादकता और गुणवत्ता में कमी तथा जलीय आवासों का क्षारण होता है। पादप विविधता अनेकों खाद्य श्रृंखलाओं का भी आधार निर्मित करती है। भाग्यवश, मानव द्वारा उपयोग किए जाने वाले भोजन का अधिक भाग सीधे तौर पर या अप्रत्यक्ष रूप से पादप स्रोतों से ही आता है।

पुष्पी पादप मनुष्य द्वारा बनाए गए अनेकों संदूषकों (pollutants) का विघटन और अवशोषित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनस्पतियां वायु में ऑक्सीजन/कार्बनडाइ-ऑक्साइड के संतुलन को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक है।

6.14 आर्थिक महत्व

मानव (तथा अधिकांश अन्य जीवों) का अस्तित्व आवृतबीजी पादपों पर अत्यधिक रूप से निर्भर करता है। मनुष्य द्वारा पाँच हजार पादप जातियों का उपयोग किया जाता है हालांकि भोजन के रूप में सिर्फ बीस जातियां ही प्रयोग की जाती हैं। आवृतबीजी पादप अब विश्व की अधिकांश जनसंख्या को भोजन प्रदान कर रहे हैं। गेहूँ, *ट्रिटिकम ऐस्टाइवम* (*Triticum aestivum*), चावल, *औराइज़ा सैटाइवम* (*Oryza sativum*) तथा मक्का, *ज़िआ मेज* (*Zea mays*) तीन कार्बोहाइड्रेट फसलें हैं जो अधिकांश मनुष्यों का प्रमुख भोजन हैं। मिलैट जैसे कि *सोरघम बाइकलर* (*Sorghum bicolor*) तथा बाजरा, *पेनिसीटम अमेरिकानम* (*Pennisetum americanum*) एशिया तथा अफ्रीका में गरीबों का प्रमुख भोजन है।

लकड़ी/काष्ठ मनुष्य के लिए ईंधन के रूप में, भवन निर्माण कार्यों के लिए तथा औद्योगिक उत्पादों जैसे कागज के लिए कच्चे माल के रूप में महत्वपूर्ण हैं। उष्णकटिबंधी वृक्ष जैसे साल, *शोरिया रोबस्टा* (*Shorea robusta*), सागौन, *टेक्टोना ग्रैन्डिस* (*Tectona grandis*) तथा शीशम, *दलबर्जिया सीसू* (*Dalbergia sisoo*) लकड़ी के प्रमुख स्रोत हैं। बाँस की अनेकों जातियां कागज बनाने के लिए फाइबर पल्प के लिए प्रमुख कच्चा माल हैं। कपड़ा बनाने के लिए फाइबर, कपास, *गौसिपियम* स्पी. (*Gossypium* spp.) हैम्प, *क्रोटालेरिया जन्सिया* (*Crotalaria juncea*) तथा लिनन, *लाइनम यूसीटैटीसिमम* (*Linum usitatissimum*) से मिलते हैं। जूट *कारकोरस* स्पी. (*Chorchorus* spp.) से निकाले जाने वाले फाइबर पांरपरिक रूप से बोरे बनाने में उपयोग किए जाते हैं। नारियल के फल की मध्यफलभित्ति से निकलने वाला फाइबर कॉइरफाइबर (coirfibre) प्रदान करता है जिसका सर्वाधिक उपयोग गद्दे आदि बनाने में किया जाता है।

अनेकों पादप अपने बीज के भ्रूणपोष में (उदा. नारियल) अथवा भ्रूण में (सरसों, सोयाबीन तथा मूंगफली) तेल संचित करते हैं। ये खाद्य तेलों के स्रोत हैं। स्वादिष्ट फलों वाले पादपों में आम, *मैंजीफेरा इन्डिका* (*Mangifera indica*), लीची, *लीची चाइनेन्सिस*, आलूचा, *प्रूनस* स्पी (*Prunus* spp), सेब, *मेलस* स्पी. (*Malus* spp) तथा अमरूद, *सिडियम गुआजावा* (*Psidium guajava*) प्रमुख हैं। कुकरबिट्स की अनेकों जातियां जैसे करेला, कद्दू तथा गोभी, *ब्रेसिका ओलेरेसिया* (*Brassica oleracea*) की विभिन्न किस्में जैसे कि बंद गोभी, फूल गोभी तथा नॉल-नॉल मानव भोजन के लिए प्रमुख सब्जियां प्रदान करती हैं। प्रयोगों और गलतियों से मानव ने सैंकड़ों पादपों का सामान्य रोगों के उपचार में उपयोग करना सीखा है। उदाहरण के लिए, *रौवॉल्फिया सर्पेन्टाइना* (*Rauwolfia serpentina*) का उपयोग सांप के काटे के लिए तथा *ऐकोनिटम नैपेलिस* (*Aconitum napellus*) का बुखार के लिए किया जाता है। उपचार की आयुर्वेदिक प्रणाली में उपयोग की जाने वाली लगभग सभी औषधियों तथा ऐलोपैथिक तथा होम्योपैथिक प्रणालियों में उपयोग की जाने वाली अधिकांश औषधियों का स्रोत पादप ही हैं।

पादप मानवों को अनेकों अन्य उत्पाद जैसे वाष्पशील संगध तेल, गोंद तथा रेज़िन, नशीली दवाएं, पेय पदार्थ तथा रबड़ भी प्रदान करते हैं। खंड III ए तथा III बी पूर्णत: आवृतबीजी पादपों के आर्थिक वनस्पति विज्ञान पर आधारित हैं जिनके बारे में आप बाद के पाठ्यक्रम में पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न 8

कॉलम बी में दिए गए शब्दों को कॉलम ए में दिए गए नामों से मिलाइए।

	कॉलम ए		कॉलम बी
क)	*कस्कुटा रिफ्लैक्सा*	1)	गूदेदार तना
ख)	*रैफ्लेशिया आर्नोल्डी*	2)	क्षयकारी पत्तियों से पोषण प्राप्त करते हैं।
ग)	*ऑपन्शिया* स्पी	3)	राइजोबियम
घ)	*मोनोट्रोपा*	4)	सिर्फ जल लेता है।
ड.)	फलीदार पादप	5)	पर्णहरित नहीं होता है।
च)	*सेन्टेलम ऐल्बम*	6)	जड़ परजीवी

6.15 आवृतबीजी पादपों पर भारत में अनुसंधान कार्य

आवृतबीजी पादप मानव की अनेकों पर्यावरणीय तथा आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, अत: इन पादपों पर विश्व भर में गहन अनुसंधान किया जाता है। भारत में बड़ी संख्या में अनुसंधान संस्थान तथा विश्वविद्यालयों में पुष्पी पादपों पर अनुसंधान होता है। राष्ट्रीय वानस्पतिक अनुसंधान संस्थान (National Botanical Research Institute) लखनऊ, में प्रमुख रूप से उद्यान वनस्पतियों तथा ऊर्जा पादपों पर कार्य होता है। चिकित्सीय तथा सुंगध पादपों का केन्द्रीय संस्थान (Central Institute of Medicinal and Aromatic Plants), लखनऊ, केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान (Central Drug Research Institute), लखनऊ तथा जम्मू और जोरहाट में क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, औषधीय पादपों पर गहन अनुसंधान करती हैं। बोटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया (Botanical Survey of India) जिसका हैडक्वाटर हावड़ा, पश्चिम बंगाल तथा पाँच क्षेत्रीय स्टेशन हैं, वह देश के वन्य पादपों के अध्ययन, देखभाल और संरक्षण के लिए जिम्मेदार है। नेशनल ब्यूरो ऑफ प्लान्ट जेनेटिक रिसॉर्सेज (National Beureau of Plant Genetic Resources) का हैडक्वाटर नई दिल्ली में तथा क्षेत्रीय स्टेशन भारत में कई स्थानों पर हैं। ब्यूरों वन्य प्रजातियों, क्षेत्रीय प्रजातियों तथा कृषि फसलों की संबन्धित जातियों का संरक्षण करता है। नई दिल्ली में राष्ट्रीय जीन बैंक (National Gene Bank) स्थापित किया गया है। जी.बी.पन्त इन्सटीट्यूट ऑफ हिमालयन इन्वायरमेन्ट एन्ड डेवलपमेन्ट (G.B. Pant Institute of Himalayan Environment and Development) कोसी-कटरमल, अल्मोड़ा, उत्तरांचल में इन्सटीट्यूट ऑफ हिमालयन बायोरिसोर्स टेक्नोलॉजी (Institute of Himalayan Bioresource Technology) पालमपुर, हिमाचल प्रदेश तथा ट्रॉपिकल बाट्निकल गार्डन (Tropical Botanical Garden), तिरूअनंतपुरम भी पादप संसाधनों के विकास और उपयोगिता पर कार्य में लगे हुए हैं। इनं संस्थानों के अतिरिक्त, बड़ी संख्या में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (Indian Council of Agricultural Research) की अनुसंधान प्रयोगशालाएं कृषि फसलों पर अनुसंधान कर रही हैं। भारत में लगभग हर विश्वविद्यालय में वनस्पति विज्ञान विभाग है। इन विभागों में मुख्य रूप से पुष्पी पादपों के कोशिका जनन/साइटोजेनेटिक्स, वर्गिकी/टैक्सोनोमी, पारिस्थितिक विज्ञान/इकॉलोजी, शारीर/एनाटॉमी, भ्रूणविज्ञान/एम्ब्रॉयोलोजी तथा शरीर क्रिया विज्ञान/फिज़ियोलोजी पर कार्य हो रहा है। जैवरसायन/ बॉयोकैमिस्ट्री तथा ऊतक संवर्धन/टिशू कल्चर पर कार्य में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त कर ली गई है। हाल के वर्षों में भारत में पादप विज्ञानियों ने अपना ध्यान जीनोम विश्लेषण (genome analysis) तथा आणविक गुणों (molecular characteristics) तथा पादप संसाधनों के सुधार तथा संरक्षण के लिए ऊतक संवर्धन/टिशू कल्चर तकनीक पर केन्द्रित किया है।

6.16 सारांश

- आज पृथ्वी पर लगभग 250,000 पुष्पी पादपों की जातियां पाई जाती हैं। पुष्पी पादप विश्व की वनस्पति में प्रमुख भूवैज्ञानिक पर्यावरणीय तथा वानस्पतिक बदलावों के बावजूद पूरे सीनोजोइक कल्प के दौरान प्रभावी रहे हैं।

- आवृतबीजी पादप बीजीयपादप होते हैं। बीजांड तथा बीजांड से विकसित होने वाला बीज, अंडाशय के अंदर रहता है तथा अनावृतबीजी पादपों की भाँति नग्न नहीं होता है। अंडाशय अंडप या स्त्रीकेसर का भाग होता है तथा अंडप एक नई जटिल संरचना का भाग होता है जो पुष्प कहलाती है। आवृतबीजी पादपों के समानार्थी नाम एन्थोफाइटा (Anthophyta) तथा मैग्नोलिओफाइटा (Magnoliophyta) हैं।

- मैग्नोलिओफाइटा में दो वर्ग लिलिओप्सिडा (एकबीजपत्री) तथा मैग्नोलिओप्सिडा (द्विबीजपत्री पादप) हैं। लिलिओप्सिडा में सबसे प्राचीन माना जाने वाला उपवर्ग एलिस्मेटिडी है जिसमें जलीय पादप हैं। मैग्नोलिओप्सिडा में सबसे प्राचीन माना जाने वाला उपवर्ग मैग्नोलिडी है। एकबीजपत्री पादपों में सबसे उन्नत उपवर्ग लिलिडी तथा द्विबीजपत्री पादपों में ऐस्टेरिडी है।

- आवृतबीजी पादपों के जीवन चक्र में सम्मिलित नवीन तथ्य हैं: i) युग्मकोद्भिद पीढ़ी के आकार (साइज) तथा जटिलता में कमी। ii) अंडाशय के अंदर बीजांड का होना। iii) द्विनिषेचन। iv) वायु, जल अथवा जंतुओं के द्वारा बीज और फल का परिक्षेपण। इन अनुकूलनों के पर्यावरणीय परिणाम हैं जो ये समझा सकते हैं कि क्यों आवृतबीजी पादपों ने अनावृतबीजी पादपों पर प्रभावी थलीय पादप जीवन प्रकारों के रूप में श्रेष्ठता प्राप्त कर ली है।
- आवृतबीजी पादपों में अनेक प्रकार की जड़ें, तने, पत्तियां तथा पुष्पक्रम होते हैं जो विभिन्न प्रकार की जलवायुओं में उसके अनुकूलनों को तथा विश्वव्यापी वितरण को समझाते हैं।

6.17 अंत में कुछ प्रश्न

1. आवृतबीजी तथा अनावृतबीजी पादपों के बीच पाए जाने वाले सभी अन्तरों को लिखिए जो आपने पढ़े हैं।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. द्विनिषेचन क्या है?

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3. आवृतबीजी पादपों में बीज के परिक्षेपण के विभिन्न तरीकों का वर्णन करिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

   i) आवृतबीजी पादपों की उत्पत्ति

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ii) आवृतबीजी पादपों का वर्गीकरण

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   iii) आवृतबीजी पादपों का आर्थिक महत्व

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

5. आवृतबीजी पादपों पर भारत में अनुसंधान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

6.18 उत्तर

1.

	आवृतबीजी पादप	अनावृतबीजी पादप
1)	दारू/जाइलम वाहिकाओं की बहुलता तथा प्रमुखता	अधिकांश अनावृतबीजी पादपों में सिर्फ वाहिनिकाएं होती हैं।
2)	आवृतबीजी पादपों में पुष्प बाह्यदल, दल या दोनों बीजाणुपर्णों सहित निर्मित होते हैं।	अनावृतबीजी पादपों में स्पष्ट नर तथा मादा शंकु होते हैं।
3)	बीज फल के अंदर होते हैं	बीज नग्न होते हैं।
4)	भ्रूणपोष तभी बनता है यदि भ्रूणकोष निषेचित होता है।	भ्रूणपोष निषेचन के बिना ही बनता है।
5)	आवृतबीजी पादपों में द्विनिषेचन पाया जाता है।	अनावृतबीजी पादपों में एकल निषेचन पाया जाता है।

2. क -v, ख -i, ग -ii, घ -iv, ड. -iii

3. i) निमग्न जलोद्भिदी पादपों में पत्तियां छोटी, पतली तथा फीते जैसी हो जाती हैं।
   ii) वे पादप जिनकी जड़ें अन्दर गहरी जमी रहती हैं, उनकी पत्तियां सतह पर तैरती हैं। पत्तियां उत्प्लावन के लिए चौड़ी होती हैं।
   iii) पत्तियों में वायु गुहिकाएं होती हैं जो उन्हें आसानी से तैरने के लिए हल्का बना देती हैं और जल के भीतर भी गैसों के आदान प्रदान को संभव बनाती हैं।
   iv) निमग्न जलीय पादपों में हरितलवक सतही कोशिका परत में सान्द्रित होते हैं जिससे अधिक प्रभावी तरीके से प्रकाश संश्लेषण हो सके।

4. i) पर्वसंधि, पर्व
   ii) *मेन्था*, उपरिभूस्तारी
   iii) अंत:भूस्तारी
   iv) *सोलेनम ट्यूबरोसम*, मांड
   v) *लैथाइरस ओडोरैटस* (*Lathyrus odoratus*) प्रतान
   vi) श्वसनकारी मूल, श्वसन मूल

5. सेक्शन 5.5 पढ़िए और कोई तीन बातें लिखिए जो आवृतबीजी पादपों तथा अनावृतबीजी पादपों में भिन्न होती हैं।

6. वायु परागित पुष्पों में निम्नलिखित गुण होते हैं :
   i) पुष्प संख्या में अधिक होते हैं और बड़ी मात्रा में परागकण उत्पन्न करते हैं।

ii) पुष्पों में उत्कृष्ट दल नहीं होते हैं।

iii) परागकण छोटे, शुष्क तथा चिकने होते हैं।

iv) मादा पुष्पों में बड़े अथवा पंखयुक्त वर्तिकाग्र होते हैं जो वायु से परागकणों को पकड़ लेते हैं।

7. अधिकांश आवृतबीजी पादप अपने परागण के लिए पक्षियों, कीटों तथा चमगादड़ों पर निर्भर करते हैं। इन परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए पुष्पों में निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं।

i) पुष्प बड़े तथा चटकीले होते हैं, उनमें परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए मकरंद तथा सुगंध पायी जाती है।

ii) परागकण बड़े, नम तथा गुच्छों में होते हैं।

iii) अनेकों पुष्प तितलियों या शलभों जैसे दिखाई पड़ते है।

8. क -5, ख -6, ग -1, घ -2, ङ -3, च -4,

अंत में कुछ प्रश्न

1. खंड-1- अनावृतबीजी पादप की इकाई 1 तथा बोध प्रश्न 1 का उत्तर दीजिए।

2. एक नर युग्मक का द्विगुणित युग्मनज बनाने के लिए अंड कोशिका से निषेचन, जबकि दूसरे का द्विगुणित प्राथमिक भ्रूणपोष केन्द्रक बनाने के लिए केन्द्रीय कोशिका के केन्द्रक से युग्मन द्विनिषेचन कहलाता है, जो आवृतबीजी पादपों की विशेषता है।

3. सेक्शन 6.7 में देखिए।

4. सेक्शन 6.9, 6.10 तथा 6.14 में देखिए।

5. सेक्शन 6.15 में देखिए तथा दैनिक समाचार पत्रों में से देखकर भारत में आवृतबीजी पादपों पर अनुसंधान की वर्तमान स्थिति के बारे में लिखिए।

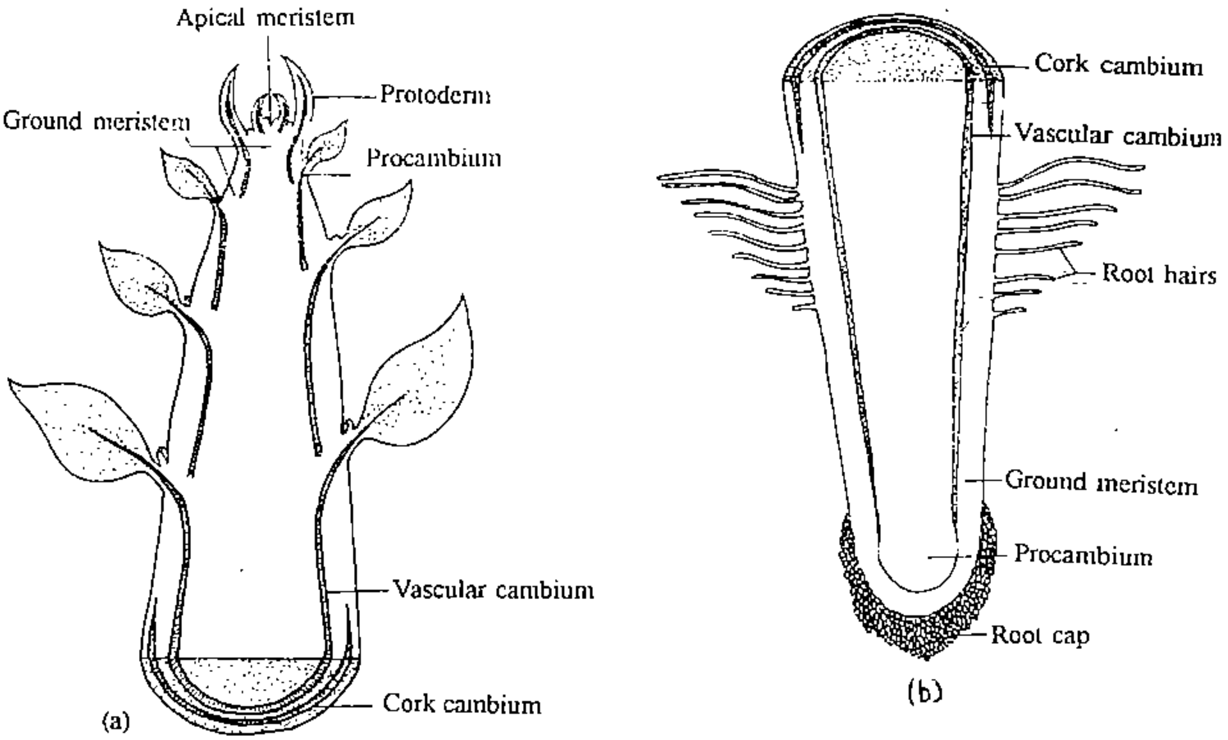

चित्र 7.2 : प्ररोह (a) तथा जड़ (b) मेरिस्टेमों को दिखाते रेखाचित्र।

i) प्ररोह शिखाग्र (Shoot apex)

आपको याद होगा कि कई निम्न पादपों में वृद्धि शिखाग्र कोशिका की सक्रियता के कारण होती है, जबकि आवृतबीजी पादपों में प्ररोह तंत्र की वृद्धि एक सुव्यवस्थित मेरिस्टेम द्वारा होती है। इन मेरिस्टेमों में अनेक खंड होते हैं, जिनके बारे में आपको इकाई-8 में पढ़ने को मिलेगा। प्ररोह मेरिस्टेम पादप के कायिक (vegetative) और जनन (reproductive) प्रावस्थाओं का एक महत्त्वपूर्ण घटक है। मगर इन दोनों प्रावस्थाओं में इन मेरिस्टेमों में कुछ विशिष्ट लक्षण पाए जाते हैं जिनके बारे में नीचे चर्चा की गई है।

कायिक और पुष्पी (floral) प्ररोह शिखाग्र : आवृतबीजी पादपों में प्ररोह शिखाग्र मेरिस्टेम का आकार और बनावट अतिपरिवर्तनशील पाई जाती है। इसका व्यास 80 μm से 1500 μm तक होता है। यह परास एक ही कुल में भी देखा जा सकता है, जैसे कि कैक्टेसी कुल में। इसके अलावा मेरिस्टेम का आकार अनेक पादपों में परिवर्धन चरणों के साथ-साथ बदलता रहता है। *होमासिफैला* और *एकाइनोकैक्टस* की पौध और परिपक्व पादपों के शिखाग्र के बीच तीन हजार गुना अंतर पाया गया है। अब बात आती है इसकी आकृति में भिन्नता की, तो यह अर्धगोलीय से लंबा, या परवलय की तरह, या चपटा या फिर अवतल हो सकता है। आपको प्ररोह शिखाग्र की संरचना के बारे में याद होगा, जिसे आपने एल.एस.ई.-6 पाठ्यक्रम की इकाई-7 में पढ़ा है। क्या आपको याद है कि कई पर्ण आद्यक, प्ररोह शिखाग्र के समीप उपस्थित रहती हैं और सबसे तरुण आद्यक शिखाग्र के सबसे समीप पाया जाता है। एक पर्ण (पत्ती) के समारंभन और दूसरे पर्ण के समारंभन के बीच के समय को प्लास्टोक्रोन (plastochron) कहते हैं।

प्ररोह शिखाग्र से लेकर सबसे तरुण पर्ण आद्यक के कक्ष के बीच की दूरी को प्ररोह ऊंचाई कहते हैं। इस तरह शिखाग्र जैसे-जैसे अनेक पर्ण आद्यकों का निर्माण करता है शिखाग्र की ऊंचाई और व्यास की माप का संदर्भ बिंदु भी बदलता रहता है। अलग-अलग जातियों में प्ररोह शिखाग्र अगले आद्यक के निर्माण में अलग-अलग समय लेते हैं। मेरिस्टेम की आकृति में भी परिवर्तन आ जाता है, क्योंकि वह पर्ण निर्माण के चक्र से गुजरता है। जैसे ही एक आद्यक का निर्माण होता है, शिखाग्र लघु और संकीर्ण हो जाता है। दूसरे शब्दों में हर प्लास्टोक्रॉन के दौरान प्ररोह शिखाग्र एक 'अल्पिष्ठ' और एक 'उच्चिष्ठ' अवस्था से गुजरता है (चित्र 7.3)।

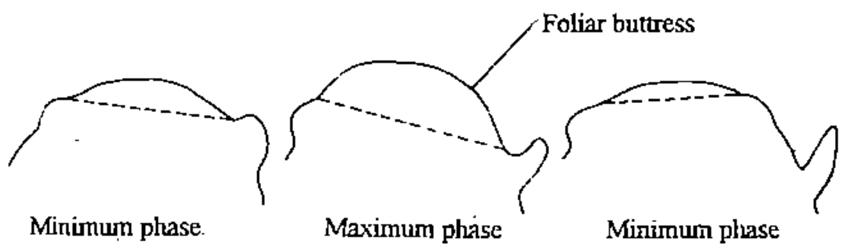

चित्र 7.3 : प्लास्टोक्रॉन के दौरान अल्पिष्ठ और उच्चिष्ठ अवस्थाओं में शिखाग्र मेरिस्टेम का रेखाचित्र। (पुनःआरेखित मौसेथ, 1988 से)।

प्ररोह शिखाग्र की सक्रियता के कारण, पादप में कायिक वृद्धि संपन्न होती है। प्ररोह शिखाग्र पूरे वर्ष भर या वर्ष के कुछ निश्चित भागों के दौरान सक्रिय रहता है। एक निश्चित सीमा तक वृद्धि कर लेने के बाद, पादप जनन अवस्था में प्रवेश करता है और उसमें पुष्पन या पुष्पक्रम का विकास आरंभ हो जाता है। इस अवस्था में शिखाग्र को जनन शिखाग्र (reproductive apex) या पुष्पी शिखाग्र (floral apex) कहा जाता है। पुष्पी शिखाग्र इस सक्रियता का मुख्य स्थल बना रहता है जो पुष्पांगों का निर्माण करता है। आप यह पूछ सकते हैं कि पुष्पी शिखाग्र और कायिक शिखाग्र में क्या भेद है?

कायिक शिखाग्र के पुष्पी शिखाग्र में रूपांतरण के दौरान विभिन्न जातियों के पादपों पर अनेक कार्यिकीय तथा कोशिक-ऊतकीय अध्ययन किए गए हैं, जिनसे दोनों अवस्थाओं में सुस्पष्ट भेदों का पता चला है। ये भेद जाति दर जाति अलग-अलग होते हैं, मगर मोटे तौर पर यह देखा गया है कि जनन शिखाग्र अपने आद्यकों का निर्माण कायिक शिखाग्र द्वारा उत्पन्न किए जाने वाले पर्ण आद्यकों की तुलना में द्रुत गति से करता है। इसके अलावा समसूत्री विभाजनांक (mitotic index) में वृद्धि, डी.एन.ए. संश्लेषण में भी संबद्ध वृद्धि देखने में आती है और केन्द्रकी (nucleolar) व्यास भी बढ़ जाता है। ऐसा संभवतः नए राइबोसोमों के निर्माण के कारण होता है जो कि सक्रिय उपापचयी कोशिकाओं में प्रोटीन संश्लेषण की बढ़ी दर के लिए आवश्यक है। जनन अवस्था के आगमन का सूचक एक अन्य लक्षण है। यह है पर्वों की दीर्घरूपता में अचानक वृद्धि, जिसे उत्स्फुटन **(bolting)** कहते हैं। यह परिवर्तन विशेष रूप से उन पादपों में असाधारण है जिनमें कायिक अवस्था के दौरान कोई दीर्घित अक्ष नहीं पाए जाते, ऐसा अनेक घासों और रोजेटा प्रकार के पादपों में देखने को मिलता है।

यहां एक बात ध्यान यह रखने की है कि सभी पुष्पी शिखाग्रों का रूपांतरण कायिक शिखाग्रों से ही नहीं होता, बल्कि कुछ का समारंभन सिर्फ पुष्पी शिखाग्रों के रूप में ही होता है। यह आपको सूरजमुखी और इस तरह के दूसरे पादपों के उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा, जिनमें पुष्प उनके पर्ण कक्षों में ही उत्पन्न होते हैं। कायिक शिखाग्र की तरह पुष्पी शिखाग्र में भी सहपत्रों, परिदल पुंज (बाह्यदलों और दलों), पुंकेसर तथा अंडपों के विकास के क्रमिक चरणों के दौरान प्लाटोक्रॉनिय उतार-चढ़ाव देखने में आता है। पुष्पी शिखाग्र का प्रकटन, शिखाग्र मेरिस्टेम में होने वाली वृद्धि की समाप्ति को भी रेखांकित करता है। जैसा कि वार्षिक पादपों में यह उनकी वृद्धि की समाप्ति और समूचे पादप की मृत्यु के आगमन का स्पष्ट संकेत दे देता है। किंतु कई चिरस्थायी पादपों में पुष्पी मेरिस्टेम, पुष्पांगों के बन जाने के बाद यदाकदा पुनः कायिक वृद्धि करने लग जाता है।

ii) मूल शिखाग्र (Root apex)

आप पूर्व से ही मूल शिखाग्र की संरचना से जुड़ी संकल्पनाओं से परिचित हैं जिसके बारे में आप एल.एस.ई.-06 पाठ्यक्रम में पढ़ चुके हैं। तो क्या आप प्ररोह और मूल शिखाग्र में पाई जाने वाली समानताओं और उनके बीच भेदों के बारे में बता सकते हैं? आइए पहले दोनों के बीच समानताओं से शुरू करते हैं। दोनों ही विशाल, बहुकोशिकीय संरचनाएं हैं जिनमें सुस्पष्ट अनुक्षेत्र वर्गीकरण होता है। इनकी संरचनाओं के बारे में जानने या दोहराने के लिए आप एल.एस.ई.-06 की इकाई-7 के उपखण्ड 7.2 तथा 7.3 को देख सकते हैं।

प्ररोह के शिखाग्र मेरिस्टेम के विपरीत मूल शिखाग्र मेरिस्टेम मूल गोप (root cap) की उपस्थिति के कारण उपांतस्थ हो जाता है। इसका यह अर्थ है कि मेरिस्टेम मूलगोप के नीचे स्थित रहता है। एक अंतर यह है कि पर्णों या शाखों की तुलना में इसमें पार्श्विक अनुबंध नहीं पाए जाते हैं। आप यह जानते होंगे कि मूल शाखों की उत्पत्ति सर्वाधिक सक्रिय वृद्धि वाले खंड से परे अंतर्जातीय (endogenously) होती है। प्ररोह शिखाग्र के आकार और संरचना में पर्ण समारंभन के दौरान आवर्ती परिवर्तन देखने में आते हैं, किंतु मूल शिखाग्र में ऐसे परिवर्तन नहीं होते। चूंकि मूलों (जड़ों) में पर्वसंधियां और पर्व नहीं रहते, इसलिए मूल शिखाग्र लंबाई में प्ररोह की तुलना में अधिक समरूपता से वृद्धि करता है।

7.2.2 पार्श्विक मेरिस्टेम (Lateral Meristems)

पार्श्विक मेरिस्टेम पादप अंग की परिधि में स्थिति रहते हैं। ये ऐसे आद्यकों से मिलकर बने होते हैं जो मोटे तौर पर एक ही तल में यानि परिनतिक विभाजन करते हैं (चित्र 7.4)। इस विभाजन के फलस्वरूप एक अंग के व्यास में वृद्धि होती है। इनकी सक्रियता के चलते विद्यमान ऊतकों में नई कोशिकाएं आ जुड़ती हैं। दो मुख्य पार्श्विक मेरिस्टेम हैं: संवहन एधा (vascular cambium) और काग एधा (cork cambium)।

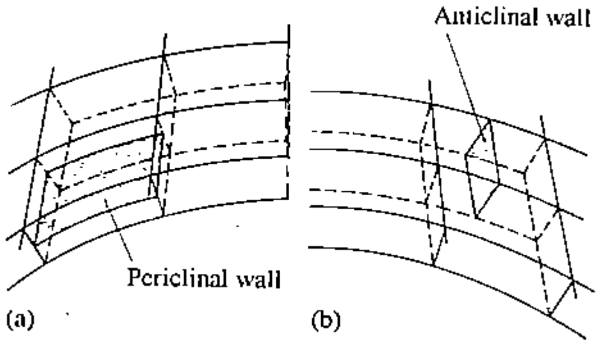

चित्र 7.4 : a) एक कोशिका में होते परिनतिक विभाजन का रेखीय निरूपण, जिसे यहां परिनतिक भित्ति के द्वारा दिखाया गया है। परिनतिक भित्तियां पृष्ठ के समांतर हैं और ये ऊतक की स्थूलता को बढ़ाती हैं। अपनतिक विभाजन के बारे में जानना भी आवश्यक है जिसे यहां चित्र b में दर्शाया गया है जिसमें आप देखें कि अपनतिक भित्ति पादप अंग या ऊतक की पृष्ठ के लंबवत् है।

(1) संवहन एधा

यह पार्श्विक मेरिस्टेम द्वितीयक संवहन ऊतकों का निर्माण करता है और यह तनों और मूलों दोनों में ही पाया जाता है। यह अनुदैर्ध्य संपूल या खोखले बेलन के रूप में विकसित होता है। एकबीजपत्री सहित कुछ खास पादपों में प्राक्एधा (procambium) की कोशिकाएं विभेदन कर प्राथमिक संवहन ऊतकों की रचना करती हैं। किंतु अधिकांश द्विबीजपत्रों में प्राथमिक वृद्धि के पूर्ण हो जाने के बाद भी प्राक्एधा का एक अंश मेरिस्टमी बना रहता है। ये मेरिस्टमी कोशिकाएं द्वितीयक काय के एधा के रूप में विकसित होती हैं। यह एधा फ्लोएम और जाइलम के बीच स्थित रहता है और इसे संवहनीय ऊतकों से इसकी निकटता के कारण पूलीय एधा (fascicular cambium) कहा जाता है (चित्र 7.5)। पूलीय एधा की पट्टियां प्राय: अंतरापूलीय एधा (interfascicular cambium) पट्टियों के द्वारा परस्पर जुड़ जाती हैं और अनुप्रस्थ काट में एक वलय या त्रि-आयामी काट में एक खोखले बेलन के रूप में दिखाई देती हैं। क्या अब आप यह समझ गए हैं कि अंतरापूलीय एधा प्राक्एधा का ही एक विस्तार नहीं बल्कि यह मृदूतक से विकसित होता है? इसीलिए कालांतर में विकसित होने वाले इन एधीय पट्टियों को द्वितीयक मेरिस्टेम कहा जाता है (चित्र 7.5)। खोखले बेलन वाली संकल्पना पर पुन: आते हैं जो मुख्य पादप अक्ष की समूची लंबाई में बनता है। अधिकांश द्विबीजपत्रों में एधीय बेलन का विकास प्राथमिक जाइलम और फ्लोएम के मध्य होता है और पादप अपने संपूर्ण जीवनकाल में यही स्थिति बनाए रखता है। संवहन एधा की कोशिकाओं में परिनतिक विभाजन होता है और ये अपने अंदर की तरफ जाइलम मातृ कोशिकाओं को जन्म देती हैं और बाहर की ओर फ्लोएम मातृ कोशिकाएं बनाती हैं (चित्र 7.6) जो अंतत: अपने-अपने द्वितीयक घटकों में विभेदित हो जाती हैं।

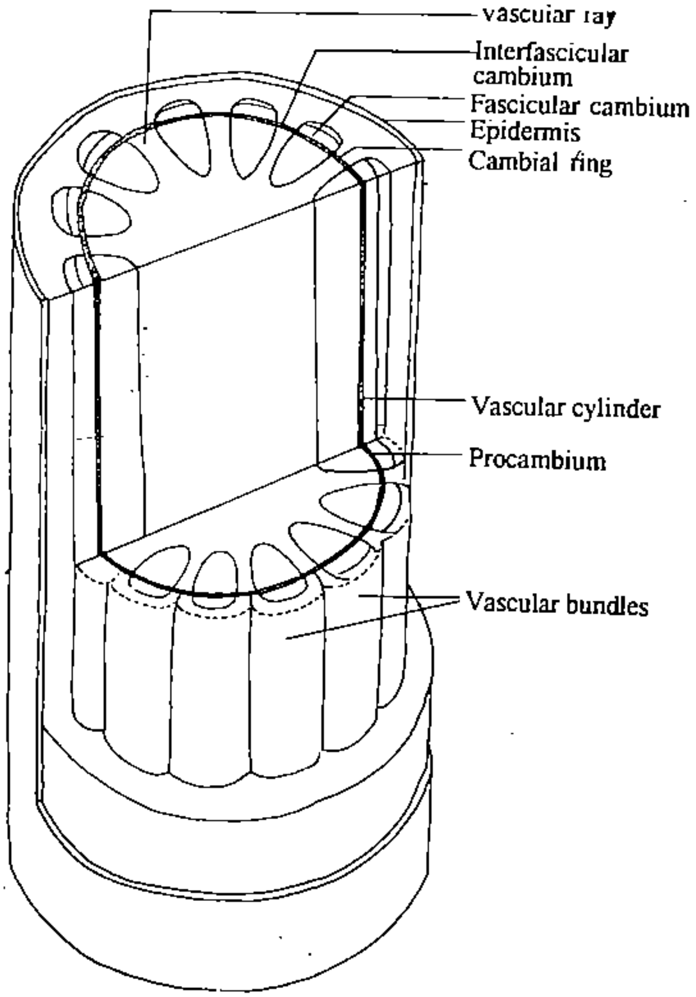

चित्र 7.5 : एक द्विबीजपत्री तने का त्रिआयामी दृश्य जो अनुप्रस्थ तल में कटे अंश में वलय को दिखा रहा है। अनुदैर्ध्य काट वाला अंश खोखली संवहनी एधा बेलन का आंशिक चित्र दिखा रहा है। (हार्टमैन आदि 1988 से)।

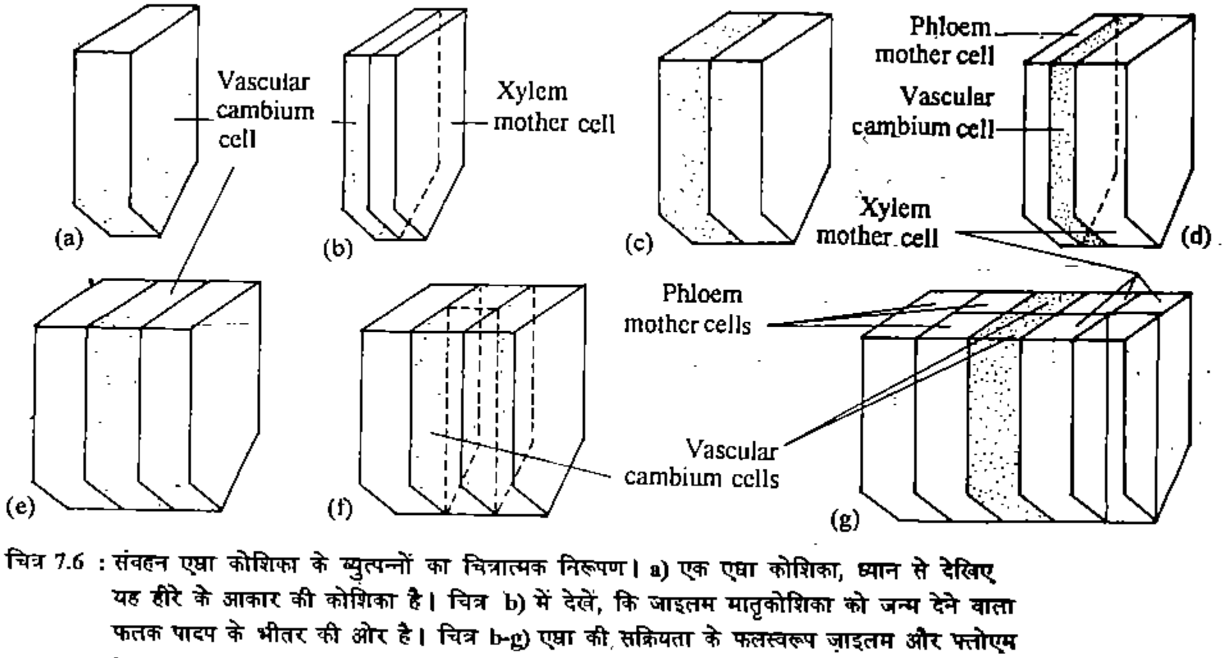

चित्र 7.6 : संवहन एधा कोशिका के व्युत्पन्नों का चित्रात्मक निरूपण। a) एक एधा कोशिका, ध्यान से देखिए यह हीरे के आकार की कोशिका है। चित्र b) में देखें, कि जाइलम मातृकोशिका को जन्म देने वाला फलक पादप के भीतर की ओर है। चित्र b-g) एधा की सक्रियता के फलस्वरूप ज़ाइलम और फ्लोएम के निर्माण को दर्शा रहे हैं। (मौसेथ, 1988 से)।

संवहन एधा की कोशिकाओं को पार्श्विक मेरिस्टेम कहा जाता है और ये मेरिस्टमी तो होती हैं मगर शिखाग्र मेरिस्टेम से भिन्न हैं। आइए देखते हैं कैसे? संवहन एधा की तनुभित्ति कोशिकाएं अतिरसधानी

युक्त रहती हैं और ये इस मामले में अन्य अधिकांश मेरिस्टमी कोशिकाओं से भिन्न होती हैं। इन कोशिकाओं में राइबोसोम, जालिकाय और चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका (ER) जैसे कोशिकांग प्रचुर मात्रा में दिखाई देते हैं। प्रसुप्तिकाल में इन कोशिकाओं में लिपिड और प्रोटीन पिंड भी पाए जाते हैं। सक्रिय होने पर संवहन एधा कोशिकाओं में लिपिड और प्रोटीनों का विलयन हो जाता है जिसके फलस्वरूप रसधानियों का निर्माण होता है। इसी करण ये कोशिकाएं अतिरसधानीयुक्त पाई जाती हैं। इनका एक अनूठा लक्षण इनकी मणिकामय भित्तियां हैं (चित्र 7.7)। यह गर्तक्षेत्रों पर प्लैज़्मोडैस्मेटा की उपस्थिति के कारण होता है, जो कोशिकाभित्तियों पर पाए जाते हैं। इनका एक अन्य विशिष्ट लक्षण है – इनकी अरीय भित्तियां, विशेषकर जाइलम और फ्लोएम मातृ कोशिकाओं की भित्तियां स्पर्शीय भित्तियों से अधिक स्थूल होती हैं। यह एधा कोशिकाओं में होने वाले परिनतिक विभाजनों के कारण होता है जिसके दौरान अरीय भित्ति का स्थूलन सतत जारी रहता है।

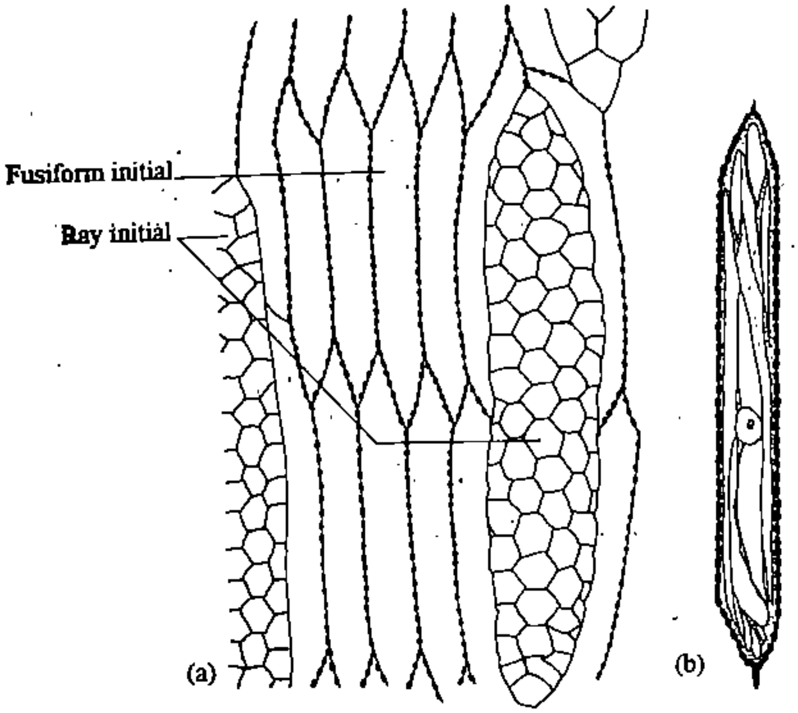

चित्र 7.7 : *रोबिनिया सूडोअकैशिया*। a) एधी भाग से होता हुआ स्पर्शीय अनुदैर्ध्य काट। तर्कुरूप आद्यक की मणिकामय भित्तियों को ध्यान से देखें। b) एक तर्कुरूप आद्यक का चित्र जो अति रसधानीयुक्त जीवद्रव्यक और अनेक प्राथमिक गर्तक्षेत्रों को दिखा रहा है जिसके कारण कोशिका भित्तियां मणिकामय दिखाई देती हैं। [a) कटर (1978); तथा b) फाह्न (1977) से पुनःआरेखित]

संवहन एधा दो प्रकार की कोशिकाओं का बना रहता है – दीर्घरूपी **तर्कुरूप आद्यक** और समव्यासी **अर आद्यक** (चित्र 7.8)। तर्कुरूप आद्यक काष्ठ के अक्षीय दीर्घरूपी या अभिविन्यस्त अवयवों और आंतरिक छाल वल्क (वाहिकीय अवयवों, तंतुओं, जाइलम और फ्लोएम मृदूतक) का निर्माण करते हैं तो अर आद्यक क्षरीय अभिविन्यस्त अरों की रचना करते हैं जिन्हें **संवहन अर** कहा जाता है (चित्र 7.9)।

तर्कुरूप आद्यक लंबी कोशिकाएं हैं, जिनकी लंबाई द्विबीजपत्रों में 140-462 μm तक, *पाइनस* में 700-4500 μm और *सीक्यूओइया सेम्परवाइरेंस* में 8700 μm तक होती है। एक ही जीनस की विभिन्न जातियों में भी इस लंबाई में अंतर देखने में आता है जैसे *डैलबर्जिया मेलैनोक्सीलॉन* में यह लगभग 154 μm और *डैलबर्जिया सिसू* में 203 μm के लगभग होती है। यह लंबाई कई अन्य कारकों के अनुसार बदलती रहती है जैसे वातावरणीय परिस्थितियां, आयु, पोषक परिस्थितियां और पादप का सामान्य ओज। तर्कुरूप आद्यक अनुप्रस्थ काट में आयती या थोड़ा सा चपटी दिखाई देती हैं, जबकि स्पर्शी कांट में इनके शुंडाकार सिरे स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। तर्कुरूप आद्यकों की लंबाई उत्सुकता का कारण रही है, क्योंकि यह व्युत्पन्नों, विशेषकर द्वितीयक जाइलम की लंबाई को प्रभावित करता है। यही जाइलम काष्ठ (wood) का निर्माण करता है।

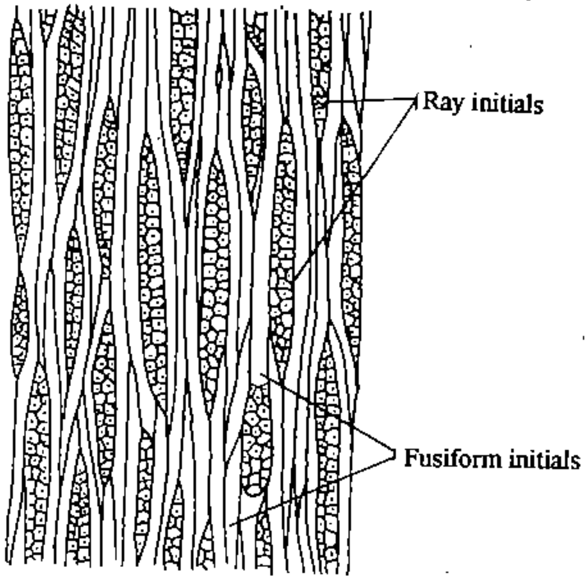

चित्र 7.8 : संवहन एधा खंड से होती हुई स्पर्शी काट जो तर्कुरूप और अर आद्यक को दर्शा रही है। (मौसेथ, 1988 से)

तर्कुरूप आद्यकों के विन्यास के आधार पर संवहन एधा दो प्रकार के हैं। **सस्तरित (storied) या स्तरित** एधा (चित्र 7.9) में तर्कुरूप आद्यक एक दूसरे के साथ पार्श्व में पंक्तिबद्ध रहते हैं और इस तरह स्तर या टियर बनाते हैं। इन आद्यकों की लंबाई 140 μm से लेकर 520 μm तक पाई जाती है। यह एक विरल लक्षण है और कुछ सुविकसित द्विबीजपत्रों में पाया जाता है, जैसे *एसकाइनोमीन, होहरिया, रोबिनिया* और *टेमैरिक्स*। सबसे अधिक आदिम और अधिकतकर पाया जाने वाला संवहन एधा स्तर रहित या **अस्तरित (non-storied)** एधा है (चित्र 7.9)। इस प्रकार के एधा में तर्कुरूप आद्यकों की लंबाई कई द्विबीजपत्रों में 320-2300 μm के बीच पाई जाती है। वाहिकारहित कई द्विबीजपत्रों में तर्कुरूप आद्यक 6200 μm तक पहुंच सकती है। इसका उदाहरण *फ्रैक्सिनस* है।

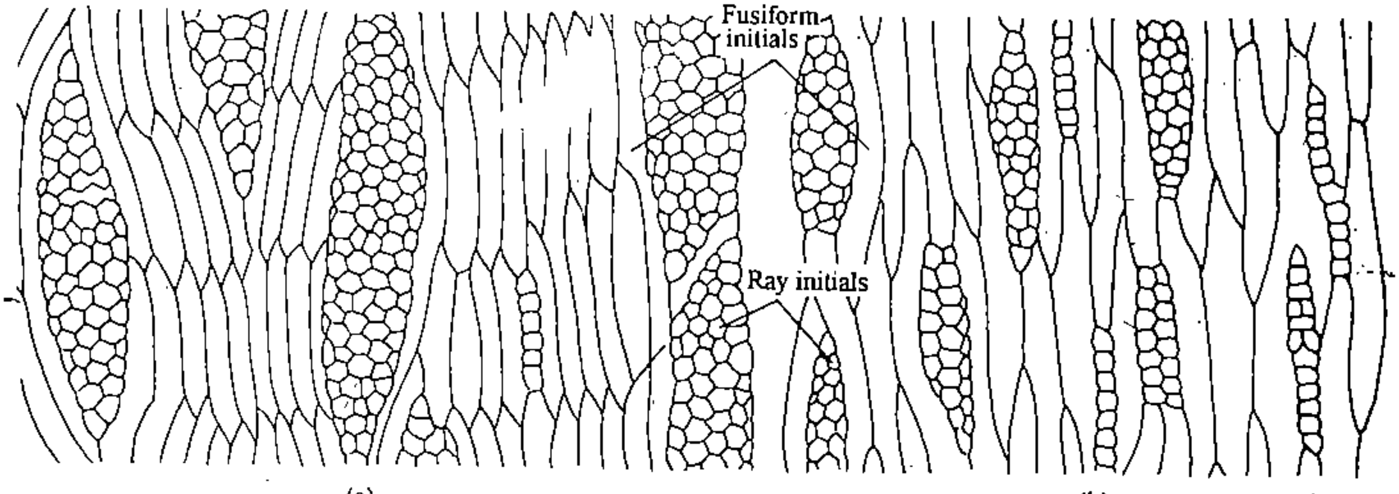

चित्र 7.9: a) *रोबिनिया* में सस्तरित प्रकार के एधा का चित्र। b) *फ्रैक्सिनस* में अस्तरित एधा। (फाह्न 1977 से)।

सस्तरित और अस्तरित (non-storied) एधा विभाजन के दौरान भिन्न आचरण करते हैं। सस्तरित एधा में गुणनात्मक विभाजन वास्तविक अपनतिक, अनुदैर्ध्य विभाजनों के द्वारा होता है, जिसमें कोशिका पट्टिका (cell plate) सिरे से सिरे तक बनती है। इस तरह बनने वाली दो संतति कोशिकाएं समान लंबाई की होती हैं। साथ ही कोशिकाएं अपनी मातृ कोशिका भित्ति और समीपी कोशिकाओं की स्थिति के अनुरूप ही परस्पर जुड़ी रहती हैं (चित्र 7.10 a)। अस्तरित एधा में, गुणनात्मक विभाजन आभासी-अनुप्रस्थ किस्म का होता है (चित्र 7.10 b)। इसका यह अर्थ है कि शुरू में विभाजन अनुदैर्ध्य प्रतीत होता है, किंतु फ्रैग्मोप्लास्ट और कोशिका पट्टिका के सिरे कोशिका के अंतिम सिरों तक नहीं पहुंच पाते। इसके बजाए कोशिका पट्टिका पार्श्व की भित्तियों की ओर मुड़ कर उनसे जा मिलती है। नई भित्ति इसलिए मूल पार्श्व भित्तियों से छोटी होती है। इस तरह निर्मित संतति कोशिकाएं भी अपनी मातृ कोशिकाओं से छोटी होती हैं और उनके सिरे उसी तल पर स्थित नहीं होते।

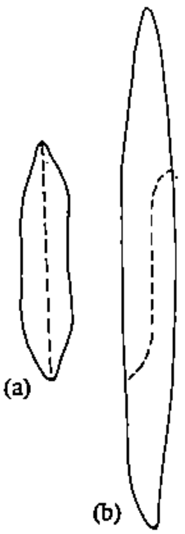

चित्र 7.10 : तर्कुरूप आद्यकों का चित्रात्मक निरूपण। a) अरीय गुणनात्मक विभाजन दिखाती एक तर्कुरूप कोशिका। दोनों संतति कोशिकाएं लंबाई में परस्पर और मातृ कोशिका के बराबर होती हैं। b) एक तर्कुरूप आद्यक में आभासी-अनुप्रस्थ विभाजन। ध्यान से देखिए नव कोशिका भित्ति किसी भी सिरे तक नहीं फैलती और दोनों संतति कोशिकाओं में एक भी मातृ कोशिका के बराबर नहीं है। (मौसेथ, 1988 से)।

संवहन एधा की सक्रियता के फलस्वरूप पादप में द्वितीयक वृद्धि होती है। वार्षिक या द्विवार्षिक पादपों में साधारणतया कायिक अवस्था, जनन अवस्था, कायिक मृत्यु (somatic death) और बीज प्रकीर्णन का एक नियमित अनुक्रम पाया जाता है। कायिक और जननात्मक अवस्था के बीच प्राय: पादप में द्वितीयक वृद्धि होती है और इस चरण पर संवहन एधा सक्रिय हो उठता है। चिरस्थायी पादपों को द्वितीयक वृद्धि के कई चक्रों से गुजरना पड़ता है। इसका यह मतलब है कि संवहन एधा विशिष्ट अवधियों में ही सक्रिय होता है और फिर प्रसुप्त अवस्था में लौट जाता है। इस प्रसुप्ति का संबंध तनावजन्य परिस्थितियों जैसे गर्मी, शीत या जलाभाव से है। सभी पादपों का एधा प्रसुप्ति के दौर से नहीं गुजरता। ऐसे पादप भी हैं, जिनमें एधा उनके संपूर्ण जीवनकाल भर सक्रिय रहता है और उनमें जाइलम और फ्लोएम अवयवों में वृद्धि करते रहता है। एधा में इस प्रकार की सक्रियता प्राय: उष्णकटिबंधी प्रदेशों में उगने वाले पादपों में पाई जाती है। इसीलिए इन वृक्षों में **वृद्धि वलयों** का निर्माण नहीं दिखाई देता। वृद्धि वलय मुख्यत: शीतोष्ण पादपों में एधा सक्रियता को नियंत्रित करने वाले ऋतु-जन्य उतार-चढ़ावों की अनुक्रिया के फलस्वरूप बनते हैं। इन पादपों में, अनूकूल मौसम में अपेक्षतया बड़े, तथा प्रतिकूल मौसम में संकीर्ण संवहन ऊतक बनते हैं।

द्वितीयक वृद्धि यूं तो संवहन एधा का एक महत्वपूर्ण प्रकार्य है, किंतु यही एकमात्र प्रकार्य नहीं है। इसका इतना ही महत्वपूर्ण एक और प्रकार्य है - जीवित बने रहना। जैसे कि जड़ों और प्ररोहों के शिखाग्र मेरिस्टेमों को अक्षुण्ण बने और सामान्य रूप से कार्य करते रहना आवश्यक है, ठीक उसी तरह संवहन कैम्बियम को भी जीवित बने रहना और पादप के संपूर्ण जीवनकाल में सफलतापूर्वक कार्य करते रहना आवश्यक है। सिर्फ एक या दो मौसमों के लिए नहीं बल्कि कभी-कभी 11,000 वर्षों तक। इसका एक और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि शिखाग्र मेरिस्टेमों के विपरीत संवहन कैम्बियम अपूरणीय है। शिखाग्र मेरिस्टेम अगर क्षतिग्रस्त हो जाएं तो कक्षीय कलिकाएं मेरिस्टमी प्रकार्य संभाल लेती हैं।

वाणिज्य कॉर्क का निर्माण वृक्षों की छाल, विशेष्कर क्वेरकस सुबेर (*Quercus suber*) वृक्ष में होता है। लगभग दस वर्ष तक कागजन की वृद्धि वाणिज्य कोटि का कॉर्क प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। कॉर्क के वाणिज्य मूल्य को नियंत्रित करने वाले लक्षण, गैसों और तरलों के प्रति इसकी अप्रवेश्यता, इसकी शक्ति, प्रत्यास्थता और हल्कापन हैं।

(2) काग एधा

संवहन एधा की तरह काग एधा भी एक पतला-बेलन (सिलिंडर) बनाता है जो काष्ठी पादपों की जड़ों और तनों की लंबाई के बराबर होता है और संवहन कैम्बियम के बाहर की ओर स्थित रहता है। अनुप्रस्थ काट में, संवहन एधा, काग एधा के अंदर स्थित लघुतर व्यास की एक नलिका जैसा दिखाई देता है। काग एधा का उत्पाद **छाल वल्क (bark)** या **परिचर्म (periderm)** है। इनका निर्माण भी संवहन एधा की तरह प्राथमिक ऊतकों के परिपक्व होने के बाद होता है। इसलिए ये द्वितीयक ऊतक (secondary tissues) हैं।

परिचर्म असल में ऊतकों का एक मिश्रण है। यह काग एधा या कागजन (**phellogen**) का बना होता है। कागजन की कोशिकाएं मेरिस्टेमी होती हैं, किंतु संवहन एधा के विपरीत इसकी सभी कोशिकाएं एक ही प्रकार की होती हैं। कागजन की कोशिकाएं परिनतिक विभाजन कर कोशिकाओं की अरीय पंक्तियों को जन्म देती हैं। कागजन के बाहर की ओर बनने वाली कोशिकाएं **कॉर्क या काग (phellem)** में विभेदित हो जाती हैं और भीतर की ओर की कोशिकाएं **काग अस्तर (phelloderm)** या द्वितीयक वल्कुट (secondary cortex) बनाती हैं (चित्र 7.11)। कागजन एक द्वितीयक मेरिस्टमी ऊतक है। इसकी उत्पत्ति अधिचर्म (epidermis) या अधस्त्वचा (hypodermis) से होती है यानि उन कोशिकाओं से जिनमें विभेदन हो चुका होता है। काग कोशिकाएं परिपक्व होने पर मृत हो जाती हैं और उनकी कोशिका भित्तियां सबेरिनमयी (suberized) होती हैं जो इन्हें जलरोधी एवं कठोर बनाती है। दूसरी ओर काग अस्तर की कोशिकाएं सजीव होती हैं। परिचर्म के कुछ भाग की कोशिकाकएं **वातरंध्रों (lenticels)** में विभेदित हो जाती हैं। कागजन के कुछ भाग, प्राय: रंध्रों (stomata) के नीचे स्थित, कुछ अलग हटकर कार्य करते हैं, और वातरंध्र बनाते हैं (इकाई-8 भी देखें)। ये अदृढ़ रूप से व्यवस्थित कोशिकाओं के बने रहते हैं - यह एक पूरक ऊतक (complementary tissue) है जो बाहरी पर्यावरण के साथ गैसीय विनिमय को सुगम बनाता है। आपने अनेक पादपों में वातरंध्र देखे होंगे। ये पाए जाते हैं आलू में, सेब, नाशपाती जैसे फलों में, *वाइटिस* के तने में और *डौकस* की जड़ों पर भी यह उपस्थित रहते हैं।

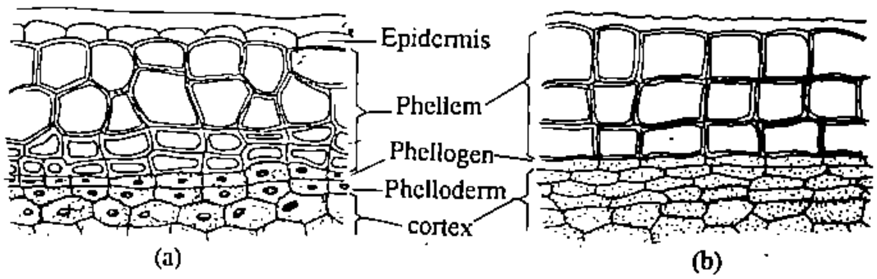

चित्र 7.11 : *पोपुलस डेल्टोइडीज* (a), और *सोलनम डलकमारा* (b) इन दोनों की एक शाखा की अनुप्रस्थ काट के भाग, जिसमें परिचर्म और उसके घटकों को दिखाया गया है। चित्र (a) वल्कुट की बाह्यतम परत से कागजन के विकास को दिखाता है, जबकि चित्र (b) अधिचर्म से विभेदित हुए कागजन को दर्शाता है। (इमीज एंड मैकडेनियल्स (1987))

चित्र 7.12 : अंतर्विष्ट मेरिस्टेम की उपस्थिति वाले खंडों को दर्शाता योजनाबद्ध चित्र। उन खंडों को जहां अंतर्विष्ट मेरिस्टेम और तरुण ऊतक पाए जाते हैं, काले रंग से दिखाया गया है, थोड़ा सा प्रौढ़ खंडों को छायित भागों से दर्शाया गया है और, परिपक्व कोशिकाओं वाले खंडों को खाली छोड़ दिया गया है। (प्रैट 1935 से)।

7.2.3 अंतर्विष्ट मेरिस्टेम (Intercalary Meristems)

घासों और संबद्ध पादपों में न तो संवहन एधा और ना ही काग एधा पाया जाता है, किंतु उनमें शिखाग्र मेरिस्टेम अवश्य होता है। साथ ही एक अन्य मेरिस्टमी ऊतक भी होता है जिसे अंतर्विष्ट मेरिस्टेम कहते हैं। यह पर्वों के समीप स्थित होता है और तने में एकांतर में पाया जाता है (चित्र 7.12)। यानि इस तरह के अनेक मेरिस्टेम पूर्णत: परिपक्व कोशिकाओं के खंडों से पृथक हुए रहते हैं। कुछ समय के बाद इन अंतर्विष्ट मेरिस्टेमों का भी परिपक्व ऊतकों में विभेदन हो जाता है। इस तरह ये किसी पादप के पूर्ण जीवनकाल में उपस्थित नहीं रहते। शीर्षस्थ मेरिस्टेम की तरह अंतर्विष्ट मेरिस्टेम भी तनों की लंबाई में वृद्धि करते हैं। घासों के तनों और कुछ एक बीजों के अलावा केरियोफिलेसी और पॉलिगोनेसी की कुछ जातियों में भी अंतर्विष्ट मेरिस्टेम पाए जाते हैं। कुछ खास पादपों के पुष्पक्रमों के पुष्पावली वृंतों, पोएसी की पत्तियों और *एरैकिस हाइपोजिया* की जायांगधर में दीर्घन अंतर्विष्ट मेरिस्टेम की सक्रियता के फलस्वरूप होता है।

बोध प्रश्न 1

बताइए कि नीचे दिए गए कथन सही हैं या गलत:

i) किसी पादप अंग के व्यास में वृद्धि शिखाग्र मेरिस्टेम के परिनतिक विभाजन द्वारा होती है।

ii) *एरैकिस* के जायांगधर में दीर्घन अंतर्विष्ट मेरिस्टेम की सक्रियता के फलस्वरूप होता है।

iii) पादपों के प्रौढ़ तने में खोखले-बेलन सी आकृति का निर्माण सिर्फ पूलीय एधा द्वारा होता है।

iv) काग एधा मूलत: प्राथमिक है।

v) अंतर्विष्ट मेरिस्टेम परिपक्व ऊतकों के मध्य पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिए।

i) एक पर्ण के निर्माण और दूसरे पर्ण के समारंभन के बीच के समय को .... कहते हैं।

ii) संवहन एधा .... और .... का बना होता हैं।

iii) तनों के घेर में वृद्धि .... की सक्रियता के फलस्वरूप होती है।

iv) कैम्बियम उत्पत्ति की दृष्टि से .... और .... दोनों प्रकार का होता है।

v) कागजन बाहर की ओर .... को और भीतर की ओर .... को जन्म देता है।

7.3 परिपक्व ऊतक

ये उन कोशिकाओं के बने होते हैं, मेरिस्टमों से उत्पन्न होने के बाद जो जैसे-जैसे विकसित और परिपक्व होती जाती हैं अपने प्रकार्यों के अनुरूप विभिन्न आकृतियों व आकारों का रूप ले लेती हैं। यह जानना आवश्यक है कि ऊतक को बनाने वाली कोशिकाएं संतत होती हैं और वे पादप की संरचना या प्रकार्यात्मक आधार का कुछ अंश प्रदान करती हैं। इन विभिन्न पादप ऊतकों में उन कोशिकाओं का संकलन सम्मिलित है जो वृद्धि, भोजन के भंडारण, निर्जलीकरण से बचाव, भोजन के संश्लेषण और जल तथा खनिज तत्त्वों के अवशोषण जैसे प्रकार्यों के अनुकूल विशेषरूप धारण कर लेती हैं। एक ही कोशिका-प्ररूप से निर्मित ऊतकों को **सरल ऊतक (simple tissues)** कहते हैं और यह समांगी होते हैं। दो या दो से अधिक कोशिका-प्ररूपों से निर्मित ऊतक **विषमांगी या जटिल ऊतक (complex tissues)** होते हैं। हमने पहले सरल प्रकार के परिपक्व ऊतकों को यहां चर्चा के लिए लिया है जिसके बाद हम जटिल ऊतकों के बारे में बताएंगे।

7.3.1 सरल ऊतक

पादपों में कुछ गिने-चुने ही सरल ऊतक होते हैं। साधारणतया पाए जाने वाले सरल ऊतक हैं - मृदूतक **(parenchyma)**, स्थूलकोणोतक **(collenchyma)** और दृढ़ोत्तक **(sclerenchyma)**। विभिन्न प्रकार के ऊतकों के ये तीनों नाम अलग-अलग कोशिकाओं के लिए भी प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण के लिए दृढ़ोतक की एक कोशिका को भी दृढ़ोतक कोशिका कहा जाता है। एक और बात जो आपने ध्यान रखनी है 'मृदूतकी' **(parenchymatous)**, या 'स्थूलकोणोतकी' (collenchymatous) उन कोशिकाओं को कहा जाता है जिनमें दिए गए ऊतक के कुछ लक्षण पाए जाते हैं जो कि इन उदाहरणों में क्रमश: मृदूतक और स्थूल कोणोतक है। आइए अब ऊपर बताए गए तीनों प्रकार के मूलभूत सरल ऊतकों की चर्चा करते हैं।

(1) मृदूतक

मृदूतक कोशिकाएं उच्च पादपों के लगभग सभी प्रमुख भागों में पाए जाने वाले कोशिका प्ररूपों में सर्वाधिक संख्या में मिलती हैं। ये उत्पत्ति में प्राथमिक या द्वितीयक होती हैं यानि ये तनों या जड़ों के शीर्षस्थ मेरिस्टेमों से उत्पन्न होती हैं; पर्णों के अंतर्विष्ट मेरिस्टेमों से, संवहन एधा से, या फिर परिपक्व अंगों जिनमें द्वितीयक वृद्धि हो चुकी है, उनके कागजन से। विभेदन के दौरान मृदूतक कोशिकाओं में कम से कम परिवर्तन होता है, जोकि रसधानीभवन (vocuolation) और उनकी पतली तथा सुघट्य भित्तियों पर प्राथमिक भित्ति पदार्थ की कुछ मात्रा जुड़ने तक सीमित रहता है। मृदूतक के लक्षणों के बारे में नीचे बताया जा रहा है।

- परिपक्व होने पर भी ये कोशिकाएं सजीव रहती हैं (चित्र 7.13)।
- मृदूतक पादप के सभी भागों में पाया जाता है जैसे मज्जा; तनों एवं जड़ों के वल्कुट में; जड़ों, तनों और पत्तियों के अधिचर्म और संवहन ऊतकों में; पत्तियों के पर्णमध्योतक में; पुष्पांगों में; बीजों के भ्रूणपोष में; और फलों के गूदे में। अधिचर्म भी रूपांतरित मृदूतक का बना होता है जिसके बारे में आप इस इकाई में आगे पढ़ेंगे।

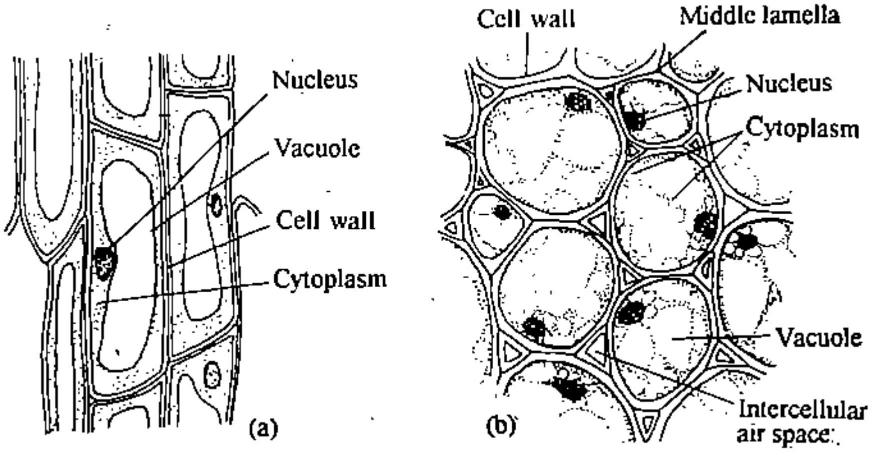

चित्र 7.13 : अनुदैर्ध्य काट (a), और अनुप्रस्थ काट (b) में मृदूतक कोशिकाओं का चित्र। ध्यान दीजिए कोशिकाओं में कोशिकाद्रव्य और सुस्पष्ट केन्द्रक है।

- प्रायः ये अतिदीर्घित नहीं होते। नवनिर्मित कोशिकाएं कमोबेश गोलाकार होती हैं और अंततः वे भिन्न-भिन्न आकार और आकृतियां ग्रहण कर लेती हैं (चित्र 7.14)। साधारणतया ये बहुभुजीय आकार अर्जित करती हैं (चित्र 7.15), यह कोशिकाओं के आपस में दब जाने के कारण होता है, जिससे उनकी नमनशील भित्तियां संपर्क बिंदुओं पर चपटी हो जाती हैं। इनमें से अधिकांश कोशिकाएं चौदह-किनारों वाली होती हैं।

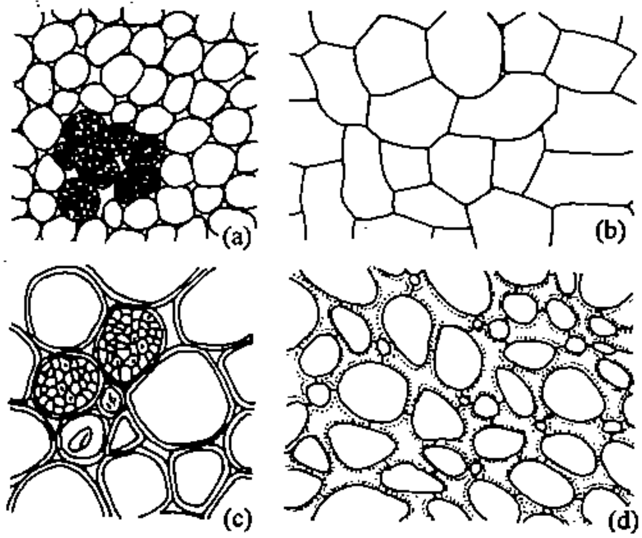

चित्र 7.14 : अनुप्रस्थ काट में दिखाई दे रही मृदूतक कोशिका के आकार में विविधता। (a) *एस्क्लेपियास इकार्नेटा* के जड़ के वल्कुट की कोशिकाएं - कुछ कोशिकाएं स्टार्च के कणों से भरी हैं; (b) *जिया* का मज्जा; (c) *कैस्टानिया डेंटाटा* की टहनी की मज्जा की स्थूलभित्ति लिग्निनयुक्त कोशिकाएं; (d) *क्लीमैटिस वरजीनीयाना* की मज्जा की कुछ कोशिकाएं जिनमें स्थूलभित्ति दिखाई दे रही है। (इमीज और मैकडेनियल्स 1987 से, पुनर्रेखांकित)।

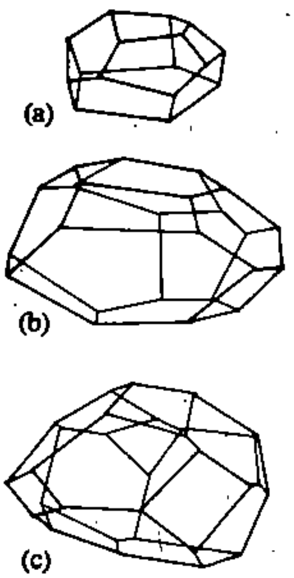

चित्र 7.15 : ऐलंथस की मज्जा की कुछ मृदूतक कोशिकाओं के त्रियामी रेखाचित्र। a) दस फलकों वाली कोशिका; b) चौदह फलकों वाली कोशिका; और c) सत्रह फलकों वाली कोशिका। (हलवैरी 1944 से पुनर्रेखांकित)।

- इनमें एक पतली और सेलुलोजी प्राथमिक भित्ति पाई जाती है और द्वितीयक भित्ति इनमें नहीं होती (चित्र 7.13)।
- इनकी कोशिकाएं रसधानीयुक्त होती हैं और उनमें सजीव कोशिकाद्रव्य पाया जाता है (चित्र 7.13)। कुछ कोशिकाओं में लघु एवं सरल गर्त पाए जाते हैं (चित्र 7.16)।
- वायु अवकाश की उपस्थिति मृदूतक कोशिकाओं का एक सामान्य लक्षण है (चित्र 7.13 और 7.14)।
- मृदूतक कोशिकाएं पुनर्नियोजनीय होती हैं जिससे वे विभिन्न कोशिका प्ररूपों में विभेदित हो जाती हैं।
- मृदूतक कोशिकाएं काफी लंबे काल तक जीवित रह सकती हैं; उदाहरणतया कुछ कैक्टसों में वे 100 वर्ष से अधिक जीवित रहती हैं।
- मृदूतक कोशिकाओं में विस्मयकारी प्रकार्यात्मक विविधता देखने में आती है। एक ओर वे सामान्य यानि सरल कोशिका मात्र भर हो सकती हैं, जिनमें कोई विशिष्टीकरण नहीं मिलता। दूसरी कुछ

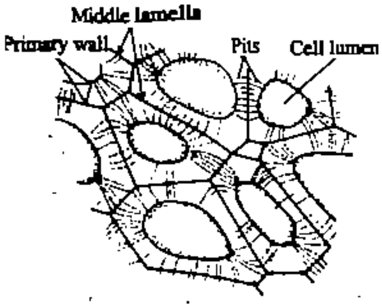

चित्र 7.16: ***डियोस्पाइरॉस* के भ्रूणपोष की मृदूतक कोशिकाओं का चित्रात्मक निरूपण। कोशिकाएं एक दूसरे से कई गर्तो के माध्यम से जुड़ी रहती हैं। (इसौ, 1985 से)।**

कोशिकाएं अति विशिष्टीकृत पाई जाती हैं। उनकी प्रकार्यात्मक विविधता के आधार पर मृदूतक कोशिकाओं को पांच वर्गों में बांटा गया है: संश्लेषी **(synthetic)** मृदूतक, संरचनात्मक **(structural)** मृदूतक, **परिसीमा (boundary)** मृदूतक, अभिगमन **(transport)** मृदूतक और संचय **(storage)** मृदूतक। इन सभी वर्गों के कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं।

(i) संश्लेषी मृदूतक : इस वर्ग में वे सभी मृदूतक आते हैं जो नवीन कोशिकाओं या कुछ उत्पादों का संश्लेषण करते हैं। प्रकाश संश्लेषी मृदूतक या हरित ऊतक (chlorenchyma, देखें चित्र 7.17 में **palisade tissue**), मेरिस्टमी कोशिकाएं और स्रावी मृदूतक मुख्यत: इस वर्ग के घटक हैं। हरित ऊतक का मुख्य प्रकार्य प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा के रूप में कार्बनिक यौगिकों में संचित करना है। इसके लिए प्रकाश को रोका जाना और कार्बन-डाइआक्साइड का कोशिका में अवशोषण होना जरूरी है। इन दोनों कार्यों को पूरा करने के लिए इन कोशिकाओं का पृष्ठ क्षेत्रफल विशाल होता है और ये बेलनाकार होती हैं। उनके चारों ओर पाए जाने वाले वृहद वायु अवकाश कार्बन-डाइआक्साइड के अवशोषण के लिए अधिकतम धरातल उपलब्ध कराते हैं। ऐसे ऊतकों में प्राय: एक विशाल मध्य रसधानी होती है जो हरितलवकों को कोशिका के भीतर एक समान वितरण में सहायक होती है तथा स्व-आच्छादन को रोकती है इससे हरितलवकों को कार्बन-डाइऑक्साइड अवशोषण के लिए अनुकूल परिस्थिति भी मिलती हैं। हरित ऊतक का वृहद पृष्ठ क्षेत्रफल, पानी को कोशिकाओं से वाष्पित होकर अंतराकोशिक अवकाशों में निकल जाने देता है जहां से वह रंध्रों के जरिए बाहर निकल जाता है। मरूपादपों में, जहाँ जल संरक्षण आवश्यक है हरित ऊतक दृढ़ता से परस्पर बंधे रहते हैं, जिससे पृष्ठ क्षेत्रफल कम हो जाता है तथा जलक्षति भी कम हो जाती है। ऐसा क्रस्यूलेसी और मीजेम्ब्रिएंथीमेसी में देखा जा सकता है।

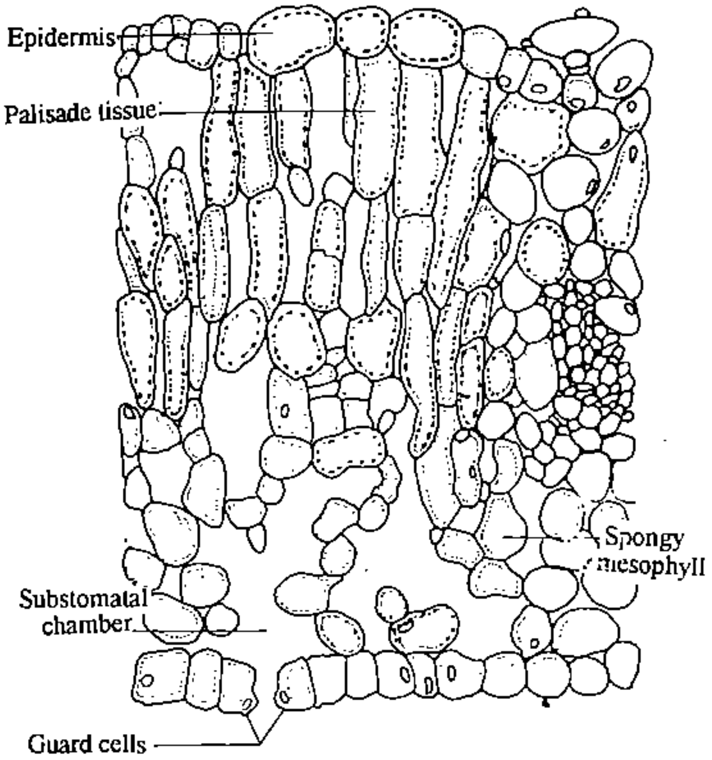

चित्र 7.17: ***सिरिंजा* जाति। पत्ती की खड़ी काट का एक अंश। प्रकाशसंश्लेषी स्तंभ (palisade) ऊतक के लक्षणों को ध्यान से देखिए।** (कटर, 1978, से पुनःआरेखित)।

मेरिस्टमी मृदूतक : इन कोशिकाओं की विशेषता है इनका छोटा आकार तथा इनमें पाए जाने वाले गिने-चुने कोशिकांग। ये कोशिकाएं शर्कराओं, जल और अकार्बनिक पोषक तत्वों का अवशोषण करती हैं और इनका उपयोग संपूर्ण कोशिकाओं के संश्लेषण के लिए करती हैं।

स्रावी मृदूतक : ये कोशिकाएं पादप के बाहर की ओर नाना प्रकार के पदार्थों का स्राव करती हैं जैसे क्यूटिन या फिर ये पादप के भीतर कुछ खास गुहिकाओं और वाहिनियों में स्राव करती हैं जैसे लैटेक्स और रेजिन।

(ii) संरचनात्मक मृदूतक : जैसा कि इनके नाम से स्पष्ट हो जाता है ये एक तरह की संरचनात्मक विशेषज्ञता प्रदर्शित करते हैं। इनका साधारण रूप वायूतक (aerenchyma) है (चित्र 7.18)। इस प्रकार

के ऊतक में अंतराकोशिक अवकाशों की उपस्थिति इनकी मुख्य विशेषता है। इन अवकाशों का निर्माण कोशिकाओं के बीच मध्य पटलिका के विभक्त होने से या कोशिकाओं के भंजन से होता है। जलीय पादपों में, अंतराकोशिक अवकाश सुविकसित होते हैं जो मिलकर समूचे पादप काय में एक संबद्ध तंत्र बनाते हैं। इस प्रकार एक ऐसी सतत गैस प्रावस्था पैदा होती है जो समूचे ऊतक में प्रशाखित रहती है। यह जलीय पुष्पी पादपों के निमग्न तनों, पर्णवृंतों और जड़ों को अपनी ऑक्सीजन आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ बनाता है। इसके उदाहरण जल कुमुदिनी और मैंग्रोवों के पादप हैं। इसके अलावा कई जलीय पादपों में पाए जाने वाले ऊर्ध्व वायु अवकाशों में अक्सर ताराकार कोशिकाएं या ताराभ दृढ़कोशिकाएँ **(astrosclereids)** होतीं हैं। ये कोशिकाएं अक्सर नियमित अंतरालों पर डायाफ्रामों द्वारा आड़ी प्रतिच्छेदित रहती हैं। यह साधारणतया *निम्फिया* के पर्णवृंतों में पाई जाती हैं (चित्र 7.18 d) ये ताराभ दृढ़कोशिकाएं अक्सर स्तंभी वायु अवकाशों के अंदर तक शाखन कर वृंत को आधार प्रदान करती हैं।

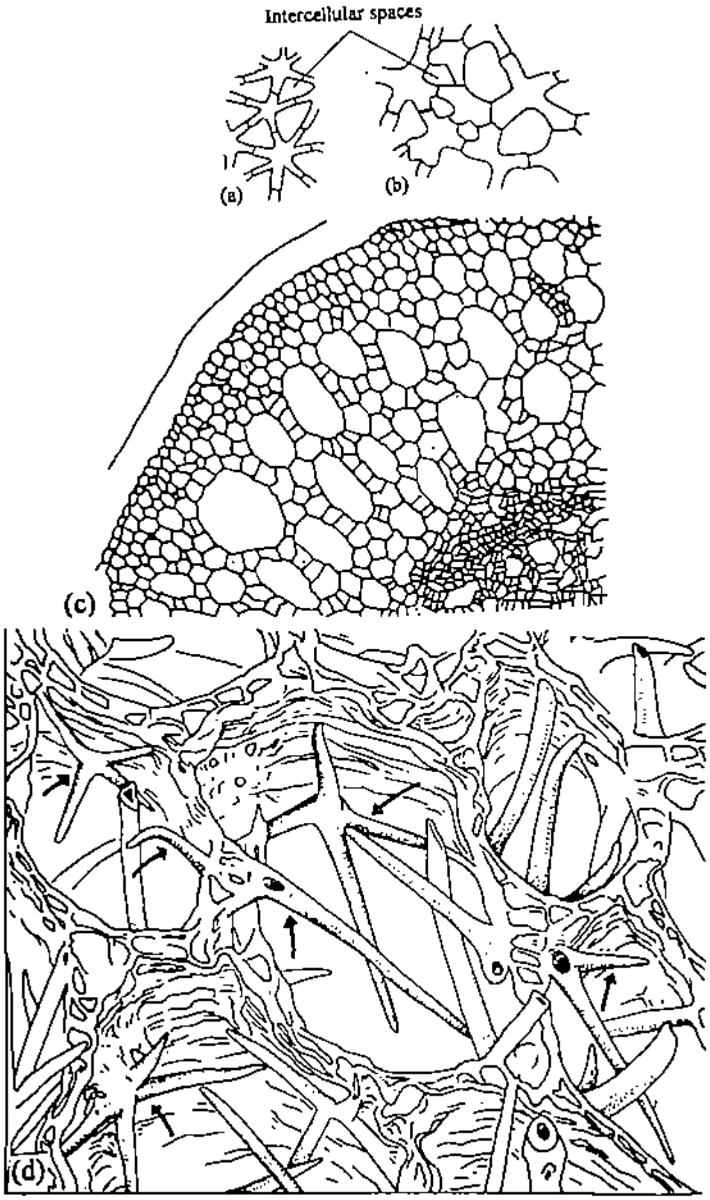

चित्र 7.18 : वायूतक। a,b) मृदूतक कोशिकाएं जिनकी कई भुजाएं जुड़कर वृहद अंतराकोशिक अवकाशों को घेरे हुए हैं। a) *जंकस* के मज्जा की कुछ कोशिकाएं। b) कुछ कोशिकाएं *कैन्ना* की पर्णमध्यशिरा से। c) *लुडवीगिया* टेरेस्ट्री के तने का एक भाग जिसका वल्कुट अधिकाधिक वायूतक का बना है। d) न्यूफर *वैरीगेटम* के पर्णवृंत के वायूतक में ताराभ दृढ़कोशिकाएं जिन्हें तीर के निशान से दिखाया गया है। (a,b और d कटर, 1978 से; और c मौसेय 1988 से)।

वायूतक कोशिकाएं जलीय पादपों को न केवल वातन और उत्प्लावन प्रदान करता है वरन् यह अपने हल्के भार के बावजूद भी अपेक्षतया शक्तिशाली होती हैं। वायूतक की एक रोचक विशेषता यह है कि वायु अवकाश ऊतक के आयतन का लगभग आधा क्षेत्र घेरे रहते हैं। ऐसी स्थितियों में कोशिकाओं में निरपवाद रूप से पालियां या भुजाएं विकसित हो जाती हैं और ताराकार बन जातीं हैं जैसे कि *जंकस*, *मूसा* और

सिर्पस में। फिर यदि वायु अवकाश इससे भी बड़े हों तो उनमें अक्सर ऊतक शीट पाई जाती हैं जो उन अवकाशों से आर-पार गुजरती हैं। इससे पादप को अतिरिक्त आधार मिलता है।

(iii) परिसीमा मृदूतक : जड़, तना और पत्ती की शारीरीय संरचना के अध्ययन से आपको याद होगा कि इनके कई भागों या पादप संरचना और पर्यावरण के बीच अंतरापृष्ठ, मृदूतक कोशिकाओं से निर्मित होते हैं। विभिन्न पादप ऊतकों के बीच अंतरापृष्ठों का उदाहरण जड़ों में पाई जाने वाली अंतस्त्वचा है जो संवहन ऊतक को वल्कुट से अलग रखती है। इसी तरह एकबीजपत्री पर्ण में पाया जाने वाला पूलाच्छद **(bundle sheath)** संवहन पूल और पर्णमध्योतक कोशिकाओं के बीच अंतरापृष्ठ का कार्य करता है। जड़ों, तनों और पत्तियों की अधिचर्मी कोशिकाएं अधिकतर मृदूतकी होती हैं और वे पादप संरचना और पर्यावरण के बीच अंतरापृष्ठ का निर्माण करते हैं। अधिचर्म के बारे में अधिक विस्तार से आप इस इकाई के अंत में पढ़ेंगे।

(iv) अभिगमन मृदूतक : अंतरण कोशिकाएं **(transfer cells)** इनका उदाहरण हैं (चित्र 7.19)। पादप के कई भागों में पदार्थों को तेजी से और भारी मात्रा में थोड़ी दूरी तक अंतरित करने की आवश्यकता पड़ती है, जैसे एक ग्रंथि में, चालन अवयवों में और उनसे बाहर और एक परिवर्धनशील भ्रूण में। इस कार्य का निष्पादन अंतरण कोशिकाओं द्वारा होता है। ये विशिष्टीकृत मृदूतक कोशिकाएं हैं, जिनकी भित्तियों में विस्तृत भित्ती अंत:वर्ध होते हैं जो कोशिका गुहिका तक फैले रहते हैं (चित्र 7.19)। वर्धित भित्ति क्षेत्रफल द्रव्यों के अंतरण को सुगम बनाता है।

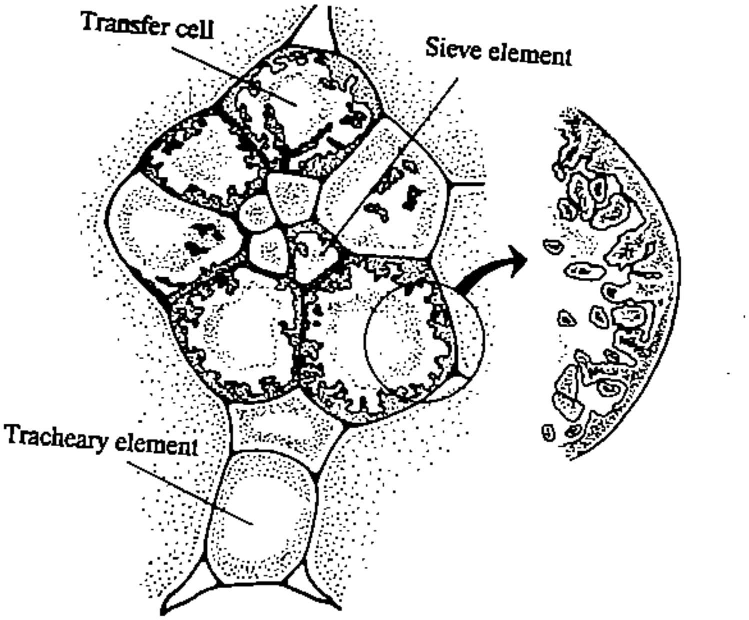

चित्र 7.19 : ***शेरार्डिया एर्वेन्सिस***। **पर्ण संवहन न्यास का आवर्धित अंश जो फ़्लोएम तत्वों को घेरे अंतरण कोशिकाओं को दिखा रहा है। (पेट और गनिंग, 1969 से)।**

(v) संचय मृदूतक : ऐसे पादप अंग जो स्टार्च कणों, तेलों, प्रोटीनों आदि उत्पादों का संचय करते हैं (चित्र 7.20) अधिकतर मृदूतकी होते हैं। इनके इस विशिष्ट प्रकार्य के आधार पर ही इन्हें संचय मृदूतक कहा जाता है। फल, बीज और कंद जैसे पादप अंगों के संचय उत्पादों का भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है। स्टार्च संचयी कोशिकाएं अनाज के दानों और आलू में, प्रोटीन संचयी कोशिकाएं सेमों और नाशपाती में, और तेल संचयी कोशिकाएं एवोकाडो तथा कुसुंभ में पाई जाती हैं। इस प्रकार की कोशिकाएं संचय उत्पाद से अक्सर इस तरह भरी रहती हैं कि उनमें रसधानी और अन्य कोशिकांग पूर्णत: विलुप्त से हो जाते हैं। मांसलोद्भिद पादपों, जैसे कैक्टस और *यूफोर्बिया* जाति के पादपों में उनकी मृदूतक कोशिकाएं जल का संचय करती हैं। ऐसी कोशिकाएं विशाल होती हैं और उनके आयतन का एक बड़ा हिस्सा अति विस्तारित रसधानी का बना होता है जो एक कोशिकाद्रव्य की पतली परत से घिरा रहता है (चित्र 7.20)।

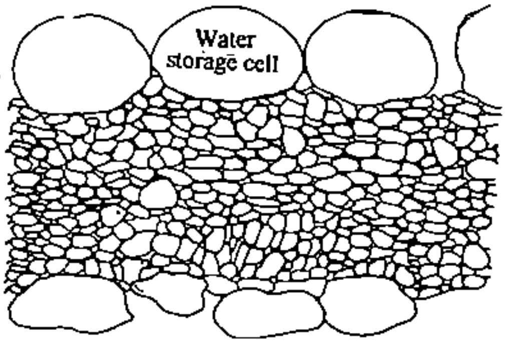

चित्र 7.20 : अनुप्रस्थ काट में *कार्पोब्रोटस* की पत्ती का एक अंश। कई अधिचर्मी कोशिकाएं अति-दीर्घित रहती हैं और जल संचय कोशिकाओं का कार्य करती हैं। (मौसेथ, 1988 से)।

बॉक्स 7.1 : मुक्तदोली मृदूतक

> सजीव जीवद्रव्यक और मेरिस्टमी सक्रियता को पुन: आरंभ कर लेने की क्षमता के कारण मृदूतक कोशिकाएं मुक्तदोली ऊतक कहलाती हैं। उद्यान कृषकों में ये लोकप्रिय हैं। उद्यान कृषि विधियों में पादप के किसी अंग को जब उच्छेदित कर उससे कलम का काम लिया जाता है, तो नई जड़ें या कलिका आद्यक इसकी मृदूतक कोशिकाओं से ही विकसित होते हैं। इसके अलावा, यह ऊतक घाव को ठीक करने और पुनरुद्भवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिपक्व मृदूतक कोशिकाएं, जब उनका परिवेश कृत्रिम रूप से बदल दिया जाए, तो उनमें मेरिस्टमी सक्रियता पुन: आरंभ हो जाती है। संवर्धन माध्यम में ऐसी कुछ कोशिकाएं संपूर्ण पादपों को जन्म देने में सक्षम होती हैं, जिन पादपों में जीवनक्षम बीज भी पैदा होते हैं। ये कोशिकाएं ऐसी मुक्तदोली होती हैं कि अगर इनके जीवद्रव्यकों को अनुकूल संवर्धन माध्यम में उगाया जाए तो वे भी संपूर्ण पादपों में विकसित हो जाते हैं। हाल के कुछ ही वर्षों से पर्णमध्योतक कोशिकाओं से पृथक किए गए जीवद्रव्यकों को नियंत्रित परिवेश में पूर्ण पादपों में सफलतापूर्वक पुनरुद्भवन किया जा रहा है। इस कार्य की एक महत्वपूर्ण संभावना कायिक संकरों (somatic hybrids) का निर्माण है, जिनका विकास दो भिन्न जातियों के पृथक किए गए जीवद्रव्यकों का पहले आपस में संलयन कर और फिर उनसे पादप उत्पन्न कर किया जाता है। ये विधियां आनुवांशिक अनिषेच्यता से उबरने में सहायक होती हैं।

(2) स्थूल कोणोतक

सरल ऊतक का यह एक और रूप है क्योंकि यह भी एक ही प्रकार की कोशिकाओं का बना होता है। ये मृदूतक के इतनी सदृश होती हैं कि इन्हें स्थूलभित्तीय मृदूतक ही मान लिया जाता है। स्थूल कोणोतक में विभेदन प्रक्रम मृदूतक कोशिकाओं से कुछ अलग हटकर होता है। इन्हें भारी तनन-सामर्थ्य युक्त एक सजीव लचीले ऊतक के रूप में जाना जाता है। स्थूल कोणोतक की मुख्य विशेषताएं नीचे बताई जा रही हैं।

- परिपक्व होने पर ये सजीव बनी रहती हैं। इनमें सजीव कोशिकाद्रव्य होता है जिसमें अक्सर हरितलवक और बड़ी मध्य रसधानी पाई जाती है (चित्र 7.21) इनमें प्राय: टैनिन भी देखने को मिलता है।

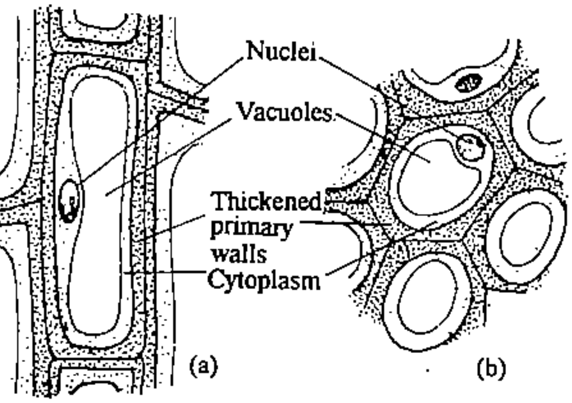

चित्र 7.21 : स्थूल कोणोतक के चित्र (a तथा b)। इन कोशिकाओं की विशेषता यह है कि कोशिका भित्ति की प्राथमिक परत के भीतरी फलक की ओर इनमें लिग्निन-मुक्त स्थूलन पाया जाता है। इनमें सजीव कोशिकाद्रव्य पाया जाता है।

- इनमें सरल गर्त उपस्थित रहते हैं।
- कभी-कभी वायु अवकाश भी उपस्थित रहते हैं।
- व्यक्तिवृत्तीय की दृष्टि से स्थूल कोणोतक दीर्घित कोशिकाओं से विकसित होते हैं, जो प्राक्एधा के सदृश होती हैं और मेरिस्टेम में विभेदन के आरंभिक चरणों में ही जो प्रकट हो जाती हैं या ये भरण मेरिस्टेम की कामोबेश समव्यासीय कोशिकाओ से उपजती हैं।
- ये तरुण वर्णनशील अंगों और शाकीय पादपों के परिपक्व अंगों में भी आधार ऊतक के रूप में काम करते हैं।
- ये तनों, पत्तियों, पुष्पांगों, फलों, पर्णवृंतों और पुष्पावलि-वृंतों में पाए जाते है। अंगों में ये प्राय: परिधीय स्थिति में रहते हैं। तनों में इन्हें अधिचर्म के ठीक नीचे या मृदूतक की कुछ बाहरी परतों के नीचे देखा जा सकता है। ये अक्सर स्तंभ की परिधि के समीप एक पूर्ण बेलन का निर्माण करते हैं या विविक्त गुच्छों के रूप में मिलते हैं।
- ये जिस अंग में स्थित रहते हैं उसके अक्ष के समांतर ही ये दीर्घित रहते हैं।
- सेलुलोस भित्ति के अतिरिक्त इनमें प्राथमिक भित्ति की एक और परत होती है जो हेमीसेलुलोसों या पेक्टिनी पदार्थों की बनी होती है। ये पदार्थ सेलुलोस भित्ति के भीतर समान रूप से वितरित रहते हैं या कोशिका के कोणों में संकेन्द्रित रहते हैं।

बॉक्स 7.2 : सेलुलोस का परीक्षण

> पहले आयोडीन पोटेशियम आयोडाइड के घोल से और फिर 60 प्रतिशत सल्फ्यूरिक अम्ल से कोशिका को संसाधित करें। भित्तियों में सेलुलोस का रंग उभर आएगा।

- इन कोशिकाओं में काफी सुघट्यता पाई जाती है, परन्तु ये अंग की वृद्धि के साथ ही सदा के लिए फैल जाती हैं।
- मृदूतक कोशिकाओं की तरह ये भी मेरिस्टमी अवस्था में पुन: लौटने में समर्थ रहती हैं।
- भित्ति स्थूलन के आधार पर स्थूल कोणोतक के तीन मुख्य प्रकार हैं (चित्र 7.22)।

  i) कोणीय : सर्वाधिक पाया जाने वाला स्थूल कोणोतक जिसमें भित्ति स्थूलन प्रधानत: कोशिकाओं के कोनों या कोणों पर संकेन्द्रित रहता है, जैसे आजवाइन के पर्णवृंत, *डहेलिया, धतूरा, वाइटिस, बिगोनिया, कोलियस,* मोरूस और *कुकुरबिटा* के तनों में,

  ii) पटलित : इस प्ररूप में भित्ति स्थूलन भारी मात्रा में कोशिकाओं की अरीय भित्तियों में न होकर स्पर्शीय भित्तियों में होता है, जैसे *सैम्बुकस नाइग्रम,* और *रेमनस* के तने में,

  iii) रिक्तिका : इन कोशिकाओं में, स्थूलन मुख्यत: कोशिका के बीच अंतराकोशिक अवकाशों के आसपास जमा मिलता है। ऐसी कोशिकाएं *मोन्स्टेरा* की आकाशी जड़ों और *सैल्विया, माल्वा, एल्थेया, एस्क्लेपियास, डाहलिया* और *हेलिएंथस* के पर्णवृंतों में देखी जा सकती हैं।

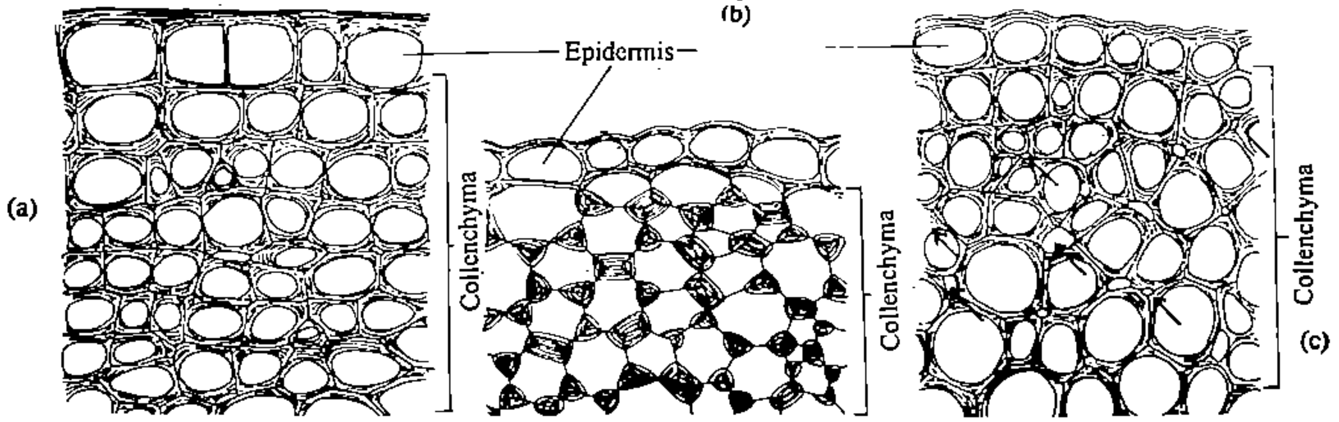

चित्र 7.22 : स्थूल कोणोतक के प्रकार। a) *सैम्बुकस* में पटलिका स्थूल कोणोतक। स्थूलन मुख्यत: स्पर्शी भित्तियों में हैं। b) *कुकुरबिटा* में कोणीय स्थूल कोणोतक। इनमें स्थूलन कोणों में है। c) *लैक्ट्यूका* में रिक्तिका स्थूल कोणोतक। इनमें काफी संख्या में मौजूद अंतराकोशिक अवकाशों (तीरों को देखें) और इन अवकाशों के समीप स्थूलकों को गौर से देखिए। (इसौ, 1985 से पुन:आरेखित)।

(3) दृढ़ोतक

यह ऊतक स्थूल भित्ति कोशिकाओं के एक काम्प्लेक्स का बना होता है, जिसका प्रधान प्रकार्य यांत्रिक शक्ति प्रदान करना है। इनमें निम्न कोशिका विशिष्टताएं पाई जाती हैं।

- परिपक्व होने पर इनमें प्राय: जीवद्रव्यक नहीं रहता और ये अधिकतर मृत कोशिकाएं होती हैं।
- ये प्राथमिक या द्वितीयक पादप काय के किसी भी या सभी अंगो में विकसित हो सकतीं हैं। इनका निर्माण सीधे मेरिस्टमी कोशिकाओं से या फिर मृदूतक या स्थूल कोणोतक कोशिकाओं के रूपांतरण के द्वारा होता है।
- कोशिकाओं की स्थूलित भित्तियां, जो कि अक्सर लिग्निन-युक्त रहती हैं, इस ऊतक की पहचान हैं। इनकी कोशिकाओं में प्राय: सरल गर्त पाए जाते हैं (चित्र 7.23)।

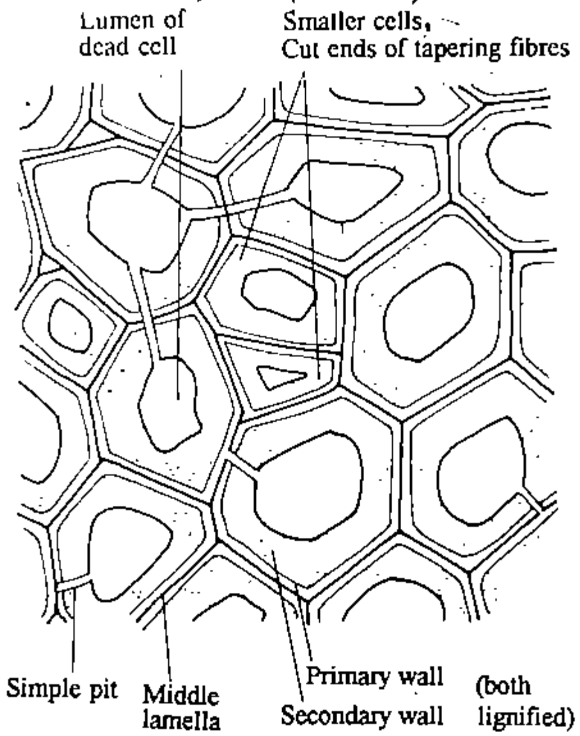

चित्र 7.23 : *सैन्सेवीरिया* जाति। पत्ती की अनुप्रस्थ काट के एक अंश का रेखाचित्र, जो दृढ़ोतक कोशिकाओं को विस्तार से दिखाता है। ध्यान से देखिए कोशिकाएं सरल गर्तों द्वारा परस्पर जुड़ी रहती हैं। (बेरी और सहयोगियों, 1987 से पुनःआरेखित)।

- ये कोशिकाएं पादप अंगों को विभिन्न तनावों, जैसे खिंचाव, मुड़ने, भार और दबाव से उपजे तनावों, को सहने की क्षमता प्रदान करती हैं और तनु-भित्ति मृदुल कोशिकाओं को होने वाली क्षति को कम करती हैं।
- दृढ़ोतक दो प्रकार के होते हैं : स्क्लेरीड और फाइबर यानि रेशा (चित्र 7.24)।

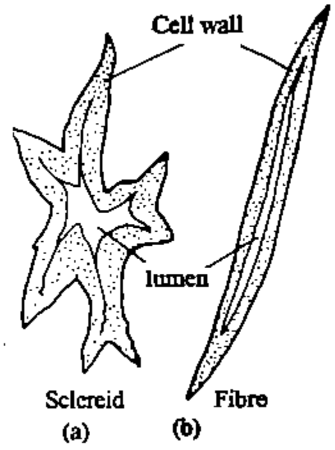

चित्र 7.24 : दृढ़ोतक के प्रकार : (a) स्क्लेरीड और (b) फाइबर।

स्क्लेरीड

स्क्लेरीड आकृति में बड़े परिवर्तनशील होते हैं (चित्र 7.25)। इनके विभिन्न रूपों के बारे में आप थोड़ी देर बाद पढ़ेंगे। पाषाण कोशिका शब्द का प्रयोग एक ऐसी स्क्लेरीड कोशिका के लिए होता है जो लगभग पूरी तरह से समव्यासी, अशाखित और समरूप आकृति के बिना होती है। बीज, नट और दृढ़फलों के सबसे कठोर भाग विभिन्न प्रकार के स्क्लेरीडों से निर्मित होते हैं। ये मिलकर कठोरता और यांत्रिक सुरक्षा प्रदान करते हैं जैसे अखरोट में। इन्हें पादप के विभिन्न ऊतकों में इधर-उधर वितरित देखा जा सकता है।

- ये एकल या समूह में पाए जा सकते हैं (चित्र 7.25) कभी-कभी ये जाइलम या फ्लोएम के साहचर्य में मिलते है जैसे *सिनैमोमुम* की छाल में, या मृदूतकों में जैसे *होया* के तनों और पर्णवृंतों के मज्जा

और वल्कुट में; या *निम्फिया* के पर्णमध्योतक में; *पाइरस* फल के गूदे में, *पाइसम, फेजियोलस* के बीज आवरण में। बीज आवरण में ये प्राय: एक पूर्ण परत के रूप में पाए जाते हैं (चित्र 7.26 a,b), जबकि अन्य ऊतकों में ये यादृच्छिक रूप से वितरित रहते हैं (चित्र 7.26 c)। इसके अलावा ये विशिष्ट स्थानों में भी पाए जाते हैं जैसे *मौरीरिया* की पत्तियों में शिरिकाओं के सिरों पर (चित्र 7.26 d,e)। इन स्क्लेरीडों को अंतस्थ स्क्लेरीड कहा जाता है। स्क्लेरीड पत्तियों के किनारों में भी पाए जाते हैं जैसे *कैमिलिया* में। *पाइरस* फल की कणिक प्रकृति, इनमें पाए जाने वाले स्क्लेरीडों के कारण होती है, जोकि गुच्छों में पाए जाते हैं। स्क्लेरीड आकृति और वितरण में अत्यधिक परिवर्तिता दर्शाते हैं (चित्र 7.26)। कुल मिलाकर यह बहुत ही रोचक कोशिकाएं हैं।

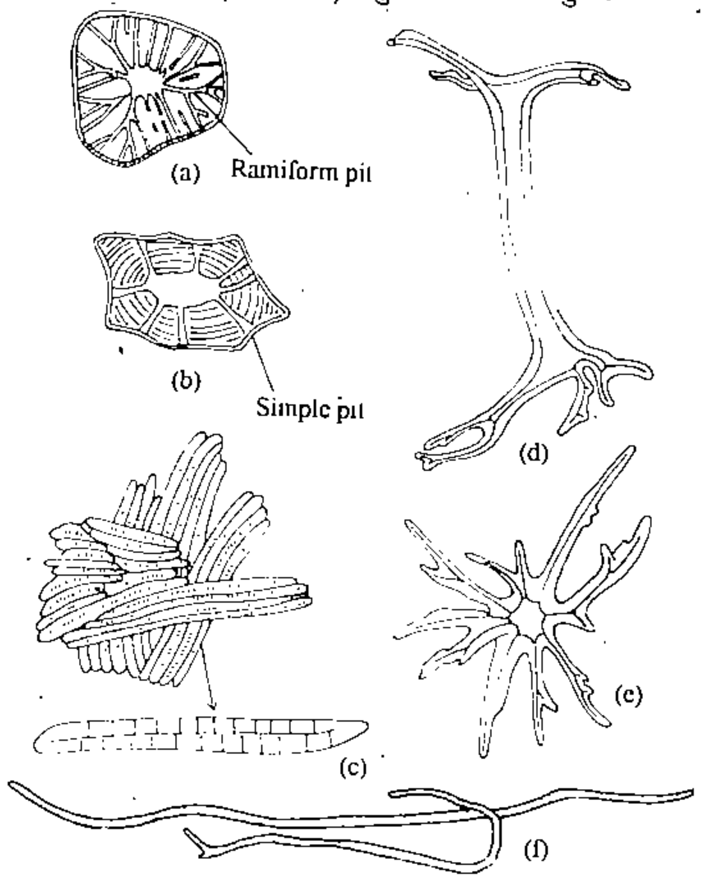

चित्र 7.25 : विभिन्न प्रकार के स्क्लेरीड। a) नाशपाती (*पाइरस*) के गूदे से पाषाण कोशिकाएं; b) मोम पादप (*होया*) के तने के वल्कुट में स्क्लेरीड; c) सेब (*मैलस*) की अंत:फलभित्ति (endocarp) में से कुछ स्क्लेरीड; d) *हैकिया* के पर्ण मध्योतक में स्तंभाकार स्क्लेरीड जिनके सिरे शाखित हैं; e) *ट्रोकोडेन्ड्रॉन* के तने के वल्कुट के तारभ स्क्लेरीड; f) जैतून (ओलिव) के पर्ण माध्योतक में तंतुरूप स्क्लेरीड। (इसौ, 1985 से पुन:आरेखित)।

स्क्लेरीडों के रूपों में अत्यधिक विविधता देखने में आती है। सामान्यतया पाए जाने वाले रूपों के बारे में नीचे बताया जा रहा है।

i) समव्यासी दृढ़क **(Brachysclereids)** : साधारणत: इन्हें पाषाण कोशिका (stone cells) कहते हैं और ये आकृति में समव्यासी होती हैं। ये *पाइरस* (नाशपाती) के फल के गूदे में, और मृदूतकों में या तनों के फ्लोएम में जैसे कि *सिनैमोमुम* और *होया* में (चित्र 7.25 a,b) देखे जा सकते हैं।

ii) गुरूदृढ़क **(Macrosclereids) :** ये छड़ के आकार की होती हैं, जो अक्सर बीज चोल में एक सतत परत की रचना करती हैं जैसे फैबेसी के बीज में (चित्र 7.26 a); और सेब की अंत:फलभित्ति में (चित्र 7.25 c) देखा जा सकता है।

iii) अस्थिदृढ़क **(Osteosclereids) :** ये हड्डी के आकार की होती हैं और इनके सिरे बढ़े हुए या घुंटिकामय रहते हैं। ये प्ररूप *हैकिया* के बीजावरण और पत्तियों में पाए जाते हैं (चित्र 7.25 d)।

iv) तारभ दृढ़क (**Astrosclereids**) : इनमें तरह-तरह का शाखन होता है और ये अक्सर ताराकार होते हैं। ये पर्णवृंतों और पत्तियों में पाए जाते हैं जैसे *थिया*, *ट्रोकोडेन्ड्रॉन* और *निम्फिया* (चित्र 7.25 e)।

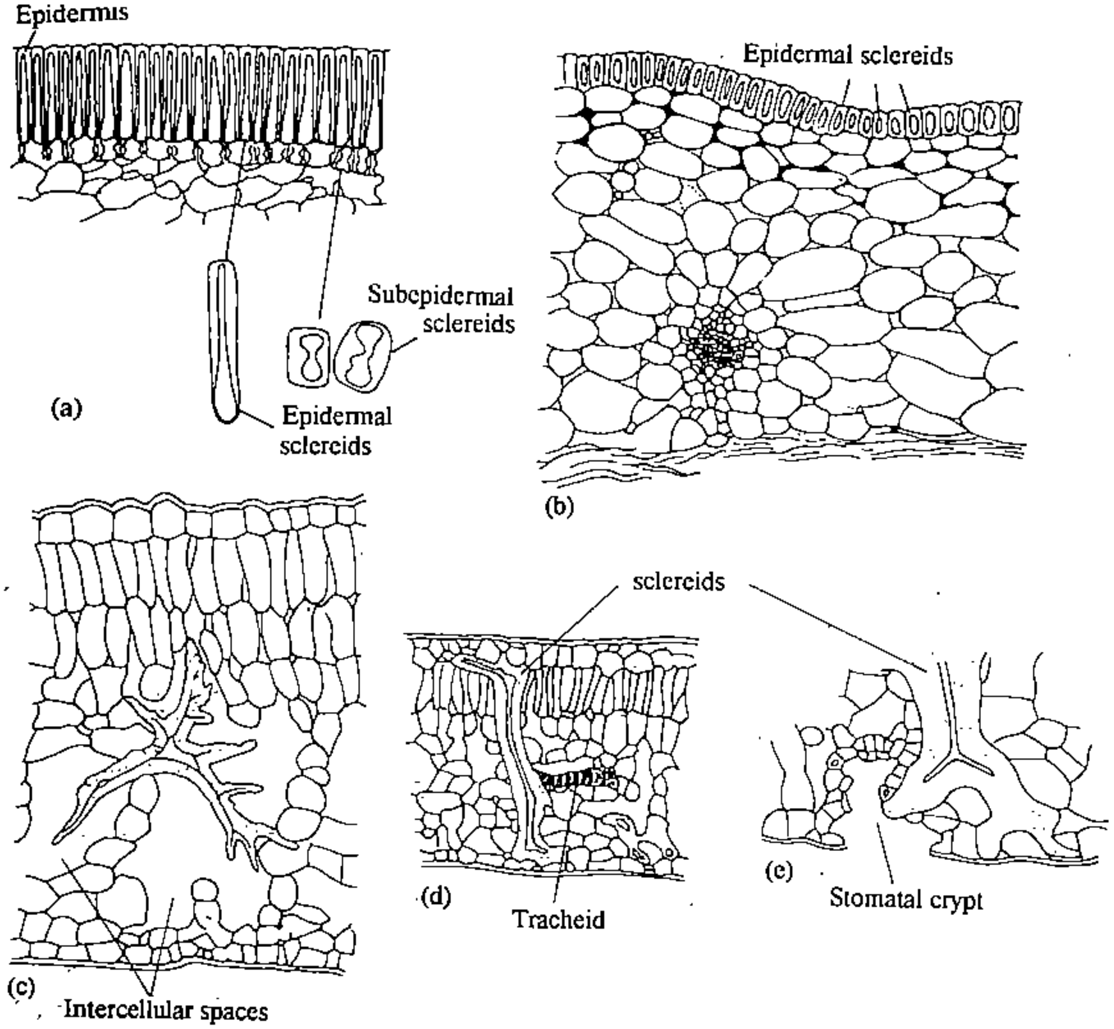

चित्र 7.26: स्क्लेरीडों का वितरण। a) *फेजियोलस* के बीजावरण की अनुप्रस्थ काट का एक अंश, जो स्क्लेरीडों के दो सतत परतों को दर्शाता है। चित्र के आवर्धित भाग में अधिचर्मी और उपाधिचर्मी परतों की स्क्लेरीडों की विशेषताओं पर ध्यान दें। b) *एलियम सैटाइवम* (लहसुन) के शल्क की अनुप्रस्थ काट का एक अंश। अधिचर्मी परत का अधिकांश भाग स्क्लेरीडों का बना रहता है। c) *ट्रोकोडेन्ड्रॉन* के पर्णफलक की अनुप्रस्थ काट का एक अंश। d) *मौरिरिया* की पत्ती में स्तंभाकार स्क्लेरीड, जिसके सिरों पर क्षैतिज शाखें हैं (इसे यहां अनुप्रस्थ-काट में दिखाया गया है)। ध्यान से देखिए स्क्लेरीड एक वाहिनी के संपर्क में है। e) स्क्लेरीड, जैसा कि (d) में आपने देखा, के विस्तार को दिखाने के लिए उसके अंतस्थ अंश का आवर्धित दृश्य। इसकी एक शाखा क्यूटिकल तक फैली है तो दूसरी रंध्र गुहा में स्थित दो द्वार कोशिकाओं के बीच प्रवेश कर चुकी है। [a) इसौ 1985; b) मॉन 1952; तथा c-e) फॉस्टर, 1947 से पुन:आरेखित]

v) ट्राइकोस्कलेरीड (**Trichosclereids or Filiform sclereids**) : ये लंबाई में दीर्घित रोमनुमा रूप हैं जो शाखित भी हो सकते हैं। ये साधारणतया *मोन्स्टेरा* की आकाशी जड़ों और *ओलिया* की पत्तियों में पाए जाते हैं (चित्र 7.25 f)।

फाइबर (रेशे)

पादप रेशों का उपयोग मानव कम से कम 10,000 वर्षों से कर रहा है। वस्त्र उत्पादों, रस्सियों, धागों, कैनवास और अनेक अन्य उत्पादों के निर्माण के लिए, अभी भी पादपों के 40 भिन्न कुलों का व्यावसायिक उपयोग किया जा रहा है।

रेशों की लंबाई में भारी अंतर देखने को मिलता है, किंतु इनकी विशेषता यह है कि ये मोटाई की अपेक्षा लंबाई में कई गुना अधिक होते हैं। अधिकत: ये दीर्घित अवयव हैं जिनके सिरे शुण्डाकार होते हैं। (चित्र 7.27), जो अतिव्यापन की स्थिति में और अक्सर एक दूसरे में संलयनित मिलते हैं। सामर्थ्यवर्धक ऊतक के रूप में इनका महत्व इनके लंबे समूहों में इनके विन्यास और कोशिकाओं के अतिव्यापन और अंत:बंधन के कारण है। इनकी द्वितीयक भित्तियां प्राय: लिग्निनयुक्त होती हैं, जिसके चलते इनमें एक संकीर्ण गुहिका या ल्यूमेन बच जाती है। इन कोशिकाओं में अधिकतर कोशिकाद्रव्य नहीं पाया जाता है। नवीनतम खोजों से पता चला है कि कई पादपों में जाइलम रेशों के तत्व अनेक वर्षों तक जीवित बने रहते हैं।

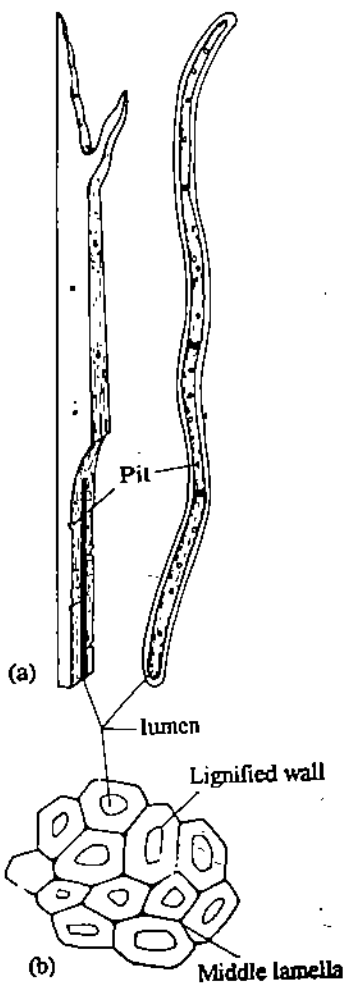

चित्र 7.27 : अनुदैर्घ्य (a), और अनुप्रस्थ काट (b) में रेशों का रेखांकन (वीरेर आदि, 1982 से)।

रेशे विभिन्न ऊतकों के साहचर्य में जड़ों, तनों, पत्तियों और फलों में पाए जाते हैं। आप इन्हें जाइलम और फ्लोएम के समांतर में या खासकर पत्तियों में एक आच्छद या गोप के रूप में संवहन पूलों के साहचर्य में देख सकते हैं। ये मज्जा या वल्कुट के मृदूतक में भी उपस्थित रहते हैं।

रेशे एकल या प्राय: पूलों में मिलते हैं। इनकी उपस्थिति के आधार पर इन्हें दो प्रकारों में बांटा गया है: जाइलम फाइबर या दारू रेशा, जो जाइलम से संबद्ध पाया जाता है; और (ii) दारूबाह्य रेशे (extraxylary fibre) ज़ाइलम को छोड़ फ्लोएम, वल्कुट, परिरंभ और मज्जा में मिलते हैं। वल्कुट, परिरंभ और फ्लोएम में पाए जाने वाले रेशों को बास्ट फाइबर या काष्ठ रेशा कहते हैं। एकबीजपत्री पत्तियों में रेशे सिर्फ संवहन पूलों के इर्दगिर्द आच्छाद के रूप में ही उपस्थित नहीं रहते बल्कि वे पूलों के दोनों ओर, उपरि तथा निचले अधिचर्मों के मध्य में फैले रहते हैं। इस प्रकार का संपूर्ण गुच्छक 'कठोर' या पर्ण रेशे का निर्माण करता है, जिसका व्यावसायिक उपयोग किया जाता है जैसे रामबांस (*एगेव सीसैलैना*)।

रेशों की उत्पत्ति प्राक्एधा या संवहन एधा से हो सकती है यदि वे फ्लोएम के प्राथमिक या द्वितीयक तंत्र से संबद्ध हों। या फिर ये भरण मेरिस्टेम से भी उत्पन्न होते हैं। प्राथमिक रेशे उसी अंग में लंबाई में वृद्धि करते हैं, जिनमें वे उत्पन्न होते हैं। *कैनाबिस* (भांग) और *कॉर्कोरस* (जूट) के रेशे तने के पर्वों के लंबाई में बढ़ने के साथ-साथ फैलते जाते हैं। किंतु ये पर्व विस्तार काल के बाद भी लंबाई में बढ़ते रहना जारी रख सकते हैं। *लुफ़्फा* के फल में भी यही स्थिति पाई जाती है, जिसके रेशों के जाल को स्पंज के रूप में प्रयोग किया जाता है। *बोमीरिया* में रेशे अपने आसपास की कोशिकाओं से कहीं ज्यादा गति से लंबाई में वृद्धि करते हैं।

रेशे काफी अधिक लंबाई प्राप्त कर सकते हैं जैसे भांग में 1 से 10 से.मी. और रैमी में 55 से.मी. तक। द्वितीयक भित्ति का निक्षेपण रेशों में दीर्घन रुक जाने के पश्चात् ही होता है। इसके फलस्वरूप रेशे के आधारी सिरे में एक स्थूल द्वितीयक भित्ति पाई जाती है, जबकि उसके शिखाग्र सिरे में सजीव अवयव और तनु-भित्ति देखने में आते हैं जैसे *बोमीरिया* में।

बॉक्स 7.3 : रेशे की पहचान के मानदंड

> पादप रेशों का व्यापक उपयोग होता है जैसे रस्सी, कागज और अन्य उत्पादों के निर्माण में। परंतु यह कार्य इतना सहज नहीं। इसके लिए हमें उत्पाद के निर्माण में प्रयुक्त होने वाली लुग्दी की गुणवत्ता की पुष्टि और पहचान करने की बार-बार आवश्यकता पड़ती है। कई पादपों से मिलने वाले रेशों का गहराई से अध्ययन किया गया है। वर्गिकी महत्व के इनकी पहचान के लक्षण हैं लंबाई, मोटाई, भित्ति के स्थूलन और गुहिका (ल्यूमेन) के व्यास का अनुपात, आसपास की कोशिकाओं द्वारा छोड़े गए तिरछे चिन्ह और क्रिस्टलों तथा सिलिका निक्षेपों की उपस्थिति।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरें :

i) ताराकार मृदूतक .... पत्ती के मध्यशिरा भाग में पाया जाता है।

ii) .... ऊतक जलीय पादपों को वातन और उत्प्लावन प्रदान करता है।

iii) .... कोशिकाएं चोटों को ठीक करने में भूमिका निभाती हैं।

iv) .... *हैकी* की पत्तियों में पाए जाने वाले स्कलेरीड प्ररूप हैं।

v) *पाइरस* के फल की कणिक बनावट उसके गूदे में .... की उपस्थिति के कारण होती है।

vi) .... और .... एक ही कार्य करते हैं जो कि पादप को आधार देना है।

vii) .... की पत्तियां रेशे का व्यावसायिक स्रोत हैं।

viii) कई जलीय पादपों में .... की शाखाएं वायूतक के अवकाशों में दिखाई देती हैं।

7.3.2 जटिल ऊतक

एक इकाई के रूप में कार्य करने वाली एक से अधिक तरह की कोशिकाओं से बने ऊतक को जटिल ऊतक कहते हैं। पादपों में सबसे महत्वपूर्ण दो जटिल ऊतक हैं जाइलम और फ्लोएम, जो प्रधानत: जल, आयनों और घुलनशील भोजन पदार्थों के समूचे पादप में अभिगमन का कार्य करते हैं। ये दोनों मिलकर पादप के संवहन तंत्र की रचना करते हैं

1) जाइलम

पादप की जटिल जलसाजी तंत्र का यह एक महत्वपूर्ण घटक है, जो जल और उसमें घुले पदार्थों को जड़ से प्ररोह तंत्र के विभिन्न हिस्सों तक पहुंचाता है। इसके अलावा यह समूचे पादप को यांत्रिक आधार प्रदान करने में सहायक है और पोषक तत्त्वों के संचय का काम करता है। यह मृदूतक कोशिकाओं, रेशों, वाहिकाओं और वाहिनियों से मिलकर बना रहता है (चित्र 7.28)। वाहिनी और वाहिका अवयवों में अनेक लक्षण उभयधर्मी होते हैं और संयुक्त रूप से इन्हें वाहिकीय अवयव (tracheary elements) कहा जाता है। इनके सामान्य लक्षण हैं:

- परिपक्व होने पर ये मृत हो जाते हैं;
- प्राय: ये एक अंग के अक्ष के समांतर दीर्घित रहती हैं;
- इनकी कोशिका भित्तियां लिग्निनयुक्त होती हैं, यह लिग्निन अनेक पैटर्नों में जमा रहता है; और प्राथमिक भित्ति को कई जगह से अनावरित छोड़ देता है।

जाइलम पादप की प्राथमिक वृद्धि के दौरान प्राक्एधा से विभेदित होता है। प्राक्एधा बढ़ती हुई जड़ या प्ररोह शिखाग्र के नीचे, अन्दर की ओर स्थित होता है, या यह पर्ण आद्यक से जुड़ा रहता है। प्राक्एधा मेरिस्टमी, सघन कोशिकाद्रव्य वाली कोशिकाओं से मिलकर बना होता है, जो उस अंग के अक्षीय तल में यानि लंबाई में दीर्घित रहती है, जिस अंग में प्राक्एधा विद्यमान रहता है। प्राथमिक काय में प्राक्एधा से उत्पन्न होने वाले जाइलम को प्राथमिक ज़ाइलम (primary xylem) कहा जाता है। सबसे पहले विभेदित और परिपक्व होने वाले प्राथमिक जाइलम के घटकों को आदिदारु (protoxylem) कहते हैं। बाद में परिपक्व होने वाले घटकों को मेटाज़ाइलम (metaxylem) कहा जाता है (चित्र 7.28)। कई पादपों में प्राथमिक काय का गठन पूरा हो जाने के बाद द्वितीयक वृद्धि होती है, जैसे कि आवृतबीजी और द्विबीजपत्रों में। इसमें संवहन एधा द्वितीयक जाइलम (secondary xylem) को जन्म देता है।

जैसा कि आप जानते ही हैं जाइलम वाहिकाओं, वाहिनियों, मृदूतक और रेशों से बना रहता है। वाहिकाएं लंबी नलिकाएं हैं जो अलग कोशिकाओं की बनी होती है जिन्हें वाहिका अवयव कहा जाता है (चित्र 7.29)। ये अंग के अक्ष के समांतर एक छोर से दूसरे छोर तक इस प्रकार व्यवस्थित होती हैं जिससे नलिकाओं की रचना होती है। वाहिका अवयव प्रत्येक सिरे पर विवृत या खुले होते हैं और इनके सिरे तिर्यक्, नुकीले या आड़े होते हैं। क्रमवार वाहिका अवयवों के बीच की तिर्यक भित्तियां छिद्रित होती हैं जिनसे जल को एक कोशिका से दूसरी कोशिका तक पहुंचने का मुक्त मार्ग मिल जाता है। यह छिद्रण एक विशेष पैटर्न में तियर्क् भित्तियों के विगलन से होता है। वाहिनियां, वाहिका अवयवों की तरह स्थूलभित्ति युक्त और परिपक्वता पर मृत हो जाती हैं। ये लंबाई में दीर्घित संरचनाएं हैं जिनके सिरे शुंडाकार होते (चित्र 7.30)। इनके छिद्रविहीन सिरे एक-दूसरे पर अतिव्यापित मिलते हैं और जहां कहीं भी दो वाहिनियां एक दूसरे के संपर्क में आती हैं, वहां पर अक्सर गर्तों के जोड़े विद्यमान रहते हैं। वाहिनी

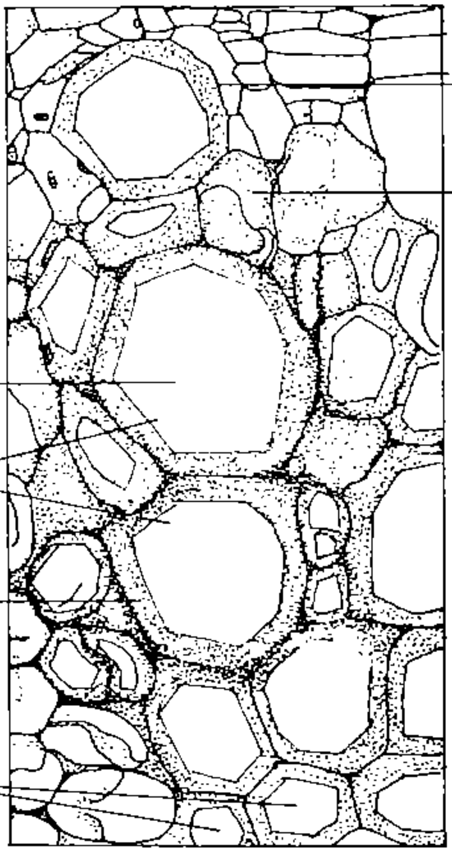

चित्र 7.28: ट्राइडेक्स स्पीशीज़। अनुप्रस्थ काट में जाइलम का एक अंग, जिसमें उसके विभिन्न घटक दिखाई दे रहे हैं। (बेरी आदि 1987 से पुनःआरेखित)।

अवयवों में निर्मित द्वितीयक भित्ति का पैटर्न, उस अंग में दीर्घन की अवस्था के अनुसार बदलता रहता है, जिस अंग में विभेदन के समय ये स्थित होती हैं। वाहिनी अवयवों में, जो कि वर्धनशील या लंबाई में दीर्घन कर रहे पादप अंग में विभेदन करते हैं, स्थूलन के पैटर्न पाए जाते हैं। ये स्थूलन इन्हें तनन प्रदान करता है। इनमें शामिल हैं अलग-अलग छल्लों में पाए जाने वाले वलयाकार स्थूलन (annular), एक सतत कुंडलित सर्पिल (spiral) स्थूलन, और सीढ़ी के छल्लों की तरह सीढ़ीनुमा (scalariform) स्थूलन (चित्र 7.31 a-c)। वाहिनी अवयव, जिनमें द्वितीयक भित्ति का निर्माण दीर्घन समाप्त होने के बाद ही होता है उनमें जालिकारूपी (reticulate) स्थूलन (चित्र 7.31 d) पाया जाता है यानि ये स्थूलन जाली की तरह होते हैं या इन स्थूलनों में परिवेशित गर्त पाए जाते हैं (चित्र 7.31 e)। इन गर्तों को परिवेशित गर्त इसलिए कहा जाता है क्योंकि द्वितीयक भित्ति का किनारा गर्त के किनारे के ऊपर लटका या प्रलंबी रहता है, इससे गर्त प्रक्षेत्र गर्त छिद्र से चौड़ा हो जाता है और जब गर्त को पृष्ठ दृश्य में देखा जाता है तो यह दो संकेन्द्री वृतों की तरह दिखाई देता है।

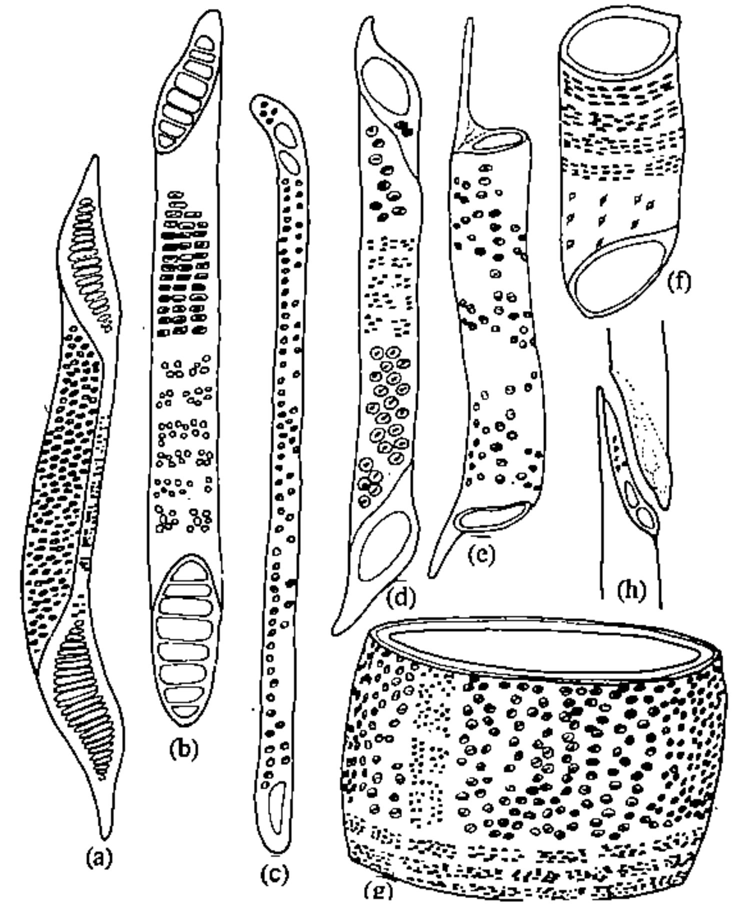

चित्र 7.29 : विभिन्न प्रजातियों से वाहिका अवयव। a) *बेट्यूला ऐल्बा*, b) *तिरियोडेन्ड्रॉन*, c) *लोवेलिया कॉर्डिनैलिस*, d) *क्वेरकस ऐल्बा*, e) *मैलस प्यूमिला*, f) ऐसर नेग्यूंडो, g) *क्वेरकस ऐल्बा*। h) *लोवेलिया* के दो वाहिका अवयवों के अंतस्थ अंश, दोनों अवयवों के परस्पर सन्निधि भागों को ध्यान से देखिए। (इमीज और मैकडेनियल्स, 1987 से)।

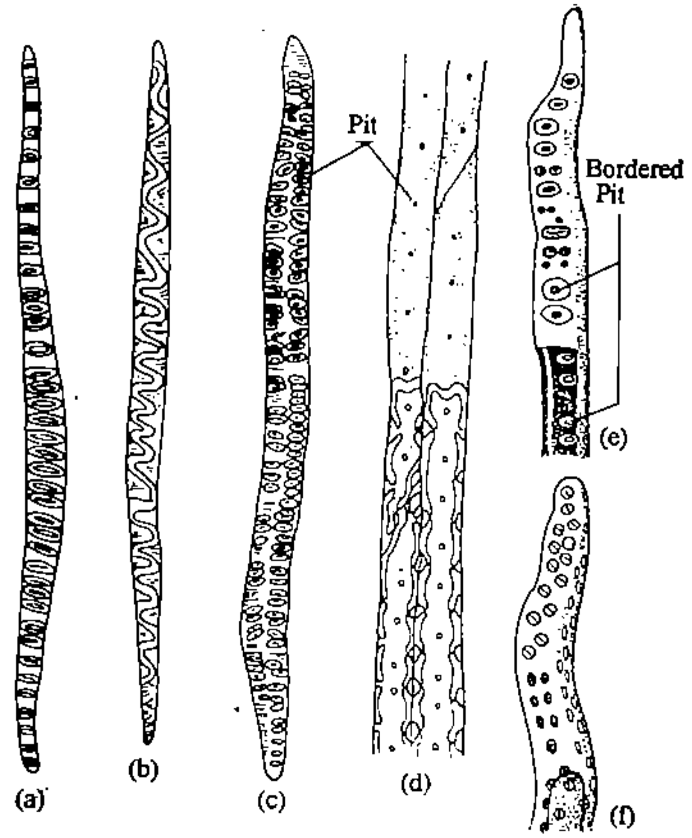

चित्र 7.30: a-d) अनुदैर्घ्य काट में वाहिनियों के विविध रूप। e,f) दो वाहिनियों के अंतस्थ अंश, इनकी तुलना वाहिकाओं के अंतस्थ अंशों (चित्र 7.29) से कीजिए। (वार्डेन आदि से, 1987)।

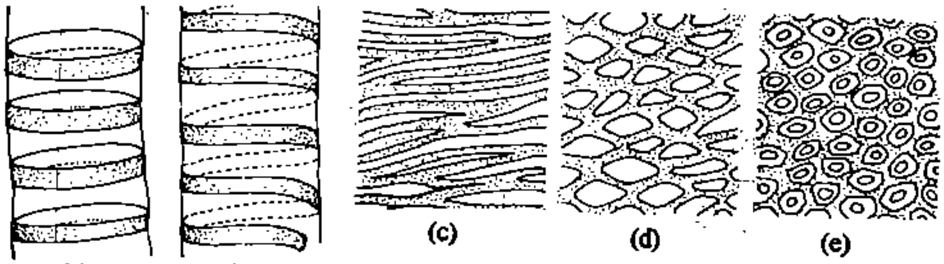

चित्र 7.31: वाहिनी अवयवों में भित्ति-स्थूलन के पैटर्न। a) वलयाकार; b) सर्पिल; c) सीढ़ीनुमा; तथा d,e) जालिकारूपी - बिना गर्त के (d), तथा परिवेशित गर्त वाले (e) स्थूलनों सहित। (वेरी आदि 1987 से)।

जाइलम रेशे (चित्र 7.32 a-c) पहले बताए गए विशिष्ट दृढ़ोतक की तरह होते हैं। ये दीर्घित, सामर्थ्य बढ़ाने वाली कोशिकाएं हैं, जिनकी भित्तियां स्थूलित होती हैं। परिपक्व होने पर इनके सिरे नुकीले हो जाते हैं और इनमें जीवद्रव्यक नहीं रहता। मुख्यत: अपनी भित्तियों और गर्तों की कम संख्या में ही ये वाहिनियों से भिन्न हैं।

जाइलम मृदूतक कोशिकाएं (चित्र 7.32 d) जाइलम अवयवों के बीच बिखरी पाई जाती हैं। ये भरण ऊतक के विशिष्ट मृदूतक से लंबाई में अक्सर थोड़ा अधिक दीर्घित रहती हैं और कभी-कभी इनकी कोशिकाएं थोड़ी सा लिग्निनयुक्त भी बन जाती हैं। इनका मुख्य प्रकार्य भोजन संचय और पार्श्विक परिवहन है।

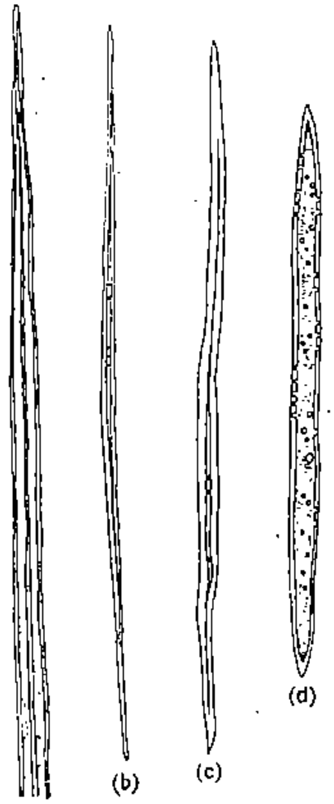

चित्र 7.32 : a-d) जाइलम रेशों के कुछ रूप। a) *क्वेरकस रूबरा*, (b) *कैरिया ओवैटा*, और c) *ग्वाएकम सैंक्टम*, d) *सैसाफ्रास वैरीफोलियम* के काष्ठ की एक मृदूतक कोशिका। (इमीज और मैकडेनियल्स 1987 से)।

2) फ्लोएम

यह एक ऐसा ऊतक है जिसका कार्य सुक्रोस और अमीनो अम्ल जैसे घुले कार्बनिक पदार्थों को उनके निर्माण स्थल से उपयोग या संचय स्थलों तक पहुंचाना है, जाइलम की तरह फ्लोएम भी एक जटिल ऊतक

है। आवृतबीजी पादपों में यह ऊतक कई अवयवों से मिलकर बना रहता है जैसे चालनी अवयव, सहचर कोशिका, मृदूतक और दृढ़क (स्क्लेरीड)। फ्लोएम के साथ लैटेक्सधर (laticifers) और तैल कोशिकाओं (oil cells) जैसी कुछ विशेष स्रावी कोशिकाएं भी जुड़ी रहती हैं।

प्राथमिक फ्लोएम का विकास प्राक्एधा से होता है और इसे प्राक्फ्लोएम (protophloem) और मेटाफ्लोएम (metaphloem) में बांटा जा सकता है। प्राक्फ्लोएम व्यक्तिवृत्तीय अवस्था के दौरान प्राक्एधा से विकसित होता है, जबकि मेटाफ्लोएम का विकास परिवर्धन की पश्चावस्था में होता है।

फ्लोएम के चालक घटक चालनी अवयव (sieve elements) हैं जो दो तरह की होती हैं: चालनी कोशिकाएं लगभग सभी अनावृतबीजी और कुछ आदिम आवृतबीजी पादपों में (चित्र 7.33 a) जैसे *ऑस्ट्रोबेलिया स्कैंडेन्स;* और अधिकांश पुष्पी पादपों में पाई जाने वाली चालनी नलिका घटक (चित्र 7.33 b)। दोनों के बीच के अंतर को ध्यान से चित्र 7.33 में देखिए। मृदूतक कोशिका होने के कारण चालनी अवयवों में एक प्राथमिक भित्ति ही पाई जाती है, जाहिर है कि इनमें द्वितीयक भित्ति नहीं रहती। आवृतबीजी पादपों मे चालनी नलिका घटक और सहचर कोशिकाएं एक ही समय में उत्पन्न होती हैं। यह एक ही प्राक्एधा कोशिका में विभाजन से होता है। यही कारण है कि दोनों के बीच सुस्पष्ट सामीप्य मिलता है (चित्र 7.34 और 7.35)। तरुण चालनी नलिका में घटक सामान्य कोशिकांग पाए जाते हैं: केन्द्रक, लवक, माइटोकोन्ड्रिया, अंतर्द्रव्यी जालिका (ER) और जालिका (dictyosomes)। चालनी नलिका घटकों के परिपक्व होने पर, इसका जीवद्रव्यक काफी रूपांतरित हो जाता है। इसका केन्द्रक खंडित हो जाता है, लवक की अधिकांश आंतरिक झिल्लियां समाप्त हो जाती हैं मगर उनमें प्राय: स्टार्च बना रहता है। प्लैज्मा झिल्ली अक्षत रहती है। माइटोकोन्ड्रिया छोटा हो जाता है, कोशिकाद्रव्य की मात्रा काफी कम हो जाती है और वह सिर्फ एक पतली परिधीय परत के रूप में मौजूद रहता है। रसधानी झिल्ली या टोनोप्लास्ट भी टूट जाती है और अंतर्द्रव्यी जालिका कभी-कभी कोशिका भित्ति के साथ-साथ एक समांतर श्रेणियों में संचित हो जाती है। चालनी नलिका घटक कोशिका के मध्य भाग को नलिकाओं या रज्जुओं का गुच्छा घेरे रहता है। इस गुच्छे को अवपंक (**slime**) कहते हैं, जो प्रकाश सूक्ष्मदर्शी में दिखाई देता है। यह प्रोटीनों का बना होता है इसलिए इसे P-प्रोटीन कहा जाता है। अनावृतबीजी पादपों में चालनी अवयवों से एल्बुमिनी कोशिकाएं घनिष्ठता से जुड़ी रहती हैं और आवृतबीजी पादपों में सहचर कोशिकाएं।

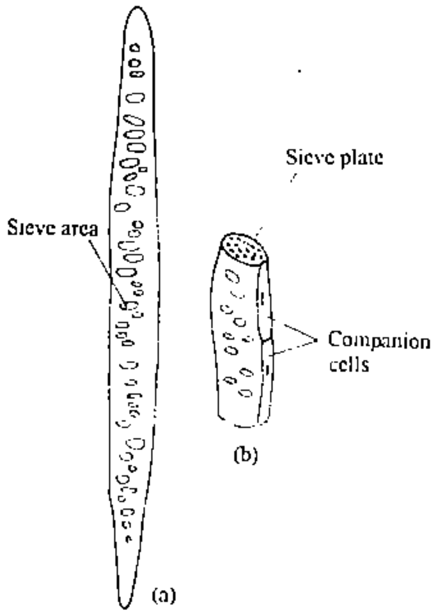

चित्र 7.33 : चालनी अवयव। a) शुंडाकार सिरों वाली चालनी कोशिका और कोशिका की सतह पर कई चालनी क्षेत्र। b) एक चालनी नलिका घटक। ध्यान से देखिए यह चालनी कोशिका से अधिक चौड़ा होता है और इसमें विशिष्ट अनुप्रस्थ अंत्य भित्तियां होती हैं, जिन पर सुस्पष्ट चालनी क्षेत्र पाए जाते हैं।

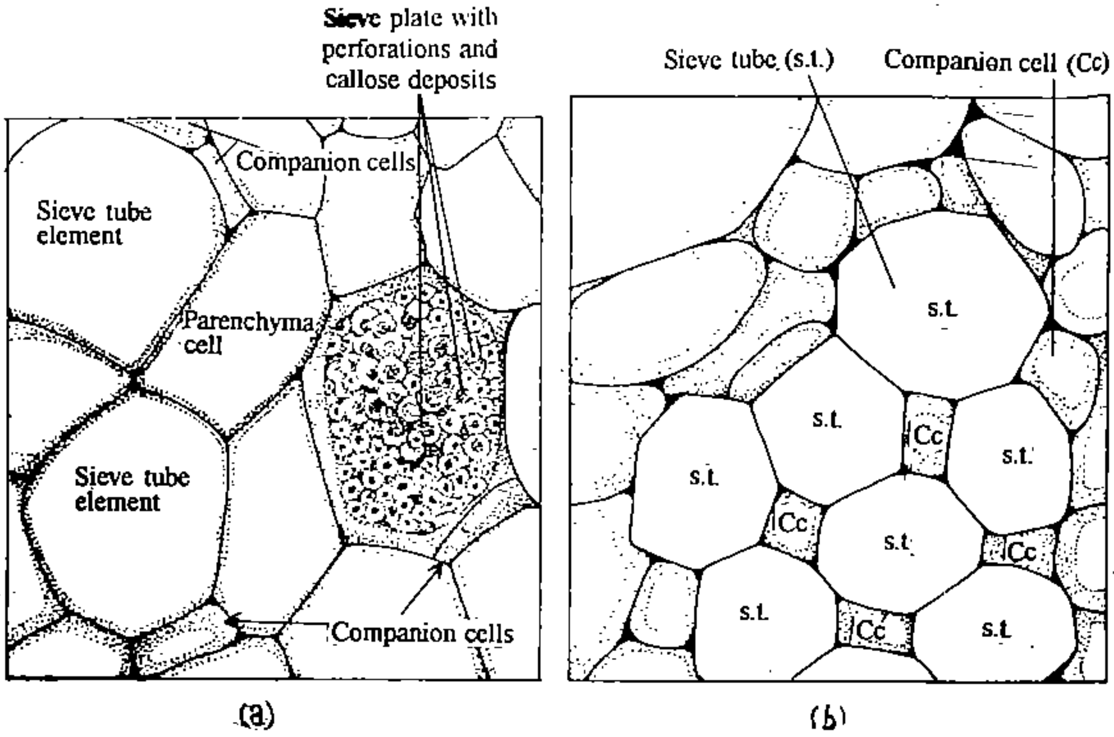

चित्र 7.34 : a) एक द्विबीजपत्री, और b) एकबीजपत्री पादप का फ्लोएम अनुप्रस्थ काट में। दोनों में चालनी नलिका और सहचर कोशिकाओं में सामीप्य को ध्यान से देखिए। (चेरी आदि से 1987)।

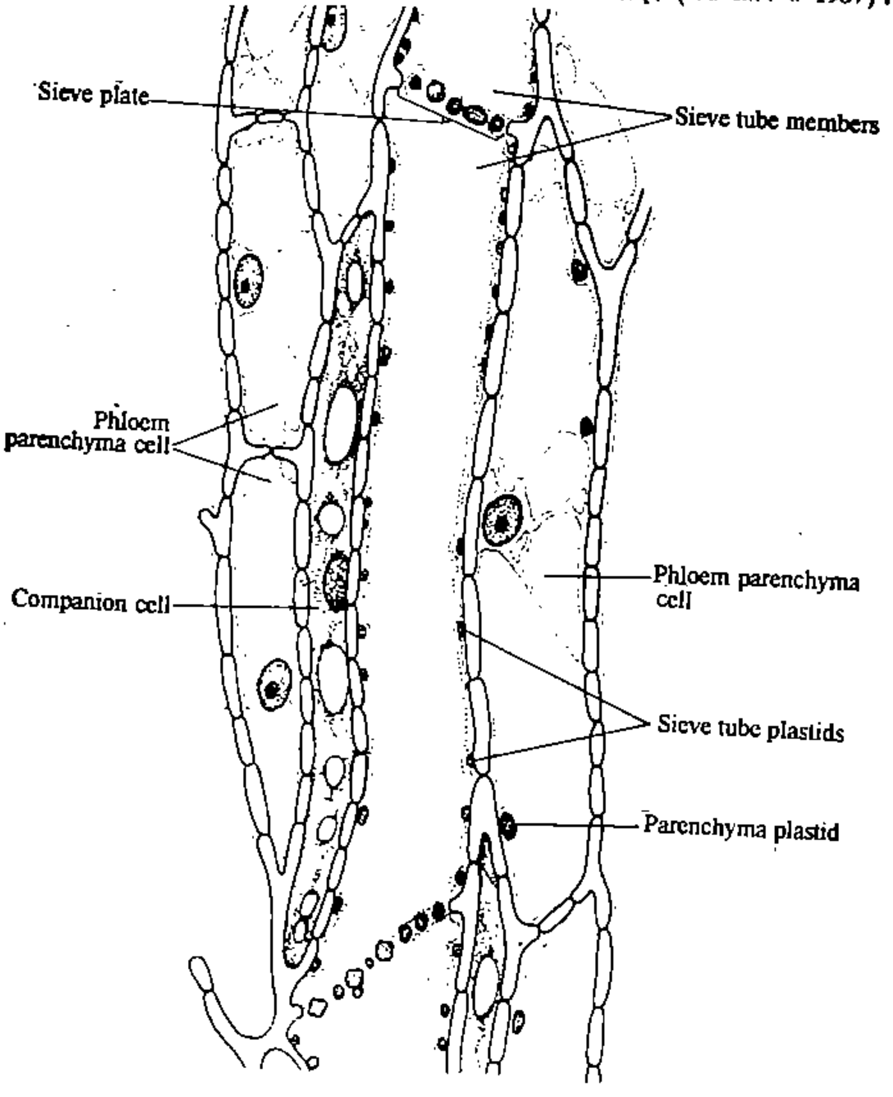

चित्र 7.35 : तंबाकू के तने से लिया गया फ्लोएम ऊतक। फ्लोएम के विभिन्न घटकों की कोशिकीय बारीकियों को ध्यान से देखें। (वीरर आदि, 1987 से)।

सहचर कोशिकाओं में सामान्य जीवद्रव्य (चित्र 7.35) और सभी कोशिकांग पाए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि ये कोशिकाएं केन्द्रक विहीन चालनी नलिका घटकों की उपापचय गतिविधि को नियंत्रित करती हैं। कई जीवद्रव्यतंतु, सहचर कोशिकाओं और चालनी नलिका घटकों के जीवद्रव्यों को जोड़ते हैं (चित्र 7.35)। परिपक्व नलिका सदस्यों का एक विशिष्ट संरचनात्मक लक्षण चालनी पट्टिका (sieve plate, चित्र 7.35) है। यह सिरे या पार्श्व भित्तियों पर पाई जा सकती है। अगर एक चालनी पट्टिका में सिर्फ एक ही चालनी क्षेत्र है तो इसे **सरल चालनी पट्टिका (simple sieve plate)** और एक से अधिक चालनी क्षेत्रों वाली चालनी पट्टिका को **संयुक्त चालनी पट्टिका (compound sieve plate)** कहते हैं (चित्र 7.36)। छिद्र का आकार या व्यास बेहद परिवर्तनशील है - *कुकुरबिटा* में औसतन 1.18 μm से 10 μm तक और *ऐलेंथस ऐल्टिसिमा* में 14 μm तक। चालनी नलिका के घटक एक सिरे से दूसरे तक एक हो जाते हैं और स्तंभ या चालनी नलिका का निर्माण करते हैं।

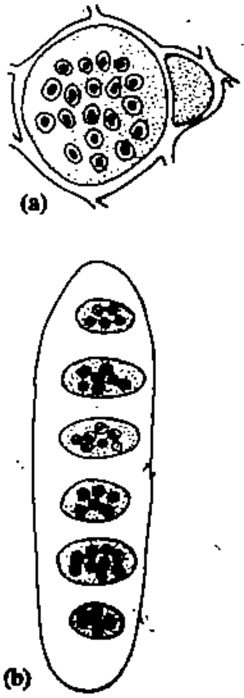

चित्र 7.36 : दो प्रकार की चालनी पट्टिकाएं। a) सरल, और b) संयुक्त।

फ्लोएम मृदूतक (चित्र 7.35) सजीव कोशिकाएं होती हैं जो फ्लोएम की अन्य कोशिकाओं के बीच बिखरी रहती हैं। ये भरण ऊतक के मृदूतक की तरह ही होती है किंतु इनकी कोशिकाएं संकरी और अपेक्षतया अधिक दीर्घित मिलती हैं। ये कोशिकाएं पदार्थों के पार्श्विक गमन में सहायक हैं और अक्सर संचय ऊतक का काम भी करती हैं।

फ्लोएम रेशे दीर्घित दृढ़ोतकी कोशिकाएं हैं जो समूहों में फ्लोएम में विद्यमान रहती हैं। एकबीजपत्री और द्विबीजपत्री पादपों में फ्लोएम ऊतक का संघटन कुछ भिन्न रहता है। एकबीजपत्री पादपों में फ्लोएम में सिर्फ चालनी नलिका अवयव और सहचर कोशिकाएं ही पाई जाती हैं। मगर अधिकांश द्विबीजपत्रियों में इनके अलावा फ्लोएम मृदूतक और कभी-कभी फ्लोएम रेशे भी मिलते हैं।

बोध प्रश्न 4

निम्न कथनों में कौन सही है और कौन गलत। बताइए।

i) प्राथमिक जाइलम के सबसे पहले विभेदित होने वाले अवयवों को मेटाजाइलम कहते हैं।

ii) द्वितीयक जाइलम का जनक संवहन एधा है।

iii) वाहिकाएं, वाहिनियां, रेशे और मृदूतक कोशिकाएं जाइलम के मुख्य घटक हैं।

iv) वाहिका अवयव वाहिनियों से मुख्यत: अंत्य और तिर्यक भित्तियों में ही भिन्न होती हैं।

v) आवृतबीजी पादपों में फ्लोएम के मुख्य घटक चालनी अवयव, सहचर कोशिकाएं, मृदूतक, रेशे और दृढ़क हैं।

vi) प्राक्फ्लोएम का जन्म व्यक्तिवृत्तीय विकास के दौरान अंतरापूलीय एधा से होता है।

vii) आवृतबीजी पादपों में चालनी नलिका सदस्यों और सहचर कोशिकाएं एक के बाद एक उत्पन्न होती हैं।

viii) P-प्रोटीन चालनी नलिका घटकों और सहचर कोशिकाओं दोनों में ही मिलता है।

7.4 अधिचर्मी ऊतक तंत्र

शाकी पादपों में मूल और प्ररोह तंत्र कोशिकाओं की एक सबसे बाहरी परत से ढके रहते हैं जिसे अधिचर्म (epidermis) कहते हैं। यही अधिचर्मी ऊतक तंत्र (epidermal tissue system) का निर्माण करता है। यह पादप और पर्यावरण के बीच होने वाले अंतरासीम-क्रिया को भी निरूपित करता है जिसमें जैविक और अजैविक दोनों प्रकार के अनेक कारक सम्मिलित रहते हैं। विविध परिस्थितियों में उगने वाली विभिन्न पादप जातियों के अधिचर्मी ऊतकों ने अपने-अपने पर्यावरणीय परिवेशों के अनुकूल विशेष लक्षणों का विकास किया है।

तने, पत्तियों और पुष्पांगों के अधिचर्म की उत्पत्ति प्ररोह शिखाग्र मेरिस्टेम के पृष्ठस्तर से और जड़ के अधिचर्म की उत्पत्ति मूल प्ररोह मेरिस्टेम की परतों से होती है। कुछ प्रजातियों में मूल अधिचर्म की उत्पत्ति वल्कुट मूलगोप के साथ ही होती है।

(i) पदार्थों के संचलन का नियमन : अधिचर्म के प्राथमिक प्रकार्य. में एक प्रकार्य है पादप काय के अंदर और उससे बाहर पदार्थों के संचलन का नियमन। इस प्रकार्य को पूरा करने के लिए मूल और प्ररोह तंत्रों की अधिचर्म कोशिकाओं में उपयुक्त विशेषताएं होती हैं। मूल कोशिकाओं में जीवद्रव्यक मिट्टी से भी शुष्क रहता है, इसलिए वे मिट्टी से पानी सहज ढंग से सोख लेते हैं। दूसरी ओर प्ररोह तंत्र, जो कि शुष्क वातावरण के संपर्क में रहता है, उसे एक ऐसे रक्षात्मक युक्ति की आवश्यकता पड़ती है जिससे पादप से होने वाले जल क्षय को रोका जा सके। यह मूल और प्ररोह तंत्र की व्यतिरेकी भूमिकाओं को साफ-साफ़ दर्शाता है। अधिचर्म की ऐसी व्यतिरेकी भूमिकाओं का एक और उदाहरण इस प्रकार है: एक समोद्भिद् (mesophytic) और एक मरूद्भिद् (xerophytic) पादप को उखाड़िए। इन दोनों पौधों को ऐसी ही दशा में छोड़ दीजिए। कुछ घंटों के बाद समोद्भिद् पौधा कुम्हलाने लगता है, जबकि मरूद्भिद् में ऐसे लक्षण प्रकट होने में काफी अधिक समय लगता है। ऐसा क्यों होता है। यह मूलत: इन दोनों की अधिचर्म परतों में विद्यमान भिन्नताओं के कारण होता है। नागफनी (कैक्टस) जैसे किसी मरूद्भिद् में कुम्हलाने की गति उसके अधिचर्म को उतार देने पर तेज़ हो जाती है। अधिचर्म की एक और प्रकार्यात्मक विशेषता (यानि एक कार्यविशेष के निष्पादन के लिए विकसित) विशिष्ट अधिचर्मी तंत्र है जो अधिपादपों (epiphytes) को वृक्षों की सतह से जुड़ने में सहायता करता है, ताकि वर्षा-जल और हवा से मिट्टी के कणों से वे जल और पोषण संबंधी अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर लें।

(ii) धूप से बचाव : मरूस्थलों, समुद्रतटों और अल्पाइन प्रदेशों में उगने वाले पादपों की अधिचर्म उन्हें सीधी धूप से होने वाली क्षति से बचाती है। सीधी धूप के कुछ क्षतिकारक प्रभाव हैं जीवद्रव्य अतितापक और पर्णहरित (क्लोरोफिल) का विरंजित हो जाना।

(iii) अन्य जीवों से बचाव : अधिकांश पादपों में तरह-तरह के नाशकजीव (pests) और रोगाणु (pathogens) परजीवी बन कर रहते हैं। इसमें विषाणुओं और जीवाणुओं से लेकर उच्च पादप सभी आते हैं। वस्तुत: किसी पादप का अधिचर्म नाना प्रकार के जैविक शत्रुओं के विरुद्ध सबसे पहली रक्षा-पंक्ति है। प्रतिरोधी अधिचर्म विविध जैविक कारकों को आसानी से दूर रखती है और इस तरह पादप के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करता है। क्या आपने कभी यह देखा है कि बांदा (मिसिलटो) और अमरबेल जैसे कुछ परजीवी आवृतबीजी कुछ विशेष पादपों पर ही हमला करते हैं, शेष अप्रभावित रहते हैं। इनसे अछूते रहने वाले पादपों की प्रतिरोधी अधिचर्म इसका एक कारण हो सकती है। इसी तरह कीट, पादपों के लिए हमेशा एक खतरा बने रहते हैं। कई पादपों, जैसे बिच्छू बूटी (stinging nettle), में अधिचर्मी ग्रंथियां विकसित होती हैं, जिनमें विषैले या हानिकारक तत्त्व विद्यमान रहते हैं जिससे इन पादपों में कीट परजीवी नहीं बन पाते हैं या बड़े जंतु इन्हें नुकसान नहीं पहुंचा सकते हैं।

(iv) अजैविक कारकों से बचाव : अजैविक कारकों जैसे वायु, लवणता और आर्द्रता तनावों ने प्रतिकूल स्थितियों का सामना करने के लिए पादपों में विशेष अनुकूली लक्षणों का विकास किया है। इनमें से कई के बारे में विस्तार से हम बाद में बताएंगे। एक पादप उच्च वायु वेग का सामना किस तरह से करता है इसका एक रोचक उदाहरण केले का पेड़ है। इसके नवनिर्मित पत्तों में समूचा पटल होता है, मगर पुराने पत्ते आमतौर से कई जगह पर कटे-फटे रहते हैं। ऐसा कैसे होता है? असल में पत्ते के पटल पर कुछ कमजोर भाग मौजूद रहते हैं और पटल इन्हीं भागों से फटता है और यह भाग पत्तों की तरह ही दिखाई देते हैं। उच्च वेग की हवा से होने वाली शारीरिक क्षति को रोकने के लिए यह एक प्रकार का अनुकूलन है। इसी प्रकार कई पादप जातियों के तरुण प्ररोहों और पत्तियों में लचीले, विदार-प्रतिरोधी आवरण विद्यमान रहते हैं विशेषकर पत्तियों के किनारों पर जिनकी सहायता से ये संरचनाएं हल्की हवा को सह लेती हैं और उच्च वेग वायु से पादप को होने वाली क्षति की संभावनाएं भी काफी कम हो जाती हैं।

(v) जनन में अधिचर्म की भूमिका : पादपों में ऐसी कई क्रियाविधियों का विकास हुआ है जो उनमें पर-परागण को बढ़ावा देती हैं या उसे सुनिश्चित करती हैं। एक उदाहरण पुंधानी अधिचर्म है जो जल्दी खुलकर पराग कणों को छोड़ देता है, जबकि वर्तिकाग्र अधिचर्म तब भी अग्राही होता है। दूसरा उदाहरण वर्तिकाग्र का अधिचर्म है जो अपने धरातल पर उतरने वाले पराग की जांच परख करता है और उन पराग कणों को अस्वीकार कर देता है जो पादप के अनुकूल नहीं हों। इसे हम निषेच्यता प्रतिक्रिया कहते हैं। इसके बारे में आप एल.एस.ई.-06 में जान चुके हैं। इसके अलावा अधिचर्म नाना प्रकार के रंगों, तंतु-विन्यास और इत्रों का निर्माण भी करते हैं। पराग को वर्तिकाग्र तक लाने के लिए परागणकारियों को

आकर्षित करने में ये सहायक हैं। इसी प्रकार पुष्प या पुष्पबाह्य मकरंद-कोष से मकरंद का स्राव या तो स्रावी अधिचर्म या फिर ऐसे अधिचर्म द्वारा किया जाता है, जो मकरंद का संचय करता है और उसे परागणकारियों के लिए छोड़ता है।

(vi) स्राव : कीटभक्षी पादपों में कीटों को आकर्षित करने के लिए विशेष नि:स्रावों; और जलरंध्रों (hydathodes) के जरिए अतिरिक्त आर्द्रता को दूर करने में अधिचर्म महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इनके बारे में हम विस्तार से पाठ्यक्रम में आगे बताएंगे।

संरचनात्मक विविधताएं तथा विशिष्टताएं

प्रकार्यात्मक विविधता की दृष्टि से अधिचर्म की चर्चा कर लेने के बाद, आइए अब हम उन संरचनात्मक लक्षणों को देखें जो पादप को इन विविध प्रकार्यों को पूरा करने के समर्थ बनाते हैं।

(i) अधिचर्म : पुष्पी पादपों में परिपक्व अधिचर्म चार प्रकार की कोशिकाओं का बना रहता है। ये हैं साधारण अधिचर्म कोशिकाएं, द्वार कोशिकाएं, त्वचारोम (trichomes) और मूलरोम (root hair)। साधारण अधिचर्म कोशिकाएं, अधिचर्म की अधिक विशिष्टीकृत कोशिकाओं के बीच में पड़ी मिलती हैं। इनकी संख्या अधिक होती है और पादप काय के एक बड़े भाग को ये घेरे रहती हैं। बनावट, आकार और अंतर्वस्तुओं में ये कोशिकाएं भारी विविधता दर्शाती हैं। उदाहरण के लिए बीजावरणों और कलिका शल्कों में दीर्घित कोशिकाएं आधिक्य में विद्यमान रहती हैं जहां कि अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता होती है। ये कोशिकाएं जिस अंग में विद्यमान रहती हैं, उसी अंग के अनुरूप ये तरह-तरह से रूपांतरित रहती हैं। उदाहरण के लिए ये अंग के समांतर दीर्घित पृष्ठ दृश्य में ये कोशिकाएं चतुष्कोणी - कोटर (rhomboidal - sinuous) और भिन्न-भिन्न रूप लिए रहती हैं।

साधारण कोशिकाओं की एक सार्विक विशेषता है कि ये अपने-अपने पार्श्वों से एक-दूसरे से दृढ़ता से तो जुड़ी रहती हैं मगर नीचे स्थित ऊतक से ये कम-दृढ़ता से जुड़ी रहती हैं। अनेक पादपों में अधिचर्म के नीचे स्थित कोशिकाओं से इसे आसानी से एक पूरी शीट के रूप में छील कर उतारा जा सकता है। साधारण अधिचर्म कोशिकाएँ प्राय: वार्षिक या द्विवर्षी पादपों के जीवनकाल तक जीवित रहती हैं, मगर बहुवर्षी या चिरस्थायी पादपों में इनकी जगह छाल (bark) ले लेती है।

अधिचर्म कोशिकाओं में सजीव जीवद्रव्यक होने के अलावा अवर्णी लवक (leucoplast), हरितलवक, और एंथोसाइएनिन भी पाये जाते हैं। ये कोशिकाएं दीर्घन या आकार में बढ़ती हैं और अंग के परिपक्व होने पर इनमें द्वितीयक स्थूलन होता है। यह स्थूलन परिनतिक भित्तियों पर अधिक और अपनतिक भित्तियों पर अल्पतम होता है।

अधिचर्म का एक मुख्य प्रकार्य जल क्षय की मात्रा को नियंत्रित करना है। इसलिए अधिचर्म कोशिकाओं की बाहरी भित्तियों पर क्यूटिन और क्यूटिकल जैसे जलविरोधी पदार्थों का जमाव रहता है (चित्र 7.37)। क्यूटिन उच्च अणुभार वाला लिपिड पॉलिएस्टर है जो कुछ खास वसा अम्लों के बहुलकीकरण के फलस्वरूप बनता है। जल-धारण के अलावा यह अपनी चमक से अतिरिक्त सौर किरणन को कुछ सीमा तक परावर्तित कर देता है। क्यूटिकल प्राय: एक चिकनी परत के रूप में अवक्षेपित रहता है, किंतु कुछ प्रजातियों में इसमें स्तरीकरण, उभारों और वलियन का एक जटिल पैटर्न देखने को मिलता है।

क्यूटिन के अलावा कई प्रजातियों की अधिचर्म मोमी अवक्षेपणों से ढकी रहती है जो उनकी सतह को घूसरी रंग देता है और उसे अत्यधिक जलविरोधी तथा अनार्द्रणीय बनाता है। शाकनाशियों और वृद्धि नियामकों जैसे बहिर्जात पदार्थों के अनुप्रयोग में यह एक महत्वपूर्ण कारक है। पादपों के लिए भी ये निस्संदेह महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये एक प्रभावी धूपरोधी का काम भी करते हैं। उदाहरण के लिए *एकीवेरिया ब्रैक्टियोसा* की मोमी परत आपाती प्रकाश के 25 प्रतिशत अंश को परावर्तित कर देती है। कीटों के हमले से भी बचाव करते हैं ये मोम।

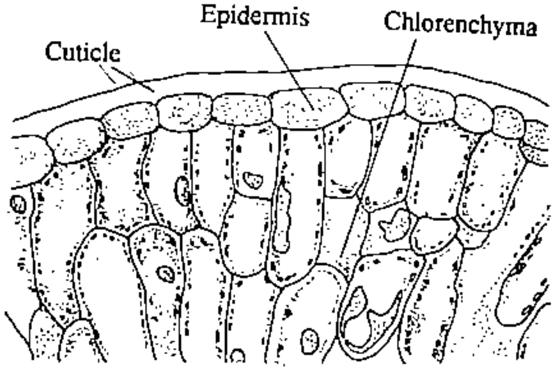

चित्र 7.37 : टैक्सस के पत्ती की अनुप्रस्थ काट का एक अंश। अधिचर्म कोशिका परत के बाहर की ओर क्यूटिकल की एक सुस्पष्ट परत को गौर से देखिए। (मौसेथ 1988 से)।

1) रंध्र : क्यूटिन और मोम की उपस्थिति के बावजूद भी पादपों के आकाशी अंग पूर्णत: अपारगम्य नहीं होते। बल्कि वे सूक्ष्म छिद्रों या रंध्री छिद्रों से अंतरायित रहते हैं। प्रत्येक छिद्र दो **द्वार कोशिकाओं** से घिरा रहता है, जो रंध्र बनाती हैं। आकार और विन्यास में द्वार कोशिकाएं साधारण कोशिकाओं से भिन्न रहती हैं। कभी-कभी द्वार कोशिकाओं के निकट की कोशिकाएं भी आकार, बनावट और कोशिका अंतर्वस्तु में साधारण कोशिकाओं से भिन्न पायी जाती हैं। ऐसी कोशिकाओं को **सहायक कोशिका (subsidiary cells)** कहा जाता है (चित्र 7.38)। छिद्रों सहित द्वार कोशिकाएं और आसपास की सहायक कोशिकाएं मिलकर एक रंध्री जटिलसंघ की रचना करती हैं। जटिलसंघों की कोशिकाओं के विन्यास और संख्याकों के आधार पर इनके पांच प्रकार माने गए हैं (चित्र 7.39)।

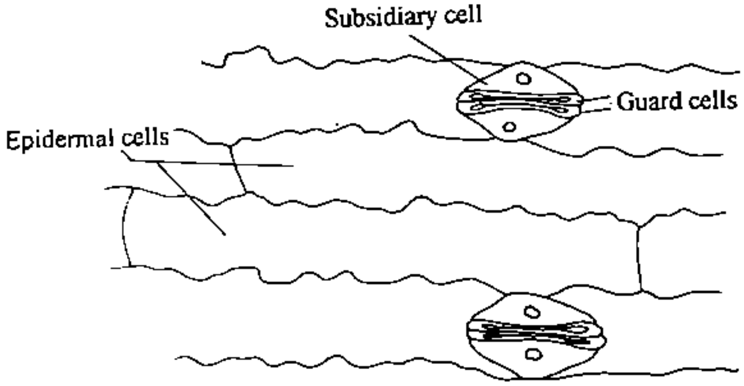

चित्र 7.38 : ज़िया मेज़ (*Zea mays*) की पत्ती की पराचर्मी काट का एक भाग जिसमें आप द्वार कोशिकाएं, सहायक कोशिकाएं और अन्य अधिचर्म कोशिकाएं देख सकते हैं।

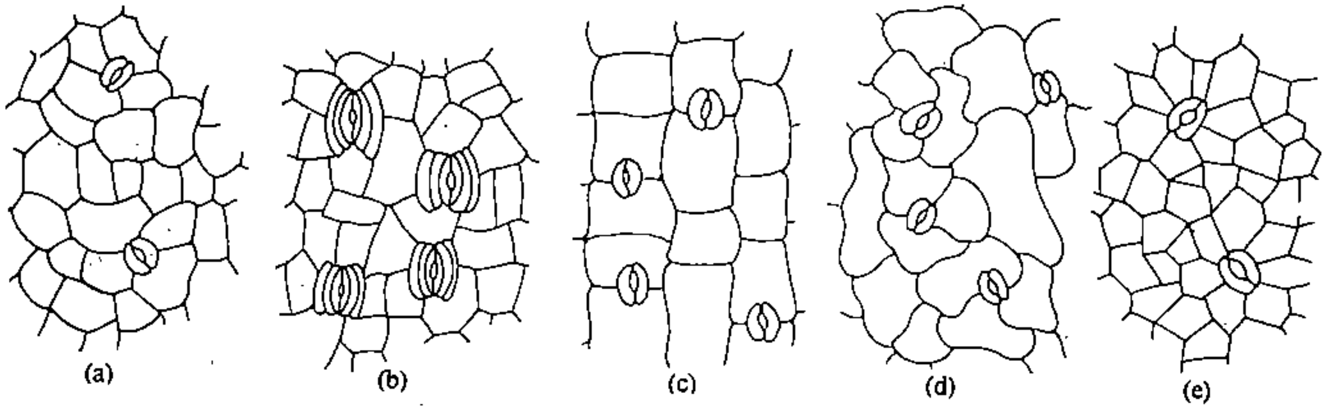

चित्र 7.39: रंध्र जटिलसंघों के पांच प्रकार : a) अनियमकोशिक (anomocytic) प्रकारों में सहायक कोशिकाएं नहीं होतीं; b) पराकोशिक (paracytic) प्ररूप – प्रत्येक द्वार कोशिका के साथ एक या अधिक सहायक कोशिकाएं रहती हैं जो द्वार कोशिकाओं के समांतर सरेखित होती हैं; c) लंबकोशिक (diacytic) प्रकार इसमें दो सहायक कोशिकाएं द्वार कोशिकाओं के लंबवत् सरेखित रहती हैं; d) असमकोशिक (anisocytic) प्रकार – इसमें असमान आकार की तीन सहायक कोशिकाएं द्वार कोशिका के इर्दगिर्द व्यवस्थित रहती हैं, और (e) एक्टिनोसाइटिक (actinocytic) प्रकार – इसमें कई द्वार कोशिकाएं सहायक कोशिकाओं को घेरे रहती हैं।

रंध्र पादप के सभी हरे भागों विशेषकर पत्तियों और तनों पर पाए जाते हैं। पत्तियों में ये विशेषकर निचले या अपाक्ष (abaxial) पृष्ठ पर अधिक प्रचुरता में पाए जाते हैं मगर उपरि या अभ्यक्षी (adaxial) सतह पर रंध्र बहुत कम संख्या में या बिल्कुल नहीं होते। रंध्र पादपों के कुछ हरितविहीन भागों में भी विद्यमान रहते हैं जैसे दलों (पंखुड़ी), पुंकेसरों, फलों और बीजों में। लेकिन ये कार्यशील नहीं होते। मटर की जड़ों को छोड़ शेष सभी पादपों की जड़ों में रंध्र नहीं मिलते।

2) त्वचारोम : अधिचर्म की सतह से भली प्रकार बाहर की ओर विकसित कोशिका को ही त्वचारोम कहा जाता है। ये त्वचारोम स्राव से लेकर रक्षा करने तक कई तरह के कार्य करते हैं। इन्हें ग्रंथिल (grandular) और ग्रंथिहीन में विभाजित किया गया है।

i) ग्रंथिहीन त्वचारोम : इनमें काफी विविधता देखने में आती है - ये एककोशिक से लेकर बहुकोशिक संरचनाएं हैं। इनके कुछ रूप चित्र 7.40 में दिखाए गए है। हर चित्र को सावधानीपूर्वक देखिए और नोट कीजिए कि प्रत्येक में कितनी कोशिकाएं हैं, उनका विन्यास कैसा है और एक रूप से दूसरा किस तरह भिन्न है, बताइए।

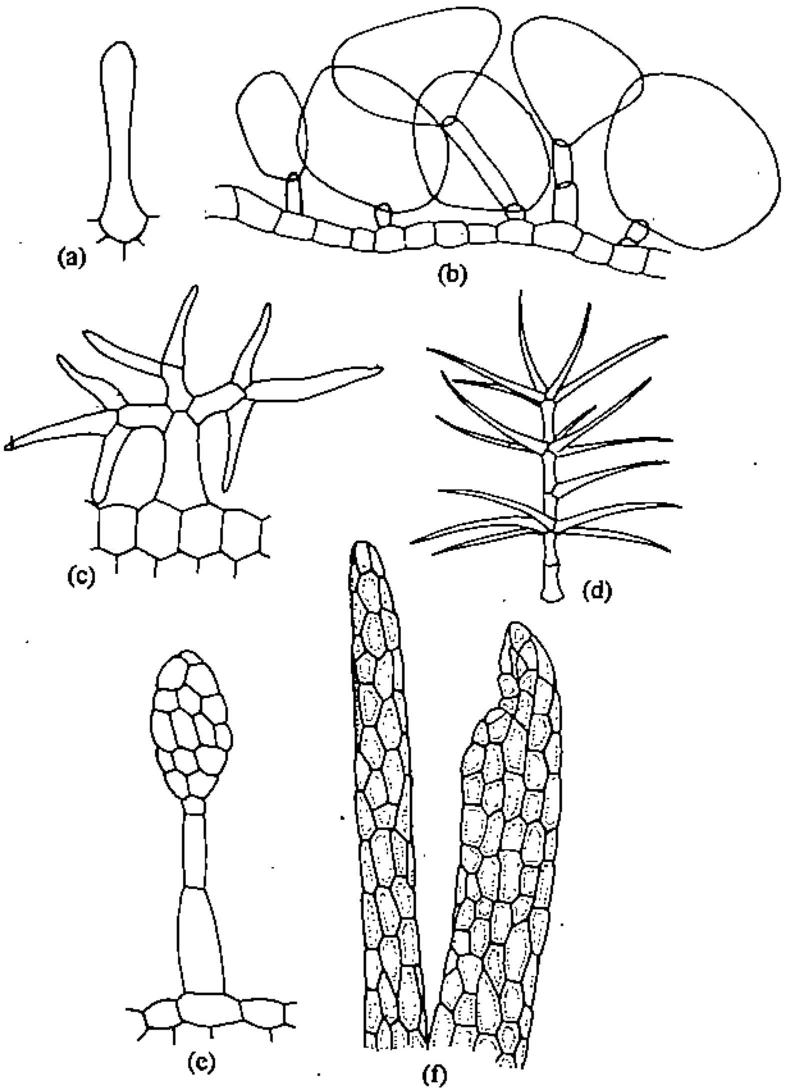

चित्र 7.40 : ग्रंथिहीन त्वचारोम के विविध रूप। a) एककोशिक त्वचारोम। b-f) बहुकोशिक त्वचारोम।

इन त्वचारोमों का मुख्य कार्य विभिन्न पर्यावरणीय व्यवधानों से बचाव के लिए एक आवरण प्रदाम करना है। चूंकि त्वचारोमों की संरचना भिन्न-भिन्न प्रजातियों में अतिविशिष्ट रहती है, इसलिए वर्गिकीविज्ञ इसे एक अमूल्य साधन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। कई प्रजातियों के त्वचारोमों या रोमों का आर्थिक महत्व भी है। कपास से बने वस्त्र, जिनका प्रयोग हम 900 से 200 ईस्वीपूर्व से कर रहे हैं, असल में ये इसके

त्वचारोमों से व्युत्पन्न होते हैं। *सीबा कैपॉक* एक और उदाहरण है, जो शाल्मली तंतु या कैपॉक का स्रोत है।

ii) ग्रंथिमय त्वचारोम : इनकी अभिलाक्षणिक विशेषता इनकी स्रावी भूमिका है। तेल, रेज़िन और कपूर इन्हीं रोमों से स्रावित होते हैं। ग्रंथिल त्वचारोमों में भी भारी विविधता देखने में आती है और ये एककोशिक या बहुकोशिक होते हैं (चित्र 7.41)।

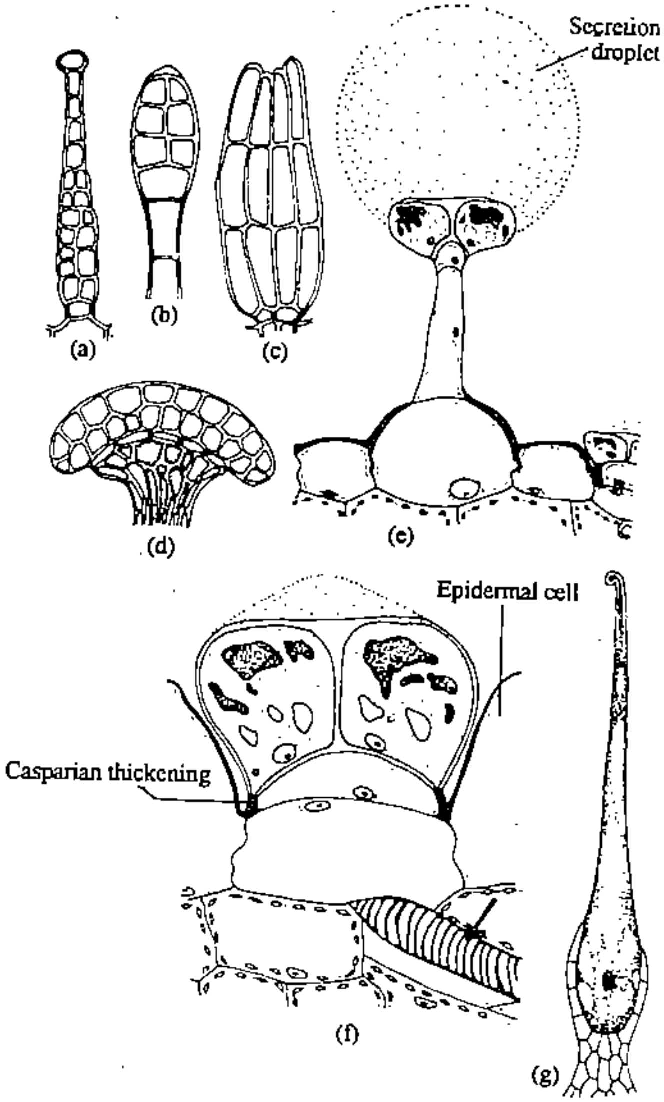

चित्र 7.41 (a - g) ग्रंथिल त्वचारोमों के कुछ रूप। a-d) और f) में कैस्पेरी स्थूलनों को ध्यान से देखिए। g) इस ग्रंथिमयी त्वचारोम को दंश रोम (stinging hair) कहते हैं और यह *अर्टिका* में पाया जाता है। एककोशिक सुई-जैसा त्वचारोम अधिचर्मी कोशिकाओं से घिरा रहता है जो कप की तरह व्यवस्थित रहती हैं। ग्रंथि के सिरे को अगर थोड़ा सा छू भी लिया जाए तो वह टूट जाती है। यह टूटा हिस्सा बड़ा नुकीला होता है और त्वचा में घुस कर उसके विषाक्त बेचैन करने वाले कोशिका अंतर्वस्तुओं को प्रविष्ट करा देता है - इन अंतर्वस्तुओं में मुख्यतः हिस्टेमिन और ऐसिटिल कोलीन होते है। (फ़ाह्न, 1977)

इन त्वचारोमों में एक वृंत और एक सिर होता है (चित्र 7.42), जिसमें सिर स्रावी भाग है। त्वचारोम के एककोशिक या बहुकोशिक सिर को क्यूटिकिल-जैसी एक परत ढकी रहती है। स्राव कोशिकाओं और क्यूटिकल के बीच एकत्र होते हैं, फिर क्यूटिकल भित्ति के सेलुलोसी हिस्से से ऊपर उठ जाती है। इसके बाद क्यूटिकल फट जाती है और स्राव छूट जाते हैं। विशाल ग्रंथिमय त्वचारोमों के वृंत सुस्पष्ट वाहिनी अवयवों के जरिए संवहन ऊतकों से जुड़े रहते हैं (चित्र 7.41 f, तीर देखें)। इसके अलावा वृंत कोशिकाओं की तिर्यक् भित्तियों में जीवद्रव्यतंतुक काफी संख्या में पाए जाते हैं, जो त्वचारोमों के सिर तक पदार्थों के प्रवाह को बनाए रखते हैं। इसी तरह पाद कोशिका (foot cell) और संग्राही कोशिकाओं (collecting

cells) में गहन भित्तियां (labryrinthine wall) होती हैं और वे अंतरण कोशिका (transfer cell) बन जाती हैं।

ग्रंथिल त्वचारोमों की एक विशेषता इनके स्रावी भाग को पृथक करने वाले भाग में कैस्परी पट्टियों की उपस्थिति है (चित्र 7.42)। इनकी उपस्थिति के कारण स्रावी उत्पाद पादप में वापस नहीं जा सकते हैं।

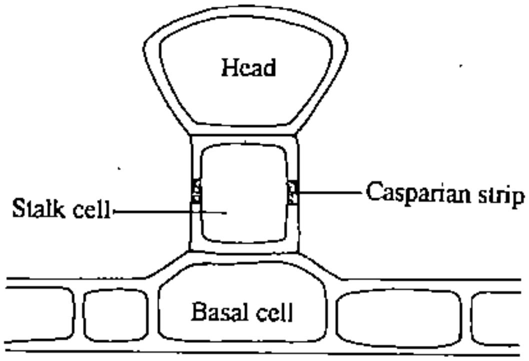

चित्र 7.42: एक ग्रंथिमय त्वचारोम का चित्रात्मक निरूपण जो उसके विभिन्न अंगों को दिखा रहा है। अधिकांश ग्रंथिल त्वचारोमों का यह मूलभूत खाका है और भिन्नताएं इनके घटक कोशिकाओं की भिन्न संख्याओं और विन्यास के कारण होती है।

3) कुछ विशिष्ट अधिचर्मी कोशिकाएं : अधिचर्म कोशिकाओं के कुछ अन्य विशेष रूप हैं **सिलिका कार्क, क्रिस्टल-युक्त और आवर्ध त्वक्कोशिकाएं**। यह कुछ ऐसी विशेष कोशिकाएं हैं जो विभिन्न पादपों के अधिचर्मों में पाई जातीं हैं। सिलिका कोशिकाएं (चित्र 7.43) आकार और बनावट में निकटवर्ती अधिचर्म कोशिकाओं से भिन्न होती हैं। इनमें सिलिका पिंड विद्यमान रहते हैं जो गोल, दीर्घवृत्ताकार, डम्बेल या काठी की बनावट जैसे हो सकते हैं। ये एकल अवस्था में या पत्ती की सतह पर यादृच्छिक रूप से बिखरी या शिराओं के ऊपर खड़ी पंक्तियों में व्यवस्थित रहती हैं।

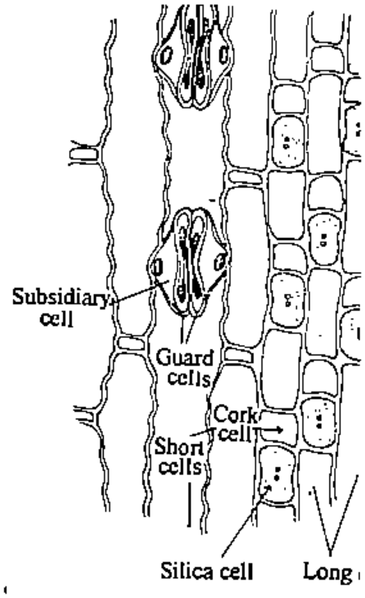

चित्र 7.43 : *पेनिसीटम क्लैंडिस्टीनम* की अधिचर्म का एक भाग, जिसमें आप खड़ी पंक्तियों में व्यवस्थित सिलिका और कार्क कोशिकाओं को देख सकते हैं। (फाह्न, 1977 से)।

कार्क कोशिकाएं छोटी, अति रसाधानी युक्त और इनकी भित्तियां सुबेरिनयुक्त होती हैं इनकी अवकाशिकाएं (lumen) कोशिकीय अजैव पदार्थों (ergastic substances) से भरी रहती हैं। ये अक्सर सिलिका कोशिकाओं के साहचर्य में मिलती हैं, जैसे *पेनिसीटम क्लैंडिस्टीनम* में (चित्र 7.43) और ये पादप को यांत्रिक बल प्रदान करती हैं। खाद्यान्नों में, सिलिका पर्ण पृष्ठ पर पोटेशियम और कैल्सियम जैसे दूसरे तत्त्वों के जमाव को रोकती है।

कैल्सियम कार्बोनेट के क्रिस्टल, जिन्हें सिस्टोलिथ (cystolith) कहते हैं, विशिष्टीकृत अधिचर्म कोशिकाओं या अश्मपुटों में पाए जाते हैं (चित्र 7.44)। ये कोशिकाएं आमतौर पर अपनी निकटवर्ती कोशिकाओं से आकार में बड़ी होती हैं और त्वचारोमों के विपरीत ये कोशिका गुहा के अंदर उभरी रहती हैं। यह अश्मपुट ऐकेंथेसी, कुकुरबिटेसी और मौरेसी कुल की विशेषता है। ओपिलिएसी और बोरैजिनैसी कुलों में ऐसी क्रिस्टलधारी कोशिकाएं समूहों में मिलती हैं।

एकबीजपत्रों विशेषकर घासों और प्रतृणों (सेजों) के अधिचर्म में एक और विशेष प्रकार की कोशिकाएं पाई जाती हैं। ये आवर्ध त्वक्कोशिकाएं (bulliform cells) हैं (चित्र 7.45)। ये कोशिकाएं बड़ी होती हैं, इनकी भित्तियां तनु या पतली होती हैं और ये पत्ती की लंबाई में लंबी पट्टियों में व्यवस्थित रहती हैं। ये आनमन बिन्दुओं (flexure points) का काम करती हैं। जैसे ये जब फूली और स्फीत होती हैं, तो पत्ती खुल जाती है। मगर इनसे जब जल क्षत होता है और ये ढीली हो जाती हैं तो पत्ती मुड़ जाती है, तथा इस तरह पानी की कमी वाली परिस्थितियों में यह पर्णपृष्ठ को कम से कम विवृत रखती हैं। इन कोशिकाओं की यह क्रिया पत्ती से जल के क्षय को नियंत्रित करने में सहायक है।

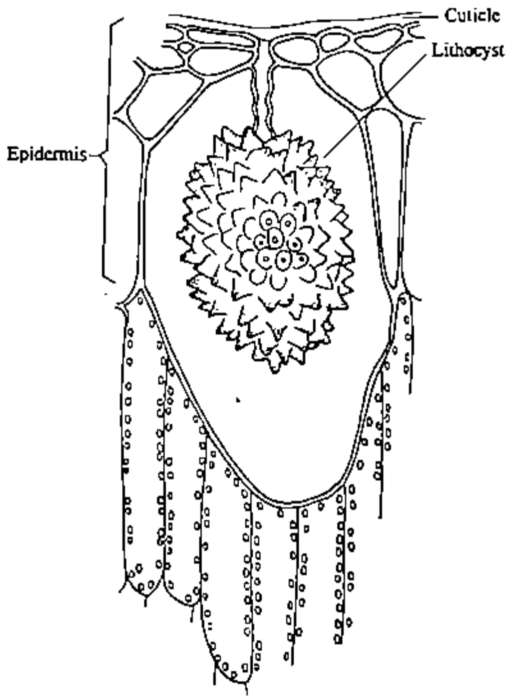

चित्र 7.44 : फाइकस इलेस्टिका (*Ficus elastica*) की पत्ती का एक भाग, जिसमें बहुपंक्तिक अधिचर्म और एक अश्मपुट दिखाई दे रहे हैं। (फाह्न 1977 से)।

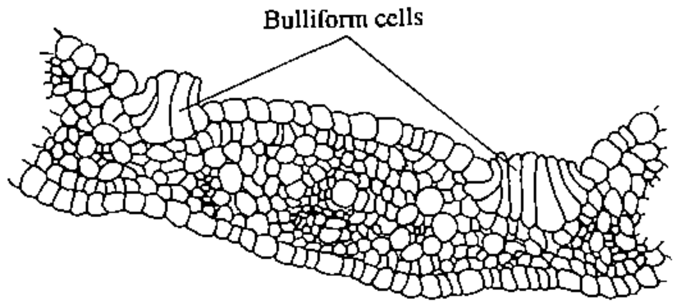

चित्र 7.45 : ट्रिप्सैकम डैक्टिलोइडीस की पत्ती की अनुप्रस्थ काट का एक भाग जिसमें बड़ी-बड़ी आवर्ध त्वक्कोशिकाएं दिखाई दे रही हैं। (मौसेथ, 1988 से)।

मूल रोम (**Root hairs**) : चर्मी संरचना का यह एक अन्य विशेष प्रकार है जो सभी पादपों में विद्यमान रहते हैं। इनका विशिष्ट प्रकार्य जल और पोषकतत्त्वों का अवशोषण है। अधिकांश मूल रोम एककोशिक होते हैं, चित्र 7.46। इसका एक अपवाद कैलैंको फेदत्शेंकोई (*Kalanchoe fedtschenkoi*) है जिसमें मूल रोम बहुकोशिक होते हैं। मूल रोम की लंबाई 80 से 1500 μm तक और व्यास 5 से 17 μm तक होता है। कुछ पादपों में लगभग हरेक अधिचर्म कोशिका मूल रोम में विकसित हो जाती है, किंतु अन्य पादपों में कोशिकाओं में एक असमान विभाजन होता है और लघु कोशिका मूल रोम के रूप में विकसित होती है – इस लघु कोशिका को रोमकोरक (trichoblast) या रोमधर कोशिका (piliferous cell) कहते हैं। ये मूल रोम जल के कुशल अवशोषण के लिए एक विस्तारित क्षेत्रफल प्रदान करती हैं। सिर्फ राई के पौधे में ही लगभग 14 करोड़ मूल रोम होते हैं जिनका पृष्ठ क्षेत्रफल 400 वर्ग मीटर रहता है। दूसरे त्वचारोमों की तरह मूल रोमों का जीवन काल भी लघु होता है और निर्माण के कुछ ही दिनों के अंदर वे मर जाते हैं। किंतु कभी-कभी कुछ मूल रोम जीवित बने रहते हैं और उनकी भित्तियां लिग्निनभवन या सुबेरिनीकरण के कारण स्थूलित या मोटी हो जाती हैं।

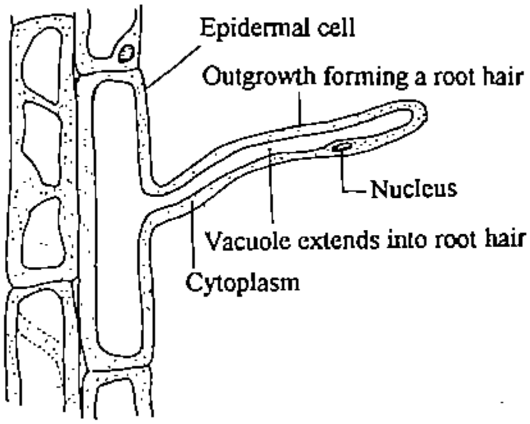

चित्र 7.46 : मूल के एक हिस्से के अनुदैर्ध्य काट का आरेखिय चित्र जोकि एक एककोशिकीय मूल रोम दिखा रहा है।

बोध प्रश्न 5

कोष्ठक में दिए गए विकल्पों में से सही शब्दों का चयन कीजिए।

i) प्ररोह और मूल तंत्रों के अधिचर्म (क्रमश: प्ररोह और मूल शिखाग्र मेरिस्टेम/सिर्फ प्ररोह शिखाग्र मेरिस्टेम) से विकसित होते हैं।

ii) पादप के आकाशीय भागों में अधिचर्म की निरंतरता (अंगों/रंध्रों) द्वारा भंग होती है।

iii) अधिचर्म कोशिकाओं का संलगन (उनके पार्श्वों पर/उनके नीचे स्थित ऊतकों से) अधिक होता है।

iv) रंध्र के जिस प्रकार में द्वार कोशिकाएं तीन असमान सहायक कोशकाओं से घिरी रहती हैं वह (साइक्लोसाइटिक/असमकोशिक) है।

v) (कपास/मकई) त्वचारोम से विकसित होने वाले रेशों का एक अच्छा उदाहरण है।

vi) (क्रिस्टल/आवर्ध-त्वक्) कोशिकाएं घासों और प्रतृणों की पत्तियों से जलक्षय को नियंत्रित करने में सहायक हैं।

7.5 सारांश

इस इकाई में आपने जाना कि :

- पादप काय मूलत: दो प्रकार की कोशिकाओं से बना होता है - मेरिस्टमी और परिपक्व ऊतकों से।
- पादप के पूरे जीवन काल में मेरिस्टमी ऊतक विभाजन करने में सक्षम रहते हैं और इन्हें इनकी स्थिति के अनुसार तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है - शिखाग्र, पार्श्विक और अंतर्विष्ट।
- शिखाग्र मेरिस्टेम तनों और जड़ों के शिखाग्रों पर विद्यमान रहते हैं। पार्श्विक मेरिस्टेम पादप अंगों के समांतर और अंतर्विष्ट मेरिस्टेम परिपक्व ऊतकों के बीच में स्थित रहते हैं।
- परिपक्व ऊतक दो प्रकार के होते हैं - सरल और जटिल।
- सरल ऊतक वे ऊतक हैं जो सिर्फ एक ही प्रकार की कोशिका से बनते हैं। पादपों में साधारणतया तीन प्रकार के सरल ऊतक पाए जाते हैं - मृदूतक, स्थूल कोणोतक और दृढ़ोतक।
- मृदूतक मुख्यत: प्रकाश संश्लेषण और संचय का कार्य करता है, जबकि स्थूल कोणोतक और दृढ़ोतक, अंग और संपूर्ण पादप को यांत्रिक शक्ति प्रदान करते हैं।
- जटिल ऊतक एक से अधिक प्रकार की कोशिकाओं से बनते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। ज़ाइलम और फ्लोएम। ज़ाइलम पानी के संवहन का कार्य करता है और फ्लोएम भोज्य पदार्थों का संवहन करता है। ज़ाइलम और फ्लोएम पादप अंग में निकट साहचर्य में रहते हैं और दोनों मिलकर संवहन ऊतक बनाते हैं।

- अधिचर्म पादप की सबसे बाहरी परत है। इसका प्रकार्य रक्षा करना है। कई रंध्र अधिचर्म की निरंतरता को भंग करते हैं और गैसीय विनिमय और वाष्पोत्सर्जन का कार्य करते हैं। रंध्रों के अलावा पादपों के आकाशीय भागों की अधिचर्म में कई किस्म के त्वचारोम पाए जाते हैं। मूल तंत्र की अँधिचर्म की विशेषता इसमें मूलरोमों की उपस्थिति है।

7.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. शब्दों के निम्न युग्मों में अंतर बताइए:

   i) स्तरित और अस्तरित एधा

   ....

   ....

   ii) पटलीय और रिक्तका स्थूल कोणोतक

   ....

   ....

   iii) समव्यासी दृढ़क और गुरूदृढ़क

   ....

   ....

   iv) वाहिनी और वाहिका अवयवों

   ....

   ....

   v) सरल और संयुक्त चालनी क्षेत्र

   ....

   ....

2. स्तंभ - I में दिए गए विषय वस्तुओं को स्तंभ -II में दिए गए विषय वस्तुओं से मिलाइए:

	I		II
i)	*ऐरैकिस हाइपोजीया*	1)	अधिचर्म रोम
ii)	*निम्फिया* पर्णवृंत	2)	स्पंज
iii)	*ऐगेव सीसैलैना*	3)	जूट
iv)	*कैनाबिस*	4)	लिग्निन
v)	*कॉरकोरस*	5)	ताराभ दृढ़कोशिका
vi)	दृढ़ोतक	6)	हेम्प
vii)	*लूफ्फा* फल	7)	अंतर्विष्ट मेरिस्टेम
viii)	समव्यासी दृढ़क	8)	कठोर रेशा
ix)	कपास	9)	*अर्टिका*
x)	दंश रोम	10)	*पाइरस*

3) प्रकार्यात्मक विविधता के आधार पर मृदूतक का वर्गीकरण कीजिए।

....

....

....

....

....

....

4) दृढ़कों के कौन से भिन्न रूप हैं? एक-एक उदाहरण के साथ प्रत्येक के निदानात्मक लक्षण बताइए।

....

....

....

....

....

....

7.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. i) गलत ii) सही iii) गलत iv) गलत v) सही

2. i) प्लास्टोक्रोन
   ii) तर्कुरूप, अर आद्यक
   iii) पार्श्विक मेरिस्टेम
   iv) प्राथमिक, द्वितीयक
   v) काग, काग्र अस्तर

3. i) कैल्स
   ii) वायूतक
   iii) मृदूतक
   iv) अस्थिदृढ़क
   v) समव्यासीदृढ़क
   vi) स्थूलकोणोतक, दृढ़ोतक
   vii) सीसल (*ऐगेव सीसैलैना*)
   viii) ताराभ दृढ़क

4. i) गलत ii) सही iii) सही iv) सही
   v) सही vi) गलत vii) गलत viii) गलत

5. i) क्रमशः प्ररोह और मूल शिखाग्र मेरिस्टेम
   ii) रंध्रों
   iii) उनके पाश्र्वों पर
   iv) असमकोशिक
   v) कपास
   vi) आवर्ध-त्वक्

अंत में कुछ प्रश्न

1. i) उपभाग 7.2.2 देखें
   ii) उपभाग 7.3.1 देखें
   iii) उपभाग 7.3.1 देखें
   iv) उपभाग 7.3.2 देखें
   v) उपभाग 7.3.2 देखें

2.

I	II
i)	7
ii)	5
iii)	8
iv)	6
v)	3
vi)	4
vii)	2
viii)	10
ix)	1
x)	9

3. देखिए उपभाग 7.3.1

4. देखिए उपभाग 7.3.1

इकाई 8 जड़, तना और पत्ती

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
    उद्देश्य
8.2 जड़
    8.2.1 जड़ शीर्ष
    8.2.2 जड़ संरचना
    8.2.3 विशेषीकृत जड़ें
8.3 तना
    8.3.1 प्ररोह शीर्ष
    8.3.2 प्राथमिक संरचना
    8.3.3 द्वितीयक संरचना
    8.3.4 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री तने के बीच तुलना
    8.3.5 विशेषीकृत तनें
8.4 पत्ती
    8.4.1 आंतरिक संरचना
    8.4.2 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादप की पत्ती में तुलना
    8.4.3 विशेषीकृत पत्तियां
    8.4.4 विलगन
8.5 सारांश
8.6 अंत में कुछ प्रश्न
8.7 उत्तर

8.1 प्रस्तावना

प्राथमिक कायिक संवहनी पादप काया भ्रूण से विकसित होती है। भ्रूण के दोनों विपरीत ध्रुवों/छोरों (poles) पर दो शीर्षस्थ विभज्योतक (growing point); जड़ तथा प्ररोह शीर्ष विभज्योतक (apical meristem) होते हैं। जब बीज अंकुरित होता है, तब ये विभज्योतक जड़ तथा प्ररोह तंत्र को स्थापित करने में योगदान करते हैं। विभज्योतक नई कोशिकाएं उत्पन्न करते हैं जो विकसित होकर विभेदित होती हैं तथा विभिन्न प्रकार के प्राथमिक ऊतकों में विकसित होती हैं। जड़ तंत्र में जड़ें होती हैं जो पादप को मिट्टी से जोड़े रखती हैं तथा उसमें से जल तथा खनिज लवण लेती हैं। प्ररोह में एक अक्ष, तने का ढाँचा तथा पार्श्व (laterals) पत्तियां तथा प्ररोह कलिकाएं होती हैं। पत्तियां खाना बनाती हैं तथा उनसे वाष्पोत्सर्जन (transpiration) के द्वारा जल निकालता है। तना पत्तियों को धारण किए रहता है तथा जल और खनिज लवणों का जड़ों से पत्तियों तक संचालन और परिवहन करता है। यह प्रकाश संश्लेषी पदार्थों को पत्तियों से पौधे के अन्य भागों में ले जाने का कार्य भी करता है। विभिन्न अंग-जड़ें, तने तथा पत्तियां विभिन्न प्रकार के ऊतकों से बने होते हैं जो विशिष्ट पैटर्न में स्थित और व्यवस्थित रहते हैं। इस प्रकार के पैटर्न तथा अंग के द्वारा किए जाने वाले कार्य में एक सुस्पष्ट सहसंबन्ध होता है। बाद में उस पौधे के जीवन में, खासतौर पर अधिक लंबी आयु वाले पौधों में, ये अंग (जड़ तथा तना) द्वितीय वृद्धि (secondary growth) के फलस्वरूप द्वितीय ऊतक उत्पन्न करते हैं। द्वितीय क्रिया/वृद्धि पार्श्व विभज्योतकों के कारण होती है जिन्हें संवहन एधा/कैम्बियम (vascular cambium) तथा कॉर्क कैम्बियम (cork cambium) कहते हैं। इस इकाई में आप जड़, तने तथा पत्ती के विकास तथा संरचनात्मक संगठन के बारे में पढ़ेंगे। आप यह भी पढ़ेंगे कि किस प्रकार कोई अंग किसी विशिष्ट कार्य करने के लिए अथवा/तथा वातावरण की जरूरत के हिसाब से अपनी संरचना को रूपांतरित कर लेता है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- कायिक पादप में पाए जाने वाले विभिन्न अंगो को पहचानने में,
- अंगों के संबन्ध में ऊतक तंत्र की धारणा को समझने में,
- जड़, तना तथा पत्ती की आंतरिक संरचना (शारीर) का वर्णन करने में,
- विभिन्न अंगो के आंतरिक संगठन के विभेद और तुलनात्मक अध्ययन में,
- किसी अंग में विभिन्न ऊतकों की स्थिति के पैटर्न का संबन्धित अंग की क्रियात्मक क्षमता से संबन्ध स्थापित करने में,
- द्वितीय विभज्योतकों की उत्पत्ति तथा कार्यों के बारे में जानने में,
- प्राथमिक तथा द्वितीयक ऊतकों के नीचे विभेद करने में,
- द्विबीजपत्री (dicotyledon) तथा एकबीजपत्री (monocotyledon) पादपों की संरचना के बीच विभेदों को जानने और पहचानने में,
- संरचना तथा कार्यों में तथा अनुकूलन में घनिष्ठ संबन्धों को जानने में।

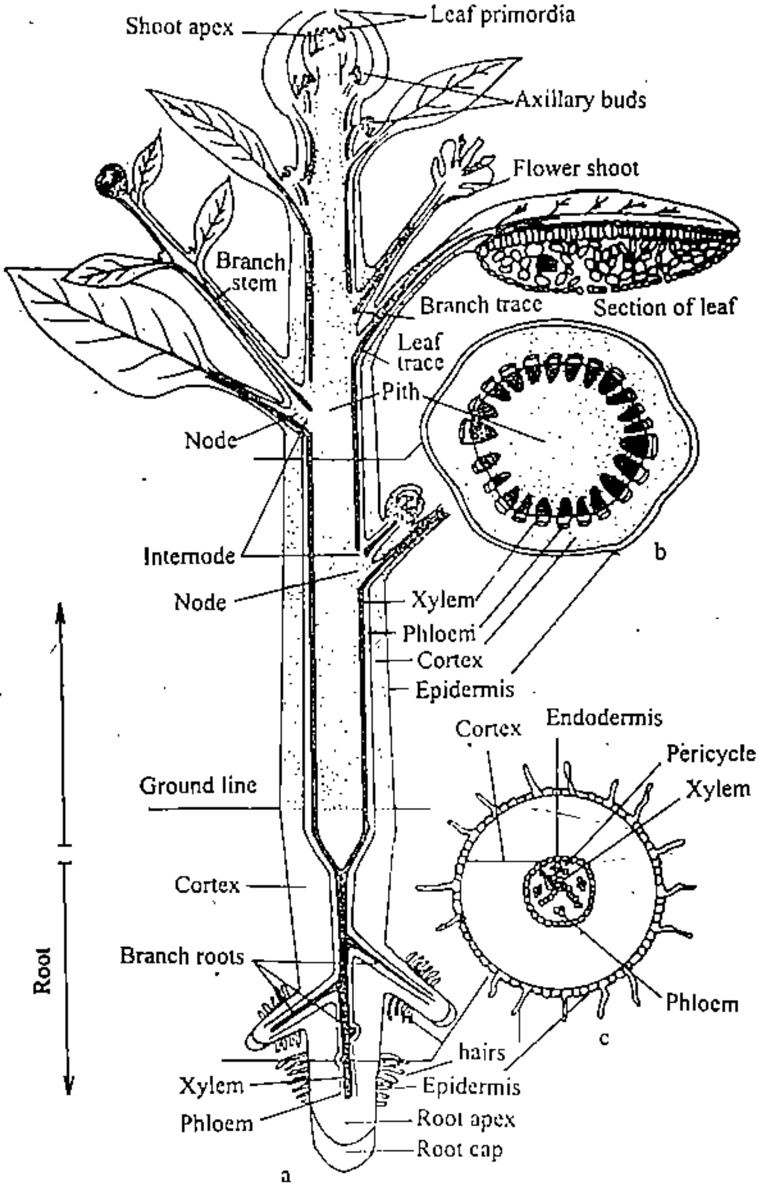

चित्र 3.1 : एक तरुण पादप।

आपको सलाह दी जाती है कि आप भूमि से एक तरुण पादप उखाड़े तथा उसके संगठन की तुलना चित्र 8.1 में दिखाए गए पादप की संरचना से करें।

अध्ययन गाइड

इस इकाई का अध्ययन आरंभ करने से पहले, आप ऊतकों पर इकाई 7 का अध्ययन अवश्य करें। आप विभज्योतक के विभेदन, कोशिका विभाजन (cell division), स्थायी ऊतकों आदि की धारणाओं की जानकारी कर लें। आपको पादप कोशिका के संगठन तथा विभिन्न कोशिकीय अंगों की भूमिकाओं को भी याद कर लेना चाहिए। आप विभिन्न रेखाचित्रों को बहुत ध्यानपूर्वक देखिए।

पहले पढ़ लीजिए

इकाई -17 कोशिका विभाजन पर, एल.एस.ई-01

इकाई -7 इस खंड की

इकाई -4 विकासात्मक जीवविज्ञान की, एवं इकाई -10 द्वितीयक वृद्धि एल.एस.ई-06

8.2 जड़

जड़ आमतौर पर पादप अक्ष के निचले हिस्से में स्थित रहती है। यह सामान्यत: भूमि की सतह के नीचे उगती और विकसित होती है। जड़ें जल तथा खनिज लवणों को ऊपर ले जाने, कभी-कभी खाद्य संग्रह और जमीन से जोड़े रखने का कार्य करती है। जड़े ग्रुप साइलोटेलीज (Psilotales), (टेरिडोफाइटा (Pteridophyta) अबीजीय संवहनी पादप) के अतिरिक्त अन्य संवहनी पादपों में उपस्थित रहती हैं। पोडोस्टिमेसी (Podostemaceae) में भी जड़ें अनुपस्थित होती हैं इनके पौधे जड़विहीन होते हैं। पौधे की पहली जड़ भ्रूण के मूलवत् (radicular) भाग से विकसित होती है। यह प्राथमिक जड़ बनाती है। इस जड़ का विकसित भाग पार्श्व जड़ें उत्पन्न करता है। जड़ तंत्र (**root system**) को बनाने के लिए यह प्रक्रिया अनेकों बार दोहरायी जाती है। प्राथमिक जड़ को मूसला जड़ (**tap root**) भी कहते हैं। (चित्र 8.2 a), तथा यह अनावृतबीजी (gymnosperms) तथा आवृतबीजी (**angiosperms**) पादपों की विशेषता है। एकबीजपत्री पादपों में, प्राथमिक जड़ बनने के तुरंत बाद ही बढ़ना बंद कर देती है तथा बीजपत्राधर (hypocotyl) तथा तने से अतिरिक्त जड़ें विकसित हो जाती हैं। ये जड़ें तथा अन्य ऐसी जड़ें जो भ्रूण के मूलांकर (radical) के अलावा अन्य भागों से विकसित होती है वे अपस्थानिक (adventitious) जड़ें कहलाती हैं। इस प्रकार का जड़तंत्र तंतुमय जड़तंत्र (**fibrous root system**) बनाता है (चित्र 8.2 b)। सभी प्रकार की जड़ें चाहे वो प्राथमिक, पार्श्व अथवा अपस्थानिक हों, सभी में समान संरचनात्मक संगठन पाया जाता है। यह संरचना मूल है तथा प्राथमिक है। द्वितीय वृद्धि से पहले पायी जाती है। आइए इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करें।

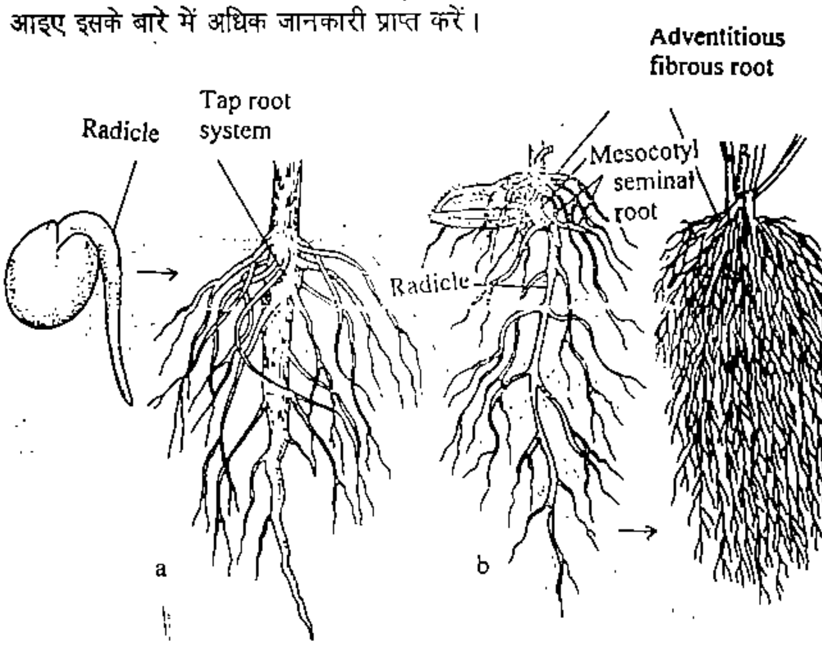

चित्र 8.2 : जड़ तंत्रों का विकास। a) अंकुरित होता हुआ द्विबीजपत्री बीज जिसमें उगता हुआ मूलांकुर भी हैं जो मूसला जड़ तंत्र में विकसित होता है (तीर देखिए)। b) चावल का नवोद्भिद पौधा जिसमें बहुत घना अपस्थानिक जड़ तंत्र विकसित है (तीर देखिए)।

8.2.1 जड़/मूल शीर्ष (Root Apex)

मूल शीर्ष संगठन के सिद्धांत

भ्रूणोद्भव (embroyogeny) के दौरान, कुछ कोशिका/कोशिकाएं स्वत: ही समसूत्री कोशिका विभाजन (mitotic cell division) के द्वारा अधिक कोशिकाएं बनाने का कार्य करने लगती हैं। इन कोशिकाओं में सघन कोशिकाद्रव्य (cytoplasm) बड़ा तथा सुस्पष्ट द्विगुणित केन्द्रक तथा बहुत सी छोटी धानियां (vacuoles) पाई जाती हैं। ये धानियां स्पष्ट रूप से सिर्फ इलैक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही दिखाई पड़ती हैं। किसी भी प्राथमिक जड़ में सभी कोशिकाओं की उत्पत्ति इन्ही कोशिकाओं से होती है जो तथाकथित जड़/मूल शीर्ष विभज्योतक (root apical meristem) बनाती हैं। विभज्योतक में उपस्थित कोशिका/कोशिकाएं आरंभक (initial) कहलाती हैं। क्योंकि ये कोशिकाएं मूल शीर्ष में उपस्थित रहती हैं अत: इन्हें मूल शीर्ष आरंभक (root apical initial) कहते हैं। हालांकि इन आरंभकों की उपस्थिति सभी जड़ों की विशेषता होती है, फिर भी इनकी संख्या, स्थान, श्रेणीकरण (placement) तथा कार्य करने का तरीका ठीक से ज्ञात नहीं है। सभी पादप जातियों में आवश्यक रूप से समान जड़/मूल शीर्ष संगठन नहीं पाया जाता है। इस संदर्भ में बहुत अधिक विविधता पाई गई है। मूल शीर्ष के संगठन की जानकारी प्रदान करने के लिए पहले भी काफी प्रयास किए गए हैं। अब हम उनमें से कुछ कार्यों की चर्चा करेगें।

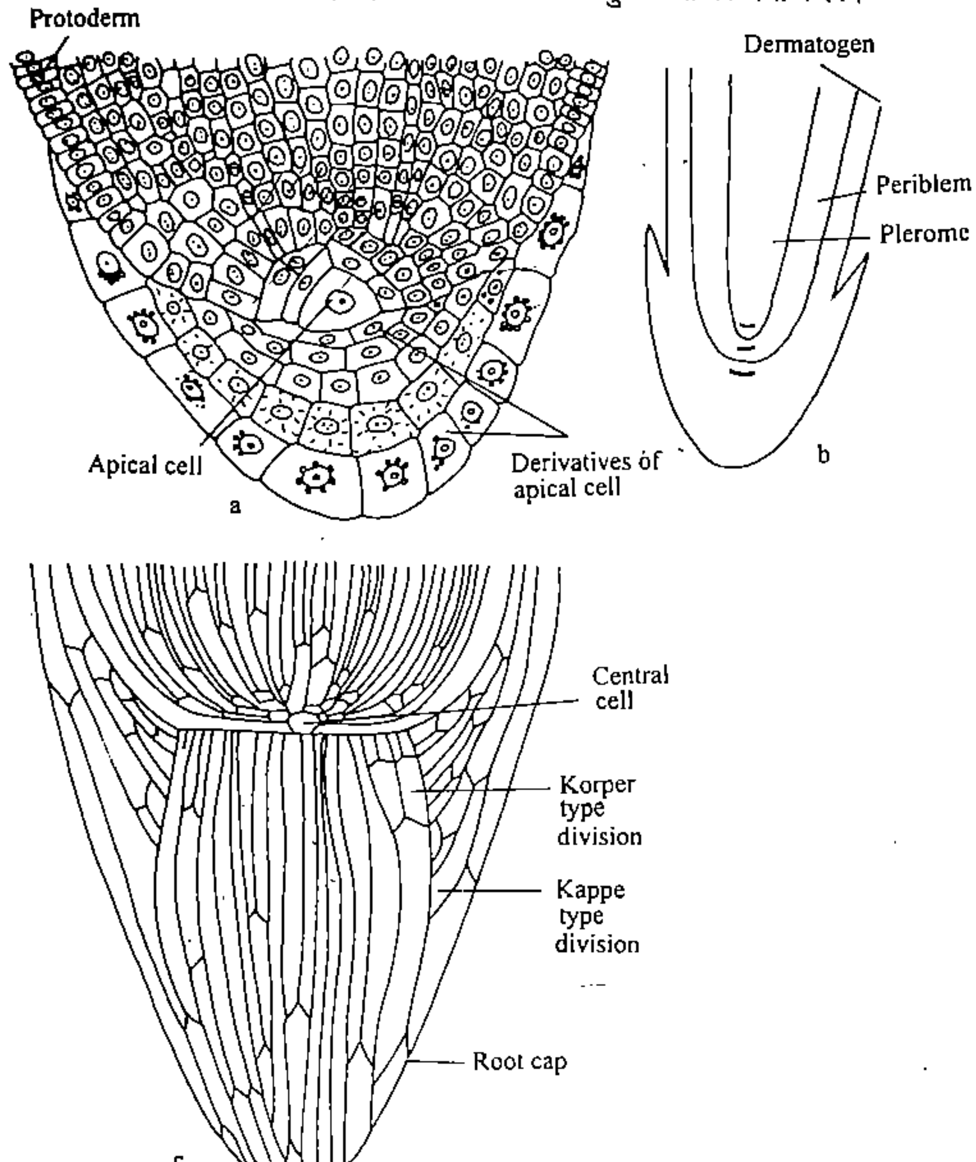

चित्र 8.3 : मूल शीर्ष विभज्योतक का रेखाचित्रीय प्रदर्शन **a)** टेरिस (*Pteris*) के मूलशीर्ष का मध्य अनुदैर्घ्य काट, **चार ओर की काट** वाली शीर्ष (जिसमें से एक अनुदैर्घ्य काट के समतल में नहीं) एक ही शीर्ष **कोशिका को** दर्शाते हुए (ए.जे.ईम्स तथा एल.एच.मैकडेनिअल्स की **An Introduction to plant Anatomy** मैक्ग्रा-हिल बुक कं०, इंक, न्यूयॉर्क से रूपांतरित) **b)** द्विबीजपत्री पादप के मूल शीर्ष की **वृद्धि** का योजनाबद्ध प्रदर्शन, हैन्सटीन की हिस्टोजन धारणा (**histogen concept**) के अनुसार **समझाई** गई **c)** ज़िया मेज़ (*Zea mays*) के मूल शीर्ष की अनुदैर्घ्य काट, कोशिका वंश परंपराओं **(cell lineages)** के पैटर्न को दिखाते हुए व कॉर्पर कैपी धारणा (**körper-kappe concept**) के आधार पर **उसके संगठन** को समझाते हुए (एफ-ए-एल.क्लॉस के, एन्डेवियर (**Endeavour**) **24,1965** से ली गई)।

कुछ संवहनी क्रिप्टोगेम्स (cryptogams) [उदाहरण के लिए, इक्वीसीटम (*Equisetum*), ऑफियोग्लौसम (*Ophioglossum*), ड्रायोप्टेरिस (*Dryopteris*)] की जड़ों में सिर्फ एक चतुष्फलकीय (tetrahedral) शीर्ष कोशिका पाई जाती है (चित्र 8.3 a देखिए)। ऐसा समझा जाता है कि जड़ में सभी कोशिकाएं इसी से उत्पन्न होती हैं। यह नागेली [(Nägeli), 1844) द्वारा प्रस्तावित **शीर्ष कोशिका सिद्धांत** का आधार है। हालांकि, कुल मैराटिएसी [Marattiaceae (एक फर्न कुल)] में दो या अधिक मूलशीर्ष आरंभक रिपोर्ट की गई है। उच्च संवहनी पादपों में अक्सर बहुत सारे शीर्ष आरंभक देखे जाते हैं। अत: यह सिद्धांत अधिकांश संवहनी पादपों पर लागू नहीं होता है।

हिस्टोजन सिद्धांत (Histogen Theory)

जे-हैन्सटीन (1868) ने हिस्टोजन सिद्धांत प्रतिपादित किया तथा तीन कोशिका-आरंभक केन्द्रों या क्षेत्रों की उपस्थिति को स्वीकार किया जिन्हें उन्होंने **हिस्टोजन्स** कहा। ये **डर्मेटोजन/त्वचाजन(dermatogen), वल्कुटजन (periblem)** तथा **प्लीरोम (plerome)** हैं (चित्र 8.3 b देखिए) जो वयस्क जड़ में क्रमश: बाह्यत्वचा (epidermis), वल्कुट (cortex) तथा संवहनी ऊतक (vascular tissue) का निर्माण करते हैं।

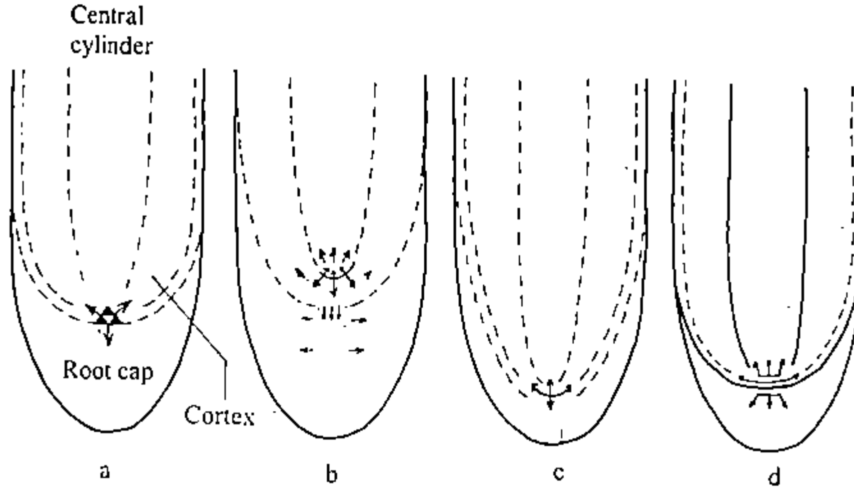

चित्र 8.4 : मूल शीर्ष विभज्योतक का संगठन a) एक एकल शीर्ष कोशिका मूल तथा मूलगोप (root cap) के सभी भागों का स्रोत है। b) आरंभकों के दो समूह संवहनी वेलन/सिलिन्डर तथा वल्कुट, बाह्यत्वचा और मूलगोप को जन्म देते हुए। c) दूरस्थ भाग जिसमें आरंभक ठीक से वैयक्तिक नहीं है वह केन्द्रीय वेलन, वल्कुट तथा कॉलम/स्तंभ का स्रोत हैं। d) आरंभकों के तीन समूह संवहनी वेलन, वल्कुट, बाह्यत्वचा तथा मूलगोप को जन्म देते हुए (के इसाऊ की **Plant Anatomy** से लिया गया, जॉन विली एन्ड सन्स, इंक, न्यूयॉर्क, 1965)

चित्र 8.4 विभिन्न प्रकार के मूल शीर्ष को दिखाता है। तीर को देखिए। *a* में, जड़ की सभी कोशिकाएं एक ही शीर्ष कोशिका से उत्पन्न हुई है। *b* में, कोशिकाओं की एक परत संवहनी बेलन को तथा दूसरी वल्कुट बाह्यत्वचा और मूलगोप को उत्पन्न करती हैं। अधिकांश अनावृतबीजी पादपों में ऐसा ही मूल शीर्ष पाया जाता है। पैटर्न *c* जो बहुत से द्विबीजपत्री पादपों की विशेषता है, इसमें एक परत संवहनी बेलन की, दूसरी वल्कुट की तथा तीसरी बाह्य त्वचा और मूलगोप दोनों की साझा उत्पति करती है। *d* प्रकार में मूल शीर्ष *e* से मूल गोप की स्वंतत्र उत्पत्ति में भिन्न होता है, पर बाह्य त्वचा तथा वल्कुट का एक ही आरंभक होता है। इस प्रकार के मूल शीर्ष अधिकांश एकबीजपत्री पादपों में पाए जाते हैं।

कार्पर कैपी सिद्धांत (Korper Kappe Theory)

इस सिद्धांत के अनुसार, कोशिकाएं उस पैटर्न से विभाजित होती हैं जो T-विभाजन कहलाता था। मूल शीर्ष के बाहरी क्षेत्र में (कैपी (टोप) क्षेत्र) संतति कोशिकाएं अनुदैर्घ्य रूप से तथा पहले कोशिका विभाजन के तल के समकोण मे विभाजित होती है। इस प्रकार दो कोशिका विभाजनों के तल जड़ के मध्य अनुदैर्घ्य काट में T का आकार बनाते हैं। कार्पर (काया) क्षेत्र में (मूलगोप क्षेत्र) इन विभाजनों के फलस्वरूप उल्टे

T का पैटर्न बनता है (चित्र 8.3 c) देखिए। कार्पर कैपी सिद्धांत 1917 में स्वीप (Schuepp) द्वारा रखा गया था। उनके अनुसार विभिन्न मूल ऊतकों की उत्पत्ति को इन कोशिका विभाजन के पैटर्न को देखकर जाना जा सकता है।

प्रोमेरिस्टेम (Promeristem) : यह शब्द प्रोमेरिस्टेम शीर्ष के उस भाग को इंगित करता है जो जड़ के सभी ऊतकों को निर्मित करने में समर्थ होता है। ये एक अथवा बहुकोशिकीय हो सकता है। पहले ऐसा माना जाता था कि प्रोमेरिस्टेम शायद लघु क्षेत्र होता है। हालांकि, एफ.ए.एल क्लॉउस (F.A.L.Clowes) द्वारा (1950 के दशक में) किए गए *विसिया फाबा* (*Vicia faba*) तथा *फैगस सिल्वाटिका* (*Fagus sylvatica*) के मूल शीर्षों के विस्तृत प्रयोगात्मक अध्ययनों के आधार पर यह सुझाया गया कि प्रोमेरिस्टेम कुछ-कुछ प्यालेनुमा कोशिकाओं का समूह है जो केन्द्रीय निष्क्रिय क्षेत्र की परिधि में होता है (चित्र 8.5)।

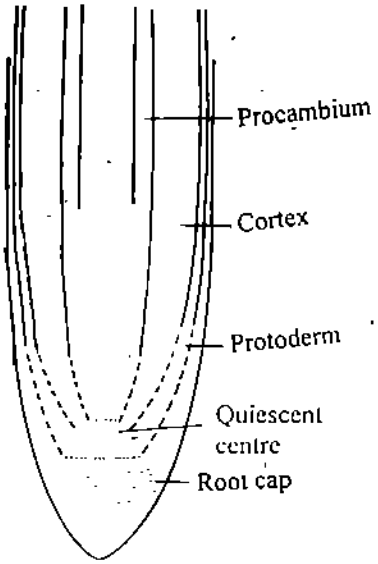

चित्र 8.5 : मूल शीर्ष का मध्य अनुदैर्घ्य दृश्य प्राथमिक विभज्योतक तथा प्राथमिक ऊतकों और क्षेत्रों को दर्शाते हुए जो उनसे विकसित होते हैं।

शांत क्षेत्र (Quiescent centre) : सक्रिय, प्यालेनुमा आरंभकों के समूह के नीचे के केन्द्रीय निष्क्रिय क्षेत्र, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, को क्लॉउस ने शांत केन्द्र या शांत क्षेत्र नाम दिया था। यह भाग अर्धगोलाकार तथा बहुकोशिकीय माना जाता है। इस क्षेत्र की कोशिकाओं में अपेक्षाकृत छोटे केन्द्रक, कम माइटोकॉन्ड्रिया (mitochondria) तथा एन्डोप्लास्मिक रेटीकुलम (endoplasmic reticulum) का अल्प जाल/नेटवर्क होता है। वे R.N.A (राइबो न्यूक्लीक अम्ल) के लिए कम रंजित (stain) होते हैं। तथा जब जड़ें ऐसे माध्यम में उगाई जाती है जिसमें लैब्लिड/चिन्हित फोस्फोरस तथा थाइमिडीन होता है, तो इस क्षेत्र की कोशिकाएं इन तत्वों को बहुत अल्प मात्रा में ग्रहण करती हैं।

ये परीक्षण सुझाते हैं कि शांत क्षेत्र में पाई जाने वाली कोशिकाएं बहुत अल्प (कम) क्रिया दिखलाती हैं। इस क्षेत्र की कोशिकाओं में समसूत्री विभाजन का जी फ़ेज (G-Phase) बहुत लंबा होता है तथा इसलिए ये कोशिकाएं अल्प तापमान की स्थितियों में रखे जाने पर और उसके बाद पुन: उच्चतापमान में रखने पर होने वाली क्षति को, तथा विकिरणों (radiations) को झेल जाती है।

इस शांत क्षेत्र में पाई जाने वाली शांति के कार्यों तथा कारणों को समझाने के लिए विभिन्न सुझाव दिए गए हैं। उनमें से कुछ का नीचे सारांश दिया गया है (1) वे पादप वृद्धि तत्वों के संश्लेषण का स्थान है; इन तत्वों की अधिक सान्द्रता वाली कोशिकाएं शांत होती है जबकि कम सान्द्रता वाली कोशिका विभाजन में समर्थ होती हैं।(2) मूलगोप कोशिकाएं इन कोशिकाओं में शांति को नियंत्रित करती है; (3) पड़ोसी कोशिकाओं के तेजी से विभाजित होने के कारण पड़ने वाला दबाब इस क्षेत्र को निष्क्रिय बना देता है; (4) ये किसी जाति के प्रारूपी द्विगुणित जीनधर (Typical diploid genome) का भंडार होते हैं; चूंकि विभाजित होने वाली कोशिकाएं बदलाव आदि के लिए अधिक ग्रहणशील होती हैं।

यह उल्लेख करना आवश्यक है कि सभी जातियों की जड़ों में शांत क्षेत्र नहीं पाया जाता है। इस प्रकार का क्षेत्र अक्सर तरुण जड़ों में अनुपस्थित होता है। *यूफोर्बिया एस्कुला* (*Euphorbia escula*) जिसमें द्विरूपी जड़ तंत्र पाया जाता है, उनमें शांत क्षेत्र लंबी जड़ों में तो पाया जाता है परन्तु छोटी जड़ों में नही होता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि मूल शीर्षों में एक या अधिक शीर्ष कोशिकाएं होती हैं जो प्राथमिक जड़ में सभी व्यस्क ऊतकों को जन्म देती हैं।

8.2.2 जड़ संरचना

जड़ की संरचना को, खास तौर पर अनुक्षेत्र वर्गीकरण (zonation) को सबसे अच्छी तरह से शीर्ष भाग से जाती हुई अनुदैर्ध्य काट में देखा जा सकता है (चित्र 8.6 देखिए) विभिन्न अनुक्षेत्र जिन्हें आप देख सकते हैं वे हैं: **मूलगोप, कोशिका विभाजन का क्षेत्र, दीर्घीकरण (elongation) का क्षेत्र** तथा **परिपक्वता का क्षेत्र**

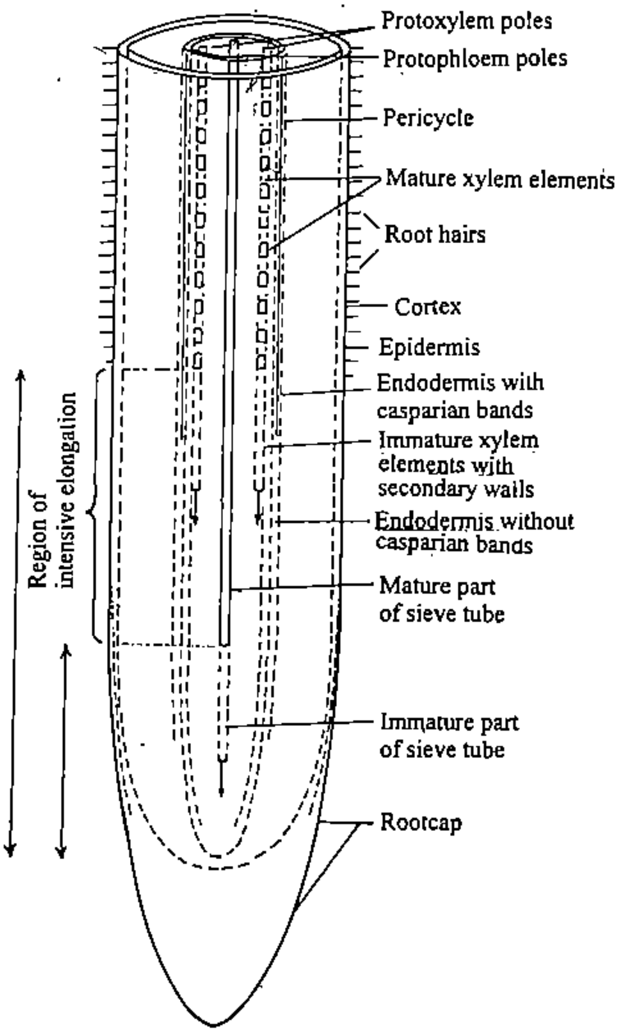

चित्र 8.6 : विकासशील जड़ में विभिन्न अनुक्षेत्रों तथा ऊतकों का आरेखी प्रदशर्न। (इसाऊ से)

मूलगोप (Root cap)

मूल शीर्ष आंशिक रूप से पूर्णत: विभेदित, वयस्क तथा बहुकोशिकीय, संरचना से ढ़का रहता है जिसे मूलगोप कहते हैं। मूलगोप की कोशिकाएं जीवित मृदूतकी (parenchyma) कोशिकाएं होती हैं जिनमें अक्सर मंड कण (starch grains) होते हैं तथा ये अव्यवस्थित रूप में स्थित रहती है। जब भी मूलगोप की केन्द्रीय कोशिकाएं स्पष्ट और स्थिर संरचना बनाती हैं तब ये स्तंभिका/कॉल्यूमेला **(columella)** कहलाती हैं।

मूलगोप जड़ प्रोमेरिस्टेम की रक्षा करता है तथा उगने वाली जड़ों के मिट्टी में घुसने में सहायता करता है। कुछ पौधों की मूलगोप कोशिकाओं को हटाया जा सकता है। इस प्रकार की जड़ें अपने मूलगोप के बिना, अनियमित गुरुत्वानुवर्ती (geotropic) अनुक्रिया दर्शाती हैं। इसलिए यह माना जाता है कि मूलगोप जड़ की गुरुत्वानुवर्ती वृद्धि को नियंत्रित करती है।

मूलगोप की कोशिकाएं कुछ ठोस कोशिका अंतवस्तुओं (cell inclusions) की घनी होती हैं जिन्हें **संतुलनाश्म (statoliths)** कहते हैं (चित्र 8.7 देखिए), ये मुख्यत: मंडलवक (amyloplast) आच्छद में लिपटे हुए मंडकण होते हैं। इस प्रकार की कोशिकाएं **संतुलनाणु (statocytes)** या **संतुलनपुटी (statocysts)** कहलाती हैं। ऐसा समझा जाता है कि संतुलनाश्म संतुलनाणु की जीवद्रव्य कला (plasmalemma) को गुरुत्वाकर्षी उद्दीपन (stimuli) प्रेषित करते हैं।

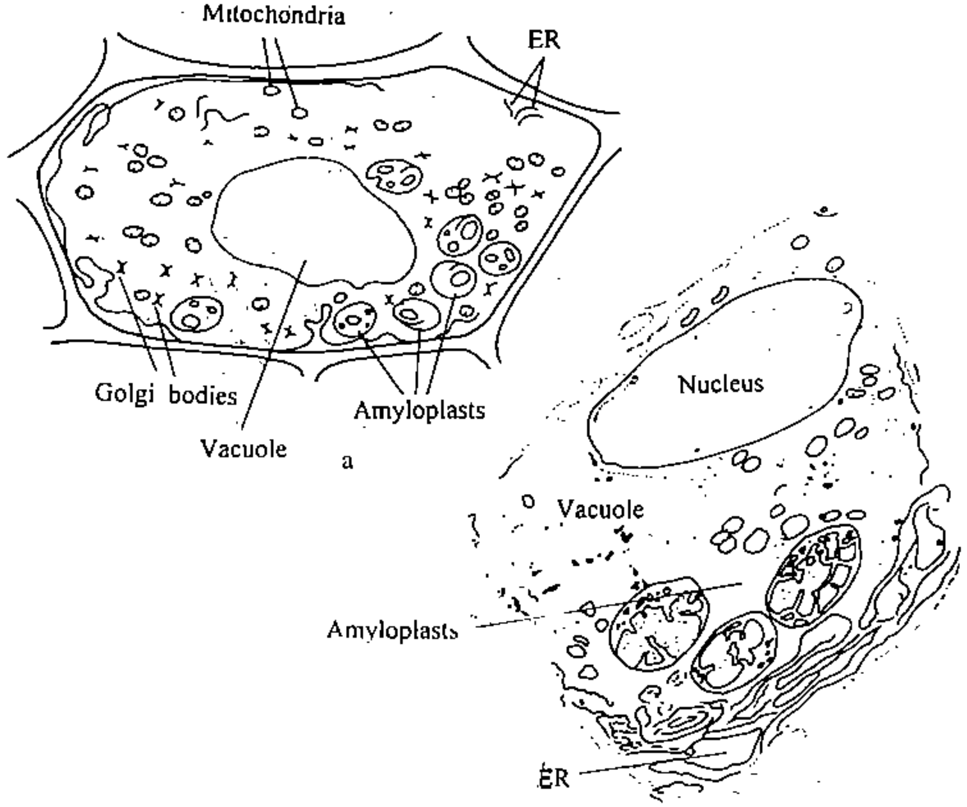

चित्र 8.7 : मूलशीर्षों के संतुलनाणुओं के चित्र, गुरुत्वाकर्षी उद्दीपन के कारण मंडलवक संतुलनाश्मों का कोशिका के निचले हिस्से में अवसादन दिखाते हुए। a) *विसिया फाबा (Vicia faba)*, मंडलवक कोशिका के निचले हिस्से में अवसादित तथा एफ.आर. (FR) ऊपरी हिस्से में विस्थापित (ग्रिफिथ्स तथा ओंडस, 1964 से लिया गया) b) *लैपीडियम सैटाइवम (Lepidium sativum)* मंडलवक स्थिर एफ.आर. कॉम्प्लैक्स के शीर्ष पर स्थित (चित्र इलैक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ पर आधारित है। सीवर्स और वॉकमैन, 1972)।

मूलगोप कोशिकाओं का जीवन काल बहुत छोटा होता है। सबसे बाहर की कोशिकाएं मरकर अलग होकर विघटित हो जाती हैं तथा लगातार नई कोशिकाओं द्वारा विस्थापित होती रहती हैं। नई कोशिकाएं मूल शीर्ष आरंभकों के द्वारा उत्पन्न होती हैं। मक्का (*ज़िया मेज़*) की जड़ों को पानी में 23° से० पर रखा गया तो 3000-7000 कोशिकाएं 24 घंटे में उत्पन्न और विमोचित/निर्मोचित (sloughed off) हुईं।

मूलगोप हालांकि अधिकांश जड़ों की विशेषता होता है पर यह कुछ परजीवी तथा कवकमूली **(mycorrhizal)** जड़ों में अनुपस्थित होता है। जलीय पादपों में मूलगोप कोशिकाएं जल्दी ही नष्ट हो जाती हैं।

कोशिका विभाजन के क्षेत्र (Region of Cell Division)

मूलशीर्ष के विभिन्न क्षेत्रों में कोशिकाएं भिन्न-भिन्न दरों से विभाजित होती हैं। बहुत सी जड़ों में सर्वाधिक समसूत्री विभाजन प्रोमेरिस्टेम के पीछे कुछ दूरी पर पाया जाता है। जड़ों में समसूत्री विभाजन में दैनिक आवर्तिता (diurnal periodicity) भी पाई जा सकती है। *मेलीलोटस* (*Melilotus*) में, समसूत्री विभाजन दोपहर तथा मध्यरात्रि में सबसे अधिक तेजी से होते हैं।

चूंकि मूल शीर्ष में सबसे सघन तथा सर्वाधिक कोशिका विभाजन की क्रिया दिखाई देती है अत: हमारी पादपों में समसूत्री विभाजन की जानकारी मूलशीर्ष के अध्ययनों पर आधारित है।

दीर्घीकरण का क्षेत्र (Region of Elongation)

कोशिका के प्रोमेरिस्टेम के समीपवर्ती तथा कोशिका विभाजन के क्षेत्र की अभिक्रिया के फलस्वरूप जड़ का दीर्घीकरण होता है। इस क्षेत्र की कोशिकाएं स्पष्ट धानीभवन (vacuolation) तथा घटी हुई समसूत्री विभाजन की क्रिया दिखाती हैं। यह क्षेत्र भूमि से जल तथा खनिजों के अवशोषण में सक्रिय रहता है तथा इसलिए यह अवशोषण का क्षेत्र भी कहलाता है।

परिपक्वता का क्षेत्र (Region of Maturation)

यह क्षेत्र दीर्घीकरण के क्षेत्र से समीपवर्ती होता है तथा इसकी कोशिकाएं अपनी विभाजन की क्षमता खो देती हैं। विभिन्न प्रकार के ऊतक जो जड़ में पाये जा सकते हैं। वे इस क्षेत्र तथा इस क्षेत्र के आगे होते हैं।

बोध प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान(ों) को उचित शब्द(ों) से भरिए।

क) पादप की पहली जड़ जो भ्रूण के मूलवत् भाग से विकसित होती है वह .... कहलाती है।

ख) वह जड़ जो भ्रूण के मूलांकुर के अतिरिक्त अन्य किसी भी स्थान से उत्पन्न होती है वह .... कहलाती है।

ग) मूल शीर्ष संगठन का शीर्ष कोशिका सिद्धान्त .... के द्वारा प्रतिपादित किया गया था।

घ) हिस्टोजन परत जो संवहनी ऊतक के आरंभिक केन्द्र के रूप में मानी जाती है वह .... कहलाती है।

ङ) मूलशीर्ष का वह भाग जो जड़ के सभी ऊतकों को जन्म देने में समर्थ होता है वह .... कहलाता है।

च) एफ.ए.एल.क्लॉउज़ ने मूल शीर्ष संगठन में .... की धारणा को प्रतिपादित किया था।

प्राथमिक संरचना :

जड़ में तीन प्राथमिक ऊतक अनुक्षेत्रों को पहचाना जा सकता है। ये हैं : **बाह्यत्वचा, भरण ऊतक (ground tissue)** तथा **संवहनी ऊतक** (चित्र 8.8 देखिए)

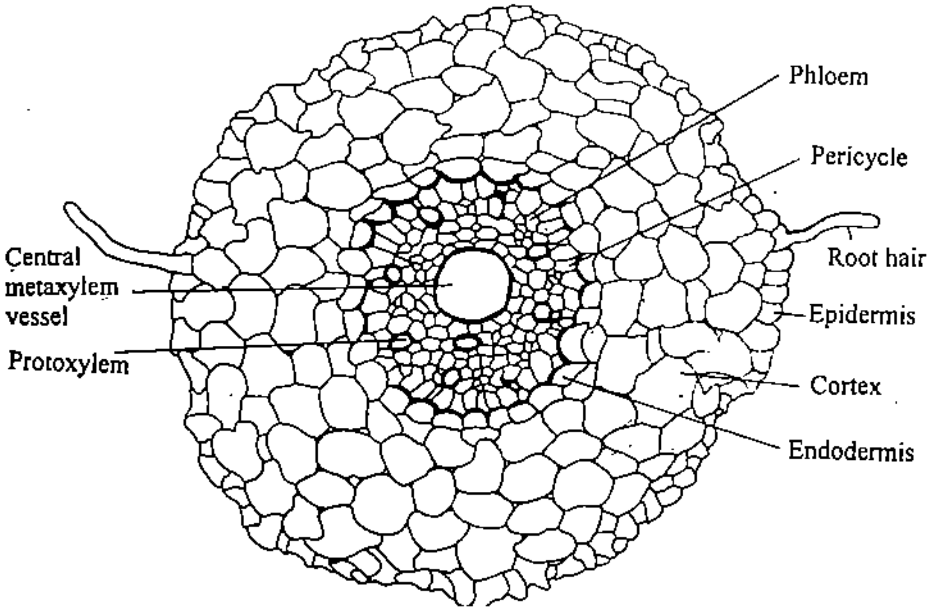

चित्र 8.8 : ट्रिटीकम (*Triticum*) के नवोद्भिद पौधे की जड़ की अनुप्रस्थ काट। (एवरी से लिया गया, 1930)।

बाह्यत्वचा : बाह्यत्वचा प्राथमिक जड़ की सबसे बाहरी परत होती है। अल्पजीवी जड़ों में इसकी कोशिकाएं सामान्यत: पतली-भित्ति वाली होती हैं। वे मोटी भित्ति की अथवा लिग्निन युक्त भी हो जाती हैं यदि बाह्यत्वचा ज्यादा समय तक बनी रहती है या जब जड़ें वायु के संपर्क में आ जाती हैं। बाह्यत्वचा सामान्यत: एकल-परत की होती है परन्तु कुछ वायवीय जड़ों में (जैसे आर्किडिसी तथा कुछ अधिपादपों में) यह बहुपरतीय भी हो सकती है तथा आर्द्रता ग्राही गुठिका/**वैलामेन (Velamen)** कहलाती है (चित्र 8.9 देखिए)।

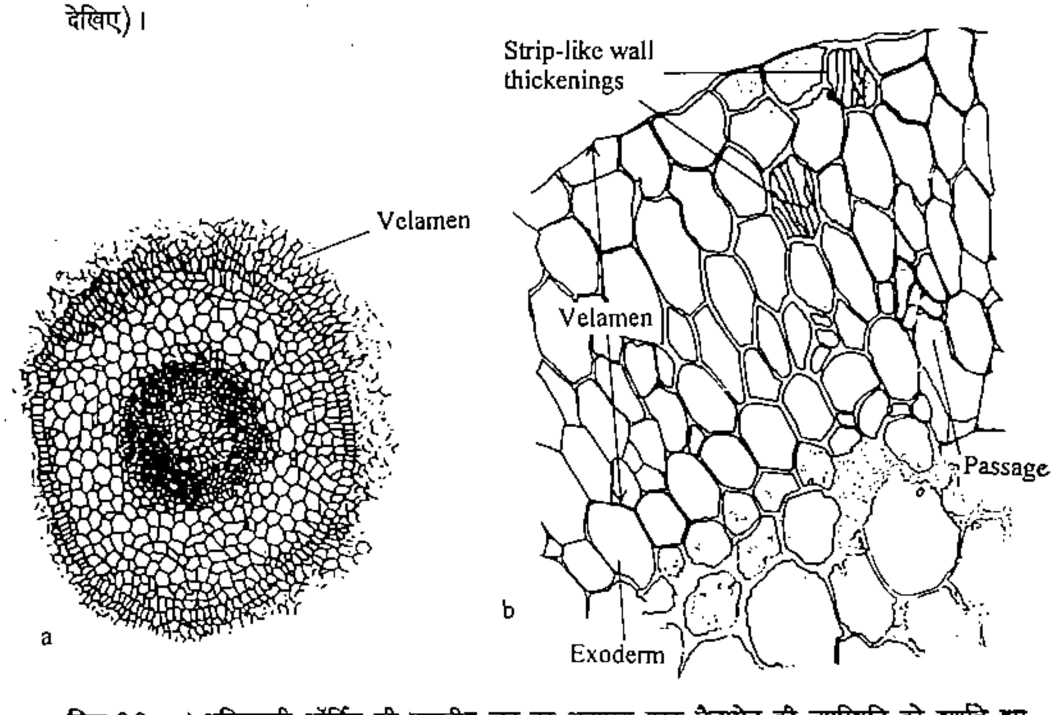

चित्र 8.9 : a) अधिपादपी ऑर्किड की वायवीय जड़ का अनुप्रस्थ काट वैलामेन की उपस्थिति को दर्शाते हुए b) वैलामेन का एक दीर्घीकृत भाग।

मूल रोम (Root hair) : जड़ की बाह्यत्वचा एककोशिकीय बर्हिवृद्धि, मूल रोम के विकास से पहचानी जाती है। वे कभी भी शीर्ष आरंभकों के निकट नहीं पाए जाते हैं। मूल रोम युक्त बाह्यत्वचा का क्षेत्र शीर्ष आरंभकों से कुछ दूरी पर ही होता है। मूल रोम आरंभक छोटा होता है तथा जब यह बाहर की ओर उभरना आरंभ करता है (चित्र 8.13) उसका केन्द्रक तथा लगभग सारा कोशिकाद्रव्य उसमें स्थानांतरित हो जाता है। मूल रोम शीर्ष पर भित्ति के तत्वों के जमा होने से बढ़ता है पर जड़ के निकट का क्षेत्र दीर्घित नहीं होता है। इसमें एक विशाल केन्द्रीय धानी होती है तथा अधिकांश कोशिकाद्रव्य भित्ति के बिल्कुल पास

एक बहुत ही पतली परत बनाता है। यदि रोम किसी छोटे मिट्टी के अणु में से गुजरता है, तो यह उसके चारों ओर दो दिशाओं में बढ़ कर द्विशाखी (bifid) बन सकता है। कुछ मरूस्थली पादप भूमि के नम होने की अपेक्षा उसके शुष्क होने पर अधिक रोम उत्पन्न करते हैं।

जड़ों के वृद्ध भागों में कभी भी मूल रोम नहीं उत्पन्न होते हैं। मूल रोमों का कार्य पदार्थों को सीधे अवशोषित करना नहीं हैं बल्कि हमेशा उपस्थित बाह्यत्वचीय कोशिकाओं के द्वारा अवशोषण को संभव बनाना है, यानि कि मूल रोमों की उपस्थिति जड़ के ठीक समीपवर्ती क्षेत्र मूल परिवेशी (rhizosphere) के वातावरण को बदल देती है।

जड़ के अपेक्षाकृत पुराने भागों में रोम मर कर झड़ जाते हैं। जलीय पादपों की जड़ों की बाह्यत्वचा में सामान्यतः मूल रोम नहीं पाए जाते हैं। मूल रोम अल्पजीवी होते हैं, सिर्फ उन जड़ों को छोड़कर जिनमें द्वितीय स्थूलन (secondary thickning) नहीं पायी जाती अथवा उन जड़ों के जिनमें परिचर्म (periderm) नहीं विकसित होता है।

डिटर (1937) ने एक वयस्क राई पादप पर नम भूमि अथवा आर्द्र वायु में 10,000,000,000 मूल रोमों का आकलन किया था।

जड़ की बाह्यत्वचा की सभी कोशिकाएं रोमों में नहीं विकसित होती हैं। यह हमेशा संभव नहीं होता है कि मूल रोमों में विकसित होने वाले आरंभकों को उनसे अलग/विभेदित किया जा सके जो मूल रोमों में विकसित नहीं होते हैं। हालांकि, *फ्लीअम (Phleum)*, *हाइड्रोकैरिस (Hydrocharis)* तथा *रैफैनस (Raphanus)* में मूल रोम आरंभकों को पहचानना बहुत आसान होता है। ये कोशिकाएं **रोमकोरक (trichoblast)** कहलाती हैं।

भरण ऊतक (Ground Tissue) : जड़ का वह भाग जो बाह्यत्वचा के अंदर तथा संवहनी ऊतक के बाहर का होता है वह वल्कुट बनाता है जो बहुपरतीय होता है। द्विबीजपत्री पादपों तथा अनावृतबीजी पादपों में वल्कुट मुख्यतः मृदूतकी होता है। बहुत से एकबीजपत्री पादपों में जहाँ जड़े दीर्घजीवी होती हैं उनमें दृढ़ोतक (sclerenchyma) विकसित हो जाता है। ये दृढ़ोतक परिधिय क्षेत्र में रहता है।

जड़ों में सामान्यतः वल्कुट तने की तुलना में अधिक चौड़ा होता है तथा यह संग्रह में प्रमुख भूमिका निभाता है। उत्कृष्ट वियुक्तिजात (schizogenous) अन्तर कोशिकीय स्थान जड़ों की वल्कुटी कोशिकाओं में सामान्य तौर पर पाए जाते हैं। घास कुल में अतिरिक्त लयजात (lysigenous) स्थान भी बन जाते हैं। बड़े वायु नालें (air canals) ऐरिकेसी (पामी) (Araceae (Palmae)) के जड़ वल्कुट में काफी मात्रा में पाये जाते हैं।

वल्कुट की कोशिकाएं सामान्यतः अपर्णहरिती (achlorophyllous) होती हैं, हालांकि, जलीय पादपों तथा बहुत से अधिपादपों की जड़ों में हरितलवक (chloroplast) का होना रिपोर्ट किया गया है।

कुछ पादपों जैसे *फिनिक्स (Phoenix)*, *स्माइलैक्स (Smilax)*, *आइरिस (Iris)* तथा *सिट्रस (Citrus)* में वल्कुट की सबसे बाहरी कोशिका(ओं) की परत बाह्यत्वचा के ठीक नीचे वाली परत विशिष्ट हो जाती है और **बाह्यमूलत्वचा (exodermis)** कहलाती है। इसकी कोशिकाएं सुबेरिनमय (suberized) हो जाती हैं तथा सुरक्षा का कार्य करती हैं।

अंतःत्वचा (Endodermis) : अंतःत्वचा वल्कुट की सबसे भीतरी सतह होती है, जो संवहनी बेलन को बाकी के वल्कुट से अलग करता है। अंतःत्वचा की अरीय (radial) तथा आड़ी (cross) कोशिकाभित्तियों में विशिष्ट स्थूलन विकसित कर लेती हैं। ये स्थूलन प्राथमिक कोशिका भित्ति का अभिन्न भाग होती हैं तथा मध्य पटलिका (middle lamella) सुबेरिन और लिग्निन से भरी रहती हैं। स्थूलन की यह पतली/बैन्ड **कैस्पेरियन पट्टी (casparian strips)** कहलाती हैं। इलैक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से देखने पर ये पट्टियां थोड़ी सी स्थूल, समांगी (homogenous) इलैक्ट्रॉन अपारदर्शी भित्ति क्षेत्र जैसी दिखाई पड़ती हैं। अन्य सभी जीवित कोशिकाओं की भांति ही जीवद्रव्यतंतु (plasmodesmata) अंतःत्वचीय कोशिकाभित्तियों में उस भाग को छोड़ कर जहाँ कैस्पेरी पट्टियां पाई जाती है अन्य सभी भागों में उपस्थित रहते हैं। इस

संधि/जंक्शन पर, पट्टियां कोशिका झिल्ली से चिपक जाती हैं। अंत:त्वचा की कुछ कोशिकाएं, खासतौर पर वे जो जड़ की अनुप्रस्थ काट में प्रोटोजाइलम/आद्यदारू के विपरीत स्थित दिखाई पड़ती हैं उनमें कैस्पेरियन पट्टियां नहीं विकसित होती हैं। ये कोशिकाएं पथ कोशिकाएं (passage cells) कहलाती हैं। वे वल्कुट तथा संवहनी ऊतक के मध्य पदार्थों का आवागमन संभव करती हैं।

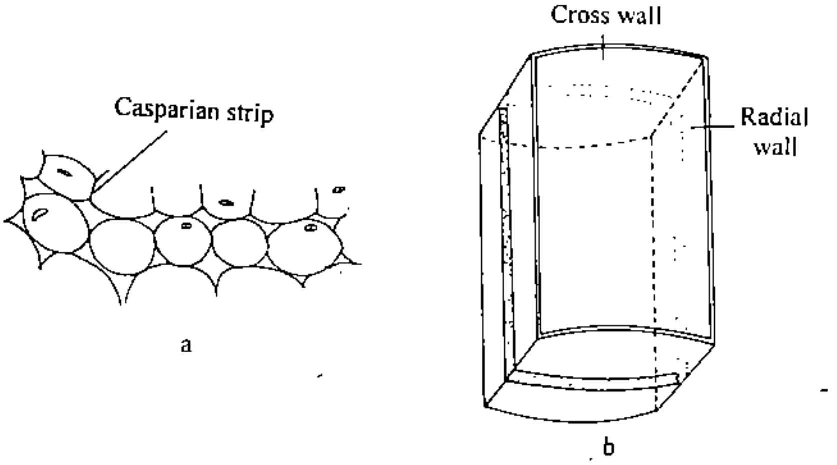

चित्र 8.10 : अंत:त्वचा में कैस्पेरियन पट्टिया a) जड़ के एक भाग की अनुप्रस्थ काट अंत:त्वचा के एक भाग तथा मृदूतकी कोशिकाओं की कतार को दर्शाते हुए b) एकल अंत:त्वचीय कोशिका का कैस्पेरी पट्टी युक्त त्रिविम आरेख। (इसाऊ से लिया गया, 1953)।

संवहनी ऊतक **(Vascular Tissue) :** जड़ में संवहनी ऊतक का विकास विविध तथा दिलचस्प है। प्रोकैम्बियम के विभेदन की दिशा बड़े परिपक्व भाग से शीर्ष की ओर यानि कि अग्राभिसारी (acropetal) होती है। संवहनी ऊतक की सभी कोशिकाएं केन्द्रीय प्रोकैम्बियम रज्जुक (strand) से निकलती हैं। प्रोकैम्बियम सघन रूप से रंजित होने वाली विभज्योतकी कोशिकाओं का बना होता है जो अंग के लंब अक्ष के समानान्तर तल में स्थित होती हैं।

जाइलम/दारू तथा फ्लोएम/पोषवाह के सबसे पहले परिपक्व होने वाले तत्व प्रोकेम्बियम की परिधि की ओर होते हैं। ये क्रमश: प्रोटोजाइलम/प्राक्दारू तथा प्राक्पोषवाह/प्रोटोफ्लोएम कहलाते हैं। जाइलम और फ्लोएम का विभेदन तथा परिपक्वता प्रोकैम्बियम के केन्द्र की ओर होती है। जाइलम और फ्लोएम के बाद में विकसित होने वाले तत्व अनुदारू/मेटाजाइलम तथा अनुपोषवाह/मेटाफ्लोएम कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त, जाइलम तथा फ्लोएम साथ-साथ विकसित होना शुरू कर सकते हैं परन्तु ये एकान्तर रूप से प्रोकैम्बियम की परिधि के बाहर विकसित होते हैं। वयस्क प्राथमिक जड़ में, जाइलम और फ्लोएम दो, तीन, चार, पाँच अथवा अनेकों बिंदुओ पर उत्पन्न हो सकते हैं। इस प्रकार की जड़ें क्रमश: द्विआदिदारुक **(diarch)**, त्रिआदिदारुक **(triarch)**, चतुष्कआदिदारुक **(tetrarch)**, पंचादिदारुक **(pentarch)** या बहुआदिदारुक **(polyarch)** कहलाती हैं (चित्र 8.11 देखिए)।

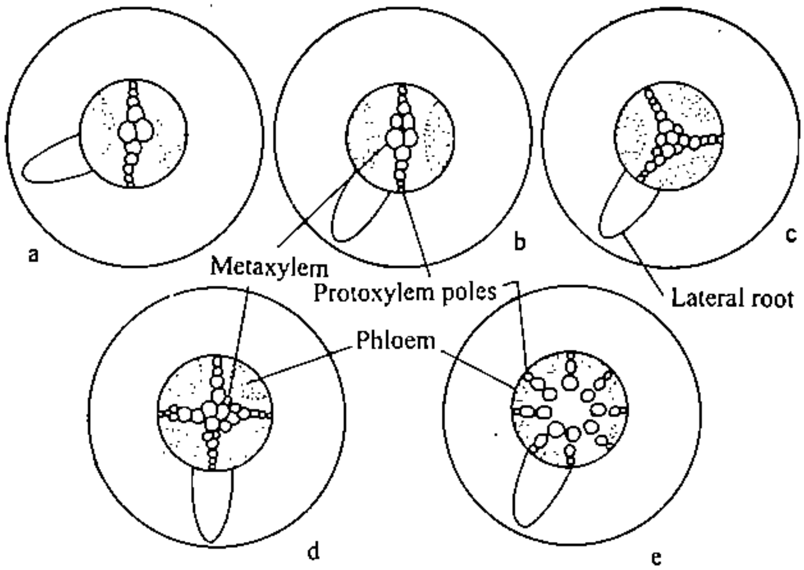

चित्र 8.11 : जड़ों में संवहनी ऊतकों की अरीय व्यवस्था जैसी कि अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ती हैं। a-d द्विआदिदारुक, त्रिआदिदारुक, चतुष्कआदिदारुक तथा बहु-आदिदारुक जड़ें। जड़ के उस विशिष्ट स्थान

प्रोकैम्बियम का केन्द्रीय भाग जो जाइलम और फ्लोएम के रूप में विभेदित नहीं होता है वह मृदूतकी **मज्जा (pith)** में विकसित हो जाता है। मज्जा बहुत ही अस्पष्ट हो सकती है जैसे कि द्विआदिदारुक जड़ों में अथवा बहुत बड़ी हो सकती है जैसे कि अधिकांश एकबीजपत्री पादपों में बहुआदिदारुक जड़ों में होता है। प्रोकैम्बियम की कोशिकाएं जो प्रोटोजाइलम तथा प्रोटोफ्लोएम के बाहर की तरफ परन्तु अंत:त्वचा के अंदर की तरफ होती हैं वे एक से कुछ परतों वाले परिरंभ (pericycle) में विभेदित हो जाती हैं। परिरंभ बहुत ही दिलचस्प ऊतक है। यह मृदूतकी है तथा इसमें इतनी सामर्थ्य होती है कि यह एक बार फिर विभाजित होने की क्षमता रखता है। यह अपने आपको संवहनी कैम्बियम, कॉर्क कैम्बियम तथा पार्श्व जड़ों के निर्माण में संबद्ध कर लेता है। परिरंभ की कोशिकाएं सामान्यत: द्विगुणित होती हैं तथा कभी-कभी ये **परिकैम्बियम (pericambium)** कहलाती हैं।

पार्श्व जड़ों की उत्पत्ति (Origin of Lateral Roots)

पार्श्व जड़ों के आद्यक **(primordia)** सामान्यत: परिरंभ में बनते हैं। इन आद्यकों के निर्माण में अंत:त्वचा भी भाग ले सकती है जैसे कि फर्न (fern) तथा अन्य टेरिडोफाइट पादपों में होता है। पार्श्व जड़ों की उत्पत्ति अंतर्जात **(endogenous)** यानि कि अधिक गहरे ऊतकों से होती है।

परिरंभ की कोशिकाएं आरंभ में परिनतिक (periclinally) रूप से विभाजित होती हैं (यानि कि नई कोशिकाभित्तियां जड़ की सतह के समानान्तर बनती हैं) बाद के कोशिका विभाजन परिनतिक तथा अपनतिक (anticlinal) दोनों प्रकार के होते हैं। साथ ही साथ, अंत:त्वचा की कोशिकाएं भी उभरते हुए पार्श्व जड़ आद्यकों के साथ गति बनाए रखने के लिए विभाजित होती रहती हैं। इस प्रकार उत्पन्न हुई कोशिकाओं का समूह विकसित होकर एक नया जड़ शीर्ष विभज्योतकी अनुक्षेत्र गठित करता है। यह अनुक्षेत्र मातृ जड़ के शीर्ष विभज्योतक/जड़ शीर्ष के समान होता है। इस प्रकार बनी हुई नई जड़ मातृ जड़ की अंत:त्वचा, वल्कुट तथा बाह्यत्वचा से पार्श्व दिशा में निकलती हुई अंतत: बाहर निकल आती है। इस प्रकार निकलने के दौरान, पार्श्व जड़ वल्कुटी कोशिकाओं को विस्थापित अथवा नष्ट कर देती हैं। वह स्थान जहाँ से भावी पार्श्व जड़ निकलना आरंभ करती है वह मातृ जड़ के जाइलम तथा फ्लोएम की तुलना में काफी अलग होता है। द्विआदिदारुक जड़ों में, वे सामान्यत: जाइलम और फ्लोएम के बीच में तथा त्रिआदिदारुक और चतुष्कआदिदारुक जड़ों में वे प्रोटोजाइलम के विपरीत दिशा में विकसित होती हैं तथा बहुआदिदारुक जड़ों में वे प्रोटोफ्लोएम के विपरीत स्थित कोशिकाओं से उत्पन्न होती हैं (चित्र 8.11 देखिए)। जलीय पादपों में, पार्श्व जड़ें मूलशीर्ष के निकट निकलती हैं। पार्श्व जड़ों के विकास के लिए एक आवश्यक कारक संभवत: ऑक्सिन (auxin) है। यह विशेषतौर पर परिरंभ के कुछ क्षेत्रों में कोशिका विभाजन को उद्दीपित करता है।

द्वितीयक संरचना (Secondary Structure)

सामान्यत: अनावृतबीजी पादपों तथा काष्ठीय द्विबीजपत्री पादपों की मूसला जड़ें और मुख्य पार्श्व जड़ें तथा कभी-कभी सबसे छोटी जड़ों की शाखाएं द्वितीय स्थूलन विकसित कर लेती हैं। शाकीय (herbaceous) द्विबीजपत्री पादपों में, हालांकि, द्वितीय वृद्धि अनुपस्थित अथवा बहुत ही कम हो सकती है जैसे *रैननकुलस (Ranunculus)* में, अथवा सुविकसित हो सकती है जैसे *पाइसम (Pisum)* तथा *साइसर (Cicer)* में। एकबीजपत्री जड़ों में द्वितीय संरचना नहीं पाई जाती है।

वह प्रक्रिया जिसके फलस्वरूप द्वितीय संरचना विकसित होती है तथा द्वितीय ऊतकों का निर्माण होता है वह द्वितीयक वृद्धि (secondary growth) कहलाती है। जड़ों में द्वितीयक वृद्धि की शुरुआत तनों में पाई जाने वाली द्वितीय वृद्धि से काफी भिन्न होती है, जिसके बारे में आप पहले ही एल.एस.ई-6 इकाई 10 में पढ़ चुके हैं।

अब हम उन घटनाओं पर नजर डालें जो प्रारूपी द्विबीजपत्री जड़ में द्वितीयक वृद्धि की शुरुआत करती हैं। जैसा कि इस अध्याय में पहले ही कहा गया है, प्राथमिक जड़ में कोई संवहनी कैम्बियम नहीं पाया जाता है। हालांकि, कुछ प्रोकैम्बियमी कोशिकाएं जो अनुफ्लोएम (metaphloem) के नीचे होती हैं (जैसी कि अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ती हैं) अथवा अनुफ्लोएम के समानान्तर या अंदर की ओर होती हैं (जैसी कि अनुदैर्घ्य काट में दिखाई पड़ती हैं) वे अविभेदित रहती हैं। द्वितीयक वृद्धि का आरंभ इन्हीं कोशिकाओं से होता है जो **संवहनी कैम्बियम** में विभेदित हो जाती हैं (चित्र 8.12 a, b देखिए)। इस प्रकार के अलग हुए संवहनी कैम्बियम रज्जुकों की संख्या द्विआदिदारुक, त्रिआदिदारुक या चतुष्कआदिदारुक जड़ों में क्रमश: दो, तीन तथा चार होती है। बहुआदिदारुक जड़ें, जो सिर्फ एकबीजपत्री पादपों की विशेषता होती हैं, उनमें द्वितीयक क्रिया नहीं होती है। एक बार बनने के बाद ये संवहनी कैम्बियम विभज्योतक परिनतिक रूप से विभाजित होकर अपने दोनों तरफ कोशिकाओं को काटती हैं। अत: इस अवस्था में द्वितीयक ऊतक टुकड़ों में निर्मित होते हैं।

अगले चरण में, परिरंभ तत्व जो प्रोटोजाइलम के विपरीत स्थित होते हैं वे संवहनी कैम्बियम में विभेदित हो जाते हैं (चित्र 8.12 c) इस प्रकार के टुकड़ों की संख्या (परिरंभी उत्पत्ति के संवहनी कैम्बियम की) प्रोटोजाइलम बिंदुओं की संख्या के बराबर होती है। उसके बाद बहुत जल्द ही, मेटाफ्लोएम के नीचे तथा प्रोटोफ्लोएम के ऊपर बना संवहनी कैम्बियम कुछ बिंदुओं पर मिल कर एक तरंगित (undulating) कैम्बियम वलय बनाता है (चित्र 8.12 d, e)। बाद में, यह वलय फिर एक गोले का आकार ले लेती है (चित्र 8.12 f देखिए)।

संवहनी कैम्बियम द्वारा बाहर की ओर को काटा गया ऊतक द्वितीय फ्लोएम तथा भीतर की ओर को काटा गया द्वितीय जाइलम कहलाता है। इन द्वितीय ऊतकों का संगठन, विकास तथा संरचना तने में देखी गई द्वितीय वृद्धि के समान ही होती है जिसके बारे में आप काफी विस्तार से एल.एस.ई-6.की इकाई 10 में पढ़ चुके हैं। दिलचस्प तौर पर, जड़ों में द्वितीयक वृद्धि के बाद भी, प्राथमिक जाइलम तत्व लुप्त नहीं होते हैं (चित्र 8.13)।

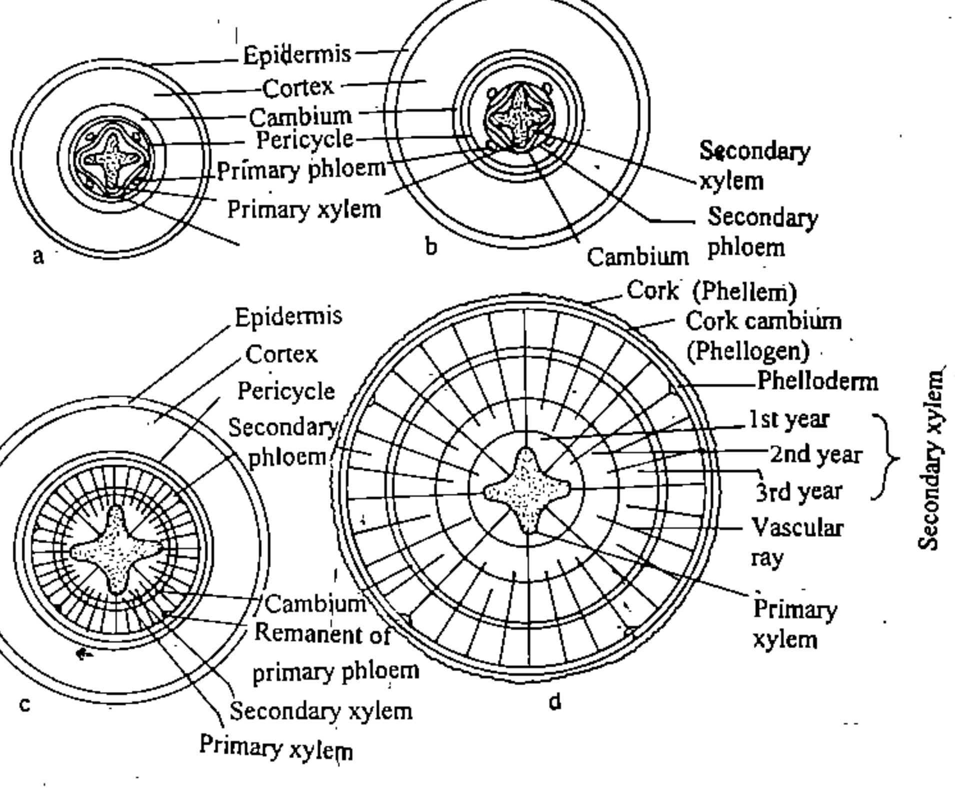

चित्र 8.12 : एक प्रारूपिक द्विबीजपत्री जड़ में द्वितीयक वृद्धि का आरेखी प्रदर्शन। a) प्राथमिक जड़, b) द्वितीयक क्रिया की शुरुआत c और d) पुरानी जड़ें द्वितीयक ऊतक के विकास को दिखाते हुए।

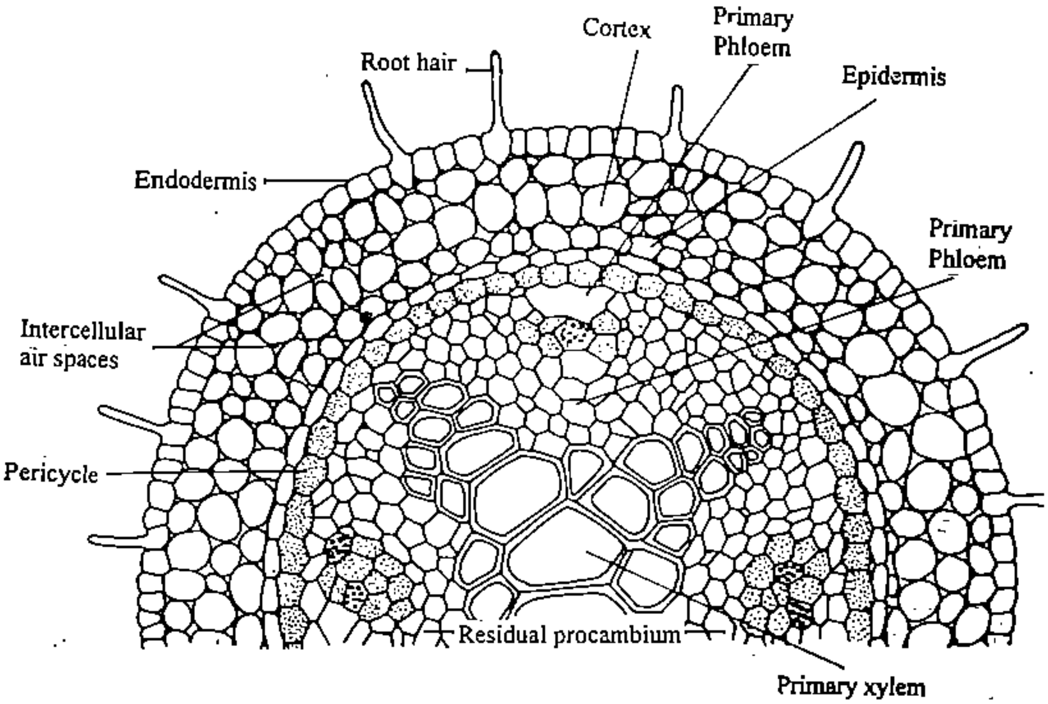

चित्र 8.13 : प्राथमिक ऊतकों को दिखाता हुआ जड़ का अनुप्रस्थ काट।

परिचर्म (Periderm) : शाकीय द्विबीजपत्री पादपों में जिनमें द्वितीय वृद्धि बहुत ही कम या अल्प होती है, उनमें रंभ (stele) के बाहर की ओर के ऊतक अक्षुण्ण (intact) बने रहते हैं तथा बाह्यत्वचा के नीचे एक बाह्यमूलत्वचा विकसित हो सकती है जो उसे मजबूती प्रदान करती है।

हालांकि, काष्ठीय द्विबीजपत्री पादपों में संवहनी कैम्बियम की लंबे समय तक चलने वाली गतिविधि के कारण बहुत अधिक मात्रा में द्वितीय ऊतक खासतौर पर द्वितीय जाइलम निर्मित हो जाता है। ऊतकों के इस तरह जमा होने से जड़ की चौड़ाई बढ़ जाती है। ये बढ़ा हुआ आकार बाहरी प्राथमिक ऊतकों जैसे वल्कुट तथा बाह्यत्वचा पर दबाव डालता है। इन ऊतकों के पपड़ी बन कर उतरने के पहले ही एक अधिक असरदायक सुरक्षात्मक आवरण ऊतक, **परिचर्म** निर्मित हो जाता है। परिचर्म की संरचना और विकास की विस्तृत जानकारी आप पहले ही एल.एस.ई-06, की इकाई 10 खंड II में पढ़ चुके हैं। जड़ों में परिचर्म अधिकांशत: परिरंभ में उत्पन्न होती है। हालांकि, रंभ के बाहर की कोशिकाओं से भी परिचर्म की उत्पत्ति रिपोर्ट की गई है। जड़ परिचर्म, अच्छे वातन (वायु के आदान-प्रदान) के लिए कुछ स्थानों पर **वातरंध्र (lenticels)** भी निर्मित कर सकती है। परिचर्म के बन जाने के बाद इसके बाद के प्राथमिक ऊतक पपड़ी बनकर अलग हो जाते हैं।

आवृतबीजी पादपों के कुछ कुलों की जड़ों में जैसे कि हाइपरीकेसी (Hypericaceae), मिर्टेसी (Myrtaceae), ऑनाग्रेसी (Onagraceae) और रोसेसी (Rosaceae) में, परिचर्म दो प्रकार की कोशिकाएं, सुबेरिन युक्त तथा सुबेरिन-विहीन कोशिकाओं की बनी होती है। एक परत वाली सुबेरिन युक्त कोशिकाएं बहुपरतों वाली सुबेरिन विहीन कोशिकाओं के बीच में रहती हैं। इस प्रकार की परिचर्म **पट्टत्वक् (polyderm)** कहलाती है।

बोध प्रश्न 2

कोष्ठक में दिए गए विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए।

क) ऑर्किड की वायवीय जड़ों में (एकल/बहुपरती) बाह्यत्वचा पाई जाती है।

ख) वे कोशिकाएं जो मूलरोमों में विभेदित होती हैं वे (अधिवक/रोमकोरक) कहलाती हैं।

ग) जड़ में वल्कुट (एकल/बहु) परतीय होता है।

घ) उत्कृष्ट (वियुक्तिजात/लयजात) अंतरकोशिकीय स्थान जड़ की वल्कुटी कोशिकाओं में काफी पाए जाते हैं।

ङ) *फिनिक्स* और *सिट्रस* में बाह्यत्वचा के ठीक नीचे, एक विशेषीकृत, सुबेरिनयुक्त और सुरक्षात्मक परत (अंत:त्वचा/बाह्यमूलत्वचा) कहलाती है।

च) कैस्पेरियन पट्टियां (बाह्यत्वचा/अंत:त्वचा) की विशेषता होती हैं।

छ) जाइलम का प्रथम तत्व जो परिपक्व होता है वह (मेटाजाइलम/प्रोटोजाइलम) कहलाता है।

ज) मज्जा सबसे अधिक स्पष्ट (द्विआदिदारुक/बहुआदिदारुक) जड़ों में होती है।

झ) पार्श्व जड़ों की उत्पत्ति (बहिर्जात/अंत:जात) होती है।

ण) संतुलनाश्म (मूलगोप/फ्लोएम) की कोशिकाओं में उपस्थित रहते हैं।

प्राथमिक तथा द्वितीय संरचनाओं की तुलना :

पिछले सेक्शन में आपने आवृतबीजी पादपों की जड़ संरचना तथा संगठन की रूपरेखा का अध्ययन किया। हालांकि, इस सामान्य सांचे में हम देखते हैं कि एक तरफ तो द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पौधों की जड़ों में तथा दूसरी तरफ प्राथमिक और द्वितीय जड़ों में कुछ गुण विशिष्ट रूप से सिर्फ उनके अपने होते हैं। नीचे दो तालिकाएं दी गई हैं जो उनके तुलनात्मक गुणों को बताती हैं।

तालिका 8.1 : द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री प्राथमिक जड़ की संरचना में की तुलना

द्विबीजपत्री जड़	एकबीजपत्री जड़
बाह्यत्वचा :	
पतली/मोटी भित्ति वाली	अपेक्षाकृत मोटी भित्ति वाली
वल्कुट :	
अधिकांश: मृदूतकी, कभी-कभी बाहरी कोशिकाएं दृढ़ोतकी	परिधिय कोशिकाएं सामान्यत: मोटी भित्ति वाली : अधिकांशत: दृढ़ोतकी
संवहन पूल :	
द्विआदिदारुक से षट्आदिदारुक	अधिकांशत: बहुआदिदारुक
परिरंभ :	
पार्श्व जड़ों, संवहनी कैम्बियम तथा कॉर्क कैम्बियम को जन्म देता है।	सिर्फ पार्श्व जड़ें उत्पन्न करता है।
कैम्बियम :	
बाद में द्वितीय ऊतकों को बनाने के लिए विकसित होता है।	उन पौधों में भी अनुपस्थित होता है जिनके तनों में अस्वाभाविक द्वितीयक वृद्धि होती है
मज्जा :	
छोटी या अनुपस्थित	बड़ी तथा सुविकसित

तालिका 8.2 : प्राथमिक तथा द्वितीय जड़ की संरचना की तुलना

प्राथमिक जड़	द्वितीय जड़
बाह्यत्वचा :	
क्यूटिकल पतली/अनुपस्थित, रोम एककोशिकीय तथा सादा	बाह्यत्वचा पूर्णतः पपड़ी बनकर अलग हो सकती है
वल्कुट :	
सामान्यतः मृदूतकी बहुत अधिक विभेदित नहीं होता है परन्तु प्रभावी अन्तर कोशिकीय स्थानों युक्त होता है, संग्रह का कार्य करता है	पूर्णतः पपड़ी बनकर निकल जाता है
अंतःत्वचा :	
कैस्पेरियन पट्टी तथा पथ कोशिकाओं सहित एक पूर्ण वलय होता है	सामान्यतः दिखाई नहीं पड़ती है
परिरंभ :	
एकल/कुछ परतों वाली, मृदूतकी	संवहनी कैम्बियम में विभेदित, अपनी पहचान खो देता है
संवहनी पूल :	
अरीय रंभ, 2-6 जाइलम/फ्लोएम रज्जुक, प्रोटोजाइलम तथा प्रोटोफ्लोएम बर्हिआदिदारुक (exarch), अभिकेन्द्री विकास।	अरीय व्यवस्था लुप्त, प्राथमिक फ्लोएम विरूपित (obliterated); प्राथमिक जाइलम बहुत अधिक द्वितीय वृद्धि के बाद भी बचा रहता है। द्वितीय ऊतक अभिकेन्द्री तथा अपकेन्द्री दोनों तरह से कटता है।
मज्जा :	
छोटी या अनुपस्थित	अनुपस्थित
संवहनी कैम्बियम :	
अनुपस्थित	टुकड़ों में उत्पन्न होता है; पूर्ण वलय बनाता है; प्रभावी रूप से कार्य करता है।
द्वितीय जाइलम : अनुपस्थित	संवहनी कैम्बियम द्वारा भीतर की ओर अभिकेन्द्री रूप से काटा गया; एक बार बनने के बाद हमेशा रहता है; अक्षीय तथा अर तंत्र होता है; जल तथा खनिजों को ले जाता है, मजबूती प्रदान करता है; बहुत बड़ा होता है।
द्वितीय फ्लोएम :	
अनुपस्थित	संवहनी कैम्बियम द्वारा बाहर की ओर अपकेन्द्री रूप से काटा जाता है; भंगुर, किनारों पर एकत्रित होता है, पुराने

	भाग नष्ट हो जाते है; अक्षीय तथा अर तंत्र पाया जाता है; कार्बनिक मेटाबोलाइट्स का संवहन करता है।
परिचर्म : अनुपस्थित	सुरक्षा का कार्य करता है, संवहनी कैम्बियम की क्रिया के बाद बनता है, बाह्यत्वचा को विस्थापित करता है
वातरंध्र : अनुपस्थित	कागजन (phellogen) के द्वारा बन सकते हैं। वायवीय आदान-प्रदान में सहायक

8.2.3 विशेषीकृत जड़ें

इस इकाई में अब तक आपने प्रारूपी जड़ की संरचना और संगठन के बारे में पढ़ा है जो पौधे के जमने तथा पानी और खनिजों को भूमि से खींचने और पौधे में ऊपर ले जाने का मूल कार्य करती हैं। हालांकि, प्रकृति में, हम उन जड़ों को भी देखते हैं जो विविध प्रकार के कार्य करती हैं। तदनुसार, उनकी संरचना और संगठन रूपांतरित हो जाते हैं। मूल रचना, हालांकि, समान ही रहती है। अब हम कुछ ऐसी ही रूपांतरित जड़ों तथा उनके अनुकूलित लक्षणों पर नजर डालते हैं।

वे जड़े जिनकी हम चर्चा करेंगे वे हैं : खाद्य-संग्रही जड़ें; जल-संग्रही जड़ें; प्रवर्धी **(propagative)** जड़ें; श्वसन-मूल/वातपुटीधर जड़ें (**pneumatophores**); वायवीय जड़ें; संकुचन जड़ें **(contractile roots)**; वप्र/पुश्ता (**buttress**) जड़ें; कवकमूल (**mycorrhiza**); तथा **मूल ग्रंथिकाएं (root nodules)**।

खाद्य संग्रही जड़ें : प्राथमिक जड़ों में भोजन, मुख्यत: मंड के रूप में, मोटे वल्कुट में संग्रहित होता है। द्वितीय वृद्धि के बाद, भोजन सामान्यत: द्वितीय जाइलम तथा द्वितीय फ्लोएम मृदूतक में संग्रहित होने लगता है। सामान्यत: जड़ों में तनों की अपेक्षा अधिक मृदूतक पाया जाता है।

कुछ पौधों जैसे *रेफेनस सेटाइवस* (*Raphanus sativus*) [मूली], *ब्रेसिका रैपा* (*Brassica rapa*) [तौरिया]; *डॉकस कैरोटा* (*Daucus carrota*) [गाजर]; *बीटा वल्गेरिस* (*Beta vulgaris*) [चुकन्दर] तथा *आइपोमिया बटाटास* (*Ipomoea batatas*) [शकरकंदी] की जड़ें मोटे खाद्य संग्रही गूदेदार अंग में विकसित हो जाती हैं। इस प्रकार की जड़ों में बीज पत्राधार (hypocotyl) तथा मूसला जड़ द्वितीय वृद्धि के बाद मोटी हो जाती है। वाहिकीय (tracheary) तत्व अल्प मात्रा में उत्पन्न होते हैं तथा द्वितीय जाइलम अक्षीय मृदूतक ज्यादा मात्रा में उत्पन्न होता है (खाद्य संग्रह के लिए) जिससे अंग गूदेदार हो जाता है (चित्र 8.14 तथा 8.15 देखिए)।

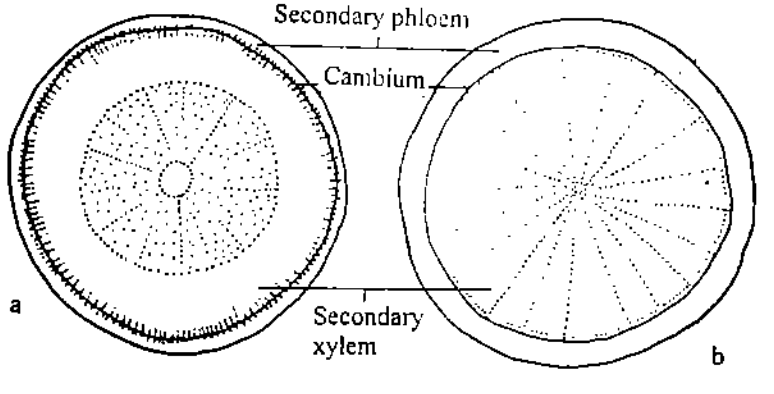

चित्र 8.14 : *ब्रेसिका रैपा* (a) तथा *रेफेनस सेटाइवस* (b) की संग्रही जड़ों की अनुप्रस्थ काट।

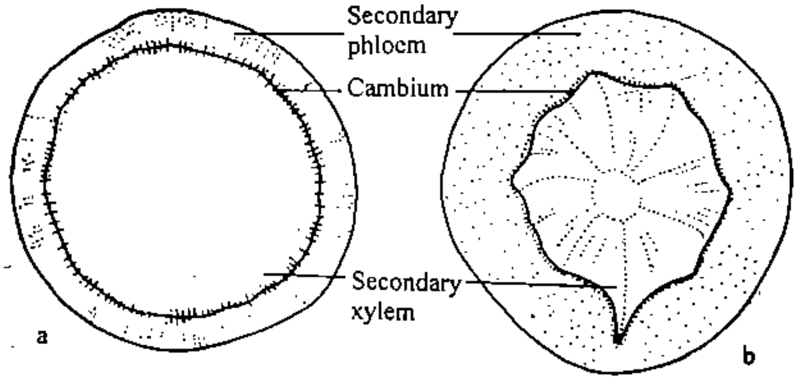

चित्र 8.15 : *आइपोमिया बटाटास* (a) तथा *डॉकस कैरोटा* (b) की संग्रही जड़ों की अनुप्रस्थ काट।

चुकंदर (*बीटा वल्गेरिस*) की जड़ों में बीजपत्राधर तथा जड़ असंगत स्थूलन के फलस्वरूप गूदेदार बन जाते हैं (चित्र 8.16)। संवहनी कैम्बियम जो मूलत: बनता है वह सिर्फ थोड़े समय के लिए कार्य करता है। उसके बाद, असंख्य, उत्तरोत्तर (एक के बाद एक) कैम्बियम नवीनतम बने द्वितीय फ्लोएम के बाहर की ओर बनने आरंभ हो जाते हैं। ये सभी कैम्बियम सामान्य रूप से कार्य करते हैं परन्तु ये किसी अन्य प्रकार की कोशिकाओं की तुलना में अधिक मृदूतक उत्पन्न करते हैं। शक्कर मुख्य संग्रही खाद्य है। आप पहले ही एल.एस.ई-06 पाठ्यक्रम के इकाई 10 में चुकन्दर के बारे में विस्तार से पढ़ चुके हैं।

शकरकंदी (*आइपोमिया बटाटास*) में एक अनियमित आकार की गूदेदार खाद्य संग्रही जड़ बन जाती है। आरंभ में सामान्य द्वितीय वृद्धि होती है। उसके बाद किसी भी वाहिका (vessel) या वाहिका समूह के चारों ओर की कोशिकाएं संवहनी कैम्बियम की वलय बनाती हैं। इस प्रकार का कैम्बियम अधिक से अधिक जाइलम मृदूतक बनाता है। यह प्रक्रिया बहुत बार दोहरायी जाती है, जिसके फलस्वरूप एक अनियमित आकार बन जाता है।

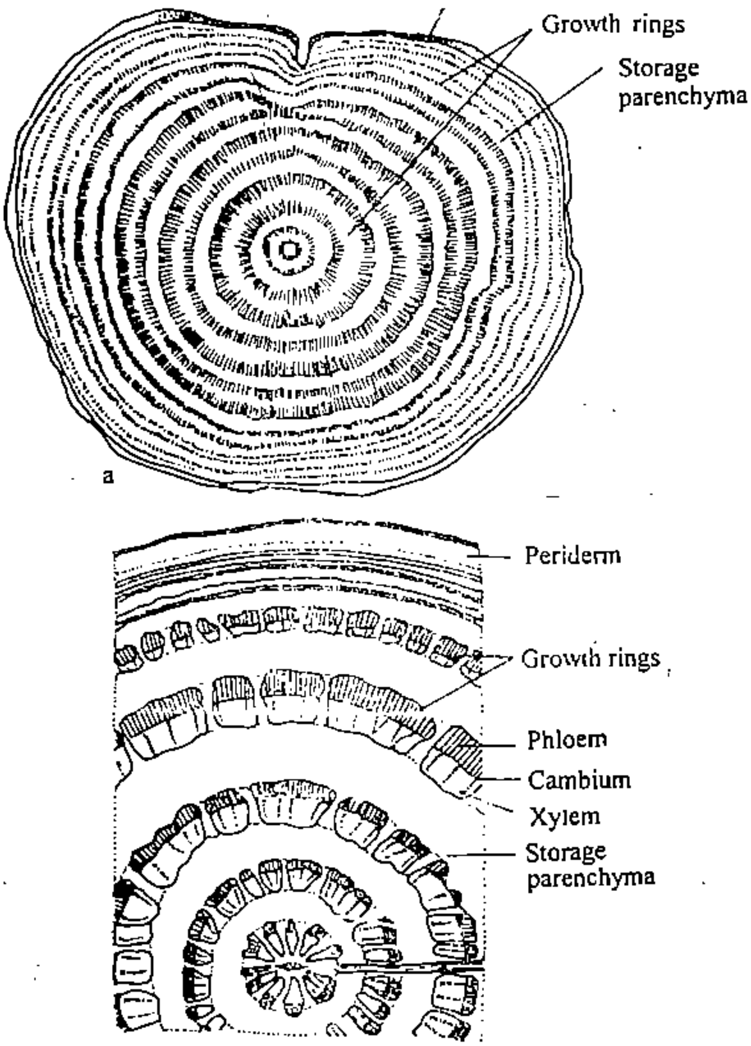

चित्र 8.16 : a) *बीटा वल्गेरिस* की संग्रही जड़ों की अनुप्रस्थ काट वृद्धि वलयों को दर्शाते हुए। b) में a का एक भाग आवर्धित है।

जल संग्रही जड़ें : इस प्रकार की जड़े मरूस्थलीय परिस्थितियों के लिए अनुकूलित होती हैं। रूपांतरण गूदेदार प्रकृति के विकास के रूप में होते हैं। मृदूतकी कोशिकाएं बड़ी हो जाती हैं तथा जल का संग्रह करती है। जल की कमी को अंदर से रोकने के लिए मोटी छाल (bark) निर्मित हो जाती है। वल्कुटी कोशिकाओं का दृढ़ीभवन (sclerification) जड़ को दृढ़ता प्रदान करता है।

वायवीय जड़ें : तने से अथवा ऐसी शाखा से निकलने वाली जड़ें जो हवा में मुक्त रहतीं हों वो **वायवीय** जड़ें कहलाती हैं। वे अधिकांशत: उष्णकटिबंधी (tropical) पादपों के विविध समूह जैसे : *फाइकस* स्पी (*Ficus* spp), अधिपादपी उष्णकटिबंधी एरेसी (Araceae) तथा आर्किडेसी (Orchidaceae) के पादपों से रिपोर्ट की गई हैं। जब से जड़ें भूमि का स्पर्श करती हैं तब ये **अवस्तंभ** (Prop) जड़ों की तरह कार्य करती हैं। यदि ये किसी ठोस आधार से जुड़ जाती हैं, तब ये **आरोही** (climbing) या **आसंजक**

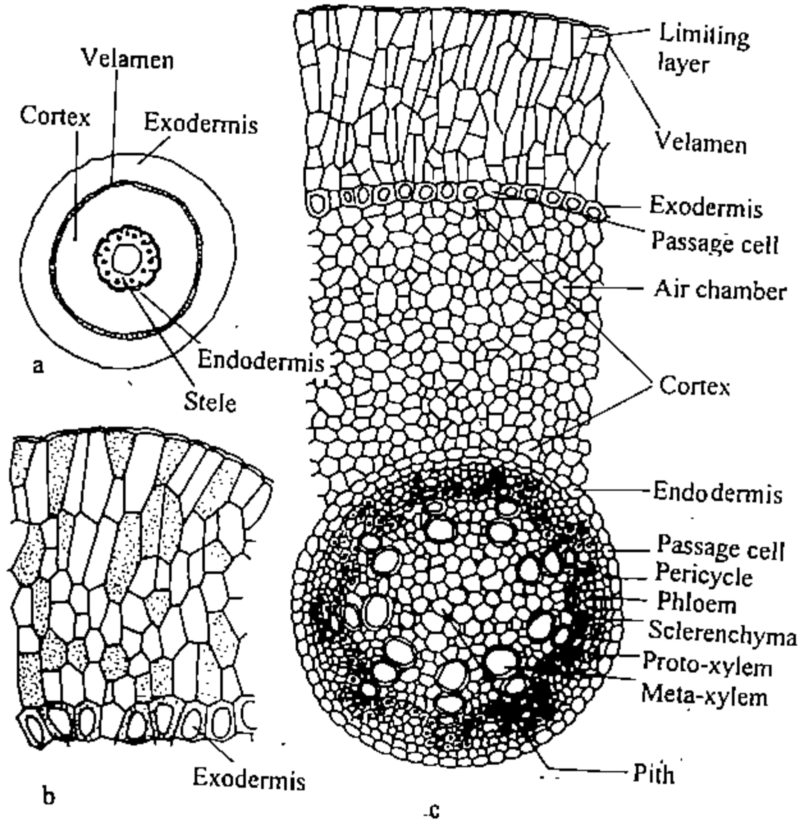

चित्र 8.17 : आर्किड की जड़ a) जड़ की अनुप्रस्थ काट (आरेखी); b) वाह्यमूल त्वचा के साथ वैलामेन (दीर्घीकृत); c) अनुप्रस्थ काट में जड़ का एक भाग।

(adhesive) जड़ें कहलाती हैं। इस प्रकार की जड़ों के अनुकूलित लक्षणों में प्रकाशसंश्लेषी क्षमता भी शामिल है। आर्किडों में जड़ों में बहुपरती बाह्यत्वचा पाई जाती है जो **आर्द्रता ग्राही गुंठिका/वैलामेन** कहलाती है (चित्र 8.17 देखिए)। वो कोशिकाएं जो वैलामेन बनाती हैं वे मृत होती हैं तथा उनमें पट्टी जैसी स्थूल भित्ति होती है और जब वायु शुष्क होती है तब ये वायु से भरी रहती हैं। आर्द्रताग्राही गुंठिका/वैलामेन की सबसे भीतरी कोशिका परत में पथ कोशिकाएं तथा बाह्यमूल त्वचा होती है।

श्वसन मूल : ये वातपुटीधर भी कहलाती हैं (चित्र 8.18 तथा 8.19 देखिए)। ये ऐसे पौधों में पाई जाती हैं जो दलदली जगहों में ऑक्सीजन की कमी में पाये जाते हैं जैसे मैंग्रोव/गरान (mangroves)। सामान्य जड़ों के विपरीत, ये ऊर्ध्वाकर रूप से ऊपर की ओर उगती हैं और इस प्रकार ऋणात्मक रूप से गुरुत्वानुवर्ती गुण को दर्शाती हैं। ये बाहरी वातावरण से विशेष रूप से शीर्ष पर स्थित वातरंध्रों से ऑक्सीजन अवशोषित करती हैं (उदाहरण *एवीसीनिया* [*Avicennia*]। परिधिय कोशिकाएं कॉर्क/काग के रूप में विकसित हो जाती हैं। वल्कुट में सुविकसित अंतर कोशिकीय स्थान दिखाई पड़ते हैं। अनुप्रस्थ काट में आप देख सकते हैं (चित्र 8.18) कि पतला रंभ बहुत ही चौड़े वायूतक (aerenchyma) से घिरा रहता है जो कागजन (phellogen) द्वारा बनता है उदाहरण *राइज़ोफोरा* (*Rhizophora*)।

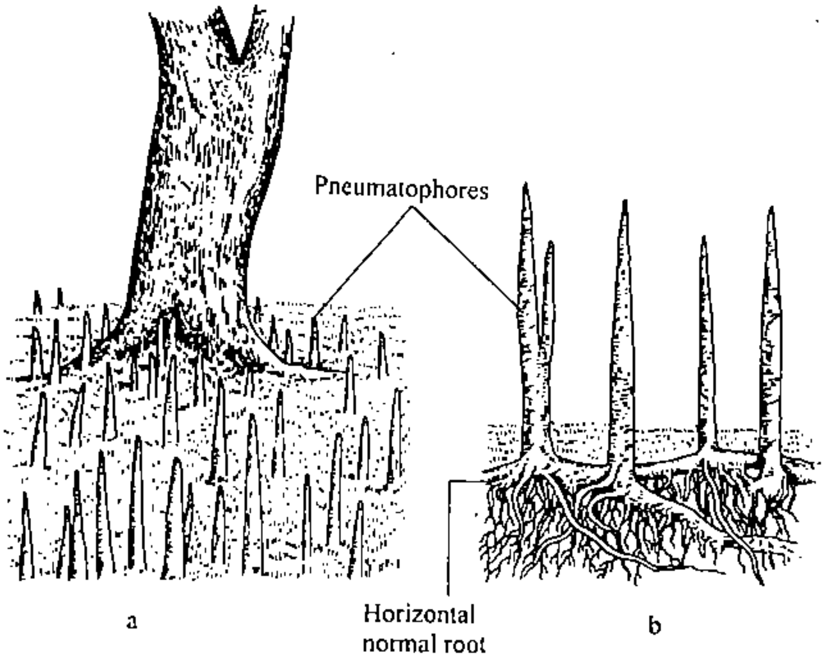

चित्र 8.18 : वात पुटी घर a) मैंग्रोव वृक्ष के आधार पर वातपुटी घर b) वातपुटीघर की उत्पत्ति को दिखाते हुए भूमि का एक भाग।

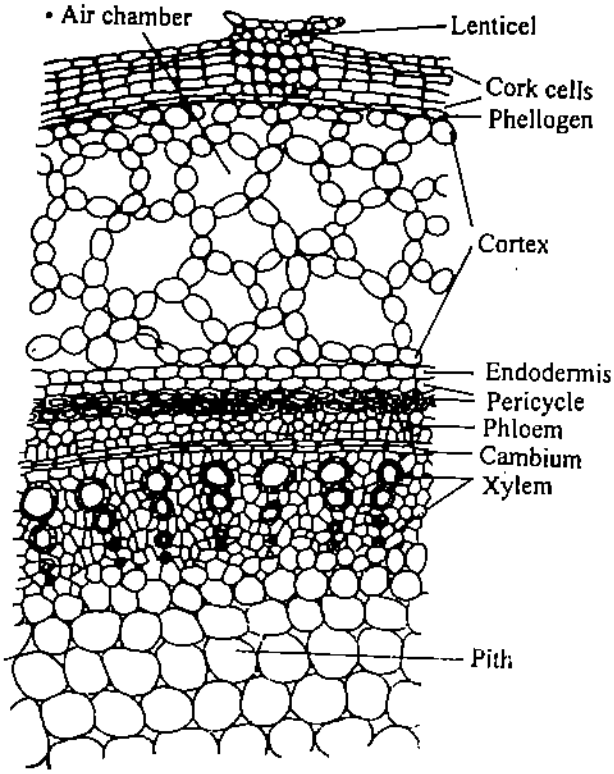

चित्र 8.19 : अनुप्रस्थ काट में श्वसन मूल का एक भाग।

संकुचन जड़ें : जड़ का बल्कुट द्वितीय वृद्धि के बाद शीघ्र ही पपड़ी बन कर उतर जाता है। हालांकि, कुछ शाकीय द्विबीजपत्री पादपों तथा बहुत से एकबीजपत्री पादपों में, वल्कुट की उम्र काफी लंबी होती है तथा इसमें परिपक्व होने पर बहुत से बदलाव आ जाते है। एक ऐसा बदलाव जड़ की सतह में झुर्रियां हो जाना है। इस प्रकार की झुर्रियों वाली जड़ें **संकुचन जड़ें** कहलाती हैं। ऐसी जड़ें *डॉकस, मेडीकागों* (*Medicago*) *ऑक्सेलिस* (*Oxalis*), *ट्रिटीफोलियम* (*Trifolium*), *एलियम* (*Allium*), *ग्लैडिओलस* (*Gladiolus*), *काइनम* (*Crinum*) तथा *नार्सीसस* (*Narcissus*) में पाई जाती हैं।

जड़ों का संकुचन विभिन्न चरणों में भिन्न-भिन्न तरीकों से होता है। ये वल्कुटी मृदूतकी कोशिकाओं के ऊर्ध्वाधर रूप से (लंबाई में) छोटे होने तथा अरीय (चौड़ाई में) तौर पर विस्तारित होने/बढ़ने से भी हो सकता है (बाह्य वल्कुट से आरंभ होकर अरीय रूप से वल्कुट के भीतर की ओर बढ़ने से)। *ग्लैडिओलस, काइनम* तथा *नार्सीसस* में ये पैटर्न पाया जाता है।

ऑक्सेलिस तथा आर्किड्स की जड़ों में, कोशिकाओं की अनुप्रस्थ डिस्क गिर जाती है तथा अनुदैर्घ्य रूप से (लंबाई में), ऊपर और नीचे से स्थित स्फीत कोशिकाओं (turgid cells) की परत से कुचल जाती हैं। इस प्रकार बारंबार कोशिकाओं के गिरते जाने के परिणामस्वरूप झुर्रियां पड़ जाती हैं (चित्र 8.20)।

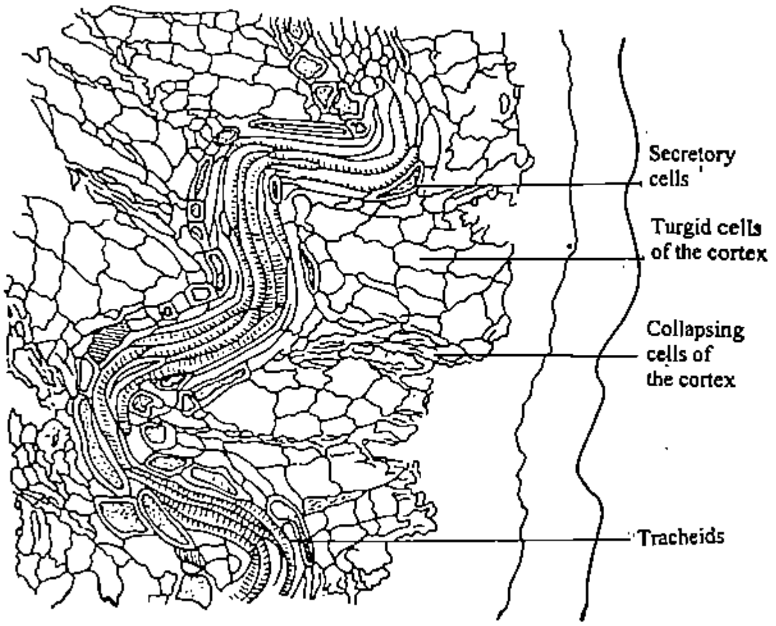

चित्र 8.20 : *ऑक्सेलिस हिंटा* (*Oxalis hirta*) की संकुचन जड़ की अनुदैर्घ्य काट का एक भाग, वल्कुट की स्फीत तथा गिरती हुई कोशिकाओं को दर्शाता हुआ। (ए.जे.दवे की एनालिटिकल बॉटनी (एन.एस) 10, 1946 से)।

वप्र/पुश्ता जड़ : वप्र/पुश्ता जड़ें बहुत से उष्णकटिबंधी वृक्षों में आमतौर पर पाई जाती हैं (चित्र 8.21)। ये मुख्य जड़ों के आधार से उत्पन्न होती हैं, जिनमें द्वितीय स्थूलन / असंगत (ऊपर की ओर अधिक स्थूलन) होते हैं जिसके फलस्वरूप बोर्ड या तख्ते जैसी संरचनाएं बन जाती है। आंतरिक रूप से ये लकड़ी जल के संवहन की अपेक्षा सहारे के लिए अधिक उपयुक्त होती है।

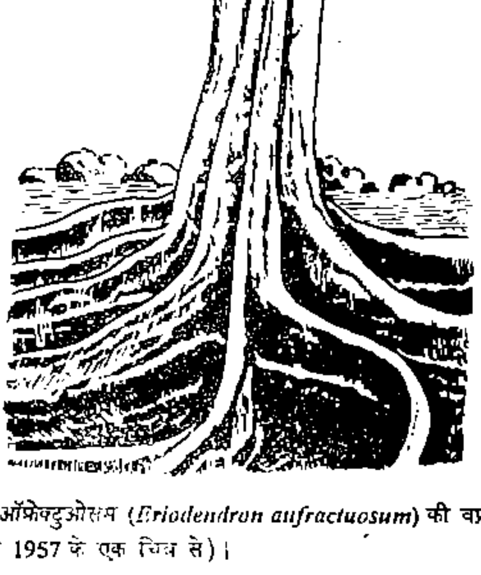

चित्र 8.21 : इरयोडेन्ड्रॉन ऑफ्रेक्टुओसम (*Eriodendron aufractuosum*) की वप्र/पुश्ता जड़ें। (मैक्लीन तथा इनीमी-कुक 1957 के एक चित्र से)।

चूषकांग जड़ें (Haustoria Roots) : परजीवी आवृतबीजी पादप विशेष संरचनाएं विकसित कर लेते हैं जिन्हें चूषकांग कहते हैं। ये परजीवी को परपोषी (host) से जोड़कर पोषक तत्वों के प्रवाह के लिए एक रास्ता बना देती हैं। दो प्रकार के चूषकांग होते हैं : प्राथमिक तथा द्वितीय। यदि मूल शीर्ष सीधे ही चूषकांग की तरह कार्य करने लगता है तो वह प्राथमिक चूषकांग कहलाता है। यदि चूषकांग जड़ के पार्श्व से निकलता है तो वह द्वितीय चूषकांग कहलाता है। अब हम *कस्कुटा* (*Cuscuta*) (अमरबेल) की चूषकांग संरचना का अध्ययन करते हैं।

कस्कुटा में नवोद्भिद अवस्था में सिर्फ अल्पकालिक जड़ें होती हैं। नवोद्भिद पौधे में पत्तियां नहीं होती हैं तथा जड़े जल्दी ही मुरझा जाती हैं। धागे जैसा तना परपोषी के चारों ओर लिपट जाता है तथा बहुत से चूषकांग विकसित कर लेता है।

कस्कुटा (अमरबेल) के तने में चार वल्कुटी परतें होती हैं। बाहरी दो परतें चपटे पैड विकसित कर लेती हैं जो परपोषी की बाह्यत्वचा से कस कर चिपके रहते हैं। पैड के केन्द्र में चूषकांग सभी चार वल्कुटी परतों के बाहर विकसित होता है। जल्दी ही चूषकांग परपोषी वल्कुट को दीर्घीकृत कोशिकाओं के रूप में भेदता है जो कवकतंतु/हाइफा (**hypha(e)**) कहलाती हैं। परपोषी के वल्कुट में, ये कवकतंतु स्वतंत्र रूप से उगते हैं तथा पूरे परपोषी ऊतक में फैल जाते हैं। अंततः, हाइफी/कवकतंतु परपोषी के संवहन तंत्र से संपर्क बना लेते हैं। तब, परपोषी के संवहनी रज्जुक तथा परजीवी भी आपस में संपर्क बना लेते हैं। इस तरह चैनल पूरा हो जाता है।

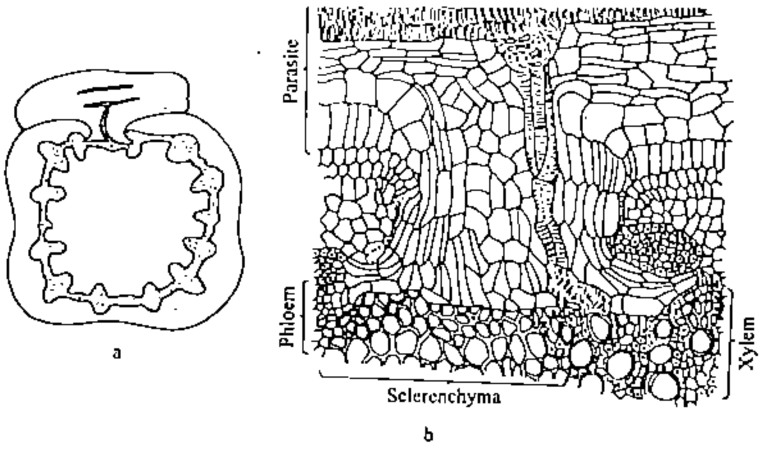

चित्र 8.22 : परपोषी के साथ परजीवी का चूषकांगी संबन्धन विडेन्स (*Bidens*) पर अमरबेल (*कस्कुटा*)। a) परपोषी के तने की अनुप्रस्थ काट का चित्र, परजीवी के तने की तिरछी काट तथा चूषकांग की परपोषी के संवहनी ऊतकों तक भेदती हुई अनुदैर्घ्य काट; b) चूषकांग तथा उसके आस-पास के ऊतकों का विस्तार। परजीवी के संवहनी ऊतकों का परपोषी के ऊतकों से संबन्धन।

कवकमूल (Mycorrhiza) : बहुत से पादपों में जड़ों की बाह्यत्वचा तथा वल्कुट अक्सर भूमि के कवकों से संबद्ध रहती हैं। कवकतंतु तथा उच्च पादपों की जड़ों के बीच का संबध कवकमूल (चित्र 8.23) कहलाता है। सामान्यतः यह संबन्ध सहजीवी (symbiotic) होता है। उच्च पादप तथा कवक दोनों ही इस संबन्ध से लाभ उठाते हैं। कवकमूल दो प्रकार के होते हैं बाह्य कवकमूल तथा अंतः कवकमूल।

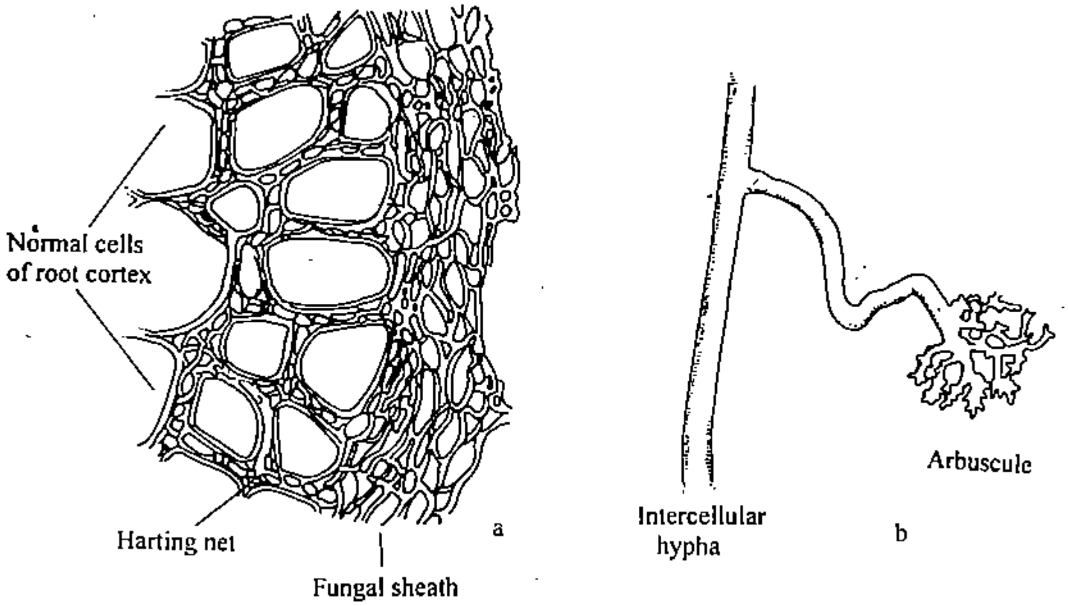

चित्र 8.23: कवकमूल के रेखाचित्र a) बाह्य कवकमूल मेयर (1973) के माइक्रोग्राफ पर आधारित b) अंत: कवकमूल कॉक्स और सैन्डर्स (1974) के माइक्रोग्राफ पर आधारित।

आर्किड अपने कवकमूल संबन्ध पर बहुत अधिक आश्रित होते हैं; यदि इनके नवोद्भिद पौधों पर उपयुक्त कवक के कवकतंतु अपना जाल नहीं बनाते तो पौधे मृतप्राय हो जाते हैं और अंतत: मर जाते हैं।

बाह्य कवकमूल : इस संबन्धन में कवक जड़ की सतह पर कवकमूल बनाता है। कवकतंतु वल्कुट कोशिकाओं में घुस कर एक जाल (Hartigs net) बनाते हैं। यह कई पेड़ों की जड़ों में पाया जाता है जैसे *पाइनस, एबीज़, सीडरस, क्वरकस, पोपूलस, फेगस, सैलिक्स, यूक्लिपटस* और *बेटयूला*।

अंत:कवकमूल : इस संबन्धन में, कवक जड़ की सतह पर अस्पष्ट कवकमूल बनाता है परन्तु मूल कोशिकाओं के अन्दर तक घुस जाता है। *ऑर्किडेसी* (Orchidaceae), ऐरिकेसी (Ericaceae), एसर (*Acer*) तथा *लिरियोडेन्ड्रॉन* (*Liriodendron*) की जड़ों में इस प्रकार का संबन्धन पाया जाता है।

इलैक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से किए गए विस्तृत निरीक्षण दिखाते हैं कि अंत:कवकमूल में परपोषी कोशिकाओं की जीवद्रव्य कला/प्लैज्मा झिल्ली कवक तंतु की वैयक्तिक शाखाओं को घेरकर संरचना बनाती हैं जिन्हें कूर्चक **(arbuscule)** कहते हैं। वे अंत:कवकमूल जिनमें पटविहीन (nonseptate) कवक शामिल होते हैं वे अधिक प्रचलित प्रकार की हैं तथा संभवत: सभी स्थलीय पादपों के लगभग 80% पादपों में इस प्रकार का संबन्ध पाया जाता है। ये पुटिकामय-कूर्चकी कवकमूल (vesicular-arbuscular mycorrhiza) या वी.ए. कवकमूल (v.a. mycorrhiza) कहलाती हैं क्योंकि कवक परपोषी में घुसने के बाद विशिष्ट पुटिकाएं तथा कूर्चक बनाते हैं।

परपोषी की जड़ें कवक के जरिए भूमि से पोषण प्राप्त करती हैं तथा परपोषी कवक को कार्बोहाइड्रेट, अमीनो अम्ल, विटामिन तथा अन्य पदार्थ प्रदान करते हैं। परपोषी की वल्कुट कोशिकाएं परिणामस्वरूप कोई मंड संग्रहित नहीं करती हैं। ऐसा पाया जाता है कि कवकमूल संबन्ध के कारण परपोषी पर सूखे (drought) का कम असर होता है।

जड़ ग्रंथिकाएं **(Root nodules)** : जीवाणुओं के साथ संबन्ध सामान्यत: लैग्युमिनोसी (Leguminosae) कुल की जड़ों तथा फली-विहीन (non-leguminous) वृक्ष जैसे ऐल्डर, सी बक थॉर्न (sea buckthorn) में पाया जाता है। इस प्रकार के संबन्धन द्वारा जड़ों पर बनने वाले उभारों को ग्रंथिकाएं कहते हैं।

ग्रंथिकाएं, नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले जीवाणुओं *राइज़ोबियम* स्पी. (*Rhizobium* spp) के मूलरोम के जरिए जड़ वल्कुट में घुसने के फलस्वरूप बनती हैं। संक्रमण के बाद जीवाणु बाह्यत्वचा में और उसके बाद वल्कुट में प्रवेश करके जीवाणुज-धागा (bacterial thread) बनाते हैं। ये जीवाणुज-धागे इसके बाद एक गोंद-जैसे पदार्थ के आच्छद से ढंक जाते हैं। जब धागा जड़ में अंदर गहराई में घुसता है तो ये प्रचुरोद्भवन (proliferation) करता है तथा वल्कुट कोशिकाओं में कोशिका विभाजन का उद्दीपन करता है। ये भीतरी भाग जीवाणुसम **(bacteroid)** क्षेत्र कहलाता है। इस अवस्था में धागे से निर्मुक्त

हुए जीवाणु तथा ग्रंथिकाओं की संरचना आद्यकों के समान लगती है। ग्रंथिकाओं के आकार के बढ़ने के साथ, परपोषी की जड़ की बाह्यत्वचा टूट जाती है परन्तु ग्रंथिकाएं जड़ के बाहर निकल कर नहीं आती हैं। वल्कुटी कोशिकाएं, हालांकि, विभाजित होती हैं तथा बढ़ती हुई ग्रंथिकाओं को पर्याप्त जगह देने के लिए खिंच जाती हैं।

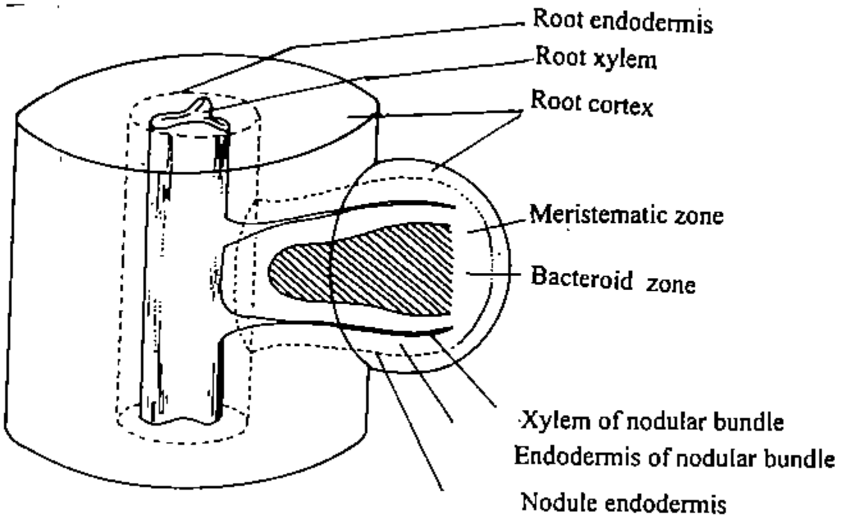

चित्र 8.24 : लेग्युमिनस/फलीदार जड़ तथा ग्रंथिका का आरेखी चित्र। (बॉन्ड से लिया गया 1948)।

जब बीजाणुसम क्षेत्र स्थापित हो जाता है, तब जड़ के संवहनी ऊतक की शाखाएं उसे घेर लेती हैं। इनमें से प्रत्येक संवहनी पूल में मृदूतकी आच्छद तथा अंतःत्वचा की परत होती है। मृदूतकी आच्छद कोशिकाएं कुछ कोशिका-भित्ति प्रचुरोद्भवन (proliferation) विकसित कर लेती हैं (स्थानांतरण कोशिकाओं से मिलती जुलती) (चित्र 8.24)।

बोध प्रश्न 3

प्रश्न कॉलम अ तथा ब के तत्वों को मिलाइए

	कॉलम अ	कॉलम ब
क)	गूदेदार प्रकृति	ग्रंथिका
ख)	आर्द्रताग्राही गुंठिका/वैलामेन	मेन्ग्रोव्स
ग)	श्वसन मूल/वातपुटी धर	आर्किड्स की वायवीय जड़ें
घ)	मोटी गूदेदार जड़ें	कवकमूली जड़ें
ङ.)	परजीवी आवृतबीजी पादप	खाद्य संग्रही जड़ें
च)	कवकीय संबन्धन	जल संग्रही जड़ें
छ)	जीवाणुज संबन्धन	चूषकांगी जड़ें

8.3 तना

संवहनी पादपों के वायवीय भाग में एक अक्ष होता है जिसे तना कहते हैं। ये पार्श्व अंगों को धारण किए रहता है। सीधा तना सामान्यतः ऊर्ध्ववर्धी (सीधा लंबाई में) होता है। ये अवनत (नीचे की ओर बढ़ने वाला), या तिर्यक अनुवर्ती (क्षैतिज वृद्धि दर्शाने वाला) भी हो सकता है। पार्श्व दो प्रकार के होते हैं (1) सीमित/निर्धारित वृद्धि वाली पत्तियां और (2) असीमित/अनिर्धारित वृद्धि वाली कली। पत्तियां सामान्यतः पृष्ठाधर (dorsiventral) होती हैं; कलियों में, हालांकि, अरीय सममिति पाई जाती है। पार्श्वों, पत्तियों तथा कलियों से युक्त तना प्ररोह (shoot) बनाता है (चित्र 8.25 देखिए)। तने के वे भाग जहाँ पर पत्तियां पाई जाती हैं वो **पर्वसंधि (nodes)** कहलाते हैं तने की दो पर्वसंधियों के बीच का पत्तीविहीन भाग पर्व/पोरी (internode) कहलाता है।

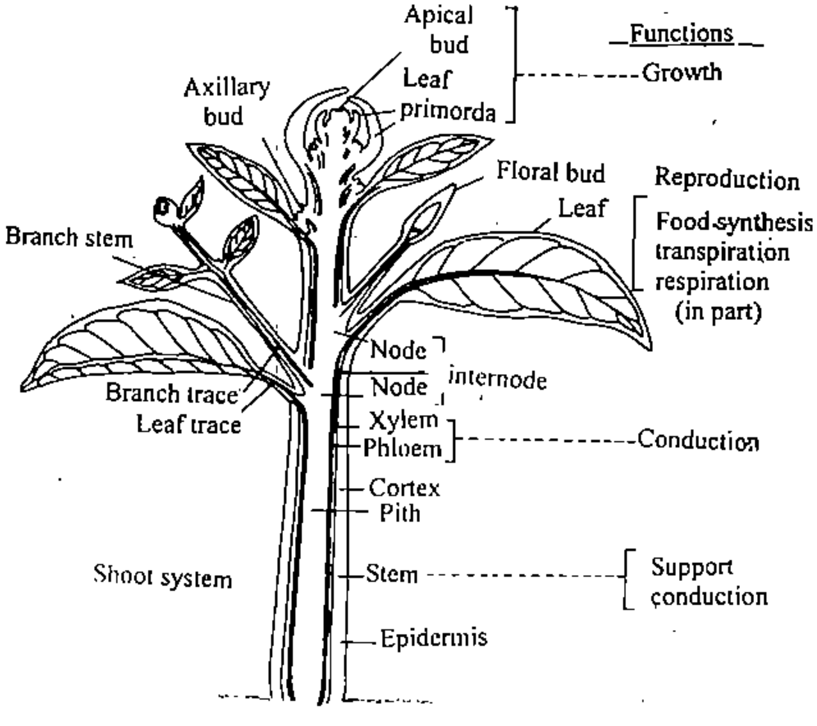

चित्र 8.25 : प्ररोह तंत्र का नक्शा/ग्राउण्ड प्लान।

8.3.1 प्ररोह शीर्ष (Shoot Apex)

प्ररोह तंत्र में अक्ष तथा पार्श्व दोनों की उत्पत्ति एक अथवा अनेक कोशिकाओं के समूह से होती है। चूंकि ये कोशिकाएं अक्ष के दूरस्थ/शीर्षस्थ भाग में स्थित होती हैं, ये **प्ररोह शीर्ष आरंभक** कहलाती हैं। प्ररोह शीर्ष आरंभक अपने तात्कालिक व्युत्पन्नों (derivatives) के साथ प्ररोह शीर्ष बनाते हैं।

प्ररोह शीर्ष विभज्योतक संगठन (Shoot apical meristem organization) प्ररोह शीर्ष विभज्योतक विकासशील भ्रूण में स्थापित होता है। इसके आकार, आकृति तथा वृद्धि की दर में उसके बाद काफी बदलाव आते हैं। इस प्रकार के बदलाव पादप में जीवन भर आते रहते हैं। इसीलिए, प्ररोह शीर्ष विभज्योतक को महत्वपूर्ण, सक्रिय, सदैव-बदलने वाला वृद्धिकारी तंत्र कहलाता है। ये बदलाव चक्रिय होते हैं तथा विशेष रूप से प्ररोह शीर्ष विभज्योतक द्वारा पत्ती के आरंभ और निर्माण के दौरान प्रभावी होते हैं। इस एक चक्र (जो **घटनान्तराल/प्लास्टोक्रोन** भी कहलाता है) के दौरान प्ररोह शीर्ष विभज्योतक को निम्नतम तथा अधिकतम क्षेत्र उपलब्ध होता है ये पत्ती के आरंभन की जल्दी तथा बाद की अवस्थाओं के अनुरूप होती हैं।

प्ररोह शीर्ष विभज्योतक इस प्रकार प्ररोह तंत्र के निर्माण में योगदान करता है। प्ररोह शीर्ष का वह क्षेत्र जो सबसे तरुण पर्ण आद्य के दूरस्थ (distal) होता है, वह प्ररोह शीर्ष विभज्योतक कहलाता है।

प्ररोह शीर्ष की चौड़ाई और आकार विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होता है। सामान्य तौर पर, साइकैड्स (cycads), कैक्टस (cacti) तथा कुछ फर्न्स (ferns) में बड़े प्ररोह शीर्ष पाए जाते हैं (चित्र 8.26 देखिए)।

तना तथा पत्तियां बनाने के अतिरिक्त प्ररोह शीर्ष विभज्योतक विभिन्न अन्य संरचनाओं को भी बना सकता है। हम उनकी चर्चा सेक्शन 8.3.6 में करेंगे।

प्ररोह शीर्ष संगठन के सिद्धान्त (Theories of shoot apical organization)

कैस्पर फ्रेडरिक वुल्फ, 1759 में प्ररोह शीर्ष के महत्व को पहचानने वाले पहले व्यक्ति थे। तब से कई प्रयास प्ररोह शीर्ष विभज्योतक की संरचना और वृद्धि के प्रकार का वर्णन करने के लिए किए गए हैं। कुछ प्रचलित सिद्धांत हैं, शीर्ष कोशिका सिद्धांत; ऊतक जन/हिस्टोजन सिद्धांत तथा ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत (चित्र 8.27 देखिए)।

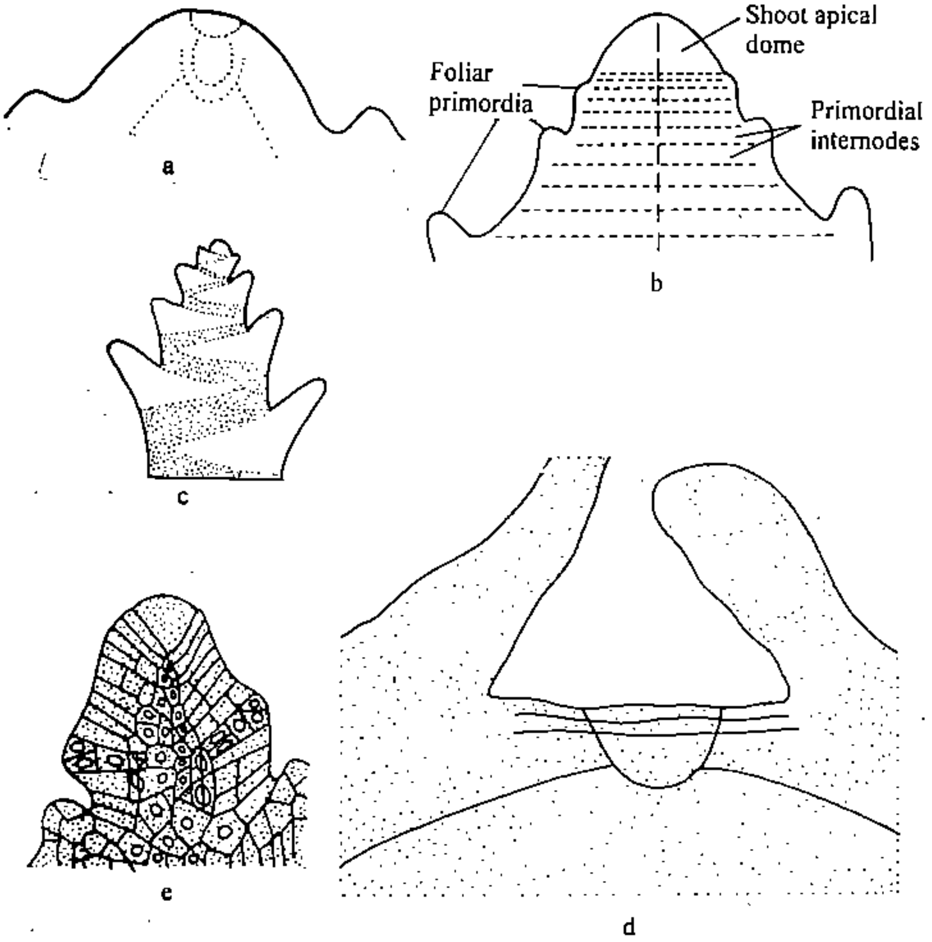

चित्र 8.26 : प्ररोह शीर्षों की भिन्न-भिन्न आकृतियां, a) गुंबदाकार (dome shape) b) शंकु आकार (cone shape), c) परवलयी/पैराबोलिक (parabolic), d) चपटाकार (flat shape), e) दीर्घीकृत आकार (elongated shape)।

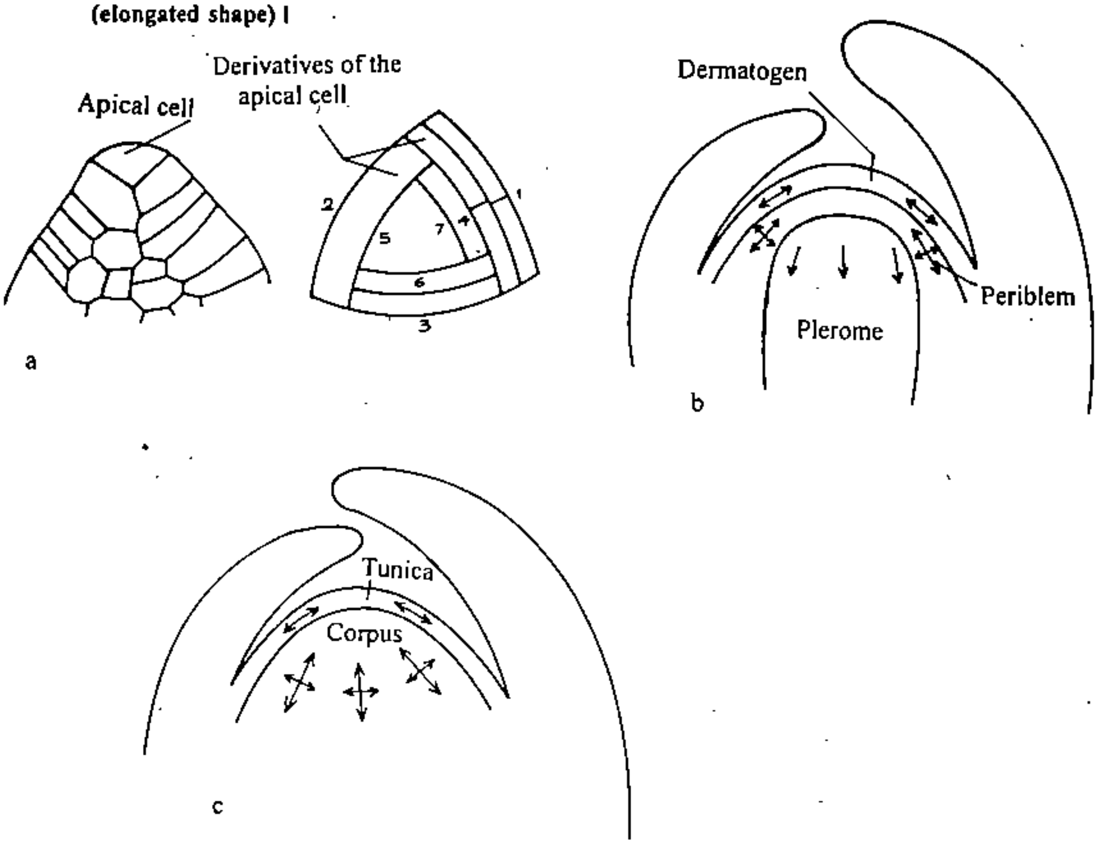

चित्र 8.27 : प्ररोह शीर्ष संगठन के विभिन्न सिद्धांत a) शीर्ष कोशिका सिद्धान्त b) ऊतक जन सिद्धांत c) ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत।

शीर्ष कोशिका सिद्धांत : शीर्ष कोशिका सिद्धान्त मध्य-उन्नीसवीं शताब्दी में सी.डब्लू. नागेली द्वारा प्रतिपादित किया गया था। बहुत से संवहनी पादपों में प्ररोह शीर्ष में एकल चतुष्कफलकीय शीर्ष कोशिका पाई जाती है। यह एकल कोशिका प्ररोह तंत्र में सभी कोशिकाओं की उत्पत्तिकर्ता/जनक मानी जाती है, इसीलिए इसका नाम शीर्ष कोशिका सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त सभी संवहनी पादपों में समान स्थिति की परिकल्पना करता है। जब यह जान लिया गया कि अधिकांश उच्च पादपों में ऐसी स्थिति नहीं पाई जाती है, तब से इस सिद्धांत का महत्व कम हो गया।

ऊतक जन सिद्धांत : 1868 में जे. हेंन्सटीन ने इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। उनके अनुसार उच्च संवहनी पादपों में प्ररोह शीर्ष अनियमित रूप से व्यवस्थित मध्य कोर का बना होता है जो अनेक आवरण जैसी (mantle like) परतों से ढ़का रहता है। एकल या आरंभकों का समूह इनमें से प्रत्येक परत को जन्म देता है। ये परतें शीर्ष विभज्योतक में सोपानों (tiers) में व्यवस्थित रहती हैं। उन्होंने इन परतों या ऊतकजनों को **त्वचाजन (dermatogen)**, **वल्कुटजन (periblem)** और **प्लेरोम (plerome)** नाम दिए (सेक्शन 8.2.1 देखिए) गये। इस सिद्धांत की कमी ऊतकजन के व्युत्पन्नों को विशिष्ट निर्यात प्रदान करने का प्रयास करना है।

ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत : 1924 में ए. श्मित द्वारा प्रतिपादित किये गए ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत को अपेक्षाकृत अधिक मान्यता मिली। ये प्राथमिक रूप से प्ररोह शीर्ष की कोशिकाओं में कोशिका विभाजन के तल पर आधारित है। इसके अनुसार प्ररोह शीर्ष दो क्षेत्रों का बना होता है: **ट्यूनिका और कार्पस।** ट्यूनिका कोशिकाओं की एक से लेकर कुछ परतों का बना होता है जिसमें भित्तियां **अपनतिक** (वर्धन बिंदु पर लंब रूप में) तलं में होती हैं। कार्पस में इसके विपरीत कोशिकाओं की केन्द्रीय कोर होती है जिसमें कोशिका विभाजन सभी तलों में होता है। पत्ती के आद्य जनन के निर्माण के स्थानों पर, ट्यूनिका परिनतिक रूप से भी विभाजित हो सकती है।

सतत् विभज्योतकी अवशेष : आई.वी.न्यूमेन (1965) ने सुझाया कि शायद प्ररोह शीर्ष में कोई भी कोशिका(ए) स्थायी आरंभक नहीं होती हैं। कुछ समय के लिए विभज्योतकी कोशिकाओं की एक श्रेणी आरंभक के रूप में कार्य करती है। ये **सतत् विभज्योतकी अवशेष (सी.एम.आर) (continuing meristematic residue)** बनाती हैं। इन अस्थायी आरंभकों के उत्पाद सामान्य विभज्योतक बनाते हैं। ए.एस.फॉटर (1938) प्लेन्टेफोल (1948), फोफेम व चॉम (1950), बुवां (1952) आदि वैज्ञानिको ने भी प्ररोह शीर्ष संगठन के अलग-अलग सिद्धांत प्रतिपादन किए है परन्तु, अभी तक प्रतिपादित प्ररोह शीर्ष संगठन सिद्धांतों से किसी एक पर भी एकमत नहीं हो पाया है (चित्र 8.28 देखिए)

बोध प्रश्न 4

रिक्त स्थानों को उचित शब्द (शब्दों) से भरिए:

क) ए. श्मित् ने 1924 में .... प्रतिपादित किया।

ख) ट्यूनिका की कोशिकाएं .... कोशिका विभाजनों के द्वारा पहचानी जाती हैं।

ग) प्ररोह शीर्ष विभज्योतक अक्सर प्ररोह शीर्ष का वह क्षेत्र माना जाता है जो सबसे छोटे पर्ण आद्यक से .... होता है।

घ) प्ररोह शीर्ष का महत्व सबसे पहले .... द्वारा पहचाना गया।

ङ) प्ररोह तंत्र में असीमित वृद्धि वाले पदार्थ .... कहलाते हैं।

च) प्ररोह शीर्ष का वह स्थान जहाँ पर्ण आद्यक उत्पन्न होता है वह .... कहलाता है।

छ) कैक्टस तथा साइकैड्स में सबसे बड़े .... शीर्ष विभज्योतक होते हैं।

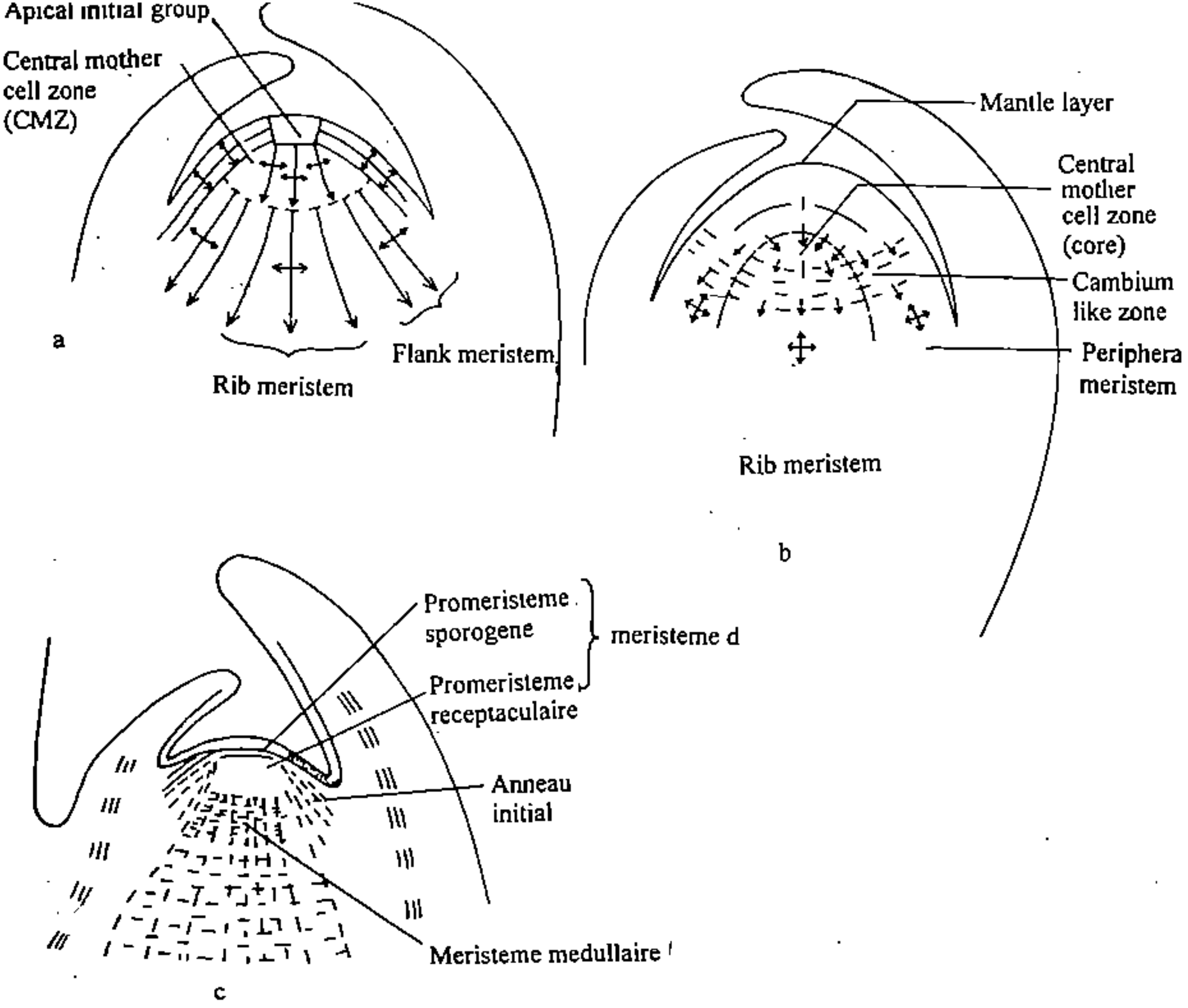

चित्र 8.28 : प्ररोह शीर्ष तथा उसके वृद्धि केन्द्र a) कोशिका ऊतकीय श्रेणीकरण को दर्शाने के लिए *गिंगो बाइलोबा (Glnkgo blloba)* के प्ररोह शीर्ष का चित्रवत् प्रदर्शन b) द्विबीजपत्री पादप के प्ररोह शीर्ष की वृद्धि का मैन्टल-कोर धारणा के अनुसार कल्पित चित्रवत् प्रदर्शन, तीर वृद्धि की दिशा वता रहे हैं। c) द्विबीजपत्री पादप के प्ररोह शीर्ष की वृद्धि का एन्यू आरंभक (anneau initial) तथा मेरिस्टेम डी' अटेन्टी (meristem d' attente) धारणा के संदर्भ में कल्पित चित्रवत् प्रदर्शन। (आर. बुवात, एनल, साइंस नैट (बोटनी) 13, 1952 से लिया गया)।

8.3.2 प्राथमिक संरचना (Primary Structure)

प्राथमिक तने में तीन मौलिक ऊतक तंत्र होते हैं : त्वचीय, संवहनी तथा भरण ऊतक। ये प्ररोह शीर्ष विभज्योतक के तीन प्रमुख व्युत्पन्नों प्रोटोडर्म/अधित्वक्, प्राक्एधा (procambium) तथा भरण विभज्योतक से बनते हैं।

त्वचीय ऊतक (Dermal Tissue) : तना बाह्यत्वचा से घिरा रहता है जो कि पतली भित्ति वाली पास-पास व्यस्थित अपर्णहरित (achlorophyllous) जीवित कोशिकाओं की एक परत होती है। उन पादपों में, जो जल अथवा सघन छायादार स्थानों में पाये जाते हैं उनमें बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में हरितलवक (chloroplast) पाया जाता है। बाह्यतवचीय कोशिकाओं की बाहरी भित्ति क्यूटिकल/उपत्वचा से ढ़की रहती है। प्रकाश संश्लेषी तनों में बाह्यत्वचा में रंध्र (stomata) पाए जाते हैं। विभिन्न प्रकार के त्वचारोम (trichomes) भी पाये जा सकते हैं। बाह्यत्वचा की विस्तृत जानकारी सेक्शन 7 में दी गई है।

भरण ऊतक (Ground Tissue) : बाह्यत्वचा तथा संवहनी ऊतक के अलावा किसी अंग की अन्य सभी कोशिकाएं भरण ऊतक कहलाती हैं। अनावृतबीजी पादपों तथा द्विबीजपत्री पादपों में भरण ऊतक वल्कुट तथा मज्जा (मध्यांश) में विभाजित किया जा सकता है। वल्कुट, बाह्यत्वचा तथा संवहनी ऊतक के बीच में तथा मज्जा केन्द्र में स्थित रहती है। एकबीजपत्री पादपों के तने में, हालांकि, वल्कुट तथा मज्जा के बीच कोई वास्तविक अन्तर नहीं होता है।

वल्कुट (Cortex) : वल्कुट कोशिकाओं की बहुत सी परतों का बना होता है जो प्रमुख रूप से मृदूतकी होते हैं। हालांकि, बहुतों में, खासतौर पर द्विबीजपत्री पादप के तरुण, उभरते हुए तनों में बाहरी कुछ परतें (यानि कि, बाह्यत्वचा के नीचे की) श्लेषोतक/कॉलेनकाइमा (collenchyma) के रूप में विभेदित रहती हैं। (आपको याद होगा कि श्लेषोतक वृद्धि अथवा बढ़ते हुए अंगों में दृढ़ता प्रदान करने वाले ऊतक के रूप में कार्य करता है)। ये श्लेषोतक या तो सतत् बेलन बनाता है- उदाहरण *हेलीएन्थस (Helianthus)* *साल्विया (Salvia)* अथवा अधिक सामान्य रूप से पट्टियों के रूप में प्रक्षेपी शिराओं (projecting ribs) में पाई जाती हैं [उदाहरण अंबेलीफेरी (Umbelliferae) कुकरबिटेसी (Cucurbitaceae)]। इन परिधिय परतों में प्रकाशसंश्लेषण के लिए हरित लवक भी पाया जा सकता है। इस प्रकार का ऊतक, हरित ऊतक कहलाता है। श्लेषोतक के अतिरिक्त, दृढ़ता प्रदान करने वाला ऊतक या दृढ़ोतक (सामान्यत: रेशा/फाइबर) भी तने की परिधि के निकट, खासतौर पर एक बीजपत्री पादपों में, पाया जा सकता है।

बहुत से पादपों जैसे कि *कैसुएराइना (Casuarina)*, *कैपेरिस (Capparis)*, *सिस्टीकस (Cysticus)* तथा *एस्पेरेगस (Asparagus)* में, जिनमें बहुत छोटी/लघुकृत पत्तियां पाई जाती हैं, उनमें मुख्य प्रकाशसंश्लेषी कार्य तने द्वारा किया जाता है।

वल्कुट की कोशिकाओं में मंड (उदाहरण अधिकांश तरुण तने), क्रिस्टल [उदाहरण *रिसीनस (Ricinus)*, *कोलोकेशिया (Colocasia)*], स्कलेरॉइड्स [उदाहरण *ट्रोकोडेन्ड्रॉन (Trochodendron)*], पाए जा सकते हैं, अथवा ये ऑलियोरेजिन [उदाहरण *जिजींबर (Zingiber)*] में ज्यादा हो सकते हैं या फिर तेल स्रावित कर सकते हैं [उदाहरण *हैलीएन्थस (Helianthus)*]।

वल्कुट की सबसे भीतरी कोशिका परत अंत:त्वचा कहलाती है। यह तने में उतनी स्पष्ट नहीं होती है जितनी कि जड़ों में होती है। यह अक्सर वायवीय तनों में दिखाई नहीं पड़ती है, जबकि पाइपर *(Piper)* के तने में ये बहुत स्पष्ट होती है। भूमिगत तनों के वल्कुट में, अंत:त्वचा सुविकसित होती है।

कुछ पादपों के तरुण तनों में [उदाहरण-*रिसीनस (Ricinus)*, *फैसिओलस (Phaseolus)*], सबसे भीतर की वल्कुटी परत में बहुत अधिक मात्रा में मंडकण पाए जाते हैं तथा यह मंड आच्छद **(starch sheath)** कहलाती है (चित्र 8.29 देखिए)

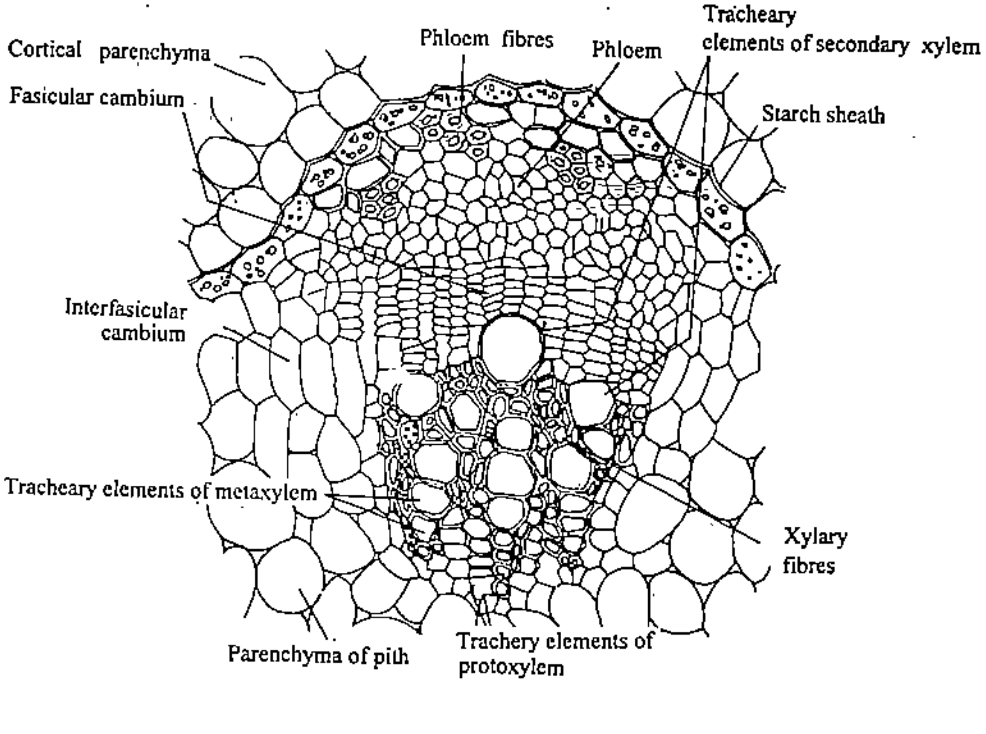

चित्र 8.29 : *रिसीनस* के सुविकसित बीजपत्राधर (hypocotyl) की अनुप्रस्थ काट का एक भाग। (पैलेडसिन, 1914 से लिया गया)।

मज्जा (Pith) : तने का केन्द्रीय भाग या मज्जा मृदूतकी का बना होता है। कभी-कभी यह काष्ठीकृत(**lignified**) भी हो सकता है। यह अनावृतबीजी तथा द्विबीजपत्री पादपों के प्राथमिक तनों में बहुत स्पष्ट होता है।

संवहनी ऊतक (Vascular Tissues) : तने में संवहनी ऊतक की व्यवस्था में बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। द्विबीजपत्री पादपों में, संवहनी ऊतक वल्कुट और मज्जा के बीच में पूर्ण या खंडित बेलन के रूप में विकसित हो जाता है जब खंडित होता है, तब इस बेलन में बहुत सी अलग-अलग असंतत् (discrete) कायाएं होती हैं जिन्हें संवहनी पूल कहते हैं। संवहनी पूलों के बीच में अंतरापूलीय (inter-fascicular) मृदूतक पाया जाता है।

जड़ के विपरीत, जिसमें जाइलम और फ्लोएम एकांतरित (alternate) होते हैं, तने में, जाइलम और फ्लोएम विभेदित होते हैं तथा एक ही त्रिज्या/रेडियस पर स्थित होते हैं। फ्लोएम बाहर बाह्यत्वचा की ओर विभेदित हो जाता है तथा जाइलम अंदर मज्जा की ओर विभेदित हो जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था **बहि:फ्लोएमी (collateral)** संवहनी पूल कहलाती है (उदाहरण हेलीएन्थस (*Helianthus*), रेननकुलस (*Ranunculus*)]। जब फ्लोएम जाइलम के दोनों तरफ विभेदित होता है, तब संवहनी पूल **उभयफ्लोएमी (bicollateral)** होता है (उदाहरण कुकरबिटा (*Cucurbita*)]। जब संवहनी पूल में जाइलम पूरी तरह से फ्लोएम को सब तरफ से घेर लेता है, तब यह **फ्लोएमकेन्द्री (amphivasal)** [उदाहरण कोर्डिलाइन (*Cordyline*), एकोरस (*Acorus*), ड्रेसीना (*Dracaena*)] कहलाती है। **जाइलमकेन्द्री (amphicribal)** संवहनी पूल वे होते हैं जिनमें फ्लोएम पूरी तरह से जाइलम को घेर लेता है। ये बहुत से टेरिडोफाइट्स में पाए जाते हैं (चित्र 8.30 देखिए)।

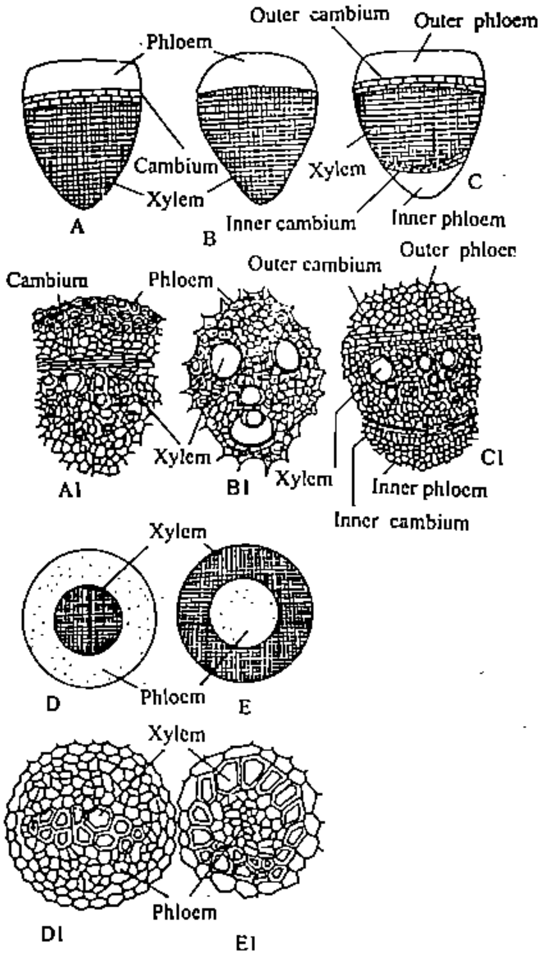

चित्र 8.30 : विभिन्न प्रकार के संवहनी पूल। बहि:फ्लोएमी (A तथा B, A_1 तथा B_1); उभयफ्लोएमी (C तथा C_1); फ्लोएमकेन्द्री (E तथा E_1); जाइलमकेन्द्री (D तथा D_1)।

जब संवहनी पूल में कैम्बियम विभेदित हो जाता है तथा जाइलम और फ्लोएम के बीच में स्थित होता है, तब संवहन पूल वर्धी (open) कहलाता है (चित्र 8.30 A_1)। कैम्बियम विहीन संवहनी पूल अवर्धी (closed) कहलाता है (चित्र 8.30 B_1)। फ्लोएमकेन्द्री तथा जाइलमकेन्द्री संवहन पूल वर्धी अथवा अवर्धी दोनों प्रकार के हो सकते हैं। उभयफ्लोएमी संवहन पूल जिनमें बाह्य तथा आंतरिक कैम्बियम दोनों उपस्थित होते हैं, उनमें सिर्फ बाह्य कैम्बियम (जाइलम तथा फ्लोएम के बीच का) ही क्रियाशील होता है (चित्र 8.30 C_1)।

एकबीजपत्री पादपों के तने में बहुत अधिक संख्या में अवर्धी संवहन पूल भरण ऊतक में बिखरे हुए दिखाई पड़ते हैं। जाइलम तत्व Y, V या U अक्षर बना सकते हैं (चित्र 8.31 देखिए)। इनमें से बहुत से संवहन पूलों में प्रोटोजाइलम अंग के परिपक्व होने के साथ ही नष्ट हो जाते हैं। वो अपने पीछे प्रोटोजाइलम गुहिका/नाल/रिक्तिका छोड़ देता है जो कि बिना मज्जा के होती है।

एकबीजपत्री पादपों में, संवहन पूल टोपी युक्त या मोटी भित्ति वाले दृढ़ोतकी फाइबर/रेशे की पट्टिका द्वारा घिरे रहते हैं। सिर्फ वे तने जिनमें वर्धी संवहन पूल पाए जाते हैं, द्वितीयक वृद्धि कर पाते हैं।

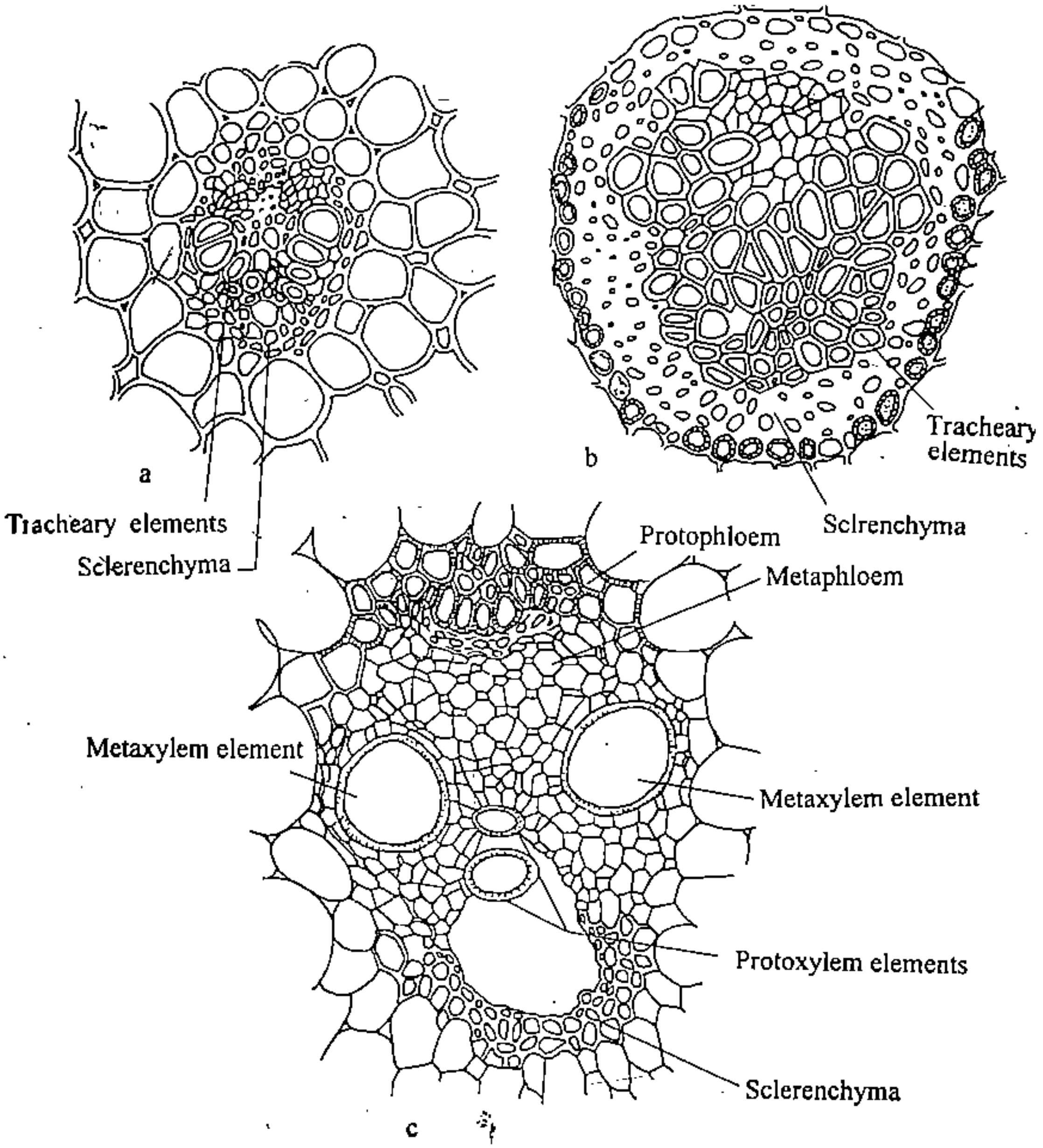

चित्र 8.31 : विभिन्न प्रकार के संवहन पूलों से गुजरते हुए अनुप्रस्थ काट। a) *जैन्थोरिया (Xanthorrhoea)* की पत्ती V-आकार के जाइलम को दर्शाते हुए b) *किंगिया (Kingia)* का तना U-आकार के जाइलम को दर्शाता हुआ c) *ज़िया (Zea)* के तने में Y-आकार का जाइलम।

8.3.3 द्वितीयक संरचना (Secondary Structure)

अधिकांश तने मोटाई में द्वितीयक वृद्धि के कारण बढ़ते हैं। यह क्रिया अनावृतबीजी पादपों तथा द्विबीजपत्री पादपों में सामान्य तौर पर पाई जाती है तथा दो प्रकार के पार्श्व विभज्योतकों द्वारा संपन्न होती है; संवहनी कैम्बियम तथा कॉर्क कैम्बियम। संवहनी कैम्बियम द्वारा द्वितीयक क्रिया के फलस्वरूप तने का व्यास काफी बढ़ जाता है। बढ़ी हुई मोटाई के कारण प्राथमिक ऊतक जैसे कि बाह्यत्वचा तथा वल्कुट अंशत: या पूर्णत: पपड़ी बन कर उतर सकते हैं। इसके फलस्वरूप मज्जा भी आंशिक या पूर्ण रूप से विलुप्त हो सकती है। बाह्यत्वचा जब परत बनकर उतर जाती है तब उसके स्थान पर अक्सर एक अन्य सुरक्षा परत/कवर उपचर्म बन जाती है (यह कार्क कैम्बियम की क्रिया के कारण बनती है) चूंकि आप संवहनी कैम्बियम और कार्क कैम्बियम तथा उनकी क्रियाविधि के बारे में पहले ही विस्तार से एल.एस.ई-06 के खंड 2, इकाई 10 में पढ़ चुके हैं, अत: यहाँ उनकी व्याख्या नहीं की गई है। इस सेक्शन को पढ़ने से पहले चित्र 8.32 में आरेखों को देखिए।

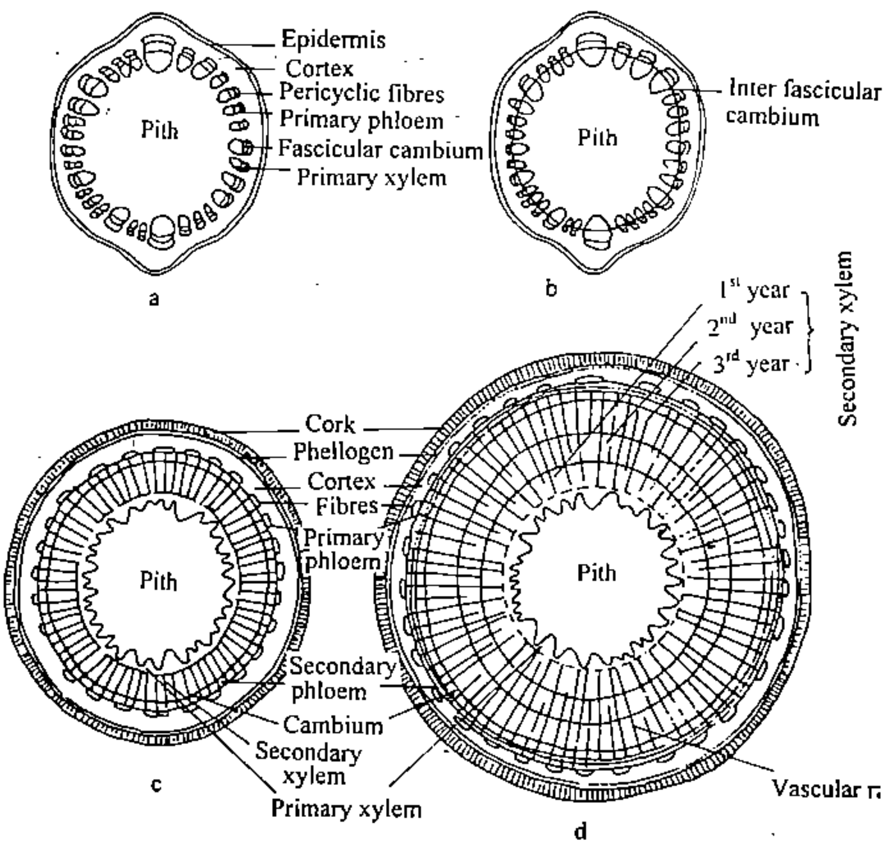

चित्र 8.32 : एक प्रारूपी द्विबीजपत्री पादप के तने में द्वितीयक वृद्धि की अवस्थाओं का चरणबद्ध प्रदर्शन। d) में 3 वर्षीय तने की अनुप्रस्थ काट को दिखाया गया है (आर.एम होलमेन तथा डब्लू.डब्लू. रोबिन्स की ए टेक्सट् बुक ऑफ जनरल बॉटनी, जॉन विली एन्ड सन्स, इन्क, न्यूयॉर्क, 1934 से लिया गया)।

द्वितीय जाइलम (Secondary Xylem) :

द्वितीय जाइलम दो तंत्रों की उपस्थिति से पहचाना जाता है; अक्षीय (ऊर्ध्व) तथा अरीय (क्षैतिज)। ये दोनों मिलकर व्यापारिक (बाजार में बिकने वाली) लकड़ी/काष्ठ का निर्माण करते हैं। यह द्वितीय जाइलम होती है। द्वितीय जाइलम में प्राथमिक जाइलम के समान ही तत्व होते हैं; जाइलम फाइबर/रेशा, जाइलम मृदूतक तथा वाहिकीय तत्व। दोनों की तुलना आगे सेक्शन 8.3.4 में की गई है।

काष्ठ/लकड़ी (Wood) :

यह संवहनी कैम्बियम का उत्पाद होती है। यह मृदुकाष्ठ/मृदुदारू (**softwood**) (अनावृतबीजी पादपों की, मुख्यत: कोनिफर्स/शंकु वृक्षों की)], तथा कठोरकाष्ठ/कठोरदारू (द्विबीजपत्री पादपों की) के रूप में वर्गीकृत

की गई है। मुख्य अन्तर मृदुकाष्ठ में फ्लोएमाभ/पोषवाहरूप रेशों (libriform fibres) की अनुपस्थिति है। मृदुकाष्ठ में वाहिनिकाएं (trachieds) अधिक मात्रा में पाई जाती हैं, परन्तु कठोरकाष्ठ में अधिकांशत: वाहिकाएं (vessels) पाई जाती हैं। ये क्रमश: अरंध्री **(non-porous)** तथा रंध्री **(porous)** दारू कहलाती हैं। कठोरकाष्ठ में, जब वाहिकाएं नियमित रूप से उत्पन्न होती हैं तथा एकरूप में वितरित होती हैं, जैसे कि ऐसर (*Acer*) तथा *बिट्यूला* (*Betula*) में, तब काष्ठ विसरित रंध्री (diffuse porous) कहलाती है। हालांकि, जब वर्ष के कुछ भाग/मौसम में वाहिकाओं का व्यास अन्य भाग से अधिक बड़ा होता है, तब अपेक्षाकृत लंबी वाहिकाएं सुस्पष्ट वलयों में व्यवस्थित दिखाई पड़ती हैं, जैसे कि *क्वेरकस, फ्रेक्सीनस* (***Quercus, Fraxinus***) तथा अन्य शीतोष्ण वृक्षों में काष्ठ वलय रंध्री कहलाती है। अधिक बड़ी वाहिकाओं वाला क्षेत्र **अग्र या बसंत** दारू कहलाता है। वह भाग जिसमें वाहिकाएं अपेक्षाकृत छोटे व्यास की होती हैं, वह **पश्च या शरद** दारू कहलाता है। आप पहले ही द्वितीयक वृद्धि से संबन्धित सभी मुददों के बारे में विस्तार से विकासात्मक जीवविज्ञान (एल.एस.ई-06) की इकाई 10, खंड II में पढ़ चुके हैं।

ऊर्ध्वाधर तंत्र में दारू मृदूतक का वर्गीकरण उसकी स्थिति के आधार पर किया जाता है (चित्र 8.33 देखिए)। परावाहिकी **(paratracheal)** मृदूतक जैसा कि अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ता है यह वाहिकीय तत्वों से संबद्ध रहता है। अपवाहिकी **(apotracheal)** मृदूतक वाहिकीय तत्वों से संबद्ध नहीं होता है। जब यह मृदूतक मौसम के आरंभ या अंत में उत्पन्न होता है, तब यह अलग स्थान ग्रहण करता है तथा **परिसीमा मृदूतक (boundary parenchyma)** कहलाता है।

पुराने तने में, काष्ठदारु, दो स्थितियों या क्षेत्रों (postures) में विभक्त दिखाई देता है। परिधिय क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा अनुक्षेत्र होता है जिसका रंग हल्का होता है, यह रसदारु **(sapwood)** कहलाता है तथा यह वह भाग होता है जो सक्रिय रहता है। अपेक्षाकृत पुराना, केन्द्रीय, स्थूल और संचयी (accumulative) भाग जो गहरा तथा क्रियात्मक रूप से निष्क्रिय दारु/काष्ठ अंत: काष्ठ **(heart wood)** कहलाता है।

क्वेरकस (*Quercus*), *रोबीनीया* (*Robinia*) तथा टीक [(*टेक्टोना ग्रांडिस*) *Tectona grandis*] के काष्ठ में, अंत: काष्ठ में वाहिकाओं के बराबर वाली मृदूतकी कोशिकाओं के जीवद्रव्यक/प्रोटोप्लास्ट अंदर घुस जाते हैं तथा कोशिका की अवकाशिकाओं/ल्यूमेन को भर देते हैं। ये टाइलोसिस कहलाते हैं। आप टाइलोसिस के बनने के बारे में बेहतर जानकारी हासिल करने के लिए खंड II की इकाई 10 (एल.एस. ई-06) को भी पढ़िए।

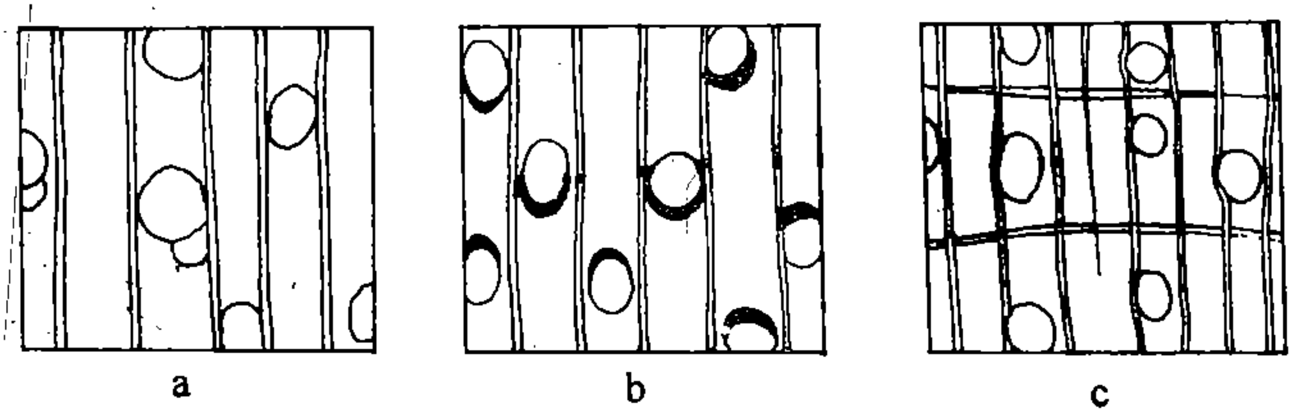

चित्र 8.33 : काष्ठ/दारू में मृदूतक का वितरण, a) अपवाहिकी, b) परावाहिकी c) परिसीमा मृदूतक (Modified from K R Rao and K B S Juneja, A hand book for field identification of fifty important timbers of India. The manager of publications, Govt of India, Delhi 1971.

काष्ठ/दारू के क्षैतिज तंत्र में अर (rays) (संवहनी अथवा जाइलम अर) होती हैं। इनका बेहतरीन अध्ययन काष्ठ/दारू के टी.एस. (अनुप्रस्थ काट), टी.एल.एस (अनुदैर्ध्य काट) तथा आर.एल.एस (अरीय अनुदैर्ध्य काट) काट कर किया जा सकता है। (चित्र 8.34 तथा 8.35)

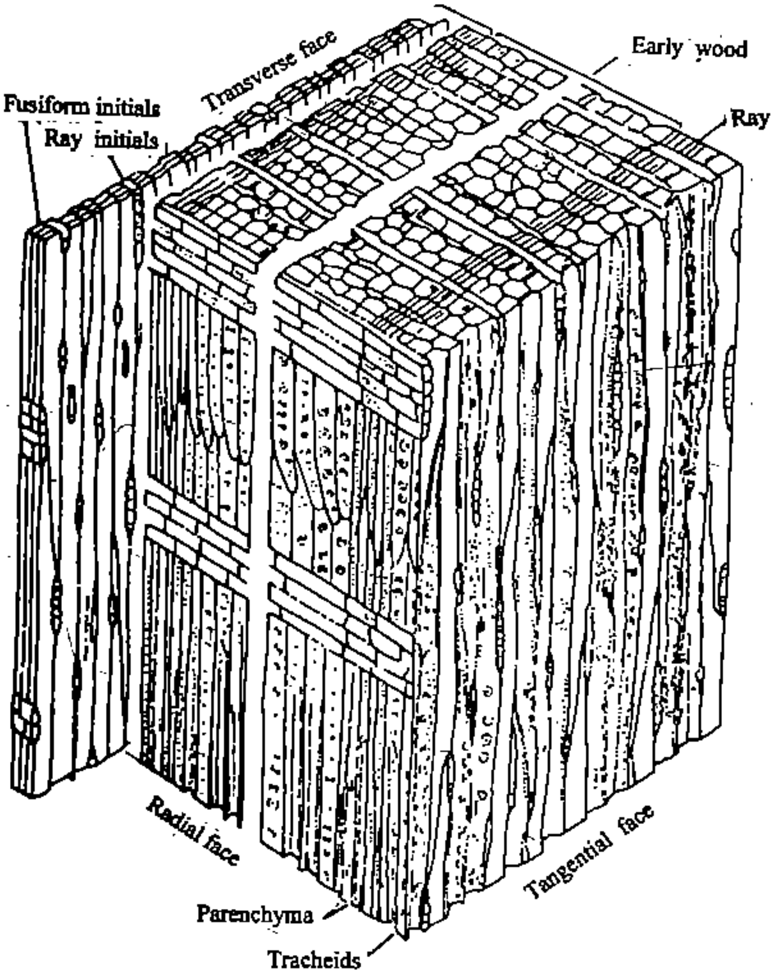

चित्र 8.34 : थूजा ऑक्सिडेन्टेलिस (*Thuja occidentalis*) [श्वेत देवदार] के कैम्बियम तथा द्वितीय जाइलम का ब्लॉक आरेख (श्वेत देवदार/सीडर)। अनावृतबीजी (कोनिफर/शंकुवृक्ष) काष्ठ का उदाहरण। ऊर्ध्वाधर तंत्र वाहिनिकाओं तथा मृदूतक की अल्प मात्रा का बना होता है। क्षैतिज तंत्र में नीची, एकपंक्तिक (uniseriate) अरें होती हैं जो मृदूतकी कोशिकाओं की बनी होती हैं।

अरें एकपंक्तिक (एक-कोशिका चौड़ी) या बहुपंक्तिक (कुछ कोशिका चौड़ी) होती हैं। ये गुण सबसे अच्छी तरह से टी.एल.एस (अनुप्रस्थ-अनुदैर्घ्य काट) में देखा जा सकता है। अरें समकोशिकीय (समरूप) हो सकती हैं, यदि उनकी सभी कोशिकाएं समान प्रकार की होती हैं अथवा विषमकोशिकीय (विषम रूप) हो सकती हैं, यदि उनमें एक से अधिक प्रकार की कोशिकाएं हों। समकोशिकीय अरों की सभी कोशिकाएं तथा विषमकोशिकीय को अधिकांश कोशिकाएं अरीय तल में दीर्घीकृत होती हैं। ये शयान (procumbent) अर कोशिकाएं कहलाती हैं। कम प्रचलित पर ऊर्ध्वाधर रूप से दीर्घीकृत अर कोशिकाएं अनुलंब कोशिकाएं (upright cells) कहलाती हैं। ये सामान्यत: विषमकोशिकीय अरों के किनारों पर पाई जाती हैं। अरों का कार्य क्षैतिज परिवहन का है।

पाइनस (*Pinus*) में बहुपंक्तिक अरें होती हैं जिनमें से कुछ में राल नलिकाएं (resin canals) भी उनसे संबद्ध होती हैं।

द्वितीयक फ्लोएक (Secondary Phloem) :

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, द्वितीय फ्लोएम संवहनी कैम्बियम के द्वारा बाहर की ओर उत्पन्न किया जाता है।

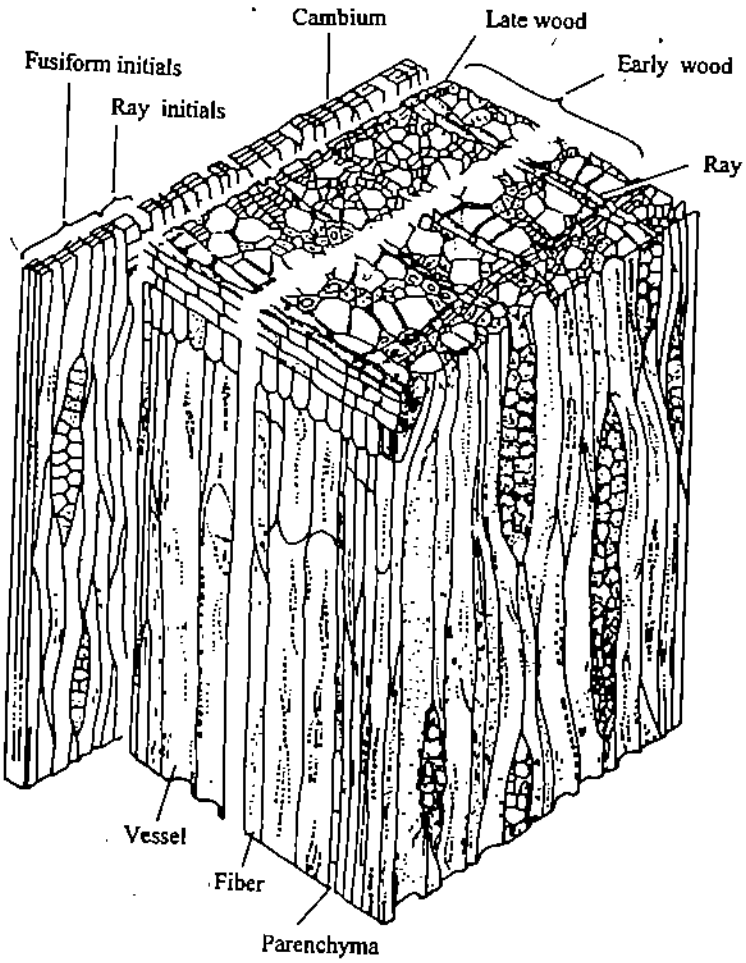

चित्र 8.35 : *लिरियोडेन्ड्रॉन ट्यूलिपीफेरा* (*Liriodendron tulipifera*) (ट्यूलिप वृक्ष) के कैम्बियम तथा द्वितीय जाइलम का ब्लॉक आरेख। आवृतबीजी (द्विबीजपत्री) पादप के काष्ठ/दारु का उदाहरण। ऊर्ध्वाधर तंत्र में वाहिकाएं होती हैं, जिनके परिवेशित गर्त (bordered pits) होते है जो विपरीत व्यवस्था में झुकी हुई अंतःभित्तियों वाले तथा सीढ़ीनुमा छिद्रित पट्टिकाओं को (scalariform perforation plates) धारण किए होते हैं; हल्के से परिवेशित गर्तों वाली फाइबर वाहिनिकाएं तथा अंतस्थ व्यवस्था (terminal arrangment) में जाइलम मृदूतक रज्जुक। क्षैतिक तंत्र में विषमांगी अरें (heterogenous rays) होती हैं (सीमांत कोशिकाएं सीधी होती है; अन्य दंडवत् (लेटी हुई) होती हैं), जो एकपंक्तिक तथा द्विपंक्तिक एवं भिन्न-भिन्न लंबाइयों की होती हैं।

इसमें ऊर्ध्वाधर तथा क्षैतिज तंत्र भी पाए जाते हैं। इसमें पाई जाने वाली कोशिकाओं के प्रकार प्राथमिक फ्लोएम में पाई जाने वाली कोशिकाओं के समान होती हैं। बहुत से पादपों जैसे *कोरकोरस* (*Corchorus*) तथा *कैनाबिस* (*Cannabis*) में द्वितीय फ्लोएम में रेशों/फाइबर की काफी मात्रा/अनुपात पाया जा सकता है।

अधिकांश पादपों में जैसे-जैसे द्वितीय क्रिया बढ़ती जाती है, तो पुराना द्वितीय फ्लोएम नए द्वितीय फ्लोएम द्वारा विस्थापित होता जाता है। ये पुराना, परिधिय द्वितीय फ्लोएम **अ-क्रियाशील फ्लोएम** कहलाता है। कभी-कभी ये अक्रियाशील फ्लोएम क्रियाशीलता जारी रखता है तथा मंड संचय करता है। इस तरह के फ्लोएम की चलनी नलिकाओं (sieve tubes) का विशेष गुण **नियत कैलोस (definitive callose)** का निर्माण करना होता है (सेक्शन 7 देखिए)।

वाइटिस (*Vitis*) और बॉम्बैक्स (*Bombax*) में, अ-क्रियात्मक चलनी नलिका तत्व आसपास के द्वितीय फ्लोएम अक्षीय मृदूतक के द्वारा टाइलोसिस जैसे क्रम प्रसरणों/प्रचुरोद्भवन से भर जाते हैं। इस प्रकार के अनधिकार प्रवेश टाइलोसॉइड्स (**tylosoids**) कहलाते हैं।

छाल (Bark) :

पहले की बनी हुई उपचर्म नई उपचर्म द्वारा विस्थापित हो सकती है। जब इस प्रकार का विस्थापन संपन्न होता है, तब नवीनतम उपचर्म सदैव पहले वाली (सबसे आखिर में बनी) के भीतर की ओर बनती है।

इस बाद में बनने वाली उपचर्म की उत्पत्ति वल्कुट, प्राथमिक फ्लोएम, अथवा द्वितीय फ्लोएम से भी हो सकती है। सामान्यत: परवर्ती (एक के बाद एक) उपचर्मों के दो प्रकार के निर्माण को विभेदित किया जा सकता है।

i) वे पादप जिनमें पहले बनने वाली उपचर्म भीतरी ऊतक में विकसित होती हैं, बाद में बनने वाली उपचर्में सामान्यत: पहले वाली उपचर्म में बनने वाले बेलन के समान ही पूरा बेलन बनाती हैं। इस प्रकार के पादप **वलय छाल (ring bark)** बनाते हैं।

ii) वे पादप जिनमें पहले बनने वाली उपचर्म बाह्यत्वचा या वल्कुट की बाहरी परतों में उत्पन्न होती है, उनमें बाद वाली उपचर्म शल्कों (scales) या छिलकों (shell) के रूप में विकसित होती हैं। इन शल्कों की अवतल (concave) सतह बाहर की ओर होती है। इस प्रकार के पादप **शल्कीय छाल (scaly bark)** उत्पन्न करते हैं।

राइटिडोम (Rhytidome) :

जब कभी भी नई उपचर्म, पहले से उपस्थित उपचर्म के अंदर की ओर बनती है, तो उसके बाहर वाले ऊतक भीतरी ऊतकों से कट जाते हैं। उनका पोषण तथा जल आपूर्ति कट जाता है तथा ये कोशिकाएं अंतत: मर जाती हैं। ऐसे ऊतकों के बाहर एक कठोर बाहरी पपड़ी विकसित हो जाती है। ये पपड़ी नीचे से उत्पन्न होने वाले अतिरिक्त कार्क ऊतक के कारण मोटाई में बढ़ जाती है। इस प्रकार की सभी कॉर्क परतें सबसे भीतरी कागजन (phellogen) के बाहर वाले वल्कुटी/फ्लोएम ऊतकों सहित **राइटिडोम** (बाहरी छाल) कहलाती हैं (चित्र 8.36 देखिए)।

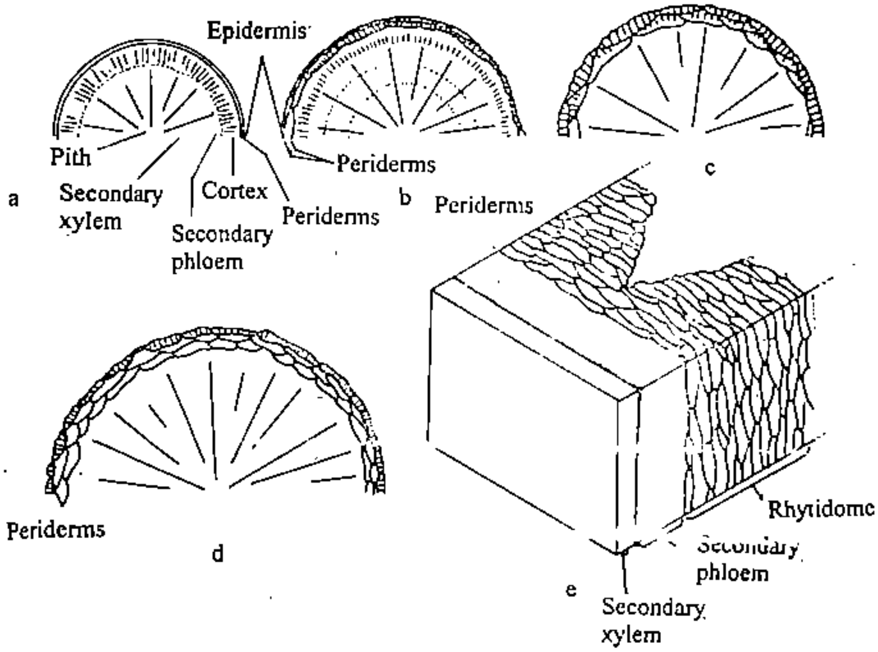

चित्र 8.36 : तने में द्वितीय क्रियाविधि के फलस्वरूप उपचर्म तथा राइटिडोम का निर्माण।

संवहनी कैम्बियम के बाहर वाले सभी ऊतक छाल शब्द में आ जाते हैं। छाल का जीवित भाग, जो राइटिडोम के भीतर का होता है वह अक्सर भीतरी छाल कहलाता है।

वातरंध्र (Lenticels) :

वातरंध्र सामान्यत: जड़ों, तनों, तरुण शाखाओं, फलों तथा बीजों तक में पाए जाते हैं। वातरंध्र रंध्रों अथवा रंध्रों के समूह के नीचे के सीमित क्षेत्र होते हैं (चित्र 8.37)। इन क्षेत्रों में कागजन कार्क कोशिकाओं के स्थान पर विरल रूप से व्यवस्थित, अन्तरा कोशिकी अवकाशों वाली मृदूतकी सुबेरिनविहीन कोशिकाएं (जो पूरक कोशिकाएं (complimentary cells) कहलाती हैं) बाहर की ओर काटते हैं। कागजन भीतर की ओर बनता है। ये संरचना वातरंध्र बनाती है (चित्र 8.37 देखिए)।

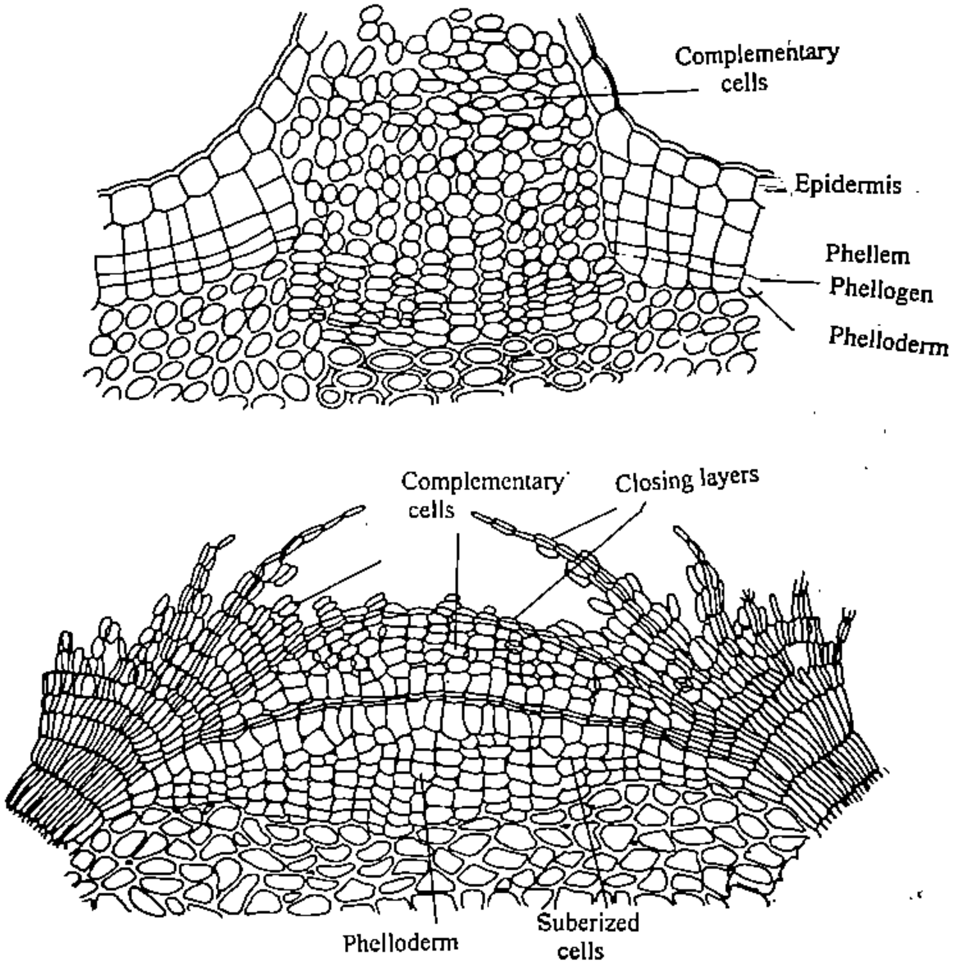

चित्र 8.37 : a) सैम्बूकस नाइग्रा (*Sambucus nigra*) का तरुण वातरंध्र b) प्रुनस ओरियम (***Prunus avium***) का परिपक्व वातरंध्र (a ट्रौल से लिया गया (1948); b) बोरीयू (Boureau) 1954, से लिया गया)।

वातरंध्र अपने आसपास के उपचर्म/बाह्यत्वचा से ऊपर उठे हुए दिखाई पड़ते हैं क्योंकि इनका आमाप/साइज बड़ा तथा कोशिकाओं की व्यवस्था विरल होती है। उनका कार्य गैसों का आदान-प्रदान है।

बोध प्रश्न 5

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

क) प्राथमिक तने में तीन मूलभूत ऊतक तंत्रों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

ख) ऐसे तीन पादपों के नाम बताइए जिनमें प्रकाशसंश्लेषी क्रिया तने द्वारा संपन्न होती है।

....

....

....

....

....

ग) उस ऊतक का नाम बताइए जो एकबीजपत्री तने को सबसे अधिक दृढ़ता प्रदान करता है।

....

....

....

....

....

घ) तनों में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के संवहन पूलों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

ङ) पादपों के दो समूह बताइए जहाँ एक में तने में अवर्धी संवहनी पूल पाए जाते हों।

....

....

....

....

....

8.3.4 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री तनों के बीच तुलना

पादप एक दूसरे से अपने शारीरीय (anatomical) गुणों में अलग होते हैं। ये गुण-निश्चित/पूर्ण नहीं होते हैं। बहुत सी भिन्नताएं/अपवाद पाए जा सकते हैं। कुछ विशिष्ट लक्षणों/गुणों का सारांश नीचे दिया जा रहा है।

तालिका 8.3 : द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादप के तने के बीच मुख्य अन्तर

	द्विबीजपत्री तना	एकबीजपत्री तना
बाह्यत्वचा	स्पष्ट, त्वचारोम सहित/विहीन, रंध्र विरल रूप में, पर्णहरित	सामान्यत: मोटी भित्ति वाली, सुस्पष्ट
अधोत्वचा	सुस्पष्ट हो भी सकती है नहीं भी, यदि होती है तो सामान्यत: श्लेषोतकी होती है	सामान्यत: उपस्थित, दृढ़ोतकी
वल्कुट	एक से बहुपरतीय; मृदूतकी दृढ़ोतक हो सकता है	अधोत्वचा के बाद नली कोशिकाएं विभेदित नहीं होती हैं तथा अधोत्वचा से अक्ष के केन्द्र तक विस्तारित रहती हैं। ये भरण ऊतक के रूप में जाना जाता है। मृदुतकी/दृढ़ोतकी।
अंत:त्वचा	सामान्यत: स्पष्ट नहीं होती है, अधिकांशत: कोशिकाओं द्वारा प्रदर्शित की जाती है, खंडित या पूर्ण वलय	अनुपस्थित
परिरंभ	प्रोटोफ्लोएम तथा अंत:त्वचा के बीच उपस्थित, मृदूतकी	अनुपस्थित
अंतरा पूलीय मृदूतक	संवहन पूलों के बीच में मृदूतक की एक पट्टी	अनुपस्थित
मज्जा	बड़ी, उत्कृष्ट, केन्द्रीय बेलन, मृदूतकी, विचित्र कोशिका। (आइडियोब्लास्टिक दृढ़ोतकी)	विभेदित नहीं होती है
संवहन पूल	क) संयुक्त (conjoint), बहि:फ्लोएमी (collateral), वर्धी (open) संवहन पूल मध्यआदिदारुक (endarch) प्रोटोजाइलम सहित।	क) संयुक्त, बहि:फ्लोएमी अवर्धी।
	ख) अनेक, सामान्यत: एक वलय में व्यस्थित।	ख) अनेक, पूरे भरण ऊतक में बिखरे हुए
	ग) लगभग सभी एक ही आमाप के होते हैं।	ग) केन्द्र की ओर बड़े तथा परिधि की ओर छोटे होते हैं।
	घ) फ्लोएम मृदूतक उपस्थित	घ) फ्लोएम मृदूतक अनुपस्थित
	ङ) पूल आच्छद अनुपस्थित या अल्पविकसित	ङ़) सुविकसित पूल आच्छद उपस्थित

8.3.5 विशेषीकृत तनें (Specialized Stems)

आप अब तक उस तने की संरचना तथा संगठन से परिचित हो गए होंगे जो सामान्यत: सामान्य पर्यावरणीय परिस्थितियों में उगते हैं। हालांकि, बहुत से पादपों में तना विशिष्ट प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों में जीवित रहने के लिए विशेषीकृत रूपांतरण कर लेता हैं। हम इनमें से कुछ रूपांतरणों के बारे में इस उपभाग में जानेगें। इनमें से अधिकांश पादपों में रूपांतरण, उस अंग को अतिरिक्त रूप से चिरस्थायी/सदाबहार (perennating) बना देते हैं।

प्रकंद (Rhizome) : प्रकंद भूमिगत पृष्ठाधर तने या शाखाएं होते हैं जो क्षैतिज रूप से भूमि की सतह के नीचे रहते हैं (चित्र 8.38)। इनमें पर्वसंधि (nodes) तथा पर्व (internodes) पाए जाते हैं। पर्वसंधि पर भूरे शल्क पर्ण होते हैं। इनमें कक्षीय (axillary) तथा शीर्षस्थ कलियां दोनों होती हैं। अपस्थानिक जड़ें पर्वसंधियों पर विकसित होती हैं। कभी-कभी इनमें संकुचन जड़ें भी पाई जा सकती हैं। प्रकंद खाद्य पदार्थों के संग्रह के कारण सामान्यत: गूदेदार होते हैं। ये शीर्ष विभज्योतक के द्वारा उगते हैं जो प्ररोह को जन्म देते हैं। ये प्ररोह शीर्ष बहुत जल्दी ही मर जाता है तथा प्रकंद की वृद्धि कक्षीय कलिका के द्वारा जारी रहती है। इस प्रकार की वृद्धि संधिताक्षी (sympodial) कहलाती है।

प्रकंद के दो बहुत अच्छे उदाहरण अदरक (ginger) [*जिंजीबर ऑफिसिनेलिस*] तथा हल्दी [*कर्क्युमा लोंगा*] हैं।

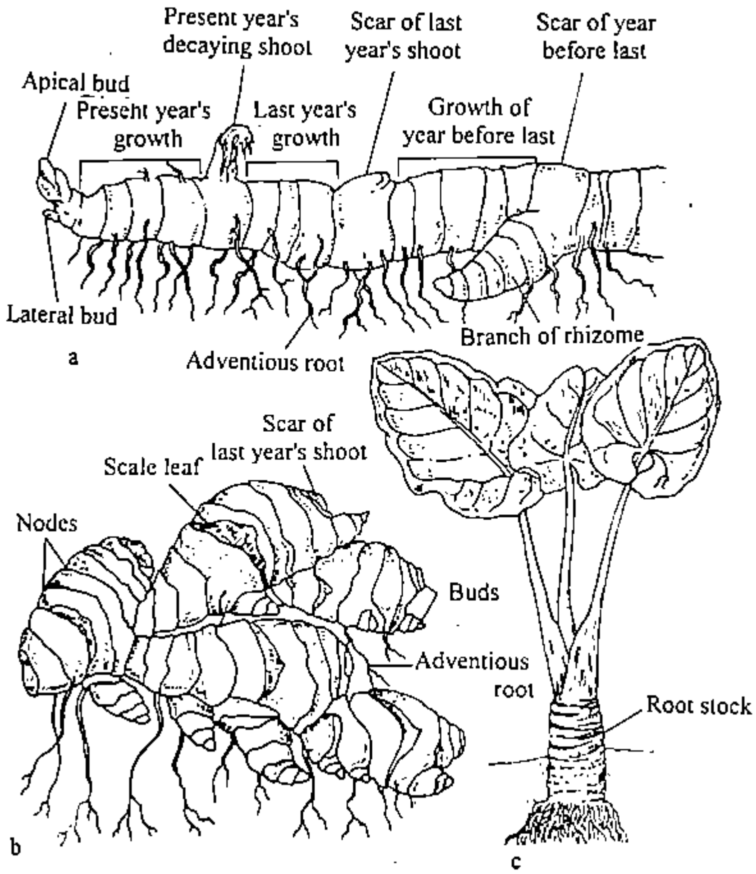

चित्र 8.38 : प्रकंद a) एक जंगली पादप का चार वर्षीय प्रकंद। शीर्षस्थ कलिका अगले वर्ष के प्ररोह को विकसित करती है जबकि वृद्धि पार्श्व कलिका से तीर की दिशा में होती है। तना इसलिए संधिताक्षी होता है। b) अदरक का प्रकंद c) एलोकेसीया इंडिका (*Alocasia indica*) का प्रकंद (ऊर्ध्वाधर प्रकंद)।

कंद (Tuber) : कंद एक आम शब्द है जो पादप के ऐसे किसी भी गूदेदार भाग के लिए प्रयुक्त होता है जो खाद्य संग्रह कर सकता हो। ये तना कंद या मूल कंद हो सकते हैं। तना कंद का सबसे प्रचलित उदाहरण आलू [(*सोलेनम ट्यूबरोसम*) *Solanum tuberosum*] है (चित्र 8.39 a देखिए) जब आलू चक्षुकलिका (eyebud) से बोया जाता है तो उसके तने का निचला भाग मिट्टी से ढ़क दिया जाता है।

कक्षीय या अपस्थानिक शाखाएं तने के इस भूमिगत भाग से निकलती हैं। ये शाखाएं खाद्य पदार्थों के संग्रह के कारण (अधिकांशत: मंड) कंद में फूल जाती हैं तथा उसकी वृद्धि को रोक देती है। कंद बहुत धीमी गति से बढ़ता है तथा इसमें पर्वसंधि और पर्व दोनों होते हैं। पर्वसंधियां अपने अक्ष में शल्क पत्रों (तरुण अवस्था में) तथा चक्षुओं (अवशेषी कलियों) की उपस्थिति के द्वारा विभेदित होती हैं। चक्षु सर्पिलाकार रूप में व्यवस्थित रहते हैं तथा दूर स्थित सिरे पर अधिक संख्या में होते हैं। ये रोज़ सिरा (rose end) भी कहलाता है। दूरस्थ सिरे का सीमांत एक शीर्षस्थ कलिका द्वारा होता है। कंद में कॉर्की/काग जैसी त्वचा पाई जाती है जो कागजन द्वारा बनती है। कुछ अन्य पादपों के उदाहरण जिनमें कंद बनते हैं वे हैं : *साइप्रस रोटंडस* [(*Cyperus rotundus*) खरपतवार], हाथीचक [(artichoke) *हैलीएन्थस ट्यूबरोसस* (*Helianthus tuberosus*)] (सब्जी/शाक), जो इन्युलिन (inulin) का संचय करता है तथा चीनी हाथीचक (Chinese artichoke) *स्टैकिस ट्यूबरीफेरा* (*Stachys tuberifera*) जो स्टैकिओस (stachyose) संग्रह करता है।

शल्क कंद **(Bulbs)** : शल्क कंद रूपांतरित अक्ष होता है जिसमें तना बहुत ही लघुकृत (डिस्क) होता है तथा उसमें से गूदेदार शल्क पत्र निकलते हैं। डिस्क का आकार अवमुख (convex) या शंकु जैसा (conical) होता है। जिसमें बहुत ही संकुचित संधियां होती हैं। पर्वसंधियां गूदेदार शल्क वर्ण उत्पन्न करती है जो खाद्य संग्रह करती हैं। पुष्पन (फूल खिलने) के समय शीर्षस्थ कलिका पुष्पदंड (scape) में

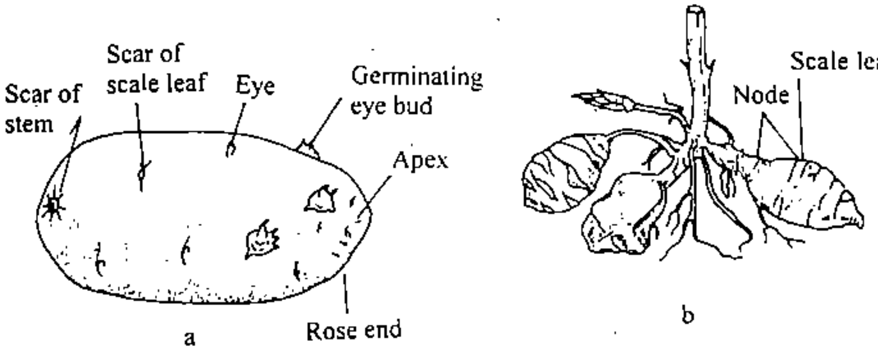

चित्र 8.39 : कंद : रूपांतरित तना a) सोलेनम ट्यूबरोसम, b) हैलीएन्थस ट्यूबरोसस।

विकसित हो जाती है। संतति शल्क कंद अक्षीय कलियों से भी बन सकते हैं। अपस्थानिक जड़ें डिस्क की निचली सतह से निकलती हैं। गूदेदार पत्तियों की व्यवस्था के आधार पर दो प्रकार के बल्ब पाए जाते हैं (चित्र 8.40 देखिए)।

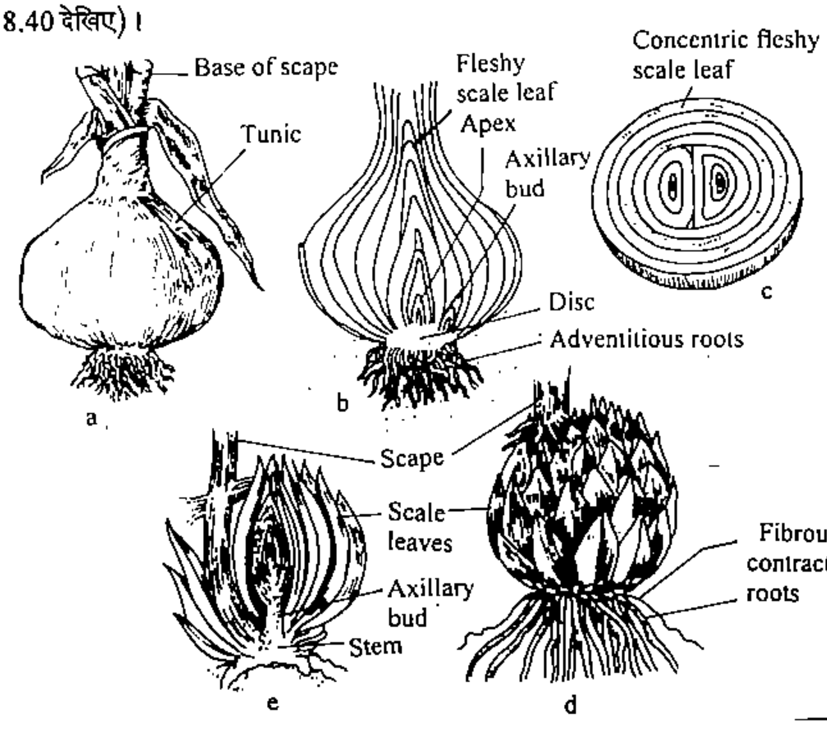

चित्र 8.40 : शल्क कंद – रूपांतरित तना, a) प्याज का कंचुकित शल्क कंद (tunicated bulb) b) प्याज की (एल एस) अनुदैर्ध्य काट, c) शल्क कंद की अनुप्रस्थ काट d) लिली (lily) का शल्कीय शल्क कंद, e) शल्कीय शल्क कंद की अनुदैर्ध्य काट।

i) कुंचिकित शल्क कंद (Tunicated Bulbs) : इसमें शल्क कंद संकेन्द्री (concentric) तरीके से व्यवस्थित रहते हैं जैसा कि अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ता है। पूरा शल्क कंद शुष्क कलानय (membranous) शल्क पत्रों से ढंका रहता है जो कंचुक बनाता है। इस प्रकार के शल्क कंद प्याज [*एलियम सीपा* (*Allium cepa*)]; ट्यूलिप [*टुलपिया* (*Tulpia*)]; हायसिन्थ [*हायासिन्थस* (*Hyacinthus*)]; तथा ट्यूबरोस [*पोलिएन्थिस* (*Polyanthes*)] में पाये जाते हैं (चित्र 8.40 a देखिए)।

ii) शल्कीय या कोरछादी शल्क कंद (Scaly or imbricate bulbs) : इसमें शल्क पत्र संकेन्द्री नहीं होते हैं बल्कि पुष्प के दल/पंखुड़ी के समान ढ़ीले रूप से व्यवस्थित रहते हैं, जो किनारों पर अतिव्यापी (एक दूसरे पर चढ़े हुए) होते हैं। ये संहत (compact) नहीं होते हैं बल्कि एक सामान्य कंचुक से ढ़ंके रहते हैं। लहसुन [*एलियम सेटाइवम* (*Allium sativum*) तथा लिली [*लिलियम* स्पी (*Lilium* spp)] में इस प्रकार के शल्क कंद पाए जाते हैं (चित्र 8.40 b देखिए)।

घनकंद/कॉर्म (Corms) : घनकंद ठोस शल्क कंद भी कहलाते हैं। ये बहुत अधिक संहत (condensed) ऊर्ध्वाधर जड़ स्कन्ध (root stock) होते हैं जिनमें बहुत बड़ी शीर्षस्थ कलिका तथा कुछ शल्क पत्र होते हैं। अपस्थानिक जड़ें या तो घनकंद के आधार से अथवा उसकी पूरी काया से ही उगती हैं।

एमोर्फोफेलस कैम्पेनुलेटस (*Amorphophallus campanulatus*) का घनकंद विशाल संहत संधि (condensed internode) होता हैं जिसमे असंख्य अपस्थानिक कलिकाएं तथा जड़ें पूरे शरीर/काया पर पाई जाती है। नए संतति घनकंद नए पर्व बनाने वाले प्ररोह के आधार पर खाद्य पदार्थों के संचय के कारण उत्पन्न होते हैं। केसर (saffron) [*क्रॉकस सेटाइवस* (*Crocus sativus*)] में भी घनकंद पाए जाते हैं और ये उनके द्वारा उगते हैं (चित्र 8.41 देखिए)।

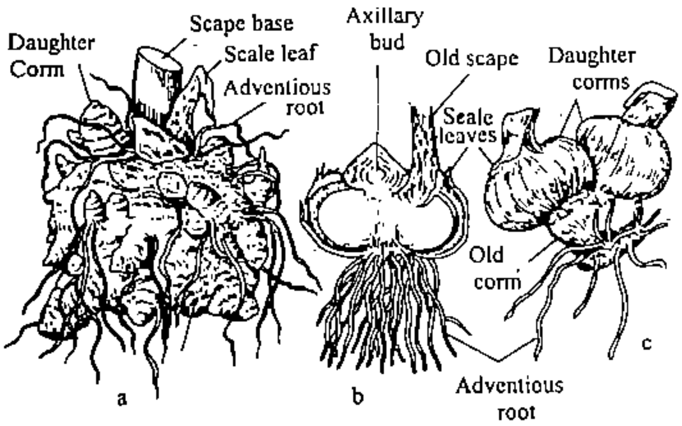

चित्र 8.41 : घनकंद-रूपांतरित तना a) संतति घनकंदों के साथ क्रॉकस का घनकंद, b) क्रॉकस के घनकंद का अनुदैर्घ्य काट c) एमोर्फोफेलस का घनकंद।

उपरिभूस्तारी, भूस्तारिका, भूस्तारी, अंत:भूस्तारी

कमजोर शाकीय प्रकृति वाले पादप विशेष शाखित तनों के द्वारा तेजी से प्रवर्धन/संचरण करते हैं जो नए पादपों को जन्म देते हैं व इनमें हालांकि प्रत्येक पौधा अल्प-जीवी होता है परन्तु कोलोनी/उपनिवेश बहुवर्षी होती है। ये रूपांतरित शाखाएं या तो भूमि या जल की सतह पर उगती हैं या आंशिक रूप से या पूर्णत: भूमिगत हो सकती हैं।

उपरिभूस्तारी (Runner) : दूबघास (*Cynodon dactylon*) , ऑक्जैलिस (*Oxalis*), *फ्रेगेरिया* (*Fragaria*) जैसे सर्पी पौधे उपरिभूस्तारी कहलाते हैं इसमें सबसे नीचे की पत्तियों में स्थित कक्षीय कलिका हल्की सी परिवर्तित शाखाओं को जन्म देती हैं। कलिका का आधारी पर्व लम्बा होकर क्षैतिज पंथ

पर जमीन के सतह पर बढ़ता है। इस प्रकार कलिका जनक पौधे से दूर-दूर तक पहुँच जाती है। यह प्रक्रिया लगातार होती रहती है। (चित्र 8.42 a)

भूस्तारीका (Offset) : भूस्तारिकाएं जलीय पादपों में पाई जाती हैं। ये भी एक प्रकार के उपरिभूस्तारी ही होते हैं, परन्तु ये अपेक्षाकृत छोटे और मोटे होते हैं। जल हायसिन्थ [(*ईकोर्निया क्रेसीपिस*) *Eichhornic crassipes*] भूस्तारिका के द्वारा उगते हैं (चित्र 8.42 d देखिए)।

भूस्तारी (Stolon) : ये एक विशेष प्रकार का उपरिभूस्तारी होता है जो आरंभ में क्षैतिज रूप से (आड़ा) नहीं उगता है। पहले ये सामान्य शाखाओं की तरह ही ऊपर की ओर उगता है और फिर भूमि को स्पर्श करने के लिए नीचे की ओर झुक जाता है। भूमि को स्पर्श करने के बाद संतति पादप बन जाते हैं। **मेन्था** (चित्र 8.42 b) तथा रोसेसी (Rosaceae) कुल के कुछ और सदस्यों में प्राकृतिक भूस्तारी पाए जाते हैं।

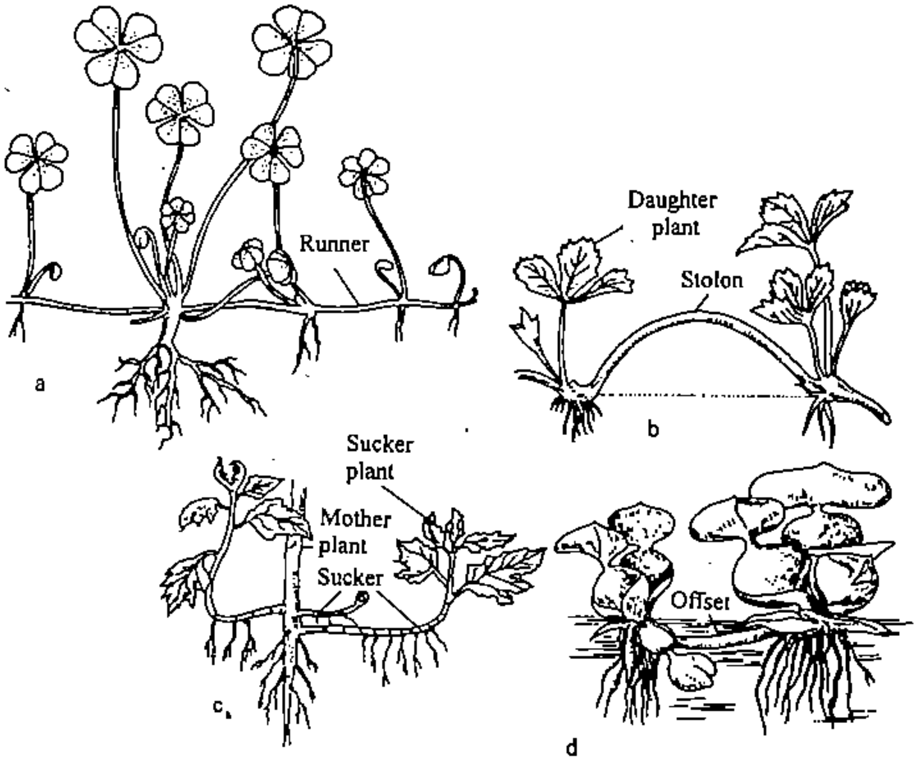

चित्र 8.42 : तने के रूपांतरण : a) *ऑक्सेलिस कोर्निकुलेटा* (*Oxalis corniculata*) का उपरिभूस्तारी b) *मेन्था* स्पी. (*Mentha* sp.) का भूस्तारी c) *क्राइसेन्थिमम* स्पी. (*Chrysanthemum* sp.) का अंत:भूस्तारी d) ईकॉर्निया स्पी. (*Eicchornia* sp.) की भूस्तारिका।

अंत:भूस्तारी (Sucker) : अंत:भूस्तारी भूमिगत् उपरिभूस्तारी होता है जो जल्दी ही ऊपर की ओर बढ़ जाता है तथा जड़ों को स्पर्श करने पर संतति पादप बनाता है। अंत:भूस्तारी उत्पन्न करने वाले पादपों के उदाहरण *क्राइसेन्थिमम* (*Chrysanthemum*) तथा *मेन्था आर्वेन्सिस* (*Mentha arvensis*) हैं (चित्र 8.42 c)।

पर्णाभस्तंभ (Cladophyll) : ये पर्णाभवृंत (phylloclade) भी कहलाते हैं। ये वो रूपांतरण हैं जो मरूस्थलीय पादपों में पाए जाते हैं। रूपांतरण पादप को जल की क्षति को कम करने में सहायक होते हैं। पत्तियों की वृद्धि रुक जाती है और इससे वाष्पन (transpiration) कम हो जाता है। तना चपटा या फूला हुआ हो जाता है। ये पर्णहरित (chlorophyllous) होता है तथा प्रकाशसंश्लेषी अंग की तरह कार्य करता है। ऐसे चपटे या फूले हुए तने वाली सरंचनाएं पर्णाभवृंत या पूर्णाभस्तंभ कहलाती हैं (चित्र 8.43)। चपटा, गूदेदार भाग पर्व होता है तथा पर्वसंधि पर पत्तियां काँटों में बदल जाती हैं अथवा छोटे शल्क पत्रों में लघुकृत हो जाती हैं।

पर्णाभवृंत सामान्यत: कैक्टेसी (Cactaceae) व यूर्फोबिएसी (Euphorbiaceae) कुलों में तथा *म्यूलेनबेकिया* (*Meuhlenbeckia*), *कैसुएराइना* (*Casuarina*) तथा *रस्कस* (*Ruscus*) में पाए जाते हैं। सिर्फ एक पर्व वाले पर्णाभवृंत पर्णाभ (Cladode) कहलाते हैं (उदाहरण *एस्पेरेगस* (*Asparagus*))।

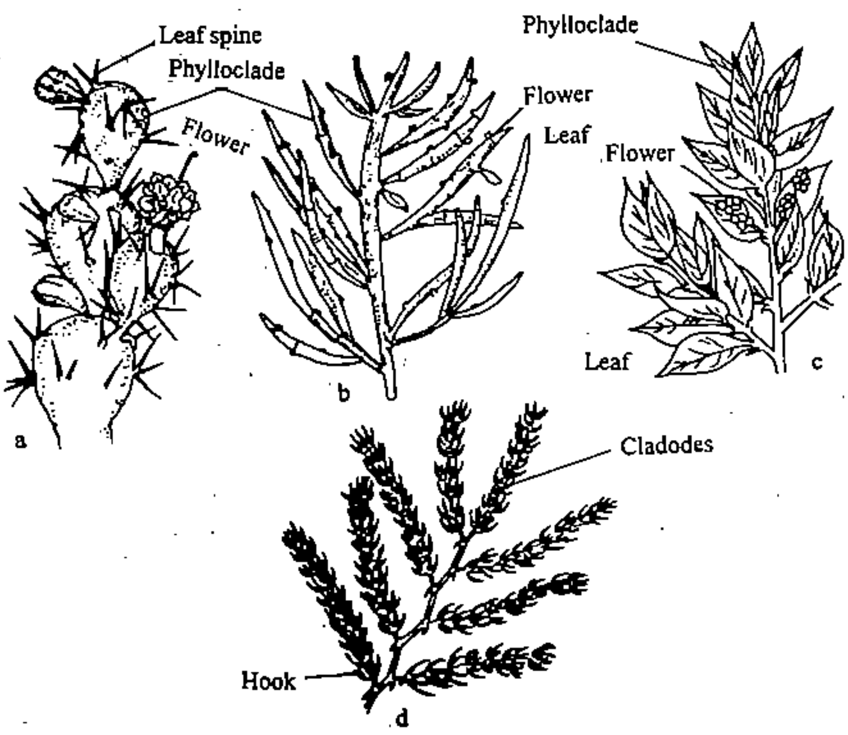

चित्र 8.43 : पर्णाभवृंत-तने का रूपांतरण : a) *ओपन्शिया* (*Opuntia*) का पर्णाभवृंत, b) *म्यूलेनबेकिया* *Muehlenbeckia*) का पर्णाभवृंत, c) रस्कस (*Ruscus*) का पर्णाभवृंत, d) *एस्पेरेगस* (*Asparagus*) का पर्णाभ।

काँटे तथा शूल (Thorns & Spines) : कक्षीय कलिकाओं की वृद्धि कभी-कभी रुक जाती है तथा वे काफी कठोर संरचना में परिवर्तित हो जाती हैं जो काँटे कहलाते हैं। ये शूल तथा तीक्ष्ण वर्धो (**Prickles**) से भिन्न होते हैं। काँटे बहुत ही गहरे स्थित संरचनाएं होती हैं जिनमें संवहनी संबंधन होते हैं तथा ये तने का सीधा प्रवर्धन होते हैं [उदा. *कैरीसा कैरन्डस* (*Carissa carandus*), *प्रूनुस* (*Prunus*), *अगेल मर्मालोस* (*Aegle marmelos*) चित्र 8.44]। तीक्ष्ण वर्ध बाह्यत्वचा पर महज सतही

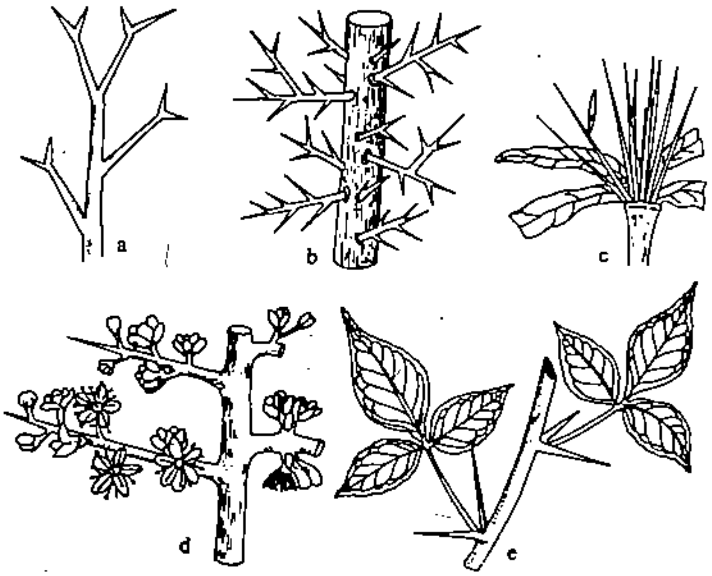

चित्र 8.44 : काँटे a) *कैरीसा कैरन्डस* के शाखित काँटे जिनकी उत्पत्ति कक्षीय होती है। b) *फ्लेकोर्शिया कैटाफैक्ट्रा* (*Flacourtia cataphracta*) के शाखित काँटे। इनमें से कुछ वास्तविक काँटे नहीं हैं बल्कि महज उपबाह्यत्वचीय बर्हि:वृद्धि हैं। c) *हाइग्रोफिला स्पाइनोस* (*Hygrophila spinos*) के कक्षीय काँटे। d) प्रून [प्रूनस] फूलों को धारण किए हुए काटें e) *अगेल मार्मेलोस* के युग्मित काँटे।

ब) निम्नलिखित में से प्रत्येक का एक उदाहरण दीजिए

i) उपरिभूस्तारी (Runner)

....

....

ii) भूस्तारी (Stolon)

....

....

iii) अंत:भूस्तारी (Sucker)

....

....

iv) भूस्तारिका (Offset)

....

....

v) पर्णाभवृंत (Phylloclade)

....

....

8.4 पत्ती/पर्ण

पत्तियां तने पर पार्श्व अंग होती हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, तने के साथ मिलकर ये प्ररोह तंत्र बनाती हैं। ये प्ररोह शीर्ष विभज्योतक की क्रिया के कारण उत्पन्न होती हैं। ये पर्वसंधियों पर उगती हैं। आकृतिक रूप से पत्ती को तने से विभेदित करना ज्यादा मुश्किल नही है। हालांकि, पत्ती को एक विशेष कार्य करना होता है जिसके लिए वह संरचनात्मक तथा शरीर क्रियात्मक रूप से विशेषीकृत होती है। इसलिए हम पत्ती की संरचना की अलग से चर्चा करेंगें।

पत्ती एक निश्चित वृद्धि तथा पृष्ठाधर सममिति वाली पेड़ का अंग है। इसका चपटा आकार इसके प्रकाशसंश्लेषी कार्य के अनुरूप होता है।

पत्तियों को लघुपर्णी तथा दीर्घपर्णी (मध्यम पर्ण) के रूप में वर्गीकृत की जाती है। दोनों प्रकार की पत्तियां प्ररोह शीर्ष पर मूलत: समान प्रकार के आद्य कैम्बियम से उत्पन्न होती हैं। लघुपर्ण छोटे आमाप की होती हैं क्योंकि ये कोई विस्तृत परवर्ती वृद्धि नहीं कर पाती हैं। ये साइलोटेल्स (Psilotales), क्लब मॉसेस (Club mosses) तथा कुछ अन्य टेरिडोफाइट्स में पाई जाती हैं।

दीर्घपर्ण या सामान्य पत्र (foliage leaves) जैसा कि जाना जाता है पुष्पीय पादपों में सामान्यत: पाए जाते हैं। इनकी लंबाई कुछ मिलीमीटर से लेकर कुछ ताड़ वृक्षों (palms) तथा केले में 2 मीटर तक हो सकती है। *विक्टोरिया अमेज़ोनिका* [(*Victoria amazonica*) विशाल जलीय लिली] की प्लावी पत्तियों (floating leaves) में पटल (lamina) 1.83 मीटर व्यास तक का हो सकता है।

सामान्य पत्र (Foliage leaf) : एक प्रारूपिक सामान्य पत्र में (चित्र 8.46 देखिए) तीन भाग पाए जाते हैं (क) पत्र आधार (leaf base); (ख) पर्णवृंत (petiole), पर्ण/पत्ती का वृंत तथा (ग) पर्ण पटल या फलक (blade)।

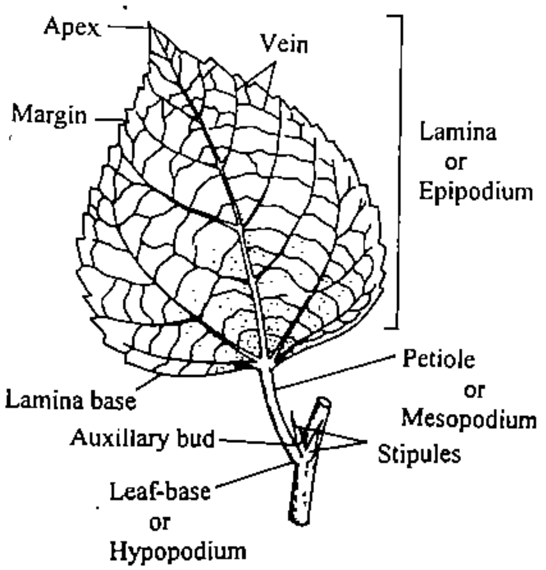

चित्र 8.46 : प्रारूपिक पत्ती के भाग।

पर्ण आधार पत्ती को तने से जोड़ता है। जब पर्णवृंत उपस्थित होता है, तब पत्ती **वृंतीय संवृत** कहलाती है। पर्णवृंत विहीन पत्ती **अवृंत (sessile)** कहलाती है। पर्णआधारों तथा पर्णवृंतों के विभिन्न प्रकार के रूपांतरण पाए जाते हैं। यहाँ हम पटल के बारे में चर्चा करेगें क्योंकि यह मुख्यत: प्रकाशसंश्लेषण तथा गैसों के आदान-प्रदान से संबद्ध होती हैं।

पर्ण पटल सामान्यत: एक चपटी संरचना होता है। ऊपरी सतह जो तने के अक्ष की ओर होती है, वह **अभ्यक्ष (adaxial)** कहलाती है निचली सतह, जो अक्ष से दूर होती है वह **अपाक्ष (abaxial)** कहलाती है। इस प्रकार की पत्तियां **पृष्ठाधर** कहलाती हैं तथा अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में पाई जाती हैं। एकबीजपत्री तथा छायादार पादपों में पत्ती इस प्रकार स्थित रहती है कि दोनों सतहों को समान प्रकाश मिलता है तथा दोनों सतहों में कोई अंतर नहीं होता है। इस प्रकार की पत्तियाँ **समद्विपार्श्व (isobilateral)** कहलाती हैं। बेलनी रूपरेखा वाली पत्तियाँ **केन्द्रिक (centric)** कहलाती हैं (उदाहरण प्याज)।

8.4.1 आंतरिक संरचना (Internal Structure)

आंतरिक रूप से पत्ती के पटल में तीन मूल प्रकार के ऊतक पाए जाते हैं : त्वचीय (बाह्यत्वचा), भरण (पर्णमध्योतक) तथा संवहनी (शिराएं)। अब हम प्रत्येक के बारे में और अधिक जानकारी लेते हैं।

त्वचीय ऊतक (बाह्यत्वचा)

बाह्यत्वचा पत्ती का त्वचीय ऊतक बनाती है। सामान्यत: बाह्यत्वचीय कोशिकाओं की एकल परत उपस्थित रहती है। हालांकि, फाइकस (*Ficus*), नेरियम (*Nerium*) तथा पाइपर (*Piper*) की पत्तियों में बहुपरती बाह्यत्वचा दिखाई पड़ती है। इस प्रकार की पत्तियों में अभ्यक्ष बाह्यत्वचा में अपाक्ष बाह्यत्वचा की अपेक्षा अधिक परतें पाई जाती हैं। जब कभी भी अपाक्ष सतह पर बाह्यत्वचीय परतों की संख्या अधिक होती है, तब एक उप-रंध्री (sub-stomatal) क्रिप्ट (crypt) सामान्यत: उपस्थित रहती है, जैसे कि *नेरियम ऑलिएन्डर* (*Nerium oleander*) की पत्ती में (चित्र 8.47)।

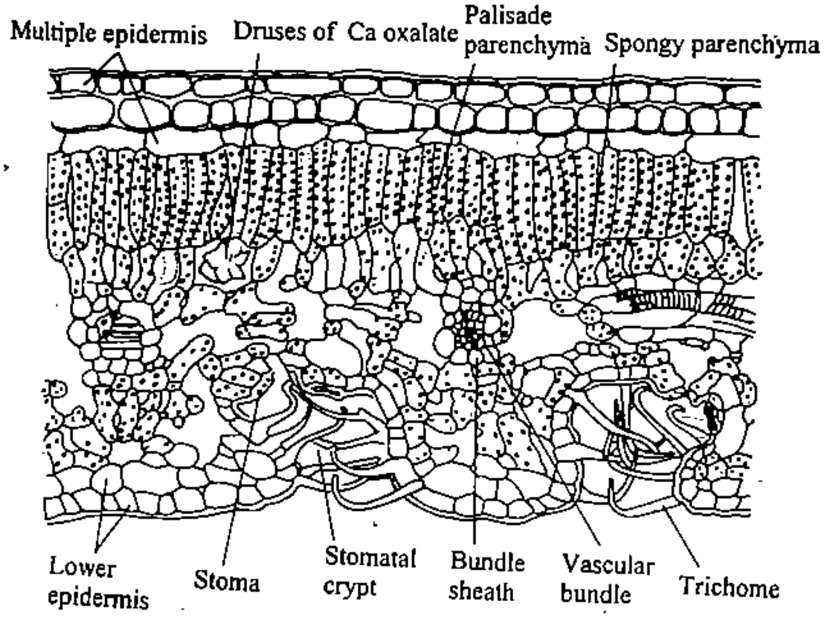

चित्र 8.47 : *नेरियम* की पत्ती की ऊर्ध्वाधर काट।

रंध्र (stomata) किसी भी पत्ती की बाह्यत्वचा का सबसे विशेष गुण होते हैं। वे पत्ती की दोनों सतहों पर उपस्थित हो सकते हैं (जैसे कि समद्विपार्श्व पत्तियों में) या सिर्फ अपाक्ष सतह पर (जैसे कि अधिकांश पृष्ठाधर पत्तियों में) सीमित हो सकती हैं। कभी-कभी जैसे कि *निम्फिया (Nymphaea)* की प्लावी पत्तियों में, रंध्र सिर्फ अभ्यक्ष सतह पर स्थित होते हैं।

बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में सुविकसित लवक (plastids) नहीं होते हैं। लवक विशेष रूप से रंध्रों की द्वार कोशिकाओं (guard cells) में पाए जाते हैं। इस प्रकार के लवकों में सिर्फ कुछ ग्रैना (grana) होते हैं। फिल्लोस्पैडिक्स (*Phyllospadix*), जो समुद्री जल में उगता है, उसकी बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में हरित लवक (chloroplast) पाए जाते हैं।

बहुत सी जातियों के पादपों की बाह्यत्वचा में त्वचारोम (trichomes) पाए जाते हैं। आवरणी तथा ग्रंथिय (glandular) दोनों प्रकार के त्वचारोम पत्तियों में पाए जाते हैं। त्वचारोम विभिन्न प्रकार के होते हैं। कुछ ग्रेमिनी कुल (graminaceous) की पत्तियों में, कुछ बाह्यत्वचीय कोशिकाएं आवर्धत्वक कोशिकाओं (bulliform cells) के रूप में रूपांतरित हो जाती हैं। इस प्रकार की कोशिकाएं आर्द्रताग्राही (hygroscopic) होती हैं।

बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में क्रिस्टल [उदाहरण *टैमेरिक्स (Tamarix)*, *प्लम्बैगो कैपेन्सिस (Plumbago capensis)*], कैल्सियम कार्बोनेट के सिस्टोलिथ [उदाहरण *फाइकस इलैस्टिका (Ficus elastica)*]; लिग्निन [उदाहरण *क्वेरकस (Quercus)*, *नेरियम (Nerium)*, साइकैडेसी, कोनिफर्स की नीडिल (needle)]; काउटचाउक (*coutchoue*) [उदाहरण *यूकेलिप्टस (Eucalyptus)*]; सिलिका [उदाहरण *इक्वीसीटम*, ग्रेमिनी, साइप्रैसी (Cyperaceae)]; तथा श्लेष्म (mucilage) [उदाहरण यूर्फोबिएसी (Euphorbiaceae), माल्वेसी (Malvaceae) कुल के पादपों की पत्तियों में] भी पाए जा सकते हैं।

भरण ऊतक (पर्ण मध्योतक) : पर्णपटल का भरणऊतक प्रकाशसंश्लेषण करने के लिए काफी विशेषीकृत होता है। कोशिकाओं में काफी मात्रा में हरितलवक होता है तथा इनमें पर्णमध्योतक होता है। पर्णमध्योतक दो प्रकार की कोशिकाओं में विभेदित होता है, खंभ तथा स्पंजी मृदूतक **(palisade and spongy parenchyma)**। खंभ कोशिकाएं पत्ती की ऊर्ध्वाधर काट में बेलनाकार तथा दीर्घित दिखाई पड़ती हैं। ये एक से लेकर कुछ परतीय हो सकती हैं। स्पंजी मृदूतक में कुछ अनियमित कोशिकाएं अव्यवस्थित रूप से वायु अवकाशों में पायी जाती हैं। ये सामान्य तौर पर खंभ मृदूतक के नीचे उपस्थित रहती है। पृष्ठाधर पत्तियों में (चित्र 8.48 देखिए) खंभ मृदूतक अभ्यक्ष सतह पर ही सीमित रहता है। हालांकि, समद्विपार्श्व

पत्तियों में, खंभ मृदूतक दोनों सतहों पर पाया जाता है। (चित्र 8.49 देखिए)। बेलनाकार पत्तियों में जैसे *हाकिया (Hakea)* में, खंभ मृदूतक पूरे परिधिय क्षेत्र में पाया जाता है। पत्तियों में पर्णमध्योतक की संरचना तथा वितरण में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है।

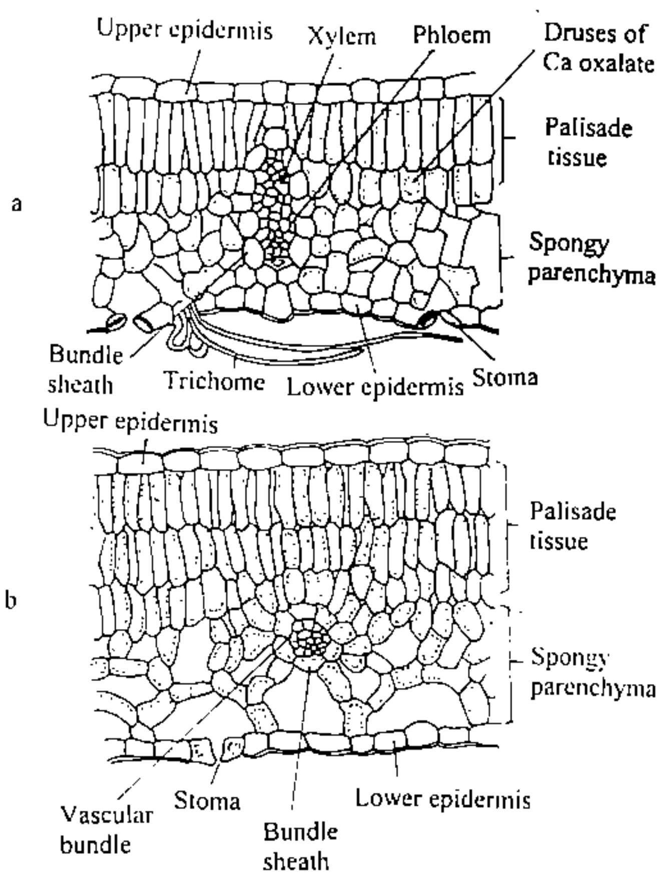

चित्र 8.48 : पृष्ठाधर पत्तियों की ऊर्ध्वाधर काट के भाग a) क्वेरकस (*Quercus*) b) मैलस (*Malus*)।

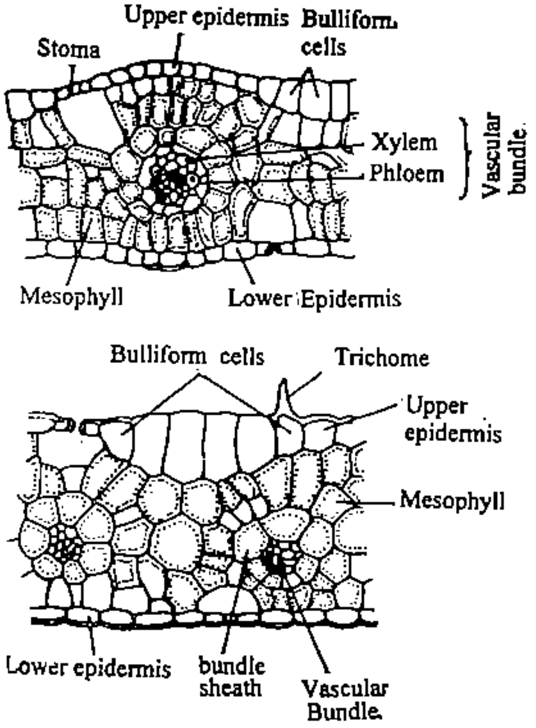

चित्र 8.49 : समद्विपार्श्व पत्तियों की ऊर्ध्वाधर काट के भाग a) एविना (*Avena*) b) जिया (*Zea*)।

पूलाच्छद (Bundle sheath)

कुछ पादपों में, पर्ण पटल में संवहनी ऊतक को घेरे हुए कोशिकाएं हालांकि समान उत्पत्ति की होती हैं परन्तु आकृतिक रूप से अपने बगल वाली पर्णमध्योतकी कोशिकाओं से भिन्न होती हैं। ये कोशिकाएं बड़ी होती हैं तथा इनमें हरितलवक कम होते हैं। ये मोटी-भित्ति की हो सकती हैं। ये कोशिकाएं पूलाच्छद बनाती हैं (चित्र 8.50 देखिए)। जब ये कोशिकाएं पत्ती की सतह तक विस्तारित हो जाती हैं, तब ये पूलाच्छद विस्तारण कहलाती हैं।

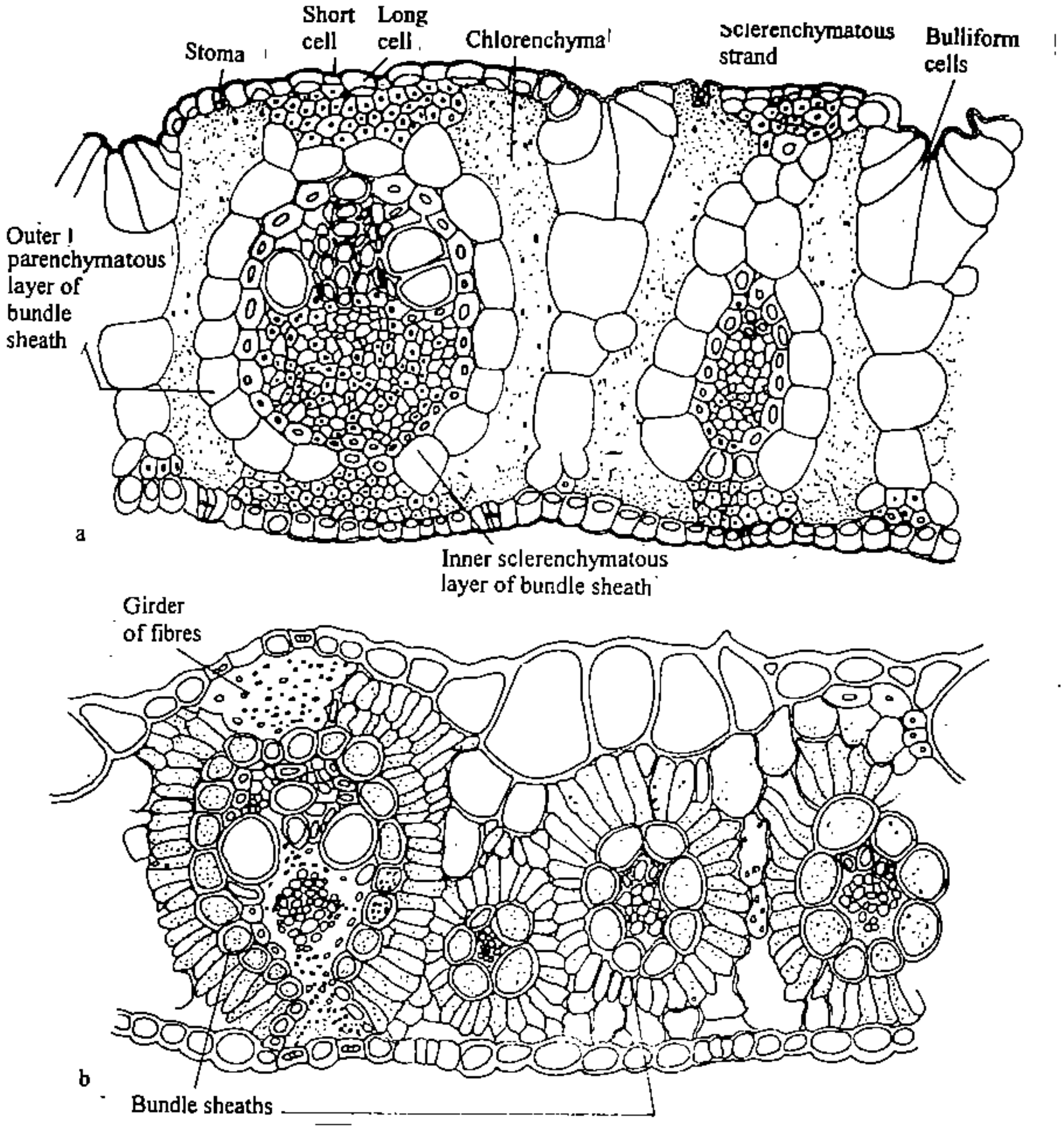

चित्र 8.50 : घास की पत्तियों के ऊर्ध्वाधर काटों के भाग a) *डैस्मोस्टैकिया बाइपिन्नेटा* (*Desmostachya bipinnata*) जिसमें पूलाच्छद दो परतों का बना होता है, बाहरी मृदूतकी तथा भीतरी दृढ़ोतकी होती है। b) *हाइपरीमा हिर्टा* (*Hyparrhenia hirta*) जिसमें पूलाच्छद हरित लवक युक्त कोशिकाओं की एक परत का होता है।

जब कभी भी पूलाच्छद कोशिकाएं मंड लिए होती हैं, तब ये मंड आच्छद **(starch sheath)** कहलाती हैं। जब इनमें कैस्पेरी पट्टियां (Casparian strips) पाई जाती हैं, तो वे अंतःत्वचा बनाती हैं।

C_4 पादपों में पूलाच्छद बहुत स्पष्ट होते हैं तथा उनका भली-भांति अध्ययन किया जा सकता है। इलैक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से किए गए अध्ययन बताते हैं कि *अमरेन्थस इड्यूलिस* (*Amaranthus edulis*) तथा *आट्रीप्लेक्स लेन्टीफोर्मिस* (*Atriplex lentiformis*) की पूलाच्छद कोशिकाओं में हरितलवक बड़े होते हैं तथा ग्रैना (grana) युक्त एवं काफी मात्रा में मंड कण लिए होते हैं। इन्हीं पत्तियों की मध्यपर्ण कोशिकाओं

कोशिकाओं के हरित लवकों में ग्रेना या तो बहुत कम होते है अथवा नहीं पाए जाते हैं।

संवहनी ऊतक (Vascular Tissue)

पत्ती का संवहनी ऊतक उस तने के संवहनी ऊतक का विस्तारण होता है जिसमें से वो निकलती हैं। प्रत्येक पत्ती तने से एक या अनेक संवहनी ट्रेस बंडल प्राप्त करती है। ये ट्रेस पत्ती को पूर्ण लंबाई में अशाखित जारी रह सकते हैं या एकांतरिक रूप से शाखित या जालबंध (anastomose) में भी हो सकते हैं। पत्ती का संवहन पूल **शिरा** कहलाता है। पत्तियों में इन शिराओं का शाखन (ramification) तथा जाल **शिराविन्यास (venation)** कहलाता है। निम्न संवहनी पादपों में द्विशाखी शिराविन्यास होता है (उदा. फर्न की पत्तियां)। द्विबीजपत्री पादपों की पत्तियों में शिराविन्यास जालिकावत् (reticulate) जाल जैसा होता है। एकबीजपत्री पादपों में इसके विपरीत, पत्तियों में **समानान्तर शिराविन्यास** दिखाई पड़ता है (चित्र 8.51 देखिए)।

गिंगों (Ginkgo) की पत्तियों में मुक्त द्विशाखी (बारंबार शाखित)। शिराविन्यास होता है जो द्विबीजपत्री पादपों के दो अवशेषी वंशों *किंगडोमिया (Kingdomia)* तथा *सर्केस्टर (Circaester)* से मिलता है।

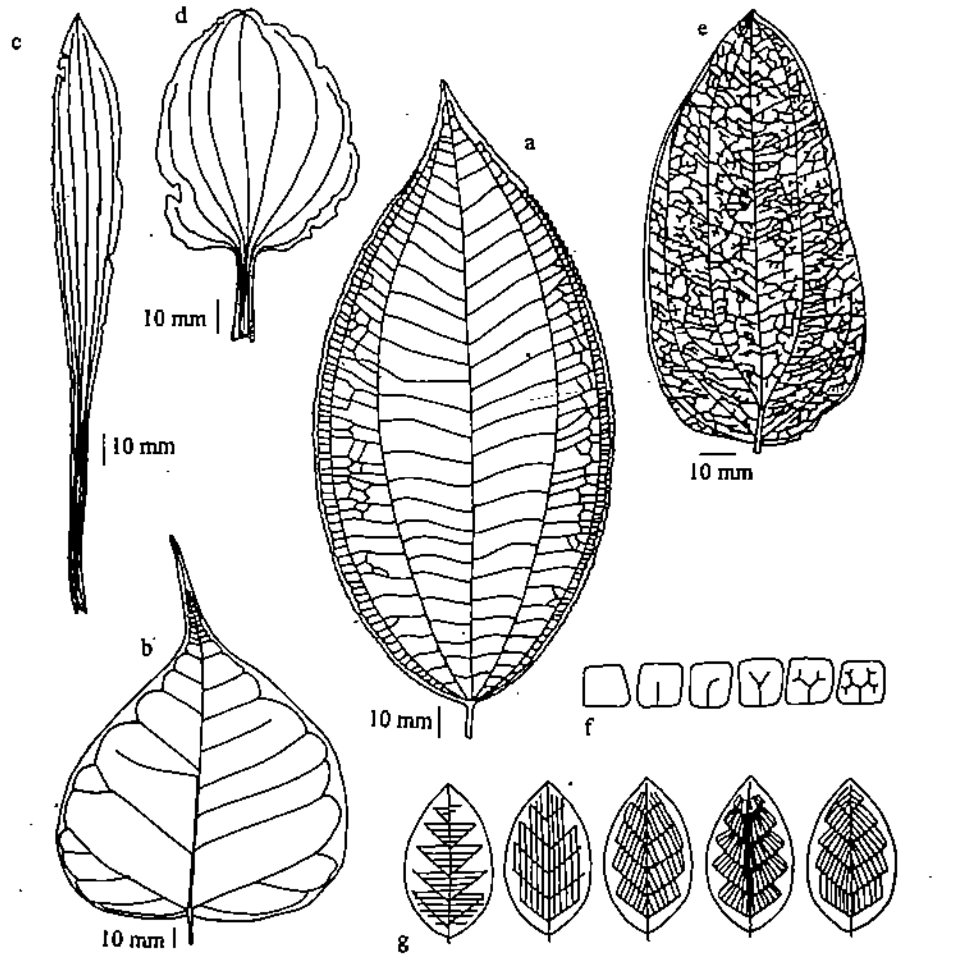

चित्र 8.51 : a) *क्लीडेमिया हिर्टा* (*Clidemia hirta*) (D), b) फाइकस *रिलीजिओसा* (*Ficus religiosa*) (D), c) *प्लान्टैगो लैन्सियोलेटा* (*Plantago lanceolata*), समानान्तर शिराओं वाला (D); d) *प्लान्टैगो मेजर* (*Plantago major*) ; e) *स्माइलैक्स* स्पी. (*Smilax* sp.), जाल-शिरीय (M); f) अंतिम शिराओं को दिखाते हुए प्रारूपिक एरिओल (areole) पैटर्न; g) एक प्रकार के द्वितीय शिरा विन्यास की भिन्नताएं (f तथा g हिकी 1973 से)। (D) = द्विबीजपत्री (M) = एकबीजपत्री पादप ।

पर्णऊतक का सबसे छोटा क्षेत्र जो शिराओं से घिरा रहता है वह **एरिओल (areole)** कहलाता है। एरिओल आकार तथा आमाप में भिन्न होते हैं। कुछ गूदेदार/मांसल पादपों (succulents) की पत्तियों में एरिओल नहीं बनते हैं। संवहन पूल सामान्यत: बहि:फ्लोएमी होते हैं जिनमें जाइलम अभ्यक्ष सतह पर तथा

फ्लोएम अपाक्ष सतह की ओर होता है। संवहनी कॉम्बियम यदि उपस्थित हो, तो वह मध्य-शिरा के पूलों तक ही सीमित रहता है और वह भी सिर्फ द्विबीजपत्री पादपों में। मध्य शिरा के क्षेत्र में संवहनी पूल एक वलय में व्यवस्थित रह सकते हैं [उदाहरण *वाइटिस* (*Vitis*), *लिरियोडेन्ड्रॉन* (*Liriodendron*)], अर्ध-गोलाकार में [*एब्रोसिया* (*Abrosia*)] या फिर अनियमित रूप से वितरित हो सकते हैं [हेलीएन्थस (*Helianthus*)]। वृंत यदि उपस्थित होता है तो उसके शारीरीय (anatomical) गुण पर्व में दिखाई पड़ने वाले गुणों के लगभग समान ही होते हैं।

8.4.2 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादप की पत्ती में तुलना

	एकबीजपत्री पत्ती	द्विबीजपत्री पत्ती
बाह्यत्वचा	सिर्फ एक परत की, मरूद्भिदीय घासों में बड़ी कोशिकाएं होती हैं जिनकी कोशिकाभित्ति लचीली होती है जो पत्ती को शुष्क मौसम में मुड़ने में सहायक होती है। ये आवर्धत्वक कोशिकाएं कहलाती हैं।	सामान्यत: एकल परती या कभी-कभी बहुपरतीय। आवर्धत्वक कोशिकाएं (bulliform cells) अनुपस्थित होती हैं।
रंध्र	पत्ती के दोनों तरफ, सामान्यत: समानान्तर कतारों में व्यवस्थित	सामान्यत: अभ्यक्ष बाह्यत्वचा तक सीमित।
खंभ मृदूतक	दोनों सतहों पर उपस्थित	मुख्यत: अभ्यक्ष सतह पर सीमित
स्पंजी मृदूतक	दो खंभ मृदूतकी अनुक्षेत्रों के बीच में	सुस्पष्ट: बड़ी काया अपाक्ष सतह की ओर
शिरा विन्यास	सामान्यत: समानान्तर; परन्तु *स्मायलेक्स* (*Smilax*), ऐरम (*Arum*) व ऑर्कीडकुल के कुछ पादपों में जालिकावत्	सामान्यत: जालिकावत्; परन्तु *प्लेन्टागो* (*Plantago*), जीरोपोगॉन (*Geropogon*), ट्रेपोपोगॉन (*Trapopogon*) में समानान्तर
	सामान्यत: समद्विपार्श्व, (एकपृष्ठी भी कहलाते हैं)।	सामान्यत: पृष्ठाधर (द्विपृष्ठी भी कहलाते हैं)।

बोध प्रश्न 7

अ) पत्ती का आरेख बनाइए तथा विभिन्न भागों को चिन्हित/लेबल कीजिए।

ब) निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित कीजिए :

अवृंत (sessile), अभ्यक्ष (adaxial), अपाक्ष (abaxial), सवृंत (petiolate), शिराविन्यास (venation), एरिओल (areole)

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

8.4.3 विशेषीकृत पत्तियां (Specialized Leaves)

पहले के सेक्शनों में आपने प्रारूपिक पत्ती की संरचना के बारे में पढ़ा। हालांकि, कुछ परिस्थितियों में पत्ती में उसके पर्यावरण के अनुकूल कुछ रूपांतरण होते हैं।

शुष्क क्षेत्रों की पत्तियां (Leaves of arid regions)

पादप कुछ संरचनात्मक विशेषताएं विकसित कर लेते हैं जो कि शुष्क जलवायु के लिए अनुकूलन होते हैं। इस प्रकार के पादप शुष्कतानुकूलित **(xeromorphic)** पादप कहलाते हैं। शुष्कतानुकूलन हालांकि, सिर्फ मरूद्भिदी/पादपों तक ही सीमित नहीं होता है तथा सभी मरूद्भिदी वनस्पतियों में शुष्कतानुकूलित गुण नहीं पाए जाते हैं।

शुष्कतानुकूलित पत्तियों का एक सबसे अधिक पाया जाने वाला गुण पत्ती की बाहरी सतह का अनुपात उसके आयतन (volume) से कम होना है। बाहरी सतह में इस कमी के साथ ही पत्ती की आंतरिक संरचना में भी कुछ बदलाव आते हैं जैसे कि : कोशिका के आमाप में कमी; कोशिकाभित्ति की मोटाई में वृद्धि; संवहनी तंत्र तथा रंध्रों की अधिक सघनता (density); स्पंजी ऊतक का कम होना और उसकी जगह खंभ ऊतक का अधिक विकास। इस प्रकार की पत्तियां त्वचा रोमों से ढंकी रहती हैं। रंध्र छोटी गुहिकाओं/क्रिप्ट्स में धंसे हुए रहते हैं। इन पत्तियों में बाह्यत्वचा की सतह पर अधिक क्यूटिकल तथा मोम पाया जाता है। कुछ पादपों में पत्तियों में जल संग्रही ऊतक, उन्हें गूदेदार बनाने के लिए पाया जाता है। *नेरियम ओलिएन्डर* (*Nerium oleander*), *ओलिया* (*Olea*), *सेलीकोर्निया* (*Salicornia*) तथा *सालसोला* (*Salsola*) की पत्तियां (चित्र 8.52 देखिए) मरूद्भिदी गुण दर्शाती हैं।

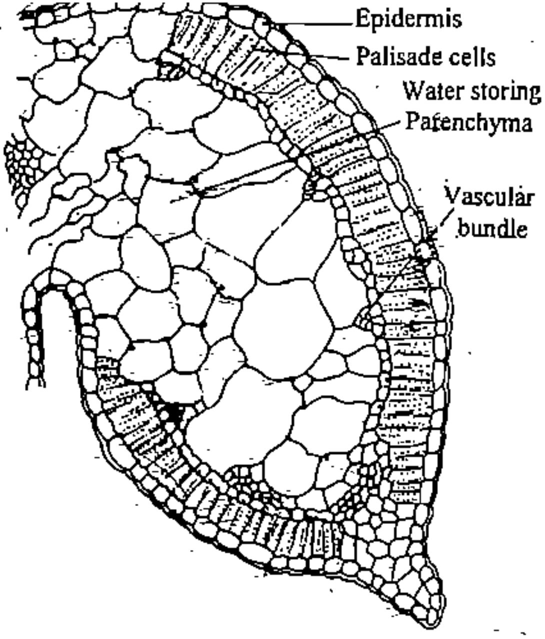

चित्र 8.52 : सालसोला की गूदेदार पत्ती अनुप्रस्थ काट में।

प्रतान (Tendril) : बहुत से आरोही पादपों में, पत्ती या पत्ती का एक भाग प्रतान के रूप में रूपांतरित हो जाता है। प्रतान सहायक अंग की तरह कार्य करते हैं। *लैथाइरस* (*Lathyrus*) में (चित्र 8.53 a देखिए) संपूर्ण पटल प्रतान बन जाता है। *पाइसम* (*Pisum*) में अंतस्थ पत्रक (Leaflet) प्रतान बन जाते हैं (चित्र 8.53 b देखिए)। *ग्लोरिओसा सुपर्बा* (*Gloriosa superba*) का पर्ण शीर्ष प्रतान में रूपांतरित हो जाता है (चित्र 8.53 d देखिए)। कुकरविट्स (cucurbits) के प्रतान सहपत्रिका (prophyll) हो सकते हैं (चित्र 8.53 g देखिए)। चित्र 8.53 को कुछ अन्य किस्म के प्रतानों के लिए भी देखिए।

पार्श्व शाखाओं पर प्रथम अधोपर्ण (cataphylls) सहपत्रिका कहलाते हैं।

चित्र 8.53 : पर्ण प्रतान : a) लैथाइरस एफाका (*Lathyrus aphaca*) के पर्ण प्रतान, b) पाइसम सेटाइवम (*Pisum sativum*) के पत्रक प्रतान, c) क्लिमेटिस स्पी. (*Clematis* sp.) का पर्णवृंत प्रतान, d) ग्लोरिओसा सुपर्बा (*Gloriosa superba*) का पर्णशीर्ष प्रतान, e) स्माइलैक्स (*Smilax*) का अनुपर्णी प्रतान, f) एन्टीगोनोन (*Antigonon*) की पुष्पक्रम वृन्त g) कुकरबिटा (*Cucurbita*) की पत्ती में प्रतान।

शूल (Spines), काँटे (Thorns) तथा तीक्ष्ण वर्ध (Prickles) : पत्ती के कुछ अथवा पूरे भाग का शूल, काँटे या तीक्ष्णवर्ध में रूपांतरण दो कार्य करता है। वे सतह के क्षेत्र को कम कर देते हैं। जिससे पादप द्वारा होने वाले वाष्पोत्सर्जन में कमी होती है। इसके अतिरिक्त ये पादप को संरक्षण प्रदान करते हैं।

जिज़ीफस (Zizyphus) के अनुपर्ण शूलों में रूपांतरित हो जाते हैं। *ऑपन्शिया (Opuntia)*, *एस्पेरेगस (Asparagus)*, *बरबेरिस (Berberis)* तथा *यूलेक्स (Ulex)* सभी में शूल होते हैं जो वास्तव में पत्तियां होती हैं (चित्र 8.54 देखिए)।

तीक्ष्ण वर्ध, जो बाह्यत्वचीय कोशिकाओं के सतही रूपातंरण होते हैं, वे *सोलेनम मेलोन्जेना (Solanum melongena)* (बैंगन) तथा *सोलेनम जैन्थोकार्पम (Solanum xanthocarpum)* की पत्तियों में काफी पाए जाते हैं।

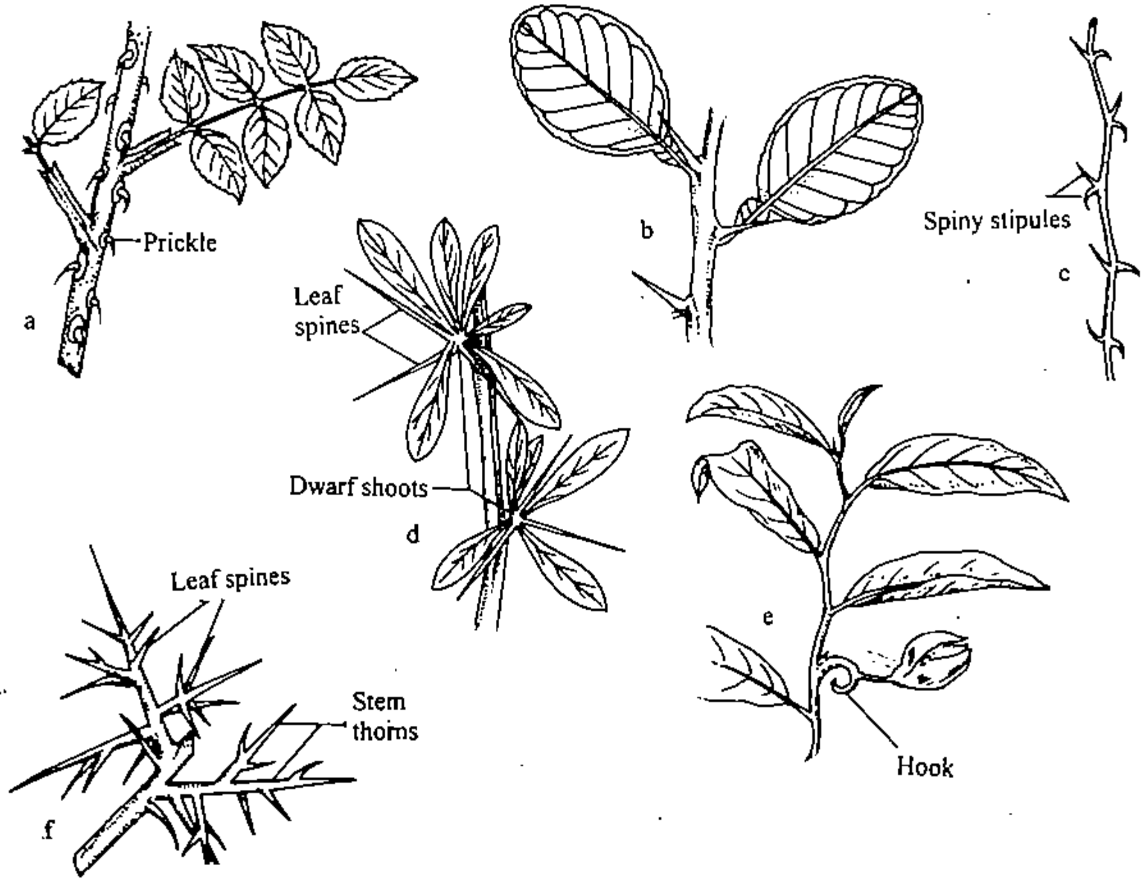

चित्र 8.54 : पत्तियों में शूल तथा तीक्ष्ण वर्ध : a) आरोही गुलाब में वक्र वर्ध, b) *सिट्रस (Citrus)* में सहपत्रिका, c) *जिज़ीफस (Zizyphus)* के कंटकी अनुपर्ण, d) *यूलेक्स (Ulex)* में बड़े तने के शूल तथा छोटे पत्तियों के शूल, e) *अर्टाबोट्रिस (Artabotrys)* के वृंत (peduncles) पर शूलीय हुक, f) *बर्बेरिस (Berberis)* की पत्तियां।

संग्रही पत्तियां (Storage leaves) : कुछ पत्तियां, खासतौर पर मरूद्भिदीय तथा लवणमृदोद्भिदों (halophytes) में, जल, श्लेष्मक (mucilage) तथा खाद्य पदार्थों के संग्रह के कारण गूदेदार बन जाती हैं। इन पत्तियों में एक विशेष संग्रही ऊतक होता है। कुछ उदाहरण *पोर्टुलका ओलीरेसी (Portulaca oleracea)*, *एलोय (Aloe)*, *एगेव (Agave)* तथा *ब्रायोफिलम (Bryophyllum)* की पत्तियां हैं।

प्रजनन पत्तियां (Reproductive leaves) : जब कलिका सामान्य स्थिति से उत्पन्न न होकर (यानि कि शीर्ष या अक्ष से) कहीं और से उगती हैं तब वह अपस्थानिक कलिका कहलाती है। जब ये कलिकाएं

... (**epiphyllous**) ... (*Bryophyllum*) ... जड़, तना और पत्ता

की पत्ती में इस प्रकार की कलियां किनारों पर उगती हैं(चित्र 8.55 देखिए)। *बिगोनिया* (*Begonia*) तथा केलेन्चोइ (*Kalanchoe*) की पत्तियों के किनारों या सतह पर ये कलियाँ उगती हैं।

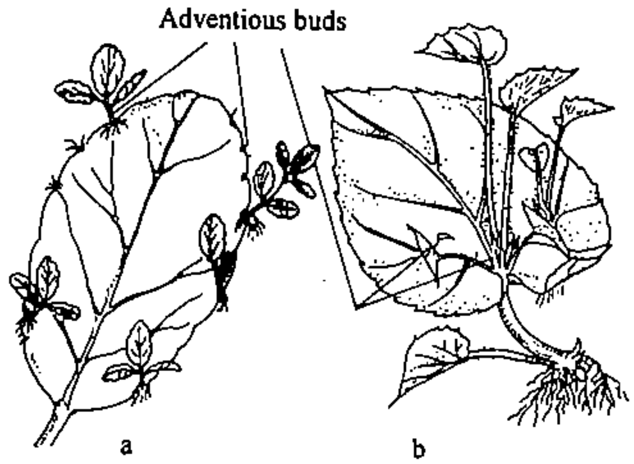

चित्र 8.55 : a) *ब्रायोफिल्लम* **में जनन पत्तियां b)** *बिगोनिया* **में जनन पत्तियां।**

पुष्पीय पत्तियां/पर्ण (Floral leaves) : कुछ पादपों में पुष्प पत्तियों के कक्ष में उगते हैं जिन्हें **सहपत्र (bracts)** कहते हैं। वे फूल में उपस्थित होने पर या तो जल्दी ही झड़ जाते हैं अथवा उसमें लगे रहते हैं। सहपत्र जैसी ही, अतिरिक्त, छोटी और पतली संरचनाएं जो कभी-कभी सहपत्र और पुष्प के बीच में वृंतक पर उगती हैं वे **सहपत्तिका (Bracteole)** कहलाती हैं (चित्र 8.56 देखिए)।

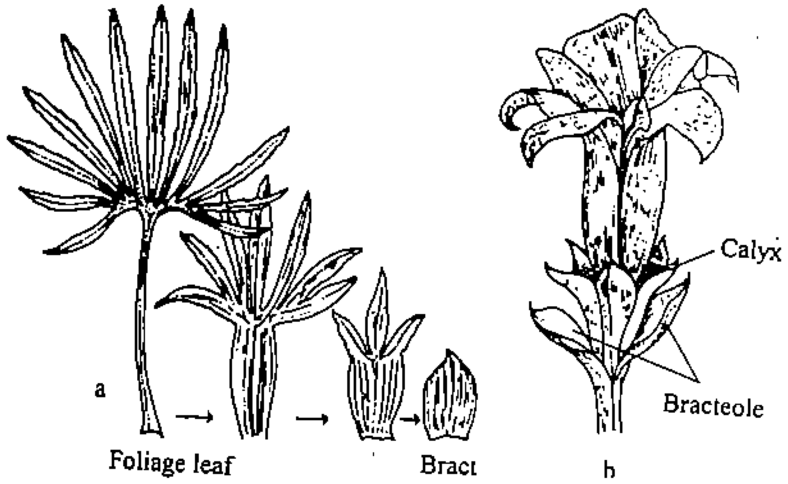

चित्र 8.56 : पुष्पीय पत्तियां: सहपत्र तथा सहपत्रिकाएं a) *हैलीबोरस फोइटिडस* **(*Helleborus foetidus*) में सहपत्र में स्थानांतरण b)** *जेन्शियाना एकोलिस* **(*Gentiana acaulis*) में सहपत्रिकाएं।**

सहपत्र और सहपत्रिकाएं हो सकते हैं :

i) **पत्रीय या पर्णिल (foliaceous) :** जैसे मालवेसी (Malvaceae) का एपिकैलिक्स (epicalyx)। *एधेटोडा वैसिका* (*Adhatoda vasica*), *गाइनेन्ड्रोप्सिस* (*Gynandropsis*)।

ii) **दलाभ (petaloid) :** जैसा कि *बोगेनवेलिया* (*Bougainvillea*), *यूफोर्बिया पल्चेरिमा* (*Euphorbia pulcherrima*) में होता है।

iii) **स्पेथी सहपत्र (spathy bract) :** जैसे कि *ऐमोर्फोफैल्स टइटैनम*, (*Amorphophallus titanum*), *पौलिऐन्थस* (*Polyanthes*)।

iv) **परिचक्रक सहपत्र (involucre bract) :** जैसे कि *डॉकस कैरोटा* में होते हैं।

v) **शल्कीय सहपत्र (scaly bract) :** जैसे कि *हुमुलस लुपुलस* (*Humulus lupulus*) में होते हैं।

vi) **प्यालिका (cupule) :** जैसे कि *बिटुला* (*Betula*) व *कोरी..स* (*Corylus*) में होते हैं।

vii) **तुषाभ (glume) :** जैसे कि ग्रेमिनी (घास कुल) की कणिशिकाओं (spikelet) में होते हैं।

viii) **लेमा (lemma) और पेलिया/शल्किका (palea) :** जैसे कि पोएसी (Poaceae) कुल की कणिशिकाओं में होते हैं।

कीट पकड़ने वाली पत्तियां **(Insect trapping leaves) :** कीटभक्षी पौधों (insectivorous plants) के घट (pitcher) पूर्णत: या आंशिक रूप से पर्ण पटल का रूपांतरण होते हैं।

नेपेन्थीस (*Nepenthes*) में (चित्र 8.57 c देखिए) वृंत का निचला भाग परिवत (winged) होता है तथा ऊपरी भाग प्रतानी (tendrillar) संरचना बनाता है। जो घट जैसी संरचना के भार को वहन करने के लिए कुंडलित होकर सहारा प्रदान करता है। घट जैसी संरचना पटल होती है। *सेरासीनिया* (*Sarracenia*) में भी घट बनते हैं।

सनड्यू (Sundew) [*ड्रोसेरा* (*Drosera*)] में प्रत्येक पत्ती ग्रंथिल रोमों (glandular hairs) से ढंकी रहती है जिन्हें स्पर्शक (tentacles) कहते हैं। ये चिपचिपा तरल पदार्थ स्रावित करते हैं (चित्र 8.57 b)।

वीनस फ्लाइट्रैप [*डाओनिया मसीपुला* (*Dionoea muscipula*)] में, साधारण पर्ण का वृंत पंखित होता है तथा पटल में शीर्ष पर गहरी खाँच (notch) होती है। पत्ती के किनारे हल्के से भीतर की ओर मुड़े हुए होते हैं तथा उनमें लंबे नुकीले दंत होते हैं। पत्ती के दोनों अर्ध भाग संचलन में समर्थ होते हैं व इनमें मध्यशिरा कब्जे (hinge) की भाँति कार्य करती है। जब पत्ती मुड़ती है तो किनारों के दंत आपस में जुड़ जाते हैं, और शिकार को फंसा लेते हैं। (चित्र 8.57 f)।

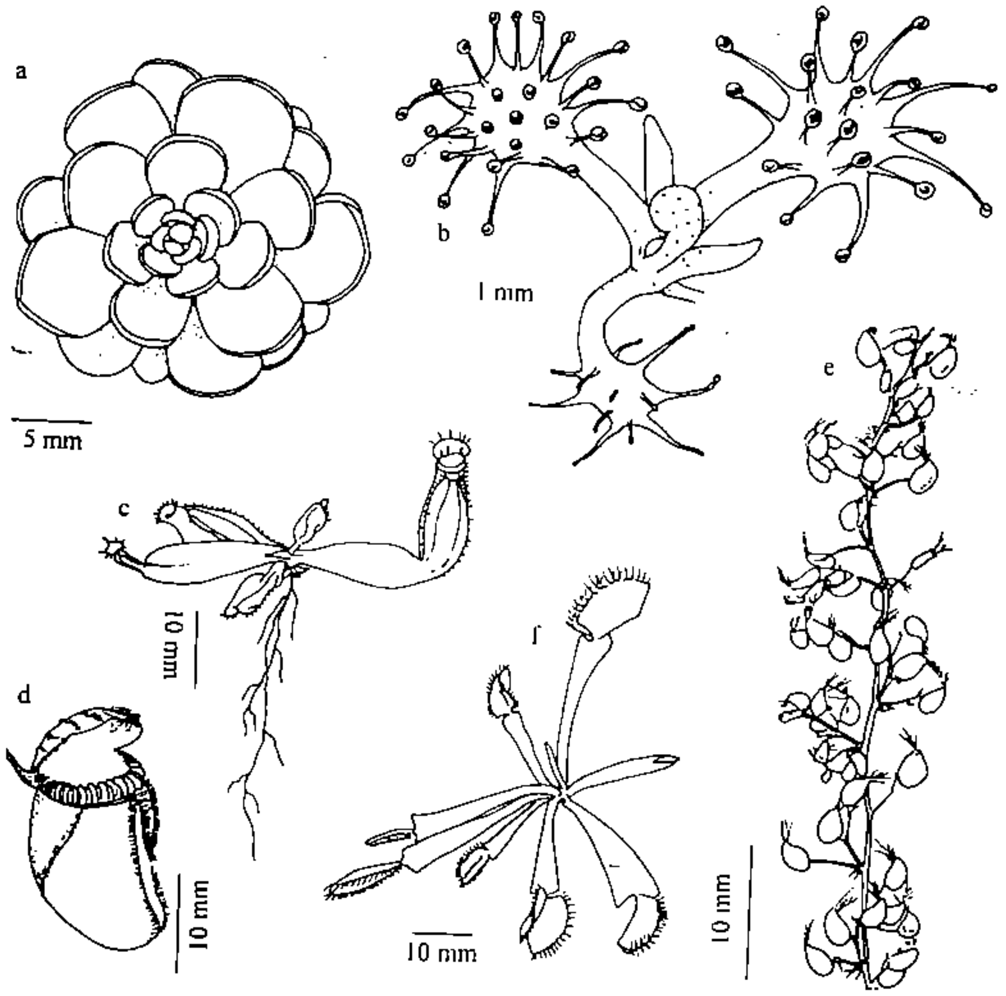

चित्र 8.57 : a) *पिंगीकुला लेनी* (*Pinguicula lanii*), ऊपर से पर्ण रोज़ेट (rosette); b) *ड्रॉसेरा केपेन्सिस* (*Drosera capensis*), नवोद्भिद; c) *नेपेन्थीस खासियाना* (*Nepenthes khasiana*), नवोद्भिद; d) *सिफेलोलोटस फोलीकुलेरिस* (*Cephalotus follicularis*) एकल पर्ण; e) *युट्रिकुलेरिया माइनर* (*Utricularia minor*), प्ररोह का एक भाग; f) *डायोनिया मसीपुला* (*Dionaea muscipula*), नवोद्भिद।

ब्लैडरवर्ट (Bladderwort) [युट्रीकुलेरिया (*Utricularia*) में (चित्र 8.58 देखिए) बारीक रूप से कटी-फटी निमग्न (submerged) पत्तियां होती हैं जो हरी जड़ों जैसी लगती हैं। पत्ती के असंख्य/अनेक खंड ब्लैडर्स या वृत्तियों **(utricles)** में रूपांतरित हो जाते हैं। ब्लैडर की भीतरी भित्ति में तीन या चार भुजाओं वाली पाचन ग्रंथियां होती हैं। प्रत्येक ब्लैडर में वाल्व द्वार होता है। *पिंगुलेरिया* (*Pingularia*),*पिंगीकुला* (*Pinguicula*) अन्य कीटभक्षी पादप हैं।

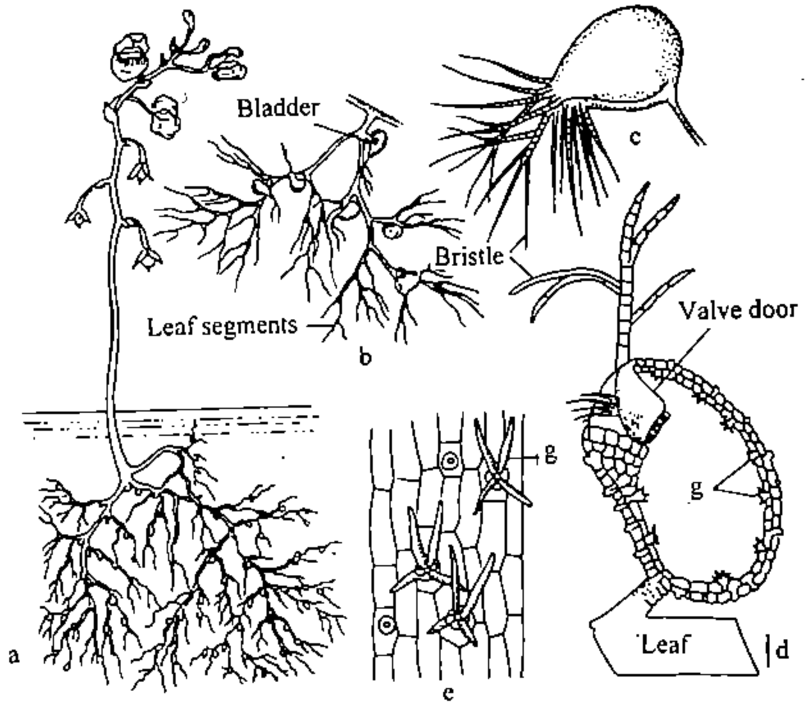

चित्र 8.58 : कीटभक्षी पादप *युट्रीकुलेरिया* (*Utricularia*) a) पुष्प सहित पादप, जल में तैरता हुआ b) पर्णखंड तथा थैलियों को दर्शाते हुए पत्ती का एक भाग c) आवर्धित थैली d) वाल्व डोर (valve door) तथा पाचन ग्रंथियों (digestive glands) (g) को दर्शाता हुआ ब्लैडर का सेक्शन e) ग्रंथियों (g) को दर्शाते हुए ब्लैडर की भीतरी भित्ति।

बोध प्रश्न 8

क) कम से कम पाँच प्रकार की विशेषीकृत पत्तियों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

ख) निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए :

प्रतान

....

....

....

कीटभक्षी पादप

....

....

....

8.4.4 विलगन (Abscission)

पादप अपने अंगों को अलग कर देते हैं तथा यह एक प्रक्रिया के द्वारा होता है जिसे **विलगन** कहते हैं। पत्तियां, पुष्पीय भाग व फल तथा कभी-कभी शाखाएं तक [*टैक्सोडियम* (*Taxodium*), *पोपुलस* (*Populus*)] झड़ सकती हैं। *कोचिया इंडिका* [(*Kochia indica*) टंबल वीड/खर (Tumble weed)] में पादप का पूरा वायवीय भाग जड़ से अलग हो जाता है।

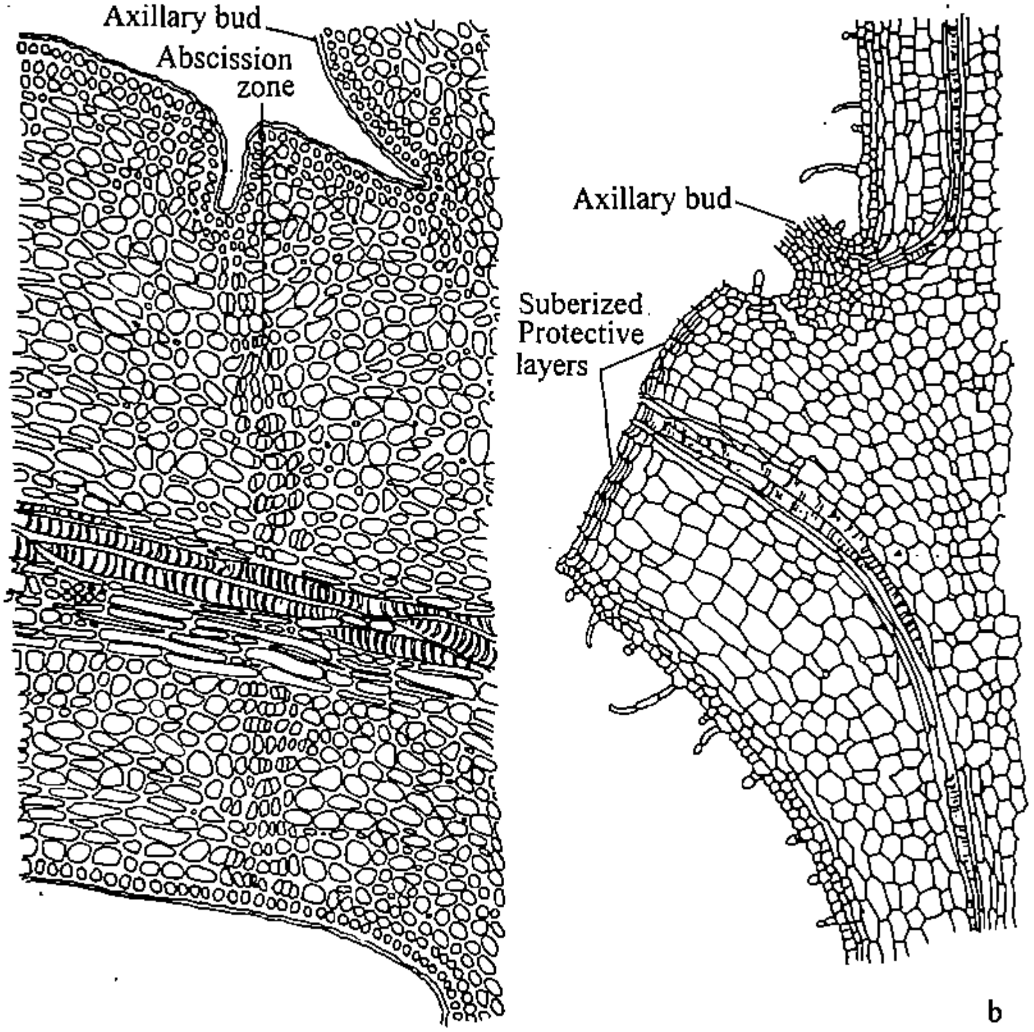

चित्र 8.59: पर्ण विलगन : a) *प्रुनुस* (*Prunus*) के पर्ण आधार का अनुदैर्ध्य काट उन कोशिकाओं को दर्शाते हुए जो विलगन परत बनाने के लिए विभाजित होती हैं, b) *कोलियस* (*Coleus*), तने के एक भाग का पर्णाधार के साथ अनुदैर्ध्य काट, पत्ती के विलगन के बाद (गिब्स से लिया गया, 1950)।

कुछ जिम्नोस्पर्मस पादपों तथा काष्ठीय द्विबीजपत्री पादपों की पत्तियां सामान्यत: पत्ती के मरने के पहले पर्णाधार के ऊतकों में आए बदलावों के परिणामस्वरूप झड़ जाती हैं।

परिपक्व पर्णपाती पत्तियों के आधार में कोशिकाओं का एक पतला क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है जो अंग के झड़ने में सहायक होता है। ये विलगन अनुक्षेत्र कहलाता है (चित्र 8.59 देखिए)। यह क्षेत्र ऊतकीय (histologically) रूप से अपने आस-पास की कोशिकाओं से उथली खाँच (groove) की उपस्थिति के कारण अथवा बाह्यत्वचा के रंग में अन्तर के कारण विभेदित किया जा सकता है।

संवहनी तंत्र आमतौर पर विलगन अनुक्षेत्र के केन्द्र में स्थित रहता है तथा दृढ़ोतक एवं श्लेषोतक अल्प विकसित या अनुपस्थित भी हो सकते हैं।

विलगन अनुक्षेत्र में, दो परतें महत्वपूर्ण होती हैं: विलगन परत (पृथककारी परत) जिसके द्वारा अंग अलग होता है तथा सुरक्षात्मक परत जो विलगन के बाद पर्णाधार की सुरक्षा करती है तथा खुले क्षेत्र से जीवाणुओं के प्रवेश को रोकती है।

सुरक्षात्मक परतें दो प्रकार की होती हैं– प्राथमिक तथा द्वितीयक। पहले वाली में क्षेत्र में मृदूतकी कोशिकाओं का काष्ठाभन (lignification) तथा सुबेरिनीकरण (suberisation) होता है, जबकि द्वितीय सुरक्षात्मक परत में उपचर्म विकसित होती है।

विलगन के दौरान होने वाली कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं निम्नलिखित हैं :

— कोशिकाभित्तियों का एन्जाइमी निम्नीकरण (enzymatic degradation)। इसमें मध्य पटलिका (lamella) से कैल्सियम पेक्टिन का हटना तथा उसके बाद भित्तियों में सेलुलोस का जल-अपघटन (hydrolysis) शामिल हैं।

— दृढ़ीकृत वाहिकीय (sclerified tracheary) तत्वों का फटना।

— वाहिकीय संवहनी ऊतकों के बीच की मध्य पटलिका विघटित हो जाती है।

— जाइलम वाहिकाएं तथा उसके आस-पास का मृदूतक, कोशिका भित्ति तत्वों के जल अपघटन के कारण कमजोर हो जाता है।

— गॉल्जी उपकरण (Golgi apparatus) विलगन के लिए विशिष्ट एन्जाइमों के स्राव में शामिल हो सकता है।

— उन जातियों में जिनमें कोशिकाभित्ति का पूर्ण विलय नहीं होता है, उनमें भौतिक प्रतिबलों (physical stresses) से विलगन हो जाता है (उदा. एकबीजपत्री तथा शाकीय द्विबीजपत्री पादपों में)।

पर्ण जीर्णता (senescence) ऊतकों के पीले पड़ने से तथा विभिन्न जैव रासायनिक बदलावों से पहचानी जाती है जैसे क्षमता में कमी या आर.एन.ए. (राइबो-न्यूक्लीक अम्ल) तथा प्रोटीनसंश्लेषण का घटना। अनेक प्रकार के कारक जैसे पादप वृद्धि नियंत्रक (ऑक्सिन्स, साइटोकाइनिन, एब्सीसिक अम्ल) तथा दिन की लंबाई विलगन की प्रक्रिया में सम्मिलित मालूम पड़ते हैं।

बोध प्रश्न 9

क) दिए गए शब्दों को दो या तीन लाइनों में परिभाषित कीजिए :
विलगन, विलगन अनुक्षेत्र, विलगन परत, जीर्णता तथा सुरक्षात्मक परतें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

ख) उन पादपों के उदाहरण दीजिए जिनमें निम्नलिखित पाए जाते हैं :

i) प्ररोह तंत्र की पूरी शाखा का विलगन होता है।

....

....

ii) संपूर्ण वायवीय भाग में विलगन होता है।

....

....

8.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- प्राथमिक पादप काया में जड़ तथा प्ररोह तंत्र होते हैं। जड़ तंत्र में मूसला तथा अपस्थानिक जड़ें होती हैं। इनमें पाई जाने वाली सभी परिपक्व कोशिकाओं की उत्पत्ति मूल शीर्ष में उपस्थित मूल शीर्ष विभज्योतक की कोशिका(ओं) से होती है। शीर्ष कोशिका सिद्धांत, हिस्टोजन सिद्धांत, कोर्पर-कैपी सिद्धांत तथा शांत क्षेत्र सिद्धांत आदि ऐसे कुछ सिद्धांत हैं जो मूल शीर्ष संगठन को समझने के लिए सुझाए गए हैं।

- एक प्रारूपिक जड़ में: मूलगोप; कोशिका विभाजन का क्षेत्र; दीर्घीकरण का क्षेत्र तथा परिपक्वता का क्षेत्र होते हैं। मूलगोप के द्वारा जड़ की गुरूत्वानुवर्ती वृद्धि होती है। जड़ के तीन प्रायमिक ऊतक क्षेत्र बाह्यत्वचा, भरण ऊतक तथा संवहनी ऊतक के रूप में जाने जाते हैं। मूल रोम बाह्यत्वचा से विकसित होते हैं तथा अपने आस-पास से जल और खनिजों को लेने में सहायक हो सकते हैं। कभी-कभी बाह्यत्वचा बहु-परतीय होती है(उदा. आर्किड की वायवीय जड़ों में)। वल्कुट बहुपरती व अक्सर मृदूतकी होता है तथा जल के परिवहन में सहायक होता है। एक अंत:त्वचीय परत रंभ को वल्कुट से अलग करती है। संवहनी ऊतक का विकासात्मक पैटर्न विविध होता है। प्राथमिक जाइलम तथा प्राथमिक फ्लोएम दोनों अभिकेन्द्री रूप से विकसित होते हैं अत: प्रोटोजाइलम तथा प्रोटोफ्लोएम तत्व दोनों ही बाह्य आदिदारुक (exarch) होते हैं। प्राथमिक जाइलम तथा फ्लोएम एक दूसरे के साथ एकांतरित होते हैं। द्विआदिदारुक से षटआदिदारुक जड़ें तक द्विबीजपत्रियों पादपों में पाई जाती है जबकि बहुआदिदारुक जड़ें एक बीजपत्री पादपों की विशेषता होती हैं। एकबीजपत्री जड़ में बड़ी, सुस्पष्ट मज्जा भी होती है। पार्श्व जड़ों की उत्पत्ति अंतर्जात होती है तथा वे परिरंभ से निकलती हैं। पार्श्व जड़ आरंभन के स्थान तथा संवहनी ऊतक के संगठन के प्रकार के बीच एक स्पष्ट संबन्ध होता है।

- एकबीजपत्री पादपों की जड़ों में कोई द्वितीयक क्रिया नहीं दिखाई पड़ती है। द्विबीजपत्री तथा अनावृतबीजी पादपों की जड़ों में, संवहनी कैम्बियम अनेक स्थानों पर सक्रिय हो जाता है तथा बाद में आपस में मिलकर एक वलय बना लेता है। संवहनी कैम्बियम अंदर की ओर द्वितीय जाइलम तथा बाहर की ओर द्वितीय फ्लोएम बनाता है। द्वितीय जाइलम वर्षों तक संग्रहित होता रहता है जबकि द्वितीय फ्लोएम नष्ट हो जाता है। बहुत अधिक द्वितीयक वृद्धि के बावजूद भी, प्राथमिक जाइलम हमेशा जड़ के केन्द्र में दिखाई पड़ता है। बढ़ती हुई चौड़ाई का प्रतिकार करने के लिए, उपचर्म बाहरी सुरक्षात्मक तंत्र के रूप में बाह्यत्वचा का स्थान ले लेता है।

- जड़ें अक्सर विभिन्न कार्यों को करने के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। इस प्रकार की जड़ों में शामिल है : खाद्य संग्रही जड़ें; जल-संग्रही जड़ें; प्रवर्धन जड़ें; श्वसन-मूल/वातपुटीघर; वायवीय जड़ें; संकुचन जड़ें; पुश्ता जड़ें; कवक मूल तथा मूल-ग्रंथिकाएं।

- प्ररोह तंत्र में अक्ष, तना तथा पार्श्व, पत्तियां (निश्चित वृद्धि वाली) तथा शाखाएं (अनिश्चित वृद्धि वाली) होती हैं। प्ररोह, प्ररोह शीर्ष में स्थित प्ररोह शीर्ष विभज्योतक की क्रिया के कारण उगता है। प्रत्येक प्ररोह शीर्ष नियमित अंतरालों पर पर्ण आद्यक उत्पन्न करता है। ये आद्यक अपने कक्षों में कली(यां) धारण करते हैं। पत्ती के आरंभन के स्थान को पर्वसंधि कहते हैं। किन्हीं दो पर्वसंधियों के बीच का भाग पर्व कहलाता है।

- प्ररोह शीर्ष संगठन और इसके कार्य को समझाने के लिए विभिन्न सिद्धांत दिए गए हैं। इनमें से कुछ सिद्धांत हैं शीर्ष-कोशिका सिद्धांत, हिस्टोजन सिद्धांत, ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत तथा सांतत्यक (continuum) विभज्योतिकी अवशेष परिकल्पना। विभिन्न पादपों के प्ररोह शीर्ष आमाप, आकार तथा आवर्ती क्रिया में भिन्न-भिन्न होते हैं।

- प्राथमिक तने में तीन मूलभूत क्षेत्र होते हैं; बाह्यत्वचा, भरण ऊतक तथा संवहनी ऊतक। बाह्यत्वचा सामान्यत: एकल परती होती है तथा उसमें त्वचारोम तथा रंध्र पाए जा सकते हैं। सुस्पष्ट क्यूटीकल सदा उपस्थित रहती है। भरण ऊतक अनावृतबीजी तथा द्विबीजपत्री पादपों में वल्कुट तथा मज्जा में विभेदित होता है जबकि एकबीजपत्री पादपों में ऐसा विभेद नहीं पाया जाता है। वल्कुट में, कभी-कभी ऐसी कोशिकाएं पाई जाती हैं जो पर्णहरित, श्लेषोतकी अथवा दृढ़ोतकी होती हैं अथवा ये कोशिकीय अजैव पदार्थ (ergastic substance) से भरी हो सकती हैं। अंत:त्वचा, वायवीय तनों में सिर्फ आंशिक तौर पर ज्ञेय होती हैं जबकि भूमिगत तनों में यह सुविकसित होती हैं। अंत:त्वचा मंड आच्छद के रूप में रूपांतरित भी हो सकती है।

- तने के संवहनी ऊतक में वलय में असंतत संवहनी पूल होते हैं। ये सामान्यत: संयुक्त, बहि: फ्लोएमी (या उभयफ्लोएमी), वर्धी या अवर्धी परन्तु सदैव मध्यादिदारुक आदिदारू होते हैं। संवहन पूल फ्लोएम केन्द्रों या जाइलम केन्द्री हो सकते हैं। प्राथमिक फ्लोएम का विकास अभिकेन्द्री होता है जबकि प्राथमिक जाइलम अपकेन्द्री रूप से विकसित होता है।

- अनावृतबीजी तथा द्विबीजपत्री पादपों के तनों में द्वितीयक वृद्धि पाई जाती है, पर एकबीजपत्री पादपों में यह स्पष्ट रूप से अनुपस्थित होती है क्योंकि पूलों में कैम्बियम नहीं पाया जाता है। अंतरापूलीय कैम्बियम का विकास द्वितीयक वृद्धि के आरंभ को सूचित करता है। अन्तरापूलीय तथा अंत:पूलीय कैम्बियम मिल जाते हैं तथा एक सतत वलय बनाते हैं। संवहनी कैम्बियम बन जाने के बाद भीतर की ओर द्वितीय जाइलम तथा बाहर की ओर द्वितीय फ्लोएम निर्मित करता है। द्वितीय जाइलम वर्षों तक जमा होता रहता है जबकि द्वितीय फ्लोएम प्रत्येक ऋतु/मौसम में विस्थापित हो जाता है।

- द्वितीय जाइलम का बहुत अधिक मात्रा में विकास मज्जा तथा प्राथमिक जाइलम को पूरी तरह से नष्ट कर देता है। संवहनी कैम्बियम क्रिया के कारण होने वाली चौड़ाई को रोकने के लिए उपचर्म अक्सर विकसित हो जाती है, तथा यह जल्दी ही बाह्यत्वचीय तंत्र को विस्थापित कर देती है। छाल, राइटिडोम तथा वातरंध्रों का बनना कार्क कैम्बियम की क्रिया से संबद्ध होता है।

- तने विभिन्न कार्यों को करने के लिए रूपांतरित भी हो जाते हैं। राइज़ोम/प्रकंद, कंद, शल्ककंद तथा घनकंद, संग्रह तथा चिरकालिकता के लिए रूपांतरित भूमिगत तने हैं। उपरिभूस्तारी, भूस्तारी, भूस्तारिका तथा अंत:भूस्तारी कायिक प्रवर्धन के लिए उप-वायवीय रूपांतरण हैं। पर्णाभ स्तंभ तथा पर्णाभ वृंत, कांटे और शूल, मरूस्थलीय वातावरण से संबद्ध रूपांतरण हैं। प्रतान आरोहण तथा अवलंबन में सहायक होते हैं।

- पत्तियां पार्श्व अंग हैं जो पर्व संधियों पर प्ररोह शीर्ष के द्वारा उत्पन्न होती हैं। इनकी वृद्धि निश्चित, सममिति पृष्ठाधर तथा कार्य प्रकाशसंश्लेषी होता है। पत्ती (पर्णपाद) में 3 भाग होते हैं : पर्णाधार, पर्णवृंत एवम् स्तरिका (पटल)। पत्ती अवृंती अथवा संवृंत हो सकती है। पटल में दो सतहें होती हैं, अभ्यक्ष तथा अपाक्ष। जब दोनों तलों पर भिन्न-भिन्न संरचनाएं होती हैं तो वे पृष्ठाधर कहलाती हैं तथा जब ऐसा कोई अंतर नहीं पाया जाता है तो वे सम-द्विपार्श्व कहलाती हैं।

- आंतरिक रूप से, पत्ती में त्वचीय, भरण तथा संवहनी ऊतक होते हैं। बाह्यत्वचा में क्यूटीकल, रंध्र व त्वचारोम होते हैं तथा यह एकल या बहुपरती हो सकती है। भरण ऊतक पर्णहरिती मध्यपर्ण के रूप में रूपांतरित हो जाता है। मध्यपर्ण, खंभ तथा स्पंजी मृदूतक में विभेदित हो जाता है। संवहनी आपूर्ति शिराविन्यास निर्मित करती है। पर्ण ऊतक का सबसे छोटा भाग जो शिराओं से घिरा रहता

है वह एरिओल कहलाता है। शिराविन्यास द्विशाखी, जालिकावत् (द्विबीजपत्री पादपों में) या समानान्तर (एकबीजपत्री पादपों में) हो सकता है। C_3 तथा C_4 पादपों में इसकी संरचना भिन्न हो सकती है।

- कुछ पादपों में पत्तियां विशेष कार्यों को करने के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। कुछ इस प्रकार की पत्तियां हैं : गूदेदार पत्तियां; प्रतान; शूल; कांटे; तीक्ष्ण वर्ध; संचयी पत्तियां; जनन पत्तियां; पुष्पीय पत्तियां; तथा कीट-पकड़ने वाली पत्तियां।

- पादप अपने अंगों को विलगन के द्वारा अलग करते हैं। सभी पार्श्व अंग विलग होते हैं। विलगन से पहले विलगन क्षेत्र बन जाता है। इसमें विलगन परत तथा सुरक्षात्मक परत होती है।

8.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. जड़ शीर्ष तथा प्ररोह शीर्ष में कुछ प्रमुख अंतरों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

2. नीचे शब्दों (क-घ) का सेट दिया गया है जिसको 'कुंजी' शीर्षक में समूहित किया गया है। प्रत्येक शब्द से मैच करती हुई व्याख्या "वक्तव्यों" (i-iv) में दी गई है। आपको यह करना है कि कुंजी के प्रत्येक शब्द के लिए मैचिंग वक्तव्य छाँटकर अपना उत्तर दी गई जगह में लिखना है।

कुंजी :

क) ट्राइकोब्लास्ट / रोमकोरक (Trichoblast)

ख) वैलामेन/आर्द्रताग्राही गुंठिका (Velamen)

ग) कैलिप्ट्रोजन/गोपकजन (Calyptrogen)

घ) अंतःत्वचा (Endodermis)

वक्तव्य **(Statements)**

i) ढ़ोलकाकार कोशिकाओं की एक परत जिसकी अरीय कोशिका भित्तियां सुबेरिन युक्त होती हैं। यह परत जड़ों में भरण ऊतक को संवहनी ऊतक से अलग करती है।

ii) हिस्टोजन परत जो मूलगोप को बनाती है।

iii) आर्किडिसी (Orchidaceae) कुल के पादपों में पाई जाने वाली बहुपरती बाह्यत्वचा

iv) जड़ की बाह्यत्वचा में एक आरंभक कोशिका, जो मूलरोमों के निर्माण के लिए जिम्मेदार होती है।

शब्द	वक्तव्य संख्या
क)	
ख)	
ग)	
घ)	

3. आप सूक्ष्मदर्शी द्वारा एक प्रारूपी प्राथमिक जड़ की अनुप्रस्थ काट का निरीक्षण कर रहे हों। उन गुणों/लक्षणों की सूची बनाइए जो आपको दिखाई पड़ सकते हैं। उन गुणों को बताइए जिनके आधार पर आप उसे पहचान सके।

i) एक जड़ के रूप में

ii) एक बीजपत्री पादप की जड़ के रूप में

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4. पादप के मूल भागों को दर्शाता हुआ एक रेखांकित चित्र बनाइये।

5. आपको एक अंग दिया जाए जिसमें बहुत अधिक द्वितीयक वृद्धि हो रही हो, तो आप ये कैसे निश्चित करेंगे कि यह जड़ का अंग है।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

6. द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों के तने में प्रमुख विभेदों। अंतरों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

7. नीचे ऊतकों से संबद्ध कुछ शब्द दिए गए हैं जिन्हें कोई उस द्विबीजपत्री पादप के तने में देख सकता है जिसमें द्वितीयक वृद्धि होती हो। उन्हें इस तरह से व्यवस्थित कीजिए जैसे कि आप उन्हें अंग की परिधि से उसके केन्द्र तक देखते हैं। (मज्जा, प्रोटोज़ाइलम, मेटाज़ाइलम, द्वितीय ज़ाइलम, बाह्यत्वचा, कॉर्क, कॉर्क-कैम्बियम, द्वितीय वल्कुट, प्राथमिक वल्कुट, द्वितीय फ्लोएम, संवहनी कैम्बियम, अंतःत्वचा, परिरंभ)

....

....

....

....

....

....

....

....

8. सही विकल्पों को चुनिए:

क) किसी अंग में परिचर्म निर्मित होता है .... के द्वारा :

i) कागजन

ii) संवहनी कैम्बियम

iii) मूल शीर्ष

iv) प्ररोह शीर्ष

ख) वल्कुटजन जन्म देता है :

i) बाह्यत्वचा

ii) वल्कुट

iii) मूलगोप

iv) मज्जा

ग) बहु-आदिदारुक जड़ें .... की विशेषता हैं:

i) द्विबीजपत्री जड़ों

ii) एकबीजपत्री जड़ों

iii) टेरिडोफाइटा की जड़ों

iv) प्राथमिक जड़ों

घ) पादप की लंबाई बढ़ती हैं .... के द्वारा :

i) शीर्ष विभज्योतक

ii) पार्श्व विभजयोतक

iii) त्वचाजन

iv) संवहनी कैम्बियम

ङ) मध्यपर्ण/पर्णमध्योतक रूपांतरित .... हैं :

i) संवहनी ऊतक

ii) त्वचीय ऊतक

iii) भरण ऊतक

iv) विभज्योतक

8.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क) मूसला (प्राथमिक जड़),
   ख) अपस्थानिक जड़
   ग) नागेली (Nageli)
   घ) प्लीरोम (Plerome)
   ङ) प्रोविभज्योतक (Promeristem)
   च) शांत क्षेत्र या शांत केन्द्र

2. क) बहुपरतीय

ख) रोमकोरक/ट्राइकोब्लास्ट

ग) बहुपरतीय

घ) वियुक्तिजात (schizogenous)

ङ) बाह्यमूलत्वचा

च) अंत:त्वचा

छ) प्रोटोजाइलम

ज) बहुआदिदारुक

झ) अंत:जात

ण) मूलगोप

3. क) जल संचयी जड़ें,

ख) आर्किड्स की वायवीय जड़ें,

ग) मैन्ग्रोव्स (Mangroves)

घ) खाद्य संचयी जड़ें,

ङ) परजीवी जड़ें,

च) कवकमूली जड़ें,

छ) ग्रंथिका

4. क) ट्यूनिका-कार्पस सिद्धांत

ख) अपनतिक

ग) दूरस्थ

घ) फैडरिक वुल्क

ङ) शाखा

च) पर्वसंधि

छ) प्ररोह

5. क) त्वचीय ऊतक, भरण ऊतक तथा संवहनी ऊतक।

ख) कैपेरिस डेसीडुआ (*Capparis decidua*), ओपंशिया (*Opuntia*) [कैक्टस], रस्कस (*Ruscus*), कैसुएराइना (*Casuarina*), एस्पेरेगस (*Asparagus*), सिस्टीकस (*Cysticus*)।

ग) फाइबर/रेशा (दृढ़ोतक)।

घ) संयुक्त, बहि:फ्लोएमी, वर्धी, संयुक्त उभयफ्लोएमी, वर्धी, संयुक्त बहि:फ्लोएम अवर्धी, फ्लोएम केन्द्री, जाइलम केन्द्री

ङ) जीवित (विद्यमान) टैरिडोफाइट्स तथा एकबीजपत्री पादप

6. क) i) प्रकंद भूमिगत पृष्ठाधर तने या शाखाएं होते हैं जो क्षैतिज (आड़े) रूप से भूमि की सतह के नीचे उगते हैं। इनमें पर्वसंधि और पर्व होते हैं पर्वसंधि पर भूरी शल्कीय पत्तियां होती हैं। इनमें कक्षीय तथा शीर्ष कलिकाएं दोनों पाई जाती हैं। अपस्थानिक जड़ें पर्वसंधियों पर विकसित होती हैं। इनमें संकुचन जड़ें भी हो सकती हैं। ये भोजन संग्रह करने के कारण सामान्यत: गूदेदार होती हैं।

ii) पादप का कोई भी गूदेदार भाग जो खाद्य संचय करता हो वह कंद कहलाता है। कंद, तना कंद तथ जड़ कंद होते हैं। प्रत्येक तना कंद में पर्वसंधि तथा पर्व होते हैं, तथा ये धीमी वृद्धि दर्शाते हैं। पर्वसंधि बिन्दु अपने कक्ष में शल्कीय पत्तियों तथा नेत्रों की उपस्थिति से पहचाने जाते हैं। नेत्र सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित रहते हैं तथा रोज सिरे (Rose end) पर अधिक पाए जाते हैं।

iii) शल्ककंद भोजन संचय के लिए रूपांतरित भूमिगत् तने होते हैं। इनमें पर्वसंधि और पर्व होते हैं। पत्तियां शल्कीय, शुष्क तथा कलामय/झिल्लीमय हो सकती हैं। ये कंचुकित (उदाहरण प्याज, ट्यूलिप, हायासिन्थ) अथवा शल्कीय (उदा. लहसुन, लिली) हो सकते हैं।

iv) धनकंद ठोस शल्ककंद होते हैं। इनमें संकुचित ऊर्ध्वाधर मूल स्कंध होते हैं जिनमें बहुत बड़ी शीर्ष कलिका होती है। इनमें कुछ शल्कीय पत्तियां होती हैं तथा ये उनके आधारों से अथवा पूरी काया से अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न करते हैं।

ख) i) *आक्सेलिस (Oxalis)*, *फ्रेगेरिया (Fragaria)*, *साइनोडोन (Cynodon)* ।

ii) *मैन्था (Mentha)*

iii) *क्राइसैन्थिमम (Chrysanthemum)*, *मैन्था आर्वेन्सिस (Mentha arvensis)*।

iv) *इकोर्निया क्रैसीपिस (Eichhornia crassipes)*

v) *ओपन्शिया (Opuntia)*, *रस्कस (Ruscus)*, *मूलेनबेकिया (Muhlenbeckia)*।

7. क) चित्र 8.46 में देखिए

ख) अवृंत : वृंत विहीन पत्ती

अभ्यक्ष : अक्ष की ओर की सतह।

अपाक्ष : अक्ष के दूसरी ओर की सतह।

वृंतीय : वह पत्ती जिसमें वृंत पाया जाता है।

शिराविन्यास : पत्ती के पटल पर शिराओं का संयुक्त जाल/नेटवर्क

एरिओल : पर्ण ऊतक का सबसे छोटा भाग जो शिराओं से घिरा रहता है।

8. क) i) *लैथाइरस (Lathyrus)* के पूरे पटल से बना हुआ प्रतान

ii) *पाइसम (Pisum)* की अंतस्थ पर्णिका से बना प्रतान

iii) *नेरियम ऑलिएन्डर (Nerium oleander)* की मरूद्भिदी पत्ती

iv) *जिजीफस (Zizyphus)* का अनुपर्णी कांटा

v) *ओपन्शिया (Opuntia)* और *बरबेरिस (Berberis)* की कांटेदार पत्तियां

vi) *ब्रायोफिल्लम (Bryophyllum)* की जनन पत्तियां

vii) *नेपेन्थीस (Nepenthes)* में कीटभक्षी घट पत्तियां (सेक्शन 8.4.3 को भी देख लीजिए)।

ख) सेक्शन 8.4.3 में देखिए।

9. क) **विलगन** : यह पादप के द्वारा पार्श्व अंगों को अलग करने की प्रक्रिया (संपूर्ण घटना) है।

विलगन क्षेत्र : समीपस्थ सिरे पर अंग का वह भाग जो रूपांतरित हो जाता है तथा विलगन के दौरान दूरस्थ भाग के अलग होने में सहायता करता है।

विलगन परत : विलगन क्षेत्र का एक भाग (क्षेत्र) जो वास्तव में अंग के विलगन (अलग होने) में सहायक होता है।

सुरक्षात्मक परतें : विलगन क्षेत्र का एक भाग जो पर्णाधार की विलगन से रक्षा करता है तथा खुले भाग में जीवाणुओं के प्रवेश को रोकता है।

जीर्णता : ऊतकों का पीला होना तथा अन्य सभी जैवरासायनिक बदलाव जो पत्ती में विलगन की प्रक्रिया के दौरान आते हैं।

ख) i) *टैक्सोडियम, पोपुलस*

ii) *कोचिया इंडिका* [टंबल बोड/खर]

अंत में कुछ प्रश्न

1.

	मूलशीर्ष	प्ररोह शीर्ष
i)	दूरस्थ क्षेत्र में मूल गोप होती है।	ऐसी कोई गोप नहीं होती है।
ii)	पार्श्वों की उत्पत्ति से संबद्ध नहीं होते हैं।	पार्श्व जैसे कि पत्तियां सदैव प्ररोह शीर्ष की क्रिया से उत्पन्न होती हैं।
iii)	पर्वसंधियां तथा पर्व अनुपस्थित होते हैं।	पर्वसंधियों तथा पर्व उपस्थित होते हैं।
iv)	विभज्योतकी कोशिकाएं उपशीर्षस्थ भाग में स्थित होती हैं।	विभज्योतकी कोशिकाएं अंतस्थ भाग में स्थित होती हैं।

2.

शब्द	वक्तव्य
क)	(iv)
ख)	(iii)
ग)	(ii)
घ)	(i)

3. i) इसमें बाह्य आदिदारुक प्रोटोजाइलम तथा संवहन पूलों की व्यवस्था अरीय होती है।

   ii) जड़ बहुआदिदारुक तथा स्पष्ट और बड़ी मज्जा वाली होती है।

4. चित्र 8.1 देखिए तथा पौधे के महत्वपूर्ण अंग नीचे दिये गये हैं।

   1. अंतस्थ कलिका
   2. कक्षीय कलिका
   3. पर्णपटल
   4. वृंत
   5. पर्व
   6. पर्वसंधि
   7. पार्श्व जड़
   8. मूलगोप
   9. मूल विभज्योतक

5. जड़ में, प्राथमिक जाइलम हमेशा जड़ के केन्द्र में रहता है, भले ही उसमें चाहे कितनी भी द्वितीयक वृद्धि हो जाए। इसके विपरीत तनों में, प्राथमिक जाइलम अंततः पूर्णतः समाप्त हो सकता है।

6. सेक्शन 8.3.5 देखिए।

7. बाह्यत्वचा

   कॉर्क

   कॉर्क–कैम्बियम

   द्वितीय वल्कुट

   प्राथमिक वल्कुट

   अंतः त्वचा

   परिरंभ

   प्राथमिक फ्लोएम

   द्वितीय फ्लोएम

   संवहनी कैम्बियम

   द्वितीय जाइलम

   मेटाज़ाइलम

   प्रोटोज़ाइलम

   मज्जा

8. क) (i), घ) (i),

   ख) (ii), ङ) (iii),

   ग) (ii).

इकाई 9 पुष्प, फल तथा बीज

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
 उद्देश्य
9.2 पुष्प
 9.2.1 वाह्यदलपुंज
 9.2.2 दलपुंज
 9.2.3 पुमंग
 9.2.4 जायांग
9.3 पुष्पन की ओर पारगमन
9.4 पुष्पीय अंगों का निर्माण (अंगविकास)
9.5 पुष्प की आकारिकीय प्रकृति
9.6 पुष्प का संवहनी शारीर
9.7 पुष्पीय अंगों का शारीर
 9.7.1 बाह्यदल पुंज
 9.7.2 दलपुंज
 9.7.3 पुमंग
 9.7.4 जायांग
9.8 पुंकेसरों की आकारिकीय प्रकृति
9.9 अंडप का जातिवृत्त
9.10 फल
 9.10.1 सरल तथा संयुक्त फल
 9.10.2 कूट फल
 9.10.3 फलों के प्रकार
9.11 फलों का विकास
 9.11.1 सिट्रस फल
 9.11.2 सेब
 9.11.2 केला
 9.11.3 फली
9.12 फल का विलगन
9.13 असंगजनन
 9.13.1 कायिक प्रजनन
 9.13.2 अनिषेकबीजता
 9.13.3 अनिषेकजनन
 9.13.4 अनिषेकफलन
9.14 बीज
 9.14.1 कूटबीज
9.15 बीज के प्रकारों में विविधता
 9.15.1 मटर
 9.15.2 एंरड
9.16 बीज के उपांग
 9.16.1 बीजचोलक
 9.16.2 बीजचोल
 9.16.3 रोम
 9.16.4 पंख
9.17 सारांश
9.18 अंत में कुछ प्रश्न
9.19 उत्तर

9.1 प्रस्तावना

आवृतबीजी पादपों (angiosperms) में नर तथा मादा प्रजनन अंग पुष्पों में सुरक्षा तथा सजावट सहायक भागों के साथ उगते हैं। पादप कुछ समय तक कायिक वृद्धि के बाद पुष्पित होता है, सामान्यत: यह कुछ पर्यावरणीय कारकों की अनुक्रिया स्वरूप होता है। कायिक प्ररोह शीर्ष में कुछ बदलाव आते हैं जिससे प्ररोह के दीर्घन (elongation) तथा पत्र कलिका (leaf bud) के आरंभन (initiation) के स्थान पर, यह एकल पुष्प अथवा अनेक पुष्पों वाला पुष्पक्रम (infloresence) बनाता है। समजातता (homology) तथा पुष्प के आकारिकीय विकास (morphological evolution) की समस्या ने अनुसंधानकर्ताओं को लंबे समय तक व्यस्त रखा है। इस इकाई में हमने पुष्प के विकास का व्यापक विवरण देने का प्रयास किया है। पुष्प का साइज, आकार, रंग तथा गंध, परागण (pollination) और निषेचन (fertilization) को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित हो जाते हैं। फल, पुष्प द्वारा प्राप्त होने वाले उस जीववैज्ञानिक चरमावस्था का प्रतिनिधित्व करता है जो तब बनता है जब अंडाशय (ovary) में स्थित बीजांड (ovules) निषेचित हो जाते हैं तथा बीज में विकसित हो जाते हैं। अत:, फल के बनने के सभी संभावित तरीकों के बारे में तथा बीजों के परिक्षेपण (dispersal) के लिए उसके द्वारा अपनायी जाने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं के बारे में समझना महत्वपूर्ण हैं।

बीज बीजांड से विकसित होता है जिसके बारे में आप पहले ही एल.एस.ई -06 की इकाई-5 में पढ़ चुके हैं। बीज के परिवर्धन विज्ञान, जीवविज्ञान, शारीर (anatomy) तथा आकारिकीय विवरणों की चर्चा संक्षिप्त रूप से इस इकाई में की गई है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- पुष्प के विभिन्न भागों, उनकी आकारिकी, संरचना विकास (morphogenesis) तथा अंगविकास (organogenesis) को जानने में,
- पुष्पीय अंगों के शारीर का वर्णन करने में, जिनमें पुंकेसर (stamens) तथा अंडप (carpels) भी सम्मिलित हैं,
- अंडप के जातिवृत्त (phylogeny) की चर्चा करने में,
- फल तथा बीज के संरचनाविकास तथा अंगविकास की चर्चा करने में,
- विभिन्न प्रकार के फलों तथा बीजों का वर्णन करने में।

9.2 पुष्प

आवृतबीजी पादपों में प्रजनन संरचना पुष्प के रूप में होती है। पुष्प में एक पुष्पासन (thalamus) अथवा धानी (receptacle) होती है जो व्यक्तिवृत (ontogeny) तथा संरचना में कायिक प्ररोह शीर्ष से मिलती जुलती है। इस इकाई में बाद में, हम पढ़ेगें कि किस प्रकार कायिक शीर्ष, एक निश्चित अवस्था में आकर तथा निश्चित परिस्थितियों में, पुष्पीय शीर्ष में बदल जाता है। पुष्पासन पर प्रारूपिक रूप से बंध्य (sterile) तथा उर्वर (fertile) उपांग दोनों ही या तो सर्पिल रूप में (spirally) अथवा चक्रों (whorls) में उगते हैं। बंध्य उपांग दो प्रकार के होते हैं: (i) बाह्यदल (sepals), जो मिलकर बाहरी बाह्यदलपुंज (calyx) बनाते हैं; (ii) दल/पंखुरीयां (petals), जो भीतर की ओर सम्मिलित रूप से दलपुंज (corolla) बनाते हैं। बाह्यदल तथा दल सामूहिक रूप से परिदलपुंज (perianth) अथवा परिदल (tepals) कहलाते हैं, खासतौर पर यदि दोनों एक से दिखते हों तब। उर्वर उपांग हैं: (i) पुंकेसर, जो दलों के अंदर स्थित होते हैं तथा परागकोष (anthers) धारण करते हैं जो परागकण (pollengrains) उत्पन्न करते हैं जिनमें नर युग्मक (male gametes) होते हैं; (ii) अंडप, पुष्प के केन्द्र में, अंडाशय होते हैं जिनमें मादा युग्मकोद्भिद (female gametophyte) के साथ ही बीजांड स्थित रहते हैं। पुष्प के पुंकेसर सम्मिलित रूप से पुमंग

(androecium) कहलाते हैं तथा अंडप सम्मिलित रूप से जायांग (gynoecium) कहलाते हैं। *फैगोपाइरम* (*Fagopyrum*) के पुष्प की अनुदैर्घ्य काट को चित्र 9.1 में दिखाया गया है। इस पुष्प में पांच बाह्यदल, पांच दल, पांच पुंकेसर (काट में सिर्फ कुछ ही दिखाई दे रहे हैं) तथा एक अंडाशय होता है जो तीन युग्मित अंडपों का बना होता है जिसमें एक कोष्ठक (locule) तथा वर्तिका (styles) होती हैं। जब पुष्प में पुंकेसर तथा अंडप दोनों होते हैं तो वह द्विलिंगी (bisexual) कहलाता है। जब सिर्फ पुंकेसर अथवा सिर्फ अंडप उपस्थित होते हैं, तो पुष्प एकलिंगी (unisexual) कहलाता है – नर अथवा पुंकेसरी (staminate) यदि पुंकेसर उपस्थित हो तो – तथा मादा या अंडपी (carpellate) यदि सिर्फ अंडप उपस्थित हो।

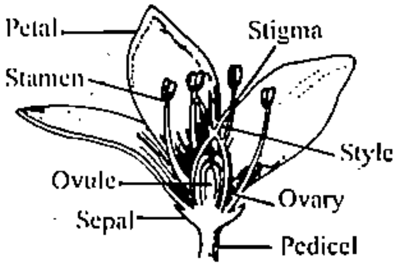

चित्र 9.1 : *फैगोपाइरम* का एक पुष्प अनुदैर्घ्य काट में। जायांग तीन युग्मित अंडपों का व एककोष्ठकीय अंडाशय तथा तीन वर्तिका युक्त होता है।

पुष्प (i) एकल, शाखा पर अंतस्थ स्थित (उदा. गुड़हल अथवा पत्ती के अक्ष में उगते हुए (उदा. गुलखेरा (hollyhock)); अथवा (ii) समूहों में व्यवस्थित होते हैं जो पुष्पक्रम कहलाते हैं (उदा., लैबरनम (Laburnum))।

विभिन्न आवृतबीजी पादपों में पुष्प काफी विस्तृत विविधता (diversity) प्रदर्शित करते हैं। कुछ पादपों में बंध्य उपांग विशेषरूप से दल काफी प्रमुख/अथवा उत्कृष्ट, चटकीले रंगों युक्त तथा सुवासित भी होते हैं (उदा. गुलाब; चित्र 9.2)। अन्य नें जैसे कि *फाइकस* स्पी. (*Ficus* spp.) (चित्र 9.3), शहतूत (mulberry) तथा घासों में परिदल अनुपस्थित अथवा बहुत ही अस्पष्ट सा हो सकता है, तथा पुष्प में सिर्फ पुंकेसर अथवा अंडप भी हो सकते हैं। पुष्प का साइज, रंग, सममिति तथा गंध परागण की क्रिया (परागकणों के वायु, जल, कीट, पक्षियों अथवा चमगादड़ों के द्वारा वर्तिकाग्र पर पहुँचने) से संबन्धित होते हैं। पुष्पीय गुण वनस्पति विज्ञानियों के लिए काफी दिलचस्प होते हैं क्योंकि ये विकास को समझने के लिए सूत्र प्रदान करते हैं तथा पादप के वर्गीकरण (classification) और पहचान (identification) करने में सहायता करते हैं। आप आसानी से इस विविधता के विस्तार को अपने अड़ोस-पड़ोस में कुछ पुष्पों का निरीक्षण करके व्यापक रूप से देख सकते हैं। सुविधा के लिए, आप वैयक्तिक पुष्पीय भागों पर भी ध्यान दे सकते हैं।

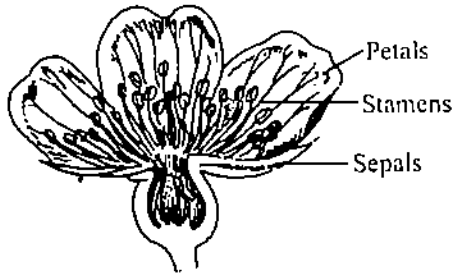

चित्र 9.2 : रोज़ा (*Rosa*) कुल का एक पुष्प उत्कृष्ट दलों को दिखाते हुए।

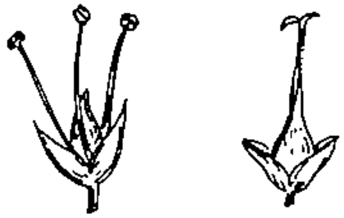

चित्र 9.3 : फाइकस (*Ficus*) के नर तथा मादा पुष्प लघुकृत परिदल पुंज को दिखाते हुए।

9.2.1 बाह्यदलपुंज (Calyx)

बाह्यदल सबसे बाहरी चक्र को बनाते हैं, जिनके अंदर अन्य पुष्पीय भाग कलिका अवस्था (bud stage) में रहते हैं। ये अधिकांशत: हरे होते हैं, परंतु कुछ पादपों में सजावटी भी होते हैं जैसे कि *सैल्विया स्प्लैन्डेन्स* (*Salvia splendens*) में जहाँ बाह्यदलपुंज, दलपुंज की भाँति ही चटकीले लाल रंग का होता है। बाह्यदलों की अलंकृत अथवा दलाभ (petaloid) स्थिति दलों के कम अथवा न होने की स्थिति भी हो सकती है जैसे कि सिल्वर ओक (silver oak) में। लिलिएसी (Liliaceae) *ऐस्फोडेलस* तथा इरीडेसी (Iridaceae) (उदा. केसर (saffron) तथा ग्लैडिओलस (gladiolus) में बाह्यदल तथा दल दोनों अलंकृत/सजावटी होते हैं तथा अविभेदित होते हैं। दूसरी ओर, वंश (genus) *कोर्नस* (*Cornus*) में बाह्यदलों में लघुता दिखाई पड़ती है। *यूफॉर्बिया* (*Euphorbia*) में पुष्पों में बाह्यदल तथा दल दोनों ही नहीं पाए जाते हैं(चित्र 9.4); नग्न पुष्प पुष्पक्रम में समूहित होते हैं जो साएथियम (cyathium) [बहुवचन साएथिया (cyathia)] कहलाता है जो अलंकृत पर्णिल सहपत्रों (bracts) से घिरा हो सकता है।

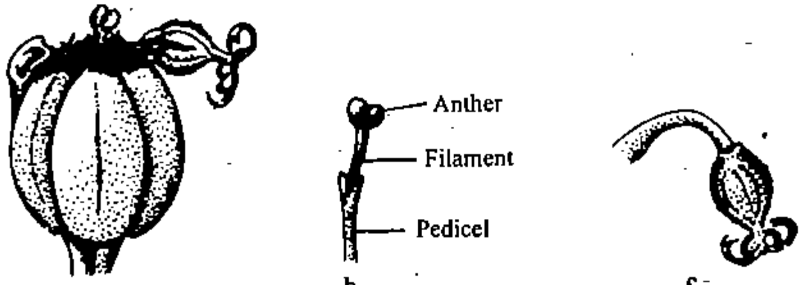

चित्र 9.4 : a) *यूफॉर्बिया* स्पी. का साएथियम b) नर पुष्प c) मादा पुष्प बाह्यदलों तथा दलों के विहीन।

9.2.2 दलपुंज (Corolla)

दल बाह्यदल के अंदर स्थित होते हैं तथा पुंकेसर को घेरे हुए या कक्षांतरित (subtend) किए रहते हैं। ये वायु तथा जल से परागित होने वाले पुष्पों में अनुपस्थित या लघुकृत होते हैं तथा जंतु परागित पुष्पों में बड़े, सजावटी तथा अक्सर सुगंधयुक्त होते हैं। दलों के साइज, आकार, रंग, व्यवस्था तथा तंतुविन्यास (texture) में काफी विविधता दिखाई पड़ती है। पुष्प में दल मुक्त हो सकते हैं जैसे *फैगोपाइरम* में (चित्र 9.1) अथवा दलपुंज नलिका (corolla tube) को बनाने के लिए संयुक्त हो सकते हैं जैसे कि *विन्का* (*Vinca*) में (चित्र 9.5)।

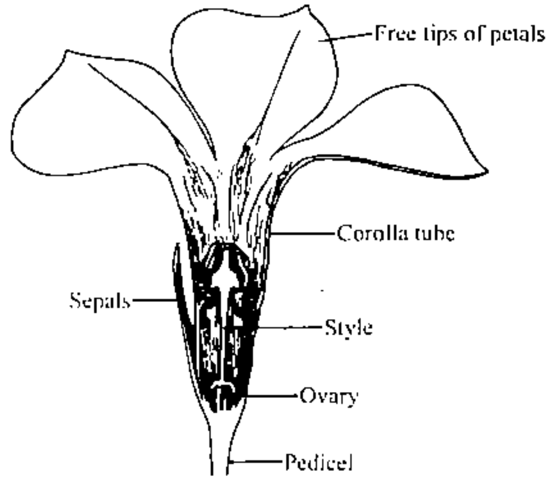

चित्र 9.5 : *विन्का मेजर* (*V.major*) के पुष्प की अनुदैर्ध्य काट दलों को दिखाते हुए जो निचले अर्धभागों में युग्मित होकर दलपुंज नलिका बनाती है।

आर्किड्स में दलों में रंग तथा सममिति होती है जो उन शलभों (moths) तथा तितलियों के जैसी ही होती है जो पुष्पों को परागित करते हैं (चित्र 9.6)। सिल्क कॉटन (सेमल रूई) वृक्ष *बाम्बैक्स सीबा* (*Bombax ceiba*) तथा कोरल वृक्ष *एरिथ्रीना इंडिका* (*Erythrina indica*) में दल परागण करने वाले पक्षियों को आकर्षित करने के लिए चटकीले, नलिकाकार तथा माँसल होते हैं *ट्रोपिओलम मेजस* (*Tropaeolum majus*) में दल पूँछ-जैसी मकरंद शुंडिका/दलपुट (nectar spur) बनाते हैं जिसमें मकरंद पाया जाता है (चित्र 9.7)।

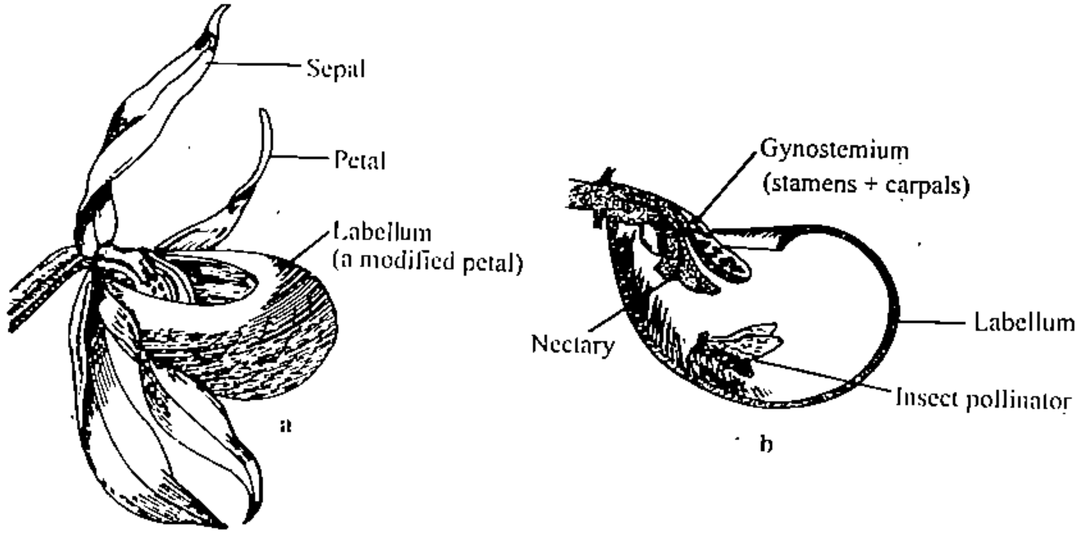

चित्र 9.6 : आर्किड *सिप्रिपीडियम* स्पी. (*Cypripedium*) का पुष्प b) पुष्प का मकरंद युक्त गर्त जैसा पाउच या ओष्ठक (labellum) कीटों को आकर्षित करने के लिए जो पुष्प को परागित करते हैं।

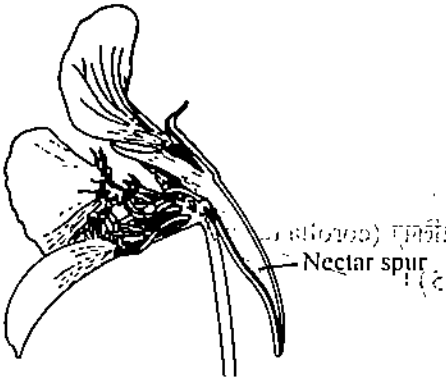

चित्र 9.7 : ट्रोपिओलम स्पी. (*Tropaeolum*) की मध्य काट पूंछ जैसे मकरंद दलपुट/शुंडिका को दिखाते हुए।

9.2.3 पुमंग (Androecium)

पुंकेसर एक, दो या अधिक चक्रों में मुक्त या आपस में युग्मित अथवा दलों के साथ युग्मित पाए जाते हैं। प्रत्येक पुंकेसर में तंतु होता है जो परागकोष धारण किए रहता है। परागकोष में सामान्यत: चार या दो कोष्ठ या खंड होते हैं जिनमें परागकण होते हैं। प्रत्येक परागकण दो नर युग्मक या पुमणु उत्पन्न करता है। किसी पुष्प में कुछ या सभी पुंकेसर लघुकृत या बंध्य हो सकते हैं (जिन्हें बंध्य पुंकेसर कहा जाता है)। पुंकेसर नलिका बनाने के लिए जायांग के चारों ओर युग्मित हो सकते हैं जिससे स्वपरागण (self pollination) को बढ़ावा मिले। (उदा. गुड़हल; चित्र 9.8)।

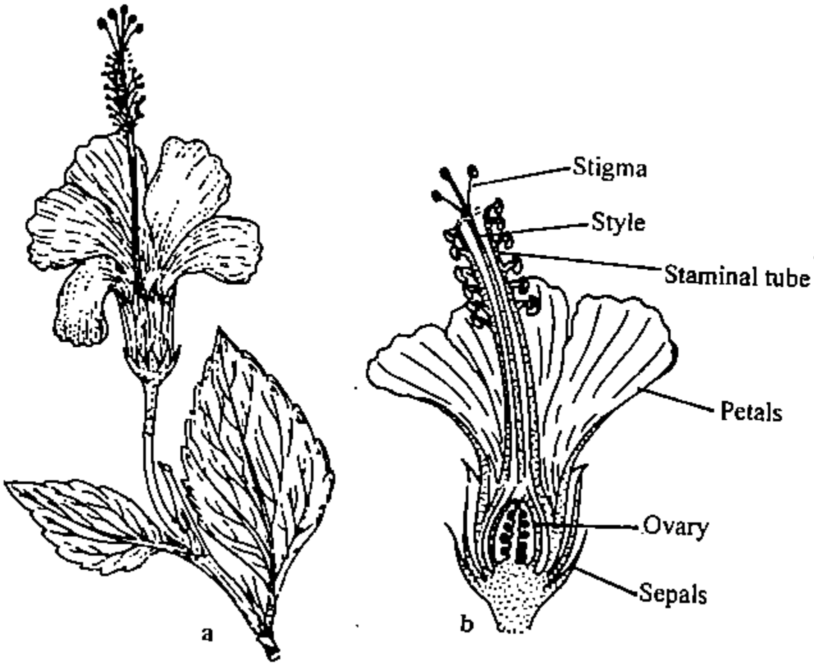

चित्र 9.8 : *हिबिस्कस रोजा-सायनेन्सिस (Hibiscus rosa-sinensis* a) पुष्प के साथ एक टहनी b) पुष्प का मध्य काट वर्तिका को घेरे हुए पुंकेसरी नलिका को दिखाते हुए। परागकोष वर्तिकाग्र को लगभग छू रहे हैं।

मटर, *पाइसम सैटाइवम (Pisum sativum)* में (चित्र 9.9) नौ पुंकेसरों के तंतु युग्मित होकर अंडाशय को घेरे हुए एक आच्छद बनाते हैं जबकि दसवां पुंकेसर मुक्त होता है। *हाइपेरीकम एजिप्टीकम (Hypericum aegypticum)* में पुंकेसर तीन समूहों में युग्मित रहते हैं (चित्र 9.10)। जब पुंकेसर अथवा उनके तंतु पार्श्व रूप से एक समूह में युग्मित रहते हैं तो यह स्थिति एकसंघी (monoadelphous) (*हिबिस्कस*), जब दो समूहों में तो द्विसंघी (diadelphous) (*पाइसम*) और जब कुछ समूहों में युग्मित रहते हैं तो ये स्थिति बहुसंघी (polyadelphous) [रूटेसी (Rutaceae)] कहलाती है। कुछ पादपों में पुंकेसर बड़े तथा सजावटी होते हैं (उदा. बोटलब्रश; चित्र 9.11)। *कैना (Canna)* में पांच पुंकेसरों में से सिर्फ एक उर्वर होता है; अन्य चटकीले रंगों के होते हैं जो पुष्प का सजावटी (दलाभ) भाग बनाते हैं।

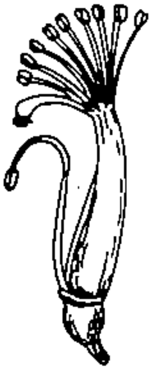

चित्र 9.9: *पाइसम सैटाइवम*। विलग किया हुआ पुमंग नौ युग्मित तथा एक मुक्त पुंकेसर को दिखाने के लिए।

चित्र 9.10 : *हाइपेरीकम* स्पी. के पुष्प का पुमंग तीन समूहों में पुंकेसरों को दिखाते हुए।

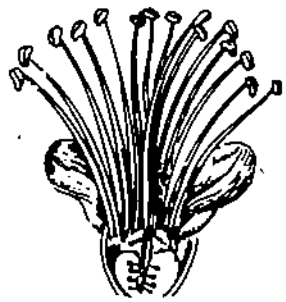

चित्र 9.11 : बोटल ब्रुश : [*कैलिस्टीमौन लैन्सियोलेटस* (*Callistemon lanceolatus*)] के पुष्प के अनुदैर्घ्य काट, बड़े सजावटी पुंकेसरों को दिखाते हुए।

9.2.4 जायांग (Gynoecium)

अंडप पुष्प के मध्य में स्थित होते हैं, व पुष्पीय प्ररोह का अंत करते हैं। पुष्प में एक ही अंडप हो सकता है (जैसा कि गेहूँ और मक्का में; चित्र 9.12 a) अथवा दो या अधिक अंडप हो सकते हैं जो या तो मुक्त होते हैं (जैसे कि नवनीत पुष्प (butter cup) तथा निर्विषी (larkspur) में; चित्र 9.12 b) अथवा युग्मित होकर बहुअंडपी स्त्रीकेसर (pistil) बनाते हैं (जैसे कि अंरडी (castor), सरसों (mustard) या लिली में; चित्र 9.13)। जायांग या स्त्रीकेसर सामान्यत: अंडाशय, वर्तिका तथा वर्तिकाग्र में विभेदित होता है। अंडाशय में एक या अधिक बीजांड होते हैं, प्रत्येक में मादा युग्मकोद्भिद (female gametophyte) होता है। अंडाशय बेलनाकार वर्तिका में जारी रहता है तथा वर्तिकाग्र में समाप्त होता है। परागण के पश्चात् परागकण वर्तिकाग्र पर अंकुरित होते हैं जिसके फलस्वरूप पराग नलिका निर्मित होती है जो वर्तिका से गुजरती है तथा पुमणुओं को मादा युग्मकोद्भिद तक ले जाती है। वह पादप जिसमे पुंकेसर तथा अंडप दोनों होते हैं वह द्विलिंगी होता है; अन्यथा यह एकलिंगी होता है- नर या पुंकेसरी यदि सिर्फ पुंकेसर होते हैं, तथा मादा, अंडपी या स्त्रीकेसरी यदि सिर्फ जायांग पाया जाता है।

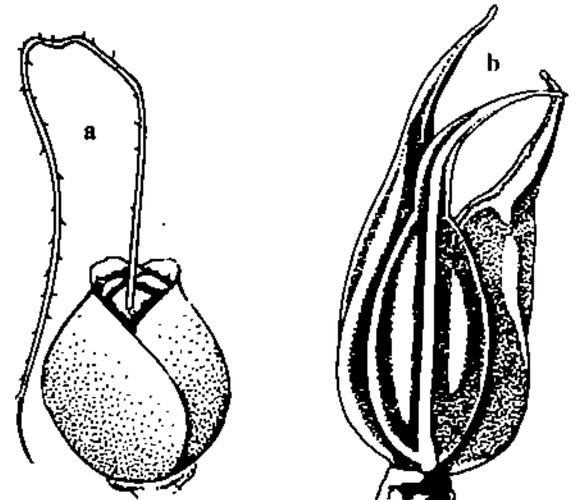

चित्र 9.12 : a) मक्का, *ज़िया मेज़* (*Zea mays*) में एकल अंडप b) मुक्त अंडप पादप।

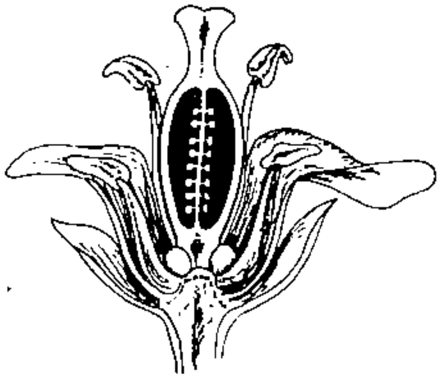

चित्र 9.13 : सरसों, ब्रैसिका (*Brassica*) में युग्मित बहुअंडपी स्त्रीकेसर।

9.3 पुष्पन की ओर पारगमन

इकाई 8 में आपने प्ररोह विभज्योतक (shoot meristem) के संगठन से संबधित मूलभूत धारणाओं के बारे में पढ़ा। आपको ध्यान होगा कि आवृतबीजी पादपों में कायिक प्ररोह शीर्ष विस्तृत रूप से ट्यूनिका (tunica) तथा कार्पस (corpus) को लिए हुए माना जाता है (चित्र 9.14)। हालांकि, अन्य व्याख्याएं अवधारणाएं भी हैं जो सुझाती हैं कि विभज्योतक में अधिक विस्तृत कोशिका ऊतकी अनुक्षेत्र वर्गीकरण (cyto-histological zonation) पाया जाता है। कुछ आवृतबीजी पादपों में प्ररोह शीर्ष में मध्य सतह आरंभकों (median surface initials) का समूह पाया जाता है जो शीर्ष आरंभक समूह (apical initial group) कहलाता है। इन कोशिकाओं के नीचे का अनुक्षेत्र और इनसे व्युत्पन्न क्षेत्र, केन्द्रीय मातृ कोशिकाएं बनाता है (चित्र 9.15)। इन मातृ कोशिकाओं के केन्द्र स्थित व्युत्पन्न, मज्जा (pith) को जन्म देते हैं तथा पार्श्व व्युत्पन्न सघन रूप से अभिरंजित होने वाला परिधिय अनुक्षेत्र बनाते हैं जो वल्कुट (cortex) को निर्मित करता है। एक मत के अनुसार (जॉन्सन तथा टॉलनर्ट, 1960 Johnson & Tolbert) विभज्योतक की केन्द्र स्थित कोशिकाएं मेट्रा-मेरिस्टेम/विभज्योतक बनाती हैं जो अपना रखरखाव भी करता है और विभज्योतक के अन्य क्षेत्रों को भी सक्रिय रूप से कोशिकाएं प्रदान करता है (चित्र 9.16)। एक अन्य धारणा के अनुसार जो फ्रांसीसी वनस्पति वैज्ञानिक बूवट(1952) द्वारा दी गई है, मुख्य ऊतकजनीय (histogenic) भूमिका पार्श्व अथवा उपअंतस्थ (sub-terminal) अनुक्षेत्र एनू आरंभक (anneau initial) अथवा आरंभिक वलय (initial ring) द्वारा निभाई जाती है। शीर्ष की केन्द्रीय कोशिकाएं मैरिस्टैम डी' अटेन्टी (merist 'eme d' attente) अथवा विश्रान्ति विभज्योतक की विकास की कायिक प्रावस्था में कोई ऊतकजनीय भूमिका नहीं मानी जाती है। (चित्र 9.17)। ऐसा माना जाता है कि विश्रान्ति विभज्योतक, अंतस्थ स्थित पुष्प अथवा पुष्पक्रम के निर्माण में सक्रिय बन जाता है।

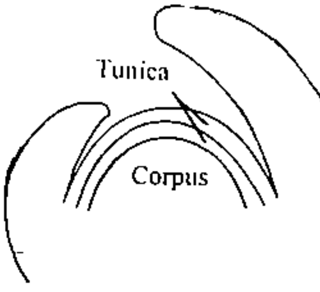

चित्र 9.14 : ट्यूनिका तथा कॉर्पस दोनों को दर्शाते हुए प्ररोह शीर्ष का आरेखीय प्रदर्शन।

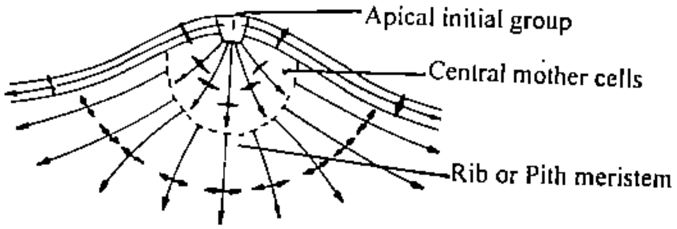

चित्र 9.15: विभज्योतकी शीर्ष आरंभक समूह तथा केन्द्रीय मातृ कोशिकाओं सहित प्ररोह शीर्ष।

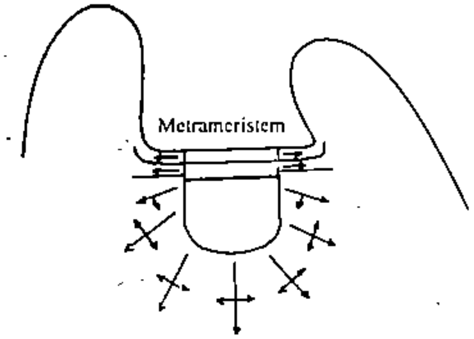

चित्र 9.16 : *हिबिस्कस* में शीर्ष विभज्योतक केन्द्रीय स्थित मेट्रा-मेरिस्टेम को दिखाते हुए।

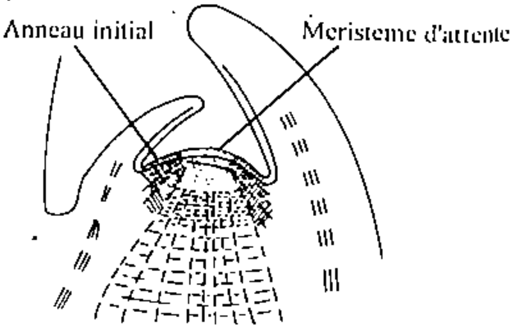

चित्र 9.17: कोशिका ऊतकजनीय (cytohistogenic) विभेदन के साथ प्ररोह शीर्ष।

बेल्जियम के आकारिकी वैज्ञानिक ग्रेगोइर (Gegoire) (1938) का मानना था कि पुष्पीय विभज्योतक पूर्णत: नई संरचना होता है जो कायिक विभज्योतक से व्युत्पन्न नहीं होता है। उनके मतानुसार, पुष्प या पुष्पक्रम मुख्य कायिक विभज्योतक से नहीं बनता है बल्कि पार्श्व कलिकाओं से बनता है। ग्रेगोइर ने दावा किया था कि ट्यूनिका-कार्पस संगठन जो कायिक शीर्ष के लिए प्रारूपिक होता है वह प्रजनन शीर्ष में नहीं प्रदर्शित होता है, जिसमें इसके स्थान पर विभज्योतकी मेंटल होता है जो मेन्कॉन मेरिस्टमेटीक (manchon meristematique) कहलाता है जो संपूर्ण शीर्ष भाग में केन्द्र अथवा वृहत् मृदूतक क्षेत्र (massif parenchymateux) को घेरे रहता है (चित्र 9.18) मेंटल की सतही परतें पुष्पीय भागों को जन्म देती हैं तथा भीतर के मृदूतकी केन्द्रीय भाग को कोशिकाएं प्रदान करती हैं।

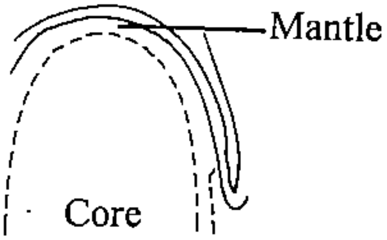

चित्र 9.18 : विभज्योतकी मेंटल तथा मृदूतकी केन्द्र भाग (core) को दर्शाता पुष्पीय शीर्ष।

फिलिप्सन (1947) ने बताया कि ग्रेगोइर द्वारा अभिव्यक्त किया गया चरम मत उचित नहीं हो सकता है तथा ट्यूनिका-कॉर्पस संगठन प्रजनन शीर्ष में पाया जाता है। ये अब मान लिया गया है कि कायिक शीर्ष सीधे ही प्रजनन शीर्ष में रूपांतरित हो जाता है। कायिक विभज्योतक से पुष्प या पुष्पक्रम के बनने के दौरान आने वाले बदलाव समान होते हैं।

अनअपेक्षत: इसके कि कायिक प्ररोह विभज्योतक में ट्यूनिका-कॉर्पस संगठन है अथवा कोशिका ऊतकीय अनुक्षेत्रण, पुष्पारंभोद्दीपन (flower induction) के पश्चात् प्रजनन शीर्ष में कुछ गुण विकसित हो जाते हैं। शीर्ष कायिक अक्ष की अपेक्षा अधिक दीर्घीकृत और शंक्वाकार (conical) हो जाता है। समसूत्री विभाजनों की आवृत्ति बढ़ जाती है, जिसके फलस्वरूप डी.एन.ए. संश्लेषण में भी वृद्धि हो जाती है कायिक प्रावस्था का ट्यूनिका-कार्पस अथवा कोशिका-ऊतकीय अनुक्षेत्रण रूपांतरित हो जाता है। क्रमश: शीर्ष के केन्द्रीय कोर की कोशिकाएं छोटी कोशिकाओं की सघन रूप से अभिरंजित होने वाली परतों के विपरीत और अधिक धानीयुक्त हो जाती हैं जो बाह्य आवरण अथवा मेंटल बनाती हैं। दूसरे शब्दों में, पुष्पीय शीर्ष मेंटल-कोर संगठन विकसित कर लेता है। कायिक शीर्ष में कोशिका-ऊतकीय अनुक्षेत्रण के साथ ही, मेरिस्टेम डी अटेन्टी (विश्रान्ति विभज्योतक) की बड़ी, हल्के रूप से अभिरंजित होने वाली कोशिकाएं सक्रिय

हो जाती हैं तथा तेजी से समसूत्री विभाजन करती हैं जिससे इस क्षेत्र में भी छोटी, सघन रूप से रंजित होने वाली कोशिकाएं हो जाती हैं। यह क्षेत्र विभज्योतकी मेंटल का भाग बन जाता है जो केन्द्रीय मृदूतकी कोर को घेर लेता है। हालांकि, कुछ प्रजननकारी शीर्षों में कायिक शीर्ष का कोशिका ऊतकीय अनुक्षेत्रण न्यूनतम रूपांतरणों के साथ रहता है (वॉघन Vaughan, 1955)। बहुत से लेखकों ने जोर दिया है कि मेरिस्टेम डी अटेन्टी (विश्रांति विभज्योतक) वृद्धि में भाग लेता है तथा सिर्फ तब ही रूपांतरित होता है जब अंतस्थ स्थित पुष्प बनता है। विश्रान्ति विभज्योतक पार्श्व पुष्पों के बनने में सक्रिय भूमिका नहीं निभाता है।

प्लेनटफोल (Plantefol) (1947) के अनुसार प्रजनन शीर्ष कायिक शीर्ष के प्रगामी (progressive) रूपांतरण से उत्पन्न होता है। ऐन्यु (anneau) आरंभक, जो कायिक प्रावस्था में सामान्य पत्र (foliage leaf) को जन्म देता है, वह प्रजनन प्रावस्था में बाह्यदलों तथा दलों को उत्पन्न करता है। पुंकेसर तथा अंडप शीर्ष के अवशेष में से बनते हैं जिसमें सक्रियित (activated) मेरिस्टेम डी अटेन्टी होता है (बूवट, 1952)।

बर्सिलोन (1955) ने पैपैवरेसी (Papaveraceae) के अपने अध्ययन के आधार पर, मत व्यक्त किया कि बाह्यदल एन्यू आरंभक से व्युत्पन्न होते हैं, जबकि अन्य पुष्पीय उपांगों का आरंभन विभज्योतकी मेंटल में होता है जो मुख्यत: मेरिस्टेम डी अटेन्टी से व्युत्पन्न होता है। गुलाब में भी समान स्थिति पाई जाती है।

क्लिओम (*Cleome*) में (चित्र 9.19), जिसमें पुष्पक्रम में अंतस्थ पुष्प नहीं होता है, उसमें एन्यू आंरभक पार्श्व पुष्पीय कलिकाओं तथा सहपत्रों (bracts) को जन्म देता है। *बीटा* (*Beta*) में (चित्र 9.20), जिसमें अंतस्थ पुष्प युक्त पुष्पक्रम होता है, उसमें एन्यू आरंभक जनन अथवा प्रावस्था में निष्क्रिय होता है। मेरिस्टेम डी अटेन्टी (विश्रान्ति विभज्योतक) सहपत्रों की तथा साथ ही पुष्पों की उत्पत्ति के लिए जिम्मेदार होता है (गिफॉर्ड तथा कॉर्सन Gifford & Corson, 1971)। रोजेसी कुल के *ऐग्रीमोनिया यूपेटोरिया* (*Agrimonia eupatoria*) में मध्यवर्ती स्थित पाई जाती है जिसमें पुष्पक्रम अंतस्थ पुष्प सहित होता है। एन्यू आरंभक द्वारा तीस से नब्बे पार्श्व मेरिस्टेम डी अटेन्टी (विश्रांति विभज्योतक) के सक्रिय होने से पहले बन जाते हैं और अंतस्थ पुष्प बनाते हैं।

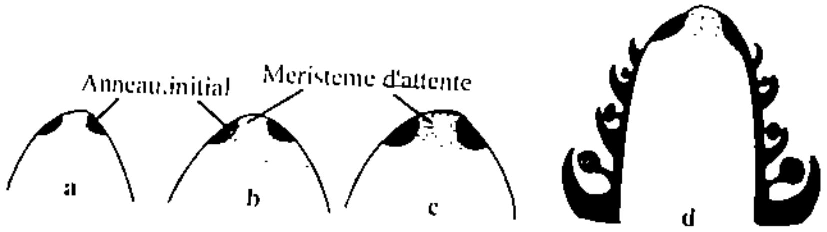

चित्र 9.19 : *क्लिओम* में पुष्पीय शीर्ष एन्यू आरंभक से पार्श्व कलिकाओं के आरंभन (अदीप्त क्षेत्र) को दिखाते हुए।

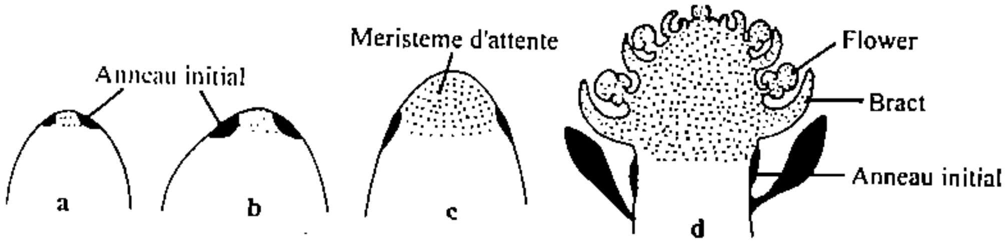

चित्र 9.20 : *बीटा* में पुष्पीय शीर्ष। एन्यू आरंभक निष्क्रिय होता है। मेरिस्टेम डी अटेन्टी द्वारा पुष्प तथा सहपत्र निर्मित होते हैं।

बहुत से लेखक पुष्प के विभिन्न भागों के जनन में कायिक शीर्ष के ऊतकीय अनुक्षेत्रण के महत्व को नकारते हैं। वे मानते हैं कि संपूर्ण शीर्ष विकास ही नई प्रावस्था में प्रवेश करता है। फिलिप्सन (Philipson) (1947, 49) ने मत व्यक्त किया कि कायिक शीर्ष का मूल कार्य अक्ष के अनुदैर्ध्य प्रसार को बढ़ाना है जबकि प्रजनन शीर्ष का कार्य चौड़े विभज्योतकी आवरण को निर्मित करना है जिससे पुष्प या पुष्पों (पुष्पक्रम की अवस्था में) के भाग विकसित हो सकते हैं। प्रथम ध्यान देने योग्य बदलाव केन्द्रीय मातृ कोशिका क्षेत्र तथा शिरा (rib) विभज्योतक क्षेत्र के बीच के क्षेत्र में समसूत्री विभाजन का बढ़ना है। विभाजन की क्रिया क्रमश: केन्द्रीय मातृ कोशिकाओं के अनुक्षेत्र में फैलती जाती है जिससे कि कोशिकाएं अपेक्षाकृत छोटी तथा जीवद्रव्य (protoplast) में समृद्ध हो जाती हैं। अत:, शिरा विभज्योतक के ऊपर की सभी कोशिकाएं ट्यूनिका से जुड़ जाती हैं तथा साथ मिलकर मेंटल बनाती हैं।

इसके बाद शिरा विभज्योतक क्षेत्र में तथा उसके नीचे मज्जा में समसूत्री विभाजन तथा वृद्धि लगभग रुक जाती है। अत:, प्रजनन शीर्ष में मृदूतकी मज्जा या कोर होती है जो विभज्योतक कोशिकाओं के मेंटल से घिरी रहती है (चित्र 9.21 a)। पुष्पीय भाग अथवा सहपत्र, अक्षीय शाखाएं तथा पुष्पक्रम की स्थिति में पुष्प इन विभज्योतकी कोशिकाओं से विकसित होते हैं (चित्र 9.21 b)।

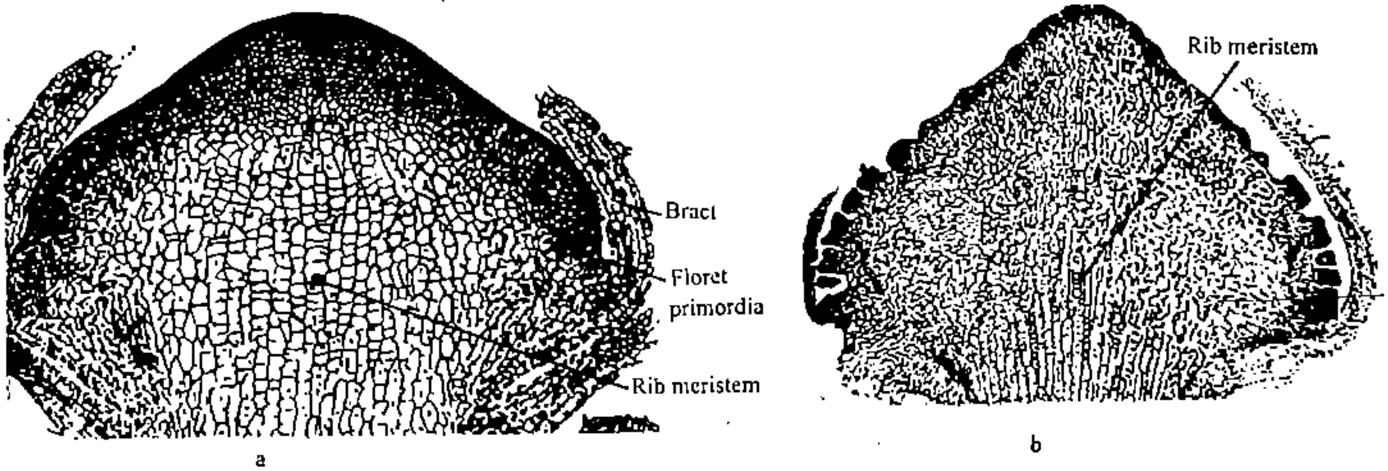

चित्र 9.21 : a) मेंटल-कोर संगठन के साथ *कैलेन्डुला* के तरुण पुष्पक्रम शीर्ष की अनुदैर्ध्य काट। शिरा विभज्योतक सुस्पष्ट होता है। सहपत्र तथा पुष्पीय आद्यक (floret primordia) का आरंभ हो चुका है। b) *कैलेन्डुला* के पुष्पक्रम शीर्ष की अनुदैर्ध्य काट, पुष्पक आद्यक (floret primordia) अग्रभिसारी (acropetal) क्रम में निर्मित हो गए हैं।

बर्नियर (Bernier) आदि (1967) ने निरीक्षण किया कि *सिनेप्सिस अल्बा* (*Sinapsis alba*) में पुष्पारंभोद्दीपन के बाद समसूत्री विभाजनों में वृद्धि हो जाती है जिसके बाद डी.एन.ए संश्लेषण का उद्दीपन होता है, व साथ ही केन्द्रकीय व्यास में वृद्धि तथा कोशिका के आयतन में वृद्धि होती है। इसके बाद समसूत्री विभाजन का दूसरा दौर (phase) होता है जिसके फलस्वरूप पुष्पीय कलिकाओं का आरंभन होता है। कोशिका-ऊतकीय रूपांतरणों के साथ ही जैव-रासायनिक तथा शरीरक्रियात्मक परिवर्तन भी होते हैं। राइबोसोम (ribosome) तथा डिक्टियोसोम (dictyosome) की संख्या में वृद्धि तथा एन्डोप्लास्मिक रेटीकुलम/अंतर्द्रव्यी जालिका (endoplasmic reticulum) में परिवर्तन भी रिपोर्ट किए गए हैं (गिफॉर्ड तथा स्टीवार्ड, 1965) [Gifford and Steward]।

बोध प्रश्न 1

1. आप किस प्रकार पुष्प को परिभाषित करेगें? किस प्रकार आप पुष्प को अनावृतबीजी पादप शंकु से विभेदित करेगें।

....

....

....

कॉलम ए को कॉलम बी से मिलाकर वाक्यों को पूरा करिए।

	कॉलम ए	कॉलम बी
1.	जहां बाह्यदल तथा दल अविभेदित होते हैं वहाँ होता है	(क) जायांग के
2.	अंडाशय, वर्तिका तथा वर्तिकाग्र भाग हैं	(ख) पुष्पीय शीर्ष
3.	कोशिकाओं का मेंटल-कोर संगठन दिखाई पड़ता है	(ग) परिदल पुंज
4.	प्ररोह शीर्ष का एक भाग जो कायिक प्रावस्था में निष्क्रिय माना जाता है वह है	(घ) एन्यू आरंभक
5.	पैपैवरेसी में बाह्यदल व्युत्पन्न होते हैं	(ङ.) मैरिस्टैम डी' अटेन्टी (विश्रान्ति विभज्योतक)

बोध प्रश्न 3

पुष्प के भागों की सूची बनाइए तथा प्रत्येक भाग के कार्यों को समझाइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

9.4 पुष्पीय अंगों का निर्माण (अंगविकास)

पुष्पीय प्रावस्था के प्रेरण (induction) के बाद, पुष्पक्रम शीर्ष छोटे पत्ती जैसे सहपत्रों तथा पुष्पकों (florets) की श्रृंखला को जन्म दे सकते हैं। एक वैयक्तिक/एकल पुष्प बनाने वाले शीर्ष पर, विभिन्न पार्श्व अंग अग्राभिसारी क्रम में निर्मित होते हैं, यानि कि सबसे छोटा अंग शीर्ष के सबसे निकट स्थित होता है। ऐक्विलेजिया (*Aquilegia*) [टेपफर (Tepfer) 1953; चित्र 9.22] तथा पोरटूलाका (*Portulaca*) में बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप ट्यूनिका की द्वितीय तथा/अथवा तृतीय परत (परतों) में परिनतिक विभाजन से उत्पन्न होते हैं। सतही परत में भीतरी ट्यूनिका परतों के साथ वृद्धि करने के लिए महज अपनतिक विभाजन होते हैं। पुष्पीय उपांगों का इस तरीके से आरंभन इस मत को बल देता है कि ये अंग पत्तियों के सदृश ही प्ररोह के पार्श्व सदस्य हैं।

पेरिविन्कल, *कैथेरन्थस रोजियस* (*Catharanthus roseus*) में (बोक (Boke), 1948 ; चित्र 9.22) प्रजनन शीर्ष पहले सर्पिल क्रम में पाँच बाह्यदलों को जन्म देता है। उसके बाद शीर्ष दीर्घीकृत हो जाता है तथा चक्र में पाँच दलों को बनाता है। दलों के आधार व्यक्तिवृत के दौरान मिलकर दलपुंज नलिका बनाते हैं। उसके बाद पांच पुंकेसरी आद्यक बनते हैं जो जल्दी ही दलपुंज नलिका के आधारीय क्षेत्र से जुड़ जाते हैं, जिससे पुष्पीय शीर्ष की अनुप्रस्थ काट में पाँचों पुंकेसर दलों की बर्हिवृद्धि (outgrowth) जैसे दिखाई पड़ते हैं। पुंकेसरी आद्यक के बनने के बाद पुष्पीय शीर्ष काफी कम हो जाता है। हालांकि, धीरे-धीरे पुष्पीय शीर्ष का व्यास बढ़ता जाता है तथा परिधि पर स्थित कोशिकाएं गुणित (multiply) होकर उन्नत वलय बनाती हैं। दो अंडप आद्यक इस वलय में विपरीत दिशाओं में बन जाते हैं। बाह्यदल, दल, पुंकेसर व साथ ही अंडप के आद्यक द्वितीय ट्यूनिका तथा बाह्य कार्पस परतों में परिनतिक विभाजनों के द्वारा बनते हैं और सतही ट्यूनिका परत सिर्फ अपनतिक रूप से विभाजित होती है। अत:, प्रत्येक अंग का आरंभन एक उन्नत आद्यक के रूप में होता है, जिसमें शीर्ष वृद्धि शीघ्र आरंभ हो जाती है और उसके बाद उप-शीर्ष विभज्योतकों से वृद्धि होती है। आरंभन का समय, स्थान अंतर्वेशी (intercalary), परिधिय तथा अभ्यक्ष (adaxial) तथा उप-शीर्ष विभज्योतकों की क्रियाविधि का विस्तार विभिन्न जातियों में पुष्पीय अंगों की प्रकार में विविधता का निर्धारण करता है।

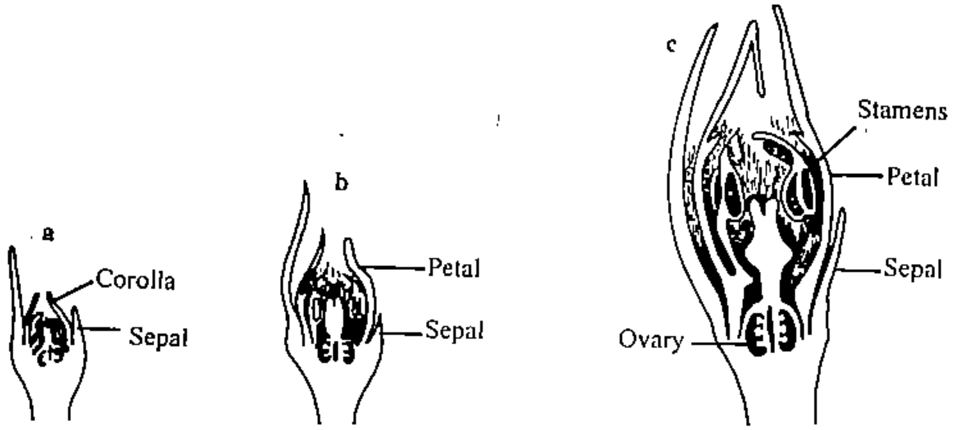

चित्र 9.22 : a-c) पेरिविन्कल का विकासशील पुष्प सेक्शनों में पाँच बाह्यदलों, पाँच दलों जो आधार पर दलपुंज नलिका बनाने के लिए युग्मित होते हैं, पांच पुंकेसर जो दलपुंज नलिका के साथ युग्मित होते हैं, तथा द्विअंडपी अंडाशय। सेक्शनों/काटों में सभी पुष्पीय भागों की सही संख्या संग्रहित नहीं है।

कायिक प्ररोह में, शीर्ष विभज्योतक विकासशील पत्ती आद्यक के ऊपर कार्य करने के लिए जारी रहता है। हालांकि, विकासशील पुष्प में शीर्ष, पुष्पीय अंगों का बनना आरंभ होने के साथ ही घटने लगता है जब तक कि वह पूर्णत: लुप्त नहीं हो जाता है अथवा छोटे निष्क्रिय अवशेष के रूप में रह जाता है।

पत्ती की भाँति ही, पुष्प के पार्श्व अंग शीर्ष, परिधिय, पट्टिल (plate) तथा कभी-कभी अभ्यक्ष विभज्योतक को दर्शाते हैं (केपलन (Kaplan), 1968)। बाह्यदल तथा दल लंबाई में शीर्ष तथा अंतर्वेशी विभज्योतक द्वारा बढ़ते हैं तथा घेरे में परिधिय विभज्योतक की क्रिया के द्वारा विस्तारित होते हैं। ये अंग पट्टिल विभज्योतक के कारण भी मोटे/स्थूलित हो जाते हैं। बाह्यदलों में अक्सर इसके अतिरिक्त अभ्यक्ष विभज्योतक भी होता है। अभ्यक्ष विभज्योतक दलों में अनुपस्थित रहता है इसलिए ये अपेक्षाकृत पतले तथा अधिक नाजुक होते हैं। पुंकेसरों में शीर्ष वृद्धि थोड़े समय तक ही दिखाई पड़ती है, उसके बाद की अधिकांश वृद्धि अंतर्वेशी होती है। कुछ पादपों जैसे *मैग्नोलिया* (*Magnolia*) तथा *निम्फिया* (*Nymphaea*) के चपटे, पर्णिल पुंकेसरों के अतिरिक्त अन्य पुंकेसरों में परिधिय विभज्योतकी क्रिया अनुपस्थित होती है। अंडप न सिर्फ शीर्ष तथा परिधिय वृद्धि दर्शाते हैं बल्कि उनमें अभ्यक्ष विभज्योतकी क्रिया भी होती है जो अंडप को मोटाई/स्थूलन प्रदान करती है। पुष्प के पार्श्व भागों की तुलना पत्तियों से न सिर्फ उनकी उत्पत्ति में की जा सकती है बल्कि उनकी वृद्धि के तरीके में भी की जा सकती है।

उन पुष्पों में जिनमें मुक्त अंडप [वियुक्तअंडपी अवस्था (apocarpous condition)] होती है उनमें प्रत्येक अंडप आद्यक गोलाकार वप्र/पुश्ता (buttress) जैसा दिखाई पड़ता है जो अन्य पुष्पीय अंगों तथा पत्तियों के

आद्यक से मिलता-जुलता होता है (चित्र 9.23)। यह आद्यक छत्रिकाकार (peltate) बन जाता है और फिर आद्यक के शीर्ष पर एक गढ्ढा बन जाता है। असमान विकास के फलस्वरूप एक अपाक्ष (abaxial) ओष्ठ (lip) बन जाता है जिससे अंडप की पृष्ठ सतह निर्मित हो जाती है। आद्यक का अभ्यक्ष ओष्ठ अपेक्षाकृत धीरे विकसित होता है जिससे अंडप का "सिल" (sill) निर्मित होता है (मेक्लीन तथा आइवेमी-कुक, (Mclean & Ivemy-Cook), 1956; चित्र 9.24)। यह सिल दीर्घीकृत हो जाता है तथा अंडप के किनारे बनाता है। यह अनुमान लगाया जाता है कि सिल में मूलरूप से दो आधारीय पटलीय/स्तरीय (laminar) कोष्ठ होते हैं जो व्यक्तिवृत के दौरान युग्मित हो जाते हैं। वह क्षेत्र जहाँ दोनों किनारे युग्मित होते हैं वह क्रॉस क्षेत्र/जोन कहलाता है। अंडप की पृष्ठ सतह सामान्यत: मुड़ जाती है व सिल के ऊपर जाकर कोष्ठक को बंद कर देती है।

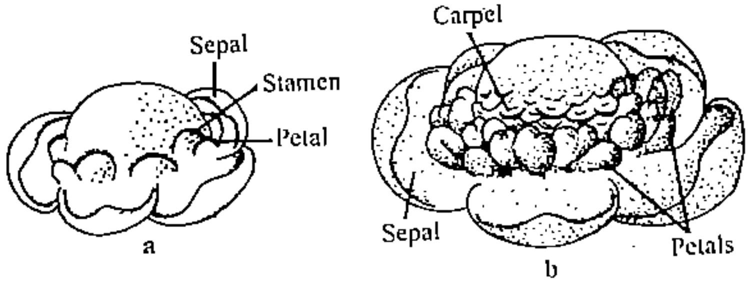

चित्र 9.23: a-b) रैननकुलस (*Ranunculus*) में पुष्प का व्यक्तिवृत अंडप आद्यक के समारंभन को गोलाकार चक्र के रूप में दिखाते हुए, जैसा कि बाह्यदल, दल तथा पुंकेसर आद्यक में होता है।

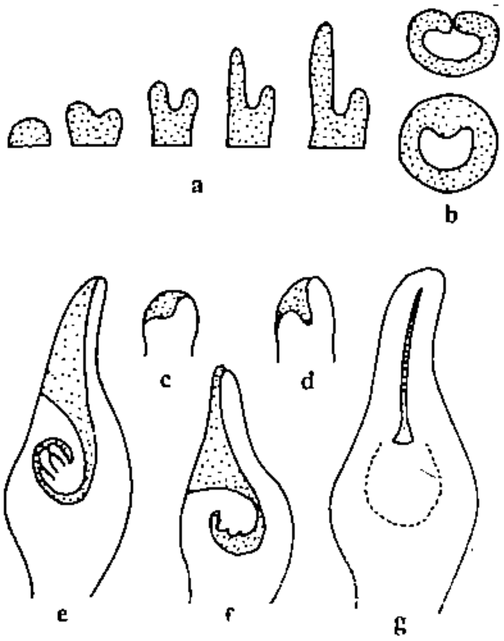

चित्र 9.24 : वियुक्तांडपी जायांग में छत्रिकाकार अंडप का विकास a व b) क्रमश: अंडप के अनुदैर्घ्य तथा अनुप्रस्थ काट के आरेख विभिन्न व्यक्तिवृत अवस्थाओं में। c-g) थैलिक्ट्रम (*Thalictrum*) में अंडप के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, सिल, बीजांड तथा सिल के ऊपर के भाग के विकास को दिखाते हुए जो मुड़ जाता है तथा कोष्ठक (locule) को बंद कर देता है।

युक्त/युग्मित अंडपो (युक्तांडपी अवस्था) वाले पुष्पों में अंडाशय निम्नलिखित दो तरीकों में से किसी एक द्वारा विकसित हो सकता है: (i) अंडप आद्यक अलग दिखाई दे और फिर पार्श्व वृद्धि के फलस्वरूप युग्मित हो जाए (व्यक्तिवृत्तीय युग्मन; चित्र 9.25 a-c)। उसके बाद युग्मित अंडप एक इकाई के रूप में ऊपर की ओर वृद्धि करके युक्तांडपी अंडाशय बनाए; (ii) अंडप जब दिखाई दे उससे पहले से ही युग्मित हों (जन्मजात युग्मन (congenital fusion)), जिससे अंडाशय की भित्ति एक वलय के रूप में बढ़े (चित्र 9.26; a-d)। अंडपों के युग्मन के क्षेत्र अंदर की ओर मुड़े हुए मोड़ों द्वारा विभेदित होते हैं।

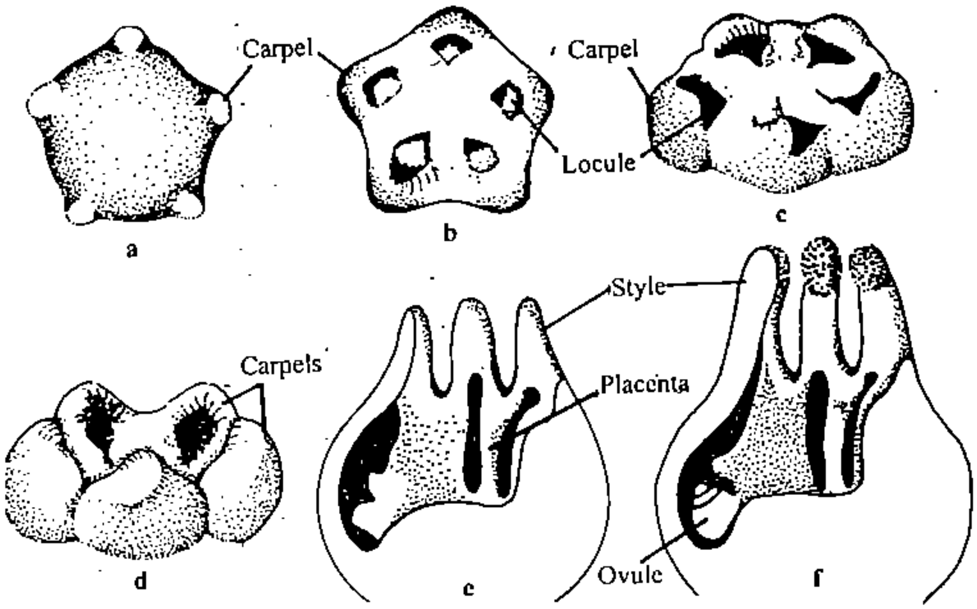

चित्र 9.25 : (a-f) एक अलग आचक द्वारा युक्तांडपी जायांग के विकास की अवस्थाएं जो पार्श्व रूप से विस्तरित होता है और युग्मित होकर एकल वलय बनाता है। e तथा f में अंडाशय की भित्ति का एक भाग बीजांडासन (placenta) पर उगे हुए बीजांडों को दिखाने के लिए हटा दिया गया है।

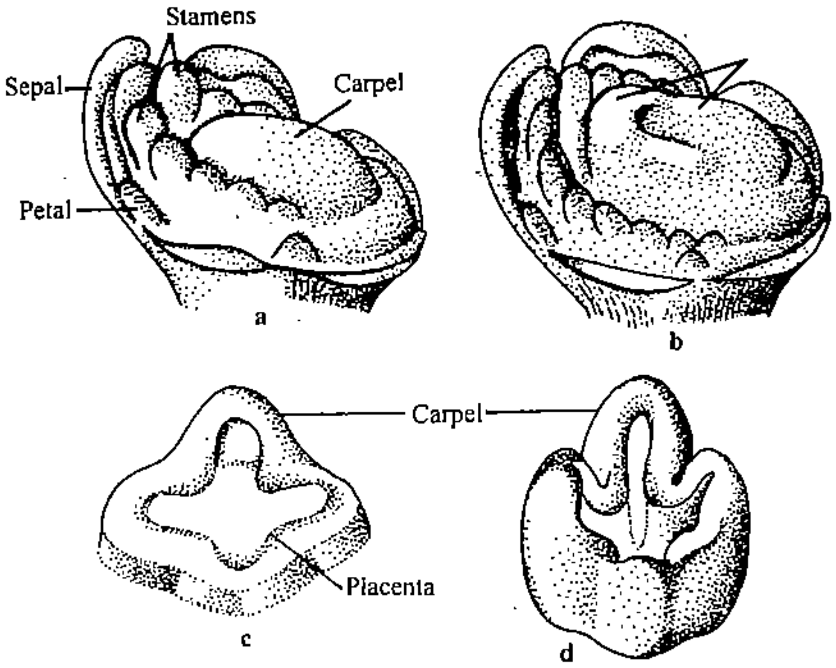

चित्र 9.26 : (a-d) छत्रिकाकार अंडप आचक को दिखाते हुए पुष्प का व्यक्तिवृत्त (a) गढ्ढे के साथ b)' शीर्ष पर। किनारे कोष्ठों को बनाते हैं जो मुड़कर बंद अंडप बनाते हैं जिसमें बीजांडासन अंदर होता है (c, d)।

9.5 पुष्प की आकारिकीय प्रकृति

संवहनी पादप जो विकास क्रम में आवृतबीजी पादपों के पूर्ववर्ती रहे हैं उनमें प्रजनन अंग ऐसे नहीं थे जो पुष्प के पूर्वज माने जा सकें। इसलिए पुष्प की आकारिकीय प्रकृति ने कुछ प्रश्न खड़े कर दिए हैं। पुराने समय में, कुछ वनस्पतिज्ञों ने वेट्सटीन (Wettstein) का अनुसरण किया और माना कि केटकिन सम पुष्पक्रम वाले आवृतबीजी (उदा. पादप *सेलिक्स* (*Salix*) तथा *कैसुअरीना* (*Casuarina*)) सबसे प्राचीन

पुष्पीय पादप हैं। उनका केटकिन सम पुष्पक्रम अनावृतबीजी पादपों के शंकु के समान माना गया और उनके तनुकृत पुष्प कुछ अनावृतबीजी पादपों जैसे *इफिड्रा* (*Ephedra*) और *नीटम* (*Gnetum*) के प्रजनन अंगों के समतुल्य माने गए। हालांकि एन्जियोस्पर्म्स के भीतर के विकास से पता चलता है कि केटकिन सम पुष्पक्रम वाले तथा लघुकृत पुष्प वाले वायु परागित पुष्पीय पादप अधिक उन्नत होते हैं। यह अधिक संभव है कि आदि/प्राचीन पुष्प कीट परागित होते थे तथा उनमें अनेक मुक्त तथा प्रभावी बाह्यदल पुंकेसर तथा अंडप होते थे। इस तरह का पुष्प अनावृतबीजी पादप के शंकु से व्युत्पन्न नहीं हो सकता।

अधिकांश आकारिकीय विशेषज्ञ मानते हैं कि पुष्प निर्धारित प्ररोह (determinate shoot) को प्रदर्शित करते हैं। उपांग (बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप) रूपांतरित पत्तियां होते हैं। ये पुष्पीय अंग पत्ती के समजात (homologous) (समान उत्पत्ति वाले) होते हैं परंतु इनके कार्य और प्रगटन (दिखने में) भिन्न होते हैं। पर्व (internodes) दबे हुए, छोटे या विलुप्त होते हैं जिससे पर्वसंधियां (nodes) पास-पास आ जाती हैं। अत: पर्वसंधियों पर उपांग बहुत सघनित/पास-पास हो जाते हैं।

मैग्नोलिया के पुष्प में दीर्घीकृत धानी तथा पत्ती जैसे दिखने वाले सर्पिल रूप से व्यवस्थित उपांग होते हैं। इस प्रकार के पुष्प का संगठन स्पष्ट रूप से कायिक प्ररोह से मिलता है। अधिक उन्नत पुष्पों के विकास में धानी का संपीडन (compression), उपांगों की संख्या में कमी, सममिति में बदलाव तथा पुष्पीय अंगों के पत्ती जैसे प्रगटन का लुप्त होना सम्मिलित है।

पुष्पीय भागों का युग्मन

द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री दोनों प्रकार के अनेकों पादप, विभिन्न स्तर पर पुष्पीय भागों के युग्मन को प्रदर्शित करते हैं। जब चक्र में निकटवर्ती पुष्पीय अंग पार्श्व रूप से युग्मित हो जाते हैं तो यह सहज संयोजन (connation) कहलाता है। कुछ पुष्पों में बाह्यदल पार्श्व रूप से युग्मित होकर संयुक्त बाह्यदली (gamosepalous) बाह्यदलपुंज बनाते हैं। दल युग्मित होकर संयुक्त दली (gamopetalous) दलपुंज बना सकते हैं (जैसे कि *विन्का* में) तथा पुंकेसर पार्श्व रूप से युग्मित होकर संपुमंगी (synandrous) पुंकेसरी नलिका बना सकते हैं (जैसे कि *हिबिस्कस* में)। संलग्नता (adnation) में विभिन्न पुष्पीय उपांगों का युग्मन होता है। संयुक्त दली पुष्पों में अक्सर पुंकेसर दलों में युग्मित रहते हैं। ऐसे पुंकेसर दललग्न (epipetalous) कहलाते हैं। एसक्लीपिएडेसी (Asclepiadaceae) तथा ऑर्किडेसी (Orchidaceae) में (चित्र 9.6 b) पुंकेसर तथा अंडप पूर्णत: अथवा आंशिक रूप से युग्मित होकर पुंवर्तिकाग्रछत्र (gynostegium) बनाते हैं। सेब के फल में सभी पुष्पीय भाग संयोजित तथा संलग्न होते हैं। फल का बाहरी खाने वाला भाग बाह्यदलों, दलों तथा पुंकेसरों के युग्मन से बनता है। केन्द्र भाग/कोर (core) जिसमें बीज स्थित होता है, वह युग्मित अंडपों का बना होता है।

पुष्पीय भागों का युग्मन जन्मजात (congenital) [आद्य अवस्था से] अथवा जननांग पश्चीय (post-genital) [जब आद्यक स्वतंत्र रूप से उगता है परंतु बाद में व्यक्तिवृत के दौरान युग्मित हो जाता है] होता है।

9.6 पुष्प का संवहनी शारीर

पुष्प के वृंत (pedicel) की अथवा पुष्पक्रम के अक्ष की शारीरीय संरचना तने के समान होती है। संवहनी बेलन सतत् या विभाजित होता है। इसमें से धानी के ट्रेस/अनुपथों के रंभ पुष्प के विभिन्न भागों में जाते हैं और अंतराल (gaps) छोड़ देते हैं जो रंभ को बंडलों/पूलों के विशिष्ट जाल में विभाजित कर देते हैं।

ऐक्विलेजिया (*Aquilegia*) (टेपफर Tepfer, 1952) जो रेननकुलेसी कुल का सदस्य है उसका पुष्पीय संवहनी शारीर का उदाहरण के तौर पर अध्ययन किया जा सकता है। इस पुष्प के वृंत में पाँच मोटे बंडल/पूल होते हैं जो पाँच पतले बंडलों/पूलों के साथ एकान्तरित होते हैं। पूल पुष्प के आधार पर युग्मित होते हैं और एक अविच्छिन्न वलय बनाते हैं (चित्र 9.27)। इस स्तर के ऊपर तीन अनुपथों/ट्रेसों के पाँच समूह होते हैं जो प्रत्येक बाह्यदलों में चला जाता है। तीन अनुपथों का प्रत्येक समूह धानीय बेलन में

एक अंतराल छोड़ता है और एक बाह्यदल में चला जाता है। थोड़े और उच्च स्तर पर, अनुपथों के साथ एकान्तरित होता हुआ व बाह्यदलों में जाता हुआ, एक अनुपथ प्रत्येक पाँच दलों में से एक में चला जाता है।

पुंकेसरों के अनेकों चक्र होते हैं। प्रत्येक पुंकेसर में एक अनुपथ होता है। सबसे से ऊपर वाले पुंकेसरों के ऊपर, रंभ पुन: एक अविच्छिन्न वलय बन जाता है। इस स्तर पर प्रत्येक अंडप तीन अनुपथ प्राप्त करता है, एक पृष्ठ तथा दो अधर में होते हैं। धानीय रंभ उसके बाद थोड़ी दूर तक जारी रह सकता है और उसके बाद धुँधला पड़ जाता है। अंडपों के अधर पूल प्रतिलोमित (inverted) दिक्‌विन्यास (orientation) दर्शाते हैं और उनका जाइलम बाहर की ओर होता है तथा फ्लोएम भीतर की ओर होता है।

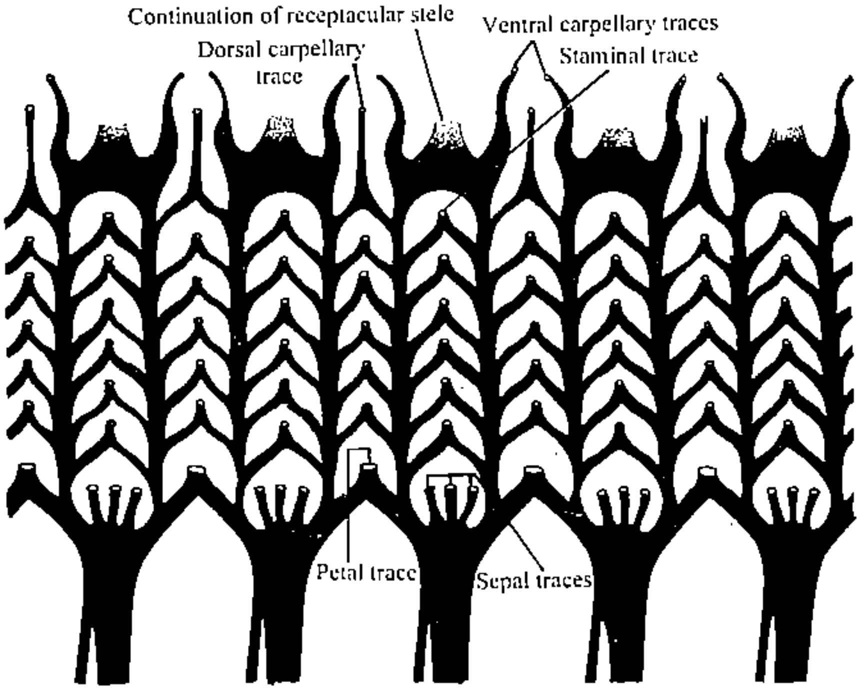

चित्र 9.27 : ऐक्विलेजिया (*Aquilegia*) पुष्प के रंभ का आरेखी प्रदर्शन एकल तल में फैला हुआ।

9.7 पुष्पीय अंगों का शारीर

आप अभी तक पढ़ चुके हैं कि पुष्पीय अंग रूपांतरित पत्ती को प्रदर्शित करते हैं; जो अनेकों प्रकार से विकसित होकर विभिन्न कार्य करते हैं। अब हम यहाँ पुष्पीय अंगों के शारीर का वर्णन करेंगे।

9.7.1 बाह्यदलपुंज (Calyx)

बाह्यदल में ऊपरी और निचली बाह्यत्वचा, पर्णमध्योतक (mesophyll) को घेरे रहती है जिसमें हरित ऊतक होता है। खंभ ऊतक सामान्यत: अनुपस्थित होता है। बाह्यदल तरुण पुष्प को घेरे रहते हैं और उसकी सुरक्षा करते हैं तथा पुष्प के वयस्क होने के बाद सामान्यत: गिर जाते हैं अथवा पीछे की ओर मुड़ जाते हैं। हालांकि बहुत से पादपों में बाह्यदल विभिन्न प्रकार से रूपांतरित होकर अन्य कार्यों को संपन्न करते हैं। उदाहरण के लिए *ऐबूटिलॉन पिक्टम* (*Abutilon pictum*) में बाह्य दलों में मकरंद स्रावित करने वाले त्वचारोम (trichome) निचली सतह पर आधार के निकट होते हैं। *प्लम्बैगो कैपेन्सिस* (*Plumbago capensis*) में बाह्यदल, दलों के आधार को घेरे हुए एक छोटी नलिका बनाते हैं। बाह्यदलपुंज नलिका चिपचिपी ग्रंथियों से ढंकी रहती है जो रेंगने वाले कीड़ों जैसे चीटों को उर्वर उपांगों तक नहीं पहुंचने देती है, जिससे पर-परागण (cross pollination) उड़ने वाले कीटों से ही होता है। बहुत से द्विबीजपत्री पादपों (उदा. *हेलीबोरस* (*Helleborus*) तथा *ट्रोपिओलम* (*Tropaeolum*)) में व साथ ही एकबीजपत्री पादपों *ट्यूलिपा* (*Tulipa*), *नार्सिसस* (*Narcissus*) में बाह्यदल चटकदार रंगों के तथा दलों जैसे होते हैं तथा उनमें सुगंध और मकरंद भी हो सकता है।

प्रत्येक बाह्यदल सामान्यतः उतने अनुपथ/ट्रेस प्राप्त करता है जितनी उस पादप में पत्तियां होती हैं। अधिकांश बाह्यदलों में तीन संवहनी पूल होते हैं, जिनमें से एक मध्यशिरा की भाँति कार्य करता है तथा अन्य दोनों पार्श्व शिराएं बन जाते हैं। सहजात बाह्यदलों वाले पुष्पों में, निकटवर्ती बाह्यदलों की पार्श्व शिराएं अक्सर युग्मित होकर सामूहिक स्तंभ पूल (common trunk bundle) बनाते हैं। *हिबिस्कस* में (चित्र 9.8), उदाहरण के लिए पांच बड़े और पांच छोटे पूल बाह्यदल नलिका के आधार पर प्रवेश करते हैं। प्रत्येक बड़ा पूल मध्यशिरा बनाता है, जबकि छोटे पूल विभाजित होकर पार्श्व शिराएं बनाते हैं जो निकटवर्ती बाह्यदलों की होती है।

9.7.2 दलपुंज (Corolla)

बाह्यदल की भाँति ही, प्रत्येक दल में एक ऊपरी और एक निचली बाह्यत्वचा होती है जो मृदूतक के बने हुए भरण-ऊतक (ground tissue) को घेरे रहती है। दल सामान्यतः बाह्यदलों की तुलना में अधिक पतले, अधिक नाजुक तथा अल्पकालिक होते हैं। प्रत्येक दल में एकल संवहनी अनुपथ होता है, पूल पटल/लैमिना में प्रवेश करते समय शाखित हो जाता है (चित्र 9.28)।

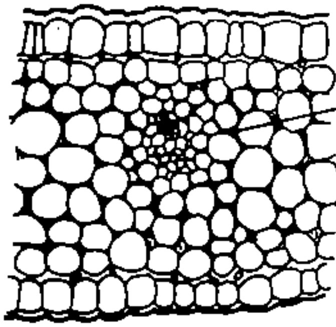

चित्र 9.28 : ट्यूलिपा स्पी. में से गुजरती हुई अनुप्रस्थ काट एकल संवहनी पूल को दर्शाते हुए।

इकाई 10 में आप पढ़ेंगे कि किस प्रकार विभिन्न जातियों में पुष्प परागण सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न रूपों में रूपांतरित हो जाते हैं। दल परागण क्रिया विधि के संबंध में बहुत अधिक विविधता दर्शाते हैं। वायु परागित पुष्पों में, दल तनुकृत अथवा अनुपस्थित होते हैं। कीटों, पक्षियों अथवा चमगादडों से परागित होने वाले पुष्पों में दलों का रंग, तंतु विन्यास, दिक्विन्यास (orientation) तथा सुगंध विशिष्ट परागण-कर्त्ता को आकर्षित करने के लिए अनुकूलित हो जाता है। वर्णलवक/क्रोमोप्लास्ट में कैरीटिनॉइड्स तथा कोशिका की धानियों में बीटासायनिन सबसे अधिक पाए जाने वाले वर्णक हैं। बहुत से पुष्पों के दलों की बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में पराबैंगनी (u.v.) अवशोषण करने वाले फ्लेविनॉइड्स (flavanoids) होते हैं जिससे मधुमक्खियां उन्हें देख सकें और मकरंद की ओर जा सकें। ऐबूटिलॉन (*Abutilon*) के दलों की भीतरी सतह की ओर की कोशिकाएं मकरंद स्रावित करती हैं। ट्रोपिओलम मेजस (*Tropaeolum majus*) में दलों से बनने वाले पूँछ जैसे मकरंद दलपुट (spur) के पर्ण मध्योतकी ऊतक मकरंद स्रावित करते हैं। यह मकरंद खुले हुए रंध्रों (stomata) तथा त्वचारोमों द्वारा मकरंद दलपुट की गुहा में जाता है।

अधिकांश फूलों में, सभी दलों का एक सा आकार और साइज़ होता है। ये पुष्प नियमित या त्रिज्या समनित (actinomorphic) होते हैं। अन्य में दल तथा बाह्यदल और पुंकेसर भी, द्विपार्श्विक (bilaterally) रूप से सममित हो सकते हैं। ऐसे द्विओष्ठीय पुष्प एकव्यास सममित (zygomorphic) कहलाते हैं। ऑर्किडेसी, पेपिलिओनेसी तथा लेबिएटी के सदस्यों में विशिष्ट एक व्यास सममित पुष्प होते हैं जो उन्हें कुछ कीट परागकों को आकर्षित करने में सहायता करते हैं।

9.7.3 पुमंग (Androecium)

पुंकेसर में सामान्यतः पतला वृंत या तंतु होता है जो अपने शीर्ष पर परागकोष धारण किए रहते हैं। परागकोष अधिकांशतः द्विपालित होता है तथा उसके दोनों में से प्रत्येक पालि में दो लघुबीजाणुधानियां (microsporangium) होती हैं (चित्र 9.29)। अतः परागकोष में चार लघुबीजाणुधानियां या परागकोष

होते हैं जो मृदूतकी संयोजक द्वारा अलग होते हैं जो तंतु का सतत भाग होता है। तंतु लंबा भी हो सकता है जिससे कि परागकोष परिदलपुंज के आगे तक विस्तारित रहता है अथवा यह छोटा तथा अनुपस्थित भी हो सकता है। बोटल ब्रुश, *कैलिस्टीमान लेन्सीओलेट्स* (*Callistemon lanceolatus*) में प्रत्येक पुष्प में लंबे बहुत अधिक पुंकेसरों के लाल तंतु प्रमुख अलंकरण बनाते हैं जो पुष्पक्रम को विशिष्ट बोटल-ब्रुश जैसा प्रगटन प्रदान करता है (चित्र 9.11)। *रिसिनस कम्यूनिस* (*Ricinus communis*) में पुंकेसर शाखित होते हैं जिससे पुंकेसर कुछ परागकोष धारण कर लेते हैं।

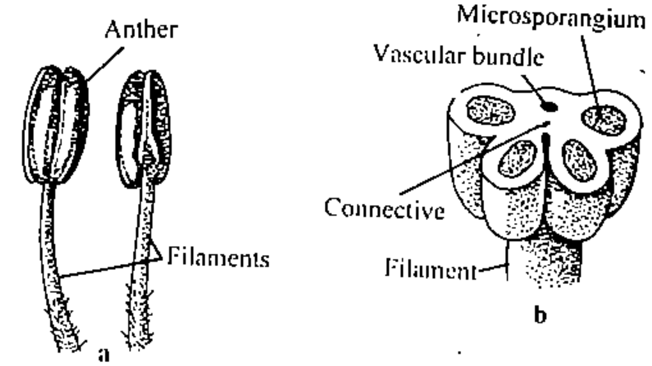

चित्र 9.29: a) तंतु सहित पुंकेसर तथा द्विपालित परागकोष b) अनुप्रस्थ काट में परागकोष चार लघुबीजाणुधानियां को दिखाते हुए।

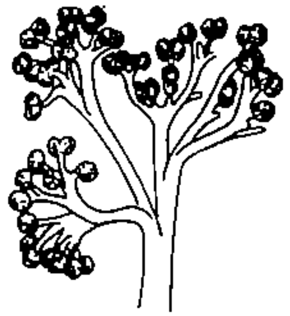

चित्र 9.30 : *रिसिनस कम्युनिस* का एक शाखित पुंकेसर।

प्रत्येक लघुबीजाणुधानी में बाह्यत्वचा, एक अंतस्थीसियम (endothecium), एक, दो या कुछ मध्य परतें तथा टेपीटम की बनी भित्ति होती है (चित्र 9.31)। परागकोष में बीजाणुजन कोशिकाएं लघुबीजाणु मातृ कोशिकाएं बनाती हैं जो अर्धसूत्री विभाजन करती हैं तथा अगुणित (haploid) लघुबीजाणु या परागकण उत्पन्न करती हैं। जब परागकोष परिपक्व होता है, यह सूख जाता है, विशिष्ट सैलुलोसिक स्थूलनों वाली अंतस्थीसियमी कोशिकाएं सिकुड़ जाती हैं और प्रत्येक परागकोष रंध्रक (stomium) से खुल जाता है और परागकणों को निर्मुक्त कर देता है। कुछ परागकोष अनुप्रस्थ झिरीयों/स्लिट्स या छिद्रों के द्वारा स्फुटित (dehisce) हो जाते हैं।

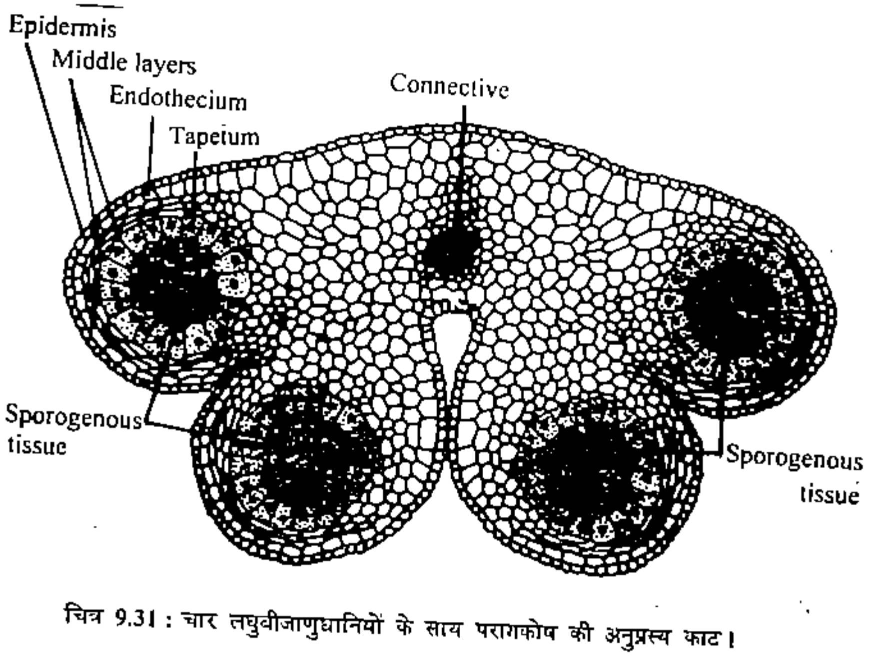

चित्र 9.31 : चार लघुबीजाणुधानियों के साथ परागकोष की अनुप्रस्थ काट।

पुंकेसर में एक पतला संवहनी पूल होता है जो संयोजक तक विस्तारित होता है। यह पूल बहुत कम विभेदन दर्शाता है तथा परिपक्व होने पर भी इसमें अल्प व्यवस्थित जाइलम और फ्लोएम होते हैं। कुछ प्राचीन आवृतबीजी पादपों (एन्जियोस्पर्मस) जैसे *मैग्नोलिया* (*Magnolia*) तथा *डेफ्नीफिल्लम* (*Daphniphyllum*) में प्रत्येक पुंकेसर में तीन पूल होते हैं।

ऑस्ट्रोबेलिया (*Austrobaileya*) तथा *डिजीनेरिया* (*Degeneria*) में (बेली तथा स्वामी, 1949; चित्र 9.32 a-b) पुंकेसर पृष्ठाधर (dorsiventrally) रूप से चपटे पत्ती जैसे तथा बीजाणुधानियों को मध्य शिरा के दोनों तरफ सतही स्थिति में धारण किए होते हैं। *डेजीनेरिया* में तीन संवहनी पूल पुंकेसर के आधार से प्रवेश करते हैं तथा *ऑस्ट्रोबेलिया* में सिर्फ एक करता है। *डेजीनेरिया* के पुंकेसर पाए जाने वाले एन्जियोस्पर्म्स में सबसे आदिम माने जाते हैं। दिलचस्प रूप से इस प्रकार के प्राचीन प्रकार के पुंकेसरों वाले पुष्पों में आदिम प्रकार के चपटे अंडप भी होते हैं।

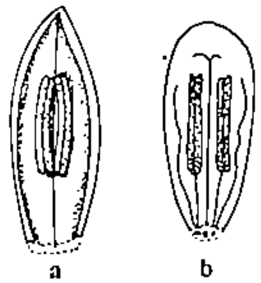

चित्र 9.32: a) *ऑस्ट्रोबेलिया* पत्ती जैसे पुंकेसर मध्यशिरा के दोनों ओर सतही परागकोषो के साथ b) *डेजीनेरिया* पत्ती जैसे पुंकेसर तीन संवहनी पूलों के साथ।

अनेकों बहुपुंकेसरी पादपों में जिनमें असंख्य पुंकेसर होते हैं, विल्सन (Wilson) (1937) ने देखा कि पुंकेसरों को संवहनी आपूर्ति धानी के अंदर वृक्षाभ तरीके से (dendroid manner) शाखन द्वारा होती है (चित्र 9.33) उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि ये शाखित पुंकेसरी पूल इंगित करते हैं कि पूर्वजी पुष्पों में पुंकेसर शाखित होते थे।

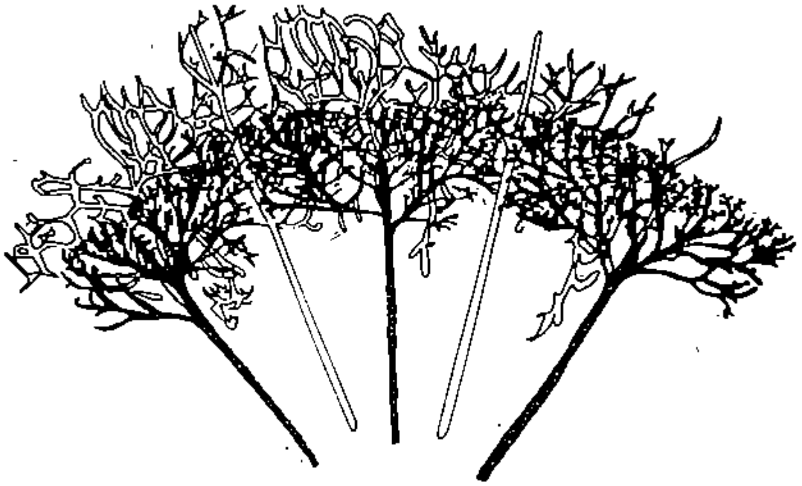

चित्र 9.33 : *मीसेमब्राएन्थिमम* (*Mesembryanthemum*) की धानी का भीतर से देखा गया एक भाग। संवहनी पूल (रेखाचित्र के रूप में बने हुए) परिदल पुंज सदस्यों तथा धानीय ऊतक को आपूर्ति करते हुए। जो काले हैं वे पुंकेसरों को तथा वंध्य पुंकेसरों (staminodes) को आपूर्ति करते हैं।

9.7.4 जायांग (Gynoecium)

पुष्प का जायांग सिर्फ एक ही अंडप का अथवा अनेकों अंडपों का बना हो सकता है जो मुक्त अथवा युग्मित हो सकते हैं। दोनों स्थितियों में यह सामान्यतः (i) आधारीय अंडाशय जो अपनी गुहा में एक या अधिक बीजांड (ovule) लिए रहता है (चित्र 9.34); (ii) वर्तिका, जो अंडाशय की भित्ति का विस्तार होती है और

खोखली नलिका या मृदूतकी ऊतक की होती है जो पराग नलिका के संचरण के लिए होती है; (iii) वर्तिकाग्र, जो वर्तिका के शीर्ष पर होती है, वो शुष्क अथवा नम, पिप्पलमय (papillate) या रोमयुक्त (hairy) हो सकती है, परागकणों को प्राप्त करने के लिए तथा उनके अंकुरण के लिए स्थितियां प्रदान करने के लिए। अंडाशय में बीजांड अंडाशय के कुछ स्थूलित क्षेत्रों से जुड़े रहते हैं जो बीजांडासन (Placenta) कहलाते हैं। बीजांडासन परिधिय (जिसमें बीजांड अंडाशय की भित्ति से जुड़े रहते हैं; चित्र 9.35 a) अक्षीय (बहुकोष्ठीय अंडाशय में केन्द्रीय अक्ष से जुड़े हुए; चित्र 9.35 b), आधारीय (एक बीजांड अंडाशय के आधार से जुड़ा हुआ; चित्र 9.35 c) अथवा मुक्त केन्द्रीय (अनेको बीजांड केन्द्रीय आधारीय बहिर्वृद्धि पर होते हैं जो अंडाशय का विभाजन नहीं करते हैं; चित्र 9.35 d) हो सकते हैं।

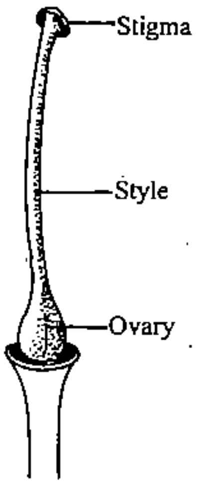

चित्र 9.34 : एक अंडाशय, वर्तिका व वर्तिकाग्र के साथ।

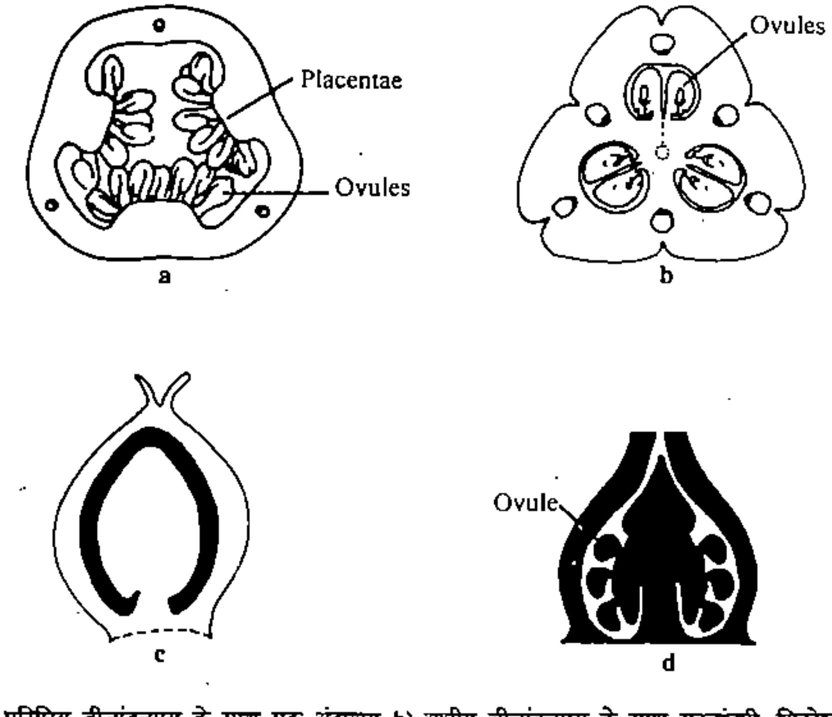

चित्र 9.35 : a) परिधिय बीजांडन्यास के साथ एक अंडाशय b) अक्षीय बीजांडन्यास के साथ युक्तांडपी, त्रिकोष्ठीय अंडाशय c) एकल आधारीय बीजांड d) मुक्त केन्द्रकी बीजांडन्यास।

अधिकांश पुष्पों में अंडाशय अन्य पुष्पीय उपांगो के ऊपर स्थित होता है। इस प्रकार का पुष्प अधोजायांगी (hypogynous) होता है तथा अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती (superior) माना जाता है। (चित्र 9.36 a)। कुछ पुष्पों में (उदाहरण, धनिया, केला) अंडाशय एक डिस्क द्वारा घिरा रहता है जो बाह्यदलों, दलों तथा पुंकेसरों के युग्मित आधारों द्वारा बनती है जिससे उनके मुक्त भाग अंडाशय के शीर्ष के निकट उगते हैं। इस प्रकार

का पुष्प जायांगोपरिक (epigynous) होता है तथा उसका अंडाशय अधोवर्ती (inferior) होता है (चित्र 9.36 b)। वे पुष्प जो मध्यवर्ती स्थितियां दर्शाती हैं वे परिजायांगी (perigynous) कहलाते हैं (चित्र 9.36 c)।

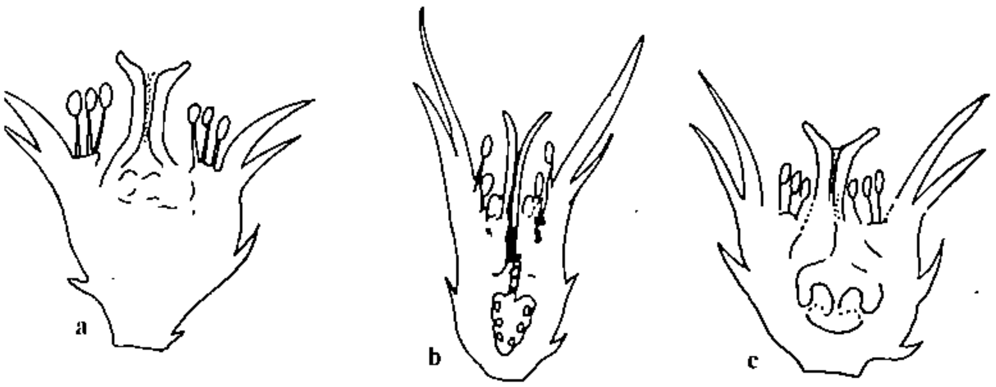

चित्र 9.36 : a) अधोजायांगी पुष्प (ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय) b) जायांगोपरिक पुष्प (अधोवर्ती अंडाशय) c) परिजायांगी पुष्प(उप-अधोवर्ती अंडाशय)।

अन्य पुष्पीय भागों के विपरीत, जायांग निषेचन के बाद भी बना रहता है और उसका अंडाशय फल को बनाता है। अंडपों में, इसलिए अक्सर मोटा पर्ण मध्योतक होता है जिसमें संवहनी पूलों का जाल पाया जाता है। कोशिकाएं पर्णहरिती हो सकती हैं तथा आरंभिक अवस्थाओं में कुछ बिखरी हुई कोशिकाएं या परतें स्कलैरीड्स (sclereids) के रूप में भी विभेदित हो सकती हैं।

अंडप एक, तीन या पांच अथवा अधिक ट्रेस/अनुपथ प्राप्त कर सकता है, परंतु अधिकांशतः एक अंडप तीन अनुपथ प्राप्त करता है। मध्य या पृष्ठ अंडप अनुपथ परिधिय या अधर अनुपथों की अपेक्षा निचले स्तर पर धानीय रंभ को छोड़ देता है (चित्र 9.38 a)। अधर पूल मुक्त (चित्र 9.37 a-b, 9.38 a), आंशिक रूप से (चित्र 9.37 c; 9.38 b) अथवा पूर्णतः (चित्र 9.37 d; 9.38 c) युग्मित होते है। पृष्ठ पूल पत्ती की मध्यशिरा के समजात माना जाता है। युक्तांडपी जायांगों में अधर पूल मुक्त (चित्र 9.39 a-b) अथवा युग्मित (चित्र 9.39 c) हो सकते हैं तथा पृष्ठ पूल के पार्श्व में स्थित होते हैं (चित्र 9.38 a-c)। यदि अंडप भीतर की ओर मुड़े हुए होते हैं तो परिधिय पूल पृष्ठ पूलों की तुलना में अधर रूप से स्थित हो जाते हैं (चित्र 9.39 a-c)। अंडप के किनारों के भीतर की ओर मुड़नें के फलस्वरूप अधर पूल 180° के कोण पर उल्टे हो जाते हैं यानि कि, उनका फ्लोएम भीतर की ओर तथा जाइलम बाहर की ओर हो जाता है। पृष्ठ तथा अधर पूल दोनों अंडाशय की भित्ति में शाखित होते हैं। बीजांड अपनी संवहनी आपूर्ति बीजांडासन में अधर अंडपी पूलों से अथवा उनकी शाखाओं से प्राप्त करते हैं।

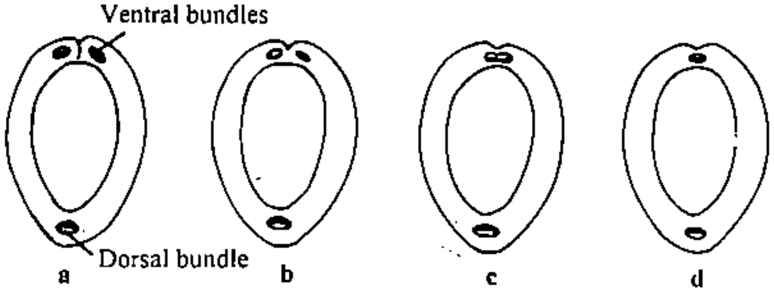

चित्र 9.37 : a-d) अंडप एक पृष्ठ पूल तथा दो अधर मुक्त (a-b) आंशिक रूप से युग्मित (c) पूर्णतः युग्मित (d) पूलों के साथ।

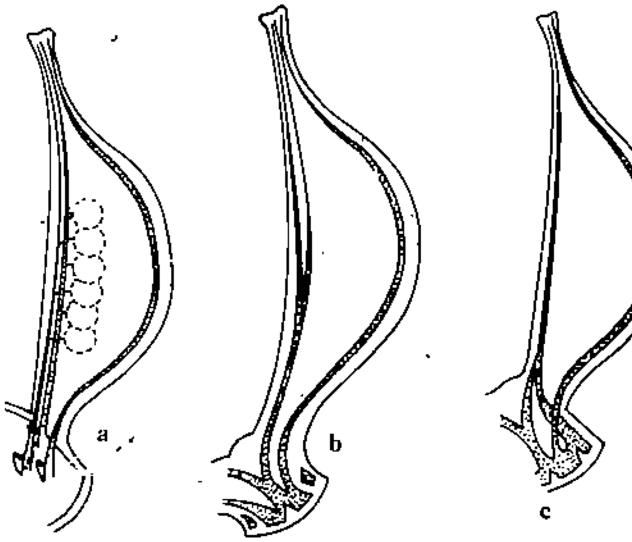

चित्र 9.38 : a-c) अंडपी संवहनी आपूर्ति को दर्शाते हुए चित्र a) अंडप तीन अनुपथों द्वारा आपूर्ति युक्त जो अंडप में वर्तिकाग्र तक अयुग्मित होता है b) अंडप जिसमें अधर अनुपथ युग्मित उगते हैं परंतु जिनमें वे अंडप के आधारीय भाग में पृथक हो जाते हैं। c) वह अंडप जिसमें दो अधर अनुपथ अंडप के आधार से ही युग्मित होते हैं।

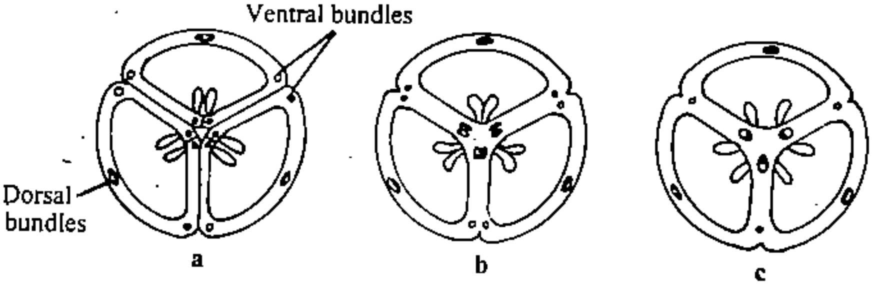

चित्र 9.39 : a-c) त्रिअंडपी, युक्तांडपी अंडाशयों के सेक्शन/काट, प्रत्येक अंडप में पृष्ठ तथा दो अधर पूल मुक्त (a-b) अथवा युग्मित (c)।

यदि तीन से अधिक अनुपथ अंडप में प्रवेश करते हैं तो अतिरिक्त अनुपथ पृष्ठ तथा अधर पूलों के बीच में पूल निर्मित कर देते हैं तथा उन्हें पार्श्व पूल कहते हैं।

पूलों का युग्मन (Bundle fusion)

पुष्पीय अंगों के संसजन (cohesion) के फलस्वरूप अक्सर पार्श्व तथा परिधिय संवहनी पूल तथा अनुपथ युग्मित हो जाते हैं। लेमिएसी (लेबिएटी) के विभिन्न वंशों की जातियों के बाह्यदलरूपण (calyces) में शिराओं के युग्मन की विभिन्न अवस्थाएं दिखाई पड़ती हैं (ईम्स Eames, 1931)। नेपटा (*Nepeta*) में प्रत्येक बाह्यदल में एक मुख्य शिरा तथा दो पार्श्व शिराएं होती है (चित्र 9.40 a, b)। एजूगा (*Ajuga*) में निकटवर्ती पार्श्व शिराएं युग्मित हो जाती हैं (चित्र 9.40 c-d)। साल्विया (*Salvia*) में पार्श्व शिराओं के दो जोड़े युग्मित हो जाते हैं जबकि अन्य मुक्त रहते हैं (चित्र 9.40 e)।

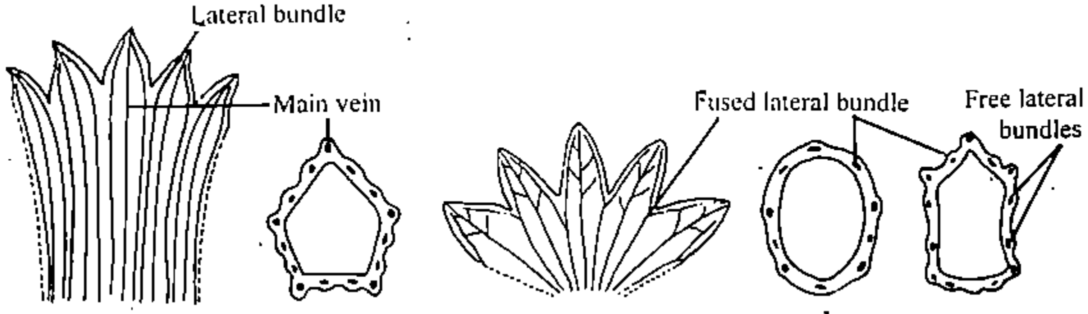

चित्र 9.40 : a-b) *नेपटा* स्पी. : वाह्यदल खुला हुआ ये दिखाने के लिए कि पार्श्व पूल अयुग्मित हैं। b) उसी की अनुप्रस्थ काट पांच मुख्य शिराओं को अयुग्मित पार्श्व शिराओं के साथ एकांतरित दिखाते हुए c-d) *एजूगा* स्पी. : c) वाह्यदल खुला हुआ तथा d) बाह्यदल की अनुप्रस्थ काट युग्मित पार्श्व पूलों को दिखाते हुए e) *साल्विया* स्पी. :के वाह्यदल की अनुप्रस्थ काट जिसमें पार्श्व पूलों के दो जोड़े होते हैं जबकि अन्य मुक्त रहते हैं।

9.8 पुंकेसरों की आकारिकीय प्रकृति

उत्पत्ति तथा शारीर की समानता के परिप्रेक्ष्य में, इस बात में अब शायद ही कोई संदेह है कि बाह्यदल तथा दल रूपांतरित पत्तियों को प्रदर्शित करते हैं। हालांकि, पुंकेसर तथा अंडप की आकारिकी और विकास के संबन्ध में अभी भी मतों में भिन्नता है (पार्किन (Parkin), 1951)। सबसे प्रचलित मत है कि ये अंग भी पत्ती के सहजात हैं। दूसरी ओर, कुछ आकृति विज्ञानियों ने पुंकेसर के विकास को टीलोम सिद्धांत के आधार पर समझाने की कोशिश की है। इस सिद्धांत के अनुसार पुंकेसर प्राचीन द्विशाखी रूप से विभाजित अक्ष से लघुकरण (reduction) तथा युग्मन के द्वारा विकसित हुए हैं जो अपने शीर्ष पर बीजाणुधानियों को धारण किए रहते हैं (विलसन (Wilson), 1942), मेलविले (Melville), 1962, 1963) ने सुझाया कि पुमंग में मूलभूत इकाईयां होती हैं जो जननपर्ण (gonophyll) कहलाती हैं जिनमें से प्रत्येक एक बंध्य पर्ण की बनी होती है जिसमें अधिपर्णी (epiphyllous) द्विभाजन रूप से शाखित तंत्र होता है जो नर अंगों को धारण किए रहता है (चित्र 9.41 a)। बेली तथा उनके सहकर्मियों (बेली तथा नेस्ट 1943; बेली तथा स्वामी, 1951) ने *डेजीनेरिया* के चौड़े पत्ती-जैसे पुंकेसरों पर बल दिया जिनमें तंतु, परागकोष या संयोजक में कोई अंतर नहीं होता है। पुंकेसर में तीन संवहनी पूल होते हैं तथा दो परागकोष मध्य तथा पार्श्व पूलों के बीच बनते हैं। इसी प्रकार के पुंकेसरों का वर्णन *ऑस्ट्रोबेलिया (Austrobaileya)* तथा *हाइमैनटैन्ड्रा (Himantandra)* में किया गया है जो रेनेलीज (Ranales) के सदस्य हैं तथा कुछ मैग्नोलिएसी कुल के सदस्यों में भी किया गया है। मैग्नोलिएसी में मध्यवर्ती स्थितियां पाई जाती हैं जो तीन पूलों तथा पटलीय (laminar) परागकोषों वाले चौड़े पुंकेसरों से सुस्पष्ट तंतु तथा परागकोषों वाले पुंकेसरों में रूपांतरण दिखाती हैं। इस प्रकार के अध्ययनों पर आधारित अधिकांश लेखक अब इस पर सहमत हैं कि पुंकेसर को "एक प्राथमिक फिल्लोमिक (phyllomic) प्रकृति के द्विमुखी अंग (bifacial organ) जिसमें परिधिय वृद्धि क्षेत्र परागकोषों में विकसित हो रहा होता है" के रूप में वर्णित किया जा सकता है (केनराइट, Canright 1952)। *निम्फिया (Nymphaea)* में दल से पुंकेसर में रूपांतरण को चित्र 9.41 a-g में दर्शाया गया है।

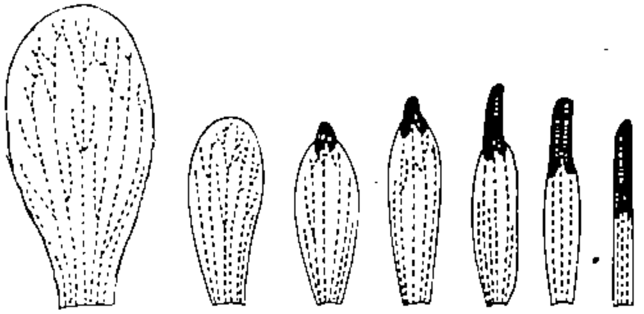

चित्र 9.41 : (a-g) *निम्फिया* पत्ती जैसे दल से पुंकेसर के विकास की अवस्थाओं को दर्शाते हुए चित्र।

9.9 अंडप का जातिवृत्त

अंडप की आकारिकीय प्रकृति काफी अधिक विवादास्पद है। कुछ मतों की नीचे चर्चा की जा रही है :

(i) विलसन (1942) ने माना कि अंडप, पुंकेसर की भाँति ही उर्वर टीलोमों से विकसित हुआ है। बीजाणुधानियां धारण करने वाले टीलोम युग्मित होकर पत्ती जैसा अंग बनाते हैं जो अपने किनारों पर बीजांड धारण किए रहते हैं। इस काल्पनिक अंग के किनारों के अंतर्वलन (involution) के फलस्वरूप अंडाशय का विकास हुआ जिसमें बीजांड परिबद्ध (enclosed) रहते हैं।

(ii) मेलविले (1962) ने अपना जननपर्ण सिद्धांत प्रतिपादित किया जिसके अनुसार पुमंग तथा जायांग दोनों मूलभूत इकाईयों के बने होते हैं जो जननपर्ण कहलाती हैं, इनमें से प्रत्येक बंध्य पत्ती की बनी होती है जिसमें अधिपर्णी द्विभाजी शाखित तंत्र होता है (चित्र 9.42 a)। जब उर्वर शाखा सिर्फ एक ही लिंग के अंगों को धारण करती है तो पुंबीजाणुपर्ण (androphyll) तथा जायांग पर्ण (gonophyll) शब्दों का उपयोग किया जाता है। संयुक्त जननपर्ण जिसमें नर तथा मादा अंग दोनों होते हैं वह पुंजायांग पर्ण (androgonophyll) कहलाती है और बंध्य ब्लेड जो अपनी उर्वर शाखा से अलग हो जाते हैं वे टेगोफिल (tegophyll) कहलाते हैं। विकास अनेकों अलग-अलग दिशाओं में जननपर्णों के युग्मन तथा लघुकरण के विभिन्न पेटर्नों के फलस्वरूप हुआ है। उदाहरण के लिए मुक्त केन्द्रीय बीजांडन्यास वाला अंडाशय बीजांडधर (ovuliferous) शाखाओं के मुक्त केन्द्रीय कॉलम बनाने के लिए युग्मन के द्वारा निर्मित हो सकता है, जबकि अंडाशय की भित्ति टेगोफिलों के युग्मन द्वारा बन गई थी। फॉलिकिल/पुटक एक संघनित जायांगपर्ण को प्रदर्शित करता है जिसमें अधर पूल द्विभाजी बीजांडधर शाखा तंत्र के दो अर्ध भागों को प्रदर्शित करता है।

(iii) मीऊस (Meeuse; 1965) ने सुझाया कि जायांग की दो प्रमुख आकारिकीय श्रेणियां होती हैं, कूट आवृतबीजी (pseudoangiospermous) तथा कूट पत्रिल बीजाणुपर्णी (pseudophyllosporous)। उनकी *एन्गेलहार्डिया* (*Engelhardia*) (जुगलेन्डेसी) के जायांग की व्याख्या सुझाती है कि वर्तिकाग्र अपसारी बीजांडद्वार (flared micropyle) होता है जो नग्न बीजांड के बाहरी आवरण के आगे निकला रहता है। इस प्रकार की व्यवस्था स्पष्टत: अनावृतबीजी पादप *नीटम* (*Gnetum*) के शंकु के समान दिखती है। कूट पत्रिल बीजाणुपर्णी जायांग की व्याख्या गोनोक्लेड (gonoclad) और स्टीगोक्लेड (stegoclad) शब्दों से की जाती है उसी तरीके से जैसे मेलविले ने जननपर्णों का उपयोग किया था। अंडप की भित्ति बाहरी आवरण को प्रदर्शित करती है (चित्र 9.42 b)

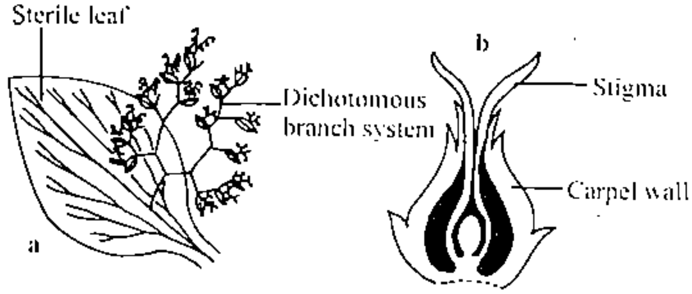

चित्र 9.42 : a) मेलविले की जननपर्ण, चौड़ी पत्ती की बनी हुई जिसमें अधिपर्णी द्विभाजी रूप से शाखित तंत्र नर अंगों को धारण किए हैं b) *एन्गेलहार्डिया* का कूट-आवृतबीजी जायांग।

(iv) क्लासिकल (classical) धारणा के अनुसार जो अठारहवीं शताब्दी में गोइथे (Goethe) ने दी थी, अंडप की व्युत्पत्ति उर्वर पत्ती से होती है, जिसके किनारे बीजांडों को धारण किए रहते हैं। किनारे अंतर्वलित हो जाते हैं और आपस में ही अथवा अन्य अंडपों के किनारों के साथ युग्मित हो जाते हैं, जिससे कि बीजांड कोष्ठक में बंद हो जाते हैं।

बेली और स्वामी ने (1951) *डेजीनेरिया* में अंडप का वर्णन किया जो अनुप्रस्थ काट में मुड़े हुए अंग जैसा दिखाई पड़ता है जिसके किनारे बाहर की ओर अपसारी होते हैं तथा अयुग्मित रहते हैं। इस प्रकार का अंडप समंतर्वलित (conduplicate) कहलाता है (चित्र 9.43 a-f)। अपसारी किनारों पर वर्तिकाग्र जैसी विशेषताएं होती हैं तथा ये परागकणों को ग्रहण करते हैं। बीजांडों की दो कतारें भीतरी अभ्यक्ष सतह पर स्थित होती हैं। इन बीजांडों को पृष्ठ तथा अधर पूल दोनों से अनुपथों की आपूर्ति होती है। (चित्र 9.44)। इस प्रकार के समंतर्वलित रूप से मुड़े हुए अंडप से, सामान्य प्रकार के आवृतबीजी अंडप के ऊपरी भाग के वर्तिकाग्री किनारों के बंद होने तथा प्रतिबंधित होने के द्वारा बने हैं। बीजांडों की संख्या घट गई तथा ये सिर्फ अंडप के निचले भाग में रह गए, जो दीर्घीकृत हो गया जबकि ऊपरी भाग वर्तिका और वर्तिकाग्र बनाने के लिए विभेदित हो गया।

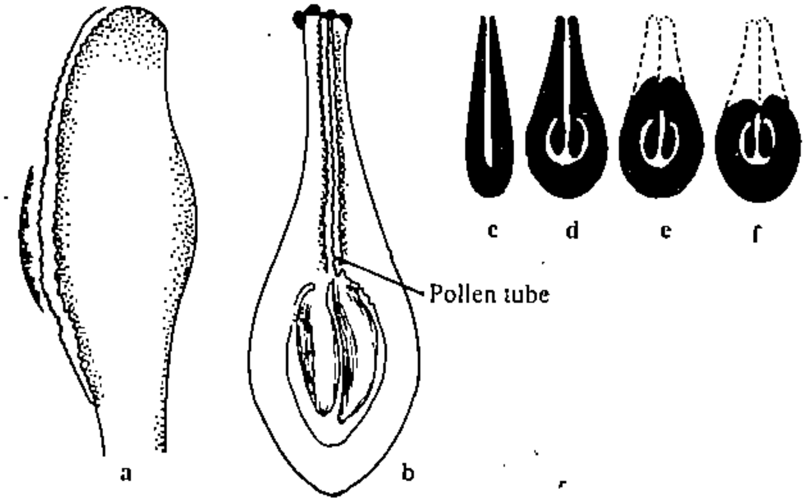

चित्र 9.43 : a) *ड्राइमिस* स्पी. (***Drimys*** sp.) का समंतर्वलित अंडप a) वर्तिकाग्री किनारों को दर्शाता हुआ पार्श्व दृश्य b) बीजांड के एक भाग को तथा पराग नलिका के वेधन (**penetration**) को दिखाती अनुप्रस्थ काट; c-f) आज के अंडप का समंतर्वलित अंडप से विकास का आरेखी प्रदर्शन।

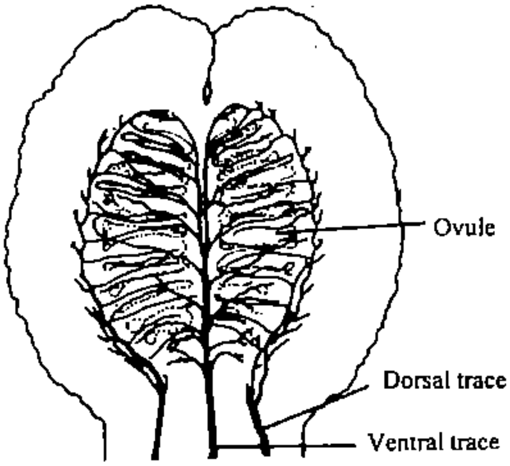

चित्र 9.44: सामान्य अंडप बीजांडों को पृष्ठ तथा अधर दोनों पूलों से संवहनी आपूर्ति की प्राप्ति को दिखाते हुए।

बोध प्रश्न 4

कॉलम ए को कॉलम बी में दिए गए शब्दों/नामों से मिलाइए।

कॉलम ए	कॉलम बी
1. पुष्प जो शलभ और तितलियों से अनुहार (mimic) करते हैं वे दिखाई पड़ते हैं	(क) यूफॉर्बिया (*Euphorbia*)
2. चटक लाल, नलिकाकार तथा गूदेदार दलपुंज पाए जाते हैं .... के पुष्पों में	(ख) गुड़हल (shoe flower)
3. परिदलपुंज अनुपस्थित अथवा अस्पष्ट होता है .... के पुष्पों में	(ग) बोतल ब्रुश
4. बहुत से मुक्त अंडपों वाला पुष्प	(घ) सिल्क-सूत वृक्ष (silk cotton tree)
5. अंतस्थ पुष्प विहीन पुष्पक्रम दिखाई पड़ता है	(ङ.) *ऐग्रीमोनिया* में
6. साएथियम पाया जाता है	(च) सिल्वर-ऑक में (silver oak)
7. जायांग को घेरे हुए पुंकेसरी नलिका बनाने के लिए पुंकेसर युग्मित हो जाते हैं	(छ) ऑर्किडेसी में
8. उत्कृष्ट सजावटी पुंकेसर विशेषता होते हैं .... के पुष्पों की	(ज) घास
9. अंतस्थ पुष्प युक्त पुष्पक्रम पाया जाता है	(झ) बटर कप (butter cup) में
10. बाह्यदल सजावटी तथा दल लघुकृत होते हैं	(ण) *क्लिओम* (*Cleome*) में

बोध प्रश्न 5

रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

1. पुष्पीय अंगों का चक्र में पार्श्व युग्मन .... कहलाता है।
2. जब पुंकेसर दलपुंज के साथ युग्मित होते हैं तो वे .... कहलाते हैं।
3. प्रत्येक अंडप तीन अनुपथ प्राप्त करता है, एक .... तथा दो .... ।
4. एबूटिलॉन (*Abutilon*) में बाह्यदलों में त्वचारोम होते हैं जो .... स्रावित करते हैं।
5. अंडाशय में बीजांड .... पर जुड़े रहते हैं।

उपयुक्त रेखाचित्रों की सहायता से *एक्वीलेजिया* के पुष्पीय शरीर का वर्णन करिए।

बोध प्रश्न 7

उन विभिन्न सिद्धांतों को सारांशित करिए जो अंडप की आकारिकीय प्रकृति को समझाते हैं।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

9.10 फल

इकाई 6, एल.एस.ई-06 में आप पहले ही फल के बारे में उसके निर्माण तथा परिक्षेपण के बारे में विस्तार से पढ़ चुके हैं। यहाँ पर फलों में विविधता के बारे में जानेगें।

परागण तथा निषेचन के बाद बीजांड बीज में रूपांतरित हो जाता है। उसी समय अंडप अथवा विशेषतौर पर अंडाशय जो बीजांड को घेरे रहता है उसमें कुछ बदलाव आते हैं जिसके फलस्वरूप फल का निर्माण होता है। वह अंडाशय जिसमें पके हुए बीज होते हैं वह फल है। फल बीजों की तब तक सुरक्षा करता है जब तक कि वे परिपक्व नहीं हो जाते हैं और उचित अवस्था आने पर उनके मुक्त होने और परिक्षेपण

लगा होता है तथा बीज अपने आप में ही परिक्षेपण की इकाई होता है। मिल्कवीड *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* (*Calotropis procera*) में (चित्र 9.45 a) तथा सिल्क कॉटन/सेमल के वृक्ष *बाम्बैक्स सीबा* (*Bombax ceiba*) में रोमिल (hairy) बीज खुले हुए फलों में से निकलते हैं जो हवा के साथ उड़ जाते हैं। हालांकि, अधिकांश पुष्पीय पादपों में परिक्षेपण का कार्य कम से कम आंशिक रूप से तो फल द्वारा किया ही जाता है। उदाहरण के लिए नारियल का फल स्वयं ही समुद्र के जल में परिक्षेपण के लिए अनुकूलित होता है।

इम्पेशिएन्स (*Impatiens*) में (चित्र 9.45 b, c) तथा *यूफॉर्बिया* स्पीशीज (*Euphorbia*) में फल फट कर खुल जाता है तथा बीज को कुछ दूरी तक फेंक देता है। कंपोजिटी (एस्टेरेसी) कुल के कुछ सदस्यों के फलों (चित्र 9.45 d) में रोमिल या काँटेदार रोमगुच्छ (pappus) होते हैं जिनकी मदद से ये लंबी दूरियों तक जंतुओं के द्वारा ले जाए जाते हैं। मिसलटो (mistletoe) *विस्कम एल्बम* (*Viscum album*) के फल चिड़ियों द्वारा खा लिए जाते हैं तथा बीज उनके मल के साथ बाहर आ जाते हैं। अत: किसी भी फल की संरचना को उसके द्वारा सुरक्षा के लिए अनुकूलन तथा बीजों के परिक्षेपण के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए।

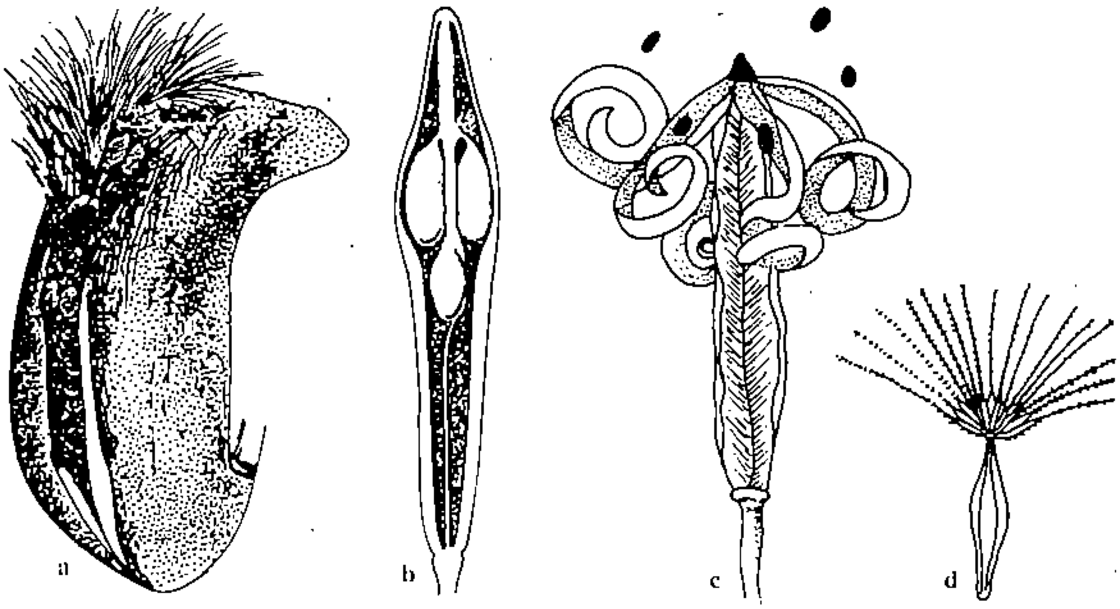

चित्र 9.45: **a) *केलोट्रोपिस प्रोसेरा* : रोमिल बीजों युक्त फल b-c) *इम्पेशिएन्स* स्पी. अनुदैर्घ्य काट में बंद फल c) फल जिसके वाल्व अंदर की ओर मुड़े हुए होते हैं और ऐसा करने में बीजों को निष्कासित कर देते हैं d) कंपोजिटी कुल का फल परिक्षेपण के लिए रोमिल रोमगुच्छ के साथ।**

9.10.1 सरल तथा संयुक्त फल

सरल फल (simple fruit) पुष्प के एक अंडपी अथवा बहुअंडपी, युक्तांडपी जायांग से निर्मित होता है। बहुफल (multiple fruit) में एक से अधिक पुष्प के जायांग एक सामान्य अक्ष पर संबद्ध अथवा सहजात होते हैं जैसे कि अनान्नास, *अनानास कोमोसस* (*Ananas comosus*) में (चित्र 9.46 a)। पुंजफल (aggregate fruits) एक जायांग के अंडपों से विकसित होता है जो पुष्प में मुक्त होते हैं परंतु फल में संबद्ध होते हैं जैसे कि शरीफा *अनोना स्क्वेमोसा* (*Annona squamosa*) में (चित्र 9.46 b)। संयुक्त फल (compound fruit) शब्द का उपयोग कभी-कभी बहुफल तथा पुंजफल दोनों के लिए किया जाता है।

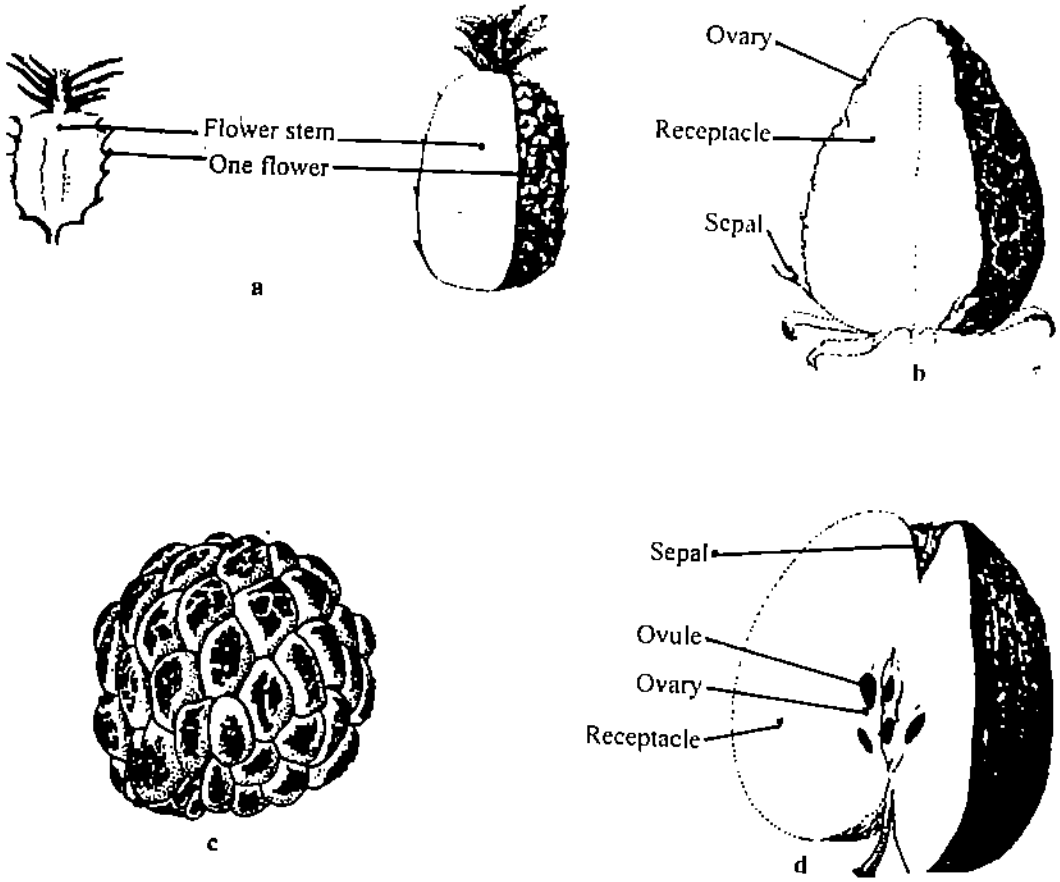

चित्र 9.46 : a) अनान्नास का बहुफल c) *अनोना स्क्वेमोसा* का फल b) स्ट्राबेरी का कूटफल d) सेब की अनुदैर्घ्य काट धानी तथा बीजयुक्त अंडाशय को घेरे हुए युग्मित परिदलपुंज को दिखाते हुए।

9.10.2 कूट फल

वे फल जिनमें अंडप के बजाय अन्य पुष्पीय अंग उपस्थित होते हैं वे सहायक या कूट फल (false fruit) कहलाते हैं। कूट फल के निर्माण में सहयोग करने वाले सहायक अंग (जो अभासी फलिका भी कहलाती है) पुष्पीय धानी, वृंत, पुष्पक्रम अक्ष, बाह्यदल, दल या सहपत्र हो सकते हैं। स्ट्राबेरी, *फ्रेगेरिया* स्पी. (*Fragaria* spp.) (चित्र 9.45 b) में पुष्पीय धानी या पुष्पासन अंडाशय के चारों ओर विस्तारित होकर मांसल, लाल खाद्य फल बनाता है। सेब *पाइरस मेलस* (*Pyrus malus*) में (चित्र 9.45 d) पुष्पीय अंगों द्वारा बनने वाली पुष्प नलिका तथा अधःस्थ (inferior) अंडाशय को घेरकर बनने वाली धानी मिलकर फल का स्थूल भाग बनाते हैं। कटहल में *आर्टोकार्पस हैटेरोफिल्लस* (*Artocarpus heterophyllus*) में परिदलपुंज तथा अनान्नास में पुष्पक्रम में संहत रूप से व्यवस्थित पुष्पों को घेरे हुए सहपत्र फल के निर्माण में भाग लेते हैं।

9.10.3 फलों के प्रकार

वास्तविक फल की भित्ति फलभित्ति (pericarp) कहलाती है। परिपक्व फल की फलभित्ति अक्सर तीन क्षेत्रों में विभाजित होती है। आम, *मैंजीफेरा इंडिका* (*Mangifera indica*) में, जैसे बाह्यत्वचा या छिलका बाह्यफलभित्ति (exocarp or epicarp) को प्रदर्शित करता है। गूदेदार तथा रसीला मध्य भाग, जो खाया जाता है वह मध्यफलभित्ति (mesocarp) है। भीतरी कवच या गुठली अंतःफलभित्ति (endocarp) द्वारा बनती है जो मुलायम बीज को घेरे रहती है। कद्दू (pumpkin) *कुकुरबिटा पीपो* (*Cucurbita pepo*) में बाह्यफलभित्ति कठोर होती है तथा मध्यफलभित्ति और अंतःफलभिति गूदेदार/मांसल होती है। दूसरी ओर टमाटर, *लाइकोपर्सिकम एस्कुलेन्टम* (*lycopersicum esculentum*) या अमरूद, *सिडियम* गुआजावा

(*Psidium guajava*) में संपूर्ण फलभित्ति मुलायम होती है। अधिकांशत: कठोर फलों जैसे कि बादाम में ‍मम बीज होते हैं तथा मुलायम फलों जैसे अंगूर तथा अमरूद में कठोर बीज होते हैं।

विभिन्न पादपों के फलों में साइज, आकार, संरचना, तंतुविन्यास, रासायनिक संगठन तथा परिक्षेपण क्रियाविधि में काफी विविधता दिखाई पड़ती है। साइज घासों के छोटे कैरिऑप्सिस (caryopsis) तथा सौंफ, *फ़ीनीकुलम वल्गैरी* (*Foeniculum vulgare*) के भिदुर फल (schizocarp) से लेकर नारियल, *कोकोस न्यूसीफेरा* (*Cocos nucifera*) के बड़े अष्ठिल फल (drupe) तथा कद्दू के पीपो (pepo) फल जितना बड़ा हो सकता है। जबकि गेहूँ के कैरिऑप्सिस अथवा नारियल के अष्ठिल फल में सिर्फ एक ही बीज होता है, टमाटर के सरस फल/बेरी में सैंकड़ों बीज होते हैं तथा खसखस (poppy) पेपेवर स्पी. (*Papaver* spp.) के कैप्सूल में हजारों छोटे-छोटे बीज होते हैं। फलों को मुख्यत: इस आधार पर वर्गीकृत किया जाता है कि वह शुष्क तथा कठोर हैं अथवा मुलायम और गूदेदार हैं तथा इस आधार पर क्या फल तब स्फुटित होता है जब परिपक्व हो जाता है अथवा पकने के बाद भी साबुत रहता है (चित्र 9.47 देखिए)। इन मानदंडों के आधार पर फलों को श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है जिनके बारे में आप पहले ही एल.एस.ई.-06 इकाई में पढ़ चुके हैं।

9.11 फलों का विकास

वृद्धि तथा रूपांतरण की मात्रा जो फल के विकास के दौरान पाई जाती है वह विभिन्न पादपों में काफी भिन्न होती है। घासों में, जिनमें गेहूँ तथा मक्का जैसे अनाज भी सम्मिलित हैं, फल में सिर्फ एक बीज होता है तथा वह काफी छोटा होता है। अंडाशय की भित्ति में बहुत कम अथवा कोई कोशिका विभाजन नहीं होता है। कोशिकाओं का दीर्घीकरण विभेदन तथा दृढ़ीभवन (sclerification) फल के विकास के लिए पर्याप्त होते हैं। अंगूर, *वाइटिस वाइनीफेरा* (*Vitis vinifera*) में कुछ कोशिका विभाजन होते हैं जिनसे अंडाशय का साइज़ दोगुना हो जाता है, परंतु कोशिका के विस्तार के फलस्वरूप फल के साइज में 3000 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है। दूसरी ओर, अनेकों बीजों वाले बड़े फलों में (उदा. बैंगन, तरबूज) काफी मात्रा में कोशिका विभाजन हो सकता है। *प्रुनुस विर्जिनिआना* (*Prunus virginiana*) (लेब्रेकी (Labrecque) आदि, 1985) में फल का विकास तीन प्रावस्थाओं में होता है। पहले अंडपी भित्ति की कोशिकाओं के विस्तार की आरंभिक प्रावस्था होती है, उसके बाद कोशिका विभाजनों का काल होता है तथा अंत में कोशिकाओं के विस्तार की एक और प्रावस्था होती है। ऐवोकेडो (avocado) *परसिआ अमेरिकाना* (*Persea americana*) में फलभित्ति में फल के परिपक्व होने तक लगातार कोशिका विभाजन होते रहते हैं।

ऐसा माना जाता है कि पराग नलिकाएं अपने वर्तिकाग्र से बीजांड तक के पथ के दौरान एक एन्जाइम स्रावित करती हैं जो ट्रिप्टोफान (tryptophan) को सक्रिय हार्मोन में परिवर्तित करने में समर्थ होता है। वर्तिका के नीचे उगने वाली परागनलिकाएं ऑक्सिनों को संश्लेषित करती हैं जो अंडाशय में चले जाते हैं और उसकी वृद्धि को बढ़ा देते हैं। हार्मोनों की अतिरिक्त आपूर्ति प्रगट रूप से तरुण बीजों से होती है इसलिए सामान्यत: परागण तथा निषेचन दोनों फल के निर्माण के लिए आवश्यक होते हैं। निटिश (Nitsch) (1951) ने दिखाया कि बंध्य संवर्धन (sterile culture) में उगाये गए टमाटर के अपरागित पुष्पों को फल बनाने के लिए प्रेरित किया जा सकता है यदि उन पर ऑक्सिन की अभिक्रिया की जाए। वास्तव में इस ज्ञान का उपयोग वाणिज्य में फलों जैसे कि केला और आम को जल्दी पकाने के लिए उन पर इथाइलीन (ethylene) या ईथ्रेल (ethrel) के उपयोग द्वारा किया जा सकता है, जो ऑक्सिनों के निकलने में सहायता करते हैं।

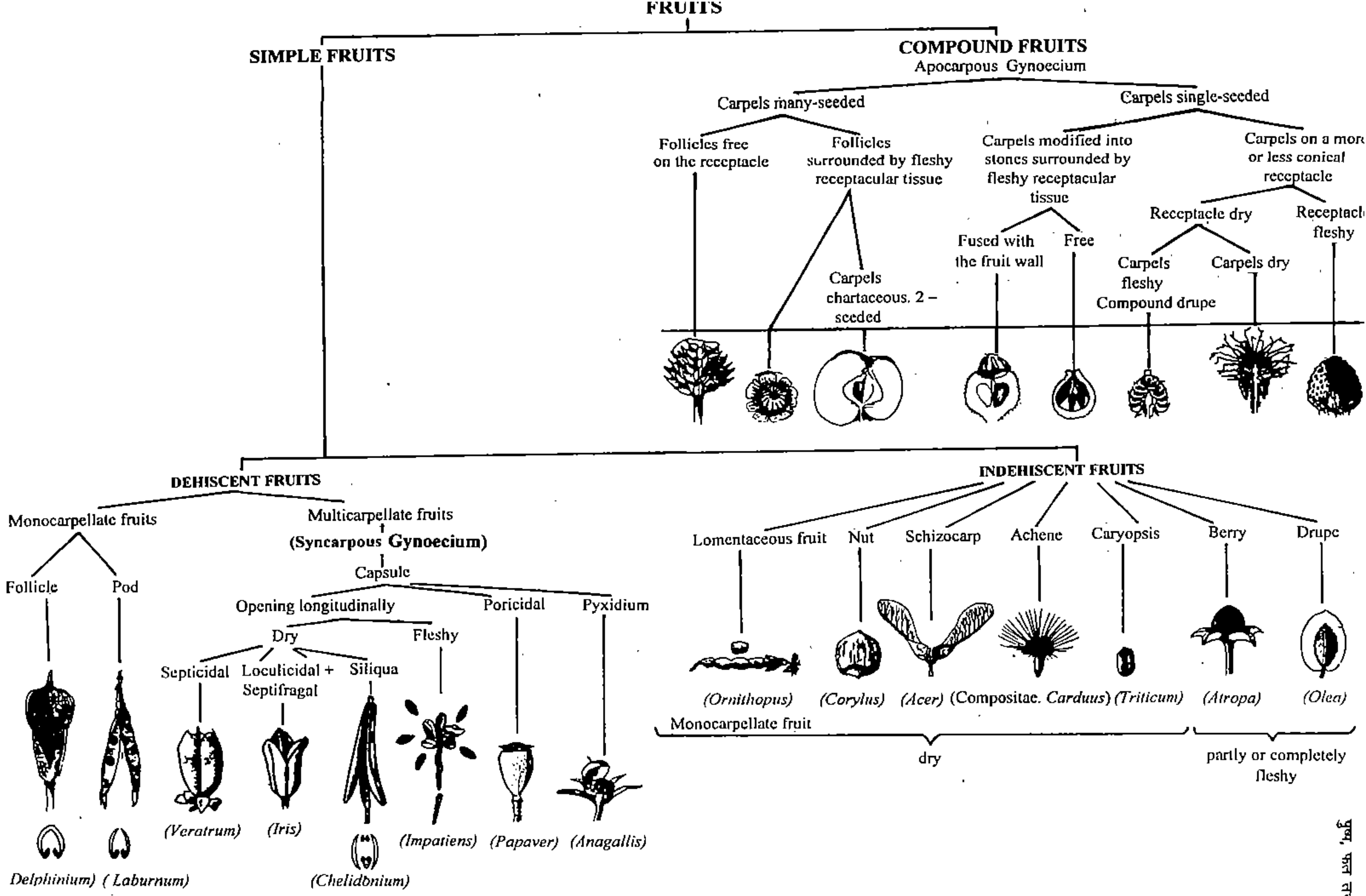

चित्र 9.47: फलों के प्रकार

फल की संरचना की विविधता के अध्ययन के लिए किसी प्रयोगशाला की या वानस्पतिक उद्यान में भ्रमण करने की आवश्यकता नहीं होती है। हमारे आसपास के स्थानों में पाए जाने फल तथा वे जिन्हें हम खाने के लिए खरीदते हैं वे समृद्ध विविधता को दर्शाने के लिए पर्याप्त होते हैं। वर्तमान अध्ययन में हम निम्नलिखित आसानी से उपलब्ध चार फलों को समझने की कोशिश करेंगे।

9.11.1 सिट्रस फल (Citrus Fruits)

संतरा या नीबू का फल सरल फल/बेरी प्रकार का होता है। बाह्यफलभित्ति, जो फ्लेविडो (flavedo) कहलाती है, उसमें क्यूटीकल युक्त बाह्यत्वचा तथा समीपवर्ती मृदूतक होता है जिसमें फ्लास्कनुमा तेल ग्रंथियां होती हैं (चित्र 9.48 a,b)। इसमें पर्णहरित/क्लोरोफिल की कमी हो जाती है तथा मृदूतक में कैरोटिनॉइड्स की वृद्धि हो जाती है जो पके फल को पीला या नारंगी रंग प्रदान करते हैं। मध्यफलभित्ति, जो एल्बीडो (albedo) कहलाती है, उसमें सफेद मुक्त रूप से शाखन की हुई मृदूतकी कोशिकाएं होती हैं जिनमें काफी अंतरकोशिकीय स्थान होते हैं। यह पेक्टिन का समृद्ध स्रोत है जिसका उपयोग जैम तथा जैली आदि बनाने के लिए किया जाता है। संवहनी पूल मध्यफलभित्ति में से होकर शाखन करते हैं। अंडपों की भीतरी बाह्यत्वचा तथा संहत मृदूतक की कुछ परतें मिलकर अंत:फलभित्ति बनाती हैं। यह झिल्ली जैसी कोष्ठीय परत बनाती हैं जो रसकोषों तथा बीजों को घेरे रहती है। रसकोष वृंतीय बर्हिवृद्धियां होती हैं जो अंत:फलभित्ति की बाह्यत्वचीय तथा उपबाह्यत्वचीय कोशिकाओं से निकलती हैं और कोष्ठकों में प्रक्षेपित (projective) हो जाती हैं (चित्र 9.48 c)। उनकी बड़ी धानी युक्त कोशिकाओं में रस होता है।

सिट्रस फलों के छिलके में बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति का काफी भाग होता है। कुछ जातियों में जैसे कि संतरे में मध्यफलभित्ति का ऊतक आसानी से फट जाता है जिससे छिलके तथा अंडपी भागों को आसानी से अलग किया जा सकता है, जबकि अन्य में जैसे कि नीबू में मध्यफलभित्ति मजबूत होती है तथा छिलके तथा अंडपी भागों को आसानी से अलग नहीं किया जा सकता है।

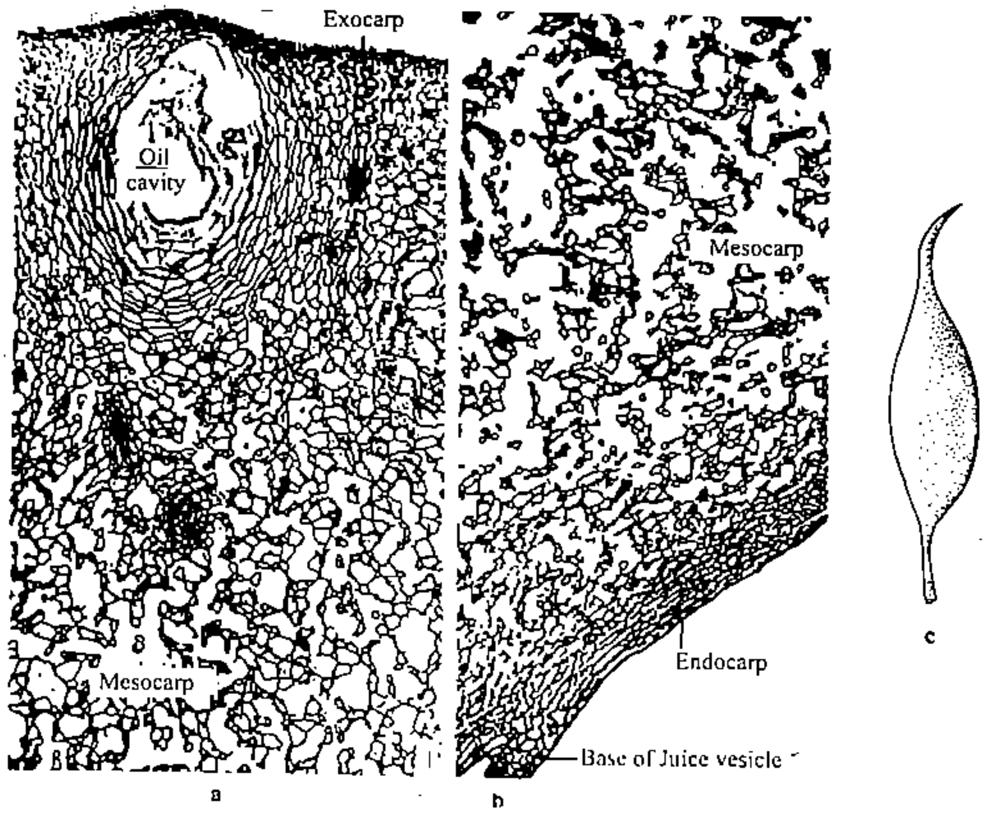

चित्र 9.48 : सिट्रस की फलभित्ति के भागों के माइक्रोग्राफ a) बाहरी भाग b) भीतरी भाग c) एकल रस कोष।

सेब के फल, पाइरस मेलस (*Pyrus malus*) को पोम (pome) के रूप में वर्णित किया जाता है, जो कि एक प्रकार का अष्ठिल/गुठलीदार फल है। यह एक कूट फल है जो पाँच अयुग्मित अंडपों की भीतरी कोर/क्रोड (core) तथा उसको घेरे हुए गूदेदार भाग (जो खाया जाता है) जो बाह्यदलों, दलों तथा पुंकेसरों के युग्मित तथा दीर्घीकृत आधारीय भागों का बना होता है (चित्र 9.46 d)। घानी फल के आधारीय भाग के निर्माण में भाग लेती है। अंडपी क्रोड बाहरी पुंजित गूदेदार भाग से "क्रोड रेखा" (core line) द्वारा अलग रहती है जो अपेक्षाकृत छोटी कोशिकाओं की बनी होती है। संयुक्त फलभित्ति का अंडाशय वाला भाग जो हाइपैन्थियम (Hypanthium) कहलाता है, उसमें मृदूतकी बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति होती है (चित्र 9.49)। उपास्थियुक्त(cartilaginous) अंत:फलभित्ति, जो 5-6 स्क्लैरिड्स की परतों की बनी होती है, वह अंडाशयी कोष्ठो का संस्तर बनाती है जो गहरे रंग के बीजों को धारण किए रहते हैं। प्रत्येक अंडप में पृष्ठ पूल तथा दो अधर पूल होते हैं। हाइपैन्थियम के बाहरी भाग में दस संवहनी पूल होते हैं, पाँच बाह्यदलों के तथा बाकी पाँच दलों के होते हैं। बाहरी बाह्यत्वचा में मोटा क्यूटिकल होता है। जब फल विकसित हो जाता है तो रंध्र वातरंध्रों (lenticels) द्वारा विस्थापित हो जाते हैं। बाह्यत्वचा के भीतर कुछ परतों का कॉलेनकाइमा/श्लेषोतक होता है जिसमें मोटी भित्ति वाली स्पर्शीय रूप से दीर्घीकृत (tangentially elongated) कोशिकाएं होती हैं। इस क्षेत्र के भीतर की ओर मृदूतक होता है जिसमें अरीय रूप से विन्यासित कोशिकाएं होती हैं जिनमें काफी वायु अवकाश होते हैं।

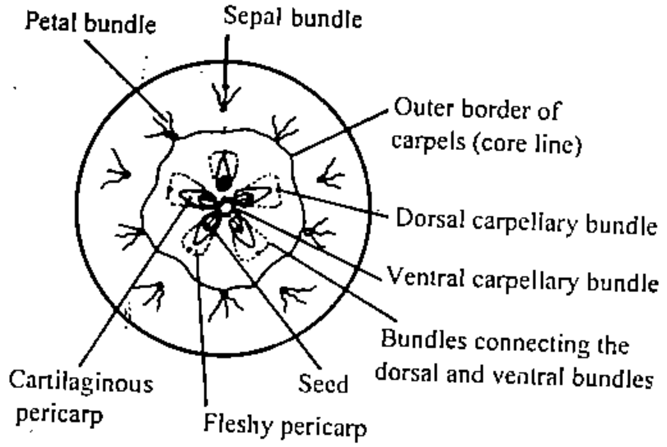

चित्र 9.49 : सेब के फल की अनुप्रस्थ काट का आरेख।

9.11.3 केला (Banana)

केला का फल सरस फल का उदाहरण है। वन्य केले में 3-कोष्ठकों वाले बीजीय, फल होते हैं (चित्र 9.50 a, b) परंतु कृष्य केला, म्यूजा पैराडिजिएका (*Musa paradisiaca*) बीजरहित तथा गूदेदार होता है(चित्र 9.50 c-d)। केले का छिलका बाह्यफलभित्ति को प्रदर्शित करता है जो क्यूटीकल युक्त बाह्यत्वचा, कुछ अधोत्वचीय मृदूतक की संहत परतों तथा वायूतक (aerenchyma) के चौड़े क्षेत्र की बनी होती है जो संवहनी पूल तथा लैटीसीफर्स (laticifers) युक्त होती है। मध्यफलभित्ति अरीय रूप से दीर्घीकृत गूदा/पल्प बनाने वाली मृदूतकी कोशिकाओं की 5-7 परतों की बनी होती है। अंत:फलभित्ति भीतरी बाह्यत्वचा द्वारा प्रदर्शित होती है। त्रिअंडपी अंडाशय को विभाजित करने वाले पटों में बाहरी तथा भीतरी बाह्यत्वचीय कोशिकाएं केन्द्रीय मृदूतक जिसमें समानान्तर संवहनी पूल होते हैं तथा अधोत्वचीय गूदा-बनाने वाली कोशिकाएं होती हैं। मध्यफलभित्ति की गूदा बनाने वाली कोशिकाओं के प्रचुरोद्भवन (proliferation) तथा कृष्य केले में पट कोष्ठों को गूदे/पल्प से भर देते हैं। मांड/स्टार्च गूदे में आरंभिक अवस्थाओं में निक्षेपित हो जाता है परंतु, बाद में, मांड, केले की खाने वाली किस्मों में शर्करा (sugar) में परिवर्तित हो जाता है।

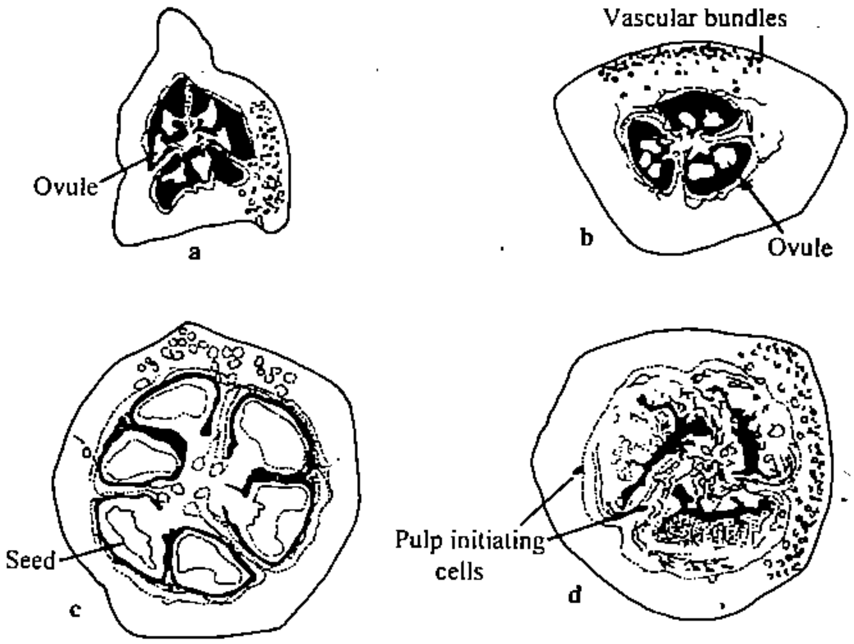

चित्र 9.50 : वन्य तथा कृष्य केलों की अनुप्रस्थ काट (a) वन्य केले का अंडाशय तरुण अवस्था में b) परिपक्व फल बीजों सहित तीन कोष्ठीय अवस्था को दिखाते हुए गूदा का निर्माण नगण्य है c) कृष्य केला का अंडाशय तथा d) परिपक्व फल मध्यफलभित्ति तथा पटों से गूदे के निर्माण को दिखाते हुए।

9.11.4 फली (Legume)

लेग्युमिनोसी कुल में फली एकल अंडप से विकसित होती है जो परिपक्व होने पर अधर तथा पृष्ठ दोनों सीवनों (sutures) से खुल जाती है, जिससे अधर किनारे पर लगे हुए बीज दिखाई पड़ने लगते हैं। बाह्यफलभित्ति बाहरी बाह्यत्वचा की बनी होती है जिसमें मोटा क्यूटीकल होता है। मध्यफलभित्ति में अपेक्षाकृत मोटी-भित्ति वाला मृदूतक होता है। इस क्षेत्र में संवहनी पूल होते हैं जिनके साथ अक्सर कुछ दृढ़ोतकी (sclerenchymatous) कोशिकाएं होती हैं। अंत:फलभित्ति कुछ दृढ़ोतकी ऊतकों की बनी होती है जिसके भीतर की ओर कुछ मृदूतक की परतें तथा पतली भित्ति वाली भीतरी बाह्यत्वचा होती है। अंत:फलभित्ति का दृढ़ोतक या तो स्क्लैरिड्स के एक अनुक्षेत्र का बना होता है जो एक ही दिशा में समान रूप से व्यवस्थित रहती हैं (उदा. *ऐसट्रागेलस मेक्रोकार्पस* (*Astragalus macrocarpus* चित्र 9.51 a) अथवा दो अनुक्षेत्रों की बनी होती हैं जिनमें स्क्लैरिड्स का विन्यास भिन्न होता है (उदा. *ऐस्ट्रागेलस होमासस* (*Astragalus homosus*)। स्फुटित होने वाली फलियों में सामान्यत: दृढ़ोतकी कोशिकाओं का क्रॉस-विन्यास होता है। इस प्रकार की फलियों में मुलायम विभेदन ऊतक भी सीवनों के क्षेत्र में होता है। इस प्रकार की फलियों में फली जब शुष्क हो जाती है तो वह ऐंठ (twist) जाती है जिससे फल के दोनों अर्धभाग सीवनों से अलग हो जाते हैं। *ऐकेशिया रेडियाना* (*Acacia radiana*) में फलभित्ति की बाह्यफलभित्ति में तथा अंत:फलभित्ति में भी स्क्लैरिड्स होती हैं (चित्र 9.51 b)। इस प्रकार की फलियां कठोर तथा अस्फुटित होती हैं।

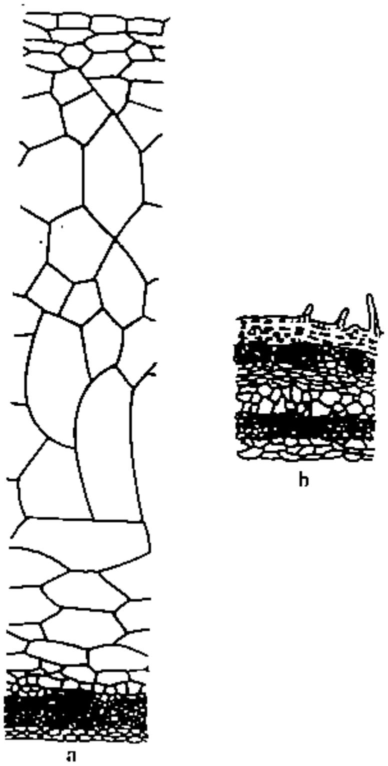

चित्र 9.51: a) ऐस्ट्रागेलस स्पी. फलभित्ति की अनुप्रस्थ काट अंत:फलभित्ति में स्क्लैरीड्स के साथ b) ऐकेशिया रेडिआना (*Acacia radiana*) समान वाह्यफलभित्ति तथा अंत:फलभित्ति में स्क्लैरिड्स के साथ।

बोध प्रश्न 8

दिए गए कोष्ठकों में लिखिए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य, सत्य वक्तव्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

क) वह अंडाशय जिसमें पके हुए बीज होते हैं वह फल कहलाता है। [ ]

ख) *इम्पेशिएन्स* में फल अस्फुटित होता है। [ ]

ग) अन्ननास एक संयुक्त फल है। [ ]

घ) आम में संपूर्ण फलभित्ति मुलायम और मांसल होती है। [ ]

ड.) कठोर फलों में सामान्यत: मुलायम बीज होते हैं। [ ]

च). संतरे में रसधानियां अंत:फलभित्ति से उगती हैं। [ ]

छ) लैग्युमिनोसी में फली दो अंडपों से विकसित होती है। [ ]

9.12 फल का विलगन

किसी भी पेड़ पर अनेकों तरुण फल विलग हो जाते हैं और गिर जाते हैं। एक बीजांड वाले अंडाशय यदि निषचित न हो पाएं तो सामान्यत: गिर जाते हैं। अनेकों बीजांडों युक्त अंडाशय के लिए, फल के विकसित होने और पेड़ पर लगे रहने के लिए कुछ न्यूनतम संख्या में बीजांडों का निषेचित होना आवश्यक होता है। चूंकि फलों का गिरना किसी भी बाग में काफी नुकसान पहुँचाता है, अत: फल के गिरने के कारण और उसकी क्रियाविधि बहुत महत्वपूर्ण होती है। आम तथा ऐवोकेडो के फल वृंतों में छोटी, पतली भित्ति वाली स्क्वैट (squat) कोशिकाएं युक्त विलगन क्षेत्र के निर्माण का वर्णन किया गया है जैसी कि पर्णवृंत में

होती हैं। टाइलोसिस, जो जल के प्रवाह को अवरुद्ध कर देती हैं, वे अक्सर विलगित फल के वृंत में देखी गई हैं। पकने की प्रावस्था के दौरान विलगन क्षेत्र की कोशिकाओं में मध्य पटल (middle lamella) घुल जाती है जिसके फलस्वरूप फल गिर जाता है।

कपास (cotton) में यह दिखाया गया है कि विलगन, एब्सीजिक अम्ल (abscisic acid) तथा जिबरेलिन्स (gibberellins) के द्वारा जल्दी होता है। दूसरी और ऑक्सिन्स फलों के विलगन को रोकते हैं। बीजों द्वारा संश्लेषित होने वाले ऑक्सिन्स फल के विलगन को रोकते हैं। इस क्रियाविधि के कारण अनिषेचित बीजांडों वाले अंडाशयों में गिरने की प्रवृत्ति अधिक होती है, जबकि विकासशील बीजों वाले अंडाशय पके फल में विकसित हो जाते हैं।

9.13 असंगजनन

वे पादप जिनमें सामान्य लैंगिक प्रजनन की क्रिया पूर्णत: अलैंगिक तरीके के प्रजनन के द्वारा प्रतिस्थापित हो जाती है वे असंगजनिक (apomictic) कहलाते हैं। विंकलर (1908) के अनुसार असंगजनन को सामान्य लैंगिक प्रक्रिया का किसी अन्य प्रकार के प्रजनन के द्वारा प्रतिस्थापन से परिभाषित किया जा सकता है जिसमें अर्धसूत्री विभाजन तथा युग्मक-संलयन(syngamy) नहीं होता हो। असंगजनन के दो मुख्य प्रकार हैं।

9.13.1 कायिक प्रजनन (Vegetative Reproduction)

पादप का, बीज के अतिरिक्त किसी अन्य भाग के द्वारा प्रवर्धन, कायिक प्रजनन कहलाता है। उदाहरण के लिए, केसर (saffron) तथा ग्लेडियोलस (gladiolus) में पादप भूमिगत रूपांतरित तने के द्वारा प्रवर्धित होते हैं जो घनकंद/कॉर्म (corm) कहलाता है। बंध्य होने के कारण पादप फल अथवा उर्वर बीज नहीं उत्पन्न करते हैं।

9.13.2 अनिषेकबीजता (Agamospermy)

इस श्रेणी के पादप बीज द्वारा प्रवर्धित होते हैं, परंतु भ्रूण का निर्माण अर्धसूत्री विभाजन तथा युग्मक-संलयन के बिना ही होता है। इसकी तीन प्रकार ज्ञात हैं।

क) अपस्थानिक भ्रूणता **(Adventive embroyony) :** लैंगिक भ्रूणकोष सामान्य रूप से विकसित होते हैं। अनिषेकबीजी भ्रूण बीजांड की द्विगुणित बीजाणुउद्भिदी (sporophytic) कोशिकाओं से यानि कि बीजांडकाय (nucellus) अथवा अध्यावरण (integument) से विकसित होते हैं। युग्मनजी भ्रूण (zygotic embryo) या तो अपभ्रष्ट (degenerate) हो जाते हैं या असंगजनिक भ्रूणों के साथ स्पर्धा करते हैं। *सिट्रस, मैंजीफेरा* (चित्र 9.52) तथा *ओपन्शिया* (*Opuntia*) की कुछ जातियां अपस्थानिक भ्रूणता दर्शाती हैं।

ख) द्विगुणित बीजाणुता **(Diplospory) :** इसमें प्रप्रसूतक (archesporium) बीजांड में विभेदित हो जाता है, परंतु दीर्घबीजाणु मातृ कोशिका में अर्धसूत्री विभाजन नहीं होता है। इसकी बजाय, यह समसूत्री रूप में विभाजित होती है तथा अनअपघटित भ्रूणकोष में विकसित हो जाती है (उदा. *ऐर्वा टोमेन्टोसा* (*Aerva tomentosa*) । भ्रूण अनिषेचित अंड में विभाजनों के द्वारा बनता है (अनिषेकजनन) अथवा भ्रूणकोष की किसी अन्य कोशिका के द्वारा बनता है(अपयुग्मकता (apogamety) ।

ग) अपबीजाणुता **(Apospory) :** बीजांडकाय की कोई कायिक कोशिका दीर्घीकृत हो जाती है और अनअपघटित भ्रूणकोष बनाने के लिए विभाजन करती है। उसका द्विगुणित अंड बिना युग्मक संलयन के ही भ्रूण में विकसित हो जाता है। [उदा. *पोआ* स्पी. (*poa* spp.)]

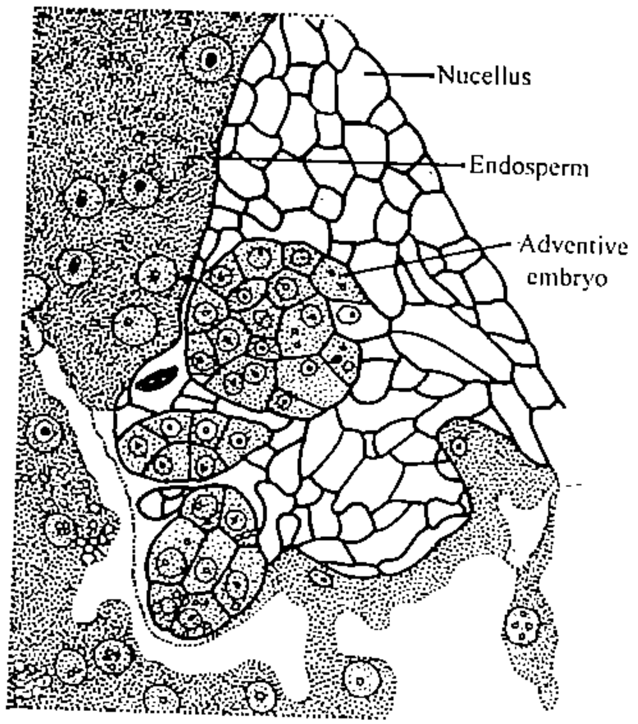

चित्र 9.52: मैंजीफेरा ओडोरेटा (*Mangifera* odorata) बीज की काट का एक भाग बीजांडकायी कोशिकाओं से भ्रूणों के निकलने को दिखाते हुए।

9.13.3 अनिषेकजनन (Parthenogenesis)

युग्मक संलयन के बिना ही अंड का भ्रूण में विकास अनिषेकजनन कहलाता है। द्विगुणबीजाणवी (diplosporous) अथवा अपबीजाणुक (aposporous) भ्रूणकोषों के द्विगुणित अनिषेचित अंड नर युग्मकों की भागीदारी के बिना भ्रूण में विकसित हो सकते हैं। ऐस्टरेसी और रूबिऐसी कुलों के कुछ सदस्यों में असंगजनिक भ्रूण परागण उद्दीपन से मुक्त होता है। हालांकि, बहुत सी अन्य असंगजनिक जातियों में (उदा. *सिट्रस स्पी.*) भ्रूण सिर्फ परागण के बाद विकसित होता है। इस प्रकार की घटना आभासी युग्मन (pseudogamy) कहलाती है। हेसलोप-हैरीसन (1972) के अनुसार आभासी युग्मन में परागण की आवश्यकता होती है: (क) अंडाशय और बीजांड के सक्रियण (activation) के लिए ; ख) भ्रूणपोष (endosperm) के विकास के लिए नर युग्मक की आपूर्ति के लिए तथा ग) अनिषेकजनन को उद्दीपित करने के लिए।

अधिकांश असंगजनिक भ्रूण संकर उत्पत्ति के तथा बहुगुणित होते हैं। असामान्य अर्धसूत्री विभाजन के कारण उनके परागकण अधिकतर बंध्य होते हैं। ऐसे परागकण परागण उद्दीपन प्रदान करने में तो समर्थ होते हैं परंतु युग्मक-संलयन के लिए अगुणित नर युग्मक नहीं प्रदान करते हैं। असंगजनन में विशेषरूप से अनुकूल जीवप्रारूपों (biotype) के अनिश्चित गुणन की संभावना रहती है।

9.13.4 अनिषेकफलन (Parthenocarpy)

फल का विकास उसके भीतर स्थित बीजांडों के निषेचन के बिना ही होना अनिषेकफलन कहलाता है। (निट्श (Nitsch), 1965)। फल के अनिषेकफलन के लिए परागण उद्दीपन की आवश्यकता हो सकती है (उद्दीपक अनिषेकफलन) अथवा यह अपरागित पुष्पों में पाया जा सकता है (कायिक अनिषेकफलन)। खाने योग्य केला, अनॉन्नास तथा अंजीर अनिषेकफलिक फलों के उदाहरण हैं।

तीन प्रकार के अनिषेकफलन पहचाने गए हैं:

अ) **आनुवांशिक अनिषेकफलन (Genetic parthenocarpy) :** इस प्रकार का अनिषेकफलन उत्परिवर्तन (mutation) अथवा संकरण (hybridization) के कारण होता है। उदाहरण के लिए, संतरे (naval orange), सामान्य बीजीय *सिट्रस* किस्म से कक्षीय कलिका (axillary bud) में उत्परिवर्तन के द्वारा विकसित हुआ है जो बीजरहित संतरे धारण करने वाली शाखा में विकसित हो गया।

ब) **पर्यावरणीय अनिषेकफलन (Environmental parthenocarpy) :** निम्न तापमान, तुषार, कुहरा तथा अन्य पर्यावरणीय चरम सीमाऐं सामान्य प्रजनन प्रक्रिया में हस्तक्षेप कर सकती हैं तथा अनिषेकफलन कर सकती हैं। ओसबोर्न तथा वेंट (1953) ने टमाटर में अनिषेकफलन को निम्न तापमान तथा उच्च प्रकाश तीव्रता के द्वारा प्रेरित किया।

स) **रसायन प्रेरित अनिषेकफलन (Chemically induced parthenocarpy) :** निम्न सान्द्रणों में आक्सिन तथा जिबरेलिनों का उपयोग उन पादपों में अनिषेकफलन को प्रेरित करने के लिए किया जाता है जो सामान्य बीज वाले फल धारण करते हैं (बालासुब्राह्मण्यम तथा रंगास्वामी, 1959)। आक्सिनों का उपयोग टमाटर, स्ट्रॉबेरी, कद्दू आदि, अंजीर व अमरूद में अनिषेकफलित फलों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। जिबरैलिक अम्ल का उपयोग सेब, अंगूर, अंजीर, तथा टमाटर में अनिषेकफलीय फलों के विकास को प्रेरित करने के लिए किया जाता है।

अनिषेकफलीय फलों का उद्यान कृषि में बहुत महत्व है क्योंकि बीजरहित फल न सिर्फ ऐसे ही खाने में अधिक सुविधाजनक होते हैं बल्कि फलों के रस तथा जैम उद्योग में भी इनकी बहुत मांग है।

बोध प्रश्न 9

विभिन्न प्रकार के फलों का वर्णन कीजिए और प्रत्येक का कम से कम एक उदाहरण दीजिए।

....

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 10

फल के निर्माण के दौरान अंडाशय में कौन-कौन से परिवर्तन होते हैं?

....

....

....

....

....

....

....

9.14 बीज

निषेचन के पश्चात् बीजांड में अनेकों परिवर्तन होते हैं। निषेचित अंड या युग्मनज भ्रूण को बनाता है जो बीजाणुउद्भिद की अगली पीढ़ी का पूर्वज होता है। केन्द्रीय कोशिका के केन्द्रक द्वितीय नर युग्मक के साथ युग्मित हो जाते हैं (जो उसी पराग नलिका से ही निकलता है) और युग्मन केन्द्रक बनाते हैं जो विभाजित होकर भ्रूणपोष को जन्म देता है। भ्रूणपोष भ्रूण को पोषण प्रदान करता है। बाद की अवस्थाओं में यह सामान्यत: भोजन का संग्रह करता है जिसका उपयोग बीज के अंकुरण के दौरान तरुण नवोद्भिद के पोषण के लिए किया जाता है।

जबकि भ्रूण तथा भ्रूणपोष, भ्रूणकोष के भीतर विकसित होते हैं, स्वयं बीजांड में अनेकों बदलाव आ जाते हैं। बीजांड़काय सामान्यत: अपभृष्ट हो जाता है तथा भ्रूणपोष के विस्तार के लिए रास्ता बनाता है। हालांकि, कुछ पादपों जैसे कि काली मिर्च *पाइपर नाइग्रम* (*Piper nigrum*) में बीजांडकाय परिभ्रूणपोष (perisperm) के रूप में बना रहता है तथा भ्रूणपोष के साथ-साथ पोषण ऊतक के रूप में कार्य करता है। कठोर फलों जैसे कि नारियल, बादाम तथा मूंगफली में बीजावरण (seed coat) पतला और झिल्लीनुमा होता है क्योंकि सुरक्षात्मक भूमिका फलभित्ति द्वारा संपन्न होती है। हालांकि, अधिकांश पादपों में खासतौर पर जिनमें मुलायम और पतली फलभित्ति होती है, बीजांड का एक या दोनों अध्यावरण कठोर बीजावरण बनाते हैं। यदि अध्यावरण निषेचन के पश्चात् कोशिका विभाजनों के कारण मोटे हो जाते हैं तो ये गुणनात्मक (multiplicatives) कहलाते हैं, अन्यथा ये अगुणनात्मक (non multiplicatives) कहलाते हैं(कोर्नर, 1976)। बीजावरण का बाहरी भाग जो बाहरी अध्यावरण द्वारा बनता है वह बीजचोल (testa) कहलाता है, जबकि भीतरी भाग जो भीतरी अध्यावरण द्वारा निर्मित होता है वह टेगमेन/प्रवार (tegmen) कहलाता है।

अत:, वास्तविक बीज दरअसल निषेचित परिपक्व बीजांड होता है जिसमें भ्रूणीय पादप, भ्रूणपोष अथवा परिभ्रूणपोष (तथा स्वयं भ्रूण) में संचित खाद्य भंडार तथा सुरक्षात्मक बीजावरण होता है। कठोर बीजावरण के कारण बीज जल, गैसों तथा रोगाणुओं (pathogens) के लिए अप्रवेश्य (impermeable) हो जाता है। बीज कुछ वर्षों तक के लिए भी भूमि में निष्क्रिय अवस्था में रह सकता है। जल की उपलब्धता तथा मध्यमान तापमान पर बीज नया पादप बनाने के लिए अंकुरित हो जाता है। बहुत से उष्णकटिबंधी वृक्षों में [जैसे कि पारा रबड़, *हेविया ब्राजीलिएन्सिस* (*Hevea brasiliensis*)] बीज में जीवनक्षमता का सिर्फ अल्पकाल होता है, बीज के भीतर का भ्रूण मर जाता है यदि बीज कुछ ही दिनों में अंकुरित नहीं होता है। अन्य बीजों, खासतौर पर शीतोष्ण तथा शुष्क जलवायु में पाए जाने वाले बीजों में सुषुप्तावस्था (dormancy) पाई जाती है जिससे कि अंकुरण प्रतिकूल स्थितियों के दौरान न हो पाए। हालांकि, अधिकांश बीजों में पर्याप्त जीवनक्षम काल होता है और वे तभी अंकुरित होते हैं जब वृद्धि के लिए उपयुक्त स्थितियां उपलब्ध होती हैं।

9.14.1 कूटबीज (Pseudo-seeds)

प्रचलित तौर पर, बीज शब्द का उपयोग छोटे एक-बीजीय अस्फुटित फलों के लिए भी किया जाता है, जैसे कि गेहूँ या जौ का कार्योप्सिस (caryopsis), सूरजमुखी का सिप्सेला (cypsella), धनिया का फलांशक (mericarps) तथा काली मिर्च के सरस फल/बेरी (berries)। इन फलों में फलभित्ति बीजावरण से युग्मित या निकट रूप से संलग्न रहती है। प्याज के बल्ब/कंद (रूपांतरित तना तथा पत्तियां), ग्लेडियोलस का घनकंद, अदरक और हल्दी के प्रकंदों के टुकड़े अथवा आलू के कंदों/ट्यूबर के टुकड़े (सभी रूपांतरित तने) भी बीज कहलाते हैं क्योंकि इनका उपयोग पादप के प्रवर्धन में किया जाता है।

9.15 बीज के प्रकारों में विविधता

पुष्पीय पादपों के बीजों का साइज, आकार, रंग तथा सतह के तंतु विन्यास में बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। आकार/माप में ऑर्किड के धूल के कण जैसे बीज तथा खसखस और सरसों के पिन के शीर्ष जैसे बीजों से लेकर नारियल *कोकोस न्यूसीफेरा* (*Cocos nucifera*) तथा युग्म नारियल (double

coconut), *लोडोइसिया मालडिविका* (*Lodoicea maldivica*) के विशाल बीजों तक हो सकता है। रंग सफेद (खरबूजा) से पीले (सरसों) भूरे (अलसी; linseed) तथा काले (सेपोडिला; sapodilla) तक भिन्न हो सकते हैं। बीज की सतह चिकनी, सिलवटदार, धारीदार, खाँचदार, जालिकामय, रोमिल, गूदे ार (pulpy) या पंखयुक्त हो सकती है।

मटर तथा एंरड/अंडी (castor) के बारे में अधिक विस्तार से पढ़ेंगें जिससे बीज के भागों को समझा जा सके।

9.15.1 मटर (Pea)

मटर की फली में अनेकों बीज दो कतारों में व्यवस्थित रहते हैं। प्रत्येक बीज फलभित्ति से एक छोटे वृंत बीजांड वृंत (funiculus) द्वारा जुड़ा रहता है। परिपक्व होने पर बीजांड वृंत एक दाग/निशान छोड़ते हुए बीज से अलग हो जाता है, ये दाग नाभिका (hilum) कहलाता है। नाभिका के थोड़ा सा नीचे एक छोटा छिद्र होता है, जिसे बीजांडद्वार (micropyle) कहते हैं। बीजावरण को बीजचोल तथा टेगमेन में विभेदित नहीं किया जा सकता है। जब बीजचोल हट जाता है, तो भ्रूण दिखाई पड़ने लगता है क्योंकि परिपक्व फली के बीज में भ्रूणपोष नहीं होता है। भ्रूणीय अक्ष में दो बड़े बीजपत्र होते हैं। भ्रूणीय अक्ष का वह भाग जो बीजपत्रों के आगे तक विस्तारित होता है वह बीजपत्रोपरिक (epicotyl) होता है जिसके शीर्ष पर प्रांकुर (plumule) या भ्रूणीय प्ररोह अक्ष होती है (चित्र 9.53)। अक्ष का अन्य भाग बीजपत्राधर (hypocotyl) होता है जिसके सिरे पर मूलांकुर (radicle) अथवा भ्रूणीय जड़ होती है। मटर में बीजपत्र भोजन संग्रही अंगों की भाँति कार्य करते हैं। बीजावरण की बाहरी बाह्यत्वचीय कोशिकाएं विशिष्ट खंभाकार (palisade shaped) वृहत् द्रढ़क (macrosclerieds) बनाती हैं (चित्र 9.54)। अधोत्वचीय परत हैन्डग्लॉस (hand-glass) के आकार की कोशिकाओं की बनी होती है। बाहरी अध्यावरण की भीतरी कोशिकाएं तथा भीतरी अध्यावरण अपभृष्ट हो जाते हैं।

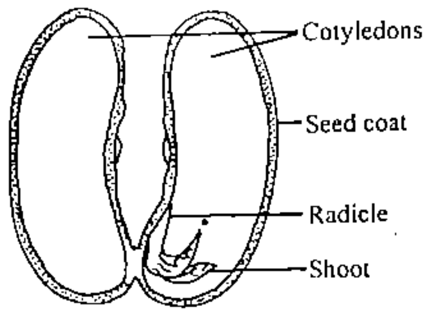

चित्र 9.53 : मटर के बीज का एक भाग।

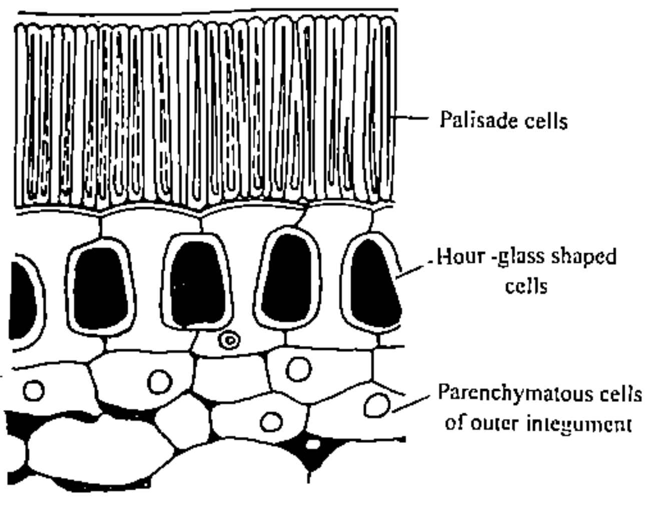

चित्र 9.54 : मटर के बीजावरण की अनुदैर्ध्य काट बाहरी खंभ परत को दिखाते हुए।

9.15.2 एरंड (Castor)

एंरड का बीज सेम के आकार का होता है और उसके शीर्ष पर सफेद कॉलर जैसी संरचना होती है जो बीजचोलक (caruncle) कहलाती है। बीजचोलक बीजचोल की बर्हिवृद्धि होता है। बीजावरण स्वयं बाहरी झिल्लीनुमा बीजचोल में विभेदित होता है, जो बीजांड के बाहरी अध्यावरण से बनता है (चित्र 9.55)। उसके भीतर स्थित टेगमेन कठोर और भंगुर होता है। भीतरी अध्यावरण की बाहरी बाह्यत्वचीय कोशिकाएं खंभ जैसी स्क्लैरीड्स/दृढ़क बनाती है। परिपक्व बीज भ्रूणपोष से भरा होता है, जिसकी कोशिकाओं में तेल तथा प्रोटीन होते हैं। सीधा भ्रूण बीज के एक सिरे से दूसरे सिरे तक विस्तारित रहता है। भ्रूण में मूलांकुर, बीजपत्राधर, दो पत्रीय बीजपत्र तथा एक बीजपत्रोपरिक होता है जो प्रांकुर में जाकर खत्म होता है।

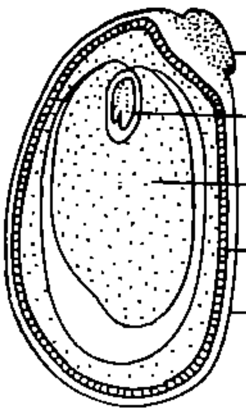

चित्र 9.55 : *रिसीनस कम्यूनिस* (*Ricinus communis*) विकासशील भ्रूण की अनुदैर्घ्य काट बाहरी अध्यावरण द्वारा बने हुए बीजचोलक को दिखाती हुई। टेगमेन की बाहरी बाह्यत्वचा स्कलैरीड्स की खंभ परत बनाती है।

9.16 बीज के उपांग

बहुत से पादपों में परिपक्व होने पर बीज विशेष संरचनाएं विकसित कर लेते हैं जो परिक्षेपण में सहायक होती है। ये संरचनाएं उपांग कहलाती है।

9.16.1 बीजचोलक (Caruncle)

यूफॉर्बिएसी कुल के सदस्यों में बाहरी अध्यावरण के फूले हुए शीर्ष से बीजांडद्वार को घेरे हुए एक सफेद माँसल कॉलर जैसी बर्हिवृद्धि विकसित होती है (उदा. एरंड, चित्र 9.55)। मांड तथा शर्करा से समृद्ध होने के कारण, यह चीटों द्वारा खाई जाती है जो बीज के परिक्षेपण में सहायक होते हैं।

9.16.2 बीजचोल (Aril)

बीजचोल टेस्टा या बीजांडवृंत से उगता है तथा आंशिक रूप से बीज को घेर लेता है (उदा. *पिथीकोलोबियम डल्से* (*Pithecellobium dulce*) अथवा पूर्णरूप से घेर लेता है (*लीची चाइनेन्सिस* (*Litchi chinensis*)। *क्रॉसोसोमा कैलीफोर्निकम* (*Crossosoma californicum*) (चित्र 9.56 a) में बीजचोल बीज को घेरे हुए एक झालरदार बर्हिवृद्धि होती है। बीजचोल का अक्सर आकर्षक नारंगी या लाल रंग होता है (जैसे जायफल में) तथा यह शर्करा और तेल से समृद्ध होता है। यह चिड़ियों को आकर्षित करता है जो बीजचोल को खा जाती हैं तथा बीज को छोड़ देती हैं; जिससे उसका प्रभावी रूप से परिक्षेपण हो जाता है।

9.16.3 रोम (Hairs)

कपास तथा सेमल/सिल्क कॉटन के बीजों में पूरी सतह बाह्यत्वचीय रोमों से ढंकी रहती है। ऐपोसाएनेसी कुल के सदस्य, जैसे कि कनेर (oleander) में बीजों के दोनों सिरों पर रोम होते हैं। दूसरी ओर,

मिल्कवीड कुल एस्कलेपिएडेसी के सदस्यों [उदा. *कैलोट्रोपिस प्रोसेरा* चित्र 9.45 a) में रोम बीज के एक सिरे पर स्थित होते हैं। रेशमी सफेद बालों से बीज हल्का और उत्प्लावी (buoyant) हो जाता है जिससे कि वह लंबी दूरियों तक वायु द्वारा चला जाता है।

9.16.4 पंख (Wings)

कुछ पौधों जैसे *औरोजाइलोन* (*Oroxylon*) (चित्र 9.56 b) तथा *टेकोमा* (*Tecoma*) जातियां पंखो के रूप में उपांग विकसित कर लेती हैं। ये बीजवरण की बहिर्वृद्धियां होती हैं। पंखयुक्त बीज वायु द्वारा लंबी दूरियों तक परिक्षेपित हो जाते हैं।

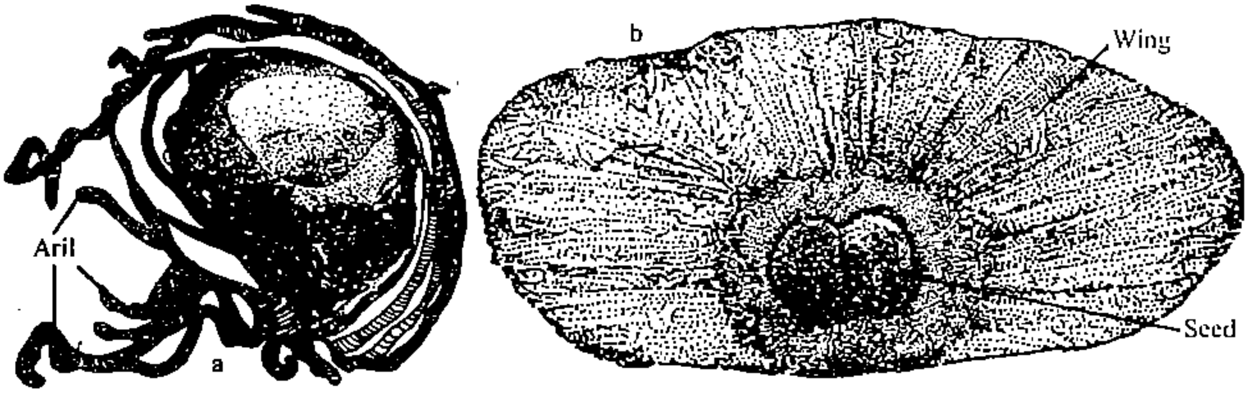

चित्र 9.56 : a) *क्रॉसोसोमा* का बीज झालरदार बीजचोल युक्त b) *औरोजाइलोन* का पंखयुक्त बीज।

बोध प्रश्न 11

रिक्त स्थानों को भरिए :

क) केसर .... के द्वारा प्रवर्धित की जाती है।

ख) अर्धसूत्री विभाजन तथा युग्मक संलयन के बिना प्रजनन .... कहलाता है।

ग) अनिषेकजनन में अंड से भ्रूण का निर्माण .... के बिना होता है।

घ) खाद्य केला में .... फल होता है।

ड.) बीजचोलक .... की बहिर्वृद्धि होता है।

च) जायफल के बीज आकर्षक .... से घिरा रहता है।

9.17 सारांश

- कायिक वृद्धि के काल के बाद तथा अक्सर कुछ जलवायवी परिस्थितियों के तहत, तने का शीर्ष रूपांतरित होकर पुष्प या पुष्पक्रम बनाता है। प्रजननकारी शीर्ष में मृदूतकी क्रोड/कोर होती है जो विभज्योतकी कोशिकाओं के मैंटल द्वारा घिरी रहती है। पुष्पीय भाग अथवा सहपत्र कक्षीय शाखाएं तथा पुष्पक्रम के होने पर पुष्प, इन विभज्योतकी कोशिकाओं से विकसित होते हैं। बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप अग्राभिसारी क्रम में ट्यूनिका की दूसरी/तीसरी परत में परिनतिक विभाजनों के द्वारा विकसित होते हैं।

- पुष्प निर्धारित प्ररोह को प्रदर्शित करते हैं। उपांग (बाह्यदल, दल, पुंकेसर तथा अंडप) रूपांतरित पत्तियों को प्रदर्शित करते हैं। प्राचीन पुंकेसर पत्ती-जैसे होते हैं तथा दो सतही बीजाणुधानियां धारण किए रहते हैं। वे पतले तंतु तथा अंतस्थ स्थित परागकोष (जिनमें परागकण होते हैं) वाले पुंकेसरों

में विकसित हो गए है। प्राचीन आवृतबीजी पादपों के पत्ती जैसे अंडप समंतर्वलित रूप से मुड़ गए तथा उन्होंने अंडाशय (बीजांडों को घेरे हुए), वर्तिका तथा वर्तिकाग्र युक्त अंडपों को जन्म दिया।

- पुष्प परागण की क्रियाविधि के संबन्ध में काफी विविधता दर्शाते हैं। वायु-परागित पुष्पों में तनुकृत बाह्यदल तथा दल होते हैं तथा जंतु परागित पुष्पों में बड़े, उत्कृष्ट तथा अक्सर सुगंधयुक्त परिदलपुंज होते हैं।

- परागण तथा निषेचन के पश्चात् बीजांड बीजों में परिवर्तित हो जाते हैं। निषेचित अंड भ्रूण को बनाता है। भ्रूणकोष की केन्द्रीय कोशिका के उद्दीपन, तत्पश्चात् द्वितीय नर युग्मक के साथ युग्मन से, पोषण ऊतक भ्रूणपोष बनता है। बीजांडकाय सामान्यत: नष्ट हो जाता है, पर कभी-कभी यह परिभ्रूणपोष बनाने के लिए बना रहता है। एक या दोनों अध्यावरण कठोर बीजावरण बना सकते हैं। बीज में अक्सर बीज के प्रभावी परिक्षेपण के लिए बीजचोल, बीजचोलक, पंख या रोम जैसे उपांग होते हैं।

- अंडप जो बीज (बीजों) को घेरे रहते हैं उनमें फल बनाने के लिए दीर्घीकरण तथा रूपांतरण हो जाता है। फल बीजों को तब तक संरक्षित रखता है जब तक कि वे परिपक्व नहीं हो जाते हैं तथा उचित अवस्था आने पर उनके मुक्त होने और परिक्षेपण में सहायता करता है। फलों को उनके संयोजन, तंतु विन्यास तथा परिक्षेपण की क्रिया विधि के आधार पर विभाजित किया जाता है।

- प्रजनन की प्रक्रिया में काफी दिलचस्पी ली जा रही है जिसको नियंत्रित करके मानव कल्याण के लिए उपयोग किया जा सकता है। फल के गिरने को एब्सीजिक अम्ल अथवा जिबरैलिनों के द्वारा त्वरित किया जा सकता है तथा ऑक्सिनों के द्वारा इन्हें देर तक पेड़ पर रखा जा सकता है। असंगजनन में अर्धसूत्री विभाजन तथा युग्मक संलयन के बिना ही प्रजनन संपन्न होता है। उदाहरण के लिए *सिट्रस* और *मैंजीफेरा* में बीजांडकाय अध्यावरण की द्विगुणित कायिक कोशिकाएं बीज में असंगजनिक भ्रूण बनाती हैं जो आनुवांशिक रूप से जनक पादप के समान होती है। फल के भीतर बीजों के निर्माण के बिना ही उसके विकास को अनिषेकफलन कहते हैं। केला (खाने वाला) तथा अनॉन्नास अनिषेकफलित फलों के उदाहरण हैं।

9.18 अंत में कुछ प्रश्न

1. एक प्रारूपिक पुष्प के भागों का वर्णन कीजिए और उनके कार्यों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

2. कायिक प्ररोह शीर्ष में कौन से बदलाव आते हैं जब वह पुष्पीय अक्ष में परिवर्तित होता है?

....

....

....

....

3. बताइए कि किस प्रकार पुष्पीय अंग बनाना आरंभ होते हैं और किस प्रकार आद्यक (primordia) स्पष्ट बाह्यदलों, दलों, पुंकेसरों तथा अंडपों को बनाता है।

4. पुष्प एक निर्धारित प्ररोह होता है। समझाइए।

5. वे कौन से कारक हैं जो फल बनाने के लिए अंडाशय का सक्रियण करते हैं।

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

i. अंडप का जातिवृत्त

ii. पुंकेसर की आकारिकीय प्रकृति

....

....

....

....

....

....

iii. फल का गिरना

....

....

....

....

....

....

iv. अपस्थानिक बहुभ्रूणता

....

....

....

....

....

....

v. अनिषेकजनन

....

....

....

....

....

....

vi. अनिषेकफलन

....

....

....

....

....

....

vii. बीज के उपांग

....

....

....

....

....

....

viii. कूट बीज

....

....

....

....

....

....

9.18 उत्तर

बोध प्रश्न

1. पुष्प एक निर्धारी प्ररोह को प्रदर्शित करता है जिसमें पर्व छोटे हो जाते हैं अथवा विलुप्त हो जाते हैं। पर्वसंधियों पर बंध्य (बाह्यदल तथा दल) तथा उर्वर (पुंकेसर तथा अंडप) उपांग उगते हैं जो रूपांतरित पत्तियों को प्रदर्शित करते हैं। अनावृतबीजी शंकुओं में केन्द्रीय अक्ष होती है जिसमें सर्पिल रूप से व्यवस्थित बीजाणुपर्ण होते हैं। नर शंकु में लघुबीजाणुपर्ण होते हैं जिनमें लघुबीजाणुधानियां अपाक्ष सतह पर होती हैं। मादा शंकु में दीर्घबीजाणुपर्ण होते हैं जिनमें नग्न बीजांड अभ्यक्ष सतह पर होते हैं।

2. 1-ग; 2-क; 3-ख; 4-ङ; 5-घ।

3. देखिए उपभग 9.2।

4. 1-छ; 2-घ; 3-ज; 4-झ; 5-ण; 6-क; 7-ख; 8-ग; 9-ङ; 10-च।

5. 1. सहज संयोजन
   2. दललग्न
   3. पृष्ठीय, अधरीय अघर
   4. मकरंद
   5. बीजांडासन

6. देखिए सेक्शन 9.6, चित्र 9.27

7. देखिए सेक्शन 9.9

8. क) स ख) अ ग) स घ) अ ड.) स च) स
   छ) अ

9. देखिए सेक्शन 9.10

10. देखिए सेक्शन 9.11

11. क घनकंद
    ख असंगजनन
    ग युग्मक संलयन
    घ अनिषेकफलित
    ड. बाहरी अध्यावरण
    च बीजचोल

अंत में कुछ प्रश्न

1. देखिए सेक्शन 9.2
2. देखिए सेक्शन 9.3
3. देखिए सेक्शन 9.4
4. देखिए सेक्शन 9.5
5. देखिए सेक्शन 9.11
6. i) देखिए सेक्शन 9.9
   ii) देखिए सेक्शन 9.2.3
   iii) देखिए सेक्शन 9.12
   iv) देखिए सेक्शन 9.13.2
   v) देखिए सेक्शन 9.13.4
   vi) देखिए सेक्शन 9.13.5
   vii) देखिए सेक्शन 9.16
   viii) देखिए सेक्शन 9.14.1

इकाई 10 परागण जीवविज्ञान

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
10.2 परागण का पुनरावलोकन
10.3 पुष्पी नियन्त्रण तथा सन्तुलन
10.3.1 अनचाहे पुष्प-अतिथियों के लिए रुकावटें
10.3.2 परागणकारियों के आकर्षी
10.3.3 परागणकारियों को पारितोषिक
10.4 विशिष्ट परागणकारी और उनका आचरण
10.4.1 मधुमक्खियां
10.4.2 बर्र
10.4.3 भौंरे
10.4.4 पक्षी
10.4.5 मोलस्क
10.4.6 चमगादड़
10.4.7 शलभ और तितलियां
10.5 पुष्प-परागणकारी सहविकास
10.6 वैध परागणकारी और अवैध पुष्प-अतिथि
10.7 पुष्प अतिथियों को छलावा
10.8 सारांश
10.9 अंत में कुछ प्रश्न
10.10 उत्तर

10.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आपको पुष्पी पादपों में परागण के रोचक विषय के बारे में बताएंगे, जिसमें हमेशा तो नहीं, मगर प्रायः पादप और जंतु/कीट के बीच कुछ अन्योन्य क्रिया होती है। एल.एस.ई.-06 पाठ्यक्रम के खंड-1 की इकाई 3 को पढ़ने के बाद आप परागण के बारे में यह जानते ही होंगे कि यह कैसे होता है और परागण के कारक या वाहक कौन हैं। इस इकाई में आप परागण जीवविज्ञान के कुछ और पहलुओं का अध्ययन करेंगे जैसे कि विविध परागणकारी जंतु, उनका आचरण और पादपों के लिए उनमें अनुकूलन। परागण के संदर्भ में आपको छल-कपट, चोरी और डकैती के कुछ आश्चर्यजनक उदाहरण भी जानने को मिलेंगे जिन्हें कीट परागणकारी अपनाते हैं। आप यह भी देखेंगे कि किस तरह विकासात्मक इतिहास के दौरान कुछ पादपों ने कीटों को छलने की कला सीख ली है ताकि वे उनसे परागण सेवा ले सकें।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- परागण के अर्थ का पुनरावलोकन कर सकें, इसके महत्त्व को समझा सकें और परागण के विभिन्न वाहकों को सूचीबद्ध कर सकें,
- उन चंद युक्तियों की सूची बना सकें, जिनके जरिए पादप परपरागण सुनिश्चित करते हैं और स्वपरागण से बचते या उसे कम से कम करते हैं,
- उन पारितोषिकों और लोभों के बारे में सोदाहरण बता सकें जिनसे पादप अपने परागणकारियों को लुभाते हैं,

- अवांछित जंतुओं/कीटों को आने से रोकने के लिए पादप जिन युक्तियों या रुकावटों का सहारा लेते हैं उनके उदाहरण बता पाएं,
- कुछ विशेष पुष्पों के संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक लक्षणों का, तथा उनके परागणकारियों के बीच सहसंबंध बता सकें, और
- पादपों और उनके परागणकारियों के सहविकास के कुछ उदाहरणों के बारे में बता सकें।

10.2 परागण का पुनरावलोकन

पादपों में, नर जननांग से पराग का मादा जननांगों में अंतरण ही परागण है। कोई पुष्प सिर्फ तभी जीवनक्षम बीजों के रूप में संतति को जन्म देता है जब उसी जाति का पराग उसके वर्तिकाग्र में प्रफुल्लन के समय ही जमा हो। इस प्रक्रिया के समापन पर परागण पूर्ण होता है। पराग के स्रोत के आधार पर दो प्रकार के परागण देखने में आ सकते हैं। 1) **स्वपरागण** में परागकोष से पराग का अंतरण उसी पुष्प या उसी पौधे के किसी दूसरे पुष्प के वर्तिकाग्र में होता है। 2) **परपरागण** एक पुष्प से पराग का उसी जाति के दूसरे पादप के पुष्प के वर्तिकाग्र में अंतरण है।

कई जातियों में नियमित रूप से स्वपरागण होता है। यह प्रायः पुष्प के पूर्ण रूप से खुलने से पहले या फिर परिपक्व पुंकेसरों के बीच ग्राही वर्तिकाग्र की वृद्धि से होता है। अन्य जातियों में ऐसे संरचनात्मक तथा प्रकार्यात्मक रूपांतर होते हैं जो स्वपरागण को रोकते हैं या उसकी संभावना को कम कर देते हैं। ऐसे कुछेक रूपांतरों के बारे में जानकारी हम आगे देंगे। स्वपरागण की तुलना में परपरागण के कई लाभ हैं। परपरागण जीनप्ररूपों के मिश्रण को बढ़ाता है, जिससे नवीन आनुवांशिक संयोजनों की संभावना बढ़ जाती है। फलतः जीनकोश समृद्ध होता है। यह समृद्ध जीनकोश वातावरण में होने वाले किसी भी प्रकार के परिवर्तनों का लाभ उठाने या नवीन तनावों का सामना करने में पादप समष्टियों को सक्षम बनाता है।

एल.एस.ई.-06 पाठ्यक्रम की इकाई-3 के अध्ययन से आपको याद होगा कि कुछ पादप जातियां विशेष युक्तियों के जरिए परपरागण को सुनिश्चित करती हैं। इनमें एक स्वबंध्यता **(self-sterility)** है। एक अन्य युक्ति में पुमंग और जायांग एक ही समय पर परिपक्व नहीं होते। इस परिघटना को **भिन्नकालपक्वता (dichogamy)** कहते हैं। **स्त्रीपूर्वी (protogynous)** पुष्पों में स्त्रीकेसर (pistil) पहले परिपक्व होते हैं और पुंकेसर उनके बाद। **पुमंगपूर्वी (protandrous)** पुष्पों में स्त्रीकेसर से पहले पुंकेसर परिपक्व हो जाते हैं। *प्रिम्यूला (Primula)* की कुछ जातियों में परपरागण **विषम वर्तिकात्व (heterostyly)** के कारण संपन्न होता है। इन जातियों में कुछ पादपों के पुष्प लंबे स्त्रीकेसर और लघु पुंकेसर युक्त होते हैं तो अन्य में पुंकेसर लंबे और स्त्रीकेसर लघु पाए जाते हैं। परपरागण को सुनिश्चित करने की एक अन्य विधि लिंग पृथकलैंगिकता **(dicliny)** है। इसका यह मतलब है कि पादपों में पृथक नर और पृथक मादा पुष्प या तो एक ही पौधे में या अलग-अलग पौधों में पाए जाते हैं। इन्हें क्रमशः **उभयलिंगाश्रयी (monoecious)** और **एकलिंगाश्रयी (dioecious)** कहा जाता है। स्वपरागण रोकने की ये सब कारगर युक्तियां हैं।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :

i) परागण में मुख्य वाहकों के नाम बताइए।

....

....

....

ii) परागण का क्या परिणाम होता है?

....

....

....

iii) परागण क्या पुष्प विकास के किसी भी चरण पर संपन्न हो सकता है? विवेचन कीजिए।

....

....

....

iv) परपरागण पादपों के लिए क्यों लाभप्रद माना जाता है?

....

....

....

v) पादपों में परपरागण को बढ़ावा देने वाली सामान्य युक्तियों के नाम बताइए।

....

....

....

10.3 पुष्पी नियन्त्रण तथा सन्तुलन

परागण सजीव और निर्जीव दोनों ही प्रकार के वाहकों के द्वारा होता है। सजीव वाहकों में शामिल हैं मधुमक्खियां, भृंग, तितलियां, विभिन्न प्रकार के कीट, पक्षी, मोलस्क और स्तनधारी। निर्जीव वाहक हैं वायु और जल। परागण वाहक के प्रकार के अनुसार विभिन्न पुष्पों में भिन्न-भिन्न संरचनात्मक अनुकूलनों का विकास हुआ है।

इस इकाई में हम मुख्यतः सजीव वाहकों पर ही ध्यान केन्द्रित करेंगे। निर्जीव वाहकों से होने वाले परागण के विशेष लक्षणों के लिए आप एल.एस.ई.-6 पाठ्यक्रम की इकाई-3 के अनुभाग 3.2 को पढ़ सकते हैं। पादपों और उनके जंतु-परागणकारियों के बीच भिन्न-भिन्न प्रकार का संबंध होता है। कुछ आवृतबीजी पादपों में परागण तरह-तरह के कीट करते हैं तो कुछ कीट कई तरह के पादपों को परागित करते हैं। यह एक अदृढ़ संबंध को दर्शाता है। अन्य मामलों में यह संबंध घनिष्ठ होता है जिसकी चरम स्थिति में एक पादप जाति को एक विशेष जंतु जाति ही परागित करती है। यह जंतु जाति उस पादप पर पूर्ण रूपेण आश्रित रहती है और यह अन्य किसी पादप जाति के पास नहीं जाती है। सजीव वाहकों द्वारा परागित पादपों में कुछ विशेष लक्षण पाए जाते हैं। इनके दलपुंज या परिदलपुंज रंग-बिरंगे होते हैं और यह एक मीठा तरल पैदा करते हैं जिसे मकरंद कहते हैं। ये कुछ विशेष किस्म के वाष्पशील यौगिक भी बनाते हैं जिनकी गंध विशिष्ट और अक्सर अनूठी होती है। ये विशेषताएं परागणकारियों को आकर्षित करने का साधन है।

ऐसा माना जाता है कि आदिम आवृतबीजी पादपों का परागण भृंगों द्वारा होता था जो इस प्रक्रिया के दौरान, पुष्पों के परिदलपुंज चबाकर खा जाते थे। इन आदिम पादप कुलों के कई पादपों का परागण अभी भी इसी तरह से होता है जैसे मैग्नोलिएसी और निम्फिएसी। इन सदस्यों में मकरंद का उत्पादन नगण्य या नहीं

होता है। मकरंद चूषक जैसे मधुमक्खियां,मक्खियां और तितलियों का विकास मकरंद-निर्माता पादपों के विकास के पश्चात् ही हुआ। पक्षियों और चमगादड़ों द्वारा होने वाला परागण भी भृंग परागण से नया है क्योंकि इसमें मुख्य आकर्षी मकरंद ही है।

मकरंद के अलावा भी विभिन्न आवृतबीजियों में परागणकारी आकर्षण के अन्य साधन भी हैं जैसे सुगंध और रेजिन (resin), दृश्य-पैटर्न (visual patterns) और वर्णकन (pigmentation), तथा पराग संलगन (pollen attachment) या अनुकरण (imitation) ।

पुष्पी पादपों के एक बड़े हिस्से में परागण, कीटों द्वारा होता है। जिनमें मुख्य हैं मधुमक्खियां, बर्र, तितलियां और शलभ। कुछ पुष्पों पर भृंगु, मक्खियां और अन्य किस्म के कीट भी आते हैं। आपने देखा होगा कि कीट-परागित पुष्प प्रायः चटक रंग और/या सुगंधित होते हैं। इनका पराग काफी भारी या चिपकू होता, है जिसे हवा असानी से उड़ा नहीं पाती है। अनेक कीट-परागित पुष्पों में मकरंद-कोश पाया जाता है। ये विशेष प्रयोजन के लिए रूपांतरित अंग या ऊतक हैं जो मकरंद का स्राव करते हैं। कुछ कीट परागित पुष्पों की पंखुड़ियों पर ऐसे पैटर्न होते हैं, जिन्हें हमारी आंखें तो देख नहीं पातीं मगर कीटों की आंखें देख लेती हैं क्योंकि कीटों के नेत्र पराबैंगनी किरणों के प्रति संवेदी होती हैं। इन पैटर्नों को हम पराबैंगनी संवेदी फिल्मों या पराबैंगनी-प्रेषी लेंसों से सज्जित वीडियो कैमरे की मदद से फ़ोटो में उतार सकते हैं। यह इसलिए कि साधारण कांच पराबैंगनी किरणों को रोक देता है, इसलिए साधारण लेंस इस काम के लिए उपयुक्त नहीं होते।

मकरंद एक मीठा तरल द्रव्य है जिसमें मुख्यत: शर्करा होती है। यही वह कच्चा माल है जिससे मधुमक्खियां मधु या शहद का निर्माण करती हैं। संरचना और अवस्थिति में मकरंद-कोषों में काफी विविधता पायी जाती है। ये पुष्प के किसी भी भाग से संबद्ध हो सकते हैं। मकरंद का स्राव, धानी (पुष्पासन) की सतह पृष्ठ, परिदलपुंज के दलपुट, दलपुंज के रोमों या अंडाशय से होता है। कई पुष्पों में मकरंद कोष अंडाशय के आधार को घेरे एक वलय के रूप में होते हैं। कुछ पादपों में मकरंद कोषों का विकास रूपांतरित या लघुकृत पुंकेसरों या पंखुड़ियों से होता है।

एक विशेष वाहक द्वारा परागण के लिए विशिष्टतया अनुकूलित पुष्प संरचना के अनेक उदाहरण मौजूद हैं (देखिए तालिका 10.1; चित्र 10.1 और 10.2)। मधुमक्खी द्वारा परागित पुष्पों में प्रायः पंखुड़ियां होती हैं जो मधुमक्खियों के लिए अवतरण स्थल का काम करती हैं, जहां मधुमक्खियां उतरती हैं। ये पुष्प एक नलिकाकार दलपुंज के आधार पर स्थित ग्रंथियों से मकरंद का स्राव करते हैं। मधुमक्खी अपनी लंबी और पतली जीभ से मकरंद की खोज करती है, तो उसके शरीर के रोमों पर पुष्प के पुंकेसरों से पराग चिपक जाते हैं। मधुमक्खियाँ प्रायः एक समय पर, एक ही जाति के पुष्प से मकरंद चूसती हैं और इस तरह उसके पराग को उसी जाति के अन्य पुष्पों तक पहुंचाती हैं। मधुमक्खी द्वारा परागित पुष्पों में पुंकेसर और स्त्रीकेसर एक साथ पाए जाते हैं। इससे मधुमक्खियां आसानी से एक पुष्प से प्रचुर संख्या में पराग बटोर लेती हैं और उन्हें निषेचन के लिए अन्य पुष्पों तक पहुंचाती हैं। चित्र 10.1 में मधुमक्खी-परागित पादप *सैल्विया प्रैटेन्सिस* में परागण को दर्शाया गया है।

तालिका 10.1 : कुछ आम परागणकारियों से संबंद्ध पुष्पी विशेष लषण।

पुष्पी विशेषक	परागणकारी				
	मधुमक्खियां	तितलियां	शलभ	पक्षी	चमगादड़
आकार	बड़ा	छोटा	छोटा	लंबा	बड़ा
आकृति (सममिति)	द्विपार्श्वी	नलिकाकार	धारीदार या पालिदार	नलिकाकार	कटोरे या बीकर का आकार
रंग	पीला, सफेद, नीला	लाल, सफेद, नीला	फीका या सफेद	लाल या तीखे रंग	बादामी या सफेद
सुगंध	ताज़ा, हल्की	ताज़ा, हल्की	मीठी, तीखी	शून्य	मत्स्य, तीखी
विवृत्त पुष्प में मकरंद	हां	हां	हां	हां	नहीं
मकरंद उत्पादन का समय	दिन	दिन	रात	दिन	रात

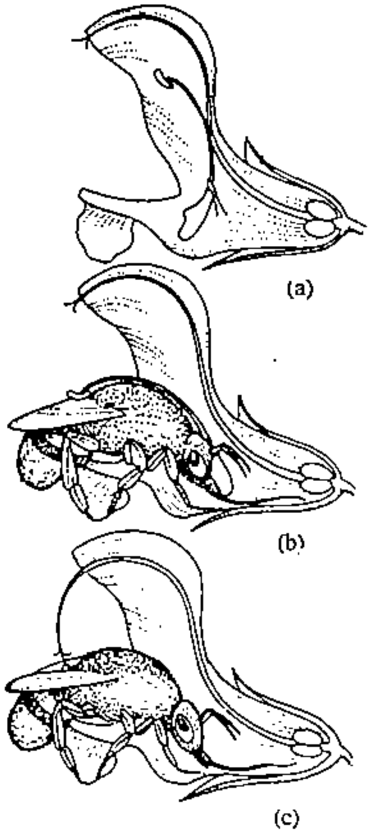

चित्र 10.1 : *सैल्विया प्रैटेन्सिस* में परागण। *सैल्विया* का पुष्प जब पहली बार खुलता है, तो व्यावहारिक रूप से यह एक नर पुष्प ही होता है क्योंकि इसका पराग तो परिपक्व हो चुका होता है मगर वर्तिकाग्र अग्राही और अपरिपक्व ही रहता है। मकरंद की तलाश करता भौंरा पुष्प पर चढ़ता है तो वह एक धुराग्र क्रियाविधि को सक्रिय कर देता है (देखिए a और b) जिसके फलस्वरूप पराग से भरा परागकोश इसके पृष्ठभाग को छूने लगता है। भौंरे के पुष्प से उड़ते ही, पुंकेसर अपनी मूल स्थिति में लौट आता है। जायांग के परिपक्व होने पर वर्तिकाग्र ग्राही वन जाती है और यह पुष्प अव मादा पुष्प वन जाता है। इस पुष्प पर जब कोई भौंरा आता है, तो वर्तिकाग्र उसके पृष्ठ पर मौजूद दूसरे पुष्प के पराग को छू जाता है (c), जिससे परागण हो जाता है।

तालिका 10.2 में ऐसे कुछ पुष्प लक्षणों, जो प्राय: साधारण प्रकार के परागणकारियों से संबद्ध हैं, की तुलना की गयी है।

तितली, शलभ, मधुमक्खी और बर्र के मुखांग मकरंद को चूसने के लिए विशेषरूप से रूपांतरित होते हैं। मधुमक्खी के मामले में ये मुखांग पराग को गूंथने के लिए अनुकूलित रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि विकास के दौरान मकरंद का उत्तरोत्तर होता गया।

पुष्पों को मोटे तौर पर तीन वर्गों में बांटा जा सकता है: 1) पराग के लिए जिन पर परागणकारी आते हैं; (2) मकरंद के लिए; और (3) पराग और मकरंद दोनों के लिए जिन पर परगणकारी वाहक आते हैं। *कैसिया* जाति के फूल मधुमक्खियों को आकर्षित करने के लिए प्रचुर मात्रा में पराग उत्पन्न करते हैं। पर इनमें प्राय: मकरंद नहीं होता। *ऐपिएसी* (अम्बेलिफेरी) और *यूफोर्बिया* के पुष्पों में मकरंद कीटों के लिए मुख्य आकर्षण है। यह मकरंद मुक्त रूप से अनावृत रहता है और लघु जिह्वा वाले कीटों जैसे मक्खी और भृंग को सुलभ रहता है। मकरंद शल्कों से अंशत: छिपा भी रहता है जैसे *रैननक्यूलस* में। कुछ वर्गों में यह रोमों या एक लघु परिदलपुंज-नलिका से अंशत: छिपा रहता है और सिर्फ ऐसे कीटों को ही यह सुलभ हो पाता है जिनकी जीभ लगभग 3 मि.मी. लंबी होती है। *रिसिनस* और *थेवेशिया* का मकरंद पूर्णत: छिपा

तालिका 10.2 : परागणकारी वाहकों के अनुसार पादप अनुकूलन।

परागणकारी वाहक	परागित पुष्प	पुष्पों में विशेष अनुकूलन/लक्षण, और उनका वितरण
मधुमक्खी	ऑर्किड, पुदीना, *वर्बिना*	मकरंद; चटक, भड़कीली, नीली या पीली पंखुड़ियां; अक्सर रात में जब मधुमक्खियां नहीं उड़तीं यह बंद रहती हैं; पुंकेसर और स्त्रीकेसर एक समूह में।
शलभ	*निकोटियाना टैबकम, यक्का, फ्लॉक्स, इनीथीरा, कैरिका पपाया*	मकरंद; तीखी सुगंध, संध्याकाल और रात में खुलते हैं जब शलभ उड़ते हैं; सामान्यतया ऊष्णकटिबंधीय प्रदेशों में।
तितलियां	*फुक्सिया*, गेंदा	प्रायः लाल या संतरी, दिन के समय खुलते हैं।
मक्खियां	कुमुदिनी, एरॉइड, *ऐरिस्टोलोकिया* (चित्र 10.2 देखिए)	फीका रंग; गोबर सड़ांध या खाद की गंध जिनपर मक्खियां आती हैं; साधारणतया उत्तरध्रुव और उष्णतंगुता प्रदेशों में।
भृंग	*मैग्नोलिया, रोज़ा, एशशोलज़िया*	चटपटी, फलीय या मीठी गंध; उष्णकटिबंध प्रदेशों में बहुतायत में पाये जाते हैं; अंतर्हित बीजांड।
पक्षी	*यूकेलिप्टस, हाइबिसकस, पैसीफ्लोरा*	प्रायः लाल या पील रंग के मगर गंधहीन; उष्णकटिबंधी और मगर शीतोष्ण प्रदेशों में; पंखुड़िया अक्सर मकरंदधारी नलिका में विलय रहती हैं।
चमगादड़	*किजेलिया*, तूर्य-लताएं	रात में खुलते हैं; बड़े, अक्सर सफेद, किण्वन या फलीय गंध।
वायु	तिलौंज, घासें, अनाज, पाइन	मुक्त रूप से उघड़े पुंकेसर और स्त्रीकेसर; पंखुड़ियां अक्सर नहीं होती; मकरंद, गंध, चटक रंग अनुपस्थित; वर्तिकाग्र पंखदार, ब्रशनुमा या मांसल; पृथक नर और मादा पुष्प; शीत शीतोष्ण एवं उत्तरध्रुव प्रदेश में।

रहता है, जिससे इसको वही कीट चूस पाते हैं, जिनकी जीभ लगभग 6 मि.मी. से लंबी होती है। यह संगोपन प्रायः एक लंबी दलपुंज-नलिका के जरिए होता है तो कभी दलपुट निर्माण से। असाधारण रूप से लंबी दलपुंज-नलिका या मकरंद-दलपुट का एकमात्र उदाहरण मैडागास्कर ऑर्किड, *एंग्रीकम सेस्क्विपिडेल* है, जिसमें इसकी लंबाई 25-30 से.मी. तक होती है। सिर्फ *जैन्टोपैन मोर्गेनाइ* नामक शलभ ही इसमें छिपे मकरंद का रसपान कर सकता है।

ऐरिस्टोलोकिया एलिगैंस में स्त्रीपूर्वी पुष्प पाए जाते हैं जिनके परिदलपुंज पर भूरे या क्रीम रंग के चिन्ह विद्यमान रहते हैं (चित्र 10.2 a)। अपनी विशिष्ट गंध से यह मक्खियों को आकर्षित करता है। इसमें जायांग पहले परिपक्व होता है और इसे मक्खियां परागित करती हैं जो कि दूसरे पुष्प से पराग लेकर,इस पर आती हैं। मक्खियां परिदलपुंज कीप में प्रवेश कर जाती हैं। अंदर पहुंचने के बाद वे तभी बाहर निकल पाती हैं जब तक कीप पर उगे रोम नष्ट नहीं हो जाते और तब तक पुंकेसर अपना पराग छोड़ चुके होते हैं। इसी पराग को पुष्प में कैद मक्खियां बाद में अन्य पुष्प तक पहुंचाती हैं।

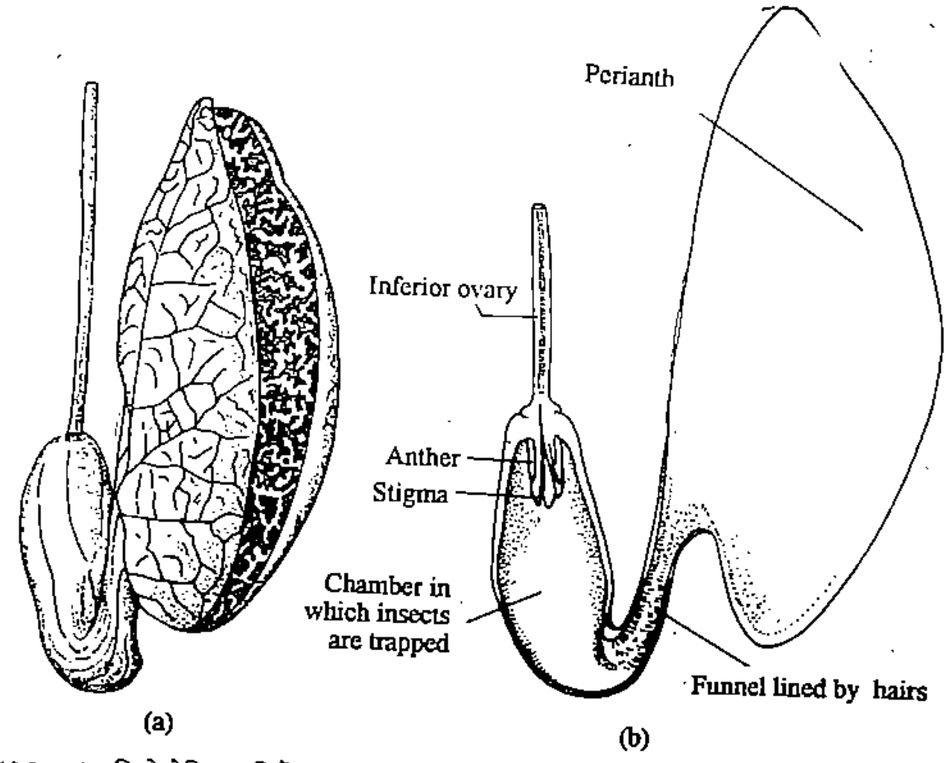

चित्र 10.2 : a) *एरिस्टोलोकिया एलिगैंस* का पुष्प। b) इसी पुष्प का अर्धभाग जो संरचनात्मक विशेषताएं दर्शाता है जिनसे परागण सुनिश्चित होता है।

10.3.1 अनचाहे पुष्प-अतिथियों के लिए रुकावटें

विकास के दौरान, अनामंत्रित अतिथियों को रोकने के लिए कई पुष्पी पादपों ने नाना प्रकार के शारीरिक, रासायनिक और जैविक प्रकृति के अवरोधों का विकास कर लिया।

1. शारीरिक रुकावटें : पुष्प आकारिकी उपयुक्त आगंतुक के अनुकूल लेकिन अनचाहे आगंतुक को दूर रखने के लिए परिवर्तित/अनुकूलित हो गई। उदाहरण के लिए, एक लंबी संकरी दलपुंज-नलिका लेपिडोपटेरा (शल्कपंखियों) के लिए तो उपयुक्त होती है लेकिन यह गुंजनपक्षियों को दूर रखती है जिन्हें एक चौड़ी नलिका चाहिए। लंबी-नलिका पुष्प अपने मकरंद को लघु जिह्वा वाली मधुमक्खियों, मक्खियों और भृंगों से इसी तरह बचाए रखते हैं।

2. रासायनिक रुकावटें : मकरंद में एल्कैलॉइड, ग्लूकोसाइड, अप्रोटीनी अमीनो अम्ल और फिनोलिक की उपस्थिति पुष्प पर आने वाले अनचाहे अतिथियों के लिए इसे अरुचिकर या विषैला बना डालती है। कुछ जातियों के मकरंद में विशेष रूप से चींटी-प्रतिकर्षी रसायन होते हैं।

3. जैविक रुकावटें : कुछ चींटियां पुष्पों की रक्षा करती हैं और उनके मकरंद को अवांछित पुष्प अतिथियों या शाकाहारियों से बचाती हैं। लेकिन चींटियां खुद पुष्पबाह्य मकरंदकोशों से अपना भोजन लेती हैं। साधारणतया यह *ऐकेशिया* जाति में देखा जाता है।

10.3.2 परागणकारियों के आकर्षी

कीट परागणकारियों को तीन मुख्य वर्गों में बांटा जा सकता है: एकनिष्ठ पराग प्रेमी, जैसे तक्षमक्षिका; (2) एकनिष्ठ मकरंद अनुरागी जैसे शलभ और तितलियां; और (3) पराग और मकरंद अनुरागी जैसे मधुमक्खियां। तितलियों के मामले में इनके लारवा परपोषी विशेष पादपों की पत्तियों पर ही जीते हैं। प्यूपा से निकलने पर वर्धनशील तितली को भोजन की जरूरत से ज्यादा उसको सांद्रित कार्बोहाइड्रेट, जिसका एक स्रोत मकरंद है, की आवश्यकता होती है जो उसकी जनन-ग्रंथि में कोशिका-विभाजन में भूमिका निभाता है। मकरंदकोश प्रायः पुष्प में छिपे रहते हैं, सो तितलियों के मुखांग भी विकास के फलस्वरूप उसी के अनुरूप मकरंदकोश तक पहुंचने के लिए रूपांतरित हो चुके हैं। अन्य पुष्पांगों को क्षति पहुंचाए बिना यह

मकरंदकोश में छेद कर मकरंद चूसती है। इसके लिए तितली पुष्प पर उतरती है और अपने स्पर्शकों तथा श्रृंगिकाओं का उपयोग संवेदी जांच-पड़ताल के लिए करती है। इस प्रक्रम में वह पर्याप्त संख्या में परागकण ग्रहण कर लेती है।

पुष्पों पर तितलियों के आगमन में सबसे महती भूमिका निभाते हैं पुष्प रंग। लाल तितलियों में लाल रंग के पुष्पों में ही जाने ही प्रवृत्ति होती है। मधुमक्खियों के विपरीत, जोकि अक्सर लाल रंग के प्रति वर्णांध रहती हैं, अधिकतर तितलियां लाल रंग के प्रति बड़ी संवेदनशील होती हैं। सामान्यतया तितलियां 300 nm से 800 nm तरंगदैर्घ्य के बीच के रंगों को पहचान लेती हैं। श्वेत रंग प्राय: उन्हें आकर्षित नहीं कर पाता है किंतु पीला, नारंगी और लाल रंग के हल्के रूप उनके लिए आकर्षी होते हैं। सफेद फूल शलभों को आकर्षित करते हैं तो पीले तितलियों को। पुष्प रंग तितलियों के भोजनखोजी आचरण को भी प्रभावित करता है।

तितलियों के पुष्पागमन में दृश्य प्रकाश की तुलना में पराबैंगनी प्रकाश की भूमिका अधिक जान पड़ती है। पुष्पों द्वारा पराबैंगनी प्रकाश के अंतरात्मक अवशोषण और परावर्तकता परागणकारी तितलियों के मुख्य आकर्षी दिखाई देते हैं। विशेषकर दिवा परागणकारियों में। सफेद पुष्प पराबैंगनी प्रकाश का अवशोषण करते हैं तो पीले पुष्प उसे परावर्तित करते हैं। प्राय: पराबैंगनी प्रकाश-अवशोषक पुष्प मुख्यत: मधुमक्खियों को, तथा पराबैंगनी प्रकाश परावर्तक पुष्प तितलियों को आकर्षित करते हैं।

रंग व्यतिरेक अक्सर आकर्षण शक्ति में वृद्धि का सहायक होता है तथा यह मकरंद-निर्देशकों (nectar guides) में वरणात्मक पराबैंगनी-अवशोषण के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। पुष्प रंग में परिवर्तन भी आगंतुक तितली द्वारा मकरंद की समाप्ति और वर्तिकाग्र में पराग अवक्षेपण के कारण होता है। ये परिवर्तन पुष्प को भावी अतिथियों के लिए अनाकर्षक बना देते हैं।

10.3.3 परागणकारियों को पारितोषिक

1. मकरंद

विविध पुष्पों के मकरंद में मुख्य रूप से ग्लूकोज़, सूक्रोज और फ्रुक्टोज़ तथा पानी ही नहीं पाया जाता बल्कि इनके अतिरिक्त उनमें, प्रोटीन, अमीनो अम्ल, लिपिड, एल्कैलॉइड, फिनोलिक, प्रतिऑक्सीकारक, सैपोनिन, डेक्स्ट्रिन, अकार्बनिक अम्ल और नाना प्रकार के अन्य कार्बनिक पदार्थ भी लघु मात्राओं में पाए जाते हैं। इनमें सुक्रोज़ की मात्रा 5 प्रतिशत से लेकर 80 प्रतिशत तक हो सकती है।

मकरंद के रूप में परागणकारियों को मिलने वाले पारितोषिक उनके जीवसंख्या गतिकी के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं। मकरंद आयतन, परागणकारियों द्वारा अगले पादप तक तय की जाने वाली दूरी और साथ ही प्रति पादप प्रवासित पुष्पों की संख्या को भी प्रभावित करता है। मकरंद के लिए स्पर्धा एक महत्वपूर्ण निर्धारक है इस पर मधुमक्खियों की विभिन्न जातियों द्वारा *एगेव शैटाइ* जैसे पुष्पों, का उपभोग निर्भर है। बाहर से लाई गई मधुमक्खियां (*ऐपिस मेलिफेरा*) अधिमानत: इन पुष्पों के सबसे उत्पादनशील हिस्सों को चुनती है। इस तरह ये मधुमक्खियां मूल मधुमक्खियों (भौरों *बॉम्बस सोनोरस* और तक्षमक्षिका *ज़ाइलोकोपा एरिजोनैन्सिस*) के लिए मकरंद की उपलब्धता को प्रभावित करती हैं।

मकरंदकोश दो प्रकार के होते हैं- **पुष्पी** या **पुष्पबाह्य**। पुष्पबाह्य मकरंदकोश पुष्प से बाहर पुष्पक्रम, पुष्पदलपुंज या पत्तियों में पाए जाते हैं। ये पुष्पबाह्य मकरंदकोश भी कीट आगंतुकों को आकर्षित करते हैं। ये पुष्पी मकरंदकोशों के काफी समान होते हैं, तथा इनकी ओर ध्यान भी कम ही आकर्षित हुआ है। ये पुष्पबाह्य मकरंदकोश प्राय: निरंतर मकरंद का स्राव करते हैं चाहे कीटों का आगमन हो या नहीं हो। इसके विपरीत पुष्पी मकरंदकोशों की सक्रियता आवर्ती, संक्षिप्त, और कीट आगमन से सहसंबंधित होती है। स्पष्टत: पुष्पी मकरंदकोशों का पादप-परागकारी अन्योन्यक्रिया में काफी अधिक महत्व है। ये मकरंदकोश प्राय: पुष्प के अंदर छिपे रहते हैं और उनके अस्तित्व की जानकारी सिर्फ संबंधित कीट विशेष को ही रहती है। इन अंतरसंबंधों में मकरंद निर्देशक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

[illegible] में मकरंद उत्पादन अनेक कारकों द्वारा प्रभावित होता है और यह कारक अलग-अलग पादपों में अलग-अलग होते हैं। मकरंद स्राव का समय और उसकी मात्रा का प्रायः परागणकारी की क्रियाशीलता के समय के साथ सहसंबंधित रहता है। रात के समय पुष्पित होने वाले पादपों में मकरंद स्राव संध्याकाल में अपने चरम पर होता है और यह अर्धरात्रि के बाद कम हो जाता है।

उष्णकटिबंधी प्रदेशों में तितली परागित पादपों में पुष्पन वर्षा ऋतु में प्रायः जुलाई-सितम्बर के महीनों में होता है। इसी काल में ही उनमें अधिकतम मकरंद का उत्पादन होता है। ऐसी धारणा है कि मकरंद की मात्रा, पुष्प और उसके परागणकारी के बीच बढ़ती परस्पर निर्भरता के साथ-साथ बढ़ती जाती है।

2. पराग

भृंगों, मक्खियों, मधुमक्खियों और चमगादड़ों के लिए तो पराग पौष्टिक होता है, मगर पक्षियों के लिए नहीं। पराग-उपभोग (pollinivory) को परागणकारियों द्वारा परागण का पूर्ववर्ती समझा जाता है। यह एक सहोपकारिक (mutualistic) प्रक्रम बन जाता है यदि पराग-भक्षी अनुपभुक्त पराग को वैकल्पिक पराग प्रकीर्णन वाहकों जैसे वायु, बारिश या गुरुत्व की तुलना में अधिक कार्यक्षमता से परपोषी पादप के मादा जननांग तक पहुंचाए। परागण सहोपकारिता में पादपों को परागण सुनिश्चित करने के लिए उत्पादित पराग के एक अंश का त्याग करना पड़ता है।

3. ऊष्मा

कई परागणकारियों को जहां मकरंद, पराग और स्टार्च जैसे ऊर्जा तथा पोषक स्रोतों का पारितोषिक मिलता है वहीं तापजनक पुष्प (thermogenic flowers) एक अन्य प्रकार का पारितोषिक देते हैं- यह है ऊष्मा का प्रत्यक्ष अनुप्रयोग। जैसा कि 'तापजनक' शब्द से ही संकेत मिल जाता है, ये पुष्प एक उच्च, लगभग स्थिर आंतरिक तापमान बनाए रखते हैं जबकि बाहरी वातावरण में तापमान में भारी उतार-चढ़ाव आते हैं। तापजनक पुष्प एरेसी, एरिस्टोलोकिएसी, नेलुम्वोनेसी, ऐनोनैसी, ऐरिकेसी और साइक्लैंथेसी जैसे कई पादप कुलों में पाए जाते हैं। ये पुष्प प्रायः बड़े होते हैं क्योंकि अधिक पृष्ठ: आयतन अनुपात वाले छोटे पुष्प पर्याप्त ऊष्मा बनाए रखने में सक्षम नहीं रहते, जिससे वे पुष्प तापमान को काफी अधिक बढ़ा सकें।

पुष्पों द्वारा अपने परागणकारी को पारितोषिक के रूप में ऊष्मा प्रदान करने का एक सुज्ञात उदाहरण है अमेजन जलकुमदिनी, *विक्टोरिया अमेज़ोनिका*। यह पादप एक दो-दिवसीय अनुक्रम के दौरान भृंग परागणकारी के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए ऊष्मा उत्पादन को, अपनी पंखुड़ियों के रंग में परिवर्तन, के साथ संयोजित करता है। इस पादप में पुष्प 20 से.मी. चौड़े होते हैं और प्रफुल्लन के पहले दिन उनमें सुंदर सफेद पंखुड़ियां होती हैं। इस समय पुष्प तापमान बाह्य तापमान से लगभग 10° से० से अधिक होता है और पुष्प एक तीखी फलीय गंध छोड़ता है। पुष्प सज्जा और सुगंध भृंग परागणकारियों को भारी संख्या में आकर्षित करते हैं जो इसके पुष्प कोष्ठ में जमा हो जाते हैं। संध्या घिरने पर पंखुड़ियां धीरे-धीरे बंद हो जाती हैं और इस तरह कीटों को अपने अंदर समेट लेती हैं। दूसरे दिन दोपहर तक पंखुड़ियां फिर खुल जाती हैं और भृंग पुंकेसरों पर से रेंगते हुए बाहर निकल जाते हैं। इस पूरी प्रक्रिया में, पुंकेसरों से भृंगों पर पराग चिपक जाते हैं। कीट अब इस द्वितीय दिवसी पुष्प की ओर आकर्षित नहीं होते क्योंकि इसमें न तो तीखी सुगंध रहती है और ना ही यह सफेद रंग का, तथा भोजन से भरपूर रहता है बल्कि ये कीट अब अन्य प्रथम दिवसी पुष्पों पर चले जाते हैं। तथा ऊपर वर्तित प्रक्रम से होते हुए इन दूसरे फूलों में परपरागण को पूरा करते हैं। इस प्रकार यह चक्र कई बार दोहराया जाता है।

जल कमल *नेलम्बो न्यूसिफेरा* इस प्रकार के पुष्पों का एक देशज उदाहरण हैं। यह पादप भी परागण के लिए एक ऐसी ही रणनीति अपनाता है। अब आप यह प्रश्न कर सकते हैं कि भला किस तरह उच्च तापमान परागणकारी के लिए लाभदायक हो सकता है? कई भृंग आन्तरोष्मी **(endothermic)** होते हैं और उड़ने जैसी गतिविधि के लिए उन्हें अपनी वक्षीय पेशियों (thoracic muscles) में उच्च तापमान की जरूरत पड़ती है। इसके अलावा मैथुन के लिए जोड़ीदार, और भोजन के लिए तीव्र स्पर्धा जैसी अन्य गतिविधियों के लिए भी उच्च शारीरिक तापमान की जरूरत होती है।

4. प्रतिजैविक-युक्त पदार्थ

दक्षिण और मध्य अमेरिका में पाया जाने वाला *क्लुसिया ग्रैंडिफ्लोरा* नामक पुष्प अपने परागणकारी वन्य ट्राइगोना मधुमक्खी को एक अनूठा उपहार देता है। यह 'उपहार' प्रभावशाली प्रतिजैविकों से भरपूर रेज़िन का एक आवरण है। ऐसा माना जाता है कि ये प्रतिजैविक, इन मधुमक्खियों को अपने छत्तों को हानिकारक जीवाणुओं से मुक्त रखने में सहायता करते हैं। एक और बड़ी रोचक बात यह है कि मादा पादप से मिलने वाला रेज़िन, नर पादपों से अधिक शक्तिशाली होता है।

बोध प्रश्न 2

कोष्ठकों में दिए गए गलत शब्द(दों) को काट दीजिए।

i) कीट-परागित पुष्प निरपवाद रूप से (कोई नहीं/जटिल) अनुकूलनों का विकास कर लेते हैं।

ii) यदि A जाति के पुष्पों को $X_1, X_2 \ldots X_n$ कीट परागित करते हैं; और X जाति का एक कीट A, B, C, ... इत्यादि अनेक पुष्प जातियों को परागित करता है। ऐसे पादप और परागणकारी (घनिष्ठ/अदृढ़) संबंधों को दर्शाते हैं।

iii) (पक्षी और चमगादड़/भृंग) को आदिम परागणकारी समझा जाता है।

iv) (वायु/कीट) परागित पादपों में प्रायः अनेक आकर्षियों के साथ चटक रंग के दर्शनीय फूल होते हैं।

v) (मधुमक्खियों/भृंगों) द्वारा परागित पुष्पों में पुंकेसर और स्त्रीकेसर साथ-साथ होते हैं। यह परागणकारी के लिए एक पुष्प से पराग उठाने के साथ-साथ दूसरे पुष्प से लिए गए पराग को उस पुष्प में डालने में सहायक होता है।

vi) एक लंबी, संकरी दलपुंज नलिका गुंजनपक्षियों के लिए एक (आकर्षी/रुकावट) है।

vii) (तितलियां/तक्षमक्षिकाएं) एकनिष्ठ मकरंद अनुरागी हैं।

viii) पराग-उपभोग (भृंगों/पक्षियों) जैसे परागणकारियों के लिए लाभकारी है।

10.4 विशिष्ट परागणकारी और उनका आचरण

अभी तक आपको विभिन्न परागणकारियों के बारे में सामान्य जानकारी मिल चुकी है। आइए अब कुछ विशिष्ट परागणकारी प्ररूपों की बारे में कुछ विस्तार से जानें।

10.4.1 मधुमक्खियां

विभिन्न प्रकार की मधुमक्खियां अनेक पादपों के लिए महत्वपूर्ण परागणकारी हैं। प्रतिनिधिक मधुकर पुष्पों में पुदीने जैसी गंध होती है और अपनी अतिथि मधुमक्खियों को वे मकरंद, पराग या यह दोनों प्रदान करते हैं। प्रायः वे चटक पीले या नीले होते हैं और दिन के समय खुलते हैं। इनमें अक्सर मधु निर्देशक रंग या गंध पैटर्नों के रूप में पाए जाते हैं। कुछ पुष्पों में बड़ी, चौड़ी, अधर पंखुड़ियां होती हैं जो मधुमक्खियों के अवतरण-स्थल का काम करती हैं। मधुमक्खी के एक दौरे के दौरान पुष्प आम तौर से पराग लेता और देता है। परागकण चिपकू, कंटकी या तक्षित पाए जाते हैं। मधुमक्खी बसंत ऋतु में अपने छत्ते को छोड़ती है और अपने प्रत्येक दौरे पर पराग का एक गुटिका लेकर लौटती है, जिसे प्रायः वह (शीतोष्ण प्रदेशों में) एल्डर या अनूपी भिंसा (swamp willow) से प्राप्त करती है। मधुमक्खियों को पराग की पहली आपूर्ति प्रायः भिंसा के नतकणिशों (catkins) से मिलती है। कोई नतकणिश अगर पहुंच के अंदर कहीं भी खुली हो, तो नवीन पराग, तथा मकरंद को चूसने के लिए मधुमक्खी उसी समय वहां सुलभ हो जाती है। पराग उद्भार को छत्ते तक ले जाती यह मधुमक्खी एक प्रकोष्ठ के पास पहुंचकर पराग की

गुटिका को पैर चलाते हुए उतारती है। इसके बाद यह मधुमक्खी वहां से बाहर चली आती है और छत्ते में रहने वाली अन्य मधुमक्खियां पराग उद्भार को अपने सिर से ठेलते हुए प्रकोष्ठ के अंदर पहुंचा देती हैं।

मधुमक्खियां पराग या मकरंद एकत्र करते समय पुष्पों के सुस्पष्ट रंगों से आकर्षित होती हैं। इसका सबसे आकर्षक उदाहरण इसका प्रयोगशाला प्रदर्शन है। मधुमक्खियों को आसानी से सुगंधित शर्करा घोल युक्त एक वाचग्लास के नीचे रखी रंगीन डिस्क के प्रति प्रानुकूलित किया जा सकता है। अपने तदनन्तर ढोरों में मधुमक्खियां इसे वहां प्रस्तुत अन्य रंगों के बीच से बड़े ही आराम से चुन लेती हैं। एक निश्चित किस्म के फूलों का भ्रमण करते समय मधुमक्खियां इसी प्रकार उनके रंगों के प्रति प्रानुकूलित हो जाती हैं और मकरंद के सुलभ रहने तक उनके प्रति चयनात्मक ढंग से अनुक्रिया करती हैं। मधुमक्खियां लाल रंग नहीं देख पातीं मगर वे पोश्त के लाल पुष्पों सहित कुछ पुष्पों से उत्सर्जित होने वाले पराबैंगनी किरणन के प्रति अनुक्रिया करती हैं। रंग की अभिरुचि के परिवर्तन को देखते हुए, जोकि भोजनखोजी के एक समाप्त हो चुकी फसल से नयी फसल में जाने के लिए जरूरी है, यह पाना असंभव है कि छत्ते को पहली बार छोड़ने वाली मधुमक्खियों में पीले और नीले रंगों के प्रति जन्मजात अभिरुचि है। इससे अधिक अनोखी एक बात यह है कि अनुभवहीन मधुमक्खियां मधु-निर्देशकों को पहचान लेती हैं और अपनी बहिर्वेधित बाहर को निकली शुंडिका से उनकी जांच-पड़ताल करती हैं मानों उन्हें पास ही में मकरंद पाने की 'आशा' हो। ऐसे ही एक प्रयोग में *ईनोथेरा बायेसिस* की उपयुक्त रूप से कटी पीली पंखुड़ियों को दो विन्यासों में, पराबैंगनी पारदर्शी पन्नी के नीचे रखा गया। जैसाकि चित्र 10.3 में दिखाया गया है, जांच पड़ताल की सर्वाधिक प्रतिक्रियाएं काले रंग के छोटे हिस्सों पर केन्द्रित थीं, जो पराबैंगनी परावर्तन करते हैं और जो सामान्यतया पुष्प के केन्द्र में मकरंद स्रोत के निकट रहते हैं। विशेष उद्दीपकों से पहली बार सामना होने पर उनके प्रति चयनात्मक ढंग से अनुक्रिया की ये प्रवृत्तियां जन्मजात मानी जाती हैं। इसका यही संकेत है कि इनका अर्जन उद्दीपकों के अनुभव के जरिए नहीं होता है।

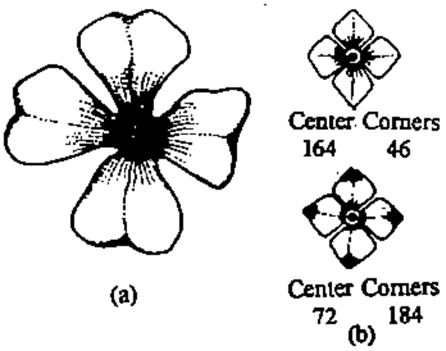

चित्र 10.3 : a) ईनोथेरा *बायेसिस* पराबैंगनी फिल्टर से लिए गया एक फोटो; पराबैंगनी मुक्त भाग काले दिखाई देते हैं। b) पराबैंगनी-मुक्त भाग मधु-निदेशकों का काम करते हैं, जिनसे अनुभवहीन मधुमक्खियों में अन्वेषण प्रतिक्रियाएं उत्पन्न होती हैं। सबसे ऊपर सामान्य विन्यास; नीचे कटी पंखुड़ियों का पराबैंगनी पारदर्शी पन्नी के नीचे उल्टा विन्यास। चित्र में प्रयोग के दौरान मधुमक्खियों की अन्वेषण प्रतिक्रियाओं की दर्ज संख्या को बताया गया है। (डॉमर, 1964 से)।

मधुमक्खी का दोलन नृत्य

कोई मधुमक्खी मकरंद या पराग के किसी स्रोत को ढूंढ निकालती है तो वह इस खोज की सूचना अन्य मधुमक्खियों को एक अनोखे तरीके से देती हैं, जिसे हम "दोलन नृत्य" कहते हैं (चित्र 14.4b)। नए स्रोत का पता लगाकर यह स्काउट, छत्ते की ओर लौट आती है और अपने इसी मनमोहक नृत्य के माध्यम से भोजनखोजी रंगरूटों को सूचित करती है। इस अनूठे आचरण की जानकारी के कारण ही कार्ल वॉन फ्रिश जिन्होंने इसका अवलोकन 50 वर्ष पूर्व किया था, को नोबेल पुरस्कार मिला। इस नृत्य के बारे में और जो अन्य मधुमक्खियों को मकरंद या पराग की अवस्थिति की काफी सटीक जानकारी देता है, आप अधिक जानने के इच्छुक होंगे। भोजन का स्रोत छत्ते के समीप हो तो यह स्काउट एक गोल नृत्य करती है (चित्र 10.4 a) जिसमें यह करंड (honeycomb) पर अनेक घेरे बनाती है इसमें यह हर एक या दो घेरे के बाद दक्षिणावर्त और वामावर्त दिशाओं के बीच एकांतरण करती है। पास की कुछ मधुमक्खियां इस

भोजनखोजी की हरकतों का अनुकरण करता है। नर्तक मधुमक्खी अपने मधु उदर से मकरंद की बूंद बार-बार उलट कर पास की मधुमक्खियों को देती है। यह व्यवहार, नृत्य अनुकरण करती मधुमक्खियों को भोजन के एक संपन्न स्रोत की उपस्थिति के प्रति भी सचेत करता है। उन्हें इसकी गंध नृतक के शरीर से अभी तक उठती पुष्पों की गंध से, और नृतक से मिलने वाले भोजन से भी मालूम हो जाती है। यह सूचना अन्य मधुमक्खियों के छत्ते से बाहर निकलकर आसपास में उसी गंध के भोजन की खोज में निकलने में सहायता करती है। नृत्य की गति छत्ते की साथियों को नए भोजन स्रोत की लगभग दूरी की जानकारी देती है। दोलन का कोण भोजन की दिशा बताता है। चूंकि स्काउट मधुमक्खी एक ऊर्ध्व करंड पर नृत्य करती है, इसलिए उसे ऐसे संदर्भ बिंदु का प्रयोग करना होता है, जिसे मधुमक्खियां अपनी उड़ान में देख समझ सकें। यह संदर्भ बिंदु असल में सूर्य है। भोजन अगर सूर्य की दिशा (यानि सुबह के समय छत्ते की पूर्व दिशा) में हो तो, दोलक भाग करंड की सीध पर होगा। भोजन जब सूर्य की 20° दाईं ओर हो, तो दोलन सीध की 20° दाईं तरफ होगा। इन विशेष मुद्राओं को चित्र 10.5 में दर्शाया गया है।

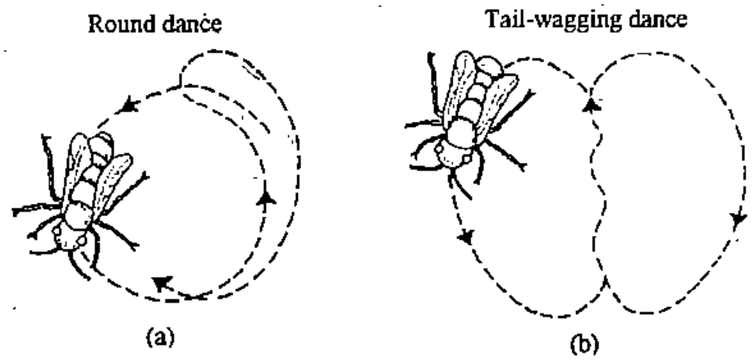

चित्र 10.4 : मधुमक्खी द्वारा किए जाने वाला दो प्रकार का नृत्य। a) गोल नृत्य; b) पुच्छदोलन नृत्य।

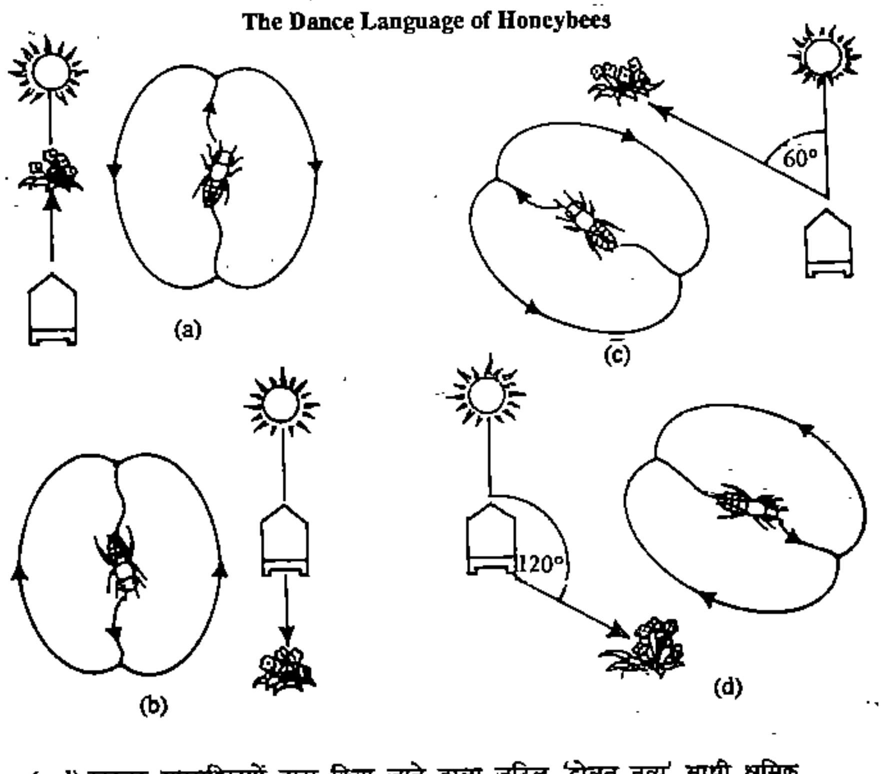

चित्र 10.5 : (a-d) स्काउट मधुमक्खियों द्वारा किया जाने वाला जटिल 'दोलन नृत्य' साथी श्रमिक मधुमक्खियों को भोजन स्रोत की सटीक स्थिति की जानकारी देता है। मान लीजिए कि इस पन्ने का ऊपरी सिरा छत्ते के सिरे को दर्शाता है, तो दोलन नृत्य के कुछ उदाहरणों को चित्र में दिखाया गया है। भोजन स्रोत को यदि छत्ते से सूर्य की दिशा में उड़कर पाया जाता है (a), तो इस स्थिति में 'आठ' के अंक का ऊपर की दिशा में नृत्य किया जाता है। चित्र b, c और d क्रमशः नृत्य की दिशा को दर्शाते हैं अगर भोजन सूर्य से 60° या 120° पर है।

[illegible], भरपूर भोजन स्रोत की दूरी और दिशा बता देती है। छत्ते से अपनी साथियों को वह 8 के अंक नृत्य से संकेत देती है। यह नृत्य करंड के ऊर्ध्व फलक पर होता है। मधुमक्खी जब 8 के मध्य से गुजरती है तो यह कई पुच्छदोलन देती है, भोजन स्रोत समीप हो तो जल्दी-जल्दी, और दूरस्थ हो तो धीरे-धीरे। उदाहरणतया, एक मील दूर भोजन स्रोत के लिए वह चार दोलन देती है या पूंछ हिलाती है। नर्तकी इस जानकारी में वायु दिशा की भी जानकारी जोड़ती है। चूंकि वायु की दिशा में उड़ना ज़रा कठिन होता है, इसलिए वह वास्तविक से थोड़ा अधिक दूरी बताती है। भोजन स्रोत की दिशा बताने के लिए सूर्य को एक संकेत-दीप के रूप में उपयोग किया जाता है। नृत्य का मध्य भाग यदि सीधे ऊपर की ओर हो और मधुमक्खी ऊपर (चित्र 10.5 a) और नीचे (चित्र 10.5 b) की ओर आ जा रही हो, तो इसका मतलब हुआ कि वे सूर्य से दूर जाएं। ऊर्ध्वाधर के 60°/120° वाम/दक्षिण के कोण में नृत्य (चित्र 10.5c, d) इस बात का सूचक है कि अनुकरण करने वाली मधुमक्खियों को उसी दिशा में जाना होगा, जो छत्ते और सूर्य को जोड़ती रेखा के साथ वही कोण (60° या 120°) बनाए। दूरस्थ भोजन स्रोत तक पहुंचने में काफी समय लग जाता है, जिसकी जानकारी भी यह नर्तक मधुमक्खी देती है। मगर नर्तकी भोजन स्रोत की ऊंचाई नहीं बता पाती। इसलिए भोजन स्रोत को जब एक पोल पर, ठीक छत्ते के ऊपर ही टांग दिया जाए तो छत्ते की साथिनें भ्रमित हो जाती हैं।

मधुमक्खियों के अन्य आकर्षी

पुष्प अपने परागणकारियों को सिर्फ मकरंद और पराग ही नहीं देते बल्कि कई अन्य उत्पाद भी देते हैं। इनमें शामिल हैं वाष्पशील यौगिक, लिपिड, मोम और रेज़िन। इरिडिएसी, क्रैमरिएसी, मैलपिगिएसी, ऑर्किडेसी और स्कोफुलैरिसी कुलों से संबद्ध कई पादप जीनसों में विशिष्ट रूप से अनुकूलित तैल-स्रावी ग्रंथियां होती है, जिन्हें तेलांग (elaiophores) कहते हैं (चित्र 10.6)। कुकुरबिटेसी, सोलेनेसी और प्राइमुलेसी के कुछ पादपों मे "तेल-पुष्प" पाए जाते हैं। ये खासकर उष्णकटिबंधी सवाना में प्रचुरता से मिलते हैं। तालिका 10.3 में तेल संग्राही मधुमक्खियों के कुछ उदाहरण और उनके 'तेल-परपोषी" पादपों के नाम दिए गए हैं। 'तेल पुष्पों' पर विशिष्ट रूप से अनुकूलित मधुमक्खिों के कुछ निश्चित समूहों का आगमन होता है (जैसे हाइमेनोप्टेरा: एपॉइडिया)। कुछ 'तेल मधुमक्खियां' लार्वो के विवर्धन के लिए अपनी पराग आपूर्ति में मकरंद की जगह लिपिड स्रावों का प्रयोग करती हैं। अन्य मधुमक्खियां तेलों का प्रयोग अपने छत्ते के प्रकोष्ठों के लिए जलरोधी-अस्तरों के निर्माण में करती हैं।

तालिका 10.3 : पुष्पी लिपिडों को संग्रहित करने और उन्हें ले जाने के लिए संरचनात्मक रूपांतरणों से सज्जित कुछ मधुमक्खियों के नाम।

तेल-संग्राही मधुमक्खियां		तेल-परपोषी पादप	
जीनस	कुल	जीनस	कुल
मैक्रोपस	मेलिटिडी	*लाइसिमेकिया*	प्राइमुलेसी
रेडीविवा	मेलिटिडी	*एनेस्ट्रेब, डायासिया*	स्क्रोफुलेरिएसी
		डिस्पेरिस	आर्किडेसी
टेनोप्लेक्ट्रा	टेनोपलेक्ट्राइडी	*मोमोर्डिका*	कुकुरबिटेसी
सेन्ट्रिस	एन्थ्रोफोरिडी	*क्रैमेरिया*	क्रैमेरिएसी
कैलिपोजीनस	एन्थ्रोफोरिडी	*साइपेला*	इरिडेसी

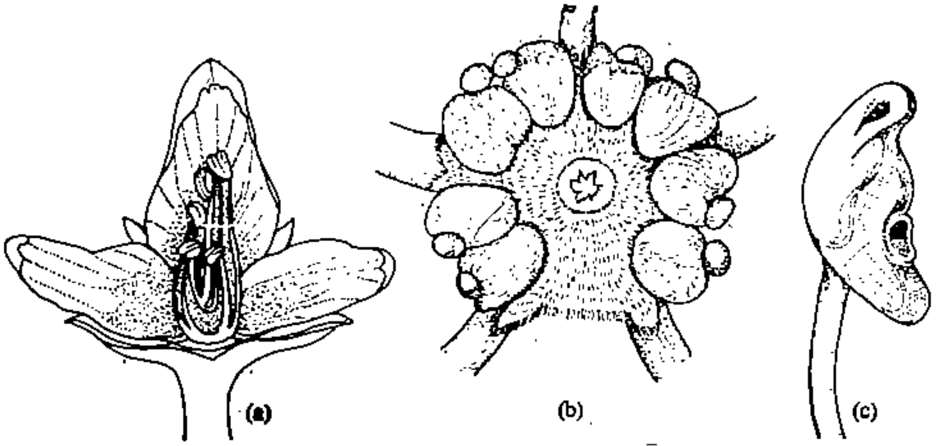

चित्र 10.6 : कुछ आवृतबीजियों के तेलांग (तिल-स्रावी ग्रंथियां)। *लाइसिमेकिया क्वेड्रिफोलिया* के पुंकेसरों और पंखुड़ियों पर ग्रंथिल रोम या ट्राइकोम तेलांग। b) *कैलियम मैक्रोप्टेरम* – पुष्प का अपाक्षी भाग जिससे पुष्पवृंत और पंखुड़ियां निकाल दिए गए हैं। आठ तेलांग लिपिड उदवर्धों के रूप में दिखाई दे रहे हैं। c) *मौरिरी मिर्टिलॉइडीज* परागकोश जिसकी उपकला पर तेलांग गहरी अवतल ग्रंथि के रूप में बना होता है।

कुछ अन्य आवृतबीजियों में भी ऐसे पुष्प उगते हैं जिनमें सुस्पष्ट स्रावी ग्रंथियां यानि तेलांग पाये जाते हैं जैसे *क्रैमेरिया* जाति में। तेलांगों को दो विशिष्ट वर्गों में बांटा जा सकता है।

i) उपकला तेलांग **(epithelial elaiophores)** यह स्रावी अधिचर्म कोशिकाओं से बना होता है, जहां पतली क्यूटिकल के नीचे स्रावित लिपिड जमा होते हैं (चित्र 10.6 b)। क्रैमेरिएसी और मैल्पिगिएसी कुलों में यह देखने में आते हैं।

ii) **ट्राइकोम तेलांग (trichome elaiophores)** जो हजारों ग्रंथिल ट्राइकोमों का बना होता है, जिनसे लिपिडों का स्राव होता है (चित्र 10.6 a)। इन्हें कुकुरबिटेसी, प्राइमुलेसी और सोलनेसी कुलों में देखा जाता है।

तेल प्राप्त करने के लिए कुछ मधुमक्खियां विशिष्ट उदरीय संचलनों का उपयोग करती हैं जैसे दोलन या उदर को नीचे की ओर रगड़ना। कुछ टेनोप्लेक्ट्रिड मादा मधुमक्खियों में एक अर्धचंद्राकार आंतरिक **पश्च अंतर्जंघिका कंट (hind tibial spur)** पाया जाता है, जिससे तेल निकालने का काम लिया जाता है। *मैक्रोपस लैबिएटा* और *मै. फुल्विपीज* मधुमक्खियां, *लाइसिमेकिया वल्गैरिस* और *ला. पंक्टैटा* के पुष्पों से तेल पुंतंतुओं से चिपक कर, तथा परागकोशों से लिपटते हुए, निकालती हैं। ये ग्रंथिल ट्राइकोमों को अपने अग्र और मध्य पादों से तथा प्रत्येक जोड़े के बीच एकांतरण में थपका कर निकालती हैं। तेल-संग्रह में मुखांगों से कोई काम नहीं लिया जाता। पर हां तेल निकालने के इस प्रयास में मधुमक्खियों का शरीर पराग से अवश्य भर जाता है।

साइक्लैंथेरा (कुकुरबिटेसी) जैसे कुछ पुष्पों में सरेस-निर्माता परागकोश रोम पाए जाते हैं जो पराग को मधुमक्खियों से चिपकाने में सहायक हैं।

बॉक्स 10.1 : परागणकारियों की आर्थिक उपयोगिता

शहद के स्रोत के अलावा, कई देश अपनी कृषि पैदावार बढ़ाने के लिए भी मधुमक्खियों से काम लेते हैं। हमारे देश को भी इस संभावना का लाभ उठाने की आवश्यकता है। ऐसा माना जाता है कि यदि मधुमक्खियों द्वारा प्रदत्त सेवाओं का उपयोग किया गया होता तो हमारा देश आज तिलहन और अन्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया होता। अधिकांश दालें और तिलहन उत्पादक पादप स्वबंध्य होते हैं। सो परागण के लिए इन्हें वायु, कीटों या पानी जैसे वाहकों पर आश्रित रहना पड़ता है। इस स्थिति में मधुमक्खियां भी पराग-अंतरण की एक प्रभावशाली वाहक बन सकती हैं।

पंजाब में किए गए प्रक्षेत्र-प्रयोगों में, मधुमक्खियों के छत्तों को सूरजमुखी के खेतों में जब स्थापित किया गया तो उनसे औसत से 300 प्रतिशत अधिक पैदावार मिली। इस तकनीक से प्याज़, सेम, कॉफी, अल्फा-अल्फा, अंगूर, संतरा, लीची, सेब और प्लम की फसलों से भी अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

परागण में सहायक होने के साथ-साथ, प्रदूषकों की पहचान करने के लिए भी मधुमक्खियों से अतिसंवेदी जैविक सूचकयंत्र का काम लिया जा सकता है। इन सब कार्यों को दक्षता से अंजाम देने के लिए मधुमक्खियों को कारगर तरीके से प्रशिक्षित भी किया जा सकता है।

10.4.2 बर्र

अंजीर, *फाइकस केरिका* के जीवन चक्र और इसके परागणकारी बर्र के बीच एक घनिष्ठ परस्पर-निर्भरता विद्यमान है। इसे हम अंजीर-बर्र (*ब्लास्टोफैगा सेनीस*) कहते हैं। अंजीर के दो प्रकार के पेड़ पाए जाते हैं - एक पेड़ खाद्य अंजीर फल देता है तो दूसरा सिर्फ छोटे, कठोर और अखाद्य फल। यही अखाद्य फल एक इंक्यूबेटर की तरह काम करता है, जिसमें बर्र के लारवा विकसित होते हैं।

एक वर्धनशील अंजीर पुष्पक्रम में, नर पुष्प प्राय: छिद्र के समीप स्थित होते हैं और मादा पुष्प शेष समूचे गुहा के घेरे रहते हैं। मादा पुष्पों के स्त्रीकेसर लघुवर्तिका युक्त होते हैं। मादा बर्र छिद्र के रास्ते मादा पुष्पक्रम में प्रवेश करती है और प्रत्येक अंडाशय में अंडे जमा कर जाती है। इन अंडों से लारवा उत्पन्न होते हैं, जिनसे बर्र विकसित होते हैं। ये बर्र पुष्प अंडाशयों का भक्षण करते हैं और अपरिपक्व अंजीर के अंदर मैथुन करते हैं तथा फिर बाहर निकल आते हैं। मैथुन के बाद अधिकांश नर मर जाते हैं। मादा बर्र छिद्र से बाहर निकल आती हैं तथा इस प्रक्रम में नर पुष्पों से उन पर पराग विसरित हो जाते हैं। अंजीर से बाहर निकल आने के बाद मादा बर्र ताजा खाद्य फलों के अंडाशयों की खोज में निकल पड़ती हैं। इस खाद्य अंजीर के पुष्पक्रम में सिर्फ ऐसे मादा पुष्प होते हैं जिनके स्त्रीकेसरों में वर्तिकाएं लंबी होती हैं। इस दशा में बर्र लंबी वर्तिकाओं के कारण अंडनिक्षेप तो नहीं कर पाते मगर इनसे परागण का निष्पादन हो जाता है। कालांतर में यह पुष्पक्रम एक खाद्य फल में परिपक्व हो जाता है, जिसमें कई बीज रहते हैं। अन्य मादा बर्र मैथुन के बाद देर-सबेर अखाद्य पुष्पक्रम में पहुंच जाते हैं, जहां वे अपने अंडे छोड़ती हैं और इस प्रकार उपरोक्त चक्र को पूरा करती हैं।

शायद आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि अखाद्य अंजीर की शाखा की कलम खाद्य अंजीर के पेड़ पर लगाई जा सकती है और उस एक अकेली शाखा में समूचे वृक्ष के लिए पर्याप्त संख्या में परागणकारी बर्र प्रदान करने की क्षमता रहती है। इससे आपको अदांजा हो गया होगा कि प्रत्येक फल में कितनी अधिक संख्या में बर्र होते हैं।

10.4.3 भौंरे

बॉम्बस (भौंरा) भोजनखोजियों के सामने सबसे बड़ी समस्या एक आवास में सुलभ अनेक पुष्प जातियों में से सर्वाधिक लाभकारी पुष्पों को चुनने की रहती है। ये भोजनखोजी अपनी खोज का आरंभ अनेक भिन्न-भिन्न पादप जातियों के भ्रमण से करते हैं और फिर सबसे अधिक लाभकर जाति पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।

परागणकारी के व्यवहार और पुष्प चयन पर मकरंद स्रोतों के प्रभाव का काफी अध्ययन कार्य हुआ है। मगर मकरंद स्रोतों और पादप जनन सफलता के बीच सहलग्नताओं की पहचान के लिए अध्ययन की बड़ी कमी रही है। किसी झाड़ी और अनूपी समुदाय में, औसत मकरंद उत्पादप में अंतराजाति अंतर, भौरों के सापेक्षिक आगमन दर का एक सूचक हो सकता है। किंतु, फल का निर्माण परागण से परिसीमित नहीं है- यहां तक कि कम मकरंद वाली जातियों में भी। इसकी वजह यह है कि इनमें चिरायु पुष्प, स्वपरागण या वैकल्पिक परागणकारी पाए जाते हैं।

तापमान और अन्य भौतिक कारक, भौंरों की भोजनखोजी गतिविधि पर बड़ा प्रभाव डालते हैं। भौंरों की भोजनखोजी गतिविधियां प्रातःकाल या संध्याकाल की तुलना में दोपहर में शिथिल रहती हैं। इसका कारण संभवतः दोपहर में मकरंद की उच्चतर सांद्रता है। भौंरे ऐसे पुष्पों से दूर रहते हैं जिनमें मकरंद का सांद्रण उच्च हो। साधारणतः छोटे भौंरे, लघु-दलपुंज पुष्पों पर अपेक्षतया अधिक दक्ष भोजनखोजी साबित होते हैं।

10.4.4 पक्षी

उष्णकटिबंध प्रदेशों में पक्षी अच्छे परागणकारी होते हैं। पक्षियों की लगभग एक हजार जातियां कीटों, मकरंद या पराग चुगने के लिए विभिन्न प्रकार के पुष्पों पर जाती हैं। परागणकारी पक्षियों की चोंचे (चित्र 10.7) पुष्पों के दलपुंज नलिकाओं की आकृति के अनुसार ही पतली और मुड़ी होती है।

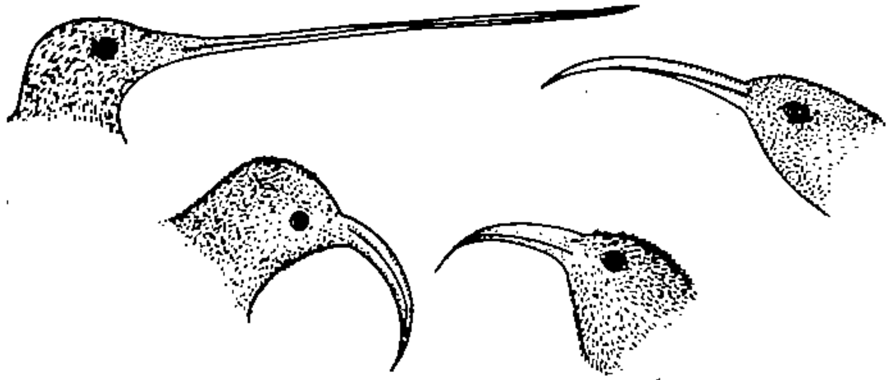

चित्र 10.7: मकरंद-भक्षी चार पक्षियों की चोंचों की आकृतियां।

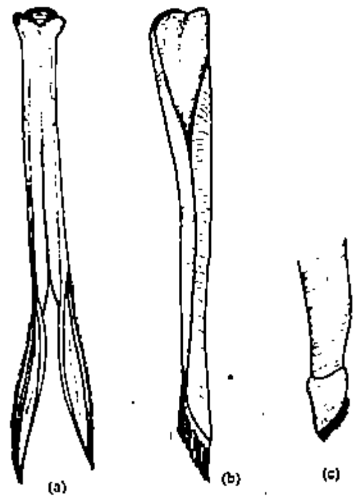

चित्र 10.8: तीन परागणकारी पक्षियों की जीभें। इन नलिकाकार जीभों को ध्यान से देखिए।
a) गुंजनपक्षी;
b) मकरंद पक्षी,
और **c)** तोता।

परागणकारी पक्षियों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं: गुंजनपक्षी (hummingbird), शकरखोरा (sun-bird, और ब्रशनुमा जीभ वाला तोता (चित्र 10.8)।

अधिकांश पक्षियों में अच्छा रंग बोध और उत्तम दृष्टि होती है, मगर उनमें घ्राणशक्ति नहीं होती। गुंजन-पक्षी लाल या नारंगी रंग के फूलों की ओर बड़ी तीव्रता से आकर्षित होते हैं। साधारणतया पक्षीपरागित पुष्प कीटपरागित पुष्पों की तुलना में बड़े होते हैं और वे दिन के समय खुलते हैं। इनमें अंडाशय प्रायः निम्न (inferior ovary) होता है जो बीजांडों को पक्षियों की अन्वेषी चोंच से बचाए रखता है। पुंकेसर इस प्रकार स्थित होते हैं कि वे आगमनकारी पक्षी के सिर या वक्ष से रगड़ खाते हैं। अनेक पक्षीपरागित एशियाई पुष्पों में पक्षी उनके ऊपर मंडराते नहीं। बल्कि पुष्पों में एक अवतरण स्थल या ओष्ठ पाया जाता

है जिस पर पक्षी उतरते हैं। पक्षी-परागण पर आश्रित पादपों में *फुक्शिया, हाइबिस्कस* और ऑर्किडेसी, फेबेसी (लेग्यूमिनोसी), और कैक्टेसी कुलों के पादप शामिल हैं। भारतीय प्रवाल वृक्ष (*इरिथ्रिना*) पक्षी परागित (ornithophilous) है। इसे मुख्यतः टुंइयां तोता (parakeet) और कठफोड़वा परागित करते हैं। इसके पुष्पों में एक नलिकाविहीन दलपुंज होता है जिसके सामने एक चक्कस या पक्षीसाद (जिस पर पक्षी बैठते हैं) स्थित होता है। दलपुंज शर्करा से भरपूर मकरंद से लबरेज रहता है। *बिगनोनिया* की जातियों को गुंजनपक्षी परागित करते हैं।

10.4.5 मोलस्क

एस्पिडिस्ट्रा लुरिडा, क्राइसैन्थेमम ल्यूकैन्थेमम और कुछ ऐरेसी के पुष्पों को घोंघा और शम्बूक (slug) परागित करते हैं। इन पुष्पों को शंबूक-परागित (malacophilous) कहा जाता है।

10.4.6 चमगादड़

चमगादड़-परागण (chiropterophily) उष्णकटिबंध प्रदेशों में बहुतायत में होता देखा गया है। *ग्लोसोफैगा* और *मैक्रोग्लॉसम* तो भोजन, मकरंद और पराग सभी कुछ फूलों से प्राप्त करते हैं। चमगादड़-परागित पुष्प बड़े मजबूत, फीके और बादामी, घंटे के आकार के और चौड़े मुंह वाले होते हैं। इनसे उठने वाली तीखी विकृतगंध या फंफूदिया गंध चमगादड़ों को बहुत पसन्द होती है, तथा इनकी गंध पाते ही वे अपने पसंदीदा पुष्पों पर जा पहुंचते हैं। पुष्पों पर भोजन के दौरान इनके सिरों पर पराग लग जाता है और यह पराग अन्य पुष्पों पर लग जाता है जब ये चमगादड़ उन फूलों पर जाते हैं। चमगादड़-परागित पादपों के कुछ उदाहरण हैं: *ऐगेव, ऐरिका, किजेलिया* जातियां, *ऐडनसोनिया, पार्किया* और *कोबिया स्कैन्डेन्स*।

10.4.7 शलभ और तितलियां

तितलियों से परागित होने वाले अधिकांश पुष्प दिन के समय में खुलते हैं। वे सुगंधित और सफेद या चटक रंग के हो सकते हैं। इनमें भी एक अवतरण स्थल पाया जाता है, जिस पर तितलियां उतरती हैं। इसके विपरीत अधिकतर शलभ या पतंगे रात्रिचर होते हैं। इनसे परागित होने वाले पुष्प जैसे सांध्य पीतसेवती (evening primrose) हल्के रंग के होते हैं और वे सांध्यकाल में ही खुलते हैं। श्येनशलभ (Hawk moths) प्रायः मजबूत शरीर के और काफी बड़े कीट हैं, जिनका शरीर सीधा सा होता है तथा ये अच्छे उड़ाका होते हैं।

अधिकांश लेपिडोप्टेरा (शल्कपंखी) में लंबी, लचीली तथा पतली शुंडिका होती है जो एक चूषक नलिका का काम करती है। जब ये कीट पुष्पों से मकरंद नहीं चूस रहे होते हैं यह शुंडिका कुंडलित अवस्था में रहती है। इसके अनुरूप पुष्पों में एक लंबी, संकरी दलपुंज नलिका होती है। इस तरह की नलिका लेपिडोप्टेरा के प्रति एक अनुकूलन है। मगर यही नलिका अन्य लघुजिह्वाधारी कीटों के लिए अनुपयोगी रहती है। ये पुष्प एक खोखले दलपुट में प्रचुर मात्रा में मकरंद उत्पन्न करते हैं।

यक्का के फूल सिर्फ *यक्का* शलभ (*प्रोन्यूबा यक्कासेला*) से ही परागित होता है, किसी अन्य जन्तु से नहीं। मादा शलभ *यक्का* पुष्प के अंडाशय के भीतर ही अंडे देती है। अंडे देने के लिए मादा शलभ जब पुष्प पर जाती है, तो अपने साथ यह अन्य *यक्का* फूलों से संग्रहित पराग का गोला-सा अपने साथ लाती है। अंडे देने के बाद, मादा इस पराग गोले को स्त्रीकेसर के सिरे पर मौजूद एक गर्त में गिरा जाती है। कुछ समय बाद इन अंडों से इल्लियां (caterpillars) जन्म लेती हैं जो अंकुरित होते बीजों में से कुछ को खा जाती हैं तथा कुछ बीज सही-सलामत बच जाते हैं। इस प्रकार अपने जीवन और गुणन के लिए पादप और जंतु दोनों ही एक दूसरे पर आश्रित रहते हैं।

पैपिलियोनाइडी कुल *सीजलपीनिया* जाति के पुष्पों को परागित करने वाली तितलियां इनके पराग को अपने पंखों पर ले जाती हैं। ये तितलियां जब किसी फूल पर जाती हैं तो अपने पंख फड़फड़ाती हैं। पंखों का फड़फड़ाना पहले पंखों पर और फिर अन्य पुष्पों के वर्तिकाग्रों पर पराग निक्षेपण में सहायक होता है जिन पर तितलियां बाद में जाती हैं।

बोध प्रश्न 3

नीचे तालिका में दिए गए खाली स्तंभों को पूरा कीजिए। प्रत्येक परागणकारी के सामने लक्षणगत पुष्प विशेषताओं, परागणकारी व्यवहार या कोई अन्य रोचक पहलू के बारे में लिखिए।

क्रमांक	परागणकारी का प्रकार	विशिष्ट परागण संबंधी लक्षण
i)	मधुमक्खियां	
ii)	बर्र	
iii)	भौंरा	
iv)	पक्षी	
v)	चमगादड़	
vi)	शलभ/तितलियां	

10.5 पुष्प-परागणकारी सहविकास

सहविकास एक ऐसा विकास संबंधी परिवर्तन है जो *क* जाति के प्राणियों के एक विशेषक में *ख* जाति के प्राणियों के एक विशेषक के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप होता है, जिसके बाद क जाति में हुए परिवर्तन के प्रति *ख* जाति की विकासात्मक अनुक्रिया होती है। इसमें विभिन्न जातियों की जीवसंख्याओं में सहोपकारी अनुकूलन या पारस्परिक परिवर्तन होते हैं।

पुष्पी पादपों तथा उनके कीट परागणकारियों के बीच सहविकास के उदाहरण हमें मालूम हैं जिनमें प्रत्येक साथी यानि पादप और कीट ने परस्पर लाभ के लिए साथ-साथ रहने की दृष्टि से अपनी जीवन शैली का अपने साथी की जीवन शैली के साथ तालमेल बिठा लिया है।

किसी पादप और उसके परागणकारी के बीच सहविकास एकदम अदृढ़ या बिल्कुल गूढ़ हो सकता है। जैसा कि हम पहले बता ही चुके हैं, ऐसे अनेक पादप हैं जिन्हें नाना प्रकार के परागणकारी परागित करते हैं। ये पादप अदृढ़ सहविकास (loose coevolution) के उदाहरण हैं जिसका यह मतलब है कि एक पादप जाति की अनेक परगणकारी जातियां हैं।

यूग्लोसीन मधुमक्खियां यूग्लोसीन ऑर्किडों के साथ सहविकसित हुई हैं। यूग्लोसीन आर्किड इन मधुमक्खियों के लिए अनुकूलित हुई जान पड़ती हैं क्योंकि इन पादपों ने भिन्न-भिन्न पुष्प सुगंधों का विकास कर लिया है जो परागणकारी मधुमक्खियों को आकर्षित करने में सहायक हैं। प्रत्येक यूग्लोसीन ऑर्किड जाति में सुगंधित यौगिकों का कुछ विशिष्ट संयोजन पाया जाता है। यूग्लोसीन मधुमक्खी की सिर्फ एक खास जाति ही

आर्किड की एक खास जाति की ओर उसकी विशिष्ट सुगंध के अनुसार आकर्षित होती है। इस विशेष सुगंध को मधुमक्खियां संग्रहित कर लेती हैं, जो उन्हें अपनी ही जाति की नर मधुमक्खियों को संकेत करने में सहायक होता है। कई नर मिलकर एक छोटा सा झुंड बना लेते हैं जो एक साथ घूमता है और मैथुन के लिए मादाओं को आकर्षित करता है।

एक पादप और उसके परागणकारी के बीच सहविकासात्मक परस्पर निर्भरता का एक अच्छा उदाहरण *ब्रैसिका रैपा* और *ऐपिस मेलिफेरा* का है। आप यदि मधुमक्खी और *ब्रैसिका रैपा* के फूल को विच्छेदित करके देखें तो दोनों के बीच एक घनिष्ठ संबंध पाएंगे। विच्छेदन के बाद आप भी स्वयं मधुमक्खी की पराग-संग्रह की अद्‌भुत क्षमता को जांच परख सकते हैं।

कुछ ऐसे खास पादप हैं जो शाकाहारियों के सिर्फ एक या कुछ महत्वपूर्ण वर्गों को ही संबल प्रदान करते हैं। इसी प्रकार *पैसीफ्लोरा* जाति मुख्यत: जीनस *हेलिकोनियस* की तितलियों को संबल प्रदान करती है। ये तितलियां पादप की पत्तियों पर पीले रंग के अंडे देती हैं। किंतु कीट-पादप सहविकास के दौरान *पैसीफ्लोरा* जाति में पीले अंडों के समान संरचनाओं का जन्म स्वंतत्र रूप से हुआ जान पड़ता है। ऐसा समझा जाता है कि इन पादप संरचनाओं का विकास तितलियों के अंडों की नकल करने के लिए हुआ है। मादा तितलियां अंडों या उन जैसी संरचनाओं से भेद करती हैं। इस तरह वे इन अंडेनुमा संरचनाओं के विकास में एक वरणात्मक वाहक का काम करती हैं। *हेलिकोनियस* मादाओं की अंडेनुमा संरचनाओं के प्रति इस अनुक्रिया का आधार मुख्यत: या पूर्णत: दृष्टिपरक है। *पैसीफ्लोरा-हेलिकोनियस* तंत्र किसी पादप संरचनात्मक विशेषता का एक अच्छा उदाहरण है जो शाकाहारी कीट के एक परपोषी-सीमित समूह के साथ उसके सहविकास का परिणाम है।

सहविकास का सबसे विशिष्ट उदाहरण एक अकेली पादप जाति और जंतु के बीच संबंध है – *यक्का प्रोन्यूबा* – शलभ संबंध। शलभ (चित्र 10.9) पराग को यक्का पुष्प के वर्तिकाग्र में अंतरित कर, उसके अंडाशय में अंडे देता है। वर्धनशील लारवे कुछ बीजों को खा जाते हैं जो इस परागण के फलस्वरूप उत्पन्न हुए होते हैं। शलभ और पादप के बीच यह संबंध स्थायी और अनिवार्य है।

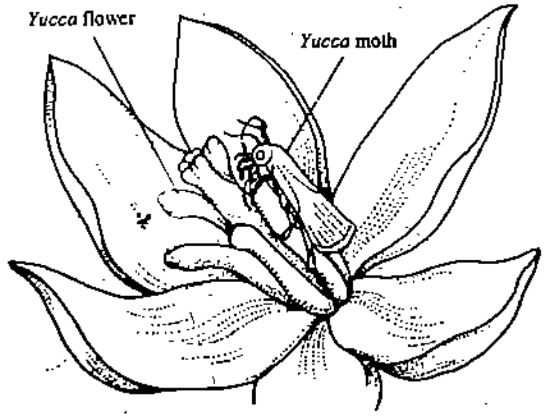

चित्र 10.9 : *यक्का* पुष्प को परागित करता *यक्का* शलभ।

पुष्पों और उनके परागणकारियों के सहविकास में मकरंद एक महत्वपूर्ण कारक रहा है। पुष्प और परागणकारी के संबंध को मकरंद के स्राव की मात्रा, स्राव की दर, अवसान या उसकी बहाली, ये सब प्रभावित करते हैं। मकरंद स्राव का आरंभ परागणकारी की क्रियाशीलता शुरू होने के साथ तुल्यकाली होती है। कई उदाहरणों में यह सहविकसित परागणकारी के सक्रिय होने के सिर्फ कुछ घंटे पहले होता है।

तितलियों तथा अन्य परागणकारियों का भोजनखोजी व्यवहार उनकी विकासीय अवस्था पर निर्भर करता है। धूप, हवा और तापमान जैसे बाहरी कारकों के अलावा तितली का भोजन खोजने का पिछला अनुभव भी भोजनखोजी आचरण में भारी परिवर्तन ला सकता है। यह व्यवहार पुष्पों की बनावट, रंग, ऊंचाई तथा प्रचुरता से भी प्रभावित होता है।

पुष्प-भ्रमण में व्यतीत किए जाने वाले समय में भारी भिन्नताएं देखने में आती हैं। अधिकांश तितलियां एक फूल पर औसतन 30 सेंकड बिताती हैं। *जोइस एक्टोवा* तथा *क्रैसिडा क्रैसिडा* एक पुष्प पर बहुत ही कम समय बिताती हैं, जबकि *एक्रिया एंड्रोमैका* एक पुष्प पर काफी ज्यादा समय बिताता है। एक पुष्प पर उतरने पर अधिकतर तितलियां मकरंद चूसते समय अपने पंखों को सीधे खड़ा कर मोड़ लेती हैं।

सहविकास में कभी-कभी खाद्य-जाल (food web) के एक से अधिक चरण सम्मिलित रहते हैं। एक रोचक स्थिति शाही तितली (monarch butterfly) *डैनौस प्लेक्सिपस* में दिखाई देती है। यह जाति कशेरुकी परभक्षियों को अपच्य होती है। मिल्कवीड (milkweed) पादपों में पाए जाने वाले कुछ विषाक्त ग्लाइकोसाइडों को यह तितली पृथक कर उनसे पक्षी परभक्षियों के प्रति एक प्रभावी सुरक्षा कवच बना लेती है। यह तितली अन्य कीटों के लिए अपाच्य पादप को खाने के अलावा, यह उस पादप के आविषों को परभक्षियों से स्वयं की रक्षा करने के भी काम ला सकती है।

पुष्पी मकरंदकोश मकरंद पैदा करते हैं, जिसका अनुकूलन महत्व संभावित परागणकारियों में इसके प्रति आकर्षण में हैं, जिनके लिए मकरंद ऊर्जा से भरपूर भोजन का एक स्रोत है। कुछ मकरंद विशेषकर शर्कराओं के साथ-साथ अमीनो अम्लों से भी भरपूर रहते हैं। कुछ मकरंदों में प्रमुख शर्करा सुक्रोस होती है, तो अन्य में शर्करा ग्लूकोज और फ्रुक्टोज के रूप में तथा कुछ अन्य में तीनों शर्कराएं समान मात्रा में पाई जाती हैं। शर्करा से भरपूर मकरंद में अमीनो-अम्ल भी भरपूर मात्रा में रहते हैं मकरंद में पाए जाने वाले महत्वपूर्ण अमीनो अम्लों में "आवश्यक" अमीनो अम्ल शामिल हैं: आर्जिनीन, हिस्टीडीन, लाइसिन, ट्रिप्टोफान, फिनाइलऐलानीन, मिथियोनिन, थ्रियोनिन और वैलीन। अर्ध-आवश्यक अमीनो अम्ल हैं: सेरीन, ग्लाइसीन और प्रोलीन; और साधारण अमीनो अम्ल हैं: एलैनीन, एस्पार्टिक अम्ल तथा ग्लूटामिक अम्ल। अधिकतर तितली-परागित पुष्पों के मकरंद भी विशेष रूप से साधारण अमीनो अम्लों के साथ-साथ सेरीन, ग्लाइसीन, हिस्टीडीन और लाइसीन से भरपूर रहते हैं। मधुमक्खी परागित पुष्पों के मकरंद सेरीन, एस्पार्टिक अम्ल, ग्लूटामिक अम्ल, ग्लाइसीन, हिस्टीडीन और लाइसीन से संपन्न होते हैं। मुख्यत: शलभों, मक्खियों, पक्षियों तथा अन्य जंतुओं से परागित होने वाले पुष्पों के मकरंद में प्राय: अधिकांश अमीनो अम्ल अल्प मात्रा में पाए जाते हैं।

अमीनो अम्ल से भरपूर मकरंदों में प्राय: कुछ लिपिड तथा/या प्रतिऑक्सीकारक भी थोड़ी मात्रा में पाए जाते हैं। ऐसे पुष्प जिनके मकरंद में लिपिड मिलते हैं उनके उदाहरण हैं *एब्रोनिया लैटिफोलिया, कैलिस्टेमॉन* जातियां, *जैकैरांडा ओवलिफोलिया* तथा *ट्राइकोसीरियस* जातियां। एस्कॉर्बिक अम्ल सहित प्रतिऑक्सीकारक *ईनोथेरा, धतूरा, लिलियम* तथा *सेन्टौरिया* आदि के मकरंदों में पाए जाते हैं।

मकरंद के अधिकांश घटक विशेषकर शर्कराएं उपभोक्ताओं के लिए पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। अमीनो अम्ल अनेक कीटों के लिए भोजन के अच्छे स्रोत हैं। मकरंद में विद्यमान लिपिडों को मधुमक्खियां और मक्खियां पचाकर उन्हें स्वांगीकार कर लेती हैं। मकरंद में यदा-कदा एल्कैलॉइड, अप्रोटीनी अमीनो अम्ल तथा ग्लाइकोसाइड भी मिलते हैं। ये रक्षी हो सकते हैं जो अनुपयुक्त आगन्तुकों को दूर रख पुष्पों पर अधिक कार्यक्षम परागणकारियों के निर्बाध आगमन को बढ़ावा देते हैं।

चटक रंग और/या सुगंधित पुष्प कीटों को मकरंद तथा पराग की ओर आकर्षित करते हैं। जंतु पादप सहविकास के संबंध में एक रोचक प्रश्न यह उठता है कि क्या प्राकृतिक चरण या सहविकास ने परागणकरियों को पुष्पों पर अपने आगमन की आवृत्ति को बढ़ाने के लिए बाध्य किया है? भौंरे भोजन खोजने की कला विशिष्ट फूलों से सीखते हैं जिनसे उन्हें भोजन के रूप में अच्छा पुरस्कार मिलता है।

कुछ मधुमक्खियां किसी एक खास समय पर सुलभ विविध पुष्पों पर भोजन खोजती हैं। चूंकि ये पुष्प आकारिकी में भिन्न होते हैं, इसलिए इन फूलों से पराग और मकरंद पाने के लिए मधुमक्खी को भिन्न प्रकार का व्यवहार अपनाना पड़ता है। उदाहरण, *सोलैनम डलकैमारा* के पुष्पों को परागणकारी द्वारा बड़े जोरों से हिलाया जाता है ताकि वे नलिकाकार परागकोशों से पराग मुक्त कर दें। एक मधुमक्खी को

इम्पेशिएन्स बाइफ्लोरा के पुष्प से मकरंद पाने के लिए उसमें मौजूद एक नलिका मार्ग तक पहुंचकर उसमें एक विशेष दिशा से प्रवेश करना पड़ता है। असल में ऐसा प्रतीत होता है कि इन पुष्पों को मधुमक्खियां तब भी बड़ी तत्परता से तलाशती हैं जब पुष्प प्रायः छितरे होते हैं। वह इसलिए कि ये मधुमक्खियों को बेहतरीन भोजन उपलब्ध कराते हैं। *आइरिस वर्सीकलर, वैक्सीनियम* जाति तथा अन्य अनेक जीनस के पुष्पों में हरेक तक एक भिन्न तथा विशिष्ट विधि से पहुंचना होता है। इन सब विशिष्ट विधियों को कालांतर में ही सीखा जाता है।

मधुमक्खियों को कितनी बार और किस सीमा तक पुरस्कृत किया जाएगा इसको प्रभावित करने वाला एक और महत्वपूर्ण कारक है उनकी जिह्वा की लंबाई (चित्र 10.10)। लंबी-जिह्वा वाले भौंरे लंबी दलपुंज नलिका वाले पुष्पों के पास लघु-जिह्वाधारी भौंरों की तुलना में अधिक सुगमता से जा सकते हैं। भौंरों की भोजनखोजी अभिरुचियों का संबंध पुष्पों से सहजता से मकरंद निकाल लेने से हो सकता है।

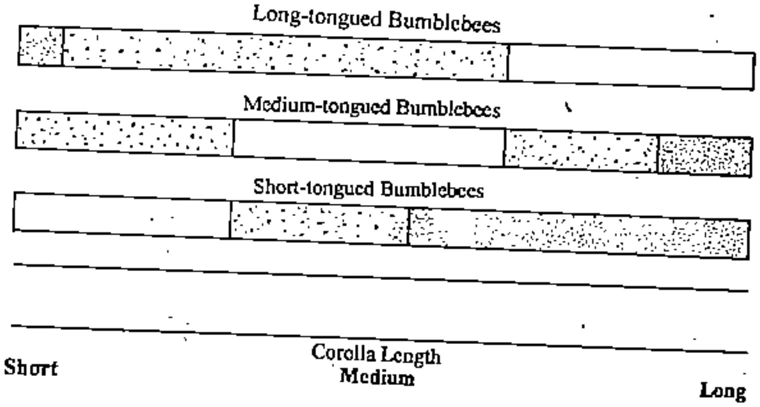

चित्र 10.10 : उन प्रक्रमों को दर्शाता मॉडल जो एक भौंरे की जीभ की लंबाई और वह जिन पुष्पों का विचरण करता है उनके दलपुंजों की लंबाई के परास के बीच संगति दिखाता है।

= दलपुंज गहराई का वह परास जिसमें अधिकतम अभिरुचि दिखाई जाती है।

= दलपुंज की गहराई का वह परास जिसमें निम्न नेट ऊर्जा अंतर्ग्रहण की दर के कारण कम अभिरुचि दिखाई जाती है। ऐसा मुख्यतः अन्य मधुमक्खियों की अनुपस्थिति के कारण होता है।

= आकारिकी सीमा : बहुत छोटी या बहुत लंबी जीभ।

10.6 वैध परागणकारी और अवैध पुष्प-अतिथि

पुष्पों पर कीटों के आगमन से आवश्यक नहीं परागण हो ही जाए। असफल आगमन एक तरह की चोरी है और नाजायज़ अतिथियों को "चोरों" तथा "दस्युओं" की श्रेणी में बांटा जा सकता है। चोर सिर्फ उन्हीं स्रोतों को चट कर जाते हैं जिन्हें साधारणतया जायज़ परागणकारी उपभोग किया करते हैं। ऐसे अपरागणकारी चोरों के कुछ उदाहरणों में कुछ विशेष चींटियां, रसाद (थ्रिप्स) और अन्य लघु कीट शामिल हैं। दूसरी ओर दस्यु न केवल परपोर्षा से मकरंद लूट लेते हैं बल्कि पुष्प ऊतकों को क्षति भी पहुंचा जाते हैं। ऐसी डकैतियां संयुक्तदली (sympetalous) पुष्पों में पड़ती हैं जो एक परागणकारी के लिए संरचना की दृष्टि से अनुकूलित होते हैं। कुछ खास किस्म के भौंरे और *जाइलोकोपा* जाति के कीट दस्युओं के कुछ उदाहरण हैं। मध्य अमेरिका में पाया जाने वाला *लेस्ट्रीमेलिटा लिमाओ* यानि "जम्बीर भ्रमर" (जिसे "दस्यु भ्रमर" भी पुकारा जाता है) का उदाहरण नीचे दिया जा रहा है। जम्बीर भ्रमर के श्रमिकों के पास कॉर्ब्यूबिली या अन्य पराग वाहक नहीं होते। इसलिए जीवित रहने के लिए दूसरी कॉलोनियों पर हमला कर उन्हें लूटते हैं। दस्यु इस कार्य के लिए एक रणनीति अपनाते हैं, जिसमें वे अपनी वर्धित चिबुक ग्रंथियों से काम लेते हैं जो नींबू की तीखी गंध छोड़ते हैं। यह जम्बीरी गंध उस कॉलोनी की विशिष्ट गंध को दबा देती है, जिस पर इन्हें आक्रमण करना होता है।

व कॉलोनियां। कुछ सुरक्षाकर्मी तैनात रखती हैं जो हमलावरों या दस्युओं को कॉलोनी में प्रवेश करने से रोकते हैं। यह सुरक्षादस्ता अपनी जाति के सदस्यों को उस विशिष्ट गंध से पहचान लेता है। कुछ अजनबी यानि दस्यु भ्रमर जब जबरन छत्ते में प्रवेश करते हैं तो उन्हें यह सुरक्षा दस्ता मार डालता है। मगर इस प्रक्रम में तीखी जम्बीरी गंध फैल जाती है, जिससे छत्ते के सुरक्षा दस्ते के लिए अपनी ही जाति की विशिष्ट गंध को पहचान पाना असंभव हो जाता है। सो वे अब सुरक्षा का कार्य नहीं कर पाते। फलस्वरूप दस्यु भ्रमर बड़ी संख्या में छत्ते पर टूट पड़ते हैं। असल में पहले आक्रमण करने वाले भ्रमरों द्वारा छोड़ी नींबू की सुगंध ही दस्यु भ्रमर के अन्य सदस्यों को विजित कॉलोनी की ओर आकर्षित करने में सहायक होती है।

मकरंद लूटने वाले कीट जायज़ परागणकारी को उसके मकरंद से वंचित तो करते हैं मगर परागण में कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं निभाते। परंतु वे परागणकारी को मकरंद की खोज में अनेक पुष्पों का भ्रमण करने के लिए विवश कर देते हैं। इस तरह वे परोक्ष रूप से जायज़ परागणकारी के द्वारा परागण को बढ़ावा देते हैं। वस्तुतः ये दस्यु यदि मकरंद नहीं लूटें तो परागणकारी की मकरंद की जरूरतें एक या कुछ गिनचुने फूलों से ही पूरी हो सकती हैं। तब वे अन्य पुष्पों पर जाने की इच्छुक नहीं रहेंगी। कुछ तितलियां जहां कुछ फलियों में मकरंद दस्युओं का काम करती हैं तो कुछ में जायज़ परागणकारियों का। चींटियां, *एस्क्लेपियास क्यूरासैविका* के तितली-परागित पुष्पों में मकरंद-दस्युओं का काम करती हैं। भौरों की कुछ जातियां प्राथमिक मकरंद दस्यु हैं। ये दलपुंज नलिकाओं के आधारों में छेद कर जबरन मकरंद निकाल लेते हैं। अन्य जातियां द्वितीयक दस्यु होती हैं। ये प्राथमिक दस्युओं द्वारा किए गए छिद्रों से मकरंद निकालती हैं। मकरंद-दस्यु भौंरे स्वकयुग्मी पादप *पेडिक्यूलैरिस पैलस्ट्रिस* के लिए कारगर स्वपरागणकारी हैं।

डकैती या चोरी के संदर्भ में एक रोचक बात ध्यान की है कि मधुमक्खियों के विपरीत भौंरे बड़े ही गोपनशील और आत्मकेन्द्रित होते हैं, सो अगर वे अच्छा भोजन स्रोत खोज लेते हैं तो इसकी सूचना वे अन्य सदस्यों को नहीं देते। इस मामले में इनका व्यवहार मधुमक्खियों के विपरीत है जो अपने छत्ते के साथियों को यह जानकारी प्रचारित करती हैं।

10.7 पुष्प अतिथियों को छलावा

छलावा परागण जीवविज्ञान में सुज्ञात है विशेषकर कीटों के संदर्भ में, जिनमें भेदमूलक क्षमता अल्पविकसित रहती है। कुछ पादपों के पुष्प कुछ रोचक, चतुराई से भरपूर छलने की कला प्रदर्शित करते हैं। इनमें वास्तविक खाद्य पराग के स्थान पर पीले रंग का आकर्षक नकली पराग विकसित होता है, जो परागणकारियों का ध्यान विरल, निषेच्य पराग से हटाता है। निषेच्य पराग एक हल्का सा, ध्यान न आकर्षित करने वाला रंग लिए रहता है। यहां ध्यान देने की बात यह है कि इस प्रक्रम में कीट को पादप ही छल रहा है न कि कीट पादप को।

साइप्रिपीडियम कैल्सियोलस नामक आर्किड भी मधुमक्खियों को लुभाने के लिए ऐसा ही छलावा करता है। फलस्वरूप कुछ मधुमक्खियां ही इनके पुष्पों पर अवतरित होती हैं तथा कुछ मधुमक्खियां प्रवेश मार्ग के रास्ते बाहर निकल जाती हैं। मध्याकार *ऐन्ड्रीना हीमोरिया* मादा मधुमक्खियां निर्गम छिद्रों से स्वयं को बाहर निकाल लेती हैं, प्रयास में वे पुष्प की परागण में सहायता कर जाती हैं। आर्किड के दो अन्य उदाहरण हैं *हिमैन्टोग्लोसम* और *बैरलिया* हैं। यह भी छलपूर्वक अपने परागणकारियों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

कुछ पुष्प कुकुरमुत्ते की जैसी भ्रामक गंध छोड़ते हैं। यह भ्रामक गंध मादा मक्खियों को भ्रम में डालकर उन्हें इन पर अंडे देने के लिए आकर्षित करती है तथा ये पादप इस प्रक्रम में परागित हो जाते हैं। अन्य पुष्प जातियां परागण के लिए कीटों को फंसा लेते हैं, और उन्हें तब तक बंदी बनाए रखते हैं जब तक वे परागण सेवा का कार्य पूरा नहीं कर लेते।

उष्णकटिबंधी पादपों की कुछ विशेष जातियों में ऐसे पुंकेसरी पुष्प होते हैं जो अपने परागणकारियों को कुछ पारितोषिक (पराग, मकरंद या दोनों) देते हैं। मगर इन्हीं जातियों के स्त्रीकेसरी पुष्प इस तरह का

पारितोषिक प्रदान नहीं करते इसलिए ये पुष्प अतिथियों के लिए भ्रामक होते हैं। *कैरिका पपाय,* इसका एक सुपरिचित उदाहरण है।

बैनिस्टेरियोप्सिस म्यूरिकैटा और *हेटरोप्टेरिस एसीरॉइडीस* के अग्रंथिल रूपों (eglandular morphs) पर तेल संग्राही मधुमक्खियों का आगमन व्यवहार बहुत रोचक है। ये दोनों पादप जीनस मैलपीजिएसी कुल के हैं। मधुमक्खियां इन अग्रंथिल पुष्पों पर स्पष्टतया मूलवश ही उतरती है (चित्र 10.11) जिसका संकेत उतरने पर उनके पुष्प को खुरचने और ठीक वैसे ही व्यवहार से मिलता है जैसा वे ग्रंथिल पुष्पों पर स्थित तेल-ग्रंथियों को खुरचने में करती है(चित्र 10.12)। अपनी भूल महसूस होते ही मधुमक्खियां या तो अग्रंथिल पुष्पों को छोड़ देती हैं या फिर अपना ध्यान पराग संग्रह पर केंद्रित करती हैं। *सेन्ट्रिस* जीनस की मधुमक्खियों की वृहदाकार जातियां तो अपनी भूल का पता लगते ही पुष्पों से उड़ जाती हैं मगर इस जीनस की छोटी मधुमक्खियां अपनी भूल को पराग संग्रह करके एक लाभकर आगमन में बदल लेती हैं। उपरोक्त दोनों जातियों के अग्रंथिल पुष्प इस तरह छलावे से तेल-संग्राही *सेन्ट्रिस* जातियों को आकर्षित करते हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि अग्रंथिल पुष्प परागण किस तरह करते हैं। इनमें परागण छलपूर्वक आकर्षित, अवसरवादी, मधुमक्खियों के तेल के साथ पराग संग्रह करने के मिले-जुले व्यवहार पर निर्भर करता है, जैसे *एपीकेरिस श्रोटकाई* में।

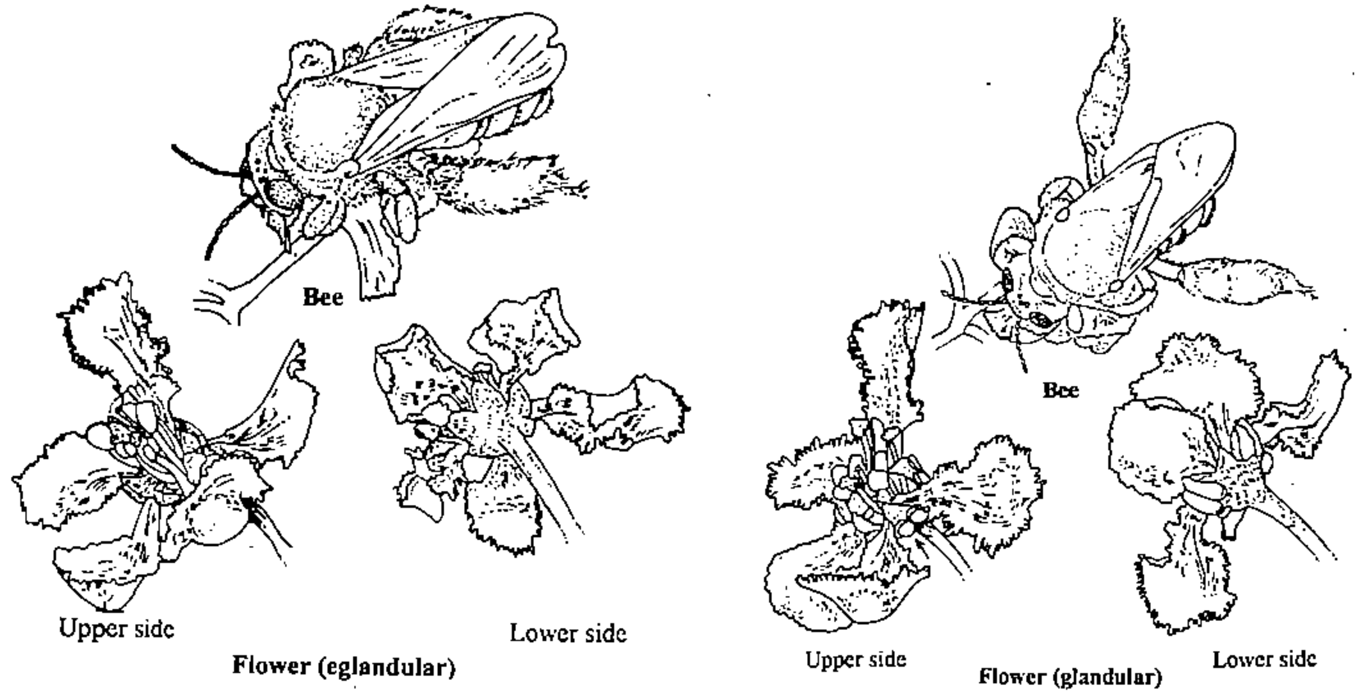

चित्र 10.11 और 10.12 : *बैनिस्टीरियोप्सिस म्यूरिकैटा* के अग्रंथिल (चित्र 10.11, बायीं ओर), और ग्रंथिल (चित्र 10.12, दायीं ओर) पुष्पों के ऊपरी और निचले पृष्ठ चित्र में तीर एक तेलांग दिखा रहा है। (सैज़िमा एंड सैजिमा 1989 से)।

कूटयुग्मन (Pseudocopulation) : ऐसा कुछ आर्किडों में परपरागण को सुनिश्चित करने की एक युक्ति के रूप में यह होता है। यूरोप, अफ्रीका और मध्य-पूर्व में पाया जाने वाला लघुरूपी आर्किड *ओफ्रिस* में अपने परागणकारी बर्र को आकर्षित करने का एक अनूठा तरीका विकसित किया है। नर बर्र, पुष्प की ओर आकर्षित होता है और उसके ऊपर मैथुनमुद्रा बनाता है जो इस प्रकार के छलावे के लिए बड़े ही अच्छी तरह अनुकूलित रहती है। मैथुनकारी नर बर्र इस क्रिया के दौरान इससे आर्किड के पराग पुटों को ढीला कर देता है, जो इसके शरीर से चिपक जाते हैं। नर बर्र एक पुष्प से उड़ कर दूसरे पुष्प पर जाता है तो साथ में पराग को भी वहां ले जाता है। इस दूसरे पुष्प पर पहुंचकर वह जब कूटयुग्मन का फिर से प्रयास करता है तो इस बार अनजाने ही उस पुष्प में परागण या निषेचन को पूरा कर जाता है। बर्र का आर्किड पुष्प के साथ कूटयुग्मन महा विशिष्ट-अनुकूलन का एक उदाहरण है। इससे पादप को भारी लाभ मिलता है मगर बर्र को इससे क्या उपलब्ध होता है यह ज्ञात नहीं है।

उपरोक्त उदाहरण में बर्र एक पादप के प्रजनन को प्रभावित करता है। मगर आप यह जानकर आश्चर्यचकित हो जाएंगे कि ऐसे पादप भी हैं जो मधुमक्खियों के प्रजनन को प्रभावित करते हैं। इनके

होता ही है मगर साथ में अकेले नर और मादा मधुमक्खियों को एक-दूसरे से मिलाने में यह सहायक है।

बोध प्रश्न 4

निम्न कथनों में सही या गलत बताइए।

i) *यक्का* पादप और इसके परागणकारी शलभ के बीच का संबंध अदृढ़ सहविकास का एक उदाहरण है।

ii) पुष्पों में मकरंद-उत्पादन का पादप-परागणकारी संबंध पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

iii) वायु वेग, तापमान और धूप जैसे भौतिक कारक तितली-परागणकारियों के भोजन खोजी व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

iv) मकरंद मुख्यत: शर्करायुक्त यौगिक हैं।

v) तितलियों की कुछ क़िस्में कुछ पादपों में मकरंद दस्यु बनकर जाती हैं तो कुछ अन्य पादपों में जायज़ परागणकारी होती हैं।

vi) भोजन के स्रोत की जानकारी संप्रेषित करने के मामले में भौंरों का व्यवहार मधुमक्खियों के विपरीत होता है।

vii) परागणकारी कई रोचक, चतुर और छलने वाले लक्षण दर्शाते हैं।

viii) कुछ आर्किड पुष्पों में होने वाला कूटयुग्मन परागण के निष्पादन में सहायक है।

10.8 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- परागण के दौरान वर्तिकाग्र की सतह तक परागकणों को विभिन्न प्रकार के सजीव और निर्जीव वाहक पहुंचाते हैं। परपरागण कई दृष्टि से पादपों के लिए लाभप्रद है। इससे उत्पन्न होने वाली संततियां विभिन्न प्रकार की वातावरणीय परिस्थितियों के लिए बेहतर ढंग से अनुकूलित रहती हैं। स्वबंध्यता, भिन्नकालपक्वता, विषमवर्तिकात्व तथा पृथकलैंगिकता जैसी युक्तियां परपरागण को प्रोत्साहित करती हैं।

- अपने-अपने सजीव परागणकारियों के लिए पुष्पों ने चटकीले परिदलपुंज, मकरंद, अनूठी गंधों और रेज़िन के रूप में आकर्षियों का विकास किया है। अपरागणकारी और अनियमित पुष्प अतिथियों को दूर रखने के लिए भी पुष्पों में तरह-तरह की भौतिक, रासायनिक और जैविक रुकावटें पायी जाती हैं। मकरंद, परागणकण, उष्मा के रूप में मिलने वाली ऊर्जा, तथा प्रतिजैविक-युक्त पदार्थ परागणकारियों को पुरस्कार में पुष्पों से प्राप्त होते हैं।

- भिन्न-भिन्न पादप जातियों में एक या अधिक विशिष्ट परागणकारी होते हैं। सामान्य परागणकारियों के वर्ग हैं मधुमक्खियां, बर्र, भौंरे, मोलस्क, पक्षी, चमगादड़, शलभ या तितलियां । परागण के लिए अपने विकास के दौरान पादपों ने यथेष्ट परागण आकर्षण और पारितोषिक प्रणालियों के साथ पुष्प विशेषताएं विकसित की हैं।

- पादप और उनके परागणकारियों का विकास निकटता से हुआ है।

- परागणकारियों के अलावा भी अन्य अनेकों किस्म के कीट पुष्पों के पास आते हैं, जो उन पादप संसाधनों का लाभ उठाने के लिए विशेष रणनीतियां अपनाते हैं जो वस्तुत: उनके परागणकारियों के लिए बने होते हैं।

- कुछ पादपों में छलावे की प्रवृत्तियां पायी जाती हैं, जिसका उपयोग वे उन पुष्प अतिथियों पर करते हैं जिनमें से कुछ में भेदपरक क्षमता अल्प विकसित रहती है। ऐसा वह अपना परागण परिपूर्ण करने के लिए करते हैं।

10.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. आवृतबीजियों में पाए जाने वाले अनुकूलनों की सूची बनाइए जो स्वपरागण को रोकते हैं या उसकी संभावनाओं को कम करते हैं।

....

....

....

....

....

....

2. "कीटों को आकर्षित करने के लिए पुष्पों में रंगीन पंखुड़ियां पायी जाती हैं।" इस कथन का विवेचन कीजिए। आप किस प्रकार यह निर्धारित करेंगे कि कीटों को आकर्षित करने में पुष्पों के रंग की कोई भूमिका होती है या नहीं?

....

....

....

....

....

....

....

3. पुष्पी पादप परागणकारियों के प्ररूपों के अनुसार अनेक अनुकूलन दिखाते हैं। एक अज्ञात फूल को ध्यान पूर्वक देखकर या उसे विच्छेदित कर उसके परागणकारी की संभाव्य पहचान बताइए? इस अभ्यास को अपने इलाके के दस भिन्न पुष्पों पर दोहराइए और उन्हें एक तालिका में दर्ज कीजिए।

4. मधुमक्खी और भौंरे के भोजन के किसी नए और संपन्न स्रोत का पता लगने पर उनके व्यवहार की तुलना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

5. मधुमक्खियों और पुष्पों के बीच किस प्रकार का सहजीवी संबंध पाया जाता है? अन्य प्रकार की सहजीविता से यह किस तरह भिन्न है?

....

....

....

....

....

....

6. *यक्का* पुष्पों को सिर्फ *प्रोन्यूबा* शलभ ही परागित कर सकता है जिसकी मादा पुष्प के अंडाशय में अंडे उत्सर्जित करते समय उसकी खोखली वर्तिका में पराग भर देती है। इसके लारवा नवनिर्मित बीजों में से कुछ को भोजन के रूप में खा जाते हैं। जनन के लिए दोनों जातियां एक दूसरे पर पूरी तरह से निर्भर हैं। जैव विकास द्वारा इस प्रकार के सहजीवी संबंध की उत्पत्ति में निहित समस्याओं और *यक्का* तथा शलभ के पूर्वजों के बीच संभावित प्रकार के परस्पर-संबंधों के बारे में बताइए।

....

....

....

....

....

....

7. आवृतबीजी और कीट जीवों के बेहद विविध समूह हैं। यह विविधता इन दोनों समूहों के बीच सहोपकारी संबंधों के द्वारा किस प्रकार प्रेरित हो सकती है?

....

....

....

....

....

....

10.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1. i) पुष्प की नर जनन संरचना - शक्राणु; तथा मादा जनन संरचना - इसकी अंड कोशिका तथा परागण का वाहक यदि कोई हो।

   ii) संकेत : पादपों में लैंगिक जनन में परागण आवश्यक चरण है जिसके फलस्वरूप बीज का निर्माण होता है।

   iii) नहीं। यह पुष्प में प्रफुल्लन के समय में ही पूरा हो सकता है।

   iv) संकेत : परपरागण आनुवांशिक विविधता को जन्म देता है। यह संततियों को प्रबल और विविध वातावरणीय परिस्थितियों में बेहतर अनुकूलित बनने में सहायक है। इसी कारण परपरागित पादप, स्वपरागित पादपों की तुलना में अधिक व्यापक रूप से फैले रहते हैं।

   v) एल.एस.ई -06 पाठ्यक्रम की इकाई-3 के भाग 3.2; तथा इस इकाई का भाग 10.2 देखिए।

2. कोष्ठकों में दिए गए गलत शब्द, जिन्हें काटना है, वे निम्नलिखित हैं।

   i) कोई नहीं

   ii) घनिष्ठ

   iii) पक्षी और चमगादड़

   iv) वायु

   v) भृंगों

   vi) आकर्षी

   vii) तक्षमक्षिकाएं

   viii) पक्षियों

3. संकेत : (i) मधुमक्खियां - पुष्प लक्षण : दिन में खुलने वाले पुष्प, पीले/नील वर्णी, मधु-निर्देशक उपस्थित, परागणकारी के लिए पारितोषिक के रूप में मकरंद/पराग या दोनों। पराकणकारी का व्यवहार : दोलन नृत्य द्वारा मकरंद/पराग की स्थिति की जानकारी।

4. i) गलत

   ii) गलत

   iii) सही

   iv) गलत

   v) सही

   vi) सही

   vii) गलत

   viii) सही

अंत में कुछ प्रश्न

1. देखिए भाग 10.2
2. देखिए भाग 10.3
3. देखिए भाग 10.3, 10.4
4. देखिए भाग 10.4
5. देखिए भाग 10.4
6. देखिए भाग 10.5
7. देखिए भाग 10.5

NOTES

NOTES

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -02

पादप विविधता-II

खंड

3ए

आर्थिक वनस्पतिविज्ञान

इकाई 11

अनाज और मिलैट 5

इकाई 12

शिंब (दालें) 50

इकाई 13

फल तथा दृढ़फल 82

इकाई 14

सब्जियाँ 131

इकाई 15

पादप तेल और वसाएं 175

इकाई 16

शर्करा और स्टार्च 217

खंड 3ए आर्थिक वनस्पतिविज्ञान

हाल के वर्षों में जनसंख्या में हुई बढ़ोतरी ने विश्व के विभिन्न संसाधनों पर काफी चिंताजनक रूप से दवाव डाला है। इसने आर्थिक वनस्पति विज्ञान को मानव सरोकार की मुख्य धारा में ला दिया है। इस पाठ्यक्रम में, हमने भी वनस्पति विज्ञान की इस बहुत ही प्रासंगिक शाखा को वृहत्तर परिपेक्ष्य में देखा है। जिसके परिणामस्वरूप खंड 3 जो सिर्फ आर्थिक वनस्पति विज्ञान से संवन्धित है, वह पाठ्यक्रम के अन्य खंडों से अधिक भारी हो गया है। पाठ्य सामग्री के प्रवंधन में आपकी सुविधा के लिए हमने इसे दो उप-खंडों 3ए तथा 3बी में विभाजित कर दिया है।

मानव तथा पशुओं के लिए पादप खाद्य का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत अनाज हैं। सभी अनाज घास कुल पोएसी (Poaceae) के सदस्य हैं। गेहूं, मक्का तथा चावल अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उन्होंने सभ्यता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। अनाजों में अन्य खाद्य पादपों की अपेक्षा अधिक मात्रा में कार्बोहाइड्रेट्स पाए जाते हैं। साथ ही प्रोटीन्स, कुछ वसा तथा विटामिन्स भी पाए जाते हैं। इकाई 11, जो इस खंड की पहली इकाई है उसमें अनाजों तथा मिलेट्स (ज्वार, वाजरा आदि) के बारे में बताया गया है। इसमें गेहूं, चावल तथा मक्का जो कि भोजन के प्रमुख स्रोत हैं, उनके बारे में विस्तार से बताया गया है। इसके अतिरिक्त, अन्य अनाजों जैसे बाजरा, जई तथा राई के बारे में भी बताया गया है। यह इकाई इन सभी अनाजों के वानस्पतिक विवरण, उत्पत्ति, खेती, प्रजनन कार्यक्रमों तथा उपयोगों से संबन्धित जानकारी प्रदान करती है। मानव निर्मित प्रसिद्ध अनाज *ट्रिटिकेल* (*Triticale*) का भी वर्णन किया गया है।

अनाज-फली संयोजन ने प्रत्येक प्रमुख सभ्यता के आधार-तंत्र के महत्वपूर्ण भाग का निर्माण किया है। ये वर्तमान काल के लिए भी सत्य है। फलियां अब भी प्रोटीन्स का प्रमुख स्रोत हैं विशेष रूप से शाकाहारी भोजन में। साथ ही, फलीदार बीज कार्बोहाइड्रेट्स से समृद्ध होते हैं और कुछ तेलों तथा वसा के भी समृद्ध स्रोत होते हैं। इनका नाइट्रोजन स्थिरीकरण गुण, आसान खेती, तेजी से वृद्धि, निम्न बीज-जल तत्व के कारण सरल संग्रहण तथा परिवहन आदि कुछ अन्य विशेषताएं हैं। इस पाठ्यक्रम की बारहवीं इकाई, जिसका शीर्षक फलियां (दालें) है, वह इस दिलचस्प तथा बहुत ही महत्वपूर्ण पादप समूह के बारे में है। इस इकाई में आप अपने देश में विस्तृत रूप से खाई जाने वाली कुछ फलियों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

एशियाई क्षेत्र में उष्ण कटिबंधी फलों की समृद्ध विविधता मौजूद है। यह कुछ प्रमुख तथा गौण / लघु फलों के देशीकरण तथा विविधरूपण का स्थान है जिनकी 400 से अधिक समृद्ध जातियाँ यहां पाई जाती हैं। भारत में सदाबहार उष्णकटिबंधी से लेकर शीतोष्ण पर्णपाती तक लगभग सभी प्रकार के फलों की फसलें उगाई जाती हैं। इकाई 13 में विभिन्न प्रकार के प्रमुख फलों तथा दृढ़फलों की उत्पत्ति, वितरण, पारिस्थितिकी, वनस्पति तथा उपयोगों के बारे में बताया गया है। इस इकाई में आम, केला, अन्नानास, पपीता, अमरूद, अंजीर, सिट्रस फलों, मेलन / तरबूज आदि, लीची, अनार, सेब तथा नाशपाती के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है क्योंकि ये फल भारत में बहुत अधिक खाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त विभिन्न दृढ़फलों जैसे कि काजू, पिस्ता, अखरोट, बादाम तथा चेस्टनट का भी वर्णन किया गया है।

शाक / सब्जियां पादपों का विशाल तथा विविध समूह बनाती हैं जिनका विश्व के वाणिज्य में काफी महत्व है। वे कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन के स्रोत के रूप में अनाजों के बाद दूसरे स्थान पर हैं। सब्जियों का पोषण मूल्य अपरिहार्य खनिज लवणों तथा विटामिनों की उपस्थिति के कारण बहुत अधिक बढ़ जाता है जबकि उनका रूक्षअंश पाचन में सहायक होता है। इकाई 14 हमारे कुछ प्रचलित शाकों / सब्जियों की उत्पत्ति, वितरण, पारिस्थितिकी, वनस्पति तथा उपयोगों के बारे में है जैसे कि आलू, शकरकंद, कैसावा, प्याज, लहसुन, चुकंदर, गाजर, पत्तागोभी, सलाद / लेट्यूस, मूली(?)क, कुकरबिट, टमाटर, बैंगन, मिर्चों तथा भिन्डी। इसमें उनके कुलों तथा वानस्पतिक नामों के बारे में भी जानकारी प्रदान की गई है।

तेल तथा वसा प्रदान करने वाले पादप, पादपों का एक और महत्वपूर्ण समूह बनाते हैं। इनका मूल्य न सिर्फ भोजन में इनके उपयोग के लिए ही होता है वल्कि हमारे नित्य प्रति के जीवन में इनके अन्य उपयोगों के कारण भी होता है। हाल ही के वर्षों में इनकी मांग दो कारणों से निरंतर बढ़ती

जा रही है: एक, इनमें से अनेक विभिन्न प्रकार के उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयोग किए जाते हैं; दो, ये अनवीकरणीय ऊर्जा साधनों के निरंतर ह्रास के कारण ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में उभर रहे हैं। खाद्यान्नों / अनाजों के बाद तिलहन, पादप तेलों तथा वसा के मुख्य स्रोत, भारत में कृषि उत्पादों का दूसरा प्रमुख संवर्ग बनाते हैं। ये, इसलिए, हमारी कृषि अर्थव्यवस्था के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। इसके बाद हमारे देश की प्रमुख तिलहन उत्पादक फसलों का विस्तृत विवरण दिया गया है।

कार्बोहाइड्रेट्स- जो कि प्रकाश संश्लेषण के प्राथमिक उत्पाद हैं, वे हमारे भोजन के एक प्रमुख घटक हैं। ये प्रकृति में शर्करा, मांड तथा सेलुलोस और अन्य जटिल पदार्थों के रूप में विस्तृत रूप से फैले हुए हैं। इनमें से, शर्करा तथा मांड आसानी से पच जाते हैं और वे हमें आवश्यक कैलोरीज भी प्रदान करते हैं। उनके प्राकृतिक स्रोतों यानि कि पादपों का अध्ययन, इकाई 16 का विषय है। विश्वभर में अनेकों शर्करा स्रोत उपलब्ध हैं। हमारे देश में गन्ना सबसे प्रमुख स्रोत है। इस स्रोत पादप का विस्तृत विवरण इकाई के पहले भाग में दिया गया है। बाद के भाग में, दो मांड-उत्पादक पादपों, यानि कि, आलू तथा कैसावा का विस्तार से विवरण दिया गया है।

इकाई 11 अनाज तथा मिलैट

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
11.2 गेंहू
11.3 मक्का
11.4 धान / चावल
11.5 राई
11.6 जई
11.7 सोरघम
11.8 जौ
11.9 ट्रिटिकेल
11.10 सारांश
11.11 अंत में कुछ प्रश्न
11.12 उत्तर

11.1 प्रस्तावना

मानव के स्वास्थ्य व उत्तरजीविता के लिए अच्छा भोजन आवश्यक है। मनुष्य अपने भोजन के लिए पादपों (और / अथवा उन जंतुओं पर जो पादप खाते हैं) पर निर्भर है। भोजन से हमें वह सब तत्व प्राप्त होते हैं जिनकी अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यकता होती है। ये पोषक तत्व शरीर के ऊतकों को बनाने, उनमें सुधार करने अथवा उनकी देखभाल के लिए तत्व प्रदान करते हैं। ये शरीर की प्रक्रियाओं को भी नियमित करते हैं तथा ऊर्जा प्रदान कराने वाले ईंधन का कार्य करते हैं। पोषक तत्वों को पाँच प्रमुख समूहों में वर्गीकृत किया गया है : कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, प्रोटीन्स, खनिज तथा विटामिन। ये सभी दैनिक भोजन में महत्वपूर्ण होते हैं, तथा विभिन्न पादपों से प्राप्त किए जाते हैं। अनाज या धान्य की फसलें आदमी के लिए भोजन के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा मूल (staple) या प्रमुख आहार प्रदान करते हैं। इनमें कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन्स, वसा, खनिज तथा विटामिन होते हैं, और इसलिए इनका अच्छा पोषक मूल्य (nutritive value) है। ये खेती करने अथवा घरेलू बनाये गये पहले पादपों में से थे। ये प्राचीन काल से ही मानव द्वारा उगाए तथा उपयोग किए जाते रहे हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जौ तथा गेंहू सबसे पहले पश्चिमी एशिया में लगभग 9000 वर्ष पूर्व उगाए गए थे। इसने मैसोपोटामिया, सुमेरिया, बेबीलोन, मिस्र, ग्रीस, इटली तथा अन्य सभ्यताओं के लिए आधार प्रदान किया। इसी प्रकार, धान ने दक्षिण पूर्वी एशिया में सभ्यताओं के लिए तथा मक्का ने नई दुनिया में सभ्यता के लिए महत्वपूर्ण अनाज का कार्य किया।

अनाज तथा मिलैट के अतिरिक्त कुछ अन्य वानस्पतिक रूप से असंबद्ध द्विबीजपत्री पादप हैं, जिनके बीज भी अनाज के रूप में उपयोग किए जाते हैं। कूटू / बकव्हीट [फैगोपाइरम एस्कुलेन्टम (*Fagopyrum esculentum*)] ग्रेन एमरेन्थस (एमरेन्थस स्पी.) तथा अन्य जिनका उपयोग कम किया जाता है वे कभी-कभी 'कूटअनाज' (*Pseudocereals*) कहलाते हैं।

अनाज सिर्फ मानव के लिए भोजन का कार्य ही नहीं करते हैं परन्तु बहुत से औद्योगिक कार्यों के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। अनाज तथा अन्य घासों का पशुओं के लिए चारे के रूप में भी उपयोग होता है। घास कुल की 10,000 से भी अधिक जातियों में से कुछ ही को मानव द्वारा घरेलू बनाया गया है।

रोचक बात यह है कि पिछले 2000 या अधिक वर्षों से किसी अन्य नयी जाति को खेती के लिए नहीं उगाया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जानने में समर्थ होंगे :

- स्वास्थ्य तथा उत्तरजीविता के लिए भोजन के महत्व के बारे में,
- पादप खाद्य के सबसे महत्वपूर्ण स्रोत के बारे में,
- अनाज तथा मानव में निकट संबंध के बारे में,

- विभिन्न अनाज तथा मिलैट फसलों के बारे में,
  गेंहू
  मक्का
  चावल
  राई
  जई
  सोरघम / ज्वार
  जौ
  ट्रिटिकेल

की उत्पत्ति तथा वितरण; खेती; वनस्पतिक; गुण; प्रजनन तथा सुधार; उपयोग तथा अन्य बातों से संबंधित विवरण।

11.2 गेहूं

वानस्पतिक नाम : *ट्रिटिकम एस्टीवम* लिनियस (*Triticum aestivum* Linn.)
कुल : पोएसी (**Poaceae**),
साधारण नाम : गेंहू
2 n = 42, बी और डी जीनोम

भारत में गेहूं का उत्पादन (मिलियन टन में)

92-93	57.2
93-94	59.8
94-95	65.8
95-96	62.1
96-97	69.3
97-98	66.0

विश्व की एक तिहाई से अधिक जनसंख्या के लिए गेहूं विश्व का सबसे महत्वपूर्ण खाद्य पादप है। पूरे विश्व में करोड़ों व्यक्ति गेहूं के पादप के (बीज या दानों) से बने भोजन पर निर्भर करते हैं। यह संभवत: खेती के लिए ज्ञात सबसे पुरानी फसल है। कृषि के आरंभ के काफी पहले से ही, लोगों ने भोजन के लिए जंगली गेंहू एकत्र किया था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्राचीन काल में कृषि की उत्पत्ति मध्य पूर्व में हुई थी जब गेंहू सबसे पहले उगाया गया था। उत्तरी ईराक में जार्मो में नवपाषाणी स्थलों पर तथा केन्द्रीय एवं उत्तर पूर्वी यूरोप में कार्बनीकृत गेहूं के दानों की उपस्थिति को दर्शाने के लिए कुछ पुरातात्विक प्रमाण उपलब्ध हैं जो 6750 ईसा पूर्व से 7500 ईसा पूर्व काल के हैं। ये तथा अन्य निरीक्षण सुझाते हैं कि गेहूं मध्य पूर्व में घरेलू बनने के पश्चात् पूरे एशिया और यूरोप में तेजी से तथा विस्तृत रूप से फैला।

बॉक्स 11.1 : अनाज

> यह जानकारी दिलचस्प है कि शब्द सीरियल (cereal) की ग्रीक शब्द 'सीरीस' (ceres), से व्युत्पत्ति हुई; जो रोम की पुराण शास्त्र के अनुसार अनाज की, फसल की तथा कृषि की देवी थी। रोम के किसानों तथा लोगों के द्वारा उसकी पूजा उसके द्वारा दिये गये उपहारों के लिए की जाती थी। प्रत्येक वर्ष 12 अप्रैल से 19 अप्रैल तक देवी को सम्मानित करने के लिए एक त्यौहार 'सिरिलिया' (cerealia) मनाया जाता है। जापान में, प्राचीन शिंटो (Shinto) धर्म में अच्छी फसल तथा अच्छे स्वास्थ्य के लिए अनेक विशेष अनुष्ठान किए जाते हैं यहां चावल सबसे महत्वपूर्ण अनाज है। उत्तरी भारत में एक त्यौहार जो बैसाखी (13 अप्रैल) कहलाता है वह भी कृषि से संबन्धित है तथा इसमें फसल से पहले काटे गये दाने देवताओं को अर्पित किए जाते हैं। ये तथा कई अन्य प्रमाण दर्शाते हैं कि अनाज तथा मानव के बीच प्राचीन काल से ही काफी निकट का संबन्ध रहा है।

विभिन्न प्रकार के गेहूं होते हैं तथा आज सबसे अधिक विस्तृत रूप से उगाया जाने वाला गेहूं सामान्य गेहूं अथवा ब्रेड व्हीट (bread wheat) कहलाता है। गेहूं के बारे में अपने ज्ञान के लिए हम लोग रूसी वनस्पति शास्त्री निकोलाई वेवीलोव (1887-1943) के बहुत आभारी हैं। उन्होंने गेहूं को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत करने के लिए विश्व के विभिन्न भागों से उसके 31,000 से अधिक नमूनों का अध्ययन किया। इस ज्ञान में बाद में कोशिका विज्ञान (cytology), शरीरक्रिया विज्ञान (physiology) तथा जैवरसायन के द्वारा प्राप्त जानकारियों से और वृद्धि हुई जिसे जापानी तथा अमरीकी वैज्ञानिकों द्वारा हमें विश्व के गेहुंओं के बारे में महत्वपूर्ण आंकड़े उपलब्ध कराने के लिए प्राप्त किया गया था। अत: विभिन्न प्रकार के गेहुंओं की वर्गिकी (taxonomy) के बारे में जानना

आवश्यक है। यह जानकारी आपको विभिन्न प्रकार के गेहुंओं की उत्पत्ति तथा वितरण को समझने में सहायक सिद्ध होगी।

11.2.1 गेहूं की वर्गिकी, उत्पत्ति तथा वितरण

वेवीलोव ने विभिन्न गेहुंओं को 14 जातियों में वर्गीकृत किया था। अन्य गेहूं के वर्गीकरण विज्ञानियों ने अधिक या कम जातियों को स्वीकार किया है। सभी प्रकार के गेहुंओं को वंश *ट्रिटिकम* में वर्गीकृत किया गया है। यह ग्रेमिनी (Gramineae) कुल, पोइडी (Pooideae) उपकुल तथा ट्रिटिसी (Triticeae) उपवर्ग का सदस्य है गेहूं की विभिन्न जातियों को उनके कोशिका विज्ञान के आधार पर तीन श्रेणियों में समूहित किया गया है।

बॉक्स 11.2 : गेहूं का कोशिका विज्ञान

गेहूं द्विगुणित 2n = 14 गुणसूत्र वाले; चतुर्गुणित (tetraploid) गेहूं 2n = 28 गुणसूत्र वाले तथा षट्गुणित, (hexaploid) 2n = 42 गुणसूत्र वाले होते हैं। इन गेहुंओं का विस्तृत कोशिका विज्ञानी विश्लेषण बताता है कि तीन भिन्न-2 जीनोम होते हैं। द्विगुणित गेहूं * AA* (ए.ए.) जीनोम के रूप में पहचाने जाते हैं। चतुर्गुणित तथा षट्गुणित स्वबहुगुणित (autoploids) (अर्थात् द्विगुणित के समान जीनोम्स लिए हुए) नहीं होते हैं वे असमान जीनोम्स वाले परबहुगुणित (alloploids) होते हैं। चतुर्गुणित गेहूं में * ए ए बी बी *(* A A B B*) जीनोम होता है जबकि षट्गुणित गेहूं में *ए ए बी बी डी डी* (AABBDD) जीनोम होता है। यह कोशिका विज्ञानी ज्ञान व साथ ही अन्य प्रमाणों ने हमें गेहूं तथा अन्य घासों की उत्पत्ति तथा विकास के बारे में जानने में सहायता प्रदान की है। जिसने इस विकास में योगदान दिया है।

सबसे प्राचीन ज्ञात गेहूं द्विगुणित गेहूं है। इन द्विगुणित गेहुंओं की वन्य तथा घरेलू (कृष्य) जातियां हैं। वन्य आइन्कोर्न (einkorn) गेहूं *ट्रिटिकम बोइटिकम* बोइस (*Triticum boeoticum* Boiss) कहलाता है। ये द्विगुणित गेहूं है (2n = 14 ए ए जीनोम) जो पश्चिमी एशिया में काफी विस्तृत रूप से पाया जाता था। यह काफी आनुवंशिक परिवर्तन दर्शाता है। कृष्य आइन्कोर्न गेहूं *ट्रिटिकम मोनोकोकम* एल (*Triticum monococcum* L.) कहलाता है जो वन्य प्रकार (wild type) से विकसित हुआ है। ये द्विगुणित भी कहलाता है तथा इसमें समान जीनोम ए ए (AA) होता है। इसकी प्राचीन काल से ही खेती की जाती रही है। इन गेहुंओं में एक दानेदार कणिशिका (spikelet) होती है, फलन वृंत (fruiting stalks) नाजुक और भंगुर होते हैं तथा दाने तुष (glume) में जड़े रहते हैं। अब इस प्रकार के गेहूं की बहुत कम खेती की जाती है।

चतुर्गुणित प्रकार के कई गेहूं होते हैं। उनकी उत्पत्ति द्विगुणित गेहूं तथा उनसे नजदीकी रूप से संबन्धित वन्य घासों के बीच संकरण (hybridization) से हुई है। उनके दो स्पष्ट जीनोम होते हैं, ए ए घटक द्विगुणित गेहूं से प्राप्त किया गया है जबकि बी बी घटक द्विगुणित घास के द्वारा प्रदान किया गया है जो *एजीलोप्स स्पेलटोइडिस* (*Aegilops speitoildes*) (2n = 14; बी बी जीनोम) कहलाती है। संकरण के पश्चात् गुणसूत्रों के द्विगुणन के फलस्वरूप चतुर्गुणित गेहूं की उत्पत्ति हुई है। सबसे प्राचीन ज्ञात चतुर्गुणित गेहूं वन्य एमर (wild emmer) या *ट्रिटिकम डाइकोकोइड्स* कोर्न (*Triticum dicoccoides* Koern) कहलाता है। ये फिलिस्तीन तथा सीरिया में पाया जाता है इस वन्य एमर से, कृष्य एमर अथवा *ट्रिटिकम डाइकॉकम* शुब्ल (*Triticum dicoccum* schubl.) अवश्य ही उत्परिवर्तन (mutation), कृषिकरण तथा चयन के द्वारा विकसित हुआ होगा। अन्य चतुर्गुणित गेहूं ड्यूरम अथवा *ट्रिटिकम ड्यूरम* डेस्फ (*T. durum* Desf.) कहलाता है। वह भी वन्य एमर से विकसित हुआ है। इन चतुर्गुणित गेंहू की कभी मध्य पूर्व में विस्तृत रूप से खेती की जाती थी। कृष्य एमर अब सिर्फ सीमित रूप से ही उगाया जाता है परंतु ड्यूरम विस्तृत रूप से इटली, स्पेन तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में उगाया जाता है।

सबसे अधिक प्रचलित कृष्य गेहूं षट्गुणित गेहूं है। *ट्रिटिकम स्पेल्टा* लिनिनस (*Triticum spelta* Linn.) तथा *ट्रिटिकम एस्टीवम* लिनियस (*T. aestivum* Linn.) सबसे महत्वपूर्ण षट्गुणित गेहूंओं में से है। *ट्रिटिकम एस्टीवम* या ब्रेडव्हीट की अनेकों किस्में विश्व के विभिन्न भागों में पाई जाती हैं।

षट्गुणित गेहूं के विकास का इस तालिका में दिखाए गए संकेतानुसार द्वारा संक्षिप्तीकरण किया जा सकता है :

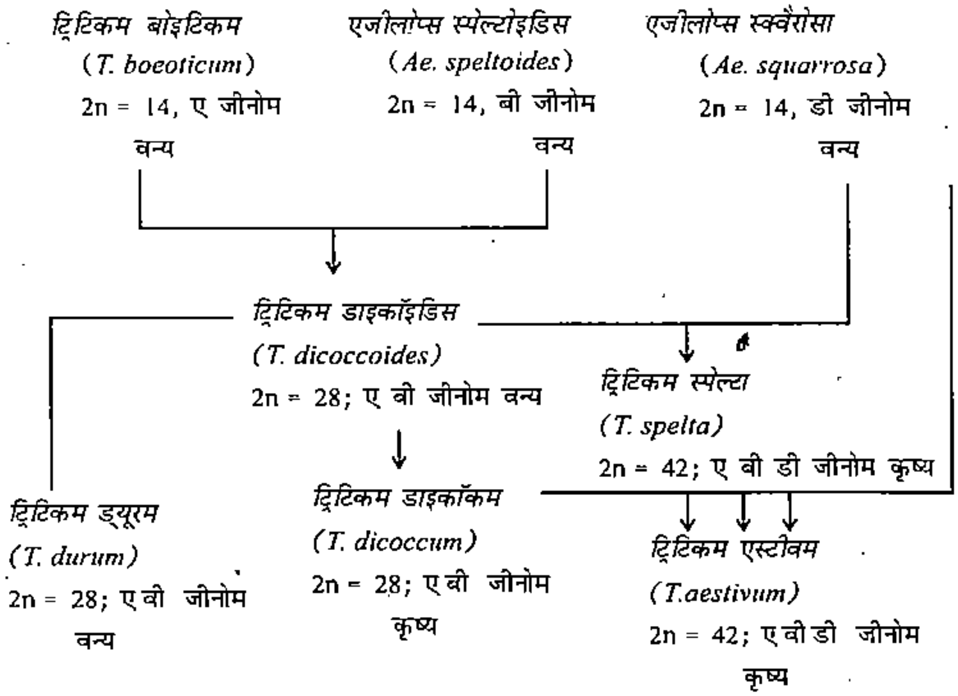

11.2.2 गेहूं की खेती

गेहूं को विभिन्न प्रकार के मौसमों तथा मिट्टियों में उगाया जा सकता है। ये विश्व की सबसे विस्तृत रूप से भी उगाई जाने वाली फसल है। इसे मध्यरेखा से 40° दक्षिण से 60° उत्तर तक के क्षेत्रों में उगाया जाता है जहाँ काफी शुष्क तथा मृदु मौसम होते हैं। वहुत अधिक गर्मी या सर्दी, अथवा बहुत नम या शुष्क मौसम फसल के लिए हानिकारक होता है। अतः, मौसम की स्थितियां गेहूं की खेती को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं।

गेहूं की विस्तृत रूप से गर्म शीतोष्ण क्षेत्रों में खेती की जाती है जहां ठंडी सर्दियां तथा गर्म शुष्क गर्मियां होती हैं। इस प्रकार के गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में औसत वर्षा 30 से 90 से.मी. के मध्य होनी चाहिए। फसल की खेती मैदानों से लेकर समुद्रतल से 3000 मीटर की ऊँचाई तक की जा सकती है।

गेहूं सबसे अच्छी तरह से उर्वर चिकनी मिट्टी अथवा सिल्ट दोमट (silt loams) में उगता है जिसमें पर्याप्त कार्बनिक पोषक तत्व होते हैं। मिट्टी में समुचित जल निकास तंत्र तथा साथ ही जल धारण क्षमता होनी चाहिए।

गेहूं को एक प्रमुख अनाज फसल के रूप में रूस तथा उसके आसपास के क्षेत्रों में, अन्य यूरोपीय देशों में विशेषतौर पर फ्रांस, जर्मनी, इटली तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में, कनाडा, केन्द्रीय तथा दक्षिणी अमरीका, चीन, भारत तथा ऑस्ट्रेलिया में उगाया जाता है। इसे पाकिस्तान, तुर्की तथा मिस्र में भी उगाया जाता है। भारत में, दो प्रमुख गेहूं उगाने वाले क्षेत्र हैं: (i) पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, विहार, तथा राजस्थान के कुछ हिस्सों के साथ सिंधु गंगा प्रदेश तथा (ii) मध्यप्रदेश, दक्षिणी राजस्थान, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश तथा कर्नाटक।

भारत में उगाई जाने वाली गेहूं की फसल मुख्यतः शीतकालीन गेहूं, (winter wheat) तथा ब्रेड व्हीट दोनों हैं तथा साथ ही ड्यूरम व्हीट भी बोया जाता है। इसकी कटाई दानों के पकने के वाद जल्द से जल्द खराब मौसम के द्वारा फसल को क्षति पहुंचने से पहले कर ली जाती है।

दानों को तुष (chaff) से अलग करने के लिए थ्रेशर (thresher) या (कम्बाइन) विशेष यंत्रों का उपयोग किया जाता है जो फसल को काटते तथा दानों को भूसे से अलग करते हैं। इसके वाद दानों को दलने / पिसने (milling) के लिए भेज दिया जाता है।

11.2.3 गेहूं के पादप का वनस्पति विज्ञान

गेहूं का पादप एक प्रारूपिक घास है जिसमें ग्रेमिनी कुल के सभी गुण पाए जाते हैं। तरुण गेहूं के पादप चमकीले हरे होते हैं। वे फसल के पकने पर सुनहरे भूरे हो जाते हैं। पादप एकवर्षी तथा असंख्य "टिलर" (tiller) युक्त होते हैं (चित्र 11.1)। इसमें दो प्रकार की जड़े होती हैं : प्राथमिक या नीजीय (seminal) जो भ्रूण से विकसित होती हैं; तथा द्वितीय या किरीट जो अपस्थानिक होती हैं तथा मुख्य अक्ष तथा टिलर्स की आधारीय भूमिगत पर्वसंधियों (nodes) से विकसित होती हैं। प्राथमिक जड़ें सिर्फ छह से आठ सप्ताह तक जीवित रहती हैं जबकि द्वितीय जड़ें पादप के स्थायी जड़तंत्र को प्रदर्शित करती हैं।

मुख्य तना व साथ ही टिलर्स भी सतर बेलनाकार संरचनाएं होते हैं। प्रत्येक 5-7 पर्वसंधियों का बना होता है तथा 0.3 से 1.5 मीटर ऊँचाई तक बढ़ता है। निचले पर्व छोटे होते हैं परंतु ऊपर वाले बड़े होते हैं। ये खोखले (hollow) होते हैं तथा आमतौर पर चिकने होते हैं।

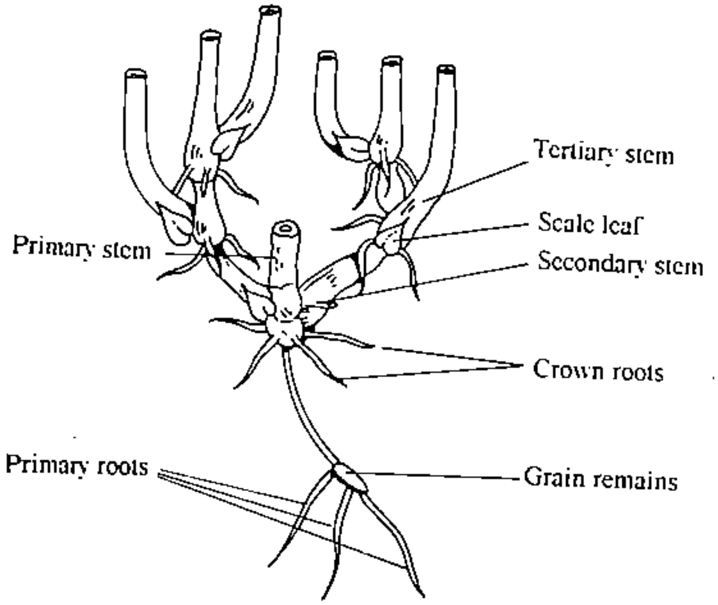

चित्र 11.1 : अनाज में टिलरिंग की प्रकृति

पत्तियां एकांतरी विन्यास दर्शाती हैं। प्रत्येक पत्ती में आधारीय आच्छद होता है। ये तने को घेरे रहता है तथा उसके निचले क्षेत्र में संपूर्ण नाल बनाता है। आच्छद ऊपर जाकर विभाजित हो जाती है तथा पर्णदल (lamina) या ब्लेड में जारी रहती है। पर्णदल चपटा, लंबा, पतला तथा तीक्ष्ण नोंक युक्त होता है। इसमें समानान्तर विन्यास, तथा ऊपरी सतह पर अधिक रंध्र दिखाई पड़ते हैं। रंध्र ग्रेमिनी कुल की विशेषता होते हैं व उनमें विशेष 'आर्वध' (buliform) रक्षा कोशिकाएं होती हैं। आच्छद तथा पर्णदल के मिलन बिंदु पर एक रंगहीन झिल्लीनुमा लिग्यूल / जीभिका (ligule) होती है। पर्णदल के आधार पर पालि (auricles) की जोड़ी भी उपस्थित रहती है।

पुष्पक्रम अंतस्थ व असंख्य कणिशिकाओं (spikelets) कणिश का बना होता है। पुष्पक्रम अक्ष कठोर होता है तथा अनाज के पकने पर छिन्न-भिन्न (टूटता) नहीं होता है। कणिशिकाएं दो कतारों में अक्ष के एकांतरित भागों में होती हैं। प्रत्येक कणिशिका अंवृत तथा 2-5 एकल फूल (florets) सहित होती है (चित्र 11.2)। कणिशिका में बंध्य तुषों (glumes) का एक जोड़ा, एक तनुकृत रेकिला (rachilla) तथा 2-5 जोड़े उर्वर तुषों के होते हैं। उर्वर तुषों का प्रत्येक जोड़ा बाह्य लेमा (lemina) तथा भीतरी पेलिया / शल्किका (palea) का बना होता है (चित्र 11.3a)। ये उर्वर तुष एकल पुष्पों को लपेटे रहते हैं। लेमा का शीर्ष सामान्यतः शूक (awn) में विस्तारित रहता है। एकल पुष्प मे दो लॉडिक्यूल (lodicule) होते हैं जो परिदलपुंज (perianth) को प्रदर्शित करते हैं तथा पुष्प के खुलने को नियंत्रित करते हैं। पुष्प में तीन पुंकेसर (stamens)

होते हैं जिनके तंतु पतले होते हैं तथा परागकोश (anthers) द्विपालित (bilobed) व मुक्तदोली (versatile) होते हैं (चित्र 11.3 b) जायांग (gynoecium) एक अंडपी (monocarpellary) (अथवा कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार त्रिअंडपी युक्तांडपी (tricarpellary syncarpous) होते हैं) व ऊर्ध्व अंडाशय (superior ovary) तथा 2 अंतस्थ वर्तिकाओं (styles) युक्त होते हैं जिनमें पंखीय वर्तिकाग्र (stigmas) होते हैं। इसमें बीजांड एक ही होता है।

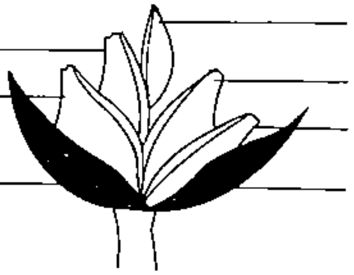

चित्र 11.2: तुषों, एकलपुष्पों तथा पुष्पीय भागों को दिखाती गेहूं की कणिशिका

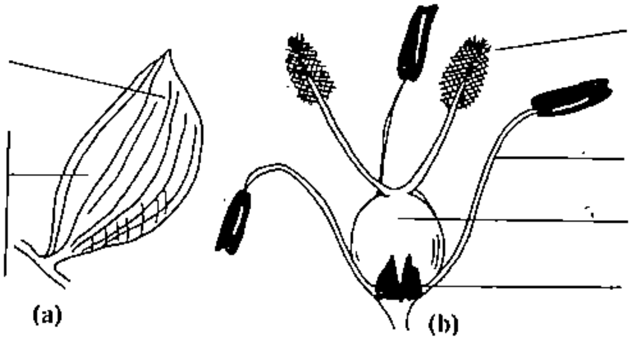

चित्र 11.3 : ग्रेमिनी के एकलपुष्प की संरचना a) लेमा तथा पेलिया/शल्किका अक्षुण लगे हुए b) लेमा तथा पेलिया हटे हुए, पुष्प के आवश्यक अंगों को दिखाने के लिए

फल एक कैरिऑप्सिस (caryopsis) होता है। यह एक बीजीय, शुष्क, अस्फुटनशील (indehiscent) दाना / कण होता है। सामान्यत: प्रत्येक कणिशिका में दो दाने विकसित होते हैं। प्रत्येक दाना अंडाकार, उत्तल पृष्ठ सतह तथा केन्द्रीय खांचदार अधर सतह युक्त होता है। दाने के शीर्ष पर रोमगुच्छ (tuft of hairs) उपस्थित रहता है। फल की भित्ति तथा बीजावरण (seed coat) पूर्णत: युग्मित रहते हैं तथा ये परतें दाने की चोकर बनाती हैं इसके अंदर भ्रूणपोष (endosperm) रहता है जो दाने का प्रमुख भाग (लगभग 82-86%) बनाता है। ये मुख्यत: मांड (starch) तथा ग्लूटन (gluten) का बना होता है। भ्रूणपोष की सबसे बाहर की परत एल्यूरोन (aleurone) होती है जिसमें विटामिन्स, खनिज तथा प्रोटीन्स होते हैं परंतु ग्लूटन नहीं होता है। छोटा सा भ्रूण दाने के आधारीय सिरे पर उपस्थित रहता है। ये प्रांकुर (plumule) तथा मूलांकुर (radicle) को धारण किये रहता है। प्रांकुर एक आवरण से घिरा रहता है जिसे प्रांकुर चोल (coleoptile) कहते हैं। मूलांकुर चोल (coleorhiza) अथवा मूल आवरण मूलांकुर को घेरे रहता है। (चित्र 11.4)। एक मांसल ढालनुमा बीजपत्र (cotyledon) भी उपस्थित रहता है जो स्कूटैलम (scutellum) कहलाता है।

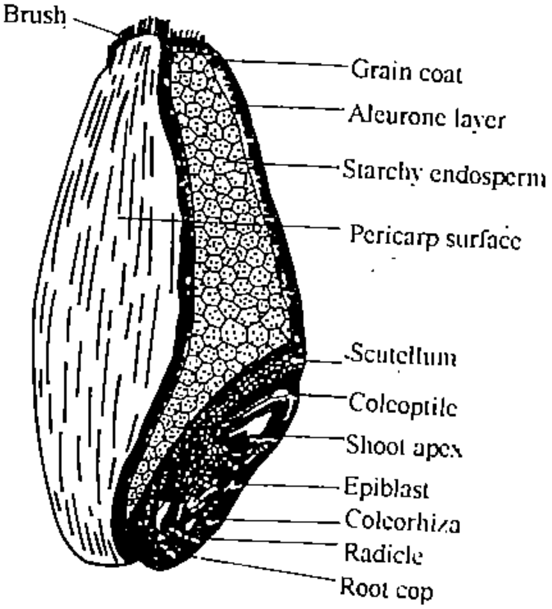

चित्र 11.4 : गेहूं के दाने का शारीर। जो मूलांकुर चोल और मूलांकुर प्रदर्शित करता है

11.2.4 गेहूं के पादप का प्रजनन तथा सुधार

11.2.4.1 खेती के आरंभ से ही, मानव पादपों को अपने लाभ के लिए सुधारने की कोशिश करता रहा है। बेहतर वृद्धि, अच्छे दानों तथा अन्य लाभदायक गुणों के लिए पादपों के सबसे पहले चयन अनजाने में ही होते रहे थे। इसके फलस्वरूप चयनित किस्मों की अधिक खेती होने लगी। ये परिवर्तनों अथवा बहि:संकरण (out crossing) तथा चयनित किस्मों के बेहतर गुणों की पहचान के परिणामस्वरूप भी हो सकते हैं।

गेहूं के प्रजनन में अनेकों महत्वपूर्ण घटनाएं हुई हैं। ये जानना दिलचस्प है कि प्रसिद्ध रेड फाइफ (Red fife), टर्की व्हीट (Turkey wheat), मार्किस (Marquis), फेडरेशन, (Federation) तथा अन्य महत्वपूर्ण आरंभिक किस्मों ने गेहूं के प्रजनन को उन्नत करने में बहुत अधिक योगदान दिया है। भारत में, पूसा (बिहार) का इम्पीरियल कृषि अनुसंधान संस्थान (Imperial Agricultural Research Institute) बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में गेहूं के प्रजनन के लिए एक महत्वपूर्ण केन्द्र था। पूसा व्हीट की ये कुछ किस्में जैसे P.4 / पी.4, P.6 / पी.6, तथा P.12 / पी.12 अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विख्यात हो गई। बाद में, नई दिल्ली में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (जो सामान्यत: पूसा इन्स्टीट्यूट कहलाता है) में गेहूं के प्रजनन पर कार्य जारी रहा तथा न्यू पूसा या एन.पी / N.P. किस्में विकसित की गई। डा. बी.पी. पाल ने एन पी 809 किस्म विकसित की जो गेहूं की सभी तीनों किट्टो (rusts) के लिए प्रतिरोधी है। ये गेहूं के प्रजनन के इतिहास में महत्वपूर्ण घटना मानी गई। डा. एम.एस. स्वामीनाथन गेहूं के सुधार में अपने योगदान के कारण भारत में हरित क्रांति के जनक माने जाते हैं।

11.2.4.2 आधुनिक काल में, बहुत से पहलुओं की उचित समझ गेहूं के पादप के जनन तथा सुधार के लिए आवश्यक है। कोशिकाआनुवांशिकी (cytogenetics) तथा प्रजनन के व्यवहार के बारे में विस्तृत जानकारी होना आवश्यक हो गया है। रोगों तथा कीटों के कारण गेहूं की फसल को होने वाली क्षति ने भी फसल की हानि को रोकने की आवश्यकता पर बल दिया है। भारत में, गेहूं की फसल विभिन्न किट्ट रोगों द्वारा प्रभावित होती है जो बेसीडियोमाइसिटी (basidiomycete) कवक *पक्सीनिया ग्रेमिनिस* (*Puccinia graminis*) तथा अन्य संबन्धित जातियों के कारण होते हैं। कुछ अन्य कवक तथा वाइरल रोग भी फसल को हानि पहुंचाते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि गेहूं की फसल के सुधार के लिए कोई संकलित कार्यक्रम (Integrated Programme) होना चाहिए। गेहूं के प्रजनन के कुछ उद्देश्यों में निम्नलिखित सम्मिलित हैं।

(i) दाने की पैदावार बढ़ाने के लिए प्रति पादप टिलरों की संख्या को बढ़ाना

(ii) प्रति कणिशिका दानों की संख्या तथा आकार को बढ़ाना

(iii) फसल की जल्दी परिपक्वता

(iv) बौने पादप प्राप्त करना जो गिरें ना

(v) ऐसे पादप प्राप्त करना जो रासायनिक उर्वरकों तथा सिंचाई के लिए अनुकूल व्यवहार करें

(vi) रोगों तथा कीटों के रोधी हों

(vii) बेहतर प्रकार के दाने उत्पन्न करना

(viii) स्थानीय पर्यावरण के अनुकूल तथा उस क्षेत्र के लोगों द्वारा अपनाई जाने योग्य किस्में विकसित करना।

गेहूं के इतिहास में कुछ महत्वपूर्ण उन्नतियां 1900वें दशक के दौरान किये गए वैज्ञानिक प्रजनन के फलस्वरूप हुई हैं। गेहूं की नई किस्में विकसित करके पादप प्रजननकों ब्रीडर्स ने प्रति एकड़ या प्रति हेक्टेयर जमीन पर गेहूं की पैदावार को काफी अधिक बढ़ा दिया है। कुछ किस्मों की काफी उच्च पैदावार है क्योंकि ये रोगों या कीटों के लिए प्रतिरोधी हैं। कुछ अन्य जल्दी पक जाती हैं अथवा उर्वरकों के प्रयोग पर तथा सिंचाई के लिए अनुकूल तरीके से प्रतिक्रिया दिखाती हैं। प्रजनकों ने ऐसे मजबूत वृंतों वाले पादप भी विकसित किए हैं जो अधिक दानों का भार उठाने में समर्थ हों।

आज के समय की एक सबसे बड़ी उपलब्धि गेहूं की बौनी किस्मों का विकास है जो अंतर्राष्ट्रीय मक्का तथा गेहूं सुधार केन्द्र (International Maize and Wheat Improvement Centre) पर मैक्सिको में किया गया है (सीआईएमएमवाईटी CIMMYT) इसे जापानी 'नौरिन' (Norin) बौनी प्रजातियों से बौनेपन के जीन्स को अन्य प्रजातियों में डालकर संपन्न किया गया है। इसके परिणामस्वरूप नई प्रजातियों/किस्मों का विकास हुआ है जो दानों की अधिक पैदावार को तने के गिरे बिना संभाल लेती हैं। विकासशील देशों में अनाज के उत्पादन को बढ़ाने के लिए किया गया। ये विश्वव्यापी प्रयास इतना सफल हुआ कि भारत ने तीन वर्षों में ही अपनी गेहूं की पैदावार दोगुनी से अधिक कर ली। इस 'हरित क्रांति' ने अकाल के खतरों को कम कर दिया तथा 1970 में अमरीकी कृषि वैज्ञानिक डा. नोर्मन ई बोर्लोग. (CIMMYT के निदेशक) को नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

नौरिन बौनीकरण जीन्स वाले मैक्सिकन ड्वार्फ व्हीट्स का उपयोग प्रजनन प्रजातियों / किस्मों के लिए किया जाता है जो भारतीय गेहूं उत्पादकों के लिए भी ग्राह्य थी। लर्मो रोजो 64 ए तथा सोनोरा 64 को कृषि के लिए पेश किया गया। इन्हें फिर बाद में अन्य किस्मों जैसे कल्यान-सोना, सफेद लर्मा, छोटी लर्मा, सोनालिका, शर्बती सोनोरा तथा अन्य से पूरित किया गया।

11.2.4.3 संकर गेहूं : संकर पादप कृषि में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन्हें फसल की गुणवत्ता तथा उत्पादकता को सुधारने के लिए उत्पन्न किया जाता है। मक्का में, संकर प्रजातियों में बहुत अधिक शक्ति होती है तथा ये अधिक पैदावार करते हैं। यह गुण यदि गेहूं में समाविष्ट कर दिया जाए तो यह गेहूं के प्रजनन में बड़ी कामयाबी ला सकता है। संकर गेहूं उत्पन्न करने की संभावना 1951 में जापानी गेहूं प्रजनक किहारा द्वारा कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता (Cytoplasmic male sterlity) की खोज पर निर्भर थी। नर बंध्यता *ट्रिटिकम एस्टीवम* में केन्द्रकी जीन तथा *ट्रिटिकम टाइमोफीवी* (*T. timopheevi*) में कोशिकाद्रव्य की परस्पर क्रिया (interaction) के फलस्वरूप हुई। उर्वरता को *ट्रिटिकम टाइमोफीवी* तथा अन्य स्रोतों से जीन्स द्वारा पुन: प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए संकर गेहूं के विकास में बहुत अधिक दिलचस्पी ली जा रही है तथा और अब इसमें ज्यादा देर नहीं है जब भारतीय किसान इस फसल को उगा सकेंगे।

11.2.5 उपयोग

गेहूं को विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है तथा, कुछ क्षेत्रों में, यह हर वक्त के भोजन में किसी न किसी रूप में उपयोग की जाती है। गेहूं के दानों को आटे के रूप में पीस लिया जाता

है जिसका उपयोग रोटी बनाने के लिए किया जाता है। आटे में एक प्रोटीन ग्लूटन होता है जो आटे को प्रत्यास्थ (elastic) बनाता है। आटे की यह प्रत्यास्थता रोटी बनाने के लिए आवश्यक है क्योंकि यह गेहूं को खमीर के साथ मिलाकर पकाने पर खमीर उठाता है। भारत में तथा विश्व के अन्य भागों में गेहूं के आटे से बिना खमीर की रोटी (चपाती) बनाई जाती है। चपातियों के अतिरिक्त इसका उपयोग तंदूरी रोटी, पराठा, पूड़ी आदि बनाने के लिए भी किया जाता है। रिफाइन्ड गेहूं का आटा (मैदा) केक, बिस्कुट, पेस्ट्री तथा अन्य चीजें बनाने में उपयोग किया जाता है। मोटा पिसा गेहूं का आटा जो सूजी कहलाता है उसका उपयोग विभिन्न व्यंजनों जैसे मिठाइयों, हलवा खरा भात या उपमा बनाने में किया जाता है। गेहूं का दलिया भी कठोर दानों से बनाया जाता है। चतुर्गुणित गेहूं जैसे *ट्रिटिकम ड्यूरम* का उपयोग मैकरोनी (Macroni), स्पैगेटी (Spaghetti), वर्मीसेली (Vermicelli), नूडल्स (Noodles) आदि बनाने में किया जाता है।

गेहूं का दाना प्रोटीन, मांड, विटामिन्स, आवश्यक खनिजों जैसे लौह तथा फोस्फोरस आदि पोषक तत्वों से समृद्ध होता है। पूरे दाने से बना हुआ गेहूं का आटा रोलर मिलों के उपयोग से बने सफेद आटे से अधिक पोषक होता है। मिलों में गेहूं का सिर्फ मुलायम सफेद भीतरी भाग जो मुख्यत: मांडयुक्त भ्रूणपोष होता है उसे आटे में पीसा जाता है। इस प्रक्रिया में 'गेहूं की चोकर' यानि कि दाने का बाहरी आवरण साथ ही 'व्हीटजर्म' यानि कि भ्रूण विलग हो जाते हैं। दानों के इन भागों में पोषक विटामिन्स, खनिज व प्रोटीन्स होते हैं।

भोजन के अतिरिक्त, गेहूं का कुछ अन्य तरीकों से भी उपयोग होता है। चोकर पशुओं के चारे तथा मुर्गियों के भोजन का एक महत्वपूर्ण अवयव होता है। गेहूं से प्राप्त होने वाले ग्लूटामिक अम्ल का उपयोग मोनोसोडियम ग्लूटामेट (एमएसजी (MSG)) के निर्माण में किया जाता है। इस लवण का अपना स्वाद कम ही होता है परंतु यह अन्य भोजनों के स्वाद को बढ़ा देता है। गेहूं का उपयोग औद्योगिक रूप से मांड, ग्लूटन, अल्कोहल, चिपकाने वाले पदार्थ, पोलिश आदि बनाने में भी किया जाता है। गेहूं की भूसी (straw) मवेशियों के चारे व खाद बनाने में तथा टोकरियां, टोपियां, स्ट्राबोर्ड, कागज तथा साधारण खिलौने बनाने में भी प्रयोग की जाती है।

11.3 मक्का (Maize or Corn)

वानस्पतिक नाम : *ज़िया मेज* लिन (*Zea Mays* Lin)
साधारण नाम : मकई, भुट्टा
कुल : पोएसी
n = 10

मक्का तीन प्रमुख अनाजों में से एक है जो मनुष्य के भोजन में ऊर्जा के प्रमुख स्रोत हैं। विश्व में अनाज के उत्पादन के क्रम में मक्का गेहूं के बाद दूसरे नंबर पर है। चावल उसके आसपास ही तीसरे नंबर पर है। मक्का सबसे विस्तृत रूप से वितरित अनाज की फसल है। जिसकी उत्पत्ति का इतिहास बहुत ही दिलचस्प है। यह शायद मानव के लिए अमरीका की सबसे बड़ी भेंट है। मक्के का आदमी के भोजन के रूप में, मवेशियों के चारे के लिए अथवा अनेकों प्रकार के अखाद्य उत्पादों में उपयोग होता है।

मक्का नाम की उत्पत्ति दक्षिण अमरीकी भारतीय अरावक-कैरिब शब्द ''माहिज़'' से हुई है। इसका उपयोग सबसे पहले भोजन के रूप में लगभग 10,000 वर्ष पूर्व उस क्षेत्र में रहने वालों रेड ''इन्डियन्स'' द्वारा किया गया था जो अब मैक्सिको कहलाता है। सैकड़ों वर्षों तक स्वयं मक्का उगाना सीखने से पूर्व ये ''भारतीय'' / ''इन्डियन्स'' वन्य पादपों से अनाज इकट्ठा करते थे। अत: इसे ''इन्डियन कॉर्न'' (Indian corn) भी कहते हैं हालांकि ये हमारे देश भारत के संदर्भ में नहीं हैं।

मक्का भी अन्य अनाजों की भांति ही घास कुल ग्रेमिनी का सदस्य है। इसकी कई हजार जातियां उगाई जाती हैं। ये सभी अपनी उत्तरजीविता के लिए मानव पर निर्भर हैं क्योंकि दाने कड़े मोटे छिलके से ढके रहते हैं तथा अन्य अनाजों की भांति अपने आप प्राकृतिक रूप से नहीं बिखरते। यदि पूरा भुट्टा जमीन पर गिर जाए, तो सभी बीज एक साथ अंकुरित हो जाएं तथा संभवत: कोई

एक पादप भी परिपक्व ना हो पाए। इसलिए, नई दुनिया के इस महत्वपूर्ण अनाज के पादप के बारे में अधिक जानकारी हासिल करना आवश्यक है।

11.3.1 मक्का की वर्गिकी तथा उत्पत्ति एवं वितरण

वंश *ज़िया* को पोएसी कुल की उपकुल मेडीएई (Maydeae) में वर्गीकृत किया गया है। इसकी सिर्फ एक जाति, *ज़िया मेज़* (*Zea-mays*) है जिसकी खेती की जाती है। इस वंश से निकट रूप से संबन्धित दो अन्य न्यू वर्ल्ड / नई दुनिया की जातियां हैं, *ट्रिपसेकम* (*Tripsacum*) (जो (गामा घास कहलाती है तथा उत्तरी अमरीका में चारे के रूप में प्रयोग की जाती है) तथा *यूक्लीना* (*Euchlaena*) {जो टियोसिन्ट (Teosinte) कहलाती है, मक्का की निकटस्थ वन्य संबन्धी मानी जाती है। कुछ वर्गीकरण विज्ञानी *यूक्लीना* को अलग वंश के रूप में मान्यता नहीं देते हैं तथा सभी जातियों को वंश *ज़िया* में स्थानांतरित कर देते हैं।

दाने की संरचना के आधार पर कई प्रकार के मक्का की पहचान की गई है। दाने की संरचना एक अथवा कुछ आनुवंशिक गुणों द्वारा नियंत्रित होती है तथा इसका मक्के की उत्पत्ति से संबन्ध है। मुख्य समूह हैं :-

(i) पॉड कॉर्न / फली वाला मक्का - *ज़ीआ मेज़* किस्म *ट्यूनीकेटा* (*tunicata*)

(ii) पॉप कॉर्न / *ज़ीआ मेज़* किस्म *एवरेटा* (*everata*)

(iii) फ्लिंट कॉर्न - *ज़ीआ मेज़* किस्म *इंड्यूरेटा* (*indurata*)

(iv) डेन्ट कॉर्न - *ज़ीआ मेज़* किस्म *इंडेन्टेटा* (*indentata*)

(v) सॉफ्ट कॉर्न या फ्लॉसकार्न - *ज़ीआ मेज़* किस्म *एमाइलेशिया* (*amylacea*)

(vi) स्वीट कॉर्न- *ज़ीआ मेज़* किस्म *सैकेरैटा* (*saccharata*)

(vii) वैक्सी मेज़- *ज़ीआ मेज़* किस्म *सिरेटिना* (*ceratina*)

ये सभी प्रकार पूर्व कोलंबियन काल से ही अस्तित्व में हैं तथा ये जानना आवश्यक है कि इनमें से कौन सी सबसे प्राचीन है। ये हमें कृष्य मक्का की उत्पत्ति के बारे में जानने में सहायक होगा। पॉड कॉर्न सबसे प्राचीन मानी जाती है। इसमें प्रत्येक दाना (बीज) तुष अथवा पुष्पीय सहपत्रों द्वारा ढका रहता है। इसके ऊपर से पूरा भुट्टा पुनः छिलके द्वारा ढका रहता है। इसकी खेती नहीं होती है, परन्तु इसे कुछ स्थानों पर प्राचीनतम कृष्य भुट्टे की उत्पत्ति को समझने के लिए सुरक्षित रखा गया है। अन्य प्राचीन प्रकार पॉप कॉर्न है। पॉप कॉर्न के पॉड कार्न से संकर ने मक्के की पूर्वजी प्रकार के आनुवांशिक पुनर्गठन (genetic reconstruction) में सहायता की है।

वैज्ञानिक अभी आधुनिक मक्के की वंश परंपरा को सीधे ही वन्य पादप से जानने में समर्थ नहीं हुए हैं जैसा कि अन्य अनाजों में किया जा चुका है। पुरातात्विक खोजें, आनुवांशिक अध्ययन तथा अन्य प्रमाणों का उपयोग मक्के की उत्पत्ति पर विभिन्न विचारों को बल देने के लिए किया जाता है।

(i) मक्का की एशियाई उत्पत्ति

बोनाफस (1836) ने सुझाया कि मक्का की उत्पत्ति संभवतः दक्षिण पूर्वी एशिया (संभवतः आसाम में) में *सोरघम* (*Sorghum*) तथा अन्य घास *कॉइक्स* (*Coix*) के संकरण के द्वारा हुई है। इस विचार को एंडरसन (1945) द्वारा भी बल प्रदान किया गया उसने भी सुझाया कि मक्का का फैलाव नई दुनिया / न्यू वर्ल्ड में पूर्व कोलनियाई काल में हुआ। 1964 में, धवन ने बहुत ही प्राचीन प्रकार की मक्का का हिमालय के गिरिपादों (foot hills) पर पाया जाना रिपोर्ट किया। ये "सिक्किम प्रिमिटिव-1" तथा "सिक्किम प्रिमिटिव-2" कहलाती थीं। इनमें सबसे प्राचीन प्रकार की मक्का के आकारिकीय तथा कोशिकाविज्ञानी गुण पाए जाते हैं तथा उन्हें "जीवित जीवाश्म" कहा जा सकता है। हालांकि इस मत को मक्का के एशियाई उत्पत्ति से प्रमाणित करने का कोई अन्य प्रमाण नहीं है ना ही इसका कोई स्पष्टीकरण है कि कैसे यह पूर्व ऐतिहासिक काल में नई दुनिया में फैल गई।

(ii) मक्का की नई दुनिया / न्यू वर्ल्ड उत्पत्ति

इस मत को स्थापित करने के पर्याप्त प्रमाण हैं कि मक्का **'नई दुनिया की मानव के लिए भेंट**

है।' यह अनाज अमेरिका में सभी पूर्व-कोलंबियाई प्राचीन सभ्यताओं में मौलिक खाद्य पादप के रूप में उपयोग किया जाता था तथा विस्तृत रूप से फैला हुआ था। मैंगेल्सडोर्फ, रीव्स, मैक नीश तथा वाइक्स द्वारा किए गए सघन शोध कार्य ने मक्का के अमरीका उत्पत्ति को स्थापित किया। ग्वाटेमाला से दक्षिणी मैक्सिको तक का क्षेत्र मक्का की उत्पत्ति का केन्द्र माना जाता है।

जब हम ये मानते हैं कि मक्का की उत्पत्ति अमरीका में हुई है, तो आधुनिक कृष्य मक्का के पूर्वजों का निर्धारण करना आवश्यक है। मक्का की उत्पत्ति से संबन्धित अनेकों दिलचस्प निरीक्षण हैं।

(क) आधुनिक कृष्य मक्का की पूर्वज मक्का स्वयं है तथा कोई अन्य संबन्धित घास नहीं है। यह मत मक्का के परागकण की मैक्सिको से खोज पर आधारित है। 1954 में जब पहली गगनचुम्बी इमारत मैक्सिको में बन रही थी तब जीवाश्म परागकण 70 मीटर की गहराई में पाए गए थे। ये लगभग 80,000 वर्ष पुराने अंतिम अंतरग्लेशियाई काल (interglacial period) के थे।

(ख) न्यू मैक्सिको में बैट गुफा के पुरातात्विक क्षेत्रों की खुदाई 1948 से की जाती रही है। इससे कुछ बहुत ही प्राचीन अधिवासों को पहचाना गया है जिनमें संभवत: प्राचीन लोग कुछ हजार वर्षों तक निवास करते रहे थे। ये लोग बहुत ही पुराने प्रकार की खेती तथा प्राचीन तरीके के स्वच्छता उपाय अपनाते थे। वहां पर कचरे के ढेरों में संरक्षित भुट्टे पाए गए हैं। ये बहुत ही छोटे मात्र 2-3 से.मी. लंबे थे तथा 3600 ईसा पूर्व काल के निर्धारित किए गए थे। कुछ अन्य ऐसे प्राचीन भुट्टे मैक्सिको के विभिन्न भागों में अन्य प्राचीन स्थानों से भी खुदाई करके प्राप्त किए गए हैं। एक दिलचस्प खोज 1960 में मैक नीश द्वारा दक्षिणी मैक्सिको में तहुआकान घाटी में कॉक्सकेटलन गुफा (Coxcatlan cave) से की गई थी। यहां 5200 ईसा पूर्व प्राचीन सुसंरक्षित भुट्टों की पहचान की गई है। इसको इसके प्राचीन गुणों के कारण वास्तविक वन्य मक्का माना जा सकता है। पॉड कॉर्न जो सबसे प्राचीन प्रकार का भुट्टा माना जाता है, इसी प्रकार का है। मेंगेल्सडोर्फ (1974) ने अपनी किताब ''मक्का, उसकी उत्पत्ति, विकास तथा सुधार'' में निष्कर्षित किया है कि मक्का की उत्पत्ति पूर्वज़ी मक्का से हुई है।

(ग) मेंगेल्सडोर्फ द्वारा सघन अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि पॉड कॉर्न सबसे प्राचीन प्रकार का मक्का है। प्रत्येक दाना (बीज) फली या छिलके में लिपटा रहता है जो तुषों या पुष्पीय सहपत्रों के बने होते हैं। पूरा भुट्टा पुन: छिलके द्वारा घिरा रहता है। मक्का में फली / पोड का गुण चौथे गुणसूत्र (chromosome) पर **टूटू लोकस (tutu locus)** पर स्थित जीन्स द्वारा नियंत्रित होता है। टूटू लोकस बहुत अधिक बहु प्रभावी (pleiotropic) होता है तथा मक्का के पौधे के बहुत से भिन्न गुणों को प्रभावित करता है। पूर्वजी मक्का का आनुवांशिक पुनर्गठन पाड कॉर्न के पॉप कॉर्न से संकर तथा संकर के प्रतीय संकरण (back crossing) द्वारा संभव है। ये अध्ययन सुझाते हैं कि कृष्य मक्का नई दुनिया में वन्य पूर्वजी मक्का से उत्पन्न हुई है।

(घ) मक्का के समीपस्थ संबन्धी टियोसिन्ट *(यूक्लीना मैक्सीकाना) (Euchlaena mexicana)* तथा गामा घास *(ट्रिपसेकम डेक्टाइलॉइड्स) (Tripsacum dactyloides)* है। ये वन्य मक्का के पूर्वज नहीं हैं परंतु वे पूर्वजी वन्य मक्का के साथ ही विकसित हुए तथा उसके साथ इनका संकरण हुआ। इन घासों के कुछ गुण कृष्य मक्का में पाए जाते हैं।

(ङ) हाल ही में खोजी गई एक बहुवर्षी घास जिसे *जिआ डिप्लो-पेरेन्सिस (Zea diplo-perrensis)* के रूप में पहचाना गया है, उससे *ज़िया मेज़* के संबन्धों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

11.3.2 मक्का की खेती

संयुक्त राष्ट्र अमरीका मक्का का सबसे बड़ा उत्पादक है। मक्का के पूर्ण विश्व उत्पादन का लगभग 40% संयुक्त राष्ट्र अमरीका से प्राप्त होता है। चीन मक्का का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। अन्य बड़े उत्पादकों में अर्जेन्टीना, ब्राजील, फ्रांस, भारत, मैक्सिको तथा रोमानिया हैं। जापान मक्का का सबसे बड़ा आयातक (importer) है।

भारत में, मक्का उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान कर्नाटक, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश तथा जम्मू व कश्मीर में उगाया जाता है।

11.3.3 मक्का के पादप की वानस्पतिकी

मक्का का पादप एक एकवर्षी तेजी से बढ़ने वाली घास है। इसमें एकल तना होता है जो छोटा (एक मीटर तक का) या लम्बा (5-6 मीटर तक का) होता है। तना गूदेदार होता है तथा कुछ किस्मों में टिलर्स भी बनते हैं।

जड़ तंत्र काफी विशिष्ट होता है। प्रथम शुक्रीय जड़ मूलांकुर से विकसित होती है। इसके बाद 3 या अधिक बीजीय जड़ें बनती हैं जो बाहर की ओर भ्रूण से निकलती हैं। ये महत्वपूर्ण होती हैं क्योंकि ये तरुण नवोद्भिद को पोषक तत्वों की आपूर्ति करती हैं। दो सप्ताह पश्चात् वे या तो सक्रिय रहती हैं अथवा अपना महत्व खो देती हैं। वे पादप में जीवन भर रहती अथवा नहीं रहती हैं। दो सप्ताह पश्चात् अपस्थानिक किरीट या मुकुट जड़ें विकसित होती हैं। ये तंतुमय जड़ें होती हैं जो तने की निचली पर्वसंधियों से विकसित होती हैं। वे काफी पास-2 उगती हैं तथा सघन रूप से शाखित होती हैं, जब तना दीर्घीकृत होता है तथा पादप में पुष्प आने आरंभ हो जाते हैं। अपस्थानिक जड़ों का दूसरा सेट पर्व संधियों से भूमि की सतह के ठीक ऊपर विकसित होता है। ये अवस्तंभ जड़े (prop roots) या बाहु / ब्रेस या प्रवालपद / स्टिल्ट जड़ें कहलाती हैं। ये आंशिक रूप से प्रकाश संश्लेषी होती हैं तथा अक्सर सघन रूप से वर्णांकित होती हैं। ये तने को अतिरिक्त बल प्रदान करती हैं तथा मिट्टी में प्रवेश करने के बाद ये किरीट जड़ों की भांति कार्य करती हैं।

तना सतर, बेलनाकार तथा ठोस व स्पष्ट, पर्वसंधियों तथा पर्वों युक्त होता है। इसकी ऊँचाई तथा मोटाई (घेरा) काफी भिन्न-2 होती है। इसमें प्रत्येक तने पर सामान्यत: 14 (9-21) पर्वसंधियां होती हैं। आधार की ओर के पर्व अपेक्षाकृत छोटे तथा मोटे होते हैं तथा अंतस्थ नर पुष्पक्रम की तरफ लंबे और पतले होते जाते हैं।

पत्तियां एकांतरित रूप से पर्व संधियों पर तने के दोनों ओर उगती हैं। यह विन्यास द्विपंक्तिक (distichous) कहलाता है। अन्य अनाजों की भांति, पत्ती में आधारीय आवरण तथा अंतस्थ पटल (lamina) या ब्लेड होता है। आवरण तथा पटल के मिलनबिंदु पर एक झिल्लीनुमा जीभिका / लिग्यूल पाया जाता है। आवरण पर्वों को विभिन्न लंबाइयों तक ढंके रहता है तथा ऊपर विभाजित हो जाता है। आवरण के किनारों पर सामान्यत: ऊपरी भाग में रोम पाए जाते हैं। पटल या ब्लेड रेखीय-भालाकार (linear lanceolate), लंबाग्र (acuminate) तथा लहरदार (wavy) होते हैं मध्यशिरा सुस्पष्ट तथा शिराविन्यास समानान्तर होता है। निचली सतह पर ऊपरी सतह की अपेक्षा अधिक रंध्र होते हैं।

मक्के का पौधा उभयलिंगाश्रयी (monoceious) तथा पृथकलिंगी (diclinous) होता है। नर तथा मादा पुष्पक्रम एक ही पादप पर अलग-2 उगते हैं। एक एकल अंतस्थ पुष्पगुच्छ जो टैसल / फुंदना (tassel) कहलाता है वह नर पुष्पक्रम होता है। ये संघनित (compact) या बहुत अधिक शाखित, सतर अथवा टेढ़ा-मेढ़ा होता है। कणिशिकाएं युग्मित होती हैं तथा प्रत्येक युग्म में एक कणिशिका के छोटा वृंत होता है तथा दूसरी अंवृती होती हैं। प्रत्येक कणिशिका में दो तुष तथा दो नर एकल पुष्प होते हैं। प्रत्येक एकल पुष्प में लेमा (lemma), पेलिया / शल्किका (palea), दो माँसल लोडीक्यूल्स तथा 3 पुंकेसर होते हैं। एक अवशेषी जायांग भी उपस्थित हो सकता है। (चित्र 11.5)

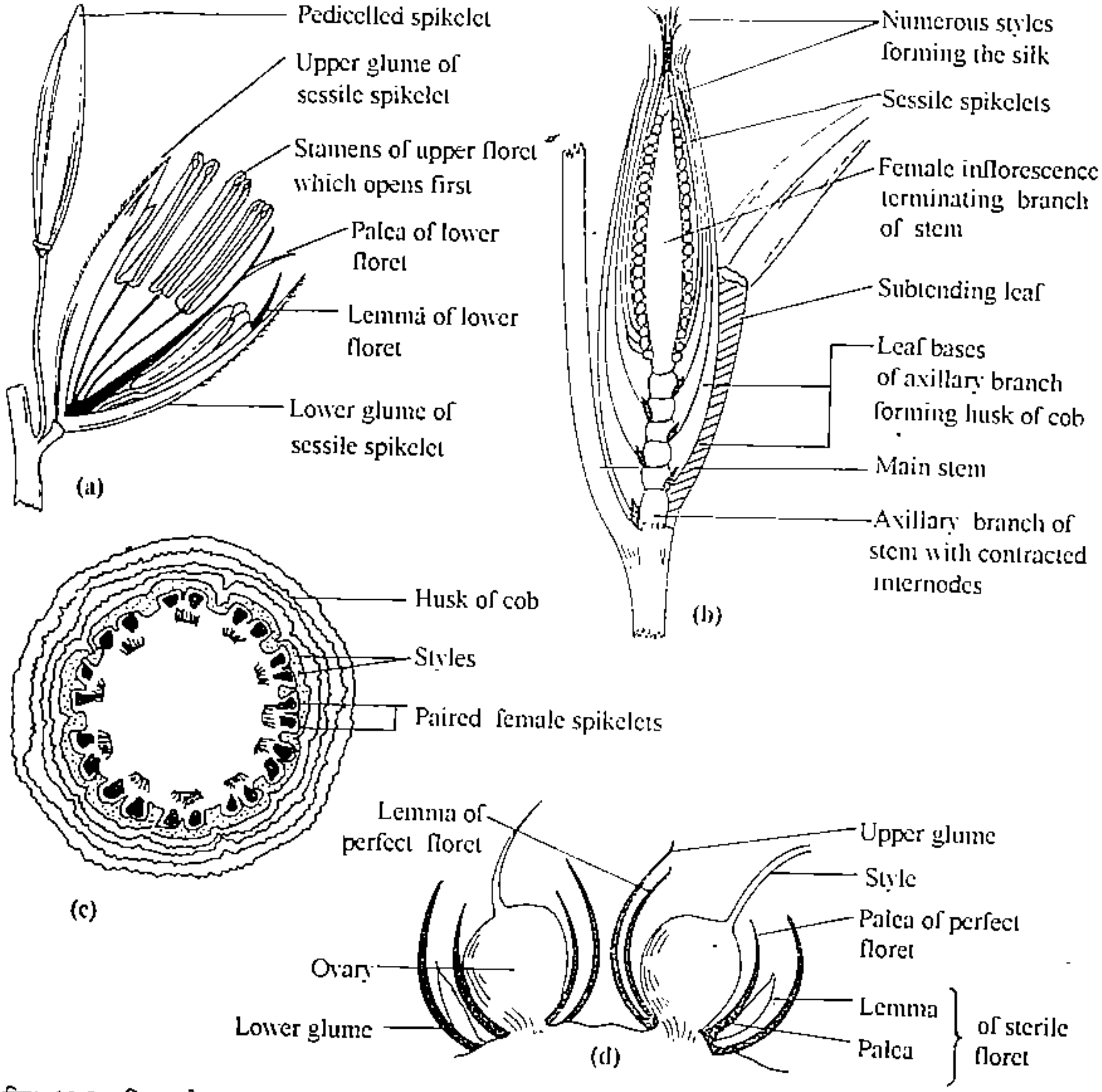

चित्र 11.5 : *ज़िआ मेज़* (a) नर पुष्पक्रम की अवृंती तथा वृंती कणिशिकाएं (b) मादा पुष्पक्रम से होता हुआ आरेखी अनुदैर्ध्य काट (c) मादा पुष्पक्रम से होता हुआ आरेखी अनुप्रस्थ काट (d) मादा कणिका के युग्म का आरेख

मादा पुष्पक्रम, जो भुट्टा या बाली कहलाता है, वह भी अंतस्थ होता है परंतु यह रूपांतरित पार्श्व शाखा पर विकसित होता है। यह शाखा सामान्य पत्ती की अक्षीय कलिका से विकसित होती है। यह मुख्य प्ररोह की तरह होती है तथा इसमें पर्वसंधि तथा पर्व होते हैं। प्रत्येक पर्वसंधि से पर्ण आच्छद उत्पन्न होते हैं तथा ये पुष्पक्रम के चारों ओर सुरक्षात्मक आवरण या छिलका बनाते हैं। पुष्पक्रम स्थूलित केन्द्रीय अक्ष का बना होता है जिसमें युग्मित कणिशिकाएं ऊर्ध्वाधर कतारों में होती हैं। कणिशिकाएं एकांतरित कतारों में सॉकेट (socket) जैसी प्यालिकाओं (cupules) से संबद्ध रहती हैं। कणिशिकाएं अंवृती तथा समान होती हैं जिनमें दो तुष तथा दो एकल पुष्प होते हैं। ऊपरी एकल पुष्प उर्वर होता है जबकि निचला वंध्य होता है। एकल पुष्प में लेमा, पेलिया / शल्किका तथा अंडाशय होता है। लोडीक्यूल्स अनुपस्थित होते हैं तथा अवशेषी पुंकेसर उपस्थित हो सकते हैं। लंबी धागे जैसी वर्तिका या ''सिल्क'' अपनी पूरी लंबाई में ग्राही (receptive) रहती है। सिल्क भुट्टे के छिलके के ऊपर दिखाई पड़ती है। फल केर्योप्सिस होता है। मक्का के दाने / कर्नेल सम संख्या की कतारों में उगते हैं, व प्रत्येक कणिशिका के युग्म के एकल उर्वर पुष्प से विकसित होता है। अन्य अनाजों के विपरीत मक्का में बीज के बिखरने के लिए कोई क्रियाविधि नहीं होती है। वयस्क कर्नेल चार भागों का बना होता है।

(1) छोटा स्पंजी वृंत या शीर्ष गोप (tip cap)

(2) फल भित्ति (pericarp) जो हल (hull) कहलाती है,

(3) भ्रूणपोष जो बीज का प्रमुख भाग बनाता है तथा मंड युक्त होता है। इसकी सबसे बाहर की परत एल्यूरॉन (aluerone) होती है जिसमें बहुत अल्प मंड होता है या नहीं होता है। प्रोटीन का जाल / नेटवर्क मोटा तथा सघन हो सकता है जो भ्रूणपोष को कठोर, चकमकी (flinty) तथा पारभासी (transluscent) बनाता है। यदि प्रोटीन का नेटवर्क / जाल पतला होता है, तो भ्रूणपोष मुलायम तथा अपारदर्शी (opaque) बन जाता है। (चित्र 11.6)।

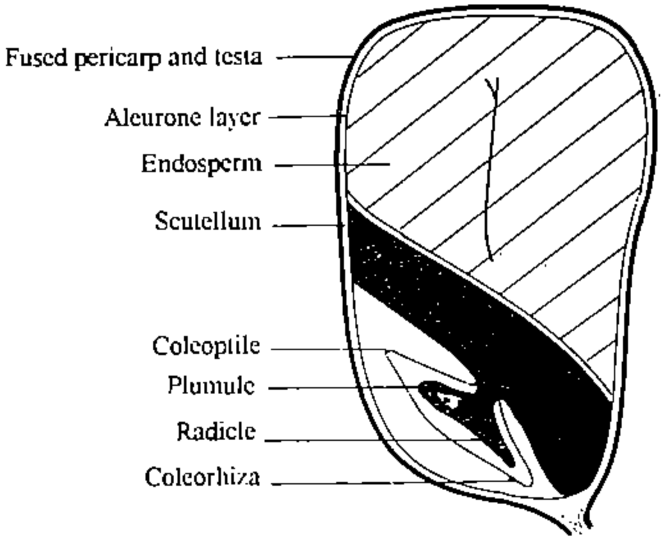

चित्र 11.6 : *ज़िआ मेज़:* कार्योप्सिस की आरेखी अनुदैर्घ्य काट

(4) भ्रूण बीज के आधार पर एक तरफ उपस्थित रहता है। ये प्रांकुर (plumule), मूलांकुर (radicle) तथा प्रशल्क / स्कूटेलम (scutellum) का बना होता है। ये वसा, खनिज, प्रोटीन तथा शर्कराओं में अपेक्षाकृत रूप से समृद्ध होता है।

11.3.4 मक्का का सुधार

मक्का पर-परागित (cross pollinated) होती है तथा उच्च स्तर की विषमयुग्मकता (heterozygosity) दर्शाती है। बहुत ही कम बीजों में, एक ही भुट्टे पर भी, समान प्रकार का जीनोटाइप / जीन प्ररूप (genotype) होता है। मक्का को इसलिए सघन आनुवांशिक तथा कोशिकानुवांशिक (cytogenetic) अध्ययनों में वांछित किस्में / प्रजातियां प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

संकर मक्का का विकास पादप प्रजनन में एक सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से है। इससे कृषि में क्रांति आई है तथा मक्का की पैदावार काफी बढ़ गई है। डॉ. जार्ज ए शुल (A. George Shule (1874-1954) ने नियंत्रित स्व-परागण का प्रयोग करके अंत: प्रजात क्रम (inbred lines) विकसित किए। दो अंत: प्रजात क्रमों के युग्मन से अधिक शक्ति वाले संकर उत्पन्न हुए। डॉ. डोनॉल्ड एफ. जोन्स द्वारा सुझाए गए द्विसंकरण (double cross) के विचार को लागू करने से संकर मक्का का उत्पादन आर्थिक रूप से संभव हो सका। 10 वर्षों के भीतर ही (1936-1945), मक्का का उत्पादन संकर बीजों के उपयोग से 5% से भी कम से बढ़कर 90% से अधिक हो गया।

पादप प्रजनन के प्रचलित तरीकों में वांछित अंत: प्रजात क्रम से पर परागण निश्चित करने के लिए नर पुष्पक्रम को हटाने की आवश्यकता पड़ती थी। यह बाद में ज्ञात हुआ कि कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता के कारण पराग कण अपूर्णवर्धित (abortion) हो जाता है। इसलिए, चयनित जनकों के संकरण से वांछित संकर उत्पन्न हो जाते हैं तथा श्रमसाध्य वल्लर हरण (detasseling) का कार्य नहीं करना पड़ता है। अधिक शक्तिवान अंत: प्रजात क्रमों के उत्पादन से उनके द्वारा उत्पन्न बीजों की पैदावार बढ़ने में सहायता मिलती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (Indian Council of Agricultural Research) ने 1957 में एक समन्वित मक्का प्रजनन प्रोजेक्ट (Co-ordinated Maize Breeding Project) आरंभ किया। कुछ प्रचलित संकर जैसे गंगा हाइब्रिड मक्का (Ganga Hybrid Makka), रंजीत हाइब्रिड मक्का (Ranjit Hybrid Makka), डेकन मक्का (Deccan Makka), तथा अन्य की अब देश के विभिन्न भागों में विस्तृत रूप से खेती की जाती है।

1964 में आरंभ की गई सभी भारतीय समन्वित मक्का सुधार योजनाओं (Co-ordinated Maize Improvement Scheme) के परिणामस्वरूप विभिन्न किस्मों जैसे विजय, किसान, जवाहर, विक्रम, शक्ति, तथा रतन का विकास हुआ। ये किस्में भारत में मक्का अनुसंधान के इतिहास में महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी गईं।

11.3.5 मक्का के उपयोग

मक्का का उपयोग तीन प्रमुख कार्यों के लिए होता है : (i) मानव भोजन के रूप में; (ii) मवेशियों के चौरे के रूप में; तथा (iii) बहुत से औद्योगिक उत्पादों के कच्चे माल के रूप में। इनके अतिरिक्त, मक्का के अनेकों अन्य उपयोग भी हैं।

मक्का का दाना विशेष तौर पर मांड से समृद्ध होता है। मांड के अतिरिक्त मक्का वसा तथा प्रोटीन्स की भी आपूर्ति करता है। ज़ीन (zein) मक्का में पाया जाने वाला प्रभावी प्रोटीन है। हालांकि, मक्का के प्रोटीन में अमीनो अम्ल ट्रिप्टोफेन तथा लाइसीन की कमी होती है। इसके कारण, मक्का के आहार को वैकल्पिक प्रोटीन स्रोत के साथ संपूरित करना आवश्यक है जिससे संतुलित आहार प्राप्त हो सके।

दानों को साधारणतः पका के खाया जाता है तरुण मक्का के दानों (विशेष रूप से स्वीट कॉर्न के) को उबाला या भूना जाता है। पॉपकार्न को छोटे दानों को गरम करके बनाया जाता है, जो गर्म होने पर फूट जाते हैं तथा उनके अंदर के तत्व बाहर आकर सफेद फूले हुए गोले बन जाते हैं। इन्हें नाश्ते के तौर पर उपयोग किया जाता है। मक्का का आटा, कॉर्नफ्लेक्स तथा मक्के का मांड मुख्य भोजन के रूप में विभिन्न प्रकार से उपयोग किए जाते हैं। मक्का रोटी बनाने के लिए अनुपयुक्त होता है क्योंकि इसमें ग्लूटन नहीं पाया जाता है। मक्के के शीरे (corn syrup) तथा मक्के की शर्करा (corn sugar) का उपयोग जैम, जैली तथा मिठाईयों में होता है। मक्के का तेल एक प्रमुख पाक माध्यम (cooking medium) है। अधिकांश पश्चिमी देशों में मक्का एक प्रमुख मवेशियों का चारा है। संयुक्त राष्ट्र अमरीका में उगाई जाने वाली मक्का का लगभग 50% इस कार्य के लिए उपयोग होता है। साइलेज (खत्ती में परिरक्षित चारा) या तो पूर्ण मक्का के पौधे से बनाया जाता है। (सिवाय जड़ के) अथवा जब भुट्टों को काट लिया जाता है। हरे तथा सूखे वृंतों का उपयोग भी चारे के रूप में होता है।

टॉर्टिला (मक्के का केक) खमीर रहित पेनकेक जैसी मक्के की पावरोटी होती है जिसे मक्के के आटा से बनाया जाता है तथा इसे मुख्य भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है।

मक्का का उपयोग बहुत से औद्योगिक उत्पादों के निर्माण में किया जाता है। मक्के के मांड को सुखाकर डेक्स्ट्रिन (dextrin) के उत्पादन में प्रयोग किया जाता है। तेल का उपयोग साबुन तथा ग्लिसरीन के निर्माण में किया जाता है। ज़ीन, (Zein) मक्का के प्रोटीन का उपयोग अच्छे तन्यता बल (tensile strength) के तंतु / फाइबर्स को बनाने में किया जाता है। तने के तंतु कागज बनाने के काम आते हैं। मज्जा (pith) का उपयोग हल्के पैकिंग के सामान के लिए तथा विस्फोटकों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। जब मक्का के भुट्टों को दबाव में अम्लों के साथ पकाया जाता है, तो एक पदार्थ फरफ्यूराल (furfural) उत्पन्न होता है। ये एक महत्वपूर्ण औद्योगिक यौगिक है जिसका उपयोग डीजल, वनस्पति तथा चिकनाई वाले तेलों (lubricating oils) के शोधन के लिए किया जाता है। इसका उपयोग प्लास्टिक तथा नाइलोन बनाने के लिए भी किया जाता है।

अल्कोहली पेय पदार्थ जैसे बियर तथा व्हिस्की मक्का से बनाए जाते हैं। औद्योगिक अल्कोहल जैसे इथाइल, ब्यूटाइल तथा प्रोपाइल अल्कोहल भी मक्का के दानों से बनाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त एसिटेल्डिहाइड, एसीटोन, ग्लिसरॉल, एसीटिक, साइट्रिक तथा लैक्टिक अम्ल भी मक्का से बनाए जाते हैं।

11.4 चावल

वानस्पतिक नाम: *ओराइज़ा सेटाइवा* लिनियस (*Oryza sativa* **Linn.**)

कुल : पोएसी

साधारण नाम : चावल, धान

n = 12

भारत में चावल का उत्पादन मिलियन टन में।

92-93	72.9
93-94	80.0
94-95	81.1
95-96	77.0
96-97	81.3
97-98	82.1

विश्व के आधे से भी अधिक लोग चावल अपने आहार के मुख्य भाग के रूप में खाते हैं। लगभग सभी लोग जो भोजन के लिए चावल पर निर्भर हैं वे एशिया में रहते हैं। अधिकांश वर्गीकरण विज्ञानियों ने चावल की लगभग 20 जातियों को पहचाना है, परंतु सिर्फ दो की ही खेती की जाती है तथा ये ही आर्थिक महत्त्व की हैं। एशियाई चावल-*ओराइजा सेटाइवा* लिन. दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया में प्रमुख अनाज की फसल है। इसे विश्व के अन्य भागों में भी उगाया जाता है। अफ्रीकी चावल *ओराइजा ग्लेबेरिमा स्टुइड* (*O. glaberrima Steud*) अधिकांशत: पश्चिमी अफ्रीका में उगाया जाता है। दोनों जातियां तुषों रोमिलता (pubescence) तथा जीभिका (ligule) के आमाप में भिन्न होती है। इन संरचनीय विभेदों के अतिरिक्त, *ओराइजा ग्लेबरीमा* (*O. glaberrima*) की फलभित्ति (pericarp) लाल होती है। दिलचस्प रूप से, दोनों जातियों के बीच की माध्यमिक किस्में भी पाई जाती है। निम्नलिखित ब्यौरा अधिक महत्वपूर्ण जाति *ओराइजा सेटाइवा* का है।

11.4.1 चावल की उत्पत्ति तथा वितरण

राइस पेपर चावल से नहीं बनाया जाता है, परंतु *टेट्रापेनेक्स पेपिरीफिरा* (हुक) (*Tetrapanax papyriferum*) (Hook) K. koch की मज्जा से बनाया जाता है, जो ताईवान का एक वृक्ष है व अरेलिएसी (Araliaceae) कुल का है।

ओराइजा सेटाइवा की उत्पत्ति दक्षिण पूर्व एशिया में हुई है। इसकी उत्पत्ति या घरेलू बनाने का सही स्थान तथा तारीख निश्चित तौर पर ज्ञात नहीं है। चीन में इसकी खेती लगभग 5000 वर्षों से होती रही है। चीन में युंग शाओ खुदाई से प्राप्त पुरातात्विक प्रमाण चावल के अवशेषों को दर्शाते हैं। ये 2600 ईसा पूर्व के हैं। प्राचीन काल से ही चावल के साथ बहुत से धार्मिक अनुष्ठान संबद्ध हैं। ये तथा अन्य प्रमाण सुझाते हैं कि चावल की उत्पत्ति चीन में हुई है।

दूसरी परिकल्पना सुझाती है कि चावल की उत्पत्ति संभवत: भारत में हुई तथा उसके बाद यह चीन तथा दक्षिण पूर्वी एशिया के अन्य भागों में फैला। गुजरात में लोथल से की गई पुरातात्विक खुदाइयों से चावल के जले हुए दानों का पता चला है। यह 2300 ई. पूर्व के हैं तथा सिंधु घाटी सभ्यता की हड़प्पा संस्कृति के विस्तार माने जाते हैं प्राचीन हिंदू धर्मग्रंथों तथा साहित्य में भी चावल के अभिलेख है। कार्बनीकृत चावल के दाने उत्तर प्रदेश में हस्तिनापुर में भी पाए गए हैं।

इसके अतिरिक्त, फिलीपीन्स में अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान (IRRI) की स्थापना फोर्ड तथा रॉकफेलर फाउण्डेशन के संयुक्त प्रयास से इस महत्वपूर्ण कृषि पादप के अध्ययन के लिए किया गया था। यह 1962-1965 के मध्य, तीन वर्षों में जर्म / जनन प्लास्म / द्रव्य बैंक बनाने के लिए विश्व के विभिन्न भागों से चावल के नमूने एकत्रित किए गए। चावल की 10,000 से अधिक किस्में पहचानी गई तथा दिलचस्प रूप से इनमें से लगभग 60% भारत में पाई गई थीं। इसने सुझाया कि इस देश में उगाए जाने वाले चावल में बहुत अधिक जेनेटिक विविधता पाई जाती है। विकासात्मक दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण है क्योंकि जितनी अधिक विविधता होगी उतने ही अधिक पर्यावरण से अनुकूलन की संभावनाएं होंगी। कच्छ क्षेत्र में, पहाड़ियों के बीच में चावल की खेती ने व साथ ही क्षेत्र में वन्य जातियों की उपस्थिति ने विभिन्न किस्मों के प्राकृतिक चयन में सहायता की है।

इन प्रमाणों के अतिरिक्त, भारत में धार्मिक अनुष्ठानों में चावल के असंख्य प्रचलित उपयोग हैं। वे जन्म, विवाह तथा मृत्यु तक से संबन्धित हैं जो यह सुझाते हैं कि चावल की उत्पत्ति प्राचीन भारत से हुई है। भारत से, चावल संभवत: चीन, इंडोनेशिया, जापान तथा अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई क्षेत्रों में फैला है। ये पश्चिम की ओर ईरान, ईराक, मिस्र तथा पड़ोसी क्षेत्रों में भी फैला है। हमको चावल की उत्पत्ति को वर्गिकी दृष्टि से भी देखना चाहिए। कृष्य चावल की उत्पत्ति पर दो

भिन्न मत हैं पहली परिकल्पना सुझाती है कि कृष्य चावल की उत्पत्ति एक ही पूर्वज से हुई है। यह एकस्त्रोतोद्‌भिदी उत्पत्ति (monophyletic origin) सुझाती है कि दोनों कृष्य जातियां *ओराइजा सेटाइवा* तथा *ओराइजा ग्लेबरीमा* एक ही पूर्वज से विकसित हुई है। इस पूर्वज की खोज ने वन्य चावल [*ओराइजा लॉगीस्टेमीनेटा* (*O. longistaminata*) (*ओराइजा पैरान्सिस*) (*O. perennis*) भी कहलाता है।] की प्राप्ति को दर्शाया जो दोनों कृष्य जातियों की प्रजनक हो सकती थी। इसकी उत्पत्ति को गोंडवाना थल महाद्वीप (Gondwana land super continent) से खोजा जा सकता है। इस महाद्वीप के महाद्वीपीय विस्थापन तथा विखंडन से, प्रागैतिहासिक काल में आज के अफ्रीका, मेडागास्कर, दक्षिण पूर्व एशिया, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिण अमरीका, एंटार्टिका आदि का निर्माण हुआ। गोंडवाना क्षेत्र में पाई जाने वाली चावल की मूल पूर्वजी जाति पश्चिम अफ्रीका तथा दक्षिण पूर्वी एशिया के क्षेत्रों के लिए अनुकूलित थी। इससे एक तरफ *ओराइजा सेटाइवा* का विकास हुआ तथा दूसरी ओर *ओराइजा ग्लेबरीमा* विकसित हुई।

चावल की खेती बहुत बड़े पैमाने पर चीन, भारत, जापान, बंगलादेश, थाईलैण्ड, वियतनाम, म्यांमार तथा अन्य आसपास के देशों में होती है। कुछ कम मात्रा में इसकी खेती अफ्रीका, अमरीका तथा यूरोप में भी होती है। भारत जो चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा चावल का उत्पादक है, अक्सर अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए चावल का आयात करता है। भारत में, चावल की खेती लगभग सभी राज्यों में की जाती है। यह नदी की घाटियों, तटीय क्षेत्रों तथा नदियों के मुहानों (deltas) पर अधिक उगाया जाता है। पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा आसाम महत्वपूर्ण चावल उत्पादक राज्य हैं। यह जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा केरल में भी उगाया जाता है। केन्द्रीय चावल / धान अनुसंधान संस्थान (CRRI) की स्थापना कटक (उड़ीसा) में चावल पर अनुसंधान / शोध को समन्वित करने के लिए की गई है।

11.4.2 चावल के प्रकार

चावल वर्गीकरण वैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के चावलों के कई विशिष्ट गुणों का अध्ययन किया है तथा तीन उपजातियों को पहचाना है। ये अलग भौगोलिक प्रजातियों के रूप में विकसित हुई हैं तथा अपने अनेकों गुणों के कारण पहचानी जा सकती हैं। ये तीन उपजातियां हैं :

(अ) *ओराइज़ा सेटाइवा* उपजाति *इंडिका* (*O. sativa* sub.sp. *indica*)

(ब) *ओराइज़ा सेटाइवा* उपजाति *जेपोनिका* (*O. sativa* sub. sp. *japonica*)

(स) *ओराइजा सेटाइवा* उपजाति *जावानिका* (*O. sativa* sub sp. *javanica*)

इन उपजाति के बीच में स्पष्ट बंध्यता रोध (sterlity barriers) पाए जाते हैं। इनमें से *इंडिका* तथा *जैपोनिका* चावल काफी सुविख्यात हैं तथा उन्हें आकारिकीय तथा शरीर क्रियात्मक गुणों के आधार पर विभेदित किया जा सकता है जैसा कि इस तालिका में सूचीबद्ध किया गया है।

तालिका 11.1 : *इंडिका* तथा *जैपोनिका* चावल की उपजातियों के मध्य आकारिकीय तथा शरीर क्रियात्मक विभेद

	गुण	*इंडिका* उपजाति	*जैपोनिका* उपजाति
1.	मौसम/ऋतु अनुकूलन	उष्णकटिबंधी (tropical) मानसून	गर्म शीतोष्ण
2.	विपरीत परिस्थिति को झेलने की क्षमता	उच्च	मध्यम
3.	रोगों के लिए प्रतिरोधकता	काफी प्रतिरोधी	कम प्रतिरोधी

4. दीप्ति कालिक अनुक्रिया (Photo periodic response)	प्रमुख रूप में प्रकाश संवेदी (Photo sensitive) (अल्प प्रदीप्त काली) (short day)	दीप्ति काल असंवेदी (insensitive)
5. उर्वरक अनुक्रियात्मकता	निम्न	उच्च
6. पतन (lodging)	ग्राही (susceptible)	प्रतिरोधी (resistant)
7. वर्धन काल तथा वृद्धि (Vegetative period and growth)	लंबा, तेजी से बढ़ने वाला, पर्णिल (दीर्घ परिपक्वता)	छोटा, कायिक शक्ति की कमी (शीघ्र परिपक्वता)
8. तलशाखन की प्रवृत्ति (Tillering habit)	सघन तलशाखन	मध्यम तलशाखन
9. कल्म (culm) की प्रकृति	लंबे तथा कमजोर वृंत (stalks)	छोटे तथा मजबूत वृंत
10. पर्ण का रंग तथा प्रकार	चौड़ी तथा पीत हरित	पतली तथा गहरी हरी
11. भूसी की रोमिलता	छितरे हुए (sparse), छोटे	सघन, लंबे
12. शूक (awns)	समान्यत: अनुपस्थित	कभी-2 उपस्थित
13. भंजन (shattering) गुण	ग्राही	प्रतिरोधी
14. दाने का आमाप / साइज	सामान्यत: लंबा, पतला, चपटा	छोटा तथा मोटा
15. भ्रूणपोष	प्रभासी	खड़ियामय (chalky)
16. बीज प्रसुप्तता (seed dormancy)	उपस्थित	अनुपस्थित
17. पकाने का गुण	पकाने पर दाने चिपकते नहीं हैं	दाने तेजी से गल जाते हैं तथा लुगदी बन जाती है
18. उत्पादन विभव (Yield potential)	मध्यम	उच्च
19. निर्देशित मूल्य	उच्च	निम्न

कोचर (1998) से

चावल की किस्मों को उनके परिपक्व होने के काल के आधार पर भी वर्गीकृत किया जा सकता है। भारत में हमारे पास है :

(अ) बहुत शीघ्र परिपक्व होने वाली किस्में जो 110 दिन या कम में परिपक्व हो जाती हैं।

(ब) शीघ्र परिपक्व होने वाली किस्में जो 110 से 140 दिन में परिपक्व हो जाती हैं।

(स) देर से परिपक्व होने वाली किस्में जो 150-170 दिनों में परिपक्व होती हैं।

(द) बहुत ही देर से परिपक्व होने वाली किस्में जो 180 या अधिक दिनों में परिपक्व होती है।

परिपक्वता के इस काल के आधार पर, किसान पानी की उपलब्धता होने पर एक ही वर्ष में एक ही खेत में चावल की 2 या 3 फसल उगा सकते हैं।

11.4.3 खेती

चावल की खेती के तरीके विश्व के विभिन्न भागों में भिन्न-2 हैं भारत में, तथा अन्य दक्षिण पूर्वी ऐशियाई देशों में, अधिकांश चावल की खेती साधारण तरीकों के द्वारा तथा उपलब्ध खेत मजदूरों के द्वारा होती है। चावल की खेती के लिए चार मुख्य चरण अपनाए जाते हैं। ये हैं : (i) भूमि तैयार करना, (ii) रोपण (planting) (iii) रोगों तथा कीटों पर नियंत्रण , (iv) कटाई (harvesting)।

चावल नम आवासों के लिए काफी सहनशीलता दिखाता है क्योंकि यह मूल रूप से दलदली मिट्टी की फसल है। ये उन क्षेत्रों में सबसे उत्तम ढंग से उगता है जिनमें पर्याप्त वर्षा होती है। हालांकि, इसे शुष्क क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है यदि किसानों को सिंचाई की सुविधाएं प्रदान की जाएं। सफल खेती वर्धन काल के अधिकांश भाग के दौरान जल की आपूर्ति तथा नियंत्रण पर निर्भर करती है।

जल आपूर्ति की तुलना में, मिट्टी अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण नहीं होती है। चावल को अनेकों प्रकार की मिट्टियों पर उगाया जा सकता है। नदी घाटियों की तथा नदियों के मुहानों की भारी जलोढ़ मिट्टी चावल की सफल खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, तथा पोटेशियम युक्त उर्वरकों की पर्याप्त मात्रा में आवश्यकता होती है।

चावल एक गर्म मौसम की फसल है जिसको वर्धन काल के दौरान अपेक्षाकृत उच्च तापमान की आवश्यकता होती है। वर्धन काल के दौरान औसत तापमान 20-38° सेन्टीग्रेड के बीच रहता है। अच्छी पैदावार के लिए सूरज की धूप के लंबे काल की, विशेषतौर पर पुष्पगुच्छ (panicle) के आरंभन से लेकर फसल की कटाई तक, (लगभग 45 दिन) आवश्यकता होती है। *इंडिका* किस्मों को *जैपोनिका* किस्मों की अपेक्षा अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। चावल अल्प प्रदीप्तकाली (short day) पादप है।

जब चावल को शुष्क भूमि (dryland) या उच्च भूमि (upland) फसल के रूप में उगाया जाता है, तो भूमि को पिछली फसल के बाद बारंबार जोता जाता है। अन्य अनाजों की तरह बीज को बोया जाता है। नम धान की खेती में, भूमि को बुआई के लगभग एक महीने पहले सींचा जाता है तथा इसे ठहरे जल में कई बार अच्छी तरह से जोता जाता है। बीजों को छोटी पौधशालाओं में अंकुरित किया जाता है तथा नवोद्भिद पौधों को पानी से भरे खेतों में रोपा जाता है। इस तरीके से धान के नवोद्भिदों को रोपने के कई लाभ हैं :

(i) मुख्य भूमि पर चावल को उगाने का काल कम हो जाता है। इससे एक ही खेत में एक वर्ष में 2 या 3 या कभी-कभी 4 फसलें भी उगाई जा सकती हैं।

(ii) इससे फसल की इष्टतम पैदावार के लिए सबसे अनुकूल मौसम का चयन संभव होता है।

(iii) बीज की कम मात्रा की आवश्यकता होती है, जिससे उनकी कीमत घट जाती है। एक हेक्टेयर भूमि के लिए नम धान की खेती में, 30-50 कि. ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है जबकि इसकी तुलना में शुष्क भूमि पर खेती में 50-100 कि. ग्रा. बीज एक हेक्टेयर भूमि पर बोने पड़ते हैं।

(iv) पौधशालाओं में उगाए जाने वाले नवोद्भिद मजबूत तथा स्वस्थ पौधों में विकसित होते हैं। वे प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए प्रतिरोधकता विकसित कर लेते हैं। इनमें रोगों, कीटों तथा खरपतवार पर नियंत्रण भी आसान होता है।

(v) प्रतिरोपण से लवणों से समृद्ध भूमि का प्रभावी उपयोग भी संभव होता है।

11.4.4 चावल के पौधे की वानस्पतिकी

चावल का पादप अर्ध-जलीय, मुक्त रूप से तल शाखन करने वाला एकवर्षी घास है। इसमें लगभग 50-150 से.मी. लंबा बेलनाकार संधियुक्त तना होता है। जड़ तंत्र तंतुमय होता है। अंकुरण होने पर प्राथमिक जड़ निकलती हैं तथा उसके बाद 2 अतिरिक्त जड़ें निकलती हैं। अपस्थानिक जड़ें उसके बाद प्राथमिक तने की आधारीय पर्व संधियों तथा तलशाखन से उत्पन्न होती हैं (चित्र 11.7)। जड़ें निम्न ऑक्सीजन की सांद्रता में उग सकती हैं। ये सघन सतह जाल बनाती हैं तथा बहुत अधिक शाखित व मूलरोमों की अधिकता लिए होती हैं।

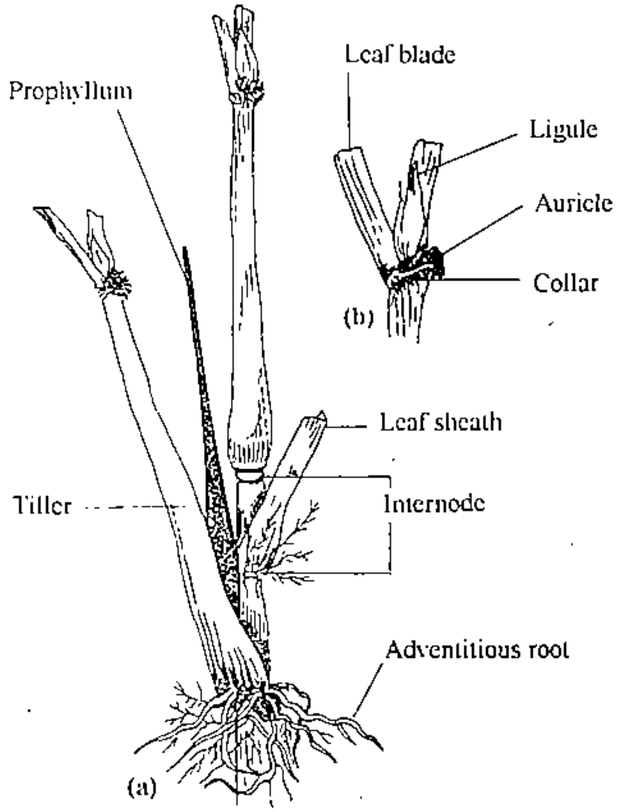

चित्र 11.7 : (a) मुख्य चावल के कल्म का आधारीय भाग, अपस्थानिक जड़ों, सहपत्रिकाओं (prophyllum) तथा द्वि-श्रेणित पत्तियों को दिखाते हुए। (b) जीभिका तथा पालियों (auricles) को दिखाते हुए पर्ण संधि

तना या कल्म सामान्यत: सतर, चिकना, तथा 6-10 मि.मी. व्यास का होता है। पर्वसंधियां ठोस होती हैं परंतु पर्व खोखले होते हैं। प्रत्येक पर्वसंधि के ऊपर एक स्पष्ट पर्णवृंततल्प (pulvinus) तथा एक अंतर्वेशी विभज्योतक (intercalary meristem) होता है। निम्न पर्व छोटे होते हैं, तथा शीर्ष की ओर क्रमश: लंबे होते जाते हैं। प्रत्येक तने पर 10-20 पर्व होते हैं।

प्रत्येक कल्म के आधार पर प्रथम पर्ण तथा प्रत्येक तलशाखा अवशेषी होती है। ये ब्लेड विहीन सहपत्रिका लिए होती है। पादप पर अन्य सभी पत्तियों में आच्छद तथा पटल होते हैं। पत्तियां तने पर दो श्रेणियों में एकांतरी रूप से, प्रत्येक पर्वसंधि पर एक उगती है। प्रत्येक पत्ती आच्छद, ब्लेड, जीभिका तथा पालियुक्त होती है। आच्छद अपनी पूरी लंबाई में फट जाता है तथा पर्वसंधि को घेर लेता है। निचले आच्छद पर्वों से लंबे होते हैं परंतु 10 वीं पत्ती के बाद आच्छद लगातार पर्वों से छोटा होता जाता है।

आच्छद बारीक रूप से शिरामय तथा चिकना होता है। आच्छद तथा ब्लेड की संधि पर एक त्रिभुजाकार झिल्लीनुमा जीभिका होती है। यह सामान्यत: रंगहीन होती है तथा इसमें उम्र के साथ कट-फट जाने की प्रवृत्ति होती है। जीभिका के दोनों तरफ छोटे झालरदार उपांग होते हैं जो पालि कहलाते हैं। पर्ण ब्लेड पतला होता है। पालि के नीचे सबसे ऊपरी पत्ती का पटल अन्य पत्तियों से चौड़ा तथा छोटा होता है। यह ''बूट या फ्लेग पत्ती'' (boot or flag leaf) कहलाती है।

पुष्पक्रम मुक्त अंतस्थ यौगिक असीमाक्ष (panicle) व 14-42 से. मी. लंबा होता है। मुख्य अक्ष विभिन्न संख्या में प्राथमिक शाखाएं धारण किए रहता है। वह कोण जिस पर प्राथमिक शाखाएं उगती हैं वह पुष्पक्रम की सघनता को निर्धारित करता है (चित्र 11.8)। प्राथमिक शाखाएं द्वितीयक शाखाएं धारण किए रहती हैं जिसमें से प्रत्येक में एक या अधिक कणिशिकाएं होती हैं। प्रत्येक कणिशिका द्विपार्श्विक रूप से संपीडित (compressed) रहती है तथा एक द्विलिंगी एकल पुष्प लिए रहती है। वृंत छोटा तथा दृढ़ होता है। समान लंबाई के दो तुष पाए जाते हैं। लेमा

बड़ा, नौकाकार तथा दृढ़ होता है। यह कठोर, नौतलित (keeled) तथा स्पष्ट रूप से पाँच शिरीय होता है। शीर्ष नोकदार अथवा शूक बनाने के लिए विस्तारित होता है। पेलिया पतला, नौतलित, तथा 3-शिरीय होता है। पेलिया का शीर्ष एक ठोस बिंदु के रूप में बाहर निकला रहता है जो लेमा के शीर्ष के साथ मिलकर कार्योप्सिस का एपीकुलस (apiculus) बनाता है। प्रत्येक एकल पुष्प में 2 चौड़े लोडिक्यूल, छह पुंकेसर दो घेरों में तथा एक बीजांड के साथ जायांग होता है। इसमें दो वर्तिकाएं होती है जिन पर सफेद या बैगनी से पिच्छकी (plumose) वर्तिकाग्र होते हैं।

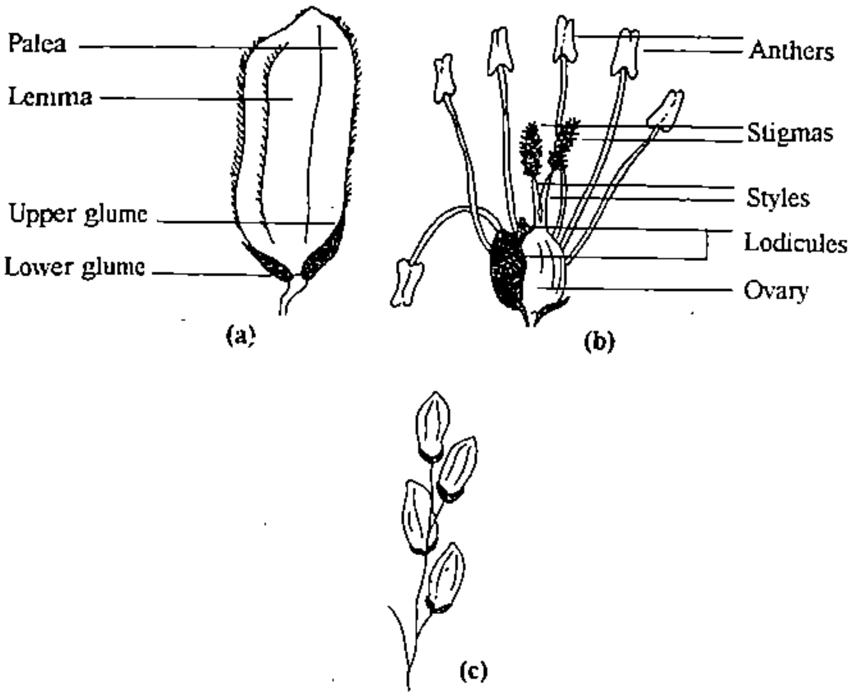

चित्र 11.8 : *ओराइज़ा सेटाइवा (Oryza sativa)* (a) एक कणिशिका, (b) छह पुंकेसरों सहित पुष्प को दिखाने के लिए लेमा तथा पेलिया हटे हुए (c) चावल के यौगिक असीमाक्ष का एक भाग

फल कार्योप्सिस होता है जो लेमा तथा पेलिया द्वारा निर्मित छिलके में कसकर बंद रहता है। यह धान कहलाता है। मिलिंग के दौरान हल (hull) हट जाता है तथा चावल का दाना अलग हो जाता है (चित्र 11.9)।

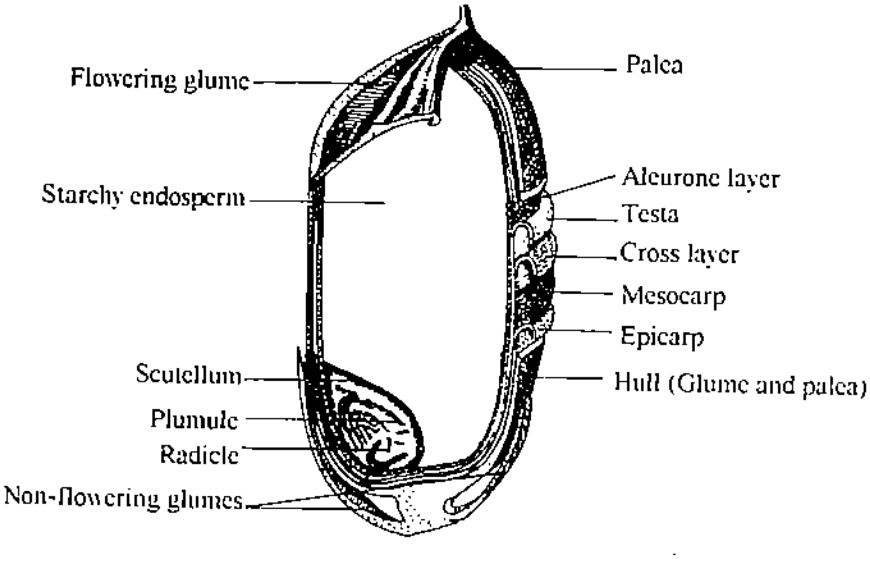

चित्र 11.9 : चावल की कणिशिका से होता हुआ आरेखी अनुदैर्ध्य काट

भारत में उत्पन्न होने वाला लगभग आधा चावल उसना (parboiled) चावल है। धान को ठंडे या गर्म जल में विभिन्न काल तक के लिए तीन दिनों तक डुबोया जाता है। इसे फिर कम दाब पर भाप में पकाया जाता है तथा सुखाया जाता है। इसके बाद हल को मिलिंग के द्वारा अलग किया जाता है। उसनीकरण से मिलिंग के दौरान दाना कम टूटता है। प्रमुख पोषक तत्व भी दाने में ही रहते हैं तथा दाने को लंबे समय तक संग्रहित किया जा सकता है। हालांकि, यह निश्चित कर लेना जरूरी है कि स्वच्छ जल का उपयोग किया गया है तथा उसनीकरण स्वच्छता से किया गया है जिससे अच्छे प्रकार का चावल प्राप्त किया जा सके। अनुचित ढंग से उसनीकरण करने से दाने का रंग हल्का हो जाता है तथा उसमें से खराब महक आती है।

11.4.5 चावल के प्रजनन कार्यक्रम

चावल के प्रजनन के तरीके, गेहूं के तथा अन्य स्वपरागित फसलों के प्रजनन में प्रयुक्त तरीकों के समान ही होते हैं। इन कार्यक्रमों के उद्‌देश्य हैं :

(i) नई किस्में बनाने के लिए जननद्रव्य / जर्मप्लास्म का संग्रह

(ii) इष्टतम लाभ के लिए अच्छी जीनप्रकारों का चयन

(iii) उपयुक्त गुणों युक्त नई किस्में उत्पन्न करने के लिए संकरण।

बढ़ती जनसंख्या को भोजन प्रदान करने के लिए बढ़ती आवश्यकता ने अनाज के उच्च उत्पादन के तरीके खोजने पर बल दिया। दक्षिण पूर्वी एशिया में, चावल प्रमुख आहार का कार्य करता है तथा अधिक दाने उत्पन्न करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों की आवश्यकता है। 1950 में, संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य तथा कृषि संगठन ने कटक (उड़ीसा) में अंतर्राष्ट्रीय चावल संकरण प्रोजेक्ट को प्रायोजित किया। केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान ने सहकारी *इंडिका* तथा *जैपोनिका* किस्मों के चावल के संकरण के प्रोजेक्ट को ले लिया। इस प्रोजेक्ट के उद्‌देश्य थे :-

(i) (क) *जैपोनिका* चावल को उर्वरक अनुक्रियता तथा उच्च उत्पादकता के लिए तथा

(ख) *इंडिका* चावल की कठोरता तथा अनुकूलनशीलता के लिए जीन्स को समावेशित करना

(ii) *जैपोनिका* चावल के दानों के अपतन तथा अभंजन के जीन्स को संकरों में समावेशित करना।

दक्षिण पूर्वी एशिया के सभी देशों ने इस प्रोजेक्ट को सफल बनाने के लिए बहुत सी किस्मों के बीजों का योगदान दिया।

साथ ही साथ ताईवान में, चावल प्रजनकों ने एक स्वत: बौने परिवर्तक (spontaneous dwarf mutant) की खोज की जो **डी-जी-वू-जेन (Dee-geo-woo-gen)** कहलाया। यह चावल के प्रजनन में मील का पत्थर साबित हुआ। इस परिवर्तक / म्यूटेन्ट के निम्नलिखित गुण हैं :

(i) बौनेपन की प्रकृति, सिर्फ 60 से.मी. तक बढ़ता है।

(ii) कड़ी पत्तियां जो तने पर सतर रूप से लगी रहती हैं, जिससे सूरज के प्रकाश का अधिकतम उपयोग संभव हो सके।

(iii) प्रकाश असंवेदी जिससे फसल को पूरे वर्ष बोया जा सके।

(iv) बीज प्रसुप्तता की अनुपस्थिति जिससे बीजों को कटाई के फौरन बाद बोया जा सके।

इस परिवर्तक के लंबे सूखा रोधी *इंडिका* चावल के साथ संकरण से एक विशिष्ट बौनी किस्म उत्पन्न हुई जिसे ताइचुंग नेटिव-1 (Taichung native I) कहते थे। लॉस बैनोस (फिलीपीन्स में) में अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के स्थापित होने के बाद इस बौने संकर का, विभिन्न चावल उत्पादक देशों के अनुकूल, बड़ी संख्या में नए संकर उत्पन्न करने के लिए आगे उपयोग किया गया। इसने 1965 के बाद भारत में भी चावल प्रजनन प्रोजेक्ट को नई दिशा प्रदान की, अनेकों नई उच्च पैदावार वाली, जल्दी परिपक्व होने वाली तथा उप-बौनी किस्में विकसित हुई

तथा अब विस्तृत रूप से भारत में इनकी खेती की जाती है। कुछ अधिक विख्यात उन्नत किस्में हैं आई आर-8 (I.R.-8), आई आर-20 (I.R.-20), पंकज, जया, कावेरी, विजया, रतना, जगन्नाथ पद्म, कामिनी, साबरमती तथा जयन्ती। *जेपोनिका* चावल की कुछ किस्में जो ताईवान में विकसित की गई उनकी भी खेती की गई है। इनमें से ताईवान-3, ताईचुंग 65 तथा ताईचुंग 68 प्रचलित हैं।

11.4.6 उपयोग

प्रमुख अनाज होने के कारण, चावल दक्षिण पूर्वी एशिया में करोड़ों लोगों के दैनिक आहार की लगभग आधी कैलोरीज की आपूर्ति करता है। यह कार्बोहाइड्रेट्स का एक उत्तम स्रोत है तथा इसमें अल्प मात्रा में प्रोटीन्स, खनिज तथा विटामिन्स भी होते हैं। चावल में बहुत कम वसा होता है तथा इसे पचाना आसान है। लगभग 90% चावल को पका कर विभिन्न प्रकार से दालों, सब्जियों, मछली या मीट के साथ खाया जाता है। इसे सादे पानी में उबाला जा सकता है अथवा इसका पुलाव बनाया जाता है। चावल को इडली, डोसा तथा अन्य पकवानों के रूप में भी खाया जाता है। जो न सिर्फ दक्षिण भारत में बल्कि विश्व के अन्य भागों में भी प्रचलित है। चावल की खीर चावल को दूध में पकाने तथा उसमें चीनी और मेवा डालकर बनायी जा सकती है। पिसे हुए चावल को पका कर बच्चों के लिए दूध के विकल्प के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। यह एकमात्र अनाज है जिसे इस तरीके से उपयोग कर सकते हैं। चावल के आटे को मिठाइयों, आइस-क्रीम, पेस्ट्री आदि में भी उपयोग किया जाता है। चावल के मांड का भोजन के रूप में, लान्ड्री में तथा कॉस्मेटिक व वस्त्र उद्योग में भी उपयोग किया जाता है।

भूना हुआ चावल (parched rice) दानों को गर्म बालू में खुले बर्तन में भूनकर बनाया जाता है। दाने चटकने लगते हैं और फूल जाते हैं, जिसके बाद इन्हें छाना जाता है। चावल के पत्रक / फ्लेक (flake) धान को 2-3 दिन के लिए जल में डुबोकर व उसके बाद उन्हें पानी में कुछ मिनटों के लिए उबालकर बनाया जाता है। पानी को बहा दिया जाता है, दानों को ठंडा किया जाता है तथा फिर तब तक गर्म किया जाता है जब तक कि उनका छिलका चटक कर अलग नहीं हो जाता। दाने को फिर चपटा कर दिया जाता है तथा छिलका उतार दिया जाता है। फूला हुआ या पॉप्ड चावल (puffed or popped rice) चावल को बंद बर्तन में एक घंटे के लिए 288° सेन्टीग्रेड तापमान पर गर्म करके बनाया जाता है। दाने की नमी भाप में बदल जाती है तथा जब भाप / प्रेशर को निकाला जाता है तो दाने अपने वास्तविक नाप से कई गुना अधिक फूल अथवा बड़े हो जाते हैं।

अल्कोहली पेय पदार्थ भी चावल से बनाए जाते हैं। जापान में 'साकी' तथा चीन में ''वांग इसीन'' (Wang Esin) प्रचलित हैं।

चावल के कुछ सहउत्पाद (by products) हैं जो विभिन्न तरीकों से लाभदायक हैं। चावल की भूसी / छिलका का उपयोग चावल मिलों में ईंधन के रूप में, हार्डबोर्ड बनाने में तथा अपघर्षी (abrasive) के रूप में होता है। फरफ्यूराल (furfural) (मक्का को देखिए) को भी चावल के हल (hull) से बनाया जाता है।

चावल की चोकर, जो सफेद चावल उत्पन्न करने के लिए भूरे चावल (brown rice) की पॉलिश के दौरान प्राप्त होती है, उसका उपयोग मवेशियों तथा मुर्गियों के चारे के लिए होता है। चोकर से निकाले जाने वाले तेल का उपयोग खाना बनाने में तथा साबुन के निर्माण में होता है।

चावल की पुआल पशुओं को खिलाई जाती है। इसका उपयोग स्ट्रावोर्ड, छप्पर, चटाइयां तथा टोप बनाने में भी किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

1 विश्व के छह प्रमुख अनाजों के नाम लिखिए।

....

2 मिलेट तथा कूटअनाजों (pseudocereals) के बीच अंतर कीजिए।

....

....

....

....

3 निम्न के उत्पत्ति के केन्द्र बताइए।

क) गेहूं

....

ख) मक्का

....

ग) चावल

....

4. विस्तार कीजिए :

क) सी आई एम एम वाई टी (CIMMYT)

....

ख) आई आर आर आई (IRRI)

....

ग) सी आर आर आई (CRRI)

....

5. निम्न के योगदानों पर नोट्स बनाइए

क) एन वेवीलोव ....

....

....

ख) मेंगेल्सडोर्फ ....

....

....

ग) जोर्ज शुल ....

....

....

6. कृष्य गेहूं की उत्पत्ति तथा विकास को बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

7. *इंडिका* चावल के *जेपोनिका* चावल से विभेद करने वाले गुणों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

11.5 राई (Rye)

वानस्पतिक नाम : *सीकेल सिरेल* लिनियस (*Secale cereale* Linn.)
कुल : पोएसी
साधारण नाम : राई
n = 7

कृष्य अनाजों में यह गेहूं का निकटतम संबन्धी है। दाने गेहूं तथा जौ से मिलते जुलते होते हैं। राई के पुष्प, गेहूं, जई तथा जौ के विपरीत, परागण के लिए खुलते हैं। पर परागण के कारण, राई की किस्मों को शुद्ध रखना कठिन होता है। राई गेहूं से अपने पतले सूच्यग्री एक शिरीय तुषों के द्वारा विभेदित होता है। इसकी खेती अनाज के लिए तथा चारे के लिए होती है।

11.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

कृष्य राई की उत्पत्ति संभवत: वंश *सीकेल* की वन्य बहुवर्षी खर पतवारी जाति से मध्य तथा दक्षिण पश्चिमी एशिया व साथ ही मध्य यूरोशिया के आसपास के क्षेत्रों से हुई। इसकी कुछ वन्य जातियां हैं जिनकी खेती की जा सकती है तथा जो कभी-कभी खर पतवार तथा शुद्ध फसल दोनों के रूप में पाई जाती हैं। राई की उत्पत्ति का केन्द्र अन्य अनाजों, गेहूं, जौ, तथा जई के उत्पत्ति के केन्द्र का अतिव्यापन / अंश आच्छादन (overlaps) करता है हालांकि, राई की उत्पत्ति अन्य अनाजों की अपेक्षा आधुनिक मानी जाती है।

राई की खेती बड़े पैमाने पर यूरोप तथा एशिया में होती है। रूस तथा उसके आसपास का क्षेत्र, साथ ही पौलेण्ड मुख्य क्षेत्र हैं जहां राई पैदा किया जाता है भारत में, यह बहुत छोटे क्षेत्रों में हिमाचल प्रदेश, जम्मू तथा कश्मीर, तथा अन्य उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों के पहाड़ी इलाकों में उगाया

जाता है। जम्मू तथा कश्मीर में यह मुख्यतः अर्गॉट कवक (ergot fungus) *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया (Claviceps purpurea)* के परपोषी के तौर पर उगाया जाता है।

11.5.2 खेती

राई सर्द मौसम की फसल है। इसे बहुत अधिक ठंडे क्षेत्रों में, तथा अधिक ऊँचाइयों पर उगाया जा सकता है। राई हल्की बलुई (sandy) अथवा दुमटी (loamy) मिट्टियों पर उग सकता है। इसे समुचित जलनिकास की आवश्यकता होती है तथा यह मिट्टी की अम्लीयता तथा क्षारीयता को अधिक सहन कर लेता है। यह, इसलिए, उन क्षेत्रों में विशेष रूप से कीमती फसल है जहां अन्य अनाजों को आर्थिक रूप से नहीं उगाया जा सकता है। राई को गेहूं तथा जौ के साथ भी बोया जा सकता है।

11.5.3 वानस्पतिकी

राई एक गुच्छेदार (tufted) एकवर्षी पादप है जो 1-2 मी. ऊँचा व बहुवर्षी प्रवृत्ति की ओर उन्मुख होता है व नए पादप ठूठ (stubble) से निकलते हैं। बाहरी तौर से यह गेहूं से मिलता है। पुष्पकम शूकित (awned) व दो-पुष्पीय कणिशिकाएं लिए होता है। परिपक्व दाना गेहूं के दाने से अधिक पतला तथा सामान्यतः भूरा-पीला होता है। पुष्प गेहूं के पुष्प के समान ही होता है व घास कुल के प्ररूपी संगठन को दर्शाता है (चित्र 11.10)।

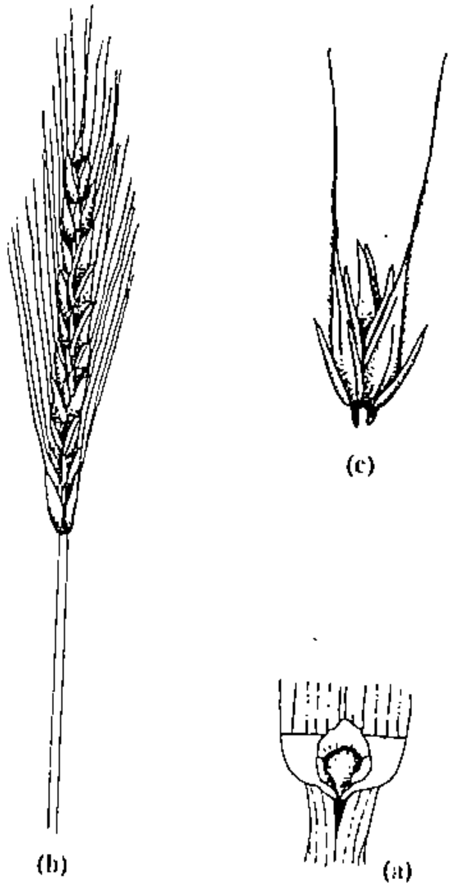

चित्र 11.10 : *सीकेल सिरेल* (a) पालि तथा जीविका, (b) कणिश, (c) कणिशिका

11.5.5 उपयोग

राई को कभी-2 "गरीबी का अनाज" (grain of poverty) भी कहते हैं क्योंकि यह उन क्षेत्रों में विशाल जनसंख्या को दैनिक रोटी प्रदान करता है जहां प्राकृतिक परिस्थितियां कोई अन्य विकल्प नहीं प्रदान करती हैं। गेहूं के अतिरिक्त, यह एकमात्र अन्य अनाज है जिसका उपयोग रोटी बनाने में किया जाता है। राई का खाद्य मूल्य लगभग गेहूं के समान ही होता है। राई के आटे से

बनी रोटी गहरे रंग की, लगभग काली तथा कड़वी परंतु पोषक होती है। चूंकि राई के आटे में कम ग्लूटन होता है, अत: यीस्ट / खमीर राई के आटे में उतनी आसानी से खमीर नहीं उठा पाता है जितनी कि से गेहूं में उठाता है। इसलिए राई की रोटी गेहूं की तुलना में भारी तथा अधिक संहत होती है।

राई का उपयोग अल्कोहली पेयपदार्थों जैसे व्हिस्की, जिन तथा बियर के निर्माण में भी होता है। इसकी पुआल लंबी, चिकनी तथा आसानी से मुड़ने वाली होती है। इसका उपयोग पैकिंग पदार्थ के रूप में, गद्दों को भरने में अथवा चटाइयां, टोपियां तथा कागज के निर्माण में होता है। इसका उपयोग छप्पर छाने के लिए भी किया जाता है क्योंकि इसका क्षय अन्य प्रकार की पुआलों की अपेक्षा कम तेजी से होता है।

राई, इसकी सूखी घास तथा मध्यम दानों (midlings) (राई के दानों की मिलिंग के दौरान प्राप्त होने वाले मध्यम आकार के कण) का उपयोग मवेशियों के चारे के रूप में होता है। तरुण राई के पादप अच्छे खलिहान बनाते हैं। परन्तु, कभी-2 राई के खलिहानों में चरने वाली गायें ऐसा दूध देती हैं जिसमें असामान्य रूप से तीखी गंध होती है। राई को मिट्टी को सुधारने या उसका संरक्षण करने के लिए भी उगाया जाता है। इसमें खर पतवारों से लड़ने की क्षमता होती है तथा यह फसलों के आवर्तन में एक महत्वपूर्ण घटक है। यह एकमात्र ऐसा अनाज भी है जिसे बंध्य बलुई या अम्लीय मिट्टी में उगाया जा सकता है। यह गुण इसे व्यर्थ भूमि के उपयोग के लिए एक प्रमुख अग्रणी फसल बनाता है।

11.5.5.1 राई तथा अर्गॉट (Ergot) : राई, गेहूं, जौ तथा अन्य घासें एक परजीवी कवक द्वारा आक्रमित होती हैं, जिसे *क्लेवीसेप्स परंप्यूरिया (Claviceps purpurea)* अथवा अर्गॉट कहते हैं। यह कवक दाने पर आक्रमण करता है तथा लंबी बैंगनी संरचनाएं बीजों के स्थान पर बनती हैं जिन्हें स्क्लैरोशिया (sclerotia) कहते हैं। इन स्क्लैरोशिया द्वारा उत्पन्न बीजाणु मनुष्य तथा मवेशियों में संक्रमण करते हैं एक रोग जो एर्गोटिस्म (Ergotism) कहलाता है वह उन लोगों में बहुधा पाई गई जो संक्रमित राई के दानों से बनी रोटी खाते थे। वह आज गंभीर रोग नहीं रह गया है।

अर्गॉट अनेकों औषधियों का स्रोत है। इनका उपयोग अनैच्छिक माँसपेशियों (involuntary muscles) में तीव्र संकुचन उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। इन औषधियों का सबसे प्रचलित उपयोग माइग्रेन के सिरदर्द को कम करने तथा बच्चे के जन्म के पश्चात् हैमरेज (रक्तस्राव) (heamarrage) को रोकने के लिए किया जाता है।

11.6 जई (Oats)

वानस्पतिक नाम : (i) *एविना सेटाइवा* **लिनियस (*Avena sativa* Linn.)**
(ii) *एविना बाइजैन्टिना* **सी. कोच (*A. byzantina* C. Koch) अथवा इंडियन/भारतीय जई**
कुल : पोएसी
साधारण नाम : जई
n = 21

भारत में मोटे अनाजों का उत्पादन (मिलियन टन में)

'92-93	36.6
93-94	30.8
94-95	29.9
95-96	29.0
96-97	34.3

जई एक महत्वपूर्ण अनाज की फसल है। इनका खाद्य मूल्य अन्य किसी भी अनाज के दाने से अधिक होता है। जई मांड तथा उच्च स्तर के प्रोटीन से समृद्ध होती है। ये विटामिन बी का अच्छा स्रोत है।

भारत में, सामान्य जई या *एविना सेटाइवा* की खेती सामान्यत: नहीं होती है। इसकी बजाए, *एविना बाइज़ैन्टिना* (जिसे *एविना स्टरिलिस* लिन किस्म *कल्टा (A. sterilis* Linn. var. *culta)* भी कहते हैं) को मुख्यत: चारे की फसल के रूप में उगाया जाता है।

11.6.1 उत्पत्ति तथा वितरण

जई को सबसे पहले लौह युग में यूरोप में उगाया गया था। प्रथम मिलिनियम / सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व के पुरातत्त्विक अवशेष स्विटजरलैण्ड, जर्मनी तथा डेनमार्क में पाए गए हैं। जई संभवत: प्राचीन

मिस्रवासियों, यहूदियों, यूनानियों, रोमनों, चीनियों तथा भारत वासियों के लिए अज्ञात थी।

ऐसा माना गया कि सामान्य जई, *एविना सेटाइवा* की उत्पत्ति यूरोप में हुई। हालांकि, वेवीलोव ने 1926 में बताया कि जई खरपतवार के रूप में पर्शिया में गेहूं के खेतों में पाई जाती थी तथा सुझाया कि कृष्य जई के पूर्वज एशिया के वासी हो सकते हैं। जई संभवतः माइनर एशिया में ट्रॉन्सकॉकेशशी (Trans Caucasian) क्षेत्र में उत्पन्न हुई।

सामान्य जई *एविना सेटाइवा* की खेती संयुक्त राष्ट्र अमरीका, केनाडा, रूस, फ्रांस, जर्मनी, पोलैण्ड / स्वीडन, डैनमार्क, तथा भूमध्यीय / मेडीटिरेनियन क्षेत्र में भी की जाती है। इसकी खेती दक्षिण अमरीका, ऑस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड में भी की जाती है। भारत में, जई कम महत्व की फसल है। यहां, *एविना बाइज़ेन्टिना* (जो *एविना स्टरिलिस* किस्म *कल्टा* भी कहलाती है) को चारे के लिए उगाया जाता है।

उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा आसपास के क्षेत्र जई की खेती के प्रमुख क्षेत्र हैं। यह सीमित मात्रा में महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा, बिहार तथा पश्चिम बंगाल में भी उगाया जाता है।

11.6.2 खेती

जई शीतोष्ण क्षेत्रों के ठंडे, नम क्षेत्रों में उगाई जाती है। ये विभिन्न कृषि जलवायवी परिस्थितियों (agroclimatic conditions) के लिए काफी अनुकूलित हैं। ये अपेक्षाकृत रूप से कठोर हैं तथा उन स्थितियों में भी जीवित रह जाती हैं जो अन्य फसलों के लिए बहुत अधिक सर्द होता है। भारत में, ये रबी (rabi) फसल के रूप में, अधिकांशतः सिंचाई युक्त परिस्थितियों में उगाई जाती हैं। फसल को हर प्रकार की मिट्टी पर उगाया जा सकता है। सुनिर्मित, अच्छी जल निकासी युक्त, समृद्ध तथा भुरभुरी दोमट मिट्टी अच्छी वृद्धि के लिए सबसे अधिक उपयुक्त होती है। फसल हल्की अम्लीय तथा लवणीय स्थितियों को झेल सकती है, परंतु क्षारीय तथा जल अवरुद्धता को नहीं झेल सकती। नवंबर के मध्य से पहले बोयी गई फसल को परिपक्व होने में लगभग 140-180 दिन लगते हैं। देर से बोयी गई फसल जल्दी परिपक्व होती है।

11.6.3 वानस्पतिकी

जई का पादप अन्य अनाजों की भांति ही एक एकवर्षी गुच्छेदार घास है। इसको अन्य अनाज घासों से निम्नलिखित गुणों के द्वारा अलग किया जा सकता है:

क) पादप नीलाभ दिखाई पड़ता है।

ख) पत्तियों में आधार पर पालियां नहीं होती हैं।

ग) पुष्पक्रम एक मुक्त फैलने वाला यौगिक असीमाक्ष होता है जो बड़ी दोलनी (pendulous) कणिशिकाएं धारण किए रहता है।

घ) इसमें सामान्यतः प्रत्येक पुष्पक्रम में 40-50 कणिशिकाएं होती हैं।

ङ) अधिकांश कणिशिकाओं में दो बीज होते हैं, प्रत्येक छिलके से ढंका रहता है।

पर्णआच्छद कसकर पर्वों को आवृत किए रहते हैं - यह ऐसा गुण है जो घासों में असामान्य है प्रत्येक तने का अंत एक अंतस्थ यौगिक असीमाक्ष में होता है जो बहुत सी छोटी शाखाओं का बना होता है। पुष्पक्रम के शाखन को मुख्यतः दो मूल प्रकारों में बांटा जा सकता है :

अ) विस्तारी / प्रसारी प्रकार जिसमें शाखाएं यौगिक असीमाक्ष के चारों तरफ समान रूप से वितरित रहती हैं।

ब) सामान्य प्रकार या "अश्व पितर (horse-mane) प्रकार" जिसमें सभी शाखाएं एक ओर होती हैं।

समूचा पुष्पक्रम सीधा या झुका हुआ हो सकता है। पुष्पक्रम की अंतस्थ प्रशाखाओं में बड़ी दोलनी, लंबे वृंतों वाली कणिशिकाएं पाई जाती हैं। प्रत्येक कणिशिका 3-पुष्पीय होती है, परन्तु दूसरा पुष्प

सामान्यत: बंध्य होता है। अत: सिर्फ दो पुष्प उर्वर होते हैं। उर्वर तुषों में, लेमा तथा पेलिया शूकित या शूकरहित हो सकते हैं। कुछ किस्मों में, पेलिया शूकित होते हैं तथा ये सामान्यत: मुड़े हुए तथा आर्द्रताग्राही (hygroscopic) होते हैं। शूक एक दूसरे से गुंथ जाते हैं तथा जब गीले होते हैं तो ये एक दूसरे से अलग होने की कोशिश करते हैं इस प्रकार से, शूक एक दूसरे को तब तक दबाते हैं जब तक एक प्रकार का विस्फोट नहीं हो जाता है, जिससे दाने छिटक कर दूर गिर जाते हैं। एकल पुष्पों का संगठन अन्य अनाजों या घासों की भांति ही होता है (चित्र 11.11)।

जई मुख्यत: स्व-परागित होती है तथा सिर्फ 0.5-1.0% प्राकृतिक क्रॉसिंग रिपोर्ट की गई है। दाना कार्योप्सिस होता है। यह पतला तथा गेहूं के दाने से अधिक बारीक होता है व इसमें एक तरफ पूरी लंबाई में एक खांच होती है। दाना भूरा पीला होता है तथा मजबूती से छिलके या हल से ढका रहता है जो लेमा व पेलिया से बनती है। ये विभिन्न रंगों के हो सकते हैं। वे बीज जो हल से ढंके रहते हैं वो हल के ही रंग के होते हैं। जब बीज को हल से अलग किया जाता है, तब वह ग्रोट/दलिया (groat) कहलाता है।

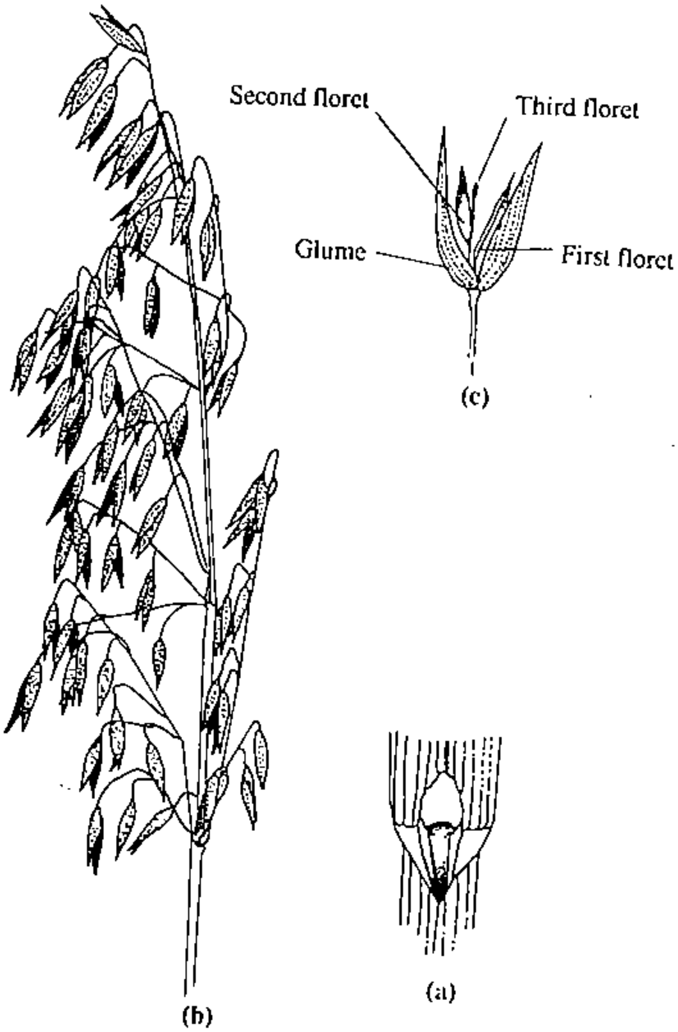

चित्र 11.11 : जई *(एविना सेटाइवा)* (a) जीभिका (b) यौगिक असीपाक्ष, (c) कणिशिका

.1.6.4 उपयोग

ई सस्ती होती है, पर सभी अनाजों में सबसे अधिक पोषक होती है। ये मांड, उच्च-स्तर के टीन, विटामिन बी, वसा तथा खनिजों से समृद्ध होते हैं। हालांकि विश्व में उगाई जाने वाली जई ी मात्रा में से बहुत कम ही मानव भोजन के रूप में खाई जाती है। जई का दलिया / ओटमील, ो जई को दरदरा पीस कर तथा गोल मोड़ कर बनाया जाता है उसे सामान्यत: नाश्ते के रूप में योग किया जाता है। यह रोटी बनाने के लिए उपयुक्त नहीं होता है क्योंकि इसमें ग्लूटन नहीं ता है।

जई का उपयोग केक, बिस्कुट तथा बच्चों के आहार बनाने में भी किया जाता है। जई की फसल का प्रमुख भाग मवेशियों के चारे के रूप में खासतौर पर घोड़े मवेशियों तथा मुर्गियों के लिए उपयोग किया जाता है।

सूखी घास या साइलेज के लिए उगायी जाने वाली जई के पौधों को तभी काट लिया जाता है जब वे हरे होते हैं तथा उनके बीज मुलायम रहते हैं। इन्हें मवेशियों को सर्दियों के दौरान खिलाया जाता है। जई की पुआल का मवेशियों के बिस्तर के रूप में उपयोग होता है।

मानव भोजन तथा मवेशियों के चारे के रूप में उपयोग होने के अतिरिक्त जई के औद्योगिक उपयोग भी हैं। जई के हल का उपयोग फरफ्यूरॉल के निर्माण में (मक्का भी देखिए 11.3.5) कच्चे माल के रूप में होता है। इस पदार्थ का उपयोग तेल के शोधन में, नाइलोन तथा कृत्रिम रबड़ के उत्पादन में व साथ ही एन्टीसेप्टिक के निर्माण में भी होता है। जई की हल का उपयोग ईंधन के रूप में अथवा पैकिंग के कार्य में भी होता है।

11.6.5 सुधार

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वैज्ञानिकों ने कृष्य जई के अनेकों सफल संकर विकसित किए हैं। सुधार में मुख्य रूप से ज़ोर ऐसी किस्मों को विकसित करने की है जिनमें निम्न गुण हों :

अ) अच्छी दानों की पैदावार

ब) सघन पुआल का उत्पादन

स) शीघ्र परिपक्वता, तथा अधिक तलशाखन,

द) सूखे के लिए प्रतिरोधकता

11.7 सोरघम (Sorghum)

वानस्पतिक नाम: ***सोरघम बाईकलर*** **(लिनियस)** ***Sorghum bicolor*** **(Linn.)**
मोइंच **(Moench) (पर्याय नाम** ***सोरघम वल्गेयर*** **पर्स) (*S. vulgare* Pers.)**
कुल : पोएसी
प्रचलित नाम : ज्वार
n = 10

सोरघम, अफ्रीका तथा एशिया में पाई जाने वाली ऊष्णकटिबंधीय घासों के समूह के लिए एक सामान्य शब्द है। ये सूखा रोधी घासें शुष्क क्षेत्रों के लिए तथा अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए बेहतरीन फसल हैं। दिलचस्प तौर पर, ये घासें अस्थायी जलरोधकता को भी झेल लेती हैं। इन पादपों को उनके दानों के लिए अथवा उनके मोटे रसदार तनों के लिए उगाया जाता है जिससे सिरप बनाया जाता है। इन्हें चारे तथा झाड़ के लिए भी उगाया जाता है।

11.7.1 उत्पत्ति तथा वितरण

यह फसल ईथियोपिया में 5000 सालों से भी अधिक पहले से उगायी जाती रही है। ईथियोपिया में पारिस्थितिकीय आवासों की विशाल विविधता ने विभिन्न जातियों (races) तथा किस्मों के चयन के लिए आदर्श पर्यावरण प्रदान किया जिससे इस क्षेत्र के प्राचीन बसाने वालों को इस फसल के देसीकरण में सहायता मिली।

ज्वार या ग्रेन सोरघम की खेती भारत, चीन, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, नाइजीरिया, सूडान, अर्जेन्टीना, पाकिस्तान, मैक्सिको आदि में की जाती है। भारत में, ज्वार मध्य तथा दक्षिण भारत के असंख्य लोगों का प्रमुख भोजन है। महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, तथा उत्तर प्रदेश

का बुन्देलखंड क्षेत्र प्रमुख सोरघम उत्पादक क्षेत्र हैं। इसे चारे के लिए देश के अन्य भागों में भी उगाया जाता है।

बॉक्स 11.3 : सॉरघम की उत्पत्ति

ग्रेन सोरघम की उत्पत्ति से संबन्धित अनेकों दिलचस्प पहलू हैं। बेबीलोनिया के वासी एक अनाज उगाते थे जो संभवत: सोरघम ही था। इस फसल के लिए पर्सियन नाम ''जोर-ई-हिन्दी'' था। यह सुझाता है कि इसकी उत्पत्ति संभवत: भारत में हुई थी। ये यह भी सुझाता है कि सोरघम पर्सिया में भारत से पहुँची। लिनियस का मानना था कि सोरघम की उत्पत्ति भारत में हुई। हालांकि, इस घास का कोई संस्कृत नाम नहीं है जिससे इस घास की भारत से उत्पत्ति होने की पुष्टि (सुनिश्चित) हो सके। यह संभवत: बाद में भारत में आई तथा इसने अपने आप को इस देश के बिना सिंचाई वाले क्षेत्र में अनुकूलित कर लिया।

11.7.2 खेती

सोरघम अनेकों प्रकार की पारिस्थितिक दशा के लिए अनुकूलित है। यह आवश्यक रूप से उष्ण कटिबंधी फसल है तथा गर्म एवं शुष्क परिस्थितियों को झेल लेती है। यह मुख्य रूप से उन क्षेत्रों में उगाई जाती है जहां वार्षिक वर्षा 50-100 से.मी. होती है। इष्टतम वृद्धि के लिए औसत तापमान 26 से 32° सेन्टीग्रेड के बीच होना चाहिए। कुछ किस्में उप शुष्क परिस्थितियों में उच्च तापमान 38-44° सेन्टी. पर अच्छी फसल उत्पन्न करने में समर्थ होती हैं। फसल, बेहतर तरीके से सिंचाई युक्त क्षेत्र में उगती है तथा औसत पैदावार सामान्यत: वर्षा से सिंचित होने वाली फसल से अधिक होती है।

सोरघम विभिन्न प्रकार की मिट्टी की स्थितियों को झेल सकता है।

11.7.3 वानस्पतिकी

सोरघम का पौधा अपनी कायिक अवस्था में सतही तौर पर कुछ-2 मक्का के पादप से मिलता है। यह एक लंबी घास है जो 0.5-6.0 मी. की ऊँचाई तक बढ़ती है। सामान्यत: इसमें एकल सतर तना होता है। कभी-2 टिलर्स (tillers) उत्पन्न होते हैं। सुविकसित अपस्थानिक तंतुमय जड़ तंत्र मिट्टी में 150 सै.मी. तक घुस जाता है तथा पार्श्व रूप से भी फैल जाता है अवस्तम्भ जड़ें (stilt roots) तने के आधार के निकट से लंबे तने को अतिरिक्त सहारा देने के लिए विकसित होती हैं।

प्रत्येक तने पर 7-24 पत्तियां एकांतरित रूप से व्यवस्थित रहती हैं। प्रत्येक पत्ती में आधारीय आच्छद होता है, जिसके किनारे तने को अतिव्यापित (overlap) करके घेरे रहते हैं। इसमें छोटी जीभिका / लिग्यूल तथा त्रिकोणीय या भालाकार पालियां / ऑरिकल्स होते हैं। पटल / लेमिना भालाकार, चिकना, चपटा या लहरदार होता है तथा इसमें सुस्पष्ट मध्य शिरा तथा किनारे होते हैं।

यौगिक असीमाक्ष / पुष्प गुच्छ कणिशिकाओं के अनेकों जोड़े (अंवृत तथा वृंतीय) धारण किए रहता है जिनमें बड़े, स्पष्ट रूप से नौतलित (keeled) तुष आधार पर होते हैं। प्रत्येक कणिशिका दो पुष्पीय होती है परन्तु उनमें से एक ही क्रियाशील होता है।

अवृंतीय कणिशिका चौड़ी तथा अपेक्षाकृत बड़ी होती है जिसमें निचला पुष्प लेमा के रूप में लघुकृत हो जाता है तथा ऊपरी पूर्ण होता है जिसमें लेमा तथा पेलिया तीन पुंकेसर, दो लोडीक्यूल्स तथा केन्द्र में स्थित अंडाशय लंबी वर्तिका तथा द्विभाजित पिच्छकी वर्तिकाग्र के साथ होता है (चित्र 11.12)। लेमा शूकित होता है। वृंतीय कणिशिका लंबी तथा पतली तथा बंध्य निचले पुष्प के साथ होती है, जिसमें सिर्फ लेमा होता है, तथा पुंकेसरी (या नपुंसक) ऊपरी पुष्प लेमा तथा 3 पुकेसरों के साथ होता है। इन दोनों में से किसी भी पुष्प में पेलिया नहीं होते हैं।

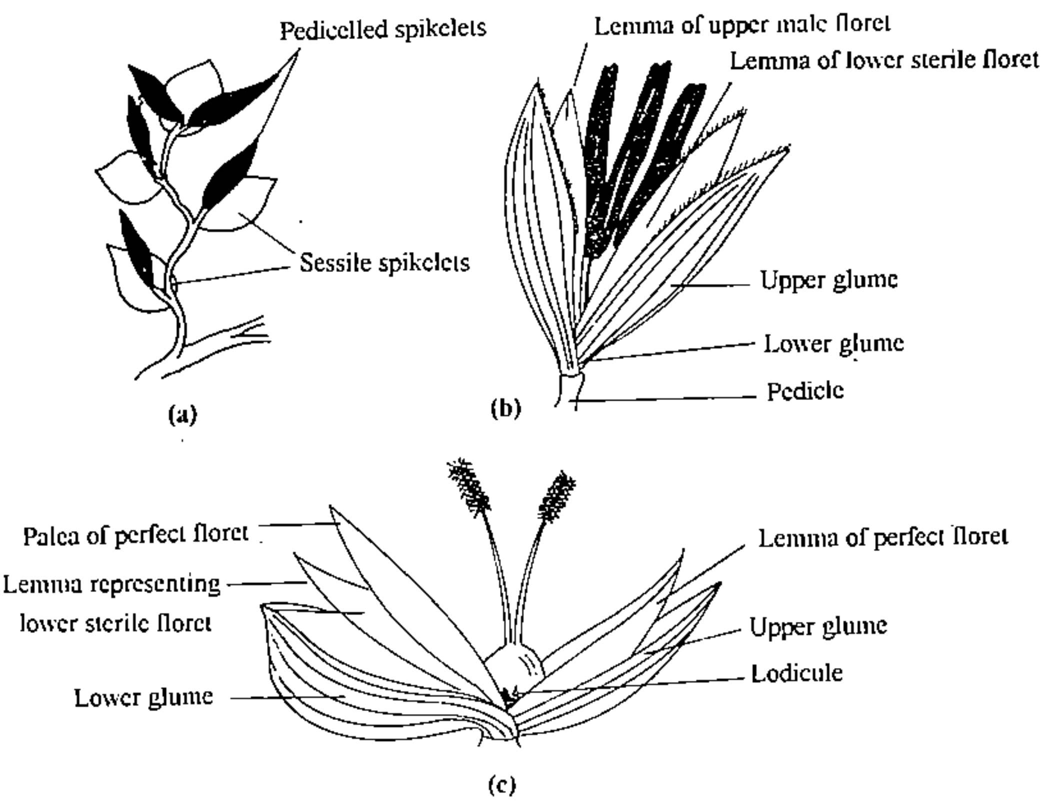

चित्र 11.12: *सोरघम बाइकलर* : (a) यौगिक असीमाक्ष / पुष्प गुच्छ की अंतिम शाखाओं पर स्थित वृंतीय तथा अवृंतीय कणिशिकाओं की व्यवस्था (b) एक नर एकल पुष्प के साथ एक वृंतीय कणिशिका (c) एक अवृंत कणिशिका, एकल पूर्ण एकल पुष्प के साथ जिसमें से पुंकेसर झड़ गए हैं। स्पष्टता के लिए लेमा, पेलिया तथा तुषों को नहीं सम्मिलित किया गया है

फल कॉर्योप्सिस या दाना होता है जो सामान्यत: आंशिक रूप से तुषों से ढंका रहता है। यह अंडाकार, दीर्घकृतज्ञ (ellipsoid) या गोलाकार होता है। रंग हल्के सफेद या क्रीम से लाल, पीले या भूरे के विभिन्न शेड लिए हो सकता है। भ्रूणपोष बाहर से कठोर तथा श्रृंगी (corneous) तथा अंदर से अधिक सफेद तथा फूला हुआ होता है (चित्र 11.13)। गहरे रंग के दानों का स्वाद सामान्यत: कड़वा होता है।

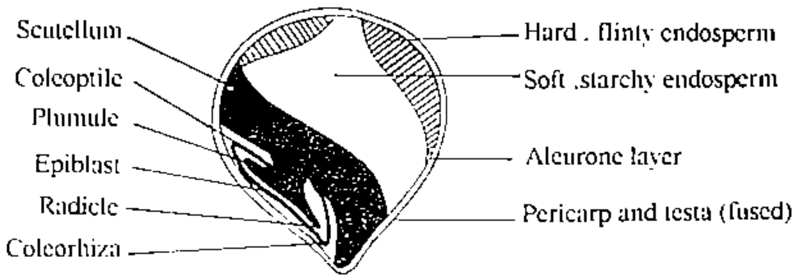

चित्र 11.13 : सोरघम के कार्योप्सिस से होता हुआ अनुदैर्घ्य काट का आरेख

11.7.4 उपयोग

सोरघम के दाने विश्व कृषि में सदियों से महत्वपूर्ण रहे हैं। वर्तमान में, सोरघम विश्व की फसलों में क्षेत्रफल (एकड़ में) के हिसाब से पांचवें स्थान पर है, इससे ऊपर गेहूं, चावल, मक्का तथा

जौ हैं। यह उष्णकटिबंधी अफ्रीका, भारत तथा चीन के शुष्क भागों में प्रमुख भोजन है। दाने को आटे के रूप में पीस लिया जाता है। इसको पानी में उबालकर पतले दलिया के रूप में या गाढ़े पेस्ट के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। बीजावरण को निकालने के बाद, दानों को चावल की तरह पकाया जा सकता है। प्रोटीन ग्लूटन रहित होता है, इसलिए सोरघम के आटे की रोटी बनाने के लिए उसे गेहूं के आटे के साथ मिलाया जा सकता है। कुछ किस्में जो पॉप सोरघम (pop sorghum) कहलाती हैं उनके दाने छोटे व कठोर कांटेदार भ्रूणपोष को परिधि की ओर होते हैं। इन दानों को पॉपकॉर्न की तरह पकाकर भारत में उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार, कुछ मीठे दानों को स्वीट-कॉर्न की तरह खाया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र अमरीका में तथा अन्य विकसित देशों में, दानों को मुख्यत: मवेशियों के चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। सोरघम को अफ्रीका में विस्तृत रूप से बियर बनाने में उपयोग किया जाता है। इसमें उच्च विटामिन बी तत्व होता है परंतु यह एसीटिक अम्ल के उत्पादन के कारण शीघ्रता से खट्टा हो जाता है

बड़े, रसदार मीठे तनों वाली किस्में सार्गोस (sargos) कहलाती हैं। वे 10% तक सुक्रोस लिए होती हैं तथा इन्हें गन्ने की तरह चूसा जाता है। या इनके जूस से सिरप का निर्माण किया जाता है। तने में शर्करा की उपस्थिति, पादप को महत्वपूर्ण चारे की फसल बनाता है। पुआल को भी पशुओं को खिलाया जाता है। छोटे पुष्पक्रमों वाली कुछ किस्मों का उपयोग झाडू बनाने में किया जाता है। पादपों की कटाई पुष्पन के बाद जल्दी ही कर ली जाती है तथा पुष्पक्रम को बीज निकालने के बाद सुखा लिया जाता है।

11.7.5 प्रजनन तथा सुधार

सोरघम एक बहुत सी विविधतापूर्ण फसल है। वन्य तथा कृष्य सोरघमों में परस्पर काफी अंतरक्रॉसिंग (inter crossing) तथा संकरण पाया जाता है। इससे चयन तथा प्रजनन के द्वारा सुधार के लिए काफी संभावना रहती है।

एक समन्वित सोरघम सुधार कार्यक्रम (co-ordinated Sorghum Improvement Programme) भारत सरकार के द्वारा संयुक्त राष्ट्र कृषि विभाग (United States Department of Agriculture) (यू एस डी ए) तथा रॉकफेलर फाउण्डेशन के साथ मिलकर आरंभ किया गया जिसमें सॉरघम के विश्व के जीनीय / आनुवांशिक स्टॉक (genetic stock) की ग्रंथ सूची बनाई गई तथा उन्हें वर्गीकृत किया गया है। अधिक आनुवंशिक विविधता तथा जनन विभव दर्शाने वाले नमूनों को भारत में तथा बाहर दोनों जगह विस्तृत रूप से वितरित किया गया है। बड़ी संख्या में उन्नत विभेद (strains) मुख्यत: एकल पादप अथवा विस्तृत चयन (mass selection) द्वारा विकसित किए गए हैं। इनमें से अनेक जीनीय संयोजनों को दर्शाते हैं जिनमें मौसम के बदलावों को झेलने की क्षमता होती है। कुछ उन्नत किस्में अब विस्तृत रूप से भारत के विभिन्न राज्यों में उगाई जाती हैं। इनमें से "समन्वित सोरघम संकर" (Co-ordinated Sorghum Hybrids) सी.एस.एच.-1 से लेकर सी.एस.एच.-8 तक सुविख्यात हैं। इन्हें पुरानी प्रचलित किस्मों के साथ उगाया जाता है।

बोध प्रश्न 2

1. निम्नलिखित के वानस्पतिक नाम बताइए:

क) राई ....

ख) एरगॉट ....

ग) सामान्य जई (common oat) ....

घ) भारतीय जई (Indian oat) ....

ङ) ग्रेट मिलैट ....

2. उन गुणों को सूचीबद्ध कीजिए जो विभेदित करते हैं :

क) गेहूं को राई से

....

....

....

ख) जई को अन्य अनाज की घासों से

....

....

....

ग) मक्का को सोरघम से

....

....

....

3. निम्नलिखित के उत्पत्ति के केन्द्र बताइए:

क) जई

....

ख) सोरघम

....

4. कोशिका जननी (cytogenetic) संदर्भ में बताइए:

क) गेहूं तथा जई के बीच एक समानता तथा

....

....

ख) एक अंतर

....

....

5. निम्न के महत्वपूर्ण उपयोग बताइए :

क) राई

....

....

ख) जई

....

....

ग) सोरघम

....

....

11.8 जौ (Barley)

वानस्पतिक नाम : *होर्डियम वल्गेअर* लिनियस (*Hordeum vulgare* Linn.)
पर्यायवाची नाम : *होर्डियम सेटाइवम* (*H. sativam*)
कुल : पोएसी
साधारण नाम : जौ
n = 7

जौ सबसे प्राचीन अनाजों में से एक है जिसकी खेती मानव ने सभ्यता के आरंभ के साथ ही की थी इसके दानों को खाने, बियर के बनाने में, माल्ट (malt) के उत्पादन में, तथा जंतु खाद्य के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

11.8.1 उत्पत्ति तथा वितरण

यह अनाज निकट रूप से गेहूं से संबद्ध है। ईराक की प्रसिद्ध जार्मो की नवपाषाण साइट से प्राप्त पुरातात्विक अवशेष सुझाते हैं कि इस अनाज की खेती संभवत: लगभग 6500-7000 ईसा पूर्व तथा सबसे पहले की गई थी। यह भी माना जाता है कि जौ की उत्पत्ति संभवत: एबीसीनिया (ईथियोपिया), में उत्तर पूर्व अफ्रीका में, तथा एशिया में भी उस क्षेत्र में जिसमें चीन, जापान, तिब्बत तथा नेपाल आते हैं, में हुई थी। ये दोनों क्षेत्र विविधता के केन्द्र माने जा सकते हैं तथा इन क्षेत्रों में उगने वाली जौ के प्रकार भिन्न-भिन्न हैं। उत्तर-पूर्वी अफ्रीकी केन्द्र में प्रभावी कृष्य प्रकार की जौ 2- कतार वाली प्रकार की होती है। प्रत्येक कणिश में दानों की दो कतारें होती हैं। यह *होर्डियम वल्गेयर* किस्म *डिस्टीकम* (अथवा *हार्डियम डिस्टीकम* लिन.) (*H. distichum* L.) कहलाती है तथा यह वन्य जाति *होर्डियम स्पोन्टेनियम* (H. spontaneum) से काफी मिलती-जुलती होती है। पूर्वी या एशियाई केन्द्र में, सामान्यत: छह कतारों वाली जौ की खेती की जाती है। प्रत्येक कणिश में दानों की छह कतारें होती हैं। पादप को *होर्डियम वल्गेयर* किस्म *हैक्सास्टीकम* (*H. vulgare* var. *hexastichum*) कहते हैं।

जौ की प्राचीनता अन्य प्रमाणों द्वारा भी दर्शायी जाती है। रोमन कृषि को देवी-सिरिस के दृष्टांतों में उनके बालों में जौ की बालियां लगी हुई दिखाई पड़ती हैं। प्राचीन यूनानी तथा रोमन सिक्के भी जौ को दर्शाते हैं। स्विस-लेक निवासों से कार्बनीकृत दानों व साथ ही छह-कतारों वाली जौ के दानों का जार इस अनाज के प्राचीनतम नमूनों में से हैं जो विश्व संग्रहालय में संरक्षित हैं।

वेवीलोव ने सुझाया कि जौ दो केन्द्रों से फैला है, उत्तरी अफ्रीका तथा पूर्व एशिया। यह सुझाव वानस्पतिक तथा पारिस्थितिकीय सूचना पर आधारित था। इस अनाज की उत्पत्ति का वास्तविक केन्द्र उत्तर पश्चिमी भारत तथा एबीसीनिया के मध्य के क्षेत्र में हो सकता है।

जौ की खेती स्वतंत्र राष्ट्रों के राष्ट्रमंडल (Commonwealth of Independent States) (सी. आई.एस; पूर्व यू एस एस आर); यूरोप के अन्य भागों (विशेषरूप से जर्मनी, युनाइटेड किंगडम); भूमध्य रेखा के आसपास के क्षेत्र; संयुक्त राष्ट्र अमरीका, कनाडा, चीन, जापान तथा भारत में की जाती है। जौ की खेती उत्तरी भारत के मैदानों में तथा हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों दोनों में की जाती है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, पंजाब, हरियाणा, मध्यप्रदेश, पश्चिम बंगाल, हिमाचल प्रदेश, जम्मू तथा कश्मीर तथा महाराष्ट्र के राज्य भी अब इस फसल की खेती करते हैं।

11.8.2 खेती

हालांकि जौ मूलत: शीतोष्ण फसल है, इसे उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में भी उगाया जाता है। गेहूं की भांति ही, जौ को भी या तो बसंत में अथवा जाड़े में बोया जाता है। चूंकि यह सर्दी के लिए दृढ़ नहीं है, अत: इसे यूरोप में बसंत फसल के रूप में उगाया जाता है जबकि भारत में इसे जाड़े की फसल के रूप में उगाया जाता है। यह उन क्षेत्रों में अच्छी तरह से उगता है जहां धूपदार मौसम होता है तथा मध्यम वर्षा होती है।

जौ को विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है तथा क्षारीय स्थितियों में भी उगाया जा सकता है। हल्की बलुई दुमटी मिट्टी सामान्यत: अधिक पसंद की जाती है, परंतु अच्छी किस्म का दाना उर्वर गहरी दुमटी मिट्टी में उत्पन्न होता है जिसका पी एच (pH) 7 से 8 होता हो।

जौ की खेती भारत में रवी फसल के रूप में होती है। जिसे अक्टूबर नवंबर में बोया जाता है तथा मार्च-अप्रैल में कटाई की जाती है जैसा कि गेहूं के साथ होता है। इसे एकल फसल के रूप में भी बोया जा सकता है अथवा अन्य रवी के मौसम की फसलों के साथ मिश्रित रूप से बोया जा सकता है।

11.8.3 वानस्पतिकी

जौ का पौधा अपनी कायिक अवस्था में सतही तौर पर गेहूं के पादप से कुछ-कुछ मिलता-जुलता होता है। यह एक एकवर्षी गुच्छेदार घास है जो 1-2 मी. की ऊँचाई तक उगती है। गेहूं की ही भांति, इसमें मुक्त रूप से टिलर्स उत्पन्न होते हैं। पत्तियां कम होती हैं व उनमें रेखीय-भालाकार ब्लेड होते हैं। जीभिका काफी स्पष्ट होती है; आच्छद चिकना तथा धारीदार होता है। कणिश बेलनाकार तथा लंबे रोएंदार होता है। यह गेहूं तथा राई से 3 एक पुष्पीय कणिशिकाओं के पाए जाने के कारण भिन्न होता है जो एकांतरी रूप से व्यवस्थित रहती हैं। 2-कतारीय जौ में (*हार्डियम वल्गेयर* किस्म *डिस्टीकम*) केन्द्रीय कणिशिका उर्वर होती है जबकि प्रत्येक पर्वसंधि पर दो पार्श्व कणिशिकाएं वंध्य होती है। अत: वयस्क कणिश में, दानों की सिर्फ दो कतारें होती हैं (चित्र 11.14)। छह-कतारीय जौ (*होर्डियम वल्गेयर* किस्म *हैक्सास्टीकम)* में सभी कणिशिकाएं उर्वर होती हैं। अत:, वयस्क कणिश में दानों की 6-कतारें होती हैं। प्रत्येक पर्वसंधि पर 2-छोटे, पतले, छोटी-शूक वाले तुष होते हैं जो 3-कणिशिकाओं को ढंके रहते हैं (चित्र 11.15)। प्रत्येक कणिशिका में, भालाकार लेमा होता है जो 5-फाँकेंदार (ribbed) होता है तथा आगे जाकर लंबी सीधी या मुड़ी हुई शूक के रूप में पतला हो जाता है। पेलिया लेमा से कुछ छोटा होता है। दो लोडीक्यूल्स 3-पुंकेसर तथा 2-पंखीय वर्तिकाओं युक्त अंडाशय प्रत्येक एकल पुष्प को बनाते हैं। फल केर्योप्सिस (caryopsis) होता है जिसमें लेमा और पेलिया दाने के साथ युग्मित होकर हल बनाते हैं। कुछ किस्मों में दाना नग्न, चिकना तथा हल रहित होता है। दीर्घवृत्तीय दाना दोनों सिरों पर नुकीला होता है तथा भीतर की ओर खांचित होता है। यह गेहूं के दाने से पतला होता है।

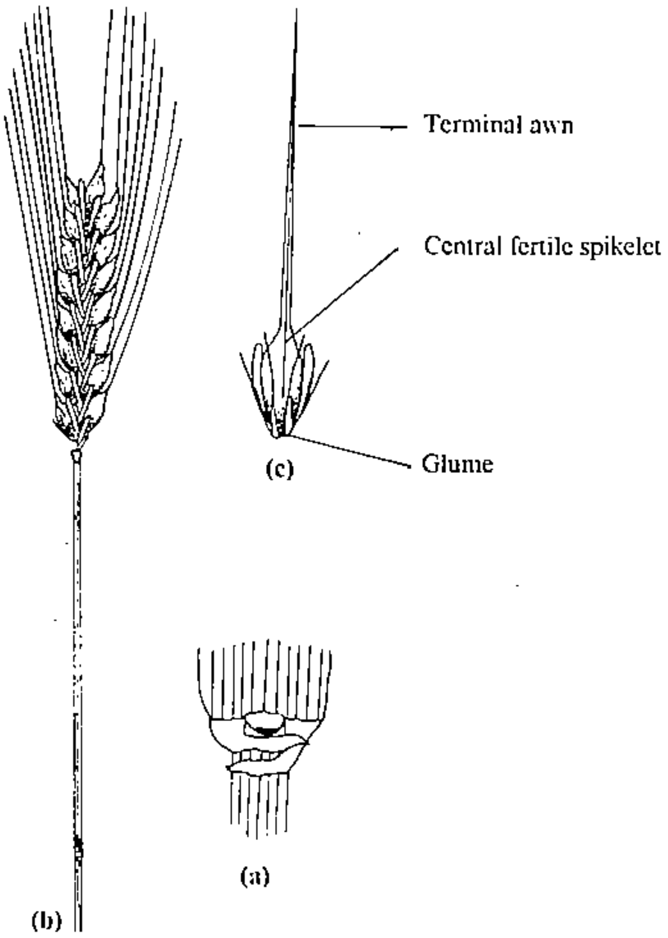

चित्र 11.14 : दो-कतारीय जौ (*होर्डियम वल्गेयर*) (a) पालियां / ऑरिकल्स तथा जीभिका (b) उर्वर तथा वंध्य कणिशिकाओं के साथ कणिश (c) तीन कणिशिकाओं का समूह

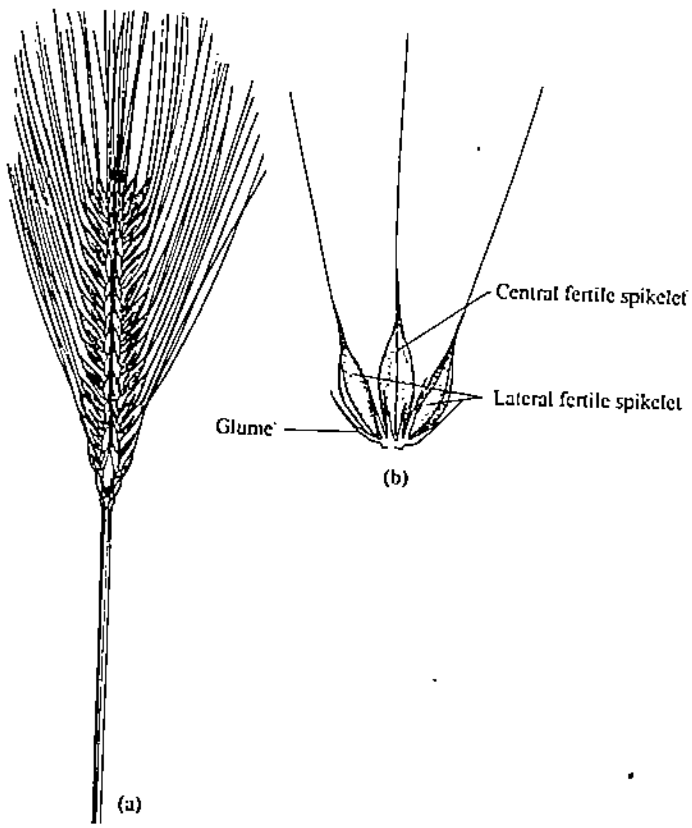

चित्र 11.15 : छह कतारीय जौ (*होर्डियम वल्गेयर*) (a) कणिश, (b) तीन उर्वर कणिशिकाओं का समूह

11.8.3.1 जौ एक स्व-परागित फसल है। अक्रियाशील परागकोश तथा आनुवंशिक नर वंध्यता (genetic male sterlity) भी जौ में रिकॉर्ड की गई हैं। प्राकृतिक क्रॉसिंग बहुत ही कम होती है। कृष्य जौ का संकरण गेहूं की तुलना में काफी कठिन होता है। सभी कृष्य प्रकार की जौ में गुणसूत्रों के सात जोड़े होते हैं।

11.8.4 उपयोग

जौ के दानों की बड़ी मात्रा स्थानीय रूप से किसानों द्वारा खाई जाती है। चूंकि इसमें बहुत कम ग्लूटन होता है, इसलिए जौ के आटे का उपयोग रोटी बनाने में नहीं किया जाता है। चपाती बनाने के लिए इसके आटे को गेहूं के आटे के साथ मिलाया जाता है। भारत के बहुत से भागों में एक स्फूर्तिदायक, मीठा, ठंडा पेय जौ के दानों से बनाया जाता है जिसे ''सत्तू'' कहते हैं। पके तथा अनपके दोनों प्रकार के दानों को भूनकर आटे के रूप में पीसा जाता है। इसे फिर ठंडे चीनी मिले जल में मिलाया जाता है तथा गर्मियों में स्फूर्तिदायक पेय के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। जौ का काढ़ा जिसे जौ का पानी कहते हैं, उसे सामान्यत: बच्चों तथा बीमारों के लिए महत्त्वपूर्ण आहार के तौर पर दिया जाता है।

जौ का उपयोग माल्टीकरण (माल्ट सुरा बनाने) तथा मद्यकरण (brewing) उद्योग में किया जाता है माल्ट का उत्पादन जौ के दानों का नियंत्रित स्थितियों में अंकुरण करके किया जाता है। जब मूलांकुर दिखने लगता है, तब दानों को सुखाकर अंकुरण को रोक दिया जाता है। इन दानों को सुखाकर माल्ट के रूप में बियर बनाने में उपयोग किया जाता है। लगभग 80% माल्ट का प्रयोग बियर बनाने में होता है। इसकी अल्प मात्रा का उपयोग औद्योगिक अल्कोहल के निर्माण तथा व्हिस्की के आसवन (distillation) में किया जाता है।

भोजन के रूप में तथा माल्टीकरण में प्रयोग किए जाने के अतिरिक्त जौ का उपयोग मवेशियों के चारे के रूप में भी होता है। तरुण पादपों को हरा ही खिलाया जाता है अथवा सूखी घास के रूप में खिलाया जाता है। पुआल का उपयोग पैकिंग पदार्थ के रूप में अथवा सेलुलोस पल्प (cellulose pulp) बनाने में किया जाता है।

11.9 ट्रिटिकेल

वानस्पतिक नाम : *ट्रिटिकेल*

पर्यायवाची नाम : *ट्रिटिकोसीकेल विटमैक*

यह प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला अनाज नहीं है; यह मानव द्वारा बनाया गया अनाज है जिसे गेहूं (*ट्रिटिकम*) तथा राई (*सीकेल*) के बीच संकरण द्वारा उत्पन्न किया गया है। वनस्पति विज्ञानियों ने पहले 1876 में गेहूं तथा राई में संकर कराया। संकरण सफल रहा, परन्तु संकर पूर्णत: बंध्य थे तथा कोई दाना उत्पन्न नहीं कर पाए। हालांकि, गेहूं, राई संकर के नवोद्भिदों को कोल्चिसिन (colchicine) लगाने पर, पादप उर्वर बन गए तथा उसमें दाने उत्पन्न हो गए। इससे स्वीडन में, पहला *ट्रिटिकेल* प्रजनन कार्यक्रम आरंभ हुआ। 1950 के दशक तक विश्व भर में अनेकों देश इस मानवनिर्मित अनाज के उत्पादन में दिलचस्पी लेने लगे। इसमें उच्च पोषक तत्व होते हैं क्योंकि इसमें गेहूं अथवा राई से अधिक उपयोगी प्रोटीन होते हैं। दाने गेहूं से बड़े होते हैं परन्तु कणिश पर कम प्रचुरता में पाए जाते हैं।

संकर *ट्रिटिकेल* पादप पतली लंबी पत्तियों के साथ गेहूं से मिलता-जुलता होता है। अंतस्थ कणिश में अनेक कणिशिकाएं होती हैं, व प्रत्येक में 3 से 5 दाने होते हैं पौधों में सर्दी झेलने की क्षमता गेहूं से अधिक होती है तथा इनको ठंडे मौसम में तथा खराब मिट्टी में भी उगाया जा सकता है। ये किट्ट (rust) के लिए अधिक प्रतिरोधी होते हैं तथा इनमें गेहूं की तुलना में पतन (lodging) की प्रवृति कम होती है। इनकी पैदावार राई से अधिक होती है।

ट्रिटिकेल को मुख्यत: पशुओं के चारे के लिए तथा चरागाह की फसल के तौर पर उगाया जाता है। दाने की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए बहुत से देशों में शोधकार्य चल रहा है जिससे इसे मानव भोजन में, व पावरोटी (bread) तथा केक उद्योग में उपयोग किया जा सके। दानों को माल्टकरण (malting) में भी उपयोग किया जा जाता है।

उर्वर *ट्रिटिकेल* संकरों का उत्पादन षट्गुणित गेहूं (*ट्रिटिकम एस्टीवम*) का द्विगुणित राई (*सीकेल सीरिएल*) के साथ संकर कराके तथा गुणसूत्रों की संख्या को दोगुना करके किया जा सकता है। उर्वर पादप अष्टगुणित (octaploid) होते हैं जिनमें $2n = 8x = 56$ गुणसूत्र होते हैं। हालांकि, चतुर्गुणित ड्यूरम गेहूं (*ट्रिटिकम ड्यूरम*) का द्विगुणित राई के साथ संकर से तथा उसके बाद गुणसूत्रों की संख्या को दोगुना करके उत्पन्न होने वाले षट्गुणित संकर अधिक प्रचलित हो गए हैं।

ड्यूरम गेहूं — राई

ए ए बी बी ($2n = 28$) × आर आर ($2n = 14$)

↓

बंध्य संकर

ए बी आर ($2n = 21$)

↓ कॉल्चिसिन उपचार

उर्वर षट्गुणित संकर

ए ए बी बी आर आर ($2n = 42$)

बोध प्रश्न 3

1. *होर्डियम वल्गेयर* किस्म *डिस्टीकम* तथा *होर्डियम वल्गेयर* किस्म *हेक्सास्टीकम* के मध्य प्रमुख अंतर बतलाइए।

....

....

....

....

....

2. वेवीलोव द्वारा सुझाए गए उन दो केन्द्रों के नाम वतलाइए जहां से जौ फैला।

....

....

3. जौ का पुष्पक्रम गेहूं तथा राई के पुष्पक्रमों से किन मायनों में भिन्न होता है।

....

....

....

....

....

4. माल्ट कैसे बनता है ?

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

5. किस प्रकार से *ट्रिटिकेल* महत्वपूर्ण मानव-निर्मित अनाज बन गया।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

11.10 सारांश

खाद्य पादपों में अनाज मुख्य आहार के रूप में सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। अनाजों के मानव सभ्यता तथा कृषि के विकास के साथ निकट संबन्ध को परस्पर संबद्ध करना संभव हो गया है। गेहूं, चावल तथा मक्का सबसे महत्वपूर्ण खाद्य के स्रोत बन गए हैं। इसके अतिरिक्त, जौ, जई तथा राई अन्य वास्तविक अनाज हैं। घास कुल के कुछ छोटे दाने वाले सदस्य भी खाने लायक हैं। ये मिलैट कहलाते हैं।

खाने के रूप में उपयोग में आने के अतिरिक्त, ये पादप औद्योगिक कार्यों में, तथा मवेशियों के चारे के रूप में भी महत्व के हैं।

गेहूं संभवत: खेती के लिए ज्ञात सबसे प्राचीन फसल है। आधुनिक कृष्य गेहूं षट्गुणित दिखाई देता है जो संकरण के द्वारा उत्पन्न हुआ है। सामान्य रोटी के गेहूं / ब्रेड-व्हीट की उत्पत्ति तथा विकास को कोशिकानुवंशिक अध्ययनों के द्वारा सिद्ध किया गया है।

दाने की गुणवत्ता को सुधारने तथा उत्पादन बढ़ाने के लिए किए गए सम्मिलित प्रयासों ने इस पादप के प्रजनन तथा सुधार में कुछ महत्वपूर्ण सफलताएं स्थापित की हैं। गेहूं के पौधे के असंख्य उपयोगों को सूचीबद्ध किया गया है।

नई दुनिया का अनाज, मक्का, अनाज के उत्पादन की दृष्टि से गेहूं के बाद दूसरे नंबर पर आता है। दिलचस्प पुरातात्विक खोजों व साथ ही आनुवंशिक अध्ययनों तथा अन्य प्रमाणों से आपको मक्का की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न मतों को जानने में सहायता मिलेगी। दाने की संरचना जो आनुवंशिकी द्वारा नियंत्रित होती है, उसका उपयोग विभिन्न प्रकार की मक्का को वर्गीकृत करने के लिए किया जाता है। हालांकि, मक्का भी प्रारूपिक घास है, यह गेहूं से अलग-अलग नर तथा मादा पुष्पक्रमों के पाए जाने के कारण भिन्न होती हैं। संकर मक्का पादप प्रजनकों की सबसे बड़ी उपलब्धि बन गई है। मक्का का उपयोग मानव भोजन के रूप में, मवेशियों के चारे के रूप में तथा बहुत से औद्योगिक कार्यों के लिए कच्चे माल के रूप में किया जाता है।

चावल की खेती, वनस्पति तथा उपयोगों के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। चावल प्रजनन के बारे में जानकारी तथा चावल की जैवप्रौद्योगिकी को भी बताया गया है।

राई, जौ तथा जई, अन्य तीन अनाज की फसलें हैं, उनके बारे में भी बता दिया गया है। ग्रेट मिलैट या ज्वार, *सोरघम वल्गेयर* उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों की एक महत्वपूर्ण फसल है। इसकी उत्पत्ति के दिलचस्प पहलुओं की विस्तृत चर्चा की जा चुकी है। यह पादप हालांकि वास्तविक अनाज नहीं है, पर बहुत अधिक महत्व का है। कायिक अवस्था में यह पादप सतही रूप से मक्के के पौधे से मिलता है। यह चावल की तरह अंतस्थ यौगिक असीमाक्ष (paniculate) पुष्पक्रम धारण किए रहता है तथा इसके दाने का उपयोग अनेक प्रकार से होता है। इस फसल के प्रजनन तथा सुधार का भी अध्ययन किया गया है। अंततः, *ट्रिटिकेल*, भविष्य के अनाज, के बारे में भी जानकारी दी गई है।

11.11 अंत में कुछ प्रश्न

1. भारत में गेहूं अथवा चावल की खेती के बारे में लिखिए। उस मिट्टी तथा मौसम की स्थितियों के बारे में बताइए जो अधिक उत्पादन में सहायक होती हैं। अपने द्वारा चयनित फसल के विभिन्न उपयोगों के बारे में भी बतलाइए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. मक्का की उत्पत्ति, खेती, सुधार तथा उपयोगों का विस्तृत विवरण तैयार कीजिए।

....

....

....

....

....

....

3. मक्का तथा ज्वार / सोरघम की खेती, वनस्पति तथा उपयोगों की तुलना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

4. क)उसना चावल क्या होता है ? इसे सामान्य चावल से बेहतर क्यों माना जाता है ?

....

....

....

....

ख) माल्टीकरण के बारे में तथा ब्रूइंग (सुरा) उद्योग में उसके महत्व के बारे में संक्षिप्त रूप से लिखिए।

....

....

....

....

....

5. अनाज क्या हैं (क) मानव आहार, तथा (ख) सभ्यता के विकास में अनाजों के महत्व की व्याख्या कीजिए। प्रमुख अनाजों तथा उनको उत्पत्ति के केन्द्रों के नाम बताइए। अनाज पादपों की वानस्पतिकी का सामान्य विवरण लिखिए।

....

....

....

....

....

....

11.12 उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) गेहूं, चावल, मक्का, जौ, जई तथा राई

2) मिलैट्स अनाजों की भांति ही घास होती हैं, परन्तु ये छोटे दाने उत्पन्न करती हैं तथा भोजन का महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

कूटअनाज (pseudocereals) असंवद्ध द्विबीजपत्री पादप होते हैं जिनके बीज अनाजों की तरह ही उपयोग किए जाते हैं

3. क) गेहूं की उत्पत्ति पुरानी दुनिया में आनुवांशिक विविधता के अनेकों केन्द्रों में हुई थी। द्विगुणित गेहूं की उत्पत्ति एशिया माइनर में; चतुर्गुणित गेहूं की उत्तरी अफ्रीका में; तथा षट्गुणित गेहूं की मध्य एशिया में उत्पत्ति हुई थी।

ख) मक्का की उत्पत्ति नई दुनिया में हुई थी। ग्वाटेमाला से दक्षिणी मैक्सिको तक का क्षेत्र मक्का की उत्पत्ति का केन्द्र माना जाता है।

ग) चावल की उत्पत्ति दक्षिण पूर्वी एशिया में हुई।

4. क) सीआईएमएमवाईटी (CIMMYT) = सेन्ट्रो इंटरनेशनल डी मेजर-अमीन्टो डी मेज़ ट्रिगो (Centro International de mejor-amiento de Maizy Trigo)

अथवा

अंतर्राष्ट्रीय मक्का तथा गेहूं सुधार केन्द्र (International Maize & Wheat Improvement Centre)

ख) आईआरआरआई (IRRI) अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान (International Rice Research Institute)

ग) सी आर आर आई (CRRI) केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान (Central Rice Research Institute)

5. क) एन.आई वेवीलोव एक विलक्षण रूसी वैज्ञानिक थे। वे पादपों की खोज में अग्रणी थे। उन्होंने फसलों के भूगोल तथा आनुवंशिकी में शोध कार्य किए। विश्व भर में अभियान दल भेज कर उन्होंने कृष्य पादपों तथा उनके वन्य संबन्धियों का विशाल संग्रह एकत्रित कर लिया था। वेवीलोव ने विभिन्न कृष्य पादपों की उत्पत्ति के केन्द्रों, विविधता तथा वितरण के बारे में महत्वपूर्ण सुझाव दिए थे।

ये सुझाव विभिन्न प्रकार के प्रमाणों के तुलनात्मक मूल्यांकन पर आधारित थे। पादपों की आकारिकी के अतिरिक्त, उन्होंने शारीर, कोशिकाविज्ञान, आनुवंशिकी, वितरण तथा रोग विज्ञान संवन्धी अनुक्रियाओं से प्राप्त जानकारियों का भी प्रयोग किया था।

ख) मेंगल्सडोर्फ सुविख्यात मक्के पर कार्य करने वाला वैज्ञानिक था। उन्होंने यह परिकल्पना प्रस्तावित की कि मक्का की उत्पत्ति अमरीका में हुई। इसका समर्थन अन्य वैज्ञानिकों ने भी किया। मेंगल्सडोर्फ ने मक्का की उत्पत्ति को समझने के लिए उसके कोशिकानुवंशिकी आधार का पता लगाने के लिए आदि प्रकारों की मक्का का विस्तृत अध्ययन किया। उन्होंने मक्का के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से लिखा तथा उनकी किताव "मक्का, उसकी उत्पत्ति, विकास तथा सुधार" इस नई दुनिया के अनाज के वारे में दिलचस्प जानकारी प्रदान करती है।

ग) जॉर्ज एच.शुल ऐसे पादप प्रजनक थे जिन्होंने मक्का पर विस्तृत प्रजनन अध्ययन किए। वे "संकर मक्का के जनक" कहलाते हैं। उन्होंने मक्का की अनेकों अंत: प्रजात क्रमों को उत्पन्न करने के लिए नियंत्रित परागण का तरीका अपनाया। फिर उन्होंने अंत: प्रजात क्रमों का संकर कराया तथा संकर मक्का उत्पन्न की जिसमें बहुत अधिक जीवन शक्ति होती है। इसने मक्का की खेती में क्रांति ला दी जिसके फलस्वरूप चयनित मक्का की किस्मों का बड़े स्तर पर उत्पादन होने लगा।

6. खंड / सेक्शन 11.2.1 देखिए - गेहूं की उत्पत्ति तथा वितरण

7. 11.4.2 के अंतर्गत तालिका 11.4.2 देखिए चावलों के प्रकार

बोध प्रश्न 2

1. क) राई - *सीकेल सिरेल* लिनियस

   ख) अंर्गट् - *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया*

   ग) सामान्य जई - *एवीना सेटाइवा* लिनियस

   घ) भारतीय जई - *एवीना वाइजैन्टीना* सी. कोच

   ड़) ग्रेट मिलैट - *सोरघम बाइकलर* (लिनियस) मोइंच.

2. क) राई को गेहूं से विभेदित किया जा सकता है

   i) उसके पतले, सूच्यग्री (sulrelate) एक-शिरीग तुषों द्वारा ;

   ii) इसके पुष्प खुलते हैं

   iii) सर्दी के मौसम की फसल होने से;

   iv) अपनी मिट्टी की आवश्यकताओं में सबसे कम विशिष्ट होने से;

   v) कुपोषित मिट्टी में उगने में समर्थ होने के कारण जो अन्य अनाजों के लिए अनुत्पादक होती है।

   ख) जई को अन्य अनाज घासों से निम्नलिखित गुणों में विभेदित किया जा सकता है।

   i) पादप नीलाभ दिखाई पड़ते हैं।

   ii) पत्तियों के आधार पर पालि / ऑरिकल्स नहीं होते हैं;

   iii) पुष्पक्रम एक मुक्त विस्तारी यौगिक असीमाक्ष होता है जिसमें बड़ी दोलनी कणिशिकाएं होती हैं;

   iv) प्रत्येक पुष्पक्रम में लगभग 40-50 कणिशिकाएं होती हैं,

   v) अधिकांश कणिशिकाएं दो बीज लिए होती हैं;

   vi) प्रत्येक बीज छिलके में लिपटा रहता है;

   vii) इनका खाद्य मूल्य किसी भी अन्य अनाज के दाने से अधिक होता है।

   ग) मक्का वास्तविक अनाज है जबकि सोरघम / ज्वार मिलैट है। मक्का के दाने बड़े होते हैं जबकि ज्वार के छोटे होते हैं। दोनों घासें कायिक अवस्था में सतही समानता दर्शाती हैं। परंतु पुष्पन के समय, वे भिन्न हो जाती हैं। ज्वार में पुष्पक्रम अंतस्थ यौगिक असीमाक्ष होता है। यह संकुचित हो सकता है और इस प्रकार संहत हेड (compact head) बनाता है अथवा यह अदृढ़/ ढीला दोलनी यौगिक असीमाक्ष हो सकता है। शाखाएं युग्मित कणिशिकाओं को असीमाक्षी ढंग से धारण किए रहती हैं। एक

कणिशिका वृंतीय होती है तथा उस पर नर अथवा बंध्य एकल पुष्प होते हैं। दूसरी कणिशिका अवृंतीय होती है तथा द्विलिंगी एकल पुष्पों को धारण करती हैं। यह पुष्पक्रम इसलिए मक्का के अंतस्थ नर फुंदनों / टैसल या मादा भुट्टों से पूर्णत: भिन्न होता है।

3. क) जई - पर्सिया

   ख) ज्वार - उत्तर पूर्वी अफ्रीका।

4. क) सामान्य कृष्य गेहूं तथा कृष्य जई दोनों षट्गुणित व $2n = 42$ गुणसूत्रों सहित होते हैं। गेहूं तथा जई दोनों में - द्विगुणित ($2n = 14$), चतुर्गुणित ($2n = 28$) तथा षट्गुणित ($2n = 42$) जातियां पाई जाती हैं।

   ख) जई की द्विगुणित, चतुर्गुणित तथा षट्गुणित जातियों के बीच में बंध्यता उपरोध (sterlity barriers) होते हैं। गेहूं में ये नहीं पाए जाते हैं। अत: गेहूं की भांति कृष्य षट्गुणित जई की उत्पत्ति को पता करना संभव नहीं है।

5. क) राई - 11.5 देखिए

   ख) जई - 11.6.4 देखिए

   ग) सोरघम / ज्वार- 11.7.4 देखिए

बोध प्रश्न 3

1. *होर्डियम वल्गेयर* किस्म *डिस्टीकम* अथवा दो कतारीय जौ में प्रत्येक कणिश में दानों की दो कतारें पाई जाती हैं।

   होर्डियम वल्गेयर किस्म *हैक्सीस्टीकम* अथवा 6-कतारीय जौ में प्रत्येक कणिश में दानों की छह कतारें पाई जाती हैं।

2. (i) उत्तरी अफ्रीका

   (ii) पूर्व एशिया

3. जौ के पुष्पक्रम में 3 एक-पुष्पीय कणिशिकाएं चपटी रैकिस / प्राक्ष (rachis) के दोनों ओर एकांतरी रूप से व्यवस्थित पाई जाती हैं। अंतस्थ पुष्पक्रम बेलनाकार कणिश होता है जो लंबे रोएंदार होता है।

4. माल्ट को जौ के दानों को नियंत्रित स्थितियों में अंकुरित करके बनाया जाता है। जब मूलांकुर दिखने लगता है, तब दानों को सुखाकर अंकुरण रोक दिया जाता है। इन्हें सुखाकर माल्ट के रूप में उपयोग करते हैं। माल्टकरण की प्रक्रिया के दौरान कुछ एन्जाइम्स दाने में रासायनिक बदलाव ले आते हैं।

5. कोल्चिसिन नामक दवा की खोज के बाद जो कोशिका विभाजन के दौरान तुर्क निर्माण (spindle formation) को रोक देती है जिससे गुणसूत्रों की संख्या दोगुनी हो जाती है, *ट्रिटिकेल* एक महत्वपूर्ण मानव निर्मित अनाज बन गया। इसने बंध्य संकरों को उर्वर बना दिया और इस तरह वे अनाज उत्पन्न करने लगे।

   इन दानों का पोषण मूल्य उच्च होता है क्योंकि इनमें गेहूं अथवा राई के मुकाबले में अधिक उपयोगी प्रोटीन्स होते हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1. चावल के लिए 11.4 देखिए

   गेहूं के लिए 11.2 देखिए

2. 11.3 देखिए

3. 11.3.2 तथा 11.3.3 देखिए (मक्का के लिए) तथा 11.7.2 व 11.7.3 (सोरघम के लिए)

4. क) 11.4.4 अंतिम पैराग्राफ

   ख) 11.8.4

5. अपने उत्तर को प्रस्तावना (11.1) तथा विभिन्न अनाजों के वारे में पढ़कर तैयार कीजिए, जिनकी चर्चा इस इकाई में की गई है।

इकाई 12 शिंब (दालें)

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
12.2 शिंब एक नजर में
12.3 मूंगफली
12.4 चना
12.5 मटर
12.6 सोयाबीन
12.7 लोबिया
12.8 सेम
12.9 उड़द
12.10 मूंग
12.11 सारांश
12.12 अंत में कुछ प्रश्न
12.13 उत्तर

12.1 प्रस्तावना

जीवन की एक बुनियादी आवश्यकता भोजन है, इससे शरीर को वे पोषक तत्व मिलते हैं जिनकी जरूरत उसे ऊर्जा उत्पादन, ऊतकों के निर्माण और उनकी मरम्मत तथा कायिक प्रक्रमों को नियमित करने के लिए पड़ती हैं। भोजन में उपस्थित प्रोटीनों से शरीर ऊतकों का निर्माण और मरम्मत करता है। प्रोटीन प्रत्येक कोशिका में पाए जाते हैं और पादप तथा जंतु जीवन के लिए आवश्यक हैं। मानव द्वारा खाए जाने वाले नाना प्रकार के भोजन पदार्थों में शिंब (फलियां) प्रोटीनों के एक महत्वूपर्ण स्रोत हैं। फैबेसी (लेग्यूमिनोसी) कुल के इन पादपों को आहार के एक महत्व्पूर्ण घटक के रूप में, दुनिया के अनेक हिस्सों में, आदमी अनादिकाल से खाता रहा है। इनका प्रयोग अनाज़ से बने आहार को सम्पूरित करने के लिए किया जाता है (इकाई 11 देखिए)। इसके अलावा ये (शिंब) अनाजों के बाद खाद्य पादपों का सबसे महत्वपूर्ण समूह हैं। इनके बीजों में पानी की अल्प मात्रा होती है, जिसके कारण ये दूर-दूर तक ले जाए जाने और लंबे समय तक के लिए भंडारण के लिए उपयुक्त हैं। इनकी खेती सहज-सरल है तथा ये उगते भी तेजी से हैं। मृदा की उर्वरता को उन्नत करने और उसे बनाए रखने में शिंबों की उपयोगिता की पहचान आदमी को प्राचीन काल से ही है। इसी वजह से ये पादप फसल-चक्रण के लिए आदर्श हैं। शिंबों की कई जातियों में उनकी जड़ों पर ग्रंथिकायें होती हैं जो नाइट्रोजन यौगिकीकरण स्थलों का काम करती हैं। इन नाइट्रोजन यौगिकीकरण संरचनाओं के बारे में अधिक विस्तार से आप इस इकाई के अंत में परिशिष्ट 12.1 में पढ़ेंगे।

शिंबों को हम हरी सब्जियों, हरे छिलके वाले बीजों या सूखे बीजों के रूप में खाते हैं। शिंबों के सूखे बीजों को हम संयुक्त रूप से दाल कहते हैं, इन्हें दानेदार फलियां या सेम भी पुकारा जाता है। हरी सब्जियों के रूप में खाई जाने वाली शिंबों की किस्मों में गूदेदार भित्ति वाली फलियां होती हैं जिनमें तरुणावस्था में कम रेशा पाया जाता है। शुष्क भार के आधार पर दालों में 17 से 30 प्रतिशत प्रोटीन रहता है। किसी भी पादप भोज्य पदार्थ से मिलने वाले प्रोटीन की

यह निश्चित ही एक बड़ी मात्रा है। शिंबों में प्रोटीनों का सबसे विपुल स्रोत सोयाबीन है जिससे शुष्क भार आधार पर 40 प्रतिशत से भी अधिक प्रोटीन हमें मिलता है, प्रोटीनों के अलावा शिंबों में कार्बोहाइड्रेट (मुख्यत: स्टार्च), वसा, कैल्सियम तथा लौह भी मिलता है। इनके बीजों को भिगोकर इन्हें अंकुरित होने दिया जाए, तो वे विटामिन-सी का उत्तम स्रोत बन जाते हैं हालांकि यह विटामिन सूखे बीजों में नहीं पाया जाता। इनके बीजों में नियासीन, थायमीन तथा राइबोफ्लैविन भी पाया जाता है। शिंबों की एक रोचक विशेषता यह है कि इनके अमीनों अम्ल अनाजों के अमीनों अम्लों के पूरकों का काम करते हैं। शिंबों में लाइसीन, ट्रिप्टोफान और थ्रिओनीन तो पर्याप्त मात्रा में होते हैं लेकिन वहीं उनमें मिथियोनीन, सिस्टीन तथा सिस्टाइन अमीनों अम्लों की मात्रा कम होती है। ये सल्फरधारी अमीनों अम्ल अनाजों में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं, जिनमें लाइसीन और थ्रियोनीन कम मात्रा में होते हैं। इसी कारण अनाजों और शिंबों को मिला जुलाकर ही मानव आहार में प्रयोग किया जाता रहा है। इससे भोजन में अमीनों अम्लों का सही संतुलन बनता है।

हमारे देश में व्यापक रूप से खाई जाने वाली शिंबों के बारे में आप इस इकाई में जानेंगे। ये हैं: मूंगफली, चना, मटर और सोयाबीन। इनके अलावा भारत की मुख्य दालों के बारे में आपको जानकारी मिलेगी जिससे पादपों के इस समूह के बारे में आपके ज्ञान में और वृद्धि होगी।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ लेने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप:

- हमारे देश में व्यापक रूप से खाई जाने वाली शिंबों की विशेषताओं जैसे कि उत्पत्ति तथा वितरण, पारिस्थितिक दशाओं, पहचान के लक्षणों, उपयोगों और उनकी किस्मों को उन्नत बनाने के लिए किए गए सुधारों से संबंधित विस्तृत विवरण प्रस्तुत कर सकें,
- कुछ कम प्रयोग होने वाले शिंबों के बारे में भी संक्षेप में बता सकें,
- मानव के लिए शिंबों के महत्व को स्पष्ट कर सकें।

12.2 शिंब एक नजर में

फैबेसी पुष्पी पादपों का एक विशाल कुल है। इस पाठ्यक्रम के खंड-4 की इकाई 21 में आपको इस कुल का विस्तृत वर्गिकीय विवरण पढ़ने को मिलेगा। **वानस्पतिक विज्ञान की दृष्टि से शिंब शब्द समूचे पौधे और फल के लिए** भी प्रयुक्त होता है। यह एक सरल, सूखी, स्फोटी फली है। भोजन के रूप में खाए जाने और उपजाई जाने वाली सभी शिंबों को उपकुल पैपिलियोनेटी में वर्गीकृत किया गया है, इस उपकुल को पैपिलियोनॉइडी या फैबोइडी या लोटियोडी भी कहा जाता है। इस समूह के विभिन्न दाल फसलों को तीन संवर्गों में बांटा गया है– विशी, हेडिसेरी, और फेसियोली।

मसूर (*लेंस एस्क्यूलेंटा*), मटर (*पाइसम सैटाइवम*), चना (*साइसर ऐरीटिनम*), बाकला (*विशिया फैबा*) तथा अन्य दालें विशी संवर्ग की सदस्य हैं। सर्वाधिक प्रचलित शिंब मूंगफली (*एरैकिस*

हाइपोजिआ) है जिसे तिलहन की एक महत्वपूर्ण फसल भी माना जाता है। यह हेडिसेरी संवर्ग का सदस्य भी है। सोयाबीन (*ग्लाइसीन मैक्स*), लोबिया (*विग्ना अंगुइकुलेटा*), अरहर (*कैजनस कैजनस*), मूंग (*फ़ोसियोलस ऑरियस*), उड़द (*फैसियोलस म्यूंगो*)जैसी दालों को *फैसियोली* संवर्ग में रखा गया है।

यूं तो शिंबों की खेती पूरे विश्व में होती है किंतु भारत दुनिया का सबसे बड़ा दाल उत्पादक देश है। भारत में बारहों मास किस्म-किस्म की दालें उगाई जाती हैं जो इन्हें देश की कृषि अर्थ व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बनाता है। दाल विकास निदेशालय, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, ने कुछ दालों की किस्मों को जिन्हें नीचे तालिका (12.1) में प्रस्तुत किया गया है, को दाल की प्रमुख फसलों का दर्जा दिया है।

तालिका 12.1. : हमारे देश में उगाई जाने वाली दाल की प्रमुख फसलें

वानस्पतिक नाम	हिंदी में नाम
साइसर ऐरिएटिनम	चना
कैजनस कैजन	अरहर, तुड़
डोलिकॉस यूनिफ्लोरस	कुलथी
लैथाइरस सैटाइवस	खेसरी दाल
लेंस एस्क्यूलेंटा	मसूर
फैसियोलस ऑरियस	मूंग
फैसियोलस म्यूंगो	उड़द
पाइसम सैटाइवम	मटर

राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, तथा पश्चिम बंगाल दाल के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। चना और अरहर, दाल की दो सबसे महत्वपूर्ण फसलें हैं, जिन्हें शिंब कृषि के अंतर्गत सकल क्षेत्रफल के 45 प्रतिशत हिस्से में उगाया जाता है। शेष 55 प्रतिशत क्षेत्रफल में शेष अन्य दालों की खेती की जाती है। चना और अरहर से ही देश में सकल उत्पादित दाल का 55 प्रतिशत भाग आता है।

भारत के अलावा दालों की खेती उष्ण और उपोष्ण क्षेत्रों में भी होती है। भारत के अतिरिक्त प्रमुख दाल उत्पादक देश हैं चीन, ब्राजील, मैक्सिको, नाइजीरिया और तुर्की। यूरोप, अमेरिका तथा अफ्रीका में घरेलू खपत के लिए दालों का थोड़ा बहुत उत्पादन होता है। मूंगफली और सोयाबीन शिंब तो हैं, मगर ये वसायुक्त तेलों से भरपूर होते हैं। इसलिए इन्हें सामान्यतया दाल नहीं माना जाता है।

यद्यपि शिंब प्रोटीनों व तेलों का निस्संदेह महत्वपूर्ण स्रोत हैं, इनमें से कई में कुछ विषैले पदार्थ पाए जाते हैं। सौभाग्यवश इनमें से अधिकांश विषैले पदार्थों का पकाने के दौरान या उन्हें ठंडे या गरम पानी में भिगाकर धोने से निराविषीकरण हो जाता है। अर्थात् उनका विषैला प्रभाव समाप्त हो जाता है। किंतु दो शिंब मानवों में रोगों को जन्म देती हैं। ये शिंब हैं: खेसरी दाल (*लैथाइरस सैटाइवस*) और बाकला (*विशिया फैबा*)। खेसरी दाल में एक तंत्रिआविष

(neurotoxin) तथा एक अस्थिआविष (osteotoxin) रहता है। ये दोनों विष आदमी को पैरों से पंगु बना देते हैं। इस रोग को लैथिरी-रूग्णता (lathyrism) कहते हैं और यह खेसरी दाल को लंबे समय तक खाने के कारण होता है। ठीक इसी प्रकार बाकला तीव्र अरक्तता (खून की कमी) के रोग शिम्बाधिता (favism) को जन्म देता है। यह रोग इसके बीजों को कच्चा या अधपका खाने या फिर इसके पौधे के पराग को सूंघने से होता है। इसके संबंध में सबसे रोचक बात यह है कि यह रोग सिर्फ पुरूषों में ही होता है और साधारणतया भूमध्यसागरीय देशों में होता है।

संक्षेप में शिंब या दालें बड़े महत्वपूर्ण पादप हैं। नाइट्रोजन यौगिकीकरण के गुण, उष्ण प्रोटीन मात्रा, सरल खेती और तेज वृद्धि, आसान भंडारण तथा परिवहन के कारण इन्हें मूल्यवान माना जाता है। ये मृदा की उर्वरता को बढ़ाते हैं। साथ ही भारतीय भोजन का अभिन्न अंग हैं तथा पालतू पशुओं के लिए चारापत्ती के काम आते हैं।

12.3 मूंगफली

वानस्पतिक नाम : ***ऐरैकिस हाइपोजिया***

प्रचलित नाम : मूंगफली, पीनट, माँनकि नट

कुल : फैबेसी

n = 20

यद्यपि इस रोचक पौधे को मूंगफली या पीनट कहा जाता है तथापि इसका फल वास्तविक दृढ़फल नहीं है (इकाई 13 फल तथा दृढ़फल देखिए। यह एक फली या शिंब है जो भूमि-फलनी (geocarpic) है यानि जिसका फल भूमि के अंदर विकसित होता है। स्वीडन के प्रकृति-विज्ञानी कैरोलस लिन्नियस ने इस पौधे को *ऐरैकिस हाइपोजिया* वानस्पतिक नाम दिया क्योंकि यह फल वास्तव में एक शिंब हैं (*ऐरैकिस* का अर्थ शिंब है) और इसका भूमि के अन्दर विकास होता है (*हाइपोजिया* का अर्थ है भूमि के नीचे। यह रोचक शिंब स्टार्च तथा अन्य तत्वों के अलावा वसा और प्रोटीन का एक विपुल स्रोत है। भारत के अलावा इस पौधे की विश्व के ऊष्ण उपोष्ण तथा गर्म शीतोष्ण प्रदेशों में गहन खेती की जाती है।

उत्पत्ति और वितरण

ऐसा माना जाता है कि मूंगफली की उत्पत्ति दक्षिण अमेरिका में हुई थी। रूसी वनस्पति विज्ञानी वैविलोव के अनुसार इस पादप की खेती सबसे पहले ब्राजील-पराग्वे क्षेत्र में हुई थी। पराग्वे और पैराना नदियों की घाटियों का क्षेत्र इस शिंब की उत्पत्ति का संभावित केन्द्र है। इस महत्वपूर्ण फसल के वन्य पादप तो नहीं पाए गए हैं मगर इसकी अनेक जातियां वनों में उगती हैं और सभी में भूफलित फल पैदा होते हैं। तटीय पेरू में हुए उत्खनन में मिले 800 ईसा पूर्व के अवशेष बताते हैं कि उस क्षेत्र में मूंगफली की व्यापक खेती होती थी। दक्षिण अमेरिका से इस शिंब का प्रसार विश्व के अन्य भागों में हुआ। कोलंबस-काल से पहले यह वेस्ट इंडीज में तो बहुतायत में पाई जाती थी मगर संयुक्त राज्य अमेरिका में नहीं। प्राचीन विश्व में मूंगफली 16वीं सदी में आई जब पुर्तगाली इसके बीजों को अमेरिका से अफ्रीका लाए। पश्चिम अफ्रीका से इन्हें फिलिपींस लाए स्पेनिश। इसके बाद मूंगफली का विस्तार चीन, भारत, जापान, मलेशिया और विश्व के दूसरे भागों में हुआ।

भारत मूंगफली का सबसे बड़ा उत्पादक देश है किंतु विश्व बाजार में यहां उगाई गई फसल का एक बहुत छोटा अंश ही पहुंच पाता है। भारत में ही मूंगफली के तेल की मांग उसके उत्पादन से अधिक है। इसकी खेती मुख्यत: आंध्र प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, कर्नाटक, उत्तरप्रदेश, पंजाब और राजस्थान में होती है। इनके अलावा बिहार, पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश आदि राज्यों में भी मूंगफली की खेती होती है।

इसके पौधे में एक सुविकसित मूसला जड़ होती है जिससे कई पार्श्विक जड़ें निकलती हैं (चित्र 12.1b)। बीजपत्राधार (hypocotyl) और फैलती शाखों से भी अपस्थानिक जड़ें विकसित होती हैं। मूलरोम नहीं पाए जाते। जड़ें *राइज़ोबियम* के निवह लिए रहती हैं।

भारत के अलावा विश्व में मूंगफली के अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक देश चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण अफ्रीका, सूडान, नाइजीरिया, इंडोनेशिया, बर्मा, अर्जेंटीना और थाइलैंड हैं। नाइजीरिया, यूरोपीय देशों का मूंगफली का सबसे बड़ा निर्यातक है।

पारिस्थितिकी

मूंगफली गरम मौसम में होने वाली फसल है, जिसके सामान्य वृद्धि विकास के लिए प्रचुर मात्रा में धूप आवश्यक है। पाला इसके लिए बड़ा हानिकारक है। इसकी खेती कैल्सियम और कार्बनिक पदार्थों से संपन्न ढीली, चूर्णशील बलुई दुमट मिट्टी में बहुत अच्छी होती है जिसमें जल निकास सुविकसित हो। आपको याद होगा कि मूंगफली का फसल-चक्रण में बड़ा महत्व है। इसे अनेक फसलों में चक्रित किया जाता है और इसे कपास तथा बाजरे के बीच की फसल के रूप में भी उगाया जाता है।

भारत में मूंगफली की खेती वर्षापोषित खरीफ की फसल के रूप में होती है, जिसे अप्रैल से जुलाई के बीच बोया जाता है। यह चार से छ: महीने के समय में तैयार हो जाती है और जब इसकी निचली पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं तो इसकी कटाई की जाती है। इसके लिए समूचे पौधे को जड़ से उखाड़ दिया जाता है और फिर फलियों को हाथ से चुना जाता है। इन ताजा फलियों को धूप में अच्छी तरह से सुखाने के बाद ही उन्हें पैक और भंडारित किया जाता है। इस फसल की व्यावसायिक खेती बीज से की जाती है।

वानस्पतिकी

मूंगफली का पौधा (चित्र 12.1 a - e) एक शाकीय, वार्षिक पादप है जो ऊर्ध्वशीर्षी या तलसर्पी होता है। यह 15-60 सेमी. की ऊंचाई तक बड़ा होता है। ऊर्ध्वशीर्षी किस्म को गुच्छ प्ररूप भी कहते हैं, जिसमें शाखें एक-दूसरे के समीप उगती हैं। फलियां पौधे के आधार के समीप, गुच्छों में बनती हैं। तलसर्पी पौधों में शाखें शयान रहती हैं और भूमि पर फैलती हैं। फलियां शाखों की संपूर्ण लंबाई में उगती हैं जिससे उसके गुच्छे नहीं बनते। इस प्रकार फलियां मिट्टी पर फैली रहती हैं। ये फलियां (चित्र 12.1 b,e) मध्यम से बड़े आकार की होती हैं और इनमें 1-3 या अधिक अंडाकार बीज होते हैं। इन फलियों का छिलका अपेक्षतया मोटा होता है।

इसके पौधे में एक सुविकसित मूसला जड़ होती है जिससे कई पार्श्विक जड़ें निकलती हैं (चित्र 12.1b)। बीजपत्राधार (hypocotyl) और फैलती शाखों से भी अपस्थानिक जड़ें विकसित होती हैं। मूलरोम नहीं पाए जाते। जड़ें *राइज़ोबियम* के निवह लिए रहती हैं।

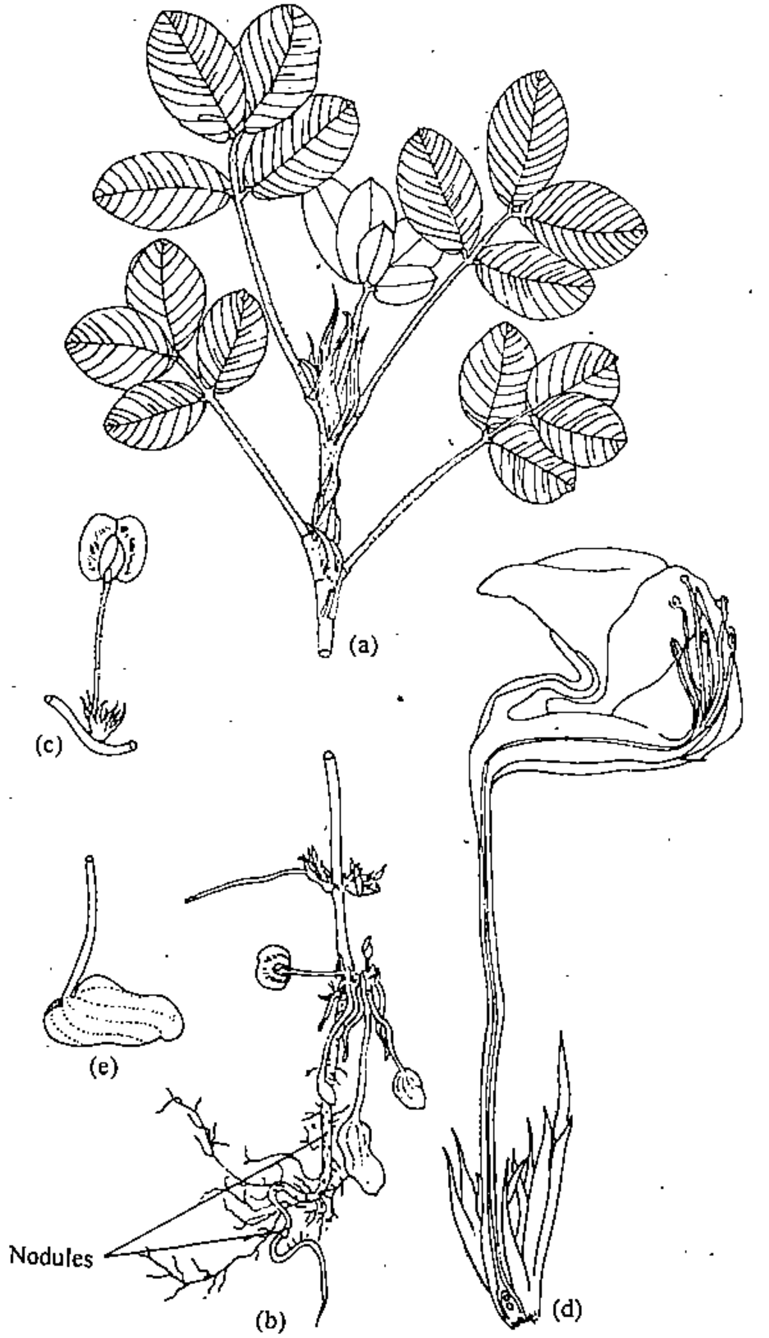

चित्र 12.1 : (a-e) : *ऐरेकिस हाइपोजिया*, मूंगफली। (a) टहनी का एक भाग जिसमें पत्तियां हैं। (b) पुष्प और विकास की विभिन्न अवस्थाओं में फलों को दिखाता पौधे का आधारी भाग। (c) एक पुष्प, (d) अनुदैर्ध्य काट में एक पुष्प। (e) एक तरुण फल। (पुनः चित्रित : पर्सग्लोव, 1988 से)।

मुख्य तना अतिशाखित रहता है। शाखन द्विरूपी होता है। कायिक शाखें एकलाक्षी (monopodial) होती हैं। पुष्पी या जननात्मक शाखें समानीत होती हैं। तरुण तने कोणीय, पूरी तरह से भरी मज्जा युक्त होते हैं। पुराने तने बेलनाकार होते हैं और उनका मज्जा वाला भाग खोखला रहता है। पत्तियां सर्पिल विन्यास में होती हैं। प्रत्येक पत्ती संयुक्त होती है, जिसमें पत्रकों के जोड़े आमने सामने पाए जाते हैं (चित्र 12.1a)। सुस्पष्ट रेखीय अनुपर्ण लगभग आधी लंबाई तक पर्णवृंत से संलग्न रहते हैं।

पुष्प (चित्र 12.1 b,c,d) पीले और स्थानबद्ध (sessile) होते हैं। इनका विकास एकल या संपीडित कणिशों (spikes) में होता है जिनमें दो से चार पुष्प पाए जाते हैं। ये जननात्मक शाखों पर उपस्थित पर्णसमूह पत्तियों (foliage leaves) के कक्षों में उत्पन्न होते हैं। पुष्प का संगठन विशिष्ट रूप से मटरकुलीय (papilionaceous) होता है (इकाई 21 में कुल फैबेसी भी देखिए)। बाह्यदलपुंज (calyx) 5, संयुक्त (fused) बाह्यदलों का बना होता है। *इस नलिका को अक्सर हम फूल का वृंत* (pedicel) समझने की भूल करते हैं (चित्र 12.1d)। बाह्यदलपुंज नलिका की चोटी पर मटरकुलीय

दलपुंज (corolla) और पुंकेसरी नलिका (staminal tube) उपस्थिति होती है। पांच पीले दल (petals) और 10 पुंकेसर (stamens) एकसंघी (monodelphous) अवस्था में मिलते हैं। इन 10 पुंकेसरों में 2 बंध्य (sterile) और 4 पुंकेसरों में बड़े और 4 छोटे परागकोश (anthers) पाए जाते हैं। अंडाशय (ovary) एकांडपी (monocarpellary) जिसके सीमांत बीजांडासन (marginal placenta) में 1-6 बीजांड (ovules) पाए जाते हैं। अंडाशय ऊर्ध्व (superior) तथा वर्तिका (style) लंबी और तंतुरूपी (filiform) होती है।

फल एक शिंब या फली है (चित्र 12.1 b,e)। मिट्टी के अंदर इसका विकास बड़ा ही रोचक अभिलक्षण है। निषेचन के बाद फल सबसे पहले नुकीली वृंत-नुमा संरचना की नोक पर प्रकट होता है यह फलधारी (carpophore) या कीलक (peg) अंडाशय के आधार पर उपस्थित अंतर्वेशी मेरिस्टेम (intercalary meristem) में सक्रिय विभाजन के फलस्वरूप वृद्धि करता है। कीलक गुरूत्वानुवर्ती हो जाता है और वृद्धि कर एक निश्चित गहराई तक मिट्टी में प्रवेश कर जाता है। इसकी शंकवाकार नोक लिग्ननिनयुक्त हो जाती है और एक रक्षी गोपक का निर्माण करती है। अब कीलक अपनी गुरूत्वानुवर्तिता खो देता है और शिंब या फली क्षैतिज विकास करती है। फल तेजी से परिपक्व होता है। पक्व फल संरचनात्मक स्फोटी मगर प्रकार्यात्मक अस्फुटनशील शिंब है। इस आयत रूपी फली में 1-3 (कभी-कभी इससे अधिक) बीज होते हैं। परिपक्व फली की सूखी फलभित्ति एक रेशेदार संरचना है जिसके पृष्ठ पर जालिकाय पैटर्न दिखाई देता है। फलभित्ति पक्व फल के भार का 20-30 प्रतिशत होती है। मृदूतकी अंतःफलभित्ति (endocarp) वर्धनशील बीजों को घेरे रहती है और पक्व फल में यह छिलके के कागजनुमा अस्तर की रचना करती है। बीजों का आकार, बनावट तथा बीजावरण का रंग भिन्न-भिन्न होता है। बीज का यह कागजी आवरण या त्वचा, सफेद, गुलाबी, लाल, बैंगनी या भूरे रंगों का होता है। इसमें भ्रूणपोष (endosperm) नहीं रहता और भ्रूण (embryo) दो स्थूल बीजपत्रों (cotyledons), एक बड़ा मूंलाकुर (radicle) तथा प्रांकुर (plumule) का बना होता है। गूदेदार सफेद बीजपत्र न सूखने वाले तेल और प्रोटीन से भरपूर होते हैं। इनमें स्टार्च भी होता है और ये फॉस्फोरस और विटामिनों विशेषकर थियामीन, नायसिन तथा राइबोफ्लैविन से भरपूर रहते हैं।

उपयोग

मूंगफली वनस्पति तेलों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसकी खेती तिलहन की फसल के रूप में की जाती है। क्योंकि बीजभार का 45 प्रतिशत इसके बीजपत्रों में उपस्थित वसा तेल का ही होता है। यह न सूखने वाले प्रकार का खाद्य तेल है और इसे खाना पकाने, मारजरीन, साबुन तथा स्नेहकों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। तेल को हाइड्रोजनीकृत कर उससे वनस्पति घी बनाया जा सकता है। बीजों से तेल निकालने के पश्चात बची खली प्रोटीन से भरपूर होती है। इसे पशुओं के चारे या खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। अच्छी गुणवत्ता वाली खली को पीस कर मानव के उपभोग के लिए प्रोटीन से भरपूर एक खाद्य सम्पूरक बनाया जा सकता है।

मूंगफली से मक्खन भी बनाया जाता है जो मूंगफली के मक्खन यानि (peanut butter) के नाम से भी जाना जाता है। इसके लिए मूंगफली के दानों को साफ किया जाता है, बीजचोल तथा भ्रूण को निकाल दिया जाता है और फिर बड़े सफेद बीजपत्रों को भूना जाता है। इसके बाद इनको पीसा जाता है तो इनसे एक गाढ़ा मक्खन जैसा पदार्थ मिलता है। इसे मूंगफली के मक्खन के रूप में बेचा जाता है।

मूंगफली के बीज का कैलोरी मान बहुत उच्च है। उन्हें जब कच्चा, भूनकर, नमक लगाकर या मिठाई के रूप में खाया जाता है तो ये मानव शरीर में भारी मात्रा में ऊर्जा पैदा करते हैं। इस वजह से मूंगफली का जैविक मान वनस्पति प्रोटीनों में सबसे अधिक है। विश्व के कई भागों में सर्दी के दौरान शरीर को गर्म रखने के लिए मूंगफली खाई जाती है।

प्रौद्योगिक प्रगति के फलस्वरूप अब मूंगफली के प्रोटीन से कृत्रिम वस्त्र तंतु (टेक्स्टाइल फाइबर) का निर्माण होने लगा है। यह क्रीम रंग का ऊन जैसा रेशा है जिसे ऐड्रिल (adril) कहते हैं। फली का रेशेदार छिलका ईंधन के काम आता है और उससे पार्टिकल बोर्ड भी बनाया जाता है।

आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पादपों को उन्नत बनाने के प्रयास हमेशा किए जाते हैं ताकि उनमें बेहतर उपज, बेहतर गुणवत्ता, रोग और पीड़क प्रतिरोधकता के गुण विकसित हो सकें। किंतु मूंगफली के मामले में यह एक बड़ा दुष्कर कार्य है। यह फसल अंत:प्रजननकारी (inbreeder) है जिसमें स्वपरागण (self-pollination) ही नियम है। इसमें परपरागण को सफल बनाने के प्रयास किए गए हैं, किंतु यह बड़ा ही कठिन और समय खपाने वाला कार्य है। प्रफुल्लन (फूल खिलना) सूर्योदय के समय होता है, खिलने के 5-6 घंटे के भीतर ही फूल मुरझा जाते हैं। फिर इनमें अनुन्मील्य परागण (cleistogamy) की प्रवृत्ति भी पाई जाती है' एक अन्य महत्वपूर्ण कारक यह है कि प्रत्येक पौधा कुछ गिने चुने बीज ही पैदा करता है इससे उन्नत किस्म के अधिक बीज नहीं मिल पाते।

स्थानीय परिस्थितियों के प्रति अनूकूलन, जलाभावरोधकता, उच्च तेल और प्रोटीन मात्रा, यांत्रिक कटाई आदि के लिए उपयुक्त गुणों के लिए चयन इस महत्वपूर्ण कृषि उत्पाद को उन्नत बनाने का सतत प्रक्रम है।

12.4 चना

वानस्पतिक नाम : *साइसर ऐरिएटिनम*
कुल : फैबेसी
प्रचलित नाम : चना, चिक-पी, बंगाली चना
n = 8

प्राचीन समय से ही एशिया और यूरोप में परिचित और उगाई जाने वाली दालों में एक है चना। पुरातत्त्वीय खोजों से पता चलता है कि चने की खेती 5450 ईसापूर्व तुर्की में होती थी। ऐसी ही जानकारी फिलिस्तीन और भूमध्यसागर क्षेत्र के प्रागैतिहासिक स्थलों में की गई खोज़ों से भी मिली है। आज यह एक बड़ा ही महत्वपूर्ण शिंब या दाल फसल है जिसका कृषि क्षेत्रफल अरहर के बाद दूसरे स्थान पर है। उत्पादन के मामले में यह विश्व की तीसरी महत्वपूर्ण दाल फसल है तो भारत में सबसे महत्वपूर्ण। इसके वानस्पतिक नाम का एक रोचक पहलू यह है कि इसके बीज की तुलना नर भेड़ (मेष) के सिर से की गयी है। रोमन भाषा में 'साइसर' मेष के सिर को कहते हैं और 'ऐरीज' का अर्थ मेष है। इस तरह चने का यह वानस्पतिक नाम *साइसर ऐरीएटिनम*, इस पौधे के बीज की बनावट के आधार पर मिला है।

उत्पत्ति एवं वितरण

अन्य महत्वपूर्ण दालों की तरह चना वन्यावस्था में नहीं पाया जाता। इसका उल्लेख कृषि अवस्था में ही मिलता है। चने के पौधे की उत्पत्ति पश्चिम एशिया में काफ (कॉकासस) और हिमालय पर्वत श्रृंखलाओं के बीच के क्षेत्र में हुई मानी जाती है। यहां से यह दक्षिण यूरोप, ईरान, मिस्र और भारत में फैला। इसके अलावा यह उष्णकटिबंधी अमेरिका, अफ्रीका तथा ऑस्ट्रेलिया में भी ले जाया गया। भारत और मध्यपूर्व इसके सबसे बड़े उत्पादक क्षेत्र हैं। इसके सकल उत्पादन का 70 प्रतिशत भारत में पैदा होता है। चने के अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक देश पाकिस्तान, इथियोपिया, तुर्की और मोरक्को हैं। भारत में चने की खेती मुख्यत: उत्तर प्रदेश, पंजाब, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और महाराष्ट्र में होती है।

पारिस्थितिकी

चना एक जलाभाव प्रतिरोधी शीत ऋतु (रबी) की फसल है। इसे ठंडी शुष्क जलवायु चाहिए। यह सुवातित जलोढ़ मृदा में सबसे बेहतर उगता है इसे मानसून के बाद अक्तूबर में बोया जाता है और फसल मार्च में तैयार हो जाती है। यह शुष्क और अर्ध-शुष्क प्रदेशों के लिए अनुकूलित है। इसे ज्वार, गेहूं, जौ, अलसी, सरसों या मटर के साथ मिश्र फसल के रूप में भी उगाया जा सकता है।

वानस्पतिकी

साइसर ऐरीएटिनम (चित्र 12.2 a - f) एकवार्षिक, शाकीय पौधा है। यह पौधा ऊर्ध्व, फैलाव लिए हो सकता है और यह अत्यधिक शाखित होता है। पौधे के सभी भाग मुद्‌गराकार ग्रंथिल रोमों (clavate glandular hairs) से ढके रहते हैं। इन ग्रंथियों से ऑक्जैलिक (oxalic) एसिड और मैलिक (malic) एसिड जैसे यौगिकों का स्राव होता है। ये स्राव इसकी पत्तियों और फली को खट्टा स्वाद प्रदान करते हैं। इन स्रावों को पौधे को रात में कपड़े से ढककर संग्रहित किया जा सकता है। प्राप्त अम्लों से पेट के विकारों को दूर करने की औषधियां बनाई जाती हैं।

मूल तंत्र विस्तृत रहता है और जीवाणु निवह धारी विशाल ग्रंथिकाएं पार्श्विक जड़ों पर बनती हैं। ये ग्रंथिकाएं वायुमंडलीय नाइट्रोजन के यौगिकीकरण में सहायक हैं। पत्तियां अनुपर्णी (stipulate) विषम पक्षाकार (imparipinnate) होती हैं, जिनमें क्रकची कोरों वाले पर्णकों के 9-15 जोड़े पाए जाते हैं। इनका रंग पीले-हरे से गहरा नीला-हरा होता है।

पुष्प (चित्र 12.2c) एकल और कक्षवर्ती होते हैं। ये सफेद से लेकर गुलाबी भिन्न-भिन्न रंगों के होते हैं और आकार में छोटे रहते हैं। पुष्पवृंत संयुक्त और कलिका अवस्था में ही पुष्प झुका रहता है। प्रत्येक पुष्प में विशिष्ट मटरकुलीय संरचना दिखाई देती है (चित्र 12.2.c)। पुंकेसर द्विसंधी (diadelphous) हैं और उनमें विशिष्ट (9)+1 विन्यास देखने को मिलता है (चित्र 12.2.d)। सभी परागकोश एक ही आकार के होते हैं। एकांडपी जायांग में एक स्थानबद्ध अंडाशय पाया जाता है जिसमें एक अंतर्वक्रित वर्तिका और एक अंतस्थ वर्तिकाग्र होता है।

फली या शिंब छोटी तथा फूली हुई रहती है। प्रत्येक फली में एक तिर्यक् चोंच होती है और फली में सिर्फ एक या दो बीज होते हैं। बीज के दाने कोणीय होते हैं जो अग्र सिरे पर एक नुकीली चोंच और छोटी-सी नाभिका लिए रहते हैं। बीजावरण चिकना, झुर्रीदार, या खुरदरा होता है। इसका रंग सफेद, पीला, लाल, भूरा या लगभग काला अलग-अलग किस्म का होता है। प्रत्येक बीज में दो मोटे पीतवर्णी बीजपत्र पाए जाते हैं।

उपयोग

चना भारत की सबसे महत्वपूर्ण दाल है। इसके बीजों को ताजा हरी अवस्था में सब्जी के रूप में तो सूखी अवस्था में दाल के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। चने की दाल बनाने के लिए उसके दानों को दलकर उनसे छिलका उतार लिया जाता है। दले हुए बीजपत्रों को भूनकर, उबालकर या फिर मसालों के साथ पकाकर अलग-अलग तरीकों से खाया जाता है। इसके छीले, दले हुए बीजपत्रों को महीन पीसकर बेसन बनता है जिससे कई तरह की मिठाइयां या पकवान बनाए जाते हैं। चने के ग्रंथिल रोमों से स्त्रावित होने वाले तीक्ष्ण स्रावों को इकट्ठा कर उनसे औषधि और सिरका बनाया जाता है।

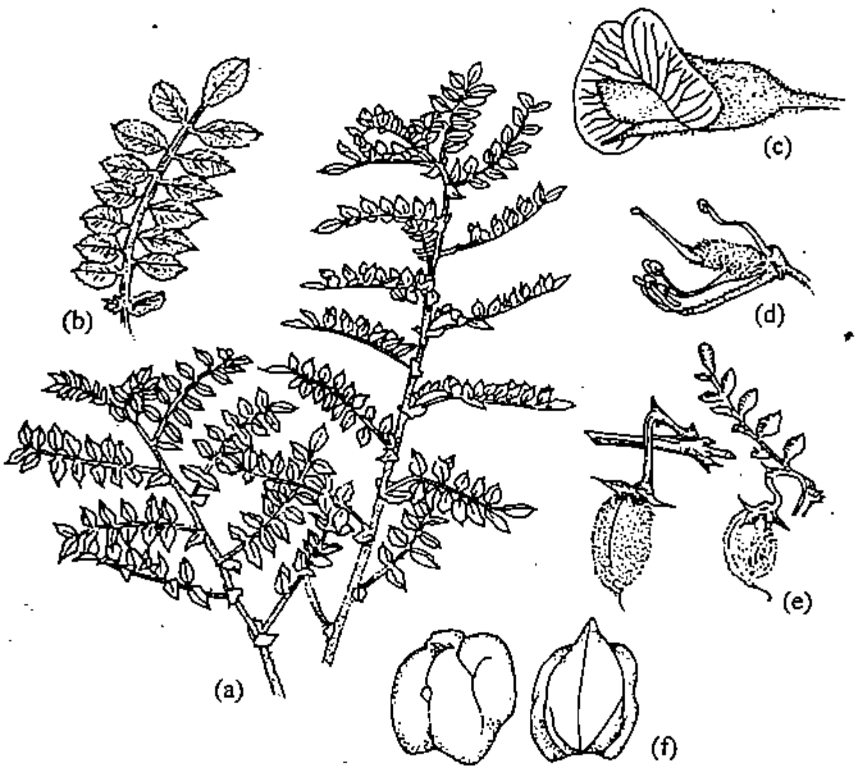

चित्र 12.2 : (a-f) *साइसर ऐरीटिनम,* चना (a) पत्तीदार प्ररोह, (b) एक पत्ती, (c) एक पुष्प, (d) एक पुष्प जिसमें पुंकेसरों और स्त्रीकेसरों को दिखाने के लिए उसके दलों और बाह्य-दलों को निकाल लिया गया है। (e) फलीयाँ, (f) भिन्न दृश्यों में बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)।

12.5 मटर

वानस्पतिक नाम : *पाइसम सैटाइवम*
कुल : फैबेसी
प्रचलित नाम : मटर
$n = 7$

जीवविज्ञान के अधिकांश छात्र मटर के पौधे के बारे में जानते ही हैं जिसके बारे में उन्होंने आनुवंशिकी में पढ़ा है। इसी मटर के पौधे पर अपने प्रयोग कर ग्रेगर मेंडल ने आनुवंशिकता के नियमों की स्थापना कर ख्याति पाई थी। इसलिए आप लंबे और बौने मटर के पौधों, लाल और सफेद पुष्प रूपों, मटर के गोल और झुर्रीदार बीजों, हरे और पीले बीजों और कई अन्य वैषम्य (constrasting) लक्षण युग्मों के बारे में जानते ही हैं।

मटर अधिक महत्वपूर्ण बीजीय शिंबों में एक है। यह ताजा हरे बीजों को सब्जी के रूप में खाया जाता है या उन्हें बाद के उपयोग के लिए प्रशीतित कर डिब्बाबंद किया जाता है। इसके पके, सूखे बीजों को दाल के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

उत्पत्ति और वितरण

कई अन्य पादपों की तरह इनकी व्यापक रूप से खेती की जाती है। मटर को वन्य पादप के रूप में नहीं देखा गया है। प्राचीन काल से ही इसकी खेती की जाती रही है। ईसा से कोई 7500 से 6500 वर्ष पूर्व के नव पाषाणी स्थलों के खुदाई में मटर के कार्बनीभूत बीज पाए गए हैं। इनकी खोज सबसे पहले जार्मो में निकट पूर्व और अन्य स्थलों में हुई थी। कालांतर में यूरोप के नवपाषाणी स्थलों से भी ऐसी ही खोजें हुईं। रूस के वनस्पतिविज्ञानी वैविलोव के अनुसार मटर की उत्पत्ति स्थल इथियोपिया या भूमध्यसागर प्रदेश या मध्य एशिया रहा होगा जिसके विस्तार का केन्द्र निकटपूर्व रहा होगा। दूसरी

ओर फ्रेंच वनस्पति विज्ञानी डी कैंडोल का मत है कि "खेती से पहले यह जाति पश्चिम एशिया में काफ (कॉकासस) के दक्षिण से लेकर पर्शिया तक अस्तित्व में रही होगी।" एक रोचक बात यह है कि रूस में ही मटर *(पाइसम सैटाइवम)* के घनिष्ठ संबंधी *पाइसम ऐरवेंसी* के वन्य पौधे पाए जाते हैं। *पाइसम* की एक महत्वपूर्ण गुण यह है कि हालांकि इसकी सभी जातियां स्वपरागी, द्विगुणित हैं, यह मुक्त रूप से अंत:प्रजनन (intercross) भी करती हैं। इसीलिए मटर की वास्तविक उत्पत्ति का पता नहीं लग पाया है। यूनान और रोम की सभ्यताओं के समय से ही इसकी खेती की जा रही है। इसे संभवत: मध्य या पश्चिम एशिया में घरेलू बनाया गया था जहां से यह विश्व के अन्य भागों में फैली।

इस फसल की ठंडी जलवायु वाले देशों, विशेषकर उत्तरी गोलार्द्ध के देशों में गहन खेती होती है। यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, चीन, इथियोपिया, भारत और जापान मटर के प्रमुख उत्पादक हैं। भारत में उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, हिमाचल प्रदेश और उड़ीसा प्रमुख मटर उत्पादक राज्य हैं।

पारिस्थितिकी

मटर का पौधा ठंडी, अपेक्षतया आर्द्र जलवायु में उगता है। इसीलिए भारत में इसे मैदानी भागों में शीतऋतु (रबी) की फसल, तो पहाड़ों में इसे ग्रीष्मऋतु की फसल के रूप में उगाया जाता है। इसकी पैदावार के लिए सबसे पहली आवश्यकता उपजाऊ मिट्टी और 5.5 से 6.5 के बीच की pH सांद्रता है। गर्म शुष्क मौसम में इसमें बीज स्थापन अत्यधिक अवनत हो जाता है। इसकी सबसे उत्तम पैदावार इसे दुमट (loam) या मृत्तिका दुमट (clayey loam) मिट्टी में उगाने से मिलती है। मटर को अक्सर एक बीच की फसल के रूप में उगाया जाता है।

मटर के प्रकार

मटर की दो किस्में मानी जाती हैं। ये दोनों किस्में पूर्णत: पर-निषेच्य (cross-fertile) हैं। इनके आकारिकीय लक्षणों के आधार पर कुछ वर्गिकी विज्ञानी इनको पृथक जातियों का दर्जा देते हैं तो अन्य इन्हें सिर्फ उपजातियां मानते हैं। ये हैं:

(क) *पाइसम सैटाइवम* उपजाति *हार्टेन्सी* (या *पाइसम हॉर्टेन्सी*)। इसका प्रचलित नाम उद्यान मटर या गार्डन पी है। यह एक हृष्ट-पुष्ट, पौधा है। जिसके दाने कम कठोर होते हैं और इसे हरी फली के रूप में उगाया जाता है। इसके अनुपर्णों में लाल चित्ती नहीं होती और पुष्प सफेद होते हैं। फलियां बड़ी, गोल, कोमल और मीठी होती हैं।

(ख) *पाइसम सैटाइवम* उपजाति *एर्वेन्सी* (या *पाइसम ऐर्वेन्सी*); इसका प्रचलित नाम खेत की मटर है। इसका पौधा खूब फैलाव वाला तथा, बेहद कठोर होता है और इसे इसके सूखे बीजों (दानों) के लिए उगाया जाता है। इसके अनुपर्णों में लाल चित्ती पाई जाती है और पुष्प रंगीन होते हैं, जिनका रंग अक्सर बैंजनी होता है। इसकी फलियां छोटी और दाने कोणीय होते हैं।

वानस्पतिकी

मटर का पौधा (चित्र 12.3 a - d) एक-वार्षिक, शाकीय, आरोही पादप है। यह या तो बौना होता है जिसकी लंबाई सिर्फ 10-15 से.मी. होती है। या फिर यह लंबा होता है जो 1.5 मीटर की ऊंचाई तक बढ़ता है। इसका तना खोखला और शाखें या तो झाड़ी के रूप में फैलाव लिए उगती हैं या फिर शाखित प्रतानों (tendrils) के द्वारा आरोही लता के रूप में विकसित होती हैं; मूसला जड़ सुविकसित होती हैं और पार्श्विक जड़ों में मूल ग्रंथिकाएं पाई जाती हैं। पत्तियां पिच्छाकारी-संयुक्त होती हैं और 1-3 जोड़े पर्णक लिए रहती हैं। प्रत्येक पत्ती एक शाखित प्रतान पर आकर समाप्त होती

है और हरेक के आधार पर बड़ी पत्तीनुमा अनुपर्ण पाए जाते हैं। पुष्प कक्षीय, एकल या फिर 2-3 पुष्पधारी असीमाक्ष में होते हैं। पुष्प सफेद या रंगीन, प्राय: गुलाबी या बैंजनी होते हैं। पुष्पों में विशिष्ट मटर कुलीय संरचना देखने को मिलती है (चित्र 12.3.b) और वे प्राय: स्वपरागित होते हैं। फल या फली 2-10 बीजधारी शिंब है (चित्र 12.3.a, d)। फलियां फूली हुई या संपीडित सीधी या हल्की सी वक्राकार होती हैं (चित्र 12.3d)। मटर के बीज अत्यधिक पौष्टिक होते हैं। इनमें 7.5 प्रतिशत प्रोटीन, 16 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा लौह, सल्फर और फॉस्फोरस जैसे खनिज भी पाए हैं। विटामिन ए,बी तथा सी भी इनमें अलग-अलग मात्राओं में पाए जाते हैं।

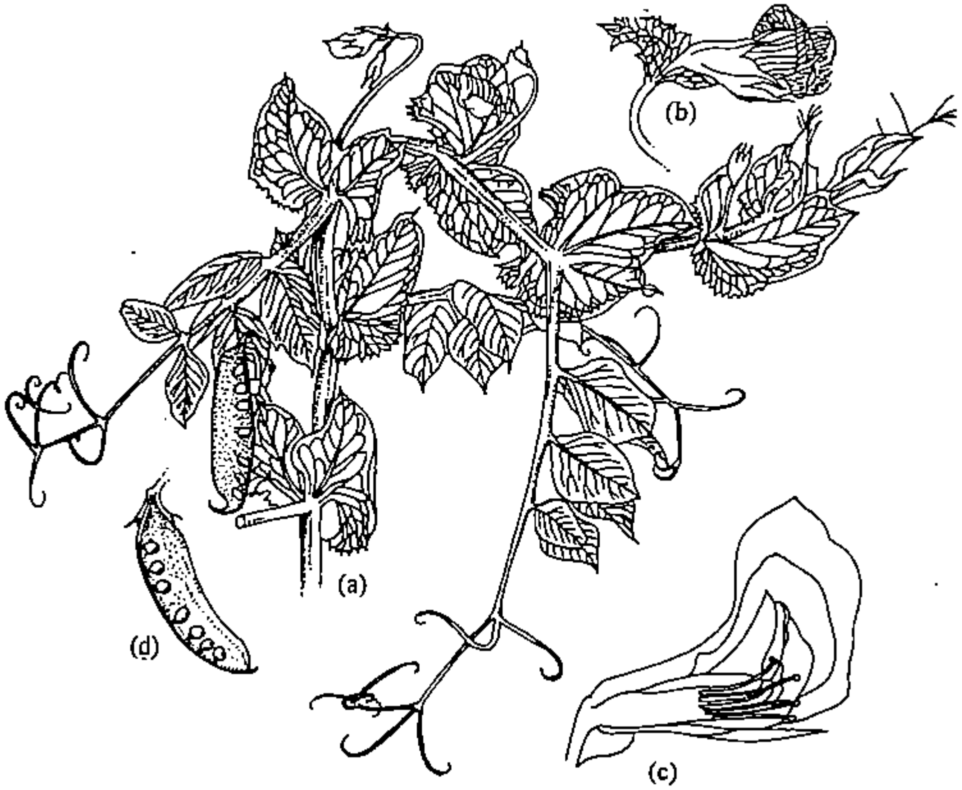

चित्र 12.3 (a-d): *पाइसम सैटाइवम*, मटर। (a) पुष्पन करती एक टहनी। (b) एक पुष्प। (c) पुष्प की अनुदैर्घ्य काट। (d) एक तरुण खुली फली। (पर्सग्लोव, 1988 से)।

उपयोग

ताजा हरे बीजों को सब्जी के रूप में पकाकर खाया जाता है। इनसे हम स्वादिष्ट मटर पुलाव भी बनाते हैं। इन्हें प्रशीतित और डिब्बाबंद कर विभिन्न प्रकार के भोजन के काम लाया जाता है। पके सूखे दानों को समूचा, दलकर या फिर आटे के रूप में खाया जाता है। सूखे दानों से मटर का सूप भी बनाया जा सकता है। हरे पौधे पशुओं के चारे के काम आते हैं और सूखे पौधों को वापस मिट्टी में मिला दिया जाता है जिससे उसकी उर्वरता में वृद्धि होती है।

12.6 सोयाबीन

वानस्पतिक नाम : ***ग्लाइसीन मैक्स***
कुल : फैबेसी
प्रचलित नाम : सोयाबीन, भट, रामकुर्थी
n = 20

तेल और प्रोटीन का एक अति महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है यह प्राचीन पूर्वदेशीय शिंब। इसे पशु आहार के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। पिछले 30 वर्षों से विशेषकर एक 'चमत्कारी सेम' के रूप में इसकी क्षमता का पता लगने के बाद से इस पौधे में मानव की रुचि बढ़ती ही जा रही है।

उत्पत्ति एवं वितरण

सोयाबीन की उत्पत्ति चीन में हुई थी। पूर्व में उगाई जाने वाली संभवत: यह सबसे प्राचीन फसल है। इसके बीजों से बनाए जाने वाले भोजन उत्पाद सदियों से लोगों के आहार का महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। खेती किया जाने वाला सोयाबीन - *ग्लाइसीन मैक्स* वन्यावस्था में नहीं पाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि इसका विकास *ग्लाइसीन सोजा* (जिसे *ग्लाइसीन यूस्यूरिएंन्सिस* भी कहते हैं) से हुआ होगा। यह पतला, शयान यमलनकारी शिंब पूर्वी एशिया के अनेक भागों में वन्यावस्था में होता है। एक अन्य जाति *ग्लाइसीन टोमेंटेला* (या *जी. टोमेंटोसा*) के *जी. सोजा* से संकरण द्वारा, कृषिजाति *जी. मैक्स* की उत्पत्ति एवं विकास हुआ होगा, ऐसा माना जाता है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से संयुक्त राज्य अमेरिका सोयाबीन का अग्रणी उत्पादक देश बनकर उभरा है। अब चीन का स्थान दूसरा है और उसके बाद ब्राजील का स्थान आता है। सोयाबीन के उत्पादक अन्य देशों में इंडोनेशिया, मेक्सिको, रूस, कोरिया, जापान, अर्जेंटीना, कोलंबिया और भारत मुख्य हैं।

भारत में सोयाबीन का आगमन 1880 के आसपास हुआ था, किंतु इसकी खेती बड़े पैमाने पर हाल-फिलहाल में ही शुरू हुई है। इसे समूचे देश में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसकी व्यावसायिक स्तर पर खेती आसाम, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों में होती है।

पारिस्थितिकी

सोयाबीन एक उपोष्ण पौधा है, मगर इसकी खेती उष्णकटिबंध से लेकर शीतोष्ण प्रदेशों तक होती है। इस शिंब को उगाने के लिए जलवायु संबंधी सामान्य आवश्यकताएं मक्का (देखें इकाई 11-अनाज और ज्वार-बाजरा, से बहुत मिलती-जुलती या लगभग समान होती हैं। इसकी खेती प्राय: ऐसे क्षेत्रों में की जाती है जहां ग्रीष्म ऋतु गर्म और नम हो। वर्धन-काल के दौरान वर्षा का समान वितरण और बीज पक्वन के दौरान कमोबेश शुष्क मौसम आवश्यक है। सोयाबीन भिन्न-भिन्न किस्म की मृदाओं में उगायी जा सकती है लेकिन इसकी खेती के लिए उच्च कैल्सियम युक्त उपजाऊ मृदा सबसे उत्तम समझी जाती है। नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए इसे *राइजोबियम जैपोनिकम* के एक विशिष्ट प्रभेद की जरूरत पड़ती है। सो अगर सोयाबीन को किसी नए क्षेत्र में उगाया जा रहा हो तो उस मिट्टी में पहले इस जीवाणु का संरोपण किया जाना जरूरी है।

सोयाबीन एक लघु दिवसीय (short-day) पादप है। फसल पकने का समय बोई गयी किस्म और अक्षांश विशेष के प्रति अनुकूलन के अनुसार 75-200 दिनों के बीच होता है। फसल को सीधे बीज से उगाया जाता है और इसकी कटाई हाथ से या मशीनों की सहायता से की जा सकती है।

वानस्पतिकी

सोयाबीन का पौधा (12.4, a-e) एक सीधा, अतिशाखित, वार्षिक शाकीय पादप है जो रोमों से ढका रहता है। इसकी कुछ किस्में विसर्पी लता या वल्लरी होती हैं और इस प्रकार का स्वभाव छाया में और बढ़ जाता है। मूसला जड़ एक सुविकसित तंत्र है जो मिट्टी के ऊपरी सतह में 30-60 से.मी. का फैलाव लिए रहता है। इसमें लघु गोलाकार ग्रंथिकाएं विद्यमान रहती हैं। सीधा तना किस्म के अनुसार 50 से 180 से.मी. की ऊँचाई तक वृद्धि कर सकता है। तने की ऊंचाई के साथ-साथ रोपण का घनत्व पौधे में शाखन को प्रभावित करता है। इसकी पत्तियां बड़ी, रोमिल, एकांतरी, अनुपर्णी होती हैं और इनमें एक लंबा पर्णवृंत पाया जाता है। प्रत्येक संयुक्त पत्ती सामान्य तथा त्रिपर्णक (कभी-कभी पांच पर्णकयुक्त होती है। पर्णक प्राय: अंडाकार से लेकर भालाकार (चित्र 12.4 a) होते हैं

और उनकी जड़ों पर छोटे नुकीले अनुपर्ण पाए जाते हैं। इसकी कई कृषिजोपजातियों में जब फलियां पकने लगती हैं तो उनकी पत्तियां झड़ जाती हैं।

पुष्पक्रम छोटे, कक्षीय असीमाक्ष होते हैं जो 3-15 पुष्प लिए रहते हैं। कई पुष्प फल बनाए बिना गिर जाते हैं। पुष्प छोटे और सफेद से लेकर गहरे बैंजनी रंगों के होते हैं। शिंबों का निर्माण गुच्छों में होता है और वे रोमिल होते हैं। फली प्रायः संपीडित और हल्की सी वक्रित रहती है। बीज छोटे, गोलाकार और लघु नाभिका युक्त होते हैं। एक फली में सामान्यतया 2-3 बीज (कभी 1-5) विकसित होते हैं। बीजों का रंग क्रीम सा सफेद, पीला, विभिन्न शेड वाला धूसरी और भूरा या इन रंगों का मिश्रण होता है।

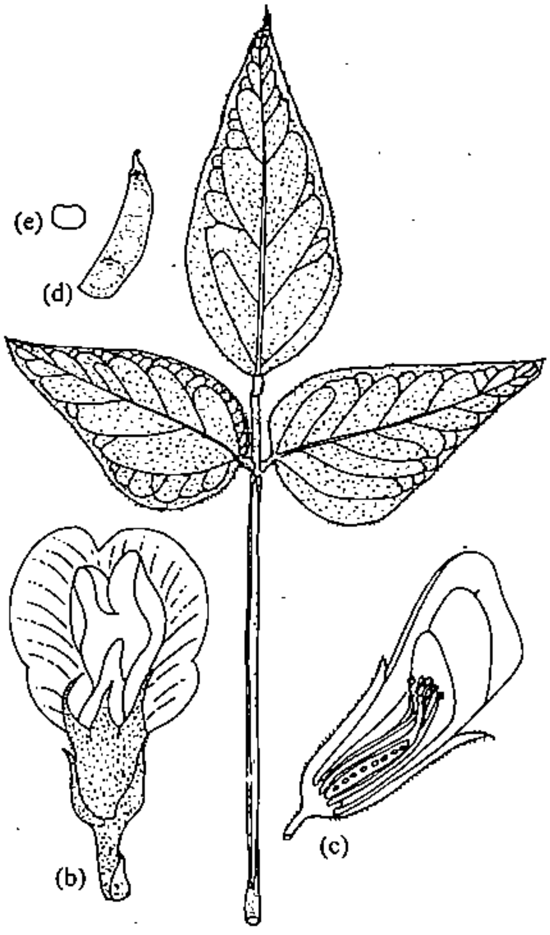

चित्र 12.4 (a-e): *ग्लाइसीन मैक्स, सोयाबीन*। (a) एक पत्ती। (b) एक पुष्प जैसा कि नीचे से दिखाई देता है। (c) अनुदैर्घ्य काट में एक पुष्प। (d) एक फली। (e) एक बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)।

उपयोग

प्रोटीन और तेल की उच्च मात्रा के कारण सोयाबीन को अत्यधिक मूल्यवान शिंबों में माना जाता है। इस महत्वपूर्ण पादप के नाना प्रकार के उपयोग हैं। चीन, जापान और अन्य दक्षिण-पूर्वी देशों में सोयाबीन की खेती मुख्यतः एक खाद्य फसल के रूप में की जाती है। कच्चे बीजों को सब्जी के रूप में खाया जाता है। पक्व सूखे बीजों को पूरा, दलकर या चने की तरह अंकुरित कर खाया जाता है। इन्हें पीसकर आटा भी बनाया जाता है, जिसे दूसरे आटे में मिलाकर ब्रेड, चपाती तथा अन्य बेकिंग उत्पाद बनाए जाते हैं। सोयाबीन का आटा जिसमें उच्च मात्रा में प्रोटीन और अल्प मात्रा में कार्बोहाइड्रेट होते हैं, ये गुण अनाज (गेहूं आदि) के आटे का पूरक बनकर एक संतुलित पौष्टिक आहार बनाने में सहायक होते हैं। इसके दानों को उबालकर, भूंजकर या बेकिंग कर खाया जाता है। इन्हें संसाधित कर सोया दूध बनाया जाता है। शिशु आहार, दही और चीज़ (पनीर) के निर्माण में सोयादूध एक महत्वपूर्ण प्रोटीन संपूरक का

काम करता है। पकाए हुए बीजों को गेहूं के आटे और नमक के साथ *एस्परजिलस ओराइजी* कवक से किण्वन कराकर स्वादिष्ट सोयासॉस बनाया जाता है।

सोयाबीन का बीज वसा का भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इनसे एक सामिशुष्कन तेल बनाया जाता है जिसका सेवन व्यापक रूप से किया जा रहा है। भोजन उद्योग में इसके उपयोग के अलावा इस तेल का प्रयोग साबुनों, छपाई की स्याही, स्नेहकों, ग्रीजों तथा अन्य औद्योगिक उत्पादों के निर्माण में होता है। इस तेल को रंग-रोगन और वार्निश उद्योग में भी अन्य सूखने वाले तेलों के साथ मिलाया जाता है।

समूचे पौधे को चारे या प्राकृतिक खाद बनाने में उपयोग किया जाता है। तेल निकालने के बाद जो खली मिलती है वह पशुओं के लिए प्रोटीन का एक विपुल स्रोत है। इस प्रोटीन से कृत्रिम रेशा भी बनाया जाता है। इस प्रकार इस महत्वपूर्ण शिंबी पादप के अनेक उपयोग हैं।

बोध प्रश्न 1

1. शिंब क्या है ?

....

....

....

2. फसल के चक्रण में शिंब क्यों महत्वपूर्ण हैं ?

....

....

....

3. निम्नलिखित का नाम बताइए :

(क) शिंबों में प्रोटीन का सबसे विपुल स्रोत।

....

(ख) शिंब जो लैथीरीरूगणता नामक रोग पैदा करता है।

....

4. शिम्बाधिता क्या है ? यह रोग कैसे होता है ?

....

....

....

5. निम्नलिखित के वानस्पतिक और प्रचलित नाम बताइए:

(क) हैडीसेरी संवर्ग में वर्गीकृत एक शिंब।

....

(ख) वीशी संवर्ग में वर्गीकृत दो शिंब।

....

....

(ग) फैसियोली संवर्ग में वर्गीकृत तीन शिंब।

....

....

....

6. भारत के पांच प्रमुख दाल फसलों के वानस्पतिक नाम लिखिए।

....

....

....

....

....

7. निम्न शिंबों की उत्पत्ति के केन्द्रों के नाम लिखिए।

(क) *ऐरैकिस हाइपोजिया* ....

(ख) *साइसर ऐरिएटिनम* ....

(ग) *पाइसम सैटाइवम* ....

(घ) *ग्लाइसीन मैक्स* ....

8. दो शिंबों के नाम बताइए जो तेल के विपुल स्रोत हैं।

....

....

....

....

....

12.7 लोबिया

वानस्पतिक नाम : i) *विग्ना अंगुइकुलेटा* - कैटजंग लोबिया।

ii) *विग्ना साइनेन्सिस* - साधारण लोबिया

iii) *विग्ना सेस्क्वीपिडैलिस* - गजभर लोबिया या एस्पैरागस पी

कुल : फैबेसी

प्रचलित नाम : लोबिया

n = 11

उष्ण तथा उपोष्ण प्रदेशों में उगने वाली इस महत्वपूर्ण दाल फसल के वर्गीकरण पर कोई सहमति नहीं है। कई वनस्पति विज्ञानी लोबिया के उगाए जाने वाले विभिन्न रूपों को विशिष्ट किस्में मानते हैं क्योंकि ये मुक्त रूप से संकरण कर सकती हैं और इनमें मुक्त-जीन प्रवाह होता है। इन सभी को *विग्ना अंगुइकुलेटा* जाति के अंतर्गत भिन्न किस्मों के रूप में वर्गीकृत किया गया है:

क) *वी. अंगुइकुलेटा* किस्म *अंगुइकुलेटा*

ख) *वी. अंगुइकुलेटा* किस्म *साइनेन्सिस*

ग) *वी. अंगुइकुलेटा* किस्म *सेस्क्वीपिडैलिस*

उत्पत्ति और वितरण

लोबिया एक महत्वपूर्ण दाल फसल है जिसकी खेती प्राचीन काल से अफ्रीका और एशिया में हो रही है। इस दाल का उल्लेख प्राचीन संस्कृत साहित्य में भी मिलता है। अफ्रीका में यह शिंब वन्यावस्था में तो बहुतायत में मिलता ही है साथ ही इसकी खेती भी खूब की जाती है। ऐसा माना जाता है कि इसकी कृषि किस्मों की उत्पत्ति मध्य अफ्रीका के वन्य प्ररूपों से हुई होगी। वैवीलोव के अनुसार लोबिया की उत्पत्ति भारत में हुई थी जहां से यह विश्व के अन्य भागों तक पहुंचा। कृषि लोबिया अब अनेक उष्ण तथा उपोष्ण क्षेत्रों में उगाया जाता है। लोबिया के मुख्य उत्पादक देश हैं नाइजीरिया, युगांडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत, चीन, भूमध्यसागरीय देश, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया।

पारिस्थितिकी

यह दाल विभिन्न वातावरणीय परिस्थितियों में उगाई जा सकती है। यह एक गर्म मौसम और जलाभाव प्रतिरोधी फसल है और इसे कम वृष्टि वाले प्रदेशों में भी उगाया जा सकता है। गर्मी का सामना यह अन्य शिंबों की अपेक्षा बेहतर ढंग से करती है। लोबिया को नाना किस्म की मृदाओं में उगाया जा सकता है जिनमें पर्याप्त जलनिकास हो। इसकी फसल बीज से उगायी जाती है और तीन महीने में परिपक्व हो जाती है।

वानस्पतिकी

लोबिया एक-वार्षिक शाकीय पौधा है (चित्र 12.5 a-d) जो सीधा, शयान या आरोही होता है। यह बड़ी तेजी से वृद्धि कर झाड़ीनुमा हो जाता है और 1.5 मीटर की ऊंचाई तक बढ़ता है। इसके पौधे अरोमिल तो होते हैं मगर कभी-कभी पर्वसंधियों पर रोमिल होते हैं। मूसला जड़ सुविकसित होती है जिसमें जीवाणु निवह धारी अनेक बड़ी-बड़ी ग्रंथियां पाई जाती हैं। पत्तियां बड़ी, त्रिपर्णक और पर्णवृंत लिए रहती हैं (चित्र 12.5a)। पर्णवृंत को अनुपर्णों का एक जोड़ा घेरे रहता है। प्रत्येक पर्णक लघु अनुपर्णिकाओं द्वारा कक्षांतरित रहता है।

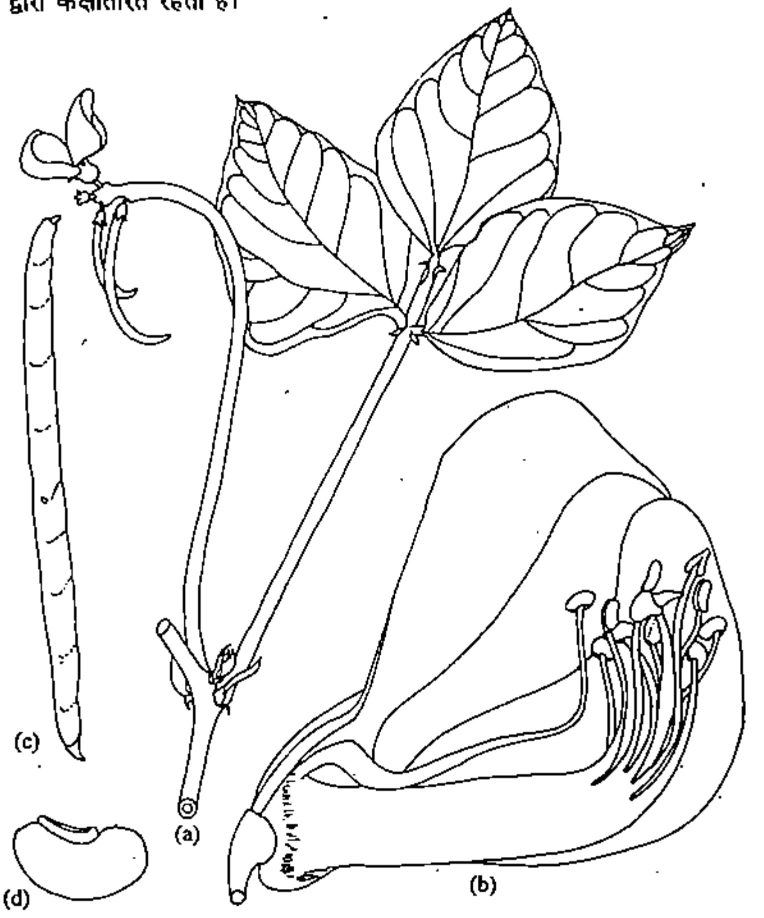

चित्र 12.5 (a-d) : *विग्ना अंगुइकुलेटा*, **लोबिया। a) पत्तियों, पुष्पों और फलों को दिखाता एक प्ररोह। b) अनुदैर्घ्य काट में एक पुष्प। c) एक फली d) एक बीज (पर्सग्लोव, 1988)।**

पुष्पक्रम कक्षवर्ती असीमाक्ष या गुच्छे में होता है, जिसमें गिने-चुने फूल होते हैं जो प्राय: शिखर के समीप झुंड में रहते हैं। पुष्प पुष्पक्रम कक्ष की स्थूल पर्वसंधियों पर एकांतरी जोड़ों में पाए जाते हैं। पुष्पों में विशिष्ट मटरकुलीय संगठन देखने को मिलता है (चित्र 12.5 b देखिए)। दलपुंज सफेद, हल्का गुलाबी, बैंजनी, बैंगनी या हल्का नीले रंग का होता है। फल शिंब या फली (चित्र 12.5c) है जो लोबिया की विभिन्न किस्मों में बिल्कुल अलग-अलग होती है। फलियां लंबी, वेलनाकार और बीजों के बीच में कुछ-कुछ संकुचित होती हैं। गजभर लोबिया (yardlong cowpea) (चित्र 12.6 a-c) यानि *विगना अंगुइकुलेटा* किस्म *सेस्क्वीपिडैलिस* में फली 30-100 से.मी. तक लंबी होती है, तो अन्य किस्मों में फलियां 10-30 से.मी. की लंबाई तक की होती हैं।

फली में बीजों की संख्या फली की लंबाई के अनुसार अलग-अलग होती है। बीज बनावट और आकार में अलग-अलग होते हैं (चित्र 12.5 d, 12.6 c)। ये गोलाकार, वृक्कवाकार, चिकने या झुर्रीदार और भिन्न रंग लिए हो सकते हैं। ये सफेद, दूधिया, पीले, हरे, लाल, भूरे या काले होते हैं। सफेद बीजों वाली किस्मों में, जिनकी अक्सर खेती की जाती है, बीजों के चारों ओर एक लाक्षणिक काला चिन्ह पाया जाता है और इन्हें अक्सर 'काली आँख वाला लोबीया' कहा जाता है। बीज प्रोटीन से भरपूर होते हैं जो इनके शुष्क भार का 20 प्रतिशत होता है। इनमें प्रोटीनों के अलावा 50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है। इनमें खनिज तथा अल्प मात्रा में वसा भी पाए जाते हैं।

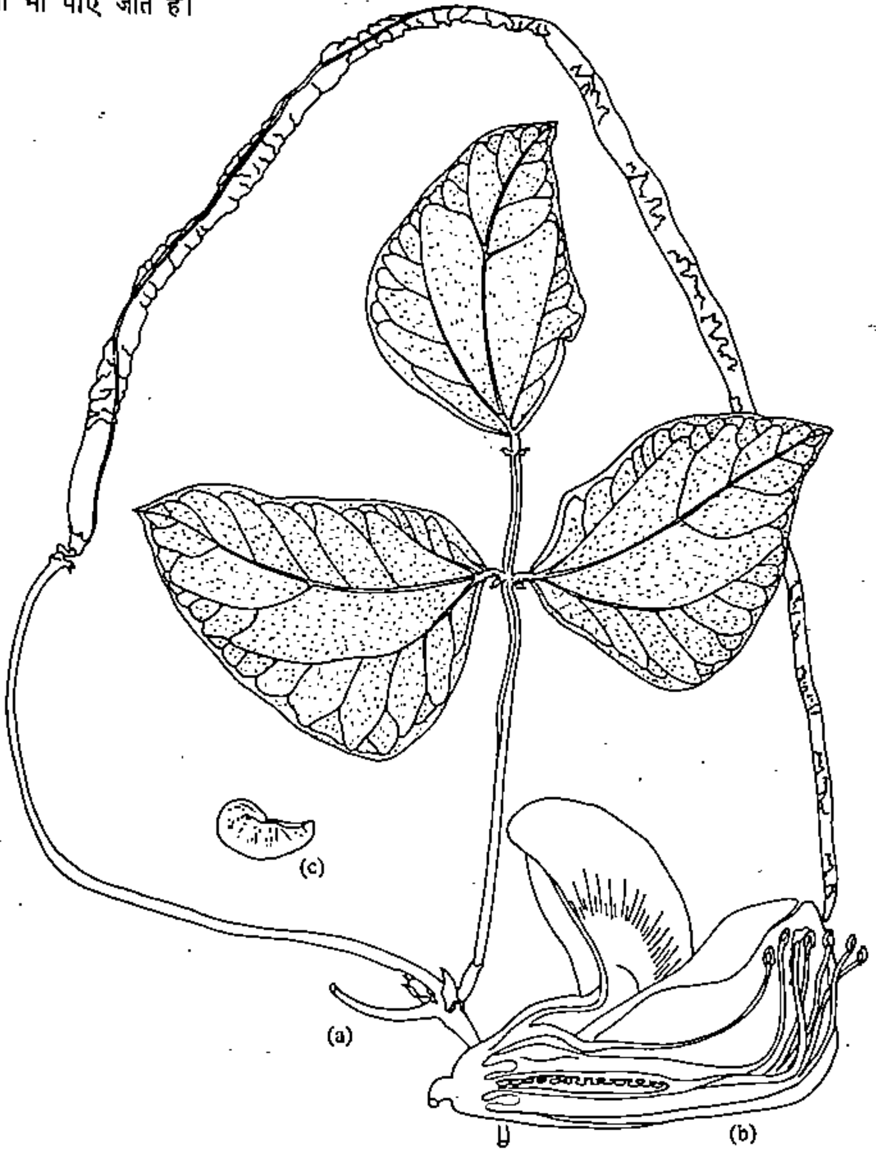

चित्र 12.6 (a-c) : *विग्ना अंगुइकुलेटा*, यार्डलांग बीन (गजभर लोबिया)। a) पत्ती और फली को दिखाती टहनी का एक भाग। b) अनुदैर्ध्य काट में एक फूल। c) एक बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)।

उपयोग

इसकी कोमल फली को सब्जी के रूप में खाया जाता है। पके सूखे बीजों को दाल के रूप में साबुत या दलकर खाया जाता है। इनको पीसकर बने आटे को विभिन्न व्यंजनों को बनाने में काम में लाया जाता है। इसके पौधों से हरा पशु आहार बनाया जाता है या फिर सुखाकर घास के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इसके पादपों को जमीन में ही दबाकर प्राकृतिक खाद का काम लिया जाता है।

12.8 सेम

सेम सब्जियों में सबसे पौष्टिक हैं। ये शिंबी पादप कई प्रकार से महत्वपूर्ण हैं। पूरे विश्व में कई किस्म की सेमों की खेती होती है। इनमें मोठ, लीमा बीन, सोयाबीन, वैक्सबीन, स्ट्रिंगबीन, ग्रीन-शेल बीन शामिल हैं। ये प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट से भरपूर होने के कारण ऊर्जा के अच्छे स्रोत हैं। इसके अलावा इनमें विटामिन और खनिज भी पाए जाते हैं। इन्हें हरी सब्जी या सूखे बीजों के रूप में खाया जाता है। मृदा को उपजाऊ बनाने के अतिरिक्त ये पशुओं के लिए पौष्टिक हरे चारे के काम भी आते हैं।

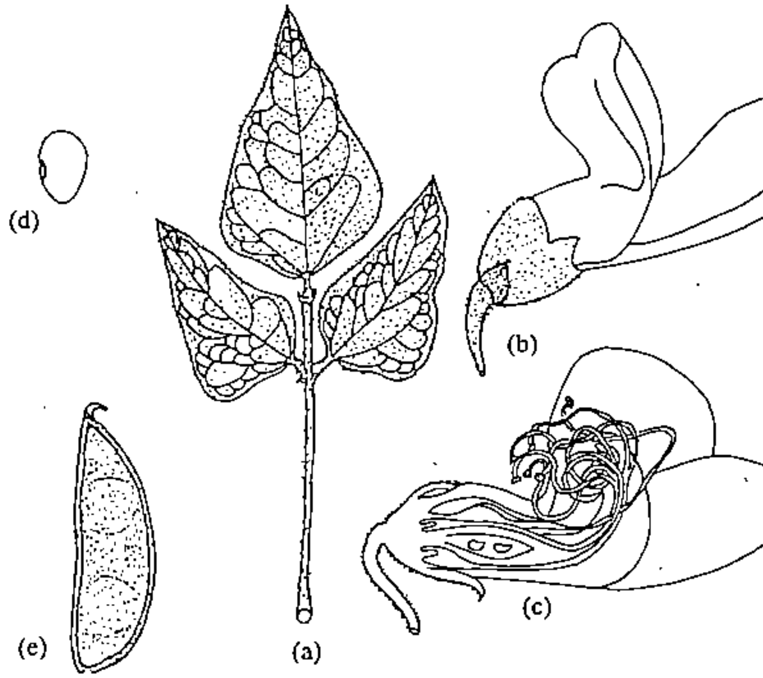

चित्र 12.7 (a - e) : ***फैसियोलस लीमेन्सिस*****, लीमाबीन। a) एक पत्ती। b) एक पुष्प। c) अनुदैर्घ्य काट में एक पुष्प। d) एक फली। e) एक बीज (पर्सग्लोव, 1988 से)**

(i) लीमाबीन

n = 11

लीमाबीन (चित्र 12.7 a - e) मटर कुल का सबसे पौष्टिक सदस्य है। प्रोटीन मान में यह उच्च और लौह कैल्सियम तथा विटामिनों में विपुल है। यह चौड़ी चपटी सेम उष्ण अमेरिका के मूल की है। इसकी खेती विश्व के कई गर्म प्रदेशों में की जाती है। लीमाबीन का वानस्पतिक नाम *फैसियोलस लीमेन्सिस* या *फैसियोलस लुनैटस* है।

(ii) सामान्य सेम या फ्रेंच बीन

n = 11

फैसियोलस वल्गैरिस (चित्र 12.8 a - e) के अन्य नाम हैं किडनी बीन, रबर बीन, स्नैप बीन और सलाद बीन। *फैसियोलस* जीनस की यह सुपरिचित जाति है जिसकी सबसे व्यापक रूप से खेती होती है। यह नई दुनिया के मूल की है और कई उष्ण और उपोष्ण भागों में इसकी खेती होती है। इसकी अनेक कृषि किस्में हैं जो पादप स्वभाव, फली और बीज के लक्षणों तथा पारिस्थितिकीय आवश्यकताओं में एक दूसरे से भिन्न हैं। यह एक बहुरूपी जाति है और इसकी विभिन्न किस्में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप अनुकूलित रहती हैं। फसल को बीज से उगाया जाता है।

n = 11

मूंग भारत की एक महत्वपूर्ण दाल फसल है। दालों में इसे सबसे अधिक पौष्टिक माना जाता है। इसके सूखे दानों को साबुत या दाल के रूप में दलकर खाया जाता है। इसकी हरी फली को सब्जी के रूप में खाते हैं। बीजों को अंकुरित कर सलाद आदि के रूप में खाया जाता है, जो कि बेहद पौष्टिक होता है। इसके बारे में और अधिक विस्तार से आप भाग 12.10 में पढ़ेंगे।

(iv) ब्लैक ग्राम या *फैसियोलस म्यूंगो*

n = 11, 12

उड़द को भारत में शाकाहारी भोजन के लिए एक अति पौष्टिक दाल माना जाता है। इसका उपयोग भी मूंग की तरह ही किया जाता है। इसकी उत्पत्ति संभवत: भारत में हुई थी जहां से यह अन्य ऊष्ण क्षेत्रों में फैली। हमारे देश में इसकी खेती का इतिहास प्राचीन है। इस विषय में विस्तार से आप भाग 12.9 पढ़ेंगे।

(v) स्कारलेट रनर बीन या *फैसियोलस कोक्सीनियस*

n = 11

यह एक मध्य अमेरिकी शिंब है जहां इसके हरे और सूखे बीज खाए जाते हैं। इस सेम की खेती शीतोष्ण देशों और नम उच्च भूमि वाले उष्ण प्रदेशों में की जाती है। इसकी लंबी, मांसल, कंदिल जड़ों को उबालकर खाया जाता है।

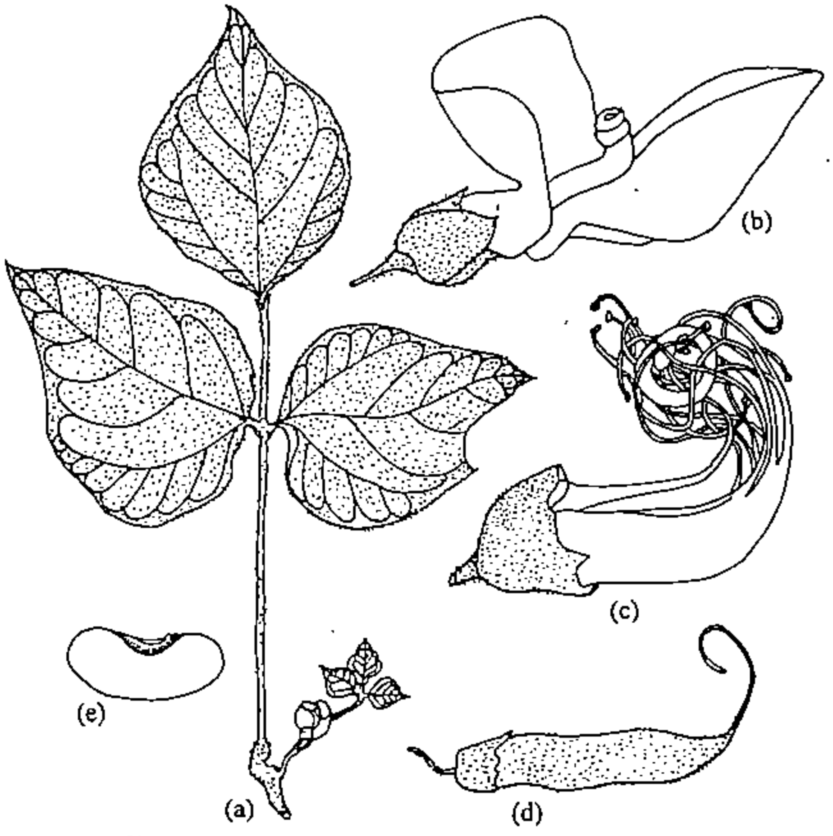

चित्र 12.8 (a - e) : *फैसियोलस वल्गैरिस* सेम। (a) एक पत्ती। (b) एक पुष्प। (c) एक पुष्प जिसका दल-पुंज हटा लिया गया है। (d) एक फली। (e) एक बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)

(vi) हायासिन्थ बीन

n = 11, 12

इसे लोबिया बीन, लवलव बीन, इंडियन बीन, मिस्री बीन और बोनाविस्ट बीन के नाम से भी इसे पुकारा जाता है। कई नामों वाले इस सेम (चित्र 12.9 a - d) के कई लैटिन

(वानस्पतिक) नाम भी हैं। *इसे लबलब नाइजर* (चित्र 12.9) / *लबलब परप्यूरियस / लबलब वल्गैरिस* (चित्र 12.9) / *डोलिकॉस लबलब / डोलिकॉस परप्यूरियस* भी कहते हैं।

यह भारतीय मूल का है जहां यह वन्य और कृषि दोनों स्थितियों में पाया जाता है। दक्षिण और मध्य अमेरिका, ईस्ट और वेस्ट इंडीज, अफ्रीका और चीन में इसकी गहन खेती होती है। सेम एक शुष्क भूमि की फसल है, जो जलाभाव प्रतिरोधी है और जिसे अल्प वृष्टि वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। इसे भिन्न-भिन्न ऊँचाई पर अलग-अलग किस्म की मृदाओं में उगाया जा सकता है।

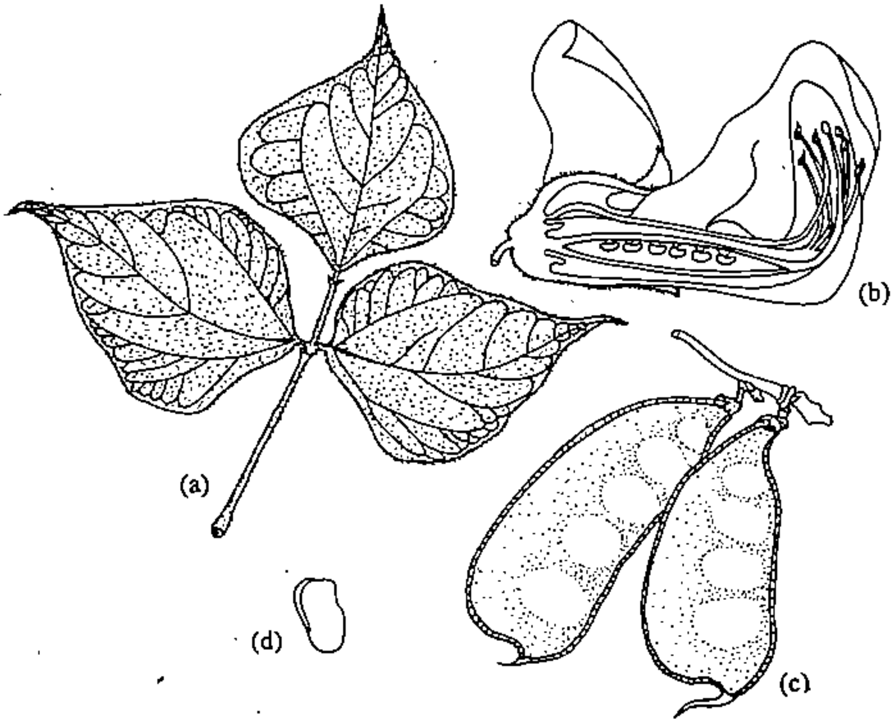

चित्र 12.9 (a - d) : *लबलब नाइजर*, हायासिन्थ बीन। (a) एक पत्ती। (b) एक पुष्प अनुदैर्ध्य काट में। (c) दो फलियां। (d) एक बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)।

तरुण फलियां (चित्र 12.9c) और कोमल सेमें भारत के विभिन्न हिस्सों में लोकप्रिय सब्जियां हैं। इन्हें अच्छी तरह से पकाया जाना चाहिए क्योंकि कच्ची फलियों में एक जहरीला ग्लाइकोसाइड होता है। पके और सूखे बीजों को दाल के रूप में खाया जाता है। इस सेम को प्राकृतिक खाद फसल के रूप में तथा कपास और सोरघम (sorghum) के साथ फसल-चक्रण के लिए उगाया जाता है।

हायासिन्थ बीन का निकट संबंधी घोड़े का चना है जिसका वानस्पतिक नाम *डॉलिकॉस यूनिफ्लोरस* है। इसे गरीब की दाल भी कहा जाता है और दक्षिण भारत की यह एक महत्वपूर्ण फसल है। आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, और तमिलनाडू में यह उतना ही महत्व रखता है जितना की चना उत्तरी भारत में। इसे महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में भी उगाया जाता है। यह एक शुष्क भूमि फसल है जिसे मध्यम वृष्टि वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है।

(vii) ग्वार (क्लस्टर बीन)
$n = 7$

इसका प्रचलित नाम ग्वार है तथा वानस्पतिक नाम है *सायामॉप्सिस टेट्रागोनोलोबा*। यह संभवत: भारत की देशज सेम है जहां इसकी खेती प्राचीन काल से चारे, प्राकृतिक खाद, और एक सब्जी के रूप में की जा रही है। इसकी खेती अब संयुक्त राज्य अमेरिका में गोंद के उत्पादन के लिए की जाती

इसकी दाल को चावल के साथ पीसकर डोसा और इडली जैसे स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जाते हैं। हरी फलियों को सब्जी बनाकर खाते हैं।

इसके बीज के प्रोटीन में ग्लूटेन का गुणधर्म पाया जाता है। डबलरोटी और बिस्कुट बनाने में भी उड़द काम आती है। इसकी दाल को पीसकर जुड़ाई की सामग्री के रूप में काम लिया जाता है। इसके पौधे से पशुओं का चारा और प्राकृतिक खाद भी बनाई जाती है। यह मृदा अपरदन को रोकता है और मृदा की नमी के बचाए रखता है।

12.10 मूंग

वानस्पतिक नाम : *फैसिय़ोलस ऑरियस*

कुल : फैबेसी

प्रचलित नाम : मूंग, हरी दाल, गोल्डन ग्राम

n = 11

भारत में इस दाल का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है दालों में यह सबसे पौष्टिक दाल है।

उत्पत्ति एवं वितरण

फैसियोलस म्यूंगो की तरह *फैसियोलय ऑरियस* की खेती भारत में प्राचीन काल से हो रही है और इसे अभी तक वन्यावस्था में नहीं पाया गया है। इसे भारत और मध्यएशिया मूल का माना जाता है। वर्गिको की दृष्टि से यह *फैसियोलस रेडिएटस* का निकट संबंधी है जो समूचे भारत और म्यानमार (बर्मा) में वन्यावस्था में पाया जाता है और कहीं-कहीं इसकी खेती भी होती है। भारत के अलावा इस दाल की खेती दक्षिण पूर्व एशिया, अफ्रीका के कुछ हिस्सों में, वेस्ट इंडीज और संयुक्त राज्य अमेरिका में होती है। भारत के प्रमुख मूंग उत्पादक राज्य हैं महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश और कर्नाटक।

पारिस्थितिकी

मूंग एक शुष्कभूमि की फसल है आमतौर पर जिसे धान के बाद बोया जाता है। मूंग को खरीफ और रबी दोनों फसलों के रूप में उगाया जाता है। इसका पौधा गरम मौसम पसंद करता है और जलाभाव सह सकता है। किंतु जलाक्रांति (पानी के जमाव) के प्रति संवेदनशील है। इसे कई किस्म की मृदाओं में उगाया जा सकता है और अच्छी दुमट मिट्टी में इसकी पैदावार सबसे उत्तम होती है। यह लाल और काली मिट्टी के लिए भी उपयुक्त है। इस दाल की लघुदिवसीय और दीर्घदिवसीय कृषजोपजातियां हैं। बुआई के 3-4 महीने बाद इसका पौधा परिपक्व हो जाता है।

वानस्पतिकी

सामान्य बनावट में मूंग भी उड़द के समान ही होती है, किंतु अनेक लक्षणों में दोनों दालें एक दूसरे से भिन्न हैं। लक्षणों में ये भिन्नताएं तालिका 12.2 में दी गई हैं।

फैसियोलस ऑरियस (चित्र 12.11 a - d) वार्षिक शिंब है। इसका पौधा ऊर्ध्व (सीधा) या अर्धऊर्ध्व, बहुल शाखित शाक है। समूचा पौधा रोमिल होता है मगर इसके रोम *फैसियोलस म्यूंगो* की ऊनी बनावट की तुलना में काफी अलग-अलग होते हैं। पत्तियां एकांतरी, त्रिपर्णक होती हैं। उनके पर्णवृंत लंबे और अनुपर्ण अंडाकार होते हैं (चित्र 12.11a)। पर्णक अंडाकार और बड़े होते हैं। पुष्पक्रम कक्षवर्ती असीमाक्ष होता है जिसमें 10-20 पुष्प पाए जाते हैं। पुष्प एक लंबे पुष्पवृंत की चोटी पर गुच्छे में रहते हैं। इन पुष्पों में विशिष्ट मटरकुलीय संगठन (चित्र 12.11b) और

बैंजनी-पीला दलपुंज देखने को मिलता है बीज गोलाकार और प्राय: हरे होते हैं मगर कभी-कभी इनका रंग पीला या काला सा होता है। इनकी दो कृषि किस्में पहचानी गयी हैं :

तालिका 12.2 : मूंग और उड़द के विभेदी लक्षण

लक्षण	मूंग (फै. *ऑरियस*)	उड़द (फै. *म्यूंगो*)-
तना	बहुधा ऊर्ध्व या अर्ध-ऊर्ध्व	बहुधा विस्तारित या तलसर्पी
पत्तियां	बहुधा हरी या गहरी हरी	बहुधा पीली-हरी
रोमिलता	विश्व रोमिल	सघन रोमिल
रोमों का रंग	हल्का-भूरा	लौहमय (लाल-भूरा)
फलियां	वलित या निलंबी लघुरोमों युक्त; सहजता से खुल जाती हैं	ऊर्ध्व या अर्धऊर्ध्व लंबी रोमों युक्त; खुलती नहीं
बीज	छोटे, गोलाकार, प्राय: हरे	बड़े, आयतरूपी वर्गाकार कोने युक्त; प्राय: काले
बीजावरण	बीजचोल सूक्ष्म, लहरदार कटक युक्त; ये कटक कभी-कभी बेहद हल्के होते हैं मगर इनका अभाव कभी नहीं रहता	कटक हीन
बीजपत्र	पीला; चबाने पर लेईनुमा नहीं होते	सफेद या हल्के पीले और चबाने पर लेईनुमा हो जाते हैं
नाभिका	चपटी	अवतल

(क) सुनहरी हरी किस्म जिसके बीज पीला रंग लिए रहते हैं। इस किस्म में बीजों का उत्पादन कम होता है और इसमें चटककर छितराने की प्रवृत्ति देखने में आती है,

ख) हरी किस्म जिसके बीज गहरे (काले) या चमकीले हरे होते हैं और जिसमें बीजों का निर्माण अधिक होता है। फलियां समान रूप से पक्वन करती हैं और उनमें चटककर छितराने की प्रकृति कम दिखाई देती है।

बीज प्रोटीन; कार्बोहाइड्रेट और खनिज तत्वों से भरपूर होते हैं।

उपयोग

फैसियोलस ऑरियस या मूंग सबसे पौष्टिक दालों में एक है। सूखे बीजों को साबुत या दलकर और उबाल कर खाया जाता है। या फिर बीजचोल को हटाकर बीजपत्रों को सूखा या भिगोकर तथा पीस कर विभिन्न प्रकार के भारतीय और चीनी व्यंजन बनाए जाते हैं। यह दाल सुपच्य है और "भारीपन और उदर वायु की प्रवृत्ति" से मुक्त होती है जो प्रभाव अन्य दालों से जुड़े हैं। हरी फलियों को सब्जी के रूप में खाया जाता है। साबुत बीजों को अंकुरित कर उन्हें सलाद आदि के रूप में खाया जाता है। उड़द (*फैसियोलस म्यूंगो*) की तरह मूंग से भी पापड़ और बड़ी बनायी जाती है।

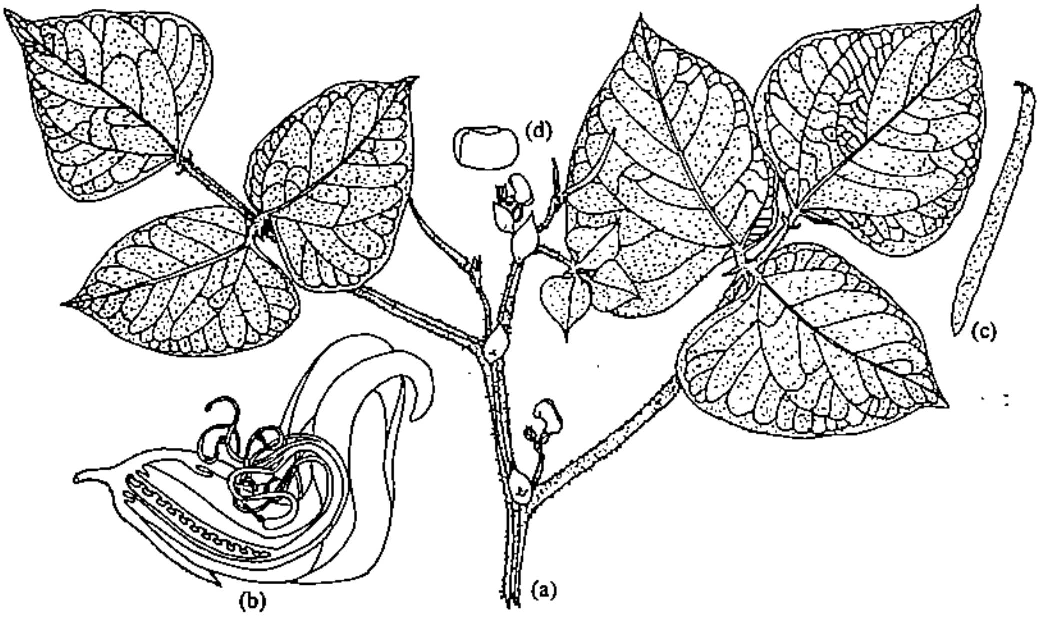

चित्र 12.11 (a-d) : *फैसियोलस ऑरियस*, मूंग। (a) पुष्पन करता एक प्ररोह। (b) पुष्प की अनुदैर्घ्य काट। (c) एक फली। (d) एक बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)

मानव उपभोग के अलावा, इस फसल को घास के चरागाह, साइलो संरक्षण (साइलेज) और भूमिसंरक्षण फसल के रूप में भी उगाया जाता है। यह पौधा फसल चक्रण और मृदा की उर्वरता को बहाल करने में उपयोगी है।

बोध प्रश्न 2

1. कॉलम **क** की विषय वस्तुओं का सही मिलान कॉलम **ख** में दी गई वस्तुओं से कीजिए।

क	ख
i) लोबिया	अ) *लबलब नाइजर*
ii) लीमा बीन	ब) *फैसियोलस वल्गैरिस*
iii) फ्रेंच बीन	स) *सायामोप्सिस टेट्रागोनोलोबा*
iv) हायासिंथ बीन	द) *विग्ना अंगुइकुलैटा*
v) क्लस्टर बीन	ई) *फैसियोलस लुनैटस*

2. निम्न के वानस्पतिक नाम लिखिए :

i) घोड़े का चना ....

ii) स्कारलेट रनर बीन ....

iii) उड़द ....

iv) राइस बीन ....

v) मैट या मॉथ बीन ....

3. ऐसे चार लक्षण बताइए जो *फैसियोलस ऑरियस* को *फैसियोलस* म्यूंगो से भिन्न बनाते हैं।

....

....

....

....

4. निम्न कथनों में से कौन से सही हैं तथा कौन से गलत हैं ?

i) लोबिया को प्राचीन रोमन साहित्य में एक महत्वपूर्ण दाल के रूप में माना गया था। ☐

ii) बटर बीन किडनी बीन का ही एक प्रचलित नाम है। ☐

iii) *फ़ैसियोलस* जीनस की जाति *फ़ैसियोलस ऑरियस* या मूंग की खेती सबसे व्यापक रूप से होती है। ☐

iv) *लबलब नाइजर* या लुबिया बीन की कच्ची फली में एक जहरीला ग्लाइकोसाइड होता है। ☐

v) कलस्टर बीन, हॉर्स ग्राम और मॉथ बीन की उत्पत्ति भारत में हुई थी। ☐

vi) मूंग का वानस्पतिक नाम *फ़ैसियोलस म्यूंगो* है। ☐

vii) *फ़ैसियोलस म्यूंगो* भारत में शाकाहारी भोजन के लिए अति लोकप्रिय शिंब है। ☐

12.11 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- शिंब या दालें शाकाहारी भोजन में प्रोटीनों का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। प्रोटीन की उच्च मात्रा के अलावा इनमें कार्बोहाइड्रेट तथा वसा भरपूर मात्रा में मिलते हैं। इनमें पानी की मात्रा कम होती है और इनका भंडारण और परिवहन सरल है। ये शिंब तेजी से वृद्धि करते हैं और वायुमंडलीय नाइट्रोजन को यौगिकीकृत कर ये मृदा की उर्वरक शक्ति को बढ़ाते हैं। इस कार्य को इनकी जड़ों की ग्रंथिकाओं में उपस्थित नाइट्रोजन यौगिकीकरण जीवाणु करते हैं। इस प्रकार ये शिंब फसल चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

- सभी शिंबों को फैबेसी कुल में रखा गया है। इनका फल एक सरल, सूखा, स्फोटी फली या शिंब होता है। भोजन के रूप में खाए जाने वाले इन शिंबों को उपकुल पैपिलियोनेटी में रखा गया है। इन दालों की खेती समूचे विश्व में की जाती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा दाल उत्पादक देश है। देश के लगभग सभी राज्यों में कई किस्म के शिंबों यानि दालों की खेती होती है। दो मुख्य दालों-चना और अरहर की पैदावार देश में सकल दाल उत्पादन का 55 प्रतिशत है। इनके अलावा अनेकों उपयोगी दालें भी हैं।

- भारत मूंगफली (*ऐरैकिस हाइपोजिया*) का सबसे बड़ा उत्पादक है और इसके बीजों से मुख्यत: एक भोज्य तेल निकाला जाता है। मूंगफली का तेल एक न सूखने वाला महत्वपूर्ण तेल है जिसका प्रयोग पाक तथा अन्य उद्योगों में होता है। इसके बीजों में कैलोरी मान उच्च होता है।

- चना या *साइसर ऐरिएटिनम* ज्ञात दालों में सबसे प्राचीन फसल है। आज यह एक बेहद महत्वपूर्ण शिंब है और इसका 70 प्रतिशत विश्व उत्पादन भारत में ही होता है। इसके नुकीले चोंचयुक्त कोणीय बीज भिन्न रंगों के होते हैं और उनमें दो मोटे पीले बीजपत्र पाए जाते हैं। इनहें कई तरह से प्रयोग किया जाता है।

- मटर या *पाइसम सैटाइवम* जाना पहचाना शिंब है। उत्तरी गोलार्द्ध में इसकी गहन खेती होती है। इसके बीज अति पौष्टिक होते हैं और प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट तथा खनिजों के साथ-साथ उनमें विटामिन ए, बी तथा सी भी पाए जाते हैं। इसके ताजा हरे बीजों को सब्जी के रूप में खाया जाता है।

है। इसके बीजों में एक श्लेष्मकीय पदार्थ पाया जाता है जिसे कागज तथा कपड़ा उद्योगों में काम में लाया जाता है।

इसका पौधा एक-वार्षिक झाड़ी है जिसकी शाखाएं सीधी-खड़ी रहती हैं। ये कोणीय, खांचेदार और सफेद रोमों से ढकी रहती हैं। इनके छोटे गुलाबी-सफेद पुष्प घने कक्षवर्ती असीमाक्ष में उगते हैं। फलियां कटकित, रेखीय तथा संपीडित रहती हैं। ये गुच्छों में उगती हैं इसीलिए इनहें क्लस्टर बीन कहा जाता है।

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की सेमें विश्व के विभिन्न भागों में महत्वपूर्ण फसलें हैं।

(viii) फैसियोलस की अन्य जातियां
n = 11

कमतर महत्व की जाति *फैसियोलस कैल्कैरटस* या एशियाई राइस बीन जो हिमालय और मध्य एशिया से मलेशिया, बर्मा, चीन, फीजी, मॉरीशस, और फिलिपींस तक पाई जाती है।

मैट या मॉथ बीन (*फैसियोलस ऐकोनिटिफोलियस*) भारत, पाकिस्तान और बर्मा के मूल को है। इसकी खेती श्री लंका, चीन तथा अमेरिका के टेक्सास और कैलिफोर्निया में की जाती है। इसकी हरी फलियां सब्जी और सूखे बीज दाल के रूप में खाए जाते हैं।

12.9 उड़द

वानस्पतिक नाम : ***फैसियोलस म्यूंगो***
कुल : फैबेसी
प्रचलित नाम : उड़द
n = 11, 12

भारत में शाकाहारी भोजन में इस दाल का अति महत्वपूर्ण स्थान है।

उत्पत्ति एवं वितरण

इस शिंब की खेती प्राचीन काल से ही भारत में की जा रही है। वैवीलोव के अनुसार इस दाल की उत्पत्ति भारत में हुई थी और इसे विस्तार का द्वितीयक केन्द्र मध्य एशिया को माना जाता है। कई वनस्पति विज्ञानी मानते हैं कि *फैसियोलस म्यूंगो* की उत्पत्ति संभवत: *फैसियोलस ट्राइनरवियस* या *फै. सबलोबुटस* वन्य जाति से हुई थी, जो भारत में प्रचुरता में उगते हैं। भारतीय प्रवासियों ने इसे उष्ण और उपोष्ण प्रदेशों में पहुंचाया। भारत के अलावा उड़द के मुख्य उत्पादक देश हैं ईरान, मलेशिया, पूर्वी अफ्रीका, दक्षिणी यूरोप, दक्षिण एवं मध्य अमेरिका तथा वेस्ट इंडीज। भारत में मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक उड़द के मुख्य उत्पादक राज्य हैं।

पारिस्थितिकी

फैसियोलस म्यूंगो (चित्र 12.10 a - d) गर्मी के मौसम की फसल है और इसे खरीफ और रबी दोनों मौसमों में उगाया जाता है। इसे धान और अन्य फसलों के साथ मिश्रण फसल के रूप में भी उगाया जाता है। यह जलाभाव प्रतिरोधी है और अतिवृष्टि वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नहीं है। उड़द की खेती के लिए सबसे आदर्श स्थिति गर्म जलवायु और सुवितरित वृष्टि है। यह विशेषकर मृत्तिका मृदा के लिए उपयुक्त है और भारत में पायी जाने वाली काली कपास मृदा जैसी भारी

मृदाओं में भी इसकी फसल अच्छी होती है। इसकी फसल को बीजों से उगाया जाता है और यह तीन महीने में तैयार हो जाती है।

वानस्पतिकी

यह एक तेजी से वृद्धि करने वाला शाकीय शिंब है। इसका पौधा ऊर्ध्व या अर्ध-ऊर्ध्व या तलसर्पी वार्षिक होता है। तना विसरित रूप से शाखित रहता है। तना, पत्तियां और फल लाल-भूरे रोमों से ढके रहते हैं जिससे दिखने में यह ऊनी लगता है (इसीलिए विश्व के कुछ हिस्सों में इसे वूली

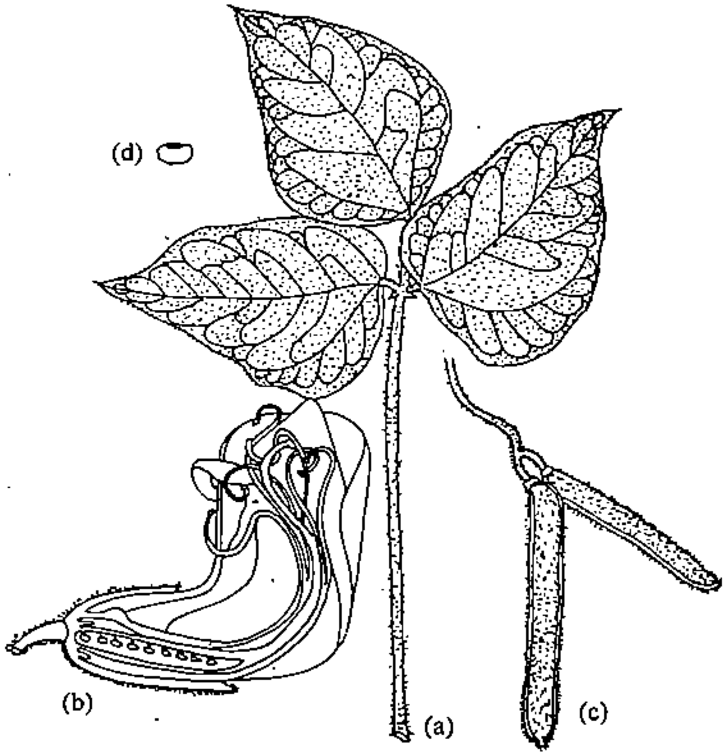

चित्र 12.10 (a-d) : *फैसियोलस म्यूंगो*, उड़द। (a) एक पत्ती (b) अनुदैर्ध्य काट में पुष्प। (c) दो फलियां। (d) बीज। (पर्सग्लोव, 1988 से)

पाइरोल भी कहा जाता है)। इसकी बड़ी पत्तियां त्रिपर्णक होती हैं और उनमें लंबे पर्णवृंत (चित्र 12.10 a) तथा अंडाकार अनुपर्ण पाए जाते हैं। पर्ण अंडाकार से भालाकार, अच्छिन्न कोर और हंसियाकार अनुपर्णिकाएं लिए रहते हैं। कक्षवर्ती पुष्पक्रम शाखित होते हैं और उनमें 5-6 पुष्पों के गुच्छे होते हैं। प्रत्येक पुष्प में एक छोटा रोमिल पुष्पावलि-वृंत होता है और वह बड़ी सहपत्रिकाओं द्वारा कक्षांतरित रहता है। पुष्प में एक विशिष्ट मटर-कुलीय संगठन पाया जाता है (चित्र 12.10 b), जिसमें एक हल्का पीला दलपुंज और द्विसंघी पुंकेसर देखने को मिलते हैं। फल एक शिंब या फली होता है (चित्र 12.10c)। फल के बनने पर पुष्पावलिवृंत दीर्घन करता है। फली ऊर्ध्व, संकीर्ण, बेलनाकार और एक छोटी अंकुशित चोंच युक्त होती है। प्रत्येक फली में 6-10 बीज होते हैं, जो पटों के द्वारा पृथक रहते हैं। बीज आयतरूपी, कोने वर्गाकार होते हैं। बीजों का रंग बहुधा काला होता है। बीजावरण या बीज चोल चिकना रहता है और नाभिका सफेद तथा अवतल होती है। प्राचीन भारत में बीज को तोल के रूप में प्रयोग किया जाता था और उसे 'माशा' कहा जाता था। बीज के 12 दाने या ''माशा' एक 'तोला' होता था जो कि लगभग 11.66 ग्राम होता है। ये बीज फोस्फोरिक अम्ल और ग्लोब्यूलिन A और B से भरपूर रहते हैं। इनमें प्रोटीन की मात्रा बीज के शुष्क भार का 24 प्रतिशत और कार्बोहाइड्रेट की मात्रा 57 प्रतिशत होती है।

उपयोग

इस दाल को साबुत या दला, छिलके के साथ या धुला तथा उबालकर खाया जाता है। धुली दली दाल को पीसकर उससे व्यंजन बनाए जाते हैं। इसकी दाल से पापड़ और बड़ियां भी बनाए जाते हैं।

- सोयाबीन या *ग्लाइसीन मैक्स* एक प्राचीन पूर्व देशीय शिंब है। विश्व के ऊष्ण से लेकर शीतोष्ण प्रदेशों तक इसकी कृषि होती है। नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए इसे *राइजोबियम जैपोनिकम* जीवाणु के एक विशेष प्रभेद की आवश्यकता पड़ती है। बीजों में उच्च प्रोटीन और तेल मात्रा के कारण इसकी गिनती महत्वपूर्ण शिंबों में होती है।
- लोबिया (*विग्ना अंगुइकुलैटा*) एक ध्यानाकर्षक शिंब है। जो उष्ण और उपोष्ण प्रदेशों में एक महत्वपूर्ण दाल फसल है। इसकी कोमल फलियों तथा पक्व बीज दोनों को भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- शिंब पादपों का एक महत्वपूर्ण वर्ग हैं। इन्हें सर्वाधिक पौष्टिक सब्जियों में माना जाता है। पूरे विश्व में इनकी खेती होती है और इनमें सबसे प्रमुख हैं, क्रिडनी बीन, लीमा बीन, वैक्स बीन, स्ट्रिंग बीन, क्लस्टर बीन, सेम, हायासिंथ बीन, राइस बीन, तथा हॉर्स बीन।
- उड़द और मूंग *फैसियोलस* जीनस की दो महत्वपूर्ण दालें हैं जिनकी उत्पत्ति संभवत: भारत में हुई। उड़द (*फैसियोलस म्यूंगो*) और मूंग (*फैसियोलस ऑरियस*) दोनों गरमी के मौसम की फसलें है और भारत में इन्हें खरीफ और रबी की फसलों के रूप में उगाया जाता है। घनिष्ठ संबंधी होने के बावजूद भी ये दोनों जातियां कई लक्षणों में भिन्न हैं। दोनों दालों का शाकाहारी भोजन में महत्वपूर्ण स्थान है और इनसे कई प्रकार के व्यंजन बनाए जाते हैं।

12.12 अंत में कुछ प्रश्न

1. शिंब की परिभाषा दीजिए। भारत में उगाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के शिंबों के बारे में संक्षेप में बताइए, प्रत्येक का क्षेत्र भी बताइए जहां सामान्यतया उसकी खेती की जाती है।

   ....

   ....

   ....

   ....

2. भोजन, फसल चक्रण और देश की अर्थ व्यवस्था में शिंबों के महत्व के बारे में बताइए। भारत में उगाए जाने वाले महत्वपूर्ण शिंबों के नाम बताइए।

   ....

   ....

   ....

   ....

3. किसी एक शिंब के बारे में विस्तार से बताइए जिसका आपने अध्ययन किया है। इसकी उत्पत्ति के स्थल, कृषि, और आर्थिक महत्व का उल्लेख कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

4. मूंगफली को उपयोगी क्यों माना जाता है ? इस शिंब की उत्पत्ति, पारिस्थितिकी और वानस्पतिकी के बारे में संक्षेप में लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

5. मूंगफली और सोयाबीन की वानस्पतिकी तथा आर्थिक महत्व की तुलना कीजिए। और उनमें भेद बताइए।

....

....

....

....

6. निम्नलिखित की उत्पत्ति, कृषि तथा आर्थिक महत्व के बारे में संक्षेप में बताइए:

क) चना

....

....

....

....

ख) लोबिया

....

....

....

....

ग) उड़द

....

....

....

....

घ) मूंग

....

....

....

....

12.13 उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. शिंब शाकाहारी भोजन में प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। शिंब फैबेसी कुल के सदस्य हैं। इनकी विशेषता इनका विशेष प्रकार का फल है। शिंब दाल फसलें हैं जिनकी खेती पूरे विश्व में होती है कृषि में शिंब फसल बहुत महत्वपूर्ण हैं। भाग 12.1 और 12.2 भी देखिए।

2. शिंबों का फसल चक्रण में बड़ा महत्व है, क्योंकि ये मृदा की उर्वरता को बनाए रखते हैं। ऐसा इसलिए है कि ये पौधे मृदा में नाइट्रोजन जोड़ने का काम करते हैं, वायुमंडलीय नाइट्रोजन के यौगिकीकरण और उसे प्रयोग के योग्य नाइट्रेटों में परिववर्तित करने की शिंबों में यह क्षमता सहजीवी जीवाणुओं के कारण होती है जो इन पौधों की जड़ों में ग्रंथिकाओं में पाए जाते हैं।

3. क) *सोयाबीन - ग्लाइसीन मैक्स*

   ख) *खेसरी दाल - लैथाइरस सैटाइवस*

4. शिम्बाधिता एक तीव्र अरक्तता की स्थिति है। यह रोग बाकला (*वीशिया फैबा*) के कच्चे या अध-पके बीजों को खाने से होता है। यह रुग्णदशा इस पौधे के पराग को सूंघने से भी हो जाती है। यह रोग सिर्फ पुरूषों को होता है और भूमध्यसागरीय क्षेत्र में प्रचलित है।

5. क) *ऐरैकिस हाइपोजिया - मूंगफली*

   ख) निम्न में से कोई दो :

   i) *लेंस एसकुलेंटा* - मसूर

   ii) *पाइसम सैटाइवम* - मटर

   iii) *साइसर ऐरिएटिनम* - चना

   iv) *वीशिया फैबा* - बाकला

   ग) निम्न में कोई तीन :

   i) *ग्लाइसीन मैक्स* - सोयाबीन

   ii) *विग्ना अंगुइकुलैटा* - लोबिया

   iii) *कैजनस कैजन* - अरहर

   iv) *फैसियोलस ऑरियस* - मूंग

   v) *फैसियोलस म्यूंगो* - उड़द

6. i) *साइसर ऐरिएटिनम*

   ii) *कैजनस कैजन*

   iii) *लेंस एस्क्यूलेंटा*

   iv) *फैसियोलस ऑरियस*

   v) *फैसियोलस म्यूंगो*

   vi) *पाइसम सैटाइवम*। कोई पाँच नाम लिखिए। तालिका 12.1 भी देखें।

7. क) दक्षिण अमेरिका - ब्राजील-पराग्वे प्रदेश।

   ख) पश्चिमी ऐशिया - कॉकासस तथा हिमालय पर्वत श्रेणियों के बीच का स्थान।

   ग) पूर्वी जार्मो के समीप या यूरोप के नवपाषाणी स्थल।

   घ) चीन।

8. i) *ऐरैकिस हाइपोजिया - मूंगफली*

   ii) *ग्लाइसीन मैक्स* - सोयाबीन

बोध प्रश्न 2

1. i) द, ii) ई, iii) ब, iv) अ, v) स
2. i) *डॉलिकॉस युनिफ्लोरस*

   ii) *फैसियोलस कॉक्सिनियस*

   iii) *फैसियोलस म्यूंगो*

iv) *फैसियोलस कैल्करैटस*

v) *फैसियोलस ऐकोनिटिफोलियस*

3. देखिए भाग 2.10

4. i) गलत

ii) गलत

iii) सही

iv) गलत

v) सही

vi) गलत

vii) सही

अंत में कुछ प्रश्न

1. देखिए भाग 12.1, 12.2 और प्रत्येक शिंब की खेती के क्षेत्र देखिए।

2. देखिए भाग 12.2 ।

3. अपनी पसंद के किसी एक शिंब के बारे में लिखिए।

4. भाग 12.3 देखिए।

5. भाग 12.3 तथा 12.6 देखिए। एक तालिका बनाइए और दोनों में तुलना कीजिए।

6. क्रमश : 12.4, 12.7, 12.9 और 12.10 देखिए।

परिशिष्ट 12.1 : शिंब– नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने वाले शिंय (दालें)

इनमें विशेष गुलिकानुमा संरचनाओं में जीवाणु पाये जाते हैं, जिनमें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीरण करने का गुण होता है। मृदा जीवाणुओं और शिंबी पादपों की जड़ों के बीच एक सहजीवी संबंध होता है जिससे नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने वाली मूल ग्रंथिकाओं का निर्माण होता है। आधुनिक कृषि में इस सहजीवी संबंध का बड़ा महत्व है। *राइजोबियम* जाति का जीवाणु मृदा में स्वतंत्र रह सकता है किंतु वह वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण नहीं करता है। मगर जब ये जीवाणु इन मूल ग्रंथिकाओं के अंदर सहजीविता में रहते हैं तभी ये वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण उसे नाइट्रेट तथा अन्य यौगिकों में रूपांतरित करके करते हैं, इन्हें पादप अब अपने काम ला सकते हैं। ये जीवाणु शिंबों की जड़ों की ओर नवोद्भिद् पौद की अवस्था के बाद से आकर्षित होता है। जीवाणु मूल रोमों से प्रवेश कर मूल वल्कुट को वेध जाते हैं। यहां पहुंचकर जीवाणु मूल कोशिकाओं से पोषक तत्वों और एंजाइम ले तेजी से गुणन करते हैं। परपोषी कोशिकाएं भी विभाजन करती हैं और आकार में वृद्धि कर ग्रंथिकाओं की रचना करती हैं। ये ग्रंथिकाएं जड़ों की सतह पर सुस्पष्ट नजर आती हैं मूल ग्रंथिकाओं की कोशिकाएं लाखों जीवाणुओं से सघन रूप से भरी रहती हैं। ग्रंथिकाओं की बनावट और आकृति में काफी भिन्नता पायी जाती है और ग्रंथिकाओं की वृद्धि और कार्यक्षमता को अनेक कारक नियंत्रित करते हैं। ग्रंथिकाओं में एक विशेष लाल वर्णक पाया जाता है जिसे लेगहीमोग्लोबिन कहते हैं, ये ग्रंथिकाएं अति प्रभावी और नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए महत्वपूर्ण हैं। जीवाणु कोशिकाएं वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करती हैं और शिंब जीवाणु को पचा लेते हैं और नाइट्रोजन यौगिकों का उपयोग करते हैं। ग्रंथिकाएं इस प्रकार अंततः मर जाती हैं और अपचे जीवाणुओं का एक बड़ा अंश मृदा में सुलभ हो जाता है जो पादपों को नाइट्रोजन यौगिक प्रदान करते हैं। नाइट्रोजन यौगिकीकरण का यह प्रक्रम निरंतर मृदा में नाइट्रोजन जोड़ते रहता है जो जैविक परिसंचरण के लिए उसे सुलभ बनाए रखता है।

इकाई 13 फल तथा दृढ़फल

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

13.2 फल

13.3 दृढ़फल

13.4 सारांश

13.5 अन्त में कुछ प्रश्न

13.6 उत्तर

13.1 प्रस्तावना

अधिकांश लोग किसी भी रसदार, खाने योग्य तथा आम तौर पर मीठी चीज जैसे आम, केला, संतरा या सेव के लिए फल शब्द का उपयोग करते हैं। हांलाकि आप टमाटर, ककड़ी, खीरा, बैंगन, भिन्डी आदि भी सब्जी के रूप में खाते हैं तथा इन पादप संरचनाओं को आमतौर पर फल नहीं समझा जाता है क्योंकि ये स्वाद में मीठे नहीं होते हैं। इसलिए इससे पहले कि हम फलधारी पादपों तथा मानव के लिए उनके महत्व के बारे में पढ़े, ये समझना आवश्यक है कि शब्द फल का अर्थ क्या है।

वानस्पतिक रूप से बोलें तो फल वृद्धि की उस प्रक्रिया का उत्पाद है जो निषेचन की क्रिया के द्वारा आरंभ होता है। अत: फल पका हुआ अंडाशय होता है तथा ये बीजों को अपने अंदर संचित रखता है जो पक्के हुए बीजांड होते हैं। दिलचस्प रूप से, उद्यान विज्ञान (horticulture) में, शब्द फल का उपयोग किसी भी बीजधारी मांसल संरचना के लिए होता है जो बहुवर्षी पुष्पीय पादप द्वारा उत्पन्न होती है अत: इस परिभाषा में दृढ़फल नहीं आते हैं। (जो मांसल संरचनाएं नहीं होते हैं।) साथ ही एकवर्षी पुष्पीय पादपों द्वारा उत्पन्न होने वाली मांसल संरचनाएं भी नहीं शामिल हैं जैसे टमाटर, बैंगन, ककड़ी, खीरा आदि तथा इन्हें उद्यान विज्ञान में सब्जियों के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

फल की वानस्पतिक परिभाषा ''पुष्प के मादा भाग से उत्पन्न एक पश्च निषेचन उत्पाद'' के रूप में करना अधिक उपयुक्त होगा। इस परिभाषा के अनुसार वनस्पति विज्ञानियों ने पादपों के जीवन चक्र में उत्तर जीविता के लिए लैंगिक प्रजनन के महत्व को पहचाना। अत: फल एक बीज धारण करने वाली संरचना के रूप में अनेक प्रकार से महत्वपूर्ण है। आप पहले ही उनके विकास तथा वर्गीकरण के बारे में एल. एस. ई.-06 में पढ़ चुके हैं। इस इकाई को पढ़ने से पहले एल. एस. ई.-06 (ब्लॉक-1) की इकाई-6 को पढ़ लीजिए।

आपके लिए यह जानना दिलचस्प होगा कि शब्द फल की उत्पत्ति लैटिन शब्द 'फ्रुई' (frui) से हुई है, जिसका अर्थ है ''आनंद लेना'' क्योंकि अधिकांश फलों को उनकी सुगंध तथा स्वाद के लिए खाया जाता है। मानव द्वारा प्राचीन काल से ही विभिन्न फलों का उपयोग किया जाता रहा है तथा इन्हें अपनी प्राचीनता को दर्शाने के लिए विभिन्न रूपों में प्रदर्शित किया गया है। उदाहरण के लिए, आम को सांची स्तूप में प्रदर्शित किया गया है जो 150 ईसा पूर्व का है। बाइबल में आदम व हव्वा के बगीचे में प्रतिबंधित सेब का जिक्र किया गया है। विभिन्न फलों के पुरातात्विक अवशेष भी हैं जो ये इंगित करते हैं कि फलों को भोजन के रूप में उपयोग किया

जाता था। वे पोषक तथा क्षुधावर्धक पादप भाग हैं जो कार्बोहाइड्रेट्स तथा अन्य उत्पादों में समृद्ध होते हैं। अधिकांश फलों में उच्च शर्करा तत्व होते हैं और इसीलिए ये शीघ्र ऊर्जा प्रदान करते हैं। अपाचनशील कार्बोहाइड्रेट्स जैसे सेलुलोस तथा पेक्टिक पदार्थ रूक्ष अंश (roughage) के रूप में मूल्यवान होते हैं जो आहार नाल की समुचित कार्यविधि के लिए आवश्यक होता है। फल विटामिन सी तथा अन्य कार्बनिक तथा खनिज पदार्थों में भी समृद्ध होते हैं। उनमें बहुत कम प्रोटीन होता है और इसलिए अधिकांश फल अपने आप में संतुलित आहार का कार्य नहीं करते हैं। हालांकि, वे ऊर्जा व विटामिनों के स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण होते हैं।

अधिकांश फल डेज़र्ट (भोजनोपरांत मिष्ठान्न) के रूप में खाये जाते हैं अथवा उन्हें खाने से पहले संसाधित (processed) किया जा सकता है। अधिकांश फलों की लंबी निधानी आयु (shelf life) नहीं होती है तथा इन्हें ज्यादा समय तक संग्रहित नहीं किया जा सकता है। बहुत से फलों को विभिन्न तरीकों द्वारा संरक्षित किया जा सकता है तथा उनके स्वाद और सुगंध का आनंद लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, वायु परिवहन, शीतानुकूलित संग्रह तथा नई पैकिंग तकनीकें अब उपलब्ध है जिसके फलस्वरूप विश्व के विभिन्न भागों से विभिन्न प्रकार के फल विश्व के बड़े शहरों में उपलब्ध हैं।

इस इकाई में आप कुछ सुविख्यात फल तथा दृढ़फल धारी पादपों के बारे में पढ़ेंगे तथा मानव के लिए उनके महत्व को समझेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई का सावधानीपूर्वक अध्ययन करके, आप समर्थ होंगे,

- शब्द फल के उचित वानस्पतिक उपयोगों को जानने में,
- फलों के सामान्य गुणों को जानने में,
- कुछ महत्वपूर्ण फलों तथा दृढ़फलों की उत्पत्ति, वितरण, पारिस्थितिकी, वनस्पति विज्ञान तथा उपयोगों को जानने में,

13.2 फल

फल प्राचीन काल से ही भोजन के स्रोत के रूप में उपयोग होते रहे हैं। विभिन्न फल पादपों ने मानव जाति को ऊर्जा तथा स्वाद प्रदान किया है तथा इनमें से कुछ आर्थिक रूप से काफी महत्वपूर्ण बन गए हैं। इनकी विस्तृत रूप से खेती होती है तथा इन्हें पूरे विश्व में जाना जाता है। कुछ कम प्रचलित फल भी हैं जिनकी खेती सिर्फ स्थानीय उपयोग के लिए होती है। हम अधिक प्रचलित फलों के बारे में जानकारी देंगे।

13.2.1 आम (Mango)

वानस्पतिक नाम : *मैंजीफेरा इन्डिका* लिनियस (*Mangifera indica* Linn.)
कुल : ऐनाकार्डिऐसी
सामान्य नाम : आम
n = 20

आम एक बहुत ही प्रचलित फल है जिसे विश्व भर में करोड़ों लोगों द्वारा खाया जाता है। भारत में, यह "सभी फलों का राजा" कहलाता है। अपने देश में फलों की खेती के कुल क्षेत्र के लगभग 60% में आम की खेती होती है।

13.2.1.1 उत्पत्ति तथा वितरण

आम की उत्पत्ति भारतीय उपमहाद्वीप में हिंद वर्मा (Indo Burma) क्षेत्र में हुई है। इसकी खेती 6000 वर्षों से भी अधिक से होती रही है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में आम के विस्तृत संदर्भ हैं तथा इसके वृक्ष को, 150 ईसा पूर्व के सांची के बुद्ध स्तूपों में भी प्रदर्शित किया गया है। सबसे प्राचीन तथा सबसे महत्वपूर्ण उष्ण कटिबन्धी फल होने के कारण आम को अब भारत के अतिरिक्त, पाकिस्तान, वंगला देश, इंडोनेशिया, फिलीपीन्स, ट्रॉपिकल अमरीका, फ्लोरिडा, कैलीफोर्निया, तंजानिया तथा मिस्र में भी उगाया जाता है। इसकी खेती भारत के लगभग सभी भागों में की जाती है तथा इसकी कई सौ उद्यान विज्ञानी किस्में हैं। प्रत्येक किस्म का अपना विशेष स्वाद, सुगंध, मिठास तथा गूदे की गुणवत्ता होती है। भारत में उगाई जाने वाली सुविख्यात किस्मों में प्रसिद्ध एल्फोंसो (Alphonso), दशहरी (Dasheri) लंगड़ा (Langra), चौसा (Chausa), बंगनपल्ली (Banganpalli) या सफेदा (Safeda), तोतापरी (Totapari) या पोलीमेंगों (Polymango), नीलम (Neelam) तथा मालगुआ (Malgoa) सम्मिलित हैं। अनेकों संकर भी विकसित किए गए हैं। इनमें से, मलिका (Malika) तथा आम्रपाली (Amrapali) बहुत प्रसिद्ध हो गई हैं।

13.2.1.2 पारिस्थितिकी

पादपों में एकांतरण की प्रवृत्ति पाई जाती है, जिसमें एक साल तो काफी पुष्प तथा फल लगते है व आगामी वर्ष में हल्की फसल होती है। यह मिट्टी में खनिज असंतुलन के कारण होता है। पर्याप्त उर्वरकों से असंतुलन ठीक हो सकता है तथा खेती में प्रतिवर्ष एक समान फल प्राप्त किए जा सकते हैं। अच्छी फसल के लिए ऐसे उर्वरक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होने चाहिए जो नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटेशियम उपलब्ध कराते हों।

13.2.1.3 वनस्पति विज्ञान

आम का पौधा एक सीधा, शाखित, सदाबहार पेड़ है जो 10-40 मीटर की ऊँचाई तक बड़ा होता है तथा इसमें सघन गुम्बदाकार वितान (canopy) होता है। वृक्ष सौ वर्ष या अधिक तक जीवित रहता है तथा फल देना जारी रखता है। तना सुदृढ़ स्तंभ होता है जिसमें भूरे से रंग की दरारयुक्त (fissured) छाल होती है। पत्तियां सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित रहती हैं तथा सघन चमकदार पिंड बनाती हैं। ये गहरी हरी वृंत्तीय तथा तल्पयुक्त आधार युक्त होती है। (लेमिना) पटल हल्का सा दीर्घवृत्तीय (elliptic) या भालाकार लहरदार (lanceolate) तथा चर्मिल (coriaceous) तथा शीर्ष व आधार की ओर क्रमशः पतला होता जाता है।

पुष्पक्रम बड़ा अंतस्थ यौगिक असीमाक्ष (panicle) होता है जो असंख्य पुष्प धारण किए रहता है प्रत्येक पुष्पक्रम में कुछ द्विलिंगी तथा अनेक नर पुष्प होते हैं। द्विलिंगी पादपों में, एकल अंडप होता है जिसमें ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय तथा एक दोलायमान (pendulous) बीजांड होता है। वर्तिका पार्श्व होती है जिसमें छोटा सरल वर्तिकाग्र होता है (चित्र 13.1) वृक्ष के द्विलिंगी पुष्पों में से सिर्फ 0.1 से 0.25% फल बन पाते हैं। पैदावार बीस वर्ष तक बढ़ती है तथा औसतन 400-600 फल प्रत्येक वृक्ष से प्रति वर्ष निकलते हैं।

लाल बाग गार्डन बेंगलोर में आम के असंख्य पेड़ हैं। पर क्षेत्र विशिष्ट होने के कारण 250 सालों से भी ज्यादा समय से हैं। शायद टीपू सुल्तान व हैदर अली ने इस बाग के आम खाए होंगे।

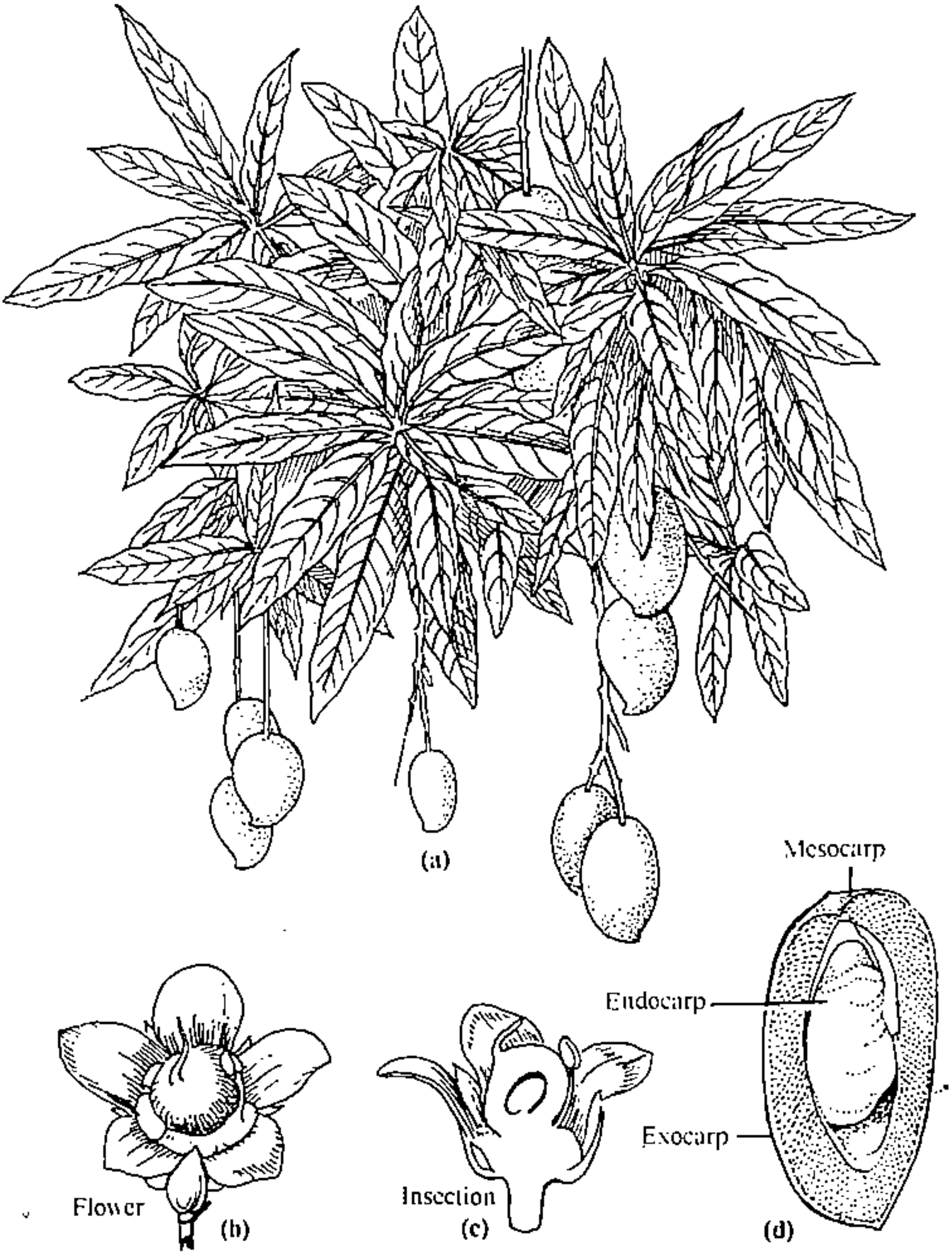

त्र 13.1 : (a) वृक्ष पर आम (b) आम का फूल (c) उभयलिंगी पुष्प से गुजरता हुआ आरेखी अनुदैर्ध्य काट, जो छोटी तिरछे रूप से स्थित अंडाशय को पार्श्व वर्तिका व दोलायमान बीजांड तथा सुस्पष्ट डिस्क के साथ दिखा रहा है। (d) फल की अनुदैर्ध्य काट

ह एक मांसल अष्ठिल / गुठलीदार (ड्रूप) फल है जो आकृति, आकार, रंग तथा त्वचा के ुविन्यास (बाह्यफलभित्ति), सुगंध, मिठास तथा अम्लता एवं खाद्य मध्यफलभित्ति (mesocarp [ूदा]) की रचना में भिन्न होता है। गूदा पीला, नारंगी या लाल से रंग का हो सकता है तथा ांतरिक गुठली या अंत:फलभित्ति (endocarp) को ढके रहता है। यह मोटी, काष्ठीय तथा एक ीज लिए होती है। कच्चे फल मांड से समृद्ध होते हैं तथा विटामिन ए, बी व सी लिए होते हैं ल के पकने के दौरान मांड का शर्करा में जल-अपघटन हो जाता है तथा पके फल का शर्करा व कुल वजन का 10-20% के बीच में होता है। निम्न कोटि के फल तंतुमय तथा अम्लीय ते हैं।

3.2.1.4 उपयोग

श्व के 1/5 यानि 20% लोग आम खाते हैं। यह प्रचलित फल अनेक तरीकों से खाया जाता है। च्चे फल अचारों, चटनी व अन्य खाने की चीजों में उपयोग किए जाते हैं। कच्चे फलों की ांको को हल्दी या हल्दी के बिना सुखाया जाता है तथा इसे इसी तरह या पाउडर बनाकर खाने

में स्वाद के लिए मसाले के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत में, यह 'अमचूर' कहलाता है। पके फल डेजर्ट के रूप में ताजे खाए जाते हैं तथा जैम, जैली, शर्बत के रूप में संरक्षित किए जाते हैं। आम का गूदा, अमरस (दूध और चीनी के साथ) तथा अन्य स्फूर्तिदायक पेय भी आम से बनाए जाते हैं। पके आमों के गूदे को सुखाकर ठोस खट्टी मीठी पापड़ी ''आम पापड़'' भी बनाया जा सकता है जिसे नाश्ते के रूप में खाया जा सकता है। आम भारत में एक पवित्र वृक्ष है तथा इसकी पत्तियां सभी हिन्दू धार्मिक अनुष्ठानों में तथा त्यौहारों में एक महत्वपूर्ण वस्तु होती है।

13.2.1.5 प्रवर्धन तथा सुधार

आम को बीज द्वारा अथवा कायिक रूप से प्रवर्धित किया जा सकता है। कलमित (grafted) आम के पौधे बहुत अधिक प्रचलित होते जा रहे हैं क्योंकि वे बीजों से बड़े हुए वृक्षों की तुलना में जल्दी फल देना आरंभ कर देते हैं।

कृष्य आम *मेंजीफेरा इन्डिका* परबहुगुणित (allopolyploid) उत्पत्ति का है जिसे अंतराजातीय (interspecific) संकरण तथा गुणसूत्रों को दोगुना करके उत्पन्न किया गया है। जीन उत्परिवर्तनों (gene mutations) के जरिए चयन ने फसल को नियमित तथा प्रचुर फलदायी; अच्छे स्वाद तथा सुरक्षित रखने, रोगों तथा कीटों से प्रतिरोधकता, तथा अन्य वांछित गुणों में सुधार करने में सहायता की है। फल चुनने में आसानी के लिए बौनी प्रवृत्ति तथा मौसम में विस्तारित फल देना अन्य गुण है जिन्हें उत्परिवर्तनों के जरिए चयनित किया गया है।

13.2.2 केला अथवा स्वर्ग का वृक्ष

वानस्पतिक नाम : *म्यूजा पैराडिज़िएका* लिन. किस्म *सैपाइन्टम* (लिन.) कुंज़े
(*Musa paradisiaca* Linn. var. *sapientum* (Linn.) Kunze)
(पर्यायवाची नामः *म्यूजा सैपाइन्टम* लिन.) (केला.) *म्यूजा पैराडिज़िएका* (प्लैन्टिन)
कुल : मूसेसी (Musaceae)
सामान्य नामः केला
2n = 22, 33, 44

केला ट्रापिकल फलों में सबसे महत्वपूर्ण है। जब विश्व के कुल फल उत्पादन की तुलना की जाती है तो अंगूर प्रथम स्थान पर आते हैं व उसके बाद केले आते हैं। कृष्य केलों को मोटे तौर पर दो समूहों में बांटा जा सकता है। कोचर के अनुसार (इकॉनामिक बॉटनी इन द ट्रॉपिक्स), मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, 1998) ''वे फल जो डेज़र्ट के रूप में बिना पकाए हुए खाए जाते हैं वे केला कहलाते हैं जबकि अधिक मांडयुक्त प्रकार के फल जिनका स्वाद अधिक अच्छा नहीं होता है तथा जिन्हें सब्जी के रूप में खाए जाने के लिए पकाने की आवश्यकता होती है उन्हें प्लैन्टिन (plantains) कहते हैं।

दूसरी तरफ सल्धाना (Saldhana) के अनुसार (फ्लोरा ऑफ हसन डिस्ट्रिक्ट, कर्नाटका, एमरिन्ड पब्लिशिंग कं. 1976) दक्षिण भारत में मांडयुक्त पका कर खाया जाने वाला केला *मूसा* कहलाता है तथा मीठे प्रकार का ''प्लैन्टिन'' कहलाता है।

13.2.2.1 उत्पत्ति तथा वितरण

हालांकि कृष्य केले *मूसा पैराडिज़िएका* अथवा *मूसा सैपाइन्टम* कहलाता है, वे वास्तव में संकर हैं जो दो वन्य जातियों *मूसा एकूमिनेटा (Musa acuminata)* व *मूसा बाल्बीसिआना (M. balbisiana)* के बीच संकर से उत्पन्न होता है। ये वन्य जातियां द्विगुणित होती है तथा बड़े बीज उत्पन्न करती हैं। फल खाने योग्य नहीं होता है। कृष्य केले द्विगुणित होते हैं। असंख्य कृष्य प्रकारें मूल पूर्वजों या संकरों की उत्परिवर्ती हैं जिन्हें मनुष्य द्वारा सदियों से संवर्धित किया जाता रहा है। यह मानव को ज्ञात सबसे प्राचीन फलों में से एक है तथा इसलिए इसकी उत्पत्ति के बारे में निश्चितता से कुछ नहीं कहा जा सकता है। केला संभवतः, दक्षिण पूर्व एशिया के नम उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में उत्तर पूर्व भारत, म्यामार (बर्मा), थाईलैण्ड अथवा इंडोनेशिया के पहाड़ी क्षेत्रों में कहीं हुआ है। यह अब पूरे विश्व में फैल गया है तथा खेती के प्रमुख क्षेत्र अफ्रीका, एशिया, अमरीका तथा ऑस्ट्रेलिया के उपमहाद्वीपों में है।

13.2.2.2 पारिस्थितिकी

केला सबसे अच्छी तरह से नम उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में उगता है जहां फलों के गुच्छे सबसे जल्दी उत्पन्न होते हैं। पर्याप्त मासिक वर्षा 100 मि.मी. तथा 150 मि.मी. के बीच तथा इष्टतम तापमान 25° तथा 30° सेल्सियस के बीच महत्वपूर्ण आवश्यकता हैं।

13.2.2.3 वानस्पतिकी

केले का पौधा एक विशाल बहुवर्षी शाक है। प्राथमिक जड़ें जल्दी ही मर जाती हैं तथा अपस्थानिक जड़ों द्वारा जगह ले ली जाती है जो सघन सतही जाल बनाती हैं। वास्तविक तना भूमिगत प्रकंद (rhizome) या घनकंद (corm) होता है जो "कूट तने" (pseudostem) से पुष्पन के समय उगता है। घनकंद में बहुत ही छोटे पर्व (internode)होते हैं तथा ये बहुत पास-2 स्थित पर्णदागों (leaf scars) से ढंका या घिरा रहता है। तथाकथित कायिक तना वास्तव में अवास्तविक या कूट तना होता है जो अंतरावलित (interfolded) तथा कस कर मुड़े हुए पर्ण आच्छदों के द्वारा बनता है जो घनकंद से उगते हैं। पत्तियां सर्पिल रूप से व्यवस्थित व हल्की हरी होती हैं तथा कूट तने के शीर्ष पर एक मुकुट के रूप में दिखाई पड़ती हैं (चित्र 13.2)। त्रिगुणितों की सामान्यत: अधिक लंबी पत्तियां होती हैं।

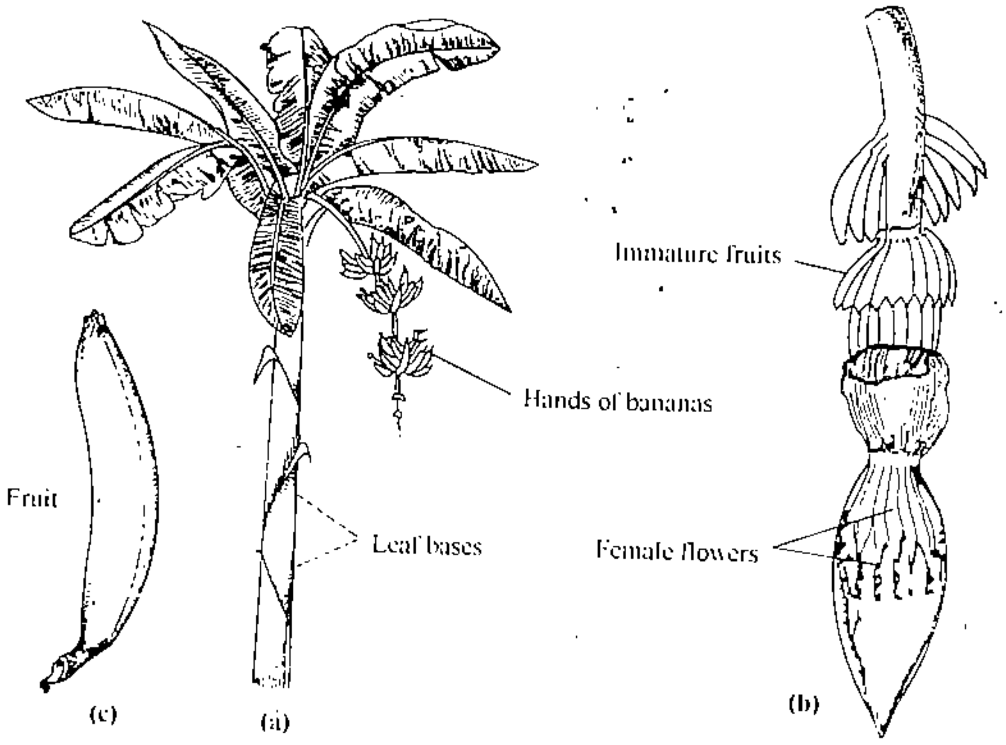

चित्र 13.2 : बहुवर्षी शाक - केला *मूसा पैराडिज़िका* (a) संपूर्ण पादप (b) मादा पुष्पों के गुच्छों को क्रमवार रूप से खुलते हुए दर्शाता हुआ पुष्पक्रम (c) फल

पत्तियां सरल होती हैं तथा सामान्यत: 20-50 पत्तियां पुष्पक्रम के बनने से पहले उग जाती हैं। इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि गुच्छे के बनने के लिए प्रकाश संश्लेषण की दर काफी उच्च है। गुच्छे के पकने के बाद, प्ररोह मर जाता है, परंतु पादप पार्श्व प्ररोहों को उत्पन्न करके बढ़ता रहता है।

पुष्पक्रम घनकंद से उगता है तथा कूट तने में से बढ़ने के बाद मुकुट में से निकलता है। यह जटिल स्पाइक / कणिश होता है। असीमाक्षी पुष्पक्रम में पुष्प क्रमवार परतों में व्यवस्थित रहते हैं। पुष्पों का प्रत्येक गुच्छा चमकीले रंग के बड़े हरे या लाल सहपत्र द्वारा अंतरित (subtended) रहता है। जैसे-जैसे पुष्प परिपक्व होते जाते हैं यह सहपत्र पीछे की ओर मुड़ता जाता है और

अंततः गिर जाता है। अनेक पुष्प गुच्छ अपने अंतरित सहपत्रों के साथ मजबूत वृंतक (peduncle) पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहते हैं। प्रत्येक गुच्छे में 12-20 पुष्प होते हैं। लगभग 5-15 गुच्छे पुष्पक्रम के आधार के निकट मादा पुष्पों को धारण किए रहते हैं जबकि वे जो पुष्पक्रम के शीर्ष की ओर होते हैं उनमें नर पुष्प होते हैं (चित्र 13.3)। उभरता हुआ पुष्पक्रम सीधा होता है परंतु जब यह परिपक्व हो जाता है तब यह गुरूत्वानुवर्ती अभिक्रिया (geotropic reaction) व अपने भार के कारण उलटा लटक जाता है।

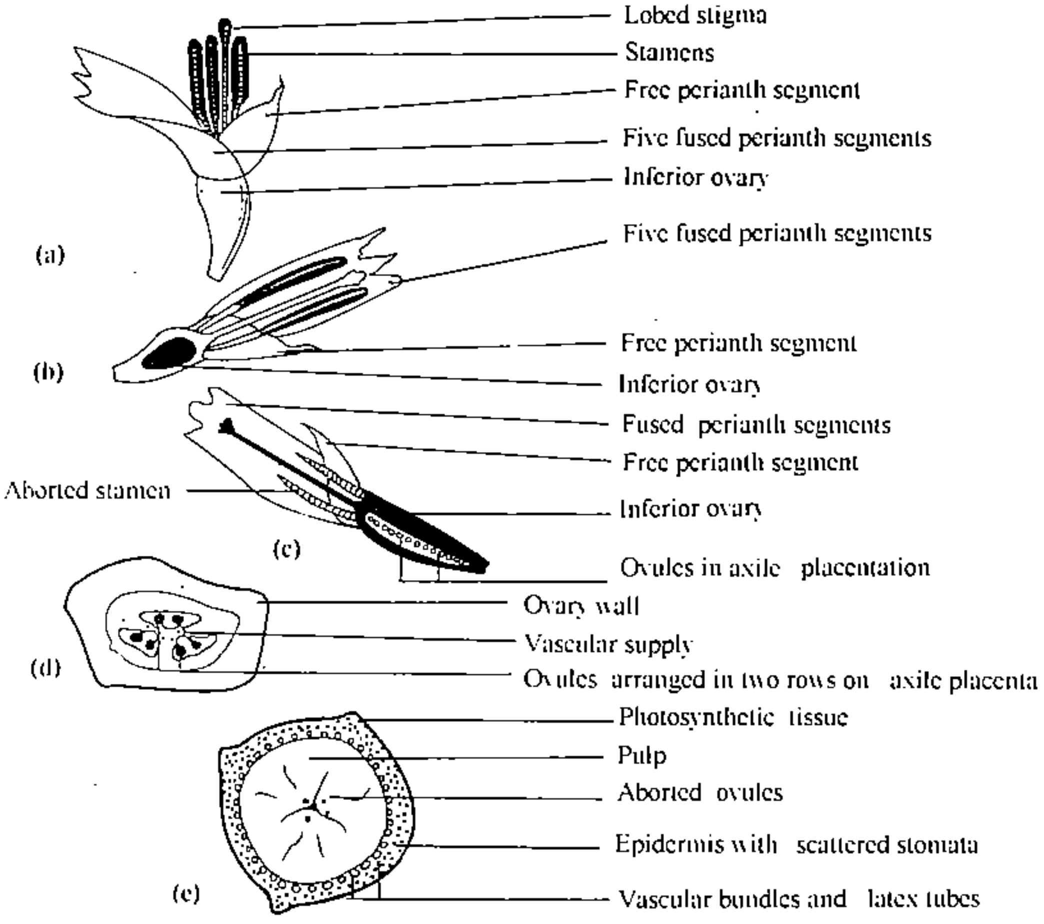

चित्र 13.3: केला का पुष्पीय संगठन (a) अलग हुए परिदलपुंज (perianth) के साथ द्विलिंगी पादप (b) उभयलिंगी पुष्प से गुजरता हुआ अनुदैर्ध्य काट (c) मादा पुष्प से गुजरता हुआ अनुदैर्ध्य काट (d) तरुण फल की अनुप्रस्थ काट (e) वयस्क फल की अनुप्रस्थ काट

फल एक सरस फल (Berry) है तथा यह सामान्यत: अनिषेकजनन (parthenocarpy) के द्वारा विकसित होता है। जब फल परिपक्व हो जाता है तब असंख्य बीजाण्ड अपभृष्ट / नष्ट हो जाते हैं तथा परिपक्व फल के मध्य भाग में काले या भूरे कणों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। फलों के गुच्छे 'हत्था' (hands) या 'छत्ता' (comb) भी कहलाते हैं तथा इनमें प्रत्येक केला अंगुलि (finger) कहलाता है।

13.2.2.4 उपयोग

केला एक बहुउपयोगी फल है। कच्चे फल को सब्जी के रूप में पकाया जा सकता है या इसके टुकड़े करके सुखाकर चिप्स बनाकर अथवा बेसन में लपेट कर तला जा सकता है। पके फलों को नाश्ते के रूप में या डेजर्ट के रूप में खाया जा सकता है। एक पेय, बनाना बियर (Banana beer), दुनिया के विभिन्न भागों में बनाया जाता है। पके फलों का उपयोग केले का पाउडर बनाने में किया जाता है जिसका उपयोग मिष्ठान्न बनाने में किया जाता है। पुष्पक्रम, खासतौर पर अंतस्थ भाग जो नर

पुष्पों को धारण किए रहता है उसका उपयोग सब्जी के रूप में होता है। पुष्पन तथा फल देने के बाद मांसल तने को भी सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। हरी पत्तियां थाली का काम करती हैं। पादप का उपयोग कुछ समारोहों जैसे शादी के अवसर पर भी किया जाता है। फल के पकने का पता पीली त्वचा तथा भूरे चकत्तों (धब्बेदार) से चलता है। केला शर्करा, वसा, प्रोटीन्स से समृद्ध होने के कारण एक बेहतरीन खाद्य है।

13.2.2.5 प्रवर्धन तथा संवर्द्धन तकनीकें (cultural practices)

केले कायिक तरीके से विभिन्न प्रकार के पार्श्व प्ररोहों या अंत: भूस्तारी (suckers) अथवा घनकंद (corm) के टुकड़ों से प्रवर्धित होता है। केलों की कटाई तभी कर ली जाती है जब वे हरे होते हैं तथा उन्हें कृत्रिम तरीकों से रसायनों जैसे इथीन (या इथाइलीन) अथवा इथाइन (एसिटेलीन) के द्वारा, अथवा धुंऐं में रखकर पकाया जाता है।

13.2.3 अन्नानास (Pineapple)

वानस्पति नाम : *अनानास कोमोसस* (लिन.) मेर (*Ananas comosus* (L.) Merr.)
कुल : ब्रोमीलिएसी (Bromeliaceae)
सामान्य नाम : अन्नानास
n = 25

हवाई के अन्नानास उद्योग का आरम्भ 1896 में चयनित अंग्रेजी पुर: स्थापनों से हुआ जो आस्ट्रेलिया से आए थे। आज हवाई विश्व के उत्पादन के तीसरे भाग से कुछ अधिक ही लगभग 118 करोड़ टन अन्नानास उत्पन्न कर रहा है।

अन्नानास (पाइनएपल) एक ऐसा पादप है जो न तो ताड़ (पाइन) है ना हीं सेब (एपल) है, परंतु स्वादिष्ट फल उत्पन्न करता है। फल की ताड़ के शंकु से समानता के कारण स्पेनवासी इसे पाइनएपल / अनानास कहते थे। इस पादप के लिए वंश नाम *अनानास* की उत्पत्ति दक्षिण अमरीकी "तूपी इंडियन" (Tupi Indian) नाम 'नाना' से हुई है।

13.2.3.1 उत्पत्ति तथा वितरण

अनानास दक्षिण अमरीका का वासी है। यह अन्य उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में भी फैल गया तथा काफी महत्वपूर्ण फल की फसल बन गया। अब इसकी खेती भारत, फिलिस्तीन, मेडागास्कर, थाईलैण्ड, मॉरीशस, मलेशिया, हवाई, ब्राजील पश्चिम अफ्रीका, दक्षिण अमरीका, अर्जेन्टीना, ऑस्ट्रेलिया तथा अन्य उष्ण कटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में होती है। यूरोप में अन्नानास तप्त पौधालयों (green houses) में भी उगाया जाता है। बीजरहितता के लिए उत्परिवर्तन के फलस्वरूप बड़े आकार, सरसता, मिठास, तथा बेहतर स्वाद के लिए जातियों का चयन संभव हुआ।

13.2.3.2 पारिस्थितिकी

अन्नानास निम्न ऊँचाइयों पर भूमध्यरेखा के 25° उत्तर तथा दक्षिण के बीच उगाये जाते हैं। वे सूखे की स्थिति को झेल / सह लेते हैं क्योंकि उनमें विशेष जल संग्रही कोशिकाएं पाई जाती हैं। पादप में मरूद्भिदी (xeromorphic) गुण पाए जाते हैं तथा वृद्धि के लिए इष्टतम तापमान 25° तथा 32° सेल्सियस के बीच होता है। यदि अन्नानासों को अपेक्षाकृत ठंडे स्थानों पर उगाया जाए, तो फल अम्लीय / खट्टा होगा तथा उसमें शर्करा तत्व कम होंगे। 100-150 से.मी. वर्षा तथा उच्च नमता महत्वपूर्ण होते हैं।

फसल को विभिन्न प्रकार की मिट्टियों पर उगाया जा सकता है। परंतु अच्छी जलनिकासी वाली, हल्की सी अम्लीय, बालुई दोमट मिट्टी वांछित होती है। अन्नानास पाला (frost) नहीं सह पाते हैं। केन्या में ये 1400-1800 मी. की ऊँचाई पर उगते हैं।

13.2.3.3 वानस्पतिकी

अन्नानास का पादप बहुवर्षी शाक होता है जिसमें प्रमुख तना 1 मी. की ऊँचाई तक का होता है जिस पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित नुकीले शीर्षों तथा सतत् या काँटेदार किनारों वाली कड़ी पत्तियों का रोज़ेट (rosette) होता है। अंतस्थ पुष्पक्रम फल में विकसित हो जाता है तथा वृद्धि फलन (fruiting) के बाद भी अक्षीय कलिकाओं के शाखाओं में विकसित हो जाने के कारण जारी रहती है।

पादप में छिछला अक्षीय अपस्थानिक जड़ तंत्र होता है। इसके अतिरिक्त, जड़ें पत्तियों के अक्षों में भी विकसित होती हैं तथा ये तने को आधार के निकट से घेरे रहती हैं। इस प्रकार से पादप शुष्क

परिस्थितियों में भी नमी प्राप्त करने में सक्षम होता है। तना मांड का संचय करता है जो बाद में शर्करा में बदल जाता है तथा विकासशील फल में स्थानांतरित हो जाता है। प्रवर्धन अंत:भूस्तारी (sucker), कलम तथा बीजों के द्वारा भी होता है।

पादप संहत अंतस्थ पुष्पक्रम उत्पन्न करता है जिसमें 100-200 सर्पिल रूप से व्यवस्थित पुष्प होते हैं। अधिकांश कृष्य अन्नानास फल का अनिषेचकी (parthenocarpic) विकास दर्शाते हैं।

फल वास्तव में फूला हुआ पुष्पक्रम या युक्तांडप (syncarp) अथवा संग्रथित फल (multiple fruit) होता है। पुष्प क्रम का अक्ष तथा शाखाएं तथा संग्रथित फल मॉसल तथा गूदेदार होते हैं। फल बेलनाकार व बड़ा होता है तथा इसके शीर्ष पर पत्तियों का मुकुट होता है (चित्र 13.4)। ये पुष्पक्रम के आगे तक अक्ष की वृद्धि के द्वारा उगती हैं। जब फल परिपक्व हो जाता है तो पत्तियों के मुकुट की वृद्धि रुक जाती है तथा यह सुषुप्त हो जाता है। इस मुकुट का उपयोग कायिक प्रवर्धन के लिए किया जा सकता है। पुष्पक्रम को फल के रूप में परिपक्व होने में लगभग 5-6 महीने लग जाते हैं।

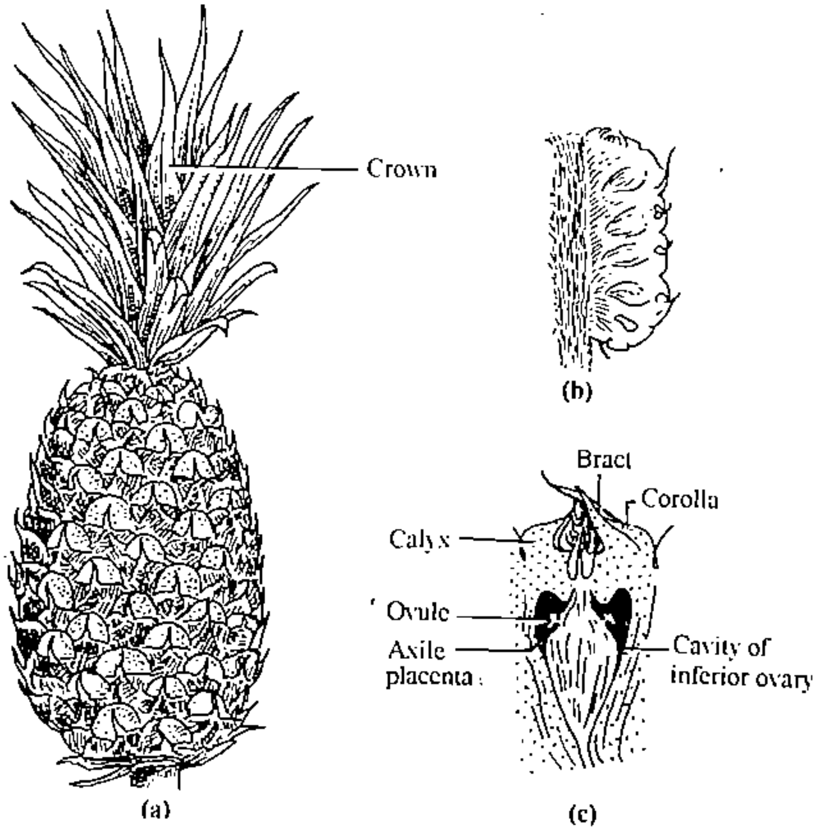

चित्र 13.4 : *अनानास कोमोसस* (a) अंतस्थ पत्तियों के मुकुट के साथ अन्नानास का फल (b) कुछ मॉसल पुष्पों को दर्शाता हुआ अनुदैर्घ्य काट (c) अनुदैर्घ्य काट में एकल पुष्प परिदलपुंज तथा अधःस्थ अंडाशय (inferior ovary) को दर्शाते हुए।

फल का आकार, रंग, सरसता, मिठास तथा स्वाद किस्मों के साथ बदलता रहता है। कृष्य अन्नानास बीजरहित तथा अनिषेचकी होते हैं क्योंकि बीजांड फल के विकास के दौरान पूर्वपात / निष्फल (abort) हो जाते हैं।

13.2.3.4 उपयोग

अन्नानास के फलों को या तो ताजा खाया जाता है अथवा सिरप में संरक्षित कर लिया जाता है तथा डेज़र्ट के रूप में खाया जाता है। फल का उपयोग जैम, अन्नानास का रस या शर्बत बनाने में भी

किया जाता है। जो स्फूर्तिदायक पेय के रूप में पिए जाते हैं। अन्नानास को अन्य फलों के साथ मिलाकर फल सलाद या मिश्रित फल / कॉकटेल बनाया जाता है।

पत्तियों में सफेद रेशमी तंतु होता है। जिसका उपयोग महीन वस्त्र (फिलिस्तीन तथा ताईवान में पाइना वस्त्र कहलाता है) बनाने में तथा जहाजी रस्से (cordage) बनाने में किया जाता है। अन्नानास की कुछ किस्में जिनमें चकत्तेदार पत्तियां होती हैं उन्हें सजावटी पौधों के रूप में उगाया जाता है।

13.2.3.5 खेती तथा संवर्धन तकनीकें

अन्नानास में पुष्पन तथा फलन को वृद्धि हार्मोन्स नैफ्थेलीन एसीटिक अम्ल या उसके सोडियम लवण, इथाइलीन तथा एसिटिलीन के उपयोग के द्वारा क्रमिक रूप से उद्दीपित किया जा सकता है तथा अंतस्थ पत्तियों के गुच्छे में एक ग्राम कणीय कैल्सियम कार्बाइड रखकर उत्पन्न किया जा सकता है। फलों को हाथ से तोड़ा जाता है तथा या तो ऐसे ही इस्तेमाल के लिए बेच दिया जाता है अथवा कारखानों में विभिन्न उत्पादों के रूप में संसाधित करने के लिए भेज दिया जाता है।

13.2.4 पपीता (Papaya or paw paw)

वानस्पतिक नाम : *कैरिका पपाया* लिन. (*Carica papaya* Linn.)
कुल : कैरीकेसी
सामान्य नाम : पपीता
n = 9

पपीता सबसे अधिक उगाये जाने वाले उष्ण कटिबंधी फलों में से एक है। इन्हें अधिकांशतः छोटे बगीचों में अथवा पृथक वृक्षों के रूप में स्थानीय उपयोग के लिए उगाया जाता है।

13.2.4.1 उत्पत्ति तथा वितरण

कैरिका पपाया वन्य स्थिति में नहीं पाया जाता है। इसकी उत्पत्ति संभवतः दक्षिणी मैक्सिको में हुई थी तथा यह सभी उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण देशों में फैल गया।

13.2.4.2 पारिस्थितिकी

पपीता स्थानीय रूप से अनुकूलित होते हैं परंतु विस्तृत रूप से फैले हुए हैं। वे भूमध्यरेखीय उष्णकटिबंधी क्षेत्रों से शीतोष्ण अक्षांशों तक उगाये जाते हैं। उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में वृद्धि तेज होती है तथा वृक्ष छह महीने के भीतर ही पुष्पित होने लगते हैं तथा नौ महीने में ही फल देने लगते हैं। वे पाले के लिए संवेदनशील होते हैं। बालुई मिट्टी पपीते की खेती के लिए श्रेष्ठ होती है, परंतु फसल को लगातार एक ही मिट्टी में नहीं उगाना चाहिए।

13.2.4.3 वानस्पतिकी

पपीता का पादप अल्प-जीवी, जल्दी बढ़ने वाला मृदु काष्ठ (soft wood) का छोटा वृक्ष होता है। यह सामान्यतः अशाखित होता है। जड़ें मुलायम होती हैं तथा आसानी से क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। पादप के सभी भागों में लैटेक्स (latex) ग्रंथियां पाई जाती हैं। सीधे बेलनाकार तने पर स्पष्ट पर्णदाग (leaf scars) होते हैं। इसमें मृदु, स्पंजी, तंतुमय ऊतक होता है तथा यह मज्जा (pith) के क्षेत्र में सामान्यतः खोखला होता है। तना, बड़ी लंबे वृंत वाली, हस्ताकार रूप से पालियुक्त पत्तियों के मुकुट को धारण करता है जो सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहती हैं। पपीते के पुष्प कक्षीय पुष्पक्रमों में उत्पन्न होते हैं। पेड़ सामान्यतः एकलिंगाश्रयी (dioecious) होते हैं, तथा या तो नर अथवा मादा पुष्प उत्पन्न करते हैं। परन्तु कभी-कभी द्विलिंगी पुष्प भी बन जाते हैं। उभयलिंगी पेड़ों में, नर तथा मादा पुष्प दोनों उत्पन्न होते हैं। मादा वृक्षों पर, पुष्प छोटे से वृंतयुक्त सामान्यतः एकल (परन्तु कभी-कभी कुछ पुष्पीय ससीमाक्षों (cyme) में होते हैं) तथा फलों में क्रमिक रूप से विकसित होते हैं। नर पुष्प नर

वृक्षों पर बड़े लटके हुए अक्षीय यौगिक असीमाक्षों (axillary panicles) में होते हैं। उभयलिंगी वृक्षों में पुष्पक्रम परिवर्तनशील होता है, यहां तक कि मादा पुष्प भी लंबे लटके हुए पुष्पावलि वृंतों (peduncles) में उग जाते हैं (चित्र 13.5)।

पुष्प सुवासित, क्रीमी सफेद या पीले होते हैं। ये पंचभागी (pentamerous), त्रिज्या सममित (actinomorphic), तथा संयुक्त दली (gamopetalous) होते हैं। नर पुष्पों में 10 पुंकेसर दो घेरों में होते हैं। मादा पुष्प में तीन से पंचअंडपी (tri to pentacarpellary), युक्तांडपी (syncarpous) जायांग होता है जिसमें परिधिय बीजान्डन्यास (parietal placentation) दर्शाता हुआ ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय (superior ovary) होता है।

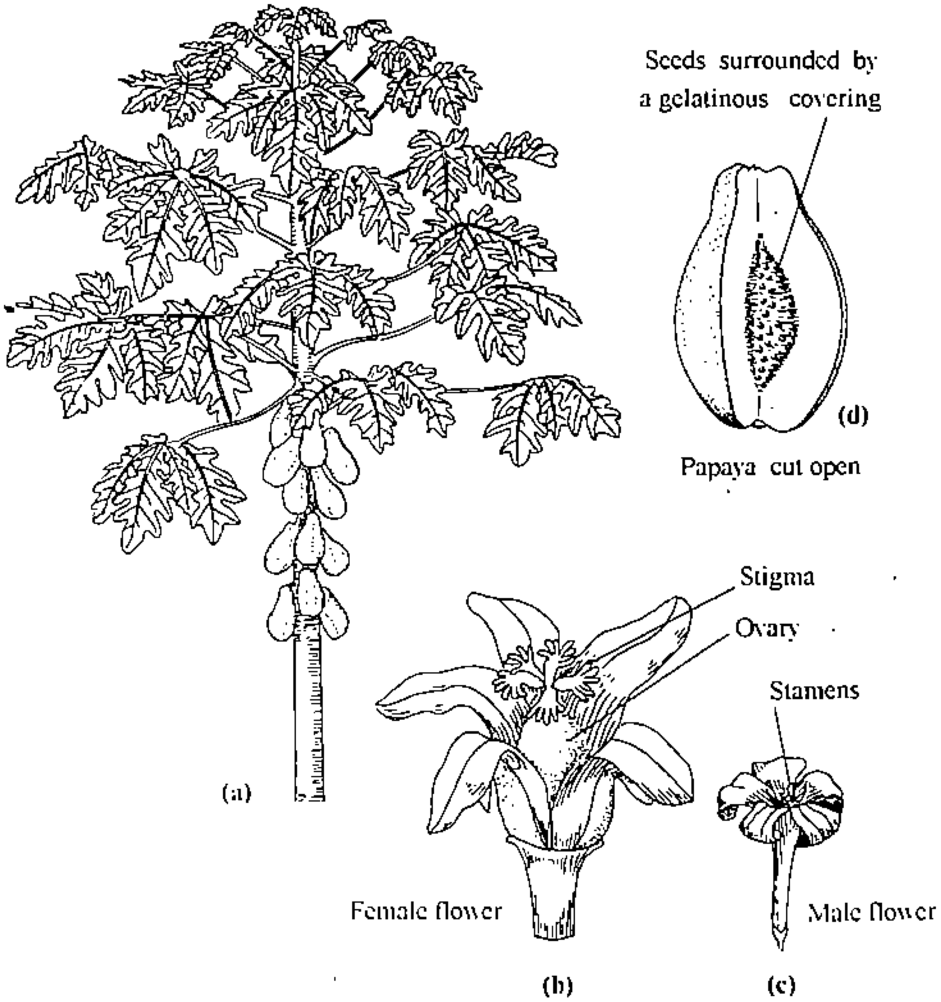

चित्र 13.5 : *कैरिका पपाया* (a) पपीता का वृक्ष (b) मादा पुष्प (c) नर पुष्प (d) फल (कट कर खुला हुआ)

फल मांसल सरस फल बेरी (berry) होता है। इसकी आकृति तथा आकार बदलता रहता है, तथा साथ ही इसका रंग (सामान्यत: पीला, नारंगी), तंतु विन्यास (texture) तथा खाद्ययोग्य गूदे का स्वाद भी बदलता रहता है। लगभग बीज रहित किस्मों में बीज कम हो सकते हैं अथवा वे असंख्य हो सकते हैं जो खोखले फल की गुहा को भरे रहते हैं। ये श्लेष्मीय, काले या हरे से होते हैं।

13.2.4.4 उपयोग

कच्चे (हरे) फलों को सब्जी की तरह पकाया जाता है। पके ताजे फल नाश्ते के रूप में अथवा डेज़र्ट (भोजनोपरांत मिठाई) के रूप में अथवा फल सलाद के रूप में सभी उष्ण कटिबंधी देशों में खाए जाते हैं। फल मीठे, कस्तूरी गंध युक्त (musky) होते हैं। तरुण अपरिपक्व फलों से प्राप्त लैटेक्स को सुखा कर पपैन (papain) के रूप में उपयोग किया जाता है। यह प्रोटीन को पचाने

वाले एन्जाइम लिए होता है जिनका कार्य पेप्सिन (pepsin) के समान होता है। तरुण फल या उससे निर्मित पापैन को मीट / माँस को मुलायम करने में उपयोग किया जाता है। इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों व च्यूइंग गम तथा पाचन संबन्धी रोगों की दवा के निर्माण में भी होता है। पपीते में लगभग 2% पेक्टिन होता है तथा इसको जैम तथा जैली बनाने के लिए निकाल लिया जाता है।

13.2.4.5 खेती तथा कटाई

पपीते को बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। फलों को अधपकी अवस्था में काट लिया जाता है तथा वे 3–4 दिन में पक जाते हैं। कड़े फल जो गाजर जैसे सख्त होते हैं उन्हें सामान्यत: संसाधित (processed) अथवा डिब्बा बंद (canned) कर दिया जाता है।

अनेकों संकर किस्मों की देश के विभिन्न भागों में खेती की जाती है।

13.2.5 अमरूद (The Guava)

वानस्पतिक नाम : *सिडियम गुआजावा* लिन (*Psidium guajava* Linn.)
कुल : मर्टेसी
सामान्य नाम : अमरूद
n = 11

अमरूद को " उष्णकटिबंधी देशों का सेब" अथवा "गरीब आदमी का सेब" कहा जाता है। इसको कुछ किताबों में "भारत में उगाये जाने वाले कम महत्व के फल" के रूप में सूचीबद्ध किया गया है। फल विटामिन सी का अच्छा स्रोत है तथा अपने स्वाद तथा सुगंध के कारण पसंद किया जाता है।

13.2.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

इंकास (Incas) के अनुसार, अमरूद (*सिडियम गुआजावा*) की उत्पत्ति उष्ण कटिबंधी ट्रापिकल अमरीका में हुई थी तथा अब यह सभी ऊष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में फैल गया है। यह अधिकांशत: स्थानीय उपयोग के लिए उगाया जाता है। भारत में, अमरूद व्यापारिक स्तर पर अनेक राज्यों में उगाया जाता है तथा इलाहाबादी किस्में अपने विशिष्ट स्वाद के लिए मशहूर हैं। कैलीफोर्निया तथा फ्लोरिडा (संयुक्त राष्ट्र अमरीका), ब्राजील, ब्रिटिश गुआना, वेस्ट इंडीज तथा फिलिस्तीन में भी इसकी खेती की जाती है। यह वन्य रूप से क्यूबा में उगता है।

13.2.5.2 पारिस्थितिकी

वृक्ष कठोर व मजबूत होता है तथा विभिन्न प्रकार की जलवायु तथा मिट्टी की स्थितियों के लिए अनुकूलित होता है।

13.2.5.3 वानस्पतिकी

अमरूद का पादप छिछली जड़ों वाला बड़ा झाड़ (shrub) या छोटा वृक्ष होता है। शाखाएं भूमि के निकट से निकलती हैं तथा बाहर की ओर फैलती हैं। पत्तियां विपरीत, सरल, छोटे से वृंत युक्त तथा अंडाकार से दीर्घवृत्तीय होती हैं।

पुष्प अक्षीय या तो एकल अथवा ससीमाक्षी गुच्छों (cymose clusters) में होते हैं। प्रत्येक गुच्छे में 2–3 पुष्प होते हैं। ये सफेद, त्रिज्यासममित, द्विलिंगी, चतुर्भागी या पंचभागी तथा जायांगोपरिक

(epigynous) होते हैं। जायांगोपरिक डिस्क पर असंख्य पुंकेसर संकेन्द्री (concentric) वलयों में होते हैं। युक्तांडपी जायांग, 4–5 पालियुक्त अंडाशय के साथ अनेकों बीजांड धारण किए रहता है।

फल सरस फल / बेरी होता है जो आकार, आकृति, तंतु विन्यास, सरसता तथा खाद्य गूदे की मिठास में भिन्न-भिन्न होता है। इसकी त्वचा या तो हरे रंग के विभिन्न शेड्स लिए होती है अथवा यह पीली, क्रीम या लगभग सफेद होती है। माँसल खाने योग्य भाग अथवा मध्य फलभित्ति सफेद, पीली, गुलाबी या लाल हो सकती है। इसमें असंख्य दृढ़ कोशिकाएं तथा कठोर अस्थिल (bony) बीज पाए जाते हैं। फल में किरीट / मुकुट होता है जो चिरस्थायी वाह्य दलपुंज (persistent calyx) द्वारा बनता है जिसमें सूखे हुए पुंकेसर भी उपस्थित हो सकते हैं (चित्र 13.6)।

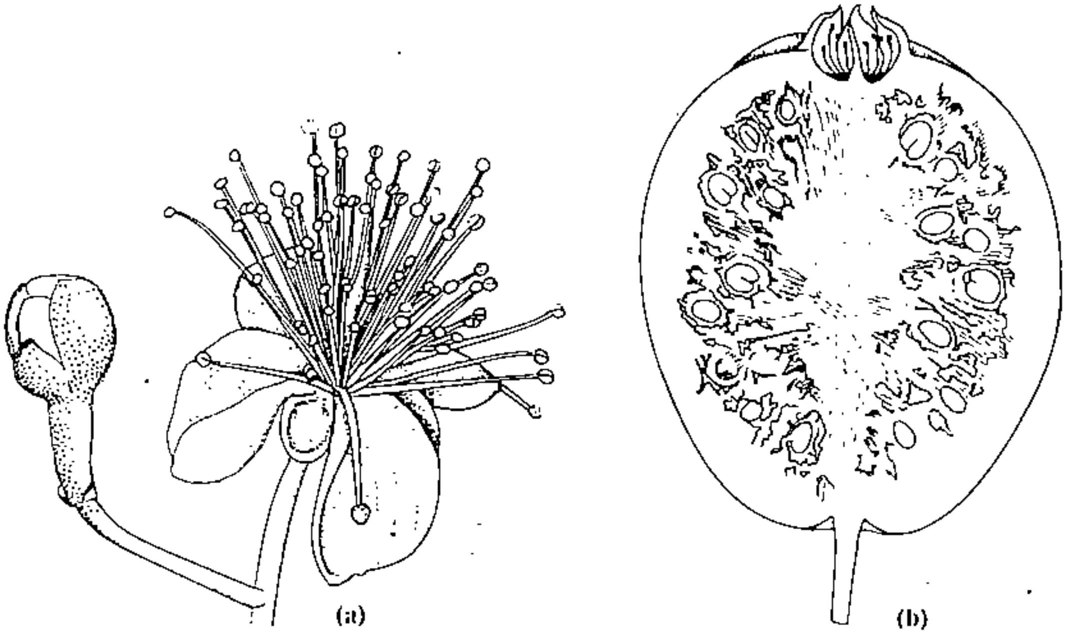

चित्र 13.6 : *सिडियम गुआजावा* (a) अमरूद का फूल (b) अमरूद के फल की अनुदैर्घ्य काट

13.2.5.4 उपयोग

पका हुआ अमरूद रसदार, मीठा, सुगंधयुक्त, तथा बहुत अच्छे स्वाद का होता है। इसमें अम्ल, शर्करा तथा प्रोटीन का अच्छा मिश्रण पाया जाता है। फलों को या तो ताजा खाया जाता है अथवा फलों की सलाद में अन्य फलों के साथ मिलाकर खाया जाता है। फलों का उपयोग जैम, जैली, सुस्वादु पेय (nectar) तथा फलों का रस बनाने में भी किया जाता है। अमरूद खासतौर पर विटामिन सी से समृद्ध होते हैं। अमरूद विटामिन ए, लौह तत्व, कैल्सियम तथा फॉस्फोरस के भी अच्छे स्रोत हैं।

13.2.5.5 प्रवर्धन

अमरूद को बीज से उगाया जा सकता है परन्तु इससे बहुत अधिक विविधता आ जाती है। खेती में फलों की वांछित किस्मों को प्राप्त करने के लिए कायिक प्रवर्धन किया जाता है।

13.2.6 अंजीर (The Fig)

वानस्पतिक नाम : *फाइकस केरिका* लिन. (*Ficus carica* Linn.)

कुल : मोरेसी

सामान्य नाम : अंजीर

n = 13

अंजीर वंश *फाइकस* की कुछ सौ जातियों में से एक है। हम लोग बरगद, *फाइकस बेंगालेंसिस (ficus benghalensis)*, पीपल, (*फाइकस रिलिजिओसा* (*F. religiosa*), क्लस्टर अंजीर (*फाइकस ग्लोमेरेटा* [*F. glomerata*] तथा इंडियन रबर वृक्ष (*फाइकस इलेस्टिका* (*F. elastica*) से परिचित हैं। सामान्य अंजीर की खेती खाद्य फलों के लिए की जाती है।

13.2.6.1 उत्पत्ति तथा वितरण

फाइकस केरिका की उत्पत्ति एशिया माइनर में हुई थी तथा यह भूमध्य क्षेत्र में फैल गया। इसकी खेती प्राचीन काल में मिस्त्र में होती थी। इसका जिक्र बाइबल में भी किया गया। अब इसकी खेती टर्की स्पेन, पुर्तगाल, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, चिली, अरब देशों, ईरान, भारत, चीन तथा जापान में की जाती है। भारत में अंजीर उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, आंध्रप्रदेश तथा महाराष्ट्र में उगाई जाती है।

13.2.6.2 पारिस्थितिकी

अंजीर के ततैये (wasps) पर-परागण तथा उसके बाद फल के विकास के लिए आवश्यक होते हैं। अंजीर के ततैयों की जाति अंजीर की किसी जाति विशेष के लिए विशिष्ट होती है। अत: जब किसी नए क्षेत्र में अंजीर की खेती की जाए तो विशिष्ट ततैयों की जाति को भी उस क्षेत्र में समावेशित कर देना चाहिए।

13.2.6.3 वानस्पतिकी

अंजीर का पादप छोटा या मध्यम आकार का अक्सर पर्णपाती (deciduous) वृक्ष होता है जिसमें सभी भागों में लैटेक्स होता है। यह 10 मी. की ऊँचाई तक बढ़ता है। पत्तियां बड़ी, चौड़ी अंडाकार या लगभग वुर्तलाकार कमोबेश 3-5 पालियुक्त तथा स्पष्ट तौर पर हस्ताकार रूप से शिरीय होती हैं।

छोटे-छोटे फूल ससीमाक्षी पुष्पक्रमों में उगते हैं तथा ऐसे कुछ पुष्पक्रम एक दूसरे के बिल्कुल समीप उगते हैं तथा एक दूसरे के साथ युग्मित होकर प्यालाकार या नाशपाती के आकार की संरचना बनाते हैं जिसे हाइपैन्थोडियम (hypanthodium) कहते हैं (चित्र 13.7)। यह माँसल खोखली संरचना होती है जिसमें अंर्तबंधित (interlocking) शल्कों वाला संकरा मुख होता है। इस हाइपैन्थोडियम में 3 प्रकार के पुष्प पाए जाते हैं।

i) नर या पुंकेसरी पुष्प

ii) लंबी वर्तिका वाले उर्वर मादा पुष्प

iii) छोटी वर्तिका वाले बंध्य मादा पुष्प

बंध्य पुष्प गॉल (gall) पुष्प भी कहलाते हैं। इन गॉल पुष्पों में, अंजीर की ततैया अपने अंडे देती है जिसके कारण कोई बीजांड नहीं बनता है। वर्तिका छोटी तथा बिना वर्तिकाग्री रोमों के होती हैं।

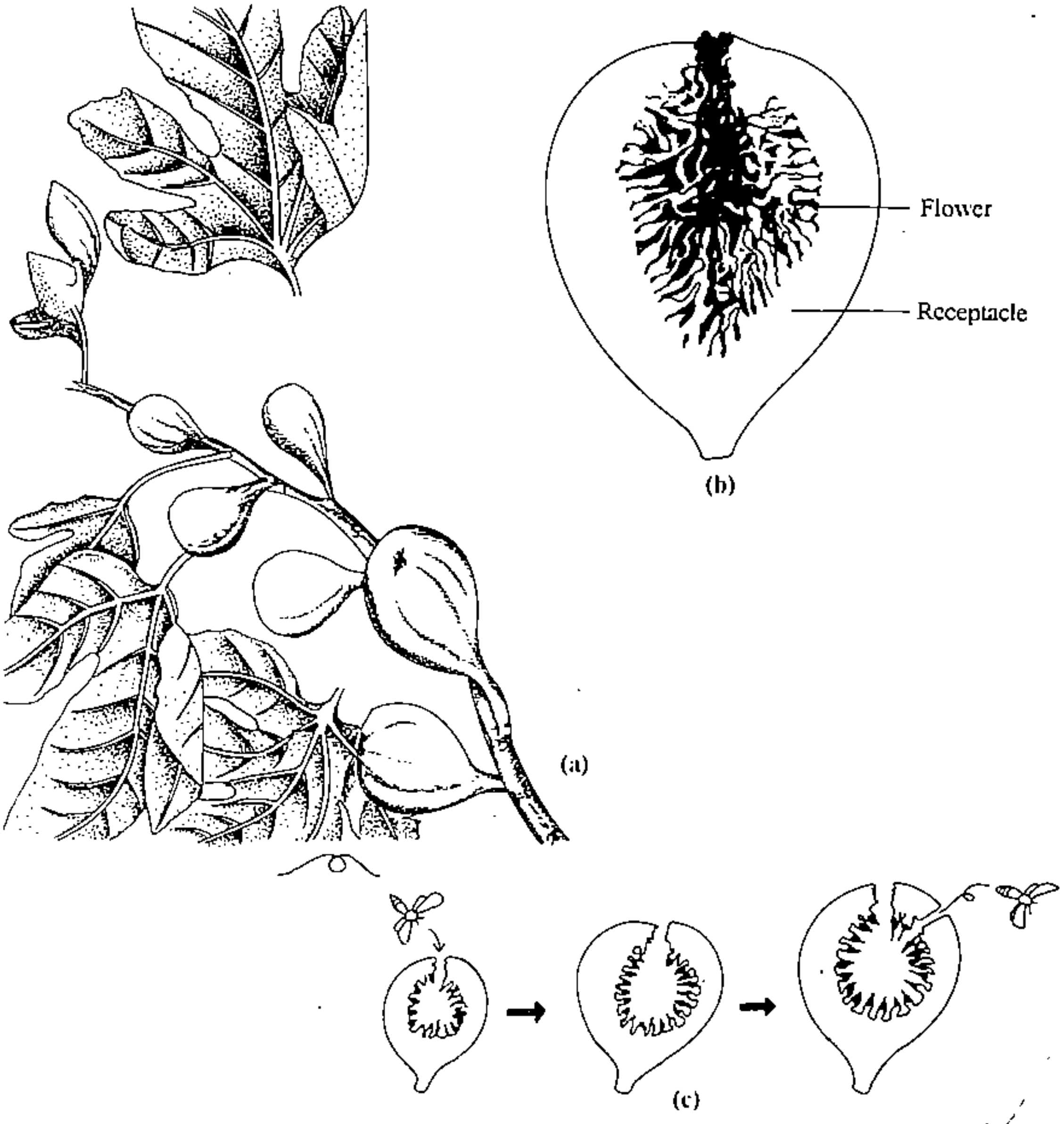

चित्र 13.7 : फाइकस *केरिका* (a) अंजीर के वृक्ष की एक शाखा (b) अंजीर का फल (काटकर खुला हुआ) (c) अंजीर के फल का परागण

फल के विकास के लिए अंजीर के ततैयों द्वारा (*ब्लास्टोफैगा* स्पी.(*Blastophaga* sp.)) पर-परागण आवश्यक है। स्पष्ट तौर पर कहा जाए तो वानस्पतिक दृष्टि से अंजीर को फल नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यह पुष्प से नहीं विकसित होता है। यह मांसल धानियों का अंजीर फल / साइकोनियम (syconium) होता है। जिसमें बड़ी संख्या में पुष्प होते हैं जो हाइपैन्थोडियम बनाते हैं। अत: साइकोनियम संपूर्ण पुष्पीय प्ररोह के फूलने से बनता है जो तने तथा असंख्य ससीमाक्षी पुष्पक्रमों का बना होता है। साइकोनियम नाशपाती के आकार की संरचना होती है। जिसका आकार तथा रंग भिन्न-भिन्न होता है। इसमें उच्च शर्करा तत्व होता है। अंजीर लगभग 3 महीने में परिपक्व होता है तथा उर्वर मादा पुष्पों में विकसित बीजों तथा गॉल पुष्पों में स्थित कीटों के अंडों को लगभग समान अनुपात में लिए रहता है। सामान्य अंजीरों में पुंकेसरी पुष्प नहीं होते हैं अत: पुष्प निषेचन के बिना ही विकसित हो जाता है तथा इसमें बीज नहीं होते हैं। वर्ष में दो फसलें उत्पन्न होती हैं। पहली फसल में फल बड़े तथा अधिक रसीले होते हैं तथा सामान्यत: ताजे ही खाए जाते हैं। वे पुरानी काष्ठ पर उगते हैं। दूसरी फसल के फल पत्तियों के अक्षों में उगते हैं। इन्हें ताजा उपयोग किया जाता है या सुखा लिया जाता है। पेड़ सामान्यत: कलमों द्वारा प्रवर्धित होते हैं।

कैप्रीफिग (caprifig) वन्य अंजीरें होती हैं जो प्राकृतिक रूप से भूमध्यसागरीय क्षेत्र व पश्चिमी एशिया में उगती हैं तथा संभवत: आदि प्रकार को प्रदर्शित करती हैं। हालांकि फल के रूप में इनका व्यवसायिक मूल्य नहीं है, परंतु ये स्मरना फिग (smyrna fig) के विकास के लिए आवश्यक हैं। कैप्रीफिग (caprifig) का जीवनचक्र एक छोटे ततैया (*ब्लास्टोफैगा सीनीस* (*Blastophaga psenes*)) से निकट रूप से संबन्धित है जिसके बारे में आप पहले ही ऊपर के सेक्शन में पढ़ चुके हैं।

स्मरना फिग में पुंकेसरी पुष्प नहीं उगते हैं तदनुसार ये अंजीर कैप्रीफिग से पर-परागण पर निर्भर करती हैं। यह प्रक्रिया कैप्रीभवन (caprification) कहलाती है तथा कृत्रिम रूप से संपन्न की जाती है। कैप्रीफिग की प्रोफिक (profichi) फसल की शाखाओं को स्मरना वृक्ष पर लटका दिया जाता है। ततैये निकलने पर आंशिक रूप से विकसित स्मरना फिग में प्रवेश कर जाते हैं तथा परागण संपन्न हो जाता है। स्मरना फिग का स्वाद उर्वर बीजों की उपस्थिति के कारण अच्छा होता है। वे सबसे महत्वपूर्ण व्यावसायिक अंजीर होती हैं तथा विस्तृत रूप से उगायी जाती हैं।

13.2.6.4 उपयोग

ताजे अंजीर उच्च पोषक मूल्य सहित स्वादिष्ट फल होते हैं। यह शर्करा तथा खनिजों से समृद्ध होते हैं तथा बहुत जल्दी खराब हो जाते हैं। चूंकि फल जल्दी सड़ने लगता है, इसलिए अंजीरों की बड़ी मात्रा को सुखाकर, संरक्षित करके या डिब्बाबंद करके रख लिया जाता है। अंजीर में अनेकों औषधीय गुण होते हैं तथा इसका उपयोग सिरप तथा दस्तकारी (laxatives) दवाएं बनाने में किया जाता है।

13.2.6.5 खेती

अंजीर की चयनित उच्च पैदावार वाली स्वादिष्ट किस्में सामान्यत: कायिक तौर पर कलमों द्वारा लगाई जाती है। खेती के क्षेत्र में फसल के परागण को सुनिश्चित करने के लिए अंजीर की ततैयों को वहां समावेशित कराना आवश्यक होता है।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित फलों के वानस्पतिक नाम तथा कुलों को लिखिए।

फल	वानस्पतिक नाम	कुल
क) केला	....	....
ख) सामान्य अंजीर	....	....
ग) आम	....	....
घ) अन्नानास	....	....

2. नाम बताइए :

क) दो ऐसे फल जो ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय से विकसित होते हैं

i) ....

ii) ....

ख) दो ऐसे फलों के जो अध:स्थि अंडाशय से विकसित होते हैं।

i) ....

ii) ....

ग) दो फल जो एकबीजपत्री पादप हैं :

i) ....

ii) ....

3. कॉलम-I (फल का नाम) को कॉलम-II (महत्वपूर्ण घटक) से मिलाइए।

कॉलम I (फल)	कॉलम II (महत्वपूर्ण घटक)
क) अंजीर	i) पेक्टिन
ख) अमरूद	ii) शर्करा तथा खनिज
ग) आम	iii) मांड / शर्करा तथा विटामिन्स
घ) पपीता	iv) विटामिन सी

4. ऐसे एक फल का नाम बताइए निम्नलिखित गुण जिसकी विशेषता हो:

क) पुष्पन तथा फलन का रासायनिक नियंत्रण
फल का नाम

....

....

ख) *ब्लास्टोफैगा* ततैया द्वारा पर-परागण
फल का नाम

....

....

5. निम्नलिखित फलों का नाम लिखिए

क) अपनी मातृभाषा में

ख) किसी अन्य भारतीय भाषा में

फल	**मातृभाषा में नाम**	**भारतीय भाषा**
केला-		
अंजीर-		
अमरूद-		
आम-		
पपीता-		
अन्नानास-		

13.7 निंबुकुल के फल

निंबुकुल के सभी फल रूटेसी कुल के सदस्य हैं। ये एक ही वंश *सिट्रस* की विभिन्न जातियां हैं जिसमें अधिक प्रचलित संतरा तथा नीबू हैं। *सिट्रस* फल विटामिन सी तथा विभिन्न फल अम्लों का समृद्ध स्रोत है जो इन फलों के स्वाद तथा स्फूर्तिदायक गुणों के लिए जिम्मेदार हैं निम्नलिखित तालिका भारत में उगाए जाने वाले कुछ सुप्रसिद्ध सिट्रस फलों की सूची है।

तालिका 13.1 : भारत के सिट्रस फल

वानस्पतिक नाम	प्रचलित अंग्रेजी नाम / हिन्दी नाम
सिट्रस औरेन्शियम लिन. (*Citrus aurantium* L.)	खट्टे या सेविली (seville) संतरा, खट्टा
सिट्रस औरेन्टीफोलिया (*C. aurantifolia*) क्रिस्म) स्विंग	नींबू, कागज़ी नींबू
सिट्रस ग्रांडिस लि. (*C. grandis* (L) ऑसबेक	शेडॉक (shaddock) या प्यूमेलो (Pummelo)
सिट्रस लाइमन (लिन.) बर्म एफ. (*C. limon*) (L) Burm f.)	नीबूं (Lemon), बड़ा नींबू
सिट्रस मेडिका (लिन) (*C. medica* L.)	गलगल (citron), बड़ा निबूं
सिट्रस रेटीकुलेटा ब्लांको (*C. reticulata Blanco*)	माल्टा (mandarin) or Tangerine, santra
सिट्रस साइनेन्सिस लिन. ऑस्बेक (*C. sinensis* (L.) Osbeck	स्वीट ऑरेन्ज / संतरा (sweet orange) मूसंबी
सिट्रस पैराडाइज (*C. paradise*)	ग्रेपफ्रूट (grapefruit)

सिट्रस रेटीकुलेटा की विभिन्न किस्मों के बीच के संकर 1915 में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के सिट्रस अनुसंधान केन्द्र (Citrus Research Centre) में विकसित किए गए जो बहुत प्रचलित हो गए तथा भारत में 'किनू' के नाम से बेचे जाते हैं। हालांकि अलग-अलग जातियां विशिष्ट गुण दर्शाती हैं, वंश *सिट्रस* के बारे में सामान्य जानकारी देना सुविधाजनक होगा।

13.2.7.1 उत्पत्ति तथा वितरण

सिट्रस की कृष्य जातियों की उत्पत्ति दक्षिण पूर्व एशिया की उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों के शुष्क मानसून स्थानों में हुई थी। प्राकृतिक संकरण तथा चयन के फलस्वरूप ऐसे फलों का विकास हुआ जिनमें रस संचयी ऊतक की मात्रा सबसे अधिक तथा सबसे अधिक वांछित स्वाद था। कुछ प्रक्रियाएं जैसे संकरण, बहुभ्रूणता (polyembryony), उत्परिवर्तन, स्वचतुर्गुणितों (autotetraploids) का सतत् उत्पादन आदि के फलस्वरूप *सिट्रस* की अनेकों कृष्य प्रकारों का विकास हुआ।

इन्हें व्यावसायिक स्तर पर उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में उगाया जाता है तथा अक्सर विभिन्न जातियों के सही वानस्पतिक नामों का निर्धारण कठिन होता है। स्ट्रिस फलों की खेती व्यावसायिक तौर पर संयुक्त राष्ट्र अमरीका, इटली, सिसली, स्पेन, ग्रीस, ब्राजील, अर्जेन्टीना, मैक्सिको, भूमध्य सागरीय अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका, जापान, भारत, इज़रायल तथा ऑस्ट्रेलिया में की जाती है। भारत में, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक तथा उत्तर पूर्वी राज्य प्रमुख सिट्रस उगाने वाले क्षेत्र हैं।

13.2.7.2 पारिस्थितिकी

सिट्रस की जातियां उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में उगाई जाती हैं। अधिकांश व्यावसायिक फसल उपोष्ण देशों में उगाई जाती है वह शुष्क मौसम में बेहतर पैदावार देती हैं।

13.2.7.3 वानस्पतिकी

पादप छोटे सदाबहार झाड़ या वृक्ष होते हैं। ये दीर्घजीवी, अधिक शाखित तथा सुगंधयुक्त होते हैं क्योंकि सभी भागों में बिन्दुकित (punctate) तैल ग्रंथियां पाई जाती हैं।

तनों में काँटे या शूल हो सकते हैं जो पत्तियों के अक्षों में निकलते हैं। ये काँटे कभी-कभी सिर्फ तेजी से बढ़ने वाले प्ररोहों पर ही विकसित होते हैं। प्ररोह की वृद्धि

चक्रिक होती है तीव्र वृद्धि तथा प्रसुप्तावस्था के कालों के बीच एकांतरित होती रहती है। पत्तियां ऊपर से देखने में सरल होती हैं परन्तु अपने व्यक्तिवृत (ontogeny) में ये त्रिपर्त्री (trifoliate) संकर होती है। सिर्फ अंतस्थ पर्णक (leaflet) पूर्णत: विकसित होता है जबकि दो पार्श्व पर्णक तनुकृत होते हैं। वृंत पंखयुक्त होता है तथा अक्सर दोनों सिरों पर संधित (articulated) होता है। पत्तियां चमकदार, अरोमिल (glabrous) काफी गहरी हरी तथा, अंडाकार होती हैं। इनमें खंभ ऊतक (palisade tissue) में उन्नत तैल ग्रंथियां पाई जाती हैं। (चित्र 13.8)।

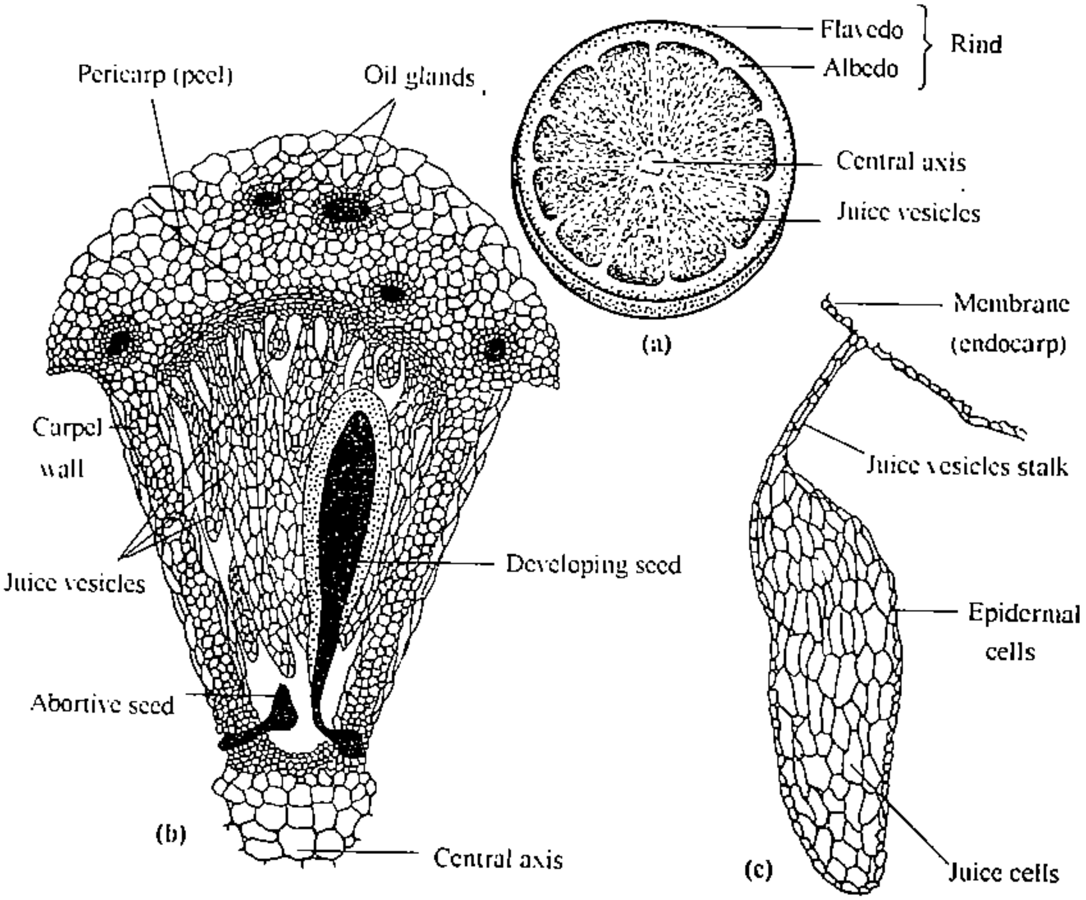

चित्र 13.8 : *सिट्रस* स्पी. (a) फल का अनुप्रस्थ काट (b) सिट्रस फल के एक भाग का अनुप्रस्थ काट (c) रस या गूदा धानी

पुष्पक्रम नए प्ररोहों पर अक्षीय होता है। यह एकल पुष्पों या छोटे ससीमाक्षी गुच्छों का बना हो सकता है। पुष्प रूटेसी कुल का प्रारूपिक संगठन दर्शाते हैं। (इकाई 21 देखिए)। ये सहपत्री (bracteate), वृंतीय, पूर्ण तथा सामान्यत: द्विलिंगी (परंतु कभी-2 एकलिंगी भी) होते हैं। पुंकेसरों तथा अंडाशय के मध्य एक उन्नत मकरंद (nector) उत्पन्न करने वाली डिस्क उपस्थित रहती है। भीनी-भीनी खुशबू वाले पुष्प सामान्यत: सफेद होते हैं परंतु कभी-2 ये गुलाबीपन लिए हुए हो सकते हैं। बाह्यदलपुंज चिरस्थायी होता है तथा दलों में असंख्य तैल ग्रंथियां पाई जाती हैं।

फल विशेष प्रकार का बड़ा सरस फल / बेरी होता है। यह हेस्पेरीडियम (hesperidium) कहलाता है। परिपक्व फल की आकृति, आकार, रंग तथा गाढ़ापन विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होता है। प्रत्येक फल पर मोटा सुरक्षात्मक आवरण होता है जिसे शल्क / छिलका (rind) कहते हैं। ये बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति के ऊतकों का बना होता है। सिट्रस फलों के छिलके का वर्णन करने के लिए निश्चित शब्द है। बाह्यफलभित्ति फ्लेविडो (flavedo) कहलाती है तथा यह छिलके

का रंगीन भाग होता है वाह्यफलभित्ति में तैल ग्रंथियां तथा क्रिस्टल पाए जाते हैं। इसमें पतली भित्ति वाली प्रकाश-संश्लेषी रूप से सक्रिय मृदूतकी दिखाती है। तरुण फलों में ये कोशिकाएं प्रकाश संश्लेषण करती हैं, परंतु जैसे ही फल परिपक्व हो जाता है या पक जाता है, पर्णहरित/क्लोरोफिल विखंडित हो जाता है तथा जैन्थोफिल और कैरोटिन वर्णन उन्नत / स्पष्ट हो जाते हैं। यह छिलके के रंग को पीले या नारंगी रंग में बदल देता है। फ्लेविडो के अंदर एल्बीडो (**albedo**) या मध्यफलभित्ति होती है। यह छिलके का भीतरी सफेद भाग होता है। इस क्षेत्र की कोशिकाएं शर्करा, पेक्टिन, विटामिन सी तथा ग्लूकोसाइड्स से समृद्ध होती हैं। इस प्रकार से फल का खाने योग्य भाग चोट / क्षति से बच जाता है तथा उसकी गुणवत्ता बनी रहती है। यह भीतरी अंत:फलभित्ति का भाग कुछ पास-पास लगे हुए अंडप खंडों का बना होता है, जिनमें से प्रत्येक पतली पारदर्शी झिल्ली से घिरा रहता है। प्रत्येक खंड में अनेकों बहुकोशिकीय धानियां रहती हैं जो अंडप की भित्तियों से उगती हैं। ये रस से भरी रहती हैं जिसमें शर्करा तथा अम्ल होते हैं। अधिक अम्लीय फल कड़वे या खट्टे होते हैं जबकि अधिक शर्करायुक्त फल मीठे होते हैं। जब फल पक जाता है तो साइट्रिक अम्ल की मात्रा घट जाती है वे साथ ही शर्करा तथा सुगंधित तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। इन रस से भरी हुई धानियों में अनेकों बीज धंसे रहते हैं। रस से भरे हुए रोमों वाला भाग फल का खाने वाला भाग होता है। बीज में या तो सिर्फ एक भ्रूण होता है (युग्मनज से विकसित होता है) अथवा इसमें असंख्य भ्रूण होते हैं। बहुभ्रूणीय बीजों में भ्रूण बीजांडकाय (nucellus) से विकसित होता है और इसलिए इन भ्रूणों में सिर्फ मातृ पक्ष के गुण होते हैं। कुछ *सिट्रस* की जातियों में, बीजरहित फल अनिषेकफलनी तौर पर उत्पन्न हो जाते हैं। हालांकि, अनिषेकफलनी विकास को उत्प्रेरित करने के लिए परागण आवश्यक होता है।

3.2.7.4 उपयोग

कुछ सिट्रस फल जिनका रस मीठा होता है उन्हें ताजा ही डेज़र्ट के रूप में अथवा फलों के सलाद में खाया जाता है। उन्हें रसों, शबर्त, कॉर्डियल (सुरा युक्त पेय) तथा सुगंध प्रदान करने वाले तत्वों में भी संसाधित किया जा सकता है। अम्लीय कड़वे स्वाद वाले फलों को अचार, लेमोनेड पेय, तथा खाने में स्वाद प्रदान करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। मीठे तथा कड़वे फलों का उपयोग मार्मलेड बनाने में तथा साइट्रिक अम्ल के निर्माण में किया जाता है। सिट्रस फलों के छिलकों से निकलने वाले सुगंध तेलों का उपयोग इत्रों, सौन्दर्य प्रसाधनों, सुगंध तथा औषधि उद्योग में किया जाता है। पेक्टिन भी निकाला जा सकता है तथा उसका उपयोग जैली तथा मिठाई आदि बनाने में किया जा सकता है।

3.2.7.5 खेती

सिट्रस फलों को बीजों से उगाया जा सकता है, परंतु अधिकांश अच्छी किस्मों में बीज वाह्य संकरण के कारण विविधता उत्पन्न करते हैं। विविधता के अलावा, बीज से उगने वाले पादप कई वर्षों तक कायिक वृद्धि करने के पश्चात् पुष्पन तथा फल उत्पन्न करना आरंभ करते हैं। अतः व्यावसायिक खेती में, चयनित किस्मों को कायिक तरीके से प्रवर्धित किया जाता है। इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि वांछित गुण पादप में बने रहते हैं तथा आनुवांशिक विविधताएं नहीं हो पाती हैं। कायिक प्रवर्धन या तो कतरनों (cuttings) के द्वारा अथवा कलमों के द्वारा होता है। कतरनों से पादप उगाने में "मारकोट" (marcott) बनाया जाता है जिसे मिट्टी को चयनित शाखा के चारों ओर लगाकर व छाल को हटाकर या बिना हटाए ही तैयार किया जाता है। इससे जड़ों को प्रोत्साहन मिलता है तथा जड़ युक्त कतरन को फिर मिट्टी में रोपा जाता है। यह जल्दी तैयार होने वाला प्रक्रम है तथा कई पादप साथ-साथ प्राप्त किए जा सकते हैं। जड़ को जल्दी बढ़ाने वाले हार्मोन्स का उपयोग भी किया जा सकता है।

कलम चयनित प्रकंदों (root stocks) पर लगाई जाती है तथा इस बात का ध्यान रखा जाता है कि जातियां सुसंगत हो उन्हीं की कलम लगाई जाए। प्रकंद तथा कलम लगाने वाली प्रजाति के साथ संयोजन के उचित चयन के लिए स्थानीय जानकारी आवश्यक होती है।

13.2.8 मैलन्स (Melons)

भारत में दो प्रकार के मेलन, तरबूज तथा खरबूजा की खेती सामान्यत: उनके स्वादिष्ट फलों के लिए की जाती है। ये कुकरबिटेसी कुल के सदस्य हैं जो अनेकों अन्य फल भी प्रदान करता है जिन्हें अपने देश में सब्जियों के रूप में उपयोग किया जाता है (इकाई 14 देखिए)। यहां दोनों मैलन्स की चर्चा की जा रही है।

तालिका 13.2 : कुछ प्रचलित मैलन्स के नाम

सिट्रलस लेनेटस (थंब) मेंन्स्फ (*Citrullus lanatus* (Thunb. Mansf.)	तरबूज (water melon)
कुकुमिस मेलो किस्म *मोमोर्डिला* (रोक्स) (*Cucumis melo* var. *momordila* (Roxb.) ड्थी फुलर स्नेप मेलन फिसेंट Duthie & Fuller) (snap melon) phesnt	
कुकुमिस मेलो किस्म *रेटीकुलेटस* सर (*Cucumis melo* var. *reticulatus* ser.)	खरबूजा (musk melon)

13.2.8 ए तरबूज

वानस्पतिक नाम : *सिट्रलस लेनेटस* (थंब) मेन्स्फ
कुल : कुकरबिटेसी
n = 11

13.2.8 ए. 1 उत्पत्ति तथा वितरण

तरबूज की उत्पत्ति ट्रापिकल अफ्रीका में हुई थी तथा इसकी खेती प्राचीन काल से ही भूमध्यसागरीय क्षेत्र में होती रही है। भारत में भी इसकी खेती प्रागैतिहासिक काल से ही होती आई है। अब इसे विस्तृत रूप से उष्ण कटिबंधी देशों के शुष्क भागों में उगाया जाता है। तरबूज की खेती दक्षिणी यूरोप में तथा मध्य व दक्षिण अमरीका में भी की जाती है।

13.2.8 ए.2 पारिस्थितिकी

तरबूज सबसे अच्छी तरह से उन क्षेत्रों में उगते हैं। जहां गर्म शुष्क मौसम तथा पर्याप्त सूरज की रोशनी होती है। ये काफी हद तक सूखा रोधी होते हैं तथा जलात्पलावन (waterlogging) को नहीं झेल पाते हैं। ये बलुई मिट्टी में जैसे नदी के किनारे सबसे अच्छी तरह से उगते हैं।

13.2.8 ए.3 वानस्पतिकी

तरबूज का पादप लंबा शाकीय एकवर्षी पौधा है जो जमीन पर फैलता है। इसमें बहुत ही सघन तथा सतही जड़ तंत्र होता है। कमजोर तना कोणीय, खांचित, तथा सफेद रोमों से ढंका हुआ होता है। पादप में द्विभाजित प्रतान (tendrils) होते हैं। लंबी वृंतीय पत्तियां सरल, बड़ी तथा पिच्छाकार रूप से पालियुक्त (pinnately lobed) होती हैं। पालियां पुन: विभाजित हो जाती हैं व शीर्ष पर चौड़ी तथा दंतीय किनारों वाली होती है। एकलिंगी पुष्प पर्ण अक्षों में उगते हैं। नर-पुष्पों की तुलना में मादा पुष्पों की संख्या कम होती है। पुष्पों में कुकरबिटेसी कुल का विशिष्ट संगठन पाया जाता है (इकाई 17 देखिए) तथा ये पीले रंग के होते हैं। फल बड़ा, गोलाकार या अंडाकार, मांसल सरस फल जैसी संरचना होती है जिसे पीपो कहते हैं। छिलका (बाहरी आवरण क्षेत्र) या तो पूर्णत: हरा या धारीधार या चितकबरा, कठोर तथा चिकना / अरोमिल होता है। इसके अंदर लाल, हरा या सफेद सा गूदा होता है जो सामान्यत: मीठा होता है। इसमें अनेकों बीज भी होते हैं जो सफेद, काले या लालिमा लिए हो सकते हैं। बीज चपटे तथा चिकने होते हैं (चित्र 13.9)।

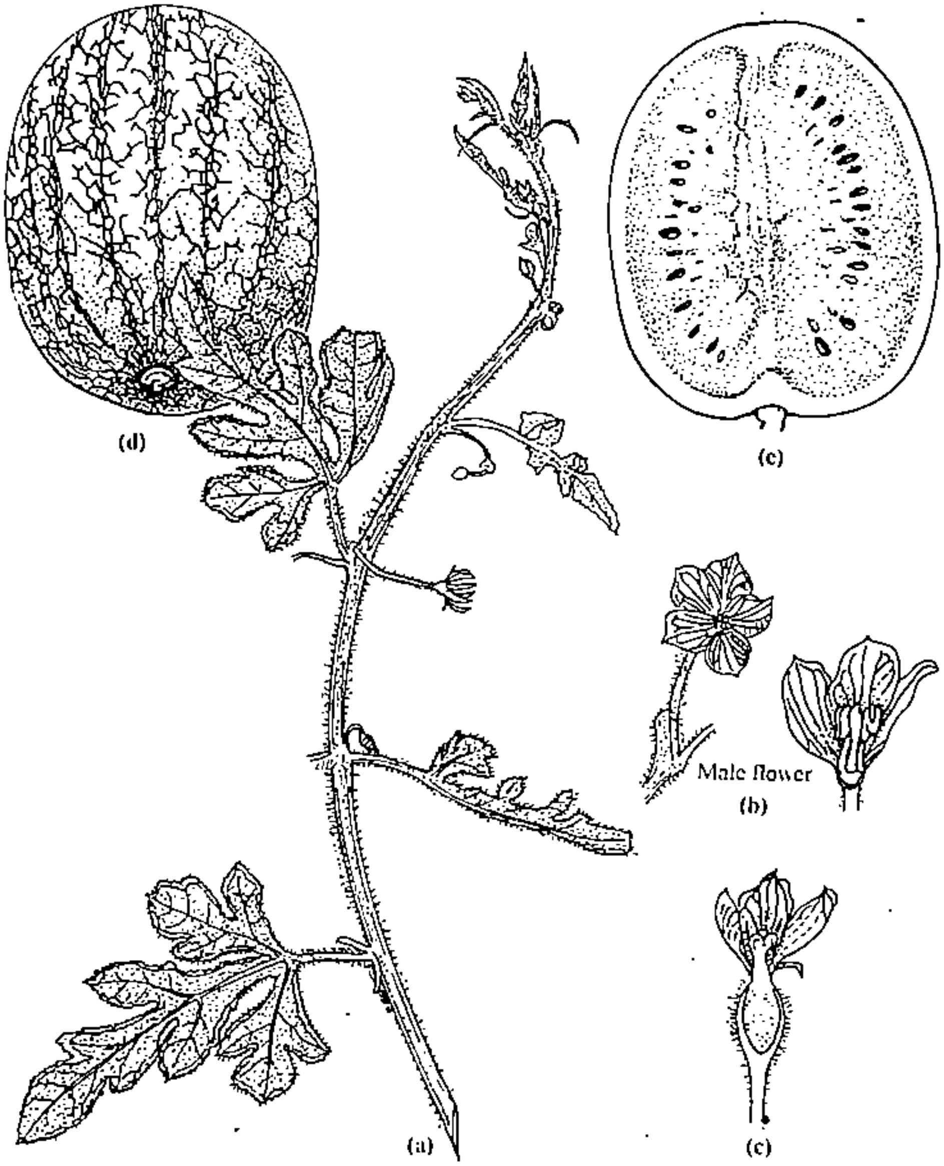

चित्र 13.9 : *सिट्रुलस लेनेटस* (a) पुष्पित होता है प्ररोह (b) नर पुष्प (c) मादा पुष्प (d) फल।
(e) फलकी अनुदैर्ध्य काट

13.2.8 ए.4 उपयोग

पके फल का सरस मीठा गूदा ताजा ही खाया जाता है। यह रेगिस्तानी इलाकों में प्यास बुझाने के काम आता है। बीजों को भूनकर खाया जा सकता है। एक खाने योग्य तेल बीजों से निकाला जाता है जिसका उपयोग खाना पकाने में किया जाता है। तरबूज के रस को ऊतक संवर्धन (tissue culture) में वृद्धि वर्धक के रूप में उपयोग किया जाता है।

13.2.8 ए.5 खेती

पादपों को बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। बीज के बोये जाने के चार-पांच महीने बाद फल पक कर तैयार हो जाता है। पके तरबूजों को सावधानी से ले जाने की आवश्यकता होती है क्योंकि ये आसानी से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तथा 2-3 हफ्ते से अधिक समय तक संग्रहित नहीं किए जा सकते हैं।

13.2.8 बी. खरबूजा (Watermelon)

वानस्पतिक नाम : *कुकुमिस मेलो* लिन. किस्म *रेटीकुलेटस* सेर.

(*Cucumis melo* Linn. var. *reticulatus* Ser.)

सामान्य नाम : खरबूजा

n = 7, 12

13.2.8 बी.1 उत्पत्ति तथा वितरण

खरबूजा की उत्पत्ति उष्णकटिबंधी अफ्रीका में मानी जाती हैं जहां वंश *कुकुमिस* की कुछ वन्य जातियां प्रचलित हैं। इसे भारत, चीन, ईरान तथा अन्य देशों में पुर: स्थापित किया गया है। यह अब विश्व भर में गर्म शीतोष्ण देशों में तथा गर्म शुष्क उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में उगाया जाता है।

13.2.8 बी.2 पारिस्थितिकी

फसल को बहुत अधिक सूरज की रोशनी की तथा गर्म शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है। यह सबसे अच्छी तरह से समृद्ध दुमटी मिट्टी में उगता है तथा उच्च अम्लता को नहीं सह सकता है।

13.2.8 बी.3 वानस्पतिकी

खरबूजे का पादप बहुत ही परिवर्तनशील तलसर्पी (trailing) शाकीय एकवर्षी पौधा है। पादप के सभी भाग रोमिल होते हैं। जड़तंत्र काफी फैला हुआ तथा सतही होता है। तना कंटकित (ridged) होता है तथा इसमें उभयपोषवाही पूल (bicollateral bundles) पाए जाते हैं (ये कुकरबिटेसी कुल का विशिष्ट गुण है)। बड़ी सामान्य पत्तियां एकांतरी तथा लंबे वृंत युक्त होती हैं। पटल पालियुक्त व दांतेदार होता है तथा इसका आधार हृदयाकार होता है। पर्णअक्षों नें से सामान्य प्रतान निकलती है। पुष्प सामान्यत: एकलिंगी होते हैं परंतु कभी-कभी कुछ द्विलिंगी पुष्प भी विकसित हो सकते हैं। नर पुष्प ससीमाक्षी गुच्छों में होते हैं जबकि मादा पुष्प एकल होते हैं। उनमें छोटे वृंत होते हैं तथा कुकरबिटेसी कुल का विशिष्ट संगठन पाया जाता है। फूल पीले होते हैं। फल मादा तथा द्विलिंगी पुष्पों से विकसित होता है। फल आकृति तथा आकार में भिन्न-2 हो सकते हैं। वे चिकने या खांचे से युक्त हो सकते हैं (चित्र 13.10)। छिलका चिकना, जालिकावत् या खुरदुरा हो सकता है। तथा इसका रंग हरे या पीले से भूरा तक हो सकता है। स्वादिष्ट रसीला गूदा भी रंग में पीले से गुलाबी या हरा तक हो सकता है। विभिन्न किस्मों में शर्करा की मात्रा भिन्न होती है तथा फल में विटामिन ए पाया जाता है। अनेकों सफेद, चपटे, चिकने बीज फल के केन्द्र में उपस्थित रहते हैं।

13.2.8 बी.4 उपयोग

पके हुए फल ऐसे ही स्वादिष्ट डेज़र्ट (भोजनोपरांत मिष्ठान्न) फल के रूप में खाए जाते हैं। बीजों को सुखा लिया जाता है तथा इनके छिलके उतार कर इनका उपयोग मिठाइयों में किया जाता है। फल की कुछ किस्में पकाकर सब्जी के रूप में खाई जाती हैं।

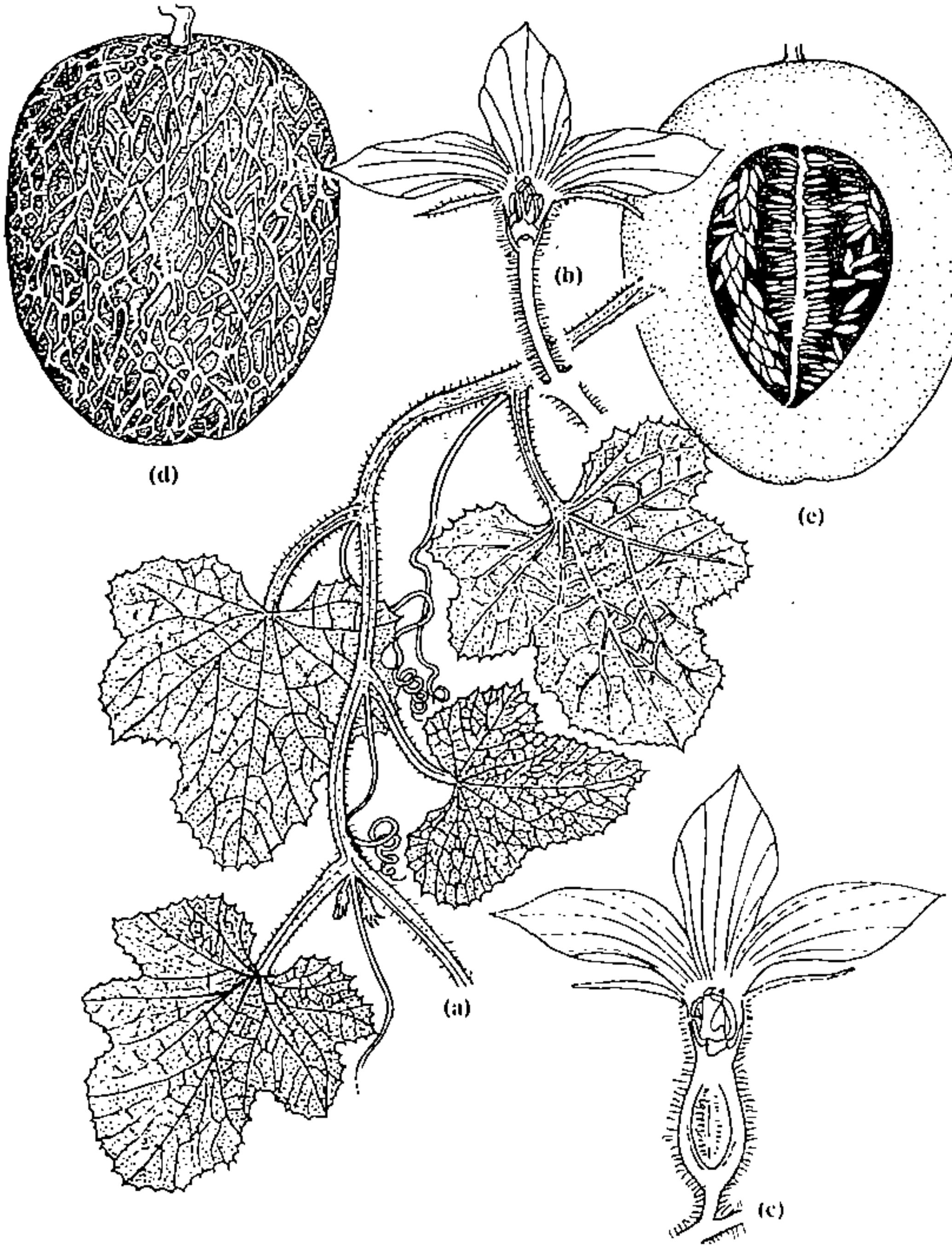

चित्र 13.10 : *कुकुमिस मेलो* (a) पुष्पित होता प्ररोह (b) नर पुष्प (c) मादा पुष्प (d) फल (e) अनुदैर्घ्य काट में फल।

13.2.9 लीची (The Litchi)

वानस्पतिक नाम : *लीची चाइनेन्सिस* सोन. (*Litchi chinensis* Sonn.)
कुल : सैपिन्डेसी
सामान्य नाम : लीची
n = 11

लीची एक दिलचस्प फल है जिसमें बीज को घेरे हुए मांसल रसदार बीजचोल (aril) खाया जाता है (इस पादप कुल में अधिक प्रसिद्ध रीठा (soapnut) के वृक्ष, सेपिन्डस सेपोनेरिया (*Sapindus saponaria*), भी सम्मिलित हैं, जिनके फलों में सेपोनिन (saponins) होते हैं जो जल के साथ साबुन के झाग बनाते हैं।

13.2.9.1 उत्पत्ति तथा वितरण

लीची की उत्पत्ति दक्षिणी चीन में हुई थी तथा यह विस्तृत रूप से सभी उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में फैल गया। यह अधिक ऊँचाइयों पर अच्छी तरह उगते हैं। इसकी खेती भारत, म्यांमार (या वर्मा), इंडोचाइना, थाईलैण्ड, जापान, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, हवाई, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, ब्राजील, वेस्टइंडीज, तथा दक्षिण अफ्रीका में की जाती है। भारत में इसकी खेती उत्तर प्रदेश (खासतौर पर देहरादून, सहारनपुर तथा मुजफ्फरनगर, बिहार (मुख्यत: मुजफ्फरपुर तथा धनबाद), उत्तर पूर्वी राज्यों पश्चिमी बंगाल तथा पंजाब में की जाती है। इसे बंगलौर तथा दक्षिण भारत के अन्य भागों में पुर: स्थापित किया गया है परंतु वहां ये अच्छे फल नहीं उत्पन्न करते हैं।

13.2.9.2 पारिस्थितिकी

पादप अपनी मिट्टी तथा मौसम की आवश्यकता में काफी स्पष्ट होते हैं। फलन के लिए ठंडे शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है। पादप नम वातावरण को प्राथमिकता देता है परन्तु पाले को बिल्कुल नहीं झेल पाता है। इसके लिए बहुत अधिक नम मिट्टी की आवश्यकता होती है तथा ये गहरी दुमटी मिट्टी में अच्छी तरह से उगता है।

13.2.9.2 वानस्पतिकी

लीची का पौधा घना सदाबहार वृक्ष होता है जो 10-20 मी. की ऊँचाई तक उगता है। इसमें चौड़ा गोलाकार मुकुट होता है जिसमें चमकीली-हरी पत्तियां होती हैं। पत्तियां समपिच्छकी (paripinnate) तथा 2-9 अंडाकार तथा चर्मिल (coriaceous) पर्णकों युक्त होती हैं। छोटे पुष्प अस्पष्ट हरापन लिए सफेद से पीले तक होते हैं। वे बड़े अंतस्थ यौगिक असीमाक्षों (panicles) में उगते हैं। पुष्प एकलिंगी होते हैं। फल एक वानस्पतिक नट / दृढ़फल है जो गोलाकार या अंडाकार होता है यह गुच्छों में यौगिक असीमाक्षी पुष्पक्रम में विकसित होते हैं। प्रत्येक फल गहरे या हल्के लाल (या कभी-कभी पीले) बाह्यफलभित्ति (या छिलके) से ढका रहता है। यह हल्का सा या अधिक गुलिकीय (tubercled) तथा भंगुर होता है। इसमें एक बड़ा गहरा भूरा दीर्घवृत्तीय बीज होता है जो सफेद मांसल मीठे तथा रसीले बीजचोल से घिरा रहता है। यह पारभासी संरचना बीजांडवृत्त से (funiculus) एक उपांग या बर्हिवृद्धि होती है (चित्र 13.11)। यह बीज का तीसरा आवरण माना जाता है तथा यह लीची के फल का खाने योग्य भाग होता है। बीज में एक मुड़ा हुआ भ्रूण होता है।

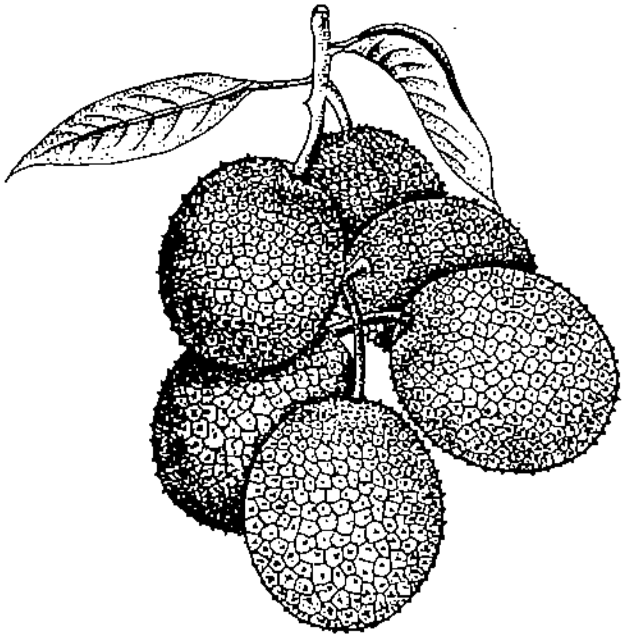

चित्र 13.11: लीची के फल

13.2.9.4 उपयोग

वयस्क फल स्वादिष्ट डेज़र्ट फल के रूप में खाए जाते हैं जिनका रसीला मीठा बीजांडचोल वाला भाग खाया जाता है। फलों को तोड़ लेने के बाद छिलका अपना रंग खोना आरंभ कर देता है। साथ-हीं-साथ बीजांडचोल अधिक मीठा हो जाता है क्योंकि उसमें उपस्थित जटिल कार्बोहाइड्रेट्स शर्करा में बदल जाते हैं। बीजांडचोल को संरक्षित तथा शर्बत के रूप में संवर्धित भी किया जा सकता है जिसे एक स्फूर्तिदायक पेय के तौर पर पिया जाता है।

13.2.9.5 खेती

लीची को सामान्यत: कायिक रूप से प्रवर्धित किया जाता है तथा ऐसे वृक्ष 4-6 वर्ष में फल देना आरंभ कर देते हैं।

13.2.10 अनार (The Pomegranate)

वानस्पतिक नाम: *प्यूनिका ग्रैनेटम* लिन. (*Punica granatum* Linn.)
कुल : प्यूनीकैसी
सामान्य नाम : अनार
n = 8

सुप्रसिद्ध अनार अथवा *प्यूनिका ग्रैनेटम* अनेक रूपों में एक दिलचस्प पादप है। यह तथा एक अन्य जाति *प्यूनिका प्रोटोप्यूनिका (P. protopunica)* प्यूनिकेसी कुल की सिर्फ ये ही दो जातियां हैं।

13.2.10.1 उत्पत्ति तथा वितरण

अनार की उत्पत्ति ईरान से अफगानिस्तान तक के क्षेत्र तथा बलूचिस्तान में हुई है। यह प्राचीन मिस्र में प्रसिद्ध था तथा बेबीलोन के प्रसिद्ध हैंगिंग गार्डन्स में उगाया जाता था। यह भूमध्यसागरीय क्षेत्रों के आसपास तथा पूर्व की ओर भारत तथा चीन में फैल गया। यह अब वन्य रूप में गर्म घाटियों तथा हिमाचल की पहाड़ियों में उगता है। इसकी खेती भारत में सभी जगह की जाती है तथा महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश प्रमुख अनार उत्पादक राज्य हैं। यह उष्ण कटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों के अधिकांश भागों में भी उगाया जाता है।

13.2.10.2 वानस्पतिकी

अनार का पौधा, 2-4 मीटर की ऊँचाई का होता है तथा इसकी खेती झाड़ या छोटे वृक्ष के रूप में की जाती है। यह बहुत अधिक शाखित होता है जिसकी उपशाखाएं कुछ-कुछ शूलाग्री (spinescent) होती हैं। पत्तियां एकांतरी, छोटे वृंत वाली, चमकदार गहरी हरी तथा अंडाकार होती हैं। पुष्प नारंगी लाल, एकल या 2-4 के गुच्छों में हो सकते हैं। फल सरस फल जैसा, भूरापन लिए हुए पीला या लाल होता है। इसमें चर्मिल बाह्यफलभित्ति होती हैं जिसके शीर्ष पर चिरस्थायी बाह्यदलपुंज होता है। फल में असंख्य बीज होते हैं। प्रत्येक बीज गुलाबी-लाल रसीले गूदे से घिरा रहता है। (चित्र 13.12)। फल का भीतरी भाग झिल्लीनुमा भित्तियों के बन जाने के कारण खंडयुक्त (septate) हो जाता है।

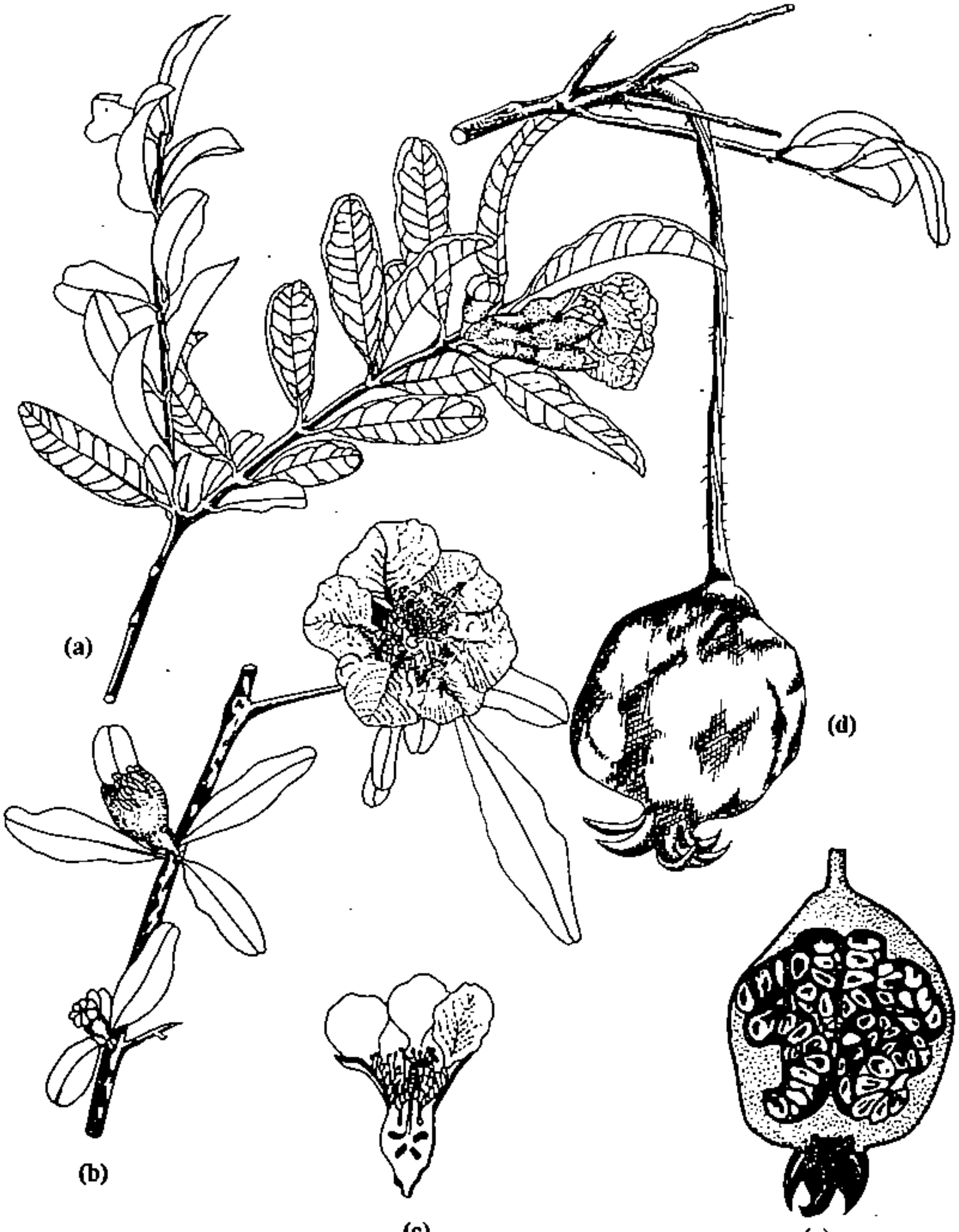

चित्र 13.12 : अनार (a) एक पुष्पित शाखा (b) पुष्प (c) अनुदैर्ध्य काट में पुष्प (d) फल (e) अनुदैर्ध्य काट में फल

13.2.10.3 उपयोग

बीज को घेरे हुए रसीला गूदा फल का खाने योग्य भाग होता है। ताजे बीज डेज़र्ट के रूप में खाए जाते हैं तथा बीजों से निकाले गए जामुनी रंग के रस से एक स्फूर्तिदायक पेय तैयार किया जा सकता है। ताजे बीजों को सलाद में भी खाया जा सकता है।

सूखे बीजों को मसाले के रूप में खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। उन्हें पूरा ही या दरदरे / पाउडर के रूप में उपयोग किया जाता है। यह भोजन को स्वादिष्ट खट्टा मीठा स्वाद प्रदान करता है। जड़ों तथा बीजों में औषधीय गुण होते हैं।

कुछ प्रकार के अनारों की खेती की जाती है। ये फल की आकृति तथा आकार में बाह्यफल भित्ति के रंग तथा पतलेपन में और बीज के रंग में भिन्न होते हैं। तथाकथित बीजरहित किस्मों में मुलायम बीज होते हैं जिनमें बीजचोल (testa) लिग्निनयुक्त नहीं होता है। कुछ किस्मों की खेती अपने उत्कृष्ट फूलों के कारण बगीचों में सजावटी पौधों के रूप में होती हैं।

13.2.10.4 प्रवर्धन

पादप को बीज अथवा कलमों के द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। पादप चौथे वर्ष में फल उत्पन्न करना आरंभ करते हैं तथा फल पुष्पन के 6 महीने बाद पकते हैं।

13.2.11 पोम फल (Pome fruits)

रोजेसी कुल सबसे अधिक महत्वपूर्ण फल उत्पन्न करने वालें कुलों में से एक है। पोम फलों में सेब तथा नाशपाती सम्मिलित हैं, जिनकी जातियां जो यूरोप तथा एशिया की देशज हैं। अष्ठिल / कठोर फल वंश प्रुनुस के हैं- आड़ू (peach), चेरी (cherry), आलू-बुखारा (plum) खुबानी (apricot); सरस फल- जामुन (black berry), रसभरी (raspberry) तथा स्ट्राबेरी (strawberry) भी महत्वपूर्ण हैं।

यहां हम रोज कुल से प्राप्त होने वाले दो प्रमुख फलों सेब तथा नाशपाती के बारे में विस्तार से वर्णन करेंगे। इनकी विशेषता एक विशेष प्रकार का फल होता है जिसे पोम (pome) कहते हैं। यह फल आभासी फलिका (pseudocarp) कूटफल होता है जिसमें परिपक्व अंडाशय सुदीर्घित तथा माँसल धानी तथा अन्य सहायक भागों से घिरे रहते हैं। वास्तव में, पुष्पीय अक्ष गहरी प्यालेनुमा संरचना बनाता है। जिसमें अंडप अध:स्थापित रहते हैं। फल की कठोर या अष्ठिल अंत:फलभित्ति के अंदर संयुक्त अंडप रहते हैं। प्रत्येक अंडप में एक या दो बीजांड होते हैं जो परिपक्व होकर बीज बन जाते हैं। बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति मांसल बन जाते हैं। फल का खाने योग्य भाग वास्तव में सुदीर्घित मांसल धानी या पुष्पीय अक्ष होता है। यह काफी मात्रा में खाद्य तथा जल संग्रह कर लेता है। यह मुलायम, कुरकुरा, या कठोर हो सकता है। सेब में अष्ठिल कोशिकाएं (stone cells) नहीं होती हैं जबकि नाशपाती में खाने योग्य गूदे में बहुतायत में अष्ठिल कोशिकाएं पाई जाती हैं।

13.2.11.ए सेब (The Apple)

वानस्पतिक नाम : ***मेलस प्यूमिला*** **मिल. (*Malus pumila* Mill. syn *Malus sylvestris* (L.) Mill;)**

कुल : रोज़ेसी (Rosaceae)

सामान्य नाम : सेब

n = 17

13.2.11 ए.1 उत्पत्ति तथा वितरण

सेब की खेती प्राचीन काल से ही होती आई है तथा यह विश्व के शीतोष्ण क्षेत्रों का सबसे प्रमुख फल है। इसकी उत्पत्ति पश्चिमी हिमालय तथा कॉकेशस पहाड़ों और एशिया माइनर के बीच के पहाड़ी क्षेत्रों में हुई थी। इसकी खेती विश्व के अनेक भागों में की जाती है। प्रमुख सेब उत्पादक देश संयुक्त राष्ट्र अमरीका, पश्चिमी तथा पूर्वी यूरोप, जापान, ऑस्ट्रेलिया तथा भारत हैं। बागवानी कृषि कार्य के रूप में सेब की खेती 18वीं शताब्दी के मध्य में उत्तरी भारत के पहाड़ों तथा मैदानों में आरंभ हुई थी। 1887 में शिमला के निकट लगाए गए एक प्रमुख बाग में सेब की बहुत अधिक किस्में पाई जाती हैं। शिमला के अतिरिक्त, कुल्लू घाटी भी हिमाचल प्रदेश का एक प्रमुख सेब उगाने वाला क्षेत्र है। कश्मीर सेब की एक भिन्न किस्म का घर है जिसे "अंब्री" (ambri) कहते हैं। सेब उत्तर प्रेदश के अल्मोड़ा, गढ़वाल, तथा नैनीताल जिलों में भी उगाए जाते हैं। सेब की खेती दक्षिण भारत में बंगलौर तथा नीलगिरी पहाड़ियों पर भी की जाने लगी हैं।

बॉक्स 13.3 : *मेलस*- बुरा (The bad)

सेब पर किवंदतियां प्राचीन काल से हो रही हैं। जेनेसिस (genesis) की किताब के अनुसार हव्वा शैतान के लालच में आ गई तथा उसने प्रतिबंधित फल का एक टुकड़ा खा लिया जिसे अधिकांश लोग मांनते थे कि वह सेब है। सेब का वंश नाम मेलस लैटिन शब्द ''मेलस'' से पड़ा है जिसका अर्थ है बुरा, इस नाम का चयन इसलिए किया गया था क्योंकि ये माना जाता था कि मानव के पतन के लिए यह फल जिम्मेदार है।

13.2.11 ए.2 पारिस्थितिकी

सेब मूलतः सर्दी के मौसम की फसल है जो जाड़े के निम्न तापमान को झेलने में समर्थ है। शीत अनुकूलन अथवा कड़ाके की ठंड फल के सफल विकास के लिए आवश्यक है। अपर्याप्त ठंड से खराब तथा असमान फल निकलते हैं। यदि सर्दियां पर्याप्त रूप से ठंडी या लंबी ना हों तो अनेकों पुष्प कलिकाएं नहीं खिल पाती हैं। इसके फलस्वरूप विलगन तथा फूल व तरुण फल गिरने लगते हैं। अतः सेब की खेती उन क्षेत्रों में की जाती है जहां सर्दियों का तापमान निम्न तथा औसत वार्षिक वर्षा 60-75 से.मी. होती है।

सेब सबसे अच्छी तरह से अच्छी जल निकासी वाली गहरी उर्वर दुमटी मिट्टी में उगते हैं जिनमें थोड़ी मात्रा में चूना होता है। पर्याप्त नाइट्रोजन तथा नम मिट्टी फल के उचित विकास को उन्नत करते हैं। ये पाले के लिए कम ही संवेदनशील होते हैं।

13.2.11 ए.3 वानस्पतिकी

सेब का पादप कम फैलने वाला गोल मुकुट धारी वृक्ष है। यह 15 मी. की ऊंचाई तक बढ़ता है। पत्तियां प्ररोहों अथवा दलपुटों (spurs) पर उगती हैं। ये सामान्य अंडाकार या दीर्घवृत्तीय तथा भोथरे दंतीय किनारों वाली फीके हरे रंग की होती हैं।

पुष्प पुष्पछत्र (umbel) जैसे ससीमाक्षों में छोटे प्ररोहों पर उगती हैं जो कम से कम 2 वर्ष पुराने होते हैं। वे पर्णकलिकाओं के साथ मिश्रित रहती हैं। पुष्प सफेद से गुलाबी तक होते हैं। अनेकों पुष्प प्रफुल्लन (फूल के खिलने) के बाद जल्दी ही गिर जाते हैं, जबकि अन्य परागण के पश्चात् तरुण फलों के रूप में गिरते हैं। सिर्फ एक फल प्रत्येक पुष्पक्रम में दलपुट पर परिपक्व होता है।

फल मांसल खाद्य भाग लिए हुए पोम (pome) होता है जो धानी से विकसित होता है। इसके अंदर बीज लिए हुए संयुक्त अंडप होते हैं। मांसल खाद्य धानी फलीभित्ति (pericarp) बनाती है। (बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति) जबकि उपास्थियुक्त या अस्थिल शुष्क कागज जैसा फल का मध्य भाग अंतःफलभित्ति बनाता है। (चित्र 13.13) त्वचा हरी, पीली या लाल हो सकती है अथवा दो या तीनों रंग लिए हुए हो सकती है। यह बड़ी मात्रा में जल तथा खाद्य तत्व संग्रहित किए रहता है। फल की विशेषताओं के आधार पर सेबों की असंख्य किस्मों को वर्गीकृत किया गया है।

तरुण फलों में मांड, पेक्टिन और मेलिक अम्ल (पूर्ण अम्लीय तत्व का 90-95%) होता है जबकि परिपक्व फलों में अधिक शर्करा, खनिज, प्रोटीन्स तथा अन्य तत्व पाए जाते हैं। सेबों की विशेष संगध / वाष्पशील तेलों तथा कार्बनिक अम्लों के एमाइल एस्टर्स (amyl esters) की उपस्थिति के कारण होती है।

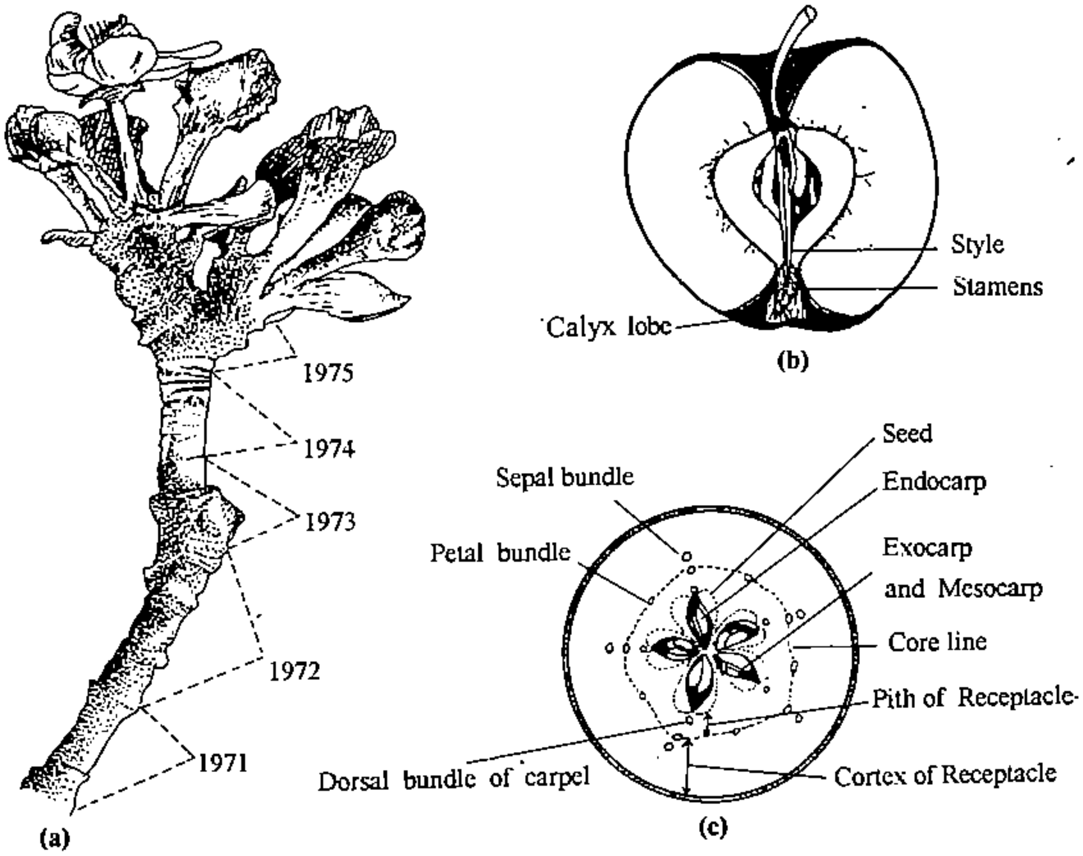

चित्र 13.13 : *मेलस प्यूमिला* (a) सेव का फल दलपुट (b) सेव के फल की अनुदैर्ध्य काट (c) सेव के फल की अनुप्रस्थ काट।

13.2.11 ए.4 उपयोग

सेव को प्रमुख डेज़र्ट फल के तौर पर खाया जाता है। विश्व के पूर्ण उत्पादन का लगभग आधा ताजे फल के रूप में खाया जाता है। फलों को संसाधित भी किया जा सकता है या जैम, जैली, मुरब्बा, सेव के रस, सेव की सॉस या एपल बटर बनाया जा सकता है। अकिण्डवित (बिना खमीर उठा) सेव का रस मीठा / स्वीट साइडर कहलाता है जबकि किण्डवित अल्कोहली रस हार्ड साइडर कहलाता है। सेव के रस से सिरका भी बनाया जा सकता है। पेक्टिन का निर्माण सेव के रस के उद्योग में सह उत्पादक के रूप में होता है। सेव की लकड़ी कठोर होती है तथा औजार बनाने में तथा ईंधन के रूप में उपयोग की जाती है।

13.2.11 ए.5 संवर्धन के तरीके

सेवों को सामान्यत: कायिक तरीके से मुकुलन (budding) या कलम लगाकर प्रवर्धित किया जाता है। जब फल अधिक तादाद में आते हैं तो कायिक वृद्धि तथा फल उत्पादन में संतुलन बनाए रखने के लिए छटांई / तनुभवन (thinning) आवश्यक होती है। इस से फल का रंग, आकार तथा गुणवत्ता में भी सुधार आ जाता है। सेवों को तब तोड़ा जाता है जब वे पूरी तरह से पक जाते हैं तथा इसका ध्यान रखना पड़ता है कि कोई क्षति न हो पाए क्योंकि क्षति से फल सड़ने लगता है पके फलों को लंबे समय तक ठंडे अच्छे वातायन वाले संग्रह घरों में संग्रहित किया जा सकता है।

1. अपरिपक्व फलों को गिराने के लिए हार्मोन्स का छिड़काव किया जाता है।

2. अधिक परागकों (pollinators) को देने के लिए मधुमक्खी पाली जाती हैं।

13.2.11 बी नाशपाती (The Pear)

वानस्पतिक नाम : *पाइरस कम्यूनिस* लिन. (*Pyrus communis* Linn.)
कुल : रोज़ेसी
सामान्य नाम : नाग, नाशपाती
n = 17

13.2.11 बी.1 उत्पत्ति तथा वितरण

नाशपाती सेब से निकट रूप से संबन्धित है तथा शीतोष्ण फलों में सेब के बाद दूसरे स्थान पर आती है। इसकी उत्पत्ति यूरोप में हुई थी। नाशपाती की खेती जर्मनी, इटली, जापान, फ्रांस, स्विट्ज़रलैण्ड, भारत तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में की जाती है। भारत में इसकी खेती सेब की अपेक्षा काफी कम स्तर पर की जाती है। इसे कश्मीर, उत्तर प्रदेश तथा हिमाचल प्रदेश में उगाया जाता है।

13.2.11 बी.2 पारिस्थितिकी

नाशपाती का पादप कम कठोर होता है तथा सेब की अपेक्षा गर्म मौसम में उगता है। यह गहरी तथा गर्म मिट्टी में अच्छी तरह से उगता है जो जल को रोक सकती है। सेब की भांति, यह पुष्पन के समय पाले को नहीं सह सकता है। यदि फलन के समय अत्यधिक वर्षा या तेज आँधी आ जाए तो फसल क्षतिग्रस्त हो जाती है। तनुभवन (thinning) से कायिक वृद्धि तथा फल उत्पादन के बीच में संतुलन बना रहता है।

13.2.11 बी.3 वानस्पतिकी

नाशपाती का पादप पिरामिडीय मुकुट युक्त छोटा वृक्ष होता है। पत्तियां सरल, वर्तुलाकार या अंडाकार से लेकर दीर्घवृत्तीय तक हो सकती हैं व इनमें कुंठदंती (crenate) से दांतेदार तक किनारे हो सकते हैं। पुष्प सफेद तथा सेब के पुष्प के समान होते हैं।

फल पोम होता है तथा यह आकार तथा आकृति में भिन्नता लिए हुए होता है। यह लट्टू जैसा (turbinate) या गोलाकार हो सकता है। त्वचा हरी होती है जबकि खाने योग्य भाग या गूदा पारभासी सफेद होता है (चित्र 13.14)। यह मुलायम तथा रसीला हो सकता है। या भुरभुरा, कठोर व शुष्क होता है। इसमें असंख्य दानेदार कण या अष्ठि कोशिकाएं होती हैं। फल का स्वाद व सुगंध सेब की भांति भिन्न-भिन्न नहीं होती हैं।

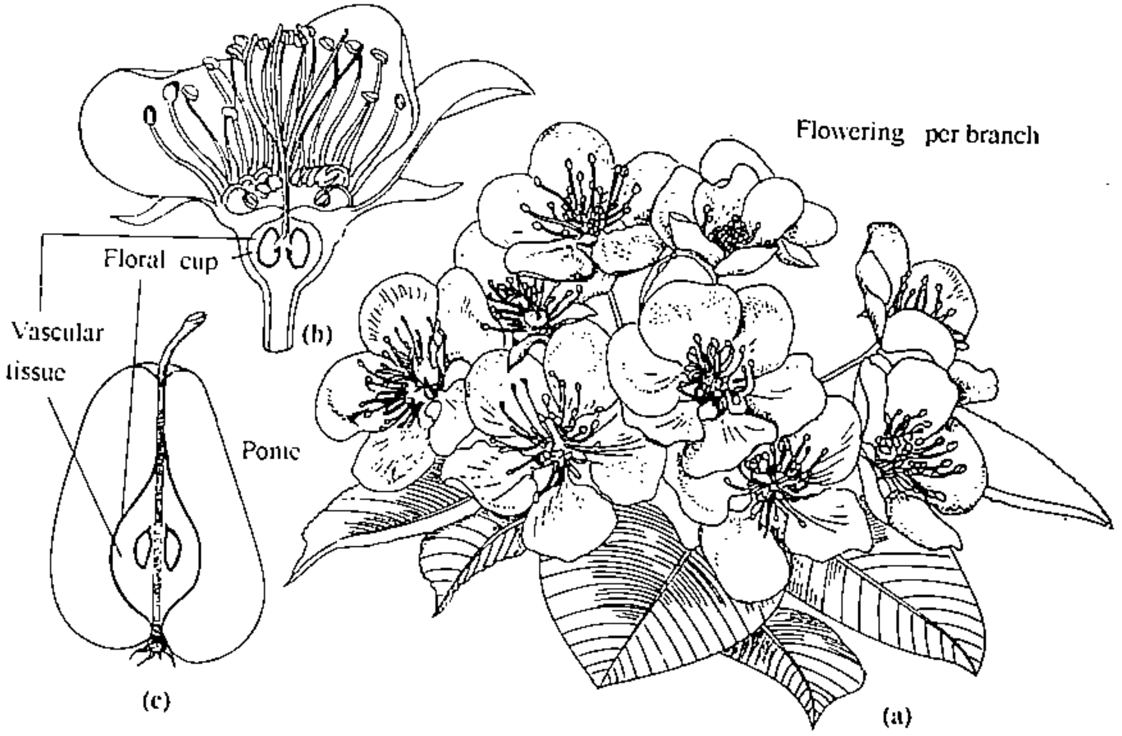

चित्र 13.14 : *पाइरस* स्पी. (a) नाशपाती की पुष्पीय शाखा (b) अनुदैर्ध्य काट में पुष्प (c) अनुदैर्ध्य काट में फल

13.2.11 बी.4 उपयोग

ताजे फलों को खाया जाता है या सेब की भांति जैम जैली आदि में संसाधित कर लिया जाता है।

1. कॉलम I (फल) को कॉलम II (उत्पत्ति का केन्द्र) से मिलाइए।

कॉलम I	कॉलम II
क) सेव	(i) ट्रॉपिकल अफ्रीका
ख) सिट्रस	(ii) दक्षिणी चीन
ग) लीची	(iii) यूरोप
घ) मेलन	(iv) ट्रॉपिकल दक्षिण पूर्वी एशिया
ड़) नाशपाती	(v) ईरान से अफगानिस्तान तक
च) अनार	(vi) एशिया माइनर

2. निम्नलिखित वक्तव्यों के आगे दिए गए बॉक्स में सत्य (स) या असत्य (अ) लिखे।

क) नींबू का फल विशेष प्रकार का सरस फल होता है। ☐

ख) लीची का खाने योग्य भाग सत्य / वास्तविक फल नहीं है। ☐

ग) अनार का फल पीपो है। ☐

घ) सेब नव विकसित तरुण प्ररोहों पर उगते हैं। ☐

ड़) नाशपाती को मॉसल फल के रूप में वर्गीकृत किया गया है। ☐

3. (क) नाम बताइए (उन) तीन फलों के जो उन अंडाशयों से विकसित होते हैं जिनमें स्तंभीय बीजान्डन्यास (axile placentation) होता है।

(i) ....

(ii) ....

(iii) ....

ख) दो फलों के नाम बताइए जो उन अंडाशयों से विकसित होते हैं जिनमें परिभित्तीय बीजांडन्यास (parietal placentation) पाया जाता है।

(i) ....

(ii) ....

4. उदाहरणों के साथ वर्णन कीजिए:

क) हेस्पेरीडियम ....

उदाहरण ....

....

ख) पोम ....

....

उदाहरण ....

5. निम्नलिखित फलों के वानस्पतिक नाम तथा कुल लिखिए।

फल	वानस्पतिक नाम	कुल
क) आम		
ख) मेन्डेरिन		
ग) नाशपाती		
घ) तरबूज		

6. उन फलों के नाम बताइए जिनमें निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं।

क) कार्बनिक अम्लों के एमाइल एस्टर्स

ख) माँसल बीजचोल

ग) बहुभ्रूणीय बीज

घ) विटामिन ए

13.3 दृढ़फल / नट्स (Nuts)

दृढ़फल / नट अनेक प्रकार के सूखे खाने योग्य बीजों या फलों के लिए एक प्रचलित नाम है जो काष्ठीय खोल में उगते हैं। वानस्पतिक शब्दों, नट एक- एककोशिकीय, एकबीजीय शुष्क फल है जिसमें कठोर फलभित्ति (खोल / कवच) होता है। अत: काजू तथा अखरोट वास्तविक दृढ़फल / नट हैं जबकि बादाम, नारियल तथा पिश्ता वानस्पतिक दृष्टि से वानस्पतिक दृढ़फल / नट नहीं हैं चूँकि इन में फल अष्ठिफल (गुठलीदार फल) होता है। तथाकथित नट एक-बीजीय संरचना होती है जो कठोर काष्ठीय अंत:फलभित्ति से घिरी रहती है। आप नट्स के बारे में प्रचलित अर्थ के अनुसार पढ़ेंगे तथा न कि वानस्पतिक अर्थ के अनुसार नहीं पढ़ेंगे।

अधिकांश लोग नट्स को नाश्ते के रूप में खाते हैं अथवा खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए उपयोग करते हैं। नट्स प्रोटीन्स तथा वसा से समृद्ध होती हैं, परंतु कुछ में मांड भी पाया जाता है। ये विटामिन्स तथा खनिजों का अच्छा स्रोत हैं तथा शरीर को क्रियाशील बनाने के लिए पर्याप्त ऊर्जा प्रदान करते हैं। नट्स पर्वतारोहियों, पदयात्रियों, सुरक्षा बलों के लोगों तथा अन्य के लिए आहार के एक प्रमुख भाग के रूप में कार्य करता है।

नट्स पादपों की अनेकों जातियों से प्राप्त की जाती है, परन्तु सिर्फ 25 प्रकार की नट्स की खेती की जाती है तथा आर्थिक महत्व की होती है। अनाजों की (इकाई 11) तथा फलियों (इकाई 12) की भाँति ही नट्स की भी आसानी से देखभाल तथा संग्रहित किया जा सकता है। निम्नलिखित पन्नों में आप कुछ अधिक प्रचलित दृढ़फलों / नट्स का अध्ययन करने में समर्थ होंगे।

13.3.2 काजू (The Cashew Nut)

वानस्पतिक नाम : *ऐनाकार्डियम आक्सीडेन्टेल* (लिन) (*Anacardium occidentale* Linn.)
कुल : ऐनाकार्डिऐसी
सामान्य नाम : काजू
n = 21

इस इकाई में आपने आम के बारे में पढ़ा तथा जाना कि यह भारत में "सभी फलों का राजा" है। आम की भाँति ही काजू भी ऐनाकार्डिऐसी कुल का सदस्य है। काजू तथा इसके उत्पादों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर भारत का एकाधिकार है।

13.3.1 उत्पत्ति तथा वितरण

काजू के पेड़ की उत्पत्ति अमरीका के उष्णकटिबंधी क्षेत्रों (मैक्सिको से पेरू तथा ब्राजील) तथा वेस्टइंडीज में हुई थी। इसे अन्य देशों में पुर्तगालियों द्वारा पुरः स्थापित किया गया तथा अब यह विस्तृत रूप से विश्व के सभी उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में वितरित है। इसे पहली बार भारत में 16वीं शताब्दी में समुद्रतटीय क्षेत्रों में मिट्टी को बांधने के लिए पुरः स्थापित किया गया था जिससे मृदा अपरदन (soil erosion) को नियंत्रित किया जा सके। इसे अब विस्तृत रूप से केरला के तटीय क्षेत्रों, कर्नाटक तथा तमिलनाडू में उगाया जाता है। इसे आसाम, महाराष्ट्र, गोआ, उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल में भी उगाया जाता है। भारत विश्व का अग्रणी काजू उत्पादक देश है। मोज़ाम्बीक तथा ंज़ानिया भी बड़ी मात्रा में काजू उत्पन्न करते हैं तथा वे नट्स को संसाधित (processing) के लिए भारत भेजते हैं। काजू का निर्यात मुख्यतः उत्तरी अमरीका तथा यूरोप में किया जाता ा।

3.3.1.2 पारिस्थितिकी

ाजू कठोर तथा सूखा रोधी होता है। यह उष्ण कटिबंधी मौसम में उगता है। समुचित वृद्धि अच्छी ल निकासी वाली बलुई मिट्टी में होती है। काजू को सामान्यतः बीज से उगाया जाता है। हाल के र्षों में, कायिक प्रजनन की तकनीकें भी सफल हुई हैं।

आम में भी वृक्ष पर सिर्फ 0.1 प्रतिशत से 0.25 प्रतिशत द्विलिंगी पुष्प ही फल में परिवर्तित होते हैं।

3.3.1.3 वानस्पतिकी

ाजू का पादप एक विस्तारी मध्यम आकार का सदाबाहर वृक्ष है। यह 12 मी. की ऊँचाई तक ाता है। आसानी से फल उतारने के लिए वृद्धि के पहले तीन वर्षों के दौरान निचली शाखाओं को ाटकर पेड़ों को आकार प्रदान किया जाता है। पत्तियां एकांतरी, सरल, अंडाकार, व गोल शीर्ष वाली ती हैं जो सामान्यतः मध्य में खांचित होता है। किनारे सीधे होते हैं तथा छोटे वृंत में क्रमिक रूप पतले हो जाते हैं जो आधार पर फूला होता है। शिराएं सुस्पष्ट तथा चर्मिल पत्तियां चिकनी होती पुष्पक्रम अंतस्थ यौगिक असीमाक्षी होता है जिसमें नर तथा द्विलिंगी पुष्प 6:1 के अनुपात में होते प्रत्येक अंतस्थ पुष्पक्रम में लगभग 60 द्विलिंगी पुष्प होते हैं जिसमें से सिर्फ 5 या 6 फल पन्न करते हैं। बचे हुए 90% परिपक्व फल नहीं उत्पन्न करते हैं। शरीरक्रिया विज्ञानी hysiological) कारणों की वजह से फल जल्दी गिर जाते हैं।

ा धूसर भूरा वृक्काकार (kidney shaped) नट होता है जिसका खोल कठोर होता है यह एक चना में धसा रहता है जिसे "केश्यू एपल" (cashew apple) कहते हैं। यह एक दीर्घीकृत तथा रल संरचना होती है जो पुष्प की धानी तथा वृंत से बनती है। यह नाशपाती के आकार का रसीला ा चमकदार लाल या पीला बन जाता है। (चित्र 13.15)। इसमें कीट परागकों को आकर्षित करने लिए एक विशिष्ट गंध होती है। पुष्प मक्खियों, चीटों तथा अन्य कीटों द्वारा परागित होते हैं तथा 2-3 महीनों में परिपक्व होती हैं। प्रत्येक नट में एकल बीज होता है जिसमें दो बड़े सफेद ापत्र (cotyledon) होते हैं। बीज आवरण (seed coat) या बीजचोल (testa) लाल भूरा होता फलों को तब तोड़ा जाता है जब वो पूरी तरह से पक जाते हैं। उनकी नमी की मात्रा को कम ो के लिए उन्हें 2-3 दिन के लिए सुखाया जाता है तथा उसके बाद नट्स को बेचे जाने से ो उनको संसाधित किया जाता है।

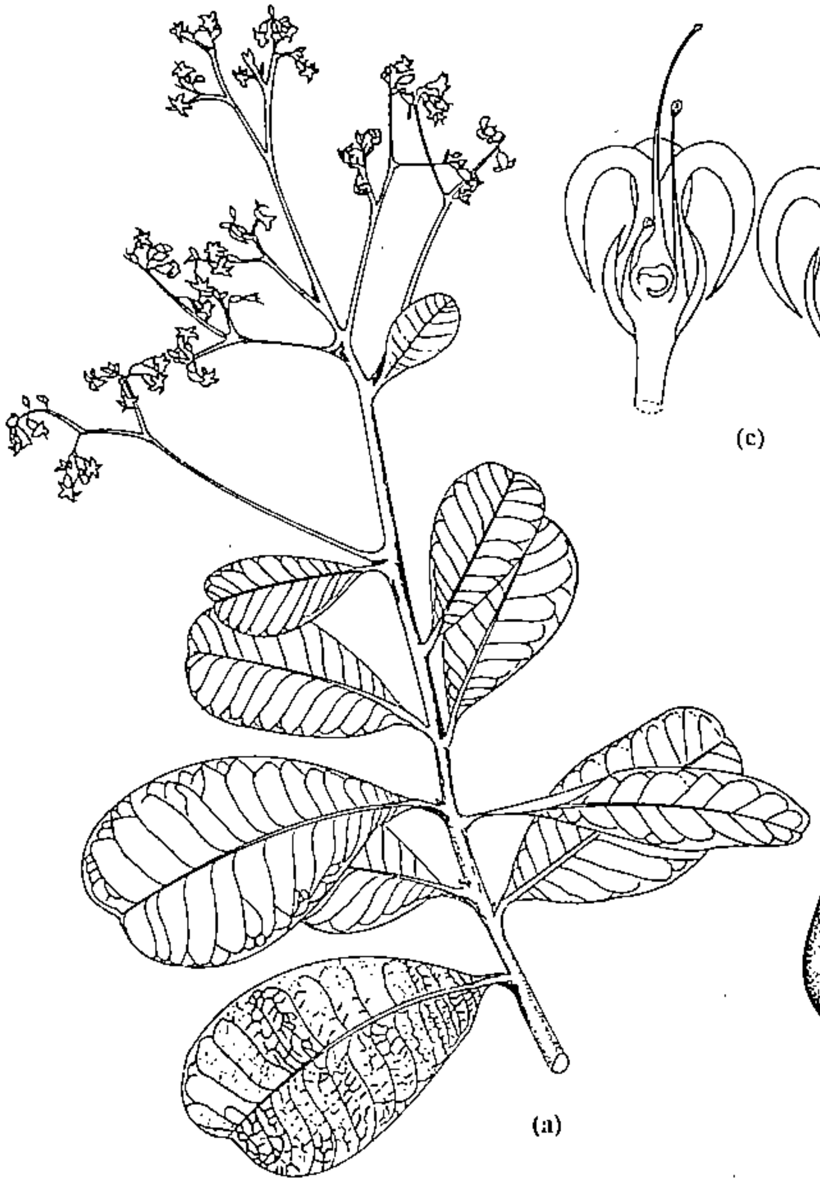

चित्र 13.15 : *ऐनाकार्डियम आक्सीडेन्टेल* (a) पत्तियों तथा पुष्पों को धारण किए काजू की एक शाखा (b) परिपक्व फल (c) नर तथा मादा पुष्प

13.3.1.4 काजू का संसाधन

कच्चे काजू के नट्स में कवच में बड़ी मात्रा में फीनॉलिक तेल पाए जाते हैं। इन तेलों में एक कषाय (astringent) स्वाद होता है तथा ये त्वचा पर दाह तथा फफोले उत्पन्न कर देते हैं। नट्स को बेचने से पूर्व इन तेलों को अलग करना जरूरी होता है। काजू के कवच में से तेल अलग करने के लिए कच्ची नट्स को आग पर बालू या राख में भूना जाता है। कवच के तेल को इस्तेमाल कि जा सकता है। अत: कच्चे नट्स से तेल निकालने के लिए तेल उष्मक (oil bath) पर भी भूना ज सकता है। इस तरीके से नट्स एकसार भुन जाती है तथा कवच में से तेल अधिक मात्रा में निकल आता है। तेल को कच्चे नट्स से, कार्बनिक विलायक द्रव्यों (solvents) या भाप में से गुजारकर भी निकाला जा सकता है। कवच में से तेल निकालने के बाद नट्स को खोल कर बीजावरण के साथ बीज प्राप्त कर लिया जाता है। यह प्रक्रिया तथा बीजावरण को अलग करने का काम हाथ से ही किया जाता है। इसके बाद काजू के बीजों को श्रेणियों में बांटकर निर्वात् (vacuum) पैकिंग व जाती है।

13.3.1.5 उपयोग

वृक्काकार काजू के बीज जिन्हें सामान्यत: काजू कहते हैं उसे डेज़र्ट नट के रूप में खाया जाता है तथा मिठाइयों में उपयोग किया जाता है। इसे ऐसे ही खाया जा सकता है या नमकीन करके अथव

घी में तल कर भी खाया जाता है। भुने हुए काजू भी खाये जाते हैं। स्वादिष्ट नट के अतिरिक्त, ''केश्यु एपल'' भी खाया जा सकता है। यह ''वास्तविक फल'' नहीं है, परन्तु इसको सेब की तरह ही उपयोग किया जाता है। रसीले ''केश्यु एपल'' का उपयोग जैम बनाने में किया जाता है अथवा इसको किण्डवित करके वाइन (शराब) बनाई जाती है जिसे ''फेनी'' या ''काजू वाइन'' कहते हैं। कवच से निकले तेल को जल-रोधक के रूप में अथवा परिरक्षात्मक रसायन (preservation) के रूप में उपयोग किया जाता है। इसको आसवित (distilled) करके वार्निश के पृथक्करण (insulation), टाइराइटर के रोल्स के निर्माण, ब्रेक लाइनिंग, स्याही, तेल तथा अम्ल-रोधी सीमेन्ट आदि बनाने में उपयोग किया जाता है। अमिट स्याही (indelible ink) (जिसे चुनावों के दौरान निशान लगाने में उपयोग किया जाता है) वृक्ष की छाल से प्राप्त होने वाले सत् से बनाई जाती है। तने के गोंद युक्त स्राव से चिपकाने वाले पदार्थ (adhesive) बनाए जाते हैं।

13.3.2 पिस्ता / पिश्ता (Pistachio)

वानस्पतिक नाम : *पिश्टेशिया वेरा* लिन. (*Pistacia vera* Linn.)
कुल : ऐनाकार्डिऐसी
सामान्य नाम : पिस्ता / पिश्ता
n = 15

पिस्ता आम कुल का तीसरा आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पादप है। इसे कभी-कभी हरा बादाम कहा जाता है परन्तु यह किसी भी तरह से वास्तविक बादाम से संबन्धित नहीं है।

13.3.2.1 उत्पत्ति तथा वितरण

पिस्ता की उत्पत्ति केन्द्रीय एशिया में हुई है। यह सामान्यत: पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र ईरान, अफगानिस्तान तथा मध्य एशिया में पाया जाता है। इसकी खेती इटली, टर्की, साइरिया, ईरान, अफगानिस्तान, लेबनान तथा भूमध्यसागरीय क्षेत्र के अन्य भागों में की जाती है। पिस्ता की खेती दक्षिण पश्चिमी एशिया तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका के कैलीफोर्निया, टैक्सास तथा एरीजोनिया राज्यों में भी की जाती है। हम पिस्ता का आयात बड़ी मात्रा में ईरान तथा अफगानिस्तान से करते हैं।

13.3.2.2 पारिस्थितिकी

पादप को कुपोषित मिट्टी में, शुष्क स्थानों पर तथा काफी ऊँचाई पर उगाया जा सकता है। पादप को अत्यधिक शीत प्रदान करने के लिए लंबे सर्दियों के मौसम की आवश्यकता होती है जिससे बसन्त में पुष्पन तथा फलन आरंभ हो सके। अत: पादप ठंडे मौसम भी झेल सकते हैं।

13.3.2.3 वानस्पतिकी

पादप छोटा शाखित पर्णपाती वृक्ष होता है जो 10 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ता है। पत्तियां संकर तथा 3-7 पत्रकों युक्त होती हैं जो मोटे तौर पर अंडाकार तथा चर्मिल होती हैं तथा चिपचिपा रेज़िन उत्पन्न करती हैं। वृक्ष एकलिंगाश्रयी होते हैं तथा अक्षीय असीमाक्षी गुच्छों में छोटे पुष्प उत्पन्न करते हैं। सामान्यत: पुष्पों में दल (petals) नहीं पाए जाते हैं। मादा पुष्पों में 2 या 3 अंडप होते हैं। हालांकि, सिर्फ एक अंडप में बीजांड होता है जो बीज में विकसित होता है। फल छोटा अष्ठि फल (गुठलीदार फल) होता है तथा उसका बाहरी छिलका (बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति) विभिन्न रंगों का होता है तथा अस्थिल अंत:फलभित्ति से अलग होता है। यह कठोर छिलका ''नट'' के परिपक्व हो जाने पर किनारे से खुल जाता है। (चित्र 13. 16)। इसके अंदर एक हल्के-पीले से गहरे हरे रंग का खाने योग्य बीज होता है जिसमें पतला लालामी लिए हुए बीजचोल होता है। प्रत्येक बीज में दो बड़े बीजपत्र होते हैं।

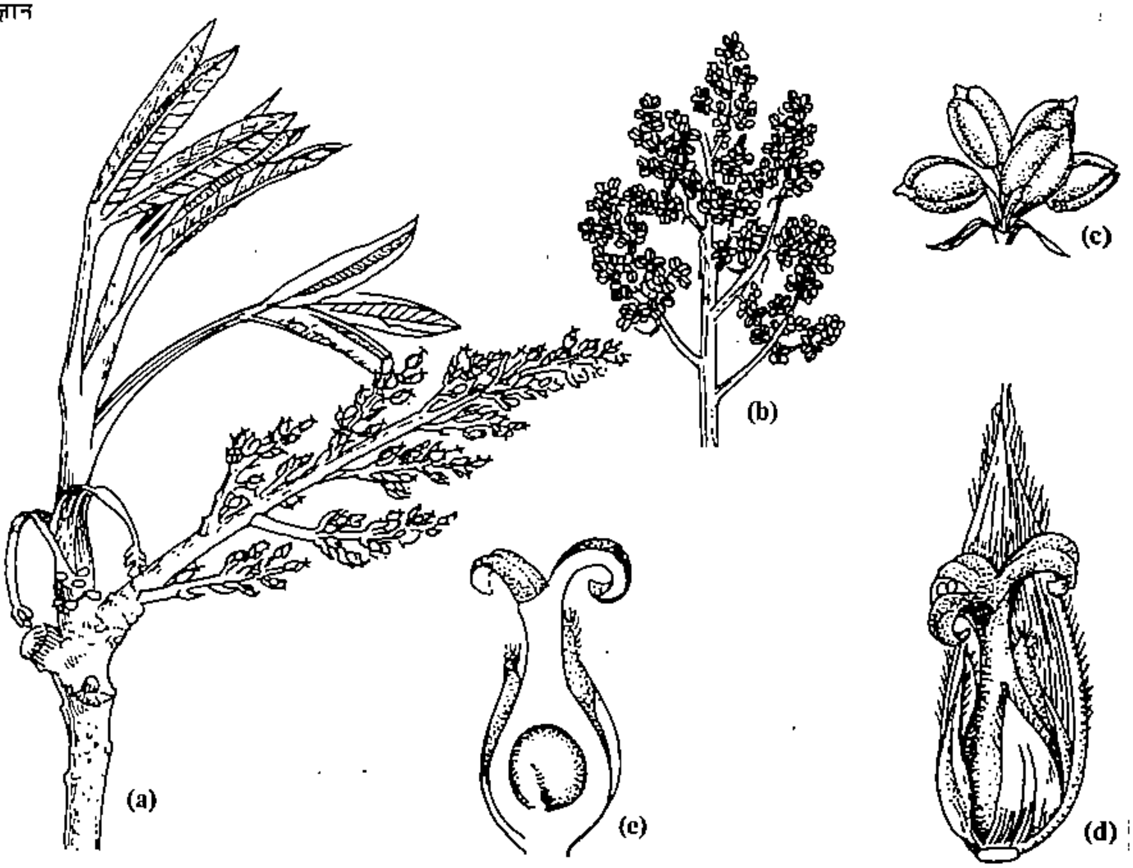

चित्र 13.16 : *पिस्टेशिया वेरा* (a) पिस्ता के नट्स की पुष्पीय शाखा (b) नर पुष्पक्रम (c) नर पुष्प (d) मादा पुष्प (e) अंडाशय की अनुदैर्घ्य काट

13.3.2.4 प्रवर्धन

पादपों को सामान्यत: कायिक रूप से चयनित किस्मों की नवोद्‌भिद के प्रकंद में कलम लगाकर प्रवर्धित किया जाता है। चूंकि पादप एकलिंगाश्रयी होते हैं, बागों में कम नर पादप तथा अधिक मादा पादप उगाए जाते हैं। कभी-कभी नर शाखा की वयस्क मादा वृक्ष पर कलम लगाई जाती है जिससे बाग में अलग से नर वृक्ष लगाने की आवश्यकता नहीं होती है। पिस्ता का वृक्ष लंबे समय तक चलता है तथा आम की तरह ही सामान्यत: एकांतरी रूप से फल धारण करता है।

13.3.2.5 उपयोग

खाद्य बीजों का स्वादिष्ट नटी स्वाद होता है। इन्हें नट के रूप में खाया जा सकता है अथवा इसका चूरा बनाकर दूध, आइसक्रीम, मिठाइयों तथा अन्य खाद्य चीजों में उपयोग किया जाता है। बीजों को जब वे कवच के अंदर ही होते हैं तभी उन्हें नमक के घोल (brine) (लवण जल) में रखकर व उसके बाद सुखाकर नमकीन भी किया जा सकता है। नट्स को भूना भी जा सकता है। पत्तियों से प्राप्त होने वाले रेजिनयुक्त पदार्थ में काफी मात्रा में टैनिन (tannin) होता है जिसका उपयोग चमड़े को रंगने तथा उसकी टैनिंग (tanning) करने के लिए किया जाता है।

13.3.3 अखरोट (The Walnut)

वानस्पति नाम : *जुगलैन्स रिजिया* लिन. (*Juglans regia* Linn.)
कुल : जुगलैन्डेसी
सामान्य नाम : अखरोट

अखरोट की कुछ प्रकारें पाई जाती है परंतु सामान्य अखरोट सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। यह पर्सियन अखरोट या इंगलिश अखरोट भी कहलाता है। इस प्रचलित अखरोट के अतिरिक्त,

काले अखरोट (*जुगलैन्स नाइग्रा* लिन. (*Juglans nigra* Linn.)) तथा सफेद अखरोट या बटरनट (*जुगलन्स सिनेरिया* लिन. (*Juglans cinerea* Linn.)) भी संयुक्त राष्ट्र अमरीका तथा कनाडा में उगाए जाते हैं।

13.3.3.1 उत्पत्ति तथा वितरण

वंश *जुगलैन्स* में लगभग 12 जातियां है जो उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका तथा दक्षिणी यूरोप से पूर्वी एशिया तक में भी वितरित हैं। सबसे विस्तृत रूप से ज्ञात जाति *जुगलैन्स रेजिया* या सामान्य अखरोट है। इसकी उत्पत्ति पर्सिया में हुई है (इसीलिए इसे पर्सियन अखरोट भी कहा जाता है)। यह जाति विस्तृत रूप से दक्षिणी यूरोप (इसीलिए इसका नाम यूरोपियन अखरोट) में उगाई जाती है, साथ ही चीन तथा भारत सहित एशिया के अन्य भागों में भी उगाई जाती है। भारत में, जम्मू तथा कश्मीर प्रमुख अखरोट उत्पादक क्षेत्र है। इसे पंजाब, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश में भी उगाया जाता है।

सामान्य अखरोट को संयुक्त राष्ट्र अमरीका के कैलोफोर्निया तथा ऑरेगॉन के राज्यों में पुर: स्थापित किया गया है। यह काले अखरोट से भिन्न है जिसे उसकी लकड़ी के लिए संयुक्त राष्ट्र अमरीका के बहुत से भागों में उगाया जाता है। कभी-कभी इस जाति की नट्स को भी इकट्ठा किया जाता है। सफेद अखरोट की खेती कनाडा तथा उत्तरी अमरीका में की जाती है व इसके नट्स से वालनट बटर (walnut butter) बनाया जाता है।

13.3.3.2 पारिस्थितिकी

अखरोट का पेड़ 1000 से 3500 मीटर की ऊँचाई तक पाया जाता है। वृक्ष को बसंत में पाले रहित मौसम की तथा गर्मियों में अत्यधिक गर्मी की अनुपस्थिति की आवश्यकता होती है। वृक्ष अच्छे गुल्म (coppice) बनाते हैं तथा बीज द्वारा प्रवर्धित होते हैं। वृक्ष 8-10 वर्ष का होने पर फल देना आरंभ करते हैं तथा 100 वर्ष तक फल देना जारी रखते हैं।

13.3.3.3 वानस्पतिकी

पादप बड़ा पर्णपाती उभयलिंगाश्रयी वृक्ष होता है जिसमें घनरोमिल (tomentose) प्ररोह होते हैं। यह 30-35 मी. तक बढ़ता है। खेती में, ये छोटे स्तंभ से फैलने के लिए तैयार किया जाता है। पत्तियां एकांतरी तथा विषमपक्षाकार (imparipinnate) तथा 5-13 पत्रकों सहित होती हैं जो उपवृंतीय, दीर्घवृत्तीय से अंडाकर-भालाकार तथा सतत् होते हैं। पुष्प एकलिंगी होते हैं। नर-पुष्प लंबे लटके हुए नतकणिश (catkin) में विकसित होते हैं जबकि मादा पुष्प 1-3 पुष्पीय अंतस्थ गुच्छों में पाये जाते हैं

फल हरा दीर्घवृत्तन या गोलाकार अष्ठिल फल (drupe) होता है जो पकने पर खुल जाता है। चर्मिल बाह्यफलभित्ति के भीतर कठोर काष्ठीय अंत:फलभित्ति होती है जो दो-कपाट वाली तथा वलीय (wrinkled) होती हैं, तथा एक बड़ा खाने योग्य अ-भ्रूणपोषी (non-endospermic) बीज लिए रहती है। बीज वलिमय (सिकुड़नों दार) तथा नट के भीतरी भाग के संरूपित होता है। दो बड़े तेलीय बीजपत्र नट के कवच/खोल को भरते हैं। प्रत्येक बीजपत्र आधार पर 2-पालियुक्त हो सकता है जिससे बीज चार-पालियुक्त हो जाता है। अपनी आकारिकी में, बीजपत्र मानव मस्तिष्क से सतही समानता दर्शाते हैं चित्र 13.17)। तरुण बीजों में, बीजचोल कड़वा होता है, परन्तु वयस्क बीजों में यह अपना कड़वा स्वाद खो देता है।

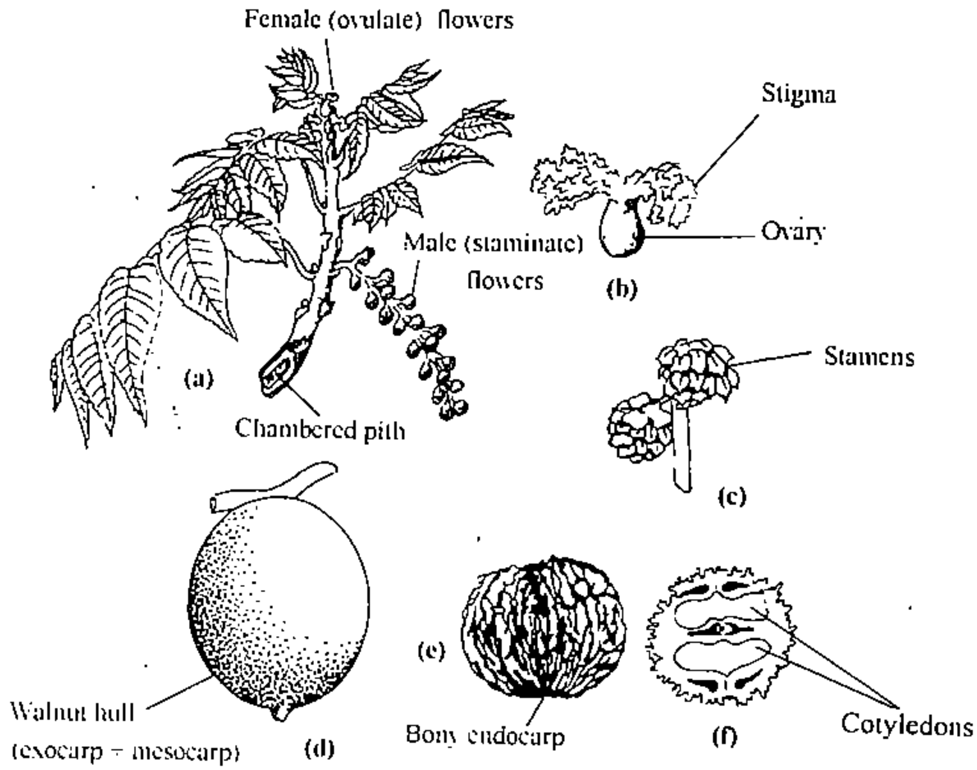

चित्र 13.17 : (a) नर तथा मादा पुष्पों के साथ अखरोट की एक शाखा (b) मादा पुष्प (c) नर पुष्प (d) फल (e) लंबी अंतःफलभित्ति (च) बीजपत्र

13.3.3.4 उपयोग

अखरोट का भोजन के रूप में उपयोग प्राचीन काल से ही होता आया है। बीज को डेज़र्ट नट या सूखे मेवे के रूप में विशेषरूप से सर्दियों में उत्तरी भारत में खाया जाता है। इसका उपयोग मिठाइयों तथा आइसक्रीम में भी किया जाता है। नट में प्रोटीन्स, वसा, खनिज तथा विटामिन्स पाए जाते हैं।

अपरिपक्व फल एस्कॉर्बिक अम्ल का समृद्ध स्रोत होते हैं। इनका सिरका में अचार भी डाला जा सकता है। पीत हरे-पीले या लगभग रंगहीन सूखने वाला तेल (drying oil) परिपक्व नट्स से निकाला जाता है। इसमें अच्छी खुशबू तथा नटी स्वाद होता है। यह खाने योग्य होता है तथा इसका पेन्ट्स वार्निस, प्रिंटिंग की स्याही तथा साबुनों के निर्माण में भी उपयोग किया जाता है। अखरोट की लकड़ी का उपयोग फर्नीचर तथा कलाकृतियों आदि बनाने के लिए भी किया जाता है। इसकी छाल का उपयोग दाँतों की सफाई के लिए किया जाता है जिसे "दन्दासा" कहते हैं।

13.3.4 बादाम

वानस्पतिक नाम : *प्रूनस डल्सिस* (मिल.) ड़ी.ए.वेब (*Prunus dulcis* (Mill.) D.A. Webb
पर्यायवाची नामः *प्रूनस एमिग्डेलस* बैस्च (*prunus amygdalus* Batsch.)
कुल : रेज़िसी
सामान्य नाम : बादाम
n = 8

रोज़ेसी कुल अनेक प्रकारों से आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है। आपने इस इकाई में पोम फलों सेव तथा नाशपाती - के बारे में पढ़ा। बादाम, जो रोज कुल का ही सदस्य है, यह विश्व की सबसे प्रचलित नट है जिसका उपयोग मानव द्वारा प्राचीन काल से किया जाता रहा है।

दिलचस्प रूप से इसमें फल पोम नहीं होता है, परन्तु यह अष्ठिल फल होता है जिसमें कठोर काष्ठीय अंत: फलाभित्ति बीज लिए हुए होती है।

13.3.4.1 उत्पत्ति तथा वितरण

बादाम की उत्पत्ति दक्षिण पश्चिमी एशिया में हुई है तथा यह भूमध्यसागरीय क्षेत्र के देशों में विस्तृत रूप से उगाया जाता है। प्रमुख बादाम उगाने वाले देश स्पेन, पुर्तगाल, इटली, टर्की, यूनान / ग्रीस, ट्यूनीशिया, मौरक्कों तथा ईरान है। बादाम संयुक्त राष्ट्र अमरीका के कैलीफोर्निया राज्य तथा दक्षिण ऑस्ट्रेलिया व दक्षिण अफ्रीका में भी उगाया जाता है। भारत में, बादाम की खेती कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में की जाती है। सबसे अच्छे बादाम बालूचिस्तान (पाकिस्तान) के होते हैं।

13.3.4.2 पारिस्थितिकी

बादाम के पौधे को उपोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है। पाला रहित वर्धन का मौसम तथा फल के पकने के दौरान काफी गर्म मौसम पादप की उचित वृद्धि के लिए आवश्यक हैं। अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए लगभग 60 से.मी. वार्षिक की पर्याप्त वर्षा की आवश्यकता होती है।

13.3.4.3 वानस्पतिकी

बादाम का पादप एक छोटा पर्णपाती वृक्ष होता है जो 8 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ता है। खेती में, इसे कम विस्तारी वृक्ष के रूप में उगाया जाता है जिससे नट्स को आसानी से तोड़ा जा सके चूंकि इन्हें हाथ से ही तोड़ा जाता है काष्ठ के विघटन के द्वारा गोंद बनता है तथा यह तने तथा शाखाओं पर चमकदार सफेद या पीला बर्हिस्राव निकालता है। पत्तियां सामान्य एकांतरी, अंडाकार-भालाकार या लंबी नोकदार छोटे-छोटे दांतेदार किनारों युक्त होती हैं। बसन्त में, पत्तियों से पहले सामान्यत: रंगीन फूलों के गुच्छे निकल आते हैं जो पादप को (या संपूर्ण बाग को) बहुत आकर्षक बना देते हैं। पुष्प 1 से 3 के छोटे गुच्छों में निकलते हैं। फल अष्ठिल फल होता है जिसमें हरी रोमिल बाह्यफलभित्ति, कड़ी चर्मिल मध्यफलभित्ति तथा कठोर अंत:फलभित्ति होती है। जब फल पक जाता है, तो बाह्यफलभित्ति तथा मध्यफलभित्ति बीच में से फट जाती है जिससे गर्तयुक्त (pitted) कठोर अंत:फलभित्ति दिखाई पड़ने लगती है जो पतली या मोटी होती है। इसमें एक अनुदैर्घ्य संधि रेखा होती है जिस पर से ये फटती है। इसमें एक (कभी-कभी दो) लंब, अंडाकार चपटा बीज होता है जिसमें भूरा सा बीज चोल होता है, व उसमें दो बड़े, मांसल समतल उत्तल (planoconvex) बीजपत्र पाए जाते हैं। यह बीज खूबसूरत बादाम के पेड़ का स्वादिष्ट नट होता है। (चित्र 13.18)।

नट के आमाप अंत:फलभित्ति के तंतुविन्यास (काष्ठता) तथा बीज के स्वाद के अनुसार विभिन्न प्रकार के बादाम पाए जाते हैं। कुछ बादाम मीठे होते हैं तथा अन्य कड़वे होते हैं। कड़वे बादामों में जहरीला ग्लूकोसाइड होता है जो एमाइग्डेलिन (amygdalin) कहलाता है। यह आसानी से प्रूसिक अम्ल में (जो हाइड्रोसायनिक (hydrocyanic) अम्ल भी कहलाता है) बदल जाता है जो बादाम के अरुचिकर कड़वे स्वाद के लिए जिम्मेदार होता है।

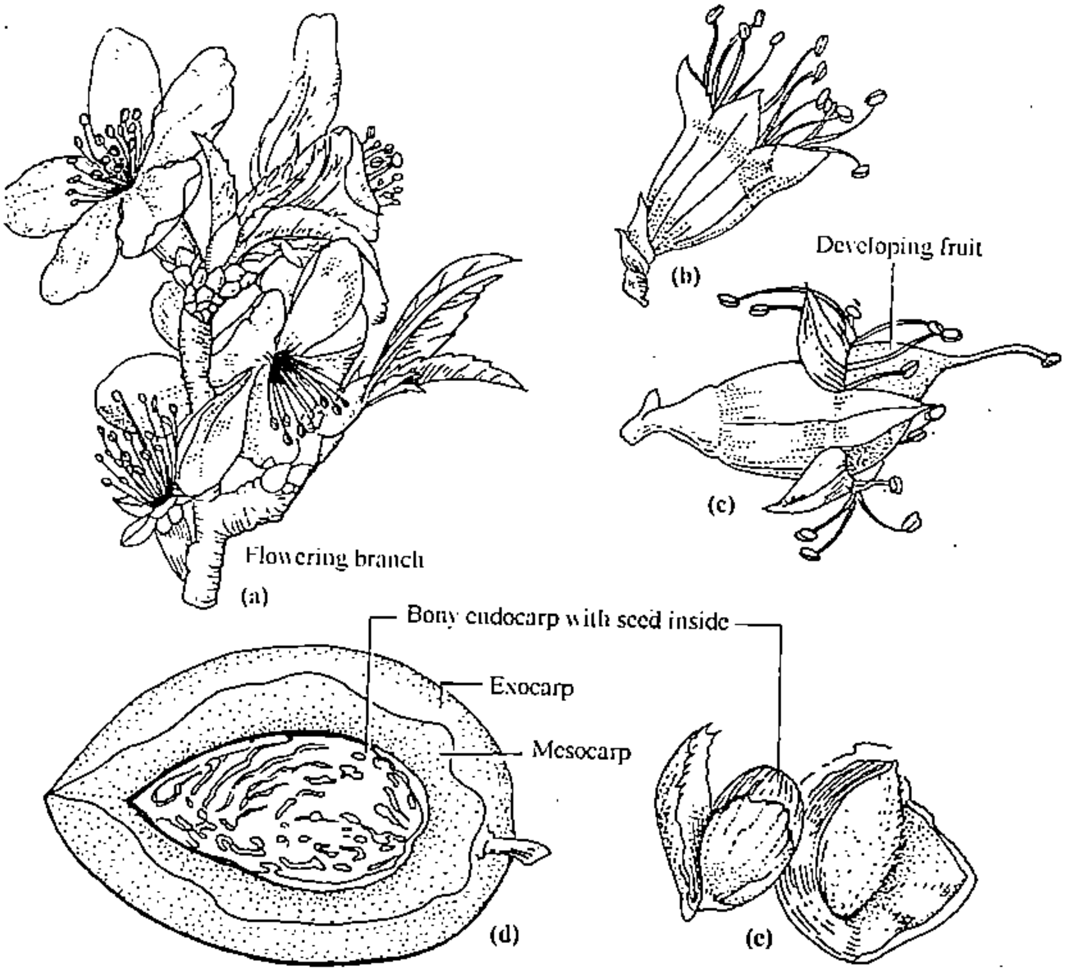

चित्र 13.18 : *प्रूनस डल्सिस* (a) बादाम की एक पल्लवित शाखा (b) पुष्प (c) विकासशील फल के साथ पुष्प (d) बीज के साथ फल (e) बीज

13.3.4.4 उपयोग

मीठे बादाम एक लोकप्रिय स्वादिष्ट खाद्य हैं। इन्हें ताजा ही खाया जा सकता है अथवा भूना या तला जा सकता है। इनका उपयोग बड़े पैमाने पर मिठाइयों, खीर, पुडिंग आदि में किया जाता है। चूरे के रूप में अथवा छीलकर बादाम को दूध में मिलाकर पोषक पेय तैयार किया जाता है।

कड़वे बादामों को सामान्यत: नट्स में से तेल निकालने के लिए उगाया जाता है। तेल से प्रूसिक अम्ल को निकाल कर इस तेल को सुगंधकारी तत्व के रूप में उपयोग किया जाता है। मीठे बादामों के तेल को औषधि के रूप में तथा कॉस्मेटिक्स में उपयोग किया जाता है।

13.3.5 चेस्टनट (Chestnut)

वानस्पतिक नाम : *कस्टेनिया सेटाइवा* मिल. (*Castanea sativa* Mill.)
कुल : फैगेसी
सामान्य नाम : चेस्टनट
n = 12

बादाम, पिस्ता तथा अखरोट के विपरीत, चेस्टनट वानस्पतिक रूप से "वास्तविक" नट है। इसमें अधिक कार्बोहाइड्रेट्स तथा कम प्रोटीन्स व वसा पाए जाते हैं।

13.3.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

वंश *केस्टेनिया* की लगभग 10 जातियां हैं जो उत्तर शीतोष्ण क्षेत्रों में फैली हुई हैं। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण *केस्टेनिया सेटाइवा* है जो स्वीट चेस्टनट या यूरोपियन चेस्टनट कहलाती है। यह जाति पश्चिम एशिया के पहाड़ी वनों, यूरोप तथा उत्तरी अफ्रीका की देशज / मूल निवासी है। भारत में,

यह हिमाचल के अनेक भागों में, व खासतौर पर पंजाब, दार्जिलिंग तथा खासी की पहाड़ियों में उगायी जाती है। इटली स्वीट चेस्टनट का अग्रणी उत्पादक है। अन्य देश को चेस्टनट का उत्पादन करते हैं, वे स्पेन, पुर्तगाल, तुर्की, यूनान / ग्रीस, फ्रांस तथा जापान है।

13.3.5.2 वानस्पतिकी

चेस्टनट का पादप बड़ा सदाबहार वृक्ष है जो 45 मीटर तक की ऊँचाई का होता है। पत्तियां सर्पिल रूप से व्यवस्थित अंडाकर-भालाकार तथा भोथरे दंत वाले किनारों युक्त होती हैं।

पुष्प एकलिंगी होते हैं। नर पुष्प बड़े कैटकिन्स / नतकणिशों में पाए जाते हैं तथा मादा पुष्प सामान्यत: तीन के गुच्छे में उगते हैं। फल एक-बीजीय नट होता है जिसमें चर्मिल या कठोर फल भित्ति होती है। इस प्रकार, प्रत्येक पुष्पक्रम में, 3 नट्स विकसित होते हैं। ये प्यालिका (cupule) द्वारा घिरे रहते हैं। प्यालिका की शक्ल-नुमा संरचनाएं कठोर तथा काँटे-जैसी हो जाती है। नट के पक जाने पर क्यूपूल / प्यालिका में दरार पड़ जाती है (चित्र 13.19)। नट्स त्रिकोणीय, गहरी भूरी तथा एल्ब्यूनिन विहीन होती हैं। इसमें दो बड़े सिकुड़े हुए बीजपत्र होते हैं। जिनमें बड़ी मात्रा में मंड तथा शर्करा तथा बहुत कम प्रोटीन और वसा होता है।

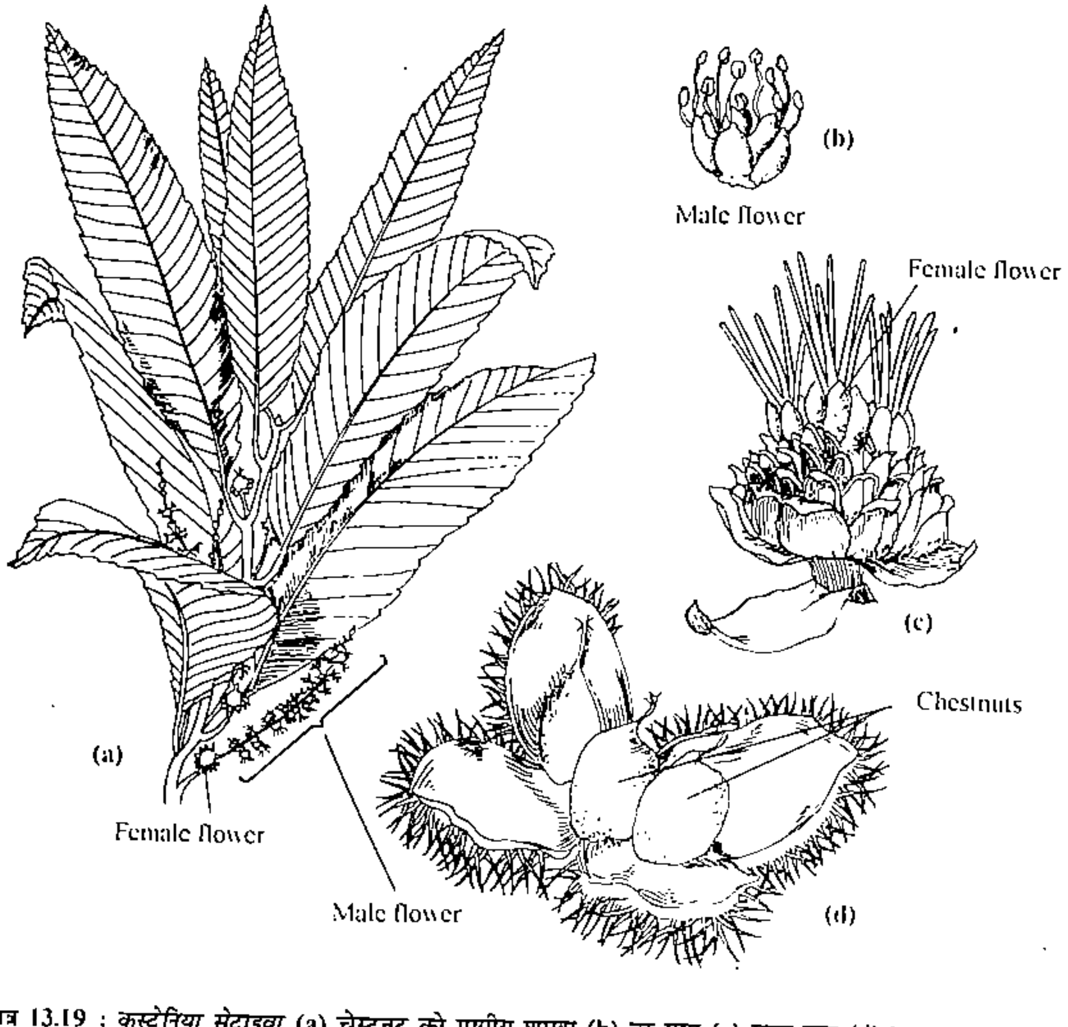

चित्र 13.19 : *कस्टेनिया सेटाइवा* (a) चेस्टनट को पुष्पीय शाखा (b) नर पुष्प (c) मादा पुष्प (d) नट्स

13.3.5.4 उपयोग

चेस्टनट का उपयोग भोजन के एक पदार्थ के रूप में कई सदियों से होता आ रहा है। अपने उच्च कार्बोहाइड्रेड तत्व के कारण, चेस्टनट यूरोप में गेहूं या मक्का की भांति महत्वपूर्ण हैं। अन्य मांडयुक्त भोज्य पदार्थों की भांति ही इन्हें उबालकर या भूनकर खाया जाता है। नट्स का आटा भी बनाया जाता है तथा भोज्य पदार्थ के रूप में खाया जाता है। यह मंड, अन्य पौलीसैकेराइड्स, सुक्रोस तथा खनिजों

से समृद्ध होता है। लकड़ी से प्राप्त किया जाने वाले टैनिन का उपयोग टैनिन उद्योग में किया जाता है। पत्तियों तथा छाल में भी टैनिन होता है।

बोध प्रश्न 3

1. नाम बताइए

   क) तीन नट उत्पन्न करने वाले पादपों के जिनमें फल वानस्पतिक रूप से अष्ठिल फल / डूप होता है।

   (i)

   (ii)

   (iii)

   ख) तीन नट उत्पन्न करने वाले पादप जिनमें फल वानस्पतिक रूप से नट होता है।

   (i)

   (ii)

2. उन नट्स के नाम बताइए जिनमें निम्नलिखित तत्व होते हैं

   अ) एस्कॉर्बिक अम्ल ....

   ब) प्रूसिक अम्ल ....

   स) मंड, सुक्रोस तथा खनिज ....

3. केश्यु एपल पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

13.4 सारांश

इस इकाई में आपको विभिन्न फलों तथा दृढ़फलों / नट्स के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की गई है। फल शब्द की परिभाषा प्रचलित शब्दों में व साथ ही वानस्पतिक अर्थों में (वैज्ञानिक) देने से आपको इस संरचना को बेहतर ढंग से समझने में सहायता मिलेगी। विभिन्न प्रकार के फल तथा उनके वानस्पतिक गुणों को सूचीबद्ध किया गया है जिससे आपको फलों तथा दृढ़फलों के अध्ययन में सुविधा रहे।

आपने प्रसिद्ध फलों तथा दृढ़फलों / नट्स की उत्पत्ति, वितरण, पारिस्थितिकी, वानस्पतिकी तथा उपयोगों के बारे में पढ़ा। निम्नलिखित तालिका में आपके द्वारा प्राप्त की गई जानकारी का संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

फल/नट	वानस्पतिक नाम	कुल	उत्पत्ति का केन्द्र	वानस्पतिक गुण
आम	*मैंजीफेरा इंडिका*	ऐनाकार्डिएसी	इंडो-बर्मा	बड़ा सदावहार वृक्ष, फल अष्ठिल फल है जो खनिज असंतुलन के कारण एकांतर वर्षों में फल धारण करता है।
केला	*म्यूज़ा-पैराडिसिएका किस्म सैपाइन्टम*	मूसेसी	दक्षिण-पूर्व एशिया	विशाल बहुवर्षी शाक, फल सरस फल होता है।
अन्नानास	*अनानास कोमोसस*	ब्रोमीलिएसी	दक्षिण अमरीका	मरूस्थलीय गुणों वाला बहुवर्षी शाक, फल सिनकार्प है।
पपीता	*कैरिका पपाया*	कैरीकेसी	दक्षिणी मैक्सिको	मृदु काष्ठ वाला बहु वर्षी शाक फल सरस फल है।
अमरूद	*सिडियम गुआजावा*	मिर्टेसी/मर्टेसी	ट्रॉपिकल अमरीका	विस्तारी शाखाओं वाला बड़ा झाड़ या छोटा पेड़, फल सरस फल है।
अंजीर	*फाइकस कैरिका*	मोरेसी	एशिया माइनर	मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष, फल साइकोनियम है। परागण तथा फल निर्माण के लिए विशेष अंजीर के ततैयों की आवश्यकता होती है।
स्वीट/मृदुसंतरा	*सिट्रस साइनेन्सिस*	रूटेसी	दक्षिण पूर्वी एशिया	छोटा सदावहार वृक्ष; फल हैस्पेरेडियम होता है।
नींबू	*सिट्रस लाइमन*	रूटेसी	दक्षिण पूर्व एशिया	समान
तरबूज	*सिट्रुलस लेनेटस*	कुकुरविटेसी	ट्रॉपिकल अफ्रीका	शाकीय, एकवर्षी, प्रतान युक्त, फल अनेक बीजों वाला पीपो है।
खरबूजा	*कुकुमिस मेलो*	कुकुरविटेसी	ट्रॉपिकल अफ्रीका	शाकीय, एकवर्षी, फल अनेक बीजों वाला पीपो है।
लीची	*लीची चाइनेसिस*	सैपिन्डेसी	दक्षिणी चीन	घना सदावहार वृक्ष; फल नट है, खाद्य बीजचोल बीज को घेरे रहता है।
अनार	*प्यूनिका ग्रैनेटम*	प्यूनिकेसी	ईरान, अफगा. बलूचिस्तान	बहुत अधिक शाखित छोटा वृक्ष या बड़ा झाड़, फल सरस फल जैसा चर्मिल फलभित्ति युक्त व अनेक बीज वाला होता है, रसीले बीज खाए जाते हैं।
सेब	*मेलस प्यूमिला*	रोज़ेसी	पश्चिमी हिमालय	कम विस्तारी वृक्ष; फल छोटे प्ररोहों पर उत्पन्न होता है; फल पोम (pome) है।
नाशपाती	*पाइरस कम्यूनिस*	रोज़ेसी	यूरोप	छोटा वृक्ष, फल पोम होता है।
काजू	*ऐनाकार्डियम ऑक्सीडेन्टेल*	ऐनाकार्डिएसी	ट्रॉपिकल अमरीका	मध्यम आकार का सदावहार वृक्ष; फल नट है, केश्यू एपल मांसल रसीली संरचना है; यह खाद्य योग्य है तथा शराब (wine) बनाने में भी काम आता है।
पिस्ता	*पिस्टेशिया वेरा*	ऐनाकर्डिएसी	मध्य एशिया	छोटा पर्णपाती वृक्ष; फल अष्ठिल फल (drupe) है।
अखरोट	*जुगलैन्स रिजिया*	जुगलैन्डेसी	ईरान	बड़ा पर्णपाती, उभयलिंगाश्रयी वृक्ष; फल अष्ठिल फल है; बड़ा अ-भ्रूणपोषी बीज मानव मस्तिष्क से मिलता है।
बादाम	*प्रूनस डलसिस*	रोज़ेसी	दक्षिण पश्चिम एशिया	छोटा पर्णपाती वृक्ष, फल अष्ठिल फल है।
चेस्टनट	*कैस्टेनिया सेटाइवा*	फैगेसी	पश्चिम एशिया यूरोप उत्तरी अमरीका	बड़ा सदावहार वृक्ष; कैटीकन्स में एकलिंगी पुष्प होते हैं; फल नट होता है जिसमें चर्मित फल भित्ति होती है; बीज मांड तथा शर्करा से समृद्ध होता है।

उपर्युक्त तालिका से तथा इस इकाई में दिए गए विवरण से, आपने पढ़ा कि बड़ी संख्या में फल तथा नट के पादपों का उपयोग मानव द्वारा प्राचीन काल से किया जाता रहा है।

इनमें से अधिकांश पादप द्विबीजपत्री हैं परन्तु दो पादप एक बीजपत्री हैं। ये केला तथा अन्नानास हैं। इनमें से तीन पादप (आम, काजू और पिस्ता) ऐनाकार्डिएसी कुल में वर्गीकृत किए गए हैं। तथा तीन (सेब, नाशपाती और बादाम) रोज़ेसी कुल में किए गए हैं। वंश *सिट्रस* के अनेकों पादप (कुल रूटेसी) स्वादिष्ट फल प्रदान करते हैं।

13.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. फल शब्द को परिभाषित कीजिए तथा वानस्पतिक तौर पर विभिन्न प्रकार के फलों का वर्णन कीजिए। फलों के प्रमुख गुणों का सामान्य तौर पर विवरण दीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. अपने द्वारा पढ़े गए उन पादपों के नाम बताइए जिनमें फल बेरी होता है। इनमें से किन्हीं दो का निम्नलिखित शीर्षकों द्वारा विस्तृत वर्णन कीजिए: उत्पत्ति तथा वितरण; पारिस्थतिकी, वानस्पतिकी तथा उपयोग।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

3. उन गुणों को बताइए जिनके द्वारा आप सरस फल का अष्ठिल फल से अंतर कर सकते हैं। अपने द्वारा पढ़े गए उन पादपों को सूचीबद्ध कीजिए जिनमें फल अष्ठिल फल है। ''सभी फलों के राजा'' का वर्णन कीजिए; उसके प्रमुख वानस्पतिक गुणों तथा उपयोगों को बताइए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

4. किसलिए पोम "कूट/मिथ्या फल" कहलाता है ? पोम का वर्णन कीजिए तथा उसकी संरचना का उल्लेख कीजिए। पोप फलों के महत्व का समझाइए।

....

....

....

....

....

....

5. प्रचलित मानकों के आधार पर 'नट' क्या है ? नट को वानस्पतिक शब्दों में परिभाषित कीजिए। दो पादपों के नाम बताइए जिनमें फल वानस्पतिक नट नहीं है, परन्तु इसका उपयोग नट के रूप में होता है।

....

....

....

....

....

....

प्रोजेक्ट

फल तथा नट / दृढ़फल उत्पादक पादपों के नाम बताइए जिनके उत्पाद आपके क्षेत्र में खाए जाते हैं। अपने अध्ययन केन्द्र में उपलब्ध किताबों में से देखकर उनमें से प्रत्येक के वानस्पतिक नाम, कुल, तथा प्रचलित नाम लिखिए। इनमें से किसी एक ऐसे फल / दृढ़फल का वर्णन कीजिए जिसकी चर्चा इस इकाई में नहीं की गई है।

13.6 उत्तर

बोध प्रश्न 1

1	फल	वानस्पतिक नाम	कुल
क)	केला	*म्यूज़ा पैराडिज़िएका* किस्म *सैपाइन्टम*	मूसेसी
ख)	सामान्य अंजीर	*फाइकस केरिका*	मोरेसी
ग)	आम	*मैंजीफेरा इंडिका*	ऐनाकार्डिएसी
घ)	अन्नानास	*अनानास कोमोसस*	ब्रोमेलिएसी

2. क) i) आम

    ii) पपीता

    iii) अंजीर

    (कोई दो)

   ख) i) केला

    ii) अन्नानास

    iii) अमरूद

    (कोई दो)

   ग) i) केला

    ii) अन्नानास

3. क - ii

   ख - iv

   ग - iii

   घ - i

4. क) अन्नानास

   ख) अंजीर

5. छात्र द्वारा सूचीबद्ध किए गए फलों तथा दृढ़फलों / नट्स के आधार पर उत्तर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न होगा।

बोध प्रश्न 2

1. क - vi

   ख - iv

   ग - ii

   घ - i

   ङ - iii

   च - v

2. क - स (सत्य)

   ख - स (सत्य)

   ग - अ (असत्य)

   घ - अ (असत्य)

   ङ - स (सत्य)

3. क) i) सेव

    ii) सिट्रस

    iii) नाशपाती

ख) i) तरबूज

ii) खरबूजा

iii) अनार

4. क) सिट्रस फल का वर्णन कर दीजिए।

ख) सेब या नाशपाती के फल का वर्णन कर दीजिए।

5. क) आम - *मैंजीफेरा इंडिका* एनाकार्डिएसी

ख) मैन्डेरिन - *सिट्रस रेटीकुलेटा* रूटेसी

ग) नाशपाती - *पाइरस कम्यूनिस* रोज़ेसी

घ) तरबूज - *सिट्रस लेनेटस* कुकुरबिटेसी

6. क) सेब

ख) लीची

ग) सिट्रस

घ) खरबूजा

बोध प्रश्न 3

1. क i) बादाम

ii) पिश्ता

iii) अखरोट

ख) i) काजू

ii) चेस्टनट

2. क) अखरोट

ख) कड़वे बादाम

ग) चेस्टनट

3. 13.3.1.3 तथा 13.3.1.5 देखिए।

अंत में कुछ प्रश्न

1. प्रस्तावना में से देखिए

2. i) केला

ii) पपीता

iii) अमरूद

iv) अनार

v) सिट्रस फल (हैस्पेरीडियम विशेष प्रकार का सरस फल है)।

vi) मेलेन्स (पीपो भी विशेष प्रकार का सरस फल है)। वर्णन करने के लिए पाठ्य में से देखिए।

3. बोध प्रश्न 1 के उत्तर 1-सी को देखिए।

   i) आम

   ii) पिश्ता

   iii) अखरोट

   iv) बादाम

आम के फल का वर्णन कर दीजिए तथा उसके उपयोग बता दीजिए।

4. 13.2.11 को देखिए - पोम फल (The pome fruits)

5. 13.3 को देखिए - दृढ़फल / नट्स

निम्नलिखित में से किसी एक का वर्णन कर दीजिए।

पिश्ता

बादाम

अखरोट

इकाई 14 सब्जियाँ

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

14.2 जड़ों तथा अन्य भूमिगत भागों से प्राप्त होने वाली सब्जियां

14.3 पत्तियों से प्राप्त होने वाली सब्जियां

14.4 फलों तथा बीजों से प्राप्त होने वाली सब्जियां

14.5 सारांश

14.6 अंत में कुछ प्रश्न

14.7 उत्तर

14.1 प्रस्तावना

सब्जियां शाकाहारी आहार का महत्वपूर्ण भाग होती हैं। ताजी सब्जियों तथा फलों की खपत अब से ज्यादा पहले कभी नहीं थी, तथा ये हमारे आहार में विविधता, स्वाद, खनिज तथा अधिक आवश्यक विटामिन्स प्रदान करते हैं।

सब्जियों को पादप तथा पादप भागों से प्राप्त होने वाले किसी भी अन्य पोषक आहार की भांति ही परिभाषित किया जा सकता है। अत: जड़ों तनों, पत्तियों, पुष्पक्रमों, बीजों तथा खाद्य फलों, सभी को विभिन्न तरीकों से सब्जियों के रूप में उपयोग किया जा सकता है। उन्हें सलाद के रूप में कच्चा ही खाया जा सकता है अथवा विभिन्न तरीकों से पकाया जा सकता है। सब्जियों को भोजन के प्रमुख भाग के रूप में भी लिया जा सकता है अथवा उन्हें नाश्ते के रूप में या सूप में लिया जा सकता है।

सब्जियां स्वस्थ / पोषक आहार का महत्वपूर्ण भाग हैं। ये विटामिन्स, खासतौर पर नियासिन (niacin), राइबोफ्लेविन (riboflavin), थाइमीन (thiamin) तथा विटामिन ई का बेहतरीन स्रोत हैं। विटामिन ए का पूर्ववर्ती (precursor) कुछ सब्जियों में काफी मात्रा में पाया जाता है। ये खनिज जैसे कैल्सियम तथा लौहतत्व (iron) भी प्रदान करते हैं। पादप कोशिकाओं की सेलुलोसीय कोशिका भित्तियों का हमारे लिए अपने आप में कोई पोषक मूल्य नहीं है। परंतु यह तत्व हमारे भोजन में अति आवश्यक है। यह आहार नाल की उचित कार्यशैली के लिए आवश्यक व्यर्थ पदार्थ (roughage) प्रदान करता है।

अधिकांश सब्जियों में काफी मात्रा में नमी पाई जाती है तथा शाकाहारी आहार में मांसाहारी आहार की अपेक्षा कम कैलोरीज़ होती हैं। दिलचस्प बात है, कि अध्ययनों से पता चला है कि शाकाहारी लोग अधिक स्वस्थ होते हैं तथा अधिक समय तक जीते हैं। ये पोषक आहार की विवेक सम्मत योजना के कारण होता है। अधिकांश शाकाहारी, इसलिए, भोजन परिभाषित संयोजनों में खाते हैं जो संतुलित आहार देता है। उदाहरण के लिए, चावल तथा बीन्स एक साथ खाए जाने पर अकेले खाए जाने की अपेक्षा अधिक संतुलित पोषण प्रदान करते हैं। मानव भोजन में सब्जियों के महत्व को देखते हुए, पहले सब्जियां प्रदान करने वाले पादपों के बारे में जानना उचित होगा।

विभिन्न पादप, सभ्यता के आरंभ से ही सब्जियों के रूप में खाए जाते रहे हैं। अनाजों के साथ ही प्राचीन काल में लोगों ने विभिन्न सब्जियों की फसलों को उगाना भी आरंभ कर दिया था जिससे संतुलित आहार प्रदान किया जा सके। इनमें से कुछ पादपों ने विश्व-स्तर पर महत्व प्राप्त किया तथा आज यह विश्व में भली प्रकार जाने जाते हैं। इनके बारे में वनस्पति विज्ञानियों, कृषि विज्ञानियों तथा आहार विज्ञानियों ने काफी विस्तार से वर्णन किया है।

ऐसी सब्जियां भी हैं जो स्थानीय महत्व की होती हैं तथा कम ही लोगों द्वारा खाई जाती हैं। वे उस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण होती हैं। इनमें से कुछ प्राकृतिक रूप से पाई जाती हैं जबकि अन्य की सीमित स्तर पर खेती की जाती है। हालांकि, हाल के वर्षों में (जैसा कि फलों के साथ है- इकाई 13 देखिए) शीतअनुकूलित संग्रह, वायु परिवहन तथा पैकिंग की तकनीकों के कारण बड़े शहरों में विभिन्न प्रकार की सब्जियां देश के विभिन्न भागों से उपलब्ध कराई जा सकती हैं।

सब्जियों को विभिन्न तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है। यहां पर हम आकृति विज्ञान पर आधारित वर्गीकरण का अनुसरण करेंगे तथा विभिन्न सब्जियों को उनके वानस्पतिक (लैटिन) नाम तथा वह कुल जिसमें उस पादप को वर्गीकृत किया गया हो उसके आधार पर पहचानेंगे। विभिन्न पादपों को उसके उस भाग की आकारिकीय प्रकृति के आधार पर जिसे सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। समूहित करना भी सुविधाजनक रहता है।

क) भूमिगत पादप के भाग जैसे जड़ें, प्रकंद (rhizome), कंद (tuber) तथा शल्क कंद (bulb) जैसे प्याज, आलू, गाजर आदि।

ख) पत्तियां तथा तरुण प्ररोह, जैसे पालक, पत्ता गोभी, सलाद के पत्ते आदि।

ग) पुष्पक्रम तथा फूल जैसे गोभी

घ) फल तथा बीज जैसे टमाटर, बैंगन, कुकुर्बर, मिर्च, आदि।

इस इकाई में, आप कुछ प्रसिद्ध सब्जी उत्पादक पादपों के बारे में पढ़ेंगे जिससे मानव के लिए उनके महत्व को समझ सके।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जानने में समर्थ होंगे :

- मानव आहार में सब्जियों के महत्व को,
- सब्जियों के वर्गीकरण को,
- सब्जियों के सामान्य गुणों को,
- सब्जियों के वानस्पतिक नाम तथा उनके कुलों को,
- निम्नलिखित सब्जियों की उत्पत्ति, वितरण, पारिस्थितिकी, वानस्पतिकी तथा उपयोगों के बारे में जानने में– आलू, शकरकंदी, कैसावा, प्याज, लहसुन, चुकंदर, गाजर, पत्तागोभी, लैट्यूस / सलाद पत्ता, पालक कुकरबिट्स, टमाटर, बैंगन, ओक्रा तथा मिर्च।

142 जड़ों तथा अन्य भूमिगत भागों से प्राप्त होने वाली सब्जियां

अनेकों पादप अपने भोजन को विभिन्न प्रकार के भूमिगत अंगों में संग्रहित करते हैं। संग्रही अंगों की तरह काम करने के अतिरिक्त ये कायिक प्रवर्धन के लिए भी महत्वपूर्ण होते हैं। ये फूले हुए अंग रूपांतरित जड़ें, भूमिगत तने के कंद या शल्क कंद हो सकते हैं। ये भूमि में संरक्षित रहते हैं तथा बड़ी मात्रा में मृदूतकी ऊतक लिए रहते हैं जो काफी मात्रा में जल तथा खाद्य पदार्थ खासतौर पर कार्बोहाइड्रेट्स लिए रहते हैं जो ऊर्जा प्रदान करते हैं। कार्बोहाइड्रेट्स के अतिरिक्त इन अंगों की कोशिकाएं खनिज, विटामिन्स, कुछ वर्णक (जैसे गाजर में कैरोटीन (carotene) चुकंदर में बीटासायनिन्स (betacyanins) आदि) तथा प्रोटीन भी लिए रहती हैं। इन सब्जियों का कैलोरी मूल्य प्रति इकाई भूमि के क्षेत्र में अनाजों की तुलना में अधिक होता है। अनेकों सब्जियों के पादप मानव को ज्ञात हैं तथा इनमें से गाजर, चुकंदर, मूली, शकरकंदी तथा कैसावा जल्दी परिपक्व होने वाली जड़ फसलें हैं। इनमें, मूसला जड़ (tap root) बड़ी मात्रा में खाद्य पदार्थों को संचित करने के लिए रूपांतरित रहती हैं। आलू, प्याज, लहसुन, *कोलोकेसिया (Colocasia)* तथा *एमार्फोफेलस (Amorphophallus)* में रूपांतरित भूमिगत तने होते हैं जिन्हें सब्जी के रूप में खाया जाता है।

14.2.1 आलू या आयरिश पटेटो (Potato or Irish Potato)

वानस्पतिक नाम : *सोलेनम ट्यूबरोसम* लिन. (*Solanum tuberosum* Linn.)
सामान्य नाम : आलू
कुल : सोलेनेसी
n = 12

14.2.1.1 उत्पत्ति तथा वितरण

आलू नई दुनिया का उपहार है। यह पुरानी दुनिया में सोलहवीं शताब्दी से पहले ज्ञात नहीं था। इसकी उत्पत्ति दक्षिण अमरीका के एंडीस पहाड़ों में हुई है तथा यह उस क्षेत्र के लोगों के जीवन में काफी प्रभावी था। जब कोलंबस नई दुनिया में पहुंचा यह मध्य तथा उत्तरी अमरीका में ज्ञात नहीं था। आलू विश्व के अन्य भागों में सोलहवीं शताब्दी के बाद ही पुर: स्थापित (introduced) हुआ। इसे आइरिश पटेटो कहते हैं क्योंकि 1845-46 में आयरलैण्ड तथा यूरोप के अन्य कई भागों में *फाइटोफ्थोरा (Phytophthora)* के संक्रमण के कारण आलू की फसल बर्बाद होने से सबसे भयानक अकाल पड़ा था।

बॉक्स 14.1 : आयरलैण्ड का अकाल

1840 के दशक तक, आयरलैण्ड में आलू प्रमुख आहार था जिस पर 1845-1846 तक आयरलैण्ड के किसान निर्भर थे। पूरे देश ने आवश्यक रूप से कंदीय पादपों की (tuberous plants) एकल खेती (monoculture) अपना रखी थी। 1845 के लगभग विनाश ने दस्तक दी। जब आलू की शीर्णता (Potato blight), जो *फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टन्स (Phytophthora infestans)* कवक के द्वारा होती है, वह यूरोप में पहुंची तथा पाँच वर्ष के भीतर ही वास्तविकता में पूरी आइरिश (आयरलैण्ड की) तथा ब्रिटिश (ब्रिटेन की) आलू की फसल नष्ट हो गई थी। ऐसा अनुमान है कि इस काल के दौरान लोग (कुछ कहते हैं कि 2 करोड़ लोग) भूख से मर गए तथा अन्य एक करोड़ वहां से दूसरी जगहों पर चले गए। यह पश्चिमी दुनिया के इतिहास में सबसे भयंकर अकाल था जिसके बाद अद्वितीय देशांतरण हुआ।

कृष्य आलू चतुर्गुणित (tetraploid) होता है। इसकी उत्पत्ति प्राचीन द्विगुणित जाति में क्रोमोसोम / गुणसूत्रों के दुगना होने (chromosome doubling) से हुई होगी, अथवा यह दो प्राचीन द्विगुणित जातियों के बीच संकरण (hybridization) व उसके बाद गुणन उभय (amphiploidy) से उत्पन्न हुआ होगा।

आलू की खेती पूरे यूरोप, रूस, एशिया, अफ्रीका, तथा अमरीका में होती है। भारत में आलू उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार, पंजाब, मध्यप्रदेश, तमिलनाडू तथा कुछ अन्य राज्यों में एक प्रमुख फसल है। इसे अधिकांशत: स्थानीय खपत के लिए बोया जाता है।

14.2.1.2 खेती

आलू ठंडी नम जलवायु में शीतोष्ण क्षेत्रों में बोया जाता है। इसका कंद / टयूबर के निर्माण के दौरान गर्म दिनों व सर्द रात्रियों की आवश्यकता पड़ती है। 3-4 महीनों की वर्षा या सिंचाई कंद के निर्माण को उन्नत करती है। पाला फसल के लिए हानिकारक है। अल्प प्रदीप्त काल (short day) या नाइट्रोजन की कमी भी कंद निर्माण को बढ़ाती है। फसल को विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। छिद्रमय (porous), अच्छी जल निकासी वाली अम्लीय मिट्टी (पी एच 5.0) अच्छी होती हैं क्योंकि वे ट्यूबर / कंद की वृद्धि को बढ़ाती हैं।

फसल को कायिक रूप से छोटे कंदों (जो बीज आलू कहलाते हैं) द्वारा अथवा बड़े कंदों के भागों से प्रवर्धित किया जाता है। इन भागों में आँख (eye) या अक्षीय कलिकाओं का होना आवश्यक है जो नए पादप के रूप में विकसित हो जाती हैं। फसल की कटाई लगभग चार महीने बाद होती है।

14.2.1.3 वानस्पतिकी

आलू का पादप एक शाकीय बहुवर्षी पादप है परंतु इसकी खेती एकवर्षी के तौर पर की जाती है। इसमें सुविकसित अपस्थानिक तंतुमय जड़ तंत्र तथा भूनिगत भूस्तारी (stolons) होते हैं जो कंद

धारण करते हैं। ये भूमिगत तने छोटी तथा मोटी संरचनाएं होते हैं जिनमें शल्क जैसी पत्तियां होती हैं। इन शल्क-जैसी पत्तियों के अक्षों में, अक्षीय कलिकाएं होती हैं जो आलू की 'आँख' कहलाती हैं। शल्क नुमा पत्तियां गिर जाती हैं तथा प्रत्येक आंख के निकट पर्ण दाग (leaf scar) बन जाता है। "आँख" वास्तव में अक्षीय शाखाओं को प्रदर्शित करती हैं (चित्र 14.1)। ये कंद पर सर्पिल रूप में व्यवस्थित रहती हैं। आलू का कंद अपनी शरीर विज्ञानी संरचना में एक प्रारूपिक तना है। सबसे बाहर की परत परिचर्म (periderm) होती है तथा यह वल्कुट (cortex) को घेरे रहती है। वल्कुट के अंदर संवहनी पूलों (vascular bundles) की वलय होती है जो केन्द्रीय मज्जा को घेरे रहती है। कंद मंड का संचय करते हैं। कंद की आकृति आकार तथा रंग विभिन्न किस्मों में भिन्न-भिन्न होता है।

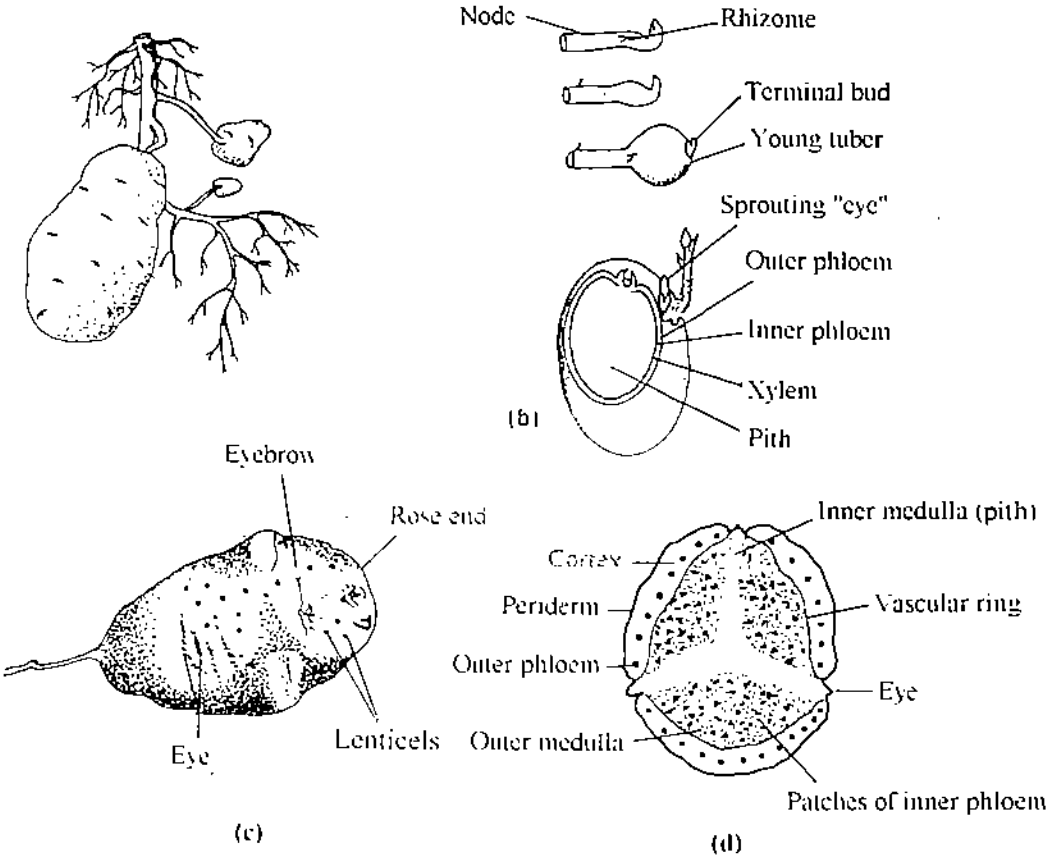

चित्र 14.1 : *सोलेनम ट्यूबरोसम* (a) आलू का एक कंद (b) आलू में कंद निर्माण का आरेखीय प्रदर्शन। (c) आलू के कंद के वाह्य लक्षणीय गुण (d) आलू के कंद की अनुप्रस्थ काट

वायवीय शाखाएं 1 मी. तक लंबी हो सकती हैं। इनमें एकांतरी रूप से व्यवस्थित पत्तियां होती हैं। तने के आधार के पास की, पहली कुछ पत्तियां सामान्य होती हैं परन्तु अन्य पत्तियां पिच्छाकारी रूप से (pinnately) संयुक्त होती हैं। इन संयुक्त पर्णों में विभिन्न आमापों के पर्णक होते हैं तथा इनमें लंबे पर्णकों के बीच में कुछ बहुत ही छोटे पर्णक भी होते हैं जो पिच्छिका (pinnules) (पर्णिका) कहलाते हैं।

हरे आलुओं में एक जहरीला ग्लूकोसाइड, सोलेनिन (solanin) होता है जो काफी अधिक सांद्रता में मानव तथा मवेशियों दोनों में बीमारी तथा मौत तक का कारण बन सकता है।

पुष्प उत्पन्न हो भी सकते हैं या नहीं भी हो सकते हैं। जब पुष्प उत्पन्न होते हैं, तो ये अंतस्थ पुष्पक्रमों में उगते हैं। पुष्प प्रारूपिक रूप से सोलेनेसी (solanaceous) होते हैं तथा फल छोटे अखाद्य अष्ठिल फल (berry) (जो बीज या आलू बॉल्स) कहलाते हैं जो छोटे हरे टमाटरों जैसे दिखते हैं। इनमें असंख्य बीज होते हैं।

14.2.1.4 उपयोग

आलू सबसे विस्तृत रूप से उगाई जाने वाली सब्जी की फसल है जो विश्व की खाद्य अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आलू का पोषक मूल्य उच्च होता है। कंद में लगभग 80% जल तथा 20% ठोस तत्व होता है। ठोस तत्व में मांड लगभग 85% तथा बाकी अधिकांशत: प्रोटीन्स होते

हैं। आलू विटामिन सी के अच्छे स्रोत हैं। वे कैल्सियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सोडियम तथा सल्फर जैसे खनिज भी लिए रहते हैं।

कंदों को अनेक तरीकों से उपयोग किया जाता है, ताजी सब्जी तथा संवर्धित खाद्य दोनों प्रकार से इसको खाया जाता है। ताजे आलुओं को उबालने, भूनने, तलने या बेक करने के बाद खाया जाता है। उन्हें अन्य सब्जियों के साथ भी पकाया जाता है। कंदों को आलू के चिप्स, कचरी तथा वेफर्स के रूप में प्रवर्धित किया जा सकता है या इनसे मांड, अल्कोहल (वोदका) या ग्लूकोस का उत्पादन किया जा सकता है।

वोदका, एक रूसी अल्कोहली पेय पदार्थ पके हुए आलुओं के किण्डवन (Fermentation) के द्वारा तैयार किया जाता है।

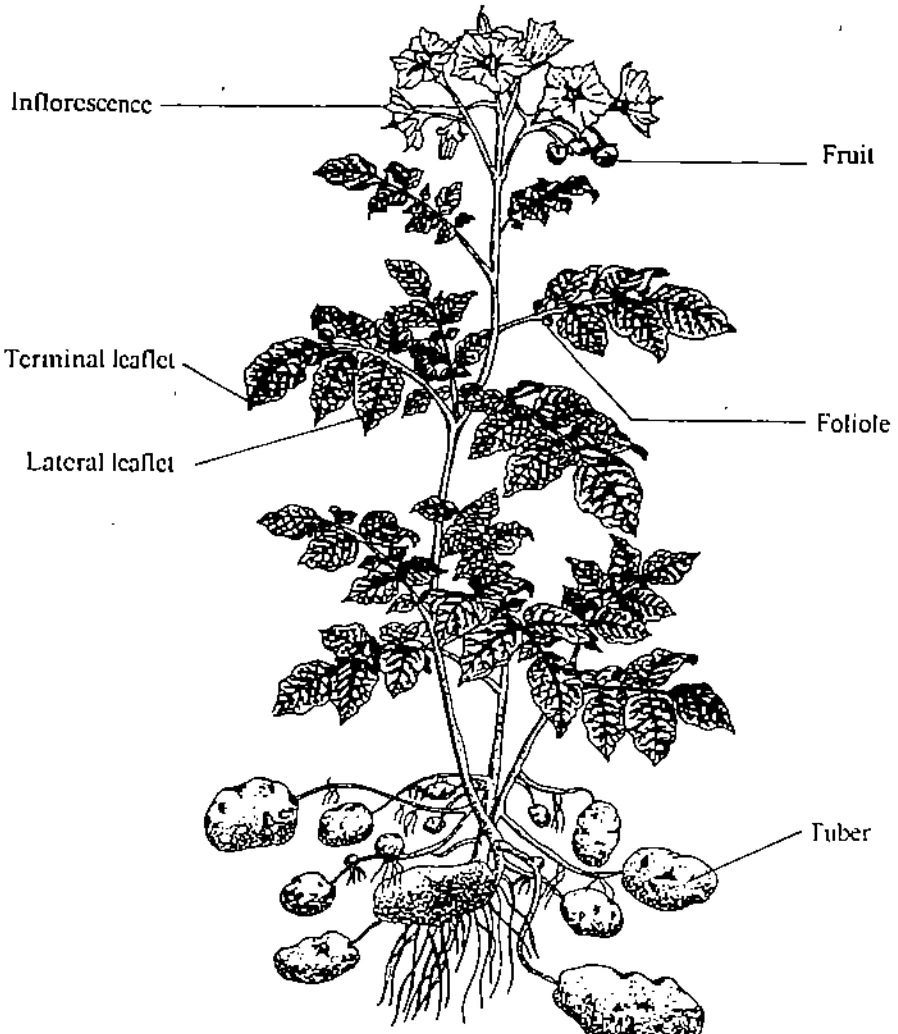

चित्र 14.2 : आलू का पौधा

14.2.2 शकरकंदी (Sweet Potato)

वानस्पतिक नाम : *आइपोमिया बटाटास* (लिन.) लैम (*Ipomoea batatas* **(Linn.) Lam)**

कुल : कान्वाल्वुलेसी

सामान्य नाम : शकरकंदी

n = 45

14.2.2.1 उत्पत्ति तथा वितरण

शकरकंदी के पादप की सिर्फ खेती ही की जाती है, इसकी कोई वन्य जाति ज्ञात नहीं है। इसकी उत्पत्ति संभवत: ट्रापिकल अमरीका में हुई तथा पूर्व कोलंबसी काल (कोलंबस द्वारा अमरीका की खोज से पहले) में इसे मैक्सिको, मध्य तथा दक्षिण अमरीका तथा वेस्टइंडीज में उगाया जाता था।

अब यह विश्व के अन्य भागों में भी फैल गया है। यह पादप पुरानी दुनिया में आइरिश पोटेटो / आलू से पहले पहुंचा तथा प्रसिद्ध हो गया। *आइपोमिया बटाटास* एक षट्गुणित (2n = 90) पादप है यह उभयगुणिता (amphiploidy) द्वारा चतुर्गुणित (2n = 60) तथा द्विगुणित (2n = 30) पादपों के संकर के रूप में उत्पन्न हुआ होगा।

14.2.2.2 खेती

शकरकंदी की खेती उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में सभी जगह होती है। प्रमुख उत्पादक अफ्रीका, चीन, इंडोनेशिया, भारत, कोरिया, जापान, दक्षिणी संयुक्त राज्य, पोलीनेशिया, तथा न्यूजीलैण्ड हैं। यह उन स्थानों पर सबसे अच्छी तरह से उगता है जहां औसत तापमान 25° सेन्टीग्रेड या अधिक होता है। वहां काफी सूरज की रोशनी तथा कम से कम 300 मि.मी. की वर्षा 4 महीने के वर्धन काल के दौरान होना आवश्यक है।

फसल को अनेक प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। अच्छी जल निकासी वाली बालुई दोमट मिट्टी तथा सूरज की रोशनी वाला मौसम तथा वर्धन काल में नमी की अच्छी आपूर्ति, शकरकंद की खेती के लिए आदर्श है। यह अल्प प्रदीप्त काल पादप है तथा 11 घंटे या कम का प्रकाशकाल पुष्पन को बढ़ाता है।

शकरकंदों को तने की कलमों अथवा कंद के भाग द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। पादप को कम देखभाल की आवश्यकता होती हैं तथा कंद 4-6 महीने बाद कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। कंदों को या तो संग्रहित कर लिया जाता है अथवा उनके स्लाइस / टुकड़े काटकर धूप में सुखा लिया जाता है।

14.2.2.3 वानस्पतिकी

शकरकंद का पादप वास्तव में बहुवर्षी शाक होता है, परंतु आलू की भांति ही इसकी खेती भी एकवर्षी के तौर पर होती है। यह अंगूर लता (vine) जैसा पादप होता है जिसमें तलसर्पी (trailing) या वल्लरी (turning) तने होते हैं। यह 1.5 मी. की लंबाई तक बढ़ते हैं तथा पादप के सभी भागों में लैटेक्स पाया जाता है।

पादप में सघन तंतुमय जड़ तंत्र पाया जाता है। कंद कुछ अपस्थानिक जड़ों के द्वितीय स्थूलन होते हैं। प्रत्येक पादप मिट्टी के ऊपरी पटल में (25 से.मी.) लगभग 10 कंद उत्पन्न करता है। प्रत्येक कंद में बड़ी मात्रा में मृदूतकी कोशिकाएं, संवहनी ऊतक तथा लैटेक्स वाहिकाएं (vessels) पाई जाती हैं (चित्र 14.3, c)। बाहरी भाग परिचर्म (periderm) कहलाता है तथा यह फटी हुई बाह्य त्वचा के स्थान पर होता है। ताजे कंद का लगभग 70% वजन नमी के कारण होता है। ठोस तत्व में मांड, शर्करा, प्रोटीन, विटामिन ए व सी, अल्प मात्रा में वसा तथा खनिज होते हैं। कंद आवृति आमाप तथा रंग में भिन्न-भिन्न होते हैं। एक कंद का वजन सामान्यत: 200-500 ग्राम तक होता है, हालांकि बहुत ही बड़े कंद कुछ किलोग्राम वजन तक के भी उत्पन्न हो सकते हैं।

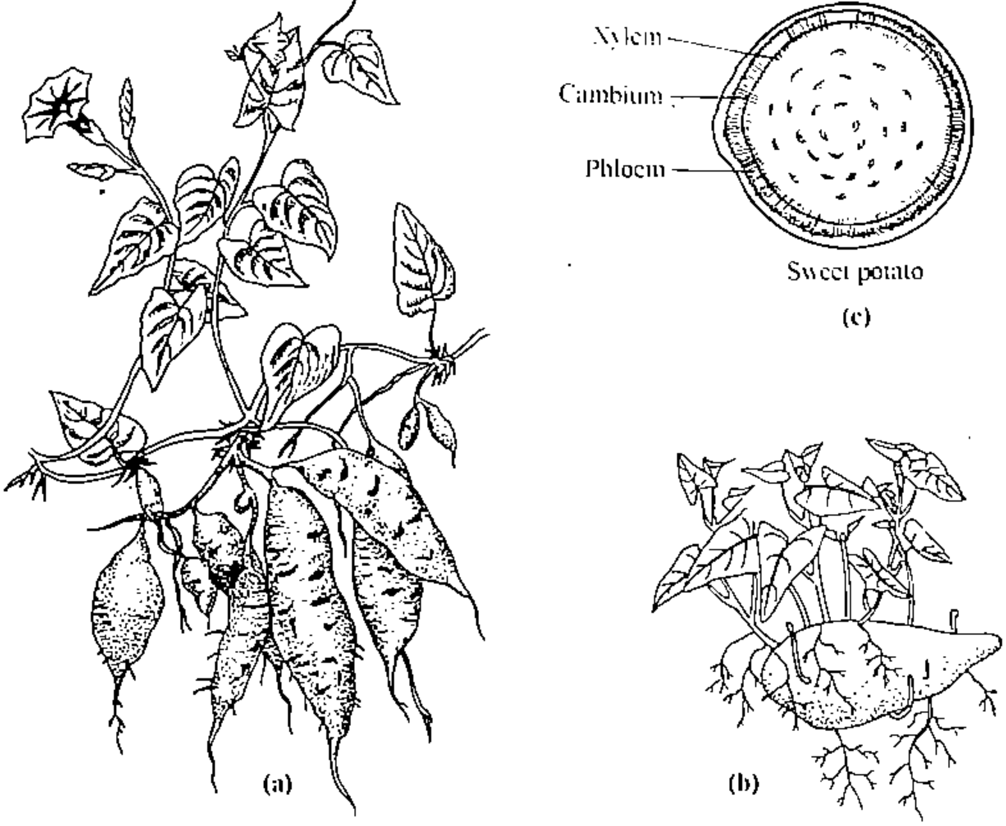

चित्र 14.3 : *आइपोमिया बटाटास* (a) शकरकंद का एक पादप (b) अधिकांश प्ररोह संचयी जड़ के शीर्ष से अंकुरित होते हुए (c) जड़ की अनुप्रस्थ काट

जापान तथा ताईवान में शकरकंदी को 'प्रचंड तूफान (typhoon) या 'अंधड़' (hurricane) सुरक्षी फसल माना जाता है, जबकि चावल या अन्य मांड वाली फसलें नष्ट हो जाती हैं यह फिर भी खाने के लिए उपलब्ध रहता है।

14.2.2.4 उपयोग

शकरकंद एक सब्जी है जिसकी बड़ी, मांसल खाद्य जड़ें होती हैं। ये कंदीय जड़ें विश्व के अनेक भागों में भोजन के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में उपयोग की जाती हैं। इन्हें उबालकर अथवा भूनकर भी खाया जा सकता है। कंदों का उपयोग मांड, आटा, ग्लूकोस तथा अल्कोहल के निर्माण में भी किया जाता है। इन्हें मवेशियों को भी खिलाया जाता है।

14.2.3 कैसावा या मैनियोक (Cassava or Manioc)

वानस्पतिक नाम : *मेनीहोट एस्कुलेन्टस क्रेन्टज़ (Manihot esculentus Crantz)*
पर्यायवाची नाम : *मेनीहोट यूटीलीसीमस* पोल (*M. utilissimus* Pohl.) *मेनीहोट आइपी* पोल (*M. aipi* pohl पोल), *मेनीहोट डल्सिस* पैक्स (*M. dulcis* Pax); *मेनीहोट पाल्मेटा* मुएल आर्ग. (*M. palmata* Muell Arg.)
कुल : यूफॉर्बिएसी
सामान्य नाम : टैपिओका, सागू
n = 18

14.2.3.1 उत्पत्ति तथा वितरण

मेनीहोट एस्कुलेन्टस मानव को सिर्फ कृष्य रूप में ही ज्ञात है तथा यह वन्य अवस्था में नहीं पाया जाता है। ऐसा ज्ञात है कि इसका देसीकरण स्वतंत्र रूप से दक्षिण अमरीका तथा मध्य अमरीका में हुआ है परंतु दक्षिण अमरीका से मध्य अमरीका में पुर: स्थापन अधिक संभव प्रतीत होता है। यह पादप विश्व के अन्य भागों में सोलहवीं शताब्दी के बाद पुर : स्थापित हुआ। यह अब सभी उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में फैल गया है। दक्षिण तथा मध्य अमरीका, पश्चिम तथा मध्य अफ्रीका तथा दक्षिण पूर्व एशिया मुख्य क्षेत्र हैं जहां कैसावा की खेती होती है। भारत में इसके पुर : स्थापन का प्रथम रिकॉर्ड 1794 में है। जब इसे इंडियन बॉटेनिकल गार्डन, सिबपुर, कलकत्ता में लाया गया था। भारत में इस फसल की खेती मुख्यत: केरला, तमिलनाडु, मेघालय, आंध्रप्रदेश तथा आसाम में की जाती है।

टूपी पौराणिक कथा के अनुसार, एक मां के पास बिल्कुल भोजन नहीं था और उसे अपने बच्चे को भूख से मरते हुए देखना पड़ा। दुखी मन से, उसने अपने बच्चे को अपनी झोंपड़ी के फर्श के नीचे दफना दिया। उस रात, लकड़ी रूपी आत्मा या "मानी" (mani) आई तथा उसने बच्चे की काया को पादप की जड़ों में रूपांतरित कर दिया जो भारतीयों की भावी पीढ़ियों को भोजन प्रदान करने के लिए बढ़ गया। पादप "मानी" कहलाया तथा "ओका" (oca) जड़ के लिए है जिसे लकड़ी रूपी आत्मा लाई थी।

14.2.3.2 खेती

कैसावा निम्नस्थल की उष्णकटिबंधी फसल है जो मध्यम उर्वरता वाली बलुई या बलुई दोमट मिट्टी में सबसे अच्छी तरह से उगती है। मिट्टी की अधिक उर्वरता से सघन कायिक वृद्धि हो जाती है तथा क़ंद कम बनते हैं। इसकी फसल जलात्पलावन (water logging), शीत या पाला नहीं बर्दाश्त कर पाती है।

कैसावा की फसल तने की कतरनों / कलमों से लगाई जाती है जो प्ररोह तथा जड़ उत्पन्न करने वाले नए पादपों को अंकुरित करती हैं। अल्प ऋतु वाली फसलों को लगाने के बाद 6-10 महीने में फसल प्राप्त की जा सकती है। कैसावा की लंबी ऋतु वाली फसलों को लगभग दो वर्ष के लिए उगाया जाता है। फसल को अधिकांशत: हाथ से ही निकाला जाता है। प्रत्येक कंद को मिट्टी में से खोदकर खाने के लिए निकाला जाता है।

14.2.3.3 वानस्पतिकी

कैसावा का पादप झाड़ है जो 1-5 मी. की ऊँचाई तक बढ़ता है तथा इसके सभी भागों में लैटेक्स पाया जाता है। खाए जाने वाले कंद फूली हुई अपस्थानिक जड़ें होती हैं। प्रत्येक पादप 5-10 बेलनाकार कंद उत्पन्न करता है। कंद का सघन मृदूतकी मज्जा वाला भाग बड़ी मात्रा में मांड का संचय करता है। सतर तने में स्पष्ट पर्ण दाग निचले भाग में दिखाई पड़ते हैं। पत्तियां सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित रहती हैं तथा वृत्तीय होती हैं। पटल काफी हस्ताकार व 3-9 (सामान्यत: 5-7) पालि युक्त होता है। पत्तियां सामान्यत: हरी होती हैं परन्तु चितकबरी पत्तियां या लाल, बैंगनी अथक पीली पत्तियां भी पाई जाती हैं। (चित्र 14.4)।

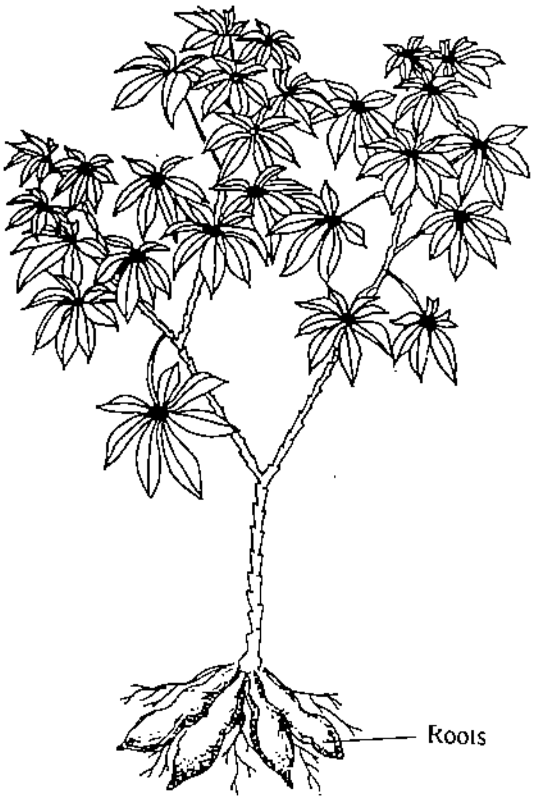

चित्र 14.4 : जड़ों सहित *कैसावा* का एक पादप

14.2.3.4 उपयोग

कैसावा बहुत से लोगों का प्रमुख खाद्य है। ये लोग सामान्यत: समाज के कमजोर तबके के लोग होते हैं जो अनाजों को प्रमुख आहार के रूप में नहीं खा सकते हैं। जड़ कंद कार्बोहाइड्रेट्स से समृद्ध होते हैं तथा बहुत से ऊष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भोजन के रूप में खाए जाते हैं।

कैसावा दो प्रकार के होते हैं– मीठे तथा कड़वे। मीठे कंदों में हाइड्रोसायनिक (hydrocyanic) या प्रूसिक (prussic) अम्ल की मात्रा कम होती है। यह तथा अन्य रासायनिक पदार्थ सामान्यतः कंद के वल्कुटी क्षेत्र में उपस्थित रहते हैं। कड़वे कैसावा में बड़ी मात्रा में हाइड्रोसायनिक अम्ल उपस्थित रहता है। यह पूरे कंद में वितरित रहता है। मीठे कंदों को छीलने के बाद कच्चा भी खाया जा सकता है। कड़वे कैसावा को धोकर, ऊबालकर, भूनकर अथवा हाइड्रोसायनिक अम्ल को नष्ट करने के लिए विशेष तरीके से उपचारित करके ही खाना चाहिए।

कंदों से उच्च श्रेणी का मांड प्राप्त किया जाता है। इसको भोजन के रूप में पुडिंग, बिस्कुट तथा मिठाइयां आदि बनाने में उपयोग किया जा सकता है। इस मांड का उपयोग चिपकाने वाले पदार्थ, कॉस्मेटिक्स, कागज तथा लांड्री में भी किया जाता है। कैसावा के कंद मवेशियों के भोजन के रूप में तथा ग्लूकोस और सोडियम ग्लूटामेट के निर्माण में भी उपयोग किए जाते हैं।

14.2.4 प्याज (The Onion)

वानस्पतिक नाम : *एलियम् सीपा* लिन. (*Allium cepa* Linn.)
कुल : एलिऐसी

(पहले वंश *एलियम* को या तो लिलिएसी (Liliaceae) कुल में (ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय के कारण) अथवा एमेरिलिडेसी (Amaryllidaceae) कुल में (पुष्पक्रम की संरचना के कारण) वर्गीकृत किया गया था परंतु अब ये एलिऐसी कुल के माने जाते हैं, जो एक ऐसा कुल है जो इन दोनों कुलों के बीच का है)।
सामान्य नाम : प्याज
n = 8

14.2.4.1 उत्पत्ति तथा वितरण

प्याज की खेती प्राचीन काल से ही भारत तथा मध्य पूर्व में होती रही है। *एलियम सीपा* निश्चित तौर पर वन्य पादप के रूप में ज्ञात नहीं है। ऐसा माना जाता है कि इसकी उत्पत्ति ईरान या पाकिस्तान के पहाड़ी क्षेत्रों में हुई है। इस पादप के बारे में प्राचीन साहित्य में वर्णन है तथा इसे धार्मिक अनुष्ठानों में उपयोग किया जाता था। इसकी खेती अब विस्तृत रूप से विश्व के सभी भागों में भी की जाती है। एशियाई देशों में बड़ी मात्रा में प्याज उत्पन्न होता है। चीन, जापान तथा भारत अग्रणी उत्पादक हैं। भारत बड़ी मात्रा में प्याज का निर्यात भी करता है। संयुक्त राष्ट्र अमरीका, तुर्की, स्पेन, इटली तथा नीदरलैण्ड्स अन्य प्याज उगाने वाले क्षेत्र हैं। भारत में, प्याज महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, बिहार तथा पंजाब में उगाया जाता है।

14.2.4.2 खेती

प्याज को विविध प्रकार की जलवायुवी परिस्थितियों में उगाया जा सकता है। अधिकांश किस्में शीतोष्ण क्षेत्रों के ठंडे भागों में उगने के लिए अनुकूलित हैं। गर्म शुष्क मौसम शल्क कंदों के परिपक्व होने तथा कटाई के लिए आवश्यक होता है। इन्हें बहुत अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में नहीं उगाना चाहिए।

फसल को विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। जो जल को रोक कर न रखती हों। उर्वर दुमटी मिट्टी जिसका पी एच (pH) 5.8 से 7.0 के बीच हो उसमें फसल अच्छी होती है। फसल बीज के बोये जाने के 3 से 5 महीने बाद कटने के लिए तैयार हो जाती है। शल्क कंद का निर्माण प्रदीप्त काल तथा तापमान द्वारा नियंत्रित होता है। शल्क कंदों का आकार चपटे से गोलाकार, अंडाकार या तुर्क (spindle) जैसे आकार का भी हो सकता है। रंग भी रूपहले सफेद से भूरे, बैंगनी या लालिमा लिए हुए तक भिन्न हो सकता है।

बिना कटा प्याज गंधहीन होता है, परंतु जब इसे काटा जाता है अथवा क्षतिग्रस्त हो जाता है तब एन्जाइमी बदलावों के कारण कार्बनिक सल्फर यौगिक निर्मुक्त होते हैं। इसके कारण प्याज में विशिष्ट गंध तथा तीखा स्वाद होता है। प्याज हल्की, तीखी या मीठी हो सकती है तथा ये गुण, आकार तथा रंग के साथ-2, वर्गीकरण के लिए उपयोग किए जाते हैं।

14.2.4.3 वानस्पतिकी

प्याज का पादप द्विवर्षी शाक है, जो वृद्धि के पहले वर्ष में शल्क कंद में खाद्य संग्रहित करता है तथा दूसरे वर्ष में पुष्पन करता है। शल्क कंदों के व्यावसायिक उत्पादन के लिए, फसल को एकवर्षी के तौर पर उगाया जाता है। पादप में सतही, छिछला, अपस्थानिक जड़ तंत्र होता है। तना छोटा, चपटा होता है या पादप के आधार पर उत्पन्न होता है। वृद्धि बढ़ने के साथ-2 इसका व्यास बढ़ता जाता है। यह पादप का वास्तविक शल्क कंद होता है तथा यह माँसल पर्ण आधारों की संकेन्द्री परतों से घिर जाता है जो खाद्य सामग्री को संग्रहित करता है इससे बल्ब एक महत्वपूर्ण संग्रही अंग बन जाता है (चित्र 14.5 d)।

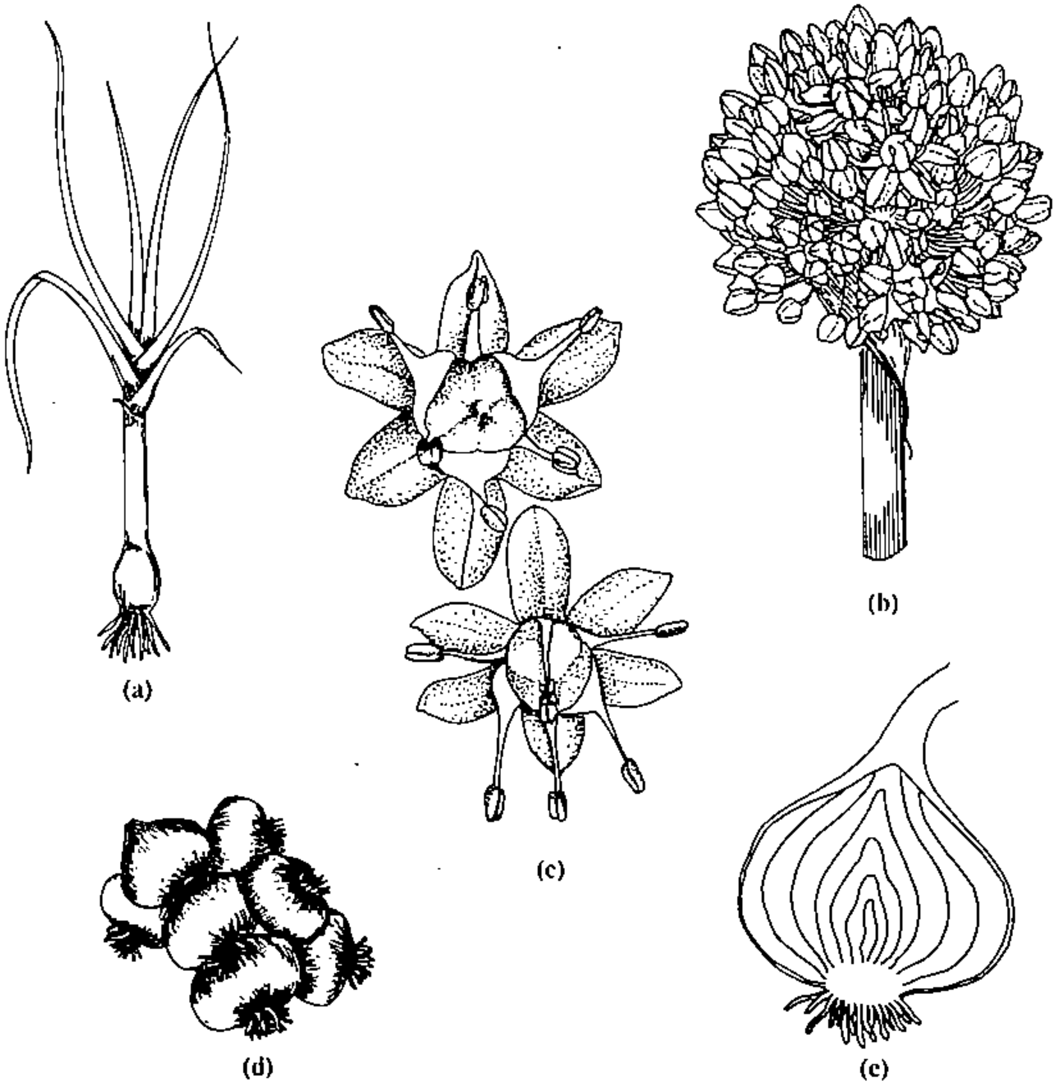

चित्र 14.5 : *एलियम सीपा* (a) एक तरुण प्याज का पादप (b) प्याज का पुष्पक्रम (c) प्याज का पुष्प (d) प्याज के शल्क कंद (e) प्याज के मांसल पर्ण आधार जो पोषक तत्वों का संग्रह करते हैं

चौड़े तने के शीर्ष से क्रमबद्ध तरीके से पत्तियां निकलती हैं। प्रत्येक पत्ती के दो भाग होते हैं। एक नलिकाकार या वलय आवरण आधार और खोखला सीधा बेलनाकार या चपटा पटल का होता है। कंद की बाहरी पर्णाधार सूखी, पतली तथा रेशेदार होती है। ये अन्दरूनी मांसल पर्णाधार के चारों ओर एक कवच का निर्माण करते हैं। कंद के बनने तथा पर्णाधार के मांसल होने का नियंत्रण या समंजन दिवाकाल और तापक्रम से होता है।

बहुत छोटे दीप्तिकाल या कम तापक्रम पर कंद का निर्माण नहीं होता है। जब कंद का पूर्ण विकास हो जाता है तब विभोज्योतक द्वारा पत्तियों का बनना रुक जाता है तथा अंतस्थ पुष्पक्रम का निर्माण हो जाता है।

एक पर्णरहित पुष्पीय तना जो पुष्पदंड (scape) कहलाता है, वह शल्क कंद में से बाहर निकलता है। विकासशील पुष्पक्रम एक झिल्लीनुमा स्पेथ (spathe) के द्वारा सुरक्षित रहता है, ये *एलियम* का एक ऐसा गुण है जो एमेरीलीडेसी कुल के सदस्यों के साथ साझा है। पुष्पक्रम में 50-2000 हरापन लिए सफेद पुष्प होते हैं।

14.2.4.4 उपयोग

प्याज के अपरिपक्व तथा परिपक्व शल्क कंद कच्चे खाए जाते हैं अथवा उन्हें पकाकर सब्जी की भाँति भी खाया जा सकता है। इनका उपयोग सूप तथा सॉसेज में तथा अनेकों खाद्य पदार्थों की सीज़निंग में किया जाता है। प्याज खाने को स्वाद भी प्रदान करती है तथा डिब्बाबंद मांस आदि में भी उपयोग की जाती है। ये अनेकों अचारों तथा चटनियों का भी महत्वपूर्ण घटक होती है। छोटे शल्क कंदों का सिरका या लवणजल में अचार डाला जाता है। इन्हें तलकर विभिन्न प्रकार के नाश्ते बनाने में भी उपयोग किया जा सकता है। प्याज की पत्तियों को भी सब्जी की तरह उपयोग किया जाता है। यह भी रिपोर्ट किया गया है कि प्याज लू लगने से भी बचाव करती है।

14.2.5 लहसुन (The Garlic)

वानस्पतिक नाम : ***एलियम सेटाइवम*** **लिन. (*Allium sativum* Linn.)**
कुल : एलिएसी
सामान्य नाम : लहसुन
n = 8

14.2.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

लहसन की उत्पत्ति पूर्वी भूमध्य सागरीय भाग में हुई तथा प्राचीन काल से ही भारत तथा चीन में इसकी खेती होती है। भारत विश्व में लहसुन का सबसे बड़ा उत्पादक है। यह स्पेन, मिस्र, कोरिया, अर्जेंटीना, इटली, चीन तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में एक महत्वपूर्ण फसल है।

14.2.5.2 खेती

लहसुन की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में की जा सकती है। शल्क कंद के निर्माण के लिए अपेक्षाकृत लंबे दिनों तथा उच्च तापमान की आवश्यकता होती है। परंतु एक बार शल्क कंद का निर्माण आरंभ होने पर, यह निम्न तापमान पर भी बनता रहता है। इसका प्रवर्धन कायिक रूप से एकल ''क्लोव/कंदिका (clove) को बोकर किया जाता है। अधिंकाश फसल सिंचाई युक्त क्षेत्रों में लगाई जाती है। फसल उर्वरकों के उपयोग से अच्छी होती है तथा बोए जाने के 4-6 महीने बाद पककर तैयार हो जाती है। शल्क कंदों को लगभग एक सप्ताह के लिए खेतों में सुखाया जाता है।

14.2.5.3 वानस्पतिकी

लहसुन का पादप शाकीय एकवर्षी होता है तथा अनेक गुणों में प्याज से मिलता-जुलता होता है। यह चपटे ठोस पर्ण आधारों के कारण प्याज से भिन्न होता है जो मिश्र या संयुक्त शल्क कंद बनाते हैं। सतर शाक में सतही तथा अपस्थानिक जड़ तंत्र होता है। चपटी डिस्क जैसे तने में विभिन्न संख्या में अपेक्षाकृत छोटे शल्क कंद या शल्क कंदिका (bulb lets) होती हैं जो ''लहसुन कंदिका / क्लोव'' (garlic clove) कहलाती हैं। ये तरुण पर्णीय पत्तियों की अक्षीय कलिकाओं से बनती हैं। अत: लहसुन का शल्क कंद एक संयुक्त संरचना है जो कुछ छोटे सघन रूप से पास-पास शल्क कंदिकाओं की बनी होती है। संपूर्ण संयुक्त शल्क कंद एक बहुपरती सुरक्षात्मक कवच में बंद रहता है जो संग्रही पत्तियों के आच्छदी आधारों द्वारा बनता है। प्रत्येक शल्क कंदिका अपना स्वयं का सुरक्षात्मक एकल परती आच्छद भी होता है। शल्क कंदिका एक स्थूलित संचयी पर्ण आच्छद तथा

एक छोटी केन्द्रीय कलिका का बना होता है। कभी-कभी, एक एकल बड़ा ठोस "शल्क कंदिका" प्रत्येक पादप (शल्क कंद) में बन जाती है। यह तब होता है जब फसल या तो कुपोषित मिट्टी में उगाई जाती है, अथवा बहुत ही छोटी "शल्क कंदिकाओं" से उगाई जाती है। (चित्र 14.6)

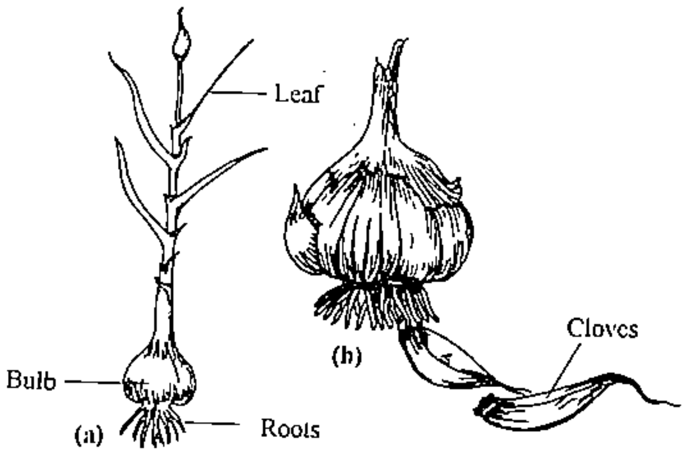

चित्र 14.6 : *एलियम सेटाइवा* (a) लहसुन का पादप (b) शल्क कंदिकाओं के साथ लहसुन का शल्क कंद

लहसुन की कुछ कृष्य जातियाँ कोई पुष्पन नहीं दर्शाती हैं जबकि अन्य दर्शाती हैं। पुष्पक्रम प्याज की तरह ही अंतस्थ होता है। पर्णहीन चिकना सफेद पुष्पदंड शल्क कंद के मध्य में से उगता है। यह पहले तो कुंडलित होता है। परंतु बाद में सीधा हो जाता है, तथा झिल्लीनुमा स्पेथ को धारण करता है। इसमें या तो छोटी शल्क कंदिकाएं ही होती हैं अथवा शल्क कंदिकाएं तथा पुष्प दोनों होते हैं। लहसुन के पुष्प सफेद से गुलाबीपन लिए हुए होते हैं।

14.2.5.4 उपयोग

प्याज से निकट रूप से संबन्धित, यह वंश *एलियम* की द्वितीय सबसे अधिक विस्तृत कृष्य जाति है। यह खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए मसाले की तरह इस्तेमाल किया जाता है। लहसुन भारत में तरीदार सब्जियों का तथा चायनीज भोजन का भी महत्वपूर्ण घटक है। औषधियों की विभिन्न प्रणालियों में लहसुन के औषधिय गुणों का वर्णन है। लहसुन में एन्टीसेप्टिक तथा जीवाणुनाशक गुण होते हैं। लहसुन तथा प्याज दोनों में ऐसे यौगिक होते हैं जैसे कि एजोइन (ajoene) जो रक्त के जमने की प्रवृत्ति को कम करता है तथा एस्टीरियोस्केलरोसिस (arteriosclerosis) तथा हार्ट अटैक की संभावना को कम करता है।

साबुत शल्क कंद में एक अमीनोअम्ल होता है जो एलीनिन (allinine) कहलाता है। जब शल्क कंद या "कंदिका" को काटा जाता है या वह क्षतिग्रस्त हो जाती है तो एलीनिन पर एन्जाइम एलीनेस क्रिया करता है और एलीसिन उत्पन्न करता है। यह यौगिक लहसुन की तीखी गंध के लिए जिम्मेदार है। यह तीखापन जो सभी एलियम्स में सामान्य है वह इस यौगिक से जुड़ा हुआ है जो प्याज काटते वक्त हमारी आंखों में आंसू ला देती है। ये वाष्पशील सल्फर यौगिक हैं जिनमें मिथाइल-डाइ तथा ट्राइसल्फाइड्स एवं n-प्रोपाइल डाइ-तथा ट्राइसल्फाइड शामिल हैं। शल्क कंदिकाओं का निर्जलन किया जा सकता है या "गार्लिक पर्ल्स" (garlic pearls) बनाए जा सकते हैं। इन्हें ताजे लहसुन के स्थान पर उपयोग किया जा सकता है। लहसुन में तीखा स्वाद होता है तथा इसकी गंध मुख में लंबे समय तक रहती है।

14.2.6 चुकंदर (The Beetroot, The garden beet)

वानस्पतिक नाम : *बीटा वल्गेरिस* लिन. (*Beta vulgaris* Linn.)
कुल : कीनोपोडिएसी
सामान्य नाम : चुकंदर
n = 9

बीटा वल्गेरिस की कुछ कृष्य किस्में आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। चुकंदर अपनी बड़ी लाल जड़ों के लिए उगाया जाता है जिन्हें सब्जी के रूप में खाया जाता है। दूसरी किस्म जिसमें सफेद या हल्की भूरी जड़ें होती हैं जो शुगरबीट कहलाती है वह शर्करा का उत्तम स्रोत है। इन दोनों तथा अन्य किस्मों की खेती व्यावसायिक स्तर पर विश्व के विभिन्न भागों में होती हैं।

14.2.6.1 उत्पत्ति तथा वितरण

कृष्य बीटरूट तथा शुगर बीट दोनों को ही *बीटा वल्गेरिस* (चुकंदर) कहते हैं। इनकी उत्पत्ति वन्य पूर्वज *बीटा मेरीटिमा (Beta maritima)* से हुई है जो प्राकृतिक रूप से ब्रिटेन, पूरे यूरोप, एशिया तथा भारत में समुद्र तटों पर उगता है। कृष्य चुकंदर की विभिन्न किस्में सतत् चयन द्वारा विकसित हुई हैं।

14.2.6.2 खेती

बीट / चुकंदर की खेती शीतोष्ण क्षेत्रों में की जाती है। कभी-2 इसे अधिक ऊँचाइयों पर उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में भी उगाया जाता है। इन्हें वर्धन काल के दौरान ठंडी रातों की आवश्यकता होती है। चुकंदर सबसे अच्छी तरह से भुरभुरी गहरी नम दोमटी मिट्टी में उगता है; यह जलात्प्लावन को नहीं बर्दाश्त कर पाता है, अत: मिट्टी में अच्छी जल निकासी की व्यवस्था होना जरूरी है। इनको बीज द्वारा उगाया जाता है तथा नवोद्भिदों का तनुकरण (thinning) वर्धन के लिए पर्याप्त स्थान प्रदान करने के लिए आवश्यक है। यह श्रम प्रबल फसल है।

14.2.6.3 वानस्पतिक

चुकंदर का पादप वास्तविक द्विवर्षी है। इस अरोमिल शाक में स्पष्ट रूप से फूली हुई जड़ होती है। जिसमें बीटा सायनिन वर्णक के कारण गहरा लाल रंग होता है तथा वृद्धि के प्रथम वर्ष में पत्तियों का रोज़ेट पाया जाता है (चित्र 14.7)। पत्तियां सामान्य, बड़ी तथा अक्सर मोटी मध्यशिरा युक्त होती हैं। लाल वर्णक भी पत्ती में उपस्थित हो सकता है। चुकंदर की कुछ किस्में, खासतौर पर लिटिल बीट या बीट लीफ (*बीटा वल्गेरिस* किस्म *बैंगालेन्सिस*) की खेती पत्तियों के कारण की जाती है जिन्हें पालक की तरह खाया जाता है।

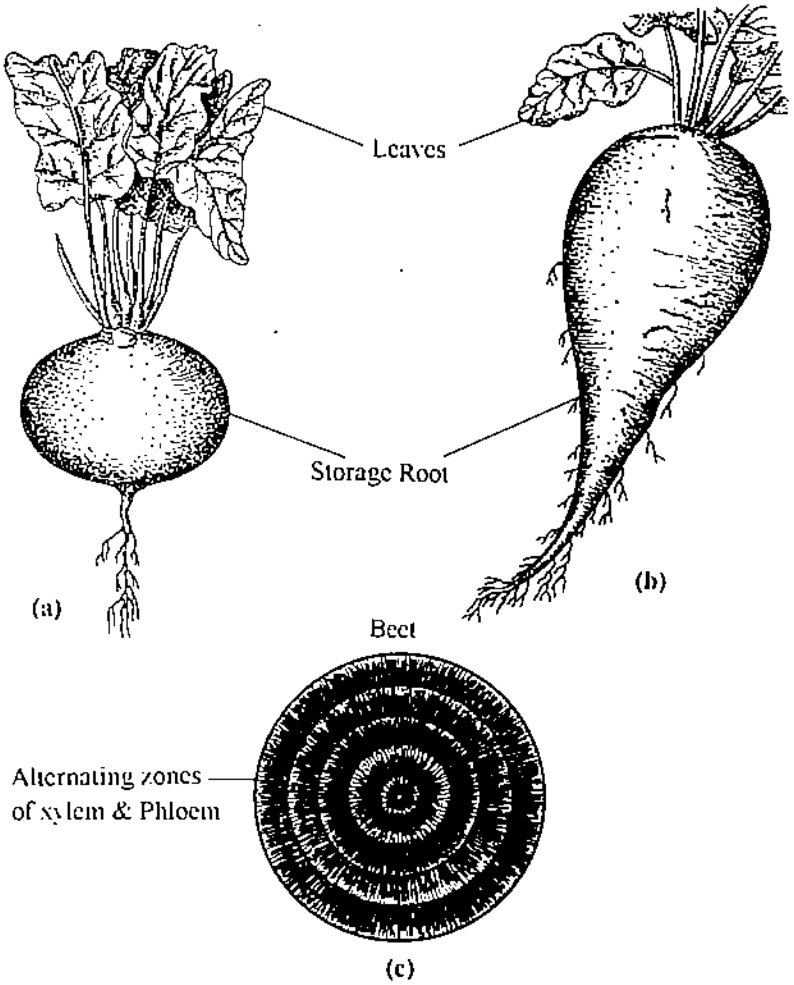

चित्र 14.7 : *बीटा वल्गेरिस* (a) बीट रूट का एक पादप (b) शुगर बीट का एक पादप (c) बीटरूट की अनुप्रस्थ काट

14.2.6.4 उपयोग

बीटरूट/ चुकंदर की विभिन्न किस्मों को भिन्न-2 तरीकों से उपयोग किया जाता है।

क) *बीटा वल्गेरिस* किस्म *वल्गेरिस* सामान्य बीटरूट है। इसे गार्डन बीट भी कहते हैं। लाल जड़ें निम्न कैलोरी व निम्न कार्बोहाइड्रेट खाद्य प्रदान करती हैं जिसमें लौह तत्व, कैल्सियम तथा लाल वर्णक बीटासायनिन होता है। इन्हें सब्जी अथवा सलाद के रूप में खाया जाता है तथा इनका स्वाद मीठा होता है। इन्हें कच्चा ही, उबालकर या बेक करके खाया जा सकता है। लाल चुकंदर का अचार डाला जा सकता है या डिब्बा बंद किया जा सकता है। फसल के बीज बोये जाने के 3-4 महीने बाद मीठी मुलायम जड़ें प्राप्त करने के लिए काटा जाता है।

ख) *बीटा वल्गेरिस* किस्म *रैपा* शुगर बीट कहलाती है। इसमें हल्की भूरी या सफेद जड़ें होती हैं तथा यह शर्करा का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। इसकी जड़ें गार्डन बीट की तुलना में छोटी होती हैं। संयुक्त राष्ट्र अमरीका में शुगर बीट कुल शर्करा उत्पादन का आधा प्रदान करती हैं। इनमें शर्करा तत्व 15 से 18% तक उच्च हो सकता है।

जड़ों को धोकर पतले टुकड़ों में काटा जाता है। इनहें शर्करा निकालने के लिए गर्म पानी में डाला जाता है। इसे घोल को फिर परिष्कृत करके, छाना जाता है तथा शर्करा के दाने बनाने के लिए उबाला जाता है।

ग) *बीटा वल्गेरिस* किस्म *बैंगालेन्सिस* बीट ग्रीन या बीट लीव्स या भारतीय पालक / इंडियन स्पिनिच हैं। मुलायम गूदेदार पत्तियां तथा तरुण प्ररोह को हरी पत्तेदार सब्जियों की तरह पकाया जाता है तथा ये कैल्सियम, लौह तत्व तथा विटामिन ए का बेहतरीन स्रोत हैं।

14.2.7 गाजर (The Carrot)

वानस्पतिक नाम : *डॉकस कैरोटा* लिन. (*Daucus carota* Linn.)
कुल : एपिएसी (अंबेलीफेरी)
सामान्य नाम : गाजर
n = 9

14.2.7.1 उत्पत्ति तथा वितरण

गाजर प्राचीन काल से ही भूमध्य सागरीय क्षेत्र में उगाई जाती रही है। इसका उपयोग पहले प्राचीन रोमवासियों तथा यूनानियों के द्वारा औषधिय पादप के रूप में किया जाता था। कृष्य गाजर की उत्पत्ति वन्य संवन्धी से हुई है जो प्राकृतिक रूप से यूरोप, एशिया तथा अफ्रीका में पाया जाता है। अब इसका विस्तार पूरे विश्व में हो गया है तथा यूरोप इस फसल का सबसे बड़ा उत्पादक है। उत्तरी तथा मध्य अमरीका एवं अफ्रीका अन्य क्षेत्र हैं जहां गाजर की खेती की जाती है। दुनिया के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न प्रकार की गाजर उगायी जाती हैं। भारत में भी, प्रचलित नारंगी गाजर होती हैं जिनकी जड़ें कठोर होती हैं, मुलायम तथा अधिक रसीली लाल गाजर तथा बैंगनी या लगभग काली गाजर होती हैं। ये देश के विभिन्न भागों में उगायी जाती हैं।

14.2.7.2 खेती

गाजर सबसे अच्छी तरह से अच्छी-जलनिकासी वाली, मुक्त दोमट मिट्टी में उगती हैं। इसे जड़ों के समुचित विकास के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। फसल की समुचित वृद्धि के लिए बड़ी मात्रा में पोटाश की आवश्यकता होती है। फसल बीज द्वारा उठी हुई क्यारियों या कटकों (ridges) पर बोई जाती है। नवोद्भिद अवस्था में फसल का विरलन करने से अच्छी वृद्धि होती है तथा फसल 3-4 महीने बाद तैयार हो जाती है। तरुण जड़ों को निकाल लिया जाता है तथा कुछ महीने तक उन्हें उनकी गुणवत्ता में कमी आए बिना संग्रहित किया जा सकता है। गहन श्रम कार्य होने के कारण, गाजर की खेती महंगी होती है।

14.2.7.3 वानस्पतिकी

गाजर का पादप शाकीय द्विवर्षी पादप है परंतु इसकी खेती इसकी स्थूलित मूसला जड़ों के लिए एकवर्षी के तौर पर होती है। जड़ छोटी तथा गोल अथवा लंबी और क्रमिक रूप से पतली होती है। जड़ का रंग पीलापन लिए सफेद से पीला, नारंगी, बैंगनी, गहरा लाल, या लगभग काला होता है। जड़ का रंग तथा वृद्धि तापमान तथा फसल की उम्र के साथ-साथ बदलते जाते हैं। चौड़ा वल्कुटी क्षेत्र भोज्य पदार्थ तथा वर्णन खासतौर पर कैरोटीन्स संचित करता है। मानव की काया कैरोटिन का उपयोग विटामिन ए उत्पन्न करने के लिए करती है। गाजर में विटामिन $बी_1$, $बी_2$ तथा सी. शर्करा और लौहतत्व भी पाए जाते हैं।

तना जड़ के ऊपर तश्तरीनुमा मुकुट बनाता है तथा ये पत्तियों का मुकुट धारण करता है। वृद्धि के दूसरे वर्ष में तना दीर्घीकृत हो जाता है तथा अंतस्थ पुष्पक्रम धारण करता है। पत्तियां लंबे वृंत वाली तथा पिच्छकी रूप से संयुक्त होती हैं। खंड पिच्छाकारी (pinnatified) हो जाते हैं व उनमें भालाकार पालियां हो जाती हैं (चित्र 14.8)।

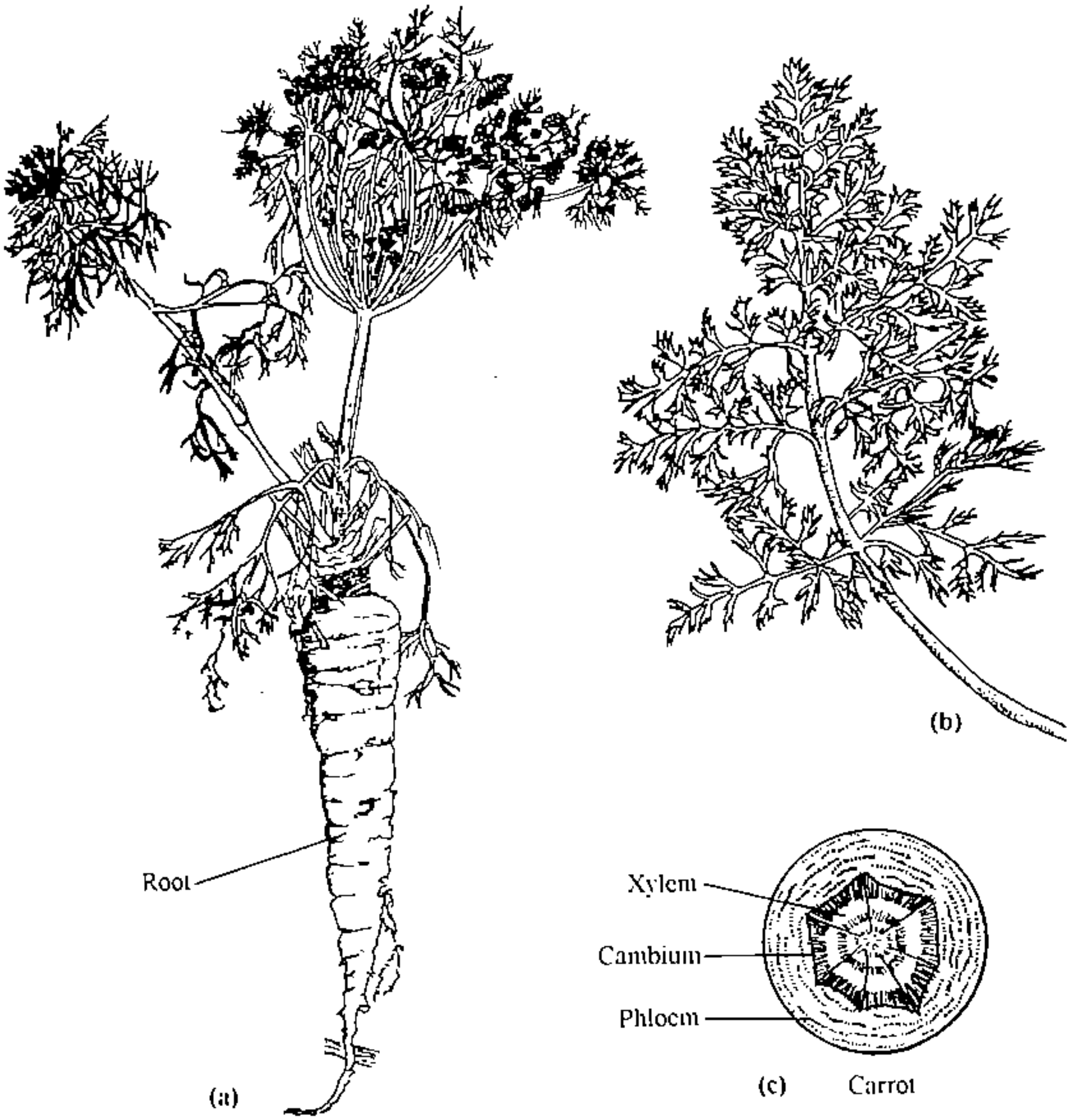

चित्र 14.8 : *डॉकस कैरोटा*: (a) जड़ों सहित गाजर का पादप (b) एक पत्ती (c) गाजर की अनुप्रस्थ काट

फल आयतिक-अंडाकर 3-4 मि.मी. लंबा भिदुर फल (schizocarp) होता है। प्रत्येक भिदुर फल दो फलांशकों (mericarps) का बना होता है। प्रत्येक फलांशक की प्राथमिक कटकें (ridges) पक्ष्माभी (ciliated) होती हैं जबकि द्वितीयक कटकों में हुकदार काँटें होते हैं। फल की ये विशिष्टताएं पादप की पहचान में सहायक होती हैं। फलभित्ति में वाष्पशील तेल की नालें होती हैं जिसके कारण बीज सुगंधित होते हैं।

14.2.7.4 उपयोग

हाल ही के समय में, गाजर विस्तारित रूप से मानव के लिए खाद्य बन गई हैं। जड़ों का उपयोग सब्जी के रूप में, सूप, करी तथा अन्य पकवानों में किया जाता है। इन्हें सलाद में कच्चा खाया जा सकता है। अथवा विभिन्न तरीकों से पकाया जा सकता है। मुलायम जड़ों का अन्य सब्जियों के साथ अचार भी डाला जा सकता है। ताजी जड़ों से जूस / रस निकाला जा सकता है तथा इसे अकेले ही अथवा संतरे के रस के साथ मिलाकर स्फूर्तिदायक पेय के तौर पर पिया जा सकता है। घिसी हुई गाजर को दूध में उबालकर स्वादिष्ट मिठाई (जो "गाजर का हल्वा" कहलाती है।) तैयार की जाती है। जड़ें कैरोटिन का समृद्ध स्रोत होने के कारण उनका उपयोग मक्खन तथा अन्य खाद्य पदार्थों को रंगने के लिए किया जा सकता है। गाजरों को सिरप में डिब्बा बंद अथवा निर्जलित भी किया जा सकता है। उत्तरी भारत में, 'काली' गाजर का उपयोग एक पाचक पेय बनाने में किया जाता हैं जिसे "काँजी" कहते हैं।

बोध प्रश्न 1

सब्जियाँ

1. निम्नलिखित पादपों के वानस्पतिक नाम तथा उन कुलों के नाम लिखिए जिनके वे सदस्य हैं।

क) आलू

....

....

ख) शकरकंद

....

....

ग) कैसावा

....

....

घ) प्याज

....

....

ङ) लहसुन

....

....

च) गार्डनबीट

....

....

छ) गाजर

....

....

2. क) उपर्युक्त में से कौन सी विशेषीकृत जड़े हैं।

....

....

....

....

....

....

ख) उन पादपों को सूचीबद्ध कीजिए जिनमें तना रूपांतरित होता है तथा प्रत्येक में रूपांतरण का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

3. निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य इसे दर्शाने के लिए क्रमश: (स) या (अ) लिखिए।

क) आलू तथा शकरकंद को "वास्तविक जड़ फसल" के तौर पर वर्गीकृत किया जा सकता है। ☐

ख) कैसावा में कंदीय जड़ें होती हैं। ☐

ग) आलू के कंद संरचना में कैसावा के कंद से भिन्न होते हैं। ☐

घ) गार्डनबीट कैलोरीज, लौह तत्व, कैल्सियम तथा एन्थोसायनिक से समृद्ध होती हैं। ☐

ङ) प्याज में शल्क कंद का बनना दिवा काल (दिन की लंबाई) तथा तापमान से नियंत्रित होता है। ☐

च) एलीसिन पर एन्जाइम एलीनेस की क्रिया द्वारा एलीनिन उत्पन्न होता है। ☐

4. रिक्त स्थानों की पूर्ति करिए

क) गाजर में .... वर्णक बड़ी मात्रा में उपस्थित रहते हैं।

ख) *बीटा वल्गेरिस* किस्म *रैपा* .... का समृद्ध स्रोत है।

ग) .... के कंदों में हाइड्रोसायनिक अम्ल उपस्थित रहता है।

घ) प्याज तथा लहसुन की तीखी गंध .... यौगिक के कारण होती है।

ङ) आलू तथा शकरकंद को .... खाद्य पदार्थों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है

5. भूमिगत अंगों से प्राप्त होने वाली फसलों को पुरानी दुनिया (पूर्वी गोलार्द्ध) तथा नई दुनिया (उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका) की फसलों में उनके उत्पत्ति के केन्द्रों के आधार पर वर्गीकृत कीजिए।

क) पुरानी दुनिया (पूर्वी गोलार्द्ध) की फसलें

....

....

ख) नई दुनिया (उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका) की फसलें।

....

....

6. शब्द सब्जी को परिभाषित कीजिए तथा मानव आहार में सब्जियों के महत्व पर एक नोट लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

14.3 पत्तेदार सब्जियां

पत्ती पादप का एक महत्वपूर्ण अंग होती है। यह प्रकाश संश्लेषण का मुख्य क्षेत्र होती है तथा सिर्फ पादप के लिए ही भोजन का निर्माण नहीं करती हैं बल्कि अन्य सभी जीवों के लिए भी करती हैं। शाकभक्षी जंतु अपने भोजन के लिए पादप की पत्तियों पर निर्भर होते हैं। मानव भी विभिन्न पादपों की पत्तियों को अपनी पोषण संबन्धी जरूरतें पूरी करने के लिए उपयोग करता है। पत्तियों में पर्याप्त मात्रा में खनिज जैसे लौह तत्व, कैल्सियम, पोटेशियम तथा कुछ विटामिन्स पाए जाते हैं। विटामिन ए तथा सी की मात्रा पत्ती के हरे रंग के साथ बढ़ती जाती है। पत्तियों का ऊर्जा मूल्य कम होता है क्योंकि इनमें उच्च जल तत्व होता है। हालांकि, उनका बड़ा सतह क्षेत्र आहार में व्यर्थ पदार्थ (roughage) प्रदान करता है। यह आहार नाल की समुचित क्रियाविधि के लिए बहुत आवश्यक है। संतुलित आहार में लगभग 100 ग्राम पत्तीदार सब्जियों के दैनिक उपभोग की जरूरत होती है। इसे कच्ची पत्तेदार सब्जियों से जिन्हें सलाद के रूप में खाया जाता है अथवा पकी हुई पत्तीदार सब्जी से प्राप्त किया जा सकता है।

अधिक महत्वपूर्ण तथा विख्यात पत्तेदार सब्जियों की खेती ताजी सब्जी के रूप में अधिकांशत: स्थानीय उपयोग के लिए ही की जाती है। कुछ पादप जो वन्य अवस्था में उगते हैं उनका उपयोग समाज के कमज़ोर तबके के लोगों द्वारा खासतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में, पत्तेदार सब्जी के रूप में किया जाता है। भारत में, पत्तेदार सब्जियां बड़े स्तर पर भोजन के सब्जी के भाग की पूर्ति करती हैं। सर्दी के मौसम में पालक, मेथी, सरसों, बथुआ, चौलाई सब्जियों के रूप में उपयोग होने वाले प्रमुख 'साग' हैं। पत्तियों के अतिरिक्त, तरुण मुलायम प्रोह तथा पुष्प कलिकाएं भी सब्जी के रूप में खाई जाती है।

14.3.1 पत्तागोभी (Cabbage)

वानस्पतिक नाम : *ब्रेसिका ओलेरेसिया* लिन. (*Brassica oleracea* Linn.)
किस्म *कैपीटेटा* लिन. (Var. *capitata* Linn.)
कुल : ब्रेसीकेसी (क्रूसी फेरी)
सामान्य नाम : बन्द गोभी, पत्तागोभी
$n = 9$

14.3.1.1 उत्पत्ति तथा वितरण

पत्तागोभी की खेती यूरोप में प्राचीन काल से होती रही है। ऐसा माना जाता है कि इसकी उत्पत्ति भूमध्यसागरीय क्षेत्र में हुई तथा यह यूरोप के अन्य भागों में फैल गई। यह फूलगोभी, केल (kale) व शाक (broccoli) से निकट रूप से संबन्धित है तथा ये ''कोल फसलें'' (cole crops) कहलाती हैं। ये सभी एक ही जाति *ब्रेसिका ओलिरेसिया* की विभिन्न किस्में हैं तथा इनकी उत्पत्ति वन्य पत्तागोभी कोलवर्ट (colewort) से हुई है। पत्तागोभी की खेती अब पूरे विश्व में की जाती है। इस सब्जी के प्रमुख उत्पादक यूरोप, जापान, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, कोरिया, टर्की, भारत तथा चीन है।

14.3.1.2 खेती

पत्तागोभी की खेती शीतोष्ण क्षेत्रों में की जाती है जहां का मौसम ठंडा व नम होता हो। इसे मुख्यत: उत्तरी भारत के मैदानों में सर्दी की फसल के तौर पर उगाया जाता है। इसे बीज से उगाया जाता है तथा पत्तागोभी का हेड / बंद (head) उन नवोद्भिदों को रोपने के 2 से 4 महीने के अंदर विकसित हो जाता है जिन्होंने अपने आपको अच्छी तरह से स्थापित कर लिया होता है। कटाई के बाद फसल को या तो तुरंत ही ताजी सब्जी के रूप में खाने के लिए बेच दिया जाता है अथवा इसे शीतगृह (cold storage) में रखा जाता है।

14.3.1.3 वानस्पतिकी

पत्तागोभी का पादप द्विवर्षी होता है परंतु इसे एकवर्षी के तौर पर उगाया जाता है। इसमें सुविकसित मूसला जड़ तंत्र होता है जो बहुत ही छोटे मजबूत तने को सहारा देता है। तना सघन रूप से मोटी, मांसल अतिव्यापित (overlapping) पत्तियों से पैक रहता है। यह पत्तागोभी का संहत ''बंद / हैड'' बनाता है। विभिन्न प्रकार के पत्तागोभी आकृति, आमाप, रंग तथा तंतुविन्यास के द्वारा पहचाने जाते हैं (चित्र 14.9) कुछ पत्तागोभी सफेद या लाल होते हैं। इनमें पत्तियां चिकनी तथा सुस्पष्ट शिराओं युक्त होती हैं। सेवोय (savoy) पत्तागोभी में झुर्रीदार या लहरदार पत्तियां होती हैं। सफेद पत्तागोभी जिसमें वास्तव में पीत हरित पत्तियां होती हैं वह सबसे अधिक प्रचलित हैं। पादप को पुष्पित नहीं होने दिया जाता है तथा ''हैड / बंद'' को सब्जी के रूप में उपयोग करने के लिए काट लिया जाता है।

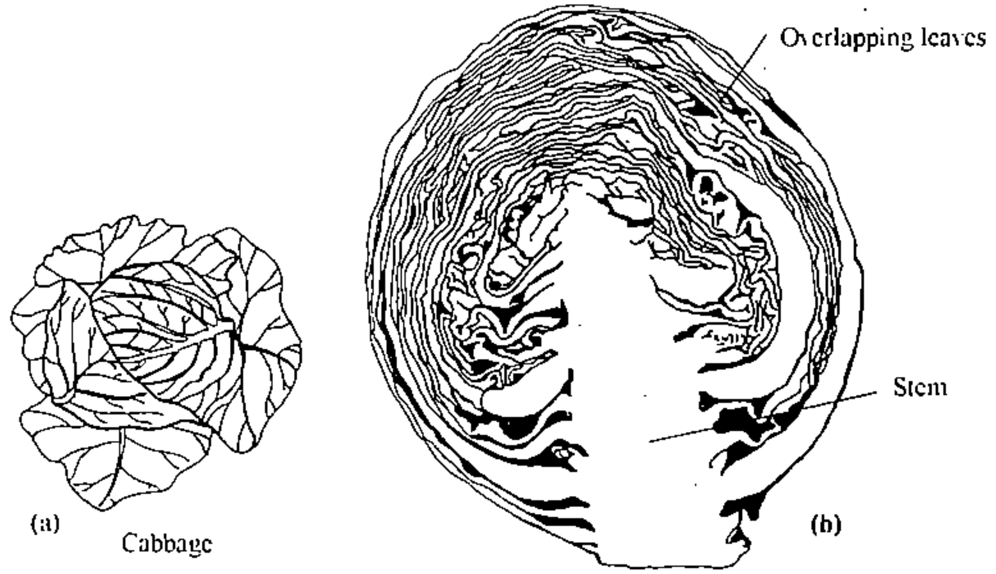

चित्र 14.9 : *ब्रैसिका ओलेरेसिया* किस्म *कैपीटेटा* (a) पत्तागोभी का संहत हैड (b) आधी कटी हुयी पत्ता गोभी

14.3.1.4 उपयोग

पत्तागोभी को कच्चा सलाद के रूप में खाया जा सकता है अथवा इसे सब्जी के रूप में पकाया जा सकता है। यह खनिजों तथा विटामिनों का समृद्ध स्रोत है। तथा पाचन में सहायता करती है।

14.3.2 लैट्यूस/सलाद के पत्ते (Lettuce)

वानस्पतिक नाम : *लैक्टूका सैटाइवा* लिन. (*Lactuca sativa* Linn.)
कुल : एस्टेरेसी (कंपोज़िटी)
सामान्य नाम : सलाद
n = 9

14.3.2.1 उत्पत्ति तथा वितरण

लैट्यूस की खेती के बारे में प्राचीन काल से ही ज्ञात है। लैट्यूस की पत्तियों के रिकॉर्ड मिस्र के मकबरों में 4500 ईसा पूर्व के काल के हैं। इसको प्राचीन यूनानियों तथा रोम वासियों द्वारा भी उगाया जाता था। ऐसा माना जाता है कि कृष्य लैट्यूस वन्य जाति *लैक्टूका सिरिओला* लिन. (*Lactuca serriola* Linn.) से विकसित हुई है। यह यूरोप, पश्चिमी एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका में सामान्य रूप से पाई जाती है। कृष्य लैट्यूस की उत्पत्ति के बारे में एक और मत भी है। कोशिका विज्ञानी तथा आनुवंशिकीय अध्यनों के आधार पर लुंडविस्ट (*Lundqvist*) (स्वीडन के वनस्पति विज्ञानी) ने सुझाया कि *लैक्टूका सेटाइवा* की उत्पत्ति संभवत: अन्य जातियों के संकरण द्वारा हुई है। हालांकि, इसकी उत्पत्ति शीतोष्ण क्षेत्र में हुई, लैट्यूस की खेती उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में भी होती है। यह अब विश्व के सभी भागों में उगाया जाता है।

14.3.2.2 खेती

लैट्यूस ठंडे मौसम की फसल है तथा इसके पुष्पन को रोकने के लिए पर्याप्त सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में अधिक ऊँचाईयों पर बेहतर ढंग से उगता है। उच्च तापमान से पुष्पन होने लगता है तथा इससे पत्तियां कड़वी हो जाती हैं। हल्की, बेहतर जल निकासी वाली तथा समुचित रूप से खाद पड़ी हुई मिट्टी में फसल की वृद्धि अच्छी होती है। लैट्यूस को बीज से उगाया जाता है तथा लगभग तीन महीने में काट लिया जाता है। नियमित दो सप्ताह के अंतरालों पर छोटी बुआई से अच्छी फसल होती है।

14.3.2.3 वानस्पतिकी

लैट्यूस का पादप एक एकवर्षी चिकना शाक है। जिसमें पादप के सभी भागों में दूधिया लैटैक्स पाया जाता है। इसमें सुविकसित मूसला जड़ें होती हैं जो आरंभ में महीन होती हैं परन्तु बाद में सघन हो जाती हैं। पहले एक छोटा मांसल तना बनता है तथा यह अनेकों सर्पिल रूप से व्यवस्थित पत्तियां उत्पन्न करता है जो संहत मूलज रोज़ेट (compact radical rossette) बनाता है जिसे "लैट्यूस हैड" कहते हैं। इस "हैड" की आकृति तथा संहतता विभिन्न किस्मों में भिन्न-भिन्न होती हैं (चित्र 14.10)। ये पत्तियां लगभग अवृंती, 12-25 से.मी. लंबी, चौड़े नाजुक या भंगुर पटल युक्त होती हैं। ये "लैट्यूस हैड" सलाद के रूप में खाए जाने के लिए उगाए जाते हैं।

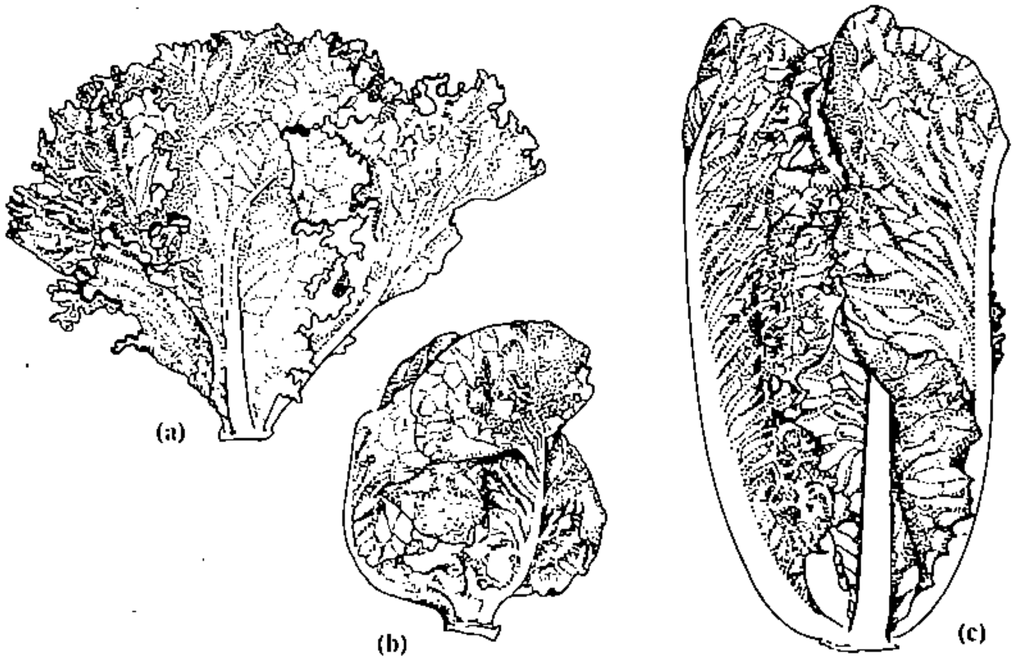

चित्र 14.10 : विभिन्न प्रकार के लैट्यूस (a) पर्णिल किस्म (b) हैड बनाने वाली किस्म (c) रोमैन (romaine) किस्म

वृद्धि की कायिक प्रावस्था के बाद, यदि "हैड" की कटाई नहीं की जाती है, तो पादप के तने दीर्घीकृत हो जाते हैं (bolting) (उत्स्फुटन)। यह दीर्घीकृत तने कुछ पत्तियां तथा अंतस्थ बड़ा यौगिक असीमाक्षी पुष्पक्रम धारण करते हैं। यौगिक असीमाक्षी पुष्पक्रम की प्रत्येक शाखा का अंत मुंडक (capitulum) में होता है। उत्स्फुटन तथा पुष्पन पत्तियों के रसायन को बदल देता है। उनमें एक कड़वा स्वाद आ जाता है तथा वे सलाद के रूप में खाई जाने के अयोग्य हो जाती हैं।

14.3.2.4 उपयोग

लैट्यूस सबसे विस्तृत रूप से उगाई जाने वाली सलाद की फसल है। पत्तियों में विटामिन ए तथा ई व साथ ही खनिज जैसे कैल्सियम, फॉस्फोरस, सोडियम, मैग्नीशीयम तथा पोटैशियम होता है। उन्हें कच्चा खाया जाता है अथवा उबाला जाता है। लैट्यूस के बीजों का उपयोग पादप शरीर क्रिया विज्ञानी अध्ययनों में बीज के अंकुरण पर प्रकाश के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

14.3.3 पालक (Spinach)

वानस्पतिक नाम : *स्पाइनेसिया ओलोरेसिया* लिन.
कुल : कीनोपोडिएसी
सामान्य नाम : पालक
n = 6

ये पादप "बीट ग्रीन्स" (Beet greens) या "इंडियन स्पीनिच" *बीटा बल्गेरिस* किस्म *बेंगालेन्सिस* से कुछ-कुछ सतही समानता दर्शाता है। (14.2.6 देखिए)। दोनों पादप कीनोपोडिएसी कुल के सदस्य हैं, परंतु इन्हें भिन्न वंशों में वर्गीकृत किया गया है। दोनों वंश पत्ती तथा फूलों की संरचना में भिन्न होते हैं। वंश *बीटा* में द्विलिंगी पुष्प होते हैं जबकि वंश *स्पाइनेसिया* में एकलिंगी पुष्प होते हैं।

14.3.3.1 उत्पत्ति तथा वितरण

स्पाइनेसिया ओलिरेसिया की खेती दक्षिण पश्चिमी एशिया में प्राचीन काल से होती रही है। इसकी उत्पत्ति संभवतः ईरान में हुई थी। इसे उत्तरी अफ्रीका तथा यूरोप में पुर:स्थापित किया गया था तथा अब इसकी खेती विस्तृत रूप से विश्व के शीतोष्ण भागों में की जाती है। यह संयुक्त राष्ट्र अमरीका, कैनाडा तथा यूरोप में बहुत ही प्रचलित पत्ते वाली सब्जी है। *स्पाइनेसिया ओलिरेसिया* की खेती सीमित स्तर पर भारत के पहाड़ी स्थलों में की जाती है परंतु इंडियन स्पीनिच (*बीटा वल्गेरिस* किस्म *बैंगालेन्सिस*) की खेती व्यापक स्तर पर पूरे देश में की जाती है।

14.3.3.2 खेती

पालक विभिन्न प्रकार की मिट्टियों तथा जलवायवी अवस्थाओं के लिए विस्तृत अनुकूलन दर्शाता है। ठंडी तथा अल्प प्रदीप्त काल की स्थितियां अच्छी पत्तियों की वृद्धि के लिए सबसे अनुकूल होती हैं। दीर्घ दिवा काल (long day) तथा उच्च तापमान से पुष्पन आरंभ हो जाता है।

पालक की फसल बीज से उगायी जाती है तथा बोने के बाद 6 से 8 सप्ताह में कटने के लिए तैयार हो जाती है। पादप में पुष्पन आरंभ होने से पहले पत्तियां 3-4 बार कट चुकी होती हैं।

14.3.3.3 वानस्पतिकी

पालक का पादप एक सतर शाक है जिसकी ऊँचाई 30-60 से.मी. होती है। घना, तेजी से बढ़ने वाला पादप द्विवर्षी होता है परंतु एकवर्षी की भांति उगाया जाता है। इसमें बहुत ही छोटा प्लेट जैसा तना होता है जिसमें से पत्तियों का सघन रोज़ेट निकलता है। पत्तियां बड़ी अंडाकार से दीर्घवृत्तीय, सामान्य, चिकनी, मुलायम तथा कुछ-कुछ गूदेदार होती हैं (चित्र 14.11)।

चित्र 14.11 : पालक की पत्तियां

जब पादप को बढ़ने दिया जाता है, तो चपटे प्लेट जैसे आधारीय क्षेत्र के केन्द्र से एक सतर तना उगता है। यह एकांतरी पत्तियां धारण करता है जो आमाप में आधारी पत्तियों से छोटी होती हैं। इन छोटी पत्तियों के अक्षों में मादा पुष्पों के गुच्छे निकलते हैं। तने का अंत नर पुष्पधारी कणिश (spike) में होता है। पुष्प छोटी हरी सी संरचनाएं होते हैं जो पंचभागी तथा त्रिज्या सममित होते हैं। फल

कठोर, न दबाए जा सकने वाला यूट्रिकल (utricle) होता है। यह एक शूलाग्री (spinescent) कैप्सूल जैसी संरचना में बंद रहता है।

14.3.3.4 उपयोग

प्राचीन काल में, पालक का उपयोग औषधि के तौर पर होता था। पत्तियों में उपस्थित बड़ी मात्रा में रेशे हल्के दस्तकारी (laxative) का कार्य करते हैं। यह अपनी उच्च पैदावार के कारण अब प्रचलित पत्तेदार सब्जी है। पत्तियां खनिजों जैसे कैल्सियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, लौहतत्व, फॉस्फोरस, सोडियम, कॉपर, विटामिन ए, बी कॉम्प्लैक्स तथा सी और कैरोटीन से समृद्ध होती हैं। ये प्राकृतिक विटामिन के (vitamin K) का भी महत्वपूर्ण स्रोत हैं। गूदेदार पत्तियां कच्ची अथवा पकाकर खायी जाती हैं। इनमें किसी भी अन्य पत्तेदार सब्जी से अधिक प्रोटीन होता है। इनका उपयोग सलाद तथा सूप में भी होता है।

बोध प्रश्न 2

1. कॉलम I (पादप) को कॉलम II (कुल) से मिलाइए।

कॉलम I	कॉलम II
पत्तागोभी	कीनोपोडिएसी
लैट्यूस	ब्रैसीकेसी
पालक	एस्टेरेसी

2. तीन गुण बताइए जो पत्तेदार सब्जियों को संतुलित आहार का महत्त्वपूर्ण घटक बनाते हैं।

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

3. लैट्यूस की खेती पर एक टिप्पणी लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

4. बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य (स) हैं या असत्य (अ)।

   क) सभी पत्तेदार सब्जियों को अल्प रूप से अम्लीय मिट्टी में उगाया जा सकता है। ☐

   ख) विवर्णी (blanched) पत्तेदार सब्जियां कम पोषक होती हैं। ☐

   ग) पत्तागोभी या पालक में पुष्पन पत्तियों का स्वाद बढ़ा देता है। ☐

   घ) *लैक्टूका सैटाइवा* की उत्पत्ति वन्य जातियों के संकरण से हुई थी। ☐

14.4 फल तथा बीज वाली सब्जियां

आपने इस इकाई की प्रस्तावना में पढ़ा कि सब्जी को पादप के किसी भी भाग से प्राप्त होने वाले पोषक भोज्य पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इस संदर्भ में बहुत से पादपों के वास्तविक वानस्पतिक फलों को भी सब्जी के तौर पर खाया जा सकता है। इनमें से अधिकांश फल जिन्हें सब्जी के रूप में खाया जाता है वे शाकीय एकवर्षी पादपों से उत्पन्न होते हैं। दिलचस्प तौर पर, उद्यान विज्ञान में, वास्तविक वानस्पतिक फल जो एकवर्षी पुष्पीय पादपों द्वारा उत्पन्न होते हैं उन्हें सब्जी के रूप में वर्गीकृत किया गया है। इस परिभाषा को अपनाते हुए, शाकीय पादपों द्वारा उत्पन्न होने वाले अनेक फल प्राचीन काल से ही सब्जी के रूप उपयोग किए जाते हैं। अनेकों कुकुरबिटेसी कुल के पादप जो खाद्य फल उत्पन्न करते हैं उन्हें सब्जी के तौर पर खाया जाता है। ऐसे मेलन्स (खरबूजा, तरबूजा आदि), भी हैं जो हालांकि शाकीय एकवर्षी पादपों पर उगते हैं परंतु फल के तौर

पर खाए जाते हैं। (इकाई 13.2.8 देखिए)। कुकुरबिट्स के अतिरिक्त, टमाटर, बैंगन तथा मिर्च भी सोलेनेसी कुल के महत्वपूर्ण पादप हैं जिनके फल सब्जी के रूप में खाए जाते है। अन्य महत्वपूर्ण फल जिन्हें सब्जी के रूप में उगाया जाता है, उनमें भिन्डी (ओक्रा) तथा विभिन्न बीन्स शामिल हैं (इकाई 12 देखिए)।

अधिकांश सब्जियों में वसा या प्रोटीन्स नहीं होते हैं परन्तु ये विटामिनों, खनिजों, व्यर्थ पदार्थ आदि के स्रोत होते हैं। ये सब्जी की फसल के रूप में महत्वपूर्ण होते हैं और हम यहां कुछ प्रमुख पादपों की चर्चा करेंगे जिनके फलों को सब्जी के तौर पर खाया जाता है।

14.4.1 कुकुरबिट्स (Cucurbits)

कुकुरबिटेसी कुल प्रतान (tendril) धारी शाकीय पादप के रूप में पहचाना जाता है जिनमें एकलिंगी पुष्प तथा गूदेदार सरस फल (berry) जैसे फलों के कारण पहचाना जाता है (चित्र 14.12)। हम लोग कद्दू वर्गीय शाक (gourds), मेलन्स, काशीफल, ककड़ी, खीरा आदि से परिचित हैं जिन्हें सामान्य तौर पर देश के विभिन्न भागों में खाया जाता है। इन सबके बारे में विस्तार से वर्णन करना जगह सीमित होने के कारण कठिन होगा। सौभाग्य से, इस कुल के अधिकांश पादपों में समान विशेषताएं पाई जाती हैं। (चित्र 14.13) तथा ये समान प्रकार की जलवायवी तथा मिट्टी की स्थितियों में उगते हैं हालांकि उनकी उत्पत्ति संभवत: विश्व के विभिन्न भागों में हुई है। इनमें से अधिकांश विभिन्न उष्ण कटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में फैल गए हैं जहां उनकी खेती फलों के लिए की जाती है। खाने के रूप में खाए जाने के अतिरिक्त, कुकरबिट्स के फलों का उपयोग कुछ भंडारण के लिए बर्तनों को बनाने के लिए तथा कुछ संगीत वाद्यों को बनाने में किया जाता है। परिपक्व फलों के शुष्क कठोर कवचों का उपयोग अन्य अनेक प्रकारों से भी किया जाता है। *लुफा (Luffa)* के पके फल के तंतु-संवहनी जाल से स्पंज बनाए जाते हैं। बहुत से कुकुरबिट्स के बीज मिठाइयों तथा नमकीन नाश्तों के महत्वपूर्ण भाग होते हैं।

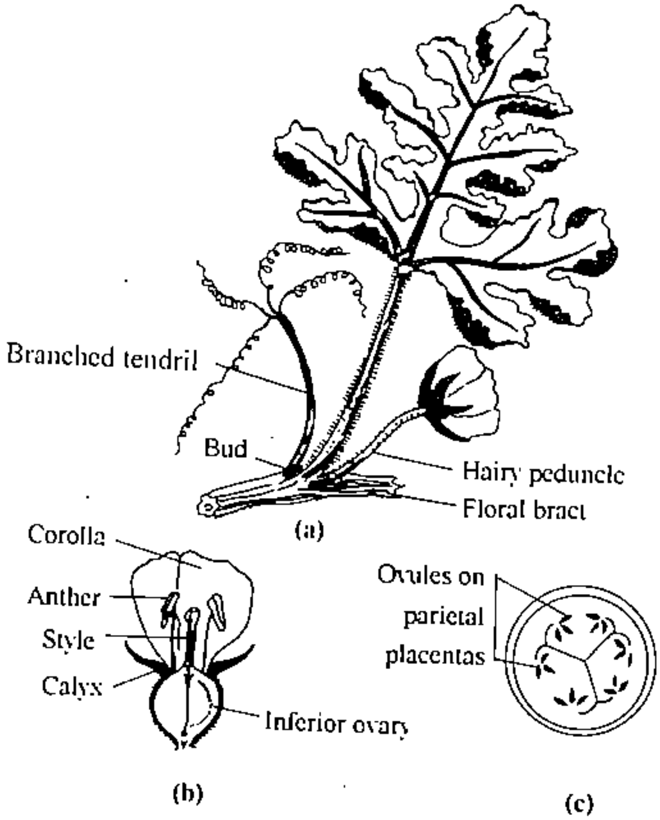

चित्र 14.12 : कुकुरबिटेसी (a) *कुकुरबिट* के सामान्य संरचनात्मक पादप के पर्ण अक्ष; प्रताप; सहपत्र; पुष्प तथा कलिका का आरेखी चित्र (b) उभयलिंगी पुष्प की अनुदैर्ध्य काट (c) तरुण फल की अनुप्रस्थ कॉट

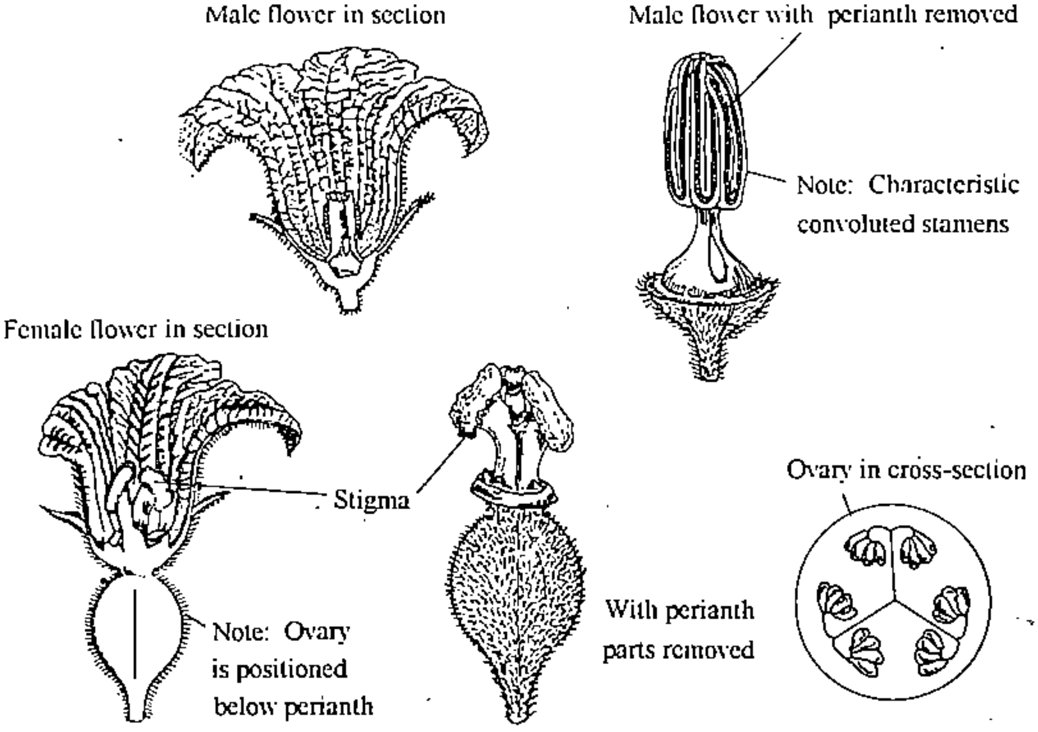

चित्र 14.13 : फल अधःस्थ अंडाशय से बनते हैं व फल का छिलका अंडाशय की भित्ति तथा वाह्य दलपुंज व दलपुंज के निम्न भाग का संयुक्त परिदलपुंज होता है

कुछ अधिक महत्वपूर्ण कुकरविट्स जिन्हें सब्जी की फसल के तौर पर उगाया जाता है उन्हें नीचे सूचीवद्ध किया गया है।

14.4.1.1 *बेनिनकेसा हिस्पिडा* **(थंब) लोग्न (*Benincasa hispida* (Thunb) Logn.)**
पेठा / श्वेत तुंबा - (white gourd)
सामान्य नाम : पेठा
n = 12

इस पादप की उत्पत्ति जावा में हुई तथा अब इसे पूरे उष्णकटिवंधी एशिया में उगाया जाता है। फल बड़े, भारी गोल से दीर्घवृत्तीय तथा हरे छिलके के ऊपर सफेद मोमी परत युक्त होते हैं।
सफेद स्पंजी गूदे में असंख्य चपटे बीज होते हैं।

तरुण फल सब्जी के तौर पर खाए जाते हैं। पके फलों को चीनी के साथ पका कर स्वादिष्ट मिठाई वनाई जाती है। फलों का उपयोग शुभ कार्य धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है।

14.4.1.2 *सिटुलस लेनेटस* **किस्म** *फिस्टुलोसस* **(स्टॉक्स)**
(*Citrullus lanatus* var. *fistulosus* (Stocks) डूथी और फुलर :
(Duthie and Fuller)

स्क्वाश मेलन / टिंडा (Squash melon)
सामान्य नाम : टिंडा
n = 11

तरबूज की इस किस्म की उत्पत्ति भारत में हुई थी तथा यह अधिकांशत: देश के उत्तरी भागों में उगाया जाता है। छोटे गोल (हरे) फलों को विभिन्न प्रकार से सब्जी के रूप में पकाया जाता है।

14.4.1.3 ए : *कुकुमिस मेलो* लिन. किस्म *रेटीकुलेटस* सर.
(*Cucumis melo* Linn. var. *reticulatus* Ser.)

खरबूजा (**musk melon**)
सामान्य नाम : खरबूजा
n = 12

खरबूजा, इसके बारे में विस्तार से इकाई 13.2.8 में वर्णन किया जा चुका है। कुछ किस्मों के फलों को पकाकर सब्जी के रूप में खाया जाता है।

14.4.1.3 बी : *कुकुमिस मेलो लिन.* किस्म *युटीलिसाइमस* (रोक्स.)
(*C. melo* Linn. Var. *utilissimus* (Roxb.) डूथी और फुलर (Duthie & Fuller)

(लंबा मेलन या ककड़ी) (Long melon or snake cucumber)
सामान्य नाम : ककड़ी
n = 12

यह भारत का वासी है तथा विभिन्न राज्यों में स्थानीय उपयोग के लिए इस्तेमाल किया जाता है। तरुण फलों को कच्चा ही सलाद के तौर पर खाया जाता है।

14.4.1.4 *कुकुमिस सेटाइवस* लिन. (*Cucumis sativus* Linn.)

खीरा
सामान्य नाम : खीरा
n = 7

इसकी उत्पत्ति उत्तरी भारत में हुई तथा अब यह पूरे विश्व में फैल गया है। फल की आकृति, आमाप तथा रंग विभिन्न किस्मों में भिन्न-भिन्न होते हैं।

फलों को सलाद के तौर पर खाया जाता है।

14.4.1.5 *कुकुरबिटा मैक्सिमा* डच एक्स लिन.
(*Cucurbita maxima* Duch ex Linn.)

(सीताफल या शीत स्क्वॉश) (Pumpkin or Winter squash)
सामान्य नाम : सीताफल
n = 12

इसकी उत्पत्ति दक्षिणी अमरीका में (पेरू) हुई तथा अब यह विश्व के अनेकों भागों में फैल गया है।

फल विभिन्न प्रकार का मुलायम या कठोर छिलके वाला होता है जो मद्धिम या चटक रंगों में हो सकता है। गूदा पीले के विभिन्न शेड्स का होता है। बीज स्थूल तथा सामान्यत: चिकने होते हैं। पादप के तने तथा पत्तियों पर शूक (bristles) उपस्थित रहते हैं।

परिपक्व फलों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है।

14.4.1.6 *कुकुरबिटा मॉस्केटा* (डच ऐक्स लैम) डच एक्स पोइर : (*Cucurbita moschata* (Duch ex Lam) Duch. Ex. Poir
(मीठाकद्दू) (The pumpkin)
सामान्य नाम : मीठा कद्दू
n = 12

यह जाति विस्तृत रूप से उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका में वितरित है तथा संभवत: इसका देसीकरण सबसे पहले मध्य अमरीका या मैक्सिको में किया गया था। इसे अब विश्व के उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों

में उगाया जाता है। यह जाति *कुकरबिटा मैक्सिमा* के काफी समान है तथा तने व पत्तियों पर शूक का अनुपस्थिति के कारण भिन्न होती हैं।

इस फल का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है तथा एक मिठाई भी फल से बनाई जाती है।

14.4.1.7 *कुकरबिटा पीपो* (लिन.) (*Cucurbita pepo* Linn.)

ग्रीष्म स्कवॉश / विलायती कद्दू (The Marrow or Summer Squash)
सामान्य नाम : विलायती कद्दू, कुम्हरा
n = 20

इस जाति की उत्पत्ति उत्तरी अमरीका में हुई थी तथा अब यह विस्तृत रूप से वितरित है। यह अपेक्षाकृत ठंडे मौसम को बर्दाश्त कर लेती है, जबकि *कुकरबिटा मॉस्केटा* गर्म मौसम को बर्दाश्त कर सकती है। यह अन्य जातियों के समान है परंतु अपने तीक्ष्ण कोणीय, खाचित, कठोर वृंतकों तथा छोटे फलों के द्वारा विभेदित की जा सकती है। यह अन्य दो जातियों की भांति प्रसिद्ध नहीं हैं। फलों को सब्जी के रूप में पकाकर खाया जाता है।

14.4.1.8 *लैजीनेरिया सिसरेरिया* (मोलिना) स्टैण्डल
[*Lagenaria siceraria* (Molina) Standl]

लौकी (The Bottle gourd)
सामान्य नाम : लौकी
n = 11

लौकी नई तथा पुरानी दुनिया दोनों में प्राचीन काल से ही ज्ञात है। इसकी उत्पत्ति अफ्रीका या भारत (पुरानी दुनिया) में अथवा मैक्सिको या पेरू (नई दुनिया) में हुई होगी। यह अब सभी उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में फैली हुई है।

तरुण फलों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है जबकि परिपक्व फलों को पादप पर ही सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। ये विभिन्न आकृति तथा आमापों के कठोर कवच बनाते हैं। इन्हें बर्तन के रूप में (बोतल) अथवा घरेलू बर्तनों जैसे प्याली, प्याले, कलछी, चम्मच, चमचा आदि बनाने में उपयोग किया जाता है।

14.4.1.9 *लूफा एक्यूटेंगुला* (लिन.) रोक्स. (*Luffa acutangula* (Linn.) Roxb.]

(कोणीय लूफा / काली तोरई : (The Angled Luffa)
(खाँचित या धारीदार गॉर्ड / तोरई) (Ridged or Ribbed sponge gourd)
सामान्य नाम : काली तोरी
n = 13

इस जाति की उत्पत्ति उत्तरी-पश्चिमी भारत में हुई तथा यह विस्तृत रूप से हमारे देश में उगाई जाती है। अन्य अधिकांश कुकुरबिट्स के विपरीत, यह निम्न-नम उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में अच्छी तरह से उगती है। फल मुग्दराकार (club shaped), कोणीय तथा 10-खाँचों युक्त होते हैं। तरुण मुलायम फलों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है।

14.4.1.10 *लुफा सिलिन्ड्रिका* (लिन.) एम.जे.रोइम
(*Luffa cylindrica* (Linn.) M.J. Roem]

चिकना लूफा / तोरई (The smooth Luffa)
चिकनी स्पंज गॉर्ड (Smooth sponge gourd)
सामान्य नाम : तोरी
n = 13

इसकी उत्पत्ति संभवत: भारत में हुई तथा अब यह विश्व के उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में विस्तृत रूप से उगाई जाती है। फल लगभग बेलनाकार तथा हल्की धारियों युक्त होता है, परन्तु यह खाँचित या कोणीय नहीं होता है।

तरुण फलों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है। परिपक्व फलों को पेड़ पर ही सूखने दिया जाता है, जिससे तंतुमय-संवहनी जाल पूर्णत: विकसित हो सके। इसे नहाने के स्पंज के रूप में अथवा अन्य कार्यों में उपयोग किया जाता है।

14.4.1.11 *मैमोर्डिका चरेंशिया* **लिन.** (*Momordica charantia* **Linn.**)

करेला : (The Bitter gourd)
सामान्य नाम : करेला
n = 11

हालांकि इसकी उत्पत्ति के वास्तविक केन्द्र का निर्धारण नहीं किया जा सका है, करेले की उत्पत्ति पुरानी दुनिया में हुई थी। अब यह सभी उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में विस्तृत रूप से पाया जाता है। दोलायमान / लटके हुए फल लंबे, तर्कुरूप (fusiform), खांचित तथा असंख्य गुलिकाओं (tubercles) युक्त होते हैं। तरुण फलों को सब्जी के रूप में खाया जाता है। इनकी कड़वाहट को कटे हुए फलों को पकाने से पहले नमक के पानी में डुबोकर रखने से कम हो जाती है। ऐसा माना जाता है कि इसका कड़वापन डायबिटीज / मधुमेह के रोगियों में रक्त-शर्करा के स्तर को कम करने में सहायक होती है। इसके टुकड़े काटकर तरीदार सब्जियों या सांभर आदि में मिलाए जा सकते हैं।

14.4.1.12 *ट्रिकोसेन्थीज़ एंग्युना* **लिन.** (*Trichosanthes anguina* **Linn.**)

सर्प गॉर्ड / चचिंडा : (The Snake gourd)
सामान्य नाम : चचिंडा
n = 22

यह वन्य स्थिति में भारत से ऑस्ट्रेलिया तक ज्ञात है। इसकी खेती भारत, सुदूर पूर्व तथा वेस्टइंडीज में की जाती है। फल पतले, लंबे, क्रमश: पतले होने वाले, हरापन लिए सफेद होते हैं। अंदर का भाग खोखला होता है तथा इसमें कुछ मोटे भूरे से तक्षित (sculptured) बीज होते हैं। तरुण फलों को सब्जी के रूप में खाया जाता है।

14.4.1.13 *ट्रिकोसेन्थीज़ डायोका* **रोक्स.** (*Trichosanthes dioica* **Roxb.**)

नुकीली गॉर्ड / परवल (The Pointed gourd)
सामान्य नाम : परवल
n = 11

इसकी उत्पत्ति भारत में हुई तथा इसकी खेती दक्षिण पूर्व एशिया में भी की जाती है। इसके फल सर्प गॉर्ड के फलों की तुलना में छोटे होते हैं। वे अधिक तीक्ष्ण रूप से नुकीले तथा तर्कुरूपी होते हैं। फल संहत होते हैं तथा असंख्य बीज लिए होते हैं। तरुण फलों को सब्जी के रूप में पकाया जाता है।

14.4.2 सोलेनेसी कुल की सब्जियां

कुल सोलेनेसी आर्थिक रूप से एक बहुत ही महत्वपूर्ण कुल का प्रतिनिधित्व करता है जो फलों से सब्जियां प्रदान करता है। ये फल की फसलें न सिर्फ वानस्पतिक रूप से महत्वपूर्ण हैं बल्कि उनकी संवर्धनी आवश्यकताएं भी समान होती हैं। उन्हें एकवर्षी के रूप में गर्म मौसम में उगाया जाता है। इसके अतिरिक्त आलू का वर्णन सेक्शन 14.2.1 में किया गया है। प्रारूपी रूप से, बीजों को पहले नर्सरी में बोया जाता है तथा बाद में जब वो लगभग 15 से.मी. ऊँचे हो जाते हैं नवोद्भिदों को खेत में बो दिया जाता है।

14.4.3 टमाटर (Tomato)

वानस्पतिक नाम : *लाइकोपर्सिकोम एस्कुलेन्टम* मिल.
(*Lycopersicon esculentum*) Mill.

कुल : सोलेनेसी

सामान्य नाम : टमाटर

n = 12

14.4.3.1 उत्पत्ति तथा विवरण

टमाटर की उत्पत्ति लैटिन अमरीका के पेरू-इक्वेडोर क्षेत्र में हुई थी। यह पूर्व-कोलंबसी काल में ट्रॉपिकल अमरीका के बहुत से भागों में ज्ञात था तथा 15वीं शताब्दी में पूर्वी गोलार्द्ध / पुरानी दुनिया में पहुंच गया था। टमाटर की खेती अब पूरे विश्व में की जाती है। महत्व के क्रम में प्रमुख उत्पादक देश संयुक्त राष्ट्र अमरीका, उसके बाद चीन, टर्की, इटली, भारत, मिस्र (ईजिप्ट), स्पेन, ईरान, ग्रीस, मैक्सिको, रूसी फेडरेशन, उज़्बेकिस्तान, उक्रेन, युनाइटेड किंगडम, चिली, रोमानिया तथा संयुक्त अरब अमीरात, मोरक्को व पुर्तगाल अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक हैं।

14.4.3.2 खेती

टमाटरों को विभिन्न प्रकार की जलवायवी परिस्थितियों में उगाया जा सकता है। यह गर्म मौसम की फसल है। लंबे सूर्य की रोशनी के काल तथा हल्की समान रूप से वितरित वर्षा बहुत अच्छी होती है। बहुत नम मौसम तथा हल्की सूर्य की रोशनी कायिक वृद्धि को बढ़ा देते हैं जिससे फल का निर्माण कम हो जाता है। उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में सिंचाई युक्त भूमि में एक ही वर्ष में तीन फसलें उगायी जा सकती हैं। शीतोष्ण क्षेत्रों में, टमाटरों को नियंत्रित पौधग्रह (green house) की स्थितियों में उगाया जाता है। फलों को यांत्रिक तरीके से तोड़ने के लिए विशेष किस्में विकसित की गई हैं।

टमाटर सबसे अच्छी तरह से समृद्ध, उर्वर दोमट मिट्टी में उगते हैं। समुचित वृद्धि के लिए मिट्टी का मुक्त विन्यास बहुत महत्वपूर्ण होता है।

फसल को बीज से उगाया जाता है। बीजों को फल के गूदे से पूरी तरह से मुक्त कर लिया जाता है क्योंकि गूदे में अंकुरण रोधी (germination inhibitor) पाया जाता है। नवोद्‌भिदों को नर्सरी में उगाया जाता है तथा उसके बाद खेतों में रोपा जाता है। कार्बनिक खाद देने से फसल काफी अच्छी बढ़ती है। टमाटरों को बहुत सफल तरीके से मिट्टी विहीन संवर्धन में जल संवर्धन कला के उपयोग द्वारा उगाया जा सकता है।

14.4.3.3 वानस्पतिकी

टमाटर का पादप बहुत ही विविध शाक है। यह वन्य अवस्था में बहुवर्षी के रूप में उगायी जाती है। परंतु इसकी खेती एकवर्षी के रूप में होती है। नवोद्‌भिदों में मज़बूत मूसला जड़ होती है परन्तु यह रोपण के दौरान क्षतिग्रस्त हो जाती है तथा सघन तंतुमय अपस्थानिक जड़ तंत्र विकसित हो जाता है। कमजोर तना सघन रूप से शाखित होता है। पहले एकपादाभी रूप से (monopodial) तथा बाद में संपादाभी (sympodial) तरीके से। शाखाएं सतर अथवा तलसर्पी होती हैं। छोटे घुंडीदार, लाल-पीले से ग्रंथिल रोम तथा लंबे नुकीले त्वचारोम (trichome) तने, वृंतों तथा तरुण पत्तियों को घेरे रहते हैं।

पत्तियां सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहती हैं तथा 2/5 पर्णविन्यास दर्शाता है। पुष्पक्रम अंतस्थ होता है, परंतु संपादाभी शाखन के कारण, पुष्प गुच्छों में, पत्तियों के विपरीत अथवा कभी-2 उनके बीच में उगते हुए दिखाई पड़ते हैं। (चित्र 14.14)

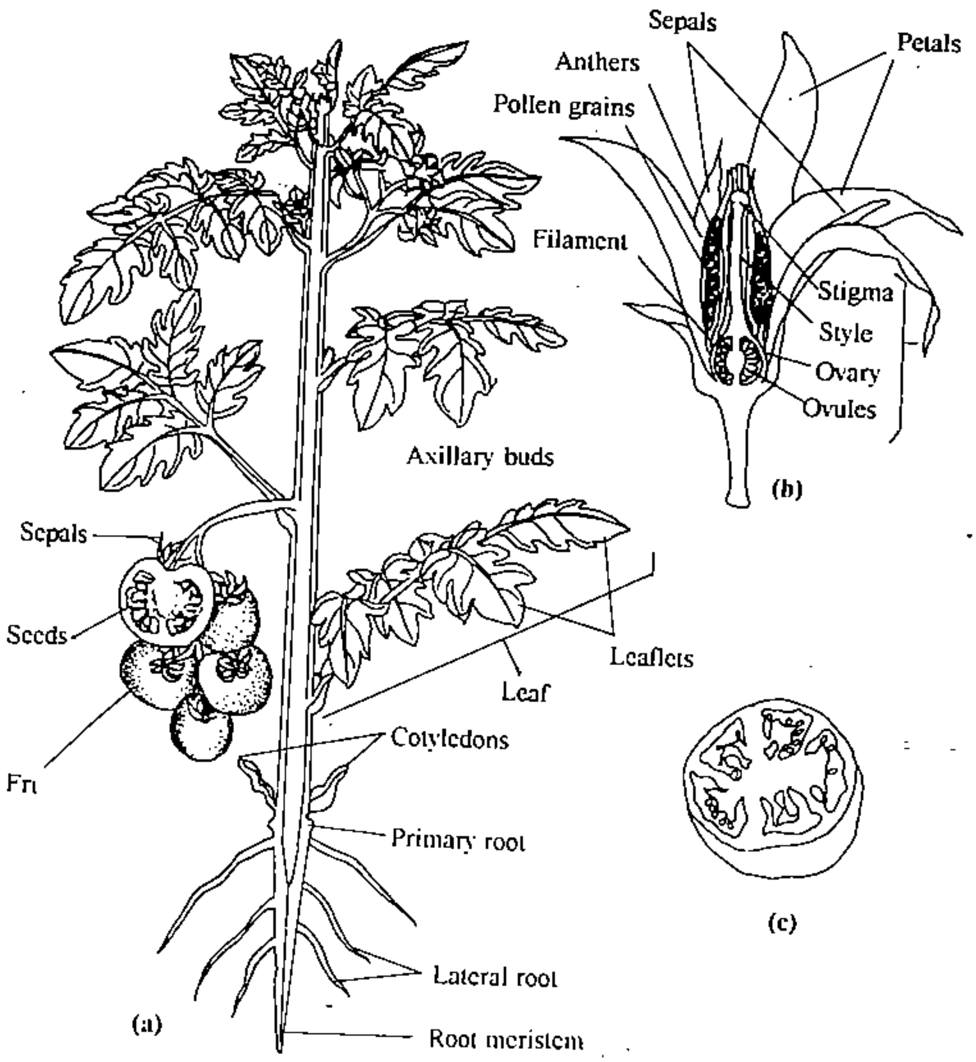

चित्र 14.14 : *लाइकोपर्सिकोम ऐस्कुलेन्टम* (a) टमाटर का पादप (b) पुष्प (c) अनुप्रस्थ काट में फल

फल मांसल सरस फल होता है। यह जब तरुण होता है तब रोमिल होता है परंतु परिपक्व होने पर चिकना तथा चमकीला हो जाता है। फल की आकृति, आमाप तथा रंग अनेक किस्मों में भिन्न-भिन्न होता है। कच्चा फल हरा तथा पका फल सामान्यत: लाल या पीला होता है। फल का लाल रंग विकासशील फल में दो वर्णकों के विकास के कारण होता है। कैरौटीन (Carotene) तथा लाइकोपरसिकीन (Lycopersicin) (या लाइकोपीन) (Lycopene)।

न वर्णकों की आपेक्षिक मात्रा पके फल के वास्तविक रंग का निर्धारण करती है। पीले फलों वाली किस्मों में, लाइकोपरसिकीन नहीं विकसित होती है। फल में असंख्य छोटे हल्के भूरे बीज पाए जाते हैं।

4.4.3.4 उपयोग

टमाटर बहुत ही महत्वपूर्ण सब्जी की फसल है तथा आलू के बाद दूसरे नंबर पर आती है। यह सबसे महत्वपूर्ण डिब्बाबंद या प्रवर्धित शाक है क्योंकि इसका विशेष पोषक मूल्य है। फल खनिजों तथा विटामिन ए और सी का समृद्ध स्रोत है। फलों को सलाद के रूप में कच्चा अथवा पकाकर खाया जाता है। यह तरीदार सब्जियों का महत्वपूर्ण घटक है इनका उपयोग सूप, सॉसेस तथा कैचप बनाने में भी किया जाता है। टमाटरों का पेस्ट, प्यूरी तथा सूप में प्रवर्धन अब एक महत्वपूर्ण उद्योग बन गया है। टमाटर के बीजों (जो गूदे तथा बचे हुए अवशेष से प्राप्त होते हैं) में एक अंशशुष्कन

तैल (semidrying oil) होता है। यह खाने योग्य होता है तथा इसका उपयोग सलाद तेल के रूप में तथा मार्जेरीन (margarine) और साबुन के निर्माण में किया जाता है।

14.4.4 बैंगन, भाँटा (The Brinjal or the Eggplant or Aubergine)

वानस्पतिक नाम : *सोलेनम मैलोजेना* लिन. (*Solanum melongena* Linn.)
कुल : सोलेनेसी
सामान्य नाम : बैगन
n = 12

14.4.4.1 उत्पत्ति तथा वितरण

बैगन के पादप की उत्पत्ति भारत में हुई है। ऐसा माना जाता है कि इसकी खेती पहले शाक फसल के रूप में उत्तर पूर्व में की जाती थी जहां अनेक प्रकार के वन्य पादप आज भी पाए जाते हैं। बैंगन के जननद्रव्य (germ plasm) का संग्रह नेशनल ब्यूरो ऑफ प्लांट जेनेटिक रिसॉर्सेज (National Bureau of Plant Genetic Resources) के द्वारा भारत के अनेक भागों से इस शाक फसल की जैवविविधता का अध्ययन करने के लिए किया गया है। भारत से, यह पादप विश्व के अन्य भागों में फैल गया। बैंगन की खेती उष्णकटिबंधी, उपोष्ण तथा गर्म शीतोष्ण क्षेत्रों में की जाती है। यह भारत तथा दक्षिण पूर्वी एशिया के अतिरिक्त जापान, टर्की, इटली, मिस्र, ईराक की महत्वपूर्ण फसल है।

14.4.4.2 खेती

बैंगन की खेती के लिए कृषि जलवायवी आवश्यकताएं टमाटर के काफी समान या उसके जैसी ही हैं। इसमें हालांकि फल के परिपक्व होने के लिए लंबे वर्धन काल की जरूरत होती है। यह गर्म मौसम की फसल है तथा पाले को नहीं बर्दाश्त कर पाती है। यह मजबूत पादप होता है तथा विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। फसल सबसे अच्छी तरह से अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी में उगती है। बीजों को नर्सरी में अंकुरित किया जाता है तथा नवोद्भिदों को रोपा जाता है। फसल श्रम साध्य है। फल जब अच्छे आकार तथा रंग के हो जाते हैं तब उन्हें तोड़ लिया जाता है। फलों के आने को रासायनिक वृद्धि नियंत्रकों के पुष्पन आरंभ होने पर उपयोग द्वारा बढ़ाया जा सकता है। बीजों को बोने से पहले उनको वृद्धि नियंत्रकों द्वारा उपचारित किया जा सकता है।

14.4.4.3 वानस्पतिकी

अपनी वन्य अवस्था में, बैंगन का पादप एक बहुवर्षी है, परंतु इसकी खेती एकवर्षी के रूप में की जाती है। इसमें मजबूत गहरा भेदी मूसलाजड़ तंत्र होता है। जो सतर शाखित शाक को सहारा देता है। पादप 0.5 से 1.5 मी. की ऊँचाई तक बढ़ता है तथा इसमें काँटे तथा धूसर घनरोम (tomentum) सभी भागों में पाए जाते हैं। तना अधिक शाखित तथा विस्तारी होता है। (चित्र 14.15a)।

बैंगन में, वर्तिका की लंबाई के आधार पर विभिन्न प्रकार के पुष्प पाए जाते हैं। सिर्फ उन्हीं पुष्पों में फल आता है जिनमें लंबी या मध्यम आकार की वर्तिका होती है। फल बड़ा सरस फल है जिसकी आकृति, आमाप तथा रंग भिन्न-भिन्न होते हैं। यह चिकना, चमकदार तथा दृढ़ गूदे वाला होता है। फल बड़ा, चिकना, चमकदार, दृढ़ गूदे वाला, दोलायमान / लटका हुआ सरस फल (15 से.मी. तक लम्बा) होता है। यह सामान्यत, अंडाकार, दीर्घायत (oblong) या प्रतिअंडाकार (obovoid) होता है। (चित्र 14.15) जो सफेद या पीले से गहरे बैंगनी या काले रंग का अथवा धारीदार भी हो सकता है। असंख्य छोटे हल्के भूरे बीज फल के गूदे में धंसे रहते हैं।

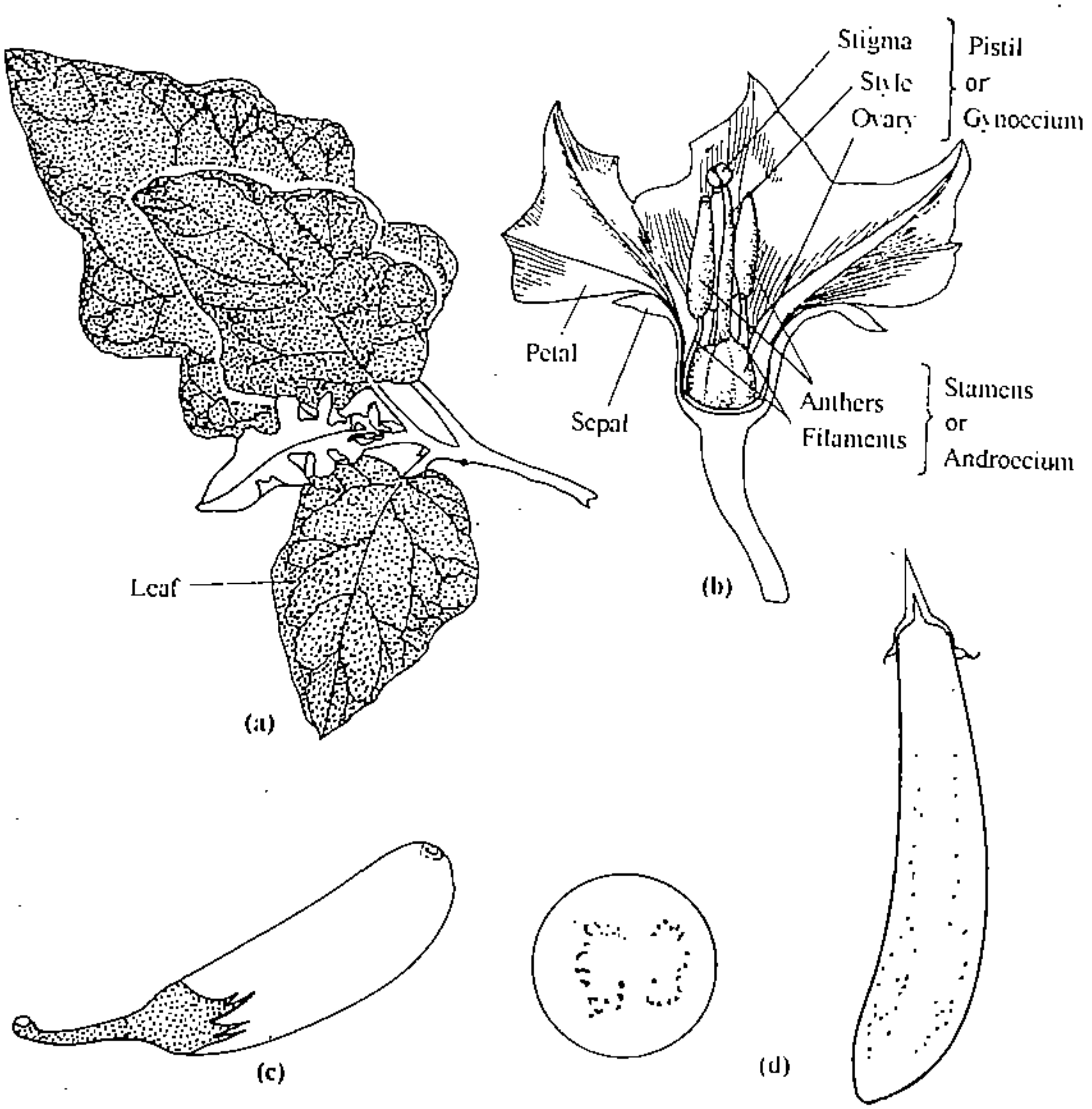

चित्र 14.15 : *सोलेनम मैलोन्जिना* (a) बैंगन की एक शाखा (b) पुष्प (c) फल (d) फलों की अनुप्रस्थ तथा अनुदैर्घ्य काट

14.4.4.4 उपयोग

ताजे वैंगन के फल खनिजों तथा विटामिन वी से समृद्ध होते हैं। उन्हें सब्जी के रूप में विभिन्न तरीकों से पकाया जाता है। छोटे फलों वाली किस्मों को टुकड़े करके तला या पकाया जा सकता है। बड़े फलों वाली किस्मों को भूनकर भरता भी वनाया जा सकता है। बैंगन के टुकड़ों को बेसन के घोल में लपेटकर उन्हें तलकर स्वादिष्ट नाश्ता तैयार किया जा सकता है।

14.4.5 मिर्चें (Chillies)

वानस्पतिक नाम : *कैप्सिकम एनुअम* लिन. (*Capsicum annuum* Linn.)
कैप्सिकम फ्रुटसेन्स लिन (*C. frutescens* Linn.)
कुल : सोलेनेसी
सामान्य नाम : मिर्च
n = 12

मिर्चें विभिन्न प्रकार की होती हैं जिनका उपयोग सामान्यत: सब्जी, अथवा मसाले के रूप में सब्जी का स्वाद बढ़ाने के लिए किया जाता है। इनका उपयोग ताजा ही अथवा सुखाकर व साबुत या पाउडर बना कर किया जाता है। जो सब्जी के रूप में खाई जाती हैं उन्हें लाल या मीठी मिर्च, पिमैन्टो (जमैका की काली मिर्च) हरी मिर्च कहते हैं जबकि तीखी किस्मों को कैप्सीकम पेपर

(capsicum pepper) चिली पेपर, लौंग पेपर या रेड-पेपर कहते हैं। कुछ वनस्पति विज्ञानी सिर्फ एक जाति को मान्यता देते हैं *कैप्सिकम फ्रुटेसेन्स* (पर्याय. *कैप्सिकम ऐनुअम*) जिसकी ये सब विभिन्न किस्में हैं। पादप विशिष्ट गुण दर्शाते हैं तथा एक ही वंश की विभिन्न जातियां भी माने जाते हैं। अतः *कैप्सिकम फ्रुटेसेन्स* लिन तथा *कैप्सिकम एनुअम* लिन. को अब अलग जातियां माना जाता है जो विस्तृत रूप से पूरे विश्व में उगाई जाती हैं। कुछ अन्य जातियां भी हैं जिनकी खेती सिर्फ दक्षिण अमरीका में की जाती है। *कैप्सिकम एनुअम* के पादप एकवर्षी शाक होते हैं जो पर्ण अक्षों में एकल फल धारण करते हैं जबकि *कैप्सिकम फ्रुटेसेन्स* के पादप बहुवर्षी होते हैं तथा दो या अधिक फलों को समूहों में पर्ण अक्षों में धारण करते हैं। *कैप्सिकम एनुअम* के फल विभिन्न आकार तथा आमाप के होते हैं तथा भिन्न रंगों के भी होते है। उनकी तीक्ष्णता कम होती हैं। *कैप्सिकम फ्रुटेसेन्स* के फल छोटे, शंकु रूप लाल या पीले तथा अधिक तीक्ष्ण / तीखे होते हैं। दोनों जातियों में आसानी से परस्पर संकरण भी नहीं होता है और जब होता है तो संकर बध्य होते हैं। दोनों जातियों की खेती की जाती है तथा *कैप्सिकम एनुअम* की असंख्य किस्में होती हैं। खंड III बी की इकाई 17 मसाले (spices) भी देखिए।

14.4.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

वंश *कैप्सिकम* की उत्पत्ति उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका (नई दुनिया) में हुई तथा अमरीका में इसकी अनेकों वन्य जातियां पाई जाती हैं। कृष्य मिर्चें पेरू में प्राचीन काल से जानी जाती हैं। इन मिर्चों की मैक्सिको में पूर्व कोलंबसी काल में खेती होने के भी प्रमाण मौजूद हैं। इस क्षेत्र में कृष्य *कैप्सिकम एनुअम* की भी काफी विविधता पाई जाती है तथा कोई वन्य पादप ज्ञात नहीं है। वंश *कैप्सीकम* पुरानी दुनिया (पूर्वी गोलार्द्ध) में तब फैला जब कोलंबस 1492 के बाद इसके फलों को स्पेन में लाया। दिलचस्प रूप से 50 साल बाद, 1542 तक, *कैप्सिकम एनुअम* की तीन विशिष्ट कृष्य प्रजातियां भारत में पहचानी जाने लगी थीं। आज भारत मिर्चों का सबसे बड़ा उत्पादक है। अन्य देश जहां इसकी खेती की जाती है उनमें थाईलैण्ड, इंडोनेशिया, जापान, मैक्सिको, यूगांडा, केन्या, नाइजीरिया तथा सूडान सम्मिलित हैं। इन क्षेत्रों के अतिरिक्त, मिर्चों को पूर्वी तथा दक्षिणी यूरोप तथा दक्षिणी संयुक्त राष्ट्र अमरीका में भी उगाया जाता है। मिर्चों की बड़ी मात्रा श्रीलंका, संयुक्त राष्ट्र अमरीका तथा मलाया द्वारा आयात की जाती है।

भारत में, यह फसल देश के सभी भागों में उगाई जाती है। पूर्ण फसल की लगभग 75% चार राज्यों आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा तमिलनाडू में उगाई जाती है। अन्य राज्य जहां मिर्च की खेती होती है वे मध्यप्रदेश, पंजाब तथा बिहार हैं।

14.4.5.2 खेती

मिर्चें उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में उगाई जाती हैं तथा इन्हें गर्म नम मौसम की आवश्यकता जाती है। ये पाले को बर्दाश्त नहीं कर पाती हैं। जलात्प्लावन से पत्तियां गिर जाती हैं तथा पादप सड़ जाता है। काफी लंबी वर्षा से खराब फल आते हैं तथा वे सड़ जाते हैं। फसल को विभिन्न प्रकार की मिट्टयों में उगाया जा सकता है जो अच्छी जल निकासी वाली हों तथा जिनमें हवा का आदान-प्रदान भली प्रकार हो सके। हल्की दोमट मिट्टी जो कैल्सियम से समृद्ध हो वह फसल की खेती के लिए सर्वश्रेष्ठ होती है।

बीजों को नर्सरी में अंकुरित किया जाता है तथा नवोद्भिद को रोपा जाता है। कार्बनिक खाद पादप की अच्छी वृद्धि को उन्नत करती है। फलों को तोड़ने का निर्धारण इस पर निर्भर करता है कि किस उद्देश्य के लिए फसल को बोया गया है। उन्हें तभी तोड़ा जा सकता है जब वे हरे तथा पूर्णतः विकसित हों अथवा जब वे लाल तथा पूर्णतः पक चुके हों।

14.4.5.3 वानस्पतिकी

कैप्सीकम एनुअम परिवर्तनशील शाक है जो बहुत बड़ा तथा झाड़ी जैसा भी बन सकता है। बड़े पादप कभी-कभी आधार पर काष्ठीय होते हैं। पादप को एकवर्षी के तौर पर उगाया जाता है तथा यह 0.5 से 1.5 मी. तक की लंबाई का हो जाता है। नवोद्भिद की मजबूत मूसला जड़ सामान्यत: रोपण के दौरान क्षतिग्रस्त हो जाती है तथा असंख्य पार्श्व जड़ें विकसित हो जाती हैं। फल एक अस्फुटनशील (indehiscent) सरस फल होता है जिसमें असंख्य बीज होते हैं। फल का आकार, आमाप तथा रंग विभिन्न किस्मों में काफी भिन्न-2 होता है (चित्र 14.16)

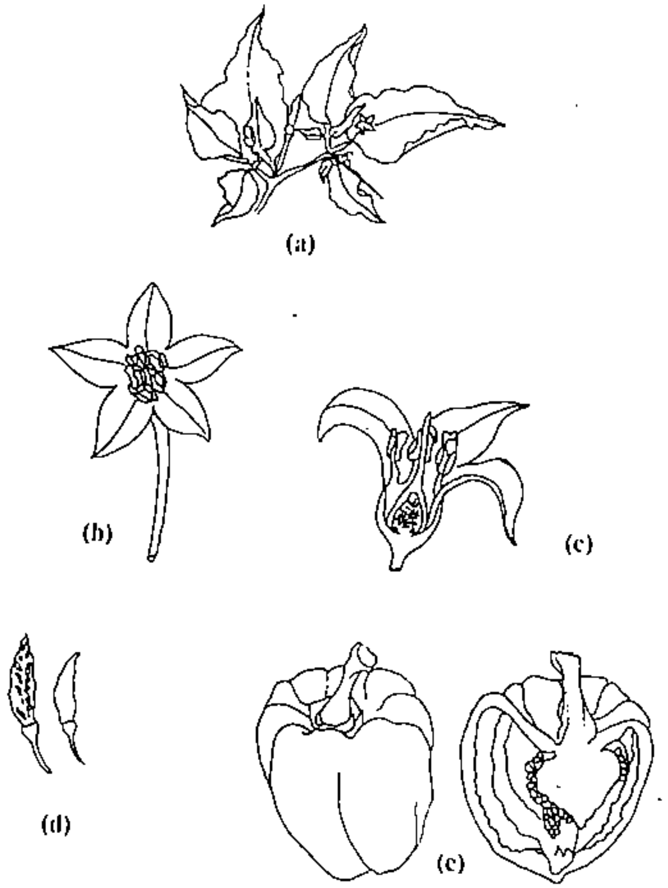

चित्र 14.16 : (a) *कैप्सिकम फ्रुटसेन्स* का पुष्पीय प्ररोह (b) पुष्प (c) अनुदैर्घ्य काट में पुष्प (d) फल तथा अनुदैर्घ्य काट में फल (e) *कैप्सिकम एनुअम* का फल तथा फल की अनुदैर्घ्य काट a-d *कैप्सिकम फ्रुटसेन्स* e *कैप्सिम एनुअम*

14.4.5.4 उपयोग

हल्की तीखी किस्में जिनमें बड़े फल होते हैं उन्हें सब्जी के रूप में तथा सलाद में खाया जाता है। *कैप्सिकम एनुअम* किस्म *ग्रॉसम* के (जो उत्तरी भारत में शिमला मिर्च कहलाती है।) बड़े गहरे हरे कच्चे सरस फल सब्जी के रूप में खाए जाते हैं। उन्हें स्लाइस / टुकड़ों में काटकर पकाया जाता है अथवा पूरा ही भरवाँ (विभिन्न प्रकार से भरकर) बनाया जाता है। उन्हें पीज़ा पर ऊपर से भी लगाया (टॉपिंग) जाता है। अन्य किस्मों को कच्चा खाया जाता है या अचार डाला जाता है अथवा खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए मिलाया जाता है।

जब फलों को पेड़ पर ही पकने दिया जाता है, तो वे लाल हो जाती हैं। उन्हें सुखाकर पाउडर बना लिया जाता है। यह पिसी मिर्च कहलाती है तथा अन्य मसालों के साथ करी पाउडर में पड़ती है।

इन मिर्चों का तीखापन एक एल्केलॉइड कैप्सेसीन (capsaicin) के कारण होता है जो बीजांडासन (plancentae) में स्थित होता है। लाल रंग एक वर्णन कैप्सेन्थिन (capsanthin) के कारण होता है। मिर्चों में काफी मात्रा में विटामिन सी भी पाया जाता है। फलों में विटामिन ए तथा खनिज भी पाए जाते हैं।

14.4.6 ओक्रा या भिन्डी (Okra or Lady's finger)

वानस्पतिक नाम:*एबेलमोस्कोस एस्कुलेन्टस* (लिन.) (*Abelmoschus esculentus* Linn.) मुंच (Moench)
कुल : माल्वेसी
सामान्य नाम : भिन्डी
n = 12

14.4.5.1 उत्पत्ति तथा वितरण

भिन्डी के पादप की उत्पत्ति ट्रॉपिकल अफ्रीका में हुई थी तथा वन्य पादपों को मिस्र (ईजिप्ट) में नील नदी के किनारे तथा इथियोपिया में देखा जा सकता है। यह अब विस्तृत रूप से पूरे विश्व में फैल गया है तथा फसल को स्थानीय उपयोग के लिए बोया जाता है। यह उपोष्ण देशों तथा शीतोष्ण क्षेत्रों के गर्म भागों में सब्जी की फसल के रूप में उगायी जाती है। भिन्डी की खेती पूरे भारत में विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न महीनों में की जाती है।

14.4.6.2 खेती

भिन्डी गर्म मौसम की शाक फसल है। फसल को किसी भी प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है, परंतु यह सबसे अच्छी तरह से अच्छी खाद वाली दोमट मिट्टी में उगती है। तरुण फलों को 2-3 महीने बाद तोड़ा जा सकता है। फसल 2-3 महीने तक फल उत्पन्न करना जारी रखती है जिन्हें सामान्यत: हर दूसरे या तीसरे दिन तोड़ा जा सकता है।

14.4.6.3 वानस्पतिकी

भिन्डी का पादप एक सतर एकवर्षी शाक है, जो 1-2 मी. लंबा होता है। संपूर्ण पादप बाह्य त्वचीय रोमों में ढका रहता है। तने हरे या कभी-कभी लालामी लिए रहते हैं। पुष्प एकल, अक्षीय तथा छोटे वृंतकों वाले होते हैं। इनमें प्रारूपिक माल्वेसी कुल का संगठन दिखाई पड़ता है। इसमें 8-10 पतली सहपत्रिकाओं (bracteoles) की बनी एपीकैलिक्स (epicalyx) होती है जो सामान्यत: फल के परिपक्व होने से पहले गिर जाती है। पुष्प के खुलने पर बाह्य दलपुंज लंबाई में फट जाता है। यह प्रफुल्लन / परागोद्भवन (anthesis) के बाद दलों के साथ गिर जाती है। फल पिरामिडीय दीर्घायत कैप्सूल होता है। यह लंबाई में खांचित होता है तथा क्रमश: पतला होकर चोंच जैसे सिरे में खत्म होता है। (चित्र 14.17) यह चिकना या दीर्घलोमी (hirsute) होता है। परिपक्व फल अनुदैर्ध्य रूप से फट जाता है (स्फुटन)। बीज गहरे हरे से गहरे भूरे, गोल तथा गुलिकीय (tuberculate) होते हैं।

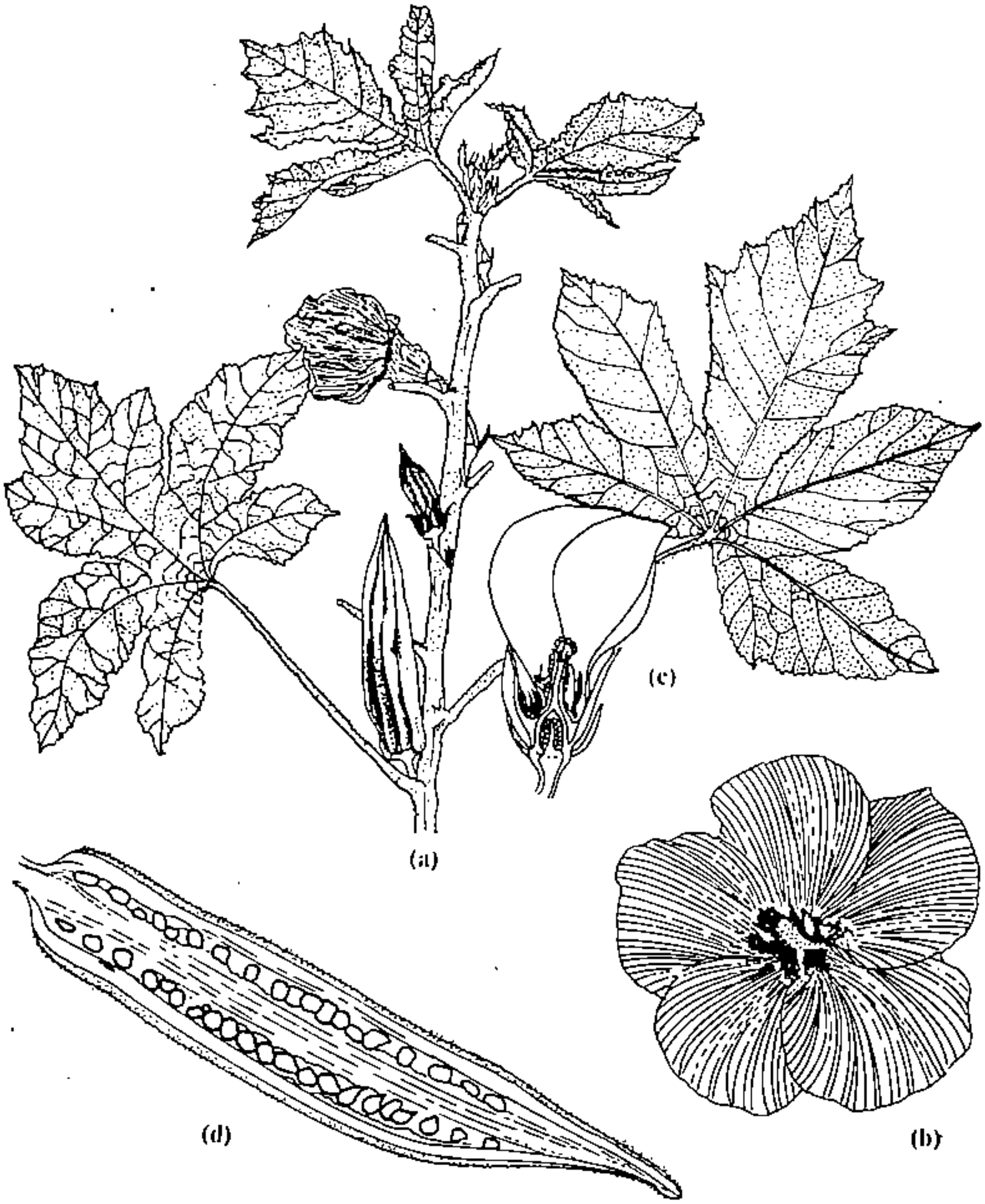

चित्र 14.17 : (a) *ऐबेलमोस्कोस एस्कुलेन्टस* की पुष्पीय तथा फलीय शाखा (b) पुष्प (c) अनुदैर्ध्य काट में पुष्प (d) अनुदैर्ध्य काट में फल

14.4.5.4 उपयोग

ताजे तरुण फलों को सब्जी के रूप में खाया जाता है। इनमें विटामिन ए, बी, सी व खनिज खासतौर पर आयोडीन होता है। इन्हें काटने या बीच में से दो टुकड़े करने विभिन्न तरीकों से बनाया जाता है। इन्हें तला भी जाता है। तने से म्यूसीलेज प्राप्त किया जाता है। इसका उपयोग, भारत में, औद्योगिक रूप से गुड़ बनाने में किया जाता है। चीन में इसका उपयोग कागज के चिक्कीकरण (sizing) के लिए किया जाता है। इसके तने से तथा बहुत बड़े फलों से निम्न गुणवत्ता का फाइबर / तंतु प्राप्त किया जाता है। इसका उपयोग कागज के तथा वस्त्र के निर्माण में किया जाता है। पके बीजों में एक खाद्य तेल होता है।

बोध प्रश्न 3

1. कुकरबिटेसी कुल के छह ऐसे पादपों के नाम बताइए जिनका उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है तथा जिनकी उत्पत्ति भारत में हुई है।

....

....

....

....

....

....

2. नई दुनिया में उत्पत्ति हुए चार फलों तथा बीज सब्जियों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

....

3. बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य (स) है या असत्य (अ) हैं।

क) मिर्चों तथा टमाटरों का लाल रंग एन्थोसायनिन रंजक के कारण होता है। ☐

ख) मिर्चों के तीखेपन के लिए एक एल्केलॉयड जिम्मेदार है। ☐

ग) बैंगन का गहरा बैंगनी रंग फल में आयोडीन की उपस्थिति के कारण होता है। ☐

घ) भिन्डी के फल में पाया जाने वाला श्लेष्म / म्यूसीलेज इस सब्जी को स्वाद प्रदान करता है। ☐

ड़) सभी फल वाली सब्जियां उन फूलों से उत्पन्न होती है जिनमें ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय होता है। ☐

14.5 सारांश

इस इकाई में आपको विभिन्न सब्जियों के बारे में जानकारी प्रदान की गई है। पादप के विभिन्न भाग मानव के लिए पोषक खाद्य प्रदान करते हैं तथा ये सब्जियां अनेक तरह से महत्वपूर्ण हैं। सब्जी के रूप में उपयोग किए जाने वाले अनेक पादपों की खेती प्राचीन काल से ही होती आई है तथा इस जानकारी ने हमें इन फसलों की उत्पत्ति तथा वितरण के बारे में जानने में सहायता की है। इन पादपों को उनकी उत्पत्ति, उनके वानस्पतिक वर्गीकरण, उपयोग किए जाने वाले भाग की आकारिकीय (morphological) प्रकृति तथा अन्य गुणों के आधार पर समूहित करना संभव है। इस ज्ञान के लिए, विभिन्न सब्जियों के कुछ सामान्य गुणों के बारे में जानना संभव है।

कुछ अधिक प्रचलित सब्जियों के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। खाने वाले भाग की आकारिकीय प्रकृति के आधार पर सब्जियों को तीन श्रेणियों में समूहित किया गया है। आपके ज्ञान को समृद्ध करने के लिए प्रत्येक में उत्पत्ति तथा वितरण, खेती / कृषि, वानस्पतिक पहलुओं तथा पादप के उपयोगों का लेखाजोखा प्रस्तुत किया गया है। पादप का वानस्पतिक नाम तथा वह किस कुल का सदस्य है यह भी बताया गया है। निम्नलिखित तालिका आपके द्वारा प्राप्त की गई कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों को सारांशित करती है।

तालिका 14.1 : सब्जियां

वानस्पतिक नाम	कुल	प्रचलित अंग्रेजी नाम	प्रचलित हिंदी नाम	उपयोग होने वाला भाग	वानस्पतिक गुण
सोलेनम ट्यूबरोसम	सोलैनेसी	पोटेटो या आयरिस पोटेटो	आलू	विशेषीकृत भूमिगत तना जो कंद कहलाता है	शाकीय पादप जिसमें भूमिगत कंद धारी भूस्तारी होते हैं; मंड, विटामिनों तथा खनिजों के समृद्ध स्रोत।
आइपोमिया बटाटस	कान्वाल्वुलेसी	स्वीट पोटेटो	शकरकंदी	अपस्थानिक कंदीय जड़ें	अंगूर की बेल जैसा शाकीय पादप जिसमें अपस्थानिक कंदीय जड़ें होती हैं; मांड, शर्करा, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिजों का समृद्ध स्रोत।
मैनीहॉट एस्कुलेन्टा	यूफोर्बिएसी	कैसावा या मैनियोक	शकरकंद	अपस्थानिक फूली हुई कंदीय जड़ें	झाड़, जिसके पादप के सभी भागों में लैटेक्स पाया जाता है, 5-10 बड़े कंद, मांड तथा हाइड्रोसयनिक अम्ल उपस्थित होते हैं।
ऐलीयम सीपा	एलिऐसी	ऑनियन	प्याज	संकेन्द्री रूप से व्यवस्थित मांसल पर्णाधारों युक्त शल्क कंद	शाकीय शल्क कंदीय पादप भोजन मांसल / गूदेदार पर्णआधारों की संकेन्द्री परतों में संचयित होता है; क्षतिग्रस्त होने या काटे जाने के फलस्वरूप होने वाले एन्जाइमी बदलावों की वजह से विशिष्ट गंध तथा तीखा स्वाद होता है।
एलियम सेटाइवम	एलिऐसी	गार्लिक	लहसुन	असंख्य छोटी शल्क कंदिकाओं युक्त शल्क कंद	शाकीय शल्क कंदीय पादप, खाद्य स्थूलित, संचयी पत्तियों में संचित जो शल्क कंदिका बनाती हैं। तीखी गंध एलीनिन से बनने वाले एलिसिन के कारण होती है।
बीटा वल्गॅरिस किस्म वल्गॅरिस	कीनोपोडिएसी	बीटरूट या गार्डन बीट	चुकंदर	बीज पत्राधर सहित फूली हुई जड़	शाकीय पादप जो असंगत द्वितीयक वृद्धि दर्शाता है व बड़ी चुकंदर उत्पन्न करता है; इसमें काफी मात्रा में बीटासायनिन वर्णक तथा शर्करा होती है।
बीटा वल्गॅरिस किस्म रैपा	-समान	शुगर बीट		समान	बड़ी मात्रा में शर्करा, वर्णक अनुपस्थित।
बीटा वल्गॅरिस किस्म बैंगालेन्सिस	समान	बीटग्रीन या इंडियन स्पीनिच	पालक	तरुण पत्तियां वास्तविक पालक के स्थान पर सब्जी के रूप में उपयोग की जाती है।	शाकीय पादप जिसमें पत्तियों का "हैड" होता है; पर्णआच्छदों में कुछ वर्णक पाए जाते हैं, पत्तियों में खनिज तथा विटामिन 'ए' पाया जाता है; पुष्प द्विलिंगी होते हैं जबकि *स्पाइनैक ऑलिरेशिया* में एकलिंगी हैं।
डॉकस कैरोटा	एपिऐसी	कैरट	गाजर	जड़	शंकुरूपी मूसला जड़ युक्त शाकीय पादप; कैरोटीन्स, विटामिन्स, शर्करा तथा खनिजों से समृद्ध होता है।
ब्रैसिका आलेरेशिया किस्म कैपीटेटा	क्रूसीफेरी	कैबेज	पत्ता गोभी या बंद गोभी	पत्तियां	मोटी, गूदेदार, अतिव्यापित पत्तियों युक्त शाकीय पादप जो संहत "हैड" (बंद) बनाता है। पत्तियां खनिजों तथा विटामिनों का समृद्ध स्रोत होती हैं।
लैक्टूका सैटाइवा	एस्टेरेसी	लैट्यूस	सलाद	पत्तियां	एकवर्षी चिकना / अरोमिल शाक जिसमें पत्तियों का संहत मूलांकुरी रोज़ेट होता है जो लैट्यूस-हैड बनाता है। पत्तियां खनिजों तथा विटामिनों का समृद्ध स्रोत होती हैं।

वानस्पतिक नाम	कुल	प्रचलित अंग्रेजी नाम	प्रचलित हिंदी नाम	उपयोग होने वाला भाग	वानस्पतिक गुण
स्पाइनेसिया ओलेरेसिया	कीनोपोडिएसी	स्पीनिच	पालक	पत्तियां	यह पादप बीट ग्रीन्स या इंडियन स्पीनिच (भारतीय पालक) से सतही समानता दर्शाता है (*बीटा वल्गेरिस* किस्म *बेंगालेन्सिस*)। यह अपनी पत्तियों तथा पुष्पीय संरचना में भिन्न होता है। पुष्प एकलिंगी होते हैं पत्तियां खनिजों, विटामिनों तथा कैरोटीन की समृद्ध स्रोत होती हैं।
बैनिनकेसा हिस्पिडा	कुकरबिटेसी	वैक्स गॉर्ड या व्हाइट गॉर्ड	पेठा	फल	कुकरबिटेसी कुल के सभी पादप शाकीय प्रतानी आरोही लता या उपरि भूस्तारी होते हैं। इनमें एकलिंगी पुष्प तथा सरस फल / बेरी जैसे फल होते हैं, फलों का आकार, आमाप तथा रंग काफी भिन्न-भिन्न होता है।
सिट्रुलसलैनेटस किस्म *फिस्टुलोसस*	समान	स्क्वॉश मेलन	टिन्डा	फल	
कुकुमिस मेलो किस्म युटीलिसाइमस	समान	लांग मेलन या स्नेक कुकुंबर	ककड़ी	फल	
कुकुमिस सेटाइवस	समान	कुकुंबर	खीरा	फल	
कुकरबिटा मैक्सिमा	समान	पंपकिन या विंटर स्क्वॉश	सीताफल	फल	
कुकरबिटा मॉस्कैटा	कुकरबिटेसी	पंपकिन	मीठा कद्दू	फल	
कुकरबिटा पीपो	समान	मेरो या समर स्क्वॉश	विलायती कद्दू	फल	
लैजीनेरिया सिसरेरिया	समान	बॉटल गॉर्ड	लौकी या घीया कद्दू	फल	
लूफा एक्यूटैंगुला	समान	एंगल्ड लूफा	काली तोरई	फल	
लूफा सिलिंड्रिका	समान	स्मूथ लूफा, वेजीटैबल स्पंज	घीया तोरई	फल	
मैमोर्डिका चरेंशिया	समान	बिटर गॉर्ड	करेला	फल	
ट्रिकोसेन्थीज़ एग्युना	समान	स्नैक गॉर्ड	चचिंडा	फल	
ट्रिकोसेन्थीज़ डायोका	समान	प्वाइंन्टेड गॉर्ड	परवल	फल	
लाइकोपर्सिकम एस्कुलेन्टम	सोलेनेसी	टमैटो	टमाटर	फल	शाकीय पादप जिसमें कमजोर सघन रूप से शाखित तना तथा संयुक्त पत्तियां पायी जाती हैं। फल मांसल सरस फल/बेरी है जिसमें कैरोटीन तथा लाइकोपरसिकिन वर्णक होते हैं। ये खनिजों तथा विटामिन से भरपूर होते हैं।
सोलेनम मेलोन्जिना	समान	ब्रिंजल या एग प्लांट या एग्गर जीन	बैंगन	फल	शाकीय पादप जो आधार पर काष्ठीय हो जाता है। बड़ी सघन रूप से रोमिल पत्तियां। फूल बैंगनी से जिनमें स्पष्ट पीले पुंकेसर होते हैं। बाह्य दलपुंज पर शूक उपस्थित जो चिरस्थायी व उत्तर वर्धी होता है। फल सरस फल है जो खनिजों तथा विटामिन बी से समृद्ध होता है।
कैप्सिकम एनुअम फ्रुटसेन्स	सोलेनेसी	चिलीज़	मिर्च लाल मिर्च, शिमला मिर्च	फल	शाकीय पादप जिसमें सघन रूप से शाखित घना होता है। पत्तियां परिवर्तनशील, पुष्प एकल; फल विभिन्न आकार, आमाप, रंग तथा स्वाद के सरस फल / बेरी, एक वर्णक कैप्सेसीन तथा एल्केलॉइड कैप्सेसीन उपस्थित इसके अलावा बड़ी मात्रा में खनिज तथा विटामिन ए भी उपस्थित।
एबेलमोस्कोस एस्कुलेन्टस	मॉल्वेसी	लेडीज़ फिंगर ओक्रा	भिन्डी	फल	सतर एकवर्षी शाक आधार पर काष्ठीय पत्तियां बड़ी वृत्तीय तथा हस्ताकार रूप से पालित। पुष्प चटकीले पीले जिनमें दलों के आधार के निकट लाल दाग, फल पिरामिडी दीर्घायत कैप्सूल होते हैं।

उपर्युक्त तालिका से तथा इस इकाई में दी गई पाठ्य सामग्री के अध्ययन से आपने सीखा कि बड़ी संख्या में पादपों का उपयोग मानव द्वारा भोजन के लिए सब्जी के स्रोत के रूप में होता आया है। अधिकांश की खेती स्थानीय उपयोग के लिए होती है, हालांकि कुछ जैसे टमाटर को विभिन्न तरीकों से प्रवर्धित किया जाता है।

बड़ी संख्या में पादप द्विबीजपत्री होते हैं तथा कुछ एकबीजपत्री होते हैं। लहसुन तथा प्याज, प्रमुख एकबीजपत्री सब्जियां हैं। सोलेनेसी तथा कुकुरबिटेसी कुल में अनेक पादप हैं जिन्हें सब्जी के रूप में खाया जाता है। ये सभी पादप आहार में बहुमूल्य विटामिन्स तथा खनिज प्रदान करते हैं और इसलिए स्वस्थ जीवनयापन के लिए महत्वपूर्ण हैं।

14.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. शब्द सब्जी की परिभाषा दीजिए तथा वानस्पतिक शब्दों में विभिन्न प्रकार की सब्जियों का वर्णन कीजिए। सब्जियों के प्रमुख गुणों का सामान्य रूप में वर्णन कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. अपने द्वारा अध्ययन किए गए उन पादपों की सूची दीजिए जिनमें फल का उपयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। इनमें से किन्हीं दो का वर्णन विस्तार से कीजिए जो आपके क्षेत्र में बहुत प्रचलित हों। इन फलों के विभिन्न उपयोगों को बताइए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

3. विभिन्न भूमिगत पादप भागों के नाम बताइए जो खाद्य संचयी अंगों की भांति कार्य करते हैं। उन लक्षणों को बताइए जिनके द्वारा आप तने के कंद को जड़ के कंद से विभेदित कर सकते हैं। इनमें से किसी एक का निम्नलिखित हैडिंग्स/शीर्षकों के तहत वर्णन कीजिए: उत्पत्ति तथा वितरण, पारिस्थितिकी, वानस्पतिकी तथा उपयोग।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

4. किन तरीकों से पत्तेदार सब्जियां मानव आहार में महत्त्वपूर्ण हैं। विवर्णी (Blanched) पत्तेदार सब्ज़ियां कैसे प्राप्त की जाती हैं ? अपने क्षेत्र में प्रचलित पत्तेदार सब्जियों को सूचीबद्ध कीजिए। इनके प्रमुख गुणों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

14.7 उत्तर

बोध प्रश्न 1

1.

सब्ज़ी	वानस्पतिक नाम	कुल
क) आलू	*सोलेनम ट्यूबरोसम*	सोलेनेसी
ख) शकरकंद	*आइपोमिया बटाटास*	कन्वोल्वुलेसी
ग) कैसावा / शकरकंदी	*मैनीहोट एस्कुलेन्टा*	यूफोर्विएसी
घ) प्याज	*एलियम सीपा*	एलिऐसी
ङ) लहसुन	*एलियम सेटाइवम*	एलिऐसी
च) चुकंदर	*बीटा वल्गेरिस* किस्म *वल्गेरिस*	कीनोडिएसी
छ) गाजर	*डॉकस कैरोटा*	एपिऐसी

2. क) शकरकंद, आलू, कैसावा, चुकंदर तथा गाजर विशेषीकृत जड़े हैं।

ख i) आलू- विशेष भूमिगत शाखांए जो भूस्तारी कहलाती हैं, शाखित बर्हिवृद्धियां (out growths) धारण करती हैं जो संचयी अंग होते हैं। इन कंदों में ऐसा शरीर विज्ञानी संगठन होता है जो प्रारूपिक रूप से तने का होता है जैसा कि 14.2.1.3 में वर्णन किया गया है।

ii) प्याज- वास्तविक शल्ककंद एक छोटी चपटी डिस्क जैसे तने का बना होता है- जो पादप के आधार पर उत्पन्न होता है। वृद्धि बढ़ने के साथ-साथ इसका व्यास बढ़ता जाता है तथा यह माँसल पर्णआधारों की संकेन्द्री परतों द्वारा घिरता जाता है।

iii) लहसुन- प्याज की तरह ही, वास्तविक शल्क कंद चपटे डिस्क जैसे तने का बना होता है। इसमें विभिन्न संख्या में अपेक्षाकृत छोटे शल्क कंद या शल्क कंदिकाएं बन जाते हैं जो तरुण पर्णाभ पत्तियों की अक्षीय कलिकाओं से बनते हैं। अत: लहसुन का शल्क कंद एक जटिल संरचना है।

3. क) (अ) ख) (स)
ग) (स) घ) (अ)
ङ) (स) च) (अ)

4. क) कैरोटिन ख) शर्करा
ग) कैसावा घ) सल्फर
ङ) मांडयुक्त

5. क) पुरानी दुनिया (पूर्वी गोलार्द्ध) की फसलें
i) प्याज ii) लहसुन
iii) चुकंदर (बीट रूट; शुगर बीट) iv) कैरट

ख) नई दुनिया (उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका) की फसलें
   i) आलू
   ii) शकर कंद
   iii) कैसावा

6. 14.1 प्रस्तावना में देखिए।

बोध प्रश्न 2

1.

कॉलम I	कॉलम II
पत्तागोभी	ब्रैसिकेसी
लैट्यूस/सलाद	एस्टेरेसी
पालक	कीनोपोडिएसी

2. i) खनिजों तथा विटामिनों की पर्याप्त मात्रा उपस्थित रहती है।
   ii) उच्च जल तत्व तथा निम्न ऊर्जा मूल्य
   ii) बड़ा सतह क्षेत्र आहार में व्यर्थ पदार्थ प्रदान करता है। यह आहार नाल के समुचित रूप से कार्य करने के लिए आवश्यक है।

3. 14.3.4.2 देखिए।

4. क) स   ख) अ   ग) अ   घ) स

बोध प्रश्न 3

1. क) *सिट्रुलस लैनेटस* किस्म *फिस्टुलोसस*
   ख) *कुकुमिस मेलो* किस्म *युटीलिसाइमस*
   ग) *कुकुमिस सैटाइवस*
   घ) *लूफा एकूटेंगुला*
   ड़) *लूफा सिलिंड्रिका*
   च) *ट्राइकोसेन्थीस डायोका*

2. क) कुकुरबिटा *मैक्सिमा*
   ख) *कुकुरबिटा मॉस्केटा*
   ग) *कुकुरबिटा पीपो*
   घ) *लाइकोपर्सिकम एस्कुलेन्टम*
   ड़) *कैप्सीकम एनुअम*

3. क) *लूफा एकूटैन्गुला* में मुग्दर के आकार के, कोणीय तथा 10 खाँचों वाले फल होते हैं। जबकि *लूफा सिलिन्ड्रिका* में लगभग बेलनाकार फल होते हैं जो खांचित या कोणीय नहीं होते हैं। उनमें हल्के रंग की धारियां होती हैं।
   ख) *कुकुरबिटा मैक्सिमा* – में पादप के तने तथा पत्तियों पर शूक होते हैं। *कुकुरबिटा मॉस्कैटा* में ये संरचनाएं अनुपस्थित होती हैं।
   ग) *कैप्सीकम एनुअम* एक एकवर्षी शाक है जिसमें पर्ण अक्षों में एकल फल पाए जाते हैं। *कैप्सीकम फ्रुटेसेन्स* एक बहुवर्षी है तथा पर्ण अक्षों में दो या अधिक फलों को समूहों में उत्पन्न करता है।

4. क) अ   ख) स   ग) अ   घ) स   ड़) अ

अंत में कुछ प्रश्न

1. वास्तविक वानस्पतिक फलों से प्राप्त होने वाली सब्जियां पत्तेदार सब्जियों से निम्नलिखित समानताएं दर्शाती हैं।

i) इनमें बड़ी मात्रा में नमी पाई जाती है।

ii) इनमें विटामिन तथा खनिज पाए जाते हैं।

iii) वे खाने में आवश्यक स्वाद तथा विविधता बढ़ाती हैं।

iv) वे प्रोटीन्स, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट्स में बहुत समृद्ध नहीं होते हैं।

तथा प्रस्तावना 14.1 देखिए : बोध प्रश्न 1-6 देखिए।

2) 14.4 फल तथा बीज वाली सब्जियां देखिए। सारांश (14.5) में भी सूची प्रदान की गई है। उन दो पादपों का वर्णन इस इकाई में दिए गए पैटर्न के आधार पर कीजिए जो आपके क्षेत्र में प्रचलित हैं।

3) 14.2 देखिए - जड़ों तथा भूमिगत भागों से प्राप्त होने वाली सब्जियां। सारांश (14.5) में भी सूची प्रदान की गई है। तने का कंद एक विशेषीकृत कंदीय बहिर्वृद्धि है जो भूमिगत शाखाओं जिन्हें भूस्तारी कहते हैं से निकलती हैं। शरीर क्रिया विज्ञानी रूप से ये कंद तने के प्रारूपिक गुण दर्शाते हैं। जड़ कंद एक फूली हुई कंदीय संरचना है जो खाद्य संचय करती है। यह अपने विकास में अपस्थानिक होती है तथा जड़ जैसे शरीर क्रिया विज्ञानी गुण दर्शाती है। किसी एक का वर्णन प्रश्न के अनुसार विस्तार से कर दीजिए।

4) 14.3 पत्तेदार सब्जियां- को देखिए।

उनके महत्व को बोध प्रश्न 2.4 के उत्तर में सूचित किया गया है। पत्तेदार सब्जियों का विवर्णीकरण सामान्य संवर्धन तकनीक है। पत्तियां या पत्तियों के स्टॉक को मिट्टी या कागज से ढक देते हैं जिससे उन पर प्रकाश न पड़े। इससे पर्णहरित क्लोरोफिल का बनना रुक जाता है जिससे पत्तियां पीलाभ सफेद हो जाती हैं। अपने क्षेत्र में प्रचलित पर्णीय सब्जियों की सूची बनाइए तथा इनके प्रमुख गुणों को बताइए।

इकाई 15 पादप तेल और वसाएं

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

15.2 पादप मूल के तेल और वसाएं

तेलों और वसाओं का रासायनिक संघटन

वनस्पति और सगंध तेल

वनस्पति तेलों का वर्गीकरण

वनस्पति तेलों का निष्कर्षण

तेलों का हाइड्रोजनीकरण

वनस्पति तेलों और वसाओं के उपयोग

15.3 आम उपयोग के तेलों और वसाओं के स्रोत

मूंगफली

सरसों

कुसुंभ

नारियल

बिनौला

सोयाबीन

सूरजमुखी

अलसी

जैतून

कैस्टर

तिल

15.4 सारांश

15.5 अंत में कुछ प्रश्न

15.6 उत्तर

15.1 प्रस्तावना

वनस्पति तेलों, वसाओं और मोम को संयुक्त रूप से लिपिड कहा जाता है, इनका बड़ा व्यावसायिक महत्व है। अनाज के बाद भारत में सबसे अधिक खेती तिलहनों की ही होती है। इसलिए हमारी कृषि अर्थ-व्यवस्था में इनका स्थान बेहद महत्वपूर्ण है। तेलों, वसाओं और मोम का उपयोग प्राचीन काल से हो रहा है। प्रागैतिहासिक काल से चीनियों और हिन्दुओं को वनस्पति तेल निकालने के लिए जाना जाता है। प्राचीन चीन में तेल पेरने की मशीनें मानव-श्रम से चलती थीं, तो भारत में घणी, चेक्कू या कोल्हू के नाम से ज्ञात आदिकालीन मशीनें बैलों से चलाई जाती थीं। भारत के देहातों में घणी आज भी प्रचलित है। यह मशीन एक सरल सिद्धांत पर काम करती है, जिसमें एक खरल में घूर्णन करते हुए मूसल तिलहनों को पीसता है। मिस्री एवं फीनिशियाई लोग प्राचीन युग में भोजन में वनस्पति तेलों का सेवन करते थे और उन्हें अपने शरीर पर लगाते थे। ग्रीक इतिहासकार होमर ने तेल का उल्लेख कताई-बुनाई में काम आने वाले पदार्थ के रूप में किया है, तो प्लाइनी ने कठोर और कोमल साबुनों की बात कही है। दूसरी ओर हमारे वेदों में भी तेल,

मक्खन और घी का उल्लेख असंख्य बार किया गया है। आज इन्हीं तेलों और वसाओं का उपयोग नाना प्रकार से किया जा रहा है।

मारजरीन, खाना बनाने और सलाद के तेलों, साबुनों, पेन्ट और अन्य प्रचलित उत्पादों का निर्माण जिन तेलों और वसाओं से होता है उनकी उत्पत्ति पादपों से होती है जिनकी खेती शीतोष्ण प्रदेशों में की जाती है। वस्तुत: मौजूदा समय में सिर्फ कुछ ही महत्वपूर्ण तेलों का दोहन वन्य पादप स्रोतों से किया जाता है जो मुख्यत: उष्णकटिबंध क्षेत्रों में उगने वाले ताड़ हैं। जिन वनस्पति तेलों और वसाओं का उपयोग ईंधनों और स्नेहकों के रूप में और साबुनों तथा डिटर्जेंटों के निर्माण में भी जिनका उपयोग खूब होता था, उनकी जगह अब पेट्रो-रसायन प्रतिस्थापकों ने ले ली है। इसके बावजूद भी आधुनिक जगत् में इनका महत्व अब भी कम नहीं हुआ है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि अनवीकरणीय संसाधनों के भंडारों की इति हो जाने पर पादप तेलों की महत्ता और भी बढ़ जाएगी। इसीलिए इन तेल और वसा उत्पादक पादपों का उतना ही महत्व है जितना कि खाद्य पादपों का।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- मानव जीवन में वनस्पति तेलों और वसाओं के महत्व को बता सकें,
- पादप वसाओं और तेलों की रासायनिक संरचना स्पष्ट कर सकें,
- वनस्पति तेलों का वर्गीकरण उनके शुष्कन गुणधर्मों और उपयोगों के आधार पर कर सकें,
- वसीय तेलों और सगंध तेलों में अंतर बता सकें,
- वनस्पति तेलों के दोहन और उनके शोधन की सामान्य विधियों के बारे में बता सकें, तथा
- भारत की मुख्य तेल-उत्पादक फसलों का ब्यौरा दे सकें।

15.2 पादप मूल के तेल और वसाएं

लिपिड जल में अविलेय कार्बनिक पदार्थ हैं जिन्हें क्लोरोफॉम, ईथर और बेंजीन जैसे कार्बनिक विलायकों द्वारा पादप कोशिकाओं से निकाला जा सकता है। वनस्पति वसाओं में तेलों से सिर्फ इतना सा अंतर है कि ये वसा-अम्लों से बनी होती हैं, सामान्य तापमान में जो तरल अवस्था में न होकर कमोबेश ठोस अवस्था में पाई जाती हैं। इसलिए ध्रुवीय जलवायु वही ठोस वसा, उष्णकटिबंधीय जलवायु में तेल हो सकती है। कार्बोहाइड्रेटों की तरह, वसाओं, और तेलों में भी कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन पाए जाते हैं मगर एक भिन्न अनुपात में- ऑक्सीजन की मात्रा इनमें अपेक्षतया कम होती है।

15.2.1 तेलों और वसाओं का रासायनिक संघटन

वनस्पति तेल और वसाएं, जटिल कार्बनिक वसा-अम्लों के ट्राइग्लिसराइड हैं जिनका संश्लेषण कार्बोहाइड्रेटों से होता है। वसा-अम्ल हाइड्रोकार्बन की दीर्घ शृंखलाएं हैं जिनके अंत में कार्बोक्सिल समूह स्थित होता है। यह कार्बोक्सिल समूह इन शृंखलाओं को एक दुर्बल अम्ल की विशेषता प्रदान करता है। तेल और वसा इस प्रकार संश्लेषित होते हैं– एन्जाइम क्रिया के माध्यम से वसा-अम्लों का ग्लिसरॉल के साथ संयोजन से एस्टर आबांधों वाले ट्राइग्लिसराइडों की रचना होती है (चित्र 15.1)। और जैसा कि ऊपर बताया गया है कि यही ट्राइग्लिसराइड ही तेल और वसा हैं।

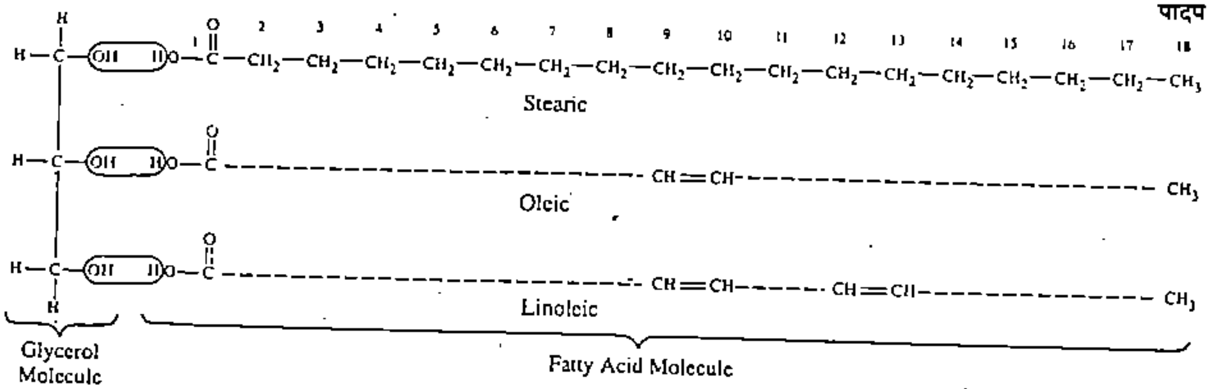

चित्र 15.1: तेल या वसा का एक अणु तीन वसा-अम्लों से मिलकर बना होता है जो ग्लिसरॉल के एक अणु से जुड़े रहते हैं। यह बंध जल के एक अणु के हटने से बनते हैं जैसा कि बहुशर्कराओं के निर्माण में होता है। चित्र तीन C_{18} अम्लों को दिखाता है, जो मिलकर एक तेल या वसा अणु बनाते हैं।

The general formula of fatty acids are:
CH_2-COOR_1
|
$CH-COOR_2$
|
CH_2-COOR_3
Where R_1, R_2, R_3 are carbon chains of different fatty acids.

ग्लिसरॉल जल के अणु को हटाकर कार्बोक्सिल समूह के साथ एक बंध स्थापित कर लेता है और इस तरह वसा-अम्लों के लिए एक बंधकी या वाहक का काम करता है। ग्लिसरॉल के अणु से बंधने वाले वसा-अम्लों के तीनों अणु जरूरी नहीं कि एक ही प्रकार के हों। लाइपेस एंजाइम एस्टर बंधताओं का जल-अपघटन (hydrolysis) करता है, इससे संचित खाद्य वसा को वापस ग्लिसरॉल और वसा अम्लों में रूपांतरित किया जा सकता है। लिनोलीइक और लिनोलीनिक जैसे वसा-अम्लों का संश्लेषण स्तनधारी प्राणी नहीं कर सकते हैं। सो पादप स्रोतों से इनका दोहन अनिवार्य हो जाता है, इसीलिए इन्हें हम **आवश्यक वसा-अम्ल** कहते है (तालिका 15.1 और 15.2 देखें)। ट्राइग्लिसराइड रंगहीन और स्वादहीन होते हैं। वसा और तेलों में जो रंग या स्वाद हम पाते हैं वह उनमें थोड़ी मात्रा में विद्यमान स्टेरॉल, लैसिथिन और विटामिनों के कारण होता है।

वसा-अम्लों के सामान्य सूत्र इस प्रकार हैं .
CH_2-COOR_1
|
$CH-COOR_2$
|
CH_2-COOR_3
यहां R_1, R_2, R_3 विभिन्न वसा-अम्लों की कार्बन शृंखलाएं हैं।

तालिका 15.1 : प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाले कुछ वसा-अम्ल

प्रचलित नाम	विश्व वितरण (प्रतिशत में)	संतृप्ति	प्रतीक[a]	गलनांक (°सें.)
लौरिक	4	संतृप्त	12:0	44.2
मिरिस्टिक	2	संतृप्त	14:0	53.9
पामिटिक	11	संतृप्त	16:0	63.1
स्टीएरिक	4	संतृप्त	18.0	69.6
ओलीइक	24	एक-असंतृप्त	18:1(9c)	13.4
लीनोलीइक	34	बहु-असंतृप्त	18:2 (9c, 12c)	-5
लीनोलीनिक	5	बहु-असंतृप्त	18:3 (9c,12c,15c)	-11

[a]- पहली संख्या, वसा-अम्ल शृंखला में उपस्थित कार्बन परमाणुओं की संख्या को दर्शाती है तथा दूसरी संख्या हमें असंतृप्त बंध (बंधों) के बारे में बताती है; कोष्ठक में दी गई संख्याएं हमें शृंखला में उनका (असंतृप्त बंधों का स्थान बताती हैं) उदाहरण के लिए, 9c का अर्थ है कार्बन परमाणु 9 और 10 के बीच का स्थान।

वसा-अम्ल सीधी और सम-संख्या वाली शृंखलाओं में पाए जाते हैं (क्योंकि इनका संश्लेषण द्वि-कार्बन पूर्ववर्ती से होता है)। अगर शृंखला के प्रत्येक कार्बन में दो हाइड्रोजन परमाणु हैं तो वसा-अम्ल **संतृप्त** कहलाता है (चित्र 15.1 में स्टीएरिक अम्ल और तालिका 15.1 और 15.2 को भी देखिए)। संतृप्त वसा-अम्लों की शृंखला का सामान्य सूत्र $C_nH_{2n-1}COOH$ है (उदाहरण के लिए लौरिक अम्ल, स्टीएरिक, मिरिस्टिक अम्ल, पामिटिक और कैप्रिक अम्ल)। शृंखला में हाइड्रोजन के विशेष निकटवर्ती कार्बन अणुओं के हटने से द्विआबंधों का निर्माण होता है और इस तरह से उत्पन्न होने वाला वसा अम्ल हाइड्रोजन के मामले में

असंतृप्त रहता है। पादप मूल के अधिकांश असंतृप्त वसा अम्लों में कार्बन परमाणु 9 और 10 के बीच में द्वि-आवंध विद्यमान होता है। अतिरिक्त द्वि-आवंध प्राय: C_{10} और शृंखला के मेथिल सिरे के बीच पाए जाते हैं। अधिकतर पादप वसा-अम्ल असंतृप्त होते हैं। तालिका 15.1 में जिन अम्लों के नाम दिए गए हैं, वे विश्व में उत्पादित होने वाले व्यावसायिक वनस्पति वसाओं का 94 प्रतिशत हैं। आमतौर पर ये अम्ल पादपों के सभी भागों में लिपिडों के रूप में पाए जाते हैं, लेकिन इनमें बहुलता अक्सर पामिटिक, ओलीइक और लीनोलीइक अम्लों की रहती है।

तालिका 15.2 : महत्वपूर्ण वसा अम्ल तथा उनके मूलानुपाती सूत्र (कोचर, 1986 से)

संतृप्त अम्ल		असंतृप्त अम्ल	
अम्ल	मूलानुपाती सूत्र	अम्ल	मूलानुपाती सूत्र
कैप्रिक	$C_{10}H_{20}O_2$	ओलीइक	$C_{18}H_{34}O_2$
लौरिक	$C_{12}H_{24}O_2$	लीनोलीइक	$C_{18}H_{32}O$
मिरिस्टिक	$C_{14}H_{28}O_2$	लीनोलीनिक	$C_{18}H_{30}O_2$
पामिटिक	$C_{16}H_{32}O_2$	रिसिनोलीइक	$C_{18}H_{34}O_3$
स्टीएरिक	$C_{18}H_{36}O_2$	एरूसिक	$C_{22}H_{42}O_2$

अधिकांश वसाएं और तेल अस्थायी होते हैं। इन्हें लंबे समय तक विशेषकर उच्च तापमान और हवा में रखा जाए तो इनमें रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं। उच्च तापमान और वायु की उपस्थिति से होने वाले परिवर्तन हैं- एल्डीहाइडों और कीटोनों का निर्माण, जिससे इनका स्वाद खट्टा, और बदबूदार हो जाता है।

तेलों, वसाओं और मोमों का संघटन काफी समान होता है। सामान्य तापमान पर तेल तरल अवस्था में होते हैं तो वसाएं ठोस या लगभग ठोस अवस्था में। सामान्यतया असंतृप्त वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड साधारण तापमान पर तरल होते हैं और 12 या अधिक कार्बन परमाणु वाले संतृप्त वसा अम्लों के ट्राईग्लिसराइड ठोस अवस्था में पाए जाते हैं। नारियल का तेल, खजूर का तेल, खजूरगिरी तेल, तथा कोको मक्खन वसा के उदाहरण हैं। नारियल का तेल उष्णकटिबंधी जलवायु में तो तरल होता है मगर शीतोष्ण जलवायु में यह ठोस अवस्था में मिलता है। मोमों का निर्माण वसा अम्ल-अणुओं के साथ (ग्लिसरॉल के बजाए) दीर्घ-शृंखला एल्कोहलों का सम्मिलन होने से होता है। ये अक्सर पत्तियों और तनों की सतहों पर रक्षी आवरणों के रूप में पाए जाते हैं और वाष्पोत्सर्जन से होने वाले जल के क्षय को ये काफी हद तक कम करते हैं। मोम प्राय: पौधों की सतह पर पाए जाते हैं और सजीव पादप कोशिकाओं के अंदर अपवाद स्वरूप ही देखने में आते हैं।

15.2.2 वनस्पति और सगंध तेल

वनस्पति तेल कई तरह से वाष्पशील या सगंध तेलों से भिन्न हैं:

1. सामान्य तापमान में ये वाष्पित नहीं होते;
2. इन्हें अपघटित किए बिना आसवित नहीं किया जा सकता है;
3. ये कागज पर चिकना या लसलसा स्थायी दाग छोड़ जाते हैं;
4. ग्लिसराइड होने के कारण ये क्षार के साथ मिलकर साबुन का निर्माण करते हैं;
5. इनमें आवश्यक तेलों जैसी तेज गंध और तीखा स्वाद नहीं होता। लंबे समय तक वायु के संपर्क में रहने पर इनमें खटास और दुर्गंध आ जाती है।

15.2.3 वनस्पति तेलों का वर्गीकरण

घटक वसा अम्लों की संतृप्ति की मात्रा, तेलों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। द्विआबंध जितने अधिक होंगें उस तेल के आक्सीभूत होकर जलसह परत या फिल्म बनने की

संभावना उतनी ही होगी। तेलों का वर्गीकरण अक्सर परत में आक्सीभूत होने की उनकी क्षमता के अनुसार न सूखने वाले, आंशिक रूप से सूखने वाले सामिशुष्कन या सूखने वाले तेलों में किया जाता है।

न-सूखने वाले तेल

सामान्य तापमान में ये तेल तरल अवस्था में रहते हैं। लंबे समय तक वायु के संपर्क में रहने पर भी ये प्रत्यास्थ परत नहीं बना पाते क्योंकि वायुमंडलीय ऑक्सीजन के साथ ये तेल कोई अभिक्रिया नहीं करते। ये संतृप्त वसाओं और ओलीइक अम्ल के ग्लिसराइड हैं, जिनमें लीनोलीइक और लीनोलीनिक अम्ल नहीं पाए जाते और पाए भी जाते हैं तो अति अल्प मात्रा में। न-सूखने वाले तेलों में आक्सीकरण नहीं होता, जिससे ये प्रत्यास्थ परत नहीं बना सकते। इसीलिए पेंट, वार्निश या प्रलाक्ष (लाख) उद्योग में इनका कोई उपयोग नहीं है। मगर साबुनों के निर्माण में और स्नेहकों व भोजन के रूप में ये बड़े उपयोगी हैं। ये तेल उष्णकटिबंध प्रदेशों में उगने वाले पादपों में बहुलता में पाए जाते हैं। मूंगफली, ताड़, जैतून, एरण्ड, सरसों और बादाम सूखने वाले तेलों के कुछ उदाहरण हैं।

सामिशुष्कन तेल

ये तेल सूखने और न सूखने वाले तेलों के मध्यवर्ती हैं। इनकी विशेषता यह है कि इनमें लीनोलीइक अम्ल और संतृप्त अम्ल तो काफी बड़ी मात्रा में पाए जाते हैं लेकिन लीनोलीनिक अम्ल इनमें नहीं होता। आंशिक रूप से सूखने वाले ये तेल वायुमंडलीय ऑक्सीजन को धीरे-धीरे अवशोषित करते हैं और लंबे समय तक वायु के संपर्क में रहने के बावजूद भी ये सिर्फ एक कोमल परत ही बना पाते हैं। सूखने वाले तेलों की तरह एक कड़ी प्रत्यास्थ परत का निर्माण ये तेल कभी नहीं कर पाते। बिनौला, तिल, सूरजमुखी, मकई और क्रोटन (जमालगोटे) के तेलों को इस समूह में रखा जाता है।

सूखने वाले तेल

ये असंतृप्त वसा-अम्लों के ग्लिसराइडों विशेषकर लीनोलीइक और लीनोलीनिक अम्लों से भरपूर रहते हैं। इनमें कुछ ओलीइक यौगिक भी पाए जाते हैं। वायु के संपर्क में आने पर ये तेल सहजता से ऑक्सीजन अवशोषित कर एक दृढ़, प्रत्यास्थ मगर जलरोधी परत का निर्माण करते हैं। इसीलिए ये पेन्ट तथा वार्निश उद्योग के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। शीतोष्ण जलवायु में उगने वाले पादपों जैसे अलसी, सोयाबीन, तुंग, कुसुंभ और भांग के बीज का तेल कुछ महत्वपूर्ण सूखने वाले तेल हैं।

बाक्स 15.1 : विभिन्न प्रकार के वसा समूहों की आयोडीन संख्या।

> न सूखने वाले तेल = आयोडीन संख्या 100 से कम
>
> सामिशुष्कन तेल = आयोडीन संख्या 100 से 130 के बीच
>
> सूखने वाले तेल = आयोडीन संख्या 130 से अधिक
>
> आयोडीन संख्या 100 ग्राम वसा द्वारा अवशोषित होने वाले आयोडीन या आयोडीन यौगिकों की ग्राम संख्या है। उच्च आयोडीन संख्या वाले तेल वायुमंडलीय ऑक्सीजन को सहजता से अवशोषित कर एक कड़ी और टिकाऊ परत बनाते हैं।

पादप तेलों को हालांकि बहुधा उनकी उस सापेक्षिक क्षमता के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है, जिसके अनुसार वे सूख कर एक कठोर परत का निर्माण करते हैं, लेकिन उनका वर्गीकरण भोजन या औद्योगिक उद्देश्यों के लिए उनकी मूलभूत उपयोगिता के अनुसार करना अधिक कारगर होगा :

क) मूल रूप से भोजन के लिए उपयोग होने वाले तेल - जैतून का तेल, सरसों को तेल, सोया तेल, मकई का तेल, मूंगफली का तेल, बिनौले का तेल, कुसुंभ का तेल, सूरजमुखी का तेल और तिल का तेल।

ख) भोजन और औद्योगिक दोनों उद्देश्यों में काम आने वाला तेल - खजूर का तेल।

ग) मुख्य रूप से औद्योगिक उद्देश्यों में काम आने वाले तेल - कैस्टर तेल, तुंग तेल और अलसी का तेल।

15.2.4 वनस्पति तेलों का निष्कर्षण

वसीय तेल जल में अविलेय होते हैं और पादप कोशिकाओं के भीतर छोटी-छोटी अविलेय बूंदों के रूप में पाए जाते हैं। अधिकांश तेल बीजों में प्राय: भ्रूणपोष और बीजपत्रों में संचित रहते हैं। अधिकांश अनाजों में सिर्फ उनके भ्रूण में ये तेल संचित पाए जाते हैं। वनस्पति तेल फलों, तनों, कंदों और पर्णसमूहों में भी पाए जा सकते हैं। जैतून और खजूर के तेल इनके फलों के गूदेदार फलभित्तियों से निकाले जाते हैं।

तेल निकालने की विधियां

तेल धारी पादप कोशिकाओं से कच्चे तेलों और वसाओं को निम्न विधियों से निकाला जाता है:

क) दारण, ख) यांत्रिक दाब, और ग) विलायक निष्कर्षण।

दारण: यह विधि मुख्यत: जंतु वसाओं को निकालने में काम लाई जाती है। मगर अफ्रीका के कुछ प्रदेशों में भी खजूर से तेल निकालने के लिए यह विधि अपनायी जाती है। सबसे प्रचलित विधि यांत्रिक निष्पीडन है। निष्कर्षण से पहले टहनियों, पत्तियों, पत्थरों और कूड़ा करकट को चुनकर और उन्हें चुम्बकों के ऊपर से ले जा कर हटा दिया जाता है। सफाई के बाद बीजावरणों यानि छिलकों को मशीनों से उतार लिया जाता है और फिर गुठलियों के पतले फाहे बनाए जाते हैं। इसके बाद अब तप्त या शीत निष्पीडन, विलायक या स्क्रू-निष्कर्षण और अपकेन्द्रण किया जाता है।

यांत्रिक निष्पीडन: इस विधि में वसा निकालने के लिए तेलधारी ऊतकों पर दवाव डाला जाता है। यह कार्य द्रवचालित दाब या स्क्रू-दाब के द्वारा किया जाता है। द्रवचालित दाबक में छोटे-छोटे टुकड़ों को प्राय: मजबूत कपड़े में, या थैलों में लपेटकर रखा जाता है। तेल निकालते समय अवशिष्ट पदार्थ को यह रोके रखता है। तप्त निष्पीडन में, साफ की गई गुठलियों/गिरियों को पहले भाप में पकाया जाता है ताकि निष्कर्षण के दौरान तेल का प्रवाह सुविधाजनक हो जाए। शीत निष्पीडन में बीज/गुठलियों को बिना किसी पूर्ण उपचार के सीधे महीन पीसा जाता है। इस विधि से उत्पादन अधिक मिलता है, मगर इससे निकाले जाने वाले तेल की गुणवत्ता अपेक्षतया निम्नकोटि की होती है।

विलायक निष्कर्षण: यह विधि बड़ी कारगर मगर महंगी है। उन पादप ऊतकों से तेल निकालने की यही एकमात्र व्यावहारिक विधि है, जिनमें तेल अपेक्षतया कम मात्रा में होता है। गैसोलीन, बेन्जीन, कार्बन डाइसल्फाइड, पेट्रोलियम ईथर और क्लोरीनित हाइड्रोकार्बन सहित कई प्रकार के विलायक इस विधि में काम लाए जाते हैं। मगर वही विलायक उपयुक्त होगा जोकि तेल-धारी सभी कोशिकाओं तक पहुंचने वाला हो। विलायक निष्कर्षण के बाद, वसा-तेलों को निष्कर्षी विलायकों से आसवन द्वारा मुक्त कर लिया जाता है। विलायक निष्कर्षण के दौरान जो खली निकलती है उसमें तेल की मात्रा सिर्फ एक प्रतिशत या उससे भी कम रहती है, जबकि यांत्रिक दाब से प्राप्त होने वाली खली में तेल की मात्रा 4 से 7 प्रतिशत तक रहती है।

कच्चे वनस्पति तेल का शोधन

कच्चे तेलों में अक्सर कई प्रकार की अशुद्धता रहती है जैसे पानी, मिट्टी, कोशिकीय पदार्थ, मुक्त वसा-अम्ल और फोस्फोटाइड, वर्णक, एल्डीहाइड, कीटोन, और हाइड्रोकार्बन जैसे गंधयुक्त यौगिक और संगध तेल। इसीलिए तेल को शोधन प्रक्रम से गुजरना होता है। कच्चे वनस्पति तेल के एल्वूमिनॉइड भाग, तेल को गर्म कर स्कंदन के जरिए निकाल बाहर किया जाता है। मुक्त वसा अम्लों को सोडियम हाइड्रॉक्साइड के साथ प्रक्षोभन करके अलग कर लिया जाता है। इसके बाद आवश्यकतानुसार विरंजन या निर्गन्धीकरण भी किया जाता है।

तिलहनों, वनस्पति तेलों और वसाओं की रखवरखाव गुणवत्ता

कुछ बीजों के आवरण को यदि क्षति नहीं पहुंची हो तो उनमें विद्यमान वसा में किसी प्रकार का परिवर्तन हुए बिना उन्हें वर्षों तक गोदाम में रखा जा सकता है। यह इनमें विद्यमान कुछ पदार्थों के कारण होता है, जो स्वत: आक्सीभवन को रोकते हैं। प्राकृतिक रूप से सर्वाधिक पाया जाने वाला प्रति-आक्सीकारक विटामिन-ई यानी टोकोफेरॉल है। वनस्पति वसाओं में टोकोफेरॉल अक्सर अच्छी मात्रा में मौजूद रहता है, लेकिन जन्तु वसा में इसका अभाव रहता है। इसके अतिरिक्त इनमें अन्य यौगिक भी पाए जाते हैं जो वास्तविक प्रति-ऑक्सीकारक की क्रियाशीलता बढ़ाते हैं। इन यौगिकों को संकर्मी (synergists) कहा जाता है। फोस्फेटाइड प्रति-ऑक्सीकारक का कार्य करते हैं और साथ ही अन्य प्रति-ऑक्सीकारकों की क्रियाशीलता को बढ़ाते हैं। *सीसैमॉल* (sesamol) नामक ऑक्सीकारक सिर्फ तिल के तेल में ही पाया जाता है जबकि गॉसीपॉल (gossypol) नामक प्रतिऑक्सीकारक विनौले के कच्चे तेल में मिलता है। शोधन प्रक्रम के दौरान प्रति-आक्सीकारक संकर्मी दोनों ही कभी-कभी तेलों से अंशत: या पूर्णत: निकाल दिए जाते हैं इसलिए इन तेलों के खराब हो जाने की संभावना रहती है, इनमें दुर्गंध आने लगती है और स्वाद बिगड़ जाता है। यह ग्लिसराइडों के मुक्त वसा-अम्लों, एल्डीहाइड, कीटोन इत्यादि में खंडित होने के कारण होता है। इसे विकृत गंधिता (बासीपन) कहते हैं। शोधित तेलों को और अधिक स्थायी बनाने के लिए उनमें प्रति-ऑक्सीकारक मिलाना जरूरी हो जाता है। हाइड्रोजनीकृत वसाएं आम तौर पर उन तेलों से अधिक स्थायी होते हैं, जिनसे इनका निर्माण किया जाता है। इनके विकृतगंधी होने की संभावना कम रहती है।

15.2.5 तेलों का हाइड्रोजनीकरण

असंतृप्त वसा ग्लिसराइडों से युक्त तेलों को वसाओं में रूपांतरित करने के प्रक्रम को तेलों का हाइड्रोजनीकरण कहते हैं। आंशिक हाइड्रोजनीकरण तेल के द्वि-आबंध को तोड़ देता है, जिससे खाने के लिए तेल अधिक उपयुक्त बन जाता है। इसके साथ-साथ तेल की रखरखाव गुणवत्ता, स्वाद, गंध और गलनांक में भी गुणात्मक सुधार आ जाता है। हाइड्रोजनीकरण से प्राप्त होने वाले अंतिम उत्पाद को भारत में वनस्पति घी कहा जाता है। इसका निर्माण साधारणतया मूंगफली, सोयाबीन, विनौला, तिल इत्यादि तेलों से किया जाता है। हाइड्रोजनीकरण प्रक्रम के निम्न चरण हैं:

1. हाइड्रोजनीकरण पूर्व चरण

इसमें निम्न अवस्थाएं शामिल हैं।

क) निष्प्रभावन: हाइड्रोजनीकरण के लिए तेल को पहले न्यूट्रलाइजर यानि निष्प्रभावक में डाला जाता है और उसे तेज गति से विलोडित किया जाता है। फिर उसमें सोडियम हाइड्रोक्साइड जरूरी मात्रा में मिला दिया जाता है, जो मुक्त वसा-अम्लों को निष्प्रभावी

बना देता है। इससे बनने वाले लवण तेल की सतह पर मलफेन के रूप में उभर आते हैं, जिसे अलग कर दिया जाता है। तेल को अब ब्लीचर यानि विरंजित्र में पम्प किया जाता है।

ख) **विरंजन:** तेल को विरंजित्र में 90° से. तापमान पर मुल्तानी मिट्टी के साथ विरंजित किया जाता है। रंगकार पदार्थों को मिट्टी सोख लेती है और फिर तेल को छान लिया जाता है।

ग) **निर्गन्धकरण :** इस क्रिया का उद्देश्य आपत्तिजनक गंधों और सुवासों को दूर करना है, जो वाष्पशील घटकों के कारण उत्पन्न होते हैं। तेल को गर्म किया जाता है और अति-तप्त वाष्प को अंदर पम्प किया जाता है, जो वाष्पशील पदार्थों को वाष्पोत्सर्जित कर देता है।

2. हाइड्रोजनीकरण

रंगहीन (विरंजित), गंधहीन (निर्गंधित) तेल को अब कनवर्टर यानि परिवर्तक में डालकर निश्चित तापमान और दाब में उसका हाइड्रोजनीकरण किया जाता है। इसके लिए तेल को 77° से. तक गरम किया जाता है। हाइड्रोजन गैस को उच्च दाब में, बुदबुदाया जाता है और गर्म तेल बड़े ही सूक्ष्म तरीके से विभाजित निकेल की उपस्थिति में हाइड्रोजन को अवशोषित कर लेता है। इस अवशोषित की जाने वाली हाइड्रोजन की मात्रा को नियमित किया जा सकता है, तथा जब उच्च गलनांक वाली वसा का निर्माण किया जाना होता है तो इसमें अधिक हाइड्रोजन अवशोषित की जाती है। हाइड्रोजनीकरण को वांछित गाढ़ेपन वाली वसा प्राप्त होने तक जारी रखा जाता है। इस दृढ़ीभूत तेल को कनवर्टर से निकाल कर उसे फिल्टर प्रेस पर पम्प किया जाता है जिससे निकेल अलग हो जाता है।

3. पश्च–हाइड्रोजनीकरण शोधन

विकृत गंधिता रोकने के लिए उच्च शुद्धता जरूरी है। इसके लिए हाइड्रोजनीकृत तेल को ठीक उपरोक्त तरीके से संसाधित किया जाता है। इस तरह वह अवशिष्ट वसा अम्लों या ठोस पदार्थों से मुक्त हो जाता है। अब इस अंतिम उत्पाद में अल्प मात्रा में रंग और सुवासी पदार्थ मिलाए जाते हैं। इसे कनस्तरों में बंद कर प्रशीतित वायु से ठंडा किया जाता है जो इसके तापमान को 4.5° से. प्रति घंटे की दर से गिरा देता है। इससे इसकी बनावट दानेदार, घी जैसी हो जाती है।

हमारे भोजन में शामिल वनस्पति तेलों, पाक वसाओं और तेल, और मारजरीन इन सब में संतृप्तता की मात्रा मानव स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। भोजन में संतृप्त वसा अम्लों की अत्यधिक मात्रा को अब चिंताजनक माना जा रहा है। क्योंकि ये अम्ल कोलेस्ट्रॉल के साथ मिलकर वसा की ऐसी परतें बनाते हैं, जिनसे धमनियां कठोर हो जाती हैं। यह हृदय रोग का कारण बन सकता है। इसलिए आजकल भोजन के लिए कुसुंभ, मकई, सोयाबीन और सूरजमुखी जैसे वनस्पति तेलों को संतृप्त वसाओं और जंतु स्रोतों से प्राप्त वसाओं से अधिक तरजीह दी जा रही है।

15.2.6 वनस्पति तेलों और वसाओं के उपयोग

इनका उपयोग मुख्यत: भोजन के रूप में, औषध-उद्योग और अन्य उद्योगों में किया जाता है।

1. कई वनस्पति तेलों का भोजन पकाने में और ओलियामारजरीन के निर्माण में प्रयोग होता है जैसे जैतून, मूंगफली, मकई और बिनौला।
2. वनस्पति तेल और वसाएं ऊर्जा का अति सांद्रित भंडार हैं। कार्बोहाइड्रेटों और प्रोटीनों की अपेक्षा सभी वसाओं का कैलोरी मान अधिक रहता है। एक ग्राम वसा से लगभग नौ कैलोरी मिलती है जबकि एक ग्राम कार्बोहाइड्रेट या प्रोटीन से हमें सिर्फ चार कैलोरी ही मिलती है।
3. तेल और वसाएं हमारे भोजन को सुगंधित बनाते हैं और उसे विविधता प्रदान करते हैं। ये भोजन को परितृप्ति मान भी प्रदान करते हैं। इसका यह अर्थ है कि इनसे हमें तृप्ति का अनुभव होता और भूख हमें देरी से लगती है।

4. विटामिन-ए, डी, ई और के जैसे वसा में घुलनशील विटामिनों के लिए वसाएं विलायकों का काम करती हैं।
5. तेल की पिराई से मिलने वाले अवशिष्ट पदार्थ को हम खली कहते हैं जो प्रोटीन से भरपूर होती है, जिसे हम पालतू पशुओं के चारे में काम लाते हैं। लेकिन कुछ खलियों जैसे एरण्डी, अलसी और तुंग, में विषैले पदार्थ रहते हैं जिन्हें चारे के काम नहीं लाया जा सकता है। लेकिन इन्हें नाइट्रोजन उर्वरकों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।
6. तेलों और वसाओं को पेंट, वार्निशों और प्रलाक्षों (लाख) के निर्माण में इस्तेमाल किया जाता है। लिनोलियम और मोमजामा, साबुन, डिटर्जेंट, मोमबत्ती, प्लास्टिक, सिंथेटिक फाइबर, कृत्रिम चमड़ा, पॉलिश, सौंदर्य-प्रसाधनों और स्नेहकों में ये घटक के रूप में काम आते हैं।
7. अवाष्पशील (fixed) तेलों और वसाओं जैसे कैस्टर और क्रॉटन तेलों को उनके रेचककारी गुणों के कारण औषधियों के निर्माण में या दवा के रूप में प्रयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

1. सामने के कोष्ठकों में सही कथन के लिए सही (√) का चिह्न और गलत के लिए गलत का (×) चिह्न लगाएं।

   i) लीनोलीइक और लीनोलीनिक अम्लों को आवश्यक वसा-अम्ल इसलिए कहा जाता है कि इनका संश्लेषण स्तनधारी प्राणी नहीं कर सकते हैं, इसलिए इन्हें पादप स्रोतों से प्राप्त किया जाना जरूरी होता है। ☐

   ii) वनस्पति तेल और वसाएं जटिल कार्बनिक वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड हैं। ☐

   iii) अधिकांश वसाएं और तेल स्थायी होते हैं और लंबे समय तक वायु और उच्च तापमान के संपर्क में रहने पर इनके स्वाद में खटास और दुर्गंध नहीं आती। ☐

   iv) साधारण तापमान पर असंतृप्त, वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड ठोस और संतृप्त वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड तरल अवस्था में रहते हैं। ☐

   v) साधारण तापमान पर वनस्पति तेल वाष्पित नहीं होते। ☐

   vi) न सूखने वाले तेल वायु के संपर्क में आने पर एक प्रत्यास्थ फिल्म बनाते हैं। ☐

   vii) अलसी का तेल सामि-शुष्कन तेल का उदाहरण है। ☐

   viii) असंतृप्त अम्लों विशेषकर लीनोलीइक और लीनोलीनिक के ग्लिसराइडों से भरपूर तेल सूखने वाले तेल हैं। ☐

   ix) सामि-शुष्कन तेलों की यह विशेषता है कि इनमें भारी मात्रा में लीनोलीइक अम्ल और संतृप्त अम्ल उपस्थित हैं, लेकिन इनमें लीनोलीइक अम्ल नहीं होता। ☐

   x) वसा-अम्ल सीधी, सम या विषम संख्यी शृंखलाएं हैं, तथा यदि शृंखला के प्रत्येक कार्बन दो हाइड्रोजन परमाणुओं को धारण किए हुए हो तो वह वसा-अम्ल असंतृप्त कहलाता है। ☐

15.3 आम उपयोग के तेलों और वसाओं के स्रोत

15.3.1 मूंगफली

वानस्पतिक नाम : *ऐरैकिस हाइपोजिया*
कुल : फैबेसी
उपकुल : पैपिलियोनॉइडी
प्रचलित नाम : मूंगफली
n = 20

सोयाबीन के बाद वनस्पति तेलों का दूसरा बड़ा स्रोत मूंगफली है। इसका वानस्पतिक नाम *ऐरैकिस हाइपोजिया* ग्रीक शब्दों "ऐरैकिस" और "हाइपोजिया" से उपजा है। "ऐरैकिस" का अर्थ शिंब यानि फली, तो "हाइपोजिया" का अर्थ है भूमि के नीचे, जिसके फल भूमिगत पक्वन करते हैं। यानि जो भूमिफलनी होते हैं। इसकी उत्पत्ति ब्राजील में हुई थी। यहां से यह समूचे दक्षिण अमेरिका (महाद्वीप) में फैल गई, जहां से इसे पुर्तगाली सोलहवीं सदी में पश्चिमी अफ्रीका लाए। कालांतर में चीन, जापान, भारत, मलेशिया और मालागासी गणराज्य में भी इसकी खेती की जाने लगी। इस पौधे की वानस्पतिक संरचना, संवर्धन की विधियों के बारे में आप इकाई-12 शिंब (दालें) में पढ़ चुके हैं। यहां हम मूंगफली के तेल की रासायनिक संरचना और उसके उपयोगों पर चर्चा करेंगे।

फली की संरचना

मिट्टी में प्रवेश कर लेने के बाद मेख एक फली में विकसित हो जाती है (चित्र 15.2)। इसका फल एक कोष्ठक छिलके-युक्त फली है। फली का छिलका एक बाह्य स्पंजी आवरण, एक मध्य रेशेदार और काष्ठीय परत और एक आंतरिक परत का बना होता है। फली को घेरे रहने वाली यह अंतिम परत कमोबेश कागजी बन जाती है। हर बीज में दो बीजपत्र पाए जाते हैं और वह एक पतले कागजी बीजावरण से ढका रहता है। मूंगफली की फली में गूदों की संख्या अलग-अलग, एक से पांच तक होती है। बीजपत्रों का रंग क्रीम के रंग का होता है।

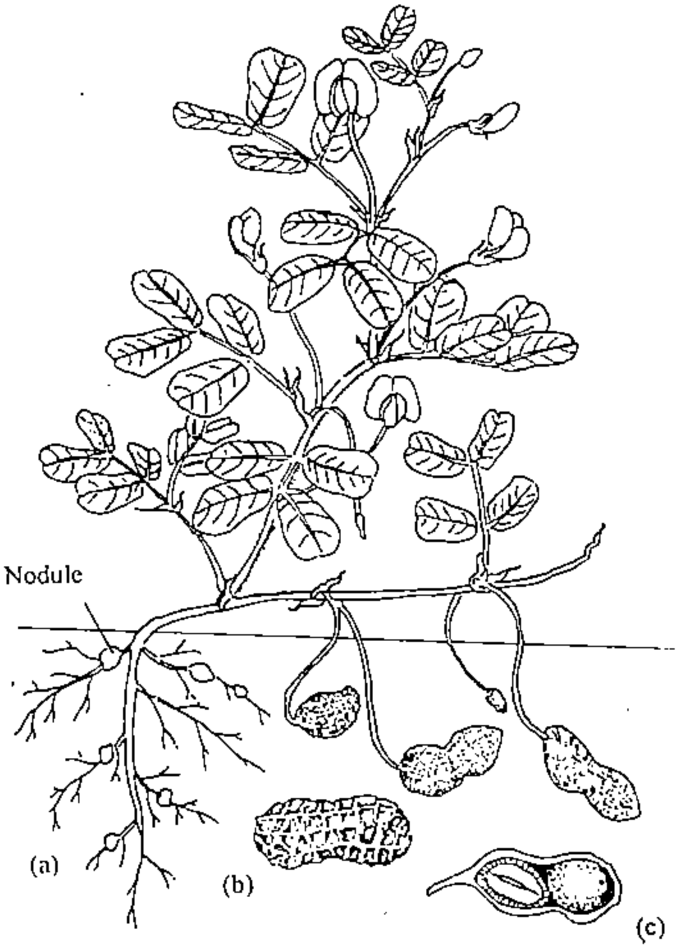

चित्र 15.2: मूंगफली (*ऐरैकिस हाइपोजिया*)। a) विकास के विभिन्न चरणों पर फली को दर्शाता मूंगफली के पौधे का रेखाचित्र। b) एक पूर्ण फली, c) अनुदैर्ध्य काट में एक फली जिसके कोष्ठक में दो बीज दिखाई दे रहे हैं (इनमें से एक बीज अनुदैर्ध्य काट में है)। (पुनःचित्रित सिम्पसन और ओगरजाली, 1986 से)।

रासायनिक संरचना: मूंगफली के दानों (nuts) में लगभग 26 प्रतिशत प्रोटीन और 45 प्रतिशत तेल पाया जाता है। ये फास्फोरस, थायमिन (thiamine), राइबोफ्लेविन (riboflavin) और नायसिन (niacin) से भरपूर होते हैं। शीत निष्पीडन से निर्मित मूंगफली के

तेल का रंग सुनहरा पीला होता है और इसमें एक हल्की सी मगर स्वीकार्य गंध पाई जाती है। तृप्त निष्पीडन से प्राप्त होने वाले तेल का रंग लाल-पीला रहता है। इसमें पाए जाने वाले प्रमुख वसा-अम्लों की मात्रा इस प्रकार है: ओलीइक अम्ल 56 प्रतिशत, लीनोलीइक अम्ल 25 प्रतिशत, पामीटिक अम्ल 6-12 प्रतिशत। इसके अलावा इसमें स्टीएरिक, ऐरैकिडिक अम्ल और अन्य संतृप्त वसा अम्लों की भी कुछ मात्रा पाई जाती है।

तेल का निष्पीडन

तेल की पेराई से पहले मूंगफली के दानों से छिलका उतार कर उन्हें साफ कर लिया जाता है। बीज में 40-50 प्रतिशत तेल होता है। तेल को एक्सपैलर मशीन या द्रवचालित दावक यंत्र से निकाला जाता है। भारत मूंगफली के तेल का सबसे बड़ा उत्पादक देश है।

उपयोग

1. मूंगफली का शोधित तेल भोजन बनाने का एक लोकप्रिय माध्यम है और इसे मारजरीन, पीनट मक्खन (peanut butter) इत्यादि के निर्माण में इस्तेमाल किया जाता है।
2. मूंगफली के तेल के हाइड्रोजनीकरण से ''वनस्पति घी'' बनाया जाता है।
3. सार्डीन मछली को जैतून के तेल में डिब्बाबंद करने से पहले उन्हें इस तेल में पकाया जाता है।
4. इसके निम्न कोटि के तेल को साबुन, प्रदीपकों, स्नेहकों और रबड़ प्रतिस्थापी बनाने में इस्तेमाल किया जाता है।
5. अवशिष्ट खली नाइट्रोजन से भरपूर (7-9 प्रतिशत मात्रा) रहती है और एक महत्वपूर्ण पशु-आहार है। खली को खाद के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है।
6. औषधि के लिए मूंगफली के तेल का उपयोग रेचक और प्रशामक के बतौर किया जाता है।

15.3.2 सरसों

वानस्पतिक नाम : *ब्रैसिका* स्पी.
कुल : ब्रैसिकेसी
प्रचलित नाम : सरसों, काली सरसों, राई, सोंधा, तौरिया
n = 8, 9, 10, 11

ब्रैसिका जीनस में लगभग 150 प्रजातियां आती हैं, जिनमें से कई तेल के स्रोत हैं। व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्रोत, तौरिया (या कोल्जा) और सरसों हैं। *ब्रैसिका* के बीजों का इतिहास बेहद प्राचीन है जिनका उल्लेख हमें बाइबिल, यूनानी और रोमन ग्रंथों में मिलता है। तीन हजार ई. पूर्व के संस्कृत अभिलेखों में भी सरसों का उल्लेख एक महत्वपूर्ण मसाले के रूप में मिलता है। इसके पौधे एकवर्षी, द्विवर्षी और शाकीय होते हैं। ये बहुवर्षी यदाकदा ही मिलते हैं। ये प्राय: प्राचीन विश्व के उत्तरी शीतोष्ण भागों विशेषकर भूमध्यसागरीय प्रदेश के मूल के हैं। ऐसा माना जाता है कि *ब्रैसिका* प्रजाति की उत्पत्ति तीन केन्द्रों में हुई थी: यूरोप, मध्य और दक्षिणी एशिया और चीन। इसकी विभिन्न जातियों का फैलाव उपोष्ण और उष्ण प्रदेशों के शीत ऋतु की फसलों के रूप में हुआ है। *ब्रैसिका* की खेती बड़े पैमाने पर उत्तरी अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, डेनमार्क, फ्रांस, जर्मनी, चीन, जापान और भारत में की जाती है। भारत में इनकी खेती पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल और आसाम में होती है।

कृष्य *ब्रैसिका* प्रजातियों को दो विशिष्ट किस्मों में विभाजित किया जा सकता है: सब्जियां और तिलहन। पत्तागोभी (बंद गोभी), फूलगोभी, ब्रोकोली और शलजम सब्जियों वाली प्रजातियां हैं। जिन प्रजातियों को तेल के लिए बड़े पैमाने पर उगाया जाता है उनके नाम इस प्रकार हैं: चीन और जापान में: *ब्रैसिका नैपुस* और *ब्रैसिका जन्सिया*; यूरोप और अमेरिका में *ब्रै. नैपुस* और *ब्रै. प्रोकॉक्स* तथा रूस और भूमध्यसागर प्रदेश में *ब्रै. जन्सिया* और *ब्रै. नैपुस।*

भारत में प्रधान तिलहन *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* (चित्र 15.3) और *ब्रै. जन्सिया* हैं। मुख्यतः पंजाब में उगाई जाने वाले *एरुका वेसिकेरिया* की उपजाति *सैटाइवा* से "जांबा" तेल निकलता है (तालिका 15.3 भी देखें)। भारत में *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* से तीन विशिष्ट किस्में विकसित हुई हैं। ये हैं भूरी सरसों, पीली सरसों, और तौरिया जो अपने-अपने विशिष्ट पारिस्थिक भौगोलिक प्रदेशों की सीमा में ही पाई जाती हैं। पश्चिमी यूरोप में *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* को तिलहन के रूप में उगाया जाता है लेकिन इसकी किस्में दक्षिणपूर्व एशिया में उगाई जाने वाली किस्मों से भिन्न हैं।

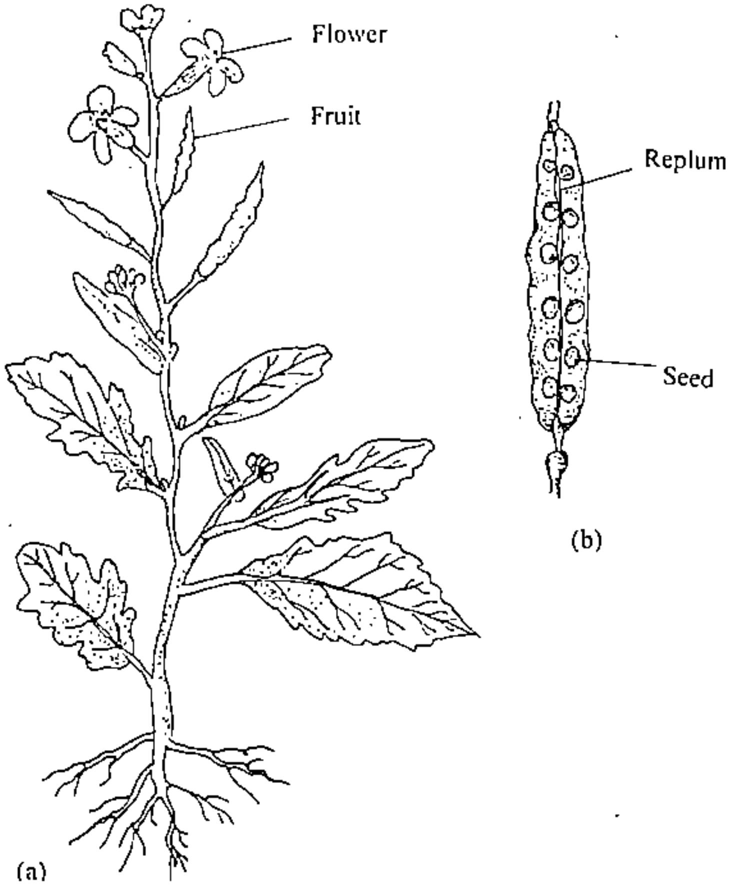

चित्र 15.3 : सरसों (*ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस*) a) सरसों के पौधे का एक रेखाचित्र, जिसमें पुष्प और फल विकास के विभिन्न चरणों में दिखाई दे रहे हैं। b) अनुदैर्ध्य काट में एक परिपक्व फल जो आभासीपट (रिप्लम) और कई बीज दिखा रहा है।

तालिका 15.3 : भारत में आम उगाई जाने वाली तेल उत्पादक क्रूसीफर कुल की फसलें

वानस्पतिक नाम	साधारण नाम	साधारण भारतीय नाम
ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस किस्म "भूरी सरसों"	टर्निप रेप	भूरी सरसों
ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस किस्म पीली सरसों"	टर्निप रेप	पीली सरसों
ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस किस्म "तौरिया"	इंडियन रेप	तौरिया
ब्रै. जन्सिया	इंडियन या ब्राउन मस्टर्ड	राई
ब्रै. नाइग्रा	ब्लैक या अल्बा मस्टर्ड	बनारसी राई
सिनैपिस अल्बा	व्हाइट मस्टर्ड	उजली सरसों
एरुका वेसिकेरिया	रॉकेट क्रेस	तारा मीरा

भारतीय बाजार में *ब्रैसिका* की तीनों किस्मों मसलन *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* (भूरी सरसों), *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* (पीली सरसों) और *ब्रै. कैम्पेस्ट्रिस* (तौरिया) को सामूहिक रूप से तौरिया या तोरी (रेप) के नाम से जाना जाता है। राई (*ब्रै. जन्सिया) किस्म* को सरसों कहा जाता है। *ब्रैसिका नाइग्रा और सिनैपिस अल्बा का भारत में कम प्रयोग होता है, मगर यूरोप और कनाडा में इससे खूब तेल निकाला जाता है।*

(i) तोरी तिलहन

(पीली सरसों, भूरी सरसों और तौरिया)

तोरी तिलहनों में पीली सरसों संभवत: सबसे प्रचीन है जिसका उल्लेख प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथों में मिलता है। पूर्वी अफगानिस्तान और उससे लगा पश्चिमोत्तरी भारत भाग भूरी सरसों की उत्पत्ति का एक स्वतंत्र केन्द्र था। भूरी सरसों और तौरिया देखने में लगभग समान लगती हैं। इसी तथ्य के मद्देनजर ये निष्कर्ष निकाल लिया गया है कि इन्हें पश्चिमोत्तर भाग से पंजाब में लाया गया था जहां से ये पूर्वी भारत में फैली। पीली सरसों भारत के पूर्वी प्रांतों में उगाई जाती है जहां उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में इसके विविध रूप देखने में आते हैं। यह संभव है कि इसकी उत्पत्ति का मुख्य केन्द्र पश्चिमोत्तर भारत हो। भारत में तोरी तिलहन उत्तर प्रदेश, पंजाब, आसाम, बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में उगाए जाते हैं।

तोरी के पौधे पतले, सीधे खड़े (ऊर्ध्व), शाखित वार्षिक शाकीय पौधे हैं। इनकी ऊंचाई कुछ किस्मों में 30-45 सेमी., तो पीली सरसों में 1.5 मीटर होती है। पत्तियां पालियुक्त, प्राय: लायरेट (दीर्घतर पिच्छाकार और स्तंभ आलिंगी यानि तने से चिपकी) होती हैं। प्रत्येक पुष्प में एक विशेष क्रूसीफेर पुष्प योजना पाई जाती है जिसमें चार मुक्त बाह्यदल, चार मुक्त नखरित दल (पंखुड़िया), *चतुर्दीर्घी* (टेट्राडायनैमस) पुंकेसर और एक द्विअंडपी (बाइकार्पिलैरी) युक्तांडपी (सिंकापर्स) ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय पाए जाते हैं। अंडाशय आरंभ में एककोष्ठी होता है। मगर कालांतर में यह एक आभासी पट के बन जाने से यह द्विकोष्ठी हो जाता है। इस पट को रीप्लम या आभासी पट कहा जाता है (चित्र 15.3b देखिए)। फल सिलिक्वा या सिलिक्यूला (एक छोटी और संपीडित फली) है जो जड़ से ऊपर की ओर स्फुटन करती है। इसमें बीज के दाने रीप्लम या आभासी पट से जुड़े होते हैं (चित्र 15.3)। बीज छोटे, गोलाकार, पीले (पीली सरसों) या सूक्ष्म वलित (भूरी सरसों और तौरिया), श्लेष्मकीय (भूरी सरसों) या अश्लेष्मकीय (पीली सरसों और तौरिया) होते हैं। बीज आवरण के नीचे एल्यूरोन और भ्रूणपोष उपस्थित रहते हैं।

ब्रैसिका के बीजों में सिनिग्रिन नामक ग्लाइकोसाइड या पोटेशियम माइरोनेट होता है और *सिनैपिस अल्बा* में सिनैल्बिन नामक ग्लाइकोसाइड पाया जाता है। इन ग्लाइकोसाइडों की कार्यकीय गतिविधियों के बारे में स्पष्ट रूप से पता नहीं है। मगर माइरोसिन नामक एंजाइम के साथ जल अपघटन होने पर ये डेक्स्ट्रोज और सरसों सगंध तेल उत्पन्न करते हैं।

सिनैपिस अल्बा (सफेद सरसों)

सिनैल्बिन ($C_{30}H_{42}O_{15}N_2S_2$) + H_2O $\xrightarrow{\text{माइरोसिन}}$ एक्रिनिल आइसो थियोसाइनाइट (सिनैल्बन सरसों तेल) + डेक्स्टरोज + सिनैपिन हाइड्रोजन सल्फेट

ब्रैसिका नीग्रा (काली सरसों)

सिनिग्रिन ($C_{10}H_{16}O_9NS_2K$) + H_2O $\xrightarrow{\text{माइरोसिन}}$ माइरोसिन एलिल आइसोथियोसाइनाइट (सरसों का वाष्पशील तेल) + डेक्स्टरोज + पोटेशियम हाइड्रोजन सल्फेट

खेती

भारत में तौरी की खेती रबी की फसल के रूप में की जाती है। तौरी प्राय: सितंबर में बोई जाती है और उसे जैद खरीफ (पतझड़ की फसल) कहा जाता है। सरसों की बुआई अक्तूबर-नवंबर में होती है। सरसों की खेती के लिए मध्यम या भारी दुमट मिट्टी उपयुक्त रहती है। इन्हें गेहूं, जौ या चने के साथ भिन्न-फसल के रूप में बोया जाता है। मगर तौरिया की खेती मुख्यत: एक शुद्ध फसल के रूप में होती है। भूरी सरसों की खेती उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पंजाब के बरानी (वर्षा पोषित) क्षेत्रों में एक शुद्ध फसल के रूप में की जाती है।

कटाई

पीली सरसों की किस्मों को 120-160 दिन, तो भूरी सरसों को 105-145 दिन पकने में लगते हैं। तौरी की फसल 85-100 दिन में पक जाती है। तौरी की कटाई उसकी फलियों के पीले पड़ते ही शुरू हो जाती है। मगर सरसों की कटाई तभी शुरू होती है जब सारे पौधे पीले हो जाएं। इनकी कटाई दरातियों से की जाती है। कटाई के बाद पौधों की ढेरियां बनाकर उन्हें कुछ दिनों तक सूखने के लिए धूप में रखा जाता है। इसके बाद इन्हें लकड़ी के घन से कूटा जाता है। इसे ओसार कर भूसी से दाने अलग कर लिए जाते हैं। अब दानों को कुछ दिनों तक धूप में सुखा कर स्टोर कर लिया जाता है।

तेल की मात्रा

बीजों में तेल की मात्रा 30 से लेकर 48 प्रतिशत तक अलग-अलग होती है। यह तौरी की किस्म और जलवायुगत परिस्थितियों के अनुसार होती है जिनमें उसे उगाया गया है। बीज में 20 प्रतिशत के लगभग प्रोटीन होता है। सभी किस्मों की विशेषता यह है कि इनमें एरुसिक अम्ल उच्च मात्रा में पाया जाता है, जो सकल वसा अम्ल का 40-45 प्रतिशत होता है। ओलीक और लिनोलीइक अम्ल लगभग 47 प्रतिशत होता है। अन्य संतृप्त अम्ल जैसे पामिटिक, स्टिऐरिक और लिग्नोसीरिक अम्ल अल्प मात्रा में पाए जाते हैं। बीज में सिनिग्रिन नामक एक ग्लूकोसाइड और पोटेशियम माइरोनेट होता है। माइरोसिनेज नामक एंजाइम द्वारा जलअपघटन होने पर यह डेक्स्ट्रोज एलिल-आइसोथियोसाइनेट और पोटेशियम हाइड्रोजन सल्फेट उत्पन्न करता है। तौरी और सरसों के तेल में तीखी गंध उसमें उपस्थित सगंध तेल एलिल-आइसोथियोसाइनेट के कारण आती है।

उपयोग

1. बीज के दाने और तेल को आचार में मसाले, और करी और सब्जियों में तड़का लगाने के लिए काम लाया जाता है।
2. तौरी से निकाला जाने वाला तेल काफी तरह से खाने के काम लाया जाता है जैसे सलाद में, खाना पकाने में, और मारजरीन में।
3. इसे स्नेहक (लूब्रिकेंट) के रूप में और ग्रीज, लूब्रिकेंट और साबुन के निर्माण में भी काम में लाया जाता है।
4. खली को पशु के चारे और खाद के रूप में इस्तेमाल किया ज़ाता है।

(ii) राई

(इंडियन मस्टर्ड, राई, सरसों राई)

ब्रैसिका जेन्सिया भारत की एक महत्वपूर्ण तिलहन उपज है। इसमें सरसों या तौरी से इतना अंतर है कि पत्तियां पर्णवृंतीय, संकीर्ण आधारी होती हैं जो स्तंभ आलिंगी नहीं होतीं।

राई का आगमन चीन से उत्तर भारत में हुआ था। इसकी खेती भारत के अलावा चीन, पाकिस्तान, जापान में भी होती है। भारत में मुख्य सरसों और राई के उत्पादक राज्य हैं उत्तर प्रदेश, पंजाब, आसाम, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा।

इसके पौधे शाकीय, वार्षिक, पतले और शाखित तने वाले होते हैं। इनकी ऊँचाई 1-2 मीटर तक होती है। तना चौथी या पांचवी पत्ती के कक्षों से ऊपर की ओर शाखन करते हैं। पत्तियां लायरेट, वृंतयुक्त और 15-30 सेमी. लंबी होती हैं। पुष्प क्रम कोरिम्बी (समशिखरूपी) असीमाक्ष होता है। पुष्प छोटे, दल हल्के पीले, पीले या क्रीम रंग के होते हैं। पुंकेसर चतुर्दीर्घी (टेट्राडायनैमस) और परागकोश अंतर्मुखी (इंट्रोर्स) होते हैं। अंडाशय अधोजायांगी, द्विअंडपी युक्तांडपी (बाइकार्पिलैरी सिंकार्पस) होता है। बीजांडों की संख्या काफी ज्यादा होती है और बीजांडन्यास भित्तीय होता है। फल सिलीक्वा, 1.25-6.25 से.मी. लंबा, सीधा, और छोटी मगर मजबूत चोंच जैसी संरचना धारण किए रहता है। बीज छोटे, गोल, भूरे या गहरे भूरे और अश्लेष्मकी होते हैं। माइक्रोस्कोप में देखने पर बीजों के पृष्ठ पर जालिकाभवन पाया जाता है। *ब्रै. जन्सिया* एक स्व-निषेची प्रजाति है।

खेती

राई की खेती एक शुद्ध फसल या मिश्र फसल के रूप में गेहूं, जौ और चने की फसल के साथ की जाती है। इसकी मिश्र खेती उत्तर प्रदेश में अधिक प्रचलित है। भारत में इसकी खेती रबी की फसल के रूप में होती है। राई को मिश्र फसल के रूप में उगाने के लिए मध्यम या भारी मृदा सबसे उत्तम होती है। इसे मुख्य फसल के लिए की जाने वाली तैयारी और खाद सभी का लाभ मिलता है। इसे प्राय: अक्तूबर के मध्य से लेकर नवंबर के आरंभ के दिनों में बोया जाता है। मिश्र खेती में इसके बीज 1.2-1.8 मीटर की दूरी पर समानांतर पंक्तियों में मुख्य फसल के साथ एकांतर में बोया जाता है। या फिर उन्हें पूरे खेत में छिड़क दिया जाता है। शुद्ध फसल के रूप में उगाने के लिए राई के बीज को साधारणतया हाथों से खेत में छिड़क दिया जाता है।

कटाई

राई की फसल 110 से लेकर 160 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। फसल की कटाई फरवरी से मार्च के बीच में चलती है। कटाई दरातियों से की जाती है। फसल को काटकर उसके बंडल बनाने के बाद उसे धूप में सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। इसकी कुटाई बड़ी आसानी से हो जाती है क्योंकि इसकी फलियां सहजता से फट जाती हैं और उनसे बीज निकल जाते हैं। बीज के दानों को ओसार-फटक कर उसमें से भूसी अलग कर दी जाती है और फिर उन्हें सुखाकर स्टोर कर लिया जाता है। इसके भंडारण कक्ष नमी से पूर्णत: मुक्त होने चाहिए।

राई का तेल

राई के बीज में तेल की मात्रा 30-42 प्रतिशत होती है। तेल का रंग हल्का पीला होता है और यह वायु के प्रभाव में ठोस फिल्म नहीं बनाता। ब्रैसिकेसी कुल के अन्य सदस्यों की तरह राई के बीज में भी सिनिग्रिन नामक एक ग्लूकोसाइड और पोटैशियम माइरोनेट पाया जाता है। माइरोसिनोज एंजाइम की सहायता से जलअपघटन कर यह ग्लूकोसाइड डेक्स्ट्रोज, सगंध तेल (एलिल-आइसो-थियोसाइनेट) और पोटैशियम हाइड्रोजन सल्फेट बनाता है। राई के तेल में तीखी गंध इसी सगंध तेल के कारण आती है। तेल में वसा अम्लों का मुख्य घटक एरुसिक अम्ल है।

निष्कर्षण

राई के बीजों से तेल बैलों से चलने वाले कोल्हू या बिजली से चलने वाली घूर्णी घणियों, एक्सपेलर और हाइड्रोलिक प्रेस से निकाला जाता है। कुछ वर्षों से विलायक निष्कर्षण (सॉल्वेन्ट एक्स्ट्रेशन) की विधि से भी तेल निकाला जाने लगा है।

अन्य खाद्य तेलों की तरह सरसों और राई के तेल में भी मिलावट होती है। इसमें प्रायः मूंगफली और अलसी के तेल की मिलावट की जाती है। फसल कटाई के दौरान कभी-कभी अनजाने में उसमें *आर्जीमोन* के दाने भी मिल जाते हैं। जिसके फलस्वरूप सरसों के तेल में *आर्जीमोन* का तेल थोड़ी मात्रा में मिला रहता है। *आर्जीमोन* की अधिक मिलावट वाले तेल के सेवन से ही आदमी में ड्रॉप्सी (जलोदर) नामक रोग होता है क्योंकि *आर्जीमोन* तेल में एक विषाक्त एल्कलॉइड सैंग्विनैराइन होता है।

उपयोग

1. भारत में राई का तेल मुख्यत: खाने के काम आता है।
2. राई के बीजों का आचार बनाने में मसाले के रूप में और करी व सब्जियों में तड़का आदि लगाने के लिए उपयोग किया जाता है।
3. इसके निम्न कोटि के तेल प्रदीपक और कटिंग ऑयल के रूप में काम आते हैं।
4. इसके तेल से मिलने वाले एरुसिक अम्ल को जेट इंजनों के स्नेहन के लिए और प्लास्टिक के निर्माण में इस्तेमाल किया जाता है।
5. राई के तेल से चर्मशोधन प्रक्रिया में त्वचाओं और चमड़ों को मुलायम और लचीला बनाया जाता है। जंतु त्वचा की कोशिकाओं में एक निश्चित मात्रा में वसा मौजूद होती है जिसे चर्म शोधन के दौरान हटाया जाता है।
6. इसके बीज पालतू पशुओं को खिलाए जाते हैं क्योंकि इसकी तासीर ठंडी होती है और यह पाचन और रोगों की रोकथाम में सहायक है।
7. राई का तेल और सेंधा नमक (rock salt) मसूड़ों के रोगों के उपचार के लिए दंत विलयन के रूप में इस्तेमाल होता है। यह आयुर्वेदिक औषधियुक्त तेलों में भी मिलाया जाता है, जिन्हें मलहम या तंत्रिका तंत्र के विकार से होने वाले पक्षाघातकारी (लकुवा) रोगों में मालिश के लिए प्रयोग किया जाता है।
8. इसकी तरुण हरी पत्तियों का साग बनाया जाता है। इसे पशुओं के चारे और कभी-कभी प्राकृतिक खाद बनाने के लिए भी उगाया जाता है।
9. इसकी खली को पशु आहार और खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।
10. राई में उपस्थित वाष्पशील तेल एक अति शक्तिशाली प्रदाहजनक है, जो त्वचा में भयंकर फफोले पैदा कर सकता है। इसके इस गुण के लिए इसे दवाईयों में अति तनु सांद्रता में एक प्रतिप्रदाहक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

(iii) तारामीरा (रॉकेट सीड)

तारामीरा, वानस्पतिक नाम - *एरूका सैटाइवा*, पश्चिमोत्तर भारत के शुष्क क्षेत्रों में शीत

ऋतु में उगाया जाने वाला तिलहन है। इसे प्राय: चने या जौ के साथ मिलाकर उगाया जाता है। यह एक-वार्षिक, शाकीय पौधा है जिसकी ऊँचाई 0.6-1.2 मीटर तक होती है। तना जड़ पर ठोस मगर ऊपर की ओर खोखला, शाखित और अरोमिल होता है। पत्तियां गहरी हरी या अरोमिल होती हैं। पुष्पक्रम कोरिम्बी (समशिखरूपी) असीमाक्ष होता है। इसमें दो प्रकार के पुष्प पाए जाते हैं- दीर्घ वर्तिकाग्री और लघु वर्तिकाग्री पुष्प। बाह्यदलपुंज (कैलिक्स) चतुर्भुजीय, नलिकाकार होता है। इसकी पंखुड़िया नखरित, हरी पीली और गहरी बैंगनी शिराओं युक्त होती हैं। पुंकेसर छ:, चतुर्दीर्घी होते हैं। अंडाशय जायांगधरी, द्विकोष्ठकी होता है और उसके प्रत्येक कोष्ठक में बीजांडों की दो कतारें पाई जाती हैं। फल सिलिक्वा होता है। यह 2.5 से.मी. लंबा, एक चपटा, खड्गरूपी बीज रहित चोंच युक्त और तने से नजदीकी से लग्नित होता है। बीज हल्के लाल-भूरे अंडाकार और चिकनी सतह युक्त होते हैं। इन पर एक अनियमित सी श्लेषमकी आवरण या कोटिंग पाई जाती है बीजांड द्वार के समीप इसका जमाव अधिक घना होता है। बीज में दो समंतर्वलित (कॉनडुप्लीकेट) बीजपत्र पाए जाते हैं।

खेती

तारामीरा की खेती शुद्ध या मिश्र फसल के रूप में ऐसे क्षेत्रों में होती है जहां मिट्टी हल्की, नमी बहुत कम, और मृदा उर्वरता बहुत कम हो। असल में तारामीरा को किसान ऐसे क्षेत्रों में उगाते हैं जहां कोई दूसरी खेती लाभकारी नहीं है। इसे सितंबर और नवंबर के बीच कभी भी बोया जाता है।

उपयोग

1. तारामीरा तेल का उपयोग गांवों में लैम्प इत्यादि जलाने के लिए किया जाता है। यह तेल *ब्रैसिका* (सरसों कुल) के तेलों से अधिक तेज रोशनी और कम धुंआ देता है।

2. इसकी खली पशु के चारे के काम लाई जाती है। तारामीरा की खली से पलने वाले पशुओं को कुटकी से मुक्त पाया गया है।

15.3.3 कुसुंभ

वानस्पतिक नाम : *कार्थैमस टिंक्टोरियस*
कुल : एस्टरेसी
प्रचलित नाम : सैफ्लावर, कुसुंभ
n = 12

कुसुंभ (*कार्थैमस टिंक्टोरियस*) एक वार्षिक तिलहन है जिसकी खेती मुख्यत: भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका और मेक्सिको में होती है। इसके अन्य उत्पादक देश आस्ट्रेलिया, स्पेन, पुर्तगाल और तुर्की हैं। कुसुंभ से दो तरह के तेल निकाले जाते हैं - एक बहुअसंतृप्त तेल है जिसे मारजरीन, सलाद तेल और सरफेस कोटिंग के लिए प्रयोग किया जाता है। दूसरा तेल एकलअसंतृप्त (मोनो-अनसैचुरेटेड) है जिसे मुख्यत: तलने के काम लाया जाता है। मध्य पूर्व के अनेक देश मुख्यत: इसके सूखे फलों के लिए इसे उगाते हैं। इसके सूखे फूलों को केसर की जगह प्रयोग किया जाता है।

कुसुंभ की खेती का सबसे प्राचीन प्रमाण मिस्र के पुरातात्विक दस्तावेजों से मिलता है। लगभग 1600 ईसा पूर्व कुसुंभ की खेती इसके फूलों के लिए की जाती थी जिसके रंगों में तब वैसी ही विविधता पाई जाती है जो आज भी उस देश में देखने को मिलती है। इसके लाल-संतरी पुष्पकों को पपारस या कपड़े की पतली पट्टियों की किनारियों पर सिलकर लंबी मालाएं बनाई जाती थीं। इन मालाओं को पुराशवों (ममी) के गर्दनों और शरीरों पर लपेटा जाता था। फिर कालांतर में यह खोज हुई कि इसके संतरी या लाल फूलों से कपड़े को रंगने के लिए डाई या रंजक बनाया जा सकता है। इससे यह पता चलता है कि कुसुंभ में आदमी की रुचि तब से हुई जब उसने पहले-पहले इसके संतरी या लाल फूलों वाले पौधों को देखा। उन्नसवीं सदी के आरंभ तक कुसुंभ रंजक के दो सबसे महत्वपूर्ण पादप स्रोतों का दर्जा पा गया था। दूसरा पादप स्रोत 'नील' था। कृत्रिम एनीलाइन रंजकों का विकास हो जाने के बाद इसका महत्व घट गया। कुसुंभ के सूखे फूल अभी भी बाजार में खाने के रंग के रूप में बिकते हैं। इसमें कार्थमोन (carthamone) नामक वर्णक पाया जाता है जो एक *कैलइऑन* (chaleone) व्युत्पन्न है। ऐसा माना जाता है कि रोमन काल में या इससे भी पहले कुसुंभ के बीजों का उपयोग मिस्र में तेल के स्रोत के रूप में किया जाता था। भारत में इसकी खेती कब से आरंभ हुई, यह कोई नहीं जानता। मगर संभवत: यह काफी पहले शुरू हुई थी। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक इसे एक संभावित तिलहन की फसल के रूप में जांचा परखा नहीं गया था। इस प्रजाति को सबसे पहले निकट पूर्व में एक रंजक पौधे के रूप में घरेलू बनाया गया था। उसके बाद इसे पुरानी दुनिया के उपोष्ण प्रदेशों में इस उद्देश्य के लिए खूब प्रयोग किया गया। आरंभिक काल में ही इसके बीजों से तेल निकाला गया था, जिससे यह तिलहन के रूप में पहचाना गया। एक विशाल क्षेत्र में लंबे समय तक इसकी खेती होने के कारण इसमें काफी विविधता आ गई। इसकी विविधता और प्रमुख प्रकारों के केन्द्र (नोवल्स, 1969) इस प्रकार हैं:

1. सुदूर पूर्व - देर से होने वाला, कंटीला, लंबा, लाल-पुष्प।
2. भारत-पाकिस्तान - जल्दी होने वाला, अति कंटीला, छोटा फूल नारंगी।
3. मध्य पूर्व - देर से होने वाला कंटकहीन, लंबा, लाल फूल।
4. मिस्र - विविध, प्राय: बड़े सिर वाला।
5. सूडान - जल्दी होने वाला, अति कंटीला, पीले फूल।
6. इथियोपिया - देर से होने वाला, अति कंटीला, लंबा, लाल-फूल।
7. यूरोप (भूमध्यसागरीय प्रदेश) - विविध रूपी।

इसका पादप एक-वार्षिक शाक (चित्र 15.4) है। यह तेजी से विकसित होता है। यह अति शाखित होता है और 1-4 फुट की ऊँचाई तक उगता है। पत्तियां तने के निचले हिस्से में, जड़ के समीप रोजेट की आकृति में इकट्ठा रहती हैं। ये प्राय: सर्पिल विन्यास और अनियमित अंतराल में उगती हैं। पत्तियाँ शाखाओं के सिरों के काफी समीप उगती हैं और पुष्पक्रम के परिचक्रक सहपत्र बनाती हैं। पत्तियां संपूर्ण, कड़ी, कंटकहीन या शूलिकामय-क्रचकी (स्पाइन्यूलोज-सीरेट) होती हैं। पुष्पक्रम पौधे की हर शाखा के सिरे पर बनता है। पुष्पक्रम के पुष्पक (फ्लोरेट) अनियमित नलिकाकार (समयुग्मकी) होते हैं। फल ऐकीन, अंडाकार, रोमगुच्छयुक्त होता है। बीज में 24-36 प्रतिशत बेहतरीन, शुष्कन तेल होता है।

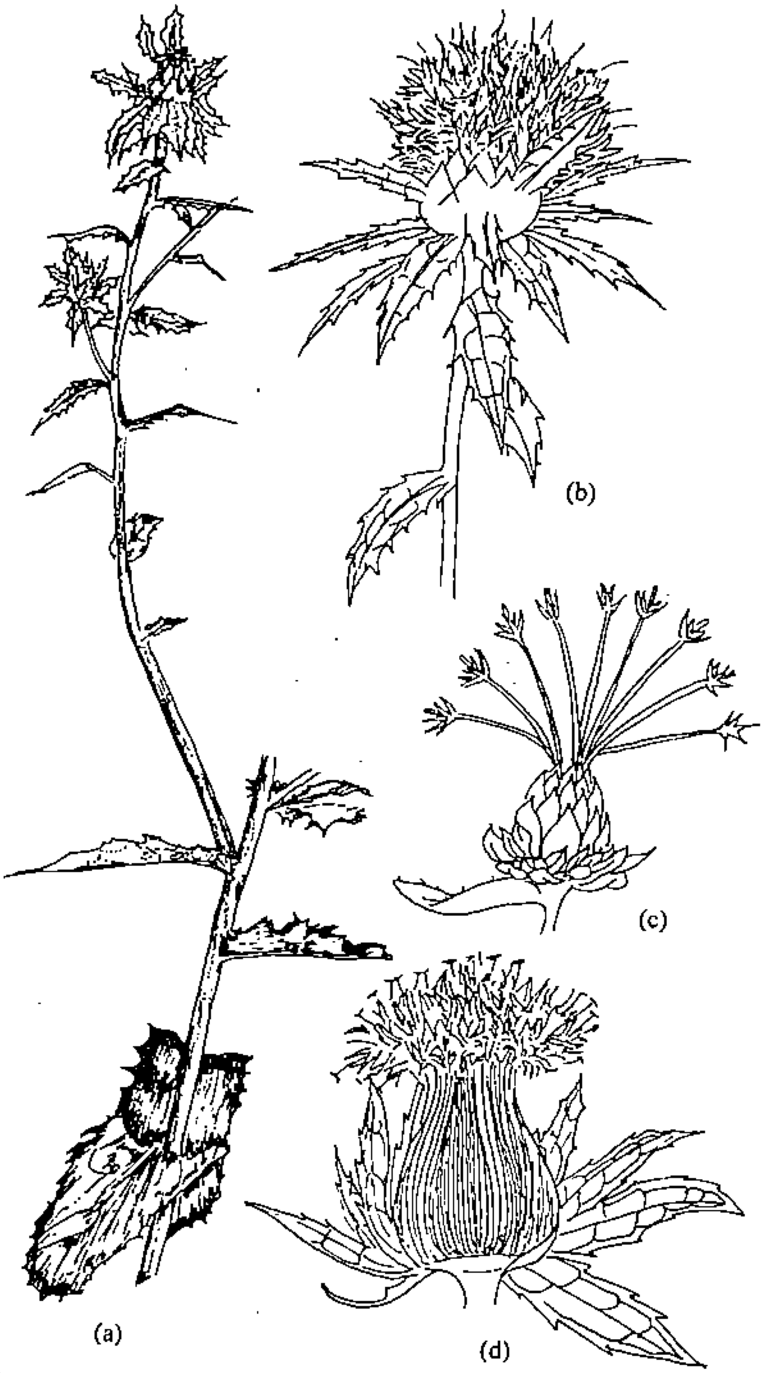

चित्र 15.4: कुसुंभ (*कार्थेमस टिंक्टोरियस*)। a) पुष्पक्रम सहित पौधे का एक भाग। b) कैपीटुलम (मुंडक) जैसा कि बाहर से देखने में आता है। c) एक कैपीटुलम जिसमें से अधिकांश फूल हटा दिए गए हैं। d) अनुदैर्ध्य काट में कैपीटुलम [पुनः चित्रित - a,b,d) पर्सग्लव 1988 से; तथा c) कोबले एवं स्टील, 1976 से]।

खेती और कटाई

भारत के आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक और मध्यप्रदेश आदि राज्यों में कुसुंभ की खेती एक महत्वपूर्ण तिलहन की फसल के रूप में की जाती है। यह एक शुष्क, शीत ऋतु की मैदानी फ़सल है और इसे वर्षापोषित तथा सिंचित दोनों तरह से उगाया जाता है। जलाभावसह होने के कारण इसे निम्नकोटि की बलुई मिट्टी के साथ-साथ ऐसे क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है जहां कम वर्षा होती है। कुसुंभ की खेती के लिए काली-भुरभुरी (ब्लैक-कॉटन), दुमट और हल्की मिट्टी उत्तम होती हैं। रंजक या डाई प्राप्त करने के लिए इसे प्रायः शुद्ध फसल के रूप में उगाया जाता है, मगर तिलहन के रूप में इसकी खेती गेहूं, ज्वार, जौ या चना के साथ मिला कर की जाती है।

तिलहन की फसल के रूप में इसे साधारणतया अक्तूबर-नवंबर में बोया जाता है और फरवरी-मार्च में काटा जाता है। बीज नम खेत में एक से तीन पंक्तियों की पट्टियों में मुख्य फसल गेहूं या रबी ज्वार को छः से लेकर 12 पंक्तियों के साथ एकांतरित करते हुए बोया जाता है। शाखन बढ़ाने के लिए पौधे दो महीने के हो जाएं तो अक्सर उनके सिरों को कलम कर दिया जाता है। इससे फूलों और फलतः बीज का उत्पादन अधिक मात्रा में होता है।

फसल चार महीने में पक कर तैयार हो जाती है, तब इसकी कटाई प्रायः सुबह के समय, पौधे को जड़ समेत उखाड़ कर की जाती है जब उसमें ओस जमी होती है। अपने को कांटों से चुभने से बचाने के लिए मजदूर अक्सर अपने हाथ पैरों को इस काम के लिए कपड़े आदि से ढक लेते हैं। पौधों की ढेरी बनाकर कुछ दिनों तक सूखने के लिए खुला छोड़ दिया जाता है, फिर उसे लाठियों से कूटा जाता है। इसके बाद बीजों को साफ कर उसे ओसारा जाता है। सूखे तनों और पत्तियों को ईंधन के काम लाया जाता है या फिर खेत में ही जला दिया जाता है। कभी-कभी इन्हें गढ्ढे में डालकर कम्पोस्ट खाद भी बनाई जाती है।

तेल का निष्कर्षण

विवल्कीकृत (decorticated) बीज से बेहतर गुणवत्ता का तेल और खली मिलते हैं। बीज को ''घणी'' या कोल्हू में पीसकर या तप्त शुष्क आसवन विधि से निकाला जाता है। व्यावसायिक उत्पादन के लिए हाइड्रॉलिक प्रेस और एक्सपेलर और सॉल्वेंट एक्स्ट्रैक्शन (विलाकर निष्कर्षण) विधियों से तेल निकाला जाता है।

तेल का रासायनिक संघटन

इस तेल के घटक वसा अम्ल इस प्रकार हैं: माइरिस्टिक एसिड 1.5 प्रतिशत, स्टीएरिक एसिड 1 प्रतिशत, ऐरेकिडिक अम्ल 0.5 प्रतिशत, अलोइक अम्ल 33 प्रतिशत, और लीनोलीइक इम्ल 61 प्रतिशत। तेल की मात्रा 20-30 प्रतिशत होती है।

प्रजनन

संवर्धित कुसुंभ निकट संबंधी द्विगुणितों (2x = 24) से संबंध रखता है जिसका विस्तार पश्चिम में तुर्की, लेबनॉन और इस्राइल से लेकर पूर्व में उत्तर पूर्व भारत तक है। इसके दो सफल अपतृण प्रजातियां *कार्थैमस फ्लैवेसैन्स* और *कार्थैमस ऑक्सीकैन्था* है। *का. फ्लैवेसैन्स* एक स्व-अनिषेच्य और *का. ऑक्सीकैन्था* एक मिश्र यानी स्व-निषेच्य और अनिषेच्य प्रजाति है। इस फसल का विकास कीटों के प्रकोप के कारण अवरुद्ध हुआ है क्योंकि कई कीट कुसुंभ की अपतृण प्रजातियों समेत अन्य कम्पोजिटी पौधों पर जीवित रहने के लिए अनुकूलित होते हैं। इनमें सबसे विकट कीट कुसुंभ मक्खी (*ऐकैन्थियोफिलस हेलिएन्थी*) है। भारत के दक्षिणी भूभागों में कुसुंभ क्रो कीटों से क्षति नहीं हो पाती क्योंकि वहां एकांतरी परपोषी प्रचुर मात्रा में नहीं हैं या फिर कुसुंभ की फसल जल्दी पक जाती है जिससे उसे कीटों से कोई नुकसान नही हो पाता।

इसके प्रजनन कार्यक्रमों में रोग-रोधी किस्मों के विकास के बड़े प्रयास किए जा रहे हैं। इसकी ऐसी कृष्णेपजातियां विकसित कर ली गई हैं जिन पर *फ्यूसेरियम ऑक्सीस्पोरम, फ्यू. कार्थेमी,* और *वर्टिसिलियम एल्बोएट्रम* के कारण होने वाली म्लानि (मुरझाना) तथा *पक्सिनिया कार्थेमी* के कारण होने वाले किट्ट रोग का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। सभी प्रजनन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य रोग-रोधी किस्मों और उच्च तेल मात्रा वाली किस्मों का विकास करना है जिनमें तेल की मात्रा 50 प्रतिशत से अधिक हो। इसके लिए इनमें रेशा की मात्रा कम और प्रोटीन क जगह तेल की मात्रा बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है।

उपयोग

करडी या कुसुभ के तेल के कई उपयोग हैं:

1. शीत दाब निष्पीड़न से सुनहरे पीले रंग का तेल बनता है जिसे खाने के काम लाय जाता है।
2. कुसुंभ के तेल को परिष्कृत, विरंजित और हाइड्रोजनीकरण कर एक रिफाइंड खाद्यतेल बनाया जाता है।
3. इसके जल्दी सूखने के गुण के कारण इसे पेंट, वार्निश और लिनोलियम के निर्माण में काम लाया जाता है।

4. इसे रोशनी जलाने और साबुन बनाने के काम भी लाया जाता है।
5. जला हुआ करडी या कुसुम तेल छालों के उपचार और गठिया (या जोड़ों के दर्द) में मालिश के काम आता है।
6. प्रोटीन से भरपूर खली पशु आहार के काम आती है।

15.3.4 नारियल

वानस्पतिक नाम : ***कोकॉस न्यूसिफेरा***
कुल : ऐरेकेसी
प्रचलित नाम : कोकोनट, नारियल
n = 16

नारियल का पेड़ (चित्र 15.5) वनस्पति तेल का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। इसे चमत्कारिक पेड़ या कल्पवृक्ष की संज्ञा दी जाती है क्योंकि इससे अनेक उत्पाद मिलते हैं। असल में इस पौधे के सभी भाग किसी न किसी तरह से उपयोगी हैं। लेकिन इनमें सूखी गुठली, जिसे आम तौर पर कोपरा कहा जाता है, सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

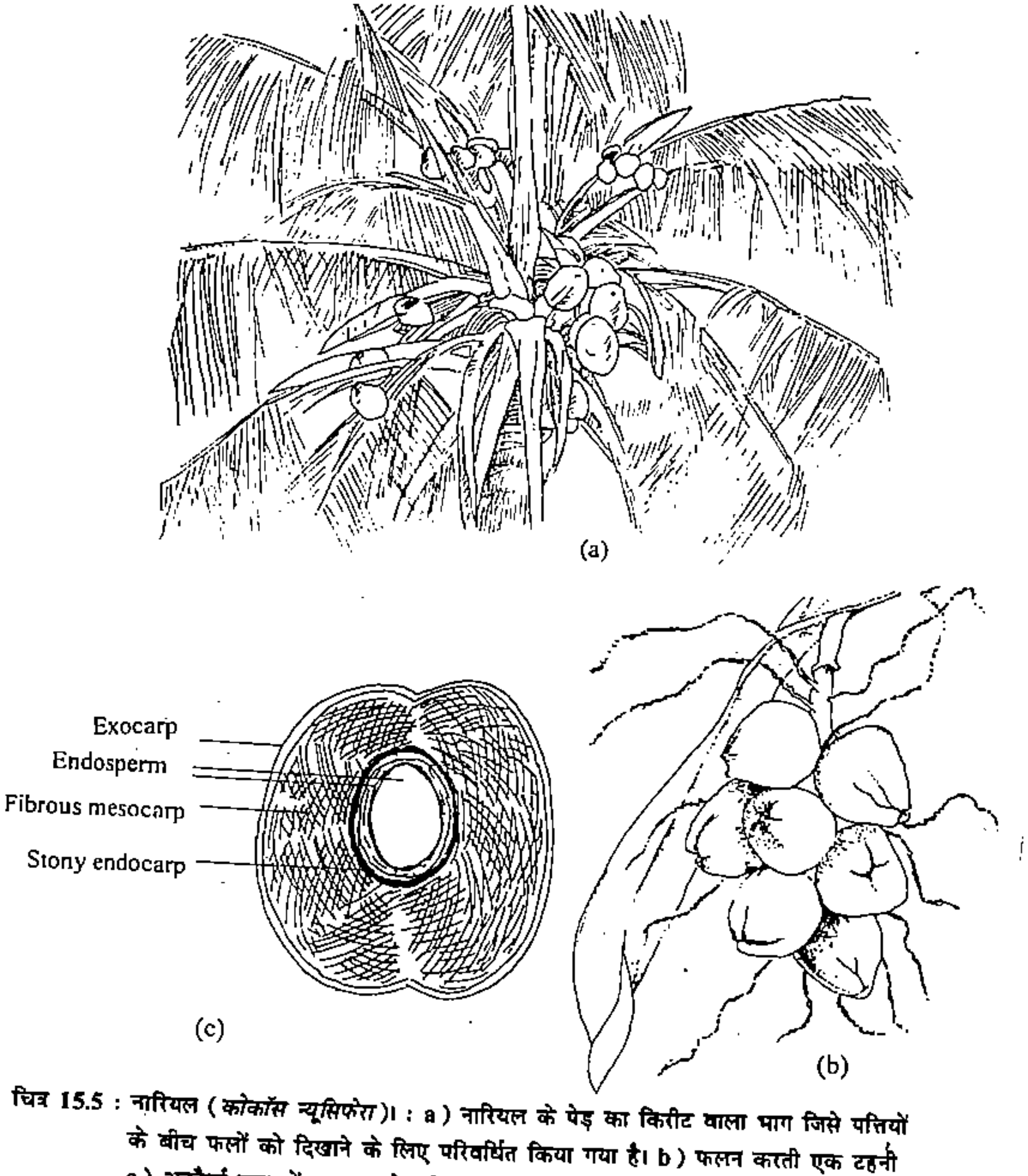

चित्र 15.5 : नारियल (*कोकॉस न्यूसिफेरा*)। : a) नारियल के पेड़ का किरीट वाला भाग जिसे पत्तियों के बीच फलों को दिखाने के लिए परिवर्धित किया गया है। b) फलन करती एक टहनी c) अनुदैर्ध्य काट में फल का रेखाचित्र।

तेल का निष्पीड़न

कोपरा या गरी के उत्पादन के लिए पूरी तरह से पके फलों (11 से 12 महीने के) को तोड़ा जाता है जिससे बेहतर गुणवत्ता का तेल ईष्टतम मात्रा में मिलता है। कोपरा नारियल का सूखा गूदा (बीजपोष) है। नारियल की जटा के उत्पादन के लिए दृढ़फलों (नट) को 10 महीने में तोड़ लिया जाता है। नारियल पानी के लिए इन्हें इससे पहले प्राय: सात महीने के आसपास तोड़ा जाता है। इन फलों को स्टील के बने सीधे संगीननुमा औजार से छीला जाता है जो लकड़ी के दस्ते पर जड़ा होता है। छिले नारियल को एक धारदार औजार की तेज चोट से दो फाड़ कर दिया जाता है। गरी या बीजपोष को खोल से निकालकर उसे धूप या कृत्रिम ताप में सुखाया जाता है। गरी के सूखने के लिए सबसे जरूरी है कि कच्चे नम गूदे की नमी की मात्रा को, 50 प्रतिशत से 5-6 प्रतिशत तक कम किया जाए। अच्छी क्वालिटी की गरी में 60-65 प्रतिशत तेल और 3-5 प्रतिशत नमी होती है। सूखी गरी को साफ करके अब उसे पिराई की मशीन में पीसा जाता है। देहात में इसकी पिराई 'चेक्कू' से की जाती है। व्यावसायिक स्तर पर बिजली से चलने वाले चेक्कू या रोटरी मिलों, एक्सपेलर और हाइड्रौलिक प्रेसों से इसकी पिराई होती है। आधुनिक औद्योगिक इकाइयों में एक्सपेलर या हाइड्रौलिक प्रेसों से सॉल्वेंट एक्स्ट्रैक्शन प्लांट को जोड़ कर गरी की खली से बचे-खुचे तेल को इष्टतम मात्रा में निकाल लिया जाता है। भारत में नारियल के तेल का उत्पादन चेक्कू में 58-60 प्रतिशत, रोटरी मिल से 62-63 प्रतिशत और एक्सपेलर मशीनों से 63-65 प्रतिशत तक मिल जाता है।

तेल का परिष्करण

पिराई के प्रक्रम से प्राप्त नारियल तेल में मुक्त वसा अम्ल और कई तरह की अशुद्धियां पाई जाती हैं। इसलिए इसे उपयोग में लाने से पहले इसका परिष्कार किया जाता है। परिष्करण के लिए इसे क्षार (कॉस्टिक सोडा) से संसाधित किया जाता है जो मुक्त वसा अम्लों को निष्क्रिय कर देता है। इस प्रक्रम से जो साबुन बनता है उसे गर्म पानी से धोकर साफ कर दिया जाता है और अब उसमें मौजूद नमी को निर्वात में तेल को गरम करके हटा लिया जाता है। अंत में तेल को मुलतानी मिट्टी और सक्रियित कार्बन के साथ संसाधित कर और फिर उस पर से अतितृप्त भाप प्रवाहित कर तेल को रंगहीन और गंधहीन बना दिया जाता है। इस तरह बना तेल पानी की तरह रंगहीन और गंधहीन होता है और यह मानव उपभोग के लिए सर्वथा उपयुक्त है।

तेल का रासायनिक संघटन

कोपरा या गरी में तेल की मात्रा 55 से 65 प्रतिशत के बीच होती है। नारियल तेल के मुख्य वसा अम्ल घटक हैं- लौरिक अम्ल 44-51 प्रतिशत; माइरिस्टिक अम्ल 13.1-18.5 प्रतिशत; पामिटिक अम्ल 7.5-10.5 प्रतिशत; कैप्रिक अम्ल 4.5-9.7 प्रतिशत; स्टीएरिक अम्ल 3.2 प्रतिशत; एरैकिडिक अम्ल 0-1.5 प्रतिशत; ओलीक अम्ल 5.0-8.2 प्रतिशत; और लीनोलीइक अम्ल 1.0-2.6 प्रतिशत। इनमें आखिरी के दो असंतृप्त वसा अम्लों की मात्रा सकल वसा अम्ल घटक का सिर्फ 9.0 प्रतिशत होती है। नारियल तेल 24° से. से नीचे के तापमान पर सफेद से हल्का पीला ठोस वसा होता है। उच्च तापमान में यह एक रंगहीन या हल्के पीले रंग के तेल में परिवर्तित हो जाता है।

उपयोग

नारियल तेल एक महत्वपूर्ण वनस्पति वसा है जिसके कई उपयोग हैं। इसके मुख्य उपयोग निम्नलिखित हैं।

1. रिफाइन्ड या परिष्कृत तेल खाने योग्य होता है और इसे दक्षिण भारतीय खाना बनाने के काम खूब लाते हैं। इसे मारजरीन कैंडी बार और कनफेक्शनरी बनाने के लिए भी प्रयोग किया जाता है।
2. तेल शरीर के मालिश करने के लिए और घर में रोशनी जलाने के काम भी आता है।
3. नारियल तेल एक लोकप्रिय केश तेल है। यह कई प्रकार के सौंदर्य प्रसाधनों जैसे साबुन, शेविंग क्रीम, शेम्पू, फेस क्रीम इत्यादि के निर्माण में आधार तेल के रूप में काम आता है।
4. इसका हाइड्रोजनीकरण कर वनस्पति घी भी बनाया जाता है।

5. इसमें लौरिक और माइरिस्टिक अम्ल की मात्रा अधिक होने के कारण इस तेल का अति उच्च साबुनीकरण मान है। इसे नहाने में काम लाया जाता है और इस तेल से बने साबुन कठोर और खारे पानी में भी अच्छा झाग देते हैं।

6. इसकी खली एक उत्तम पशु आहार है।

15.3.5 बिनौला

वानस्पतिक नाम : ***गॉसिपियम प्रजाति***
कुल : मालवेसी
प्रचलित नाम : बनौला, कपास
n = 13

बिनौले का तेल *गॉसीपियम* (कपास) की विभिन्न जातियों के बीजों से निकाला जाता है जिन्हें मुख्यत: उनके रेशे के लिए उगाया जाता है। कपास के पौधे के बारे में इकाई-20 में विस्तार से बताया गया है। इसलिए यहां हम तेल के स्रोत के रूप में उसके बीज पर ही अपनी चर्चा केन्द्रित करेंगे। जिन से निकले बिनौले के बीज (चित्र 15.6) के तीन मुख्य भाग हैं:

(क) छोटे रेशों का एक मोटा आवरण बनाने वाले रोएं या लिंटर जो बीज को सफेद या धूसरी रंग देते हैं; (ख) बीजचोल या एक कठोर आवरण, जो संपूर्ण बीज का 35-40 प्रतिशत होता है और (ग) लंबे मूलांकर और संवलित बीजपत्रों युक्त भ्रूण, जो एक पतली कागजी झिल्ली (परिभ्रूणपोष या पेरीस्पर्म) से संवेशित होता है। रोएं को हटाने के बाद बीज गहरे भूरे या लगभग काले रंग और नुकीले, अंडाकार होते हैं। हाइलम (नाभिका) और बीजांड द्वार बीज के नुकीले सिरे पर होते हैं, जबकि वृंत को संलगन बिंदु दूसरे छोर पर एक तरफ स्थित होता है।

रैफी का संकेत बीज के नुकीले सिर पर एक हलके से कटक (रिज) से मिलता है। गुठली की चितकबरी बनावट अनेक सूक्ष्म काले रंग की वर्णक ग्रंथियों के कारण होती है। इन वर्णक ग्रंथियों में गॉसिपॉल मौजूद होता है (1-2 प्रतिशत)। यह एक पॉलिफिनोलिक पदार्थ है जो सूअर और मुर्गियों के लिए विषाक्त होता लेकिन पशुओं के लिए नहीं। इसके अलावा इन ग्रंथियों में गॅसिर्पप्यूरिन, गॉसिफ्लविन और गॉसिसीरूलिन भी पाए जाते हैं। सौभाग्यवश बिनौले के ग्रंथिल कृषोपजातियों में पाया जाने वाला गॉसिपॉल संसाधन के दौरान प्रभावहीन हो जाता है क्योंकि यह प्रोटीन के साथ जुड़कर ऐसे पदार्थ बनाता है जिनका स्वांगीकरण नहीं हो सकता है। बिनौले की ऐसी किस्में विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है जिनमें गॉसिपॉल ना हो।

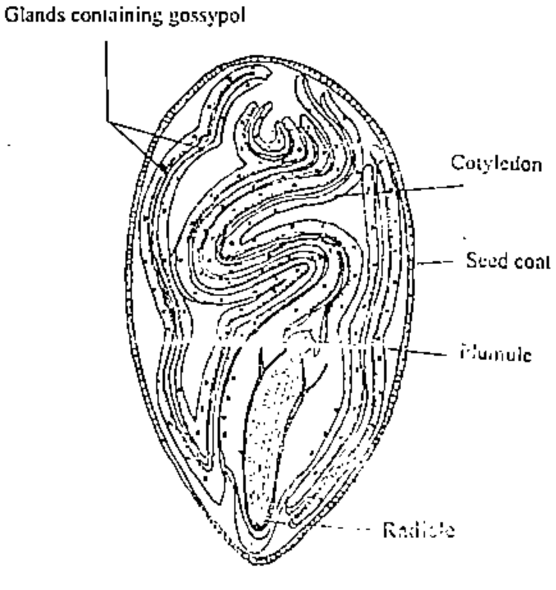

चित्र 15.6 : अनुदैर्ध्य काट में बिनौले का बीज जिसमें अनेक गॉसिपॉल ग्रंथियां दिखाई दे रही हैं। बीजपत्रों के जटिल वलनों को गौर से देखिए। पुनःचित्रित : सिम्पसन और ओगरज़ाली, 1986 से।

तेल का निष्कर्षण

बीज दानों को अच्छी तरह से साफ कर लेने और उन पर से लिंटर व अशुद्धियां हटा लेने के बाद उन्हें पीसकर, गरम किया जाता है और फिर उनसे तेल निकालने के लिए हाइड्रोलिक दाब या एक्सपेलर विधि अपनाई जाती है। तेल को निःसादी (सैटलिंग) टैंक में प्रवाहित किया जाता है, जहाँ उसमें मौजूद अशुद्धियां नीचे बैठ जाती हैं और इस तरह शुद्ध परिष्कृत तेल निकाल लिया जाता है।

तेल का रासायनिक संघटन

कपास के बीजों में तेल और प्रोटीन की मात्रा इसकी किस्म और कृषि-जलवायु स्थितियों के अनुसार अलग-अलग पाई जाती है। भारत में उगने वाले बिनौले में तेल की औसत मात्रा 18.5 प्रतिशत होती है। बिनौले के तेल का वसा संघटन इस प्रकार पाया जाता है: लिनोलीइक अम्ल 40-55 प्रतिशत; पामिटिक अम्ल 20-25 प्रतिशत; ओलीइक अम्ल 18.3 प्रतिशत; स्टीएरिक अम्ल 2 से 7 प्रतिशत और थोड़ी-थोड़ी मात्रा में माइरिसिटक व ऐरैकिडिक अम्ल। बिनौले के तेल में 0.9 प्रतिशत टोकोफेरॉल यानि विटामिन ई भी पाया जाता है जिसे प्रति-ऑक्सीकारक प्रभाव के लिए जाना जाता है और यह तेल की गुणवत्ता को बनाए रखता है।

उपयोग

1. शुद्ध परिष्कृत तेल खाना पकाने, मारजरीन बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण तेल है। इसे सलाद तेल के रूप में प्रयोग किया जाता है।

2. इसके निम्न कोटि या ग्रेड के तेल का प्रयोग साबुन, स्नेहक (लुब्रिकेन्ट), सल्फोनेटित तेलों और सुरक्षा आवरण (प्रोटेक्टिव कोटिंग) के निर्माण के लिए होता है।

3. बिनौले के तेल के परिष्करण के दौरान प्राप्त होने वाला उपोत्पाद (मील) का, साबुन, कपड़े धोने के पावडर, मोमजामा, कृत्रिम चमड़ा, ताप/विद्युत रोधी (इंसुलेटिंग) पदार्थ, टार, पुटी, ग्लिसरीन इत्यादि उद्योगों में प्रयोग किया जाता है।

4. बिनौले की खली को खाद और पशु आहार के रूप में प्रयोग किया जाता है। भारत में इसके संपूर्ण बीज को भी दुधारू पशुओं को खिलाया जाता है।

5. औषधि में बिनौले के तेल का प्रयोग एक प्रशाकमक के रूप में किया जाता है। बिनौले के परिष्कित तेल को स्टीरॉइड हार्मोन इंजेक्शन बनाने के लिए एक विलायक रूप में काम लाया जाता है।

15.3.6 सोयाबीन

वानस्पतिक नाम : *ग्लाइसीन मैक्स*
कुल : फैबेसी
उपकुल : पैपिलियोनॉइडी
प्रचलित नाम : सोयाबीन, भट, रामकुर्थी
n = 20

चीन के प्राचीन साहित्य से पता चलता है कि वहां इसकी सघन खेती होती थी और भोजन पदार्थ के रूप में इसे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। इसके पौधे के विषय में पहला लिखित अभिलेख 2800 ई. पूर्व के चीनी साहित्य में मिलता है जिसमें इसे पांच मुख्य और पवित्र फसलों में माना गया है। प्राचीन काल से ही यह चीन, मंचूरिया, कोरिया और

जापान का एक महत्वपूर्ण खाद्य पादप रहा है जिसे फ्रेंच मिशनरी 1740 में यूरोप ले गए थे। संयुक्त राज्य अमेरिका में इसका आगमन 1804 में हुआ मगर इसे वहाँ कोई महत्व नहीं मिला। इसके महत्व और संभावनाओं का पता कमोबेश कुछ समय पहले ही हुआ है और तब से इसकी खेती बहुत बड़े पैमाने पर होने लगी है। वर्तमान में अपने पोषण महत्व के कारण शिंबी फसलों में इसका ऊँचा स्थान इस कारण रहा है क्योंकि इसमें प्रोटीन की मात्रा 43 प्रतिशत और तेल की मात्रा 20 प्रतिशत पाई जाती है। सोयाबीन एक बहुपयोगी पौधा है, इसी कारण इसे ''चमत्कारिक फली'' भी कहा जाता है।

सोयाबीन के बारे में हम आपको इकाई-12, शिंब (दालें) में विस्तार से बता चुके हैं (चित्र 15.7 देखिए)। इस इकाई में इसके बीज के रासायनिक संघटन, तेल का निष्कर्षण और सोयाबीन तेल के उपयोगों के बारे में बताएंगे।

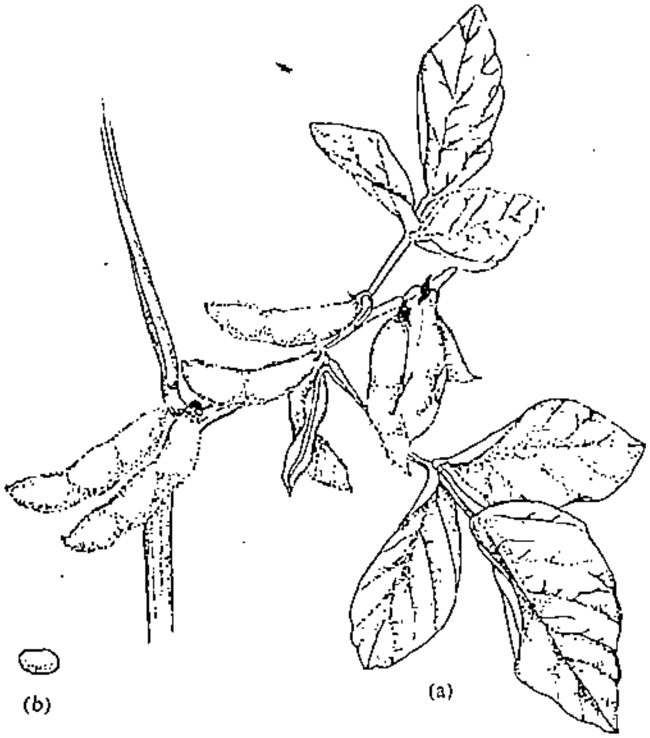

चित्र 15.7 : सोयाबीन (*ग्लाइसीन मैक्स*)। a) फली सहित एक टहनी। b) बीज। (पुनःचित्रितः लैंगर और हिल, 1991 से।

बीज का रासायनिक संघटन

सोयाबीन एक तैलोत्पादकी (oleaginous) बीज है, जिसमें लिपिड, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और खनिज पाए जाते हैं। काले रंग के बीज वाली किस्में जिन्हें प्रचलित भाषा में भट भी कहा जाता है, में प्रोटीन सभी दालों, फलियों से अधिक और तेल की मात्रा कम होती है। पीले रंग के बीज वाली किस्मों में तेल की मात्रा अधिक मगर प्रोटीन की मात्रा कम होती है। सोयाबीन के कच्चे तेल में 90-95 प्रतिशत वसा अम्ल, ग्लिसराइड और फॉस्फेटाइड के कुछ घटक, स्टेरॉल, टोकोफेरॉल (विटामिन ई), वर्णक इत्यादि पाए जाते हैं। तेल के वसा अम्ल घटक इस प्रकार हैं: ओलीक अम्ल 23-24 प्रतिशत; लीनोलीइक अम्ल 52-60 प्रतिशत; पामिटिक अम्ल 7-14 प्रतिशत; स्टीएरि[illegible] अम्ल 2-6 प्रतिशत; लीनोलीनिक अम्ल 3.0 प्रतिशत और उच्च संतृप्त अम्[illegible].0 प्रतिश[illegible] [illegible] बीन [illegible] जेनिस्टिन, डायड्जिन नामक ग्लाइकोसाइड और सैपोनिन होते हैं। इसके [illegible]टीन का [illegible] घटक ग्लोबुलिन (ग्लाइसिनिन) है जिसकी मात्रा लगभग 80-90 प्रतिशत होती है। इसके अलावा फैसियोलिन नामक एक अन्य ग्लोबुलिन और लेग्यूमेलिन नामक एक एल्बुमिन भी इसमें पाए जाते हैं। सोयाबीन के बीज कैल्सियम, लौह जैसे आवश्यक खनिजों और विटामिनों विशेषकर बी-काम्प्लेक्स के अच्छे स्रोत हैं। इनके अलावा इनमें फॉस्फोरस, पोटेशियम,

कॉपर और सोडियम, मैग्नीशियम, सल्फर, फ्लोरीन, आयोडीन, मैंग्नीज, जिंक और एलुमिनियम भी पाए जाते हैं।

तेल का निष्कर्षण

सोयाबीन तेल एक्सप्रेशन (निष्पीड़न) या सॉल्वेंट एक्स्ट्रैक्शन से निकाला जाता है। तेल का रंग संसाधन प्रक्रम और बीज की किस्म के अनुसार पीले से गहरे कहरूए रंग का होता है। सोयाबीन के तेल में एक विशिष्ट सेमी गंध मिलती है जिसे परिष्करण और निर्गन्धीकरण के द्वारा दूर कर लिया जाता है।

उपयोग

1. परिष्कृत तेल का प्रयोग भोजन के लिए विशेषकर खाना बनाने के तेल, सलाद तेल और मारजरीन बनाने के लिए होता है।
2. सोयाबीन तेल का प्रयोग सारडीन, ट्यूना और अन्य प्रकार की मछलियों के डिब्बा बंद करने के लिए किया जाता है।
3. इसका प्रयोग साबुन, ग्लिसरीन, छापे की स्याही, ग्रीस, लुब्रिकेन्ट (स्नेहक), रेजिन, कीटनाशक, डिसइन्फेक्टेंट (रोगाणुनाशक) और लैदर ड्रैसिंग इत्यादि अनेक पदार्थों के निर्माण में होता है।
4. पेंट, वार्निश और एनामेल उद्योगों में काम आने वाले सूखने वाले तेलों के साथ इस तेल को मिलाया जाता है।
5. सोय लैसिथिन, जो कि वनस्पति तेल उद्योग का एक महत्वपूर्ण उपोत्पाद है, जिसे भोजन उद्योग में एक पायसीकारक (इमल्सीकारक) के रूप में और कॉस्मेटिक्स (सौंदर्य प्रसाधनों), औषधियों और प्लास्टिक उद्योगों में भी प्रयोग किया जाता है।
6. सोया मील जो कि तेल की पिराई के बाद बच जाता है, वह पशुओं, सूअर और मुर्गियों के लिए प्रोटीन से भरपूर आहार है।

15.3.7 सूरजमुखी

वानस्पतिक नाम : ***हैलिएंथस एनुअस***
कुल : एस्टरेसी
प्रचलित नाम : सूरजमुखी
n = 17

विश्व में वनस्पति तेल के महत्वपूर्ण स्रोतों में सोयाबीन, मूंगफली और बिनौले के बाद चौथे स्थान पर सूरजमुखी है। सूरजमुखी की आधुनिक व्यावसायिक किस्म की उत्पत्ति पेरू या मेक्सिको में हुई, ऐसा माना जाता है। सोलहवीं सदी में इसे यूरोप लाने का श्रेय स्पेनवासियों को जाता है। स्पेन में इसकी खेती आरंभ होने के बाद, यह 1625 में बावेरिया में, यूरोप में 1787 में, और फिर हंगरी, रूस और यूरोप के अन्य भागों में फैला। सूरजमुखी के सबसे बड़े उत्पादक देश रूस, अर्जेन्टीना, रोमानिया, संयुक्त राज्य अमेरिका और तुर्की हैं जिनमें इसकी बड़े पैमाने पर खेती होती है। भारत में एक तेल उत्पादक पादप के रूप में सूरजमुखी की उपयोगिता को देरी से पहचाना गया है। इसे कर्नाटक, महाराष्ट्र आन्ध्र प्रदेश, तमिलनॉडू और उत्तर प्रदेश में उगाया जाता है।

सूरजमुखी एक खुरदुरा, लंबा, वार्षिक पौधा है (चित्र 15.8 देखें)। इसका तना काष्ठीय होता है जो खुरदुरे रोमों से ढका रहता है। यह 0.6 से 4.5 मी. तक ऊँचा होता है। पत्तियां बड़ी, अंडाकार या हृदयकार, गहरी-हरी होती है जो एकांतर में उत्पन्न होती हैं। **पुष्पक्रम** मुंडिका या मुंडक नुमा होता है, जो कि पौधे के ऊपरी अंतिम सिरे पर स्थित रहता है। इसमें दो प्रकार के पुष्पक पाए जाते हैं- **नलिकाकार बिम्ब पुष्पक (टयुबुलर डिस्क फ्लोरेट)** और **जीभिकाकार रश्मि पुष्पक (लिगुलेट रे फ्लोरेट)**। **नलिकाकार बिम्ब पुष्पक**

उभयलिंगी और जीभिकाकार रश्मि पुष्पक स्त्रीकेसरी होते हैं। अंडाशय अधोवर्ती, एकल बीजांडयुक्त होता है। पुष्प मुंडक कीट परागण के लिए अति अनुकूलित होते हैं। इसका फल एकल बीजधारी ऐकीन है, जो वायु प्रकीर्णन के लिए रोम गुच्छ युक्त होता है।

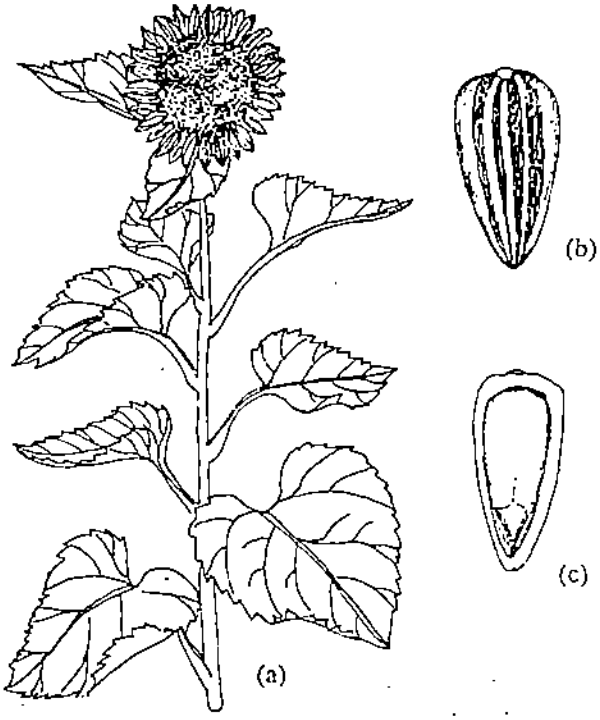

चित्र 15.8 : सूरजमुखी, (*हैलिएंथस एनुअस*)। a) एक पुष्पी प्ररोह जो एक अकेला बड़ा फूल लिए है। b) और c) क्रमशः पृष्ठ दृश्य और अनुदैर्ध्य काट में बीज।

खेती और कटाई

सूरजमुखी को क्षारीय मिट्टी से लेकर बलुई, किसी भी किस्म की मिट्टी में उगाया जा सकता है। लेकिन इसकी खेती के लिए अम्लीय मिट्टी उपयुक्त नहीं है। इसकी खेती वर्षा-पोषित या सिंचित, मिश्र या शुद्ध फसल के रूप में की जा सकती है। इसे ह्यूमस खूब भाती है जो कॉम्पोस्ट का गोबर की खाद से मिल जाती है। बीज बोने से पहले एनपीके (NPK) खाद मिट्टी में मिलाई जाती है। उसमें हरी खाद (green manure) भी मिलाई जाती है। खेत की हल्की जुताई करने के बाद उसमें हाथों से बीज की बोआई की जा सकती है।

एक वर्ष में सूरजमुखी की तीन फसलें प्राप्त करना संभव है और हर सीजन में प्रति हैक्टेयर 20-25 कुंतल की औसत पैदावार पाई जा सकती है। सूरजमुखी एक दिवस निरपेक्ष पादप है। इस विशेषता के कारण सूरजमुखी को किसी भी तरह के फसल चक्रण में शामिल किया जा सकता है और ऑफ सीजन (यानि जिस मौसम में खेती नहीं की जाती) में भी भूमि का सदुपयोग हो जाता है।

फसल के पक जाने पर उसके वृंतों को जमीन से लगभग 3 इंच ऊपर से काटा जाता है और उन्हें खेत में सुखाया जाता है। अगर शुष्कन स्थितियां अच्छी हों तो फूलों के मुंडों से नमी तेजी से सूख जाती है। कम मात्रा में उगाई गई फसलों में हाथ से ही कुटाई की जाती है। बीजों को फर्श पर, हवादार जगह में सुखाकर ओसारा जाता है।

तेल का रासायनिक संघटन

सूरजमुखी के बीजों में 50-60 प्रतिशत लीनोलीइक अम्ल और 25-30 प्रतिशत ओलीक अम्ल पाया जाता है। ठंडे शीतोष्ण जलवायु में 70 प्रतिशत लीनोलीइक अम्ल और 15 प्रतिशत ओलीक अम्ल, लेकिन गर्म उपोष्ण जलवायु में लीनोलीइक अम्ल 20 प्रतिशत और

ओलीक अम्ल 65 प्रतिशत पाया जाता है। इसमें अर्ध-शुष्कन तेल की मात्रा प्राय: 32-45 प्रतिशत रहती है। तेल तप्त या शीत निष्पीड़न दोनों ही विधियों के द्वारा निकाला जाता है।

सूरजमुखी का ताजा परिष्कृत प्रथम ग्रेड का तेल हल्के पीले रंग का और एक अच्छी गंध व सुवास लिए रहता है। हालांकि दूसरी पिराई से निकले तेल को विभिन्न औद्योगिक उत्पादों के निर्माण कार्यों के लिए रखा जाता है और इसका रंग गहरा होता है।

उपयोग

1. इसका तेल भोजन बनाने के काम आता है। यह एक बेहद अच्छा सलाद तेल है और मारजरीन में प्रयोग होता है।
2. इसमें वसा अल्प मात्रा में पाई जाती है जिस विशेषता के कारण यह हृदय रोगियों के लिए एक आदर्श खाने का तेल है क्योंकि इसके सेवन से रक्त में कोलेस्ट्रॉल का स्तर बढ़ता नहीं।
3. वनस्पति घी के निर्माण में सूरजमुखी के तेल को मूंगफली के तेल की जगह काम लाया जा सकता है।
4. सूरजमुखी के तेल के कई व्यावसायिक उपयोग हैं जैसे कि उत्तम कोटि के पेंट, साबुन और सौंदर्य प्रसाधन के सामान इत्यादि के निर्माण में। पेंट में तेल के रूप में इसकी अधिक उपयोगिता है क्योंकि यह 26 घंटे में सूख जाता है, जबकि अलसी का तेल सूखने में 34 घंटे लेता है।
5. इसके बीज जाड़े के मौसम में एक बेहतर मुर्गी आहार है।
6. इसकी खली पशुआहार के काम आती है।

15.3.8 अलसी

वनस्पतिक नाम : *लाइनम यूसीटैटीसिमम*
कुल : लाइनेसी
प्रचलित नाम : अलसी
n = 15

अलसी की खेती प्राचीन काल से ही रेशे के उत्पादन के लिए की जाती रही है। इसके पौधे से व्यावसायिक महत्व का तेल भी उत्पन्न होता है। विश्व के उष्ण और शीतोष्ण-भूभागों में इसकी बड़े पैमाने पर खेती होती है। गर्म शुष्क भागों में इसकी खेती तेल उत्पादन, तो शीतोष्ण भागों में उच्च कोटि के रेशे (फाइबर) के उत्पादन के लिए की जाती है। रेशे के उत्पादन के लिए उगाई जाने वाली किस्में प्राय: तिलहन उत्पादन के लिए उगाई जाने वाली किस्मों से भिन्न होती हैं।

इसकी खेती के प्राचीनतम क्षेत्र और विविधता के केन्द्र के अनुसार इसके दो मुख्य भौगोलिक समूह हैं। अलसी की खेती अनादि काल से भूमध्यसागर के तटीय प्रदेशों, एशिया माइनर, मिस्र, अल्जीरिया, स्पेन, इटली और यूनान में की जाती रही है। इन सभी प्रदेशों में अधिकतर रेशे (सन) के लिए ही अलसी की खेती होती है। दूसरे भौगोलिक समूह में भारत और अफगानिस्तान समेत दक्षिण-पश्चिम एशिया के भूभाग आते हैं जहां इसकी खेती सिर्फ तेल के लिए होती है। एशिया माइनर और दक्षिणी रूस में अलसी की संक्रामी किस्मों की खेती की जाती है जिनसे सन और तेल दोनों ही प्राप्त किए जाते हैं। वर्तमान में अलसी की खेती पूर्ववर्ती सोवियत संघ, भारत, पाकिस्तान, चीन, जापान, ऑस्ट्रेलिया, अर्जेन्टीना, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में की जाती है। भारत में अग्रणी अलसी उत्पादक राज्य मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, बिहार, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा हैं।

अलसी के पौधे वार्षिक, शाकीय, बेलनाकार सीधे तने युक्त होते हैं। तना नीचे से सरल, 0.6-1.2 मीटर तक लंबा, ऊपर की तरफ से अक्सर एकल समशिखरूपी शाखित रहता है (चित्र 15.9 a)। पत्तियां संकीर्ण, रेखीय या भालाकार (lanceolate), अनुपर्णी ग्रंथियों

के बिना होती हैं। पुष्प 2.5 से.मी. व्यास के चौड़े ससीमाक्ष में पाए जाते हैं। बाह्यदल अंडाकार, लंबाग्र, दल (पंखुड़ियां) नीली, वार्तिका विवक्त, वर्तिकाग्र रेखीय-मुद्गराकार होते हैं। फल (चित्र 15.9 b) एक छोटा, अस्फुटनशील, गोलाकार, बहु-कक्षीय कैप्सूल है जो अपाती (दीर्घस्थायी) बाह्यदलपुंज (कैलिक्स) धारण किए रहता है। यह बाह्यदलपुंज पंचअंडपी अंडाशय से विकसित होता है। इसमें 10 कोष्ठक होते हैं और हर कोष्ठक में एक बीज पाया जाता है।

बीज अंडाकार या मसूराकार, 4-6 मि.मी. लंबे और 2 से 3 मि.मी. चौड़े होते हैं। इनमें विशिष्ट तिरछा नुकीला सिरा पाया जाता है जिसमें एक हल्के से गर्त में नाभिका (हाइलम) व बीजाडंद्वार मौजूद रहते हैं। इन बीजों की विशेषता यह है कि ये चिकने और चपटे होते हैं और इनका बीजचोल चमकदार पीले से लाल-भूरे रंग का होता है। और इनमें एक किनारे के समांतर एक सुस्पष्ट रैफी पाया जाता है। गीला होने पर बीजचोल बड़ी मात्रा में श्लेष्मक उत्पन्न करता है। भ्रूणपोष विरल और स्थूलाकार बीजपत्रों को घेरे रहता है।

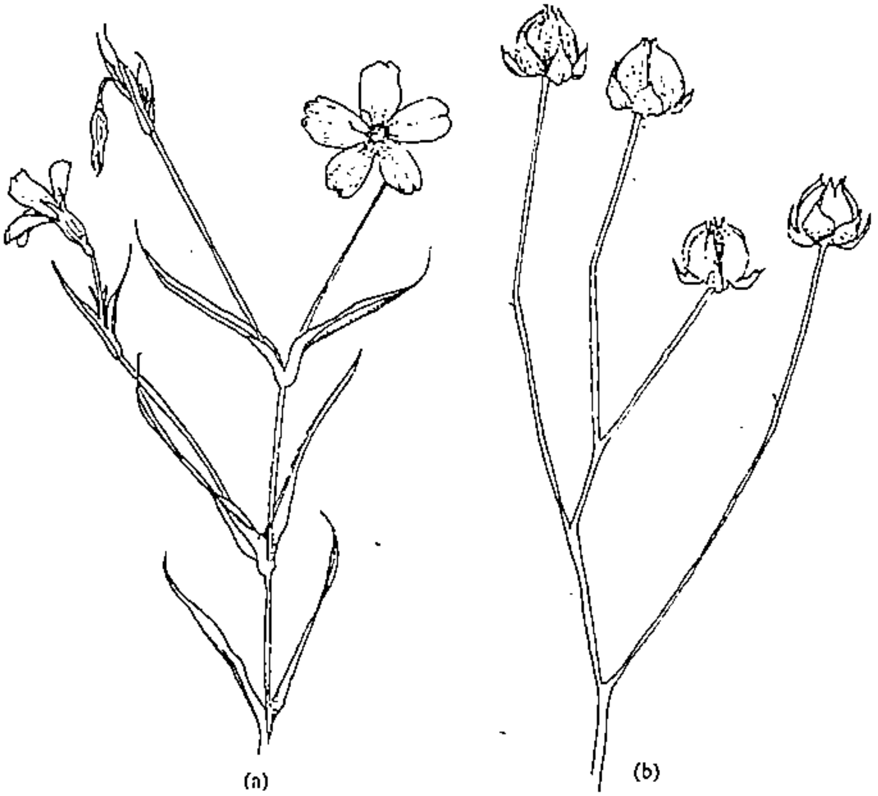

चित्र 15.9 : अलसी, (*लाइनम यूसीटैटीसिमम*)। a) पत्ती और पुष्प सहित एक टहनी। b) पुष्पक्रम का एक भाग जिसमें कैप्सूल दिखाई दे रहे हैं (लैंगर और हिल, 1991 से)।

खेती

भारत में सन एक शीत ऋतु की फसल है। यह दक्षिण के प्रायद्वीपीय भूभाग और उत्तर की जलोढ़ मिट्टी दोनों में समान रूप से उगती है। आम तौर पर जहां वर्षा अधिक होती हो वहां हल्की मिट्टी और जहां वर्षा कम होती हो वहां भारी मिट्टी सन के पौधे के लिए सबसे उत्तम रहती है। यह मुख्यत: एक वर्षापोषित फसल है जिसे वर्ष में 75-175 से.मी. की वर्षा चाहिए। सन संपूर्ण भारत में रबी की फसल है। इसे बोने का समय प्रदेश के अनुसार अलग-अलग है। प्रायद्वीपीय भारत में इसे अक्तूबर के आरंभ में तो उत्तर के गंगा की जलोढ़ मिट्टी में इसे प्राय: नवंबर में बोया जाता है। अलसी को चने, गेहूँ, जौ, सरसों इत्यादि के साथ मिश्र फसल के रूप में उगाया जाता है। ऐसी धारणा प्रचलित है कि सन एक मृदा अशक्तकारी फसल है। कहा जाता है कि इसकी एक के बाद एक फसल उगाने से भूमि की सन उगाने की क्षमता कम हो जाती है। इसलिए इसकी खेती

करने का ज्वार, अरहर, तिल, धनिया, गेहूं, चना और बिनौले के साथ घूर्ण फसल के रूप में चलन है। तिलहन के लिए उगाई जाने वाली किस्में अपेक्षतया छोटी होती हैं और उनके बीच अधिक दूरी पर रखी जाती है जिससे उनमें शाखन अधिक हो और इस प्रकार बीज का उत्पादन भी अधिक हो।

कटाई

अलसी की खेती छः से सात महीने में पककर तैयार हो जाती है। भारत में अलसी की फसल प्रायः फरवरी और मार्च में दो तरह से काटी जाती है- पौधों को जमीन से सटकर दराती से काटा जाता है या फिर उन्हें जड़ सहित उखाड़ लिया जाता है। तिलहन की किस्मों को दराती से काटा जाता है और सन की किस्मों के लिए बाद की विधि अपनायी जाती है। कटाई के बाद फसल को कुछ दिनों तक सूखने के लिए खेतों में ही छोड़ दिया जाता है। इसके बाद उस पर बैलों को चलाकर या लकड़ी के कुंदों से या पैडल से चलने वाली मशीनों या स्टोन रॉलर से उसकी कुटाई की जाती है। इसके बाद इसे बहती हवा में ओसारकर बीज से भूसा अलग कर लिया जाता है। बीज को भूसे से अलग करने के लिए हाथ से चलने वाली ओसारने की मशीन भी इसके लिए काम में लाई जाती है।

तेल का निष्कर्षण

तेल बीज के दो बड़े बीजपत्रों की कोशिकाओं में पीले रंग की गोलिकाओं के रूप में रहता है। तेल की ये गोलिकाएं एल्यूरोन कणों के साथ अंतर्मिश्रित या घुलीमिली होती हैं। बीज में तेल की मात्रा 33 से 43 प्रतिशत के बीच होती है। तेल का निष्पीड़न अधिकतर बैलों से चलने वाली घणियों या कोल्हू से किया जाता है, जिससे बीज में मौजूद सारे तेल को पूरी तरह से नहीं निकल पाता। जिससे खली में तेल का अच्छा खासा भाग बर्बाद चला जाता है। कुछ वर्षों से बिजली से चलने वाली रोटरी घणियों, हाइड्रोलिक प्रेसों और एक्सपेलरों से तेल की पिराई की जाने लगी है। तेल के निष्कर्षण के लिए शीत और तप्त निष्पीड़न विधियां प्रयोग की जाती हैं। क्रशिंग (पिराई) से पहले बीज को पहले मील में पीसकर उसे एक वाष्प जैकेटित द्रोणिका (स्टीम जैकेटेड ट्रफ) में पकाया जाता है।

तेल का रासायनिक संघटन

बीज में तेल की मात्रा अलसी की किस्मों और जलवायु संबंधी स्थितियों के अनुसार अलग-अलग होती है। तेल की मात्रा प्रायः 33-43 प्रतिशत के बीच होती है। तेल को अगर हवा और प्रकाश से बचाया जाए तो लंबे समय तक इसकी गुणवत्ता बनी रहती है। हवा के प्रभाव में आने पर यह तेल एक लचीले ठोस पदार्थ में बदल जाता है जिसे लिनॉक्सिन कहते हैं। अलसी का तेल पीले-भूरे रंग का होता है, जिसकी विशेषता इसें लीनोलिनिक अम्ल की उच्च मात्रा (30-60 प्रतिशत) की उपस्थिति है। इसमें पाए जाने वाले अन्य वसा अम्ल स्टीएरिक और पामिटिक (6-16 प्रतिशत), ओलीक अम्ल (13-36 प्रतिशत), लीनोलीइक अम्ल (10-25 प्रतिशत) हैं। इनके अलावा इसमें माइरिस्टिक ओर ऐरैकिडिक अम्ल भी अल्प मात्रा में पाए जाते हैं। अलसी के कच्चे तेल से 0.25 प्रतिशत फॉस्फेटाइड मिलता है जिसमें लैसीथिन और सिफैलिन होते हैं।

उपयोग

1. सूखने वाला तेल होने के कारण अलसी के तेल का प्रयोग मुख्यतः पेंट और वार्निश उद्योग में होता है। लाख, अलसी के तेल और लाल सीसे के क्रमशः 80:160:12 के अनुपात में बने मिश्रण से सबसे उत्तम कोटि का वार्निश बनता है।

2. इसे लिनोलियम, मोमजामा, छपाई और लिथोग्रैफी में काम आने वाली स्याही और मृदु साबुनों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

3. तेल को लुब्रिकेंट (स्नेहक), ग्रीज और पॉलिशों को बनाने में काम लाया जाता है।

4. अलसी का कच्चा तेल प्रशामक, कफोत्सारक (एक्सपेक्टोरैंट) और मूत्रल (डाइयूरेटिक) के रूप में औषधि बनाने में काम आता है। बीजचोल में उपस्थित श्लेष्मक पदार्थ के जलरागी गुण के कारण इसके पूरे बीज को रेचक (पेट की कब्ज को दूर करने के लिए) के रूप में प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह शरीर के ऊतकों से जल खींच लेता है जिनके संपर्क में यह आता है।

5. जले के घावों पर अलसी के तेल को नींबू के रस के साथ मिलाकर उसका लेप लगाया जाता है।

6. इसकी खली एक उत्तम कार्बनिक खाद है। इसे अन्य अकार्बनिक खादों के साथ मिलाकर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाई जा सकती है।

7. खली स्वादिष्ट, प्रोटीन (30 प्रतिशत) से भरपूर होती है जिसे पशुओं को खिलाया जाता है। लेकिन इसमें कुछ विषाक्त गुण भी होता है जिस कारण इसे पशुओं को कम मात्रा में दिया जाता है। असल में इसके बीज में फैसियोलुनैटिन (लाइनैमैरिन) नामक सायनीजनक ग्लाइकोसाइड उपस्थित रहता है, जिसके कारण ही यह विषैला प्रभाव उत्पन्न होता है। पशुओं में विषाक्तता लाइनेज या लाइनैमैरिन नामक एंजाइम की क्रियाशीलता से उत्पन्न होने वाले हाइड्रोसायनिक अम्ल या प्रूसिक अम्ल के कारण होती है। तप्त निष्पीड़ित विधि द्वारा प्राप्त अलसी की खली से इस तरह का कोई नुकसान नहीं होता है क्योंकि पाकन के दौरान लाइनेज एंजाइम के गुणनाशन के कारण लाइनैमैरिन का जल अपघटन हाइड्रोसायनिक (HCN) में नहीं हो पाता है।

8. अलसी के कच्चे तेल को सीसा, मैंगनीज, कोबाल्ट और जिंक जैसी कुछ विशेष धातुओं के तेल को सुखाने वाले लवणों के साथ 90–100° से. तापमान तक गर्म किया जाता है। इस तरह उबला तेल जल्दी सूखता है और एक चिकनी और चमकदार पपड़ी (फिल्म) बनाता है। ऐसे तेल को पेंट, प्रलाक्ष (लैकर) और वार्निश उद्योग में खूब प्रयोग किया जाता है।

15.3.9 जैतून

वानस्पतिक नाम : ***ओलिया यूरोपिया***
कुल : ओलिएसी
प्रचलित नाम : जैतून
n = 23

जैतून का तेल साधारण जैतून वृक्ष *ओलिया यूरोपिया* के फलों से निकाला जाता है। इस वृक्ष की सैकड़ों कृषोपजातियां हैं जिनमें से कुछ को सिर्फ तेल उत्पादन के लिए ही विकसित किया गया हैं। यह मुख्यत: भूमध्यसागरीय देशों में उगाया जाता है जिनमें स्पेन, इटली, यूनान और पुर्तगाल अग्रणी हैं। उत्तरी भारत में भी जैतून की कुछ खेती होती है। *ओ. यूरोपिया* एक संकीर्ण पत्तियों वाला मरूद्भिद् वृक्ष है जो प्राय: 15.0 से 18.5 मीटर तक ऊँचा होता है। फल एक बीजधारी होता है। फल का रंग पहले हरा और फिर नीला, बैंजनी और लाल और अंत में काले रंग में बदलता है। मध्य फलभित्ति तैलीय होती है और यह एक लंबे भूरे बीज को घेरे रहता है, जिसे अक्सर ''संग्रहगार'' (स्टोर) कहा जाता है।

जैतून का पेड़ सिर्फ ऐसे प्रदेशों में उगता है जहां गर्मी का मौसम शुष्क गर्म और शीत ऋतु में मंद सर्दी पड़ती हो। इस पेड़ के लिए –10° से. से नीचे का तापमान घातक होता है। अच्छे पुष्पन और फलन के लिए 10° से. का माध्य तापमान या उससे नीचे का (ठंडा) तापमान करीब दो महीने तक आवश्यक होता है। उष्ण कटिबंधी प्रदेशों में यह

वृक्ष उगता तो है मगर इसमें फल नहीं लगता। प्राय: जैतून को अर्ध-शुष्क प्रदेशों में उगाया जाता है और इसके लिए हल्की, तथा गहरी मिट्टी उपयुक्त रहती है। कैल्सियमी बलुई दुमट मिट्टी इसकी उपज के लिए सबसे उत्तम है। भूमध्यसागर के सन्निकट की भूमि जैतून की खेती के लिए सबसे उपयुक्त मानी गई है। कटिंग या कलम के जरिए इसे परिवर्धन किया जाता है। इसका पेड़ छ: वर्ष बाद फलने लगता है और उसकी उत्पादकता 50 वर्ष के बाद कम होने लगती है। हरे जैतून के लिए इसके फल जब हल्के पीले रंग (पुआलवर्णी) हो जाएं तो उन्हें हाथ से तोड़ा जाता है। पके जैतून के लिए इन्हें तब तोड़ा जाता है जब ये काले हो जाएं। तेल निकालने के लिए, इसके फलों को यांत्रिक शेकरों की सहायता से इकट्ठा किया जाता है।

तेल का निष्कर्षण

फल में तेल की मात्रा 25 से 60 प्रतिशत के बीच होती है और फल के गूदे में इसकी कम से कम 75 प्रतिशत मात्रा मौजूद रहती है। इसकी गुठली में 12-28 प्रतिशत तेल रहता है। फल गूदेदार होने के कारण गूदे को हाथ या मशीन से निचोड़ कर तेल निकाला जाता है। हाथ से निकाला जाने वाला तेल सबसे उत्तम कोटि का होता है जो सुनहरा पीला, साफ और स्वच्छ होता है। हरे रंग और तीखे गंध वाला तेल निम्न कोटि का माना जाता है। तेल का अधिकतम उत्पादन पूर्णत: पके जैतून से मिलता है। मिलिंग या निष्कर्षण की प्रक्रिया में आम तौर पर गुठलियों को गूदे से अलग नहीं किया जाता है। निष्कर्षण कई बार किया जाता है। पहले निष्कर्षण वाला तेल अधिक शुद्ध होता है जिसे परिष्करण के बिना प्रयोग किया जाता है।

तेल का रासायनिक संघटन

जैतून के तेल के वसा अम्ल घटक हैं: ओलीक अम्ल 65 से 86 प्रतिशत; पामिटिक अम्ल 7 से 20 प्रतिशत; लीनोलीइक अम्ल 5 से 15 प्रतिशत; माइरिस्टिक अम्ल 0-1 प्रतिशत; और स्टीएरिक अम्ल 0.3 प्रतिशत।

उपयोग

1. जैतून का तेल सबसे महत्वपूर्ण न-सूखने वाला तेल है। एक खाद्य तेल के रूप में इसे महत्वपूर्ण स्थान इसकी रखाव गुणवत्ता के कारण मिला है। वायु के लंबे समय तक और निरंतर संपर्क में आने पर ही जैतून के तेल में खटास आती है। यूरोपीय देशों में यह खाना बनाने का एक महत्वपूर्ण तेल है और इसे सलाद तेल के रूप में, सार्डीन मछलियों को डिब्बाबंद करने और दवाओं में प्रयोग किया जाता है।
2. निम्न कोटि के तेल का प्रयोग साबुन बनाने और लुब्रिकेंट (स्नेहक) के रूप में होता है।
3. तेल के निष्कर्षण के बाद बचा मील, एक महत्वपूर्ण पशु आहार है और इसे मिट्टी में ह्युमस (खाद) के तौर पर भी प्रयोग किया जाता है।

15.3.10 कैस्टर

वानस्पतिक नाम : ***रिसिनस कम्युनिस***

कुल : यूफोर्बिएसी

प्रचलित नाम : एरंड, अरंड

n = 10

एरंड (चित्र 15.10) यूफोर्बिएसी कुल की एक महत्वपूर्ण तेल फसल है। इसके अनूठे रासायनिक गुणों के कारण यह बहुपयोगी है और यह बड़े औद्योगिक महत्व का तेल है। इसे तेज गति से चलने वाले वायुयान इंजनों के लिए भी सबसे बेहतरीन लुब्रिकेंट (स्नेहक) माना जाता है। इसके अलावा इसे दवा बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। कैस्टर या एरंड की उपोष्ण और उष्णकटिबंधी प्रदेशों में बड़े पैमाने पर प्राय: वार्षिक फसल के रूप में खेती होती है। इसके महत्वपूर्ण उत्पादक देश ब्राजील, भारत और चीन हैं। इसका सबसे बड़ा आयातक देश संयुक्त राज्य अमेरिका है। जिसके बाद फ्रांस और इंग्लैंड का स्थान आता है। भारत में गुजरात सबसे प्रमुख कैस्टर उत्पादक राज्य है उसके बाद आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु और राजस्थान हैं।

रिसिनस एकलप्ररूपी (monotypic) जीनस है। इसकी चार मुख्य उपजातियां हैं: *पर्सिकस, चाइनेन्सिस, एफ्रीकैनस* और *जैंजीबेरिनस।* इनमें से पहली उपजाति को सर्वाधिक उत्पादक माना जाता है और इसमें बीजचोलक (कैरंकल) नहीं पाया जाता है। *चाइनेन्सिस* में एक छोटा और शेष दो में बड़े बीजचोलक होते हैं। वितरण में *रिसिनस* अब एक सार्वउष्ण कटिबंधी (पैनट्रॉपिकल) है। इसकी अपतृणी या पलापनित किस्में खूब मिलती हैं। इसकी उत्पत्ति के विषय में कोई निश्चित जानकारी नहीं है, कुछ इसकी उत्पत्ति भारत में तो कुछ अफ्रीका में मानते हैं। इस फसल के प्रयोग का उल्लेख मिस्र और भारत के प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है। भारत में इसका उल्लेख आर्युविज्ञान की प्रसिद्ध संस्कृत कृति सश्रुता आयुर्वेद में मिलता है। इसलिए संभवत: इसका घरेलूकरण प्राचीन काल में ही हो गया था। यूरोप में इसकी खेती तेरहवीं सदी के बीच में आरंभ हुई। दवा के काम में इसके सेवन की शुरुआत अठरहवीं सदी में हुई। यूरोप में दवा के लिए इसके बीज अधिकतया जमाइका और भारत से ही मंगाए जाते थे।

यह लंबा, अरोमिल, बहुवर्षी पौधा है। अक्सर यह पेड़ जितना बड़ा (9-12 मीटर) हो जाता है, इसमें सुस्पष्ट पर्णसंधियां और पर्ण-स्कार पाए जाते हैं। कुछ ही समय पहले इसकी बौनी किस्में विकसित की गई हैं जो सिर्फ एक से दो मीटर की ऊँचाई तक ही बढ़ती हैं और अपना विकास चक्र 150-180 दिन में पूरा कर लेती हैं। आधुनिक कृषि में इन किस्मों का बड़ा महत्व है। पत्तियां बड़ी, हरी या लाल रंग की, हस्ताकार में पालियुक्त, क्रकचित होती हैं और कमोबेश एकांतर क्रम में बनती हैं (चित्र 15.10a)। कैस्टर या एरंड का पौधा प्राय: उभयलिंगाश्रयी होता है। मादा पुष्प, पुष्पगुच्छ के ऊपरी भाग में जबकि नर पुष्प निचले भाग में बनते हैं। कभी-कभी दोनों प्रकार के पुष्प पुष्पक्रम में अंत: प्रकीर्णित रहते हैं। इसका फल कैप्सूल है जोकि गोलाकार दीर्घायती, कंटीला या चिकने हो सकते हैं। परिपक्व होने पर ये कैप्सूल में तीन-एक-बीजीय फलांशकों में स्फुटित होते हैं। एरंड के बीजों के रंग और आकार में बड़ी विविधता दिखाई देती है। यह कुटकी या भृंग (बीटल) से काफी मिलता जुलता नज़र आता है। इसमें इन कीटों के रंग का एक चितकबरा बीजचोल होता है जो एक अध्यावरण को घेरे रहता है जिसे टेगमेन कहते हैं। इसका हाइलम कैरंकल (बीजचोलक) के नीचे लगभग ढका रहता है जो कि बीजांडद्वारी सिरे पर एक अध्यावरणी प्रसार है। रैफी सुस्पष्ट होता है।

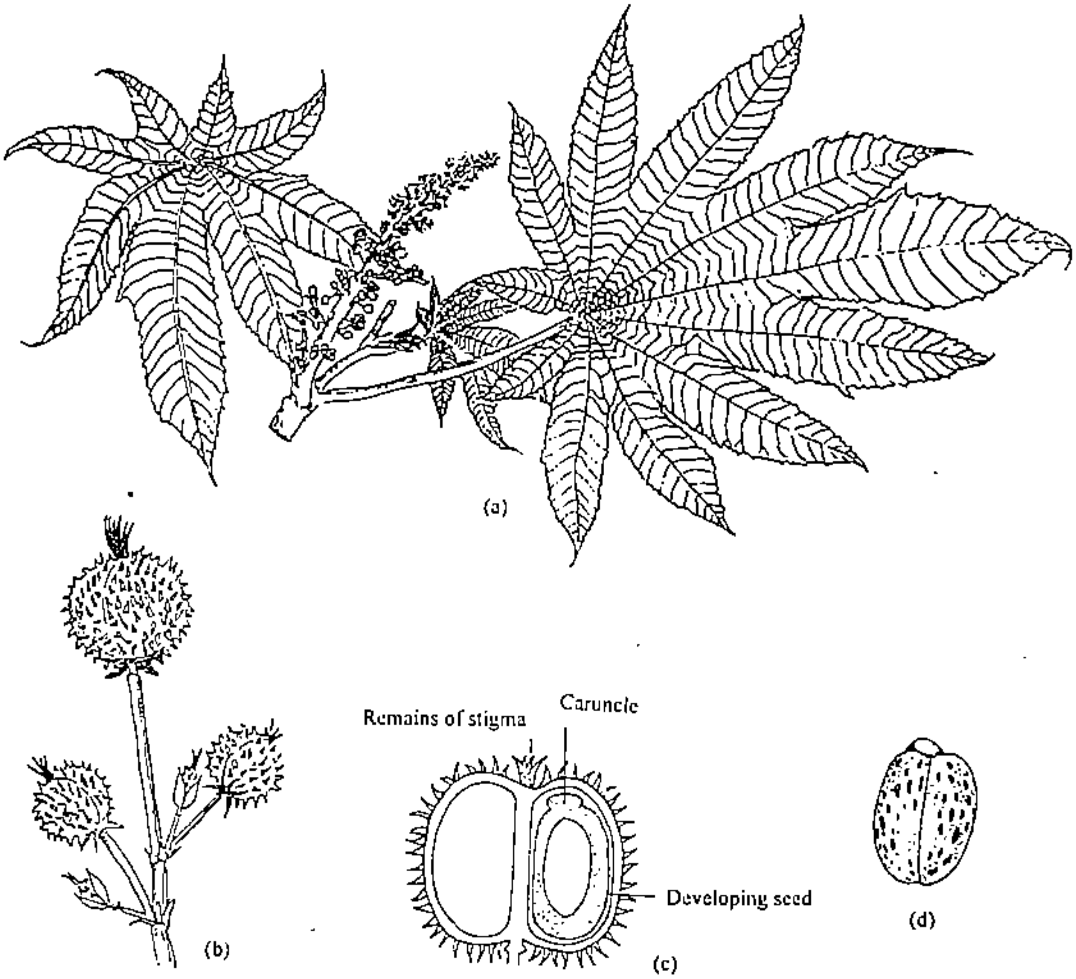

चित्र 15.10 : कैस्टर, (*रिसिनस कम्युनिस*)। a) प्ररोह का एक भाग जिसमें पत्तियां और तरुण पुष्पक्रम दिखाई देता है। b) मादा पुष्प और तरुण फल दिखाता पुष्पक्रम का एक भाग। c) अनुदैर्ध्य काट में तरुण फल का एक रेखाचित्र। d) बीज सामने के दृश्य में। [a, d) पर्ससग्लव, 1988; b, c) कोबॅले और स्टील 1976 से।]

खेती

इसका पौधा खेतों में एक-वार्षिक पादप के रूप में उगाया जाता है जिसे नवोद्‌भिद पौद बनने से बीज बनने तक लगभग 280 दिन लगते हैं। मगर इसे अगर घर आंगन या पिछवाड़े उगाया जाए, जहां पानी बराबर मिलता रहे तो पौधा अनेक वर्षों तक जीवित रह सकता है। इसकी फसल के लिए संपूर्ण वर्धन-काल के दौरान 20° से. से 30° से. का उच्च तापमान सबसे उत्तम रहता है। एरंड का पौधा शुष्क जलवायु सह सकता है। भारत में इसकी खेती विविध मृदा और जलवायु परिस्थितियों में की जाती है। यह आंध्र प्रदेश के तेलंगाना की निम्न कोटि की बलुई मिट्टी (*चालका*) से लेकर उत्तर प्रदेश की उत्तम उर्वर जलोढ़ मिट्टी में उगाया जाता है। इसे समुद्र तल के भूभाग से लेकर 1500-2100 मीटर की ऊँचाई वाले भूभागों में उगाया जा सकता है। लेकिन यह पौधा तुषार, भारी वर्षा और जलाक्रांति (पानी का जमाव) नहीं सह पाता। इसे प्राय: 60 और 90 से.मी. वर्षा वाले प्रदेशों में वर्षापोषित फसल के रूप में उगाया जाता है। मगर यह 50 से.मी. से कम वर्षा वाले स्थानों में भी उगाया जा सकता है। फल और बीज के समुचित विकास के लिए इसे गर्म शुष्क जलवायु की आवश्यकता पड़ती है, जो फसल की कटाई और थ्रैशिंग के लिए भी सहायक रहती है।

कटाई और तेल का निष्कर्षण

एरंड की फलियां बीजों के पूरी तरह से पकने से पहले मशीनों या हाथ से तोड़ ली जाती हैं। विशेष रूप से बनी छिलका उतारने वाली मशीनों (हलर) की सहायता से बीजों से

छिलके उतार लिए जाते हैं। बीजावरण बीज के कुल भार का 25 प्रतिशत होता है। गुठलियों के निष्पीड़न से अवाष्पशील तेल का दो तिहाई हिस्सा प्राप्त हो जाता है जो कि बीज के कुल भार का लगभग 50 प्रतिशत है। औषधीय और वायुयान इंजनों में प्रयोग के लिए सबसे उत्तम गुणवत्ता का कैस्टर तेल गुठलियों को शीत तापमान में पीसकर निकाला जाता है। यह तेल लगभग रंगहीन होता है।

खली को दुबारा तप्त विधि से निष्पीड़ित कर या हेपटेन, बैंजीन या ट्राइक्लोरएथिलीन का उपयोग करते हुए, विलायक निष्कर्षण के द्वारा निम्नकोटि का तेल प्राप्त किया जाता है। एरंड की खली में कम से कम तीन विषाक्त पदार्थ उपस्थित रहते हैं: अ) रिसिन, यह बेहद विषैला पदार्थ बड़ी मात्रा में उपस्थित रहता है; ब) रिसिनीन, जो एक हल्का विषैला ऐल्केलॉइड है; और स) एक ऐलर्जन, जो एक प्रोटीन पॉलिसैकेराइड है। रिसिन एक रुधिर स्कंदक के रूप में काम करता है।

तेल का रासायनिक संघटन

एरंड का तेल लगभग रंगहीन, बेहद हल्का हरा-पीला श्यान द्रव्य है। इसका वसा अम्ल संघटन इस प्रकार है: रिसिनोलीइक अम्ल 91-95 प्रतिशत; लीनोलीइक अम्ल 4.5 प्रतिशत; पामिटिक अम्ल और स्टीएरिक अम्ल 1.2 प्रतिशत; और नगण्य मात्रा में ओलीक अम्ल। तेल में रिसिनोलीइक अम्ल की 90 प्रतिशत मात्रा इसे जो विशेष गुण प्रदान करती है वे हैं: उच्च एसिटिल या हाइड्रॉक्सिल मान, उच्च विशिष्ट गुरूत्व, उच्च अपवर्तनांक, निम्न साबुनीकरण मान, एथिल एल्कोहल में मिश्रणीयता और पेट्रोलियम ईथर में अविलेयता।

उपयोग

तेल और इससे व्युत्पन्न पदार्थों के अनेक औद्योगिक उपयोग हैं।

1. निर्जलीकृत एरंड तेल (डिहाइड्रेटेड कैस्टर ऑयल) जो तेल के तापन के फलस्वरूप प्राप्त होने वाला उत्पाद है, यह एक अच्छा शुष्कन तेल है और इसे पेंट, वार्निश और अन्य रक्षी आवरणों के लिए प्रयोग किया जाता है। इसे रेफ्रिजरेटरों के ऊपर, बाहर से की जानी वाली सफेद परिसज्जा (रंग), कवर प्रिंट वार्निशों, सिंथेटिक लिथोग्रैफिक वार्निशों, छपाई स्याही उद्योग, लिनोलियम और मोमजामों के निर्माण में काम में लाया जाता है। पलास्टीसाइजर और नाइलॉन फाइबर उत्पादन में काम आने वाले सीबैसिक और अनडेसिलिनिक अम्ल जैसे विभिन्न रसायनों के निर्माण में यह एक महत्वपूर्ण कच्चा माल है।

2. एरंड तेल को 450° से. तापमान पर गर्म करने पर ताप-अपघटन होता है, जिससे हेप्टैल्डिहाइड और अनडेसिलिनिक अम्ल प्राप्त होते हैं। हेप्टैल्डिहाइड का प्रयोग वायोलेट, आयनोन लाइलैक जैसे अनेक प्रकार के इत्र बनाने में किया जाता है। अनडेसिलिनिक अम्ल का इत्र निर्माण में और जीवाणु कवकनाशक के रूप में तथा कवक जनित त्वचा रोगों के उपचार में प्रयोग होता है।

3. हाइड्रोजनीकृत एरंड तेल का प्रयोग लीथियम आधारित स्नेहक ग्रीजों, पॉलिशों में और शेललैक ब्लेंड के रूप में किया जाता है।

4. एरंड तेल का प्रयोग, भारत में रेलवे इंजनों और लोकोमोटिव बियरंगों में, ठोस संपर्क स्नेहक के रूप में बड़े पैमाने पर होता है। इन भारी वाहनों में प्रयोग होने वाले हाइड्रॉलिक ब्रेक ऑयल में एरंड तेल अच्छी खासी मात्रा में मिला होता है।

5. उत्तम गुणवत्ता का कैस्टर तेल वायुयान इंजनों में स्नेहन के लिए प्रयोग होता है।

6. एरंड तेल का प्रयोग पारदर्शी साबुनों के निर्माण में भी होता है। इसकी जबर्दस्त जीवाणुनाशक शक्ति के कारण इसका प्रयोग दंत मंजनों में भी होता है।

7. सल्फोनेटित एरंड तेल का प्रयोग सूती वस्त्र की रंगाई और छपाई के अलावा चर्म उद्योग में भी होता है।

8. एरंड का तेल एक शक्तिशाली रेचक औषधि के रूप में प्रयोग होता है।

9. रिसिनोलीइक अम्ल का प्रयोग रासायनिक गर्भनिरोधकों में एक घटक के रूप में किया जाता है जिसमें यह पृष्ठ तनाव कम कर शुक्राणुओं की गतिशीलता को कम कर देता है।

10. इस तेल के ताप-अपघटन पर प्राप्त होने वाले ऐमाइड जैसे अनडेसिलैमाइड, फ्लाई-स्प्रे और कीटनाशकों में प्रयोग होते हैं।

11. देहाती क्षेत्रों में एरंड के तेल से दीए, लैंप आदि जलाए जाते हैं।

12. एरंड की खली प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और फॉस्फोरस, कैल्सियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम और लौह जैसे खनिजों से भरपूर होती है। रिसिन नामक रुधिर स्कंदक की उपस्थिति के कारण इसे पशु आहार के काम न लाकर उर्वरक के रूप में काम में लाया जाता है। वहरहाल खली को विषहीन बनाने की विधियां विकसित की जा चुकी हैं।

15.3.11 तिल

वानस्पतिक नाम : ***सिसेमम इंडिकम***
कुल : पेडेलिएसी
प्रचलित नाम : तिल
n = 13

तिल की गिनती सबसे प्राचीन तिलहनों में होती है जिससे मानव परिचित है। यह एक वार्षिक फसल है जो 70-140 दिनों के बीच पक कर तैयार हो जाती है। वैसे इसे पकने में अमूमन 105 दिन लगते हैं। इसमें तेल की मात्रा काफी अधिक (45 से 60 प्रतिशत) होती है और उच्च गुणवत्ता व स्थायित्व के लिए इसे महत्वपूर्ण माना जाता है। इसे प्राय: पाक-शास्त्र में काम में लाया जाता है। इसके तेल, बीज और इसकी पत्तियों में अनेक औषधीय और अन्य उपयोगी गुण पाए जाते हैं।

तिल की खेती प्राचीन काल से ही भूमध्यसागरीय प्रदेशों, अफ्रीका, भारत और सुदूर पूर्व में की जाती रही है। इसकी उत्पत्ति कहां हुई इस बारे में निश्चित पता नहीं है। मध्य पूर्व, मिस्र और भारत से तिल के अनेक पुरातात्विक, प्रागैतिहासिक या साहित्यिक उल्लेख मिलते हैं। उष्ण कटिबंधी अफ्रीका में *सिसैमम* की दो तिहाई प्रजातियां मिलती हैं जिसके आधार पर इस भूभाग को तिल का एक संभावित प्राथमिक केन्द्र माना जा सकता है। भारत को इसका दूसरा केन्द्र माना जाता है। तिल की 80 प्रतिशत पैदावार भारत, चीन, सूडान, मैक्सिको, वर्मा, इथियोपिया और वेनेजुएला में होती है। इसके प्रमुख निर्यातक देश सूडान, मैक्सिको और नाइजीरिया हैं। विश्व में तिल की खेती का सबसे बड़ा क्षेत्रफल भारत में है जहां इसके मुख्य उत्पादक राज्य उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडू और कर्नाटक हैं।

तिल एक सीधा, झाड़ीनुमा वार्षिक पौधा है, जिसकी ऊँचाई 2.0 मीटर तक होती है। इसका तना अनुदैर्घ्यत: खांचेदार और सघन रोमिल रहता है। पत्तियां स्थावर या पर्णवृंतीय, पूर्णत: पालित या विभक्त होती हैं (चित्र 15.11)। निचली पत्तियां चौड़ी और अक्सर पालित होती हैं जबकि उपरी पत्तियां कमोबेश भालाकार होती है। घंटाकर सफेद, गुलाबी या मोव (नीलशोण) पुष्प (चित्र 15.11 a, b) एकल या दो-तीन के समूह में पत्तियों के कक्षों में उत्पन्न होते हैं। पुष्प लघु वृंत युक्त, होते हैं, इनके बाह्यदलपुंज स्थायी या पाती होते हैं। वृंत प्राय: लघु और आधार पर मकरंदधारी ग्रंथियां लिए रहते हैं। दलपुंज फॉक्सग्लव (foxglove) के आकार का, तिर्यक घंटाकार रहते हैं। अंडाशय दो-कोशिक, अनेक

बीजांड-युक्त होता है। कैप्सूल रोमिल, दीर्घायती या अंडाकार, सीधे, गहरे खांचेदार होते हैं और उनमें लघु त्रिभुजाकार चोंच मिलती है (चित्र 15.11 a,c)। फल प्रत्येक अंडप पृष्ठ सीवन (dorsal suture) के समांतर फटकर स्फुटित होता है। फल दो प्रकार के होते हैं- एक द्विअंडपी (चार कोष्ठकी) स्त्रीधानी से और दूसरी तरह का फल चार अंडपी (अष्ट कोष्ठकी) स्त्रीधानी से विकसित होता है। दूसरी तरह के फल प्राय: एकल विकसित होते हैं। बीज अनेक और संपीडित, कुछ-कुछ नाशपाती के आकार के, सफेद रंग से लेकर भूरे या काले रंग के, चिकनी या खुरदुरी सतह लिए होते हैं। बीज के अंदर एक भ्रूण मौजूद होता है, जिसमें सुस्पष्ट बीजपत्र होते हैं। भ्रूणपोष भ्रूण के चारों ओर एक पतली परत के रूप में पाया जाता है।

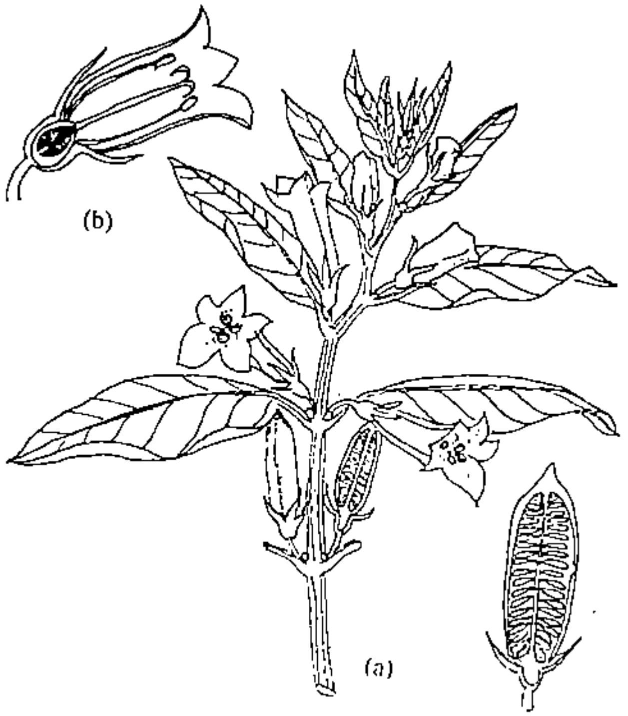

चित्र 15.11 : तिल, (*सिसैमम इंडिकम*)। a) पुष्पों और फलों के साथ एक टहनी। b) और c) अनुदैर्ध्य काट में क्रमशः एक पुष्प और फल। (पुनः चित्रित सिम्पसन और ओगरज़ाली, 1986 से)

ती

ल गर्म-शुष्क उष्ण कटिबंधी प्रदेशों की फसल है। यह प्राय: उन क्षेत्रों में उगाई जाती जहां वर्ष में 50 से 110 से.मी. वर्षा होती हो। भारी वर्षा और उष्ण आर्द्रता इसके पौधे लिए हानिकारक हैं। मगर यह जलाभाव-सह है जिस पर सूखे का कोई प्रभाव नहीं ड़ता है। मृदा तापमान 21° से. से कम होने पर इसके बीज अंकुरित नहीं हो पाते हैं, थ ही 40° से. से अधिक तापमान, पर यानि अति गर्म मौसम होने पर इसमें फलन च्छा नहीं होता। भारत में इसे रबी और खरीफ दोनों फसलों के रूप में उगाया जाता है। शुद्ध या ज्वार-बाजरा, दाल, एरंड इत्यादि के साथ मिश्र फसल के रूप में उगाया जाता इसकी खरीफ फसल के लिए हल्की मिट्टी से बलुई मिट्टी, तथा रबी फसल के ए नमी युक्त मध्यम, भारी, जलोढ़ या काली मिट्टी चाहिए।

ाई

ल की कटाई पौधों के पूरी तरह से सूख जाने से पहले ही की जाती है ताकि इसके पूल फटने से बचाए जा सकें। इसकी कटाई का सबसे उपयुक्त समय तब है जब का सबसे नीचे वाला कैप्सूल पीला होने लगे, परन्तु खुले नहीं। फसल को जमीन के से दराती से काटा जाता है। पौधों के बंडल बनाकर उन्हें चटाइयों या थ्रैशिंग फर्श उल्टे, एक हफ्ते तक छोड़ दिया जाता है ताकि उसके बीज पक जाएं। बीज पकने पर,.

या फिर पौधों के सिरों को हिलाने पर बीज फर्श पर गिर जाते हैं। इन्हें लाठी से पीटकर भी थ्रैशिंग की जाती है।

तेल का निष्कर्षण

तिल के बीज तेल (50 प्रतिशत) और प्रोटीन (20-25 प्रतिशत) से भरपूर होते हैं। इसका तेल निकालने की एक सरल विधि है जिसमें तिल के बीजों को लकड़ी की ओखली में कूटा जाता है और उसके बाद तेल को गर्म पानी के साथ प्लवन प्रक्रम के जरिए अलग कर लिया जाता है। भारत में तिल का तेल बैलों से चलाए जाने वाली घणियों या चेक्कू या हाइड्रॉलिक प्रेस से निकाला जाता है। व्यावसायिक पैमाने पर तिल का तेल निकालने के लिए सीधे सॉल्वेंट एक्स्ट्रैक्शन विधि काम में लाई जाती है। शीत दाब विधि द्वारा तिल के बीजों से व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण जिंजली तेल प्राप्त होता है। सफेद या हल्के पीले बीजों से उत्तम कोटि का तेल प्राप्त होता है जबकि गहरे लाल, भूरे या काले बीजों से उच्च मात्रा में अवाष्पशील तेल प्राप्त होता है।

तिल का तेल हल्के पीले रंग का, लगभग गंधहीन और स्वादहीन होता है। यह पानी में घुलता नहीं है मगर एल्कोहल में थोड़ा सा घुलनशील और क्लोरोफॉर्म व ईथर में पूर्णतः घुलनशील होता है। कई अन्य वनस्पति तेलों की तरह इसमें विटामिन ए नहीं होता, मगर यह विटामिन ई से भरपूर रहता है। इसका सबसे बड़ा उपयोगी गुण इसकी उच्च स्थायित्वता है, इसलिए इससे अन्य खाद्य पदार्थों का स्वाद नहीं बिगड़ता और न ही अनेक विटामिन नष्ट हो पाते हैं जैसा कि अन्य वसाओं से होने वाली विकृत गंधता के कारण होता है।

तेल का रासायनिक संघटन

तिल के तेल में असंतृप्त वसा अम्लों की मात्रा 85 प्रतिशत तक होती है। इसका वसा अम्ल संघटन इस प्रकार है: ओलीक अम्ल 37-50 प्रतिशत; लीनोलीइक अम्ल 37-47 प्रतिशत, पामिटिक अम्ल 7-9 प्रतिशत और स्टीएरिक एसिड 4-5 प्रतिशत। तेल में दो लघु घटक भी मिलते जो किसी अन्य अवाष्पशील तेलों में नहीं पाए जाते हैं। इनका नाम सिसेमिन (0.5-1.0 प्रतिशत) और सिसैमोलिन (0.3-0.5 प्रतिशत) है। सिसैमोलिन जलअपघटन पर सिसैमॉल नामक एक शक्तिशाली प्रति-ऑक्सीकारक उत्पन्न करता है। सिसैमिन और सिसैमोलिन के अलावा तेल में फाइटोस्टेरॉल और टोकोफेरॉल भी पाए जाते हैं।

उपयोग

1. भारत में तिल के बीज नाना प्रकार की मिठाइयों और कनफेक्शनरी जैसे रेवड़ी और गज़क में एक महत्वपूर्ण घटक हैं।
2. तिल के तेल से पाक वसाओं, मारजरीन और सलाद तेल बनाए जाते हैं।
3. इसके उत्तम कोटि का तेल खाद्य होता है और खाना बनाने के काम लाया जाता है।
4. यूरोपीय देशों में इसे जैतून के तेल के स्थान पर प्रयोग किया जाता है।
5. संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोपीय देशों में तिल के बीजों का प्रयोग ब्रेड रोल और बेकरी उत्पादों की सज्जा के लिए किया जाता है। बीज को अक्सर ब्रेड, पेस्ट्री और केक बनाते समय उनके ऊपर छिड़का जाता है।
6. तिल के बीजों को भूंजकर या चीनी के साथ मिलाकर खाया जाता है।
7. तिल के बीजों को हिंदू लोग धार्मिक कर्मकांडों में प्रयोग करते हैं।
8. इसके निम्नकोटि का तेल, साबुन, रबर प्रतिस्थापियों, पेंट उद्योग में और स्नेहक और प्रदीपक के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

9. भारत में बनने वाले इत्रों में प्रयोग होने वाले सुगंधित तेलों में अधिकांश का आधार तिल के तेल को बनाया जाता है।

10. औषधि विज्ञान में तिल के तेल को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जहां इसका प्रयोग एंटीबायोटिकों (प्रतिजैविकों), विटामिनों और स्टेरॉयडों के लिए वाहक या निलंबनकारी एजेंट के रूप में होता है। यही नहीं यह कीटनाशक बनाने में भी काम आता है।

11. इसकी खली डेरी पशुओं, मुर्गियों और सूअरों के लिए प्रोटीन से भरपूर एक उत्तम आहार सम्पूरक है। यह कैल्सियम, फॉस्फोरस और नायसिन भी भरपूर होती हैं।

बोध प्रश्न 2

i) रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिए।

क) .... में दो लघु घटक सिसैमिन और सिसैमोलीन होते हैं जो अन्य अवाष्पशील तेलों में नहीं मिलते हैं।

ख) एरंड की खली में तीन विषाक्त पदार्थ - i) ...., ii) ...., और iii) ....पाए जाते हैं।

ग) .... और .... से व्यावसायिक महत्व के रेशे और वनस्पति तेल दोनों प्राप्त होते हैं। (इनके वानस्पतिक नाम लिखिए)

घ) बिनौले की गुठली अनेक सूक्ष्म, गहरे रंग की वर्णक ग्रंथियों के कारण चितकबरी दिखाई देती है, तथा इन ग्रंथियों में .... होता है।

च) *ब्रैसिका* के बीजों में कभी-कभी .... के बीजों से मिलावट कर दी जाती है जिससे आदमी में *ड्रॉप्सी* (जलोदर) नामक महामारी हो जाती है जो उसमें सैंग्विनेरीन नामक एक ऐल्केलॉइड की उपस्थिति के कारण होता है।

ii) भारत में उगने वाले ऐसे पांच पौधों के वानस्पतिक नाम बताइए जिनसे वसायुक्त तेल मिलते हैं।

....

....

iii) वनस्पति तेलों का संक्षिप्त वर्गीकरण कीजिए।

....

....

iv) हाइड्रोजनीकरण से आप क्या समझते हैं ?

....

....

v) एरंड की खली पशु आहार के रूप में प्रयुक्त क्यों नहीं की जाती है ?

....

....

15.4 सारांश

- इस इकाई में आपने पढ़ा कि वनस्पति वसाएं और तेल जिन्हें अवाष्पशील तेल भी कहा जाता है, वे कार्बनिक वसा अम्लों के ट्राइग्लिसराइड हैं। साधारण तापमान पर वसाएं ठोस या अर्धठोस स्थिती में रहती हैं मगर तेल प्रायः तरल अवस्था में पाए जाते हैं।
- आधुनिक औद्योगिक इकाइयों में पादप सामग्री से वनस्पति तेल हाइड्रॉलिक या स्क्रू प्रेसों या सॉल्वेंट एक्स्ट्रेक्शन संयंत्रों से निकाला जाता है। मगर समूचे उष्णकटिवंधी प्रदेशों में तेल निकालने की अनेक स्थानीय, सरल विधियां प्रयोग में लाई जा रही हैं। तेल निष्कर्षण के बाद बची खली प्रायः प्रोटीन से भरपूर पाई जाती है और इसे इसीलिए पशु भोजन के निर्माण में और उर्वरक के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।
- जिन तेलों का प्रयोग मुख्यतः खाना बनाने और सलाद तेलों में तथा मारजरीन बनाने में किया जाता है उनमें सूरजमुखी (*हेलिएंथस एनुअस*), मकई (*जिया मेस*), मूंगफली (*ऐरेकिस हाइपोजिया*), सोयाबीन (*ग्लाइसीन मैक्स*), जैतून (*ओलिया यूरोपिया*) और तिल (*सिसैमम इंडिकम*) शामिल हैं। सरसों (*ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस*) के तेल का भी प्रयोग मारजरीन बनाने और उद्योग में एक स्नेहक के रूप में होता है। औषधि गुणों के अलावा एरंड तेल (*रिसिनस कम्युनिस*) का प्रयोग बड़े पैमाने पर पेंट, कलई आदि के काम आने वाले इनामेलों, साबुन और स्नेहकों के निर्माण में होता है। अलसी का तेल (*लाइनम यूसीटैटीसीमम*) सबसे महत्वपूर्ण शुष्कन तेल है और इसका प्रयोग पेंट और वार्निशों के निर्माण में होता है। विनौले का तेल (*गॉसिपियम*) प्रजाति, रेशे के लिए होने वाले कपास के व्यावसायिक उत्पादन का उपोत्पाद है और इसे खाद्यपदार्थों में प्रयोग किया जाता है। नारियल (*कोकोस न्यूसिफेरा*) की सूखी गुठली या गरी (कोपरा) विश्व व्यापार जगत् में वनस्पति तेल का एक प्रमुख स्रोत है। पश्चिम अफ्रीकी ताड़ वृक्ष के फल से दो प्रकार के तेल मिलते हैं एक इसकी मध्य फलभित्ति से, और दूसरा ताड़ की गुठली से निकाला जाता है। दोनों तेल भोजन और साबुन बनाने के काम लाए जाते हैं।

15.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्न तेलों के निष्कर्षण की विधियों, उनके गुणों और आर्थिक उपयोगों के बारे में बताइए:

   क) नारियल तेल, ख) अलसी का तेल, और ग) एरंड का तेल

   ....

   ....

   ....

2. भारत में पांच महत्वपूर्ण तेल पादपों के नाम बताइए। इनमें से किन्हीं दो के बारे में विस्तार से बताइए।

   ....

   ....

   ....

3. भारत की वसा तेल उत्पादक मुख्य फसलों के नाम बताइए। उनके शुष्कन गुणों के आधार पर तेलों का वर्गीकरण कीजिए और उनके उपयोग बताइए।

....

....

....

4. वनस्पति तेल और वसाएं क्या हैं? भारत में उत्पादित, महत्वपूर्ण वनस्पति तिलहनों की वानस्पतिकी, खेती, तेल निष्कर्षण और उनके उपयोगों के बारे में संक्षेप में बताइए।

....

....

....

5. भारत में होने वाले दो तेल उत्पादक पादपों के नाम बताइए। उनसे तेल किस तरह निकाला जाता है ? इन वनस्पति तेलों के उपयोग बताइए।

....

....

....

6. निम्नलिखित कुलों के पादपों के नाम बताइए जिनसे वनस्पति तेल प्राप्त होता है। इनसे तेल किस तरह निकाला जाता है और उनके क्या-क्या व्यावसायिक उपयोग हैं ?

क) एस्टरेसी, ख) ऐरेकेसी, ग) मालवेसी, तथा घ) यूफोर्बिएसी

....

....

....

....

7. निम्न में अंतर बताइए:

क) तेल और वसाएं

ख) संगंध या वाष्पशील तेल और वनस्पति तेल

ग) शुष्कन और न सूखने वाले तेल

....

....

....

8. मूंगफली में फल तो भूमि के नीचे विकसित होता है मगर इसका पुष्प आकाशी होता है। टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

15.6 उत्तर

बोध प्रश्न

1. i) –√ ; ii) –√ ; iii) –× ; iv) –× ; v) –√ ;
   vi) –× ; vii) –× ; viii) –√ ; ix) –√ ; x) –× ;

2. i) क) तिल के तेल,
   ख) रिसिन, रिसिनीन, एलर्जन
   ग) *लाइनम यूसीटैटीसिमम, कोकोस न्यूसिफेरा*
   घ) गॉसिपॉल
   ङ) *आर्जीमोन*

   ii) *ऐरैकिस हाइपोजिया, कार्थैमस टिंक्टोरियस, सिसैमम इंडिकम, रिसिनस कम्युनिस ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस।*

   iii) उपभाग 15.2.3 देखिए।

   iv) तेलों में मौजूद असंतृप्त वसा ग्लाइकोसाइडों को वसा में परिवर्तित करने के प्रक्रम को हाइड्रोजनीकरण कहते हैं। हाइड्रोजनीकरण तेल के द्विआबंधों को समाप्त करके इसे खाने के लिए और अधिक उपयुक्त बनाता है। साथ ही यह उसकी भंडारण गुणवत्ता, स्वाद और गंध को भी उन्नत बनाता है।

   iv) एरंड की खली में रिसिन नामक एक बेहद विषैले पदार्थ की उपस्थिति के कारण उसे पशु आहार के रूप में प्रयोग नहीं किया जाता है। रिसिन रुधिर स्कंदक का काम करता है।

अंत में कुछ प्रश्न

1. क) उपभाग 15.3.1 देखिए।
   ख) उपभाग 15.3.8 देखिए।
   ग) उपभाग 15.3.10 देखिए।
2. इकाई के भाग 15.3 को देखिए।
3. भाग 15.2 और 15.3 देखिए।
4. भाग 15.2 और 15.3 देखिए।
5. कोई दो उदाहरण दीजिए। इसके लिए आप भाग 15.3 देख सकते हैं।
6. भाग 15.3 देखिए।
7. भाग 15.2 देखिए।
8. उपभाग 15.3.1 देखिए।

इकाई 16 शर्करा और स्टार्च

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

16.2 शर्करा
गन्ना

16.3 स्टार्च
आलू
कैसावा

16.4 सारांश

16.5 अंत में कुछ प्रश्न

16.6 उत्तर

16.1 प्रस्तावना

शर्करा और स्टार्च जो कि कार्बोहाइड्रेट के आम रूप हैं ये कार्बनिक यौगिकों का एक समूह हैं, जिसमें कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन प्राय: 1:2:1 के अनुपात में मौजूद रहते हैं। कार्बोहाइड्रेट में ऑक्सीजन का प्रतिशत अपेक्षतया अधिक होता है जिसके कारण वसा और तेलों की तुलना में ये ऊर्जा के कम उपयोगी स्रोत माने जाते हैं। कार्बोहाइड्रेटों को मोटे तौर पर मोनोसैकेराइड, ओलिगोसैकेराइड और पॉलिसैकेराइड में बांटा जा सकता है। मोनोसैकेराइड सबसे कम जटिल कार्बोहाइड्रेट हैं जिनका सामान्य सूत्र ($C_nH_{2n}O_n$) है। इन्हें और सरल कार्बोहाइड्रेट में और जल-अपघटित नहीं किया जा सकता है। ओलिगोसैकेराइड और पॉलिसैकेराइड जैसे अधिक जटिल कार्बोहाइड्रेट इन्हीं से बनते हैं। पादप मोनोसैकेराइडों में सबसे आम ग्लूकोज और फ्रुक्टोज़ हैं। ओलिगोसैकेराइड, मोनोसैकेराइड के दो या अधिक अणुओं से मिलकर बनते हैं जो ग्लाइकोसाइड बंधों के द्वारा परस्पर जुड़े रहते हैं। जल-अपघटन पर इनसे हमें सरल शर्कराएं प्राप्त होती हैं। सुक्रोज और माल्टोस डाइसैकेराइड के दो आम उदाहरण हैं। सुक्रोज, एक फ्रुक्टोज और ग्लूकोज इकाई का संघनन उत्पाद (condensation product) है, तो माल्टोज या माल्ट शर्करा दो ग्लुकोज अणुओं का संघनन उत्पाद हैं। पॉलिसैकेराइड उच्च आण्विक भार वाले जटिल अणु हैं। ये अनेक पुनरावर्ती मोनोसैकेराइड इकाइयों के बने होते हैं जो ग्लुकोसाइड बंधों से आपस में जुड़ी रहती हैं। इनके सभी शर्करा गुणों का लोप हो चुका होता है। इनका सामान्य सूत्र $(C_n H_{2n-2} O_{n-1})_x$ है। जल-अपघटन के द्वारा इन्हें इनकी घटक शर्कराओं में तोड़ा जा सकता है। पादपों में सबसे प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले दो पॉलिसैकेराइड स्टार्च और सेलुलोज हैं।

कार्बोहाइड्रेट सिर्फ पादपों का ही नहीं बल्कि जंतुओं के लिए भी आरक्षी खाद्य आपूर्ति हैं। पादप जगत् के ये सबसे मूल्यवान उत्पाद हैं और मनुष्य के लिए एक आवश्यक खाद्य घटक हैं। पादपों के शुष्क भार का एक बड़ा भाग कार्बोहाइड्रेट ही होते हैं। हालांकि इनकी कई किस्में होती हैं मगर विभिन्न प्रकार की शर्कराएं, स्टार्च और सेलुलोज प्रधानता में पाए जाते हैं। शर्कराएं जल में घुलनशील होती हैं मगर स्टार्च और सेलुलोज अघुलनशील होते हैं। मनुष्य सेलुलोज को पचा नहीं सकता है लेकिन सूक्ष्मजीव (जीवाणु इत्यादि) सेलुलोज को अपघटित कर सकते हैं। तालिका 16.1 में आम शर्करा और स्टार्च उत्पादक फसलों के नामों की सूची दी गई है।

तालिका 16.1 : शर्करा और स्टार्च पादप

प्रचलित नाम	वानस्पतिक नाम	कुल
I. शर्करा पादप		
गन्ना	*सैकेरम ऑफिसिनेरम*	पोएसी
चुकंदर	*बीटा वल्गैरिस*	कीनोपोडिएसी
जौ	*होर्डियम वल्गेयर*	पोएसी
सोरघम, सोरगो	*सोरघम बाइकलर*	पोएसी
खजूर	*फीनिक्स सिल्वेस्ट्रिस*	ऐरेकेसी
ताड़	*कैरियोटा यूरेंस*	ऐरेकेसी
नारियल	*कोकोस न्यूसिफेरा*	ऐरेकेसी
II. स्टार्च पादप		
आलू	*सोलैनम ट्यूबरोसम*	सोलैनेसी
कैसावा	*मैनिहॉट एस्कुलेंटा*	यूफोर्बिएसी
क्वींसलैंड अरारोट	*कैन्ना एडुलिस*	*कैनेसी*
टारो / कचालू	*कोलोकेशिया एस्कुलेंटा*	ऐरेकेसी
जायंट टारो	*ऐलोकेशिया मैक्रोराइज़ा*	ऐरेकेसी
ईस्ट इंडियन अरारोट	*कुरकुमा एंगस्टिफोलिया*	जिंजिबरेसी
ग्रेटर एशियाटिक यैम (रतालू)	*डायोस्कोरिया ऐलेटा*	डायोस्कोरेसी
व्हाइट गिनी यैम	*डा. रोटुन्डैटा*	डायोस्कोरेसी
यलो गिनी यैम	*डा. कैयेंसिस*	डायोस्कोरेसी
एयर पोटैटो	*डा. बल्बीफेरा*	डायोस्कोरेसी
कशकश, याम्पी	*डा. ट्राइफिडा*	डायोस्कोरेसी
सागू	*कैरियोटा यूरेंस*	ऐरेकेसी
सागू, क्वीन सागू	*साइकैस सरसिनैलिस*	साइकैडेसी
जापानी सागू	*सा. रिवोलुटा*	साइकैडेसी
मकई	*जिया मेस*	पोएसी
गेहूं	*ट्राइटिकम स्पीशीज*	पोएसी
धान	*ओराइजा सैटाइवा*	पोएसी

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- शर्करा निर्माण के प्रक्रमों और पादपों में उनके प्रकार्यों के बारे में बता सकें;
- विश्व के मुख्य शर्करा-उत्पादक पादपों की सूची बना सकें;
- गन्ने की खेती की विधियों के बारे में बता सकें;
- शर्करा उत्पन्न करने वाले पादप अंगों की आकारिकीय प्रकृति के बारे में बता सकें;

- शर्करा निष्कर्षण या चीनी बनाने की विधि समझा सकें तथा इसके उपयोगों के विषय में बता सकें;
- शर्करा उत्पादन के दौरान उत्पन्न होने वाले उपोत्पादों, और उनके उपयोगों के बारे में बता सकें;
- शर्करा फसल को उन्नत बनाने की विधियों के बारे में संक्षेप में बता सकें;
- स्टार्च के निर्माण और उसके संचयन के बारे में स्पष्ट रूप से बता सकें;
- स्टार्च के मुख्य पादप स्रोतों की पहचान कर सकें;
- विभिन्न प्रकार के स्टार्च कणों को पहचान सकें;
- स्टार्च उत्पादक पादपों और उनके अंगों की आकारिकी के बारे में बता सकें;
- आलू और कैसावा की खेती की विधियों के बारे में बता सकें; तथा
- मानव के लिए स्टार्च के महत्व और उसके उपयोगों के बारे में बता सकें।

16.2 शर्करा

यह शब्द संस्कृत का है जिसका अर्थ "कंकड़" है और यह कच्ची या अपरिष्कृत चीनी के लिए प्रयोग होता है। जैसा कि आप जानते हैं, मनुष्य की जीभ सिर्फ चार बुनियादी स्वादों को जानती है। ये हैं: मीठा, खट्टा, नमकीन और कड़ुवा। आप यह भी जानते हैं कि मीठे का शौक ही भोजन को स्वादिष्ट और आकर्षक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके अलावा ऊर्जा के स्रोत और मधुरक (मीठा बनाने वाले पदार्थ) दोनों के रूप में चीनी के बिना हमारे जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। शहद हमारे पूर्वजों का पहला मधुरक था और शहद को सहज सुलभ रखने के लिए ही आदमी ने मधु-मक्खी को पालतू बनाया, जिससे मधुमक्खी पालन या मौनपालन की शुरुआत हुई। मध्य युग तक चीनी यूरोप में सुलभ नहीं थी, इसलिए इसे सिर्फ अभिजात्य वर्ग प्रयोग करता था। बहरहाल, पंद्रहवीं सदी के आखिर में मधुरक के रूप में शहद की जगह चीनी ने ले ली थी। और फिर उन्नीसवीं और बीसवीं सदी तक यह सभी लोगों के भोजन का सामान्य अंग बन गई।

सभी हरे पादप प्रकाशसंश्लेषण के जरिए शर्कराओं का संश्लेषण करने में समर्थ हैं। यह अनेक पादप जातियों में लघु मात्रा में पाई जाती है (चित्र 16.1 देखिए)। मगर इस तरह से बनने वाली शर्करा की मात्रा इतनी कम रहती है कि उसका अधिकांश हिस्सा तो पादप के उपापचय के दौरान ही खर्च हो जाता है और संचय के लिए कुछ खास नहीं बच पाता है। गन्ने का पौधा सौर ऊर्जा, कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को ऊर्जा दायक भोजन में बदलने वाले सबसे कार्यक्षम परिवर्तकों में गिना जाता है। गन्ने के अलावा चुकंदर, गाजर (मूल); मकई, सोरघम और शूगर मैपल (तनों) में शर्करा होती है और खजूर की अनेक किस्मों में शर्करा मुख्यत: उनके पुष्पक्रम में होती है, प्याज (के वल्च में) और कई फलों में भी शर्कराएं पाई जाती हैं।

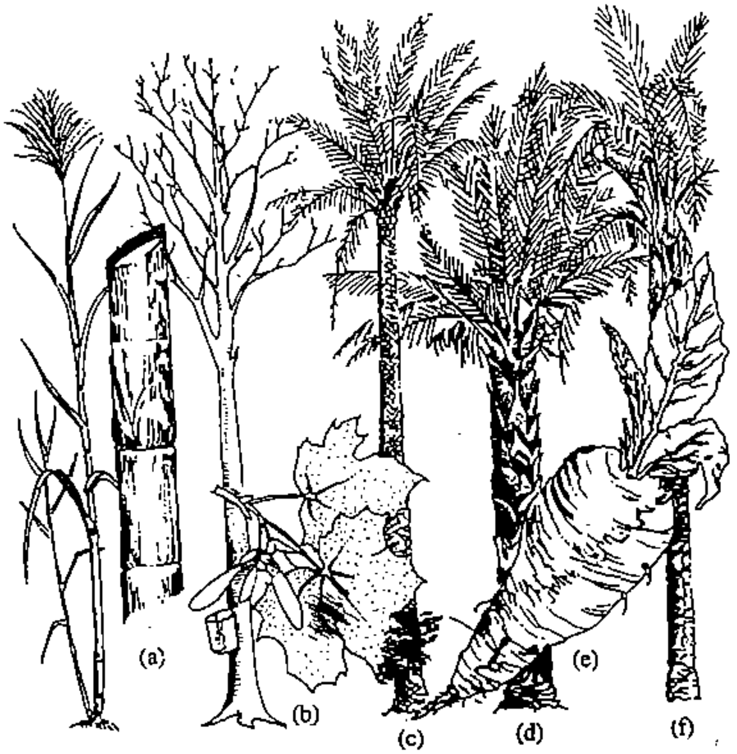

चित्र 16.1 : शर्करा और स्टार्च उत्पादक पादप। a) गन्ना, b) शूगर मैपल, c) वन खजूर, d) खजूर, e) चुकंदर, f) सागो।

शर्करा या चीनी हमारे भोजन का एक अनिवार्य अंग ही नहीं है बल्कि यह अन्य भोज्य पदार्थो के लिए एक महत्वपूर्ण परिरक्षक (प्रिजर्वेटिव) भी है। विश्व को चीनी की आपूर्ति मुख्यत: गन्ने (*सैकेरम ऑफिसिनैरम*) से होती है। चुकंदर से भी थोड़ी-बहुत मात्रा में चीनी बनाई जाती है। गन्ना अनिवार्यत: एक उष्णकटिबंधीय पादप है, जबकि चुकंदर (*बीटा वल्गैरिस*) उपोष्ण और शीतोष्ण जलवायु वाले प्रदेशों में उगता है। चुकंदर यूरोप के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है जहां यह चीनी का मुख्य स्रोत है। गन्ने के वाद विश्व की चीनी आपूर्ति का दूसरा बड़ा स्रोत चुकंदर ही है। मेपल (*एसर सैकेरम*), शूगर पाल्म (*ऐरेंगा पिन्नेटा*), पंखिया ताड़ (*बोरसस फिलेबेलिफर*), ताड़ (*कैरियोटा यूरेंस*), नारियल (*कोकोस न्यूसिफेरा*), डेट पाम (*फीनिक्स सिल्वेस्ट्रिस*) और *सोरघम वल्गेयर* की किस्म *सैकैरेटम*- यह पादप जातियां भी चीनी के स्रोत हैं।

इस इकाई में हम गन्ने के वारे में बताऐंगे जो उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में चीनी का एक महत्वपूर्ण स्रोत है

16.2.1 गन्ना

वानस्पतिक नाम : ***सैकेरम ओफिसिनैरम***
कुल : पोएसी
प्रचलित नाम : गन्ना
n = 6, 8, 10

गन्ना, शर्करा या चीनी का मुख्य स्रोत है जो उष्णकटिबंध मूल का है और गर्म जलवायु वाले सभी देशों में उगाया जाता है। भारत, पाकिस्तान, क्यूवा और ब्राजील चीनी के प्रधान उत्पादक देश हैं। इनके अलावा दक्षिण अमेरिका, मध्य और दक्षिण अमेरिकी देशों, वेस्ट इंडिज़, मेक्सिको, मिस्र, जावा, चीन, ताइवान, फिलिपीन, दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया में भी गन्ने की खेती होती है। क्यूबा जो कि ''दुनिया के चीनी के भंडार'' के रूप में जाना जाता है, गन्ने का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। ऐसा विश्वास है कि गन्ने की उत्पत्ति संभवत: दक्षिण पैसिफिक में, शायद न्यू गिनी में हुई थी जहां से यह समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया में फैला।

भारत में गन्ने की खेती प्रागैतिहासिक काल से हो रही है। चौथी सदी ईसा पूर्व तक यह यहां की एक महत्वपूर्ण फसल का दर्जा पा गया था। भारत पर अपने आक्रमण के दौरान (327 ई. पूर्व) अलेक्जेंडर यानि सिकंदर महान की सेना ने स्थानीय लोगों को मधुमक्खियों की सहायता के बिना, घास जैसे पौधे में "शहद" समान मीठा पदार्थ निकालते देखा। ये दरअसल मीठा रस देने वाले पौधे थे और इनहें *सैकेरम* जीनस से जुड़े पौधों के रूप में पहचाना गया। गन्ना उगाने और फिर उससे चीनी बनाने की विधि यहां से पूर्व में हिंद-चीन और पश्चिम में अरब देशों और यूरोप में फैली। गन्ने की खेती चीन में ईसापूर्व पहली सदी से पहले ही होने लगी थी। पर्शिया (आज के ईरान) में यह छठी सदी में पहुंचा। नई दुनिया में इसे लाने का श्रेय कोलंबस को जाता है जो इसे कैनरी द्वीप से लाया। सत्रहवीं सदी तक यह पौधा समूचे विश्व में फैल चुका था।

भारत में आज गन्ना 25 लाख हेक्टेयर कृषि भूमि में उगाया जाता है और इसकी खेती लगभग प्रत्येक राज्य में होती है, जिसमें उत्तर प्रदेश सबसे पहले स्थान पर है। उसके बाद तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, हरियाणा, पंजाब, बिहार, उड़ीसा, गुजरात का स्थान आता है। इसकी खेती के लिए उपजाऊ मिट्टी, लंबा वर्धनकाल, वर्ष भर प्रचुर मात्रा में पानी की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए 200-225 से.मी. वर्षा और 16° से. से 50° सें. तक का तापमान और 26° से. का औसत तापमान चाहिए। वर्धनकाल की पश्च-अवस्थाओं के दौरान इसे कुछ समय के लिए शुष्क मौसम की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि इस दौरान इसके तने में शर्करा का संचय हो रहा होता है।

उत्पत्ति

कृषि योग्य गन्ने की उत्पत्ति के दो भौगोलिक केन्द्र माने जाते हैं :

1) दक्षिण प्रशांत द्वीप विशेषकर न्यू गिनी, जहां *सैकेरम* जीनस में अधिकतम विविधता पाई जाती है। अधिकांश वनस्पति वैज्ञानिकों का मत है कि गन्ने की उत्पत्ति इसी भूभाग में हुई जहां से यह पूर्व की दिशा में फैला और अंततः दक्षिण पूर्व एशिया के कई देशों में यह एक महत्वपूर्ण फसल का स्थान पा गया।

2) इसकी उत्पत्ति का दूसरा केन्द्र उत्तरी भारत को माना जाता है। ऊँची बड़ी बैरल नुमा इस जाति *एस. ऑफिसिनेरम* की उत्पत्ति संभवतः न्यू गिनी की *एस. रोबस्टम* से हुई। जैसे-जैसे यह जाति बाहर की ओर फैली यह संबंधित जाति *एरिएंथस मैक्सिमस* या *स्क्लेरोस्टैकिया फसका* के साथ नए प्राकृतिक आवास के अनुरूप रूपांतरित हो गई। ऐसा माना जाता है कि उत्तरी-भारत में पाई जाने वाली जातियों *एस. साइनेंस* (चीनी या जापानी गन्ना) और *एस. बारबेरी* (भारतीय गन्ना) की उत्पत्ति *एस. ऑफिसिनेरम* के प्रवासी रूपों और *एस स्पांटेनियम* (वन्य गन्ना) के बीच प्राकृतिक संकरण से हुई होगी। ये दोनों जातियां वन्यावस्था में भी पाई जाती हैं (चित्र 16.2 देखिए)।

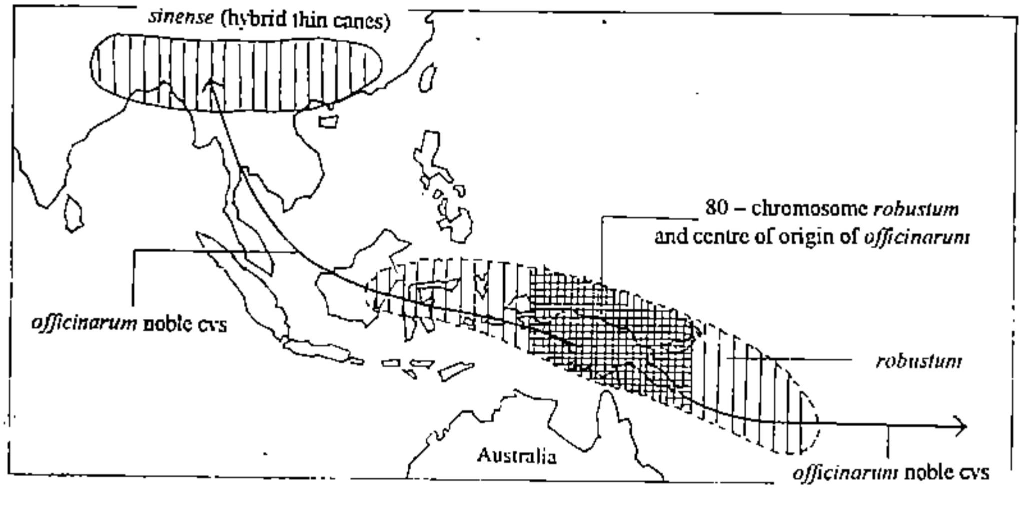

चित्र 16.2 : गन्ने का विकासीय भौगोलिक मानचित्र।

सैकेरम का वर्गीकरण

सैकेरम की पांच जातियां पहचानी गई हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं: *सैं. ऑफिसिनेरम, सैं. बारबेरी, सैं. साइनेंस, सैं. स्पोंटेनियम* और *सैं. रोबस्टम।* ये पुरानी दुनिया की देशज जातियां हैं। ये बहुगुणित या असुगुणित होती हैं: ये पांचों जातियां गन्ने के सारे प्रजनन कार्य की आधार शिलाएं हैं क्योंकि ये सरलता से परस्पर संकरण कर लेती हैं। गन्ने की जिन-जिन किस्मों की खेती आजकल की जाती है, वे सब अंतराजातीय संकर हैं। इन संकरों के विकास कार्यक्रम को *नोबिलाइजेशन* (nobilisation) या उत्कृष्टीकरण कहा जाता है। इस कार्यक्रम के मुख्य पात्र इस प्रकार हैं:

सैं. ऑफिसिनेरम (2n = 80) नोबल या मोटा गन्ना। यह नरम, मोटे तने वाला, बड़ा तथा बैरलनुमा होता है। इसमें कम रेशा और सुक्रोज की मात्रा अधिक होती है। यद्यपि यह जाति चीनी का एक महत्वपूर्ण स्रोत है तथापि इसे अधिकांश क्षेत्रों में संतोषप्रद ढंग से नहीं उगाया जा सकता है क्योंकि यह जाति गन्ने में लगने वाली लगभग सभी गंभीर बीमारियों का शिकार हो जाती है।

सैं. बारबेरी (2n = 82 से 124) यह जाति भारतीय गन्ने के नाम से भी जानी जाती है। यह जाति वन्य और उत्कृष्ट गन्ना जातियों के बीच की मध्यवर्ती प्रतीत होती है। इसकी किस्में प्राय: कुछ सख्त, तथा छोटे तने वाली होती है। इनमें रेशे और रस की मात्रा अधिक रहती है। इसमें मूल तंत्र प्रबल होता है। सेरे रोग के प्रति असंक्राम्यता के गुण के कारण इसे महत्व दिया जाता है।

सैं. साइनेंस (2n = 116 से 118) इसे चीनी या जापानी गन्ना कहा जाता है। ये कठोर और लघु तने वाली होती है। यह जाति बड़ी ओजपूर्ण है और यह जल्दी परिपक्व हो जाती है। यह हल्का तुषार और जलाभाव (सूखा) सह लेती है और इसे उत्तरी भारत में उगाया जा सकता है। हालांकि इसमें शर्करा की मात्रा अपेक्षतया कम रहती है मगर यह जाति मूल विगलन (रूटरॉट जिसमें गन्ने की जड़ें गल जाती हैं) और सरे रोगों की अच्छी प्रतिरोधी है। इसकी कुछ किस्में मोजैक रोग की भी प्रतिरोधी हैं।

सैं. स्पोंटेनियम (2n = 40 से 128) इसे जंगली गन्ने के नाम से भी जाना जाता है। यह एक प्रबल, पतली, घासनुमा जाति है। इसका वृंत अक्सर मज्जादार होता है और उसमें सुक्रोज नहीं पाया जाता। इसकी मूल प्रणाली गहराई में प्रवेश करने वाली होती है। यह जलाभाव सह सकती है, और सेरे, मोजैक और मूल विगलन जैसे रोगों के प्रति असंक्राम्य है। इसे प्रजनन कार्य में खूब काम लाया जाता है।

सैं. रोबस्ट्रम (2n = 80) इसका भी प्रचलित नाम जंगली गन्ना है। इस जाति में सबसे लंबे गन्ने की किस्में शामिल हैं। यह जाति बड़ी प्रबल है और इसमें बड़ी व्यापक अनुकूलनशीलता पाई जाती है। इसमें रेशे की मात्रा अधिक तो शर्करा की मात्रा कम पाई जाती है और यह रोग रोधी है। गन्ना प्रजनन कार्यक्रम में इस जाति का बड़ा महत्व है।

बोध प्रश्न 1

i) तीन शर्करा-उत्पादक पादपों के वानस्पतिक नाम दीजिए।

....

....

....

ii) उन पादपों के नाम बताइए जिनमें शर्करा उनके तने, जड़ और पुष्पक्रम में संचित रहती है।

....

....

....

iii) भारत के कौन-कौन से राज्य अग्रणी गन्ना उत्पादक हैं ?

....

....

....

iv) कृषि गन्ने की उत्पत्ति के केन्द्र कौन-कौन हैं ?

....

....

v) इनके वानस्पतिक नाम बताइए : नोबल गन्ना; भारतीय गन्ना; और जंगली गन्ना।

....

....

....

आकारिकी

गन्ना एक बहुवर्षीय प्रकंदी महाघास में जिसमें एक मोटा ठोस आकाशी तना होता है। तने की लंबाई 3 से 8 मीटर और मोटाई 3.8 से 6.0 से.मी. होती है। यह झुरमुटों में उगता है। इसका रंग सफेद से लेकर पीला, गहरा हरा, बैंगनी लाल या बैंगनी होता है। तना संधित (जोड़दार) होता है। जड़ के पास के जोड़ अपेक्षतया छोटे या पास-पास होते हैं, जो ऊपर की ओर लंबाई और मोटाई में उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं। अधिकतम सीमा तक पहुंचने के बाद उत्तरोत्तर छोटे होते जाते हैं और अंततः एक पुष्पक्रम में जाकर समाप्त होते हैं।

गन्ने की संधि या जोड़ में पांच सुस्पष्ट भाग होते हैं :

1. पर्वसंधि (गांठ)-वह भाग जहां पर पर्णआच्छद तने से जुड़ा रहता है।

2. मूल पट्ट जो अनेक सूक्ष्म पारभासी बिंदुओं का बना होता है - ये बिंदु मूल आद्य हैं, जिनसे जड़ें निकलती हैं।

3. अंतर्वेशी विभज्योतक या मेरिस्टेम - मूल पट्ट के बिल्कुल ऊपर स्थित एक संकीर्ण विभज्योतकी भाग है जिससे पर्वों में वृद्धि होती है।

4. पर्व-बैरल नुमा एक संरचना है जो एक मोटी मोमी फुल्लिका से ढका रहता है।

5. पार्श्व कलिकाएं - ये तने के आमने-सामने के पार्श्वों पर एकांतर क्रम में स्थित रहती हैं। पर्ण-आच्छद इन्हें क्षति से बचाता है जो पर्वों के इर्द गिर्द एक कसा आवरण बना लेता है (चित्र 16.3)।

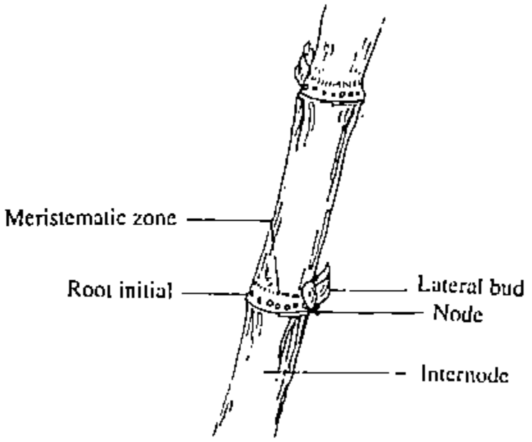

चित्र 16.3 : गन्ने के वृंत के टुकड़े का एक रेखाचित्र, जिसमें दो पूर्ण जोड़ (संधिया) और दो संलग्न जोड़ के भाग हैं।

शारीरीय दृष्टि से तने का बाहरी भाग (छिलका) स्थूलभित्ति लिग्निनीकृत कोशिकाओं की अनेक परतों का बना रहता है। यह भीतर की अधःशायी कोशिकाओं को सुरक्षा प्रदान करता है। अंदर से यह कोमल हल्के रंग के ऊतक (मज्जा) का बना होता है, जिसमें अनेक वाहिनी-बंडल अंतःस्थापित रहते हैं। इनके इर्दगिर्द की मृदोतकी कोशिकाओं में उच्च मात्रा में रस रहता है जो गन्ने के ताजा रस के कुल भार का 85-88 प्रतिशत है। रस में शर्करा की मात्रा 12 से 17 प्रतिशत तक होती है। पत्तियां तने के दोनों पार्श्व में दो पंक्तियों में पर्वसंधियों पर एकांतर क्रम में जुड़ी रहती हैं। ये एक प्रारूपिक घासी योजना के अनुसार बनी होती हैं। पर्ण-फलक एक लंबी, पतली, चपटी संरचना है जो किनारे से बारीकी से क्रकचित होती है। यह प्रायः 2.5-10 से.मी. चौड़ी और 0.9-1.5 से.मी. या अधिक लंबी और अक्सर रोमों से ढकी रहती है। पत्ती को छूने पर यह रोम त्वचा में छेद कर देते हैं (चित्र 16.4)।

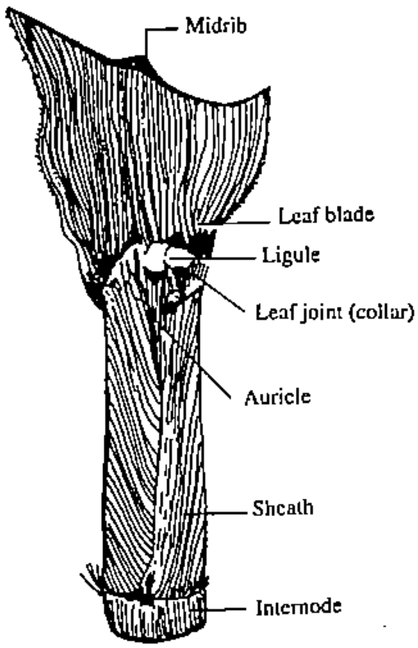

चित्र 16.4 : पत्ती के किनारे की संरचना को दर्शाता रेखाचित्र। चित्र में पर्ण-फलक का एक अंश ही दिखाया गया है।

हल्के रजत कत्थई रंग का पुष्पक्रम एक विवृत (खुला) पंखदार या लोमश पुष्पगुच्छ (panicle) है जो 0.3-0.6 मीटर लंबा और जो सिर्फ बचे हुए या प्रायोगिक पौधों में ही देखा जाता है (चित्र 16. 5)। इसे वल्लर (टैसेल) या तीर कहते हैं। दोनों कणिशिकाएं या स्पाइकिका (spikelets) निचले भाग पर लंबे रेशमी रोमों के एक छल्ले से घिरी रहती हैं, ये रोम पुष्पक्रम को एक विशिष्ट रेशमी बनावट प्रदान करते हैं। पुष्पक्रम को तत्काल घेरे रहने वाला पर्ण-आच्छद (leaf sheath) काफी लंबा (0.6-0.9 मीटर) होता है तथा फलक या ब्लेड अपेक्षतया छोटा होता है और इसे फ्लैग (flag) कहा जाता है। दोनों कणिशिकाओं की संरचना योजना समरूप होती है - दोनों में एक जोड़ा तुष (glumes) पाए जाते हैं जो पुष्पकों को ढके रहते हैं, अधरी पुष्प सिर्फ एक बंध्य लेमा (sterile lemma) के रूप में उपस्थित रहता है। मगर *सै. ऑफिसिनैरम* ऊपरी पुष्प में लेमा नहीं पाया जाता जबकि यह *सै. स्पोंटेनियम* और उसके संकरों में उपस्थित रहता है। पैली (palea) एक लघु, पतली, संकीर्ण संरचना है। अधरी पुष्प का लेमा ऊपरी निषेचनशील पुष्प के पैली को मजबूती से लपेटे रखता है। इस निषेचनशील पुष्प में दो लोडिक्यूल (lodicules), तीन पुंकेसर (stamens) और बीचोंबीच एक जायांग (gynoecium) स्थित होता है, जिसमें दो वर्तिकाएं पाई जाती हैं। ये वर्तिकाएं दो पंखदार वर्तिकाग्रों में जाकर समाप्त होती हैं (चित्र 16.6)। फल कैरिऑप्सिस होता है। बीजों की जीवनक्षमता थोड़े से समय के लिए रहती है।

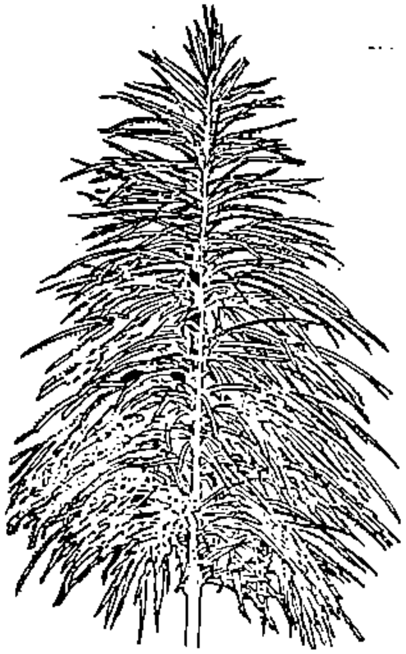

चित्र 16.5 : गन्ने का पुष्पक्रम।

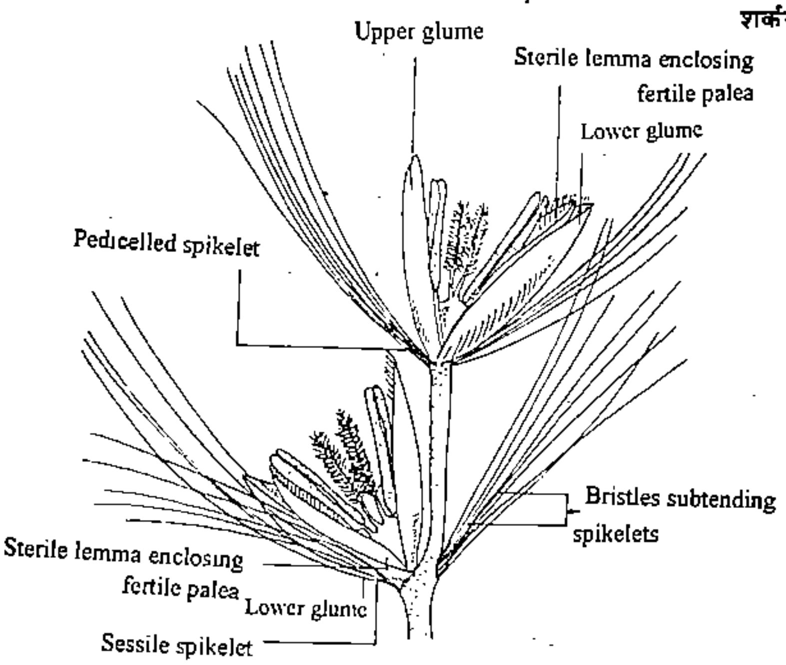

चित्र 16.6 : गन्ने के पुष्पक्रम का एक भाग जिसमें कणिशिकाओं का जोड़ा दिखाई दे रहा है। (कॉयले तथा स्टील, 1976 से)।

रासायनिक संघटन

पिराई के योग्य गन्ना संपूर्ण पौधे के कुल शुष्क भार का 50-60 प्रतिशत, ऊपरी सिरा और झाड़ 30-40 प्रतिशत और जड़ें व ठूंठ आदि 10 प्रतिशत होते हैं। रासायनिक संघटन आयु, पर्यावरण और संवर्धन स्थितियां प्रभावित करती हैं। पर्णिल या पत्तीदार सिरों में अपचायक (reducing) शर्कराएं उच्च मात्रा में और पुनर्प्राप्य (recoverable) सुक्रोज कम मात्रा में पाए जाते हैं। पुनर्प्राप्य सुक्रोज की मात्रा तभी अधिक मिल पाती है जब गन्ने की फसल आदर्श स्थितियों में पके। तने में सुक्रोज, $C_{12}H_{22}O_{11}$, की मात्रा फसल के पकने तक बढ़ती जाती है और यह पौधे के आधार में उच्चतम होती है। मगर सुक्रोज की मात्रा में पक्वन की अवस्थाओं के अनुसार परिवर्तन होते रहता है। इसके 26 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ में 9-16 प्रतिशत अंश रेशा और शेष मुख्यत: शर्कराएं होती हैं। गन्ने के कुल भार में रस का अंश 85-88 प्रतिशत होता है जो कि अनिवार्यत: जल और सुक्रोज है जिनके साथ-साथ कुछ ग्लूकोज और फ्रुक्टोज और अल्प मात्रा में खनिज लवण व नाइट्रोजनयुक्त पदार्थ भी इसमें पाए जाते हैं। रस ब्रिक्स, जो कि रस में मौजूद कुल ठोस पदार्थ है, उसकी मात्रा प्राय: 20-22 प्रतिशत होती है जिसमें 80-95 प्रतिशत सुक्रोज होता है। सुक्रोज की यह मात्रा गन्ने के पक्वन पर निर्भर करती है। सौ टन पिराई के गन्ने से प्राय: कुल 9 से 13 टन तक कच्ची शर्करा प्राप्त होती है। चीनी की आधुनिक और कार्यकुशल मिलें कारखाने में प्रवेश के समय गन्ने में उपस्थित सुक्रोज का 87 प्रतिशत तक निकाल लेती हैं।

पेराई के बाद प्राप्त होने वाले मोलेसेज या शीरे (molasses) में लगभग 20 प्रतिशत पानी, 35 प्रतिशत सुक्रोज और 14 प्रतिशत अपचायक शर्कराएं होती हैं। खोई (bagasse) में 25-55 प्रतिशत पानी, 42-47 प्रतिशत रेशा और 2.3-3.0 प्रतिशत सुक्रोज पाया जाता है।

वर्धन

न्ने का प्रवर्धन कायिक होता है जिसके लिए गन्ने के तने की कटिंग या कर्तनें, जिसमें तीन से कर पांच जोड़ हों, का प्रयोग किया जाता है। इन्हें हम "गन्ना बीज" (seed cane) या "बीज टुकड़े" (seed pieces) कहते हैं। या फिर इसके लिए रतूनी (ratooning) विधि काम लाई ती है। इस विधि में गन्ने की कटाई के बाद उसके अंश को जमीन में दबा रहने दिया जाता है, समें मौजूद प्रसुप्त कलिकाएं दो या तीन हफ्ते के अंदर अंकुरित होकर नई फसल बनाती हैं। इस

फसल को "ठूंठी फसल" या "रतून फसल" (ratoon crop) कहते हैं (चित्र 16.7) मगर रतून फसलों में क्रमशः उपज धीरे-धीरे कम होती जाती है। खेतों को तीन या चार वर्ष में साफ कर उसमें गन्नें की ताजा कर्तनें बो दी जाती है।

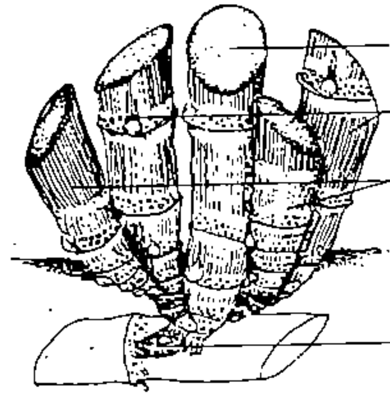

चित्र 16.7 : गन्ने की कर्तन (ठूंठ) का भूमिगत भाग जिसमें प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक वृंत लगे हुए हैं।

कर्तनें प्राय: 8-12 महीने के गन्ने के पादप या 6-8 महीने के रतून से ली जाती हैं। इसमें यह ध्यान दिया जाता है कि वे रोगों और पीड़कों से मुक्त हों। गन्ने के ऊपरी तिहाई हिस्से से लिए गए कर्तन सबसे उत्तम रहते हैं। रोपण के लिए प्रयोग किए जाने वाली कटिंग तने के ऐसे टुकड़े हो सकती हैं जिनमें दो या अधिक कलिकाएं या आंखें हों। इन्हें 45° के कोण में रोपा जाता है या इन्हें खांचों की तली में समतल दबा दिया जाता है। कभी-कभी दो कटिंगें अगल-बगल में रख दी जाती हैं। द्रुत गुणन के लिए एक पूर्वअंकुरित कलिका वाला जोड़ प्रयोग किया जाता है। रोपण से पहले कटिंगों को कार्बनिक-पारद पदार्थों (organo-mercurial compounds) से उपचारित किया जाता है। सफल अंकुरण के लिए बीज बोने वाला खेत अच्छी तरह से तैयार किया जाना चाहिए, तथा यह रोपण के समय नम होना चाहिए। रोपण प्राय: नम ऋतु के आरंभ में किया जाता है।

रोपण के बाद पहली फसल को रोपण फसल (plant crop) कहते हैं जो स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार 9-24 महीने का समय लेती है। अधिकांश उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में इसे वर्षा ऋतु में रोपा जाता है ताकि वह 15-16 महीने बाद पक जाए। अन्य देशों में यह फसल दो वर्षों तक खेतों में खड़ी रखी जाती है। कटाई के बाद ठूंठो को 2 से 4 रतून फसलों के लिए छोड़ दिया जाता है। प्रत्येक रतून फसल को पकने में एक वर्ष लग जाता है। इसके बाद खेत को साफ और तैयार कर उसमें नई रोपण फसल की रोपाई कर दी जाती है। कभी-कभी पुर्रोपण से पहले खेतों को परती (fallow) छोड़ दिया जाता है। रोपण और रतून फसल के बीच की अवधि को फसल या शस्य चक्र (crop cycle) कहते हैं। फसल का लगभग 30-40 प्रतिशत हिस्सा रतून से ही प्राप्त किया जाता है।

कटाई

गन्ने की कटाई उसके परिपक्व होने पर की जाती है क्योंकि यही वह समय है जब इसमें सुक्रोज की मात्रा उच्चतम होती है। पक्वन के परीक्षण के लिए समूचे खेत से 7-10 दिनों के अंतराल में यादृच्छिक नमूने (रैंडम सैम्पल) लिए जाते हैं। इसके लिए पूरे गन्ने को काटा जाता है या फिर खड़े गन्ने के ऊपरी और अधर तिहाई के बीच के पर्वसंधियों से एक हस्त अपवर्तनांकमापी (हैंड रिफ्रैक्टोमीटर) की सहायता से रस की जांच की जाती है। अनुभव, दृष्टि निरीक्षण और खेत के इतिहास से भी पक्वन का अनुमान लगाने में सहायता मिलती है। गन्ने के पक्वन के मूल्यांकन की आधुनिक विधि कारखाने को गन्ना देते समय उसमें मौजूद सुक्रोज की मात्रा पर आधारित है। अधिकांश उष्णकटिबंधीय देशों में गन्ना कटाई के लिए रोपण फ़सल में 14-18 महीने में और रतून

या ठूंठी फसल में 12 महीने में पककर तैयार हो जाता है। आम तौर पर पहले उन रतून फसलों को काटे जाने का प्रचलन है, जिन्हें साफ कर उनकी जगह गन्ने की नई फसल लगाई जानी हो। इसके बाद रोपण फसल और फिर रतून फसल की कटाई की जाती है जिनसे आगे की रतून फसलें प्राप्त की जानी होती हैं।

अधिकतर देशों में गन्ने को छोटी कटार या गंडासे से काटा जाता है। फसल की कटाई जमीन के पास से की जाती है। आधुनिक प्लांटेशनों में गन्ने की कटाई बड़ी मशीनों से भी की जाती है। इसके बाद उन पर से सूखी पत्तियां काट कर अलग कर दी जाती हैं और उन्हें तत्काल कारखानों में संसाधन के लिए भेज दिया जाता है। कटा गन्ना शीघ्र ही खराब होने लगता है क्योंकि गन्ने का रस अस्थिर होता है और इसका व्युत्क्रमण ग्लूकोज और फ्रक्टोज में हो जाता है, पहले 48 घंटे के दौरान पिराई और रस की प्राप्ति में कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

बोध प्रश्न 2

i) रतून फसल किसे कहते हैं ?

....

....

....

....

ii) गन्ना कटाई की सही अवस्था क्या है ? उसकी जांच कैसे की जाती है ?

....

....

....

....

चीनी का निर्माण

गन्ने से सफेद दानेदार (क्रिस्टल) चीनी का निर्माण इस प्रकार होता है :

1. रस का निष्कर्षण

संसाधन के लिए आदर्श कच्चा माल साफ, पका गन्ना है, जो कूड़े, सिरों (पुष्पक्रमों) और बाहरी सामग्री से मुक्त हो। ताज़ा कटे गन्ने के वृंतों को क्रशर की सहायता से छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर उन्हें भारी, खांचेदार स्टील रोलरों से गुज़ारा जाता है, जिससे इसका रस अच्छी तरह निकल जाता है। रस पूरी तरह से निचोड़ने के लिए कई बार क्रमिक निष्पीड़न करने की जरूरत पड़ती है। प्रत्येक निष्पीड़न के बाद गन्ने पर पानी का छिड़काव किया जाता है ताकि रस पूरी तरह से निकल जाए। पिराई के बाद बचे माल को खोई कहते हैं। निष्पीड़ित रस एक आविल, गहरा धूसरी, मीठा तरल है। यह कार्बनिक अम्लों, खनिजों, प्रोटीनों, कोलोइडी रंजक पदार्थों, राल, गन्ने के कणों और अन्य बाहरी पदार्थों जैसी अनेक अशुद्धियों से भरा रहता है।

2. रस का शोधन

अविलेय और निलंबित कणों को अलग करने के लिए रस को सबसे पहले छाना जाता है। इसके बाद घुले गैर-शर्करा पदार्थों को दूर करने के लिए रस को अपमलन, कार्बोनेटीकरण और सल्फाइटीकरण प्रक्रमों से गुजारा जाता है। अपमलन के दौरान रस में निश्चित मात्रा में चूना मिलाकर उसे गर्म किया जाता है, जिससे मुक्त कार्बनिक अम्ल और फॉस्फेट पदार्थ,

अविलेय कैल्सियम लवणों के रूप में अलग हो जाते हैं। इस घोल से प्रोटीन और कोलोइडी रंजक पदार्थ जैसी अशुद्धियां एक गाढ़े मलफेन के रूप में घोल की सतह पर आ जाती हैं। अवक्षेपित कैल्सियम और मलफेन को कपड़े से छान लिया जाता है। छने रस को अब टैंकों में प्रवाहित किया जाता है जहां इसका संपर्क कार्बन डाइआक्साइड से कराया जाता है, इस प्रक्रिया को कार्बोनेटीकरण कहते हैं। यह प्रक्रम अतिरिक्त चूने को कैल्सियम कार्बोनेट के रूप में अलग कर देता है और कैल्सियम सुक्रेट को अपघटित कर उसे घुलनशील, गहरे रंग की शर्करा में परिवर्तित कर डालता है। सल्फाइटीकरण के दौरान छने कार्बोनेट रस को सल्फर डाइऑक्साइड से उपचारित किया जाता है जिससे चूने के उदासीनीकरण और कैल्सियम सुक्रेट के अपघटन की क्रिया पूरी हो जाए।

3. सांदण और क्रिस्टलीभवन

परिष्कृत रस को फिर वाष्पित्रों (इवैपोरेटर्स) में प्रवाहित कराया जाता है जिनमें इसे समानीत दाब (reduced pressure) में इसके गाढ़े सिरप में परिवर्तित होने तक उबाला जाता है। इस तरह आंशिक निर्वात क्वथन (उबालना) शर्करा को काला होने से और उसके अपघटन को रोकता है। अंत में सांद्रित कच्चे सिरप को एक निर्वात बर्तन में क्रिस्टलीभवन होने तक उबाला जाता है, जिससे एक गाढ़ा चिपचिपा पिंड (मास्क्वीट) बन जाता है जिसमें चीनी या शर्करा का एक हिस्सा क्रिस्टल या रवों के रूप में बाहर निकल आता है। सुक्रोज रवों या क्रिस्टलों और मदर लिकर (शीरा) के इस गहरे भूरे मिश्रण को अब खुले टैंकों या क्रिस्टलाइजरों में उसके क्रिस्टल बनने तक विलोडित किया जाता है। अंततः मासक्वीट को अपकेन्द्री (सेन्ट्रीफ्यूगल) मशीन में प्रवाहित किया जाता है। इस प्रक्रिया में शीरा स्क्रीन से होकर गुजरता है और कच्ची चीनी, पीछे रह जाती है जहां से उसे जल से द्रुत धोवन के बाद निकाल लिया जाता है। शीरे में क्रिस्टलीभवन योग्य शर्करा अब भी थोड़ी बहुत मात्रा में बची रहती है जिसे कच्चे सिरप के साथ मिलाकर फिर से उबाला जाता है। इस प्रक्रिया को यथासंभव अधिक से अधिक शर्करा निकालने के लिए तीन-चार बार दोहराया जाता है। अपकेन्द्री मशीन से बनने वाली कच्ची शर्करा लाल भूरे या कुछ-कुछ धूसरी रंग की होती है और उसमें लगभग 96 प्रतिशत सुक्रोज होती है। इसका निर्यात प्रायः इसी रूप में किया जाता है। जिसके बाद आयातक देश में इसका परिष्करण किया जाता है।

4. रवों (क्रिस्टलों) का परिष्करण और शुष्कन

कच्ची शर्करा को गर्म पानी में फिर से घोला जाता है और उसमें डायएटमी मृत्तिका (मिट्टी) मिलाकर, निलंबित अशुद्धियों को दूर किया जाता है। अब इस घोल को कार्बनब्लैक से उपचारित कर उसे विरंजित किया जाता है जिससे वह एक रंगहीन चमकदार तरल में बदल जाता है। इस साफ सिरप को निर्वात सांद्रण के बाद अपकेन्द्री मशीन में अपकेन्द्रित किया जाता है जिससे शर्करा के शुद्ध चमकदार सफेद क्रिस्टल अलग-अलग होकर निकलते हैं। इन रवों को अब विशाल रोटरी ड्रायरों में तेज गर्म वायु के प्रवाह में सुखाया जाता है। इस दानेदार शर्करा क्रिस्टलों को आनत कम्पित्र स्क्रीनों (इनक्लांइड वाइब्रेटिंग स्क्रीन) से गुजारा जाता है जिससे दाने के आकार के अनुसार चीनी की ग्रेडिंग होती है। इससे बाद उसकी पैकेजिंग कर उसे बाजार में या निर्यात के लिए भेज दिया जाता है।

भारत और एशिया के अन्य देशों में गन्ने के रस को लोहे के बड़े, कम गहरे बर्तनों में खुली भट्टियों में उबाला जाता है। उबलता सिरप जब 118-120° से. के तापमान पर पहुंचता है, तो अर्ध-ठोस पिंड को तत्काल लकड़ी के कठौतों या सांचों में उंडेल दिया जाता है। भारत में इसे गुड़, अफ्रीका में "जैगरी" और लातिन अमेरिका में "पैनेला" कहा जाता है। तकनीकी दृष्टि से यह अनापकेन्द्री शर्करा है।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों में सही शब्दों को भरिए:

i) गन्ने के तने से रस के निष्कर्षण के बाद बचे सूखे रेशे को ········ कहते हैं।

ii) ········ के दौरान निष्कर्षित रस को चूने की निश्चित मात्रा के साथ गर्म करके, उसमें मौजूद मुक्त कार्बनिक अम्लों और फॉस्फेट को अविलेय कैल्सियम लवणों में परिवर्तित कर अलग किया जाता है।

iii) ········ शर्करा उद्योग का एक महत्वपूर्ण उपोत्पाद है जिसे एल्कोहल युक्त पेयों के निर्माण में बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है।

iv) सल्फाइटीकरण के बाद प्राप्त सांद्रित सिरप, जिसे कि क्रिस्टलीकरण टैंक में प्रवाहित किया जाता है, उसे ········ कहते हैं।

आर्थिक महत्व

1. गन्ना शर्करा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है और शर्करा मानव भोजन में ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

2. एल्कोहल युक्त पेयों, शीतल पेयों, कनफेक्शनरी (मिठाई, टॉफी इत्यादि), आइस-क्रीम और चॉकलेट के निर्माण के अलावा कैनिंग (यानि डिब्बाबंद खाद्य) उद्योग में भी शर्करा का प्रयोग भारी मात्रा में होता है।

3. चीनी को खाद्यान्न निर्माता मधुरक के रूप में काम लाते हैं।

4. इसका प्रयोग हेयर टॉनिकों, बारूदों, फोटोग्रैफिक सप्लाई और औषधियों में किया जाता है।

5. चर्म शोधन, दर्पणों की सिल्वरिंग और आसंजकों के निर्माण में भी यह काम आती है।

6. मोलासेज या शीरा, चीनी उद्योग का एक महत्वपूर्ण उपोत्पाद है जिसे बड़े पैमाने पर पशु आहार के रूप में, रम जैसे एल्कोहल युक्त पेयों और अनेक रसायनों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है जैसे औद्योगिक एल्कोहल, सिरका, ग्लिसरॉल, लैक्टिक और साइट्रिक अम्ल इत्यादि। इसमें लगभग 35 प्रतिशत सुक्रोज और 15 प्रतिशत 15 अपचायक शर्कराएं होती हैं। इसी 50 प्रतिशत किण्वनशील शर्करा के कारण ही मोलासेज को एक महत्वपूर्ण कच्चा माल माना जाता है। रम बनाने के लिए *सैकेरोमाइसीज सेरेविसी* नामक यीस्ट से शीरे का पहले किण्वन करने के बाद उसका आसवन किया जाता है। शीरे का प्रयोग सूखी बर्फ के निर्माण के लिए भी होता है। *क्लोस्ट्रिडियम* नामक जीवाणु से शीरे का किण्वन करके एसीटोन और ब्यूटानोल जैसे रसायन बनाए जाते हैं।

7. सोल्वेंट्स एक्सट्रेक्शन (विलायक निष्कर्षण) के पश्चात प्राप्त होने वाले ईखमोम (केन वैक्स) का प्रयोग पॉलिशों, कॉस्मेटिकों (सौंदर्य प्रसाधनों) और पेपर कोटिंग के निर्माण में किया जाता है।

8. निष्यंद खली (फिल्टर केक) को उर्वरक के रूप में काम में लाया जाता है क्योंकि इसमें कैल्सियम, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में रहते हैं।

9. मोटी उत्कृष्ट (नोबल) ईख को चूसा जाता है क्योंकि यह अपेक्षाकृत कोमल और रसीली होती है। इसमें शर्करा की मात्रा भी अधिक पाई जाती है।

10. खोई को बॉयलर ईंधन के रूप में जलाया जाता है, पेड़-पौधों के लिए पलवार (mulch) के

काम आती है। मुर्गी व पालतू पशुओं के लिए यह करकट या विछावन के रूप में प्रयोग की जाती है। इसका प्रयोग कागज, अग्निरोधी पटल (इंसुलेटिंग फायरबोर्ड), कार्डबोर्ड (गत्ता), प्लास्टिक और फरफ्यूरल के निर्माण में भी होता है। तेल शोधन और नाइलोन उद्योग के लिए फरफ्यूरल बड़ा महत्वपूर्ण है।

गन्ने का प्रजनन (सुधार)

गन्ने के सुधार के लिए गहन प्रजनन कार्य किया गया है और इससे उत्पन्न गन्ने की किस्मों का रोगरोधकता, तेज वृद्धि, शाखन का न होना और उच्च सुक्रोज उत्पादन आदि गुणों के लिए चयन किया गया है। डच शासकों ने सन् 1885 में एक गन्ना प्रयोगशाला जावा में स्थापित कर दी थी। इस प्रयोगशाला ने ईख की जिस किस्म का विकास किया है उसे विश्व में सर्वोत्तम किस्मों में माना जाता है। ब्रिटिश शासकों ने भी भारत के कोयंबटूर में ऐसी ही प्रयोगशाला और फिर एक बारबडोस में भी स्थापित की। इन प्रयोगशालाओं में विकसित ईख की उन्नत किस्में, बड़े पैमाने पर उगाई जाती हैं।

जावा में सोल्टवीडल ने, तथा स्वतंत्र रूप से हैरीसन एवं बोवेल ने, 1888 में ईख के बीजों की जीवनक्षमता की खोज की। यह खोज ऐसे समय हुई थी जब गन्ना उत्पादक भूभागों में रोगों का प्रकोप जोर पकड़ रहा था। इस खोज ने ईख प्रजनन में एक नए युग का सूत्रपात किया। शुरू के कुछ वर्षों के दौरान प्रजनन कार्यक्रम चयन तक सीमित था। मगर फिर शीघ्र ही इसके बाद अंतरउपजातीय (intervarietal) और आंतरजातीय (interspecific) संकरण कार्य आरंभ हो गए। *सैकेरम ऑफिसिनेरम* की किस्मों या उपजातियों और *सै.बारबेरी व सै. साइनेंस* जैसी अन्य जातियों के बीच संकरण करके रोधी उपजातियां विकसित की गईं। नोवल और वन्य प्ररूपों के बीच संकरण कराने का उद्देश्य ऐसे संकर विकसित करना था जिनमें दोनों जनकों के सर्वोत्तम गुण मौजूद हों यानि जिनमें *एस. ऑफिसिनेरम* जनक का मोटा, कोमल, लंबे तने वाला गन्ना और उच्च सुक्रोज मात्रा के साथ-साथ वन्य जनक *सै. स्पॉटेनियम* और *सै. रोबस्टम* की गहराई तक जाने वाली मूल (जड़) प्रणाली, प्रबलता, जलाभाव और रोगरोधकता जैसे सभी गुण मौजूद हों। इनकी पहली पीढ़ी की संतति, इन दोनों जनकों के बीच की मध्यवर्ती होती है और यह शर्करा उत्पादन के अनुपयुक्त रहती है क्योंकि इसका तना अक्सर पतला, मज्जादार होता है और उसमें शर्करा भी नगण्य होती है। मगर इसमें प्रबलता और रोगरोधकता के कुछ गुण पाए जाते हैं। एफ-1 संकरों का नोबल ईख उपजातियों के साथ प्रतीप संकर (बैक क्रॉस) वन्य जनक के उपयोगी गुणों को दुष्प्रभावित किए बिना गन्ने की उत्पादक गुणवत्ता को काफी ज्यादा उन्नत करता है। शर्करा की मात्रा को बढ़ाने के लिए नोबल ईख *सै. ऑफिसिनैरम* के साथ किया जाने वाला संकरण नोबिलाइजेशन या ईख उत्कृष्टीकरण कहलाता है। ईख प्रजनन में सबसे मुख्य घटना 1921 में जावा में सबसे श्रेष्ठ ईख का विकास था। पीओजे 2878 नामक यह सबसे पहली नोबलीकृत ईख हालांकि आज अपना महत्व प्राय: खो चुकी है, लेकिन यह ईख की लगभग प्रत्येक आधुनिक वंशावली में विद्यमान है। आधुनिक नोबलीकृत ईखें अनिवार्यत: *सै. स्पॉटेनियम* की ही व्युत्पन्न हैं, जिसका प्रतीप संकरण नोबल ईख प्ररूपों से किया गया था (चित्र 16.8)। ईख संकर में शर्करा की मात्रा में वृद्धि के इस योज्य प्रभाव की व्याख्या 1922 में ब्रेमर ने प्रस्तुत की थी। *सै. ऑफिसिनैरम* को जब *सै. स्पॉटेनियम, सै. बारबेरी* और *सै. साइनेंसिस* में किसी एक प्ररूप परागित करता है तो वह अपनी कायिक गुणसूत्र संख्या (2n) को संकर संतति को संचारित कर देता है। मगर वहीं अंतराजातीय संकरों में या जब इसे *सै. रोबस्टम* द्वारा परागित किया जा रहा हो तो उस स्थिति में यह सिर्फ युग्मकी (समानीत अगुणित) संख्या को संचारित करते समय सामान्य व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए, मादा जनक *सै. ऑफिसिनैरम* के परागणकर्ता *सै. स्पॉटेनियम* ($n = 56$) से संकरण से उत्पन्न संकर में सामान्य द्विगुणित गुणसूत्र संख्या (40 + 56) होने के बजाए, उसमें 40+40+56=136 गुणसूत्र होंगे। अब यदि इस नर प्रजननशील F_1 संकर ($n = 68$) का प्रतीप संकरण *सै. ऑफिसिनेरम* प्ररूप ($n = 40$) के मादा जनक से कराया जाता है तो नए संकर में 40+40+68 या $2n = 128$ गुणसूत्र होंगे। नर जनक के रूप में जब *सै. ऑफिसिनेरम* को प्रयोग किया जाता है तो इस तरह के प्रतीप संकरों के क्लोन गुणसूत्रों की संख्या आगे और वृद्धि नहीं दिखाते।

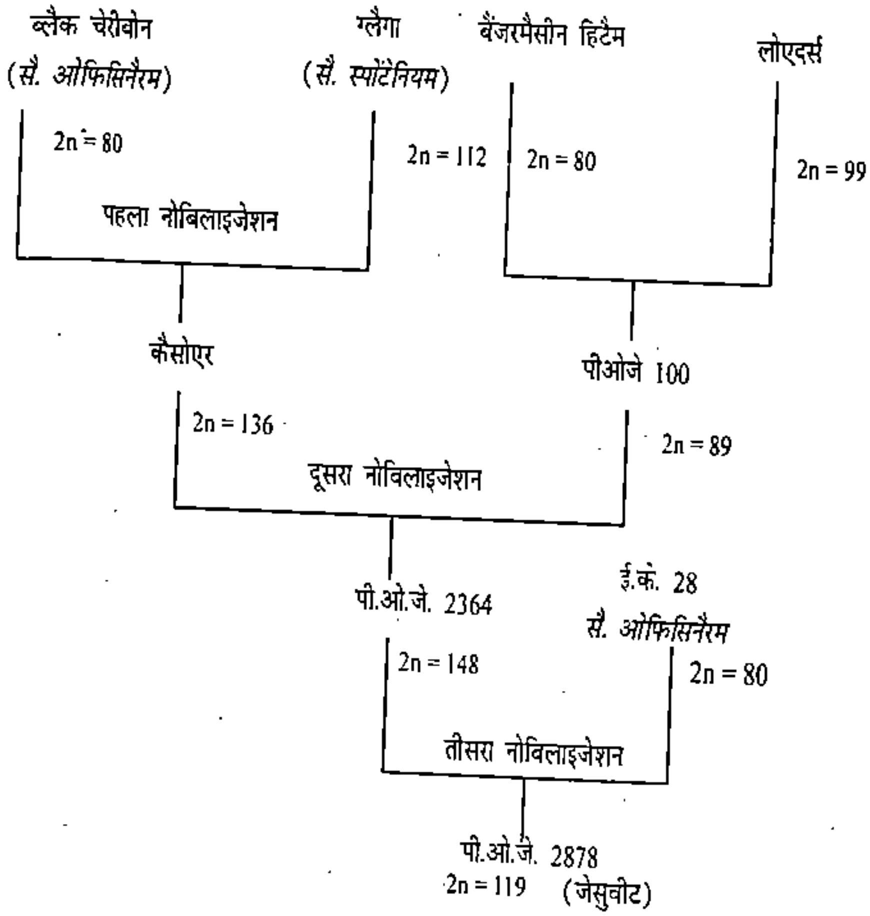

चित्र 16.8 : पी.ओ.जे. 2878 की वंशावली।

बोध प्रश्न 4

निम्न संकरों की पीढ़ी में गुणसूत्र संख्या बताइए:

i) *सै. ऑफिसिनैरम* (n = 40) (मादा जनक) × सै. स्पॉटेनियम (n = 56) (नर-जनक)
↓
F_1 [ ]

ii) *सै. ऑफिसिनैरम* (n = 40) (मादा जनक) × *सै. ऑफिसिनैरम* (n = 40) (नर जनक)
↓
F_1 [ ]

iii) *सै. ऑफिसिनैरम* (n = 40) (मादा जनक) × *सै. रोबस्टम* (n = 40) (नर जनक)
↓
F_1 [ ]

iv) *सै. ऑफिसिनैरम* (n = 40) (मादा जनक) × संकर संख्या 1 से प्राप्त F_1 नर प्रजननशील संकर
↓
F_1 [ ]

'नोबिलाइज़ेशन' और इस तरह के अन्य प्रक्रमों के जरिए भारत, ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका; हवाई और पूर्वी पश्चिमी गोलार्ध के अनेक द्वीपों में कई नई किस्में विकसित की जा चुकी हैं। फसल में सुधार के लिए नई उन्नत उपजातियों या किस्मों का निरंतर विकास किया जाना जरूरी है। हमारे देश में यह कार्य तमिलनाडु के कोयंबटूर स्थित ईख प्रजनन संस्थान (शुगरकेन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट) 1912 से, अपनी स्थापना के समय से ही कर रहा है। भारत में उगाए जाने वाले गन्ने की 90 प्रतिशत किस्में इसी संस्थान से ही निकली हैं जिसने देश में कुल उपज को बढ़ाने में बड़ा भारी योगदान किया है। गन्ने की उच्च उपज देने वाली कुछ किस्में इस प्रकार हैं: सी.ओ. 11; सी.ओ. 413; सी.ओ. 622; सी.ओ. 712; सी.ओ. 658; बी. 14; एच.एम. 320। कुछ रोगरोधी किस्में इस प्रकार हैं: सी.ओ. 331; सी.ओ. 213; सी.ओ. 349; और कुछ लोकप्रिय कृष्ट उपजातियां इस प्रकार हैं सी.ओ. 513; सी.ओ. 527; और सी.ओ. 421 इत्यादि।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ और राष्ट्रीय गन्ना प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर, उपजातीय सुधार पर शोधकार्य और गन्ना व चीनी उद्योग के बारे में जानकारी का प्रचार प्रसार कर रहे हैं। गन्ना प्रजनन संस्थान (The Sugarcane Breeding Institute) (सीएसआरआई) कोयंबटूर देश में मुख्य अनुसंधान कार्य कर रहा है।

गेहूं और धान की तरह गन्ना भी कृषि के क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय सहयोग और जैवप्रौद्योगिकी (बायोटैक्नालॉजी) के आदान-प्रदान का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। विश्व के विभिन्न प्रजनन प्रयोगशालाओं में विकसित उच्च उत्पादकता और रोगरोधकता वाले ईख क्लोन पूरे विश्व में फैल चुके हैं और वे अब ऐसी किस्मों की वंशावली में प्रवेश कर चुके हैं जो स्थानीय कृषि-जलवायु स्थितियों के अनुसार अनुकूलनशील हैं।

16.3 स्टार्च

कार्बोहाइड्रेट मुख्यत: प्लैस्टिड (लवकों) के भीतर 150 μ के आकार के कणों में स्टार्च के रूप में संचित रहते हैं। इन लवकों में इनके संश्लेषण के एन्जाइम विद्यमान रहते हैं। हरितलवक (क्लोरोप्लास्ट) में प्रकाशसंश्लेषण के फलस्वरूप बनने वाला ग्लूकोज स्टार्च में रूपांतरित हो जाता है। जड़ों और अन्य संचय अंगों की मृदूतक कोशिकाओं के साथ-साथ कई नवोद्भिदों में भी स्थानांतरित सुक्रोज ल्यूकोप्लास्ट (अवर्णी लवक) या एमाइलोप्लास्ट (मंडलवक) में स्टार्च में संश्लेषित हो जाती है। यह एमिलेज एंजाइम के इसको अपघटित करने तक, महीनों तक इसी अवस्था में बना रहता है। प्रत्येक ल्यूकोप्लास्ट सिर्फ एक ही स्टार्च कण उत्पन्न कर पाता है, जिससे ये कण कोशिका द्रव्य में मुक्त नजर आते हैं। स्टार्च दो भिन्न किस्म α-d (अल्फा-डी) ग्लूकोज अवशेषों का बना होता है - ये हैं एमिलोज और एमिलोपेक्टिन (चित्र 16.9)। एमिलोज एक लंबा अणु है (जिसमें 200-1000 ग्लूकोज इकाइयां होती हैं), जो अशाखित हेलिक्स (कुंडलिनी) बनाता है। यह गरम पानी में घुल जाता है इसीलिए व्यावसायिक रूप से इसका प्रयोग ''घुलनशील'' स्टार्च के रूप में होता है (जैसे कपड़ों पर स्टार्च या मांड चढ़ाने में)। एमिलोपेक्टिन अपेक्षतया एक छोटा अणु है जिसमें 40-60 ग्लूकोज इकाइयां होती हैं। यह एक अति शाखित हेलिक्स बनाता है। अधिकांश खाद्यान्नों और शिंब फलियों में 70-80 प्रतिशत यही स्टार्च होता है। मक्का में तो यह लगभग शतप्रतिशत और मटर में लगभग 30 प्रतिशत होता है। शायद अपने कुंडलन स्वभाव के कारण स्टार्च के अणुओं में कणों में समूहित रहने की प्रवृत्ति रहती है। अनाज में स्टार्च संकेन्द्री परतों में विद्यमान रहता है और फिर भिन्न जातियों में इसके विशिष्ट पैटर्न होते हैं (चित्र 16.10)। इसीलिए मक्का और आलू स्टार्च जैसे व्यावसायिक उत्पादों की मिलावट के लिए जांच करना संभव है।

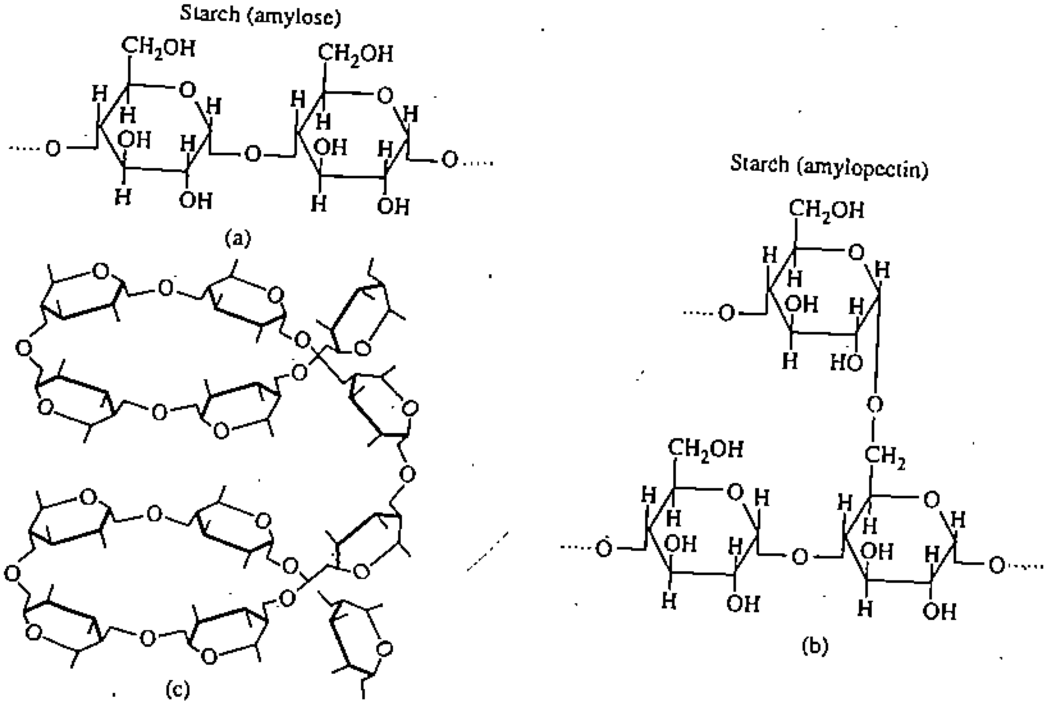

चित्र 16.9: a) एमिलोज के एक अणु में 1000 या अधिक ग्लूकोज इकाइयां एक लंबी अशाखित शृंखला में पाई जाती हैं। b) एमाइलोपेक्टिन 40 से 60 ग्लूकोज इकाइयों का बना होता है जो छोटी, शाखित शृंखलाओं में व्यवस्थित रहती हैं। c) स्टार्च के अणुओं में एक हेलिक्स बनाने और फिर कणिकाओं में समुचित होने की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

अधिकांश हरित पादपों में स्टार्च एक मुख्य भोजन संग्रह के रूप में पाया जाता है। इसकी विशेषता है कि यह पादपों के बीजों, तनों, पत्तियों और जड़ों में स्टार्च कणों के रूप में संचित रहता है। ये कण आकार, बनावट और अन्य सूक्ष्मदर्शीय वर्णनों में भिन्न रहते हैं। स्टार्च कण उत्केन्द्री - eccentric (आलू, सेम और अरारोट) या संकेन्द्री - concentric (गेहूं, मकई) होते हैं। कुछ स्थितियों में ये परस्पर जुड़कर संयुक्त स्टार्च कण बनाते हैं जैसे चावल में (चित्र 16.10)। आयोडीन पोटेशियम आयोडाइड घोल में ये एक विशिष्ट नीला-काला रंग दिखाते हैं।

अनाज हमारे स्टार्चयुक्त भोजन का बुनियादी स्रोत हैं। सभी महत्वपूर्ण मानव सभ्यताओं का आधार कोई न कोई खाद्यान्न रहा है। लेकिन आलू (*सोलैनम ट्यूबरोसम*), शकरकंद (*इपोमिया बैटाटास*), रतालू (*डायोस्कोरिया एलेटा*), कैसावा (*मैनिहाट एस्कुलेंटा*), केला (*म्यूसा सैपियेंटम*) जैसे कंद मूल और फल आज भी अनेक लोगों के भोजन का महत्वपूर्ण अंग हैं जो उन प्रदेशों में रहते हैं जो खाद्यान्य उत्पादन के लिए अनुकूल नहीं हैं। यद्यपि ये पादप एक दूसरे से घनिष्ट रूप से नहीं जुड़े हैं, तथापि इनमें काफी समानता है। ये सभी उष्णकटिबंध मूल के हैं जिनमें आलू उच्चभूमि (highlands) तो शेष जातियां निम्नभूमि (lowlands) में पैदा होती हैं। इनका प्रर्वधन कायिक होता है। यह कार्बोहाइड्रेट के बड़े महत्वपूर्ण स्रोत हैं। इनमें प्रोटीन बहुत कम मात्रा में पाए जाते इसलिए भोजन में अगर इनमें से सिर्फ कोई एक कंद काफी लम्बे अर्से तक लिया जाए तो इससे गंभीर रोग हो सकते हैं।

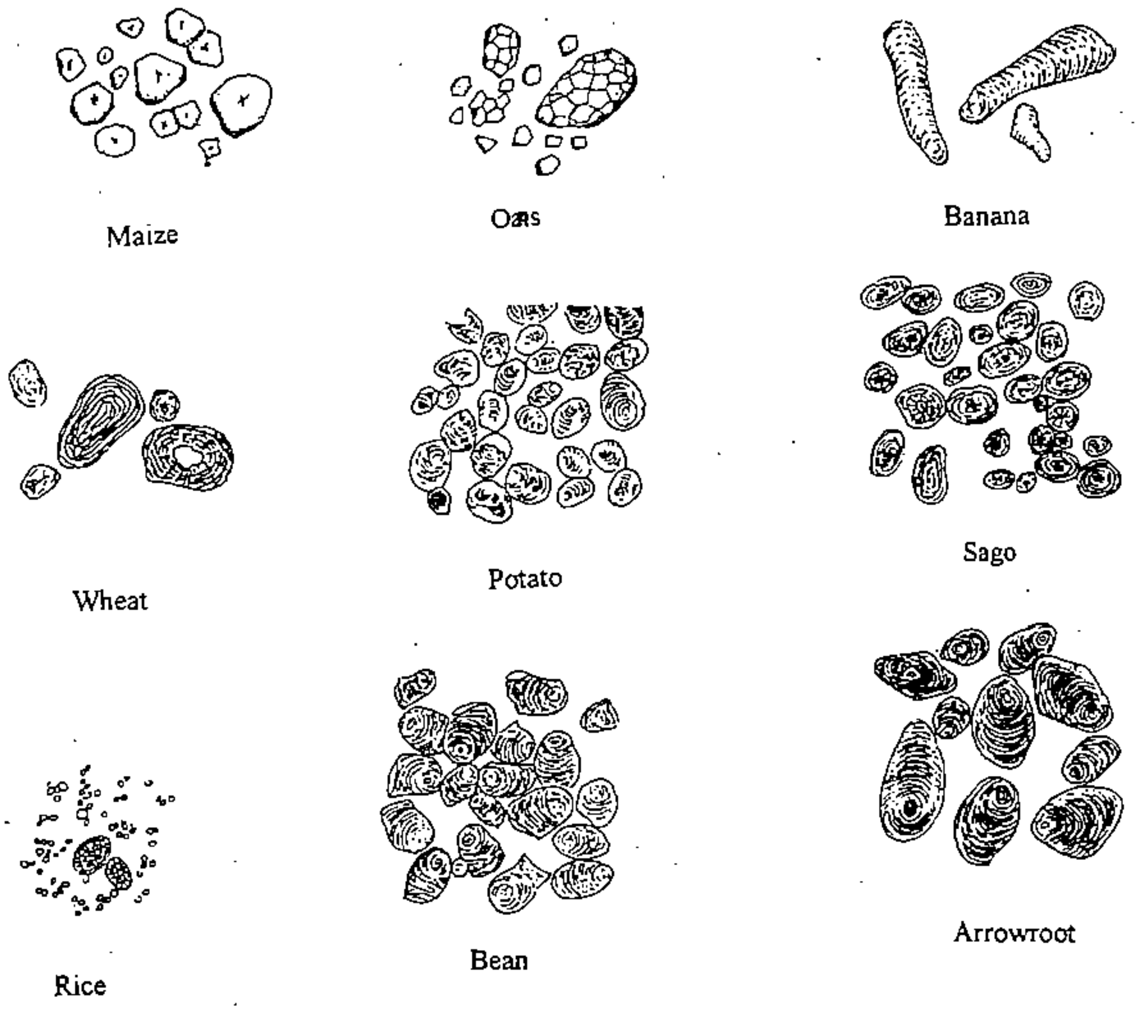

चित्र 16.10 : विभिन्न पादपों के स्टार्च कण जो प्रत्येक जाति के विशिष्ट पैटर्न को दर्शाते हैं।

व्यावसायिक पैमाने पर स्टार्च आलू (*सोलैनम ट्यूबरोसम*) के स्तंभ कंदों और कैसावा (*मैनीहॉट एस्कुलेंटा*) के मूल (जड़) कंदों से और अरारोट (*मैरांटा ऐरंडिनेसी*) के राइजोमों से प्राप्त किया जाता है। कैसावा के मूल कंद प्रमुख आहार भी हैं। इस इकाई में हमने विस्तार से आलू और कैसावा पर चर्चा की है। इसके अलावा कुछ महत्वपूर्ण व्यावसायिक स्टार्चों के बारे में भी बताया गया है।

बोध प्रश्न 5

i) रिक्त स्थानों में सही शब्द भरिए:

क) स्टार्च दो भिन्न किस्म के ······· और ······· α-d (अल्फा डी) ग्लूकोज घटकों का बना होता है।

ख) एमिलोज एक लंबा अणु है जो ······· हेलिक्स बनाता है।

ग) आलू के स्टार्च कण ······· हैं, मगर ······· में ये परस्पर मिलकर संयुक्त स्टार्च कण बनाते हैं।

घ) स्टार्च कण आयोडीन पोटेशियम आयोडाइड में ······· रंग देते हैं।

ड़) ······· हमारे स्टार्च युक्त आहार का बुनियादी स्रोत हैं।

च) व्यावसायिक पैमाने पर स्टार्च आलू के ······· और कैसावा के ······· से प्राप्त किया जाता है।

ii) स्टार्च उत्पन्न करने वाले तीन गैर-धान्य (non-cereal) पादपों के नाम बताइए।

....

....

....

16.3.1 आलू

वानस्पतिक नाम : ***सोलैनम ट्यूबरोसम***
कुल : सोलैनेसी
प्रचलित नाम : आलू
n = 24

साधारण आलू (*सोलैनम ट्यूबरोसम*) सोलैनेसी कुल का है। *सोलैनम* की अनेक वन्य जातियां आलू की तरह के छोटे कंद उत्पन्न करती हैं जिन्हें आदि काल से इंडियन जन-जाति के लोग जमीन से खोदकर निकाल खाते रहे हैं। इनमें से किसी एक या अधिक जाति को लगभग 2000 वर्ष पूर्व बोलीविया और पेरू की एंडीज पर्वतमाला में घरेलू बनाया गया था जो कालांतर में कृष्ट *सो. ट्यूबरोसम* बन गया। *सोलैनम* में द्विगुणित गुणसूत्र संख्या 24 है, जिसमें *सो. ट्यूबरोसम* ($2n = 48$) एक स्वचतुर्गुणित (autotetraploid) जाति है।

कहा जाता है कि आलू पर पहली दृष्टि 1537 में एक यूरोपीय की पड़ी थी, जब स्पेनवासियों के पांव आज के कोलंबिया में पड़े थे। इसके बाद के वर्षों में नई दुनिया के खोजकर्ताओं और धर्मप्रचारकों को इसकी जानकारी हुई और इसे 1570 तक यूरोप ले आया गया। सोलहवीं सदी के अंत तक इसकी खेती समूचे महाद्वीप में होने लगी थी और फिर 1663 तक यह आयरलैंड भी पहुंच गया। कृषि आलू उत्तरी अमेरिका में 1621 में लाया गया था। बहरहाल सत्रहवीं सदी तक आलू की खेती व्यापक स्तर पर नहीं होती थी। यूरोप में सत्रहवीं सदी के दौरान आलू को एकाएक मिली प्रमुखता का एक कारण यह था कि यूरोप के विभिन्न शासकों ने भोजन पदार्थ के रूप में इसकी उपयोगिता जान ली थी और इसीलिए उन्होंनें राजाज्ञा जारी कर अपनी प्रजा को इसकी खेती करने के लिए बाध्य कर दिया था। जर्मनी में 1744 में, और स्वीडन में 1764 में ऐसा किया गया था। आयरलैंड ने तो आलू को प्रमुख आहार के रूप में अपना लिया था। एक प्रमुख आहार के रूप में आलू की उपयोगिता को संभवत: सबसे पहले समझने वाले आयरिश लोग ही थे जिन्होंने सत्रहवीं सदी के मध्य तक इसे फसल के रूप में उगाना आरंभ कर दिया था। इस पर आयरिश कृषक वर्ग एक तरह से पूर्णतया निर्भर हो चले थे। यह सिलसिला 1845-46 में जाकर टूटा जब आलू की अंगमारी का रोग (जो *फाइटोफ्थोरा इनफेस्टैंस* नामक कवक से होता है) समूचे यूरोप में फैल गया। इससे पौधे की पत्तियां काली हो जाती हैं और आलू के कंद सड़ जाते हैं। फलस्वरूप आयरिश लोगों को भयंकर अकाल का सामना करना पड़ा। इस अकाल के चलते ही अभूतपूर्व पलायन भी हुआ। इस अकाल के कारण हुई मौतों और फिर अमेरिका को पलायन के कारण आयरलैंड की जनसंख्या काफी कम हो गई। यह माना जाता है कि आयरलैंड में आलू की खेती का आरंभ एक संकीर्ण आनुवंशिक स्रोत से हुआ होगा और अगर आलू की महाआनुवंशिक परिवर्तिता इसके दक्षिण अमेरिकी मूलभूमि से सुलभ रहती तो शायद इतना भयंकर दुर्भिक्ष नहीं आता और फिर इतिहास की धारा भिन्न रही होती। आयरिश लोगों के संयुक्त राज्य अमेरिका में पलायन करने से पहले ही आयरलैंड से इस आलू का पुर:स्थापन (introduction) न्यू इंग्लैंड में ''आयरिश'' आलू के नाम से हो चुका था। शकरकंद से अलग करने के लिए इसे कभी-कभी ''सफेद आलू कंद'' भी कहा जाता है (शकरकंद एक भिन्न कुल का सदस्य है)।

कृषि आलू की उत्पत्ति को लेकर दो मत हैं। एक मत के अनुसार यह *सोलैनम स्टेनोटोमम* के एक पूर्वज प्ररूप से सीधे सरल गुणसूत्रीय द्विगुणन के प्रक्रम द्वारा उत्पन्न हुआ होगा। दूसरा मत कहता है कि यह प्राचीन, द्विगुणित *सो. स्टेनोटोमम*, और द्विगुणित अपतृण *सो. स्पार्सीपाइलम* के बीच उभयद्विगुणित (amphidiploid) संकर के रूप में स्वत: उत्पन्न हुआ होगा।

भारत में आलू के प्रमुख उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, पं. बंगाल, पंजाब, गुजरात, मध्य प्रदेश और तमिलनाडू हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में आलू एक ग्रीष्म फसल, तो मैदानी इलाकों में शीत फसल के रूप में उगायी जाती है। आलू की किस्म, वर्धन स्थितियों, भंडारण और हस्तन के अनुसार आलू का भोजन मान बदलता है। विश्लेषणों से पता चलता है कि इसके संघटन में पानी 70-81 प्रतिशत, स्टार्च 8-28 प्रतिशत, प्रोटीन 1-3 प्रतिशत (अधिकतर कृष्योपजातियों में जेल्डाल नाइट्रोजन 5 प्रतिशत पाया जाता है, जिसमें से आधा संभवतया प्रोटीन के रूप में नहीं होता), रेशे 2-3 प्रतिशत और वसा 0.1 प्रतिशत है। इनके अलावा इसमें अलग-अलग संघटन में अमीनो अम्ल, खनिजों (पोटेशियम, फॉस्फोरस, लौह) के अंश और अन्य खाद्य अवयव पाए जाते हैं।

उच्च तापमान कंदीभवन (ट्यूबराइजेशन) के लिए अनुकूल नहीं है इसलिए आलू को उपोष्ण जलवायु वाले प्रदेशों में सिर्फ ठंडे मौसम में ही उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम वातावरण ठंडी नम जलवायु है जिसमें वार्षिक माध्य तापमान 15-21° से. हो तो मिट्टी उपजाऊ, भुरभुरी (चूर्णशील), सरंध्री, अम्लीय, हल्की हो और उसमें जल निकास अच्छा हो। दीर्घ दिवस स्थितियां और मिट्टी में उच्च नाइट्रोजन मात्रा पौधे की अच्छी वृद्धि के लिए अनुकूल है तो वहीं लघु दिवस और नाइट्रोजन की कमी शीघ्र कंदीभवन के अनुकूल है। इसकी फसल प्राय: रोग मुक्त कंदों से उगाई जाती है जिन्हें समूचा बोया जाता है या फिर टुकड़ों या सेटों में काट कर बोया जाता है। बीज के बड़े आलूओं को अनेक खंडों में काटा जाता है। हर टुकड़े में कम से कम एक कलिका या आंख होनी चाहिए। आदर्श रूप से ये टुकड़े मुख्य अक्ष के समकोण पर काटे जाएं ताकि शिखाग्री प्रभाविता हटाई जा सके। आलू के कंदों को लगभग तीन महीने के प्रसुप्ति काल की जरूरत पड़ती है मगर कुछ किस्मों (*सोलैनम ट्यूबरोसम*) को सात महीने के प्रसुप्ति काल की आवश्यकता पड़ती है। हरे आलू में सोलैनिन नाम जहरीला ग्लाइकोसाइड विद्यमान होता जो उच्च सांद्रण में मनुष्य और जानवर दोनों को बीमार कर सकता है और जानलेवा भी हो सकता है। यह यौगिक अंकुरित आलू में भी होता है।

आकारिकी

यह एक सीधा, शाखन कमोबेश फैलाव लिए, कंद उत्पादक पादप है जिसकी ऊंचाई 60-90 से.मी. तक होती है। आलू यद्यपि एक बहुवर्षीय पादप है, तथापि कृषि में इसे एक-वार्षिक पादप के रूप में लिया जाता है। तने का आकाशी भाग विकास के आरंभिक चरणों में सीधा या ऊर्ध्व होता है मगर कालांतर में यह अधिक फैलाव पा जाता है। पर्वसंधियों के अलावा आकाशी तना खोखला और कमजोर होता है। तने का भूमिगत भाग कमोबेश गोलाकार और ठोस रहता है जिससे क्षैतिज शाखाएं (भूस्तारी या स्टोलॉन) निकलती हैं। ये शाखाएं कक्षीय कलिकाओं से उत्पन्न होती हैं। मुख्य भूमिगत तने की पर्वसंधियों, साथ-साथ स्टोलॉनों पर 3-4 के झुंड में अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न होती हैं (चित्र 16.11)।

चित्र 16.11 : आलू का पौधा।

''वीज'' के टुकड़े से विकसित होने वाली पहली कुछ पत्तियां प्रायः सरल होती हैं मगर उसके बाद की पत्तियां संयुक्त और अनयिमित रूप से विषम पक्षाकार पाई जाती हैं। प्रत्येक पत्ती में एक अंतस्थ पर्णिका, 2-4 जोड़े, बड़ी पार्श्विक प्राथमिक अंडाकार पर्णिकाएं पाई जाती हैं जिनके किनारे समूचे या क्रकची रहते हैं। और अंत में छोटी द्वितीयक पर्णिकाएं (पत्रक) प्राथमिक पर्णिकाओं के बीच में अंत:प्रकीर्णित रहती हैं (चित्र 16.11)। पर्णिकाएं कमोबेश एक दूसरे के सामने होती हैं। तरुण अवस्था में ये घने रूप से रोमिल होती हैं मगर परिपक्व होने पर ये रोम मध्यशिरा और पार्श्व शिराओं तक सीमित हो जाती हैं। पत्तियां सर्पिल विन्यास में तने पर व्यवस्थित रहती हैं जिसमें दो आधारी पत्तीनुमा अनुपर्ण मुख्य तने को जकड़े रहते हैं। कंद छोटा होता है जो स्टोलॉन के शिखाग्र का अति दीर्घित भाग है (चित्र 16.12)। यह संचित भोजन से भरा होता है। आकारिकी के अनुसार यह एक लघुकृत, स्थूलनित तना है जो शल्कनुमा पत्तियों के अक्षों में कलिकाएं या आंखे लिए रहता है। ये पत्तियाँ शीघ्र ही गिर जाती हैं, जिससे इस पर एक अल्पवर्धित पर्ण क्षतचिन्ह (जिसे भौंह या आइब्रो कहते हैं) या कटक बना रह जाता है। आंखे छिछली, मध्यम या गहरी होती हैं, तथा आइब्रो हील या संलगन विंदु की दिशा में सुस्पष्ट (अर्ध वृत्ताकार) वनी होती है प्रत्येक आंख में एक अल्पवर्धित पर्ण कटक और कम से कम तीन कलिकाओं का समूह पाया जाता है। ये कलिकाएं एक हल्के गर्त में स्थित रहती हैं जो अविकसित पर्वसंधियुक्त एक पार्श्व शाख को दर्शाती हैं। आंखें कंद के इर्द-गिर्द सर्पिल विन्यास में व्यवस्थित रहती हैं और हील या आधारी विंदु की अपेक्षा इनका जमाव कंद के शिखाग्र या रोज सिरे की ओर अधिक रहता है (चित्र 16.14)। कंदों के आकार, बनावट और रंग में भारी विविधता पाई जाती है। इनकी त्वचा चिकनी या खुरदुरी हो सकती है।

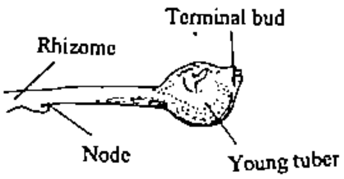

चित्र 16.12 : राइजोम के शीर्ष पर आलू का कंद, विकास की आरंभिक अवस्था में।

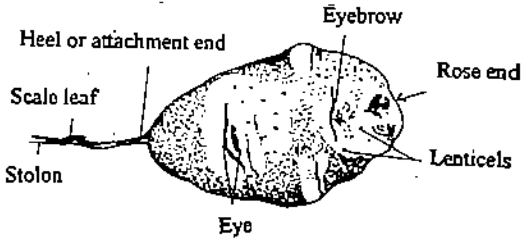

चित्र 16.13 : आलू के कंद के बाहरी लक्षणों को दर्शाता चित्र।

शारीरीय दृष्टि से आलू का कंद एक किस्म का एक तना है जो परिचर्म (पेरीडर्म), वल्कुट (कॉर्टेक्स), संवहन सिलिंडर, बाह्य मेडुला (मज्जा) जो भीतरी फ्लोएम (पोषवाह) को दर्शाता है और मृदूतक युक्त भीतरी मेडुला या मज्जा से बना रहता है (चित्र 16.14)। संवहन सिलिंडर वाह्य फ्लोएम और सुस्पष्ट जाइलम (दारू) बंडलों के छल्ले का बना होता है।

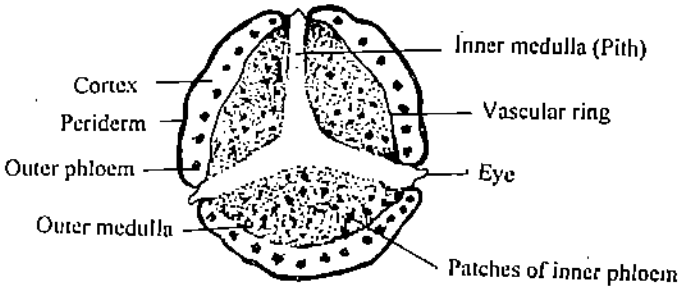

चित्र 16.14 : अनुप्रस्थ काट में आलू के कंद का बाह्य रेखाचित्र।

फ्लोएम, बाहरी और भीतरी दोनों के अवयव अनेक समूहों में पाए जाते हैं। भीतरी फ्लोएम मृदूतक (पैरेन्काइमा) से भरपूर रहता है और यही कंद का प्रधान संचय ऊतक माना जाता है। परिचर्म (पेरीडर्म) और जाइलम बंडलों में नगण्य संचय मृदूतक होता है। पतली कागी परिचर्म बाह्य रक्षी परत (त्वचा) का निर्माण करती है जिसे आसानी से उतारा जा सकता है। त्वचा वातरंध्रों से गर्तित रहती है। प्रोटीनों, खनिजों, टैनिन, क्रिस्टलों और वर्णकों (आलू की रंगदार किस्मों में) का एक बड़ा हिस्सा वल्कुल (कार्टेक्स) की बाहरी परतों में स्थानगत रहता है। आलू को छीलते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह गहरा न छिलने पाए क्योंकि इससे उसमें मौजूद महत्वपूर्ण पौष्टिक तत्व भी छिलके के साथ चले जाते हैं। कंद कोशिकाओं में विद्यमान स्टार्च पकने पर फूल जाता है, फलतः पतली कोशिका भित्तियां फट जाती हैं।

आलू के पौधों पर पुष्प आ भी सकते हैं या नहीं भी आ सकते हैं। यह दरअसल आलू की किस्म पर निर्भर करता है। यूं आलू के पुष्प सफेद, पीले या बैंगनी रंग के होते हैं और ये अंतस्थ झुंडों में उगते हैं। इसमें पांच संलीन बाह्यदल, पांच संलीन दल (पंखुड़ियां), पांच दललग्न पुंकेसर और द्विअंडपी जायांग पाए जाते हैं। फल गोलाकार (बेरी), अपरिपक्व अवस्था में हरा और पक्व अवस्था में बैंगनी-काला होता है।

प्रजनन की विधियां

आलू के प्रजनन के मुख्य चरण हैं: पुरःस्थापन, संकरण और चयन। संकरण प्रमुख विधि है जिसमें वांछित लक्षणों या गुणों को मिलाने के लिए व्यावसायिक उपजातियों के बीच आंतर-उपजातीय (intervarietal) संकर किए जाते हैं। ऐसा संकर द्विसंकर या बहुसंकर हो सकता है जिसमें कई उपजातियां शामिल हो सकती हैं। आलू एक कायिक प्रवर्धन करने वाली फसल है, इसकी व्यावसायिक उपजातियां या किस्में विषमयुग्मजी होती हैं; क्लोन का चयन (clonal selection) प्रायः संकरण के बाद F_1 पीढ़ी में किया जाता है। मुख्य प्रजनन कार्य दीर्घ दिवसी ग्रीष्म ऋतु में, शिमला के केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान में किया जाता है और विकसित फसल को मैदानी

इलाकों में लघुदिवसी शरत् ऋतु की फसल के रूप में उगाया जाता है। बहरहाल उन किस्मों में चयन कठिन हो जाता है जो मैदानी स्थितियों के लिए अनुकूलनित हो चुकी हैं। इसके लिए शिमला में संकर बना कर F_1 बीजों को पटना और जालंधर की क्षेत्रीय प्रयोगशालाओं को भेज दिया जाता हैं जहां उन्हें उगाकर लघु दिवसी स्थितियों में चयन किया जाता है।

कंद में जिन वांछित गुणों के लिए उसका चयन किया जाता है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं: परिरक्षण गुणवत्ता, आकार, बनावट, रंग, त्वचा की मोटाई, गठन और पौष्टिकता।

आजकल आलू की पुरानी किस्मों की जगह नई किस्में ले रहो हैं जैसे कुफरी किसान, कुफरी कुंदन, कुफरी सिंदूरी, कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी चमत्कार और कुफरी अलंकार। कुछ नवीनतम किस्में इस प्रकार हैं: कुफरी बहार, कुफरी बादशाह, कुफरी ज्योति और कुफरी लालिमा।

आर्थिक महत्व और उपयोग

1. आलू को एक ताजा सब्जी के रूप में दैनिक भोजन में तरह-तरह से खाया जाता है जैसे कि उबाल कर, भाप में पकाकर, फ्राइ करके या आग में पका कर।
2. आलू से नाना प्रकार के व्यंजन बनाए जाते हैं जैसे कटलेट, टिकिया, पापड़ इत्यादि।
3. आलू के संसाधन से अनेक खाद्य उत्पाद बनाए जाते हैं जैसे चिप्स या क्रिस्प, डिहाइड्रेटेड मैश्ड पोटैटो, आलू का आटा, फ्रोजन फ्रेंच फ्राइज और डिब्बाबंद आलू।
4. ताजा आलू विटामिन बी और सी का महत्वपूर्ण स्रोत है।
5. रोटी बनाने के लिए आलू का आटा (4 प्रतिशत तक) गेंहू के आटे में मिलाया जा सकता है।
6. आलू का स्टार्च आसंजक, डेक्स्ट्रोज और व्यावसायिक ग्लूकोज बनाने के काम भी आता है।
7. आलू के स्टार्च जिसे कलफ कहा जाता है लांडरियों में प्रयोग होता है और यह कागज बनाने के लिए भी उपयोगी हैं।
8. भारी मात्रा में औद्योगिक एल्कोहल आलू के स्टार्च से बनाया जाता है। इसके लिए आलू के स्टार्च को पहले शर्करा में बदला जाता है और फिर यीस्ट से किण्वन कराके एल्कोहल बनाया जाता है।
9. सूक्ष्म जीवों के वर्धन के लिए आलू एक अच्छा आधार (सबस्ट्रेट) है। उबले आलूओं से प्राप्त घोल का प्रयोग एक पोषण माध्यम के रूप में प्रयोगात्मक कार्य के लिए किया जाता रहा है।
10. प्रसद्धि रूसी मदिरा वोदका पके आलू के किण्वन से बनाई जाती है।

बोध प्रश्न 6

i) भारत में आलू के प्रमुख उत्पादक राज्यों के नाम बताइए।

....

....

....

ii) आलू को उपोष्ण जलवायु में शीत ऋतु में ही उगाया जा सकता है। टिप्पणी कीजिए।

....

....

....

iii) हरे आलू नुकसानदेह क्यों हैं ?

....

....

....

iv) भारत में उगाई जाने वाली आलू की तीन उपजातियों के नाम बताइए।

....

....

....

v) भारत में उस स्थान और संस्थान का नाम बताइए जहां आलू का उन्नत बनाने का कार्य चल रहा है।

....

....

....

16.3.2 कैसावा

वानस्पतिक नाम : *मैनीहॉट एस्कुलेंटा*
कुल : यूफॉर्बिएसी
प्रचलित नाम : मैनियोक, मैंडियोका, यूका, टैपिओका और सागू
n = 18

कैसावा उष्णकटिबंधी निम्न भूमि की पादप जाति है। यह अनुर्वरक मिट्टी और अनियमित खेती के लिए अनुकूल है। अपनी इस विशेषता के कारण यह विकासशील देशों में, गरीबों का मुख्य भोजन बन गया है। यह एक बहुवर्षी झाड़ी है, जिसमें रोपण के पहले और तीसरे वर्ष तक कंदिल मूल भारी मात्रा में लगते हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट की असाधारण मात्रा, मकई तथा चावल से काफी अधिक पाई जाती है। कैसावा आज दुनिया का छठा सबसे महत्वपूर्ण भोजन है। संपूर्ण उष्णकटिबंध प्रदेशों में एक महत्वपूर्ण मूल (जड़दार) फसल के रूप में कैसावा का स्थान अब सिर्फ शकरकंदी के बाद है। यह प्रत्येक उष्णकटिबंधीय देश में उगाया जाता है और इसकी लगभग 200 भिन्न उपजातियां ज्ञात हैं। मूल कंदों को जब तक जरूरत नहीं पड़ती बिना किसी गंभीर दुष्प्रभाव के जमीन में दबे रहने दिया जा सकता है। इन मूलों को उबालकर या भाप में पकाकर खाया जा सकता है।

कैसावा ब्राजील (द. अमेरिका) मूल का है। यह फसल कड़ाके की सर्दी सहन नहीं कर सकती और इसी कारण यह उत्तरी भारत की शीत स्थितियों में पुष्पन नहीं कर सकती। मगर यह भारी वर्षा सह सकती है। भारत में इस पौधे को काफी समय पहले पुर्तगाली, डच या स्पेनिश उपनिवेशकर्ता दक्षिणी केरल के त्रावणकोर में लाए थे। आज यह केरल की एक महत्वपूर्ण फसल है और उसके पश्चिम तटीय जनपदों के वासियों का एक मुख्य आहार बन गया है। अब इसकी खेती तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, गुजरात, आसाम और महाराष्ट्र में भी होने लगी है।

इस फसल के लिए अच्छे जल निकास वाली बागानी दुमट मिट्टी सबसे उपयुक्त रहती है। इसकी रोपाई सामग्री, तने की छोटी कटिंगे हैं जिन्हें पिछली फसल की कटाई के बाद प्राप्त किया जाता है। इसके लिए जो भाग चुने जाते हैं वे उपेक्षतया तरुण होने चाहिए। इन्हें वर्षा ऋतु आरंभ होने के ठीक पहले मिट्टी में क्षैतिज या अनुदैर्ध्य मगर तिरछे रोपा जाता है। इसे अक्सर अन्य खाद्य फसलों के साथ मिश्र फसल के रूप में उगाया जाता है। लेकिन इसे शुद्ध फसल के रूप में बोया जाता है। अंकुरण में एक हफ्ते का समय लगता है। सही विधि से उगाने के लिए प्रत्येक पौधे में तीन से अधिक शाखाएं उगने नहीं दी जाती, जिससे पौधा 2.5 से 3 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ जाता है। जड़ों के अच्छे विकास के लिए पौधे को 1.8 मीटर की ऊंचाई से अधिक बढ़ने नहीं दिया जाना चाहिए इसके लिए पौधे की छंटाई-कटाई की जाती है। पक्व जड़ों की मोटाई 7-10 से.मी. और लंबाई 30-45 से.मी. होती है और इनका वजन 1-2 कि.ग्रा. तक होता है। कुछ विशाल जड़ों का वजन तो 10 कि.ग्रा. तक पाया जाता है। कभी-कभार एक पौधा औसतन अच्छे आकार की 4-5 जड़े या मूल पैदा कर पाता है।

यह एक अल्प-जीवी झाड़ी है जिसके सभी अंगों में लेटेक्स (रबड़) पाया जाता है। इसमें कंद अपस्थानिक जड़ों में फुल्लन (swellings) के रूप में तने से थोड़ी दूरी पर, विकसित होते हैं। यह फुल्लन द्वितीयक स्थूलन प्रक्रम के द्वारा होता है (चित्र 16.15)। इनकी संख्या, बनावट, आकार और जमीन में किस गहराई तक ये प्रवेश करते हैं, बाहरी काग (कॉर्क) और भीतरी ऊतक का रंग इन सबमें भारी भिन्नता पाई जाती है। इसकी रचना इस प्रकार है : (क) एक बाह्य त्वचा या परिचर्म (पेरीडर्म)। काग की परतें खुरदुरी या चिकनी, सफेद, हल्की या गहरी भूरी, गुलाबी या लाल होती हैं, (ख) पतला छिलका (शल्क) या वल्कुट (कॉर्टेक्स) जो प्राय: सफेद होता है लेकिन यह गुलाबी या भूरे रंग का भी हो सकता है, और (ग) क्रोड (कोर) या मज्जा जो मुख्यत: मृदूतकी कोशिकाओं की वनी होती है। ये कोशिकाएं मध्यम आकार के स्टार्च कणों से भरी होती हैं। इनमें ताराकार नाभिका (हाइलम), कुछ संवहन बंडल और लैटेक्स ट्यूब पाई जाती हैं। लैटेक्स ट्यूब सफेद, पीली या लाल रंग की हो सकती हैं। यही खाद्य भाग है। कंदों के अलावा रेशेदार, अपस्थानिक जड़ें भी क्षैतिज और ऊर्ध्व दिशाओं में विकास करती हैं। पुराने कंद लिग्निनयुक्त हो जाते हैं।

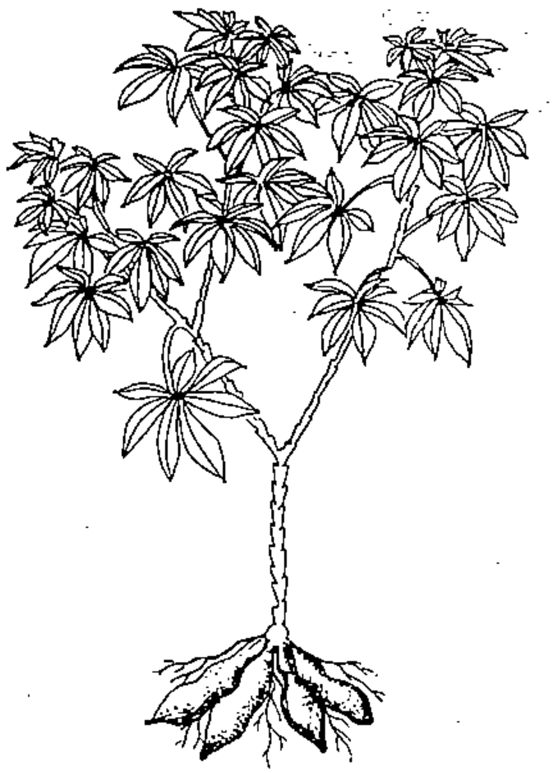

चित्र 16.15 : जड़ें और हस्ताकार पालियां युक्त पत्तियां दर्शाता कैसावा का पौधा।

तनों की ऊंचाई और शाखन में बड़ा अंतर देखने में आता है। शाखें अक्सर अरोमिल, कृशकाय होती हैं जिनमें पत्तियां शिखाग्र की ओर लगती हैं और नीचे की तरफ सुस्पष्ट पर्ण स्कार होते हैं। परिचर्म और पर्ण स्कार का रंग रजत-धूसरी से हरा-नीला, हल्का या गहरा भूरा बैंगनी रंग की धारियों सहित देखा जाता है।

पत्तियां सर्पिल विन्यास में व्यवस्थित पाई जाती हैं। इनके आकार और अनुवर्णों, वृंतों, मध्य शिरा और पटल (लैमिना) के रंग, पालियों की संख्या, पालिभवन की गहराई और पालियों की आकृति व चौड़ाई में काफी भिन्नता पाई जाती है। पर्णवृंत प्राय: लैमिना से लंबा होता है। लैमिना गहरा हस्ताकार 3-9 पालियां लिए होता है। यूं पालियों की संख्या 5-7 के बीच होती है। पालियां अंडाकार-भालाकार, समूचा सीमांत, आधार संकीर्ण, सिरा लंबाग्र, ऊपर से अरोमिल, शिराओं के नीचे की तरफ से कभी-कभी रोमिल होता है, अनुपर्ण प्राय: 3-5 भालाकार पालियों के साथ और पर्णपाती होते हैं। पर्णवृंत और मध्यशिरा हरे से गहरे लाल रंग की होती हैं। लैमिना लाल रंग का भी होता है। हरे और पीले शबलित प्ररूप भी पाए जाते हैं।

पुष्प शाखों के अंत के समीप कक्षीय असीमाक्ष में उत्पन्न होते हैं। ये एकलिंगी होते हैं तो नर और मादा पुष्प एक ही पुष्पक्रम में मौजूद होते हैं। मादा पुष्प आधार के समीप स्थित होते हैं। पुष्प बड़े छोटे होते हैं। वाह्यदल पुंज की पालियां रंगीन होती हैं और दलपुंज नहीं होता। नर पुष्प में दल पुंकेसर पांच-पांच के दो चक्करों में पाए जाते हैं। मादा पुष्प में जायांग त्रिअंडपी, त्रिकोष्ठकी होता है जहां प्रत्येक कोष्ठक में एक बीजांड होता है। फल 1.5 से.मी. लंबा, गोलाकार कैप्सूल होता है जिसमें छ: अनुदैर्ध्य, तथा तीन-कोशिक पंख पाए जाते हैं।

इसकी काष्ठीय फलभित्ति परागण के 3-5 महीने के वाद पकने पर धमाके से फटकर बीजों को प्रकीर्णित करती है। बीज दीर्घवृतज, धूसर-चितकवरे गहरे धब्बे वाले होते हैं और उनमें सुस्पष्ट बीजचोलक पाया जाता है।

खेती

इस पौधे की खेती गर्म जलवायु में की जाती है। यह पौधा आसानी से उगता है और इसे अधिक श्रम की जरूरत नहीं पड़ती। तने के कुछ इंच लंबे कर्तनों (कटिंग) को एक मीटर के अंतर पर खोदे गए गढ्ड़ों में रोपा जाता है। भिन्न-भिन्न जातियों को परिपक्व होने में अलग-अलग समय लगता है। कुछ उपजातियों में छ: महीने के भीतर कंद पक जाते हैं तो दूसरी उपजातियों को इसमें डेढ़ से दो वर्ष लग जाते हैं। कंदों का निर्माण उपस्थानिक जड़ों में द्वितीयक वृद्धि से होता है। इनमें स्टार्च की मात्रा लगभग 30 प्रतिशत तक होती है। पुराने कंद खाने योग्य नहीं रह जाते क्योंकि उनकी कोशिकाएं लिग्निनयुक्त हो जाती हैं। कंदों का आकार अलग-अलग होता है, ये अति दीर्घित और बेलनाकार संरचनाएं हैं जिनकी लंबाई दो से तीन मीटर तक जा पहुंचती है। सुविकसित पौधों में, कंद तने के नज़दीक, एक झुंड में विकसित होते हैं। ये कंद सामान्य रेशेदार जड़ों के पिंड से भी घिरे पाए जाते हैं। इन्हें प्राय: आठ महीने के वाद तोड़ लिया जाता है मगर बड़े और अच्छी गुणवत्ता वाले कंदों के लिए सोलह महीने या कुछ और अधिक समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इसकी परित्यक्त जड़ों से नए तनों का विकास जारी रहता है जिससे पौधा बहुवर्षी बना रहता है।

कैसावा की कृषोपजातियों को मोटे तौर पर "कटु" या "मधुर" समूह में बांटा गया है जिनमें एक सायनोजनक ग्लाइकोसाइड क्रमश: उच्च या निम्न सांद्रता में पाया जाता है। मधुर या मीठे कैसावा को खाने से पहले किसी विशेष उपचार की आवश्यकता नहीं पड़ती मगर कटु या कडुवी किस्मों को जहरीले रस से मुक्त करने या उसकी विषैक्तता को कम करने के लिए उन्हें काटा कतरा जाता है, निचोड़ा जाता है, पकाया जाता है और दूसरे तरीकों से उपचारित किया जाता है। इन दोनों समूहों के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं है क्योंकि ग्लाइकोसाइड की मात्रा पौधों और कृषोपजातियों में अलग-अलग होती है। मीठी किस्मों में मुख्य संचयी भाग, ग्लाइकोसाइड से अपेक्षतया मुक्त रहता है।

कंद मूल की फसलों के अनुसंधान और विकास कार्य के लिए 1963 में त्रिवेंद्रम में सेन्ट्रल ट्यूबर क्रॉप्स रिसर्च इंस्टीट्यूट (सी.टी.सी.आर.आई) की स्थापना की गई। यह अनुसंधान केन्द्र देश और विदेश से कंदिल फसलों का संग्रह रखता है। इसके पास कैसावा के लगभग 1300 किस्मों का संग्रह हैं जिनमें 250 किस्में विदेशी हैं। इसमें कैसावा की श्रेष्ठ उपजातियों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है विशेषकर जो मोजैक रोगरोधी और उच्च उत्पादन वाली हों। आंतरजातीय संकरण के फलस्वरूप संकर और श्रेष्ठ गुणों वाले प्ररूप पृथक किए जा चुके हैं इनमें से कुछ प्ररूप इस प्रकार हैं: एच.-97, एच.-165, एच.-226 है। प्ररूप एच.-97 में स्टार्च उच्च मात्रा में पाया जाता है। इसके कुछ चतुर्गुणित किस्में भी विकसित की गई हैं। जिनमें औसत प्रोटीन मान 3.9 प्रतिशत होता है जबकि द्विगुणितों में सिर्फ 1.8 प्रतिशत होता है। उच्च उपज वाली उपजातियों में प्रोटीन मान बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

आर्थिक उपयोग

कैसावा के अनेक उपयोग हैं :

1. समूची जड़ को उबाला जा सकता है, इसमें चिपचिपा भारी गाढ़ापन होता है जो खुद में स्वादहीन होता है। उबालने के बाद इसे आलू या शकरकंद की तरह सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है।

2. ब्राजील में इसे कतर कर, फिर गर्म और सुखा करके एक खाद्य चूर्ण बनाया जाता है जिसे फैरिन्हा कहते हैं। इसे अकेला या अन्य भोजन पदार्थों और चटनी के साथ मिलाकर खाया जाता है।

3. टैपियोका बनाने के लिए छिले मूलकंदों को कद्दूकस करके उसे कई दिन तक पानी में भिगाए रखा जाता है। उसके बाद उसे गूंथकर उसमें से पानी निथार कर सुखाया जाता है। अब उसे गर्म किया जाता है जिससे उसमें विद्यमान स्टार्च अंशत: शर्कराओं और जेल (gel) में जल-अपघटित हो जाए। इससे यह फूलकर ढेलों में बंट जाती है। यही ढेले और स्टार्च टैपियोका पर्ल के नाम से जाने जाते हैं। इसे पुडिंग, बिस्कुट और कनफेक्शनरी बनाने में प्रयोग किया जाता है।

4. कंदों के छिलके उतार कर उनके पतले-पतले स्लाइस बनाए जाते हैं और फिर उन्हें हल्का उबालकर सुखाया जाता है। इन चिप्सों को आलू के चिप्सों की तरह खाया जा सकता है या फिर इन्हें पीस कर खीर इत्यादि की तरह भी खाया जा सकता है।

5. कैसावा की औद्योगिक उपयोगिता भी सिद्ध है। इसके स्टार्च का किसी न किसी रूप में सामान्य व्यापार होता है। इसका स्टार्च लांड्री के लिए आसंजकों के निर्माण, कागज़ बनाने (पेपर साइजिंग) और शर्करा, एल्कोहल और एसीटोन के स्रोत के रूप में प्रयोग होता है।

निम्न भूमि उष्णकटिबंधीय दक्षिण अमेरिका में इन कंद मूलों को चूसकर बीयर बनाने का प्रचलन आज तक जारी है। लारस्त्रवण से स्टार्च शर्करा में परिवर्तित हो जाता है जिसके बाद वन्य यीस्ट से उसका किण्वन कर लिया जाता है और इस प्रकार बीयर तैयार हो जाती है।

अफ्रीका में कैसावा की पत्तियाँ जलज-बूटी के काम आती है क्योंकि इनमें 30 प्रतिशत तक प्रोटीन होती है। इनके वृहत्तर प्रयोग से उन लोगों को कुपोषण से बचाया जा सकता है जो भोजन के लिए कैसावा पर निर्भर हैं।

टैपियोका आटा एक विशेष प्रक्रम के द्वारा बनाया जाता है। कंदों को छील, धोकर, कद्दूकस या पीसा जाता है। संपीडित लुग्धी को अब लेटेक्स से अलग कर दिया जाता है और इसे एक थैले में निचोड़ कर रस निकाल लिया जाता है। इससे स्टार्च दूध की धार की तरह बाहर निकल आता है और रेशे तथा अन्य अशुद्धियां कपड़े के बैग में ही रह जाती हैं। थैले में बार-बार ताजा पानी डालकर निचोड़ना और मर्दन स्टार्च निकलना बंद होने तक दोहराया जाता है जिसके बाद सिर्फ पानी की धारा ही निकलती है। स्टार्च की चिकनी परत नीचे बैठने पर साफ पानी को निथार दिया जाता है। इसे पहले धूप में और फिर तप्त प्लेट के ऊपर सुखाया जाता है। इंडियन टैपियोका से सैमोलिना और सैलमसैगा बनाए जाते हैं।

स्टार्च पशुओं के चारे के काम आता है।

कटु किस्मों के रस से "कैसारीप" नामक पदार्थ वनाया जाता है और सॉस (चटनी) बनाने के काम आता है। रस का किण्वन कर एल्कोहल युक्त पेय बनाए जाते हैं।

व्यावसायिक स्टार्चों के प्रकार

1. अरारोट स्टार्च

अनेक उष्ण कटिबंधीय पादपों के कंद जैसे वेस्ट इंडियन अरारोट (*मैरांटा ऐरंडिनेसी*), फ्लोरिडा अरारोट (*फेना एड्यूलिस*) और ईस्ट इंडियन अरारोट (*करक्यूमा एंगस्टीफोलिया*) से अरारोट स्टार्च मिलता है। इसके कंदों को छीला, धोया और पीसा जाता है इसके बाद लुग्दी को छिद्रित सिलिंडरों से गुजारा जाता है जहां से एक जलधारा, स्टार्च को निःसादी टैंक में ले जाती है। अरारोट स्टार्च आसानी से पच जाता है और इससे बच्चों के लिए सूप या ब्रौथ बनाया जाता है। इसे लांड्री में भी इस्तेमाल किया जाता है।

2. धान्य स्टार्च

यह मक्का (*जिया मेस*) के दानों से बनाया जाता है। इसके दानों को गर्म पानी में भिगाया जाता है, जिसमें थोड़ी मात्रा में सल्फ्यूरस अम्ल डाल दिया जाता है। इससे किण्वन नहीं होता और दाना मुलायम हो जाता है। इसके बाद दानों को इस तरह से दला जाता है कि उनमें विद्यमान भ्रूणों को हानि न पहूंचे। अब इन्हें जर्म सैपरेटरों से गुजारा जाता है, फिर बीरीकी से दलकर छिद्रित सिलिंडरों में धोया जाता है जिससे छिलका अलग हो जाए। इससे बनने वाला दूधनुमा तरल को आनत टेबुलों (inclined tables) के ऊपर से प्रवाहित किया जाता है, जिन पर स्टार्च के कण बैठ जाते हैं। इसे एकत्र कर सुखाया जाता है और बाजार में बेचने के लिए तैयार किया जाता है।

3. कैसावा स्टार्च

कैसावा (*मैनिहोट एस्कुलेंटा*) से प्राप्त होने वाला स्टार्च कई उद्योगों में साइजिंग द्रव्य के रूप में काम आता है।

4. आलू स्टार्च

यह आलू (*सोलैनम ट्यूबरोसम*) के कंदों से प्राप्त किया जाता है। स्टार्च छंटे आलूओं से निकाला जाता है। इसके लिए उन्हें धोकर और उनकी लुग्दी बनाकर उसे छनित्रों से गुजारा जाता है ताकि उसमें से रेशेदार पदार्थ अलग हो जाए। अपकेन्द्रण के बाद होने वाले अवसादन से ठोस स्टार्च अलग हो जाता है, जिसे सुखाकर बाजार में बेचने के लिए तैयार किया जाता है। आलू स्टार्च का प्रयोग वस्त्र उद्योग में बड़े पैमाने पर किया जाता है। यह ग्लूकोज, डेक्सट्रिन और औद्योगिक स्रोत का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

5. धान मांड

यह चावल (*ओराइज़ा सैटाइवा*) के दानों से निकाला जाता है। चावल के टूटे या अनुपयु दानों को स्टार्च निकालने के लिए प्रयोग किया जाता है। दानों को कास्टिक सोडा से उपचारित कर धोया जाता है और फिर उसे पीस कर महीन छन्नी से छाना जाता है। निस्यंदक में अब क्षार मिलाया जाता है। जिससे स्टार्च अवसाद बनकर नीचे बैठ जाता है इसे निकाल और धोकर सुखाया जाता है। धान की मांड या स्टार्च को मुख्यतः लांड्री म कलफ लगाने में प्रयोग किया जाता है।

6. सागो स्टार्च

यह सागो पाम (*मेटाजाइलॉन सागो*) से प्राप्त किया जाता है। सागो पाम के तने की मज्ज ही व्यावसायिक सागो स्टार्च का स्रोत है। यह लंबा उष्णकटिबंधी खजूर का पेड़ पुष्पन पहले तने में स्टार्च संचित करके रखता है। पुष्पन के बाद इसको काट गिराया जाता है और उससे स्टार्च युक्त मज्जा निकाल ली जाती है। मज्जा को पीस कर और फिर उस पानी मिलाकर छन्नी से छान लिया जाता है। अवसादन से स्टार्च अलग हो जाता है जि

धोकर सुखा लिया जाता है और इस तरह प्राप्त होने वाले अंतिम उत्पाद को सागो आटा कहते हैं। इस आटे की लुग्दी बनाई जाती है और उसे छन्नी पर रगड़ा जाता है जिससे स्टार्च की कणिकाएं बन जाती है। इन्हें अब धूप या भट्टी में सुखाया जाता है। इस तरह ठोस चमकदार कण मिलते हैं जिन्हें व्यापार जगत में पर्ल सागो कहते हैं। सागो आटा और पर्ल सागो खाद्य स्टार्च के महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

7. गेहूं स्टार्च

यह रोटी गेहूं (*ट्राइटिकम एस्टीवम*) से निकाला जाता है। यह स्टार्च का सबसे प्राचीन व्यावसायिक स्रोत है। इसे गेहूं के दानों के आंशिक किण्वन से निकाला जाता है गेहूं स्टार्च का प्रयोग कपड़ा उद्योग में होता है।

बोध प्रश्न 7

i) कैसावा (*मैनीहोट एस्कुलेंटा*) .... कुल का सदस्य है और इसके अन्य प्रचलित नाम हैं ....।

ii) कैसावा .... मूल का है और इसे भारत के .... भाग में पुर्तगाली उपनिवेशक लाए थे।

iii) कैसावा .... जलवायु में उगाया जाता है जबकि आलू को .... के लिए कम तापमान की जरूरत पड़ती है।

iv) कैसावा की कृषोपजातियों को उनमें सायनोजनक ग्लाइकोसाइड की सांद्रता के आधार पर .... और .... श्रेणियों में बांटा जाता है।

v) सी.टी.सी.आर.आई. का पूर्ण रूप .... है।

16.4 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- शर्कराएं प्रकाश-संश्लेषण का प्राथमिक उत्पाद हैं। जिसका बड़ा अंश स्वयं पौधे की विभिन्न उपापचयी प्रक्रमों में खप जाता है। शर्करा एक कार्बोहाइड्रेट है जो रासायनिक दृष्टि से 1:2:1 के अनुपात में कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से मिलकर बनता है। मानव के लिए ऊर्जा का यह एक सर्वोत्तम प्राकृतिक स्रोत है।

- शर्करा देने वाले आम पादप हैं : गन्ना (*सैकेरम ऑफिसिनैरम*), चुकंदर (*बीटा वल्गैरिस*), मैपल (*एसर सैकेरम*) और विभिन्न खजूर (*फीनिक्स सल्वेस्ट्रिस, कैरियोटा यूरेंस, अरेंगा पिन्नैटा, बोरसस फ्लैबेलिफर, कोकोस न्यूसिफेरा*)

- ईख शर्करा गन्ने से बनाई जाती है। इस पौधे की बड़े पैमाने पर खेती होती है। ईख या गन्ने का प्रवर्धन तीन से पांच जोड़ों या संधियों वाली कटिंगों (कर्तनों) द्वारा किया जाता है। जिन्हें हम "बीज ईख" या "बीज खंड" कहते हैं। इसके लिए मात्र पादप के ऊपरी भाग के जोड़ों से ये कटिंगें ली जाती हैं। गन्ने का प्रवर्धन रतूनों के जरिए भी किया जाता है। इसमें कटाई के बाद भूमि के नीचे छूटे गन्ने के हिस्से पर विद्यमान प्रसुप्त कलिकाएं दो या तीन सप्ताह में अंकुरित होकर ईख की नई फसल पैदा करती हैं जिसे "ठूंठी फसल" या "रैतून फसल" के नाम से जाना जाता है।

  कटाई तने को यथा संभव जमीन के समीप से काट कर की जाती है क्योंकि गन्ने का नीचे का भाग सबसे ज्यादा रसीला रहता है। कटाई के तत्काल बाद गन्ना कारखानों या चीनी मिलों

में रस निकालने के लिए पहुंचा दिया जाता है। निष्कर्षित रस को एक प्रक्रम से गुजरना पड़ता है जिसे ''वर्गीकरण'' कहते हैं।

- साफ और गाढ़े रस को एक निश्चित घनत्व तक सांद्रित किया जाता है जिससे शर्करा गाढ़े सिरप (मास्क्वीट) से क्रिस्टल के रूप में बाहर निकल आती है।

- शर्करा को अनादिकाल से एक मधुरक (मीठे) के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। मिष्ठानों और पेयों के निर्माण से (मधुरक के रूप में इसे तरह-तरह से बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है। खाद्य परिरक्षण में इसे बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है। इसे ऑक्जैलिक अम्ल और ऑक्टाएसीटेट को बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। चीनी बनाने के प्रकमों से मिलने वाले उपोत्पादों के कई उपयोग हैं।

- रोग रोधी और अधिक पैदावार देने वाली ईख की उन्नत उपजातियां विस्तृत प्रजनन कार्य के माध्यम से विकसित की जाती हैं। जिसमें चयन, आंतरोपजातीय और आंतरजातीय संकरण और नॉबिलाइजेशन किया जाता है।

- स्टार्च सभी हरे पादपों का मुख्य संचित भोजन है। यह एक जटिल कार्बोहाइड्रेट है जो लवकों के अंदर कणों के रूप में विद्यमान रहता है। यह तनुभित्ति कोशिकाओं के अंदर संचित रहता है।

- धान्य फसलें जैसे धान, मक्का और गेहूं तथा भूमिगत कंद जैसे आलू, अरारोट, शकरकंद, कैसावा ये सभी स्टार्च के प्रमुख स्रोत हैं।

- स्टार्च के कणों का आकार, बनावट और अन्य सूक्ष्मदर्शीय बारीकियां विभिन्न पादप जातियों में भिन्न होती हैं। यह उत्केन्द्री या संकेन्द्री होते हैं, या फिर ये परस्पर मिलकर संयुक्त स्टार्च कण भी बनाते हैं।

- स्टार्च को कागज उद्योग में साइजिंग एजेंट के रूप में प्रयोग किया जाता है। कैलिको छपाई में यह एक रंगबंधक का काम करता है। इसे लांड्री, औषधियों, टॉयलेट सामाग्रियों और बंधक सामग्रियों (आसंजकों) में भी प्रयोग किया जाता है।

- साधारण आलू, स्टार्च का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। भारत में प्रमुख आलू उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, प. बंगाल, पंजाब, गुजरात, मध्यप्रदेश और तमिलनाडू हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में इसे ग्रीष्मकालीन फसल तो मैदानी क्षेत्रों में शीतकालीन फसल के रूप में उगाया जाता है। शारीरीय दृष्टि से आलू का कंद एक तना है जिस पर वाह्य-कलिकाएं (आंखें) विद्यमान रहती हैं। जो नए पौधे में अंकुरित हो सकती हैं। इसके कायिक प्रवर्धन के लिए आलू के खंड काटे जाते हैं जिनमें कम से कम एक कलिका होती है। इसका कारण यह है कि लैंगिक प्रजनन काफी धीमा होता है और फिर इसमें आनुवंशिक विसंयोजन के कारण होने वाले परिवर्तनों का जोखिम भी रहता है।

- आलू में प्रजनन की प्रमुख विधि संकरण है जिसमें वांछित गुण लाने के लिए व्यावसायिक उपजातियों में आंतरोपजातीय संकर किए जाते हैं।

- कैसावा एक और महत्वपूर्ण स्टार्च उत्पादक मूल (जड़दार) फसल है। यह पौधा ब्राजील मूल का है और इसे भारत के कई राज्यों में उगाया जा रहा है। कैसावा के पौधे में अनेक फुल्लित जड़ें लगती हैं जो शकरकंद जैसी दिखाई देती हैं। इसकी हस्ताकार पत्तियां इस जीनस की विशेषता हैं। जड़ों में 30 प्रतिशत के लगभग स्टार्च होता है जो मुख्यत: उनकी विशाल मज्जा में संचित रहता है। इसमें पाए जाने वाले सायानोजन ग्लाइकोसाइड की उच्च या निम्न सांद्रता के अनुसार कैसावा को क्रमश:

'कटु' या 'मधुर' समूहों में बांटा गया है। मीठी या मधुर किस्मों को खाने से पहले किसी प्रकार के विशेष उपचार की आवश्यकता नहीं पड़ती है। मगर कटु उपजातियों को खाने से पहले इसे कतरा, निचोड़ा और पकाया जाता है जिससे उनकी विषाक्तता कम हो जाए।

16.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्नलिखित पर संक्षेप में टिप्पणी कीजिए:

   क) ईख का नोबिलाइजेशन

   ख) चीनी उद्योग के उपोत्पाद

   ग) खोई

   घ) शीरा (मोलासेज)

....

....

....

....

....

....

2. ईख शर्करा क्या है ? इसके व्यावसायिक उत्पादन के प्रक्रम के बारे में बताइए।

....

....

....

3. ईख के तने के पर्वसंधि और पर्व भाग का अंकित स्केच बनाइए।

4. ईख के कायिक प्रवर्धन के लाभों के बारे में संक्षेप में बताइए।

....

....

5. क) उन देशों के नाम बताइए जहां गन्ने की खेती की जाती है।

....

ख) भारत में गन्ने को उन्नत बनाने के लिए कार्य कर रहे अनुसंस्थान संस्थानों और उक्त जगहों के नाम बताइए जहां वे स्थापित हैं।

....

....

....

....

ग) भारत में ईख शर्करा (चीनी) के अग्रणी उत्पादक राज्यों के नाम बताइए।

....

....

6. व्यासायिक स्टार्च देने वाले पादपों के वानस्पतिक नाम, कुलों के नाम और उनके अंगों की आकारिकी के बारे में बताइए जिनसे स्टार्च प्राप्त किया जाता है।

....

....

....

7. आलू के कंद की अनुदैर्ध्य काट का अंकित स्केच बनाइए।

8. निम्नलिखित पर संक्षेप में नोट लिखिए:

क) स्टार्च के उपोत्पाद और उनके उपयोग

ख) आलू दुर्भिक्ष और आयरिश पलायन

ग) *मैनीहॉट एस्कुलेंटा*

....

....

....

....

....

....

9. किसी भी राष्ट्र की मात्र एक फसल पर निर्भरता के परिणाम जोखिम भरे हो सकते हैं। आलू का संदर्भ देकर इस पर व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

10. आलू या कैसावा की खेती की विधियां और उपयोग बताइए।

....

....

....

....

16.6 उत्तर

बोध प्रश्न

1. i) ईख (गन्ना) - *सैकेरम ऑफिसिनैरम*
   चुकंदर - *बीटा वल्गैरिस*
   मैपल - *एसर सैकेरम*

   ii) तना - सोरघम, ईख, मैपल
   जड़े (मूल) - चुकंदर, गाजर
   शल्क कंद (बल्ब)- प्याज़
   पुष्पक्रम - खजूर

   iii) उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, बिहार।

   iv) कृष्ट ईख की उत्पत्ति के दो भौगोलिक केन्द्र हैं:
   क) दक्षिण प्रशांत दीप समूह (न्यू गिनी), और
   ख) उत्तरी भारत

   v) नोबल (उत्कृष्ट) गन्ना - *सैकेरम ऑफिसिनैरम*
   भारतीय गन्ना (इंडियन ईख) - *सैकेरम बारबेरी*
   जंगली गन्ना (वन्य ईख) - *सैकेरम स्पॉटेनियम*

2 i) कटाई के बाद गन्ने का कुछ भाग को जमीन में दबे रहने दिया जाता है। इन पर विद्यमान प्रसुप्त कलिकाएं 2-3 हफ्ते में अंकुरित होकर नई फसल उत्पन्न करती हैं जिसे "ठूंठी" या रतून फसल कहते हैं।

   ii) गन्ने की कटाई की सही अवस्था तब होती है जब यह उच्चतम शर्करा मात्रा के साथ परिपक्व होता है पक्वन की जांच के लिए 7-10 दिन के अंतर में यादृच्छिक नमूने लिए जाते हैं। यह जांच या तो पूरे गन्ने को काट कर की जाती है या फिर खड़ी ईख के ऊपरी और निचले तिहाई हिस्से के बीच स्थित मध्य पर्वों से रिफ्रैक्ट्रोमीटर से रस की जांच से की जाती है।

3 i) खोई

ii) अपमलन

iii) शीरा

iv) मासक्वीट

4. i) 40 + 40 + 56 = 136 गुणसूत्र

ii) 40 + 40 = 80 गुणसूत्र

iii) 40 + 40 = 80 गुणसूत्र

iv) 40 + 40 + 68 = 148 गुणसूत्र

5. क) एमाइलोस; एमाइलोपेक्टिन

ख) अशाखित

ग) उत्केन्द्री; धान

घ) नीला-काला

च) धान्य (अनाज)

छ) स्तंभ कंद; मूल (जड़) कंद

ii) आलू - *सौलेनम ट्यूबरोसमं*

शकरकंद - *इपोमिया बैटाटस*

कैसावा - *मैनिहॉट एस्कुलैंटा*

6. i) उत्तर प्रदेश, प. बंगाल, पंजाब, गुजरात, मध्य प्रदेश और तमिलनाडू।

ii) उपोष्ण जलवायु में आलू सिर्फ शीत ऋतु में ही उगाया जा सकता है क्योंकि उच्च तापमान में कंदीभवन (ट्यूबराइजेशन) नहीं होता है। इसकी खेती के लिए शीत नम जलवायु सबसे उपयुक्त है।

iii) हरे आलू में सोलैनिन नामक एक जहरीला ग्लाइकोसाइड विद्यमान होता है जो उच्च सांद्रता में मानव और पालतू पशुओं में बीमारी और मृत्यु तक का कारण बन जाता है।

iv) कुफरी किसान, कुफरी कुंदन, कुफरी सिंदूरी

v) केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला

7. i) यूफोर्बिएसी; मैन्डियोका, यूका, टैपियोका, सागू

ii) ब्राजील; त्रावणकोर (दक्षिण केरल)

iii) तप्त; कंदीभवन

iv) कटु (कड़ुवा); मधुर (मीठा)

v) सेन्ट्रल ट्यूबर क्रॉप्स रिसर्च इंस्टीट्यूट

अंत में कुछ प्रश्न

1. क) ईख का नोबिलाइजेशन : गन्ने की किस्मों को उन्नत बनाने के लिए, नोबल ईख (*सैकेरम ऑफिसिनैरम*) और वन्य ईख (*सै. स्पोंटेनियम* और *सै. रोबस्टम*) के बीच संकर किए गए। इसके पीछे ऐसे संकर विकसित करने का उद्देश्य था जिसमें दोनों जनकों के सर्वोत्तम गुण मिले हों। यानि *सै. ऑफिसिनैरम* की मोटी, कोमल, लंबी नाल और उच्च शर्करा मात्रा वाली

ईख और वन्य जनक की गहरी मूल प्रणाली, जलाभाव और रोग रोधकता। पहली पीढ़ी की संतति दोनों जनकों के बीच मध्यवर्ती होती है और प्राय: चीनी या शर्करा के निर्माण के लिए व्यावसायिक दृष्टि से अनुपयुक्त होती है। इसका कारण यह है कि तने अक्सर पतले, मज्जादार होते हैं और उनमें शर्करा नगण्य होती है। मगर वहीं इनमें प्रबलता और रोगरोधिता के गुण पाए जाते हैं। F_1 संकरों की नोबल ईख उपजातियों के साथ प्रतीप संकरण कराने से गन्ने की उत्पादन गुणवत्ता वन्य जनक के उपयोगी गुणों को प्रभावित किए बिना, काफी हद तक बढ़ जाती है। नोबल ईख (*सै. ऑफिसिनैरम*) के साथ संकरण के जरिए गन्ने में शर्करा की मात्रा को उन्नत करना ''नोविलाइजेशन'' कहलाता है।

ख) चीनी उद्योग से प्राप्त होने वाले महत्वपूर्ण उपोत्पाद इस प्रकार हैं :

1. **खोई:** गन्ने का रस निकाल लेने के बाद जो रेशेदार अवशेष बच जाता है उसे ही खोई कहते हैं। इसे मिलों में ईंधन के रूप में, फाइबर बोर्ड और कार्ड बोर्ड, इंसुलेशन (तापरोधी) बोर्ड और कागज निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

2. **शीरा (मोलासेज)** : शर्करा के क्रिस्टलीभवन के बाद बचे लिकर को शीरा कहते हैं। यह चीनी निर्माण प्रकमों का एक महत्वपूर्ण उपोत्पाद है। इसे पशुआहार के रूप में, रम जैसे एल्कोहलिक पेयों और अनेक रासायनों, औद्योगिक एल्कोहल, सिरका, ग्लिसरॉल, लैक्टिक और साइट्रिक अम्ल को बनाने में प्रयोग किया जाता है। इसमें 50 प्रतिशत किण्वनशील शर्करा (35 प्रतिशत, सुक्रोस, 15 प्रतिशत अपचायक शर्करा) होती है। अपने इसी गुण के कारण इसे औद्योगिक महत्ता प्राप्त है। रम बनाने के लिए शीरे का *सैकेरोमाइसीज सिरिविसी* यीस्ट से किण्वन किया जाता है जिसके बाद आसवन होता है। क्लोस्ट्रिडियम जीवाणु से शीरे का किण्वन करके एसीटोन और ब्यूटानोल जैसे उत्पाद बनाए जाते हैं। शीरे से सूखी बर्फ भी बनाई जाती है।

ग) ऊपर लिखे उत्तर में 'खोई' के विस्तार देखें।

घ) ऊपर लिखे उत्तर में 'शीरा' के विस्तार देखें।

2. खण्ड 16.2 में 'चीनी का निर्माण' देखें।

3. चित्र 16.3 देखिए।

4. गन्ने की अधिकतर कृष्ट उपजातियां आंतरजातीय संकर हैं जिनका कायिक प्रवर्धन तीन से पांच पर्व संधियों वाली तने की कटिंगों से किया जाता है जिन्हें ''बीज ईख'' या ''बीज खंड'' कहते हैं। कायिक प्रवर्धन के लाभ इस प्रकार हैं:

   क) 'रतूनों' के जरिए हम गन्ने की दो या तीन फ़सलें प्राप्त कर सकते हैं तब जाकर हमें नए ''बीज ईख'' को बोने की आवश्यकता पड़ती है।

   ख) बीजों की जीवन-क्षमता थोड़े से समय के लिए होती है।

   ग) कायिक प्रवर्धन से उपजी फसल शीघ्र तैयार हो जाती है। कटिंगें प्राय: 8-12 महीने की पादप ईख या 6-8 महीने की रतून फसल से ली जाती हैं। रोपण के बाद प्राप्त होने वाली फसल, जिसे रोपण फसल कहते हैं, को परिपक्व होने में 15-24 महीने लग जाते हैं, मगर रतून फसल को सिर्फ एक वर्ष का समय लगता है।

5. क) भारत, क्यूबा, पाकिस्तान और ब्राजील मुख्य उत्पादक देश हैं।

   ख i) शुगरकेन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट (गन्ना प्रजनन संस्थान), कोयम्बटूर (तमिलनाडू)।

   ii) राष्ट्रीय शर्करा प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर, (उत्तर प्रदेश)।

   iii) भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)।

   ग) उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, हरियाणा, पंजाब, बिहार, उड़ीसा, गुजरात, राजस्थान।

6.

नाम	वानस्पतिक नाम	पादप अंग	कुल
धान्यमांड	*जिया मेस*	फल	पोएसी
गेहूं स्टार्च	*ट्राइटिकम वल्गैर*	फल	पोएसी
आलू स्टार्च	*सोलैनम ट्यूबरोसम*	कंद (तना)	सोलैनेसी
धानमांड	*ओराइज़ा सैटाइवा*	फल	पोएसी
अरोरोट स्टार्च	*मैरांटा एरंडिनेसी*	जड़ (मूल)	मैरेंटेसी
सागो स्टार्च	*मैट्रोजाइलॉन सागो*	तना	ऐरेकेसी
कैसावा स्टार्च	*मैनीहोट एस्कुलेंटा*	मूल कंद	यूफॉर्बिएसी

7. देखिए चित्र 16.13।

8. क) खण्ड 16.3 देखें।

   ख) उपखण्ड 16.3.1 देखें।

   ग) उपखण्ड 16.3.2 देखें।

9. उपखण्ड 16.3.1 देखें।

10. खण्ड 16.3 देखें।

सुझावित पाठन सामग्री

1. कोचर, एस.एल. 1998 (द्वितीय संस्करण) इकॉनोमिक बॉटनी इन द ट्रॉपिक्स (Economic Botany in the Tropics) मैक्मिलन इंडिया लिमिटेड नई दिल्ली (अध्याय 7 फल तथा दृढ़फल / नट्स)।

2. रंजीत सिंह फल (fruits) नेशनल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली।

3. कोबली एल.एस 1976 एन इंट्रोडक्शन टु द बॉटनी ऑफ ट्रॉपिकल क्रॉप्स (An Introduction to the Botany of Tropical crops) द्वितीय संस्करण (डब्लू.एम.स्टील द्वारा संशोधित) लौंगमैंन, लंदन।

4. हिल ए (ओ.पी. शर्मा द्वारा रूपांतरित) 1976 इकॉनॉमिक बॉटनी (Economic Botany) टाटा मैग्रॉ हिल पब्लिशिंग कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली।

5. पर्सग्लोव, जे डब्लू. 1974 ट्रॉपिकल क्रॉप्स डाइकोटीलीडन्स (Tropical crops-Dicotyledons) लौंगमैन्स, लंदन।

6 चौधरी, बी. 1992, वेजीटेबल्स (Vegetables) नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।

7. कोचर, एस.एल. 1998. इकॉनोमिक बॉटनी इन द ट्रॉपिक्स (Economic Botany in the Tropics), मैकमिलन इंडिया लिमिटेड।

NOTES

NOTES

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -02
पादप विविधता-II

खंड

3बी

आर्थिक वनस्पति विज्ञान

इकाई 17

मसाले 05

इकाई 18

पेय 41

इकाई 19

औषधीय और सुगंधमूलक पादप 72

इकाई 20

काष्ठ, रेशा और संबंधित उत्पाद 120

3 बी आर्थिक वनस्पति विज्ञान

ोजन की मूल आवश्यकता के अतिरिक्त आवश्यकताएं जैसे कि आवास, कपड़ा तथा अनेकों अन्य ानिवार्यताएं भी मुख्यत: पादपों से ही प्राप्त की जाती हैं। इस खंड में हम कुछ ऐसी ही अनिवार्यताओं जैसे क मसाले आदि; पेय पदार्थ, औषधीय तथा सुगंधित पादप; दवायें; वाष्पशील तेल; काष्ठ; फाइबर्स; कॉर्क था रबड़ के बारे में बताने जा रहे हैं। ये सभी वस्तुयें पादपों से प्राप्त की जाती हैं।

सालों का प्रयोग प्राथमिक रूप से भोजन को एक अच्छा स्वाद प्रदान करने के लिए किया जाता है। वे ादहीन भोजन को एक रुचिकर स्वाद तथा सुगंध प्रदान करते हैं और विस्तृत रूप से उपयोग किए जाते । खासतौर पर उष्णकटिबंधी प्रदेशों में ये भूख को तथा पाचक रसों के प्रवाह को भी बढ़ाते हैं। इकाई 7 में, अदरक, हल्दी, दालचीनी, केसर, लौंग, मिर्च, काली मिर्च, धनिया, सौंफ, सरसों, इलायची, जायफल था जावित्री का वर्णन, उनकी उत्पत्ति, वितरण, आकारिकी, कृषि/खेती तथा उपयोगों के संदर्भ में किया या है।

ल के अतिरिक्त जो कि मानव जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है, दुनिया भर में बड़ी संख्या में लोग ाय, कॉफी तथा कोको जैसे पेय पदार्थों के आदी हैं। ये, पादप-उत्पत्ति के सबसे अधिक उपयोग किए जाने ले, अएल्कोहॉली पेय हैं। इनके दो गुण — तंत्रिका तंत्र का उद्दीपन, तथा थकान दूर करने की क्षमता, े कारण हैं जिनके लिए ये विस्तृत रूप से उपयोग किए जाते हैं; यहाँ तक कि उनकी लत भी पड़ जाती । इकाई-18 जिसका शीर्षक 'पेय' है, उसमें उपर्युक्त तीनों पेयों के बारे में बताया गया है। आप उनके तरण, कृषि-जलवायवी परिस्थितियों, प्रमुख आकारिकीय तथा शारीरीय गुणों, कृषि, कटाई तथा प्रवर्धन के ीकों, अपमिश्रकों की जानकारी के साथ-साथ, उनके सामान्य उपयोगों के बारे में भी इस इकाई में ागे।

ाई 19 जिसका शीर्षक है – "औषधीय और सुगंधमूलक पादप" यह पादप व्युत्पन्नों के एक अन्य त्वपूर्ण क्षेत्र के बारे में है। यह पादप हमारे शरीर के निर्माण तथा रखरखाव के लिए अनिवार्य विभिन्न श्यक तत्वों को ही नहीं देते हैं बल्कि वे उसे स्वस्थ रखने में भी सहायक हैं। वर्तमान में, अनेकों पादपों औषधियां निर्मित की जाती हैं।

ही नहीं, अनेकों बीमारियों के इलाज में उपयोगी पाई जाने वाली औषधियाँ जिनको पहले पादपों में जा गया था उन्हें अब विश्व भर में रासायनिक प्रयोगशालाओं में कृत्रिम रूप से बनाया जा रहा है। र ही, नए औषधीय पादपों की खोज भी जारी है, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बढ़ती चुनौतियों का सामना ने में सहायक हो सकती हैं। औषधीय पादपों की सूची बहुत लंबी है, जिसमें से हमने इस इकाई में ययन के लिए कुछ उदाहरणों को ही चुना है जिससे कि आपको विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य संबधी स्याओं में उनके उपयोग के बारे में जानकारी मिल सके।

इकाई का दूसरा खंड पादपों से प्राप्त होने वाली धूमकीय और चवर्णी सामग्रियों के बारे में है। यह वे र्थ हैं जो सदियों से सुख तथा आनंद की अनुभूति के लिए खाए जाते रहे हैं। इकाई के आखिरी खंड में ध तेल उत्पादक पादपों के कुछ देशी उदाहरणों के बारे में बताया गया है। उन्हें विविध प्रकार से ोग किया जाता है, उदाहरण के लिए खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए, खाद्य सामग्रियों के संरक्षण में यक के तौर पर, तथा शरीर के सौन्दर्य के लिए। ये वाष्पशील तथा सुगंधित कार्बनिक पदार्थ होते हैं जो स्पति तेलों तथा वसाओं से अपने भौतिक तथा रासायनिक दोनों गुणों में भिन्न होते हैं। इस पहलू को ा इकाई 15 में समझाया जा चुका है।

अगली इकाई का शीर्षक यानि कि "काष्ठ, रेशा और संबंधित उत्पाद" स्वयं ही इस इकाई की विषय वस्तु के बारे में बताती है। पिछली इकाई की भाँति ही, इसमें भी हम पादप उत्पत्ति के विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण उत्पादों के बारे में अपनी चर्चा को जारी रखेंगे, जो कि हमारी दैनिक दिनचर्या में हमसे निकट रूप से संबद्ध है। काष्ठ, कॉर्क, रबड़ तथा विभिन्न प्रकार के रेशे इस इकाई की परिचर्या के केन्द्र बिन्दु हैं। इन वस्तुओं का व्यावसायिक महत्व बहुत अधिक है और इसलिए यह विश्व व्यापार में प्रमुख हैं। इस इकाई में हमने अपने जीवन में इन उत्पादों के विविध उपयोगों के उदाहरण प्रस्तुत करने की कोशिश की है। हम आशा करते हैं कि इन इकाइयों के अध्ययन से आपकी सोच को इन बहुत ही विविध प्राकृतिक संसाधनों के न्यायोचित उपयोग तथा प्रबंधन के बारे में गति मिलेगी जिससे इन्हें वर्ष दर वर्ष तथा अनेकों पीढ़ियों तक पुनर्जीवित रखा जा सके।

़काई 17 मसाले

काई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 मसाले

7.3 मसालों का महत्व

7.4 भूमिगत् भागों से प्राप्त होने वाले मसाले : प्रकंद

अदरक

हल्दी

7.5 छाल से प्राप्त होने वाले मसाला

दालचीनी

7.6 पुष्पों अथवा पुष्प कलिकाओं से प्राप्त होने वाले मसाले

केसर

लौंग

7.7 फलों से प्राप्त होने वाले मसाले

लाल मिर्च/मिर्च

काली मिर्च

धनिया

सौंफ

'.8 बीजों से प्राप्त होने वाले मसाले

सरसों

इलायची

जायफल तथा जावित्री

'.9 सारांश

'.10 अंत में कुछ प्रश्न

'.11 उत्तर

7.1 प्रस्तावना

ालों की कहानी पादप जगत् के इतिहास में सबसे अधिक मसालेदार अध्याय है। ऐतिहासिक रूप से ाले साम्राज्यों के उत्थान और पतन के लिए तथा दुनिया के दूरस्थ कोनों की खोज के लिए विशाल ुद्री यात्राओं के लिए जिम्मेदार रहे हैं। यहां तक कि इतिहास के क्रम को आकार देने में भी मसालों ने त्वपूर्ण भूमिका निभाई है; वे विश्वभर के साहसपूर्ण कार्यों, लड़ाइयों, खोजों तथा साहसपूर्ण कारनामों से ़ हुए हैं। पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद के आधे भाग में पुर्तगाल तथा स्पेन दोनों ने स्पाइस/मसाले के द्वीपों ालूकास) के लिए समुद्री रास्तों की खोज की। क्रिस्टोफर कोलंबस (Christopher Columbus) 1492 स्पेन से पश्चिम की ओर समुद्री यात्रा पर इस उम्मीद से चला कि वह मसाले के द्वीपों पर पुर्तगालियों पहले पहुँच जायेगा, परन्तु वह अपने प्राथमिक अभियान में असफल रहा। इसकी बजाय, उसने उत्तरी ा दक्षिणी अमरीका की खोज की तथा उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के तीन प्रमुख मसालों में से दो की ज में सहायता की, आलस्पाइस (*पिमेन्टो आफिसीनेलिस*) (*Pimento officinalis*) तथा लाल मिर्च *प्सीकम* स्पी.) [*Capsicum* sp.]। तीसरा प्रमुख उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका का मसाला वेनिला *निला प्लेनीफोलिया*) [*Vanilla planifolia*] है।

ारहवीं शताब्दी के आरंभिक भाग में मसालों की तस्करी करके उन्हें काफी मात्रा में उन्हें विश्व भर में ातौर पर वेस्टइंडीज में रोपा गया। आजकल काफी मात्रा में पौधों को अमरीका में उगाया जाता है।

हालांकि, मसालों की विशाल मात्रा अब भी उष्णकटिबंधी देशों, खासतौर पर एशिया के अपेक्षाकृत नम् भाग से प्राप्त की जाती है।

भारत में 2.5 मिलियन टन मसाले उत्पन्न होते हैं जिसमें से 450,000 टन निर्यात किए जाते हैं।

भारत में प्रमुख रूप से उत्पन्न होने वाले मसाले कालीमिर्च (pepper), इलायची (cardamon), अदरक (ginger), हल्दी (turmeric) तथा मिर्चें (chillies) हैं। काली मिर्च सबसे महत्वपूर्ण भारतीय मसाला है और यह ''मसालों का राजा'' अथवा भारत का काला सोना कहलाता है। इसके बाद इलायची का स्थान है जो ''मसालों की रानी'' कहलाती है जिसके जरिए भारत विदेशी मुद्रा अर्जित करता है। भारत में निम्न स्तर पर उगाए जाने वाले कुछ प्रमुख मसालों में अजवायन (ajowan), एनिस के बीज (ani seed), काला जीरा (caraway), सेलरी (celery), धनिया (coriander), प्याज (onion), केसर (saffron) तथा वेनिला (vanilla) सम्मिलित हैं। मसालों की खेती मुख्यत: केरला, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान और बिहार में की जाती है।

इस इकाई में हम उन कुछ प्रमुख मसालों का विस्तार में वर्णन करेंगे जो सामान्यत: भारत में खाना बनाने में प्रयोग किए जाते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- मसालों (spices), कोन्डीमेन्ट (condiment) तथा शाक (herb) को परिभाषित करने में,
- हमारे जीवन में मसालों के महत्व का वर्णन करने में,
- मसालों के वर्गीकरण के तरीके को समझने में,
- मसाले के पादपों के वानस्पतिक, सामान्य व प्रचलित नामों को बताने, उनकी गुणसूत्र संख्या (chromosome numbers), कुलों व पादप के उस भाग को बताने में जिसका उपयोग मसाले के रूप में किया जाता है,
- मसाले की उत्पत्ति के स्थान का नाम बताने व विश्व में उसके वितरण के बारे में खासतौर पर भारतीय राज्यों में वितरण के बारे में बताने में,
- उन पादपों का वर्णन करने में जो मसालों को उत्पन्न करते हैं,
- विभिन्न मसालों के उपयोग का वर्णन करने में।

17.2 मसाले

मानकीकरण के अंतर्राष्ट्रीय संगठन (आई.एस.ओ.) (International Organization for Standardization) के अनुसार मसालों (spices) तथा कोन्डीमेन्ट (condiments) के बीच कोई स्पष्ट अंतर नहीं होता है। मसाला (spice) शब्द का उपयोग सुगंधयुक्त पादप उत्पादों या उनके मिश्रणों के लिए किया जाता है, जो या तो साबुत ही अथवा पीसकर उपयोग किए जाते हैं। प्रचलित तौर पर इसका उपयोग सूखी हुई छालों, जड़ों, बीजों, फलों तथा पुष्प के भागों से प्राप्त किए जाने वाले मसालों के वर्ग के तौर पर किया जाता है। वे मसाले जो भोजन को सुगंध, स्वाद तथा चरपरापन (तीखा या चरपरा स्वाद) प्रदान करते हैं वे सामान्यत: उष्णकटिबंधी प्रदेशों की उत्पत्ति के होते हैं। दूसरी ओर कोन्डीमेन्ट (condiments) वो मसाले होते हैं जिन्हें सामान्यत: भोजन में उसके पकने के बाद मिलाया जाता है। इसके विपरीत जब सुगंधिक शाकीय उत्पाद किसी शीतोष्ण पादप से प्राप्त किया जाता है, तो इसे पाक्य शाक [(culinary herb) (अ-काष्ठीय)] कहते हैं, जैसे कि बे (bay) की पत्तियां, धनिया, सौंफ, सरसों आदि।

अधिकांश रसायन जो सुगंधित मसालों तथा मसालों के विशिष्ट स्वाद तथा सुगंध के लिए जिम्मेदार होते हैं, उन यौगिकों को वाष्पशील या सगंध तेल (essential oil) कहते हैं।

17.3 मसालों का महत्व

अधिकांश रसायन जो शाकों, मसालों तथा कोन्डीमेन्ट के विशिष्ट स्वाद तथा सुगंध के लिए जिम्मेदार होते हैं उन यौगिकों को सगंध तेल (वाष्पशील तेल) कहते हैं। ये वाष्पशील तेल सामान्यत: टर्पीन्स (terpenes)

होते हैं जो विशेषीकृत पादप कोशिकाओं, ग्रंथियों या वाहिकाओं (vessels) में पाए जाते हैं जो पादप के किसी अथवा सभी भागों में पाई जा सकती हैं। कुछ मामलों में ये सगंध तेल पादपों द्वारा जंतुओं को आकर्षित करने के लिए उत्पन्न किए जाते हैं जो परागण-कारी (pollinators) या फल परिक्षेपकों (fruit dispensors) की तरह कार्य कर सकते हैं। हमारे जीवन में मसालों के महत्व निम्नलिखित हैं :

i) ये क्षुधावर्धकों (भूख बढ़ाने वाले) की तरह कार्य करते हैं अत: इन्हें 'भोजन उपबंध' (food adjunct) या सहायक (accessories) भी कहते हैं।

ii) ये सादा या फीके खाने में तीखापन तथा स्वाद बढ़ाते हैं।

iii) ये लार (saliva) के स्रावण को बढ़ाते हैं जिसमें टायलिन (ptyalin) होता है जो भोजन को पचाने में सहायक होता है।

iv) इनमें प्रति-ऑक्सीकारक (anti-oxidant) गुण पाए जाते हैं।

v) इनका उपयोग अचार तथा चटनियों में परिरक्षक (preservative) के रूप में किया जाता है।

vi) इनमें तेज सूक्ष्मजीवरोधी (antimicrobial) तथा जैवरोधी (antibiotic) गुण पाए जाते हैं।

vii) इनका औषधीय महत्व होता है।

viii) ये मुख दुर्गंधनाशक (mouth freshner) की भाँति कार्य करते हैं, मुखगुहा (oral cavity) में चिपके हुए भोजन के कणों तथा जीवाणुओं को साफ करते हैं तथा श्लेष्म झिल्ली (mucous membrane) की तापीय (thermic), यांत्रिक (mechanical) तथा रासायनिक (chemical) उत्तेजनों (irritations) से रक्षा करते हैं।

ix) पेय पदार्थों को स्वाद प्रदान करते हैं, तथा

x) कुछ सौंदर्य प्रसाधनों में उपयोग किए जाते हैं।

भारत में, रिकॉर्डस बताते हैं कि शाक/मसालों का उपयोग रोगों के उपचार के लिए प्राचीन काल से किया जाता रहा है। चरक संहिता – जो आयुर्वेदिक औषधीय प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है उसमें 700 शाकों का वर्णन किया गया है। आज विश्व में, पुन: शाकों तथा मसालों में वैकल्पिक औषधि के रूप में दिलचस्पी ली जा रही है।

लगभग 70 मसाले हैं जिन्हें विश्व के विभिन्न भागों में उगाया जाता है। मसालों को (i) वर्गीकरण के विभिन्न तरीकों जैसे कि वानस्पतिक अनुरूपता (अलग-अलग पादपों या कुलों के बीच समानता), (ii) आर्थिक महत्त्व (प्रमुख तथा अल्प महत्व के मसाले) (iii) खेती के तरीकों में समानता, (iv) पादप के उस भाग में समानता जिसका मसाले के रूप में उपयोग किया जाता है जैसे कि जड़, प्रकंद, छाल, कली, पुष्प, फल; बीज या पत्तियों के अनुसार समूहित किया जा सकता है।

इस इकाई में ग्यारह मसालों का वर्गीकरण तथा वर्णन पादप के भाग में समानता के आधार पर किया गया है जिससे उनकी उत्पत्ति होती है। प्रकंद (अदरक तथा हल्दी), छाल (दालचीनी), कली (लौंग), पुष्प वर्तिकाग्र (केसर), फल (मिर्च, काली मिर्च, सौंफ तथा धनिया) बीज (सरसों, इलायची, जायफल तथा जावित्री)

17.4 भूमिगत् भागों से प्राप्त होने वाले मसाले : प्रकंद

कुछ मसाले हैं जिन्हें पादपों के भूमिगत् भागों (प्रकंद, rhizome) से प्राप्त किया जाता है जैसे कि गैलांगल (galangal), (एल्पीनिया ओफीसिनेरम) (*Alpinia officinarum*), अदरक (*जिंजीबर ऑफिसिनेल*) (*Zingiber officinale*), सरसापारीला, (sarsaparilla) [(*स्माइलैक्स* स्पी.) *Smilax* sp.] तथा हल्दी (*कुरकुमा लौंगा*) [*Curcuma longa*] । इस उपखंड/सेक्शन में हम अदरक तथा हल्दी का वर्णन करेंगे। अदरक का उपयोग ताजे तथा सूखे हुए दोनों रूपों में किया जाता है जबकि हल्दी को सामान्यत: सुखाकर उसका पाउडर बनाकर किया जाता है। इन दोनों का औषधीय महत्व है। खासतौर पर आयुर्वेदिक औषधियों में इनका उपयोग किया जाता है।

17.4.1 अदरक

वानस्पतिक नाम : *जिन्जिबर ऑफिसिनेल* रोस (*Zingiber officinale*) (अदरक)
कुल : जिन्जिबेरेसी
सामान्य नाम : अदरक
n = 11

उत्पत्ति

अदरक दक्षिण-पूर्व एशिया की मूल प्रजाति (indigenous) है।

वितरण

अब इसकी खेती विश्व के कई भागों में की जाती है; सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र भारत, जमैका, सिएरा-लिऑन तथा ऑस्ट्रेलिया हैं। भारत विश्व का सबसे बड़ा अदरक का उत्पादक तथा निर्यातक है तथा कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत केरला से आता है। इसकी खेती पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, कर्नाटक, मध्यप्रदेश तथा गुजरात में भी की जाती है।

आकारिकी

अदरक (ginger) का पौधा एक सीधा, बहुवर्षी शाक है। इसमें मोटा, कठोर, पार्श्व रूप से दबा हुआ, अक्सर हस्ताकार रूप से शाखित प्रकंद (हस्त) होता है। यह छोटी शल्क पत्तियों तथा महीन तंतुमय जड़ों से ढंका रहता है। (चित्र 17.1)। सगंध तेलों तथा रैजिन को धारण किये हुए छोटे कोष/थैली पूरे प्रकंद में वितरित रहती है, परंतु मुख्य रूप से ये उपत्वचीय (epidermal) ऊतकों में पाई जाती है। अदरक की विशिष्ट गंध उसमें पाए जाने वाले वाष्पशील तेल (जिंजर/अदरक के तेल) के कारण होती है तथा उसका तीखापन अ-वाष्पशील ऑलियोरेजिन (जिंजरीन (gingerin)) के कारण होता है।

1672 में, एलिहू येल ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी में क्लर्क के रूप में नौकरी शुरू की थी तथा भाग्यवश मसालों के व्यापार में उसके द्वारा किए गए कार्य के फलस्वरूप संयुक्त राज्य अमरीका में येल विश्वविद्यालय की स्थापना की गई।

पर्णिल प्ररोह वार्षिक रूप से उगते हैं। ये सतर, 60 से 90 से.मी लंबे व एक दूसरे से पास-पास आच्छदी पर्णआधारों द्वारा आच्छादित रहते हैं। पत्तियां एकांतरी (alternate) रेखीय भालाकार (linear lanceolate) तथा लगभग 5–20 से.मी. लंबी होती हैं। (चित्र 17.1)

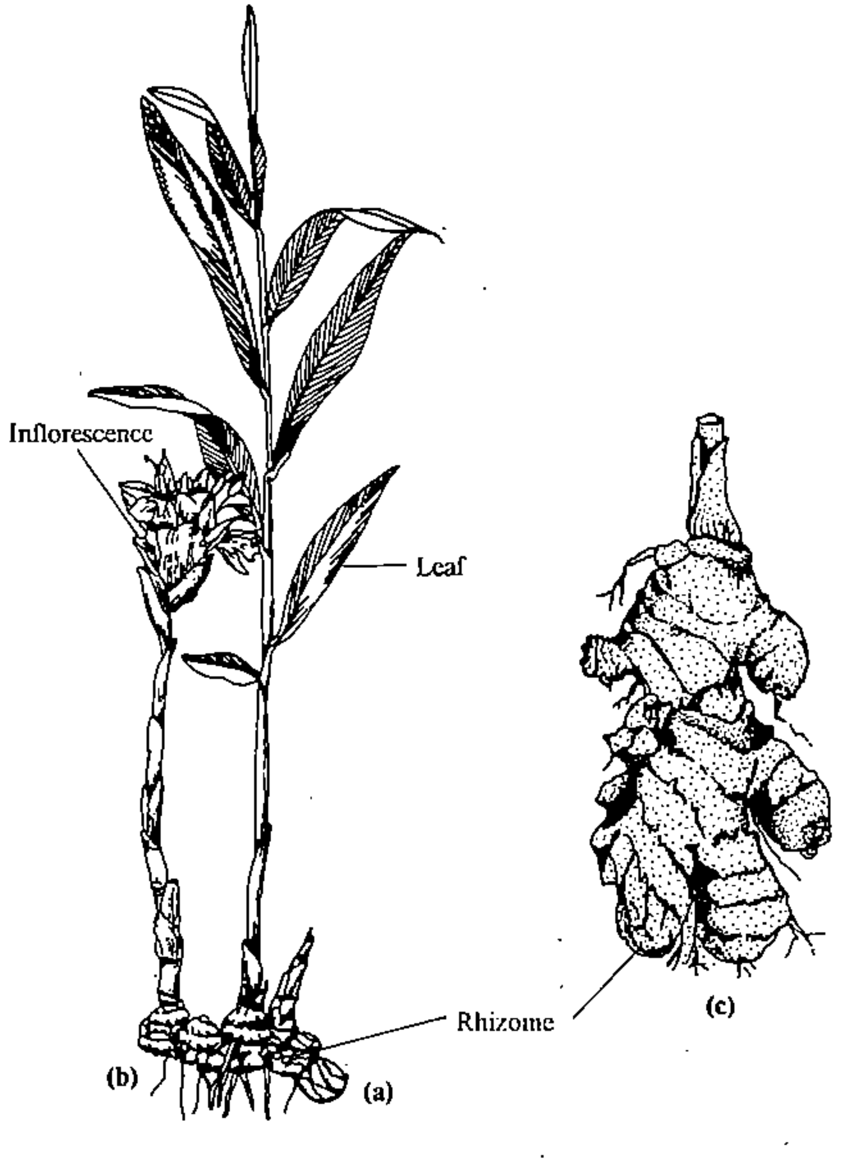

चित्र 17.1 : *जिन्जिबर ऑफिसिनेल* : अदरक a) प्रकंद के साथ पादप b) पुष्पक्रम c) प्रकंद का बड़ा स्वरूप।

पादप सबसे अच्छी तरह से गर्म उष्णकटिबंध मौसम में उगता है तथा समुद्र तल से लेकर 1500 मी. तक की ऊँचाई तक उग सकता है। पादप व्यावसायिक रूप से प्रकंद के भागों से प्रवर्धित किया जाता है जो 2.5 से 5 से.मी. लंबे तथा कम से कम एक जीवनक्षम कली युक्त होते हैं। अदरक मिट्टी से उर्वरकता को खींचने वाली फसल है जिसको बहुत अधिक खाद देने की जरूरत पड़ती है। बालुई, चिकनी या लैटराइटी दुमटी मिट्टी (lateritic loam soil) फसल के लिए सबसे उपयुक्त होती है। इसको सामान्यत: छोटी जोतों (small holdings) पर उगाया जाता है।

फसल की कटाई चरणों में की जाती है। हरी अदरक के लिए मुलायम प्रकंदों की आवश्यकता होती है जिनका अचार डाला जाता है, वे पाँचवे माह से खोदे जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। परंतु परिपक्व या भूरे प्रकंद के लिए, फसल की खुदाई 9-10 महीने बाद की जाती है जब पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं। प्रकंद बाहर से हल्के पीले, हल्के से नारंगी या पीले-नारंगी रंग के होते हैं तथा भीतर से हरापन लिए पीले होते हैं। इसकी खुदाई के बाद संसाधित करने (curing) की जरूरत पड़ती है तथा ये बाजार में दो रूपों में पाए जाते हैं:

1) सूखी अथवा संसाधित अदरक - यह विभिन्न देशों में विभिन्न तरीकों से उत्पन्न की जाती है। मसाले के व्यवसाय में सूखी हुई अदरक की दो प्रमुख श्रेणियां जानी जाती हैं (अ) छिली हुई अदरक (अनावरित अदरक) तथा (ब) बिना छिली या आवरणयुक्त अदरक।

   जमैका अदरक की बेहतरीन प्रकार को ध्यानपूर्वक छीलकर व पांच से छह दिन तक धूप में सुखाया जाता है। छिली हुई जमैका अदरक हल्के पिलछौहें (buff) रंग की होती है तथा उसकी खुशबू और स्वाद बहुत ही हल्का होता है। कुछ देशों में प्रकंदों को उबलते हुए पानी में कुछ मिनट के लिए डाल दिया जाता है (पकाना) तथा धूप में छीलकर अथवा बिना छीले सुखाया जाता है। अदरक को चूने में डुबोने से (liming) इसका रंग अच्छा हो जाता है और यह देखने में अच्छी लगती है इससे यह फंफूदी तथा अन्य पीड़कों (pest) से भी बची रहती है। प्रकंदों को कभी-कभी गंधक के धुँए से विरंजित (bleach) किया जाता है।

2) हरी अदरक - इसे मुलायम, माँसल छिले हुए प्रकंदों को जल में उबाल कर तैयार किया जाता है, जिसके बाद उन्हें उबाल कर शक्कर के घोल में बेचा जाता है। क्रिस्टलीकृत (crystalized) अदरक भी इसी प्रकार से तैयार की जाती है परंतु इसे सुखाकर चीनी मे लपेट कर बेचा जाता है। संरक्षित तथा क्रिस्टलीकृत अदरक की अधिकांश मात्रा अब हाँगकाँग से निर्यात की जाती है। इसके लिए चाईनीज़ अदरक का उपयोग किया जाता है जिसमें तीखापन कम तथा सुगंध होती है।

उपयोग

i) **भोजन बनाने में:** इसका उपयोग विस्तृत रूप से पाककला में अदरक की डबलरोटी, बिस्कुट, केक, पुडिंग, सूप तथा अचार बनाने में किया जाता है।

ii) रेचित **(exhausted)** अदरक (उसमें से वाष्पशील तेल निकाल लेने के बाद बची अदरक) से मांड निकालना तथा मृदु पेयों **(soft drinks)** का निर्माण : अदरक में से ऑलियोरेसिन निकालने के बाद बचे हुए पदार्थ में से मांड प्राप्त किया जा सकता है। इसीतरह, विटामिनयुक्त उबला हुआ या सादा अदरक पाउडर भी रेचित अदरक से प्राप्त किया जा सकता है।

iii) **अल्कोहलीय पेय पदार्थ :** अदरक का उपयोग पेय पदार्थों का स्वाद बढ़ाने के लिए भी किया जाता है जैसे कि जिंजर बीयर, जिंजर ऐल तथा जिंजर वाइन।

iv) **औषधि में :** औषधि की आयुर्वेदिक पद्धति के अनुसार अदरक को उद्दीपक (stimulant) तथा वातहर (carminative) (पेट की वायु निकालने में सहायक) माना गया है।

v) **अदरक का तेल :** इसका उपयोग (अ) अल्कोहल-रहित पेय पदार्थों मिठाइयों व अचारों को सुवासित करने में (ब) औषधि उद्योग में वातहर (carminative), त्वक्रक्तकारी (rubefacient) (जो लालामी उत्पन्न करता है, जैसे कि त्वचा की), गैस्ट्राइटिस (gastritis) तथा डिस्पेप्सिया (dyspepsia) (अपच) में और (स) सुगंधों में (perfumery) किया जाता है क्योंकि यह एक विशिष्ट प्रकार की ओरिएन्टल/प्राच्य खुशबू प्रदान करता है।

17.4.2 हल्दी

वानस्पतिक नाम : *कुरकुमा लौंगा* लिन (***Curcuma longa* L.**) (टर्मेरिक, हल्दी)
पर्यायवाची नाम *कुरकुमा डोमेस्टिका* वेल (***C.domestica Val***)

कुल : जिंजीबेरेसी

सामान्य नाम : अदरक

2n = 62, 63, 64

उत्पत्ति

हल्दी (curcuma) दक्षिणी एशिया की वासी/स्वदेश जात है। इसकी वन्य अवस्था निश्चित तौर पर ज्ञात नहीं है परंतु यह पूर्वी जावा के कुछ शुष्क भागों में प्राकृतिकीकृत (naturalized) हो गई है। कृषिज (cultigen) एक बांध्य (sterile) त्रिगुणित होता है जिसमें फल नहीं आते हैं। ऐसा लगता है कि इसकी उत्पत्ति किसी अज्ञात वन्य पूर्वज से कायिक प्रवर्धन के द्वारा सतत् चयन (selection) तथा खेती से हुआ है व जिसका भारत में पाया जाने वाला वन्य द्विगुणित (2n = 42) *कुरकुमा ऐरोमेटिका* (*Curcuma aromatica*) एक पूर्वज हो सकता है।

भारत में लगभग 15000 टन संसाधित (cured) हल्दी प्रतिवर्ष निर्मित होती है। जिसमें से लगभग 92 प्रतिशत भारत में उपयोग कर ली जाती है तथा बाकी निर्यात कर दी जाती है।

वितरण

हल्दी की खेती विस्तृत रूप से भारत, इंडोनेशिया, श्रीलंका, चीन, ताईवान, इंडोचीन, पेरू, हाइती, तथा जमैका में की जाती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक है। प्रमुख हल्दी उगाने वाले राज्यों में आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरला तथा उत्तर पूर्व में खासी तथा जैन्टिया पहाड़ियां हैं।

आकारिकी

हल्दी एक बहुवर्षी शाक है जो एक मी. तक लंबा होता है व जिसमें छोटा तना 6-10 पत्तियों का गुच्छ धारण किए रहता है जो फलक (blade) रहित आच्छदों द्वारा घिरी रहती हैं; और पर्ण आच्छद कूटतना (pseudostem) बनाती हैं।

मुख्य स्थूलित कंद यानि कि प्रकंद "कंद" में अनेक बेलनाकार प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक प्रकंद (अंगुलि) भी पाए जाते हैं। प्रकंद छोटा, मोटा, कुंठित (blunt), गोलाकार तथा अदरक के प्रकंद से मोटा होता है (चित्र 17.2)। यह समकोणों पर शाखित होता है तथा तंतुमय अपस्थानिक जड़ें धारण करता है। इसमें गोलाई में कॉर्कयुक्त उपत्वचा पाई जाती है तथा बीच का भाग चमकीला नारंगी होता है जिसकी एक विशिष्ट गंध तथा स्वाद होता है।

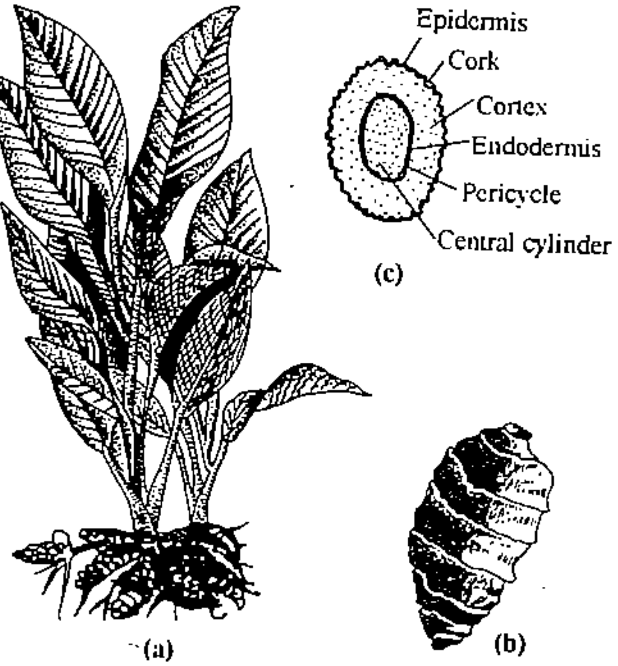

चित्र 17.2 : हल्दी a) प्रकंद के साथ पादप b) सिर्फ प्रकंद c) आंगुलि की अनुप्रस्थ काट।

भारत में अनेकों प्रजातियाँ (cvs) उन स्थानों के नाम द्वारा विभेदित किए जाते हैं जिनमें वे उगाए जाते हैं। कठोर, चमकीले-रंग वाले प्रकंदों को रंगाई के काम में लाया जाता है; बड़े, अधिक मुलायम, अधिक सुगंधित तथा हल्के रंग के प्रकंद बेहतरीन मसाला बनाते हैं। मद्रास की हल्दी की बाजार में काफी ज्यादा मांग है।

ती

प को कायिक रूप से प्रवर्धित किया जाता है। एक या दो कलियों वाले प्रकंद या आंगुलि को "बीज" के में रोपने के लिए उपयोग किया जाता है। यह अक्सर खाँचों पर उगाया जाता है तथा सबसे अच्छी ह से गर्म, नम उष्णकटिबंधी जलवायु में अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी में उगता है।

ल को बोये जाने के नौ से दस महीने बाद काटा (खोदा) जाता है जब निचली पत्तियां पीली पड़ जाती मुख्य प्रकंद तथा उनकी आंगुलि जैसी प्रशाखाओं को सावधानी से खोदकर निकाल लिया जाता है तथा मय जड़ों को काट दिया जाता है। हरी हल्दी को बाजार में लाने से पहले संसाधित करना पड़ता है। धित करने के लिए प्रकंदों को पानी में धीमी आँच पर उबाला जाता है जब तक कि वे मुलायम नहीं जाते हैं। उबालने वाले बर्तन में पानी के साथ सामान्यतः हल्दी की कुछ पत्तियां भी डाल दी जाती हैं। हुए प्रकंदों को धूप में लगभग हफ्ते भर तक सुखाया जाता है। अंततः उनको पॉलिशिंग ड्रम में घूर्णित tating) करके उनपर पॉलिश की जाती है। इसके फलस्वरूप निकले उत्पाद को 'आंगुलियों' (fingers) ों' (rounds) तथा 'टुकड़ों' (splits) में श्रेणीबद्ध किया जाता है। आंगुलियों का मसाले के रूप में क दाम होता है। संसाधित हल्दी गहरी पीली से नारंगी-पीली होती है तथा उसमें विशिष्ट तीखा स्वाद है।

हल्दी में सुगंधित तेलों (5-6%) की उपस्थिति के कारण एक कस्तूरी गंध (musky) पाई जाती है, इन तेलों के मुख्य घटक डी-ए फैलेन्ड्रीन (d-a-phellandrin) डी-सेबीनीन (d-sabinene), सिनियॉल (cineol), बोर्नीऑल (borneol) जिंजीबरीन (zingiberene) तथा सेस्क्वीटर्पीन्स (sesquiterpenes) हैं। पीला रंग कुरकुमीन (curcumin) के कारण होता है।

ोग

स्वादकारी (flavourant) के रूप में : अधिकांश एशियाई देशों में हल्दी का उपयोग अनेकों सब्जियों, मीट तथा मछली को पकाने में, खाद्य योजक (food adjunct) के रूप में किया जाता है। हल्दी कुरकुमा के फीनोलिक गुण के कारण एक प्रति-ऑक्सीकारक है। इसके कारण मसाले को अधिक समय तक सुरक्षित भी रखा जा सकता है। इसका सुगंधित तेल स्वाद तथा सुगंध प्रदान करता है। यह करी पाउडर का एक महत्वपूर्ण भाग है। यह क्षुधावर्धक (भूख बढ़ाने वाला) की भांति कार्य करती है तथा पाचन में भी सहायक होती है।

ii) **डाई/रंजक के रूप में :** हल्दी में एक रंगने वाला तत्व होता है जिसे कुरकुमीन (curcumin) कहते हैं, जो अम्ल निमज्जनों (acid bath) में, पीला रंग देता है। इसका उपयोग ऊन, सिल्क तथा सूत को रंगने में किया जाता है। पेन्ट तथा वार्निश उद्योग में भी इसका उपयोग किया जाता है। हल्दी कागज/टर्मेरिक पेपर का उपयोग क्षारीयता के परीक्षण के लिए किया जाता है।

iii) **औषधि में :** भारतीय औषधि पद्धति में औषधियुक्त तेल, मल्हम तथा पुलटिस (poultices) बना में हल्दी का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह हिस्टीरिया के तथा व्याक्षोभ (convulsion) के दौरों आंत्र संबन्धी गडबड़ियों, रक्ताल्पता (हल्दी में लौह तत्व काफी होता है), मीजल्स (measles), अस्थमा (asthma), सर्दी जुकाम, मोच (sprains), फोड़े-फुंसी, त्वचा संबन्धी रोगों तथा आँख अ के उपचार में उपयोगी होती है। जली हुई हल्दी का मंजन के रूप में प्रयोग करने से दांत की तकलीफों में आराम मिलता है।

iv) **सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में :** अपने घाव भरने के तथा एन्टीसेप्टिक गुणों के कारण, हल्दी का उपयोग कुंकुम, क्रीमों तथा लोशनों में किया जाता है।

17.5 छाल से प्राप्त होने वाले मसाले

दालचीनी और कैसिया केवल दो ही ऐसे मसाले हैं जिसे छाल से प्राप्त किया जाता है। चीनी कैसिया (cassia) *सिनैमोमम कैसिया* (*Cinnamomum cassia*) से प्राप्त की जाती है। भारतीय कैसिया *सिनैमोमम तमाला* (*Cinnamomum tamala*) (तेजपत्ता) से प्राप्त की जाती है, इसकी पत्तियों का उप उत्तर भारत में मसाले के रूप में किया जाता है, जबकि असली दालचीनी को *सिनैमोमम ज़ेलैनिकम* (*C. zeylanicum*) की छाल से प्राप्त किया जाता है, जिसका उपयोग भारत में मसाले के रूप किया जाता है हम इसका विस्तार से वर्णन करेंगे।

17.5.1 दालचीनी

वनस्पतिक नाम : *सिनैमोमम ज़ीलेनिकम* ब्रेइन (***Cinnamomum zeylanicum*** **Breyn**)
कुल : लॉरिसी (**lauraceae**)
सामान्य नाम : दालचीनी
2n = 24

उत्पत्ति

दालचीनी श्रीलंका की मूल प्रजाति है। भारत में यह वृक्ष केरला तथा पश्चिमी घाटों के वनों में उगता है

वितरण

भारत में दालचीनी पश्चिमी तटों पर उगाई जाती है। केरला के अंजराकांदी (Anjarakkandi) कैनोनोर (Cannonore) जिले में, 248 एकड़ में रैन्डा टैरा (Randa Tarra) दालचीनी का बागान है जोकि एशिया का सबसे बड़ा तथा शायद सबसे पुराना बागान है।

दालचीनी (cinnamon) की गुणवत्ता अन्य कारकों के साथ-साथ उस क्षेत्र पर भी निर्भर करती है जहं उगाई जाती है। श्रीलंकाई दालचीनी तथा सेचेल्स द्वीपों (Seychelles islands) से प्राप्त होने वाली दालचीनी, सर्वश्रेष्ठ दालचीनी मानी जाती है। अन्य उत्पादक देश चीन, मलेशिया तथा इंडोनेशिया हैं। कुछ इसकी खेती केन्या, तंजानिया, वेस्ट इंडीज तथा दक्षिण अमरीका भागों में भी की जाती है।

आकारिकी

सिनैमोमम ज़ेलैनिकम एक सदाबहार वृक्ष है। यह अपने स्थानीय आवास में 9–12 मी. की ऊँचाई तक होता है (कभी-कभी 18 मी. तक लंबा हो जाता है) श्रीलंका तथा दक्षिण भारत में जहाँ का यह मूल निव है। इसकी खेती सामान्यतः "कटबैक" (cutback) झाड़ी के रूप में की जाती है। इसकी छाल तथा परि दोनों बहुत तीखी गंधयुक्त होती हैं। पत्तियां बड़ी (12.7–17.5 से.मी. लंबाई की), चर्मिल, कुंठित रूप से नोकदार, चिकनी, गहरे हरे रंग की ऊपर की तरफ से तथा हल्की धूसर हरी निचली सतह पर, व तीन से पाँच स्पष्ट शिराओं युक्त होती हैं।

ा विरल अक्षीय (lax axillary) तथा अंतस्थ यौगिक असीमाक्षों (panicles) में टहनियों के सिरों पर
; जाते हैं (चित्र 17.3a)। पुष्प छोटे होते हैं (चित्र 17.3 b), तथा इनमें तीखी दुर्गंध पाई जाती है।

· बैंगनी सा या काला, मॉसल, एक-बीजीय, अंडाकार तथा आधार पर दीर्घीकृत बाह्यदल पुंज (calyx)
ा होता है (चित्र 17.3 c)

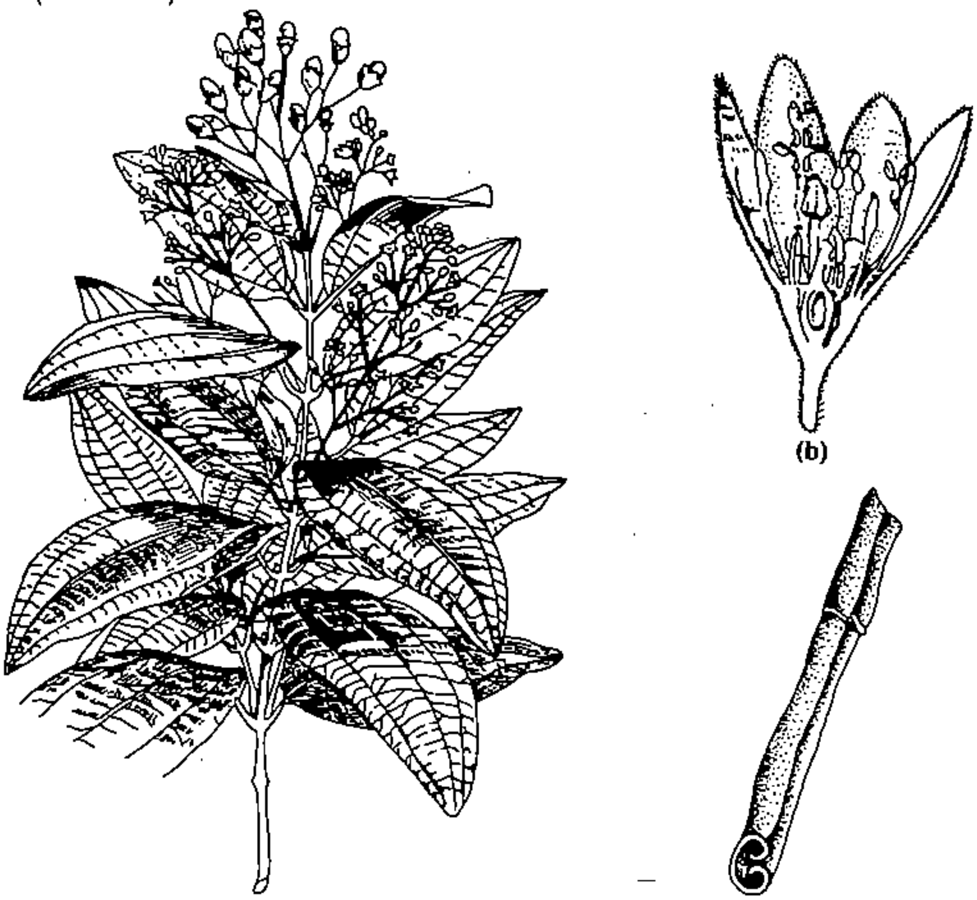

चित्र 17.3 : *सिनैमोमम ज़ेलैनिकम* a) पुष्पीय प्ररोह b) अनुदैर्घ्य काट में फल c) क्विल्स (quills)।

ां को सामान्यत: बीज से उगाया जाता है, परंतु कलम से भी प्रवर्धित किया जा सकता है। दालचीनी
ादप छायादार जगह में समुद्र तल से लेकर 1000 मी. तक की ऊँचाई तक अच्छी तरह से उगता है,
औसत वर्षा 200–250 से.मी. तथा औसत तापमान लगभग 27° सेन्टीग्रेड हो। गर्म तथा नम या आर्द्र
ायु खेती के लिए आदर्श मानी जाती है। रोपे जाने के दो से तीन वर्ष बाद, पादपों को कट-बैक या
ा'' बनाए जाते हैं, जिससे अंत: भूस्तारीयों (suckers) से नए प्ररोहों के बनने को उत्प्रेरित किया
है, जिनकी बाद में कॉट छाँट करके प्रति झाड़ी छह से आठ पादप बनाए जाते हैं।

ीनी की पहली फसल लगभग दो साल के बाद प्राप्त होती है जब पादप 2–2.5 मी. की ऊँचाई तक के
ते हैं। मानसूनी वर्षा के बाद पादपों को जमीन के पास से काटा जाता है जिससे छाल को छीलने में
ी रहती है।

ुदैर्घ्य खाँचे लंबाई में प्ररोह में बनाई जाती हैं तथा छाल को विशेष तौर पर बनाए गए औजारों से
ीटर की लंबाई में छील लिया जाता है। छीली हुई छालों को फिर कस कर गठ्ठरों में बाँध लिया
है तथा 24 घंटे के लिए "किण्डवित'' (ferment) करने के लिए छोड़ दिया जाता है। छाल की
/कागजन (corky) बाह्य परत को फिर सावधानी से छील लिया जाता है तथा उसे फिर सुखाया
है जिससे वो सिकुड़ कर अंदर की ओर मुड़ कर नलिका जैसी संरचना बनाती है। जिन्हें क्विल्स

आफ कार्मस (quills of commerce) कहते हैं (चित्र 17.3 c)। अच्छी क्विल्स को लगभग 1 से.मी. चौड़ तथा 4 मि.मी. मोटी होना चाहिए।

उपयोग

i) स्वादकारी तत्व के रूप में : सूखी दालचीनी की पत्तियां तथा उसकी भीतरी छाल का उपयोग केक तथा मिठाइयों का स्वाद बढ़ाने के लिए तथा करी पाउडर में किया जाता है दालचीनी की छाल के तेल का उपयोग भी मिठाइयों तथा पेय पदार्थों को सुस्वाद् करने के लिए किया जाता है।

ठंडी हवा के कारण उत्पन्न होने वाले सिरदर्द में वारीक पिसे हुए दालचीनी के पाउडर का जल में लेप बनाकर माथे तथा कनपटी पर लगाने से शीघ्र आराम मिलता है।

ii) औषधीय : दालचीनी साधारण सर्दीजुकाम के लिए एक प्रभावकारी उपचार है। यह जी मिचलाने, उल्टी आने तथा अतिसार/दस्त (diarrhoea) को रोकती है। यह पाचन को बढ़ाती है।

दालचीनी की पत्तियां अफारा (flatulence) को दूर करने में तथा स्रावण को बढ़ाने और मूत्र के निष्कासन में उपयोगी होती हैं। यह तंत्रिकीय तनाव को भी रोकता है। इसका उपयोग औषधीय साबुनों तथा दंत मंजनों में भी किया जाता है।

iii) इत्र उद्योग में : दालचीनी की छाल तथा पत्तियों दोनों का उपयोग धूप/लोबान(incense) तथा इत्रों को बनाने में किया जाता है। इसकी पत्तियों के तेल को (उसमें 70–95 प्रतिशत तक यूजिनॉल होता है) वैनिलीन (vanillin) के उत्पादन के लिए सामान्यत: लौंग के तेल से अधिक पसंद किया जाता है।

इसकी छाल में 0.5–1.5 प्रतिशत संगध तेल होता है। इसका मुख्य घटक सिनामिक एल्डिहाइड (cinnamic aldehyde) होता है (60–75 प्रतिशत)। दालचीनी की पत्ती के तेल में 70–95 प्रतिशत यूजिनॉल (Eugenol) होता है।

बॉक्स 17.1 : आई.एस.ओ. (ISO) ने आधिकारिक रूप से निम्नलिखित जातियों को पहचाना है

वानस्पतिक नाम	प्रचलित नाम
ए) i) *सिनैमोमम जेलैनिकम* ब्लूम (*Cinnamomum zeylanicum* Blume)	दालचीनी (cinnamon)
ii) *सिनैमोमम टेमाला* (बुक-हेम.) टी.नीस व ईबर्म (*C.tamala* (buch-ham) T.Nees and Eberm	तेजपत्ता *कैसिया लिग्ना* या भारतीय
iii) *सिनैमोमम ओबट्यूसीफोलियम* (*C. obtusifolium*)	तेजपत्ता (Tejpat)
बी) i) *सिनैमोमम एरोमेटिकम* सी.जी.नीस या *सी. केसिया* (*C. aromaticum* C.G.Nees or *C. cassia*)	कैसिया चाइना या कैसिया
ii) *सिनैमोमम बर्मैनी* ब्लूम, *केसिया बेरा* (*C. burmannii* Blume, *Cassai vera*)	बताविया कैसिया या जावा कैसिया या पादंग दालचीनी
iii) *सिनैमोमम लॉरेरी* नीस (*C. laureirii*)	सागौन कैसिया (saigon cassia)

बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से पूरा कीजिए :

1) कोलंबस ने दो महत्वपूर्ण नई दुनिया (उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका) के मसालों .... तथा........................... की खोज में सहायता की है।

2) अधिकांश रसायन जो शाकों, मसालों तथा सुगंधित मसालों के विशिष्ट स्वाद तथा सुगंध के लिए जिम्मेदार होते हैं, वे यौगिक .... कहलाते हैं।

3) अदरक के पादप में ऑलियोरेसिन होता है जो .... कहलाता है।

4) हल्दी .... की वासी है।

5) .... में एक रंगने वाला तत्व कुरकुमीन होता है जो अम्ल निमज्जनी में पीला रंग देता है।

17.6 पुष्पों अथवा पुष्प कलिकाओं से प्राप्त होने वाले मसाले

अनेकों मसाले पुष्पों, या पुष्प कलियों से प्राप्त किए जाते हैं जैसे कि *कैपेरिस स्पाइनोसा* (*Capparis spinosa*) से केपर (caper), *यूजीनिया केरियाफाइलेटा (Eugenia caryophyllata)* से लौंग तथा *क्रोकस सैटाइवस (Crocus sativus)* से केसर प्राप्त की जाती है। हम केसर (सबसे मंहगा मसाला) तथा लौंग के बारे में विस्तार से वर्णन करने जा रहे हैं। ये दो ऐसे मसाले हैं जिनका उपयोग सामान्य रूप से भारतीय पाककला में किया जाता है।

17.6.1 केसर

वानस्पतिक नाम : *क्रोकस सैटाइवस* लिन (*Crocus sativus* Linn.)

कुल : इरीडेसी (Iridaceae)

सामान्य नाम : केसर/जाफरान

n = 12

उत्पत्ति

केसर (Saffron) का पादप संभवत: दक्षिणी यूरोप या एशिया माइनर का मूल वासी है।

वितरण

केसर की खेती स्पेन, टर्की, फ्राँस, इटली, ग्रीस/यूनान, ऑस्ट्रिया, इंग्लैण्ड, ईरान, चीन तथा भारत में की जाती है। भारत में केसर की खेती अधिकांशत: काश्मीर में पैम्पोर (1700 मी. की ऊँचाई पर) तथा जम्मू में किशवर क्षेत्र तक ही सीमित है। केसर की प्रायोगिक खेती उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों में डूंडा (उत्तरकाशी), जोशीमठ (चमोली), बिसार (पिथौरागढ़) तथा भरसर (पौढ़ी गढ़वाल) की पौधशालाओं/नर्सरी में सफल रही है।

बॉक्स 17.2 : केसर की खेती

> आयुर्वेद तथा सिद्ध में अनुसंधान के केन्द्रीय संस्थान (Central Council for Research in Ayurveda and Siddha) (सी.सी.आर.ए.एस) ने पश्चिमी उत्तरप्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में रानीखेत तथा चमोली में 2000 हेक्टेयर से अधिक जमीन में पाँच टन केसर की खेती करने में सफलता प्राप्त कर ली है। ऐसा पहली बार हुआ है कि केसर की खेती इतने विशाल पैमाने पर काश्मीर के बाहर कहीं की गई है।

आकारिकी

केसर का पौधा धीमी वृद्धि करने वाला बहुवर्षी शाक है (15 से 25 से.मी. ऊँचा)। इसमें गोलाकार, भूमिगत घनकंद (corn) (तने का ठोस कंद जैसा भाग, जो सामान्यत: भूमिगत होता है) होता है तथा यह छह या अधिक मूलज (radical) पतली, रेखीय पत्तियों को धारण करता है (चित्र 17.4)। नीलाभ या बैंगनी पुष्प एकल रूप से उगते है।

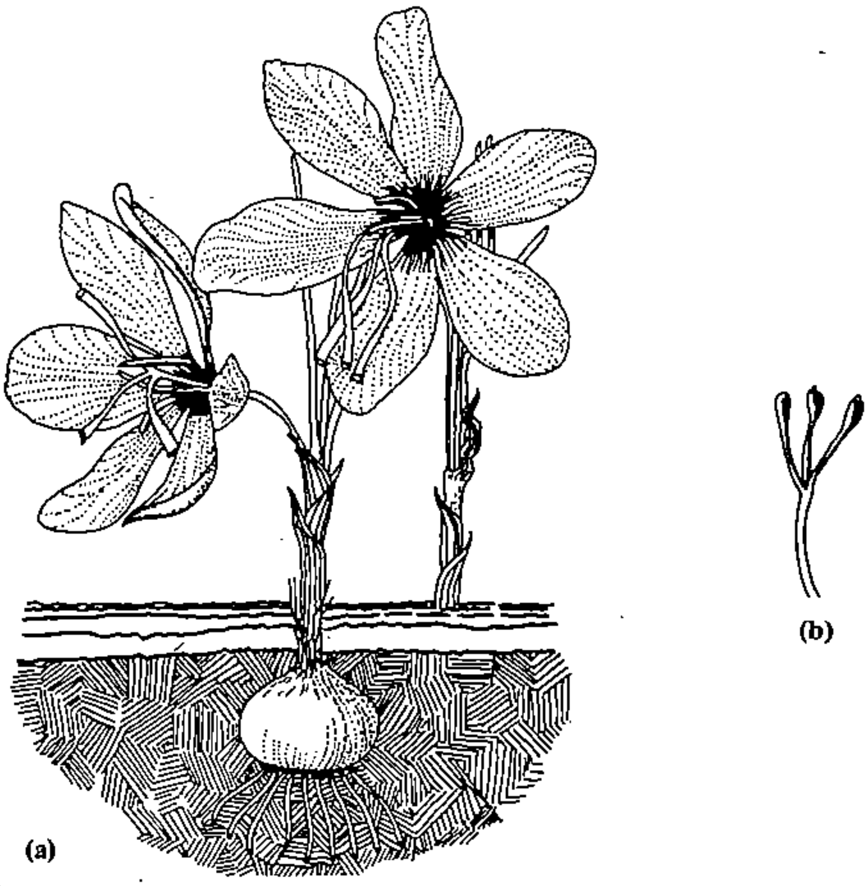

चित्र 17.4 : a) *क्रॉकस सेटाइवस* का पौधा कंद जैसे तने के साथ b) त्रिभागी कुप्पी के आकार के वर्तिकाग्र।

केसर बहुत से कॉन्टीनेन्टल व्यंजनों में डाला जाता है विशेषरूप से भारतीय व्यंजनों जैसे कि 'पुलाव' को रंगने व उसका स्वाद बढ़ाने के लिए केसर का उपयोग किया जाता है।

केसर का मूल्य मुख्यत: वर्तिकाग्रों को सुखाए जाने के तरीके पर निर्भर करता है। यह प्रक्रिया भारत में "शुष्कन" (drying) तथा स्पेन में "भूनना" (toasting) कहलाती है। बाजार में बेचा जाने वाला मसाला गहरे, लालामी लिए भूरे चपटे वर्तिकाग्रों का ढीले रूप से बना हुआ पिंड होता है। इसमें विशिष्ट सुगंधित महक होती है जो सगंध तेल सैफ्रेनल (safranal) के कारण होती है तथा ग्लूकोसाइड पिक्रोक्रोसीन (picrocrocin) के कारण स्वाद कड़वा होता है। इसमें एक लालिमा लिए पीला वर्णक ग्लाइकोसाइड (glycoside) क्रोसिन होता है तथा यह राइबोफ्लेविन (riboflavin) का भी अच्छा स्रोत है। एक किलोग्राम सूखा मसाला प्राप्त करने के लिए लगभग 154,000 पुष्पों या 210,000 वर्तिकाग्रों की आवश्यकता होती है। यह वाकई, विश्व का सबसे महंगा मसाला है।

सूखी वर्तिकाग्रों के आसवन से केसर का तेल प्राप्त होता है। यह सबसे मंहगा इत्र है और इसकी विशिष्ट गंध सैफ्रेनल के कारण है।

खेती

केसर के पौधे कायिक रूप से तरुण घनकंदों को रोप कर प्रवर्धित किए जाते हैं। इस मसाले की खेती के लिए ठंडें क्षेत्र में गर्म या उपोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है।

भारत में पुष्पन काल (flowering period) मध्य या देर अक्टूबर से आरंभ होकर नवंबर के पहले या दूसरे सप्ताह तक चलता है। वर्तिकाग्रों को प्रतिदिन फूल के खिलने के साथ ही हाथ से तोड़ लिया जाता है। उन्हें धूप में या कृत्रिम ताप देकर सुखाया जाता है। पूर्णत: सूख जाने के बाद, केसर को तुरंत पैक कर दिया जाता है। इन्हें आमतौर पर टिन के डिब्बों में पैक किया जाता है। सबसे अच्छे किस्म की केसर "शाही जाफरान" को वर्तिकाग्रों के लाल शीर्षों से प्राप्त किया जाता है। वर्तिकाग्र के बचे हुए भाग से निम्नस्तर किस्म की केसर बनती है।

उपयोग

i) स्वादकारी तथा रंगाई के रूप में : केसर का उपयोग मक्खन, चीज़ (cheese), तथा मिठाइयों को रंगने व स्वादकारी बनाने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग विशिष्ट पकवानों खासतौर पर

भारतीय मिठाइयों में, स्पेनिश चावल के व्यंजन तथा फ्रेंच मछली को बनाने में किया जाता है।

ii) **औषधि में :** अ) केसर भारत में आयुर्वेदिक तथा यूनानी औषधि पद्धतियों का महत्वपूर्ण घटक है। इसका उपयोग बुखार तथा यकृत व तिल्ली (spleen) के बढ़ जाने में किया जाता है। यह उदर/पेट की कार्यविधि को मजबूत करती है तथा ऐंठन आदि को दूर करती है। यह भी रिपोर्ट किया गया है कि यह हृदय तथा मस्तिष्क को बल प्रदान करती है।

ब) इसका उपयोग अन्य दवाओं को रंगने के लिए भी किया जाता है।

स) केसर के 'कंद' तरुण जंतुओं के लिए जहरीले होते हैं तथा वर्तिकाग्र की अधिक मात्रा के सेवन से सुषुप्तता/बेहोशी का असर होता है।

17.6.2 लौंग

वानस्पतिक नाम : *यूज़ीनिया केरियोफाइलस* (स्प्रेंग) बुलक और हेरीसन (***Eugenia caryophyllus*** **Spreng) Bulluck & Harrision.**

पर्यायवाची नाम : *सिज़ीजियम ऐरोमेटिकम* (मेरिल & पेरी) (***Syzygium aromaticum*** **(Merill & Perry)**
यूज़ीनिया केरियोफाइलेटा (***Eugenia caryophyllata***) थंब

कुल : मिर्टेसी
सामान्य नाम : लौंग/लवंग
n = 1

उत्पत्ति

लौंग (Clove) का वृक्ष मोलक्कास या मसाले के द्वीप का मूल वासी माना जाता है – जो पूर्वी इंडोनेशिया में ज्वालामुखी द्वीपों का समूह है।

लौंग का वृक्ष सगंध तेल का समृद्ध स्रोत होता है, जिसमें 16 प्रतिशत लौंग की कलियों में, 2 प्रतिशत पत्तियों में तया 4–6 प्रतिशत तने में होता है। लौंग के तेल में 80–92 प्रतिशत यूजिनॉल होता है।

वितरण

विश्व भर में लौंग का आज सबसे बड़ा उत्पादक देश ज़ंजीबार है, उसके बाद पेम्बा, मेडागास्कर और इंडोनेशिया हैं। इसे मलेशिया, श्रीलंका, भारत तथा हैटी में भी उगाया जाता है। भारत में लौंग की खेती नीलगिरी, तेनबासी पहाड़ियों तथा तमिलनाडु के कन्याकुमारी जिले में एवं केरला में कोट्टायम तथा क्विलोन जिलों में की जाती है।

आकारिकी

क्लोव (लौंग) शब्द की उत्पत्ति फ्रेन्च शब्द 'लेक्लाउ' (le-clou) से हुई जिसका अर्थ है नाखुन (चित्र 17.5)। प्रत्येक पुष्प कलिका एक पुष्पावलि वृंत (pedicel) (हाइपैन्थोडियम), चार स्पष्ट त्रिकोणीय पालियों, चार लाल बंद दलों जो अंसख्य पुंकेसरों तथा केन्द्रीय स्तंभीय वर्तिका को घेरे हुए होते हैं की बनी होती हैं। हाइपैन्थोडियम धानी का सुदीर्घीकरण प्रदर्शित करता है। द्विअंडपी (bicarpellary) अधःस्थ (inferior) अंडाशय कमोवेश मांसल धानी से ढंका रहता है। हाइपैन्थोडियम एक छोटा कोणीय वृंत होता है, जो आधार पर चपटा होता है। इसमें असंख्या तैल ग्रंथियां होती हैं जो विशिष्ट सुंगधित महक प्रदान करती हैं।

पत्तियां, कच्चे फल तथा टूटी हुई लवंग एवं उसके वृंत में भी सुगंध होती है तथा इनसे सगंध तेल प्राप्त किया जाता है।

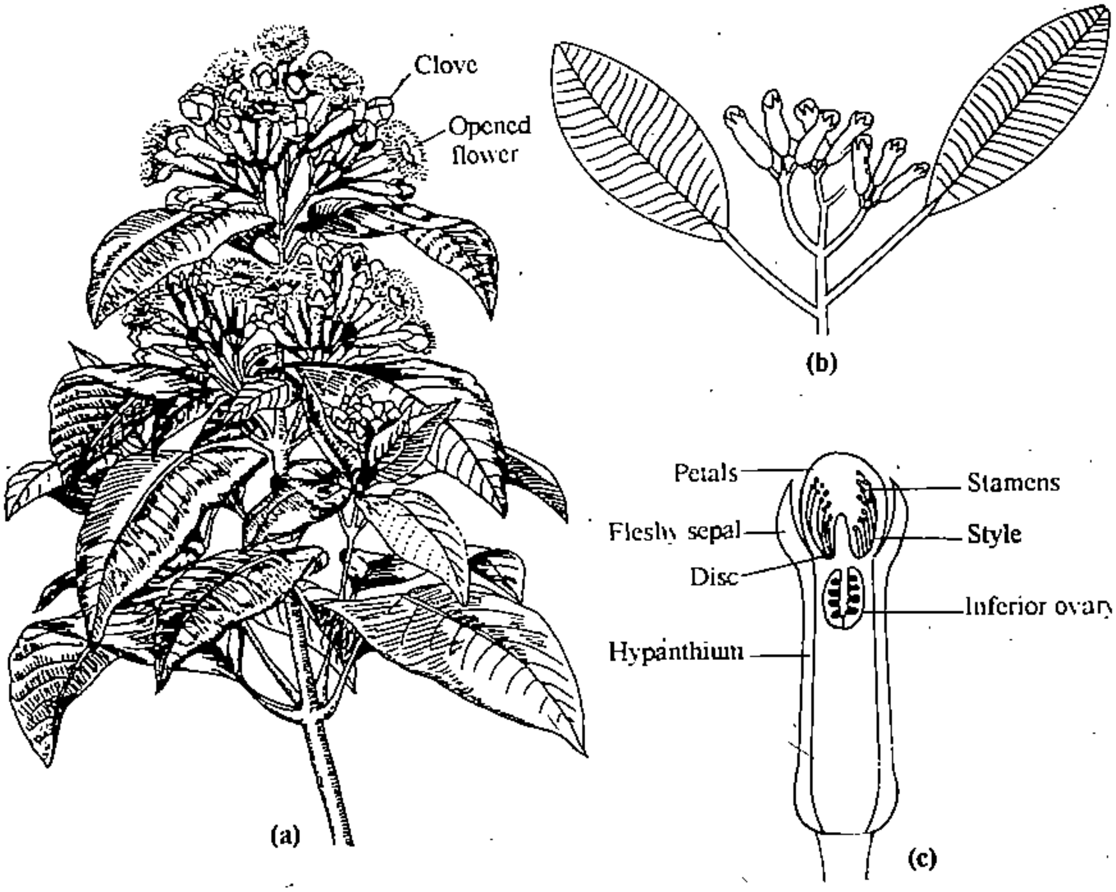

चित्र 17.5 : *यूज़ीनिया केरियोफाइलस* a) पुष्पित होती शाखा b) दो सामान्य पत्तियां तथा पुष्पक्रम का भाग c) कली की अनुदैर्घ्य काट।

खेती

यूज़ीनिया केरियोफाइलस एक छोटा, सममित, सदाबहार वृक्ष है (12-15 मी. ऊँचाई का)। वन्य रूप से उगने वाले पौधों में लाल पुष्प तीन-तीन के गुच्छों में उत्पन्न होते हैं, परन्तु कृषि में पेड़ों पर फूल नहीं आने दिया जाता है।

पुष्प कलिकाओं को हाथ से तोड़ा जाता है जब वे हल्की लाल होती हैं तथा उसके बाद उन्हें चटाई पर धूप में अथवा भट्टे में सुखाया जाता है। अच्छे किस्म की लौंग बड़ी, फूली हुई, खुरदुरी परंतु सिकुड़न विहीन होती है।

लौंग का पेड़ गहरे ज्वालामुखीय, दुमटी मिट्टी में सबसे अच्छी तरह से पनपता है, तथा इसे उष्ण नम जलवायु की आवश्यकता होती है। लौंग को बीजों द्वारा प्रवर्धित किया जाता है, जिन्हें सामान्यतः छायादार पौधशालाओं में रोपा जाता है तथा बाद में खेत मे आया जाता है।

उपयोग

i) **पाक्य मसाले के रूप में :** लौंग बहुत ही सुगंधित होती है तथा इसमें बहुत अच्छा स्वाद होता है। इसका उपयोग मीठे तथा नमकीन पकवानों दोनों का स्वाद बढ़ाने के लिए किया जाता है। पूरी अथवा पिसी हुई लौंग का उपयोग मिठाइयों, अचारों तथा संसाधित करने वाली चीजों में किया जाता है।

ii) **सिगरेट तथा सुपाड़ी से बनी तंबाकू में :** जावा में, लौंग का उपयोग विशेष ब्रांड की सिगरेट बनाने में किया जाता है। यह सुपाड़ी से बनी तंबाकू में भी मिलाई जाती है क्योंकि इसमें उद्दीपनकारी (stimulating) तथा गर्मी देने वाले गुण होते हैं।

iii) औषधि में : लौंग का उपयोग अफारा तथा मंदाग्नि (भूख न लगने) के उपचार में किया जाता है। लौंग के तेल में एन्टीसेप्टिक, पीड़ाहर (analgesic) तथा एन्टीबॉयटिक गुण पाए जाते हैं तथा यह हर दंतचिकित्सक की अलमारी में अवश्य पाई जाती है। बहुत से दंतमंजनों/टुथपेस्ट तथा मुख दुर्गंध नाशकों (mouth wash) में भी ये मिलाई जाती है।

iv) सफाई कर्मक के रूप में : लौंग के तेल का उपयोग ऊतकीय कार्यों (histological works) में सफाई के कर्मक के रूप में किया जाता है।

v) इत्र उद्योग में : लौंग के तेल में यूज़ीनॉल (eugenol) होता है जिसका उपयोग विस्तृत रूप से इत्रों तथा नहाने के साबुनों में खुशबू प्रदान करने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग कृत्रिम वैनिला को बनाने में भी किया जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) लिखिए कि निम्नलिखित वक्तव्य सही हैं या गलत। दिए गए कोष्ठक में √ या × का चिन्ह लगाइए।

   i) *सिनैमोमम जेलैनिकम* को कृषि/खेती में सामान्यत: कट-बैक (cut-back) झाड़ी के रूप में उगाया जाता है। ☐

   ii) *सिनैमोमम* की पत्ती के तेल में 20 – 30 प्रतिशत यूज़िनॉल पाया जाता है। ☐

   iii) केसर का मूल्य मुख्यत: वर्तिकाग्रों को सुखाए जाने के तरीके पर निर्भर करता है। ☐

   iv) केसर की सुगंध सेफ्रेनॉल की उपस्थिति के कारण तथा उसका कड़वा स्वाद यूज़िनॉल के कारण होता है। ☐

   v) लौंग में हाइपैन्थोडियम धानी के दीर्घीकरण को प्रदर्शित करता है। ☐

   vi) लौंग के तेल का उपयोग ऊतकीय कार्यों में सफाई कर्मक के रूप में किया जाता है। ☐

17.7 फलों से प्राप्त होने वाले मसाले

कुछ मसाले हैं जिन्हें फलों से प्राप्त किया जाता है जैसे कि ऑलस्पाइस को *पाइमेन्टा आफिसेनेलिस (Pimenta officinalis)* से, लाल मिर्च या मिर्चों को *कैप्सीकम* की विभिन्न जातियों से, काली मिर्च को *पाइपर नाइग्रम (Piper nigrum)* से, वैनिला को *वैनिला प्लेनीफोलिया (Vanilla planifolia)*, काला जीरा को *कैरम कार्वी (Carum carvi)* से, धनिया को *कोरिएन्डर सैटाइवम (Coriander sativum)* से, जीरा को *क्यूमिनम साइमिनम (Cuminum cyminum)* से, सौआ (dil) को *एनीथम ग्रेविओलेन्स (Anethum graveolens)* (भारतीय सोआ, *एनीथम सोआ (A. sowa)*), या सौंफ को *फीनीकुलम वल्गैरी (Foeniculum vulgare)* से प्राप्त किया जाता है। यहाँ हम मिर्च, काली मिर्च (मसालों का राजा), धनिया तथा सौंफ के बारे में विस्तार से वर्णन कर रहे हैं।

1996–97 के दौरान, भारत ने 9.45 लाख टन मिर्चों (सूखी हुई) का उत्पादन किया जो 23 राज्यों में फैले हुए 9.565 लाख हेक्टेयर के क्षेत्र में किया गया।

17.7.1 लाल मिर्च/मिर्च

वनस्पतिक नाम : कैप्सीकम एनुअम लिन : (*Capsicum annuum* **Linn.**) कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स लिन (*C. frutescens* **Linn.**)

कुल : **सोलेनेसी**

सामान्य नाम : **मिर्च**

2n = 12

उत्पत्ति

मिर्च या लाल मिर्च (Capsicum) अमरीका का मसालों में सबसे महत्वपूर्ण योगदान है। मिर्चें अमरीकी उष्णकटिबंधी तथा उपोषण क्षेत्रों और वेस्टइंडीज की मूल प्रजाति हैं। इनके 7000 ईसा पूर्व अवशेष मैक्सिको की गुफाओं में पाए गए हैं।

वितरण

कैप्सीकम एनुअम (*C. annuum*) को विश्व भर में सबसे अधिक विस्तृत रूप से उगाया जाता है। *कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स* (*C.frutescens*) की खेती मुख्य रूप से उष्ण कटिबंधी क्षेत्रों में की जाती है। भारत विश्व का सबसे बड़ा मिर्च का निर्यातक है। भारत में मिर्च सामान्यत: सभी जगह उगाई जाती है परंतु प्रमुख उत्पादक राज्य आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा तमिलनाडु हैं।

मिर्चों का तीखापन एक क्रिस्टलीय पदार्थ 'कैप्सेसीन (capsaicin) के कारण होता है जो मुख्यत: बीजांडासन के क्षेत्र में सांद्रित रहता है, जहाँ बीज स्पंजी केन्द्रीय भाग से जुड़े रहते हैं। इसमें विटामिन ए तथा ई (टोकोफेरॉल) की उपस्थिति भी रिपोर्ट की गई है। पके फलों में रंग कैप्सेन्थीन, (capsanthin), ए और बी, कैरोटिन्स, जैन्थोफिल्स आदि यौगिकों से बना होता है।

आकारिकी

कैप्सीकम एनुअम - खेती की जाने वाली सभी जातियां एकवर्षी होती हैं तथा इनका वर्धन काल अल्प होता है (चित्र 17.6)। पुष्प एकल रूप से पर्ण अक्षों में निकलते हैं। पके फल (सरस फल/बेरी) लालामी लिए हुए, पीले से या भूरे से होते हैं। फल 30 से.मी. तक लंबे हो सकते हैं परंतु कुछ किस्मों में छोटे फल होते हैं। ये सीधे या लटके हुए हो सकते हैं। फल खोखले तथा मांसल, विटामिन सी से भरपूर तथा बहुत तीखे नहीं होते हैं।

कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स - पादप अल्पजीवी व बहुवर्षी होते हैं। पुष्प पर्ण अक्षों में 2 या अधिक के गुच्छों में होते हैं। फल चमकीले लाल होते हैं। ये सामान्यत: छोटे (2 – 3 से.मी. लंबे), सतर/सीधे, शंकुरूपी, सामान्यत: कम मांसल तथा तीखे होते हैं। विटामिन सी की मात्रा *कैप्सीकम ऐनुअम* की तुलना में कम होती है।

खेती

कैप्सीकम को एक एकवर्षी के रूप में, गर्म जलवायु की फसल के तौर पर उगाया जाता है क्योंकि यह पाला बर्दाश्त नहीं कर पाता है। बीजों को पहले पौधशाला में बोया जाता है तथा नवोद्भिदों को तब खेत में रोपा जाता है जब वे 15 से.मी. ऊँचाई के हो जाते हैं।

उपयोग में आने वाले अधिकांश सरस फल/बेरी *कैप्सीकम एनुअम* किस्म *ग्रोसम* (लिन.) सेन्ड्ट (*C. annuum* var. *grossum*) की कृषि/खेती की जाने वाली कम तीखी जातियां होती हैं। मीठी मिर्च (भारत में शिमला मिर्च के नाम से जानी जाती है) के कच्चे गहरे हरे सरस फलों का उपयोग सब्जी के तौर पर किया जाता है।

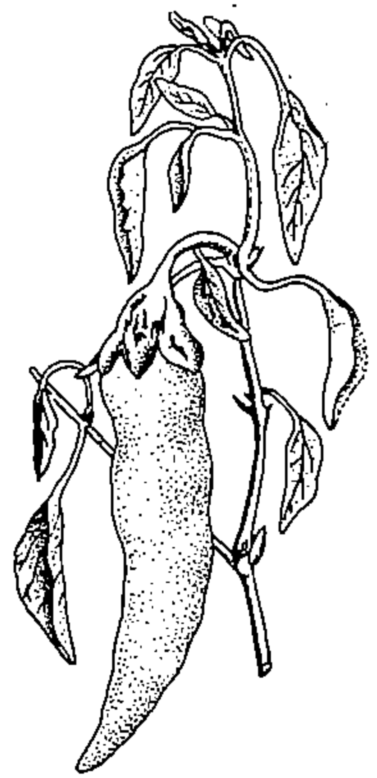

चित्र 17.6 : कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स की एक फल युक्त शाख।

उपयोग

i) स्वादकारी तथा रंगकारी के रूप में : पेपरिका (paparika) (स्पेनिश पाइमेन्टों, एक ऐसी किस्म है जिसमें तीखापन नहीं होता है। कश्मीरी मिर्च तथा लाल मिर्च का उपयोग मसाले तथा सुगंधकारी मसाले दोनों के रूप में विभिन्न प्रकार के भोजनों में सॉस व अचार आदि में किया जाता है।

ii) मानव शरीर क्रिया विज्ञान में भूमिका : मिर्चे विटामिन ए तथा सी का अच्छा स्रोत होने के कारण ये क्षुधा वर्धक (भूख बढ़ाने वाली) होने के साथ-साथ ही शरीर में विटामिनों की अच्छी पूरक हैं। हरी मिर्चे, पकी सूखती मिर्चों की तुलना में अधिक पोषक होती हैं क्योंकि अधिकांश विटामिन उन्हें सुखाने के दौरान लुप्त हो जाते हैं।

मिर्चे स्वाद ग्रंथियों को उद्दीपित कर देती हैं तथा लार के प्रवाह को बढ़ा देती हैं जिसमें 'एमाइलेस' (amylase) एन्जाइम होता है। यह मांडयुक्त या अनाज से निर्मित भोजन को ग्लूकोस में पचा देता है।

iii) औषधीय गुण : कैप्सीकम से बनी औषधियों का उपयोग कटिवात (lumbago), तंत्रिका शूल (neuralgia) तथा गठिया (rheumatic) के विकारों से उत्पन्न उत्तेजना के प्रतिकारक उत्तेजक के रूप में किया जाता है। यह वातहर (carminative) है, परंतु यदि इसे अधिक मात्रा में ले लिया जाए तो यह जठरांत्र शोथ (gastroentritis) कर सकती है। कैन्सर अनुसंधान संस्थान, चैन्नई (मद्रास) में किए गए कुछ परीक्षणों के अनुसार, यह रिपोर्ट किया गया है कि हरी मिर्चे कैन्सर को दबा/रोक देती हैं।

17.7.2 काली मिर्च (मसालों का राजा)

वानस्पतिक नाम : पाइपर नाइग्रम लिन. (***Piper nigrum*** **Linn.**)
कुल : पाइपरेसी
हिन्दी नाम : काली मिर्च
n = 26

उत्पत्ति

पाइपर नाइग्रम (pepper) दक्षिण पश्चिमी भारत के मालाबार तट के आर्द्र/नमी वाले वनों की वासी है।

वितरण

इसकी खेती अब पूर्वी तथा पश्चिमी गोलार्धों दोनों के उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में की जाती है। यह मुख्यतः भारत, थाईलैण्ड, मलेशिया, ब्राजील, श्रीलंका तथा इंडोनेशिया में उगाई जाती है।

केरल अकेला, भारत के कुल काली मिर्च के उत्पादन का 96 प्रतिशत उत्पादन करता है। काली मिर्च की खेती कर्नाटक और तमिलनाडु में भी की जाती है।

आकारिकी

पादप एक बहुवर्षी बेल / लता (vine) है जो वन्य अवस्था में 9 मी. की या अधिक लंबाई तक जाता है परंतु कृषि में इसे नीचा ही (4 मी. ऊँचा) रखा जाता है जिससे आसानी से फलों को तोड़ा जा सके । बेल में द्विरूपी शाखन होता है।

i) ऋजु (orthotropic) (ऊर्ध्वमुखी या सीधा) कायिक आरोही प्ररोह (climbing shoots) इनमें फूली हुई पर्व संधिया होती हैं जिनमें से असंख्य अपस्थानिक जड़ें, पत्तियां तथा अक्षीय कलिकाएं निकलती हैं। जड़ें पादप को पेड़ों के तनों पर तथा अन्य आधारो पर चढ़ने में मदद करती हैं।

ii) पार्श्व तिर्यगअनुवर्ती (तिरछी) (plagiotropic) फलन शाखाएं — ये अक्षीय कलिकाओं से विकसित होती हैं तथा इनमें जड़ें नहीं होती हैं।

पत्तियां, एकांतरी, अंडाकार, गहरी हरी, ऊपरी सतह पर चमकदार तथा नीचे की ओर पीत हरी होती हैं तथा इनमें तीक्ष्ण नुकीले शीर्ष होते हैं। पुष्पक्रम (3 – 25 से.मी. लंबा) लगभग 150 फूलों युक्त होता है

तथा यह तिर्यगअनुवर्ती शाखा पर पत्तियों के विपरीत उगता है। पुष्प एकलिंगी या उभयलिंगी होते हैं। फल अवृंत गोलाकार अष्ठिफल (गुठलीदार फल) होते हैं। पकने के क्रम में फल हरे से चमकीले लाल तथा अंतत: पीले हो जाते हैं। सूखे हुए फलों में उनकी काली-मध्यफलभित्ति (mesocarp) गूदेदार होती है। बीजों (3 – 4 मि. मी. व्यास के) में छोटा सा भ्रूण होता है तथा थोड़ा सा भ्रूणपोष (endosperm) होता है। इसका अधिकांश भाग परिभ्रूणपोष (perisperm) द्वारा अधिग्रहीत रहता है (चित्र 17.7 d)।

काली मिर्च कच्चे फलों से उन्हें सुखाने के बाद प्राप्त की जाती है, जबकि सफेद मिर्च धूसर सफेद गोलाकार बीजों से लगभग पके फलों में से प्राप्त की जाती है। हरी मिर्च अधपके मुलायम हरे स्पाइक/कणिश से प्राप्त की जाती है।

काली मिर्च में पिपरीन (piperine) और पिपरीडीन (piperidine) एल्केलॉइड्स पाए जाते हैं। काली मिर्च का तीखापन एक ऑलियोरेसिन के कारण होता है। कालीमिर्च की विशिष्ट सुगंध एक वाष्पशील तेल की उपस्थिति के कारण होती है, जो मुख्यत: फलभित्ति (pericarp) की कोशिकाओं में पाया जाता है।

कालीमिर्च अनुसंधान केन्द्र (Pepper Research Station), पैनियुर (Panninyur), केरला में कुछ संकर जातियां विकसित की गई हैं।

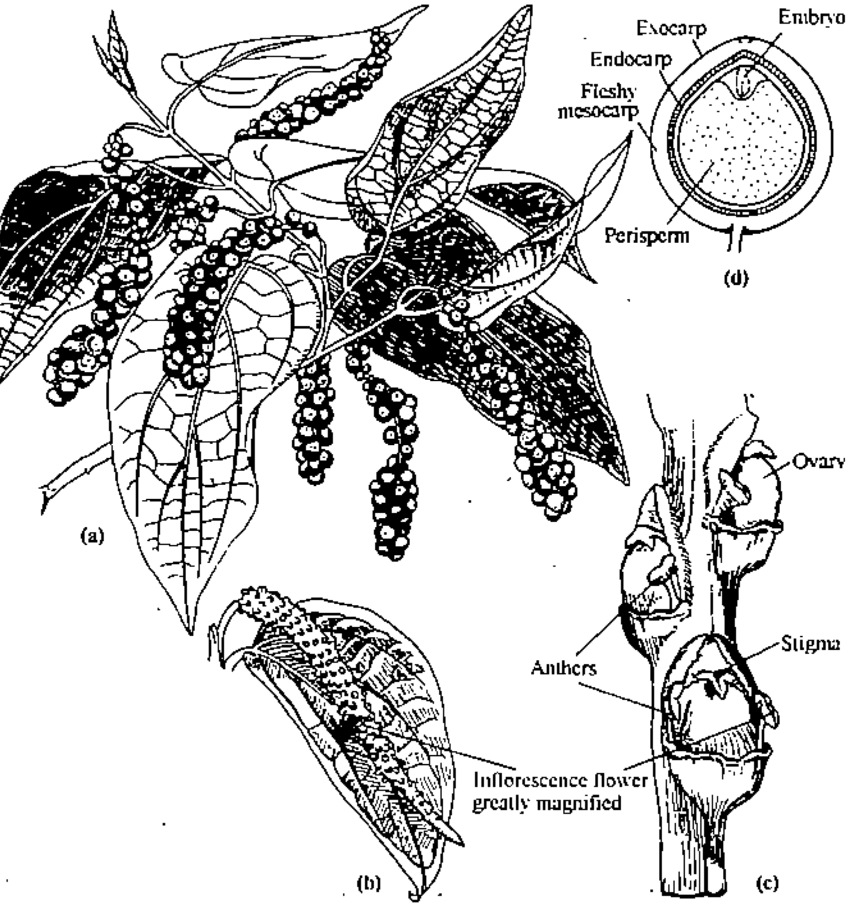

चित्र 17.7 : पाइपर नाइग्रम : a) एक फलदार शाखा b) उभयलिंगी पुष्पक्रम c) पुंकेसर दिखाते हुए पुष्प d) अनुप्रस्थ काट में फल।

काली मिर्च की बेल सबसे अच्छी तरह से नम, गर्म जलवायु में तथा आंशिक छाया में पनपती है। समृद्ध भुरभुरी दुमट मिट्टी जिसमें काफी मात्रा में खाद (humus) हो तथा अच्छी जल निकासी की व्यवस्था अच्छी फसल के लिए आवश्यक है। प्रवर्धन तने की कटिंग/कलम के जरिए किया जाता है जिन्हें सामान्यत: तरुण तथा जीवनक्षम शाखाओं के ऊपरी भागों से लिया जाता है। सामान्यत: प्रत्येक आधार (support) के आसपास दो या तीन कलमें लगाई जाती हैं। लता को बांस या लकड़ी के लठ्ठों पर, सीमेन्ट के खंभों पर या आम, नारियल या सुपाड़ी के पेड़ों पर चढ़ाया जाता है। जब पौधे सिर्फ 0.6 मी. लंबे होते हैं, तभी उनके शीर्ष को अलग कर दिया जाता है जिससे पार्श्व कलियां विकसित हो सकें और इस तरह पादप झाड़ी जैसा हो जाता है। बेलों की समय-समय पर काट-छांट की जाती है जिससे वो नीची ही रहती हैं। लता को पूरी तरह से फल देने में तीन से सात साल लग जाते हैं। फसल पुष्पन/फूल आने के पांच से छह महीने बाद पकती है।

कटाई

मसालों के व्यापर में काली मिर्च की दो मुख्य किस्में जानी जाती हैं काली मिर्च तथा सफेद मिर्च। काली मिर्च के लिए सरस फलों या फलों को तब तोड़ा जाता है जब वे पूरी तरह से पके नहीं होते है तथा हरे ही होते हैं या कभी-कभी सिर्फ कुछ कणिश/स्पाइक लाल होते हैं। इन्हें ढ़ेरों के रूप में इकठ्ठा कर दिया जाता है तथा धूप में सूखने दिया जाता है। सरस फलों को कृत्रिम रूप से धुंआ घरों (smoke houses) में भी सुखाया जा सकता है। जब ये सूख जाते हैं तो फलभित्ति कठोर और झुर्रीदार हो जाती है तथा प्राकृतिक किण्डवन के कारण गहरे भूरे या काले रंग की हो जाती है। कभी-कभी सुखाने और जल्दी काला करने के लिए ताजी कटी कच्ची स्पाइक/कणिशों को उबलते पानी में डाल दिया जाता है।

दूसरी ओर, सफेद मिर्च अधपके सरस फलों से निर्मित की जाती है जो हरे पीले से लगभग लाल रंग के होते हैं। तोड़ने के बाद, सरल फलों को बोरों में भरकर बहते पानी में लगभग आठ से दस दिन के लिए डुबोया जाता है जिससे उनकी त्वचा ढीली हो जाती है। इसके बाद उन्हें नंगे पैरों से कुचला जाता है जिससे बाहरी छिलका उतर जाता है। इसके बाद बचे हुए धूसर सफेद बीजों को अच्छी तरह पानी से धोया जाता है और फिर उन्हें धूप में सुखाया जाता है। आजकल, हालांकि, सफेद मिर्च को अधिकांशत: काली मिर्च से ही निर्वल्कनी यंत्रों (decorticating machines) की सहायता से बनाया जाता है इसीलिए यह कम तीखी होती है।

बॉक्स 17.3 : कालीमिर्च की खेती

भारत में काली मिर्च का कुल उत्पादन लगभग 50,000 टन का है जिसे 1.58 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में खेती करके प्राप्त किया जाता है। मसालों के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र (National Research Centre for Spices) कालीकट में विकसित की गई उच्च उत्पादन तकनीक, का लक्ष्य इस शताब्दी के अंत तक इस महत्वपूर्ण मसाले के कुल उत्पादन को दोगुना करने का है जिससे भारत विश्व निर्यात बाजार का कम से कम 50 प्रतिशत पर अधिकार कर सके।

उपयोग

i) स्वादकारी के रूप में : काली मिर्च अनेकों पिसे मसालों के मिश्रणों तथा सीज़निंग चूर्णों में मिलाई जाती है। सफेद मिर्च का बाजार मूल्य अधिक होता है क्योंकि मायोनीज़ (mayonnaise) जैसे उत्पादों में काली मिर्च के काले तिनके नहीं पसंद किए जाते हैं। इसका उपयोग मिठाइयों तथा पेय पदार्थों के निर्माण में भी किया जाता है।

ii) **औषधि में** : आर्य लोग इसको विभिन्न विकारों जैसे मंदाग्नि/डिस्पेप्सिया, मलेरिया, सन्निपात(delirium) तथा कंपन (tremors) के लिए सशक्त उपचार मानते थे।

iii) **परिरक्षक के रूप में** : तरीदार सब्जियों तथा अन्य भोज्य पदार्थों में परिरक्षक के रूप में इसका उपयोग किया जाता है।

मिश्र (egypt) के वासी इसका उपयोग शव लेपन (embalming) के लिए करते थे।

काली मिर्च की विशिष्ट सुगंध इसमें पाए जाने वाले वाष्पशील तेल (जो मुख्यत: फलभित्ति की कोशिकाओं में पाया जाता है) की उपस्थिति के कारण होती है। फल में पाई जाने वाली तीक्ष्णता/तीखापन अ-वाष्पशील ऑलियोरेजिन तथा विभिन्न एल्केलॉइड्स के कारण होती है। इनमें मुख्य एल्केलॉइड पिपरीन (piperine) है।

iv) **कीटनाशक के रूप में** : यह मक्खियों के लिए पाइरीथ्रम (pyrethrum) से अधिक विषैला समझा जाता है। हालैण्ड तथा फ्राँस के वासी इसका उपयोग कीट-प्रतिकर्षी (insect-repellent) तथा शलभ/मॉथ-नाशी के रूप में करते हैं।

v) **काली मिर्च का तेल** : यह मीट, सूप, सॉसेज, पेयपदार्थों तथा शराब आदि में महत्वपूर्ण योजक का कार्य करता है। इसका उपयोग इत्र तथा औषधि उद्योग में भी किया जाता है।

vi) **काली मिर्च के उपोत्पाद** : केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान (Central Food Technology Research Institute) (सी.एफ.टी.आर.आई), मैसूर द्वारा व्यर्थ काली मिर्च (जो रद्द कर दी जाती है) तथा सामान्य लवण से एक स्वादकारी पदार्थ 'पीपर-साल' (pepper-sal) निर्मित करने का पेटेन्ट प्राप्त कर दिया गया है। पीपर-साल का उपयोग सलाद, पेय पदार्थों तथा मीट के व्यंजनों में स्वादकारी के रूप में किया जाता है।

vii) **काली मिर्च के समावरक/हल (Hull)** : काली मिर्च के हल अथवा छिलके जो सफेद मिर्च बनाने के दौरान अलग किए जाते हैं उन्हें अलग से हल्के भूरे से रंग के पाउडर के रूप में बेच दिया जाता है, इनकी गंध तथा स्वाद बहुत तीखा होता है। इसका उपयोग डिब्बा बंद सामानों में स्वादकारी के रूप में किया जाता है। काली मिर्च के छिलकों में वाष्पशील तेल प्रचुर मात्रा में होने के कारण इनका उपयोग काली मिर्च के स्रोत में भी किया जा सकता है।

17.7.3 धनिया

वानस्पतिक नाम : *कोरिएन्ड्रम सैटाइवम* लिन (***Coriandrum sativum*** **Linn.**)

कुल : एपिएसी (अंबेलीफेरी)

सामान्य नाम : धनिया

n = 11

उत्पत्ति

धनिया (coriander)भूमध्यसागरीय क्षेत्र का वासी/मूल प्रजाति है।

वितरण

इसकी खेती रूस, मध्य यूरोप, भारत, टर्की, मोरक्को, अर्जेन्टीना, तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में विस्तृत रूप से की जाती है।

भारत में, धनिया लगभग सभी राज्यों में उगाया जाता है परंतु मुख्य रूप से यह आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, पंजाब, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, आसाम तथा मध्य प्रदेश में उगाया जाता है।

आकारिकी

एपिएसी (अंबेलीफेरी) एक बहुत ही महत्वपूर्ण कुल है जो कई पाक्य शाक (culinary herbs) प्रदान करती है जो भोजन को अच्छी सुगंध प्रदान करते हैं। लगभग पूरा कुल ही विश्व के शीतोष्ण भागों तक सीमित

है। इनमें कुछ ही खेती उन उष्णकटिंबधी क्षेत्रों में की जाती है जहाँ जलवायवी की परिस्थितियां अनुकूल होती हैं।

प्रमुख स्वादकारी मसाले एनिस/सतपुष्पा (anise), कालाजीरा, धनिया, ज़ीरा, सोआ तथा सौंफ हैं जो सभी भूमध्यसागरीय भाग में उगते हैं। उपर्युक्त सभी मसालों में कालाजीरा सबसे कठिन स्थितियों में उगने वाला है जो उत्तर में सुदूर आइसलैण्ड तक में उगता है।

धनिया एक एकवर्षी शाक है (30–70 से.मी. ऊँचा) जिसमें द्विरूपी पत्तियां होती हैं। निचली पत्तियां चौड़ी तथा छिछले रूप से गोल-दंतीय किनारों वाली होती हैं जबकि ऊपरी पत्तियां काफी कटी-फटी रेखीय पालियों (linear lobes) वाली होती हैं। (चित्र 17.8)

पुष्प छोटे सफेद या गुलाबी से तथा संयुक्त अंतस्थ पुष्पछत्रों (umbels) में होते हैं। फल दो बीजीय तथा कच्चे होने पर खटमल जैसी बुरी गंध वाले होते हैं परंतु बाद में धनिया के तेलों की उपस्थिति के कारण अच्छी खुशबू वाले बन जाते हैं, इन तेलों का प्रमुख घटक कोरिएन्ड्रॉल (coriandrol) होता है। सभी अंबेलीफेरी कुल के फलो से निर्मित वाष्पशील तेलों में धनिया/कोरिएन्डर का तेल अधिक स्थायी होता है तथा इसमें मीठी और पंसद आने लायक महक लंबे समय तक रहती है। धनिया का फल प्रारूपिक भिदुर फल (schizocarp) होता है जो लगभग गोलाकार तथा पीला भूरा होता है तथा अपने शीर्ष पर बाह्यदलपुंज एवं वर्तिका पाद/स्टाइलोपोडियम के अवशेष धारण किए रहता है। फल की खाँचे अस्पष्ट होती हैं तथा पूरी पृष्ठ सतह पर रेशों की बनी हुई परत होती है। दो फलांशक (mericarps) एक अविभाजित फलधर (carpophore) से जुड़े रहते हैं (चित्र 13.8 d)। फलभित्ति में पृष्ठ सतह पर तैल नलिकाएं (vittae) नहीं होती हैं पर सामान्यत: तैल नलिकाओं का एक जोड़ा संधायी सतह पर (commissural side) उपस्थित होता है।

बॉक्स 17.4 : अंबेलीफेरी कुल के कुछ मसाले

अंबेलीफेरी कुल अपने सुगंधित फलों के कारण अनेकों पाक्य शाक प्रदान करता है। धनिया के अतिरिक्त अन्य दो प्रमुख मसालों *कैरम कैरवी* (*Carum carvi*) (काला ज़ीरा) तथा *क्यूमीनम साइमीनम* लिन. (Cuminum cyminum) (ज़ीरा) का उपयोग भी विस्तृत रूप से पाककला (भोजन बनाने) में किया जाता है। काले ज़ीरा का उपयोग डबलरोटी, बिस्कुट, केक, चीज़ (पनीर), सेब की सॉस तथा कुकीज़ को स्वादकारी बनाने में किया जाता है। इसके बीज के तेल का उपयोग सॉसेज, मीट, डिब्बाबंद भोज्य पदार्थों इत्र, मुख दुर्गंध नाशकों तथा शराब/पेय पदार्थों (कुमेल्स) (kuimmels) को स्वादकारी बनाने में किया जाता है। इसके बीज पाचक तथा वातहर की भाँति कार्य करते हैं। भारत में, ज़ीरा, करी पाउडर का प्रमुख घटक होता है तथा इसका उपयोग मुख्यत: सूप, सॉसेज, अचार, चीज़, मीट से बने व्यंजनों, डबलरोटी तथा केक आदि को स्वादकारी बनाने में किया जाता है।

ज़ीरे के बीजों का उपयोग उद्दीपक, वातहर तथा पाचक के रूप में किया जाता है वाष्पशील तेल निकालने के बाद बचे अवशेष का उपयोग मवेशियों के चारे के रूप में किया जा सकता है। अन्य मसाले *ट्रेकीस्पर्मम एमी* (लिन.) (*Trachyspermum ammi* (L.) (एजोवन या अजवायन) तथा हींग (asafetida) *फेरूला एस्फोईटडा* (*Ferula assafoetida*) का उपयोग भी भारतीय व्यंजनों में विस्तृत रूप से किया जाता है।

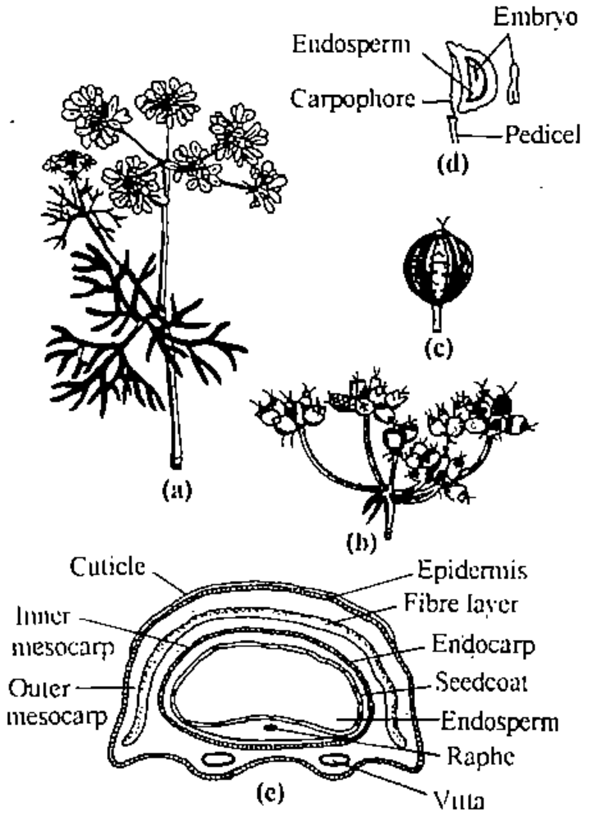

चित्र 17.8 : *कोरिएन्ड्रम सैटाइवम* : a) बुरी तरह से कटी-फटी संयुक्त पत्तियों तथा त्रिज्या सममित (actinomorphic) एवं एकव्यास सममित (zygomorphic) पुष्पों युक्त पुष्पछत्र (umbel) b) परिचक्रिक सहपत्र (involucral bracts) तथा सहपत्रिका चक्र (involucel bractlets) युक्त फलन शाखा c) एकल फल d) अनुदैर्घ्य रूप से कटा हुआ फलांशक (mericarp) e) अनुप्रस्थ काट में फलांशक।

उपयोग

i) **स्वादकारी के रूप में** : धनिया की पत्तियों का उपयोग उनकी तीखी सुगंध के कारण तरीदार सब्जियों, सॉसेज, चटनी आदि बनाने में किया जाता है। इनका उपयोग तरीदार सब्जियों, सूप, दही आदि को स्वादकारी बनाने में भी किया जाता है। इसके फल करी पाउडरों के प्रमुख घटक होते हैं। कुछ पश्चिमी देशों में जिन (gin) में भी धनिया मिलाया जाता है।

ii) **औषधि में** : धनिया के बीज पाचक, मूत्रल (diuretic), वातहर, पित्तशामक (antibilious) तथा कामोद्दीपक (aphrodisiac) माने जाते हैं। धनिया के तेल का उपयोग औषधियों की अरुचिकर गंध को दबाने के लिए किया जाता है।

iii) **इत्रों में** : धनिया के बीजों का तेल इत्रों के लिए महत्वपूर्ण होता है : इसकी हल्की, रुचिकर, हल्की तीखी महक इत्रों में मिलकर ओरिएन्टल/यूरोपीय गंध देती है। यह चमेली के साथ भली-प्रकार मिल जाता है।

17.7.4 सौंफ

वानस्पतिक नाम : *फोइनोकुलम वल्गेअर* मिल. (*Foeniculum vulgare* Mill.)

कुल : एपिएसी (अंबेलीफेरी)

सामान्य नाम : सौंफ

n = 11

उत्पत्ति

सौंफ (fennel) दक्षिणी यूरोप तथा भूमध्यसागरीय क्षेत्र की मूल प्रजाति है।

कड़वी सौंफ *फोइनीकुलम वल्गेअर* किस्म *वल्गेअर* की खेती अब विस्तृत रूप से रूस, भारत, रोमानिया, हंगरी, इटली, जर्मनी, फ्रांस, जापान व अर्जेन्टीना में की जाती है तथा *फोइनीकुलम वल्गेअर* किस्म *डुल्से* (मिल) थैलंग (*F. vulgare* var.) *dulce* (Mill) Thellung) को फ्रांस, इटली तथा मेसोडोनिया में उगाया जाता है।

भारत में, सौंफ को शीत ऋतु की फसल के रूप में महाराष्ट्र, गुजरात तथा कर्नाटक में उगाया जाता है। कुछ मात्रा में इसकी खेती उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान में भी की जाती है।

आकारिकी

सौंफ का पौधा लंबा, सुगंधित, बहुवर्षी शाक है। पौधे के सभी भाग सुगंधित होते हैं। पत्तियां पिच्छाकार (pinnate), चार से पांच बार विभाजित तथा लंबे वृंतों वाली होती हैं। इन्हें गमले के शाक के रूप में उगाया जाता है। पुष्पक्रम संयुक्त पुष्प छत्र होता है जिसमें पीले से पुष्प होते हैं।

फल दीर्घायत-अंडाकार (oblong-oval) या दीर्घवृत्तीय हरे से या पीत भूरे लंबे वृंत तथा छोटे स्टाइलोपोडियम/वर्तिकापाद (वर्तिका के आधार पर डिस्क जैसा विस्तार, जिसमें से मधु का स्रावण होता है, चित्र 17.9) युक्त होते हैं। दो फलांशक (एक बीजीय खंड) विभाजित फलधर (carpophore) से जुड़े रहते हैं (जो वृंत का रूपांतरित विस्तार होता है)। फलभित्ति सामान्यत: चार पृष्ठ तथा दो संधायी तेल नलिकाओं (चित्र 17.9) युक्त होती है।

कड़वी सौंफ में 6 प्रतिशत फेनचोन (fenchone) तथा 70 प्रतिशत एनियोल (anethole) होता है। मीठी सौंफ के तेल में 90 प्रतिशत तक एनियोल होता है, परंतु फेनचोन नहीं पाया जाता है।

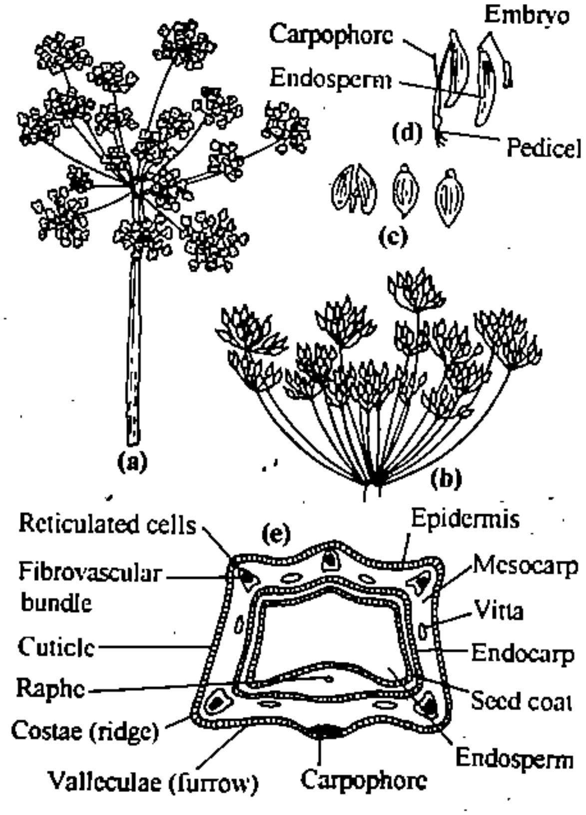

चित्र 17.9 : **फोइनीकुलम वल्गेअर** : a) एक संयुक्त पुष्पछत्र (परिचक्रिक सहपत्र तथा सहपत्रिका रहित) जिसमें लंबा प्राथमिक वृंत या अर/किरणें (rays) होती हैं तथा बहुत ही छोटी द्वितीयक अरें होती हैं। b) फलित होता पुष्प छत्र c) भिदुर फल, पूर्ण तथा खुला हुआ जिसमें शाखित फलधर दिखाई दे रहे हैं (चिरस्थायी स्टाइलोपोडियम/वर्तिकापाद को देखिए) d) फलांशक की अनुदैर्ध्य काट, फलधर शाखित है तथा भ्रूण कहीं स्टाइलोपोडियम के सिरे के ठीक नीचे स्थित है, तथा e) फलांशक की मध्य अनुप्रस्थ काट।

उपयोग

i) **स्वादकारी के रूप में :** सूखी हुई सौंफ करी पाउडर का आवश्यक भाग है तथा इसका उपयोग अक्सर सूप, सॉसेज़, अचार, मिठाइयों तथा शराब/पेय पदार्थों में स्वादकारी के रूप में किया जाता है। पत्तियों का उपयोग सॉसेज़ में तथा तरकारियों में ऊपर से सजाने में किया जाता है।

ii) **सब्जी के रूप में :** सौंफ के स्थूलित पर्णवृंतों को विवर्ण (blanch) करके उन्हें सब्जी की तरह उपयोग किया जाता है।

iii) **औषधि में :** औषधि के रूप में, सौंफ के तेल का उपयोग उद्दीपक तथा वातहर के रूप में किया जाता है। इन्हें अल्प मात्रा में बच्चों को कार्बोहाइड्रेट्स को पचाने के लिए दिया जाता है। खाने के बाद सौंफ चबाने से मुख की दुर्गंध, अपच तथा उल्टी आदि नहीं होती है।

iv) **इत्र उद्योग में :** सौंफ के तेल का उपयोग साबुन तथा इत्र के निर्माण में किया जाता है।

v) **मवेशियों के चारे के रूप में :** फलों के आसवन के बाद बचे अवशेष को मवेशियों के चारे के लिए उपयोग किया जाता है।

वोध प्रश्न 3

कॉलम ए में दिए गए वानस्पतिक नामों को कॉलम बी में दिए गए उनके फलों से मिलाइए।

1.	*फोइनिकुलम वल्गेअर*	क - सरस फल/बेरी
2.	*पाइपर नाइग्रम*	ख - अष्ठिल फल (गुठलीदार फल)
3.	*कोरिएन्ड्रम सैटाइवम*	ग - भिदुर फल
4.	*ब्रेसिका* (स्पी.)	घ - भिदुर फल
5.	*कैप्सीकम एनुअम*	ङ. - सिलिकुआ

17.8 बीजों से प्राप्त होने वाले मसाले

अनेकों जातियां ऐसी हैं जिनके बीजों को उसी रूप में मसाले के तौर पर उपयोग किया जाता है जैसे कि सरसों, *ब्रैसिका* (*Brassica*) से इलायची, *एलीटेरिया कार्डामोमम* (*Elettaria cardamomum*) से मेथी, *ट्राइगोनेला फोइनम ग्रेसम* (*Trigonella foenum -graecum*) से तथा जायफल और जावित्री *मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स* (*Myristica fragrans*) से प्राप्त की जाती है। यहाँ हम सरसों/राई इलायची, जायफल और जावित्री के बारे में विस्तृत वर्णन करेंगे।

17.8.1 सरसों/राई

ब्रैसिका (mustard) आर्थिक महत्व के अनेक मसाले प्रदान करता है। इसकी लगभग 150 जातियां हैं जो एकवर्षी, द्विवर्षी या कभी-कभी बहुवर्षी शाक होती हैं। भारत की प्रमुख तेल उत्पादक फसलें *ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस* (*Brassica campestris*) तथा *ब्रैसिका जंन्सिया* (*B. juncea*) हैं। एक अन्य क्रूसीफेरी कुल का पौधा *ऐरूका वेसीकैरिया* उपजाति *सेटाइवा* (*Eruca vesicaria* sub sp. *sativa*) भी एक अल्प तेल उत्पादक फसल है, जिसे मुख्यत: पंजाब में उगाया जाता है जिससे जंबा तेल (jamba oil) का उत्पादन होता है। *ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस* से तीन भिन्न किस्में भूरी सरसों, पीली सरसों तथा तोरिया विकसित की गई हैं तथा ये विशिष्ट पारिस्थितिक-भौगोलिक (eco-geographical) क्षेत्रों में ही सीमित है। भारत में विश्व भर में सबसे अधिक क्षेत्रफल में तथा सबसे अधिक मात्रा में तोरिया तथा सरसों का उत्पादन किया जाता है।

तोरिया का मुख्य उत्पादक उत्तर प्रदेश है जो अकेला ही कुल उत्पादन का 60 प्रतिशत प्रदान करता है। अन्य उत्पादक राज्य पंजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा आसाम हैं।

तालिका 17.1 : सरसों

ानस्पतिक नाम (प्रचलित नाम) तथा गुणसूत्र संख्या	भारतीय प्रचलित नाम	उत्पत्ति	वितरण
1. *ब्रैसिका एल्बा* (लिन.) बोइस (*B. alba* (Linn.) Boiss या *ब्रैसिका हिर्टा* (*B. hirta*) या *सिनेप्सिस एल्बा* लिन. (*Sinapsis alba* Linn.) (सफेद राई) n = 12	सफेद राई	भूमध्यसागरीय क्षेत्र	रूस, कनाडा, डेनमार्क, युनाइटेड किंगडम
2. *ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस* लिन. (*B. campestris* Linn.) किस्म डाइकोटोमा var (dichotoma) n = 10	काली सरसों	भूमध्यसागरीय क्षेत्र	चीन, पाकिस्तान और भारत
(var. glauca (किस्म ग्लॉका) पर्यायवाची नाम किस्म तोरिया डूथी और फुलर (var. toria Duthie & Fuller)	पीली सरसों तोरिया		
. *ब्रैसिका जंशिया* (लिन.) ज़र्न और कॉस (*B. juncea* (Linn) Czern. & Coss) भारतीय या भूरी सरसों।	राई	अफ्रीका	अफ्रीका, यूरोप से चीन, जापान,
. *ब्रैसिका नाइग्रा* (लिन.) कोच (*B. nigra* (Linn.) Koch) असली या काली सरसों।	बनारसी राई	यूरेशिया	रूस यूरोप

ल : ब्रेसिकेसी (क्रूसीफेरी) [Brassicaceae (Cruciferae)]

कारिकी

रसों के पौधे पतले, सीधे, शाखित, एकवर्षी शाक होते हैं जिनकी लंबाई लगभग 0.6–1.5 मी. तक होती । ये सामान्यत: मोम की परत से ढके रहते हैं जिसे 'ब्लूम' (bloom) कहते हैं। पत्तियां पालियुक्त (कान आकार की) तथा सामान्यत: लायरेट (lyrate) (चित्र 17.10) (दीर्घपिच्छाकारी परंतु दीर्घीकृत अंतस्थ लि तथा छोटी निचली पालि युक्त) होती हैं।

ज छोटे, गोलाकार, पीले भूरे से या काले होते हैं। बीजों में एक ग्लाइकोसाइड सिनिग्रिन (glycoside nigrin) या पौटेशियम माइरोनेट (potassium myronate) (*ब्रेसिका एल्बा* में सिनाल्बिन) inalbin) पाया जाता है दोनों में वैसे शरीरक्रियात्मक गतिविधि नहीं पाई जाती है, परंतु एन्जाइम इरोसिन (myrosin) के साथ जल अपघटन होने पर वे डैक्स्ट्रोस तथा सरसों का संगध तेल उत्पन्न रते हैं।

पुष्प प्रारूपिक क्रूसीफेरी कुल की संरचना दर्शाते हैं यानि कि इनमें चार मुक्त वाह्य-दल। (sepals), चार मुक्त नखरित (clawed) दल (petals), चर्तुदीर्घी (tetradynamous) पुंकेसर (stamens) तथा द्विअंडपी, युक्तअंडपी, ऊर्ध्ववर्ती (superior) अंडाशय होता है, जो आरंभ में एककोष्ठी (unilocular) परंतु बाद में कूट-पट [(रेप्लम) आभासी (पट)] बन जाने के कारण द्विकोष्ठी हो जाता है।

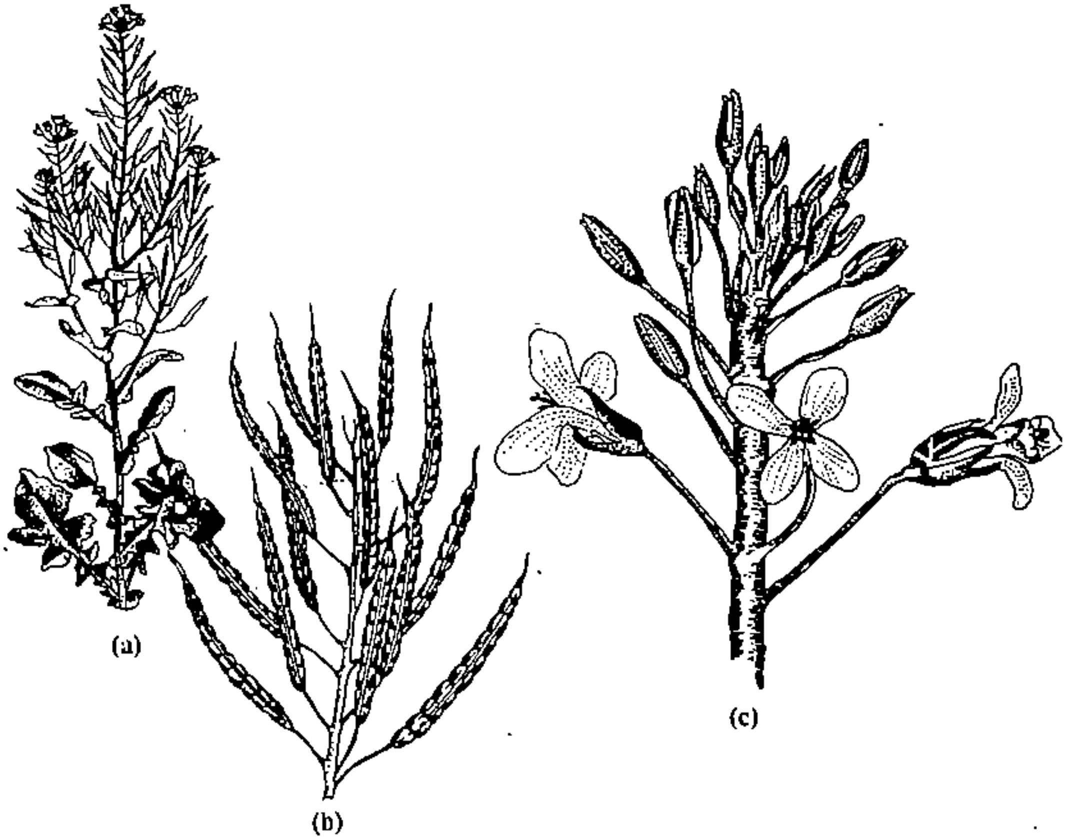

चित्र 17.10 : तोरिया (ब्रैसिका नेपस) [*Brassica napus*] a) पादप, आधारीय पत्ती के साथ b) फली c) पुष्प।

उपयोग

i) स्वादकारी के रूप में : सरसों के बीज, विशेष रूप से राई का उपयोग अचार बनाने में तथा तरीदार व अन्य सब्जियों में मसाले के रूप में किया जाता है। बीजों से निकाले जाने वाले तेल का उपयोग खाना पकाने के तेल के रूप में तथा सलाद और मार्जेरीन बनाने में किया जाता है।

ii) प्रदीप्तकारी के रूप में : निम्न किस्म के तेल का उपयोग प्रदीप्तकारी (illuminant) के रूप में किया जाता है।

iii) चिकनाई युक्त (lubricant) पदार्थ के रूप में : तेल के इरूसिक (erucic) अम्ल का उपयोग जेट इंजनों को चिकनाई प्रदान करने के लिए तथा प्लास्टिक के निर्माण में किया जाता है। यह टैनिंग (tanning) के दौरान चमड़ी तथा खालों को मुलायम तथा आनम्य (pliable) बनाता है। भारत में इस तेल का उपयोग शरीर की मालिश करने के लिए किया जाता है।

iv) मवेशियों के चारे के रूप में : भारत में खली (oil cake) का उपयोग मवेशियों के चारे के रूप में किया जाता है।

iv) उर्वरक के रूप में : जापान, भारत तथा यूरोप में खली का उपयोग उवर्रक के रूप में किया जाता है। *ब्रेसिका हिर्टा* (*B. hirta*) को कभी-कभी, हरी खाद के लिए उगाया जाता है।

iv) परिरक्षक के रूप में : शराब आदि में यीस्ट के किण्डवन(fermentation) पर सभी मसालों, सुगंधित मसालों तथा शाकों के प्रभाव पर किए गए अध्ययन में, सरसों के आटे में सबसे अधिक परिरक्षक गुण पाए गए हैं, इसके बाद प्रभाव के इस क्रम में लौंग तथा इलायची आते हैं।

17.8.2 इलायची (मसालों की रानी)

वानस्पतिक नाम : *इलिटेरिया कार्डमोमम* (लिन.) मेटन (***Elletaria cardamomum*** **(L.) Maton)**

कुल : जिंजीबरेसी **(Zingiberaceae)**

सामान्य नाम : छोटी इलाइची

n = 24

उत्पत्ति

वंश *इलिटेरिया* (cardamon) भारत व श्रीलंका की मूल प्रजाति है जहाँ यह वन्य अवस्था में उष्णकटिबंधी वर्षा वनों में उगता है। जिसमें इन्डो-मलेशियाई प्रदेश भी शामिल हैं।

एक एकलप्ररूपी (monotypic) वंश जो *इलिटेरिया कार्डामोमम* (*E. cardamomum*) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है वह उष्णकटिबंधी इंडो-मलेशियाई (Indo-Malayan) क्षेत्र में वितरित है।

वितरण

भारत तथा श्रीलंका के अतिरिक्त, ग्वाटेमाला और थाईलैण्ड इलायची के अन्य प्रमुख उत्पादक देश हैं। अल्प मात्रा में इसे लाओस, वियतनाम, कंबोडिया, कोस्टारिका, एल-सेल्वाडोर, तथा तंज़ानिया में भी उगाया जाता है।

भारत में, छोटी इलायची की खेती केरला, कर्नाटक तथा तमिलनाडु तक ही सीमित है। केरला में कोट्टायम तथा कर्नाटक में कुर्ग और हासन प्रमुख जिले हैं जहाँ छोटी इलायची की खेती की जाती है।

इलिटेरिया कार्डामोमम किस्म मेजर थॉ (*E. cardamomum* var. major Thw.) श्रीलंका तथा पश्चिमी घाटों के दक्षिणी आधे भाग की 'वन्य' इलायची है।

आकारिकी

छोटी इलाचयी का पादप एक मजबूत, लगभग 3 मी. ऊँचा शाकीय बहुवर्षी पौधा है। इसमें भूमिगत शाखित प्रकंद होता है; इसमें से कुछ सतर पर्णिल प्ररोह निकलते हैं। पत्तियां दो कतारों में तने के विपरीत भागों में होती हैं तथा उसी तल में (द्विपंक्तिक) होती हैं। पुष्प यौगिक असीमाक्षों (panicles) में उगते हैं। वे सफेद या पीत हरे होते हैं जिनमें मध्य में स्थित ओष्ठ (lip) बैंगनी रंग की धारी लिए होते हैं। छोटी इलायची का फल एक त्रिकोष्टी कैप्सूल होता है। यह क्रीमी-सफेद, दीर्घायत-अंडाकार (लगभग 8 – 15 मि. मी. लंबा) तथा हल्की सी चोंच युक्त होता है। फलभित्ति तंतुमय, कागजी तथा अनुदैर्ध्य रूप से झुर्रीदार होती है। (चित्र 17.11)।

इलिटेरिया कार्डामोमम किस्म कार्डमोमम (पर्यायवाची किस्म *माइनर* वाट किस्म *माइनस्कुला* बर्किल) [syn.var. *minor* watt var. *minuscula* Burkill] में भारत में उगायी जाने वाली-अधिकांश कृत्य प्रजातियां सम्मिलित हैं।

प्रत्येक फल में 15 – 20 बीज होते हैं। ये सुगंधित, लगभग 3 मि.मी. लंबे, भूरे से, कोणीय व झुर्रीदार होते है तथा एक ढीले रूप से जुड़ी हुई कागजी संरचना-बीजचोल (aril) द्वारा एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। बीज में स्थूल सफेद मांडयुक्त परिभ्रूणपोष (perisperm) तथा एक छोटा भ्रूण होता है (चित्र 17.12)।

खेती

छोटी इलायची सिर्फ पहाड़ी क्षेत्रों की उष्णकटिबंधी फसल है। पादपों को प्रकंदों के टुकड़ों द्वारा अथवा बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। फलों की कटाई पकने से पहले ही कर ली जाती है जिससे सूखने के दौरान उनके स्फुटन को रोका जा सके। उन्हें या तो धूप में सुखाया जाता है अथवा छाया में सुखाया जाता है। कभी-कभी फलों को गंधक (sulphur) के धुंए से विवर्णित (bleach) किया जाता है जिससे बाहरी त्वचा का रंग अच्छा हो जाता है। छिले हुए फलों में सुगंध लंबे समय तक रहती है। बीजों में बहुत बढ़िया सुगंध तथा विशिष्ट गर्मी व स्वाद हल्का तीक्ष्ण होता है। यह अच्छी सुगंध वाष्पशील तेल की उपस्थिति के कारण होती है (2 – 3%)। वाष्प शील तेल के मुख्य घटक साइनॉल (cineol), टर्पिनियॉल (terpineol), टर्पीइन (turpinene), सेबनीनन (sabinene) तथा लाइमोनीन (limonene) हैं।

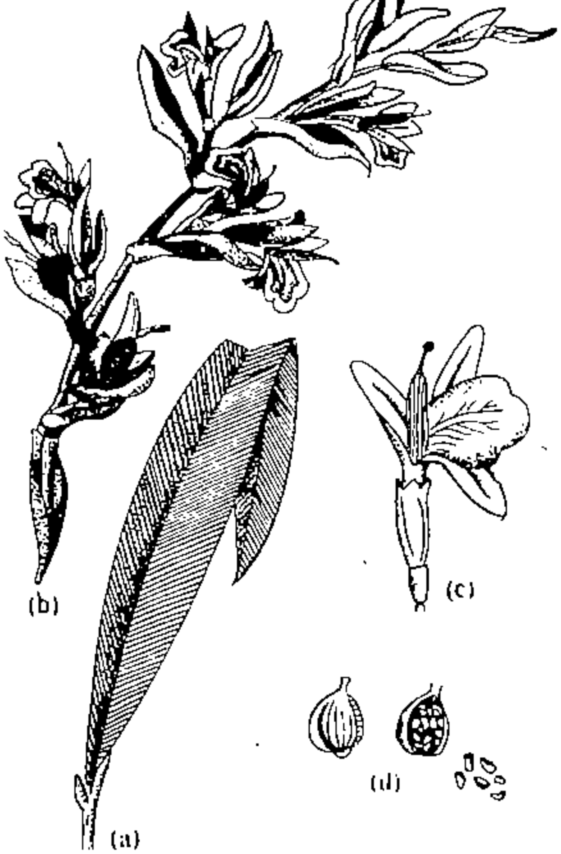

चित्र 17.11 : *इलिटेरिया कार्डमोमम* : a) एक पर्ण b) अक्षीय सिन्सिनी (cincinni) सहित यौगिक असीमाक्ष (panicle), सामान्यत: दो या तीन पुष्प युक्त c) नलिकाकार सहपत्रिका तथा पार्श्वदल पुंज सहित पुष्प जिसमें प्रतिअंडाकार ओष्ठक/लेबीलम केन्द्र से निकलने वाली धारियों के साथ दिखाई दे रहा है। d) कैप्सूल तथा बीज।

बड़ी इलायची (Large cardamomum)
वानस्पतिक नाम :
एफ्रेमोमम ऐमोमम
(*Aframomum amomum*)
सामान्य नाम : बड़ी इलायची

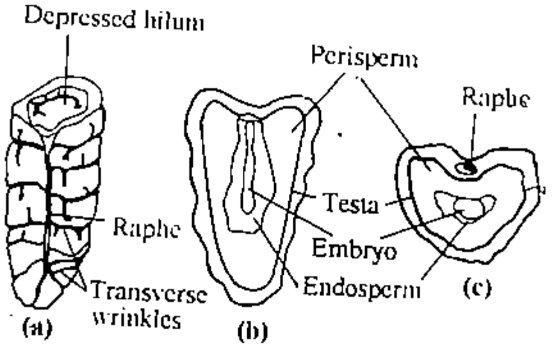

चित्र 17.12 : छोटी इलायची के बीज : a) सतह परिदृश्य b) अनुदैर्घ्य काट c) अनुप्रस्थ काट।

उपयोग

i) स्वादकारी व चर्वणी (**masticatory**) के रूप में : छोटी इलायची के बीजों को साबुत ही अथवा चूर्ण रूप में करी पाउडर, अचार, मिठाइयों, कॉफी, पेय पदार्थों तथा तंबाकू बनाने में उपयोग किया जाता है।

छोटी इलायची के फलों को खाने के बाद चबाया जाता है या अक्सर पान में डाला जाता है। इसका आसवन करके छोटी इलायची का तेल बनाया जाता है। सऊदी अरब में, छोटी इलायची सबसे अधिक प्रचलित मसाला है।

ii) औषधि में : यह शक्तिशाली सुगंधित उद्दीपक, वातहर, पाचक तथा मूत्रक का कार्य करती है। ऐसा कहा जाता है कि छोटी इलायची को दिन में एक बार एक चम्मच शहद में मिलाकर खाने से आंखों की ज्योति बढ़ती है, तंत्रिका तंत्र मजबूत होता है तथा यह आदमी को स्वस्थ रखती है। छोटी इलायची के चूर्ण को चाय के पानी में उबालकार चाय बनाने में अच्छी महक आती है तथा इससे अत्यधिक थकान, अवसाद आदि में आराम मिलता है।

बॉक्स 17.5 : छोटी इलायची की किस्में

इलिटेरिया कार्डमोमम में कृष्य जातियों में काफी विविधता पाई जाती है तथा व्यावसायिक प्रकारों का नामकरण उनके उत्पन्न होने की जगह के नाम पर होने से किस्मों की पहचान में काफी गड़बड़ी/भ्रॉति हो जाती है। फल के आमाप के आधार पर दो किस्मों की पहचान की गई है। वे हैं i) *इलिटेरिया कार्डमोमम* किस्म मेजर थॉ. (*E. cardomomum* var. major Thw.) जो सीलोन की 'वन्य' देशी इलायची से या बड़ी दीर्घायत इलायची या बड़ी इलायची से बनी है। ii) *इलिटेरिया कार्डमोमम* किस्म माइनर वाट (पर्याय - *इलिटेरिया कार्डमोमम* किस्म मिनस्कुला वीर्कल (*E. cardamomum* var. minor Watt [syn. *E. cardamomum* var. minuscula Burkill] जिसमें सभी कृष्य प्रजातियां (races) सम्मिलित हैं, खासतौर पर मालाबार तथा मैसूर नाम से जानी जाने वाली सभी किस्में इसमें शामिल हैं।

कार्डेमम किस्म मेजर अधिक प्राचीन किस्म है, जिससे कृष्य किस्म माइनर की उत्पत्ति हुई है। माइनर सामान्यतः भारत में उगायी जाती है। इसमें अनेंको प्रजातियां/रेसिस सम्मिलित हैं जो पादप के आमाप में, पर्ण सतह की प्रकृति में तथा पुष्पित होने वाले यौगिक असीमाक्षी पुष्पक्रमों के गुणों में और फल के कैप्सूल में भिन्न होती है। सभी किस्में तथा प्रजातियां एक दूसरे के साथ परस्पर प्रजनन कर सकती हैं तथा इनमें दिखायी पड़ने वाली भिन्नताएं संभवतः प्राकृतिक प्रजनन के कारण ही होती हैं।

बोध प्रश्न 4

बीजों से प्राप्त किए जाने वाले मसालों की एक सूची बनाइए तथा उनमें से किसी एक का विस्तार से वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

17.8.3 जायफल तथा जावित्री

वानस्पतिक नाम : *मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स* हाउट (***Myristica fragrans*** **Houtt)**
कुल : मिरिस्टिकेसी **(Myristicaceae)**
सामान्य नाम : जायफल
n = 21

जायफल (nutmeg) और जावित्री (mace) दो स्पष्ट रूप से भिन्न मसालें हैं: जो *मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स* से प्राप्त होते हैं। जायफल सूखे हुये बीज की गुठली होती है जावित्री सूखा हुआ जालिकावत् बीजचोल होता है।

उत्पत्ति

यह मोलक्का (Moluccas) द्वीप का मूल वासी है जिसे प्रचलित तौर पर मसालों पर द्वीप (spice islands) कहते हैं।

वितरण

वर्तमान में, विश्व के कुल जायफल और जावित्री के उत्पादन का लगभग 60% इंडोनेशिया से आता है, खासतौर पर सियान्य (Sianew), सिंघीसं (Singhales), टर्नेट (Ternate), जावा, (Java), सुमात्रा (Sumatra), उत्तरी सिलेबीस (Northern celabes), तथा बॉडा (Banda) के द्वीपों से। अन्य प्रमुख उत्पादक हैं, वेस्टइंडीज में ग्रेनाडा तथा मलेशिया और श्रीलंका। भारत में जायफल के पेड़ लघु स्तर पर तमिलनाडु (नीलगिरी, वर्लियार, कोयम्बटूर) कन्याकुमारी तथा मदुरै जिलों में, केरला व आसाम आदि में उगाये जाते हैं।

आकारिकी

मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स एक खूबसूरत, सुगंधित, सदाबहार वृक्ष है जिसकी ऊँचाई कृष्य जातियों में 9–12 मी. होती है। वृक्ष सामान्यत: एकलिंगाश्रयी होते हैं। फल बड़े खूबानी जैसे दिखाई पड़ते हैं तथा नारंगी पीले रंग के होते हैं। परिपक्व होने पर, फलभित्ति या 'छिलका' खाँच से दो भागों में फट जाता है, जिससे खूबसूरत, चमकीला लाल कुछ कठोर सा चर्मिल, जाल जैसा सुरक्षात्मक आवरण - बीजचोल - दिखाई पड़ता है जो पूर्णत: सूखने पर चिकना भूरा तैलीय बीज होता है, बीज की गुठली चमकदार कठोर कवच जैसे बीजचोल से एक खनखनाती (rattling) आवाज के साथ अलग हो जाता है। बीज अंडाकार होते हैं, ये भूरे या धूसर भूरे रंग के तथा जालिकारूप से खांचित होते हैं। कटी हुई सतह चमकदार व संगमरमरी दिखाई पड़ती है जिसमें हल्के रंग का भ्रूणपोष होता है और उसमें अनेकों गहरी भूरी शिराएं होती हैं (परिभ्रूणपोष)। जायफल का संगध तेल इन शिराओं में रहता है (चित्र 17.13)।

खेती

वृक्ष ताजे बीजों द्वारा प्रवर्धित किए जाते हैं। बीजों को पौधशाला में या टोकरियों में प्रवर्धित किया जाता है और तब खेत में रोपा जाता है जब वे लगभग 15 से.मी. लंबे हो जाते हैं। जायफल का पेड़ एकलिंगाश्रयी होता है परंतु आप नर तथा मादा पेड़ों को तब तक विभेदित नहीं कर सकते हैं जबतक उनमें फूल नहीं आ जाता है वो भी रोपे जाने के 6 साल बाद आता है। रोपणों से अधिकतम जायफल का उत्पादन प्राप्त करने के लिए, एक नर वृक्ष व 10–12 मादा वृक्षों का अनुपात बनाए रखना आवश्यक माना जाता है। वृक्ष सबसे अच्छी तरह से परिरक्षित (sheltered) घाटियों में, गर्म नम जलवायु में उगते हैं।

जायफल के वृक्षों को भुरभुरी, अच्छी जल निकासी वाली, बलुई मिट्टी की आवश्यकता होती है जिसमें प्रचुर मात्रा में पत्ती की खाद होती है तथा सुवितरित वर्षा (200–250 मि.मी. प्रति वर्ष) तथा 25–33° सेन्टी. का तापमान अच्छी वृद्धि के लिए आवश्यक होता है। यह मिट्टी की जलाक्रांतता (water logging) तथा शुष्कन को भी झेल लेते हैं।

20,000 फल/वृक्ष वार्षिक की रिकॉर्ड पैदावार भी रिपोर्ट की गई है।

जायफल के वृक्ष सामान्यत: छठवें वर्ष में फलन आरंभ करते हैं तथा 50 या अधिक वर्षों तक फलते रहते हैं। फल पुष्प के खिलने के छह महीने बाद पकते हैं। ग्रेनडा में दो मुख्य उत्पादन काल होते हैं जनवरी से अप्रैल तक तथा सितंबर से अक्टूबर तक। परंतु फल वर्ष भर उत्पन्न होते रहते हैं। फलों को लंबे द्विभागी बॉस से तोड़ा जाता है जिसके साथ एक टोकरी बंधी रहती है, जब फल फट कर खुल जाते हैं। वे फल तथा बीज जो जमीन पर गिर जाते हैं उन्हें भी एकत्रित कर लिया जाता है। प्रति वृक्ष वार्षिक औसत पैदावार 1200 जायफल की तथा कभी-कभी 4000 जायफल तक की हो जाती है।

बीजों से अवाष्पशील तेल और जायफल मक्खन निकलता है जिसमें मिरिस्टिसिन (Myristicin) पाया जाता है तथा जो निद्राकारी तथा विषैला होता है अत: जायफल का उपयोग कभी-कभी ही करना चाहिए।

जब छिलका फट कर खुल जाता है, तो फल को निकाल लिया जाता है तथा फलभित्ति अलग कर दी जाती है और जावित्री को कवच/छिलके में से निकालकर सीधा करके सुखा दिया जाता है। यह पीत भूरे रंग की हो जाती है। बीजों को सुखा लिया जाता है तथा छिलके को तोड़ दिया जाता है। पीले, लाल बीजचोल का स्वाद सभी मसालों में सबसे अधिक स्वादिष्ट होता है। इसमें सुगंधित खुशबू पाई जाती है। सूखी हुई

जावित्री को कार्बन-डाइ-सल्फाइड या मिथाइल ब्रोमाइड धुँए में रखा जा सकता है जिससे उसको अधिक समय तक रखा जा सकता है।

जायफल के बीजों को अलग से धूप में या धीमी आग पर सुखाया जाता है जब तक कि गुठली कवच के अंदर ही चटकने नहीं लगती है। कवच को या तो लकड़ी के मुगदर से तोड़ा जाता है अथवा विशेष रूप से निर्मित, तोड़ने की मशीनों में तोड़ा जाता है। सूखी हुई बीज की गुठलियां व्यावसायिक जायफल होती हैं। अक्सर इन्हें चूनीकृत, (चूना लगाना) किया जाता है जिससे इनको अधिक समय तक संग्रहित किया जा सके।

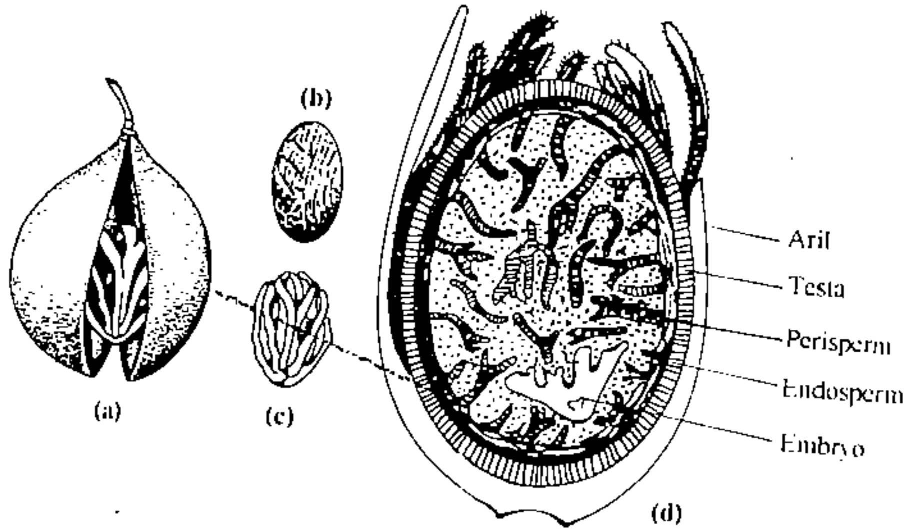

चित्र 17.13: a) *मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स* की एक शाखा, फल को काट कर खोला गया जिससे जायफल और जावित्री दिखाई दें। b) बीज c) जायफल का बीज जिसमें एरिल लगा है। d) जायफल बीज की लम्बवत् काट।

उपयोग

) स्वादकारी के रूप में : अ) जायफल और जावित्री को मुख्यत: हल्के मसालों के तौर पर उपयोग किया जाता है। जायफल के बीजों को पीसने से प्राप्त होने वाले कणमय उत्पाद का प्रयोग मिठाइयों, विशेषरूप से दूध से बनी मिठाइयों, पाइस, सॉस, मीट तथा सब्जियों और पेयपदार्थों को स्वादकारी बनाने में किया जाता है।

ब) जायफल केक, पेस्ट्री, बिस्कुट, सॉसेस, टमाटर सॉस तथा मीट और मछली को बड़ा अच्छा स्वाद प्रदान करता है।

इत्रों में : जायफल के अवाष्पशील तेल का उपयोग साबुन, इत्र तथा मल्हमों में किया जाता है।

औषधि के रूप में : i) ऐसा कहा जाता है कि जायफल में उद्दीपनकारी, वातहर तथा कामोद्दीपक गुण पाए जाते हैं।

अधिक मात्रा में सेवन करने पर ये शक्तिशाली नारकोटिक/निद्राकारी प्रभाव दिखाते हैं, और मतिभ्रम (hallucination) तथा व्यामोह/जड़ता (stupor) उत्पन्न करते हैं।

सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में : जायफल के तेल का उपयोग साबुनों, तंबाकू तथा दंत मंजनों को सुगंधित करने के लिए भी किया जाता है।

7.9 सारांश

इकाई में आपने पढ़ा कि :

सुगंधकारी मसालों (spices) तथा मसालों (condiments) में कोई स्पष्ट अंतर नहीं होता है। सुगंधित मसाले शब्द का उपयोग आमतौर पर सूखी हुई छालों, जड़ों, बीजों, फलों तथा पुष्प के भागों के लिए किया जाता है, जिनका उपयोग उनके विशिष्ट स्वाद तथा सुगंध के लिए किया जाता है। मसाले/कोन्डीमेन्ट्स वे मसाले होते हैं जिन्हें सामान्यत: भोजन के पकने के बाद उसमें डाला जाता है।

- मसाले सामान्यत: उष्णकटिबंधी उत्पत्ति के होते हैं इसके विपरीत जब सुगंधित सब्जी के उत्पाद शीतोष्ण पादप से आते हैं तो उन्हें शाक (अ-काष्ठीय) माना जाता है।

- अधिकांश रसायन जो शाकों, मसालों व सुगंधित मसालों की विशिष्ट गंध तथा स्वाद के लिए जिम्मेदार होते हैं वे सगंध तेल कहलाते हैं। वे विशेषीकृत पादप कोशिकाओं में, ग्रंथियों या वाहिनियों में पाए जाते हैं जो पादप के किसी अथवा सभी भागों में हो सकती हैं।

- लगभग 70 मसाले हैं जो विश्व के विभिन्न भागों में उगाए जाते हैं। मसालों का वर्गीकरण वानस्पतिक अनुरूपताओं (भिन्न पादपों या कुलों में समानता) पर आर्थिक महत्व पर तथा खेती के तरीकों में समानता पर या पादप भाग में समानता के आधार पर किया जाता है।

- दी गई तालिका सुगंधित मसालों तथा मसालों के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं को सारांशित कर रही है।

- मसालों में पाए जाने वाले सामान्य मिलावटी तत्व तालिका 17.2 में दिये गये हैं।

परिशिष्ट-1

तालिका 17.2 : कुछ प्रचलित तौर पर उपयोग किए जाने वाले मसाले तथा उनके मिलावटी तत्व

क्र. सं.	वानस्पतिक नाम	प्रचलित नाम	हिन्दी नाम	कुल	पादप का वह भाग जो मसाले के रूप में उपयोग किया जाता है।	मिलावटी तत्व	उपयोग
1	पूर्वी गोलार्ध/पुरानी दुनिया के मसाले जिन्जिवर आफीसिनेल लिन. *Zingiber officinale* Linn.	जिंजर	अदरक	जिंजिवेरेसी	प्रकंद	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग तथा कीट संक्रमण	i) भोजन में स्वादकारी के रूप में ii) औषधि में iii) पेय पदार्थों तथा इत्रों में
2	कुरकुमा लौंगा लिन. (*Curcuma longa* Linn.)	टर्मेरिक	हल्दी	जिंजिवेरेसी	प्रकंद	लैड क्रोमेट, मेटेनिल येलो/पीला	i) स्वादकारी के रूप में, ii) डाइ/रंजक के रूप में iii) औषधि में iv) सौंदर्य प्रसाधनों में
3	सिनैमोमम जेलैनिकम ब्रेइन (*Cinnamomum zeylanicum* Breyn)	सिनामन	दालचीनी	लॉरेसी	सूखी हुई भीतरी छाल	अन्य/बाहरी शाक तत्व, कृत्रिम रंग	i) स्वादकारी के रूप में ii) औषधि में iii) इत्र उद्योग में
4	क्रोकस सेटाइवस लिन. (*Crocus sativus* L.)	सैफ्रन	केसर	इरिडेसी	सूखे हुए वर्तिकाग्र	केसर के फूल के व्यर्थ भाग, कैलेन्डुला स्पी. (*Calendula* sp.), कार्थेमस टिंटोरियस (*Carthamus tinctorius*), मक्के के सिल्क रेशम तथा रंगीन मोम	i) स्वादकारी के रूप में ii) रंजक रूप में iii) औषधि में iv) केसर का तेल तथा एसेंस
5	यूजीनिया केरियोफाइलस (स्प्रेन्गल) बुलक व हैरीसन (*Eugenia caryophyllus* (Sprengel) Bullock & Harrison	क्लोव	लौंग	मिर्टेसी	सूखी बंद पुष्प कलियां	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग	i) स्वादकारी के रूप में ii) सिगरेट तथा सुपाड़ी की तबाकू में iii) औषधि में (दंत चिकित्सा) iv) ऊतकीय कार्यों में सफाई के तत्व के रूप में v) इत्र उद्योग में

क्र. सं.	वानस्पतिक नाम	प्रचलित नाम	हिन्दी नाम	कुल	पादप का वह भाग जो मसाले के रूप में उपयोग किया जाता है।	मिलावटी तत्व	उपयोग
6	पाइपर नाइग्रम लिन. (*Piper nigrum* Linn.)	पेपर/पिपर	काली मिर्च	पाइपरेसी	फल (अष्ठिफल)	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग केरिका पपाया (*Carica papaya*) के बीज	i) स्वादकारी के रूप में ii) औषधि में iii) कीटनाशी रूप में iv) इत्र में काली मिर्च के तेल का उपयोग होता है। v) पेपर साल बनाने में
7	कोरिएन्ड्रम सैटाइवम लिन. (*Coriandrum sativum* Linn.)	कोरिएन्डर	धनिया	एपिएसी	शुष्क/सूखे पके फल (भिदुर फल)	विजातीय तत्व, धनिया के अतिरिक्त अन्य फलों के खाद्य बीज	i) स्वादकारी के रूप में, ii) औषधि में, iii) इत्रों में
8	फ़ीनीकुलम वल्गैरी मिल. (*Foeniculum vulgare* Mill)	फेनिल	सौंफ	एपिएसी	सूखे पके फल (भिदुर फल)	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग	i) स्वादकारी के रूप में, ii) औषधि में, iii) इत्र उद्योग में iv) मवेशियों के चारे के रूप में
9	ब्रेसिका स्पी. (*Brassica* spp.)	मस्टर्ड	सरसों	ब्रेसीकेसी	बीज	विजातीय तत्व, खाद्य पदार्थ, आर्जीमोन मैक्सिकाना लिन (*Argemone mexicana* Linn.)	i) स्वादकारी के रूप में ii) प्रदीप्तकारी के रूप में iii) चिकनाई देने वाले तत्व के रूप में, iv) मवेशी के चारे के रूप में, v) ऊर्वरक के रूप में vi) संरक्षण में
10	इलिटेरिया कार्डमोमम (लिन.) मेटन (*Elettaria cardamomum* (Linn.) Maton	कार्डमम	छोटी इलायची	जिंजी-बेरेसी	फलों के (कैप्सूल) सूखे हुए बीज	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग	i) स्वादकारी के रूप में ii) चर्वण/चबाने के लिए, iii) औषधि में
1	मिरिस्टिका फ्रेग्रेन्स (*Myristica fragrans* Houtt	नट मेग मेस	जायफल, जावित्री	मिरिस्टि-केसी	फल और बीजचोल	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग	i) स्वादकारी के रूप में ii) औषधि के रूप में iii) सौंदर्य प्रसाधनों में

त्तरी तथा दक्षिणी अमरीका / नई दुनिया के मसाले

2	कैप्सीकम एनुअन लिन. (*Capsicum annuum* Linn.) कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स लिन. (*C. frutescens* Linn.)	कैप्सीकम	मिर्च	सोलेनेसी	हरे या सूखे फल सरस फल/बेरी या कैप्सूल	विजातीय तत्व, कृत्रिम रंग,	i) स्वादकारी के रूप में ii) मानव शरीर क्रिया विज्ञान में भूमिका iii) औषधि में

2.10 अंत में कुछ प्रश्न

1) दालचीनी मसाला एक सदाबहार वृक्ष की .... से प्राप्त किया जाता है।

2) केसर .... से प्राप्त की जाती है। यह .... कुल का सदस्य है।

3) स्पाइस आईलैण्ड्स/मसाले के द्वीप .... में ज्वालामुखी द्वीपों के समूह है।

4) पका हुआ फल बैंगनी ………………… सा होता है, 'लौंग की जननी' मानी जाती है तथा मसाले के व्यापर में महत्वपूर्ण नहीं हैं।

5) ………………… दंतचिकित्सा तथा ऊतकीय कार्यों दोनों में उपयोगी है।

6) *कैप्सीकम एनुअम* में मसाला ……………… से प्राप्त किया जाता है।

7) मसालों का राजा ……………… दक्षिण पश्चिमी भारत का वासी है।

2. कॉलम ए में दिए गए वानस्पतिक नामों को उनके कॉलम बी में सूचीबद्ध किए गए कुलों से मिलाइए।

	कॉलम ए	कॉलम बी
1)	*ब्रेसिका नाइग्रा* (*Brassica nigra*)	क) जिंजीबेरेसी
2)	*कैप्सीकम फ्रूटेसेन्स* (*Capsicum frutescens*)	ख) एपिएसी
3)	*ज़िंजीबर ऑफिसिनेल* (*Zingiber officinale*)	ग) पाइपरेसी
4)	*फोइनीकुलम वल्गेअर* (*Foeniculum vulgare*)	घ) मिर्टेसी
5)	*इलिटेरिया कार्डमोमम* (*Elettaria cardamomum*)	ङ) सोलेनेसी
6)	*सिलैमोमम ज़ीलेनिकम* (*Cinnamomum zeylanicum*)	च) एपिएसी
7)	*पाइपर नाइग्रम* (*Piper nigrum*)	छ) लॉरेसी
8)	*कोरिएन्ड्रम सेटाइवम* (*Coriandrum sativum*)	ज) ब्रेसिकेसी
9)	*यूज़ीनिया केरियोफाइलस* (*Eugenia caryophyllus*)	झ) इरिडेसी
10)	*क्रोकस सैटाइवस* (*Crocus sativus*)	ट) जिंजीबेरेसी

3. मसालों की एक बोधशील सूची बनाइए जिसमें वानस्पतिक तथा प्रचलित नाम तथा पादप के उस भाग का नाम हो जिससे मसाला प्राप्त किया जाता है।

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

4. कारण बताइए कि क्यों केसर सबसे महंगा मसाला है।

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

………………………………………………………………………………………………

5. काली मिर्च की कौन सी दो किस्में हैं तथा उनकी पैदावार कैसे की जाती है?

....

....

....

....

....

....

6. आपके विचार से कौन से दो मसाले औषधीय रूप से महत्वपूर्ण हैं तथा क्यों?

....

....

....

....

....

....

17.11 उत्तर

बोध प्रश्न

1) 1) ऑलस्पाइस, कैप्सीकम/मिर्च

2) सगंध/वाष्पशील तेल

3) ज़िजरीन (gingerine)

4) दक्षिणी एशिया

5) हल्दी

2) i) स ii) अ iii) स iv) अ v) स vi) स

3) 1) ग 2) ख 3) घ 4) ङ 5) क

अंत में कुछ प्रश्न

1) 1) छाल

2) त्रिभाजी वर्तिकाग्र, इरिडेसी

3) पूर्वी इंडोनेशिया

4) अष्ठि (गुठलीदार) फल

5) *यूज़ीनिया केरियोफाइलस*

6) फल

7) *पाइपर नाइग्रम*

2.

1.	ज	6.	छ
2.	ड.	7.	ग
3.	क, ट	8.	ख, च
4.	ख, च	9.	घ
5.	क, ट	10.	झ

3. उन मसालों की एक सूची बनाइए जिनका अध्ययन आपने इस इकाई में किया है। आप उन अन्य मसालों को भी सम्मिलित कर सकते हैं जिनका वर्णन इस इकाई में नहीं किया गया है।

4. कृपया सेक्शन 17.6.1 में देखिए।

5. कृपया काली मिर्च की खेती/कटाई देखिए जहाँ काली मिर्च की प्रमुख प्रकार की किस्मों का वर्णन किया गया है।

6. दो मसालों के बारे में लिखिए जो आपके विचार से अन्य मसालों से अधिक महत्वपूर्ण हैं कृपया अपने उत्तर के पक्ष में यह भी बताइए कि क्यों ये दो मसाले अन्य मसालों से अधिक महत्वपूर्ण हैं।

इकाई 18 पेय

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
18.2 चाय
18.3 कॉफी
18.4 कोको
18.5 सारांश
18.6 अंत में कुछ प्रश्न
18.7 उत्तर

18.1 प्रस्तावना

पानी के बाद विश्व में सबसे अधिक जो तरल पिया जाता है वह चाय ही है क्योंकि ताजा चाय बंध्य होती है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में वार्षिक व्यापार मूल्य के मद्देनजर पेट्रोलियम और उसके उपोत्पादों के बाद दूसरा महत्वपूर्ण स्थान कॉफी का है। पेयों (मृदु पेयों को छोड़) को दो वर्गों में बांटा जा सकता है :
i) अल्कोहली या मद्यपी, और ii) अल्कोहलरहित या अमद्यपी (जैसा कि तालिका 18.1 में दिखाया गया है)। चाय, कॉफी और चॉकलेट का सेवन हमारे दैनिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। अन्य पेयों की तरह ये तीनों भी उद्दीपक (stimulant) हैं (तालिका 18.1), क्योंकि इनमें मुख्यत: कैफीन नामक एक रसायन और उसके संबंधी तत्व पाए जाते हैं (तालिका 18.2)। ये रसायन हमारे शरीर में कार्यिकीय अभिक्रियाएं उत्पन्न करते हैं। कॉफी पीने के पांच मिनट पश्चात् इसमें विद्यमान कैफीन रुधिर धारा में पहुंच जाता है। रुधिर धारा के जरिए यह समूचे शरीर में संचरित होकर हृदय को उद्दीपित करता है, आमाशयी अम्लीयता और मूत्र उत्पादन को बढ़ाता है और उपापचय की दर में वृद्धि करता है। दिन भर की थकान के बाद यदि हम कैफीन वाला कोई पेय पीते हैं तो कुछ ही समय में हम उद्दीपित या चौकस महसूस करते हैं। कैफीन से शरीर में वैसी ही प्रक्रियाएं होती हैं जैसी एड्रीनलीन उत्पन्न करने पर होती हैं। इन पेयों को अगर अधिकता में लिया जाता है, जैसे कॉफी के 10 कप पीए जाएं (जो कि एक ग्राम कैफीन के तुल्य है) तो इससे बैचेनी, सिरदर्द, चक्कर आना, अनिद्रा, हृदय का तेजी से धक-धक करना और कभी-कभी मंद उन्माद आदि पैदा हो सकता है। अत्यधिक चाय और कॉफी पीने वाले व्यक्तियों में कैफीन के प्रति सह्यता या सहनशीलता विकसित हो जाती है और अगर वे अपनी आदत छोड़ते हैं तो उन्हें अपनयन लक्षणों (withdrawal symptoms) से पीड़ित होना पड़ सकता है। इस इकाई में हम तीन पेयों चाय, कॉफी और कोको के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- मद्यपी और अमद्यपी पेयों में भेद कर पाएं,
- चाय, कॉफी और कोको में कैफीन के महत्व को समझ सकें,
- चाय, कॉफी और कोको का विस्तृत विवरण तैयार कर पाएं,
- चीनी और आसाम चाय में अंतर बता पाएं,
- विभिन्न प्रकार की चाय बनाने के लिए प्रयुक्त होने वाली संसाधन विधियों के बारे में समझा सकें,
- अरबी, रोबुस्टा और लाइबेरियाई कॉफी में भेद स्पष्ट कर सकें;
- कच्ची, भुंजित, चूर्णित, इनस्टैंट और कैफीनरहित कॉफी में अंतर समझ सकें ;
- चाय, कॉफी और कोको उत्पादों में मिलावटी अपभिन्निताओं को पहचान सकें।

तालिका 18.1 : कुछ आम पेय

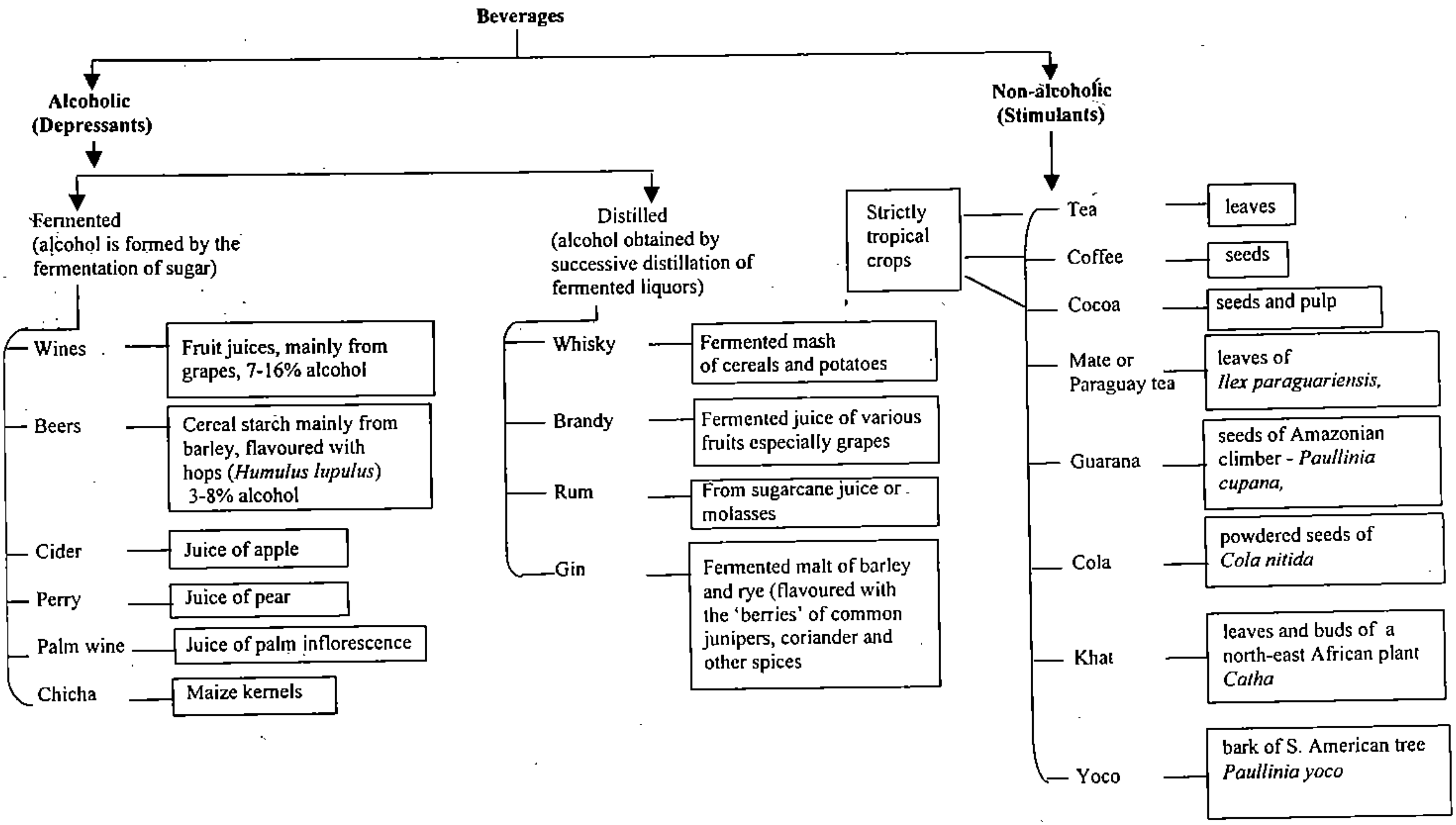

तालिका 18.2 : आम तौर से पीए जाने वाले पेयों में कैफीन की मात्रा (सिम्पसन और कोनर-ओगोरजैली, 1986)

पेय	कैफीन की मात्रा (मि.ग्रा. में)
कॉफी	
5 - औंस कप, ड्रिप विधि	146
5 - औंस कप, पर्कोलेटर विधि	110
5 - औंस कप, इंस्टैंट	53
5 - औंस, कैफीनरहित	2
चाय	
5 - औंस कप, निसवित (एक मिनट)	9 – 33
5 - औंस कप, निसवित (3-5 मिनट)	20 – 50
12 - औंस कप, डिब्बाबंद	22 – 36
कोको और चॉकलेट	
6 - औंस डिब्बाबंद दूध के पाउडर से बना	10
1 - औंस दुग्ध (मिल्क) चॉकलेट	06
1 - औंस (एक वर्गाकार) बेकिंग चॉकलेट	35
मृदुपेय	
12 - औंस पेप्सी, सामान्य	37
12 - औंस कोको कोला	34

.8.2 चाय

ानस्पतिक नाम : *कैमीलिया साइनेंसिस (Camellia sinensis)*

ल : कैमीलिएसी (थीएसी = टर्नस्ट्रीमिएसी)

चलित नाम : चा, चाय

= 15

त्पत्ति एवं वितरण

क्षेण-पूर्वी चीन, म्यानमार (बर्मा) और आसाम का हिमालयी भाबर क्षेत्र चाय के उत्पत्ति स्थल माने जाते । सबसे महत्वपूर्ण चाय उत्पादक क्षेत्र एक भूभाग में सीमित हैं। यह भूभाग 8° दक्षिण (जावा में) से ऱर 35° उत्तर (जापान में) और 8° पूर्व से लेकर 140° पूर्व में फैला हुआ है और इसमें चीन, जापान, इवान, सुमात्रा, श्री लंका और भारत शामिल हैं। भारत में चाय के प्रधान उत्पादक प्रदेश हैं : ाम, पश्चिम बंगाल, केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, त्रिपुरा और हिमाचल प्रदेश।

चित्र 18.1 : पुष्पन करती चाय की एक टहनी।

चाय का पौधा (चित्र 18.1) एक सदाबहार या अर्ध-सदाबहार काष्ठीय झाड़ी है जिसकी ऊंचाई 9–15 मीटर तक होती है; झाड़ियों को बार बार कांटा-छांटा जाता है ताकि उनमें पत्तियां ज्यादा से ज्यादा बनें। इन्हें इस तरह से कांट-छांट कर उसे तुड़ाई की ऊंचाई तक बनाए रखा जाता है। लगभग 10 वर्षों बाद झाड़ियों को ज़मीन के नज़दीक तक काट दिया जाता है ताकि अंत:भूस्तारियों से नई शाखाएं निकल सकें। पत्तियां एकांतर, साधारणतया दीर्घवृत्तीय से लेकर भालाकार, किनारों से दांतदार पाई जाती हैं। इनकी लंबाई 5 से 30 से.मी. तक होती है। तरुण पत्तियों की अध:पृष्ठ कोमल रोमों से ढकी रहती है जो समय के साथ लुप्त हो जाते हैं। प्रौढ़ पत्तियां चर्मिल होती हैं। पत्तियों में विशिष्ट सुगंध और सुवास उनमें विद्यमान अनेक तेल ग्रंथियों के कारण होती है। पत्ती की शारीरिकी के लिए चित्र 18.2 देखिए। पुष्पों का रंग सफेद या गुलाबी और बीच में पीला होता है। ये एकल या दो से चार के समूह में, पर्ण कक्षों में, जुलाई से अक्टूबर के महीने में उत्पन्न होते हैं। फल एक तीन-कोशिक, काष्ठीय कैप्सूल है, जिसके प्रत्येक कोष्ठक में एक भूरा बीज होता है जिसका व्यास लगभग 1.25 से.मी. होता है। परिपक्व होने में फल को 9–12 महीने लग जाते हैं। स्फुटन के समय यह शिखाग्र से तीन कपाटों में बंट जाता है।

कृषि चाय को सामान्यतया दो प्रमुख वर्गों में बांटा जाता है :

क) चीनी चाय (*कैमीलिया साइनेंसिस* उपजाति साइनेंसिस)

ख) आसाम चाय (*क. साइनेंसिस* उपजाति आसामिका)। तालिका 18.3 में आसाम चाय और चीनी चाय में अंतर बताए गए हैं। इन उपजातियों के अलावा चाय की कुछ संकर उपजातियां चीन, जापान और आसाम के बाहरी प्रदेशों में उगाई जाती हैं। भारत में चतुर्गुणित स्टॉक का संकरण द्विगुणित क्लोनों से करके चाय की अनेक उपयोगी तिगुणित वंशावलियों का विकास किया गया है।

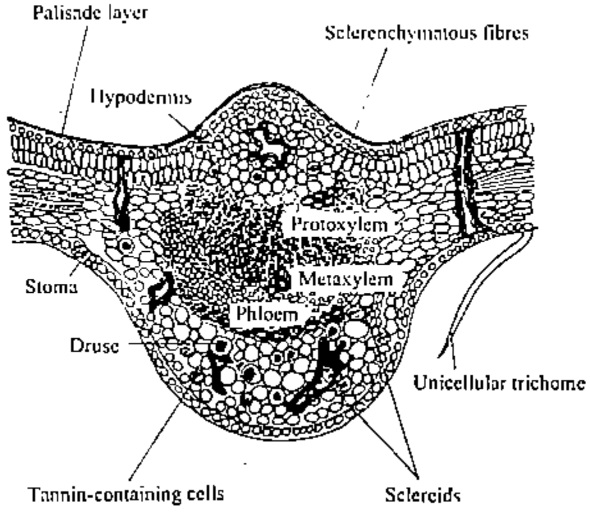

चित्र 18.2 : चाय की पत्ती की खड़ी काट। संवहन पूल या बंडल मध्य शिरा भाग में चापाकार में स्थित होते हैं। अध:पृष्ठ में वातरंध्र और स्थूल भित्ति वाले एककोशिक रोम विद्यमान रहते हैं। समूचे पर्णमध्योतक में ड्रूज छितरे रहते हैं। आइडियोब्लास्ट (विचित्र कोशिकाएं) अधरी बहिचर्म से उपरि बहिचर्म में प्रकीर्णित रहते हैं। टैनिन कोशिकाएं समूची पत्ती में वितरित पाई जाती हैं। प्रत्येक पत्ती के किनारों पर विद्यमान क्रकचन एक लघु शंक्वाकार ग्रंथि से जा मिलते हैं। यह ग्रन्थि सहजता से टूट जाती है और प्राय: परिपक्व पत्तियों में विद्यमान नहीं रहती।

कृषि-जलवायु स्थितियां

वृष्टि – लगभग 150 से.मी. प्रतिवर्ष और समूचे वर्ष सुवितरित हों। तापमान – ओजपूर्ण वृद्धि के लिए 21° से 32° से. का तापमान आवश्यक है।

तालिका 18.3 : आसाम और चीनी चाय में अंतर

आसाम चाय	चीनी चाय
1. द्रुत वर्धनशील	1. धीमी वर्धनशील,
2. वृक्ष एकल-तना, 6.1 से 18.3 मीटर ऊँचा	2. झाड़ीदार, बहुस्तंभित 1.2–2.7 मीटर ऊँचा
3. पत्तियां विशाल (15–30 से.मी. लंबी), जो संस्तर में में स्थित रहती हैं या थोड़ा सा नीचे की ओर झुकी रहती हैं; रंग हल्का हरा और ऊपरी पृष्ठ चमकीला और बुल्लायुक्त पाया जाता है।	3. पत्तियां लघु (4.7 से.मी. लंबी), संकीर्ण गहरी हरी और निस्तेज चपटी सतह युक्त पाई जाती हैं।
4. पुष्प दो से चार के झुंड में उत्पन्न होते हैं।	4. पुष्प एकल होते हैं।
5. अधिक उपज	5. कम उपज
6. आर्थिक आयु 40 वर्ष तक	6. आर्थिक आयु कम से कम 100 वर्ष तक
7. कैफीन और पॉलिफिनॉल यौगिकों से भरपूर	

मृदा

गहरी, सुअपवाहित, अम्लीय मृदा (pH 4.0 – 5.0 के बीच) जो ह्यूमस से भरपूर हो, चाय की खेती के लिए उत्तम रहती है। क्षारीय मिट्टी में चाय नहीं उगती। चाय का पौधा मृदा में एलुमिनियम की उच्च मात्रा (17,000 ppm) को सह लेती है। मगर कुछ उदाहरणों में एलुमिनियम के जमाव से चाय की पत्तियों में एलुमिनियम विषाक्तता पाई गई है। चाय की खेती के लिए उत्तम मिट्टी की पहचान के लिए एलुमिनियम को एक निदानात्मक लक्षण भी माना जाता है, जिसमें यह मैंग्नीज के आयनों के उद्ग्रहण में नियामक भूमिका अदा करता है या फिर फोस्फोरस उद्ग्रहण से जुड़ा होता है। चाय चूंकि एक पर्ण फसल है, इसलिए इसे नाइट्रोजन युक्त खाद प्रदान की जानी चाहिए जिससे नाइट्रोजन की कमी का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़े। अमोनियम सल्फेट के नियमित प्रयोग से अच्छी पैदावार मिलती है क्योंकि इससे मृदा में अम्लीयता बनी रहती है, जो कि चाय के वृद्धि-विकास के लिए अनिवार्य है। इसके अलावा यह चाय को रेड़ रस्ट नामक रोग के प्रति रोधी बनाता है जो *सिफैल्यूरोस पैरासाइटिकस* नामक शैवाल के कारण से चाय में होता है। खुले सौर प्रकाश की तुलना में चाय हल्के शेड में अधिक तेजी से विकसित होती है। छाया के लिए प्रयुक्त होने वाले वृक्षों को 12–13 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है और इसके लिए साधारणतया *ऐल्बिजिया चाइनेंसिस, ए.प्रोसीरा, ऐ. स्टीपुलेटा, डलबर्जिया आसामिका, डेरिस रोबुस्टा, ग्लाइरिसिडिया सेपियम* और *एरिथ्रिना* जातियां प्रयोग में लाई जाती हैं। छाया प्रदान के अलावा ये वृक्ष चाय के पौधों को अनिवार्य पोषक तत्त्व और इनकी जड़ें मिट्टी को संवातन प्रदान करती हैं।

चाय का प्रवर्धन प्राय: बीज द्वारा किया जाता है जिन्हें पौधशाला या नर्सरी में बोया जाता है। बीज की जीवनक्षमता बहुत कम होती है, इसलिए उन्हें एकत्र करने के कुछ दिनों के भीतर ही बो दिया जाना चाहिए। बीज शीघ्र अंकुरित हो जाते हैं, और फिर 30 से.मी. लंबी नवोद्भिद् पौद को खेतों में रोप दिया जाता है। कायिक प्रवर्धन एकल, पोरी या पर्व कलमों द्वारा किया जाता है, जिन्हें पत्ती के ठीक ऊपर और कक्षीय कली के बीच के पर्व को काटकर बनाया जाता है। पौधे को नियमित रूप से काट-छांट कर उसे झाड़ीनुमा बनाए रखा जाता है। दस वर्ष के पश्चात् झाड़ियों को अक्सर जमीन के स्तर से काट दिया जाता है जिनकी जगह पर अंत:भूस्तारी उग आते हैं। तुड़ाई में तरुण कोमल प्ररोहों को तोड़ा जाता है यानि इसमें अंतस्थ कलिका और दो या तीन एकदम तरुण या नई पत्तियां तोड़ी जाती हैं (चित्र 18.3)। पत्तियां प्राय: पौधे के चार वर्ष हो जाने के बाद ही तोड़ी जाती हैं। एक झाड़ी से पत्तियां हफ्ते में एक बार तोड़ी जा सकती हैं।

पत्तियों को किस विधि से संसाधित किया जाए यह इस पर निर्भर करता है कि किस तरह की चाय चाहिए। व्यावसायिक दृष्टि से चाय के तीन बुनियादी प्रकार हैं: काली, हरी और ऊलांग चाय एक विशेष किस्म की चाय *कैमीलिया साइनेंसिस* उप.*केमिसा* से बनाई जाती है (तालिका 18.4 भी देखिए)। तोड़ने के बाद ताजा पत्तियों को टोकरियों में हल्का भरकर तत्काल संसाधन संयंत्रों को पहुंचा दिया जाता है, जिससे पत्तियों में टूट-फूट और तापन न हो (चित्र 18.4 a-i)।

चित्र 18.3 : चाय की पत्तियों का तोड़ा जाना। उत्तम कोटि की चाय बनाने के लिए तरुण प्ररोह की अंतस्थ कलिका और पहली दो पत्तियों को तोड़ा जाता है।

तालिका **18.4** : काली, हरी और ऊलांग चाय में अंतर

काली चाय	हरी चाय	ऊलांग चाय
विश्व में उत्पादित चाय की पांच चौथाई को काली चाय में संसाधित किया जाता है	पूरे विश्व में पी जाने वाली चाय का 1/5 हिस्सा चाय हरी चाय है।	विश्व में पी जाने वाली 2 प्रतिशत चाय ऊलांग चाय है।
1. यह किण्वित होती है (इससे चाय की पत्ती के विभिन्न रासायनिक घटकों में परिवर्तन आ जाता है)।	1. यह अकिण्वित होती है।	1. यह अर्ध-किण्वित होती है।
2. इसमें छ: मुख्य क्रियाएं शामिल हैं : i) शिथिलन ii) रोलिंग iii) किण्वन iv) शुष्कन या ज्वालन v) स्वच्छन प्रक्रम vi) ग्रेडिंग इसे चाय संसाधन की रूढ़िगत विधि भी कहते हैं।	2. इसमें तीन मुख्य क्रियाएँ शामिल हैं : i) तापन या भाप से गर्म करना ii) रोलिंग iii) शुष्कन	2. इसमें चार चरण हैं : i) शिथिलन ii) प्रकाश किण्वन iii) रोलिंग iv) शुष्कन (Cont.)

i) शिथिलन - खुले शेडों या विशेष शेडों में किया जाता है जहाँ नियंत्रित तापन और संवातन की सुविधाएं सज्जित होती हैं। चाय की पत्तियों को शिथिलन रैकों पर एक के ऊपर एक समस्तर में बिछाकर 12 से 18 घंटे तक 30°C के तापमान पर छोड़ दिया जाता है जिससे उनमें से अत्यधिक नमी सूख जाए। इससे नमी की मात्रा 75–80 प्रतिशत से घटकर 50–60 प्रतिशत रह जाती है। वायुमंडल में आर्द्रता होने पर शिथिलन रैकों पर तप्त हवा प्रवाहित की जाती है। पत्तियां धीरे-धीरे समान रूप से कोमल और कोमल चमड़े की तरह ढीली पड़ जाती हैं और वे रोलिंग के लिए तैयार हो जाती हैं।	i) पत्ती को प्रायः वृंत के बिना ही तोड़ा जाता है और उसे लोहे के बर्तन में गर्म किया जाता है यानि प्राकृतिक शिथिलन की जगह पात्र ज्वालन (जैसे कि चीन में) या भाप में पकाना (जैसे जापान में)। भाप से गर्म करने पर पत्तियां रोलिंग के लिए नम्य हो जाती हैं। यह पत्ती को किण्वन और काली होने से बचाता है। यह प्रक्रम पॉलिफिनोल ऑक्सीडेज एंजाइम को निष्क्रिय बना कर पॉलिफिनोलों के ऑक्सीकरण को रोक देता है।	i) पात्र-ज्वालन करने से पहले पत्ती को हल्का सा शिथिल बनाया जाता है; इसी प्रक्रम के दौरान थोड़ा सा किण्वन भी किया जाता है।
ii) रोलिंग- यह पत्तियों को विशिष्ट व्यावर्तन प्रदान करता है और पत्तियों की कोशिकाओं को तोड़कर उनके रसों को वायु के प्रभावन में ले आता है जिससे किण्वन आरंभ हो जाता है। रोलिंग के आधा घंटे बाद पत्ती को एलुमिनियम की ट्रॉलियों में एक सॉफ्टर और बॉल ब्रेकर में ले जाया जाता है। इस मशीन में एक धातु की चपटी शीट होती है, जो छिद्रिल होती है। यह शीट एक फ्रेम से जुड़ी होती है जो प्रत्यागामी गति करता है। इसके फलस्वरूप टूटी पत्ती और उसके सूक्ष्म कण नीचे गिर जाते हैं और शेष को छलनी करने के बाद अधिक दाब में दूसरी बार रोलिंग करने के लिए बाहर निकाल लिया जाता है। जो पत्ती अब भी हरी और काफी शिथिल होती है उसे निकाल कर किण्वन कक्ष में भेज दिया जाता है।	ii) कमोबेश काली चाय की तरह इसमें भी पत्तियों को रोल कर सुखाया जाता है।	ii) काली चाय की तरह ही रोल किया जाता है।
iii) किण्वन - किण्वन गृह में तापमान (24–27°से.) और आर्द्रता (सापेक्ष आर्द्रता 90 प्रतिशत) को नियंत्रित किया	iii) रोलिंग या बेल्लन और शुष्कन के बीच किण्वन समाप्त कर दिया जाता है। पॉलिफिनोलों का ऑक्सीकरण नहीं होने दिया जाता है।	(Cont.)

जाता है। रोलिंग या बेल्लन की हुई पत्तियों को ऐलुमिनियम टाइलों या कांच की समतल शीटों पर ऑक्सीकरण के लिए फैला दिया जाता है। किण्वन के दौरान, चाय में विद्यमान टैनिन (पॉलिफिनॉल) अंशतः आक्सीकृत हो जाते हैं और पत्ती का रंग बदल कर चमकीला ताम्र-लाल हो जाता है।		
iv) शुष्कन या ज्वालन - यह पत्ती का ऑक्सीकरण और अधिक होने से रोकने तथा नमी की मात्रा को घटाकर 3 से 5 प्रतिशत करने के लिए किया जाता है। इसके लिए तापमान का सावधानीपूर्वक नियमन अनिवार्य है क्यों अत्यधिक ऊष्मा पत्तियों को जला देगी तो वहीं उसकी कमी होने पर पत्तियां पूर्णतः सूख नहीं पाएंगी। इसके लिए विशेषरूप से निर्मित भट्टियों में तप्त हवा (90–100° से.) 20–25 मिनट तक प्रवाहित की जाती है।	iv) शुष्कन पत्ती के हरे रंग को बनाए रखता है। लौह पात्र ज्वालन विधि से प्राप्त किण्वन चाय की गुणवत्ता उत्तम होती है।	
v) **स्वच्छन प्रक्रम** - चाय को अब साफ किया जाता है और उसे घूर्णी या कम्पामान स्क्रीनों की सहायता से छांटा जाता है।	v) रंग को आकर्षक बनाने के लिए सेलखड़ी या फ्रेंच चाक से पॉलिश किया जाता है।	
vi) ग्रेडिंग - भारत में उत्पादित चाय के अनिवार्यतः तीन ग्रेड या कोटियां हैं: चाय पत्ती, टूटा-फूटा बचा-खुचा अपशिष्ट उत्पाद, धूल (यह चाय के लघुतम कण जिसमें से टफ और डंठल निकाल लिए जाते हैं)। छंटाई और ग्रेडिंग के बाद इसे "फ्लफ" कहते हैं, इसमें 3.5 प्रतिशत कैफीन पाया जाता है और इसे कैफीन के निष्कर्षण के लिए प्रयोग किया जा सकता है।	vi) हरी चाय में टैनिन और कैफीन की मात्रा काली चाय से अधिक होती है।	
ग्रेडिंग के बाद चाय को पेटियों में बंद कर दिया जाता है। इन पेटियों में भीतर से टिन या एलुमिनियम और कागज का अस्तर चढ़ा होता है। इसका उत्पादन मुख्यतः भारत और श्रीलंका में होता है।	चीन और जापान में चाय प्रायः इसी प्ररूप में बनाई जाती है। उत्तरी भारत में भी हरी चाय थोड़ी बहुत मात्रा में बनाई जाती है जिसे मुख्यतः अफगानिस्तान, ईरान और अमेरिका में बेचा जाता है।	ऊलांग चाय के लिए अमेरिका में एक विशेष बाजार है और इसका उत्पादन दक्षिणी चीन और ताइवान में ही किया जाता है।

इन मुख्य श्रेणियों में भी चाय को आगे और श्रेणियों में इसके आकार के अनुसार बांटा जाता है और अंतिम ग्रेडों को प्राय: आकर्षक नाम दे दिए जाते हैं (तालिका 18.5 देखें)

तालिका 18.5: चाय के विभिन्न ग्रेड

ग्रेड	श्रेणी	तत्व
पत्ती (लीफ)	ऑरेंज पीको (ओ.पी.) पीको (पी.) पीको साउचोंग (पी.एस.)	कलिका, पहली पत्ती और वृंत के कोमल भाग । इसमें कलिकाएं नहीं होती । हल्के लिकर युक्त।
टूटी-फूटी (ब्रोकन)	ब्रोकन ऑरेंज पीको(बी.ओ.पी.) ब्रोकन पीको (बी.पी.) ब्रोकन पीको साउचोंग (बी.पी.एस.)	इसमें अग्रभाग या कलिका पत्ती होती है। इसमें अग्रभाग नहीं होते । इसमें पत्तियां बी.पी. से थोड़ी सी बड़ी होती हैं, और हल्की होती हैं।
धूल, डस्ट	फेनिंग या पीको (एफ.या पी.) फेनिंग (एफ.)	ये बी.पी. से छोटी और शीघ्र उबलने वाली होती हैं। ये चाय के लघुतम कण हैं जिनमें से पल्क और वृंत नहीं होते, इन्हें छोटी पत्ती या ब्रोकन ग्रेड की चाय के साथ मिलाया जाता है।

लेग-कट चाय

इसका निर्माण पूर्वोत्तर भारत के दुआर, तराई और कछार बागानों में किया जाता है। इस प्रक्रम में पत्तियों के शिथिलन की आवश्यकता नहीं पड़ती जो कि इन नम प्रदेशों में अक्सर कठिन कार्य है। चूंकि अशिथिलित पत्ती को रोल या बेल्लित करना कठिन होता है, इसलिए पत्तियों को कुट्टी काटने वाले यंत्र जिसे लेग-कटर भी कहा जाता है, इसे छोटे-छोटे पट्टियों में काटा जाता है। इसी यंत्र के नाम से ही इस तरह से निर्मित चाय को पुकारा जाता है। काटने के बाद पत्तियों को हल्के से रोल किया जाता है और उन्हें अच्छी तरह से 'ज्वालित' करने से पहले उन्हें थोड़े समय तक किण्वन के लिए छोड़ दिया जाता है। यह चाय यद्यपि हल्की सी भूरी और डंठलदार दिखाई देती है तथापि शीघ्र निसवन और उत्तम लिकरिंग गुणों के कारण इस चाय की मांग अब भी काफी है।

ब्रिक टी

इसका निर्माण काली और हरी चाय बनाने के बाद बचे-खुचे माल या अवशिष्ट सामग्री से किया जाता है। यह पत्ती, डंठल और टहनियों या मुख्यत: चाय की मोटी धूल से बनती है। इसके लिए ढेर को भाप से कोमल बनाकर गुट्टों या खंडों (ब्रिक) में संपीडित किया जाता है। इस प्रकार की चाय का सेवन अधिकतर तिब्बत और चीन में होता है।

लेपत्सो या मियांग चाय

यह अचारी चाय है। म्यान्मार, थाईलैंड और चीन में चाय की उबली या भाप से पकी हरी पत्तियों को गड्ढों में परिरक्षित किया जाता है। इस तरह की चाय को पेय के बजाए अचार या सब्जी के रूप में अधिक इस्तेमाल किया जाता है।

सी.टी.सी. चाय

चाय संसाधन की पारंपरिक विधि के अलावा विशेषकर उत्तरी भारत में चाय के निर्माण प्रक्रम में एक अलग किस्म की विधि प्रचलन में आई। इसमें मशीन का प्रयोग होता है जिसका नाम क्रशिंग, टियरिंग एंड कर्लिंग मशीन है (संक्षेप में इसे सी.टी.सी. कहते हैं)। मशीन में समांतर स्टेनलेस स्टील रोलर लगे होते हैं जो अलग-अलग गति से अंदर की दिशा में घूर्णन करते हैं। ये रोलर एक मीटर लंबे, व्यास में 15 से.मी. होते हैं। इनमें संकेन्द्रिक और सर्पिल विन्यास में खांचे बने रहते हैं। एक रोलर के संकेन्द्रिक खांचों को

दूसरे रोलर के खांचों में अलग-अलग घात में परस्पर फंसाया जाता है। शिथिलन के बाद पत्ती को बिना दबाव के हल्का सा रोल या बेल्लित किया जाता है। इसके बाद उत्कृष्ट पत्तियों को पृथक कर स्थूल पत्तियों को इस मशीन में दो, तीन या चार बार डाला जाता है। रोलरों के बीच में डाली गई पत्ती मैंगल या बेल्लपीडित्रित हो जाती है। मशीन से पत्ती के गुजरने के लिए आवश्यक समय बहुत कम (बस कुछ मिनट) होता है। इसलिए बेल्लन (या रोलिंग) कक्ष में लगने वाला समय काफी कम हो जाता है। इससे पूर्ण निर्माण समय भी घट जाता है। सी.टी.सी. चाय के प्रति एक किलोग्राम में 500–1000 कप चाय बनती है।

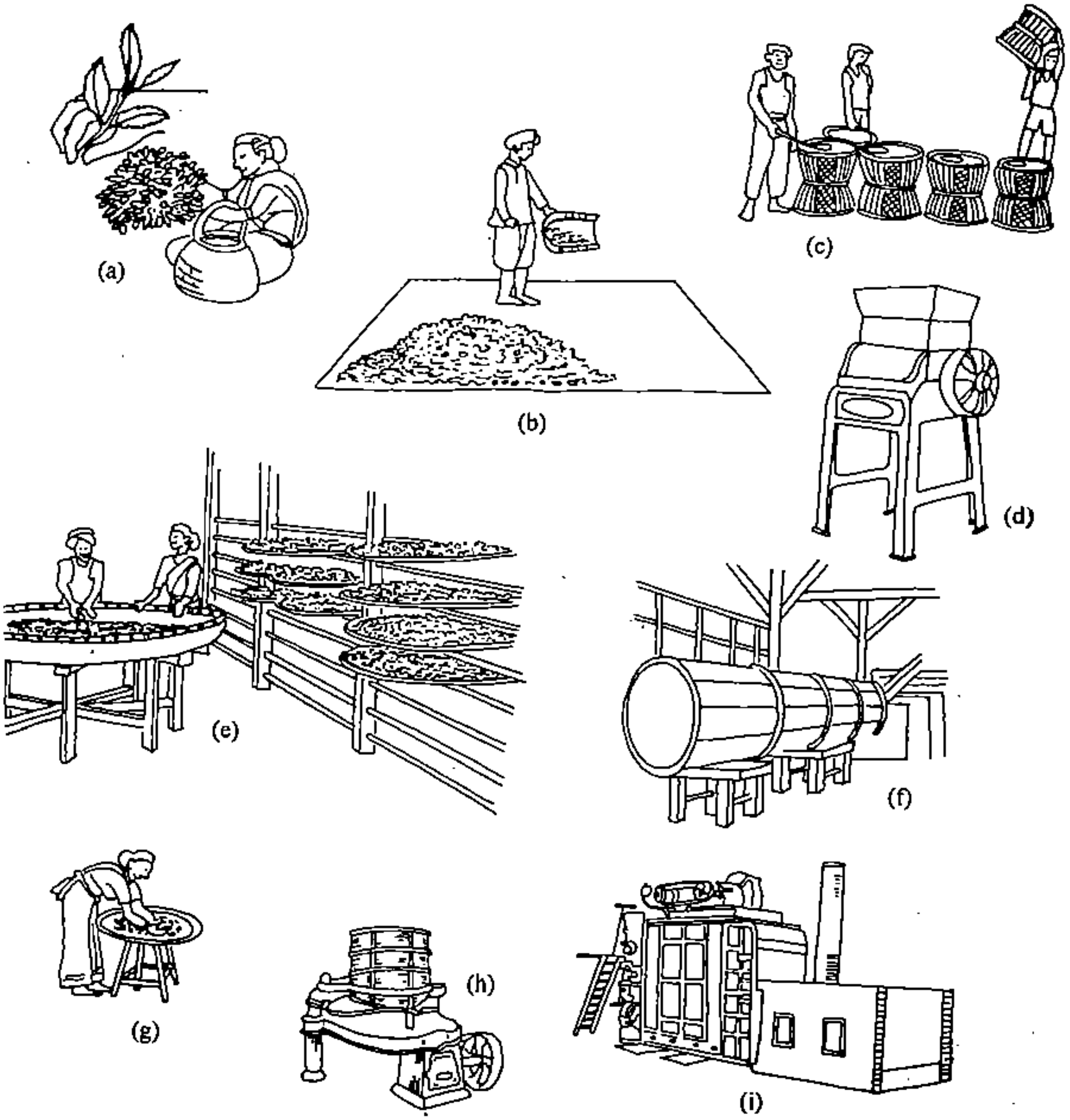

चित्र 18.4 : चाय के संसाधन के मूलभूत चरण। a) चाय की पत्ती का तोड़ा जाना (चित्र 18.3 भी देखें)। b) चाय का शिथिलन, c) बांस की टोकरियों में पत्तियों को रखकर, कोयले के ऊपर सुखाया जाना – यह विधि चीन में प्रयोग की जाती है। d) चाय काटने वाला यंत्र (टी कटर)। e) विकर ट्रे में चाय का शिथिलन और किण्वन : यह विधि पूर्व में अधिक प्रचलित है। f) शिथिलन की क्रिया को पूरा करने के लिए ड्रमों का भी प्रयोग किया जाता है। g) काली चाय के उत्पादन में हैंड रोलिंग h) चाय की रोलिंग मशीनों से भी की जाती है, चित्र में ऐसी ही एक प्राचीन रोलिंग मशीन दिखाई गई है। i) विद्युत् चालित टी ड्रायर (शुष्कन यंत्र)। (सिम्पसन और कोनर-ओगोरजैली, 1986 से)।

रासायनिक संघटन

चाय के मुख्य घटक, जो इसे पेय के रूप में एक विशिष्ट गुण प्रदान करते हैं, उन्हें पॉलिफिनॉल कहते हैं (ये गैलिक एसिड और कैटीचिन के व्युत्पन्न हैं मगर टैनिन के नहीं)। ये पॉलिफिनॉल मसृणन और किण्वन के दौरान एंजाइम क्रिया से ऑक्सीकृत होकर ओर्थो-क्विनोन बनाते हैं।

ये ओर्थोक्विनोन i) थियाफ्लेविन या TF (जो कि निषेक से जुड़ा है), और ii) थियारूबिजिन या TR (जिस पर चाय की रचना और शक्ति निर्भर होती है) में परिवर्तित हो जाते हैं। आदर्श किण्वन से TF और TR का एक यथेष्ट संतुलन बनता है और किण्वासवन चाय में ये आंशिक रूप से निष्कर्षित होते हैं (चित्र 18.5 भी देखिए)।

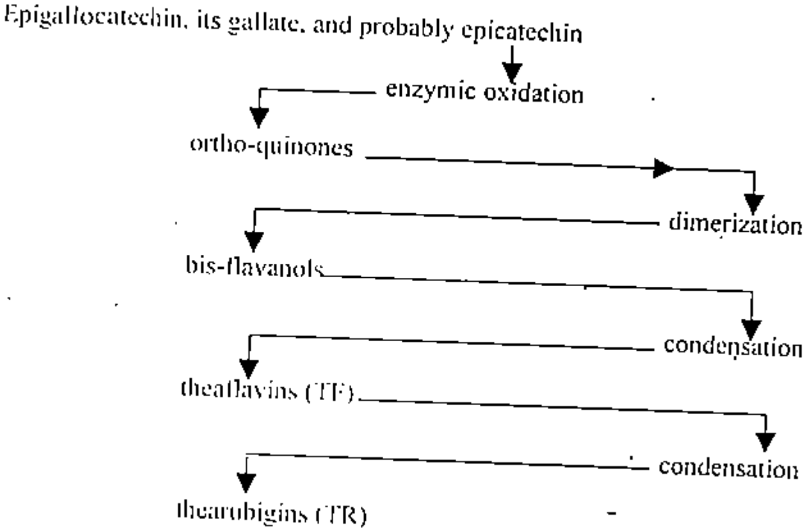

चित्र 18.5 : काली चाय के निर्माण के दौरान होने वाले जैवरासायनिक परिवर्तन, जो चाय के किण्वासवन (brew) के दौरान अंशतः निष्कर्षित होते हैं। (ईडन, 1976 से)।

इसके अलावा एल्केलॉइड अंश कैफीन (या थाईन) उत्तेजना और ताज़गी का एहसास पैदा करता है। थियोफाइलिन नामक एक संबद्ध ऐल्कैलॉइड भी चाय में लघु मात्रा में विद्यमान होता है।

चाय में पाए जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण घटक वाष्पशील तेल (थियोल) हैं जो चाय को उसकी विशिष्ट गंध और सुवास प्रदान करते हैं।

ताजा तोड़ी जाने वाली चाय पत्ती में निम्नलिखित पदार्थ विद्यमान रहते हैं :

जल	75–80 प्रतिशत (शुष्क भार प्रतिशत)
पॉलिफिनॉल	25–28 प्रतिशत
प्रोटीन	20 प्रतिशत
कैफीन	2.5–4.5 प्रतिशत
कच्चा रेशा	27 प्रतिशत
कार्बोहाइड्रेट	4 प्रतिशत
पेक्टिन	6 प्रतिशत
शर्कराएं	12 प्रकार की
कार्बनिक यौगिक	6 प्रकार के

ताजा निर्मित चाय का संघटन इस प्रकार रहता है : i) आर्द्रता लगभग 3 प्रतिशत, (ii) कैफीन 2.5–4.5 प्रतिशत (यह काफी के भुने दानों में पाई जाने वाली कैफीन की मात्रा 1.0–2.0 प्रतिशत से दोगुना है), iii) पॉलिफिनॉलों का सांद्रण 28 प्रतिशत से घटकर 12 प्रतिशत हो जाता है, (iv) अनेक बी-कॉम्प्लेक्स विटामिन और निकोटिनिक अम्ल।

चाय के एक कप में औसतन कैफीन एक ग्राम से थोड़ा कम और दो ग्राम पॉलिफिनॉल होता है। एक कप चाय से चार कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। चाय में दूध मिलाने पर, दूध में विद्यमान कैसीन चाय में मौजूद पॉलिफिनॉलों को बद्ध कर देता है। इससे चाय की सारी कषायता लुप्त हो जाती है। चाय में मिलाई जाने वाली चीनी सिर्फ एक भोजन के रूप में इस पेय के मान को बढ़ाती है। एक कप चाय में एक चम्मच दूध

चाय की पत्ती में पॉलिफिनॉल और एक एंजाइम पॉलिफिनॉल ऑक्सीडेज पाया जाता है। चाय की पत्तियों के तोड़े जाने पर ये शिथिल पड़ जाती हैं। चाय को अगर पात्र-तप्त करके या भाप से पका कर संसाधित किया जाए तो पॉलिफिनॉल ऑक्सीडेज एंजाइम निरुद्ध हो जाता है। मसृणित पत्तियों के शुष्कन के दौरान जो उत्पाद बनता है उसे हरी चाय (ग्रीन टी) कहते हैं। दूसरी ओर आरंभ में रोलिंग (बेल्लन) करने से एंजाइम और पॉलिफिनॉलों के बीच संपर्क हो जाता है जिसके फलस्वरूप पॉलिफिनॉलों का ऑक्सीकरण हो जाता है। लगभग 30 मिनट के लघु काल ऑक्सीकरण से ऊलांग चाय बनती है और पॉलिफिनॉलों के 90–200 मिनट के लंबे समय तक एंजाइम के संपर्क में रहने से काली चाय (ब्लैक टी) बनती है।

टी बैग *मूसा टेक्सटाइलिस* (मूसेसी) के पर्ण तंतुओं से बनाए जाते हैं।

और चीनी का एक गट्टा ये सब मिलकर कुल 40 कैलोरी प्रदान करते है। हरी चाय में अधिकांश पॉलिफिनॉल अपनी मूल अवस्था में ही विद्यमान रहते हैं। इस चाय में गंध और सुवास काली चाय के बराबर नहीं होते क्योंकि इसके निर्माण में किण्वन की क्रिया नहीं होती।

बॉक्स **18.1** : बोस्टन टी पार्टी

> यूरोपीय मूल के अमेरिकी चाय के रसिक थे। ये लोग चाय के इतने आदी हो चुके थे कि अब ब्रिटिश शासकों ने घोषणा की कि उनके उपनिवेशवासियों को चाय के लिए कर चुकाना होगा तो सभी अमेरिकी भड़क उठे। अपने विरोध में उपनिवेशवासियों ने दिसंबर 16, 1773 के दिन बोस्टन बंदरगाह पर ब्रिटिश ईस्ट इंडिया टी कंपनी के मालवाहक पर हल्ला बोल कर चाय की 343 पेटियां समुद्र में फेंक दीं। इतिहास में इस घटना को बोस्टन टी पार्टी के नाम से ख्याति मिली।

उपयोग

1) एक पेय के रूप में चाय का सेवन 2000 – 3000 वर्षों से हो रहा है।

2) कैफीन का निर्माण चाय अवशिष्ट (डस्ट) से किया जाता है।

3) मनुष्य और जंतुओं में गहन अनुसंधान से यह तथ्य प्रकाश में आया है कि चाय हृदय रोगों और विभिन्न किस्म के कैंसरों को जन्म देने वाली जटिल प्रक्रमों को अवरुद्ध करती है। अनुसंधान के इन परिणामों से इस प्रचलित अवधारणा को ठोस वैज्ञानिक आधार मिला है कि चाय एक स्वास्थ्यदायी पेय है।

बॉक्स **18.2** : भारत में चाय पर एक विहंगम दृष्टि (जैन 1995 से)

चाय की खेती का क्षेत्रफल	:	4.25 लाख हेक्टेयर
चाय की पैदावार	:	1752 किग्रा/हेक्टेयर
उत्पादन	:	74.40 करोड़ किग्रा.
घरेलू खपत	:	58 करोड़ किग्रा.
निर्यात से आमदनी	:	900 करोड़ रूपये
विश्व उत्पादन में भारत का हिस्सा	:	31 प्रतिशत (1992 में)
विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा	:	29 प्रतिशत (1992 में)
चाय की पहली खोज	:	चीनी सम्राट शेन मुंग द्वारा ई.पूर्व 2737 में
भारत में चाय की पहली खोज	:	1823 में मेजर ब्रूस द्वारा
ब्रिटेन को पहला निर्यात	:	आदिवासियों द्वारा उगाई गई चाय की 8 पेटियां 1838 में
अनुसंधान केन्द्र	:	तोकलई एक्सपेरिमेन्टल स्टेशन, जोरहाट(आसाम); टी रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ यू.पी.ए. एस.आई., सिंकोना, कोयंबटूर; और तमिलनाडु, सी.एस.आई.आर. कॉम्प्लेक्स, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश)

बोध प्रश्न 1

i) चाय के पौधे की बार-बार छंटाई क्यों की जाती है?

....

....

ii) चाय की पत्तियों की आकारिकी के बारे में बताइए।

....

....

iii) आसाम और चीनी चाय में अंतर बताइए।

....

....

iv) टी बैग किस पौधे के पर्ण तंतुओं से बनाए जाते हैं?

....

....

18.3 कॉफी

वानस्पतिक नाम : *कॉफिया* जाति; (*Coffea* spp)

कॉ. अरैबिका (*C.arabica*,अरबी कॉफी)

कॉ : कैनीफोरा (*C.canephora*, रोबुस्टा या कोंगों कॉफी)

कॉ: लाइबेरिका (*C.liberica*, लाइबेरियाई कॉफी)

कुल : रूबियेसी

प्रचलित नाम : कॉफी

n = 11

उत्पत्ति

इसकी उत्पत्ति इथियोपिया, अफ्रीका, संभवतः इथियोपिया के प्रांत काफा में हुई। *कॉफिया अरैबिका* की दो वानस्पतिक उपजातियां हैं जिनसे कॉफी की विश्व उपज का 90 प्रतिशत प्राप्त होता है।

1) *कॉ. अरैबिका* उपजाति *अरैबिका* (= उपजाति *टिपिका*) को आदिम रूप माना जाता है।

2) *कॉ. अरैबिका* उपजाति *बोरबोन* इथियोपा मूल की है। अनुकूल स्थितियों में यह *अरैबिका* उपजाति से अधिक उपज देती है। इसीलिए ब्राज़ील में *अरैबिका* उपजाति की जगह इसने ले ली है। *कॉ. केनीफोरा* (रोबुस्टा कॉफी) और *कॉ. लाइबेरिका* (*लाइबेरियाई* कॉफी) की खेती से विश्व उत्पादन की क्रमशः 9 प्रतिशत और 1 प्रतिशत उपज मिलती है। तालिका 18.6 में अरबी, रोबुस्टा और लाइबेरियाई कॉफी के निदानात्मक लक्षणों को तालिकाबद्ध किया गया है।

कॉफी की खेती भूमध्य रेखा के 20° उत्तर और दक्षिण में होती है। कॉफी का वार्षिक विश्व उत्पादन लगभग 10 लाख टन है।

वितरण

ब्राज़ील कॉफी का सबसे बड़ा उत्पादक देश है जहां विश्व के कुल उत्पादन का 27.2 प्रतिशत पैदा होता है। कोलंबिया में विश्व कुल उत्पादन का 12 प्रतिशत भाग पैदा होता है। यह कोट दीवायर में भी पैदा होती है। अंतर्राष्ट्रीय कॉफी संगठन (आइ.सी.ओ) की स्थापना 1963 में हुई थी जिसका मुख्यालय लंदन (ब्रिटेन) में है।

भारत में कॉफी की खेती कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु के अतिरिक्त पूर्वोत्तर राज्यों आंध्र प्रदेश और उड़ीसा में होती है। विश्व के सकल कॉफी उत्पादन में 3.5 प्रतिशत का योगदान भारत करता है। (वर्ष 1995–96 में भारत में कॉफी का उत्पादन 2.23 लाख टन आंका गया था और इसे कॉफी उत्पादक देशों में छठा स्थान दिया गया था। वर्ष 1997–98 में भारत में कॉफी का उत्पादन 2.41 लाख टन था। आंध्र प्रदेश के चिकमगलूर में सेन्ट्रल कॉफी रिसर्च इंस्टीट्यूट (सी.सी.आर.आई.) स्थित है।

सीलोन यानि आज का श्रीलंका कभी हिन्द महासागर क्षेत्र में कॉफी का सबसे बड़ा उत्पादक देश था और इसकी अर्थ व्यवस्था इसकी खेती पर बहुत ज्यादा निर्भर थी। मगर जब 19 वीं सदी में (1880) *हेमिलिया वैस्टैट्रिक्स* नामक कवक से उत्पन्न होने वाला रोग "लीफ स्पॉट" "पर्ण चित्ती" या "कॉफी रस्ट" महामारी का प्रकोप हुआ तो उसने कॉफी के तमाम बागानों को कुछ ही वर्षों में नष्ट कर दिया। श्रीलंका की बेहाल आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए पुनः चाय के बागान लगाए गए।

आकारिकी

यह एक सदाबहारी झाड़ी या लघु वृक्ष (ऊंचाई 4.5– 9.0 मीटर) है। काट-छांट के इसकी ऊंचाई को कम रखा जाता है। कटाई-छंटाई से हृष्ट-पुष्ट और सुसंतुलित काया बनती है; फलन करने वाली शाखाओं में आवर्ती पुनर्युवन को बढ़ावा मिलता है; और हवा और अत्यधिक प्रकाश से सुरक्षा मिलती है।

कॉफी की एक नई उल्लेखनीय बौनी जाति का पता 1997 में लोवर गिनी (उष्णकटिबंधीय अफ्रीका) में चला है। कॉ. *मैग्नीस्टिपुला* नामक इस जाति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके तने में अपस्थानिक जड़ें और बहुत बड़े-बड़े अनुपर्ण विद्यमान होते हैं जो पर्णाधारों के साथ मिलकर कचरा-ग्राही पात्रों की रचना करते हैं। इस तरह के अनूठे अनुकूलन से संभवतया इसके पौधे को अधिक जल और पोषक तत्व प्राप्त होते हैं।

पत्तियां (चित्र 18.6) अंडाकार-दीर्घवृत्तीय, सम्मुख, अरोमिल और चमकदार होती हैं। पत्तियों के किनारे तरंगित और उनके सिरे लंबाग्री होते हैं और इनमें अंतरावृंतक अनुपर्ण पाए जाते हैं। पुष्प (चित्र 18.6) तारे-नुमा, हिम की तरह श्वेत और उनमें चमेली के फूलों जैसी भीनी-भीनी सुगंध होती है। पुष्प सघन, कक्षीय पुंजों में और वर्ष में तीन से चार बार प्राधवन में उगते हैं। ये पुष्प अल्पकालिक होते हैं, प्रात:काल में खुलते हैं और दोपहर तक मुरझा जाते हैं। फल (चित्र 18.6) एक अष्ठिल (1.5 से.मी.लंबा) है। यह हरे रंग का होता है और परिपक्व होने पर यानि पुष्पन के 6 से 9 महीने पश्चात् इसका रंग किरमिजी लाल हो जाता है। अष्ठिल में तीन भिन्न भाग होते हैं : बाह्यफलभित्ति बाहरी पतली गहरी किरमिजी त्वचा होती है। मध्यफलभित्ति पीली श्लेष्मकीय या गूदेदार होती है; और अंत:फलभित्ति कठोर उपास्थिमयी और चर्मपत्र (पार्चमेंट) जैसी होती है, जिसमें दो (कभी-कभी एक) दीर्घवृत्तजीय या अंडाकार बीज बंद रहते हैं। इन बीजों को कॉफी बीन के नाम से जाना जाता है। कॉफी के बीज या बीन में एक बाहरी कोमल बीजावरण होता है जिसे रजत त्वचा (सिल्वर स्किन) कहते हैं। बीज का स्थूल भाग एक विचित्र तरीके से वलित भ्रूणपोष का बना होता है जो एक बहुत ही लघु भ्रूण को घेरे रहता है (चित्र 18.6)।

तालिका 18.6 : अरबी, रोबुस्टा और लाइबेरियाई कॉफी में अंतर

अरबी कॉफी	रोबुस्टा कॉफी	लाइबेरियाई कॉफी
1. पौधे कम मज़बूत होते हैं।	1. पौधे अरबी कॉफी से अधिक मज़बूत होते हैं।	1. पौधे अरबी कॉफी से अधिक मजबूत होते हैं।
2. प्रति वृक्ष उत्पन्न होने वाले फलों की संख्या कम होती है।	2. फलों की संख्या अधिक होती है।	2. फलों की संख्या अधिक होती है।
3. यह स्व-निषेच्य बहुगुणित (2n = 44) है।	3. यह स्व-अनिषेच्य द्विगुणित (2n = 22) है।	3. यह स्व-अनिषेच्य द्विगुणित (2n = 22) है।
4. शेष दो कॉफियों की तुलना में इसमें सुवास अपेक्षातया बेहतर होता है।	4. अफ्रीका के कुछ भागों में इसके कटु सुवास को पसंद किया जाता है। इसे ब्लेंडेड (मिश्रित) कॉफी में या कैफीनरहित कॉफी या इंस्टैंट कॉफी बनाने में उपयोग किया जाता है जिसमें कॉफी के स्वाद को बदला जाता है।	4. तीनों प्रकार की कॉफियों में यह सबसे कड़वी है। इसे मुख्यत: अन्य कॉफियों के साथ मिश्रण बनाने में फिलर के रूप में प्रयोग किया जाता है।

कृषि-जलवायु स्थितियां

कॉफीया अरैबिका 600–1700 मीटर ऊंचाई के पर्वतीय भू-भागों की अपेक्षतया शीतल और कम आर्द्र जलवायु मे अच्छी उगती है। *कॉ.कैनीफोरा* और *कॉ.लाइबेरिका* गर्म आर्द्र जलवायु वाले निम्न भूमि में अच्छी उगती हैं। स्वस्थ पौधों और अच्छी वृद्धि के लिए कॉफी के पौधों को लगभग 150 से.मी. प्रतिवर्ष की दर से समवितरित वृष्टि की आवश्यकता पड़ती है। इन्हें पूरे वर्षभर अवमृदा नमी चाहिए। पूर्वी अफ्रीका में जहाँ

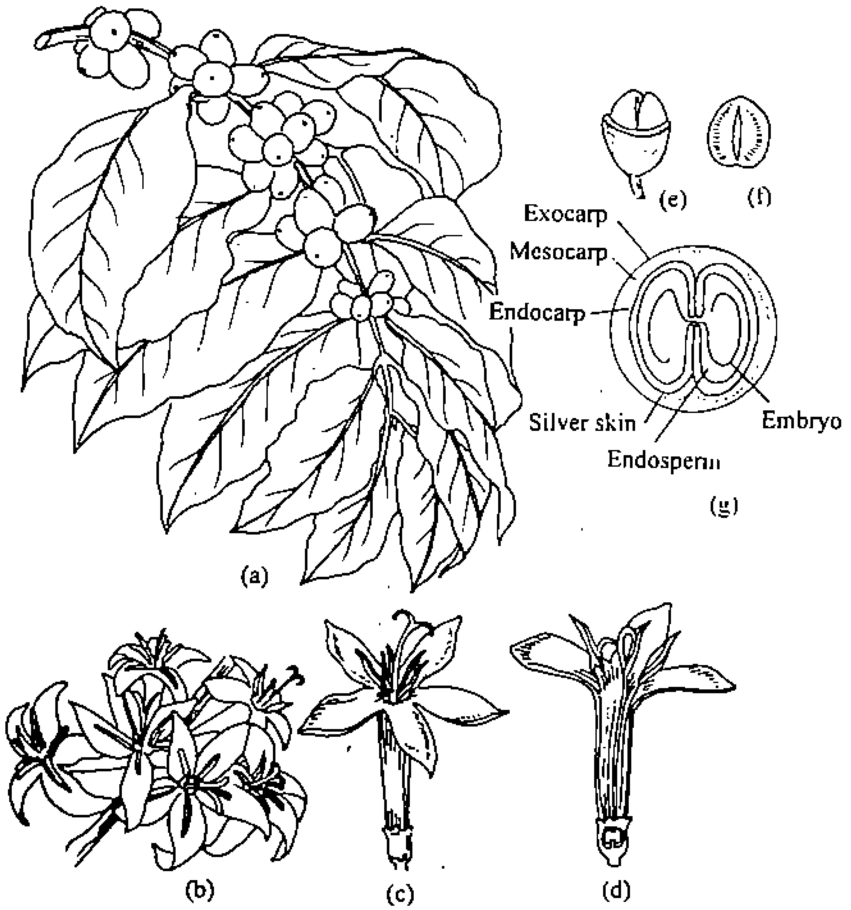

चित्र 18.6 : a) कॉफी की एक टहनी जिसके पर्ण-कक्षों में फलों के गुच्छे लगे हुए हैं। b) कॉफी का एक पुष्प गुच्छ। c) एक पुष्प। d) अनुदैर्घ्य काट में पुष्प। e) कॉफी की बेरी या फल, जिसका ऊपरी भाग काटा गया है जिसमें दो बीज दिखाई दे रहे हैं। f) बीज का अधरीय (चपटा) भाग। g) मरूक अंगों को दिखाती बेरी की अनुप्रस्थ काट। (**सिम्पसन** और कोनर ओमोरमेली, 1986 से)।

कि वर्षा की दर 125 से.मी. प्रतिवर्ष से कम है वहां नेपियर घास अवमृदा की नमी को बनाए रखती है। कम वृष्टि वाले क्षेत्रों में पैदावार को बढ़ाने के लिए पलवारना बड़ा उपयोगी होता है। इसके लिए औसत तापमान लगभग 20° से. होना चाहिए। कॉफी एक मृदाक्षयी फसल है। यह गहरी, थोड़ा सा अम्लीय, सुअपवाहित लेटराइट या ज्वालामुखी मूल की उपजाऊ मिट्टी इसके लिए सबसे उत्तम है। कॉफी की खेती के लिए ब्राजील की "टेरा रोक्सा" मिट्टी प्रसिद्ध है। पहले कॉफी के पौधे छाया में (ब्राजील और हवाई) में उगाए जाते थे। मगर अब इसकी खेती के लिए छाया का चलन खत्म हो रहा है। छाया की अनुपस्थिति में कॉफी उगाने के लिए उर्वरक विशेषकर नाइट्रोजन की मात्रा काफी अधिक बढ़ानी पड़ जाती है। प्राय: अमोनियम सल्फेट प्रयोग किया जाता है जो मिट्टी पर अम्लकारी प्रभाव डालता है। इस विधि में एक लाभ यह है कि अगर भिन्न तत्त्वों की कमी हो तो उसका पता इनमें छायादार वृक्षों के नीचे उगने वाले पौधों से अधिक शीघ्रता से चल जाता है।

उच्चभूमि में छाया का एक अनुकूल लाभकारी प्रभाव पड़ता है क्योंकि यह दिन और रात में तापमान में आने वाले उतार-चढ़ावों को कम करती है। उन भूभागों में जहां वर्षा कम पड़ती है या लंबे समय तक सूखा रहता हो वहां छायादार वृक्षों के साथ कॉफी को उगाया नहीं जा सकता क्योंकि छायादार वृक्ष स्वयं काफी अधिक जल प्रयोग कर लेंगे। छाया की कमी को आंशिक पूर्ति हम पलवार की एक मोटी परत से कर सकते हैं (इससे मृदा तापमान एकरूप और कम बना रहता है)। इष्टतम pH मान 6–6.5 है। कॉफी की गुणवत्ता वर्धन संबंधी स्थितियों से प्रभावित होती है।

कॉफी का प्रवर्धन अमूमन बीजों से होता है। *कॉ.केनीफोरा* और संकरों का प्रवर्धन अधिकांश या पूर्णत: कायिक होता है। इसके लिए प्राय: अपक्व काष्ठ की एकल-पर्वसंधि युक्त कलमों को काम में लाया जाता है।

कॉफी के बीज मात्र दो महीने की अवधि तक जीवनक्षम रहते हैं। उन्हें नम चारकोल पाउडर में संचित रखकर 4 महीने तक जीवनक्षम रखा जा सकता है। बीज बोने के आठ हफ्ते पश्चात् नवोद्भिदों को बीज की क्यारी से निकालकर रोपण-क्यारी या इससे बेहतर, प्लास्टिक की थैलियों में लगा दिया जाता है। नवोद्भिदों में पत्तियों के छ: जोड़े उग आने के बाद और पहला पार्श्व प्ररोह के विकसित होने से पहले उन्हें खुले में दो मीटर की दूरी पर रोप दिया जाता है। पौधे के 3–5 वर्ष का हो जाने पर उसमें फल लगने लगते हैं। अक्सर कॉफी को केले या अंजीर के साथ उगाया जाता है। तमिलनाडु में कॉफी की खेती *पाइपर नाइग्रम* के साथ की जाती है। कॉफी के वृक्षों की आयु 50 वर्ष तक होती है, जिसमें से यह 25 वर्षों के लिए ही उत्पादी होते हैं।

फसल की कटाई

कॉफी के पेड़ मे रोपण के 3–5 वर्ष पश्चात् फल लगने लगते हैं मगर पूर्ण-फलन 6–8 वर्ष के पश्चात् ही होता है। फल, पुष्पन के पश्चात् अनेक हफ्तों में परिपक्व होते हैं तथा इसमें 7–9 महीनों तक का समय लगता है। पके लाल बेरियों या फलों को 10–14 दिन के अंतराल में तोड़ा जाना जरूरी होता है।

संसाधन

कॉफी के फलों का संसाधन नीचे दी गई विधियों में किसी भी एक विधि से किया जाता है:

1) शुष्क विधि : काफी संसाधन की अपेक्षतया एक पुरानी विधि है जिसे अफ्रीका और निकट-पूर्व के अतिरिक्त अन्य कॉफी-उत्पादक देशों में काम में लाया जाता है जहां पानी का अभाव है। एकत्रित फलों को जिन्हें कि बेरी (या बदरी) भी कहा जाता है उन्हें टहनियों और बाह्य सामग्री के साथ पतली परतों में बिछाकर खुली धूप में या तप्त वायु (हॉट एयर) ड्रायरों में सुखाने के लिए 15–25 दिनों के लिए रख दिया जाता है। फलों को समान रूप से अच्छी तरह से सूखने के लिए उल्टा-पुल्टा जाता है। इसके पश्चात् इन्हें थैलों में भर कर गोदामों में भंडार कर दिया जाता है।

2) **नम विधि** : फलों को तोड़ने के यथाशीघ्र बाद और 24 घंटे के भीतर उनकी लुग्दी अलग कर ली जाती है अन्यथा उनमें किण्वन आरंभ हो जाता है। इस विधि में निम्न चरण हैं (चित्र 18.7): फलों या बेरियों को पानी से भरी विशाल टंकियों में डाल दिया जाता है। सुविकसित फल टंकियों के तल में जा बैठते हैं। इसके पश्चात् पके फलों का लुग्दीकरण, किण्वन, शुष्कन, छिलका उतारना, पॉलिश करना, ग्रेडिंग और भर्जन (रोस्टिंग) किया जाता है।

   i) लुग्दीकरण (पल्पन) - यह पल्पन मशीनों से किया जाता है, जो बाह्यफलभित्ति, तथा मांसल मध्यफलभित्ति के अंश को निकाल देती हैं। फलियों के पार्चमेंट आवरण से चिपकी शेष लुग्दी को नियंत्रित किण्वन के द्वारा पृथक कर दिया जाता है।

   ii) किण्वन - यह एंजाइमों, यीस्ट और जीवाणुओं के द्वारा कराया जाता है जिससे अंत:फलभित्ति से चिपका श्लेषमक अलग हो जाता है। इस प्रक्रम में प्राय: 12–24 घंटे का समय लगता है। किण्वन की क्रिया को एंजाइम मिश्रण या 2 प्रतिशत $NaOH$ मिलाकर तेज किया जा सकता है।

iii) शुष्कन - पल्पहीन फलों को धूप या तप्त वायु ड्रायरों में सुखाया जाता है जिससे उनमें नमी की मात्रा 12 प्रतिशत रह जाती है। इस चरण पर फलियां (अंत:फलभित्ति युक्त बीज) नीली हरी होती हैं और पार्चमेंट कवच के अंदर सिकुड़ जाती हैं जो एक रजत त्वचा की तरह दिखाई देती हैं। हरी कॉफी को लंबे समय तक भंडार करके रखा जा सकता है।

iv) छिलका उतारना - यह बीज के पार्चमेंट (अंत:फलभित्ति के साथ-साथ बीजावरण या तनुत्वक् या बीजचोल (रजत-त्वचा) को भी अलग करता है जिससे कॉफी के बीज खुल जाते हैं।

v) पॉलिश करना - इससे फलियों (बीजों) की सतह पर चमक बढ़ने के साथ-साथ बीज आवरण और पार्चमेंट के अवशेष भी दूर हो जाते हैं।

vi) ग्रेडिंग - खराब फलियों को कभी-कभी हाथ से चुनकर पृथक कर लिया जाता है। इस चरण पर फलियों को थैलों में भरकर निर्यात किया जा सकता है।

vii) भर्जन (रोस्टिंग) - कॉफी की पॉलिश की हुई फलियों को कॉफी रोस्टिंग मशीनों में 200–260°C के तापमान पर 5 मिनट के लिए भूना जाता है। भूनने के बाद बीज गहरे भूरे, छिद्रिल और भुरभुरे हो जाते हैं। इनमें शर्करा का आंशिक कैरमलन (या भर्जन) भी हो जाता है। इसके फलस्वरूप फलियों का भार 14–23 प्रतिशत कम हो जाता है मगर इसके साथ ही उनका आकार 30 से 100 प्रतिशत तक बढ़ जाता है। इनमें कॉफी की विशिष्ट गंध और सुवास विकसित हो जाती है (यह भुंजी फलियों में विद्यमान वाष्पशील तेल कैफियोल और मर्केप्टांस के कारण होता है)। कच्ची कॉफी में वह गंध या स्वाद नहीं मिलता जिसके लिए कॉफी जानी जाती है। फिर मुख्य उद्दीपन घटक कैफीन कैफियोटैनिक एसिड नामक टैनिन कांपलेक्स से मुक्त हो जाता है। यह घटकर आधा रह जाता है। तालिका 18.7 भी देखिए।

viii) पिसाई - भुंजी फलियों को कुंडों में तेजी से ठंडा किया जाता है जिसके बाद वे पिसाई के लिए तैयार हो जाती हैं।

ix) पैकिंग - पीसी हुई कॉफी में उसकी विशिष्ट सुवास नहीं रह पाती और अगर उसे संमुद्रित डिब्बों में तत्काल बंद नहीं किया जाए तो उसमें खटास आ जाती है। पीसी हुई कॉफी में कैफीन की मात्रा 0.75 से 1.5 प्रतिशत तक होती है। पैकिंग अप्रवेश्य डिब्बे में निर्वात या निष्क्रिय गैस की उपस्थिति में की जाती है।

इंस्टैंट कॉफी

इसे निर्वात में कॉफी के एक प्रबल फाण्ट के वाष्पन के द्वारा या फ्रीज ड्राइंग तकनीक द्वारा बनाया जाता है। इंस्टैंट कॉफी साधारणतया कॉ. *कैनीफोरा* की फलियों से बनाई जाती है।

कॉफी सुवास

कॉफी का स्वाद या सुवास निम्न बातों पर निर्भर करता है :

क) स्थान

ख) उपजाति या किस्म

ग) बीज में पक्वन की मात्रा

घ) संसाधन और सुखाने की विधि

ङ) भर्जन की रीति तथा

च) प्रयोग होने वाले प्रतिस्थापियों की मात्रा और उनकी किस्म

चाय की स्वाद चखने वालों यानि कि टी-टेस्टर की तरह कॉफी के पेशेवर स्वादी भी भिन्न-भिन्न स्थानों की कॉफियों को यथेष्ठ मात्रा में मिलाकर एक विशिष्ट स्वाद वाली कॉफी बनाते हैं।

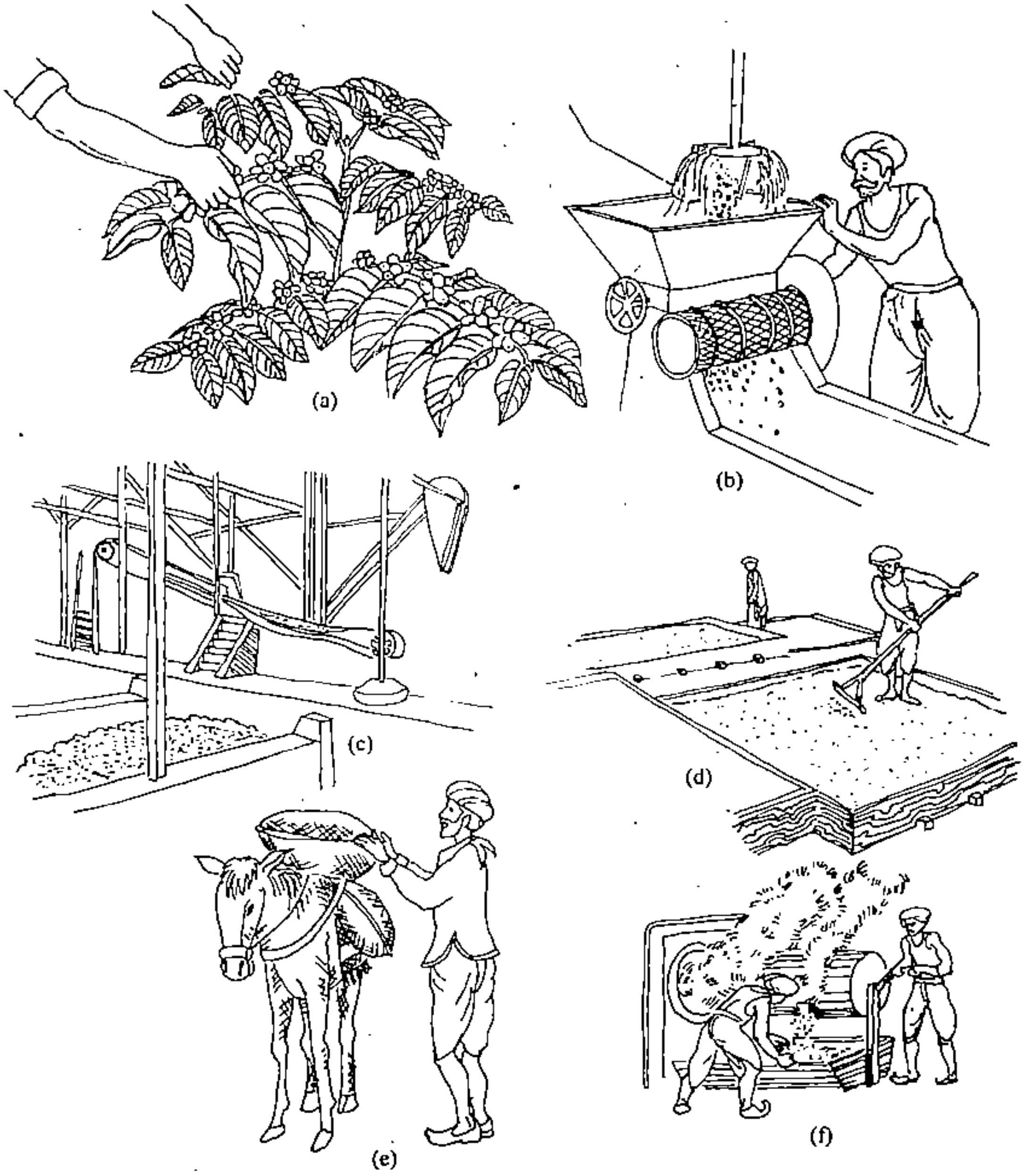

चित्र 18.7 : कॉफी के संसाधन के चरणों का चित्रात्मक निरूपण। a) कॉफी की पकी या लाल बेरियों को हाथ से तोड़ा जाता है। b) इन्हें पानी से धोकर किण्वन किया जाता है। c), d) फलभित्तियों को अलग करने के बाद फलियों को सुखाया जाता है। e) हरी फलियों को बाजार ले जाया जा सकता है। f) फलियों को भूनने के लिए एक सरल रोस्टर मशीन। आधुनिक मशीनों में स्वचालित टम्बलर लगे होते हैं। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से)।

कैफीनरहित कॉफी

इसे कॉफी की हरी अभर्जित फलियों से कैफीन पृथक करके बनाया जाता है जिसके लिए निम्न कोई एक विधि काम में लाई जाती है:

क) कार्बनिक विलायक के प्रयोग से

ख) जल निष्कर्षण से या

ग) वाष्प निष्कर्षण से

क) विलायक विधि

फलियों को पहले भाप में पकाकर कोमल बना लिया जाता है और फिर मेथिलिन क्लोराइड जैसे कार्बनिक विलायक के साथ उन्हें निष्कर्षित किया जाता है। इसके पश्चात् विलायक को फलियों से पृथक कर, कॉफी

में बचे उसके (विलायक के) अवशेषों को भर्जन प्रक्रम के दौरान भाप या ताप द्वारा वाष्पीकृत कर दिया जाता है। कैफ़ीन को विलायक से पानी द्वारा पृथक कर लिया जाता है। एक टन संसाधित कॉफी से लगभग 20 कि.ग्रा. कैफीन (44 पौंड) प्राप्त होती है।

ख) जल निष्कर्षण विधि

कॉफी की हरी पत्तियों को पानी से स्रावित किया जाता है, जिससे कि कैफ़ीन को छोड़कर कॉफी में विद्यमान जल में विलेय सभी यौगिक, जल से संतृप्त हो जाते हैं। इसके बाद कैफ़ीन को निष्कर्षण जल से कार्बनिक विलायकों की सहायता से पृथक कर शोधित कर लिया जाता है। इस विधि में कोई भी विषाक्त कार्बनिक विलायक कॉफी के संपर्क में नहीं आ पाता है। मगर यह विधि महंगी है।

ग) वाष्प निष्कर्षण विधि

इस विधि को कॉफी संसाधन कम्पनियों द्वारा एक रहस्य रखा गया है।

तालिका 18.5 : काफी की कच्ची और भर्जित फलियों का औसत संघटन (कोचर 1998 से)

घटक	कच्ची फलियाँ (प्रतिशत)	भर्जित फलियां (प्रतिशत)
भस्म	3.97	5.17
वसाएं	11.42	8.30
आर्द्रता	8.26	0.36
शर्कराएं	8.18	1.84
ग्लुटेन	10.68	12.03
कैफीन	1.10	1.06
सेलुलोज़	42.36	44.96
निष्कर्षी पदार्थ	14.03	26.28

उपयोग

1) अरब देशों में कॉफी की सूखी लुग्दी से ऐल्कोहली पेय बनाया जाता है।

2) कॉफी की फलियों से कॉफीलाइट नामक प्लास्टिक पदार्थ बनाया जा सकता है, जिसमें उत्तम तापरोधी गुण पाए जाते हैं।

3) कॉफी संसाधन से प्राप्त होने वाले अवशिष्ट पदार्थों का प्रयोग खाद और पलवार (मल्च) के रूप में किया जाता है।

4) भारत में इसके अवशिष्ट को ईंधन और पशुओं के चारे के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

5) इथियोपिया में कॉफी की सूखी पत्तियों और सूखी व भूनी बेरियों से पेय बनाए जाते हैं।

6) इंडोनेशिया और मलेशिया में कॉफी की पत्तियों से चाय बनाई जाती है।

7) कॉफी केन्द्रीय तंत्रिका और संवहन तंत्र पर उद्दीपक और आंतों में क्रमांकुचन में वृद्धि करके पाचन में सहायता करती है।

8) एक कप काफी में चाय में विद्यमान कैफ़ीन की मात्रा से तीन गुना अधिक कैफ़ीन होती है।

कॉफी के अपमिश्रक

भुनी मटर, सेम, अन्न के दाने और इमली के भुने बीजों को कॉफी में मिलाना आम प्रचलन में है। कॉफी में मिलाए जाने वाले पदार्थ उसके स्वाद और गंध को और बेहतर, आकर्षक बनाने के काम भी आते हैं जैसे, चॉकलेट, लिकर, संतरे या बादाम का सत और वनीला। कॉफी में मिलाया जाने वाला सबसे ज्यादा प्रचलित एड़िटिव चिकोरी (*साइकोरियम इंटीबस*, एस्टरेसी कुल का सदस्य) की जड़ है जिसे एक मिलावटी पदार्थ या सुवास वर्धक माना जा सकता है।

बोध प्रश्न 2

i) अरबी, रोबुस्टा और लाइबेरियाई कॉफी में अंतर बताइए?

....

....

....

....

ii) कॉफी उगाने के लिए किस तरह की मृदाएं उत्तम है?

....

....

....

iii) कॉफी को कैफीनरहित किस तरह बनाया जाता है?

....

....

....

....

....

....

18.4 कोको

वानस्पतिक नाम : *थियोब्रोमा कोको* यानि *Theobroma cacao* (ग्रीक शब्द "थियोस" यानि देव और "ब्रोमा" यानि भोजन - "देवों का भोजन")

कुल : स्टर्कुलिएसी

प्रचलित नाम : कैको (cacao), कोको (cocoa) या चॉकलेट वृक्ष। कैको शब्द का प्रयोग प्रायः पेड़ और इसके भागों के लिए, तथा कोको विनिर्मित उत्पादों के लिए होता है।

n = 10

उत्पत्ति

इसकी उत्पत्ति एंडीज पर्वतमाला की ढाल, दक्षिण अमेरिका में हुई, ऐसा माना जाता है। कॉफी की तरह कोको की पैदावार इन क्षेत्रों में अब सबसे ज्यादा होती है जो इसकी उत्पत्ति स्थल से बहुत दूर स्थित हैं। मगर ये क्षेत्र भूमध्यरेखा के 20° उत्तर और 20° दक्षिण के बीच उसी अक्षांश में स्थित हैं। कोको के उत्पादन में 1988 से आइवरी कोस्ट सबसे अग्रणी (680,000 टन) है जिसके बाद ब्राज़ील (347,000 टन) दूसरे स्थान पर और घाना (पश्चिम अफ्रीका) तीसरे स्थान पर (290,000 टन) है। कोको के

उत्पादक अन्य देश डोमिनिकन गणराज्य, पपुआ न्यू गिनी, मेक्सिको, टोगो, कोलंबिया, वेनेजुएला, इंडोनेशिया, फिलिपीन और श्री लंका हैं। मलेशिया में कैको की खेती में वृद्धि के कारण जो इसके उत्पादन (220,000 टन) में नाईज़ीरिया (140,000 टन) से काफी आगे निकल गया है, दक्षिण-पूर्व एशिया में भी कैको की पैदावार में बढ़ोतरी हुई है।

भारत में कैको की खेती मुख्यत: नीलगिरि पर्वतमाला की तलहटी और केरल के कुछ भागों में की जाती है। *टी. कैको* की उपजातियाँ और इसके प्ररूप सहजता से संकरण करके निषेचनशील F_1 संकरों को जन्म देते हैं। इसके फलस्वरूप इनकी अनेक स्थानीय समष्टियां (local populations) विकसित हो गई हैं जिनकी विशिष्ट पहचान है (तालिका 18.8)।

व्यापारिक दृष्टि से *टी.कैको* की दो उपजातियां महत्वपूर्ण हैं - 'क्रिओलो' और 'फोरैस्टेरो' (तालिका 18.8)। क्रिओलो की खेती मुख्यत: वेनेजुएला, कोलंबिया और मध्य अमेरिका में; और फोरेस्टेरो की खेती अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका विशेषकर ब्राज़ील में की जाती है। इससे कैको फलियों के सकल विश्व उत्पादन का 80 प्रतिशत प्राप्त होता है एक अन्य उपजाति ट्रिनिटैरिया, जो संभवत: क्रिओलो और फोरैस्टरो का संकर है, की खेती मुख्यत: ट्रिनिडाड में होती है।

तालिका 18.8 : क्रिओलो और फोरैस्टेरो कैको के बीच अंतर

लक्षण	क्रिओलो	फोरैस्टरो
फल का रंग	पीला-लाल, चित्तीदार	हरा-पीला
फल का आकृति	लंबा, नुकीला	अंडाकार
फल की पृष्ठ	असम, मस्सेदार, गहरा, खांचेदार	चिकना, हल्के खांचे
फल का छिक्कल	पतला और कोमल	सुदृढ़ और कड़ा
बीज का आकार	बड़ा, गोल	छोटा, चपटा
फल में बीज की संख्या	20–40	30–60
बीजपत्रों का रंग	क्रीम से गुलाबी रंग तक	बैंजनी
गंध (सौरभ)	तीखी	क्षीण
उपज	कम	अधिक

आकारिकी

कैको के पेड़ की ऊंचाई 8–10 मीटर तक होती है मगर खेती में काट-छांटकर इसकी ऊंचाई को कम रखा जाता है। मूल (जड़) तंत्र मुख्यत: मूसला जड़ों से बना होता है, जो मिट्टी में 2 मीटर की गहराई तक जाते हैं। भरण जड़ें, मूल कॉलर (5–6 मीटर लंबी) से उत्पन्न होती हैं और मिट्टी के उपरि 15–20 से. मी. भाग में पाई जाती हैं। कैको पादप में शाखन का पैटर्न विशिष्ट है (चित्र 18.8)। तना पहले के 14–18 महीनों में ऋजु (लंबाई) दिशा में बढ़ता है और जब इसकी ऊंचाई 1.2–1.5 मीटर हो जाती है तो यह बढ़ना बंद कर देता है। इसके बाद मुख्य तना (चुपॉन), प्राय: पांच मेरिस्टेमों में विभाजित हो जाता है। इन मेरिस्टेमों से तिर्यक् अनुवर्ती पंख-शाखें उगती हैं जिनमें अनिर्धारित वृद्धि होती है। तिर्यक् अनुवर्ती शाखों के इस समूह को 'जोरक्वेट' या "पंखा" कहा जाता है। जोरक्वेट के ठीक नीचे स्थित कक्षीय कलिका कुछ समय पश्चात् एक ऊर्ध्व ऋजु प्ररोह यानि चुपॉन में विकसित होती है। यही चुपॉन कुछ फुट ऊपर एक और जोरक्वेट की रचना करता है। इसी प्रकार दूसरे जोरक्वेट के नीचे से एक और ऊर्ध्व प्ररोह विकसित होता है। इस तरह कुछ वर्षों में तिर्यक् अनुवर्ती शाखों के अनेक टियर बन जाते हैं चुपॉन और पंख दोनों क़ी शाखों में पुष्प और फल उगते हैं।

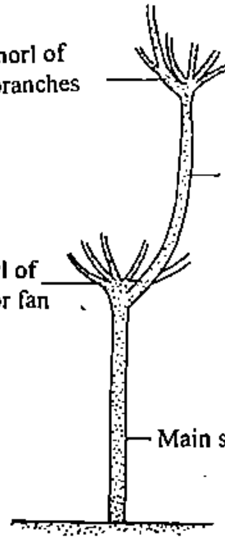

चित्र 18.8 : कैको के पौधे में शाखन पैटर्न का चित्रात्मक निरूपण। चुपॉनों के क्रमिक निर्माण को ध्यान से देखिए जो जोरक्वेट शाखों का एक झुंड धारण करते हैं तथा जो एक ही स्थल से उत्पन्न होते हैं। (कोचर, 1998 से)।

मुख्य तने और अनुवर्ती चुपॉनों में पत्तियां सर्पिल विन्यास में लेकिन जोरक्वेट शाखों में पत्तियां एकांतर विन्यास में लगी रहती हैं। परिपक्व पत्तियां गहरी हरी लगभग 37 से.मी. लंबी और 7.5 से.मी. चौड़ी आयताकार, अंडाकार दीर्घायती-आयाताकार होती हैं जिनमें सुस्पष्ट शिराएं और शिरिकाएं विद्यमान रहती हैं। पत्तियों के लघु वृंत में दो संधियां पाई जाती हैं।

पुष्पक्रमं मुख्य तने के पुराने पर्णहीन भाग (चित्र 18.9) और पंख शाखों में उत्पन्न होते हैं। पुष्पक्रम अति संपीडित सिन्सिनसी ससीमाक्ष (सर्पिलज-ससीमाक्ष) होता है, जिसमें शाखें बहुत लघुकृत पाई जाती हैं। ये शाखें लघुकृत सहपत्रों के कक्ष में स्थित कलिकाओं से उत्पन्न होती हैं (ये लघुकृत सहपत्र शाखों के मूल यानि base पर स्थित अवृंत पत्तियां हैं जो कक्षीय कलिका से उत्पन्न होते हैं)। शाखा प्राय: मुक्त रूप से वृद्धि नहीं करती। बल्कि पुष्पक्रम की छोटी और घुमावदार शाखें घेरे में वृद्धि कर एक गद्दी (कुशन) की तरह की रचना बनाते हैं। इस कुशन में एक सीजन में 50 पुष्प के लगभग लगते हैं। पुष्पावली वृंत और सहपत्र रोमिल यानि लघु कोमल रोमों से आच्छादित रहते हैं। पुष्पक्रम के कवक रोग (विचेज ब्रूम) से उद्दीपत होने पर यह कुशन एक पर्णदार प्ररोह में विकसित होता है।

पुष्प लघु सफेद, पीले या गुलाबी, पंचभागी, सवृंत (1–2 से.मी. लंबे वृंत) और द्विलिंगी होते हैं। बाह्यदल, पांच, गुलाबी या सफेद, त्रिभुजाकार, मांसल, कोरस्पर्शी और मूल पर एकीकृत होते हैं। दल पांच और वे बाह्यदल से छोटे होते हैं। इनका आधार प्रतिअंडाकार, 3–4 मि.मी. लंबा होता है जो एक अवतल, कपनुमा धाती बनाता है। दल (पंखुड़ी) का सिरा अशुंकी (2–3 मि.मी) और पीले रंग का होता है जो बाहर और पीछे की ओर झुका रहता है तथा एक संकीर्ण संयोजी की सहायता से धानी से जुड़ा रहता है (चित्र 18.9 a-c) पुमंग में पांच पक्ष्माभी बाह्य बंध्य पुंकेसर बाह्यदल के सम्मुख स्थित रहते हैं जो वर्तिका के चारों ओर एक घेरा बनाए रखते हैं। पांच भीतरी निषेच्य पुंकेसर बाहर की ओर झुके रहते हैं और पुंकेसर संगत दल में स्थित धानी में छिपे होते हैं। जायांग में पांच अंडप होते हैं, अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती, बीजांड (प्रतीप) अनेक होते हैं। अंडाशय की जड़ में बीजांडासन स्तंभीय और ऊपर की तरफ से भित्तीय होता है। वर्तिका एक, खोखली और बंध्य पुंकेसरों के घेरे से छोटी होती है। वर्तिकाग्र पांच और कमोबेश संलागी होते हैं। फल अष्ठिल होता है जिसे आम तौर पर फली कहा जाता है (चित्र 18.9 d,e)। यह सीधे तने पर उगता है। वानस्पतिकी में इस स्थिति को स्तंभपुष्पता (cauliflory) कहते हैं। फल अस्फुटनशील, सफेद, हरा या लाल और भिन्न आकार व बनावट लिए रहता है। बाह्यफलभित्ति (छिलका) प्राय: मांसल तथा स्थूल होती है। निषेचन के बाद फलियां 4–6 महीनें में परिपक्व हो जाती हैं जिसमें उनके पक्वन के लिए आवश्यक एक महीने की अवधि भी शामिल है। बीजों को साधारणतया सेम (बीन) कहा जाता है। बीज पांच पंक्तियों में व्यवस्थित और आकार व बनावट में भिन्न होते हैं।

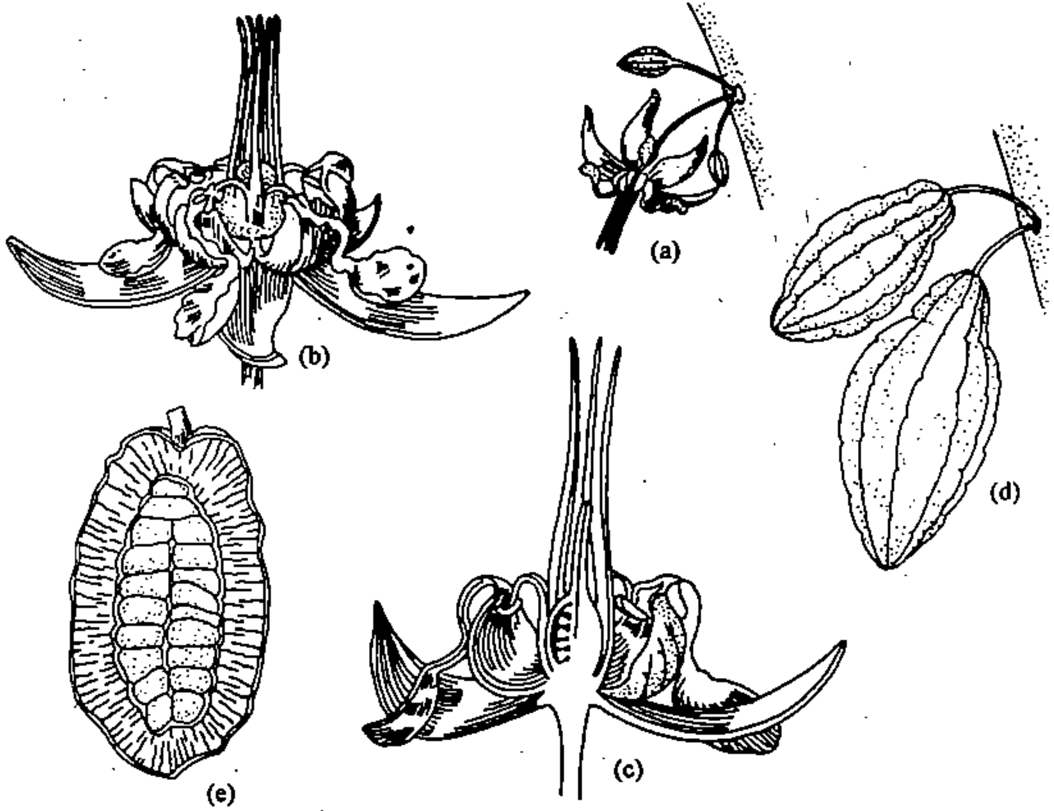

चित्र 18.9 : कोको (चॉकलेट) के पौधे के पुष्प और फल। a) पेड़ के तने से सीधे उगता एक फूल और दो कलिकाएं। b) फूल का आवर्धित दृश्य। c) अनुदैर्ध्य काट में एक पुष्प। d) सीधे तने पर उगे दो फल। e) अनुप्रस्थ काट में फल। (सिम्पसन और कोनर ओगोरज़ैली, 1986 से)।

बॉक्स 18.3 : कैको और कलाबाज पंछी

कलाबाज (ऐक्रोबैट) पंछी के नाम से ज्ञात एक छोटे-काले और धूसरी रंग के पक्षी को शोधकर्ताओं ने पहली बार नवंबर 1994 में देखा था। इसका नाम *ऐक्रोबैटोरनिस फोन्सीकाई* रखा गया। इस पक्षी का संरक्षण चिंता का विषय है। जुवेना नामक रोम के एक कवि ने इस पंछी को "रारा एविस" यानि पृथ्वी पर दुर्लभ पंछी कहा था। रियो की फेडरल यूनिवर्सिटी के एक अनुसंधानकर्ता के अनुसार यह ऐक्रोबैट पंछी उस क्षेत्र में ओवनबर्ड कुल का एकमात्र उदाहरण है। इस पक्षी कुल के शेष सदस्य पक्षी, लगभग 200 वर्ष पूर्ण कैको की खेती के आंरभ पर, आवास में आकस्मिक परिवर्तन आ जाने से मर गए थे। मगर ऐक्रोबैट यानि इस कलाबाज पंछी ने परिवर्तनों के अनुरूप अनुकूलन प्राप्त कर लिए और यह जीवित रहा। कैको के बागानों को सूर्य की रोशनी से बचाए रखने के लिए विस्तृत वन वितान चाहिए और इन्हीं प्रलंबी छायादार वृक्षों में ही यह पक्षी रहता है। बहिया के 70 प्रतिशत से अधिक कैको के पेड़ विचेस ब्रूम नामक घातक कवक (*मैरास्मिस पर्निसियसस*) रोग से ग्रस्त हैं जिसका कोई उपचार नहीं है। कैको के बागानों के इस रोग के चलते नष्ट होते ही ऐक्रोबैट का एकमात्र आवास भी समाप्त हो जाएगा। इसे संरक्षित रखने के लिए कारगर कदम उठाने होंगे।

फसल की कटाई

कैको के पेड़ की आयु 3–4 वर्ष होने पर उस पर फल लगने लगते हैं यद्यपि पूर्ण उत्पादन पेड़ के 10 वर्ष का होने पर ही मिलता है। फलन पूरे वर्ष होता है। जैसा कि पीछे बताया गया है फल 4–6 महीने में पक जाते हैं और फलों को दो कालों में तोड़ा जाता है: i) अक्टूबर से फरवरी तक, और ii) मई से अगस्त तक। फलों को हुक के आकार के चाकू से बहुत सावधानी से तोड़ा जाता है जिससे तने पर स्थित कुशननुमा वृद्धि करती हुई संरचनाओं को कोई क्षति नहीं पहुंचे क्योंकि इसी स्थल पर अगले वर्ष फूल लगेंगे (चित्र 18.10 a)।

कोको का संसाधन

किण्वन

फलों को काटकर खोलकर बीज और गूदा निकाल लिया जाता है और फिर किण्वन किया जाता है (चित्र 18.10 b)। पश्चिम अफ्रीका के छोटे बागानों में किण्वन ढेरियों या मध्यम आकार की टोकरियों में किया जाता है जिन्हें अक्सर केलों की पत्तियों से ढका जाता है ताकि ऊष्मा बनी रहे। जलवायु स्थिति के अनुसार बीजों को सात से आठ दिन के लिए छोड़ दिया जाता है। बेहतर वातन और तापमान को अत्यधिक बढ़ने से रोकने के लिए बीजों को ऊपर-नीचे उल्टा-पलटा जाता है। सूक्ष्मजैविकी किण्वन के दौरान गूदे में मौजूद शर्करा यीस्ट (*सैक्रोमाइसीज* जाति) की क्रियाशीलता के द्वारा एल्कोहल में और अंततः *ऐसिटोबैक्टर* स्पी. द्वारा ऐसिटिक अम्ल में रूपांतरित हो जाती है। अल्कोहल और ऐसिटिक अम्ल के प्रवेश करने पर बीज मर जाते हैं और उनका रंग भूरा हो जाता है। बीजपत्र बीजचोल से सिकुड़कर अलग हो जाते हैं। इस चरण पर उनकी विशिष्ट सुगंध विकसित होती है, जोकि 'कैकूल' (cacool) नामक वाष्पशील तेल की उपस्थिति के कारण पैदा होती है। प्रोटीनों और पॉलिफिनॉलों में ये परिवर्तन अंतर्जात (endogenous) एंजाइमों द्वारा लाए जाते हैं जो बीजों के समूचे परिमाण में बढ़ते तापमान (40–50°से.) द्वारा सक्रिय हो जाते हैं। बड़ें बागानों में किण्वन विशेष रूप से बने छिद्रित लकड़ी या कंकरीट के "स्वेदन बाक्सों" या 'किण्वन बिनों' में किया जाता है। इनकी माप 90×90×90 से.मी. या 120×90×90 से.मी. (गहराई 90 से.मी. से अधिक नहीं) होती है। स्वेदन बॉक्सों का निर्माण पदशः किया जाता है और वातन के लिए इन बॉक्सों के ऊंचे चबूतरों पर रखा जाता है (चित्र 18.10 c)। घाना के कोको रिसर्च इंस्टीट्यूट (सी.आर. आई.) में किण्वन 120×90×7.5से.मी. की ट्रे में किया जाता है जिनका तल झिर्रीदार होता है जो ताड़ के प्रपत्रों की मध्य शिराओं से बनाए जाते हैं। दस या अधिक ट्रे को एक-दूसरे के ऊपर रखकर सबसे ऊपरी ट्रे को केलों के पत्तों से ढक दिया जाता है। चार दिन की अवधि में किण्वन पूर्ण हो जाता है।

शुष्कन

किण्वन के पश्चात् बीजों को धोकर ट्रे या चटाई पर धूप में सुखाने के लिए, या कृत्रिम शुष्कन के लिए फैलाकर डाल दिया जाता है। समान रूप से सूखने के लिए बीजों को दोलित किया जाता है। इससे नमी की मात्रा घटकर 6 प्रतिशत रह जाती है।

पॉलिश (सफाई) करना

बीजों को मशीन से पॉलिश किया जाता है या फिर इसके लिए गीले बीजों को नंगे पैरों से रौंदा जाता है, ट्रिनिडाड में इस विधि को "कोको नृत्य" कहते हैं। बीजों में मिले पदार्थों जैसे टहनियों, पत्थर और कचड़ा इत्यादि को साफ करके उनकी ग्रेडिंग की जाती है और फिर उन्हें निर्यात किया जा सकता है।

भर्जन

सफाई के बाद कोको के दानों को लोहे के ड्रमों में 125–140°C तापमान पर भूना जाता है (चित्र 18.10c) भर्जन से अम्लीयता और कषायता कम हो जाती है। इसके अलावा नमी घट जाती है, रंग गहरा हो जाता है, आवरण आसानी से अलग हो जाता है और बीजों में सुगंध आ जाती है।

भर्जित कैको बीज में निम्न घटक पाए जाते हैं :

वसा (कैको मक्खन)	-	30–36 प्रतिशत
स्टार्च	-	15 प्रतिशत
ऐल्बुमिनोइड और खनिज पदार्थ	-	15 प्रतिशत
थियोब्रोमीन	-	3 प्रतिशत
कैफीन	-	लघु मात्रा

भर्जन के दौरान कुछ थियोब्रोमीन, बीजपत्रों से बीज के आवरण में आ जाता है और इसीलिए निष्कर्षण एक महत्वपूर्ण प्रक्रम बनता जा रहा है।

बीजों को मशीन में तोड़ा जाता है और भारी बीजपत्रों (जिन्हें निब भी कहा जाता है) को फटकार कर छिलकों से पृथक कर लिया जाता है। निबों को पीसकर तैलीय लुग्दी बनाई जाती है जिसे "कटु चॉकलेट" या "चॉकलेट लिकर" या "कैको पिंड" कहते हैं।

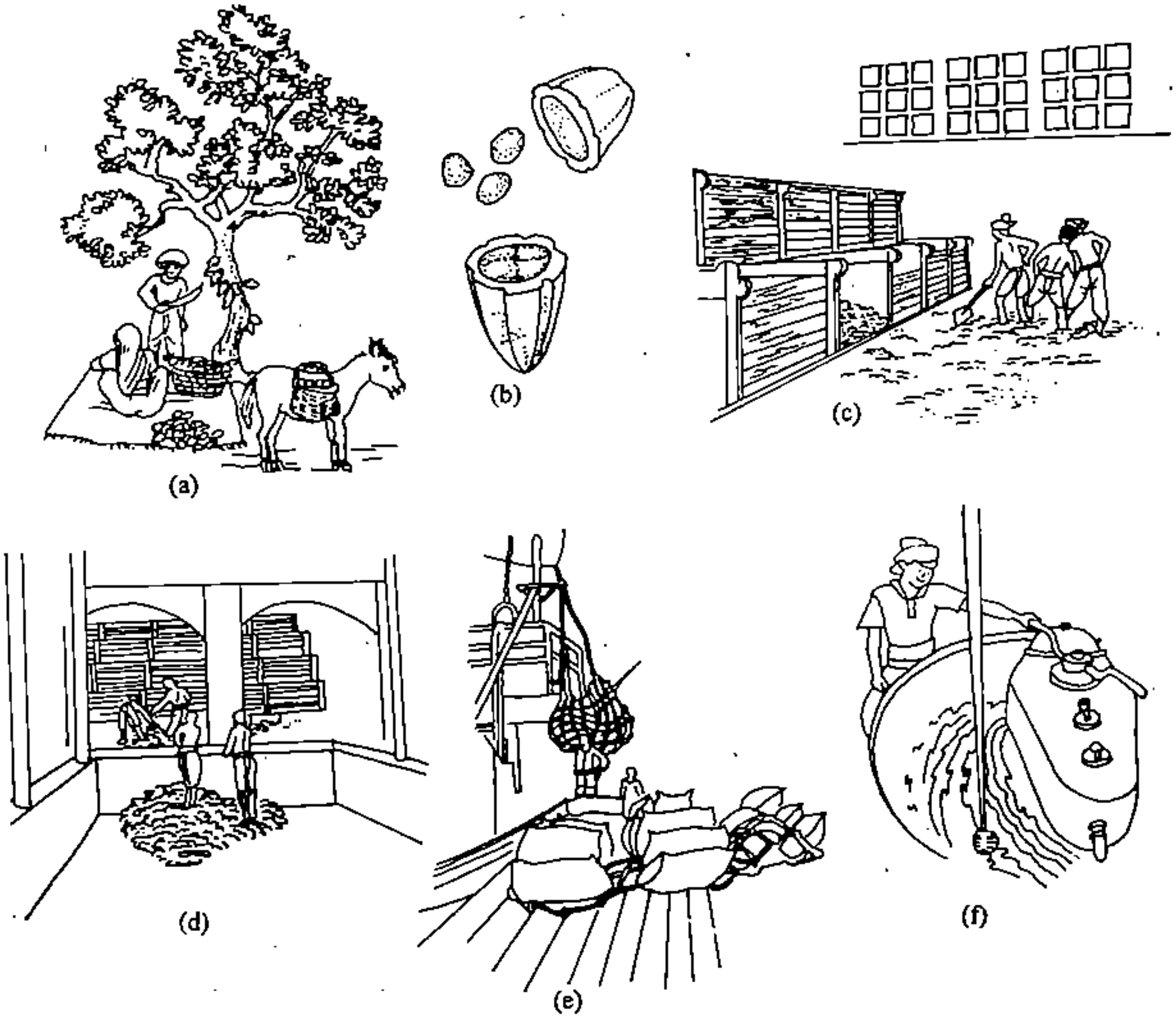

चित्र 18.10 : कैको के संसाधन के चरणों का चित्रात्मक निरूपण। a), b) फलियों को तोड़ा और उनसे बीज निकालने के लिए उन्हें विखंडित किया जाता है। c) बीजों का किण्वन। d) बड़े हौजों में बीजों को धोया जाता है। e) बीजों को दूसरे देशों के निर्माण संयंत्रों के लिए भेज दिया जाता है। f) चॉकलेट निर्माण कैको के निबों, चीनी, कैको मक्खन और संघनित दूध मिलाकर किया जाता है। इन पदार्थों को खूब दोलन करके घूर्णनकारी टबों में अच्छी तरह से मिलाया जाता है जिससे एक चिकना समांगी पेस्ट बनता है। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से)।

कोको का निर्माण – कोको चूर्ण के निर्माण के लिए "कोको के द्रव्यमान" में विद्यमान दो-तिहाई वसा को हाइड्रॉलिक प्रेसिंग से अलग कर लिया जाता है। शेष द्रव्यमान को पीस लिया जाता है। कोको मक्खन एक अति स्थायी वसा है जिसे दो से पांच वर्ष तक संचित करके रखा जा सकता है। अम्लीयता को कम करने के लिए क्षारीय विवेचन किया जाता है जो इसके कई कार्बनिक अम्लों को उदासीन बना देता है, इससे उसमें सुगंध सुवास विकसित हो जाती है और रंग गहरा हो जाता है। इसे डचिंग भी कहा जाता है (इस विधि का विकास हॉलैंड में हुआ था)।

चॉकलेट का निर्माण - (चित्र 18.10 f देखिए) चॉकलेट बनाने के लिए "चॉकलेट लिकर" में अतिरिक्त कोको मक्खन और चीनी मिलाई जाती है। समूचे द्रव्यमान को दुबारा पीसा जाता है और फिर उसे सुवासित करके उपभोक्ताओं के लिए उपयुक्त छोटे आकार के 'बार' या खंडों में ढाला जाता है। दुग्ध चॉकलेट बनाने के लिए 'चॉकलेट लिकर' में ठोस दुग्ध पदार्थ अधिक मात्रा में मिलाए जाते हैं।

रासायनिक संघटन

बीज या 'बीन' पोषक तत्त्वों और सुवास के उत्तम स्रोत हैं। बीजपत्रों या 'निब', तेल (कोको मक्खन) से भरपूर होते हैं। इनमें स्टार्च और प्रोटीन की मात्रा 15 प्रतिशत (प्रत्येक में) पाई जाती है। इसके अलावा इसमें 3 प्रतिशत थियोब्रोमीन एल्कैलॉइड, थोड़ी मात्रा में कैफीन और विभिन्न प्रकार के सुगंध मूलक तेलों के ट्रेस पाए जाते हैं।

उपयोग

1) कोको एक अति सान्द्रित ऊर्जा आहार (concentrated energy food) है जिसमें वसाएं, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और विटामिन विद्यमान रहते हैं।

2) कोको थियोब्रोमीन एल्कैलॉइड का मुख्य प्राकृतिक स्रोत है। इसे मुख्यतः बीज के अवशेषों से निष्कर्षित कर कैफीन में रूपांतरित किया जाता है और इसे अधिकतर 'कोला' में प्रयोग किया जाता है।

3) कोको चूर्ण को मसालों, वनीला और अन्य प्राकृतिक या कृत्रिम सुवासों से सुगंधित कर केक, पुडिंग और आइसिंग के लिए प्रयोग किया जाता है।

4) जल या दूध में बने कोको पेय मंद उद्दीपन प्रभाव डालते हैं।

5) कोको मक्खन का प्रयोग कनफेक्शनरी, औषधि लेपों और टॉयलेट्री संसाधनों के निर्माण में होता है।

6) कोको के छिलके पशुओं के चारे, उर्वरक, माल्च, ईंधन और कोको चूर्ण और चॉकलेट में मिश्रण के रूप में प्रयोग होते हैं।

7) फिलिपींन्स में कोको के कच्चे बीन आज भी चबाए जाते हैं।

अपमिश्रक

खारनूब के फल की मध्यफलभित्ति का चूर्ण, प्रोटीन और शर्करा का विपुल स्रोत है जिसे चॉकलेट के प्रतिस्थापक या अपमिश्रक के रूप में प्रयोग किया जाता है। खारनूब (*सीरैटोनिया सिलिक्वा*, कुल सीसलपिनिएसी) पूर्वी भूमध्यसागरीय प्रदेश मूल का है जिसकी खेती पंजाब में की जाती है।

बोध प्रश्न 3

1) कैको को "देवों का भोजन" क्यों कहा जाता है?

....

....

....

2) चॉकलेट लिकर किस कहते है?

....

....

3) चॉकलेट में मिलाए जाने वाले एक अपमिश्रक/प्रतिस्थापक का नाम बताइए।

....

....

18.5 सारांश

इस इकाई में आपने जाना कि :

- पेयों (सौफ्ट ड्रिंक्स को छोड़कर) को दो समूहों में बांटा जा सकता है: i) अल्कोहली और ii) अल्कोहल-रहित।

- अल्कोहली पेय अवनमक (ड्रिप्रेसैंट) होते हैं।

- अल्कोहलरहित पेय जैसे चाय, कॉफी और कैको उद्दीपक होते हैं क्योंकि इनमें मुख्यत: कैफीन (एल्कैलॉइड) और संबंधी रसायन विद्यमान रहते हैं जो हमारे शरीर में कार्यिकीय अभिक्रियाएं उत्पन्न करते हैं।

- चाय, कॉफी और कैको उष्णकटिबंधीय फसलें हैं।

- चाय (*कैमिलिया साइनेंसिस*, कुल - थियेसी) की उत्पत्ति का केन्द्र दक्षिण-पूर्व चीन, तथा भारत हैं। यह एक सदाबहार काष्ठीय झाड़ी है। इसकी पत्तियों से पेय बनाया जाता है। पत्तियों के संसाधन का प्रकार इस पर निर्भर करता है कि चाय किस प्रकार की चाहिए। व्यावसायिक स्तर पर चाय का किण्वन किया जाता है जिससे पत्ती के विभिन्न रासायनिक घटकों में परिवर्तन होता है। हरी चाय अकिण्वित होती है। ऊलांग चाय अर्ध-किण्वित होती है। चाय का सेवन संयम से करने पर चाय स्वास्थ्यवर्धक है। इसके अपमिश्रक हैं : डेंठल तथा धूल।

- कॉफी - *कॉफिया अरैबिका, कॉ.कैनीफोरा, कॉ.लाइबेरिका*, कुल - रूबिएसी। इसके बीजों को आम तौर पर 'बीन' कहा जाता है जिन्हें पेय बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है, कॉफी के बीजों को i) शुष्क या ii) नम विधि से संसाधित किया जाता है। कॉफी हमारे केन्द्रीय तंत्रिका और संवहन तंत्र पर उद्दीपन प्रभाव डालती है। अपमिश्रक - चिकोरी, डैंडिलियोन, अनाज के दाने, इमली के भुजे बीज।

- कैको-*थियोब्रोमा कैको*, कुल - स्टर्कुलेसी, उत्पत्ति का केन्द्र - एंडीज (दक्षिण अमेरिका) की ढलान वाला क्षेत्र है। कैको के पेड़ में शाखन का एक विशिष्ट पैटर्न होता है। बीजों (जिन्हें प्राय: बीन कहते हैं) और गूदे को (अष्ठिल) फलों से निकाल लिया जाता है और उन्हें किण्वित करके सुखाकर पॉलिश किया जाता है और फिर भूना जाता है। बीजपत्रों को अब पीसकर एक तैलीय लुग्दी या पेस्ट बनाया जाता है। जिसे "कटु चॉकलेट" या "चॉकलेट लिकर" या "कैको मॉस" कहते हैं। कोको अति सान्द्रित ऊर्जा आहार है क्योंकि यह वसाओं, प्रोटीनों, कार्बोहाइड्रेटों और विटामिनों से भरपूर होता है। इसमें खारनूब के फल की चूर्णित मध्यफलभित्ति की मिलावट की जाती है।

18.6 अंत में कुछ प्रश्न

1) रिक्त स्थान भरिए :

   i) चाय में विशिष्ट सुगंध और सुवास .... की उपस्थिति के कारण होती है।

   ii) चाय में उद्दीपन और ताज़गी का गुण .... की उपस्थिति के कारण होता है।

   iii) .... पर चाय की चमक, संगठन और शक्ति निर्भर करती है।

   iv) कॉफी की खेती अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए .... के साथ मिलकर की जाती है।

v) कैफीन रहित कॉफी बनाने के लिए कॉफी के .... बीन/बीजों से कैफीन को अलग किया जाता है।

vi) कोको के बीजों को मशीन से पॉलिश किया जाता है या फिर गीले बीजों को नंगे पैरों से रौंद कर साफ किया जाता है। इस विधि को ट्रिनिडाड में .... कहते है।

vii) .... के फल की चूर्णित मध्यफलभित्ति प्रोटीन और शर्करा का विपुल स्रोत है जिसे चॉकलेट के प्रतिस्थापक या अपमिश्रक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

viii) कॉफी में सबसे अधिक मिलाया जाने वाला एडिटिव .... है जिसे एक अपमिश्रक या सुवास वर्धक के रूप में समझा जाता है।

ix) टी बैग .... के पर्ण तंतुओं से बनाए जाते हैं।

x) कॉफी की विशिष्ट सुगंध और स्वाद .... के कारण होती है।

2) निम्न शब्दों के पूर्ण रूप लिखिए :

i) सी टी सी (CTC) ....

ii) सी सी आर आई (CCRI) ....

iii) सी आर आई (CRI) ....

iv) आई सी ओ (ICO) ....

3) निम्नलिखित कहाँ स्थित हैं ?

i) कोको रिसर्च इन्स्टीट्यूट ....

ii) इंटरनेशनल कॉफी ऑर्गनाइजेशन (आई सी ओ) का प्रधान कार्यालय ....

iii) टोकलई एक्सपेरिमेंटल स्टेशन ....

4) काली, हरी और ऊलांग चाय में क्या अंतर है?

....

....

....

....

5) बोस्टन टी पार्टी की ऐतिहासिक घटना के बारे में बताइए।

....

....

....

....

6) सी.टी.सी., ब्रिक, लेपत्सो और लेग-कट चाय क्या हैं?

....

....

....

7) एक कप चाय में : (क) एक चम्मच दूध और चीनी का एक गट्टा मिलाने पर, और (ख) दूध और चीनी मिलाए बिना कितनी कैलोरी होती हैं?

....

....

8) *कैमीलिया साइनेंसिस* की पत्ती की अनुप्रस्थ काट का स्केच बनाकर उसके विभिन्न हिस्सों के नाम लिखिए।

9) कॉफी की बेरियां तोड़ने के समय से लेकर पेय कॉफी पावडर बनने तक सभी चरणों के बारे लिखिए।

....

....

....

....

10) इंस्टैंट कॉफी पावडर कैसे बनता है?

....

....

....

....

11) भारत के कॉफी उत्पादक राज्य कौन से हैं?

....

....

12) कोको की 'क्रियोलो' और 'फॉरैस्टरो' किस्मों में अंतर बताइए।

....

....

....

....

13) कैको पादप में शाखन पैटर्न की विशेषताएं बताइए।

....

....

....

....

14) चॉकलेट के निमार्ण में फलों को तोड़ने के समय से लेकर चॉकलेट के बार या ब्रिकों के निर्माण तक सभी चरणों के बारे में लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

15) कैको के वृक्ष में किस तरह का पुष्पक्रम दिखाई देता है?

....

....

....

....

18.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) झाड़ियों को अक्सर काटा-छांटा जाता है जिससे पर्ण उत्पादन **अधिकतम** हो और झाड़ियों को पत्ती तोड़ने की ऊंचाई तक रखा जा सके।

ii) चित्र 18.2 और भाग 18.2 देखिए।

iii) तालिका 18.3 देखिए।

iv) टी बैग *मूसा टेक्सटाइलिस* (मूसेसी) के पर्ण तंतुओं से बनाए जाते हैं।

2) i) भाग 18.3, तालिका 18.6 देखिए।

ii) भाग 18.3 में 'कृषि-जलवायु स्थितियां' देखिए।

iii) भाग 18.3 में 'कैफीन रहित कॉफी' देखिए।

3) i) केको को " देवों का भोजन" कहा जाता है क्योंकि (केन्द्रीय और दक्षिण अमेरिका के आदिवासी) माया लोगों को मानना था कैको पादप दैवीय उत्पत्ति का है और लिन्यिस ने इसे *थियोब्रोमा कैको* (ग्रीक के शब्द थियोस यानि देवता और ब्रोमा भोजन) नाम दिया।

ii) भाग 18.4 में 'चॉकलेट का निर्माण' देखिए।

iii) भाग 18.4 में 'अपमिश्रक' देखिए।

अंत में कुछ प्रश्न

1) i) वाष्पशील तेल/थियोल

ii) थीइन/एल्कैलॉइड/कैफीन

iii) पॉलिफिनॉल

iv) केला/अंजीर/काली मिर्च

v) बिना भुने/हरे

vi) कैको नृत्य

vii) खारनूब वृक्ष/*सीरेटोनिया सिलिक्वा*

viii) चिकौरी/*सिकोरियम इनटाइबस*

ix) अबाका/*मूसा टैक्सटाइलस*

x) कैफियोल/वाष्पशील तेल

2) i) क्रशिंग, टीयरिंग एंड कर्लिंग

ii) सेन्ट्रल कॉफी रिसर्च इंस्टीट्यूट

iii) कोको रिसर्च इंस्टीट्यूट

iv) इंटरनेशनल कॉफी ऑर्गेनाइज़ेशन

3) i) घाना

ii) लंदन

iii) जोरहाट (आसाम,- भारत)

4) भाग 18.2; तालिका 18.4

5) बॉक्स 18.1 देखिए

6) भाग 18.2 देखिए

7) क) 40 कैलोरी

ख) 4 कैलोरी

8) चित्र 18.2 देखिए

9) भाग 18.3 देखिए

10) भाग 18.3 देखिए

11) भाग 18.3 देखें

12) तालिका 18.8 देखिए

13) भाग 18.4 देखें

14) भाग 18.4 में 'कोको का संसाधन' देखें

15) संपीडित सिन्सिनसी ससीमाक्ष (सर्पिलज ससीमाक्ष)।

इकाई 19 औषधीय और सुगंधमूलक पादप

इकाई की रूपरेखा

19.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
19.2 औषधीय पादप
19.2.1 रोवूल्फिया
19.2.2 इंडियन एकोनाइट
19.2.3 कुनैन
19.2.4 थैम
19.2.5 बेलाडोना
19.2.6 फॉक्सग्लव
19.2.7 पेरीविंकल
19.2.8 पोस्त
19.2.9 नक्स-वोमिका
19.2.10 अरगॉट
19.3 धूमकीय और चर्वणी सामग्री उत्पादक पादप
19.3.1 भांग
19.3.2 तंबाकू
19.3.3 सुपारी
19.4 सगंध तेल उत्पादक पादप
19.4.1 चंदन
19.4.2 खसखस
19.4.3 अन्य महत्वपूर्ण स्रोत
19.5 सारांश
19.6 अंत में कुछ प्रश्न
19.7 उत्तर

19.1 प्रस्तावना

पौधों में पाए जाने वाले कई रसायन अत्यंत महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि पृथ्वी पर पादप और जन्तु जीवन दोनों को कायम रखने के लिए भी अनिवार्य हैं। धरती पर जवीन का मूल आधार कार्बन है। उदाहरण के लिए ग्लूकोज जैसे शर्करा के सरल अणु की रचना प्रकाश संश्लेषण के दौरान हरे पौधों की कोशिकाओं से सूर्य के प्रकाश की पारस्परिक क्रिया के फलस्वरूप होती है। प्रकृति में पाई जाने वाली सभी खाद्य श्रृंखलाओं का आधार यही अणु है। ये सरल शर्कराएं जटिल जैव-रासायनिक पथों के जरिए अमीनो अम्ल जैसे अन्य अणुओं के निर्माण में सहायक होती हैं। जैसा कि आप जानते ही हैं अमीनो अम्ल निर्माण खंड हैं जिनसे प्रोटीनों की रचना होती है। अमीनो अम्लों से ही सजीव तंत्र का बुनियादी ढांचा बनता है। जीवन और उससे जुड़े जैव-रासायनिक प्रक्रमों (उपापचय) को कायम रखने के लिए कोई 20 अमीनो अम्ल अनिवार्य हैं। जीवन के लिए आवश्यक उपापचय के पथ प्राथमिक उपापचय की रचना करते हैं और इन पथों में सीधे शामिल यौगिकों को प्राथमिक यौगिक या *प्राथमिक उपापचयज* कहा जाता है, जैसे ग्लूकोज और आवश्यक अमीनो अम्ल। द्वितीयक पथों (ग्लाइकोसाइडों के निर्माण में ग्लूकोज जैसे प्राथमिक उपापचयजों से) के जरिए पादपों द्वारा बनाए जाने वाले कई यौगिक *द्वितीयक उपापचयज* कहलाते हैं। इन यौगिकों में एल्कलॉइड, ग्लुकोसाइड, ग्लाइकोसाइड या फिनोलिक यौगिक आते हैं। औषधीय महत्व, सुगंध के गुणों वाले अनेक पादपों में द्वितीयक यौगिक पाए जाते हैं जो संभवतः उत्तरजीवितामूलक अनुकूलन (survival adaptations) या रक्षा क्रियाविधियां (defense mechanisms) हैं। मगर जंतुओं और विशेषकर मानव

के लिए ये बड़े मूल्यवान हैं। इन द्वितीयक पादप मूलक पदार्थों (secondary plant substances), इनके अनुरूपों (semi - synthetic forms) और अर्धकृत्रिम स्वरूपों (analogs) की जानकारी और उनका उपयोग, आने वाले समय में हमारे दैनिक जीवन में अत्यधिक महत्व पाएगा।

इस इकाई में आपके ज्ञानवर्धन के लिए हमारे देश में साधारणतया प्रयोग होने वाले औषधीय और सुगंधी पादपों को शामिल किया गया है। इन पर हमने तीन पृथक खंडों में चर्चा की है जो क्रमश: औषधीय पादपों (medicinal plants), धूमकीय और चर्वणी सामग्री (fumitory and masticatory materials), और सगंध तेल (essential oil) उत्पादक पादपों के बारे में हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- प्राथमिक और द्वितीयक उपापचयजों में भेद बता सकें,
- औषधीय और सुगंधमूलक पादपों के अध्ययन के महत्व को समझ सकें,
- पादप मूल के यौगिकों के प्रमुख वर्गों के महत्व को स्पष्ट रूप से बता सकें,
- आमतौर पर उपयोग में लाए जाने वाले औषधीय पादप स्रोतों, धूमकीय और चर्वणी सामग्री उत्पादक पादपों और संगध तेल देने वाले पौधों के बारे में बता पाएं, और
- अवाष्पशील और सगंध तेलों में अंतर बता सकें।

19.2 औषधीय पादप

प्राचीन काल में रोगों के उपचार के लिए जड़ी-बूटियों से कई तरह के नुस्खे तैयार किए जाते थे। आधुनिक चिकित्साविज्ञान के विकास में इन्हीं नुस्खों ने किसी न किसी तरह से महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसे समझाने के लिए हम यहाँ एस्पिरिन का उदाहरण दे रहे हैं जो सारे विश्व में खूब प्रयोग में आने वाली दवा है। यह दवा यूं तो पूर्णत: कृत्रिम है (एस्पिरिन का 'ए' अक्षर एसिटिल; और 'स्पिरिन' रोजेसी कुल की *स्पीरी* जाति से लिया गया है यह कुल सैलीसाइलिक अम्ल का एक स्रोत है) लेकिन आज हम जिस एस्पिरिन को दर्द निवारक औषधि के रूप में जानते हैं उसका ज्ञान हम विलों के पेड़ की छाल (जाति *सैलिक्स* और कुल सैलीकेसी) के प्रयोग में तलाश सकते हैं जिसे प्राचीन युग में यूनानवासी दर्द दूर करने के लिए काम में लाते थे। विलो की पत्तियों से 1827 में सैलिसिन नाम का एक सक्रिय घटक पृथक किया गया। सैलिसिन ग्रहण करने योग्य नहीं था। मगर 1899 में जर्मनी में इससे एसिटिलसैलीसाइलिक अम्ल निकाला गया जो सभी प्रकार के दर्द से राहत देता था। यहां एक बात ध्यान देने की यह है कि इस दवा का आदिप्ररूप (प्रोटोटाइप) पौधे से प्राप्त किया गया तथा यह एक प्राकृतिक उत्पाद था। इसी तरह से कई दवाइयां जो आज कृत्रिम रूप में हमें सुलभ हैं उनका एक वानस्पतिक इतिहास है— यानि किसी न किसी कच्चे सार-सत्त के रूप में उनका सेवन किया जाता रहा है। प्राचीन चिकित्सा पद्धतियां जैसे भारतीय आयुर्वेद और चीनी चिकित्सा पद्धति पादप मूल की दवाओं से चलती हैं। पश्चिमी जगत इन पद्धतियों को आरंभ में शंका की दृष्टि से देखता था मगर आज वही इनमें विशेष रुचि दिखा रहा है। इसी रुचि के चलते विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इन औषधीय पादपों की एक सूची बनाई है जिन्हें विभिन्न देशों के लोग उपचार में काम लाते हैं।

आधुनिक दवाओं में पादप उत्पाद प्रयोग किए जाते हैं जैसे वसा अम्ल और सगंध तेल, गोंद (gum), राल (resin), एल्कैलॉइड (alkaloids) और स्टीरॉइड (steroids)। कई प्रचलित औषधि विरचनों में तेलों और गोंदो का प्रयोग पायसीकरण के लिए किया जाता है। सगंध तेलों और रालों का प्रयोग इसलिए किया जाता है कि वे ऊतकों को भेदने में सहायक होते हैं। इन्हें एन्टीसेप्टिक (antiseptic) के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में प्रयोग होने वाले पादप मूल के यौगिकों के दो वर्ग इस प्रकार हैं : 1) एल्कैलॉइड, और 2) स्टेराइड (बॉक्स 19.1 तथा 19.2 देखिए)। ये शर्करा के एक या अधिक अणुओं के साथ पाए जा सकते हैं (बाक्स 19.1 तथा 19.2 देखें) इन्हें ग्लाइकोसाइड कहते हैं और प्राय: यही यौगिक के औषधीय दृष्टि से सक्रिय रूप हैं।

बाक्स 19.1 : स्टेरॉइड

स्टेरॉइड ऐसे जटिल रासायनिक यौगिक होते हैं जिनकी संरचना में निम्नलिखित चार वलयों वाला मूल ढांचा होता है :

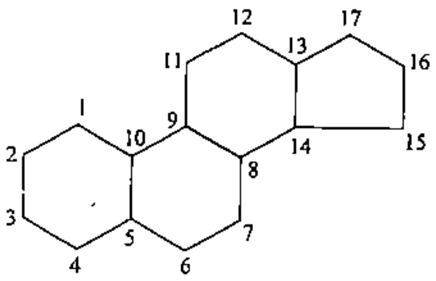

Steroid backbone

इस रीढ़ पर अलग-अलग जगह में भिन्न रासायनिक अर्धांशों यानि chemical moieties (मॉइ-इ-टि) को जोड़ने से नाना प्रकार के स्टेरॉइड यौगिक बनते हैं। स्टेरॉइड रीढ़ से शर्करा के अणुओं को जोड़ने से स्टेरॉइडी ग्लाइकोसाइड बनते हैं। इन्हें द्वितीयक उत्पाद भी कहते हैं। पौधों में स्टेरॉइडों का कोई प्रत्यक्ष कार्यिकीय प्रकार्य देखने में नहीं आता। इसके विपरीत जंतुओं और विशेषकर कशेरुकी प्राणियों पर इनका गहरा प्रभाव पड़ता है। कई जीव विज्ञानियों का मत है कि पादपों में इनका निर्माण उन्हें जन्तुओं से बचाने के लिए होता है। उदाहरण के लिए मोर्नाक बटरफलाई नामक तितली लारवा अवस्था में (इल्ली के रूप में) मिल्कवीडों को खाती है जो ऐस्क्लीपिएडेसी कुल के सदस्य हैं। मिल्कवीड मानव के लिए जहरीले हैं क्योंकि इनमें स्टेरॉइडी ग्लाइकोसाइड पाए जाते हैं। मोनार्क का लारवा इन यौगिकों को अपने शरीरांगों में संचित कर लेते हैं और उन पर इनका कोई जहरीला प्रभाव नहीं पड़ता। ये इल्लियां जब वयस्क तितलियों में कायांतरित होती हैं तो ये संचित ग्लाइकोसाइड मुख्यत: उनके पंखों में आ जाते हैं। इस तरह ये तितलियां अपने कशेरुकी भक्षी जंतुओं जैसे पक्षीयों, के लिए विषैली बन जाती हैं। मगर यहां एक रोचक बात यह है कि पक्षी शीघ्र ही इन टॉक्सिन-धारी तितलियों से दूर रहना सीख जाते हैं।

बॉक्स 19.2 : ऐल्कैलॉइड

ऐल्कैलॉइड ऐसे यौगिकों का समूह है जिसे परिभाषा के दायरे में नहीं रखा जा सकता। यूं तो ऐल्कैलॉइड शब्द का अर्थ क्षारीय होता है मगर ऐल्कैलॉइड अणु के लिए कोई एकरूप मॉडल नहीं मिलता। ऐल्कैलॉइड अणु साधारणतया एकल या बहुल वलय वाले होते हैं और इनमें नाइट्रोजन पाया जाता है। अतीत में इन ऐल्कैलॉइडों को पादपों में अपशिष्ट पदार्थ या उपापचय का द्वितीयक उत्पाद माना जाता था जिनकी भूमिका के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। मगर अब ऐसे अकाट्य प्रमाण उपलब्ध हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि स्टेरॉइडों के विपरीत, ऐल्कैलॉइड पादपों के उपापचय में भाग लेते हैं। इन्हें पौधों में रासायनिक रक्षा में विशेषकर उन्हें जंतु भक्षण से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते पाया गया है। जंतुओं में और खासकर स्तनधारी प्राणियों में कई ऐल्कैलॉइडों की सूक्ष्म मात्रा भी बड़ा गहरा प्रभाव डालती है। जंतुओं में ऐल्कैलॉइडों का सबसे व्यापक प्रभाव उनके तंत्रिका तंत्र (nervous system) पर पड़ता है। इसके अलावा उनके अन्य तंत्र भी प्रभावित होते हैं। कोई पौधा जहरीला है या उसकी रोग उपचार में उपयोगिता है - यह बस खुराक (dosage) पर निर्भर करता है।

औषधीय पादपों के वर्गीकरण की कई विधियां हैं। इन्हें i) इनमें पाए जाने वाले यौगिकों की रासायनिक प्रकृति, ii) इन यौगिकों से उत्पन्न होने वाले प्रभावों, या iii) औषधियों के स्रोतों, के आधार पर अलग-अलग वर्गों में बांटा जाता है।

सुविधा के लिए हमने पादपों का वर्गीकरण स्रोतों के आधार पर किया है जिनसे दवा निकाली जाती है।

19.2.1 रौवूल्फिया (Rauwolfia)

वानस्पतिक नाम : *रौवूल्फिया* जाति (*Rauwolfia* sp.)

कुल : एपोसायनेसी

प्रचलित नाम : रौवूल्फिया रूट, स्नेक रूट, चंद्रभागा, छोटा चांद, सर्पगंधा

n = 10, 11, 12, 22

रौवूल्फिया जीनस नाम 16 वीं सदी के जर्मन फिजीशियन और अन्वेषक ड्रॉ. लियोनार्द रौवूल्फ के नाम पर पड़ा।

चित्र **19.1** : *रौवूल्फिया सर्पेन्टाइना* (***R.serpentina***), का एक तरुण पौधा जिसमें सर्पनुमा जड़ें देखी जा सकती हैं जो ऐल्कैलॉइडों की मुख्य स्रोत हैं। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से पुन:चित्रित)।

पारिस्थितिकी एवं प्रवर्धन

यह पौधा उष्ण या उपोष्ण प्रदेशों में उगता है और यह गर्म नम जलवायु में खूब फलता-फूलता है। जड़ों की कलमों (कटिंगों) के प्रयोग से इसे बढ़िया ढंग से उगाया जाता है। इसके प्रवर्धन के लिए इसके बीजों और तने की कटिंगों का भी प्रयोग किया जाता है। औषध-निर्माता या दवा बनाने वाली कंपनियों ने हालांकि इसे बड़े पैमाने पर उगाने के प्रयास बहुत किए हैं, मगर उन्हें इसमें कामयाबी नहीं मिली है। सो इसकी व्यावसायिक आपूर्ति अभी भी प्रकृति से प्राप्त की जाती है। इंडोनेशिया कभी इसका एक मुख्य स्रोत हुआ करता था, मगर वहां *रौवूल्फिया वोमिटोरिया* (*R.vomitoria*)के वृक्ष और झाड़ियां लगभग समाप्त हो चुके हैं। इस समय इसके प्रमुख उत्पादक देश भारत और थाइलैंड हैं।

आकारिकी :

रौवूल्फिया सर्पेन्टाइना (चित्र 19.1) एक सीधा ऊर्ध्व, सदाबहार, चिरकालिक, अरोमिल, उपक्षुप (अंडरश्रब), है। इसकी जड़ें धूसरी-भूरी, कंदिल (गांठदार) होती हैं और उनमें एक विशिष्ट हल्की सी झुर्रीदार और खुरदुरी सतह पाई जाती है। इसकी बेलनाकर, शुंडाकार और अक्सर घुमावदार (व्यावर्तित) मूसला जड़ का व्यावसायिक महत्व है मगर इसमें भी जड़ की छाल को उसके काष्ठ से अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। जड़ों को दो-तीन वर्ष के पौधों से उनकी पत्तियां गिर जाने के बाद तोड़ा जाता है। इस अवस्था में ये जड़ें ऐल्कैलाइड से अधिक भरपूर रहती हैं। पत्तियों और तने में ऐल्कैलॉइड थोड़ी-बहुत मात्रा में पाए जाते हैं। पत्तियां सरल, अरोमिल, भालाकार या प्रतिअंडाकार और तीन या चार के चक्करों में व्यवस्थित होती हैं। ये तने के ऊपरी भाग को घेरे रहती हैं। पुष्पक्रम आमतौर से अंतस्थ तो कभी कक्षीय होता है। यह प्राय: घने ससीमाक्षों का बना होता है (चित्र 19.1)। पुष्प नलिकाकार, गुलाबी सफेद या हरे सफेद होते हैं। फल छोटे (0.5 से.मी), अंडाकार, मांसल गुठलीदार होते हैं और पकने पर ये चमकदार काले रंग के हो जाते हैं।

रौवूल्फिया जाति में लगभग 80 या अधिक ऐल्कैलॉइड पाए जाते हैं। इनमें रिसर्पिन (reserpine), रेसीनैमाइन (rescinnamine), ऐजमैलाइन (ajmaline), ऐजमैलिसीन (ajmalicine) और सर्पेन्टिन (serpentine) नामक ऐल्कैलॉइड व्यावसायिक महत्व के हैं(देखें तालिका 19.1)। इनमें सबसे महत्वपूर्ण रिसर्पिन है।

रिसर्पिन रासायनिक संरचना में मस्तिष्क में पाए जाने वाले सिरैटोनिन नामक पदार्थ के समान होता है जो एल.एस.डी (लिसर्जिक एसिड डाइएथिलैमाइड) से संबंधित है।

उपयोग

1. भारत में सदियों से इसकी मूसला जड़ों के चूर्ण से पागलपन और सांप व कीट के काटे का इलाज किया जाता रहा है। इसीलिए इसे चंद्रभागा, छोटा चांद और सर्पगंधा कहा जाता है। रिसर्पिन का प्रयोग अमेरिका में भी स्किजोफ्रीनिया (schizophrenia) नामक मनोविकार के उपचार के लिए दवा में किया जाता था।

तालिका 19.1 : *रौवूल्फिया* जातियों के मुख्य विभेदनकारी लक्षण

लक्षण	रौवूल्फिया की जातियां		
वानस्पतिक नाम	*R.serpentina*	*R.tetraphylla*	*R.vomitoria*
प्रचलित नाम	सर्पगंधा, छोटा-चांद	बाराचंद्रिका	——
उत्पत्ति	उत्तरी भारत, पूर्वी-पाकिस्तान और मलेशिया के कुछ भाग	वेस्ट इंडीज	उष्णकटिबंधीय अमेरिका
वितरण	पंजाब से नेपाल तक उप-हिमालयी पट्टी, सिक्किम, भूटान, थाइलैंड, आसाम, पूर्वी भारत में और पश्चिमी घाट और अंडमान द्वीप समूह	उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, और केरल	गिनी तट और मोजांबीक
आकारिकी	सीधी खड़ी, सदाबहार झाड़ी (ऊंचाई 0.6–1 मीटर)	छोटी, शाखित झाड़ी	छोटा पेड़ (ऊंचाई 6 मीटर)
ऐल्कैलॉइड मात्रा	0.7–3 प्रतिशत जड़ें रिसर्पिन, ऐजमैलाइन और सर्पेन्टाइन के निष्कर्षण के लिए इस्तेमाल की जाती हैं।	इसकी जड़ों को *R. serpentina* ऐल्कैलॉइडों के साथ मिलावट के लिए प्रयोग किया जाता है।	0.5–1 प्रतिशत इसे मुख्यत: रेसर्पिन और ऐजमैलाइन के निष्कर्षण के लिए प्रयोग किया जाता है। इसमें रिसर्पिन की मात्रा *R. serpentina* से दोगुना होती है।

2. जब यह खोज हुई कि रिसर्पिन हाइपोटेन्सिव (hypotensive) है और यह रक्तचाप को कम कर सकता है तो तभी से इसे स्किजोफ्रीनिया से ज्यादा उच्च रक्तचाप के उपचार (अक्सर अन्य दवाओं के साथ) में अधिकाधिक प्रयोग किया जा रहा है। रिसर्पिन से हाइपरटेंशन का उपचार इसके रुधिर वाहिनियों को विस्फारित कर रक्त के दबाव को कम करने की क्रिया पर आधारित है।

3. पत्तियों के सारसत्त का सेवन आंख की कॉर्निया में होने वाली अपारदर्शिता के उपचार के लिए किया जाता है।

4. इसकी जड़ के सत्त का सेवन पेट के विकारों को दूर करने के लिए किया जाता है। इसके सत्त को कभी-कभी अन्य पादप सत्तों के साथ मिलाकर हैज़ा, शूल और ज्वर के उपचार के लिए काम लाया जाता है। इसकी जड़ का सत्त गर्भाशय संकुचन को उत्प्रेरित करता है और इसलिए इसका सेवन शिशु-जनन के दौरान किया जाता है।

5. यह प्राचीन काल से ही ज्वर कम करने वाले कर्मक, और रजोधर्म लाने वाले कर्मक- इमेनागॉग (emmenagogue) के रूप में प्रसिद्ध है।

19.2.2 इंडियन एकोनाइट (Indian Aconite)

वानस्पतिक नाम : *ऐकोनिटम फेरॉक्स* (*Aconitum ferox*)

कुल : रैननकुलेसी

प्रचलित नाम : बालनाग, वाचनाग, विष

उत्पत्ति

हिमालय के शीतोष्ण और अर्ध-अल्पाइन प्रदेश

वितरण

सिक्किम से गढ़वाल और आसाम, मध्य नेपाल से भूटान की पर्वत श्रृंखलाएं

आकारिकी

यह एक बहुवर्षी, एक से दो मीटर ऊंचा पादप है, जिसमें शंक्वाकार कंदिल, मूसला जड़नुमा स्कंध होता है। इसका तना मजबूत होता है। पत्तियां अपने आधार (base) तक पांच पालियों में कटी होती हैं। पालियां बनावट और आकार में भिन्न होती हैं और रेखीय से दीर्घवृत्तीय होती हैं। पुष्प गहरे नीले, लंबे स्पाइकनुमा अंतस्थ झुंड में पाए जाते हैं। ऊपरी पंखुड़ी एक गोलाकार फण (हुड) बनाती है जो लंबा कम, चौड़ा अधिक और एक छोटी तीखी नोक लिए होता है। निचले सहपत्र पिच्छाकार में पालित रहते हैं जबकि ऊपरी सहपत्र संपूर्ण हैं।

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

यह नमी से भरपूर चरागाहों और पर्वतीय प्रदेशों में उगता है। इसका प्रवर्धन इसके कंदों से होता है। इन्हें पौधे में पुष्पन आरंभ होने पर खोद निकाला जाता है। इन्हें फिर धूप या छांव में सुखाया जाता है। कंद बाहर से गहरे भूरे मगर अंदर से सफेद रंग के होते हैं।

रासायनिक संघटन

एकोनाइट बड़ा जहरीला होता है। इसमें सूडोऐकोनिटिन (pseudoaconitine) नामक एक विषाक्त ऐल्कैलॉइड पाया जाता है।

प्रयोग

ऐकोनाइट को दूध में उबालने पर इसका जहरीला गुण लुप्त हो जाता है। इसके बाद इसे डाइयूरेटिक यानि diuretic (मूत्रल); एंटीआर्थ्राइटिक यानि antiarthritic (गठिया रोगहारी), एक्सपेक्टोरैंट यानि expectorant (कफ़ोत्सारक), नार्कोटिक यानि narcotic या स्वापक, तंत्रिका आविष यानि nervine toxin (नर्वाइन टॉक्सिन) और स्टॉमैकिक यानि stomachic (आमाशयिक) के रूप में काम लाया जाता है।

इससे बनने वाली होमियोपैथिक दवाइयां गृध्रसी (sciatica यानि सायैटिका), न्यूरैल्जिया (neuralgia) और कंपकंपी (chills) के उपचार में सेवन की जाती हैं।

19.2.3 कुनैन (Quinine)

वानस्पतिक नाम : *सिंकोना* जाति (*Cinchona* spp.)

कुल : रूबिएसी

प्रचलित नाम : कुनैन का पेड़, सिंकोना, पेरू की छाल

n = 17

उत्पत्ति

एंडियन प्रदेश (दक्षिण अमेरिका महाद्वीप-बोलीविया से कोलंबिया तक)

वितरण

भारत और इंडोनेशिया। यह तंजानिया, श्रीलंका म्यानमार (बर्मा), आस्ट्रेलिया और कौकासस देशों में भी उगाया जाता है। भारत में *सि.कैलीसैया* यानि *C.calisaya* (पीली सिंकोना छाल) हिमालय और सिक्किम में तो *सि.लेजारियाना* (*C.ledgeriana*) (हल्की भूरी सिंकोना छाल), *सिं. सक्सीरूब्रा* यानि *C.succirubra* (लाल सिंकोना छाल) और *सिं. रोबस्टा* (*C.robusta*) आदि जातियां बंगाल और तमिलनाडु में पर्यनुकूलित यानि उनकी जलवायु में ये फूलती-फलती हैं। एंडीज पर्वत श्रृंखला के वर्षा वनों में सिंकोना जाति के वन्यप्ररूप मिलते हैं (चित्र 19.2)।

सिंकोना कोई 300 वर्षों से प्रयोग में है। ऐतिहासिक दस्तावेजों से पता चलता है कि 1638 में चिंकोन ऑंव पर्क की काउंटेस को मलेरिया होने पर उसका उपचार सिंकोना छाल के सेवन से किया गया था। फिर 1820 में दो फ्रेंच वैज्ञानिकों, पियरे योसेफ पेल्लेतियर और योसेफ कैवेन्तौं ने कुनैन की खोज की और इसका नाम छाल के लिए प्रयोग होने वाले क्वीना शब्द पर रखा।

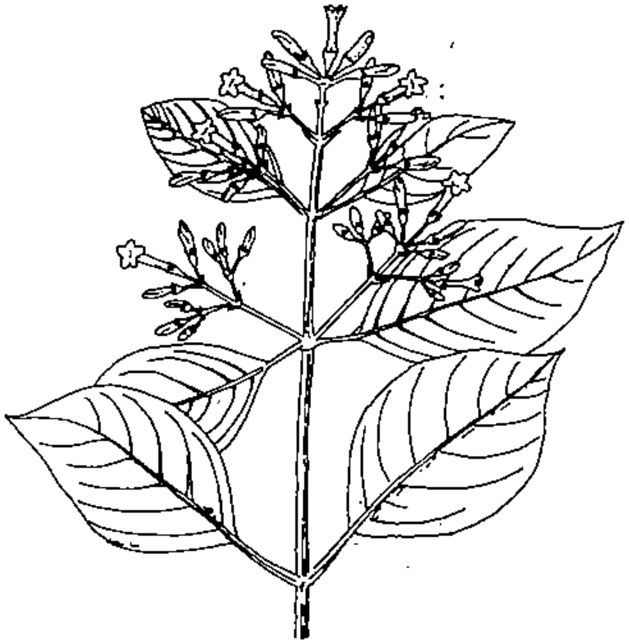

चित्र 19.2 : *सिंकोना सक्सीरूब्रा* (*C.succirubra*) की पुष्प युक्त एक टहनी।

आकारिकी

सिंकोना जातियां सदाबहार झाड़ियां या वृक्ष होती हैं। पत्तियां सम्मुखी, सरल, संपूर्ण और अंतरावृंतक अनुपर्ण धारी होती हैं। पुष्पक्रम एक अंतस्थ पुष्पगुच्छ है, पुष्प छोटे और सुगंधित होते हैं। बाह्यदलपुंज एकीकृत; दलपुंज नलिकाकार, पांच विस्तारी पालियों युक्त होते हैं। इन पालियों के किनारों पर रोमों के झालर पाए जाते हैं। जायांग द्विअंडपी, संयुक्तांडपी और अधोवर्ती, विषमवर्तिकी होता है यानि लघुवर्तिक (microstyled) पादपों में पांच बाहर निकले पुंकेसर कोरोला नलिका के साथ एकांतर क्रम में रहते हैं और वर्तिकाग्र कोरोला नलिका की आधी लंबाई तक ही पहुंचता है; तथा दीर्घवर्तिकी (macrostyled) पादपों में पुंकेसर कोरोला नलिका की लंबाई का आधा होता है और वर्तिकाग्र बाहर को निकला होता है। फल एक कैप्सूल होता है जिसमें 40 से 50 की संख्या में छोटे, चपटे और पंखदार बीज पाए जाते हैं।

वर्ष 1944 में हारवर्ड विश्वविद्यालय के रॉबर्ट वुडवर्ड और कोलंबिया विश्वविद्यालय के विलियम डोअरिंग ने इसका संश्लेषण किया। मगर प्राकृतिक औषधि के लिए आदर्श प्रतिस्थायी यानि कृत्रिम दवा खोजी नहीं जा सकी है। कुनैन की लगभग सारी विश्व आपूर्ति आज भी सिंकोना की छाल से मिलती है।

इसकी जड़ों, तने और शाखाओं की छाल में ऐल्कैलॉइड पाए जाते हैं। जड़ों में सभी ऐल्कैलॉइडों का अधिकतम सांद्रण पाया जाता है, इनमें अब तक लगभग 30 ऐल्कैलॉइड पृथक किए जा चुके हैं। मगर इसके तने की छाल कुनैन ($C_{20}H_{24}N_2O_2$) का सबसे विपुल स्रोत है। कुनैन इसका समस्थानिक क्विनिडीन (quinidine), सिंकोनीन यानि cinchonine ($C_{19}H_{22}N_2O$) और उसका समस्थानिक सिंकोनिडीन (cinchonidine) - ये चारों सामूहिक रूप से टोटाक्वीन कहलाते हैं। ऐल्कैलॉइड छाल में सिंकोटैनिक (cinchotannic) अम्ल, क्वीनिक अम्ल, मुक्त कार्बनिक अम्लों, टैनिनों, रंजनकारी कर्मकों, गोंद, स्टार्च, वानस्पतिक पदार्थ और वाष्पशील तेलों के अवशेषों के संयोजन में पाए जाते हैं।

उपयोग

1) कुनैन से मलेरिया का उपचार किया जाता है।
2) क्विनिडीन का प्रयोग अब हृदय की अपसामान्य गति के उपचार, मांसपेशियों की ऐंठन से राहत दिलाने और सिर में दर्द के उपचार में किया जाता है।

3) फर, पंख, ऊन, नमदा और वस्त्र (टैक्सटाइल) के परिरक्षण के लिए प्रयोग होने वाले कीटनाशकों में कुनैन, क्विनीडीन और उनके यौगिकों को मिलाया जाता है।

4) ऐल्कैलॉइडों के निष्कर्षण के बाद सिंकोना की बची छाल का प्रयोग चर्मशोधन (tanning) में किया जाता है।

19.2.4 यैम (Yams)

वानस्पतिक नाम : *डायोस्कोरिया* (*Dioscorea*)

कुल : डायोस्कोरिएसी

प्रचलित नाम : कट रितालू, खमालू, छुपरियालू, गेठी, रतालू

n = 10

उत्पत्ति

पश्चिमी अफ्रीका, दक्षिण पूर्वी एशिया, चीन, मेक्सिको, ग्वाटेमाला (यह विश्व के नम उष्णकटिबंधीय और शीतोष्ण प्रदेशों का स्थानिक पादप है)।

वितरण

डायोस्कोरिया की लगभग 600 जातियां हैं। मेक्सिको और ग्वाटेमाला में *डायोस्कोरिया* जाति के वन्यप्ररूपों से रतालू तोड़े जाते हैं। अफ्रीकी उत्पत्ति की सबसे महत्वपूर्ण कृष्ट जाति *डायोस्कोरिया रोटुंडा* (व्हाइट गिनी यैम) है। विश्व में डायोस्जेनिन (diosgenin) का अधिकांश उत्पादन इसी से होता है। भारत में इसकी निम्न आठ जातियां पाई जाती हैं (देखिए तालिका 19.2)।

आकारिकी

रतालू गहरी जड़ों वाली, आरोही, एकलिंगाश्रयी, बहुवर्षी लता है (चित्र 19.3)। इसमें राइज़ोम रूपांतरित होकर एक वार्षिक कंद बनाता है जिसका आकार एक छोटे आलू से लेकर 45 कि.ग्रा. और 1.8 से 2.8 मीटर लंबा होता है। रतालू अंदर से प्राय: सफेद रंग का होता है, मगर कुछ जातियां बैंजनी या पीले रंग की भी होती हैं। यह खुरदरा, सूखा, चूर्णी, कोमल, कुरमुरा या गूदेदार हो सकता है। कंद 8 से 10 महीने में परिपक्व होते हैं। हरेक कंद प्राय: एक मुख्य तना उत्पन्न करता है जो कि शाखित हो सकता है।

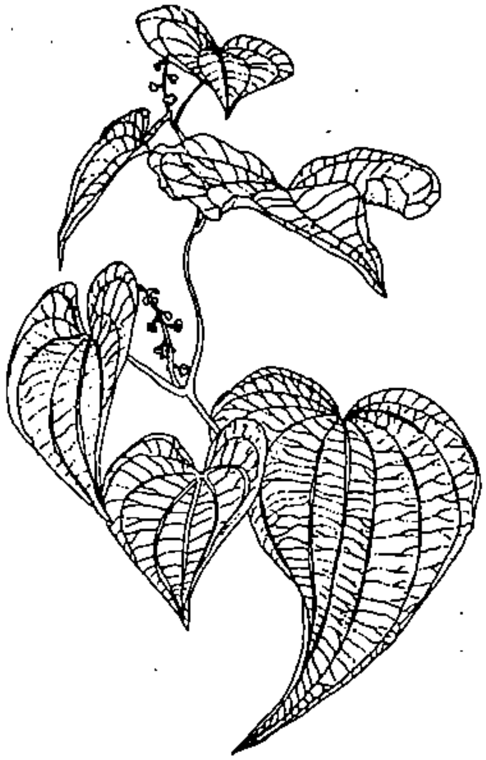

चित्र 19.3 : *डायोस्कोरिया* (*Dioscorea*) जाति। टहनी का एक हिस्सा (यह चित्र सिम्पसन और कोनर ओगोरज़ैली, 1986, से लिया गया है)।

तालिका 19.2 : भारत में पाई जाने वाली *डायोस्कोरिया* की जातियां

क्रम संख्या	जाति	प्रचलित नाम	स्थानीय नाम	स्वाभाव	वासी	भारत में खेती, और उपयोग
1.	*डायोस्कोरिया ऐलैटा* (*Dioscorea alata*)	व्हाइट यैम, एशियाटिक यैम	खमालू, छपरि-आलू	आरोही झाड़ी (क्षुप)	पूर्वी: एशिया	आसाम, गुजरात (बड़ौदा), तमिलनाडु, बंगाल, मध्यप्रदेश में कंद की सब्जी बनाई जाती है।
2.	*डा.बल्बि-फेरा* (*D.bulbi-fera*)	पोटैटो यैम या आकाशी यैम	गेठी, रतालू	आरोही, शाकीय बहुवर्षी पादप	एशिया और प. हिमालय में वन्यावस्था में	समूचे देश में इसके कंद निरा-विषीकरण के बाद खाए जाते हैं।
3.	*डा. डेल्टॉइडी* (*D.delt-oides*)	-	-	झाड़ी या क्षुप	भारत और प. हिमालय में वन्यावस्था में	पंजाब, कर्नाटक, कश्मीर उत्तर पूर्व हिमालय। कंदो से कॉर्टिसोन मिलता है जो गठिया रोग और नेत्र विकारों के काम आता है, शुष्क भार में 7–8 प्रतिशत डायोस्जिनिन
4.	*डा. एस्कुलेंटा* (*D.escul-enta*)	छोटा यैम करिन - पोटैटो	सस्नी - आलू	कंटीली, आरोही झाड़ी	दक्षिण-पूर्व एशिया	मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, बंगाल, आसाम, पूर्वी हिमालय, नागालैंड, खासी पहाड़ियां, अंडमान
5.	*डा. हैमिल्टोनाइ* (*D.hamil-tonii*)	-	-	आरोही झाड़ी	दक्षिण-पूर्व एशिया	पश्चिमी घाट, सिक्किम, उड़ीसा और बंगाल। कंद खाद्य हैं।
6.	*डा. पेंटा-फाइला* (*D.penta-phylla*)	-	कांता आलू	,,	उष्णकटि-बंधीय एशिया	समूचे भारत में कंद खाद्य हैं।
7.	*डा. प्रैजेरी* (*D.prazeri*)	-	,,	-	,,	बंगाल, आसाम और पूर्वी हिमालय इसके कंद कोर्टिसोन (cortisone) के स्रोत हैं, जो गठिया (rheumatism) के रोग में काम आता है।
8.	*डा. टोमेंटोसा* (*D.tomen-tosa*)	-	,,	-	,,	दक्षिण भारत इसके कंद स्टेरॉइड के स्रोत हैं।

तना – इसका तना 3–12 मीटर लंबा होता है जिसकी लंबाई जाति पर निर्भर करती है। ये कमजोर होते हैं और आधारों के सहारे या तो दाईं ओर (दक्षिणावर्त) या बाईं ओर (वामा ओर) यमलन करते हुए आरोहण करता है। आरोहण की दिशा प्रत्येक जाति में विशिष्ट होती है। तना कंटकयुक्त या कंटकहीन हो सकता है, यह अरोमिल या रोमिल हो सकता है।

पत्तियां – सरल (यदा कदा ही संयुक्त होती हैं), हृदयाकार या गहरी पालित, सम्मुखी लंबे पर्णवृंत युक्त होती हैं। कुछ जातियां (*डा. बल्बिफेरा* यानि *D.bulbifera*) बड़ी खाने योग्य पत्रप्रकलिकाएं (bulbils) उत्पन्न करती हैं। ये पत्रप्रकलिकाएं कायिक प्रवर्धन का माध्यम हैं और पत्तियों के कक्ष में उत्पन्न होती हैं।

नर पुष्पक्रम एककक्षीय असीमाक्ष, पुष्पगुच्छ या एकससीमाक्ष होता है या फिर फूल पर्ण अक्षों में एकल या युगल में होते हैं। पुष्प बहुत छोटे-छोटे, यदाकदा ही 4 मि.मी. तक होते हैं। इनमें परागण कीटों से होता है। फूलों में सफेद, नीला या भूरे रंग का परिदलपुंज पाया जाता है। नर पुष्प में छः पुंकेसर और मादा पुष्प में त्रिकोष्ठीय अंडाशय पाया जाता है। फल स्फुटनशील कैप्सूल होता है, जिसमे छः चपटे, पंखदार बीज पाए जाते हैं जो हवा द्वारा प्रकीर्णित होते हैं।

पारिस्थितिकी

यैम उष्णकटिबंधी वर्षावनों के प्रति अच्छी तरह से अनुकूलित होते हैं। इसकी ग्यारह कृषि जातियों की जलवायु संबंधी आवश्यकताएं एक दूसरे से अलग रहती हैं। इन्हें 1000 से 3000 मि.मी. वार्षिक वर्षा वाले प्रदेशों या शीतोष्ण जलवायु में उगाया जा सकता है।

प्रवर्धन

इसके कायिक प्रवर्धन के लिए छोटे कंद, कंदों की कटिंग या पत्रप्रकलिकाएं प्रयोग की जाती हैं। कटिंग के लिए कंद के कलियों या आंखों वाले शिखर वाला भाग चुना जाता है। इसके बेहतरीन प्रवर्धन के लिए कंद के 50–70 ग्राम के टुकड़े लिए जाते हैं जिन्हें एक ऊंचे स्थान पर बनाई गई क्यारी में, छांव के नीचे, बालू से ढक कर रखा जाता है और उनकी रोपाई से पहले एक महीने तक पानी से सींचा जाता है।

रासायनिक संघटन

अधिकांश जातियों के कंद कड़ुवे या जहरीले हो सकते हैं। इसका कारण यह है कि इनमें कुछ विशेष ऐल्कैलॉइड या ऑक्जैलिक और ऑक्जैलेट विद्यमान होते हैं। प्रोटीनों और विटामिन सी से भरपूर होने कारण ये कैसावा से अधिक पौष्टिक होते हैं। ताज़े रतालू का औसत संघटन इस प्रकार है: जल 60 से 70 प्रतिशत , कार्बोहाइड्रेट 15 से 25 प्रतिशत, और प्रोटीन 4 से 8 प्रतिशत। वन्य जातियों में (diosgenin) डायोस्जेनिन मौजूद होता है। डायोस्जेनिन एक आरंभिक स्टेरॉइड केन्द्रक सिद्ध हुआ है जिससे नाना प्रकार के महत्वपूर्ण स्टेरॉइड यौगिकों का निर्माण किया जा सकता है, जैसे कॉर्टिसोन (cortisone), हाइड्रोकॉर्टिसोन (hydrocortisone), और एंड्रोजन (androgens), प्रोजेस्टोजन (progestogens) जैसे सैक्स हार्मोन।

बॉक्स 19.3 : *डायोस्कोरिया* से प्राप्त होने वाले स्टेरॉइड

वर्ष 1936-1940 के दौरान यह खोज हुई कि यैम जीनस *डायोस्कोरिया* के कुछ सदस्यों में विशेष प्रकार के स्टेरॉइड होते हैं जिन्हें सैपोनिन (saponins) कहते हैं। असल में सैपोनिन सैपिनोजन (sapinogen) के रूप में होते हैं जिनसे एक या अधिक शर्कराएं जुड़ी रहती हैं। इनका नाम सैपोनिन इसलिए पड़ा कि जब इन यौगिकों को पानी में हिलाया जाता है तो ये साबुन जैसा झाग देते हैं। स्टेरॉइड ढ़ाचें से विशेष श्रृंखलाओं या अतिरिक्त वलयों के संयोजन से विभिन्न प्रकार के हृदयी (cardiac) ग्लाकोसाइडों और स्टेरॉइड हार्मोनों का निर्माण किया जाता है। हृदयी ग्लाइकोसाइड (digitoxigenin यानि डिजिटोक्सिजेनिन) में स्टेरॉइड ढ़ाचें के 17 वें कार्बन अणु से एक विशिष्ट वलय जुड़ा रहता है। स्टेरॉइडी सैपोनिन, डायोस्जेनिन लिलिएसी, ऐगावेसी और डायोस्कोरिएसी में आमतौर पर पाए जाते हैं। ये अन्य स्टेरॉइडों से भिन्न हैं क्योंकि इनके स्टेरॉइड संरचना से एक स्पाइरोकीटल काम्प्लेक्स (spiroketal complex) जुड़ा रहता है। यही काम्प्लेक्स इन्हें मानव स्टेरॉइड हार्मोनों के पूर्वगामियों के रूप में विशेष उपयोगी बनाता है।

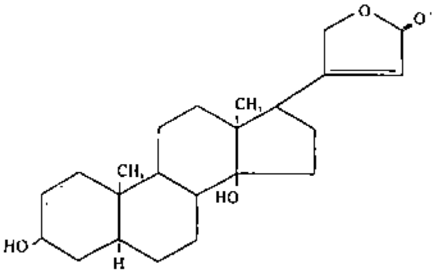

Digitoxigenin

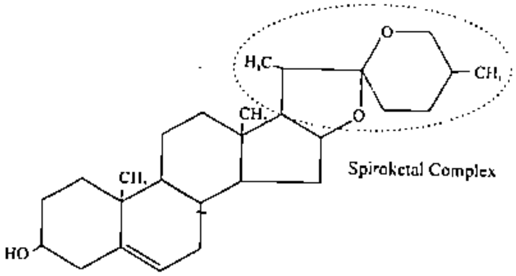

Diosgenin

उपयोग

1. डायोस्जेनिन से बनाए जाने वाले अधिकांश हार्मोन: क) गर्भ निरोधक गोलियों; ख) रजोधर्म को नियमित करने वाले हार्मोनों के निर्माण में; या ग) गर्भादानकारी (फर्टिलिटी) दवाओं के घटक के रूप में काम करते हैं।
2. डायोस्जेनिन से कॉर्टिसोन और हाइड्रोकॉर्टिसोन नामक दो अन्य हार्मोन बनाए जाते हैं। इनका प्रयोग: क) गंभीर ऐलर्जी (प्रत्यूर्जता) कारक प्रतिक्रियाओं; ख) आर्थ्राइटिस (संधिशोथ) के रोग; और ग) एड्रीनल ग्रंथि की कुसंक्रिया से होने वाले ऐडीसन रोग के उपचार में किया जाता है।
3. यैम कार्बोहाइड्रेट युक्त (30–40 प्रतिशत) भोजन का स्रोत हैं और ये कैसावा से अधिक पौष्टिक हैं क्योंकि इनमें प्रोटीन अधिक (4 से 8 प्रतिशत) पाया जाता है। इन्हें छीलने, उबालने या भूंजने के बाद इनका कड़ुवापन चला जाता है। पश्चिम अफ्रीकी घरों में ताजा यैम को पीसकर एक लोकप्रिय व्यंजन फुफु बनाया जाता है।

19.2.5 बेलाडोना (Belladonna)

चित्र 19.4 : *ऐट्रोपा बेलाडोना (Atropa belladona)* की एक पुष्पन करती टहनी।

वानस्पतिक नाम : *एट्रोपा बेलाडोना (Atropa belladona)*

कुल : सोलैनेसी

प्रचलित नाम : डैडली नाइटशेड, येबरज, गिरबूटी, सुची, विचेज बेरी

n = 36

उत्पत्ति

मध्य और दक्षिणी यूरोप और एशिया माइनर

वितरण

संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और भारत। भारत में इसे मुख्यत: कश्मीर में उगाया जाता है।

आकारिकी

एट्रोपा बेलाडोना एक शाकीय, बहुवर्षी, 90–120 से.मी. ऊंचा पौधा है जिसका प्रकंद विसर्पी होता है। पत्तियां अंडाकार, तने के ऊपरी भाग में असमान आकार में होती हैं। ये एकांतर क्रम में लगी रहती हैं (चित्र 19.4)। पुष्प एकल, बैंगनी भूरे रंग के, तथा घंटाकार होते हैं। ये जून-जुलाई के महीने में खिलते हैं और पत्तियों के कक्षों से उत्पन्न होते हैं। बेरी चमकीले रंग की और उनका रस स्याह बैंजनी रंग का होता है।

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

पौधे बीजों से उगाए जाते हैं। कायिक प्रवर्धन पुराने प्रकंदों को खंडित करके किया जाता है। इसके लिए मिट्टी कैल्सियमी, सुजलनिकास वाली दुमट, जिसमें सड़ी ह्यूमस खाद्य के साथ-साथ पोटाश और सोडा जैसे खनिज भरपूर मात्रा में होने चाहिए।

रासायनिक संघटन

इस पौधे के सभी भागों में ऐल्कैलॉइड पाए जाते हैं मगर ये कायिकी दृष्टि से अधिक सक्रिय कोशिकाओं में अधिक पाए जाते हैं। पुष्प काल के दौरान इसकी पत्तियां और सिरे-तोड़ लिए जाते हैं क्योंकि तब इनमें ऐल्कैलॉइडों का सांद्रण सबसे अधिक (0.9 से 1.23 प्रतिशत) होता है। इस पौधे से अनेक एल्कैलाइड पृथक किए जा चुके हैं जिन्हें सामूहिक रूप से बेलाडोना ऐल्कैलॉइड कहते हैं। ऐट्रोपिन यानि Atropine ($C_{17}H_{23}O_4N$), इसका समस्थानिक हायासायैमिन hyoscyamine, स्कोपोलैमिन यानि scopolamine ($C_{17}H_{21}O_4N$) इसके तीन सर्वाधिक महत्व के ऐल्कैलॉइड हैं।

उपयोग

1. नेत्र चिकित्सक आंख की जांच करते समय पुतलियों को विस्फारित करने के लिए ऐट्रोपिन का प्रयोग करते हैं।
2. कोलिक (बड़ी आंत) और पेप्टिक अल्सर की दवा के निर्माण में ये आधारभूत घटक हैं।

3. बेलाडोना लेप, गाउट और गठिया के उपचार के लिए लगाया जाता है।
4. पार्किंसन रोग के रोगियों में अकड़न और कंपकंपी के दौरों को कम करने के लिए उन्हें बेलाडोना ऐल्कैलॉइड दिए जाते हैं।
5. रोगियों की शल्य चिकित्सा से पहले और लालास्रवण (salivation) को कम करने के लिए भी ऐल्कैलॉइड दिए जाते हैं।
6. खुंभी (मशरूम) खाने से होने वाली विषाक्तता में भी ये बड़े लाभकारी होते हैं।

19.2.6 फॉक्सग्लव (Foxglove)

वानस्पतिक नाम : *डिजिटैलिस* जाति (***Digitalis* sp.**)

कुल : स्क्रोफुलेरिएसी

प्रचलित नाम : विचेज बेल्स

n = 7

उत्पत्ति

डि. परप्यूरिया - यूरोप और यूनाइटेड किंगडम; *डि. लैनाटा* - ऑस्ट्रिया

वितरण

संयुक्त राज्य अमेरिका, मध्य यूरोप, इंग्लैंड और अर्जेंटीना। भारत में *डि. परप्यूरिया* को मुख्यत: कश्मीर और नीलगिरि की पहाड़ियों में उगाया जाता है। *डि.लैनाटा* कश्मीर में (2100 मीटर की ऊंचाई पर) औ उत्तर-प्रदेश के चक्रौता में उगाया जाता है।

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

इसकी खेती के लिए रोग मुक्त किस्मों के बीज चुने जाते हैं जिससे कि स्वस्थ पौधे उत्पन्न हों। मिट्टी में खाद और पत्तियों की खाद मिली होनी चाहिए। पौद हाथ से रोपी जाती है।

आकारिकी

पौधे द्विवर्षी (यदा-कदा ही बहुवर्षी) शाकीय होते हैं जिनकी ऊंचाई 45–150 से.मी. होती है। पत्तियां भालाकार से अंडाकार, एकांतरी या सम्मुखी और रोमिल पाई जाती हैं। पहले वर्ष दीर्घवृंतीय पत्तियों का रोज़ेट (गुलाबवत् गुच्छा) बनता है। पुष्पक्रम असीमाक्ष होता है (चित्र 19.5)। पुष्प बैंजनी या पीले रंग के, उभयलिंगी एकव्याससममित (जाइगोमॉर्फिक) होते हैं जिनमें अधोवर्ती ओष्ठ बाहर की ओर निकला रहता है। फूल नलिका के भीतरी तली पर स्पष्टत: चित्तीदार होते हैं (चित्र 19.5)। कैलिक्स पांच, कोरोला संयुक्तदली, दल या पंखुड़ियां पांच, अस्पष्ट पालियों सहित दो-ओष्ठ होते हैं। पुंधानी चार और दललग्न पुंकेसर पाए जाते हैं। जायांग द्विअंडपी, अंडाशय द्विकोष्ठीय और स्तंभीय बीजांडन्यास पाया जाता है।

चित्र 19.5 : *डिजिटैलिस परप्यूरिया* (***Digitalis purpurea***)। पुष्पक्रम युक्त टहनी का एक भाग। (चित्र सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 पर आधारित है)।

बॉक्स 19.4 : ग्लाइकोसाइड

ग्लाकोसाइड अनपचयी (non-reducing) कार्बनिक पदार्थ हैं जिनके जल-अपघटन से एक ऐग्लाइकॉन और शर्करा बनाते हैं। इस ऐग्लाइकॉन को प्राय: जेनिन कहा जाता है। शर्करा ऑक्साइड छल्लों के रूप में होती है। सभी हृदयी ग्लाइकोसाइड स्टेरॉइड या साइक्लोनोफीनैंथ्रीन व्युत्पन्न होते हैं। इनमें C_{17} की जगह पर एक असंतृप्त लैक्टोन पाया जाता है। डिजिटैलिस ग्लाइकोसाइड, C_{23} ग्लाकोसाइड हैं और इनमें 5-सदस्यी लैक्टोन वलय पाए जाते हैं। स्टेरॉइडी ढ़ाचें में शर्करा अणुओं के योजन से स्टेरॉइडकी ग्लाइकोसाइड बनते हैं।

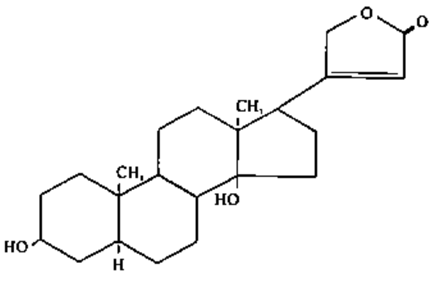

Digitoxigenin

पत्ती शारीर - *डिजिटैलिस* की पत्ती पृष्ठाधर होती है (चित्र 19.6)। इसमें त्वचारोम (ट्राइकोम) एकपंक्तिक, प्रायः 3 या 4 कोशिका लंबे होते हैं, जिनमें एक तीव्र (acute) शिखाग्र और सूक्ष्म किणकी क्यूटिकिल (finely warty cuticle) पाई जाती है। ग्रंथिल त्वचा-रोमों में एक छोटा एककोशिक वृंत, और द्विकोशिक या कभी-कभी एककोशिक मुंड पाए जाते हैं। ये ग्रंथिल त्वचारोम प्रायः शिराओं के ऊपर स्थित रहते हैं। अधोवर्ती पृष्ठ में अनियमकोशिक यानि anomocytic प्रकार के रंध्र भी विद्यमान रहते हैं।

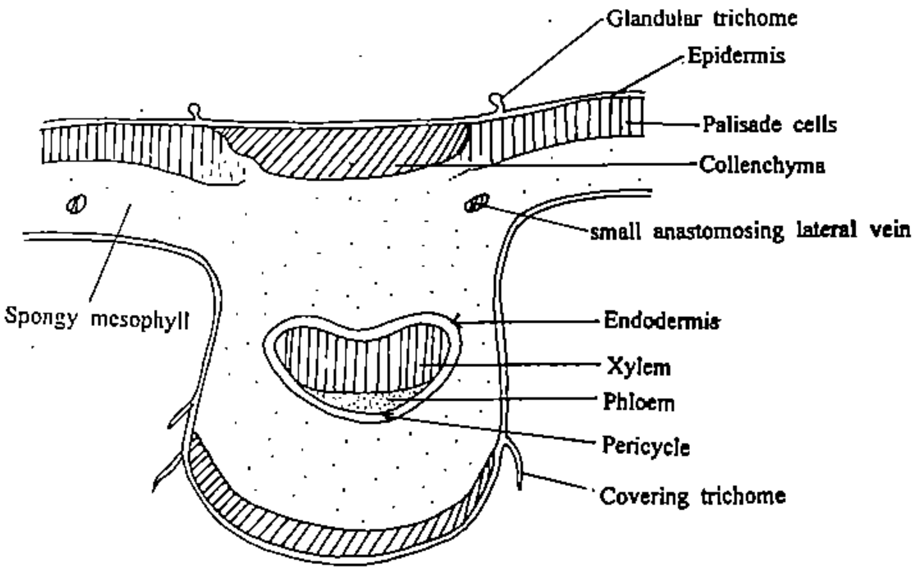

चित्र 19.6 : *डिजिटैलिस (Digitalis)* जाति। पत्ती का एक रेखाचित्र जिसमें उसके मध्यशिरा से होती हुई अनुप्रस्थ काट दिखाई गई है।

रासायनिक संघटन

सावधान

फॉक्सग्लव की पत्ती बड़ी जहरीली होती है। पत्ती को चबाकर निगल जाने पर पक्षाघात (लकुवा) हो सकता है और आकस्मिक रूप से हृदय गति रुक जाती है।

पहले वर्ष की पत्तियों में ग्लाइकोसाइडों की मात्रा अधिकतम होती है। इन्हें पुष्पन से पहले तोड़कर 600° से. से कम तापमान पर अच्छी तरह से सुखा लिया जाता है। *डिजिटैलिस* के क्रियाशील घटक मुख्यतः अधिचर्मी (एपिडर्मल) और उपाधिचर्मी (सब-एपिडर्मल) श्लेषोतक (कौलेंकाइमा) और अंतश्चर्म कोशिकाओं तक सीमित रहते हैं। *डि.परप्यूरिया* पत्तियों में 0.2–0.45 प्रतिशत की मात्रा में कार्डिनोलाइडों (cardenolides) का मिश्रण विद्यमान रहता है। कार्यिकी रूप से क्रियाशील डिजिटॉक्सिन (digitoxin), जिटॉक्सिन (gitoxin) और जिटैलिन (gitalin) ग्लाइकोसाइड प्राकृतिक परप्यूरिया ग्लाइकोसाइडों से व्युत्पन्न किए जाते हैं। यह क्रमशः प्राकृतिक परप्यूरिया ग्लाइकोसाइड ए, परप्यूरिया ग्लाइकोसाइड बी, और परप्यूरिया ग्लाइकोसाइड सी से ग्लूकोन अपशिष्ट के लोप से होता है।

डिजिटॉक्सिन	⟶	डिजिटॉक्सिजेनिन	ये शर्कराहीन खण्ड ऐग्लाइकोन या जेनिन हैं। ग्लाइकोसाइडों की तुलना में इनकी हृदय पर क्रिया दुर्बल होती है।
जिटॉक्सिन	जल-अपघटन पर ⟶	जिटॉक्सिजेनिन	
जिटैलिन	⟶	जिटैलिजेनिन	

डिजिटैलिस ग्लाइकोसाइडों में डिजिटॉक्सिन सबसे शक्तिशाली है। इसकी क्रियाशीलता चूर्णित डिजिटैलिस से 1000 – गुना अधिक है।

डि. परप्यूरिया के बीज से एक अन्य सक्रिय हृदयी ग्लाइकोसाइड डिजिटैलिन (digitalin) प्राप्त किया जाता है। *डिजिटैलिस लैनाटा (Digitalis lanata)* में अपेक्षतया अधिक शक्तिशाली औषधीय गुण पाए जाते हैं और फिर इसके पार्श्व प्रभाव (साइड इफेक्ट) *डि.परप्यूरिया* की तरह विषैले नहीं रहते। इसकी पत्तियों में मौजूद सक्रिय ग्लाइकोसाइड डिजिटॉक्सिन (digitoxin), जिटॉक्सिन (gitoxin), और डिजॉक्सिन (digoxin) हैं और ये प्राकृतिक या प्राथमिक ग्लाइकोसाइड क्रमशः लैनेटोसाइड ए, लैनेटोसाइड बी और लैनेटोसाइड सी से व्युत्पन्न किए जाते हैं। इन्हें क्रमशः डिजिलैनिड ए, बी और सी (digilanids A ,B and C) भी कहा जाता है।

डिजिटॉक्सिन	→ जल-अपघटन पर →	डिजिटॉक्सिजेनिन
जिटॉक्सिन	→	जिटॉक्सिजेनिन
डिजॉक्सिन	→	डिजोक्सिनेनिन

लैनेटोसाइड सी का *डि. परप्यूरिया* में कोई प्रतिरूप नहीं है। डिजॉक्सिन भी डिजिटैलिस के समान ही हृदयी प्रभाव पैदा करता है। यह डिजिटैलिस की पत्तियों से तैयार किए जाने वाले ग्लाइकोसाइड से 300 – गुना प्रभावी होता है।

उपयोग

हृदयी ग्लाइकोसाइडों का हृदय की पेशियों पर शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है। औषधि के रूप में प्रयोग किए जाने पर ये: क) सामान्य रुधिर संचार में सुधार लाते हैं; ख) शोफ (dropsy यानि जलोदर रोग), जो कि अक्सर हृदय को निष्क्रिय कर देता (heart failure) है उससे राहत देते हैं; और ग) वृक्कीय स्राव (renal secretion) में सहायक हैं।

अभी तक कोई भी प्रयोगशाला डिजिटैलिस का प्रतिस्थापक उत्पन्न नहीं कर पाई है।

19.2.7 पेरीविंकल (Periwinkle)

वानस्पतिक नाम : *कैथरैंथस रोजियस* (*Catharanthus roseus*)
कुल : ऐपोसायनेसी
प्रचलित नाम : मैडागास्कर पेरीविंकल, सदाबहार

उत्पत्ति

वेस्ट इंडीज और हिंद महासागर में मैडागास्कर द्वीप

वितरण

कैथरैंथस रोजियस (= *विंका रोजिया* चित्र, 19.7 देखें) को पूरे विश्व में एक सजावटी पौधे के रूप में उगाया जाता है। भारत, इस्राइल और सं.राज्य अमेरिका (इंटरनेशनल ट्रेड सेंटर, 1982) में इसे व्यावसायिक पैमाने पर उगाया जाता है। भारत में इसकी व्यावसायिक खेती मुख्यतः तमिलनाडु के रामनाथपुरम, त्रिउनेलवेली और मुदरै जिलों में होती है।

प्रवर्धन

इसके प्रवर्धन के लिए ताजे बीज प्रयोग होते हैं।

आकारिकी

यह एक बहुवर्षी ऊर्ध्व उपक्षुप है जिसकी ऊंचाई 1 मि.मी. तक होती है। यह आधार के करीब से शाखन करते हुए 60–70 से.मी. व्यास के क्षेत्रफल में फैलता है। पौधा 5 से.मी. लंबी, चिकनी, चमकीली, गहरे हरे रंग की पत्तियों में ढका रहता है। प्राकृतिक अवस्था में दो किस्म के फूल - एल्बा (सफेद) और रोजियस (गुलाबी) और अनेक संकर पाए जाते हैं। पुष्प समूची ग्रीष्म ऋतु के दौरान शाखनकारी तनों के आखिरी सिरों पर उगते हैं। पुष्प भंगुर होते हैं। इनके कोरोला नलिका के मुंह पर बैंजनी लाल या पीली वृत्ताकार मकरंद-दर्शिका (nectar guide) होती है। दीवटाकार कोरोला का रंग सुर्ख गुलाबी से नीलशोण और सफेद रहता है। फल एक बेलनाकार पुटक (follicle) होता है जिसमें कई काले रंग के बीज रहते हैं।

चित्र 19.7 : कैथरैंथस रोजियस (*Catharanthus roseus*)। पुष्पयुक्त टहनी का एक भाग। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से)।

रासायनिक संघटन

वैज्ञानिक समुदाय की इसमें रुचि 1950 के दशक में जागी जब उसने " पेरिविंकल चाय" के बारे में सुना। इस चाय का सेवन जैमाइका में इसके मधुमेह हारी गुणों के लिए किया जा रहा था। इस पौधे के सभी भागों में ऐल्कैलॉइड पाए जाते हैं। मगर इसकी पत्तियां महत्वपूर्ण व्यावसायिक स्रोत हैं जिनसे दो कैंसरहारी ऐल्कैलॉइड, विनक्रिस्टिन (vincristine) और विनब्लैस्टिन (vinblastine) निकाले जाते हैं। ये अर्बुदों (ट्यूमरों) की वृद्धि को रोकते हैं। आज, हम जान गए है कि पेरिविंकल में कई अन्य औषधीय गुण भी विद्यमान हैं। कुल मिलाकर इसमें 90 ज्ञात ऐल्कैलाइड पाए जाते हैं।

उपयोग

1) विलब्लैस्टिन सल्फेट (vinblastine sulphate) का प्रयोग मुख्यत: हॉजकिंस रोग (Hodgkins disease) के उपचार में होता है जो लसिका तंत्र (lymphatic system) का कैंसर है।

2) विनक्रिस्टन सल्फेट से बाल रक्त कैंसर (ल्यूकेमिया) और लसीकाण्विक (लिम्फोसाइटिक) कैंसर का उपचार किया जाता है।

बॉक्स 19.5 : पेरीविंकल के प्राचीन औषधीय उपयोग

इस पौधे के औषधीय गुणों की जानकारी आधुनिक अनुसंधानकर्ताओं को होने के काफी समय पहले, दूरदराज़ के नीम हकीम या वैद्य, मैडागास्कर पेरीविंकल से कई प्रकार की दवाइयां बनाते थे। इधर भारत में इसकी पत्तियों के सत्त से ततैया के दंश का इलाज किया जाता था। हवाई में, खून बहना रोकने के लिए पौधे को उबाल कर उसके सत्त का सेवन किया जाता था। मध्य अमेरिका में इससे गले के दर्द और छाती के रोगों को दूर करने के लिए इसके गरारा किया जाता था। क्यूबा, प्योर्टो रिको, जमाइका और अन्य द्वीपों में इसके फूलों के सत्त से बने नेत्र जल का प्रचलन लोकप्रिय था।

19.2.8 पोश्त (Opium Poppy)

वानस्पतिक नाम : *पैपावर सोम्नीफेरम (Papaver somniferum)*

कुल : पैपावरेसी

प्रचलित नाम : पस्तो, एहफिन, पोस्त, अफ़ीम, कशकशा, एफू, खुशखुश, रूबिनी, घाश अघाशा, गासागसालू, खशखशुफैद

n = 11

उत्पत्ति

पूर्वी यूरोप और पश्चिमी एशिया

वितरण

नेपाल, भारत, रूस, लाओस और कंबोडिया। भारत में इसकी खेती ~ ~ प्रदेश, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में की जाती है।

आकारिकी

यह एक खड़ एकवर्षी नीलाभ शाक है जो ऊंचाई में 30 से. 100 से.मी तक होता है। पत्तियां अंडाकार - आयातरूपी होती है, उनके पर्णाधार तने को घेरे रहते हैं और अक्सर पिच्छाकार में हल्के पालित होते हैं। पुष्प एकल, द्विलिंगी और त्रिज्यासममित रहते हैं (चित्र 19.8)। बाह्यदल दो, फूल के खुलने से पहले गिर जाते हैं; पंखुड़ियां 2+2; पुंकेसर अनेक होते हैं जिनमें नीले से रंग के परागकोश पाए जाते हैं। अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती, एककोष्ठिक अनेक बीजांड युक्त रहता है, बीजांडन्यास भित्तीय होता है, वर्तिकाग्र डिस्क के आकार का होता है जिसमें गहरी सीमांतक पालियां पाई जाती हैं। फल एक कैप्सूल है; बीज छोटे, सूक्ष्म भ्रूण-युक्त होते हैं और बीजपोष तैलीय होता है। सभी पादपांगों में लेटेक्स पाया जाता है।

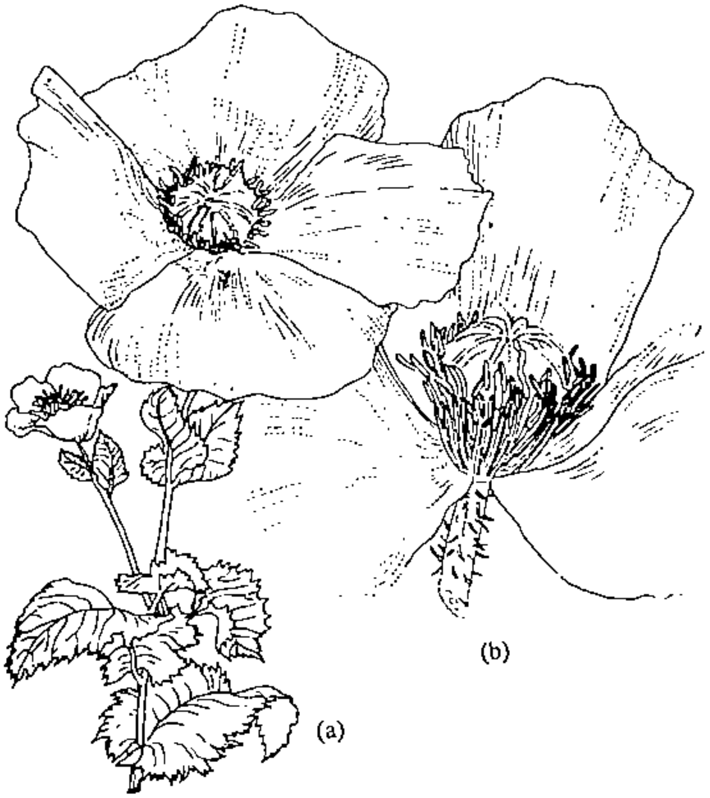

चित्र 19.8 : पैपावर सोम्नीफेरम (*Papaver somniferum*)। a) पुष्पन करती टहनी का एक भाग b) पुष्प का आवर्धित मध्य भाग जिसमें गहरी सीमांतक पालियों समेत बड़ा वर्तिकाग्र और अनेक परागकोश देखे जा सकते हैं। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजेली, 1986 से)

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

भारत में अफ़ीम या पोस्त की खेती रबी (जाड़ों की) फ़सल के रूप में होती है। इसके बीज अक्टूबर-नवंबर में बो दिए जाते हैं और पौधों से लेटेक्स आने वाले मार्च-अप्रैल में निकाला जाता है। पौधे सुजलनिकाल बलुई दुमट मिट्टी में अच्छे उगते हैं। इसके पौधे अत्यधिक शीत सहन नहीं कर सकते हैं। प्रवर्धन बीजों से होता है। पोस्त की खेती के लिए सुअपवाहित उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी चाहिए। पुष्पन 90–115 दिनों के बाद आरंभ होता है। पुष्पन के चार दिन के पश्चात् पंखुड़ियां गिर जाती हैं और कैप्सूल का विकास शुरू हो जाता है। कैप्सूल जब हरे रंग से पीला हो जाता है तो दोपहर में एक विशेष औज़ार की सहायता से कैप्सूलों में उसकी तली से ऊपर की ओर चीरे लगाए जाते हैं। इसके बाद अगली सुबह लैटेक्स (अफ़ीम) इकट्ठा कर ली जाती है।

कैप्सूल से प्राप्त होने वाली अफ़ीम (लैटेक्स) डेक्स्ट्रोज (dextrose), पेक्टिन (pectin), मोम (wax), वर्णकों (pigments), वाष्पशील तेल (volatile oil), ट्राइटर्पिनॉइडों (triterpenoids) और ऐल्कैलॉइडों (शुष्क भार का 20–30 प्रतिशत) का काम्प्लेक्स मिश्रण है जो मेकोनिक, लैक्टिक, साइट्रिक, सक्सीनिक, सलफ्यूरिक और फ़ोस्फोरिक अम्लों समेत अनेक अम्लों से व्युत्पन्न होने वाले लवणों के रूप में पाए जाते हैं।

मॉरफ़ीन की पूर्ण संरचना 1952 में स्पष्ट हुई थी हालांकि इसका पहला शुद्ध विरचन 1803 में जर्मन फार्मासिस्ट एफ. डब्लू. सर्टुनर ने कर लिया था जो तब सिर्फ 20 वर्ष के थे।

कच्ची या अपरिष्कृत अफ़ीम में लगभग 40 ऐल्कैलॉइड होते हैं। इनमें से कुछ व्यावसायिक और औषधीय दृष्टि से महत्वपूर्ण (शुष्क भार में अफ़ीम के प्रतिशत के अनुसार) ऐल्कैलॉइड इस प्रकार हैं :

i) मॉरफ़ीन यानि morphine (9 – 4 प्रतिशत, इसका नाम स्वप्नों के देवता मॉर्फियस के नाम पर पड़ा है)

ii) कोडीन यानि codeine (2 से 3 प्रतिशत)

iii) थिबेन यानि thebaine (5 से 7 प्रतिशत)

iv) नार्कोटीन यानि narcotine (नोस्कोपिन, 5–8 प्रतिशत)

v) पैपावरीन यानि papaverine (1 प्रतिशत)

पोस्त के बीजों में स्वापक (narcotic) घटक नहीं होते।

बॉक्स 19.6 : मॉरफ़ीन और उसके व्युत्पन्न

> एक ऐसे अव्यवसनकारी दर्द-नाशक दवा के विकास के प्रयास में कि जिससे रोगी को नशे की लत न पड़े, वैज्ञानिकों को पता चला कि मॉरफ़ीन को दो ऐसिटिल समूहों के योजन से रासायनिक दृष्टि से बदला जा सकता है। इसका अंतिम उत्पाद एक अर्ध-कृत्रिम यौगिक निकला जिसका नाम हिरोइन (heroin) पड़ा। यह मॉरफ़ीन से भी अधिक शक्तिशाली ऐनल्जैसिक (analgesic) है। मगर यह शरीर को व्यसनी (addictive) बना देता है और अगर इसकी आदत पड़ जाए तो यह जबर्दस्त अपनयन लक्षण (withdrawal symptoms) पैदा करता है। हिरोइन के आदि लोगों की मृत्यु का मुख्य कारण इसका सेवन अधिक मात्रा में (ओवरडोज़) करना है।

उपयोग

1) मॉरफ़ीन एक शक्तिशाली ऐनल्जैसिक और स्वापक है, जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को भी उद्वेलित करता है।

2) कोडीन भी एक महत्वपूर्ण ऐनल्जैसिक और कासहारी (anticough) कर्मक है, जो मॉर्फ़ीन की तुलना में कम शामक (सीडेटिव) और कम विषैला है।

3) थीबेन एक व्याक्षोभकारी (convulsant) विष है जिससे शरीर में रुक रुक कर तेज़ झटके आने लगते हैं। इसे सिर्फ कोडीन या फिर अर्ध कृत्रिम ऐनल्जैसिक और स्वापक विरोधी दवाओं, जैसे नैलोर्फिन (nalorphine) और एटोर्फिन (etorphine) के विनिर्माण में कच्चे माल के बतौर प्रयोग किया जाता है। स्वापक-विरोधी दवाइयां असल में स्वापकों के प्रभाव को निष्क्रिय कर देती हैं।

4) नार्कोटिन एक मंद एंटीटसिव (antitussive) है और प्राय: खांसी की दवाइयां बनाने में प्रयोग होता है।

5) पैपावरिन एक पेशी विश्रांतक (smooth muscle relaxant) और प्रमस्तिष्कीय वाहिकाविस्फारक (cerebral vasodilator) है। इसे दमे और एंजाइना पेक्टोरिस (angina pactoris) जैसे रोगों में प्रयोग किया जाता है।

6) पोस्त के बीज बड़े पौष्टिक होते हैं और उनमें दृढ़फल जैसी सुखकर सुवास होती है। इन्हें अक्सर डबल रोटियों और केक के ऊपर छिड़का जाता है। इसके बीज वसायुक्त तेल का स्रोत भी हैं जिसे हम खसखस का तेल (poppy oil) कहते हैं, जो मिठाई इत्यादि को बनाने में काम आता है।

19.2.9 नक्स-वोमिका (Nux-Vomica)

वानस्पतिक नाम : स्ट्राइक्नॉस नक्स-वोमिका (*Strychnos nux-vomica*)

कुल : लोगेनिएसी (स्ट्राक्नेसी)

प्रचलित नाम : डॉगबटन, स्ट्राइक्निन वृक्ष, कुचला

n = 12

उत्पत्ति

दक्षिण एशिया और ऑस्ट्रेलिया, इसकी दूसरी प्रजाति स्ट्रा. इग्नैटाइ (*S.ignatii*) फिलिपीन मूल की है।

वितरण

भारत, श्रीलंका, मलेशिया, चीन और आस्ट्रेलिया। इसके वृक्ष समूचे उष्णकटिबंधी भारत में पाए जाते हैं। व्यावसायिक उद्देश्य के लिए आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल से बीज का संग्रहण किया जाता है।

आकारिकी

यह एक मध्यम आकार का सदाबहार पेड़ है, जिसकी ऊंचाई 12 मीटर या अधिक होती है। तना अक्सर घुमावदार और कंटकी होता है (चित्र 19.9a)। पत्तियां बड़ी (9 से.मी. लंबी), सम्मुखी, सरल और अंडाकार होती हैं। हरे सफेद पुष्पों के छोटे और अबद्ध गुच्छे शाखाओं के अंत में अंतस्थ ससीमाक्षों में उत्पन्न होते हैं। फल एक बड़ी संतरी-लाल रंग की बेरी (सरस फल) है जो 3.5 से.मी. चौड़ी होती है और रंग-रूप में चीनी संतरे की तरह दिखाई देती है। प्रत्येक फल में 3-5 बीज होते हैं जो धूसरी, कठोर, चपटे और बटन-नुमा होते हैं (चित्र 19.9b)। बीजों में रेशमी सफेद चमक अनेक रोमों के एक दूसरे के पास-पास लग्न होने के कारण होती है।

रासायनिक संघटन

बीजों में दो शक्तिशाली ऐल्कैलॉइड स्ट्राइक्निन यानि strychnine, और ब्रूसिन यानि brucine (1.5 – 3.5 प्रतिशत) पाए जाते हैं स्ट्राइक्निन बेहद कड़ुवा होता है और 400,000 भाग जल वाले घोल को तनु करने पर भी यह कड़ुवा लगता है। पुरानी जड़ों, काष्ठ, छाल, पत्तियों, फूलों और फल के गूदे में भी अलग-अलग मात्रा में ऐल्कैलॉइड पाए जाते हैं।

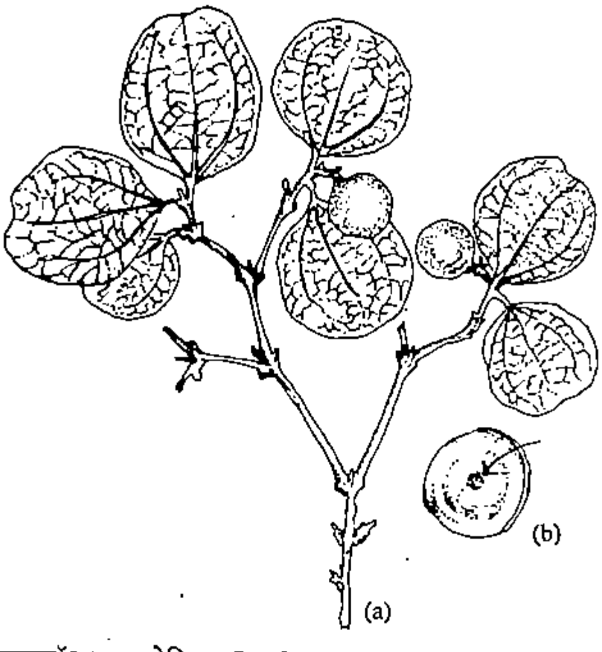

चित्र 19.9 : स्ट्राइक्नॉस नक्स-वोमिका (*Strychnos nux-vomica*) । a) फल युक्त एक टहनी। b) एक आवर्धित बीज जो एक सुस्पष्ट नाभिका (हाइलम) दिखा रहा है। (कोचर 1998 से)।

उपयोग

1) स्ट्राइक्निन एक उद्दीपन (stimulant) है जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है यानि यह दृष्टि, गंध, स्पर्श और श्रवण की संवेदन क्षमता में वृद्धि करता है। इसके अलावा यह एक ऐसा कर्मक या एजेंट है जो शरीर में अनियंत्रित फिट या मरोड़ पैदा करता है। इस तरह से यह उद्दीपक और व्याक्षोभी दोनों है। इसकी क्रिया स्वत: स्फूर्त हो सकती है। आज के आधुनिक युग में स्ट्राइक्निन का प्रयोग नियंत्रित खुराक में मांस पेशियों की सक्रियता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। यह एल्कोहल (शराब) और अवनमक दवाओं (डिप्रेसैंट ड्रग) के विषैले प्रभाव को दूर करने वाला प्रतिविष (antidote यानि एंटीडोट) है।

2) चूंकि यह आंतीय परिचलन को प्रेरित करता है (यानि इसके सेवन से पेट की आंते चलने लगती हैं) इसलिए चिकित्सक विकट कब्ज के उपचार में इसको काम में लाते हैं।

15वीं शताब्दी में, यूरोप में, स्ट्राइक्नॉस के बीजों का प्रयोग विभिन्न रोडेंटों को मारने के लिए किया जाता था। यह बीज़ मुख्यत: भारत से निर्यात किए जाते थे।

3) व्यावसायिक स्तर पर स्ट्राइक्निन से गोलियां बनाई जाती हैं जिन्हें चूहों, छुछुंदरों को मारने के लिए ज़हर के रूप में काम लाया जाता है।

4) फल का गूदा जहरीला नहीं होता और इसे पक्षी, पशु और बंदर खाते हैं।

19.2.10 अरगॉट (Ergot)

वानस्पतिक नाम : *क्लैविसेप्स परप्यूरिया* (*Claviceps purpurea*)

कुल : एस्कोमाइसिटीज (कवक)

प्रचलित नाम : अरगॉट

अनाज और तृणों, मुख्यत: राइ (*सीकेल सीरिएल*) के अरगॉटीकृत बीजों से इस कवक के बैंजनी स्क्लेरोशियम (फलन पिंड) को एकत्र करके उससे दवा बनाई जाती है।

आकारिकी

अरगॉट की कृत्रिम खेती सबसे पहले 1940 में स्विट्जरलैंड में की गई थी। भारत में नीलगिरि की पहाड़ियों में राई की फसल पर अरगॉट उगाया जाता है।

क्लैवीसेप्स परप्यूरिया एक बीजाणुधारी कवक है, जिसमें प्रसुप्तावस्था एक कठोर गदाकार फलन पिंड या स्क्लेरोशियम है (चित्र 19.10)। यह कवक विभिन्न प्रकार के तृणों (घासों) से पोषण प्राप्त करता है। अरगॉट पिंड, संक्रमित पादपों के दानों की गुठलियों की जगह ले लेते हैं। स्क्लेरोशियम एक गहरी भूरी नील-लोहित काली, भंगुर केला-नुमा संरचना है। यह आभासी मृदूतकी माइसीलियाई पिंड है जो तैल गोलिकाओं से भरपूर होता है (चित्र 19.10)।

रासायनिक संघटन

अरगॉट में नाना प्रकार के ऐंल्कैलॉइड पाए जाते हैं जिनमें कुछ विषाक्त हैं तो शेष औषधीय महत्व के हैं। अरगॉट कवक से प्राप्त होने वाले कुछ महत्वपूर्ण ऐल्कैलाइड एर्गोटॉक्सिन(ergotoxine), एर्गोटैमिन (ergotamine) और एर्गोनोविन (ergonovine) हैं। इस कवक से बनाई जाने वाली दवा लाइसर्जिक एसिड डाइएथिलैमाइड (एल एस डी) को सबसे भयंकर व्यसनकारी ड्रग (drug) के रूप में जाना जाता है। ऐसा समझा जाता है कि यह गुणसूत्रीय विपथन भी पैदा करता है। अरगॉट में स्क्लेरेरिथ्रिन यानि sclereythrine (यह एक लाल या बैंगनी वर्णक है), अर्गोस्टेरॉल (ergosterol), क्लैवीसेप्सिन (clavicepsin), अर्गोक्राइसिन (ergochrysin), एर्गोफ्लेविन (ergoflavin), अकार्बनिक लवण (inorganic salts) तथा अनेक क्षारक और अमीनो अम्ल भी पाए जाते हैं। अरगॉट ऐल्कैलाइड और संबंधी यौगिक विषाक्त होते हैं और ये तरह-तरह के प्रभाव उत्पन्न करने में सक्षम रहते हैं, जिसमें विभ्रम (hallucinations) जैसा प्रभाव भी शामिल है। यह अर्गोट रोग (ergotism यानि अरगॉटिज्म) भी पैदा करता है। जब राई की फसल काटी, तथा पीसी जाती है तो स्क्लेरोशिया भी साथ ही पिस जाते हैं।

एल.एस.डी सिरैटोनिन से संबद्ध है, जो मस्तिष्क में पाया जाने वाला पदार्थ है।

उपयोग

1) *क्लैविसेप्सस परप्यूरिया* स्क्लेरोशिया उत्पन्न करता है जिसमें रक्त स्राव को रोकने वाले ऐल्कैलॉइड मौजूद होते हैं। इन अभिकर्मकों का प्रयोग शिशु जनन या प्रसव के पश्चात् रक्तस्राव को रोकने के लिए किया जाता है।

2) इसे रक्तचाप को बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

3) इसे मनोविकार चिकित्सा में प्रयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

निम्न कथनों में सही या गलत बताइए।

i) एस्पिरिन का आदिप्ररूप (प्रोटोटाइप) विलो के वृक्ष की छाल से उत्पन्न किया गया था।

ii) एल्कैलॉइड और स्टेरॉइड औषधि में प्रयुक्त होने वाले दो प्रमुख पादप-व्युत्पन्न यौगिक हैं।

iii) रिसर्पिन एल्कैलॉइड का मुख्य स्रोत *क्लैवीसेप्स परप्यूरिया* है।

iv) इंडियन एकोनाइट पौधे के कंदों से दवा निकालने के लिए पौधों में पुष्पन आरंभ होने पर, कंदो को ज़मीन से खोद कर निकाला जाता है।

v) कुनैन का मुख्य स्रोत *सिनकोना* पेड़ की जड़ों की छाल है।

vi) यैम के कंद प्रोटीन से भरपूर और विटामिन-सी के महत्वपूर्ण स्रोत भी हैं।

vii) बेलाडोना पौधे में पुष्पन काल के दौरान ऐलकैलॉइड की सांद्रता अधिकतम होती है।

viii) हृदय विकारों के उपचार में प्रयुक्त होने वाले डिजिटैलिन नामक ग्लाइकोसाइड *डिजिटैलिस परप्यूरिया* के बीजों से निकाला जाता है।

ix) कैंसर के उपचार में विश्वभर में प्रयोग की जाने वाली विनक्रिस्टिन और विनब्लैस्टिन नामक दो दवाएं यैम की पत्तियों से निकाली जाती हैं।

x) हमारे देश में पोश्त की खेती ख़रीफ़ की फसल के रूप में की जाती है।

xi) कच्ची अफ़ीम में सबसे विपुल मात्रा में पाया जाने वाला ऐल्कैलॉइड पैपावरिन है।

xii) स्ट्राइक्निन का मुख्य स्रोत *स्ट्राइक्नॉस नक्स-वोमिका* के बीज हैं।

xiii) डायोस्जेनिन, उद्दीपक और व्याक्षोभक - दोनों का काम करता है।

xiv) अर्गट रोग का संबंध *क्लैविसेप्स परप्यूरिया* के फलों से है।

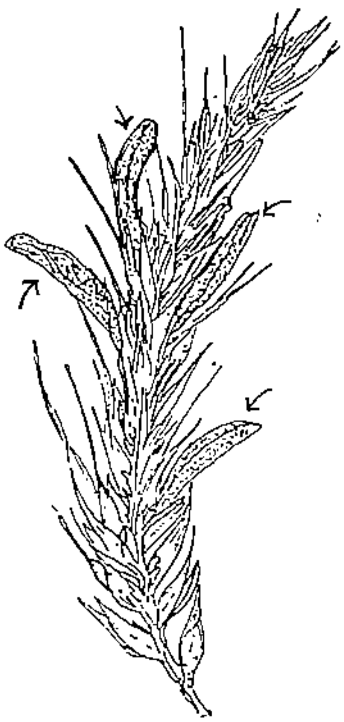

चित्र 19.10 : राई घास (*सीकेल सीरिएल यानि Secale cereale*) का एक पुष्पक्रम जो अरगोट (*क्लैविसेप्स परप्यूरिया यानि Claviceps purpurea*) के चार पक्व फलन पिंडों (स्क्लेरोशिया) धारण किए है (चित्र कोचर, 1981 से)।

19.3 धूमकीय और चर्वणी सामग्री उत्पादक पादप

आनंद लेने या शरीर की प्रकार्यात्मक सक्रियता को बढ़ाने या भ्रम पैदा करने के लिए कुछ धूमकीय और चर्वणीय सामग्रियों (fumitory and masticatory materials) का प्रयोग धूम्रपान करके या उन्हें चबा कर किया जाता है। इन पदार्थों में केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को उत्तेजित या उसकी सक्रियता को कम करने वाले तत्व विद्यमान रहते हैं। उद्दीपक (उत्तेजक) ऐसे रासायनिक कर्मक या औषधियां हैं जो किसी जीव में या उसके किसी अंग में जैव-ऊर्जा (vital energy) में एकाएक द्रुत वृद्धि करते हैं। यह वृद्धि क्षणिक होती है। उद्दीपक पदार्थों की श्रेणी में हम कैफ़ीन के पेयों (जैसे काफी, चाय), तंबाकू (tobacco), पान (betel) और कोका (coca) को शामिल कर सकते हैं। इनमें से तंबाकू का प्रयोग हानिकारक है और इससे सांस-संबंधी रोग होते हैं।

व्याक्षोभक (depressants) ऐसे रासायनिक कर्मक हैं जो जीव की प्रकार्यात्मक सक्रियता को कम करते हैं यानि ये शरीर पर प्रशामक प्रभाव (soothing effect) डालते हैं (इसलिए इन्हें शामक या सीडेटिव यानि sedative कहते हैं)। जिन दवाओं की लत पड़ जाती हो या जिन्हें अवैध तरीके से सेवन किया जाता है उन्हें स्वापक (narcotic) या नशीली दवाओं की संज्ञा दी जाती है। मगर यह एक रोचक बात है कि कुछ स्वापक पदार्थों, जैसे अफ़ीम को, बेहद कम मात्रा में वैध दवाओं के रूप में व्यग्रता (anxiety) और दर्द को दूर करने के लिए प्रयोग किया जाता है। नींद लाने के लिए भी इनका सेवन किया जाता है। वास्तविक स्वापक पदार्थों (true narcotics) को तीन मुख्य श्रेणियों में रखा गया है :

क) सम्मोहक (hypnotics),

ख) शामक (sedatives), और

ग) भ्रांतिजनक (hallucinogens)

क) सम्मोहक दवाइयां नींद लाती हैं या नींद जैसी स्थिति पैदा करती हैं जैसे कैवाकावा, पाइपर *मेथिस्टिकम* यानि *Piper methysticum* (पाइपरेसी) जो फिजि और अन्य प्रशांत महासागरीय द्वीपों के मूल के हैं।

ख) शामक ऐसी दवाइयां हैं जो उत्तेजना, क्रोध और दर्द को कम करती हैं। ये प्रशामक या निद्राजनक प्रभाव उत्पन्न करती हैं, जैसे कोकीन (cocaine) और अफ़ीम (opium)।

ग) भ्रांतिजनक दवाइयां चेतना की अवस्था को ही बदल डालती हैं। यानि ये दवाइयां अवबोधन (समय, दिक्स्थान या आत्म बोध), मूड, और विचार को ही बदल डालती हैं। दूसरी तरह से कहें तो ये दवाइयां भ्रम पैदा करती हैं जिसमें बाहरी विश्व का प्रत्यक्ष बोध कुछ ऐसा होता है कि जो यथार्थ में विद्यमान ही नहीं होता ।

इन अलग-अलग स्वापक पदार्थों की श्रेणियों से कभी-कभी बड़ा भ्रम पैदा हो जाता है क्यों इनमें से कई दवाइयां तरह-तरह के संयोजन (combination of ways) में काम करती हैं। उदाहरण के लिए नार्कोटिक एनल्जेसिक जैसी अनेक तथाकथित व्याक्षोभक दवाइयां और सोलेनेसी मूल के ऐल्कैलॉइड भी भ्रांतिजनक दवाइयों का काम कर सकते हैं। पर्याप्त मात्रा में लेने पर निकोटिन (nicotine) और कोकीन (cocaine) जैसे उद्दीपन भी विभ्रम की अवस्था उत्पन्न करते हैं।

इकाई के इस भाग में हम तीन पादपों (1) *कैनाबिस सैटाइवा* (*Cannabis sativa*),(2) *निकोटिआना टैबकम* यानि *Nicotiana tabacum* (जिससे धूमकीय पदार्थ तैयार किए जाते हैं), और (3) *ऐरेका कटेचू* यानि *Areca catechu* (जिससे चर्वणीय पदार्थ बनाए जाते हैं) पर चर्चा करेंगे।

19.3.1 भांग (Indian Hemp)

वानस्पतिक नाम : *कैनाबिस सैटाइवा* (***Cannabis sativa***)

कुल : कैनाबिनेसी

प्रचलित नाम : गांजा, भांग, चरस

n = 10

उत्पत्ति

यह पश्चिमी और मध्य एशिया मूल का पौधा है।

वितरण

कैनाबिस विश्व के समूचे शीतोष्ण और उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में उगता है। भारत में इसकी खेती बंगाल, कर्नाटक और तमिलनाडु में कुछ लाइसेंसधारी किसान करते हैं।

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

यह पौधा (19.11) बंजर या परती भूमि पर खरपतवार के रूप में उगता है। इसकी खेती उपजाऊ, सुअपवाह (जल-निकास) मृदा में सबसे उत्तम होती है। यह अत्यधिक आहार लेने वाली और मृदा क्षयकारी फ़सल है। इससे दवा और तेल का उत्पादन करने के लिए, फ़सल के रूप में इसके पौधों को काफी दूर-दूर लगाया जाता है। निषेचन रोकने और मादा पुष्पन को बढ़ाने के लिए नर पौधों को उखाड़ कर अलग कर दिया जाता है। उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले प्रदेशों में उगने वाला मारीजुआना, ठंडे शीतोष्ण देशों के मारीजुआना से अधिक शक्तिशाली होता है क्योंकि इन देशों की जलवायु में यह पौधे बहुत कम मात्रा में रेज़िन उत्पन्न कर पाते हैं। यह रेज़िन संवेदनशील पादपांगों की जलशुष्कन से रक्षा करता है या

उन्हें सूखने (desiccation) से बचाता है इसलिए गर्म जलवायु में जब पौधे गर्मी और सूर्य के प्रभावन में आते हैं तो उनसे रेज़िन अधिकाधिक मात्रा में निकलता है।

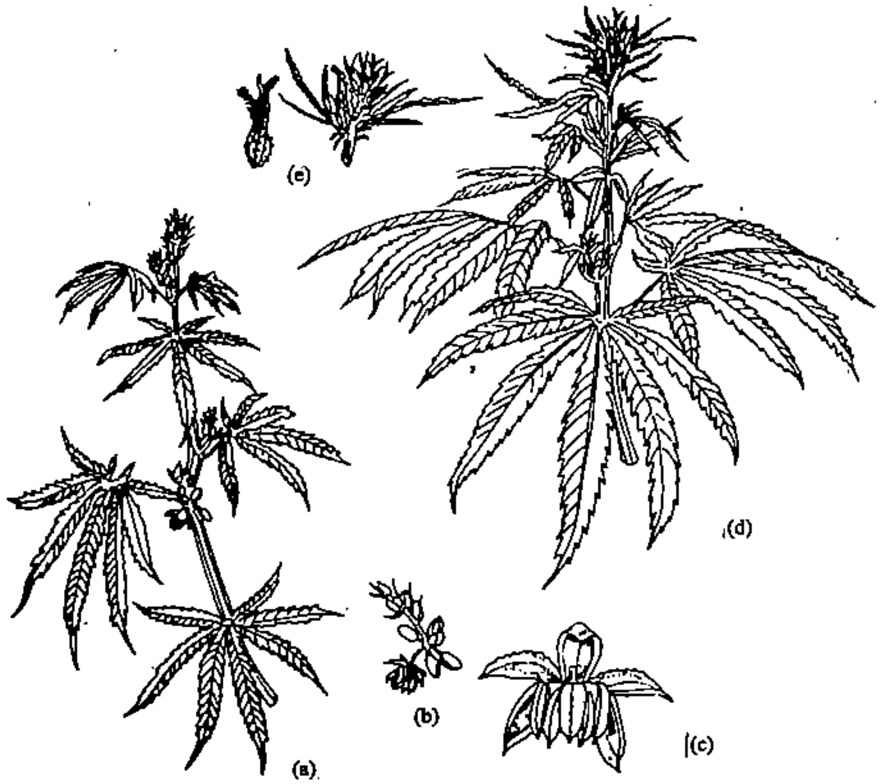

चित्र 19.11 : *कैनाबिस सैटाइवा (Cannabis sativa)*। a) एक नर टहनी। a,c) आवर्धित दृश्य में नर पुष्प। d) एक मादा टहनी। e) आवर्धित दृश्य में एक मादा पुष्प। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से)।

आकारिकी

इसका पौधा एक लंबा (1.2–4.5 मीटर ऊंचा), मजबूत वार्षिक, एकलिंगाश्रयी शाक है। इसमें हस्ताकार में विभाजित पत्तियां उगती हैं। नर पुष्पक्रम एक दीर्घ, लटकासा (drooping), कक्षीय और अंतस्थ पुष्पगुच्छ है जो कुछ पत्तियां लिए रहता है। मादा पुष्प लघु कक्षीय पर्णिल (पत्तीदार) कर्णिशों (स्पाइक) के रूप में होता है। सभी पादपांग ग्रंथिल रोमों से ढके रहते हैं जो तरुण पर्णसमूह विशेषकर मादा पुष्पक्रम को घेरे रहने वाले सहपत्रों पर अधिक प्रचुरता में होते हैं। स्वापक तत्त्व ग्रंथिल रोमों से उत्पन्न होने वाले रेज़िन में ही मुख्यतः सांद्रित रहते हैं। फल ऐकीन होता है।

कैनाबिस के पौधे से तीन प्रकार के स्वापक प्राप्त किए जाते हैं :

1) भांग यानि bhang (मारीजुआना) में कृष्ट और वन्य स्थितियों में नर तथा मादा - दोनों पादपों की सूखी पत्तियां, तने और पुष्पन प्ररोह शामिल हैं। इनमें रेज़िन की मात्रा कम रहती है इसलिए ये गांजा और चरस से कम शक्तिशाली या कम नशीले होते हैं।

   क) इसे पेयों में प्रयोग किया जाता है।

   ख) इसके सूखे मिश्रण को अक्सर तंबाकू के साथ मिला कर पीया जाता है।

   ग) इसे मीठे व्यंजनों में भी प्रयोग किया जाता है।

2) गांजा यानि ganja (मजून) प्रायः इसकी विशेष कृषोपजातियों के सूखे अनिषेचित मादा पुष्पक्रम को कहते हैं, जिनसे रेज़िन निकाला नहीं गया हो यानि यह अपेक्षतया शुद्ध रेज़िन युक्त होता है।

   क) इसका प्रयोग चिकित्सा में शामक (sedative) और संमोहक (hypnotic) के रूप में होता है।

   ख) इसे पेयों में प्रयोग किया जाता है।

   ग) इसे धूम्रपान के लिए भी प्रयोग किया जाता है।

भांग की अपेक्षा इसमे रेज़िन की मात्रा अधिक पाई जाती है।

3) चरस यानि charas (हशीश) मादा पादपों की पत्तियों और अनिषेचित पुष्पक्रम से निकाला जाने वाला गाढ़ा, शुद्ध, चिपचिपा, पीला सा नि:स्राव है। इनसे कच्चा रेज़िनी स्राव इकट्ठा करने के लिए पौधों के ऊपरी भागों को हाथ से रगड़ा या किलाटी के कपड़े से रगड़ा या हल्के से पौधों पर मारा जाता है। इसके बाद चिपचिपे रेज़िन को कपड़े पर से रगड़कर उतार लिया जाता है। ताज़ा चरस गहरे हरे रंग का विस्कासी (viscous) पदार्थ है। भंडारण करने पर यह भुरभुरा और गहरा भूरा हो जाता है। इसकी स्वापक शक्ति (narcotic power) हवा के प्रभावन में क्षीण पड़ने लग जाती है और धीरे-धीरे लुप्त हो जाती है। इसमें रेज़िन की मात्रा उष्ण (35–45 प्रतिशत) होने के कारण यह भांग से अधिक नशीला होता है।

रासायनिक संघटन

रेज़िन नि:स्राव में एक सक्रिय भ्रांतिजनक यौगिक Δ-ट्रांसटेट्राहाइड्रोकैनाबिनॉल यानि Δ-transtetrahydrocannabinol (THC) उच्चतम मात्रा में विद्यमान रहता है। इसके रेज़िन से कई अन्य तरह के रासायनिक यौगिक भी पृथक किए गए हैं :

क) कैनाबिडायोलिक एसिड यानि Cannabidiolic acid (यह एक प्रतिजैविकीय कर्मक यानि antibacterial agent और शामक दवा है)

ख) टेट्राहाइड्रो-कैनाबिनोल-कार्बोक्सिलिक एसिड यानि Tetrahydro-cannabinol-carboxylic acid

ग) कैनाबिक्रोमीन यानि Cannabichromene (उल्लासोन्मादात्मक यानि euphoric)

उपयोग

1) इसका सक्रिय मूल घटक (THC) ग्लॉकोमा (glaucoma) या सबलबाय नामक नेत्र रोगियों की आंखों पर पड़ने वाले दबाव को कम करने में प्रभावी है।

2) ड्रग यौगिक का सेवन विकिरण (radiation) या रसोपचार (chemotherapy) कराने वाले कैंसर रोगियों को होने वाली मतली को कम करता है।

3) टी.एच.सी (THC) श्वसनी वाहिकाओं (bronchial vessels) को विस्फारित करता है या उन्हें फैलाने का काम करता है, इसलिए यह दमें (asthma) के रोगियों को राहत पहुंचता है।

4) दवा का अति उपयोग कई मनोवैज्ञानिक (psychological) और कार्यिकीय (physiological) समस्याओं से जुड़ा है।

5) एक नवीनतम अध्ययन के अनुसार मारीजुआना का सेवन अन्य वैध (legal), और इससे अधिक पैमाने पर उपयोग किए जाने वाले मादक द्रव्यों, एल्कोहल (शराब) और तंबाकू से अधिक सुरक्षित है।

6) इसके रेशे से रस्सी, सुतली और मोटा कपड़ा बनाया जाता है।

7) इसके बीज को अनेक व्यावसायिक चुग्गों (commerical birdseeds) में मिलाया जाता है।

8) चित्रकार और रंगसाज (पेंटर) रंगों को मिलाने के लिए और वार्निश (varnish) के रूप मे भांग के बीज का तेल (hempseed oil) प्रयोग करते हैं।

19.3.2 तंबाकू (Tobacco)

वानस्पतिक नाम : *निकोटिआना* जाति (*Nicotina* sp.)

कुल : सोलैनेसी

प्रचलित नाम : तंबाकू

n = 9, 10, 12 16

उत्पत्ति

नि. टैबैकम दक्षिण अमेरिका (मेक्सिको और वेस्ट इंडीज में *नि. सिलवेस्ट्रिस* और *नि. ऑटोफोरा* में प्राकृतिक संकरण से हुई (इस बंध्य संकर में गुणसूत्र द्विगुणन होने पर उससे *नि. टैबकम* उत्पन्न हुआ)। *नि. रस्टिका* मेक्सिको और टेक्सास मूल का है। इस जाति की उत्पत्ति *नि. अनडुलेटा* और *नि. पैनीकुलेटा* नामक दो वन्य प्रजातियों के बीच प्राकृतिक संकरण के फलस्वरूप हुई, जिसमें गुणसूत्र द्विगुणन के फ़लस्वरूप *नि. रस्टिका* की उत्पत्ति हुई।

वितरण

नि. टैबकम (चित्र 19.12) को पैदा करने वाले देश संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, तुर्की, यूनान, इटली, जिंबाब्वे, मालावी, चीन, भारत, जापान, पाकिस्तान और इंडोनेशिया हैं। *नि.रस्टिका* की खेती थोड़ी बहुत तुर्की, रूस, भारत और कुछ यूरोपीय देशों में भी होती है। भारत में इसे आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में उगाया जाता है।

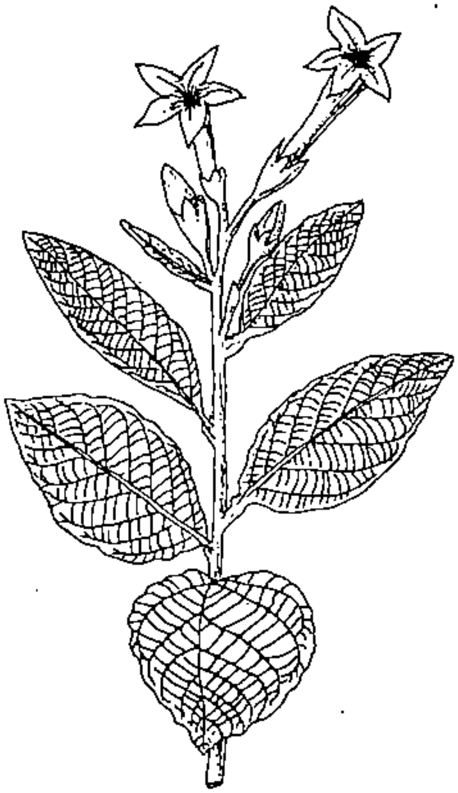

चित्र 19.12 : *निकोटिआना टैबकम*। पुष्पन करती टहनी। (जौहरी और श्रीवास्तव, 1978 से पुनःचित्रित)

बॉक्स 19.7 : तंबाकू के उपयोग का इतिहास

सन् 1942 में कोलंबस के वेस्ट इंडीज में पांव रखने से कोई हज़ार वर्ष पहले से ही नई दुनिया के स्थानीय लोग तंबाकू का सेवन तरह-तरह से कर रहे थे, जैसे वे इसका धूम्रपान करते थे, चबाकर खाते थे और इससे सूंघनी का काम लेते थे। लिनीयस ने इस जिनस का नाम फ्रांस के पुर्तगाल राजदूत जीन निकोट के नाम पर रखा जिसने पेरिस में इस पौधे का आयात करके इसके सेवन को लोकप्रिय बनाकर खूब धन कमाया। उधर अंग्रेजों ने राष्ट्रीय आपूर्ति को सुनिश्चित करने के लिए अपने उपनिवेशों में तंबाकू की खेती को बढ़ावा दिया। वर्जिनिया (अमेरिका) के लोगों ने तंबाकू की खेती 1612 में इसलिए शुरू की क्योंकि एक एकड़ की जमीन में तंबाकू उगाने से मकई की एक एकड़ की खेती से चार गुना अधिक आमदनी होती थी।

पारिस्थितिकी

यह गर्म जलवायु में तेज़ी से उगता है। रोपण से फसल कटाई तक इसे 90–20 दिन का तुषार-मुक्त काल की आवश्यकता पड़ती है। वर्धन-काल के लिए इष्टतम माध्य तापमान 70–80°फा. है। इसके लिए तीव्र प्रकाश जरूरी है। वर्धन-काल के दौरान न्यूनतम 10 मि.मी. वर्षा आवश्यक है मगर 20 मि.मी. की वर्षा में यह अच्छा उगता है। इसकी फसल के पकने और उसकी कटाई के लिए शुष्क मौसम चाहिए।

निकोटिआना मृदा में होने वाले छोटे से छोटे परिवर्तन के प्रति अति संवेदनशील होता है। यही उत्पादित पत्ती की किस्म और उसके अनुसार उसके उपयोग को निर्धारित करता है। भिन्न मृदा प्रकार इसके सुवास सुगंध पर बड़ा प्रभाव डालते हैं।

प्रवर्धन

व्यावसायिक तंबाकू हमेशा बीज से उगाया जाता है।

आकारिकी

निकोटिआना की अनेक जातियों में से सिर्फ दो जातियां ही तंबाकू का मुख्य स्रोत हैं। ये हैं : *नि. टैबकम* और *नि. रस्टिका* (चित्र 19.13 देखें)। विश्व में जितने क्षेत्रफल में तंबाकू की खेती होती है उसके 90 प्रतिशत भाग में सिर्फ *नि. टैबकम* ही उगाया जाता है। तालिका 19.3 में इन दोनों जातियों में पाई जाने वाली मुख्य भिन्नताएं दी जा रही है।

तालिका 19.3 : *निकोटिआना टैबकम* और *नि. रस्टिका* में अंतर

नि. टैबकम	*नि.रस्टिका*
• यह एक मजबूत चिपचिपा वार्षिक शाक है जो 1.2 से 2.7 मीटर ऊंचा होता है।	• पौधा छोटा होता है जिसकी ऊंचाई 0.6 से 1.2 मीटर तक होती है।
• इसमें पार्श्व-शाखाएं विकसित होती हैं। जिसके कारण इसकी बनावट झाड़ीनुमा नहीं होती।	• यह अपेक्षतया कठोर जलवायु में उगता है, इसमें प्राय: अंत:भूस्तारी (पार्श्व शाखाएं) विकसित होती हैं।
• इसमें पत्तियां एकांतरी, अंडाकार या आयतरूपी भालाकार और विशाल (60 से.मी. लंबी और 25 से.मी. चौड़ी) होती हैं।	• पत्तियां एकांतरी, अंडाकार, छोटी मगर मोटी होती हैं, जिनकी सतह असमतल (झुर्रीदार) होती है।
• पत्तियां स्थानबद्ध (स्थावर) समालग्नी पर्णाधार युक्त होती हैं, पत्तियों की सतह पर ग्रंथिल रोम विद्यमान रहते हैं। जो गोंद और तेल का स्राव करते हैं।	• पत्तियां वृंतीय, पर्णवृंत पंखहीन होती हैं। ये *नि. टैबकम* की पत्तियों की भांति ही गोंद और तेलों का स्राव करती हैं।
• अंतस्थ पुष्पगुच्छ में पुष्प गुलाबी-किमिजी रंग या सफेद रंग के होते हैं।	• पुष्पगुच्छ में लगे पुष्प हल्के पीले रंग से हरे रंग के होते हैं।
• फल द्वि- और कभी-कभी चतुष-फलांशकीय, अंडाकार (1.5 – 2 से.मी. लंबा) कैप्सूल होता है, जो बाह्यदल-पुंज से लगभग पूरा ढका रहता है। इसमें अनेक बहुत छोटे अंडाकार से वृत्ताकार बीज विद्यमान रहते हैं जिनमें जालिकारूपी चिन्ह दिखाई देते हैं।	• इनमें कैप्सूल अंडाकर (0.7 से 1.5 से.मी.लंबा) होता है, जिसमें अनेक छोटे-छोटे बीज पाए जाते हैं।

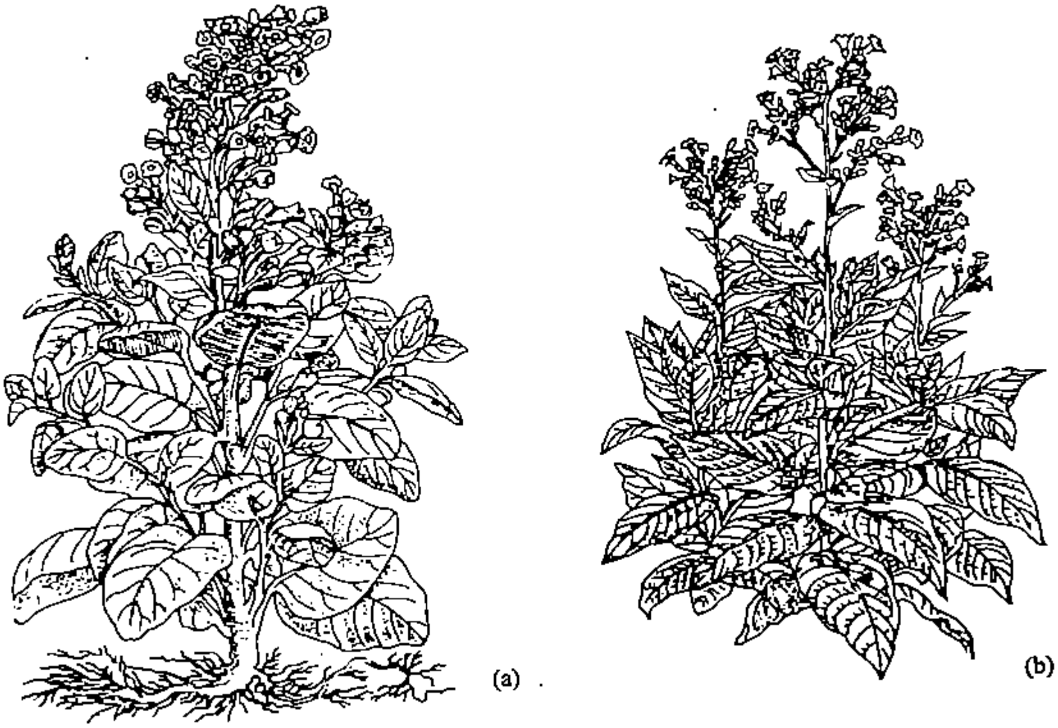

चित्र 19.13 : तंबाकू की दो जातियों की बाहरी संरचना को दिखाते बाह्य रेखाचित्र। a) *निकोरिभाना ैनकम* (*Nicotiana tabacum*) । b) *नि. रस्टिका* (*N. rustica*) । चित्र सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से।

कटाई और संसाधन

पत्तियां रोपण के 90–30 दिन बाद कटाई के लिए तैयार हो जाती हैं। तब वे हरी-पीली पड़ने लग जाती हैं और भंगुर और कड़ी होने लगती हैं। ताजा पत्तियों में 75–85 प्रतिशत नमी होती है। संसाधन के लिए पत्तों या उनके वृंतों को गुच्छों में बांध दिया जाता हैं, जिन्हें "हॉग्सहैड" (hogsheads) कहते हैं। संसाधन अनिवार्यत: आक्सीकरण या शुष्क किण्वन (dry fermentation) का प्रक्रम है। इस प्रक्रम के दौरान तंबाकू की पत्तियों में नमी की मात्रा कम होकर 80 प्रतिशत से 20 प्रतिशत रह जाती है। इस तरह के धीमे शुष्कन से वायुवीय किण्वन तो हो जाता है मगर वहीं पत्तियों पर कवक नहीं उग पाते हैं। इस प्रक्रम में स्टार्च शर्करा में परिवर्तित हो जाते हैं। कुछ प्रोटीन भी एंजाइम क्रिया द्वारा विघटित हो जाते हैं। पत्तियों का हरा रंग लुप्त हो जाता है और वे कठोर हो जाती हैं। संसाधन की मुख्य विधियां इस प्रकार हैं :

1) धूम नाल संसाधन (फ्लू क्योरिंग - flue curing)

2) वायु संसाधन (एअर क्योरिंग - air curing)

3) सौर संसाधन (सन क्योरिंग - sun curing)

4) अग्नि संसाधन (फायर क्योरिंग - fire curing)

1) धूम नाल संसाधन (फ्लू क्योरिंग)

तंबाकू के विश्व उपज का लगभग 36 प्रतिशत भाग का इस विधि से संसाधन किया जाता है और इस तंबाकू का अधिकांश हिस्सा सिगरेट निर्माण में प्रयोग होता है। धूम नाल संसाधन ईंट के बने कोठारों (brick barns) में किया जाता है जिनके भीतर तापमान और आर्द्रता को नियंत्रित रखा जाता है। इसके लिए ऊष्मा धातु की पाइपों या "फ्लू" के जरिए एक छोटी भट्टी से कोठार में पहुंचाई जाती है। इस प्रक्रम में चार से छ: दिन लग जाते हैं और इसमें तीन चरण होते हैं:

क) **पत्ती का पीतन या पीला पड़ना** : कटाई के बाद तंबाकू की पत्तियों को बांस की डंडियों पर बांधकर उन्हें कम तापमान (32–38° से.) और उच्च सापेक्ष आर्द्रता (80–85 प्रतिशत) पर

कोठार में रखा जाता है। कोठार के फर्श पर पानी का बार-बार छिड़काव किया जाता है या पाइपों पर गीले टाट रख दिए जाते हैं। इस चरण का पूरा होने में 20–40 घंटे लग जाते हैं। तब तक पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, सिर्फ उनकी मध्य-शिराएं ही कुछ-कुछ हरी रह जाती हैं। पत्तियों में विद्यमान स्टार्च शर्करा में बदल जाता है।

ख) रंग का स्थायीकरण : इस चरण में तापमान 54–60° से. तक बढ़ा दिया जाता है और वायु संचार के लिए संवातक (वेंटीलेटर) को खोलकर कम किया जाता है। इस पूरे प्रक्रम में 12–20 घंटे का समय लगता है। अब पत्तियां सूख जाती हैं और उनका चमकीला पीला रंग स्थायी हो जाता है। पत्ती की कोशिकाएं मृत हो जाती हैं। पत्ती की सिर्फ मध्यशिरा में ही कुछ नमी शेष रह जाती है।

ग) पत्ती को पूरी तरह सुखाना : तापमान को 77° से. तक बढ़ा दिया जाता है और सापेक्ष आर्द्रता को घटाकर 8 प्रतिशत कर दिया जाता है। पत्ती के पूरी तरह सूख जाने तक इस क्रिया को जारी रखा जाता है।

तंबाकू की धूम नाल संसाधित पत्तियों में अच्छी प्रत्यास्थता होती है, उनमें हल्की सुगंध होती है और उनका रंग चमकीला पीला बिना किसी दाग के होता है। वे हवा से फिर से नमी सोख लेती हैं और कोमल, गोंदी और नमनशील हो जाती हैं।

2) वायु संसाधन

विश्व में तंबाकू की कुल उपज का लगभग 20 प्रतिशत वायु संसाधित किया जाता है और मुख्यत: सिगार के निर्माण में काम आता है। यह एक धीमा प्रक्रम है और इसे सामान्य वायुमंडलीय परिस्थितियों (आर्द्रता 80 प्रतिशत) में सुसंवातित (अच्छे हवादार) कोठारों में किया जाता है। कोठार का तापमान 21–24° से० की बीच रखा जाता है और उसे अंतिम चरण में भी 43° से० से अधिक होने नहीं दिया जाता है। संसाधन कोठारों में वायु का बेहतर संचार महत्वपूर्ण है। इस प्रक्रम के दौरान फिनोलिक यौगिकों के ऑक्सीकरण के कारण पत्तियों का रंग भूरा हो जाता है। पत्तियों को छ: से आठ हफ्ते तक उत्तरोत्तर बुभुक्षित रखने से उनमें विद्यमान प्रोटीन अपघटित हो जाते हैं और निकोटीन भी लुप्त हो जाता है। वायु संसाधित तंबाकू में स्टार्च और शर्कराओं की मात्रा बहुत कम होती है।

3) सौर संसाधन

ओरिएंटल (प्राच्य) या तुर्की तंबाकू को धूप में सुखाया जाता है। यह विश्व की कुल उपज का 14 प्रतिशत है और इसे अधिकांश "बीड़ी" तथा हुक्के के तंबाकू के रूप में प्रयोग किया जाता है, इस तरह का संसाधन ऐसे इलाकों में किया जाता है जहां फसल कटाई के तत्काल बाद शुष्क अवधि और धूपदार मौसम रहता हो। यह वायु संसाधन का एक रूपांतर है, इसमें सिर्फ यही बुनियादी अंतर रहता है कि तंबाकू को छाया के बजाए सीधे धूप में संसाधित किया जाता है। इसके लिए पत्तियों को खड़ा और एक दूसरे के पास-पास टांगा जाता है। पत्तियों को शुष्कन सांचों (ड्राइंगफ्रेमों) में एक से डेढ़ महीने तक सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। पत्तियां दिन में सूखती हैं और रात के दौरान पड़ने वाली ओस से नम हो जाती हैं। इसे प्रचयनी या रैक संसाधन कहते हैं। कभी-कभी समूचे पौधों या पत्तियों की ढेरियों को कुछ दिनों तक खेतों में सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है और उन्हें समय-समय पर पलटा दिया जाता है। इसे भूमि-संसाधन (ground curing) कहते हैं।

4) अग्नि संसाधन

यह सबसे प्राचीन विधि है। यह अमेरिकी रेड इंडियनों में प्रचलित थी। वर्तमान समय में लगभग एक प्रतिशत तंबाकू को धुंए से संसाधित किया जाता है और इसे सुंघनी तंबाकू चर्वणी (चबाया जाने वाला तंबाकू जैसे खैनी, गुटखा), और बट्टी (प्लग) तंबाकू के रूप में इस्तेमाल की जाती है। संसाधन की इस विधि में तंबाकू के पूर्णतः कुम्हलाए कटे पौधों को खंबों पर टांग दिया जाता है और फिर संसाधन कोठार के फर्श पर गड्ढों में लकड़ी, कोयला या नारियल का झाड़ जलाकर उन्हें धूमित किया जाता है। आरंभिक चरणों में तापमान 38° से. रखा जाना चाहिए जिसे बाद में बढ़ाकर 52° से० किया जा सकता है। रात में आग बुझा दी जाती है, जिससे पत्तियां कोमल हो जाएं। मृदुलन और शुष्कन का यह एकांतरण तीन से चार हफ्ते की अवधि तक दोहराया जाता है। इस प्रक्रम के दौरान पत्तियों में एक विशिष्ट सुगंध आ जाती है। संसाधित पत्तियों में यह सुगंध धुंए से अवशोषित किए जाने वाले क्रियोसोट पदार्थ (जो कि काष्ठ-टार से बनने वाला तैलीय द्रव्य है) के कारण उत्पन्न होती है।

किण्वन और काल-प्रभावन

तंबाकू की संसाधित पत्तियों को बंडलों में बांधकर उन्हें किण्वन के फर्श पर (2×4 मीटर के) आयताकार चट्टों में 4 से 6 हफ्ते तक की अलग-अलग अवधि के लिए रखा जाता है। ढेरी के अंदर के तापमान को 40–60° से० के बीच रखा जाता है। इसके फलस्वरूप पत्तियों के रंग, सुगंध और उनकी दाह्यता में काफी अधिक गुणात्मक सुधार आ जाता है। इसके बाद इन तीन गुणों कि आधार पर पत्तियों को श्रेणियों में बांटा जाता है : क) आकार, ख) रंग, और ग) गठन। पत्तियों को उनके अलग-अलग ग्रेडों के अनुसार बंडलों मे बांध दिया जाता हैं जिन्हें बोलचाल की भाषा में "हैन्ड्स"(hands) कहते हैं। इसके बाद इन्हें गट्ठरों में लगाकर निर्यात के लिए भेज दिया जाता है।

तंबाकू को बड़े गोदामों में छः माह से तीन वर्ष तक की अवधि के लिए काल-प्रभावित (age) किया जाता है। इसके लिए तंबाकू की गठरियों को नम किया जाता है ताकि उनका पूर्ण किण्वन हो जाए जिसके दौरान तंबाकू में एक विशेष सुगंध उत्पन्न होती है। काल-प्रभावन के इस प्रक्रम के दौरान तंबाकू में मौजूद निकोटिन की मात्रा उत्तरोत्तर घटती जाती है। इसके साथ-साथ उसमें विद्यमान तीखापन, कसैलापन और दूसरी तरह के आपत्तिजनक गुण भी दूर हो जाते हैं। तंबाकू अब डिब्बा बंद करने और उपयोग के लिए तैयार हो जाता है। (तालिका 19.4 भी देखिए)।

रायायनिक संघटन

सूखी संसाधित पत्तियों में औसतन 10–15 प्रतिशत नमी, 85–90 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ (इसमें कार्बोहाइड्रेट, नाइट्रोजन यौगिक, कार्बनिक और अकार्बनिक अम्ल, पॉलिफिनॉल, वर्णक, तेल, ऐल्कैलॉइड, एंजाइम और कुछ कार्बनिक पदार्थ शामिल हैं)। खनिज पदार्थ 12–25 प्रतिशत विद्यमान रहते हैं। इनके अलावा उनमें ग्रंथिल रोमों द्वारा स्रावित वाष्पशील तेल और रेज़िन भी होते हैं जिनके कारण उनमें विशिष्ट सुगंध और सुवास होता है। मूल ऐल्कैलॉइड, निकोटिन ($C_{10}H_{14}N_2$) बीज को छोड़कर तंबाकू के समूचे पौधे में विद्यमान रहता है मगर पत्तियों में इसका सांद्रण सबसे अधिक होता है।

निकोटिन की मात्रा *नि. टैबकम* में 4–6 प्रतिशत और *नि.रस्टिका* में 12 प्रतिशत होती है। इसकी मात्रा इन बातों से निर्धारित होती है : क) प्रजाति और उपजाति, ख) संवर्धनात्मक आवश्यकताएं विशेषकर मृदा तथा जलवायु स्थितियां, ग) संसाधन की विधि (वायु और अग्नि संसाधित तंबाकू में निकोटिन की मात्रा 4–4.5 प्रति होती है, धूमनाल संसाधित तंबाकू में यह मात्रा 2.5–3 प्रतिशत रहती है, घ) पौधे पर पत्ती की स्थिति (नीचे की पत्तियों में निकोटिन प्रायः कम रहता है)। निकोटिन की उत्पत्ति जड़ों में होती है जहां से यह पत्तियों में स्थानांतरित हो जाता है।

तालिका 19.4 : तंबाकू के बाज़ार वर्ग

क्र. सं.	तंबाकू का वर्ग	मृदा प्रकार	पत्तियों की विशेषताएं	उपयोग	सबसे बड़े उत्पादक	सबसे बड़े निर्यातक
1)	धूम-नाल संसाधित	हल्की बलुई दुमट या महीन बलुई दुमट मिट्टी	•अच्छी प्रत्यास्यता •मंद-मंद सुगंध •चमकीली पीली •दाग-धब्बे के बिना •गोंदनुमा पदार्थ के बिना •मीठा सुवास •हल्का अम्ली धुंआ (अधिक शर्करा/प्रोटीन अनुपात)	सिगरेट, पाइप और चर्वण (चबाने वाला) तंबाकू के निर्माण में	संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जापान, जिंबाब्वे, मालावी, कनाडा, भारत	संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत
2)	अग्नि संसाधित	भारी गाद या चिकनी मिट्टी	•पत्तियां बड़ी होती हैं •मोटी •अच्छी प्रत्यास्यता •गहरा महोगनी रंग •दाग-धब्बे बिना	नसवार (चूर्णित उत्पाद और चर्वण तंबाकू, चुर्रट (दोनों ओर से खुले सिरों वाला साधारण सिगार), बीड़ी, हुक्का	भारत चीन कनाडा	
3)	वायु-संसाधित क) हल्का वायु-संसाधित	गाद-दुमट से बलुई दुमट मिट्टी	वजन में हल्की (कम मोटी), हल्के से लाल भूरी	सिगरेट, सिगार और पाइप तंबाकू	संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, ब्राजील, जापान, जिम्बाब्वे, पाकिस्तान, कनाडा	संयुक्त राज्य अमेरिका, इंडोनेशिया
	i) सिगार-फिलर (वायु-संसाधित)	दुमट या पांशु दुमट	•भूरी या लालभूरी •भारी •मीठी, खुशगवार, सुवास •समान रूप से जलते हुए सफेद राख देती है।	सिगार के क्रोड को भरने के लिए	मध्य अमेरिका, क्यूबा, ब्राजील, प्यार्टोरिको	
	ii) सिगार-बाइंडर (वायु संसाधित)	गाद दुमट या बलुई दुमट मिट्टी	•उत्तम संरचना •प्रत्यास्थता अन्य किस्मों से अधिक	सिगार के फिलर को सही आकार में रहने के लिए	,,	
	iii) सिगार-रैपर (वायु संसाधित)	हल्की बलुई दुमट या सूक्ष्म बलुई दुमट मिट्टी जो किलाटी कपड़े की छांव में रखी जाए	•पत्तियां सुवास, हीन रहती हैं, •पतली; •रेशमी, •प्रत्यास्थ, •सूक्ष्म शिरायुक्त •एक रूप रंग •दाग धब्बे बिना •उच्च कोटि का दहन गुण पाया जाता है •नाइट्रोजनयुक्त पदार्थ अधिक होता है •स्टार्च और शर्करा से मुक्त (क्षारीय सुवास और सुगंध)	सिगार के ऊपर आखिरी रैपिंग (लपेटन) के लिए	,,	
	ख) गहरा वायु-संसाधित	भारी पांशु या चिकनी दुमट	गहरा, खुरदुरा	चर्वण और बट्टी तंबाकू	—	
4)	सौर संसाधित तुर्की तंबाकू	भारी गाद और मृत्तिका दुमट की मध्यवर्ती	•पत्तियां छोटी (7.5 से 15 से.मी. लम्बी) •पीली से हल्की लाल-भूरी •विशिष्ट सुगंध	सिगरेट	मध्यपूर्व, जिम्बाब्वे	तुर्की

1) संसाधित (cured) और काल-प्रभावित (aged) तंबाकू के भिन्न-भिन्न ग्रेडों को मिलाकर उसे तरह-तरह के उपयोगों के लिए तैयार किया जाता है जैसे सुंघनी, चर्वणी तंबाकू या धूम्रपान तंबाकू। तंबाकू उत्पादों में ग्लिसरीन या सोर्बिटॉल (ये आर्द्रक नमी को रोके रखते हैं जिससे वातावरणीय परिवर्तनों का तंबाकू पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता), वैनीला, चॉकलेट, रम इत्यादि जैसे एडिटिव (योजक) मिलाकर, उसकी गुणवत्ता को सुधारा जा सकता है।

2) सिगरेटें मशीन से बनाई जाती हैं (इनमें निकोटिन की मात्रा प्राय: 1.5–2.8 प्रतिशत होती है)। सिगरेट में प्रयोग होने वाला कागज सन (फ्लैक्स - *लाइनम यूसीटैटीसिमम*), या भांग (*कैनाबिस सैटाइवा* यानि *Cannabis sativa* से बनाया जाता है।

3) सूखी तेन्दू (*डायोसपायरास मेलॉनॉक्सीलोन* यानि *Diospyros melanoxylon*, एबीनेसी यानि Ebenaceae कुल) पत्ती के एक आयताकार टुकड़े पर तंबाकू के 0.25–0.5 ग्राम फ्लेक डाल उसे बेलनाकार मोड़कर बीड़ी बनाई जाती है। भारत में प्रतिवर्ष बीड़ी की खपत 17,800 करोड़ है जो कि सिगरेट की खपत से काफी ज़्यादा है।

4) ऐल्कैलॉइड निकोटिन का प्रयोग कृषि मे ऐफिड (aphid), पातफुदकों (leaf-hoppers), रसाद यानि काष्ठकीट (thrips) और बंदगोभी में लगने वाले कीट के लारवा जैसे चूषण कीटों के नियंत्रण के लिए एक संपर्क कीटनाशक के रूप में प्रयोग होता है। निकोटिन बेंटोनाइट (जो पानी में बेंटोनाइट और निकोटिन का निलंबन है) एक प्रभावशाली कीटनाशक है।

5) तंबाकू के बीज में निकोटिन नहीं होता। तंबाकू के बीज के रिफांइड तेल को मूंगफली के तेल की जगह इस्तेमाल किया जा सकता है। इसे उजाल जलाने और तेल तथा वार्निश उद्योगों में भी प्रयोग किया जाता है।

6) इसके बीज की खली पालतू पशुओं और घोड़ों के आहार के रूप में प्रयोग लाई जाती है।

7) संसाधित पत्ती में निकोटिन कार्बनिक अम्लों से बंधा रहता है और वह सिर्फ धूम्रपान करने पर मुक्त होता है। तंबाकू टार को फेफड़ों के कैंसर का जनक माना जाता है। इस टार (सिगरेट के धुंए में मौजूद) में से पानी के अलावा हर पदार्थ, एक अति सूक्ष्म फिल्टर से छानकर अलग किया जा सकता है)। तंबाकू के धुएं में स्वास्थ्य के लिए लाभदायक तत्त्व जैसे ग्लूटैमिन (glutamine) और ग्लूटैमिक ऐसिड (glutamic acid) अमीनो अम्ल और जल में घुलनशील विटामिन नायसिन (niacin) तथा नायासिर्नमाइड (niacinamide) भी पाए जाते हैं।

19.3.3 सुपारी (Betel Palm)

वानस्पतिक नाम : ऐरेका कटेचू (*Areca catechu*)

कुल : ऐरेकेसी

प्रचलित नाम : ऐरेका, कटेचू, कत्था, सुपारी, खैर, खदिर

n = 16

उत्पत्ति : मलाया, निकोबार द्वीपसमूह।

वितरण

दक्षिण-पूर्वी एशिया मुख्यतः भारत, बंगला देश, श्रीलंका, मलेशिया और इंडोनेशिया में। भारत में इसकी खेती दक्षिण मुंबई के तटीय क्षेत्रों, तमिलनाडु, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल और आसाम में की जाती है।

पारिस्थितिकी

सुपारी का पेड़ उष्णकटिबंधी प्रदेशों की समुद्री जलवायु में खूब उगता है। इसकी खेती समुद्र तल से लगभग 900 मीटर की ऊंचाई पर की जाती है। इसे मृदा नमी की प्रचुर आपूर्ति और लगभग 1500–5000 मि.मी. की प्रचुर वृष्टि चाहिए। इसे कई किस्म की मृदा में उगाया जा सकता है मगर मृत्तिका दुमट इसे अधिक भाती है।

प्रवर्धन

सुपारी के पेड़ का प्रवर्धन बीज से होता है। इसके लिए पूर्णतः विकसित सूखे फलों को 2.5 से.मी. की दूरी पर, कम गहरे गड्ढों में बालू से दबा दिया जाता है। तीन महीने पश्चात बीजों के अंकुरित होने पर उन्हें नर्सरी बेड (रोपण क्यारी) में उन्हें 30 से.मी. के अंतर पर रोप दिया जाता है। इन क्यारियों में बीच-बीच में केले के पेड़ लगाकर छाया कर दी जाती है। *ऐरेका* के नवोद्भिदों को 1–2 वर्ष की आयु मे खेतों में रोप दिया जाता है।

आकारिकी

यह एक पतला, ऊर्ध्व द्विलिंगाश्रयी ताड़ है (चित्र 19.14), जो 60 से 100 वर्ष तक जीवित रहता है। इसके तने के आधार (basal trunk) से अपस्थानिक जड़ें विकसित होती हैं। लट्टू के आकार की आर्द्रताग्राही गुंठिकाएं (pneumathodes) विद्यमान होती हैं। तने के मूल से कभी-कभी आकाशीय जड़ें (aerial roots) उत्पन्न होती हैं। यह एकल, सीधा, बेलनाकार (30 मीटर लंबा और 25–40 से.मी. मोटा) होता है। इस पर क्षत-चिन्हों के छल्ले बने होते हैं। पेड़ जैसे-जैसे बड़ा होता है उसके पर्वों के बीच का भाग घटता जाता है। छः से नौ विशाल पिच्छाकार पत्तियाँ, अंतस्थ किरीट में पाई जाती हैं; पिच्छकों की संख्या 30–50 होती है, वे भालाकार और पत्ती के मध्य में सबसे लंबे होते हैं। एक वर्ष में लगभग छः पत्तियां उत्पन्न होती हैं। पुष्पन, पौध रोपण के चार से छः वर्ष के बाद आरंभ होता है। प्रत्येक पर्णच्छद के कक्ष में एकल पुष्पक्रम उत्पन्न होता है। पुष्पक्रम एक अतिशाखित स्पैडिक्स (मांसल, कणिश-नुमा पुष्पक्रम) का बना होता जो नाव-नुमा स्पेथ (हुडनुमा सहपत्र) से घिरा रहता है। नर पुष्प अनेक और पाती होते हैं, जो वर्धनकाल की समाप्ति पर झड़ जाते हैं। ये लघुरूपी होते हैं और पुष्पक्रम में मादा पुष्पों के ऊपर स्थित रहते हैं। ये नर पुष्प दो पंक्तियों में व्यवस्थित होते हैं। सहपत्रहीन, स्यावर और क्रीम-रंग के होते हैं। परिदल-पुंज में छः परिदल दो चक्रों में व्यवस्थित रहते हैं। पुंकेसर छः, दो चक्रों में व्यवस्थित होते हैं। प्रत्येक स्पैडिक्स में 250–400 मादा पुष्प होते हैं जो द्वितीयक और तृतीयक शाखाओं के स्थूलित आधारों पर लगे होते हैं। परिदलपुंज अपाती होता है; बाह्य परिदलपुंज तीन, हरे और भीतरी परिदलपुंज तीन, लंबे और दूधिया रंग के होते हैं। बंध्य पुंकेसरों की संख्या छः होती है तथा वे लघु आकार के होते हैं, अंडाशय त्रिकोष्ठकी होता है। फल रेशेदार, अंडाकार, पीला-नारंगी अष्ठिल होता है, जो परागण के आठ महीने बाद विकसित होता है। एक स्पैडिक्स में 50–500 फल उत्पन्न होते हैं (एक वृक्ष प्रतिवर्ष 50–1000 फल देता है)। बीज अंडाकार, गोलाकार या दीर्घवृत्तज होता है और वजन 10–20 ग्राम होता है। भ्रूणपोष चर्बिताभ (असम आकृति) होता है, जिसमें आंतरिक अध्यावरण से सख्त, लाल ऊतक हल्के भूरे भ्रूणपोष में संस्तरीय प्रवेश करते हैं। भ्रूण शंक्वाकार और बीज के आधार पर उपस्थित रहता है।

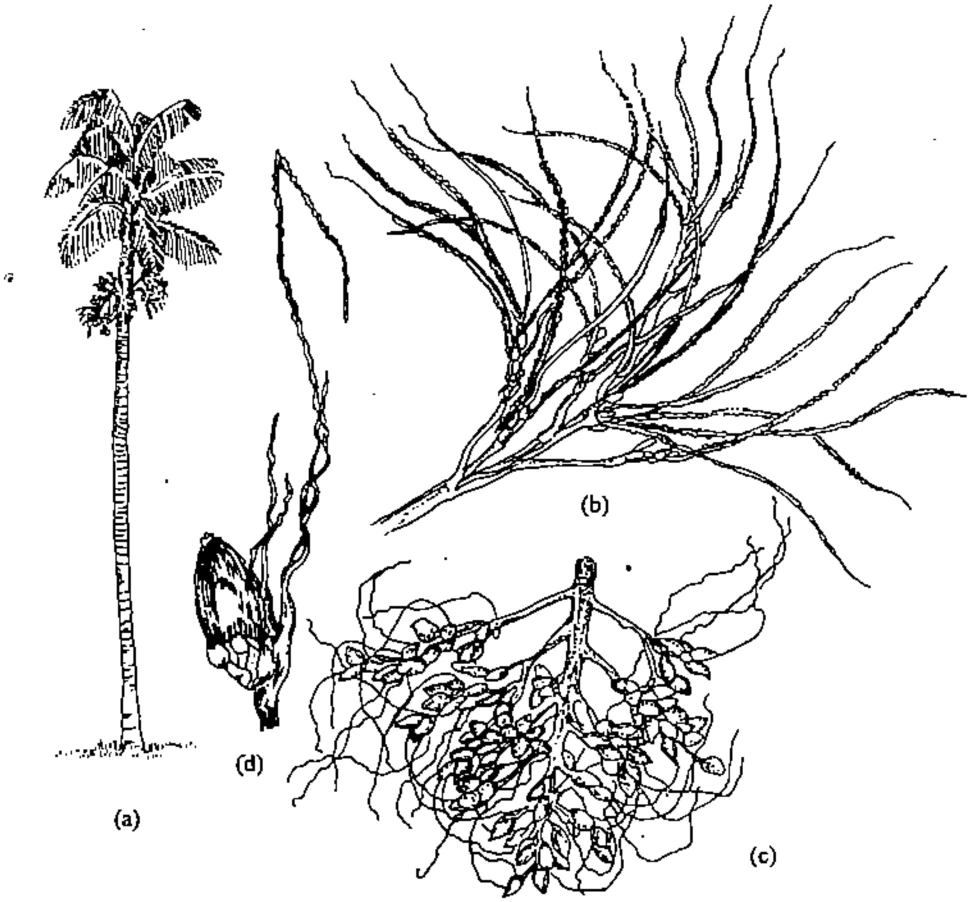

चित्र 19.14 : ऐरेका कटेचू *(Areca catechu)* । a) संपूर्ण पौधा । b) पुष्पक्रम । c) फलों का गुच्छा । d) एक आवर्धित फल । (पर्सग्लव, 1988 से) ।

रासायनिक संघटन

सुपारी के भ्रूणपोष में अनेक ऐल्कैलॉइड होते हैं । इनमें सबसे सक्रिय और महत्त्वपूर्ण ऐल्कैलॉइड ऐरेकोलीन यानि arecoline ($C_8H_{13}O_2N$) है जिसकी मात्रा 0.1 से 0.5 प्रतिशत तक पाई जाती है । अन्य ऐल्कैलॉइड ऐरेकैडीन (arecaidine), ऐरेकोलिडीन (arecolidine), गुवासीन (guvacine) और गुवाकोलीन (guvacoline) हैं । इसमें 11–26 प्रतिशत कैटेकोल (catechol) टैनिन होते हैं, जिनकी मात्रा फल पक्वन के दौरान घट जाती है । इसमें पाए जाने वाले अन्य तत्वों की अनुमानित मात्रा इस प्रकार है: पानी 30 प्रतिशत, प्रोटीन 5 प्रतिशत, वसा 5 प्रतिशत, और कार्बोहाइड्रेट 47 प्रतिशत ।

उपयोग

1) इसके पके और अनपके बीजों, जिन्हें बोलचाल की भाषा में सुपारी कहा जाता है, के कठोर सूखे भ्रूणपोष को दक्षिण-एशिया के लोग एक स्वापक पदार्थ के रूप में चबाते है । उनके इस शौक के कारण सुपारी की खपत चुईंग-गम से कहीं ज्यादा है ।

2) सुपारी के छोटे-छोटे टुकड़े को पान के पत्ते (*पाइपर बीटल* यानि *Piper betle*) में लपेटकर खाया जाता है, जिसमें कि चुटकी भर बुझा चूना लगाया गया होता है । इसके अलावा पान में *ऐकेशिया कटेचू (Acacia catechu)* के अंत:काष्ठ से बना कत्था, तंबाकू, इलायची (*एलेटेरिया कार्डमोमम* यानि *Elettaria cardamomum* के सूखे फल) इत्यादि मिलाए जाते हैं । पान-सुपारी के पत्ते के बीड़े को लौंग (*यूजीनिया कैरियोफाइलस* यानि *Eugenia caryophyllus* की सूखी पुष्प कलिकाएं) से बांधा जाता है ।

3) इसे कृमिहर (vermifuge) के रूप में भी प्रयोग किया जाता है ।

4. कभी-कभी इस ताड़ की मध्य कलिका को खाया भी जाता है ।

5. इसे एक सजावटी पेड़ के रूप में उगाया जाता है । गांजा, तंबाकू और सुपारी के पेड़ के अतिरिक्त चर्वणीय सामग्री के दो अन्य स्रोतों की मुख्य विशेषताएं तालिका 19.5 में प्रस्तुत की गई हैं । (चित्र 19.15 भी देखें) ।

चित्र 19.15 : a) कोला निटिडा (*Cola nitida*), पुष्पी टहनी और आवर्धित पुष्प। b) इरिथ्रोजाइलम कोका (*Erythroxylum coca*) पुष्पी टहनी और आवर्धित पुष्प गुच्छ। (a) पर्सग्लव, 1988 से, और b) सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली 1986 से)।

तालिका 19.5 : पौधों से प्राप्त होने वाले कुछ और चर्वणीय पदार्थ

क्रं. सं.	वानस्पतिक नाम	प्रचलित नाम	कुल	उत्पत्ति	वितरण	प्रयुक्त पादपांग	रसायन	उपयोग
1	*कोला निटिडा* (चित्र 19.15a)	कोला	स्टर्कुलिएसी	पश्चिमी अफ्रीका के उष्णकटिबंधी वर्षा वन	नाइजीरिया, सिएरालियोन, लाइबेरिया, कोट डाइवोएर गाना, वेस्ट इंडीज, ब्राजील और एशिया	बीज और पत्तियां	कोला रेड, कैफीन, थियोब्रोमाइन, कोलैनिन (ग्लोइकोसाइड)	उष्णकटिबंधी अफ्रीका में इसके बीज (नट) और दक्षिण अमेरिका में कोका पत्तियां चबायी जाती हैं, यह केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में मंद उद्दीपन/उत्तेजना उत्पन्न करता है।
2	*इरिथ्रोजाइलम कोका* (चित्र 19.15b)	कोका या कोकीन का पौधा	इरिथ्रोजाइलेसी	एंडीज उष्णभूमि	दक्षिण अमेरिका, जावा, श्रीलंका, ताइवान और भारत	पत्तियां	कोकीन कई ऐल्कैलॉइडों का मिश्रण है •कोकीन •ट्रोपोकोकीन •सिनैमिल कोकीन	छोटी डोजों में यह : •एक आनंदकारी उत्तेजना पैदा करता है। •शारीरिक शक्ति को बढ़ाता है। •मानसिक सजगता को बढ़ाता है •थकान से राहत दिलाता है। •भूख को घटाता है। मगर यह उद्दीपन अस्थायी, क्षणभंगुर होता है, जिसके बाद प्राय: थकावट और मानसिक अवसाद के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। बड़ी डोज से, शरीर में बेचैनी, मरोड़ और विभ्रम पैदा होते हैं।

बोध प्रश्न 2

i) निम्नलिखित शब्दों को स्पष्ट कीजिए :

उद्दीपक, व्याक्षोभक, सम्मोहक, शामक और भ्रांतिजनक

....

....

....

....

....

ii) निम्नलिखित में कौन सा कथन सही या गलत है। सामने दिए गए रिक्त स्थान में सही के लिए स या गलत के लिए ग लिखिए।

क) उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में उगने वाला मारीजुआना का पौधा (गांजा) शीतोष्ण देशों में उगने वाले पौधे से अधिक प्रभावशाली होता है। ☐

ख) भांग गांजा की तुलना में अधिक नशा पैदा करता है। ☐

ग) तंबाकू को 90–120 दिन का तुषार-मुक्त काल चाहिए। ☐

घ) मृदा प्रकार तंबाकू में सुवास और सुगंध को निर्धारित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है। ☐

ङ) तंबाकू की पत्तियों का काल-प्रभावन एक ऐसा प्रक्रम है जिसके फलस्वरूप उनमें निकोटिन की मात्रा बढ़ जाती है। ☐

च) ऐरेका के नट के चर्बिताभ भ्रूणपोष में अनेक ऐल्कैलॉइड होते हैं। ☐

19.4 संगध तेल उत्पादक पादप

पौधों से दो प्रकार के तेल उत्पन्न होते है: 1) अवाष्पशील, और 2) सगंध या वाष्पशील तेल। अवाष्पशील तेल प्राय: भोजन संचय हैं और इनका व्यावसायिक महत्व है। पौधों में इनका निर्माण कार्बोहाइड्रेटों से वसा अम्लों के संश्लेषण से होता है जिसमें वसा अम्लों के तीन अणु ग्लिसरॉल से संयोजन कर ट्राइग्लिसराइड बनाते हैं। इस प्रकार अवाष्पशील वनस्पति तेल संतृप्त और असंतृप्त कार्बनिक अम्लों के वास्तविक ग्लिसराइड हैं। एक ही जीनस की विभिन्न जातियों में भिन्न किस्म के तेल संचित हो सकते हैं। यह भिन्नता इस कारण होती है कि वनस्पति तेल भिन्न-भिन्न वसा अम्लों का मिश्रण हैं, जिनमें संतृप्तता की मात्रा अलग-अलग होती है। इसका यह अर्थ है कि इन वसा अम्लों के अणुओं में द्विबंधों की संख्या भिन्न होती है। तेल में वसा अम्ल जितना कम संतृप्त होंगे हवा में तेल उतना ही कम स्थायी होगा और उतनी ही आसानी से ऑक्सीकृत होकर तेल एक पतली, प्रत्यास्थ, जलरोधी पृष्ठ फिल्म बनाएगा।

संगध तेल पादपों से प्राप्त होने वाले अति सुगंधित, वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों का मिश्रण हैं। मध्य युग में यूरोप के भेषजज्ञों ने नाना प्रकार के पौधों के औषधीय गुणों का पता लगाया और पादप ऊतक के अनिवार्य मूल तत्व की खोजबीन आरंभ की जो उनके अनुसार मानव शरीर में उपचारात्मक प्रभाव उत्पन्न करता था। इस खोज का परिणाम यह रहा कि वाष्प आसवन के प्रक्रम से विभिन्न पादपों से अनेक सुगंधकारी, अति वाष्पशील तरल प्राप्त हुए। इन्हें पौधों का अनिवार्य घटक समझा गया और इन्हें "अनिवार्य तेल" का नाम दे दिया गया जो आज तक प्रचलित है।

संगंघ तेल का उत्पादन

तेल का निर्माण पौधे के उन भागों में सबसे अधिक होता है जो प्रकाश संश्लेषण की दृष्टि से सक्रिय हों। लेकिन तेल पादप शरीर में वाहित नहीं होता। तेल का संघटन पादप के विकास के दौरान बदलता रहता है। कुछ जातियों में एक पौधे के विभिन्न भागों में ऐसे तेल बनते हैं जिनकी रासायनिक प्रकृति एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न होती है। संगध तेलों का स्राव पौधों में बाह्यग्रंथियों या अधिचर्म रोमों या पौधे के किसी भी भाग में विकसित होने वाली आंतरिक ग्रंथियों में होता है। पौधे के अंदर उत्पन्न होने पर तेल का स्राव कोशिकाओं के बीच होता है। तेल का बढ़ता जमाव निकटवर्ती कोशिकाओं की भित्तियों को भी भेद देता है और उनके बीच में एक गुहा बन जाती है। ऐसी कई गुहाएं अंतत: परस्पर जुड़कर एक छोटी सी नाल बन जाती हैं। इन गुहाओं या नालों की निकटवर्ती कोशिकाओं की भित्तियां टूटकर एक सुस्पष्ट सीमा बनाती हैं जो तैल कोष पृथक करती हैं और इसके आस-पास की कोशिकाओं की रक्षा करती हैं।

पौधे की आयु या उसके अंगों तथा वातावरणीय कारक सगंध तेलों की मात्रा और उनके संघटन को प्रभावित करते हैं।

पादपांग जिनमें सगंध तेल मिलता है

सगंध तेल विभिन्न पादपांगों से निकाले जाते हैं। नीचे कुछ उदाहरण दिए गए हैं:

पत्तियां - पचौली (patchouli)
छाल - दालचीनी (cinnamon)
जड़ - खसखस (vetiver)
राइज़ोम - अदरक (ginger)
काष्ठ - चंदन (sandalwood)
पुष्पकलिका - लौंग (clove)
पुष्प - गुलाब, चमेली, कंदाकार नीलपुष्प (rose, jasmine, tuberose violet)
फल - संतरा (orange)
बीज - जायफल (nutmeg)

- वाष्पशील तेलों के संचयन स्थल को निर्धारित करने वाले कारक ज्ञात नहीं हैं। उदाहरण के लिए *सैंटलम एलबम* यानि *Santalum album* (चंदन) में अंत:काष्ठ (heartwood) तो सुगंधित पाई जाती है मगर रसदारू (sapwood) और छाल (bark) सुगंधित नहीं होते।

- *पैंडनस ओडोरैटिसिमस* यानि *Pandanus odoratissimus* (केवड़ा) में नर पुष्प सुगंधित होता है लेकिन मादा पुष्प नहीं।

- *साइट्रस औरैंशियम* यानि *Citrus aurantium* (खट्टा) जैसे कुछ पौधों के पुष्पों में नारंगी मंजरी तेल (orange blossom oil) या नेरोली तेल (neroli oil), पत्तियों और टहनियों में पेटिटग्रेन तेल (petitgrain oil), और फल में कड़ुवा नारंगी तेल (orange oil) पाया जाता है। यानि एक ही पौधे के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न सगंध तेल विद्यमान रहते हैं।

- एक और असाधारण उदाहरण है *ऐक्वीलेरिया ऐगैलोचा* यानि *Aquilaria agallocha* (ऐगार वुड), इसमें एक विशेष कवक के संक्रमण के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप ही उसमें सुगंध उत्पन्न होती है।

- पुष्पी पादपों के कोई 87 कुलों से जुड़े अनेक पौधों से लगभग 3000 सगंध तेलों की अभी तक पहचान हो चुकी है।

रासायनिक संघटन

सगंध तेल तरह-तरह के कार्बनिक यौगिकों और अनेक प्रकार्यात्मक समूहों के रसायनों तथा आण्विक संरचनाओं का मिश्रण हैं। एक वाष्पशील तेल में लगभग 200 यौगिक उपस्थित हो सकते हैं। उसकी विशिष्ट गंध किसी एक या अनेक यौगिकों की सूक्ष्म मात्रा पर निर्भर करती है। इसका सबसे महत्वपूर्ण रासायनिक घटक टर्पीन (terpene) है। ये आइसोप्रीन इकाइयों (isoprene units) C_5H_8 से बने हाइड्रोकार्बन हैं जो असंतृप्त ऋजु (सीधी) श्रृंखला अणुओं (unsaturated straight chain molecules) या वलय संरचनाओं (ring structures) के रूप में विद्यमान रहते हैं और सहजता से अन्य कार्बनिक समूहों के साथ संयोजन कर लेते हैं। अधिकांश सगंध तेलों में कैम्फर (कपूर) भी पाए जाते हैं और उनमें उपस्थित अधिकतर गंधवाही यौगिक टर्पीनों, अल्कोहलों, एस्टरों, एल्डीहाइडों और कीटोनों के ऑक्सीजन व्युत्पन्नों के बने होते हैं।

प्रकार्य

सगंध तेलों के निम्नलिखित प्रकार्य पाए गए हैं:

- कीट परागण को बढ़ावा देना क्योंकि इनकी सुगंध कीटों को पौधों की ओर आकर्षित करती है।
- जंतुओं और परजीवियों (parasites) से सुरक्षात्मक युक्ति के रूप में और एलीलोपैथिक (allelopathic) रणनीतियों में उपयोगी हैं।
- ये क्षत-तरलों (wound fluids) का काम करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ विशेष पादपों के ओलियोरेज़िनस स्राव (oleoresinous exudes) पादपों को चोट लगने पर उनके लिए रोगाणुओं और कीटों के प्रति रक्षात्मक कवच का काम करते हैं।
- ये संचित भोजन पदार्थों के रूप में काम आते हैं।
- ये अपने ऊष्मा आवरण प्रभाव (हीट स्क्रीनिंग इफेक्ट) के कारण वाष्पोत्सर्जन दर को कम करके जल संरक्षण की भूमिका निभाते हैं।
- ये पादप के सामान्य उपापचय के उपोत्पाद हैं, जो कुछ प्रकार्यों (जैसे ऑक्सीकरण-अपचयन अभिक्रिया में हाइड्रोजन दाताओं का कार्य) को कर लेने के पश्चात् पादप द्वारा कुछ इस तरह से ऐसे ऊतकों में संचित कर लिए जाते हैं कि वे उपापचयी क्रिया के मुख्य केन्द्रों से पृथक रहें। इसके बावजूद भी रासायनिक रूप से क्रियाशील रहने वाले ये तत्व उपाचयी अभिक्रियाओं में भाग लेते हैं।
- ये मसालों, इत्रों और प्राकृतिक भोजन सुवासों के महत्वपूर्ण घटक हैं।
- इन्हें अरोमाथिरोपी (aromatherapy) में प्रयोग किया जाता है।
- इनमें जीवाणुनिरोधी और प्राय: जीवाणुनाशी गुण विद्यमान होते हैं।
- इन्हें एंटीसेप्टिकों, कीटनाशकों और ऐरोसोलों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।
- फर, ऊनी और रेशमी वस्त्रों पर सगंध तेल लगाये जाते हैं क्योंकि ये कुछ विशेष कीटों से इन वस्त्रों को बचाते हैं।
- इन्हें कागज, प्लास्टिक, चर्मवस्त्रों और पेंट के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

सगंध तेलों के निष्कर्षण की विधियां

विभिन्न पादपांगों में विद्यमान वाष्पशील तेलों का निष्कर्षण उनके ऊतकों से निम्न विधियों द्वारा किया जाता है:

1) आसवन (distillation)
2) यूसेल (eucelle) विधि (जिसमें निष्पीड़न द्वारा तेल निकाला जाता है)
3) एनफ्लूरेज (enfleurage) या "शीत-वसा निष्कर्षण" विधि
4) विलायक निष्कर्षण (solvent extraction) विधि

1) आसवन : तेल निकालने की सबसे प्राचीन और सरल विधि आसवन है। इस प्रक्रम के दौरान संघनन के द्वारा वाष्प निकाली जाती है। सगंध (वाष्पशील) तेल निकालने के लिए आमतौर पर द्रव-आसवन विधि प्रयोग में लाई जाती है। द्रव-आसवन की तीन तकनीकें हैं :

   क) जल-आसवन (Water distillation)

   ख) जल और वाष्प आसवन (Water and steam distillation)

   ग) प्रत्यक्ष वाष्प आसवन (Direct steam distillation)

क) **जल-आसवन विधि :** इस विधि में पादप सामग्री को तांबे के एक आसोत्र में कुछ देर यूं ही छोड़ दिया जाता है फिर उसे सीधे ताप से या एक वाष्प आवेष्टक (स्टीम जैकेट) या स्टीम कॉइल के जरिए गर्म करके उबाला जाता है। तेल वाष्प बनकर भाप के साथ एक द्रवणित्र में प्रवेश करता है। शीतलन होने पर तेल पानी से अलग हो जाता है और उसे निकाल लिया जाता है। लौंग और जायफल का तेल प्रायः इसी विधि से निकाला जाता है।

ख) **जल-वाष्प आसवन :** इसे नम-वाष्प आसवन भी कहते हैं। इसमें आसोत्र को ग्रिड के नीचे तक पानी से भर दिया जाता है। पादप सामग्री को एक ग्रिड पर रखा जाता है, जो आसोत्र के तल से कुछ दूर ऊपर रखा जाता है, और फिर आसोत्र को गर्म किया जाता है। भाप पादप सामग्री को छूती हुई उठती है और भाप तथा तेल-वाष्प को एक छोटे से ग्राही पात्र में संघनित कर एकत्र कर लिया जाता है जिसमें से ठंडा होने पर तेल अलग हो जाता है। इस विधि का लाभ यह है कि इसमें तेल के यौगिक जल की तुलना में कम तापमान पर ही भाप बन जाते हैं। यह द्रुत विधि है जिसे चीड़ (*पाइनस जाति*), पुदीना (*मेंथा पिपेरिटा*), देवदार (*जूनिपेरस वर्जिनियाना*), और नींबू-घास (*सिम्बोपोगोन साइट्रेटस*) से तेल बनाने में काम लाया जाता है।

ग) **प्रत्यक्ष वाष्प आसवन :** इस तकनीक में पादप सामग्री को एक ग्रिड में अलग पात्र में रखा जाता है और खुली या छिद्रित कुंडलियों (कॉइलों) के माध्यम से संतृप्त भाप को उससे होकर गुज़ारा जाता है। इसमें कभी-कभी वाष्पशील तेलों के रासायनिक घटकों के बदल जाने की संभावना रहती है। इसलिए आसवन आंशिक निर्वात में किया जाता है ताकि तापमान को यथासंभव कम रखा जा सके। आयरोन (irone) या आयोनोन (ionone) जो कि सर्वोत्तम वायोलेट इत्र का आधार है, उसका आसवन इसी तरह *आयरिस फ्लोरेन्टिना* (*Iris florentina*) के राइज़ोमों (वासमूल) से किया जाता है

2) **यूसेल विधि** ताप द्वारा सगंध तेल के रासायनिक घटकों को खंडित होने से बचाने के लिए निष्पीडन द्वारा पृथक्करण किया जाता है। उदाहरण के लिए साइट्रस फलों को एक-कणिश युक्त परिक्रामी पात्र (revolving vessel with spikes) में डाला जाता है। इस पात्र में लगे कणिश तैल कोशिकाओं को विभेद कर उनसे तेल अलग कर देते हैं।

3) **एनफ्लूरेज या शीत वसा निष्कर्षण विधि** - इस विधि में वसा (पशु या सूअर की चर्बी) को कांच की एक तश्तरी पर फैला दिया जाता है और चमेली (*जासमिनम* यानि *Jasminum*) या कंदाकार जाति (*पोलिएंथस ट्यूबरोसा* यानि *Polianthes tuberosa*) के ताजा पंखुड़ियों को वसा पर फैला दिया जाता है। दो या तीन दिनों बाद इन पंखुड़ियों को हटा कर उनकी जगह नई पंखुड़ियां बिछा दी जाती है। यह प्रक्रिया वसा को पुष्प की सुगंध से पूरी तरह से संतृप्त होने तक बार-बार दोहराई जाती है। इसके बाद यह वसा अंगराग ("पोमेड"pomade) का रूप ले लेता है, जिससे अल्कोहल की सहायता से सगंध तेल को निकाल लिया जाता है जो "पुष्प कंक्रीट" (floral concrete) के रूप में प्राप्त होता है। अब "पूर्ण पुष्प सगंध तेल" (floral absolute) को प्राप्त करने के लिए अल्कोहल को वाष्प बनाकर अलग कर दिया जाता है।

4) **विलायक निष्कर्षण विधि** - इस विधि में एक बंद पात्र में रखे फूलों को पेट्रोलियम ईथर जैसे कोई विलायक के सम्पर्क में लाया जाता है। इस प्रक्रम द्वारा सुगंधमूलक पदार्थों के साथ-साथ अन्य पादप तेल और मोम अलग कर लिए जाते हैं। विलायक को निर्वात (vacuum) में वाष्प बना दिया जाता है, तथा बाद में जो अवशेष छूट जाता है जिसे परिशोधित कर संगध तेल प्राप्त किया जाता है।

19.4.1 चंदन (Sandalwood)

वानस्पतिक नाम : *सैंटलम एलबम (Santalum album)*

कुल : सैंटालेसी

प्रचलित नाम : चंदन, सफेद चंदन

n = 5, 10

उत्पत्ति

यह भारत की नीलगिरी पर्वतमाला से मैसूर के उत्तर में वन्यावस्था में पाया जाता है।

वितरण

भारत , जावा, तिमोर, सेलेबीज और सुंबावा में यह वितरित है। भारत में यह कर्नाटक, तमिलनाडु राज्यों में इसके वन हैं। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में भी इसे उगाया जाने लगा है।

आकारिकी

यह एक मध्यम आकार (15–20 मीटर) का सदाबहार वृक्ष है जो 40–60 वर्ष की आयु तक जीता है। यह एक जड़ परजीवी (root parasite) है। अंकुरण के बाद इसके नवोद्भिद् एक महीने के भीतर परपोषी के साथ चूषकांगी संबंध (haustorial connection) स्थापित कर लेता है [इसकी कोई 200 परपोषी (host) जातियां हैं] पत्तियां सम्मुख होती हैं। पुष्पक्रम छोटे, द्विलिंगी, मारूनी पुष्पों का एक पुष्प-गुच्छ होता है।

प्रत्येक चंदन का पेड़ चाहे वह किसी मंदिर के प्रांगण, सार्वजनिक पार्क या निजी बाग में उग रहा हो वह सरकार की संपत्ति है। तमाम सख्त कानूनों के बावजूद चंदन की लकड़ी की बड़े पैमाने पर तस्करी की जा रही है। इसे एक और खतरा स्पाइक रोग (spike disease) से है जो इसमें माइकोप्लाज्मा-जैसे जीव (mycoplasma-like organism) से होता है।

तेल का स्रोत : अंत:काष्ठ। इसकी जड़ों में अधिकतम मात्रा में तेल संचित रहता है।

निष्कर्षण की विधि

तेल आसवन विधि से निकाला जाता है। इसके लिए चंदन की लकड़ी को मोटा-मोटा पीसकर उसे आसोत्रों में भर दिया जाता है जिनके तल छिद्रित रहते हैं। इन आसोत्रों से भाप गुजारी जाती है जो आसोत्रों की झुकी ग्रीवाओं से होकर निकलती है और ग्राही पात्रों में इक्ट्ठा कर ली जाती है। कच्चे या अशोधित तेल को वायुरोधी कंटेनरों में संचित किया जाता और फिर निर्वात में पुनरासवन करके उसे परिष्कृत किया जाता है। तेल हल्के पीले रंग का और विस्कॉसी (viscous) होता है। इसमें स्थायी (lasting) मीठी, भारी (heavy) सुगंध होती है।

मुख्य सुगंधमूलक घटक

चंदन के तेल में सुगंध अल्फा (α) और बीटा (β) सैंटालोलों [सेस्क्वीटर्पीन एल्कोहल (sesquiterpene alcohol) 90–95 प्रतिशत] की उपस्थिति के कारण होती है। इसके अन्य घटक सैंटालाल (santalal), सैंटालोन (santalone), और सैंटीन (santene) हैं।

उपयोग

1) चंदन के तेल का प्रयोग प्राच्य इत्रों (oriental perfumes) के निर्माण में होता है।
2) इसके तेल को साबुनों, टैलकम पावडरों, क्रीमों, केश तेलों और हैंड लोशनों के निर्माण में भी प्रयोग किया जाता है।
3) इस तेल के शीतलन, स्वेदनकारी (diaphoretic यानि पसीना लाने वाले), मूत्रल (diuretic यानि मूत्रत्याग में वृद्धि लाने वाले), और कफोत्सारक (expectorant - छाती से बलगम या श्लेष्मा को बाहर निकालने वाले) गुणों के लिए इसे दवाओं में भी प्रयोग किया जाता है।
4) चंदन के लेप को जलने के घावों, ज्वर और सिरदर्द होने पर लगाया जाता है। धार्मिक अनुष्ठानों में भी चंदन की लकड़ी का प्रयोग होता है।
5) इसके बीजों से एक तेल निकलता है जो त्वचा-रोगों के उपचार में काम आता है।

6) चंदन की लकड़ी नक्काशी के काम के लिए सर्वोत्तम काष्ठ है।

7) इसके बुरादे का प्रयोग धूप-अगरबत्ती के रूप में और वस्त्रों और अलमारियों को सुगंधित करने के लिए किया जाता है।

19.4.2 खसखस (Vetiver)

वानस्पतिक नाम : *वेटिवेरिया जाइजैनीओइडीज (Vetiveria zizanioides)*

कुल : पोएसी

प्रचलित नाम : खस, गंधर

n = 10

उत्पत्ति

भारत और श्रीलंका

वितरण

इसे समूचे उष्णकटिबंध में लगाया गया था। मगर इसके प्राकृतिक सूत्र हमें भारत के उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पंजाब राज्यों में मिलते हैं। इसका पौधा सघन रूप से गुच्छेदार बहुवर्षीय शाद्वल या घास है। इसकी ऊंचाई दो मीटर तक होती है। जड़े सुगंधित होती हैं इन्हें साफ और सुखा कर इनसे चटाइयां, स्क्रीन (पर्दे) और नाना प्रकार के सामान बनाए जाते हैं। इसका मूल (जड़) स्कंध ऊर्ध्व नालें (कल्में) धारण किए रहता है जो 05–1.5 मीटर ऊंची होती हैं। पर्ण फलक कड़ा, दीर्घ संकीर्ण (75 से.मी. लंबा, 8 मि.मी. या इससे कम चौड़ा), अरोमिल मगर किनारों से खुरदरा होता है। यह गंधहीन होता है। पुष्पक्रम पुष्पगुच्छ के रूप में कणिशिकाएं युगल में, शूकहीन होती हैं, एक स्थावर और उभयलिंगी होती हैं, पुंकेसर तीन और दो पिच्छकी वर्तिकाग्र होते हैं; दूसरी कणिशिका वृंतयुक्त और पुंकेसरी होती है। इसकी कुछ कृषोपजातियों में विरले ही पुष्पन होता है।

पारिस्थितिकी और प्रवर्धन

खसखस अक्सर नदी के तटों पर 600 मीटर की ऊंचाई तक उगता है। इसके लिए गर्म और नम जलवायु आवश्यक है। इसे बलुई मिट्टी में उगाया जाना चाहिए। खसखस का प्रवर्धन जड़ों से होता है जिन्हे अलग कर 40 से.मी. के अंतर पर रोप दिया जाता है।

तेल का स्रोत : रोपण के 15–24 महीने पश्चात् जड़ों की कटाई की जाती है।

तेल निष्कर्षण की विधि

जड़ों को छाया में सुखाया जाता है। इन्हें पीसकर, फिर आसवन किया जाता है। (कभी-कभी विलायक निष्कर्षण विधि भी प्रयोग की जाती है)। इसके सबसे मूल्यवान घटक उच्च-क्वथन प्रभाजों (high boiling fractions) में मिलते हैं। भारत में खसखस का तेल कभी-कभी चंदन के तेल को आधार बना कर पर निकाला जाता है तथा इस उत्पाद को अत्तर (attar) या इत्तर (ittar) कहा जाता है।

मुख्य सुगंधमूलक घटक

- खसखस का तेल एक विस्कासी, गाढ़े रंग का तेल है जिसमें मीठी, स्थायी गंध हातो है।
- इसका मुख्य रासायनिक घटक वेटिवेरॉल (vetiverol) है।
- वेटिवेनिल (vetivenyl), वेटिवेनेट (vetivenate) और अल्फा व बीटा वेटिवोन (α – , & β – vetivones) इसकी विशिष्ट गंध का कारण माने जाते हैं।
- इसकी सूखी जड़ों में तेल की मात्रा 0.5 से 3.0 प्रतिशत होती है।

1) खसखस की जड़ों से पर्दे (स्क्रीन), चटाइयां, हाथ-पंखे और गर्मी के महीनों में काम करने आने वाले कूलिंग जैकेट बनाए जाते हैं।

2) खसखस के तेल को अतिवाष्पशील तेलों के लिए स्थायीकर (fixative) के रूप में, साबुनों को सुगंधित बनाने और सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

3) इस घास को मृदा अपरदन (soil erosion) रोकने के लिए सीढ़ीदार खेतों (terraced fields) में रक्षात्मक पार्टीशन (protective partition) के लिए और सड़कों और बगीचों के किनारों पर बाड़ के रूप में भी लगाया जाता है।

4) इसे शरबत बनाने के लिए भी प्रयोग किया जाता है।

19.4.3 अन्य महत्वपूर्ण स्रोत

चंदन और खसखस के अतिरिक्त कई सगंध तेल उत्पादक पौधों को कई तरह से काम लाया जाता है। ये पादप हमारी संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग हैं। हम इन पादपों के बारे में यहां विस्तार से वर्णन नहीं करेंगे बल्कि इनके बारे में संक्षिप्त जानकारी अंग्रेज़ी में तालिका 19.6 में दी जा रही है।

बोध प्रश्न 3

i) अवाष्पशील और सगंध तेलों में अंतर बताइए।

....

....

....

ii) पादपों में वाष्पशील तेल मुख्यत: किन-किन भागों में होते हैं?

....

....

....

iii) वाष्पशील तेलों के निष्कर्षण की निम्नलिखित विधियों में निहित मुख्य प्रक्रमों के बारे में लिखिए : आसवन, यूसेल विधि, एनफ्लूरेज और विलायक निष्कर्षण।

....

....

....

....

....

iv) निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरें।

क) .... नक्काशी के काम के लिए सर्वोत्तम काष्ठ है।

ख) चंदन के पौधे की .... और ...., चंदन के तेल के प्रमुख स्रोत हैं।

ग) ख़सखस की सुगंधित .... को स्क्रीन और कूलिंग जैकेट बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

घ) कैम्फर (camphor, यानि मुश्कपूर) मुख्यत: पौधे की .... और .... से प्राप्त होता है।
(संकेत: Table 19.6 देखें।)

ङ.) तुलसी, जिसका वानस्पतिक नाम .... है, का भारतीय संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान है।
(संकेत : Table 19.6 देखें।)

Table 19.6: Some important plants which produce essential oils.

Sl. No.	Botanical name	Common name	Vernacular Name	Family	Native of	Distribution	Plant part used	Major aromatic components	Uses
1.	*Anethum graveolens*	European dill	Soya	Apiaceae	Eurasia	Jammu & Kashmir	Fruits	Carvone (+) – Limonene (+) – phellandrene	Flavouring foods and beverages
2.	*Aquilaria agallocha*	Agar wood	Agar	Thymelaeaceae	Bhutan, parts of Bengal, the hills of Assam and Burma	Eastern Himalayas, hills of Garo, Naga, Cachar, Sylhet	Fungus infected wood	agarol	Manufacture of agar attars, agarbathies, and in perfumery as a retainer and blender
3.	*Artemisia absinthium*	Wormwood absinthe	Vilaiti afsantin	Asteraceae	Europe	Kashmir	Leaves, flowering tops	∝&β-thujones, phellandrene thujyl alcohol artabasin. Drug-santonin	Flvouring alcoholic beverages, vermifuge, stimulant and tonic
4.	*Cananga odorata*	Ylang-ylang, Macassar oil	-	Annonaceae	Malaysia	Plantation at Amabalavayal Research Station, Wynad, Kerala	Flowers	P-cresol, geraniol, linalool, eugenol, benzyl alcohol, ∝-cadinene	Perfumes, soaps, face powder
5.	*Cinnamomum camphora*	Camphor-tree	Mushkapur	Lauraceae	China, Japan	Plantation at Ootacamund, Tamil Nadu	Wood, leaves	Bisalbolene camphor (+) - ∝ -pinene dipentene cineol, terpineol, caryophyllene	Flavouring foods, pharmaceuticals, beverages
6.	*C.cassia*	Cassia, chinese cinnamon dry fruits called cassia buds	In India dry fruits are called Kala Nagkesar	Lauraceae	China	Not grown in India but it is imported from China, Malayan region	Twigs, leaves, dried fruits called cassia buds	Cinnamaldehyde, cinnamylacetate	Flavouring foods, perfumery; Russia & Germany prefer Cassia buds to cinnamon buds because of stronger aroma
7.	*C. tamala*	Tejpal, Indian Cassia	Tejpal	Lauraceae	Indian subcontient	Subtropical Himalayas, Khasi and Jaintia hills (Sikkim, Manipur & Arunachal Pradesh)	Leaves & Bark	Eugenol (+) - ∝ - phellandrene	Flavouring foods, leaves are carminative and used for colic and diarrhoea. Bark used as an adulterant for true cinnamon (*C. zeylanicum*)
8.	*Coriander* sp.	Coriander	Dhaniya	Apiaceae	Mediterranean region	M.P., Maharashtra, Rajasthan, A.P., T.N., Karnataka and Bihar	Fruits	Linalool ∝-terpinene d-carvone, ∝-β pinenes P-cymene	Flavouring foods and alcoholic beverges
9.	*Crocus sativus*	Saffron	Kesar	Iridaceae	Kashmir	Kashmir, Bhersar and Chaubatia U.P.	Stigma	Safranal	Colouring and flavouring foods
10.	*Cuminum cyminum*	Cumin	Jeera	Apiaceae	Mediterranean region	Punjab, U.P.	Fruits	Cuminaldehyde, Cuminyl alcohol P-cymeme, ∝-,β-pinenes β-phellandrene	Flavouring foods, cordials and liqueurs
11.	*Curcuma zedoaria*	Zedoary	Kachura	Zingiberaceae	North-east India	Cultivated throughout India	Rhizome	(+)-∝-pinenes (+)-camphene cineol (-) zingiberene	Perfumery, cosmetics and liqueurs
12.	*Cymbopogon citratus*	Lemon grass	Sugandh rohisha, Aghyaghas	Poaceae	Malaya or Sri Lanka	Widely distributed in the tropics	Leaves	Citronellal, geraniol, and myrcene	Flavouring soup, curries, tea and sherbet, soaps, isolation of citral for commercial synthesis of vitamin A.

(Contd.)

13.	*Cyperus rotundus*	Nut grass, motha	Motha	Cyperaceae	Pantropical Asia	Cultivated throughout India	Dried tubers	(-)- and ∝- pinene, isocyperol, ∝-cyperone	Tuber used as incense and in medicine, cyperiol oil used in perfumery, soap and for flavouring tobacco
14.	*Elettaria cardamomum*	Cardamom	Chhoti elaichi	Zingiberaceae	India	Western ghats in Karnataka, Kerala, Parts of Madurai, the Nilgris and Tirunelveli in Tamil Nadu	Fruits, seeds	Cineol, (+)-∝- terpineol terpinene limonene, terpinyl acetate	Condiments, for flavouring beverages, sweets, pharmaceuticals
15.	*Eucalyptus citriodora*	Lemon-scented Eucalypt	--	Myrtaceae	Australia Tasmania Papua New Guinea	Brazil, Guatemala, India (Punjab, U.P, A.P), U.S.A.	Leaves	Citronella, citronellol, esters	In making toilet soaps, mixed with olive oil and used as rubefacient and for rheumatism. Used also for chronic bronchitis and asthma
16.	*Jasminum officinale* var. *grandiflorum*	Jasmine	Chameli	Oleaceae	–	Grasse (S. France)	Flowers	Benzyl acetate, Benzyl alcohol, Benzyl benzoate Cresol, Eugenol, Geraniol	For worship, ceremonial purposes, hair decorations, for making attars, perfumed hair oils, soaps and creams, in air freshness, anti-perspirants and deodorants.
17.	Mentha spp. *M. arvensis*	Field Mint	Pudina	Lamiaceae	Temperate Europe	W. Himalayas Kashmir, Punjab, Kumaon and Garhwal	Leaves and flowering tops	Menthol, menthylacetate	As a condiment for preparation of chutnies, beverages, chewing gums, pharmaceuticals and dental preparations, mouthwashes, cough drops.
18.	*Michelia champaca*	Champak	Champa	Magnoliaceae	Himalayas	Eastern Himalayas, north-eastern India and the Deccan	Flowers	Cineole, isoeugenol, benzaldehyde	It is an important perfumery raw material
19.	*Myristica fragrans*	Nutmeg	Jaiphal, Jatri	Myristicaceae	Moluccas Islands	Nilgiris, Kerala, Karnataka, W. Bengal	Aril, seed	∝-β-pinenes (+)- camphene dipentene, P-cymene (+)- Linalool terpineol, geraniol, safrole	Pharmaceuticals, flavouring foods. Liqueurs, soaps, tobacco, dental cream, confectionary, perfumery
20.	*Ocimum americanum*	Hoary basil	Kali tulsi, Mamri	Lamiaceae	Tropics	Found throughout India	Shoots	Methyl chavicol	Soaps, cosmetics. Seeds are considered diuretic, for coughs, dysentery, as mouth wash for relieving toothache.
21.	*O. basilicum*	Sweet basil	Ban tulsi	Lamiaceae	-do-	-do-	Leaves/ shoots	Citral, linalool, geraniol, eugenol	Used for flavouring seeds used in dysentery and chronic diarrhoea.
22.	*Ocimum gratissimum*	Shrubby basil	Ram tulsi	Lamiaceae	-do-	-do-	Shoots, leaves	Eugenol, myrcene, citral, geraniol	Used as a mosquito repellent, should be used as a measure of biological control of mosquitoes
23.	*O. sanctum*	Holy basil	Tulsi	Lamiaceae	India	-do-	Leaves/ shoots	–	Oil has the property of destroying bacteria and insects. Juice of leaves is useful in bronchitis, catarrh, digestive complaints; applied externally on ringworm and other skin diseases. Seeds used in urinary problems.
24.	*Pandanus fasicularis* syn. *P. odoratissimus*	Pandang Screw-pine	Keora	Pandanaceae	India	Along the coast of India and the Andamans	Male flowers - source of most powerful perfume, occur in spadices enclosed in spathes (extraction by enfleurage method)	Methyl ester, β-phenylethyl alcohol, dipentene, (-)- linalool, citral	For scenting clothes, tobacco, cosmetics and agarbattis. Lower part of fruit is eaten in S. India. Leaves used for making baskets, cordage, papermaking, used in leprosy, small pox, scabies.

(Contd...)

25.	*Pimenta dioica*	Pimenta, Allspice	Pimento tree	Myrtaceae	West Indies, tropical America	Bengal, Bihar, Orissa, Bangalore	Unripe fruits	Eugenol	Spice, perfumery, soap
26.	*Polianthes tuberosa*	Tuberose	Gulshaba	Agavaceae	Mexico	Grown throughout India	Flowers	Geraniol, nerol, farnesol, benzl benzoate	High grade perfumes, base in gardenia perfumes
27.	*Pogostemon cablin*	Patchouli	Patchouli	Lamiaceae	Philippines, wild in Singapore, Malayasia & Indonesia also	Malaysia, Singapore, Indonesia	Leaves	*Norpatchoulenol* benzyaldehyde, eugenol, cinnamaldehyde	It blends with other essential oils like vetiver, sandalwood, geranium, lavender. No synthetic chemical is available to replace it. Used for soaps, cosmetics, incense sticks, antibacterial & insect repellant properties.
28.	*Rosa damascena*	Rose	Gulab	Rosaceae	It is a cultural variety, does not grow wild.	Best selections in Bulgaria, India (Feb. to April), U.P (Ghazipur, Kannauj)	Flowers	(-)- cetronellol geraniol Bulgarian rose- β-damascenone & rose oxide	Otto of roses or attar (rose oil) is soluble in water& is used as rose water in India. Used in perfumes, beverages cosmetics, eye-washes. Rose petal + sugar = gulkand (mild laxative).
29.	*Salvia officinalis*	Sage	Salbia sefakuss, seesti	Lamiaceae	Mediterranean region	Grown as an ornamental	Leaves	α- pinene, β-pinene thujone, camphor, borneol, bornyl acetate	Deodorant, flavouring foods, herbal tea, insecticidal preparations, as a carminative.
30.	*Trachyspermum ammi*	Ammi, Carum, or Lovage	Ajowan	Apiaceae	–	Sudan to India M.P., A.P., Gujarat, Maharashtra, U.P., Rajasthan & Bihar	Fruits	Thymol, carvacrol, thymene	As spice, in perfumery, as a flavouring agent, antifungal, carminative, antiseptic insecticidal properties
31.	*Vanilla planifolia*	Vanilla		Orchidaceae	Southern Mexico, Central & S. America (Northern part) & W. Indies	Malagasy Republic the Comoro Islands Reunion - grow 90% of the worlds supply. Nilgiris, Wynad Coorg & Karnataka	Cured unripe fruits	Vanillin, a group of substances called balsam	[Synthetic vanillin from lignin sulphonic acid – byproduct of sulphate pulping of softwoods (Pines)]. Natural vanilla is still the best. Used for flavouring, perfumery, sachet powders as bait for fruit flies & grasshoppers.
32.	*Viola odorata*	Sweet violet	Banafshah	Violaceae	Europe	Kashmir	Flowers, flowering tops, leaves also.	2, 6 - nonadien -1- al 2, 6-nonadien-1-01	Perfumery soap; medicinally as demulcent (soothing to skin) and in lung troubles. Used in Ayurvedic and Unani systems. Fresh herb used in homoeopathy. Blood purifier.
33.	*Zingiber officinale*	Ginger	Adrak	Zingiberaceae	S.E. Asia	Kerala, U.P., W. Bengal, Maharashtra, Himachal Pradesh (Sirmur district) and Andhra Pradesh	Rhizome	Zingiberene, Zingiberol β-bisabolene farnesene, methyl heptenone, cineole bovneol, geraniol, linalool.	Flavouring candy, baked products, liquers, soft drinks, condiments.

19.5 सारांश

इस इकाई में आपने :

- हमारे दैनिक जीवन में पादप रसायनों के बहुत से महत्वों के बारे में जाना।
- आधुनिक औषधियों के बारे में जानकारी प्राप्त की जिनमें पादप-उत्पादों का प्रयोग होता है जैसे वसा अम्ल, सगंध तेल, गम, रेजिन, एल्कैलॉइड और स्टेरॉइड। ये पदार्थ विशेषकर एल्कैलॉइड और स्टेरॉइड सूक्ष्म मात्रा में भी जंतुओं पर बड़ा गहरा प्रभाव डालते हैं।
- आपने औषधीय और सुगंधमूलक पादपों के वानस्पतिक नाम, कुल, आकारिकी, पारिस्थितिकी, प्रवर्धन, रासायनकि संघटन और उपयोगों के बारे में जानकारी प्राप्त की। इन्हें दोहराने के लिए तालिका 19.7 में सूचीबद्ध किया गया है। यह तालिका अंग्रेज़ी में भी दी जा रही है।
- पादपों में उत्पन्न होने वाले दो प्रकार के तेलों के बारे में पढ़ा ये हैं :

  1) अवाष्पशील तेल, जो संतृप्त और असंतृप्त कार्बनिक अम्लों के वास्तविक ग्लाइकोसाइड हैं, और

  2) सगंध तेल, जो पादपों के विभिन्न अंगों से पृथक किए जाने वाले अति सुगंधित वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों का मिश्रण है।

- इनके अलावा आपने पादपों से उत्पन्न होने वाले द्वितीयक उपापचयजों के बारे में जानकारी हासिल की जो जंतुओं और परजीवियों से पादपों की रक्षा करते हैं। मगर यही उपाचयंज मनुष्य के लिए बहुत उपयोगी हैं जिन्हें मसालों, सौंदर्य-प्रसाधनों, इत्रों, एंटीसेप्टिकों (पूतिरोधियों), कीटनाशकों और ऐरासोलों में प्रयोग किया जाता है।

तालिका 19.7:औषधीय और सुगंधमूलक पादप

क्रमांक	वानस्पतिक नाम	कुल	प्रयोग होने वाले भाग	महत्वपूर्ण रासायनिक घटक
1.	*रौवूल्फिया* जाति	एपोसायनेसी	मूल (जड़)	रिसर्पीन
2.	*ऐकोनिटम फेरॉक्स*	रैननकुलेसी	जड़	ऐकोनाइट
3.	*सिनकोना* जाति	रूबिएसी	छाल	एक्विनिन
4.	*डायोस्कोरिया* जाति	डायोस्कोरिएसी	कंद	डायोस्जेनिन
5.	*एट्रोपा बेलाडोना*	सोलेनेसी	पत्तियां	ऐट्रोपिन
6.	*डिजिटैलिस* जाति	स्क्रोफुलेरिएसी	पत्तियां	डिजिटैलिन
7.	*कैथरैंथस रोजियस*	एपोसायनेसी	पत्तियां	विनक्रिस्टिन और विनब्लेस्टिन
8.	*पैपावर सोम्नीफेरम*	पैपावरेसी	कैप्सूलों से प्राप्त लेटैक्स	अफ़ीम
9.	*स्टाइक्नॉस-नक्स-वोमिका*	लोगैनिएसी	बीज	स्ट्राइक्निन
10.	*क्लैविसेप्स परप्यूरिया*	कवक एस्को-माइसिटीस	स्क्लेरोशियम (फलन भाग)	एर्गोटैनिन
11.	*कैनाबिस सैटाइवा*	कैनाबिनेसी	पत्तियां, तना, पुष्पन प्ररोह	भांग, गांजा, चरस } टेट्राहाइड्रो-कैनाबिनॉल
12.	*निकोटिएना* जाति	सोलैनेसी	पत्तियां	निकोटिन
13.	*ऐरेका कटेचू*	ऐरेकसी	कठोर, सूखा भ्रूणपोष	ऐरेकोलिन
14.	*कोला निटिडा*	स्टर्कुलिएसी	बीज और पत्तियां	कोला रेड, कैफीन, थियोब्रोमिन, कोलैनिन (ग्लाइकोसाइड)
15.	*इरिथ्रोजाइलम कोका*	इरिथ्रोजाइलेसी	पत्तियां	कोकीन
16.	*सैंटालम एलबम*	सैंटलेसी	अंत:काष्ठ	अल्फा और बीटा सेंटालोल्स
17.	*वेटिवेरिया ज़िजैनाइडीज*	पोएसी	जड़	वेटिवरॉल

19.6 अंत में कुछ प्रश्न

1) द्वितीयक पादप उपापचयज क्या हैं? इनको उत्पन्न करने वाले पादपों में इन उपापचयजों की क्या भूमिका है?

....

....

....

....

....

2) हमारे जीवन में पादप रसायनों का क्या-क्या महत्व है?

....

....

....

....

....

3) निम्न में अंतर बताइए :

क) गांजा और चरस

....

....

ख) स्टेरॉइड और एल्कैलॉइड दवाएं

....

....

ग) सगंध और अवाष्पशील तेल

....

....

4) उन पादपों के वानस्पतिक नाम, कुल और पादपांगों के नाम बताइए जिनसे इन रोगों के उपचार के लिए दवाएं बनाई जाती हैं :

क) हृदय रोग

....

....

ख) मलेरिया

....

....

ग) सेक्स हार्मोन संबंधी विकार

....

....

घ) उच्च रक्तचाप

....

....

ड.) पार्किनसन रोग

....

....

च) हाजकिंस रोग

....

....

छ) ग्लॉकोमा नेत्ररोग

....

....

ज) प्रसव के पश्चात् रक्तस्राव

....

....

5) भारत के उन प्रमुख राज्यों के नाम बताइए जहां निम्नलिखित फसलों की गहन खेती होती है:

क) तंबाकू

....

ख) चंदन

....

ग) फीवर बर्क ट्री

....

19.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) स ii) स iii) ग iv) स v) ग vi) स
vii) स viii) स ix) ग x) ग xi) ग xii) स
xiii) ग xiv) स

2) i) भाग 19.3 देखें।

ii) क, ग, घ, और च सही हैं; तथा ख, ड. गलत हैं।

3) i), ii), iii) के लिए, भाग 19.4 को पढ़िए।

iv) क) चंदन/चंदन की लकड़ी

ख) अंत:काष्ठ, जड़ें/मूल

ग) जड़ों

घ) काष्ठ, पत्तियों

ड.) *ओसिमम सेंक्टम/Ocimum sanctum*

अंत में कुछ प्रश्न

1) भाग 19.1 देखें

2) भाग 19.1 और 19.2 देखें

3) क) उपभाग 19.3.1 देखें

 ख) भाग 19.2 देखें

 ग) भाग 19.4 देखें

4) क) *डिजिटैलिस परप्यूरिया, डी.ऐलैटा;* स्क्रोफुलेरिएसी; पत्तियां

 ख) *सिनकोंना* जाति, *सि. कैलिसेया;* रूबिएसी; छाल

 ग) *डायोस्कोरिया रोटुंडा, डा. डेल्टॉइडी, डा. प्रैज़ेरी;* डायोस्कोरेसी; कंद,

 घ) *रौवूल्फिया स्पेंटाइना;* एपोसायनेसी; जड़

 ड.) *ऐट्रोपा बेलाडोना;* सोलेनेसी; पत्तियां

 च) *कैथरैंथस रोज़ियस;* एपोसायनेसी, पत्तियां

 छ) *कैनाबिस सैटाइवस;* कैनाबिनेसी; पत्तियां, तना, पुष्पन प्ररोह टेट्राहाइड्रोकेनाबिनॉल यानि (tetrahydrocannabinol)।

 ज) *क्लैविसेप्स परप्यूरिया,* अनाज पर लगने वाला किट्ट कवक, स्क्लेरोशिया या फलन भाग

5) क) आंध्र प्रदेश

 ख) कर्नाटक

 ग) दक्षिण भारत (नीलगिरि, तमिलनाडु) और सिक्कम।

इकाई 20 काष्ठ, रेशा और संबंधित उत्पाद

इकाई की रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

20.2 व्यावसायिक महत्व की इमारती लकड़ी देने वाले पादप

20.2.1 सागौन

20.2.2 शीशम

20.2.3 चीड़

20.2.4 देवदार

20.3 भिन्न उपयोगों में काष्ठ

20.3.1 ईंधन

20.3.2 निर्माण सामग्री

20.3.3 कंटेनर

20.3.4 रासायनिक उत्पाद

20.4 कॉर्क

20.5 रबड़

20.6 व्यावसायिक महत्व के रेशा देने वाले पादप

20.6.1 कपास

20.6.2 जूट

20.6.3 नारियल

20.7 सारांश

20.8 अंत में कुछ प्रश्न

20.9 उत्तर

परिशिष्ट 20.1 : काष्ठ की विशेषताएं

20.1 प्रस्तावना

अब तक आप अच्छी तरह से जान गए होंगे कि पादपों को भोजन और पेयों के रूप में प्रयोग करने के अलावा भी हम उन्हें कई प्रयोजनों के लिए काम लाते हैं। इसके अतिरिक्त ये औषधियों और सगंध तेलों के स्रोत भी हैं। अनेक पादप उत्पाद हमारे घर निर्माण और वस्त्र बनाने के काम आते हैं। अनावृतबीजी और द्विबीजपत्री पादपों में द्वितीयक वृद्धि प्रक्रम के परिणामस्वरूप काष्ठीय ऊतकों की रचना होती है जो पौधे के बढ़ते भार को सहारा देने में सहायक हैं। हमें इमारती लकड़ी और ईंधन के लिए लकड़ी प्रदान करने के अलावा इन ऊतकों से हमें कई उपयोगी उत्पाद मिलते हैं जैसे गम, रेज़िन, तारपीन, कागज़, रेयॉन, कॉर्क और रबड़। विभिन्न पादप रेशे, नाना किस्म के उत्पादों, जैसे कि वस्त्र, चटाई, थैले और रस्सी बनाने के लिए आवश्यक कच्चा माल प्रदान करते हैं। इस इकाई में आप काष्ठ, रेशा उत्पादक पादपों और उनसे संबद्ध उत्पादों के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- महत्वपूर्ण काष्ठ (लकड़ी) और रेशा उत्पादक पादपों की सूची बना सके तथा उनके मुख्य लक्षणों के बारे में बता सकें,

- विभिन्न काष्ठ तथा रेशों के गुणों और लक्षणों के बारे में बता सकें, जिनके कारण उन्हें तरह-तरह से उपयोगों में लाया जाता है,
- विभिन्न प्रकार की लकड़ियों और रेशों में व्यावसायिक उपयोग के लिए, उनके संसाधन के बारे में बता पाएं,
- कागज-निर्माण के प्रक्रम को स्पष्ट कर सकें, तथा
- कार्क और रबड़ का एक विस्तृत वर्णन तैयार कर सकें।

20.2 व्यावसायिक महत्व की इमारती लकड़ी देने वाले पादप

लकड़ी ऐसा अति महत्वपूर्ण वनोत्पाद है जो चिरकाल से मानव जाति के लिए अपरिहार्य रहा है। आदि-मानव घर, औज़ार-उपकरण, बर्तन तथा दैनिक जीवन में काम आने वाले अन्य कई तरह के सामान बनाता था। आज के युग में भी हम इसे कई तरह से जैसे कि निर्माण कार्य के लिए, ईंधन के रूप में और कागज़ तथा रेयॉन उद्योग में कच्चे माल के रूप में प्रयोग करते हैं। आज जबकि तमाम तरह की धातुएं और कृत्रिम उत्पाद उपलब्ध हैं, इन सबके बावजूद अभी तक हम लकड़ी के कई उपयोगों का कोई विकल्प नहीं ढूंढ पाएं हैं। हमारे दैनिक जीवन में लकड़ी की भूमिका हमेशा महत्वपूर्ण बनी रहेगी, क्योंकि यह एक अक्षय प्राकृतिक संसाधन बनी रह सकती है बशर्ते इसका उपयोग सावधानी के साथ हो। अब आप लकड़ी के चार स्रोतों के बारे में जानेंगे, जिनका उपयोग हमारे देश में व्यावसायिक पैमाने पर किया जाता है।

20.2.1 सागौन (Teak)

वानस्पतिक नाम : *टेक्टोना ग्रैंडिस (Tectona grandis)*

कुल : वर्बिनेसी

प्रचलित नाम : सागौन; रंगून या बर्मा सागौन, मौलमीन सागौन, सिंगुरू, सागवान

n = 12, 18

वितरण

यह दक्षिण-पूर्व एशिया और मलय मूल का पादप है। उष्णकटिबंध प्रदेशों की यह एक अतिमहत्वपूर्ण व्यावसायिक इमारती लकड़ी है। बर्मा और थाइलैंड में इसके विस्तृत वन हैं। भारत में सागौन के वन मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, राजस्थान, केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश में हैं।

लक्षण

सागौन (चित्र 20.1) एक विशाल पर्णपाती (deciduous) वृक्ष है जिसकी संभावित आयु 200 वर्ष के लगभग होती है। इसमें रसदारू (sapwood) सफेद रंग का, और दीमकों और काष्ठ विगलनकारी कवकों के आक्रमण के प्रति संवेदनशील होता है। ताज़ा कटा अंत:काष्ठ (heartwood) सुनहरे पीले से पीले रंग का होता है जो खुली हवा में गहरे रंग का हो जाता है। यह कीट आक्रमण के प्रति अपेक्षतया असंक्राम्य होता है। लकड़ी छूने पर ग्रीज़ की तरह चिकनी लगती है और पुराने चमड़े जैसी गंध लिए रहती है। यह कठोर होती है और विकुंचित नहीं होती, फटती नहीं है या उसमें दरारें नहीं पड़ती। इसलिए सामान्य निर्माण कार्य के लिए यह एक महत्वपूर्ण इमारती लकड़ी है। परिरक्षकों से रक्षित नहीं होने पर भी यह क्षय और दीमकों के प्रति अति रोधी है और विमीय स्थायित्व के लिए प्रसिद्ध है। भारत में इसे 2000 वर्ष से भी अधिक समय से बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जा रहा है। सागौन की लकड़ी पर काम करना कोई कठिन नहीं है और यह चमक बहुत अच्छी देती है। इसकी काष्ठरेखा (grain) सामान्यतया सीधी और बुनावट खुरदरी (coarse) और असम (uneven) होती है। सूखे में इसका औसत भार 609–689 कि.ग्रा./घन मीटर पाया जाता है। इसमें सुस्पष्ट वर्धन वलय (growth rings) देखने में आते हैं। लकड़ी

वलय छिद्री (ring porous, परिशिष्ट 20.1 देखें) और विशाल वाहिकाओं की उपस्थिति से आसानी से पहचानी जाती है। टायलोस (tyloses) काफी आम हैं।

उपयोग

सागौन विश्व की एक बेहतरीन लकड़ी है। भारत में रेल के डिब्बे मुख्यत: इसी लकड़ी से बनाए जाते हैं। पोत निर्माण में यह बांज (oak) की लकड़ी से बेहतर होती है। इसकी लकड़ी का प्रयोग भवन, पुल, कैबिनेट और नौकाओं को बनाने, नक्काशी के काम, प्लाइवुड के निर्माण, फ्लोरिंग के लिए, खिलौने बनाने के लिए तथा और भी कई तरीके से किया जाता है।

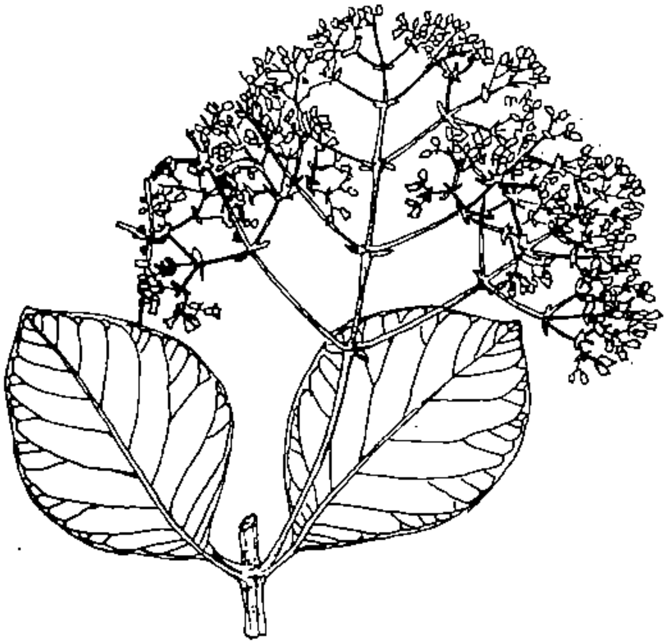

चित्र 20.1 : सागौन (*टेक्टोना ग्रैंडिस, Tectona grandis*) पुष्पन करती शाखा।

20.2.2 शीशम (Shisham)

वानस्पतिक नाम : *डैलबर्जिया सिसू* (***Dalbergia sissoo***)
कुल : फैवेसी
प्रचलित नाम : शीशम, रोजवुड, सीसू
n = 10

वितरण

डैलबर्जिया गहरे रंग की मूल्यवान इमारती लकड़ी प्रदान करने वाले उष्णकटिबंधी वृक्षों का एक प्रमुख जीनस है। *डै. लैटीफोलिया* (*D. latifolia*, इंडियन रोजवुड) और *डै. सीसू* शीशम की दो महत्वपूर्ण एशियाई जातियां हैं। कैबिनेट और फर्नीचर बनाने में उपयोगी इन दोनों जातियों को भारत की बेहतरीन लकड़ियों में माना जाता है। सीसू (चित्र 20.2) रावी नदी से आसाम तक के संपूर्ण उपहिमालयी भूभाग में, 1530 मी. की ऊंचाई तक पाया जाता है और यह जलधाराओं के आसपास मुक्त रूप से उगता है। इंडियन रोज़वुड मध्य और दक्षिणी भारत के साथ-साथ उप-हिमालयी क्षेत्र में भी पाया जाता है। *डैलबर्जिया* की अन्य आम जातियों के नाम इस प्रकार हैं : *डै.नाइग्रा* (*D.nigra*, ब्राज़ीलियाई शीशम), *डै.मेलैनोजाइलॉन* (*D.melanoxylon*, अफ्रीकी ब्लैकवुड), *डै.रेटुसा* (*D.retusa*, कोकोबोलो), *डै.स्टीवेंसोनाई* (*D.stevensonii*,होंडूरास रोजवुड)।

लक्षण

इन वृक्षों की पत्तियां पिच्छाकार तथा पुष्पगुच्छों में छोटे-छोटे, पीले या सफेद पैपिलियोनेटीय पुष्प होते हैं। शीशम में रसदारू सफेद से भूरे रंग का और अंत:काष्ठ सुनहरे-भूरे से गहरे भूरे रंग का होता है। यह

एक टिकाऊ, भारी लकड़ी है जिसका औसत भारत 800–850 कि.ग्रा./घन मीटर पाया जाता है। इंडियन रोजवुड में रसदारू पीला होता है मगर अंत:काष्ठ हल्के भूरे से बैंजनी रंग लिए होता है। यह विशेषकर खड़े पानी की स्थितियों में, एक टिकाऊ लकड़ी है। इसका भार 800–960 कि.ग्रा./घन मीटर होता है। इस पर काम करना सरल नहीं है मगर इसमें नक्काशी (उत्कीर्णन) अच्छी होती है।

उपयोग

डैलबर्जिया एक उच्च कोटि की फर्नीचर और कैबिनेट निर्माण की लकड़ी है। यह एक निर्माण और सामान्य उद्देश्यीय इमारती लकड़ी है। इससे रेलवे स्लीपरों, संगीत के साज़, हथौड़ों के हत्थे, जूतों की एड़ियां, तंबाकू के पाइप (टोबैको पाइप) बनाए जाते हैं। यह काठकोयला (charcoal) बनाने के लिए भी अच्छा है और इसे सजावटी पृष्ठावरणों (decorative veneers) के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

चित्र 20.2 : सीसू (*डैलबर्जिया सीसू, Dalbergia sissoo*) फलयुक्त टहनी।

20.2.3 चीड़ (Pine)

वानस्पतिक नाम : *पाइनस* स्पी. (*Pinus* spp.)

कुल : पाइनेसी

प्रचलित नाम : *पा. राक्सबर्घाइ* (कठोर चीड़, चीड़ पाइन, दीर्घपर्णी चीड़), *पा. वैलीचियना* (मृदु चीड़, कैल)

n = 12

वितरण

भारत में *पाइनस रॉक्सबर्घाइ* और *पा. वैलीचियाना* इमारती लकड़ी की दो सबसे लोकप्रिय *पाइनस* जातियां हैं। *पा. रॉक्सबर्घाइ* शिवालिक पर्वत श्रृंखला के बाहरी छोरों पर और हिमालयी घाटियों में पाया जाता है तथा *पा.वैलीचियाना* अधिक ऊंचाई पर उगता है। चीड़ के वन हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, पंजाब और उत्तर प्रदेश में हैं। व्यावसायिक उपयोग की अन्य इमारती चीड़ लकड़ी *पा. स्ट्रोबस* (*P. strobus* अमेरिकन येलो पाइन), *पा.मोंटीकोला* (*P. monticola*, वेस्टर्न व्हाइटपाइन), *पा. सिल्वेस्ट्रिस* (*P. sylvestris*. स्कॉटस पाइन), *पा. पोंडीरोजा* (*P. ponderosa*. पोंडीरोजा पाइन) से प्राप्त होती है।

लक्षण

चीड़ आम तौर पर एक लंबा वृक्ष है। इसमें विशिष्ट सूईनुमा पत्तियां और अलग-अलग नर और मादा शंकु होते हैं (चित्र 20.3 देखिए)। चीड़ की इमारती लकड़ी की मोटे तौर पर दो श्रेणियां हैं: मृदु (soft) या सफेद चीड़ (white pine) और कठोर, पीला या पिच पाइन (pitch pine)। पहले किस्म में मृदु, हल्के रंग की काष्ठ जोकि अंत:काष्ठ में गुलाबी और रसदारू में लगभग सफेद होती है। अंत:काष्ठ में रेज़िनी, भारी, कठोर, शक्तिशाली और चिरस्थायी काष्ठ होती है जिसमें काष्ठरेखा का पैटर्न सुस्पष्ट होता है। लकड़ी हल्की होती है उस पर काम करना सहज होता है मगर वह चिरस्थायी नहीं होती। इमारती लकड़ी की काष्ठरेखा सीधी और उसमें कम मात्रा में रेज़िन होता है।

उपयोग

मृदु पाइन का उपयोग माचिस, क्रेटों, बॉक्सों के निर्माण और स्थूल बढ़ईगिरी कार्य (rough carpentary work) के लिए किया जाता है। कठोर चीड़ की लकड़ी का प्रयोग भवनों, पुलों और पोतों के निर्माण में किया जाता है।

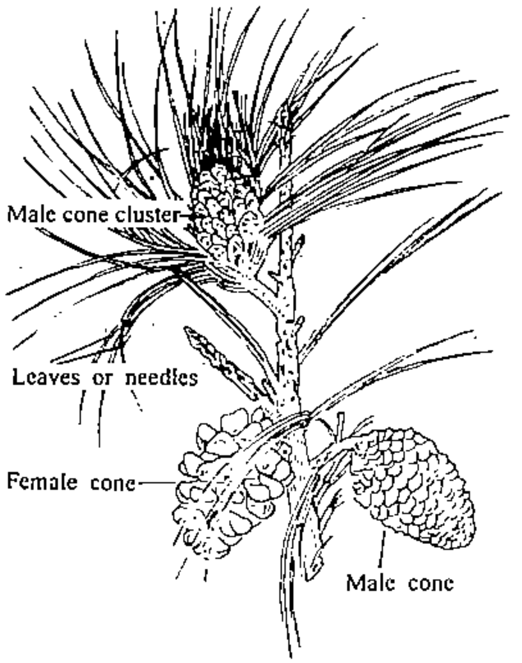

चित्र 20.3 : चीड़ (पाइनस स्पी., *Pinus* sp.)। नर और मादा शंकुओं के साथ चीड़ की एक शाखा का आरेखी स्केच।

20.2.4 देवदार (Cedar)

वानस्पतिक नाम: *सेड्रस डियोडारा (Cedrus deodara)*

कुल : पाइनेसी

प्रचलित नाम : देवदार, हिमालयी देवदार

n = 12

सेड्रस की निम्नलिखित चारों जातियां वास्तविक देवदार की श्रेणी में आती है - *से. एटलांटिका* (*C. atlantica*. एटलस या अटलांटिक देवदार), *से. लिबैनी* उपजाति *ब्रीवीफोलिया* (*C.libani* sub sp. *brevifolia*, साइप्रस देवदार), *से. लिबैनी* (*C. libani*, लेबनान का देवदार) और *से. डियोडारा* (देवदार या हिमालयी देवदार, चित्र 20.4 देखिए)।

वितरण

भारत में पाए जाने वाले मृदुकाष्ठों में देवदार सबसे महत्वपूर्ण और शक्तिशाली है, जो मुख्यत: उत्तर पश्चिमी हिमालय प्रदेश में कश्मीर, हिमालय प्रदेश, उत्तर प्रदेश और पंजाब में उगता है।

लक्षण

यह एक विशाल (45–60 मीटर ऊंचा) वृक्ष है। जिसमें खूब फैलने वाली क्षैतिजी शाखाएं होती हैं। ये शाखें ही इसे विशिष्ट गगनचुंबी बनावट देती हैं। इसका रसदारू सफेद होता है। मगर अंत:काष्ठ हल्का पीला होता है, जो अनावृत होने पर भूरा हो जाता है। इसकी इमारती लकड़ी अति चिरस्थायी यानि बेहद टिकाऊ (durable) होती है, जिस पर दीमक (termite) या कवक (fungi) विरले ही आक्रमण कर पाते हैं। लकड़ी सीधी काष्ठरेखित (straight grained) होती है और उसका गठन (texture) मध्यम परिष्कृत (fine) तथा समरूप (uniform) होता है। इसमें तेल की मात्रा अधिक होने के कारण इसे चिपकाना या पॉलिश करना थोड़ा कठिन रहता है। यह अतिरेज़िनी होती है इसलिए यह आंतरिक उपयोग के लिए उत्तम नहीं है।

उपयोग

इसका उपयोग मुख्यत: रेल के स्लीपरों, बीमों, खंभों, दरवाजों, खिड़कियों की चौखटों, पुल के निर्माण, नक्काशी, पैकिंग के कैस बनाने के लिए किया जाता है। इसमें गांठों (knots) की उपस्थिति के कारण यह पृष्ठावरणों के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

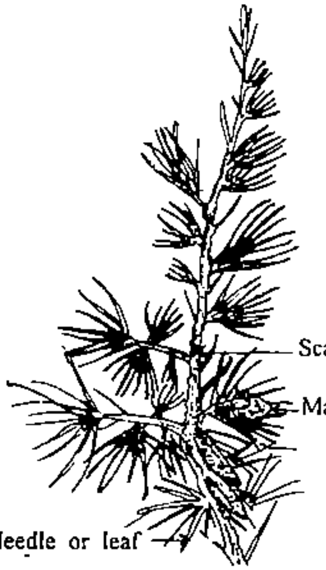

चित्र 20.4 : देवदार (सेड्रस डियोडारा, *Cedrus deodara*) एक शाखा का आरेखी स्केच। पत्तियां सूईनुमा और सर्पित विन्यास में होती हैं।

बोध प्रश्न 1

i) शीशम, सागौन, देवदार और चीड़ की इमारती लकड़ी के विशेष लक्षण बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 2

निम्न प्रयोजनों में काम आने वाली लकड़ियों के कुछ स्रोत बताइए :

i) फर्नीचर बनाने के लिए

....

....

ii) संगीत के साज़ बनाने के लिए

....

....

iii) घरों और पुल के निर्माण के लिए

....

....

iv) माचिस बनाने के लिए

....

....

v) स्थूल बढ़ई काम के लिए

....

....

vi) बीम, खंभे, दरवाजे और खिड़कियों की चौखट बनाने के लिए

....

....

20.3 भिन्न उपयोगों में काष्ठ

लकड़ियों को विभिन्न उपयोगों में लाने से पहले उन्हें अलग-अलग तरीके से संसाधित कर वांछित प्रयोजन के उपयुक्त बनाया जाता है। अलग-अलग लकड़ियां अलग-अलग उद्देश्य के लिए प्रयोग की जाती हैं। ऐसे ही कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं :

उपयोग के लिए लकड़ी का संसाधन

वृक्षों को यथासंभव भूमि के करीब से तने से काटा जाता है। पार्श्व शाखाओं को काटकर अलग कर दिया जाता है। अब तने को उपयुक्त लंबाई में काट लिया जाता हैं, जिन्हें सॉलॉग (sawlogs, लट्ठा) कहा जाता है। विश्व के कई हिस्सों में विद्युतचालित आरे हाथ से चलने वाले आरों की जगह अधिक से अधिक प्रयोग किए जा रहे हैं और ताजा बने लट्ठों के भावी प्रयोग के लिए, संसाधन प्रक्रम पूर्णत: यांत्रिक होता जा रहा है। विश्व के महत्वपूर्ण कच्चे माल में लकड़ी सबसे अनूठी है, तथा अनेक उपयोगों में जिसकी जगह कोई नहीं ले सका है। इसके असंख्य उपयोग हैं जैसे ईंधन के लिए, निर्माण कार्य के लिए, फर्नीचर, कंटेनर, यंत्रों से रूपांतरित उत्पाद, रासायनी व्युत्पन्न उत्पाद, इत्यादि।

20.3.1 ईंधन

ताप और खाना बनाने के लिए ईंधन के रूप में लकड़ी का प्रयोग प्रागैतिहासिक काल से किया जा रहा है। कुछ समय पहले से ही लकड़ी की जगह कुछ हद तक जीवाश्म ईंधनों (fossil fuels) या बिजली ने ले ली है। तब भी ईंधन के लिए लकड़ी की खपत अन्य प्रयोजनों के लिए इसके उपयोग से काफी अधिक है। लकड़ी एक उत्तम ईंधन है क्योंकि सूखी लकड़ी का 90 प्रतिशत दाह्य (combustible) होता है यानि वह

आसानी से जल जाती है। लकड़ियों के ईंधन मान (fuel value) में भारी अंतर पाया जाता है, जो मुख्यत: उनके घनत्व, रासायनिक संघटन और नमी की मात्रा पर निर्भर करता है (चित्र 20.5)। बीच (beech), बांज (oak), मैपिल (maple), भूर्ज (birch) जैसी दृढ़काष्ठों (hardwoods) को जलावन की उत्तम लकड़ी माना जाता है। सीजन की हुई (seasoned) लकड़ी का औसत कैलोरी मान (calorific value) 4600 कै०/कि.ग्रा. (cal/kg) होता है।

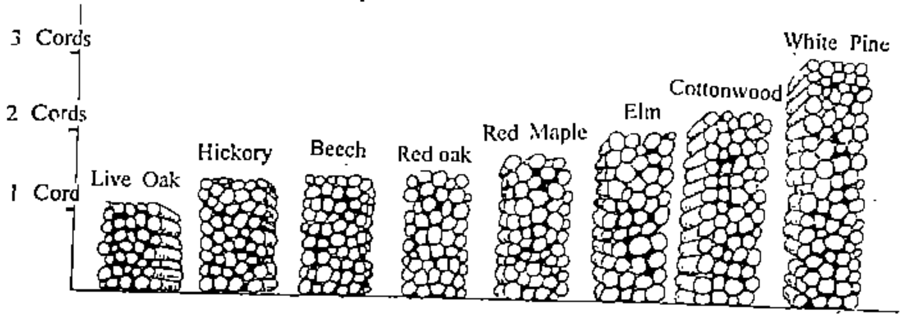

चित्र 20.5 : यह चित्र दर्शाता है कि समतुल्य मात्रा में उष्मा प्रदान करने के लिए, अलग-अलग किस्म की लकड़ी की अलग-अलग मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। खास किस्म की लकड़ी द्वारा दी जाने वाली उष्मा की मात्रा उसके घनत्व, रासायनिक संघटन और जल की मात्रा पर निर्भर करती है।

20.3.2 निर्माण सामग्री

पोल (Poles)

इन्हें मुख्यत: टेलीफोन, टेलीग्राफ और विद्युत् संचार लाइनों के लिए लगाया जाता है। इनके लिए टिकाऊ लकड़ी, जो हल्की, सीधी और शक्तिशाली हो, प्रयोग की जाती है। इसके मुख्य स्रोत शंकुधारी (coniferous) वृक्ष हैं। इस तरह की लकड़ी से कोठार और आश्रय स्थल बनाए जाते हैं।

बल्लियां (Pilings)

गोदियों, पुलों और जहाज़-घाटों के निर्माण में इनका प्रयोग होता है। ये सीधी, गोल इमारती लकड़ी हैं जिन्हें निर्माण कार्य के लिए, पानी के नीचे ले जाया जाता है। इसके लिए साधारणतया चीड़ (pine) और बांज (oak) की लकड़ी प्रयोग की जाती है। बांज की लकड़ी मुख्यत: गोदी और बंदरगाह निर्माण और मैरीन पाइलिंग (marine piling) के लिए काम लाई जाती है।

खंभे (Posts)

इनसे फार्म (farm) और रैंच (ranch) की सीमाओं, रेल मार्ग और सड़कों के किनारे बाड़ (fence) लगाई जाती है। इसके लिए लकड़ी में शक्ति, हल्कापन और चिरस्थायित्व के गुण होने जरूरी हैं। कोई भी स्थानीय जाति की लकड़ी प्रयोग की जा सकती है।

खदानी लकड़ी (Mine timbers, माइन टिम्बर)

इसमें नाना किस्म के टेक शामिल हैं जैसे प्रॉप या लैग (props or legs), क्रॉस-बार (cross-bars) या कैप (caps), जिन्हें खदान की सुरंगों के निर्माण में मिट्टी इत्यादि को गिरने से रोकने के लिए या फिर उन जगहों पर प्रयोग किया जाता है जहां पर भूमिगत शैल-समूहों के धंसने की संभावना हो। इसके लिए किसी भी किस्म की लकड़ी प्रयोग की जा सकती है बशर्ते वह टिकाऊ, मजबूत, क्षय और संक्षरणरोधी हो। इसमें अधिकतर कठोर काष्ठ ही प्रयोग की जाती है।

रेलमार्ग टाई या स्लीपर या क्रॉस टाई (Railroad ties or sleepers or cross ties)

इन्हे रेल की पटरियों को टेक देने और जकड़े रखने के लिए प्रयोग किया जाता है। इनके लिए प्रयोग की जाने वाली लकड़ी टिकाऊ, विवेचनीय (treatable) हो और जिसमें भारी और द्रुतगामी यातायात के प्रभाव और दबाव को सहने की क्षमता हो, यह कीलों और पेंचों को जकड़े रख सके, तथा आसानी से उपलब्ध हो, साथ ही कीमत में सस्ती हो। इस उद्देश्य के लिए बांज की लकड़ी का प्रयोग सबसे अधिक होता है। स्थानीय सुलभता के अनुसार अन्य कठोर काष्ठ भी प्रयोग किए जाते हैं। इन्हें परिरक्षकों (preservatives) से विवेचित किया जाता है और ये 30 वर्ष तक चल सकती है।

पृष्ठावरण (Veneers)

ये समरूप मोटाई (uniform thickness) की लकड़ी की पतली चादरें (thin sheets) हैं, जिन्हें लट्ठों का विशल्फन (peeling), स्लाइसन से या आरी से चीर कर (sawing) बनाया जाता है (चित्र 20.6)। पृष्ठावरण इन तीन विधियों में से किसी एक द्वारा बनाया जाता है : घूर्णी कर्तन (rotary cutting), स्लाइसिंग (slicing) और चिराई (sawing)। इनमें से सबसे अधिक काम लाई जाने वाली विधि घूर्णी कर्तन है। इस प्रक्रम के लिए चुनी गई लकड़ी के लट्ठों की छाल उतार कर उसे भाप या गर्म पानी में डुबाकर मुलायम बनाया जाता है। इससे लकड़ी की कटाई आसान हो जाती है और लकड़ी के फटने या टुकड़े होने की संभावना भी कम हो जाती है। इसके बाद इन्हें वांछित लंबाई में क्रॉस काटा जाता है। इसके लिए डॉगलस फर (douglas fir), पॉडीरोज़ा पाइन (ponderosa pine) और पौपलर (poplar) जैसे कई किस्म की लकड़ियां प्रयोग की जाती हैं। अखरोट (walnut), सागौन और शीशम जैसे महंगी लकड़ियों से उत्तम पृष्ठावरण बनाए जाते हैं।

प्लाईवुड (Plywood)

यह एक पतला बोर्ड होता है जो पृष्ठावरण की तीन या अधिक अति पतली चादरों से बना होता है जिन्हें एक-दूसरे से चिपका कर दबाव दिया जाता है। इनकी मोटाई 3–25 मि.मी. होती है। पृष्ठावरणों को इस तरह से रखा जाता है कि प्रत्येक की काष्ठरेखा संलग्न चादर के समकोण पर (क्रॉस-बैंड में) होती है, जिससे उसका गठन, लकड़ी से भी अधिक मजबूत हो जाता है। ठोस लकड़ियों की अपेक्षा प्लाईवुड का एक बड़ा लाभ इसका विमीय स्थायित्व (dimensional stability) है और साधारण लकड़ी की अपेक्षा इसके आवलित (warp) होने या ऐंठन (twist) की संभावना काफी कम रहती है। प्लाईवुड में शक्ति दोनों दिशाओं में वितरित होती है और इसमें किनारों के समीप कील और पेंच लकड़ी के फटे बिना ठोके जा सकते हैं। इसके अलावा इसे सांचे में ढाला जा सकता है। काफी बड़े आकार में सुलभ होने के कारण इसे पार्टीशनों, दीवारों और छतों के काम लाया जाता है। प्लाईवुड बनाने में सागौन और बांज जैसी लकड़ी प्रयोग की जाती हैं। प्लाईवुड का प्रयोग कैबिनेट के भीतरी काम, छत बनाने और दीवारों पर आवरण लगाने, फर्श बिछाने, वाहनों के बॉडी पार्ट बनाने, बोर्ड, सीलिंग, कांउटर, डेस्क, ड्रावर (drawers) और फर्नीचर बनाने के लिए होता है।

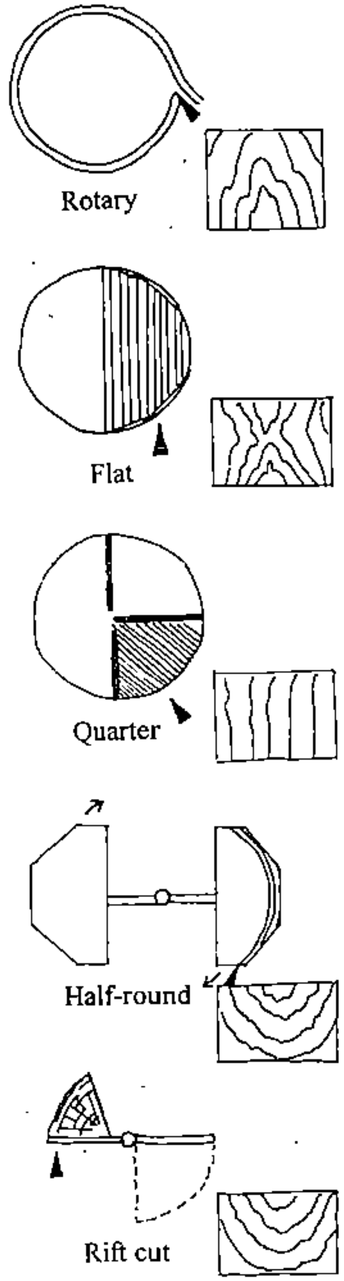

चित्र 20.6 : पृष्ठावरण काटने की विभिन्न विधियों और उत्पन्न उत्पादों को दिखाता चित्र। (विलियार्ड, 1975 से पुनर्चित्रित)।

20.3.3 कंटेनर

पीपा निर्माण कला (cooperage) : यह लकड़ी से कंटेनर जैसे पीपे, टब, टंकियां और लकड़ी की पाइप लाइनें बनाने की कला है। पीपा निर्माण उद्योग के दो प्रधान खंड हैं: पहला है; स्लैक या शुष्क (slack or dry) पीपा निर्माण जो सूखी सामग्री या माल के पैकेजिंग, स्टोरिंग और परिवहन के लिए किया जाता है। दूसरा है बीयर, व्हीस्की और मदिरा सिरपों जैसे द्रव्यों को रखने के लिए किया जाने वाला दृढ़ या नम (tight or wet) पीपा निर्माण। स्लैक पीपा निर्माण के लिए चुनी जाने वाली लकड़ी सस्ती, हल्की कारीगरी में आसान, प्रत्यास्थ और विकुंचन से मुक्त हो। इसके लिए आमतौर पर चीड़, बीच, बांज और मैपिल की लकड़ी प्रयोग की जाती है। दृढ़ पीपा निर्माण के लिए उसकी भीतरी भित्तियों को पैराफिन, सोडा के सिलिकेट, या गोंद जैसे किसी अक्रिय (inert) पदार्थ का लेप लगाया जाता है जिससे उसमें रखे जाने वाले तरल पदार्थ का रिसाव और संदूषण (contamination) रोका जा सके। इसके लिए प्रायः कठोर काष्ठ विशेषकर बांज का प्रयोग उसकी शक्ति और चिरस्थायित्व, अभेद्यता और ऊष्मा रोधी गुणों के कारण किया जाता है। इसके अलावा रेड गम, सफ़ेद अंगू (white ash), पीली भूर्ज (yellow birch), डॉगलस फर की लकड़ी भी प्रयोग की जाती है।

20.3.4 रासायनिक उत्पाद

लकड़ी मुख्यतः सेलुलोस, हेमीसेलुलोस और लिग्निन की बनी होती है। इसक अलावा उसमें अलग-अलग मात्रा में टैनिन, रेज़िन गम बौर लेटेक्स भी पाए जाते हैं। यह विभिन्न विधियों से बनाए जाने वाले अनेक रासायनिक उत्पादों के निर्माण के लिए बुनियादी कच्चे माल का काम करती है। कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं:

काष्ठ आसवन (wood distillation)

यह एक प्राचीन प्रक्रम है। भंजी आसवन (destructive distillation) के लिए लकड़ी का मुख्य स्रोत लकड़ी काटने और आरा मशीनों के काम से बचने वाला लकड़ी का बुरादा है। लकड़ी को ढलुंवा लोहा (cast iron) और स्टील रिटॉर्ट या भट्टी में वायु की अनुपस्थिति में यानि निर्वात में गर्म किया जाता है। चारकोल (काठकोयला) अवशेष रिटॉर्ट में रह जाते हैं और निकलती भाप को जल-शीतित संघनित्र (water cooled condensers) से ले जाया जाता है। संघनित (condensate) पाइरोलिग्नियस अम्ल (pyroligneous acid) को निथरने दिया जाता है और ऊपरी भाग में विद्यमान तरल से टार (tar) और तेल पृथक कर लिए जाते हैं। इसी बीच असंघननीय गैसों को रोक दिया जाता है और उन्हें भट्टी गर्म करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

प्रयुक्त लकड़ी की किस्म के अनुसार आसवन को कठोर काष्ठ और मृदु काष्ठ आसवन (softwood distillation) में वर्गीकृत किया जा सकता है। कठोर काष्ठ आसवन (hardwood distillation) में घनी और भारी लकड़ियों जैसे शूगर भोपिल, भूर्ज, बांज, बीच का प्रयोग किया जाता है। इससे प्राप्त होने वाले उत्पाद इस प्रकार हैं :

i) चारकोल या काठकोयला - ठोस अवशेष;

ii) पाइरोलिग्नियस अम्ल - यह एक पीली हरी, दुर्गंधयुक्त लिकर या संघनित है जो जल, एसिटिक अम्ल, मिथैनॉल और घुले टार का बना होता है;

iii) काष्ठ टार - जल में अविलेय अंश, जो कि जलीय पाइरोलिग्नियस अम्ल के तल में बैठ जाता है।

iv) असंघननीय काष्ठ गैस (wood gas) जिन्हें ईंधन या रोशनी के लिए प्रयोग किया जाता है।

दूसरी ओर मृदु काष्ठ आसवन में रेज़िनी चीड़काष्ठ प्रयोग की जाती है मुख्य रूप से दीर्घपर्णी और स्लैश पाइन (slash pine)। इसके मुख्य आसवन उत्पाद हैं: चारकोल, काष्ठ तारपीन (wood turpentine), चीड़ तेल (pine oil, पाइन ऑयल), चीड़ तारकोल (pine tar, पाइन टार) या अलकतारा, तारकोल तेल (tar oils), काष्ठ गैस और लघु मात्रा में काष्ठ एल्कोहल (मेथेनॉल)।

नौसेना स्टोर के लिए ताड़न (tapping)

नौसेना स्टोर (naval stores) शब्द आरंभ में, चीड़ के वृक्षों को ताड़ने के बाद प्राप्त पिच (pitch), के लिए प्रयोग किया गया था। पिच और इसके व्युत्पन्नों का यूरोपीय जहाज़रानी उद्योग में सोलहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में बड़े पैमाने पर लकड़ी के पालदार पोतों के पटरों पर काली पट्टी करने तथा साज-सामान (रिगिंग) और लंगर छेदों को जलरोधी बनाने के लिए प्रयोग किया जाता था। आजकल संयुक्त राज्य अमेरिका में इस प्रयोजन के लिए चीड़ की दीर्घपर्णी और स्लैश पाइन जातियां तथा यूरोप में जहाज़रानी चीड़ (मैरीटाइम पाइन), *पाइनस पाइनेस्टर* (*Pinus pinaster*) का उपयोग किया जा रहा है। इधर भारत में प्राय: *पाइनस रॉक्सबर्घाइ* प्रयोग में लाई जाती है। चीड़ों के अलावा इस प्रयोजन के लिए डॉगलस फर, स्प्रूस और देवदार जैसे अन्य कोनिफर जातियां भी प्रयोग में लाई जा रही हैं। इस उद्योग द्वारा तीन प्रकार के उत्पाद प्राप्त किए जाते हैं - (i) गम तारपीन और गम रोज़िन (गंधराल) जिन्हें सजीव वृक्षों से निकाले गए गम ओलियोरेज़िन (oleoresin) से व्युत्पन्न किया जाता है; (ii) काष्ठ तारपीन और काष्ठ गंधराल जिन्हें लकड़ी कटाने के बाद छोड़े गए मृसणित (पानी से भीगकर नम हुए) या कतरे हुए ठूंठों और जड़ों पर वाष्प और उपयुक्त विलेय की क्रिया से प्राप्त किया जाता है; तथा (iii) सल्फेट तारपीन और सल्फेट गंधराल (सल्फेट रोज़िन), ये पल्प (लुग्दी) मिलों के महत्वपूर्ण उपोत्पाद हैं जो रेज़िनी काष्ठ की लुग्दी बनाने के लिए सल्फेट प्रक्रम काम में लाती हैं।

कच्चा या अशोधित तारपीन, वृक्षों के लगभग 23 से.मी. या अधिक मोटाई प्राप्त करने के बाद उनसे निकाला जाता है। वृक्ष के मूल के समीप छाल को उतार कर भूस्तर से कुछ सेंटीमीटर ऊपर एक हल्का तिरछा कटाव किया जाता है। कच्चे तारपीन की धार को ग्राही पीपे में डालने के लिए उस कटाव पर एक V-आकार की धातु द्रोणिका (metal trough) ठोक दी जाती है। इसके बाद छाल में गटर (जहाँ से तारपीन निकलता है) से ऊपर एक हल्का घाव किया जाता है, जिससे स्राव टपकता है। वृक्ष का चारों तरफ़ से छीलन 10-20 वर्ष तक चलता है। इसके बाद इस पेड़ से और तारपीन नहीं निकाला जाता, क्योंकि तारपीन निकालने के लिए किए गए घाव कभी नहीं भरते, ऐसा इस प्रक्रम में एधा (कैम्बियम) के

कट जाने के कारण होता है। अशोधित तारपीन में 20 प्रतिशत तारपीन की स्पिरिट, 65 प्रतिशत रोज़िन (गंधराल), 5 से 10 प्रतिशत जल, कुछ पादप कोशिकाएं और धूल पाई जाती है। इसके उपयोगी घटकों को पृथक करने के लिए तारपीन का आसवन, वाष्प आसवन संयंत्रों में किया जाता है। आसवित में जल और तारपीन स्पिरिट होते हैं जबकि पीछे छूटने वाला तप्त कहरूवा से गहरे लाल रंग का अवशेष व्यावसायिक रोज़िन होता है।

सेलुलोस से व्युत्पन्न उत्पाद

सेलुलोस एक कार्बोहाइड्रेट $[(C_6H_{10}O_5)_n]$ है। ये कोशिका भित्तियों का महत्वपूर्ण घटक है। सेलुलोस के स्रोत के रूप में पहले कपास का प्रयोग होता था। मगर अब प्राय: काष्ठ लुग्दी का इस्तेमाल किया जाता है। इसका प्रयोग कागज तथा रेयॉन बनाने में किया जाता है।

काष्ठ लुग्दी (wood pulp) का निर्माण

लकड़ियों को निम्न तीन प्रक्रमों में से किसी एक द्वारा, काष्ठ को रेशेदार पिंड (काष्ठ लुग्दी) में बदला जाता है - i) यांत्रिक (जो सर्वाधिक किफ़ायती और उच्चतम उत्पादक है), ii) रासायनिक और iii) अर्ध-रासायनिक।

i) **यांत्रिक लुग्दीकरण** (mechanical pulping या पिष्ट काष्ठ प्रक्रम) - इसमें सिर्फ हल्के रंग और दीर्घ रेशे वाली शंकुधारी लकड़ियां प्रयोग की जाती हैं। भारत में इस प्रक्रम का उपयोग सलई-काष्ठ (*बोसवेलिया सिरेटा, Boswellia serrata*) के लिए सबसे ज़्यादा प्रयोग होता है। छिली या छाल उतरी लकड़ी को तेज़ी से घूमती चक्की में पीसा जाता है। प्राप्त लुग्दी को धोया और आगे संसाधित किया जाता है। यह प्रक्रम उच्च उत्पादक है (जिसमें लकड़ी के शुष्क भार का लगभग 95 प्रतिशत निकल आता है)। मगर लिग्निन और अन्य असेलुलोसी उत्पाद इससे अलग नहीं हो पाते और लुग्दी तथा इसके उत्पाद ज्यों-ज्यों पुराने होते जाते हैं उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है और रंग पीला हो जाता है। इसके अलावा इससे बनने वाले कागज में अच्छी क्षमता, स्थूलता और मुद्रण (छपाई) गुणवत्ता पाई जाती है। इस तरह की लुग्दी ज्यादातर न्यूजप्रिंट, आवरक पत्र (रैपिंग पेपर) और वॉल पेपर को बनाने के काम आती है।

ii) **रासायनिक लुग्दीकरण (chemical pulping)** - इस प्रक्रम में कम या रेजिनविहीन मृदुकाष्ठ (स्प्रूस फर, हेमलॉक जिसे सरल भी कहा जाता है) और कुछ कठोर काष्ठ प्रयोग की जाती हैं। लकड़ी के कतरों को उच्च तापमान पर विभिन्न रासायनिक घोलों में पकाया जाता है जिससे लिग्निन, हेमीसेलुलोस और कोशिका भित्ति के अन्य असेलुलोसी घटक घुल जाते हैं और पीछे लुग्दी के रूप में लगभग शुद्ध सेलुलोस रेशे छूट जाते हैं। यद्यपि यह एक अल्प-उत्पादक प्रक्रम (45–60 प्रतिशत) है, तथापि इससे उच्च कोटि का कागज मिलता है और वर्तमान में ज्यादतर काष्ठ लुग्दी रासायनिक विधियों से ही तैयार की जाती है। इसके लिए लकड़ी से छाल उतार कर लट्ठों को छोटे-छोटे कतरों में काट दिया जाता है जो 12–25 मि.मी. लंबे और 3–4 मि.मी. मोटे होते हैं। लुग्दीकरण विशाल स्टील डाइजेस्टरों मे सल्फाइट, सल्फेट या सोडा प्रक्रम द्वारा किया जाता है। इन डाइजेस्टरों (digesters) में वांछित दाब और तापमान हो जाने तक वाष्प प्रवाहित की जाती है। पाक क्रिया के अंत में डाइजेस्टर के तल में स्थित वाल्व से संपूर्ण दाब निकाल दिया जाता है। दाब के इस तरह से एकाएक निकल जाने पर कतरे तार-तार हो जाते हैं और रेशे अलग हो जाते हैं। सल्फाइट लुग्दी पुस्तक, बांड, टिशू और आवरक-पत्र में काम आने वाले कागज के निर्माण में प्रयोग की जाती है। इसके अलावा यह रेयॉन और अख़बारी कागज़ (न्यूज़प्रिंट) में भी प्रयुक्त होती है। सोडा लुग्दी (जो सल्फाइड लुग्दी के साथ मिली होती है) का प्रयोग पुस्तकों और बेहतर कोटि की पत्रिकाओं में प्रयुक्त होने वाले कागज को बनाने के लिए किया जाता है। सल्फेट लुग्दी मज़बूत, क्राफ्ट आवरक कागज, पेपर बैग और पेपर बोर्ड बनाने के लिए प्रयोग होती है।

iii) **अर्ध-रासायनिक लुग्दीकरण (semi-chemical pulping)** - इस प्रक्रम में साधारणतया कठोर काष्ठ प्रयोग की जाती हैं। इसके लिए लकड़ी के कतरों को पहले मंद रासायनिक क्रिया द्वारा कोमल बनाया जाता है जिसके बाद यांत्रिक क्रिया द्वारा विरेशायन (defibration) पूरा होता है। इस प्रक्रम द्वारा प्राप्त लुग्दी काष्ठ के शुष्क भार के 65–85% होती है। रासायनिक लुग्दीकरण की तुलना में इसमें अधिक उत्पादन इसलिए होता है कि इस प्रक्रम में 50 प्रतिशत लिग्निन औ 30–40 प्रतिशत हेमीसेलुलोस लुग्दी में बचा रहता है। काष्ठ को पकाने के लिए उदासीन (neutral) सोडियम

सल्फाइट सबसे उपयोग किया जाने वाला रासायनिक है। पकने के बाद भी लकड़ी ठोस मृदु कतरों में रहती है और उन्हें यांत्रिक विरेशायनिक (defibred mechanically) किया जाता है। इस तरह की लुग्दी नालदार गत्ता (corrugated board), छत नमदा (roofing felt), तापरोधी बोर्ड (insulating board), निम्न ग्रेड के आवरक पत्र (wrapping paper) बनाने के लिए अति उपयुक्त है। उत्तम कोटि का न्यूज प्रिंट (अखबारी कागज) मृदुकाष्ठ की अर्धरासायनिक लुग्दी और दृढ़काष्ठ की यांत्रिक लुग्दी के मिश्रण से बनाया जाता है।

कागज़ निर्माण

उन्नीसवीं सदी तक इसके लिए प्रधान स्रोतों के रूप में कपास और सन के चिथड़ों का प्रयोग किया जाता था और आज भी इनसे सर्वोत्तम कोटि का कागज बनाया जाता है। आजकल काष्ठ रेशे इसके सबसे महत्वपूर्ण कच्चा माल हैं (चित्र 20.7)। विश्व में निर्मित कागज और गत्ते का 97 प्रतिशत, काष्ठ लुग्दी से बनाया जाता है, जिसमें 85 प्रतिशत शंकुधार वृक्षों जैसे स्प्रूस (*पाइसीया* जाति, *Picea* spp.), फर (*ऐबीज* जाति, *Abies* spp.) और चीड़ (*पाइनस* जाति) से व्युत्पन्न की जाती है। कागज निर्माण में प्रयुक्त होने वाली कठोर काष्ठ, पॉपलर (*पॉपुलस* जाति, *Populus* spp.), भूर्ज (*बेटुला* जाति, *Betula* spp.), बीच (*फैगस* जाति, *Fagus* spp.) और यूकेलिप्टेस (यूकेलिप्टस जाति, *Eucalyptus* spp.) हैं। कागज निर्माण में काम आने वाली अन्य सामग्रियों में वस्त्र रेशे (textile fibres) जैसे जूट, सन, मनीला और सीसल रेशा, कृषि अवशिष्ट तथा कपड़े के कारखानों के त्याज्य, या बिनौले के संसाधन के दौरान प्राप्त होने वाला बिनौला रेशा शामिल हैं। भारत में इसके लिए प्रयोग किया जाने वाला मुख्य कच्चा माल बांस [विशेषकर *बैम्बुसा एरंडिनेसिया* (*Bambusa arundinacea*) और *डेंड्रोकैलमस स्ट्रिक्टस* (*Dendrocalamus strictus*], सबई-घास (*यूलैलियोप्सिस बाइनैटा, Eulaliopsis binata*), खोई और सलई-काष्ठ (*बोस्वेलिया सीरेटा, Boswellia serrata*) हैं। चिथड़ों, सन की रस्सियों, जूट अवशिष्ट और रद्दी कागज को भी लुग्दी बनाने के काम लाया जाता है।

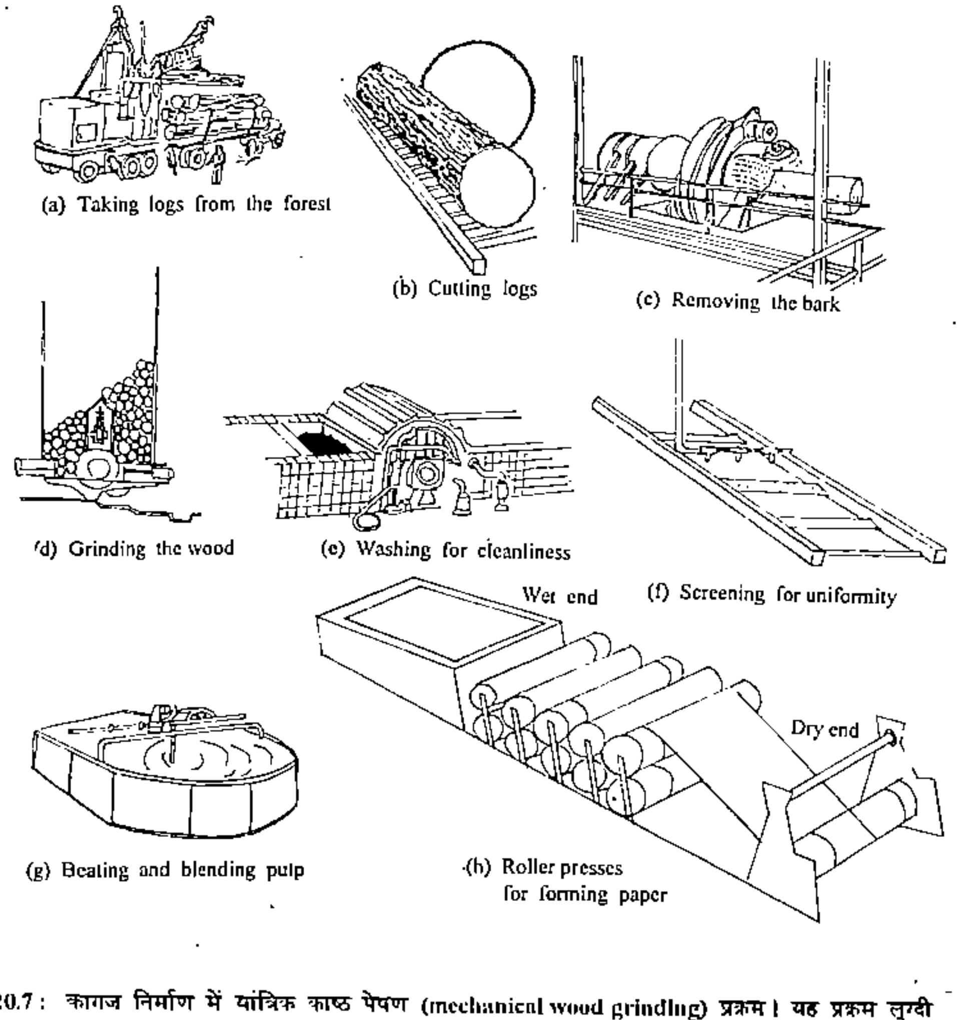

चित्र 20.7 : कागज निर्माण में यांत्रिक काष्ठ पेषण (mechanical wood grinding) प्रक्रम। यह प्रक्रम लुग्दी में पेक्टिन और लिग्निन छोड़ देता है, जिससे कागज पुराना पड़ने पर पीला हो जाता है। (यह चित्र सिम्पसन और कोनर ओगोरजेली, 1986, से लिया गया है)।

इसके बाद लुग्दी को धोया जाता है, स्क्रीन किया या छाना जाता है, विरंजित किया जाता है और बेला जाता है। स्क्रीनिंग गांठों, अनपके कतरों और अन्य बाहरी पदार्थों को रोक लेती है और स्क्रीन के छिद्रों के आकार को नियंत्रित करके यह लुग्दी को विभिन्न ग्रेडों में पृथक कर देती है। शेष बचे असेलुलोस अंश को क्लोरीन और उसके यौगिकों द्वारा विरंजित कर दूर कर दिया जाता है। यह लुग्दी को सफेद बनाता है और अवशिष्ट लिग्निन को दूर करने में सहायक है। लुग्दी को कई बार विरंजित करने की आवश्कयता पड़ सकती है। विरंजन के बाद उसे जल से धोया जाता है।

रासायनिक और अर्धरासायनिक प्रक्रमों से प्राप्त लुग्दी को विस्पंदित (beat) किया जाता है (चित्र 20.8)। यह रेशों को एक दूसरे से पृथक करता है, उन्हें छोटा और कूट (bruise) देता है। इसके फलस्वरूप कागज निर्माण मशीन में रेशे एक दूसरे से चिपक जाते हैं जिससे कागज की समरूप शीट बनती है। विस्पंदन या कूटने की कोटि प्राप्त होने वाले कागज की बनावट को प्रभावित करती है। कागज की गुणवत्ता को सुधारने के लिए विस्पंदक में लुग्दी स्कंद में नाना प्रकार के पदार्थ मिलाए जाते हैं। खनिज पूरक (मिनरल फिलर) अंतरालों को भरकर कागज को भार और अपारदर्शिता (opacity) प्रदान करते हैं। चीनी मिट्टी (चाइना क्ले), टैल्क (talc), कैल्सियम सल्फेट, जिंक सल्फाइड, टाइटेनियम ऑक्साइड

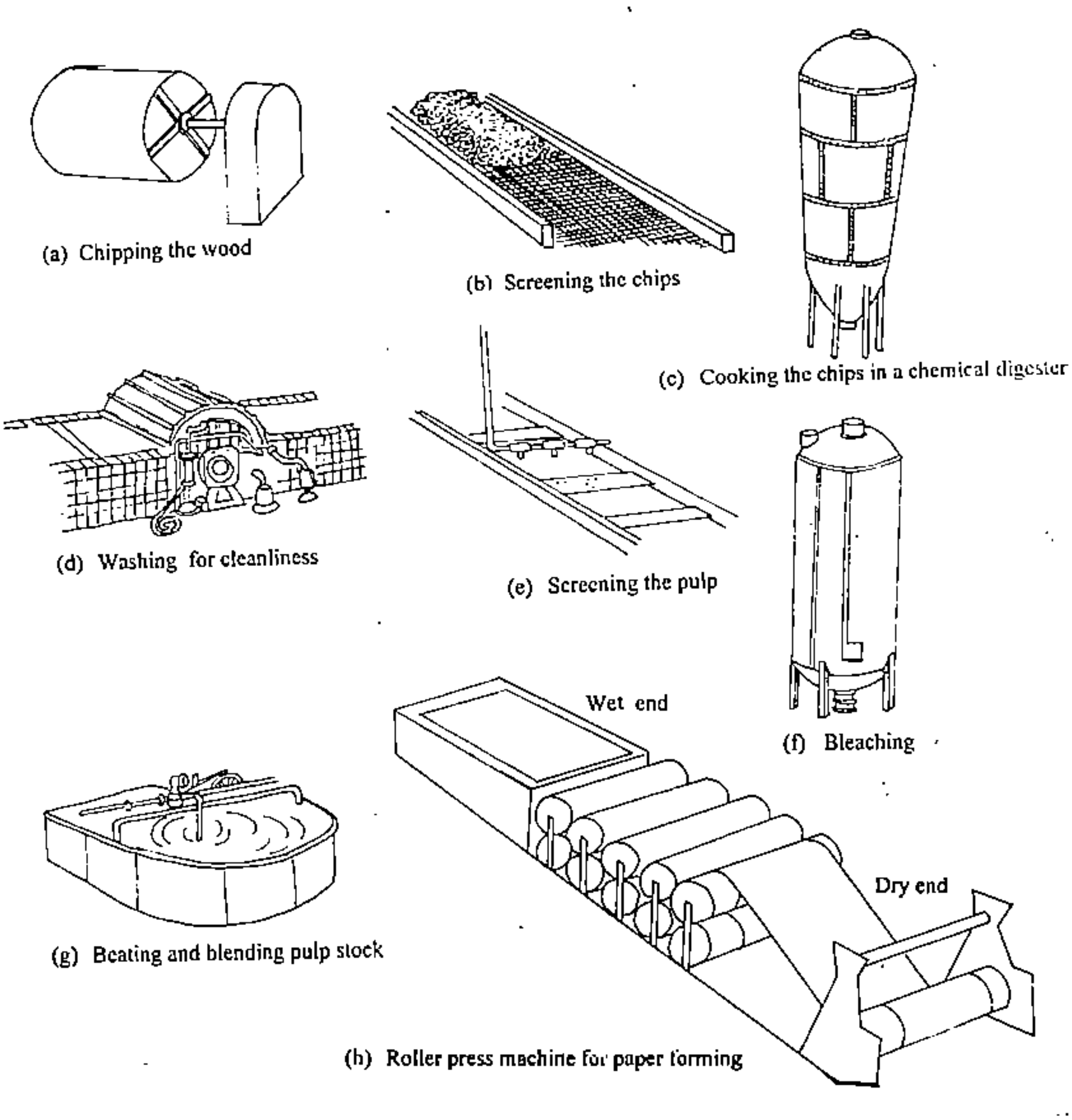

चित्र 20.8 : कागज निर्माण के रासायनिक प्रक्रम को दिखाता चित्र। लट्ठों के छोटे-छोटे कतरे बनाए जाते हैं a)। उन्हें स्क्रीन किया जाता है b) और फिर डाइजेस्टर टंकी में प्रवाहित किया जाता है जिसमें रसायन भरे होते हैं c) । यहां लकड़ी के कतरों का रासायनिक विघटन होता है जिससे रेशे मुक्त हो जाते हैं। इसमें प्रक्रिया के दौरान लिग्निन अलग हो जाते हैं, और केवल रेशे ही रह जाते हैं। इसके पश्चात् रेशों से कागज बनाने के लिए उन्हें धोया जाता है d) । स्क्रीन किया जाता है e)। विरंजित किया जाता है f)। सम्मिश्रित किया जाता है g)। और रोलर से संपीड़ित कर कागज बनाया जाता है h)। (चित्र सिम्पसन और कोनर ओगोरज़ैली, 1986 से पुनःचित्रित)।

और कैल्सियम कार्बोनेट महत्वपूर्ण पूरक या फिलर हैं। गंधराल, साबुन, मोम और स्टार्च जैसे साइजिंग (sizing) पदार्थ कागज के पृष्ठ को चिकना और स्याही के लिए अप्रवेश्य (impervious) बना देते हैं। वर्तमान में पॉलिवाइनिल ऐसीटेट, पॉलिएस्टर, वाइनिल क्लोराइड और एक्रिलिक रेज़िन जैसे पायस (emulsions) भी कागज की साइज़िंग के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

लुग्दी में सभी पदार्थ अच्छी तरह से मिला दिए जाने के बाद उसे कागज बनाने वाली मशीन में डाल दिया जाता है। कागज के सूखी शीटों पर बाह्य साइजिंग द्रव्य लगाया जा सकता है। इसके पश्चात् इस कागज को अति चकासित (या पालिश किए हुए) बेलनों (रॉलरों) के बीच में से गुजार कर उस पर इस्त्री की जाती है जिससे कागज को चिकनी बनावट मिलती है।

रेयॉन

अति शोधित सेलुलोस लुग्दी (89–98 प्रतिशत सेलुलोस) को एक आधारभूत द्रव्य के रूप में रेयॉन या कृत्रिम रेशम, ऐसीटेट तंतुओं और वस्त्रों, पारदर्शी फिल्मों (सेलाफेन, सेलुलोस ऐसीटेट और नाइट्रोसेलुलोस फिल्मों) प्रलाक्ष, प्लास्टिक और विस्फोटकों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। रेयॉन तंतु का निर्माण सेलुलोस को विघटित करने वाले विभिन्न विलायकों के प्रयोग से किया जाता है। विस्कोस रेयॉन का निर्माण सोडियम हाइड्रॉक्साइड और कार्बन डाइसल्फेट विलायकों के प्रयोग द्वारा होता है और यह सबसे अधिक प्रचलित है। शुद्ध सेलुलोस का संपाचन (digestion) उच्च सांद्रता वाले सोडियम हाइड्रॉक्साइड विलयन में किया जाता है और फिर कार्बन डाइसल्फेट से उसका संपाचन किया जाता है, जिससे जैंथेट (zanthate) बनता है। निर्मित झागदार हल्के पीले विस्कासी पिंड (विस्कोस) को अब तनु सल्फ्यूरिक अम्ल के घोल में प्रवाहित किया जाता है। यहाँ अब विलायक को अलग कर लिया जाता है, और सेलुलोस सूक्ष्म तंतुओं में स्कंदित हो जाता है। सेलुलोस के इन तंतुओं को घूर्णी रीलों द्वारा पकड़कर, सूत्रों (धागों) में बट लिया जाता है। इसके बाद इन सूत्रों को लचीला (flexible यानि प्रत्यास्थ) बनाने के लिए उन्हें ग्लिसरीन स्नान (glycerine bath) कराया जाता है।

बोध प्रश्न 3

निम्न प्रश्नों का संक्षेप में उत्तर दीजिए।

i) लकड़ी एक उत्तम ईंधन क्यों हैं?

....

....

....

ii) विभिन्न काष्ठों के ईंधन मान भिन्न होने के क्या कारण है?

....

....

....

iii) सीजन की हुई लकड़ी का औसत कैलारी मान क्या है?

....

....

....

iv) कठोर काष्ठ आसवन के उत्पादों के नाम बताइए?

....

....

....

बोध प्रश्न 4

कॉलम-I में दी गई विषय-वस्तुओं का मिलान कॉलम-II, में दी गई से कीजिए। सही मद (1–6) दिए गए बाक्स में लिखें।

कॉलम-I	कॉलम-II
i) पृष्ठावरण	1) कठोरकाष्ठ जो मज़बूत, टिकाऊ और क्षय और संक्षारण के प्रति रोधी हो।
ii) खंभे (पोल)	2) हल्की, मगर मजबूत और चिरस्थायी
iii) खादानी लकड़ी (माइन टिम्बर)	3) अल्पतम विपाटन
iv) बाढ़ के खंभे	4) चिरस्थायी (टिकाऊ), जो भारी दबाव को सहन करे, और कीलों और पेंचों को जकड़े रखे
v) रेलवे स्लीपर	5) सस्ती, हल्की, प्रत्यास्थ और विकुंचन से मुक्त
vi) स्लैक कूपरेज (पीपा निर्माण)	6) हल्की, मजबूत, और चिरस्थायी

उत्तर

i) ☐

ii) ☐

iii) ☐

iv) ☐

v) ☐

vi) ☐

20.4 कॉर्क

वानस्पतिक नाम : क्वेरकस सुबेर (*Quercus suber*)

कुल : फैगेसी

प्रचलित नाम : कॉर्क ओक

n = 12

कार्क (काग) वृक्ष की बाहरी छाल या काग से उत्पन्न होता है इस जानकारी को ताज़ा करने के लिए एल. एस.ई.-06 की इकाई 10 के उपभाग 10.8.2 को देखें।

वितरण

यह पश्चिम भूमध्यसागरीय मूल का है। भारत में कॉर्क ओक के वृक्ष नीलगिरि में उगाए जाते हैं मगर इसमें ज्यादा सफलता नहीं मिली है।

कॉर्क ओक लघु से मध्यम आकार का एक सदाबहार वृक्ष है। कॉर्क की कोशिकाएँ अधिचर्म के नीचे स्थित काग एधा की क्रियाशीलता द्वारा ठीक काष्ठ की तरह वार्षिक परतों में बनती हैं (चित्र 20.9 और 20.10)। कार्क-ओक के वृक्ष से काग को पहली बार लगभग 20 वर्ष की आयु पर उतारा जाता है और फिर हर दस वर्ष में 150 वर्ष तक काग को उतारा जाता है। काग को उतारने के बाद चट्टे बनाकर उसे वायु में सीजनित किया जाता है और उबाला जाता है। इसके पश्चात् उसे वायु में सुखाया जाता है, काटा-छांटा जाता है, श्रेणीकृत किया जाता है और फिर गट्ठों में लगा दिया जाता है।

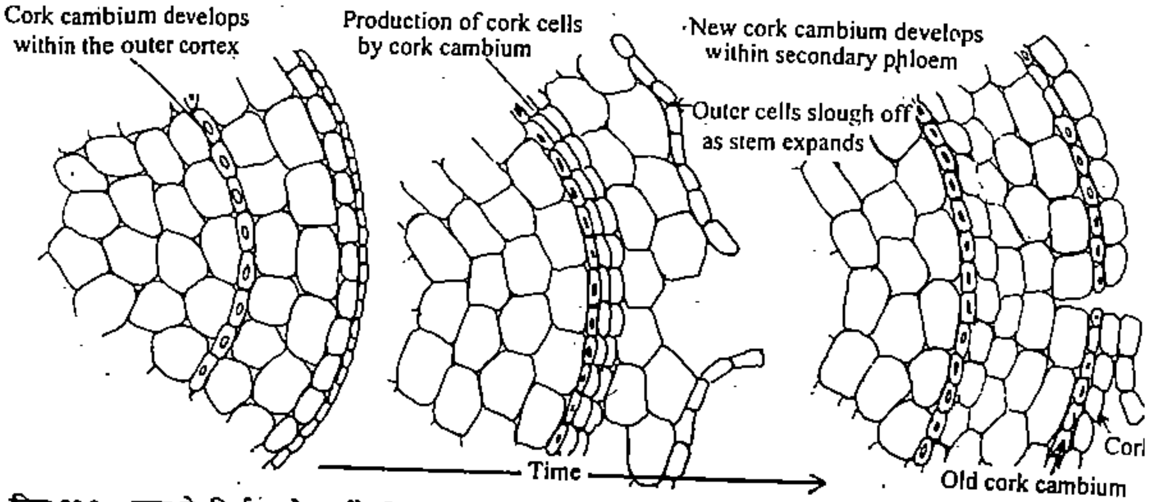

चित्र 20.9 : काग के निर्माण को दर्शाते चित्रात्मक स्केच जैसा कि हमें तनों की अनुप्रस्थ काट में देखने को मिलता है।

लक्षण

अपने निम्नलिखित गुणों के कारण व्यावसायिक काग अत्यधिक मूल्यवान है : i) उत्प्लावकता (buoyancy) और हल्कापन; ii) प्रत्यास्थता (resilience) और संपीड्यता (compressibility), iii) रोधी गुण (insulating properties) तथा अल्प तापीय संचालकता (low thermal conductivity); iv) जल तथा अन्य द्रव्यों के प्रति अक्रियता (imperviousness); v) अपघटन (deterioration) के प्रति उच्चरोधिता; vi) विद्युत् रोधिता (non-conduction of electricity); vii) जल तथा अन्य तरल द्रव्यों के प्रति अभेद्यता (imperviousness); viii) गंधहीन; ix) ध्वनि और कंपन्न को अवशोषित कर लेने की क्षमता; x) उच्च घर्षण गुणांक (coefficient of friction); और xi) आग पकड़ने में धीमापन।

उपयोग

कार्क का प्रयोग संयोजन काग (composition cork) के रूप में प्राकृतिक (natural) या फिर रूपांतरित (modified) अवस्था में किया जाता है। प्राकृतिक काग को बोतल की डाट, विद्युत् रोधी सामग्री, मोहरी अस्तर (sealing liners), सामुद्र सामग्री (marine articles), मछली पकड़ने वाली रॉड का हत्था, जूते के इनसोल (पैतावा), खेलकूद का सामान, नक्काशीदार आभूषणों के बॉक्स, तसवीरों के फ्रेम इत्यादि के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। संयोजन काग का निर्माण काग के शुद्ध कोमल कणों को सरेस, कृत्रिम रेज़िन और ग्लिसरीन जैसे प्लास्टिसाइज़र के साथ संयोजन बनाकर किया जाता है। इसे गैस्केट या वाहनों के

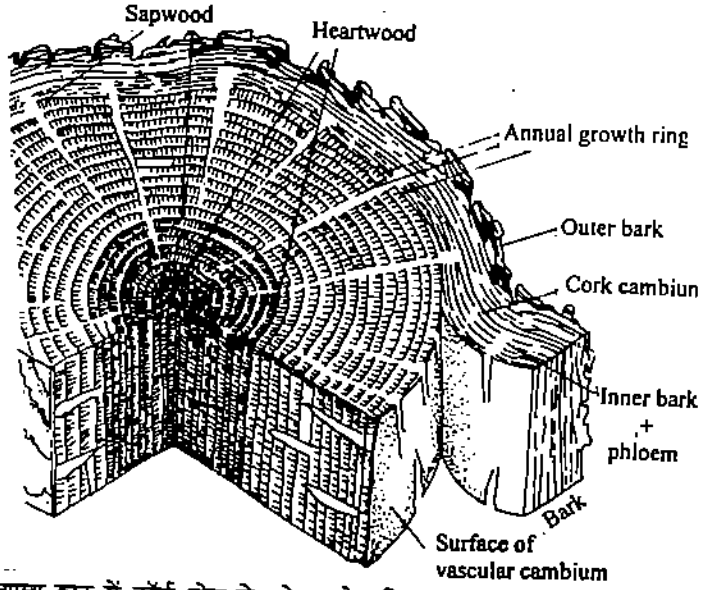

चित्र 20.10 : अनुप्रस्थ काट में कॉर्क-ओक के तने का रेखाचित्र। काग एधा और छाल की बाह्य परत को ध्यान से देखिए। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली 1986 से)।

सील, लिनोलियम और फ्लोर टाइल, जूते के इनसोल, क्राउन कैपों के मोहरी अस्तर (सीलिंग लाइनर), प्रिंटिंग प्रेस ब्लैंकेट, स्नान जूते (बेदिंग शुज), बीच सैंडल के निर्माण में उपयोग किया जाता है। काग.रोधी बोर्ड (कॉर्क इंन्सुलेशन बोर्ड) बनाने के लिए चूरा किए गए प्राकृतिक कॉर्क को योजकों (बाइंडर) के साथ गर्म किया जाता है। इसके बाद इसे विशाल सांचों में संपीडित और ताड़ित किया जाता है। इसे रेफ्रीजरेशन, एअर-कंडीशनिंग, आर्द्रता संघनन (moisture condensation) को रोकने, मशीनरी के पृथक्करण तथा साउंड प्रूफिंग (ध्वनिरोधन) के लिए प्रयोग किया जाता है।

20.5 रबड़

रबड़ का उत्पादन उष्ण या उपोष्ण कटिबंधीय प्रदेशों के विभिन्न काष्ठीय पादपों से प्राप्त होने वाले दूधिया रस या रबड़क्षीर (latex, लेटेक्स) से किया जाता है। रासायनिक दृष्टि से रबड़ एक पॉलिटर्पीन (polyterpene) है जो आइसोप्रीन इकाइयों (isoprene units) की एक दीर्घ श्रृंखला से बना होता है। आइसोप्रीन इकाइयां एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं जिससे विशाल अणु बनते हैं जिन्हें पॉलिमर या बहुलक कहते हैं। ये सूक्ष्म स्प्रिंगों की तरह कुंडलित रहते हैं। रबड़क्षीर या लेटेक्स विशेष कोशिकाओं (लेटेक्सधर) में पाया जाता है जो वृक्ष की छाल, पत्तियों और अन्य कोमल भागों में भी पाई जाती हैं। प्रायः तने के निचले भाग से प्राप्त लेटेक्स ही व्यावसायिक महत्व का होता है। रबड़ साधारणतया एक जलीय तरल में निस्यंदित (suspended) सूक्ष्म कणों के रूप में विद्यमान रहता है। इस जलीय तरल को सीरम (serum) कहा जाता है जो विशिष्टीकृत लेटेक्स वाहिकाओं (latex vessels) और लेटेक्स नलिकाओं या कोशिकाओं (latex tubes or cells) में पाया जाता है। ताज़ा लेटेक्स में रबड़ हाइड्रोकार्बन (C_5H_8—25–40 प्रतिशत) और रबड़हीन पदार्थ अलग-अलग मात्रा में पाए जाते हैं जैसे प्रोटीन, रेज़िन, शर्करा, ग्लाइकोसाइड, टैनिन, ऐल्केलॉइड, खनिज लवण और मोम।

वानस्पतिक नाम : *हीविया ब्रैजिलिएंसिस* ***(Hevea brasiliensis)***

कुल : **पोक्सा रबड़ वृक्ष, कूचुक वृक्ष**

प्रचलित नाम : **यूफोर्बिएसी**

n = 18

वितरण

हीविया ब्रैजिलिएंसिस रबड़ का उत्पादन करने वाली सबसे महत्वपूर्ण वृक्ष जाति है (चित्र 20.11)। यह अमेजन घाटी के उष्ण वर्षा वनों के मूल का है। मलेशिया, इंडोनेशिया, थाइलैंड और श्रीलंका रबड़ के मुख्य उत्पादक देश हैं। भारत में रबड़ का अधिकांश उत्पादकता केरल से, और शेष तमिलनाडु, कर्नाटक और अंडमान से मिलती है।

आकारिकी

यह एक लंबा वृक्ष है जो 20 मीटर की ऊंचाई तक उगता है। तना 2–3 मीटर मोटा होता है जो शिखर पर एक प्रसारी (फैलाव वाला) या शंक्वाकार पर्ण वितान (conical leaf colony) धारण किए रहता है। पत्तियां त्रिपर्णक संयुक्त दीर्घवृंत युक्त होती हैं। पर्णक लघुवृंतीय, दीर्घवृत्तीय से लेकर प्रतिअंडाकार और लंबाग्र शिखाग्र युक्त होते हैं। पुष्प छोटे, हरे, मीठी सुगंध युक्त, रोमिल पुष्पगुच्छ में व्यवस्थित होते हैं जिसमें मादा पुष्प शिखर पर तो नर पुष्प पुष्पगुच्छ के निचले भाग में विद्यमान रहते हैं। फल एक त्रिभागी कैप्सूल है, जिसके हर कक्ष में एक बीज उपस्थित होता है। परिपक्व होने यह फल धमाके के साथ स्फुटित होता है बीज तेल से भरपूर रहते हैं।

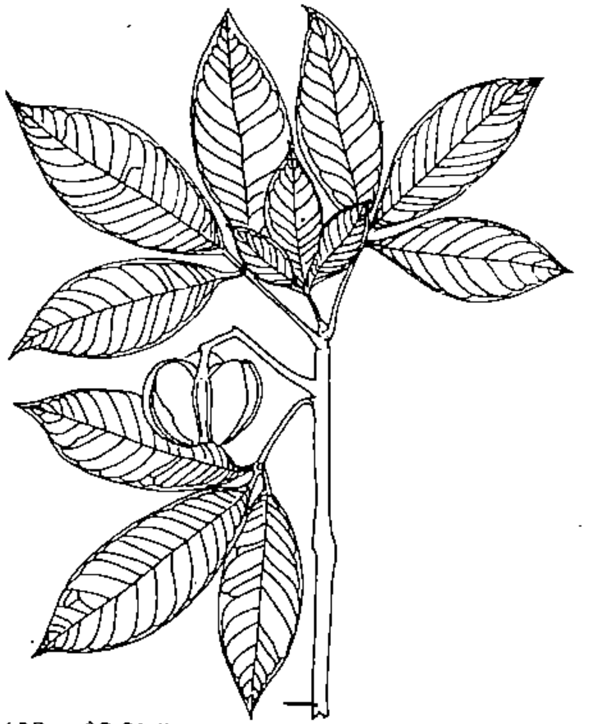

चित्र 20.11 : रबड़ का पेड़। (*हीविया ब्रैजिलिएंसिस, Hevea brasiliensis*) स्फुटनकारी फल के साथ एक प्ररोह

रबड़क्षीर या लेटेक्स वाहिकाएं ऊर्ध्व दिशा में न होकर दाहिनी ओर लंब के 30° के कोण पर वामावर्त कुंडलिनियों में चलती हैं। वे छाल में संकेन्द्री वलयों (concentric rings) के रूप में द्वितीयक फ्लोएम के वलयों के साथ एकांतर क्रम में व्यवस्थित रहती हैं (चित्र 20.12)। वाहिकाएं पार्श्व से प्रत्येक वलय से परस्पर संबद्ध या जुड़ी रहती हैं। मगर तने के परिधि (यानि मोटाई) में बढ़ने पर ये संबंधन भंग हो जाते हैं। लेटेक्स वाहिकाएं बाहरी छाल की अपेक्षा भीतरी छाल में अधिक संख्या में विद्यमान रहती हैं। वृक्षों की आयु छः या सात वर्ष हो जाने पर वे लेटेक्स ताड़न (tapping) के लिए उपयुक्त होते हैं। मगर लेटेक्स का अधिकतम उत्पादन 12 वर्ष के पश्चात् ही मिलता है। वृक्षों को 25–30 वर्ष तक ताड़न के पश्चात् छोड़ दिया जाता है क्योंकि तब वे व्यावसायिक दृष्टि से प्रायः लाभकारी नहीं रहते।

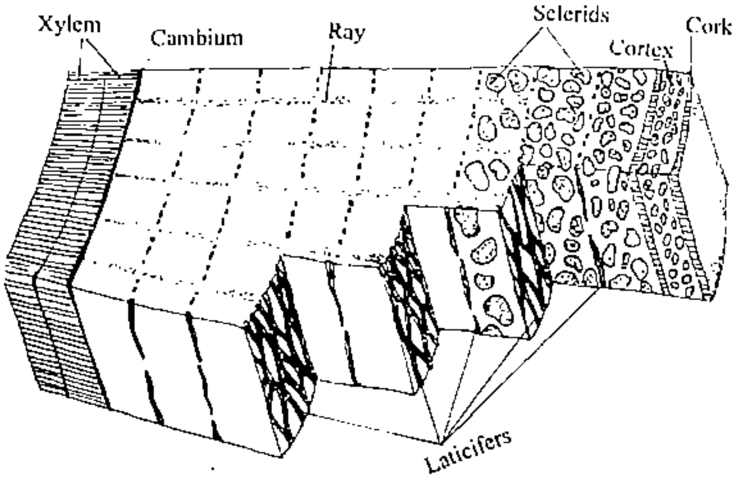

चित्र 20.12 : लेटेक्सधर कोशिकाओं की स्थिति को दर्शाता *हीविया (Hevea)* के तने की अनुप्रस्थ काट का चित्रात्मक स्केच। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजेली 1986 से)।

रबड़ का ताड़न और संसाधन - मूलतः रबड़क्षीर को रबड़ के वृक्षों को काट गिराकर एकत्र किया जाता था। मगर कालांतर में इसे वृक्षों पर अपरिष्कृत भारी हस्त-कुठार (hand-axes) से बेतरतीब घाव करके ताड़ित किया जाने लगा, इसे मैकाडिनो (machadino) विधि कहते हैं। वृक्षों की वर्धन परत को आमतौर पर इससे क्षति पहुंचती थी और ऐसी विधि वृक्षों को रोगाणुओं के आक्रमण के प्रति अतिसंवेदनशील बना देती है। बाद में U-आकार के सिर वाले छोटे ताड़न चाकुओं (tapping knives) का प्रयोग आरंभ हुआ

जिनसे वृक्षों के तनों पर अलग-अलग समांतर काट बनाकर रबड़क्षीर एकत्र किया जाने लगा, इस अमेजनस (Amazonas) विधि कहा जाता था। ये तकनीकें अत्यधिक खर्चीली, क्षतिकारक और अक्षम थीं। इस प्रकार प्राप्त रबड़क्षीर को एक लंबे पोल से चिपके पहले से सुखाए स्कंद के ऊपर उंडेल कर उसे जलती आग से उठते धुएं पर घुमा कर स्कंदित किया जाता था। इस प्रक्रिया को 70 और 90 कि.ग्रा. भार की रबड़ की एक विशाल गेंद प्राप्त होने तक दोहराया जाता है।

चित्र 20.13 : रबड़ के वृक्ष के रबड़क्षीर का ताड़न।

वर्तमान समय में पेरा रबड़ वृक्षों (para rubber trees) से लेटेक्स का ताड़न और संसाधन अति व्यवस्थित और वैज्ञानिक प्रबंधित हो चुके हैं। छाल में अनेक खड़े कटाव (vertical incisions) करने के बजाए नियमित रूप से छाल की 1.25–1.50 मि.मी. मोटी छीलन या कर्त्तन (shaving or paring) उतारी जाती है, इसे उच्छेदन (excision) विधि कहते हैं (चित्र 20.13 देखिए)।

कटावों के प्रकार और दायरे के अनुसार रबड़ के ताड़न की तीन अलग-अलग विधियां हैं: V-कट विधि, हेरिंगबोन (herring bone) विधि और सर्पिल पैनेल (spiral panel) या जेबोंग (jebong) विधि। V-कट विधि में V की दोनों भुजाओं के आकार में दो तिरछे कटाव वृक्ष के तने पर बनाए जाते हैं और कटावों के संधि-स्थल के तल पर धातु का वितुंड (spout) लगा दिया जाता है जिससे रबड़क्षीर या लेटेक्स ग्राही पात्र (cup) में गिरता है। हेरिंगबोन विधि में अनेक तिर्यक् कटाव (oblique cuts) तने पर किए जाते हैं। ये कटाव छाल में काटी गई एक ऊर्ध्व रेखा में जा मिलते हैं। इस रेखा के दोनों ओर से कटाव बनाए जा सकते हैं। लेटेक्स की धार कटावों से निकलकर इस मध्य रेखा में आ जाती है जो इसे तली में लगाए गए पात्र में बहा ले जाती है। सर्पिल पैनल विधि में ऊपर बाएं से नीचे दाहिनी ओर एक घाव 30°–35° का कोण बनाते हुए किया जाता है। यह घाव वृक्ष के तने की आधी परिधि तक (अर्ध सर्पिल पैनल) या फिर पूरी परिधि में (पूर्ण-सर्पिल पैनल) बनाया जाता है। इसमें उच्च कोटि के स्टील से विशेष रूप से इसी कार्य के लिए बनाए गए जेबोंग चाकू (Jebong's knife) का प्रयोग किया जाता है। इस चाकू में V-आकार का सिर लगा होता है जिसे छाल को समुचित मोटाई (लगभग एक मि.मी.) में काटने के लिए समायोजित किया जा सकता है। इस तरह लेटेक्स वाहिकाएं अनुप्रस्थ कटती हैं। ताड़न का कार्य तड़के सुबह आरंभ किया जाता है क्योंकि तब पौधे में उच्च स्फीति दाब (turgor pressure) के कारण लेटेक्स का प्रवाह काफी अधिक मात्रा में होता है। दिन चढ़ते-चढ़ते यह दाब कम होता जाता है और अंतत: दोपहर में लगभग रुक जाता है। रबड़क्षीर की धार प्रणाल में बहते हुए वितुंड में आती है और फिर एक छोटे से ग्राही पात्र में जा गिरती है। इस पात्र में प्रतिस्कंदक यानि anticoagulant (अमोनिया, फॉर्मेल्डिहाइड या सोडियम हाइड्रॉक्साइड) मिला दिए जाते हैं।

वृक्षों से रबड़क्षीर का ताड़न एक दिन छोड़कर किया जाता है और परवर्ती कटाव पूर्ववर्ती कटाव के ठीक नीचे किया जाता है। अगर पूर्व ताड़न सावधानीपूर्वक किया गया हो तो, ताड़ित पैनल वाले भाग में नई छाल फिर से उग आती है। यह अध:शायी एधा की मेरिस्टमी क्रियाशीलता के कारण होता है।

रबड़ को सांद्रित तरल रबड़क्षीर (concentrated liquid latex) या ठोस अवस्था (solid form) में लाया ले जाया जाता है। सांद्रित अवस्था में प्रयोग के लिए लेटेक्स को अपकेन्द्रित (centrifuged) या ऐल्जिनेटों (alginates) के साथ रासायनिक रूप से विवेचित या उपचारित किया जाता है। इससे रबड़ के कण फूल जाते हैं। जल और रबड़ेतर पदार्थों को संसाधन टैंक से अपवाहित कर लिया जाता है। इसके पश्चात् लेटेक्स के सांद्रित पिंड में प्रतिस्कंदक (anticoagulants) मिलाकर उसे ड्रमों में बंद करके निर्यात किया जाता है।

ठोस रबड़ बनाने के लिए, छने (strained) और तनु (diluted) लेटेक्स को विशाल ऐलुमिनियम टैंकों में स्थानांतरित किया जाता है, जिनमें ऐसिटिक या फॉर्मिक अम्ल मिला दिया जाता है। समूचे रबड़क्षीर में बिखरे (dispersed) रबड़ के सूक्ष्म कण संपुंजित होकर एक कोमल, सफेद, स्पंजी पिंड के रूप में सतह पर आ लगते हैं। यह कोमल स्कंद (coagulum) या पट्ट (slab) धोया जाता है और उसमें से अतिरिक्त जल बाहर निकालने और उसे वांछित मोटाई में चपटा करने के लिए उसे अनेक रोलरों से गुजारा जाता है। इसके बाद उसे वायु में सुखाया जाता है जिससे अंतत: क्रेप रबड़ की शीटें बन जाती हैं। इन्हें अक्सर जलती लकड़ी से उठती पाइरोलिग्नियस अम्ल की भाप से धूमित किया जाता है (smoked)। इस धूमित

उत्पाद को शीट रबड़ (sheet rubber) कहते हैं। रबड़ का निर्यात अधिकांशतया इसी स्वरूप में किया जाता है। मगर उसमें रसायन मिलाने से पहले उसे रबड़ मिल में खंडित (break down or mill) किया जाता है।

उपयोग

रबड़ उत्पादन का लगभग 70 प्रतिशत टायरों, ट्यूबों और वाहन-निर्माण उद्योग से जुड़े अन्य सामान बनाने में खप जाता है। छः प्रतिशत रबड़ का उपयोग जूते चप्पल इत्यादि बनाने के लिए होता है और लगभग 4 प्रतिशत रबड़ तार और केबल रोधन (केबल इंसुलेशन) में प्रयोग होता है। रबड़ की अन्य वस्तुओं में, रबड़ीकृत वस्त्र, रेनकोट (बरसाती), गर्म पानी के थैले, दस्ताने, शॉक एब्जॉर्बर, वाशर, गैसकेट, बेल्ट, होज़, खेल-कूद का सामान, खिलौने, लिखे को मिटाने वाला रबड़, आसंजक (adhesives), रबड़ बैंड इत्यादि शामिल हैं।

इलेक्ट्रिकल और रेडियो इंजीनियरिंग उद्योगों में कठोर रबड़, वल्केनाइट (vulcanite) या एबोनाइट (अति सल्फ्यूरीकृत रबड़) प्रयोग किया जाता है। रासायनिक संयंत्रों में सुरक्षा अस्तर के लिए तथा बैटरी बॉक्सों, फाउंटेन पेनों, पीपों, तंबाकू के पाइप, टेलीविजन, कंघों के निर्माण में इस रबड़ का प्रयोग किया जाता है।

सांद्रित लेटेक्स का प्रयोग अधिकांश निमज्जित (dipped) वस्तुओं, जैसे दस्ताने, गुब्बारे और गर्भ-निरोधक साधित्रों के निर्माण में होता है। फोम किये गए लेटेक्स (foamed latex) से प्राप्त स्पंजी रबड़ का प्रयोग साज़-सामान जैसे सोफे, कुशन, चटाइयां, तकिए बनाने, जीवन रक्षी बेल्टों और कालीन बनाने में किया जाता है। रबड़ का प्रयोग सैनिकों के कपड़े बनाने, अधिक ऊंचाई पर उड़ान भरने वाले वायुयान कर्मियों के लिए निपीडित सूटों (pressurised suits), गोताखोरों के लिए फ्रॉगमेंस सूट (frogmen's suit) और उत्तर ध्रुवीय प्रदेशों में तापरोधी (insulating) सूटों में किया जाता है।

पेरा-रबड़ प्रतिस्थापी (substitutes) : *हीविया ब्रैजिलिएंसिस* के अतिरिक्त अन्य रबड़ उत्पादी जातियों की खोज हमेशा से की जाती रही है। इनमें से कुछ जातियां नीचे दी गई हैं :

कैस्टिला इलैस्टिका (*Castilla elastica*) - यह एक लंबा पेड़ है। इससे कैस्टिला या पनामा रबड़ प्राप्त होता है। उन्नीसवीं सदी के मध्य तक रबड़ का यह मुख्य स्रोत था।

फ़ाइकस इलैस्टिका (*Ficus elastica*) - यह एक विशाल वृक्ष है इसे भारतीय या आसाम रबड़ कहा जाता है जो निम्न कोटि का है और अब इसका कोई विशेष व्यावसायिक महत्व नहीं है।

फंटूमिया इलैस्टिका (*Funtumia elastica*) - यह एक विशाल उष्टकटिबंधी वृक्ष है जिससे लैगोस सिल्क रबड़ मिलता है।

लैंडोल्फिया ह्युडीलोट्टी (*Landolphia heudelotti*) - यह एक काष्ठीय आरोही है जिससे लैंडोल्फिया रबड़ प्राप्त होता है।

पार्थेनियम अर्जेंटैटम (*Parthenium argentatum*) - यह एक कम ऊंचाई वाला अर्ध-क्षुप पादप है। इसकी जड़ें ही लेटेक्स का मुख्य स्रोत हैं। इससे ग्वायूली रबड़ मिलता है। इसे बागान के पैमाने पर उगाया जाता है। रबड़ निकालने के लिए इसके पौधे को पानी के साथ संमर्दित किया जाता है।

टैराक्सैकम कोक-सैघिज (*Taraxacum kok-saghyz*) - इसमें अपस्थानिक जड़ें रबड़ का मुख्य स्रोत हैं। इससे लेटेक्स प्राप्त करने के लिए समूचे पौधे को उखाड़ना पड़ता है। इससे डैंडीलियोन रबड़ प्राप्त होता है।

हाल ही के वर्षों में काष्ठ और अन्य वनोत्पादों की बढ़ती मांग से प्राकृतिक वनों पर दबाव बढ़ा है तथा उनके बहुत बड़े भाग का, तेजी से निम्नीकरण (degradation) हुआ है। इसके चलते, एक तरफ जहां

इन प्राकृतिक वनों में पहले जैसी स्थिति के स्थापन हेतु विभिन्न कदम उठाए गए हैं, वहां दूसरी ओर इसकी भी आवश्यकता है कि कुछ नई पादप जातियों की तालाश की जाए, जिनकी व्यापक पैमाने पर खेती से, हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। बॉक्स 20.1 और 20.2 में ऐसे ही कुछ उपयुक्त पौधों के बारे में जानकारी दी गई है।

बॉक्स 20.1 : भूमि उद्धार में काष्ठीय पादप

वन संपदा के अंधाधुंध दोहन और भूमि उपयोग के अनिर्वहनीय विधियों के फलस्वरूप देश के बहुत बड़े भू भाग से हरियाली का लोप हो गया और यह प्रक्रम अभी जारी है। भूमि के उपयोग को राष्ट्रीय स्तर पर उत्तम बनाने के उद्देश्य से भारत सरकार ने राष्ट्रीय भूमि उपयोग एवं बंजर भूमि विकास परिषद् (नेशनल लैंड यूज़ एंड वेस्टलैंड डेवेलपमेंट काउंसिल), संरक्षण बोर्ड (कंजर्वेशन बोर्ड) तथा राष्ट्रीय बंजरभूमि विकास बोर्ड (एन.डब्लू.डी.बी) जैसे शीर्ष निकायों का गठन किया। एन.डब्लू.डी.बी ने बंजर भूमि को दो श्रेणियों में बाँटा हैं: संवर्धनीय (culturable) और असंवर्धनीय (unculturable)। संवर्धनीय भूमि की परिभाषा में ऐसी भूमि आती है जिसमें वनस्पति के उगने की सामर्थ्य संभावना हो मगर जिसे विभिन्न कारणों से उपयोग में नहीं लाया जा.रहा हो। इस श्रेणी में लवण-प्रभावित भूमि, निम्नीकृत वनभूमि, अवनलिकादार या दर्रेवाली भूमि, झूम खेती क्षेत्र, अतिचारित चारागाह और शाद्वल (या घासस्थल) शामिल हैं। असंवर्धनीय भूमि की श्रेणी में ऐसी भूमि आती है जिसे वनस्पति उगाने के लिए विकसित नहीं किया जा सकता है। इसमें ऊसर, चट्टानी या पथरीले भूभाग, खड़ी ढालान वाली भूमि और बर्फ से आच्छादित या बर्फीले क्षेत्र आते हैं।

इस तरह की भूमि को फिर से हरा-भरा बनाना नितांत आवश्यक है, जिससे कि उसकी उपरिमृदा (मिट्टी की सबसे ऊपरी सतह) का और अधिक अपरदन न हो, उसका लवणीभवन (salinization) और मरूभवन (desertification) न हो। यही नहीं धरती की मौजूदा हरियाली को बचाए रखने के लिए भी यह जरूरी है ताकि उसका पारिस्थितिक संतुलन बना रहे। हरियाली को हम विभिन्न प्रकार के वृक्षों, पादपों का रोपण करके प्राप्त कर सकते हैं और अगर हम इनसे इमारती लकड़ी, ईंधन और चारे की जरूरतें भी पूरी कर सकें तो इससे मानव जनसंख्या की अनेक समस्याएं सुलझ जाएंगी।

भूमि-उद्धार (soil reclamation) की प्रक्रिया में एक अति महत्वपूर्ण और निर्णायक चरण इस तरह की बहुद्देशीय पादप जातियों (multipurpose plant species) का सही चयन है। ये जातियां विशिष्ट जलवायु और मृदा परिस्थितियों के लिए सिर्फ उपयुक्त ही न हों, बल्कि ये तेजी से बढ़ने वाली और मृदा की गुणवत्ता को उन्नत बनाने वाली (उसमें पोषक तत्त्वों, कार्बनिक पदार्थ, नमी इत्यादि को बढ़ाने वाली) पारिस्थितिकीय अनुक्रमिक प्रक्रमों को बढ़ावा देने में समर्थ होने के साथ-साथ आर्थिक दृष्टि से भी उपयोगी होनी चाहिए। इसके लिए पुर:स्थापित या विदेशी जातियों (exotic species) की जगह हमेशा स्थानीय जातियों (native species) को ही तरजीह दी जानी चाहिए। क्योंकि स्थानीय जातियां ही स्थानीय स्थितियों के प्रति पहले से अच्छी तरह अनुकूलित रहती हैं। इसीलिए इनके असफल रहने या क्षति करने की संभावना कम रहती है।

1. *ऐकेशिया* (*Acacia*) जाति (कुल : फैबेसी; उपकुल : मिमोसोइडी) कंटीली झाड़ियां या वृक्ष; इनकी कई जातियां भारतीय मूल की और कई पुर:स्थापित (यानि बाहर से लाकर यहां लगाई गई हैं)। ये वायु, जल और वृष्टि अपरदन (erosion) को नियंत्रित करती हैं। ये सर्वाधिक कठोर वातावरणीय परिस्थितियों में भी भली-भांति फूलती फलती हैं। नग्न भूमि (खल्वाट या परती जमीन), रेत के टीलों और लवण-प्रवाहित मिट्टी में इनका रोपण किया जा सकता है।

2. *ऐलबिज़िया* यानि (*Albizzia*) (कुल : फैबेसी; उपकुल: मिमोसोइडी) ये मध्यम आकार के वृक्ष हैं। इसकी 12 जातियां भारतीय मूल की हैं। ऐ. *ऐमारा* (*A. amara*) दक्षिण भारत के शुष्क प्रदेशों के मूल का है। यह गहरी रेतीली मिट्टी में उग सकती है। यह शुष्क प्रदेशों में वनरोपण के लिए उपयोगी है।

3. *यूकेलिप्टस* (*Eucalyptus*) जाति (कुल : मर्टेसी) ये सदाबहार सुगंधमूलक वृक्ष ऑस्ट्रेलियाई मूल के हैं। ये लंबे, तेज़ी से वृद्धि करने वाले और साफ-स्तंभ वाले वृक्ष हैं। इन्हें भारत में 18वीं सदी में बंगलूर के समीप लगाया गया था और ये विभिन्न जलवायु, मृदीय और पारिस्थितिक परिस्थितियों के प्रति अनुकूलित होते हैं। इनकी कुछ जातियां गर्म और शुष्क तो कुछ नम जलवायु पंसद करती हैं। इनकी कुछ जातियां वृहद पैमाने पर बागानी के लिए लोकप्रिय हैं। मगर ऐसा संदेह है कि ये जातियां कई तरह के लघु और दीर्घकालिक पारिस्थितिकीय क्षति पहुंचाती हैं जिनके फलस्वरूप मिट्टी में गंभीर पारिस्थितिकीय विक्षोभ उत्पन्न होते हैं और उसके पोषक तत्त्वों और जल-संबंधी परिस्थितियों में भी गड़बड़ियां हो जाती हैं। यही नहीं इनसे वन्यजीवन भी प्रभावित होता है।

   यू. कैमल्ड्यूलेंसिस (*E. camaldulensis*) यह एक उपयोगी जाति है जो नम, अनूपी क्षेत्रों, लौनी (लवण) मिट्टी और क्षारीय मिट्टी के लिए अच्छी तरह से अनुकूलित है। इससे दीमकरोधी इमारती लकड़ी मिलती है और इसकी पत्तियों से औषधि गुण वाला सगंध तेल मिलता है।

   यू. साइट्रियोडोरा (*E. citriodora*) एक द्रुत वर्धनशील (fast growing), ऋजु स्तंभित यानि सीधे तने वाली जाति है। यह अनुर्वर बजरीदार (gravelly) मिट्टी में उगती है। यह जाति पहाड़ियों, अधकचरी मिट्टी और खड़दार भूमि के उद्धार के लिए बेहद उपयोगी है। इससे इमारती और जलावन की लकड़ी मिलती है। इससे काठ-कोयला बनाया जा सकता है और इसकी पत्तियों से नींबू की सुंगध वाला तेल निकलता है।

4. *प्रोसोपिस* (*Prosopis*) जाति (कुल फैबेसी; उपकुल : मिमोसोइडी) – ये द्रुत-वर्धनशील क्षुप या वृक्ष हैं। ये प्रायः शुष्क जलवायु के लिए अनुकूलित होती हैं।

   प्रो. सिनेरेरिया (*P. cineraria*) भारतीय मूल की जाति है। यह लघु क्षुपों (झाड़ियों) या विशाल वृक्षों के रूप में उत्तरी और पश्चिमोत्तर भारत के अर्धशुष्क तथा शुष्क प्रदेशों में उगती है। यह शुष्क जलवायु सह सकती है और उन प्रदेशों के लिए उपयुक्त है जहां तापमान चरम पर रहता है। यह जाति अपोढ़ बालू वाले प्रदेशों (sand drift areas), अवनालिकाओं (gullies) और खड्ड भूमि (ravines) में मृदा अपरदन को नियंत्रित करने में सहायक है और बालू के टीलों (sand dunes) को स्थायित्व प्रदान करती है। यह कतरन (lopping) के प्रति अच्छी तरह से अनुकूलित है। यह मिट्टी में कार्बनिक यौगिकों और नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि करती है। इसकी पत्तियां हरी खाद (green manure) और चारे के रूप में प्रयोग की जाती हैं। इससे इमारती लकड़ी और ईंधन के लिए अच्छी कोटि की लकड़ी मिलती है और काठ-कोयला बनाने में उपयोगी है। इसकी कच्ची फलियां भोजन के रूप में खायी जाती हैं।

   प्रो. जूलीफ्लोरा (*P. juliflora*) – यह एक अत्यधिक परिवर्ती, आक्रामक, संक्रामक और बड़ी तेजी से बढ़ने वाला वृक्ष है। यह मध्य अमेरिकी मूल का है। यह नाना प्रकार की मिट्टियों में उग सकता है और एक उत्तम मृदा योजक यानि कि मिट्टी को बांधने वाला वृक्ष (soil binder) है। इससे इमारती लकड़ी, अच्छी कोटि की ईंधन की लकड़ी और कोयला मिलता है। पत्तियां चारे के काम आती हैं। इस जाति के यद्यपि कई व्यापक उपयोग हैं और यह बड़े भूभागों को अल्प काल में ही हरा-भरा बना सकती है। तथापि यह अत्यधिक संक्रामक (aggressive) है और अक्षत प्राकृतिक वन क्षेत्रों में आसानी से स्थापित हो कर, प्रभावी जाति बन जाती है।

5. *ल्यूसीना लैटिसिलिक्वा* यानि *Leucaena latisiliqua* (कुल : फैबेसी; उपकुल : मिमोसोइडी) यह विशाल, शाखाहीन, सदाबहार, द्रुतवर्धनशील क्षुप या लघु वृक्ष है। उष्णकटिबंधी अमेरिका की मूल वासी है। यह एक बहुद्देश्यीय (multipurpose) वृक्ष है और बंजर भूमि के लिए सबसे उत्तम है। यह मरूस्थलीय मिट्टी, वनस्पतिहीन क्षेत्रों (denuded areas), अवनलिकाओं, खड्ड भूमि, खनित बंजरभूमि (mined wastelands), नहर के किनारों में मृदा अपरदन को रोकता है। इसे हरी खाद और कम्पोस्ट (compost) बनाने में प्रयोग किया जाता है। यह नाइट्रोजन का यौगिकीकरण (fixation) करता है, इससे इमारती लकड़ी, चारा और ईंधन की लकड़ी मिलती है जिससे अच्छी कोटि का काठ-कोयला बनता है।

बॉक्स 20.2 : पेट्रोलियम उत्पाद देने वाले पादप

वन और पेट्रोलियम भंडार ऊर्जा के मुख्य स्रोत हैं। इनके अत्यधिक दोहन के परिणाम और आपूरण का उतनी तेजी से नहीं हो पाना मनुष्य के लिए चिंता का विषय बन गया है। ऊर्जा प्रदान करने वाले वैकल्पिक स्रोतों (alternative energy sources) को खोजने की आवश्यकता अधिकाधिक महसूस की जा रही है। नवीनतम खोजों से पता चला है कि हाइड्रोकार्बन का उत्पादन करने वाले पादपों में ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में उभरने की संभावनाएं विद्यमान हैं। ये स्रोत कभी समाप्त न होने वाले और तरल ईंधन व्युत्पन्न करने के लिए उत्तम होंगे। यह विचार तब और भी आकर्षक लगता है अगर ऐसी भूमि में जो वनहीन है और जिसमें पारंपरिक खेती (conventional agriculture) नहीं की जा सकती, उसका उपयोग इस तरह से पादपों की खेती के लिए किया जा सकेगा।

जैव-ऊर्जा (bioenergy) उत्पादन में सबसे महत्वपूर्ण चरण ऐसी पादप जातियों का चयन है जिनसे उपयोगी उत्पाद निकालना आर्थिक रूप से लाभप्रद हो सके। ऐसी कई जातियां निम्न कुलों से संबंध रखती हैं : एसक्लीपिएडेसी, यूफोर्बिएसी, ऐनाकार्डिएसी, कैप्रीफोलिएसी, ऐस्टरेसी, लेमीएसी, मोरेसी और कॉनवॉल्वुलेसी।

कुछ विशेष पादप जातियों से निम्न आण्विक भार (low molecular weight) अ-ध्रुवीय घटक (non-polar constituents) निकाले जाते हैं। इस बायोक्रूड (biocrude) को लेटेक्स ताड़न (tapping of latex) के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है जिसके बाद उसका स्कंदन किया जाता है। या फिर जिन स्थितियों में लेटेक्स का ताड़न संभव न हो वहां एक उपयुक्त विलायक के प्रयोग से शुष्क जैवमात्रा (बायोमास) के निष्कर्षण से बायोक्रूड प्राप्त किया जाता है। यह बायोक्रूड तरलों, टाइग्लिसराइडों, मोमों (waxes), टर्पिनाइडों (terpenoids), फाइटोस्टेरॉलों (phytosterols) तथा अन्य रूपांतरित आइसोप्रिनॉइड यौगिकों (isoprenoid compounds) का एक जटिल (complex) मिश्रण है। उत्प्रेरक-प्रभाव (catalytically) से इस बायोक्रूड को तरल ईंधनों के रूप में प्रयोग करने के लिए परिष्कृत (upgrade) किया जा सकता है। बायोक्रूड का हाइड्रोजनी भंजन (hydrocracking) करने से यह कई उपयोगी उत्पादों में रूपांतरित हो सकता है। जैसे गैसोलीन (gasoline) जो कि एक वाहन ईंधन (automobile fuel) है, मिट्टी का तेल (कैरोसीन) तथा गैस तेल। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ पेट्रोलियम (Indian Insitute of Petroleum) जोकि देहरादून में स्थित है, इस पहलू पर लखनऊ स्थित नेशनल बॉटनिकल रिसर्च इंस्टीट्यूट (NBRI) के सहयोग से गहन शोध कार्य कर रहा है। कुछ संभावित पेट्रोलियम पदार्थ उत्पादक जातियां इस प्रकार हैं :

पादप जातियां	कुल
1. *यूफोर्बिया एंटीसिफिलिटिका (Euphorbia antisyphilitica)*	यूफोर्बिएसी
2. *यूफोर्बिया कैडुसीफोलिया (E. caducifolia)*	,,
3. *पेडीलैन्थस टाइथिमैलाइडीज (Pedilanthus tithymaloides)*	,,
4. *कैलोट्रॉपिस प्रोसीरा (Calotropis procera)*	एसक्लीपिएडेसी
5. *कैलोट्रॉपिस जाइगैंटिया (C. gigantea)*	,,
6. *क्रिप्टोस्टीजिया ग्रैंडीफ्लोराप (Cryptostegia grandiflora)*	,,
7. *ऐस्कलीपियास कुरैसैविका (Asclepias curassavica)*	,,
8. *पिट्टोस्पोरम रेजिनिफेरम (Pittosporum resiniferum)*	पिट्टोस्पोरेसी
9. *कोपैइफेरा लॉग्सडॉर्फाइ (Copaifera longsdorfi)*	फैबेसी
10. *पार्थेनियम अर्जेंटैटम (Parthenium argentatum)*	ऐस्टेरेसी
11. *सिमोंड्सिया चाइनेंसिस (Simmondsia chinensis)*	सिमोंड्सिएसी

बोध प्रश्न 5

किन गुणों के आधार पर कार्क को व्यावसायिक प्रयोग के लिए श्रेणीबद्ध किया जाता है?

....

....

....

....

....

बोध प्रश्न 6

i) रासायनिक दृष्टि से आप रबड़ को किस तरह से परिभाषित करेंगे?

....

....

ii) रबड़, पादप में किस स्वरूप में विद्यमान रहता है?

....

....

iii) व्यावसायिक पैमाने पर कच्चा रबड़ आप किस पौधे से और उसके किस विशिष्ट भाग से निकालेंगे?

....

....

....

iv) रबड़ के पेड़ की पहचान करने के लिए आप उसके कौन-कौन से लक्षण देखेंगे?

....

....

....

20.6 व्यावसायिक महत्व के रेशा देने वाले पादप

रेशा देने वाले पौधों ने सभ्यता की प्रगति को काफी प्रभावित किया है। मनुष्य इनका प्रयोग प्राचीन काल से ही कर रहा है। पादप रेशों का प्रयोग ऊन, रेशम और अन्य जंतु रेशों से ज्यादा बड़े पैमाने पर होता रहा है। वर्तमान समय में भी पादप रेशों का हमारे दैनिक जीवन में बड़ा भारी महत्व है।

वानस्पतिकी की दृष्टि से रेशा अति दीर्घ संकीर्ण कोशिकाओं का बना होता है, जो जितनी चौड़ी होती हैं उससे कई गुना लंबी होती हैं। ये मोटी भित्तिवाली कोशिकाएँ हैं जिनमें एक लघु अवकाशिका (lumen) होती है और भित्तियों में अक्सर तिर्यक् गर्त (oblique pits) विद्यमान होते हैं। परिपक्व कोशिकाएं निर्जीव रहती हैं जो पादप शरीर को यांत्रिक शक्ति (mechanical support) प्रदान करती हैं। रेशे मुख्यत: सेलुलोस (64–94 प्रतिशत) के बने होते हैं जो ग्लुकोज का बहुलक $[(C_6H_{10}O_5)]_n$ है।

रेशों का वर्गीकरण

रेशों को तरह-तरह से वर्गीकृत किया गया है जिनमें सबसे आम वर्गीकरण निम्नलिखित के आधार पर है : i) उत्पत्ति और संरचना, तथा ii) उपयोग।

i) **उत्पत्ति और संरचना** - वनस्पति रेशों (काष्ठ रेशों को छोड़कर) को उनकी वानस्पतिक उत्पत्ति के अनुसार तीन समूहों में वर्गीकृत किया गया है : क) मृदु, स्तंभ (stem) या बास्ट (bast) रेशा; (ख) कठोर पर्ण (leaf) या संरचनात्मक रेशा (structural); और ग) पृष्ठ (surface) रेशा।

क) **बास्ट रेशा** : ये फ्लोएम, परिरंभ (pericycle) और वल्कुट (कोर्टेक्स) से संबद्ध हैं और अधिकतर द्विबीजपत्री पादपों में विद्यमान होते हैं। ये अनेक कोशिकाओं में समूहों के रूप में पाए जाते हैं जो संलग्न रेशों से उनकी मध्य पटलिका (middle lamellae) द्वारा बड़ी मजबूती से बंधी रहती हैं। कोमल रेशे उत्पन्न करने वाले पादप जूट अलसी (फ्लैक्स), सन और केनाफ (kenaf) हैं।

ख) **संरचनात्मक रेशा** : ये लघु, छोटे लिग्निनयुक्त कोशिकाएं हैं, जो जाइलम और फ्लोएम को आच्छादित रखती हैं, इसीलिए इसे तंतु संवहन (fibrovascular) बंडल कहते हैं। ये एकबीजपत्री पादपों की पत्तियों में बिखरी (scattered) पाई जाती हैं। समूचा तंतुसंवहन बंडल एक इकाई रेशे (unit fibre) के रूप में काम करता है और आवलंबक (supporting) और संवहन (conducting) ऊतक दोनों का काम करता है। ये रेशे अति लिग्निनयुक्त (lignified) या काष्ठाभनित होते हैं, कोमल रेशों से स्थूलतर और दुर्बल होते हैं। इनके कुछ उदाहरण हैं : सीसल, मनीला, सन और न्यूजीलैंड सन (New Zealand hemp)।

ग) **पृष्ठ रेशा** : कुछ रेशे तनों, पत्तियों, फलों और बीजों की सतह पर पाए जाते हैं। यह बीजों या फलों की भीतरी भित्तियों से एककोशिक उद्‌वर्धों (unicelled outgrowths) के रूप में उत्पन्न होने वाले रेशे हैं। कपास और शाल्मली तंतु (कैपॉक) इसके प्रमुख उदाहरण हैं जो व्यावसायिक महत्व के हैं।

ii) **उपयोग** – रेशों को उनके उपयोगों के अनुसार निम्नलिखित छः श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है : क) वस्त्र, ख) ब्रुश, ग) गूंथन (plaiting) और स्थूल बुनाई (rough weaving), घ) भराई (filling), ङ.) प्राकृतिक, और च) कागज निर्माण।

क) **वस्त्र रेशा** : वस्त्र, जाली (netting) और डोरी (cordage) या अलात बनाने के काम आने वाले सभी रेशे इस श्रेणी में आते हैं। जैसे कपास और जूट।

ख) **ब्रुश रेशा** : ब्रुश और झाडू बनाने के लिए विभिन्न पादपों की टहनियां, पत्तियां और छालें प्रयोग की जाती हैं। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण इस्टल (istle) और सीसल (sisal) या कठोर रेशा पियासैवा (piassava) या खजूर के पत्तों और तनों का पृष्ठरेशा ब्रूमकॉन (broomcorn) जोकि *सोरघम वलगेर* उपजाति *टेक्नीकम* (*Sorghum vulgare* var. *technicum*) का घना रोएंदार पुष्पक्रम है।

ग) **गूंथन और स्थूल बुनाई रेशा** : अधिक प्रत्यास्थ (elastic) चपटे सूत्रों या पट्टियों (चोटियों) को बुनकर हैट (hat), सैंडल, टोकरियां, कुर्सी की सीटें, चटाइयां और छप्पर की छतें बनाई जाती हैं। बांस की पट्टियों या फंटियों से मछली पकड़ने की डंडिया (fishing rods) फर्नीचर, टोकरियां इत्यादि बनाई जाती हैं। गेंहू (wheat), धान (rice) राई (rye), या जौ (barley) की पुआल (straw) से हैट इत्यादि बनाए जाते हैं।

घ) **भराई रेशा** : इन्हें गद्देदार कुरसियां, साज-सामान, कुशन, गद्दे, चटाइयां इत्यादि बनाने और प्रबलन तथा वालबोर्ड रोधन (wallboard insulation) के लिए प्रयोग किया जाता है भराई के लिए प्रयोग होने वाले रेशे कैपॉक, कपास, जूट तथा कई प्रकार के कठोर रेशे और घासें हैं।

ङ.) **प्राकृतिक रेशा** : कभी-कभी बास्ट के कठोर, अंतर्ग्रथनकारी रेशों को तहों या पत्तरों के रूप में निकाला जाता है, जिसे कूटने पर मोटा खुरदुरा कपड़ा बनता है। इसका सबसे प्रसिद्ध उदाहरण 'टेप क्लॉथ' (tape cloth) है, जिसे छाल से बनाया जाता है।

च) **कागज-निर्माण रेशा** : कागज़ और कागज़ी उत्पाद बनाने के लिए काष्ठ रेशों, वस्त्र रेशों और विभिन्न प्रकार की घासों तथा सेज (sedges) का प्रयोग किया जाता है।

20.6.1 कपास (Cotton)

वानस्पतिक नाम : *गॉसिपियम* जातियां (*Gossypium* sp.)

कुल : मैलवेसी

प्रचलित नाम : कपास

n =13, 26

कपास सबसे प्राचीन रेशा पादप है जिसे मनुष्य प्रयोग करता रहा है। आज भी यह विश्व का सबसे महत्वपूर्ण अखाद्य कृषि पादप है। मनुष्य को ज्ञात अनेक रेशों में कपास वस्त्र निर्माण के काम आने वाला सबसे महत्वपूर्ण रेशा है।

आकारिकी

मुख्य तना सर्पिल विन्यास में व्यवस्थित पत्तियां और शाखें धारण किए रहता है। मगर उस पर पुष्प अपरोक्ष नहीं होते। पत्तियों में दो प्रकार की कलिकाएं विद्यमान होती हैं - कक्षीय (axillary) और बाह्यकक्षीय (extra-axillary)। कपास में द्विरूपी (dimorphic) शाखन दिखाई देता है यानि कायिक - एकलाक्षीय (monopodial) और फलन-संधिताक्षीय (sympodial) शाखाएं। कायिक शाखाएं कक्षीय कलिकाओं से विकसित होती हैं जबकि फलन शाखें उपरि पर्वसंधियों पर स्थित बाह्य-कक्षीय कलिकाओं से विकसित होती हैं (चित्र 20.14)। पत्तियां विशाल, हस्ताकार में पालित (3, 5 या 7 पालियां) और बहुकोशिक ताराकार रोमों (multicellular stellate hairs) से आच्छादित रहती हैं। पुष्प बड़े और प्रदर्शनीय (showy) होते हैं जो विशाल, पत्तीनुमा सहपत्रों (bracts or epicalyx) के सहपत्र चक्रों (involucre) से घिरे रहते हैं। ये सहपत्र-चक्र प्रायः चिरस्थायी (persistent) होते हैं। फल डोडा (boll) एक गोलाकार या गोलाभ चर्मिल कैप्सूल (leathery capsule) है जो 3 से 5 कोष्ठकों (locules) से बना होता है। प्रत्येक विभाजन या कोष्ठक, लॉक (lock) कहलाता है जिसके भीतर छः से लेकर नौ बीज विद्यमान रहते हैं। प्रत्येक बीज की सतह रोमों से ढ़की रहती है। ये दीर्घ रोम (long hairs) या लिंट फ्लास (lint floss) या अंशुक (staple), और लघु रोम (short hairs) या उत्तंतु (fuzz या फज़, linter) होते हैं। कैप्सूल पकने पर फट जाता है और उसमें मौजूद तत्त्व एक सफेद रोएंदार पिंड (fluffy mass) में फैल जाता है जो कैप्सूल भित्ति से बाहर निकल आता है।

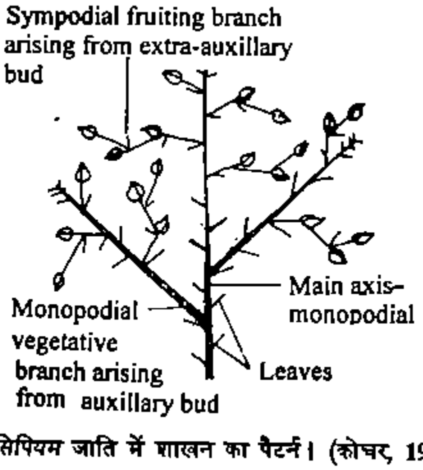

चित्र 20.14 : *गॉसिपियम* जाति में शाखन का पैटर्न। (कोचर, 1998 से)।

कपास के रेशे बीजावरण कोशिकाओं (seed coat cells) के अधिचर्मी दीर्घण (epidermal prolongations) हैं। इनकी प्राथमिक भित्ति (primary wall) एक पतली, प्रत्यास्थ (elastic) परत है जिस पर क्यूटिन (cutin) का आवरण रहता है। अवकाशिका (lumen) प्राथमिक भित्तियों के वर्धनकाल में भीतरी पृष्ठ पर सेलुलोस की अध्यारोपित परतों (superimposed layers) के जमाव के कारण संकीर्ण हो

जाती है (चित्र 20.15)। परिपक्व रेशा एक पारभासी (translucent) चपटी, व्यावर्तित या मुड़ी हुई (twisted) कमोबेश नलिकाकार (tubular) संरचना जैसा दिखाई देता है जिसका आधार चौड़ा मगर शिखाग्री सिरा अव्यावर्तित शुंडाकार (untwisted tapering apical end) होता है। व्यावर्तनों की संख्या (number of twists) प्रति इंच 150 से 300 तक होती है। रेशे की बाह्य सतह एक रक्षी मोमनुमा आवरण (wax-like covering) से ढकी रहती है जिसे इसमें कुछ-कुछ आसंजी गुण (adhesive quality) आ जाता है।

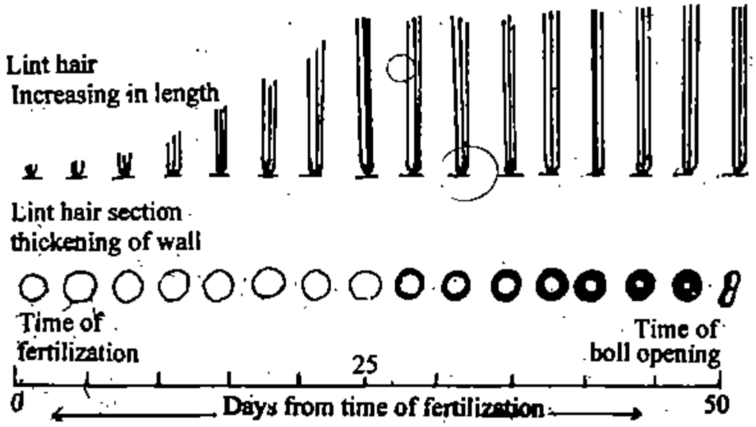

चित्र 20.15 : कपास के परिपक्व हो रहे डोडा (फल) में तंतु रोमक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को दर्शाता चित्र। (कोब्ली और स्टील 1976, से)।

अंशुक की लंबाई के अनुसार कपास के रेशों को हम तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं :

1) दीर्घ अंशुक रेशे (long staple fibres) इनकी लंबाई 2.5 से 6.5 से.मी होती है, बनावट सूक्ष्म और अच्छी चमक पाई जाती है। इस श्रेणी में सी-आयलैंड, मिस्री और अमेरिकी-मिस्री कपास रेशे आते हैं। ये सबसे कम पाए जाते हैं और इनकी खेती बड़ी कठिन है।

2) मानक मध्यम (standard medium), या मध्यवर्ती अंशुक रेशे (intermediate staple fibres) – लंबाई 1.3 से 5 से.मी. कुछ-कुछ स्थूल (coarse) होती हैं। इनमें अमेरिकी उपरिभूमि कपास (American upland cotton) शामिल है। इससे रेशे का उत्पादन तो अधिक मिलता है मगर उसकी गुणवत्ता निकृष्ट (lowest value) होती है।

3) लघु अंशुक रेशे (short staple fibres) - इनकी लंबाई 9.5 से 19 मि.मी. होती है; ये छोटे, स्थूल और चमकहीन (lustre less) रेशें हैं। इस श्रेणी में भारतीय तथा अन्य एशियाई कपासें आती है। इनसें सस्ता कपड़ा, दरियां और कंबल बनाने में काम लाया जाता है।

आम कृष्ट जातियां

कपास की चार कृष्ट (cultivated) जातियों उनकी अनेक उपजातियों और संकर किस्मों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है : 1) नई दुनिया (New world) या अमेरिकी कपास (American cotton) (*गॉसिपियम हर्सुटम* और *गॉ. बारबैडेंस*); 2) पुरानी दुनिया (old world) या एशियाई कपास (*गॉ. आरबोरियम* और *गॉ. हर्बेसियम*)। हम इन चारों जातियों के बारे में संक्षेप में अध्ययन करेंगे।

गॉसिपियम हर्सुटम (n = 26), उपरिभूमि कपास (upland cotton), अमेरिकी कपास, बौर्बोन कपास (Bourbon cotton) (चित्र 20.16)।

उत्पत्ति और वितरण

यह जाति (चित्र 20.16) मेक्सिको और मध्य अमेरिकी मूल की है। वर्तमान समय में विश्व में उत्पादित अधिकांश कपास उपरिभूमि कपास (अपलैंड कपास) है। इसे दक्षिणी संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिणी ब्राज़ील, उगांडा, दक्षिण और पश्चिमी अफ्रीका, इराक, चीन के कुछ भागों में, तुर्की, यूनान, भारत, पाकिस्तान और क्वींसलैंड (ऑस्ट्रेलिया) में उगाया जाता है।

अंशुक (स्टेपिल) की लंबाई के आधार पर *गॉसिपियम हर्सुटम* की दो उपजातियां या किस्में पहचानी गई हैं:
1) अमेरिकी उपरिभूमि लघु अंशुक कपास (American upland short staple cotton) –16-27 मि.मी.,
2) अमेरिकी उपरिभूमि लम्बी अंशुक कपास (American upland long staple cotton) –28-38 मि.मी.

लक्षण

इसके पौधे कुछ कायिक शाखाओं वाले क्षुप या वृक्ष होते हैं। इनकी पत्तियां बड़ी, हृदयाकार (cordate), रोमिल (hairy) तथा 3 से 5 पालियों में विभाजित होती हैं। डोडे बड़े, गोल, तथा *गॉ. बारबैडेंस* से भिन्न, गहरे हरे रंग के तथा कुछ गिनी-चुनी तेल ग्रन्थियों सहित होते हैं। बीज पूरी तरह से रोएंदार कोटिंग (fuzzy coating) से ढके रहते हैं।

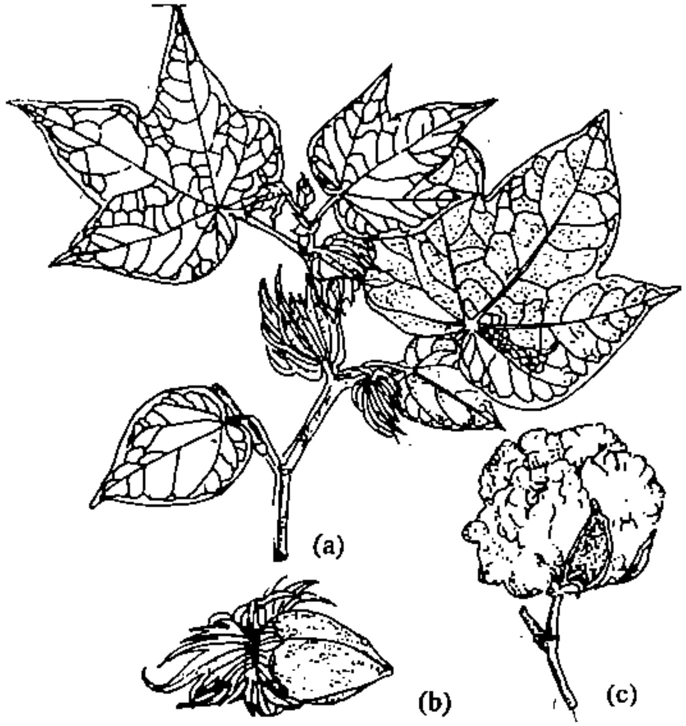

चित्र 20.16: *गॉसिपियम हर्सुटम* (*Gossypium hirsutum*)। क्रमशः a) संचितापी शाख, b) एक वंद, और c) खुला डोडा (बोल)। (पर्सग्लव, 1988, से)।

गॉसिपियम बारबैडेंस (n = 26), (सी-आइलैंड कपास, ब्रजीली कपास, पेरूई कपास, किडनी कपास (चित्र 20.17)।

उत्पत्ति और वितरण

ऐसा माना जाता है कि इस चतुर्गुणित (tetraploid) कपास का विकास, दो द्विगुणित (diploid) कपास जातियों - एशिआई कपास और अमरीकी कपास के बीच संयोगी संकरण (accidental hybridisation) तथा फिर उसके (संकर के) गुणसूत्र संख्या (chromosome number) के दुगुना (doubling) होने से हुआ। यह दक्षिण अमेरिका की मूल जाति है, जोकि इसकी लिंट की अधिक लम्बाई और उत्कर्षण (fineness) के कारण बहुत महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसकी उपजातियां (वैराइटी या varieties) सी-आइलैंड कपास और मिस्त्री कपास खासतौर पर प्रसिद्ध है।

सी-आइलैंड कपास (चित्र 20.17) जोकि सभी कृष्ट कपासों में सबसे उत्तम मानी जाती है, यह मुख्यतः वेस्ट इंडीज के निम्न ऐन्टिलीस (lesser Antilles of the West Indies) में, फिज़ी (Fiji) तथा फ्लोरिडा (Florida) मुख्यभूमि के तटवर्तीय क्षेत्र की छोटी सी पट्टी तथा पास के द्वीपों, संयुक्त राज्य अमेरिका में जीओर्जीया (Georgia) तथा दक्षिण कैरोलिना (Carolina) में उगाया जाता है। इसके महीन कते सूत्र से लेस (जाली), कैम्ब्रिक (cambric), महीन होज़री (fine hosiery) बनाई जाती है। मिस्त्री कपास मिस्त्र की नाइल घाटी (Nile valley) में, सूडान में, तथा कुछ कम मात्रा में तुर्कीस्तान, न्यू मेक्सिको, एरिज़ोना (Arizona) तथा कैरोलिना (Carolina) में उगाया जाता है। इसके रेशे का उपयोग विशेष रूप से उन वस्तुओं को बनाने में किया जाता है, जहाँ अधिक मज़बूती की आवश्यकता होती है।

लक्षण

इसके पौधे वार्षिक क्षुप है जिनकी ऊंचाई लगभग 3 मीटर तक होती है, तथा इन पर गिने-चुने या अधिक संख्या में, आरोही प्रक्रम में मज़बूत कायिक शाखाएं होती हैं। पत्तियां 3 से 5 पालियों में विभाजित होती हैं। डोडे प्राय: बड़े (3.5 से 6.0 से.मी. लम्बे) गहरे हरे, सुस्पष्ट गर्त (pits) युक्त होते हैं तथा इन पर बहुत संख्या में तेल ग्रंथियां (oil glands) विद्यमान होती हैं। सहपत्रिकाएं (bracteoles) बड़ी होती हैं, तथा शिखर पर 10–15 लम्बे, लम्बाग्र (acuminate) दांतनुमा (teeth-like) भागों में विभाजित होती हैं। फल तीन या चार कोष्टकीय होता है। प्रत्येक कोष्टक में पांच से आठ या अधिक बीज होते हैं, जोकि सिरों पर रोएंदार (fuzzy) होते हैं। यह उपजातियाँ एक दूसरे से लिंट की बुनावट (texture), लम्बाई तथा रंग में भिन्न होती हैं। सी-आइलैंड कपास में रेशे सफेद या हल्के क्रीम रंग के, रेशमी (silky) तथा चमकीले (lustrous) तथा 38–51 से.मी. लम्बे होते हैं। मिस्री कपास के स्टेपिल रेशे गहरे क्रीम या बफ़ रंग के, 38–44 मि.मी. लम्बे तथा अपेक्षतया निम्नकोटि के होते हैं।

चित्र 20.17 : *गॉसिपियम बारबैडेंस (Gossypium barbadense)* । a) एक पुष्पन करती टहनी। b) एक बंद डोडा। (पर्सग्लव, 1988 से)

गॉसिपियम आर्बोरियम (n = 13), सीलोन कपास, चीनी कपास या वृक्ष कपास (चित्र 20.18)।

उत्पत्ति और वितरण

यह हिंद से चीन प्रदेश मूल का है और वर्तमान समय में इसकी खेती भारत, म्यानमार, मलेशिया, ईस्ट इंडीज, चीन, कोरिया, जापान, ताइवान तथा अफ्रीका में की जा रही है। असल में भारत और अफ्रीका इस किस्म की कपास के सबसे बड़े उत्पादक हैं।

लक्षण

इसके पौधे वार्षिक या बहुवर्षी क्षुप हैं, जिनकी ऊंचाई लगभग 3 मीटर तक होती है। इनमें गिनी-चुनी शाखें होती हैं या फिर शाखें होती ही नहीं। बोल या डोडा त्रिकोशिक (कभी-कभी चार या पांच कोशिक) शुंडाकार (tapering) संरचना है जो अत्यधिक गर्तित (profusely pitted) होता है। इसके गर्तों में सुस्पष्ट तेल ग्रंथियां विद्यमान रहती हैं (चित्र 20.18)। फल पकने पर अच्छी तरह से खुल जाता है और उसके प्रत्येक कोष्ठक में बीजों की संख्या 17 तक पाई जाती है। बीज छोटे और धूसरी-हरे या जंग के रंग के, लघु रोमों से ढके रहते हैं जिन्हें रोवां कहते हैं। अंशुक (स्टेपिल), फ्लास या तंतु (लंबे रोम) पीले सफेद या मोरचाभ-सफेद, स्थूल (खुरदुरे) और चमकहीन होते हैं लेकिन वे मजबूत और बहुत छोटे (9.5–19 मि.मी.) होते हैं।

चित्र 20.18 : *गॉसिपियम आर्बोरियम (Gossypium arboreum)*। a) एक संचितामी शाख। b) एक बंद डोडा। c) एक खुला डोडा। (पर्सग्लव, 1988, से)।

गॉसिपियम हर्बेसियम (n = 13), लेवैंट कपास (चित्र 20.19)।

उत्पत्ति और वितरण

यह जाति उष्णकटिबंधी अफ्रीका और मध्य पूर्व के मूल की है। इसे अब चीन, इंडोनेशिया, पश्चिमोत्तर भारत, पाकिस्तान, ईराक, ईरान, तुर्कीस्तान, यूनान और अफ्रीका के कई भागों में उगाया जा रहा है।

लक्षण

इसके पौधे झाड़ीनुमा होते हैं, जिनकी ऊंचाई 1–1.3 मीटर तक होती है (चित्र 20.19)। पत्तियां 3 से 5 पालियों में विभाजित होती हैं। (इनकी संख्या विरले ही सात तक होती है)। सहपत्रिकाएं (bracteoles) अति अपसारी (widely flaring) होती हैं। डोडा त्रि-कोषिक, गोलाकार, चोंचधारी (beaked), चिकने

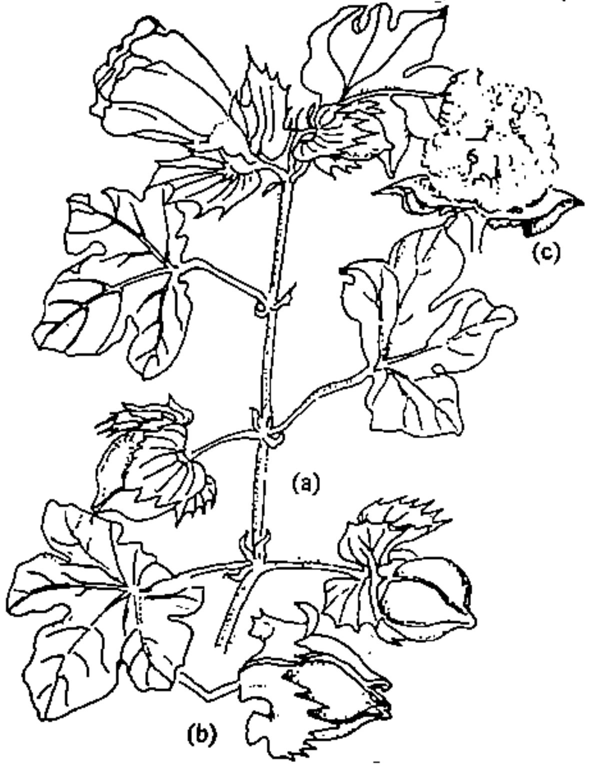

चित्र 20.19 : *गॉसिपियम हर्बेसियम (Gossypium herbaceum)*। a) पुष्प और फल युक्त एक टहनी। b) एक खुलता डोडा। c) खुला डोडा। (पर्सग्लव, 1988, से)।

पृष्ठ वाला (smooth surfaced) और कभी-कभार ही सुस्पष्ट गर्त (pits) युक्त पाया जाता है। फल पकने पर तीन या चार कोष्ठकों में स्फुटित होता है। प्रत्येक कोष्ठक में 11 की संख्या तक बीज उपस्थित होते हैं। बीजों में प्राय: रोमों के दो आवरण होते हैं - दीर्घ तंतु रोम (अंशुक या फ्लास) और लघु रोएंदार रोम (तंतु)। अंशुक छोटा (9.5–19 मि.मी.) और धूसरी होता है।

खेती

कपास मूलत: एक उष्णकटिबंधी फसल है, जिसे न्यूनतम 200 दिन का तुषार-मुक्त (frost free) वर्धनकाल चाहिए। इसके अतिरिक्त इसे प्रचुर मात्रा में धूप और गर्म (उष्ण) समरूप तापन चाहिए जो 21° से. से कम नहीं हो। मगर यह 43° से. तक का तापमान सहन कर सकती है। यह भारी वृष्टि के प्रति अति संवेदनशील है। मगर साथ ही इसे वृद्धि के आरंभिक चरणों में मृदा में पर्याप्त नमी चाहिए (लगभग 100 से.मी. वृष्टि) पुष्पन काल में अपेक्षतया शुष्क मौसम और पक्वन या बीनने के समय कोई वर्षा नहीं चाहिए। कपास गहरी चूर्णशील मिट्टी में अच्छी तरह से उगता है जिसमें ह्यूमस (humus) की मात्रा अच्छी हो।

विश्व के सकल कपास उत्पादप का 80 प्रतिशत से अधिक दस देशों से आता है। ये हैं - रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, भारत, पाकिस्तान, ब्राज़ील, तुर्की, मिस्र, मेक्सिको और सूडान। भारत के प्रमुख कपास उत्पादक राज्य महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पंजाब, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान और हरियाणा हैं। भारत में सामान्यतया *गॉ.हर्सुटम* (29 प्रतिशत) और *गॉ.हर्बेसियम* (21 प्रतिशत) जातियां उगाई जाती हैं।

फसल बीनना और कपास का संसाधन

यह कार्य फसल बोने के लगभग छ: महीने पश्चात् आरंभ होता है और यह कपास की खेती का सर्वाधिक महंगा कार्य है। जहां श्रम सस्ते में सुलभ हो वहां इसे हाथों से तोड़ा जाता है और तोड़ने का यह कार्य दो महीने या उससे अधिक समय चलता है क्योंकि सभी फल एक समय में नहीं पकते। डोडों के खुलते ही कपास तोड़ लिया जाता है। अगर इसे लंबे समय तक छोड़ दिया जाए तो वह बिखर सकता है या खराब हो सकता है। सूखी कपास बीनना ही उत्तम रहता है जो कूड़े-करकट से मुक्त हो। जहां श्रम दुर्लभ हो वहां कपास को यांत्रिक हार्वेस्टर (harvester) से तोड़ा जाता है जो चूषण के सिद्धांत (principle of suction) पर काम करता है। इसके लिए कपास के पौधों को कैल्सियम सायनामाइड जैसे रसायनों के प्रयोग द्वारा निष्पत्रित (defoliate) किया जाता है। इसके फलस्वरूप सभी कैप्सूल एक साथ पक जाते हैं।

सूत में कताई और वस्त्र में बुने जाने से पहले कच्ची कपास को कई प्रक्रमों से गुज़ारा जाता है (चित्र 20.20)। लंबे समय तक बीजों से कपास के रेशों को अलग करने की एकमात्र विधि उन्हें हाथ से अलग करना थी। सन् 1793 में कपास ओटने (कॉटन जिन) की मशीन की खोज ने कपास उद्योग में क्रांति ला दी और हस्त-संसाधन की श्रमसाध्य विधि से निजात मिल गई। कच्ची कपास के संसाधन के विभिन्न चरण इस प्रकार हैं :

1) ओटना (ginning) - कच्ची कपास से धूल अन्य पादप अंश इत्यादि साफ कर लेने के बाद उसे ओटने की मशीन के हॉपर (hopper) में डाला जाता है जो इसके रेशों को अलग-अलग कर देती है।

2) गट्ठ बनाना (baling) - ओटाने की मशीन से बाहर आते रेशों को द्रवचालित दाब (hydraulic pressure) से संपीडित कर लगभग 200 कि.ग्रा. के गट्ठ (bales) बनाए जाते हैं इन गट्ठों को जूट (jute) या हेशन आवरणों (hessian covers) में अंशिक रूप से लपेट दिया जाता है और फिर इन्हें लोहे के बैंडों से बंधा दिया जाता है जिन्हें 'टाई' (ties) कहते हैं। इन्हें इसी स्वरूप में बाजार में बेचा जाता है।

3) छंटाई (picking) - गठ्ठित कपास को पहले तोड़ा जाता है और फिर उसके रेशों को स्कचर यानि तंतु कर्षित्र (scutcher) में डाला जाता है। यह मशीन रेशों को कूटती है, धुनती और उन्हें

लोटती-पोटती है जिससे उनमें विद्यमान अवांछित बाह्य पदार्थ दूर हो जाते हैं और कपास के सूत पृथक होकर अंततः एक समरूप परत के रूप में निकल आते हैं। अंत में छंटाई (पिकिंग) मशीन कपास को एक शीट में संघनित करती है जिसे लैप (lap) या रूई की परत कहते हैं।

4) धुनाई (carding) - रेशों के बने पिंडों को धुनाई की मशीन में धुनकर रेशे अलग-अलग कर लिए जाते हैं। यह मशीन रेशों को एक दूसरे के समांतर ले आती है और अपरिपक्व रेशों और अशुद्धियों को भी हटा देती है।

5) कंकतन और आरेखण (combing and drawing) - कंकतन प्रक्रम में छोटे तंतुओं को अलग कर दिया जाता है, जबकि आरेखण में रेशों को सीधा (straighten) और संरेखित (align) किया जाता है। सामान्यतः धुनाई के बाद दो बार और कंकतन के बाद दो बार आरेखण की प्रक्रिया दोहराई जाती है।

कर्तित लैप (fleecy lap) को एक फनल के जरिए कोमल अव्यावर्तित सूत्र (untwisted rope) या "सिल्वर" में संघनित किया जाता है। इसे फिर और आरेखित, तथा थोड़ा सा व्यावर्तित (twist) करके रीलों (spools) में लपेटा जाता है। कटाई प्रक्रम में कपास को फिर से आरेखित किया जाता है और उसे वांछित शक्ति (strength) तथा दृढ़ता (firmness) वाले एक सूक्ष्म, उत्तम कोटि के सूत में व्यावर्तित किया जाता है। निर्मित सूत (finished yarn) को अब फिरकी (बॉबिनों) या रीलों (स्पूलों) पर लपेटकर उसे बुनाई की मशीनों में भेजा जाता है।

कपास के गुण

कपास एक अत्यधिक महत्वपूर्ण रेशा है क्योंकि यह कोमल और सुनम्य या लचीला (supple) होता है। इसमें उच्च तनन सामर्थ्य (tensile strength) होती है जिसका अर्थ है कि यह प्रतिबल में विदारण या भंजन को सहन कर सकता है और गीला होने पर यह और मजबूत हो जाता है। कपास से बने वस्त्रों में विमीय स्थायित्व (dimensional stability) होती हैं यानि इसकी लंबाई या चौड़ाई में कोई परिवर्तन नहीं होता। यह चिरायु है जिसके कारण यह औद्योगिक उपयोग [टायर कॉर्ड, (tyre cord), मशीनों के पट्टे (machinery belts), सुतली (twines) बनाने] के लिए उपयुक्त है। कपास अन्य रेशों की तुलना में लंबे समय तक बारबार वंकन (bending यानि मोड़कर तह लगाना) सहन कर सकता है। इसमें बुनाई की गुणवत्ता और धुलाई उत्तम कोटि की पाई जाती है।

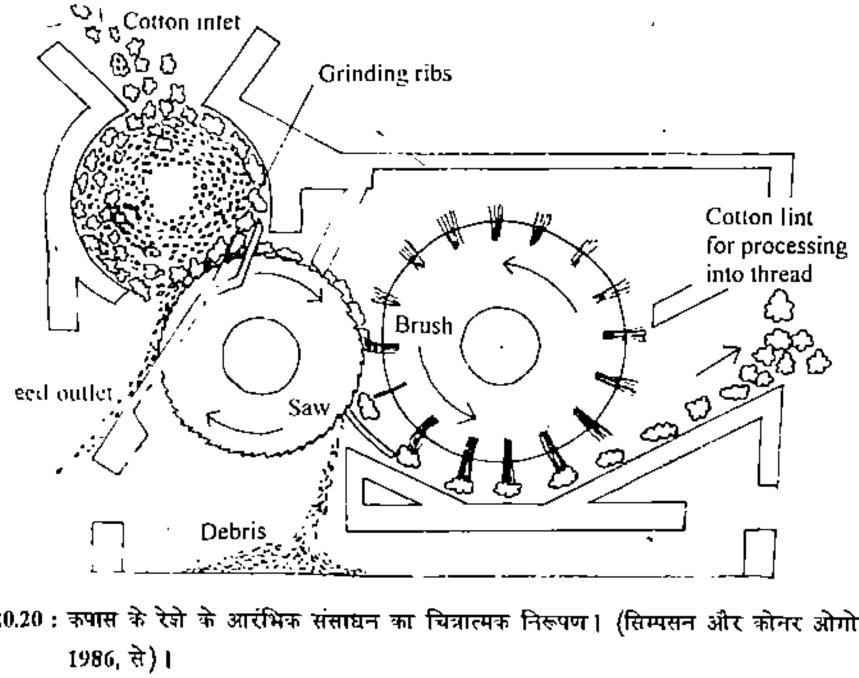

चित्र 20.20 : कपास के रेशे के आरंभिक संसाधन का चित्रात्मक निरूपण। (सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986, से)।

कपास के उपयोग

कपास एक प्रमुख नकद फसल (cash crop) है और इसे नाना प्रकार से उपयोग में लाया जाता है इसके बीज से निकाले जाने वाले तंतु का प्रयोग कपड़ा बनाने, घरेलू वस्त्र (तौलिए, चादरें, गद्दीदार साज-सामान)

बनाने, औद्योगिक सामान (थैले, पट्टे, औद्योगिक धागा, टेंट के तिरपाल, होज़, रोघन, सेलुलोस) बनाने के लिए होता है। इसके बीजों से बिनौले का तेल (cotton seed oil) मिलता है, बीज की खली पशु आहार और खाद के काम आती है। छिलके का प्रयोग निम्न कोटि के मोटे चारे के रूप में और उच्च कोटि का कागज और फाइबर बोर्ड, सेलाफेन, रेयॉन, वार्निश और विस्फोटकों के निर्माण में किया जाता है। बिनौले के तंतु (लिंटर) या रूई को तकिए, रजाई, गद्दे इत्यादि की भराई में प्रयोग किया जाता है। इसके डंठल (stalks) ईंधन के रूप में और कागज की लुग्दी बनाने के काम आते हैं। कपास को उसके अलग-2 उपयोगों के अनुसार कई तरह से रासायनिक रूपांतरित किया जाता है :

i) **मर्सरीकृत (mercerised)** कपास – इसे सूत या कपड़े को तनन अवस्था (under tension) में सोडियम हाइड्रॉक्साइड से विवेचित करके बनाया जाता है। इस प्रक्रम का नाम जॉन मर्सर (John Mercer) के नाम पर पड़ा हैं। यह कपास को उच्च चमक देता है, इसे रंगना आसान हो जाता है और इसके अधिक चमकीले और पूरे शेड उत्पन्न होते हैं।

ii) **जल प्रतिकर्षी (water repellent)** कपास – रेशों को अलग-अलग सोडियम अमोनियम स्टीयरेट जैसे रसायनों से विवेचित या उपचारित किया जाता है। सूखने के बाद इन्हें ऐलुमिनियम एसीटेट से गुजारा जाता है। इस तरह वस्त्र पर बनने वाला धात्विक साबुन जैसा निक्षेप (metallic soap-like deposition) कपड़े को जल प्रतिकर्षी गुण देता है, जिसे सायबान (या तिरपाल), तंबू और अन्य रक्षी आवरणों के रूप में प्रयोग किया जाता है।

iii) **अवशोषक (absorbent)** कपास – इसे रेशों पर मौजूद तैलीय या मोमी आवरण को हटाकर बनाया जाता है जिससे वह और अधिक पानी सोख सकती है। इसका प्रयोग अधोवस्त्र (under-clothing), तौलिये, नैपकिन और पट्टी (bandage) इत्यादि का सामान के निर्माण में होता है।

बोध प्रश्न 7

कॉलम I को कॉलम II से सही-सही मिलाइए। उपयुक्त रूप से तीरों द्वारा सही मिलान दर्शाइए।

कॉलम I	कॉलम II
जूट	ब्रुश रेशा
सीसल	बास्ट रेशा
कपास	संरचनात्मक रेशा
सोरघम	वस्त्र रेशा

बोध प्रश्न 8

बताइए कि निम्न कथन सही या गलत?

i) कपास के रेशे बीजावरण की अधिचर्म में उत्पन्न होते हैं।

☐

ii) *गॉसिपियम बारबेडेंस* मिस्री कपास का स्रोत है।

☐

iii) *गौसिपियम हर्बेसियम* से दीर्घ-अंशुक रेशा मिलता है।

☐

iv) कपास विश्व का सबसे महत्वपूर्ण खाद्येतर कृषि पादप है।

☐

20.6.2 जूट (Jute)

वानस्पतिक नाम : कोर्कोरस जाति (*Corchorus* spp.)

कुल : टिलिएसी

प्रचलित नाम : जूट [कोर्कोरस कैप्सुलैरिस (*Corchorus capsularis*) – सफेद जूट, नार्चा; को. ओलिटोरियस (*C. olitorius*) – टॉसा जूट, ज्यूज़ मैलो]

n = 7

जूट सबसे सस्ता मगर सभी बास्ट रेशों में सबसे महत्वपूर्ण है। इसका रेशा *कोर्कोरस* की दो कृष्ट (cultivated) जातियों - को. *कैप्सुलैरिस* (चित्र 20.21) और कै. *ओलिटोरियस* (चित्र 20.22) के तनों से निकाला जाता है।

उत्पत्ति और वितरण

कोर्कोरस ओलिटोरियस की उत्पत्ति का मुख्य केन्द्र अफ्रीका है, जिसका द्वितीयक केन्द्र भारत या हिंद-बर्मा है। को. *कैप्सुलैरिस* संभवत: हिंद-बर्मा मूल का है। एक समय यह भारत की एकाधिकारवादी (monopoly) फ़सल थी, विश्व का 99 प्रतिशत जूट भारत में ही पैदा होता था। वर्तमान समय में भारत और बांगलादेश जूट के प्रमुख उत्पादक देश हैं जिनके बाद चीन, बर्मा, नेपाल, ब्राज़ील हैं। बांगलादेश कच्चे जूट (raw jute) का सबसे बड़ा उत्पादक देश है जबकि भारत विनिर्मित जूट उत्पादों (manufactured jute products) के निर्यात में अग्रणी है। भारत के प्रमुख जूट उत्पादक राज्य पश्चिम बंगाल, आसाम, बिहार और उड़ीसा हैं।

चित्र 20.21 : कोर्कोरस कैप्सुलैरिस (*Corchorus capsularis*) a) फलों सहित एक टहनी। b) एक फल। (पर्सग्लव, 1988 से)।

चित्र 20.22 : कोर्कोरस ओलिटोरियस (*Corchours olitorius*) a) फलों की विभिन्न वर्धनात्मक अवस्थाओं को दिखाती टहनी। b) एक फल। (पर्सग्लव, 1988 से)।

पादप आकारिकी

जूट की दोनों कृष्ट जातियां काष्ठीय, बहुत कम शाखित, वार्षिक पादप हैं। इनमें सरल, अंडाकार क्रकची (serrate) किनारे वाली पत्तियां होती हैं। इन पत्तियों के मूल में विशेष तरीके से वक्रित (curved) पालियां (bristles or auricles) स्थित होते हैं। पुष्प एकल या कुछ पुष्पित ससीमाक्ष (cymes) होते हैं।
को. *कैप्सुलैरिस* एक लंबा बहुत कम शाखित वार्षिक पौधा (3 से 3.7 मीटर) ऊंचा है जिसमें पत्तियां अंडाकार अरोमिल (glabrous) होती हैं, जिनमें एक कड़ुवा ग्लाइकोसाइड कोर्कोरिन (corchorin) पाया

जाता है। इसके छोटे, पीले पुष्प छोटे, कमोवेश गोलाकार अत्यधिक वलीयनित (wrinkled) कैप्सूलों को जन्म देते हैं। ये कैप्सूल शिखर से चपटे होते हैं और इनमें भूरे रंग के बीज भरे होते हैं। *को. ओलिटोरियस* अधिक लंबी जाति है, जिसकी पत्तियों का ऊपरी पृष्ठ चमकदार और अधर पृष्ठ रुक्ष (rough) होता है और इनमें स्वाद कड़ुवा नहीं होता। पीले पुष्प आकार में *को.कैप्सुैरिस* से बड़े होते हैं और प्रत्येक पुष्प एक दीर्घ बेलनाकार (cylindrical), कटकित (ridged) कैप्सूल में विकसित होता है जिसमें एक दीर्घित चोंच (elongated beak) पाई जाती है। बीज छोटे, नीले-हरे से स्टील धूसरी या काले रंग के होते हैं।

खेती

भारत में उगाई जाने वाली जूट की 75 प्रतिशत फसल *को. कैप्सुलैरिस* की है। जूट की फसल वर्षा ऋतु में उगती है और गर्म, आर्द्र और उर्वर दुमट (rich loamy) या जलोढ़ (alluvial) मिट्टी में यह सबसे अच्छी उगती है। इसे 150–250 से.मी. वार्षिक वृष्टि, 17–38° से. का तापमान और 70–90 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता (relative humidity) चाहिए। गंगा, ब्रह्मपुत्र और उनकी सहायक नदियों के डेल्टाओं की उर्वरक जलोढ़ मिट्टी की खेती के लिए सबसे उपयुक्त है। बीज छिटक कर (broadcast) बोआ जाता है और पौधा तीन से पांच महीने के बीच पककर तैयार हो जाता है।

जूट की कटाई और संसाधन

जब लगभग 50 प्रतिशत पौधे फलन (fruiting) करने लग जाएं तभी फसल की कटाई की जाती है। इस चरण पर उपज और रेशे की गुणवत्ता दोनों ही उत्तम रहते हैं। पौधों को जमीन से सटाकर दरांती से काटा जाता है। या फिर अगर वे जल में उगे हों तो उन्हें हाथ से उखाड़ा जाता है। कटे तनों के छोटे बंडलों को बांध कर उन्हें दो या तीन दिन के लिए खेतों पर ही छोड़ दिया जाता है जिससे पत्तियां मुरझा कर गिर जाती हैं।

रेशे जाइलम के बाहर दीर्घ, फानाकार बंडलों (wedge-shaped bundles) में विद्यमान रहते हैं। ये संकेन्द्री वलयों (concentric rings) में समूहित होते हैं जो फ्लोएम के पतली-भित्ति वाले ऊतक के साथ एकांतर (alternate) क्रम में पाए जाते हैं। यह ऊत्तक अपगलन (retting) के दौरान खंडित (disintegrate) हो जाता है। प्रत्येक रेशा-पूल या फाइबर-बंडल एक सूत्र (strand) या तंतु (filament) है, इसे रीड (reed) भी कहते हैं। यह चार से लेकर पचास कोशिकाओं से निर्मित होता है। रेशा कोशिकाओं (fibre cells) की लंबाई दो या तीन मि.मी. से अधिक नहीं होती।

जूट के तनों के बंडलों को एक पानी के तालाब या गड्ढे में एक दूसरे के करीब, इस तरह से चपटा रखा जाता है कि एक चबूतरा सा बन जाता है। इस चबूतरे के ऊपर तनों के बंडलों की एक और तह इसके समकोण (at right angles) में लगाई जाती है। इसके बाद इन बंडलों की सतह को खर-पतवार घास-पूस या अन्य त्याज्य पदार्थों से ढ़क कर उनके ऊपर भारी पत्थर, लकड़ी के लट्ठे इत्यादि रख दिए जाते हैं ताकि वे पानी में ही डूबे रहें। इस प्रक्रम को अपगलन (retting) कहते हैं और इसमें 10 से 30 दिन का समय लगता है। इसे तभी पूरा समझा जाता है जब तनों की छाल आसानी से उतर जाए। पौधों के तनों से छाल उतारने के लिए कामगारों को कमर तक पानी में खड़े रहना पड़ता है। पहले तनों को, उनके मूल या ठूठों वाले सिरों को, लकड़ी की मुंगरी (wooden mallet) से कूटा जाता है जिससे रेशे खुल जाते हैं। इन खुले रेशों को अंगुलियों में कसकर लपेटा जाता है और फिर तनों को आगे-पीछे ज़ोर-ज़ोर से झटके देकर रेशों को डंडियों से अलग कर लिया जाता है। इन अनावृत रेशों (stripped fibres) को अब पानी की सतह पर छिटका जाता है जिससे उनसे चिपके परिचर्म (पेरीडर्म) और मज्जा (pith) के टुकड़े अलग हो जाते हैं। इन्हें स्वच्छ जल में धोकर निचोड़ने के बाद बांस के रैकों (टांडों) पर धूप में सूखने के लिए फैलाकर दो या तीन तक छोड़ दिया जाता है। सूखने के बाद उन्हें बंडलों में लपेट दिया जाता है। रेशे की औसत उपज तने के ताजा भार (stem fresh weight) का लगभग छः प्रतिशत तक होती है।

जूट के गुण

जूट के रेशे की लंबाई 1.8 से 3 मीटर तक पाई जाती है, रंग पीला या सफेद पीला होता है इसमें रेशम जैसी चमक होती है। नमी या सीलन के प्रभावन में रेशों में गुणह्रास (deterioration) होने लगता है। ये

प्राय: कड़े (stiff), भुरभुर (brittle) और खुरदुरे (coarse) होते हैं तथा इनमें तननता (stretchability) और प्रत्यास्थतता (elasticity) कम होती है। संसाधन के दौरान बंडल के कुछ रेशों के सिरे खुल जाते हैं जिससे उनमें अलग-अलग परिमाण में रोमिलता आ जाती है जो फिसलन को रोकती है। रेशों की लंबाई 2 से 5 मि.मी. होती है, अनुप्रस्थ काट में ये बहुभुजी (polygonal) पाए जाते हैं और इनकी सतह चिकनी होती है। इनमें चौड़ी अवकाशिका पाई जाती हैं। इनमें रंगाई का काम अच्छी तरह से होता है मगर जूट को विरंजित (bleach) करना बड़ा कठिन कार्य है।

जूट के उपयोग

जूट से बुना कपड़ा थैले बनाने और आवरक के काम के लिए विश्व का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। वर्ष में उत्पादित 75 प्रतिशत जूट का प्रयोग थैले या बोरे बनाने में किया जाता है। इसका प्रयोग कालीन, कंबल, दरियां, तिरपाल, पुश्ता, सुतली, रस्सी, गद्दियां, पर्दे, और मोटा कपड़ा बनाने के लिए होता है। मिस्र, सूडान और यूनान में इसकी पत्तियां और तरुण प्ररोह एक महत्वपूर्ण भोजन स्रोत हैं। जूट के ठूंठों (jute butts) का उपयोग कागज और गत्ता बनाने में किया जाता है।

बोध प्रश्न 9

निम्न कौन सा कथन सही या गलत है? बताइए।

i) जूट के रेशे ज़ाइलम से बाहर फ़ानाकार बंडलों के रूप में विद्यमान रहते हैं। ☐

ii) जूट को गलाने या अपगलन में एक महीने का समय लगता है। ☐

iii) जूट को आसानी से विरंजित किया जा सकता है। ☐

iv) जूट की पत्तियों और तरुण प्ररोहों को खाया जाता है। ☐

v) जूट के वार्षिक उत्पादन की बहुत थोड़ी मात्रा, बोरों और थैलों के निर्माण में प्रयुक्त होती है। ☐

20.6.3 नारियल (Coconut)

वानस्पतिक नाम : *कोकोस न्यूसिफेरा (Cocos nucifera)*

कुल : ऐरिकेसी

प्रचलित नाम : नारियल, डाब

n = 16

नारियल के पेड़ के फल के रेशेदार झाड़ (fibrous husk) या मध्यफलभित्ति (mesocarp) से व्यावसायिक उपयोग की नारियल जटा (coir) प्राप्त की जाती है।

उत्पत्ति और वितरण

ऐसा माना जाता है कि नारियल की उत्पत्ति हिन्द-प्रशांत महासागरीय प्रदेश (Indo-Pacific region) में हुई थी, जहां से यह समुद्री धाराओं के जरिए विश्व के सभी तटीय-भूभागों में जा फैला। इस पौधे को उष्ण कटिबंधी और उपोष्ण कटिबंधी प्रदेशों के तटीय और डेल्टा भागों में बड़े पैमाने पर उगाया जाता है। फिलिपीन्स, इंडोनेशिया, भारत, मेक्सिको, पपुआ न्यू गिनी, पश्चिम मलय और श्रीलंका इसके प्रमुख उत्पादक देश हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका इसका सबसे बड़ा आयातक देश है। भारत में, नारियल की खेती प्राय: केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के तटीय क्षेत्रों तक सीमित है।

नारियल एक लंबा पेड़ है (15 से 30 मीटर) जिसका तना (प्रकाश और हवा की दिशा में) अवनत (inclined) रहता है। तना बड़े-बड़े वलयनुमा पर्ण दागों (ring like scars) से चिन्हित रहता है (चित्र 20.23)। मुख्य तना आधार से फूला हुआ और 20 से लेकर 30 विशाल, समापिच्छकी (paripinnate) पत्तियों से ढका रहता है। पत्तियां 1.8 से 6 मीटर तक लंबी पाई जाती हैं और प्रत्येक पत्ती का भार 10 से 15 कि.ग्रा. तक होता है। पुष्पक्रम कक्षीय होता है और इसमें एक मध्य अक्ष (central axis) होता है जिसमें 40 पार्श्व शाखें (lateral branches) स्थित होती हैं। पूरा पुष्पक्रम एक स्पेथ (spathe) में बंद रहता है। नर पुष्पों की संख्या 200 से 300 तक होती है जो पुष्पी अक्ष के उपरि भाग में एकल (singly), दो या तीन की इकाइयों में उत्पन्न होते हैं। मादा पुष्पों की संख्या गिनी चुनी होती है और वे पुष्पक्रम की शाखों के मूल में प्राय: एकल संख्या में उत्पन्न होते हैं।

फल लगभग 9–12 महीने में पक जाते हैं। प्रति पुष्पक्रम प्राय: 3 से 7 फल परिपक्व होते हैं। पक्व फल एक रेशेदार अष्ठिल (fibrous drupe) होता है जो अक्सर अंडाकर रहता है। फल का भार 1.2 से 2 कि.ग्रा. होता है। फल में बाह्यफलभित्ति यानि exocarp, तरुणावस्था में चीमड़, चिकनी, कठोर और हरी होती है, और फल के परिपक्व होने पर यह झड़ जाती है। बीच की स्थूल गहरी भूरी मध्यफलभित्ति जिसे endocarp भी कहते हैं, एक पतले भूरे बीजचोल वाले खोखले बीज को घेरे रहती है। Endosperm के बाद अन्दर की ओर एक ठोस भ्रूणपोष यानि solid endosperm (जिसे meat भी कहते हैं) होता है। इसे व्यावसायिक तौर पर गरी (copra) भी कहते हैं। इसके बाद (अन्दर की ओर) एक गुहिका होती है। यह तरल नारियल दूध (coconut milk) से अंशत: भरी रहती है। यह तरल नारियल दूध, वास्तव में तरल भ्रूणपोष है। उत्तम कोटि की नारियल जटा प्राप्त करने के लिए फल को तभी तोड़ लिया जाता है जब वह हरा ही हो। फल को दो तरीके से छीला जाता है : नारियल को जमीन में झुकाव में मजबूती से गड़ी हुई लोहे की नुकीली छड़ (आयरन स्पाइक) पर रगड़ कर झाड़ (husk) को तीन या चार टुकड़ो में चीर लिया जाता है। या फिर झाड़ को कटार (cutlass) और स्फोटन मशीन (bursting machine) की सहायता से अलग किया जाता है। इसके पश्चात् झाड़ का अपगलन (retting) किया जाता है, जिससे रेशेदार पिंड से चिपके चीमड़ अंतराली पदार्थ (interstitial substances) अलग हो जाएं। अपगलन प्राय: लैगूनों (समुद्रताल) या खारे (brackish) समुद्री जल के निकट बने सिक्तन गर्तों (soaking pits) में नारियल के झाड़ को डुबोकर किया जाता है। इन गड्डों को ताड़ के पत्तों से ढककर उन पर मिट्टी बिछा दी जाती है ताकि झाड़ बह नहीं पाए।

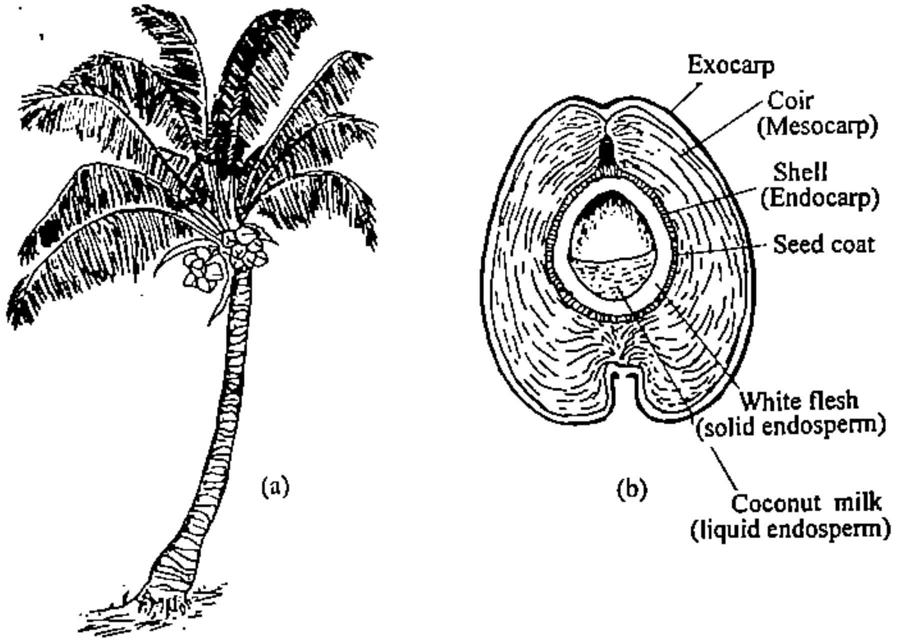

चित्र 20.23 : नारियल (कोकोस न्यूसिफेरा यानि *Cocos nucifera*)। a) नारियल के पेड़ जिसमें फल लगे हैं। b) नारियल के फल का अनुदैर्ध्य काट। चित्र में जटा पर ध्यान दीजिए जोकि मध्यफलभित्ति से निकाला जाने वाले व्यावसायिक महत्व का रेशा है। [(a) पर्सगलव, 1988; b) सिम्पसन और कोनर ओगोरजैली, 1986 से]

शूक (bristle) और तोशक रेशों (mattress fibres) के उत्पादन के लिए अपगलन अवधि लगभग दो हफ़्ते है। मगर जटा सूत (कॉयर यार्न) बनाने के लिए अपगलन काल नौ माह तक होता है। अपगलन के पूर्ण हो जाने पर झाड़ को पानी से निकालकर उस पर लगी कीचड़ और मिट्टी को साफ करने के लिए उसे कई बार अच्छी तरह से धोया जाता है। त्वचा को छीलकर उतार दिया जाता है और झाड़ को मुंगरी से कूटकर उसमें से मज्जा तथा अन्य पदार्थों को निकाल दिया जाता है। इस तरह से सुलझाए हुए रेशों को पानी से साफ करके धूप में सुखा लिया जाता है। रेशों को और साफ किया जाता है और उनमें से कड़े रेशों को अलग करने के लिए उन्हें स्टील की कंघी (steel comb) से साफ किया जाता है। इसके बाद उन्हें अलग-अलग श्रेणियों में बांटा जाता है (grading)।

नारियल के रेशे सूत्रों की लंबाई 0.3 मीटर होती है, रेशों के पूल की सतह कभी-कभी लेंस के आकार के छोटे सिलिकाभूत स्टेगमेटा (stegmata) से ढकी रहती है। प्रत्येक रेशा-संवहन पूल दृढ़ोतकी आच्छद (sclerenchymatous sheath) का बना होता है, जो एक बहि:पोषवाही पूल (collateral bundle pool) को घेरे रहता है। परिपक्व होने पर यह खंडित (disintegrate) हो जाता है, जिसके फलस्वरूप एक रिक्त गुहिका (hollow cavity) बन जाती है जिसमें वायु भर जाती है और इस प्रकार यह उत्प्लावन (buoyancy) में सहायक होती है।

जटा के गुण

अपने हल्केपन, प्रत्यास्थता विशेषकर सागरीय जल में यांत्रिक घर्षण (mechanical wear) और सीलन (dampness) के प्रति अत्यधिक रोधकता तथा ध्वनि रोधन (sound insulation) के गुणों के लिए इसके रेशों का बड़ा व्यावसायिक महत्व है। मगर इसमें कुछ कमियां भी हैं। यह कम टिकाऊ होता है, और अन्य वानस्पतिक रेशों की तुलना में इसकी सतह अधिक खुरदुरी होती है।

जटा के उपयोग

इसके रेशों में प्राकृतिक प्रतिस्कंदन (natural resilience), चिरस्थायित्व (durability), और जल-रोधिता (water resistance) पाई जाती है। इनसे कॉर्डेज (cordage), विशेषकर पोतों तथा पाल जलयानों के लिए मैरीन कैबल और हॉजर (hawser) बनाए जाते हैं। इनके अलावा चटाइयों और मोटा कपड़ा बनाने, रबड़ीकृत जटा (rubberised coir), खानों से कोयला उठाने के लिए जटा के थैले बनाने, पैकिंग सामग्री, रोधन बोर्ड बनाने, फरफ्यूरल (furfural) और टैनिन के स्रोत, और कागज की लुग्दी के रूप में जटा के रेशों के अनेक अनुप्रयोग हैं। ब्रिस्टल या शूक रेशों से ब्रुश, झाडू और अनेकों तरह के सामान बनाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 10

निम्न कथन सही हैं या गलत, बताइए।

i) नारियल की बाह्यफलभित्ति से व्यावसायिक उपयोग की जटा प्राप्त होती है। ☐

ii) ब्राज़ील नारियल का सबसे बड़ा निर्यातक है। ☐

iii) सर्वोत्व गुणवत्ता की जटा प्राप्त करने के लिए नारियल के फलों को तभी तोड़ा जाता है जब वे हरे ही होते हैं। ☐

iv) नारियल के रेशों को उसकी झाड़ के अपगलन द्वारा अलग किया जाता है। ☐

v) जटा अन्य वानस्पतिक रेशों की तुलना में अधिक टिकाऊ और कोमल होती है। ☐

20.7 सारांश

- इस इकाई में आपने काष्ठ, रेशा, कार्क (काग), रबड़ और संबंधित उत्पादों के बारे में जाना।

- काष्ठ व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण चार स्रोतों – सागौन, शीशम, चीड़ और देवदार के वितरण, काष्ठ विशिष्टताओं और विशिष्ट उपयोगों की इस इकाई में आपको जानकारी दी गई।
- अलग-अलग प्रयोजनों के लिए काम आने वाली काष्ठ, विविध स्रोतों से जुटाई जाती है और उसे विशिष्ट प्रयोजनों के अनुकूल काम आने के लिए संसाधित किया जाता है जैसे ईंधन, कंटेनरों का निर्माण, उनके रासायनिक व्युत्पन्न प्राप्त करना, कागज निर्माण इत्यादि।
- काग को परिपक्व काग-बांज-वृक्ष से प्राप्त किया जाता है। पादप की द्वितीयक वृद्धि सक्रियता के फलस्वरूप कार्क का निर्माण होता है। अपने अनेक गुणों के कारण कार्क एक बहुपयोगी सामग्री के रूप में काम आता है, जैसे यह हल्का, उत्प्लावक, प्रतिस्कंदी, तापरोधी, रासायनिक दृष्टि से निष्क्रिय, विद्युतरोधी, तरल पदार्थों के लिए अप्रवेश्य, ध्वनि और तरंगों को अवशोषित करने में सक्षम, ह्रास के प्रति अति-रोधी होता है तथा आग तेजी से नहीं पकड़ता।
- काष्ठीय पादपों के लेटेक्स से व्युत्पन्न रबड़ एक बहुपयोगी पदार्थ है। लेटेक्स को विभिन्न प्रकार के उपचारों से गुजारा जाता है और विभिन्न गुणवत्ता तथा विनिर्देशों के अनुसार रबड़ उत्पादों का निर्माण किया जाता है।
- पादपों से व्युत्पन्न रेशों के हमारे दैनिक जीवन में अनेक अनुप्रयोग हैं। कपास, जूट और नारियल जटा इस भूभाग के प्रसिद्ध पादप रेशे हैं। रेशे पादप के विभिन्न ऊतकों में उत्पन्न होते हैं जैसे फ्लोएम ऊतक; संवहन बंडलों को घेरे रहने वाली कोशिकाएँ; विभिन्न पादपागों की सतहों में जैसे तनों, पत्तियों, फलों और बीजों पर रेशायुक्त पादपों का संलग्न करके उन्हें अलग-अलग विधि से संसाधित कर रेशों को अन्य ऊतकों से पृथक कर लिया जाता है। इस तरह से प्राप्त रेशों को तरह-तरह के वांछित उत्पादों में बुना जाता है।

20.8 अंत में कुछ प्रश्न

1) इमारती लकड़ी देने वाले हमारे देश के व्यावसायिक महत्व के किसी एक पादप के वितरण, विशेष गुणों और उपयोगों पर टिप्पणी करते हुए उसका संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

1) निम्नलिखित पर संक्षिप्त नोट बनाइए:

   i) काष्ठ आसवन

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

ii) नौसेना स्टोर्स के लिए ताड़न

....

....

....

....

....

....

....

....

iii) काष्ठ लुग्दी बनाने का प्रक्रम

....

....

....

....

....

....

....

....

3) कागज निर्माण में बुनियादी चरण क्या हैं? संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

4) i) कार्क अमूमन पादप के कौन से भाग से निकाला जाता है?

....

....

ii) कॉर्क किस किस्म के ऊतकों का बना होता है?

....

....

iii) कॉर्क के कौन से गुण इसे व्यावसायिक प्रयोजनों के लिए उपयुक्त बनाते हैं?

....

....

iv) कॉर्क के कुछ उपयोग बताइए।

....

....

5) रबड़ के एक व्यावसायिक स्रोत का नाम बताइए। इसे वृक्षों से कैसे निकाला और बिक्री योग्य उत्पाद बनाया जाता है?

....

....

6) *गॉसिसिपयम बारबैडेंस* और *गॉ. हर्सूटम* के रेशों की विशेषताओं की तुलना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

7) कपास के रेशे के वे गुण बताइए जिनके कारण इसे कई तरह से उपयोग में लाया जा सकता है।

....

....

....

....

....

8) जूट अपगलन प्रक्रम का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

9) जूट के मुख्य उपयोग बताइए।

....

....

....

....

....

10) नारियल जटा के रेशे के गुण और उपयोग बताइए?

....

....

....

....

....

....

....

20.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) भाग 20.2 देखिए।

2) भाग 20.2 देखिए।

3) i) उपभाग 20.3.1 देखिए। संकेत : सूखी काष्ठ का 99 प्रतिशत भाग दाह्य होता है।
   ii) संकेत : घनत्व, रासायनिक संघटन और नमी की मात्रा।
   iii) लगभग 4600 कै०/कि.ग्रा.
   v) काठकोयला, पायरोलिग्नियस अम्ल, काष्ठ टार और काष्ठ गैसें।

4) i) 3 ii) 6 iii) 1 iv) 2 v) 4 vi) 5

5) भाग 20.4 देखिए।

6) i) भाग 20.5 देखें।
   ii) भाग 20.5 देखें। संकेत : लेटेक्स जैसा।
   iii) एक उदाहरण *हीविया ब्रैजिलिएंसिस* है; वृक्ष के तने का नीचे का भाग।
   iv) भाग 20.5 देखिए।

7) जूट — बास्ट रेशा
   सीसल — संरचनात्मक रेशा
   कपास — वस्त्र रेशा
   सोरघम — ब्रुश रेशा

8) i) सही ii) सही iii) गलत iv) गलत

9) i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही v) गलत

10) i) गलत ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत

अंत में कुछ प्रश्न

1) भाग 20.2 देखिए।
2) i), ii) और iii) उपभाग 20.3.4 देखें।
3) उपभाग 20.3.4 देखिए।
4) i)–iv) भाग 20.4 देखिए।
5) भाग 20.5 देखिए।
6) उपभाग 20.6.1 देखिए।
7) उपभाग 20.6.1 देखिए।
8) उपभाग 20.6.2 देखिए।
9) उपभाग 20.6.2 देखिए।
10) उपभाग 20.6.3 देखिए।

परिशिष्ट 20.10 : काष्ठ की विशेषताएं

काष्ठ एक द्वितीयक ऊतक है जो मुख्यत: अनावृतबीजी और द्विबीजपत्री पादपों के तनों में एक वर्धनशील परत एधा (कैम्बियम) की क्रियाशीलता के फलस्वरूप बनता है। एल.एस.ई.-06 की इकाई 10 के भाग 10.2, 10.3 और 10.4 देखिए। क्रियाशील एधा अंदर की ओर द्वितीयक जाइलम और बाहर की ओर द्वितीयक फ्लोएम का निर्माण वर्षों तक जारी रखता है। द्वितीयक जाइलम स्थायी बना रहता (persists) है और अंतत: पादप शरीर के बड़े भाग की रचना करता है। दूसरी ओर, द्वितीयक फ्लोएम कोशिकाओं को द्वितीयक वृद्धि के कारण और बाहर की ओर धकेल दिया जाता है, वह उत्तरोत्तर दबता जाता है और अंतत: वृक्ष से निर्मोचित (slough off) हो जाता है यानि उतार फैंक दिया जाता है इसे sloughing off भी कहते हैं।

काष्ठ एक विषमांगी (heterogeneous) ऊतक है, जो कई प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बना होता है। ये कोशिकाएं भिन्न कार्य करती हैं: i) वृक्ष को यांत्रिक बल (mechanical support) प्रदान करती हैं; 2) जल का संवहन करती हैं, और 3) कार्बोहाइड्रेटों का वितरण और संचयन (storage) करती हैं। अनावृतबीजीयों (gymnosperms) के काष्ठ में (जोकि मृदु काष्ठ है) पहले दो प्रकार्यों का निष्पादन जिन कोशिकाओं में होता हैं उन्हें वाहिनिका (ट्रैकीड) कहते हैं। आवृतबीजीयों (angiosperms) के काष्ठ (जो कि दृढ़ काष्ठ है) में यांत्रिक बल कई किस्म के काष्ठ रेशों (woody fibres) से मिलता है। काष्ठीय ऊतक का एक विशाल हिस्सा इन्हीं रेशों से बना होता है। जल का संवहन नलिकाकार कोशिका संगलनों में होता है, जिसे हम वाहिका (vessel) कहते हैं। वाहिनिकाएं भी कभी कभी विद्यमान होती हैं। काष्ठ अवयवों का तीसरा प्रकार्य पतली भित्ति वाली मृदूतकी कोशिकाएं (parenchymatous cells) करती हैं, काष्ठ में एकमात्र यही वे कोशिकाएं हैं जो कार्यकीय दृष्टि से क्रियाशील रहती हैं। ये कोशिकाएं काष्ठ मृदूतक (पैरेन्काइमा) कोशिकाएं हो सकती हैं जो तने में ऊर्ध्व दिशा में व्यवस्थित रहती हैं। या ये कोशिकाएं अर मृदूतक (रे पैरेन्काइमा) कोशिकाएं हो सकती हैं जो संस्तर में व्यवस्थित रहती हैं।

काष्ठ के निदान सूचक लक्षण

विभिन्न जातियों में नाना प्रकार की कोशिकाओं का विन्यास (different arrangement of various cells) हमें विभिन्न प्रकार की काष्ठ को पहचानने में मदद करता है। काष्ठों में स्पष्ट भेद करने में सहायक सामान्य आकारिकीय लक्षण इस प्रकार हैं : छिद्र (pores), अग्रदारू और पश्चदारू (early and late wood), वृद्धि वलय (growth rings), अर (rays), रसदारू (sapwood), तथा अंत:काष्ठ (heart-wood), काष्ठरेखा (grain) और आकृति (figure)। चित्र 10.4 और 10.5 (एल.एस.ई.- 06) देखिए। ये लक्षण विभिन्न काष्ठों के आर्थिक महत्व के साथ-साथ विभिन्न प्रयोजनों के लिए उनके सही, सार्थक उपयोग को निर्धारित करने में सहायक हैं।

i) **अछिद्रिल (non-porous) और छिद्रिल काष्ठ (porous wood)** : अनुप्रस्थ काट में छिद्र वाहिका दिखाई देती हैं और इनकी उपस्थिति या अनुपस्थिति काष्ठों को वर्गीकृत करने का एक सरल माध्यम है। मृदुकाष्ठ में वाहिकाएं नहीं होती इसलिए उनमें छिद्र भी नहीं होते हैं। इस तरह के काष्ठ को अछिद्रिल काष्ठ कहते हैं। दृढ़काष्ठ में वाहिकाएं होती हैं और इसीलिए वे ''छिद्रिल काष्ठ'' की श्रेणी में आते हैं।

   छिद्रिल काष्ठ को दो स्पष्ट प्रकारों में बांटा जा सकता है : क) विसरित छिद्रिल काष्ठ (diffuse porous wood) - इसमें वाहिकाएं आकार या व्यास में समरूप और यादृच्छिक तरीके से वितरित रहती हैं (उदाहरण - *ऐसर, पोपुलस बेटुला*)। ख) वलय छिद्रिल काष्ठ (ring porous wood) - इनमें अग्रदारू (early wood) की वाहिकाएं पश्चदारू (late wood) की वाहिकाओं से स्पष्टत: बड़ी होती हैं, या फिर वे अग्रदारू तक ही सीमित रहती हैं। अनुप्रस्थ काट में देखने पर छिद्र संकेन्द्री वृत्तों (concentric circles) में व्यवस्थित नजर आते हैं। इन वृत्तों के बाहरी और भीतरी भागों में छिद्रों की संख्या और उनका आकार एक दूसरे से भिन्न होते हैं।

ii) अग्रदारू और पश्चदारू : शीतोष्ण (temperate) प्रदेशों में और ऐसे उष्णकटिबंधी (tropical) भूभागों में जहां नम और शुष्क काल प्रखर हो, एधा क्रियाशीलता (activity) और प्रसुप्तावस्था (dormancy) के एकांतरी कालों (alternating periods) से गुजरता है। इसके फलस्वरूप द्वितीयक जाइलम के सुस्पष्ट संकेन्द्री वलयों की रचना होती है। वसंत ऋतु और शुरुआती ग्रीष्म ऋतु के दौरान, प्रचुर जल आपूर्ति के कारण वर्धन के लिए स्थितियां जब अनुकूल होती हैं, एधा काफी बड़े और पतली भित्ति वाले काष्ठ अवयवों का, जिनके विशाल अवकाशिकाएँ (ल्यूमेन) होते हैं, का निर्माण करता है। ग्रीष्म ऋतु के आगे बढ़ने और जल-आपूर्ति क्षीण पड़ने के साथ-साथ एक सघनतर (denser) प्रकार की काष्ठ का निर्माण होता है जिसमें काष्ठ अवयव लघुतर, स्थूल भित्ति और संकीर्ण अवकाशिका युक्त होते हैं। यही अवयव ग्रीष्म-कालीन (summer) या पश्चदारू (late wood) का निर्माण करते हैं। इस प्रकार वर्धन काल के अंत में उत्पन्न होने वाली कोशिकाओं और अगले वर्धनकाल के आरंभ में बनने वाली कोशिकाओं के बीच एक तीव्र संक्रमण (sharp transition) होता है। एधा क्रियाशीलता का यह चक्रीय पैटर्न वर्ष दर वर्ष दोहराया जाता है जिसके फलस्वरूप अनुप्रस्थ काट में नजर आने वाले संकेन्द्री वलयों की रचना होती है जिन्हें वर्धन वलय (growth rings) के नाम से जाना जाता है। बॉक्स 10.1 (एल.एस.ई.-06) भी देखिए।

iii) रसदारू और अंत:काष्ठ : देर-सबेर अनेक काष्ठ कोशिकाएं कार्यिकीय सक्रियता खो देती हैं और फिर सिर्फ वृक्ष को शक्ति प्रदान करने का काम करती हैं। काष्ठ तना आयु में ज्यों-ज्यों बड़ा होता जाता है, उसके सबसे भीतरी वर्धन वलय संवहन और संचयन जैसे महत्वपूर्ण प्रकार्य बंद कर देते हैं। ये पूर्णत: मृत हो जाते हैं और इनमें टाइलोसों के निर्माण से यह बंद हो जाते हैं। टाइलोस, मृदूतक कोशिकाओं से उत्पन्न होने वाले उद्वर्ध (outgrowths) हैं। ये उद्वर्ध गर्त गुहिका (pit cavity) से होकर वाहिनिका कोशिका (tracheary cell) में प्रवेश कर उसमें विद्यमान अवकाशिका (ल्यूमेन) को अंशत: या पूर्णत: अवरुद्ध कर देते हैं इसके अलावा ये वर्धन वलय विभिन्न रंगों के, और इनमें नमी के कमी तथा नाना प्रकार के गम, रेजिनों और अपशिष्ट पदार्थों के जमाव के कारण ये क्षयरोधी (resistant to decay) हो जाते हैं। आंतरिक स्याह भाग की ये कोशिकाएं ही अंत:काष्ठ या कठोर दारू (डयूरैमेन) का निर्माण करती हैं। इस तरह की अंत:काष्ठ प्राय: अच्छी चमक देती है और फर्नीचर बनाने तथा अन्य उच्च ग्रेड के काष्ठ शिल्प उद्योग (wood working industry) के लिए अति उत्तम है। बाहरी हल्के रंग वाला भाग रसदारू (या एल्बर्नम) को बनाता है जिसकी मोटाई अलग-अलग होती है। रसदारू की कोशिकाएं कायिक क्रियाशील होती हैं। दोनों के बीच सीमा प्राय: अनियमित या अनिश्चित होती है। रसदारू के सबसे भीतरी भाग में निरंतर परिवर्तन होता है जिसके फलस्वरूप अंत:काष्ठ का क्रोड(core) उत्तरोत्तर विस्तार पाता जाता है।

iv) गठन (texture) काष्ठरेखा (grain) और आकृति (figure) : गठन या बुनावट का मतलब विभिन्न काष्ठ अवयवों के सापेक्ष आकार और गुणवत्ता है। ऐसी काष्ठ जिसमें कई, विशाल वाहिकाएं विद्यमान हों उसकी बुनावट को अपरिष्कृत या घटिया कहा जाता है। छूने पर यह काष्ठ खुरदरा (coarse) लगता है। जिन काष्ठों में वाहिकाएं नहीं पाई जाती या बहुत छोटी होती हैं उनके गठन को सूक्ष्म गठन (fine texture) कहते हैं और छूने पर ये चिकने लगते हैं। काष्ठरेखा का अर्थ संरचनात्मक विन्यास (structural arrangement) यानि काष्ठ अवयवों (wood elements) का अनुयोजन (alignment) और प्रवरण (sorting या छंटाई) है। रेशे जब मुख्य अक्ष के समानांतर अभिमुख हों तो काष्ठ ऋजुकाष्ठरेखित (straight grained) कहलाता है। रेशों के दिग्विन्यास के आधार पर काष्ठों को सर्पिल काष्ठरेखित (spiral grained), अंतर्ग्रथित काष्ठरेखित (interlocked grained), सम-(even), और असम-काष्ठरेखित (uneven grained) की श्रेणियों में रखा जाता है। आकृति का तात्पर्य काष्ठ की सतह पर प्रकट होने वाले डिज़ाइन या पैटर्न से है। यह काष्ठरेखा की किस्म, ऊतकों में प्रविष्ट हो चुके रंजन पदार्थों की उपस्थिति या दोनों के कारण हो सकता है। अपने सजावटी गुण के कारण यह काष्ठ को अति मूल्यवान बना सकता है। यह गुण विभिन्न प्रकार की काष्ठरेखाओं के अरों, वलयों, रसदारू, अंत:काष्ठ और अन्य कोशिका विन्यासों के कारण होते हैं। काष्ठ की यह आकृति जिस तल (plane) पर उसे काटा जाता है उसके अनुसार एकदम भिन्न स्वरूप में नजर आती है।

काष्ठ के रासायनिक गुण

सूखी काष्ठ में तीन मुख्य रासायनिक घटक पाए जाते हैं : सेलुलोज (45-60 प्रतिशत), हेमीसेलुलोज (15-30 प्रतिशत) और लिग्निन (20-35 प्रतिशत)। सेलुलोज और हेमीसेलुलोज को सामूहिक रूप से होलोसेलुलोज (holocellulose) कहा जाता है। इनके अलावा अनेक गौण (minor) रासायनिक यौगिक जैसे रेज़िन, तेल, वसा, टैनिन, ऐल्कैलाइड, गम, खनिज और कार्बनिक अम्लों तथा उनके लवणों के ट्रेस भी उसमें विद्यमान हो सकते हैं जिनकी मात्रा या संख्या जाति के अनुसार अलग-अलग होती है। सेलुलोस मूलभूत संरचनात्मक ढांचा बनाता है, तथा यह व्यावसायिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। लिग्निन, सेलुलोज नेटवर्क के अंदर विद्यमान अवकाशों या रिक्तियों को भरने का कार्य करता है, जिसमें यह कोशिका भित्तियों से रासायनिक रूप से बंध जाता है और उनमें कड़ापन (stiffness) और दृढ़ता (rigidity) को बढ़ाता है, यद्यपि इससे तनन-सामर्थ्य (tensile strength) में कोई वृद्धि नहीं होती।

ऐसे काष्ठों को जिनमें सेलुलोज की मात्रा अधिक मगर गम, रेज़िनों, रंजकों और टैनिनों की मात्रा कम हो उन्हें कागज़, रेयॉन, सेलोफेन (काचाभ पत्र), विस्फोटकों तथा लैकर (प्रलाक्ष, जिसे बोलचाल में हम लाख भी कहते हैं) के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। दूसरी ओर जिन काष्ठों में टैनिनों, रेज़िनों और कुछ विशेष सुगंध तेलों की मात्रा अधिक रहती है उन्हें निर्माण कार्य में प्रयोग किया जाता है क्योंकि ये सभी घटक काष्ठ या लकड़ी के चिरस्थायित्व या टिकाऊपन को बढ़ाते हैं।

काष्ठ के भौतिक गुण

इनमें अयांत्रिक (non-mechanical) और यांत्रिक (mechanical) दोनों तरह के गुण शामिल हैं। काष्ठ के अयांत्रिक गुण हैं उनमें नमी की मात्रा (moisture content), घनत्व (density), चिरस्थायित्व (durability), पृष्ठ लक्षण (surface characteristic), चमक, गंध, स्वाद, रंग, और प्रकोपकों (irritants) की उपस्थिति) और ऊष्मा चालकता (thermal conductivity), विद्युत चालकता (electrical conductivity), ध्वनिक गुण (acoustic properties)। काष्ठ के यांत्रिक गुणों में सामर्थ्य (strength), चर्मलता (toughness), कठोरता (hardness), विदलनीयता (cleavability) और कड़ापन (stiffness) शामिल हैं।

क) अयांत्रिक गुण

i) नमी की मात्रा : ताज़ा कटी इमारती लकड़ी में शुष्क भार का 30 से 200 प्रतिशत नमी होती है। रसदारू प्राय: अंत:काष्ठ से अधिक नम होता है। दृढ़काष्ठ में रसदारू और अंत:काष्ठ की नमी की मात्रा में कोई विशेष अंतर नहीं रहता। शुष्क वातावरण के संपर्क में आते ही काष्ठ नमी खोने लगता है। कोशिका गुहिकाओं से मुक्त जल (free water) पहले वाष्प बन कर उड़ जाता है। मगर इसकी क्षति से इमारती लकड़ी में किसी तरह का संकुचन या उसके गुणों में कोई उल्लेखनीय परिर्वतन नहीं आता। इसे और सुखाने पर मुक्त जल के क्षय के साथ-साथ कोशिकाओं में संहतता (compaction) आ जाती है। इसके साथ ही रेशे भी कड़े और अधिक मजबूत हो जाते हैं जिससे काष्ठ के यांत्रिक गुणों में भी परिवर्तन आ जाता है। काष्ठ मुख्यत: अपने दीर्घ अक्ष के लंबवत् (right angles to the long axis) संकुचन करता है और लंबाई में बहुत कम संकुचन करता है। इस पूरे प्रक्रम को काष्ठ की सीजनिंग (seasoning) या परिपक्वन कहते हैं जिसके फलस्वरूप काष्ठ के सामर्थ्य, कठोरता, कड़ापन और चिरस्थायित्व में वृद्धि होती है। मगर सीजनिंग हुए काष्ठ में आर्द्र स्थितियों में पानी को सोखकर फूल जाने की प्रवृत्ति पाई जाती है, ऐसा आपने वर्षा के मौसम में स्वयं भी अनुभव किया होगा जब दरवाजे फूलकर अड़ या ऐंठ जाते हैं।

ii) घनत्व: प्रति इकाई घनत्व में कोशिका भित्ति पदार्थ के द्रव्यमान को घनत्व कहते हैं। मगर काष्ठ घनत्व का निर्धारण करते समय अंत:स्यंदन उत्पादों (infiltration products) की मात्रा को भी लिया जाता है। क्योंकि उन्हें काष्ठ के मूल पदार्थ से अलग नहीं किया जा सकता। इसीलिए इसे अक्सर सापेक्ष काष्ठ घनत्व (relative density of wood) कहा जाता है और इसे विशिष्ट गुरूत्व (specific gravity) के रूप में अभिव्यक्त करते हैं। यह काष्ठ के टुकड़े के वायु में भार, और उसी के समान आयतन पर जल के भार, का अनुपात है। मनुष्य तरह-तरह के विशिष्ट गुरूत्व वाले काष्ठों से परिचित है। उदाहरण के लिए *ऐस्काइनोमीनी* (फैबेसी) का विशिष्ट गुरूत्व

0.04 है और *क्रुगियोडेंड्रान केरियम* (रैमनेसी) का विशिष्ट घनत्व 1.40 है। अधिकांश काष्ठों का विशिष्ट गुरूत्व 1.0 से.मी. कम रहता है और वे जल से भी हल्के होते हैं, जिससे वे पानी में तैर सकते हैं। मगर उन्हें लंबे समय तक पानी में डुबाए रखने पर काष्ठ के अंदर के वायु की जगह पानी ले लेता है और वह डूब जाता है।

घनत्व को अक्सर काष्ठ की शक्ति, यानि कि उसकी मजबूती का सूचक माना जाता है और ऐसा समझा जाता है कि भारी काष्ठ अधिक मजबूत होती है। मगर हमेशा ऐसा ही नहीं होता, क्योंकि गम, रेज़िन, अन्य अंत:स्यंदित यौगिकों तथा जल की उपस्थिति काष्ठ की सामर्थ्य को प्रभावित किए बिना ही उसके भार को बदल सकती है। काष्ठ का घनत्व उसकी प्रत्यास्थता को भी प्रभावित करता है, जो बदले में उसकी ध्वनि चालकता को प्रभावित करती है। इस गुण का उपयोग भवनों और संगीत साजों के निर्माण में किया जाता है। जो काष्ठ ध्वनि तरंगों को अवशोषित (absorb) कर लेते हैं और उन्हें परावर्तित (reflect) नहीं करते, उन्हे कंसर्ट हालों में प्रतिध्वनियों (echoes) को कम करने के लिए पैनेलिंग (panelling) में प्रयोग किया जाता है। दूसरी ओर कुछ काष्ठों को अगर क्षयकारी जीव प्रभावित नहीं करते और ताड़न करने पर वे एक स्पष्ट वलय बनाते हैं, उन्हें वायोलिन और पियानो जैसे संगीत के साजों के निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

iii) **चिरस्थायित्व** : लकड़ी में क्षयकारी जीवों जैसे जीवाणु, कवक और कीट के आक्रमण का प्रतिरोध करने की नैसर्गिक क्षमता (natural ability) को ही चिरस्थायित्व कहते हैं। लकड़ी में वास करने वाले कवक, उसमें छेद करने वाले कीट और सामुद्र वेधक (मैरीन बोरर) जैसे जीव काष्ठ को नुकसान पहुंचाते हैं। लकड़ी को गलाने वाला कवक (जोकि लकड़ी में रहने वाला कवक है) असल में वाहिनिकाओं और रेशों की कोशिका भित्तियों को एंजाइमी क्रिया से पचा (digest) लेता है जिससे उसके भौतिक और रासायनिक गुणों में भारी बदलाव आ जाता है। काष्ठ अभिरंजन कवक (wood staining fungi) और फफूंद (mould) जो कि लकड़ी में वास करते हैं, पाचक एंजाइमों का स्राव नहीं करते मगर ये अपना भोजन काष्ठ तत्वों से प्राप्त करते हैं। यह काष्ठ की सामर्थ्य या उसकी शक्ति को ज्यादा प्रभावित तो नहीं करते लेकिन उन्हें विरंजित करते हैं। फफूंद सतही रंजन उत्पन्न करता है, जबकि अभिरंजन कवक रसदारू तक की गहराई में प्रवेश कर जाते हैं। इससे लकड़ी का सजावटी महत्व (decorative value) घट जाता है।

काष्ठ वेधक कीटों में से विभिन्न जाति के कीट लारवा, कटी इमारती लकड़ी पर हमला करते हैं। इनमें से कई तो भीतरी छाल में दिए गए अंडों से स्फुटित होते हैं और कालांतर में रसदारू में टनेल या बिल बनाकर उसे नष्ट कर डालते हैं। कुछ मामलों में वयस्क कीट जैसे भूमिगत दीमक, ऐम्ब्रोसिया भृंग और तक्ष पिपीलिकाएं (चींटी) लकड़ी में छेद करके उसकी संरचनात्मक शक्ति को क्षीण कर देते हैं। दीमक भूमिगत इमारती लकड़ी को छेदकर उसकी भीतरी संरचना को पूर्णत: नष्ट कर देती है जबकि बाहर से वह पूरी तरह से सुरक्षित दिखाई देती है।

समुद्री जीवों में समुद्र वेधक जैसे ग्रिबल (gribble) जो क्रस्टेशियन (crustacean) है और नौकृमि (मोलस्क) जल के भीतर लकड़ी के ढांचों जैसे गोदी, नौकाओं के पेटे इत्यादि में छेद कर देते हैं।

काष्ठनाशी जीवों के आक्रमण से लकड़ी की रक्षा सीजनिंग करके या पेंटाक्लोरोफिनॉल (pentachlorophenol), कॉपर नैफ्थिनेट (copper naphthenate), जिंक क्लोराइड (zinc chloride) या पारे (mercury), क्रोमियम (chromium) तथा संखिया (arsenic) के यौगिकों जैसे रासायनिक परिरक्षकों के उपचार से किया जाता है।

iv) पृष्ठ गुण : "चमक" लकड़ी की प्रकाश को परावर्तित (light reflect) करने की क्षमता है। यह उसके पृष्ठ पर पड़ने वाले प्रकाश के कोण, प्रभावन की दिशा में उसके हिस्से का तल (the plane of the section in the direction of exposure), कोशिका भित्ति की संरचना (cell wall structure) और संघटन (composition), और लकड़ी में विद्यमान अंत:स्यंदन उत्पादों (infiltration products) पर निर्भर करती है। गंध, सुगंध तेलों जैसे वाष्पशील यौगिकों पर निर्भर

करती है। ये वाष्पशील यौगिक स्वयं में काष्ठ पदार्थ का घटक नहीं होते। गंध सीजन की हुई लकड़ी कीं अपेक्षा हरी लकड़ी में अधिक प्रखर होती है। अनेक लकड़ियों में अपनी एक अति विशिष्ट गंध होती है जो कि आनंददायक (जैसे चंदन की लकड़ी) या अरुचिकर (जैसे बाल्ड साइप्रस और कैटाल्पा) हो सकती है।

'रंग' और 'आकृति' लकड़ी के सौंदर्यात्मक महत्व को निर्धारित करते हैं। ये अलग-अलग जाति में अलग-अलग होते हैं। यही नहीं एक ही जाति में भी इनमें भिन्नता पाई जाती है। रसदारू का रंग विशिष्ट नहीं होता बल्कि यह धूसर, गुलाबी या लाल, अलग-अलग रंगों में पाया जाता है। मगर वहीं अंतःकाष्ठ का रंग जाति विशेष के लिए विशिष्ट होता है (जैसे साइट्रस कुल के लिए पीला, *जूनिपेरस वर्जीनियाना* में अंतःकाष्ठ का रंग बैंजनी या गुलाबी लाल होता है।

लकड़ी की पॉलिश ग्रहण करने की क्षमता जिससे कि उसकी खुली कोशिका भित्तियों के फलों को एक चिकनी और चमकदार सतह मिलती है यही भवनों की आंतरिक सज्जा (इंटीरियर डेकोरेशन) में इसकी उपयोगिता को काफी हद तक तय करती है।

तापीय गुण (thermal properties) : लकड़ी ऊष्मा विद्युत् और ध्वनि का चालक नहीं है। इसके इसी गुण के कारण यह अनेक अनुप्रयोगों में उपयोगी है। ताप चालकता की कमी (lack of thermal conductivity) के कारण सूखी लकड़ी से ऊष्मा नहीं गुजर सकती [या कह लें कि यह ऊष्मारोधी (thermal resistant) होती है] जिससे यह भवन निर्माण सामग्री और भोजन बनाने के बर्त्तनों के हत्थे बनाने के लिए अति उपयुक्त होती है। अच्छी तरह से सूखी हुई लकड़ी विद्युत् करंट की भी रोधी होती है मगर गीली या कच्ची लकड़ी इनकी आंशिक चालक (partial conductor) है।

ख) काष्ठ के यांत्रिक गुण

ये गुण यह बताते हैं कि लकड़ी पर तरह-तरह के बलों के अनुप्रयोग पर वह किस तरह का व्यवहार करती है। ये गुण उसे बाह्य प्रतिबलों (external stresses) का सामना करने की सामर्थ्य देते हैं जो उसकी बनावट, और उसके आकार को बदल या उसे विरूप बना सकते हैं।

i) **सामर्थ्य (strength) :** इसका निर्धारण लकड़ी पर लगाए जाने वाले कई किस्म के प्राथमिक प्रतिबलों (primary stresses) द्वारा किया जाता है। सामान्यतः यह काष्ठरेखा की दिशा से प्रभावित होता है। लकड़ी में निम्न प्रकार के सामर्थ्य पाए गए हैं:

क) **संदलन या संपीडन सामर्थ्य (crushing or compression strength) :** यह लकड़ी की काष्ठ घटकों को दबाने वाले किसी भार का प्रतिरोध करने की क्षमता का माप है। यह लकड़ी की विशिष्ट घनत्व के सीधे समानुपाती होता है। भवन निर्माण में टेक लगाने के काम आने वाले स्तंभों और खंभों के निर्माण में यह एक महत्वपूर्ण गुण है।

ख) **तनन-सामर्थ्य (tensile strength) :** यह विपरीत दिशा में कार्य करने वाले बलों का प्रतिरोध करने की लकड़ी की क्षमता है जो बल लकड़ी को (काष्ठरेखा के समांतर या समकोण में) चीर सकते हैं।

ग) **अपरूपण सामर्थ्य (shearing strength) :** यह काष्ठ रेशों को एक दूसरे से अलग खिसकाने वाले (slide past) बलों का प्रतिरोध करने की क्षमता है। या इसे हम लकड़ी द्वारा उसकी काष्ठरेखा के समांतर, लंबवत् या तिर्यक् लगने वाले विदारी विपरीत बलों के प्रतिरोध की माप कह सकते हैं।

घ) **क्रॉस-भंजन, स्थैतिक या बंकन सामर्थ्य (cross breaking, static, or bending strength) :** यह प्रायः बीमों, गर्डरों, बाने राफ्टरों (कोठार में लगाए जाने वाले

तरापों), तांतों (स्ट्रिंगर) और फांसी के तख्ते के लिए प्रयुक्त होता है, जिनमें दोनों सिरों पर तो टेक या आधार दिया जाता है और दोनों बिंदुओं के बीच में भार डाला जाता है। इसमें उपरोक्त तीनों शक्तियां साथ-साथ काम करती हैं।

ii) **चीमड़पन (toughness) :** यह बारंबार, एकाएक, तीखे आघातों को सहन करने की लकड़ी की क्षमता की माप है। चीमड़ लकड़ी हम उसे कहेंगे जो आसानी से टूटती या फटती नहीं है। इस तरह की आघातरोधी गुण वाली लकड़ी खेल कूद का सामान बनाने, पहियों के अर (spokes) बनाने, हथौड़ों या कुल्हाड़ी के हत्थे बनाने के लिए बड़ी उपयोगी रहती है। लकड़ी का चीमड़पन मुख्यत: उसमें विद्यमान काष्ठ पदार्थों, कोशिका भित्तियों और मध्य पटलिका (मिडिल लैमेला) के संघटन तथा काष्ठरेखा पर निर्भर करता है।

iii) **कठोरता (hardness) :** यह लकड़ी में दंतुरता (indentation), खरोंच (abrasion) और घर्षण (wear) के प्रतिरोध की क्षमता है। यह काष्ठ रेशों के भार, उनकी संख्या और विन्यास तथा गांठों व विगलित भागों (decayed areas) की उपस्थिति जैसे कारकों से प्रभावित होती है।

iv) **विदलनीयता (cleavability) :** इसका तात्पर्य सहजता से है जिससे लकड़ी को दो भागों में बांटा जा सके। उच्च-विदलनीयता वाली जलावन की लकड़ी या आग जलाने के लिए उपयुक्त रहती है। जो लकड़ी विदलन के प्रति उच्च रोधी होती है वह कील ठोंकने या स्क्रू (screw) लगाने के लिए उपयुक्त रहती है।

v) **कड़ापन (stiffness) और लचीलापन या प्रत्यास्थता (flexibility or resilience) :** कड़ापन लकड़ी की आकृति, उसकी बनावट को बदलने वाले बल का प्रतिरोध करने की लकड़ी की क्षमता है, जबकि लचीलापन या प्रत्यास्थता अस्थायी विकृति को सहने और प्रतिबलों के हटाए जाने पर अपनी मूल आकृति में लौट आने की लकड़ी की क्षमता है। लकड़ी का लचीलापन उसके अवयवों की प्रकृति और उसकी कोशिकाओं में विद्यमान वायु की मात्रा से संचालित होता है। रेलवे स्लीपरों के निर्माण में काम आने वाली लकड़ी के चयन के लिए यह महत्वपूर्ण लक्षण है।

शब्दावली

मिलावटी तत्व (Adulterant) – भ्रामक बनावटी तत्व जिनको मिलावट के तौर पर किसी चीज में मिलाया जाता है।

प्रति-आंत्तरायिक (antispasmodic) – जो ऐंठन को दूर करते हैं या उसमें आराम पहुँचाते हैं।

वातहर (carminative) – पेट तथा आंतों से गैस निकालते हैं, एक वातहारी दवा

मूत्रल (diuretic) – जो मूत्र के स्रावण तथा प्रवाह को बढ़ाते हैं।

मंदाग्नि (dyspepsia) – पाचन संबन्धी गड़बड़ी/अपच

त्वक् रक्त कारी (rubefacient) – लाल करने वाला, जैसे त्वचा को लाल करने वाला। त्वचा पर लगाया जाने वाला कोई भी बाह्य तत्व।

NOTES

NOTES

NOTES

UGBY -02

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

पादप विविधता-II

खंड

4

एन्जियोस्पर्म के कुल

इकाई **21**

द्विबीजपत्री कुल-1 **5**

इकाई **22**

द्विबीजपत्री कुल-2 **74**

इकाई **23**

एकबीजपत्री कुल **150**

इकाई **24**

कुछ असाधारण पादप **193**

खण्ड प्रस्तावना

इस खण्ड की पहली तीन इकाईयां -21, 22 और 23, आवृतबीजियों की वर्गिकी के अध्ययन से सम्बद्ध हैं, तथा इनके शीर्षक क्रमश: 'द्विबीजपत्री कुल -1', 'द्विबीजपत्री कुल-2 और 'एकबीजपत्री कुल' हैं। ये इकाईयां इस प्रकार डिज़ाइन की गई हैं जिससे कि आपको विभिन्न द्विबीजपत्री कुलों एवं एकबीजपत्री विशेषकर इस महाद्वीप में पाए जाने वाले कुलों, में विस्तृत विविधता का जायज़ा मिल सके। साथ ही प्रत्येक कुल में आन्तरिक विविधता के विस्तार या परिसर की भी आपको झलक मिल सके। यदि दूसरे शब्दों में कहें तो , इन इकाईयों में आप विभिन्न कुलों में विविधता को दो स्तरों पर देखेगें मैक्रो या दीर्घ-स्तर पर और माइक्रो या लघु-स्तर पर। इन इकाईयों में अध्ययन के लिए इन विशेष द्विबीजपत्री एवं एकबीजपत्री कुलों का चयन निम्नलिखित दो आधारों पर किया गया है। पहला वे कुल (families), जो कुल-मिलाकर इन पौधों के विभिन्न रूपों तथा उनकी संरचनाओं में विविधता का एक अच्छा विस्तार प्रस्तुत कर सकें। दूसरा इन कुलों के कोई न कोई सदस्य आपके क्षेत्र में आसानी से मिल सकें, जिससे कि आप उनका उपयोग करते हुए अपने अध्ययन को रोचक तथा अर्थपूर्ण बना सकें। इन इकाईयों के अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्यों के अलावा, हमारा एक दीर्घकालीन उद्देश्य भी है, वह यह है कि प्राप्त नई जानकारी और ज्ञान, आपके सोचने के प्रक्रम को प्रेरित कर इसे जारी रखें। जिससे कि आप इस विषय पर चिंतन और खोज करें तथा अपने मन में उठ रहे विभिन्न प्रश्नों के उत्तर ढूंढने की कोशिश करें। यह प्रश्न कुछ इस प्रकार हो सकते हैं। (i) कुलों के सदस्यों की बनावट में इतनी विविधता होने के क्या कारण हैं? (ii) बनावट और संरचना की विविधता, विभिन्न कुलों के सदस्यों की किस प्रकार सहायता करती है। (iii) कुछ कुल जोकि विश्व के व्यापक क्षेत्रों में फैले पाए जाते हैं, कि इस पारिस्थितिक सफ़लता के क्या कारण हैं? (iv) और दूसरी ओर कुछ कुलों का वितरण सीमित क्यों हैं? (v) विभिन्न द्विबीजपत्री कुलों में विकसित पारस्परिक-संबंध क्या हैं? और ऐसे कई अन्य प्रश्न।

प्रत्येक कुल के वर्णन में उनके भौगोलिक वितरण, महत्वपूर्ण कायिक एवं पुष्पीय विशेषताओं, शारीरीय , परागण विज्ञान, भ्रूणविज्ञान और आर्थिक वनस्पति विज्ञान पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है।

पादप विविधता पाठ्यक्रम में अंतिम तथा 24 वीं इकाई है। एन्जियोस्पर्स (आवृतबीजी) में पायी जाने वाली अत्यधिक विविधता तथा अनुकूलनशीलता उनके बहु-आवासों में पाये जाने से विदित है। आज संसार के पादप जगत में एन्जियोस्पर्म का ही प्रभुत्व है। अनुकूलनीयता के ही कारण पादप आकारिकी में अनेकों चरम विभिन्नतायें उत्पन्न हुई हैं। कुछ दिलचस्प रूपान्तरण जैसे की मांसाहारी पादप, पादपों के विभिन्न आकार, पुष्पक्रमों, पत्तियों के आकार हैं, जिससे पादप विविधता में आपकी रुचि बनी रहेगी। फिर भी हाल के अध्ययन इशारा करते हैं कि एन्जियोस्पर्म की प्रभुता शायद हमेशा नहीं रहेगी और यह एक दिन समाप्त हो सकती है ऐसी स्थिति में कोई अन्य पादप वर्ग अपनी प्रभुता स्थापित कर सकता है।

उद्देश्य

इस खण्ड के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- दिए गए किसी अज्ञात द्विबीजपत्री और एकबीजपत्री पौधे के कुल की पहचान, संबद्ध कुलों के इस अध्ययन के आधार पर कर सकें,
- विभिन्न द्विबीजपत्री कुलों और एकबीजपत्री में तथा इनके प्रत्येक कुल में पाई जाने वाली विविधताओं के सुविस्तृत परिसर से परिचित हो सकें; तथा उनका मूल्य जान सकें,
- एन्ज़ियोस्पर्म में पाये जाने वाले चरम परिवर्तनों का मूल्यांकन कर सकें।

इकाई 21 द्विबीजपत्री कुल-1

इकाई की रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
21.2 रैननकुलेसी
21.3 ब्रैसीकेसी
21.4 मालवेसी
21.5 रुटेसी
21.6 फैबेसी
21.6.1 मिमोसोइडी
21.6.2 सीजैलपिनोइडी
21.6.3 पैपिलियोनेटी
21.7 मर्टेसी
21.8 कुकुरबिटेसी
21.9 ऐपिएसी
21.10 सारांश
21.11 अंत में कुछ प्रश्न
21.12 उत्तर

21.1 प्रस्तावना

पुष्पी पादप या आवृतबीजी (एंजियोस्पर्मस) पादप जगत के सबसे विख्यात सदस्य हैं। इनमें से कुछेक पौधों को हम किसी न किसी रूप में जानते हैं। इस पाठ्यक्रम की पीछे की इकाइयों में आपने इन पादपों की रचना, प्रकार्य, और आर्थिक महत्व जैसे विभिन्न पहलुओं के बारे में पढ़ा। अब हम एक और पहलू को लेंगे, वह है इन पादपों को कैसे जानें और उनकी पहचान कैसे करें? वर्गिकी और विकास पाठ्यक्रम (LSE-07) में हमने आपको इस पहलू से परिचित कराया था। अब हम उससे आगे बढ़ेंगे और 21 से 23 यह तीन इकाइयाँ आपको इन पादपों में पाई जाने वाली विशाल विविधता की झलक देंगीं।

अब तक हमें angiosperms की लगभग 25,000 species (जातियाँ, स्पीशीज़) ज्ञात हैं मगर एक सीमित समय में इन सभी का अध्ययन संभव नहीं है। Systems of classification (वर्गीकरण की पद्धतियों) से हम इतनी बड़ी संख्या में, इन पौधों से जुड़ी जानकारी को सारबद्ध कर सकते हैं। Angiosperms के कुछ representative groups (प्रतिनिधि समूह) या families (कुलों) के अध्ययन से हमें इनमें विद्यमान विविधता को समझने में मदद मिलती है। इसी दृष्टि से हमने इकाई 21 और 22 की रचना की है, जिनमें angiosperms के कुछ चुनिंदा dicotyledonous families (द्विबीजपत्री कुलों) के बारे में बताया गया है। इसी प्रकार इकाई 23 में कुछ monocotyledonous (एकबीजपत्री) families के बारे में बताया गया है। मगर इन इकाइयों को पढ़ने से पहले पाठ्यक्रम Taxonomy and Evolution (वर्गिकी और विकास), Course Code - LSE-07 से संबंधित इकाइयों को दोहराना उत्तम होगा। आपको विशेष रूप से उन भागों को दोहराना चाहिए जिनमें plant nomenclature (पादप नामपद्धति) और systems of plant classification (पादप वर्गीकरण की पद्धतियों) के बारे में चर्चा की गई है। आपको याद आ जाएगा कि पादप वर्गों के नाम, नामपद्धति के कुछ निश्चित नियमों पर चलते हैं। ये नियम International Code of Botanical Nomenclature या ICBN (वानस्पतिक नामपद्धति के अंतरराष्ट्रीय संहिता) में दिए गए हैं। इन्हीं नियमों के अनुसार plant families के नाम उस family के एक genus (वंश) के नाम पर आधारित हैं, जैसे Malvaceae family का नाम उसके genus *Malva* पर आधारित है। ICBN के अनुसार एक genus का नाम जो कि किसी family को नाम प्रदान करता है, उसे उस family का

Type genus (टाइप जीनस या प्ररूप जीनस/वंश) कहते हैं। कुछ families के नाम Type genus पर आधारित नहीं होते, तो भी उन्हें वर्गिकी में प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए Cruciferae, Leguminosae, Labiatae, Umbelliferae, Gramineae जैसे नाम, टाइप जीनस पर आधारित नहीं हैं। ICBN इन नामों का प्रयोग करने की अनुमति तो देता है मगर साथ ही इन families के लिए वैकल्पिक नाम भी देता है जो कि इनके Type genus पर आधारित हैं। इस प्रकार की प्रासंगिक जानकारी भी यहां दी गई है। आपने जिस family के बारे में अध्ययन करना है आप उसके सही botanical name (वानस्पतिक नाम) के साथ-साथ उसका अंग्रेजी में प्रचलित नाम और उसके सही Type genus का नाम भी जानेंगे। इसके पश्चात् आप family के size (आकार), उसके distribution (वितरण) और भारत में पाए जाने वाले उसके मुख्य genera और species के बारे में भी जानेंगे। फिर आप यह जानेंगे कि 'फील्ड' में आप प्रत्येक family की पहचान कैसे करें। यह जानकारी प्रत्येक family में "फील्ड अभिज्ञान लक्षण" (field recognition characters) शीर्षक के तहत दी गई है। चर्चा का मुख्य केन्द्र प्रत्येक family में पाई जाने वाली morphological diversity (आकारिकीय विविधता) है। प्रत्येक family में चर्चित पौधों के महत्वपूर्ण vegetative and floral characters (कायिक और पुष्पी विशेषताओं) को भी समझाया गया है। इस तरह प्रत्येक family के general characters (सामान्य लक्षणों) का ध्यानपूर्वक अध्ययन करके आप उसकी पहचान के लिए उसके diagnostic features (निदानात्मक लक्षणों) को जान जाएंगे। आपको सुविधा के लिए इन characters की सूची अलग से दी जा रही है।

इसके बाद plant classification के विभिन्न systems में प्रत्येक family की systematic position (वर्गीकृत स्थिति) के बारे में बताया गया है। पाठ्यक्रम LSE-07 के खंड-1, इकाई-2 में (Bentham & Hooker (बेंथम और हुकर) की वर्गीकरण की प्राकृतिक पद्धति (natural system of classification) के बारे में आप पढ़ ही चुके हैं। इस पाठ्यक्रम में सभी families का classification इसी system के अनुसार किया गया है। आपको एंगलर और प्रांट्ल (Engler & Prantl) तथा तख़्ताज़न* (Takhtajan) द्वारा प्रतिपादित जातिवृत्तीय पद्धतियां (phylogenetic systems of classification) भी याद होंगी। सो प्रत्येक family की systematic position की चर्चा इन दोनों classification systems के तहत की जाएगी। इस जानकारी से आपको इस इकाई में शामिल families के संदर्भ में, इन तीनों classification systems का एक तुलनात्मक ब्यौरा उपलब्ध हो जाएगा। साथ ही आपको कुछ और families के बारे में भी जानकारी मिलेगी जो उन families से संबंध रखती हैं, तथा जिनके बारे में आप यहां पढ़ेंगे।

इसके अलावा प्रत्येक family के आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पौधों के बारे में जानकारी को भी शामिल किया गया है, ताकि हम वनस्पति की प्रकृति की एक अनुपम तथा अमूल्य भेंट के रूप में महत्ता को जान सकें।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- angiosperms म विद्यमान विपुल विविधता (immense diversity) को समझ सकें,
- वर्णित families के सही वानस्पतिक नाम के अतिरिक्त उसके टाइप जीनस भी जान पाएं,
- प्रत्येक family के विशिष्ट vegetative और floral characters के बारे में बता सकें,
- यहाँ दी गई familes के diagnostic features का विश्लेषण कर उन्हें सूचीबद्ध कर सकें,

---

* तख़्ताज़न पद्धति को कुछ समय पहले (1997) में प्रकाशित पुस्तक (डाइवर्सिटी एंड क्लासीफिकेशन ऑफ़ फ्लावरिंग प्लांट्स, कोलंबिया यूनिवर्सिटी, प्रेस, न्यूयार्क) में संशोधित किया गया है। इस संशोधित वर्गीकरण की रूपरेखा, Appendix-22.1 में दी गई है तथा इसे प्रत्येक family के वर्गीकृत स्थिति का विवेचन करने के लिए इकाई 21, 22 और 23 में अपनाया गया है। इन इकाईयों में हर family की वर्गीकृत स्थिति के अध्ययन के दौरान Appendix-22.1 को देखना न भूलें। यह इकाई-22 के अंत में दी गई है। हमारी आपसे इसे कंठस्थ करने की अपेक्षा नहीं है। परन्तु आप अपने आपको इससे भली भांति परिचित करवाएं, इससे आपको classification system के इस्तेमाल के बारे में पता चलेगा।

- इस इकाई में बताई गई प्रत्येक family का classification भिन्न systems के अनुसार कर सकें,
- प्रत्येक family के size और उसके distribution के बारे में बताते हुए उसके कुछ भारतीय प्रतिनिधियों के नाम बता पाएं,
- अध्ययन की गई families के आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण उन पौधों की सूची बना सकें जो स्थानीय रूप से सुलभ हों, तथा
- प्रकृति की हमें एक अनुपम भेंट के रूप में वनस्पति की महत्ता और मानव के कल्याण और सुरक्षित भविष्य के लिए प्रकृति के संरक्षण की जरूरत की अनुभूति कर सकें।

प्रभावी अध्ययन के लिए सुझाव

पहला, एक बार में केवल दो ही families (अधिकतम) का ही अध्ययन करें।

दूसरा, एक बैठक के लिए निर्धारित विषय का अध्ययन पूरा कर लेने पर, कुछ देर तक, चाहे तो आखें मूंदकर बैठें, तथा अपने मन में अभी पढ़ी family/families की मुख्य बातें दोहराएं। ज़रूरत पड़ने पर, नि:संकोच संबंधित इकाई को देखें।

तीसरा, प्रत्येक family की याद रखने वाली मुख्य बातें खण्ड में ही नोट कर लें। इससे आपको दोहराते समय आसानी होगी। आप हाशिये में खाली छोड़ी गई जगह, या फिर families के अन्त में दिए गए बॉक्स का उपयोग कर सकते हैं।

चौथा, किसी family के अध्ययन के बाद, उसके किसी एक सदस्य पौधे को लें तथा उसके विभिन्न भागों का परीक्षण करें। साथ ही आप यह भी देखें की इसके जो लक्षण आप देख रहे हैं, क्या वे इकाई में दी गई जानकारी से मेल खाते हैं या फिर ये किसी प्रकार से भिन्न हैं। इन भिन्नताओं को भी नोट कर लें, तथा इसके बारे में अपने परामर्शदाता से चर्चा करें। यदि आप किसी family के सदस्य पौधे को फील्ड में नहीं पहचान पाते हैं, या इसकी स्थिति के बारे में नहीं जानते, तो इन जानकारियों के लिए भी आप अपने परामर्शदाता से सहायता ले सकते हैं। जीवित पौधे के अध्ययन के संबंध में हम आपका ध्यान दिलाना चाहेंगे और वह यह है कि पौधे एक बहुमूल्य प्राकृतिक सम्पदा हैं, इसलिए इनका समझदारी से इस्तेमाल करें। पौधे उतनी ही मात्रा में तोड़ें जितने की आपके अध्ययन के लिए जरूरी हैं। यदि आप पौधे या उसके भाग को तोड़े बिना ही,फील्ड में ही उसका अवलोकन करें तो यह बहुत ही अच्छा होगा। इसके लिए आपको फील्ड में अपने साथ एक छोटा hand lens, दो mounted needles, एक forceps तथा एक तेज़ धार वाला blade, ले जाना बहुत उपयोगी होगा। इसके अलावा, कोई जानकारी नोट करने के लिए pen/pencil या copy/writing pad भी साथ ले जाना ना भूलें।

पांचवा, आप अपने परामर्शदाता से किसी भी शंका के संबंध में बिना हिचक बात करें। साथ दी कोई रोचक नई जानकारी को भी आपस में बांटे।

छठा, जब आप कुछ families का अध्ययन पूरा कर लें, तो उनकी संरचनाओं की विशेषताओं की तुलना, तालिका के रूप में करें। इस अभ्यास से आप निकट संबंधी families में स्पष्ट विभेद कर सकेंगे।

हमें आशा है इन सुझावों से आपका अध्ययन रोचक तथा सार्थक होगा।

21.2 Ranunculaceae(रैननकुलेसी)

The Buttercup family (बटरकप कुल)

Type genus : *Ranunculus* (रैननकुलस)

सामान्य जानकारी

Ranunculaceae family, north temperate zone के ठंडे भागों में वितरित है। इसमें 50 genera और 1900 species पाई जाती हैं जिनमें से 20 genera और 150 species भारत में मिलती हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

अधिकतर herbs (शाक); पत्तियां आवरण आधार (sheathing base) लिए, lamina (पटल) अक्सर विभाजित होता है; flower bisexual (द्विलिंगी), जिनमें floral parts spirally arranged (पुष्पांग सर्पिल विन्यास में) रहते हैं। कई पौधों में perianth (परिदल पुंज), calyx (कैलिक्स, बाह्यदल पुंज) और corolla (कोरोला) दलपुंज, में विभेदित होते हैं, तथा कई में नहीं भी होते। Stamens (पुंकेसर) और carpels (अंडप) बहुसंख्यी; तथा फूलों में nectaries (मकरंद कोष) विद्यमान रहती हैं; thalamus (थैलमस, पुष्पासन) सुविकसित होता है।

आकारिकीय विविधता

पौधे प्राय: annual (वर्षी) या perennial herbs होते हैं जो rhizomes (राइज़ोम, प्रकंदों) या condensed root stocks (रूटस्टॉक, संघनित प्रकंदों) या tubers (ट्यूबरस, कंदों) के माध्यम से perennate (चिरकालिकता प्राप्त) करते हैं (जैसे *Ranunculus, Aconitum*). ये marshy places (कच्छ स्थलों) में पाए जाते हैं या ये typical mesophytes (समोद्भिद) हो सकते हैं। इनमें कुछ woody climbers (काष्ठीय आरोही लता) के रूप में पाए जाते हैं (जैसे *Clematis*)।

Primary root (प्राथमिक जड़) आरंभ में ही मर जाती है और तने से adventitious roots (अपस्थानिक जड़ें) उत्पन्न होती हैं। तने में vascular bundles (संवहन पूल) प्राय: वलय (ring) नहीं बनाते जैसा कि अधिकांश dicot पौधों में होता है। बल्कि वे बिखरे पाए जाते हैं। इस तरह वे monocots से मिलते-जुलते हैं। सबसे रोचक बात यह है कि इनमें xylem "Y" आकार का विन्यास दिखाता है।

Leaf : leaves exstipulate (अनुपर्णी), प्राय: alternate (एकांतरी) होती हैं तथा leaf base (पर्णाधार) एक sheath में विस्तृत रहता है। यह sheath कभी-कभी एक युगल (pair) अनुपर्ण (stipules) - जैसे lobes (पालियों) में, दीर्घित यानि elongated रहती है (उदाहरण *Thalictrum*)। *Clematis* में पत्तियां opposite (सम्मुख) होती हैं। उनका lamina सरल (simple) और *Caltha* तथा *Ranunculus* की कुछ species में पूर्ण (entire) होता है। यह palmately-lobed (हस्ताकार-पालित), divided (विभाजित) या climbing habit के लिए अनुकूलित हो सकता है (उदाहरण *Ranunculus* की aquatic species (जलीय जातियां) जिनमें submerged leaves (निमग्न पत्तियां), dissected (विच्छेदित) और aerial (अकाशी) तथा entire होती हैं जैसा कि चित्र 21.1 में दिखाया गया है।)

चित्र 21.1 : *Ranunculus sceleratus.* (a) फूल और फल-युक्त एक टहनी (twig) । b) एक फूल। c) एक फूल longitudinal section में।

Inflorescence (पुष्पक्रम) : Inflorescence के विकास में हमें इस family में भारी विविधता दिखाई देती है पत्तियों के axils में या शाखाओं के या terminal ends पर solitary (एकल) फूल (उदाहरण. *Anemone, Nigella*) होते हैं। Inflorescence cymose यानि पुष्पक्रम ससीमाक्ष (जैसे *Ranunculus*) या racemose (पुष्पगुच्छी) या फिर paniculate (यौगिक ससीमाक्ष) (उदाहरण *Delphinium, Aconitum, Clematis*) भी हो सकती है।

Flower : फूल प्राय: bracteate, pedicellate, bisexual और actinomorphic होते हैं। मगर *Delphinium* (चित्र 21.2) और *Aconitum* में perianth द्वारा एक spur (दलपुट, शुडिंका) बनाने

के कारण फूल zygomorphic होते हैं। फूल का सबसे विशिष्ट लक्षण floral parts का, एक elongated receptacle (धानी) या thalamus पर spirocyclic arrangement है। Nectaries perianth और stamens के बीच स्थित रहती हैं। Nectaries की उत्पत्ति को लेकर दो धारणाएं हैं। एक धारणा के अनुसार nectaries, modified petals (दल, पंखुड़ीयां) हैं, तो दूसरी धारणा के अनुसार इनकी उत्पत्ति stamens से हुई।

Perianth sepaloid (बाह्यदलाभ), या petaloid (दलाभ) होते हैं या यह सुस्पष्ट कैलिक्स और कोरोला में विभेदित रहता है। *Delphinium, Aconitum* और अन्य जीनसों में पुष्प जैसे-जैसे परिपक्व यानि mature होता है, वह sepaloid से petaloid स्थिति में बदल जाता है। *Ranunculus, Nigella* और अन्य जीनसों में सुस्पष्ट कैलिक्स और कोरोला दिखाई देते हैं।

Perianth प्राय: मुक्त यानि free होते हैं, मगर *Delphinium, Aconitum* और *Aquilegia* में perianth में कुछ हद तक cohesion यानि ससंजन दिखाई पड़ता है। *Nigella* और *Anemone* में perianth के नीचे, हरी पत्तियों का एक involucre अथवा सहपत्र चक्र (परीचक्र) विद्यमान रहता है।

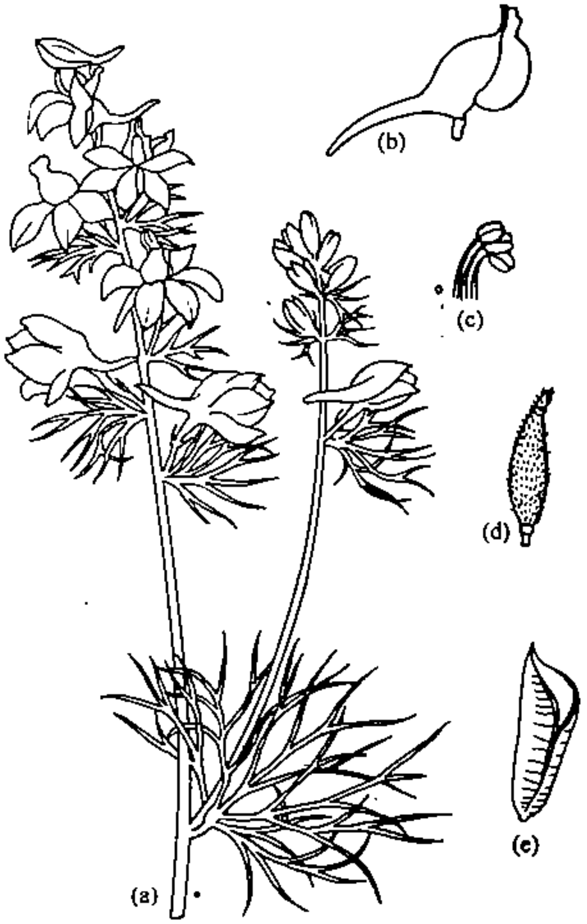

चित्र 21.2 : *Delphinium ajacis.* a) एक पुष्पी टहनी। b) एक फूल। c) कुछ stamens। d) Gynoecium। तथा e) एक फॉलिकल।

Androecium (पुमंग) : stamens numerous और free (मुक्त) होते हैं। वे receptacle पर spirally-arranged रहते हैं। *Delphinium, Helleborus* और *Nigella* में spirally arranged stamens तीन वलय अथवा ring बनाते हैं, प्रत्येक वलय में पांच stamens होते हैं। उनके filaments यानि तंतु चौड़े और laminate (पटलित) या narrow (संकीर्ण) और short (लघु) होते हैं। *Thalictrum* में ये चमकीले रंग लिए रहते हैं। Anthers यानि कि परागकोश dithecous (द्विकोष्ठी) और extrorse (बहिर्मुखी) होते हैं।

Gynoecium (जायांग) : आम तौर पर carpels numerous, free और spirally arranged पाए जाते हैं। *Aquilegia* में carpels की संख्या घट कर 5, तथा *Delphinium* में 3-1 रह जाती है। Carpels की संख्या में इस ह्रास के अलावा carpels के base यानि मूल पर कुछ हद तक cohesion भी देखा जाता है। जैसा कि *Helleborus* में दिखाई देता है या एक syncarpous gynoecium (युक्तांडपी जायांग) में fusion (संलयन) हो जाता है। प्रत्येक carpel में basal (आधारी), उदाहरण *Ranunculus*, या apical यानि शिखाग्र उदाहरण *Clematis*, या marginal यानि उपांत उदाहरण *Delphinium*, placentation (बीजांडन्यास) पाया जाता है। *Nigella* में syncarpous gynoecium में axile यानि स्तंभीय placentation तथा pentalocular ovary (पंचकोष्ठिक अंडाशय) पायी जाती है। Ovary superior यानि ऊर्ध्ववर्ती होती है। यह प्रायः एक लघु वर्तिका या style और समुंड वर्तिकाग्र अथवा capitate stigma युक्त होती है। *Clematis* में style लंबी, feathery यानि पंखदार और persistent (अपाती) होती है।

Fruit (फल) : यह कुछ से लेकर many-seeded follicle यानि अनेक बीजीय पुटकों (उदाहरण *Delphinium*) का समूह या एक-बीजीय achenes या एकीनों (उदाहरण *Ranunculus*) का झुंड या एक capsule (कैप्सूल) (उदाहरण *Nigella*) में होता है। Ranunculaceae family का एक विशिष्ट लक्षण बीज का गठन है। बीज में एक लघु, सीधा भ्रूण (embryo) और विपुल तैलीय भ्रूणपोष (endosperm) होता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. सामान्यतया herbs (शाक) कभी woody climbers (काष्ठीय आरोही लताएं)।
2. तने में vascular bundles (संवहन पूल) अनियमित रूप से स्थित पाए जाते हैं जैसा कि उसकी अनुप्रस्थ काट (transection) में देखने में आता है।
3. पत्तियां sheathing base सहित तथा exstipulate होती हैं, लैमिना पूर्ण (entire) या पालित (lobed) या बारिकी से विभाजित (finely-divided) होता है तथा अक्सर heterophyllous यानि विषमपर्णी होती हैं।
4. फूल solitary या cymose या racemose inflorescences में व्यवस्थित पाए जाते हैं।
5. फूल spirocyclic होते हैं जिनमें सभी floral parts spiral व्यवस्थित रहते हैं ये प्रायः actinomorphic, hypogynous होते हैं।
6. Perianth sepaloid या petaloid या कैलिक्स और कोरोला में विभेदित रहता है।
7. Stamens numerous होते हैं तथा anthers extrorse रहते हैं।
8. Carpels numerous होते हैं तथा ये प्रायः free होते हैं।
9. Fruit achenes या follicles का झुंड है।
10. Seed में embryo सीधा और endosperm (भ्रूणपोष) विपुल तैलीय होता है।

वर्गीकृत स्थिति

Family Ranunculaceae को बेंथम और हुकर ने Polypetalae, Series I Thalamiflorae (पॉलिपिटैली सिरीज I थैलिमफ्लोरी) और Order 1 यानि गण I Ranales में वर्गीकृत किया गया है। इस classification system में dicotyledonous पौधों की यह पहली family है। Order Ranales में सात और families हैं। एंगलर और प्रांट्ल के classification में Ranunculaceae को Archichlamydeae (आर्कीक्लैमाइडी) और Order Ranales में रखा गया है। इस वर्गीकरण के अनुसार इस Order में Dilleniaceae (डाइलिनिएसी) family को छोड़कर 17 अन्य families शामिल हैं। डाइलिनिएसी को बेंथम और हुकर ने रैनेलीज Order में रखा था। तख़्ताज़न ने Ranunculaceae को Subclass D Ranunculidae (उपवर्ग D रैननकुलिडी), Superorder 26 Ranunculanae (अधिगण 26 रैननकुलेनी) और Order Ranunculales (गण रैनकुलालीज) में रखा था। यहां एक

रोचक बात यह है कि बेंथम और हुकर के साथ-साथ एंगलर और प्रांट्ल ने जिन कुछ families को Ranunculaceae में रखा था, उन्हें तख़्ताज़न ने Subclass A, Magnoliidae (उपवर्ग A, मैग्नोलाइडी) में रखा है। Family Dilleniaceae को, जिसे एंगलर और प्रांट्ल ने Order Ranales में रखा था उसे तख़्ताज़न ने Subclass G Dilleniidae (उपवर्ग G डाइलिनाइडी) में रखा है।

Family Ranunculaceae के systematics (वर्गीकरण) का एक अन्य पहलू जीनस *Paeonia* (पीयोनिया) का संबंध है, पहले यह Ranunculaceae में शामिल किया गया था। मगर इसे अब अलग करके Paeoniaceae (पीयोनिएसी) family में रखा गया है। आपने इस जीनस की taxonomy यानि वर्गिकी के बारे में LSE-07 पाठ्यक्रम के Block-2, Unit-7, "Modern Trends in Plant Taxonomy" में पढ़ा है, जिसमें जीनस *Paeonia* के उन लक्षणों के बारे में बताया गया है जो उसे family Ranunculaceae से अलग करते हैं।

आर्थिक महत्व

1. Ranunculaceae के सदस्यों की खेती इनके सुंदर फूलों तथा ornamentals यानि सजावटी पौधों के रूप में की जाती है। इनमें *Aconitum* (ऐकोनिटम, monk's hood यानि मोन्क्स हुड); *Anemone* (ऐनीमोन, विंड फ्लावर); *Aquilegia* (ऐक्वीलेजिया, कोलम्बाइन); *Clematis* (क्लीमेटिस, वर्जिन्स बोवर); *Delphinium* (डेल्फीनियम, लार्कस्पर); *Caltha* (कैल्था, पंक गेंदा, मार्श मैरीगोल्ड); *Nigella* (लव-इन-ए-मिस्ट); *Ranunculus* (बटरकप); और *Thalictrum* (थैलीक्ट्रम, मीडो-रू) की species शामिल हैं।

2. इस family के कुछ पौधों का उपयोग औषधि में होता है। *Aconitum napellus* (ऐकोनिटम नैपेलस); *Anemone pulsatilla* (ऐनीमोन पल्सैटिला); *Adonis aestivalis* (ऐडोनिस ऐस्टाइवैलिस); *Delphinium* species और *Helleborus niger* (हेलेबोरस नाइजर) सुविख्यात औषधीय पादप (medicinal plants) हैं।

3. *Nigella sativa* (नाइजेला सैटाइवा) के बीजों का प्रयोग भोजन और अचार में मसालों के रूप में किया जाता है।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

21.3 Brassicaceae(ब्रैसीकेसी)

The Mustard family, Cruciferae (सरसों कुल, क्रूसीफेरी)

Type genus : *Brassica*(ब्रैसिका)

सामान्य जानकारी

Brassicaceae 350 जीनसों और 3000 स्पीशीज़ की एक विशाल family है जो सभी जगह पायी जाती है। North temperate regions (उत्तरी शतोष्ण प्रदेशों) में विशेषकर Mediterranean (भूमध्यसागरीय) भूभाग में यह अधिकता में पायी जाती है। भारत में इस family के 50 जीनस और 140 स्पीशीज़ मिलती हैं जिनमें से कुछ को food plants यानि खाद्य पादपों या ornamentals के रूप में उगाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

ये herbs हैं, जिनमें एक odorous यानि गंधयुक्त, जलीय रस (watery juice) होता हैं। Flowers racemose inflorescence में, व्यस्थित होते हैं तथा actinomorphic, hypogynous, cruciform यानि क्रासरूपी कोरोला, tetradynamous stamens अथवा चतुर्दीर्घी पुंकेसर तथा bicarpellary (द्विअंडपी), syncarpous gynoecium धारण किए रहते हैं।

आकारिकीय विविधता

जड़ें (root) फूली हुई यानि swollen हो सकती है और खाद्य भंडारों (food reserves) का संचय करती हैं(जैसे मूली, शलजम)। बहुवर्षी स्पीशीज में इनसे हर वर्ष aerial shoots यानि आकाशी प्ररोह, निकलते हैं। तना संहत रहता है और इसकी biennial यानि द्विवर्षी species में वृद्धि के पहले वर्ष में पत्तियों का एक मूलक रोजेट (radical rosette) और दूसरे वर्ष में पुष्पी प्ररोह (flowering shoot) उगता है। तना unicellular hairs यानि एककोशिक रोमों से ढका रहता है।

Leaf : अनेक स्पीशीज़ में पत्तियां एक radical rosette बनाती हैं और ये aerial stems पर भी पाई जाती हैं। पत्तियां आम तौर पर alternate exstipulate और simple होती हैं। लैमिना entire या lobed या फिर finely dissected रहता है और यह simple यानि सरल या stellate अथवा ताराकार रोमों से ढका रहता है।

Inflorescence : Inflorescence racemose या corymb यानि समशिख (कोरम्ब) होता है। Corymbose form (समाशिख रूप) में raceme इस family का विशिष्ट लक्षण है।

Flower : पुष्प प्रायः ebracteate यानि सहपत्रहीन और ebracteolate अथवा सहपत्रिकाहीन, pedicellate, bisexual, actinomorphic, polypetalous (पृथक् दलीय) और hypogynous यानि अधोजायांगी होते हैं। कैलिक्स में चार बाह्यदल (sepals) दो चक्रों में व्यवस्थित रहते हैं जिनमें दो sepals median (मध्यस्थ, मीडियन) और शेष दो transverse (अनुप्रस्थ) होते हैं। प्रत्येक whorl में aestivation (पुष्पदल विन्यास) valvate (कोरस्पर्शी) होता है। कोरोला में चार petals एक whorl में, प्रायः क्रॉस की तरह व्यवस्थित पाई जाती हैं, इसीलिए इन्हें क्रूसीफेरस (cruciferous) कहा जाता है। प्रत्येक दल में चौड़ा limb यानि पाद और एक छोटी claw-like structure (नखरनुमा संरचना) पायी जाती है। कोरोला का aestivation भी valvate होता है। कुछ पौधों में दल बहुत छोटे (उदाहरण *Lepidium, लीपडियम*) या फिर पक्वपुष्प में अनुपस्थित (जैसे *Coronopus कोरोनोपस* में देखें) (चित्र 21.3 देखिए) होते हैं।

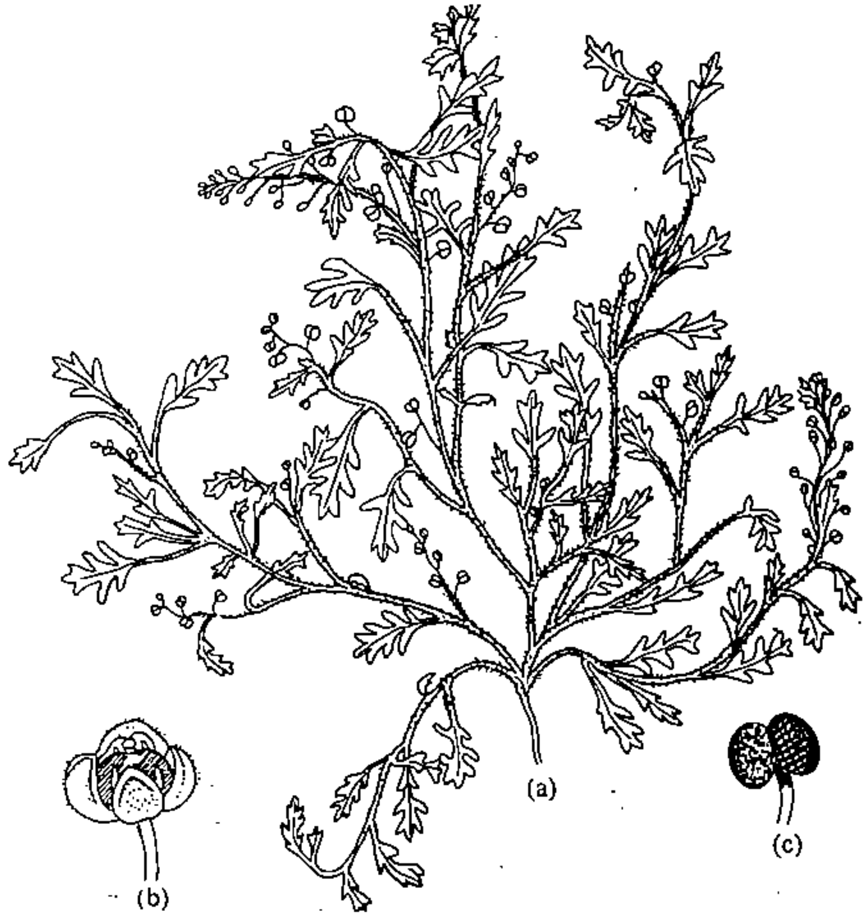

चित्र 21.3 : *Coronopus didymus* (कोरोनोपस डाइडिमस)। a) पुष्प और फल सहित पादप का एक भाग। b) एक पुष्प; c) एक द्विपालित फली (bilobed pod)।

Androecium : इसमें छः stamens दो whorls में व्यवस्थित रहते हैं। बाहरी whorl में दो लघु (short) stamens और भीतरी whorl में चार दीर्घ (long) stamens पाए जाते हैं। Androecium की इस महत्वपूर्ण चतुदीर्घी विशेषता (tetradynamous character) को लिनॉस ने Tetradynamia यानि टेट्राडाइनैमिया (उनकी वर्गीकरण पद्धति में 24 Classes में एक) Class की पहचान के लिए निदानात्मक लक्षण के रूप में चुना था। यह आज की Brassicaceae family से मेल खाता है।

कुछ स्पीशीज़ में stamens की संख्या घट जाती है और उनमें सिर्फ दो stamens ही पाए जाते हैं, जिससे पुष्प diandrous यानि द्विपुमंगी बन जाता है (उदारहण *Lepidium, Coronopus*)। परागकोश dithecous और introrse यानि अंतर्मुखी होते हैं।

Gynoecium : Gynoecium bicarpellary, syncarpous होता है जिसमें एक superior ovary पायी जाती है। Ovary monocular होती है। और उसमें parietal placentation यानि भित्तीय बीजांडन्यास पाया जाता है। Ovary में पार्टीशन (विभाजन पट) बनने से वह bilocular यानि द्विकोष्ठिक हो जाती है। इस पार्टीशन को हम आभासीपट (replum, रिप्लम) कहते हैं। यह वास्तविक पट (true septum) नहीं है बल्कि यह placenta अथवा बीजांडासन से निकला एक उद्वर्ध (outgrowth) है। वर्तिका (style) लघु होती है जिसमें एक द्विशाखी वर्तिकाग्र (bifid stigma) पाया जाता है।

Fruit : यह एक विशिष्टीकृत कैप्सूल है, जिसे siliqua यानि सिलिक्वा, या silique अथवा सिलीक (अगर यह अपनी चौड़ाई से तीन गुना लंबा हो), या फिर अगर और छोटा हो तो इस सिलिक्यूला (siliqula) या सिलीकल (silicle) कहते हैं। पक्व यानि mature फल आधार से ऊपर की दिशा में स्फुटन (dehisce) करता है जिससे replum छूटा रह जाता है तथा इससे (replum से) बीज (seeds) लगे रहते हैं। फल

replum के समांतर या लंबवत् चपटा रहता है। बीज के इन अभिलक्षणों के आधार पर इस family के सभी जीनसों और स्पीशीज़ को classify किया जाता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Herbaceous पौधे जिनमें odorous watery sap पाया जाता है।
2. पत्तियां सरल और exstipulate, लैमिना lobed या dissected।
3. Inflorescence corymbose form में raceme होती हैं।
4. फूल ebracteate, polypetalous होते हैं।
5. कैलिक्स दो whorls में विभाजित होता है।
6. कोरोला cruciform होता है, जिसमें petals में एक limb और claw organisation पाया जाता है।
7. Tetradynamous androecium।
8. Bicarpellary gynoecium जिसमें parietal placentation पाया जाता है।
9. फल siliqua या silicula।
10. बीज छोटे, जिनका एक बड़ा भाग embryo घेरे रहता है।

वर्गीकृत स्थिति

Brassicaceae family को बेंथम और हुकर ने Polypetalae, Series I Thalamiflorae (पॉलिपिटैली, सिरीज I थैलैमीफ्लोरी) और Order Parietales (गण पैराइटेलीज) में रखा है। उन्होंने इस Order में नौ families को रखते हुए Brassicaceae family का संबंध Capparaceae (कैपैरेसी) और Papaveraceae (पैपावरेसी) जैसे अन्य families के साथ इंगित किया है। एंग्लर और प्रांट्ल के classification में Brassicaceae family को Archichlamydeae and Rhoeadales (आर्कीक्लैमाइडी और रोएडेलीज) में रखा है। इस order में Capparaceae और Papaveraceae को मिलाकर छः families हैं। उधर अपनी classification system में तख़्ताज़न ने Brassicaceae family को Subclass-G Dilleniidae, Superorder Violanae and Order 84-Capparales (उपवर्ग G-डाइलेनाइडी, अधिगण वायोलेनी और गण 84-कैपैरेलीज) में रखा है। इस order में Capparaceae सहित सिर्फ छः familes हैं। यह classification, Brassicaceae को Papaveraceae family से अलग रखता है जिसे Subclass-D Ranunculidae, Superorder Ranunculanea and Order 31-Papaverales (उपवर्ग D-रैननकुलीडी, अधिगण रैननकुलेनी और गण 31-पैपवरेलीज) में रखा गया है।

आर्थिक महत्व

Brassicaceae familiy का बड़ा आर्थिक महत्व है। इसके कई पादपों का तिलहन फसलों (oilseed crops) और सब्जियों के रूप में बड़ी महत्ता है। अनेक स्पीशीज़ ornamentals के रूप में उगाई जाती हैं।

1. खाद्य पादप (Food plants)

Raphanus sativus (रैफैनस सैटाइवस) - मूली

Brassica oleracea (*ब्रैसिका ओलिरेसी*) स्पीशीज़ में भारी विविधता पाई जाती है जिसकी कई किस्में सब्जियों के रूप में खाई जाती हैं : *B. oleracea* var. *botyritis* (*ब्रै. ओलिरेसी* उपजाति *बॉटिराइटिस*) या फूलगोभी; *B.oleracea* var. *capitata* (उपजाति कैपिटैटा) या पत्तागोभी; *B. oleracea* var.

gemmifera(जेमिफेरा) या ब्रसेल्स स्प्राउट्स; *B. oleracea* var. *gongylodes* (गॉन्जिलोडीज) या नॉल-खॉल (knol-khol); *Brassica rapa* (ब्रैसिका रैपा) - शलजम; *Brassica campestris* (ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस) var. सरसों (चित्र 21.4)।

चित्र 21.4 : *Brassica campestris* var. sarson, सरसों। a) एक पुष्पी और फलधारी टहनी। b) अनुदैर्ध्य काट में पुष्प। c) एक फली (pod)।

2. तिलहन **(oilseeds)**

   Brassica campestris (ब्रैसिका कैम्पेस्ट्रिस) - mustard यानि सरसों;
   B. alba(ब्रै. एल्बा) - white mustard यानि सफेद सरसों;
   B. nigra(ब्रै. निग्रा) - black mustard यानि काली सरसों;
   B. rapa(ब्रै. रैपा) - Rapeseed यानि तौरिया

3. सजावटी पौधे **(ornamentals)**
   Alyssum (एलिसम) - Basket of gold यानि बास्केट ऑफ गोल्ड
   Arabis(अरैबिस) - Rock cress यानि रॉक क्रेस
   Brassica(ब्रैसिका) - Kale, कैल, करमकल्ला
   Cheiranthus(कायरैन्थस) - Wall flower, वॉल फ्लॉवर
   Iberis(आइबेरिस) - Candy tuft, कैन्डी टफ
   Mathiola(मैथियोला) - Stock, स्टॉक (स्कंघ)
   Nasturtium(नैस्टर्शियम) - Water cress वाटर क्रेस, जल पत्ती

21.4 Malvaceae (मालवेसी)

The China-rose family (चीनी-गुलाब कुल)

Type genus : *Malva* (माल्वा)

सामान्य जानकारी

इस family में tropical यानि उष्ण और temperate वितरण के 75 जीनस और लगभग 1000 स्पीशीज़ें हैं। इनमें से लगभग 22 जीनस और 110 स्पीशीज़ भारत में पाई जाती हैं। इस family के कुछ विख्यात पौधे हैं : कपास यानि *Gossypium* species (गॉसिपियम स्पीशीज़; चित्र 21.5 देखिए), भिंडी या ओकरा (*Abelmoschus esculentus* ऐबिलमोस्कस एस्कुलेंटस, चित्र 21.6 देखिए)। इसके अलावा इसमें चाइनारोज़ (चीनी गुलाब) या शू-फ्लावर (*Hibiscus rosa-sinensis*) सहित कई सजावटी पौधे भी हैं।

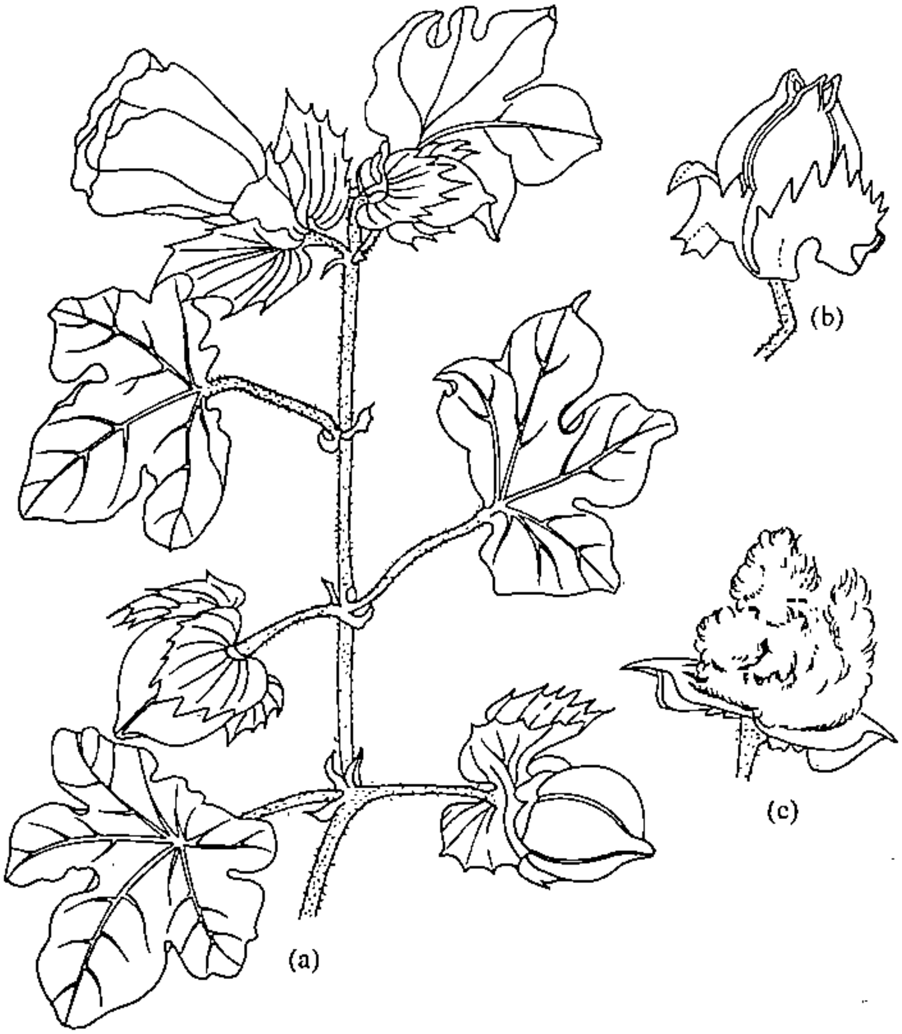

चित्र 21.5 : *Gossypium herbaceum* : a) एक फूल वाली टहनी। b) एक आंशिक रूप से खुला हुआ boll यानि डोडा (बीजकोष)। c) पूर्ण खुला डोडा।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herb, shrub (क्षुप, झाड़ी) या tree (वृक्ष) जिनके young shoots और पत्तियों पर stellate hairs (ताराकारी रोम) पाये जाते हैं। पुष्प solitary या raceme में; epicalyx यानि एपिकैलिक्स या सहपत्रिकाएं प्राय: विद्यमान रहती हैं; stamens बहुसंख्या में, और ये monadelphous यानि एकसंघी होते हैं। इनके anthers monothecous यानि एककोष्ठी होते हैं, जिनमें बड़े, कंटकी पराग (spiny pollen) विद्यमान रहते हैं।

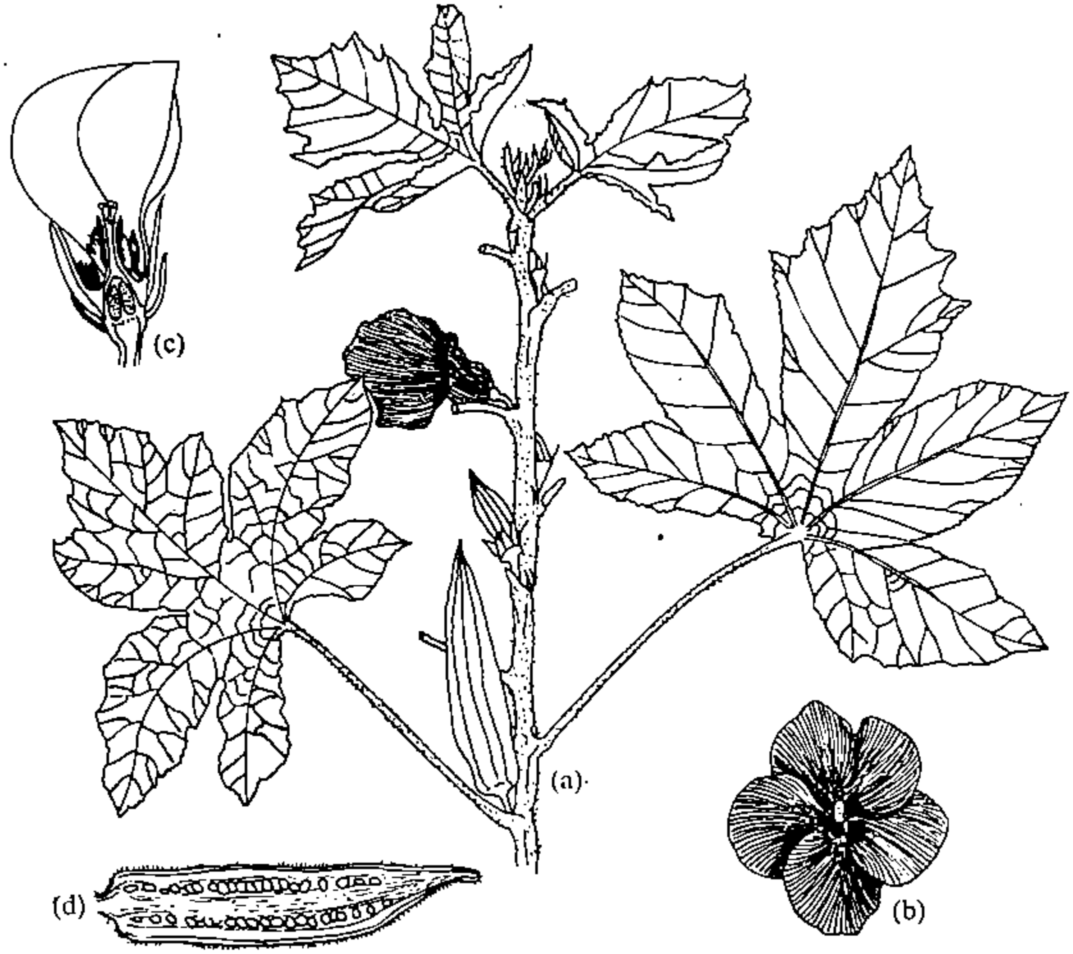

चित्र 21.6 : *Abelmoschus esculentus* : । a) एक पुष्पी और फलनकारी टहनी । b) एक फूल जैसा कि ऊपर से दिखाई देता है। c) एक फूल longitudinal section में। d) Longitudinal काट में एक फल।

आकारिकीय विविधता

पादप annual, biennial या perennial herbs, shrubs या small trees (लघु वृक्ष) हो सकते हैं। इनके stem के herbaceous भाग और पत्तियां, stellate hairs से ढकी रहती हैं। पादपों के soft tissues यानि मृदु ऊतकों में mucilage sacs यानि श्लेष्म कोष विद्यमान रहते हैं।

Leaf : पत्तियां alternate, petiolate यानि वृंतीय और सरल simple होती हैं। ये प्राय: हृदयाकार (cordate) या वृक्काकार (reniform) होती हैं मगर ऊपरी पत्तियां हस्ताकार में विभाजित (palmately-divided) होती हैं। पत्तियों के stipules जल्दी ही झड़ जाते हैं जिससे प्रौढ़ पत्तियां exstipulate दिखाई देती हैं।

Inflorescence : पत्ती के axil में या तो एक बड़ा अकेला फूल लगता है (चित्र 21.7) या फिए racemose inflorescence पायी जाती है। यह संरचना में और अधिक जटिल हो सकती है और cincinni यानि सिनसिनस की बनी होती है।

Cincinnus (plural cincinni) – A helicoid cyme.

Flower : फूल pedicellate, bisexual, complete, actinomorphic, pentamerous यानि पंचभागी और hypogyous होते हैं। इस family के अधिकांश जीनसों में bracteoles के एक whorl द्वारा कैलिक्स के नीचे एक एपिकैलिक्स (epicalyx) की रचना होती है। यह अभिलक्षण विभिन्न जीनसों की पहचान में उपयोगी है। उदाहरण के लिए, *Abutilon* (ऐबुटिलॉन) में यह नहीं पाया जाता है। *Malva* (मालवा) में इसमें तीन bracteoles (चित्र 21.7); *Urena* (यूरेना) में पांच (चित्र 21.8); तो *Hibiscus* (हाइबिस्कस) में भी पांच या अधिक bracteoles पाये जाते हैं। Gossypium में 3 bracteoles बड़े और स्थाई (persistent) होते हैं।

पांच sepals से निर्मित कैलिक्स polysepalous यानि पृथक् बाह्यदलीय, या फिर gamosepalous यानि कि संयुक्त बाह्यदलीय होते हैं। इसमें valvate (कोरस्पर्शी) या imbricate (कोरछादी) aestivation (पुष्पदल विन्यास) दिखाई देता है।

कोरोला पांच free और प्राय: showy (प्रदर्शी) petals से निर्मित होता है, जिसमें contorted or imbricate aestivation (व्यावर्तित या कोरछादी पुष्पदल विन्यास) पाया जाता है। पुंकेसर नलिका यानि staminal tube, petals के base से जुड़ी रहती है और जब फूल झड़ता है तो corolla, staminal tube के साथ ही गिर जाता है।

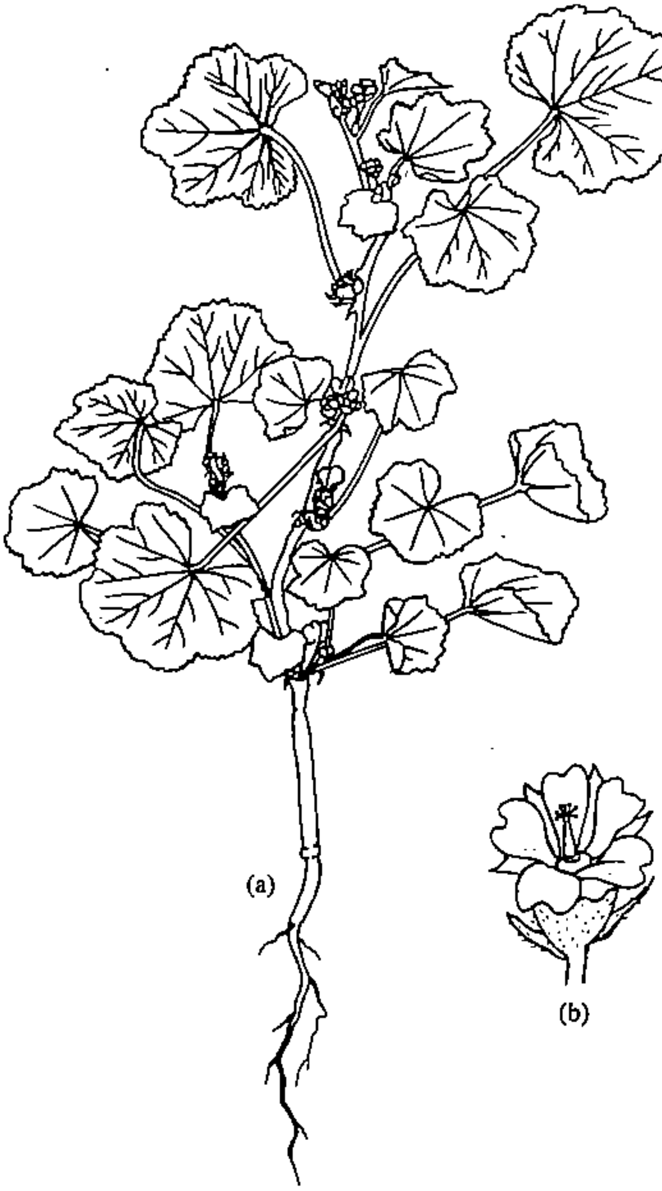

चित्र 21.7 : *Malva parviflora* (मालवा पारवीफ्लोरा)। a) एक पौधा। b) एक पूर्ण पुष्प।

Androecium : इसमें अनेक stamens होते हैं जो कोरोला के base पर एक staminal tube के रूप में एकीकृत (united) रहते हैं। इस प्रकार androecium monadelphous होता है। Anthers, staminal tube के apex (शिखाग्र) के समीप उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक anther reniform यानि वृक्काकार होता है जिसमें सिर्फ एक anther lobe यानि कि पराग कोशक पाया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह एककोष्ठी होता है। Anthers में dehiscence longitudinal होता है। Pollen grains यानि पराग कण, बड़े तथा गोल होते हैं और उनके exine यानि बाह्यचोल के पैटर्न में वैविध्य दिखाई देता है। इसीलिए Malvaceae family को palynologists (परागाणु विज्ञानी) eurypalynous या विविधपरागी कहते हैं।

Gynoecium : जायांग में (एक से अनेक) प्राय: 5 या 10 carpels पाए जाते हैं जो united (संयुक्त) होते हैं। Ovary superior और multilocular यानि बहुकोष्ठिक होती हैं। इनमें placentation axile होती है। प्रत्येक locule में ovules यानि बीजांडों की संख्या एक से लेकर कई तक होती है। फूल protandrous यानि पुंपूर्वी होते हैं और style, staminal tube के अंदर ही बंद रहती है। Anther dehiscence के बाद style, staminal tube से बाहर की ओर वृद्धि करती है तथा स्पष्ट stigma दिखाई देता है। Stigma lobes की संख्या, carpels की संख्या के बराबर या उनसे दोगुना होती है।

Fruit (फल) : फल प्राय: capsule होता है (उदाहरण *Hibiscus, Gossypium*) या यह schizocarpic (भिदुर) होता है जो कारसेरूलस (carcerulus) बनाता है जैसा कि *Abutilon* में पाया जाता है। *Malviscus* (मालविस्कस) में फल berry (बेरी) होता है।

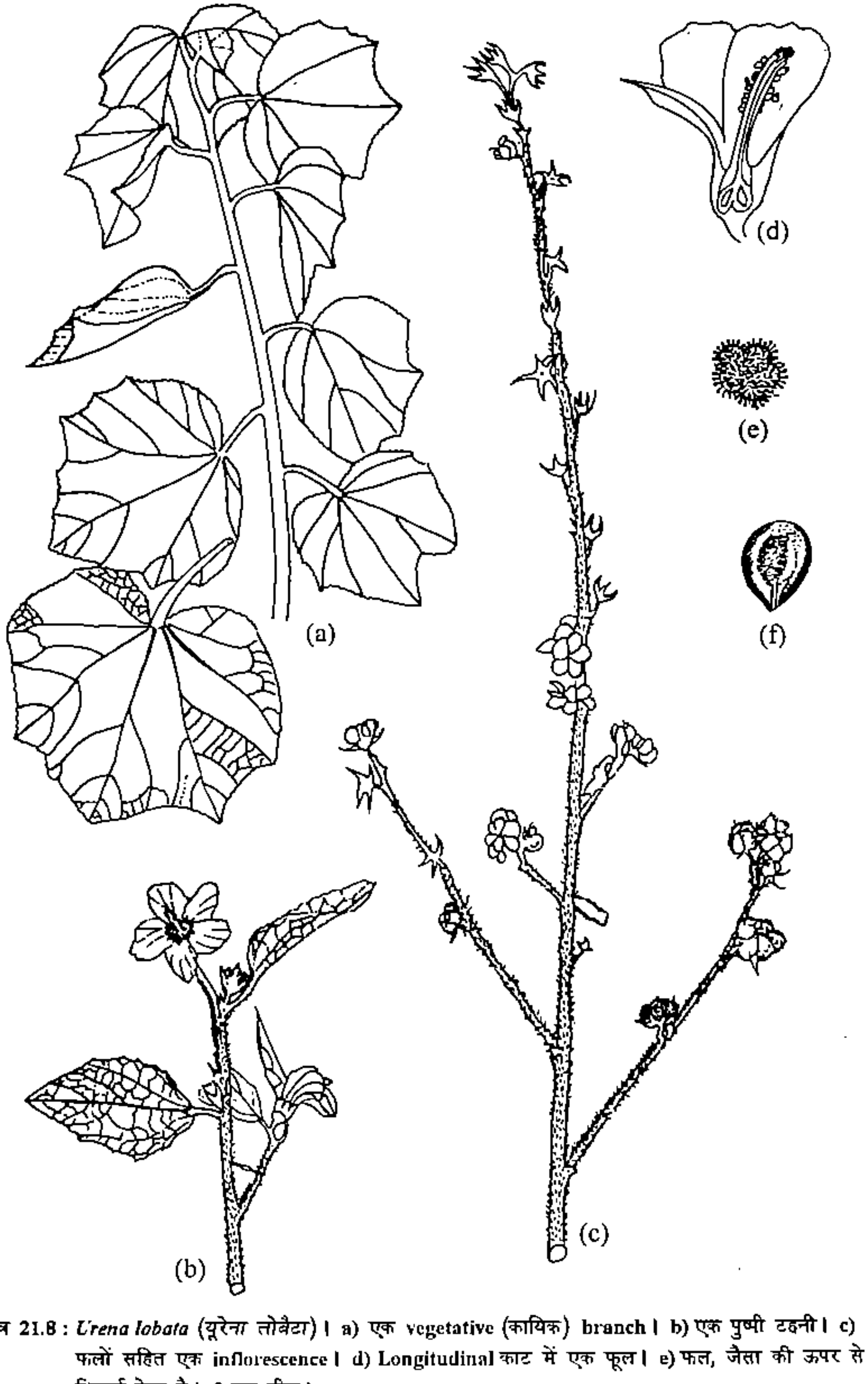

चित्र 21.8 : *Urena lobata* (यूरेना लोबैटा)। a) एक vegetative (कायिक) branch। b) एक पुष्पी टहनी। c) फलों सहित एक inflorescence। d) Longitudinal काट में एक फूल। e) फल, जैसा की ऊपर से दिखाई देता है। f) एक बीज।

बीज reniform या obovoid (प्रतिअंडाकार) होते हैं जिनमें एक curved embryo (वक्रित भ्रूण) विद्यमान होता है। यह embryo, endosperm से घिरा रहता है। बीज epidermal hairs (बाह्यत्वचा रोमों) से ढका हो सकता है जैसे कि *Gossypium* में। इसके बारे में आपने इकाई 20 में भी पढ़ा है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Herb, shrub या tree।
2. Young shoots और पत्तियां stellate hairs से ढकी हैं।
3. पत्तियां reniform, cordate या palmately-divided रहती हैं।
4. Inflorescence solitary पुष्पों का या racemose और बहुत जटिल हो सकती है।
5. फूल pentamerous होते हैं तथा epicalyx सहित होते हैं।
6. कैलिक्स में valvate aestivation होता है।
7. कोरोला contorted (व्यावर्तित) या imbricate aestivation (कोरछादी पुष्पदल विन्यास) दिखाते हैं।
8. Stamens अधिसंख्य, monadelphous जिनमें anthers reniform और monothecous होते हैं।
9. Pollen grains बड़े और spiny होते हैं।
10. Gynoecium multicarpellary, syncarpous होता है। Overy superior और इसमें axile placentation देखी जाती है।
11. फल capsule या schizocarpic होता है।

वर्गीकृत स्थिति

बेंथम और हुकर ने Malvaceae family को Polypetalae, Series I Thalamiflorae और Order 6-Malvales (पॉलिपिटैली, सिरीज I थैलैमीफ्लोरी और गण 6-मालवेलीज) में रखा है। इस order में Malvaceae, Sterculiaceae (स्टर्कुलिएसी) और Tiliaceae (टिलिएसी) family शामिल हैं। एंगलर और प्रांट्ल के classification में इस family को Archichlamydeae and Order 26-Malvales (आर्कीक्लैमाइडी और गण 26-मालवेलीज) में रखा गया है जिसमें Tiliaceae, Sterculiaceae और Bombacaceae (बॉम्बेकेसी) समेत आठ familes शामिल हैं। जबकि बेंथम और हुकर ने Brassicaceae को Malvaceae family का ही हिस्सा माना था। उधर तख़्ताजन ने अपने वर्गीकरण में Malvaceae को Subclass-G Dilleniidae, and Order 89-Malvales (उपवर्ग G-डाइलेनाइडी, और गण 89-मालवेलीज) में रखा है। उनके अनुसार इस order में 12 familes आती हैं। बहरहाल बेंथम और हुकर ने Malvaceae family की जो बंधुता (affinity), Tiliaceae और Sterculiaceae से बताई थी उसे सभी systems of classification में स्वीकार कर लिया गया है।

आर्थिक महत्व

1. रेशे (फाइबर)

   जीनस *Gossypium* की पुरानी और नई दुनिया की अनेक जातियों को कपास के रेशे के लिए प्राचीन काल से उगाया जा रहा है। इस जीनस की आर्थिक महत्ता का विस्तार से वर्णन इस पाठ्यक्रम की इकाई-20 में दिया गया है। कपास के अतिरिक्त अनेक अन्य ऐसे पादप हैं जो व्यावसायिक रेशे के विपुल स्रोत हैं। *Hibiscus cannabinus (हाइबिकस कैनाबिनस)*, *H.sabdariffa* (*हा. सैबडैरिफा*) और *Hibiscus* की अन्य स्पीशीज़ के अलावा *Sida (सीडा)*, *Thespesia (थेस्पिसिया)*, *Pavonia (पेवोनिया)* और *Urena* की स्पीशीज़ का उपयोग डोरी, रस्सी, थैले बनाने और कागज़ के निर्माण में किया जाता है।

2. **तिलहन (oilseeds)**

   Gossypium और *Hibiscus* के बीज एक वसा तेल (fatty oil) का स्रोत है जिसे साबुन, स्नेहक (लुब्रिकेन्ट) और पेंट बनाने में काम लाया जाता है। खली (oil cake) का प्रयोग पशु आहार (cattlefeed) के रूप में होता है।

3. **खाद्य पादप (food plants)**

   Abelmoschus esculentus (भिंडी या ओकरा) के तरुण फलों को सब्जी के रूप में खाया जाता है।

4. **सजावटी पौधे (ornamentals)**

   इस कुल के प्रचलित सजावटी पौधों में *Hibiscus rosa-sinensis* (*हाइबिसकस रोजा-साइनेन्सिस*), *Hibiscus schizopetalus* (*हा.स्काइजोपिटैलस*), *Hibiscus sabdariffa* (*हा. सैबडेरिफा*), *Hibiscus mutabilis* (*हा. मयूटाबिलिस*), *Hibiscus syriacus* (*हा. साइरिएकस*) और *Althaea rosea* (*एल्थिया रोज़िया*)। *Thespesia populnea* (*थेस्पिसिया पोपुल्निया*, चित्र 21.9) को इसके घने पर्णसमूह (dense foliage) और फूलों के लिए वृक्षवीथी (avenue trec) के रूप में उगाया जाता है। इसकी लकड़ी से खिलौने, पेंसिल और खेती-बाड़ी के उपकरण बनाए जाते हैं।

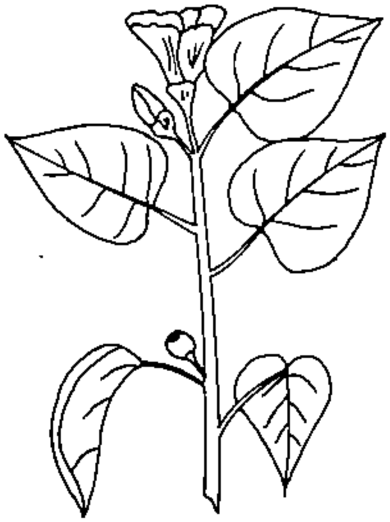

चित्र 21.9 : *Thespesia populnea* की एक फूल सहित टहनी।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

21.5 Rutaceae (रुटेसी)

The Citrus family (साइट्रस कुल)

Type genus : *Ruta* (रूटा)

सामान्य जानकारी

Rutaceae family tropical और temperate regions विशेष कर दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया में विस्तृत पैमाने पर वितरित है। 150 जीनसों और 1500 स्पीशीज़ वाली इस family को Citrus (साइट्रस, नींबू वंश) फलों और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अन्य पादपों के कारण महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, जिन्हें विश्व के अनेक भागों में उगाया जाता है। भारत में इस family के लगभग 23 जीनस और 80 स्पीशीज़ पाई जाती हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Shrubs या trees जिनमें aromatic oil glands यानि सौरभ-सुगंधमूलक (ऐरोमैटिक) तैल ग्रंथियां पाई जाती हैं; पत्तियां compound यानि कि संयुक्त; पुष्प एक विशिष्ट अधोजायांगी डिस्क (hypogynous disc) के साथ। Stamens दो whorls में, बाहरी whorl प्राय: petals यानि पंखुड़ियों के सामने होते हैं।

आकारिकीय विविधता

पौधे ज्यादातर shrubs या trees होते हैं जिनमें अक्सर शुष्कतानुकूलित (xeromorphic) अभिलक्षण पाए जाते हैं। कुछ पौधे herbaceous होते हैं जैसे *Boenninghausenia albiflora* (बोनिंघौसिया ऐल्बिफ्लोरा)। यह एक *insect-repellent* (कीट-प्रतिकर्षी) बूटी है, जो भारत के हिल-स्टेशनों में प्रचलित है। *Citrus* (साइट्रस) और *Aegle* (ऐगल) में *spines* (शूल) या *thorns* (कांटे) विद्यमान रहते हैं या फिर पौधों में इस तरह का रक्षा कवच नहीं होता जैसे कि *Murraya* (मुरया) में।

Leaf : ज्यादातर पत्तियां alternate, विरले ही opposite (सम्मुखी), exstipulate, प्राय: pinnately compound (पिच्छाकार संयुक्त) मगर कभी-कभी reduced यानि लघुकृत होती हैं। *Citrus* में पत्ती का एक सरल blade (ब्लेड) और पंखी पर्णवृंत (winged petiole), एक जोड़ द्वारा अलग होता है (चित्र 21.10) । इसे एक compound leaf (संयुक्त पत्ती) माना जाता है जो कि एकल पर्णक (leaflet) में लघुकृत हो गई है। यह लघुकरण आगे और होता है तथा फलस्वरूप तरुण प्ररोह (young shoots) में उत्पन्न होने वाली एक या दो नई पत्तियां spine या thorn में रूपांतरित हो जाती हैं। इस family का एक महत्वपूर्ण अभिलक्षण oil cavities यानि तैल-गुहाओं की उपस्थिति है। ये तैल-गुहाएं पत्तियों के संपूर्ण पटल (लैमिना) में या फिर सिर्फ margins (उपांतों) पर विद्यमान रहती हैं। ऐसी ग्रंथित (gland dotted) पत्तियां सुगंधित (aromatic) हो जाती हैं।

Inflorescence : फूल या तो solitary होते हैं या फिर cymose (ससीमाक्ष) inflorescence में पाए जाते हैं। कभी-कभी यह racemose (असीमाक्ष) भी होता है, उदाहरण *Murraya* (चित्र 21.11)।

Flower : पुष्प bracteate (सहपत्री), और bracteolate (सहपत्रिका युक्त), pedicellate, bisexual (कभी-कभी लघुकरण द्वारा unisexual यानि एकलिंगी हो जाते हैं), actinomorphic (कई स्पीशीज़ में थोड़ा सा zygomorphic और प्राय: pentamerous (पंचभागी) या tetramerous (चतुर्भागी) होते हैं। पुष्प संरचना की एक महत्वपूर्ण विशेषता stamens और ovary के बीच receptacle (धानी) का विकास है। यह receptacle एक छल्ले, कुशन या कपनुमा डिस्क के रूप में विद्यमान हो सकती है। डिस्क hypogynous (अधोजायांगी) होती है। पांच या चार sepals से बना कैलिक्स polysepalous या gamosepalous होता है। Aestivation imbricate पायी जाती है। कोरोला में चार या पांच free petals (पंखुड़ियां) विद्यमान होती हैं जिनमें imbricate aestivation पाया जाता है। कोरोला, कैलिक्स से अधिक बड़ा और यह सफेद, पीला या लाल रंगी होता है। पंखुड़ियां आम तौर पर स्थूल (thick) और मोमी (waxy) होती हैं।

Androecium : इस family के अधिसंख्य सदस्यों में 10 या 8 stamens पाए जाते हैं। ये obdiplostemonous यानि दलाभिमुख-द्विवर्तपुंकेसरी होते हैं। अर्थ यह हुआ है कि इनके stamens दो whorls में पाए जाते हैं जिनमें से बाहरी whorl petals (पंखुड़ियों) के opposite स्थिर रहता है। कभी-कभी stamens लघुकृत होकर पांच या इससे भी कम होते हैं तथा ये एक solitary whorl में व्यवस्थित रहते हैं। stamens का यह solitary whorl antesepalous यानि बाह्यदलाभिमुखी रहता है। कुछ स्पीशीज़ में stamens की संख्या अधिक (numerous) पाई जाती है और वे polyadelphous यानि बहुसंघी होते हैं। Anthers dithecous और उनके apex (शिखाग्र) भाग में connective (संयोजी) glandular (ग्रंथिल) होता है। Dehiscence introrse होता है।

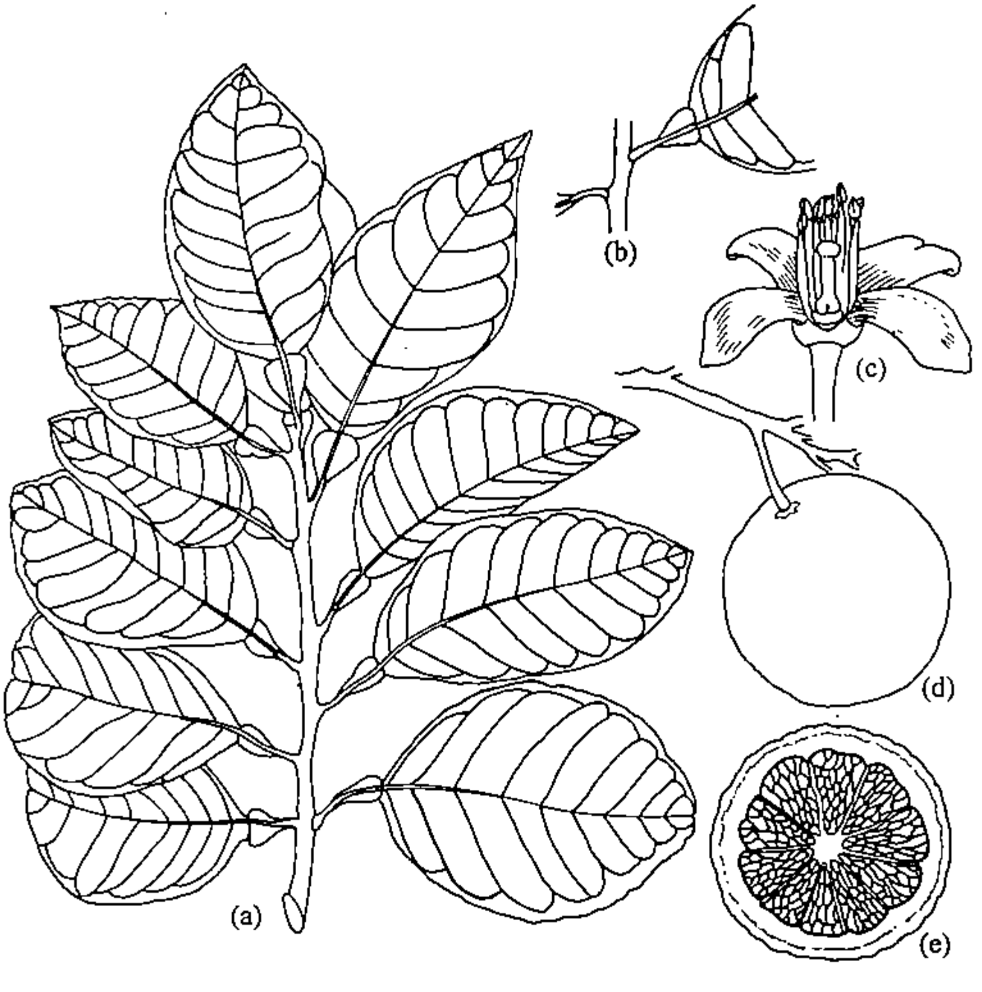

चित्र 21.10 : *Citrus aurantium* (*साइट्रस औरेंशियम*)। a) एक vegetative टहनी। b) पत्ती के base का आवर्धित चित्र। c) Longitudinal काट में एक फल। d) फल। e) Transverse काट में फल।

Gynoecium : प्रायः पांच या चार carpels पाए जाते हैं। Carpels की संख्या विरले ही तीन या एक देखने में आती है। ये carpels आम तौर पर base (आधार) पर free (मुक्त) होते हैं मगर style से ऊपर united (संयुक्त) पाए जाते हैं। Ovary superior (ऊर्ध्ववर्ती) होती है और इसके नीचे एक डिस्क स्थित रहती है। Ovary multilocular बहुकोष्ठकीय होती हैं, प्रत्येक locule (कोष्ठक) में दो (कभी-कभी एक) बीजांड (ovule), axile placentation में विद्यमान रहते हैं। Ovary unilocular तथा parietal placentation के साथ भी पायी जा सकती है (उदाहरण *Feronia* यानि *फेरोनिया*)। Styles united संयुक्त या free (मुक्त) हो सकते हैं।

Fruit (फल) : Carpels में cohesion की मात्रा के अनुसार फल की प्रकृति बदल जाती है। यह एक विशिष्टीकृत बेरी (berry) हो सकता है, जिसे हेस्परीडियम (hesperidium) कहते हैं। इस प्रकार के फल (उदाहरण *Citrus*) में मांसल गूदा (fleshy pulp) विशाल रस थैलियों (juice sacs) के रूप में पाया जाता है। कभी-कभी फल drupe यानि अष्ठिल के रूप में (उदाहरण *Skimmia* यानि *स्किमिया*) या schizocarpic यानि भिदुर (उदाहरण *Dictamnus* यानि *डिक्टैम्नस*) हो सकता है। फल के अभिलक्षणों

का उपयोग family के classification में किया जाता है। बीजों में एक बड़ा embryo होता है और endosperm विद्यमान या लुप्त (absent) रहता है। *Citrus* की जातियों में polyembryony यानि बहुभ्रूणता देखने को मिलती है।

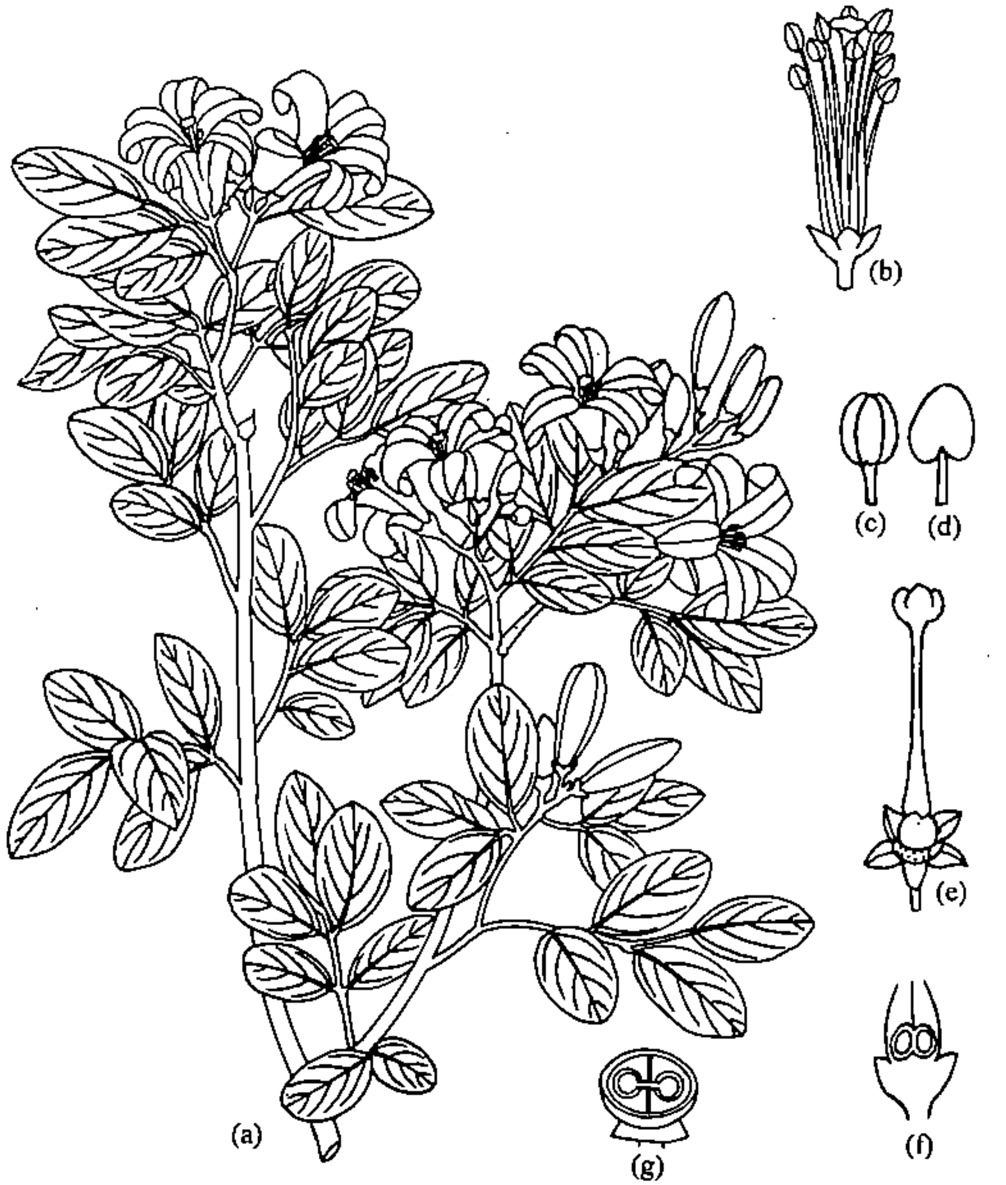

चित्र 21.11 : *Murraya paniculata* (मुर्राया पैनीकुलैटा)। a) एक पुष्पी टहनी। b) एक पुष्प जिसकी पंखुड़ियों को निकाल लिया गया है। इसमें हम कैलिक्स का एक whorl, androecium और gynoecium देख सकते हैं। c) और d) Stamen के दो भिन्न दृश्य। e) Gynoecium। (f) और g) Ovary के क्रमशः longitudinal और transverse काट में रेखाचित्र।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Shrubs या tree (विरले ही herb के रूप में)।
2. पत्तियां compound, gland-dotted, aromatic।
3. पुष्प एक विशिष्ट hypogynous disc के साथ।
4. Petals स्पष्टतः sepals से बड़े होते हैं।
5. Stamens obdiplostemonous।
6. Gynoecium में 5 या 4 carpels, जो base पर तो free होते हैं, मगर ऊपर से united रहते हैं।

3. *Murraya keonigii* यानि *मुर्राया कोएनिगाइ* (कड़ी पत्ता) को प्रयोग भोजन में छोंका लगाने (फ्लेवरिंग एजेंट) के रूप में किया जाता है। इसकी ताजा और सूखी पत्तियां कड़ी, सब्जी, दाल और सूपों को एक विशिष्ट गंध प्रदान करती हैं।

4. *Zanthoxylum armatum* यानि *जैन्थोजाइलम ऐर्मेटम* (*Z. alatum*), *Z.limonella* (*जै.लिमोनेला*), और *Peganum harmala* (*पेगानम हैर्माला*) से दवाएं बनाई जाती हैं।

5. *Citrus japonica* (*साइट्रस जैपोनिका*) के अलावा *Murraya paniculata*(*मुर्राया पैनिकुलैटा*) को भी इसके सुगंधित फूलों के लिए उगाया जाता है। यह एक बेहतरीन बाड़े (hedge) का काम भी करता है। *Ruta graveolens* (*रूटा ग्रैवियोलेंस*), *Glycosmis pentaphylla* (*ग्लाइकोस्मिस पेंटाफाइला*), *Skimmia arborescens*(*स्किमिया आरबोरेसेंस*) और *Dictamnus albus* (*डिक्टैमस एल्बस*) इस family के अन्य सुज्ञात ornamental plants हैं।

बोध प्रश्न 1

1. निम्न में से सही उत्तर चुनिए :

   अ) लिनॉस के वर्गीकरण का Class Tetradynamia (वर्ग टेट्राडाइनेमिया) तुल्य है :

   i) Brassicaceae

   ii) Malvaceae

   iii) Ranunculaceae

   iv) Rutaceac

   ब) Monadelphous stamens (एकसंघी पुंकेसर) .... में पाये जाते हैं।

   i) Brassicaceae

   ii) Malvaceae

   iii) Ranunculaceae

   iv) Rutaceae

2. Axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास) वाले दो कुलों के नाम बताइए।

   i) ....

   ii) ....

3. निम्न शब्दों की व्याख्या कीजिए और कुलों के नाम बताइए जिनमें उनके बारे में बताया गया है :

   i) Epicalyx (एपिकैलिक्स)

   ....

   ....

   ....

   ii) Obdiplostemonous androecium (दलाभिमुख, द्विवर्तपुंकेसरी)

   ....

   ....

   ....

iii) Siliqua (सिलिक्वा)

....

....

....

iv) Spirocyclic flower (सर्पिलचक्री पुष्प)

....

....

....

4. नीचे दिए गए जीनसों के families बताइए और प्रत्येक जीनस की आर्थिक उपयोगिता (economic importance) बताइए :

	Genus	family	उपयोग
i)	*Aconitum*	....	....
ii)	*Aegle*	....	....
iii)	*Alyssum*	....	....
iv)	*Delphinium*	....	....
v)	*Eruca*	....	....
vi)	*Gossypium*	....	....
vii)	*Hibiscus*	....	....
viii)	*Murraya*	....	....

5. i) आपने जिन चार families के बारे में पढ़ा उनमें से उस family का नाम बताइए जिसे बेंथम और हुकर ने Series Disciflorae में रखा है।

....

ii) तख़्ताज़न ने इस family को किस Subclass में रखा है?

....

....

6. अ) बेंथम और हुकर द्वारा Series Thalamiflorae में वर्गीकृत दो families के नाम बताइए।

i) Family ....

ii) Family ....

ब) इन families का तख़्ताज़न के वर्गीकरण में क्या स्थान है? उन्हें भाग अ में दिए गए क्रमानुसार ही लिखिए।

i) Subclass : ....

Superorder : ....

Order : ....

ii) Subclass : ....

Superorder: ....

Order : ....

7. निम्न की पहचान के लिए सबसे महत्वपूर्ण लक्षण क्या है?

अ) बेंथम और हुकर के वर्गीकरण में Order Parietales

....

....

....

ब) लिनॉस के वर्गीकरण में Class Tetradynamia

....

8. नीचे दिए गए चार कुलों के फल की किस्म बताइए :

i) Brassicaceae

....

....

....

ii) Malvaceae

....

....

iii) Ranunculaceae

....

....

....

iv) Rutaceae

....

....

....

9. Family Malvaceae को Rutaceae से भिन्न रखने वाले महत्वपूर्ण अभिलक्षण बताइए।

Malvaceae	Rutaceae

10. Family Ranunculaceae के महत्वपूर्ण vegetative और floral characters बताइए।

....

....

....

....

11. पादप वर्गीकरण की तीनों पद्धतियों में family Brassicaceae का वर्गीकृत स्थान बताइए।

....

....

....

....

कुछ याद रखने योग्य बातें:

21.6 Fabaceae (फैबेसी)

The Legume family, Leguminosae [शिंब (लेग्यूम) कुल, लेग्यूमिनोसी]
Type genus : *Faba* (फैबा)

सामान्य जानकारी

Family Fabaceae बहुत विशाल है जिसमें लगभग 600 जीनस और 1300 से अधिक स्पीशीज़ हैं, जिनका सार्वभौमिक (universal) वितरण देखने में आता है। इस family के कुछ सदस्य tropical और subtropical प्रदेशों में, तो अन्य temperate भागों में अधिक पाए जाते हैं। ये सभी प्रकार के habitats (आवासों) में पाए जाते हैं, जिनमें कई के प्रतिनिधि सभी महाद्वीपों में मिलते हैं। भारत में इस family के लगभग 150 जीनस और 900 से अधिक स्पीशीज़ विद्यमान हैं, जिनमें से कई का भारी आर्थिक महत्व है। इन पादपों का प्रयोग भोजन या चारे के लिए या वसीय तेलों, रंजकों (डाइ), इमारती लकड़ी के लिए या फिर सजावटी पौधों के रूप में भी होता है।

इस family के सदस्यों के vegetative और floral characters में भारी भिन्नता देखने में आती है। इनमें से अधिसंख्य की पहचान उनके विशेष fruit से हो जाती है, जो एक legume (शिंब) होता है। इसीलिए कुल का नाम Leguminosae पड़ा। विशिष्ट fruit के अलावा इस family के कई सदस्यों में उनकी lateral roots (पार्श्व जड़ों) पर specialised outgrowths (विशिष्टीकृत उद्वर्ध) विद्यमान रहते हैं। इन root nodules (मूल ग्रंथिकाओं) में bacteria (जीवाणुओं) के निवह या कोलोनियां cortex (मूल वल्कुट या कॉर्टेक्स) की कोशिकाओं में पाए जाते हैं। यह symbiotic relationship (सहजीवी संबंध) का एक उदाहरण है जिसमें पौधे की जड़ें bacteria को आश्रय (home) प्रदान करती हैं और बदले में bacteria atmospheric nitrogen (वायुमंडलीय नाइट्रोजन) के assimilation (स्वांगीकरण) में पौधे की सहायता करते हैं। इस प्रकार पौधे को बड़ी मात्रा में नाइट्रोजन यौगिक (compounds) सुलभ हो जाते हैं, जिन्हें वह महत्वपूर्ण प्रोटीनों में बदल डालता है। इसीलिए leguminous plants का बड़ा महत्व है क्योंकि ये नाइट्रोजन compounds से मिट्टी को और उपजाऊ बनाते हैं। इन्हें crop rotation (शस्य् चक्रण या क्रॉप रोटेशन) में प्रयोग किया जाता है।

Fabaceae, जोकि एक बहुत बड़ी family है, इसे भिन्न classification systems में तीन subfamiles में विभाजित किया गया है। इनके कुछ अभिलक्षण समान हैं, लेकिन प्रत्येक subfamily का अपना एक विशिष्ट और भिन्न समूह है। इसलिए यहां हम प्रत्येक subfamily के बारे में अलग से जानकारी दे रहे हैं। ये तीन subfamilies इस प्रकार हैं :

i) Mimosoideae (मिमोसोइडी)

ii) Caesalpinioideae (सीजैलपिनोइडी)

iii) Papilionatae or Faboideae or Lotoideae (पैपिलिनैटी या फैबोइडी या लोटोइडी)

निम्न अभिलक्षण इन्हें एक दूसरे से भिन्न करते हैं :

क) फूल actinomorphic, कोरोला valvate aestivation में .... Mimosoideae

ख) फूल zygomorphic, कोरोला imbricate aestivation में

  i) कोरोला ascending (ओराही) imbricate aestivation .... Caesalpinioideae

  ii) कोरोला descending (अवरोही) imbricate aestivation ....Papilionatae.

21.6.1 Mimosoideae (मिमोसोइडी)

Type genus : *Mimosa* (मिमोसा)

सामान्य जानकारी

तीनों subfamilies में यह सबसे छोटी subfamily है। इसके पौधे tropical और subtropical भागों विशेषकर Southern Hemisphere (दक्षिण गोलार्ध) में व्यापक स्तर पर वितरित हैं। अनेक पौधे

tropical rainforests (उष्ण वर्षावनों) और आस्ट्रेलिया के सूखे भागों में आम पाए जाते हैं। यूरोप में ये नहीं पाए जाते।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Trees या shrubs, कुछ स्पीशीज़ शाक होती हैं। पत्तियां साधारणतया bipinnately compound (द्विपिच्छकी संयुक्त) होती हैं; पुष्प compound inflorescence में, actinomorphic, साधारणतया pentamerous, stamens की संख्या दस से लेकर कई, प्राय: कोरोला से बाहर को विस्तृत (extended beyond), filaments (तंतु) अक्सर चमकीले रंग के।

आकारिकीय विविधता

पौधे अधिकतर trees या shrubs और विरले ही herbs होते हैं। कुछ woody climbers (काष्ठी बेलें) उदाहरण *Entada* (एंटैडा) होते हैं, जिनमें तना anamalous secondary growth (असंगत द्वितीयक वृद्धि) दिखाता है। कई पौधों में तने के pith (मज्जा) और medullary rays (मज्जा किरणों) में प्रचुर संख्या में tannin sacs (टैनिन थैलियां) और gum passages (गम राल पथ) विद्यमान रहते हैं। ये पदार्थ इन पादपों का आर्थिक महत्व प्रदान करते हैं।

Leaf : पत्तियां stipulate होती हैं; stipules कभी-कभी thorns में रूपांतरित हो जाती हैं [उदाहरण *Acacia* (ऐकेशिया) चित्र 21.12]। कांटे खोखले और अक्सर फूले रहते हैं। ये चींटियों को आश्रय प्रदान करते हैं। Extrafloral nectaries (पुष्पबाह्य मकरंद कोष) भी देखी जाती हैं। पत्तियां प्राय: bipinnately compound होती हैं। *Inga* (इंगा) में पत्तियां pinnate (पिच्छाकार) होती हैं। *Acacia auriculiformis* (ऐकेशिया औरीकुलिफॉर्मिस, आस्ट्रेलियाई ऐकेशिया, चित्र 21.13 देखें) में leaf rachis

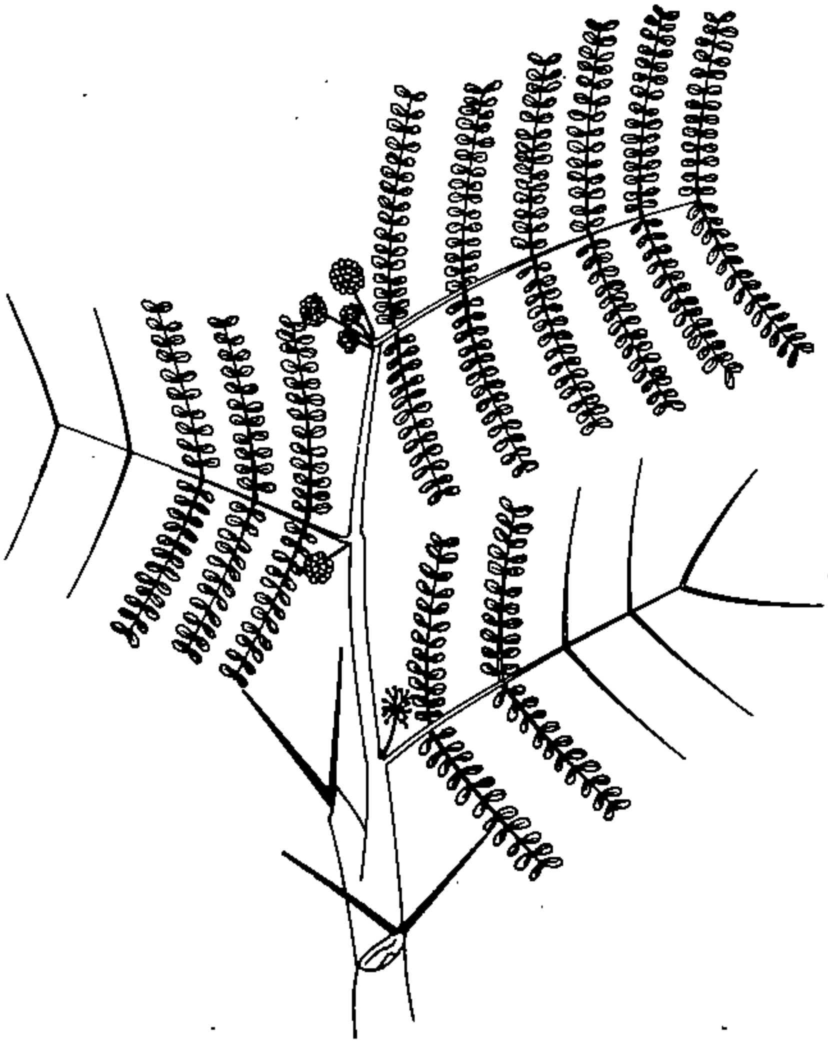

चित्र 21.12 : *Acacia nilotica* (अकैशिया निलोटिका) एक पुष्पी टहनी।

यानि पर्ण रैकिस एक विशिष्ट phyllode (पर्णाभं) में रूपांतरित हो जाती है और सिरे पर बहुत छोटे leaflets (पर्णक) विकसित हो जाते हैं। कुछ पौधों में छूने पर पत्तियों में nyctinastic movements (नैश गति, निशानुकुंची गति) भी दिखाई देती है, उदाहरण *Mimosa pudica* (*मिमोसा पुडिका* या गुलमेंहदी, चित्र 21.14 देखें)। यह movements पत्ती के आधार (base) पर विद्यमान pulvinus (पर्णवृंततल्प) द्वारा उत्पन्न होती हैं।

Inflorescence : प्रायः compound inflorescence देखी जाती है (चित्र 21.15); पुष्प अक्सर tight clusters (कसे पुंजों) में या globose, dense heads (गोलाकार, घने मुंडकों) में समूहित रहते हैं। कभी-कभी inflorescence spicate (स्पाइकी कणिशधर) या racemose (असीमाक्ष) होती हैं उदाहरण *Prosopis, Acacia* (*प्रोसोपिस, ऐकेशिया*)। *Dichrostachys* (*डाइक्रोस्टैकिस*) में एक spike में दो किस्म के फूल पाए जाते हैं। Spike के ऊपरी अर्धभाग में विद्यमान फूल bisexual और निचले भाग में विद्यमान फूल sterile (बंध्य) होते हैं, जिनमें सिर्फ दीर्घ चमकीले रंग के staminodes (बंध्य पुंकेसर) होते हैं और कोई gynoecium नहीं पाया जाता।

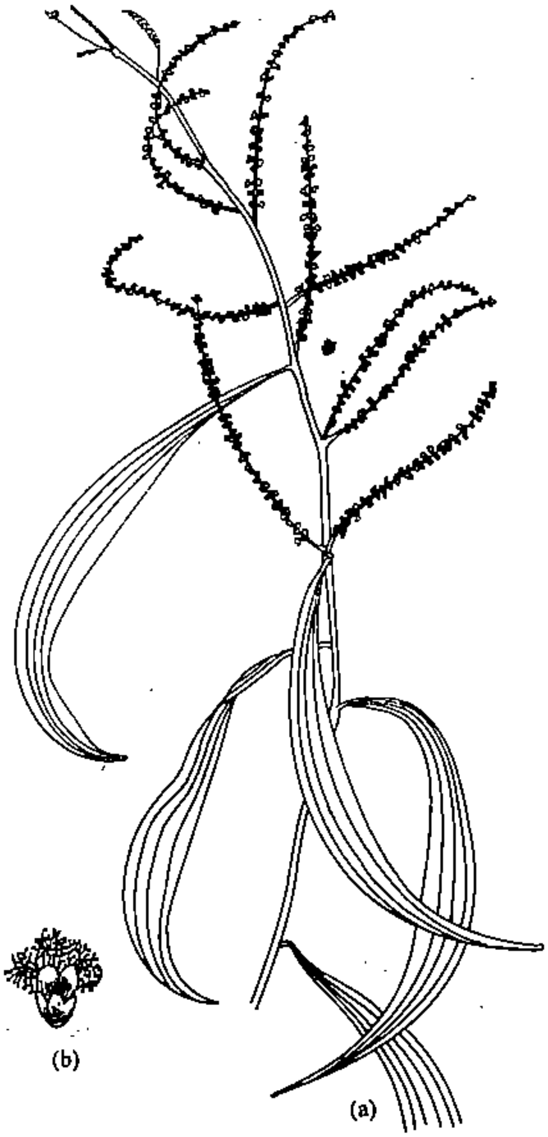

चित्र 21.13 : *Acacia auriculiformis* (*ऐकेशिया औरिकुलीफॉर्मिस*)। (a) Phyllodes (पर्णाभवृंतों) सहित एक पुष्पी टहनी। (b) एक पुष्प। (महिश्वरी, 1983 से)।

Flower : फूल प्रायः ebracteate, pedicellate सवृंत या अधिकतर subsessile (अर्धस्थावर) से sessile (स्थावर) होते हैं। ये actinomorphic, hypogynous और साधारणतः pentamerous होते हैं। पुष्प कभी-कभी trimerous, tetramerous या hexamerous भी होते हैं। *Mimosa pudica*

tetramerous होता है और *Acacia* में 3-, 4-merous फूल पाए जाते हैं। कैलिक्स प्रायः gamosepalous होता है जो पुष्प के base (आधार) पर एक छोटा कपनुमा संरचना बनाता है। Aestivation साधारणतया valvate होती है। कोरोला में free petals पाए जा सकते हैं या फिर petals, base पर संसक्त (cohere) होकर एक लघु नलिका की रचना करते हैं। Petals में valvate aestivation दिखाई देता है।

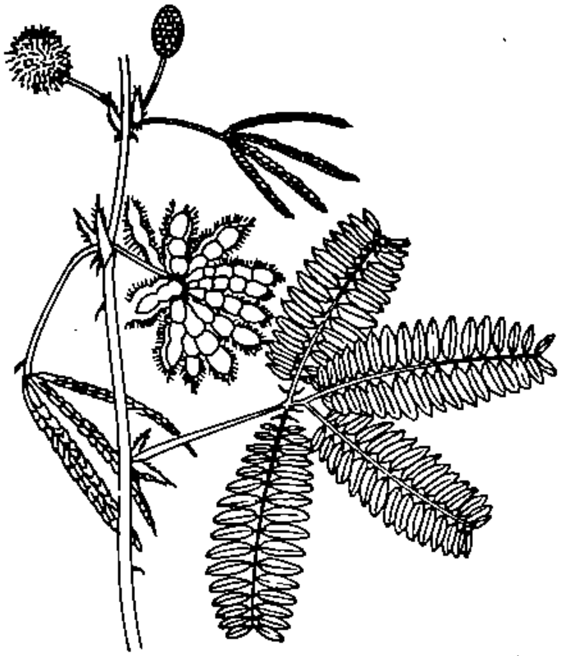

चित्र 21.14 : *Mimosa pudica* पुष्पी टहनी, जिसमें कुछ पत्तियां खुली हुई ता कुछ बंद हैं। साथ में floral heads (पुष्पी मुंड) भी विभिन्न विकासीय अवस्थाओं में दिखाई दे रहे हैं - bud stage, opened head तथा इसके अलावा dehiscence के विभिन्न चरणों में pods (फलियां) भी दिखाई दे रही हैं।

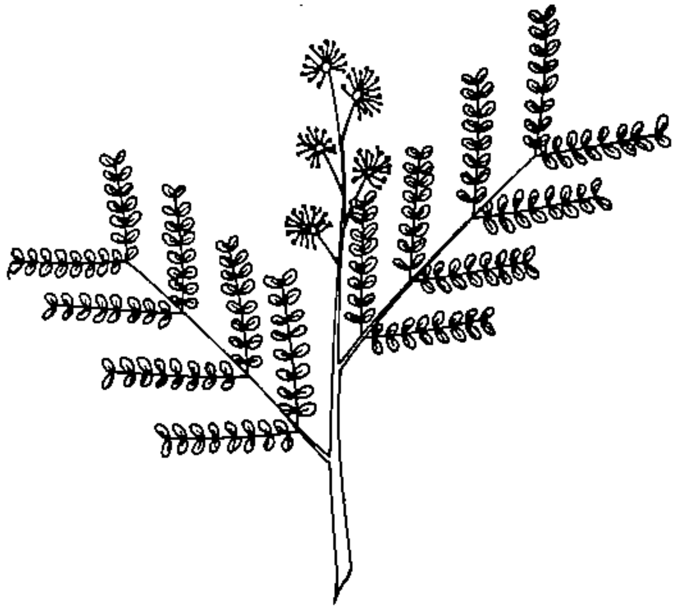

चित्र 21.15 : *Samanea saman* (सैमनिया सैमन) की पुष्पी टहनी।

Androecium : Stamens की संख्या और विन्यास अलग-अलग पाया जाता है। इनकी संख्या petals की संख्या के बराबर हो सकती है, जैसा कि *Mimosa pudica* में, या फिर stamens की संख्या petals से दोगुना हो सकती है, वे दो whorls में व्यवस्थित पाए जाते हैं और diplostemonous (द्विआवर्त पुंकेसरी) होते हैं। Stamens अधिसंख्य हो सकते हैं जैसे कि *Acacia* (ऐकेशिया), *Albizzia* (ऐल्बिज़िया) और *Pithecellobium* (पिथेसेलोबियम) में। ये free या united हो सकते हैं। Filaments

लंबे और पतले और अक्सर फूल के सबसे conspicuous (स्पष्ट) भाग के रूप में नज़र आते हैं। ये अक्सर कोरोला से इतर विस्तारित (extended beyond corolla) और प्रायः चमकदार रंग में होते हैं। Anthers लघु, dithecous होते हैं, तथा इनमें introrse dehiscence (अंतर्मुखी स्फुटनशीलता) देखी जाती है। Anther lobes, transverse septae (अनुप्रस्थ पटों) द्वारा विभाजित रहती हैं और इस प्रकार बने ऐसे प्रत्येक चैम्बर में pollen grains समूह में बंधे रहते हैं।

Gynoecium : यह monocarpellary, superior ovary और marginal placentation के साथ पाया जाता है। Style छोटा और stigma terminal होता है।

Fruit : फल एक legume या pod है, जोकि इस family का विशिष्ट लक्षण है। यह दोनों सीवनों (sutures) की ओर से खुलता या स्फुटन (dehisce) करता है। फल के आकार और आकारिकी में भारी विविधता देखी जाती है। Family Fabaceae का विशालतम फल इसी subfamily की जाति *Entada gigas* (*एंटैडा गीगास*) में पाया जाता है। इसमें फल एक मीटर से अधिक लंबी, और कई सेंटीमीटर चौड़ी काष्ठी (woody) संरचना है। यह अनेक एक-बीजी बिम्बाभ (discoid, डिस्कॉइड) जोड़ों से मिलकर बना होता है। बीज बहुत बड़े होते हैं। दूसरी ओर *Acacia* की कई स्पीशीज़ में फल एक lometum (लोमेन्टम) बन जाता है जो एक विशेष प्रकार की फली (pod) है जो बीजों के बीच संकुचित (constricted) रहती है और एक-बीजी खंडों (one-seeded segments) में विभाजित रहती है। इस subfamily के अन्य सदस्यों में legume का आकार अलग-अलग हो सकता है और या तो यह सीधा (straight) होता है या वक्रित (curved)। बीजों का आकार legume के आकार के अनुसार बदलता रहता है। इनमें endosperm अत्यल्प मात्रा में या बिल्कुल ही नहीं होता है। *Inga* (*इंगा*) में बीज आवरण एक चमकदार, कोमल wool-like mass (ऊनी पिंड) की रचना करता है, जबकि embryo एक आवरणहीन (naked), स्थूल, सेमनुमा संरचना होती है। फल के खुलने पर naked embryo ज़मीन पर गिर जाता है, तथा जल्द ही अंकुरण करता है। इस naked embryo का प्रकीर्णन (dispersal) पक्षी करते हैं जो बीज के चमकदार, कोमल ऊनी बीज आवरण के द्वारा इसकी ओर आकर्षित होते हैं। *Pithecellobium dulcis* (*पिथेसेलोबियम डुल्सिस*) में बीज एक मीठे, खाद्य, गूदेदार बीजचोल (pulpy aril) से घिरे रहते हैं।

21.6.2 Caesalpinioideae (सीजैलपिनोइडी)

Type genus : *Caesalpinia* (*सीजैलपिनिया*)

सामान्य जानकारी

इस subfamily के पौधों का वितरण ज्यादातर tropical और subtropical प्रदेशों में होता है। इसकी अनेक स्पीशीज़ ब्राज़ील और दक्षिणी यूरोप से लेकर भारत तक के प्रदेशों में पाई जाती हैं। कई पादप tropical rain forests में पाए जाते हैं। *Tamarindus* (*टैमेरिंडस*), *Bauhinia* (*बौहिनिया*), चित्र 21.16), *Cassia* (*कैसिया*), *Saraca* (*सैरैका*, चित्र 21.17), *Delonix* (*डिलोनिक्स*, चित्र 21.18) और अन्य जीनस हमारे देश में प्रसिद्ध हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

ये trees या shrub होते हैं, तथा herbs के रूप में विरले ही पाए जाते हैं। पत्तियां stipulate, ज्यादातर pinnately compound, प्रायः pulvinate (तल्पयुक्त) leaf bases वाली होती हैं तथा extrafloral nectaries विद्यमान रहती हैं; inflorescence racemose, पुष्प zygomorphic, pentamerous होते हैं; कैलिक्स का odd sepal anterior (असम बाह्यदल अग्र), और imbricate aestivation के साथ पाया जाता है। कोरोला में ascending imbricate aestivation (आरोही कोरछादी पुष्पदल विन्यास) होता है। Stamens 10 होते हैं, या कुछ staminodes (बंध्य पुंकेसरों) में लघुकृत हो जाते हैं। Stamens प्रायः free होते हैं।

आकारिकीय विविधता

पादप बहुधा trees या shrubs होते हैं। कुछ स्पीशीज़ annual herbs होती हैं, उदाहरण *Cassia tora* (*केसिया टोरा*)। कभी-कभी पादप woody climbers के रूप में भी पाए जाते हैं। इस तरह के पादपों में

विशेष sharp prickles या hooks या फिर tendrils [तीक्ष्ण वर्ध (प्रिकिल) या हुक या प्रतान] भी पाए जाते हैं जो इन्हें आरोहण (climbing) में मदद करते हैं। वृक्ष स्पीशीज़ में तना मोटा और woody होता है, मगर कभी-कभी यह चपटा (flattened) और वलनित (twisted) पाया जाता है।

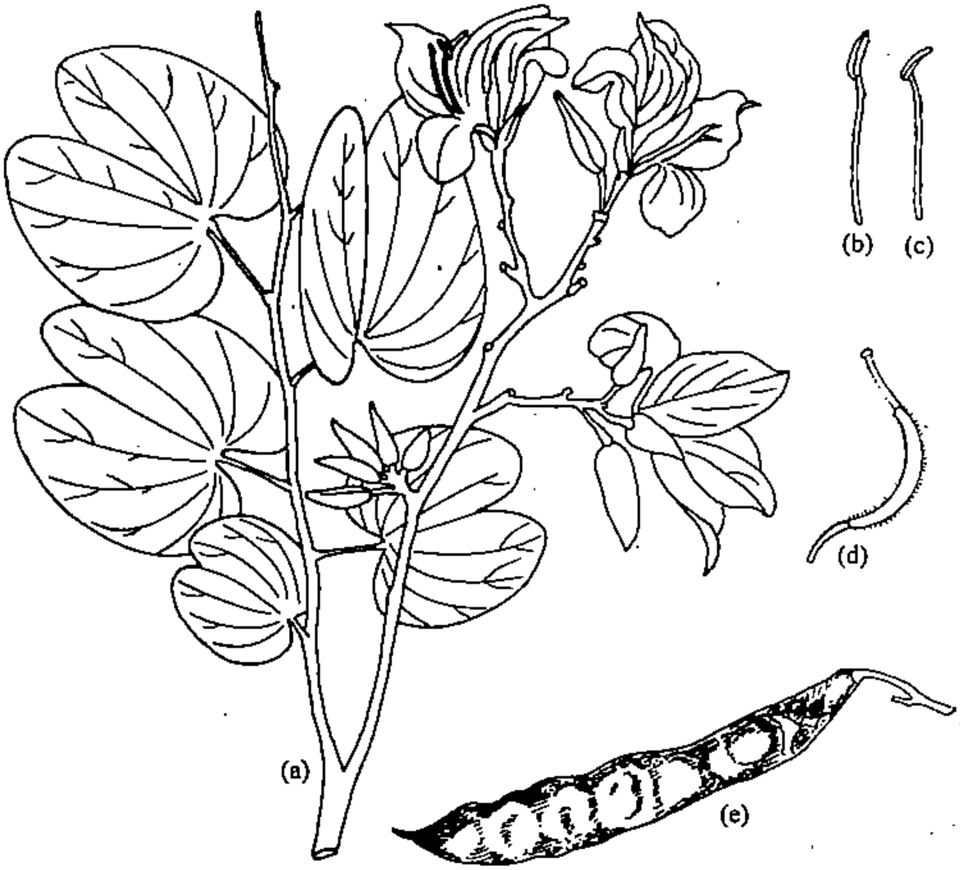

चित्र 21.16 : *Bauhinia variegata* (बौहिनिया वैरीगैटा)। (a) पुष्पी टहनी। (b) और (c) भिन्न दृश्यों में stamens. (d) Gynoecium .(e) Pod.

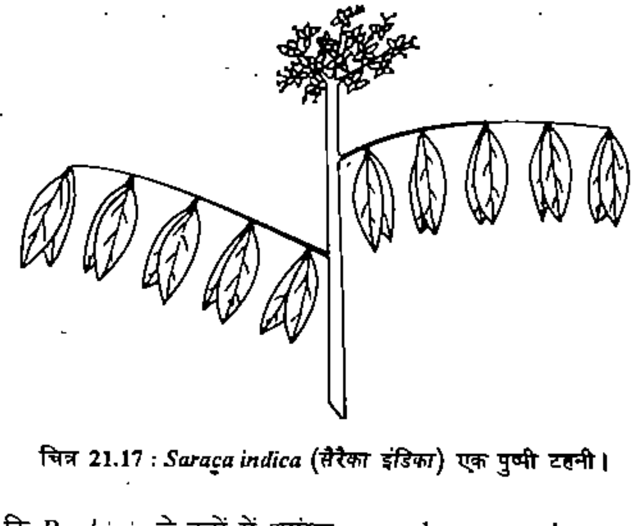

चित्र 21.17 : *Saraca indica* (सैरैका इंडिका) एक पुष्पी टहनी।

कुछ पौधों में जैसा कि *Bauhinia* के तनों में असंगत anomalous secondary growth के कारण lianas (कठलताएं) बन जाती हैं।

Leaf : पत्तियां stipulate compound पाई जाती हैं। *Bauhinia* में पत्ती सरल होती है, मगर यह apex से deeply lobed होने के कारण दो बराबर भागों से बनी प्रतीत होती है। इस प्रकार की खुली पत्ती ऊंट के पाद चिन्ह जैसी लगती है। *Parkinsonia* (पार्किनसोनिया) में, इसकी pinnately

compound leaf का रैकिस (rachis) चपटा और नुकीला सा हो जाता है। Leaflets बहुत छोटे होते हैं या वे जल्दी ही झड़ जाते हैं, या तो फिर वे विकसित ही नहीं होते। ऐसी स्थिति में पत्ती का रैकिस पर्णाभ वृंत (phyllode यानि फाइलोड) जैसा दिखाई देता है। पर्णाधार pulvinate, कई पादपों में leaf base यानि (तल्पयुक्त) होता है, यानि stem और पर्णाधार (leaf base) की संधि पर यह (leaf base) फूला सा रहता है। यह pulvinus, extrafloral nectaries से संबंधित भी पाया जाता है। मकरंद के कारण चींटियां तथा अन्य कीट बार-बार पादप पर आते हैं।

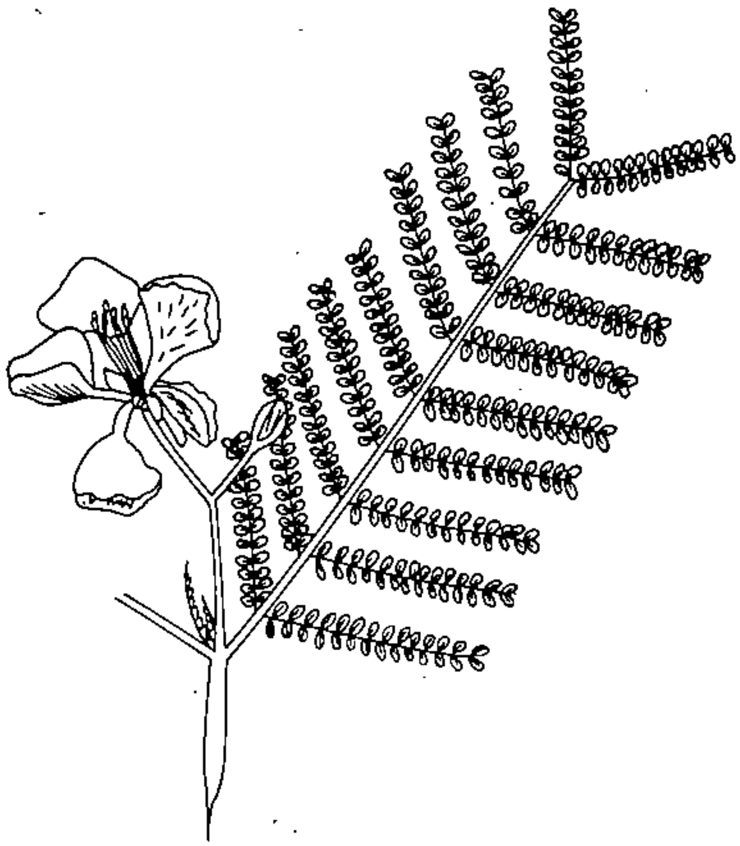

चित्र 21.18 : *Delonix regia (डिलोनिक्स रेजिया)* एक पुष्पी टहनी।

Inflorescence : Inflorescence प्राय: असीमाक्षी racemose होता है। यह एक सरल raceme, panicle या एक spike (कणिश, स्पाइक) हो सकता है। कभी-कभी यह cymose भी होता है। या फिर प्रत्येक leaf axil (पर्णकक्ष) में एक या दो पुष्पों में लघुकृत होता है।

Flower : पुष्प bracteate, bisexual, medianly zygomorphic (माध्य एकव्यास सममित), कभी-कभी actinomorphic प्रतीत होते हैं। पुष्प विशाल, दर्शी (showy), hypogynous और pentamerous होते हैं।

कैलिक्स प्राय: polypetalous पाया जाता है, मगर *Tamarindus* में दो ऊपरी sepals united होते हैं। *Bauhinia* में पांचों sepals united होकर एक spathaceous tube (स्पेथी नलिका) की रचना करते हैं, जबकि *सैरैका (Saraca)* में कैलिक्स नारंगी या सिंदूरी रंग का और petaloid (दलाभ) हो जाता है। कैलिक्स में imbricate aestivation दिखाई देता है, जिसमें odd sepal anterior (असम बाह्यदल अग्रस्थ) होता है।

इस विशिष्ट pentamerous कोरोला में काफी भिन्नता दिखाई देती है। सभी पांच petals समान आकार के और समान रूप से फैले हो सकते हैं, जैसा कि *Cassia* में पाया जाता है। *Delonix, Caesalpinia* और अन्य जीनसों में, कोरोला का स्वरूप papilionaceous (मटरकुलीय) हो सकता है

जिसमें एक petal बड़ा होता और शेष चार petals भिन्न आकार के दो युग्म बनाते हैं। यद्यपि इस प्रकार का कोरोला typical papilionaceous कोरोला, जैसा कि Subfamily Papilionatae, के समान प्रतीत होता है, परन्तु यह अपने ascending imbricate aestivation के कारण, यह उससे बिल्कुल भिन्न होता है। *Amherstia nobilis* (*ऐमहर्स्टिया नोबिलिस*) में आगे और भिन्नता देखने को मिलती है, जिसमें तीन petals तो सुविकसित मगर शेष दो anterior petals suppressed (निरुद्ध) पाए जाते हैं। इसी तरह *Krameria* (*क्रैमेरिया*) में दो anterior petals glandular scales (ग्रंथिल शल्कों) के रूप में विद्यमान रहते हैं, तो वहीं *Tamarindus* में ये दोनों petals पूर्णत: लुप्त पाए जाते हैं। सर्वाधिक लघुकरण *Saraca indica* (*सैरैका इंडिका*) में देखा जाता है, जिसमें petaloid sepals (दलाभ बाह्यदल) काफी बड़े होते हैं, तथा petals पूर्णत: लुप्त होते हैं। कोरोला में ascending imbricate aestivation होता है यानि इसमें सबसे ऊपरी petal, सबसे भीतरी (inner-most) या दो lateral (पार्श्व) petals के भीतर होता है। यह Subfamily Papilionatae में पाए जाने वाले desending imbricate aestivation के एकदम उलट है, जिसमें सबसे ऊपरी petal सबसे बाहरी होता है।

Androecium : इसमें प्राय: 10 stamens पाए जाते हैं जो पांच-पांच stamens के दो alternate whorls में पाए जाते हैं। Stamens की संख्या 10 से अधिक विरले ही पाई जाती है। कई पक्व पुष्पों में यह सभी 10 stamens, single whorl में भी पाए जाते हैं। *Caesalpinia* और *Parkinsonia* में सभी 10 stamens mature (पक्वन) होते हैं और वे fertile (निषेच्य) होते हैं। *Cassia* में पांच से सात और *Bauhinia* में तीन से पांच stamens ही fertile होते हैं तथा शेष staminodes में लघुकृत हो जाते हैं। Fertile stamens अलग-अलग आकार के होते हैं, परंतु अक्सर बाहरी whorl के stamens भीतरी whorl के stamens से बड़े पाए जाते हैं। *Tamarind* में सिर्फ तीन fertile stamens रहते हैं, शेष सात stamens का ह्रास staminodes के बजाए bristles (शूकों) में हो जाता है। Stamens प्राय: free, और रंगीन filaments (पुतंतु) वाले होते हैं। कभी-कभी filaments united भी होते हैं। उदाहरण के लिए *Tamarindus* में तीन fertile stamens के filaments मिलकर एक open sheath (विवृत आवरणनुमा) जैसी संरचना का निर्माण करते हैं। *Amherstia* में androecium diadelphous हो जाते हैं, जिसमें नौ stamens अपने filaments के द्वारा परस्पर मिलकर एक open tube (विवृत नलिका) की रचना करते हैं, शेष 10वां stamen free रहता है। Subfamily Papilionatae का यह एक आम लक्षण है। Anthers dithecous, basifixed (अध:बद्ध) या dorsifixed (पृष्ठलग्न) या कभी-कभी versatile (मुक्तदोली) होते हैं। *Cassia* को छोड़कर इनमें प्राय: introrse dehiscence (अंतर्मुखी स्फुटन) होता है। *Cassia* में dehiscence poral (रंध्री) होता है।

Gynoecium : यह monocarpellary होता है, जिसमें ovary superior और marginal placentation (कोरी बीजांडन्यास) पाया जाता है। यह समूची family का विशिष्ट लक्षण है।

इस subfamily के कई सदस्यों में ovary एक लघु या दीर्घ stalk यानि वृंत पर विकसित होता है। Ovary straight (ऋजु, सीधी) या falcate (हँसियाकार) होती है, जिसमें एक छोटी या लंबी terminal style (अंतस्थ वर्तिका) और एक oblique or capitate stigma (तिर्यक या समुंड वर्तिकाग्र) पाया जाता है।

Fruit : फल एक legume या pod है। बीजों की संख्या अलग-अलग होती है। बीजों की कुछ रोचक विशेषताएं देखने को मिलती हैं। इनमें endosperm embryo के चारों ओर एक पतली परत के रूप में, उदाहरण *Bauhinia*, या प्रचुर और cartilaginous (उपास्थिसम, उदाहरण *Cassia*) के रूप में विद्यमान हो सकता है। Cotyledons (बीजपत्र) साधारणतया fleshy यानि मांसल या चपटे या leaf-like (पर्णनुमा) होते हैं। बीजों में कभी-कभी testa (बीजचोल) बड़ा कठोर (उदाहरण *Tamarindus*) पाया जाता है और ये बीज एक pulpy mass (गूदेदार संहति) से घिरे रहते हैं।

21.6.3 Papilionatae (पैपिलियोनेटी)

Type genus : *Faba* (फैबा)

सामान्य जानकारी

यह subfamily उपकुल लोटोइडी Lotoideae भी कहलाती है जिसका प्ररूप जीनस *Lotus* (लोटस) है। मगर इस जीनस *Lotus* नाम का प्रयोग lotus (कमल) नामक जलीय पादप के संदर्भ में नहीं किया जाता है, जिसे कि जीनस *Nelumbo* (नेलुंबो) में वर्गीकृत किया गया है। जब हम इस subfamily के लिए Faboideae (फैबोइडी) नाम का प्रयोग करते हैं तो इसका प्ररूप जीनस *Faba* (फैबा) है। यह subfamily, Leguminosae family की तीनों subfamilies में सबसे बड़ी है। इस subfamily के सदस्यों का वितरण सार्वभौमिक है मगर ये उत्तरी और दक्षिणी गोलार्ध के गर्म भू-भागों में अधिक पाए जाते हैं। इस subfamily के कुछ herbaceous सदस्य उच्च तुंगता (ऊंचाई) पर स्थित अल्पाइन वनों (alpine vegetation) की विशेषता हैं। शेष अन्य सदस्य उत्तरी यूरोप और भूमध्यसागरीय क्षेत्रों का अभिलक्षण हैं। ये पादप स्टेप-निर्माण (steppe-formation) और अन्य घासस्थलों (grasslands) के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। अनेक पैपिलियोनेटीय या मटरकुलीय (papilionaceous) पादप पूर्वी यूरोप, पश्चिमी एशिया, दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया की विशेषता हैं।

इस subfamily के अनेक पौधे आर्थिक रूप से बड़े महत्वपूर्ण हैं और इनकी खेती काफी प्रचलित है। हम मटर, सेम, दाल और इस उपकुल के अन्य सदस्यों के बारे में जानते ही हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herbs, herbaceous climbers, shrubs or tree जिनके जड़ों में characteristic nodules पाई जाती हैं। इन nodules में नाइट्रोजन fixation करने वाले bacteria होते हैं। पत्तियां simple या compound होती हैं; stipules बड़े होते हैं। Herbaceous climbers में tendrils पाए जाते हैं। पुष्पों की संख्या चंद या वे racemose inflorescence में पाए जाते हैं। इस subfamily के फूल typically zygomorphic होते हैं जिसमें characteristic papilionaceous corolla पाया जाता है। Stamens प्राय: diadelphous होते हैं जिनमें staminal tube (पुंकेसरी नली) gynoecium के परिबद्ध किए रहती है। ये सभी संरचनाएं स्वयं एक keel (नौतल) या नाव-नुमा संरचना में परिबद्ध रहती हैं, जो दो petals द्वारा बना होता है।

आकारिकीय विविधता

इस subfamily के बहुसंख्य सदस्य herbs या herbaceous climbers हैं। इनमें कुछ shrubs, woody climbers या trees के रूप में भी पाए जाते हैं। कई स्पीशीज़ की जड़ों में nodules विद्यमान रहती हैं जिनमें nitrogen-fixing bacteria पाए जाते है। ये bacterial root nodules पादप को nitrogen, compounds accumulate करने में सहायता करती हैं जिससे ये पादप crop rotation के लिए महत्वपूर्ण हो जाते हैं। इन पादपों को अगर खेतों में डाला जाए (ploughed) तो ये green manure (हरी खाद) का काम भी कर सकते हैं।

Leaf : पत्तियां alternate, simple सरल (चित्र 21.19) या compound (चित्र 21.20) होती हैं। Compound leaves trifoliate यानि त्रिपर्णक (चित्र 21.21और 21.22), pinnately compound या palmately compound हो सकती हैं। सभी leaflets (पर्णक) विद्यमान हो सकते हैं या उनमें से कुछ या फिर सभी leaflets tendrils में रूपांतरित हो सकते हैं जैसे *Pisum* (पाइसम, चत्र 21.23), *Lathyrus* (लैथिरस), *Vicia* (विसिया)। पत्तियां stipulate और stipules प्राय: free पाए जाते हैं।

Stipules कभी-कभी foliaceous (पर्णाकार) बन जाते हैं और संश्लेषण के अंगों के रूप में काम करते हैं। ऐसा विशेषकर तब होता है जब leaflets tendrils में रूपांतरित हो जाती हैं। विरल स्थिति में ही stipules अति लघुकृत (*Cytisus*, *साइटिसस*) या पूर्णत: से अनुपस्थित पाए जाते हैं जैसा कि *Ulex* (*यूलेक्स*) में। Pinnately compound leaves वाले कई पादपों में leaflets के base पर stipels यानि अनुपर्णिकाएं (लघुरूपी stipules) विद्यमान हो सकती हैं।

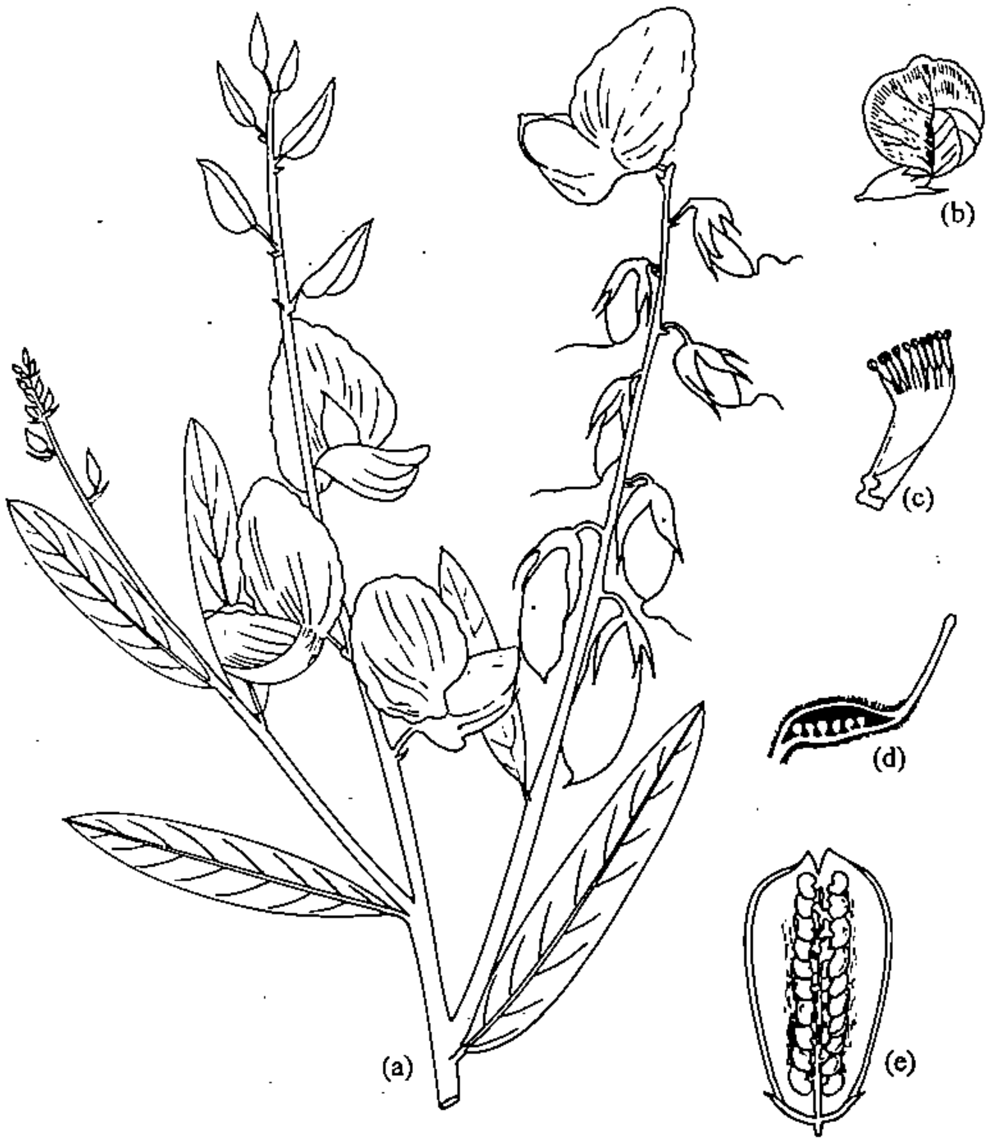

चित्र 21.19 : *Crotalaria juncea* (*क्रोटैलेरिया जन्सिया*)। a) एक पुष्पी और फलन शाखा। b) एक पुष्प। c) विस्तारित androecium. d) Gynoecium, longitudinal section में। e) Longitudinal section में एक pod.

कई पादपों की पत्तियों में विशिष्ट light-induced movement (प्रकाश-प्रेरित चलन) देखने में आता है। *Trifolium* (*ट्राइफोलियम*), *Phaseolus* (*फैसियोलस*), और *Robinia* (*रोबिनिया*) में leaflets रात के समय vertical हो जाती हैं जो उनकी शयन स्थिति का संकेत होता है। *Desmodium* (*डेस्मोडियम*) में यह leaf movement light- or temperature- induced (प्रकाश- या तापमान- प्रेरित) हो सकता है। जब तापमान पर्याप्त रूप से उच्च हो तो lateral leaflets में spontaneous upward (उपरिमुखी) और downward (अधोमुखी) movement देखने में आता है। यह leaflet movements, pulvinous या petiole के swollen base द्वारा नियमित होता है। Extrafloral nectaries विद्यमान हो सकती हैं।

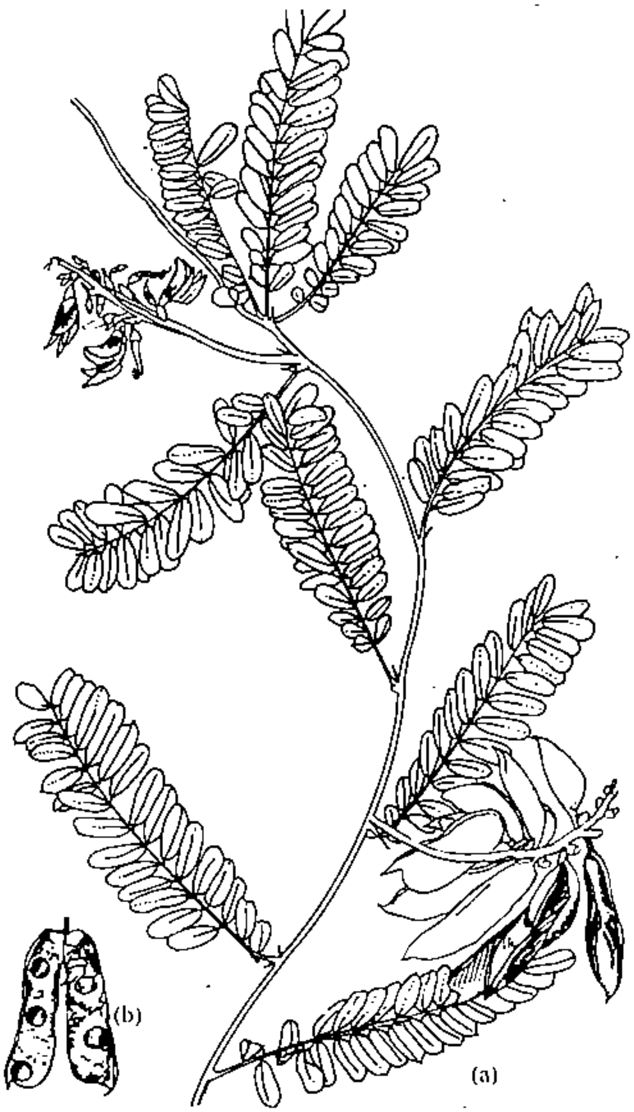

चित्र 21.20 : *Abrus precatorius* (एब्रस प्रिकैटोरियस) । a) पुष्पी और फलन टहनी । b) एक dehisced pod (माहेश्वरी, 1983 से) ।

Inflorescence : यह एक solitary flower, या inflorescence कुछ पुष्पों का बना हो सकता है जो leaf axils (कक्षों) पर उगते हैं उदाहरण *Lathyrus* (लैथिरस), *Pisum* (पाइसम) । Inflorescence ज्यादातर racemose होता है । यह एक axillary (अक्षीय) या एक terminal raceme (अंतस्थ असीमाक्ष) या panicle (पुष्पगुच्छ) होता है । Inflorescence कभी-कभी एक dense axillary head (सघन अक्षीय मुंड) के रूप में पाया जाता है ।

Flower : पुष्प bract और प्राय: bracteole सहित होते हैं । पुष्प पूर्ण, typically zygomorphic, bisexual, pentamerous और साधारणतया hypogynous [या कभी-कभी थोड़ा सा perigynous (पारजायांगी) भी] होते हैं । कैलिक्स में पांच sepals होते हैं जिनमें पहला विकसित sepal (सबसे बाहरी sepal) anterior (अग्रस्थ) होता है । Sepals प्राय: unite होकर एक नली बनाते हैं । इनमें ascending imbricate aestivation देखने में आता है । कोरोला में पांच petals होते हैं जो आकार में unequal size के होते हैं और एक typical papilionaceous कोरोला की रचना करते हैं । यह इस subfamily का विशेष लक्षण है । इसमें एक बहुत बड़ा petal होता है, जिसे 'standard' यानि "स्टैंडर्ड" या फिर 'vexillum' (पिच्छ फलक, वेक्सीलम) कहते हैं और यह सबसे बाहर और पश्च (पीछे) स्थिति में पाया जाता है । इसके बाद दो lateral petals (पार्श्व दल) पाए जाते हैं जो standard से छोटे होते हैं और पंखनुमा संरचना बनाते हैं । इन्हें 'wing petals' (पंख दल) या 'alae' (ऐली) कहते हैं । अंत में कोरोला के anterior side में दो छोटे petals विद्यमान होते हैं । ये लघु 'keel' ("नौतलसम") petals प्राय: unite होकर एक नावनुमा संरचना बनाते हैं । ये keel petals सबसे भीतरी होते हैं और कोरोला का aestivation descending imbricate [(इसे vexillary (पिच्छ फलकी) भी कहते हैं] होता है । दो

united petals, androecium और gynoecium को परिबद्ध किए रहते हैं। यह typical Papilionaceous पुष्प, insect pollination (कीट परागण) के लिए अनुकूलित होता है।

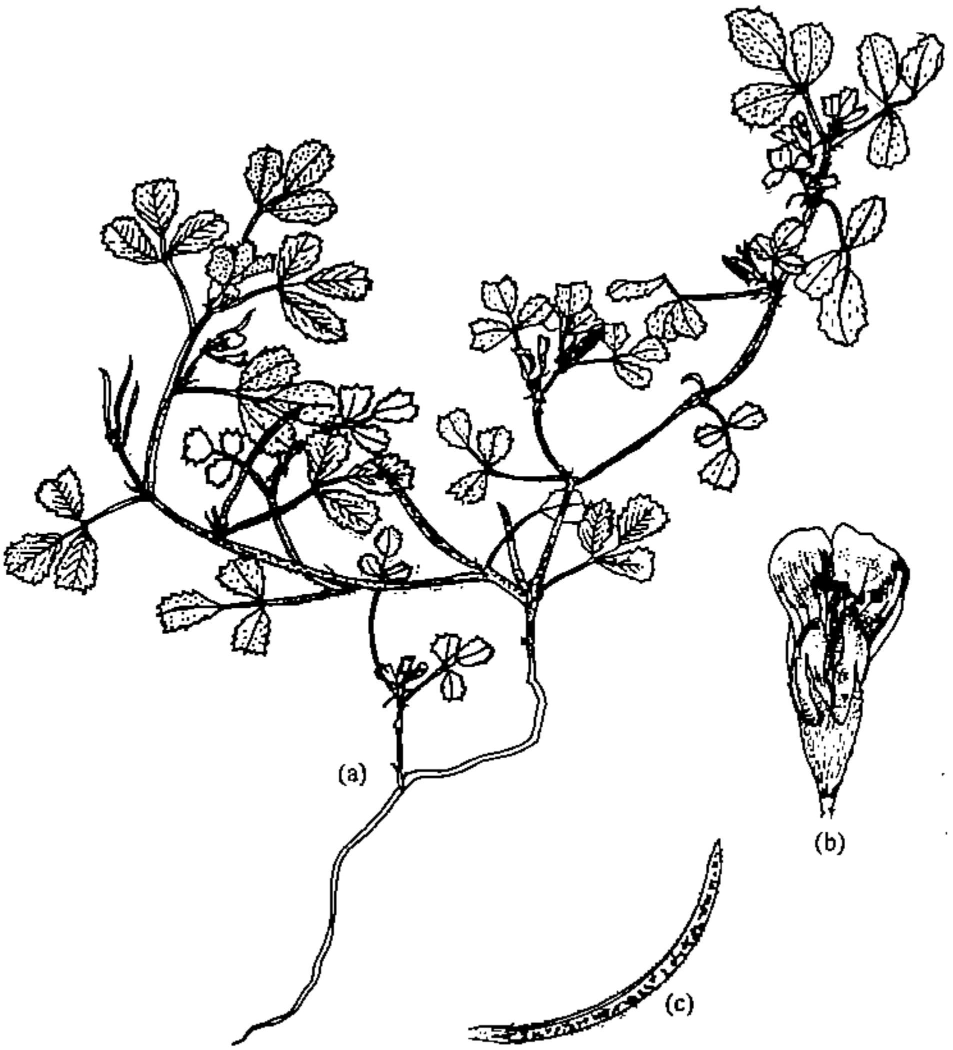

चित्र 21.21 : *Trigonella incisa* (ट्रिगोनेला इनसिसा)। a) पुष्प और pod युक्त एक पादप। b) एक पुष्प। c) एक फल। (माहेश्वरी से, 1983)।

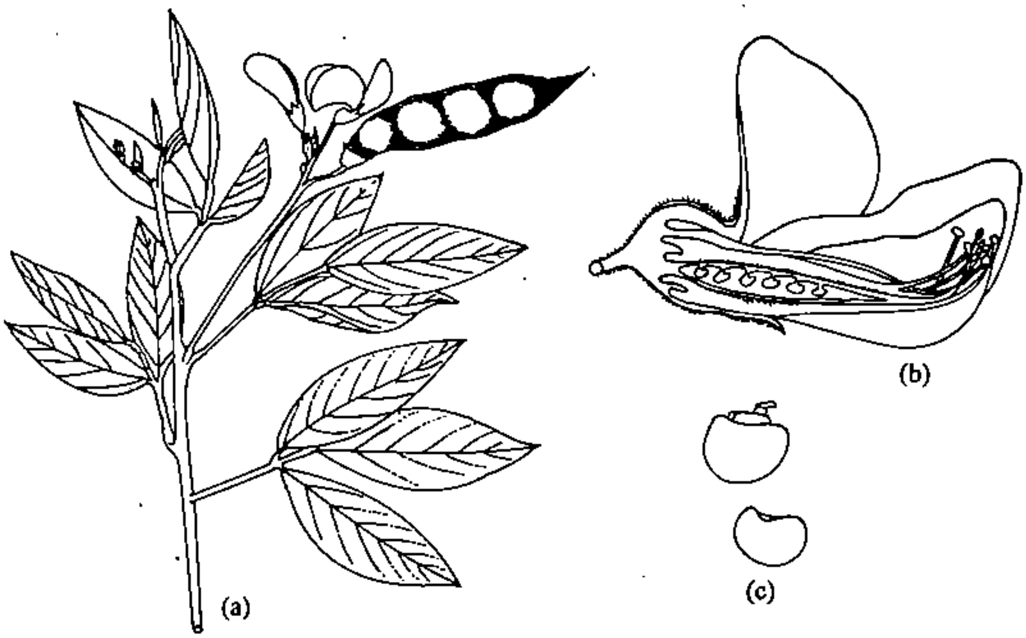

चित्र 21.22 : *Cajanus cajan* (कैजैनस कैजन)। a) एक पुष्प सहित टहनी। b) Longitudinal section में एक पुष्प। c) दो बीज। (चित्र पर्सग्लव, 1983 से)।

Androecium : Stamens की संख्या प्रायः 10 होती है। पक्व पुष्प में stamens एक single whorl के रूप में विद्यमान रहते हैं हालांकि उत्पत्ति में ये diplostemonous (द्वि-आर्वत पुंकेसरी) होते हैं। अधिकांश पादपों में androecium diadelphous होते हैं, जिसमें (9)+1 विन्यास देखने को मिलता है। नौ पुंकेसर एक लंबी नली के रूप में united रहते हैं और 10 वां (पश्च) stamen, free होता है। यह 10 वां stamen कभी-कभी विकसित नहीं हो पाता जैसे कि *Dalbergia* (*डैल्बर्जिया*) में। Stamens monadelphous भी हो सकते हैं जैसे *Crotalaria* (*क्रोटैलेरिया*) में। Staminal tube, gynoecium को घेरे रहती है और इन दोनों संरचनाओं की रक्षा carina (कैरीना) करती है जिसकी रचना दो लघु petals करते हैं।

चित्र 21.23 : *Pisum sativum* (*पाइसम सैटाइवम*)। a) पुष्प और फल युक्त एक टहनी। b) Longitudinal section में एक पुष्प। c) एक फली।

Gynoecium : यह monocarpellary होता है जिसमें एक superior ovary और marginal placentation (कोरीय बीजांडन्यास) पाया जाता है। Ovary कभी-कभी partly inferior (अंशत: अधोवर्ती) होती है। Ovules की संख्या एक (जैसे *Butea monosperma* यानि *ब्यूटिया मोनोस्पर्मा* – फ्लेम ऑफ द फॉरेस्ट) से कई होती है। Style एक, और stigma terminal पाया जाता है।

Fruit : यह एक legume या pod है जो प्रायः dorsal (अपाक्ष) और ventral (अभ्यक्ष) सीवनों दोनों के द्वारा स्फुटन करता है। फल कभी-कभी indehiscent (अस्फुटनशील) भी होता है जैसे *Dalbergia* (*डैल्बर्जिया*), *Pongamia* (*पोंगेमिया*), *Arachis hypogaea* (*ऐरैकिस हाइपोजिया* यानि मूंगफली) में फल मिट्टी के नीचे उगता और विकसित होता है। इसमें fertilisation (निषेचन) के बाद floral stalk

(पुष्प वृंत) में वृद्धि होती है और वह दीर्घन करता है जिससे विकसित होता फल मिट्टी के नीचे चला जाता है। बीजों में endosperm या तो अत्यल्प मात्रा में या बिल्कुल लुप्त होता है। Embryo में चपटे leaf-like या fleshy cotyledons (मांसल बीजपत्र) पाए जाते हैं। ये बीज स्टार्च, प्रोटीन और वसा से भरपूर रहते हैं जिससे कारण ये पादप आर्थिक दृष्टि से बड़े उपयोगी हैं।

कुल के निदानात्मक लक्षण :

1. Herbs, climbers, shrubs या trees।
2. पत्तियां stipulate प्राय: united, base pulvinate, leaflets characteristic movement दिखाते हैं।
3. Inflorescence प्राय: racemose होती है।
4. पुष्प bracteate, प्राय: pentamerous, actinomorphic (Subfamily Mimosoideae) या zygomorphic (Subfamily Caesalpiniodeae और Papilionatae) होते हैं।
5. कोरोला का aestivation valvate (Subfamily Mimosoideae) या ascending imbricate (Subfamily Caesalpinioideae) या descending imbricate (Subfamily Papilionatae), petals equal या unequal आकार के।
6. Subfamily Mimosoideae में stamens की संख्या चंद से लेकर कई, जो चटक रंगी filaments युक्त होते हैं, या Subfamily Caesalpinioideae में कुछ stamens का ह्रास staminodes में हो जाता है, या फिर Subfamily Papilionatae में stamens प्राय: diadelphous होते हैं।
7. Gynoecium monocarpellary, superior ovary और marginal placentation के साथ पाया जाता है।
8. फल एक legume या pod।
9. बीजों में endosperm अत्यल्प या पूर्णत: लुप्त होता है, और embryo चपटे, leaf-like या fleshy cotyledons युक्त होता है।

वर्गीकृत स्थिति

Family Leguminosae को यह नाम इसके विशेषता सूचक फल लेग्यूम से मिला है। इसे Fabaceae भी कहते हैं, जो प्ररूप जीनस *Faba* के नाम पर आधारित है। Paplionaceae नाम जो किसी जीनस के नाम पर आधारित न होकर paplionaceous कोरोला प्रकार पर आधारित है, उसे भी इस family के लिए प्रयोग किया जाता है और International Code of Botanical Nomenclature (अंतरराष्ट्रीय वानस्पतिक नाम पद्धति संहिता) के नियमों के अंतर्गत यह नाम प्रयोग करने की अनुमति है।

Fabaceae family को बेंथम और हुकर ने Polypetalae, Series III Calyciflorae and Order 11-Rosales (पॉलिपिटैली, सिरीज III कैलिसिफ्लोरी और गण 11- रोजेलीज) में रखा है। इस order में Rosaceae (रोजेसी) और Saxifragraceae (सैक्सीफ्रैगेसी) समेत आठ अन्य families हैं। बेंथम और हुकर ने इस विशाल family को तीन subfamilies में विभाजित किया है। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में family Fabaceae को Archichlamydeae and Order 21-Rosales (आर्कीक्लैमाइडी और गण 21- रोजेलीज) में रखा है। इस order में बेंथम और हुकर द्वारा Order Rosales (गण रोजेलीज) में रखी गई सात families समेत कुल 18 families हैं। इस वर्गीकरण में भी family Fabaceae को तीन subfamilies में बांटा गया है। Fabaceae, Rosaceae, Saxifragaceae के बीच संबंध को इसमें स्वीकार किया गया है। तख़्ताज़न ने family Fabaceae को Subclass H Rosidae, Superorder Fabanae and Order 107-Fabales (उपवर्ग H रोजिडी, अधिगण फैबेनी और गण 107- फैबेलीज) में रखा है। इस वर्गीकरण में भी Fabaceae को तीन Subfamilies में बांटा

गया है। वर्गीकरण की इस पद्धति में Family Fabaceae को अन्य सभी families से पृथक् रखा गया है जिनके साथ बेंथम और हुकर के साथ-साथ एंग्लर और प्रांट्ल ने इसे Order Rosales (गण रोजेलीज) में रखा था। तख़्ताज़न के वर्गीकरण में Rosaceae (रोजेसी) को Order 101-Rosales, and Saxifragaceae in Order 94-Saxifragales (गण 101-रोजेलीज और सैक्सीफ्रैगेसी को गण 94-सैक्सीफ्रैगेलीज) में वर्गीकृत किया गया है। ये दोनों order, Order 107-Fabales (गण 107-फैबेलीज) से अलग रखे गए हैं और इन्हें Superorder Rosanae and Saxifraganae (अधिगण रोजेनी और सैक्सीफ्रैगेनी) में वर्गीकृत किया गया है।

यहां एक रोचक बात यह है कि वर्गीकरण की अन्य पद्धतियों (हचिंसन और क्रोंक्विस्ट के वर्गीकरणों) में इस समूह के पादपों को एक single order - Leguminales or Fabales (एकल गण, लेग्यूमिनेलीज या फैबेलीज) में रखने का सुझाव मिलता है, जिनमें तीन families हैं Mimosaceae, Caesalpiniaceae और Fabaceae या Papilionaceae।

आर्थिक महत्त्व

Fabaceae पुष्पी पादपों में एक सबसे महत्वपूर्ण family है। इस family के आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पादपों को भोजन, चारा, औषधि, रंजकों और टैनिनों के रूप में प्रयोग किया जाता है। कई पादपों को भूमि-संरक्षण फसलों और मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने के लिए nitrogen fixers के रूप में उगाया जाता है। इसके अलावा कुछ पादपों से इमारती लकड़ी भी प्राप्त होती है। इस family में ऐसे पादप भी हैं जिन्हें सड़कों के किनारे या पार्कों में सजावटी और छायादार वृक्षों के रूप में उगाया जाता है। सुविधा के लिए प्रत्येक subfamily के आर्थिक महत्ता वाले पादपों का वर्णन अलग-अलग किया गया है।

21.6.1 Subfamily Mimosoideae

इस subfamily में *Acacia* जीनस बड़ा महत्वपूर्ण है। *Acacia mearnsii* (*ऐकिशिया मियेरैन्साई*) और अन्य स्पीशीज़ से वाटल छाल मिलती है। यह सबसे महत्वपूर्ण चर्मशोधन सामग्री है जिससे जानवरों के चर्म और खालों को नाना प्रकार के चमड़े में रूपांतरित किया जाता है।

A. nilotica (*ऐ. निलोटिका*) या बबूल से बबूल-गम मिलता है जो टैनिन से भरपूर होता है। *A. senegal* (*ऐ. सेनेगल*) या gum arabic (गम-अरबी) का प्रयोग वस्त्र और पॉलिश उद्योगों में होता है। इसका कनफेक्शनरी और फार्मेसी (औषधि-निर्माण) में प्रयोग होता है। *A. catechu* (*ऐ.कटेचू*) या कत्था masticatory material (चर्वण सामग्री) के रूप में पान के साथ चबाया जाता है। *A. farnesiana* (*ऐ.फार्नेसियाना*) जिसे cassie (कैसी) भी कहते हैं, इसके फूल को सुगंध के रूप में प्रयोग किया जाता है। *Inga dulcis* (*इंगा डुल्सिस*) के फल खाए जाते हैं। यह और अन्य स्पीशीज़ कॉफी के बागानों में छायादार वृक्षों के रूप में उगाए जाते हैं। *Samanea saman* (*सैमैनिया सैमन*) या raintree (रेनट्री) भी एक छायादार वृक्ष के रूप में उगाया जाता है। *Albizzia* (*ऐल्बिजिया*) स्पीशीज़ को सड़कों के किनारे और पार्कों में लगाया जाता है। अनेक पादप ईंधन की लकड़ी के रूप में काम लाए जाते हैं जैसे *Prosopis* (*प्रोसोपिस*), *Leucaena glauca* (*ल्यूसीना ग्लौका*), *Pithecellobium dulce* (*पिथेसेलोबियम डुल्से*) और अन्य स्पीशीज़ चारे के काम आती हैं। *Calliandra* (*कैलिएंड्रा*) की स्पीशीज़ को उनके सुंदर inflorescences की वजह से ornamentals के रूप में उगाया जाता है।

21.6.2 Subfamily Caesalpinioideae

Tamarindus indica (*टैमैरिंडस इंडिका*) या इमली के फल भोज्य होते हैं और करी तथा चटनियां बनाने में काम आते हैं।

Cassia (*कैसिया*) जीनस की कई स्पीशीज़ औषधि की दृष्टि से बड़ा महत्व रखती हैं। *C.angustifolia* (*कै. ऐंगस्टिफोलिया*) या Indian senna (इंडियन सेना), और *C.senna* (*कै.सेना*) या Alexandrian senna (ऐलेक्जैन्ड्रियन सेना) आम तौर से रेचक औषधियों के रूप में प्रयोग होती हैं।

Cassia auriculata (*कैसिया औरीकुलेटा*) का प्रयोग एक tanning material यानि चर्मशोधन सामग्री के रूप में होता है, जबकि *C.fistula* (*कै.फिस्ट्यूला*) और *C.siamea* (*कै.सियामी*) को सजावटी पादपों के रूप में उगाया जाता है।

Haematoxylon campechianum (*हीमैटोजायलॉन कैम्पेचिएनम*) या logwood (लॉगवुड) एक बैंजनी रंजक (डाई) का स्रोत है जिसे haematoxylin (हीमैटोजायलीन) कहते हैं। यह रंजक iron salts (लौह लवणों) से अभिक्रिया करके एक स्थाई काला रंग बनाता है। इसे कपास, ऊनी वस्त्र, चमड़ा, फर, रेशम इत्यादि डाई करने में प्रयोग किया जाता है। Haematoxylin एक महत्वपूर्ण histological reagent भी है। *Caesalpinia sappan* (*सीजैलपिनिया सैप्पन*) या sappan wood (सैप्पन वुड) की heartwood (अंत:काष्ठ) से एक लाल रंजक मिलता है। यह रंजक brasil (ब्रासिल) कहलाता था। एक अन्य स्पीशीज़ है *Caesalpinia echinata* (*सीजैलपिनिया एकिनैटा*) या Brazil wood (ब्राजील वुड) जिससे ऐसा ही रंग मिलता है, इसी से ब्राजील देश का नाम रखा गया। *Caesalpinia pulcherrima* (*सीजैलपिनिया पल्चेरिमा*) एक छायादार और सजावटी वृक्ष के रूप में उगाया जाता है। *Copaifera officinalis* (*कोपैफेरा ऑफिसिनैलिस*) से Copaiba balsam (कोपैबा बाल्सम) प्राप्त होता है जिसका प्रयोग औषधि और उद्योग में होता है। इससे और एक अन्य पादप स्पीशीज़ *Hymenaea courbaril* (*हाइमेनिया कौरबैरिल*) से copal (कोपाल) मिलता है। यह एक hard resin (कठोर रेजिन) है जिसे पेंट, वार्निश, स्याही और प्लास्टिक निर्माण में प्रयोग किया जाता है।

Amherstia nobilis (*ऐम्हर्स्टिया नोबिलिस*), *Bauhinia* (*बौहिनिया*), *Cassia* (*कैसिया*), *Delonix regia* (*डिलोनिक्स रेजिया*), और *Peltophorum pterocarpum* (*पेल्टोफ़ोरम टेरोकार्पम*) को ornamentals का तौर पर उगाया जाता है।

21.6.3 Subfamily Papilionatae

Leguminosae family की सबसे बड़ा subfamily होने के साथ-साथ यह आर्थिक रूप से भी बहुत महत्वपूर्ण है। इनमें सभी प्रकार की pulse crops (शिंब दालें) आती हैं जिन्हें हम भोजन के रूप में खाते हैं दालों के अलावा कई legumes से हमें तेल भी मिलता है जिनके बारे में हमने खंड III A, इकाई 12 और 15 में पढ़ा था। इसके अतिरिक्त हमें इनसे रंजक, रेशे, कीटनाशक और औषधियां भी मिलती हैं। अन्य subfamilies की तरह इस subfamily में भी ऐसे पादप हैं जिन्हें चारे के लिए, भूमिसंरक्षण सस्य, छायादार वृक्षों और सजावटी पौधों के रूप में उगाया जाता है। नीचे इस subfamily के आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण और सुज्ञात पादपों की सूची दी जा रही है।

1. खाद्य पादप (Food plants)
    1. *Arachis hypogaea*(*ऐरैकिस हाइपोजिया*) - मूंगफली
    2. Cajanus cajan (*कैजैनस कैजन*) - तूर
    3. *Canavalia ensiformis*(*कैनावेलिया एन्सिफॉर्मिस*) - जैक् बीन
    4. *Cicer arietinum*(*साइसर ऐरीटिनम*) - चना
    5. *Cyamopsis tetragonoloba*(*सायमोप्सिस टेट्रागोनोलोबा*) - क्लस्टर बीन
    6. *Dolichos lablab*(*डॉलिकोस लबलब*) - सेम
    7. *Glycine max*(*ग्लाइसिन मैक्स*) - सोयाबीन
    8. *Lens culinaris*(*लेंस कुलिनैरिस*) - मसूर
    9. *Phaseolus lunatus*(*फैसियोलस लुनैटस*) - लीमा बीन
    10. *Phaseolus vulgaris*(*फैसियोलस वलगैरिस*) - फ्रेंच बीन
    11. *Pisum sativum* (*पाइसम सैटाइवम*) - मटर
    12. *Pongamia pinnata* (*पोंगैमिया पिन्नैटा*) - पोंगम ऑयल ट्री
    13. *Vicia faba*(*विसिया फैबा*) - फील्ड बीन

14. *Vigna aconitifolia*(*विग्ना ऐकोनिटिफोलिया*) - मेट बीन
15. *Vigna mungo*(*विग्ना म्यूंगो*) - काला चना
16. *Vigna radiata*(*विग्ना रैडिएटा*) - हरा चना
17. *Vigna unguiculata*(*विग्ना अंगुईकुलैटा*) - लोबिया।

2. रेशे (Fibres)

Crotalaria juncea (*क्रोटैलेरिया जन्सिया*): इसके तने से सन का रेशा मिलता है जिससे रस्सियां और टाट बनाए जाते हैं।

3. रंजक (Dyes)

Indigofera (इंडिगोफेरा) की जातियां विशेषकर *I.suffruticosa* (इं. स्फ्रूटिकोसा) और *I.tinctoria* (इ. टिंक्टोरिया) से नील मिलता है जिसे कपड़ा और पेंट उद्योग में प्रयोग किया जाता है। *Pterocarpus santalinus* (टेरोकार्पस सैंटैलिनस) या लाल चंदन, लाल सैंटेलिनस रंजक मिलता है जिसे वस्त्र उद्योग में प्रयोग किया जाता है। *Butea monosperma* (*ब्यूटिया मोनोस्पर्मा*, फ्लेम ऑफ द फॉरेस्ट) में एक नारंगी, लाल रंजक पाया जाता है जो जल में घुलनशील होता है।

4. औषधीय पादप (Medicinal plants)

Glycyrrhiza glabra (*ग्लिसिराइज़ा ग्लैब्रा*) इसकी जड़ों से निकाली जाने वाली (liquorice) मुलैठी से खांसी की दवा बनाई जाती है। *Psoralea corylifolia* (*सोरैलिया कोरिलिफोलिया*) इसके बीज में त्वचा रोगों विशेषकर leucoderma (सफेद दाग, ल्यूकोडर्मा) के उपचार के औषधीय गुण पाए जाते हैं।

Trigonella foenum-graecum (*ट्रिगोनेला फीनम-ग्रीकम*) - मेथी : इसकी हरी पत्तियों की सब्जी बनाई जाती है और इसे औषधीय पादप के रूप में भी उगाया जाता है क्योंकि इसके बीज aromatic (सौरभी) और carminative (वातहारी) होते हैं।

5. चारा, भूमिसंरक्षण सस्य या प्राकृतिक उर्वरक पादप (Fodder, cover crops or green manure plants)

Medicago sativa (*मेडिकैगो सैटाइवा*) - leucene (ल्यूसीन) या alfa-alfa (अल्फा-अल्फा), और *Trifolium* (*ट्राइफोलियम*) या तिपतिया की स्पीशीज़, *Sesbania* (*सेस्बैनिया*), *Tephrosia* (*टफ्रोसिया*) और *Zornia* (*जोर्निया*) महत्वपूर्ण चारा भूमिसंरक्षण या प्राकृतिक उर्वरक पादप हैं।

6. अन्य उपयोग (Miscellaneous uses)

Abrus precatorius (*एब्रस प्रिकैटोरियस*, रत्ती) - इसके लाल और काले बीजों से गले के हार जैसे आभूषण बनाए जाते हैं और इन्हें सुनार इकाई भार (यानि सोने की तौल) के रूप में भी प्रयोग करते हैं। इसके बीज जहरीले होते हैं मगर वहीं पत्तियां और जड़ें दवा बनाने के काम आती हैं।

Aeschynomene elaphroxylon (*ऐस्किनोमीनी एलैफ्रोजायलॉन*) की लकड़ी सबसे हल्की होती है। इसे सौर टोप (सोलर हैट) बनाने में काम लाया जाता है।

Derris (डेरिस) स्पीशीज़ का प्रयोग कीटनाशकों में, तो *Lonchocarpus* (लोकोंकार्पस) की स्पीशीज़ का प्रयोग fish poison (मत्स्य विष) और कीटनाशक के रूप में किया जाता है।

इस कुल के छायादार वृक्ष और सजावटी पादपों में मुख्यत: *Gliricidia* (*ग्लिरिसीडिया*), *Erythrina* (*एरिथ्रिना*), *Millettia* (*मिलेटिया*), *Dalbergia* (*डलबर्जिया*), *Mucuna* (*मुकुना*), *Clitoria* (*क्लिटोरिया*), *Clianthus* (*क्लाएंथस*), *Sesbania* (*सेस्बेनिया*), *Pongamia* (*पोंगेमिया*), *Wistaria* (*विस्टेरिया*), और *Lathyrus* (*लैथिरस*) की स्पीशीज़ आती हैं।

21.7 Myrtaceae (मर्टेसी)

The Eucalyptus family (यूकेलिप्टस कुल)

Type genus : *Myrtus* (मर्टस)

सामान्य जानकारी

Family Myrtaceae एक विशाल tropical और subtropical family है जिसमें 140 जीनस और लगभग 3000 स्पीशीज़ हैं। इसका वितरण मुख्यत: ऑस्ट्रेलिया, अमेरिका और दुनिया के अन्य गर्म प्रदेशों में हैं। भारत में इसके 14 जीनस और 165 स्पीशीज़ पाई जाती हैं। इनमें से कुछ अपने भोज्य फलों *Syzygium cumini* (सिजीजियम क्यूमिनि, चित्र 21.24), *Psidium guajava* (सिडियम ग्वाजावा, चित्र 21.25), मसालों *Syzygium aromaticum* (सिज़िजियम ऐरोमैटिकम, चित्र 21.26) के लिए महत्वपूर्ण हैं तो कुछ लकड़ी और essential oil यानि वाष्पशील तेल जैसे कि *Eucalyptus* sp. (यूकेलिप्टस स्पीशीज़) के लिए।

चित्र 21.24 : *Syzygium cumini* एक पुष्पी टहनी।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Woody plants, जिनकी पत्तियां खुशबूदार या aromatic (सौरभी) होती हैं। पत्तियों में विशेषतासूचक इसकी intra-marginal veins (अंत:कोरी शिराएं) हैं। पुष्पों में अनेक stamens और epigynous disc (जायांगोपरिक, डिस्क) ovary inferior (अधोवर्ती), axile placentation के साथ।

आकारिकीय विविधता

पादप मुख्यत: trees होते हैं या कभी-कभी shrubs, तो विरले ही creeping undershrubs (विसर्पी झाड़) के रूप में पाए जाते हैं जिनमें stem woody होता है। तने में bicollateral vascular bundles (उभय संवहन पूल) एक सतत् शारीकीय लक्षण के रूप में विद्यमान रहते हैं। इनके अतिरिक्त तरुण तनों के वल्कुटी मृदूतक (पैरेन्काइमा) में विद्यमान lysigenous cavities (लयजात गुहिकाओं) तथा पत्तियों की बाह्यत्वचा (एपिडर्मिस) के नीचे अनेक oil glands (तेल ग्रंथियां) पाई जाती हैं।

Leaf : पत्तियां प्राय: opposite (सम्मुखी), exstipulate, entire, coriaceous (चर्मिल) और evergreen (सदाबहार) होती हैं। कई पादपों की पत्तियों में intra-marginal vein प्रमुखता से दिखाई देती है (उदाहरण, *Eucalyptus*, *Syzygium*)। ऑस्ट्रेलिया में ये पादप xerophytic (मरूद्भिदी) स्थितियों के लिए adapted यानि अनुकूलित होते हैं। ऐसे पादपों की पत्तियां needle-like यानि सुई-नुमा हो सकती हैं या वे petiole (पर्णवृंत) के twist (वलन) होने से vertically aligned (ऊर्ध्वाधर पंक्तिबद्ध) पाई जातीं हैं। इससे पादपों को leaf blade (पर्ण फलक) को सीधी धूप से बचाकर नमी को संरक्षित रखने में सहायता मिलती है।

Inflorescence : पत्ती के कक्ष में एक solitary flower जैसे *Psidium guajava*, *Myrtus communis* (मर्टस कम्युनिस) या फिर inflorescence बहुधा cymose होती है, जैसे *Pimenta*

(पिमेंटा), *Eucalyptus*, तथा *Syzygium* । कुछ स्पीशीज़ में inflorescence racemose होता है, जैसे *Callistemon* (कैलीस्टेमान), और *Barringtonia* (बैरिंग्टोनिया) में ।

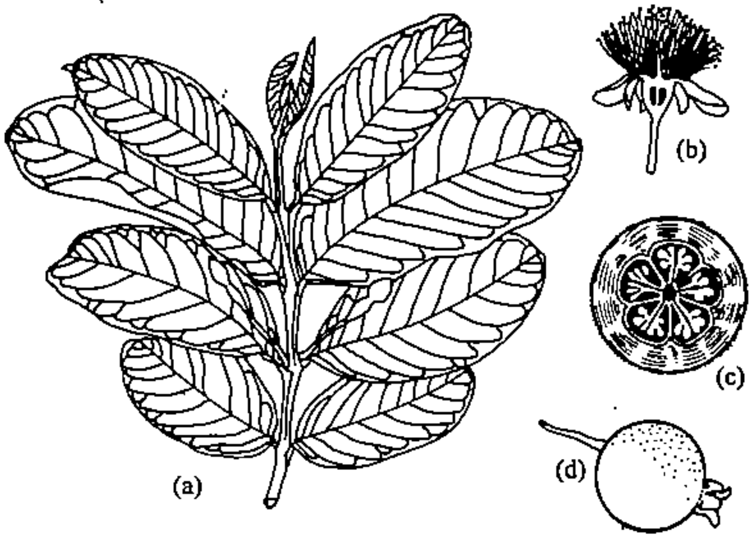

चित्र 21.25 : ***Psidium guajava*** **(सिडियम ग्वाजावा) । a) एक leafy shoot । b) Longitudinal section में एक फल । c) Transverse section में एक ovary । d) एक फल ।**

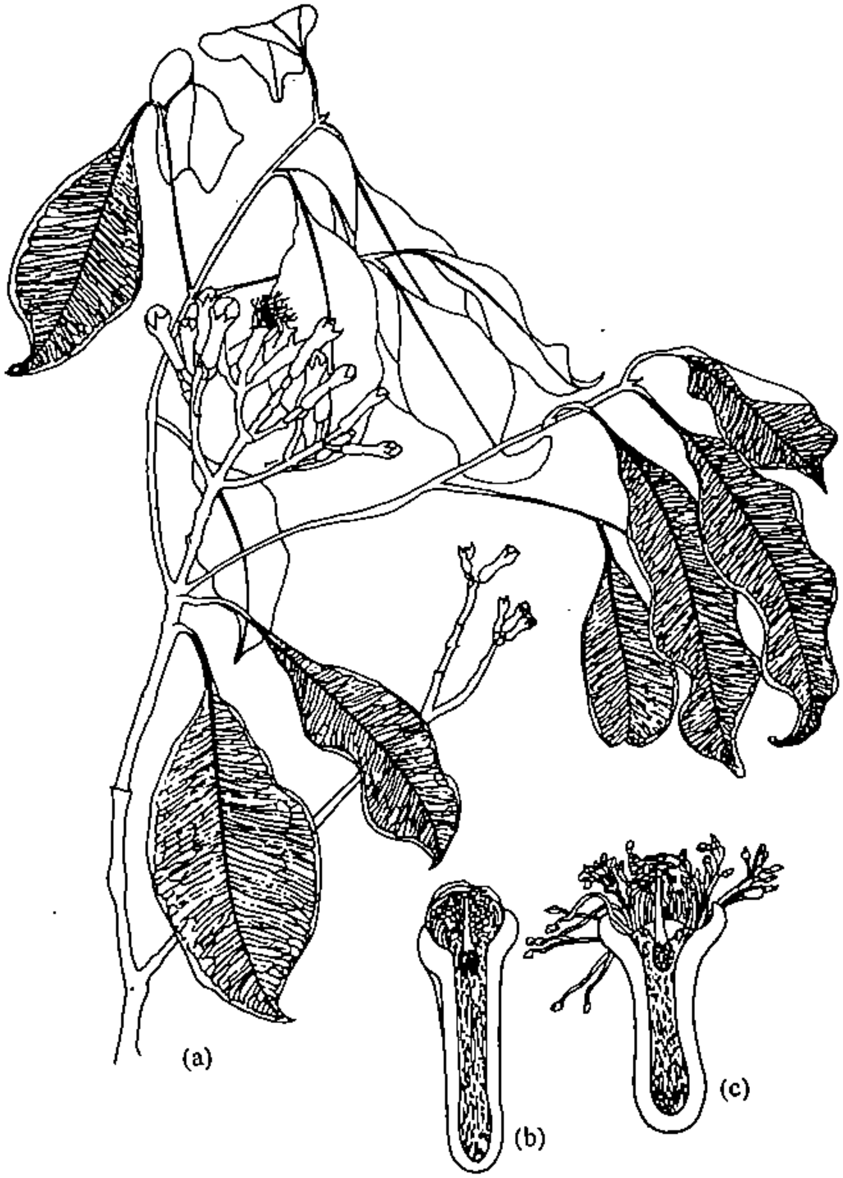

चित्र 21.26 : ***Syzygium aromaticum*** **(सिजिजियम ऐरोमैटिकम) । a) एक flowering twig । b), c) Longitudinal section में क्रमश: एक कलिका और पुष्प ।**

Flower : ये bracteate, bracteolate, pedicellate, tetramerous या pentamerous, bisexual, actinomorphic और प्राय: epigynous जैसे *Psidium*, *Myrtus* में होते हैं या फिर perigynous (परिजायांगी) ovary और receptacle में अधूरा संलयन (incomplete fusion) होने के कारण होते हैं। प्राय: एक epigynous disc विद्यमान होती है।

कैलिक्स polysepalous होता है या फिर यह विरले ही gamosepalous पाया जाता है। Aestivation quincuncial (पंचकी) और sepals प्राय: फल में persistent यानि चिरस्थायी रहते हैं। कोरोला polypetalous होता है, जिसमें petals बाहर की ओर फैले होते हैं। इसका aestivation imbricate होता है।

Androecium : Stamens प्राय: अनेक और मुक्त (free) होते हैं। वे receptacle के किनारे पर कई whorls में व्यवस्थित पाए जाते हैं और प्राय: कलिका में भीतर की ओर झुके रहते हैं। Stamens कभी-कभी सिर्फ दो obdiplostemonous whorls या फिर एक single whorl में लघुकृत पाए जाते हैं। Anthers dorsifixed या versatile रहते हैं और connective tip (संयोजी चोटी) पर gland (ग्रंथिल) पाया जाता है। Dehiscence introrse होता है।

Gynoecium : Syncarpous gynoecium दो से लेकर पांच carpels का बना होता है। जब डिस्क receptacle में पूर्णत: fused हो तो ovary inferior होती है और जब ovary और receptacle में incomplete fusion (अधूरा संलयन) हो तो ovary half-inferior, and in perigynous condition (अर्ध-अधोवर्ती, परिजायंगी स्थिति) में पाई जाती है। ovary में 1-α locules होते हैं और प्रत्येक locule में 2-α ovules पाए जाते हैं। Placentation प्राय: axile (विरले ही perietal) होता है। Style दीर्घ होता है जिसमें एक सरल stigma पाया जाता है।

Fruit : यह एक fleshy berry (मांसल बेरी), विरले ही drupe (अष्ठिल) होता है, या फिर यह एक शुष्क कैप्सूल (विरले ही दृढ़फल-नट) होता है। बीज एक कठोर testa (बीजचोल) युक्त और non-endospermous (बीजपोषहीन) होते हैं। *Eucalyptus* में बीज winged यानि पंखदार होते हैं।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Woody plants जिनके तने में bicollateral vascular bundles होते हैं।
2. तरुण तने और पत्तियों में अनेक oil glands (तेल ग्रंथियां) पाई जाती हैं।
3. पत्तियां exstipulate, coriaceous और intra-marginal vein सहित होती हैं।
4. पुष्प solitary या cymose अथवा racemose inflorescences में पाए जाते हैं।
5. पुष्प bisexual, actinomorphic, प्राय: epigynous होते हैं।
6. Receptacle या डिस्क सुविकसित होती है।
7. कैलिक्स और कोरोला भिन्न और free या calyptra में रूपांतरित होते हैं जो anthesis (परागोद्भव) के समय झड़ जाता है।
8. Stamens numerous, free, gland-tipped connective के साथ पाए जाते हैं।
9. Ovary syncarpous, inferior, placentation axile होता है।
10. फल बेरी या कैप्सूल के रूप में।
11. बीज कठोर testa युक्त और scant endosperm सहित या फिर non-endospermous होते हैं।

वर्गीकृत स्थिति

Myrtaceae family को बेंथम और हुकर ने अपने वर्गीकरण में Polypetalae, Series III Calyciflorae and Order 12- Myrtales (पॉलिपिटेली, सिरीज III कैलिसिफ्लोरी और गण

12- मर्टेलीज) में रखा है। इस order में पांच अन्य families हैं। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Myrtaceae family को Archichlamydeae and Order 29 - Myrtiflorae (आर्कीक्लैमाइडी और गण 29 - मर्टीफ्लोरी) में रखा गया है। इस order में बेंथम और हुकर द्वारा Myrtales Order में वर्गीकृत सभी families समेत 10 families हैं। तख़्ताज़न ने अपने वर्गीकरण की पद्धति में Myrtaceae family को Subclass H Rosidae, Superorder Myrtanae and Order 106 - Myrtales (मर्टेसी कुल को उपवर्ग H रोजीडी, अधिगण मर्टेनी और गण 106 - मर्टेलीज) में रखा है। इस Order में 17 families शामिल हैं। Rhizophoraceae family (राइजोफ़ोरेसी कुल) जिसे बेंथम और हुकर के साथ-साथ एंग्लर और प्रांट्ल ने भी Myrtaceae family के साथ रखा था उसे तख़्ताज़न ने Rhizophorales (राइजोफ़ोरेलीज) नामक अलग order में रखा है। बाहरहाल तख़्ताज़न ने दोनों orders को एक ही Superorder में रखा है।

आर्थिक महत्व

1. *Syzygium aromaticum* (*सिजीजियम ऐरोमैटिकम*) यानि लौंग (clove) जिससे मसाला (spice) मिलता है जो इस family का एक अति मूल्यवान उत्पाद है। आपने इस पादप के बारे में इकाई-17 में भी पढ़ा है।

2. *Pimenta dioica* (*पिमेंटा डियोइका*, पिमेंटो) tropical अमेरिका की एक महत्वपूर्ण spice है। इसे Jamaica black pepper (जेमाइकी काली मिर्च) भी कहते हैं।

3. *Psidium guajava* (*सिडियम ग्वाजावा*, अमरूद), और *Syzygium cumini* (जामुन) का महत्व उनके भोज्य फलों के लिए है।

4. *Eucalyptus* जीनस से इमारती लकड़ी (टिम्बर) मिलती है और reforestation (पुर्नवनरोपण) के लिए इसे वृहद पैमाने पर उगाया जाता है। यह एक essential oil का भी स्रोत है जिसे फ्लेवरिंग (भोजन को सुगंधित बनाने के लिए) और औषधि में प्रयोग किया जाता है।

5. इस family के कई सदस्यों को सजावटी पादपों के रूप में उगाया जाता है। इनमें *Callistemon* (कैलिस्टेमोन), *Myrtus*, *Melaleuca* (मेलैल्यूका), *Syzygium*, और *Eucalyptus* शामिल हैं।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

21.8 Cucurbitaceae (कुकुरबिटेसी)

The Gourd family (कद्दू कुल)

Type genus : *Cucurbita* (कुकुरबिटा)

सामान्य जानकारी

Cucurbitaceae family में 90 जीनस और 750 स्पीशीज़ हैं जो नई और पुरानी दुनिया के tropical और subtropical प्रदेशों में वितरित हैं। भारत में इसके लगभग 35 जीनस और 100 स्पीशीज़ पाई जाती हैं। इनमें से कई को खाद्य फलों के लिए उगाया जाता है, जिन्हें सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है या फलों के रूप में खाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Tendril bearing herbaceous climbers, पत्तियां alternate, पुष्प पीले या सफेद और unisexual, फल बेरी या pepo यानि पीपो के रूप में होता है।

आकारिकीय विविधता

अधिकांश पादप annual, herbs, trailing on ground (शाक, भूसर्पी) या climbing habit (आरोही स्वभाव) के होते हैं। ये अत्यधिक तेज़ी से वृद्धि करते हैं और इनमें watery sap यानि जलीय रस काफी बड़ी मात्रा में विद्यमान रहता है। तना प्राय: 5-angular यानि पंच-कोणीय होता है और उसमें bicollateral bundles दो alternating rings (एकांतरी वलयों) में पाये जाते हैं। ये पादप tendrils के द्वारा खंभों आदि संरचनाओं के सहारे आरोहण (climb) करते हैं। Tendrils धागे जैसी संरचनाएं होती हैं जो शाखित (branched) या अशाखित (unbranched) हो सकती हैं और clockwise यानि कि दक्षिणावर्त अथवा anti-clockwise घुमाव (twist) दिखाते हैं। Tendrils कभी-कभी पत्ती-नुमा (leaf-like) भी होते हैं। ये अति संवेदनशील (very sensitive) होते हैं और कोमल तने को काफी ऊंचाई तक चढ़ने में मदद करते हैं। Tendrils की आकारिकीय प्रकृति (morphological nature) की व्याख्या आकृतिविज्ञानी (morphologists) तरह-तरह से, जैसे रूपांतरित तने, पत्तियां, stipules, bracteoles, flower stalks के रूप में और स्वतंत्र अंगों (independent organs) के रूप में करते हैं। इससे यही लगता है कि विभिन्न पादपों के tendrils विभिन्न अंगों (organs) का रूपांतरण हो सकते हैं।

Leaf : पत्तियां alternate, exstipulate, long-petioled होती हैं और उनके आकार में भारी भिन्नता पाई जाती है। पत्तियां तरल प्राय: चौड़ी मगर अक्सर हस्ताकार-पालित (palmately-lobed) या विभाजित (divided) रहती हैं। Petioles fistular (वृंत नलीदार) होते हैं और पटल (लैमिना) में palmi-nerved reticular venation (हस्त-शिरा जालिका-रूपी शिरान्यास) पाया जाता है।

Inflorescence : पादपों में unisexual पुष्प होते हैं जो पत्तियों के axils में solitary अवस्था में या फिर cymose clusters में पाए जाते हैं। Male inflorescence (नर पुष्पक्रम) प्राय: female inflorescence (मादा पुष्पक्रम) से अधिक विस्तृत होता है। पादप साधारणत: monoecious (उभयलिंगाश्रयी) होते हैं जिनमें नर (male) और मादा (female) पुष्प भिन्न पत्तियों के axil में विद्यमान रहते हैं (जैसे: *Momordica charantia* यानि *मॉमोर्डिका कैरेंशिया* (चित्र 21.27) या पादप कभी-कभी dioecious (एकलिंगाश्रयी) भी पाए जाते हैं, जैसे *Momordica dioca* (*मॉमोर्डिका डियोइका*), *Coccinia cordifolia* (*कॉक्सिनिया कॉर्डिफोलिया*)।

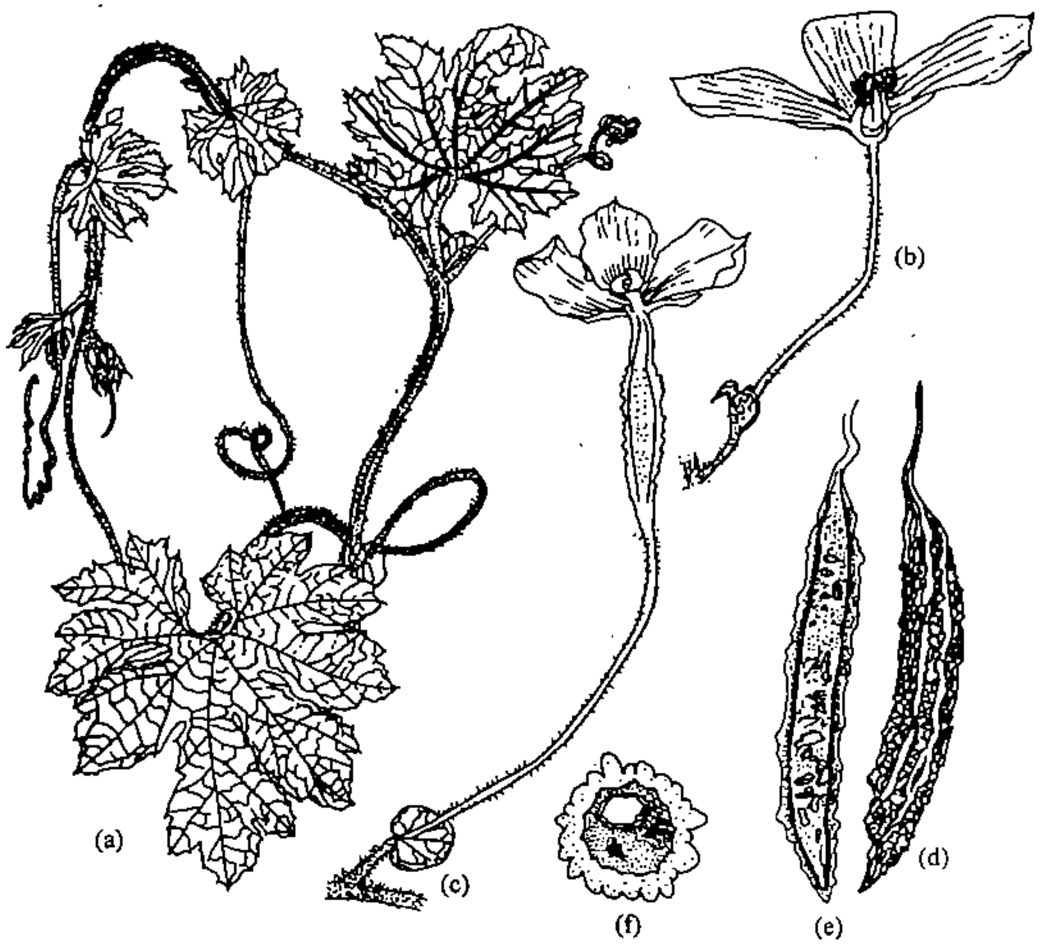

चित्र 21.27 : *Momordica charantia* । a) एक पत्तीदार प्ररोह (shoot) । b) Longitudinally cut male flower । c) Longitudinally cut female flower । d) एक फल । e) और f) क्रमशः Longitudinal और transverse sections में फल ।

Flower : फूल pedicellate, actinomorphic, pentamerous (पंचभागी), epigynous आमतौर पर पीले या सफेद और साधारणतया बड़े और दर्शनीय (showy) होते हैं। कैलिक्स में पांच sepals होते हैं जो संयुक्त (united) होकर एक नली बनाते हैं। Male flowers में calyx tube (कैलिक्स नाल) पुष्प के receptacle से जुड़ी होती है, जबकि famale flowers में यह inferior ovary से adnate (संलग्न) पाई जाती है। कैलिक्स में aestivation valvate या imbricate होता है। कोरोला में पांच petals होते हैं जो साधारणतया gamopetalous होते हैं, मगर कभी-कभी ये polypetalous भी होते हैं। Aestivation valvate या imbricate होता है। Gamopetalous कोरोला rotate (चक्राकार), campanulate (घंटाकार) या salverform (दीवटाकार) होता है। *Trichosanthes* यानि *ट्रोकोसेंथीज़* जिसमें कि एक polypetalous कोरोला पाया जाता है, उसके petals में fimbriate lobes (झालरदार पालियां) होती हैं (चित्र 21.28)।

Androecium : Male flower में साधारणतया पांच stamens होते हैं। इन stamens में भारी complexity देखने में आती है। *Luffa cylindrica* (*लुफ्फा सिलिंड्रिका*) में साधारणतया पांच free stamens दिखाई देते हैं। *Thladiantha* (*थ्लैडायन्था*) में stamens के तीन समूह (groups) पाए जाते हैं, इनमें से stamens के 2 pairs सिर्फ अपने filaments द्वारा संयुक्त (united) रहते हैं तथा शेष एक stamen single होता है। Stamens का यह सम्मिलन (union) anthers की ओर भी बढ़ता है जिससे androecium में तीन stamens दिखते हैं। इन 3 stamens में से दो stamens चार anther cells (पुंकेसर कोशिकाओं) के साथ, और शेष तीसरा stamen 2 anther cells के साथ होते हैं जैसे कि *Citrullus* (*साइट्रूलस*), और *Momordica* (*मॉमोर्डिका*) में। *Cucurbita* (*कुकुरबिटा*), *Legenaria* (*लैजिनैरिया*) और अन्य जीनसों में और जटिलता देखी जाती है, इन स्थितियों में filaments और

anthers में cohesion हो जाता है। इससे irregularly curved anthers (अनियमित रूप से वक्रित परागकोशों) का column (स्तंभ) बनता है। *Cyclanthera* (साइक्लैंथरा) में anthers दो ring-like pollen containing chambers (वलयनुमा परागधारी कक्षों) का निर्माण करते हैं जो central column (मध्य स्तंभ) के apex पर स्थित होते हैं।

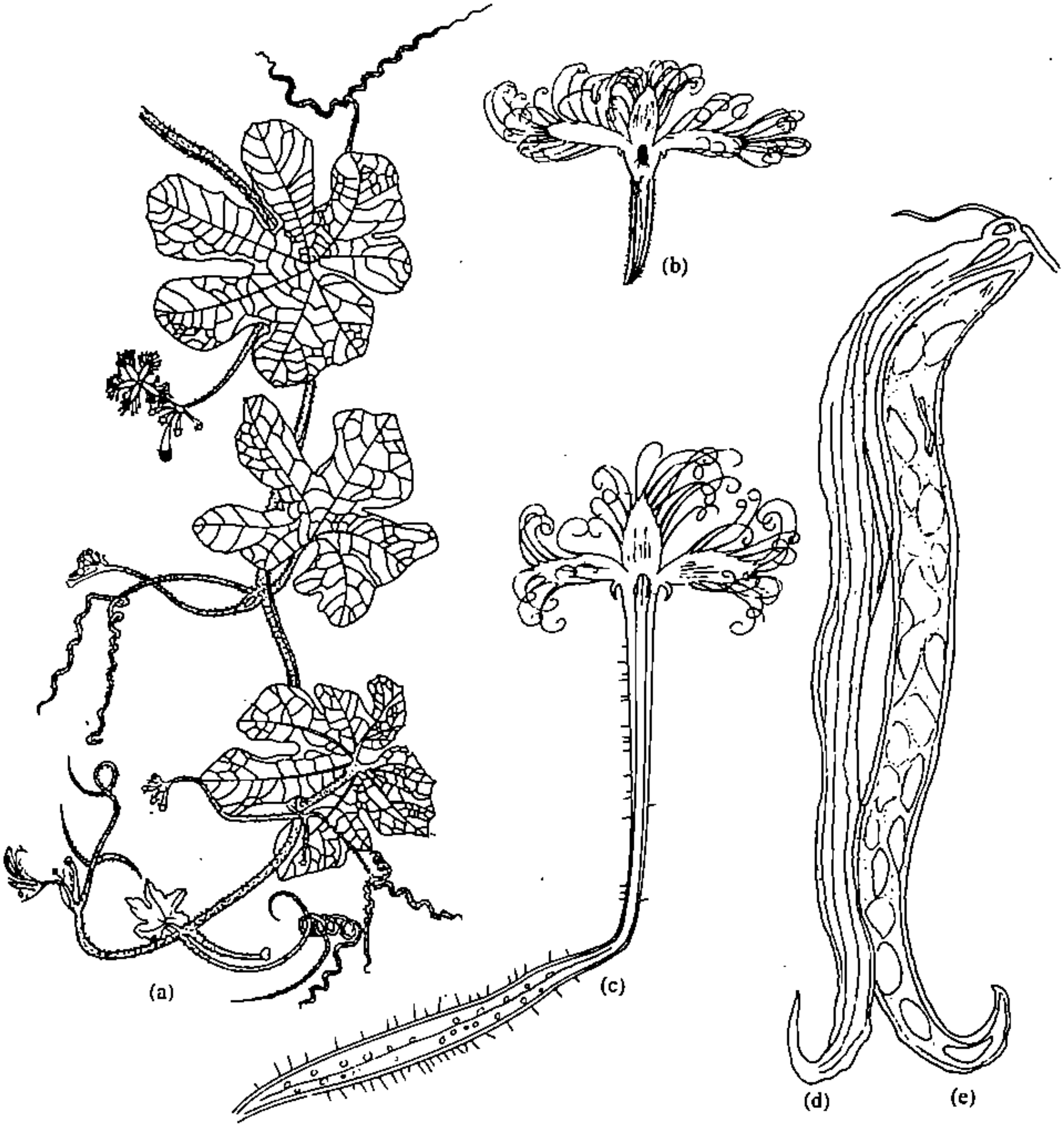

चित्र 21.28 : *Trichosanthes cucumerina* (ट्राइकोसैन्थीज कुकुमेरिना)। a) एक flowering shoot। b) और c) एक male और female flower क्रमश: longitudinal sections में। d) एक फल। e) Longitudinal cut में फल। (पर्सग्लव, 1988 से)।

Gynoecium : Female flower में, साधारणतया तीन (विरले चार या पांच) carpels पाए जाते हैं जो syncarpous होते हैं। Ovary inferior, monolocular होती है और उसमें parietal placentation देखने में आता है मगर three placentae (तीनों बीजांडासन) वृद्धि कर मध्य में मिल जाते हैं जिससे ovary falsely (आभासी) रूप से trilocular और उसमें parietal placentation प्रतीत होता है। Style एक होती है जिसमें तीन stigmas होते हैं।

Fruit : फल मृदुल (soft), मांसल (fleshy) और अस्फुटनशील (indehiscent) होता है, जो berry (बेरी) के रूप में होता है। Pericarp (बाह्यफलभित्ति) जब अतिकठोर हो तो फल को pepo (पीपो) कहते

हैं। फल के रूप और आकार में भारी विविधता पाई जाती है। फल के fleshy part में अनेक बीज होते हैं। ये बीज non-endospermic (बीजपोषहीन) और straight embryo (ऋजु भ्रूण) युक्त होते हैं। Cotyledons लंबे, चपटे या leaf-like और तेल (oil) से भरपूर होते हैं। Squirting cucumber (स्क्वर्टिंग कुकुम्बर), *Ecballium* यानि *एक्बैलियम* में पका फल turgid (अति स्फीत) होता है जो छू लेने पर तरल गूदे (liquid pulp) के साथ बीजों को पिचकारी की तरह फुहार में बाहर फेंकता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Tendril bearing, trailing or climbing herbaceous plants (चित्र 21.29, 21.30)।
2. Stem, 5-angular जिसमें bicollateral vascular bundles होते हैं।
3. पत्तियों में लंबे खोखले petioles, लैमिना simple या palmately-lobed, और palmi-nerved reticulate venation पाया जाता है (चित्र 21.29)।
4. Solitary flower या cymose inflorescence
5. Unisexual, pentamerous flower
6. Androecium with convoluted anthers
7. Tricarpellary, syncarpous, inferior ovary जिसमें parietal placentation पाया जाता है।
8. फल एक berry है।
9. Compressed seeds जिनमें तेल युक्त चपटे, cotyledons पाए जाते हैं।

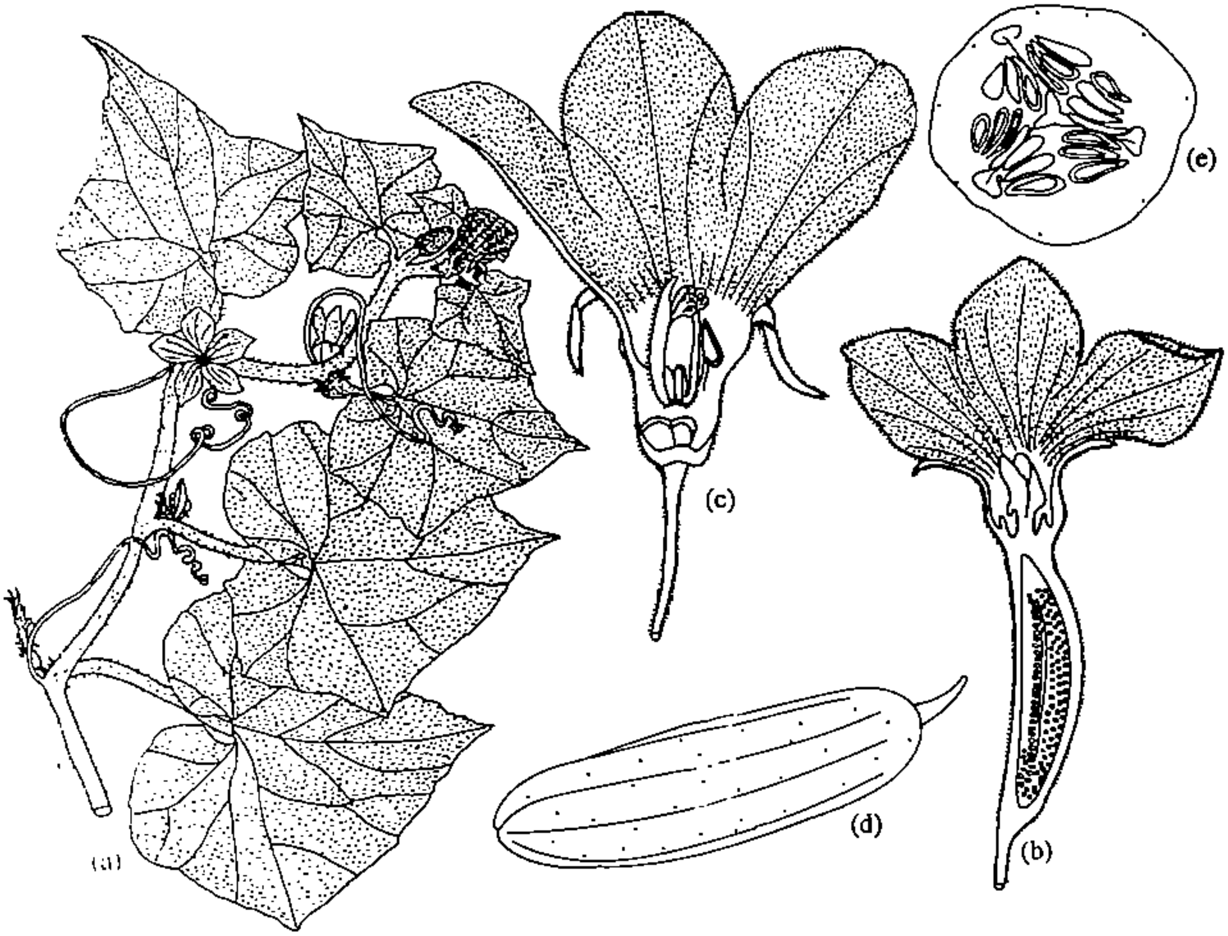

चित्र 21.29 : *Cucumis sativus* (कुकुमिस सैटाइवस)। a) एक flowering shoot। b) और c) Longitudinal cut में क्रमश: female और male flowers। d) एक फल। e) Transverse cut में फल। (पर्सग्लव, 1988)।

वर्गीकृत स्थिति

Cucurbitaceae family को बेंथम और हूकर ने Polypetalae Series III Calyciflorae and Order 13 - Passiflorales (पॉलिपिटैली, सिरीज III कैलिसिफ्लोरी और गण - 13 पैसिफ्लोरेलीज) में रखा है। इस order में 6 अन्य families शामिल हैं। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में इस कुल को Sympetalae, Order 9 - Cucurbitales (सिम्पिटैली, गण 9 – कुकुरबिटेलीज) में रखा गया है और इस order में कोई अन्य family शामिल नहीं है। तख़्ताजन ने अपने वर्गीकरण में family Cucurbitaceae को Subclass G - Dilleniidae, Superorder Violanae, Order 82 - Cucurbitales (उपवर्ग G डिलेनाइडी, अधिगण वायोलेनी, गण 82 – कुकुरबिटेलीज) में रखा है। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण की भांति तख़्ताज़न के वर्गीकरण में भी Order Cucurbitales (गण कुकुरबिटेलीज) में सिर्फ एक ही family है।

आर्थिक महत्व

Family Cucurbitacae से भारी संख्या में खाद्य फल प्राप्त होते हैं।

i) *Benincasa hispida (बेनिकैसा हिस्पिडा)* - white gourd (पेठा)। इसके तरुण और पक्व फलों की सब्जी बनाई जाती है जबकि पके फलों से पेठे की मिठाई बनाई जाती है।

ii) *Citrullus lanatus (साइट्रलस लैनैटस)* - तरबूज

iii) *Citrullus lanatus* var. *fistulosus (साइट्रलस लैनैटस* उप. *फिस्टुलोसस)* - टिंडा

iv) *Cucumis melo (कुकुमिस मेलो)* - खरबूजा

v) *Cucumis sativus (कुकुमिस सैटाइवस)* - ककड़ी (चित्र 21.29)

vi) *Cucurbita moschata (कुकुरबिटा मॉस्कैटा)* - कद्दू

vii) *Cucurbita maxima (कुकुरबिटा मैक्सिमा)* - लाल कद्दू

viii) *Cucurbita pepo (कुकुरबिटा पीपो)* - फील्ड पमकिन

ix) *Lagenaria siceraria (लैजेनेरिया सिसेरेरिया)* - लौकी

x) *Luffa acutangula (लूफा ऐकुटैंगुला)* - अरों तुरई

xi) *Luffa cylindrica (लूफा सिलिन्ड्रिका)* - तुरई

xii) *Momordica charantia (मोमोर्डिका कैरेंशिया)* - करेला

xiii) *Sechium edule (सिचियम एडुल)* - चो-चो

xiv) *Trichosanthes cucumerina (ट्राइकोसैंथीज कुकुमेरिना)* - चिचंडा

xv) *Trichosanthes dioica (ट्राइकोसैंथीज डायोसिया)* - परवल

इस family के कठोर pericarp वाले फलों से musical instruments (वाद्य यंत्र) बनाए जाते हैं जैसे *Benincasa (बेनिकैसा), Lagenaria (लैजैनरिया)*, जबकि *Luffa Cylindrica (लूफा सिलिंड्रिका)* तुरई के फल से सूखे रेशेदार ऊतकों का प्रयोग नहाने के स्पंज (sponge) के रूप में किया जाता है।

Ecballium, Cyclanthera, Coccinia तथा *Sechium* की कुछ स्पीशीज़ को ornamentals के रूप में उगाया जाता है।

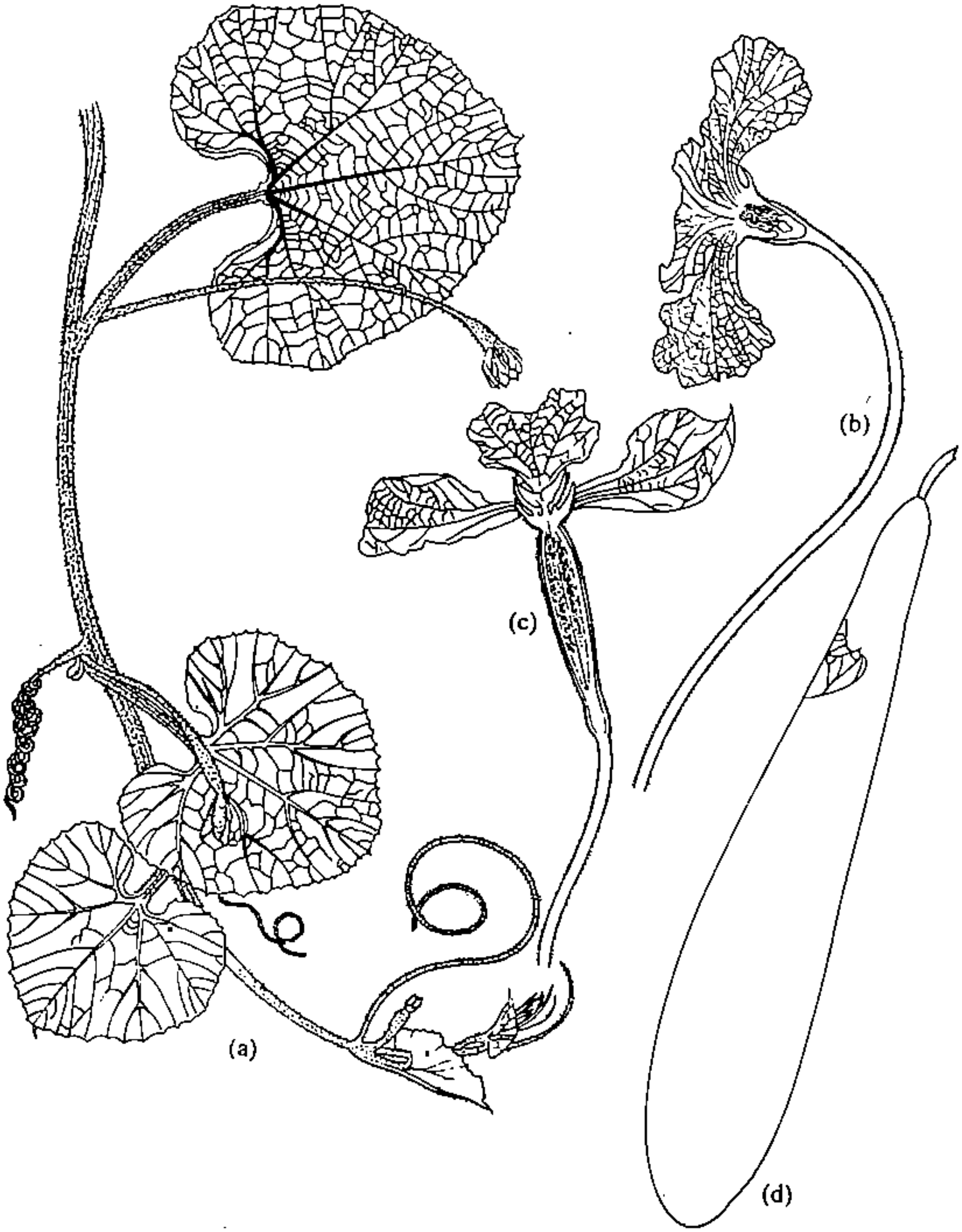

चित्र 21.30 : *Legenaria siceraria* (लैजेनेरिया सिसेरेरिया) I a) एक flowering shoot I b) और c) Longitudinal cut में क्रमश: male और female flowers I d) एक फल I (पर्सग्लव, 1988 से) I

कुछ याद रखने योग्य बातें:

21.9 Apiaceae (ऐपिएसी)

The Carrot family, Umbelliferae (कैरट कुल, अम्बेलीफेरी)
Type genus : *Apium* (ऐपियम)

सामान्य जानकारी

Apiaceae एक cosmopolitan (विश्वजनीन) family है जो मुख्यत: north temperate regions में वितरित है। यह एक बड़ी family है जिसमें 300 जीनस और 3000 स्पीशीज़ हैं। इनमें से कुछ स्पीशीज़ अपने फलों के लिए प्रसिद्ध हैं जिन्हें मसालों (spices) के काम लाया जाता है [जैसे, धनिया (coriander), सौंफ (fennel), जीरा (cumin), अमजोद (caraway) इत्यादि]। गाजर की जड़ें खाई जाती हैं। भारत में इसकी 53 जीनस और 200 स्पीशीज़ पाई जाती हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Aromatic herbs जिनमें fistular stems (तने नलीदार) पत्तियां compound तथा जिनमें sheathing base (आवरण आधार) पाया जाता है, inflorescence umbellate (पुष्पछत्री) होती हैं।

आकारिकीय विविधता

पादप annual, perennial shrubs हैं जिनमें stems fistular यानि कि शाकीय, कोमल और पर्वों पर खोखले होते हैं। तना कभी-कभी creeping और filiform जैसे *Hydrocotyle* (हाइड्रोकॉटिल, चित्र 21.31), या मजबूत और काफी लंबा, जैसे *Heracleum, Angelica* (हेरैक्लियम, ऐंजेलिका) में होता है। तना खांचेदार (furrowed) भी हो सकता है। पादप की एक महत्वपूर्ण विशेषता है उसकी aromatic nature (सौरभी प्रकृति) यह उनके सभी अंगों में essential oil या resin या balsam canals (बाल्सम नाल) के विद्यमान रहने के कारण होता है।

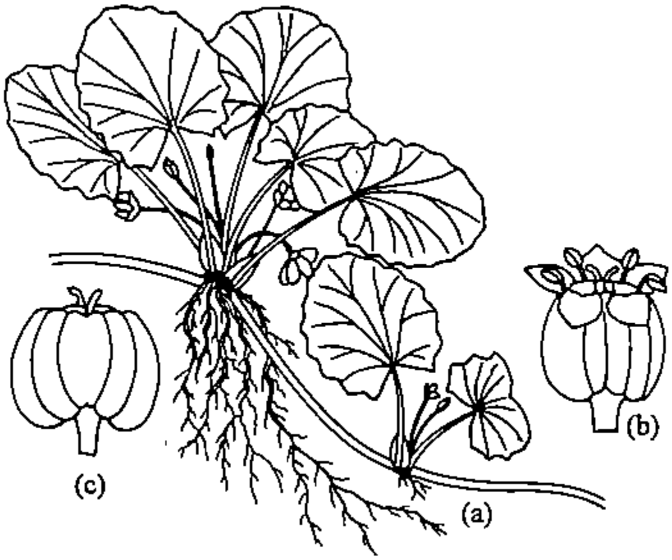

चित्र 21.31 : *Hydrocotyle asiatica* (हाइड्रोकॉटाइल एशियाटिका)। a) पादप का एक पुष्पधारी भाग। b) एक पुष्प। c) एक फल।

Leaf : पत्तियां alternate, exstipulate, sheathing base आधार, और अतिविभाजित pinnately compound लैमिना युक्त (उदाहरण *Coriandrum, Daucus, Samicula,* चित्र 21.32 और 21.33)। विरले ही सरल पत्तियां (उदाहरण *Hydrocotyle*) या compound leaves (उदाहरण सैमिकुला) भी पाई जाती हैं।

Inflorescence : विशेषतासूचक umbellate inflorescence (इसीलिए इसका नाम Umbelliferae यानि अंबेलिफेरी पड़ा है) और पादपों की aromatic nature को प्राचीन काल से ही इस family को वर्गीकरण में natural unit के रूप में पहचानने के लिए महत्वपूर्ण लक्षणों के रूप में प्रयोग किया जाता रहा है। Inflorescence एक सरल umbel (पुष्पछत्र) या फिर compound umbel (संयुक्त पुष्पछत्र) होती है जिसमें अनेक लघु umbels होते हैं, इन्हें umbellules (अंत्य-पुष्पछत्रक) कहते हैं। कभी-कभी इसका लघुकरण solitary flower में हो जाता है (उदाहरण *Hydrocotyle*)। कई स्पीशीज़ में एक

terminal flower भी उग जाता है जो शेष umbel से भिन्न होता है, उदाहरण *Daucus* (डौकस)। Infloresence साधारणतया bracts द्वारा कक्षांतरित होकर (मुख्य umbel के base पर) एक involucre (सहपत्र चक्र) या involucel (अंत्य पुष्पछत्रक यानि umbellule के आधार पर सहपत्रिका चक्र) की रचना करती है। कभी-कभी involucre और involucel दोनों लुप्त रहते हैं। सुस्पष्ट compound umbel जिसमें की अनेक लघु पुष्प होते हैं, उसकी तुलना अक्सर Asteraceae या Compositae (कम्पोजिटी) के head (मुंडक) से family की evolutionary success (जैव-विकासीय सफलता) के रूप में की जाती है।

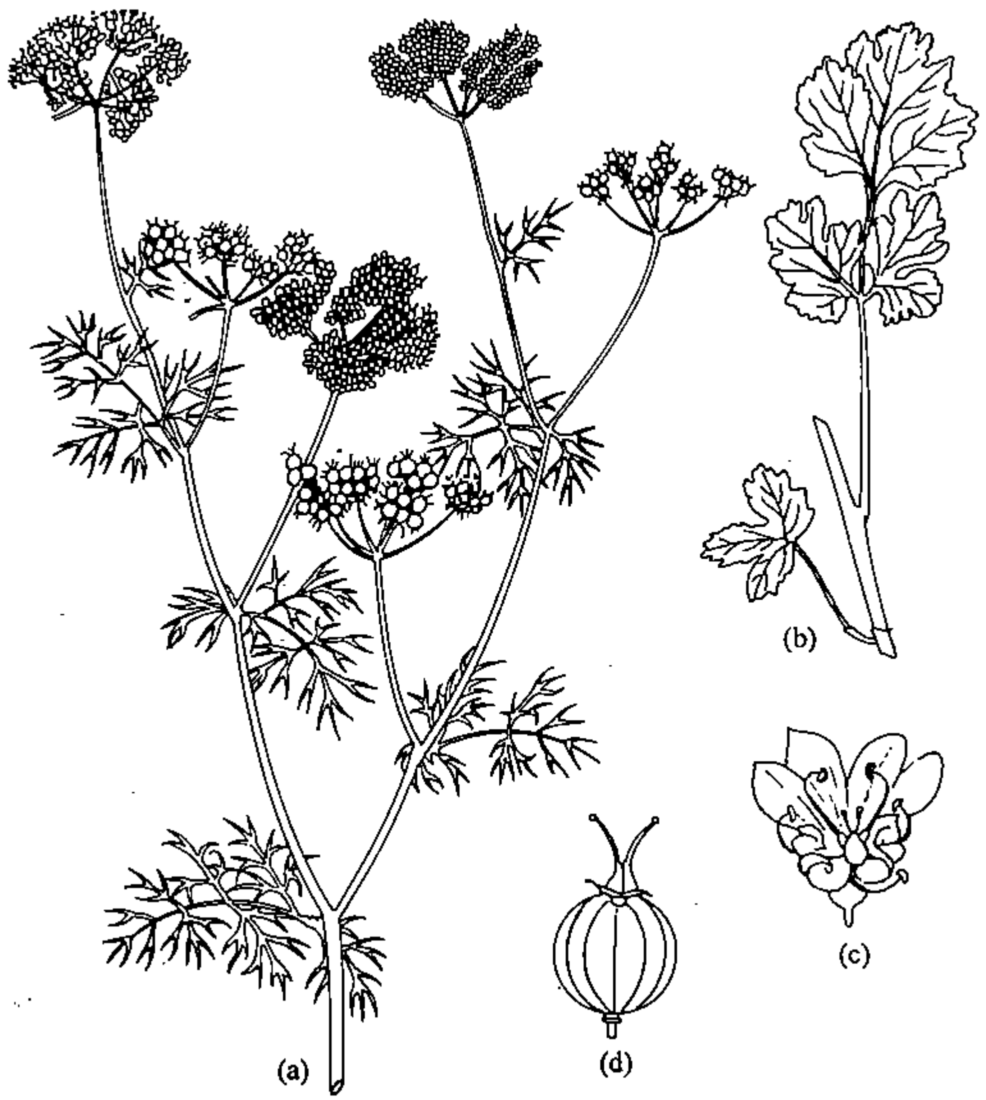

चित्र 21.32 : *Coriandrum sativum* (कोरिएंड्रम सैटाइवम)। a) एक पुष्पी शाखा। b) एक पत्ती। c) एक पुष्प। d) एक फल।

Flower : पुष्प bracteate, प्राय: bisexual, pentamerous (पंचभागी), actinomorphic और epigynous होते हैं। कभी-कभी compound umbel के peripheral flowers (परिधीय पुष्प) उनके कुछ petals के बड़े हो जाने के कारण zygomorphic बन जाते हैं। ऐसे पुष्प लघुकरण (reduction) होने या stamens का विकास (development) न हो पाने के कारण unisexual भी हो जाते हैं। ये पुष्प insect pollinators (कीट परागणकारियों) को आकर्षित करने का काम करते हैं (इस विशेषता की तुलना Asteraceae के head से करने के लिए इकाई 22 देखिए)। यह floral development (पुष्प विकास) इसलिए उल्लेखनीय है कि इसमें सुस्पष्ट protandry (पुंपूर्वता) देखने में आती है। Stamens पहले विकसित होते हैं उसके बाद petals और फिर sepals और carpels सबसे अंत में विकसित होते हैं। पुष्प में पांच sepals होते हैं जो अक्सर ovary के ऊपर एक अल्पवर्धित किरीट या ताज़ (rudimentary crown) के रूप में प्रकट होते हैं। Odd sepal (असम बाह्यदल) posterior (पश्चस्थ), और valvate या imbricate aestivation होता है। पांच petals free होते हैं और उनमें valvate aestivation दिखाई देता है। Petals गहराई में lobed या emarginate (कोरखांची) होते हैं। ये प्राय: सफेद या पीले, विरले नीले या बैंगनी होते हैं।

Androecium : पांचों stamens, petals के **alternate** में होते हैं। Filaments लंबे और पतले और कलिका में भीतर की ओर झुके होते हैं। **Anthers basifixed** (आधार-लग्न) या dorsifixed (पृष्ठ-लग्न), dithecous होते हैं और उनमें **introrse dehiscence** होता है।

Gynoecium : यह bicarpellary, **syncarpous** और **inferior ovary** युक्त होता है। एक epigynous glandular disc (जायांगोपरिक ग्रंथिल डिस्क) या stylopodium (वर्तिकापाद) विद्यमान रहता है। Stylopodium से दो लघु-styles उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक style एक stigma में समाप्त होती है। Ovary bicarpellary और **axile placentation** होता है। प्रत्येक **locule** में सिर्फ एक ovule होता है और placenta (बीजांडासन) **apex** यानि शीर्ष की ओर धकेल दिया जाता है क्योंकि ovules pendulous (बीजांड निलंबी) होते हैं।

Fruit : यह एक शुष्क **schizocarp** (भिदुर) फल होता है जिसे cremocarp (क्रीमोकार्प) कहते हैं जो septum (पट) के नीचे की दिशा में दो mericarps (फलांशकों) में विभाजित होता है। फल की pericarp (बाह्यभित्ति) में अनेक पैटर्न दिखाई देते हैं। Mericarps के surface patterns (पृष्ठीय पैटर्न) इस family के जीनसों और स्पीशीज़ को पहचानने के लिए महत्वपूर्ण लक्षण हैं। बीज अक्सर pericarp से मिला रहता है, इसमें एक लघु embryo और एक **oily endosperm** पाया जाता है।

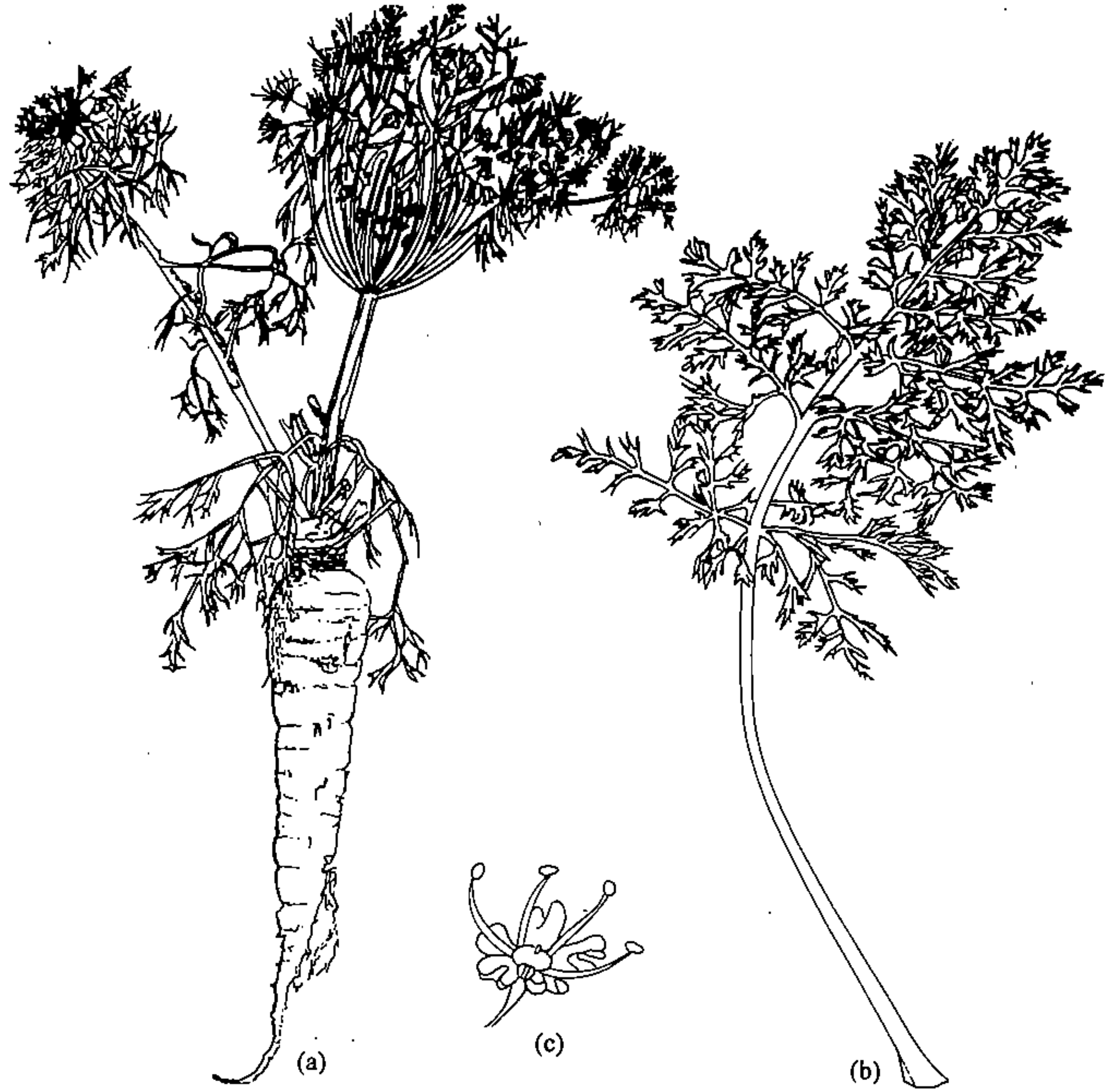

चित्र 21.33 : *Daucus carota* (डौकस कैरोटा)। a) जड़ और पुष्प सहित एक पादप। b) आवर्धित पत्ती। c) एक पुष्प। (पर्सगलव, 1988 से)।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. Aromatic herbs
2. Fistular stems
3. पत्तियां sheathing base सहित, और pinnately-divided लैमिना।
4. Umbellate inflorescence
5. Protandrous flowers
6. Reduced calyx
7. Polypetalous सफेद या पीला कोरोला।
8. Stamens लंबे पतले filament के साथ।
9. Aromatic herbs
10. Apical placentation जिसमें ovule pendulous होते हैं।
11. Ovary के ऊपर सुस्पष्ट stylopodia विद्यमान।
12. फल एक cremocarp जो mericarps में विभाजित रहता है।

वर्गीकृत स्थिति

बेंथम और हुकर ने Apiaceae या Umbelliferae को Polypetalae, Series III Calyciflorae and Order15 - Umbellales (पॉलिपिटेली, सिरीज III कैलिसिफ्लोरी और गण 15 - अम्बेलैलीज) में रखा है। Polypetalae में यह आखिरी order है और इसमें बेंथम और हुकर के वर्गीकरण की तरह तीन families हैं। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में family Umbelliferae को Archichlamydeae and Order 30 - Umbelliflorae (आर्कीक्लैमाइडी और गण 30 - अम्बेलिफ्लोरी) में वर्गीकृत किया गया है। वर्गीकरण की इन दोनों पद्धतियों में Umbelliferae की बंधुता Cornaceae (कॉर्नेसी) और Araliaceae (ऐरैलिएसी) के साथ है। तख्ताज़न ने अपने वर्गीकरण में Apiaceae family को Subclass I Cornidae, Superorder Aralianae and Order 149 - Araliales (उपवर्ग I कॉर्निडी, अधिगण ऐरैलिएनी और गण 149 - ऐरैलिएल्स) में रखा है। इस order में family Cornaceae को शामिल नहीं किया गया है, जिसे Order 141 - Cornales (गण 141 - कोर्नेलीज) में रखा गया है। इस order में पांच अन्य families शामिल हैं।

आर्थिक महत्व

पादपों की aromatic properties, Apiaceae family को आर्थिक महत्ता प्रदान करती है। इन्हें भोजन को सुगंधित - स्वादिष्ट (फ्लेवरिंग) बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। अनेक पुष्पछत्री (अम्बेलीफर) पादपों का प्रयोग spices (मसालों) के रूप में और औषधि में किया जाता है। कुछ सदस्यों को भोजन के रूप में खाया जाता है तो कुछ को सजावट के लिए (as ornamentals) उगाया जाता है। नीचे हम आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पादपों के बारे में बता रहे हैं।

1. *Daucus carota (डौकस कैरोटा)* - गाजर (चित्र 21.33), इसकी fleshy taproot (मांसल मूसला जड़) को कच्चा, सलाद के रूप में या नानाविध पकाकर खाया जाता है। कच्चे गाजर का रस एक पौष्टिक पेय (nutritious drink) के रूप में पिया जाता है। पूरे विश्व में गाजर की कई किस्में उगाई जाती हैं जिनमें pigments (वर्णकों) के कारण नाना प्रकार का रंजन (colouration) देखने को मिलता है।

2. *Petrosilinum crispum (पेट्रोसेलिनम क्रिस्पम)* - Parsley (अजमोद, पार्स्ले) इसे सभी शाकों में सबसे उपयोगी माना जाता है। इसकी पत्तियां विटामिन सी की विपुल स्रोत हैं और इन्हें भोजन में फ्लेवरिंग एजेंट के रूप में प्रयोग किया जाता है।

3. *Apium graveolens*, *A. graveolens* var. *dulce (ऐपियम ग्रैवियोलेंस, ऐ. ग्रैवियोलेंस* उप. *डल्सी)* - इसे सलाद, सूप और स्ट्यू (stews) में प्रयोग किया जाता है। इसके बीजों को भोजन में फ्लेवरिंग के लिए और औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

4. *A. sowa* (ऐ. सोवा) - पत्तियों को सलाद और सब्जी के रूप में खाया जाता है। इसके फलों को फ्लेवरिंग एजेंट के रूप में और औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

5. *Ferula assafoetida* (फेरूला ऐसाफिटिडा) - Asafoetida (हींग)। *Ferula* की इस और अन्य स्पीशीज़ से एक oleoresin (ओलियोरेजिन) मिलता है। यह root exudate (मूल निःस्राव), जड़ों पर घाव होने से (injury से) निकलता है। इस exudate को जमाकर सुखाया और फिर फ्लेवरिंग एजेंट के रूप में और औषधि में प्रयोग किया जाता है।

6. इस family के अनेक पादपों से ऐसे फल मिलते हैं जिन्हें spices के रूप में प्रयोग किया जाता है। इनमें अधिक प्रचलित इस प्रकार हैं : *Coriandrum sativum* (कोरिएंड्रम सैटाइवम, धनिया), *Cuminum cyminum* (कुमिनम सिमिनम; जीरा), *Foeniculum vulgare* (फोएनिकुलम वल्गेयर, सौंफ), *Pimpinella anisum* (पिम्पिनेला ऐनिसम, एनीसी, शतपुष्पा) और *Trachyspermum ammi* (ट्रैकीस्पर्मम एमी, अजवाइन)। *Centella asiatica, Hydrocotyle asiatica* (सेन्टेला एशियाटिका, ब्राह्मी) में अनेक औषधीय गुण हैं।

8. इस family के साधारण सजावटी पादप *Angelica* (ऐंजेलिका), *Heracleum* (हेरैक्लियम), और *Pimpinella* (पिम्पिनेला) की स्पीशीज़ हैं।

बोध प्रश्न 2

1. सबसे यथेष्ट उत्तर चुनिए:

अ) तख्ताज़न ने .... family (ies) को Subclass Rosidae में नहीं रखा है।

i) Apiaceae

ii) Cucurbitaceae

iii) Fabaceae

iv) Myrtaceae

ब) Superior ovary .... family की विशिष्टता है।

i) Apiaceae

ii) Cucurbitaceae

iii) Fabaceae

iv) Myrtaceae

2. कॉलम I में दिए गए placentation के प्रकार का सही मिलान कॉलम II में दी गई family से कीजिए।

कॉलम I	कॉलम II
Apical	Fabaceae
Axile	Cucurbitaceae
Marginal	Apiaceae
Parietal	Myrtaceae

3. उन दो families के नाम बताइए जिनके तने में bicollateral vascular bundles विद्यमान रहते हैं।

   i) ....

   ii) ....

4. नीचे दिए गए पारिभाषिक शब्दों (terms) की संक्षेप में व्याख्या कीजिए और उस family का नाम बताइए जिसमें इन संरचनाओं का वर्णन किया गया है।

   i) Cremocarp ....

   ....

   ....

   Family ....

   ii) Diadelphous stamens ....

   ....

   ....

   Family ....

   iii) Intra-marginal vein ....

   ....

   ....

   Family ....

   iv) Tendril ....

   ....

   ....

   Family ....

5. निम्न जीनसों को उनके families में रखिए और प्रत्येक जीनस की एक आर्थिक उपयोगिता बताइए।

	जीनस	फैमिली	उपयोगिता
i)	*Acacia*	....	....
ii)	*Benincasa*	....	....
iii)	*Centella*	....	....
iv)	*Cicer*	....	....
v)	*Delonix*	....	....
vi)	*Ferula*	....	....

vii) *Momordica* ....

viii) *Phaseolus* ....

ix) *Pimenta* ....

x) *Syzygium* ....

6. वर्गीकरण की किस पद्धति में निम्न नाम प्रयोग किए जाते हैं?

	Order	System of Classification
i)	Fabales	....
ii)	Myrtiflorae	....
iii)	Passiflorales	....
iv)	Umbellales	....
v)	Umbelliflorae	....

7. Family Fabaceae की तीन Subfamilies के नाम बताइए। प्रत्येक Subfamily के सदस्यों में अंतर स्पष्ट करने के लिए दो अभिलक्षण बताइए :

अ) Subfamily ....

अभिलक्षण i) ....

ii) ....

क) Subfamily ....

अभिलक्षण i) ....

ii) ....

स) Subfamily ....

अभिलक्षण i) ....

ii) ....

8. Family Myrtaceae के निदानात्मक अभिलक्षण बताइए।

....

....

....

9. Family Fabaceae में पुष्पी (floral) अभिलक्षणों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

10. आपके द्वारा पढ़े गए वर्गीकरण की तीनों पद्धतियों में Family Cucurbitaceae के स्थान की चर्चा कीजिए।

....

....

....

11. Family Apiaceae के आर्थिक महत्व पर नोट लिखिए।

....

....

....

12. Family Curcurbitaceae के निदानात्मक लक्षण लिखिए।

....

....

....

21.10 सारांश

... ...ाई में आपने जिन families का अध्ययन किया उसके निदानात्मक लक्षण इस प्रकार हैं :

Ranunculaceae : साधारणतया herbs, कभी-कभी woody climbers। तने में vascular bundles अनियमित रूप से व्यवस्थित रहते हैं, जैसा कि हमें उनके transection में दिखाई देता है। पत्तियां exstipulate, जिनका sheathing base होता है; लैमिना entire या lobed या finely divided, अक्सर heterophyllous होता है; flower solitary या cymose या racemose inflorescence में। Flower spirocyclic पाए जाते हैं जिसमें सभी floral parts spirally arranged होते हैं। फूल actinomorphic और hypogynous होते हैं। Perianth sepaloid या petaloid या कैलिक्स या कोरोला में विभेदित रहता है, stamens अधिसंख्या में, extrorse anthers के साथ। Carpels भी अधिसंख्या में पाए जाते हैं तथा ये प्राय: free होते हैं। फल achenes या follicles का group होता है। बीज में straight embryo और विपुल oily endosperm रहता है।

Brassicaceae : Herbaceous plants जिनमें odorous watery sap पाया जाता है। पत्तियां सरल, exstipulate, लैमिना lobed या divided। Inflorescence raceme corymbose form में पाया जाता है। पुष्प ebracteate, polypetalous होते हैं। कैलिक्स दो सुस्पष्ट whorls में पाया जाता है। कोरोला ... (cruciform) जैसा होता है जिसमें petals एक limb और claw organisation दिखाते हैं। Androecium tetradynamous होता है। Gynoecium bicarpellary होता है जिसमें parietal placentation पाया जाता है। फल siliqua या silicula होता है। बीज छोटा, जिसका बड़ा भाग embryo घेरे रहता है।

Malvaceae : Herbs, shurbs या trees। Young shoot और पत्तियां stellate hairs से ढकी रहती हैं। पत्तियां reniform, cordate या palmately-divided मिलती हैं। Inflorescence solitary flowers का या racemose और complex होता है। पुष्प एपिकैलिक्स युक्त, कैलिक्स valvate aestivation के साथ पाया जाता है। कोरोला convolute या imbricate aestivation के साथ। Stamens बहुसंख्यी, monadelphous होते हैं जिनमें anthers reniform monothecous पाए जाते हैं। Pollen grains बड़े, spiny और spherical होते हैं। Gynoecium multicarpellary, syncarpous होता है, जिसमें superior ovary और axile placentation पाया जाता है। फल capsule या schizocarpic होता है।

Rutaceae : Shrubs या trees होते हैं, तथा herbs के रूप में विरले ही मिलते हैं। पत्तियां compound, gland-dotted, aromatic होती हैं। पुष्प में एक विशिष्ट hypogynous disc होता है। Petals, sepals से बड़े होते हैं। Stamens obdiplostemonous होते हैं। फल hesperidium या drupe या schizocarpic होता है। बीजों में बड़ा embryo पाया जाता है।

Fabaceae : Herbs, climbers, shrubs या trees। पत्तियां stipulate साधारणतया compound, उनका pulvinate base होता है; leaflets में nyctinastic movements दिखाई देते हैं। Inflorescence प्राय: racemose होता है। पुष्प bracteate साधारणतया actinomorphic, pentamerous (Subfamily Mimosoideae) या zygomorphic (Subfamily Caesalpinioideae या Papilionatae)। कोरोला में valvate aestivation (Subfamily Mimosoideae) या ascending imbricate (Subfamily Papilionatae) होता है। Petals समान या असमान आकार के होते हैं। Stamens की संख्या कुछ से लेकर Subfamily Mimosoideae में अनेक होती है जिनमें चमकीले रंग के filaments पाए जाते हैं। या जैसा कि Caesalpinioideae में देखा जाता है, कुछ stamens staminodes में लघुकृत हो जाते हैं या फिर Subfamily Papilionatae में diadelphous stamens होते हैं। Gynoecium monocarpellary जिसमें एक superior ovary और marginal placentation पाया जाता है। फल legume या pod होता है। बीजों में endosperm अत्यल्प या अनुपस्थित होता है और embryo में चपटी पत्तीनुमा या मांसल cotyledons विद्यमान होते हैं।

Myrtaceae : Woody plants जो bicollateral vascular bundles युक्त होते हैं। तरुण तनों और पत्तियों में अनगिनत oil glands पाई जाती हैं। पत्तियां exstipulate, coriaceous और intra-marginal vein युक्त होती हैं। पुष्प solitary या cymose या racemose inflorescence में व्यवस्थित होते हैं। पुष्प bisexual, actinomorphic, प्राय: epigynous होते हैं। Receptacle या डिस्क सुविकसित होती है। कैलिक्स और कोरोला सुस्पष्ट और free या calyptra (कैलिप्ट्रा) में रूपांतरित होते हैं जो anthesis के समय झड़ जाता है। Stamens अधिसंख्यी, gland-tipped connective सहित होते हैं। Ovary syncarpous, inferior, तथा placentation axile होता है। फल एक berry या एक capsule होता है। बीज कठोर और non-endospermous होते हैं।

Cucurbitaceae : Tendril bearing, trailing या climbing herbaceous plants, तने 5-angular और bicollateral vascular bundles के साथ पाए जाते हैं। पत्तियां लंबे hollow petioles युक्त, सरल या palmately-lobed लैमिना और palmi-nerved reticulate venation, flower solitary या cymose inflorescence में व्यवस्थित पुष्प। Unisexual, pentamerous पुष्प। Androecium convoluted, anthers युक्त। Tricarpellary, syncarpous inferior ovary, जिसमें parietal placentation पाया जाता है। फल एक बेरी है। बीज में compressed oil containing, flat (चपटे) cotyledons होते हैं।

Apiaceae : Aromatic herbs, तना fistular। पत्तियों में sheathing base पाया जाता है, और लैमिना palmately-divided होता है। Inflorescence Umbellate होती है। पुष्प protandrous, कैलिक्स लघुकृत, कोरोला polypetalous, श्वेत या पीला। Stamens लंबे पतले filament युक्त। Bicarpellary, syncarpous gynoecium, inferior ovary के साथ। Apical placentation जिसमें ovule pendulous होते हैं। फल एक cremocarp होता है, जो दो mericarps (मेरीकार्पों) का बना होता है।

21.11 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्न families के सदस्यों की पहचान के फील्ड अभिज्ञान अभिलक्षण क्या हैं?

   i) Ranunculaceae

   ....

   ....

   ....

ii) Rutaceae

....

....

....

iii) Myrtaceae

....

....

....

iv) Cucurbitaceae

....

....

....

v) Malvaceae

....

....

....

vi) Apiaceae

....

....

....

2. निम्नलिखित familes के पुष्प अभिलक्षणों की तुलना कीजिए :

i) Ranunculaceae and Brassicaceae

ii) Rutaceae and Myrtaceae

3. Fabaceae family के सदस्यों की आर्थिक उपयोगों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

4. निम्नलिखित families के androecium और gynoecium की तुलना कीजिए।

   i) Brassicaceae

   ii) Rutaceae

   iii) Malvaceae

   iv) Apiaceae

Family	Androecium	Gynoecium
i) Brassicaceae		
ii) Rutaceae		
iii) Malvaceae		
iv) Apiaceae		

21.12 उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. अ) i) Brassicaceae

   ब) ii) Malvaceae

2. i) Malvaceae

   ii) Rutaceae

3. i) एपिकैलिक्स एक extra कैलिक्स-नुमा संरचना है, जो प्राय: bracteoles की बनी होती है। यह sepals से निर्मित, कैलिक्स whorl को घेरे रहता है। इकाई का भाग 21.4 भी देखिए।

   ii) Obdiplostemonous androecium, अधिकांश पुष्पों में stamens एक single whorl में और petals के साथ alternate क्रम में विद्यमान रहते हैं। कुछ पुष्पों में stamens के दो whorls पाए जाते हैं। जब outer whorl petals के alternate होता है, तो भीतरी whorl sepals के alternate होता है। इस स्थिति को diplostemonous कहा जाता है। मगर कभी-कभी stamens का बाहरी whorl petals के opposite स्थित रहता है जिससे वह petals के बजाए sepals के साथ alternate होता है। इस स्थिति को obdiplostemonous कहते हैं यह स्थिति आम तौर पर Rutaceae family में देखी जाती है।

   iii) यह एक विशेष प्रकार का कैप्सूल है जिसका आकार pod या legume जैसा होता है। यह एक सूखा dehiscent फल है जो एक रिप्लम के द्वारा दो भागों में विभाजित रहता है। फल के दोनों भाग नीचे से ऊपर की ओर खुलते हैं जिससे बीज replum से लगे रह जाते हैं। सिलिक्वा जितना चौड़ा होता है, उससे कम से कम तीन गुना उसकी लंबाई होती है। यह Brassicaceae family की विशिष्टता है।

   iv) Spirocyclic (स्पाइरोसाइक्लिक) flower : प्रत्येक पुष्प में अनेक spirally arranged floral parts होते हैं। Perianth कैलिक्स और कोरोला में विभक्त हो सकता है। इनके बाद stamens और carpels होते हैं। ये floral parts भिन्न cyclic whorls में व्यवस्थित हो सकते हैं। बहरहाल ये floral parts इस प्रकार spiral आकार में व्यवस्थित हो सकते हैं जिससे spirally arranged perianth, spirally arranged stamens और carpels के संतत रहते हैं। ऐसे पुष्प जिनके floral parts के arrangement में इस तरह का पैटर्न दिखाई देता है उन्हें spirocylic flowers कहा जाता है। इस तरह के flowers Ranunculaceae family में पाए जाते हैं।

4.

	जीनस	फैमिली	उपयोग
i)	*Aconitum*	Ranunculaceae	औषधीय
ii)	*Aegle*	Rutaceae	खाद्य और औषधीय
iii)	*Alyssum*	Brassicaceae	सजावटी
iv)	*Delphinium*	Ranunculaceae	सजावटी
v)	*Eruca*	Brassicaceae	तिलहन
vi)	*Gossypium*	Malvaceae	रेशा (फ़ाइबर)
vii)	*Hibiscus*	Malvaceae	सजावटी, रेशा
viii)	*Murraya*	Rutaceae	मसाले, सजावटी

5. i) Family Rutaceae

   ii) Subclass H Rosidae

6. अ) i) Family Ranunculaceae

   ii) Family Brassicaceae

ब) i) Subclass : D Ranunculidae

Superorder : Ranunculanae

Order : 26 Ranunculales

ii) Subclass : G Dilleniidae

Superorder : Violanae

Order : 84 Capparales

7. अ) Parietal placentation

ब) Tetradynamous androecium जिसमें छ: stamens दो whorls में व्यवस्थित रहते हैं। बाहरी दो लघु stamens और भीतरी whorl में चार दीर्घ stamens होते हैं।

8. i) Brassicaceae : फल siliqua होता है, उपरोक्त उत्तर 3 (iii) भी देखें।

ii) Malvaceae : फल एक capsule है जो सूखा और dehiscent होता है। यह schizocarpic भी हो सकता है जो carcerulus बनाता है। यह indehiscent होता है और प्रत्येक carpel central column तथा एक दूसरे से अलग हो जाता है।

iii) Ranunculaceae : इसमें aggregate फल होता है, जो अनेक सरल फलों से मिलकर बनता है। यह follicles का एक group हो सकता है जिसमें से प्रत्येक में कुछ से लेकर अनेक बीज पाए जाते हैं। यह one-seeded achenes का समूह भी हो सकता है। कभी-कभी यह कैप्सूल के रूप में भी पाया जाता है।

iv) Rutaceae : फल हेस्पिरिडियम हो सकता है। यह एक विशेष प्रकार की बेरी है, जिसके fleshy pulp में अनेक juice sacs पाये जाते हैं। यह drupe या schizocarp हो सकता है।

9.

Malvaceae	Rutaceae
i) पत्तियां और तरुण shoots stellate hairs से ढके रहते हैं।	ii) पत्तियां और तरुण shoots aromatic होते हैं।
ii) पत्तियां सरल होती हैं।	ii) पत्तियां compound होती हैं।
iii) एपिकैलिक्स पाया जाता है	iii) एपिकैलिक्स नहीं होता।
iv) Hypogynous डिस्क नहीं होती।	iv) Hypogynous डिस्क पाई जाती है।
v) Stamens monadelphous होते हैं।	v) Stamens obdiplostemonous होते हैं।
vi) Anthers reniform और monothecous होते हैं।	vi) Anthers linear और dithecous होते हैं।
vii) Carpels united होते हैं।	vii) Carpels base पर free मगर style से united होते हैं।
viii) फल कैप्सूल होता है।	viii) फल हेस्पेरिडियम होते हैं।

10. इकाई के भाग 21.2 को पढ़ें।

11. इकाई के भाग 21.3 को पढ़ें।

बोध प्रश्न 2

1. (अ) (ii) Cucurbitaceae, and Apiaceae

   (ब) (ii) Fabaceae

2.

कॉलम I	कॉलम II
Apical	Apiaceae
Axile	Myrtaceae
Marginal	Fabaceae
Parietal	Cucurbitaceae

3. i) Cucurbitaceae

   ii) Myrtaceae

4. i) Cremocarp : यह एक प्रकार का dry dehiscent फल है जो दो बराबर भागों का बना होता है जिन्हें मेरीकार्प कहते हैं। इसकी pericarp में विशिष्ट पैटर्न दिखाई देते हैं।
   Family Apiaceae

   ii) Diadelphous stamens : किसी एक पुष्प के stamens united होकर दो भिन्न groups या बंडल बनाते हैं। पुष्प में stamens का इस प्रकार का गठन diadelphous कहलाता है। Family Fabaceae में Subfamily Papilionatae में वर्गीकृत अनेक पादपों में 9 stamens एक समूह बनाते हैं लेकिन 10 वां stamen free रहता है। Stamens का इस तरह का (9) + 1 समूहन diadelphous कहलाता है।
   Family Fabaceae

   iii) Intra-marginal vein : Reticulate venation युक्त dicot पत्तियों में अनेक लघु veins भी पाई जाती है। यही लघु veins मिलकर leaf margin के भीतर एक continuous vein बनाती हैं। इस शिरा(vein) को intra-marginal vein कहते हैं।
   Family Myrtaceae

   iv) Tendril : यह पौधे का एक thread-like organ है, जो किसी भी संरचना के संपर्क में आते ही उसे जकड़ लेता है। Tendrils climbing habit वाले अनेक पादपों में विद्यमान रहते हैं। टेन्ड्रिल एक special morphological structure है जो तने या पत्ती या अन्य plant part का ही रूपांतरित स्वरूप है। यह branched या unbranched हो सकता है और वह support जिसको यह जकड़े रखता है, उसके इर्दगिर्द यह clockwise या anti-clockwise coiled रहता है।
   Family Cucurbitaceae

5.

जीनस	फैमिली	उपयोग
i) *Acacia*	Fabaceae, Subfamily Mimosoideae	चर्मशोधन सामग्री
ii) *Benincasa*	Cucurbitaceae	खाद्य फल
iii) *Centella*	Apiaceae	औषधीय
iv) *Cicer*	Fabaceae, Subfamily Papilionatae	खाद्य बीज
v) *Delonix*	Fabaceae, Subfamily Caesalpinioideae	सजावटी
vi) *Ferula*	Apiacae	मसाले, औषधीय

vii) *Momordica*	Cucurbitaceae	खाद्य फल
viii) *Phaseolus*	Fabaceae, Subfamily Papilionatae	खाद्य फल
ix) *Pimenta*	Myrtaceae	मसाला
x) *Syzygium*	Myrtaceae	मसाला

6.

	Order	System of Classification
i)	Fabales	तख़्ताज़न
ii)	Myrtiflorae	एंग्लर और प्रांट्ल
iii)	Passiflorales	बेंथम और हुकर
iv)	Umbellales	बेंथम और हुकर
v)	Umbelliflorae	एंग्लर और प्रांट्ल

7. अ) Subfamily Mimosoideae

   अभिलक्षण i) Actinomorphic पुष्प

   ii) कोरोला aestivation valvate

   ब) Subfamily Caesalpinioideae

   अभिलक्षण i) Zygomorphic पुष्प

   ii) कोरोला aestivation ascending imbricate

   स) Subfamily Papilionatae

   अभिलक्षण i) Zygomorphic पुष्प

   ii) कोरोला aestivation descending imbricate

8. भाग 21.7 को पढ़ें : Myrtaceae 'कुल के निदानात्मक लक्षण'।
9. भाग 21.6 पढ़े और family Fabaceae की तीन subfamiles के पुष्प अभिलक्षण लिखें।
10. भाग 21.8 को देखें: family Cucurbitaceae की 'वर्गीकृत स्थिति'।
11. भाग 21.9 को पढ़िए : family Apiaceae का 'आर्थिक महत्व'।
12. भाग 21.8 को पढ़ें : Cucurbitaceae 'कुल के निदानात्मक लक्षण'।

अंत में कुछ प्रश्न

1. i) भाग 21.2 देखिए।

   ii) भाग 21.5 देखिए।

   iii) भाग 21.7 देखिए।

   iv) भाग 21.8 देखिए।

   v) भाग 21.4 देखिए।

   vi) भाग 21.9 देखिए।

2. i) भाग 21.2 और 21.3 देखिए।

   ii) भाग 21.5 और 21.7 देखिए।

3. भाग 21.6 देखिए।

4. i) भाग 21.3 देखिए।

   ii) भाग 21.5 देखिए।

   iii) भाग 21.4 देखिए।

   iv) भाग 21.9 देखिए।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

इकाई 22 द्विबीजपत्री कुल-2

इकाई की रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

22.2 रूबिएसी

22.3 ऐस्टरेसी

22.4 सैपोटेसी

22.5 ऐपोसायनेसी

22.6 ऐस्क्लीपिएडेसी

22.7 सोलेनेसी

22.8 ऐकैंथेसी

22.9 लैमिएसी

22.10 ऐमैरैंथेसी

22.11 सैंटेलेसी

22.12 यूफोर्बिएसी

22.13 सारांश

22.14 अंत में कुछ प्रश्न

22.15 उत्तर

22.1 प्रस्तावना

इस इकाई में भी हम वर्गिकी पर अपनी चर्चा जारी रखेंगे, जिसमें आप द्विबीजपत्रियों (angiosperms) की 11 और families के बारे में पढ़ेंगे। प्रत्येक family के वर्णन का तरीका पिछली इकाई की तरह ही है जिससे आप परिचित हो ही चुके हैं। इस इकाई के उद्देश्य भी वही हैं जो पिछली इकाई के थे। आपकी याद ताज़ा करने के लिए यहां फिर से उन्हें लिख रहे हैं। इकाई-21 में दिए गए 'प्रभावी अध्ययन के लिए सुझाव' इस इकाई के लिए भी उपयुक्त हैं। आशा है उनसे आपका अध्ययन अधिक रोचक तथा सार्थक हुआ होगा। इस इकाई का अध्ययन शुरू करने से पहले, एक बार उन पर दोबारा नज़र डाल लें। साथ ही, families की वर्गीकृत स्थिति के अध्ययन के दौरान, Appendix 22.1 पर सरसरी नज़र डालना न भूलें। इससे आपको इन classification systems के इस्तेमाल का अभ्यास होगा। आप इस Appendix में दी गई विषय वस्तुओं को याद करने में समय न लगाएं, पर केवल इसके structure और use से परिचित आवश्य हो जाएं। तो अब हम सीधे इस इकाई की पहली family पर आते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होने चाहिए कि आप :

- angiosperms में विद्यमान विपुल विविधता (immense diversity) को समझ सकें,
- वर्णित families के सही वानस्पतिक नाम के अतिरिक्त उसके टाइप जीनस भी जान पाएं,
- प्रत्येक family के विशिष्ट vegetative और floral characters के बारे में बता सकें,
- यहाँ दी गई families के diagnostic features का विश्लेषण कर उन्हें सूचीबद्ध कर सकें,
- इस इकाई में बताई गई प्रत्येक family का classification भिन्न systems के अनुसार कर सकें,
- प्रत्येक family के size और उसके distribution के बारे में बताते हुए उसके कुछ भारतीय प्रतिनिधियों के नाम बता पाएं,

- अध्ययन की गई families के आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण उन पौधों की सूची बना सकें जो स्थानीय रूप से सुलभ हों, तथा
- प्रकृति की हमें एक अनुपम भेंट के रूप में वनस्पति की महत्ता और मानव के कल्याण और सुरक्षित भविष्य के लिए प्रकृति के संरक्षण की जरूरत की अनुभूति कर सकें।

22.2 Rubiaceae (रूबिएसी)

The Coffee family (कॉफी कुल)

Type genus: *Rubia* (रुबिया)

सामान्य जानकारी

यह एक बड़ी family है जिसमें 450 जीनस और 6500 स्पीशीज है जो मुख्यत: tropical या subtropical regions में पाई जाती हैं, मगर कुछ temperate regions में और चंद स्पीशीज़ arctic में भी मिलती हैं। भारत में इस family के 75 जीनस और 300 स्पीशीज़ पाई जाती हैं जिनमें से कुछ आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं या सजावटी पादपों के रूप में उगाई जाती हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herbs, shrubs या trees, leaves opposite या whorls में अधिकतर intra- or inter-petiolar **stipules** (अंत:- या अंत-वृंतीय अनुपर्णों) युक्त, flowers solitary और बड़े या dichasial cymes (युग्मशाखित ससीमाक्ष) में होते हैं और प्राय: छोटे bisexual, actinomorphic होते हैं; fruit एक कैप्सूल या बेरी या भिदुर यानि schizocarp होता है जिसमें छोटे-छोटे बीज होते हैं। बीज में सुविकसित endosperm पाया जाता है।

आकारिकीय विविधता

पादपों के स्वभाव में भारी विविधता पाई जाती है (चित्र 22.1 और 22.2 देखें)। कई स्पीशीज़ trees या shrubs होती हैं, लेकिन इनमें कुछ स्पीशीज़ herbs भी होती हैं। इनके अतिरिक्त कम से कम चार genera *Myrmecodia* (मर्मेकोडिया) पूर्वी हिंद-मलय प्रदेशों में, अफ्रीका में *Cuviera* (कुविएरा); दक्षिण अमेरिका में *Duroia* (डुरोइया) और पूर्वी एशिया, न्यू गिनी और फ़ीज़ी में *Hydnophytum* (हाइड्नोफाइटम) को उनके epiphytic (अधिपादपी,एपिफाइटी) स्वभाव के लिए जाना जाता है। फिर इनमें myrmecophily (पिपीलिकारागिता,चींटी परागण) भी पायी जाती है। यह चीटियों के साथ सहजीवी संबंध हैं। इन पादपों में एक tuber-like यानि कंदनुमा तना या तो पादप के base यानि आधार पर, या nodes (पर्व-संधियों) के ऊपर, या फिर inflorescence के नीचे विकसित होता है। यह tuber, mass of corky tissue (काग ऊतक के पिंड) का बना होता, जिसमें असंख्य पथ (paths) और कक्ष (chambers) बने होते हैं जिनमें चीटियां विचरण करती हैं। ऐसा माना जाता है कि चीटियां पुष्पों को अवांछित भ्रमणकारियों (undesirable visitors) से बचाती हैं।

Leaf: पत्तियां opposite या whorled और ये stipulate होती हैं। इस family में stipules अति विशिष्ट होते हैं, ये node (पर्वसंधि) पर पत्तियों के बीच विद्यमान हो सकते हैं और inter-petiolar यानि अंतरावृंतीय कहलाते हैं। या फिर stipules, petiole (अनुपर्णवृंत) और तने के बीच में leaf base (पर्णाधार) के सम्मुख हो सकते हैं और इसलिए intra-petiolar यानि अंत:वृंतीय कहलाते हैं। इन दो स्थितियों inter- or intra-petiolar के अलावा अनुपर्णों में अनेक morphological variations (आकारिकीय भिन्नताएं) भी पाई जाती हैं और ये bristles (शूकों, खरलोम) या spines (शूलों) के रूप में प्रकट हो सकते हैं या ये leaf-like (पर्णनुमा), या conical, cap-like structure (शंक्वाकार, गोपकनुमा संरचनाओं) का रूप धारण कर सकते हैं, जो तरुण कलिकाओं की रक्षा करती हैं।

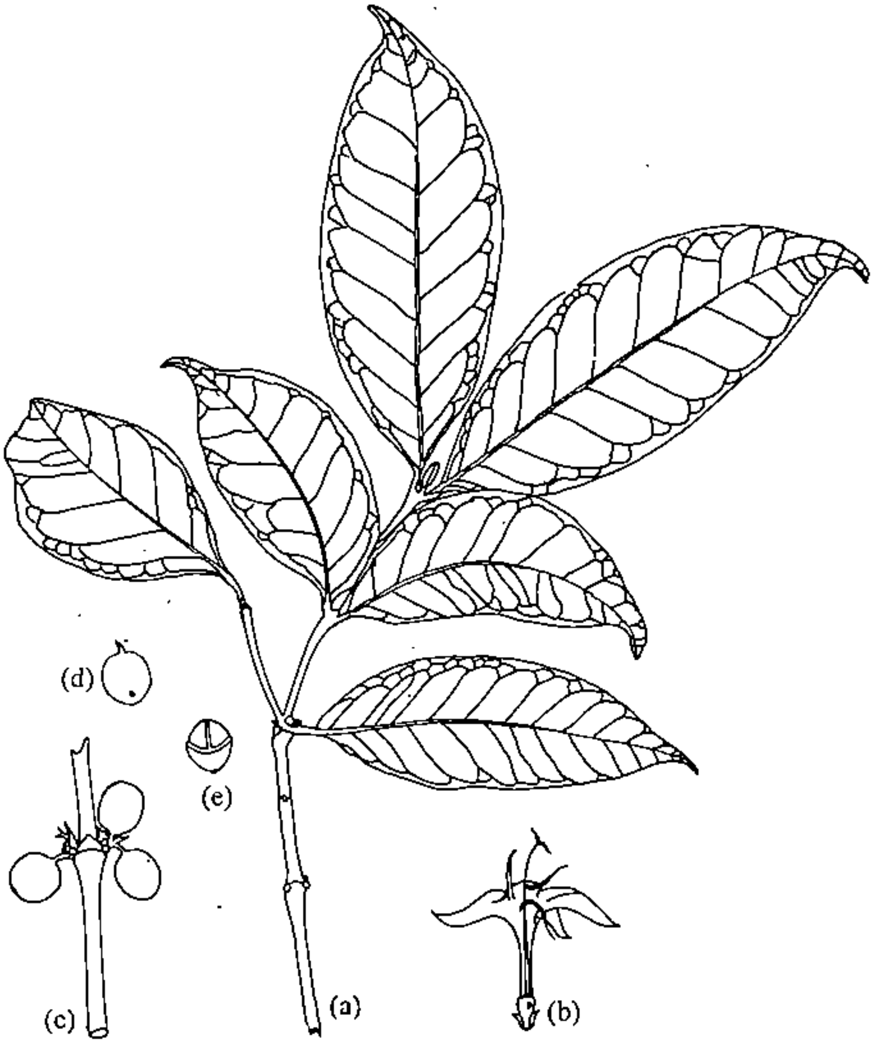

चित्र 22.1 : *Coffea arabica* (*कॉफिया अरेबिका*)। (a) Vagetative shoot का एक हिस्सा। (b)Longitudinal section में एक पुष्प। (c) फल-धारी एक node यानि एक पर्वसंधि। (d) एक फल। (e) एक फल जिसमें mesocarp यानि मध्यफलभित्ति का एक भाग छील दिया गया है। (पर्सग्लव 1988)।

Inflorescence : यह एक बड़ी, solitary, terminal (अंत्य) पुष्प के रूप में, या dichasial cyme होती है जो एक much-branched cymose panicle (अतिशखित ससीमाक्षी पुष्पगुच्छ) की रचना करती है। ये branched inflorescences कभी-कभी dense globose heads (सघन, गोलाकार मुंडक) बनाते हैं जिनमें अनेक छोटे-छोटे फूल पाए जाते हैं।

Flower : पुष्प pedicellate, complete, सवृंत, पूर्ण, प्रायः actinomorphic, bisexual, और epigynous (जायांगोपरिक) होते हैं। ये tetramerous या pentamerous होते हैं। कैलिक्स साधारणतया छोटा, 4 या 5 sepals का, gamosepalous या base तक free होता है, कभी-कभी एक sepal बहुत बड़ा हो जाता है और चटक रंग (सफेद या पीला या गुलाबी इत्यादि) लिए रहता है। यह कीट परागणकारियों (insect pollinators) को आकर्षित करने का काम करता है जैसे *Mussaenda* (*म्यूसीन्डा*) में। इसके अलावा उत्तरी अफ्रीका के *Alberta* (*अल्बर्टा*), और *Nematostylis* (*नीमैटोस्टाइलिस*) जैसे कुछ जीनसों में sepals सिर्फ fertilisation (निषेचन) के पश्चात् ही आकार में बढ़ते हैं और फल के प्रकीर्णन (dispersal) में सहायक होते हैं।

चार या पांच दलों के gamopetalous कोरोला में valvate, convolute या imbricate aestivation पाया जाता है। यह अभिलक्षण, इस family के विभिन्न जीनसों को पहचानने में सहायता करता है। कोरोला कभी-कभी zygomorphic भी होता है।

Androecium : पुंकेसरों (stamens) की संख्या corolla lobes के बराबर, epipetalous stamens (दललग्न पुंकेसर) petals के एकांतर (alternate) होते हैं और साधारणतया कोरोला की neck (ग्रीवा)

पर, या उसके समीप आलग्न होते हैं। ये विरले ही उसके आधार (base) पर आलग्न पाए जाते हैं। Stamens के दो whorls विरले ही पाए जाते हैं, परागकोश अनुदैर्ध्य स्फुटन (anthers longitudially dehisce) करते हैं।

Gynoecium : प्राय: bicarpellary (कभी-कभी 1 से अधिसंख्य अंडपी), syncarpous gynoecium, inferior ovary (अधोवर्ती अंडाशय) पायी जाती है। मगर कुछ जीनसों में perigyous (परिजायांग) या कभी-कभी hypogynous (अधोजायांगी) दशा भी देखी जाती हैं। Placentation यानि बीजांडन्यास प्राय: axile होता है, जिसमें प्रत्येक कोष्ठक में 1-अधिसंख्य ovules (अंडप) विद्यमान रहते हैं। परंतु placentation में भी भिन्नताएं पाई जाती हैं। जैसे *Oldenlandia* (*ओल्डनलैंडिया*) में peltate (छत्रिकाकार) या stalked spherical (सवृंत वृत्ताकार) placentae यानि बीजांडासन पाए जाते हैं जबकि *Cinchona* (*सिंकोना*) में यह फैलकर, टी-आकार (अनुप्रस्थ काट में) की संरचना बनाता है। Style सरल, और stigma capitate (समुंड) या lobed (पालित) होता है।

Fruit : यह capsule या berry या schizocarp फल के रूप में होता है। फल आकारिकी की इस विशेषता को family के वर्गीकरण में प्रयोग किया जाता है। *Galium* (*गैलियम*), *Anthospermum* (*ऐंथोस्पर्मम*) और अन्य जीनसों में मांसल (fleshy) फल छोटे, दृढ़ प्रतिवक्री रोमों (stiff, recurving hairs) से ढके होने के कारण चिपचिपे (sticky) हो जाते हैं जिससे जंतुओं (animals) द्वारा उनके dispersal में सहायता मिलती है। ये बीज प्राय: पंखदार होते हैं जिससे wind dispersed यानि वायु प्रकीर्णन में सहायता मिलती है। उदाहरण (*Cinchona*) बीज में एक small embryo (लघु भ्रूण) और abundant endosperm (प्रचुर भ्रूणपोष) होता है। *Coffea* में यही endosperm cartilaginous (उपास्थिसम) और convoluted (संवलित) हो जाता है।

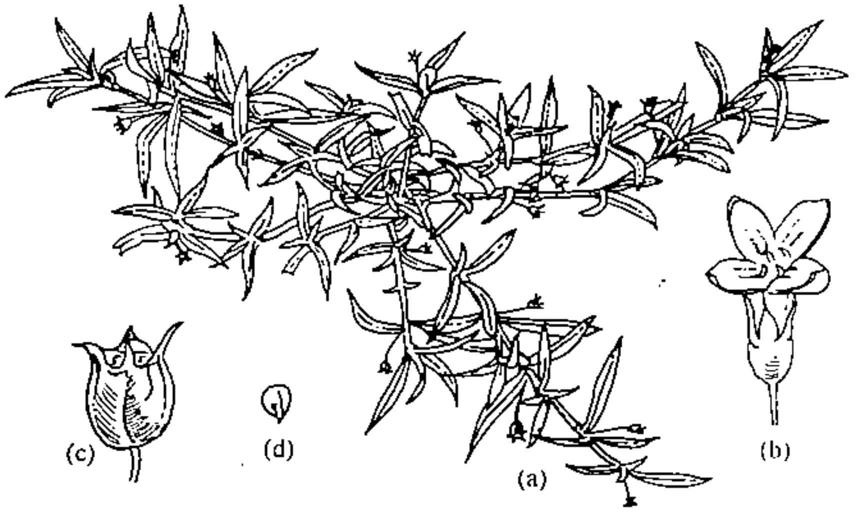

चित्र 22.2 : *Oldenlandia corymbosa* (ओल्डनलैंडिया कोरिम्बोसा)। (a) पुष्प और फल युक्त एक पादप। (b) एक पुष्प। (c) एक कैप्सूल, इसमें कैलिक्स के अवशेषों (remnants) को नोट कीजिए जो फल के शीर्ष पर दंतनुमा संरचनाओं (teeth-like structures) के रूप में दिखाई दे रहे हैं। (d) एक बीज। (माहेश्वरी, 1966 से)।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1. पादप herbaceous या woody
2. पत्तियां opposite या whorled
3. Interpetiolar या intrapetiolar stipules विद्यमान होते हैं।
4. एक solitary बड़ा terminal flower, या dichasial cyme inflorescence
5. पुष्प tetramerous या pentamerous और epigymous होते हैं।
6. कैलिक्स लघु sepals के, या उसमें एक आवर्धित चटक रंग का sepal होता है।

7. Gamopetalous (संयुक्तदली) कोरोला में valvate, या convolute, या imbricate aestivation होता है।

8. Stamens epipetalous और कोरोला ट्यूब में inserted होते हैं।

9. Gynoecium bicarpellary, ovary inferior, साधारणतया axile placentation पाया जाता है।

10. फल एक बेरी, या कैप्सूल या भिदुर (schizocarpic) होता है।

11. बीज छोटे मगर abundant endosperm लिए रहते हैं, कभी-कभी ये winged (पंखदार) भी होते हैं।

वर्गीकृत स्थिति

Family Rubiaceae को बेंथम और हुकर ने Gamopetalae, Series 1 Inferae, Order Rubiales (गैमोपिटैली, सीरीज 1 इन्फेरी, गण रुबिएलीज) में रखा है। Gamopetalae का यह पहला order (गण) है और असमें दो families शामिल हैं - Rubiaceae और Caparifoliaceae (कैप्रीफोलिएसी)। एंगलर और प्रांट्ल ने अपने वर्गीकरण में Rubiaceae family को Sympetalae, Order Rubiales (सिम्पिटेली, गण रुबिएलीज) में रखा है। इस order में पांच families हैं: Rubiaceae, Caparifoliaceae, Adoxaceae (ऐडॉक्सेसी), Valerianaceae (वैलरिएनेसी), और Dipsacaceae (डिप्सैकेसी)। तख़्ताज़न के वर्गीकरण में Rubiaceae को Subclass K Lamiidae, and Order 162-Rubiales (उपवर्ग K लैमाइडी और गण 162 - रुबिएलीज) में रखा गया है। Rubiaceae के अलावा इस order में तीन अन्य families भी हैं। Caprifoliaceae family को Subclass I Cornidae, Superorder Dipsacanae, and Order 154 - Dipsacales (उपवर्ग I कार्निडी, अधिगण डिप्सैकैनी, और गण 154 - डिप्सैकेलीज) में रखा गया है। इससे यह संकेत मिलता है कि बेंथम और हुकर तथा एंगलर और प्रांट्ल के अनुसार तो Rubiaceae का संबंध Caparifoliaceae से है मगर तख़्ताज़न के अनुसार नहीं।

आर्थिक महत्व

1) पेय पादप *Coffea* की कई स्पीशीज़ हैं जिन्हें उनके फलों के लिए उगाया जाता है तथा जिससे कॉफी (coffee) बनाई जाती है इसके बारे में आपने (इकाई 18) में विस्तार से पढ़ा है।

2) कॉफी के बाद *Cinchona* जीनस की अनेक स्पीशीज़ उसके छाल (bark) के लिए उगायी जातीं हैं जिसमें quinine (कुनैन) और अन्य alkaloids (ऐल्कैलॉइड) पाए जाते हैं जिन्हें मलेरिया जैसे रोगों के उपचार में प्रयोग किया जाता है।

3) *Cephaelis ipecacuanha* (*सिफैलिस इपैकाक्येना*) या Ipecac (इपेक) में alkaloids (ऐल्कैलॉइड) होते हैं जिन्हें अमीबाजनित पेचिश (amoebic dysentry) के उपचार में प्रयोग किया जाता है।

4) *Uncaria gambier* (*अन्कैरिया गैम्बियर*) या Gambier (गैम्बियर) या सफेद कत्थे (white cutch) चर्वण सामग्री (masticatory material) के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसमें टैनिन (tannin) पाए जाते हैं।

5) Rubiaceae family के अनेक पादपों को ornamentals के तौर के पर उगाया जाता है। इनकी कुछ जातियां इस प्रकार हैं : *Gardenia jasminoides* (*गार्डेनिया जैस्मिनोइडीज*), *Ixora* species (*इक्सोरा स्पीशीज़*), *Mussaenda* species (*म्यूसीन्डा स्पीशीज़*), *Hamelia* species (*हैमीलिया स्पीशीज़*), *Pentas lanceolata* (*पेन्टांस लैन्सियोलैटा*), *Portlandia grandiflora* (*पोर्टलैन्डिया ग्रैन्डिफ्लोरा*), *Anthocephalus cadamba* (*ऐन्थोसिफैलस कैडैम्बा*)।

22.3 Asteraceae (ऐस्टरेसी)

The Sunflower family. Compositae (सूरजमुखी कुल, कम्पोजिटी)
Type genus: *Aster* (ऐस्टर)

सामान्य जानकारी

Asteraceae (ऐस्टरेसी) या Compositae (कम्पोजिटी) को dicotyledons में सबसे बड़ी family माना जाता हैं, जिसमें लगभग 1100 जीनस और 20.000 से अधिक स्पीशीज़ पाई जाती हैं। यह flowering plants का 10 प्रतिशत हिस्सा है। इसका वितरण विश्वजनीन (world-wide distribution) है और इस family के सदस्य नाना प्रकार के habitats (आवासों) में पाए जाते हैं। इस family की ऐसी उल्लेखनीय सफलता का श्रेय इसके characteristic capitular inflorescence (विशिष्ट मुंडक पुष्पक्रम) और wide ecological adaptability (व्यापक पारिस्थितिकीय अनुकूलनशीलता) को जाता है। भारत में इस family की लगभग 140 जीनस और 700 स्पीशीज़ पाई जाती हैं, जिनमें से कुछ को बागों में ornamentals के रूप में उगाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

ये पादप herbs या shrubs होते हैं जिनमें capitulum inflorescence पाया जाता है। प्रत्येक capitulum में अनेक florets (पुष्पक) होते हैं जो एक commom receptacle (उभय धानी) पर लगे पाए जाते हैं। यह कैपिटुलम एक involucre of bracts (सहपत्र चक्र) से घिरा रहता है। कैलिक्स pappus (पैपस) में रूपांतरित होता है और कोरोला gamopetalous होता है। Androecium में syngenesious anthers (सयुंक्तकोशी परागणकोश) पाए जाते हैं। Gynoecium bicarpellary, एक single ovule (अकेला बीजांड) लिए होता है। फल cypsela (सिप्सेला) होता है।

आकारिकीय विविधता

पादपों की आकारिकी में भारी विविधता पाई जाती है मगर सबसे उल्लेखनीय उनका विशिष्ट inflorescence होता है (चित्र 22.3 से 22.6 देखें)। इस family के अधिकांश सदस्य annual या biennial herbs हैं मगर कुछ shrubs और trees भी होते हैं। आकारिकी में यह भिन्नता *Senecio* (*सेनेसियो*) की विभिन्न स्पीशीज़ में देखी जा सकती हैं। पादपों में एक सुविकसित tap-root (मूसला-जड़) पाई जाती है मगर कभी-कभी tuberous roots (कंदिल जड़ें) भी पाई जातीं हैं, जैसे: *Dahlia* (*डाहलिया*), *Helianthus tuberosus* (*हेलिएंथस ट्यूबरोसस*)। तना प्राय: herbaceous होता है। मगर कभी-कभी यह अविकसित (underdeveloped) रह जाता है उसमें पत्तियों के whorls भू-तल (ground level) पर पाए जाते हैं। पत्तियों के इस radical rosette (मूलक रोजिट) से एक flowering stem यानि पुष्प-तना विकसित होता है। Shrubs में तना suffruticose (क्षुपी) और trees में woody हो जाता है।

Leaf : जिन पादपों में scapigerous habit (पुष्पदंडधर या स्केपधर स्वभाव) होती है उनमें पत्तियां एक radical rosette बना सकती हैं। या पत्तियां alternate या opposite कभी-कभी whorls में पाई जाती हैं। पत्तियां exstipulate होती हैं। यद्यपि कुछ स्पीशीज़ में leaf bases में auricles (कर्णपल्लव) विद्यमान होते हैं। या फिर वे decurrent (अधोवर्धी) होते हैं यानि leaf base, तने के अधिचर्म (stem epidermis) की निरंतरता में होता है, जिससे petiole में भेद करना असंभव हो जाता है, वे सरल होती हैं मगर उनके लैमिना के विभाजन में भारी विविधता देखने को मिलती हैं। पत्तियां विरले ही वास्तविक रूप से compound होती हैं। अधिकांश पादपों में उनके तने और पत्तियों में watery sap (जलीय रस) पाया जाता है मगर कुछ सदस्यों में milky latex (दुग्धी लेटेक्स) विद्यमान रहता है इस विशेषता के चलते ही family को दो subfamilies में वर्गीकृत किया गया है। Asteroideae (ऐस्टरॉइडी) या Tubiliflorae (टुबुलीफ्लोरी) जिनमें watery sap पाया जाता है और Cichoroideae (सिकोरोइडी) या Liguliflorae (लिगुलीफ्लोरी), जिनमें milky latex पाया जाता है।

चित्र 22.3 : *Aster salsuginosus* (ऐस्टर सैल्सुजिनोसस) । (a) पादप का एक vegetative portion । (b) पुष्पधारी वृंत (stalk) । (c) एक अर पुष्पक (ray floret) । (d) एक डिस्क पुष्पक (disc floret) । (e) पैपस शूक (pappus bristle) ।

Inflorescence : इस family का सबसे विशिष्ट लक्षण inflorescence है इसे कैपिटुलम कहते हैं, जो एक विशेष racemose inflorescence होती है जिसमें सहपत्रों का चक्र (involucre of bracts) पाया जाता है। यह involucre of bracts एक flat receptacle (चपटी धानी) पर अनेक लघुकृत पुष्पों (reduced flowers) को घेरे रहता है। यह involucrate head या कैपिटुलम हो सकता है या फिर अनेकों कैपिटुलम, cymose or racemose inflorescences में व्यवस्थित हो सकते हैं। पुष्पकों के लिंग के अनुसार कैपिटुलम दो प्रकार के हो सकते हैं। अगर एक capitulum में विद्यमान सभी florets एक ही किस्म के, unisexual या bisexual हों तो उसे homogamous (समयुग्मकी) मगर जब एक capitulum में भिन्न प्रकार के florets जैसे कुछ bisexual और अन्य unisexual या neutral (बंध्य) या फिर कुछ florets male और कुछ female तो उस स्थिति में capitulum को heterogamous (विषमयुग्मकी) कहा जाता है। इन दोनों प्ररूपों में भी उनके capitulum में विद्यमान florets की आकारिकी में भारी विविधता पाई जाती है। इस अभिलक्षण के आधार पर family को दो subfamilies Asteroideae or Tubuliflorae [capitulum में कुछ या सभी florets tubular (नलिकाकार) होते हैं], और Cichoroideae or Liguliflorae [मुंडक में सिर्फ ligulate (जीभिकाकार) florets होते हैं] में बांटा गया है।

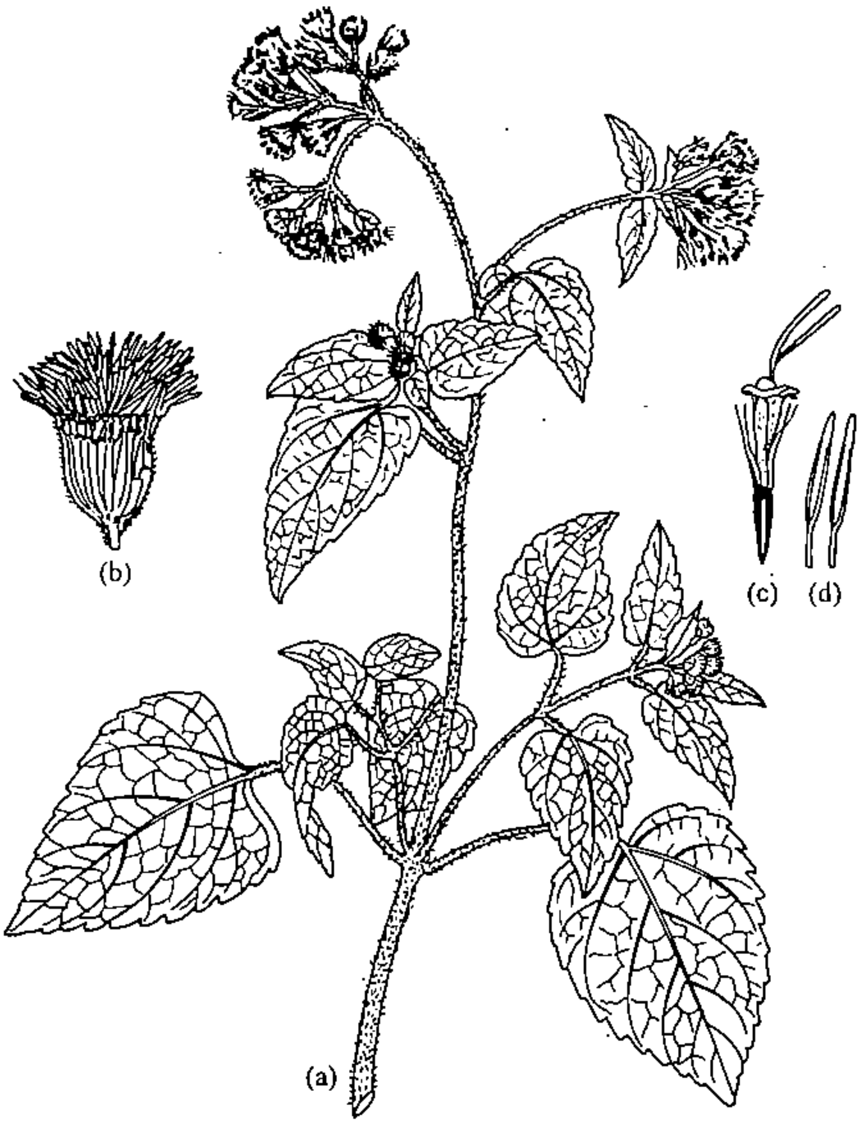

चित्र 22.4 : *Ageratum conyzoides* (ऐगरेटम कॉनिजॉइडीज) । (a) एक पुष्पी टहनी । (b) एक capitulum. (c) Enlarged view में एक floret. (d) दो enlarged stamens.

Capitulum में एक receptacle होता है जो condensed inflorescence axis (संघनित पुष्पक्रम अक्ष) से विकसित होता है। इस receptacle में florets एक निश्चित विन्यास में व्यवस्थित रहते हैं और वे involucre of bracts से घिरे रहते हैं। Receptacle flat, थोड़ा सा convex (उत्तल) या spindle-shaped (हंसिया-आकार) का होता है और सतह से यह चकनी pitted (गर्तित) या (रोमिल) या scaly शल्की होता है। Receptacle के इन अभिलक्षणों का प्रयोग इस family के जीनसों और स्पीशीज़ के वर्गीकरण में किया जाता है।

Flower : Inflorescence के अति विस्तृत होने के कारण Asteraceae family में पुष्प लघुकृत (reduced) पाए जाते हैं और उन्हें floret यानि पुष्पक कहा जाता है। Florets bisexual, unisexual होते हैं या फिर वे neutral (नपुंसक) भी होते हैं जो pollination (परागण) के लिए कीटों को पुष्प की ओर आकर्षित करने वाले अंगों (organs) का काम करते हैं। पुष्पक actinomorphic या zygomorphic होते हैं। कैलिक्स एक संरचना में लघुकृत या रूपांतरित होता है जिसे pappus (पैपस, रोमगुच्छ) कहते हैं। यह pappus, फल में स्थायी (persistent) बने रहते हैं जो बीजों के dispersal में सहायक होता है। पैपस, रोमों (hairs) या शल्कों (scales) के बने होते हैं जो बीजों के wind dispersal के लिए कारगर parachute mechanism (पैराशूट क्रियाविधि) की रचना करते हैं या फिर यह bristles के बने होते हैं (जो पशुओं द्वारा बीजों के dispersal में सहायक होते हैं)। Pappus कभी-कभी पूरी तरह से लुप्त होते हैं। Gamopetalous कोरोला में पांच petals होते हैं जो या तो पांच समान पालियों (lobes) से निर्मित एक नलिका (tube) की रचना करते हैं जिससे floret actinomorphic और tubular (नलिकाकार) (Subfamily Asteroideae or Tubuliflorae) होते हैं;

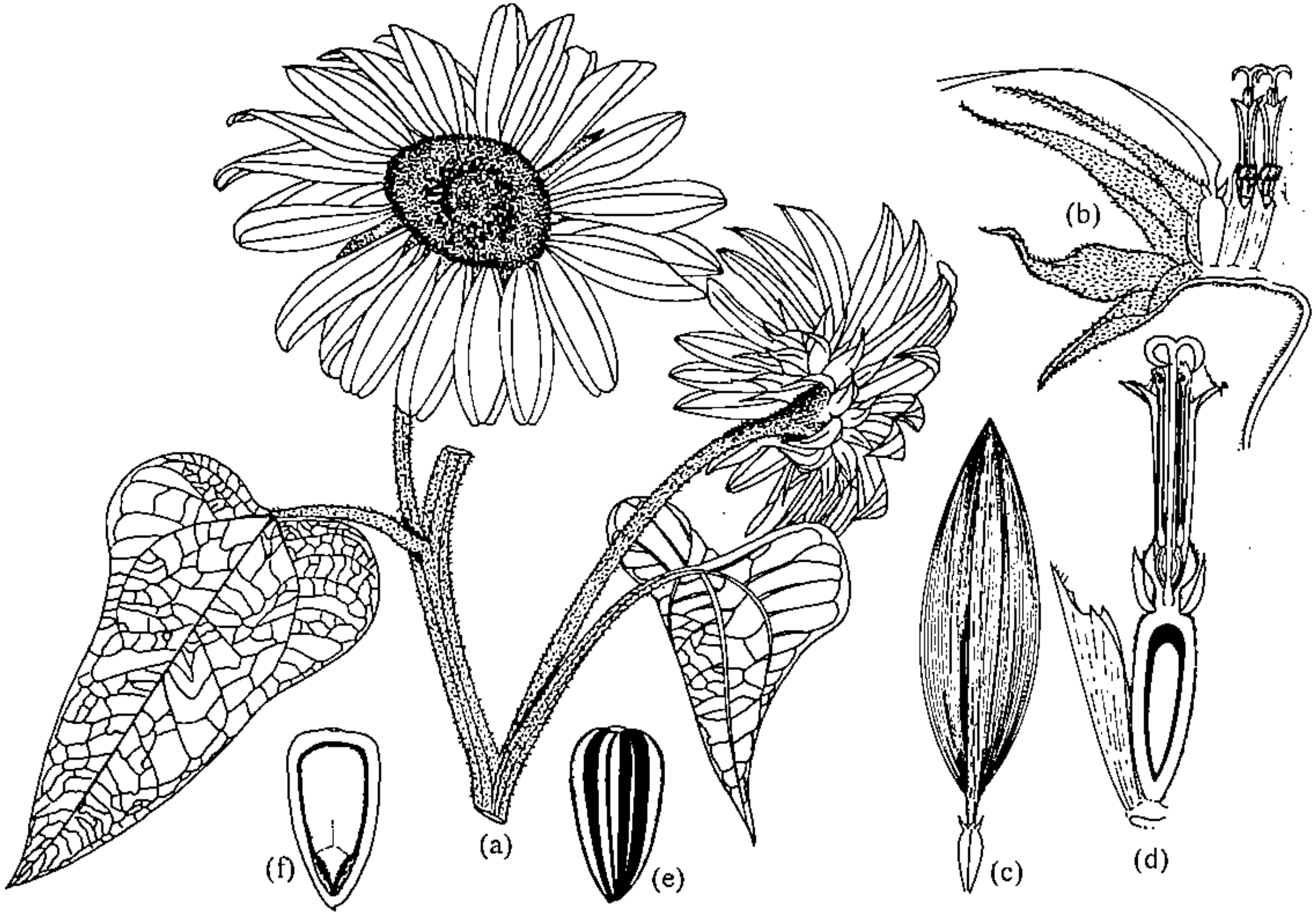

चित्र 22.5 : *Helianthus annuus* (हेलिएंथस एनुअस) (a) एक पुष्पी टहनी। (b) Longitudinal section में capitulum का एक भाग। (c) एक ray floret (अर पुष्पक)। (d) Longitudinal section में डिस्क पुष्पक (disc floret) का एक आवर्धित चित्र। (e) एक achene (ऐकीन)। (f) Longitudinal section में achene। (पर्सगलव, 1988 से)।

या फिर कोरोला bilabiate (द्विओष्ठी) होते हैं जिसमें एक या दो खंड (segments) का upper lip (ऊपरी ओष्ठ) और 3 या 4 खंडों का lower lip (निचला ओष्ठ) होता है या फिर यह वास्तविक रूप से ligulate (जीभिकाकार) होता है जिसमें आधार पर एक छोटी नली (tube) और 2,3,4, या 5 खंडों से बनी एक लंबी ligule (दर्शीय जीभिका) होती है जिससे floret zygomorphic बन जाता है (Subfamily Cichoroideae or Liguliflorae)। Petals में valvate aestivation होता है और वे नाना रंगों में होते हैं।

Androecium : Male और bisexual florets में 5 epipetalous stamens होते हैं। पाँच stamens के anthers प्राय: syngenesious होते हैं जो style के इर्द-गिर्द एक सिलिंडर बनाते हैं, जबकि filaments free होते हैं। प्रत्येक anther का base प्राय: एक लंबी या छोटी tail में विस्तारित होता है जबकि anther connective, anther lobes के ऊपर एक appendage (उपांग) के रूप में वृद्धि कर लेते हैं (चित्र 22.4 d)। इन लक्षणों का प्रयोग family के विभिन्न जीनसों और स्पीशीज़ की पहचान करने के लिए किया जाता है।

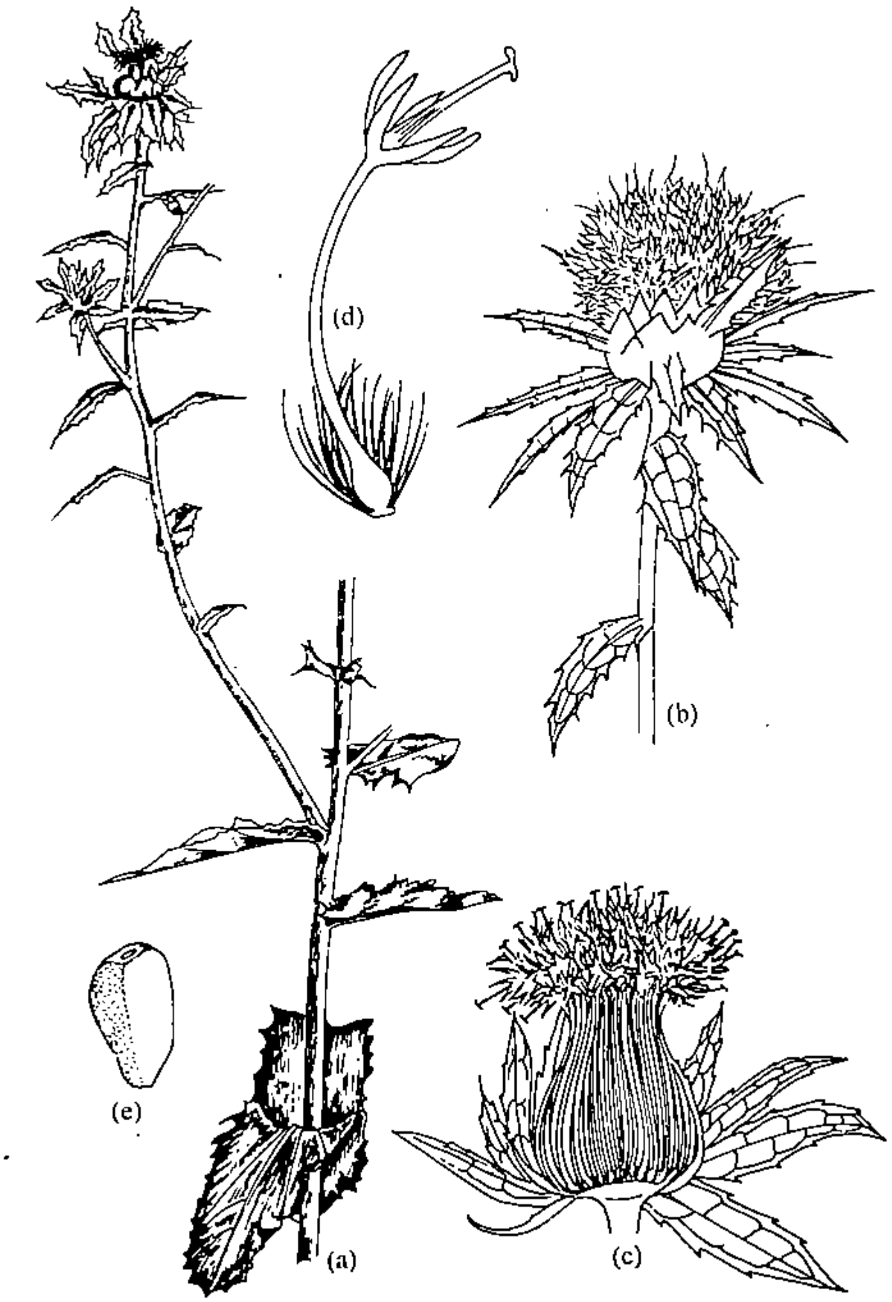

चित्र 22.6 : *Carthamus tinctorius* (कार्थेमस टिंक्टोरियस)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) Capitulum को दिखाता पुष्पी टहनी का एक enlarged view. (c) Longitudinal section में एक capitulum. (d) एक floret magnified view में। (e) एक achene। (पर्सग्लव, 1988)।

Gynoecium : Bisexual या female florets में bicarpellary syncarpous gynoecium विकसित होता है जिसमें एक inferior ovary पायी जाती है। Neutral florets में एक rudimentary gynoecium पाया जाता है। Basal placenta में single ovule पाया जाता है। Style single लंबी cylindrical होती है जिसे base पर एक लघु tubular nectary घेरे रहती है, style bifid होता है यानि यह दो stigmatic arms (वर्तिकाग्री भुजाओं) में विभाजित रहती है जो papillate (पैपिलामय) होते हैं। Style में stigmatic arms के नीचे pollen collecting hairs (पराग-संग्राही रोम) भी पाए जा सकते हैं। ये लक्षण भी family की विभिन्न जीनसों, स्पीशीज़ और tribes (संवर्गों) को पहचानने में सहायता करते हैं।

Fruit: यह एक cypsela (सिप्सेला) होता है जो एक-बीजी संरचना है जिसमें persistent pappus (स्थायी रोमगुच्छ) होते हैं। इसे यद्यपि कई पाठ्य पुस्तकों में ऐकीन (achene) कहा जाता है, वास्तविक आकारिकीय अर्थों में Asteraceae का फल achene नहीं होता। Achene की परिभाषा के अनुसार यह "एकबीजी, लघु, शुष्क, indehiscent (अस्फुटनशील) फल है जो एक carpel (अंडप) से विकसित होता है" जबकि Asteraceae family का सिप्सेला फल bicarpellary gynoecium से उत्पन्न होता है। इसके अलावा achene एक superior ovary से विकसित होता है जबकि Asteraceae में ovary inferior होती है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) कुल का मुख्य निदानात्मक लक्षण उसकी inflorescence है जिसे (कैपिटुलम) कहते हैं।
2) पादप प्राय: herbaceous होते हैं जिनमें watery sap या milky latex पाया जाता है।
3) पत्तियां exstipulate जिनमें लैमिना entire या highly divided (अति विभाजित) पाया जाता है।
4) पुष्प florets में reduced (लघुकृत) होते हैं जो capitulum में झुंड में एकत्रित पाए जाते हैं।
5) प्रत्येक capitulum में florets को involucre of bracts घेरे रहते हैं।
6) कैलिक्स पैपस में रूपांतरित होता है।
7) Pentamerous, gamopetalous (पंचभागी, संयुक्त दलीय) कोरोला जो या तो नलिकाकार actinomorphic या जीभिकाकार zygomorphic होता है।
8) Stamens epipetalous (पुंकेसर दललग्न) और anthers syngenesious (परागकोश युक्तकोशी) होते हैं।
9) Bicarpellary, syncarpous gynoecium (द्विअंडपी युक्तांडपी जायांग) जिसमें inferior ovary और basal placentation (आधारी बीजांडासन) में एक अकेला ovule (बीजांड) पाया जाता है।
10) फल cypsela (सिप्सेला) होता है।

वर्गीकृत स्थिति

वर्गीकरण की सभी पद्धतियों में Asteraceae family को एक प्राकृतिक इकाई (natural unit) के रूप में माना गया है। Dicotyledons (द्विबीजपत्रियों) में इसे सबसे अधिक विकसित कुल माना जाता है। बेंथम और हुकर ने इसे Gamopetalae, Series 1 Inferae, Order 2-Asterales (गैमोपिटैलीज सिरीज 1 इनफरी, गण 2-ऐस्टरेलीज) में वर्गीकृत किया है। इस order में Campanulaceae (कैम्पैनुलेसी) को शामिल नहीं किया गया है जिसे एक पृथक् Order Campanulales (गण कैम्पैनुलेलीज) में रखा गया है। एंगलर और प्रांट्ल ने कम्पोजिटी कुल को Sympetalae.Order 10-Campanulatae (सिम्पिटैली, गण

10-कैम्पैनुलेटी) में रखा है, जिसमें Campanulaceae (कैम्पैनुलेसी) समेत छ: अन्य families भी रखी गयी हैं। तख़्ताजन ने अपने वर्गीकरण में इस family को Subclass-J Asteridae, Superorder Asteranae and Order 160-Asterales (उपवर्ग-J ऐस्टेरिडी, अधिगण ऐस्टरेनी और गण 160-ऐस्टरेलीज) में रखा है। उन्होंने Campanulaceae family को उसी Subclass Asteridae (उपवर्ग ऐस्टरिडी) मगर एक अलग Superorder Campanulanae, and Order 155-Campanulales (अधिगण कैम्पैनुलेनी और गण 155-कैम्पैनुलैलीज) में रखा है।

आर्थिक महत्व

1) **Edible Plants** (खाद्य पादप)

i) *Lactuca sativa (लैक्टुका सैटाइवा)* - Lettuce (लेट्यूस), नई कोमल पत्तियों का सलाद बनाया जाता है।

ii) *Helianthus tuberosus - (हेलिएंथस ट्यूबरोसस)* - Jerusalem artichoke - (यरूशलमी हाथीचक) - इसके root tubers (मूलकंद) भोज्य हैं।

iii) *Cynara scolymus (सायनारा स्कॉलिमास)* - Globe artichoke (ग्लोब आर्टीचोक) (हाथीचक की एक और किस्म) - immature floral heads (अपरिपक्व पुष्प मुंडक), fleshy base made of involucral bracts and receptacle (सहपत्र-चक्रों का बना मांसल आधार और धानी) को उबालकर खाया जाता है।

iv) *Tragopogon porrifolius (ट्रैगापोगोन पॉरीफोलियस)* - Oyster plant (ओयस्टर प्लांट) - इसकी taproot (मूसला जड़) को खाया जाता है।

v) *Cichorium intybus (सिकोरियम इंटिबस)* - Chicory (चिकोरी) - इसकी मज़बूत, taproot को भूंजकर पावडर बनाया जाता है। जिसे कॉफी के बदले (as a substitute) या उसमें मिश्रण (as an admixture) के रूप में प्रयोग किया जाता है।

vi) *Cichorium endivia (सिकोरियम एन्डिविया)* - Endive (एंडाइव), इसे भी *Lactuca sativa* की तरह सलाद के पौधे के रूप में उगाया जाता है।

2) **Oil Seeds** (तिलहन)

i) *Helianthus annuus* (हेलिएंथस एनुअस); Sunflower (सूरजमुखी), इसके बीज semidrying oil (अर्धशुष्कन तेल) से भरपूर होते हैं जिसे भोजन बनाने, margarine (मारजरीन) बनाने में प्रयोग किया जाता है। Linseed oil (अलसी के तेल) को साथ मिलाकार इस तेल को पेंट (paint) और वार्निश (varnish) बनाने में प्रयोग किया जाता है।

ii) *Carthamus tinctorius (कार्थेमस टिंक्टोरियस)* - Safflower (कुसुंभ); (चित्र 22.6), इसके बीजों से निकाले जाने वाले तेल का प्रयोग भोजन बनाने में, रोशनी के लिए, साबुन और पेंट तथा वार्निश बनाने में किया जाता है। इसमें linolenic acid (लिनोलीनिक अम्ल) की मात्रा कम होती है और इसमें excellent colour retention properties (रंग अवधारण के उत्तम गुण) पाई जातीं हैं, और यह पीला भी नहीं पड़ता है।

iii) *Guizotia abyssinica (ग्वीजोटिया ऐबिसिनिका)* - Niger seed (नाइजर बीज), इससे पीला खाद्य semi-drying oil मिलता है जिसमें हल्की सी गंध और मजेदार नट जैसा स्वाद (nutty taste) होता है। इसे safflower oil (कुसुंभ तेल) की तरह प्रयोग किया जाता है।

3) **Dyes** (रंजक)

Carthamus tinctorius-Safflower; इसके सूखे florets से एक red dye (लाल रंजक) मिलती है जिसे Safflower carmin (कुसुंभ कार्मिन) कहते हैं। इससे प्रयोगशालाओं में प्रयोग किए जाने वाले stains (अभिरंजक) बनाए जाते हैं।

4) **Medicinal plants (औषधीय पादप)**

i) *Artemisia scoparia* (*आर्टिमिसिया स्कोपेरिया*) और अन्य स्पीशीज़ से santonin (सैन्टोनिन) मिलता है जिससे vermifuge (कृमिहर) दवा बनाई जाती है।

ii) *Matricaria chamomilla* (*मैट्रीकेरिया कैमोमिला*) इसका प्रयोग दवाई में टॉनिक (tonic) के रूप में और पेट के विकारों (gastric disorders) के उपचार में करने के अलावा त्वचा लेप (skin ointments) बनाने के लिए होता है।

iii) *Chrysanthemun* (*क्राइसैंथमम*) विशेषकर *C. cinerarifolium* (*क्रा. सिनेरैरीफोलियम*) का प्रयोग insecticides (कीटनाशकों) के रूप होता है जिसे pyrethrum (पाइरिथ्रम) कहा जाता है।

5) **Ornamentals (सजावटी पादप)**

Family, Asteraceae के अनेक पादपों को सजावट के लिए उगाया जाता है। जैसे: *Ageratum* (*ऐगरैटम*), *Aster* (*ऐस्टर*), *Calendula* (*कैलंडुला*), *Centaurea* (*सेंटौरिया*), *Chrysanthemum* (*क्राइसैंथमम*), *Coreopsis* (*कोरियोप्सिस*), *Cosmos* (*कॉस्मास*), *Dahlia* (*डहलिया*), *Gaillardia* (*गैलार्डिया*), *Gerbera* (*गर्बेरा*), *Helianthus* (*हेलिएंथस*), *Senecio* (*सीनोसियो*), *Tagetes* (*टैजेटीज*), *Tithonia* (*टिथोनिया*), और *Zinnia* (*जिनिया*)।

6) **Latex yielding plants (लेटेक्स उत्पादक पादप)**

Parthenium argentatum (*पार्थेनियम आर्जेंटेटम*) - Guayule (ग्वायूल) प्राकृतिक रबड़ का लघु स्रोत *Taraxacum kok-saghyz* (*टैरेक्सैकम कॉक्ज*) और *Mikania scandens* (*मिकानिया स्कैंडेंस*) से भी लेटेक्स (latex) मिलता है।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.4 Sapotaceae (सैपोटेसी)

The Sapodilla family (सैपोडिला कुल)
Type genus : *Sapota* or *Achras sapota* (*सैपोटा, या ऐक्रस सैपोटा*)

सामान्य जानकारी

यह कमोबेश एक छोटी family है जिसमें 40 जीनस और 600 स्पीशीज़ शामिल हैं जो एशिया और अमेरिका के tropical और subtropical areas सहित विश्व के अन्य भागों में भी वितरित पाई जाती हैं। भारत में इसके 10 जीनस और लगभग 50 स्पीशीज़ पाई जाती हैं जिनमें सुख्यात *Achras sapota* or *Sapodilla* (*ऐक्रस सैपोटा, सैपोडिला* चित्र 22.7), *Madhuca latifolia* (*मधुका लैटीफोलिया,* चित्र 22.8), *Mimusops elengi* (*मिमुसोप्स एलेंगी*), और *Manilkara hexandra* (*मैनिलकारा हेक्सैंड्रा*) हैं।

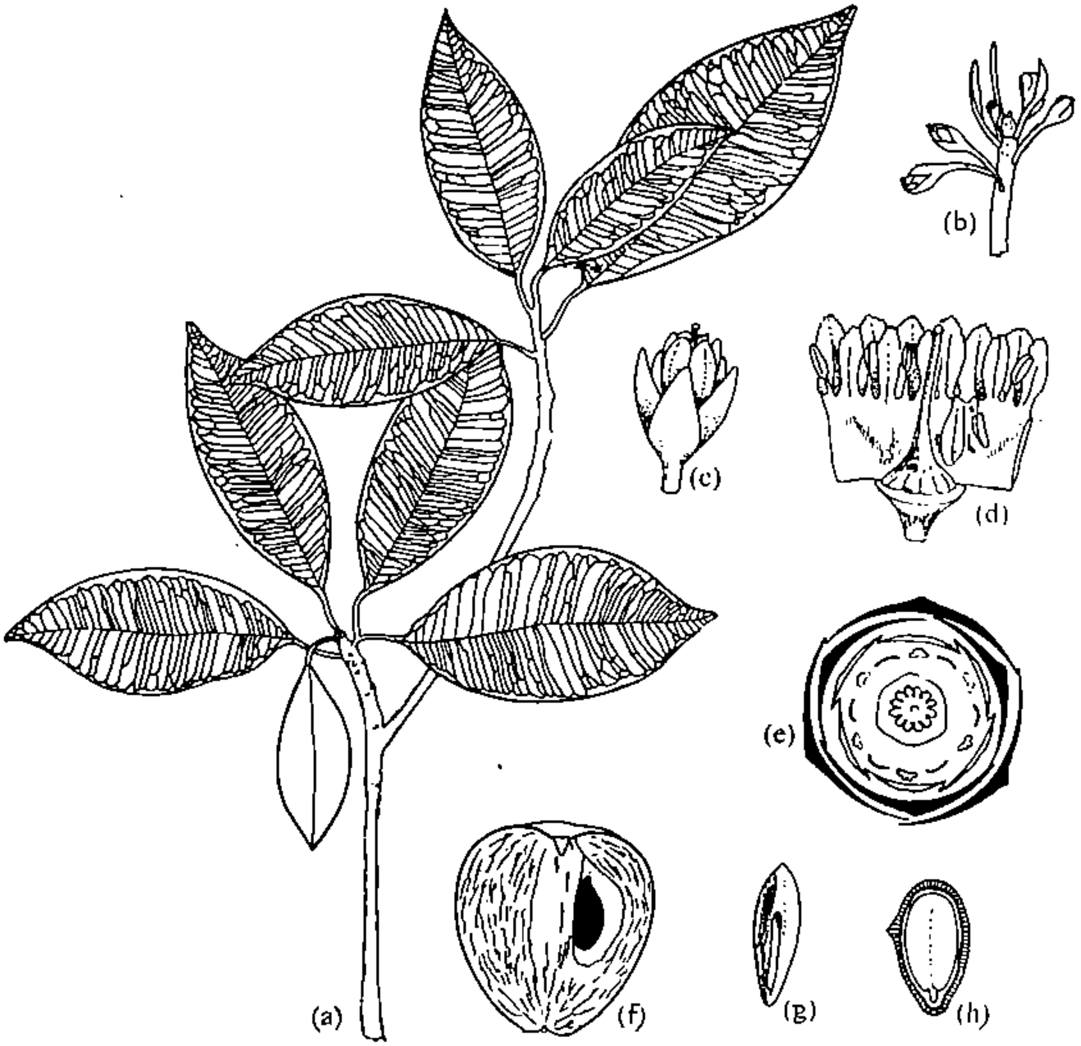

चित्र 22.7 : *Achras sapota* (*ऐक्रैस सैपोटा*)। (a) A vegetative branch. (b) An inflorescence. (c) An enlarged flower. (d) कोरोला जिसे खोल दिया गया है। दलनुमा बंध्य पुंकेसरों के आवर्त (a whorl of petal-like staminodes) को नोट करें जो कोरोला की पालियों (corolla lobes) के साथ एकांतर क्रम में (alternate) व्यवस्थित हैं। (e) इस स्थिति में उल्लिखित d को स्पष्ट करने के लिए floral diagram (पुष्प आरेख)। (f) Longitudinal section में एक फल। (g) पीछे के दृश्य में एक बीज जिसमें एक दीर्घ नाभिका, हाइलम (hilum) दिखाई देती है। (h) Longitudinal section में एक बीज जिसमें embryo दिखाई देता है। (a,b,d, पर्सग्लव से लिए गए हैं)।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

लघु आकार से लेकर मध्यम आकार के trees जिनमें सरल चर्मिल (leathery) पत्तियां और पादप के सभी अंगों में milky latex (दुग्धी लेटेक्स) पाया जाता है। पुष्प छोटे, gamopetalous (संयुक्तदलीय) होते हैं, stamens दो या तीन whorls में पाए जाते हैं और carpels अनेक संख्यी होते हैं। फल एक बेरी है जिसमें बीज गिनती के पाए जाते हैं।

आकारिकीय विविधता

Sapotaceae family के पादप छोटे से मध्यम आकार के वृक्ष होते हैं जिनमें एक काष्ठीय तना पाया जाता है। तरुण shoots (प्ररोह) tomentose (घनरोमिल) जंग के रंग यानि rust-coloured के अधिचर्मीय रोमों (epidermal hairs) से ढके पाए जाते हैं। इस family का एक विशेषतासूचक लक्षण यह है कि तने के pith (मज्जा) और cortex (वल्कुट या कार्टेक्स), पत्तियों में और यहां तक कि फलों में भी लेटेक्स धारी कोशिकाएं (latex containing cells) विद्यमान रहती हैं।

Leaf : पत्तियां alternate सरल, पूर्ण और coriaceous (चर्मिल, चमड़े की तरह) होती हैं। ये प्रायः exstipulate होती हैं मगर कभी-कभी stipules (अनुपर्ण) भी उग आते हैं। पत्तियां unicellular branched hairs (एककोशिकीय, शाखित रोमों) से ढकी रहती हैं।

Inflorescence : पुष्प solitary या cymose inflorescence में होते हैं जिनमें छोटे-छोटे पुष्प leaf axils (पर्णकक्षों) में या गिरी हुई पत्तियों के चिन्हों (scars) से जरा सा ऊपर तने में पाए जाते हैं।

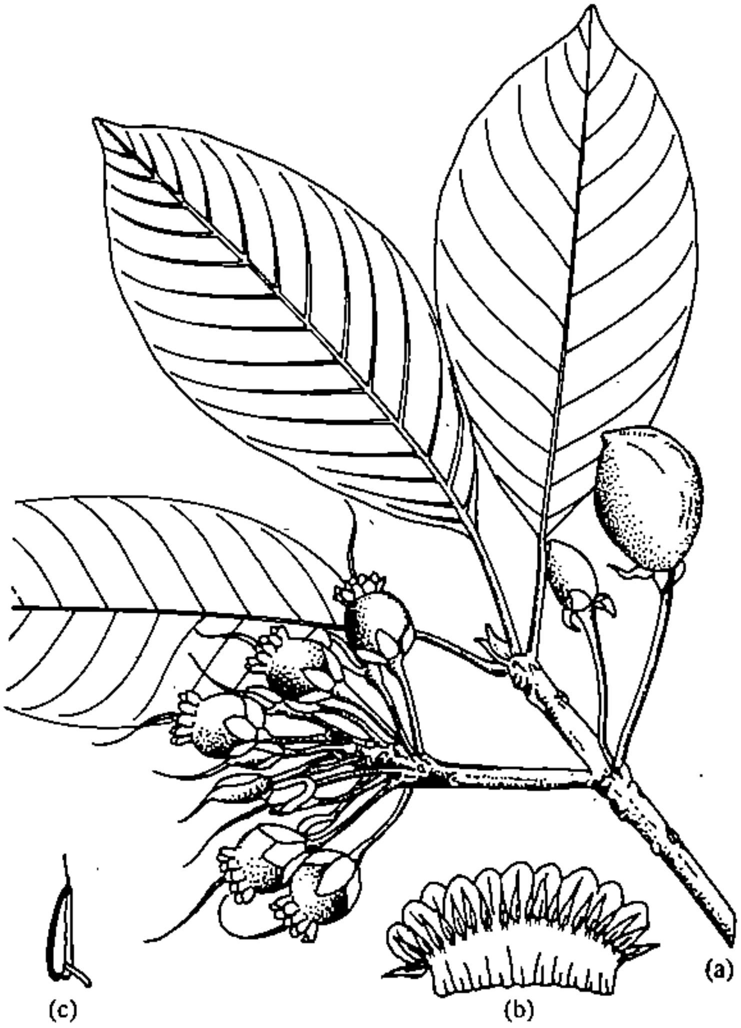

चित्र 22.8: *Madhuca latifolia* (मधुका लैटीफोलिया)। (a) पुष्प और फल धारण किए एक टहनी। (b) कोरोला जिसमें विद्यमान epipetalous (दललग्न पुंकेसरों) को दर्शाने के लिए, फैलाया गया है। (c) एक stamen.

Flower : पुष्प bracteate लघु actinomorphic और bisexual होते हैं। कैलिक्स कई पैटर्नों में पाया जाता है। इनमें 4 या 6 या 8 sepals (बाह्यदल) दो isomerous whorls (समावयवी आवर्तों) में पाए जाते हैं। कभी-कभी इसमें सिर्फ पांच sepals होते हैं जो free (मुक्त) या base (आधार) पर थोड़ा सा संयुक्त (united) पाए जाते हैं और यह imbricate aestivation दर्शाते हैं। कैलिक्स जब biseriate (द्विपंक्तिक) होता है, तो outer whorl (बाह्य आवर्त) valvate aestivation दर्शाता है और persistent (स्थायी) होता है। कोरोला साधारणतया single whorl में पाया जाता है जिसमें petals की संख्या sepals के बराबर होती है और वे बाह्यदलों के साथ एकांतर क्रम में (alternate) होते हैं। कभी-कभी petals के दो isomerous whorl भी पाए जाते हैं। कोरोला में imbricate aestivation दिखाई देता है। कई जीनसों में petals के आधार (base) से विशेष outgrowths as dorsal appendages (उद्वर्ध पृष्ठ उपांग के रूप में) विकसित होते हैं जो petals से मिलते-जुलते होते हैं और बहु-आवर्ती corolla (दलों) सी बनावट दिखाते हैं।

Androecium : 4 or 5 epipetalous stamens के दो या तीन whorls विद्यमान होते हैं। कभी-कभी outer whorl staminodes में लघुकृत (reduce) हो जाता है या फिर पूर्णतः अनुपस्थित रहता है। Anthers में longitudinal dehiscence (अनुदैर्घ्य स्फुटन) होता है।

Gynoecium : Carpels की संख्या एक whorl में विद्यमान stamens की संख्या के बराबर या उनसे दोगुना होती है। Gynoecium syncarpous होता है जिसमें एक superior ovary (ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय) पायी जाती है। Placentation axile होता है और प्रत्येक locule में सिर्फ एक ही ovule विद्यमान होता है। Style सरल, और stigma अस्पष्ट (inconspicuous) होता है। पुष्प protogynous (स्त्रीपूर्वी) होते हैं। Gynoecium पहले mature (पक्व) होता है जिसमें style का शिखर (tip) और चिपचिपा (sticky) stigma, कोरोला के फैलने से पहले ही, उसके ऊपर से प्रकट हो जाता है। तरुण पुष्प सीधे खड़े (erect) होते हैं मगर पक्व होने पर वे निलंबी (pendulous) हो जाते हैं।

Fruit : फल बेरी होता है जिसमें बाह्य परतें sclerenchymatous (दृढ़ोतकी) हो जाती हैं। बड़े फलों में epidermis (अधिचर्म) की बाहरी परत की जगह cork (कॉर्क) ले लेता है। फल का भीतरी pulp (गूदा) latex cells (लेटेक्स कोशिकाएं) धारण किए रहता है। प्रत्येक फल में चंद या सिर्फ एक बीज विकसित हो पाता है। बीज बड़ा होता है जिसमें एक लम्बा (हाइलम) और एक चमकीला (shiny) कठोर testa (बीजचोल) पाया जाता है, जिसमें tannin (टैनिन) विद्यमान होते हैं। बीजों में प्रायः endosperm पाया जाता है और इसमें तेल संचित (oil stored) होता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Tropical regions में पाए जाने वाले trees.
2) सरल, coriaceous पत्तियां जो hairs से ढकी रहती हैं।
3) पादप के सभी भागों में milky latex पाया जाता है।
4) पुष्प छोटे और leaf axils में solitary या cymose inflorescence में पाए जाते हैं।
5) पुष्प actinomorpic gamopetalous और hypogynous होते हैं।
6) कैलिक्स और कोरोला isomerous whorls में होते हैं। जिनमें imbricate aestivation पाया जाता है।
7) 4, 5 stamens प्रत्येक, दो या तीन whorls में होते हैं।
8) Carpels बहुसंख्यी होते हैं syncarpous, superior ovary देखी जाती है। Axile placentation पाया जाता है, style सरल और stigma sticky होता है।
9) फल एक बेरी होता है जिसमें चंद बीज पाए जाते हैं।
10) बीज बड़ा होता है जिसमें एक लम्बी hilum और shiny testa पाया जाता है।

वर्गीकृत स्थिति

Family Sapotaceae को बेंथम और हुकर ने Gamopetalae, Series II Heteromerae and Order 6-Ebenales (गैमोपिटैली, सिरीज II हैट्रोमेरी, और गण 6-एबिनेलीस) में रखा है, Sapotaceae

family के अलावा इस order में Ebenaceae (एबिनेसी) और Styraceae (स्टिरेसी) family भी शामिल हैं। ऐंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Sapotaceae family को Sympetalae and Order 4-Ebenales (सिम्पिटेली और गण 4-एबिनेलीज) में रखा गया है जिसमें 4 familes शामिल हैं, बेंथम और हुकर ने भी इन families में से तीन को अपने वर्गीकरण में रखा है और शेष चौथी family का नाम Symplocaceae (सिम्पलोकेसी) है।

तख़्ताज़न ने Sapotaceae family को Subclass G - Dilleniidae, Superorder Primulanae and Order 74-Sapotales (उपवर्ग G - डिलिनाइडी, अधिगण प्रिमुलेनी, और गण 74-सैपोटेलीज में रखा है जिसमें सिर्फ एक family है। अन्य families को Order 73-Styracales (गण 73-स्टिरैकेलीज) में रखा गया है।

आर्थिक महत्व

इस family के अनेक पादप कई तरह से महत्वपूर्ण हैं।

1) *Sideroxylon* (*साइडरॉक्सिलान*) की लकड़ी कठोर होती है और उपयोगी इमारती लकड़ी का स्रोत है जो ironwood (आयरनवुड) के नाम से बाज़ार में बिकती है।

2) *Palaquium gutta* (*पैलैक्वीअम गट्टा*), *Mimusops* (मिमुसोप्स) और *Payena* (*पेइना*) की कुछ स्पीशीज़ से मिलने वाले milky latex से व्यावसायिक गट्टा-पर्चा (gutta-percha) बनता है। यह पदार्थ साधारण तापमान पर कठोर मगर उच्च तापमान पर कोमल (soften) हो जाता है। यह अति निकृष्ट विद्युत संवाहक (poor conductor of electricity) है। इसे विशेषकर सबमैरीन केबलों (submarine cables) में तापरोधन (insulation) के लिए प्रयोग किया जाता है। Gutta-percha को दंत भरने (dental fillings) के लिए दंत-चिकित्सा (dentistry) में, और गॉल्फ की गेंदें (golf balls) बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

3) *Manilkara bidentata* (*मैनिल्कारा बाइडेन्टैटा*) के लैटेक्स से बैलाटा (commercial Balata) बनता है जो एक अप्रत्यास्थ (non-elastic) रबड़ है। यह मशीनों की बेल्टें बनाने के काम आता है। बैलाटा को सैपोडिला के पादप से उत्पन्न होने वाले लैटेक्स-चिकल (Chicle) के स्थान पर भी प्रयोग किया जाता है।

4) इस family के अनेक पौधे अपने भोज्य उत्पादों के कारण बेहद उपयोगी हैं। *Acharas sapota* (*ऐक्रैस सैपोटा*) के रसीले पके फलों को भोजनोपरांत फल (dessert fruit) के रूप में खाया जाता है। इस पादप से प्राप्त होने वाले लैटेक्स को Chicle कहते हैं, जिसे चुईंगम (chewing gum) बनाने और (dentistry) में प्रयोग किया जाता है। *Manilkara hexandra* (*मैनिल्कारा हेक्सांड्रा*) और *M.kauki* (*मै. कौकी*) के फल भी भोज्य होते हैं।

5) *Madhuca latifolia* (*मधूका लैटीफोलिया*) का भारत में बड़े गहन पैमाने पर दोहन किया जाता है, जिससे महुआ निकाला जाता है जो एक मक्खन-नुमा वसा (butter-like fat) है। यह बीजों में पाया जाता है। यह भोज्य होता है और इसे साबुन बनाने में भी काम लाया जाता है। इसके फूलों से सब्जी और एक alcoholic beverage (अल्कोहली पेय, शराब) बनायी जाती है। पश्चिमी अफ्रीका में *Butyrospermum paradoxa* (*बुटिरोस्पर्मम पैराडॉक्सा*) का दोहन भारत में *Madhuca latifolia* की तरह किया जाता है। इसे वहां शी-बटर ट्री (Shea-butter tree) कहा जाता है।

6) कई स्पीशीज़ को जैसे *Mimusops elengi*, *Chrysophyllum cainito* (*क्रिसोफाइलम कैनिटो*) और *Calocarpum sapota* (*कैलोकार्पम सैपोटा*) को सजावट के लिए उगाया जाता है।

कुछ याद रखने योग्य बातें

22.5 Apocynaceae (ऐपोसायनेसी)

The **Dogbane** family (डॉगबेन कुल)

Type genus : *Apocynum* (ऐपोसायनम)

सामान्य जानकारी

यह कोई 200 जीनसों और 2000 स्पीशीज़ की family है जिसका वितरण अधिकतर tropical और subtropical regions में पाया जाता है। लेकिन इस family की कुछ species, temperate regions में भी पाई जाती हैं। भारत में Apocynaceae family के लगभग 30 जीनस और 60 स्पीशीज़ पाई जाती हैं जिनमें से कुछ को साधारणतया बागों में लगाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

इसके पादप herbs, shrubs या trees होते हैं जिनमें प्राय: milky sap (दुग्धी रस) पाया जाता है। इनमें सरल, exstipulate opposite या whorled पत्तियां ; पुष्प bisexual actinomorphic, stamens free होते हैं, gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र, गाइनोस्टीजियम) और translators (स्थानांतरक) अनुपस्थित होते है, ovules कई, बीज अक्सर comose (रोमगुच्छी) पाए जाते हैं।

आकारिकीय विविधता

इस family के पादप annual या perennial herbs हैं जैसे *Vinca rosea* (*विंका रोजिया*), its other name is *Catharanthus roseus* (*कैथैरैथंस रोजियस*), shrubs जैसे *Rauvolfia serpentina* (*रौवुल्फिया सर्पेंटिना*, चित्र 22.9 देखिए) या लघु या बड़े trees होते हैं, जैसे *Thevetia peruviana* (*टेविशिया पेरुवियाना*, चित्र 22.10), *Plumeria rubra* (*प्लुमेरिया रूबरा*), *Alstonia scholaris* (*ऐल्स्टोनिया स्कॉलरिस*), कुछ स्पीशीज़ woody climbers या lianas (कठलताएं) होती हैं। पादपों में latex (लैटेक्स) या milky sap (दूधिया रस) पाया जाता है। तना herbaceous या suffruticose (क्षुपी) या फिर स्पष्टतया woody होता है जिसमें bicollateral vascular bundles (उभय संवहन पूल) पाए जाते हैं।

चित्र 22.9 : *Rauvolfia serpentina* (*रौवुल्फिया सर्पेन्टिना*)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) पुष्पी कलिकाएं। (c) एक अष्ठिल (drupe) फल। (d) एक बीज। (माहेश्वरी, 1966 से पुनर्चित्रित)।

Leaf : पत्तियां सरल, opposite या whorled,e.g. *Rauvolfia, Alstonia* (*रौवुल्फिया, ऐल्स्टोनिया*) होती हैं। पत्तियां विरले ही एकांतर क्रम में (alternate) मिलती हैं। साधारणतया पत्तियां exstipulate होती हैं मगर कभी-कभी उनमें छोटे-छोटे interpetiolar stipules (अंतवृंतीय अनुपर्ण) भी विकसित हो सकते हैं, जैसे कि *Tabernaemontana* (*टेबर्नीमोंटाना*) में।

Inflorescence : इसमें एक solitary flower जैसे कि *Vinca* (*विंका*) में हो सकता है या फिर साधारणतया पुष्पक्रम paniculate (पुष्पगुच्छी) या umbellate (पुष्पछत्री) हो सकता है। कभी-कभी यह cymose (ससीमाक्षी) भी हो सकता है।

Flower : पुष्प bracteate (सहपत्री) और bracteolate (सहपत्रिकाधारी), pedicellate, bisexual, actinomorphic, hypogynous और साधारणतया pentamerous विरले ही tetramerous होते हैं। पांच sepals से निर्मित कैलिक्स, प्रायः जिसके sepals संयुक्त (unite) होकर एक नली (tube) बनाते हैं या कई बार sepals सिर्फ आधार (base) पर ही संयुक्त होते हैं। Sepals पंचकी पुष्पदल विन्यास (quincuncial aestivation) दर्शाते हैं जिसमें odd sepal posterior (असम बाह्यदल पश्चस्थ) होता है। कैलिक्स की बनावट और भीतरी ग्रंथिल पृष्ठ (glandular surface) में कई भिन्नताएं पाई जाती हैं। Gamopetalous कोरोला में पांच petals होते हैं। Salverform जैसे *Vinca* (*विंका*) में या funnel-shaped (कीपाकार) जैसे *Nerium* (*नेरियम,* चित्र 22.11 देखें) कोरोला सबसे आम प्रकार हैं। मगर कोरोला bell-shaped (घंटाकार) भी हो सकता है जैसे *Allamanda* (*ऐलामांडा*) में। Aestivation साधारणतया contorted होती है (एंग्लर और प्रांट्ल ने इसीलिए इसे Order Contortae यानि गण कॉन्टॉर्टी, में रखा है) या कभी-कभी यह valvate भी होती है। भीतरी surface में hairy (रोमिल) या membranous outgrowths (कलामयी उद्वर्ध) होते हैं। जो एक किरीट यानि corona बनाते हैं। ये outgrowths कीटों को nectar की और गाइड कर, pollination (परागण) में सहायता करती हैं।

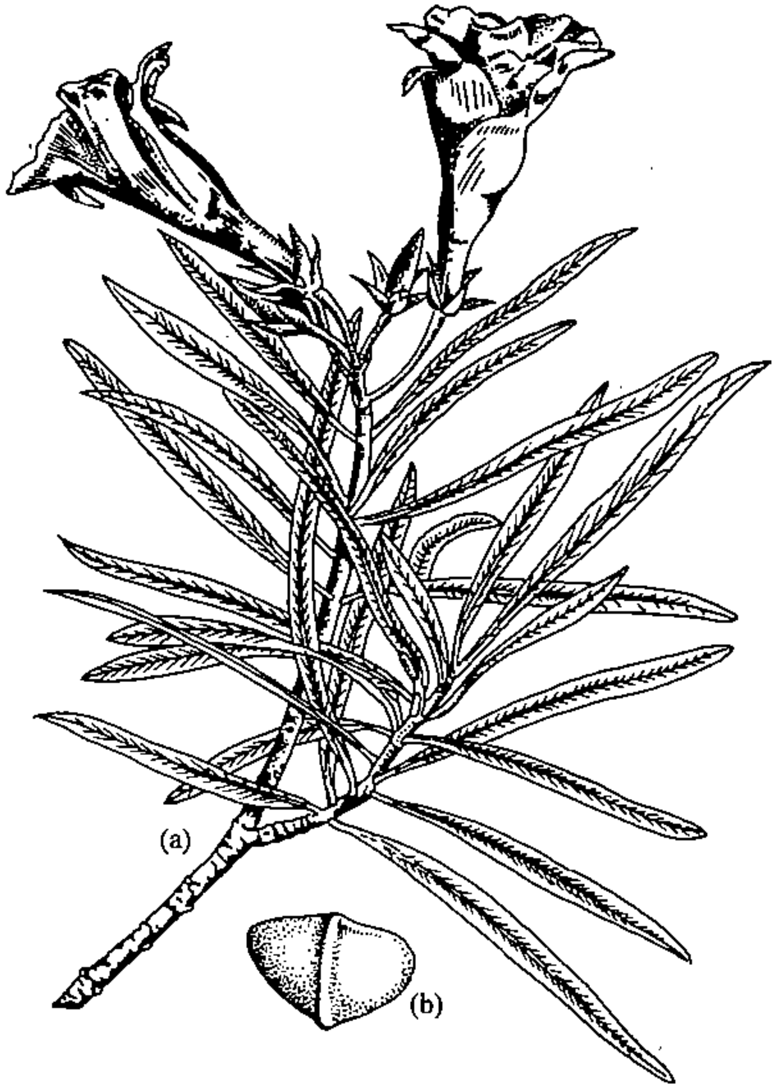

चित्र 22.10 : *Thevetia peruviana* (*थेविशिया पेरुवियाना*)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक फल।

Androecium : पांच, epipetalous stamens में लघु filaments (पुंतंतु) होते हैं जिससे stamens कोरोला नली (corolla tube) के अंदर ही रहते हैं। Anthers pollen से भरपूर हो सकते हैं या उनके (आधारी भाग) basal regions रिक्त होकर tail or spine-like structure (पूंछ या कंटकनुमा संरचना) बनाते हैं जो style को घेरे रहती हैं।

Gynoecium : इसमें दो carpels पाए जाते हैं जो base पर free, मगर ऊपर से single style में संयुक्त होते हैं। प्रत्येक carpel में marginal placentation पाया जाता है। कभी-कभी दोनों carpels आपस में मिल जाते हैं और ovary unilocular हो सकती है जिसमें parietal placentation पाया जाता है। या ovary bilocular हो सकती है जिसमें axile placentation पाया जाता है। Ovary superior होती है और उसके नीचे एक nectariferous disc (मकरंदधर डिस्क) विद्यमान होती है। कभी-कभी यह डिस्क ovary को घेरे रहती है जिससे अंडाशय (ovary) half inferior (अर्ध-अधोवर्ती) या perigynous (परिजायांगी) बन जाती है, जैसे *Plumeria* (प्लूमेरिया) में। इसमें अनेक anatropous pendulous ovules (प्रतीप, निलंबी बीजांड) पाए जाते हैं। सरल style में एक विशिष्ट capitate (समुंड) या dumb-bell shaped (डम्बेलनुमा) stigma पाया जाता है। Stigma के ठीक नीचे एक ring of hairs (रोमों का छल्ला) मौजूद हो सकता है।

Fruit : साधारणतया 2 पृथक follicles (पुटक) प्रत्येक ovary से विकसित होते हैं मगर कभी-कभी फल एक बेरी या कैप्सूल के रूप में हो सकता है। बीज चपटे होते हैं जिनमें रोमों (hairs) का एक गुच्छा पाया जाता है इन्हें रोमिल (comose) बीज कहते हैं या बीजों में पंख जैसा उद्वर्ध (wing-like outgrowths) हो सकते हैं, जैसे *Allamanda, Plumeria* (ऐलामांडा, प्लूमेरिया)।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Herbaceous या woody plants जिनमें milky sap पाया जाता है।
2) पत्तियां exstipulate, सरल opposite या whorled होती हैं।
3) पुष्प solitary या paniculate inflorescence में होते हैं।
4) पुष्प bisexual, pentamerous, actinomorphic होते हैं।
5) कैलिक्स gamosepalous होता है जिसमें quincuncial aestivation पाया जाता है।
6) Gamopetalous कोरोला में एक सुस्पष्ट नली और contorted aestivation पाया जाता है।
7) पांच epipetalous stamens कोरोला नली में inserted (आलग्न) रहते हैं, stamens free पाए जाते हैं।
8) Ovary bicarpellary, साधारणतया superior जो आधार पर मुक्त पायी जाती है, solitary style capitate or dumb-bell shaped stigma के साथ पाई जाती है।
9) फल दो पृथक follicles का, विरले ही बेरी या कैप्सूल होता है।
10) बीज चपटे और comose या winged होते हैं।

वर्गीकृत स्थिति

Apocynaceae family को बेंथम और हुकर ने Gamopetalae, Series Bicarpellatae, Order Gentianales (गैमोपिटैली, सीरिज बाइकार्पेलेटी, गण जैन्शिनेलीज) में रखा है। इस order में 6 families हैं: Oleaceae (ओलिएसी), Salvadoraceae (सल्वाडोरेसी), Apocynaceae (ऐपोसायनेसी), Asclepiadaceae (एस्क्लीपिएडेसी), Loganiaceae (लोगैनिएसी), और Gentianaceae (जेन्शिएनेसी)।

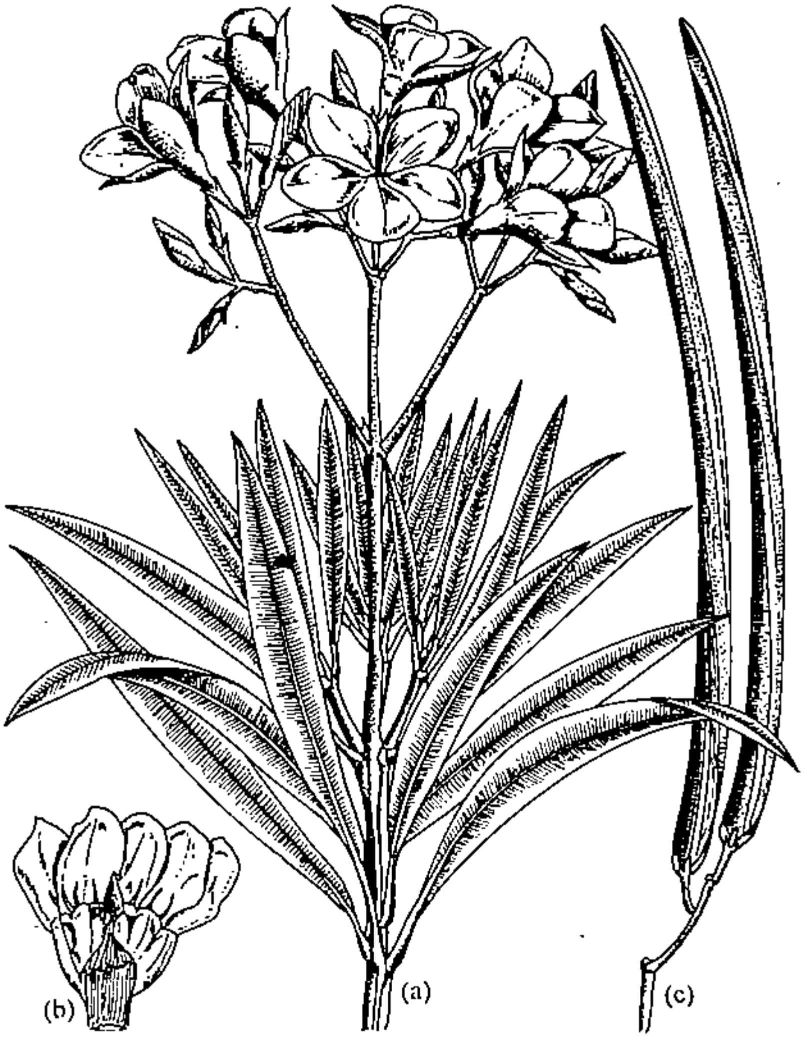

चित्र 22.11: *Nerium indicum* (नेरियम इंडिकम)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) खुला और विस्तारित कोरोला। (c) दो फल।

एंगलर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में यह family और Salvadoraceae को छोड़, चार families को Sympetalae,Order Contortae (सिम्पिटैली गण कॉन्टॉर्टी) में वर्गीकृत किया गया है। अपने वर्गीकरण में तख़्ताज़न ने Apocynaceae family को Subclass K- Lamiidae, Superorder Gentiananae and Order 163 - Apocynales (उपवर्ग K लैमाइडी, अधिगण जैन्शिलनेनी और गण 163-ऐपोसायनेलीज) में वर्गीकृत किया है। इस तरह से बेंथम और हुकर तथा एंगलर और प्रांट्ल की वर्गीकरण पद्धतियों में Apocynaceae, Asclepiadaceae, Gentianaceae, और Loganiaceae में संबंध या बंधुता को स्वीकार किया गया है। मगर तख़्ताज़न (1997) ने Asclepiadaceae को Apocynaceae में मिला दिया है। इस प्रकार दोनों को एक family Apocynaceae में मिला दिया गया है। Gentianaceae को उन्होंने Loganiaceae के साथ Order 161- Gentianales (गण 161-जेन्शिएनेलीज) में रखा है।

आर्थिक महत्व

साधारण *Vinca rosea* जिसे, *Catharanthus roseus* (कैथेरैंथस रोजियस) भी कहते हैं, में अनेक alkaloid (ऐल्कैलॉइड) पाए जाते हैं जिन्हें औषधि में प्रयोग किया जाता है इसी प्रकार *Rauvolfia serpentina* और अन्य स्पीशीज़ भी महत्वपूर्ण हैं जिनके बारे में आप इकाई-19 में पढ़ चुके हैं। इस family के अन्य औषधीय पादप *Holarrhena antidysenterica* (हॉलैरीना ऐंटीडिसेंटेरिका), *Wrightia tinctoria* (राइशिया टिंक्टोरिया), और *Alstonia scholaris* (ऐल्स्टोनिया स्कॉलैरिस) हैं।

इस family के कई पादपों को ornamentals (सजावटी पौधों) के रूप में उगाया जाता है। इनमें मुख्य हैं:

Vinca rosea. Thevetia peruviana. Nerium indicum, N.odorum (ने. ओडोरम), *Plumeria acuminata* (प्लुमेरिया ऐकुमिनैटा), *P. rubra* (प्लु. रूबरा), *P.alba* (प्लु. ऐल्बा) *Tabernaemontana divaricata* (टैबरनीमोन्टाना डाइवैरीकैटा), *Allamanda neriifolia* (ऐलामांडा नेराइफोलिया), *A. cathartica* (ऐ. कैथार्टिका), और *Beaumontia grandiflora* (ब्यूमोन्शिया ग्रैंडीफ्लोरा), *Alstonia scholaris* को avenue trees (वीथी वृक्ष) के रूप में उगाया जाता है और इसकी लकड़ी से ब्लैक-बोर्ड, सस्ता फर्नीचर इत्यादि बनाए जाते हैं।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.6 Asclepiadaceae (ऐस्क्लीपिएडेसी)

The milkweed family (मिल्कवीडकुल)

Type genus : *Asclepias* (ऐस्क्लीपियास)

सामान्य जानकारी

यह लगभग 250 जीनसों और 2000 स्पीशीज़ की family है जिसका वितरण tropical और subtropical regions में होता है। मगर कुछ स्पीशीज़ temperate regions में भी पाई जाती हैं। भारत में इस family के लगभग 53 जीनस और 250 स्पीशीज़ मिलती हैं, जिनमें कुछ को ornamentals के रूप में उगाया जाता है कुछ औषधीय पादपों के रूप में महत्वपूर्ण हैं तो कुछ को उनके रेशों के लिए उपयोग में लाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Perennial सीधी खड़ी झाड़ियां (shrubs) या काष्ठीय बेलें (woody climbers) जिनमें milky latex पाया जाता है; पत्तियां opposite, entire (पूर्ण), exstipulate होती हैं, पुष्प cymose या racemose inflorescences में bisexual actinomorphic होते हैं; gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) translator (स्थानांतरक) विद्यमान होते हैं, Corona यानि कोराना (किरीट) प्रायः विद्यमान रहता है, फल एक या दो follicles (पुटकों) का बना होता है, बीज hairy होते हैं (चित्र 22.12 और 22.13 देखें।)

आकारिकीय विविधता

Asclepiadaceae family के पादप perennial खड़ी shrub या herbaceous या woody climber होते हैं या उनमें cactus-like (कैक्टस-नुमा) बनावट के साथ xerophytic (मरोद्भिदी आकारिकी) पाई जाती है। इसकी कई स्पीशीज़ बनावट में Apocynaceae family के सदस्यों जैसी ही होती हैं जिनमें herbaceous या suffructicose तना होता है। मगर तना कभी-कभी fleshy (मांसल) भी होता है। तने में bicollateral vascular bundles (उभय संवहन पूल) और laticiferous tubes (लैटेक्सधर नलिकाएं) पाई जातीं हैं।

Leaf : पत्तियां सरल, opposite decussate (सम्मुखी क्रॉसित) exstipulate कभी-कभी fleshy होती हैं। उनकी epidermis पर एक waxy layer (मोमी परत) पाई जाती है। या पत्तियां कभी-कभी thorns (कांटों) या scales (शल्कों) में भी लघुकृत होती हैं।

Inflorescence : इस family में दो प्रकार की inflorescence पाई जाती हैं cymose या racemose। Cymose inflorescence में एक bracteole (सहपत्रक) के axil (कक्ष) में branching (शाखन) अपेक्षतया अधिक प्रखर होती है जिससे कि dichasial cyme (युग्मशाखित पुष्पक्रम) अंततः monochasial (एकलशाखी) inflorescence में रूपांतरित हो जाता है। Racemose type में inflorescence एक सरल raceme या umbel के रूप में पायी जाती है।

Flower : पुष्प bracteate, bracteolate bisexual actinomorphic और hypogynous होते हैं। ये androecium और gynoecium का एक जटिल आकारिकीय संगठन दर्शाते हैं। Gamosepalous calyx गहराई से विभाजित होता है जिसकी पांच समान lobes में quincuncial aestivation पाया जाता है जिसमें odd sepal posterior होता है। पांच petals का कोरोला gamopetalous होता है और उसमें नाना प्रकार के पैटर्न दिखाई देते हैं। यह गहराई में विभाजित हो सकता है जिसमें इसके segment (खंड) विस्तारित या फैलाव लिए rotate (चक्राकार) होते हैं। यह नली दीर्घ campanulate (घंटाकार कोरोला) होती है। Aestivation Apocynaceae family की तरह साधारणतया contorted होता है मगर कभी-कभी यह valvate भी हो सकता है। Petals से या फिर stamens के filaments से petalloid appendages (दलाभ उपांगों) के रूप में membranous outgrowths (कलामयी उद्वर्ध) उत्पन्न होते हैं जो corona (किरीट) की रचना करते हैं यह संरचना कीटों को मकरंद की ओर जाने का मार्ग दिखाकर pollination में मदद करती है।

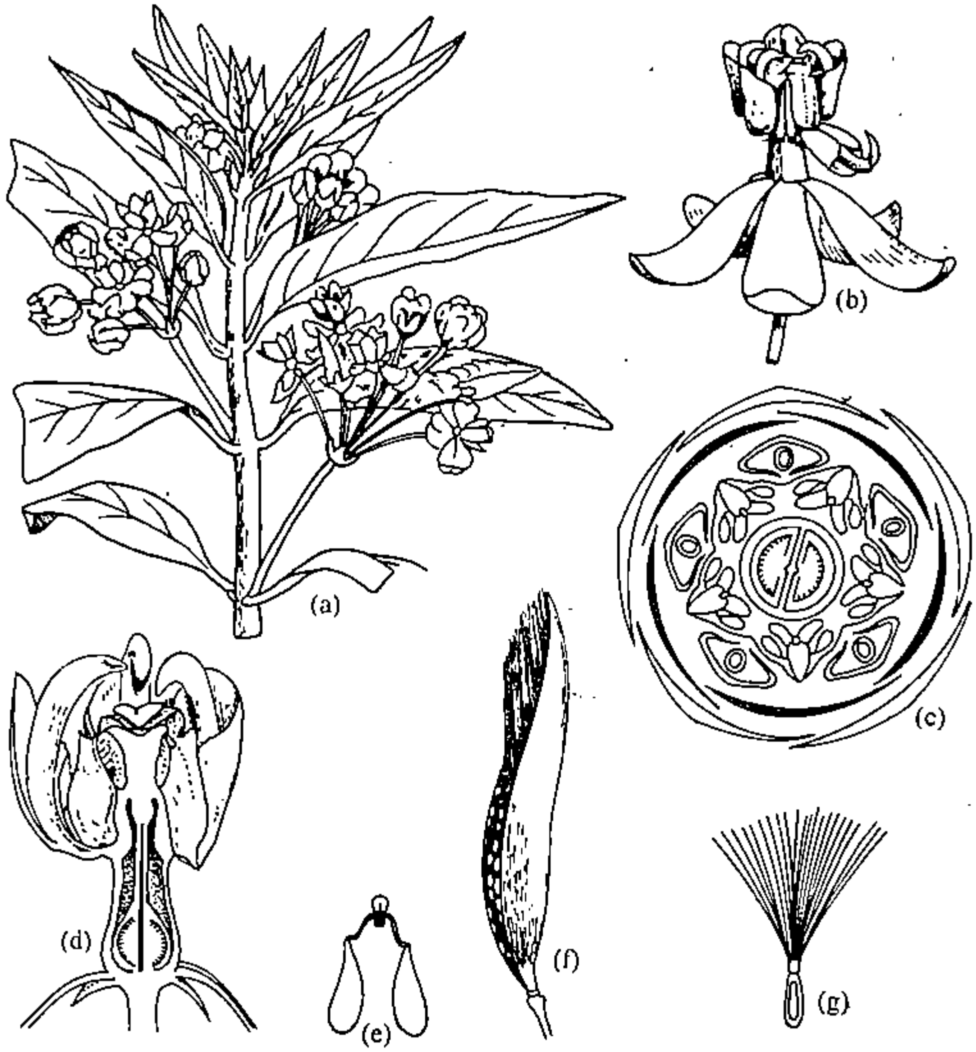

चित्र 22.12 : *Asclepias curassavica* (ऐस्क्लीपिएस कुरैसैविका)। (a) पुष्पी प्ररोह का एक भाग। (b) एक पुष्प। (c) पुष्प का चित्र। (d) पुंवर्तिकाग्रछत्री (gynostegium)। (e) परागपिंड (pollinia) के साथ translator apparatus (स्थानांतरक उपकरण)। (f) एक स्फुटनकारी पुटक (follicle)। (g) एक रोमगुच्छी (comose) बीज।

Floral axis (पुष्प अक्ष) पर पांच stamens और दो carpels अलग-अलग उत्पन्न होते हैं मगर दोनों एक जटिल संरचना में गठित होते हैं जिसे gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र, गाइनॉस्टीजियम) कहते हैं जो इस family का एक विशिष्ट लक्षण है। Androecium में पांच epipetalous stamens होते हैं जिनमें छोटे-छोटे filaments विद्यमान रहते हैं। Subfamily Cynanchoideae (उपकुल साइनेनकॉइडी) में filaments मुक्त रहते हैं और anthers spoon-shaped के translators (स्थानांतरक) बनाते हैं जिनमें दानेदार पराग (granular pollen) होते हैं। Subfamily Cynanchoideae में filaments एक स्तंभ (column) में संयुक्त (united) रहते हैं और परागकोश (anthers) पार्श्व से संयुक्त (laterally united) रहते हैं जिससे एक 5-पार्श्वीय, कुंद (blunt), शंकुनुमा संरचना (cone-shaped) बनती है, जो style और stigma से जुड़कर gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) बनाती है। इस subfamily में translator mechanism (स्थानांतरक क्रियाविधि) विशेष होती है। जिसमें pollen विशिष्ट मोमी पिंडों (waxy masses) में पाए जाते हैं जिन्हें pollinia यानि परागपिंड कहते हैं। प्रत्येक translator apparatus (स्थानांतरक उपकरण) ग्रंथि (gland) या ससंजी पिंड (adhesive body) का बना होता है जिसे corpusculum यानि कार्पसकुलम कहते हैं। इससे धागे-जैसी दो संरचनाएं उत्पन्न होती हैं जिन्हें retinaculae (उपबंधनी) या caudicle (कॉडिकल) कहते हैं। प्रत्येक कॉडिकल से, pollinium (परागपिंड) से waxy mass of pollen (पराग का एक मोमी पिंड) जुड़ा रहता है। Gynostegium में पांच corpuscles यानि कणिकाएं या कार्पसल पंचकोणीय डिस्क के प्रत्येक कोने में एक-एक पाई जाती हैं। प्रत्येक translator apparatus में, एक anther से एक pollinium और दूसरा pollinium निकटवर्ती (adjacent) anther से होता है। इस तरह प्रत्येक stamen के दो anther lobes दो भिन्न pollinia में अलग-अलग हो जाते हैं।

Gynoecium bicarpellary apocarpous यानि वियुक्तांडपी होता है जिसमें ovary superior होती है। हर carpel में placentation marginal होता है और ovules अनेक होते हैं। दोनों styles united होती हैं और वे gynostegium का हिस्सा होती हैं; और stigma gynostegium की डिस्कनुमा संरचना (disc-like structure) पर विद्यमान होता है। Stigma surface डिस्क के नीचे के पार्श्व पर होता है।

Fruit : यह follicles का जोड़ा होता है; कभी-कभी सिर्फ एक follicle ही विकसित हो पाता है और दूसरा वृद्धिरुद्ध (abort) हो जाता है। बीज अनेक और प्राय: comose (रोमगुच्छी) होते हैं (जिनमें hairs यानि रोमों का गुच्छा होता है) और उनका प्रकीर्णन वायु (wind dispersed) से होता है।

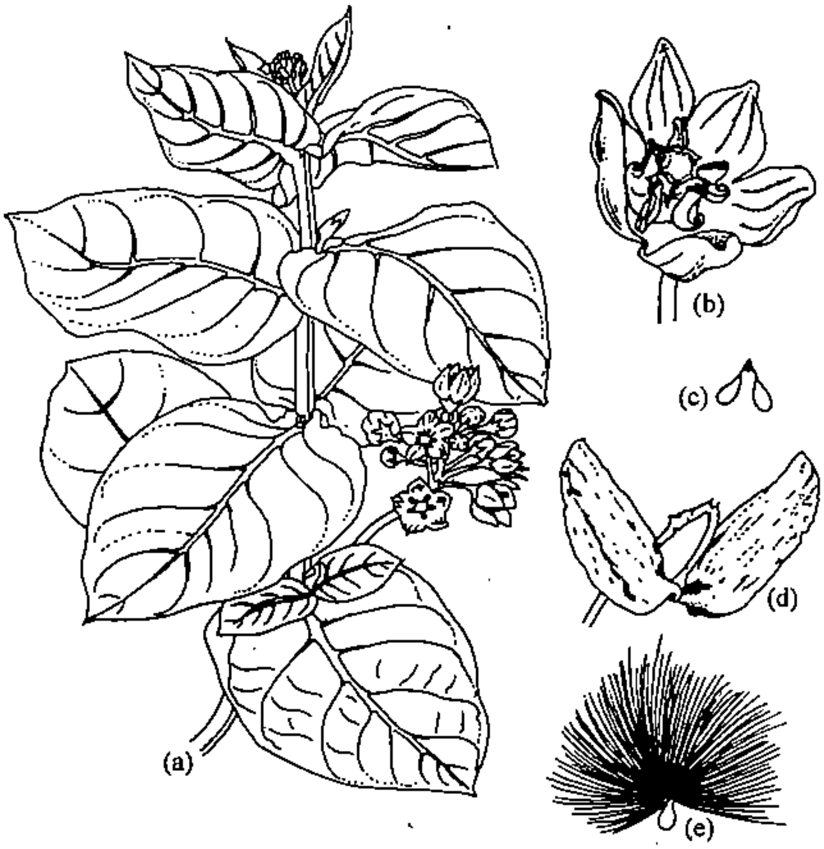

चित्र 22.13 : *Calotropis procera* (कैलोट्रॉपिस प्रोसेरा)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक पुष्प। (c) दो पराग पिंडों (pollinia) के साथ एक स्थानांतरक उपकरण (translator apparatus)। (d) दो पुटक (follicles)। (e) एक रोमगुच्छी (comose) बीज। (माहेश्वरी, 1966 से)।

कुल के निदानात्मक लक्षण

Asclepiadaceae family के कई अभिलक्षण Apocynaceae family के अभिलक्षणों से मिलते-जुलते हैं। दोनों families घनिष्ठ रूप से जुड़ी हैं। Asclepiadaceae family की पहचान के लिए निदानात्मक लक्षण निम्न हैं:

1) Herbaceous woody plants जिनमें milky latex पाया जाता है।
2) पत्तियां exestipulate सरल opposite और decussate होती हैं।
3) Inflorescence cymose या racemose होती हैं।
4) पुष्प bracteate और bracteolate actinomorphic bisexual होते हैं।
5) Gynostegium विद्यमान होता है।
6) Gamosepalous कैलिक्स में quincuncial aestivation पाया जाता है।
7) Gamopetalous कोरोला में contorted aestivation पाया जाता है।
8) पांच epipetalous stamens जिनमें चम्मच के आकार (spoon-shaped) के translators या pollinia होते हैं।

9) Bicarpellary, apocarpous superior ovary (ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय), styles gynostegium का हिस्सा होते हैं।

10) फल follicles का जोड़ा होता है।

11) बीज comose होते हैं।

वर्गीकृत स्थिति

Asclepiadaceae का Apocynaceae से घनिष्ठ संबंध है। दोनों को बेंथम और हुकर के साथ-साथ एंगलर और प्रांट्ल ने भी अपनी-अपनी वर्गीकरण पद्धतियों में साथ-साथ रखा है। मगर तख़्ताज़न (1997) ने Asclepiadaceae को Apocynaceae में ही मिला दिया है। इस तरह दोनों एक ही family में एकीकृत हैं जिसे Apocynaceae कहते हैं। सो Asclepiadaceae family की वर्गीकृत स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए Apocynaceae family के वर्गीकरण को देखें।

आर्थिक महत्व

Asclepiadaceae family में अनेकों पादप शामिल हैं जिन्हें ornamentals के रूप में उगाया है। मगर इसके अलावा कुछ पादपों का आर्थिक महत्व लैटेक्स (latex) के लिए तो अन्य पादपों का रेशों (fibres) के लिए है।

1) **Ornamental plants (सजावटी पादप)**

Asclepias curassavica (ऐस्क्लीपिएस कुरैसैविका, चित्र 22.12)

Ceropegia woodii (सीरोपेजिया वुडाइ)

Stapelia gigantea (स्टैपेलिया जाइगैंटिया)

Cryptostegia grandiflora (क्रिप्टोस्टीजिया ग्रैंडीफ्लोरा)

Calotropis gigantea (कैलोट्रॉपिस जाइगैंटिया)

2) **Medicinal plants** (औषधीय पादप)

Tylophora indica (टाइलोफोरा इंडिका) - asthma यानि दमा, bronchitis यानि ब्रोंकाइटिस, (श्वसनीशोध) खांसी के लिए।

Sarcostemma acidum (सारकोस्टेमा ऐसिडम) - वमनकारी (emetic) के रूप में।

Gymnema sylvestre (जिम्नेमा सिल्वेस्टर) - laxative (मृदु विरेचक, सारक) और diuretic यानि मूत्रल के रूप में।

Hemidesmus indicus (हेमीडेस्मस इंडिकस) - रक्त शोधक के रूप में और त्वचा व urinary diseases (मूत्र रोगों) में।

3) **Latex - yielding plants (लैटेक्स-उत्पादक पादप)**

Cryptostegia grandiflora - इसके लैटेक्स का प्रयोग रबर के स्थान पर होता है। *Calotropis gigantea* और *C.procera* (चित्र-22.13) इनसे प्राप्त लैटेक्स का प्रयोग चर्मशोधन उद्योग (tanning industry) में होता है।

4) **Latex-yielding plants** (रेशा उत्पादक पादप)

Asclepias curassavica, *Tylophora tenuis* (टिलोफोरा टेनुइस), *Leptadenia pyrotechnica* (लेप्टैडिनिया पाइरोटेक्नीका), *Calotropis gigantea*। इनके तनों से प्राप्त होने वाले रेशों (fibres) से डोरी, मछली पकड़ने के जाल (fishing nets) और सुतली (twines) बनाई जाती हैं।

बोध प्रश्न

1. नीचे दिए गए विकल्पों में सही चुनिए :

   क) Family .... में लैटेक्स नहीं पाया जाता है।

      i) Apocyanaceae

      ii) Asteraceae

      iii) Rubiaceae

      iv) Sapotaceae

   ख) Myrmecophily [पीपिलिका (चींटी) रागिता] .... family में पाई जाती है।

      i) Asteraceae

      ii) Asclepiadaceae

      iii) Rubiaceae

      iv) Sapotaceae

2. नीचे दिए गए जीनसों के families के नाम बताइए और प्रत्येक जीनस की एक आर्थिक उपयोगिता बताइए।

	जीनस	फैमिली	आर्थिक उपयोग
i)	*Alstonia*	....	....
ii)	*Artemisia*	....	....
iii)	*Carthamus*	....	....
iv)	*Cephaelis*	....	....
v)	*Cinchona*	....	....
vi)	*Cryptostegia*	....	....
vii)	*Madhuca*	....	....
viii)	*Palaquium*	....	....
ix)	*Tylophora*	....	....
x)	*Vinca*	....	....

3. निम्न terms को परिभाषित कीजिए और जिन families से वे संबद्ध हैं उनके नाम बताइए।

   क) Capitulum Inflorescence (मुंडक पुष्पक्रम)

   ....

   ....

   ....

   ....

   family ....

ख) Gynostegiun (पुंवर्तिकाग्रछत्र)

....

....

....

family ....

ग) Intra-petiolar stipules (अंतः वृंतीय अनुपर्ण)

....

....

....

family ....

घ) Protogynous flower (स्त्रीपूर्वी पुष्प)

....

....

....

family ....

4. Rubiaceae और Asteraceae family को बेंथम और हुकर ने उनमें inferior ovary (अधोवर्ती अंडाशय) के आधार पर, Series Inferae (सिरीज इनफेरी) में रखा है। Gynoecium के दो अन्य अभिलक्षण बताइए जिनके आधार पर इन दोनों families की पहचान की जा सके।

i) ....

....

ii) ....

....

5. क) Contorted aestivation (व्यावर्तित पुष्पदल विन्यास) का प्रयोग एंग्लर और प्रांट्ल ने, Order Contortae को पहचानने के लिए एक अभिलक्षण के रूप में किया है। इस order की दो families के नाम बताइए जिनके बारे में आपने पढ़ा है।

i) ....

....

....

ii) ....

....

ख) इन families का निम्न वर्गीकरण पद्धतियों में क्या स्थान है ?

i) बेंथम और हुकर वर्गीकरण में

....

....

ii) तख्ताज़न वर्गीकरण में

....

....

....

6. क) Asteraceae family को जिन दो subfamilies में बांटा जा सकता है उनके नाम बताइए।

i) ....

ii) ....

ख) इन दोनों subfamilies को अलग से पहचानने के लिए दो महत्वपूर्ण अभिलक्षण बताइए।

subfamily (i)	**subfamily (ii)....................................**
i)	
ii)	

7. एंग्लर और प्रांट्ल की वर्गीकरण पद्धति की तुलना Asteraceae family की वर्गीकृत स्थिति के संदर्भ में तख्ताज़न पद्धति से कीजिए।

....

....

....

....

....

8. Rubiaceae family के महत्वपूर्ण vegetative और floral characters का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

9. Family Sapotaceae को 'आर्थिक महत्व' पर एक नोट तैयार कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

10. Family Apocyanaceae और familyAslepiadaceae में भेद करने के लिए दो अभिलक्षण बताइए।

i) ....

....

ii) ....

....

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.7 Solanaceae (सोलेनेसी)

The Potato family (आलू कुल)

Type genus : *Solanum* (सोलेनम)

सामान्य जानकारी

Solanaceae family मुख्यत: मध्य और दक्षिण अमेरिका तथा वेस्ट इंडीज में वितरित है, जहां इस family के अधिकांश जीनस पाए जाते हैं और उनमें से ज्यादातर endemic यानि स्थानिक अथवा विशेषक्षेत्री होते हैं। विविधता के इस महत्वपूर्ण केन्द्र यानि centre of diversity के अलावा, इस family के सदस्य यूरोप और एशिया में भी पाए जाते हैं। यह 90 जीनसों और 2000 स्पीशीज़ की एक विशाल family है जिनमें से 15 जीनस और 90 स्पीशीज़ भारत में पाई जाती हैं और इनमें से अनेक को विभिन्न जरूरतों को पूरा करने के लिए उगाया भी जाता है। कुछ सदस्यों को चित्रों 22.14 - 22.18 में दर्शाया गया है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

इस family के पादप herbs, shrubs या trees होते हैं जिनमें alternate, exstipulate पत्तियां पाई जाती हैं। पुष्प साधारणतया बड़े bisexual, actinomorphic होते हैं। Carpels obliquely placed (तिर्यक् स्थिति में) होते हैं जिनमें एक swollen placenta (फूले बीजांडासन) पर कई ovules (बीजांड) पाए जाते हैं जो axile placentation में व्यवस्थित होते हैं। फल बेरी या कभी-कभी कैप्सूल के रूप में पाया जाता है।

आकारिकीय विविधता

पादप annual, biennial या perennial herbs या shrubs होते हैं, वे trees के रूप में भी पाए जाते हैं। इनके स्वभाव में यह सारी विविधता, अक्सर एक ही जीनस में देखी जा सकती है जैसे कि *Solanum* (सोलैनम) में (चित्र 22.14)। इस family में तने का एक स्थायी शारीरीय अभिलक्षण (anatomical character) उसमें bicollateral vascular bundles की उपस्थिति है। इस family के सदस्यों में branching pattern (शाखन पैटर्न) में भी एक विशेष लक्षण पाया जाता है। यह विशेषता है axillary branches (कक्षीय शाखों) का main axis (मुख्य प्ररोह) के साथ जन्मजात संलयन (congenital fusion), कुछ जीनसों में यह अधिक प्रबलता से पाई जाती है जिससे नाना प्रकार के branching pattern, विशेषकर प्ररोह shoot के पुष्पी भाग में, उत्पन्न होते हैं।

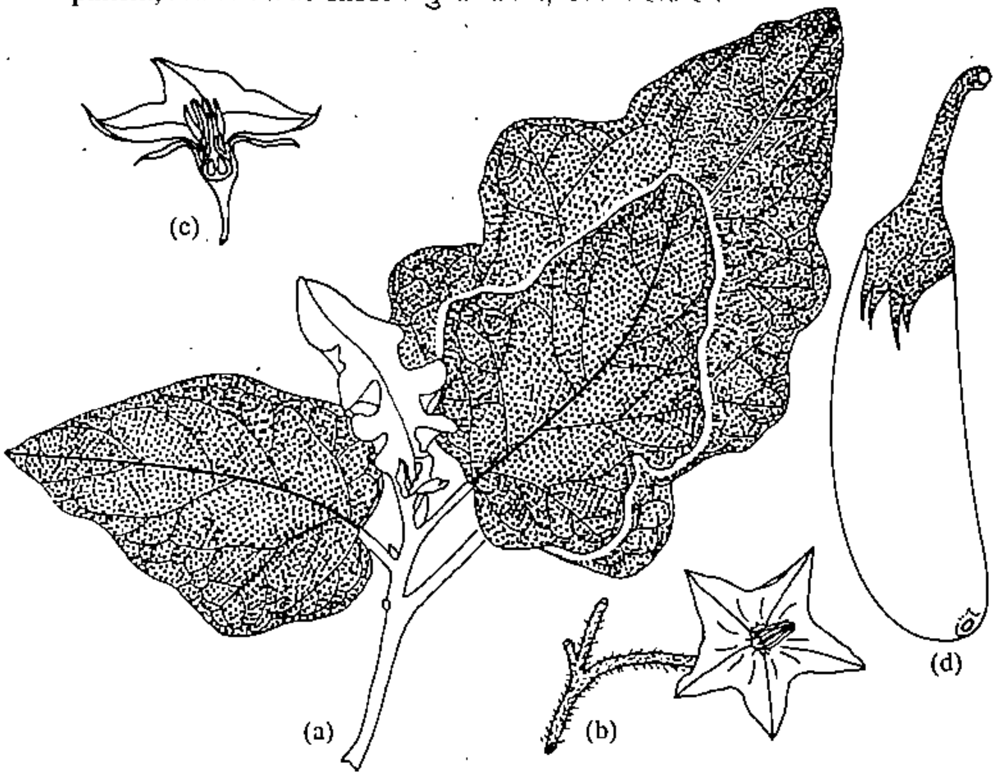

चित्र 22.14 : *Solanum melongena* (सोलैनम मेलोन्जेना)। (a) एक vegetative branch। (b) Longitudinal section में एक पुष्प। (d) एक फल। (पर्सग्लव, 1988 से पुन:चित्रित)।

Leaf : पत्तियां प्रायः alternate होती हैं मगर flowering shoot (पुष्पी प्ररोह) में वे लगभग opposite या subopposite (अर्धसम्मुखी) नज़र आती हैं। किसी एक node (पर्वसंधि) पर लगी दो पत्तियों की गौर से जांच करने पर दोनों का आकार एक-दूसरे से भिन्न पाया जाता है - एक पत्ती प्रायः दूसरी से बड़ी होती है। यह axes (कक्षों) के congenital fusion (जन्मजात संलयन) के कारण होता है। पत्तियां exstipulate सरल होती है जिनमें लैमिना पूर्ण या पालियों में विभाजित lobed होता है।

Inflorescence : Inflorescences terminal (अंत्य, अंतस्थ), या axillary (कक्षीय), या axes के congenital fusion के कारण extra-axillary (बाह्य-कक्षीय, कक्षेतर) होती हैं। यह एक अकेले (solitary) बड़े पुष्प से भी निर्मित हो सकती हैं। या फिर यह cymose होती हैं, जिसमें अनेक लघु पुष्प पाए जाते हैं।

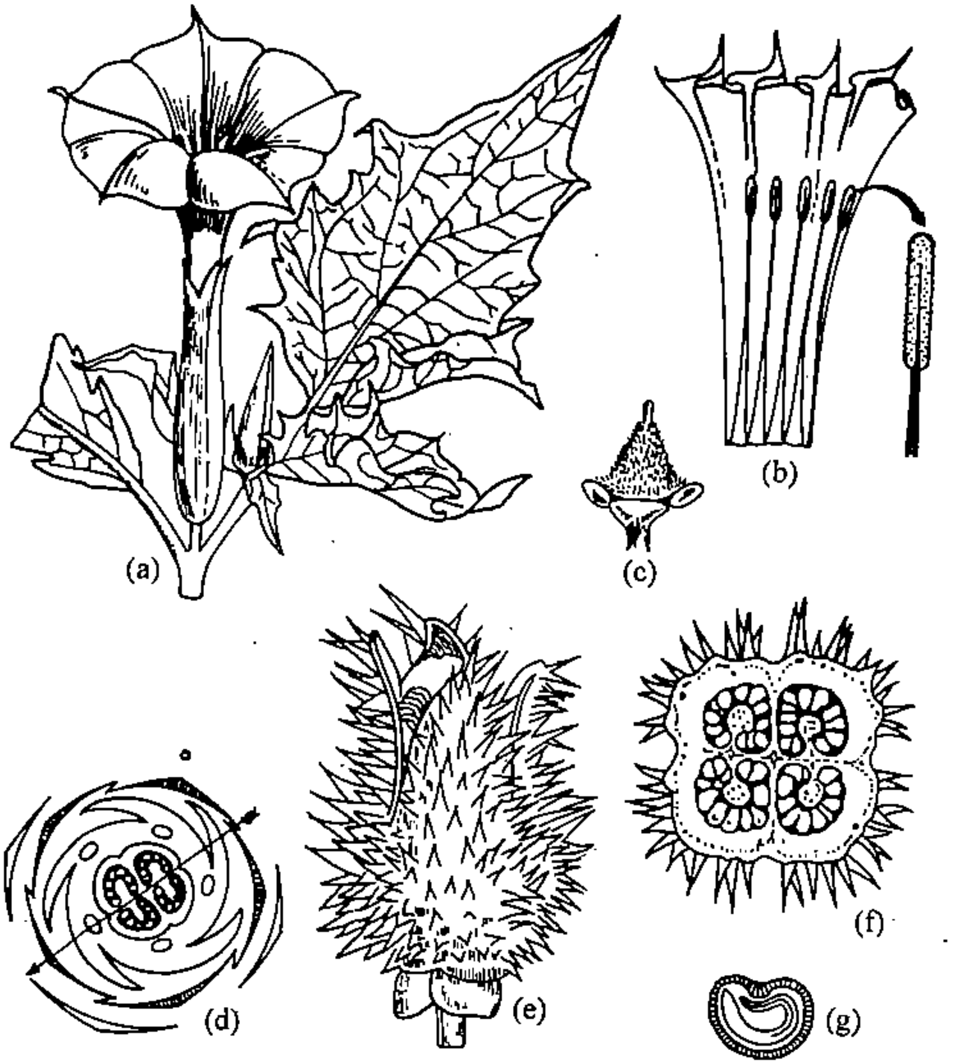

चित्र 22.15 : *Datura stramonium* (डाटुरा स्ट्रैमोनियम)। (a) एक पुष्पी प्ररोह (flowering shoot)। (b) काटकर खोला गया कोरोला। Androecium पर ध्यान दीजिए। (c) Pistil जैसा कि petals को हटा लेने के बाद दिखाई देती है। (d) Floral diagram (पुष्प-आरेख), तीर line of symmetry (सममिति के तल) का संकेत देता है। (e) एक dehiscing capsule। (f) Transvesse section में कैप्सूल। (g) एक बीज।

Flower : पुष्प ebracteate पूर्ण, bisexual, actinomorphic और hypogynous होते हैं। कैलिक्स पांच, united sepals (संयुक्त दलों) का बना होता है जिसमें valvate aestivation पाया जाता है। वे persistent (स्थायी) होते हैं और कभी-कभी accrescent (उत्तरवर्धी) होते हैं। यानि ये वृद्धि करते फल के साथ आवर्धन करते हैं। पांच petals वाले gamopetalous कोरोला में भिन्न पैटर्न दिखाई देता है। यह *Solanum* की तरह rotate (चक्राकार) या यह फिर जैसे कि *Atropa* (ऐट्रोपा) या *Datura* (डाटुरा) में देखा जाता है ये bell-shaped (घंटाकार) होते हैं (चित्र 22.16)। यह लगभग zygomorphic होते हैं जैसा कि *Hyoscyamus* (हायोसायैमय) में। Aestivation plicate (वलिकित) या convolute (संवलित) हो सकता है। अधिकांश पादपों में कोरोला सफेद या हल्के पीले रंग का होता है।

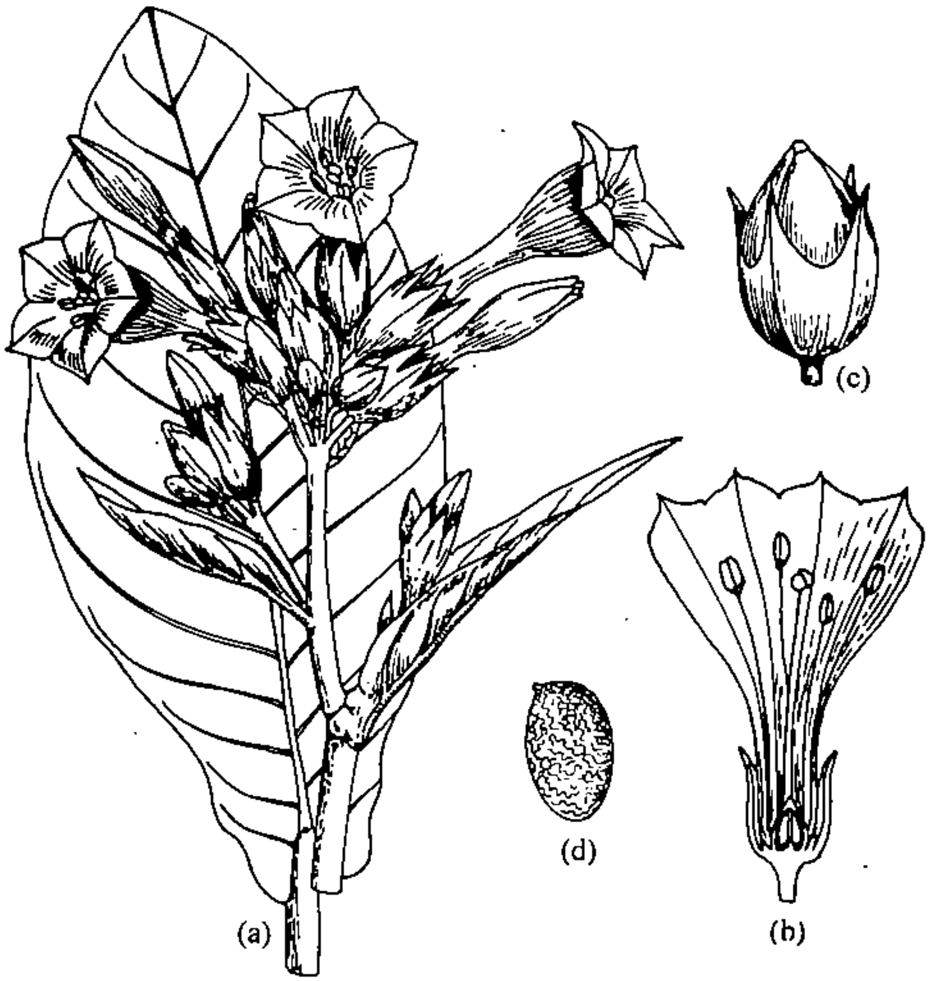

चित्र 22.16 : *Nicotiana tabacum* (*निकोटिएना टैबैकम*)। (a) पुष्पी टहनी और उसकी पृष्ठभूमि में एक पत्ती। (b) खड़ी काट (vertical section) में एक पुष्प। (c) एक फल। (d) एक बीज।

Androecium : पांच epipetalous stamens होते हैं, मगर कभी-कभी सिर्फ चार, विशेषकर zygomorphic पुष्पों में पाए जाते हैं। Stamens free होते हैं। मगर जैसे कि *Solanum* में anthers unite (संयुक्त) हो सकते हैं जिससे वे syngenesious (युक्तकोशी) दिखाई देते हैं। Anthers dithecous होते हैं और उनमें longitudinal or poral dehiscence (अनुदैर्घ्य या छिद्रिल स्फुटन) होता है।

Gynoecium : यह bicarpellary, syncarpous होता है जिसमें एक superior ovary विद्यमान रहती है। यह ovary एक hypogynous disc यानि अधोजायांगी डिस्क के ऊपर स्थित होता है। Ovary bilocular या falsely 3-5 locular (आभासी तौर पर तीन-पाँच कोष्ठकी) होता है। Placentation axile पाया जाता है। Ovules अनेक तथा intruding placentae पर विद्यमान होते हैं। दो carpels mother axise (मातृ अक्ष) से oblique (तिर्यक, तिरछी) स्थिति में पाए जाते हैं जो इस family की पहचान का एक महत्वपूर्ण लक्षण है। Floral diagram (पुष्प-आरेख) में anterior carpel (अग्र अंडप) दाहिनी, तो posterior carpel (पश्च अंडप) बाईं ओर दिखाया गया है। Style सरल होती हैं और stigma bilobed होता है।

Fruit : यह साधारणतया बहुबीजी (many-seeded) बेरी होता है। मगर कभी-कभी फल एक कैप्सूल के रूप में भी पाया जाता है जैसे के *Datura* में (चित्र 22.15) तथा *Nicotiana* (चित्र 22.16) में। कैलिक्स फल में बना रहता है (persists) और कुछ पादपों में यह सुस्पष्ट रूप से विद्यमान होता है जैसे बैंगन में (चित्र 22.14), और टमाटर (चित्र 22.17) में। *Physalis peruviana* (*फाइसैलिस पेरूविआना*) में यह फल के चारों ओर एक गुब्बारेनुमा संरचना बनाते हैं। फल में कई बीज होते हैं, जिनमें straight यानि रिजु (सीधा), या curved यानि वक्रित embryo पाया जाता है। यह लक्षण और

ovary में पार्टीशन दोनों ही विशेषताएं इस family को इसके tribes (संवर्गों) और जीनसों में वर्गीकरण के लिए महत्वपूर्ण अभिलक्षण हैं।

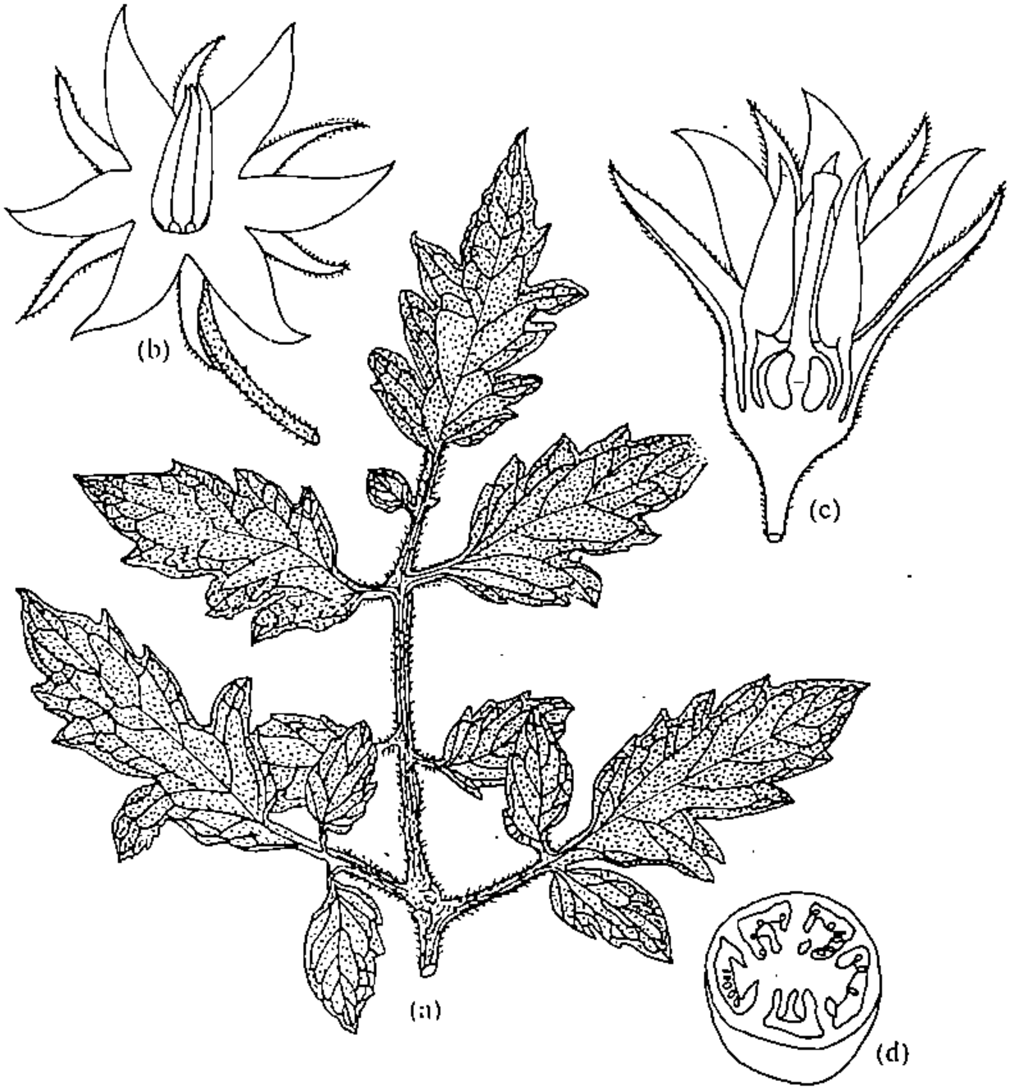

चित्र 22.17 : *Lycopersicon esculentum* (लाइकोपर्सिकॉन एस्कुलेंटम)। (a) एक vegetative shoot। (b) एक पुष्प। (c) Longitudinal section में एक पुष्प। (d) Transverse section में फल का एक अंश। (पर्सग्लव, 1988, से पुनःचित्रित)।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Herbs, shrubs या trees जिनके तने में bicollateral vascular bundles पाए जाते हैं।
2) पत्तियां सरल alternate या subopposite होती हैं जिनमें congential fusion of axes के कारण extra-axillary inflorescences पाए जाते हैं।
3) पुष्प complete (पूर्ण) hypogynous, bisexual होते हैं।
4) कैलिक्स persistent होता है।
5) कोरोला में plicate या convolute aestivation पाया जाता है।
6) Stamens की संख्या petals यानि (पंखुड़ियों के बराबर, या उनसे कम होती है)।
7) Gynoecium bicarpellary, syncarpous होता है।
8) Carpels obliquely स्थित रहते हैं।
9) Placentation axile, तथा अनेक ovules intruding placentae पर पाए जाते हैं।
10) फल एक बेरी या कैप्सूल होता है जिसमें कैलिक्स persistent होते हैं।

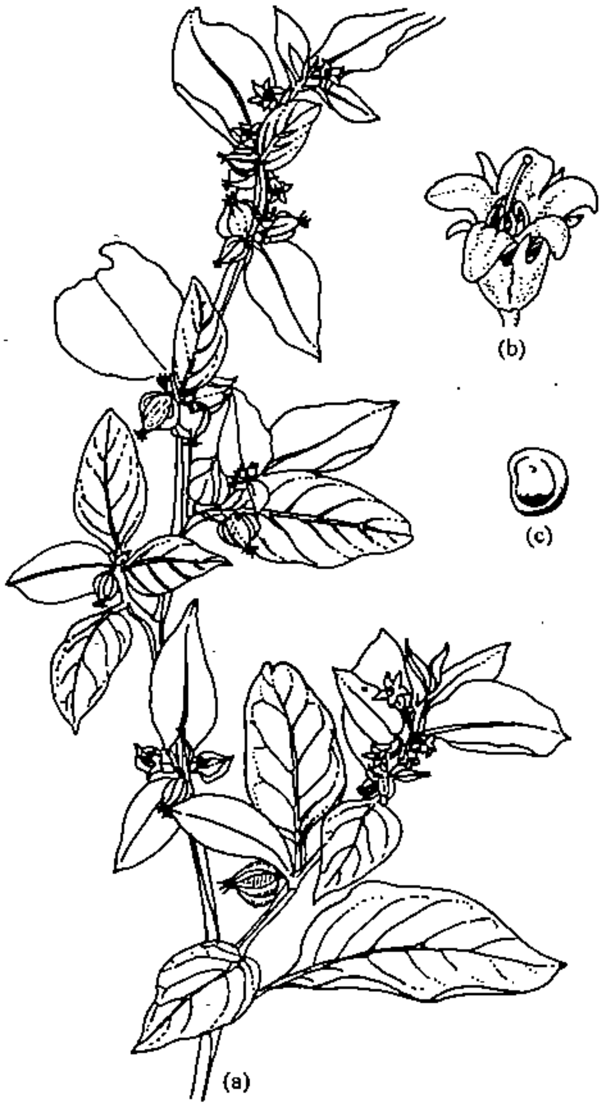

चित्र 22.18 : *Withania somnifera* (विथैनिया सोम्नीफेरा)। (a) पुष्पों और फलों से लदी एक टहनी। (b) एक पुष्प। (c) एक बेरी। (माहेश्वरी, 1986 से पुनःचित्रित)।

वर्गीकृत स्थिति

बेंथम और हुकर ने Solanaceae family को Gamopetalae, Series III Bicarpellatae, and Order 8-Polemoniales (गैमोपिटेली, सिरीज III बाइकार्पिलेटी, और गण 8-पोलेमोनिएलीज) में वर्गीकृत किया है। इस order में Convolvulaceae (कॉन्वोल्वुलेसी) और Boraginaceae (बोरैगिनेसी) सहित चार अन्य families शामिल हैं। एंगलर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में इस family को Sympetalae and Order 16-Tubiflorac (सिम्पिटैली और गण 6-ट्यूबीफ्लोरी) में रखा गया है जिसमें बेंथम और हुकर द्वारा order Polemoniales में वर्गीकृत सभी families सहित, 20 families हैं तख़्ताजन ने अपने वर्गीकरण में Solanaceae family को Subclass K-Lamiidae, Superorder Solananae, and Order 164-Solanales (उपवर्ग K-लैमाइडी, अधिगण सोलैनेनी, और गण 164-सोलैनेलीज) में वर्गीकृत किया है। इस वर्गीकरण में एक रोचक बात यह है कि family Convolvulaceae को Order 165-Convolvulales (गण 165-कॉन्वॉलुलेलीज) और family Boraginaceae को Order 167-Boraginales (गण 167-बोरैगिनेलीज) में रखा है।

आर्थिक महत्व

Solanaceae family के पादपों से हमें फल, सब्जियां, दवाइयां और narcotics (स्वापक, नशीले पदार्थ) प्राप्त होते हैं।

1) **Edible plants** (भोज्य पादप)

i) *Solanum tuberosum* (*सोलैनम ट्युबरोसम*) - आयरिश आलू जो भूमिगत कंदों (stem tubers) से मिलता है। आपने इस पादप के बारे में इकाई 14 और 16 में विस्तार से पढ़ा है।

ii) *Lycopersicon esculentum* (*लाइकोपर्सिकॉन एस्कुलेंटम*) - टमाटर (चित्र 22.17 देखिए) इसे पकाकर या कच्चा दोनों प्रकार से खाया जाता है या उससे चटनी या कैचअप (ketchup) बनाए जाते हैं।

iii) *Solanum melongena* (*सोलैनम मेलोंजेना*) (चित्र 22.14) बेंगन, इसके फल से सब्जी बनाई जाती है।

iv) *Capsicum frutescens* (*कैप्सिकम फ्रूटेसेंस*) और *Capsicum annuum* (*कैप्सिकम एनुअम*), फल को हरी मिर्च के रूप में प्रयोग किया जाता है या उसका अचार या सब्जी बनायी जाती है।

v) *Physalis peruviana* (*फाइसैलिस पेरुविआना*) - रसभरी, इसके फल खाए जाते हैं।

2) **Drugs** (दवाइयां)

i) *Atropa belladona* (*ऐट्रोपा बेलाडोना*) - इसकी जड़ों से निष्कर्षित ऐल्कैलॉइड ऐट्रोपिन आंख की पुतली को विस्तारित और दर्द से राहत दिलाने में काम आती है। बेलाडोना प्लास्टर भी दर्द से राहत दिलाने के लिए इससे बनाया जाता है।

ii) *Hyoscyamus niger* (*हायोस्कायामस नाइजर*) - हेमबेन (खुरासानी आज़वाइन) इसकी सूखी पत्तियां और तरूण पुष्पी प्ररोहों का प्रयोग दमे और काली खांसी के संलक्षणों से राहत दिलाने के लिए शामक (सीडेटिव) के रूप में होता है।

iii) *Withania somnifera* (*वियैनिया सोम्नीफेरा*) - अश्वगंधा (चित्र 22.18), धतूरा और अन्य पादप भारतीय चिकित्सा पद्धति में प्रयोग होते हैं।

3) **Fumitories** (धूमक)

Nicotiana tabacum (*निकोटिआना टैबैकम*) (चित्र 22.16) और *नि. रस्टिका* दो महत्वपूर्ण तंबाकू उत्पादक पादप हैं (चित्र 19.13 a,b भी देखें)। आपने इन पादपों के बारे में खंड III B इकाई 19 में विस्तार से पढ़ा है।

4) **Ornamentals** (सजावटी पादप)

Solanaceae की अनेक स्पीशीज़ को सजावट के लिए उगाया जाता है। इनमें मुख्य इस प्रकार हैं: *Cestrum nocturnum* (*सेस्ट्रम नॉक्टर्नम*), *C.diurnum* (*से. डाइअर्नम*), *Petunia axillaris* (*पेटूनिया ऐक्सिलैरिस*), *Salpiglossis sinuata* (*सैल्पीग्लॉसिस सिनुऐटा*), *Schizanthus pinnatus* (*शाजैन्थस पिन्नैटस*), *S. retusus* (*सा. रेटुसस*), *Solanum jasminoides* (*सोलैनम जैस्मिनॉइडीज*), *Brunfelsia calycina* (*ब्रन्फेलिसिया कैलिसिना*), और *Nicotiana alata* (*निकोटिआना ऐलैटा*)।

22.8 Acanthaceae (ऐकेंथेसी)

The Acanthus family (ऐकेंथस कुल)

Type genus : *Acanthus* (ऐकेंथस)

सामान्य जानकारी

लगभग 250 जीनसों और 2000 से अधिक स्पीशीज़ वाली Acanthaceae family के सदस्य विश्व के गर्म भागों में पाए जाते हैं। इसके वितरण के चार मुख्य केन्द्र देखने में आते हैं: हिन्द-मलय, अफ्रीका, ब्राज़ील और मध्य अमेरिका। इन प्रदेशों के अलावा इस family के कुछ सदस्य भूमध्य-सागर प्रदेश, संयुक्त राज्य अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में भी पाए जाते हैं। इस family के लगभग 70 जीनस और 350 स्पीशीज़ भारत में पाई जाती हैं, जिनमें से कई स्पीशीज़ को साधारणतया सजावट के लिए उगाया जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herbs या shrubs, पत्तियां opposite और decussate, exstipulate; inflorescence विशिष्ट bracts और bracteoles को धारण किए रहता है; पुष्प bisexual, zygomorphic (चित्र 22.19, 22.20) तथा फल कैप्सूल होता है जिसमें retinaculate यानि उपबंधनी बीज होते हैं।

आकारिकीय विविधता

इस family के सदस्य herbs या shrubs होते हैं और विरले ही small trees के रूप में भी मिलते हैं। Climbing plants (आरोही पादप), marsh plants (कच्छ पादप) और xerophytic (मरूद्भिद) प्रकार

चित्र 22.19 : *Adhatoda vasica* (एधैटोडा वैसिका)। एक पुष्पी टहनी (माहेश्वरी, 1966 से)।

के पादप भी मिलते हैं। Climbing plants में abnormal secondary growth (अपसामान्य द्वितीयक वृद्धि) पाई जाती है। इस family की एक अभिलाक्षणिक विशेषता तरुण तनों और पत्तियों में cystoliths (सिस्टोलिथ) की उपस्थिति है, ये streaks (निकष रेखाओं या स्ट्रीक) या protuberances (प्रोद्‌वर्धों) के रूप में दिखाई देते हैं। ये epidermal cells (अधिचर्मी कोशिकाओं) में calcium carbonate (कैल्सियम कार्बोनेट) के बड़े-बड़े रवों (क्रिस्टल) के रूप में विद्यमान रहते हैं।

Leaf : पत्तियां opposite और decussate exstipulate होती हैं प्राय: जिनमें entire margin (पूर्ण कोर) पाया जाता है (चित्र 22.19 और 22.20 देखें)। सिस्टोलिथ सुस्पष्ट होते हैं। मरूद्‌भिदों में पत्तियां reduced (लघुकृत) और spiny (कंटकी) होती हैं।

Inflorescence : यह साधारणतया cymose होता है जिसमें dichasial pattern (युग्मशाखी पैटर्न) पाया जाता है। मगर आमतौर पर spicate (कीर्णशधर, स्पाइकधर) और racemose inflorescences भी इस family में देखने को मिलते हैं। कुछ जीनसों में पत्तियों के axils (कक्षों) में solitary flowers (एकलपुष्प) भी पाए जाते हैं।

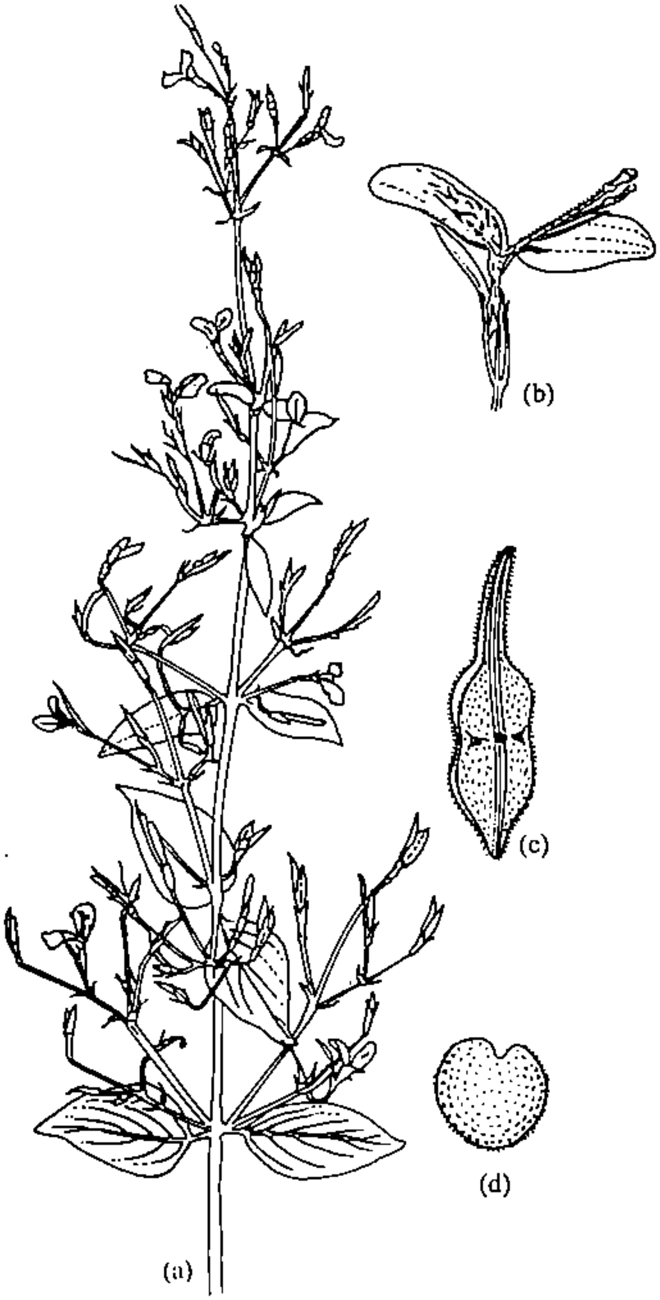

चित्र 22.20 : *Peristrophe bicalyculata* (पेरिस्ट्रॉफी बाइकैलिकुलैटा)। (a) पुष्पी और फलन टहनी। (b) एक विवृत पुष्प। (c) एक कैप्सूल। (d) बीज।

Flower : पुष्प bracteate और bracteolate, pedicellate, bisexual complete zygomorphic होते हैं। प्राय: ovary के नीचे एक nectariferous disc विद्यमान रहती है। पुष्प tetramerous या pentamerous होते हैं। कैलिक्स साधारणत: gamosepalous और 4 या 5 sepals का बना होता है। यह reduced (लघुकृत) हो सकता है जैसे कि *Thunbergia* (*थंबर्जिया*) में, जिसमें बड़ी bracteoles वर्धनशील (developing) पुष्प की रक्षा करती हैं। Sepals कभी-कभी सुस्पष्ट नहीं होते, जिसके चलते bracteoles को भूलवश sepal समझ लिया जाता है। Gamopetalous कोरोला में पांच petals होते हैं। यह एक दीर्घ या लंघु, पतली नली (slender tube) की रचना करते हैं जो बाद में पांच समान पालियों (lobes) में विस्तारित हो जाती हैं या फिर यह bilabiate (द्विओष्ठी) बना जाती है। ऊपरी lip (ओष्ठ) निचले lip की अपेक्षा अधिक बड़ा और सघन रूप से रोमिल (hairy) हो सकता है।

Subfamily Acanthoideae (उपकुल ऐकैंथोइडी) में जीनसों को कोरोला के aestivation के आधार पर दो प्रकारों में बांटा जा सकता है, जो contorted (व्यावर्तित) या imbricate (कोरछादी) हो सकता है।

Androecium : प्राय: चार epipetalous stamens, विरले ही पांच भी होते हैं या सिर्फ दो stamens ही विकसित होते हैं और शेष दो staminodes (पुंकेसरों) में लघुकृत हो जाते हैं। Stamens बाहर की ओर निकले होते हैं। इस family के कुछ सदस्यों में प्रत्येक stamen का एक anther lobe (परागकोशक) बड़ा तो दूसरा छोटा, या फिर एक rudimentary structure (अल्पविकसित संरचना) में लघुकृत हो सकता है। Pollen grains (परागकण) की बनावट, आकार और exine sculpturing (बाह्यचोल लक्षण) में भारी विविधता पाई जाती है जिनसे family के विभिन्न जीनसों की पहचान के लिए उपयोगी अभिलक्षण मिलते हैं। इस पराग विविधता (pollen diversity) के कारण ही Acanthaceae family को palynologists यानि परागाणु विज्ञानी, eurypalynous family (यूरीपैलिनस कुल) नाम देते हैं।

Gynoecium : यह bicarpellary, syncarpous होता है जिसमें एक superior ovary पायी जाती है। यह bilocular होती है जिसमें axile placentation होता है। प्रत्येक locule में 2-अनेक ovules, दो पंक्तियों में विद्यमान रहते हैं। अंडाशय दीर्घन (ovary elongate) करके एक लंबी संकीर्ण style में विकसित होता है जिसमें दो stigmas होते हैं।

Fruit : फल एक bilocular capsule होता है जो base तक longitudinally (अनुदैर्ध्य विन्यास में) खुलता है, विरले ही फल एक या द्विबीजी (two-seeded) drupe होता है, बीज छोटे और प्राय: exalbuminous (ऐल्बुमिनहीन) होते हैं। बीजों में retinaculae (उपबंधनियां) या jaculators (उत्क्षेपक) पाए जाते हैं जो funiculus यानि बीजांड-वृंत के ही हुकनुमा प्रवर्ध (projections) हैं। ये संरचनाएं dispersal में सहायक होती हैं।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Herbs या shrubs जिनके तरुण तने और पत्तियों में cystoliths पाए जाते हैं।

2) पत्तियां opposite decussate enitre और exstipulate होती हैं।

3) Inflorescence dichasial cyme or racemose होता है।

4) Bracts और bracteoles सुस्पष्ट होती हैं।

5) पुष्प bisexual zygomorphic होते हैं जिनमें ovary के नीचे तक nectariferous discs विद्यमान रहती हैं।

6) कोरोला साधारणतया bilabiate उसमें aestivation imbricate या contorted होता है।

7) Stamens दो या चार, बाहर की ओर निकले (exserted) होते हैं।

8) विभिन्न आकारिकी (morphology) के pollen पाए जाते हैं।

9) Ovary bicarpellary, syncarpous, bilocular, जिसमें axile placentation पाया जाता है, प्रत्येक locule में ovules दो पंक्तियों में व्यवस्थित रहते हैं।

10) फल एक द्विकोष्ठकी कैप्सूल (bilocular capsule) होता है।

11) बीजों में retinaculae या jaculators पाए जाते हैं जो उनके dispersal में सहायक हैं।

वर्गीकृत स्थिति

Acanthaceae family को बेंथम और हुकर ने Gamopetalae, Series III Bicarpellatae, and Order Personales (गैमोपिटैली, सिरीज बाइकार्पिलेटी और गण पर्सोनेलीज) में रखा है। इस order में आठ families शामिल हैं: Scrophulariaceae (स्क्रोफुलेरिएसी), Orobanchaceae (ओरोबैंकेसी), Lentibulariaceae (लेंटीबुलेरिएसी), Columellaceae (कॉलमेलेसी), Gesneriaceae (जेस्नेरिएसी), Bignoniaceae (बिग्नोनेएसी), Pedaliaceae (पेडलिएसी), और Acanthaceae (ऐकैंथेसी)।

एंगलर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Acanthaceae को Sympetalae and Order Tubiflorae (सिम्पिटैली और गण ट्यूबिफ्लोरी) में रखा गया है। इस order में बेंथम और हुकर के वर्गीकरण के Order Personales (गण पर्सोनेलीज) की सभी आठ families के साथ-साथ Convolvulaceae (कॉन्वोल्वुलेसी), Boraginaceae (बोरैजिनेसी), Verbenaceae (वर्बेनसी), Lamiaceae (लैमिएसी), तथा Solanaceae (सोलेनेसी) समेत 20 families शामिल की गई हैं।

अपने वर्गीकरण में तख़्ताज़न ने Acanthaceae family को Subclass K Lamiidae, Superorder Lamianae, and Order 171-Scrophulariales (उपवर्ग K लैमाइडी, अधिगण लैमीएनी और गण 171-स्क्रॉफुलैरिएलीज) में रखा है। इस family में बेंथम और हुकर के Order Personales (गण पर्सोनेलीज) की कई families समेत 15 families शामिल हैं। इस प्रकार सभी वर्गीकरण पद्धतियों में Acanthaceae family को Scrophulariaceae family के साथ घनिष्ठता से जोड़ा गया है।

आर्थिक महत्व

Family Acanthaceae के बड़े आकार की तुलना में इसके कुछ ही पादप आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। अधिकांश महत्वपूर्ण पादपों को सजावट के लिए उगाया जाता है। इनमें शामिल है: *Thunbergia grandiflora* (*थंबर्जिया ग्रैंडीफ्लोरा*), *T. alata* (*थ. ऐलैटा*), *T. coccinea* (*थं. कॉक्सीनिया*), *T. laurifolia* (*थं. लॉरीफोलिया*), *Eranthemum nervosum* (*इरैंथेमम नर्वोसम*), *E. bicolor* (*इ. बाइकलर*), *E. reticulatum* (*इ. रेटिकुलैटम*), *Jacobinia tinctoria* (*जैकोबिनिया टिंक्टोरिया*), *Barleria montana* (*बार्लेरिया मोन्टाना*), *B. cristata* (*बा. क्रिस्टैटा*), *B. prionitis* (*बा. प्रायोनाइटिस*), *Ruellia tuberosa* (*रूएलिया ट्यूबरोसा*), *R. brittoniana* (*रू. ब्रिटोनिआना*), *Justicia gendarussa* (*जस्टिसिया जेंडेरूसा*), और *Crossandra* (*क्रॉसैंड्रा*), *Strobilanthes* (*स्ट्रोबाइलैंथीज*) और अन्य संबद्ध जीनस दक्षिण भारत की नीलगिरि पहाड़ियों में cyclic pattern of flowering, generally every 12 years (पुष्पन का एक चक्रीय पैटर्न, प्राय: प्रत्येक 12 वर्ष में) दर्शाते हैं और जब इनमें flowering होती है तो पुष्पों का pollination (परागण) करने वाली मधुमक्खियां फूलों पर आती हैं, तथा बड़ी मात्रा में शहद पैदा करती हैं। *Adathoda vasica* (*ऐधेटोडा वैसिका*) से कफ सिरप (खांसी की दवा) जैसे ग्लाइकोडिन बनाई जाती है।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.9 Lamiaceae (लैमिएसी)

The Mint or the Sage Family, Labiatae (पुदीना या सेज़ कुल, लैबिएटी)

Type genus : *Lamium* (*लैमियम*)

सामान्य जानकारी

Lamiaceae family में 200 जीनस और 3200 स्पीशीज़ आती हैं जिनके वितरण का पैटर्न व्यापक होने के साथ-साथ रोचक भी है। अनेक जीनस सार्वजनीन (cosmopolitan) हैं जो भूमध्यसागरीय प्रदेश से फैले हैं। इस family में ऐसे सदस्य भी हैं जिनका वितरण आस्ट्रेलिया और तस्मानिया या दक्षिण पूर्व एशिया में, विशेषकर भारत, मलेशिया और चीन तक ही सीमित है। या ये मध्य और दक्षिण अमेरिका में सीमित वितरण में पाए जाते हैं। भारत में इस family के 64 जीनस और 380 स्पीशीज़ पाई जाती हैं, जिनमें से तुलसी *Ocimum sanctum* (*ओसिमम सैंक्टम*) और पुदीना *Mentha spicata* (*मेंथा स्पीकैटा*) प्रसिद्ध हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Aromatic (ऐरोमैटिक) शाकीय पादप जिनमें quadrangular stems (चतुर्भुजी तने) पाए जाते हैं। पत्तियां opposite, inflorescence ज्यादातर verticillate यानि (चक्रकी) होती हैं, पुष्प zygomorphic, stamens दो या चार, style gynobasic (वर्तिका जायांगनाभिक) होती है, फल चार nutlets (दृढ़-फलिकाओं) का बना होता है।

आकारिकीय विविधता

इस family के पादप साधारणतया herbs या undershrubs (उपक्षुप) होते हैं जो epidermal cells में essential oil glands (वाष्पशील तेल ग्रंथियों) की उपस्थिति के कारण सौरभी या सुगंध लिए होते हैं। इस सौरभी गुण और अभिलाक्षणिक inflorescence. का प्रयोग प्राचीन काल से ही इस family के पादपों को पहचानने के लिए किया जाता रहा है। तने प्राय: quadrangular (चतुर्भुजी) पाए जाते हैं जिनमें ribbed corners यानि शिरामय कोने होते हैं।

Leaf : पत्तियां exstipulate, opposite decussate (विरले ही whorls में) और सरल होती हैं। लैमिना पूर्ण या toothed (दंतुर), lobed (पालित) या फिर finely dissected (बड़ी सूक्ष्मता से विच्छेदित) पाया जाता है। Epidermal cells में असंख्य essential oil glands विद्यमान होती हैं जिनसे पादपों को विशिष्ट गंध मिलती है।

Inflorescence : इस family की अधिकांश स्पीशीज़ की बड़ी विशेषता उनका verticillaster inflorescence यानि कूटचक्रक पुष्पक्रम है। यह एक विशेष प्रकार की inflorescence है, जिसमें एक dichasial cyme (युग्मशाखी ससीमाक्ष) प्रत्येक पत्ती के axil (कक्ष) में node (पर्वसंधि) पर विकसित होती है। प्रत्येक पर्वसंधि node पर विकसित होने वाले दो ससीमाक्षी पुष्पक्रम (cymose inflorescences) पुष्पवृंतों (flower stalks) में लघुकरण (reduction) के कारण अतिव्यापन (overlap) करते पाए जाते हैं। उसके फलस्वरूप संघनित ससीमाक्षों (condensed cymes) में परस्पर अतिव्यापन होने से एक कूट-आवर्त (pseudo-whorl) या चक्रक (verticel) बन जाता है। इस प्रकार का inflorescence verticillaster यानि पुष्पक्रम कूटचक्रक कहलाता है। कई स्पीशीज़ में dichasial cymes में पुष्पों का और अधिक अतिव्यापन होता है जिससे verticillaster (कूटचक्रक) और complex (जटिल) बन जाता है। प्रत्येक node पर समूचा inflorescence घनिष्ठ रूप से संघनित इकाई (closely condensed unit) बन जाता है। पुष्पी प्ररोह में अनुक्रमिक पर्वसंधियों (successive nodes) पर इस तरह के अनेक कूटचक्रक (verticillasters) असीमाक्ष विधि (racemose manner) से विकसित होते हैं। कभी-कभी inflorescence एक सरल raceme होता है जिसमें प्रत्येक पत्ती के axil में solitary flower विद्यमान रहता है, जैसे, *Scutellaria* (*स्क्टीलेरिया*)। Inflorescence की इस जटिलता से, पत्तियों के आकार में ह्रास (reduction) होता है जो सहपत्रनुमा (bract-like) हो जाती हैं। Bract के ऊपर प्राय: bracteoles का एक जोड़ा विद्यमान रहता है। मगर इनमें से कभी-कभी सिर्फ एक ही विकसित हो पाता है या फिर दोनों ही लुप्त (suppress) हो जाते हैं।

Flower : पुष्प bisexual, zygomorphic, hypogynous, और प्राय: pentamerous होते हैं। इसमें पांच sepals होते हैं जो gamosepalous होते हैं। कैलिक्स tubular (नलिकाकार), funnel-shaped (कीपाकार) या bell-shaped (घंटाकार) या कभी-कभी bilabiate होता है। यह फल में भी बना रहता (persists) है। यह कभी-कभी चटकीले रंग का होता है, जैसे *Salvia splendens* (*सैल्विया स्प्लेंडेंस*) में।

इसमें 5 petals होते हैं जो gamopetalous होते हैं। कोरोला प्राय: bilabiate पाया जाता है, जिसमें एक upper lip तो एक lower lip होता है। कोरोला के हर lip में, petals की संख्या में नाना प्रकार के पैटर्न पाए जाते हैं। Upper lip में अगर चार petals हैं तो lower lip में सिर्फ एक ही petal होगा और कोरोला को 4/1 कहा जाएगा। इस तरह से कोरोला 3/2, या 2/3, 1/4 या 0/5 भी हो सकता है जिसमें पहला अंक ऊपरी lip के petals की, तो दूसरा अंक lower lip को दर्शाता है। Bilabiate corolla के गठन की यह विशेषता family के विभिन्न जीनसों की पहचान करने में सहायक होती है। कोरोला विविध रंगी होता है लेकिन उसमें नीले रंग की प्रधानता रहती है।

Androecium : साधारणतया इसमें चार stamens पाए जाते हैं, जो didynamous (द्विदीर्घी) होते हैं (पांचवा stamen विरले ही विकसित हो पाता है। बल्कि यह staminode (बंध्य पुंकेसर) के रूप में विद्यमान रहता है)। कभी-कभी ऊपर के दो stamens भी staminodes में लघुकृत हो जाते हैं जिससे पुष्प diandrous (द्विपुंकेसरी या द्विपुमुंगी, या द्विपुंधानिक) हो जाता है। *Coleus* (*कोलियस*) में stamens monadelphous (एकसंघी) होते हैं। Stamens epipetalous होते हैं जिनमें परागकोश अंतर्मुखी (anthers introrse) होते हैं। Anthers, connective (संयोजी) के परिवर्धन से एक दूसरे से काफी अलग हो जाते हैं। *Salvia* (*साल्विया*) और संबंद्ध जीनसों में connective एक लीवर क्रियाविधि (lever mechanism) की रचना करता है जो cross pollination (पर-परागण) में सहायक होती है (चित्र 22.21)।

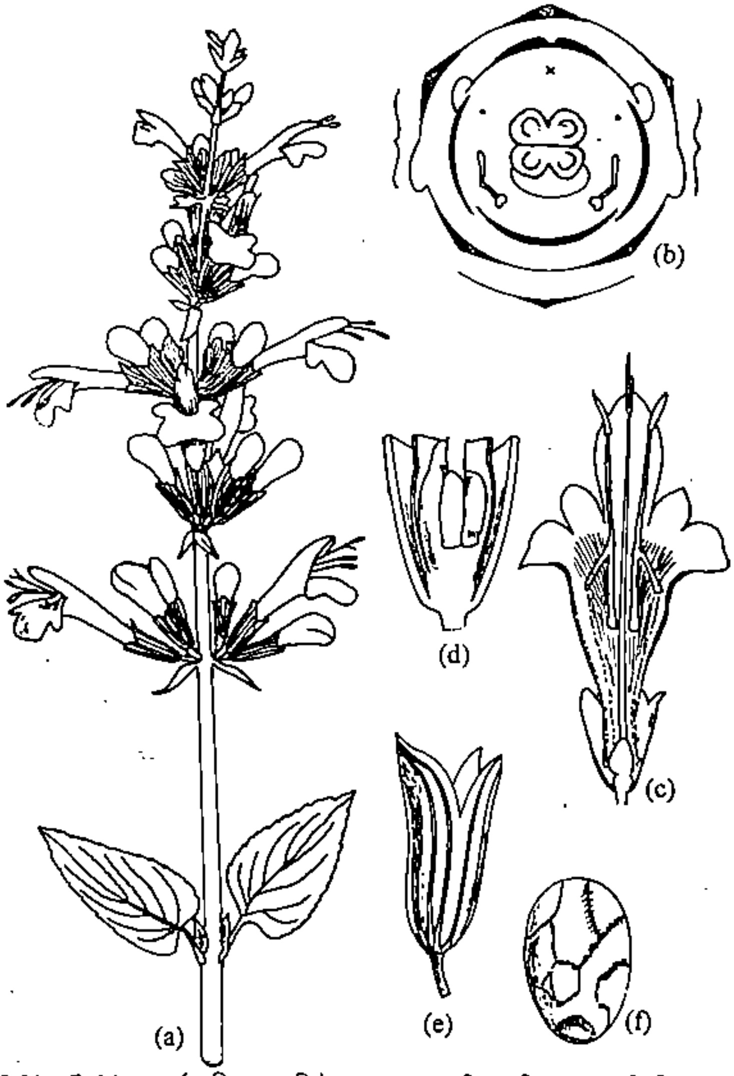

चित्र 22.21 : *Salvia* sp. (*साल्विया* जाति)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) पुष्पी चित्र। (c) अग्र (anterior) पंखुड़ी (दल) की मध्य रेखा के समांतर खुला एक पुष्प। (d) पुष्प का आवर्धित आधार जो अधोजायांगी डिस्क (hypogynous disc) से विकसित होने वाली विशाल nectary को दर्शाता है। (e) आवर्धित दृश्य में कैलिक्स। (f) एक दृढ़फलिका (nutlet)।

Gynoecium : Bicarpellary, syncarpous जो मकरंदधर डिस्क (nectariferous disc) पर विकसित होता है। ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय (superior ovary) प्रत्येक अंडप (carpel) में एक गहरे, खड़े पट्ट (deep, vertical septum) के प्रारम्भिक विकास चरणों में वृद्धि के कारण, चतुर्कोष्ठकी (quadrilocular) होता जाता है। एक mature ovary में प्रत्येक खंड एक-दूसरे से स्वतंत्र पाया जाता है। Style gynobasic (जायांगनाभिक या गाइनोबेसिक), और अधिसंख्य जीनसों में यह carpels के मध्य उत्पन्न होता है। इस family की पहचान के लिए यह एक महत्वपूर्ण विशेषता है। Placentation axile होता है और प्रत्येक locule में सिर्फ एक ovule ही विकसित होता है।

Fruit : फल nutlets (दृढ़फलिकाओं) या achenes (ऐकीनो) का समूह होता है। हर में एक बीज पाया जाता है। फल कभी-कभी drupe (अष्ठिल) के रूप में भी पाया जाता है। फल के अभिलक्षण, विशेषकर nutlets Lamiaceae family को संवर्गों (tribes) जीनसों और स्पीशीज़ में वर्गीकृत करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। बीज छोटे होते हैं जिसमें endosperm अत्यल्प मात्रा में पाया जाता है या होता ही नहीं है। बीज में रिजु भ्रूण (straight embryo) विद्यमान रहता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Aromatic, herbaceous plants.
2) तना quadrangular.
3) पत्तियां exstipulate जिनमें लैमिना विभिन्न प्रकार से विच्छेदित (dissected) पाया जाता है।
4) Verticillaster inflorescence जिसमें प्रायः bilabiate flowers पाए जाते हैं।
5) कैलिक्स persistent होता है।
6) Gamopetalous कोरोला।
7) Stamens epipetalous, प्रायः didynamous या diandrous.
8) Bicarpellary, tetralocular ovary, जिसमें axile placentation पाया जाता है।
9) Gynobasic style.
10) Hypogynous ovary on nectariferous disc.
11) फल 4 nutlets का बना होता है।

वर्गीकृत स्थिति

अपने वर्गीकरण में बेंथम और हुकर ने family Lamiaceae को Gamopetalae, Series III Bicarpellatae and Order 10-Lamiales (गैमोपिटैली, सिरीज III बाइकोर्पिलेटी और गण 10-लैमिएलीज) में रखा है। इस order में Verbenaceae (वर्बिनेसी) समेत तीन अन्य families शामिल हैं। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Lamiaceae family को Sympetalae and Order 6-Tubiflorae (सिम्पिटैली और गण 6-ट्यूबीफ्लोरी) में वर्गीकृत किया गया है जिसमें 20 families हैं। अपने वर्गीकरण में तख़्ताज़न ने इसे Subclass K Lamiidae, Superorder Lamianae, and Order 172-Lamiales (उपवर्ग K लैमाइडी, अधिगण लैमिएनी और गण 172-लैमिएलीज) में रखा है जिसमें Verbenaceae family को भी शामिल किया गया है। इस प्रकार वर्गीकरण की तीनों पद्धतियों में Lamiaceae और Verbenaceae families के बीच संबंध को स्वीकार किया गया है।

आर्थिक महत्व

इस family की अनेक स्पीशीज़ volatile oils (वाष्पशील तेलों) के लिए उपयोगी हैं। कुछ पादपों का प्रयोग भोजन के रूप में होता है और अन्य को सजावट के लिए उगाया जाता है। Labiatae families के कुछ विख्यात सदस्य इस प्रकार हैं:

1) *Coleus amboinicus* (*कोलियस ऐम्बोइनिकस*) या Indian Borage – इसकी aromatic पत्तियों का प्रयोग भोजन विशेषकर मीट की फ्लेवर करने में किया जाता है। इसे *Salvia officinalis* (*सैल्विया आफिसनैलिस* यानि सेज) और *Borago officinalis* or Borage (*बोरैगो ऑफिसिनैलिस* यानि बोरेज) के स्थान पर प्रयोग किया जाता है।

2) *Coleus parviflorus* (*कोलियस पार्विफ्लोरस*) और *Plectranthus esculentus* or Hansa potato (*प्लेक्ट्रैंथस एस्कुलेंटस*, हैंसा आलू) - इनसे उत्पन्न होने वाले tubers (कंदों) को अफ्रीका में आलू की जगह खाया जाता है। *Coleus blumei* (*कोलियस ब्लूमी*) को उसकी चटकदार आकर्षक पत्तियों के लिए आमतौर पर सजावट के लिए उगाया जाता है।

3) *Hyptis spicigera* (*हिप्टिस स्पाइसीजेरा*) इसके बीजों को अफ्रीका में *Sesamum indicum* (*सिसैमम इंडिकम*, तिल) की तरह ही इस्तेमाल किया जाता है।

4) *Mentha* (*मेंथा*) पुदीने की कई स्पीशीज़ उगाई जाती हैं। *Mentha pipertia* or peppermint (*मेंथा पिपरीता* या पिपरमिंट) - इसकी पत्तियों के steam distillation (वाष्प आसवन) से एक essential oil निकाला जाता है। इस तेल को कन्फेक्शनरी बनाने और औषधि में प्रयोग किया जाता है।

Mentha spicata or spearmint (*मेंथा स्पीकैटा* या स्पियरमिंट) - इसकी ताजा या सूखी पत्तियों की चटनी बनाई जाती है और इससे निकाले जाने वाले तेल का प्रयोग टूथपेस्ट (दंत-मंजन), चुइंगम और औषधि बनाने में होता है। *Mentha arvensis* or Japanese mint (मेंथा आर्वेंसिस या जापानी पुदीना) या menthol (मेंथॉल) का व्यावसायिक स्रोत है।

5) *Majorana hortensis* or sweet majoran (*मैजराना होर्टेंसिस* या मीठी माज़ोरन), इसे इत्र, साबुन तथा शराब उद्योगों में प्रयोग किया जाता है।

6) *Lavendula officinalis* or Lavender (*लैवेंड्यूला ऑफिसिनैलिस* या लैवेंडर), इसके तेल का प्रयोग इत्रों, साबुनों, सौंदर्य प्रसाधनों (कॉस्मेटिकस), दवाइयों के बनाने में होता है।

7) *Ocimum basilicum* or Sweet Basil (*ओसिमम बैसिलिकम* या स्वीट बेसिल), *Ocimum sanctum* or Tulsi (*ओसियम सैंक्टम* या तुलसी) और अन्य स्पीशीज़ (चित्र 22.22 भी देखिए) से जो तेल निकाला जाता है, उसे इत्र उद्योग और औषधियां बनाने में प्रयोग किया जाता है।

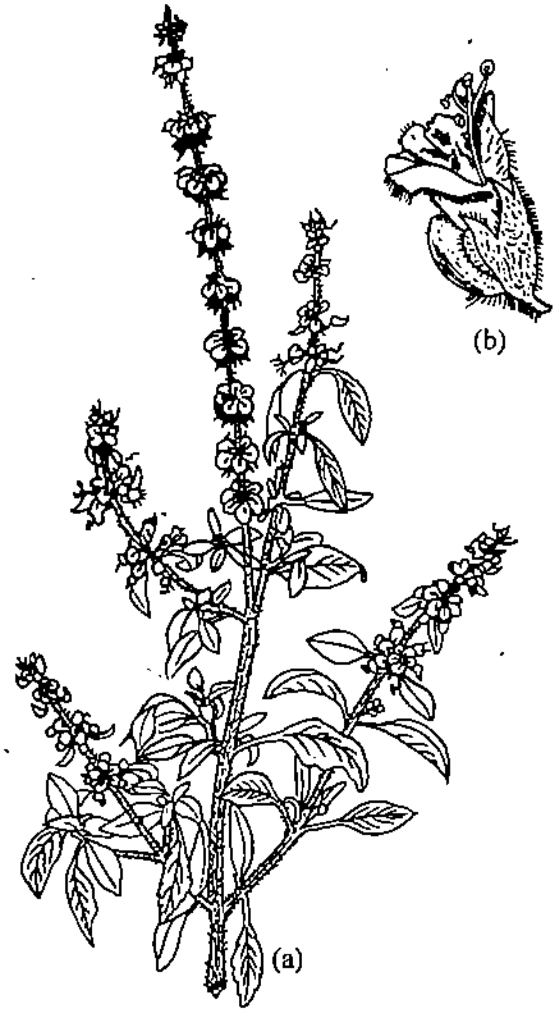

चित्र 22.22 : *Ocimum americanum* (*ओसिमम अमेरिकैनम*)। (a) एक पुष्पी और फलनकारी टहनी। (b) आवर्धित दृश्य में एक पुष्प। (माहेश्वरी, 1966 से)।

8) *Pogostemon cablin* or Patchouli (*पोगोस्टेमॉन कैब्लिन* या पैचौलाइ) - इसके तरुण प्ररोहों से निकाले जाने वाला essential oil, प्रबल इत्रों (heavy perfumes) के निर्माण में काम आने वाला एक सर्वोत्तम स्थायीकर (fixative) है। इसे साबुनों और हेयर टानिकों में प्रयोग किया जाता है।

9) *Salvia officinalis* or Sage (*साल्विया ऑफिसिनैलिस* या सेज) भोजन में प्रयोग होने वाली शाक (culinary herb या पाक-शाक) है। *Salvia splendens* or Red Salvia (*साल्विया स्प्लेंडेंस* या रेड साल्विया) और अन्य स्पीशीज़ को सजावट के लिए उगाया जाता है।

10) *Thymus vulgaris* or Thyme (*थाइमस वल्गैरिस* या थाइम) - इसके तेल Thymol (थाइमॉल) का प्रयोग इत्र उद्योग में होता है जबकि इसके व्युत्पन्नों (derivatives) का प्रयोग टूथपेस्ट, औषधियों में और antiseptics (पूतिरोधी यानि एंटीसेप्टिक) के रूप में होता है।

11) *Rosmarinus officinalis* or Rosemary (*रोजमैरिनस ऑफिसिनैलिस* या रोजमैरी) - इस तेल को इत्र उद्योग और औषधि में प्रयोग किया जाता है।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.10 Amaranthaceae (ऐमैरैंथेसी)

The Amaranth family (ऐमैरेंथ कुल)

Type genus : *Amaranthus* (ऐमैरैंथस)

सामान्य जानकारी

Amaranthaceae family विश्व के tropical और subtropical भागों में वितरित है। इसके वितरण के मुख्य केन्द्र (ट्रॉपिकल) अमेरिका और भारत में हैं। इस family में लगभग 65 जीनस और 900 स्पीशीज़ हैं जिनमें से 17 जीनस और 50 स्पीशीज़ भारत में पाई जाती हैं; जिनमें से कुछ को उगाया भी जाता है।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herbaceous पादप जिनमें पत्तियां exstipulate सरल होती है। Inflorescence सघन या संकुलित (congested) होती हैं (चित्र 22.23 से 22.26), पुष्प छोटे होते हैं जिनमें सूखी, कागजी, (papery) परिदल पालियां (perianth lobes) पायी जाती हैं जो spinescent यानि शूलाग्री होती हैं, stamens base पर एक नलिका के रूप में संयुक्त होते हैं; gynoecium bicarpellary होता है। फल प्राय: utricle (दृत्ति) होता है या nutlet (दृढ़फलिका) होता है। बीज में प्रचुर mealy (चूर्णमय) endosperm होता है।

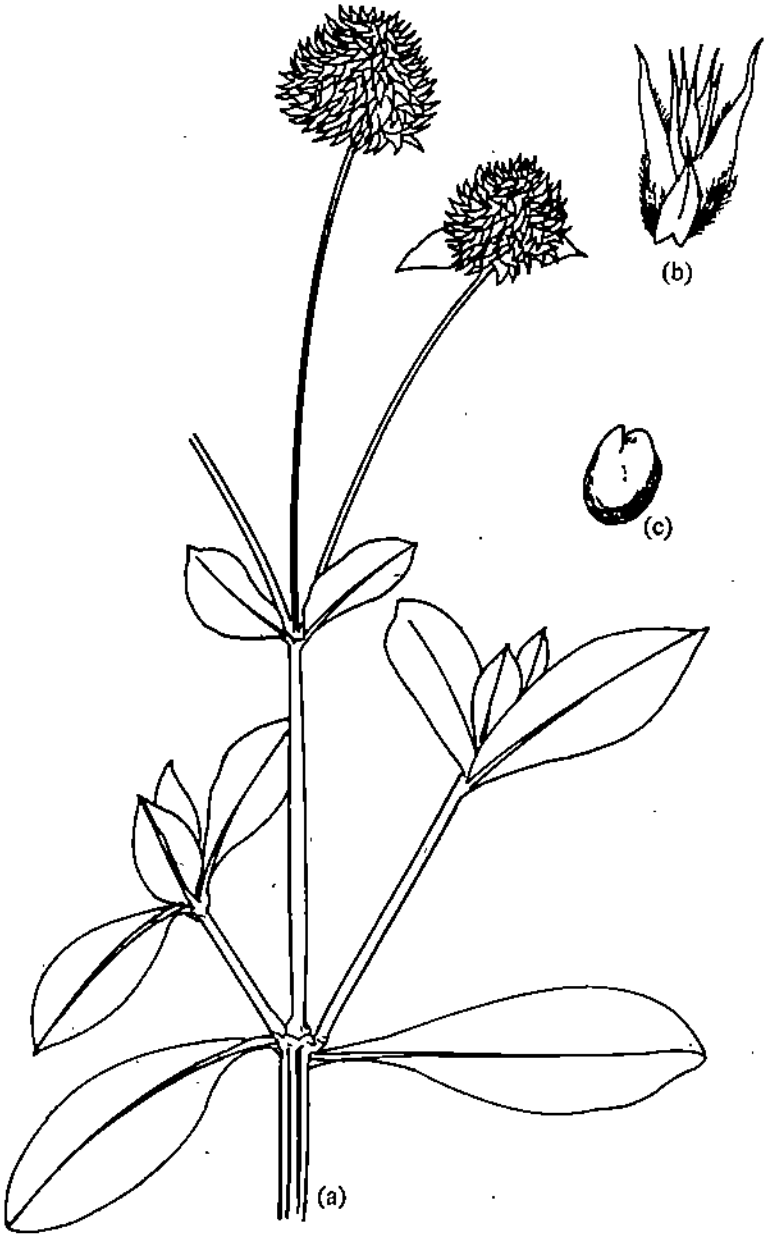

चित्र 22.23 : *Gomphrena celosioides* (गॉम्फ्रेना सीलोसियोइडी)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक पुष्प। (c) एक तरुण-बीज। (माहेश्वरी 1966 से)।

आकारिकीय विविधता

Amaranthaceae family के पादप herbs या shrubs होते हैं, जिनके तरुण भागों में विशेषकर inflorescence वाले भाग में तीखे वर्ध (prickles) या रोमों के गुच्छे (tufts of hairs) विद्यमान होते हैं। तने में vascular bundles (संवहन पूलों) का अनेक concentric rings (संकेन्द्री वलयों) में विकास होने के कारण उसमें anomalous secondary growth (विसंगत द्वितीयक वृद्धि) देखने में आती है।

Leaf : पत्तियां alternate या opposite exstipulate लैमिना पूर्ण, और रोमों (hairs) से ढकी पाई जाती हैं।

Inflorescence : इनमें भारी विविधता देखने को मिलती है। इसमें solitary flower को सकते हैं या inflorescence cymose या racemose होती है। यह एक बड़े और सघन दर्शी संरचना (dense, showy structure) के रूप में होती है। Inflorescence के अतिशाखित (highly branched) होने पर पार्श्व पुष्प (lateral flowers) प्राय: विकसित नहीं हो पाते हैं। इन पुष्पों की जगह prickles (तीखे वर्ध) या tufts of haris (रोमों के गुच्छे) विकसित हो जाते हैं। फल के mature (पक्व) होने तक ये संरचनाएं स्थायी बनी रहती हैं और ये बीज के dispersal (प्रकीर्णन) में सहायक होती हैं।

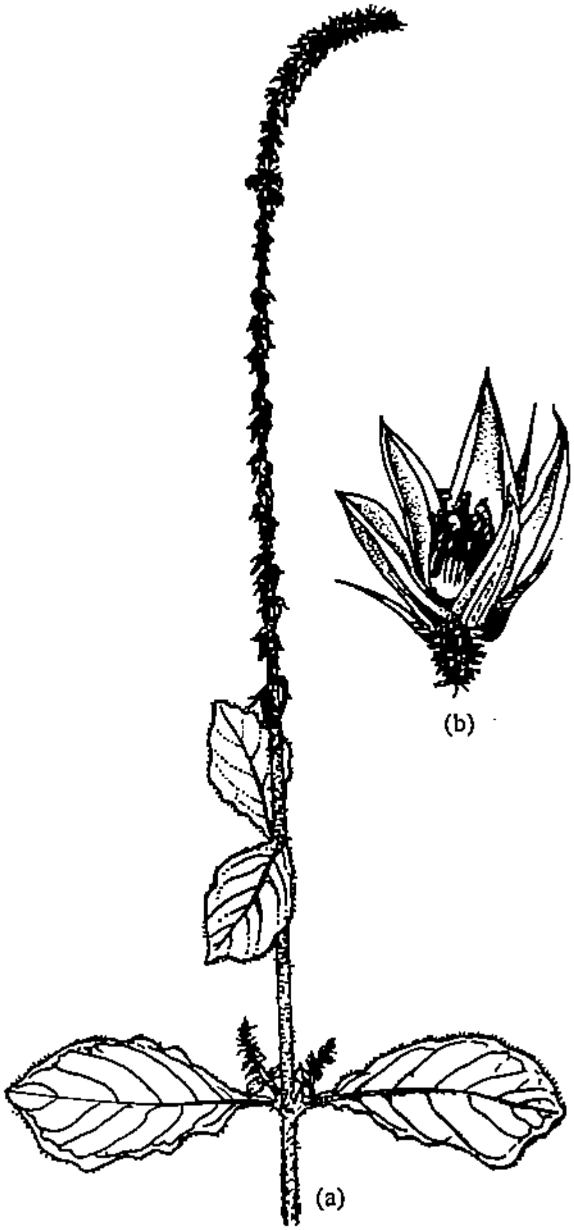

चित्र 22.24 : *Achyranthes aspera* (ऐकीरैंथस एस्पैरा)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक पुष्प। (माहेश्वरी 1966 से)।

Flower : पुष्प छोटे, ये प्राय: bisexual, विरले ही unisexual (चित्र 22.26 देखें) और actinomorphic होते हैं। पुष्प सरल और perianth (परिदल-पुंज) कैलिक्स और कोरोला में विभाजित

नहीं होता यानि ये homochlamydeous (समपरिदलपुंजी) होते हैं। इसमें चार या पांच sepaloid tepals (बाह्यदलाभ परिदलों) का एकल आवर्त (single whorl) पाया जाता है। जो free (मुक्त) या united (संयुक्त) हो सकते हैं। वे membranous (कलामय), शुष्क और paper-like (कागज़नुमा) होते हैं, मगर फल के विकसित हो जाने पर वे कठोर और काष्ठीय (woody) हो सकते हैं। Tepals में imbricate aestivation पाया जाता है।

Androecium : इसमें 4 या 5 stamens होते हैं जो प्रत्येक tepal के opposite स्थित होते हैं। Stamens base (आधार) पर अपने filaments (पुंतंतुओं) के द्वारा unite (संयुक्त) होकर एक membranous tube (कलामय नलिका) की रचना करते हैं। यह सरल lobed (पालित) हो सकती है या इसमें fringed petaloid outgrowths (झल्लरित दलाभ उद्वर्ध) पायी जाती हैं। कई जीनसों में anthers dithecous मगर कुछ में monothecous होते हैं। यह विशिष्ट लक्षण इस family के जीनसों के विभिन्न समूहों को पहचानने में उपयोगी है।

Gynoecium : इसमें दो या तीन carpels पाए जाते हैं जो syncarpous होते हैं। Basal placentation (आधारी बीजांडासन) पर एक अकेला ovule (बीजांड), कभी-कभी कई, जैसे कि *Celosia* (सिलोसिया) में मिलता है। Ovary में 1, 2 या 3 styles होती हैं प्रत्येक style एक में terminal stigma (अंत्यवर्तिकाग्र) पाया जाता है।

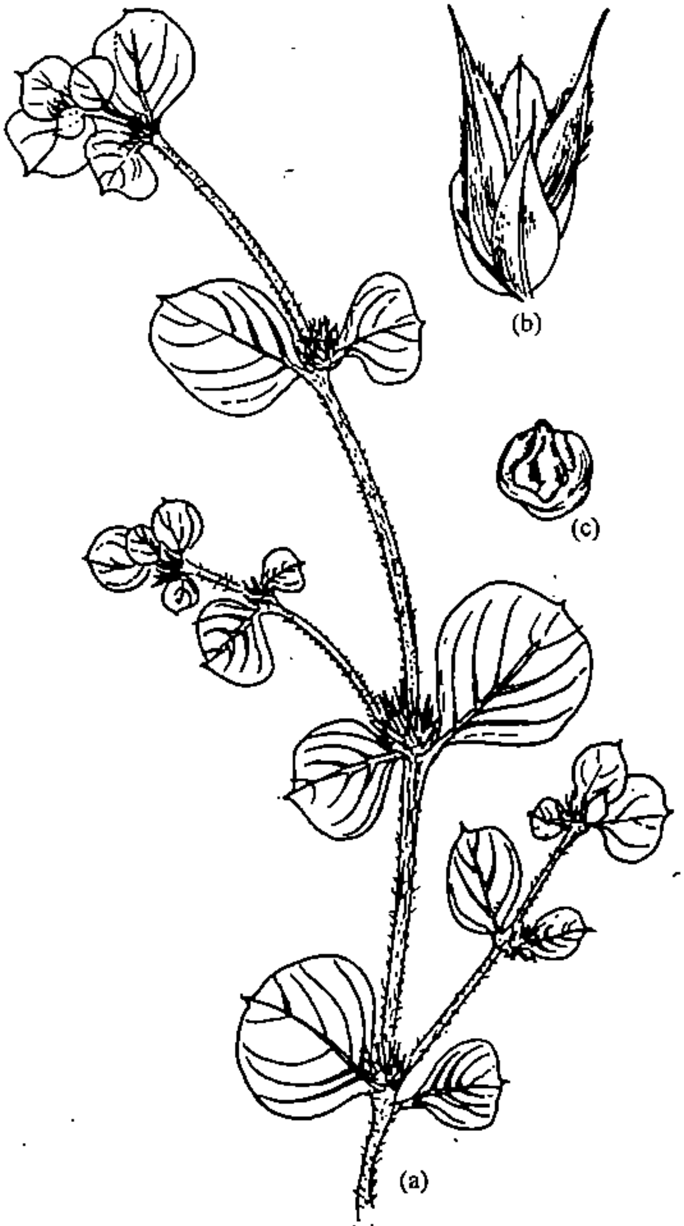

चित्र 22.25 : *Alternanthera pungens* (ऐल्टरैंथेरा पेजेंस)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक पुष्प। (c) एक बीज। (माहेश्वरी, 1966 से)।

Fruit : फल प्राय: utricle होता है जिसमें एक पतली pericarp (फलभित्ति) और एक बीज पाया जाता है। या फिर यह एक सूखी, one-seeded (एकबीजी), **nutlet** (दृढ़फलिका) के रूप में मिलता है। जिसमें एक कठोर pericarp होता है। फल कभी-कभी many-seeded (बहु-बीजी), बेरीनुमा संरचना के रूप में मिलता है। बीज lenticular (मूसराकार), rough (खुरदरा), या चमकीले testa (बीज चोल) युक्त होता है। Embryo curved (वक्रित) होता है जिसमें endosperm (भ्रूणपोष) प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Herbs या shrubs.
2) तने में anomalous secondary growth
3) पत्तियां exstipulate सरल और hairs से ढकी रहती हैं।
4) Inflorescence organisation विविधरूपी होता है और उस पर prickles या tufts of hairs होते हैं।
5) पुष्प लघु और सरल।
6) Perianth homochlamydeous (परिदल पुंज समपरिदलपुंजी), साधारणतया membranous (कलामय) होते हैं।
7) Stamens की संख्या tepals क बराबर, anthers dithecous या monothecous
8) Syncarpous gynoecium जिसमें superior ovary पायी जाती है और उसमें प्राय: एक (कभी-कभी अधिक) ovules, basal placenta पर विद्यमान रहते हैं।
9) फल utricle या nutlet या बेरीनुमा।
10) बीज lenticular (मूसराकार), curved-embryo (वक्रित भ्रूण) युक्त।

चित्र 22.26 : *Amaranthus spinosus* (ऐमैरेंथस स्पिनोसस)। (a) एक पुष्पी टहनी। (b) एक pistillate (स्त्रीकेसरी पुष्प)। (c) एक staminate (पुंकेसरी) पुष्प। (d) एक वर्धनशील फल जिसमें persistent bracts (स्थायी सहपत्र) और कैलिक्स विद्यमान हैं। (e) एक बीज।

Amaranthaceae family को बेंथम और हुकर ने simple perianth (सरल परिदलपुंज) और curved embryo (वक्रित भ्रूण) के कारण Monochlamydeae and Series I Curvembryeae (मोनोक्लैमाइडी, और सिरीज I कर्वेम्ब्रीई) में रखा है। यह family Chenopodiaceae family, और इस सिरीज के अन्य छः families से घनिष्ठता से जुड़ी हैं। इसमें रोचक बात यह है कि family Caryopyllaceae को Polypetalae, Series Thalamiflorae, and Order 4-Caryophyllinae (पॉलिपिटैली, सीरिज थैलमीफ्लोरी और गण 4-कैरियोफाइलिनी) में रखा गया है। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Amaranthaceae family को Archichlamydeae and Order 17-Centrospermae (आर्कीक्लैमाइडी, और गण 17-सेंट्रोस्पर्मी) में रखा गया है। इस वर्गीकरण में इस order में Chenopodiaceae और Caryophyllaceae समेत 9 families शामिल की गई हैं जो इन families में संबंध को दर्शाता है। तख़्ताज़न ने Amaranthaceae को Subclass E Caryophyllidae, Superorder Caryophyllanae, and Order 32-Caryopyllales (उपवर्ग E-कैरियोफाइलिडी, अधिगण कैरियोफाइलेनी और गण 32- कैरियोफाइलेलीज) में रखा है जिसमें 21 families शामिल हैं। इस order में Chenopodiaceae, Caryophyllaceae, और Cactaceae भी शामिल हैं।

आर्थिक महत्व

1) Amaranthaceae family की अनेक स्पीशीज़ को सजावटी पादपों के रूप में उगाया जाता है; कुछ को भोजन के लिए उगाया जाता है। कई स्पीशीज़ खेतों में उगने वाली खरपतवार (वीड) हैं।

2) इस family के अधिक प्रसिद्ध सजावटी पादपों में *Celosia cristata* (*सिलोसिया क्रिस्टैटा*), *C. argentea* (*सि. आर्जेन्टिया*), *Gomphrena globosa* (*गोम्फ्रेना ग्लोबोसा*), और *Amaranthus species* (*ऐमैरैंथस स्पीशीज़*) शामिल हैं।

3) *Amaranthus* जीनस की सदस्य स्पीशीज़ भोजन के लिए भी उगाई जाती हैं, जिनकी ताज़ी नई पत्तियाँ, पत्तीदार सब्जी के रूप में खाई जाती हैं या इसके दाने कूटअन्न (pseudocereal) के रूप में खाए जाते हैं।

4) *Achyranthes aspera* (*ऐकिरैंथीस ऐस्परा*) को भारतीय चिकित्सा पद्धति में प्रयोग किया जाता है। यह एक आम घासपात है, जिसमें पोटेशियम की मात्रा अधिक होने के कारण इसे एक green manure (हरी खाद) के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

11. रिक्त स्थनों में सही family के नाम लिखिए :

    क) पत्तियों में cystolith (सिस्टोलिथ) की उपस्थिति ....family में पाई जाती है।

    ख) कक्षीय शाखों (axillary branches) का मुख्य प्ररोह (main axis) से जन्मजात संलयन (congenital fusion)...................... family के सदस्यों में होता है।

    ग) चार दृढ़फलिकाओं (nutlets) का फल .... family में देखा जाता है।

12. निम्न families के Type genus (प्ररूपी जीनस) के नाम लिखिए :

Family	Genus
क) Acanthaceae	....
ख) Lamiaceae	....
ग) Solanaceae	....

13. निम्न terms (पारिभाषिक शब्दों) की व्याख्या कीजिए और उन families के नाम बताइए जिनमें इनका वर्णन आया है।

क) Gynobasic style (जायांगनाभिक वार्तिका) ....

....

....

Family ....

ख) Jaculator (उत्क्षेपक) ....

....

....

Family ....

ग) Obiquely placed carpels (तिर्यक् स्थिति में अंडप) ....

....

....

Family ....

14. Verticillaster inflorescence (कूटचक्रक पुष्पक्रम) पर एक नोट लिखिए :

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

15. उन orders के नाम बताइए जिनमें तीनों वर्गीकरण पद्धतियों में निम्न families को वर्गीकृत किया गया है:

	Family	बेंथम और हुकर	एंग्लर और प्रांट्ल	तख़्ताज़न
i)	Acanthaceae			
ii)	Lamiaceae			
ii)	Solanaceae			

16. Family Acanthaceae के निदानात्मक लक्षण बताइए।

....

....

....

....

....

17. Solanaceae family के vegetative और floral characters बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

18. Lamiaceae family का आर्थिक महत्त्व पर एक नोट तैयार कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

कुछ याद रखने योग्य बातें:

22.11 Santalaceae (सैंटेलेसी)

The Sandalwood family (चंदन कुल)

Type genus: *Santalum* (सैंटेलम)

सामान्य जानकारी

लगभग 26 जीनसों और 400 स्पीशीज़ वाले Santalaceae family का विश्व के tropical और temperate भागों में बड़ा ही रोचक वितरण पैटर्न पाया जाता है। इसकी लगभग 150 स्पीशीज़ को सबसे बड़े जीनस *Thesium* (थेसियम) में वर्गीकृत किया गया है, जबकि इस family के शेष जीनसों में कुछ ही स्पीशीज़ शामिल हैं। सबसे प्रसिद्ध जीनस *Santalum* (सैंटैलम), जिसमें 10 स्पीशीज़ आती हैं, वह भारत से आरंभ होकर मलय द्वीपसमूह (Malay Archipelago) से होते हुए ऑस्ट्रेलिया और प्रशांत महासागर द्वीपों तक फैला हुआ है। अन्य जीनस सिर्फ ऑस्ट्रेलिया में तो कुछ दक्षिण अफ्रीका में और कुछ अन्य दक्षिण यूरोप, अफ्रीका और भारत में पाए जाते हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Semiparasitic (अर्धपरजीवी) shrubs या trees जिनमें पत्तियां exstipulate, opposite होती हैं। Inflorescence विविधरूपी होती है flowers छोटे होते हैं जिनमें nectar secreting discs (मकरंद स्रावी डिस्क) विद्यमान रहती है; perianth homochlamydeous (परिदलपुंज समपरिदलपुंजी) होता है; staments epiphyllous (परिदल-लग्न) होते हैं, ovary में central placentation (मध्य बीजांडन्यास) पाया जाता है; फल nut (दृढ़फल) या drupe (अष्ठिल) के रूप में मिलता है; बीज में testa (बीजचोल) नहीं होता; endosperm fleshy, (भ्रूणपोष मांसल) सफेद होता है।

आकारिकीय विविधता

Santalaceae family के पादप semiparasitic (अर्धपरजीवी) होते हैं। ये chlorophyllous shrubs (पर्णहरितधारी क्षुप) या small trees (लघु वृक्ष) या herbs (शाक) भी होते हैं। इनमें से कुछ root parasites (मूल परजीवियों) के रूप में उगते हैं जैसे *Thesium*, *Santalum* (थेसियम, सैंटेलम) तो अन्य angiosperm hosts (आवृतबीजी परपोषियों) पर stem parasites (तना परजीवियों) के रूप में पाए जाते हैं। इनमें तने और पत्तियों में सामान्य विकास होता है या अनमें आकारिकी पूर्णत: भिन्न हो जाती है। पादप में झाड़ू-नुमा (broom-like) बनावट बन जाती है जिसमें अनेक शाखित, हरित तने होते हैं तथा जिन पर (scale-like) शल्कनुमा पत्तियां होती हैं।

Leaf : पत्तियां exstipulate, alternate या opposite सरल और glabrous (अरोमिल) होती हैं। *Santalum* में ये चटक हरी, coriaceous (चर्मिल) और चमकदार होती हैं। Reticulate venation (जालिकारूपी शिरान्यास) में solitary midrib (एकल मध्यशिरा) या कई major veins (प्रमुख शिराएं) हो सकती हैं।

Inflorescence : इसमें भारी विविधता देखने को मिलती है। पत्ती के axil (कक्ष) में एक solitary flower (एकल पुष्प) हो सकता है। या फिर सहपत्रिकाओं (bracteoles) के कक्षों (axils) में पार्श्व पुष्पों (lateral flowers) के विकास के कारण यह तीन पुष्पों का एक सरल ससीमाक्ष (cyme) होता है। इसके solitary flowers या cymose inflorescence एक raceme या spike या head (मुंड) के रूप में भी व्यवस्थित हो सकते हैं।

Flower : पुष्प छोटे और प्राय: bisexual होते हैं। मगर ये stamens या carpels में ह्रास (reduction) के कारण unisexual बन सकते हैं। इस family में पुष्प की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसमें विद्यमान nectar secreting disc है जो perigynous (परिजायांगी) या epigynous (जायांगोपरिक) होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो, ovary अधिकतर अधोवर्ती (inferior) होती है, तथा receptacular tissue (धानीकिय कोशिकाओं) में embed (लगी) होती है; या फिर यह superior (ऊर्ध्ववर्ती) होती है तथा या तो nectar secreting receptacular disc पर, नहीं तो इस receptacular disc से घिरी पाई जाती है। पुष्पों में 4 या 5 tepals (परिदलों) का एक सरल perianth (परिदलपुंज) होता है। यह sepaloid (बाह्यदलाभ) और हरा या petaloid (दलाभ) और साधारणतया सफेद होता है, और इसमें

valvate aestivation पाया जाता है। Perianth gamophyllous (परिदलपुंज संयुक्त परिदली) होता है और एक नलिका (tube) की रचना करता है जो disc (डिस्क) के साथ adnate (संलग्न) होती है।

Androecium : Stamens की संख्या perianth lobes (परिदलपुंज पालियों) के बराबर होती है और वे perianth lobes पर आलग्न होते हैं। Stamens और perianth के संधि स्थल पर रोमों के गुच्छ (tufts of hairs) पाए जाते हैं। Filaments (पुंतंतु) लघु,और anthers dithecous (परागकोशक द्विकोष्ठी) होते हैं।

Gynoecium : Syncarpous gynoecium (युक्तांडपी जायांग) तीन-पांच carpels (अंडपों) का बना होता है। यह unilocular (एककोष्ठकी) होता है जिसमें 1-5 मगर प्रायः तीन naked ovules (आवरणहीन बीजांड) central placenta पर पाए जाते हैं। Ovary साधारणतया inferior होती है, लेकिन कभी-कभी यह लगभग superior भी होती है उदाहरण *Santalum.* Style terminal (अंत्य या अंतस्थ) होती है जिसमें एक capitate (समुंड) या lobed stigma (पालित वर्तिकाग्र) पाया जाता है।

Fruit : यह indehiscent होता है। यह nut या drupe होता है जिसमें सिर्फ एक बीज मौजूद रहता है, बीज में testa (बीजचोल) नहीं होता, मगर white, fleshy endosperm (सफेद, मांसल बीजपोष) सुस्पष्ट होता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) Semi-parasitic, dicotyledonous हरे पादप।
2) पत्तियां सरल, exstipulate alternate या opposite होती हैं।
3) पुष्प छोटे, solitary या cymose या racemose inflorescences में।
4) पुष्प प्रायः bisexual (कभी-कभी unisexual) होते हैं।
5) Nectar secreting disc विद्यमान होती है।
6) सरल 4 या 5 पालित (lobed) संयुक्त परिदलपुंज (gamophyllous perianth) होता है जो डिस्क (disc) के साथ आलग्न रहता है।
7) Stamens के संधिस्थल पर tufts of hairs विद्यमान रहते हैं।
8) Stamens 4 या 5 epiphyllous (परिदल-लग्न) होते हैं।
9) Syncarpous gynoecium में central placentation होता है।
10) फल एक nut या drupe होता है जिसमें एक अकेला बीज पाया जाता है।
11) बीज में testa नहीं होता मगर उसमें white fleshy endosperm पाया जाता है।

वर्गीकृत स्थिति

Santalaceae को बेंथम और हुकर द्वारा Monochlamydeae, and Series VI Achlamydosporae (मानोक्लैमाइडी और सिरीज VI एक्लैमाइडोस्पोरी) में वर्गीकृत किया गया है यह कुल Loranthaceae (लोरैंथेसी) और Balanophoraceae (बैलैनोफोरेसी) से संबद्ध है जिन्हें इस family के साथ वर्गीकृत किया गया है। एंगलर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में यह family Archichlamydeae and Order 14- Santalales (आर्कीक्लैमाइडी और गण 14-सैंटैलेलीज) में रखा गया है। इस order में Loranthaceae समेत 8 families शामिल हैं। अपने वर्गीकरण में तख़्ताज़न ने family Santalaceae का Subclass H-Rosideae. Superorder Santalanae, and Order 133-Santalales (उपवर्ग H-रोजिडी, अधिगण सैंटैलेनी और गण 133-सैंटेलीज) में रखा है। इस order में 9 families हैं और इस वर्गीकरण में Santalaceae तथा Loranthaceae में संबंध स्वीकार किया गया है।

आर्थिक महत्व

चंदन *Santalum album* (सैंटैलम एल्बम) इस family का सबसे महत्वपूर्ण सदस्य है। यह सबसे उच्चकोटि की लकड़ियों में गिनी जाती है जिसे carving (नक्काशी) के काम के लिए प्रयोग किया जाता है। इसकी लकड़ी कई धार्मिक कर्मकांडों में प्रयुक्त होती है। इसके तने और मूल की heartwood (अंतःकाष्ठ) में एक essential oil (वाष्पशील तेल) पाया जाता है जिसे इत्र निर्माण, टॉयलेट पाउडरों इत्यादि में प्रयोग किया जाता है। इस तेल का प्रयोग औषधियों में भी होता है। इसके बुरादे से अगरबत्ती (incense) बनाई जाती है और चंदन के लेप (sandalwood paste) को माथे पर लगाया जाता है।

22.12 Euphorbiaceae (यूफोर्बिएसी)

The Spurge family (स्पर्ज कुल)

Type genus : *Euphorbia* (यूफोर्बिया)

सामान्य जानकारी

Euphorbiaceae एक विशाल family है जिसमें 300 जीनस और 5000 स्पीशीज़ हैं यह एक बड़ी ही रोचक और विविध family है जो मुख्यत: tropical regions में वितरित है। इसके अधिकांश सदस्य हिन्द-मलय प्रदेश और ब्राज़ील में पाए जाते हैं। वितरण के इन केन्द्रों के अतिरिक्त इस family के सदस्य यूरोप, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अमेरिका में भी पाए जाते हैं। भारत में Euphorbiaceae family के 60 जीनस और 350 स्पीशीज़ पाई जाती हैं।

फील्ड अभिज्ञान लक्षण

Herbs, shrubs या trees जिनमें milky latex (दुग्धी रस) पाया जाता है, पत्तियां अधिकांशत: alternate, exstipulate होती हैं। पुष्प unisexual, reduced (लघुकृत) और एक विशेष पुष्पक्रम में पाए जाते हैं जिसे cyathium (सायेथियम) कहते हैं, जैसे *Euphorbia* (यूफोर्बिया) में या फिर पुष्प cymose या racemose inflorescence में पाए जाते हैं। Cyathium inflorescence में perianth पूर्णत: लुप्त होता है अन्यथा यह homochlamydeous (समपरिदलपुंजी) या heterochlamydeous (विषमपरिदल पुंजी) होता है। Stamens की संख्या एक से लेकर कई होती है। Carpels तीन, syncarpous होते हैं, ovary superior, axile placentation के साथ पाई जाती है। बीज में सुस्पष्ट caruncle (कैरंकल, बीज चोलक) होता है।

आकारिकीय विविधता

Euphorbiaceae family के पादप herbs, shrubs या trees के रूप में पाए जाते हैं। *Euphorbia* (यूफोर्बिया) जैसे अकेले जीनस (जिसमें 800 स्पीशीज़ शामिल हैं) में भी स्पीशीज़ में भारी विविधता देखने में आती है। Dry areas (शुष्क भागों) में रहने वाली कुछ स्पीशीज़ में ठेठ मरूद्भिदी (xerophytic) स्वभाव पाया जाता है और वे अक्सर Cactus family के सदस्यों के समान होते हैं। Euphorbias और cacti (कैक्टस जातियों) में सिर्फ इतना अंतर है कि *Euphorbia* में latex (लैटेक्स) पाया जाता है। इन पादपों में तना fleshy होता है जिसमें एक बाहरी chlorophyllous photosynthetic zone (पर्णहरित प्रकाश-संश्लेषण क्षेत्र) और एक भीतरी parenchymatous storage zone (मृदोतकी संचयन क्षेत्र) पाया जाता है। इनमें से कई पादपों में thorns या spines होते हैं जो वस्तुत: modified leaves (रूपांतरित पत्तियां) हैं। पादप के सभी भागों में milky latex (दूधिया लैटेक्स) पाया जाता है।

Leaf : पत्तियां साधारणतया alternate होती हैं, मगर वे opposite या विशेषकर ऊपरी शाखों में whorled भी हो सकती हैं। Stipules प्राय: उपस्थित रहते हैं मगर कभी-कभी उनकी जगह hairs, glands या thorns ले लेते हैं। पत्तियां सरल होती हैं जिनका लैमिना पूर्ण या गहरा कटा पाया जाता है।

Inflorescence : यह प्राय: जटिल और कई प्रकार की होती हैं। इस family के सबसे बड़े जीनस *Euphorbia* में यह जटिल inflorescence अनेक लघु इकाइयों (small units) का बना होता है, जिन्हें cyathia (सायेथिया) कहते हैं। प्रत्येक cyathium एक विशेष इकाई है जो असल में एक cymose inflorescence है - यह अति लघुकृत unisexual पुष्पों से बना रहता है (देखिए चित्र 22.27)। प्रत्येक cyathium में एक terminal female flower (अंतस्थ मादा पुष्प) होता है जो naked, that is, without perianth (आवरणहीन यानि बिना परिदलपुंज के) रहता है। यह पुष्प सिर्फ gynoecium का बना होता है, इस terminal female flower के नीचे 4 या 5 bracts विद्यमान होते हैं जो संयुक्त होकर एक कपनुमा involucre (सहपत्र-चक्र) बनाते हैं। यह gamosepalous calyx (संयुक्त बाह्यदली कैलिक्स) जैसा दिखाई देता है। Involucre के प्रत्येक bract में highly reduced male flower (अति लघुकृत नर पुष्पों) का एक scorpioid cyme (कुटिल ससीमाक्ष) विद्यमान होता है। प्रत्येक male

flower naked पाया जाता है और उसमें सिर्फ एक stamen होता है। इस तरह cyathium जो कि वास्तव में एक specialised cymose inflorescence (विशिष्टीकृत ससीमाक्षी पुष्पक्रम) होता है वह एक bisexual flower की तरह दिखाई देता है।

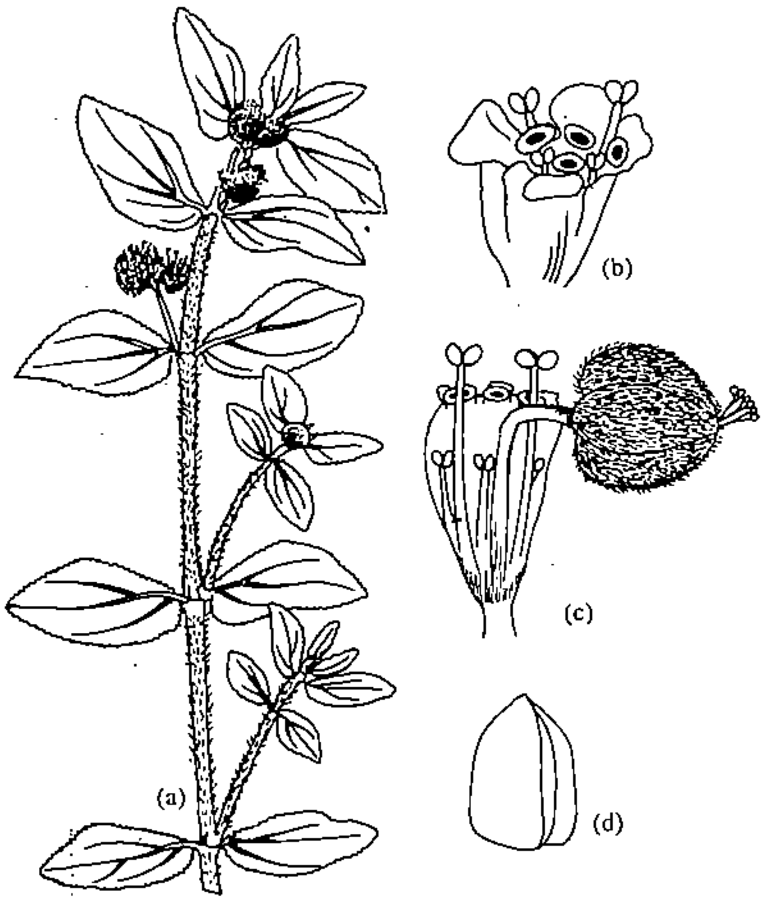

चित्र 22.27 : *Euphorbia hirta* (*यूफोर्बिया हिर्टा*)। (a) एक पुष्पी प्ररोह। (b) ग्रंथियों और staminate flowers के साथ involucre। (c) एक खुला हुआ cyathium. (d) एक बीज (माहेश्वरी, 1966 से)।

अन्य जीनसों में inflorescence cymose या racemose होता है प्रत्येक inflorescence में नर और female flowers के arrangement में एक विशिष्ट पैटर्न दिखाई देता है। कुछ में male flowers inflorescence के आधार पर स्थित होते हैं तो female flowers ऊपर। अन्य में inflorescence के apex पर एक अकेला, या दो या तीन female flowers होते हैं और शेष सभी male flowers होते हैं। इसकी विपरीत स्थित भी देखने में आती है, जिसमें female flowers inflorescence के base पर तो male flowers उसके apex की ओर पाए जाते हैं। Female और male flowers की संख्या में ratio (अनुपात) अलग-अलग होता है और प्राय: female flowers की तुलना में inflorescence में male flowers की संख्या अधिक होती है।

Flower : पुष्प unisexual, साधारणतया actinomorphic और hypogynous होते हैं। अपने form (रूप) और organisation (गठन) में ये भारी विविधता दर्शाते हैं कुछ सदस्यों में pentamerous flowers में विशिष्ट कैलिक्स और कोरोला होता है। सबसे अधिक दिखाई देने वाला अभिलक्षण sepal-like tepals (बाह्यदलसम परिदलों) का एकल perianth whorl (परिदलपुंज आवर्त) की उपस्थिति है। कैलिक्स प्राय: imbricate या valvate होते हैं। कोरोला अगर उपस्थित होता है तो वह प्राय: polypetalous होता है। *Euphorbia* में अति लघुकृत unisexual पुष्प पूर्णत: devoid of perianth (परिदलपुंज विहीन) होते हैं।

Androecium : Stamens 1- अनेक, free या कई तरह से united होते हैं। *Euphorbia* में प्रत्येक male flower में एकल stamen होता है। अन्य जीनसों में पांच stamens, single whorl में

या फिर 10 stamens 2 whorls में विद्यमान हो सकते हैं। Stamens numerous एक पुष्प में 80-100 या अधिक, हो सकते हैं जैसे कि *Ricinus* (रिसिनस) में। ये एक वृक्षनुमा, शाखित संरचना में गठित होते हैं जिसमें anthers, dendroid structure (वृक्षाभ संरचना) की शाखों पर विद्यमान रहते हैं। *Phyllanthus* (फाइलैंथस), *Cyclanthera* (साइक्लैंथेरा) में filaments united (पुंतंतु संयुक्त) और anthers एक ring-like (वलयनुमा संरचना) में संतत (continuous) होते हैं। यह Cucurbitaceae family में androecium की तरह ही होता है।

Gynoecium : यह एकसमान रूप से tricarpellary और syncarpous होता है। Ovary superior और trilocular होती है। Placentation axile होता है और प्रत्येक locule में एक या दो ovules होते हैं। यह अभिलक्षण समूची family में समान रूप से पाया जाता है और एक भेदकारी लक्षण के रूप में काम आता है। *Euphorbia* जीनस में gynoecium female flower का प्रतिनिधित्व करता है। Style सरल या बड़ी और कभी-कभी petaloid होती है। प्रत्येक style प्रायः द्विशाखी (bilobed) होता है। Ovule में एक integumentary protuberance (उद्वर्ध) पाया जाता है जो micropyle (बीजांडद्वार) को घेरे रहता है। इसे caruncle (कैरंकल या बीजचोलक) कहते हैं और यह बीज में भी बना रहता है।

कुल के निदानात्मक लक्षण

1) पादपों में milky latex पाया जाता है।
2) तनों में spines या thorns होते हैं या नहीं भी होते हैं।
3) सरल stipulate पत्तियां।
4) Unisexual पुष्प जिसमें inflorescence diverse types के होते हैं।
5) जीनस *Euphorbia* में विशेष cyathium inflorescence पाया जाता है।
6) Perianth absent या sepaloid या heterochlamydeous होता है।
7) पुंकेसर 1-many
8) Tricarpellary, syncarpous, superior ovary, axile placentation होता है।
9) फल आमतौर पर एक tricoccus capsule (त्रिन्फलांशक यानि ट्राइकोकस कैप्सूल) के रूप में होता है।
10) बीज में caruncle विद्यमान होता है।

वर्गीकृत स्थिति

Euphorbiaceae family को बेंथम और हुकर ने वर्ग Monochlamydeae Series III Unisexuales (मोनोक्लैमाइडी और सिरीज III यूनिसेक्सुएलीज) में वर्गीकृत किया है। Unisexuales flowers को एक महत्वपूर्ण अभिलक्षण मानते हुए उन्होंने इस सिरीज में 8 अन्य families को भी शामिल किया। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में Euphorbiaceae family को Archichlamydeae and Order 23- Geraniales (आर्कीक्लैमाइडी और गण 23-जिरैनिएलीज) में रखा है। इस वर्गीकरण के अनुसार इस order में 19 अन्य families हैं जिनमें वे आठों families शामिल नहीं की गयी हैं जिनके साथ बेंथम और हुकर ने Euphorbiaceae family को Series Unisexuales (सिरीज यूनिसेक्सुएलीज) में वर्गीकृत किया है। अपने वर्गीकरण में तख्ताजन ने इस family को Subclass G-Dilleniidae, Superorder Euphorbianae, Order 91-Euphorbiales (उपवर्ग G-डाइलेनाइडी, अधिगण यूफोर्बिएनी, गण 91- यूफोर्बिएलीज) में रखा है। इस order में तीन families हैं जिनमें से Dichapetalaceae (डाइकैपिटैलेसी) को एंग्लर और प्रांट्ल ने Euphorbiaceae के साथ-साथ Geraniales (जिरैनिएलीज) में रखा है। इससे यह लगता है कि विभिन्न वर्गीकरण पद्धतियों में Euphorbiaceae का संबंध भिन्न-भिन्न है।

इस family में अनेक पादप आर्थिक रूप से बड़े महत्वपूर्ण हैं। आपने इस पाठ्यक्रम की इकाई-20 में पढ़ा ही है कि *Hevea brasiliensis* (हीविया ब्रैजिलिएंसिस) के लैटेक्स से किस प्रकार para-rubber (पैरा-रबड़) प्राप्त किया जाता है (चित्र 22.28 देखें)।

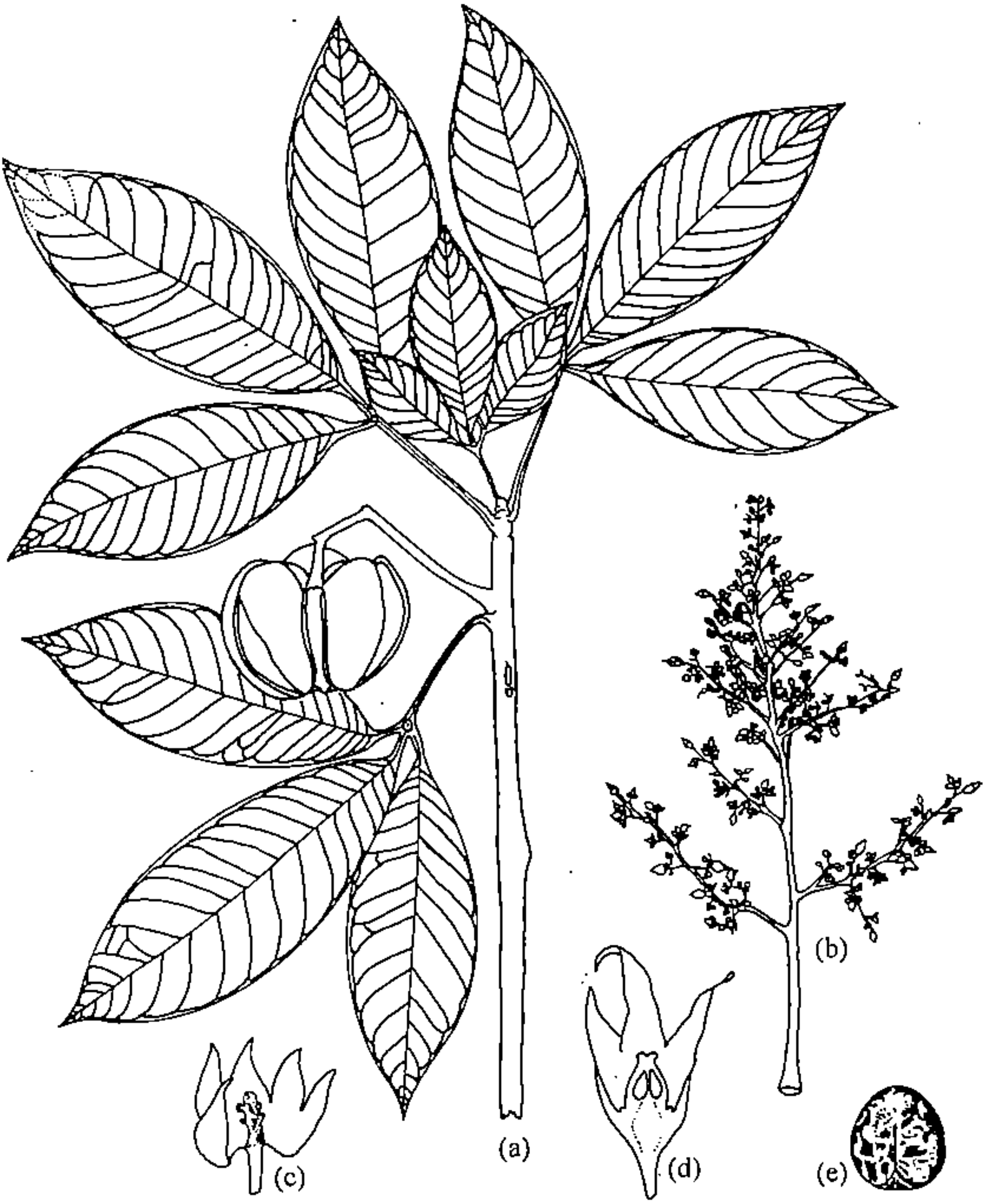

चित्र 22.28 : *Hevea brasiliensis* *हीविया ब्रैजिलिएंसिस* । (a) स्फुटित (dehisced) फल सहित एक प्ररोह। (b) एक inflorescence. (c) काट कर विवृत किया गया एक male flower. (d) अनुदैर्घ्य काट में एक female flower. (e) एक बीज। (पर्सग्लव, 1988 से)।

Castor (कैस्टर) यानि एरंड के बीज भी आर्थिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण हैं। इसका वानस्पतिक नाम *Ricinum communis* (*रिसिनस कमुनिस*, चित्र 22.29) है। *Aleurites* (*ऐल्यूराइटीज*) के बीज से tung oil (तुंग तेल) मिलता है। यह एक उच्च गुणवत्ता वाला drying oil (शुष्कन तेल) है जिसे पेंट और वार्निशों (रंग रोगन) के निर्माण में प्रयोग किया जाता है। *Croton tiglium* (*क्रोटोन टिग्लियम*) के बीज से croton oil (क्रोटोन तेल) मिलता है जिसे purgative (रेचक औषधि) के रूप में प्रयोग किया जाता है। मेक्सिको और दक्षिण अमेरिका में पाई जाने वाली स्पीशीज़ *Euphorbia antisyphilitica* (*यूफोर्बिया एंटीसिफिलिटिका*) से candelilla wax (कैन्डलिला मोम) प्राप्त होता है।

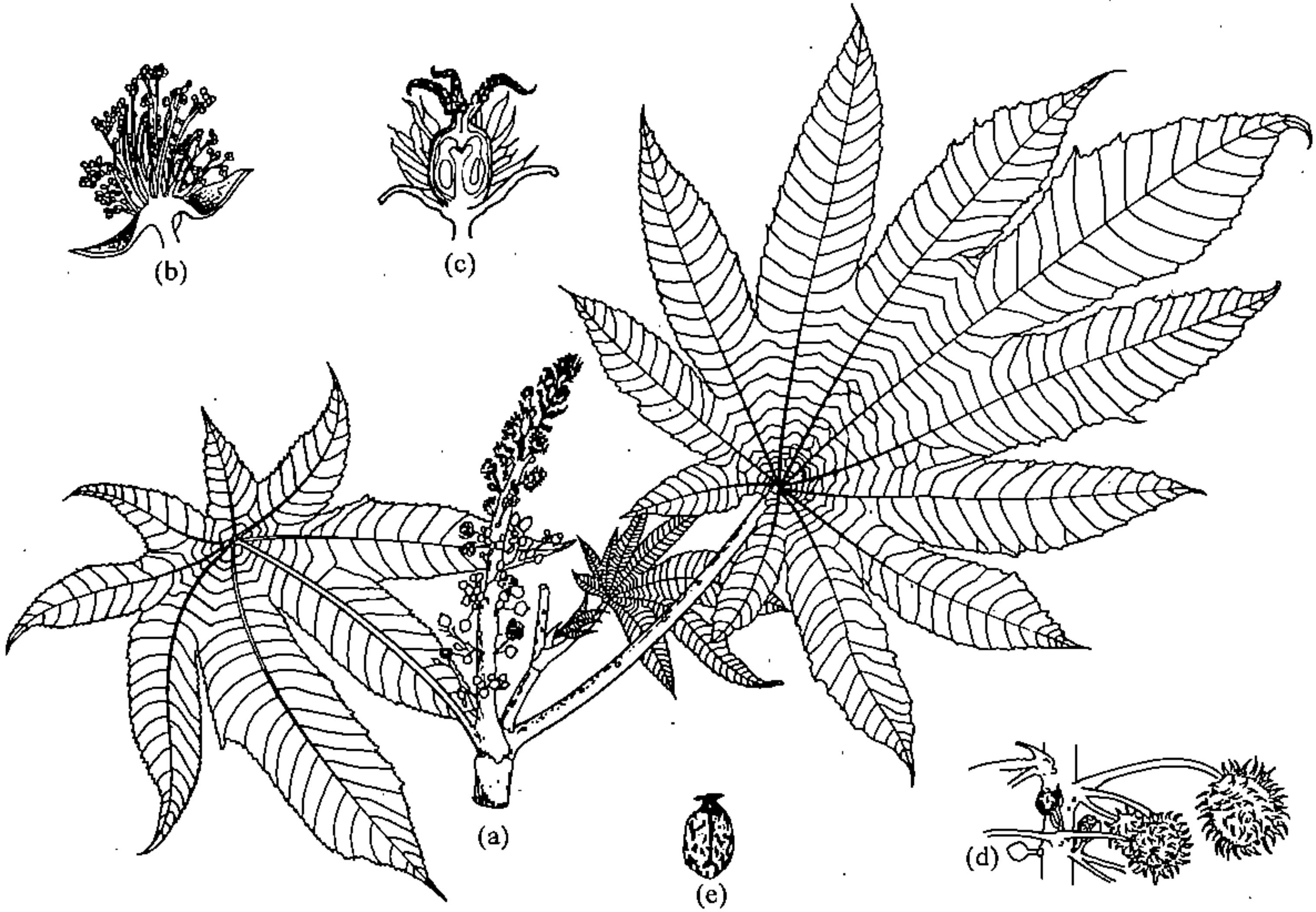

चित्र 22.29 : *Ricinus communis* (रिसिनस कमुनिस)। (a) तरुण inflorescence धारी एक प्ररोह। (b) Longitudinal section में एक male flower. (c) अनुदैर्घ्य काट में एक female flower. (d) वर्धनशील फलों को दिखाता टहनी का एक भाग। (e) Caruncle (कैरंकल) युक्त एक बीज। (पर्सिलव 1988 से)।

इस family में भोज्य पादप भी पाए जाते हैं। *Manihot esculenta* (*मैनिहोट एस्कुलेंटा*) से cassava or tapioca (कैसावा या टैपियोका) मिलता है। इसके विशाल कंद मूल स्टार्च के स्रोत हैं। *Phyllanthus emblica* (*फाइलैंथस एम्बेलिका*) और *P. acidus* (*फा. ऐसिडस*) के फल विटामिन सी से भरपूर होते हैं। इन्हें कच्चा खाया जाता है या इनका आचार या मुरब्बा बनाया जाता है। इन्हें औषधि के रूप में भी प्रयोग किया जाता है।

इस family के कई सदस्यों को आमतौर पर सजावट के लिए उगाया जाता है। ये हैं : *Acalypha hispida* (*ऐकैलिफा हिस्पिडा*), *A. wilkesiana* (*ऐ. विल्केसिआना*), *Codiaeum variegatum* (*कोडिएइयम वैरीगैटम*), *Euphorbia milii* (*यूफोर्बिया मिलाइ*), *E. pulcherrima* (*यु. पल्चैरिमा*), *E.tirucalli* (*यू. टिरूकैली*), *Jatropha* (*जैट्रोफ़ा*) की स्पीशीज़, *Pedilanthus tithymaloides* (*पैडिलेंथस टाइथिमैलोइडीज*), और *Putranjiva roxburghii* (*पट्रैंजिवा राक्सबर्घाई*)।

Mallotus philippenscs (*मैलोटस फिलिपेंसिस*) के फल से Kamala dye (कैमला-डाई) प्राप्त होता जिसे रेशम और ऊन को रंगने में प्रयोग किया जाता है।

Bischofia javanica (*बिस्कोफ़िया जैवैनिका* यानि बिशपवुड) का प्रयोग पुल, नाव और राफ्टर बनाने में होता है।

बोध प्रश्न

19. कॉलम I में दिए गए मदों को कॉलम II में दी गई उनकी families से सही-सही मिलाइए।

	कॉलम I		कॉलम II
क)	Caruncle	i)	Amaranthaceae
ख)	Central placentation	ii)	Euphorbiaceae
ग)	Utricle	iii)	Santalaceae

20. निम्न जीनसों को क्रमशः उनके फैमिली में रखिए और प्रत्येक का एक आर्थिक महत्व बताइए।

जीनस	फैमिली	उपयोग
क) *Celosia*	....	....
ख) *Gomphrena*	....	....
ग) *Mallotus*	....	....
घ) *Phyllanthus*	....	....
ड) *Santalum*	....	....

21. निम्न स्थानों में family का सही नाम लिखिए।

क) लैटेक्स .... family के पादपों में मिलता है।

ख) अर्ध-परजीवी (semi-parasitic) पादप .... family में मिलते हैं।

ग) Inflorescence में तीक्ष्ण वर्ध (prickles) या रोमों के गुच्छे (tufts of hairs) .... family के पादपों में पाए जाते हैं।

22. जीनस *Euphorbia* के cyathium inflorescence का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

23. Santalaceae family के निदानात्मक लक्षण बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

24. Amaranthaceae family के vegetative और floral characters (अभिलक्षण) बतलाइए।

....

....

....

....

....

....

....

25. वर्गीकरण की तीनों पद्धतियों में Euphorbiaceae family के वर्गीकृत स्थान का विवेचन करें।

....

....

....

....

....

....

26. किसी भी ऐसे family का नाम बताइए जो Amaranthaceae family से जुड़ा हो।

....

....

....

22.13 सारांश

इस इकाई में आपने dicots की और families के बारे में पढ़ा। उनके निदानात्मक लक्षण नीचे दिए गए हैं।

Rubiaceae: Herbaceous या woody पादप। पत्तियां opposite (सम्मुखी) या whorled में व्यवस्थित। Interpetiolar (अंतर्वृंतीय) या intrapetiolar (अंत:वृंतीय) stipules (अनुपूर्ण) विद्यमान। एकल, बड़ा terminal flower (अंत्य-पुष्प) या dichasial cyme (युग्मशाखित पुष्पक्रम)। पुष्प tetramerous (चतुर्भागी) या pentamerous (पंचभागी) और epigynous (जायांगोपरिक) होते हैं। कैलिक्स लघु sepals (बाह्यदलों) का बना या चटक रंग के एक बड़े बाह्यदल को लिए। Gamosepalous (संयुक्तदलीय) कोरोला जिसमें aestivation (पुष्पदल विन्यास) valvate (कोरस्पर्शी) या convolute (संवलित) या imbricate (कोरछादी) होता है। Stamens epipetalous (पुंकेसर दललग्न) और कोरोला नली में inserted (आलग्न) होते हैं। Gynoecium bicarpellary (जायांग द्विअंडपी), ovary inferior (अंडाशय अर्धवर्ती), साधारणतया axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास)। फल berry (बेरी) या capsulé (कैप्सूल) या schizocarpic (भिदुर) होता है। बीज छोटे और प्रचुर endosperm (भ्रूणपोष) युक्त, कभी-कभी winged (पंखदार) भी होते हैं।

Asteraceae : इस family का सबसे अधिक विशेषता सूचक लक्षण विशिष्ट capitulum inflorescence (मुंडक पुष्पक्रम) है। पादप अधिकतया herbaceous (शाकीय) और watery sap (जलीय रस) या milky latex (दुग्धी लैटेक्स) युक्त होते हैं। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी), जिनमें simple (सरल) entire (पूर्ण) या highly divided (अति-विभाजित) lamina (पटल) पाया जाता है। पुष्प florets (पुष्पकों) में लघुकृत, जो capitulum (मुंडक) में झुंड में इकट्ठे रहते हैं। प्रत्येक capitulum में involucre of bracts (सहपत्र चक्र) florets को घेरे रहते हैं। कैलिक्स pappus (रोमगुच्छ या पैपस) में रूपांतरित रहता है। Pentamerous, gamosepalous (पंचभागी, संयुक्तदली) कोरोला tubular (नलिकाकार) या ligulate (जीभिकाकर) होता है। Stamens epipetalous (पुंकेसर दललग्न), anthers syngenesious (परागकोष युक्तकोशी) होते हैं। Gynoecium bicarpellary, syncarpous (जायांग द्विअंडपी युक्तांडपी) जिसमें inferior ovary (अधोवर्ती अंडाशय) और basal placentation (आधारी बीजांडासन) पर एक अकेला ovule (बीजांड) होता है। फल एक cypsela (सिप्सेला) होता है।

Sapotaceae ; सैपोटेसी वृक्ष, उष्ण प्रदेशों में पाए जाते हैं। सरल coriaceous (चर्मिल) पत्तियां जो hairs (रोमों) से ढकी रहती हैं। पादप के सभी अंगों में milky latex (दुग्धी या दूधिया लैटेक्स) विद्यमान रहता है। छोटे पुष्प solitary (एकल) या फिर cymose inflorescence (ससीमाक्षी पुष्पक्रम) में जो leaf-axils (पर्ण-कक्षों) पर पाए जाते हैं। पुष्प actinomorphic (त्रिज्या-सममित), gamopetalous (संयुक्त दलीय) और hypogynous (अधोजायांगी) कैलिक्स और कोरोला isomerous whorls (समावयवी आवर्तों) में, imbricate aestivation (कोरछादी पुष्पदल विन्यास) के साथ। 4 या 5 stamens (पुंकेसर) प्रत्येक दो या तीन whorls (आवर्तों) में। Carpels (बीजांडों) की संख्या अनेक, ovary (अंडाशय) syncarpous superior (युक्तांडपी ऊर्ध्ववर्ती), axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास), सरल style (वर्तिका) और चिपचिपा stigma (वर्तिकाग्र)। फल berry (बेरी) जिसमें चंद बीज होते हैं। बीज बड़े उनमें लम्बी hilum (नाभिका) और चमकदार testa (बीजचोल) होता है।

Apocynaceae : Herbaceous (शाकीय) या woody plants (काष्ठीय पादप) जिनमें milky sap (दुग्धी रस) पाया जाता है। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी), सरल opposite (सम्मुखी) या whorled (आवर्ती)। पुष्प solitary (एकल) या paniculate inflorescence (पुष्प-गुच्छी पुष्पक्रम) में bisexual (द्विलिंगी), pentamerous (पंचभागी) और actinomorphic (त्रिज्या-सममित), gamosepalous (संयुक्त बाह्यदली), कैलिक्स जिसमें quincuncial (पंचकी पुष्पदल-विन्यास) पाया जाता है। Gamopetalous (संयुक्त दलीय) कोरोला एक सुस्पष्ट नली और contorted aestivation (व्यावर्तित पुष्पदल-विन्यास) के साथ। पांच epipetalous stamens (दललग्न पुंकेसर) जो कोरोला नली में inserted (आलग्न) होते हैं, stamens (पुंकेसर) free (मुक्त) होते हैं। Bicarpellary (द्विअंडपी), साधारणतया superior ovary (ऊर्ध्वर्ती अंडाशय) और आधार पर मुक्त। एकल style (वर्तिका), capitate (समुंड) या dumb-bell

(डम्बेल) के आकार में stigma (वर्तिकाग्र)। फल दो पृथक follicles (पुटकों) का बना होता है, फल विरले ही berry (बेरी) या capsule (कैप्सूल) के रूप में पाया जाता है। बीज चपटे और comose (रोमिल) या winged (पंखदार) होते हैं।

Asclepiadaceae : शाकीय या काष्ठीय पादप जिनमें milky latex (दुधिया लेटेक्स) पाया जाता है। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी) सरल, और opposite सम्मुखी decussate (क्रासित) होती हैं। Inflorescence cymose (पुष्पक्रम ससीमाक्षी) या racemose (असीमाक्षी)। पुष्प bracteate (सहपत्री) और bracteolate (सहपत्रिका युक्त) actinomorphic (त्रिज्या-सममित), bisexual (द्विलिंगी)। Gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) विद्यमान होता है। Gamosepalous (संयुक्त-बाह्यदली) कैलिक्स में, quincuncial aestivation (पंचकी पुष्पदल-विन्यास) पाया जाता है। Gamopetalous (संयुक्तदली) कोरोला contorted aestivation (व्यावर्तित पुष्पदल-विन्यास) युक्त होता है। पांच, epipetalous stamens (दललग्न पुंकेसर) जिनके anthers (परागकोषों) में चम्मच के आकार के translators (स्थानांतरक) या pollinia (परागपिंड) होते हैं। Bicarpellary (द्विअंडपी), apocarpous (वियुक्तांडपी), superior ovary (ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय)। Styles (वर्तिकाएं), gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) का हिस्सा होती हैं। फल follicles (पुटकों) का एक युगल होता है। बीज comose (रोमगुच्छी) होते हैं।

Solanaceae : शाक, क्षुप या वृक्ष जिनके तनों में bicollateral vascular bundles (उभय संवहन पूल) पाए जाते हैं। पत्तियां सरल alternate (एकांतरी), या subopposite (अर्धसम्मुखी) और congenital fusion of axes (अक्षों के जन्मजात संलयन) के कारण extra-axillary inflorescences (कक्षेतर पुष्पक्रम) के साथ पाई जाती हैं। पुष्प complete (पूर्ण), hypogynous (अधोजायांगी), bisexual (द्विलिंगी) होते हैं। कैलिक्स persistent (स्थाई) होते हैं। कोरोला plicate (वलिकीय) या convolute aestivation (संवलित पुष्पदल-विन्यास) के साथ। Stamens (पुंकेसरों) की संख्या petals (दलों) के बराबर या कम होती है। Bicarpellary, syncarpous gynoecium (द्विअंडपी युक्तांडपी जायांग)। Carpels oblique (अंडप तिर्यक्) स्थिति में होते हैं। Placentation axile (बीजांडन्यास कक्षीय) और अक्सर फूला हुआ रहता है। फल एक berry (बेरी) या capsule (कैप्सूल) होता है जिसमें कैलिक्स स्थाई रूप से यानि persistent पाए जाते हैं।

Acanthaceae : शाक या क्षुप, जिनके तरुण तनों या पत्तियों में cystolith (सिस्टोलिथ) पाए जाते हैं। पत्तियां opposite (सम्मुखी), decussate (क्रॉसित), entire (पूर्ण), exstipulate (अननुपर्णी) होती हैं। Inflorescence dichasial cyme (पुष्पक्रम युग्मशाखित, ससीमाक्ष) या racemose (असीमाक्षी) होता हैं। Bracts (सहपत्र) और bracteoles (सहपत्रिकाएं) बड़े होते हैं। पुष्प bisexual (द्विलिंगी), zygomorphic (एकव्यास सममित) होते हैं जिनमें ovary (अंडाशय) के नीचे nectariferous disc (मकरंदधर डिस्क) पाई जाती है। कोरोला साधारणतया bilabiate (द्विओष्ठी), aestivation imbricate (पुष्पदल-विन्यास कोरछादी) या contorted (व्यावर्तित) होता है। Stamens (पुंकेसरों) की संख्या दो या चार होती है, stamens exserted (बाहर निकले यानि निःसृत) होते हैं। पराग विविध आकारिकी लिए होते हैं। Ovary bicarpellary (अंडाशय द्विअंडपी) syncarpous (युक्तांडपी), bilocular (द्विकोष्ठकी) होती है जिसमें axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास) पाया जाता है। Ovary के प्रत्येक locule में ovules (बीजांड) दो पंक्तियों में पाए जाते हैं। फल एक bilocular capsule (द्विकोष्ठकी कैप्सूल) होता है। बीज में retinaculae (उपबंधनी) या jaculators (उत्क्षेपक) विद्यमान होते हैं जो dispersal (प्रकीर्णन) में सहायता करते हैं।

Lamiaceae : Aromatic (सुगंधमूलक) शाकीय पादप। तने quadrangular (चतुर्कोणीय) होते हैं। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी) होती हैं जिनमें पटल यानि लैमिना तरह-तरह से dissected (विच्छेदित) पाया जाता है। Inflorescence verticillaster (पुष्पक्रम कूटचक्रक) होता है। कैलिक्स persistent (स्थायी) होता है। पुष्प gamopetalous (संयुक्तदली) प्रायः bilabiate (द्विओष्ठी) होते हैं। Epipetalous stamens (दललग्न पुंकेसर) आमतौर पर didynamous (द्विदीर्घी) या diandrous (द्विपुंकेसरी) होते हैं। Ovary (अंडाशय), bicarpellary tetralocular (द्विअंडपी, चतुष्कोष्ठकीय) होती है जिसमें axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास) पाया जाता है। Style gynobasic (वर्तिका

जायांगाधारी) होती है। Hypogynous ovary (अधोजायांगी अंडाशय) nectariferous disc (मकरंदधर डिस्क) पर विद्यमान होती है। फल चार nutlets (दृढ़फालिकाओं) का बना होता है।

Amaranthaceae : द्विबीजपत्री शाक या क्षुप। तने में anomalous secondary growth (असंगत द्वितीयक वृद्धि) पाई जाती है। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी) सरल और hairs (रोमों) से ढकी होती हैं। Inflorescence organisation (पुष्पक्रम गठन) विविधरूपी होता है और उस पर prickles (वर्ध) या tufts of hairs (रोमगुच्छ) होते हैं। पुष्प छोटे और सरल होते हैं। Perianth homochlamydeous (परिदलपुंज समपरिदलपुंजी) साधारणतया membranous (झिल्लीमय) होता है। Stamens की संख्या tepals (परिदलों) के बराबर होती है जिनमें dithecous (द्विकोष्ठी) या monothecous anthers (एककोष्ठी परागकोश) पाए जाते हैं। Gynoecium syncarpous (जायांग युक्तांडपी) होता है। जिसमें ovary superior (अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती) होती है और आमतौर पर basal placenta (आधारी बीजांडासन) पर एक (या कभी-कभी अधिक) ovule (बीजांड) पाए जाते हैं। फल एक utricle (दृति) या एक nutlet (दृढ़फलिका) या berrey-like (बेरी-नुमा) होता है। बीज lenticular (मूसराकार) होता है जिसमें curved embryo (वक्रित भ्रूण) पाया जाता है।

Santalaceae : Semi-parasitic dicotyledonous (अर्ध-परजीवी द्विबीजपत्री) हरे पादप। पत्तियां सरल, exstipulate (अननुपर्णी), alternate (एकांतरी) या opposite (सम्मुखी)। पुष्प लघु, या तो solitary (एकल) होते हैं या cymose (ससीमाक्षी) या racemose inflorescence (असीमाक्षी पुष्पक्रम) में होते हैं। पुष्प साधारणतया bisexual (द्विलिंगी), कभी-कभी unisexual (एकलिंगी) भी होते हैं। Nectar-secreting disc (मकरंदस्रावी डिस्क) विद्यमान रहती है। सरल 4 या 5 lobed (पालित), gamophyllous perianth संयुक्त (परिदली परिदलपुंज), डिस्क के साथ संलग्न होता है। Syncarpous gynoecium (युक्तांडपी जायांग), central placentation (मध्य बीजांडन्यास) के साथ। फल nut (नट) या drupe (अष्ठिल) होता है जिसमें सिर्फ एक बीज पाया जाता है। बीज बीजचोलहीन यानि without testa होता है मगर उसमें सफेद fleshy endosperm (मांसल भ्रूणपोष) पाया जाता है।

Euphorbiaceae : Milky-latex (दुग्धी लैटेक्स) युक्त पादप। तने में spines (कंटक) या thorns (कांटे) होते हैं, और कभी नहीं भी। पत्तियां सरल exstipulate (अननुपर्णी) होती हैं। Unisexual (एकलिंगी) पुष्प विविध रूपी पुष्पक्रमों में पाए जाते हैं। जीनस *Euphorbia* में विशिष्ट cyathium inflorescence (साएथियम पुष्पक्रम) पाया जाता है। Perianth (परिदलपुंज) लुप्त होता है या फिर यह sepaloid (बाह्यदलाभ) या heterochlamydeous (विषमपरिदलपुंजी) होता है। Stamen एक से अनेक होते हैं। Tricarpellary, syncarpous, superior ovary (त्रिअंडपी, युक्तांडपी, ऊर्ध्ववती अंडाशय) जिसमें axile placentation (स्तंभी बीजांडन्यास) पाया जाता है। फल साधारणतया tricoccous capsule (ट्राइकोकस कैप्सूल) होता है। बीज में caruncle (कैरंकल या बीजचोलक) होता है।

22.14 अंत में कुछ प्रश्न

1) Asteraceae family के आर्थिक महत्व के बारे में संक्षेप में बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) Apocynaceae और Asclepiadaceae की तुलना करते हुए दोनों families की समानताएं और अंतर बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

3) माना आपको एक floral twig दी जाती है जिसका inflorescence अंशतः Acanthaceae family के सदस्यों से मिलता है तो वहीं कुछ-कुछ Lamiaceae से भी मेल खाता है। इसकी family की सही पहचान करने के लिए आप कौन से विशिष्ट लक्षण इसमें देखेंगे ?

....

....

....

....

4) Euphorbiaceae family में भारी विविधता देखी जाती है। इस कथन की पुष्टि कीजिए।

....

....

....

....

....

....

22.15 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) iii) Rubiaceae
   ख) iii) Rubiaceae

2)

	जीनस	फैमिली	आर्थिक उपयोग
i)	*Alstonia*	Apocynaceae	इमारती लकड़ी
ii)	*Artemisia*	Asteraceae	औषधि
iii)	*Carthamus*	Asteraceae	रंजक (डाइ)
iv)	*Cephaelis*	Rubiaceae	औषधि
v)	*Cinchona*	Rubiaceae	औषधि
vi)	*Cryptostegia*	Asclepiadaceae	लेटेक्स
vii)	*Madhuca*	Sapotaceae	भोज्य, औषधि, औद्योगिक उपयोग
viii)	*Palaquium*	Sapotaceae	औषधि, औद्योगिक उपयोग
ix)	*Tylophora*	Asclepiadaceae	औषधि
x)	*Vinca*	Apocynaceae	औषधि

3) क) Capitulum inflorescence - एक विशेष प्रकार का racemose inflorescence (असीमाक्षी पुष्पक्रम) है जिसमें bracts (सहपत्रों) का एक involucre (सहपत्र-चक्र) पाया जाता है। ये bracts कई (reduced flowers) (लघुकृत पुष्पों) को घेरे रहते हैं जिन्हें florets (पुष्पक) कहते हैं। ये florets एक receptacle (धानी) पर एकत्रित होते हैं जो अति condensed floral axis (संघनित पुष्पी अक्ष) द्वारा बनती है।

Family : Asteraceae

ख) Gynostegium : यह एक विशिष्ट संरचना है जिसकी रचना androecium और gynoecium के जुड़ने से होती है। इसमें stamens के filaments मिलकर एक column (स्तंभ) बनाते हैं। इस column के शीर्ष पर, laterally united (पार्श्व से संयुक्त) anthers (परागकोश) एक 5-sided, blunt, cone-like structure (पंच-फलकी, कुंठित शंकुनुमा संरचना) का निर्माण करते हैं। यह संरचना style और stigma से जुड़ी होती है। इस विशिष्ट संरचना को ही gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) कहते हैं।

Family : Asclepiadaceae

ग) Intra-petiolar stipules : कई पादपों में पत्तियां nodes (पर्वसंधियों) पर opposite arrangement (सम्मुखी विन्यास) में पाई जाती हैं। पत्तियां exstipulate (अननुपर्णी) हो सकती हैं। Stipules जब leaf petiole (पर्ण-वृंत) और stem axis (तने के अक्ष) के बीच विद्यमान हों तो उन्हें intra-petiolar stipules (अंतःवृंतीय अनुपर्ण) कहा जाता है।

Family : Rubiaceae

घ) Protogynous flower : इन पुष्पों में gynoecium सबसे पहले विकसित होता है। इसमें style (वर्तिका) अपने sticky stigma (चिपचिपे वर्तिकाग्र) के साथ कोरोला के खुलने और फैलने से पहले ही उसके ऊपर प्रकट हो जाती है।

Family : Sapotaceae

4)

	Rubiaceae	Asteraceae
i)	Ovary bilocular	Ovary unilocular
ii)	प्रत्येक locule में 1-अनेक ovules	मात्र एक ovule
iii)	Placentation axile	Placentation basal
iv)	Stigma capitate या lobed	Style bifid

(कोई दो)

5) क) i) Family Apocynaceae
ii) Family Asclepiadaceae

ख) i) बेंथम और हुकर का वर्गीकरण

Gamopetalae

Series Bicarpellatae

Order Gentianales

Two distinct families - Apocynaceae and Asclepiadaceae

ii) तख़्ताज़न का वर्गीकरण

Subclass K Lamiidae

Superorder Gentiananae

Order 163 - Aypocynales

Apocynaceae नामक मात्र एक family जिसमें Asclepiadaceae के सभी जीनस भी शामिल हैं।

6) क) i) Subfamily - Cichoroideae or Liguliflorae
ii) Subfamily -Asteroideae or Tubliflorae

ख)

Cichoroideae (सिकोरोइडी)	**Asteroideae** (ऐस्टरोइडी)
i) पादपों में milky latex विद्यमान होता है।	Milky latex अनुपस्थित, तथा watery sap पाया जाता है।
ii) सभी floret (पुष्पक) एक capitulum (मुंडक) में, bisexual (द्विलिंगी) zygomorphic (एकव्याससममित) और ligulate (जीभिकाकार)।	Floret मुंडक में, द्विलिंगी या unisexual (एकलिंगी), actinomorphic (त्रिज्याससममित) या zygomorphic और tubular या ligulate.

7)

एंग्लर और प्रांट्ल	तख़्ताज़न
Sympetalae	Subclass J Asteridae
Order 10-Campanulatae	Superorder Asteranae
Family Asteraceae	Order 160-Asterales
	Family Asteraceae

8) भाग 22.2 को देखें

9) भाग 22.4 देखिए

10)

Apocynaceae (ऐपोसयनेसी)	**Asclepiadaceae** (ऐस्क्लीपिएडेसी)
i) Gynostegium (पुंवर्तिकाग्रछत्र) नहीं होता।	पुंवर्तिकाग्रछत्र होता है।
ii) Stamens free (पुंकेसर मुक्त) होते हैं।	Stamens gynostegium के साथ मिले होते हैं।
iii) Anthers (परागकोश) सुस्पष्ट होते हैं।	Anthers translators (स्थानांतरकों) या pollinia (परागपिंडों) के रूप में होते हैं।

11) क) Acanthaceae (ऐकैंथेसी)
ख) Solanaceae (सोलेनेसी)
ग) Lamiaceae (लैमिएसी)

12)

	फैमिली	प्ररूपी जीनस
क)	ऐकैंथेसी (Acanthaceae)	*ऐकैंथस (Acanthus)*
ख)	लैमिएसी (Lamiaceae)	*लैमियम (Lamium)*
ग)	सोलेनेसी (Solanaceae)	*सोलेनम (Solanum)*

13) क) Gynobasic style (जायांगनाभिक वर्तिका) : जब style (वर्तिका) ovary अंडाशय के शीर्ष के बजाए उसके base यानि आधार पर विकसित हो तो उसे gynobasic style कहते हैं।

Family : Lamiaceae

ख) Jaculator (उत्क्षेपक) : यह funiculus (बीजांड-वृत) का हुकनुमा प्रक्षेप है जो फल से बीजों का dispersal (प्रकीर्णन) करता है।

Family : Acanthaceae

ग) Obliquaely placed carpels (तिर्यक् स्थिति में अंडप) यह पुष्प के mother axis (मूलअक्ष) के संदर्भ में दो carpels (अडंपों) के orientation (विन्यास) के बारे में बताता है। पुष्प चित्र में anterior carpel (अग्रस्थ अंडप) दाहिने, और posterior carpel (पश्च अंडप) बाएं स्थित होता है। दोनों carpel, vertically या horizontally न होकर oblique orientation (तिर्यक् विन्यास) में स्थित होते हैं।

Family : Solanaceae

14) कूटचक्रक पुष्पक्रम : भाग 22.9 को देखें।

15)

Family	बेंथम और हुकर	एंग्लर और प्रांट्ल	तख़्ताज़न
i) Acanthaceae	Personales	Tubiflorae	Scrophulariales
ii) Lamiaceae	Lamiales	Tubiflorae	Lamiales
iii) Solanaceae	Polemoniales	Tubiflorae	Solanales

16. भाग 22.8 देखें।
17. भाग 22.7 देखें।
18. भाग 22.9 देखें।
19.

कॉलम I		कॉलम II	
क)	Carcuncle (कैरंकल)	i)	Amaranthaceae (ऐमरैंथेसी)
ख)	Central placentation (मध्य बीजांडन्यास)	ii)	Euphorbiaceae (यूफोर्बिएसी)
ग)	Utricle (दृति)	iii)	Santalaceae (सैंटलेसी)

20)

	जीनस	फैमिली	उपयोग
क)	*Celosia* (*सिलोसिया*)	Amaranthaceae (ऐमरैंथसी)	सजावटी
ख)	*Gomphrena* (*गाम्फ्रेना*)	Amaranthaceae	सजावटी
ग)	*Mallotus* (*मैलोटस*)	Euphorbiaceae (यूफोर्बिएसी)	रंजक, इमारती लकड़ी
घ)	*Phyllanthus* (*फाइलैंथस*)	Euphorbiaceae	भोज्य, औषधीय
ड)	*Santalum* (*सैंटेलम*)	Santalaceae (सैंटेलेसी)	वाष्पशील तेल, नक्काशी की लकड़ी

21) क) Euphorbiaceae (यूफोर्बिएसी)

ख) Santalaceae (सैंटेलेसी)

ग) Amaranthaceae (ऐमरैंथेसी)

22) भाग 22.12 को देखिए।
23) भाग 22.11 को पढ़िए।
24) भाग 22.10 को देखें।
25) i) बेंथम और हुकर

Monochlamydeae (मोनोक्लैमाइडी)
Series III–Unisexuales (सिरीज III – यूनिसेक्सुएलीज)
Family – Euphorbiaceae (कुल – यूफोर्बिएसी)

ii) एंग्लर और प्रांट्ल

Archichlamydeae (आर्कीक्लैमाइडी)
Order 23 – Geraniales (गण 23 – जिरैनिएलीज)
Family – Euphorbiaceae (कुल – युफोर्बिएसी)

iii) तख़्ताज़न

Subclass G–Dilleniidae (उपवर्ग G – डिलीनाइडी)
Superorder–Euphorbianae (अधिगण – यूफोर्बिएनी)
Order 91 – Euphorbiales (गण 91 – यूफोर्बिएलीज)
Family – Euphorbiaceae (कुल – यूफोर्बिएसी)

26) Chenopodiaceae (कीनोपोडिएसी)

अंत में कुछ प्रश्न

1) भाग 22.3 देखें।
2) भाग 22.5 और 22.6 देखें।
3) संकेत: भाग 22.8 और 22.9 को देखें तथा इन दोनों families के निदानात्मक लक्षण बताइए।
4) देखिए भाग 22.12।

APPENDIX – 22.1 OUTLINE OF CLASSIFICATION OF THE MAGNOLIOPHYTA

Class MAGNOLIOPSIDA

Subclass A: Magnoliidae

SUPERORDER MAGNOLIANAE

Order 1. Magnoliales
Family *1. Degeneriaceae*
2. Himantandraceae
3. Magoliaceae

Order 2. Winterales
Family *1. Winteraceae*

Order 3. Canellales
Family *1. Canellaceae*

Order 4. Illiciales
Family *1. Illiciaceae*
2. Schisandraceae

Order 5. Austrobaileyales
Family *1. Austrobaileyaceae*

Order 6. Eupomatiales
Family *1. Eupomatiaceae*

Order 7. Annonales
Family *1. Annonaceae*

Order 8. Myristicales
Family *1. Myristicaceae*

Order 9. Aristolochiales
Family *1. Aristolochiaceae*

SUPERORDER LACTORIDANAE

Order 10. Lactoridales
Family *1. Lactoridaceae*

SUPERORDER PIPERANAE

Order 11. Piperales
Family *1. Saururaceae*
2. Piperaceae
3. Peperomiaceae

SUPERORDER LAURANAE

Order 12. Laurales
Family *1. Amborellaceae*
2. Trimeniaceae
3. Monimiaceae
4. Gomortegaceae
5. Hernandiaceae
6. Lauraceae

Order 13. Calycanthales
Family *1. Calycanthaceae*
2. Idiospermaceae

Order 14. Chloranthales
Family *1. Chloranthaceae*

SUPERORDER RAFFLESIANAE

Order 15. Hydnorales
Family *1. Hydnoraceae*

Order 16. Rafflesiales (Cytinales)
Family *1. Apodanthaceae*
2. Mitrastemonaceae
3. Rafflesiaceae
4. Cytinaceae

SUPERORDER BALANOPHORANAE

Order 17. Cynomoriales
Family *1. Cynomoriaceae*

Order 18. Balanophorales
Family *1. Mystropetalaceae*
2. Dactylanthaceae
3. Lophophytaceae
4. Sarcophytaceae
5. Scybaliaceae
6. Helosidaceae
7. Langsdorffiaceae
8. Balanophoraceae

Subclass B. Nymphaeidae

SUPERORDER NYMPHAEANAE

Order 19. Hydropeltidales
Family *1. Hydropeltidaceae*
2. Cabombaceae

Order 20. Nymphaeales
Family *1. Nupharaceae*
2. Nymphaeaceae
3. Barclayaceae

SUPERORDER CERATOPHYLLANAE

Order 21. Ceratophyllales
Family *1. Ceratophyllaceae*

Subclass C. Nelumbonidae

SUPERORDER NELUMBONANAE

Order 22. Nelumbonales
Family *1. Nelumbonaceae*

Subclass D. Ranunculidae

SUPERORDER RANUNCULANAE

Order 23. Lardizabalales
Family *1. Lardizabalaceae*
2. Sargentodoxaceae

Order 24. Menispermales
Family *1. Menispermaceae*

Order 25. Berberidales
Family *1. Nandinaceae*
2. Berberidaceae
3. Ranzaniaceae
4. Podophyllaceae

Order 26. Ranunculales
Family *1. Ranunculaceae*

Order 27. Circaeasterales
Family *1. Kingdoniaceae*
2. Circaeasteraceae

Order 28. Hydrastidales
Family *1. Hydrastidaceae*

Order 29. Glaucidiales
Family *1. Glaucidiaceae*

Order 30. Paeoniales
Family *1. Paeoniaceae*
Order 31. Papaverales
Family *1. Papaveraceae*
2. Pteridophyllaceae
3. Hypecoaceae
4. Fumariaceae

Subclass E. Caryophyllidae

SUPERORDER CARYOPHYLLANAE
Order 32. Caryophyllales
Family *1. Phytolaccaceae*
2. Gisekiaceae
3. Agdestidaceae
4. Barbeuiaceae
5. Archatocarpaceae
6. Petiveriaceae
7. Nyctaginaceae
8. Aizoaceae
9. Sesuviaceae
10. Tetragoniaceae
11. Stegnospermaceae
12. Portulacaceae
13. Hectorellaceae
14. Basellaceae
15. Halophytaceae
16. Cactaceae
17. Didiereaceae
18. Molluginaceae
19. Caryophyllaceae
20. Amaranthaceae
21. Chenopodiaceae
SUPERORDER GYROSTEMONANE
Order 33. Gyrostemonales
Family *1. Gyrostemonaceae*
SUPERORDER POLYGONANAE
Order 34. Polygonales
Family *1. Polygonaceae*
SUPERORDER PLUMBAGINANAE
Order 35. Plumbaginales
Family *1. Plumbaginaceae*

Subclass F. Hamamelididae

SUPERORDER TROCHODENDRANAE
Order 36. Trochodendrales
Family *1. Trochodendraceae*
2. Tetracentraceae
Order 37. Cercidiphyllales
Family *1. Cercidiphyllaceae*
Order 38. Eupteleales
Family *1. Eupteleaceae*
SUPERORDER MYROTHAMNANAE
Order 39. Myrothamnales
Family *1. Myrothamnaceae*
SUPERORDER HAMAMELIDANAE
Order 40. Hamamelidales
Family *1. Hamamelidaceae*
2. Altingiaceae
3. Platanaceae
SUPERORDER BARBEYANAE
Order 41. Barbeyales
Family *1. Barbeyaceae*
SUPERORDER DAPHNIPHYLLANAE
Order 42. Daphniphyllales
Family *1. Daphniphyllaceae*
Order 43. Balanopales
Family *1. Balanopaceae*
SUPERORDER BUXANAE
Order 44. Didymelales
Family *1. Didymelaceae*
Order 45. Buxales
Family *1. Buxaceae*
Order 46. Simmondsiales
Family *1. Simmondsiaceae*
SUPERORDER FAGANAE
Order 47. Fagales
Family *1. Fagaceae*
2. Nothofagaceae
Order 48. Corylales
Family *1. Betulaceae*
2. Corylaceae
3. Ticodendraceae
SUPERORDER CASUARINANAE
Order 49. Casuarinales
Family *1. Casuarinaceae*
SUPERORDER JUGLANDANAE
Order 50. Myricales
Family *1. Myricaceae*
Order 51. Rhoipteleales
Family *1. Rhoipteleaceae*
Order 52. Juglandales
Family *1. Juglandaceae*

Subclass G. Dilleniidae

SUPERORDER DILLENIANAE
Order 53. Dilleniales
Family *1. Dilleniaceae*
SUPERORDER THEANAE
Order 54. Paracryphiales
Family *1. Paracryphiaceae*
Order 55. Theales
Family *1. Stachyuraceae*
2. Theaceae
3. Asteropeiaceae
4. Pentaphylacaceae
5. Tetrameristaceae
6. Oncothecaceae
7. Marcgraviaceae
8. Caryocaraceae
9. Pellicieraceae
Order 56. Hypericales
Family *1. Bonnetiaceae*
2. Clusiaceae
3. Hypericaceae
Order 57. Physenales
Family *1. Physenaceae*

Order 58. Medusagynales
Family *1. Medusagynaceae*
Order 59. Ochnales
Family *1. Strasburgeriaceae*
2. Ochnaceae
3. Sauvagesiaceae
4. Lophiraceae
5. Quiinaceae
6. Scytopetalaceae
Order 60. Elatinales
Family *1. Elatinaceae*
Order 61. Ancistrocladales
Family *1. Ancistrocladaceae*
Order 62. Dioncophyllales
Family *1. Dioncophyllaceae*
Order 63. Lecythidales
Family *1. Barringtoniaceae*
2. Lecythidaceae
3. Napoleonaeaceae
4. Foetidiaceae
5. Asteranthaceae
SUPERORDER SARRACENIANAE
Order 64. Sarraceniales
Family *1. Sarraceniaceae*
SUPERORDER NEPENTHANAE
Order 65. Nepenthales
Family *1. Nepenthaceae*
Order 66. Droserales
Family *1. Droseraceae*
SUPERORDER ERICANAE
Order 67. Actinidiales
Family *1. Actinidiaceae*
Order 68. Ericales
Family *1. Clethraceae*
2. Cyrillaceae
3. Ericaceae
4. Epacridaceae
5. Empetraceae
Order 69. Diapensiales
Family *1. Diapensiaceae*
Order 70. Bruniales
Family *1. Bruniaceae*
2. Grubbiaceae
Order 71. Geissolomatales
Family *1. Geissolomataceae*
Order 72. Fouquieriales
Family *1. Fouquieriaceae*
SUPERORDER PRIMULANAE
Order 73. Styracales
Family *1. Styracaceae*
2. Symplocaceae
3. Ebenaceae
4. Lissocarpaceae
Order 74. Sapotales
Family *1. Sapotaceae*
Order 75. Myrsinales
Family *1. Myrsinaceae*
2. Theophrastaceae
Order 76. Primulales
Family *1. Primulaceae*
SUPERORDER VIOLANAE
Order 77. Violales
Family *1. Berberidopsidaceae*
2. Aphloiaceae
3. Bembiciaceae
4. Flacourtiaceae
5. Lacistemataceae
6. Peridiscaceae
7. Violaceae
8. Dipentodontaceae
9. Scyphostegiaceae
Order 78. Passiflorales
Family *1. Passifloraceae*
2. Turneraceae
3. Malesherbiaceae
4. Achariaceae
Order 79. Caricales
Family *1. Caricaceae*
Order 80. Salicales
Family *1. Salicaceae*
Order 81. Tamaricales
Family *1. Reaumuriaceae*
2. Tamaricaceae
3. Frankeniaceae
Order 82. Cucurbitales
Family *1. Cucurbitaceae*
Order 83. Begoniales
Family *1. Datiscaceae*
2. Tetramelaceae
3. Begoniaceae
Order 84. Capparales
Family *1. Capparaceae*
2. Pentadiplandraceae
3. Koeberliniaceae
4. Brassicaceae
5. Tovariaceae
6. Resedaceae
Order 85. Moringales
Family *1. Moringaceae*
Order 86. Batales
Family *1. Bataceae*
SUPERORDER MALVANAE
Order 87. Cistales
Family *1. Bixaceae*
2. Cochlospermaceae
3. Cistaceae
Order 88. Elaeocarpales
Family *1. Elaeocarpaceae*
Order 89. Malvales
Family *1. Tiliaceae*
2. Dirachmaceae
3. Monotaceae
4. Dipterocarpaceae
5. Sarcolaenaceae
6. Plagiopteraceae
7. Huaceae
8. Sterculiaceae
9. Diegodendraceae

10. Sphaerosepalaceae
11. Bombacaceae
12. Malvaceae

SUPERORDER URTICANAE

Order 90. Urticales

Family *1. Ulmaceae*
2. Moraceae
3. Cannabaceae
4. Cecropiaceae
5. Urticaceae

SUPERORDER EUPHORBIANAE

Order 91. Euphorbiales

Family *1. Euphorbiaceae*
2. Dichapetalaceae
3. Aextoxicaceae

Order 92. Thymelaeales

Family *1. Gonystylaceae*
2. Thymelaeaceae

Subclass II. Rosidae

SUPERORDER SAXIFRAGANAE

Order 93. Cunoniales

Family *1. Cunoniaceae*
2. Davidsoniaceae
3. Eucryphiaceae
4. Brunelliaceae

Order 94. Saxifragales

Family *1. Tetracarpaeaceae*
2. Penthoraceae
3. Crassulaceae
4. Saxifragaceae
5. Grossulariaceae
6. Pterostemonaceae
7. Iteaceae
8. Eremosynaceae
9. Vahliaceae

Order 95. Cephalotales

Family *1. Cephalotaceae*

Order 96. Greyiales

Family *1. Greyiaceae*

Order 97. Francoales

Family *1. Francoaceae*

Order 98. Haloragales

Family *1. Haloragaceae*

Order 99. Podostemales

Family *1. Podostemaceae*

Order 100. Gunnerales

Family *1. Gunneraceae*

SUPERORDER ROSANAE

Order 101. Rosales

Family *1. Rosaceae*
2. Neuradaceae

Order 102. Crossosomatales

Family *1. Crossosomataceae*

Order 103. Chrysobalanales

Family *1. Chrysobalanaceae*

SUPERORDER RHIZOPHORANAE

Order 104. Anisophylleales

Family *1. Anisophylleaceae*

Order 105. Rhizophorales

Family *1. Rhizophoraceae*

SUPERORDER MYRTANAE

Order 106. Myrtales

Family *1. Alzateaceae*
2. Rhynchocalycaceae
3. Penaeaceae
4. Oliniaceae
5. Combretaceae
6. Crypteroniaceae
7. Memecylaceae
8. Melastomataceae
9. Lythraceae
10. Punicaceae
11. Duabangaceae
12. Sonneratiaceae
13. Onagraceae
14. Trapaceae
15. Psiloxylaceae
16. Heteropyxidaceae
17. Myrtaceae

SUPERORDER FABANAE

Order 107. Fabales

Family *1. Fabaceae*

SUPERORDER RUTANAE

Order 108. Sapindales

Family *1. Staphyleaceae*
2. Tapisciaceae
3. Melianthaceae
4. Sapindaceae
5. Hippocastanaceae
6. Aceraceae
7. Bretschneideraceae
8. Akaniaceae

Order 109. Tropaeolales

Family *1. Tropaeolaceae*

Order 110. Sabiales

Family *1. Sabiaceae*
2. Meliosmaceae

Order 111. Connarales

Family *1. Connaraceae*

Order 112. Rutales

Family *1. Rutaceae*
2. Rhabdodendraceae
3. Cneoraceae
4. Simaroubaceae
5. Surianaceae
6. Irvingiaceae
7. Kirkiaceae
8. Pteroxylaceae
9. Tepuianthaceae
10. Meliaceae

Order 113. Leitneriales

Family *1. Leitneriaceae*

Order 114. Coriariales

Family *1. Coriariaceae*

Order 115. Burserales

Family *1. Burseraceae*
2. Anacardiaceae
3. Podoaceae

SUPERORDER GERANIANAE

Order 116. Linales

Family *1. Hugoniaceae*

2. Linaceae

3. Ctenolophonaceae

4. Ixonanthaceae

5. Humiriaceae

6. Erythroxylaceae

Order 117. Oxalidales

Family *1. Oxalidaceae*

2. Lepidobotryaceae

Order 118. Geraniales

Family *1. Hypseocharitaceae*

2. Vivianiaceae

3. Geraniaceae

4. Ledocarpaceae

5. Rhynchothecaceae

Order 119. Biebersteiniales

Family *1. Biebersteiniaceae*

Order 120. Balsaminales

Family *1. Balsaminaceae*

Order 121. Zygophyllales

Family *1. Zygophyllaceae*

2. Peganaceae

3. Balanitaceae

4. Nitrariaceae

5. Tetradiclidaceae

Order 122. Vochysiales

Family *1. Malpighiaceae*

2. Trigoniaceae

3. Vochysiaceae

4. Tremandraceae

5. Krameriaceae

Order 123. Polygalales

Family *1. Polygalaceae*

2. Xanthophyllaceae

3. Emblingiaceae

SUPERORDER CORYNOCARPANAE

Order 124. Corynocarpales

Family *1. Corynocarpaceae*

SUPERORDER CELASTRANAE

Order 125. Brexiales

Family *1. Ixerbaceae*

2. Brexiaceae

3. Rousseaceae

Order 126. Parnassiales

Family *1. Parnassiaceae*

2. Lepuropetalaceae

Order 127. Celastrales

Family *1. Goupiaceae*

2. Celastraceae

3. Lophopyxidaceae

4. Stackhousiaceae

Order 128. Salvadorales

Family *1. Salvadoraceae*

Order 129. Icacinales

Family *1. Aquifoliaceae*

2. Phellinaceae

3. Icacinaceae

4. Sphenostemonaceae

Order 130. Metteniusales

Family *1. Metteniusaceae*

Order 131. Cardiopteridales

Family *1. Cardiopteridaceae*

SUPERORDER SANTALANAE

Order 132. Medusandrales

Family *1. Medusandraceae*

Order 133. Santalales

Family *1. Olacaceae*

2. Opiliaceae

3. Aptandraceae

4. Octoknemaceae

5. Santalaceae

6. Misodendraceae

7. Loranthaceae

8. Viscaceae

9. Eremolepidaceae

SUPERORDER RHAMNANAE

Order 134. Rhamnales

Family *1. Rhamnaceae*

Order 135. Elaeagnales

Family *1. Elaeagnaceae*

SUPERORDER PROTEANAE

Order 136. Proteales

Family *1. Proteaceae*

SUPERORDER VITANAE

Order 137. Vitales

Family *1. Vitaceae*

2. Leeaceae

Subclass I. Cornidae

SUPERORDER CORNANAE

Order 138. Hydrangeales

Family *1. Escalloniaceae*

2. Hydrangeaceae

3. Abrophyllaceae

4. Argophyllaceae

5. Corokiaceae

6. Alseuosmiaceae

7. Carpodetaceae

8. Phyllonomaceae

9. Pottingeriaceae

10. Tribulaceae

11. Melanophyllaceae

12. Montiniaceae

13. Kaliphoraceae

14. Columelliaceae

Order 139. Desfontainiales

Family *1. Desfontainiaceae*

Order 140. Roridulales

Family *1. Roridulaceae*

Order 141. Cornales

Family *1. Davidiaceae*

2. Nyssaceae

3. Mastixiaceae

4. Curtisiaceae

5. Cornaceae

6. Alangiaceae

Order 142. Garryales
Family *1. Garryaceae*
Order 143. Aucubales
Family *1. Aucubaceae*
Order 144. Griseliniales
Family *1. Griseliniaceae*
Order 145. Eucommiales
Family *1. Eucommiaceae*
Order 146. Aralidiales
Family *1. Aralidiaceae*
Order 147. Toricelliales
Family *1. Toricelliaceae*

SUPERORDER ARALIANAE
Order 148. Helwingiales
Family *1. Helwingiaceae*
Order 149. Araliales
Family *1. Araliaceae*
2. Hydrocotylaceae
3. Apiaceae
Order 150. Pittosporales
Family *1. Pittosporaceae*
Order 151. Byblidales
Family *1. Byblidaceae*

SUPERORDER DIPSACANAE
Order 152. Viburnales
Family *1. Viburnaceae*
Order 153. Adoxales
Family *1. Sambucaceae*
2. Adoxaceae
Order 154. Dipsacales
Family *1. Caprifoliaceae*
2. Valerianaceae
3. Triplostegiaceae
4. Dipsacaceae
5. Morinaceae

Subclass J. Asteridae

SUPERORDER CAMPANULANAE
Order 155. Campanulales
Family *1. Pentaphragmataceae*
2. Sphenocleaceae
3. Campanulaceae
4. Cyphocarpaceae
5. Nemacladaceae
6. Cyphiaceae
7. Lobeliaceae
Order 156. Goodeniales
Family *1. Brunoniaceae*
2. Goodeniaceae
Order 157. Stylidiales
Family *1. Donatiaceae*
2. Stylidiaceae
Order 158. Menyanthales
Family *1. Menyanthaceae*

SUPERORDER ASTERANAE
Order 159. Calycerales
Family *1. Calyceraceae*
Order 160. Asterales
Family *1. Asteraceae*

Subclass K. Lamiidae

SUPERORDER GENTIANANAE
Order 161. Gentianales
Family *1. Gelsemiaceae*
2. Loganiaceae
3. Strychnaceae
4. Antoniaceae
5. Spigeliaceae
6. Gentianaceae
7. Saccifoliaceae
8. Geniostomaceae
9. Plocospermataceae
Order 162. Rubiales
Family *1. Dialypetalanthaceae*
2. Rubiaceae
3. Theligonaceae
4. Carlemanniaceae
Order 163. Apocynales
Family *1. Apocynaceae*

SUPERORDER SOLANANAE
Order 164. Solanales
Family *1. Solanaceae*
2. Sclerophylacaceae
3. Duckeodendraceae
4. Goetzeaceae
Order 165. Convolvulales
Family *1. Convolvulaceae*
2. Cuscutaceae
Order 166. Polemoniales
Family *1. Polemoniaceae*
Order 167. Boraginales
Family *1. Hydrophyllaceae*
2. Boraginaceae
3. Tetrachondraceae
4. Hoplestigmataceae
5. Lennoaceae
Order 168. Limnanthales
Family *1. Limnanthaceae*

SUPERORDER LOASANAE
Order 169. Loasales
Family *1. Loasaceae*
Order 170. Oleales
Family *1. Oleaceae*

SUPERORDER LAMIANAE
Order 171. Scrophulariales
Family *1. Baddlejaceae*
2. Retziaceae
3. Stilbaceae
4. Scrophulariaceae
5. Oftiaceae
6. Globulariaceae
7. Gesneriaceae
8. Plantaginaceae
9. Bignoniaceae
10. Pedaliaceae
11. Martyniaceae
12. Trapellaceae
13. Myoporaceae
14. Acanthaceae

15. Lentibulariaceae

Order 172. Lamiales

Family *1. Verbenaceae*
2. Phrymaceae
3. Cyclocheilaceae
4. Symphoremataceae
5. Avicenniaceae
6. Viticaceae
7. Lamiaceae

Order 173. Callitrichales

Family *1. Callitrichaceae*

Order 174. Hydrostachyales

Family *1. Hydrostachyaceae*

Order 175. Hippuridales

Family *1. Hippuridaceae*

Class LILIOPSIDA

Subclass A. Liliidae

SUPERORDER LILIANAE

Order 1. Melanthiales

Family *1. Tofieldiaceae*
2. Melanthiaceae
3. Japonoliriaceae
4. Xerophyllaceae
5. Nartheciaceae
6. Heloniadaceae
7. Chionographidaceae

Order 2. Colchicales

Family *1. Tricyrtidaceae*
2. Burchardiaceae
3. Uvulariaceae
4. Campynemataceae
5. Scoliopaceae
6. Colchicaceae
7. Calochortaceae

Order 3. Trilliales

Family *1. Trilliaceae*

Order 4. Liliales

Family *1. Liliaceae*
2. Medeolaceae

Order 5. Alstroemeriales

Family *1. Alstroemeriaceae*

Order 6. Iridales

Family *1. Geosiridaceae*
2. Iridaceae

Order 7. Tecophilaeales

Family *1. Ixioliriaceae*
2. Lanariaceae
3. Walleriaceae
4. Tecophilaeaceae
5. Cyanastraceae
6. Eriospermaceae

Order 8. Burmanniales

Family *1. Burmanniaceae*
2. Thismiaceae
3. Corsiaceae

Order 9. Hypoxidales

Family *1. Hypoxidaceae*

Order 10. Orchidales

Family *1. Orchidaceae*

Order 11. Amaryllidales

Family *1. Hemerocallidaceae*
2. Hyacinthaceae
3. Alliaceae
4. Hesperocallidaceae
5. Hostaceae
6. Agavaceae
7. Amaryllidaceae

Order 12. Asparagales

Family *1. Convallariaceae*
2. Ophiopogonaceae
3. Ruscaceae
4. Asparagaceae
5. Dracaenaceae
6. Nolinaceae
7. Blandfordiaceae
8. Herreriaceae
9. Phormiaceae
10. Dianellaceae
11. Doryanthaceae
12. Asteliaceae
13. Asphodelaceae
14. Aloaceae
15. Anthericaceae
16. Aphyllanthaceae

Order 13. Xanthorrhoeales

Family *1. Baxteriaceae*
2. Lomandraceae
3. Dasypogonaceae
4. Calectasiaceae
5. Xanthorrhoeaceae

Order 14. Hanguanales

Family *1. Hanguanaceae*

SUPERORDER DIOSCOREANAE

Order 15. Stemonales

Family *1. Stemonaceae*
2. Croomiaceae
3. Pentastemonaceae

Order 16. Smilacales

Family *1. Luzuriagaceae*
2. Philesiaceae
3. Ripogonaceae
4. Smilacaceae
5. Petermanniaceae

Order 17. Dioscoreales

Family *1. Stenomeridacae*
2. Trichopodaceae
3. Avetraceae
4. Dioscoreaceae

Order 18. Taccales

Family *1. Taccaceae*

Subclass B. Commelinidae

SUPERORDER BROMELIANAE

Order 19. Bromeliales

Family *1. Bromeliaceae*

Order 20. Velloziales
Family *1. Velloziaceae*
SUPERORDER PONTEDERIANAE
Order 21. Philydrales
Family *1. Philydraceae*
Order 22. Pontederiales
Family *1. Pontederiaceae*
Order 23. Haemodorales
Family *1. Haemodoraceae*
2. Conostylidaceae
SUPERORDER ZINGIBERANAE
Order 24. Musales
Family *1. Strelitziaceae*
2. Musaceae
3. Heliconiaceae
Order 25. Lowiales
Family *1. Lowiaceae*
Order 26. Zingiberales
Family *1. Zingiberaceae*
2. Costaceae
Order 27. Cannales
Family *1. Cannaceae*
2. Marantaceae
SUPERORDER COMMELINANAE
Order 28. Commelinales
Family *1. Commelinaceae*
Order 29. Mayacales
Family *1. Mayacaceae*
Order 30. Xyridales
Family *1. Xyridaceae*
Order 31. Rapateales
Family *1. Rapateaceae*
Order 32. Eriocaulales
Family *1. Eriocaulaceae*
SUPERORDER HYDATELLANAE
Order 33. Hydatellales
Family *1. Hydatellaceae*
SUPERORDER JUNCANAE
Order 34. Juncales
Family *1. Juncaceae*
2. Thurniaceae
Order 35. Cyperales
Family *1. Cyperaceae*
SUPERORDER POANAE
Order 36. Flagellariales
Family *1. Flagellariaceae*
Order 37. Restionales
Family *1. Joinvilleaceae*
2. Restionaceae
3. Anarthriaceae
4. Ecdeiocoleaceae
Order 38. Centrolepidales
Family *1. Centrolepidaceae*
Order 39. Poales
Family *1. Poaceae*

Subclass C. Arecidae
SUPERORDER ARECANAE
Order 40. Arecales
Family *1. Arecaceae*

Subclass D. Alismatidae
SUPERORDER ALISMATANAE
Order 41. Butomales
Family *1. Butomaceae*
Order 42. Hydrocharitales
Family *1. Hydrocharitaceae*
2. Thalassiaceae
Order 43. Najadales
Family *1. Najadaceae*
Order 44. Alismatales
Family *1. Limnocharitaceae*
2. Alismataceae
Order 45. Aponogetonales
Family *1. Aponogetonaceae*
Order 46. Juncaginales
Family *1. Scheuchzeriaceae*
2. Juncaginaceae
3. Lilaeaceae
4. Maundiaceae
Order 47. Potamogetonales
Family *1. Potamogetonaceae*
2. Ruppiaceae
Order 48. Posidoniales
Family *1. Posidoniaceae*
Order 49. Cymodoceales
Family *1. Zannichelliaceae*
2. Cymodoceaceae
Order 50. Zosterales
Family *1. Zosteraceae*

Subclass E. Triurididae
SUPERORDER TRIURIDANAE
Order 51. Petrosaviales
Family *1. Petrosaviaceae*
Order 52. Triuridales
Family *1. Triuridaceae*

Subclass F. Aridae
SUPERORDER ARANAE
Order 53. Arales
Family *1. Araceae*
2. Pistiaceae
3. Lemnaceae
Order 54. Acorales
Family *1. Acoraceae*
SUPERORDER CYCLANTHANAE
Order 55. Cyclanthales
Family *1. Cyclanthaceae*
SUPERORDER PANDANANAE
Order 56. Pandanales
Family *1. Pandanaceae*
SUPERORDER TYPHANAE
Order 57. Typhales
Family *1. Sparganiaceae*
2. Typhaceae

इकाई 23 एकबीजपत्री कुल

इकाई की रूपरेखा

23.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
23.2 कुल म्यूजेसी
23.3 कुल लिलिएसी
23.4 कुल ऐरेकेसी
23.5 कुल पोएसी
23.6 सारांश
23.7 अंत में कुछ प्रश्न
23.8 प्रोजेक्ट परियोजना कार्य
23.9 उत्तर

23.1 प्रस्तावना

आवृतबीजों पादपों के प्रमुख दो समूहों में से एक समूह एकबीजपत्री पादपों का है। ये सामान्यत: शाकीय पादप होते हैं। तनों में आवर्धी संवहन पूल (Closed vascular bundle) होते हैं। संवहनी कैम्बियम की अनुपस्थिति के कारण, इन पादपों में सामान्य द्वितीयक वृद्धि नहीं दिखाई पड़ती है जैसी कि द्विबीजपत्री पादपों में दिखाई पड़ती है जिसके बारे में आप पहले ही विकासात्मक जीवविज्ञान, एल एस ई-06 के खंड II की इकाई 10 में पढ़ चुके हैं। हालांकि, कुछ एकबीजपत्री पादप काष्ठीय होते हैं और उनके तने वृक्ष जैसे होते हैं (उदाहरण बाँस तथा ताड़ के वृक्ष)। पत्तियों में सामान्यत: आधारीय आच्छद होता है और उनका पर्णविन्यास सामानान्तर होता है। पुष्पों में विशिष्ट त्रितयी (Trimerous) संगठन पाया जाता है। भ्रूण में विभेदन दुर्लभ रूप से ही पाया जाता है और इसमें एक ही बीजपत्र पाया जाता है (इसीलिए इनका नाम एकबीजपत्री पादप है)। भ्रूणपोष सामान्यत: बहुत अधिक होता है।

एकबीजपत्री पादप, द्विबीजपत्री पादपों की तुलना में अपेक्षाकृत कम हैं। बेन्थम और हुकर के वर्गीकरण में इन्हें 7 श्रेणियों (Series) तथा 34 कुलों में वर्गीकृत किया गया हैं। इस प्रणाली में, एकबीजपत्री पादपों को द्विबीजपत्री पादपों के बाद वर्गीकृत किया गया है। इसके विपरीत, एंग्लर तथा प्रांट्ल (Engler and Prantl) की प्रणाली में उन्हें द्विबीजपत्री पादपों से पहले वर्गीकृत किया गया है। इस प्रणाली में कुल 11 गण (order) तथा 34 कुल (family) पहचाने गए हैं। तख़्ताज़न (Takhtajan) ने अपनी वर्गीकरण की प्रणाली में (1997 में किए गए संशोधन के अनुसार) एकबीजपत्री पादपों को वर्ग (class) लिलिओप्सिडा (Liliopsida) में वर्गीकृत किया है। इसे वर्ग मेग्नोलिओप्सिडा (Magnoliopsida) {द्विबीजपत्री पादपों} के बाद रखा गया है। लिलिओप्सिडा को 6 उपवर्गों (subclasses) 16 अधिगणों (superorders), 57 गणों तथा 131 कुलों में विभाजित किया गया। इस इकाई में आप 4 महत्वपूर्ण कुलों के लक्षणों के बारे में अध्ययन करेंगे। ये हैं म्यूजेसी (Musaceae), लिलिएसी (Liliaceae), ऐरेकेसी (Arecaceae) तथा पोएसी (Poaceae) यह अध्ययन उसी पैटर्न पर होगा जैसा कि इकाई 21 तथा 22 में पढ़े गए द्विबीजपत्री पादपों के कुलों का था।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे:

- म्यूजेसी, लिलिएसी, ऐरेकेसी, तथा पोएसी कुलों के बारे में जानने में,
- प्रत्येक कुल नाम के नामपद्धति प्ररूप को याद रखने में,
- भारत में पाये जाने वाले इन कुलों के वंशों (genera) तथा जातियों (species) के साइज, वितरण तथा संख्या के बारे में जानकारी हासिल करने में,
- प्रत्येक कुल में आकृतिक विविधता को समझने में,

- प्रत्येक कुल के विभदक लक्षणों की सूची बनाने तथा पौधे को क्षेत्र में पहचानने में,
- प्रत्येक कुल को वर्गीकरण की तीनों प्रणलियों में वर्गीकृत करने और उसके वर्गीकृत स्थान को जानने में,
- आर्थिक महत्व के पौधों की सूची बनाने और उनके उपयोगों के बारे में जानने में।

23.2 कुल म्यूजेसी (Musaceae)

केला कुल (Banana family)

नाम पद्धति प्ररूप : *म्यूजा* (*Musa*)

सामान्य जानकारी

ये एकबीजपत्री पादपों का एक बहुत छोटा सा कुल है। इस कुल में वंशों तथा जातियों की संख्या के बारे में दो मत हैं। एंग्लर तथा प्रांट्ल ने इस कुल में 6 वंशों को वर्गीकृत किया है। ये हैं *म्यूजा* (*एन्सीट* (*Ensete*) सहित लगभग 80 जातियां), *रैवीनेला* [(*Ravenala*) 25 जातियां]; *स्ट्रेलिज़िया* (*Strelitzia*) 4 जातियां; *हैलिकोनिया* [(*Heliconia*) 30 जातियां], *लोविया* [(*Lowia*) 2 जातियां], तथा *ऑर्किडेन्था* [(*Orchidantha*) 2 जातियाँ]।

दूसरी तरफ तख़्ताज़न, हचिन्सन (Hutchinson) तथा क्रोन्क्विस्ट (Cronquist) जैसे वर्गिकीविज्ञ सिर्फ दो वंशों को ही मानते हैं - *म्यूजा* (लगभग 60 जातियाँ) तथा *एन्सीट* (लगभग 20 जातियाँ) अन्य वंशों को स्ट्रेलिजिएसी (*रैविनेला तथा स्ट्रेलिज़िया*), हैलिकोनिएसी (वंश *हैलिकोनिया*) तथा लोविएसी (*ऑर्किडेन्था लोविया* सहित) में वर्गीकरण की विभिन्न प्रणालियों में कुल म्यूजेसी के साइज़ में यह भिन्नता मुख्यत: पादपों में आकृतिक विविधता के कारण है। अत: इस विविधता के बारे में जानकारी हासिल करना तथा एंगलर और प्राँटल के सुझावों को मानना अधिक उपयुक्त होगा।

कुल म्यूजेसी के इस संदर्भ में आपको दो शब्द याद होंगे, सेन्सू स्ट्रिक्टों (sensu stricto) तथा सेन्सू लेटों (sensu lato) इनसे आपका परिचय एल.एस.ई. - 07, खंड 2, इकाई 7 में कराया गया था। अत: निम्नलिखित विवरण कुल म्यूजेसी को *सेन्सू लेटों* (विस्तार से) बताता है।

इस कुल के सदस्य उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में वितरित हैं। ये एशिया, अफ्रीका तथा दक्षिणी अमरीका में पाए जाते हैं। हालांकि आर्थिक महत्व के वंश *म्यूजा* की खेती बड़े पैमाने पर विश्व के सभी गर्म भागों में होती है। *रैवीनेला, स्ट्रेलिज़िया* तथा *हैलिकोनिया* को पार्कों तथा बगीचों में सजावटी पौधों के रूप में लगाया जाता है।

स्थलीय पहचान

शाकीय, बहुवर्षीय 'वृक्ष जैसे' कूटतनों युक्त अथवा काष्ठीय ताड़ - जैसे पादप, पत्तियाँ बड़ी दीर्घायत (oblong) फलक युक्त जिनमें स्पष्ट आच्छद, मजबूत मध्यशिरा तथा समानान्तर पर्णविन्यास होता है। पुष्पक्रम (inflorescence) विशिष्ट स्पेथ (spathe) जैसे सहपत्रों युक्त; पुष्प एकव्यास सममित (zygomorphic) तथा सामान्यत: एकलिंगी (unisexual); नर पुष्प सामान्यत: पांच पुंकेसर (stamens) तथा एक बंध्य पुंकेसर (staminode) युक्त; मादा पुष्प त्रिअण्डपी (tricarpellary) जायांग (gynoecium) तथा अध:स्थ अंडाशय (inferior ovary) युक्त होते हैं।

आकृतिक विविधता

कुल म्यूजेसी के पादप सामान्यत: बहुवर्षीय शाक होते हैं जिनमें भूमिगत प्रकंद (rhizome) होते हैं। सबसे बड़े वंश *म्यूजा* में एक वायवी/एरियल कूटतना (5 मीटर की ऊँचाई तक बढ़ता है) निर्मित होता है। यह वास्तव में बड़े मजबूत पर्ण आच्छदों का बना होता है जो एक के ऊपर एक लिपटे रहते हैं अत: यह वास्तविक तना नहीं होता है। वास्तविक तना भूमिगत प्रकंद होता है, जिसका शीर्ष कूटतने के आधार पर उपस्थित रहता है। प्रकंदीय तना बेलनाकार कूटतने में से वृद्धि करता हुआ ऊपर आता है और अंतस्थ पुष्पक्रम को धारण करता है। *लोविया, ऑर्किडेन्था* तथा *स्ट्रेलिजिया रेगिनी* (*Strelitzia reginae*) (जो

स्वर्ग की चिड़िया कहलाता है) में भी पादप शाकीय बहुवर्षी होते हैं, परंतु *स्ट्रेलिजिया निकोली* (*S. nicolai*) तथा *रैवीनेला मैडागास्कारेन्सिस* (*Ravenala madagascariensis*) (जो मैडागास्कर का पर्यटकों का वृक्ष कहलाता है) लंबे काष्ठीय वृक्ष होते हैं जो ताड़ के वृक्षों जैसे दिखाई पड़ते है।

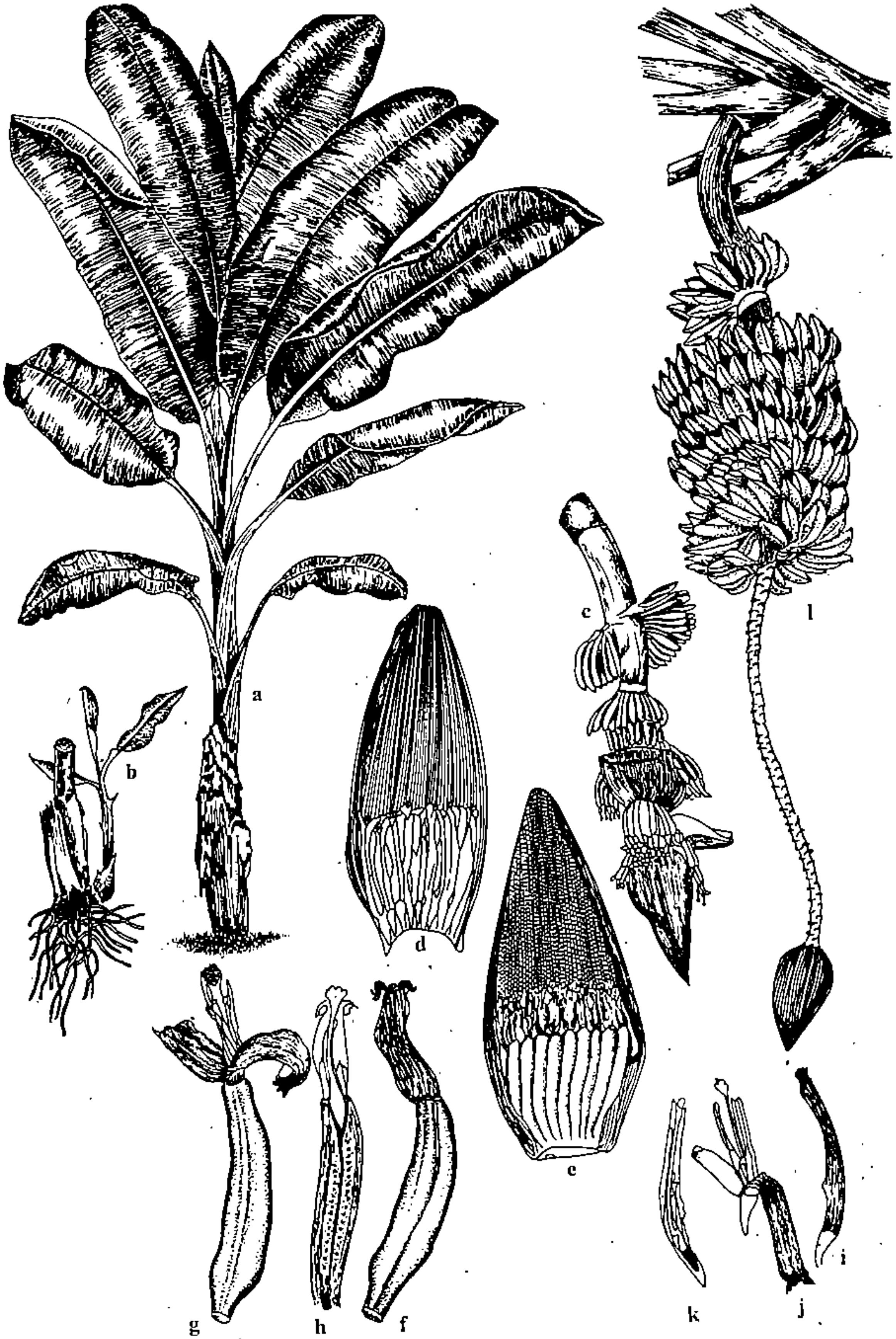

चित्र 23.1 : *म्यूजा* (a) तरुण पादप (b) पादप का आधार अंतःभूस्तारी (Sucker) के साथ (c) पुष्पक्रम (d) मादा पुष्प तथा सहपत्र (e) नर पुष्प तथा सहपत्र (f) मादा पुष्प (g) मादा पुष्प खुले परिदलपुंज के साथ (h) अनुदैर्ध्य काट में मादा पुष्प (i) नर पुष्प (j) नर पुष्प खुले परिदलपुंज के साथ (k) नर पुष्प अनुदैर्ध्य काट में (l) फलों का गुच्छा।

पत्तियाँ : *म्यूज़ा* में पत्तियाँ प्रकंद पर दो कतारों में अरीय रूप से व्यवस्थित रहती हैं। इस पैटर्न की पर्ण व्यवस्था अन्य शाकीय बहुवर्षी पौधों में भी पाई जाती है। *म्यूज़ा* में, पत्तियाँ कूटतने के शीर्ष पर निकली हुई प्रतीत होती हैं (चित्र 23.1) ऐसा इस कारण होता है क्योंकि पर्ण आच्छद एक दूसरे के ऊपर लिपटे रहते हैं तथा प्रत्येक नई पत्ती अपने संवलित (convolute) फलक को कूटतने में से बाहर की ओर निकालती है। बड़ा फलक फिर अपेक्षाकृत पुरानी पत्तियों के ऊपर विस्तारित हो जाता है। काष्ठीय पादपों जैसे *रैवीनेला* में, पत्तियाँ दो कतारों में व्यवस्थित रहती हैं जो स्तंभ के शीर्ष पर घना किरीट/ क्राउन बनाती हैं (चित्र 23.2)।

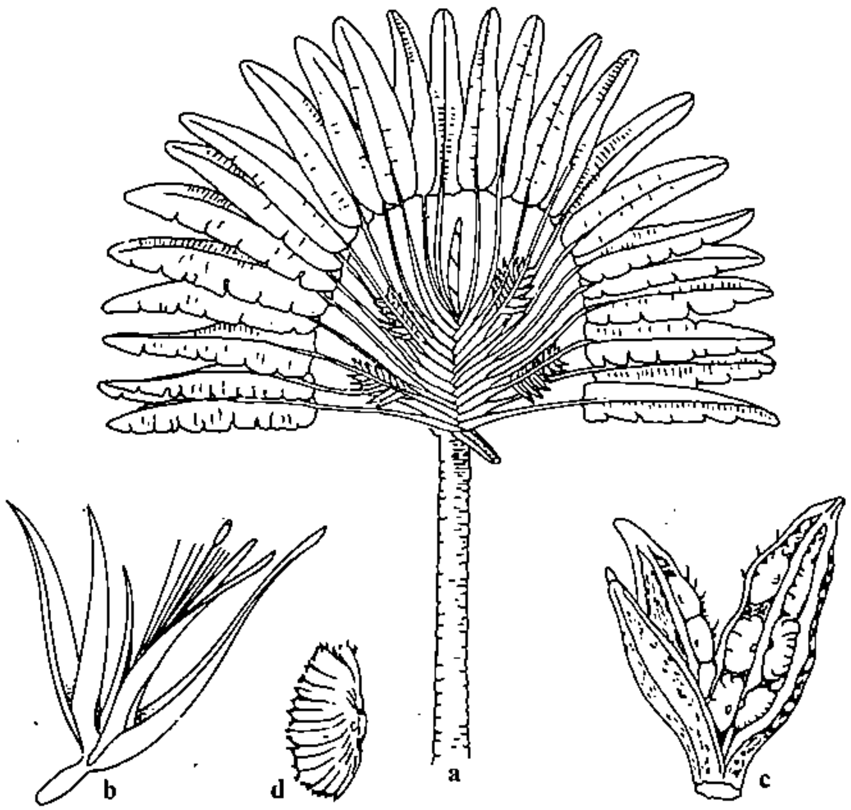

चित्र 23.2: *रेवीनेला मैडागास्कारेन्सिस* **(a) पुष्पीय अवस्था में पादप (b) खुला हुआ पुष्प (c) खुलता हुआ संपुट/कैप्स्यूल (d) बीजचोल सहित।**

पत्तियाँ बड़ी होती हैं तथा मजबूत आच्छद युक्त होती हैं जो अंडाकार या दीर्घायत, फलक से पृथक रहता है। फलक में मोटी मध्यशिरा होती है जिसमें ये असंख्य समानान्तर शिराएं किनारों की ओर जाती हैं। इनमें द्वितीय शिराओं का शाखामिलन नहीं होता है (जो कि द्विबीजपत्री पादपों में सामान्य है) जिससे बड़े फलकों के किनारे आसानी से फट जाते हैं। परिपक्व पत्तियाँ सामान्यत: मध्यशिरा तक फटी रहती हैं और इस कारण वायु के थपेड़ों से कम ही बचाव कर पाती हैं। *रैवीनेला मैडागास्कारेन्सिस* (पर्यटकों का वृक्ष) में, पर्णआधार में जल भर जाता है। ये जल पर्यटकों द्वारा पीने के उपयोग में लाया जाता है।

पुष्पक्रम : *म्यूज़ा* में पुष्पक्रम अंतस्थ स्थित होता है। ये बड़ा असीमाक्षी (racemose) पुष्पक्रम है जिसमें अनेकों बड़े सहपत्र होते हैं। सहपत्र स्वेथ - जैसे तथा चटकीले रंगों के होते हैं। प्रत्येक सहपत्र में बड़ी संख्या में एकलिंगी पुष्प होते हैं। पुष्पक्रम के शीर्ष की ओर के पुष्प नर होते हैं, जबकि आधार की ओर स्थित पुष्प मादा होते हैं। कभी-कभी पुष्पक्रम के मध्यभाग में द्विलिंगी पुष्प भी उपस्थित रहते हैं। *हैलिकोनिया* (चित्र 23.3) में अंतस्थ पुष्पक्रम में बड़े सहपत्रों की दो कतारें होती हैं। प्रत्येक सहपत्र के कक्ष (axil) में एक सिन्सिनस (cincinnus) प्रकार का एकलशाखी ससीमाक्ष (monochasial cyme)

होता है। *रैवीनेला* तथा *स्ट्रेलिज़िया* में कुछ कक्षीय पुष्पक्रम होते हैं जिनमें बड़े सहपत्र होते हैं। प्रत्येक सहपत्र में सिन्सिनस प्रकार का एकल ससीमाक्ष होता है जिसमें अनेक (*रैवीनेला*) या कम (*स्ट्रेलिज़िया*) पुष्प होते हैं। *लोविया* तथा *ऑर्किडेन्था* में पुष्पक्रम यौगिक असीमाक्ष (panicle) होता जिसमें बड़े ऑर्किड जैसे पुष्प होते हैं।

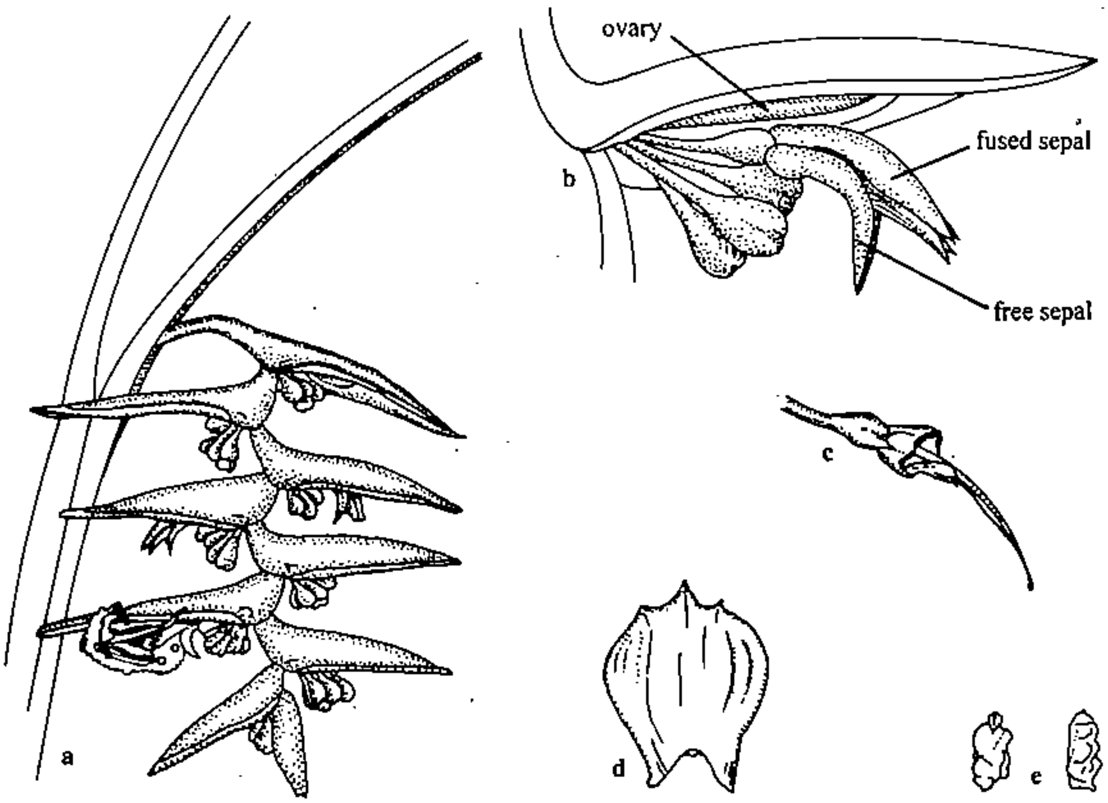

चित्र 23.3 : *हैलिकोनिया सोलामोनेन्सिस* (*H. solomonensis*) (a) पुष्पक्रम, पराणकारी दीर्घजीह्य चमगादड़ को देखिए (b) सिन्सिनसी सहपत्र कटा हुआ पुष्प को प्रफुल्लन (anthesis) के समय दिखाने के लिए (c) अंडाशय, वर्तिका, वर्तिकाग्र तथा वंध्य पुंकेसर के साथ (d) वंध्य पुंकेसर (e) पाइरीन(गुठली) अधर तथा पार्श्व परिदृश्य में।

पुष्प : पुष्प सहपत्री एकव्यास सममित तथा अपने व्यक्तिवृत (ontogeny) में द्विलिंगी होते हैं। वे एकलिंगी इसलिए बन जाते हैं क्योंकि या तो पुमंग (androecium) अथवा जायांग (gynoecium) परिपक्व नहीं हो पाता है। वे अन्य एकबीजपत्री पादपों की भाँति त्रितयी होते हैं और वे जायांगोपरिक (epigynous) होते हैं। पुष्प के परिदलपुंज में दो त्रितयी चक्र होते हैं तथा छह परिदल सामान्यतः दलाभ (petaloid) होते हैं। परिदलपुंज स्पष्ट बाह्यदल (calyx) तथा दल (petal) में विभेदित भी हो सकता है। *म्यूज़ा* में, 3 बाहरी तथा 2 भीतर के परिदल मिलकर नलिका बनाते हैं, जबकि छटवां मुक्त रहता हैं। वे साइज़ में असमान होते हैं तथा भीतरी परिदल बाहरी की अपेक्षा अपेक्षाकृत छोटे तथा पतले होते हैं। *रैवीनेला* में, परिदलपुंज के दोनों चक्र बाह्यदल तथा दल में विभेदन दिखलाते हैं। एक (मध्य) दल परिदलपुंज के अन्य भागों से थोड़ा सा छोटा होता है। *स्ट्रेलिज़िया* में एक मुक्त बाह्यदल होता है जबकि 2 पार्श्व दल मिलकर एक बड़ी चौड़े पंखों वाली तीर के आकार की संरचना बनाते हैं जो पुंकेसरों को घेरे रहती है। तीसरा तथा असमान दल बहुत छोटा तथा चौड़ा होता है। *लोविया* तथा *ऑर्किडेन्था* (चित्र 23.4) में बाह्यदल एक प्यालेनुमा संरचना के रूप में जुड़े रहते हैं। दो पार्श्व दल छोटे होते हैं जबकि तीसरा एक बड़ा विस्तारी ओष्ठक बनाता है। इन वंशों में, पुष्प विपर्यस्तता (resupination) दर्शाते हैं (इसमें पुष्प अक्ष के किसी भाग में व्यावर्त/वेष्ठन के कारण पुष्प के अभिविन्यास में बदलाव आ जाता है। इसके परिणामस्वरूप पुष्प का पृष्ठ भाग आगे दिखाई पड़ता है)। ये ऑर्किडेसी कुल में सामान्य लक्षण हैं।

चित्र 23.4 : *ऑर्किडेन्था लोंगीफ्लोरा (Orchidantha longiflora)* (a) प्रकृति (b) पुमंग तथा वर्तिकाग्र आपक्ष परिदृश्य (c) वर्तिका तथा वर्तिकाग्री पालियाँ (d) *मैक्सीलेरिऑइडस (O maxillarioides)* पुष्प और प्रकृति (e) बीजचोल युक्त बीज।

पुमंग : प्रत्येक पुष्प में पुंकेसरों के दो त्रितयी चक्र होते हैं। *रैवीनेला* में सभी छहों पुंकेसर उर्वर तथा एक ही साइज़ के होते हैं। *म्यूजा* की कुछ जातियों में (उदा. *म्यूजा एन्सीट*) (*M. ensete*) 5 पुंकेसर बड़े होते हैं तथा छठवां छोटा होता है, परंतु अन्य वंशों में सिर्फ 5 पुंकेसर उर्वर होते हैं तथा छठवां पुंकेसर बंध्य पुंकेसर के रूप में लघुकृत होता है। *हैलिकोनिया* में यह बंध्य पुंकेसर दलाभ हो जाता है और *लोविया* तथा *ऑर्किडेन्था* में ये पूर्णतः लुप्त रहता है। परागकोष (anthers) रेखीय व द्विकोष्ठी (dithecous) होते हैं तथा अंतर्मुखी स्फुटन दर्शाते हैं। नर पुष्पों में एक अल्पवर्धित अंडाशय उपस्थित रहता है जो सामान्यतः मकरंद कोष (nectary) में रूपांतरित हो जाता है।

जायांग : जायांग त्रिअंडपी, युक्तांडपी (syncarpous) तथा अधःस्थ अंडाशय युक्त होता है। अंडाशय त्रिकोष्ठकी होता है तथा बीजांडन्यास (placentation) स्तंभीय (axile) होता है। प्रत्येक कोष्ठ में 1–2 बीजांड (ovule) होते हैं। मकरंद पटीय ग्रंथियों (septal glands) में स्रावित होता है। वर्तिका सरल होती है तथा वर्तिकाग्र कमोबेश 3-पालियुक्त अथवा समुंड (capitate) होती हैं। मादा पुष्पों में सामान्यतः पुंकेसर नहीं विकसित होते हैं।

कभी-क़भी *म्यूजा* में, पुंमग तथा जायांग दोनों सामान्य विकास दर्शाते हैं तथा पुष्प द्विलिंगी हो जाते हैं।

फल : इस कुल के सदस्यों में विभिन्न प्रकार के फल निर्मित होते हैं। *म्यूजा* में, फल गूदेदार सरस फल (berry) होता है। *हैलिकोनिया* में, ये भिदुर फल (schizocarp) होता है जो 3 एक-बीजों भागों में खुलता है। *रैवीनेला, स्ट्रेलिज़िया, लोविया* तथा *ऑर्किडेन्था* में संपुट (कैप्सूल) विकसित होता है। ये संपुट त्रिकोष्ठकी होता है। तथा कोष्ठ विदारक रूप से (loculicidally) खुलता है। *म्यूजा* की कृष्य खाद्य किस्मों में बीज नहीं होते हैं। ये अधिकांशतः त्रिगुणित संकर (triploid hybrids) होते हैं। पंरतु *म्यूजा* की वन्य तथा प्राकृतिक रूप से पाई जाने वाली किस्मों में असंख्य बीज निर्मित होते हैं। ये बीज माँसल गूदे में घंसे रहते हैं। *म्यूजा एन्सीट* में फल शुष्क तथा लगभग चर्मिल होता हैं। *रैवीनेला* में, बीज बीजचोल युक्त होते हैं। बीजचोल ढाल-जैसा तथा झालरदार किनारों युक्त होता है तथा ये चटकीले रंगों का होता है। बीजचोल युक्त बीज *स्ट्रेलिजिया, लोविया* तथा *आर्किडेन्था* में भी पाए जाते हैं। *हैलिकोनिया* में बीजचोल नहीं बनता है। बीजों में कठोर तथा मोटा बीजावरण (testa) तथा सीधा भ्रूण होता है। पोषक ऊतक जो कि परिभ्रूण-पोष (perisperm) कहलाता है उपस्थित रहता है। ये बीजांडकाय (nucellus) के एक भाग का बना होता है, जिसमें संचित खाद्य पदार्थ तथा भ्रूणपोष होता है। ये भ्रूण के द्वारा अंकुरण के समय उपयोग किया जाता है।

विभेदक लक्षण

1) एकबीजपत्री पादप।

2) शाकीय, बहुवर्षी, वृक्ष-जैसे कूटतने युक्त अथवा ताड़ जैसे पादप।

3) पत्तियां बड़ी मजबूत आच्छद युक्त, दीर्घायत फलक, मजबूत मध्यशिरा तथा समानान्तर पर्ण विन्यास।

4) पुष्प विशिष्ट स्पेथ - जैसे सहपत्रों से युक्त।

5) पुष्प एकव्यास सममित तथा सामान्यतः एकलिंगी।

6) पुंकेसर सामान्यतः 5

7) त्रिअंडपी जायांग अधःस्थ अंडाशय युक्त।

8) स्तंभीय बीजांडन्यास।

9) फल, सरस फल अथवा संपुट।

10) बीज कठोर तथा मोटे बीज आवरण युक्त, बीजचोल उपस्थित अथवा अनुपस्थित।

11) परिभ्रूण-पोष उपस्थित।

वर्गीकृत स्थान

म्यूजेसी कुल को बेन्थम तथा हुकर के वर्गीकरण में पृथक कुल के रूप में नहीं माना गया है। पादपों के इस समूह को सिटेमिनी (Scitamineae) में एक उपकुल (tribe) म्यूजेसी के रूप में रखा गया है तथा इसे श्रेणी II इपीगाइनी (Epigynae) में वर्गीकृत किया गया है। एंग्लर तथा प्रांट्ल के वर्गीकरण में कुल म्यूजेसी एक पृथक कुल के रूप में पहचाना गया है। इसे गण सिटेमिनी में रखा गया है। इस गण में तीन अन्य कुल हैं, उदा. जिन्जिबेरेसी (Zingiberaceae), कैनेसी (Cannaceae), तथा मैरन्टेसी (Marantaceae)। इस वर्गीकरण में, कुल म्यूजेसी में 6 वंश हैं। दिलचस्प तौर पर ये छह वंश व साथ ही जिन्जिबेरेसी, कैनेसी तथा मैरन्तेसी कुलों के पादपों को पहले बेन्थम और हुकर के द्वारा एक साथ ही सिटेमिनी में वर्गीकृत किया गया था।

तख़्ताज़न के वर्गीकरण में कुल म्यूजेसी को उपवर्ग कोमेलाइनिडी (Commelinidae), अधिगण जिन्जिबेरेनी (Zingiberanae) तथा गण म्यूजेलीज (Musales) [जिन्जिबेरेलीज भी कहलाता है] में वर्गीकृत किया गया है। इस गण में तीन कुल हैं (i) स्टेलिजिएसी (जिसमें *स्ट्रेलिज़िया* तथा *रैवीनेला* हैं); (ii) म्यूजेसी (जिसमें *म्यूजा* तथा *एन्सीट* दो भिन्न वंश हैं); तथा हैलिकोनिएसी (एकवंशी जिसमें सिर्फ *हैलिकोनिया* हैं)। लोविएसी (जिसमें *लोविया* हैं जिसके साथ *ऑर्किडेन्था* को विलय कर दिया गया है) को गण लोविडेलीज

(Lowidales) में वर्गीकृत किया गया हैं। जिन्जिबेरेसी तथा कोस्टेसेसी (Costaceae) को गण जिन्जिबैरेलीज़ में वर्गीकृत किया गया हैं। कैनेसी तथा मैरन्टेसी को अब गण कैनेलास (Cannales) में वर्गीकृत किया जाता है। दिलचस्प तौर पर, *एन्सीट* जिसे तख्ताज़न द्वारा एक पृथक वंश के रूप में पहचाना गया है उसे पहले के वर्गीकरण विज्ञों द्वारा वंश *म्यूजा* में ही सम्मिलित किया गया था।

ऊपर दिया गया विवरण कुल म्यूजेसी के लिए है जिसे एंगलर तथा प्रांट्ल द्वारा वृहद रूप में (म्यूजेसी के तौर पर सेन्सू लेटों) पहचाना गया है ताकि उसको सीमित रूप में (म्यूजेसी की तरह सेन्सू स्ट्रिक्टो) जाना गया है।

आर्थिक महत्व

1) सबसे बड़ा वंश *म्यूजा* इस कुल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण वंश है। इस वंश के अधिकांश कृष्य पादप खाद्य फलों के लिए महत्वपूर्ण हैं जो केला तथा प्लैंटिन (Plaintain) कहलाते हैं। केला तथा प्लैंटिन के मध्य विभेद के संदर्भ में दो मत हैं। "हासन जिला कर्नाटक, भारत की वनस्पति जात" (Flora of Hasan /district, Karnataka, India) जो सी. जे. सालदत्ता तथा डी. एच. निकल्सन द्वारा संपादित है (ऐमेरिन्स्ड पब्लिशिंग क० प्राइवेट लिमिटेड, 1976) "दक्षिण भारत में, मांड युक्त पकाये जाने वाले म्यूजा को "केला" कहते हैं तथा मीठे खाने वाली प्रकार को "प्लैंटिन" कहते हैं। दूसरी तरफ, के. एल. कोचर ने अपनी पुस्तक "इक्नॉमिक बॉटनी इन द ट्रॉपिक्स" (Economic Botany in the Tropics) (मैकमलन इंडिया लिमिटेड, 1981,1998) में लिखा है कि "..........सुविधा के लिए, कृष्य केलों को मोटे तौर पर दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है, मीठे के तौर पर खाई जाने वाली किस्में तथा पकाई जाने वाली किस्में। मिठाई के तौर पर खाए जाने वाले फलों को जिन्हें बिना पकाए खाया जाता है उन्हें "केला" कहते हैं, जबकि अधिक मांडयुक्त किस्में जिनका स्वाद कम अच्छा होता है तथा जिन्हें सब्जी के रूप में खाए जाने के लिए पहले पकाने की जरूरत होती है उन्हें "प्लैंटिन" कहते हैं। इन दो विपरीत मतों से, हम ये निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि फलों के विभिन्न प्रकार पाए जाते हैं। कुछ मीठे होते हैं (जिनमें अधिक शर्करा होती है) और जिन्हें बिना पकाए ही खाया जा सकता है, जबकि अन्य मांडयुक्त होते हैं और उन्हें खाए जाने से पहले पकाना जरूरी होता है।

   कृष्य केले तथा प्लैंटिन सभी उष्णकटिबंधी फलों में सबसे अधिक उगाए जाने वाले फल हैं। इनकी सैंकड़ों किस्में हैं, जो साइज, रंग तथा स्वाद में भिन्न-भिन्न होती हैं। इन कृष्य किस्मों में से अधिकांश किस्में संकर हैं। ये अधिकांशत: त्रिगुणित होती हैं। अत: इनमें बीज नहीं विकसित होते हैं। परिपक्व फल विभिन्न तरीकों से खाए जाते हैं।

2) खाद्य फलों के अतिरिक्त वंश म्यूजा फाइबर/रेशों के लिए भी महत्वपूर्ण है। *म्यूजा टैक्सटिलिस (M. textilis)* की खेती "मनिला हेम्प" (Manila hemp) या "आबाका फाइबर" (Abaca fibre) के लिए की जाती है जो कि पर्ण आच्छदों से प्राप्त किया जाता है जो कूटतना बनाते हैं। ये बहुत ही मजबूत फाइबर होता है और इसका उपयोग समुद्री रस्सी तथा पार्सल आदि को लपेटने वाले कागज़ बनाने के लिए किया जाता है।

3) कृष्य केलों का तना भी खाया जाता है। और उसको सब्जी के रूप में पकाया जाता है। पत्तियों को प्लेट के तौर पर उपयोग किया जाता है और अनेकों धार्मिक अनुष्ठानों में इनमें भोजन परोसा जाता है।

4) *म्यूजा* की कुछ जातियां सजावटी पौधों के रूप में उगाई जाती हैं। *रैवानेला* एक खूबसूरत ताड़-जैसा पादप है। इसे बगीचों और पार्कों में अपने सममित रूप के कारण उगाया जाता है। *स्ट्रेलिजिया* का पुष्पक्रम बहुत ही खूबसूरत होता है और इसमें आकर्षक चटकीले रंग के स्पेथ होते हैं। *एन्सीट सुपनबम (Ensete supenbum)*, *हैलिकोनिया मैटेलिका (Heliconia metallica)* तथा *म्यूजा नेपालेन्सिस (M. nepalensis)* को भी सजावटी पौधे के रूप में उगाया जाता है।

23.3 कुल लिलिएसी

लिली कुल (lily family)

नाम पद्धति प्ररूप : *लिलियम* (*Lilium*)

सामान्य जानकारी

लिलिएसी कुल में लगभग 260 वंश तथा 4000 जातियां हैं। ये वितरण में विश्वव्यापी हैं। कुछ सदस्य उत्तरी शीतोष्ण क्षेत्रों में पाए जाते हैं। ये सामान्यतः हिमालयी क्षेत्रों में, स्कॉटलैण्ड तथा उत्तरी इंग्लैण्ड में, उत्तर पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमरीका तथा जापान में पाए जाते हैं। इसके कुछ वंश ऐसे भी हैं जिनका वितरण सीमित है अथवा ये दक्षिण अमरीका तथा ऑस्ट्रेलिया के स्थालिक (endemic) हैं। कुछ वंश व्यापक वितरण दर्शाते हैं, वे दोनों गोलार्द्धों के उष्णकटिबंधी, उपोष्ण तथा शीतोष्ण क्षेत्रों में पाए जाते हैं। कुछ वंश पुरानी दुनिया के अपेक्षाकृत गर्म भागों में पाए जाते हैं। भारत में इस कुल के लगभग 35 वंश तथा 230 जातियां पाई जाती हैं। ये मुख्यतः हिमालयी क्षेत्रों में पाई जाती हैं, परन्तु कुछ प्रसिद्ध तथा परिचित जातियां जो पूरे देश में पाई जाती हैं।

बेन्थम तथा हुकर तथा एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में इस बड़े कुल को 11 उपकुलों में विभाजित किया गया है। वर्गीकरण की अन्य प्रणालियों में, उपकुलों की संख्या और भी अधिक है। दूसरी ओर तख़्ताज़न के वर्गीकरण में, बहुत से उपकुलों को पृथक कुल के रूप में मान्यता दी गई है जिन्हें भिन्न-भिन्न गणों में रखा गया है।

दिलचस्प तौर पर, कुल ऐमेरिलिडेसी (Amaryllidaceae) अपने लक्षणों में लिलिएसी से काफी मिलता जुलता है परंतु अपने अधःस्थ अंडाशय के कारण उससे भिन्न है। उन्हें अधिकांश वर्गीकरण विज्ञों द्वारा दो पृथक कुलों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। परंतु अमरीकी वर्गीकरण विज्ञ क्रोन्क्विस्ट ने इन दोनो कुलों को विलय कर दिया और उसे लिलिएसी कहा उन्होंने अंडाशय की स्थिति को महत्व नहीं दिया है। इस तरह लिलिएसी कुल के बारे में भिन्न-भिन्न मत हैं। निम्नलिखित परिचर्चा में बेन्थम और हुकर तथा एंग्लर और प्रांट्ल के सुझावों को लिलिएसी कुल में विविधता के बारे में जानने के लिए अपनाया गया है।

स्थलीय पहचान

प्रकंदी या कंदीय शाक; अथवा झाड़ी या वृक्ष जैसे काष्ठीय पादप; अथवा काष्ठीय आरोही लताएं (climbers); अथवा प्रारूपिक मरूस्थली पादप; शाखाएं चपटे-पत्ती-जैसे पर्णाभों (cladodes) में रूपांतरित हो सकती हैं; पत्तियां सरल; अथवा शल्कों या शूलों में तनुकृत; अथवा मांसल जल संग्रही ऊतकों तथा मोटे क्यूटिकल युक्त; पुष्पक्रम एकल अंतस्थ पुष्प, अथवा सामान्य सरल या शाखित असीमाक्ष; अथवा एकलशाखी ससीमाक्ष जो पुष्पछत्र (umbel) जैसे मुंडकों (heads) में एकत्रित रहते हैं, पुष्प द्विलिंगी, त्रिज्या सममित (actinomrphic), प्रारूपिक रूप से त्रितयी जायांगाधर (hypógynous)।

आकृतिक विविधता

लिलिएसी कुल के पादप अपनी आकारिकी में विविधता दर्शाते हैं। इस कुल के अधिकांश सदस्य शाकीय, बहुवर्षी होते हैं। इनमें संधिताक्षी प्रकंद [*पॉलीगोनेटम* (*Polygonatum*)], एकलाक्षी प्रकंद [*पेरिस* (*Paris*)], अथवा कंद (उदा. *लिलियम* (*Lilium*), *ट्रिलियम* (*Trillium*), *ऐलियम* (*Allium*), *ट्यूलिपा* (*Tulipa*) चिरकालिक अंग के रूप में उपस्थित रहते हैं। वायवीय पर्णिल तने प्रकंद में से निकलते हैं। कंदीय प्रकारों में, मुख्य वायवी तना बाहर की ओर उगता है तथा उसमें पत्तियाँ उपस्थित अथवा अनुपस्थित हो सकती हैं। ये सामान्यतः पुष्पक्रम में रूपान्तरित हो जाता है। वायवीय तने के विकास के पश्चात्, कंद

शल्कों के कक्षों में चिरकालिकता के लिए नए कंद विकसित हो जाते हैं। कभी-कभी मुख्य अक्ष के आधार पर घनकंद (corm) निर्मित हो जाते हैं (उदा. *कोल्चिकम* (*Colchicum*)। ये रूपांतरित तना मिट्टी के अंदर पत्तियों तथा पुष्पों के विकास के बाद भी दीर्घस्थायी रहता है।

इस कुल के कुछ सदस्य काष्ठीय पादप हैं। उनकी वृक्ष जैसी प्रकृति हो सकती है जिसमें असंगत द्वितीयक वृद्धि होती हो (उदा. *ड्रैसीना* (*Dracaena*)। तना भरण ऊतक (ground tissue) में संवहनी पूलों के संकेन्द्री वलयों के बनने के कारण मोटाई में बढ़ता है। *यक्का* (*Yucca*) एक बड़ी झांड़ी अथवा वृक्ष जैसा होता है जिसमें छोटा और मोटा वायवीय तना होता है। वंश *ऐलो* (*Aloe*) में सामान्यत: गूदेदार प्रकार के प्रारूपिक मरूद्भिदी पादप पाए जाते हैं। इस वंश की कुछ जातियां वृक्षसम (arborescent) प्रकृति भी दर्शाती हैं। *यक्का* तथा *ऐलो* में भी, *ड्रैसीना* की भाँति ही असंगत द्वितीयक वृद्धि होती है।

रस्कस (*Ruscus*) तथा *ऐस्पैरागस* (*Asparagus*) में रूपांतरित शाखाओं वाला अधिक शाखित वायवीय तना देखा जा सकता है। *रस्कस* झाड़ी जैसा होता है जिसकी अंतिम शाखाएं पत्ती जैसी संरचनाओं के रूप में होती हैं जो पर्णाभ वृंत (phylloclades) कहलाती हैं। *ऐस्पैरागस* में, भूमिगत प्रकंद महीन शाकीय अथवा काष्ठीय वायवीय शाखाएं उत्पन्न करता है। ये सतर अथवा आरोही हो सकती हैं तथा अंतिम उपशाखाएं सुई जैसी या पतली चपटी पर्णाभ होती हैं। *स्माइलेक्स* (*Smilax*) में पादप काष्ठीय तथा आरोही झाड़ियाँ होते हैं।

पत्ती : पत्तियाँ विविध आकृतिक प्रकारें तथा विन्यास के पैटर्न दर्शाती हैं। कुछ पादपों में बहुत कम पत्तियाँ होती हैं। ये सामान्यत: आधारीय होती हैं तथा ये पुष्पन के पहले अथवा बाद में निर्मित हो सकती हैं। कंदीय शाकों में पत्तियां आधारीय रोजेट (rosette) बना सकती हैं तथा मुख्य वायवीय तने पर पत्तियाँ उपस्थित या अनुपस्थित हो सकती हैं। यदि इस पर पत्तियाँ होती हैं तो ये एकांतरी (alternate) होती हैं। प्रकंदी बहुवर्षी पादपों में वायवीय तने होते हैं जो एकांतरी पत्तियाँ धारण किए रहते हैं। *ड्रैसीना* में पत्तियाँ या तो रोज़ेट में होती हैं अथवा काष्ठीय तने पर दो कतारों में होती हैं। *ऐलो* में बड़ी मोटी गूदेदार पत्तियाँ होती हैं जो जल संचय करती हैं। आरोही *स्माइलेक्स* में चौड़ी द्विबीजपत्री पादपों जैसी एकांतरी रूप से व्यवस्थित पत्तियाँ होती हैं। प्रत्येक पत्ती के आधार पर प्रतानों (tendrils) का एक जोड़ा होता है जो *स्माइलेक्स* के पादप को ऊपर चढ़ने में सहायता करता है। *ग्लोरियोसा* (*Gloriosa*) में जोकि एक आरोही पादप है उसमें पत्तियाँ सम्मुख (opposite) होती हैं। इसमें *स्माइलेक्स* की भांति आधार पर प्रतान भी नहीं होते हैं। हालांकि, पर्ण शीर्ष से प्रतान जैसा उपांग उत्पन्न होता है जो पौधे को ऊपर चढ़ने में सहायता करता है। *पेरिस, ट्रिलियम* तथा अन्य वंशों में पत्तियाँ चक्रों में व्यवस्थित रहती हैं (चित्र 23.5)। *ऐस्पैरागस* तथा *रस्कस* में (चित्र 23.5), पत्तियाँ शल्कों या शूलों में मनुकृत होती हैं इनमें, रूपांतरित शाखाएं (पर्णाभ या पर्णाभ वृंत) पादप के प्रकाशसंश्लेषणी अंगों की भांति कार्य करती हैं। सामान्य तौर पर, पत्तियां अनुपर्णी (exstipulate), सरल रेखीय तथा समानान्तर पर्णविन्यास वाली होती हैं। *ड्रैसीना* में, पत्तियाँ मोटी तथा चर्मिल होती हैं। *स्माइलेक्स* में, चौड़ी चर्मिल पत्तियाँ जालिकावत् पर्ण विन्यास दर्शाती हैं (चित्र 23.6)।

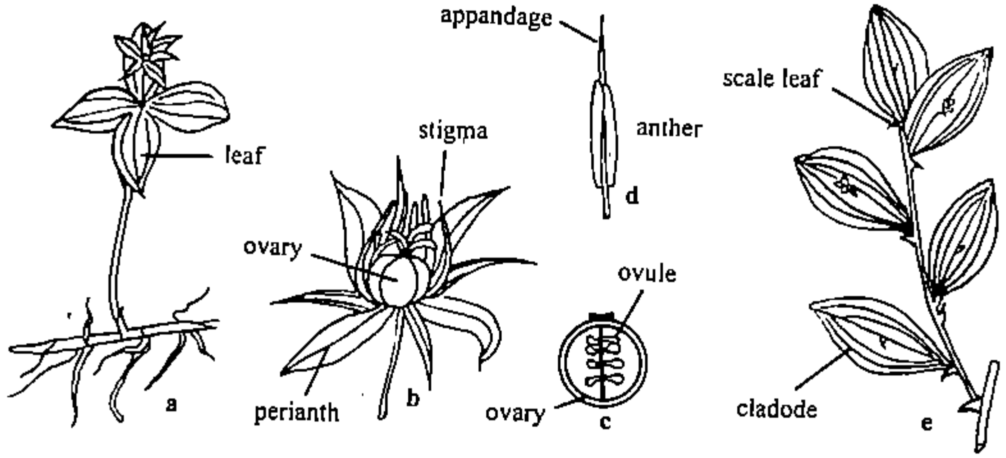

चित्र 23.5 : *पेरिस क्वाड्रीफोलिया* (*Paris quadrifolia*)(a-d) (a) पुष्पीय पादप (b) पुष्प (c) अंडाशय, अनुदैर्घ्य काट (d) परागकोष (e) रस्कस की टहनी *रस्कस एक्यूलिस्ट* (*R. aculeata*)।

कुछ पादपों में, पत्तियों के कक्षों में पत्रप्रकलिकाएं (bulbil) निर्मित हो जाती हैं। ये विशेषीकृत कंद कायिक प्रजनन के अंगों के तौर पर कार्य करते हैं।

चित्र 23.6: स्माइलेक्स जेलेनिका (*S. zeylanica*) की पुष्पीय शाखा।

पुष्पक्रम : सबसे प्रचलित प्रकार पुष्पक्रम असीमाक्षी प्रकार का है (चित्र 23.7) ये सरल असीमाक्षी अथवा वायवीय प्ररोहों के शीर्ष भागों पर निर्मित होने वाले यौगिक असीमाक्षी पुष्प होते हैं। कभी-कभी पुष्पक्रम एकल अंतस्थ पुष्प में तनुकृत हो जाता है (उदा. *ट्यूलिया, लिलियम*) एकल पुष्प कक्षीय भी हो सकते हैं (उदा. *ग्लोरियोसा*) कभी-कभी पुष्पक्रम ससीमाक्षी भी होता है। *हैमेरोकैलिस* (*Hemerocallis*) में, ये एकलशाखी ससीमाक्षी होता है। *ऐलियम* (चित्र 23.8), *एगापेन्थस* (*Agapanthus*) तथा अन्य वंशों में कुछ ऐसे एकलशाखी ससीमाक्ष जिनमें छोटे पर्व (internodes) होते हैं वे एक साथ मिलकर पुष्पछत्र या मुंडक-जैसा जटिल पुष्पक्रम बनाते हैं।

पुष्प : पुष्प सहपत्री होते हैं परंतु सामान्यत: इनमें सहपत्रिकाएं नहीं होती हैं। कभी-कभी (उदा. *लिलियम*) एक एकल सहपत्रिका विकसित हो सकती है। पुष्प द्विलिंगी, त्रिज्यासममित, सामान्यत: त्रितयी (trimerous) तथा जायांगाधर होते हैं। *स्माइलेक्स* तथा *रस्कस* में एकलिंगी पुष्प विकसित होते हैं। कुछ वंशों में पुष्प चतुष्टयी (tetramerous) हो सकते हैं।

चित्र 23.7 : ऐस्फोडेलस टेनुईफोलियस (*Asphodelus tenuifolius*) (a) पादप (b) पुष्प (c) वृंत सहित संपुट (d) बीज।

पुष्प बड़े, सजावटी तथा खुशबूदार होते हैं जो कीट परागकारियों को आकर्षित करते हैं। इन सामान्य लक्षणों के अतिरिक्त, कुछ वंशों में कीट परागण को सुनिश्चित करने के लिए विशेष अनुकूलन भी होते हैं मकरंद अंडपों के बीच में पटीय ग्रंथियों में स्रावित होता है। जो ये सुनिश्चित करता है कि कीट वर्तिकाग्र तथा परागकोषों के संपर्क में आएं। वैकल्पिक रूप से, पुष्पों में पुंपूर्वता (protandry) पाई जा सकती है जिससे कि परागकोष पहले प्रस्फुटित होते हैं और उसके पश्चात् वर्तिका की लंबाई बढ़ती है तथा वर्तिकाग्री पैपिली (papillae) का विकास होता है।

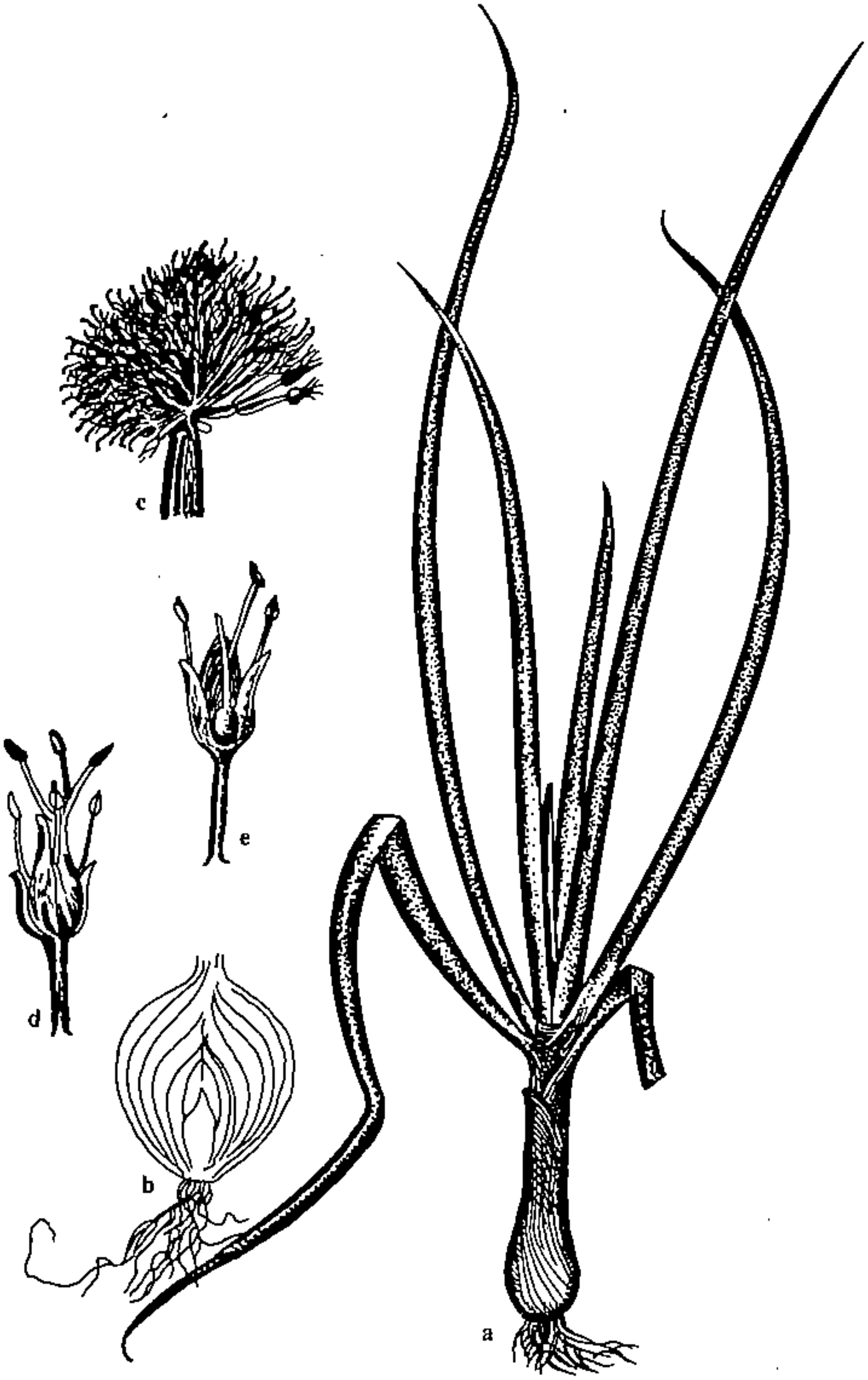

चित्र 23.8 : *ऐलियम सीपा* (*Allium cepa*) (a) संपूर्ण पौधा कंद के साथ (b) कंद की अनुदैर्ध्य काट (c) पुष्पक्रम (d) एकल पुष्प (e) पुष्प जिसका एक भाग निकाला जा चुका है।

यक्का (चित्र 23.9) में सबसे उन्नत प्रकार का अनुकूलन पाया जाता है। जहाँ वर्तिकाग्र स्वपरागण के लिए परागकोषों से काफी ऊपर होता है। इन पुष्पों का परागण एक कीट जिसे *प्रोन्यूबा यक्कासेला* (*Pronuba yuccasella*) कहते हैं के जीवनचक्र से निकट रूप से संबद्ध रहता है। पुष्प कीट के अंडों को सुरक्षा प्रदान करता है जो अंडाशय के भीतर अंडों के ठीक नीचे दिए जाते हैं। इसके बदले में, कीट पुष्प को परागित करता है। कीट के डिम्भों (larvae) तथा बीजों का विकास साथ-साथ आगे बढ़ता है। डिम्भ कुछ विकासशील बीजों को खा जाते हैं तथा फलभित्ति के जरिए बाहर आ जाते हैं और मिट्टी में कोकून (कोया) के रूप में सुषुप्त रहते हैं। वयस्क कीट कोकून में से तभी बाहर निकल कर आते हैं जब पादप पुनः पुष्पित होता है तथा अपने जीवनचक्र को दोहराता है।

पुष्प के परिदलपुंज में दो त्रितयी चक्र होते हैं। ये सामान्यत: दलाभ होते हैं अथवा कभी-कभी, बाहरी चक्र बाह्यदलाभ होता है। ये मुक्त अथवा जुड़े हुए होते हैं तथा कोरछादी (imbricate) अथवा कोरस्पर्शी (valvate) पुष्पदल विन्यास दर्शाते हैं।

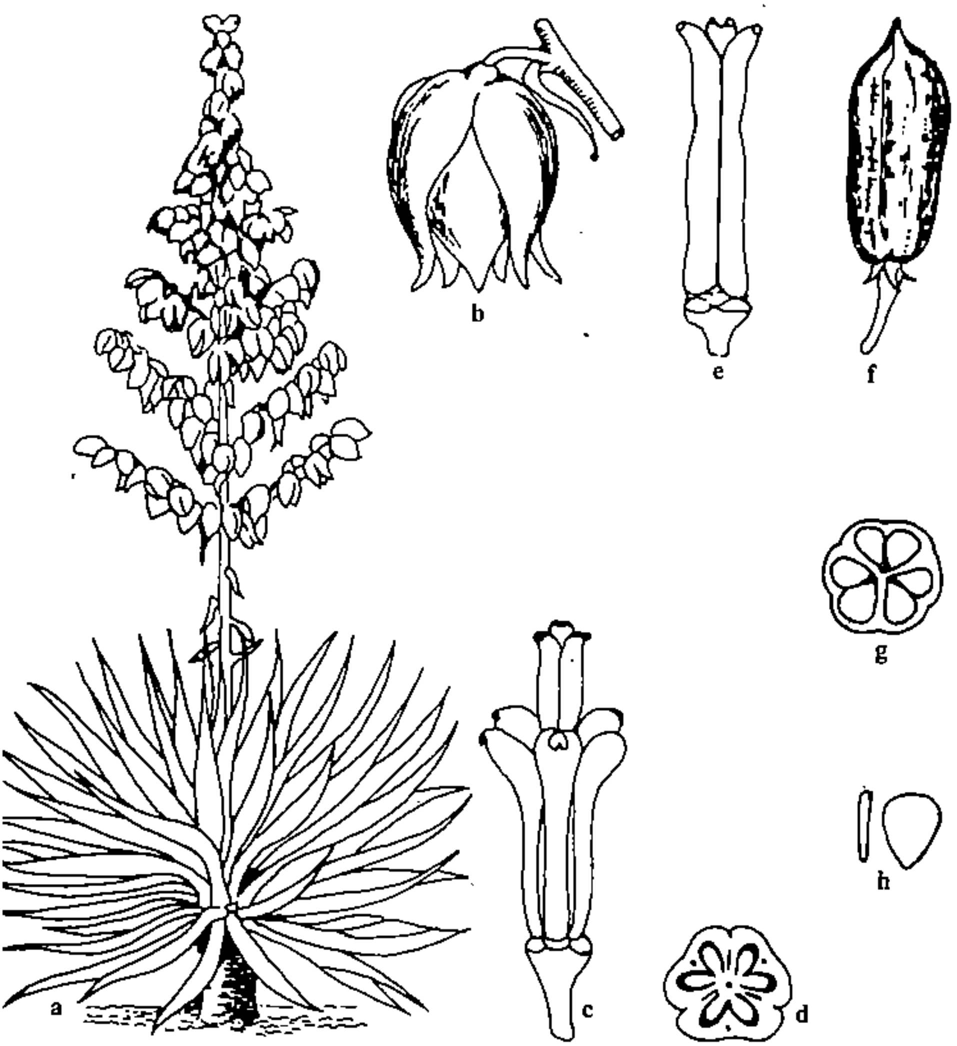

चित्र 23.9 : यक्का ग्लोरिओसा (*Y. gloriosa*) (a) पौधा (अधिक तनुकृत) (b) पुष्प (c) पुंकेसर तथा स्त्रीकेसर (d) अंडाशय की अनुप्रस्थ काट तीन कोष्ठों के बीच में पटीय ग्रंथियों को दिखाते हुए (e) स्त्रीकेसर (f) फल (g) फल की अनुप्रस्थ काट जो प्रत्येक अंडप की मध्य भित्ति के अंदर की ओर वृद्धि करने से छह कोष्ठकी बन गया है (h) बीज, कोर तथा सतह परिदृश्य।

पुमंग : सामान्यत: 6 पुंकेसर दो त्रितयी चक्रों में होते हैं। कभी-कभी सिर्फ 3 उर्वर होते हैं (उदा. रस्कस) तथा अन्य 3 बंध्य होते हैं। ये बंध्य पुंकेसर में तनुकृत होते हैं अथवा वे अनुपस्थित होते हैं। बहुत कम ही पुंकेसरों की संख्या 6 से अधिक होती है। पुंकेसर मुक्त अथवा विभिन्न प्रकार से सहजात जुड़े (connate) होते हैं और ये परिदलों के सम्मुख होते हैं। परागकोष अध:बद्ध (basifixed) तथा द्विकोष्ठी होते हैं। ये सामान्यत: अंतर्मुखी स्फुटन दर्शाते हैं।

जायांग : जायांग त्रिअंडपी, युक्तांडपी तथा ऊर्ध्ववर्ती (superior) अंडाशय युक्त होता है। अंडाशय त्रिकोष्ठकी होता है तथा स्तंभीय (axile) बीजांडन्यास दर्शाता है। कभी-कभी अंडाशय एककोष्ठकी होता है और उसमें परिधिय बीजांडन्यास होता है। अंड असंख्य होते हैं तथा प्रत्येक कोष्ठ में दो कतारों में उपस्थित रहते हैं।

मकरंद कोष अंडप की दीवारों पर पटीय ग्रंथियों में उपस्थित रहते हैं। वर्तिका एक होती है जिसमें 3-पालियां अथवा 3 सुस्पष्ट वर्तिकाग्र होते हैं।

फल : फल आमतौर पर त्रिकोष्ठकी संपुट होता है जिसमें कोष्ठविदारक या पटविदारक स्फुटन होता है। कभी-कभी ये बड़ा सरस फल होता है (उदा. *स्माइलेक्स, पोगोनेटम (Pogonatum), ऐस्पैरागस*)। बीज बड़े तथा असंख्य होते हैं। उनका सीधा या वक्र भ्रूण होता है और बहुत अधिक गूदेदार या उपास्थिसम (cartilaginous) भ्रूणपोष होता है।

विभेदक लक्षण

1) पादप मुख्यतः प्रकंदी या कंदी शाक, कभी-कभी काष्ठीय अथवा प्रारूपिक मरूद्भिदी।

2) पत्तियाँ सरल, सामान्यतः एकांतरी, अनुपर्णी तथा समानान्तर पर्णविन्यास युक्त, कभी-कभी शल्क या शूलों के रूप में तनुकृत।

3) पुष्पक्रम असीमाक्षी अथवा ससीमाक्षी या एकल पुष्प।

4) पुष्प सहपत्र हीन, द्विलिंगी, त्रिज्यासममित, जायांगाधर तथा त्रितयी होते हैं।

5) पुष्प खुशबूदार तथा मकरंद युक्त होते हैं।

6) परिदलपुंज दो चक्रों में, सामान्यतः दलाभ होता है।

7) पुमंग दो चक्रों में, एक चक्र कभी-कभी बंध्य या बंध्य पुंकेसरों के रूप में तनुकृत, कभी-कभी अनुपस्थित परागकोष अधःबद्ध, द्विकोष्ठी, अंतर्मुखी।

8) जायांग त्रिअंडपी, युक्तांडपी, अंडाशय ऊर्ध्वर्ती, बीजांडन्यास स्तंभीय, अंडप असंख्य।

9) फल संपुट अथवा कभी सरस फल।

10) बीज बड़े काफी भ्रूणपोष के साथ।

वर्गीकृत स्थान

कुल लिलिएसी का वर्गीकरण बेन्थम तथा हुकर द्वारा (श्रेणी) (Series Coronaricae) सीरीज़ कोरोनेरेएई में किया गया है। इस श्रेणी में 7 अन्य कुल है। ऐमेरिलिडेसी कुल (जिसमें बहुत से आकारिकीय लक्षण लिलिएसी के समान हैं) को पृथक रूप से इपीगइनी में वर्गीकृत किया गया है एंगलर तथा प्रांटल के वर्गीकरण में, लिलिएसी को एकबीजपत्री गण-लिलिफ्लोरी में वर्गीकृत किया गया है। इस गण में ऐमेरिलिडेसी को मिलाकर 9 कुल हैं।

इन दोनों वर्गीकरण की प्रणालियों में बड़े लिलिएसी कुल को 11 उपकुलों में विभाजित किया गया है। साथ ही दोनों प्रणालियों में लिलिएसी को ऐमेरिलिडेसी से अलग रखा गया है।

तख़्ताज़न ने अपनी वर्गीकरण की प्रणाली में इस समूह के पादपों के वर्गीकरण को पुर्नव्यवस्थित किया है। पिछली दोनों वर्गीकरण की प्रणालियों में उपकुलों के रूप में जाने गए में से कम से कम 8 को सुसपष्ट कुलों के रूप में मान्यता दी गई है।

दिलचस्प तौर पर इन कुलों को उपवर्ग ए लिलिडी (Lilidae) के विभिन्न गणों में वर्गीकृत किया गया है। लिलिएसी कुल को भी इस उपवर्ग में तथा अधिगण लिलिएनी (Lilianae) में वर्गीकृत किया गया है इसे गण लिलिएलीज (Liliales) में वर्गीकृत किया गया है। जबकि ऐमेरिलिडेसी कुल को गण ऐमेरिलिडेलीज में वर्गीकृत किया गया है। इस प्रकार तख़्ताज़न ने ऐमेरिलिडेसी को लिलिएसी से पृथक रखने में बेन्थम और हुकर तथा एंगलर और प्रांट्ल दोनों का ही अनुसरण किया है। इसके अतिरिक्त क्रॉन्क्विस्ट तथा अन्य वर्गीकरण विज्ञानी हैं जिन्होंने ऐमेरिलिडेसी को लिलिएसी से अलग नहीं किया है और दोनों कुलों को एक ही कुल में मिला दिया है जिसे लिलिएसी कहते हैं।

आर्थिक महत्त्व

1) खाद्य पादप

ऐलियम सीपा (A. cepa) प्याज। अपरिपक्व तथा परिपक्व कंदों को कच्चा खाया जाता है या उन्हें पका कर, तलकर अथवा सूप या सॉस आदि में उपयोग किया जाता है।

ऐलियम सेटाइवा (*A.sativa*) लहसुन। इसको भी विस्तृत रूप से उगाया जाता है तथा इसकी विशेषीकृत पत्तियों को "लहसुन की कलियां" कहते हैं। इन्हें मसाले के रूप में खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। इसको औषधि के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

ऐस्पैरागस ऑफीसिनेलस (*A.officinalis*) तरुण प्ररोह तथा गूदेदार जड़ों को सब्जी के रूप में अथवा सूप बनाने में उपयोग किया जाता है।

2) औषधीय पादप

लिलिएसी कुल के अनेकों पादपों का उपयोग विभिन्न औषधीयों में किया जाता है। इनमें *ऐलोवेरा* (*A. vera*), *ऐ. रेसीमोसस* (*A. racemosus*), *अर्जीनिया इन्डिका* (*Urginea indica*), *सिला हाइसिन्थीएना* (*Scilla hyacinthiana*), *यक्का ग्लोरियोसा* (*Yucca gloriosa*). *ग्लोरियोसा सुपर्ब* (*Gloriosa superba*), *हेमेरोकेलिस फल्वा* (*Hemerocallis fulva*) तथा *स्माइलेक्स* स्पी. सम्मिलित हैं। *कोल्चिम औटम्नेल* (*Colchium autumnale*) से एक ऐल्केलॉइड कोल्चिसिन प्राप्त किया जाता है जिसका उपयोग कोशिकानुवंशिकीविदों (Cytogenetists) द्वारा बहुगुणन को प्रेरित करने के लिए किया जाता है।

3) फाइबर

फाइबर *फोरमियम टीनेक्स* (*Phormium tenax*) *सैन्सेविएरिया* स्पी. (*Sansevieria* species) *यक्का फिलामेन्टोसा* (*Y. filamentosa*) से प्राप्त किए जातें हैं।

4) रेज़िन

जैन्थोरिया (*Xanthorrhoea*) तथा *ड्रैसीना* से रेज़िन प्राप्त होता है जिसका उपयोग वार्निश तथा मोहरी लाख (sealing wax) बनाने में किया जाता है। *इफीजीनिया इन्डिका* (*Iphigenia indica*) के पुष्पों से एक लाल रंज़क (dye) प्राप्त किया जाता है।

5) सजावटी पौधे

इस कुल के अनेकों पादपों को सजावटी पौधों के तौर पर उगाया जाता है। अधिक प्रसिद्ध जातियाँ हैं : *ऐगेपेन्थस* (*Agapanthus*), *ऐस्पैरागस*, *कॉनवेलेरिया* (*Convallaria*), *ड्रैसीना*, *फ्रिटिलेरिया* (*Fritillaria*), *ग्लोरियोसा*, *हैमेरोकेलिस*, *लिलियम*, *रस्कस*, *ट्यूलिपा*, तथा *यक्का*।

कुछ याद रखने योग्य बातें:

23.4 कुल ऐरेकेसी अथवा पामी (Palmae)

ताड़ कुल (Palm Family)

नामकरण पद्धति : ऐरेका (*Areca*)

सामान्य जानकारी

कॉराइफा का अतिकाय पुष्पक्रम वृक्ष के जीवन को समाप्त कर देता है।

इस विशिष्ट कुल में पादप जगत के लंबे ताड़ के वृक्षों में से एक (*सीरोज़ाइलोन*, *Ceroxylon*- 60 मीटर तक के), सबसे बड़ी काष्ठीय आरोही लता (*कैलामस*, *Calamus* 200 मीटर तक की) सबसे बड़ी पत्ती (*रैफिया*, *Raphia* 15 मीटर), सबसे बड़ा पुष्पक्रम (*कॉराइफा*, *Corypha*, 7 मीटर), तथा सबसे बड़ा बीज (*लोडोसीआ*, *Lodoicea*) पाए जाते हैं।

ताड़ उष्णकटिबंधी वनस्पति की विशेषता होते हैं। ये उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण क्षेत्रों में विस्तृत रूप से पाए जाते हैं। इस कुल में लगभग 200 वंश तथा 3000 जातियां हैं जो एशिया, अफ्रीका तथा उष्णकटिबंधी अमरीका में पाई जाती हैं। ताड़ के वृक्ष समुद्र तटों पर अथवा समुद्री द्वीपों पर काफी दिखाई पड़ते हैं। कुछ की खेती भी की जाती है। भारत में, लगभग 28 वंश तथा 90 जातियाँ पाई जाती हैं। सबसे अधिक प्रचलित जातियों में नारियल, खजूर, सुपारी तथा ताड़ी के पेड़ हैं।

स्थलीय पहचान

ताड़ के वृक्ष बड़े काष्ठीय पादप हैं (चित्र 23.10); तने अधिकांशत: अशाखित तथा स्तंभाकार होते हैं, कभी-कभी तना तनुकृत भी हो हो सकता है अथवा पतला और नरकुल (reed) जैसा हो सकता है। तना सामान्यत: पुरानी पत्तियों के आच्छदों के अवशेषों से ढंका रहता है, अथवा ये कंटकयुक्त हो सकता है, विशाल पत्तियाँ विशिष्ट होती हैं जो या तो हस्ताकार (पंखे जैसी) अथवा पिच्छाकार (पंख जैसी) होती हैं, पत्तियाँ तने के शीर्ष पर मुकुट के रूप में उपस्थित रहती हैं। बड़ा यौगिक असीमाक्षी पुष्पक्रम, स्पेथ द्वारा कक्षांतरित (subtended) रहता है, पुष्प छोटे तथा एकलिंगी होते हैं, फल, सरस फल अथवा अष्ठिल फल (drupe) होता है।

आकृतिक विविधता

अधिकांश ताड़ बड़े वृक्ष हैं जिनमें लंबा काष्ठीय तना होता है। ये बेलनाकार तना सीधे वृद्धि करता है और इसका व्यास विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होता है। एकल तना 60 मीटर तक की ऊँचाई हो सकता है (उदा. सीरोज़ाइलोन) दिलचस्प तौर पर, इनमें द्वितीय वृद्धि नहीं होती है, पंरतु फिर भी कभी-कभी पुराने तनों की मोटाई/व्यास में वृद्धि हो जाती है। ये वृद्धि दो तरीकों से होती है, (ए) उन मृदूतकी ऊतकों (parenchymatous tissues) का विस्तार हो जाता है जिनमें संवहन पूल उपस्थित रहते हैं, (बी) कोशिका गुहिका तथा संवहन पूलों को सहारा देने वाले दृढ़ोंतकी (sclerenchymatous) फाइबर की भित्तियों की मोटाई में वृद्धि हो जाती है। प्राथमिक जड़ अल्पजीवी होती है तथा तने के आधार के पास अपस्थानिक (adventitious) जड़ें विकसित हो जाती हैं। कुछ प्रकार की वायवीय जड़ें जैसे कि प्रवालपद (stilt) या अवस्तंभ (prop) जड़ें, स्पाइन/शूल जड़ें तथा श्वसन मूल (pneumatophores) इस कुल में पाई जाती हैं। ये लंबे स्तंभी तने को सहारा देती हैं।

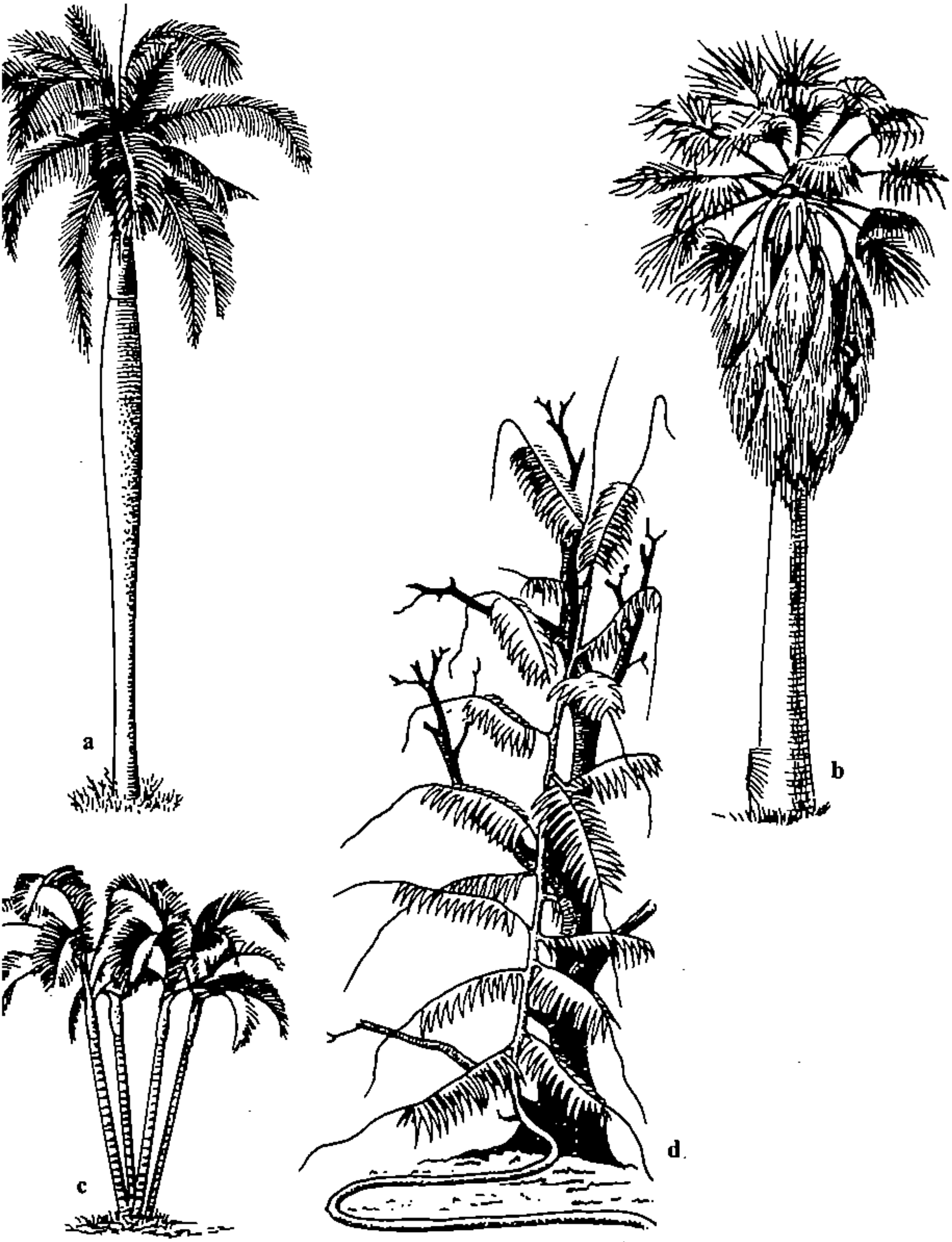

चित्र 23.10: वृद्धि प्रकारें (a) *रॉयस्टोनिया रीजिया* (*Roystonea regia*) बड़ा ताड़ वृक्ष सुस्पष्ट किरीट स्तंभ (crownshaft) सहित (b) *वाशिंगटोनिया फिलिफेरा* (*Washingtonia filifera*) तना आंशिक रूप से स्थाई अपातजीर्णी (accrescent) पत्तियों से ढंका हुआ (c) *डिप्सिस ल्यूटीसेन्स* (*Dypsis lutescens*) गुच्छित (caespitose) प्रकृति (d) *कैलामस* स्पी., आरोही लता सिरस (cirrate) जैसी पत्तियों युक्त।

कभी-कभी तना बहुत छोटा होता है (उदा. *फीनिक्स ऐकौलिस*, *Phoenix acaulis* ,*फाइटीलेफस मेक्रोकार्पा*, (*Phytelephas macrocarpa*) अथवा पादप की प्रकृति झाड़ीय/क्षुपाभ हो सकती है। ऐसा मुख्य तने के आधार के निकट के क्षैतिज अंत:भूस्तारियों (suckers) से असंख्य स्तर तनों के बनने के कारण होता है। *कैलामस* में (रैटैन या बेंत), तने लंबे, पतले होते हैं तथा आसपास की वनस्पति पर चढ़ जाते हैं। एक अकेला आरोही तना 200 मीटर तक की लंबाई का हो सकता है। अधिकांश ताड़ अशाखित होते हैं। शाखन जोकि विरल होता है वह *हाइफिनी थीबेका* (*Hyphaene thebaica*) (डूम पाम-अफ्रीकी खजूर के पेड़) में दिखाई पड़ता है। यहाँ कक्षीय कलिका मुख्य तने की भाँति शाखा में विकसित हो

जाती है। कभी-कभी शाखन अंतस्थ कलिका में क्षति के कारण भी हो जाता है। (उदा. *फीनिक्स सिल्वेस्ट्रिस* (*Phoenix sylvestris*) अथवा जंगली खजूर का पेड़) चित्र 23.11

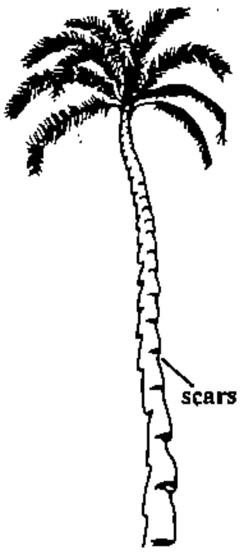

चित्र 23.11 : *फीनिक्स सिल्वेस्ट्रिस* शर्करा युक्त रस निकालने के लिए वर्ण आच्छदों पर लगाए गए चीरों के क्षत चिन्हों/स्कार्स युक्त तना।

पंखा रूपी ताड़ों में हस्ताकार तथा पंखरूपी ताड़ों में पिच्छाकार पत्तियाँ होती हैं।

पत्ती : पत्ती, ताड़ के वृक्षों का सबसे विशिष्ट लक्षण होती है पत्तियाँ कम होती हैं जो सामान्यत: तने के शीर्ष पर मुकुट बनाए रहती हैं। ये अक्सर बहुत बड़ी होती हैं (उदा. *रैफिया फेरिनीफेरा Raphia farinifera*) में एक एकल पत्ती 15 मीटर तक की लंबाई की हो सकती है। ताड़ के वृक्षों में दो प्रकार की पत्तियों को आसानी से पहचाना जा सकता है। कुछ ताड़ों में हस्ताकार (palmate) (पंखाकार) पत्तियाँ होती हैं जबकि अन्य में पिच्छाकार (pinnate) (पंख जैसी) पत्तियाँ होती हैं। पत्ती के आधार पर एक आच्छद होता है जो पत्ती को तने से मज़बूती से जोड़े रखता है। आच्छद में फाइबर्स के अनेकों पूल होते हैं जो तरुण पत्तियों के चारों ओर घना मैट (mat) बनाए रहते हैं। ये अपेक्षाकृत मृदु ऊतकों के क्षय होने के बाद भी स्थाई रह सकते हैं। *कैलामस* में, आच्छद अनुपर्ण जैसी संरचना होता जिसे ओक्रिया (ochrea) कहते हैं।

मजबूत अक्ष बड़ी पत्ती के मुख्य अक्ष के रूप में जारी रहता है। पटल अच्छिन्न (entire) या विच्छेदित (dissected) हो सकता है। पंखारूपी ताड़ में, पटल कलिका में अच्छिन्न होता है तथा वह वलित होता है। जब ये खुलता है और विस्तारित होता है, तो पटल कम या अधिक रूप से वलनों पर से फट भी सकता है। पटल का वलन तथा पिच्छकों (pinnae) का फटना पंखरूपी ताड़ों में भी देखा जाता है।

पत्तियाँ मरूद्भिदी लक्षण दर्शाती हैं। इनमें मोटा चमकदार क्यूटिकल होता है। जब पत्ती निकलती है, तो वह लगभग ऊर्ध्वाधर होती है जिससे कि अधिक विकीर्णन तथा वाष्पोत्सर्जन से बच सके। पत्ती कभी-कभी ही प्रकाश की आपतित किरणों (incident-rays) से लंबत: व्यवस्थित होती है।

पर्णवृंत, पत्तियाँ तथा तनों में काँटे अथवा प्रतिवक्रित शूल हो सकते हैं।

पुष्पक्रम : कुछ ताड़ सकृत्फली (monocarpic) होते हैं। जिनमें अनेक वर्षों तक कायिक वृद्धि के बाद एक एकल बड़ा अंतस्थ पुष्पक्रम निर्मित होता है। *कोराइफा अंब्रेकुलीफेरा* (*Corypha umbraculifera*) (तालीपात/ talipot ताड़) में पुष्पक्रम लगभग 7 मीटर लंबा होता है। जब फल बन जाते हैं तो पादप मर जाता है। अन्य ताड़ों में कक्षीय पुष्पक्रम होते हैं जो नियमित अंतरालों पर उत्पन्न होते हैं इन ताड़ों में, पादप पुष्पन तथा फलन के पश्चात्, मरता नहीं है।

संपूर्ण पुष्पक्रम या तो बड़े स्पेथ से ढंका रहता है अथवा बड़े पुष्पक्रम की प्रत्येक शाखा में स्पेथ हो सकता है। पुष्पक्रम सरल या संयुक्त स्पाइक/कणिश अथवा पुष्पगुच्छ बड़ा/यौगिक असीमाक्ष होता है। असंख्य पुष्प अवृंत अथवा कभी-कभी गूदेदार अक्ष मे धंसे रहते हैं। ऐसे मामलों में पुष्पक्रम स्पेडिक्स (spadix) कहलाता हैं। उदा. *बोरैसस* (*Borassus*) का नर पुष्पक्रम। नर तथा मादा पुष्प दोनों एक ही पुष्पक्रम पर उपस्थित हो सकते हैं। सामान्यत: कुछ मादा पुष्प पुष्पक्रम के आधार की ओर तथा असंख्य नर पुष्प शीर्ष की ओर होते हैं। कभी-कभी पादप एकलिंगाश्रयी (dioecious) होते हैं (उदा. *फीनिक्स डैक्टाइलीफेरा*

Phoenix dactylifera) अथवा छुहारा, *बोरैसस फ्लेबेरीफर* अथवा पंखिया (palmyra) ताड़। पुष्पक्रम में एक मीठी सुगंध होती है (चित्र 23.12)।

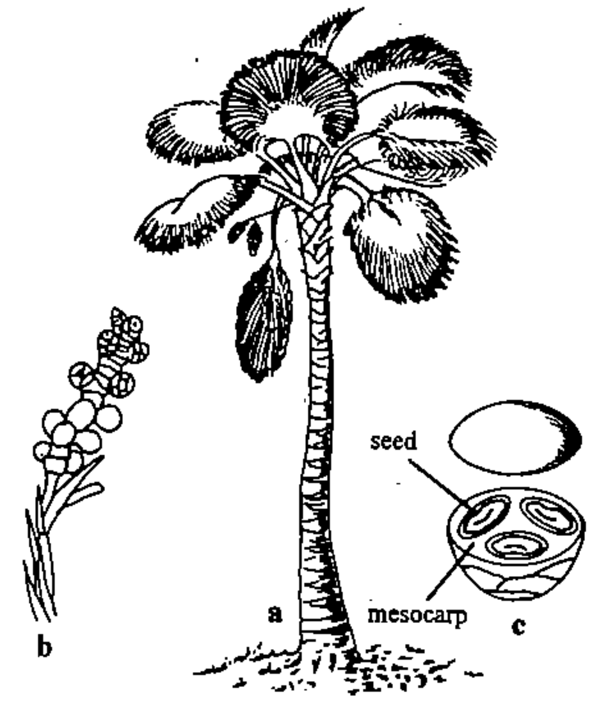

चित्र 23.12 : *बोरैसस फ्लेवेलीफोर्मिस (B. flabelliformis)* (a) प्रकृति (b) मादा पुष्पक्रम (c) फल अनुप्रस्थ रूप से कटा हुआ।

पुष्प : बड़े पुष्पक्रम की तुलना में फूल छोटे होते हैं। वे प्रारूपिक रूप से त्रितयी, त्रिज्यासममित, एकलिंगी (विरल रूप से द्विलिंगी) तथा जायांगधर होते हैं। पुष्प के परिदलपुंज में दो त्रितयी चक्र होते हैं जो एक दूसरे के समान होते हैं। बाहरी चक्र सामान्यत: भीतरी चक्र से छोटा होता है। प्रत्येक परिदल कठोर, चर्मिल अथवा गूदेदार होता है। ये हरा या पीला अथवा सफेद सा और स्थायी होता है। बाहरी चक्र में पुष्पदल विन्यास कोरछादी (imbricate) अथवा कोरस्पर्शी (valvate) होता है। भीतरी चक्र नर पुष्पों में कोरस्पर्शी तथा मादा पुष्पों में कोरछादी होता है।

इसमें सामान्यत: छह पुंकेसर होते हैं, कभी-कभी ये सिर्फ तीन ही एक ही चक्र में होते हैं। कभी-कभी एकल पुष्प में अनेकों पुंकेसर होते हैं। तंतु मुक्त तथा छोटे होते हैं। परागकोष द्विकोष्ठी होते हैं तथा अतंर्मुखी (introse) स्फुटन दर्शाते हैं। परागकण बड़ी संख्या में उत्पन्न होते हैं तथा बहुत से ताड़ वायु-परागित होते हैं।

जायांग : जायांग त्रिअंडपी होता है। ये वियुक्तांडपी (उदा. फीनिक्स) अथवा युक्तांडपी (उदा. *बोरैसस, ऐरेका*) हो सकता है। अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती तथा त्रिकोष्ठकी अथवा एककोष्ठकी हो सकता है। बीजांडन्यास स्तंभीय (त्रिकोष्ठकी) अथवा परिधिय (एककोष्ठकी) हो सकता है। जब जायांग वियुक्तांडपी होती हैं तो प्रत्येक अंडप में एक बीजांड आधारीय बीजांडासन पर होता है। कभी-कभी फल के विकास के दौरान तीन में से दो अडंपों की अपने बीजांडों सहित वृद्धि रुक जाती है, जिससे कि वयस्क फल में सिर्फ एक बीज रह जाता है (उदा. *कोकोस न्यूसीफेरा* या नारियल)। वर्तिका सामान्यत: अनुपस्थित होती है तथा उसमें 3 अवृंत वर्तिकाग्र होते हैं।

फल : फल, एक गूदेदार सरस फल (उदा. *फीनिक्स डैक्टाइलीफैरा*) अथवा फाइबर युक्त अष्ठिल फल होता है (उदा. *कोक्स न्यूसीफेरा*) (चित्र 23.13)। खजूर में फल की गूदेदार फलभित्ति में शर्करा होती है तथा इसमें एक बेलनाकार बीज होता है। फाइबर युक्त अष्ठिल फल में, मध्यफलभित्ति छोटे फाइबर्स के पूलों की बनी होती है ज़बकि अंत:फलभित्ति कठोर तथा काष्ठीय होती है। कुछ ताड़ के पेड़ों में (उदा. *कैलामस, मेटेरोजाइलोन* (*Metroxylon*) अथवा सागूताड़) बाह्यफलभित्ति शुष्क काष्ठीय शल्कों से ढंकी रहती है। फल का साइज़ विभिन्न ताड़ के वृक्षों में भिन्न-भिन्न होता है। फल के अनुसार ही बीज के आकार तथा साइज़ में भी विविधता दिखाई पड़ती है, उदा. *लोडोसिआ मालडिविका* (*Lodoicea maldivica*) (जुड़वा नारियल या कोको-डी-मेर) में फल को परिपक्व होने के लिए लगभग 5 वर्ष लगते हैं और इसमें बड़ा द्विपालित बीज होता है। प्रत्येक फल 13-22 किलो तक का हो सकता है।

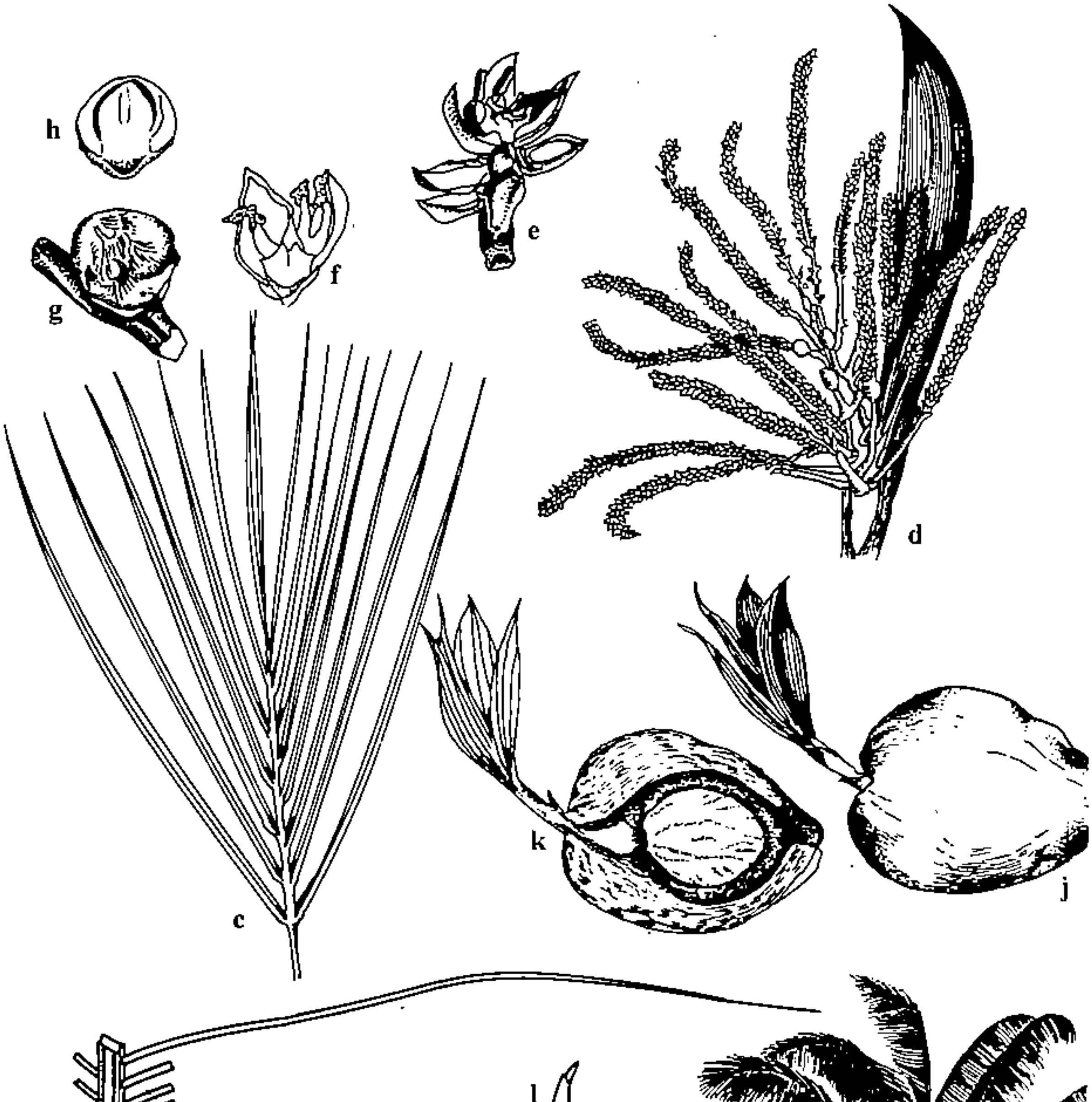

चित्र 23.13 : ऐरेकेसी : कोकस न्यूसीफेरा (*C. nucifera*) (a) ताड़ (b) पत्ती की रेकिस का एक भाग (c) पत्ती का शीर्ष (d) पुष्पक्रम (e) नर पुष्प तथा कलिका (f) नर पुष्प खुला हुआ (g) मादा पुष्प (h) मादा पुष्प अनुदैर्ध्य काट में (i) पुष्पक्रम फल साथ (j) अंकुरित होता फल (k) अंकुरित होते फल अनुदैर्ध्य काट में (l) अंकुरित होता फल जिसकी मध्यफलभित्ति हटी हुई है।

बीजों में भ्रूणपोष बड़ा तथा भ्रूण छोटा होता है। भ्रूणपोष मुलायम हो सकता है जो गूदेदार पदार्थ बनाता है तथा तेल और अन्य खाद्य सामग्री को संचित करता है (उदा. नारियल)। भ्रूणपोष कठोर (उदा. खजूर) अथवा चर्बिताभ (*ruminate*) (उदा. सुपाड़ी) भी हो सकता है अथवा ये बहुत मोटा तथा कठोर भी हो सकता है (उदा. वेजीटेबल आइबरी /नकली हाथी दांत) (चित्र 23.14)।

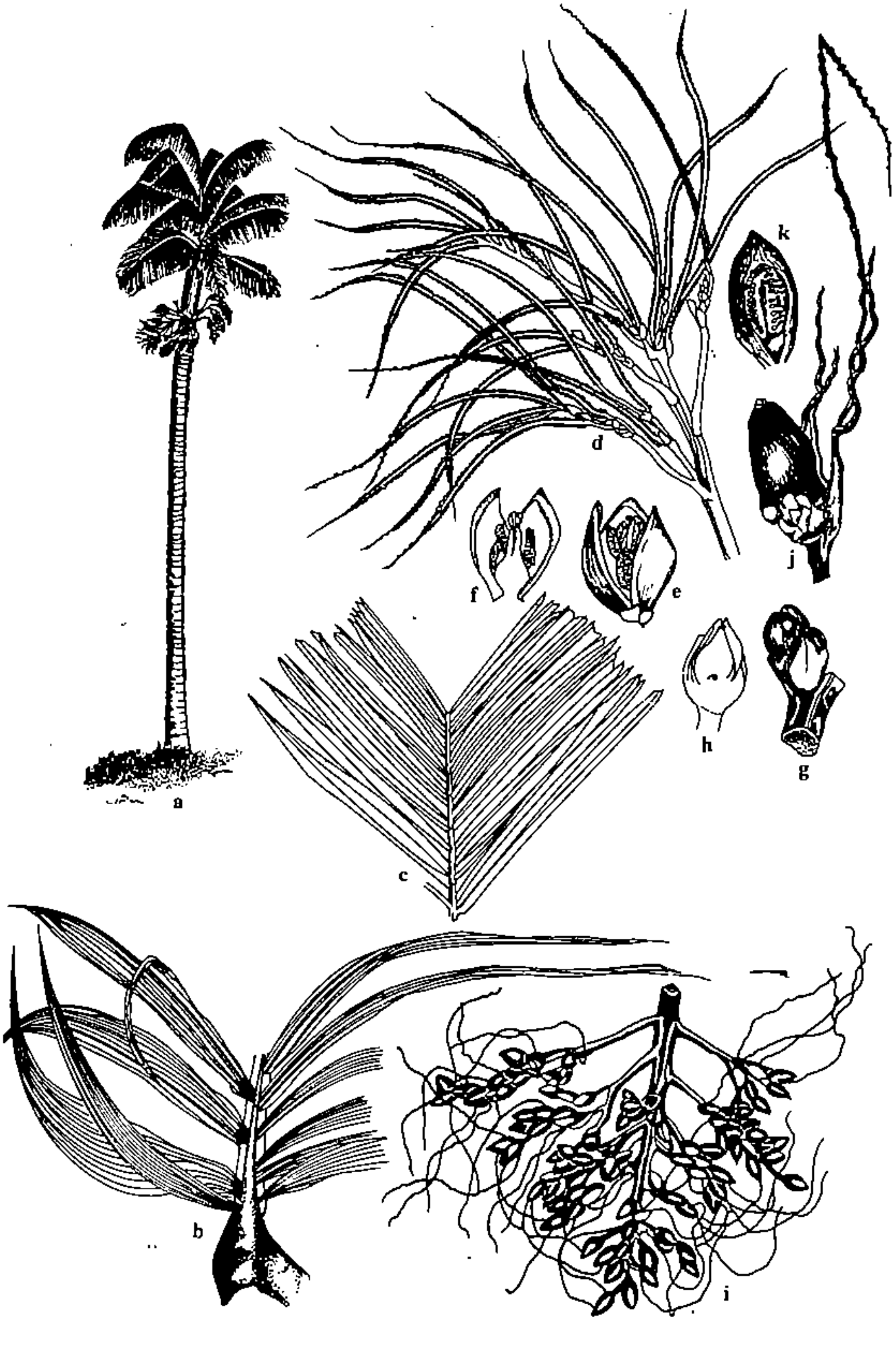

चित्र 23.14 : ऐरेकेसी : ऐरेका केटेचू (*Areca catechu*) (a) ताड़ (b) पत्ती का आधार (c) पत्ती का शीर्ष (d) पुष्पक्रम (e) नर पुष्प (f) नर पुष्प अनुदैर्ध्य काट में (g) मादा पुष्प (h) मादा पुष्प अनुदैर्ध्य काट में (i) फलों का गुच्छा (j) फल (k) फल अनुदैर्ध्य काट में।

विभेदक लक्षण

1) बड़े काष्ठीय पादप सामान्यतः अशाखित स्तंभीय तने युक्त।

2) तना पर्ण आच्छदों से ढंका हुआ।

3) काँटे या शूल तने, पर्णवृंत तथा पत्ती पर उपस्थित हो सकते हैं।

4) पत्तियाँ बहुत बड़ी, पंखा या पिच्छाकार।

5) पुष्पक्रम बहुत बड़ा, आच्छदों द्वारा कक्षांतरित, मीठी सुगंध युक्त।

6) पादप उभयलिंगाश्रयी या एकलिंगाश्रयी, पुष्प छोटे, एकलिंगी।

7) परिदलपुंज, बाह्य दलपुंज तथा दलपुंज में विभेदित नहीं, परिदल सख्त, चर्मिल या माँसल, चिरस्थायी।

8) पुंकेसर छह एवं तंतु मुक्त।

9) त्रिअंडपी जायांग, अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती।

10) फल सरस फल या अष्ठिल फल।

11) बीज अत्यधिक भ्रूणपोष तथा छोटे भ्रूण युक्त।

12) भ्रूणपोष मुलायम अथवा कठोर।

वर्गीकृत स्थान

कुल पामी (ऐरेकेसी) को बेन्थम और हुकर द्वारा एकबीजपत्री सीरीज-कैलीसिनी (Calycinae) में वर्गीकृत किया गया है। एंग्लर और प्रांट्ल के वर्गीकरण में, इस कुल को गण प्रिन्साइपीज (Principes) में वर्गीकृत किया गया है। तख़्ताज़न ने अपने वर्गीकरण में कुल ऐरेकेसी को उपवर्ग- एरेसिडी, अधिगण -ऐरेकेनी, तथा गण ऐरेकेलीज़ में वर्गीकृत किया है।

आर्थिक महत्व

ताड़ आर्थिक उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रस्तुत करते हैं। इनसे से अनेक अन्य आर्थिक पादपों के विपरीत बहुउपयोगी होते हैं। ये खाद्य पदार्थ, वसा, मोम, फाइबर, फर्नीचर के लिए कच्चा माल, तथा अन्य बहुत सी वस्तुएं प्रदान करते हैं। बहुत से उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में, ताड़ मानव जाति के लिए जीवनोपयोगी तंत्र की भाँति कार्य करते हैं, जो दैनिक जीवन की अनेक वस्तुएं प्रदान करते हैं। अधिक महत्वपूर्ण तथा सुपरिचित ताड़ तथा उनके उपयोगों की सूची यहाँ दी गई है।

1) *कोकोस न्यूसीफेरा*- नारियल का वृक्ष। ये पंखरूपी ताड़ हैं। इसके 1000 से अधिक उपयोग बताए जाते हैं क्योंकि इसका हर भाग उपयोगी होता है। ये भोजन, पेय, तैल, औषधि, फाइबर, लकड़ी, छप्पर के लिए सामग्री, पंखे, चटाई, ब्रुश, झाड़ू, ईंधन, घरेलू बर्तन, सजावटी सामग्री तथा कई अन्य वस्तुएं प्रदान करते हैं। इसे प्राचीन ग्रंथों में "कल्पवृक्ष" या "जीवनदायी वृक्ष" कहा गया है।

2) *फीनिक्स डैक्टाइलीफेरा* - खजूर का वृक्ष। खाद्य फल शर्करा से समृद्ध होते हैं (गूदेदार फलभित्ति का 60-70 % भाग शर्करा होता है) इन्हें ताजा अथवा सुखाकर खाया जा सकता है अथवा बेकरी तथा मिष्ठान आदि में उपयोग किया जाता है। तने तथा स्पेथ को ताड़ मदिरा या ताड़ी प्राप्त करने के लिए टैप/अंशनिष्कासित किया जा सकता है।

3) *फीनिक्स सिल्वेस्ट्रिस* - ये पंखारूपी ताड़ हैं जिसको उसके रस के लिए टैप/अंशनिष्कासित किया जाता है। रस में 12% सुक्रोस (sucrose) होता है जिसे गुड़ तथा ताड़ की शक्कर में परिवर्तित किया जा सकता है। रस को एक ऐल्कोहॉली पेय तैयार करने के लिए किण्वित (fermented) भी किया जा सकता है जिसे ताड़ी कहते हैं। इसके लिए, पुष्पक्रम को टैप अंशनिष्कासित किया जाता

है तथा एक पादप से ही 20 लीटर तक रस प्राप्त किया जा सकता है। परिपक्व फल खाने योग्य होता है। स्तंभीय तना मजबूत काष्ठ का बना होता है जिसको विभिन्न तरीकों से उपयोग किया जाता है। पर्ण वृंतों से फाइबर प्राप्त किये जाते हैं।

4) *मेट्राक्सिलॉन रम्फिआई (Metroxylon rumphii)*, *मेट्राक्सिलॉन सैगूस (M. sagus)*- साबूदाना का पेड़। ये पंखरूपी ताड़ होते हैं। ये उभयलिंगाश्रयी तथा एकांडपी ताड़ होते हैं। एक बड़ा अंतस्थ पुष्पक्रम निर्मित होता है जब ताड़ 10-15 वर्ष का हो जाता है। इस ताड़ के तने को पुष्पन से पूर्व काट दिया जाता है तथा बड़ी मात्रा में मांड/स्टार्च को निकाल लिया जाता है। इस मांड को धोकर सुखा लिया जाता है जिससे खाने योग्य आटा बनाया जाता है। छोटे-छोटे दाने जिन्हें साबूदाना कहते हैं वो इस आटे से बनाए जाते हैं।

5) *नीपा फ्रूटिकैन्स (Nypa fruticans)*- नीपा ताड़/ ये एक अस्तंभी ताड़ का पेड़ है। इस ताड़ के वृक्ष को शर्करा युक्त रस के लिए टैप/अंशनिष्कासित किया जाता है जिसमें 17% सुक्रोस होता हैं। इसको ताड़ी बनाने के लिए किण्वित किया जा सकता है अथवा अर्क बनाने के लिए ताड़ी का आसवन किया जा सकता है। रस से सिरका भी बनाया जाता है। रस को वाष्पित करके मोलासे-जैसी शर्करा "गुला मैलका" (gula malacca) बनाई जाती है।

6) *ऐरिन्गा पिन्नैटा (Arenga pinnata)* शर्करा ताड़। ये उभयलिंगाश्रयी, एकांडपी पंखरूपी ताड़ हैं। इसके तने में बड़ी मात्रा में मांड संचित रहता है। जब पेड़ में पुष्पन आरंभ होता है तो यह शर्करा में परिवर्तित हो जाता है। नर पुष्पक्रम के पुष्पावलि वृंत (peduncle) को टैप/अंशनिष्कासित करके लगभग 2.5 लीटर रस प्रतिदिन निकाला जाता है। ये टैपिंग/अंशनिष्कासन 2-3 महीने तक जारी रह सकता है। रस को उबालकर चिपचिपी शक्कर या गुड़ बनाया जाता है। यदि तने को पुष्पन से पूर्व टैप/अंशनिष्कासित किया जाए तो साबूदाना भी प्राप्त किया जा सकता है।

7) *कैरियोटा यूरेन्स (Caryota urens)* - मत्स्य पुच्छ ताड़ या ताड़ी का वृक्ष। ये उभयलिंगाश्रयी, एकांडपी, पंखरूपी ताड़ हैं। पुष्पक्रम को रस के लिए टैप/अंशनिष्कासित किया जाता है जिससे ताड़ी या शक्कर बनाई जाती है।

8) *हाइफिनी थीबेका (Hyphaene thebaica)* डूम पाम। ये एक शाखित, एकलिंगाश्रयी पंखरूपी ताड़ है। फल की मीठी गूदेदार फलभित्ति खाने योग्य होती है। इसका उपयोग औषधि में किया जाता है। कठोर बीजों का उपयोग नकली हाथीदाँत के विकल्प के रूप में किया जाता है। अंतस्थ विभज्योतक को ताड़ी बनाने के लिए टैप /अंशनिष्कासित किया जा सकता है।

9) *इलीइस गिनीन्निस (Elaeis guineensis)* - तेल ताड़। ये एक बहुत महत्वपूर्ण पंखारूपी ताड़ हैं। यह किसी भी अन्य फसल से प्रति इकाई क्षेत्र में वनस्पति तेल की अधिकतम पैदावार प्रदान करता है। दो भिन्न तेल इससे प्राप्त किए जाते हैं जिन्हें ताड़ तेल तथा ताड़-अष्टि तेल कहते हैं। ये दोनों ही वनस्पति तेलों के विश्व व्यापार में बहुत महत्वपूर्ण हैं। ताड़ का तेल फल की गूदेदार मध्यफलभित्ति से प्राप्त किया जाता है। मध्यफभित्ति में 45-55% तक तेल होता है। यह तेल हल्के पीले से नांरगी लाल रंग का होता है। ये खाद्य तेल होता है तथा इसका उपयोग औद्योगिक रूप से साबुन, मोमबत्ती, रेलगाड़ियों की धुरी तथा अन्य उत्पादों में किया जाता है।

ताड़-अष्टि तेल गुठली या भ्रूणपोष से प्राप्त किया जाता है। ये नारियल के तेल से मिलता हुआ होता हैं तथा लगभग रंगहीन होता है। ये खाद्य तेल है तथा इसका उपयोग मिठाईयों, बेकरी उत्पादों तथा आइसक्रीम में किया जाता है। इसका उपयोग साबुन तथा कपड़े धोने के साबुनों में भी किया जाता है।

10) *कोपर्नीसिया केरीफेरा (Copernicia cerifera)* - कोर्नोबा मोम ताड़। ये पंखारूपी ताड़ सबसे प्रमुख शाकीय मोम उत्पन्न करता है जो पत्तियों को ढंके रहता है। तरुण पत्तियों को काट कर सुखाया जाता है। मोम को सतह पर से निकाल कर उसे पिघलाया जाता है। ये बहुत कड़ा होता है

और इसका गलनांक बहुत उच्च होता है। मोम का उपयोग फर्नीचर, कार तथा फर्श की पॉलिश बनाने में किया जाता है। इसका उपयोग पेन्ट, वार्निश, कार्बन-कागज, ग्रामोफोन रिकॉर्ड्स, मल्हम तथा लिपस्टिक बनाने में भी किया जाता है।

जैव-प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा भारत के कुछ राज्यों में तेल ताड़ की बड़े पैमाने पर खेती की जा रही है। ये राष्ट्र को खाद्य तेलों के उत्पादन में आत्म निर्भर बनाने में सहायक होगी।

11) *ऐरेका केटेचू (Areca catechu)* - सुपाड़ी ताड़। ये एक पंखारूपी ताड़ हैं। पके तथा कच्चे बीजों का कठोर सूखा हुआ भ्रूणपोष व्यापक रूप से चर्वणी/चाबने वाली वस्तु के रूप में किया जाता है। इसको पान के साथ या अकेले ही खाया जाता है। सुपाड़ी खाने की आदत विश्व्यापी है और मुँह का कैन्सर भी कर सकती है। सुपाड़ी को सामान्यत: धार्मिक अनुष्ठानों तथा औषधियों में भी उपयोग किया जाता है।

12) *फाइटीलेफस मैक्रोकार्पा (Phytelephas macrocarpa)* - नकली हाथी दाँत या आइवरी नट ताड़। ये एकलिंगाश्रयी पंखरूपी ताड़ है। अ-चर्बिताभ भ्रूणपोष बहुत कठोर तथा मजबूत सेलुलोस का बना होता है। इसको वास्तविक हाथीदाँत के विकल्प के रूप में उपयोग किया जाता है और इसे नकली हाथीदाँत कहा जाता है। इसकों वास्तविक हाथीदाँत की भाँति उत्कीर्ण किया जा सकता है। इसका उपयोग शतरंज के मोहरे, बिलियर्ड की बॉल, पाँसे, बटन तथा दरवाजों की चुंडी बनाने के लिए भी किया जाता है। इसको आसानी से रंजकों द्वारा रंगा जा सकता है।

13) *लोडोइसिआ मालडिविका (Lodoicea maldivica) लोडोइसिआ सीचेलेनम (L. seychellanum)* - जुड़वा नारियल या कोको-डी-मेर। ये पंखारूपी ताड़ पादप जगत् में सबसे बड़े बीज निर्मित करता है। ऐसा माना जाता है कि ये वो ताड़ हैं जिसे पर "गरूड़" पक्षी रहता था। इसके खोल का उपयोग पानी संग्रह करने के लिए बर्तन आदि के रूप में किया जाता है। पत्तियाँ चटाइयों तथा अन्य वस्तुओं के लिए मूल सामग्री प्रदान करती हैं।

14) *कैलामस रोटैंग (Calamus rotang)* - रैटन या बेंत ताड़। ये आरोही एकलिंगाश्रयी पंखरूपी ताड़ हैं। इसके लंबे तनों का उपयोग बेंत का फर्नीचर, छड़ी, पोलो की स्टिक, [illegible], झूलने वाले पुलों, टोकरी तथा चटाई बनाने में किया जाता है।

15) सजावटी ताड़ - बहुत से ताड़ अपनी उत्कृष्ट संरचना के लिए उगाए जाते हैं और ये बहुत से बगीचे के प्रमुख सजावटी पादप हैं। कुछ अधिक प्रचलित सजावटी ताड़ हैं :

रॉयस्टोलिया रीजिया (Roystonea regia)	-	क्यूबाई रॉयल ताड़ अथवा बोतल ताड़ (Cuban royal palm or Bottle palm)
कैरियोटा सरेन्स (Caryota urens)	-	मत्स्य पुच्छ ताड़ (Fish tail palm)
कोराइफा अंब्रेकुलीफेरा (Corypha umbraculifera)	-	टैलीपॉट/तालीपात ताड़ (Talipot palm)
लीवीस्टोना चाइनेन्सिस (Livistona chinensis)	-	चीनी पंखारूपी ताड़ (Chinese fan palm)
ऐरिन्गा पिन्नेटा (Arenga pinnata)	-	शर्करा ताड़ (Sugar palm)
हाइफिनी थीबेका (Hyphaene thebaica)	-	मिस्रवासी/इजिप्शीयन डूम ताड़ (Egyptian Doum palm)
लोडोइसिया मालडीविका (Lodoicea maldivica) या *लोडोइसिया सीचेलेरम (Lodoicea seychellarum)*	-	कोको-डी-मेर (Coco-do-mer)

23.5 कुल पोएसी (Poacea) अथवा ग्रामिनी (Graminae)

घास कुल (Grass family)

नामकरण प्रकार : पोआ (*Poa*)

सामान्य जानकारी

पोएसी एकबीजपत्री पादपों का एक प्राकृतिक तथा सजातीय कुल है। घासें विस्तृत रूप से पूरे विश्व में वितरित हैं और वे उन सभी स्थानों पर उग जाती हैं जहाँ पादप जीवित रह सकते हैं। ये पुष्पीय पादपों का एक बहुत बड़ा कुल है जिसमें लगभग 550 वंश तथा 10,000 जातियाँ हैं। घासें भूमध्य रेखा से लेकर ध्रुवों तक, तथा समुद्र तल से लेकर पहाड़ों पर बर्फरेखा तक पाई जा सकती हैं। ये नम तथा शुष्क स्थानों, खारे या ताजे जल अथवा मरूस्थल में भी पाई जा सकती हैं। घासें खुले स्थानों पर अधिक पाई जाती हैं तथा घने जंगलों में अधिक नहीं होती हैं। वे प्रभावी समुदाय जैसे कि सवाना, प्रेअरी, स्टेपीज़ तथा शाद्धल (meadow) बना सकती हैं।

सभ्यताओं का विकास तब हुआ जब मनुष्य ने कृषि के बारे में जाना। घासें मनुष्य द्वारा उगाए गए पहले पादप थे। ये पादप अपने गुणों में काफी विशिष्ट तथा पादप जगत के अन्य पादपों से भिन्न होते हैं। भारत में पादपों का ये दिलचस्प समूह 240 वंशों तथा 1200 जातियों द्वारा प्रदर्शित होता है और ये पूरे देश में पाई जाती हैं।

क्षेत्रीय पहचान

घासें अधिकांशतः शाकीय पादप हैं जिनमें रेशेदार जड़ तंत्र होता है; वायवीय तने मूसलाकार (terete) होते हैं तथा पर्व सामान्यतः खोखले होते हैं; पत्तियाँ एकांतरी होती हैं; प्रत्येक पत्ती में एक आच्छद, एक पटल तथा एक जीभिका (ligule) होती है। समानान्तर पर्णविन्यास (parallel venation) पाया जाता है। पुष्पक्रम जटिल कणिशिकाओं (spikelets) का बना होता है; प्रत्येक कणिशिका में बंध्य सहपत्र तथा युग्मित उर्वर तुष (glumes) पाए जाते हैं, पुष्प तनुकृत होते हैं तथा सामान्यः द्विलिंगी होते हैं। परिदलपुंज लॉडिक्यूल द्वारा प्रदर्शित होते हैं। पुंकेसर सामान्यतः 3 तथा मुक्तदोली (versatile) परागकोषों से युक्त होते हैं। जायांग में सामान्यतः 2 पिच्छीय (feathery) वर्तिका होती है, फल, दाना या कैरिऑप्सिस (caryopsis) होता है, जिसके बारे में आप पहले ही खंड 3 ए की इकाई II में पढ़ चुके हैं।

हालांकि घासें अन्य पादपों से भिन्न होती हैं, वे प्रतृणों/सेजेस (sedges) से सतही समानता दिखाती हैं। (साइपरेसी कुल के सदस्य)। पादपों के इन दोनों समूहों को निम्न प्रकार से विभेदित कर सकते हैं:

बॉक्स 23.1 : पोएसी तथा साइपरेसी में अन्तर

पोएसी (घास)	साइपरेसी (प्रतृण/सेजेस)
1) तने मूसलाकार यानि कि अनुप्रस्थ काट में वृत्ताकार	1) तने 2-भागी यानि कि अनुप्रस्थ काट में त्रिकोणीय
2) पर्व सामान्यतः खोखले	2) पर्व ठोस
3) पत्तियाँ एकांतरी तथा 2-श्रेणियों में	3) पत्तियाँ 3- श्रेणियों में
4) पुष्प कणिशिकाओं में तथा उर्वर तुषों के युग्मों में।	4) पुष्प कणिशिकाओं में परन्तु एकल उर्वर तुष के कक्षों में

आकृतिक विविधता

अधिकांश घासें शाकीय पादप हैं परन्तु कुछ (खासतौर पर बाँस) काष्ठीय हैं। शाकीय घासें एकवर्षी या बहुवर्षी हो सकती हैं। उनमें सु-विकसित रेशेदार तथा अपस्थानिक जड़ तंत्र होता है। बहुवर्षी घासों में, निचले पर्व छोटे होते हैं तथा सबसे नीचे वाली पत्ती के कक्ष से अनेकों शाखाएं निकलती हैं। ये शाखाएं या तलशाखाएं (tillers) सीधी बढ़ती हैं और पादप को गुच्छित आकृति प्रदान करती हैं। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण घासों जैसे गेहूँ में (चित्र 23.16), तलशाखाएं प्रति पादप अनाज के उत्पादन को बढ़ा देती हैं। ऐसा इस कारण होता है क्योंकि प्रत्येक तलशाखा का अंत एक पुष्पक्रम में होता है। तलशाखाओं के आधार से, अपस्थानिक जड़ें निकलती हैं जो गुच्छित घास हो सहारा देती हैं (चित्र 23.15)।

बहुवर्षी घासों में भूमिगत प्रकंद भी हो सकता है। ये संधिताक्षी (sympodial) प्रकृति का होता है तथा वायवीय शाखाओं की निचली पर्वसंधियों द्वारा निर्मित होता है। इस संधिताक्षी प्रकंद से सीधे वायवीय प्ररोह निकलते हैं। कभी-कभी, एक देहांकुरधारी (stoloniferous) प्रकंद निर्मित हो जाता है तथा इस प्रकंद से वायवीय प्ररोह निकलते हैं। काष्ठीय बॉस गुच्छों में उगते हैं। परिधि की ओर नए प्ररोहों के निर्मित होने से ये गुच्छे निरंतर बढ़ते जाते हैं। एक बड़ा भूमिगत प्रंकद होता है जिससे स्तर बहुवर्षी काष्ठीय तने निकलते हैं। एक एकल बाँस का तना 30 मीटर तक की लंबाई तथा 25 सें. मी. के व्यास का हो सकता हैं। अत: ये घास कुल के सबसे बडे सदस्य हैं।

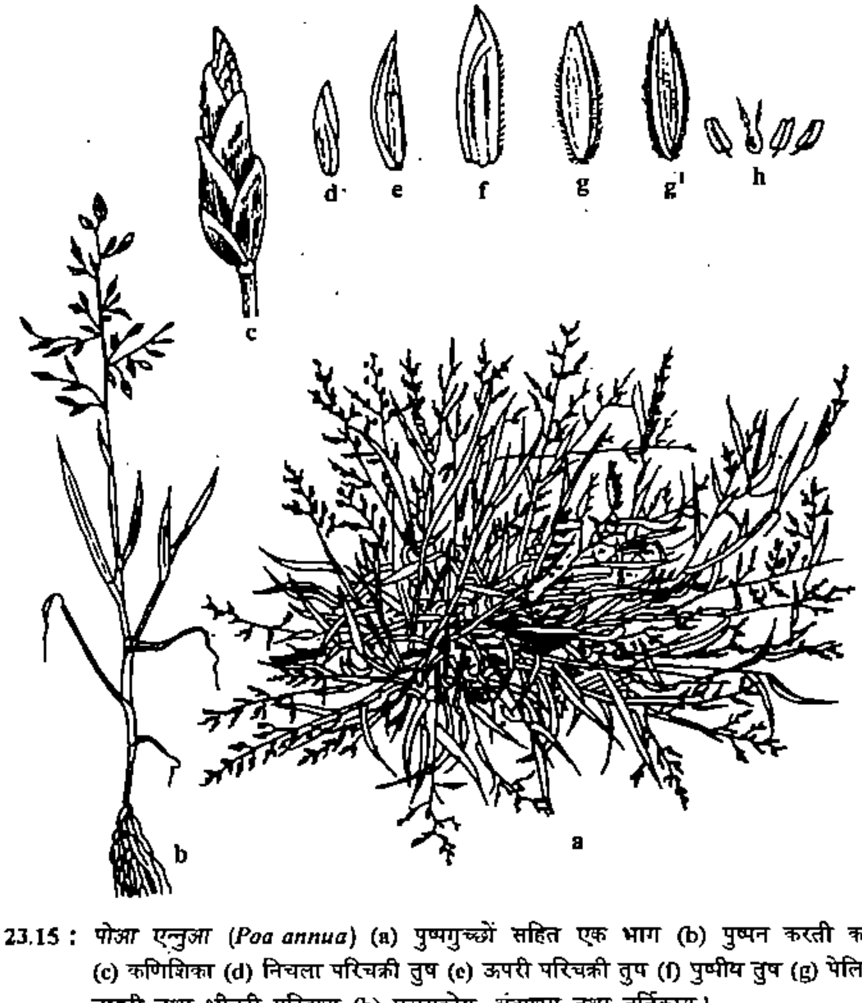

चित्र 23.15 : *पोआ एनुआ (Poa annua)* (a) पुष्पगुच्छों सहित एक भाग (b) पुष्पन करती कल्म (culm) (c) कणिशिका (d) निचला परिचक्री तुष (e) ऊपरी परिचक्री तुष (f) पुष्पीय तुष (g) पेलिया के क्रमश: बाहरी तथा भीतरी परिदृश्य (h) परागकोष, अंडाशय तथा वर्तिकाग्र।

घासों के वायवीय तने कल्म कहलाते हैं और वे सामान्यत: शाखित नहीं होते हैं। कुछ उष्णकटिबंधी घासों में तथा बाँस में, कल्म का शाखन हो सकता है प्रत्येक कल्म में सुस्पष्ट पर्वसंधियाँ तथा पर्व होते हैं। आधार की ओर के पर्व अपेक्षाकृत छोटे होते हैं जबकि शीर्ष की ओर के लंबे होते हैं। पर्व सामान्यत:

खोखले होते हैं क्योंकि मृदूतकी (भरण) ऊतक, जिसमें संवहन पूल स्थित होते हैं, वह आसानी से टूट जाता है। परन्तु *ज़िआ मेज (Zea mays)* (मक्का) (चित्र 23.18) *सैकैरम ऑफीसिनेरम (Saccharum officinarum)* (गन्ना) (चित्र 23.17) तथा अन्य घासों में, पर्व ठोस होते हैं। इनमें मृदूतकी ऊतक टूटते नहीं हैं।

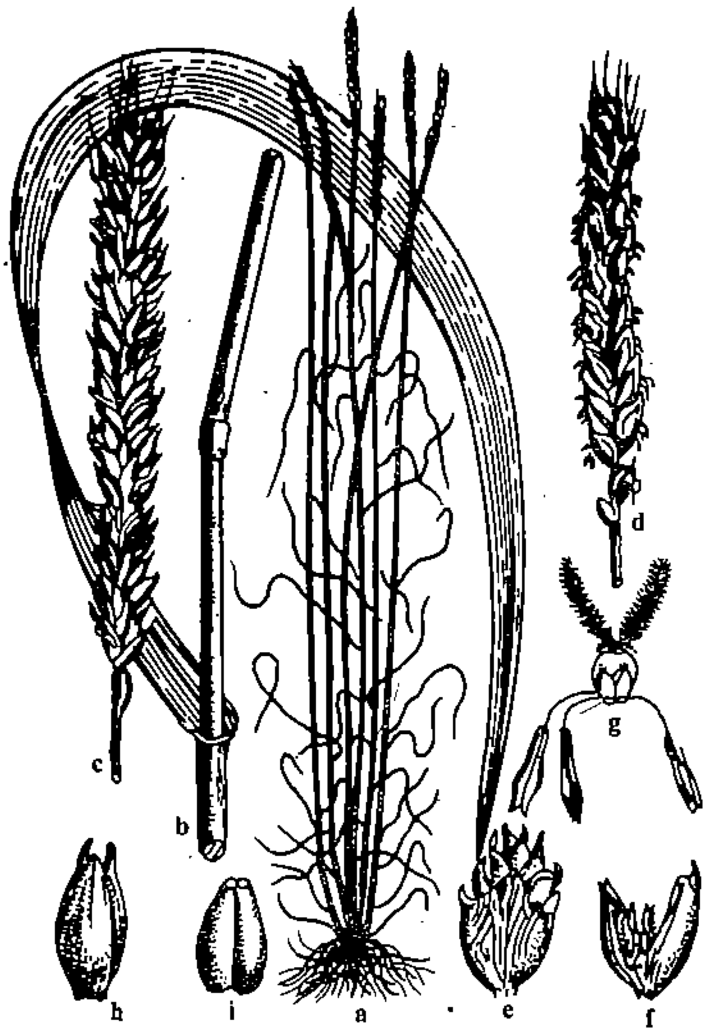

चित्र 23.16 : *ट्रिटिकम एस्टाइवम (Triticum aestivum)* (a) पुष्पन करता पादप (b) पत्ती के साथ कल्म (c), (d) कणिश (e) कणिशिका (f) लेमा और पेलिया से घिरा हुआ पुष्प (g) पुष्प (h) तुष में चंद कार्योप्सिस (i) कार्योप्सिस।

तने मूसलाकार होते हैं (यानि कि अनुप्रस्थ काट में वृत्ताकार)। बहुत सी घासों में प्रत्येक पर्वसंधि के ऊपर विशेष कोशिकाओं का एक अंतर्वेशी विभज्योतकी परिक्षेत्र होता है। ये पर्वों का दीर्घन (लंबाई का बढ़ना) संभव करता है। ये घास के तने को सतर रखना भी संभव करता है जब वो बाहरी बलों द्वारा नीचे की ओर झुक जाता है। कल्म उपत्वचा के नीचे तथा संवहन पूलों के चारों ओर दृढ़ोतकी ऊतकों के विकास के कारण दृढ़ रहता है। बहुत सी घासों में (उदा. गन्ना), प्रत्येक पर्वसंधि के ठीक ऊपर एक मूलपट्टिका (root band) उपस्थित रहती है जो अपस्थानिक जड़ों के मूल आद्यक (root primordia) अथवा मूल आरंभकों की होती हैं।

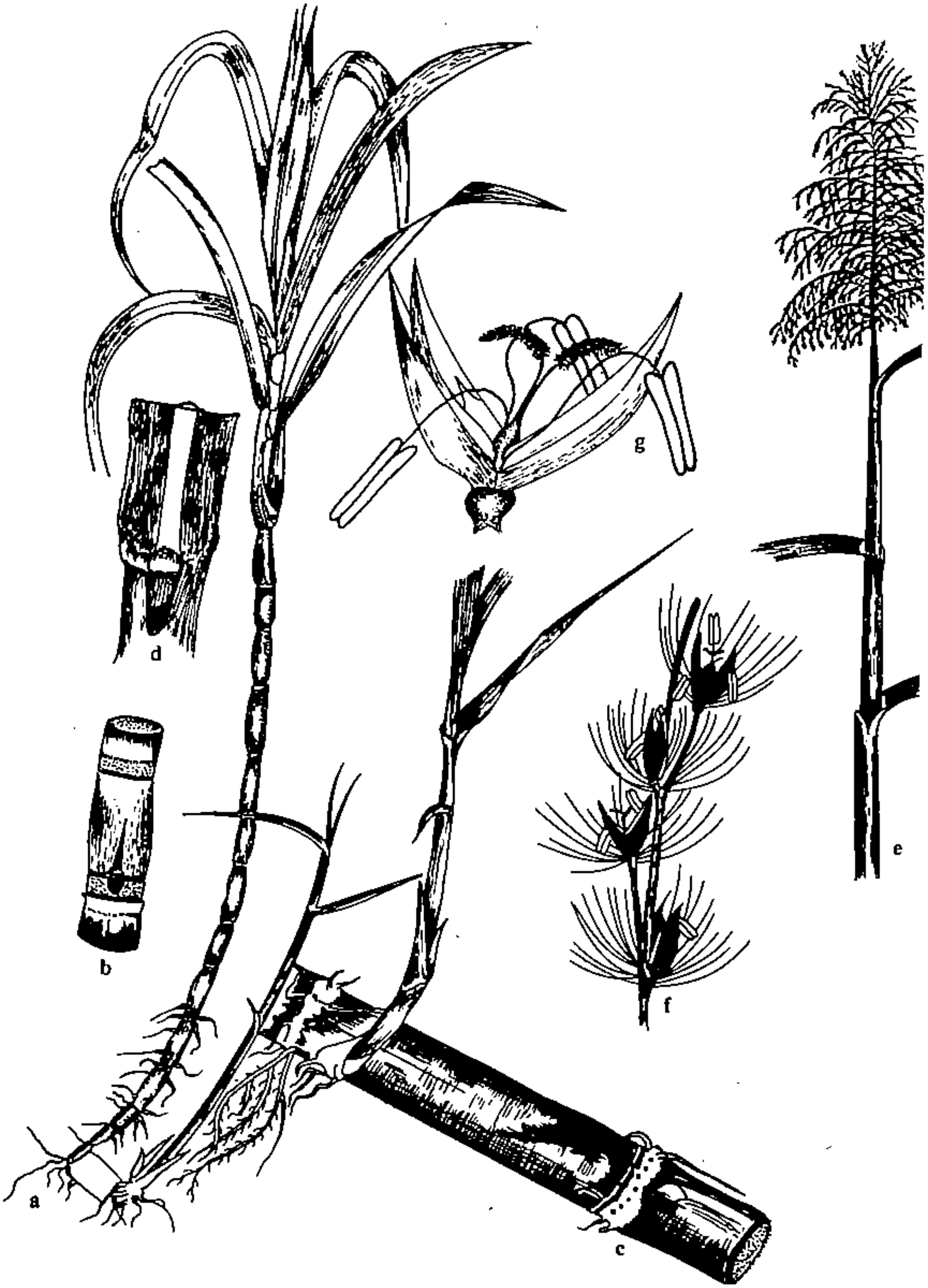

चित्र 23.17 : *सैकैरम ऑफीसिनेरम* (a) सेट (Sett) से उगता हुआ तरुण पादप (b) तने का एक भाग (c) सेट आरंभिक वृद्धि को दिखाता हुआ (d) पटल का आधार (e) पुष्पक्रम (f) पुष्पक्रम का एक भाग (g) कणिशिका।

पत्ती : पोएसी में, पत्तियाँ एकांतरित तथा 2 कतारों में व्यवस्थित रहती हैं। इसे द्विपंक्तिक व्यवस्था अथवा ½ पर्णविन्यास भी कहते हैं। (साइपरेसी में, पत्तियाँ 3 पंक्तियों में होती हैं जो 1/3 पर्णविन्यास दिखाती हैं)। निचली पत्तियाँ छोटे पर्वों के कारण सघन प्रतीत हो सकती हैं। प्रत्येक पत्ती में आधारीय आच्छद होता है। इस पर्ण आच्छद के किनारे कल्म के विपरीत दिशाओं में अतिव्यापित रहते हैं। वे पर्व को घेरे

रहते हैं तथा एक बंद या खुली नलिका बनाते हैं। ये आच्छद पर्व की सुरक्षा करते हैं। आच्छद के बाद पटल या ब्लेड होता है। हालांकि, बहुत से बाँसों तथा कुछ अन्य घासों में, एक पर्णवृंत आच्छद को ब्लेड से अलग करता है। एक विशेष संरचना जिसे जीभिका कहते हैं, वो सामान्यत: आच्छद और ब्लेड की संधि पर उपस्थित रहती है। ये सामान्यत: झिल्लीनुमा (कभी-कभी रोमिल) उद्वर्ध होती है जो आच्छद के शीर्ष पर होती है। पटल या ब्लेड सामान्यत: लंबा और पतला होता है। ये रेखीय या रेखीय-भालाकार हो सकता है तथा ये सामान्यत: पतला होकर एक नुकीले बिन्दु के रूप में हो जाता है। ब्लेड के किनारे अच्छिन्न क्रकची (serrate) अथवा तीखे दाँतेदार हो सकते हैं। पत्तियाँ समानान्तर पर्णविन्यास दर्शाती हैं।

घासों में रंध्रों (stomata) की क्रियाविधि बहुत ही स्पष्ट तथा विशिष्ट होती है। दोनों द्वार कोशिकाएं (guard cells) दीर्घीकृत होती हैं। वे दोनों सिरों पर कंदीय तथा बीच में सीधी होती हैं। प्रत्येक द्वार कोशिका के बीच के भाग में मजबूत असमान रूप से स्थूलित भित्तियाँ होती हैं। द्वार कोशिकाओं के कंदीय सिरे पतली भित्ति के होते हैं। द्वार कोशिकाओं के कंदीय सिरों पर दबाव के बढ़ने या घटने के परिणामस्वरूप रंध्री छिद्र खुलता या बंद होता है।

बहुत सी मरूद्‌भिदी घासों में, पत्तियों के ब्लेड अक्सर वलित या वेल्लित (rolled up) होते हैं। ये पत्ती वलन या वेल्लन शिराओं के मध्य मृदूतक कोशिकाओं के द्वारा होता है। जब वातावरण नम होता है, तब ये मृदूतकी कोशिकाएं स्फीत (turgid) तथा ब्लेड विस्तारित रहता है। शुष्क वातावरण में, ये मृदूतकी कोशिकाएं श्लथ/ढीली हो जाती हैं तथा ब्लेड वेल्लित हो जाता है। जब ब्लेड वेल्लित हो जाता है तो रंध्र पूर्णत: बंद हो जाते हैं। इससे वाष्पोत्सर्जन रुक जाता है।

पुष्पक्रम : पुष्पक्रम सामान्यत: कल्म पर अंतस्थ स्थित होता है और यह जटिल संरचना होती है। ये विशेष इकाइयों का बना होता है जिन्हें कणिशिकाएं कहते हैं। अनेकों कणिशिकाएं सघन (संहत) या श्लथ (loose) पुष्पगुच्छों में, अथवा कणिशों में या असीमाक्षी में व्यवस्थित रहती हैं। *ट्रिटिकम एस्टाइवम* (*T.aestivum*) (गेहूँ) में (चित्र 23.16) तथा अन्य घासों में, पुष्पक्रम प्रत्येक तलशाखा के शीर्ष पर एक कणिशिकाओं का कणिश (spike of spikelets) होता है। *ओरइजा सैटाइवा* (*Oryza sativa*) (चावल) (चित्र 23.21), *सैकैरम ऑफीसिनेरम* (*S.officinarum*) (गन्ना) (चित्र 23.17) तथा अनेकों अन्य घासों में यह कणिशिकाओं का अंतस्थ पुष्पगुच्छ होता है। *ज़िया मेज़* (मक्का) में पुष्प एकलिंगी तथा पादप उभयलिंगीश्रयी होते हैं (चित्र 23.18) इनमें, अंतस्थ नर पुष्पक्रम कणिशिकाओं का पुष्प गुच्छ होता है। यह ुंदना (tassel) कहलाता है। मादा पुष्पक्रम रूपांतरित या विशेषीकृत कणिशिकाओं का कणिश होता है तथा ुट्टा कहलाता है। पुष्पीय अक्ष स्थूलित होता है। यह मादा पुष्पक्रम कल्म के केन्द्र के निकट पत्ती के क्ष में निकलता है। यह वास्तव में अंतस्थ होता है और यह छोटी, संहत पार्श्व शाखा पर उत्पन्न होता ा। यह विशेष शाखा पत्ती के कक्ष में विकसित होती है। एक एकल मक्का के पादप पर सिर्फ एक नर ुष्पक्रम होता है परन्तु 2 या कभी-कभी 3 मादा पुष्पक्रम विकसित होते हैं।

त्येक कणिशिका में एक संघनित अक्ष होती है जिसे रैकिला कहते हैं। इस अक्ष के आधार पर, एक या दो हपत्र जैसी संरचनाएं होती हैं जिन्हें तुष कहते है। इनमें कोई पुष्प नहीं लगते हैं। उनका मुख्य कार्य णिशिका में विकासशील पुष्पों की सुरक्षा करना है। इन तुषों के ऊपर उर्वर तुषों के एक या अधिक जोड़े ते हैं। उर्वर तुषों के प्रत्येक जोड़े में एक पुष्प बंद रहता है। उर्वर तुषों का प्रत्येक जोड़ा एक बाहरी थवा निचले उर्वर तुष जिसे लेमा कहते हैं तथा एक भीतरी या ऊपरी तुष जिसे पेलिया कहते हैं, का बना ता है। लेमा सामान्यत: पेलिया से अधिक उन्नत होता है। लेमा में शूल-जैसा प्रक्षेप उपस्थित अथवा नुपस्थित हो सकता है जिसे शूक (awn) कहते हैं। ये संभवत: लेमा के शीर्ष का अंतस्थ दीर्घन हो सकता । कभी कभी, शूक लेमा की पृष्ठ सतह से जुड़ा रहता है। पेलिया सामान्यत: झिल्लीनुमा तथा लेमा से टा होता है। लेमा सामान्यत: अवमुख (convex) तथा पेलिया अवतल (concave) होता है जिससे कि पुष्प को घेरे हुए एक संहत जोड़ा बनाते हैं (23.19)।

कणिशिकाओं का यह मूल पैटर्न पूरे कुल में समान होता है (चित्र 23.20)। प्रत्येक कणिशिका में सिर्फ एक {उदा. *ऐग्रोस्टिस* (*Agrostis*), *कोइक्स* (*Coix*), *हारडियम* (*Hordeum*)}, *ओराइजा* (*Oryza*) अथवा 2 या अधिक {उदा. *ब्रोमस* (*Bromus*), *फेस्टूका* (*Festuca*), *एलुसाइनी* (*Eleusine*) *ट्रिटिकम*, बाँस} पुष्प पाए जाते हैं। बहुत अधिक तनुकृत पुष्पों को पुष्पक (florets) भी कहते हैं।

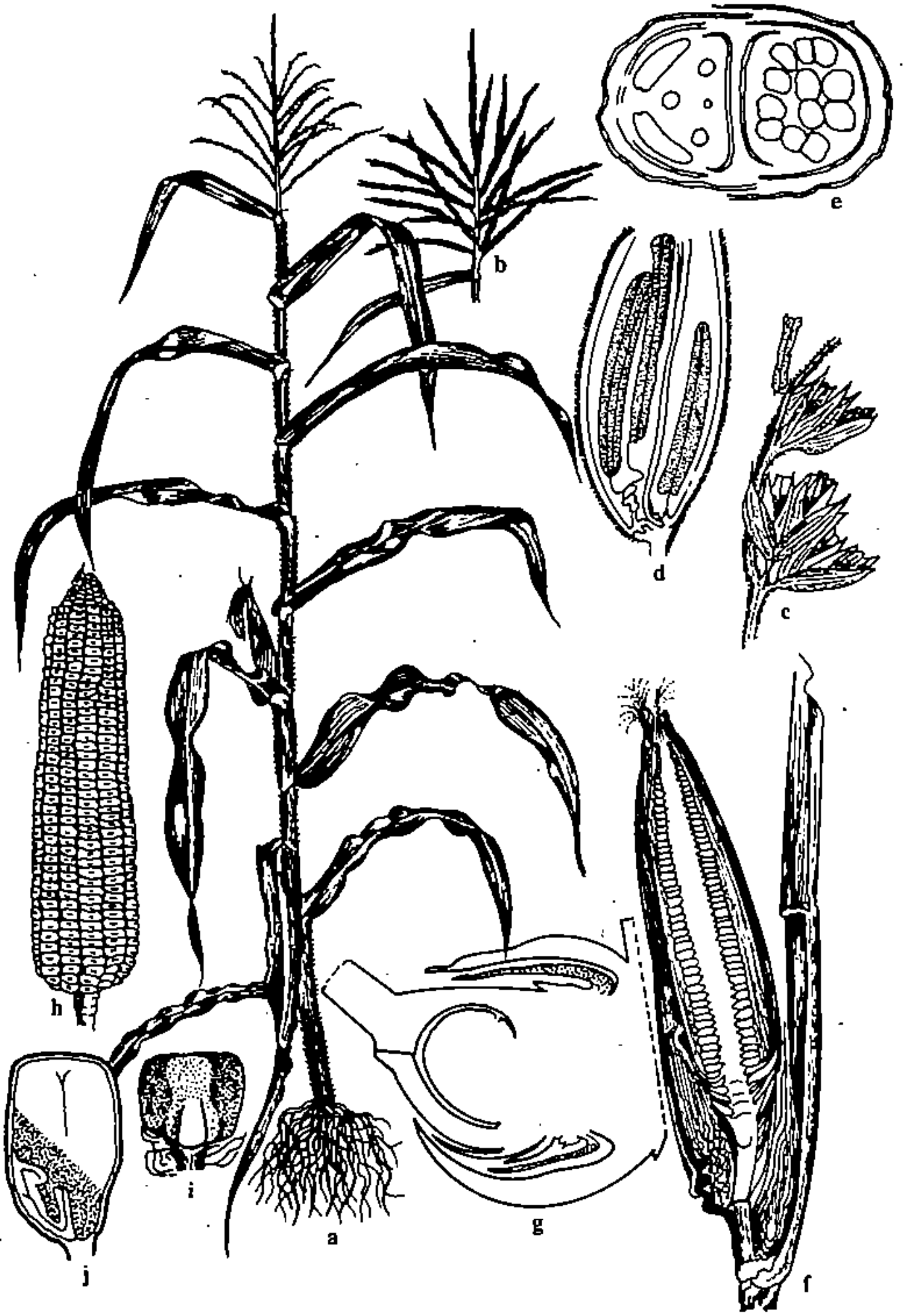

चित्र 23.18 : *ज़िया मेज* (a) पौधा (b) नर पुष्पक्रम (c) नर कणिशिकाएं (d) अनुदैर्घ्य काट में नर कणिशिकाएं (e) अनुप्रस्थ काट में पर कणिशिकाएं (f) अनुदैर्घ्य काट में मादा पुष्पक्रम (g) अनुदैर्घ्य काट में मादा पुष्पक्रम (अधिक दीर्घीकृत) (h) वाली (i) कैरिऑप्सिस (j) अनुदैर्घ्य काट में कैरिऑप्सिस।

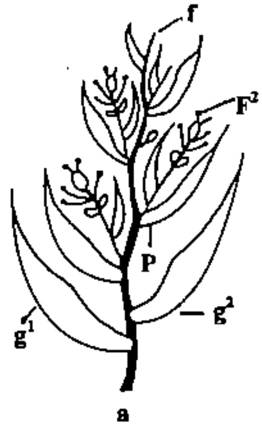

चित्र 23.19: घास की कणिशिका का चित्र जैसा कि वह दिखाई देगा यदि प्रत्येक सेट के अंगों में मध्य के पर्वों को दीर्घीकृत कर दिया जाए (g[1]) निचला तथा (g[2]) ऊपरी वंध्य तुष P) उर्वर तुष तथा (p) सबसे पुराने से दूसरे पुष्प का पेलिया (f[1]) f) एक वंध्य पुष्प सिर्फ अक्ष तथा पेलिया द्वारा प्रदर्शित। इसके ऊपर एक एकल तुष तथा कणिशिका के अक्ष का अंत (रैकिला) होता है।

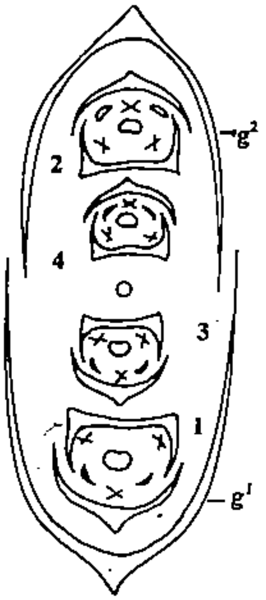

चित्र 23.20 : घास की कणिशिका का चित्र। दो वंध्य तुष (g[1]) निचला (g[2]) ऊपरी। चार पुष्पों को घेरे रहते हैं जिनमें से 1 सबसे निचला तथा 4 सबसे ऊपर का है।

पुष्प : पुष्प बहुत ही सरल होते हैं। ये छोटे, अस्पष्ट, एक व्यास सममित अधोजायांगी तथा सामान्यत: द्विलिंगी होते हैं। कुछ घासों में पुष्प एकलिंगी (उदा. *ज़िया मेज*) तथा कभी-कभी एकलिंगी और द्विलिंगी पुष्प एक ही पुष्पक्रम में पाए जाते हैं {(उदा. *एन्ड्रोपोगोन* (*Andropogon*), *एरीएन्थस* (*Erianthus*), *पैस्पैलम* (*Paspalum*), *पैनीकम* (*Panicum*), *डिजिटेरिया* (*Digitaria*)}। वास्तविक परिदलपुंज अनुपस्थित होता है, तथा कुछ घासविज्ञों के अनुसार पुष्प नग्न होते हैं। हालांकि प्रत्येक पुष्प में सामान्यत: 2 (कभी-कभी 1 या 4) छोटी झिल्लीनुमा या शल्कीय संरचनाएं होती हैं जिन्हें लॉडिक्यूल कहते हैं। ये पुष्प के आधार पर लेमा और पेलिया के बीच में उपस्थित रहते हैं। बहुत से वनस्पति विज्ञानी मानते हैं कि लॉडिक्यूल पुष्प के परिदलपुंज को प्रदर्शित करते हैं। कुछ घासों में (उदा. *ऐन्थोजैन्थम* (*Anthoxanthum*) लॉडिक्यूल पूर्णत: अनुपस्थित होते हैं तथा पुष्प वास्तव में नग्न होता है। लॉडिक्यूल लेमा और पेलिया को अलग-अलग करने का कार्य करते हैं जिससे कि परागकोष तथा वर्तिकाग्र बाहर की तरफ आ जाते हैं। ये अन्य पादपों में पुष्प के खिलने के समान ही होता है। लॉडिक्यूल नमी को अवशोषित कर लेते हैं तथा फूल जाते हैं। इससे लेमा और पेलिया के आधार पर दबाव पड़ता है, जिससे

दोनों पार्श्व से अलग-अलग हो जाते हैं और प्रजनन अंग दिखाई पड़ने लगते हैं। जब लॉडिक्यूल अनुपस्थित होते हैं तो लेमा और पेलिया पार्श्व से अलग-अलग नहीं हो पाते हैं। ऐसी घासों में, प्रजनन अंग उर्वर तुषों के शीर्ष से बाहर निकलते हैं।

बहुत सी बहुवर्षी घासों में पुष्पन प्रतिवर्ष होता है परन्तु बाँसों तथा कुछ अन्य घासों में पुष्पन में भिन्नता पाई जाती है। कुछ बाँस बिना मरे हुए अल्प अन्तरालों पर पुष्पित होते तथा फल धारण करते हैं। अन्य कदाचनिक (sporadically) रूप से कुछ से 40 वर्ष तक के अन्तराल पर पुष्पित होते है। सकृत्फली बाँस भी होते है जो अपने जीवन काल में सिर्फ एक बार बहुत अधिक संख्या में पुष्प उत्पन्न करते हैं ऐसे सकृत्फली बाँस फल निर्मित होने के पश्चात् मर जाते हैं। {(उदा. *ऐरन्डीनेरिया एल्पीना* (*Arundinaria amabilis*). *ऑक्सीटीनेथेरा एबीसिनिका* (*Oxytenathera Abyssinica*)}।

अधिकांश घासों में उन्मील परागणी (chasmogamous) पुष्प होते हैं (वे पुष्प जो खुलते हैं तो उनके प्रजनन अंग लेमा और पेलिया के ज़रिए बाहर आ जाते हैं) ये स्वपरागित अथवा पर-परागित हो सकते हैं। कुछ घासों में अनुन्मील्यपरागणी (cleistogamous) पुष्प होते हैं (बंद पुष्प जिनमें प्रजनन अंग कभी दिखाई नहीं पड़ते हैं) ये सदैव स्व-परागित होते हैं।

पुमंग : पुष्प में सामान्यत: तीन पुंकेसर एक ही चक्र में उपस्थित होते हैं। हालांकि कुछ घासों में {(उदा *फेस्टूका, यूनियोला* (*Uniola*)} सिर्फ एक पुंकेसर होता है। *एन्थोजैन्थम* (*Anthoxanthum*) तथा *कोलिएन्थस* (*Coleanthus*) जैसे वंशों में, में दो पुंकेसर होते है। अधिकांश बाँस. चावल तथा कुछ घासों में, प्रत्येक पुष्प में पुंकेसरों के दो एकांतरी त्रितयी चक्र होते हैं। विरल रूप से कभी-कभी छह से अधिक पुंकेसर भी हो सकते हैं।

प्रत्येक पुंकेसर में एक लंबा नाजुक तंतु तथा एक द्विकोष्ठी परागकोष होता है। पराकोष मुक्तदोली होते हैं तथा अंतर्मुखी स्फुटन दर्शाते हैं। प्रत्येक परागकोष अनेकों महीन कणमय तथा चिकने परागकण उत्पन्न करता है।

जायांग : पोएसी में जायांग के संगठन के संदर्भ में दो मत हैं। कुछ घासविज्ञ मानते हैं कि जायांग एकांडपी होता है अन्य का सुझाव है कि यह या तो द्वि-अथवा त्रि-अंडपी तथा युक्तांडपी होता है। ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय सदैव एककोष्ठकी होती है तथा इसमें आधारी बीजांडासन पर एक ही अंडप होता है। वर्तिका सामान्यत: दो (कभी-कभी 1 या 3) होती है और प्रत्येक पर बहुत अधिक शाखित पंखरूपी वर्तिकाग्र होती हैं *ज़िया मेज़* में, लंबे रेशमी वर्तिकाग्र काफी प्रमुख होते हैं।

फल : फल इस कुल की विशिष्टता होता है। ये शुष्क अस्फुटनशील फल होता है जिसे कैरिऑप्सिस कहते हैं। यह एक बीजीय फल है जिसमें फलभित्ति (फल की भित्ति) पूर्णत: बीजावरण से मिली रहती है। बीज में आधार के निकट एक ओर छोटा सीधा भ्रूण होता है। बीज का अधिकंश भाग मंडयुक्त भ्रूणपोष का बना होता है। कभी-कभी फल वृत्ति (utricle) होता है (एकबीजीय कठोर शुष्क अस्फुटनशील फल जिसमें पतली फलभित्ति होती है) इसमें बीज में सुविकसित बीजावरण होता है जो फलभित्ति से जुड़ा नहीं होता है। बीज को फल में से अलग किया जाता है (उदा. *एलुसाइनी कोराकैना* (*Eleusine coracana*) या फिंगर मिलेट (चित्र 23.22) कुछ बाँसों में, फलभित्ति बहुत ही कठोर होती है जो छोटा नट/दृढ़फल जैसा फल बनाती है कुछ घासों में (उदा. *हार्डियम वल्गेरी* (*Hordeum vulgare*) या जौ) तुष कैरिऑप्सिस से जुड़े रहते हैं।

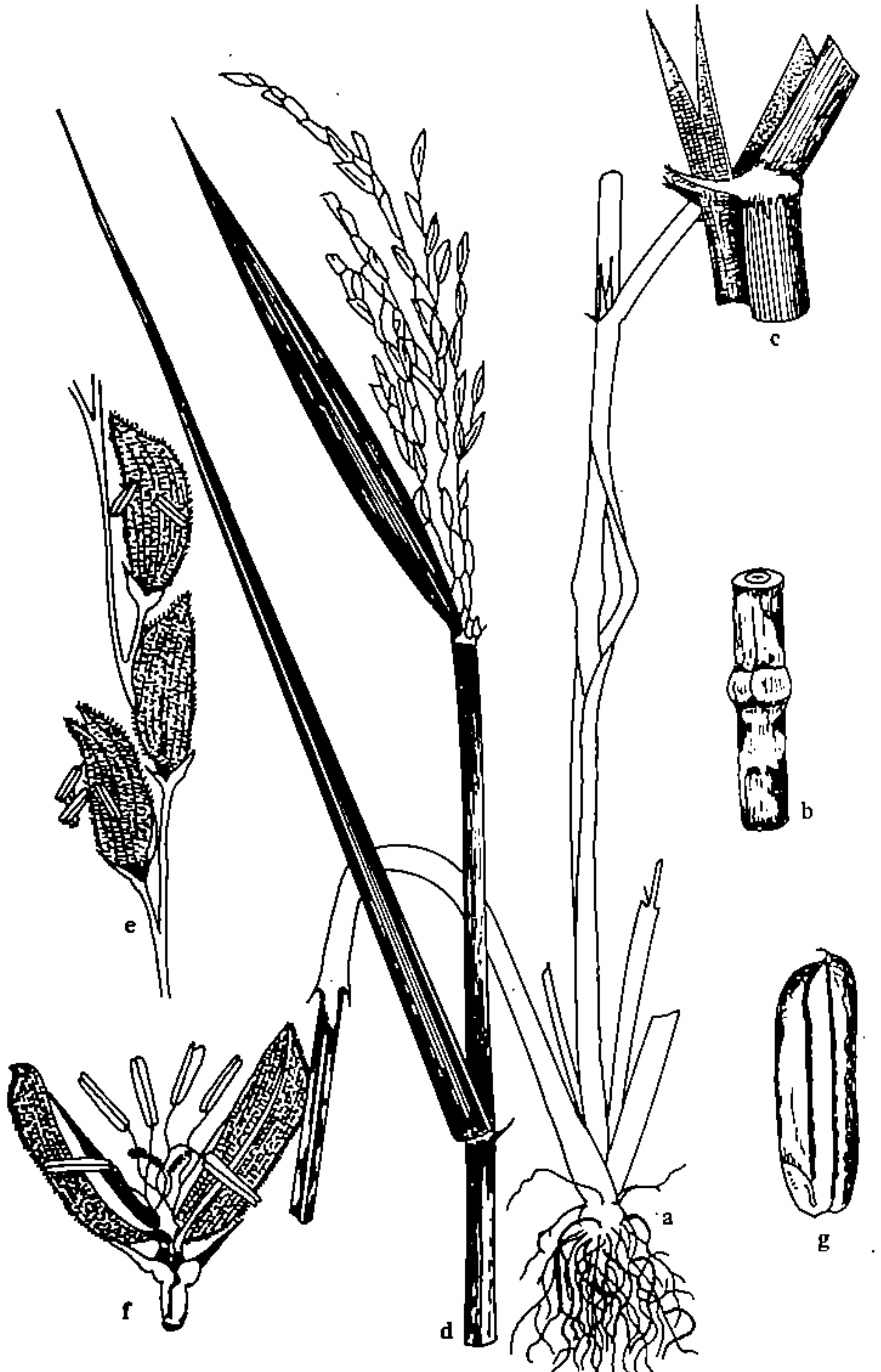

चित्र 23.21 : ओराइजा सैटाइवा (*Oryza sativa*) चावल (a) पादप का आधार (b) तने का भाग आच्छद पर्व के साथ (c) पटल का आधार जीभिका तथा पलियों (auricles) के साथ (d) निकलता हुआ पुष्पक्रम (e) पुष्पक्रम का भाग (f) खुली हुई कणिशिका (g) कैरिऑप्सिस।

विभेदक लक्षण

1) पादप सामान्यत: शाकीय रेशेदार जड़ तंत्र युक्त।

2) गुच्छित प्रकृति अथवा भूमिगत प्रकंद के साथ।

3) वायवीय तने या कल्म मूसलाकार होती है।

4) पर्व सामान्य: खोखले होते हैं।

5) पत्तियाँ द्विपंक्तिक होती हैं जिनमें आधारीय आच्छद, जीभिका तथा लंबा पतला पटल होता है।

6) पर्णविन्यास समानान्तर तथा रंध्र विशेषीकृत आवर्ध द्वार कोशिकाओं युक्त होते हैं।

7) पुष्पक्रम कणिशिकाओं का बना होता है जिसमें बंध्य तथा उर्वर तुष्मों के जोड़े होते हैं।

8) पुष्प छोटे, अस्पष्ट, 0-3 छोटे झिल्लीनुमा लॉडिक्यूल के परिदलपुंज के बने होते हैं।

9) पुंकेसर तीन मुक्तदोली परागकोषों से युक्त होते हैं।

10) अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती तथा एकल बीजांड युक्त होता है तथा वर्तिकाएं दो व पंखरूपी वर्तिकाग्रों वाली होती हैं।

11) फल कैरिऑप्सिस होता है।

12) बीज छोटे भ्रूण तथा बहुत अधिक मांडयुक्त भ्रूणपोष युक्त होता है।

चित्र 23.22 : ऐलुसाइनी कोराकैना (*Eleucine coracana*) फिंगर मिलैट (a) पुष्पन करता प्ररोह (b) पादप का आधार (c) कणिशिकाएं (d) अनुप्रस्थ काट में लेमा और पेलिया (e) फल।

कुल पोएसी को बेन्थम तथा हुकर द्वारा एकबीजपत्री पादपों के ग्लूमेसी कुल में वर्गीकृत किया गया। यह वर्गीकरण के इस तंत्र में आखिरी श्रेणी है जिसमें ग्रामिनी आखिरी कुल है। साइपरेसी कुल को भी ग्रामिनी के साथ ही वर्गीकृत किया गया है। एंग्लर तथा प्रांट्ल के वर्गीकरण में, ग्रामिनी कुल को एकबीजपत्री पादपों के गण ग्लूमीफ्लोरी (glumiflorae) में वर्गीकृत किया गया है। इस गण में भी साइपरेसी कुल को सम्मिलित किया गया है। तख़्ताज़न ने अपने वर्गीकरण में पोएसी कुल को उपवर्ग बी-कोमेलिनिडी (Commelinidae) अधिगण- पोआनी (Poanae) तथा गण- पोएलीज़ (Poales) में रखा गया है। वर्गीकरण के इस तंत्र में, साइपरेसी कुल को उपवर्ग कोमेलिनिडी अधिगण जंकेनेनी (Juncananac) तथा गण-साइपरेलीज़ (Cyperales) में वर्गीकृत किया गया है।

आर्थिक महत्व

आर्थिक रूप से पोएसी कुल पुष्पीय पादपों का सबसे महत्वपूर्ण कुल है। अनाज, सबसे महत्वपूर्ण घासें हैं जो मनुष्य के द्वारा सभ्यता के आरंभ से ही प्रमुख भोजन के रूप में उपयोग की जाती रही हैं। मनुष्य के लिए भोजन प्रदान करने के अतिरिक्त, घासों का उपयोग जानवरों को चराने के लिए भी किया जाता है। वे ऐल्काहॉली पेय पदार्थों तथा अन्य उत्पादों के उत्पादन के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।

मनुष्य के द्वारा उपयोग की जाने वाली कुछ प्रमुख तथा सुपरिचित घासों की सूची नीचे दी गई है।

1) अनाज तथा मिलेट

मनुष्य के द्वारा उपयोग किए जाने वाले छह प्रमुख अनाज हैं :

ए) *ट्रिटिकम एस्टाइवम (Triticum aestivum)* - गेहूँ

बी) *ओराइजा सैटाइवा (Oryza sativa)* - चावल

सी) *ज़िया मेज़ (Zea mays)* - मक्का

डी) *हार्डियम वल्गेरी (Hordeum vulgare)* - जौ

ई) *आवीना सैटाइवा (Avena sativa)* -जई

एफ) *सीकेल सीरेल (Secale cereale)* - राई

इनके अतिरिक्त, अन्य खाद्य घासें भी है जिनके बीज छोटे होते हैं। वे मिलैट कहलाती हैं। उनमें सम्मिलित है

ए) *एलुसाइनी कोराकैना* - फिंगरमिलैट, रागी

बी) *पेनीसीटम टाइफॉइडीस (Pennisetum typhoides)* पर्ल या बुलरश मिलैट/बाजरा

सी) *सोरघम बलगेरी (Sorghum vulgare)* - सोरघम या ज्वार

डी) *सीटेरिया इटैलिका (Setaria italica)*- इटैलियन/ इतालवी मिलैट

ई) *एकादनोक्लोआ फ्रूमेन्टेसी (Echinochloa frumentacea)* जापानी बार्नयार्ड मिलैट

एफ) *पैनीकम मिलिएशियम (Panicum miliaceum)* प्रचलित मिलैट

आपको अनाजों तथा मिलैट्स के बारे में विस्तृत जानकारी खंड IIIA इकाई 11 में दी जा चुकी है।

2) चारा घासें

घासों से प्राप्त होने वाली हरी पत्तियाँ तथा सूखा चारा मनुष्य के पालतू जानवरों तथा अनेकों जंगली जानवरों के लिए मूल भोजन प्रदान करता है। घास मवेशियों के सभी अन्य चारों से सस्ती होती है। प्राकृतिक चारागाह अथवा रोपित चारागाहों में घासों की विभिन्न जातियाँ होती हैं। कुछ विस्तृत रूप से उपयोग की जाने वाली घासों में *डिजिटेरिया (Digitaria)*, *ऐराग्रास्टिस (Eragrostis)*, *एकाइनोक्लोआ (Echinochloa)*, *लोलियम (Lolium)*, *सेन्क्रस*

(*Cenchrus*), साइनोडॉन (*Cynodon*), क्रोइसोपॉगोन (*Chrysopogon*), हैटेरोपॉ.. f (*Heteropogon*), पैनीकम (*Panicum*), पासपेलम (*Paspalum*), पोआ (*Poa*), सीटेरिया (*Setaria*), सोरघम (*Sorghum*) तथा स्पोराबोलस (*Sporobolus*) की जातियां सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ घासें सजावट के तौर पर तथा खेल के मैदानों में भी उगाई जा सकती हैं।

3) शर्करा

सैकैरम (*Saccharum*) वंश में अनेकों आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण कृष्य किस्में हैं। ये सभी गन्ने की शर्करा के सबसे प्रमुख स्रोत हैं। अतः गन्ना पोएसी कुल की एक सबसे मूल्यवान फसलों में से एक है। इस घास का विस्तृत ब्यौरा खंड III ए, इकाई 16 में दिया गया है।

4) बाँस

ये लंबी वृक्षसम घासें लगभग 45 वंश तथा 250 से अधिक जातियों में वर्गीकृत की गई हैं। सबसे अधिक संख्या में बाँस की जातियाँ इंडो-मलेशियाई क्षेत्र में पाई जाती हैं। बाँस के अनेकों उपयोग हैं। इनका उपयोग भवन निर्माण के कार्य में किया जा सकता है। घर, झोपड़ियां, बेड़ा, पुल तथा अन्य संरचनाएं बांस की बनी होती हैं। इनका उपयोग मचान बनाने के लिए, खंभे के रूप में अथवा सीढ़ी, टोकरी, ब्रुश तथा अनेकों अन्य वस्तुओं के लिए किया जाता है। बाँस का पल्प लुगदी (pulp) कागज उद्योग में एक महत्वपूर्ण कच्चा माल है। इन उपयोगों के अतिरिक्त, बाँस के कुछ जातियों के तरुण प्ररोह खाने योग्य होते हैं। बाँस की पत्तियां हाथी के लिए चारे के रूप में उपयोग की जाती हैं तथा बाँसों को वायु रोधी (wind breaker) के रूप में तथा मृदा अपरदन रोकने के लिए भी उपयोग किया जाता है।

बड़े बाँस बेम्बूसा (*Bambusa*), डेन्ड्रोकैलामस (*Dendrocalamus*), ऐरन्डीनेरिया (*Arundinaria*), जाइगैन्टोक्लोआ (*Gigantochloa*), मेलोकैना (*Melocanna*), ऑक्लैन्ड्रा (*Ochlandra*), ऑक्सीटीनेन्थेरा (*Oxytenanthera*) तथा अन्य वंशों की जातियों से प्राप्त किए जाते हैं।

5) वाष्पशील तेल

नींबू घास (Lemon grass) के तेल इत्र तथा प्रसाधन उद्योग में तथा साथ ही सुवासकारी पदार्थ (flavouring substance) के रूप में, उपयोग किया जाता है। इसे सिम्बोपोगोन फ्लैकसुओसस (*Cymbopogon flexuosus*) तथा सिम्बपोगन सिट्रेटस (*C.citratus*) घास की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है। इस वंश की अन्य जातियां भी महत्वपूर्ण हैं जैसे कि सिट्रोनेला घास - सिम्बोपोगान नार्डस (*C. nardus*) जिंजर घास - सिम्बोपोगन केसिया (*C. cassius*), रोशा घास सिम्बोपोगान मार्टिनी (*C. martini*)। इनसे भी वाष्पशील तेल प्राप्त किए जाते हैं।

वेटीवेरिया जिजैनीऑइडीज (*Vetiveria zizancoides*) से खस का तेल प्राप्त होता है। इसे जड़ों से प्राप्त किया जाता है। इसका उपयोग इत्र, प्रसाधन सामग्री, साबुन तथा सुवासकारी पदार्थ के रूप में उपयोग किया जाता है। जड़ों की चटाईयां भी बनाई जाती हैं जिनको गीला करने पर वातावरण ठंडा और सुगंधित हो जाता है।

6) विविध उपयोग

कुछ घासों का उपयोग पैकिंग तथा छप्पर बनाने के लिए तथा भवन निर्माण सामग्री के रूप में किया जाता है। घासों से प्राप्त होने वाले फाइबरों का उपयोग रस्सी बनाने के लिए तथा कागज बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में किया जाता है। ऐरन्डों डोनेक्स (*Arundo donax*) तथा फ्रैग्माइटस कर्का (*Phragmitus karka*) के तनों का उपयोग बाँसुरी तथा अन्य वस्तुएं बनाने के लिए किया जाता है। थाइसेनोलीना मैक्सिना (*Thysanolaena maxima*) के पुष्पगुच्छों का उपयोग झाड़ू बनाने के लिए किया जाता है।

बहुत सी घासों का उपयोग विस्तृत रूप से मृदा संरक्षण में किया जाता है क्योंकि उनका रेशेदार जड़ तंत्र प्रभावी मृदा योजक (soil binder) की भाँति कार्य करता है। ये मृदा अपरदन को रोकता है।

कुछ घासें लैन्डस्केप (landscape) का प्रमुख घटक होती हैं। इनमें गोल्फ के मैदान, खेल के मैदान लॉन/बगीचा तथा अन्य खुले क्षेत्र सम्मिलित हैं। कुछ घासों को सजावटी पादपों के रूप में भी उगाया जाता है। *कोइक्स लैक्राइमा* (*Coix lachryma*) – जोबी (घास मनका या एड्ले) कठोर दृढ़फल/नट जैसे फल उत्पन्न करते हैं जो अपने साइज तथा रंगों में अनेकों विविधताएं दर्शाते हैं। इनका उपयोग माला बनाने में मनकों के रूप में होता है। इन्हें मुर्गियों के दाने तथा खाने में भी उपयोग किया जाता है। इन फलों से बियर जैसा एक पेय भी बनाया जाता है।

बोध प्रश्न

1) निम्नलिखित वंशों के कुलों को बताइए तथा प्रत्येक का एक आर्थिक उपयोग बताइए।

	वंश	कुल	उपयोग
क)	*ऐरन्डीनेरिया*		
बी)	*बोरैसस*		
ग)	*कैलामस*		
घ)	*सिम्बोपोगान*		
ड़)	*ड्रैसीना*		
च)	*रेविनेला*		
छ)	*स्ट्रैलिट्जिया*		
ज)	*यक्का*		

2) तख़्ताज़न के वर्गीकरण में उपवर्ग लिलिडी में सम्मिलित नही हैं।

क) ऐरेकेसी

ख) लिलिएसी

ग) म्यूजेसी

घ) पोएसी

3) उपवर्ग लिलिडी में वर्गीकृत किए गए उन तीन कुलों का नाम बताइए जिनका ऊपर उल्लेख नहीं किया गया है।

क) ....

ख) ....

ग) ....

4) निम्नलिखित पादपों के वानस्पतिक नाम बताइए।

	प्रचलित/सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
क)	स्वर्ग की चिड़िया (Bird of paradise)	
ख)	सिट्रोनेला घास (Citronella grass)	
ग)	खजूर (Date palm)	
घ)	घास मनका (Job's tear)	
ड़)	ट्रेवलर्स ट्री (Travellers tree)	
च)	वेजीटेबल आइवरी (Vegetable ivory) (नकली हाथीदाँत)	

5) क) सुकृत्फली पादप का क्या अर्थ है। ?

....

....

....

बी) पाँच उदाहरण दीजिए।

i)

ii)

iii)

iv)

v)

6) निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित कीजिए और उस कुल का नाम बताइए जिसमें इनमें से प्रत्येक का वर्णन किया गया है।

क) कल्म-

....

....

....

कुल-

....

....

....

ख) पर्णाभ वृंत -

....

....

....

कुल-

....

....

....

ग) कूटतना/आभासी तना

....

....

....

कुल-

....

....

....

23.6 सारांश

- ये इकाई एकबीजपत्री पादपों को परिभाषित करती है तथा चार चयनित कुलों का विस्तृत विवरण देती है। ये हैं ऐरेकेसी, लिलिएसी, म्यूजेसी तथा पोएसी।
- प्रत्येक कुल का नामपद्धति प्ररूप उसका साइज तथा वितरण साथ ही भारत में पाए जाने वाले वंशों की संख्या के बारे में भी जानकारी दी गई है।
- इन कुलों के पादपों को पहचानने के लिए विभेदक लक्षणों की सूची भी दी गई है।
- प्रत्येक कुल के वर्गीकृत स्थान के बारे में जानकारी प्रदान की गई है। यह हमें पादप वर्गीकरण के विभिन्न तंत्रों की तुलना करने में सहायक है।
- प्रत्येक कुल के आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पादपों के बारे में बताया गया हैं जिससे हमें मानव कल्याण के लिए पादपों के महत्व को समझने में सहयता मिलती है।

23.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) वर्गीकरण के उन तंत्रों के नाम बताइए जिनमें निम्नलिखित शब्दों का उपयोग किया गया है। इनमें से प्रत्येक के एक कुल का नाम बताइए जो आपने पढ़ी हैं।

	शब्द	वर्गीकरण	कुल
क)	ऐरेसिडी		
ख)	कैलिसिनी		
ग)	पोएनी		
घ)	कोरोनेरिई		
ङ)	ग्लूमीफ्लोरी		
च)	लिलिफ्लोरी		
ध)	प्रिन्साइपीज़		
ज)	जिन्जीबरेलीज़		

2) क) म्यूजेसी कुल सेन्सु लेटो (**sensu lato**) को म्यूजेसी कुल सेन्सु स्ट्रिक्टो से विभेदित कीजिए।

....

....

....

....

....

ख) वर्गीकरण के 3 तंत्रों में म्यूजेसी कुल के वर्गीकृत स्थान पर टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3) पोएसी कुल के विभेदक लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

4) निम्न कुलों की कायिक तथा पुष्पीय संरचनाओं का वर्णन करिए :

क) कुल ऐरेकेसी

....

....

....

ख) कुल लिलिएसी

....

....

....

5) निम्न कुलों के आर्थिक महत्व पर टिप्पणी लिखिए :

क) कुल म्यूज़ेसी

....

....

....

....

ख) कुल पोएसी

....

....

....

....

6) क) आपके खंड III (आर्थिक वनस्पति विज्ञान) तथा खंड IV (पुष्पीय पादप) के अध्ययन के आधार पर तथा अपने अध्ययन केन्द्र की किताबों की सहायता से, उन सभी पादपों के वानस्पतिक नामों की सूची बनाइए (पादप उत्पादों को भी सम्मिलित करते हुए) जो आपके और आपके परिवार द्वारा उपयोग किए जाते हैं। प्रत्येक पादप को उसके वानस्पतिक मूल में रखिए। पादप के सबसे उपयोगी भाग को पहचानिए और उसके उपयोग बताइए।

ख) अपने आस पड़ोस से 25 पादपों को एकत्रित कीजिए। प्रत्येक पादप के महत्वपूर्ण लक्षणों को रिकॉर्ड कीजिए (इस जानकारी को एकत्रित करने के लिए ब्लाक IV को गाइड की तरह इस्तेमाल करिए)। इन निरीक्षणों से, आप कुछ पादपों को अपने द्वारा अध्ययन किए गए कुलों में रख पाने में समर्थ होंगे। पादपों को अखबारों के बीच में दबा कर पादपालय निदर्शों (Herbarium specimens) को तैयार कीजिए। अपने अध्ययन केन्द्र के वनस्पति विज्ञान के शिक्षकों की सहायता से, अपने द्वारा एकत्रित किए गए पादपों की पहचान कीजिए। इस प्रोजेक्ट/परियोजना की विस्तृत रिपोर्ट लिखिए।

23.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1)	वंश	कुल	उपयोग
क)	*ऐरन्डीनेरिया*	पोएसी	निर्माण आदि के कार्य के लिए बाँस
ख)	*बोरैसस*	ऐरेकेसी	ताड़ शर्करा या गुड़ अथवा ताड़ी
ग)	*कैलामस*	पोएसी	फर्नीचर आदि के लिए बेंत
घ)	*सिम्बोपोगान*	पोएसी	वाष्पशील तेल
ड़)	*ड्रैसीना*	लिलिएसी	राल/रेज़िन सजावटी पौधा
च)	*रैवीनेंला*	म्यूजेसी	सजावटी पौधा
ध)	*स्ट्रैलिट्जियां*	म्यूजेसी	सजावटी पौधा
ज)	*यक्का*	लिलिएसी	फाइबर, औषधि, सजावटी पौधा

2) क़) ऐरेकेसी ख) म्यूजेसी ग) पोएसी

3) 19.3.5 में से कोई तीन कुलों की सूची बना लें। लिलिएसी कुल का वर्गीकृत स्थान

4)	प्रचलित नाम	वानस्पतिक नाम
क)	स्वर्ग की चिड़िया (Bird of paradise)	*स्ट्रैलिट्जिया रेजिनी*
ख)	सिट्रोनेला घास (Citronella grass)	*सिम्बोपोगान नार्डस*
ग)	खजूर (Date palm)	*फीनिक्स डैक्टाइलीफैरा*
घ)	घास मनका (Jobs tear)	*कोइक्स लैक्राइमा-जोबी*
ड़)	ट्रेवलर्स ट्री (Travellers tree)	*रैवीनेला मैडागास्केरिएन्सिस*
च)	वेजीटेबल आइवरी (नकली हाथी दाँत)	*फाइटीलेफस मैक्रोकार्पा*

5) सुकृत्फली (monocarpic) पादप वो होते है जो अपने जीवनकाल में सिर्फ एक ही बार फूल और फल देते हैं। पुष्पन कई वर्षो की कायिक वृद्धि के बाद होता है तथा फल बन जाने के बाद पादप मर जाता है।

ख) i) *मैट्राक्सिलॉन रम्फिआई* — साबूदाना ताड़

ii) *ऐरिन्गा पिन्नेटा* — शर्करा ताड़

iii) *कैरियोटा यूरेन्स* — मत्स्य पुच्छ ताड़

6) क) कल्म

घास के पौधे का वायवीय तना। इसमें सुस्पष्ट पर्वसंधियां तथा पर्व होते हैं। आधार की ओर के पर्व अपेक्षाकृत छोटे होते हैं जबकि शीर्ष की ओर के लंबे होते हैं।
कुल - पोएसी

ख) पर्णाभ वृत
रूपांतरित तना सामान्यत: चपटा तथा पत्ती जैसा जो पादप के प्रकाश संश्लेषणी अंग की भाँति कार्य करता हैं।
उदा. रस्कस
कुल लिलिएसी

ग) कूटतना/आभासी तना
एक आभासी तना जो पर्ण आच्छदों का बना होता है जो एक के ऊपर एक लिपटे रहते हैं। उदा. म्यूजा
कुल - म्यूजेसी

अंत में कुछ प्रश्न

1)	शब्द	वर्गीकरण का तंत्र	कुल
क)	ऐरेसिडी	तख़्ताज़न	ऐरेकेसी
ख)	कैलिसिनी	बेन्थम और हुकर	ऐरेकेसी (पामी)
ग)	पोएनी	तख़्ताज़न	पोएसी
घ)	कोरोनेरिई	बेन्थम और हुकर	लिलिएसी
ङ)	ग्लूमीफ्लोरी	एंग्लर तथा प्रांट्ल	पोएसी
च)	लिलिफ्लोरी	एंग्लर तथा प्रांट्ल	लिलिएसी
छ)	प्रिन्साइपीज	एंग्लर तथा प्रांट्ल	ऐरेकेसी
ज)	जिन्जीबरेलीज	तख़्ताज़न	म्यूजेसी

2) क) म्यूजेसी कुल सेन्सु लेटों का अर्थ विस्तृत संदर्भ में कुल की परिभाषा है। इसमें म्यूजा के अतिरिक्त अन्य वंश भी सम्मिलित हैं।

म्यूजेसी कुल सेन्सु स्ट्रिक्ओं का अर्थ सीमित संदर्भ में कुल की परिभाषा है। इसमें कुछ वंशों को छोड़ दिया गया है, परन्तु वंश म्यूजा को रखा गया है।

ख) सेक्शन 23.15 को देखें - म्यूजेसी कुल का वर्गीकृत स्थान

3) सेक्शन 23.4.4 को देखें पोएसी कुल के विभेदक लक्षण

4) क) सेक्शन 23.3.3 को देखें - ऐरेकेसी की आकृतिक विविधता

ख) सेक्शन 23.2.3 को देखें - लिलिएसी की आकृतिक विविधता

5) क) सेक्शन 23.1.6 को देखें - म्यूजेसी का आर्थिक महत्व

ख) सेक्शन 23.4.6 को देखें - पोएसी का आर्थिक महत्व

इकाई 24 कुछ असाधारण पादप

इकाई की रूपरेखा

24.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
24.2 पोषण के असाधारण तरीकों वाले माँसभक्षी पादप
24.3 मृतजीवी पादप
24.4 परजीवी पादप
24.5 कुछ विलक्षण पादप
24.6 बीज तथा फल
24.7 कुछ विशेष एकबीजपत्री पादप
24.8 सारांश
24.9 अंत में कुछ प्रश्न
24.10 उत्तर

24.1 प्रस्तावना

पादप विविधता II के इस पाठ्यक्रम में आपने बीजी पादपों की संरचना, कार्य तथा जनन जीवविज्ञान के बारे में तथा मानव कल्याण में उनकी उपयोगिता के बारे में भी पढ़ा है। पृथ्वी पर पुष्पी पादपों का विस्तृत क्रम उनके द्वारा पृथ्वी के लगभग सभी कल्पनीय आवासों पर निवहन तथा उपयोग करने की क्षमता के कारण संभव हुआ है। लगभग 12.5 से 14.5 करोड़ वर्ष पूर्व से आरंभ करते हुए बीजपत्री पादपों में इतनी अधिक विविधता आ गई है कि आज न सिर्फ लाखों जातियां बल्कि हजारों जातियों के प्ररूप अस्तित्व में आ गये हैं। वे विशाल रेडवुड (Redwood) से लेकर सूक्ष्म वोल्फिया (*Wolffia*) काष्ठीय से शाकीय, बहुवर्षी से द्विवर्षी व एकवर्षी, शीतोष्ण से उष्णकटिबंधी, मरुस्थलीय से लेकर मध्यवर्ती व वर्षा वन से जलीय आवास तक, स्वपोषी से आंशिक परजीवी, अधिपादप से अंत:भूमिक (subterranean) व अंत:पादप तक विस्तारित हैं। इन विकासात्मक बदलावों में उत्परिवर्तन (mutation) संरचनात्मक रूपांतरण तथा विकासात्मक सुघट्यता (developmental plasticity) के द्वारा बहुपंक्तिक अनुकूलन सम्मिलित हैं। वे पादप जिनमें ऐसे उत्परिवर्तनों को झेलने की क्षमता होती है जो उनकी वृद्धि तथा विकास को बदल देते हैं वे उत्तर जीविता के लिए योग्यतम साबित होते हैं। आप जानते हैं कि पादप अचल होते हैं अत: वे रूक्ष/कठिन पर्यावरणीय परिस्थितियों से बच नहीं पाते हैं। अत: वे उत्तर जीविता के लिए शारीर विज्ञान तथा आकृति विज्ञान में रूपांतरणों के द्वारा प्रकृति के साथ प्रयोग करते हैं। किसी विशेष प्रकार के पर्यावरण के लिए उनके विभिन्न अनुकूलनों से ये सुनिश्चित होता है कि वे कहाँ जीवित रह पाएंगे और कहाँ वे ऐसे जीवों से हार जाएंगे जो वहाँ के लिए बेहतर अनुकूलित हों।

परिभाषा के अनुसार सभी पुष्पीय पादपों में जड़, तना तथा पत्तियां होती हैं, परंतु कुछ पादप अपवाद होते हैं। इस अध्याय में दिए गए कुछ उदाहरण दिलचस्प हैं क्योंकि वे पूर्णत: पर्णहीन तथा तनाहीन होते हैं। कुछ पुष्पीय पादप अत्यधिक आश्चर्यजनक होते हैं क्योंकि इन पादपों में ये सभी मूल अंग उनके जीवन के अधिकांश भाग में नहीं पाए जाते हैं। परन्तु फिर भी आवृतबीजी (ऐन्जियोस्पर्म) पादप हैं।

ब्रोमलिआई (bromeliad) कुल के कुछ पादप लगभग जड़ विहीन होते हैं। लीमा के दक्षिण के तटीय मरूस्थलों पर कोहरा काफी होता है परन्तु वर्षा कभी नहीं होती है। चूंकि मिट्टी हमेशा शुष्क होती है, अत: जड़ों की उपयोगिता कम होती है। इस क्षेत्र की टिलेन्डसिया स्टैमिनी (*Tillandsia starminea*) एक छोटी शाकीय वृक्ष लता है जो मिट्टी के ऊपर पड़ी रहती है। पादप पत्तियों के द्वारा हवा से नमी सोखते हैं जो कोहरे के द्वारा नम हो जाती है और खनिज हवा के द्वारा आई धूल से ले लेते हैं; जो गीली पत्ती की सतह पर घुल जाते हैं। यह पादप मिट्टी से जुड़े नहीं रहते हैं और तटीय टिब्बा (dune) पर लिपट जाते हैं ताकि हवा उन्हें बहा न ले जाये। इस प्रकार की जीवन पद्धति वृक्ष या झाड़ी के लिए असंभव होती है क्योंकि बड़े पादप जड़ों के बिना पर्याप्त जल तथा खनिज अवशोषित नहीं कर पाते।

आवृतबीजी पादप में बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। यह उचित होगा कि हम पादप जगत के इस छोटे से सर्वेक्षण को कुछ असाधारण अथवा दिलचस्प पादपों के बारे में बता कर समाप्त कर दें जो वनस्पति विज्ञानियों तथा अन्य लोगों को भी समान रूप से आकर्षित करते रहें हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- उच्च पादपों में विविधता के महत्व को समझ सकेगा,
- विभिन्न मृतजीवी, परजीवी और विशेष रूप से माँसभक्षी पादपों को सूचीबद्ध,
- पादप जगत में विभिन्न अद्भुत पादपों के बारे में जान सकेंगे।

24.2 पोषण के असाधारण तरीकों वाले माँसभक्षी पादप

पादपों में मांसाहार के विचार ने सदैव लोगों को अचम्भित किया है क्योंकि ये विश्वास करना कठिन है कि पादपों जैसी नाजुक चीज कीटों या जंतुओं को पकड़ कर उनका भक्षण कर सकते हैं। 12 वंशों तथा 5 कुलों की लगभग 370 जातियों में संपूरक आहार के लिए जंतुओं को पकड़ने के लिए विशेष अनुकूलन विकसित हो गए हैं जैसे कि *नेपेन्थीज* (*Nepenthes*), *सारासीनिया* (*Sarracenia*) (घटपर्णी), *डार्लिंगटोनिया* (*Darlingtonia*) (कोबरा पादप) *डायोनिया* (*Dionaea*) (वीनस फ्लाइट्रैप) *ड्रोसेरा* (*Drosera*) (*सनड्यूँ*) तथा *युट्रीक्युलेरिया* (*Utricularia*) (ब्लैडरवर्ट)।

ये सभी मांसाहारी पादप सामान्य रूप से प्रकाश संश्लेषण करने तथा मिट्टी से खनिजों का अवशोषण करने में सक्षम होते हैं। अल्पपोषक मिट्टी में रहने वाले ये पादप मुख्यत: कीटों को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस पोटैशियम तथा अन्य खनिजों के वैकल्पिक स्रोत के रूप में उपयोग करते हैं।

कीटभक्षी पादपों में पाए जाने वाले ट्रैप के प्रकार हैं

- सक्रिय ट्रैप (इनमें तीव्र पादप गति होती है)
  - बंद ट्रैप (Closing trap) (उदा. वीनस फ्लाइट्रैप)
  - ट्रैपद्वार (Trap doors) (उदा. ब्लैडर ट्रैप)
- निष्क्रिय ट्रैप (इनमें तीव्र पादप गति नहीं होती है)
  - चोरगढ़्ढ़ा युक्त ट्रैप (Pitfall trap) (उदा. घटपर्ण)
  - आसंजक ट्रैप (Adhesive trap) (उदा. सनड्यूज)

24.2.1 ब्लैडरवर्ट्स (*युट्रीक्युलेरिया* स्पी.)

इस विश्व्यापी वंश की लगभग 180 जातियां है जो तालाबों और झीलों में पाई जाती है। ये लैन्टीबुलेरिएसी (Lentibulariaceae) कुल के सदस्य हैं। इनमें अधिकांशत मुक्त प्लवी (free floating) जलीय पादप होते हैं जिनमें पत्तियां निमग्न होती हैं जो थैलीनुमा संरचनाओं में रूपांतरित होते हैं जिनका व्यास 0.3 से 5 मि. मी. तक होता है। थैली एक तरफा द्वार युक्त होती है। विश्रान्ति अवस्था के दौरान थैली को हवा से भरने के लिए तरल पदार्थ अवशोषित किए जाते हैं। ट्रैपद्वार के किनारों पर संवेदनशील रोम स्थित होते हैं और जब उद्दीपिका हो जाते हैं तो वे जल के तीव्र आंतरिक प्रवाह के कारण (सैकिण्ड का 1/460 वाँ भाग में) वाल्व को गतिशील कर देते हैं, जिससे जलीय जीव अंदर आ जाता है और फिर द्वार बंद हो जाता है। आसपास के ऊतकों द्वारा पाचन एन्जाइम स्रावित होते हैं, और कुछ ही दिनों में शिकार पच जाता है। यदि शिकार नहीं फंस पाता है तो 30 मिनट में ही ट्रैप पुन: अपनी स्थिति में आ जाता है। जब ब्लैडरवर्ट को जल में से निकाला जाता है, जिस पर वो तैर रहा होता है, तो ट्रैपद्वारों के खुलने पर चिटकने की ध्वनि उत्पन्न होती है।

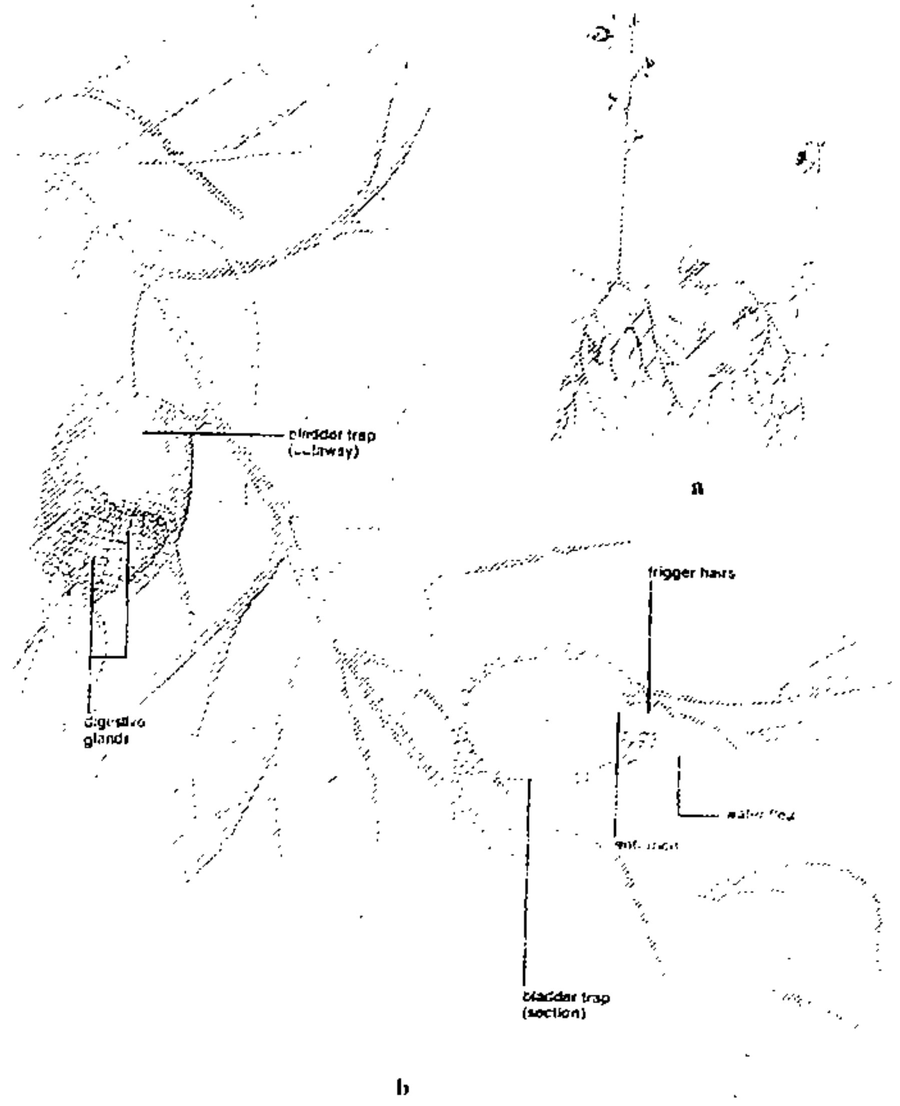

चित्र 24.1 : (a) *युट्रीक्युलेरिया* (b) पाचन ग्रंथियों को दिखाने के लिए कटा हुआ ब्लैडर ट्रैप (c) प्रवेश द्वार तथा रोमों को दिखाने के लिए थैली की काट।

24.2.2 वीनस फ्लाइट्रैप (*डायोनिया* स्पी.)

वीनस फ्लाइट्रैप, *डायोनिया मसीपुला (Dionaea muscipula)*, एक छोटा थलीय पादप है जिसमें छह से आठ पत्तियों का रोज़ट होता है जो 1-3 से. मी. (0.4–1.2 इंच) लंबे ट्रैप धारण किए रहती है। ट्रैप पत्ती के शीर्ष पर बनता है, पर्णवृंत कोरद्वार/कब्जा बनाता है तथा बाकी पर्ण ऊतक दो पालियां बनाते हैं। पालियों के किनारे अनेकों लंबे शूल युक्त होते हैं। जब पत्ती बंद होती है तो पालियों के शूल एक दूसरे के साथ मिल जाते हैं। प्रत्येक पालि पर एक तिकोने में तीन कड़े रोम स्थित होते हैं। ये लगभग 1.5 मि. मी लंबे होते हैं और पत्ती के बंद होने में विमोचक का कार्य करते हैं। कोई कीट जब किसी एक रोम को स्पर्श करता है, तो एक विद्युत् तरंग उत्पन्न होती है परन्तु ट्रैप खुला रहता है। कब्जा तभी सक्रिय होता है जब दूसरे रोम की गति विभवतरंग को निश्चित निरावेशित स्तर (discharge level) तक बढ़ा देती है। वैद्युत तरंग, तब कब्जे को सक्रिय करती है और पत्ती में से इतनी तेज गति से जाती है जैसे कि तंत्रिका आवेग, हालांकि इसमें कोई विशेषीकृत तंत्रिका ऊतक नहीं होता है। वीनस फ्लाइट्रैप में ये दोहरे कार्य वाला विमोचक संभवत: वर्षा की बूंद के द्वारा ट्रैप के अनावश्यक रूप से बंद हो जाने को रोकने के लिए विकसित हुआ है। एक बार विमोचित होने पर ट्रैप बहुत जल्दी सैकिण्ड के पाँचवें भाग में ही बंद हो जाता है।

यदि कोई शिकार नहीं फंसता है तो ट्रैप घंटे भर में खुल जाता है। वीनस फ्लाइट्रैप चटकीले रंगों के होते हैं क्योंकि इनमें एन्थोसायनिन वर्णक होता है, इसलिए कीट पादप की ओर आकर्षित होते हैं।

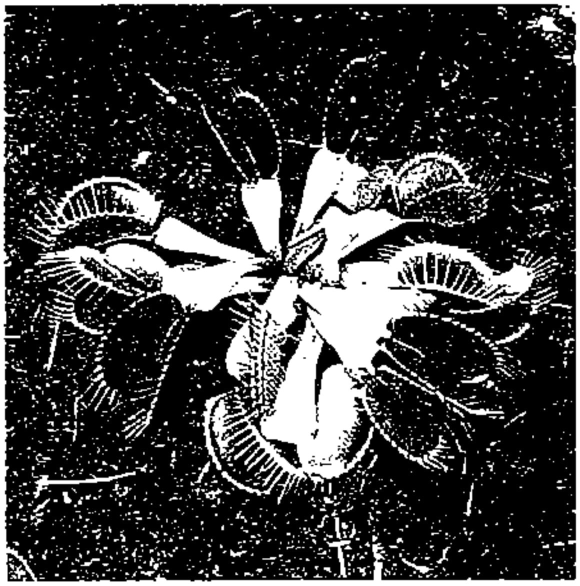

चित्र 24.2 : वीनस फ्लाइट्रैप-दर्शनीय माँसभक्षी, जिसमें मुक्त और बंद ट्रैप होते हैं। पत्ती की पालियों की भीतरी सतह में चटकीले लाल रंग की पाचन ग्रंथियां होती हैं।

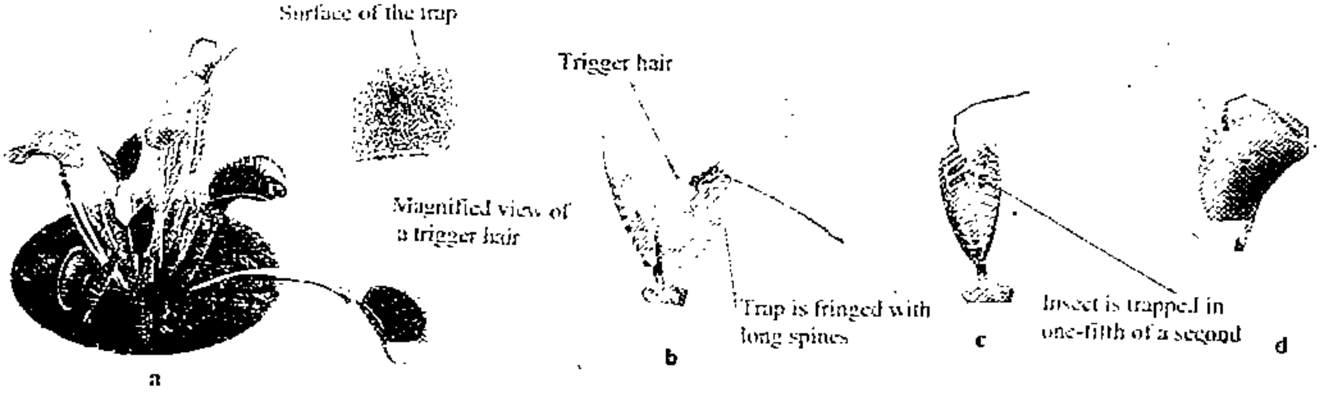

चित्र 24.3 : वीनस फ्लाइट्रैप की कार्य प्रणाली (a) पूर्ण पादप (b) पत्ती पर बैठा हुआ एक कीट जो संवेदनशील ट्रिगर रोमों को छू रहा है (c) शूलों के परस्पर जुड़ जाने से शिकार को फंसाए हुए पत्ती का बंद हो जाना (d) ट्रैप 30 मिनट में पूरी तरह से बंद हो जाता है और पाचन आरंभ हो जाता है।

24.2.3 सनड्यूज (*ड्रोसेरा* स्पी.)

सनड्यूज के ट्रैप जैसे *ड्रोसेरा*, बटरवर्ट्स *पिंगीकुला (Pinguicula)* तथा रेनबों पादप *बिबलिस (Byblis)* सभी कीटों को पकड़ने के लिए चिपचिपे श्लेष्म का उपयोग करते हैं। कुछ जातियों में पत्ती का फलक गोलाकार होता है, कुछ में दीर्घीकृत होता है और उसमें विलक्षण/विचित्र स्पर्शक (tentacles) लगे रहते हैं, ये निर्गमन (emergences) होते हैं जिनमें संवहनी पूल होते हैं और इनके सिरों पर फूले हुए लाल से रंग के शीर्ष होते हैं जो चिपचिपा चमकदार तरल पदार्थ स्रावित करते हैं।

मक्खियां तथा अन्य कीट जो इसे शहद समझने की भूल कर लेते हैं वो इसके द्वारा पकड़ लिए जाते हैं। स्पर्शक हल्की से हल्की वस्तु द्वारा दबाव के लिए अत्यधिक संवेदनशील होते हैं, जिसके कारण स्पर्शक के शीर्ष की भीतर की ओर तथा नीचे की ओर गति होती है और अंततः मक्खी पत्ती के फलक पर आ जाती है। इसी समय आसपास के स्पर्शकों में भी उद्दीपन हो जाता है जिससे वो भी नीचे के ओर उसी बिन्दु

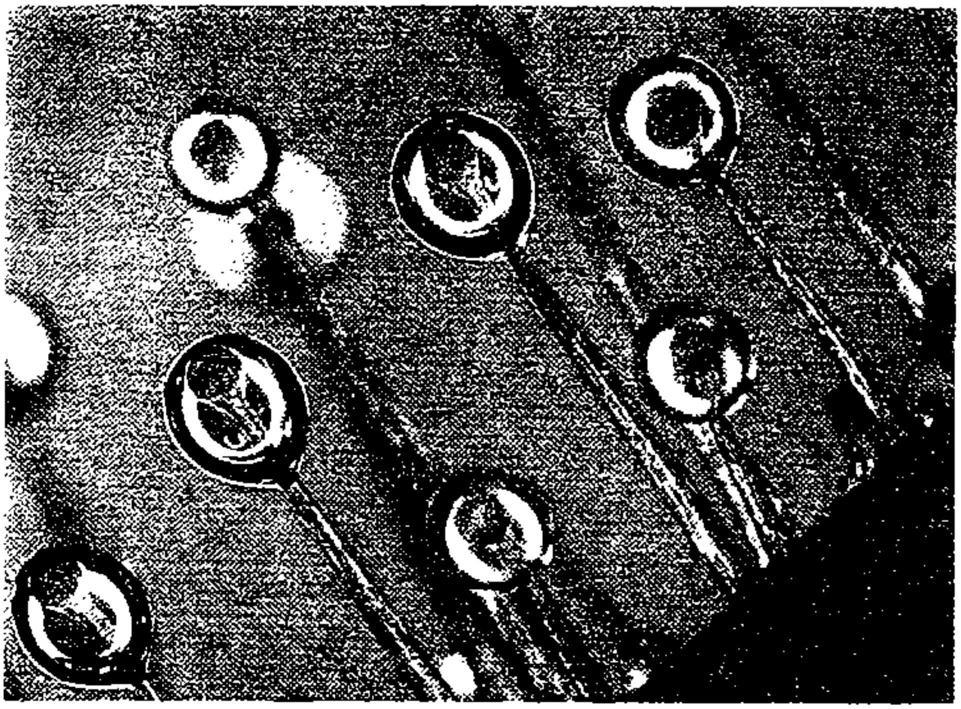

चित्र 24.4 : ड्रोसेरा स्पी. पास से खींचे गए चित्र में वृंतीय ग्रंथियां चिपचिपा तरल शर्करा युक्त हैं।

पर झुक जाते हैं। शिकार या कीट का इस तरह से दम घुट जाता है और तब स्पर्शकों के ग्रंथी युक्त शीर्ष एक किण्व (ferment) स्रावित करते हैं जो शिकार पर क्रिया करता है और पाचन एन्जाइम शिकार को पचा देते हैं। बाद में स्पर्शक एक बार फिर विस्तारित हो जाते हैं और पुन: चिपचिपे तरल पदार्थ को स्रावित करते हैं। ड्रोसेरा बहुत अल्प पोषित मिट्टी में भी रहने में सक्षम होता है।

चित्र 24.5 : सनड्यूज (ड्रोसेरा स्पी.) मक्खी को फंसाए हुए चिपचिपा तरल पदार्थ शिकार पर चिपक जाता है।

24.2.4 घटपर्णी (*नेपेन्थीज* स्पी., *सारासीनिया* स्पी.)

घटपर्णी अपने शिकार को रूपांतरित, प्यालेनुमा पत्तियों या 'घटों' के द्वारा पकड़ते हैं जिनमें पाचक तरल पदार्थ भरा होता है। कीट घट (pitcher) के अंदर आने के लिए प्रेरित हो जाते हैं जहाँ वो फिसल जाते हैं और नीचे घट में हुए तरल में गिर जाते हैं। घट अक्सर चटकीले रंगों के होते हैं और कीटों को आकर्षित करते हैं। पत्तियां विभिन्न आकृतियों और आकारों के घटों में रूपांतरित हो जाती हैं, जिनके द्वार पर छतरीनुमा पल्ले (flap) उपस्थित या अनुपस्थित हो सकते हैं। कुछ घट पत्ती के अंतस्थ भाग में बनते हैं। पादप कीटों को आकर्षित करने के लिए एक विशिष्ट गंध निकालते हैं। घट के घेरे पर मकरंद स्रावित करने वाली ग्रंथियां पाई जाती हैं। प्रलोभित कीट तले में तरल पदार्थ में गिर जाते हैं और उसकी चिकनी दीवारें उन्हें ऊपर नहीं चढ़ने देती हैं। अगर वे घेरे तक चढ़ कर आने में सफल भी हो जाते हैं, तो कड़े नीचे की ओर निकले हुए रोम उन्हें आगे नहीं जाने देते हैं। अंततः वे मर जाते हैं और पाचक एन्जाइम्स और जीवाणुओं की सहायता से पादपों द्वारा पचा लिए जाते हैं। पादपों को जंतुओं को खाने की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? स्पष्ट हैं क्योंकि ये पादप ऐसी मिट्टी में उगते हैं जिसमें कुछ आवश्यक पोषक तत्व अनुपस्थित होते हैं। पोषक तत्वों की कमी को कीटों को खाकर पूरा कर लिया जाता है। प्रयोगात्मक अध्ययनों से पता चलता है कि जब इन पादपों को मानक स्थितियों में सभी आवश्यक पोषक तत्वों के साथ उगाया जाता है, तो ये पादप 'अनाक्रामक' हो जाते हैं, उन्हें कोई ट्रैप विकसित करने या जंतुओं को खाने की आवश्यकता नहीं होती है।

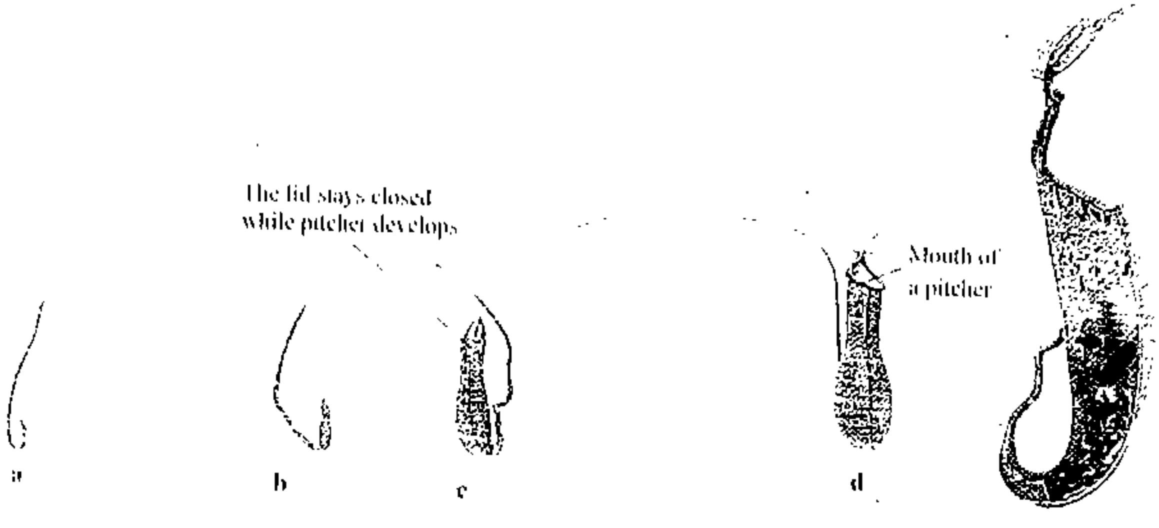

चित्र 24.6 : घटपर्णी का विकास (a) एक तरुण पत्ती का शीर्ष जो कि प्रतान में विस्तारित हो गयी है। (b) एक ऊपर की ओर मुड़ा हुआ उभार शीर्ष पर दिखाई दे रहा है। (c) घट में उभार विकसित हो गए हैं (d) ढ़कना खुला हुआ जब घट परिपक्व हो गया है। (e) घटपर्णी जिसमें घट का एक भाग हटा दिया गया है जिससे की कीट स्पष्ट दिखाई पड़ सकें।

घटों की अपूर्व पाचन क्षमता के बावजूद भी कुछ कीट ऐसे होते हैं जो उनके अंदर रहने में समर्थ होते हैं। *वाइओनिया स्मीथी* (*Wyeonia smithii*) मच्छर के लार्वा *सारसीनिया परप्यूरिया* (*S. purpurea*) के घटों के अंदर रहते हैं और वयस्क मच्छरों को घट की दीवारों पर चढ़ने या उसके बाहर निकल आने में कोई परेशानी नहीं होती है।

सबसे बड़ा शिकार जो सबसे बड़े उष्णकटिबंधी घट *नेपेन्थीज* पकड़ सकते हैं वो छोआ कुन्तक/रोडेंट अथवा पक्षी हैं। हालांकि कुछ मकड़ियां कुछ घटों के साथ आराम से सहचर्य में रहती हैं। मकड़ी की एक जाति अपना जाला नियमित रूप से घट के द्वार पर बनाती है।

नेपेन्थीज खासियाना (*N.khasiana*) एक मात्र जाति है जो भारत (मेघालय) में पाई जाती है जो स्थानिक है। उसके घट 12 से.मी. तक के होते हैं।

चित्र 24.7 : एक चटकीले रंग का घटपर्ण।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित जातियों के वानस्पतिक नामों को उनके प्रचलित नामों के साथ मिलाइए।

1)	*डायोनिया*	क)	घटपर्णी
2)	*ड्रोसेरा*	ख)	ब्लैडरवर्ट
3)	*युट्रीक्युलेरिया*	ग)	वीनस फ्लाईट्रैप
4)	*नेपेन्थीज*	घ)	सनड्यू

24.3 मृतजीवी पादप

लगभग सभी आवृतबीजी पादप स्वपोषी होते हैं (यानि कि, उनमें पर्णहरित पाया जाता है और वे सूर्य की उपस्थिति में अपना भोजन स्वयं बना लेते हैं), परन्तु कुछ पादप जातियां ऐसी होती हैं जिनका पर्णहरित वर्णक लुप्त हो गया है और इसलिए, वे पोषण के अ-स्वपोषी तरीके पर निर्भर करते हैं।

अ-पर्णहरिती (non-chlorophyllous) परजीवी आवृतबीजी पादपों की लगभग 400 जातियां हैं। वे अपना पोषण कवकों के साथ कवकमूल साहचर्य (mycorrhizal association) के ज़रिए प्राप्त करते हैं और मृतजीवी कहलाते हैं। ये पादप जीवित पादपों के कार्बनिक यौगिकों तथा जल का उपयोग वास्तव में परपोषी पादप को बेध कर करते हैं। परजीवी अपनी सफल उत्तर जीविका के लिए अनेक प्रकार के संरचनात्मक रूपांतरण तथा अनुकूलन प्रदर्शित करते हैं।

मृतजीवियों (अ-पर्णहरिती पादपों) में कार्बनिक कार्बन सेलुलोसी कोशिका भित्तियों से प्राप्त किया जाता है। हालांकि उच्चतर पादप अपने आप ऐसा करने में असमर्थ होते हैं। पर कवक मृतजीवी संवहनी पादपों के साथ कवकमूली साहचर्य में सेलुलोस को विघटित कर देते हैं और कार्बन यौगिकों को पादपों में भेज देते हैं।

सभी कवकमूल साहचर्य जो कि संभवत: सबसे आश्चर्यजनक विचित्र तथा विलक्षण पुष्पीय पादप हैं जो बहुत घनिष्ठ रूप से कवक-मूल सहभागिता से जुड़े रहते हैं तथा वनस्पति शास्त्रियों द्वारा "कवक सहपोषित जंगली पुष्प अथवा कवक पुष्प" (mycotrophic wild flowers or fungus flowers) कहलाते हैं। क्योंकि वे परजीवी के तौर पर कवक पर रहते हैं जो कि पेड़ों की जड़ों पर परजीवी होते हैं, अत: वे अधिपरजीवी (epiparasites) कहलाते हैं (परजीवी के ऊपर परजीवी)। वास्तविक मूल परजीवियों जैसे कि *आरोबैन्की* (*Orobanche*) के विपरीत उनकी तुलना छत्रकों (mushroom) से की जा सकती है क्योंकि वे भी अ-पर्णहरिती तथा मांसल होते हैं परन्तु उनके विपरीत ये वास्तविक संवहनी पादप होते हैं जिनमें पुष्प तथा बीज होते हैं। चूंकि इनमें से अनेक कवक सहपोषित जंगली पुष्प अप्रकाशसंश्लेषी होते हैं, उन्हें कभी मृतजीवी माना जाता था (यानि कि मिट्टी में क्षय होने वाले कार्बनिक तत्वों से पोषण प्राप्त करने वाले)। अब हम जानते हैं कि ये जातियां अपने कार्बनिक पोषक तत्व अपने आसपास स्थित वन के वृक्षों से कवकमूली मृदा कवकों के सूक्ष्मदर्शीय चैनल के ज़रिए प्राप्त करती हैं। इन असाधारण पादपों के द्वारा इस प्रकार भोजन प्राप्त करना अनुकूलन की पराकाष्ठा को दर्शाता है जिसे आवृतबीजी पादपों ने प्राप्त कर लिया है।

इनमें से अधिकांश जातियां मोनाट्रोपेसी (Monotropaceae) (भारतीय पाइप कुल) अथवा उससे निकट रूप से संबंधित एरिकेसी (Ericaceae) हीथ (heath) कुल से संबन्धित हैं। विश्व का दूसरा सबसे बड़ा पादप कुल आर्किडेसी (Orchidaceae) भी अपना भोजन स्रोत अनेकों सहपोषित जातियों से प्राप्त करता है।

कुछ 'कवक पुष्प' क्रीम-वेज मटमैले रंग के तथा कवक की भाँति माँसल होते हैं उदा. *मोनोट्रॉपा यूनीफ्लोरा (Monotropa uniflora)* (इन्डियन पाइप), *हेमिटोम्स कंजेस्टम (Hemitomes congestum)* (नोम पादप), *पिटीओपस कैलीफीर्निकस (Pityopus californicus)* (पाइनफुट) तथा *प्लूरीकोस्पोरा फिम्ब्रीओलेटा (Pleuricospora fimbriolata)* (धारीदार/फ्रिन्जड पाइन सैप)। इनमें से कुछ कवक पुष्प अमरीका के प्रशान्त तटीय राष्ट्रों के छायादार शंकु वृक्षी वनों में भी पाये गए हैं। एक अन्य अत्यन्त सफेद पादप दुर्लभ फेन्टम ऑर्किड *सिफैलेन्थेरा ऑस्टिनी (Cephalanthera austinae)*, है। बहुत सी बार कवक पुष्पों को कवक की फलन काया समझ लिया जाता है।

कुछ कवक सहपोषित पुष्प काफी रंगीन होते हैं। *टेरोस्पोरा एन्ड्रोमीडिया (Pterospora andromedea)* तथा *हाइपोपाइटिस मोनोट्रोपा (Hypopitys monotropa)* (अमरीकी पाइन सैप, पाइनसैप नाम संभवतः इसलिए है क्योंकि ये पादप आमतौर पर चीड़ के वृक्षों अथवा अन्य शंकु वृक्षों के नीचे उगते हैं और उनका रस चूसते हैं) गुलाबीपन लिए लाल रंग के होते हैं। *सार्कोडीज सेन्गिनी (Sarcodes sanguinea)* चटकीले लाल रंग का होता है और ब्रिलिऐन्ट रेड स्नो (brillianted snow) पादप कहलाता है, *ऐलोट्रोपा विर्गेटा (Allotropa virgata)* में स्पष्ट लाल तथा सफेद धारियां होती हैं जो पेपर स्टिक (pepper stick) से मिलती जुलती होती हैं, *कोरैलोराइजा मेकुलैटा (Corallorhiza maculata)* तथा *कोरैलाराइजा स्ट्राइएटा (C. striata)* खूबसूरत प्रवल मूल (coral root) ऑर्किड हैं। इन सभी जंगली पुष्पों में एक गुण समान होता है कि वे सभी कवकीय कवक तंतुओं के पिण्ड तथा पेड़ों की जड़ों से ज़मीन में गहरे धंसे रहते हैं तथा *कोरैलाराइज़ा* में ये मांसल पिण्ड मुलायम प्रवालों के गुच्छे जैसा होता है।

बोध प्रश्न 2

कुछ मृतजीवी पादपों का वर्णन करिए। ये पादप कवक सहपोषित क्यों कहलाते हैं ? यदि ये पादप छत्रकों से मिलते हुए होते हैं तो इन्हें आवृतबीजी पादपों में क्यों वर्गीकृत किया जाता है ?

....

....

....

....

....

24.4 परजीवी पादप

ये एक विडम्बना है कि सबसे बड़े पुष्प तथा सबसे छोटे पुष्प परजीवियों के रूप में ही पाए जाते हैं।

वे पादप जो आंशिक रूप से (अंश परजीवी) अथवा पूरी तरह से (पूर्ण परजीवी) दूसरे पादपों के ऊपर जीवित रहते हैं वे सफल परजीवी कहलाते हैं। किसी जीव (यहां पादप जाति में) के द्वारा अपने परपोषी को पहचानने की क्षमता और उस पर सफलतापूर्वक उपयुक्त विशेषीकृत संरचनाओं (चूषकांग) की मदद से पोषक तत्वों के अवचूषण के लिए परपोषी के ऊतकों को बेधने की आवश्यकता होती है। चूषकांग एक अवशोषी अंग होता है जो परपोषी के ऊतकों को भेधता है और दारू/ज़ाइलम तथा पोषवाह / फ्लोएम से एक अथवा दोनों से निकट रूप से संबद्ध हो जाता है और इस प्रकार का रिश्ता कायम कर लेता है कि परपोषी कोशिका परजीवी की कोशिकाओं के साथ जीवद्रव्यतंतुओं (plasmodesmata) को बना लेती है। परजीवी को अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए परपोषी की काया (जड़, तना अथवा पत्ती) पर अधिक लंबे समय तक चिपके रहने में समर्थ होना चाहिए और परपोषी की तुलना में अधिक तेजी से प्रजनन

करने में सक्षम होना चाहिए। अविकल्पी परजीवी परपोषी की वृद्धि और विकास को बुरी तरह से प्रभावित करता हैं। आंशिक परजीवी "जिओ और परपोषी को भी जीने दो" के सिद्धान्त का पालन करता है।

24.4.1 तने के परजीवी

ये वो परजीवी हैं जिन्हें वास्तविक अधिपादपी पूर्ण-परजीवी कहा जा सकता है क्योंकि ये पादप के तना, पत्ती या वायवीय भागों पर उगते हैं।

परजीविता पुष्पीय पादपों के कई कुलों में भी विकसित हो गई है। नई तथा पुरानी दुनिया के कुछ प्रमुख तना परजीवी मिसलटोज (mistletoes) हैं। *विस्कम (Viscum)*, *फोरेडेन्ड्रान (Phoradendron)*, *आर्क्यूथोबियम (Arceuthobium)*, विस्केसी (Viscaceae) कुल के हैं तथा *लोरेन्थस (Loranthus)* लोरेन्थेसी का, व अमरबेल {कस्कुटा *(Cuscuta)*} कस्कुटेसी (Cuscutaecae) कुल का है।

पौराणिक रूप से मिसलटों ईसवीं सनों के पूर्व शताब्दियों पहले से जाने जाते हैं। यूरोप के कुछ भागों में मिसलटों का मध्य ग्रीष्म कालीन जमावड़ा आज भी अलाव जलाने से संबद्ध है, जो प्राचीन पुजारियों अथवा ड्रुजों (druids) द्वारा की जाने वाली बलिदान आदि की रस्मों के अवशेष स्वरूप की जाती हैं। पहले ऐसा माना जाता था कि मिसलटों में जादुई तथा औषधीय गुण होते हैं। इसका उपयोग बंध्यता के इलाज में तथा विषों के प्रतिकारक/ ऐन्टिडोट के रूप में किया जाता था। बाद में, इंग्लैण्ड में (और उसके भी बाद अमरीका) में मिसलटों के नीचे चुंबन लेने की प्रथा विकसित हो गई ये माना जाता था कि ऐसा करने से लोग अवश्य ही विवाह बंधन में बंध जाते हैं।

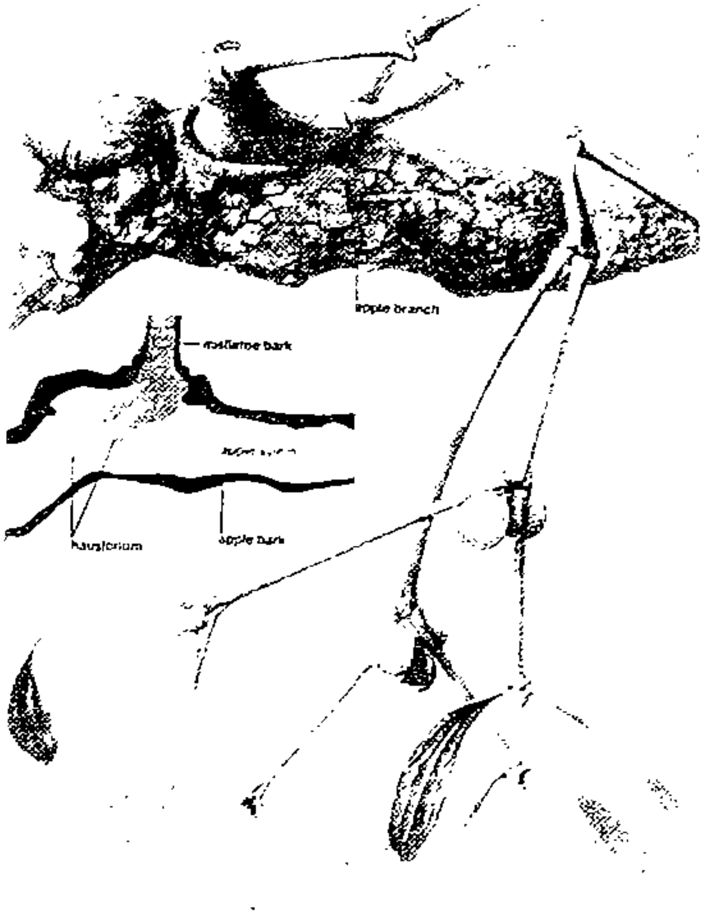

a

b

चित्र 24.8 : (a) *विस्कम एल्बम* चिपचिपे फलों को दिखाते हुए जो पक्षियों की चोंच में चिपक जाते हैं। सेव के वृक्ष का एक भाग जहाँ मिसलटों ने स्वयं को परपोषी से चूषकांग के जरिए जोड़ रखा है।
(b) *विस्कम मिनिमम (V. minimum)* लाल फलों युक्त उष्ण कटिबंधी मिसलटों।

मिसलटों *विस्कम एल्बम* (*V.album*), एसर (*Acer*), ऐलनस (*Alnus*) तथा सैलिक्स (*Salix*) व अन्य पतझड़ी वृक्षों पर उगते हैं। मिसलटों की विभिन्न जातियां प्राकृतिक तौर पर भिन्न-भिन्न परपोषी वृक्षों तथा झाड़ियों पर उगती हैं। मरूस्थली मिसलटों (*फोरेडेन्ड्रॉन कैलीफोर्निकम*) सामान्यत: *ऐकेशिया ग्रैगी* (*Acacia greggie*) पर उगता है। मरूस्थली मिसलटों रसदार चटकीली लाल बेरी/सरस फल उत्पन्न करते हैं जो सर्दियों के महीनों में अनेकों पक्षियों को भोजन तथा जल प्रदान करते हैं। मिसलटों के बीज एक झाड़ी से दूसरी झाड़ी पर पक्षियों के द्वारा ले जाए जाते हैं। वास्तव में मिसलटों शब्द जर्मनी के दो शब्दों से बना हैं : मिस्टा (शमल) तथा टेन (शाखा) जो शाखाओं या तनों पर पक्षियों की बीट के संदर्भ में है।

पर्णविहीन पुष्पीय बौने मिसलटों पोषण के लिए पूर्णत: परपोषी वृक्ष पर निर्भर करते हैं। वे शंकुवृक्षों जैसे चीड़, स्प्रूस, फर तथा हेम्लॉक के मारक परजीवी हैं। चीड़ अथवा बौने मिसलटों (*आरक्यूथोवियम*) विशेषरूप से दिलचस्प हैं क्योंकि ये सिर्फ चीड़ की विभिन्न जातियों पर उगते हैं और सफेद बेरी/सरस फल उत्पन्न करते हैं। चूंकि बेरी के भीतर के रस द्वारा काफी द्रवस्थैतिक (hydrostatic) दाब उत्पन्न हो जाता है जिसकी वजह से वे पकने पर फट जाती हैं। बीज जो सिर्फ तीन मिलीमीटर लंबे होते हैं फटने पर पार्श्वरूप से 49 फुट (15 मी.) तक लगभग 62 मील (100 कि.मी.) प्रति घंटा के प्रारंभिक वेग के साथ विकीर्णित होते हैं। *आर्क्यूथोबियम माइन्यूटीसाइमम* (*A. minutissimum*), *पाइनस वालीशियाना* (*Pinus wallichiana*) पर होता है और यह जम्मू कश्मीर में पाया जाता है।

चित्र 24.9 : *आर्क्यूथोवियम* स्पी. परपोषी वृक्ष में से सिर्फ पुष्प ही दिखाई पड़ रहे हैं।

एक अन्य बहुत ही दिलचस्प अंत:पादपी मिसलटों *ट्रिस्टैक्सि एफाइलस* (*Tristerix aphyllus*) हैं जो मध्य चिली में कुछ कैक्टस जैसे *ट्राइकोसीरियस चिलेन्सिस* (*Trichocereus chilensis*) को संक्रमित करता है। पक्षी *ट्रिस्टैरिक्स एफाइलस* के बीजों को कैक्टस पर छोड़ देते हैं और जब बीज अंकुरित हो जाते हैं, तो नवोद्भिद की जड़ें जो तंतुमय, रोम जैसी होती हैं, वे रंध्रों के द्वारा कैक्टस के वल्कुट की बहुत अधिक कोशिकाद्रव्यी वाली कोशिकाओं के भीतर चली जाती हैं। परपोषी के बाहर बचा हुआ नवोद्भिद का भाग मर जाता है। अत: मिसलटों की संपूर्ण काया मृदूतक के तंतुमय जाल से अधिक कुछ नहीं होती है, इसमें कोई अंग यहाँ तक कि संवहनी ऊतक भी नहीं होते हैं। पुष्पन के समय, कैक्टस की बाह्यत्वचा से ग्रंथिकांए/गाँठे निकल आती हैं और पुष्प निर्मित करती हैं। वे भी फल के पकने के साथ ही मर जाते हैं। हालांकि, एक नजर देखने पर ये बेतुका सा लगता है, परन्तु इसके विशेष प्रकार के आवास को समझने पर पता चलता है कि इसका शारीर विज्ञान तथा विकास उस पर्यावरण के अनुसार कॉफी तर्कसंगत तथा अनुकूल हैं जिसमें ये उगता है।

एक अन्य तना परजीवी अमरबेल या विचेज हेयर/कूबीसम रोम (*कस्कुटा*) है, जो कस्कुटेसी कुल का सदस्य है। कस्कुटा अ-प्रकाशसंश्लेषी तथा अविकल्पी परजीवी होता है जो जल तथा पोषण के लिए पूर्णत: अपने परपोषी पर निर्भर करता है। वयस्क होने पर अमरबेल नारंगी स्पैगेटी जैसे तन्तु गुच्छों के उलझे हुए पिण्ड जैसी लगती है जो झाड़ियों के ऊपर लिपटी रहती है। ये सफेद पुष्प उत्पन्न करती है जो मॉर्निंग ग्लोरी का छाप रूप लगती है।

अमर बेल परपोषी से जल, खनिज तथा कार्बोहाइड्रेट्स चूषकांगों के द्वारा अवशोषित करती है जो परपोषी के ऊतकों के भीतर चले जाते हैं। इनके चूषकांग रूपांतरित अपस्थानिक जड़ें हैं। ऐसा कहा जाता है कि अमरबेल में कलियों, फलों तथा तनों में कुछ मात्रा में पर्णहरित होता है, परन्तु इनमें बनने वाले भोजन की मात्रा पादप की उत्तरजीविता के लिए बहुत कम महत्व की होती है। अमरबेल में बीज बनते हैं जो जमीन पर गिर जाते है और यदि इन्हें उपयुक्त परपोषी मिल जाता है तो अगली वर्धन ऋतु में अंकुरित हो जाते हैं। यदि कोई उपयुक्त परपोषी नहीं मिलता तो बीज पांच वर्षों तक सुषुप्त अवस्था में रह सकते हैं।

अमरबेल के नवोद्भिद अंकुरण के कुछ दिनों के अंदर ही उपयुक्त परपोषी पर पहुंच जाने चाहिए अन्यथा वो मर जाते हैं। नवोद्भिद स्पर्श के लिए संवेदनशील होता है और पीला सा तना तब तक हवा में लटकता रहता है जब तक कि वह पादप के संपर्क में नहीं आ जाता है। संपर्क तने के चारों ओर एक या अधिक घेरे द्वारा और मजबूत हो जाता है। यदि इस पादप में अमरबेल के लिए उपयुक्त भोजन मौजूद होता है तो द्वितीय उद्दीपन हो जाता है जिसके कारण जड़ों जैसे शाखित चूषकांग बन जाते हैं और तने को वेध देते हैं। परजीवी का आधारीय भाग जल्दी ही मुरझा जाता है जिसके कारण मिट्टी से कोई संबन्ध नहीं रह जाता है। अमर बेल पीत रोग (yellow disease), नाशपाती अवनतन (pear decline), ऐस्टर येलो (aster yellow), टमाटर बडी कलिका (tomato big bud) आदि रोगों को दलानों या घास के मैदानों में फैलाती है।

अनेकों कैरिबिआई द्वीपों में पाई जाने वाली ऐसी ही दिखाने वाली अमर बेल *कैसिथा फिलिफार्मिस* (*Cassytha filiformis*) है। ये अमरबेल लोरेसी कुल की है और *कस्कुटा* वंश से पूरी तरह से भिन्न होता है। ये अभिसारी विकास (convergent evolution) का अच्छा उदाहरण है जिसमें प्रत्येक कुल के एक वंश ने परजीवी जीवन का तरीका अपना लिया है।

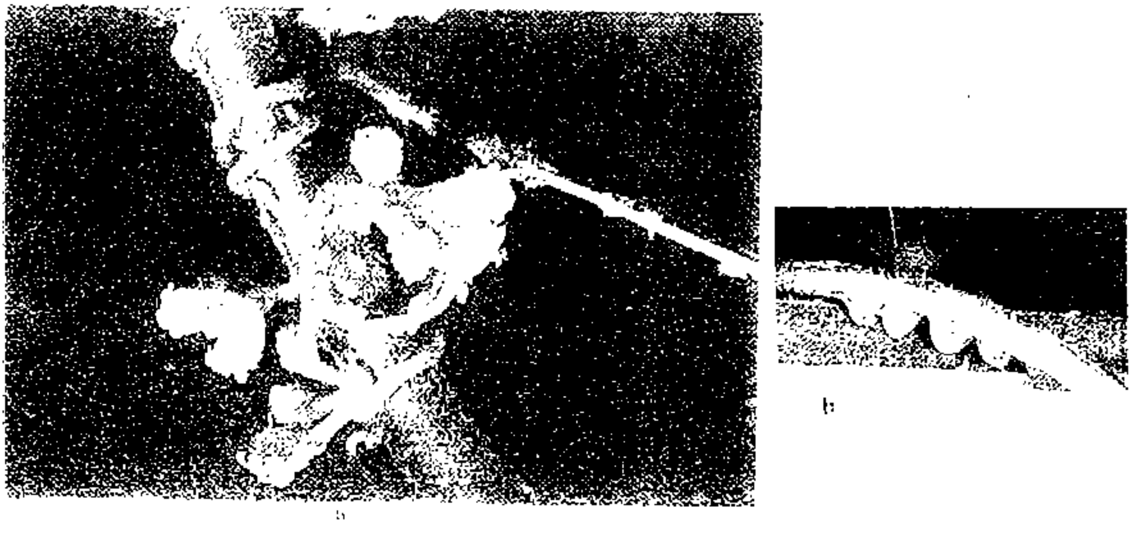

b

a

चित्र 24.10 : कस्कुटा स्पी. (a) पुष्प के साथ अमरबेल (b) आवर्धित चूषकांग।

मिसलटोज लोगों के द्वारा विभिन्न कारणों से एकत्रित किए जाते हैं। यूरोपीय मिसलटों ताकत तथा अच्छे भविष्य का प्रतीक होता है, जो सभी रोगों का सशक्त और जादुई इलाज होता है। हालांकि, क्रिसमस पर चुंबन का चलन बाद की उत्पत्ति प्रतीत होता है और इसने उत्तरी अमरीका में बहुत अधिक लोकप्रियता हासिल कर ली है।

ं:पादपी पूर्ण परजीवी का एक अन्य उदाहरण रैफ्लेसिएसी कुल के छोटे तना अंत:पादपी *पाइलोस्टालीस र्बेरी* (*Pilostyles thurberi*) का है जो मूल दक्षिण पश्चिमी संयुक्त राष्ट्र तथा मैक्सिको का पादप है। फ्लेसिया (*Rafflesia*) की भाँति ही इसमें जड़ तना तथा पत्तियां नही होती हैं। ये जल तथा अन्य ावश्यक पोषक तत्वों के लिए पूर्णत: मधुर सुगंधयुक्त मरूस्थलीय झाड़ी डाइवीड (dyeweed) *सोरोथेमनस इमोराई, Psorothamnus emoryi*) पर निर्भर करता है जो मटर कुल (फेबेसी) का दस्य है। दिखाई पड़ने वाले भागों में सिर्फ छोटे लाल-भूरे से, एकलिंगी, मांसल पुष्प होते हैं जो पूरी तरह खिले होने पर 2-3 मि. मी. के होते हैं और कुछ कुछ मुहाँसों द्वारा छोड़े गए दाग अथवा एक साधारण ाधी पिन के शीर्ष भाग जैसे दिखाई पड़ते हैं।

24.4.2 जड़ परजीवी

पृथ्वी पर कुछ सबसे विलक्षण तथा सबसे खूबसूरत पुष्प मूल परजीवियों में मिलते हैं। पुरानी दुनिया तथा नई दुनिया दोनों क्षेत्रों में कुछ सम्मोहित करने वाले कुल हैं जिनमें रैफ्लेसिएसी, भुंइफोड़ (broomrape) कुल (आरोबैन्कसी), लैनोआ कुल (लैनोएसी), चंदन कुल (सेन्टेलेसी) तथा बैलेनोफोरा) (बैलेनोफोरेसी) सम्मिलित हैं। ये कवक पोषित पुष्पों से भिन्न होते हैं क्योंकि ये अपने पोषण का अवचूषण कवकीय जाल के ज़रिए नहीं करते हैं बल्कि इनका पादप मूलों के साथ सीधे जुड़ाव होता है। यह वास्तव में उत्तर-जीविता के लिए आश्चर्यजनक सहजीवी साहचर्य है।

रैफ्लेसिएसी परजीवी पुष्पीय पादपों का अद्भुत तथा अल्प ज्ञात कुल है जो दुनिया के उष्णकटिबंधी तथा उपोष्ण भागों में सभी जगहों पर फैला हुआ है। कुल का एक सदस्य *रैफ्लेसिया आर्नोल्डाइ (R.arnoldii)* (बदनाम "बदबूदार शव लिली") पृथ्वी पर सबसे बड़ा वैयक्तिक पुष्प उत्पन्न करता है, और वास्तव में यह पादप जगत का एक अजूबा है। अधिकतर पुष्पीय पादपों के विपरीत इसमें पत्तियां या तना नहीं होता है और यह अंतः पादपी रूप से पूर्ण-परजीवी की भाँति अपनी परपोषी द्राक्ष लता *टेट्रास्टिग्मा (Tetrastigma)* जो कि अंगूर (*वाइटिस : Vitis*) का संबन्धी है, की काष्ठीय जड़ों पर उगता है। एक बड़ी पुष्प कालिका जो पीत नारंगी बंदगोभी जैसी होती है परपोषी द्राक्ष लता की छाल से बाहर निकलती है और एक विशाल पुष्प के रूप में वृद्धि कर जाती है जो 3 फुट (0.9 मी.) व्यास तथा 25 पौण्ड (11 कि.ग्रा.) भार तक का होता है। विशालकाय एकलिंगी पुष्प में पांच मांसल लाल पत्तियां (बाह्यदल) होती हैं जिन पर सफेद बुंदकियां छिटकी रहती हैं और उनमें बदबूदार मृतशव की गंध आती है।

बॉक्स 24.1 : *रैफ्लेसिया आर्नोल्डाइ*

> ये "पादप जगत के विशालकाय पॉडा" कहलाते हैं क्योंकि ये दुर्लभ तथा संकटग्रस्त जाति सिर्फ मलाया में सुमात्रा और बोर्नियों के वर्षा वनों में पाई जाती है। इसके बीजों द्वारा परपोषी द्राक्षलता को खोज लेने की संभावनाएं कम होती हैं तथा वर्षा वनों की बहुत अधिक कटाई ने इस संभावना को और भी क्षीण कर दिया है। हाल के वर्षों में इंडोनेशिया तथा मलेशिया की सरकारों ने इस अद्भुत पादप के बाजार मूल्य को पहचाना है और उन्हें यथावत् संरक्षित रखने के लिए पारिस्थितिक संरक्षण गृह स्थापित किए जा रहे हैं।

बोध प्रश्न 3

कुछ तना परजीवियों की सूची बनाइए।

....

....

....

....

....

24.5 कुछ विलक्षण पादप

24.5.1 सबसे ऊँचा पुष्पीय पादप

सबसे ऊँचा पेड़ शंकु-धारी पेड़ तटीय रेडवुड (*सिकोआ सेम्पार्वाइरेंस Sequoia sempervirens*) जो कैलिफोर्निया का निवासी है। रिकॉर्ड में उपलब्ध सबसे ऊँचा जीवित रेडवुड 367 फुट ऊँचा है जो स्टेचू ऑफ लिबर्टी से 62 फुट अधिक ऊँचा है। अब तक के सबसे ऊँचे वृक्ष का रिकॉर्ड सदियों से वनस्पति विज्ञानियों की बहस का मुद्दा रहा है। अद्भुत पुष्पीय ऑस्ट्रेलियाई वृक्ष (*यूकेलिप्टस रेग्नान्स*) (*Eucalyptus regnans*) 18 फुट व्यास का तथा 435 फुट ऊँचा होता है, जिसकी रपट विलियम

फर्गूसन के द्वारा की गई थी। ये सबसे ऊँचा (संभवतः सबसे ज्यादा सयम तक जीवित रहा) मृत वृक्ष है। *यूकेलिप्टस रेग्नान्स* के वृक्ष 300 फुट से ऊपर ही ऊँचाई के होते हैं परन्तु आज खड़ा हुआ सबसे ऊँचा वृक्ष 322 फुट का है (स्टेन कैली द्वारा *यूकोलिप्टस* पर मोनोग्राफ से, खंड I, 1977)।

24.5.2 अति विशाल जीवित वृक्ष

विशाल सिकुआ (*सिकुआडेन्ड्रॉन जागेन्टियम, Sequoiadendron giganteum*) का विश्व के सबसे अधिक उम्र के वृक्ष होने का कीर्तिमान है। विशाल सिकुआ की सबसे अधिक प्रामाणिक उम्र लगभग 3,200 वर्ष थी। भले ही ये विश्व के सबसे पुराने वृक्ष नहीं हों, परन्तु विशाल सिकुआ का अविवादित रूप से विश्व के सबसे अधिक विशाल जीवित वस्तु होने का कीर्तिमान होता है। सबसे बड़ा वृक्ष जिसका नाम जनरल शेरमेन हैं, वह 272 फुट ऊँचा व 35 फुट व्यास विशाल तने वाला तथा आधार पर 109 फुट की परिधि वाला है। और भी अधिक दिलचस्प तथ्य यह है कि 120 फुट की ऊँचाई पर भी जनरल शेरमेन के तने का व्यास 17 फुट है। आकलन के अनुसार इसमें 600,000 बोर्ड फुट से अधिक लकड़ी है, जो औसत साइज़ के 120 घर बनाने कि लिए पर्याप्त है। जनरल शेरमेन के केवल तने का भार ही लगभग 1400 टन होता है।

एक अन्य शंकु वृक्ष जाति जो कि मोन्टेजुमा बाल्ड साइप्रैस (*टैक्सोडियम म्यूक्रोनेटम*) (*Taxodium mucronatum*) कहलाती है। कभी-कभी विशाल वृक्ष के रूप में वृद्धि कर जाती है। इस वृक्ष का एक विशाल प्रतिदर्श/नमूना ओक्सा मैक्सिको के निकट सान्टा मारिया डी टूले के कब्रिस्तान में है जिसे स्थानीय लोगों द्वारा "एल जाइगेन्टी" (El Gigante) कहा जाता है। ये सभी जीवित वस्तुओं में सबसे जाइन्ट सिकुआ जनरल शेरमेन से भी ज्यादा है। इस वृक्ष के तने का व्यास 50 फुट है। ये वृक्ष कभी 10,000 वर्ष पुराना माना जाता था, परन्तु अब वनस्पति विज्ञानी इसे सिर्फ 1500 से 2000 वर्ष पूर्व का मानते हैं।

भारतीय बरगद (*फाइकस बेंगालेन्सिस, Ficus benghalensis*) के भी 100 फुट या अधिक परिधि तक के विशाल तने होते हैं, परन्तु ये लंबे नहीं होते हैं।

बॉक्स 24.2 : विशाल बरगद का वृक्ष

> रिकॉर्ड में मौजूद सबसे विशाल वृक्षों में से एक भारतीय वानस्पतिक उद्यान (**Indian botanical garden**), कोलकता में है। इसे गिनीज़ बुक ऑफ रिकॉर्ड (1985) में विश्व के सबसे अधिक (फैलने वाले) वृक्ष किरीट के रूप में सूचीबद्ध किया गया है, जिसमें 1000 अवस्तंभ मूल (**prop roots**) हैं और वह चार एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है। कुछ बरगद के पेड़ों के वितान/छत्र पूरे पूरे गाँव को छाया प्रदान करते हैं। सिकंदर महान 7000 सैनिकों की सेना के साथ बरगद के पेड़ के नीचे डेरा डाले था। हिन्दू बरगद को पवित्र मानते हैं, क्योंकि ये कहा जाता है कि भगवान बुद्ध अस्तित्व के अर्थ के अपने दर्शन को विकसित करते वक्त छह वर्ष तक इसकी छाया में बैठे थे। बरगद के वृक्ष की स्पष्ट हृदयाकार पत्तियां हल्की सी हवा चलने पर ही अमरीकी पॉपलर के वृक्ष की भांति हिलने लगती हैं, जो कि पौराणिक रूप से बुद्ध के पवित्र चिंतन के लिए श्रद्धांजलि हैं। अंग्रेजी नाम 'बेनयन' (banyan) 'बनियास' (banias) या हिन्दू वणिकों से आया है जो इन विशाल वृक्षों के नीचे बाजार लगाया करते थे।

24.5.3 अत्यधिक कठोर, अत्यधिक भारी तथा अत्यधिक हल्के काष्ठ

पुष्पीय वृक्षों की कम से कम एक दर्जन जातियां जो "लौहकाष्ठ" कहलाती हैं, वे विश्व के सबसे भारी काष्ठ के रूप में जानी जाती हैं। काष्ठ वृक्ष के तने की मृत कोशिकाओं, विशेषरूप से छाल के उतर जाने के बाद के भीतरी दारू ऊतकों का बना होता है। निश्चित रूप से विश्व के सबसे भारी तथा कठोर लौहकाष्ठों में से एक कैरिबिआई वृक्ष लिग्नम वीटाई (*ग्वाएकम आफिसिनेल, Guaiacum officinale*) है, जिसका

आपेक्षिक घनत्व 1.37 है। लिग्नम वटाई नाम का अर्थ है "जीवन की काष्ठ/लकड़ी" जो कि इसके मधुर गंध वाले रेज़िन के औषधीय गुणों के कारण से पड़ा है। इसे काष्ठ के घनत्व और इसके उच्च रेज़िन अंश ने इसको घर्षण तथा अवघर्षण के लिए बहुत अधिक प्रतिरोधी बना दिया है और इसी कारण इसमें कॉफी अधिक स्वत: स्नेहन (self lubrication) का गुण पाया जाता है। कुछ परिस्थितियों में यह वास्तव में लोहे से बेहतर सिद्ध होती है। इसके विपरीत, यूरोपीय कॉर्क बाँज (*क्वेर्कस सुबेर, Quercus suber*) का आपेक्षिक घनत्व 0.24 होता है, तथा उष्णकटिबंधी अमरीकी बाल्सा काष्ठ वृक्ष (*ओक्रोमा पिरेमिडेल, Ochroma pyramidale*) विश्व के सबसे मुलायम तथा हल्के काष्ठों में से एक है, जिसका आपेक्षिक घनत्व सिर्फ 0.19 है।

24.5.4 सबसे छोटे पुष्पीय पादप

डक्वीड कुल (लेम्नेसी) में बहुत ही छोटे पुष्पीय पादपों की लगभग 36 जातियाँ हैं, जो तालाबों, तथा शांत दलदलों, सरिताओं की सतह पर प्लवन करती हैं। वे विश्व भर में वितरित हैं, विशेष रूप से गर्म शीतोष्ण तथा उष्णकटिबंधी क्षेत्रों में। वे बहुत अधिक तनुकृत पुष्पीय पादप होते हैं जिसमें पत्तियां और तने नहीं होते हैं और कुछ जातियों में संवहनी ऊतकों के सिर्फ अवशेष ही पाए जाते हैं। कुल में चार वंश हैं जो जड़ की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति तथा पादप काया के आकार पर आधारित हैं। *वोल्फिया (Wolffia)* वंश के सदस्य पुष्पीय पादपों के लघुकरण में चरम हैं जो बहुत छोटे जड़विहीन सिर्फ 1 मि.मी. लंबे (अथवा कम) के गोले के आकार के पौधे होते हैं। प्रचलित नाम "वाटर मील (water meal) का उपयोग अक्सर *वोल्फिया* स्पी. के लिए होता है क्योंकि वे जल में छोटे खाने के कणों के समान दिखते और महसूस होते हैं।

ये एक सामान्य सिलाई वाली सुई के छेद से निकल सकते हैं तथा कम से कम 5000 पादपों को मिलाकर एक अंगुलित्र/थिम्बिल में रखा जा सकता है। प्रत्येक पादप एक सूक्ष्मदर्शीय पुष्प एक छोटी गुहिका के अन्दर उत्पन्न करता है जो पादप के ऊपरी भाग में विकसित होती है। सूक्ष्म पुष्प में एकल स्त्रीकेसर (pistil) तथा एक ही पुंकेसर (stamen) होता है चूंकि वर्तिकाग्र (stigma) सामान्यत: परागकोष (anther) के परिपक्व होने के पूर्व ही ग्राही हो जाता है, अत: पुष्प को प्रारूपिक रूप से पर-परागण की आवश्यकता होती है। परागण के पश्चात् अंडाशय छोटे एक बीजीय फल में विकसित हो जाता है जिसे दृति (utricle) कहते हैं जो कि विश्व का सबसे छोटा फल है। फल सामान्य टेबल साल्ट (table salt) के घनाभ दाने के साइज का (0.03 मि.मी.-लंबा) तथा वज़न में लगभग 70 माइक्रोग्राम का होता है।

विश्व के सबसे छोटे पुष्पीय पादप की कायिक प्रजनन की दर भी सबसे तीव्र दर वालों में से एक है। भारतीय जाति *वोल्फिया माइक्रोस्कोपिया (W. microscopica)* अपेक्षाकृत छोटा संतति पादप अपने आधारीय प्रजनन थैले (reproductive pouch) में प्रति 30-36 घंटे में मुकुलन करके निर्मित कर सकता है। एक पादप सैद्धान्तिक रूप से चार महीनों में लगभग 1 नौनीलियन (1 nonillion) पादपों (एक के बाद 30 शून्य) को उत्पन्न कर सकता है। ये काफी स्वादिष्ट होते हैं और इनमें लगभग 40% प्रोटीन (शुष्क भार) होती है जो सोयबीन के समान होती है। *वोल्फिया* लोगों के लिए युक्तिसंगत खाद्य स्रोत है। थाईलैण्ड में *वोल्फिया ग्लाबोसा (W. globosa)* खाई नाम (khai-nam) (जलीय अंडे) कहलाता है और लोगों द्वारा खाया जाता है।

सबसे तेज़ गति से वृद्धि करने वाले पादप का रिकॉर्ड बांस की एक उष्णकटिबंधी जाति को जाता है जो तीन माह में 100 फुट की हो जाती है। एक दिन में तीन फुट की वृद्धि यानि कि विस्मयकारी 0.0002 मील प्रति घंटा रिकॉर्ड की जा चुकी है।

दो सबसे छोटी जातियां *वोल्फिया ऐंग्स्टा (W.angusta)* जोकि ऑस्ट्रेलियाई जाति है तथा विश्वव्यापी उष्णकटिबंधी जाति *वोल्फिया ग्लोबोसा (W. globosa)* है। इन दोनों जातियों समूची पादप काया 1 मि.मी. से कम लंबाई की होती है (इंच के 1/25 वें भाग से भी कम) और यह कहना कठिन है कि दोनों में से कौन सी अधिक छोटी हैं, परन्तु शायद *वोल्फिया ग्लोबोसा* थोड़ी सी छोटी हो सकती है। एक औसत वैयक्तिक पौधे 0.6 मि.मी. (इंच का 1/42) तथा 0.3 मि.मी. चौड़ा (इंच का 1/85) होता है। इसका भार लगभग 150 माइक्रोग्राम (1 औंस का 1/90,000) अथवा टेबल साल्ट के दो साधारण दानों के बराबर होता है।

चित्र 24.13 : *एमॉर्फोफैलस टाइटेनियम*।

24.5.7 विश्व का सबसे बड़ा पुष्प

वास्तविक अर्थ में रैफ्लेसिएसी कुल का *रैफ्लेसिया आर्नोल्डाइ* (*Rafflesia arnoldi*) जिसे बदबूदार शव पुष्प भी कहते हैं वह "टाइटन एरम" का समदेशी हैं। हालांकि यह उतना बड़ा नही होता है जितना *एमॉर्फोफैलस टाइटेनियम* होता है परन्तु ये पुष्पक्रम न होकर एकल पुष्प होता है। पुन: सुमात्रा और बोर्नियों के वर्षा वनों का मूल निवासी *रैफ्लेसिया* स्पी. थाईलैण्ड, मलेशिया, इंडोनेशिया तथा फिलीपीन्स में सामान्य रूप से उगता है। ये पादप *सीसस* (*Cissus*) द्राक्षलताओं की जड़ों में अंत: पादपी पूर्ण परजीवी के रूप में रहता है। *रैफ्लेसिया* की कलियां परपोषी लता से गहरे रंग के पिंडों के रूप में बाहर निकलती हैं और खिलने से पहले 9 महीनों तक धीरे-धीरे फूलती रहती हैं। पुष्प एक सप्ताह से भी कम समय तक जीवित रहते हैं। वे पहले दो एक दिन सबसे सुंदर लगते हैं, उसके बाद इनका गूदा गहरा हो जाता है और अंतत: ये गिर जाते हैं। बड़े , गुलाबी सफेद उभरी हुई चित्तियों युक्त या विहीन पाँच पालि युक्त पुष्प कैरिऑन (carrion) मक्खी द्वारा परागित होते हैं। ये चौड़ाई में 91 से.मी. (36 इंच) तक वृद्धि करते हैं तथा दल 3 से.मी. (1 इंच) मोटे और 46 से.मी. (18 इंच) लंबे होते हैं तथा इनका भार 7 कि.ग्रा. (15 पौण्ड) तक होता है।

भारत में रैफ्लेसिया का निकट संबन्धी जो *सैपरिया हिमालयाना* (*Sapria himalayana*) कहलाता है पाया जाता है। इस जाति की खोज ग्रेफिथ द्वारा पूर्वी हिमालय की मिश्मी पहाड़ियों से की गई थी। इस जाति के पुष्प 35 से.मी. व्यास के होते हैं और इस पादप की जाति आज बहुत अधिक खतरे में है।

चित्र 24.14 : *रैफ्लेसिया आर्नोल्डाइ।*

24.5.8 फूलदान पर्ण

डिस्कीडिया रेफ्लेसिआना (*Dischidia rafflesiana*) (एसक्लेपिएडेसी) एक अधिपादपी आरोही लता है जो आसाम में पाई जाती है। घट या फूलदान पत्तियों के रूपांतरण होते हैं परन्तु इनका कीट पकड़ने से कोई वास्ता नहीं होता है। इसमें सामान्यत: बहुत सा मलबा एकत्रित हो जाता है जो ज्यादातर इनमें रहने वाले चीटों द्वारा लाया जाता है। इनमें से अधिकांश में वर्षा जल भरा रहता है संभवत: इसीलिए ये ह्यूमस (humus) संग्रहकर्ता तथा जलाशय की भांति कार्य करती है। भीतरी सतह मोमी (waxy) होती है जिसके कारण जल घट के द्वारा अवशोषित नहीं हो पाता है, परन्तु उन अपस्थानिक जड़ों के द्वारा ले लिया जाता हैं जो तने की पर्वसंधियों से उगती हैं तथा गुहिका के अंदर शाखित होकर फैल जाती हैं। जड़ें जनक पादप से अलग हो जाने पर मिट्टी में उग जाती हैं और यह कायिक प्रवर्धन में सहायक होता है।

a b

चित्र 24.15 : *डिस्कीडिया* स्पी. (a) चीटों को गृह प्रदान करती हैं (b) जड़ों के गुच्छे जो चीटों की बीट से पोषक तत्व अवशोषित कर लेते हैं।

24.5.9 गवाक्ष/भ्रामिका पर्ण

दक्षिण अफ्रीका के कालाहारी मरूस्थल में कोर्पेटवीड (carpet weed) कुल एजोएसी (Aizoaceae) की कम से कम तीन पादप जातियां हैं जो शुष्क तथा बलुई आवास के लिए उपयुक्त अनूठे अनुकूलनों का

उपयोग करती हैं। दो वंश लिथोप्स (*Lithops*) तथा कोनोफाइटम (*Conophythum*) (जीवित पत्थर) इसलिए ध्यान देने योग्य हैं क्योंकि वे उन पत्थरों के अनुहरी होते हैं जिनके बीच वे उगते हैं। पादप का पर्णहरित वाला भाग जमीन की सतह से नीचे होता है, पादप कुछ फूली हुई पत्तियों युक्त होते हैं जिनकी ऊपरी सतह पारभासी होती है जो प्रकाश को पत्ती के निचले भाग में चला जाने देती है जहाँ पर्णहरित पाया जाता है। *लिथोप्स* तथा *कोनोफाइटम* बहुत वर्षों तक सूखा झेल लेते हैं, और अंततः पहली बरसात के बाद जल्दी ही पुष्पन करते हैं। यह व्यवस्था जिसमें पादप का अधिकांश भाग जमीन में दबा रहता है और शुष्क हवाओं से बचा रहता है, पादप को उन परिस्थितियों में जीवित रखने में समर्थ रहती है जिन्हें अधिकांश अन्य पादप नहीं झेल सकते हैं।

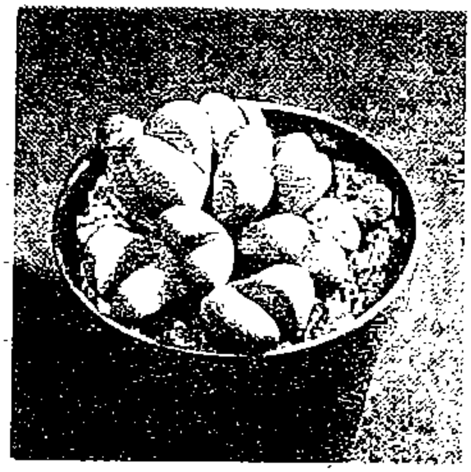

चित्र 24.16 : *लिथोप्स रूब्रा* (*L. rubra*) जो पत्थरों के अनुहारी तथा पारभासी होते हैं।

24.5.10 बाओबाब

ऐडनसोनिया डिजिटेटा (*Adansonia digitata*) बाम्बेकेसी (Bombacaceae) ही बाओबाब है। इसकी ऊँचाई ज्यादा नहीं होती है, परन्तु तना 9 मी. की मोटाई तक का हो जाता है। तना ढोलकाकार/ ...रलरूपी होता है और 9 मीटर्स (30 फुट) तक के व्यास और 18 मी. की ऊँचाई तक का हो सकता है। ...ड़े तुंबे जैसे, काष्ठीय फल में स्वादिष्ट श्लेष्मी गूदा होता है। छाल से निकलने वाला एक मजबूत फाइबर ...थानीय लोगों द्वारा रस्सा और कपड़ा बनाने में उपयोग किया जाता है। तनों को अक्सर खोखला करके ...नी भरने के लिए अथवा अस्थाई निवास के तौर पर उपयोग किया जाता है। विश्व के सबसे बड़े वृक्षों में ... एक अनुमानतः 2000 वर्ष से भी अधिक पुराना है।

चित्र 24.17 : *ऐडनसोनिया डिजिटेटा*।

24.5.11 दंशन नेटल

सर्वाधिक सफल खरपतवार जातियों में से कई वे पादप है जिनमें बड़े शाकभक्षी जीवों के विरुद्ध सुविकसित बचाव के तरीके मौजूद हैं। पादपों के खाए जाने से बचाने के अतिरिक्त, ये बचाव के तरीके जंतुओं के चलने फिरने को भी रोकते हैं। सामान्य दंशन नेटल (*अर्टिका डाओका Urtica dioica*) में परिष्कृत दंशन रोम होते हैं जो अधत्वक (hypodermic) सिरिंज की भांति कार्य करते हैं और अम्ल, हिस्टैनिम तथा अन्य पदार्थों के मिश्रण को छोड़ते हैं जो त्वचा में जलन उत्पन्न करता है जिसके कारण त्वचा में लालामी, खुजली तथा सूजन हो जाती है। कोई भी जंतु जिसमें ये मिश्रण उपत्वचीय रूप से चला जाता है वो सामान्यत: चरना छोड़ कर भाग जाते हैं। बागों चक (फार्मों) पुराने चरागाह, गढ्ढों तथा व्यर्थ स्थानों पर बड़ा समूह बना लेते हैं। वृक्ष नेटल में, *अर्टिका फैरॉक्स* (*U.ferox*) जो न्यूजीलैण्ड का निवासी है, के दंश मारक हो सकते हैं।

अर्टिका लैटिन शब्द अर्टोविर्न अथवा दंश से डाओका दो आकॉस-गृह यानि कि दोनों लिंग अलग-अलग पादपों पर

चित्र 24.18 : दंशन नेटल।

24.5.12 वानस्पतिक रत्न

कुछ वानस्पतिक रत्न ऐसे होते हैं जो मूल्य तथा सौन्दर्य में प्राकृतिक जेवरात की बराबरी कर सकते हैं। निश्चित रूप से , सबसे दुर्लभ तथा सबसे कीमती रत्न पारंपरिक "कोकोनट पर्ल/नारियल मोती" हैं जो कभी कभार नारियल *कोकस न्यूसीफेरा* (*Cocos nucifera*) के भीतर बन जाता है। वास्तविक नारियल मोती का मूल्य निर्धारित करना कठिन है, परन्तु नारियल में उन्हें पाने की संभावना निश्चित ही दस लाख में से एक से भी कम होती है। दूसरे शब्दों में यदि आप सामान्य आठ घंटे की कार्य अवधि में प्रति 15 मिनट पर एक नारियल को तोड़ें, तो दस लाख नारियलों को तोड़ने मे लगभग 80 वर्ष लग जाएंगे। 17 वीं-18 वीं सदी के प्रसिद्ध प्रकृति विज्ञानी जॉर्ज एबरहार्ड रंफियस (Georg Eberhand Rumphius) ने अपने हर्बेरियम एम्बोइनेन्स (Herbarium Amboinonse) नारियल मोतियों का विस्तृत वर्णन किया था, जो अक्सर मलेशियाई राजघरानों के पास सोने और चाँदी के जेवरातों में जड़े हुऐ पाए जाते थे।

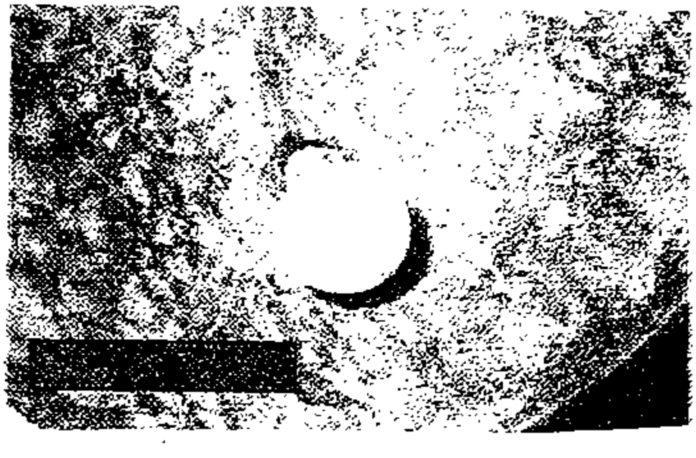

चित्र 14.19: नारियल मोती के साथ नारियल फल।

24.6 बीज तथा फल

बीज तथा फलों के गुणों में आवृतबीजी पादपों में बहुत अधिक भिन्नताएं होती हैं। बीज का साइज अधिपादप ऑर्किड्स जिसका औसत लगभग 12 लाख प्रति ग्राम होता है से लेकर द्विनारियल *लोडोइसिया सीचेलेरम* (*Lodoicea seychellarum*) (*L. maldivica*) लोडोइसिया मालडिविका जिसका भार औसतन 15-20 कि.ग्रा. होता है तक हो सकता है। इसे पकने में 10 वर्ष लगते हैं। इन वृहत पादपों का वितरण काफी सीमित है। ये सेचिल्स के दो द्वीपों में पाए जाते हैं।

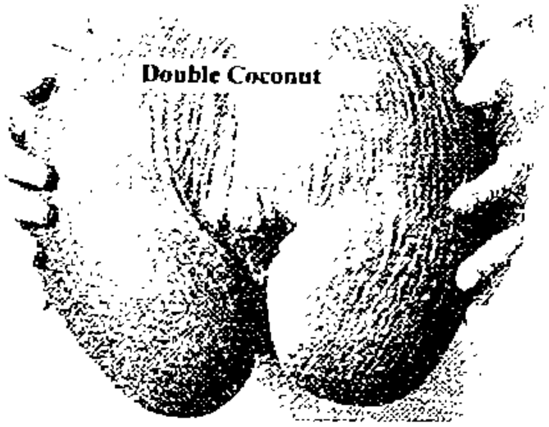

चित्र 24.20: *लोडोइसिया सीचेलेरम।*

बोध प्रश्न 14

निम्नलिखित पर टिप्पणियां लिखिए।

1) सबसे बड़ा वृक्ष

....

....

....

....

....

2) सबसे छोटा पुष्पीय पादप

....

....

....

....

....

3) सबसे बड़ा पुष्पक्रम

....

....

....

....

4) सबसे बड़ी पर्ण

....

....

....

....

....

24.7 कुछ विशेष एकबीजपत्री पादप

तीन प्रमुख उष्णकटिबंधी एकबीजपत्री कुल हैं: अगेव कुल (अगेवेसी), ब्रोमेलिड कुल (ब्रोमीलिएसी) तथा केला कुल (म्यूजेसी)।

अगेव (*Agave*) तथा *यक्का* (*Yucca*) की जातियां दक्षिणी संयुक्त राष्ट्र अमरीका से लेकर दक्षिण अमरीका तक पाई जाती हैं। अगेव की बहुत सी जातियों के जीवनचक्र बहुत लंबे होते हैं जो पुष्पन तथा समाप्त होने से पहले 60 से 100 साल तक बढ़ते रहते हैं। इसीलिए उनका प्रचलित नाम "शताब्दी पादप" (Century Plants) हैं। *यक्का* में विशेष परागण की क्रियाविधि होती है जिसमें *प्रोन्यूबा* (*Pronuba*) शलभ/कीट भी हिस्सेदारी करता है। शलभ/कीट अंडे *यक्का* के पुष्प के अंडाशय में देता है और उस दौरान उन परागकणों को वहाँ वर्तिकाग्र पर छोड़ देता है जो उसने पहले दूसरे पादप से एकत्रित किए होते हैं। इस तरह से वह यह सुनिश्चित कर लेता है कि पर्याप्त बीजांड बन जाएं जिससे उसकी इल्लियों (caterpillars) को भी भोजन मिल जाए तथा *यक्का* का भी स्थायित्व बना रहे जो सिर्फ शलभ/कीट के द्वारा ही परागित होता है। ना तो शलभ/कीट और ना ही *यक्का* एक दूसरे के बिना जीवित रह सकते हैं।

रैवीनेला मैडागास्करेन्सिस (*Ravenala madagascariensis*) ट्रैवलर्स/पथिक वृक्ष (कुल म्यूजेसी) अक्सर रेगिस्तानों के मरूउद्यानों (oasis) में उगता है, उसे ट्रैवलर्स/पथिक वृक्ष इसलिए कहते हैं क्योंकि उसकी व्यवस्थित पत्तियों के काष्ठीय पर्ण आधारों में जो जल एकत्रित हो जाता है उसे आवश्यकता पड़ने पर पीने के लिए प्रयोग किया जाता है। पानी को आधार से चाकू से चीरकर निकाला जा सकता है। पादप में वास्तविक उपवाय्वीय तना होता है, जो बड़ी द्विपंक्तिक पत्तियां धारण किए रहता है जो इसे विशिष्ट पंखे जैसा आकार प्रदान करता है।

चित्र 24.21 : *रैवीनेला मैडागास्करेन्सिस*।

24.8 सारांश

- इस इकाई में आपने तना, पत्ती तथा फल पुष्प में भिन्नताओं की चरम सीमा के बारे में पढ़ा।
- पादप स्वपोषी होते हैं परन्तु कुछ पादप मांसाहारी, मृतजीवी तथा परजीवी होते हैं। कुछ पादप कीटों का भक्षण करते हैं और बेकार खनिज विहीन मिट्टी में भी उगने में सक्षम होते हैं। उनमें अपने शिकार को पकड़ने के लिए विभिन्न तरीके/साधन पाए जाते हैं।
- बीज जोकि पादप का एक महत्वपूर्ण भाग होते हैं उनमें साइज, संरचना, आकृति, पोषक तत्वों तथा वितरण के तरीकों में बहुत अधिक भिन्नताएं पाई जाती हैं।
- कुछ विशेष एक बीजपत्री पादपों *यक्का* तथा *रेवीनेला* में विशिष्ट लक्षण पाए जाते हैं।

24.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) मांसाहारी पादपों की एक सूची बनाइए और उनमें से किसी एक का वर्णन करिए।

....

....

....

....

....

2) तने के परजीवियों पर टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

3) मांसाहारी पादपों के बारे में संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

....

4) अपनी पसंद के पाँच विलक्षण पादपों के बारे में संक्षेप में लिखिए।

....

....

....

....

24.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) 2- ग, 2-घ, 3-क, 4-ब
2) सेक्शन 24.3 को देखिए
3) उपसेक्शन 24.4.1 तथा 24.4.2 को देखिए
4) सेक्शन 24.5 को देखिए : कुछ विलक्षण/अद्भुत पादप

अंत में कुछ प्रश्न

1) सेक्शन 24.2 को देखिए।
2) उपसेक्शन 24.4.1 को देखिए।
3) सेक्शन 24.2 को देखिए।
4) सेक्शन 24.5 को देखिए।

आगे पढ़ने के लिए

1) तख़्ताज़न ए .1997, पुष्पीय पादपों की विविधता तथा वर्गीकरण (Diverity and classification of flowering plants) । कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रैस, न्यूयॉर्क

आभार

http://daphne.palomar.edu/and http://www.ftg.org/से कुछ लिए गए चित्रों का उपयोग इकाई 24 में किया गया है जिसके लिए हम आभारी हैं।